

7562

THE RASAYOGASAGARA

BY

VAIDYA PANDIT HARIPRĀPANNAJI

रसयोगसागरः ।

भापाटीकोपेतः



(गहनस्थलेषु सस्वृत्तविवरणोपेत)

स च

वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नशर्मभि-

निर्मितः ।

तस्य

पकारादिर्ज्ञपर्यन्तः परिशिष्टेन सहितो द्वितीयो भागः ।

निर्मात्रैव प्रकाशित

(अस्य ग्रन्थस्य सर्वेऽधिकारा राजकीयनियमानुसारेण-प्रकाशकेन स्वायत्तीयता)

3A61
HAR

विक्रमीयवत्सरा १९८७ सन् १९३०

मूल्यम्—१० रूप्यका ।

पृष्ठ १-६०८ तक गुजरातीप्रिन्टिंगप्रेस प्रिन्टर मणिलाल इच्छाराम देशाईके यहां और पृष्ठ ६०९-७०४ तक प्रिन्टर नटवरलाल इच्छाराम देशाई, सासून बिल्डींग, एलफिन्स्टन सर्कल, फोर्ट मुंबई. और सूची पृष्ठ १ से ५२ निर्णयसागरमे छपाहै)

पब्लिशर:-वै० पं० हरिप्रपन्नवी, श्रीभास्कर-औपघालय, तीसरा भोईवाडा, मुंबई. पो० नं० ३

प्रिन्टर:-रामचंद्र येसू शेडगे "निर्णयसागर" छापखाना,
२६-२८ कोलभाट लेन, मुंबई.

7562

जल्दीकरो अलभ्यलाभसे वंचित न रहो

रसयोगसागर—द्वितीयभागमी छपगया रसचिकित्साकेलिये इससे बढकर दूसरा कोईभी ग्रन्थ नहींहै—कारण कि इसमे दुप्राप्य और प्रामांगिक हस्तलिखित ५८ और मुद्रित ५३ ग्रन्थोंके रसोंका सङ्ग्रह है इसके अतिरिक्त जगद्वज्रह ग्रन्थकर्ताने अपना अनुभव प्रकट किया है—वर्तमानसमयके अनुकूल मात्राओंके निर्धारणपर विशेष विवेचन कियागया है बहुतसे रस सङ्कतमे लिखेहुयेये जैसे कि कासीसादिरसप्रभृतिहैं उनका कुछभी अर्थ न लगनेसे निरुद्धमे पढे हुयेये उनपर भाष्यकरके उनका आशय सुझाकरदिया है । ग्रन्थलेखकोंने जहाजहा कुछ शुभगम्यता रक्खीमी उसेमी यथाशक्य विस्तार कर ची है । ग्रन्थाशय न समझकर टीकाकारोंने जहाजहा कुछ गलतिया कीहैं उन्हें सप्रमाण दिखाकर यथार्थसिद्धान्तका आविष्कार कियागया है । एकहि रसमे पचविशेपरचनाने कारण आयेहुए औपधोंके नामान्तरोंको देखकर रसान्तरता समझकर जो घृषक २ नामरखकर एकभारी जाल फैलाया हुआथा उसे एकान्तत दूर करदियागया है । वस्तु और फल प्रमान होनेपरमी यत्किञ्चित् कियामेदसे जो रसान्तरता लिखीहुईथी उसे सप्रमाण लिखकर लोगोंकीबुद्धिको उत्तेजितकी है जैसे कि रविताण्डवप्रभृतिमे है । दशवींशरसोंके मौलिकप्रदाथ और प्रमाणों से एकनितकर योग्यतानुसार उनको एकदोही रसोंमे समाविष्ट करनेकी युक्ति प्रदर्शितकी है जैसे कि हिरण्यगर्भपोटलीप्रभृति इनयुक्तियोंसे ग्रन्थस्थरसोंहिंके बनानेकी कुशलतामान प्राप्त नहीं होती है किन्तु योग्यतानुसार नवीनरसोंके निर्माणकरनेकीमी मुद्रिमे जायति होती है । अकारादिमातृकानुसार रसोंके लिखनेसे विशेषअनुकूलता यह होगई है कि किधीकी इच्छा होवे कि अमिकुमारनामके कितने रस हैं, तब मातृकाक्रमसे प्रथम अमिकुमारसेलेकर अन्त्यतक देखजायें बाजार भरा नजर पड़ेगा सख्याजाननेकी जरूरत हो तो अखीरकी संख्यादेखनेसे संख्या अनायाससे मान्दमहो सकेगी इसीतरह तमाम रसनामोंमे समझलीजिये, इसतरह अकारादितवर्गान्त प्रथमभागहै इसमे करीब १८०० रसोंका सङ्ग्रह है । इसेछपे ३।४ वर्षहोपयेहैं इसकामूल्य १२) रुपयेहैं । इसके आदिमे अंग्रेजी और संस्कृतमे दो विस्तृत भूमिकायें लिखीगईहैं उनमे दिखायागया है कि आयुर्वेदका अस्तित्व वेदोंसे लेकर आजतक अविच्छिन्न चला आरहा है—इसको देखकर यह सप्रमाण सिद्ध होजाता है कि आजतक जितनीमी पद्धतियां (पैथिया) दुनियामे चलीहुई देखनेमे आतीहैं उन सबका मूल आयुर्वेदहै । सङ्कोचविकासकीचर्चातो स्वतन्त्रहै मीज प्राय सङ्कचितभावहीमे मिलाकरता है । इसमेदियेहुये त्रिदोषविचरणको अच्छीतरह मनन करनेसे त्रिदोषसिद्धान्तकितना उपयोगी और सख्य है इसका अनायाससे पता चलजाता है । उससे आजतकके आयुर्वेदसिद्धान्ताऽनभिज्ञलोगोंसे कियेहुये आक्षेपोंका निराकरण होजाता है और भविष्यकेलिये किधीमी व्यक्तिका आयुर्वेदकी नींव मन कल्पितसिद्धांतपरहै ऐसा कहनेका साहस न होगा । बौद्धसमयमे यज्ञ, और राजचिकित्सापर एकान्तत अद्भुत होनेके कारण ह्योमादि शारीराऽवयवोंमे छायेहुये घोरान्धकारका एकान्तत नाशहोजाता है कारण कि सन्निवपावयवोंका सप्रमाण वेद तथा ब्राह्मण और आयुर्वेदीयसहिताओंके स्मृन तथा मन्त्रोंके दिये हुये उद्धरणोंसे घराव विच्छिन्न होजाता है । डाक्टरी तथा आयुर्वेदीय शारीरज्ञानजिज्ञासुओंकेलिये आपसारीरतत्त्व नामक प्रकरण तो एक अलभ्यरत्नहै, इसरत्नका रसयोगसागरको छोडकर अन्यत्र मिलनेका अभाव हि नहीं किन्तु असम्भवहै इसमे कईतरहकी विशेषतायेंहैं उनका रहस्यज्ञान बिना मननके नहीं होसकता है इसतरह इसकी भूमिका वैद्य हकीम डाक्टर याज्ञिक तथा सशोपकोंकेलिये बहुतही सहारेफी वस्तु है ।

रसयोगसागरके द्वितीयभागमे पकारादिसम्पर्वन्त २०८२ रसहैं इसतरह इनदोभागोंमे यह ग्रन्थ समाप्त हुआ है । इसकेबाद अर्थात् पृ० ६१२ से—६२३ तक सिद्धसम्प्रदाय अर्थात् आगस्त्य और व्यासप्रोकरसप्रकरण दिया है यह बहुतही महत्वका है । इसकेबाद पृष्ठ ६२५ तक आन्ध्रविदेसप्रसिद्ध कृष्णभूपालीयप्रभृतिग्रन्थोंके प्रयोग दियेगयेहैं । इसकेबाद कईकारणोंसे सङ्ग्रहकरनेकेसमय दोनोंभागोंके छूटेहुये रसोंका पृष्ठ ६४३ तक सङ्ग्रह है । इसकेबाद सङ्ग्रहकरनेमे छूटेहुये ग्रन्थोंके नाम तत्पत्रसोंमे दाखिलकरनेकी सूचना पृष्ठ ६६१ तक दीगई है । इसके बाद आपातत प्रतीयमान विभिन्नरसोंके एकीकरणका दिग्दर्शन कराया है । ६६३ पृष्ठसे आगे ग्रन्थान्तरमे नामान्तरसे आयेहुये रसोंकी सूची दीगई है—जिसरसका दोनोंभागोंमे पता न चले और देखनेवालेको दूसरे नाम यादहोवें उनलोगोंसे प्रार्थना है कि वे लोग इससूचीको देखनेका कष्टकरें इसमे उन्हें यह पता चल जागया कि इसरसका यथार्थनाम यह है उसे देखकर आइन्दुकेलिये उसीनामसे उसका व्यवहारकरें इसकेउदाहरणार्थ अमरचन्द्ररी अन्त स्थ ५०४ मे इसकानाम विजयमैरव आया है सो वहापर देखनेसे इसके ग्रन्थमेदोसे कितनेनामहैं और क्या २ विशेषहैं इसकापता अनायाससे चलजागया इसीतरह अन्य २ रसोंकोभी देखनेका कष्टकरें प्रथमभागके छपनेपर बहुतसे वैद्यमहाजुभावोंके आक्षेपसूचक पत्र आयेये कि रसयोगसागरमे इतनाप्रसिद्धमी रस छूटगया सो उनसज्जनोंके लिये यह सूची दीगई है जिससेकि उनका वह भ्रम दूरहोजाय, देखिये इसीरसकी टिप्पणीमे इसके ८१० नामआयेहैं उनमेसे जो आदमी इसे चन्द्रप्रभाके नामसे जानता होगा वह चन्द्रप्रभाकेपाठोंमे इसे न देखकर मनमे जरूर कहेगा कि इसमें सङ्ग्रहकर्ताकीभूल है परन्तु वहां ऐसा मनने न लाकर इससूचीको देखनेका कष्टकरें इससे

उनके मनको अभीष्ट सन्तोष होयजायगा. हां इसमें वेनाम जरूर न मिलेंगे जोफ़ी हालके कल्पितहैं । कल्पितनामोंका प्रतिष्ठित ग्रन्थोंमें उल्लेखकहांसे आवेगा इसबातको विद्वान् व्यक्ति स्वयं समझसकतेहैं इसमें विशेष विवरणकरनेकी आवश्यकताही क्या है. द्वितीयभागमें सब मिलकर करीबन् २४०० रसहैं । ६७१ और ६७२ में अंग्रेजी उपोद्घातके विषयोनी सूचीहै. पृष्ठ ६७३ और ६७४ में संस्कृत उपोद्घातके विषयकी सूचीहै । पृष्ठ ६८० तक प्रथमभागका शुद्धिपत्रकहै । ६८१ में रोगानुसारिणी और अधिकारपरलसूचीरहस्यहै यद्यपि यहविषय द्विविधसूचीके अव्यवहित आदि अथवा अन्त्यमें आना उचितथा परन्तु ३ प्रसंगोंमें छपवानेकेकारण स्थानान्तर होगयाहै इसकेलिये पाठक क्षमाकरें द्वितीयाद्युक्तिमें यह यथास्थान पर चलाजायगा । पृष्ठ ६८२ के आधेसे ७८३ के आधेतक दक्षिणदेशप्रसिद्ध स्थानवातादिरोगविशेषोंके लक्षण दिऐहैं ६८३ के आधेसे लेकर ६९१ तक मान (तोल) विवरण दियाहै यह प्रकरण इतना गहन है कि दसवीसवार सावधानीसे वांचकर मनन कियेविना इसका याथातथ्य अच्छेअच्छोंकेभी चित्तमें आरूढहोना दुस्तरहै—इसमें सुश्रुत चरक कृष्णामेयके मानोंके आपाततः आयेहुये अन्तरके कारणको दिखलाकर एकता करनेकी युक्तिदिखलाईहै इसजगह उद्गण और चक्राणित्त-प्रसृति टीकाकारोंके स्थलनका दिग्दर्शन करायायगयाहै यहांपर मननकरनेसे विशिष्ट विद्वानोंकोही ज्ञानहोगा कि यह कितने दिनसे ग्रथहुवाहै और कितने २ लोगोंको इसने धोकेमें डालाहै ? इसकेसीचमें कालिह्न और मागधतोलका रहस्य खोला-गयाहै. वर्तमानसमयमें कालिह्न तथा मागधमानकी क्या दुर्दशाहुईहै. इसअन्वेषीकोठडीमेंसे निकलनेके बाद आयुर्वेदमें इस विषयकेहोनेसे स्कुलोमेंसी क्या दुर्दशा होरहीहै इसका अच्छी तरह अभिज्ञान होगा, इसका कुछ दिग्दर्शन करायामीगयाहै यूनानीवजनमें सबसे ज्यादाह विष्वव दिखाईदेताहै जितनीकितावैहैं एकदूसरीकेसाथ मेल नहीं खातीहैं पीछेके लोगोंनेभी अमुक साहब ऐसा फर्मातेहैं और दूसरे ऐसा कहतेहैं वस इसकेविषय निष्पत्ती वात ही नहींहै. इसी कारणसे उनके नुसखोंमें आयुर्वेदकी तरह सीधा हिसाब नहीं आताहै यह सब मूलमानकी भ्रष्टतासे हुवाहै इसका भ्रम अच्छीतरह विचारनेसे दूर-होजायगा. सबलोगोंको उचितहै कि दुराग्रहको छोडकर मानको सुधारलेवें यूनानीप्रसृतिपद्धतियोंका जन्मदाता आयुर्वेदहि है इसमें किसीको संदेह हो तो इसके उपोद्घातको देखनेका कष्ट करें ।

मानवधर्मशास्त्रीयमानका उल्लेखमी इसमें आयाहै परन्तु उसका आयुर्वेदके मानकेसाथ सम्बन्धनहै है यह केवल दण्डविधानार्थसांकेतिक नियमहै । यदि वह मन्तव्य होता तो आयुर्वेदमें स्वतन्त्रमानकेलिए प्रयत्न न कियाजाता । संसारमें जुदे २ व्यवहारोंकेलिये जुदे २ मान प्रचलितथे इस बातका पता वैजयन्तीकोषके मानकोष्ठको देखनेसे आनावास लगजायगा. यह कोष्ठक पृष्ठ ६९० और ६९१ मेंहै इसकोष्ठकमें कई अज्ञातसङ्केतोंकाभिपत्ता दियाहुआहै इससे यह निर्धारितहोताहै कि मानकी भिन्नता व्यवहारपरले अवश्यथी, पृष्ठ ६८९ में सुश्रुतादि मानबोधककोष्ठकदियाहुआहै उससे ग्रन्थपरलेन किस २ जगह क्या भेदहै इसका हस्ताऽऽमलकवत् ज्ञान होजायगा, इस मानपरिभाषामें बहुतकुछ ज्ञातव्यांश भराहुआहै उसके लिये हम उसे मनन करनेकी सलाहदेतेहैं । पृष्ठ ६९२ से लेकर पृष्ठ ७०४ तक ज्ञेह और आसवीका विधानहै इसमें “आर्द्रव्याणां च द्वियुगम्” इस सुश्रुतीयवाक्यमें लेखकप्रमादसे वकारस्थ यकारके निकल जानेसे अज्ञातवश पीछेके लोगोंने बनाईहुई द्रवहै-शुण्यपरिभाषाका सप्रमाण विस्तृत रूपसे खण्डनकियागयाहै । इसीतरह पृ० ६९९ में “क्वाथसिद्धमरिष्टं तद्विन्न आसवः” अर्थविधानमुखे पात्रे जलं हुजंरतां प्रजैत् । तस्मादावरणं क्षण्णा क्वाथार्थीनां विविधयः । पृ० ७०४ में द्रव्यादग्रुणं क्षीरं क्षीराक्षीरं चतुर्गुणम् । इनमेंभी परिभाषालाक खण्डन कियाहै । पृ० ७०२ से ७०४ तक नस्यमानाकेविषयको दूरकियाहै । इसके आगे क्वाथारिककीनिर्दिष्ट कीहै । इसकेबाद रोगपरल और अधिकारपरल दोषकारकी सूची थीहै इनके देनेसे चिकित्सकोंको बहुतही सरलता होगईहै उसकेबाद रज १ सुवर्ण २ ताम्र ३ नाग ४ कान्तलोह ५ लोह ६ मासिक ७ अन्नक ८ ताल ९ रजत १० वज्र ११ यशद १२ पित्तलकांस्य १३, १४ कासीस १५ हृत्प १६ इनका दोषन और मारण दियाहै । इसके समनन्तर पारद १ गन्धक २ मनःशिला ३ वसनाभ ४ विषमुष्टि (कुचिला) ५ मृदाग्रह ६ भलातक ७ धसूर ८ करिहायी ९ करवीरमूल १० शिलाजतु ११ इनकी शुद्धि कीहै । अब इस अकेलेग्रन्थके सङ्ग्रहकरनेसे अन्य रसग्रन्थोंकी पासमेरखनेकी कोईभी आवश्यकता अवशिष्ट नहीं रहजातीहै । देतेो इसके अन्त्यमें विशिष्टविद्वानोंके अभिप्राय । इष्ट-द्वितीयभागकी कीमत् १०) रुपया रखीहै दोनोंभागसाथमें लेनेवालेको १८) रुपयमें दोनों भाग दिये जायगे ढाकखर्च लेनेवालेको देना होगा । समग्र ग्रन्थमंगवानेवालेको ५) और १ भागकेलिये ३) ६० पेशगी मेजना चाहिये जवाबकेलिये जवाबीकाउंदा उचितहै ।

पुस्तकमिलनेका पत्ता—

वैद्य पं० हरिप्रपन्नजी

श्रीभास्कर औपचालय तीसरा भोईवाजा पोष्ट नं० २ मुम्बई.

रसयोगसागरः

(द्वितीयोभागः)

अथ मङ्गलाचरणम् ।

यदाऽऽकाशेऽकाशे परिसृतविकाशे परिवृत्तौ,
यदस्थूलेस्थूले स्थितिमति भृशङ्गन्तरि विधौ ।

रथावृक्षे नक्तन्दिनमिदि कलाकालकलने,
रसस्तोऽहंसाऽहं वितरतु सदा सिद्धिमनुलाम् ॥

यत्-अनिर्दिचनीय वस्तु, आकाशे-सर्वतोजसामान्यगणक-

रि, काशे-तेजसि "काश्ट" दीप्तावित्यस्मात्पचायचि प्रका-

शाथै पर्यवसानं भवति, आहुपसर्गस्याऽऽकर्षणाऽर्थवोतने वृत्ति

गोच्या, उपसर्गाणामनेकार्थत्वात् एव वृषथातुसमभिव्याहारे

ःवैरिपि तयात्वमवगम्यते । कदाचित् सोऽर्थं कर्षयातोरे-

ताऽऽत्युपसर्गाणां वैयार्कणनिर्वाये योतकत्वस्वीकृतत्वादिति

शब्दम् । तयात्वे येनकेनाऽऽत्युपसर्गणं सम्बन्धे तस्यार्थस्या

(आकर्षणरूपस्य)ऽभिव्यक्तिं स्वीकर्णीया स्यादतस्तत्तदुपसर्ग

प्रमभिव्याहारे एवाऽर्थविशेषस्याऽभिव्यक्तिं भवतीति नियमा

प्रवच्यव्यतिरेकान्या वैयार्करूपयात्या स्वीकर्णीय एवाऽस्ति ।

अत एव "विनापि प्रत्यय पूर्वोत्तरपदयोर्लोपो वा वच्यते" इति

वार्तिकं निरमिमीत वार्तिककार । अथ वार्तिकं तिरोहिता

अर्थां प्रकरणविशेषवशाद्दृष्टनीया इत्यर्थं समभिव्यनक्ति, न तुच्छ

द्वलतया सर्वत्र पूर्वपदादिलोपेनाऽनर्था उपस्थापयितव्या इत्यर्थं

रोधयति, तथात्वे सति नियताऽर्थस्य कचिदप्यसद्भावे महानु

पन्न प्रसज्येत । महाप्रलये सर्वाण्यपि तेजासि परमात्मनि

श्रियन्ते सर्वजगता मूलकारणत्वात् । अथ च अकाशे-तमोरूपे

रगति, आसीदिदं तमोभूतमप्रज्ञातमलक्षणमिति मनुना सूचि

रूपे । परिसृतविकाशे-परित सर्वतो विकाशे महदादिमहा

भूतान्तकायदिनिर्माणे पुनरपि सृष्टिप्रादुर्भावे इति यावत् । परि-

वृत्तौ-परितसर्वततो वृत्तौ विभिन्नव्यापारे स्थितावित्यर्थे । जगत्

स्थितौ भवति जीवाना परिवृति । "वृ- सम्भक्तौ" क्यादि,

"वृन् वरणे" स्वादि, "वृन् आवरणे" सुरादि, इत्यादिभ्य

स्त्वेकैकशेषादिना परिवृतिशब्दस्य निष्पन्नत्वात् । तस्मिन् समये

जीवाना भवति नानाविधो व्यापार, कश्चिन्नियते कश्चिन्नियते

कश्चित्किञ्चिदाच्यते कश्चित्किञ्चिद्वाति किञ्चिद्दृक्वाति कश्चित्क

व्याञ्चिद्योनावाततो भवति इति कृत्वा यथार्थत साऽवस्था परि

द्विस्तत्र । अस्थूले-सूक्ष्माऽतिसूक्ष्मपरिमाणुके । अथ च

चेत्यर्थ, ब्रह्मादीना मनुष्यान्ताना जीवाना नक्तन्दिन-

भेदस्याऽऽह्यरूपत्वात् । कलाकालकलने-कलाश्चतुष्पाष्टि

विद्या, अथ च गर्माऽनुकूल्युनशोणित्वादिस्वयोगानन्तर वातवृता-

ऽऽह्यविभागाणा यथास्थितित्थापकाऽऽवरणरचनाविशिष्टाऽऽवर-

णानि तेषु, अस्य विशेषविवरणमुपोद्धाते कलाटिप्पण्यादृश्यम् ।

कालः-काल्यन्ते विभक्तीभियन्ते सृज्यन्ते वा, सर्वे पदार्था

अनेनेति काल । "कल" सख्याने सुरादि, करणाविवरण

योधेति घ्न् । सुसृष्टे तु स सूक्ष्मामपि कला न लीयते इति

काल इति निरुक्तप्रक्रियया साधुत्व प्रदर्श्यं सङ्कलयति कालयति

वा भूतानीति काल इति पचायचि साधित (सु सू ६१३) ।

तत्र लघ्वशरोच्चारणमात्रोऽक्षिनिमेप इत्यादिना परमस्थूलस्वरूप

प्रदर्शितम्, सूक्ष्मस्वरूपविवरणं सस्कृतोपोद्धाते सप्तचत्वारिं-

शति पृष्ठे दृश्यम् । कलाया कालस्य च कलने सम्पादने सङ्ख्याने

चेत्यर्थ । एतस्मिन्नेतस्मिन् किङ्कारणमिति सन्वेहे श्वासोच्छ्वा

साम्या सोऽह सोऽहमित्युत्तरयति तद्वत्सः सर्वसारभूतं परमे

श्वररूप (रस शब्दस्यविशेषविवरणं पूर्वार्द्धमङ्गलाचरणटीकाया

दृश्यम्) सदा निरन्तर स्वभक्तानामित्यध्याहार ग्रन्थकर्तुः,

रिति वा । अनुल्ला-अनुपमा मोक्षरूपा ग्रन्थपरिसमाप्तिरूपा

वा सिद्धि वितरतु ददातु । अस्य मन्त्रस्यार्थविचारपुर सर

तलीनताया एव ब्रह्मविद्यारूपत्वात्, ब्रह्मविदश्च सर्वा सिद्धयो

दासीभक्तनीत्यविवादात् । इय ब्रह्मविद्या परमगोप्यरूपेणोप

निपदादावाख्यायिकादिभिर्व्यज्यते न तु साक्षात्निर्दिश्यते

साक्षात्कारस्तु गुरुमुखादेवाऽजगन्त्वथ " इम विवस्वते योग

प्रोक्तवानहमव्ययम् । विवस्वान् मनवे प्राह अनुरिक्षनाकवेऽत्र

वीत् ॥ एवं परम्पराप्राप्तमिम राजर्षयो विदु । स काले-

नेह महता योगो नष्ट परन्तप ॥ स एवाऽय मया तेऽय

योग प्रोक्त पुरातन । भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्य

शेवदुतमम् " (भगवद्गीता अ ४) भगवत्वाप्याख्यायिकेयैव

सुचिताऽस्ति । न च वाच्यः प्राणापानौ सर्वौ कृत्वा नासाऽ

भ्यन्तरचारिणावित्यादिना प्रवटीकृताऽस्तीति, तत्राऽपि गुरु-

गम्य एव मार्गोऽस्ति, अत एव "तद्विदि प्रणिपातेन परिश्रमेन

सेवया । उपदेश्यन्ति ते ह्यन ज्ञानिनस्तत्त्वदर्शिन । यत्र भूता

न्यशेषेण द्रश्यस्यात्मन्यथो मयि" (भगवद्गीता अ ४१३)

इत्यनेन स्पष्टतया ब्रह्मविद्याया गोप्यत्वमुक्तम् । एतन्मन्त्रार्थे

प्रदर्शनरूपस्य तत्सवितुर्वरेण्यमिति मन्त्रस्य महागायत्र्यर्थे

पत्वाद्वायत्रीति सङ्ख्या श्राधे कृताऽस्ति, महागायत्र्या परम

गोप्यत्वेन सर्वत्राऽऽपकारयत्नम्, तत्स्मरणमन्त्रा च लौकिक

कसमस्तकर्मणा निष्कल्यते समीक्ष्य ऋषिभि परमं तप

अधिष्ठाय महागायत्र्यर्थेत्वा तत्सवितुर्वित्यादिर्वाऽऽह्यै

ससारकल्याणाय दिव्यध्यानेन दृष्टा लोके गायत्रीनामैव
 प्राचारीति गूढ रहस्यमत एवोपनयनसमये एव सर्वसाधारण्येन
 महागायत्र्यर्थरूपो मन्त्र उपदिश्यते । महागायत्री तु काम-
 क्रोधादीना समेत शान्तोद्रेके सति सत्त्वगुणसमन्वुद्गायत्रिमं
 लन्त करणे कोऽहं कस्मादागत विज्ञाऽनुश्रेयमिति जिज्ञासोदये
 सति द्रष्टवियानिधान सहुर गवेषयते शुद्ध त सम्पक् परि-
 ह्योपदिशति । अत एव ऋग्वेदे गायत्रीमन्त्र साक्षात्निर्दिष्टो
 यथा "तत्सवितुर्वरेण्यम्० (ऋ वे ३।६२।१०) सायणभा०—
 य सविता देव नोऽस्माकं धिय कर्माणि धर्मादिविषया वा
 बुद्धी प्रचोदयात् प्रेरयेत् । तत्तस्य सर्वान् धुतियु प्रसिद्धस्य
 देवस्य धोतमानस्य सवितु सर्वान्तयामितया प्रेरकस्य जग
 त्स्थु परमेश्वरस्य आत्मभूत वरेण्य सर्वैरुपास्यतया ज्ञेयतया
 स समजनीय भर्ग—अविद्यातत्कार्ययोगैर्नानाद्वयै स्वयज्योति
 परमद्वात्मकं तेजो धीमहि तयोहोऽस्यो योऽसौ सोऽहमिति
 वयं ध्यायेम । यद्वा तदितिभर्गोविशेषण सवितुर्वैवस्य ततादृश
 भर्ग धीमहि, किं तदित्यपेक्षायामाह—य इति रिद्रव्यत्यय
 यद्भर्गो धिय प्रचादयात् तद्व्यायेमेति समन्वय । यद्वा य
 सविता सूर्ये धिय कर्माणि प्रचोदयात् प्रेरयति तस्य सवितु
 सर्वस्य प्रसवितुर्वैवस्य धोतमानस्य सूर्यस्य तत्सर्वैरुपमानतया
 प्रसिद्ध वरेण्य सर्वै समजनीय भर्ग पापाना तापक तेजोमण्डल
 धीमहि ध्येयतया मनसा धारयेम । यद्वा भर्ग शब्देनात्ममभि
 धीयते य सविता द्वयो धिय प्रचोदयति तस्य प्रसादाद्भ-
 गौऽप्रादिलक्षण फल धीमहि धारयाम तस्याऽऽधारभूता भवे
 नेत्यर्थ । भर्गदशादस्याप्रपत्त्वे धीशब्दस्य कर्मपरत्वे च आय-
 वंश—वेदाः छन्दासि सवितु वरेण्य भर्गो देवस्य कवयोभ्रमाहु ।
 कर्माणि धियस्तदुते प्रयवोमि प्रचोदयन्सवितयागिरेतीति ।
 टी०—अत्र च महागायत्रीगतच्छन्दस्यार्थे विमस्तीतिशङ्कायां
 सवितु—लोकात् प्रसावयितु देवस्य—महाप्रलयेऽपि योत
 मानस्य सर्वमूलकारणत्वात् घरेण्यै—वरेण्य भर्ग, सर्वपाप
 भञ्जनसमर्थत्वेन धीमहि—ध्यायम । विमर्थे तदपानमित्यु
 त्थिताऽऽकाहा शान्तयितुमाह य—यत् भर्गो नः—अस्माकं
 धियः—बुद्धी अन्तःकरणानीति यावत् । प्रचादयात्—धुमक
 मेमु नियुञ्ज्यात् । इति महागायत्रीरूपसमुदायस्यैवामरमात्र
 स्याऽर्थं प्रदर्शित । समसाऽऽहं—"हस्य शुचिश्च्युन्तति
 क्षमदोता बधिरवदतिश्चिदुंरोणय । वृद्धरसवत्सद्व्योमगदस्त्रा
 गोत्रा ऋतना अद्रिजा ऋत्नम् ॥ प्र १।१०।१४ ॥ (सा० भा०)
 अनया सौर्यं य एवान्तरादित्य हिरण्य पुण्यो रदयते
 हिरण्यमनुभूतिरित्यादिभूयोषो मण्डलाऽभिमानो देवोऽस्ति,
 यत्र सर्वप्राणिदि यिभू स्थित परमात्मा यत्र निरन्वज
 स्तोपाधिकं परं द्रष्टु तस्यैवेदमेवेति प्रतिपाद्यते हैमः—इति
 नैत्यर्थं सर्वत्र सर्वत्र गन्ता यो ह्येऽप्रादित्यदिशुत्पुत्रप्रका
 नैहीष्टुत्पोपन्य, परमात्ममन्त्रप्रतिपाद्य आदित्य ग य शुची
 क्षीते शुभेके सीदनीति वृत्तिः । अथ यत्न पतोदिने
 ज्यादिनीत्या ह्यादिभूते । अनेन गुह्यात् आदित्यं प्रति

पादित, स एव मन्वस्यानो वायुरित्याह वसु सर्वस्य वास-
 यिता वायु स चान्तरिक्षस्त अन्तरिक्षस्वामी । अथ तस्यैव
 क्षितिस्थानवैदिकामिरूपतामाह होता—देवानानाहाता होमनि-
 प्यादको वा वेदिपत्—वेद्या गार्हपत्यादिरूपेण स्थित अति-
 थिरतिथिवत्सर्वदा पूज्योऽमि दुरोणस्त—दुरोणं गृहनाम तत्र
 पासादिसाधनत्वेन स्थित अनेन लौकिकाभ्यात्मवत्त्वमुचम् ।
 नृपत्—नृपमनुष्येषु चैनस्यरूपेण सीदतीति वृत्त् अनेन परमा-
 त्मरूपत्वमुचम् । पुनरप्यादित्यात्मतामाह—चरस्तत्—चरं वरेणीये
 मण्डले सीदतीति वरस्त आदित्य चर वा एतत्सन्ना यस्मि-
 न्नेव आसन्स्तपतीति हि धूयते ऋते सत्यं द्रष्टु यत्र वा तत्र
 सीदतीत्युत्तरम् अमि व्योमान्तर्गिषु तत्र सीदतीति व्योमस-
 द्वायु । इदानीमादित्यतोच्यते अज्ञा—उदकेषु जात उदक-
 मध्ये खल्वय जायते गोजा. गोषु रदिम्यु जात ऋत सत्य
 सर्वैरुपल्वेन सत्यामात न ह्यमाविन्द्रादित्यरोधो भवति ।
 यदोदकेषु वैयुत्वरूपेण वा वाडवरूपेण वा जात अद्रिजा—
 अद्रावुदयाचले जात एव महातुभाव आदित्य ऋतं—सत्यम-
 याच्य सर्वाधिष्ठान द्रष्टु तत्त्व तद्रूपोऽहमावेद्यादित्यरयोत्तरूपत्व
 हस शुचिपदित्येय वै हस शुचिपदित्यादिना द्राग्ने समाना-
 त्म इति । यत्तु सायणादिभिरयमन्त्र सूर्यपरत्वेन व्याख्या
 तन्त्रपि द्रष्टवियायाम्ब्रह्माच्छादनार्थं कृतमिति वा स्यात्पूर्वं
 व्यारायात्पथोवाऽनुकृतस्यादित्यस्युमीयते । महागायत्रीमन्त्र
 साक्षात्प्राऽपि निर्दिष्टो व्याख्यातो वा गोपलम्प्यत इति तस्य
 परमोप्यत्वम् ।

केचित्तु वाल्मिस्तत्सवितुर्वरेण्यमित्यादिमन्त्रमेव द्रष्ट-
 वियां वदन्ति तत्र सम्यक् ? एकाधारमान्—यार्थरूपत्वात्, प्रदा
 यार्थमात्रातरि प्रचापतिता दार्थाऽभिप्रत्यक्षयनवदनुत्तन्त
 स्मात्समप्रमहामन्त्राधेहातयैव यथार्थप्रप्रवित्वम् । तन्त्राग्रे
 देवप्रतिमायन्त्रादीना प्राणप्रतिष्ठापने सर्वेषु सम्प्रदायेषु पासा-
 द्भुदगमितमायावीजनुचायै वायुऽहिलरूपोऽप्यादिबीजोपाएण
 पुरस्तार महामन्त्र एव विन्यम्यते न तु शुभचिदपि ॐ त्त्वापि
 वरेण्यमि यादिमन्त्र समुपन्यस्तो रदयते । किञ्च तत्सवितुरि
 तिमन्त्राऽऽरापनेऽन्यत्राजपनिवेदनमन्त्रा स्वभ्यागिदित्यमा
 वात्स्यन्त्रमेव द्रष्टवियात्वम् । द्रष्टवियाप्राप्तौ तु सर्वत्रैव देय
 समाच्यते इति सर्वत्रैव स्वोक्तार्थमतो न क्त्वावितुर्वरेण्यमित्या
 दियन्त्राधेहाने समप्रदाया द्रष्टविरत्र समाच्यते इति शान्ताऽन्य
 वरणे स्पृहदयैतच्छनीयमिति प्रथमाऽर्थं ॥ १ ॥

द्वितीयं तु—यत्न—अनिर्वचनीयस्वरूपं यन्तु आपादो,
 आकाशगमन अकाशे तन्तुत्पदस अकाशारहितं गरीत
 न्त प्रवेश वा । परिवृत्तयियाशो—पुलीच्छुत्तु—दिग्गमदान
 धारणत्वात्—दित्यपुत्रकारणोद्भूदभ्ररुद्राऽयुं । परिवृत्तौ—नर्ग
 तोषदाऽऽपकादात्मिण्यादिपुत्रा इति वायव्य, अनिष्ठा
 यितादाः परद्व कपादिरत्तच्छर्त्तना गदना प्रादुर्गताऽपार्था
 ह्याऽऽरथा परिष्ठा भवति ह्याऽऽरथा परिष्ठा अस्पर्श—
 स्पर्श—नेदं निवृत्ति, स्थितिमति—पार्था, भूदाऽऽरति-

जङ्गमे, विधौ-चन्द्रत्रियाया (रजतीकरणे), रवौ-सूर्यक्रियाया, शक्रे दलसिद्धौ (इमे धातुवादप्रसिद्धास्तद्धेता) नक्त-दिनभिदि-लाक्षणिकावेतौ शब्दौ वर्णवाचकताया पर्यवसन्तौ तेन कृष्णरकादिवर्णभेदेने अन्यथाकरणे इति यावत् । कला कालकलने-कलानां विद्यानां कलने सम्पादने कालस्य दीर्घ मितियुक्तस्य बलने सङ्घपाणे चेत्यर्थः, दीर्घाऽऽयुस्सिद्धावेतद् द्वय-मपि सम्भवति । एतरिन्नेतस्मिन् किं समर्थं भवतीत्यपेक्षायामुत्तरयति-रसः-पारदं कथम्भूतं सन्नित्यपेक्षायामाह हंसो हंस-इति एकोहंसशब्द उच्छृष्टगुणयुक्तबोधकः । द्वितीयस्तु सङ्घापरिचायक उच्छृष्टगुणयुक्तो हंसो यथा आकाशगमनादौ समर्थो भवति तद्वच्छुद्धस्वरूपतामापादितं पारदोऽपि खेचरी सिद्धयादिप्रदाने समर्थो भवति, तथाविधं पारदं परिशीलितं साधकानाम्-अनुलान्-अनुपमा सिद्धिं वितरतु-इदानीम् । महामन्त्राऽऽराधकस्य रससिद्धिर्भवतीति ध्वनिः । महामन्त्रेणैवाऽऽलौकिकसामर्थ्याद्यात् रसविद्या योगिनामेव सिद्धयतीति हृद् निश्चयस्तद्भावोवेदानां खेचरीसिद्धिप्रदगुटिकादयश्चास्ते लिखिता अपि न सिद्धयन्ति इति रहस्यम् । न च योगिनास्तु स्वयमेव सिद्धय उदयन्ते विन्तेषु (योगिषु) पारदेन प्रयोजन मिति वाच्यम् ? योगसिद्धयुदये यथा बहुकालाऽपेक्षत्वं न तथा पारदे इति बह्वन्तरम् । योगमार्गाऽवलम्ब्यने महामन्त्राऽऽराधन वतिसिद्धयादोपि सेवनीय इति रहस्यम् । पारदे सिद्धे योगसिद्धिरपि सुकरा भवति अत एव “ स्थिरदेहेऽन्यास्तवशात्प्राप्य हानं गुणाऽऽक्रोपेत् । प्राप्नोति श्रद्धपदं न पुनर्भववासजन्मदुःखानि ” इति रहस्यदयतनादौ समाहितम् । अन्याथानामप्राप्तिक्रियतया नोपन्यास इति सुहृद्भिः क्षमणीयम् ।

अथ पकारादिसाः

१ पक्तिशूलहरो रसः

दृङ्गुणं मूर्च्छितं सुतं यवक्षारं समं ततः ।
चूर्णितं भक्षयेन्मार्गं मधुना पक्तिशूलनुत् ॥ १ ॥

र क , र क ल , पक्तिशूले । र क ल (दृङ्गुणसुत)

भाषा-मुनासुहागा, रससिद्ध, यवक्षार, सब समभाग लेकर १-२ रोज खरलकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा मधुके साथ चाटनेसे पक्तिशूल नष्टहोता है ॥ १ ॥

२ पञ्चगर्भकम्

हेमाऽर्कगन्धाऽदमरसेन्द्रमेधाः

समीकृता मन्दहुतायसिद्धाः ।

मधुप्लुतेनाऽऽऽयलघेन स्त्रीढा

प्रोक्ता. समासादखिलाऽऽमयघ्ना ॥ २ ॥

लो प, (स.) समस्तरोमाऽधिकारे ।

भाषा-सुवर्ण, ताम्र, अत्रक, इनकी भरमें, शुद्धगन्ध और पादा ये सब समभाग लेकर परिगन्धकी नीलवर्णकजलीमें

मिलाकर बहुतमन्द आचसे गलाकर पर्यंटी बनाले अथवा आतशी शीशीमें रखकर मन्दआचसे यहातक पत्रावे कि एकदम द्रव हो जाय । स्वाशशीतलहोनेपर शीशीको फोड़कर निकालले । इस मेंसे धी और मधुके साथ ३-३ रतीकी मात्रा लेनेसे यह समस्तरोगोंको नष्ट करताहै ॥ २ ॥

३ पञ्चगुञ्ज रसः

आतीह्वयं कणा विश्वं मरिचं गन्धकं रसम् ।

त्रिद्वारं पञ्चलघणं गगनञ्च समांशकम् ॥ ३ ॥

मरिचं सर्वमेकत्र युक्त्या सञ्चूर्ण्य भावितम् ।

ताम्बूलपत्रस्वरसैस्तथेवाऽऽर्द्रकै रसैः ॥ ४ ॥

पञ्चगुञ्ज इति ख्यातो देयः पर्णेन वाऽऽर्द्रकैः ।

अग्निमान्ये त्वज्जीर्णे च सामे श्लेष्माऽनिले तथा ॥ ५ ॥

आमज्वरं त्रिदोषोत्थे ज्वरे मेहे विशेषतः ।

कासे श्यासे तथाऽऽनाहे गुल्मेऽर्शसि विशेषतः ॥ ६ ॥

यो म, अग्निमान्ये ।

भाषा-जायफल, जाविनी, त्रिकटु शुद्ध गन्धक और पारा, सजी, सुहागा, यवक्षार, पाचो नमक, अत्रकमन्म, सब समभाग, दूध सबकी बराबर मरिच लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्ध-ककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर पान, अदरक इनके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ५-५ रतीकी गोखिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली नागरबेलके पान अथवा अदरकके रसके साथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, सामवालश्लेष्म, आमज्वर, त्रिदोषज्वर, प्रमेह, कास, श्वास, आनाह, गुल्म, विशेषकर क्यासीर इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ३ ॥

४ पञ्चगुल्महरो रसः

धित्रमूलहरीतक्यौ वज्रदन्ती च सैन्धवम् ।

अजमोदं व्योपमर्कं गुटिकां समभागत ॥ ७ ॥

कुबेराक्षमितां कुर्यात्पञ्चगुल्मनिवृत्तये ।

निहन्त्यात्सवेदोगांश्च ज्ञानज्योतिर्भुनेवैचः ॥ ८ ॥

र ह्रा , सर्वरोगे ।

भाषा-धित्रकमूल, हर्ष, वज्रदन्ती (काश्मीरकी तरफ प्रसिद्ध है-उसके अभावमें मराठी) सैधानमक, अजमोद, त्रिकटु, आक-कीजडकी छाल, ताम्रभस्म ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर अदरक बगरहके रससे करशब्दीजके बराबर गोखिये बनाकर रख छोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्पत्रोगह्रातुपानके साथ देनेसे यह तपस्त रोगोंको दूर करता है विशेषतया गुल्मको मिटाता है ।

टि०-मूल श्लोमें अर्क शब्द मात्र है सो भी बोधके आगे होनेसे आककी जड का बोध करता है परन्तु सर्वरोगहर्त्य गुण होनेसे ताम्र और आक दोनों दिये जाय तो अच्छा है ॥ ४ ॥

५ पञ्चनिम्बादिचूर्णम्

मूलं पत्रं फलं पुष्पं त्वचं निम्बास्तमाहरेत् ।

सूक्ष्मचूर्णमिदं कुर्यात्पलेः पञ्चदशोन्मितैः ॥ ९ ॥

लोहमस्महरीतस्यौ चक्रमर्दकचित्रकौ ।
 भल्लातकं विडङ्गानि शर्कराऽऽमलकं निशा ॥ १० ॥
 पिप्पली मरिचं शुण्ठी चाकुची कृतमालकः ।
 गोक्षुरश्च पलोन्मानमैकैकं कारयेद्दुधः ॥ ११ ॥
 सर्वमेकीकृतं चूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
 अष्टभागाऽवशिष्टेन खदिराऽसनवारिणा ॥ १२ ॥
 भावयित्वा च संशुष्कं कर्पमात्रं ततः पिवेत् ।
 खदिराऽसनतोयेन सर्पिषा पयसाऽथवा ॥ १३ ॥
 मासेन सर्वकुष्ठानि विनिहन्ति रसायनम् ।
 पञ्चनिम्बमिदं चूर्णं सर्वरोगप्रणाशनम् ॥ १४ ॥

शा. सं., ना. वि., यो. वि., उ. यो. त., ग. नि., वै. र.,
 रसायनसं., वै. नि., नि. र., कुष्ठे ।

टि०-रसायनमद्यग्रे कुष्ठविभीतिकावधिक्रिया नियोजितौ तयोरागमि
 प्रक्षेपे गुणद्विंदिव । नि. र., वै. र. वैचिकित्तामगीपु निम्बपत्राङ्गे एव खदि-
 रामनकायभावना प्रदाय समन्वयस्त्रिणि नियोज्यान्ते भृङ्गभावना प्र-
 ताऽस्ति, निम्बभावनापक्षया समस्तद्रव्ये भावना ज्ञायनी ।

भाषा-अपनेअपने समयमें मूल, पत्र, फल, पुष्प और त्वक्
 ये प्रत्येक ३ पल निम्बके लेवे और लोहमस्म, हरे, चक्रवड,
 चित्रकमूल, मिलावे, विडङ्ग, शकर, आवले, हल्दी, पीपल,
 मरिच, सोंठ, वाङ्गी, अमिलतास, गोखरु १-१ पल लेकर
 सबका चूर्णकर भागरेके रस और सर्वद्रव्यकी बराबर खदिर
 तथा असनकी छालके अष्टभागावशिष्ट काढ़से १-१ भावना
 देकर सुखार रखओड़े । इसमेंसे १-१ तोला खदिर और
 असनके काढ़से अथवा धी या दूधके साथ लेनेसे यह समस्त
 कुष्ठोंको दूर करता है और रसायन है-अर्थात् समस्त रोगोंको
 दूरकर आबुको बढ़ाता है ॥ ५ ॥

६ पञ्चनिम्बाऽवलेहः

रसायनं प्रवक्ष्यामि ब्रह्मणा यदुदाहृतम् ।
 मार्कण्डेयप्रभृतिभिर्द्युत्प्रागुक्तं महर्षिभिः ॥ १५ ॥
 पुष्पकाले तु पुष्पाणि फलकाले फलानि च ।
 सङ्गृह्य पिचुमर्दस्य त्वङ्मूलानि दलानि च ॥ १६ ॥
 द्विरैतानि समाहृत्य भागिकानि प्रकल्पयेत् ।
 त्रिकला त्र्युषणं ब्राह्मी श्वदंष्ट्राऽरुण्कराऽप्रयः ॥ १७ ॥
 विडङ्गसारो वाराही लोहचूर्णं स्मृताः समाः ।
 निशाद्रयाऽवध्लगुजकं व्याधिघातः सर्शरः ॥ १८ ॥
 कुष्ठमिन्द्रयवाः पाठा चूर्णमेपांतु संयुतम् ।
 खदिराऽसननिम्बानां चूनस्यायेन भावयेत् ॥ १९ ॥
 सप्तधा पञ्चनिम्बन्तु मार्कण्डेयस्य रसेन च ।
 स्तिग्धः शुद्धतनुर्धामान् योजयेत्सद्युमे दिने ॥ २० ॥
 मधुना तिकहविषा खदिराऽसनवारिणा ।
 लेहमुष्णाभ्रमसा घापि कालद्रव्या पलं भवेत् ।
 जीर्णं तस्मिन् समश्रोषातिस्निग्धं लघु दितश्च यत् ॥ २१ ॥

विचर्चिकोद्गुम्बरपुण्डरीक-
 कपालद्वृकिटिभालसादि ।
 शताहविस्फोटविषमालाः
 कफप्रकोपं त्रिविधं किलासम् ॥ २२ ॥
 भगन्दरश्रीपदवातरक-
 जडान्घन्याडीम्रणशीर्षरोगान् ।
 सर्वान् प्रमेहान् प्रदरांश्च सर्वान्
 दंष्ट्राविषं मूलविषं निहन्ति ॥ २३ ॥
 स्थूलोदरः सिंहकृशोदरः स्या-
 त्सुक्ष्णसन्धिर्मधुनोपयोगात् ।
 सद्योपयोगाद्दपि ये दशन्ति
 सर्पादयो यान्ति विनाशमाशु ।
 जीवेद्यिरे व्याधिजराविमुक्तः
 शुभ्रेतरश्चन्द्रसमानकान्तिः ॥ २४ ॥

भा. प्र., च. द., ग. नि., र. र., उ. मा., कुष्ठारिगे ।
 चक्रते कुष्ठचूर्णमिति नाम ।

भाषा-अपने अपने समयसे निम्बके पत्राङ्गोंका सङ्गहर
 २-२ भाग लेकर त्रिकला, त्रिकड, ब्राह्मी, गोखरु, मिलावा
 चित्रक, विडङ्गतण्डुल, वाराहीचन्द, लोहमस्म, हल्दी, दाहलदी,
 वाङ्गी, अमिलतास, शकर, कुष्ठ, इन्द्रजव, पाठा ये सब १-१
 भाग लेकर कूटवपङ्कजानकर सबके बराबर खदिर, असन और
 नीमके अष्टभागावशिष्टकाढ़से और भागरेके रससे ७-७ बार
 भावनाएँ देकर रखओड़े । इसमेंसे पञ्चकर्मकर शुभमुहूर्तमें मधु
 और तिकवृत अथवा खदिर और असनके वाय, अथवा गरम-
 पानी से आपे तोलेसे प्रारम्भ कर एक तोले तक बढाकर लेवे ।
 जीर्णहोनेपर स्निग्ध और श्लिष्टकारक भोजन करनेसे विचर्चिका,
 उदुम्बर, पुण्डरीक, कपाल, द्यु, किटिम, अलम, शतारुक्,
 विस्फोटक, विसर्प, गण्डमाला, कफप्रकोप, तीन प्रकारका श्वित्र,
 भगन्दर, श्रीपद, वातरक, जडत्व, अन्यत्व, नाडीम्रण, शीर्ष-
 रोग, समस्तप्रमेह, प्रदर, दंष्ट्राविष, मूलविष, मेद इन सबको यह
 नष्ट करता है । इसके अधिकदिन सेवनकरनेवालेको यदि
 सर्पाकागया हो तो सर्प ही मरनाताही और मनुष्य अधिक
 दिन जीता है ॥ ६ ॥

७ पञ्चपञ्चामृतसः

पञ्च पञ्चाऽमृतं प्रोक्तं पञ्चधा पञ्चधा कृतम् ।
 पञ्चानाञ्चापि धातूनां पञ्चरोगहरं परम् ॥ २५ ॥
 पञ्चानुपानयोगेन पञ्चानां पाचनान्वितम् ।
 पञ्चपातकिपापत्रं पञ्चरोगहरं परम् ॥ २६ ॥
 सुवर्णं रजतं ताम्रं नागं यक्ष्मसमन्वितम् ।
 सुवर्णं कान्तलोहश्च रजतं ताम्रमम्रकम् ॥ २७ ॥
 समौक्तिकं हेमयज्ञं रसाभ्रकसमन्वितम् ।
 नागं यज्ञं धनं लोहं नेपालं पञ्चमं स्मृतम् ॥ २८ ॥

पारदं रजत ताम्रं साऽन्नक हेमपञ्चमम् ।
पञ्चपञ्चामृतान्याहुः सर्वरोगहराणि च ॥ २९ ॥
स्वानुपानविशेषेण वेदनाशमनानि च ।
बहुवर्णैर्यविषमं कुष्ठं घोरतरं क्षयम् ॥ ३० ॥
प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नात्र विचारयेत् ।
यथारोगानुपानेन पाचनं वापि कारयेत् ॥ ३१ ॥
टो०, सर्वरोगे ।

भाषा—भस्मकियेहुप सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वज्र (१)
सुवर्ण, कान्तलोह, रजत ताम्र, अन्नक (२) मोती, सुवर्ण,
हीरा, शुद्धपारा, अन्नक, (३) नाग, वज्र, अन्नक, लोह, और
ताम्र, (४) शुद्धपारा, रजत, ताम्र, अन्नक, सुवर्ण (५) ये
पाच पञ्चामृत है । इनमेंसे किसीएकको उचिताऽनुपानके
साथ उचितमात्रमें देनेसे बहुतपुराना और विषम कुष्ठ, भय
ङ्करक्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इन सबको ये नष्ट करते हैं ॥ ७ ॥

८ पञ्चवलोरसः

तीक्ष्णहिङ्गुलनागानां तारहेमरसान्वितम् ।
क्रमवृद्ध्या तु सङ्गृह्य चाद्द्वयोर् मर्दनं कुरु ॥ ३२ ॥
सर्वाङ्घ्रि गन्धकं दत्त्वा रसस्य त्रिगुणीकृतम् ।
वृहद्गण्डे विनिक्षिप्य वालुकायां प्रयोजयेत् ॥ ३३ ॥
अग्निं प्रज्वालयेच्छण्डं प्रमाणं युगसङ्गृह्यया ।
रसः पञ्चवली नाम बलुः क्षौद्रघृतान्वितः ॥ ३४ ॥
धीर्यस्तम्भे तीक्ष्णमात्रं गात्रसङ्कोचनं तथा ।
आलस्यं बहुनिद्राञ्च वेदना सर्वसन्धिषु ॥ ३५ ॥
कास श्वास प्रसक्तिञ्च निशायां तप्तगात्रताम् ।
आध्मानमग्निमान्द्यञ्च यश्मानश्चापि नाशयेत् ॥ ३६ ॥
र श, बाणीकरणे ।

भाषा—फोलाद, शिगरिक, नाग, रजत, सुवर्ण, पारा इन
सबकी भस्में क्रमवृद्धभागसे लेकर खड़ीतिपतियाके रससे १-२
रोज मर्दनकर सबसे आधा शुद्धगन्धक मिलाकर बडी आतशी
दीशीमें भरकर बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी तीक्ष्ण आच दे ।
स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखछोडे । इनमेंसे ३-३ रती
पूत और मधुके साथ देनेसे वीर्यका अत्यन्त स्तम्भन करता है
औरशरीरकी शिथिलता दूरकर दृढ बनाता है । आलस्य, अति
निद्रा, सन्धिषोंकी पीडा, कास, श्वास, प्रसेक, रात्रिज्वर,
आध्मान, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरता है ॥ ८ ॥

९ पञ्चराणोरसः (प्रथमः)

रसाऽन्ननागाऽयसगन्धवर्द्ध
कार्पादिकं तत्समभागयुक्तम् ।
रसेन हेम दिग्गुणं प्रदद्यात्
क्षीरिण भाव्यञ्च गवां त्रिवारम् ॥३७॥
त्रिः सप्तहृत्यो विजयारसेऽस्य
ततश्च दद्यात्कनकस्य सम ।

लघुङ्गजातीफलकुङ्कुमैश्च
कङ्कौलकाऽऽकल्लुगजेन्द्रकैश्च ॥३८॥
कृष्णाहरेश्चन्दनतोयमाव्या
प्रत्येकमेकस्य च सप्तसप्त ।
दपेण चैकाञ्च द्द्वीत भावना
सिद्धो रसः स्यादिति पञ्चबाणः ॥३९॥
वीर्यस्य वृद्धिञ्च करोति पुस्त्यं
नष्टेन्द्रियाणां हि शुभावहश्च ।
यदीत्यगेहेऽगणितता रमण्य-
स्तेनैव कार्यों रसरारा एवः ।
कान्ताप्रियत्वं बहुशुक्रताञ्च
दोषाऽभिवृद्धिं वितनोति सद्यः ॥ ४० ॥

वृ यो त, र मु, यो र, र बो, र बाणीकरणे ।
र मु, रसकपञ्चबाण ।

भाषा—शुद्धपारा, अन्नक, नाग, लोह इनकी भस्में, शुद्ध-
गन्धक, वज्र और कौडीभस्म ये सब १-१ भाग, सुवर्णभस्म
२ भाग, लेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर
गायके दूध से ३, भागरेके रससे २१, धतूरा, लौंग, जायफल,
केसर, शीतलचीनी, अकलकरा, गजपीपल, पीपल सफेदचन्दन
इनप्रत्येकके रसोंसे सात, कस्तूरीसे एक भावनादेनेसे यह पञ्च-
बाणरस सिद्धहोगा । इसकी ३ ३ रतीरी गोलिये बनाकर रख
छोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुपानके साथ देनेसे वीर्य
वृद्धि, इन्द्रियोंकी खराबी, इन सबको नष्टकर बहुतरती क्रियाओंको
वृत्तकरनेकी शक्ति देता है ॥ ९ ॥

१० पञ्चबाणो रसः (द्वितीय)

कनकं रसभूतिञ्च निरस्य लोहमन्नकम् ।
कस्तूरीं नागधङ्गौ च मर्दयेच्छुष्णताऽवधिम् ॥ ४१ ॥
घात्रीफलं दास्युगमं लघुङ्ग कुङ्कुमं तथा ।
शुण्ठी भङ्गातकञ्चैव विजया कनकं मधु ॥ ४२ ॥
एतैर्द्रव्यैः क्रमेणैव भावयेत्सप्तवारतः ।
पञ्चबाणरसो नाम्ना सुसिद्धो जायते ध्रुवम् ॥ ४३ ॥
दिनान्ते भक्षयेद्यस्तु स गच्छेत्प्रमदाशतम् ।
अतिस्तम्भ हरेच्छीघ्रं व्योयजम्भीरनीरयुक् ॥ ४४ ॥
र श, बाणीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, लोह और अन्नक इनकी भस्में,
कस्तूरी, नाग-वज्रभस्म सब समभागलेकर बारीकीसे आबला,
देवदास, दासहल्दी, लौंग, केसर, सोंठ, मिलावे, भाग, धतूरा
इन प्रत्येकके रसोंकी क्रमसे ७-७ भावनाएँ देकर ३ ३ रतीकी
गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली तप्तपूरुहाराऽनु
पानके साथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूर करता है । सन्ध्या
कालमें दूधके साथलेनेसे अत्यन्तस्तम्भन होता है । उसको
दूर करना हो तो त्रिकटु और जमीरीवारस पीवे ॥ १० ॥

११ पञ्चवाणो रसः (तृतीयः)

नानं वङ्गञ्च कान्तञ्च हेमताराऽकरौप्यकम् ।
 सूतं क्रमाद्भाग्युद्धं वैकान्तं सूतभागिकम् ॥ ४५ ॥
 विद्युद्गन्धं सर्वोशं पर्पटीं पातयेच्छुनैः ।
 कामिप्रियोक्तविधिना भावितं भावनौपधैः ॥ ४६ ॥
 मापपूरणसंयावे पाचितं घृतमध्यतः ।
 यथाशस्त्रयोरसवं कृत्वा ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥
 पञ्चवाण इति ख्यातो रमयेत्कामिनीशतम् ॥ ४७ ॥
 र. शं., ना. वि., वाजीकरणे ।

भाषा—नाग १ भा., वङ्ग २ भा., कान्तलोह ३ भा.,
 सुवर्ण ४ भा., मोती ५ भा., ताम्र ६ भा., चादी ७ भा.,
 पारा ८ भा., वैकान्त ८ भाग इन सक्की भस्म और शुद्ध
 गन्धक सक्कीकरावर मिलाकर पर्पटीके विधानसे पर्पटी बनाकर
 कामवर्धक गणसे भावना देकर गोलावनाय ३-४ पारों में
 लपेटकर उड़के आटेकी वाटीमें क्वलितकर धीके अन्दर
 धीमीआपसे पकावे । जब वाटी सिककर जलने को होतय नीचे
 उतार दे । स्वादशीतल होनेपर अन्दरसे रसको निकालकर
 कुमारीका प्रशक्तिका पूजनकर रखोड़े । इसमें से ३-३ रत्ती
 ततद्रोगहराऽपुपानके साथ देनेसे यह तमामरोगों को दूर करता
 है और स्तम्भन की दवाओंके साथ सेवन करने में बहुतसों
 त्रियोंको खुद करसका है ॥ ११ ॥

१२ पञ्चवाणो रसः (चतुर्थः)

श्लेच्छं सूत्रविषेष्टितं पलमितं मापस्य विषेष्टे क्षिपेत्
 प्रस्ये घृतं जतैलजे हुतग्दे सम्पाच्य पिण्डाचयेत् ॥
 मुक्ताविद्रुमसूतमस्र रविजं स्वर्णञ्च चङ्गं सप्तं
 तारं ताप्यककान्तमस्र सुभगं चाऽस्रं द्विभागं ततः ॥
 अहिवलिमपि घर्जं नागफेनन्तु भागं,
 करहटरसघृष्टं कोकिलाक्षस्य वीजेः ॥
 फणिकलजमवाङ्गिः केसरैर्द्वयुग्मैः,
 त्रिकटुघनजटाभ्यां भावयेच्छालमलीभिः ॥ ४९ ॥
 मधुसुमुशलिर्कन्दैर्कैटीकोलजाती-
 फलनलदसुजातीपरिकाहस्तिकन्दैः ।
 त्रिफलजलपुद्गची साऽध्ववासाहकन्दै-
 र्दहनमृगमदाभ्यां भावयेद्बहिसहस्रम् ॥ ५० ॥
 रमयति बहुकान्तास्तीग्रमेहाऽपहारी,
 समधुघृतसिताभ्यां पञ्चवाणोद्विबलः ।
 बहुतरमपि घीर्यं कुर्वतः क्षीरपानं,
 गुफतरमपि सेम्यं स्वादुमिष्टञ्च भोज्यम् ॥ ५१ ॥
 र. शं., वाजीकरणे ।

भाषा—स्त्रीगिरिक ४ तोले लेकर चौगुना बच्चा सूत-
 लपेटकर गेद जैना गोला बनावे ऊपर दो २ अगुल मोटा
 टट्टके आटे का लेप देकर गहरे पेंदकी कड़ाही में रसके एक

सेर घट्टे के बीजोंका तेल डालके मन्दाग्नि से पकावे । आधा
 लाल होकर काला होने लगे तब नीचे उतार ले । स्वादशीतल
 होनेपर धीरेसे निकालके रखोड़े । वाजीकरण योगों में
 इसी का प्रयोगकरे । खासकर इस योगमें इसी को डालना ।
 मोती, प्रवाल, पारा, नीलम अथवा ताम्र, सुवर्ण, वङ्ग इन-
 सबकी भस्में १-१ भाग, चादी, सोनामाखी, कान्तलोह,
 शिगरिक, अन्नरुमस्य ये सब २-२ भाग, गन्धक, हीरामस्य
 और अनीम १-१ भाग लेकर सबका चारीक चूर्णकर अकलकरा,
 तालमखाना, खसखस, केसर, लौंग, त्रिकटु, नागरमोषा,
 सेमलका सुसला, मुल्हड़ी, सुसली, केवाच, वेर, जायफल, खस,
 जाविनी, हाथीकन्द, त्रिकला, तगर, गिलोय, असगन्ध,
 वाराहीकन्द, चित्रक, कम्प्री, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरसे
 अथवा बाथोंसे ३-३ भावनाएं देकर ६-६ रत्तीकी गोलीये
 बनाकर ध्यायशुष्कर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु,
 घृत और शकरकेसाथ लेकर दूधपीनेसे बहुतसोंस्त्रियोंके साथ
 रमणरसकाहे इसकेसेवनसे अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै, कि
 कितनाही दुर्जरपरार्थं पायाहो मन जीर्णं होजाताहै ॥ १२ ॥

१३ पञ्चवाणो रसः (पञ्चमः)

गन्धकाऽन्नकधचूरगरत्नानां चतुष्टयम् ।
 पूर्वोक्तैलारसमर्धं दोलायने विपाचयेत् ॥ ५२ ॥
 गुटिकां तिलजाते च तैले प्रस्थप्रमाणके ।
 तैले निःशेषिते पक्त्वा वस्तगोपरवाजिनाम् ॥ ५३ ॥
 मूषैश्च पूर्ववत्पक्त्वा मातुलुङ्गफले क्षिपेत् ।
 तहारमन्धितं कृत्वा पुटयेत्स्त्रलपमात्रम् ॥ ५४ ॥
 पञ्चादुद्धृत्य तद्रसम् सर्पपं विनियोजयेत् ।
 सर्पपद्ममात्रन्तु ब्रह्मरन्ध्रे विलेपयेत् ॥ ५५ ॥
 त्रिदोषजानि सर्वाणि सर्वसर्पविपाणि च ।
 भूतप्रेतपिशाचादिग्रहण्यादिशिरोगदान् ॥ ५६ ॥
 कर्णाक्षिरोगानन्यांश्च नाशयेत्क्षणमात्रतः ।
 पादाङ्गुष्ठे च लेपेन सर्वं शतान् विनाशयेत् ॥ ५७ ॥
 सूचीमुत्प्रमाणन्तु नागरहोदलान्वितम् ।
 भेदयेन्मलजालानि गुल्मांश्च विधिधानपि ॥ ५८ ॥
 कुक्षिरोगानशोषंश्च नाशयेद्भाऽन्न संशयः ।
 महिषीदधिसंयुक्तं पाण्डुजालं विनाशयेत् ॥ ५९ ॥
 कदलीफलसयुक्तं भक्षयेद्ये विषेत्पयः ।
 सर्वाङ्गं लेपयेद्गन्धेः कर्पूरण च संयुतैः ॥ ६० ॥
 मदनोद्रेकसयुक्तो महामत्तगजेन्द्रयत् ।
 निरन्तरमहागाढरतिं कुर्वन्मद्रोदतः ॥ ६१ ॥
 यामत्रयं भवेत्स्तम्भः स्त्रीषु वाजीव गच्छति ।
 मुहुर्मूहुः पिषेद्ब्रह्म शर्करासंयुतं पयः ॥ ६२ ॥
 नारिकेलोदकज्ञेयं विषेच्छोष्यापचारयान् ।
 कर्पूरान्तिताम्बूलं कुर्वते सरय्याधरः ॥ ६३ ॥
 वृद्धिश्च स्तम्भनश्चनं कुर्वते च निरन्तरम् ।

जम्बीरखलवीजानां चूर्णमुष्णेन वारिणा ॥ ६४ ॥
 पिथेत्तत्क्षणाभात्रेण तदुद्रेक विनाशयेत् ।
 सर्वेषामपि रोगानामनुपानविशेषतः ॥ ६५ ॥
 तदौषधप्रयोगेऽस्मिन्नप्रमत्तः प्रयोजयेत् ।
 पञ्चवाणरसः ख्यातस्सर्वलोकोपकारकः ॥ ६६ ॥
 र. वौ. (श्र) वाजीकरणे.

भाषा—शुद्धगन्धक, अप्रकभस्म, धतूरेके बीज और बटनाग इनचारोंका बारीक चूर्ण कर सद्विजन डंडापूहर करञ्ज, आकवी जड़कीछाल, भुंदावला, बटनाग, लाल और सफेदगुञ्जा इन सबके यथासम्भवीज और जड़ अथवा जड़की छाल लेकर जबकुट्टकर पातालयन्त्रसे तेल निकाल इसमें गोलीबंधनेतक घोटकर गोलीबनाकर कपडेमें बांधकर इसी तेलमें दोलायन्त्रसे पकावे । स्वाहशीतलोनेपर सेरभर तिलके तेलमें यद्वातक पकावे कि समस्ततैल समाप्त होजाय फिर इसमेंसे निकालकर बकरा, गाय, गधा, घोड़ा, इनके छुरोंके तेलमें पनावे फिर इन प्रत्येकके मूत्रमें ४-४ पहर पकाकर स्वाहशीतल होनेपर निकालकर विजोरोंके फलमें रखकर उसीकी ढाटसे बन्दकर ३-४ कपडमिनी देकर मुखाकर इतनी आचदे कि विनोरानीचू जलजाय । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखजोडे । इसमें मे १ सर्पभरमात्रा तत्तद्रोगहरापानके साथ खिलाव और ब्रह्म रत्नपर पाण्डुरेकर २ सर्पों के बराबर घिसे तो त्रिदोषजयोग समस्तसर्पविष, भूत, प्रेत, पिशाचादि, प्रहणी, शिरोरोग, कान और आंखके रोगोंको यह क्षणमात्रमें दूरकरता है । पैरके अगुठपर पाण्डुरेकर मालिशकरने से समस्त वातविकारों को नष्ट करता है । सूईके अग्रभागजिनना पके पानमें खानेसे समस्त मल, नानातहके गुल्म, और कुशिरोग नष्ट होवे । भैंसके दही केसाथ पाण्डुरोग नष्ट होता है केलेके फलके साथ खाकर दूध पीनेसे और कपूर मिले हुए गन्धरा अङ्गमें लेपकरनेसे महामतहाधीकीतरह कामसे व्याकुलहोकर ३ पहर तक स्तम्भनहोकर स्त्रियोंमें अशक्तीतरह रतिको करता है । इसमें साकरमिलाहुआ गायकादूध बारम्बार पीवे, अधिक दाह होने, पर नारियलका जल बगैरह शीतोपचार करे । कपूरयुक्त पान खावे । इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि और अत्यन्तस्तम्भन होता है । जम्बीरीके बीजोंका चूर्ण गरमपानीसेलेनेसे तदक्षण वीर्यस्खलन होता है । इसका यथार्थप्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्ट होते है । पर इसकाप्रयोग वैद्य सावधान होकर अपने समक्षमें करावे ॥ १३ ॥

१४ पञ्चभद्रकम्

हेमाम्बुदायोऽध्रसेन्द्रकाञ्चन
 सम निवाते पुटितं लघीयसा ।
 पुटेन भृङ्गद्वयवारिणाऽऽप्लुत
 जयेद्विहीढं मधुना ससर्पिणा ॥ ६७ ॥
 शुद्धामयं पाण्डुगद सकामलं

प्रमेहमर्शांसि च ह्याममाहृतम् ।
 गदं ग्रहण्याः प्रद्राऽऽन्नपित्त-
 मुत्पानतीसारमतीय दुस्तम् ॥ ६८ ॥
 ले प. (स), अर्शंसि ।
 भाषा—शुद्ध धतूरे के बीज, नागरमोघा, लोह, अप्रक, पारा, सुगन्धमस ये सब समभाग लेकर दोनों भंगरों के रससे मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुडमें बन्दकर मुखाकर रघुपुटकी आच दे । स्वाहशीतलोनेपर निकालकर रखजोडे । इसमेंसे १-१ रत्नी मधु और धोकेसाथ मिलाकर चटानेसे गुदरोग, पाण्डुरोग, कामला, प्रमेह, बवासीर, आमवात, प्रहणी, प्रदर, रक्तपित्त, अतिसार इन सबको यह नष्टकरता है ॥ १४ ॥

१५ पञ्चमूर्ति रसः

नेपालं भूपपापाणं द्वितुत्यं तालकं समम् ।
 गृहकन्यारसे मर्यं द्वियामं च प्रयत्नतः ॥ ६९ ॥
 दोलायन्त्रे पचेद्यामं तन्नीतवा मत्स्यपित्तके ।
 भावित क्षणमात्रञ्च देयं दुग्धाऽनुपानतः ॥ ७० ॥
 व्यादिकाऽस्थिगत शीतं हन्ति सत्यं न संशयः ।
 पञ्चमूर्तिरसो नाम प्राणिनां हितकारकः ॥ ७१ ॥
 वै चि, वा, ज्वरे ।

टि०—वादे दुग्धानुपानत इत्यस्य स्थाने गुञ्जानुपानत इति पाठ, तत्र गुञ्जशब्देन तन्मूल पत्रमूलकरत्नी वा गृहीतव्यौ ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्धसोमल, तुल्यक और खर्पर, हरितालमस अथवा रसमानिस्य ये सब समभाग लेकर धौडुवार के रसमें दोषहरतक मर्दनकर गोला बनाय चारतह कपडे में बांधकर दोलायन्त्र बनाय धौडुवारकेरसमें एकपहर स्वेदनकर निकालकर मुखाकर रोहमटलीके पित्तसे भावनादेकर ज्वारके बराबर गोलियें बनाकर रखजोडे । इसमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ देनेसे न्यादिक और अस्थिगत शीतज्वर इनको यह नष्ट करता है ॥ १५ ॥

१६ पञ्चलोहभूपतिरसः

पलं रसं गन्धकघटसनाभौ
 गुल्फञ्च तीक्ष्ण रचितारकञ्च ।
 ताप्य ह्ययस्कान्तसुचारुपुष्यं
 सर्वं विमर्द्य धृतराष्ट्रतोये ॥ ७२ ॥
 तच्छोषयेदातपवाञ्जितञ्च
 वटीकृतं काचघटे निदध्यात् ।
 मृद्गाण्डमध्ये सिकताऽऽख्ययन्त्रे
 क्रमाऽग्निना पोडश याममेतत् ॥ ७३ ॥
 गाढाऽग्निमुद्दीप्य यथाक्रमेण
 तदौषधं बर्हिंसमानवर्णम् ।
 सघर्षणाद्यत्र च रक्तेरक्षा
 पूर्वांधयुक्तं दृढवत्सनाभम् ।
 पलं मरीचस्य सुमर्दितं तत्
 ताम्बूलवह्नीदलकं समानम् ॥ ७४ ॥

गुञ्जमात्रां वर्तीं कृत्वा सम्यक् छायासुशोपिताम् ।
 पिबेद्युक्ताऽनुपानेन विषमज्वरनाशनम् ॥ ७५ ॥
 सर्वाऽऽमयहरं सद्यः सदा विजयवर्धनम् ।
 चाताऽर्दितं चातमेहं श्वासक्रासादिरोगनुत् ॥ ७६ ॥
 क्षतक्षयं कफोत्थञ्च पाण्डुकामलशूलनुत् ।
 सन्धिपातं निहन्त्यायुःचाऽम्बुपित्तं नियच्छति ॥ ७७ ॥
 अजीर्णमामवातञ्च हार्शासि प्रहणीगदम् ।
 अन्नद्वेषमुदावर्तमाध्मानं सोमरोगकम् ।
 पञ्चलोहक्षितीशञ्च विंशतिक्षयरोगनुत् ॥ ७८ ॥
 रसायन सं., सर्वाऽऽमये ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, और बजनाग, ताम्र, लोह, माणिस्य, रजत, सोनामारी, कान्तलोह, शुद्ध कसीस ये सब समभाग लेकर हंसराज के रस से १-२ रोज छायामें मर्दनकर गोलिये बनाय छायाशुष्कर ४-५ कपडमिठी दीहुई आतरी शीशीमें डालकर सुंदे बन्दर मिठी की नादमें बालकायन्त्र बनाय १६ प्रहरकी क्रमादि देकर अलीमें प्रच्छाऽऽमिकरे । स्वाप्नशीतल होनेपर धीरज से निकालकर देखे, इसका रंग नयूरवी गर्दन के समान होगा और कसौटी बौरहपर धर्पण करने से लालेखा निकले तब समझना कि यह यथार्थ सिद्ध हुआ है । इसमें पहिले से आपे प्रमाणमें पका हुआ शुद्ध बजनाग और इससे दूनी मरिच तथा सबकी बराबर पके पान मिलाकर २-२ रोज घोटकर १-१ रती की गोलिये बनाय छायामें सुराबर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिनानु-पानकेसाय देनेसे विषमज्वर, वातरोग, वातमेह, श्वास, कास, क्षत, क्षय, कफरोग, पाण्डु, कामला, शूल, सन्धिपात, अम्बुपित्त, अजीर्ण, आमवात, अर्श, प्रहणी, अर्धचि, उदावर्त, आध्मान, सोमरोग, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १६ ॥

१७ पञ्चलोहरसायनम्

मृताऽन्नं कान्तलोहञ्च नागवह्नौ सुमारितां ।
 यथोत्तरं भागवृद्ध्या सत्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ७९ ॥
 तलपेटेन धाराया शतावयानं हिमाम्बुना ।
 भावनाऽन्नं प्रकृत्या यामं यामं पृथक् पृथक् ॥ ८० ॥
 चणमात्रां वर्तीं कृत्वा नवनीनेन सेषयेत् ।
 प्रातःपत्याय विधिना सर्वमेहकुलान्तकम् ॥ ८१ ॥
 शाल्यधं सपटोलञ्च तन्दुलीयकवास्तुकम् ।
 मत्स्याक्षीं मुद्गपृषञ्च शपकवं कदलीफलम् ॥ ८२ ॥
 अर्शासि प्रहणीशोपमूत्रच्छद्राऽऽमरं हरेत् ।
 कामलापाण्डुशोफाञ्च शपस्मारक्षतक्षयात् ॥ ८३ ॥
 नि. र., वै. चि., व. रा., प्रमेह ।

भाषा—अन्न १ भा., कान्तलोह २ भा., नाग ३ भा., बज ४ भा., इनकी मन्में लेकर तुररुई की जड़, बारारी, खत्वापर इनके अक्षरत्वा से १-१ पर घोटकर बने प्रमाण

गोलिये बनाय छायाशुष्कर रखलेवे । इनमें से १-१ गोली मस्खन के साथ सुबह में खानेसे समस्तप्रमेह, अर्श, प्रहणी, मूत्रच्छद्र, अमररी, कामला, पाण्डु, शोथ, अपस्मार, क्षत, क्षय, रक्तकास इनसबको यह नष्टकरता है । इसमें सपेट चावल, परवल, चौलाई, ब्युवा, मठेजी, मूंग, कषाकेला, इनका शाक पच्य है ॥ १७ ॥

१८ पञ्चवक्त्रो रसः (मृत्युञ्जयः) १

शुद्धं सतं विषं गन्धं मरिचं टङ्कणं कणा ।
 मर्दयेद्भूतजद्रावैर्दिनमेकनुत् शोषयेत् ॥ ८४ ॥
 पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्विगुञ्जः सन्धिपातहा ।
 अर्कमूलकपायं तु सव्यूपमनुपाययेत् ॥ ८५ ॥
 युक्तं दध्योदनं पय्यं जलयोगञ्च कारयेत् ।
 रसेनाऽनेन शाम्यन्ति सक्षौद्रेण कफादयः ॥ ८६ ॥
 मध्वाऽऽर्द्रकरसञ्चानु पिबेदसिधिवृद्धये ।
 यथेष्टं घृतमांसाशी शक्तो भवति पावकः ॥ ८७ ॥
 र. सं., र. चि., र. चं., वृ. प्र., वृ. यो. त., र. क. यो., भा. प्र., वै. र., टो., भै. र., र. र. स., यो. म., चि. र., र. र. दी., नि. र., र. सु., वै. चि., रसायन सं., भै. सा., र. प्र. सु., शा. सं., व. रा., र. सि., र. सु., र. क. ल., यो.-च., र. प्र., वा., चि. क., र. वो., यो. र., र. वा., र. त., ज्वरे । रसायनम्. पञ्चानन ।

टि०—र. सं. र, र सु, र. च, यो र, व. रा., र. त, वृ प्रथेपु मृत्युञ्जय रस इति नाम स्थापितम्, परमाश्रयेतयरेतेपु पठ्यय स्थापितमनयो केवलोज्जुपाने विरोपोऽस्ति तन्नामार्थं मृत्युप्रदय पाठोऽ-धन्नादृताऽस्ति यथा—

अन्यत्. मिद्धिद शुबो रंग्पा वीरिर्गणं ।
 यदा म्रद शिव माशान्मृत्युभयल मृत ॥
 विषयैरुज्जया भागो मरिच विषलीयथा ।
 गन्धस्य तथा भागो मय स्यट्कृपाय च ॥
 मंय ममभग स्याद्विद्वन्तु दिमगितम् ।
 चूर्णैरननमध्ये तु मुद्राना कटीयेत् ॥
 जम्बीरस्य सेनाऽन्न कर्षे दिहुनापोषणम् ।
 रमशेलमभग स्याद्विहल नभने तदा ॥
 गोन्दुयोऽपिपथ विष मीरविरोऽपिपथम् ।
 मृत्युरूप अर इति मृत्युभयल रत ॥
 मृत्युर्दिगिर्कि दग्मपेन मृत्युज्जो रम ।
 मधुना वेदन म्रोल मर्ननरुमिचय ॥
 दण्डुरकञ्जुपनेन बाननरुमिचये ।
 आर्द्रवय र्से पनं दग्मो मरिचरिचि ॥
 जतीरत्रयंनेन हर्शीऽन्नरनयन ॥
 मय तीपुऽनुको विमनरनयन ॥
 मीचनरं मरुपोरु पुंये मौदननिने ।
 पूर्णमा मद्रज्या पूर्णं बटिऽरुपयम् ॥
 अर्कच्छास्तिपु चदमेव मरुर्गि ॥
 मरिचये च हनी च इति चऽप्रमादपय ॥
 मुद्रमय धरमन्य मरुत्वा मरुर्गिचि ॥
 नरनरं मरुये र्दमेऽन्नरुपेदुम ॥

मध्यन्तर तथा जीर्ण त्रिप्राधासवेद्वन् ।
सप्ताहस्तत्रिपातोत्थ ज्वरापीणरसन्कम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, मरिच, भुना-
सुहागा, पीपल ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे-
गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर धतूरेके पत्तोंके रससे एक
रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमें
से १-१ गोली अदरखवंगरह के रस के साथ देकर ऊपर से
३ मासे आकृष्टी जड़की छाल के काडेमें ३ मासे त्रिकटु का
चूर्ण मिलाकर पिलावे, ऊपर से दहीभात खानेको दे । अधिक
दाह मालूम होनेपर मत्स्यपर जलधाराका प्रयोग करे, तो इससे
घोरसन्निपात नष्ट होता है । मधुके साथ देनेसे कफरोग निवृत्त
होते है । मन्दाऽग्निमें मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे
अग्नि प्रबल होता है ॥ १८ ॥

१९ पञ्चवक्त्रो रसः (द्वितीय.)

सूतं गन्धं कर्पयुग्मप्रमाणं,
तत्पादांशां कारयेद्द्वै शिलाख्याम्
व्योषं ताप्यं पिप्पलीं तत्समानां,
प्रत्येकं वै भेषजं चूर्णयेच्च ॥ ८८ ॥
भाष्यं पित्तैर्मत्स्यमायूरजैर्वै,
घर्मं कृत्वा सप्तवारं हि सम्यक् ।
गुञ्जायुग्म भक्षित पञ्चवक्त्रो
मूर्च्छां हन्यात्सन्निपातोद्भवाम् वै ॥ ८९ ॥

र. प्र सु, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ कर्प, शुद्धमैतसिल,
त्रिकटु, सोनामाखी और पीपल ये सब आधाआधा कर्प
लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर
मछली और मोरके पित्तोंसे धूम्रं ७-७ भावनाएँ दकर २-२
रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे सन्निपात
हराऽनुपान के साथ १-१ गोली देनेसे यह सन्निपातजमूर्च्छाको
दूरकरताहै ॥ १९ ॥

२० पञ्चवक्त्रो रसः (तृतीयः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं हिङ्गु पुष्करमूलकम् ।
सैन्धवं गन्धकं तालं कटुर्कां चूर्णयेत्समम् ॥ ९० ॥
पुनर्नयादेव दाल्योर्निगुण्डीमेघनादयोः ।
तिककोपातकीद्राघदिनेक मर्दयेत् दटम् ॥ ९१ ॥
मापमात्रं लिहैल्लोद्रे पञ्चवक्त्रो रसः स्मृतः ।
रक्तपित्तं निहन्त्याशु भाक्करस्तिमिरं यथा ॥ ९२ ॥

रसायन स रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, भुनाहॉग, पोहकरमूल, संधा
नमक, शुद्धगन्धक, रसमाणिक्य, कुटकी सब समभाग लेकर
बारीक चूर्णकर पुनर्नया, बदाल, निगुण्डी, कण्ट्याकी चोलाई,
कडवीतरोड़े, इनके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ भाग
की गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके

साथ देनेसे यह रक्तपित्तको इसतरह नष्ट करता है जैसे कि घूर्ण
अन्धकार को नष्ट करता है ॥ २० ॥

२१ पञ्चवक्त्रो रसः (चतुर्थः)

सूतगन्धाऽमृतं स्वर्णवीजं तुल्यं समाहरेत् ।
ज्यूपूषं सर्वतुल्यं स्यान्मर्दयेद्विषसद्वयम् ॥ ९३ ॥
पञ्चवक्त्रा भवेत्सूतो गुञ्जामात्रो ज्वरापहः ।
सिताऽऽर्द्रकसेनैव भुक्तो मुद्गरसाशिनाम् ॥ ९४ ॥
समांश्च विषमान्हन्ति निम्बुनीरसितायुतः ।
अतिसारं महाघोरं रात्रिजागरणं परम् ॥ ९५ ॥
र, अतिसारं ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग और धतूरे क बीज ये
सब समभाग, त्रिकटु सब के बराबर लेकर बारीक चूर्णकर दो
रोज सूखा अथवा पानीसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और अदरख के
रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको दूरकरता है । इसमें पच्य मूग-
का दूध लेवे । नींबूके रस और शकरके साथ लेनेसे यह सम
और विषमज्वर, घोरअतिसार और रात्रिजागरणसे होनेवाले
दोषोंको दूर करता है ॥ २१ ॥

२२ पञ्चवक्त्रो रसः (पञ्चमः)

रसं गन्धकं तित्तिरीकं चराटं,
विषं टङ्कणं सर्वमेकत्र तुल्यम् ।
ततस्त्रैफलव्योपचूर्णो न युक्तः,
सम मर्दयेद्भृङ्गराजद्रवेष ॥ ९६ ॥
रसः पञ्चवक्त्राऽभिधानोऽयमेको-
जयेत्सन्निपातानशोषान् प्रयुक्तः ।
ततो बहूमात्रं प्रयुञ्जीत युक्त्या,
ज्वरे वातिके श्लेष्मिके रक्तजे वा ॥ ९७ ॥

र श, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमाल्गोटा, कौडीभस्म,
शुद्धबछनाग, भुनासुहागा सब समभाग, इनसबको बराबर त्रिकटु
और त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर भगरेके रससे १-२ रोज मर्दन
कर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
उचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात, वातिक, श्लेष्मिक
और रक्तविकारज ज्वर इनसबको यह नष्ट करता है ॥ २२ ॥

२३ पञ्चवक्त्रो रसः (षष्ठः)

सूतं सूतं समं गन्धं गन्धपादश्च टङ्कणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्या मर्दयेद्द्रवैः ॥ ९८ ॥
तिलपर्णा तथा जाती पिप्पलीमूलपत्रकम् ।
द्रवैरेवाश्च सप्ताहं पेप्यं शोष्यं पुनः पुनः ॥ ९९ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्भूत्य कृत्वा गोलं विप्रोपयेत् ।
पञ्चवक्त्रो रसो नाम द्वियुजः सन्निपातजित् ॥ १०० ॥



अर्कमूलकपायश्च सन्धूपमनुपाययेत् ।
सक्षीरं दापयेत्पथ्यं जलयोगश्च कारयेत् ॥ १०१ ॥
र का , र को , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, धुनासुहागा ३ मासे लेकर नीलवर्ण कजलीकर ताजेकी खरल अथवा कडाहीमें डालकर जैत, हुलहु, चमेली, पिपलामूल, पत्रज, इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोंसे सातरोज् मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमें से १-१ गोली तत द्रोगहपातुपानके साथ अथवा त्रिकटु मिलेहुए आककी जडकी-छालकेकाठिकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । इसकेदेनेसे अधिक दाह मालूम होनेपर सिरपर जलकी धारा देना ॥ २३ ॥

२४ पञ्चवक्रो रसः (सप्तम)

सूतं गन्धं विषं तुल्यं नागं वङ्गं द्वयं द्वयम् ।
पञ्चवक्ररसो नाम सन्निपातकुलान्तकः ॥ १०२ ॥
र क यो , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वज्रनाग १-१ भाग, नाग और वज्रभस्म २-२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर अदरखवगैरहके रससे १-२ रोज मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमें से १-१ गोली सन्निपातहरपातुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ पञ्चशरो रसः

रसेन युक् शाल्मलिजेन सूतं
त्रिसप्तधाराणि बलि विमर्ष ।
पृथक् तयोः कज्जलिकां विपन्वां
घृते रस पञ्चशरोऽयमुक्त् ॥ १०३ ॥
घृतेऽहिवह्नीदलसम्भ्रयुकी-
धीर्यातिवृद्धिं कुरतेऽस्य नूनम् ।

मांसाऽध्रमद्य गुरुपायसश्च
पयः पिषेन्माहिपमत्र सिद्धम् ॥ १०४ ॥

शै र , र र दी , र शु , रसायनस , ली वि , यो म , र क
स (ना) , रसायने वाजीकरणे च । रसायनस (अनङ्गसुन्दरः)

भाषा—शुद्धपारे और गन्धकको अल्प २ सेमलकेरुन्दके रससे इकीस २१ दिन मर्दनकर सुखाकर दोनोकी कजली बनाकर कडाहीमें थोडासा पी डालकर कजलीको गलाकर परंटी बनाले, फिर इस परंटीको सेमलकेरुससे २१ बार भावना देकर रख छोडे । इसमेंसे ३-३ रती पके पानके साथ देकर ऊपर अधोटा भेंसका दूध पिलानेसे और मातृयुक्त अन, मद्य, खीर वगैरह देनेम यह कामकी वृद्धिको करता है और आयुको बढ़ता है ॥ २५ ॥

२६ पञ्चसायकः

मृत सूतं मृतं चात्र सुशुद्धं दरदं तथा ।
अग्निशोपमहैः फेनं जातीपत्री च तत्फलम् ॥ १०५ ॥
करहाटं तथा गोधा यानरी कौकिलाक्षकः ।
पतानि समभागानि रख्ये चूर्णीकृतानि च ॥ १०६ ॥

विजयाशाल्मलीमूलैरसितस्वर्णबीजकैः ।
शताह्वापोस्तुमधुकनागवह्नीदलद्रवैः ॥ १०७ ॥
भागशाकपूरयुतो रसोऽय पञ्चसायकः ।
मात्रा बहुद्वयी चाऽस्य मधुना त्रिफलायुता ॥ १०८ ॥
पथ्यं क्षीरं यथासाध्यं गच्छेच्च प्रमदाशतम् ।
निशामुखे रसो ब्राह्मो ह्यम्बुवर्गश्च घर्जयेत् ॥ १०९ ॥

रसायन स , वृ यो त , रसायने वाजीकरणे च ।

टि०—गोधास्वयनस्वनेप्रसिद्धलात्प्रकर्णौषितीमनुसुख यथावयधिर तिवलपत्रेषु गोधापदसदृश्यात्तमूलमन नियोनोयत्नतोक्तमिति सुधीभि विभावनीयम् ।

भाषा—पारद और अभ्रककी भस्म, शुद्धशिगरिफ, समुद्र शोष, शुद्धअफीम, जावित्री, जायफल, अकलररा, अतिवला, (गुलसिकरीहि) केवाच के बीज, तालमराना, ये सन समभाग लेकर सबका बारीक चूणकर भाग, सेमर, कालेघट्टे के बीज, सौंफ, पोस्तेकोडे, मुलहठी, पान इनके रसोंमें १-१ भावना देकर सुखाकर सोलहवा हिस्सा शुद्धकपूर मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा मधु और त्रिकलाके साथ देकर ऊपरसे दूध पिलानेसे शैकडों क्षिरियोंके साथ रमण कर सकाहै । इसका सेवन सन्ध्याकेसमय करना उचित है । इसमें अम्बुवर्ग का सेवन निषिद्ध है ॥ २६ ॥

२७ पञ्चसारो रसः (पञ्चानन) १

शुद्ध सूत सम गन्धं धात्रीपत्रद्रवैर्दिनम् ।
यष्टिखजूटद्राक्षणां फवायेन मर्दयेद्दिनम् ॥ ११० ॥
पञ्चसाररसो नाम भक्षयेन्मापमानकम् ।
धात्रीचूर्णं सितां चातु पिषेद्भृद्गगजिद्रवेत् ॥ १११ ॥
र र , व रा , र का , र च , वि क , र सि , र स , र कौ ,
ध , र शु , रसायनस , र चि , र क , यो म , हृद्रोगे । र स
इत्यादिषु पञ्चाननेति नाम । र का , पञ्चाऽमृतेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कजलीकर ताजे आवलेके पतोंका रस, मुलहठी, खजूर और द्राक्षके काथोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली खाकर ऊपरसे आवलेमा चूण और शरट खाकर दूध पीनेसे यह हृदयके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २७ ॥

२८ पञ्चसारो रसः (द्वितीयः)

रसेन्द्रेमाऽनललोहगन्धकं
समंसमं भृङ्गरसेन मूर्च्छितम्
लघौ पुटे सिद्धिमुपैत्यथाऽऽज्यव-
ग्मधुस्रुत पथ्यभुजा निषेजितम् ॥ ११२ ॥
जयेज्यवं पाण्डुगदममेहा-
नष्टोदराशोमहणीधिकारान् ।
यश्चापानुम परिणामदाल
हृद्रोगमाघ्नानमुद.क्षतश्च ॥ ११३ ॥
लो प (स) , प्रमेह ।

भापा—शुद्धपारा, सुवर्गभस्म, चित्रक, लोहभस्म, शुद्ध-
गन्धक ये सब समभाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्णकञ्जलीमें
मिलाकर भंगोके रससे २-२ रोज् मर्दनकर गोला बनाय
सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कपडमिठीकर एकवालितभरके
खड़ेमें आचदेवे । स्वाश्र्शीतल होनेपर निम्नालकर रखछोड़े ।
इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और धीके साथ खिलानेसे ज्वर,
पाण्डु, प्रमेह, आठ प्रकार के उदर, बवासीर, सद्गहणी, राजयश्मा
रिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८ ॥

२९ पञ्चाङ्गलोहम्

अथ जलप्लुतमद्रिजमायसे
विनिहित मृदितं धृतमातपे ।
तदनु भातुमधुसविशोपणाद्
दधिसरामभुपस्थितमूर्द्धतः ॥ ११४ ॥
तदभिगृह्य खरांशुखरानना-
दनु विशोप्य विशोप्य मुहुर्मुहुः ।
दलितकज्जलक्रोज्ज्वलमादरा-
क्षपलधीर्धिवधीत घनं रजः ॥ ११५ ॥
तदपरं पुनरन्यजलप्लुतं
तपनतापवशाद्धनताङ्गतम् ।
तदभिगृह्य च पूर्वैवदर्यम-
त्विपि विशोप्य तदप्यथ चूर्णयेत् ॥ ११६ ॥
इति पुन पुनरत्र शिलोद्भवे
विधिमुदारमतिविधीत च ।
भवति याचदिदं जलसङ्गमा-
द्भिगतरोगपरिग्रहविग्रहम् ॥ ११७ ॥
सूत्रमिदं यदि वा सलिलप्लुतं
घनपटे परिपूतमनेकथा ।
पुनरिदं मृदुपाकदशावशा-
त्कठिनतो गतमेव विचूर्णयेत् ॥ ११८ ॥
अथ तदकंसुवर्णघनायसां
सममिदं ननु चूर्णमनेकथा ।
कथितवीरतरादिवरीधरा-
जलपरिप्लुतमातपशोपितम् ॥ ११९ ॥
पुनरिदं परिचूर्णितमादरान्-
मधुघृताम्बितमेव निपेषितम् ।
जयति शूलमथ्याऽनलमार्दवं
क्षयमुरःक्षतपाण्डुगुदाऽङ्गुरान् ॥ १२० ॥

लो.प (स.), उर क्षते ।

भापा—शिलाजतुरो लोहेकी कडाहीमें उबलते हुए पानीमें
बालकर भीष्मत्तुकी धूपमें छत वगैरह पर रख दे जहा कि सूर्यो-
दयसे सूर्यास्त तक कड़ी धूप लगे । एक दो दिन बाद इसको खूब
मसलशाले जिसमें कि कोई ककड़ी बाकी न रह जाय, हाथोंको

गरम पानीसे उसीमें धो बाळे, उस पानीपर मलाई के सरस तह
जमजायगी उसको धीरेसे निकालकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखले
और उस पानीको फिरसे खूब चलादे । दो चार दिन बाद फिर
आईहुई पपड़ीको निकालकर चलादे, जब देखे कि पानी गाढ़ा-
होगया तो फिर उसमें वही उबलता हुआ पानी बाल दे । ऐसे
ख्यात्तर २ महीने तक करनेसे शिलाजतुका तमामहिस्सा पपड़ी
होकर निकल आवेया । उस पानीके नीचे नि सार धूल रह
जायगी उसको फेंक देना और निकाली हुई पपड़ियोंको धूपमें
सुखालेना । बदाचित्त अधिक पानी रहगयाहो तो बहुतमन्द
आचसे गाढ़ा कर लेना यह शुद्ध शिलाजतु तैयार हुआ । इस
विधिके करनेमें असमर्थ हो तो गरमपानीमें उबालकर गाथेवन्न
अथवा फिल्टरिंगपेपर (Filtering paper) में कईबार
छानकर अभिपर पकाकर कठिन कर लेना । फिर शुद्धशिलाजतु,
ताम्र, सुवर्ण, अभ्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर वीरत-
वादिगण, शतावर, त्रिफला इनके काथोंसे १-१ रोज् मर्दनकर
धूपमें सुखाकर रखछोड़े । इसमें से ४-४ रत्तीकी मात्रा मधु
और धीके साथ मिलाकर खानेसे शूल, मन्दाभि, क्षय, उर क्षत,
पाण्डु, बवासीर, श्वास, कास और प्रमेह इनसबको यह नष्ट
करता है । वाजीकर और रसायन है ॥ २९ ॥

३० पञ्चात्मको रसः (सूताभ्रयोगः)

मृतसूताऽभ्रकं ताम्रं गन्धकञ्चाऽम्बवेतसम् ।
विपं फलत्रयं तुल्यं चूर्णयित्वा विभाचयेत् ॥ १२१ ॥
विपमुष्टिजयावासाविजयारकशालिनी-
घृहतीर्त्रिमहाराष्ट्रीधत्तूरपद्मपत्रैः ॥ १२२ ॥
नन्धावर्ताऽमृताजम्बूक्याथैर्नीलोत्पलद्रवैः ।
समांशं पञ्चलवणं दत्त्वाऽऽर्द्रकरसेन च ॥ १२३ ॥
करञ्जेन्द्रयवास्तुल्यं पाययेदुष्णवारिणा ।
कर्पेकमनुपानं स्याद्वातशूलहरं परम् ॥ १२४ ॥

यो. म., र. सं., र. सु., घ., चूले ।

टि०—अथ वातुर्णं चक. १ अम्बवेतसिर्दितीय । विपमुष्ट्यादिभिर्भा-
वनालकस्तुतीय । समाशयन्लवणमिश्रणपक्षतुर्थ । सर्वस्याऽऽर्द्रकरसेन
भावनाऽऽम्बकं पञ्चम । इथ येन केन प्रकारेण पञ्चात्मरस्य निर्वाह
व्यग । रसेन्द्रयारसैर्ग्रहादी बद्धौश पञ्चलवणमिति पाठो दृश्यते । पर
चूले समाशयन्लवणमागस्यैव ज्ञाप्यत्सम् ।

भापा—पारद, अभ्रक, ताम्र इनकी मर्सें, शुद्धगन्धक,
अम्बवेत, शुद्धबलनाग, त्रिफला ये सब समभाग लेकर कपडछान
चूणकर कुचिला, जैत, अहसा, भाग, गोरखमुष्की, भटकटैया,
महाराष्ट्री (मराठी), धत्ता, पद्मपत्र, पीपल, शुद्धची, जामुन,
नीलोफर, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे १-१
भावना देकर सुखाकर सबकी बराबर पाचौनमक मिलाकर अद-
रखके रसकी २-३ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी मोलियों
बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोली लेकर करञ्ज
और इन्द्रजवका समभाग चूर्ण १ तोला गरम पानीके साथ
पिलानेसु यह वातशूलको दूरकरताहै ॥ ३० ॥

३१ पञ्चाननकल्पः

मृतं सूतं तथा गन्धं कान्तं चाऽन्नक्रमेव च ।
ताम्रमस्य मृतं कर्पं निष्कार्थं शिखितुत्यकम् ॥ १२५ ॥
सिन्दुवारस्य भृङ्गस्य पञ्चचूर्णं पलत्रयम् ।
खादिरं द्विपलञ्चैव सर्वं सञ्चूर्णं यत्नतः ॥ १२६ ॥
क्षिण्यमाण्डे विनिःक्षिप्य द्विकाल भक्षयेत्सुधीः ।
निष्कार्थमात्रं सेवेत पथ्य तत्रोदंनं हितम् ॥ १२७ ॥
लवणक्षारकाऽम्बुनि चर्जयिष्या निषेचयेत् ॥
चिरकालसमुद्भूतं हन्ति स्नायुकसन्निभम् ॥ १२८ ॥
व रा, वै चि, स्नायुजाते ।

भाषा—पारदमस्य, शुद्धगन्धक, कान्तलोह, अन्नक और ताम्रमस्य ये प्रत्येक १ कर्प, शुद्धतुत्यक २ मासो, सभाळ और भारिकेपतोंका चूर्ण ३-३ पल, खैरघार २ पल, इनसबका चारोंक चूर्णकर चिकने बतनेमें रखजोड़े । इसमेंसे २-२ मासो दोनों बक पानीबगैरहके साथ खानेसे और छाछभात पथ्यसेवनकरनेसे बहुतदिनका भयाहुआ स्नायुकजात नष्टहोताहै । इसमें लवण, क्षार और अम्बुद्वारार्थका परित्याग करदना चाहिये ॥ ३१ ॥

३२ पञ्चाननज्वराद्भुशो रसः

शम्भोः कण्ठविभूषणं समरिच दैत्येन्द्ररक्तं रविः,
पक्षौ सागरलोचनं शशियुतं भामाऽर्कसंख्यान्वितम् ।
खल्वे तत्रिकल मर्दितं रविजलैर्गुञ्जैरुमान भजेत्,
सिद्धोऽयं ज्वरदन्तिदर्पदलन पञ्चाननाऽऽख्यो रसः ॥
पथ्यञ्च देयं दधितकभक्त,
सिन्धूत्यमोहं सितया समेतम् ।
गन्धाऽनुलेपो हिमतोयपान,
दुग्धञ्च देयं तथ्य दाडिमाम्भः ॥ १३० ॥

र. मं, रसवारसद्गृह, रसायन, र का, यो चि, र सु, र को, र स, यो म, भै र, यो रा, र र्द, र, र क ल, र. क, ज्वरे ।

भाषा—शुद्धवज्रनाग २ भा०, मरिच ४ भा०, शुद्ध गन्धक २ भा०, शिगरिक १ भा०, ताम्रमस्य १२ भाग, लेकर चारोंक चूर्णकर आकके अङ्गुलसमे एकरों मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचित्वाऽनुपानके साथदकर दही, छाछ, भात, सेषानमक, मूग, चापर, दाढा भोजन करानेमें यह समस्तवर्षको नष्ट करता है । इसक देनेके बाद अधिकदाह माल्महातो बन्दनबगैरहालेय, उखा पानी, दूध, अनार, ये देने चाहियें ॥ ३२ ॥

३३ पञ्चाननो रसः (प्रथमः)

सूत गन्धश्चिषवं पिष्टुक मुस्ता विप प्रैफल,
चैतेभ्यो द्विगुणेर्मुंष्टैश्च गुटिका यद्भ्रममाण्णा हरत् ।
बुष्टाऽऽदादायु मदान्मुदर दापममेहादिक,
रोगानीकरीन्द्रर्पदलने रुधातो हि पञ्चाननः ॥ ३३ ॥

वै र, र म, वि र, र को, यो चि, र क ल, र. (मा), र घ, र सु, यो म, र का, र क यो, रसायनस, ना वि, कुष्ठे ।

टि०—सूतचिमुस्ताविपचित्रकामि नैव दृश्यन्ते, चित्रकन्धाने यत्र कुत्रचित् गुह्येच प्रक्षिता यथा चिकिमाकमस्तवद्वयः, तत्र नाम च गमचमपञ्चानन इति स्थापित, तत्रैव रसक्रमेणानावपि स्थितम् । चिकिष्णामार, रसायन, र सु, एषु वातगमसिद्ध इति नाम, तत्र गुडस्यने दिगुणार्ककरनेन भावना प्रदत्ता । रसक्रमेणौ विषाऽऽयाव, गुह्येत्वा सर्ववस्तुमन्ना, गुडस्य दिगुणभाव इति विरोधो दृश्यते । तथापि तत्र न रसान्तरता, तत्र पाठत्रादिदं सर्वं निष्पन्नमिति प्रतिभाति, कुष्ठे विषय ज्ञावस्याऽनवरयचाप, किञ्च विषरहितश्वेतो स्वातर्हि दिगुण्जिनी मात्रा न स्वादिनि गूढ रहस्यम् । र चि, र ल, र सु, रसायन, र क, र सि, एषोप रुचादलन इति नाम । र कौ, र क ल, र को, एषो मेहरदलनवदीति नाम । र सि, रामभवीवदीति नाम, अथो कीदृशार्थं यैकरिभ्योऽन पुष्के एकलैव योऽस्य विविधनामानि स्थापि तांनि, सर्वमेतद्गानविलक्षितमिति इति दिक् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रकमूल, त्रिकटु, नागर सोया, शुद्धवज्रनाग, त्रिकला, ये सब समभाग लेकर सयसे दूना गुड मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्वेगहानुपानके साथ देनेसे १८ प्रकार के बुड, गुल्म, शूल, उदरोग, शोष और प्रमेहादिक रोगसमुदाय इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

३४ पञ्चाननो रसः (द्वितीयः)

मृतं कान्तं सुषणञ्च शुञ्ज्वताराऽऽस्रमसमकम् ।
पृथगक्षमितं सर्वं पटचूर्णं हत मृदु ॥ १३२ ॥
रसगन्धककज्जल्या तुल्यया सह मर्दितम् ।
सार्धद्विपलमानेन ताप्यचूर्णेन मर्दयेत् ॥ १३३ ॥
द्विपल मृषिकामध्ये विनिक्षिप्याऽऽलचूर्णकम् ।
ततस्तु कज्जलीं क्षिप्या मनोहांतायतीं शिषेत् ॥ १३४ ॥
ततो निरुद्धच यत्नेन परिशोष्य पुटेभिरि ।
पुटेन गजसञ्ज्ञेन स्रतःशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३५ ॥
चतुर्गुणेन गन्धेन निर्मितं रसकज्जलीम् ।
क्षिप्या पृथरसे लुङ्गवारिणा परिमर्दयेत् ॥ १३६ ॥
पचेत्कोडुपुटेनैव दशवारमतः परम् ।
एवं तालककज्जल्या दशवारं पुनः पुनः ॥ १३७ ॥
ततश्च मृत्यैकान्तमस्मना च कलादात ।
ततो निचूर्ण्य यत्नेन करण्डान्तर्विनिक्षिपेत् ॥ १३८ ॥
इमं पञ्चाननसाम गुञ्जामात्र प्रयोञ्जयेत् ।
श्रेष्ठः सर्धरमेन्द्रेषु महारससमो गुणैः ॥ १३९ ॥
पथ्यास्त्ररगुण्टांभि सपृतामिनिषेवित ।
सर्वां पाण्डुगदान्दग्नि घृतप्लव इत्यटितिम् ॥ १४० ॥
यद्गमाण जडर हरीमककज यातातिविह्वगन्धन,
बुष्टश्च प्रद्वर्णां ज्वरातिसरण्ण भ्यासश्च कामाऽऽयी ।
श्लेष्मन्वाधिमशेषतो गलगदान् हुनांम मन्दाऽऽगितां,
मेहगुणमगज च किः बहुगिरा हन्याऽऽनन्दुस्नता ॥ १४१ ॥

सेव्यमाने रसे चाऽस्मिन् विलम्बमेकञ्च वर्जयेत् ।
स्वस्थः सर्वं समश्नीयाद्द्वी पथ्यं गदापहम् ॥ १४२ ॥
र. र. स., र को, उदराधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, सुवर्ण, ताम्र, रजत और अभ्रक इनसबकी भस्में १-१ कर्प, इनसबकी बराबर शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली मिलाकर अच्छीतरह मर्दनकर २ ॥ पल शुद्ध-सोनामाखी मिलाकर सबकी कजली बनाले, फिर वज्रमुपांमे २ पल हरितालका चूर्ण विद्याकर इसकजलीको ऊपर विद्यादे । इसपर २ पल शुद्ध मैतसिलका बारीकचूर्ण विद्याकर कपडमिठी कर अच्छीतरह सुखाकर रात्रिमें गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञ-शीतल होनेपर १ कर्प शुद्धपारेमें ४ कर्प शुद्धगन्धक मिलाकर नीलवर्णकजलीकर पूर्वसंभे मिलाकर विजोरेके रसे एकरोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर अच्छीतरह कपडमिठी देकर सुखाकर बराहपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निवालकर पूर्ववत् कजली मिलाकर मर्दनकर बराहपुटमें आचदे । ऐसे दस-बार आंचदेकर १ कर्प पारे और ४ कर्प हरितालकी कजली बनाकर पूर्वकी तरह १० आंचे दे । स्वाज्ञशीतल होनेपर इसमें सोलहवां हिस्सा वैक्रान्तभस्म मिलाकर बीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा हर्षे, सूरण और सोंठ इनके ३ माशे चूर्ण और धीके साथ अथवा तत्प्रोगहरागुपानके साथ मिला कर देनेसे समस्त पाण्डुरोग, यक्ष्मा, उदररोग, हलीमक, वात रोग, विडविबन्ध, कुष्ठ, प्रहणी, ज्वर, अतिसार, श्वास, काय, अरुचि, श्लेष्मरोग, गलरोग, चवासीर, मन्दाग्नि, प्रमेह, गुल्म इत्यादि समस्तरोगोंको यह इयतरह नष्टकरताहै जैसे कृतप्रआ-दमी कृतोपकारको नष्टकरताहै । इसके सेवनमें केवल बेल नहीं खाना । विशेषकर वर्तमान रोगोंको दूरकरनेवाली चीजों का सेवन करना चाहिये ॥ ३४ ॥

३५ पञ्चाननो रसः (तृतीयः)

लोहाऽन्नगन्धाऽरुणपारदानां
समं रजो धर्तुलपर्णिकायाः ।
द्रवणे सिक्तं लघुना पुटेन
प्रसाधितं क्षौद्रघृताऽवगाढम् ॥ १४३ ॥
निपेषितं तद्विधिना नराणां
निहन्ति पाण्डूदशोथमेहान् ।
हलीमकं कामलिकाऽतिसार-
मर्शांसि कुष्ठानि च धह्निमान्द्यम् ॥ १४४ ॥

लो. प (स) पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह और अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, शिगरिक और पारद ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर वर्तुल पर्णिका (इसका पत्ता ब्राह्मीके आकारका गोल छतरी जैसा होता है और पीला फूल आता है प्राय जलके किनारे रहती है पत्तिका रंग पीला रहता है दूरसे देखनेसे प्रीम्पञ्जुनी ज्ञप्त्रीका सन्देह होता है पर यह स्वतन्त्रबीज है ब्राह्मीका पत्ता

कटाहुआ रहता है इसका समग्र गोल और अक्षत रहता है, ब्राह्मीकी लता चलतीहै इसके पत्ते खड़े रहते हैं लता नहीं होती) के रसेसे मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आच देकर स्वाज्ञशीतल होनेपर निवालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा धी और मधुकेसाथ मिलाकर खानेमें पाण्डु, उदर, शोथ, प्रमेह, हलीमक, कामला, अतिसार, चवासीर, कुष्ठ और मन्दाग्नि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ३५ ॥

३६ पञ्चाननो रसः (चतुर्थः)

गौरं म्लेच्छं रसं गन्धं गोलाञ्च सुपवीरसैः ।
मर्दनं त्रिदिनं कार्यं शुल्वपत्रेषु लेपयेत् ॥ १४५ ॥
वालुकाऽऽख्ये पचेद्यन्त्रे सम्यग्यामचतुष्टयम् ।
स्वाज्ञशीतं समुत्तार्य सताम्रं परिमर्दयेत् ॥ १४६ ॥
गुञ्जाद्भयमितः सूतः ससितो विपमज्जरम् ।
शीतोष्णपूर्वं सहसा जयेत्पञ्चाननो रसः ॥ १४७ ॥
पेकाहिकं द्र्याहिकञ्च तथा त्रिदिवसज्वरम् ।
चातुर्थिकं महाघोरं दुग्धमक्काशिनां द्रुतम् ॥ १४८ ॥
र, उदराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल, शिगरिक, पारा, गन्धक और मैत सिल सत्र समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जगलीकरेलेके रसेसे ३ रोज मर्दनकर सबक बराबर शुद्ध तात्रिके कण्टकचैधी पत्रोंपर लेपकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी तीक्ष्ण अग्नि देकर स्वाज्ञशीतल होनेपर निवा-लकर तात्रिकहित मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा शक्करके साथ देनेसे विपमज्वर, शीत और उष्णपूर्वक-ज्वर, एकाहिक, द्वायाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक इनसबको यह दूर करता है । पथ्य दूध और भातदे ॥ ३६ ॥

३७ पञ्चाननो रसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पिञ्चुरीशगन्धतपनाऽयष्टद्वयं सैन्धवं,
तुत्यं तीक्ष्णहलाहलावथ पले वैश्वानरश्रेष्ठयो ।
शुद्धो गुग्गुलुरञ्जलिर्घृतयुजामेपां द्विमापा वटी,
सा श्रेष्ठा कथिताऽऽमवातपयनाऽऽतङ्केभपञ्चतनः ।
रसायनस, आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, लोहभस्म, मुनामुहागा, सैन्धव, शुद्धतुत्य, फोलादभस्म, सर्पविष अथवा शुद्धबलनाग ये सब १-१ कर्प, चित्रा और त्रिफला १-१ पल लेकर बारीकचूर्ण कर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलावे, फिर १६ तोले गुग्गुलुको थोड़ासा धी देकर कूटे, जब इसका द्रव हो जाय तब पूर्वोक्तचूर्ण थोड़ा थोड़ा डालकर कूटे, जब सबचीजें मिलजाय तब २-२ माशेकी गोखिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली तत्प्रोगहरागुपानकेसाथ देनेसे यह आमवात और वातन्याथियोंको नष्ट करता है ॥ ३७ ॥

३८ पञ्चाननो रसः (पृष्ठः)

सूतं गन्धं मृतं लोहं मृतमम्रं समांशिकम् ।
सर्वेषां द्विगुणं वङ्गं मधुना मर्दयेद्दिनम् ॥ १५० ॥
भक्षयेद्यत्प्रत्यूषाया शतितार्यं पिबेद्युतु ।
प्रमेहार्श्वशर्ति हन्ति मूत्राघातास्तथाऽऽमरीम् ॥
मूत्रकृच्छ्रं हरेदुग्रमयं पञ्चाननो रसः ॥ १५१ ॥
शै. र., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, लोह और अम्रकमस सब समभागलेखर पारेगन्धककी नीलवर्णकलीमें मिलाकर सबसे दूनी वज्रमस बालर एकरोज मधुमें मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकालमें ठंडे पानीके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्राघात, अमरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८ ॥

३९ पञ्चाननो रसः (सप्तमः)

रौप्यलोहविद्यद्वज्राऽऽकृत्तकं समभागिकम् ।
चरीविदारामुशलीद्रावैः पञ्चाननो भवेत् ॥ १५२ ॥
सर्वरोगविनिर्णाशी रामाऽऽहादन्तत्परः ।
प्रमदाशतमभयेति जरादोषविचरितः ॥ १५३ ॥
रसावतार (मा०), राजीकरणे ।

भाषा—रजत, लोह, अम्रक, हीरा इनसबकीमसमें और अरकका समभागलेखर धातव, विदारामुशली इनके स्वरसोंसे कमरकम २१ रोज मर्दनकर आधी आधी रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकीरहमें खानेसे समस्तरोग और बलीपलितको दूरकर सैकड़ों क्रियाके साथ सम्भोगरत्नेकी शक्तिको देताहै ॥ ३९ ॥

४० पञ्चाननवटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्ककान्तश्च तीक्ष्णचूर्णं समंसमम् ।
द्वन्द्वमेलापलितार्था मूषायां चाऽन्धितं धमेत् ॥ १५४ ॥
तरुणोऽन्धितं चूर्णितं कृत्वा चाऽभित्तं तु पूर्ववत् ।
समुले जारयेत्सूते यावत्पञ्चगुणं क्रमात् ॥ १५५ ॥
द्विष्योपघद्रवैस्तं तु मर्दयेद्विषसत्रयम् ।
अन्धमूषागतं धमात् जायते गुटिका शुभा ॥ १५६ ॥
नाम्ना पञ्चानना धार्यां वक्ष्ये संवतरायाधि ।
बलीपलितनिर्मुक्तो दीर्घमायुरुत्पाप्नुयात् ॥ १५७ ॥
हस्तिकर्ण्याः समूलायाधूर्णं मध्यायसंसुतम् ।
स्निग्धमाण्डे तु तद्गुणा धार्यगदां निघेदायेत् ॥
त्रिसताहातसमुकृत्य पलेकं भक्षयेद्युतु ॥ १५८ ॥

र. गं., रसायने ।

भाषा—सुरग, रजत, ताम्र, कान्तलोह, पोलाद, इत सबका यारीक चूर्ण समभाग लेखर नागवस्त्रिपमूषामें बन्दकर ५ पहर धनन बरानेमें यह गोट तैयार होगा, फिर इसे द्विष्योपघिदीक फलदात अपवा इकाग्रामे ७-८ दिनकर मर्दनकर

शुभ्रकृत पारदमें कमसे पत्रगुण जाणकर पारदको द्विष्योपघि-
योंके द्रवमें ३ दिन मर्दनकर स्वामीष्ट आकारकी गोली बनाय
अन्धमूषामें घननकरनेसे यह गोली तैयार होगी । इसको
एकसालभर रोजाना २-४ घटे मुँहमें रखकर हस्तिकर्णपलाय-
के पञ्चकका चूर्णकर इममें मधु और घृत अन्दाजमाफिक
बालकर घुत्के भाण्डमें बन्दकर धान्यराशिमें २१ रोजतन रख-
कर गोली रखनेसे बाद १-१ पल मक्षण करनेसे बलीपलितको
निर्मुक्त होकर दीर्घजीवी होता है ॥ ४० ॥

४१ पञ्चाननवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूतं पलार्धञ्च तत्समं शुद्धगन्धकम् ।
तयोः समं ताम्रपत्रं लिप्त्वा मूषान्तरे क्षिपेत् ॥ १५९ ॥
आच्छाद्य पञ्चलयणैर्लिप्त्वा गजपुंटे पचेत् ।
सिद्धं ताम्रं समादाय पलमेकं विमर्दयेत् ॥ १६० ॥
पारदस्य पलत्रैव गन्धकस्य पलन्तथा ।
पुटदग्धस्य लोहस्य गगनस्य पलंपलम् ॥ १६१ ॥
यमानी शतपुष्पा च त्रिकुटु त्रिकलाऽपि च ।
त्रिवृता चघिका दन्ती शिखरी जीरकद्वयम् ॥ १६२ ॥
एतेषां पलिकैर्भागैर्घण्टकणकमानकम् ।
ग्रन्थिकं चित्रकञ्चैव कुलिशानां पलार्धकम् ॥ १६३ ॥
आर्द्रकसरसैः पिष्ट्वा गुटिकां मापकोमिताम् ।
पञ्चाननवटी ख्याता सर्वरोगविनाशिनी ॥ १६४ ॥
अम्लपित्तमहाव्याधिनाशिनी च रसायनी ।
महाऽद्विकारिका चैषा परिणामव्यथापहा ॥ १६५ ॥
शोथपाण्डुमयाऽनाहप्लीहगुल्मोदरापहा ।
सुकृष्ट्याऽन्नपानानि पयोमांसरसा हिताः ॥ १६६ ॥
शै र, र. र., अम्लपिने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक आधा आधापल लेकर
विजोर कीरहेके रमने मर्दनकर एकपल शुद्धतावेके पत्रोंपर लेपकर
मुस्ताकर धारासमुद्रमें लवणके बीचमें बन्दकर धारापार ६-७
कपडिभी देकर गुप्ताकर गजपुंटी आच दे । स्वास्त्रोदल हाने-
पर निकालकर शुद्ध पारा, और गन्धक, लोह, अम्रक, इनकी मसमें
१-१ पल लेकर अजवान, सोंफ, त्रिकुटु, त्रिकला, निशोत,
चव्य, दन्तीमूल, अमामाग, दोनोंजीर इनका चूर्ण १-१ पल,
घण्टकण (पहाड़ीभाषामें घनेली नाम लना प्रसिद्ध है अभावेमें
हंस अपवा च्याप्रन्ती) मानकन्द, गटिन (अभावमें पिप-
लायु), चित्रक, हड़जोड़, ये प्रत्येक ३ तोले लेकर मधुके
वारीकचूर्णको पारेगन्धककी नीलवर्णकलीमें मिलाकर गर-
रराके रमने १-२ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिये बनाय
छायाशुक्रकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गमयोचितानुपान-
केमाय देनेमें भयकर अम्लपित्त, मन्दागि, परिणामदूत, शोथ,
पाण्डु, आनाह, गीह, गुन्ध और बदरोग इनको दूरकर रसा-
यनका काम करती है । इममें भारी गरिष्ठ तथा वातीकर अम-
पान, दूध और मांसल ये पण्य है ॥ ४१ ॥

४२ पञ्चामृतचूर्णम्

पारदं गन्धक लोहं ताम्रमभ्रकमेव च ।
एषां मापकमेकैकं जम्बीरद्रवभाविताम् ॥ १६७ ॥

देयं त्रिकटुना तुल्यं सम्यग्गुञ्जाचतुष्टयम् ।
तततोयानुपानेन वह्निमान्द्यहर परम् ॥ १६८ ॥

र र, र वो, अजीर्णं ।

भाषा—शुद्ध पारा तथा गन्धक, लोह, ताम्र और अभ्रक
भस्म सबसमभागलेकर जम्बीरीके रससे मर्दनकर ४-४ रतीकी
गोलिये बनाकर रसछोटे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके चूर्ण-
केसाथ मिलाकर देवे और ऊपरसे गरमपानी पिलावे तो उससे
मन्दाग्नि, शूल, श्वास, कास और वातारोग दूरहोवे ॥ ४२ ॥

४३ पञ्चामृतपर्वटी (प्रथमा)

अष्टौ गन्धकमापका रसदल लोह तदर्थं शुभ्रं,
लोहाध्रश्च वराऽभ्रकं सुधिमलं ताम्रं तथाऽभ्राध्रकम् ।
पात्रे लोहमये च मर्दनविधौ चूर्णीकृतञ्चैकतो,
द्वय्यां वादरवह्निनाऽतिमृदुना पाकं विदित्वा दले १६९
रम्भाया लघु ढालयेन्मृदुरियं पञ्चामृता पर्वटी,
ख्याता क्षौद्रपृतान्विता प्रतिदिनं गुञ्जाद्रपाद्वर्जिता ।
लोहे मर्दनयोगतः सुधिमलं भक्ष्यक्रिया लोहवत्,
गुञ्जाद्रावथया त्रिक त्रिगुणित सप्ताहमेव भजेत् १७०
नानावर्णप्रहण्यामरचिसमुद्ये दुष्टदुर्नामकाऽऽदौ,
छर्द्या दीर्घाऽतिसारे ज्वरभ्रकलिते रक्तपित्ते क्षयेऽपि ।
वृष्याणां वृष्यराज्ञी वलिपलितहरा नेत्ररोगैकहन्त्री,
तुन्द दीप्तस्थिराग्निं पुनरपि नयक रोगिदेहं करोति
पाकाऽस्यास्त्रिविधः प्राको मृदुमर्ष्यः खरस्तया
आद्ययोर्द्वयते सूतः खरपाके न हृद्यते ॥ १७२ ॥
मृदौ न सम्यग् भङ्गोऽस्ति मध्ये भङ्गश्च सौम्यवत् ।
खरेऽलघुर्भवेद्भङ्गो रूक्षः श्लक्ष्णोऽरुणच्छविः ॥

मृदुमर्ष्यो तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विषोपमः १७३

र स, र च, भै र, र चि, र शु, वै क, र र,
रससारसं, रसायनस, र क, र का, यो म, प्रहृष्यथि
कारे । रससारसङ्गहे लोहाऽभ्राऽर्करसान् समान्भागाप्रियोज्य
गन्धको द्विगुणो नियोजित इति विशेषे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक ८ मासे, शुद्ध पारा ४ मा, लोह २ मा,
अभ्रक १ मा, ताम्रभ्रम ४ रती लेकर लोहेके पात्रमें लोहेके
ढसे मर्दनकर नीलवर्ण कजली तैयारकरे । फिरलोहेकी कडाहीमें
थोडा धी लगाकर बेरेके कोयलों पर गलावे, मलेनेपर ताजे गोबर
पर रक्खेहुए ताजे बेलके पत्तेपर ढालकर ऊपर दूसरा पत्ता रख
गोबरसे दबादे । स्वाह्मशीतलहोनेपर निकालकर रसछोटे । इस
मेंसे धी और मधुनेसाथ २-२ रती लोहेके वर्तनमें घोटकर
खावे और रोजाना २-२ रती बडावे । ४-८ अथवा २१ रती
सक सातरोजमें मात्रा पूरीकरनेसे नानातरहकी प्रहणी, अहचि

दुष्ट बवासीर, छर्दी, बहुतदिनका अतिसार, ज्वरसमुदाय, रक्त
पित्त, क्षय, बली पलित, नेत्ररोग, मन्दाग्नि, मेद इनसबको दूर-
कर रोगीबे शरीरको नया बनादेतीहे । इस पर्वटीका मृदु, मध्य
और खर तीनतरहका पाकहोताहे, मृदुमें अच्छीतरह भङ्गनही
होता, मध्यमें चादीकीतरह चमकदार टुकडे होतेहे, खरमें रूक्ष,
चिकने और ललाईलियेहुए टुकडे होते हे । मृदु और मध्यमें
पारा नजर आताहे परपाकमें नजर नहीं आता । मृदु और
मध्य खाने चाहिये, खरपाकको जहरकी तरह छोडदेना
चाहिये ॥ ४३ ॥

४४ पञ्चामृतपर्वटी (द्वितीया)

पलपरिमितशुद्धं पारदं कर्ममेकं,
वलिमपि परिशुद्धं सूततुल्यञ्च सूर्यम् ।
मृतमथ शिववीर्यं कण्ठगं तस्य तुल्यं,
परिमृदितमशेषं तद्विनैकं ततश्च ॥ १७४ ॥
वलिमथ सकलांशं मर्दयेद्वा दिनैकं,
पुनरथ परिशुष्कं धर्ममध्ये विशोष्य ।
अपि घृतपरिलिप्ते लोहापात्रे विपाच्य,
दुतमखिलमदस्तम्भाचिकापत्रखण्डे ॥ १७५ ॥
प्रपतितमथ पत्रोत्थापितं पर्वटी सा,
हरति च गजचर्मोऽस्तद्भ्रमेवंप्रभावा ।
अखिलागदागानां नाशिनी नित्यमुक्ता,
द्रवमनुपरिसेवेद्वाकुचीनाञ्च तस्याः ॥ १७६ ॥
चि ऋ, कुटे ।

टि०—अस्मिन्योगे मर्दनयोगस्याऽऽस्तया मर्दनद्रवस्याऽऽभितलान्त्र
कन द्रवेण मर्दनं कर्तव्यमित्याकाङ्क्षाया उचितत्वात् पर्वटीपातनं मान्नि
कापत्रे कृतम् । अनुपाते बाकुचीद्रवो नियोजित इति प्रकरणपथलोचनेन
सन्निहितत्वात् द्रवद्रव्यमत्र मर्दने नियोजितमिति मुष्ठीभिराकृतनीयम् ।
धर्मभेदिरस्तेन साकमापाततोऽस्य साम्यं प्रतीयते परन्तु गन्धकारिणा प्रमा
णत्वं वैचित्र्याद्भावनाया विशेषत्वाधर्मभेदिरस्ते पारदभस्मनोऽनागतत्वाच्च
स्तत्त्वं प्वाऽय रस इति ज्ञातव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, शुद्धगन्धक १ कर्प, ताम्रभ्रम,
पारदभ्रम और शुद्धवल्गुमाप १-१ पल लेकर सबकी नीलपत्र
कजलीकर मनोय और बाकुचीबेरसे १-१ रोज मर्दनकर
धूपमें सुपाय कजलीकी बराबर शुद्धगन्धक देकर १-१ रोज
श्रमसे मर्दनकर धूपमें अच्छीतरह गुलालेवे । फिर लोहेकी कडा
हीमें थोडा धी ढालकर बेरेके कोयलोंपर कजलीको गरमकरे,
घोकी तरह इवहोनेपर ताजे गोबरपर रक्खे हुए मनोयके पत्तोंकी
राशिपर इसे ढालकर ऊपरसे मनोयके बहुतने पत्तोंकी तह
जमाय ताजे गोबरसे दबादे । स्वाह्मशीतल होनेपर निकालकर
रसछोटे । इसमेंसे २-२ रती धी और मधुनेसाथ सेवनकर
ऊपरसे बाकुचीका काथ पीवे । रोजाना २-२ रती बडाता
जाय । ऐसे २१ रोजतक बडाकर वैशेडी बम करे और शुद्धोक्त
पथ्यका पालनकरे तो यह गजचर्मको दूरकरतीहे और ततद्रोष-
हाऽनुपानकेसाथ देनेसे अन्य तमामरोगोंको नष्टकरती हे ॥४४॥

४५ पञ्चामृतपर्वटी (तृतीय)

सूतकं भागमेकन्तु द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।
भागमेकं क्षिपेद्वैहं भागैकं ताम्रमेव च ॥ १७७ ॥
द्विभागं गगनं दद्यान्मर्द्य कज्जलसन्निभम् ।
आयसे पाचयेत्पात्रे रम्भापत्रे विनिःक्षिपेत् ॥ १७८ ॥
ऊर्ध्वोऽधो गोमयं दत्त्वा पर्वटीरससिद्धये ।
कासातिसारज्वरन्तुक्कामलापाण्डुमेहजित् ॥ १७९ ॥
चि. र., र. बो., कासेतिसारे च ।

भाषा—शुद्धगन्धक और अन्नकभस्म २-२ भा., शुद्धपाप
लोह और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर सबको नीलार्णकज्जलीकर
लोहेके पात्रमें प्रथमपर्वटीकी तरह तैयारकर उसीतरह २-२
रसोसे अथवा रोगीकी शक्तिसे अनुसार २१ रोज तक बढ़ावे
और वैवेही कमकरे तो कास, अतिसार, ज्वर, कामला,
पाण्डु और प्रमेह इनको यह नष्ट करती है ॥ ४५ ॥

४६ पञ्चामृतपर्वटी (चतुर्थी)

सुवर्णं रजतं ताम्रं सत्त्वाऽन्नं कान्तलोहकम् ।
कमबृद्धमिदं सर्वं शाण्यौ नागवद्भक्तौ ॥ १८० ॥
द्रावयित्वाैकतः सर्वं रेतयित्वा ततश्चरेत् ।
पृथक् पलमितं गन्धं शिलाऽऽलं विनिधाय च ॥ १८१ ॥
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य मर्दयेदम्लवर्गतः ।
ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिलां गन्धञ्च चूर्णितम् ॥ १८२ ॥
दत्त्वा दत्त्वा पुटेचायथावद्विशातितारकम् ।
लोहाद् द्विगुणसूतेन ततो द्विगुणगन्धतः ॥ १८३ ॥
विधाय कज्जलौ ऋक्षणां क्षिप्या तां लोहापात्रके ।
द्रावयेद्द्वाराह्नारैर्मुद्गुभिश्चाऽथ निक्षिपेत् ॥ १८४ ॥
हेमादिपञ्चलोहानां भस्म चाऽथ विलोडयेत् ।
अथ तत्कदलीपत्रे गोमयस्ये विनिक्षिपेत् ॥ १८५ ॥
पत्रेणाऽग्नेन संच्छाद्य कुर्याद्यत्नेन पर्वटीम् ।
तस्योपरि क्षिपेत्सद्यो गोमयं स्तोक्रमेव च ॥ १८६ ॥
ततः शीतं समाहृत्य पटपूतं विधाय च ।
निक्षिपेद्दृष्येदण्डायां पालिकायां ततः परम् ॥ १८७ ॥
पूर्ववद्द्वाराह्नारैर्मुद्गुभिर्द्रावयेच्छलेन ।
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पलार्घ्यविपमायितम् ॥ १८८ ॥
पूर्वपर्वटिकातुल्यं तस्मादल्पं मुहुर्मुहुः ।
जारयेत्पालिकामध्ये दहोत् च न पर्वटी ॥ १८९ ॥
पालिकेतिविनिर्दिष्टा स्नेहक्षेपणयन्त्रिका ।
जीर्णं तालादिके चूर्णं पटपूतं विधीयताम् ॥ १९० ॥
पूतीकरत्नपट्टकालष्याम्रीशोभाञ्जनाङ्गिमिः ।
पतेः पञ्चपलैः कर्माद्यं वोडशांशाऽवशेषितम् ॥ १९१ ॥
तेन क्वाप्येन संख्येद्य शोषयेत्सन्धा द्वि ताम् ।
विपतिन्दुकलोद्भूते रसेनिर्गुण्डिकोत्थिते ॥ १९२ ॥
विभाज्य पालिकामध्ये क्षिप्या बदरपाचके ।
इष्यत्प्रस्येदनं हृत्या स्थापयेद्वृत्तियत्नतः ॥ १९३ ॥

उक्ता भैरवनाथेन स्यात्पञ्चामृतपर्वटी ।
व्योपाऽऽज्यसहिता लोढागुञ्जाबीजेन सम्मिता १९४
सर्वलक्षणसम्पूर्णं विनिहन्ति क्षयाऽऽमयम् ।
श्वासं कासं विसूचीञ्च प्रमेहमुदराऽऽमयान् ॥ १९५ ॥
अरोचकञ्च दुःसाध्यं प्रसेकं छर्दिहृद्वदम् ।
सर्वजं गुदरोगञ्च शूलकुष्ठान्यशेषतः ॥ १९६ ॥
वातज्वरञ्च विदुष्यं प्रहर्षां कफजाग्नदान् ।
एकद्वन्द्वत्रिदोषोत्थान् रोगानन्यामहागदान् ॥ १९७ ॥
अग्निमान्द्यं विशेषेण हन्तीत्यं पर्वटी ध्रुवम् ।
एवं समूह्य दातव्या रोगेषु भिषगुत्तमैः ॥ १९८ ॥
तत्तद्रोगहरैर्योस्तत्तद्रोगाऽनुपानतः ।
क्षयादिसर्वरोगघ्नी स्यात्पञ्चामृतपर्वटी ॥ १९९ ॥
तेलसर्पपविल्वाम्लकावेलेकुसुम्भकम् ।
त्यजेत्पारायतं मांसं वृत्तकं कुक्कुटं तथा ॥ २०० ॥
र. र. स., र. सु., र. को., राजयश्मणि ।

टि०—रसरान्तुन्दरं शाण्यौ नागवद्भक्तित्वारभ्य सर्वं खरो
विनिक्षिप्य हस्तनस्तुष्टिा पात्रोऽस्ति । अत्र ताप्यं नीलाञ्जनं तालं शिला
गन्धञ्च चूर्णितयत्नं प्रमाणाऽभावोऽस्ति, अत्र पृथक् पत्रमिति पूर्व-
वासयमेव परामर्शनीयं, तत्राप्यं प्रत्येकं पत्रपरिमितानां ताप्यादिपञ्चद-
श्याणां विंशतिपत्राणि द्रव्याणि भवन्ति, एषान्च विंशतिभागान् प्रकल्प्य
प्रत्येकपुटे कर्पं द्रव्यं प्रक्षिप्य पुटानि देयानीति व्यवस्था करणीया ।
तुल्याऽऽलकशिलागन्धं पञ्चदशविभाजितमित्युपासि तदेव प्रमाणमुत्तर-
णीयम्, अथमेवायं विलययुक्तं पूर्वसंदिग्धतुल्यमिति दत्तमस्ति । वैशि-
न्हाहरेस्तु पत्रपरिमिति छेद विधाय प्रत्येकं पत्रपरिमित्यैः कृतोऽस्ति, परन्तु
तथाप्येते पूर्वपर्वटिकातुल्यमित्यस्याऽऽम्रानि स्यादिति प्रत्यक्षविरोध इति
सहदयैराकल्पनीयम् ।

भाषा—सुवर्ण १ कर्प, रजत २ क., ताम्र ३ क., अन्नक
सत्त्व ४ क., कान्तलोह ५ क., नाग और वज्र ४-४ मासो
लेकर सबको इकडे गलाकर बारीकरेता करेले, फिर शुद्धगन्धक
मैनसिल और हरिताल ४-४ कर्प मिलाकर सबको इकडे
मिलाय अम्लकगमें १-२ रोज मर्दनकर सोनामासी, सुमा,
हरिताल, मैनसिल और गन्धक ४-४ कर्पका मिलकर चूर्ण
एक कर्प डाल कर अम्लकगमें मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया
बनानर गुयाकर धरावत्पुटमें बन्दकर ५ सेर कण्डोकी आंचमें,
पेसे सातपुट देनेसे बाद १-१ सेर प्रत्येक पुटमें कण्डे बजाता-
जाय ऐसे ताप्यादिर्षोका प्रोषण देदेकर २० पुटे देवे, फिर
१० कर्प शुद्धपाप और २० कर्प शुद्ध गन्धक बरेके कोयलोपर रखकर
जलीको लोहेकेपात्रमें भी लगाकर बरेके कोयलोपर रखकर
गलावे, इसकी हुति होजनेपर पूर्वसिद्धकिये हुए रसको इनमें
डालकर बलावे, एकजीवदोनेपर गोबरपर रकयेहुए केलेके पतेपर
डालकर दूसरा धेलेनापता ऊपमें रागोबरसे उपदे । स्वाहती
तत्र दोनेपर मिशालर कपडुछानचूर्णकर तैत्र, धी मिशालनेकी
रूपे डबेकी पलीमें इसचूर्णको डालकर बरेकेकोयलोपर रखकर
गलावे और हरिताल, मैनसिल तथा गन्धक १-१ पल लेकर
बारीक चूर्णकर आधेपल बटनगने बांधेते मर्दनकर गुयाकर

इसमेंसे थोड़ा थोड़ा द्रुतकज्जलीमें डालकर चलाताजाय पर यह ध्यान रखे कि पलीवालीपर्पटी न जलने पावे। जब तालादिचूर्ण समग्र समाप्त होजाय तब इसको टंडाकर कपड़छानचूर्ण करे, फिर घुडकर, पड़पण, भटकटैया और सहिजनकी जड़की छाल, ये प्रत्येक ५-५ पल्लेकर १६ सेर पानीमें पोटडोसावरोप क्वाथकर इस काथकेसात विभागकर पलीमें १-१ भागको सुखानर दवाको धूपमें सुखादेवे। फिर मर्दनकर दूसराभागकाथका डालकर घुपावे, इसीतरह सातों भागोंको सुखावे, फिर कुचिला और निर्गुण्डीके पत्तोंका रस डालकर १-१ बार पलीमें स्वेदनकरके सुखाकर कपड़छान चूर्णकर शीशमें रखछोड़े। यह भैरवनाथकी कही हुई पञ्चामृतपर्पटी है। इसमेंसे १-१ रत्तीलेकर ३ मासे त्रिकुटुके चूर्ण और घृतेकेसाथ रोजकेनेसे समस्तलक्षणयुक्त राज-यक्ष्मा, श्वास, कास, विषुचिका, प्रमेह, उदररोग, अरुचि, दु साध्यप्रसेक, छर्दि, हृदोग, सन्निपातजगुदरोग, शूल, समस्त-डुष्ट, वातज्वर, विडुविबन्ध, प्रहणी, कफरोग, एकज द्विज और त्रिदोषज तथा अन्यसमस्तरोग विशेषकर मन्दाग्नि नष्ट होतेहैं। यक्ष्मातिरिक्त रोगोंकेलिये तत्तत्सामयिक अवस्थानो देखकर अनुपानोंका योगकरना और सरसों, बेल, अम्ल, बरेला, उमुन्म, कवूरका मांस, उन्ताक, कुक्कुट इनको छोड़देवे ॥४६॥

४७ पञ्चामृतपर्पटी (पञ्चमी)

ताप्यार्कलोहेशजगन्धकाः समाः
प्राक् पर्पटीवद्विपचेच्च भावयेत् ।

सेपञ्च पञ्चामृतपर्पटीक्षये

वह्नोन्मिता सा सकलाऽऽमयाञ्जयेत् ॥ २०१ ॥

र (मा) ना. वि., कासे श्वासे च । ना वि, अर्कस्थाने
अध्र नियोजितम् तथा च इयं पर्पटी त्वनूपनजातिउसुमलवज्ञै-
रनुयोजिता ।

भाषा—सोनामाखी, ताजा, लोह इतनी भस्में, शुद्धपारद और गन्धक सब समभाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाय ३-३ रत्तीकी मात्रा समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह क्षय तथा समस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ४७ ॥

४८ पञ्चामृतपर्पटी (पष्ठी)

रसगन्धकताम्राऽत्रैः समैर्द्विगुणलोहकैः ।

लोहपात्रे खादिराऽग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः ॥ २०२ ॥

पञ्चामृतपर्पटिका महत्यग्निप्रदीपिका ।

अशोऽतिसारग्रहणीकामलापाण्डुकुष्ठनुत् ॥ २०३ ॥

ग्रीहाऽऽमगुलमशलाऽऽमचातप्रा च त्रिदोषहा ।

जलोदरमलपित्तं भगरोगञ्च नाशयेत् ॥

सुनौदनौ घृतं क्षीरं रोगाकं पथ्यमाचरेत् ॥ २०४ ॥

र. (मा), अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अत्रकभस्म १-१ भाग, लोहभस्म २ भाग, लेकर नीलवर्णकज्जलीकर प्रथम पर्पटीकी तरह लेवके कोयलेंपर पर्पटी बनाकर रखछोड़े। इसका मृदुपाकलेवे। इसकी ३-३ रत्ती समयोचितानुपानके साथ

लेनेसे मन्दाग्नि, बवासीर, अतिसार, प्रहणी, कामला, पाण्डु, कुष्ठ, ग्रीहा, आम, गुल्म, शूल, आमवात, सन्निपात, जलोदर, अम्लपित्त, भगरोग, इनसबको यह नष्ट करती है। मूंग, चावल, घी, दूध इत्यादि रोगोचित पथ्य देवे ॥ ४८ ॥

४९ पञ्चामृतपर्पटी (सप्तमी)

सुतायसी च ताम्रान्नं समं द्विगुणगन्धकम् ।

लोहपात्रे वादराग्नौ मृदुपाको भवेद्रसः ॥ २०५ ॥

ढालयेत्कदलीपत्रे कर्तव्या रसपर्पटी ।

पञ्चामृता पर्पटी च रसो वह्निप्रदीपनः ॥ २०६ ॥

ज्वरातिसारकासघ्नी कामलापाण्डुमेहजित् ।

अनुपानं मले धन्ने ज्वरे जीर्णं च मूत्रकम् ॥

पलं पथ्यं तु तैलाम्लवज्यर्मन्यच्च युक्तितः ॥ २०७ ॥

जि. र., रसायनसार, र. सु., र. र., र. कौ., र. म., र. प्र., र. शं., वै चि., वै जी., र. सु., यो. च., र. प., र. पा., अतिसार ।

भाषा—शुद्धपारा, लोह-ताम्र और अत्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी बनाकर रखछोड़े। इसमेंसे ३-३ रत्ती रोगो-चितानुपानके साथ देनेसे ज्वर, अतिसार, कास, कामला, पाण्डु, प्रमेह इनको यह नष्ट करती है। मलविबन्ध और जीर्ण-ज्वरमें गोमूत्रकेसाधेना और तैल तथा खटाईको छोड़कर पथ्य देना ॥ ४९ ॥

५० पञ्चामृतपर्पटी (अष्टमी)

रविरसभुजगायोवह्नौ गन्धकस्य,

द्विगुणरचितभागं द्रावयेत्लोह उपणम् ।

समचिनिहितपङ्कस्थायिरम्भादलस्यं,

तदितरद्वलयोगात्प्रदुतं यत्समन्तात् ॥ २०८ ॥

तदा तु पञ्चामृतपर्पटीति

स्मृतं ज्वराशेषविशेषहारि ।

कासक्षयाऽऽशोऽग्रहणीगदमं

चलद्वय क्षौद्रकणाऽचलीडम् ॥ २०९ ॥

वै र, र, र का, र बो, यो. च, कासक्षये । रसाव-
तारं पर्पटीसूतः ।

भाषा—ताम्र, नाग, लोह और वज्र इनकी भस्में और शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक सबसे दूना लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर पीपुतेहूए लोहेके पात्रमें प्रथमपर्पटीकी तरह पर्पटी तैयार करके रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा पीपुलेके चूर्ण और मधुके वाय खानेसे कास, क्षय, बवासीर, प्रहणीरोग, इनको यह नष्ट करती है ॥ ५० ॥

५१ पञ्चामृतपर्पटी (नवमी)

मृतं ताम्रं मृतञ्चात्रं कुटिलं तुल्यगन्धकम् ।

रसभस्मसमायुक्ता पर्पटी मेहनाशिनी ॥ २१० ॥

र क, प्रमेहे ।

भाषा—ताम्र, अन्नक, बह्म, पारद इनकी भस्में समभाग, शुद्धगन्धक सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकम्लीकर पपटी बनाकर १-१ रती तत्तदोगहरासुभानके साथ देनेसे यह समस्ततो-गोंको दूर करती है ॥ ५१ ॥

५२ पञ्चामृतपोट्टीरसः

प्रत्येकमेकगद्याणं शुद्धसूतसुवर्णयोः ।
खल्वे पिष्ट्वा ज्यहं कार्यां पिष्टिः सूक्ष्मा सुवर्णजा २११
वस्त्रे क्षिप्त्वाऽथ तां पिष्टिं ग्रन्थिं वद्धा दृढं ततः ।
मृन्मयी गोस्तनाकारा मूपा कार्या दृढा ततः ॥ २१२ ॥
स्थालिका बालुकापूर्णा मूपां तत्रान्तरे क्षिपेत् ।
चुल्ल्यामारोप्य तां स्थालीं हठाम्नि ज्वालयेद्यथः २१३
शुद्धगन्धकगद्याणान्मूपांन्तरे क्षिपेत् ।
गलिते गन्धके जाते तिलतैलेन सन्निभे ॥ २१४ ॥
प्रक्षिपेद्देमजां पिष्टिं ग्रन्थिवद्धाश्च गन्धके ।
क्षेप्यो गन्धकगद्याणो मुहुर्दग्धे च गन्धके ॥ २१५ ॥
पद्ममेवमहोरात्रं स्वेद्या पिष्टिश्च हेमजा ।
शुद्धगन्धकगद्याणद्वययुक्तां दिनद्वयम् ॥ २१६ ॥
वज्रीक्षीरेण सम्पेप्य प्रक्षिपेच्च शरावके ।
भूमावेव पुटो देयो लावकः पुटसप्तकम् ॥ २१७ ॥
युक्त्याऽनया मृतं हेम चूर्णं कृत्वा सुसूक्ष्मकम् ।
पीतानाश्च कपर्दीनां गद्याणा वेदसह्यका ॥ २१८ ॥
शहस्राऽपीह चत्वारो ह्यष्टानां सूक्ष्मचूर्णकम् ।
द्वयहं सेहुण्डदुग्धेन ह्यर्कदुग्धेन च द्वयहम् ॥ २१९ ॥
चित्रकाऽऽर्द्रसैनेव द्वयहं खल्वे प्रमदयेत् ।
पवं पद्मासरान्पिष्ट्वा गद्याणान्यसुसह्यकान् ॥ २२० ॥
मृतकान्ताद्रसाद्विद्वा गद्याणो मृतहेमजः ।
गद्याणान्सप्तदशकानाद्रिचित्ररसेन च ॥ २२१ ॥
दिनैकं मर्दयेत्खल्वे गुटीः कृत्वाऽथ शोपयेत् ।
तास्ता दग्धाऽमचूर्णांकाः पक्वकुड्मलकान्तरम् २२२
लिप्त्वा शुष्के वटीः क्षेप्याऽर्चूर्णालितपिधानकम् ।
दत्त्वा पस्त्रमृदा लिप्त्वा देयं गतं पुटद्वयम् ॥ २२३ ॥
पेपयेच्च समारुप्य शीतकुड्मलकाद्वटीः ।
रसोऽसौ जायते श्रेष्ठः पञ्चाऽमृतसुपोट्टली ॥ २२४ ॥
बल्लाः पञ्च रसस्याऽस्य द्वात्रिंशन्मरिचैः समम् ।
घृतमिश्राः प्रदातव्या हातिसारे ज्वरं विना ॥ २२५ ॥
देयः सर्वातिसारेषु शूलेषु विविधेषु च ।
बलक्षीणेषु मन्दाग्नौ वातव्यासेषु रोगिषु ॥ २२६ ॥
अष्टादशसु मेहेषु ह्यजीर्णं च विशेषतः ।
चत्वारः शर्करावह्ना रसवल्लैश्च पञ्चभिः ॥ २२७ ॥
मधुना च समं देया हातिसारे च रक्तजे ।
सत्त्वं शुद्ध्याश्चत्वारो रसवल्लैश्च पञ्चभिः ॥ २२८ ॥
मिश्रिता मधुना देया हातिसारे ज्वरोद्भवे ।
पते रोगाः प्रलीयन्ते प्रमात्संसेविते रसे ॥ २२९ ॥

कांस्यपात्रे न भोक्तव्यं क्षाराम्लं वर्जयेत्सदा ।
शालयो दधिदुग्धादि गौल्यं मिष्टाऽभ्रभोजनम् २३०
र. कं., रसचि, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध सुवर्ण और पारा ६-६ मास लेकर तीनरोज़ मर्दनकर गोली बनाकर वस्त्रमें कड़ीमन्थि बांधले, फिर मिट्टीकी गोस्तनाकार मज़बूत मूपा बनाय बालुकाभरेहुए पात्रमें मूपाको रख हठामि जलावे । मूपा गर्म होनेके बाद ४ तोले शुद्धगन्धक मूपामें डालदे, जब गन्धक गलकर तिलतैलेमें सटस हो जाय तब पूर्वोक्त सूतपिष्टीको उसमें रखदे और ऊपरसे आधातोला गन्धक डालदे । जब ऊपरवाला गन्धक जलकर पिष्टी उभड़ने लगे तब आधा तोला गन्धक ओर डालदे । इसतरह चारम्बार गन्धक देता हुआ एक अहोरान् पिष्टीका स्वेदन करे । एक अहोरान्के बाद १-१ तोला गन्धक देकर दोदिनतक पूर्ववत् स्वेदन करे । चौथेरोज़ पिष्टीको मूपांसे निकालकर गन्धकको छुड़ाकर अलग करदे और धूरके दूधसे अच्छी तरह मर्दनकर गोली बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर खुले प्रदेशमें लावपुट दे । इसतरह सातपुट देकर सुवर्णकी भस्म बनाले । फिर पीलीकौड़ी २ तो, शुद्धशंखचूर्ण २ तो., लेकर दोनोंको धूर और आक्के दूधमें २-२ रोज़ मर्दनकर चित्रक और अदररके रसे १-१ रोज़ मर्दन कर ६ रोज़के बाद कान्तलोहभस्म और शुद्धपारा २-२ तो, और पूर्व कीहुई सुवर्णभस्म ६ मा, इसतरह सब मिलकर ८॥ तोलेको अदरर और चित्रके रसे १-१ रोज़ मर्दनकर इसकी छोटी २ गोलियें बनाकर सुपाले फिर पत्थरके चुनेमें रखकर हिलादे, जिसमेंकि गोलियोंपर चूना चडजाय । फिर मिट्टीके पके हुए कुल्हडको चुनेसे भीतरकी तरफ पोतकर सुपादे, उसमें इन गोलियोंको रख ऊपर चूनापुते हुए दीपसे ढककर समस्तपर ३-४ कपडमित्री करके सुवाकर रात्रिमें लुपुटदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर दूसरा पुटदे । सम्पुट दत्ता न होतो खोलनेकी ज़रूरत नहीं, देवशाव सम्पुट फटगया हो तो दूसरा बदल देवे । दूसरे पुट देनेके बाद स्वाज्ञशीतल होनेपर कुल्हडमेंसे गोलियें निकालकर रसजोड़े । यह पञ्चामृत पोट्टी रस तैयार हुआ । इसरसकी १५ रती लेकर ३० कालीमिर्चीके साथ मिलाकर पीके साथ देनेसे ज्वररहित समस्त अतिसार, समस्त सुल, बकरी क्षीणता, मन्दाग्नि, वातव्याधि, १८ प्रकारके प्रमेह, अजीर्ण ये सब नष्ट होते हैं । १५ रती रसको १२ रती शर्करकेसाथ मधुमिलाकर रकातिपारमें देवे । गिलेयसत्त्व १२ रती, रस १५ रती मधुमें मिलाकर अतिसारज ज्वरमें दे । इसमें पथ्य पुराने चावल, दही, दूध, मसखन, सुलगुले बर्गुरह मिथान भोजन करे । कांस्यके पात्रमें भोजन, क्षार और अन्नका पतित्याग करे ॥ ५२ ॥

५३ पञ्चामृतमण्डूरम्

लौहं ताम्रं गन्धमन्नं पारदश्च समादाकम् ।
त्रिकटु त्रिफला मुसुं विडङ्गं चित्रकन्तथा ॥ २३१ ॥

किरातं देवकापुत्रञ्च हरिद्राद्वयपुष्करम् ।
 यमानी जीरयुग्मञ्च शरीधान्यकचव्यकम् ॥ २३२ ॥
 प्रत्येकलोहभागञ्च श्लश्वणचूर्णान्तु कारयेत् ।
 सर्वचूर्णस्य चार्द्धांशं सुशुद्धं लोहकिट्टकम् ॥ २३३ ॥
 गोमूत्रे पाचयेद्द्वयो लोहकिट्टं चतुर्गुणे ।
 पौनर्नवाष्टगुणितं काथं तत्र प्रदापयेत् ॥ २३४ ॥
 सिद्धेऽवतारिते चूर्णे मधुनः पलमानकम् ।
 भक्षयेत्प्रातरुत्थाय कोकिलाक्षाऽनुपानतः ॥ २३५ ॥
 ग्रहणीं चिरजां हन्ति सशोथं पाण्डुकामले ।
 अग्निञ्च कुरते दीप्तं ज्वरं जीर्णं व्यपोहति ॥ २३६ ॥
 ग्रीहगुल्मौ यकृच्चैवमुदरञ्च विशेषतः ।
 कासं श्वासं प्रतिद्वयायं कान्तिपुष्टिविधनम् ॥ २३७ ॥
 भै र, र चं, र. सु, वै क, पाण्डुरोगे ।

भापा—लोह, ताम्र, और अत्रकमस, शुद्धगन्धक और पारद त्रिवृद्ध, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, विद्रक, चिरायता, देवदारु, हृन्दी, दाहहृन्दी, पोहकरमूल, अन्वाशन, दोनोंजीरे, कचूर, धनिया, चव्य येसव १-१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर सबसे आधी मण्डूरभस्म मिलाकर समस्तसे चतुर्गुणित गोमूत्र और अष्टगुणित पुनर्नवाका काथ कड़ाहीमें डालकर लोह और मण्डूरभस्म डालकर पकावे । जबपककर गोलियें बधने लायक होजाय तब अन्यसबचीजें डालकर उदारकर स्वाद्गशीतल-होनेपर ८ तोले मधु मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ मासकी मात्रा तालमरानेके काथके साथ देनेसे शोथयुक्त पुरानीसङ्गहणी पाण्डु, कामला, मन्दागि, जीर्णज्वर, ग्रीहा, गुल्म, यकृत, उदर रोग, कास, श्वास, और प्रतिश्याय इनसबको नष्टकर कान्ति और पुष्टिको बढ़ाताहै ॥ ५३ ॥

५४ पञ्चामृतयोगः

पारदं रजतं ताम्रं साध्नकं हेम पञ्चकम् ।
 पञ्चामृतकमित्याहुः सर्वरोगनिवारणम् ॥ २३८ ॥
 अनुपानविभेदेन वेदनानाशकं परम् ।
 बहुवर्षञ्च विषमं कुण्डञ्चौरक्षतक्षयम् ॥
 प्रमेह पाण्डुरोगञ्च हन्यान्नाऽत्र विचारणा ॥ २३९ ॥
 ना वि, ज्वराधिकारे ।

भापा—पारद, रजत, ताम्र, अत्रक और सुवर्ण इनकीभस्में समभागमें मिलानेसे यह पञ्चामृतयोगकहलाताहै इसको बयो-कलके अनुसार मात्राका निर्धारणकर तत्परोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तरोग, नानातरहकीवेधेनी, पुराना विषमज्वर, कुष्ठ उर धत, क्षय, प्रमेह, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४ ॥

५५ पञ्चामृतसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं समादाय गन्धकं भागतः समम् ।
 त्रिभागं टङ्गुणं देयं विषभागत्रयं तथा ॥ २४० ॥
 भागत्रयं तथा देयं मरिचस्य प्रयत्नतः ।
 चूर्णीकृतं जलेनापि पिष्ट्वा रक्तिमितां घटीम् ॥ २४१ ॥

शुद्धवेरसेनैव भक्षयेद्विकामिमाम् ।
 जलदोषोद्भवे शोथे घोरेऽत्युपे जलोदरे ॥ २४२ ॥
 सन्निपातेषु घोरेषु सर्वैर्मिश्रैश्चेत्पिके गदे ।
 ज्वरातिसारसंयुक्ते शोथे चैव गलप्रहे ॥ २४३ ॥
 शिरःशूलगदे घोरे नासारोगे सपीनसे ।
 पञ्चामृतसो ह्येष सर्वरोगोपशान्तिदत्त ॥ २४४ ॥
 भै र, र सं, र. च, वै क, र सु, र त, नासारोगे ।

टि०—बुनविकित्तोद्यमित विष वरानि । यथास्थितयोऽपि शुद्ध विषेण न कापि हानिरेतद्व्यक्ते प्रत्युक्त गुणे योष्यपरितमुष्णन्वने ।

भापा—शुद्धपारा और गन्धर १-१ भाग, मुनासुहागा, शुद्धजन्गा और मरिच ३-३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धकर्ता नीलशर्षपत्रजलीमें मिलाकर जलकेसाथ घोटकर १-१ रतीरी गोलियें बनायें सुखाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे जलोदरसे भयदुष्ट शोथ, अत्युप-जलोदर, घोसाभिपात, समन्वच्छेमरोग, ज्वरातिसारसंयुक्तशोथ, गलप्रहे, घोराशिर शूल, नासारोग, पीनम इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ५५ ॥

५६ पञ्चामृतसः (द्वितीयः)

कृष्णाम्रकान्तुलिशं सरसं सहेम
 सम्मदितं कनकपत्रसेन गाढम् ।
 तद्गोलकं कमठपत्रगतं विषकं
 मूपागतं नियमकद्विविधोपधीभिः ॥ २४५ ॥
 पञ्चाऽमृतोऽस्य घृतमाशिक्षसामुपयुक्ता ।
 गुञ्जा गदान्हरति देहगदाञ्च मासात् ।
 आरोग्यसौख्यबलपुष्टिकरो नराणां
 संसेविता भगवतीर महेशकान्ता ॥ २४६ ॥
 र ल, र द, रसायनस, वै वि, क्षये । रसायनसं घातु-

पञ्चामृत. । सर्वरोगहराधिकारे च ।

भापा—कृष्णात्रक, बान्तलोह, हीरा, पारा, सुवर्ण इन-प्रत्येककीभस्म समभागलेकर घट्टीके पतोकिससे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ४ तद भोक्तेमेंसे लपेटकर ६-७ यन्त्रके बीचमें रख ४ पहरकी मध्यमागिसे पकावे । स्वाद्गशी मर्दनकर मिठीकी मूपामें बन्दर ल्युपुष्की यथाशक्ति आदि देकर रखछोडे । इसकी १-१ रती पी और मधुकेसाथ देनेसे एकमहीनेमें समस्तशरीरके रोगोंको दूरर आरोग्य, बल और पुष्टिको करताहै ॥ ५६ ॥

५७ पञ्चामृतसः (तृतीयः)

समसूताऽम्रलोहाना शिलाजतु विषं समम् ।
 शुद्धचीत्रिकलाकरायं ससृष्टं
 मृत नेपालताम्रञ्च सूतस्याने

पकीकृत्य नियोज्यन्तद्द्विगुञ्जं राजयक्ष्मनुत् ॥

पञ्चामृततरसो ह्येव चानुपानञ्च पूर्ववत् ॥ २४८ ॥

र. र., र. चं., र. र. स., नि. र., र. को., र. का., र. क. थो., वै. चि., र. क. ल., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, अत्रक, और लोहमस १-१ तोला, शिला-जतु, शुद्धवछनाग, गिलोय और त्रिफलाके बापसे शोषनक्रिया-दुआगुगुलु ३-३ तोले लेकर सबको इकट्ठेकर १-२ रोज मर्दनकर थोडासा धीकाहायदेकर कूटे फिर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म दूहोताहै । यद्यदिारदमस न मिलेतो नेपाली ताम्र-भस्मसे कामचलावेना ॥ ५७ ॥

५८ पञ्चामृततरसः (चतुर्थः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।

पञ्चामृतमिदं ख्यातं सर्वरोगहरं परम् ॥ २४९ ॥

शास्त्रे सौख्यप्रदं नृणां भुवि रोगनिवारणम् ।

पथ्यापथ्यविनिर्मुक्तं विष्णुना परिकीर्तितम् ॥ २५० ॥

सूतकान्तरविष्योम्नां शुद्धानां भस्मकं शुभम् ।

मारितं माक्षिकञ्चैव प्रत्येकञ्च पलं पलम् ॥ २५१ ॥

गन्धं पञ्चपलं दत्त्वा श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ।

आर्द्रकस्य रसं दत्त्वा त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २५२ ॥

कषाये च दशमूलस्य बहिमूलरसेन वा ।

युक्त्या तु कषयितेनापि मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ २५३ ॥

शोषयित्वा ततो घर्मे चूर्णयेत्तदनन्तरम् ।

त्रिवर्गत्रितयाम्मोदतिरहुत्तुम्बुकुरेणुकम् ॥ २५४ ॥

भार्ङ्गीभूमिम्बतिकाश्च जातीफलकशेरुकम् ।

पलार्धमानं सर्वाणि प्रत्येकैकं भवन्ति च ॥ २५५ ॥

त्रिधाय श्लक्ष्णचूर्णानि रसेन सह मेलयेत् ।

काकमाची च निर्गुण्डीवर्षाभूर्मुण्डिका तथा ॥ २५६ ॥

कषायेणाऽऽर्द्रकाम्मोभिर्भाविनाः परिकल्पयेत् ।

कषायेण गुह्यञ्चैव शिशुमूलरसेन वा ॥ २५७ ॥

पुनरार्द्रकतोयेन भावयित्वा घिमर्दयेत् ।

वदरास्थिरप्रमाणेन कर्तव्या मुष्टिका ततः ॥ २५८ ॥

मरिचानान्तु विशात्या बटीमेकान्तु भक्षयेत् ।

तत्तद्रोगहरो योगः सर्वरोगं विनाशयेत् ॥ २५९ ॥

हन्यात्सर्वविधं ज्वरक्षयकरं

पाण्डुञ्च शलाऽऽमघं,

मन्दार्मिं प्रहर्षीं गर्दाश्च कफजान्

घातोद्भवांश्चाऽऽमयान् ।

शुलभय्याप्यरघवी च पित्तजनितान्

द्वन्द्वोद्भवान् श्रोतजान्,

कासश्वासयथासमांश्च विविधान्

पञ्चामृतो देहिनाम् ॥ २६० ॥

यस्य रोगानुरूपेण पेयमत्र भिषग्वरैः ।

तकमन्तं प्रदातव्यं पथ्याय परिनिर्मितम् ॥

देयः स्तनभ्यवस्यापि सोऽयं पञ्चामृतो रसः ॥ २६१ ॥

र. र., घ., रससागर, रसायने ।

भाषा—पारा, कान्तलोह, ताम्र, अत्रक, और सोनामाखी इन प्रत्येककी भस्म १-१ पल, शुद्धान्यक ५ पल लेकर अदर खके रस, दशमूल और चिन्कमूलके बाथोंसे ३-३ रोज मर्दनकर धूपमें सुखाकर त्रिकटु, त्रिफला, त्रिजात, नागरमोथा, कुचिला, तुम्बुल, रेणुका, भारद्वाजी, चिरायता, कुटकी, जायफल, कसेरु, ये प्रत्येक २ तोले लेकर बारीकचूर्णकर (सकेसाथ मिलाकर मकोय, निर्गुण्डी, पुनर्नवा, गोररसगुडी इनप्रत्येकके बाथोंसे १-१ भावना देकर अदरखकारस, गुह्यीकाय, सहिजननी जङ्कारस, अदरखकारस इनतीकमसे १-१ भावनादेकर बेरकी गुल्लीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली २० कालीमिर्चोंके चूर्णकेसाथ मिलाकर सत्तद्रोगहरानुपानकेसाथलेनेसे समस्तज्वर, पाण्डु, शूल, मन्दार्मि, प्रहर्षी, कफरोग, घातरोग, गुल्म, अरुचि, पित्तरोग, द्वन्द्व, श्रोतोत्र, कास, श्वास, नाना-तरहके विषमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । खानेको छाछ-भात देना । दूधपीनेवाले बच्चोंकेलिये यह बहुतहितकरहै ॥ ५८ ॥

५९ पञ्चामृततरसः (पञ्चमः)

सूतं मृतं तथा चात्रं वङ्गं ताम्रञ्च कान्तकम् ।

मेलयित्वा समांशेन मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २६२ ॥

घर्षितां जलयोगेन घटीमेकाञ्च चूर्णयेत् ।

भक्षितो वल्लभात्रो हि कृष्णाक्षौद्रेण संयुतः ॥

कासश्वासाग्निहन्त्यांशु तमः सूर्योदये यथा ॥ २६३ ॥

र. प्र. सु., र. चं., कासेयासे च ।

भाषा—पारा, अत्रक, वङ्ग, ताम्र और कान्त इनप्रत्येककी-भस्मसमभागमें लेकर पीतुवारके रससे १-२ रोजमर्दनकर इसपी-बराबर सुगन्धबाला (हिंवे सं., तगरंगोला गु.)आचूर्ण मिलाकर एरुप्रीतमर्दनकर सुखाकर चूर्णकरके रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकी मात्रा चौंसठबरी पीपल और मधुमेसाय देनेसे कास, श्वास, पीनस, हस्तपादादिदाह, स्वरमेद, अरुचि, जीर्णज्वर इनसबको यह इस्तरह नष्टकरताहै जैसेकि सूर्यराउदय अंधेरेको नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० पञ्चामृततरसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागिकं भागौ द्वौ गन्धकस्य च ।

भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ २६४ ॥

मृताम्रञ्च चतुर्भागं भागमेकं विषं क्षिपेत् ।

अम्लेन मर्दयेत्सर्वं भागैकं यातकासनुत् ॥

अनुपानं लिहेत्सौद्रैर्विमीतकफल्लयचम् ॥ २६५ ॥

भे. र., वै. क., कासाधिकार ।

भाषा—शुद्धघात १ भा., गन्धक २ भा., ताम्रमस ३ भा.,

मरिच १० भा., अत्रकमस ४ भा., शुद्धवछनाग १ भा., ऐश्वर

घरवा काइएन पूनहर अन्वरागेंगे १-२ रोज मंदहर १-१
मायेदी गोळिये बनाकर रगळोडे । इतमेंगे १-१ गोली बहेदेही
एतके पून और मधुधेपाय देनेगे बात्रकाय निगुणलोडे
और अदुरानविरोगमें देनेगे प्रायः घभीरोगोंको दूरकराहे ॥६०॥

६१ पञ्चाशत्तरसः (सप्तमः)

भस्मीभूतमुपयन्तारदिनकृत्स्नान्नमर्त्यैः व्रमात,
संपृद्धैरिखितयत्रयमिभिमिहराग्भोर्विद्युतः कट्टकैः ।
निर्गुण्डीदशमूलयद्विरजनीश्रीयाऽऽद्रंकेर्भाषितो,
गोलीकृत्य विशोषितो निगदितः पञ्चाशृताग्न्या रसः ॥
नानेन सट्टराः कोऽपि रसोऽस्ति भुयनत्रये ।
निहन्ति सकलाग्रोगान् भयरोगमियाऽच्युतः ॥२६७॥
सर्वरोगाहरः सुनस्तच्छ्रेणाऽनुपानतः ।

अर्थ पञ्चाशृतां नृणां शिदृशानामियाऽशृताम् ॥२६८॥
दो. र., नि. र., र. थं, श. यो. त., थ, र्गायन श., यो त.,
र. का., र. र., धये ।

भाषा—गुण १ भा., रज २ भा., ताप ३ भा., पार ४ भा.,
अत्रकाय ५ भा., विरला, विरुद, विरान, विरुत, नागरमोषा
ये वग १-१ भागनेकर घरीकपूर्णकर पूरंगोंमें मिलाकर १-२
पहर गुणा मंदहर कायज, निर्गुण्डी, दशमूल, यिरक, हल्दी,
गोट, निबं, पीपल, और अदुरा इतके धायोंमें १-१ भागनाकर १-२
रगोली गोळिये बनाकर अन्वीतरद गुणाकर रगळोडे । इतमेंगे १-१ गोली
सप्तदशानुपानकेपाय देनेगे समन्वोगोंको यह श्मश्रुद नटकराहे
जैमे भयरोगको पानेकर नटकराहे । देवताभोरेलिये जैमे अच्युत
उरकाराहे वैमेही यह रोगियोंको उरकाराहे ॥ ६१ ॥

६२ पञ्चाशत्तरसः (अष्टमः)

स्वर्णरौप्यरविपद्मगलोहं
चन्द्रदृक्शिराचतुःशरभागाम् ।
मर्दितं तनुतरं दिनमेकं
भाषितं मकरपिच्छरसेन ॥
पल्लमात्रमरितलज्यरसान्तये
शार्कराऽऽद्रंकरसेन द्द्वीत ॥ २६९ ॥

नि. र., र. स, र. शं., र्गायनम, र. का, वै. वि, टो, ज्वरा-
धिकार ।

भाषा—गुणभम्म १ भा., रजभम्म २ भा., तापभम्म ३ भा.,
नागभम्म ४ भा., लोहभम्म ५ भा., केर एकदिनासूरी मंदकर
मकरके पिलसे यमालाभमाविकर १-२ रगोली गोळिये बनाकर
मुसाकर रगळोडे । इतमेंगे १-१ गोली धार और अदुराके रसकेपाय
देनेगे यह समतन्त्रोंको दूरकराहे ॥६२॥

६३ पञ्चाशत्तरसः (नवमः)

पारदश्च कियानुद्धं तुल्यं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
अन्नकान्तु द्वयोस्तुल्यं त्रिभिस्तुल्यस्तु शुगुलुः ॥२७०॥

सर्वाशिमृतासत्रं भावयेदौषधैः पृथक् ।
निर्गुण्डीगोभुरच्छिद्राफोकि.लाग्न्याहप्रिजे रसैः २७१
सप्तशरं ततो युज्याऽऽहाररक्तैः त्रिवल्लकम् ।
कोकिलाऽऽग्न्यस्य मूलानां पानीयमनुपाययेत् ॥२७२॥
नि. र., र्गायनं., यो. र., वै. वि., पातरके ।

भाषा—शुद्धारा और गन्धक १-१ भा., अन्नकभम्म २ भा.,
शुद्धगुणु ४ भा., शुद्धीगतघरवी बराबर केर निर्गुण्डी,
गोराद, गिनेय, लालमगाननीजडू, इनत्रयोंके रसोंमें ७-७
भागमंदकर १-५-१ रगोली गोळिये बनाकर रगळोडे ।
इतमेंगे १-१ गोली तातमगानेही जडूके पानीकेपाय देनेसे
यह बात्रकाको दूरकराहे ॥ ६३ ॥

६४ पञ्चाशत्तरसः (दशमः)

दशमाशिकत्रयाऽऽन्नकान्तमस्य प्रयेशयेत् ।
रसे सहैधि सप्ताहं मूढिकारसमर्दिताम् ॥ २७३ ॥
तां पिष्टि यन्त्रयोगेन पचेत्पञ्चाशृताह्वयः ।
रसोऽयं मधुनर्पिर्ग्या युक्तः सर्वरुजाहरः ॥ २७४ ॥
र. र. स, र्गायने ।

भाषा—एकभाग शुद्धरसको गलाकर विगी छोटमुद्धके पात्रमें
दशहर वयमें १ भाग शुद्धारा डाले फिर सोनामानी, कान्त-
लोह, अन्नप्रभम्म १-१ भाग मिलाकर दिव्यमुक्ताओंके रसमें
(दिव्यमुक्ताओं रमेन्द्रपुष्पमणिप्रथमिं देसलेना) यथा-
साम ७-७ रोज मंदहर पिथीकनाय शारावसामुद्धमें बन्दकर ६-७
कपडिमी देकर गुणाकर बात्रकायन्त्रमें रस ४ पहरकीबड़ीआंचसे
पकावे, स्वाश्रुतीकलोनेनर निहालकर रगळोडे । इतमेंगे १-१
रगोली अथवा योग्यमात्रमें मधु और पीकेपाय देनेसे यह सम-
स्तरोगोंको नटकराहे ॥ ६४ ॥

६५ पञ्चाशत्तरसः (एकादशः)

प्रयोऽंशं शुद्धमादाय पातितं स्पेदितं रसम् ।
तलमभ्ये विनिशिय मर्दयेदौषधद्रवैः ॥ २७५ ॥
तुरुदुग्धैः शाखोटदुग्धैरर्कतकूरुवैः ।
चन्द्रवह्नीचाऽऽरुकर्णाहृणधत्तूरकद्रवैः ॥ २७६ ॥
पतः समस्तैर्व्यस्तेश्च मर्दयेत्तं दिनत्रयम् ।
ततश्च पीतयेपीजिश्चन्द्रवह्नीरसेन च ॥ २७७ ॥
एवमेतैश्च सम्मर्द्य नष्टपिष्टं रसं चरेत् ।
दिनपटुं प्रमृष्टैवं यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ॥ २७८ ॥
त्रिदिनं तं पचेद्यन्त्रे पुनश्चरुष्य मर्दयेत् ।
पातनं मर्दनं त्वेयं यावद्भजति भस्मताम् ॥ २७९ ॥
तावदेवं चरेद्विमाश्रितश्च भस्म जायते ।
पले भस्मीकृतात्सूताहोहभस्म पलन्तथा ॥ २८० ॥
हृणान्नसत्त्वभस्मैकं पले प्रांशं शिलाजतु ।
एकं पले किशोरस्य शुगुलोश्च पलन्तथा ॥ २८१ ॥
पतत्सर्वं खल्वमभ्ये मर्दयेदतियत्नतः ।
शिलाजतुरसेनेव करण्डे विनिवेशयेत् ॥ २८२ ॥

वह्यपञ्चकमानेन मधुसर्पियुतो रसः ।
 प्रयोज्यो रोगराजस्य मूलच्छेदचिकीर्षुणा ॥ २८३ ॥
 पधं संसेव्यमानोऽयं रसेन्द्रो रोगराजजित् ।
 त्रिभिर्मासैर्न सन्देहः पद्मिः स्यान्न पुनर्मयम् २८४
 वर्षद्वयप्रयोगेण धलीपलितहा भवेत् ।
 पप पञ्चामृतो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २८५ ॥
 पथ्यं मृगाङ्गवज्ज्येयमुपचारोऽपि तादृशः ।
 स्वसंवेद्यादिशास्त्रोक्तरीत्या सोऽय प्रकीर्तितः ॥२८६॥
 रोगराजप्रणासार्थं सम्प्रदायप्रयोगतः ।
 शुद्धचीत्रिफलाकाथैर्दशमूलमवैस्तथा ॥ २८७ ॥
 संस्कृतो गुग्गुलुः प्रोक्तः किशोर इति वैद्यके ।
 श्यायतां सम्प्रदायेन सर्ववातनिवारणः ॥ २८८ ॥
 रसालं, क्षयाधिकारं ।

भाषा—उभुशान्तसंस्कारकियेहुए पारेको खरलमें डालधुव-
 रक, शाखोट (सीहोर) और आक इन प्रत्येकका दूध सोमलता
 (धोरवेल, पोखंदर । Sarcostemma Brevi-
 stigma, इ.) मूपाकर्णी, कालाधतुरा इनके अलग २ और
 मिलेहुए द्रवसे ३-३ रोज मर्दनकर पीलेबन्दालकेफल और
 सोमलताके रसोंसे ३-३ रोज मर्दनकर नष्टपिठी बनाकर डभक्त-
 यन्त्रमें रख तीनरोजकी धमि देकर ऊर्ध्वपातनकरे । स्वाग्रशी-
 तलहोनेपर यन्त्रको उधाइकर ऊपर लगेहुएऔर नीचे बचेहुए
 पारेको इक्का मिलाय पूर्ववत् मर्दनकर उडावे । इसपरह
 जवतक सम्पूर्णपारा तलस्थ न होजाय तवतक करताजाय ।
 फिर यह पारदभस्म, लोहभस्म, कृष्णाभ्रकसत्त्वभस्म शिलाजतु,
 कैशोरगुग्गुलु ये प्रत्येक १-१ पल लेकर खरलमें इक्के मर्दनकरे,
 जमगोली बधनेलायकहोजाय तब १५-१५ रतीकी गोलीयें
 बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीनेसाथ
 लेनेसे तीनमहीनेमें रोगराज (राजयक्ष्म) नष्टहोताहै और ६
 महीनेके सेवनकरनेसे पुनश्चथानकामय चलाजाताहै । दोषपैके
 प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोजाताहै इसमें पथ्य और उपचार
 सब मृगाङ्गीकीतरह समझना । यह स्वसंवेद्यादिरचितप्रयोगकी
 रीतिसे और सम्प्रदायके क्रमसे बहागवाहै । शुद्धची त्रिफला
 और दशमूल के हाथसे शुद्धकियेहुए गुग्गुलुको कियोरगुग्गुलु
 बहतेहै इसमें यातनाशकशक्ति अधिक होजातीहै ॥ ६५ ॥

६६ पञ्चामृतरसः (द्वादश)

गन्धकः पारदः शुद्धो मृतं नाम धिय तथा ।
 मरिचं शङ्खनामिच्छ समानेताम् चिन्तयैत् ॥२८९॥
 गुञ्जाद्वयमितो देयो नास्त्वाकर्णप्रपूरणे ।
 शृङ्गवेरसेनाऽयं त्रिदोषक्षयकासनुत् ॥ २९० ॥
 उवरितस्य हित् सूतो रोगघ्नः स्तम्भनाशकः ।
 रसः पञ्चामृतो नाम सर्वरोगहरो भवेत् ॥ २९१ ॥

र. का, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पात, नागभस्म शुद्धवतगाम ।

मरिच, शङ्खनामि ये सब समभाग लेकर १-२ पहर खरलकर
 रखछोडे । इसमेंसे अदररके रसकेसाथ २-२ रती नाक तथा
 कानमें डालनेसे त्रिदोषनक्षय, कास, ज्वर, स्तम्भ इनका नाश-
 करताहै ॥ ६६ ॥

६७ पञ्चामृतरसः (त्रयोदशः)

मृतरसपलमेकं सर्वमेकं गुड्ध्या-
 स्त्रिकटुकपलयुग्मं रकचिनस्य चैव ।
 त्रिफलपुरकट्टकीनेत्रसह्यापलानि
 इति मिलितसमस्तं सौरसारेण घृष्टम् ॥ २९२ ॥
 घृतमधुसितमिध्रं मर्दितञ्चैकरात्र
 प्रतिदिनमिह खादेन्मापकाणां दशैव ।
 हरति विविधरोगान् राजरोगञ्च पाण्डु-
 हृदयजठरशूलं श्वासकासाऽग्निमान्द्यम् ॥ २९३ ॥
 शिरसिजगुदरोगाऽशांसि गुल्मोदराणि
 हरति किल चिरोत्थान्याशुकुष्ठादिकानि
 वलिपलितयिनाशो वज्रकायो वलिष्टो
 रविशशिमकालं चाऽऽथुराप्नोति विद्वान् ॥२९४॥
 रसेन्द्रम्, सर्वरोगे ।

भाषा—पारदभस्म १ पल, शुद्धचीसत्त्व १ पल, त्रिकटु,
 रकचिनिक, त्रिफला, गुग्गुलु और डट्टकी २-२ पल लेकर सबको
 बृत्कपङ्कानकर शिलाजतुकेसाथ १-२ रोज मर्दनकर मुखाका
 इसकी बराबर घृत, मधु और शम्भू मिलाकर क्षिप्रमात्रमें
 रखछोडे । इसमेंसे १०-१० मासे तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे
 राजरोग, पाण्डु, हृद्रोग, जठर, शूल, श्वास, कास, मन्दाग्नि,
 शिरोरोग, गुदरोग, अंशु, गुल्म, उदर, चिरोत्थङ्क, वलीपलित
 इत्यादि दुस्तररोगोंको यह नष्टकर दीर्घायुको देताहै ॥ ६७ ॥

६८ पञ्चामृतरसः (चतुर्दश)

शुद्धगन्धकसूतो च माक्षिकं फान्तलोहकम् ।
 अन्नकञ्च समंशाश्च वह्निकायेन पेपयेत् ॥ २९५ ॥
 पथ्य क्षीरौदनं देयं तापे दधीधुदाकारकः ।
 पञ्चामृतरसो नाम सर्वज्वरनिपूदनः ॥ २९६ ॥
 वा, ज्वर ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक, सोनामापी, कान्तलोह, अन्नक
 इनकोभस्में समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिला
 कर चित्रककेजापसे १-२ रोजमर्दनकर ३ रतीसे ६ रतीतककी
 गोलीयें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु
 पानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तदारद
 मादमहोनेपर दही, ईस और शम्भूका प्रयोगकरने पथ्यमें दूध
 चावल देने ॥ ६८ ॥

६९ पञ्चामृतरसः (पञ्चदशः)

मृतसूताऽन्नलोहानि वज्रनागौ सम पूषकू ।
 सर्वतुल्यं चलिं दद्यात् मन्वेद्वारनालकैः ॥ २९७ ॥

तालमूलीशतावयवोर्गोक्षीरेण विदारिका
 धाराह्यजाश्वगन्धानां मर्दयेत्सप्तधा पुनः ॥ २९८ ॥
 भूधरे च पचेत्पश्चात्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
 द्विगुञ्जो रसर्राजेन्द्रः सर्वरोगक्षयान्तकृत ॥ २९९ ॥
 घलीपलितनिर्मोची सेवितः सन् जराञ्जयेत् ।
 प्रमेहं ग्रहणीञ्चार्शः क्षयं कुष्ठं हलीमकम् ॥ ३०० ॥
 नाशयेन्नात्र सन्देहो यथा सूर्योदयस्तमः ।
 शतवर्षाधिकस्यापि पुंसो रेतो विवर्धनः ॥
 आमघाताऽस्थिदालञ्च रसः पञ्चामृतो हरेत् ॥३०१॥
 रससागर, रसायने ।

भाषा—गारद, अन्नक, लोह, वक्र और नाग इनकी भस्मे सम-
 भाग, इनसबकी बराबर शुद्धगन्धक मिलाकर काशी, कालीसुसली,
 शतावरी, गोदुग्ध, विदारी, बाराही, अजगन्धा (बई), अस-
 गन्ध, इनप्रत्येकके रसोंसे ७-७ बारमर्दनकर गोलाबनाय सुपा-
 कर धारावसमुष्टमे बन्दकर भूपरयन्त्रमें ४ पहरी अग्निसे पकावे ।
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निम्बालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती
 उचितानुपाकेसाथ देनेसे यह क्षयादि समस्त रोगोंको नष्टकरता-
 है । बली, पलित, प्रमेह, ग्रहणी, अर्श, क्षय, कुष्ठ, हलीमक,
 आमवात, अस्थिशूल इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥६९॥

७० पञ्चामृतसः (चक्रादि) १६

शुद्धसूतस्य गन्धस्य तोलं तोलं सतैलकम् ।
 सम्मर्द्य लोहपात्रे च निक्षिपेदम्बुकाञ्जिराम् ॥ ३०२ ॥
 तयोः समञ्च केदारं ताम्रभस्माऽखिलैः समम् ।
 व्योपैश्वरुत्पलैः सार्धं कृत्वा भृङ्गजलैः सह ॥३०३॥
 मरिचप्रमिता कार्या यटी घर्मेण शोषयेत् ।
 सत्रिपाते च वाते च प्रतिश्रयाये च पीनसे ॥ ३०४ ॥
 कफघातभये रोमे शूले मन्दानले तथा ।
 अतिसारे ग्रहण्याञ्च सर्वश्लेष्ममच्छदे ॥
 चक्रपञ्चामृतो नाम हितो नृणामिवेश्वरः ॥ ३०५ ॥
 रससागर, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, और गन्धक १-१ तोला लेकर लोहेके-
 पात्रमें नीलवर्णकजलीकर बटुतेलेसे एकरोजमर्दनकर अम्बुकाञ्जीसे
 १ रोजमर्दनकर फिर कालीमिठी २ तो, ताम्रभस्म ४ तो और
 त्रिकटुकाचूर्ण ४ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय भयंकरे रससे
 २-३ रोजमर्दनकर मरिचवराबर गोलिये बनाकर धूपमें सुखाकर
 रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली तत्तदरोगोचितानुपाकेसाथदेनेसे
 सत्रिपात, वातरोग, प्रतिश्रयाय, पीनस, कफघातरोग, शूल,
 मन्दाग्नि, अतिसार, ग्रहणी, श्लेष्मघातरोग इनसबको यह नष्ट-
 करताहै ॥ ७० ॥

७१ पञ्चामृतसः (सप्तदशः)

पूर्वं यानि विद्योघितानि च पुनः
 कान्ताऽन्नशुद्धानि च,

पकान्येव हरेद्य गन्धकसमा-
 न्येतानि सम्मेलयेत् ।
 तच्चूर्णं सघृतञ्च शोधितरसं
 शास्त्रक्रमाद्दे भिषक्,
 तस्मिन्स्थ स्थिरमानसः सुविधिना
 क्वाथं सुतप्तं क्षिपेत् ॥ ३०६ ॥

पञ्चामृतमूलेन दशमूलेनाऽऽवर्गमूलेन ।
 मधुसञ्जीवनीमाकंविदारिमूलेन च क्वाथः ॥ ३०७ ॥
 गुडूची हस्तिरुर्णी च मुशली थावणी तथा ।
 शतावरी च पञ्जैताः क्वाथः पञ्चामृतो मतः ॥ ३०८ ॥
 कपभरुजीवकयुक्तं मेदायुग्मञ्च ऋद्धिघृद्धौ च ।
 काकोलीद्वयसहितं काथः कथितोऽऽवर्गस्य ॥ ३०९ ॥
 थ्रीपर्णिका च वृहती च वसन्तवृत्ती,
 व्याघ्रप्रिमन्थशुकनासकशालपर्ण्यः ।
 विल्वञ्च गोशुष्कमेव सुष्टुष्टपर्णी,
 क्वाथो बुधैश्च कथितोऽदशमूलसञ्चः ॥३१०॥
 ज्वलनस्यं तत्सर्वं शनैः शनैरेव पचनीयम् ।
 प्रभाततथाऽऽरम्भितमस्तं याति दिवाकरे यावत् ३११
 पाराऽवस्तानसमयं ज्ञात्वा तत्रैव चित्रकं षट्क्रीम् ।
 त्रिकटुकचूर्णञ्च तथा रसमानं तद्विनिक्षिपेत्प्राज्ञः ३१२
 गुडपाकसमानेन च घट्टिस्थे तान्यौषधानि भिषक् ।
 उत्तारणीयमग्नेर्भूमौ संस्थापनीयञ्च ॥ ३१३ ॥
 रसेन्द्रम्, र, रसायने ।

३१०-पूर्वं अन्वार्भमे यानि साम्प्रतमेव वषदिष्यमाणानि विशेषितानि
 मर्दनादिभिर्विद्युदिमापादितानि पृथक् पुन विशेषितानि भस्मीकृतानी-
 स्थं । एतस्यैस्य स्तम्भेवरूपं परान्येवेति विशेषणं दत्तम् । तानि बानी
 ल्यपश्चात् कान्ताऽन्नशुद्धानि इति शीघ्रिण, चतुर्षो गन्धक, शोधितरसश्च
 पथम्, म्नेषा शाश्वोदिष्टमणे पर्णौ सम्प्राय पुनर्भावात् दातव्येति रह-
 स्यमवगन्तव्यम् । रसावतारं तु “रसगन्धकत्रैभ्यस्तुल्य लोह विमर्दयेत् ।
 पथामृताऽऽवर्गभ्याः दशमूलेन वा पुन ॥ क्वाथं कृत्वा यथालम्ब स्वेदनीय
 मुहुर्मुहुः सर्वरार्थं दीपकेन निक्षिप्याऽऽवसथायकं । रमन्तु विरिद्धं चित्र
 कश्च विनि क्षिपेत् ॥ गुडनुष्यो जातपात्र सिद्धस्तद्वानभिर ॥” इति पौडन
 विलक्षणता प्रदर्शिता सा ज्ञानपूर्णा वा स्वावस्थानपूर्वा वा स्वादिति शुभोभि
 र्दिग्भायनीयम् ॥

भाषा—वान्तलोह, अन्नक और ताम्रभस्म १-१ तोला,
 गन्धक ३ तो, शुद्धपारा ३ तो, लेकर पारेगन्धकनी नीलवर्ण-
 कजलीमें सबको मिलाकर घृताफलोहेकी वडाहीमें डेरके कोय-
 लीपर गलाकर तजि गोबरपर रखेहुए केलेके पतेपर ढालकर
 इससे केलेके पतेमें द्वाबर गोबरसेदवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर
 निम्बालकर बारीकचूर्णकर लोहेकी कडाहीमें ढालकर अग्निर
 चढावे फिर पञ्चामृतमूलशय, दशमूलशय, अष्टवर्गमूलशय,
 मीठीजोडी, भंगरा, विदारीमूल इनका अष्टमादावदिष्ट उष्णकाथ
 थोड़ा २ डेकर प्रत्येकसे १-१ पहरेपछावे, एककेबाद दूसरा
 काथडाले । सूर्योदयमें बारम्बार सूर्यास्ततक सबसे काथोंमें
 पकासवे फिर चित्रक, काकडासींगी, त्रिकटु इन समभागलेकर

कपड्छानचूर्णक ९ तोले कड़ाहीमें डालकर पकावे, यहध्यान रखके कि कड़ाहीमें नीचे लगाने न पावे, जन्मुडकी चाशनीके सदृश होजाय तब नीचे उतारले, स्वादशीतलहोनेपर १-१ माशेकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक दुष्टप्राऽनुपानकेसाथदेनेसे ऋष्यजिह्वादि समस्तदुष्ट दूरहोतेहैं । गिलेय, हस्तिकर्णपलाश, मुशली, गोरखमुण्डी, शतावरी यह पञ्चामृत कायहै । वेलगिरी, सोनापाठा, गंभारी, पाटला, अरणी, शालपर्णी, पृथग्णी, गोखरू, दोनोंकटेरी यह दशमूलेहै । काकोली, क्षीरकाकोली, जीवक, ऋषभक, मेदा, महामेदा, ऋद्धि, बुद्धि यह अष्टवर्गहै ॥ ७१ ॥

७२ पञ्चामृतसः (अष्टादशः)

रसगन्धकवद्वाऽत्रं लोहभागं समांशकम् ।
पञ्चवक्त्रेण सम्प्रोक्तः पञ्चामृतरसोत्तमः ॥ ३१४ ॥
पञ्चवल्लमिमं खादेत्कणाक्षौद्रिण संयुतम् ।
धातुक्षयाऽग्निमान्द्ये च कासं पञ्चविधन्त्या ॥ ३१५ ॥
जीर्णञ्जरमजीर्णञ्च शोफपाण्डुहलीमकम् ।
अनुपानाऽनुयोगेन नाशयेन्नात्र संशयः ॥ ३१६ ॥
रसायनसं., क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, वद, अभ्रक, लोहइनकी भस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ पहल्योत्कर रखडोड़े । इसमेंसे १५-१५ रतीकीमात्रा मधुपीपल अथवा ततद्रोगहरानुपानकेसाथ खानेसे धातुक्षय, अग्निमान्द्य, ५ प्रकारका कास, जीर्णञ्जर, अजीर्ण, शोफ, पाण्डु, हलीमक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ पञ्चामृतसः (ऊर्ध्वविंशः)

मृतं शुल्वं मृतं तीक्ष्णं मृतं स्वर्णञ्च तुत्यकम् ।
सर्वतुल्यं गन्धकञ्च शुद्धं तद्वत्प्रमर्दयेत् ॥ ३१७ ॥
पुटेद्रजपुटे चारमेकं सिद्धो भवेद्रसः ।
एष पञ्चामृतो नाम्ना मुखरोगनिवारण ॥ ३१८ ॥
आंघ्रतालवादिशामनो बलीपलितनाशनः ।
मुखरोगी त्यजेदित्यं लघणञ्चोष्णभोजनम् ॥
कफकारि च यत्सर्वं मिष्टानञ्च दधीनि च ॥ ३१९ ॥
र. म. मा. ना. धि. मुखरोगे ।

भाषा—तावा, लोहा, सोना, तुत्य इनकी भस्में १-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा, लेकर पानवरीदेकरससे १-२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे, स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रती समयोचितानुपानके साथ देनेसे आंघ्र और ताड़केरोग, बलीपलित इनसनको यह नष्टकरताहै । पच्यमें लघण, उष्ण, बषट्कारी, मिष्टान और दर्शको छोड़कर उचितवस्तुका भेदनकरे ॥ ७३ ॥

७४ पञ्चामृतसः (विंशः)

जातीफलं जातिपत्रं लघुं केलरन्त्या ।
चातुर्जातफण्डुचौ च पिप्पली मरिचानि च ॥ ३२० ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं वरी मूलन्तु वंशजम् ।
सर्वं पिप्पु सुसुक्ष्मञ्च वाससा परिशोधयेत् ॥ ३२१ ॥
लोहचूर्णमथाऽत्रं वा ताप्रभस्म च बह्वकम् ।
रसरजञ्च नागञ्च चूर्णस्याऽर्धे प्रयोजयेत् ॥ ३२२ ॥
नागवह्लीरसेनेव ह्यथवा माक्षिकेण च ।
शुट्टिका तस्य कर्तव्या माषद्वयप्रमाणिका ॥ ३२३ ॥
दोषमग्निं बलं वीक्ष्य यथोक्तं भक्षयेद्बुधः ।
गोदुग्धस्याऽनुपानञ्च ह्युष्णञ्चैव विशेषतः ॥ ३२४ ॥
वर्धनं सर्वधातूनां धीर्यबुद्धिबलप्रदम् ।
बलुभाकान्तिरुचिदमग्रेः सुदीप्तिकारकम् ॥ ३२५ ॥
कफरोगहरञ्चैव बुद्धिज्ञानादिकारणम् ।
बन्ध्या च लभते गर्भं पण्डोऽपि पुरुषायते ॥ ३२६ ॥
नपुंसको याति पुंस्त्वं रामाः कामयते शतम् ।
यत्रकायः शुद्धधातुर्दिव्यदृष्टिस्तुजायते ॥
जराव्याधिविनिर्मुक्तो वर्षसेवो यदा भवेत् ॥ ३२७ ॥
वं से., रसायने ।

भाषा—जायफल, जाविनी, लौंग, केसर, चातुर्जात, सोंठ, पीपल, मरिच, चित्रक, पिपलामूल, शतावर, बशलोचन सब सम भागलेकर कपड्छानचूर्णकर रखले फिर लोहभस्म अथवा अभ्रक-भस्म, ताप्र, वद, पाद और नागभस्म, ये पाचों मिलकर पूर्व चूर्णसे आषेप्रमाणमें मिलाकर पानकेरस अथवा मधुसे १-२ दिन घोटकर २-२ माशेकीगोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अथवा दोष और अग्निबल देखकर मात्रा कायम-कर उष्णगोदुग्धकेसाथ देनेसे धातु, धीर्य, बुद्धि, बल और रुचिइनकाहास, मन्दाग्नि, कफरोग, बुद्धिमान्द्य, बन्ध्यात्वदोष, पण्डत्व, दृष्टिदोषइत्ये इनसनको दूरकर बुद्धिपेको दूरकरताहै ॥ ७४ ॥

७५ पञ्चामृतसः (एकविंशः)

कर्षं रसाद्रन्धकतदच कर्षं
विमर्द्य खल्वेऽन्नकमेव तावत् ।
क्षेप्यं तथा ताप्यमयोरजञ्च
गव्येन चाऽऽज्येन विमिश्र्य किञ्चित् ॥ ३२८ ॥
शरावयुग्मस्यमतो मृतं तत्
समुद्धृतं सर्वमपि प्रयत्नात् ।
पांशुमूर्धे च निधाय पात्रे
तदेव पात्रं समुद्धृदा प्रलिम्पेत ॥ ३२९ ॥
मन्दमन्दं वह्निना क्षाययेत्-
द्यावद्यामानां प्रयं स्वाद्वातात्म् ।
ग्राह्यं देयं रक्तिकेकप्रमुद्धया
यावन्मापो नाऽधिकं मानवेभ्यः ॥ ३३० ॥
शृङ्गा वन्देदीपनं हन्ति रोगान्
पाण्डुरीहोन्माददुर्नाममहान् ।
पित्तं साऽम्ल साऽतिसारं ऽरञ्च
सद्यः श्लाघान् विप्रहृष्यामयाञ्च ॥ ३३१ ॥

अयं हि पञ्चामृतनामधेयो

रसेन्द्रयोगः क्षयरोगहारी ।

वाताऽस्रकुण्डं श्वयथुं च हन्यात्

स्वयोगयुक्तः सकलान् विकारान् ॥ ३३२ ॥

र. सु. क्षयादौ

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक अत्रक सोनामाखी और लोह-भस्म ये सब समभाग लेकर पारे गन्धक की नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर थोड़े गायके घी का प्रक्षेप देकर मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्द कर ४-५ कपड़मिट्टीदेकर अच्छीतरह सुखनेपर लावपुटकी अग्नि दे फिर स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर तुलसी प्रसूतिके स्वर-समें एकदोरोज मर्दन कर सुखाकर पुन कजली कर आतशी शीथीमें भरकर बालुका यन्त्र में बन्द कर तीन प्रहरकी मन्दा-ग्निमें पकावे स्वाङ्गशीतल होनेपर निकाल रखछोड़े इसमेंसे १ एक रत्ती उचिताऽनुपानके साथ आरम्भकरे और रोज एकएक रत्ती बढाकर एक मासकी मात्रा कायमकर उचितसमयतक खानेसे मन्दाग्नि, पाण्डु, हीहा, उन्माद, बवासीर, अम्बलपित्त, ज्वराऽतिसार, साय शूल, संप्लूणी, वातरक, शोथ, इत्यादि सम-स्तरोगोंको यह बहुत शीघ्र नष्टकरता है ॥ ७५ ॥

७६ पञ्चामृतरसायनम्

भस्मसूताऽभ्रवङ्गाऽयोयुक्तं द्विघ्नं शिलाजतु ।

तद्वरामधुना सेव्यं द्विमाषं सर्वमेहजित् ॥ ३३३ ॥

पञ्चामृतमिदं वृष्यं सुभागञ्च रसायनम् ।

स्वयोगयुक्त्या कृच्छ्राऽमधुषुष्कपाण्डुक्षयापहम् ॥ ३३४ ॥

वरास्थाने भवेद्भान्नी कुर्याद्वा गुणसत्तमाम् ।

केवलं वाऽथ मधुना मेहघ्नी बलवर्धनी ॥ ३३५ ॥

र. सि., मेहे ।

भाषा—पारद, अत्रक, वङ्ग, लोह इनसबकीभस्में समभाग, इनसबसे द्विगुणबद्ध शिलाजतु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ या २ मासे लेकर त्रिफलाकेचूर्ण औरमधुके साथ देनेसे यह सम-स्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ इसका प्रयो-गकरनेसे मूत्रकण्ठ, पथरी, शुष्कपाण्डु और क्षय नष्टहोतेहै । अनुपानमें त्रिफलाके स्थानमें आबले अथवा हरे वा केवलमधुसे कामलेसकेहै । यह रसायन धातु औरबलको बढानेवालीहै और खानेमें कष्टप्रद नहींहै ॥ ७६ ॥

७७ पञ्चामृतलोहगुग्गुलुः

रसगन्धकताराऽभ्रमाक्षिकाणां पल्पलम् ।

लोहस्य द्विपलञ्चापि गुग्गुलोः पलसप्तकम् ॥ ३३६ ॥

मर्दयेदायसे पात्रे दण्डेनाऽप्यायसेन च ।

कटुतैलसमायोगाद्यामद्वयमतन्द्रितः ॥ ३३७ ॥

मापमात्रप्रयोगेण गदा मस्तिष्कसम्भवाः ।

स्नायुजा वातजाश्चापि विनश्यन्ति न संशयः ॥ ३३८ ॥

यं पञ्चामृतलौहाख्यो गुग्गुलुर्न हरेद्रदम् ।

नासौ सजायते देहे मनुजानां कदाचन ॥ ३३९ ॥

भै. र., परिशिष्टे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, रजत, अत्रक, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में प्रत्येक १ पल, लोहभस्म २ पल, गुग्गुलु ७ पल लेकर लोहेके बर्तनमें लोहेके ढँडेसे थोडासाकडवातेल डालकर दोपहरतक लगातार मर्दनकर १-१ मासकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे मस्तिष्करोग, स्नायु, वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै । शरीरमें ऐसाकोईरोगनहींहै जिसको यह (पञ्चामृतगुग्गुलु) नष्ट-नहींकरसकाहो ॥ ७७ ॥

७८ पञ्चामृतलोहम्

कनकभास्करताप्यघनायसां

यदि रजस्त्रिफलाभ्युपरिच्युतम् ।

खरमयूखविशोपितशोपितं

दलितमाज्यसितामधुयोजितम् ॥ ३४० ॥

हरति हृद्गुजामसमीरणं

क्षयमुदारमुरःक्षतपीनसम् ।

प्रकुरुते रमणीरमणीयतां

हृतहृदां सुहृदां रतिपाटयम् ॥ ३४१ ॥

लो. प. (स.), ना. वि., क्षये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, सोनामाखी, अत्रक, लोह इनसबकी भस्में समभागलेकर त्रिफलाके कडेसे कड़ीधूपमें कईभावनाएं देकर कपड़छान चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २ या ३ रत्तीकी मात्रा घी, शक्कर और मधुकेसाथ मिलाकर खानेसे हृद्रोग, आम-बाद, क्षय, अत्यन्तबढ़ाहुआ उरःक्षत, पीनस, नपुंसकता इन-सबको यह दूरकरताहै । स्त्रियोके सौन्दर्यको बढाताहै । शुद्धार रससे शून्य हृदयोंकोभी रतितत्पर करताहै ॥ ७८ ॥

७९ पञ्चामृतवटी

पारदं गन्धकं ताम्रमभ्रकं मरिचानि च ।

समभागमिदं चूर्णं चाङ्गैरीरसमर्दितम् ॥ ३४२ ॥

मर्दितं हि रसे भूयो जयन्तीसिन्धुवारयोः ।

भावनाऽपि च कर्तव्या गुञ्जापरिमिता वटी ॥ ३४३ ॥

ततोदकानुपानेन चतस्रस्तिष्ठ एव घा- ।

वह्निमान्धे प्रदातव्या वट्यः पञ्चाऽमृताः शुभाः ३४४

र सं, र. सु, र. क., र. र., अजीर्णं ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, ताम्र, अत्रकभस्म, मरिचये सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजली में मिलाकर खड़ी तिवतियाके रससे २-४ रोज मर्दनकर जैत और नितुं ष्टीके स्वसकी १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ अथवा ४ गोलियें गन्धकके साथ देनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, यकृत, प्लीह जीर्णन्दर इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ७९ ॥

८० पत्रवासकपाकः

पत्रवासः प्रस्थमेकं क्षीरे द्रोणमिने पचेत् ।

घृतप्रस्थसमायुक्तं विपचेन्मुदुवहिना ॥ ३४५ ॥

खण्डं शुद्धं तुलार्धञ्च प्रस्थार्धञ्च मधु क्षिपेत् ।
 क्षिण्णभाण्डे विनिक्षिप्य स्थाप्यं सर्वं प्रयत्नतः ३४६
 चातुर्जातं लघ्नानि पिण्णली च पुनर्नवा ।
 नागार्जुनी स्वगुत्ता च गोक्षुरं पिष्टुमात्रया ॥ ३४७ ॥
 मञ्जिष्ठा चाऽध्वगन्धा च हास्त्रमात्रं तथैव च ।
 नागवह्नीसमुद्भूतं चङ्गाप्रकसमं तथा ॥ ३४८ ॥
 लोहं शुल्यं तथैकैकं शाण्ड्यमानकम् ।
 धीपासत्वरं तवक्षीरं पलायार्धञ्च प्रकल्पयेत् ॥ ३४९ ॥
 बालकं चन्दनं मांसी कर्पूरं वंशलोचनम् ।
 जातोफलं जातिपत्री केदारं तगरं तथा ॥ ३५० ॥
 पलमात्रं प्रदातव्यं महाव्याधिनिवारणम् ।
 कासं श्वासं तथा पाण्डुं प्रमेहस्य विनादानम् ॥ ३५१ ॥
 पिच्छोद्भवं महादोषं मूत्रकृच्छ्रञ्च दारणम् ।
 ये चान्ये शुक्रजा दोषा एव सर्वाग्निनाशयेत् ॥
 बलवीर्यकरः पुंसां पत्रबासाऽवलहेकः ॥ ३५२ ॥
 वि. र. भ., पा. व., महान्यायौ ।

टि०—अत्र पत्रवाम शब्देन शारिरेणो ग्रहीतव्यं, पुनर्नवापाया
 शारिरव्यवस्थेन पत्रवामेति मान्ना प्रसिद्धे ।

भाषा—एस्मेरुमार्दकेचूर्णको १६ सेरगोदुग्धमे पकावे, उसमे
 १ सेर गोघृत डाले, जब भावा तैयारहोजाय तत्र ५० पल खाड
 डालकर चायनीबले । स्वाह्नशीतलदोषेपर ८ पल मधु मिलाकर
 चिकने वर्तनमे रखाडोडे । इममे चातुर्जात, लौंग, पीपल, पुन-
 न्नावा, छोटीदूधी, केवांचकेबीज, गोखरु, मजीठ, असगन्ध
 येसत्र १-१ तोला, पानकीजड, वज्र, अत्रक, लोह-ताम्रगन्ध
 ६-६ मापे, गिलोयसत्त्व, तीपुत्र २-२ तोले, सुगन्धवाला,
 चन्दन, जटामांसी, कपूर, वंशलोचन, जायफल, जावित्री, केसर,
 तगर येसत्र १-१ पल डालकर मिलाकर रखाडोडे । इममेमे
 १-१ तोला अथवा अग्निपल देसपर मात्रा लेनेमे कास, श्राग,
 पाण्डु, प्रमेह, पित्ततोष, नषांकर मूदहञ्ज, दुःशय्याडुक्करोसु,
 क्षमवमरो यह नटकताहै ॥ ८० ॥

८१ पथ्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पथ्या लोहरजः शुण्ठी तच्चूर्णं मधुसर्पिषा ।
 परिणामोद्भवं शूलं सद्यो हन्ति त्रिदोषजम् ॥ ३५३ ॥
 र. र., र. प्र., ४ यो त., दो, रगायनं, नि. र., र. वि., यो
 म, च. द., भा. प्र., यो. र., वै द, र का, १ मा, ग. नि, परि
 णामराले । दुग्धचित्कणा अधिक्तरया हर्यते ।
 भाषा—है, लोहभस्म मोंड, सम्यक्समागलेकर मिलाकर
 रखाडोडे । इममेमे १-१ मात्रा मधु और पीकेमाय लेनेमे
 त्रिदोषत्र परिणामशूल नटरोताहै ॥ ८१ ॥

८२ पथ्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

नून्या अयोरजः पथ्या हरिद्रा क्षौद्रसर्पिषा ।
 चूर्णिताः कामली लिखाट्टुसौत्रेण चाऽभयाम् ॥ ३५४ ॥
 च. सं., नि. र., च. द., वै वि., दो, कामलायाम् । वै वि,
 अयोरजः प्रभृति चूर्णम् ।

भाषा—लोहभस्म, हँ, हल्दी येसवसमभागलेकर मिलाकर
 रखाडोडे । इममेमे १-१ मात्रा अथवा बयोबलानुसार मात्रा
 मधु और पीकेमाय लेनेमे कामलारोग नटरोवे अथवा इषके
 बभावेमे शुड और मधुके साथ हँका चूर्ण देवे ॥ ८२ ॥

८३ पथ्यादिलोहम् (तृतीयम्)

पथ्यारजः सममयोरजसा विषकं
 गोप्रसवे समगुडं विधिवत्प्रयुक्तम् ।
 शूलं निहन्ति परिणामसमुद्भवंत-
 द्भागोरयीजलमिवातिविबुद्धमेतः ॥ ३५५ ॥
 लो. व. (स.), परिणामशूले ।

भाषा—हँ और लोहचूर्ण समभागलेकर अठ्युने गोमूत्रके
 धीरे २ पत्रवे, पाकहोनेपर इतहीबतार पुरानागुडमिलाकर
 रखाडोडे । इममेमे १ माशेमे ३ मासेतक समयोचिनानुगानके-
 साथ लेनेमे परिणामशूलको यह इसतरह नटकरताहै जिनतरह
 गहोदर केदुह्ये पापको नटकरताहै ॥ ८३ ॥

८४ परमेश्वरो रसः

रसं वज्रं स्वर्धकान्ते मुण्डञ्च मारितं समम् ।
 माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरजैर्द्रवे ॥ ३५६ ॥
 संसाहं मर्दयेत्सर्वं तत्राले चाऽन्वितं पुटेत् ।
 भूधरे दिनमेकन्तु स्यातः सिद्धरस परः ॥ ३५७ ॥
 शुक्लं च मधुना लेहां चर्गामृत्युजरापहम् ।
 दिव्यकायां नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपराक्रमः ॥ ३५८ ॥
 श्वेतपौनर्नवं मूलं क्षीरपिष्टं सदा पिबेत् ।
 भक्षयेद्वा सितार्धं प्रागरुं परमे रसे ॥ ३५९ ॥
 र. सं, रसायने ।

भाषा—शुद्धारा, हीरा, मुक्क, कान्त, मुण्ड इनही भस्मे,
 शुद्धसोनामासी और गन्धक समभागलेकर इफे दारकर जभी-
 रीके रसमे ७ रोजमर्दनकर गोला बनाय दसरायस्युद्धमे बन्दर
 एरदिन भूधरपत्रमे पकानेमे यह रग मिद्धोगा । इममेमे १-१
 रती मधुसेसाय १ वर्षपर गानेमे दिव्यकाय होताहै इतरके
 नानेकेबद सपेद पुनर्नवाजीजड १ तोला दूधमे पीगकरगीवे
 अथवा शररवेमाय श्रामञ्जीजीका मेवनकरे ॥ ८४ ॥

८५ परशुरामकुटारो रसः

नागगन्धरसञ्चैव कर्परी तु द्विभागतः ।
 वेदभागं विषकञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ ३६० ॥
 गुञ्जामासुं तु चट्टिको ह्यनुपानेन सेत्रयेत् ।
 सन्निपातकुलं हन्ति जामदग्न्यकुटारकः ॥ ३६१ ॥
 वै वि., ज्वराधिहारः ।

भाषा—नागभस्म, शुद्धगन्ध और पार १-१ मात्र,
 गर २ भा., विदह ४ भा, मषका का इतान पुनहर परिण-
 म्यरती बीजमण्डवरीमे मिश्रकर जम्बीरकेरामे १ रोजमर्द-
 कर १-१ रतीही मोरिसे बदारर रखाडोडे । इममेमे १-१

गोली तत्सममयोचितानुपानकेसाप देनेसे यह सतिपातके कुलको नष्टकरताहै ॥ ८५ ॥

८६ परहितरसः

श्वेतां पाठां जटां श्वेतां श्वेतां चैव पुनर्नगाम् ।
पिप्पुा जलेन ताः कवसैः प्रनुर्यान्म्लमूपिकाम् ॥३६२॥
स्थालीमध्ये च तां क्षिपेवा क्षिपेत्संशोधितं रसम् ।
क्षिपेदुपरि सन्पेय्य द्वयञ्जलिप्रमितं पटुम् ॥ ३६३ ॥
पिधानं तन्मुखे दत्त्वा सन्निरुध्याऽतियत्नतः ।
अधस्ताज्ज्वालयेद्बहिं पिधान्यामन्मुनिक्षिपेत् ॥३६४॥
यामद्वितयपर्यन्तं जातेऽथ शिशिरे ततः ।
क्रौडिकेशैः समाकृष्य मृतं पारदमाहरेत् ॥
नचदेतायता भस्म पुनरेव पुटेऽसम् ॥ ३६५ ॥
तद्भस्मातिविषं विषं कृमिहर व्योषोत्तमा गन्धजं,
चूर्णं द्वादशाहाटकं खलु गुडो द्वात्रिंशदंशोन्मितः ।
तत्सर्वं परिचूर्णितं प्रतिदिनं बहुश्चतुर्भिर्मितं,
चेर्यं हन्ति समस्तरोगानिवह नागं शरत्मानिव ॥३६६॥
विशेषात्सर्वकुष्ठुध्नो रसोऽयं परिकीर्तितः ।
ख्यातः परहितो नाम्ना भानुना भूरिभानुना ॥३६७॥
र र स, कुष्ठे ।

टि०—श्वेतादीना पारदस्वच प्रत्येक पल्मानम् ।

भाषा—सपेदकूलकीकोयल, पाठाकीजड, वच, सपेदपुनर्नवा, इनसबको जलमें पीस मूपावनाय अन्दर शोधनकियाहुआ पाराडालकर मूपाको हडीमें रखदे, मूपाके ऊपर थारीकपिसा हुआ ३२ तोले सेंधानमकडालनर हडीकामुह्वदकर बूलेपर रप ऊपरके टक्कनमें पानीभरदे फिर तीनपहरतक बड़ीआवधे । स्वाह्न शीतलहोनेपर धीरजसे समुद्ररोकोलकर सुअरके बालोंके कूचेसे हडीमेंसे पारेको निकालले । यदि इतनेमें भस्म न हुईहो तो फिर दुबारापूर्ववत्करे । फिर यह पारदभस्म २ तोला अतीस, शुद्धबछनाग, विडङ्ग, त्रिकटु त्रिफला और गन्धक १-१ तोले, पुषागुड ३२ तो, लेकर सगची गेंगा कपड्डखचचूर्णकर गुडमें १२-१२ रत्तीकी गोलियें बनाकररखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्प्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको इततरह नष्टकरताहै जैसेकि मरुट सर्पोंका नाशकरताहै विशेषकर कुष्ठ और उपदचको दूरकरताहै यह सूर्यका बहाहुआहै ॥ ८६ ॥

८७ परानन्दो रसः

मृतसूताऽम्रकं गन्धं तुत्यं सप्तदिनावधि ।
शिशुमूलदलेर्मैथं तद्गोलं भाण्डमध्यगम् ॥ २६८ ॥
रङ्गा पन्त्वा लघुत्वेन शाकक्राष्ट्रिदिनावधि ।
परानन्दो रसो नाम घृतेर्बल्ल सदा लिहेत् ॥३६९॥
दिनेकं निफलाक्याथैः कुष्ठं सम्मग्नपाचयेत् ।
तच्छुष्कं चूर्णितं कर्षं मघ्याज्याभ्यां लिहेद्भुजु ॥
सवत्सरप्रयोगेण जीवेद्वेगविवर्जितः ॥ ३७० ॥
र स, रसायनम्, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, अम्रकभस्म, गन्धक सबसमभाग लेकर नीलगंधकजलीकर ७ दिनतक सहिजनकीजड और पत्तोंकेरससे मर्दनकर कपड्डमिट्टीदीहुईहडीमें बन्दकर सागसीलकडीसे ४ पहरपरकर स्वाह्नशीतलहोनेपर निवालकर रखडोडे । इतमेंसे ३-३ रत्ती धीकेसाथ खाकर त्रिकलाकेवापमें पकायेहुए कुठके चूर्णको १ बर्ष मधु और धीकेसाथ ऊपरसे चाटे । ऐसे एक-वर्षतक इसरा प्रयोगकरनेमें मनुष्य रोगरहितहोकर दीर्घजीवी होताहै ॥ ८७ ॥

८८ परिकररसः (माणाद्यगुटी)

नागर तालवह्नौ च प्रत्येकन्तु त्रिकार्पिकम् ।
विडसौवर्चलक्षारपिप्लयश्चापि कार्पिकाः ॥३७१॥
एतच्चूर्णांकृतं सर्वं गोमूत्रस्याढके पचेत् ।
सान्द्रीभूतं गुटीः कुर्याद्व्या त्रिपलमाक्षिकम् ॥३७२॥
यकृतलीहोदरहरो गुल्माशोप्रहणीहरः ।
योगः परिकरो नाम्ना वह्निसन्दीपनः परः ॥३७३॥
यो म, उदरे ।

भाषा—गोंठ, हरिताल, वह्नभस्म, विडगोन, सवल, यव-क्षार, पीपल ३-३ तोले लेकर सबका वारीकचूर्णकर ४ सेरगोमूत्रमें पकावे, गाणहोनेपर उतारकर रखदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर ३ पल शहद डालकर ३-३ मासेकी गोलियें बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्प्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यकृत, प्लीह, उदर, गुल्म, धवासीर, प्रहणी, मन्दाभि इनपबको यह नष्टकरताहै ॥ ८८ ॥

८९ परिस्राव्युदरहरो रसः

नभोलोहगन्ध शिलाताम्रकुष्ठं,
रसव्योपनिम्वाग्निदीप्ताग्निगुक्तम् ।
विषं शर्वरी तालमूल्या च पिष्ट,
परिस्राविण हन्ति माक्षीकगुक्तम् ॥३७४॥
चि क, उदरे ।

भाषा—अम्रक, लोह, ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, पारा, मैनसिल, कुठ, त्रिकटु, नीमकीछाल, चित्रक, भिलावा, शुद्धबल नाग, हल्दी, येसव समभागलेकर वारीकचूर्णकर तालमूलीके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा वग्नानुपानकेसाथ देनेसे यह परिस्राव्युदरको नष्ट करताहै ॥ ८९ ॥

९० पर्पटीरसः (महपर्पटी)

राले चतुःपलमिते द्रवितेऽग्नियोगा-
त्सम्मेत्य शुक्लविपमर्षपलप्रमाणम् ।
खल्वे क्षिपेत्सपदि पर्पटिका रसोऽयं,
हन्यात्कफानिलमतिघ्नमवान्तिवेगान् ॥३७५॥
सि भे म ज्वराधिकारे ।

भाषा—४ पल सपेदरालो गलाकर आधापलसपेदरालो लका वारीकचूर्णमिलाकर उसकीपर्पटी बनाकर रालमें द्वा

दोतीनरोज्जकमर्दनकर रज्योङ्गे । इत्येते आधीआधीरत्तो सम-
योचितानुपानकेसाथदेनेसे कफवाततोग, मतिभ्रम, वमन इत्या-
दितोगोको यह तत्क्षण दूरकरताहै । इसको बहुतमंभालकर वर्तना
उचितहै, चैयको चाहियेकि ऐसी दवाइया रोगीको अपनेसामने
खिलावे, दसवीसपुडिया इक्की बनाकर न दे ॥ ९० ॥

९१ पलितारिरसः

रसगन्धाऽप्रताम्रञ्च कान्तलोहयुतन्तथा ।
त्रिफलाभृङ्गनिर्गुण्डीपत्रै र्मर्द्यं दिन पृथक् ॥ ३७६ ॥
ततः सुमर्दयेदेभिः सिद्धोऽसौ पलितापहः ।
त्रिफलाभृङ्गराजाभ्यां मापः पलितनाशनः ॥ ३७७ ॥
मुत्पक्ष्वादिलेपेन व्यङ्ग्यरुण्डुहिपूतनम् ।
जयेत्कासीसतुत्याऽऽलरोचनातार्क्ष्यशैलकम् ॥ ३७८ ॥
रक्तपत्रावरातार्क्ष्यशिलापकमजाधृतम् ।
तत्राऽहिपूतनां हन्ति चिरोत्थामपि दुष्कराम् ॥ ३७९ ॥
२.; पलिते ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अश्रक, ताम्र, कान्तलोह,
इनकीभस्में समभागलेकर त्रिफला, भागरा औरनिर्गुण्डीकेपत्ते
इनप्रत्येकके रस अथवा कायसे १-१ रोज्ज मर्दनकर १-१ माशे-
की गोलियें बनाकर रखोङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला
और भागराकेरसकेसाथलेनेसे पलितको नष्टकरताहै । मुत्प, कक्षा
प्रयत्नित्यानोंमें त्रिफला और अंशेरके रससे लेपकरनेसे व्यङ्ग,
कण्डू, अहिपूतन इनको यह नष्टकरताहै तथा कासीच, तुल्य, हरि
ताल, गोरुचन, रसाञ्जन, मैनसिल इनका त्रिफला और भंगराके
रसमें लेपकरनेसे पूर्वाञ्जकार्यहोताहै । अथवा मेंहदी, त्रिफला,
रसौत, मैनसिलइनके क्लृक, काषादिसे पकायाहुआ बकरीका
पी बहुतदिनकी दु साध्य अहिपूतनाको नष्टकरताहै ॥ ९१ ॥

९२ पशुपतिचूर्णम्

सुरतदृष्टतमालौ व्यालदाहू घरा च,
तपनकनकपुष्पौ चापि गौरी विशाला ।
समकृतशशिरसं सूतभस्म प्रयुक्तम्,
पशुपतिकृतचूर्णं श्वेतकुष्ठं निहन्ति ॥ ३८० ॥
६ चि, शिरे ।

भाषा—देवदाह, अभिलताम, चित्रकमूल, दारहल्दी त्रिफ-
ला, आकरीजईशिला, रात्यानाशीरीजइ अथवा रेवनचीनी,
हल्दी, इन्द्रायग, पारदभस्म येसत्र समभाग, इनसबकीबराबर
पात्रुकीकेवीजोंका चूर्ण मिलाकररखोङ्गे । इनमेंसे ३-३ माशेकी
मात्रा बुद्धराशुपानकेसाथ देनेसे यह भेनुग्रहो दूरकरताहै ।
श्याका काष्ठीके सायलेपरना चाहिये ॥ ९२ ॥

९३ पाञ्चजन्यरसः

लोहाकांऽस्रं हरजभुजगं कासमर्दांऽम्बुधृतं,
शुष्कं गोल पुष्ट्यं सुदृढं मूरणान्तरिगुग्गम् ।
व्योषधेष्ठागुहृद्यलियुतं भक्ष्यन्मासमात्रं,
स्वर्गं योगाद्भवति जनयेदीपनं पाञ्चजन्यम् ॥ ३८१ ॥
२.२ सि, सर्वरोगे ।

भाषा—लोह, ताम्र, अश्रक, पारा, नाग, इनकीभस्में सम-
भागलेकर कर्तोजीके रससे १-२ रोज्जमर्दनकर गोलावनाय पके-
हुए सुरणभस्ममें भीतररख उसीकी डाटसेरन्दकर ६-७ कप
इमिरीदेकर मुखाकर गजपुष्पकीआचदे, स्वातशीतलहोनेपर
निकालकर रखोङ्गे । इनमेंसे ३-३ रत्ती त्रिकटु, त्रिफला, गुड
औरगन्धक समभागके ३ माशेचूर्णमें मिलाकर खानेसे १ मही-
नेमें समस्तरोगोंको दूरकर अग्निको प्रदीप्तकरताहै ॥ ९३ ॥

९४ पाणिजडुकरसः (प्रथमः)

नागवह्नौ समौ शुद्धौ द्रावयेत्खर्परोपरि ।
भागमेकं रसं दत्त्वा बद्धं खल्वे विमर्दयेत् ॥ ३८२ ॥
हालाहलं द्विभागञ्च पिप्पेच्च परिमर्दयेत् ।
स्तुहीचित्रकतोयेन शुष्कोऽयं पाणिजडुकः ॥ ३८३ ॥
२.क यो, सन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धनागवह्नको खर्पड़ेमें गलाकर एकभाग
शुद्धपारा डालकर उतारले फिर १ रोज्जमर्दनकर दोभाग शुद्ध-
छनाग मिलाकर पत्रपित्त, गृहकेदूध और चित्रकके स्वायसे
१-१ भावना देकर गुठारर रखोङ्गे । इनमेंसे १-१ रत्ती
समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तनसिपातोंको दूर
करताहै ॥ ९४ ॥

९५ पाणिजडुकरसः (द्वितीयः)

शुद्धनागं शुद्धवह्नं द्रापितं खर्परोपरि ।
शुद्धस्तन्तु संयोज्य मरस्यपित्तेन मर्दयेत् ॥ ३८४ ॥
गुजामात्रं प्रदातयं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
शम्भुना कथितः पूर्वं रस्तोऽयं पाणिजडुकः ॥ ३८५ ॥
२.क यो, सन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्ध नागवह्नको गलाकर १ भाग शुद्धपारा
मिलाकर मछलीके पिससे १ रोज्जमर्दनकर १-१ रत्तीकी
गोलियें बनाकर रखोङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिना-
नुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ९५ ॥

९६ पाणिवद्धरसः (वडवाभिः)

गन्धकं पारदञ्चैव भस्मलोहाष्टकं समम् ।
जीरकस्य कफाशेषं मर्दितं याममात्रकम् ॥ ३८६ ॥
कृपिकायां त्रिनिशिष्यं चालुकाग्निप्रयोजितम् ।
गाढाभौ प्रिदिनञ्चैव स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ॥ ३८७ ॥
गुजामात्रं प्रदातयं पित्ते पादकरे स्मृतम् ।
निहन्त्यात्सर्वपित्तातिं योगोऽयं पाणिवद्धकः ॥ ३८८ ॥
६ चि, व रा, पित्तरोगे ।

टि०—अपमेयस्य गुजरोन्मगभवना कण्डूव्यक्ताक विना च
निष्पत्तिरस्य नाम च बद्धाभिरिति अग्निप्रय तयो त्वे प्रथमा ए
कुम्भरीकेरसस्य गुग्गुलां भवना दत्त्वा कण्डूव्यक्ते कण्डार ।
वर्षे हानते शुष्पिकेऽपि त्वयि प्रयुज्यन्मर्दयित्वा तस्य तद
रितय प्रयोगे ही कथयम् ।

भाषा—शुद्धपात्रा और गन्धक, आर्सेलोहोंकी भस्म सम-
भाग लेकर इकट्ठे मिलाय जीरेके काड़ेसे १ पहर मर्दनकर
सुखाकर ६-७ कपड़मिठीदीहुई आतशी शीशमें डालकर बालुका
यन्त्रमें तीनदिन खराभि देकर पकावे । स्वात्तशीतल होनेपर
निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती हाथपैरोंकी जलन
तथा तमाम पित्तके विकारोंमें देनेसे सबको नष्ट करता है ॥६६॥

९७ पाणिबुडो रसः

पूर्वशुद्धो रसो प्राह्यो भस्मीभूतः पलात्मकः ।
तावन्मानो गन्धकः स्याद्भागवेकत्र मर्दयेत् ॥३८९॥
चित्रकस्य कपायेण भावयेदेकघासरम् ।
दिनत्रयं प्रमूद्रीयान्मुशलीरसतस्तथा ॥३९०॥
दिनानि सप्त सम्मर्द्य पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
माहिषैः सप्तधा भाव्य काकपित्तैस्तथैव च ॥३९१॥
सौरैश्च तथा पित्तैः सप्तधा भावयेद्भिषकम् ॥
रसस्य षोडशंशेन शृङ्गिकञ्च विपं क्षिपेत् ॥३९२॥
तद्भावेन हार्द्रिमष्टमांशेन योजयेत् ॥
मेपशृङ्गिकसञ्ज वा चतुर्थांशेन योजयेत् ॥३९३॥
सकुक् त्वर्धमानेन घटसनां सम क्षिपेत् ॥
निष्पिष्य मध्ये निक्षिप्य दद्यात्पश्चाच्च भावनाः ।३९४॥
मारिचैः सलिलैः सप्त पिप्पलीसलिलैस्तथा ॥
शुण्ठीजीराऽऽर्द्रकरसैश्चित्रकस्य रसैस्तथा ॥३९५॥
एवं विभाव्य तं सूत पूर्ववद्भूमपानकम् ॥
कृत्वा सम्मर्द्य घटिकामार्द्रकस्य रसैः कुरु ॥ ३९६ ॥
बल्लप्रमाणा घटिका सन्निपाते प्रदीयताम् ॥
आर्द्रकस्याऽनुपानन्तु कुर्वाताऽत्रापि पूर्ववत् ॥३९७॥
यावच्छीतं भवेत्तावदुदकं ढालयेत्तथा ॥
सम्यक् शैत्ये समापन्ने शरीरे रोगिणस्तदा ॥३९८॥
दधिभक्तं भोजयेत्तं खण्डशर्करया युतम् ॥
अतिश्लेष्मोत्तरश्चेत्स्याद्गुग्गुधमक्तं प्रयोजयेत् ॥३९९॥

शाकार्यमार्द्रकं दद्यात्कुस्तुमुरुजपलवम् ॥
मातुलुङ्गस्याऽऽलायं सैन्धव तत्र निक्षिपेत् ॥४००॥
वृन्ताकं भर्जितं कृत्वा शाकार्यं सम्प्रयोजयेत् ॥
कर्पूरं चन्दनोशीरं निष्पिष्याद्भ्रं प्रलेपयेत् ॥ ४०१ ॥
कर्पूरं दापयेच्छब्दोद्गोणिस्तापदान्तये ॥
शीतोदकेन सस्नाप्य सर्वमुष्ण विवर्जयेत् ॥ ४०२ ॥
अयं पाणिबुडो नाम सन्निपातनिवृन्तनः ॥
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादित ॥ ४०३ ॥

रसालं, ज्वराधिकारे ।

टि०—अस्मालूवर्तनी प्रतापल्लुङ्गधरोऽस्ति तत्र निर्दिष्टक्रियावद्वाऽपि
सर्वमुष्णपम् ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मकियाहुआ पात्र, शुद्धगन्धक दोनों
समभाग मिलाकर चित्रकके काड़ेसे १, मुसलीके रससे ३
पित्तोत्स ७ दिन मर्दनकर बैसा, कौआ और सूअरके

पित्तोसे ७-७ भावनाए देकर इससे १६ वा हिस्सा शुद्धशृङ्गि-
कविय मिलावे, उसके अभावमें आठवा हिस्सा हार्द्रिक
मिलावे । इसकेभी अभावमें मेपशृङ्गिकविय चतुर्थांश मिलावे ।
इसके अभावमें दक्षकविय अर्धभागमें मिलावे । शकुक्के
अभावमें बल्लभाग समभागमें मिलावे । फिर इन सबको इकट्ठेकर
मरिच, पीपल, सोंठ, जीरा, अदरक, चित्रक, इन प्रत्येकके रस
अथवा त्रायोसे ७-७ भावनाए देकर बल्लका ऊपरके षडेके
भीतर लेप देकर नीचेके षडेमें दशाश बल्लनागका चूर्ण पानीमें
पीसकर लेप लगा दे । फिर दोनोंका मुह बन्दकर चूल्हेपर रख
दोपहरकी मन्द आच दे जिसमें कि नीचेका विष जलकर तमाम
धुआ रसमें न्यास हो जाय । स्वात्तशीतल होनेपर अदरकके
रसमें ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर सुखाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली इससे पूर्व कहे हुए लघुप्रतापल्लुङ्गेश्वर की
तरह काममें ले अथवा अदरकके रससे १-१ गोली देकर मत्थे-
पर पानीकी धारा दे । जब एम्दम शरीर ठंडा पड़जाय तब
शकर डालकर दहीभात भोजन दे । यदि कफका अत्यन्त जोर
हो तो दहीके स्थानपर दूध देवे, शाकमें अदरक और धनिया
देवे । खटाईमें बिजोरा, नमकमें सैन्धव तथा शुनाहुआवेगन
देवे । कपूर, चन्दन और खसका शरीरपर लेप करे । ज्वर
उतारनेके लिये बारम्बार कपूर खिलाव । ज्ञान शीतोदकसे
करावे । इसमें उष्णक्रिया सब वर्जितकरे, यह रस देवीशास्त्रके
अनुसार बहुत सभालकर बनाया है । इसके प्रयोगसे तमाम
सन्निपात नष्ट होते हैं ॥ ९७ ॥

९८ पाण्डुकयाशेपरसः

तुरथताम्राऽभ्रलोहानां बरुपृतेषु भस्मसु ।
तुल्यहार्द्रिस्यूर्णेन गोमूत्रं पद्भुणं पचेत् ॥ ४०४ ॥
हंसमण्डूरतुल्य तद्भव्यतक्रेण चेद्भजेत् ।
पाण्डुहलीमकञ्चापि कथामात्रेण शिष्यते ॥ ४०५ ॥
रसायनसार, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तुल्य, ताम्र, अभ्र, लोह इनप्रत्येककी भस्मको
कपड़ेमें छानकर समभागमें हल्दीका चूर्ण मिलाय ६ गुना
गोमूत्र डालकर पकावे । यह हंसमण्डूरके समान । तैयारहोगा ।
इसको गायकी छाछनेसाथ उचितमात्रामें देनेसे पाण्डु, और
हलीमक, इनकी केवल क्यामात्र शेषरहजाती है ॥ ९८ ॥

९९ पाण्डुगजकेसरीरसः

रविभागन्तु मण्डूर तत्सम लोहभस्मकम् ।
शिलाजतु तदर्थं स्याद्गोमूत्रेऽऽगुणे पचेत् ॥ ४०६ ॥
पञ्चकोलं देवदारु मुस्ता श्यावं फलत्रयम् ।
पृथगर्द्धं विडङ्गञ्च पाकान्ते स्यूणित क्षिपेत् ॥ ४०७ ॥
पाययेद्दक्षामान्त्रन्तु तन्नेणऽऽलायानो भवेत् ।
पाण्डुप्रहृणिमन्दाग्निप्रोधाशांसि हलीमकम् ॥
ऊरस्तम्भकिमिन्दीहगलरोगान्घ्नियनाशयेत् ॥ ४०८ ॥
र वि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—तामा, मण्डूर, लोहभस्म येस्य समभागलेकर सवसे आधा शिलाजतु मिलाकर अठमुने गोमूत्रमे पसावे । जप पाक-
तैयार होजाय तन पत्रकोल, देवदारु, नागरमोथा, त्रिफला,
त्रिफला, विडङ्ग ये प्रत्येक आधाआधाभाग मिलाकर रखोडे ।
इसमेसे १-१ तोला छाछकेसाथ दूबे और हल्का भोजनकरे तो
पाण्डु, सङ्गृहणी, मन्दागि, शोथ, वसासीर, हृदीमक, ऊह-
स्तम्भ, त्रिभि, प्लीहा, गलरोग, वेपन नष्टहोतेहै ॥ १९ ॥

१०० पाण्डुदलनरसः

हेमरौप्यरविस्तगन्धका-

स्तुत्यभागमिलिता विमर्दिताः ।

धातुमाक्षिकयुता द्विलोहका

देवदारुशिलितोयमाचिताः ॥ ४०९ ॥

पाचिताः कमठयन्त्रके क्षणं

पाण्डुरोगदलनः प्रजायते ।

बल्लभानमशितो मरिचाऽऽज्यैः

पिप्पलीमधुयुतः श्वययुञ्ज ॥ ४१० ॥

र., पाण्डुरोग ।

भाषा—मुषणं, रजत, ताम्र इनकी भस्में, शुद्धपारा, गन्धक
और सोनामाली सब १-१ भाग, लोहभस्म २ भा, लेजर
सबसे पातलगन्धकी नीलकण्ठमालीमे मिलाकर देवदारु और
अपामार्गके क्वाथमे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर आतसी-
शीरीमे भरकर एकपहरकी आग्निमे पकानेगे पाण्डुदलनरस
तैयारहोगा । इसमेसे ३-३ रत्ती मरिच और दीकसायदेभेसे
पाण्डु, पीपल और मधुमेसाथ देनेसे शोथ नष्टहोताहै ॥ १०० ॥

१०१ पाण्डुनाशनरसः (प्रथमः)

स्वर्णतोष्यमथ शाणमात्रकं

शुद्धताम्रमथ तत्समं कुक् ।

रसपरं सकलेन समन्तत

पिष्टिकां कुक् विमर्ष गोलकम् ॥ ४११ ॥

गन्धकेन परिषेद्य गोलकं

पात्रयेद्य मतिमान् मित्रश्च सदा ।

भूमिमध्यनिहितं नियन्त्रितं

यामपद्ममथयाऽष्टकन्ततः ॥ ४१२ ॥

गन्धमन्धमपि निक्षिपेत्पुष्टे

ष्वमप्र परिजारयेद्युधः ।

निम्बुजेन परिषेप्य पशुपं

गन्धचूर्णमथ लोहचूर्णकम् ॥ ४१३ ॥

योत्रयेद्य पलमानतस्तनः

लोहपात्रहृदरे पुष्टप्रयेः ।

पाचयेद्य निरविन्ययादिना

पाण्डुनाशनरसस्तनो भयेत् ॥

घट्टमस्य मधुपिप्पलीयुने

लेदिनं सकल्पपाण्डुनाशकम् ॥ ४१४ ॥

र. प्र. मु. र. व., पाण्डुरोग ।

भाषा—मुषणं, रजत, ताम्र इनकी भस्में ३-३ भागे, शुद्ध-
पारा सन्दीपताम्र मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाग्राय
सन्दी यतार गन्धकको किसी अम्लध्वरसमे पीसकर इस-
पर लपेटकर १-२ कपड़मिठी लगाकर सुखाकर भूधरयन्त्रमे
बन्दकर ६ अथवा ८ पहरकी आंचदे जितमेकि गन्धक जलनाय ।
बादमे मिलाकर इसीतरह फिर गन्धकमे लपेटकर पूर्ववत्
पकावे । इसतरह गोलेसे पशुगन्धक जारणकर शुद्धगन्धक और
लोहचूर्ण १-१ पल मिलाकर लोहेके समुद्रमे बन्दकर साधारण-
पुष्टदेवे । स्वादशीतल होनेपर निकालकर १ पलगन्धक मिलाकर
नीचके रखे मर्दनकर फिर वही लघुपुष्टदे । ऐसे ३ पुष्टदेकर
स्वादशीतल होनेपर शुद्धरस और चित्रकके रससे गन्धकयुक्त
पोटर दोपुष्ट अलग ० दे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर
रगजोड़े । इसमेसे ३-३ रत्तीमीनामा मधु और पीपलदेसाथ
दनेसे यह समस्त पाण्डुरोगको नष्टरताहै ॥ १०१ ॥

१०२ पाण्डुनाशनरसः (द्वितीयः)

सूक्ष्मं ताम्रदलं विलिप्य बलिना मुनेन गाढन्तया,

स्थालीमध्यगतं सुसाधितमिदं यामह्वयं चङ्गिना ।

नागं गन्धकसंयुतञ्च पुष्टितं चित्राऽऽद्रसम्मिथितं,

चूर्णीकृत्य समं सुशोभनरसं संयोजयेच्चञ्चवित्तुः ।

शोथपाण्डुककृवातनाशनो

रक्तिकरूपरिमाणतस्त्ययम् ।

सेचयेद्य लघु चात्रभोजनं

तेलमल्लववणाऽऽमिषं विना ॥ ४१६ ॥

र. प्र. मु., पाण्डुरोग ।

भाषा—शुद्धताम्रेके बारीकपत्रको घरायके शुद्धपारे

साथ नीचके रखे मर्दनकर । जबपारा पत्रोंपर चङ्गिनाय त

पात्रकी बराबर गन्धक नीचके समे पीसकर पत्रोंपर लपेटकर

तेह जगादे । शुद्धनेकर चूर्णको हठीमे रख जलने धरायके टकर

फिर शुद्धनेमे गरिन्दरकर कर एकबालिन तरेद रा

अथवा पिपाहुआनमह भरे २ पहरकी कड़ी आचद । स्वाद

शीतशीतलहोनेपर निकालकर रगजोड़े । इसीतरह शुद्धताम्रको

कका पुष्टदेकर भस्मकरले फिर बराबरताम्रकडेकरनि

अदरनेकेसाथ पोटर छोटी २ टिकिया बनाय मुद्र

बन्धमुद्रमे बंदकर ३-४ मर कपकी आंचदेकर ३ ॥

होनेपर मिलाकर निरदुर्बल पोटर पुष्टदे पमे ना ।

न हो तबत कर फिर पूर्वसा ताम्र और यह नाममे ॥ ३ ॥

फोमिलाकर चित्रक और अदरनेके समे १-१ रत्ती

रगजोड़े । इसमेसे १-१ रत्ती ममयोपिपातुनाशना

शोथ, पाण्डु, कक, वायु इनवषको दद नष्टकरादेपम्य

भोजनद । तैज, अम्ल, रजत औरमाय मुद्रकर्मनेदे ॥ ३ ॥

१०३ पाण्डुपञ्चाननरसः

लोहाऽञ्जकञ्च ताम्रञ्च पल्लिवानि पूष्णपूष्णक ।

विकट्ट विकट्टा दन्ती चयिक कृत्वात्राशकम् ॥ ४१७ ॥

चित्रकञ्च निशे द्वे च त्रिवृता मानमूलकम् ।
कुटजस्य फलं तिक्ता देवदारु वचा घनम् ॥ ४१८ ॥
प्रत्येकमेपां कर्पन्तु निक्षिपेत्पाकविद्भिर्पक् ।
सर्वस्य द्विगुणं देयं शुद्धमण्डूरचूर्णकम् ॥ ४१९ ॥
गोमूत्रेऽप्युण्णे पक्त्वा सिद्धशीते प्रदापयेत् ।
भक्षयेत्प्रातःकृताय चोष्णतोयाऽनुपानतः ॥ ४२० ॥
हलीमकं शोधपाण्डुमूदस्तम्भञ्च नाशयेत् ।
रसायनवरञ्चैव बलवर्णाऽग्निकारकः ॥
यकृतं प्लीहगुल्मञ्च सर्वरोगहरः परः ॥ ४२१ ॥
भै. र, र च, पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोह, अत्रक, ताम्र इनकी भस्म १-१ पल, त्रिफल, तिक्ता, दन्तीमूल, चन्व, कालीजीरी, चित्रकमूल, हल्दी, दारहल्दी, निशोत, मानकन्द, इन्द्रजव, कुटकी, देवदारु, वचा, नागरसोया ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर कपडछानचूर्णकर रखछोडे फिर सबसेदूनी मण्डूरभस्ममें अष्टगुणित गोमूत्र डालकर पकावे, जब घनहोनेलेगे तब उतारकर रसदे टडा होनेपर पूर्वांकचूर्ण मिलाकर १ मासेने २ माशेतकरी गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीके साथ प्रातःकाल देनेसे यह हलीमक, शोध, पाण्डु, क्लन्तम्भ, बल वर्णाग्निनाश, यकृत, प्लीह और गुल्म इन सबको नष्टकर दीर्घायुको करता है ॥ १०३ ॥

१०४ पाण्डुरोगविध्वंसनोरसः

तारं ताम्रसुहृदमसूतकसमं कृत्वा पृथग्गोलकं,
ताप्य तुत्यककान्तमभ्रकरजो वैक्रान्तमेभिर्भुतम् ।
इत्या खल्वतले सुमर्दितरसे व्याघ्रिसुखर्पाभवे,
नागिन्या घननादजेन मतिमान् कृत्वा पुनर्गोलकम् ॥
सं पन्व वदरीरसेन सहसा यत्नेन सञ्चालये,-
घावद्भस्म भवेद्विपाच्य च ततश्चल्यास्समुत्तारयेत्,
चद्व्याघ्रशमांशसक्तुकविष गन्धाऽश्मचूर्णान्वित,
शुषुषु लुङ्करसेन वेतसमुत्त तत्पाण्डुरोगोपहम् ॥ ४२३ ॥
मा. गु. म, रसेन्द्र म, पाण्डुरोगे ।

घृतादि-रजत, ताम्र, सुवर्ण इनका भारीकचूर्ण और शुद्ध कर्पूर घनभागलेकर १-२ दिन मर्दनकर इतकी पिथी बनाकर करार द्वापवाली, तुत्य, कान्तलोह, अत्रक, वैक्रान्त, इनप्रत्ये शीतोदके पारेकी बराबर डालकर भ्रकडया, इटसिट, पान, अय पांशोलाई इनप्रत्येकेरसोंसे १-१ रोजमदकर गोला देशीशास्त्राकर लघुपुष्पी आचदे । ऐसे चारआपने देनकेबाद सा-कडाहीमें रखकर चूड़ेपर चढावे और नीचे धेरकील हि. आचदे गरमहोनेकेबाद धेरके पत्तोंका रस देकर चलाता संकेतसे इसकी चमकरहित भस्म होजाय तब नीच उतारले । भा. तलहोनेपर इसतयामसे दशवा हिस्सा शुद्धकछानाग और घनमा. मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ रती विजोरा अथवा किन्नोरकेरसेके साथ देनेसे यह पाण्डुरोगका नाशकरताहै १०४

१०५ पाण्डुरोगान्तकरसः (लोहरसः)

लोहभस्म द्विपलिक पलमेकञ्च पारदम् ।
पलार्धं गन्धकस्याऽपि त्रयमेकत्र मर्दयेत् ॥ ४२४ ॥
श्वेताङ्गभावनाः सप्त जम्बीराङ्गावनाश्रयम् ।
चित्रकस्य द्वैर्भाव्य सप्तवारं पुनः पुनः ॥ ४२५ ॥
शुद्धवेररसेनैकमेकं निर्गुण्डिकारसैः ।
शिशुमूलरसैर्भाव्यं कासमर्दरसेन च ॥ ४२६ ॥
वातारिमुलतोयेन दशमूलेन च निधा ।
पाण्डुरोगान्तको नाम सर्वशोफनिवारणः ॥ ४२७ ॥
कासं श्वास क्षय हन्ति वह्निमान्द्यं हरेद्भूषम् ।
पिप्पलीमधुना योज्यं पट्टुलांश्चाऽस्य द्वापयेत् ॥
सर्वरोगनिवृत्त्यर्थमभ्विनीदेवभापितः ॥ ४२८ ॥
रसायनस, पाण्डुरोगे ।

भाषा—लोहभस्म २ पल, शुद्धपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्प लेकर तीनोंकी नीलवर्णकजलीकर अर्जुनके रससे ७, जम्बीरीसे ३, चित्रककेबाधसे ७, अदरक, निर्गुण्डी, सहिजनरी जडकीछाल, कसौजी, एरण्डीकी जडकी छाल, इन प्रत्येकके स्वरसोंसे १-१, दशमूलक स्वरसस ३ भावनाए देकर १ वा २ मासेकी गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकसाथ अथवा तत्तद्रोगहारापानके साथ देनेसे पाण्डु, शोफ, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि इत्यादिरो गोंको यह नष्टकरताहै ॥ १०५ ॥

१०६ पाण्डुसूदनरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं मृतं ताम्र जयपालञ्च गुग्गुलुम् ।
समांशमाज्यसयुक्तं गुटिकां कारयेद्विपक् ॥ ४२९ ॥
एकैकां भक्षयेन्नित्यं पाण्डुशोथप्रशान्तये ।
शीतलञ्च जलं चाम्लं वर्जयेत्पाण्डुसूदने ॥ ४३० ॥
र, स, र चि, भै र, र सु, र का, ध, नि र, वै चि, र च, भै सा, र की, यो म, र को, रसायनस, र सि, र क, र र स, र श, र (मा), पाण्डुरोग । र स, ध, भै र, र सु, र क ल, र र, र का, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने पञ्चाननवटी इति नाम । र र स, र को, एतयो ग्रन्थयो जयपालरसः इति । र क ल, त्रिनेत्ररस इति । र स, पाण्डुहरेति नाम ।

टि०—पञ्चाननवटी अन्नकमपिषतया निवोक्तिम् । जयपालरसे तु 'देवदारुव्यासु पन्वाङ्ग चूर्णं शरीरं वा जैतु । निवन्मान विनशित्य माम्ना त्पाण्डुदापहम् ॥' इत्यभिः पाठः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, जमालोटा और गुग्गुलु ताम्र-भस्म यसब समभाग लेकर पारेगन्धककीनीलवर्णकजलीमें मिलाकर शोधा धी डालकर घोटकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ दनेसे पाण्डु और शोथ इनको यह नष्टकरताहै । इसके प्रयोगमें टडा पानी और अम्ल छोडद ॥ १०६ ॥

१०७ पाण्डुसूदनरसः (द्वितीय)

सूतं तीक्ष्णकमेव गन्धसहितं भागेन संवर्धितं,
पश्चात्खल्वतले विमर्द्य विधिना चूर्णीकृतं गोलकम् ।
कुप्यां संविनिवेश्य वै सुमृदुना सलेपितायां पचेत्,
यामद्वादशमात्रकं हि सिकतायन्त्रेण घेयः सदा ॥ ४३१ ॥

प्रक्षिपेच्च चरशाहमलीरसं

त्रैफलञ्च गृह्यवह्निकाद्रवम् ।

पाचयेच्च मृदुवह्निना दिने

स्याद्गशीतलतमं प्रगृह्य च ॥ ४३२ ॥

न्यूपणार्द्रकरसेन भावयेत्

पाण्डुसूदनरसोऽयमीरितः ।

शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिदायको

रोगराजहरणः प्रकीर्तितः ॥ ४३३ ॥

र प्र, सु, र च, र म मा, पाण्डुरोगे । र म मा,
लोहसुन्दरोति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, लोहभस्म २ भा०, शुद्धगन्धक
३ भा० लेकर नीलवर्णं कजलीकर ३-४ कपडमिठी दीहुई
आतशी शीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमें १२ पहरतक पकावे ।
स्वाद्गशीतल होनेपर सेमल, त्रिफला, गिलोय इनप्रत्येकके
रसमें घोटकर बालुकायन्त्रकी १ दिनआचदे फिर निकालकर
त्रिकटु और अदरकके रसोंसे १-१ भागवादेकर रखछोड़े ।
इसमेंसे ३-३ रती समयोचितानुपानकेसाधनेसे यह पाण्डु
रोगको नष्टकरता है ॥ १०७ ॥

१०८ पाण्डुरीरसः

रसगन्धाऽम्रलोहानि मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ।

तत्रोलकञ्च सखद्वयं पुटेदेव पुटैस्त्रिभिः ॥ ४३४ ॥

चतुर्वह्नी रसो भुक्तो हन्ति पाण्डुञ्च कामलाम् ।

शोथ हलीमकञ्चैव बह्वैर्वृद्धिं करोति च ॥ ४३५ ॥

भै सा, र (मा), नि र, रसचि, र प्र, र सु, चि
सा, रसायनस, र चि, र का, यो म, वै चि, पाण्डुरोगे ।
योगमहाणवे कुमारीस्वरसोऽनुपानत्वेन यद्गीत ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अम्रक, लोहभस्म सब सम
भागलेकर घीकुवालेके रसमें १-२ रोज मर्दनकर मुलाकर शरा
वसन्मुग्में बन्दकर लघुपटकी आचदे । इसतरहतीनपुटे देकर
रखछोड़े । इसमेंसे १२ रतीकीमात्रा समयोचितानुपानके साथ
देनेसे पाण्डु, कामला, शोथ हलीमक मन्दागि येसब
नष्टहोतेहै ॥ १०८ ॥

१०९ पानीयभक्तवटी (प्रथमा)

त्रिवृता मुस्तकञ्चैव त्रिफला न्यूपणन्तथा ।

प्रत्येकन्तु पल मागं तदर्धं रसगन्धकौ ॥ ४३६ ॥

लोहाऽम्रकविडङ्गानां प्रत्येकञ्च पलद्वयम् ।

पततसकलमादाय चूर्णयित्वा विचक्षण ॥ ४३७ ॥

त्रिफलाया कपायेण घटिकां कारयेद्विपक् ।

एकैकां भक्षयेत्प्रातस्तकञ्चापि पिबेदनु ॥ ४३८ ॥

हन्ति शूल पार्श्वशूलं कुक्षिवस्तिगुदे रजम् ।

श्वासं कास तथा कुष्ठं प्रहणीदोषनाशिनी ॥ ४३९ ॥

र स, र चि, ध, व से, र का, र च, र सु, भै र,
चि क, र र, र क, अम्लपित्ते । चि क भक्तवटीरतिनाम ।

भाषा—निशोत, नागरमोथा, त्रिफला, त्रिकटु १-१ पल,
शुद्धपारा औरगन्धक आधाआधापल, लोहभस्म, अम्रकभस्म
और विडङ्ग २-२ पलकर सरका बारीक चूर्णकर पारेगन्ध
ककी नीलवर्णं कजलीमें मिलाकर त्रिफलाकेकाठमें १-२ रोज
घोटकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली छाछेकेसाथ देनेसेउदरशूल पार्श्वशूल, कुक्षि वस्ति
और गुदाकी पीडा, श्वास, कास कुष्ठ और प्रहणी इनसबको
यह नष्टकरतीहै ॥ १०९ ॥

११० पानीयभक्तवटी (द्वितीया)

कृष्णाऽम्रलोहमल्लशुद्धविडङ्गचूर्णैः,

प्रत्येकमेकपलिक विधिवद्विधाय ।

चव्य फटुत्रयफलत्रयकेशराज-

दन्तीपयोदचपलाऽनलघट्टकर्णाः ॥ ४४० ॥

मानोल्बकन्दवृहतीत्रिवृता. ससूया-

वर्ता पुनर्नैविकया सहितास्त्वमीपाम् ।

मूलं प्रतिप्रति विशोषितमक्षमक,

चूर्णं तदर्धं रसगन्धकमेकसस्यम् ॥ ४४१ ॥

वृत्वाऽम्रकौयस्ससवलितञ्च भूयः,

सम्पिप्य तस्य घटिका विधिवद्विधेयाः ।

हन्त्यम्लपित्तमरुचिं प्रहणीमसाध्यां,

दुर्नामकामलभगन्दरशोथगुल्मान् ॥ ४४२ ॥

शूलञ्च पाकजनित सतताऽग्निमान्द्य

सद्यः करोत्युपचितिं चिरणष्टवहैः ।

कुष्ठं निहन्ति पलितञ्च वलिं प्रवृद्धां

श्वासञ्च कासमपि पाण्डुगदं निहन्ति ॥ ४४३ ॥

वार्थश्रमांसदधिकार्जिकतक्रमत्स्य-

वृक्षास्तैलपरिपक्वमुज्जोययेष्टम् ।

शृङ्गादविलवगुडकञ्च टनालिके-

दुग्धानि सर्वविदलानि विवर्जयेत् ॥ ४४४ ॥

र स, र र, भै र, र क, र का, र चि, रसायनस

प्रहण्याम् ॥

भाषा—कालाअम्रक, लोह, मण्डूर इनकीभस्में अं
विडङ्गलडुल येप्रत्येक ४ तोले लेकर कपडछानचूर्णकर चक्र
त्रिकटु त्रिफला, भगरा, दन्तीमूल, नागरमोथा, पीपल, चिः
कमूल, कण्टकणं (हंस अथवा बनहा), मानकन्द, जगल
सुरण बनमाग, निशोत हुडुहर या सूर्यमुखी, पुनर्नवा इ
प्रत्येकका चूर्ण १-१ तोला, इनसबसे आधी पारेगन्धक

कजली मिलाकर अदरककेसमें १-२ रोज घोटकर १-१ माशेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत द्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, अरुचि, असाध्य प्रहणी, बवासीर, कामला, भगन्दर, शोथ, गुल्म, शूल, परिणामशूल, मन्दाग्नि, कुष्ठ, क्लीपलित, श्वास, कास, पाण्डुरोग, इनसबको यह दूखरतीहै । इसके सेवनके समय जलमें रखाहुआ भात (पखाल व), मास, दही, काञ्ची, छाछ, मछली, बोकम, और तैल इनका सेवनकरे । सिंघाड़े, बेल, गुड़, मरसा, नारि यल, दूध, सवतहकीदाल इनका त्यागकरे ॥ ११० ॥

१११ पानीयभक्तवटी (तृतीया)

विडङ्गकृष्णाग्रकलोहचूर्ण

पलंपल व्योपफलत्रयाऽब्दम् ।

सबहिमापाऽष्टकसख्यमेत-

त्पानीयभक्तस्य जलेन पिष्टम् ॥ ४४५ ॥

सार्धं चतुर्मापकमौदकाम्लं

पानीयमत्यश्रिवलानुकारि ।

अर्शांसि निर्णाशयति प्रसह्य

क्षिप्र जपानामुपैति चित्रम् ॥ ४४६ ॥

टो, अग्निमान्ये ।

भापा—विडङ्ग, कृष्णाग्रक और लोहभस्म १-१ पल, त्रिकटु त्रिफला, नागमोथा, चित्रकमूल येप्रत्येक ८ माशे लेकर कपडछान चूर्णकर भातकी काञ्चीसे बारीक पीसकर ४॥ माशेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भातकी काञ्चीकेसाथ लेनेसे अग्निके अत्यन्त बलको करतीहै अर्श और बुझापेको दूर करतीहै ॥ १११ ॥

११२ पानीयभक्तवटी (चतुर्थी)

रसोऽर्धभागिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽन्नका ।

भक्तोदकेन सम्मर्द्य कुर्याद्दुग्धासामं घटीम् ॥ ४४७ ॥

भक्तोदकानुपानेन सेव्या वद्विप्रदीपिनी ।

वार्यन्नभोजनञ्चाऽत्र प्रयोगे सात्म्यमिष्यते ॥ ४४८ ॥

च द, नि र, र चि, रसायनस, यो म, अग्निमान्ये ।

र का, शूलाधिकारे ।

भापा—विडङ्ग, मिरव और अन्नक समभाग, इनसबसे आधी पारदभस्म अथवा रसनिन्दूर लेकर चाबलोंकी काञ्ची अथवा मादमें दोतीनरोन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाय सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शफिके अनु सार भातके पानीके साथ देकर पकाकर पानीमें रखेहुए भातका पच्य देनेसे शूल और मन्दाग्नि नष्ट होतेहै ॥ ११२ ॥

११३ पानीयभक्तवटी (पञ्चमी)

त्रिफलात्रिकटुकमुस्तकविडङ्गमहातककेशराजानाम्
करिवर्तच्छददन्त्यस्तण्डुलिका पुनर्वेवा त्रिवृत्ता ॥४४९॥
चित्रद्विजीरचूर्णान्येकत्र कर्पमितानि कार्यापि ।
गन्धशिलाकपर्धे गगनपल मारित विधिवत् ॥४५०॥

अम्लशुक्तभक्तपयसि पक्वमा कुर्यादर्थमायिकां वटिका
अम्ल वार्यनुपेयं कार्यं तदनु-त्रिहितं पथ्यम् ॥४५१॥
कफातिदुष्टप्रह्नेनात परमत्र भेषज दृष्टम् ।

हन्यात्तदाम जात ग्रहणीगद्गुल्मशूलरुजः ॥ ४५२ ॥

व से रसायनाधिकारे, र का शूलाधिकारे ।

भापा—त्रिफला, त्रिकटु नागमोथा, विडङ्ग, मिलावा, काला भगरा, गजपीपल, पत्रन, दन्तीमूल, कटिवालीचौलाईकी जड, पुनर्वेवाकी जड, निशोत, चित्रक, दोनोजीरे ये प्रत्येक १ कर्पे शुद्धगन्धक ८ माशे, विधन्त्र अन्नकभस्म ४ कर्पे लेकर अच्छीतरह कपडछान चूर्णकर रागसिरका अथवा भातकी काञ्ची सब दवासे अठगुनी डालकर पकावे । जवगोलीबचने लायक होनाय तब आधे आधे माशेकी गोलिये बनाय सुखा कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खटी काञ्चीकेसाथ लेनेसे और काञ्चीभातखानेसे कफातिदुष्ट अग्नि प्रदीप्त होताहै । इसके बराबर कफदुष्ट ग्रहणीका । दूसरा औषध नहीं है इसके सेवनसे आमवात, ग्रहणीरोग, गुल्म, शूल और पीडा ये सब दूर होतेहै ॥ ११३ ॥

११४ पानीयभक्तवटी (षष्ठी)

विडङ्ग पिप्पलीमूलं त्रिफला मुनिज फलम् ।

लोहक गन्धकं चित्रं पलार्धं चूर्णितं पृथक् ॥ ४५३ ॥

श्रूपणं चूर्णितं ग्राह्यं सार्धं द्विपलिकं पृथक् ।

अम्लमारिताऽन्नपल कर्पार्धं पारदस्य च ॥ ४५४ ॥

अस्थिसहारनिर्गुण्डोनागवल्ल्यार्द्रकैः शुभे ।

रसैश्चतुष्पलैरेव भावयित्वा पृथक्पृथक् ॥ ४५५ ॥

यथाऽग्नि भक्षयेदेनां घटीमनुपिबेजलम् ।

वारिभक्तञ्च भुञ्जीत कुर्यात्पूर्वोक्तकान्गुणान् ॥४५६॥

व से, रसायनाधिकारे । र का शूलाधिकार

भापा—विडङ्ग, पिपलामूल, त्रिफला, हिंगोरनकीगिरी, लोहभस्म, शुद्धगन्धक, चित्रकमूल, ये प्रत्येक २ कर्पे सोंठ, मिचे, पीपल २॥-२॥ पल, अम्लवर्गसे माराहुआ अन्नक १ पल, शुद्धसारा ८ माशे, इन प्रत्येकका अलग २ चूर्णकर हडनोड, निर्गुण्डी, नागबला, अदरक इन प्रत्येकका १-१ पल रस डालकर क्रमसे घोटकर १-१ माशेकी गोलिये बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अथवा यथाशियल मात्रा देकर काञ्ची अथवा भक्ताऽधिवसित जल पिलावे । भूखलानेपर जला धिवासित भात खिलावे तो आमवात, ग्रहणी, गुल्म, शूल ये सब नष्टहोतेहै ॥ ११४ ॥

११५ पानीयभक्तवटी (सप्तमी)

अन्धिक त्रिफला चित्र त्रिवृल्लोहितकुम्भकम् ।

एषां कर्पाधिकं चूर्णं प्रत्येकं तापदुन्मितम् ॥ ४५७ ॥

श्रूपण लक्षणं पाक्यं विडङ्ग कार्षिकं पृथक् ।

पलं कृष्णाऽन्नकञ्चैव मन्तर्दग्ध्या विनि. क्षिपेत् ४५८

शिलायां पेपणं वृत्त्वा सर्वमेकत्र योजयेत् ।
 शिखर्याद्रिकनिर्गुण्डोनागवलयस्थिसंहता ॥ ४५९ ॥
 रसैर्द्विपालिकैरेषां भावयित्वाऽक्षसम्भिताम् ।
 कृत्वैकां भक्षयेत्प्रातरम्लवारि पिबेदनु ॥ ४६० ॥
 यातश्लेष्माऽऽमयान्दन्ति वह्निसादं उरं वमिम् ।
 आमवातं जरत्पिचं चारिभक्तवटी मता ॥ ४६१ ॥
 वं. से. रसायनाधिकारे । र. का. श्लाघिकारे ।

भाषा—गाराहीके फल अथवा पिपलामूल, त्रिफला, चित्रक, निशोत, भेंसायूल ये प्रत्येक ८ मासे, त्रिकटु ३॥ कर्पे संधानमक, सचलनमक, विडङ्ग १-१ कर्पे पुटपाकसेमारा-हुआ काळा अन्नक १ पल, लेकर सका चूर्णकर इष्टे मिलाकर अपामार्ग, अदरक, निर्गुण्डी, नागरबेल, हृदजोड इनप्रत्येकका रस २-२ पल लेकर अलग २ भावना देकर साधारणश्लेष्माके बराबर (१ मासा) की गोलियें बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल काञ्चीकेसाथ लेनेसे यातश्लेष्मरोग, मन्दाग्नि, ज्वर, वमन, आमवात, परिणामशूल इनसबको यह तत्कालनष्टकरतीहै । इसमें पथ्य जलाधिवासित भात देना-चाहिये ॥ ११५ ॥

११६ पानीयभक्तवटी (अष्टमी)

शुद्धौ गंधरसौ कर्पौ विडङ्गमरिचाऽऽद्रकाः ।
 त्रिवृता त्रिफला वह्निः कणा दन्ती पुनर्नवा ॥ ४६२ ॥
 स्नुक्शीरं मानकुलिशयावाग्रोगसण्डिकाः ।
 प्रत्येकैकं पलं चूर्णमम्लपानीयकं हविः ॥ ४६३ ॥
 आम्रं चतुष्पल भस्म चैकीकृत्याऽऽद्रकाम्बुना ।
 त्रिफलापयसा भाव्या कोलाधमानका वटी ॥ ४६४ ॥
 भक्तोद्काऽनुपादानेन सेव्या वह्निस्रदीपनी ।
 अम्लपित्ताऽऽमवातादीन् हन्याद्गुग्धान्नभोजनात् ५६५

व से रसायनाधिकारे । र. का. श्लाघिकारे ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा १-१ कर्पे विडङ्ग, मिरच, अदरक त्रिफला, निशोत, चित्रकमूल, पीपल दन्तीमूल, पुनर्नवा, शूहरकादूध, मानकद, जगलीसुरण, यवक्षार, कुष्ठ, राउड, चाव लकीकाञ्ची, पुरानाधी, येसन १-१ पल, अन्नकभस्म ४ पल, लेकर सबको इक्केकर अदरक, त्रिफला और दूध इनकी १-१ भावना देकर ३-३ मासेकी गोलियें बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली भक्षाधिवासित पानीके साथ देनेसे और दूधभात खानेसे मन्दाग्नि, अम्लपित और आमवातप्रशुतिकरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ११६ ॥

११७ पानीयभक्तवटी (नवमी)

मानकन्दोऽध्वकर्णश्च त्रिवृता मुस्तक तुण्डिः ।
 त्रिकटु त्रिफला भृङ्गमपामार्गश्च वाडिमम् ॥ ४६६ ॥
 तुम्बी वृहत्तिका जातीद्वयश्च शतपुष्पिका ।
 सूर्यावर्तस्तालमूली चूर्णमेपाञ्च कार्पिकम् ॥ ४६७ ॥

कर्पद्वयं विडङ्गानां बलेः पादोनरूपकम् ।
 गुह्यध्वन्नरुमण्डुरान् प्रत्येकं वेदकार्पिकान् ॥ ४६८ ॥
 सुचूर्णमात्रकं वरुणपातितं काञ्जिके क्षिपेत् ।
 अम्ले पयसि वा पश्चाद्भृङ्गेत्पञ्चमेऽहनि ॥ ४६९ ॥
 निर्वापयेद्य मण्डूरं त्रिफलाया रसे शुभे ।
 सूर्यावर्तसे चाऽथ चोभयत्र च वा भिपक् ॥ ४७० ॥
 तच्च सञ्चूर्णितं वरुणशोधितं योजयेद्विपक् ।
 मण्डूरेण समं पेष्यं वंशपत्ररसेन तु ॥ ४७१ ॥
 ततः पुटानि देयानि वक्ष्यमाणैर्महोपधेः ।
 वंशपत्ररसे पूर्व पुटयेदातपे भिपक् ॥ ४७२ ॥
 मण्डूरुपर्णां चित्रञ्च दन्तीमूलपुनर्नवे ।
 पटोलीत्रिवृतावालमस्थिसंहार पव च ॥ ४७३ ॥
 आद्रकं तालमूली च सूर्यावर्तश्च शिम्बिका ।
 केशराजो भृङ्गराजः शतमूली च मुस्तकम् ॥ ४७४ ॥
 प्रक्षिपेत्पूर्वचूर्णानि हिङ्गु कर्पेचतुष्टयम् ।
 सप्तधा पेषयेद्गाढं त्रिफलाकायधारिणा ॥ ४७५ ॥
 तेनैव शुटिकां कुर्यान्मापिकेकप्रमाणिकाम् ।
 वटिकाद्रितय भक्ष्य मम्लवार्यनुपाततः ॥ ४७६ ॥
 वयोऽवस्थामश्रियलं व्याधिं प्रकृतिमेव च ।
 दृष्ट्वा मात्रां प्रयुञ्जीत यथाक्षेपं प्रदीयते ॥ ४७७ ॥
 प्रहणीमम्लपित्तञ्च पित्तश्लेष्माणमेव च ।
 अर्शासि वह्निसादश्च प्लीहानमरचिन्तया ।
 वटिकेयं निहन्त्याशु नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ ४७८ ॥

व से. रसायनाधिकारे, र. का. श्लाघिकारे ।

टि०—अत्र वटिकाधिधानम वेऽप्रत्यक्षारस्य समागतवाङ्गमाल्यत् जने व्यत्यासिना प्रापित मोऽमभिर्वास्थान निवेशित । रसकामयेत् रचयित्वा मण्डूरसत्कारस्य विप्रयोननिमित्ति यत्ना तन्वाङ्गमेव तत्पानिर्गोप्यम् । वृत्तिकागतीद्वयमिति समस्तमेकर क्रियते तर्हि वृहत्तिकाद्व जातीद्वयभेदे प्रत्युपलब्धे द्वयशब्दस्य द्वादऽऽऽपगतित्वत् । बलीद्वयमि स्थत्र च जात्याद्वयमिति समासेन जात्या अवयवद्वय द्वाद्यमिति साधा रणापस्थितावपि प्ररक्षणत्वेन जात्या द्वा पलव्यश्रीनव्यमिति निश्चेत्पथ्य

भाषा—मानकन्द, अध्वकर्ण (सपुआकीजल), निशोत नागरमोधा, तुम्बी, त्रिकटु, त्रिफला, भगरा, अपामार्ग, अजार दाना, तुम्बी, भट्टरट्टया, वनभाटा, जायफल, जावित्री, सोंफ हुरहुर, तालमूली इनप्रत्येककाचूर्ण १-१ कर्पे, विडङ्गण्डुल २ कर्पे, शुद्धगन्धक १२ मासे, गिलोय, शुद्धअन्न औरमण्डूर चार ४ कर्पे लेकर गिलोयतक समस्तचीजों का वारीकचूर्णकर रखलेवे । अन्नकका धान्यान्नक बनाकर कपड़छानकर खीन्काञ्ची अथवा दूधने डालदे, पानमें रोपनिकाले । १०० वर्षसे ऊरके मण्डूरको बड़ेबड़े कोयलोंमें तथा तपानर त्रिफला अथवा हुरहुर या दोनोंक रसमें ज्वरतक शीघ्र न हो ततक तुपावे । शीघ्र होनेपर चूर्णकर वरसे छानकर खडीकाञ्चीकी यथाशक्तिभावना देकर रखडोडे । यह मण्डूर उस अधिककी बराबर मिलाकर वंशपत्रीके रसमें दोतीन रोच मदेतकर वारीक करले, फिर वंश

पत्री, ब्राह्मी, चित्रक, दन्तीमूल, पुनर्नवा, पटोल, निशोत, वाला, हृद्गोड, अदरक, तालमूली, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, सेम, कालाभंगरा, भंगरा, शतावर, नागरमोथा इनप्रत्येकके रस अथवा काथोंकी सूर्यके कड़े धूपमें भावना देकर सुखालेवे, यह अन्नक और मण्डूकी विशेषशुद्धि है । इसीतरह शुद्धरसके पूर्वचूर्णमें डालकर ४ तोले गुनाहुआ उतम हींग मिलाकर ७ रोगतक त्रिफलाके काथसे धूपमें मर्दनकरावे और आठवेंरोज १-१ माशेही गोलियें बनाकर छायाशुष्ककरले । इसमेंसे २-२ गोली अथवा, रोगीकी अवस्थासमय, अग्नि, व्याधि और प्रकृति इनका थलबल देखकर न्यूनाधिक मात्रासे छेधेधानीके साथ देवे । कामपत्रनेपर अनुपान तथा प्रथेपविशेषकी योजनाकरे । इसके सेवनसे प्रहणी, अम्लपित्त, श्लेष्मपित्त, सत्वप्रकारके यवातीर, मन्दाग्नि, हीहा, अरुचि चेतव नष्ट होतेहैं इसमें मिसीतरहका सन्देह नहीं ॥ ११७ ॥

११८ पानीयवटिका (प्रथमा)

अनाथनाथो जगदेकनाथः

श्रीलोकनाथः प्रथमः प्रसिद्धः ।

जगद् पानीयवटीं प्रसिद्धां

तामेव वक्ष्यामि गुरुप्रसादात् ॥ ४७९ ॥

जयार्जसुरसांश्चैव निर्गुण्डो वासरु तथा ।
चाट्यालकं करञ्जश्च सूर्यावर्तंरुचिचक्रौ ॥ ४८० ॥
ब्राह्मी च सर्पपञ्चैव भृङ्गराजं विचूर्णयेत् ।
दन्ती च त्रिवृता चैव तथाऽऽरग्वधपत्रकम् ॥ ४८१ ॥
सहदेवाऽमरं भण्डो तथा त्रिपुटमण्डिके ।
शालमली पिप्पली चैव द्रोणपुष्पी च वायसी ॥ ४८२ ॥
गजाङ्गिनी केशराजस्तथा योजनवल्लिका ।
असाहनेति विख्यातं घनूरकनकास्तथा ॥ ४८३ ॥
त्रैलोक्यविजया चैव तथा श्वेताऽपरजिता ।
प्रत्येक कार्पिकश्चैव स्त्ररसन्तत्र दापयेत् ॥ ४८४ ॥
स्तुष्ट्या दुग्ध चार्कदुग्ध वटदुग्धन्तथैव च ।
प्रत्येकं कार्पिकं क्षीरं पुनर्दत्त्वा विमर्दयेत् ॥ ४८५ ॥
नूनं सुमर्दितं क्षात्वा यदा पिण्डत्वमागतम् ।
द्रव्याप्येतानि सञ्चूर्ण्य वक्ष्येपूतानि निक्षिपेत् ॥ ४८६ ॥
दग्धहीरं चातिथिप थिपतिन्दुकमन्नकम् ।
शोधितं पारदञ्चैव गन्धकं विपमाह्वयम् ॥ ४८७ ॥
माक्षिक शोधितञ्चैव प्रत्येकं मापकद्वयम् ।
नूनं सुमर्दितं दग्ना चाङ्गेरीस्वरसेन च ॥ ४८८ ॥
शुटिकां सुदढाञ्चैव तिलमात्रां प्रकरपथेत् ।
लङ्गनैर्वालुकास्वेदैः क्लान्तोऽपि दीनदर्शनः ॥ ४८९ ॥
प्रपूज्य करुणाधानं प्रणम्य नाथसर्पणम् ।
शरावे धारिणा घृष्ट्वा विशरथेमां पिवेत्तरः ॥ ४९० ॥
पाययित्त्वौषध पश्चाद्दत्त्वेणाच्छाद्येत्तरम् ।
रसदाह समाश्रय दद्याद्धारि सुदीतलम् ॥ ४९१ ॥

शरावेण मितं वारि पातव्यञ्च पुनः पुनः ।
क्षत्रिपातज्वरश्चैव दाहं हन्ति सुदुस्तरम् ॥ ४९२ ॥
कासं श्वासं च्वरं हिकां प्रमेहञ्चाश्मरोन्तथा ।
कफपित्तकृतञ्चैव दाहं हन्ति न संशयः ॥ ४९३ ॥
भूजवेगविवन्धे तु पातव्यं क्षीरसंयुतम् ।
तृणपञ्चकृतं काथ पातव्यञ्च पुनः पुनः ॥ ४९४ ॥
पानीयवटिका होपा लोकनाथेन निर्मिता ।
लोकानामुपकाराय यटिका कथिता पुरा ॥ ४९५ ॥
२ २, २ सु, भै र, ज्वराऽधिकारः ।

टि०—अथ योगो लोकनाथनाम्ना गोक्षन्नाभमप्रदायवर्तिना केनचि
स्तुथना कलेचिच्छब्दल्लेखे स्वदिश्याय निर्दिष्टेन कथाव्यञ्चित्तन्त्रो
त्रिषडोत्पत्ताऽस्मिन् पथयवनायां सरकृतनामनिर्गोत्रे च द्वैषिव्य सखा
तनयव विपमाह्वयमिलादिना वननैवक्रीयनामन्यपि निवेशितानि तानि
च द्रष्टार भ्रमण्डेर निवेशन्ति त एव टीकाकारिर्नानाऽऽक्षरतया पाठा
प्रकथिता यथा अनासनेतिप्रस्थानेऽर्थाऽज्ञानालैश्चिदासारणेति पाठ प्रवत्य
असनशूनो निरवारि । अन्यैर्नवपालनानि नियोजितानि । केचुचि
ल्लेखेपु आशारणेति पाठो दृश्यते तत्सर्वमन्यभिप्रायाऽज्ञानमूल्यम् ।

भाषा—अणी, आक, तुलसी, सगाल, अहुता, नाग
बला, करञ्ज, हुरहुर अथवा सूर्यमुखी, चित्रक, ब्राह्मी, पीली
सुरसी, भंगरा ये सब १-१ कपेलेकर वारीकरपडछान चुर्ण
करके दन्तीमूल, सहदेनिसोत, अमलताव, पत्रज, सहदेवी,
अमरकन्द, सिरस, गोखल, वनभाटा, सेंमलकामुखला, पीपल,
गुमा, भकोय, गुग्गा, कालाभंगरा, मजीठ, असाहनकफेद,
धुवरा, कसौरी, भांग, सपेद अपराजिता, इन प्रत्येकना १-१
कपे रवरस पूर्वचूर्णमें मिलाकर मर्दनकरे, फिर सेकुण्ड, आक
और कटका दूध १-१ कपे डालकर यदातवमर्दन करेकि
उतका गोला बधनाय फिर हीरेकीभस्म अथवा अर्काकभस्म,
अतीस, शुद्धकुचिला, अन्नकभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, विरयमा,
(यूनानी) शुद्धसोनामासी, येप्रत्येक २-२ माशे डालकर
अमलोनियाकेरससे १-२ रोज मर्दनकर तिलप्रमाण गोलियें
बनाकर छायाशुष्क कर रखलोडे । असाध्यरोगप्रस्त आदमीको
लड़ने तथा बाजुकास्वेदसे शुद्धकर शङ्करभीपूजाकर सर्पणनायको
मन्त्रस्मारकर निगिके कोरे शरावमें पानीसे २१ गोली चिसकर
रोगीको पिलावे और बन्द भक्तानमें खटियापर सुलाकर कप-
डेहीकन्दे । जिसवक शरीरमें दाहामालमहो उससमय ठ्यागलउसी
मिथीने शरावनो भरकर बारबार पिलावे । इसने सेननेसे सत्रिपात
ज्वर, दुस्तरदाह, कास, श्वास, ज्वर, हिकी, प्रमेह, पथी
और कफपित्तजनित दाह नष्टहोताहै । मूत्रापातमें इनगोलियें-
को । दूधकेसाय देवे और तृणपत्रमूलका काथ बारवार पिलावे ।
इसप्रयोगका पानीयवटी नामहै और लोगोंके उपकारके-
लिये लोकनाथ सिद्धने बनाईहै ॥ ११८ ॥

११९ पानीयवटिका (द्वितीया)

रसमापकत्वयारि सम्यक् शुद्धानि कारयेत् ।
राजिकाद्रूपानीयैर्मर्दयेद्दुशो भिषक् ॥ ४९६ ॥

स्वर्णधत्तुरजैर्द्रवैर्वृद्धदासुद्रवैस्तथा ।
 कन्यकोत्यद्रवैस्तद्वद्रसशोधनमाचरेत् ॥ ४९७ ॥
 गन्धकं रसतुल्यन्तु प्रक्षाल्य तण्डुलाम्बुना ।
 कृत्वा तैलसमं द्रव्यां निर्वाप्य चित्रकद्रवे ॥ ४९८ ॥
 द्वयोः कज्जलिकां कृत्वा लोहचूर्णस्य मापकम् ।
 सुवर्णमाक्षिकमपि तत्र लोहसमं कुरु ॥ ४९९ ॥
 घर्मयन्त्रादिसंयोगात्ताम्रपत्रं मृत्तिं व्रजेत् ।
 एकीकृत्य तु तत्सर्वं ततः प्रस्तरभाजने ॥ ५०० ॥
 मर्दयेत्ताम्रदण्डेन दत्त्वा चैपां निजं द्रवम् ।
 प्रथमे केशराजश्च द्वितीये श्रीमस्तुन्दरः ॥ ५०१ ॥
 तृतीये भृङ्गराजश्च चतुर्थे भेरुपणिका ।
 पञ्चमे चन्द्रसूरश्च षष्ठे च रसपुतिका ॥ ५०२ ॥
 सप्तमे पारिभद्रः स्यादष्टमे रक्तचित्रकः ।
 शकान्शनश्च नवमे दशमे काकमाचिका ॥ ५०३ ॥
 एकादशे तथा नीली द्वादशे हस्तिगुण्डिका ।
 अमीपामौषधीनान्तु प्रत्येकन्तु पलं द्रवम् ॥ ५०४ ॥
 मर्दयेत्तु प्रयत्नेन द्वादशहस्ति साधकः ।
 ततः पारदमानन्तु दत्त्वा त्रिकटुचूर्णकम् ॥ ५०५ ॥
 वटिकां राजिकातुल्यां छायागुण्डां समाचरेत् ।
 ततः शम्बूकजे पात्रे कर्तव्या वटिका त्वियम् ॥ ५०६ ॥
 शरावे शङ्खपात्रे वा कृत्वा सलिलगालितम् ।
 अत्यन्तदोषदृष्टाय शानशून्याय रोगिणे ॥ ५०७ ॥
 ऊर्ध्वयोनिं समभ्यर्च्य प्रदद्याद्दटिकाद्वयम् ।
 दक्षकयेत्तं ततः पश्चात्प्ररं स्थूलपटादिभिः ॥ ५०८ ॥
 मलमूत्रागमात्सद्यः स साध्यो भवति द्रुतम् ।
 दध्यन्नन्तु ततो दद्यात्पिपेहारि यथैच्छिक्रम् ॥ ५०९ ॥
 दद्याद्वातहरं तैलमभ्यङ्गाय सदैव हि ।
 चिरज्वरे पिपेहारि पञ्चमूलीप्रसाधितम् ॥ ५१० ॥
 ग्रहण्यां रक्तपात्रे च पिपेदतिविषां गद्दी ।
 पिपेत्पर्पटजं घारि घोरं कम्पज्वरे तथा ॥ ५११ ॥
 तथा ज्वराऽतिसारे च जीरकस्य जलं पिपेत् ।
 मन्दासौ कामलायाञ्च सहह्रप्रहणीगदे ॥
 कामे श्वासे सदा देया पानीयवटिका शुभा ॥ ५१२ ॥
 भै र, र सु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धविषे हुए ४ मासे पारको राई और अदरकके
 स्तरसके बर्बारे मर्दनकरे फिर कर्मांदी, धूरु, विषात, पीपु
 आर इनके रोगोंमें अल्पा २ मर्दनकरके ऊर्ध्वान्त्रमें पारको साफ
 करके रखते । पारकीबराबर शुद्धगन्धकको चात्रलोकैपोवनमें पोकर
 धूपमें सुगाकर लोहकीकट्टीमें अम्रिके रायोगमें तेजके रास
 इव बनाकर चित्रक पत्रबरा अथवा सर्वाङ्गजयमें सुताद, फिर
 दोनोका ४ पदमर्दनकर नीलगन्धकको बनाकर १ मासालोहका
 घारिधूप और न्यग्नाक्षिकमिलाए । इनमें नीबूका स्वरस
 अथवा गुमारीका रस मित्राकर लेपके योग्य बनाए, फिर कट-

कवेधी शुद्धताम्रके ४ मासे पत्र पर लेपकरके एण्डपत्रमें लेप
 तावेके पात्रमें रखकर कडीधूपमें रखदे । चापहरकेनाद धूपमेंसे
 उठाकर कमासुत लेपतर धान्यराशिमें रखदे । तीनरोजकेवाद्-
 निकालकर पत्थरकी खरलमें डालकर तावेकेउडेसे सबको मर्द-
 नकरडाले, यह तावेकेपत्रकीमस होजायगी । इसमें कालेभा-
 रेका रस डालकर एकरोजमर्दनकरे । दूसरेदिन हरमल, तीसरेदि-
 नभंगरा, चौथेदिननाझी, पाचवेंदिन चंभुर, छठेदिन चिरपोदन,
 सातवें दिन फरहद, आठवेंदिन लालचित्रक, नवेंदिन गाचा,
 दसवेंदिन मकोय, ग्यारहवेंदिन नील, बारहवेंदिन हाथीशुडी इन
 प्रत्येक औषधोंका रसडालकर मर्दनकरे । प्रत्येकदिन पूर्वोक्तक-
 मसे प्रत्येक औषधिद्वारा १-१ पल्लेकम न सुखावे, ऐसे १०
 दिनोंमें इसमर्दनकर तेरहवेंदिन ४ मासे त्रिकटुका वारीकचूर्ण
 मिलाकर राईके बराबर गोलियें बनाकर छायागुण्डकर काचनी
 शीशीमें रखडोडे । ज्वरकी द्विदोषप्रकोपावस्थामें जब संग्हा-
 हितरोगीहो उससमय सेंचला, शङ्ख अथवा मिट्टीके कोरपात्रमें
 २ गोलो पानीकेसाथ पिसकर म्रक्षा और महादेवकी पुजनकर
 रोगीको पिलाकर रजाईवैरह गर्भकपड़ा ओढ़ादे । इसके देनेके
 बाददस्तऔर पेशावहोजावेंतो रोगीको साध्य समझना अन्यथा
 असध्य, है. मलमूत्रत्यागमेवाद् ज्वररोगीको अत्यन्त भूखलगे
 तो दहीभात पिलाकर गरम या ठंडा जैसी रोगीकी इच्छाहो
 बैतापानी पिलाना । कोईभी बातहर तैल अन्वयकरनेको देना ।
 ज्वर अगर बहुतादिना होते बृहत्पत्रमूलमें पकया हुआ पानी
 देना । प्रहर्णामें जिससमय रक्तुचदस्त होतैहों उससमय अती-
 सना काडा देना । अत्यन्त कम्पज्वरमें पित्तरापडेका घाय और
 ज्वराऽतिसारमें जीरका पानी देना इसीतरह मन्दासि, कामला,
 सङ्गह्रहणी, कास, श्वास इत्यादि रोगोंमें उचिताऽनुपानकेसाथ
 इन गोलोका प्रयोग करना ॥ ११९ ॥

१२० पापरोगान्तको रसः

अथ शुद्धस्य सूतस्य मृतस्य मूर्च्छितस्य च ।
 घण्टा पिप्पली धात्री रुद्राक्षचूतमाक्षिकैः ॥ ५१३ ॥
 पापरोगान्तको यांगः पृथिन्यामेन दुर्लभः ।
 बहुध्याऽस्य प्रयोक्तव्यो वायुचीकायसंयुतः ॥ ५१४ ॥
 र चि, रगानसं., र. र, र चं, र सि, र कौ, यो. म,
 र का, र. स, र सु, मरुिकायाम्, र का, पापाद्रुयोगः ।
 र. स, र सु, एतयोर्मन्थयो दुर्लभरस इति नाम स्थापितम् ।
 तथा च घबलापिप्लीस्थाने द्विवला पिप्पलीतिहात ।

टि०—योगान्ताय अनुपानकेनामन्थयो मूर्च्छितरस्य योग
 इत्येति नपनि—निपानकेनैव मूर्च्छित परदी रस । शिक्लेपीरो
 पीरो हनि मशिरगुनु ॥ मरुटीं मरुतां संप्रनरिषां सरीर
 जम् ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धविषेहुएपारकीमन्थयोग्य बब, अथवा धात्र-
 कभा, पीपु, आरुद्र, रुद्राक्ष, धी और रुद्राक्ष योग्यरसके
 उचिताऽनुपानके साथ देनेमें मरुकारोमटा अन्वयेताहै । अगर
 पारकी भस्म न मिलेना रसविन्तरप्रयत्नितुच्छांन्वयेताहै

उपयोगकरना । इसकी ३ रस्तीकीमात्रा बाङ्गुनीके वाडेकेसाथ देना । पी और मधुको छोडकर तमामका प्रमाण समभाग लेना उसकी तीनरस्तीकीमात्रा समझनी चाहिये । घृत तथा मधु योग्यताप्रमाणदे, जहा रससिन्दूरप्रयुक्तिकाभी अभावहो वहा कबली देखकेहै ॥ १२० ॥

१२१ पारङ्गचादि रसायनम् (गन्धकरसायनम्)

त्रिंशत्पलानि वृद्धदारु वातारस्तन्मितानि च
हिंसाद्यथं चित्रमूलमिन्दुदीमूलकन्तथा ॥ ५१५ ॥
मरीचकाण्डं मूलञ्च शरपुङ्खो च पूतिका ।
अश्वगन्धा च वहणः प्रत्येक पलपोडशम् ॥ ५१६ ॥
तद्गुण्णकं शुद्धं जलमादाय निक्षिपेत् ।
शने मूढद्विना सम्यक् पाचयेत्सत्रात्रकम् ॥ ५१७ ॥
चतुर्भागाऽवशेषे तु कषाये सुपरिक्षुते ।
पुराणस्य गुडस्याऽपि तुलां कल्कानि दापयेत् ॥ ५१८ ॥
काषायद्रव्यमूलानि चूर्णाकृत्य प्रयत्नतः ।
प्रत्येकं द्विपलं प्राह्यं त्रिंशद्भ्रूतजानि च ॥ ५१९ ॥
वृद्धदारुपलञ्चैव वातारेश्च चतुष्पलम् ।
कटुनयञ्च खदिर रान्नाकुष्ठपिडङ्गकम् ॥ ५२० ॥
दीप्यद्वयं जातिपत्रं तत्कलं वृष्टिकेसरम् ।
भाङ्गीटङ्गणमांसीनां प्रत्येकं पलमात्रकम् ॥ ५२१ ॥
गन्धं चाऽष्टपलञ्चैव चूर्णाकृत्य यथाविधि ।
योजयेद्रससिन्दूरमष्टनिष्कप्रमाणकम् ॥ ५२२ ॥
क्षौद्रं तुलार्द्धकञ्चैव तदर्थं घृतमेव च ।
लेहं पाकं तथा कृत्वा सुपक्वमपि कारयेत् ॥ ५२३ ॥
विपन्नसेनं समभ्यर्च्य धन्वन्तरिमथाऽर्चयेत् ।
देवब्राह्मणपूजां च वैद्यमानं प्रदापयेत् ॥ ५२४ ॥
स्यहं प्रातरत्याय भक्षयेत्कर्ममात्रकम् ।
तदर्थं चैव सायाह्ने सेवयेत्पण्डलं कमात् ॥ ५२५ ॥
पेह्वणान्श्च सर्वांश्च मेहुरोगांश्च सर्वशः ।
भगन्दरञ्चपिडिकां कासश्वासाऽऽरुचोस्तथा ॥ ५२६ ॥
उर्ववातान्द्वेरेचाशु सर्वत्रणनिवारकम् ।
पारङ्गचादिकनामेदमभ्यभ्यां निर्मितं पुरा ॥ ५२७ ॥

वै चि ,

भाषा—विधारेकीजड ३० पल, एरण्डीकीजड ३० पल, फाला और सपेद्वेहंत, चित्रक और द्विज्ञोटीकीजड, मिर्चकी शाखा और जड, शरपुङ्खकी जड, पुडकरभीकी छाल अथवा गन्धप्रसार, असगन्ध, वहणकी छाल ये प्रत्येक १६ पलकेकर सबको जोडकर अष्टगुणितपानीमें बहुतगन्दआचसे सातदिलरात रकावे और चतुर्भांश बाकीरहनेपर छानकर ४०० कर्ष पुराना गुड डालदे । जिनद्रव्योंका काढा बनायाहै उनकीजड २-२ रल, मिलावे ३० नग विधारेकीजड १ पल एरडकीजड ४ पल त्रिकटु, खैरसार, रान्ना, कुठ, विडङ्ग, देशी और खुरासानी अजवाइन, जाविनी, जायफल, इलायची, केसर, भारङ्गी,

सुहागा, जटामासी येप्रत्येक १-१ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, इनसबका कपडछानचूर्णकर उसमें डाले । रससिन्दूर ८ टङ्क (३२ मात्रो), मधु २०० कर्ष, पी १०० कर्ष, इनसबको इक्का चढार मन्दूर्धोचसे पकावे । जब लेह जैसा तैयारहोजाय तब विश्वसेन तथा धन्वन्तरि और देव तथा ब्राह्मणोंकी पूजाकर वैद्यका भाग (११ वा अंश) देवे । दररोज प्रात काल १-१ तोललेवे और शामको ६ माशेलेवे । इसतरह १ मण्डल सेव-नकरनेसे प्रमेहपिडिका समस्तमेहुरोग, भगन्दर, कास, श्वास, अर्धचि, समस्तवात समस्तवण येसन नष्ट होतेहै ॥ १२१ ॥

१२२ पारदद्रुतिः

यूनो नरस्य केशांस्तु विमृद्योपलया धिया ।
निर्मलीकृत्य नीरेण सूक्ष्मसूक्ष्मः ॥ ५२८ ॥
कृत्वा शरायमप्ये च स्थापयेदेकरात्रकम् ।
नीहारे सम्पुटीकृत्य मृदाऽथश्चिद्रसंयुतम् ॥ ५२९ ॥
आकाशयन्त्रके वह्निं कुक्कुटेन पुटेन तु ।
दत्त्वा तच्चिद्रतो विन्दुशङ्खतपीतसुलोहितान् ॥ ५३० ॥
गुह्यायश्च तान् कृष्णान् केशतैलमितीरितम् ।
तत्तैलमर्धसेहुण्डक्षीरेण परिमृद्य च ॥ ५३१ ॥
तद्यन्त्रेणैव सङ्गृह्य तुर्यांशं नवसादरम् ।
सम्भर्च्य तेन संक्षिप्य काचसम्पुटकान्तरम् ॥ ५३२ ॥
पारदञ्च विमृद्दीयाद्यामद्वितयकावधि ।
रुद्धा सम्पुटके तस्मिन्स्थापयेद्दर्भगर्तके ॥ ५३३ ॥
सद्यो युवाश्वमलके संकृद्धचदिवसत्रयम् ।
सञ्चित्वाऽजशकृतसप्त दिनान्येवं स्थितिर्भवेत् ॥ ५३४ ॥
अष्टमे दिवसे तत्तु गुह्यायान्निपजावरः ।
स्वच्छा सलिलरूपा सा पारदस्य द्रुतिर्भवेत् ॥ ५३५ ॥
गुञ्जातुरीयभागेन यथारोगाऽनुपानत ।
सर्वरोगहरी ख्याता शूलगुल्मादिकान् गदान् ॥
क्षिप्रं विनादायत्येव शङ्करोक्तमितीरितम् ॥ ५३६ ॥

र वा. गुल्माधिकारे ।

भाषा—जबान आदमीके काले केशोंमें / यदि गर्भमेंसे आये हुए मिलसकें तो अत्युत्तमहै) शङ्करनेसाथ एकदो पण्डे मसकर स्वच्छपानीसे धोकर साफ करले जिसमेंकि मलका अंश न रहजाय, फिर इन्हें कपडसे पोंछकर साफकरके केंचोसे जहातक होसके बारीक काटडाले । तदनन्तर मनभूत तथाकोरे दो शराव लेकर एकमें ३-४ बारीक छिद्रकरके उसमें उनके-शोंको रखकर ओसमें एकुरातमर रखदे, फिर दूसरा शराव ढक्कर दोनोका कपडमिठीसे छिद्रबन्दकरदे, फिर आकाशयन्त्रमें (चूल्हेपर छिद्रसहितपीनेको रखकर छिद्रपर शरावको रखकर मिठीसे दोनोका अन्नर बन्दकरदे जिसमें कि नीचे राखवगैरह न जाय फिर गुद्राको सुखाले यही आकाशयन्त्रहै) कुक्कुट पुट देवे । नीचेके छिद्रोंमेंसे सफर, पीले और लालरङ्गके बमसे बिन्दु गिरेगे इनसबको ललेवे जब काले बिन्दु आने लगें तब न

ले यह वेश तैल तैयार हुआ । इसकेसतैलसे आधा सेहुण्डका दूध डालकर मर्दनकरे जन गोला बनजाय तब पूर्वोक्त यन्त्रसे इमजातल निगाले, फिर उसतैलमें चतुर्थांश नवसादर मिला कर मर्दनकरले यह एक्टरहका गरहमने सदश तैयाहोजायगा इससे काचकी सरलमें लेपकरदे और लेपकीवाराज पाटा डाल कर दोपहरतक काचकी मूसलीसे मर्दनकरे । फिर उसपरलका सम्पुट बनाय कमरभर खड़ा खोदकर आधेमें जवान घोड़ोंकी ताजी लीद भरदे । उसपर इससम्पुटको रखर ऊपरसे दूसरी लीद भरदे चौथेरोज लीद निकालदे और । वक्तोंकी ताजी मींगणी पूर्ववत् भरदे । यदि वक्तोंकी इतनी ताजी मींगणी मिलनेका समय न हो तो पूर्वगतमें आधा या चौथाई गतकरे और सातदिनतक रहने दे । आठवेंरोज बहुत पीरखले शावसम्पुटको निगालकर मुदाको खोले, उसखरलमें पानीके सदश स्वच्छ दूध मिलेगी इसको काचकी शीशीमें रखडोडे । इसमेंसे एकरतीका चतुर्थभाग यथोचित रोगानुपानकेमाथ देनेसे शूल, गुल्मप्रभृति समस्तरोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ १२२ ॥

१२३ पारदवटी (प्रथमा द्वितीया च)

पारवताण्डमध्ये सूतं दङ्गुल्यं क्षिपेचुक्यता ।
तैरेव तावदण्डं मेघ्यं यावत्तु शावकोत्पत्तिः ॥५३७॥
तं सूतं गुट्टिकां सम्यग्योगेषु योजयेन्मतिमान् ।
अथवाऽसितधत्तूरशाखास्त्रये निवेशयेद्विधिना ॥
सूतं यावन्मासं भवति च गुट्टिकाप्रभो नियतम् ५३८
यो. न, रसायने ।

भाषा—क्यूतरी जिसवक अण्डा दे उसीसमय उसके परोक्ष एक अण्डेमें मुईसे छिद्रकरके ८ मासे पारा भरदेवे परन्तु यह ध्यान रखे कि यह बात क्यूतरीको मालूम न हो नहींतो वह उसको सेवेगी नहीं, किया व्यर्थ जायगी । जब औरोंमेंसे फोड़कर वह बखोना निकाललेनर बहापर भारेकी बर्षा हुई गोली मिलेगी । अथवा कालेपत्रेकी शाखामें पारेको भर कर छोड़दे ऊपरसे गोबर अथवा आटेसे छिद्रको बन्दकरदे और उसपर भिगोकर कपड़ा बांधदे तो एकमात्रेनाद इतकी गोली बंध जायगी । इन गोलियोंको दूधमें उबालकर पीनेसे शुभकी वृद्धि होतीहै कमरमें बांधनेमें स्वप्नदोष और प्रमेह निवृत्त होताहै और बद्धभारदना योग जहा आयाहो बहापर इनमें कामले सकेहै ॥ १२३ ॥

१२४ पारदवटी (तृतीया)

रसं सत्ते विनिक्षिप्य धुत्तूररसमर्दितम् ।
रजतेन निमर्द्याऽथ गुट्टिकाः कारयेद्दूध. ॥ ५३९ ॥
धुत्तूरभृङ्गराजोत्परसेन वचया सह ।
पाचयेद्गोलिकायन्त्रे गुट्टिकां घञ्जसञ्चिन्नाताम् ॥५४०॥
यदने धारयन्तेन वीर्यस्तम्भनमुत्तमम् ।
द्वितीकरञ्च लोकानां स्त्रीणाञ्चाऽपि शतमजेत् ॥५४१॥
र क यो, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें चादीकीभस्म अथवा रता इतना मिलाए कि पारा मूर्च्छित होजाय फिर धतूरेके रसकेसाथ मर्दन करे जब भस्मनके सदश होजाय तब इसकीगोलिया बनाकर मुखाळे । फिर धतूरा और भगरेका रस समभाग मिलाकर अष्टमास वचना चूर्ण मिलाकर गोलियोंको अलग २ कपडेमें बांधकर दोलायन्त्रसे स्वेदन करनेसे गोली कड़ी होजायगी । इनको सुधमें रखनेसे वीर्यस्तम्भन और वशीकरण होताहै ॥ १२४ ॥

१२५ पारदादि चूर्णम्

रसवलिघनसारकोलमज्जाऽ-

मरु सुमाम्बुधरः प्रियङ्गुञ्ज ।

मलयजामगधात्वग्निन्द्रयं

द्वलितमिदं परिभाव्य चन्दनाद्भिः ॥

मधुमरिचयुतं रजोऽस्य मापं

जयति वर्मिं प्रबलां विलिह्य मर्त्यः ॥ ५४२ ॥

र कौ, २ यो. व, रसायनवं, र सु, नि र, छर्दितोने ।

टि०—अत्र योगे घनोद्भ्रमम्, सारो लोहम् । केचित्तु घनमारसवैधेय कर्तुं निबोधयन्ति, परन्तु स लोहाद्भ्रमयोगान्मूलवले योगो भवतीति बोध्यम् ।

भाषा—पारेगन्धकी नीलवर्णकमली, अश्रक और लोह-भस्म, बेरकी मज्जा, लौंग, नागसोया, मूलप्रियङ्गु (अभावमें मालकाजी), सपेदचन्दन पीपल, तज, इन्द्रवज, देसन सम भाग लेकर वारीकचूर्णकर सकेदचन्दनके वाडेकी ६-७ भावनाये देकर मुखाकर रखडोडे । इसमेंसे १ मासे चूर्णमें ७ या २१ मरिच मिलाकर मरुकेसाथ चटानेमें अवाच्य भी वमन निवृत्त होतीहै ॥ १२५ ॥

१२६ पारदादिधूपः

रसं चङ्गुञ्ज सदिरें हरीतक्याश्च भस्मकम् ।

तरुणीरुदलीभस्म पुगस्य फलजन्तथा ॥ ५४३ ॥

एरुतोलरुमानं स्याद्विह्वल हरितालरुम् ।

गन्धकं तुत्यकञ्चाऽपि पद्मकं सरलन्तथा ॥ ५४४ ॥

हे चन्दने देवदारु वकमं काष्ठमेव च ।

तथा केदारकाष्ठञ्च मापमानं प्रकल्पयेत् ॥ ५४५ ॥

एकौत्थ्य विचूर्ण्याऽथ सर्वं चाङ्गेरिकाद्रवैः ।

तुलसीपत्रजरसैः पुरातनगुहेन च ॥ ५४६ ॥

घृतेन सह पद् फायां घट्टिका मन्त्ररक्षिताः ।

वेदनापामुस्कटायां चतुर्भिः शुक्रवर्जकैः ॥ ५४७ ॥

वेष्टयित्वा च निर्धूमाऽङ्गारोपरि प्रदापयेत् ।

तं धूमं प्रतिशुद्धीयान्नरो वखाद्विषेष्टित ॥ ५४८ ॥

मुलनासाकर्णवर्हिर्नि श्वासस्य निरोधनात् ।

स्वेदे जातेऽस्य नेह्यं सार्धं प्रातर्दिनत्रयम् ॥ ५४९ ॥

मासमात्रन्तु पथ्याशी शाकाम्लद्विषवर्जनम् ।

गुर्वन्नपायसादीनि चाऽप्यथ्यानि विवर्जयेत् ॥ ५५० ॥

दिनत्रये व्यतीते तु आनमुष्णाम्बुना चरेत् ।

पत्रं धूमे द्यते शान्तिं प्रेणाप्या पिडिका अपि ५५१

तथा शोधश्चामघातः खड्गताऽपि च ।
कुष्ठोपदंशशान्त्यर्थं भैरवेण प्रकीर्तितः ॥ ५५२ ॥
घ., भै. र., उपदंशे ।

भाषा—पारा, वज्रभस्म, कत्या, हर्षीभस्म, केलेके दो-
मलरसौवीभस्म, सुपारीकीभस्म, येसन १-१ तोला; हिङ्गुल,
हरिताल, गन्धक, तुल्य, पद्मकाष्ठ, सरल, दोनोचन्दन देवदारु,
वक्त्रमकीलकड़ी, केशरकाष्ठ (सु हळदरवो) की जड़ येसन
१-१ मादा लेकर सबका वारीक चूर्णकर अमलोनिया, तुल-
सीकेपत्ते, पुरानागुड़ और घृत, ये अन्दाजसे डालकर ६ गोलिये
बनावे । जिससमय उपदंशको मिसीतरह कल न पड़तीहो
उससमय चारतरह सफेद बपड़ेसे ढककर निर्धूम अज्ञारोंपर एक
गोली रखकर धुंआं देवे और तयामअन्नमें धुंए को लगाने देवे ।
धुंआ लेते समय मुंह, नाक, वान सनके ढकेरहनेसे और श्वासके
बन्दरनेसे पसीनाहोण उसीरास्तेसे शरीरका तमामविष
बाहरनिकल जायगा इन्तरह सुबहशामलेवे । गेंहूँ, चना, धी
और शकर इनको चाहे जितनरह जाय । इनके अतिरिक्त कोई
चीज न खाय और यह पथ्य एकमहीने तक चलावे । जबतक
धुंआले तबतक स्नान न करे, चौबेदिन गरमपानीसे स्नानकरे ।
केवल धुंएके प्रहणसे पाव, कुंसी, शोथ, आमवात, खड्गता,
पहुता, कुष्ठ और उपदंश येसब शान्त होतेहैं ॥ १२६ ॥

१२७ पारदादि मलहरम् (प्रथमम्)

रसगन्धकयोश्चूर्णं तत्समं मर्दन्तुङ्गकम् ।
सर्वतुल्यन्तु कम्पिहं किञ्चित्तुल्यसमन्वितम् ॥५५३॥
सर्वं सम्मेलयेद्भवा घृतं सर्वचतुर्गुणम् ।
पिचुप्लोतं प्रदातव्यं दुष्टव्रणविशोधनम् ॥ ५५४ ॥
नाडीव्रणहरश्चैव सर्वव्रणनिपूदनम् ।
ये व्रणा न प्रशाम्यन्ति भैपजानां शतेन च ।
अनेन ते प्रशाम्यन्ति सर्पिषा स्वल्पकालतः ॥५५५॥
२ यो. त., र. कौ., रसायनसं., व्रणे ।

भाषा—पाराऔरगन्धक समभागलेकर नीलवर्ण कजली
करना । इनदोनोंकी बराबर मुदासाज और सबको बराबर
कमीला तथा बोडशाश नीलाधोया लेकर सबका वारीकचूर्णकर
सबसे चौगुना घृत डालकर एम्बो पहरघोटकर इसतरहका मर-
हम बनावेकि सब एकजीवहोजायं । इसको बपड़ेपरलागाकर
धावपर रखना चाहिये । गम्भीर अथवा नाडीव्रण होतो इसीकी
वतीभी रखे । इसके उपयोगसे दुष्टव्रण छुद्दहोकर अच्छाहो-
जाताहै नाडीव्रण भरजाताहै । जो व्रण सैकड़ों दवाओंके वरनेसे
शान्त न हुएहों वे इस मरहमसे बहुतथोड़ेही कालमें शान्तहो
जातेहैं । इसको चाहे जिस व्रणमें लगासकेहै ॥ १२७ ॥

१२८ पारदादि मलहरम् (द्वितीयम्)

रसगन्धकसिन्दूररालाकम्पिह्लमादिकम् ।
तुल्यं खदिरजं चूर्णं घृतं देयं चतुर्गुणम् ॥ ५५६ ॥

युक्त्या सम्मेल्य पिचुना व्रणे देयं विज्ञानता ।
सर्वव्रणप्रशामनं घृतमेतन्न संशयः ॥ ५५७ ॥

२ यो. त., र. कौ., यो. र., रसायनसं., व्रणे ।

भाषा—पारा, गन्धक, सिन्दूर, राल, कमीला, मुदासाज,
नीलाधोया, कत्या, येसन समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण
कजलीकर दूसरी चीजोंका कपडछान चूर्णकर सबसे चौगुना धी
मिलाकर मरहम बनावे । इसको बपड़ेपर लगाकर सधतरहके
व्रणोंपर लगावे । इसके लगानेसे सत्रप्रकारके व्रण शान्त
होतेहैं ॥ १२८ ॥

१२९ पारदादि योगः

सूते सवर्णं व्योमसत्त्वं तारं ताम्रञ्च रोचनम् ।
वीजञ्च शरपुहोतयं कृष्णघञ्जरीजकम् ॥ ५५८ ॥
सर्वं मथी यदक्षरीः कुवेराक्षस्य बीजकैः ।
तक्षिस्त्वा धारयेद्भक्त्रे धीर्यस्तम्भकरं चिरम् ॥५५९॥
र खं., धीर्यस्तंभे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, अत्रकसार, रजतभस्म,
ताम्रभस्म, गोरोचन, सफेदका और कालेघट्टरेके बीज येसब
समभाग लेकर पारे और रजत की जल्का बनाकर सबचीजोंको
मिलादे फिर इसमें बटका दूध डालकर मदनकर १-१ रतीकी
गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली करबकी मुठ-
लीमें डालकर मुंहमें रखनेसे बीर्यस्तम्भन होताहै और यवारो-
गात्पानकेसाथ खिलानेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै १२९

१३० पारदादि लेपः (प्रथमः)

श्वेतस्य कणवीरस्य मूलस्य त्वकूपलार्धकम् ।
रदस्याऽपि च तन्मानं हरितालं पलाधकम् ॥५६०॥
धूर्तवीजं पलार्धं स्यात् पलार्धं गन्धकं मतम् ।
रसं पलार्धं कथितं तिलतैलं ततः परम् ॥ ५६१ ॥
कथितं पञ्चपलिकं औषधीनाञ्च चूर्णकम् ।
कर्तव्यं सूक्ष्मकं चाऽथ रसस्य बलिना सह ॥ ५६२ ॥
कञ्जलिं सूक्ष्मिकां कृत्वा तस्मिन्द्यालुचूर्णकम् ।
तैले सम्मिश्रितं कृत्वा घर्षार्थं संप्रलेपयेत् ॥ ५६३ ॥
वर्षिं कृत्वा प्रज्वलितां रक्षणीया जलोपरि ।
अधोमुखीतः पतितं जले तैलं समाहरेत् ॥ ५६४ ॥
तत्तैलं मर्दयेद्विह्ने उपरिस्थं ततः परम् ।
श्लेष्मातकस्य पत्रं तु मृद्म लिह्नेोपरि न्यसेत् ॥५६५॥
सूत्रेण वेष्टयित्वा च सूक्ष्मचक्षेणतत्परम् ।
द्विद्वारं सतदिवसं हस्तकर्मकृतञ्जयेत् ॥ ५६६ ॥

१ कु

भाषा—सफेद और लालकनेरकी जड़की छाल, हरिताल,
धूर्तके बीज, गन्धक, पारा येप्रत्येक २ कर्प, तिलका तैल
५ पललेकर सबका कपडछानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णक-
जलीमें मिलायथीरे २ तैलडालकर खालकरे । मरहमकेसद्वहोने-
पर एकहायलम्बाचीड़ा खादीकाकपडालेकर आधेघर इसका

लेपकर बीचमें लोहेकी शलाका रखकर बत्तीकी तरह लपेटदे और बत्तीको बीचमें चीमटेकीरहसे पकड़कर दोनों तर्क आग-लगादे । बत्तीकेनीचे चौड़ेपात्रमें पानीभरकर रखदे जिसमें कि बत्तीमेंसे टपकाहुआ तैल पानीमें गिरकर ठंटाहोजाय । बत्तीके गुलको तोड़कर फेंकताजाय नहींतो तैलनहीं निकलेगा । तमामबत्तीजलजानेके बाद स्वाङ्गशीतलहोनेपर तैलको निकालकर शीशामें रखछोड़े । इसमेंसे १-२ बूंद तैल लेकर सीबन और छुपारीको छोड़कर इन्द्रियपर लेपकर और बहुत कोमल लिप्तोडेकापता लगाकर कच्चेसूतसे लपेटकर बारीकस्पड़ावांधे, लंगोट न लगावे । इसतरह करनेसे ७ दिनों हस्तकर्मकृतदो-पसे निम्कुहोताहै इसतैलको खानेके काममें लेनाहो तो इरि-ताल, पारा, गन्धक इनको छोड़करके डाले । इसतैलकी एकएक शलाका पानमें रखकर खिलावे और ऊपरसे दूधपिलावे ॥ १३० ॥

१३१ पारदादिलेपः (द्वितीयः)

पारदं मरिचं कुष्ठं तगरं कण्टकारिका ।
अश्वगन्धा तिलाः क्षौद्रं सैन्धवं श्वेतसर्पापाः ॥ ५६७ ॥
अपामार्गो यवा मायाः पिप्पली च समं जलैः ।
पिष्ट्वा विमर्दयेत्तेन लिङ्गं मासमहर्निशम् ॥ ५६८ ॥
वर्धते हस्तमात्रन्तस्सौल्येन मुशालोपमम् ।
वराहवसयाक्षौद्रैर्लिङ्गं मासं विलेपयेत् ।
अतिदीर्घं दृढं स्थूलं जायतेनाऽत्र संशयः ॥ ५६९ ॥
र. खं., श्वजट्टौ ।

भाषा—शुद्धपारा, मरिच, कुष्ठ, तगर, भटकट्टैया, अस गन्ध, तिल, मधु, संधानमक, पीलीसरसों, अपामार्ग, जव, उडद और पीपल येसब समभागलेकर जलमें पीसकर लिप्पपर लेपकरके मर्दनकरे । एकमहीनेतक इसीतरह प्रयोगकरनेसे स्थूला और कठिनाता यथेष्ट प्राप्तहोतीहै । वराहनी वसा और मधुमे मिलाकर लेप करनेसे एकमहीनेमें ध्वनकी लम्बाई और स्थूला यथेष्टहोजातीहै ॥ १३१ ॥

१३२ पारदादि वटी (प्रथमा)

सुवर्णं रसभस्माऽथ माक्षिकं चाऽन्नसत्त्वकम् ।
मुक्ताफलसमायुक्तं सर्वं रत्नैरे विमर्दयेत् ॥ ५७० ॥
जम्बीरफलजैत्राविमर्दयेद्भिदिनं मिपक् ।
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्द्यं यामचतुष्टयम् ॥ ५७१ ॥
चित्रमूलकपायेण मर्दयेद्भिदिनं मिपक् ।
हंसपाद्रीरसे चैव मर्दयेद्विषप्रयम् ॥ ५७२ ॥
आतपे शोषयित्वाऽथ कृषिकायां निवेदायेत् ।
सप्तभिर्भृत्तिकायखैर्वालुक्यायन्प्रमार्गतः ॥ ५७३ ॥
पचेद्दिशतियामन्तु स्याद्दशीतं समुद्धरेत् ।
घाटाद्यां च शताययां गोधुंरेण च मर्दयेत् ॥ ५७४ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य पूर्वप्रपरिपाचयेत् ।
गुञ्जादयं सदा रसादेदनुपानविशेषतः ॥ ५७५ ॥

सर्वव्याधिविनिर्मुक्तो दृढदीपनपाचनः ।
वृद्धेषु सेवयेन्नित्यं पूर्णचन्द्रोदयो यथा ॥ ५७६ ॥
वीर्यवृद्धिर्दण्डवृद्धिः पण्डोऽपि पौरुषं भजेत् ।
अस्य सेवनमात्रेण बहुस्त्रीवल्लभो भवेत् ॥ ५७७ ॥
र. क. यो., बाजीकरणे ।

भाषा—सोनेकीमम्म अथवा वकं, पारकीभस्म, माक्षिकभस्म, अन्नरसत्वमस और मोती सब समभाग लेकर जंभीरी नीरूने रससे ३ रोज, अदरखके रससे ४ पहर, चित्रकमूलके काढ़ेसे ३ रोज और हंसपदीके रससे ३ रोज मर्दनकर गोली बनाय धूपमें सुचारर सातकपडिमी की हुई आतरी शीशामें डालकर मुखबन्दकर बाडुका यन्त्रमें २० पहर आंच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वाराहीकन्द, शतावरी, गोखरू, इन प्रत्येकेके रसरससे मर्दनकर पूर्ववत् वांस २० पहरकी आंच देवे, बस यह रस तैयार होगया । इसमेंसे २-२ रत्ती यथोचितानुमानके साथ सेवन करनेसे समस्तव्याधिया दूर होकर अग्नि दीप्त होताहै । पाचनशक्ति एकदम बढ़कर दृढभी पूर्णचन्द्रकी तरह जवान हो जातेहै । पण्डभी वीर्यवृद्धिकी प्राप्त होकर बहुत स्त्रियोंका पति हो सक्ताहै ॥ १३२ ॥

१३३ पारदादिवटी (द्वितीया)

पारदः पञ्चमासः स्याद्बलङ्गं पञ्चमापकम् ।
पुराणमिष्टकान्चूर्णं मापह्नयमितं भवेत् ॥ ४७८ ॥
द्रोणपुष्पीरसेनैव कांस्यपात्रे विमर्दयेत् ।
घटिकासप्तकं कृत्वा प्रातरेकाञ्च भक्षयेत् ॥
फिरङ्गव्याधिनाशाय भोजनन्तु यथेच्छया ॥ ५७९ ॥
यो. म., उपदेशे ।

भाषा—शुद्धपारा और लवङ्ग ५-५ मासे पुरानीईटका चूर्ण २ मासेलेकर यहाँतक मर्दनकरे कि पारा अदृश्य होजाय फिर घृमाके रससे कांसिके पात्रमें मर्दनकरे । गोली घंपने-लायक होनेपर इसकी सात गोळिया बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहमें पानीके साथ निगलनादेवे तो फिरङ्गरोग नष्टहो । इसमें भोजन इच्छानुसार करे ॥ १३३ ॥

१३४ पारदादिवटी (तृतीया)

निष्प्रयमितो गन्धः पारदस्तत्समांशकः ।
पट्टशाणं श्वेतप्रदिरं गुडं द्वादशदशाणिकम् ॥ ५८० ॥
तुलसीस्वरसेनैव लोहपात्रे विमर्दयेत् ।
निम्बकाष्टेन तत्सर्वं द्वियामं गुटिकास्ततः ॥ ५८१ ॥
कायांश्च सप्तसहस्राका पकेकां भक्षयेत्ततः ।
ताम्रूलं मशयेद्वाऽनु पानीयं स्वल्पसेवयेत् ॥ ५८२ ॥
भोजनञ्च यथाकामं निघातपृष्टगोचरः ।
दुःसाध्यप्रणयीडाभ्यां युक्तास्त्रस्य मसूरिकाः ॥
योगेनप्रशमं यान्ति योगेनाऽनेन नाऽन्यथा ॥ ५८३ ॥
यो. म., मसूरिकायात् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ३-३ टङ्क, सफेदकृत्या ६ टङ्क, पुरानागुड १२ टङ्क लेकर तुलसीके स्वरससे लोहके पानमें नीमके उबसे दोपहरतक मर्दनकर सबकी सात गोलियें बनालेखे । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल पानीकेसाथ निगलनाय, ऊपरसे एक पानका बीडा खाकर थोड़ासा पानी पीवे । भोजन यथेच्छितकरे, वायुरहित परमें रहे । इसके सेवनसे दुःसाध्य व्रण और पीडायुक्तमसूरिकाए बहुतजल्दी शान्त हो जातीहै ॥ १३४ ॥

१३५ पारदादिवटी (चतुर्था)

शुद्धं शिवांशमेकांशमेकांशं फणिकेनकम् ।
द्वयंशं गन्धमिति त्रीणि पिप्पला कुर्वात पर्पटीम् ॥ ५८४ ॥
विपमुष्टिकथचतुर्वीजजातीफलान्यपि ।
पकांशानि पृथक्त्वत्त दत्त्वा मरुणतां नयेत् ॥ ५८५ ॥
दाडिमीतन्तिन्डीतोयैर्भांघयेत्सप्तधा पृथक् ।
घटीयैर्जनीत जरणक्षौद्रैस्ता प्रहणीच्छिदः ॥ ५८६ ॥
सि मे म, प्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और अफीम १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीकर धेरेके कोयलेंपर लोहकी कड़्डीमें गलाकर अफीमडालदे । मिलजानेपर भेंसके ताजे गोबरपर रखेहुए कोमल केलेके पत्तेपर ढालकर ऊपरसे दूसरा पत्ता रखकर दूसरे गोबरसे दबादे । चार पहरके बाद धीरेसे पर्पटीको निकालकर फिरसे कञ्जली बनाकर शुद्धकुचिला, धतूरीज और जायफल ये प्रत्येक पारेकी बराबर बारीक पीसकर पर्पटीमें मिलाकर १-२ पहर खरलकरके अनारके स्वर लकी सातभावना देकर पदीहुई इमलीका शोल बनाकर उसकी सातभावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाय सुखाकर रखजोडे । इनमेंसे एक अथवा दोदो गोलिया योग्यतानुसार १ माशा अङ्गिकेसाथ गोलीयोंको पीसकर मधुमें चटानेसे प्रहणीरोग नष्ट होताहै ॥ १३५ ॥

१३६ पारदादिवटी (पञ्चमी)

पारद गन्धक तारममृत चानु शुल्बकम् ।
त्रिफला त्रिसुगन्धश्च चित्रकोशीररेणुकाः ॥ ५८७ ॥
रजनीद्वयसयुक्तं सम्पेय्य घटकीरुतम् ।
प्रहणीं विविधं शूलं शोधाऽतिसारकञ्जयेत् ॥ ५८८ ॥
नि. र, र सु, वै वि, प्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बज्राग, रजत और ताम्र भस्म, त्रिफला त्रिसुगन्ध (तज, पत्रज, इलायची), चित्रकमूल, खग, रेणुकीज, हल्दी, दाहहल्दी ये सब समभागलेकर पार गन्धककी नीलवर्णकञ्जलीकर अन्य वस्तुओंको बारीक पीसकर षट्जकीछालप्रभृति सद्भाहक द्रव्योंक स्वरसकेसाथ, मधु अथवा जलकेसाथ ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली योग्यतानुकूल अनुपानकसाथ दानेसे प्रहणी, नानातहकेरुल, शोथ और अतिसार ये सब नष्ट होतेहैं ।

टि०—रेणुका नामक औषधि आजकल वैद्योंके परिचयसे बाहर निकलवाईहै इसके अभावमें संभालुके बीज लिये जातेहैं परन्तु यह मूलहै रेणुकाके शुण शीतप्रधानहै उष्णताशामकहै, सर्भाङ्गके बीज अत्यन्त गरमहै इसलिये इनको बालना उचित नहीं, हरिद्वारसे लेकर बदरिकाश्रमतक एक वृक्षहोताहै जिसकी शकल कम्प्लेक्ससे बहुतअशोमें मिलती सुलतीहै । दूसरे देखनेमें इसका फलभी कम्प्लेक्सके सदृशही मालूमपड़ताहै भेद इतनाहीहै कि कम्प्लेक्सका फल फलजानेपर स्वयं फूट जाताहै और उसमेंसे खाल रज निकल पडताहै उसेही कम्प्लेक्सकरके व्यवहारमें लाते हैं । रेणुकाका बीज अत्यन्त पत-रके सदृश कठिन होताहै फोड़ने पर प्रयत्नसे फूटताहै काष्ठप्राय होताहै । पहाड़में इसद्रव्यको रोण के नामसे वहाके तमामवासिंदे जानतेहैं हरिद्वार और हृषीकेशके अनभिज्ञलोग वाविडङ्गके नामसे पुनारतेहैं पर जैसेही पहाड़के ऊपर जाओ कि वचोंसे लेकर सुगुंतक 'राण, नाम प्रसिद्धहै । यह नाम रेणुक अथवा रेणु शब्दसे अपभ्रंश हुआ मालूम पडताहै इसकी दातन करनेका बहुत रिवाजहै सुतपाकमें इसके बहुत लाभ होताहै हमेशहके अन्ध्यालसे दातों पर कुछ ललाई आतीहै । वृक्षके तोड़नेसे कुछखाल रजका द्रव निकलता मालूम होताहै इसीको रेणुका शब्दसे प्रहण किया जाय तो रेणुका युक्त योगोंमें विशेष लाभ होनेका सम्भवहै ॥ १३६ ॥

१३७ पारदादिवटी (षष्ठी)

पारदं गन्धक नागं ताम्रं व्योपाऽनलैः समम् ।
स्वर्जारसेन सञ्चर्ष्यं प्रदेया भायना दश ॥ ५८९ ॥
पुनः पर्णरसैः सन्ध्यकू चार्द्रकस्य रसेस्तथा ।
सम्मर्द्य घटिका कार्या कफरोगनिघ्नन्ती ॥ ५९० ॥
मन्दाग्निकफरोगेषु श्वासकासे विशेषतः ।
आध्मानप्रतिनाहेषु प्रदेया सुखकारिणी ॥ ५९१ ॥
नि र, रसायनय, वै, वि, श्वासाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्ण कञ्जली, नाग और ताम्रभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रकमूल ये सब समभाग लेकर काठौषधियोंका चूर्ण बनाकर २-३ पहर मर्दनकर बडी लोनी, पके पान और अदरकके रसाकी १०-१० भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगतके साथ दानेसे कफरोग, मन्दाग्नि, क्षय, कास, पेटका फूलना और गुडगुडहट येसब नष्ट होतेहैं ॥ १३७ ॥

१३८ पारदादिवटी (विनयवटी) (सप्तमी)

समौ रसाऽन्नकौ रत्नयगॅण परिभूपितौ ।
गुटिका करसंस्था तु मुखस्था युद्धचारणी ॥ ५९२ ॥
र, रसेन्द्रम, र क, रसज्याऽधिकारे । रसेन्द्रमःप्रत्ययोंम गुटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, अश्रुस्यार और रत्नगं (पद्म, पुग राज, माणिस्य, पद्मराग, नीलम, मरकत, गोमेद, मोती और मृग) समभाग लेना । प्रथम परिको अश्रुज्यायने कुमुदिकर

रत्नोंका प्राप्त देनेसे गुटिकाका आकार हो जायगा । इस गुटिकाके मुखमें रखनेसे शत्रुवैरह का प्राण नहीं लगता और युद्धमें विजय होताहै । इसीलिये बहुतेसे ग्रन्थोंमें इसका विजय-पट्टीभी नाम रक्खाहै । दूसरे लोग पारद औरहकी भस्म लेकर तुलसी औरहके समें इक्की खरकर पोष्टीके प्रकारसे इसकी गोली पकाना लिखतेहैं । पर वह गोली रसायन व वाजीकरण का कामकरेगी किन्तु “मुखस्था युद्धवारणी” यह अर्थ सिद्ध नहीं करसकी । कदाचित् मुखस्थायीको लाक्षणिक समझकर राना अर्थ करें और उससे ताकत आनेपर शत्रुओंका सामना करके जीतना अर्थ रखें तो यथार्थशक्ति हो सकेहै पर यथावस्थित अर्थसिद्धि नहीं हो सकी, इस तरहकी गोलियों का वाचना आजकल अव्ययन जैसा मादम होताहै यह सब सम्प्रदाय-विच्छेदका कारणहै । राजतरङ्गिणीके समयमें यह सम्प्रदाय चालू था इससे पुनरुज्जीवित करनेके लिये वैद्यसमुदायको ध्यान देना चाहिये ॥ १३८ ॥

१३९ पारदादिवट्टी (अष्टमी)

पारदं गन्धकन्तालं हिहृद्वञ्च मनःशिलायम् ।
मोदारप्लवङ्गकं शङ्खजीरकञ्च समंसमम् ॥ ५९३ ॥
सुरसापल्लवरसेर्भाव्यं छायाविशोपितम् ।
धत्तूरपल्लवरसेर्मर्दयेत्पुनरेव च ॥ ५९४ ॥
गुग्गुमा कष्टिका कायां गोघृतेन नियोजयेत् ।
पथ्यं सघृतगोधूममन्यत्सर्वं विचर्जेयत् ॥
पारदाद्या गुट्टी नाम ह्युपदंशविनाशिनी ॥ ५९५ ॥
रसायनं., उपदेशे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिगरिफ, मैनसिल, मुद्गांशु और सङ्गनीरा वैद्यक समभाग लेकर तुलसीके सममें एकादिन मर्दनकर छायाशुष्क करे फिर श्वरेके भत्तोरके सममें मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोलियों गायकेशीमें लपेटकर भिगलजाय । घी और गेहूंकी रोटी रानेकोदे, इसके गिराव साथ चीन्ना तथापत्रर तो उपदेश नष्टहै ॥ १३९ ॥

१४० पारदादिवट्टी (नवमी)

पारदस्य पलञ्चैव यशदं नागरहृदके ।
पृथक् पलमितं प्रोक्तं त्रयाणाञ्च विशेषतः ॥ ५९६ ॥
सम्यक् शुद्धान् समानीय द्वायं कुयांघणाधिभि ।
मूत्रञ्च प्रक्षिपेत्तत्र पुनर्मूल्यान्तु निक्षिपेत् ॥ ५९७ ॥
खल्वे धृत्या मर्दयेत्तु कज्जलीं कारयेद्गुह्यः ।
शुद्धामृतं पलमितं मरिचस्य पलायुस्म ॥ ५९८ ॥
सुमन्त्रं विधापाऽथ परमपुत्रं समाचरेत् ।
शिपूरुचो रसेर्मर्दं पुटानि श्रीणि दापयेत् ॥ ५९९ ॥
आट्टकस्य रसेनैव त्रिपुटं दापयेद्विषय ।
कल्याणरट्टी कायां पट्टिका कल्याणदिनी ॥ ६०० ॥

श्वासकासौ निहन्त्याशु शीतयातन्तथैव च ।
शूलरोगहरी प्रोक्ता रसादिवट्टिका त्वियम् ॥ ६०१ ॥
र.मु., वासे ।

भाषा—शुद्धपारा, जस्त, नाग और वज्र येप्रत्येक १ पलले, कर जस्त, नाग और वज्रको अग्निकर गलाकर मिट्टीके बर्तनमें रख्नेहुए पारमें डालदेवे, यह एकजातिकी नरमघातु होजायगी । इसको रखलमें डालकर कमली बनालेवे फिर शुद्धपल-नाग १ पल और मरिच ८ पल का बारीक चूर्णकर उसमें मिलाकर एकदो पहर घोटकर सहजनकीछाल और अदरसके रससे ३-३ भावनाएं देकर मटरबराबर गोलियों बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे कफ, श्वास, कास, शीतवात, शूलरोग इन सबका नाश होताहै ॥ १४० ॥

१४१ पारदादिवट्टी (दशमी)

पारदं सैन्धवं गन्धं नागं ध्योपाऽनलैः समम् ।
शिरूरसेन सञ्चूर्ण्य प्रदेया भावना द्वाद ॥ ६०२ ॥
पुनः पत्ररसेः सम्यक् चाऽऽट्टकस्य रसेस्तथा ।
मरिचप्रमाणा कफजित्कार्यां सा गुट्टिकोत्तमा ६०३
मन्दाग्निक्फरोगेषु कासश्वासे विशेषतः ।
आध्मानपवनार्तां च प्रदेया सुप्रकारिणी ॥ ६०४ ॥
रसायनं., कफरोगे ।

भाषा—पारा और गन्धकी नीलवर्णरजली, गन्धव, नागभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल और चित्रामूल इन समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सहजन और अदरसके रसमें १०-१० भावनाएं देकर मरिच बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे योग्यतानुसार २-३ गोली देनेसे मन्दाग्नि, कफरोग, वास श्वास, आध्मान और वातव्याधि ये सब नष्ट होतेंहै ॥ १४१ ॥

१४२ पारिजातटङ्गणम् (तालकेशरः)

द्विकैः कदलीद्रावैष्टङ्गणं मर्दयेदितम् ।
हरिद्राया द्रव्ये द्राव्ये निशापामार्गभस्मजे ॥ ६०५ ॥
तृतीयांशञ्च तालञ्च द्रव्या पालाशपुष्पजे ।
सप्ताहञ्च रक्षिशरैः श्येतरण्डस्य शीजतः ॥ ६०६ ॥
यामद्वादशकं घट्टिः काचकूप्यां गतस्य च ।
तत्रिधा जायते सत्र्यमूर्धाऽथो मेदतः पुनः ॥ ६०७ ॥
ऊर्ध्वं सत्त्वमधः किट्टं पुष्पितञ्च प्रजायते ।
पुष्पितञ्चोर्ध्वसत्त्वञ्च पूर्वोक्तत्रिधा पुनः ॥ ६०८ ॥
विमृष्टं काचकूप्याञ्च निक्षिप्याऽग्निं प्रदापयेत् ।
त्रियारमेयं हि शूते तालस्यं तत्रप्रयोजयेत् ॥ ६०९ ॥
अथ तस्य चतुर्धांशं दरदं न्यस्य मर्दयेत् ।
भृङ्गामार्षघट्टः सप्तदांघन्त्कार्यताजः ॥ ६१० ॥
प्रत्येदञ्च शिपाम्मोमिः सप्ताहं मर्दयेत्प्रदा ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य घट्टिं यामांस्तु पांशु ॥ ६११ ॥
द्वैर्यं हि त्रियारञ्च पलाण्डुस्वरमस्ननः ।
रसोन्नमानरसतः प्रत्यहं मर्दयेद् दृष्टम् ॥ ६१२ ॥

पकोनविंशतिविधाः शङ्खद्राघस्य भावनाः ।
 काचकूप्यां विनिक्षिप्य यामद्वादशक पचेत् ॥ ६१३ ॥
 त्रिचारमेवं हि कृते दिव्यं तलगतं भवेत् ।
 रक्तिका सर्वरोगघ्नी स्वरभेदक्षयाप्ययः ॥
 दत्तमात्रेण नश्यन्ति तुलरशिरिष्याऽग्निना ॥ ६१४ ॥
 र. का स्वरभेदे ।

भाषा—केलेकी जड़के रससे मुद्दागेमो १ दिन, हल्दीके स्वरससे १ दिन, हल्दीऔर अपामार्गके धारने पानीसे एक २ दिन मर्दनकर तृतीयाया हरितालका सुरमासदश बारीक चूने डालकर पलायके पुष्पोंके रस, आग्ने देध और सफेद एरण्डके बीज स्वरससे ७-७ दिन मर्दन करे । फिर ७ कपडमिठी की हुई आतशी शीशोमें भरकर १२ पहरकी कमचूद्ध अग्निदेना, इसकी छट बन्दकरदेनी चाहिये । स्वाद्दशीतल होनेपर कपडमिठीको अलगकर तैलमें एक डोरीको भित्तीकर शीशीक मुहर लगादे और अमि जलादे । जब डोरी अलजाय तब भीगेहुए काठेसे षोछदे तो अनायास शीशी फूट जायगी । इसमें ऊपर साब, बीचमें पुष्य और नीचे फिट्ट इस्तरह तीनविभाग मिलेंगे । इसमेंस विट्को छोडकर बाकी (सत्त्व और पुष्य) को लेकर पूर्वोक्त रीतिसे मर्दन करे और काचकूपीमें अग्निदेव । इस्तरह तीनवार करने के बाद तलस्य को भी शामिल करले । फिर इससे चतुर्थया शिगिरिक देसर भाग, भगरा, जवास, धतूरा, पलायपुष्य और हरे इत प्रत्येकके स्वरसोंमें ७-७ रोज मर्दनकर काचकूपीमें डालकर १६ पहरकी अग्निदे । इस्तरह ३ बार करके प्याज मानसद और लज्जुके स्वरसमें ७-७ रोज मर्दनकर १९ भावनाए शङ्खद्राघकी देकर १२ पहरकी अग्निदे । इस्तरह तीनवार करनेके बाद तलस्यको पदार्थोंहै उसको लेकर रखछोडे । यह पारिजात टट्टण तैयार हुआ । इधरकी १-१ रती उचितातु पानके साथ देनेसे स्वरभेद, क्षयप्रवृत्ति समस्तरोग इस तरह नष्ट होतेहैं जैने अमिस्त्राग्ने वपानका पुत्र नष्ट होताहै ॥ १४२ ॥

१४३ पारिभद्रो रसः

मूर्च्छितं पारदं धात्रीफलं निम्बस्य चाहरेत् ।
 तुल्यांशं स्याद्विरेः पचाथेदितं मर्द्यञ्च भक्षयेत् ॥
 निर्विकेकं दद्मुषुष्टमः पारिभद्राह्वयोरस ॥ ६१५ ॥

र स, वै वि, र वि, र सु, र म, र्गायनस, यो म, थ. रा, र का, र र कौ, गुग्गुलुधकारे ।

भाषा—मूर्च्छितारा, आंशके और नीमकी निजोलीकीमज्जा समभागलेकर कूटानकर छेकके बचायों एकदिन मर्दनकर ४-४ मासकी गोलियें बनाकर रखछे । इनमेंगे १-१ गोली रीरक काडे अपना महाभामिादिस्त्राग्ने देनेसे यह दद्दुऔर पुष्टो नष्टकरताहै ॥ १४३ ॥

१४४ पार्वतीरसः

पार्वती काशिसम्भूतो दरदो मधुपुष्पकम् ।
 शुद्धी शाल्मली द्राक्षाधान्यभूनिम्बमार्कचम् ॥ ६१६ ॥

तिलमुद्गपटोलञ्च कृष्णाम्ण्डं लवणद्वयम् ।
 यष्टिकाधान्यजं भस्म चान्तर्द्वयं समंसमम् ॥ ६१७ ॥
 मुखरोगं निहन्त्यागु पार्वतीरस उत्तमः ।
 चिरञ्जं पैत्तिकं हन्ति तिमिरञ्च तृपामपि ॥ ६१८ ॥
 र. स, र सु, र वि, मुखरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और शिगिरि, महुआके फूल, गिलोय, संमलका मुसला, द्राक्ष, धनियां, चिरायता, भगार, तिल, मूग, पटोल, कौहडा, सेंधा, साभर, मुल्हठी, धनियाकी अन्तर्द्वयमक्विदधभस्म येसब चीजें समभागलेकर बारीकपीछकर रखछोडे । इसमेंगे १-१ मासा मधुसेसाथ अपना पित्तपापेडे-केकाठकेसाथ देनेसे मुखरोग, बहुतदिनका पित्तज्वर, तिमिर और प्यास इनसबको यह बहुतजल्दी नष्ट करताहै ॥ १४४ ॥

१४५ पाशुपतास्त्रो रसः (प्रथमः)

पारदं म्लेच्छभस्माऽथ गन्धकञ्च मन.शिला ।
 पापाणद्वितयञ्चाऽथ भृङ्गीनीरेण मर्दयेत् ॥ ६१९ ॥
 द्विदिनं बालुकायन्त्रे चण्डाद्वाद्यं द्वियामकम् ।
 द्विगुञ्चं भक्षयेन्नित्यमार्द्रकञ्चाऽनुपानकम् ॥
 पाशुपताऽस्त्रनामाऽयं सर्वाऽहिकं ज्वरं हरेत् ॥ ६२० ॥
 व रा, रसायनस, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैतसिल, सारभस्म, काला और सफेद शुद्धशिरिया येसब समभागलेकर भागरेके रससे दोरोंन मर्दनकर बालुकायन्त्रमें तीक्ष्ण अग्निसे दोपहतक पनाये । स्वाप शीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इनमेंगे २ रती अदरसो रसने साथ देनेसे सर्वाहिकज्वर नष्टहोताहै ॥ १४५ ॥

१४६ पाशुपतास्त्रो रसः (द्वितीयः)

द्विपापाणं द्वितुत्यञ्च नेपालं तालकं विषम् ।
 सर्वतुल्यं शुद्धसूतमर्कसीरेण मर्दयेत् ॥ ६२१ ॥
 दोलायन्त्रे पचेधामं समुद्धृत्य धिचूर्णयेत् ।
 भावितं फणिपित्तेन गुञ्जामात्रं भिषग्वरः ॥ ६२२ ॥
 लज्जुनस्य च तैलेन प्रलाहोरं विलेपयेत् ।
 तल्लण्णेन निहन्त्यागु सन्निपाताऽश्वयीन्द्रा ॥
 रसः पाशुपतास्त्रोऽय शङ्खरेण प्रकल्पितः ॥ ६२३ ॥
 वै वि, वा, रविपाले ।

भाषा—बाय और सफेद शुद्धगिया, दानेफिरह और तृतिया, शुद्धनमाल्योटा, हरिताल और बज्जाम देगब समभाग लक्ष इगुणकी बाबर शुद्धपारा डालकर बचरी बना कर आठकेदूधके साथ मर्दनकर गोलावनाय आठकेदूधो दोला यन्त्रमें १ पहर स्वदनकरके निकालकर पोटकर गुगाने । इनमें बालेयारके पिनेही दा अपना एक भावना देकर १-१ रती लज्जुने तैलमें मित्राकर तागुके बाल दिशानकर लगानेगे तेरहकारके उभित्तोको यह तक्षण नष्टकराहै ॥ १४६ ॥

१४७ पाशुपताऽहो रसः (महान्) (तृतीयः)

द्विभागं श्वेतपापाणं म्लेच्छनेपालपारदम् ।
प्रत्येकमेकभागान्तु खल्वमये विमर्दयेत् ॥ ६२४ ॥
कृष्णधत्तूरतोयेन मर्दितं याममात्रकम् ।
मुद्गरप्रमाणमात्रेण त्वार्द्रकञ्चाऽनुपानकम् ॥
पेकाहिं क्वद्याहिकञ्च त्र्याहिकं नाशयेज्जरम् ॥ ६२५ ॥
व रा, र म मा., वै. चि, ज्वराऽधिकारं ।

भाषा—शुद्धसपेदसंयुता २ भाग, शुद्धशिगरिक, जमा-
लगोटा और पारा १-१ भाग लेकर सबकी कबली बनाय
काले धतूरेके रसेने १ पहर मर्दनकर भूषावावर गोलिया बना
कर अदरकके साथ देनेसे अन्तदेकर आनेवाले त्र्याहिक चातु-
र्थिनादि समस्त विषमन्त्रोंको यह नष्ट करताहै ॥ १४७ ॥

१४८ पाशुपतो रसः

कर्म सूतं द्विधा गन्धं त्रिभागं तीक्ष्णभस्मकम् ।
त्रिभिः समं विषं देयं चित्रककथभाषितम् ॥ ६२६ ॥
धृतवीजस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतम् ।
कटुत्रयं त्रिभागं स्यात्कृष्णैले च तत्समे ॥ ६२७ ॥
जातीफलन्तथा कोपमर्द्धभागं नियोजयेत् ।
तथाऽर्द्धं लवणं पञ्च स्तुह्यंकरण्डतित्तिडी- ॥ ६२८ ॥
अपामार्गाश्वत्थजञ्ज क्षारं दद्याद्विचक्षणः ।
हरीतकी यवक्षारं सर्जिका दिङ्गु जीरकम् ॥ ६२९ ॥
दृङ्गणं सूततुल्यञ्च क्षन्तयोगेन मर्दयेत् ।
भोजनान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाफलप्रमाणतः ॥ ६३० ॥
रसः पाशुपतो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ।
दीपनः पाचनो हृद्यः सद्यो हन्ति विसृचिकाम् ६३१
तालमूलीरसेनैवमुदरामयनाशनः ।
अतिसारं मोचरसेप्रहर्षां तक्रसेन्धवैः ॥ ६३२ ॥
सौवर्चलरूपाशुण्ठीसुतः शूलं विनाशयेत् ।
अशो हन्ति च त्रकेण पिप्पल्या राजयह्मकम् ६३३
यातरोमं निहन्त्याशु शुण्ठीसौवर्चलाश्वितः ।
शर्कराधान्ययोगेन पित्तरोमं निहन्त्ययम् ॥ ६३४ ॥
पिप्पलीशौद्रयोगेन श्लेष्मरोगञ्च तत्क्षणात् ।
अस्मात्परतरो नाऽस्ति धन्वन्तरिमतो रसः ॥ ६३५ ॥
र सा, रसायनम्, यो. र, र क ल, नि र, र सु, र प्र.,
र. का यो त., वै. चि, अनीर्णाऽधिकारं ।

टि०—अथ यथाय प्रतियुक्तं पाठभेदादहमेने यथा वर्तमानपठ
पूर्वोक्तस्य भस्माऽपि द्वात्रिंशद्भागसंयुतमिति । अन्वयस्येव “पूर्वोक्तस्य वै
भस्म मर्दं सप्तभागान्, इत्याकारकं पञ्च मर्दितं निवेदितं” । कटुत्रय
त्रिभय रसाश्वत्थं च दे शिवा त्रिगुह्यं योग्यमिष्यतीत्यादि । पर
नकाम्भवनान्जनान्तरं भूषोर्भस्मनो योगो नमुक्तिराह । भावनयो प्रथम
न पद सपिरेण उचितं प्रसिद्धिः, अगम्यन्तपि द्वात्रिंशदित्यत्र मन्त्रया
मासी हत्यो, भतीर्णाभस्मस्य पूर्वभागान्तरिणात्कारः । अन्वयमा
नि रोगेनरसहृदीपरकञ्च सहृदीन । रत्नकरं निरुपाशुभूतम् ।

भाषा—शुद्धता १ कर्ष, शुद्धकथ २ क, लोह-

भस्म ३ क. लेकर तीनोंकी बराबर शुद्धवज्रनागमिलाकर नील-
वर्णकबलीकर चित्रककेकडिकी एकभावनादेकर धतूरेकेतीनोंकी
भस्म ३२ भाग, त्रिगुह्य, लवण और इलायची ३-३ कर्ष,
जायफल, जावित्री और पाचों नमक प्रत्येक ८ भासे, सेहुण्ड,
एण्ड, इमली, अपामार्ग और पीपल इनका धार, हर्, यव-
धार, सजी, हॉग, जीरा, मुनासुहागा ये प्रत्येक १ कर्ष
लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वपिण्डमें मिलाकर नीबूके रसेने १-१
रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-
तानुपानकेसाथ देनेसे अग्नि प्रदीप्तहोकर खायाहुआ पचताहै
हृदयकरोरोंको नष्ट करताहै और हैजेको तत्काल निरस्तकर
ताहै । उदररोगोंमें तालमूलीके रसेने, अतिसारमें मोचरसेने,
प्रहृणीमें तक और सन्धयमें, घुलमें सचल, पीपल और सोंठके
चूर्णसे, अशमें तकसे, राजयह्ममें ६४ पहरि पीपलसे, वातरोममें
सोंठ और सचलसे, पित्तरोममें धनिया और शक्से, श्लेष्मरो-
गमें पीपल और मधुमेसाथ देनेसे यह तत्तद्रोगोंको बहुत
शीघ्रताके साथ नष्टकरताहै । वैद्य और रोगीको तत्क्षण परि-
शय देताहै ॥ १४८ ॥

१४९ पापाणभेदः

रसेन तुल्यं गगनं द्विगन्धं
स्वर्णं रसांशं कुटिलञ्च तद्वत् ।
विमर्दयेत्तत्करसेन शुण्ठी-
गोक्षूरजेन द्विजपट्टिकाङ्गिः ॥ ६३६ ॥
विभावितः सिद्धिमुपैति सूतः
पापाणभिहृद्भूमितः प्रयत्नात् ।
शताघरी काशकुशाश्वदंष्ट्रा-
कशेरुशालीशुरसैः प्रयोज्यः ॥ ६३७ ॥
तीव्राद्मरुं नाशयति प्रसह
क्षीराशिनीं मासचतुष्टयेन ।
तथोपकादिप्रतिधापकेन
कायं पिबेत्सेतुशुतं घृतोक्तम् ॥ ६३८ ॥
२, अश्मरीरोगे ।

भाषा—शुद्धता और अन्नभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक
२ भा, सुतने और नागभस्म छटा ३ भाग लेकर एव जगह
मिलाकर नीलवर्णकबलीकर तत्रकापाणी, सोंठ, गोरोम और
ब्रह्मदंष्ट्रीके स्वरसे १-१ रोजमर्दन करनेमें पापाणभेद नामक
रस तैयार होगा । इयमेंसे ३-३ रत्नी शताघर, काय, कुश,
गोराम, कगेरु, धानकीजड़, और ईरा इतने रसोंके साथ मेवा
करनेसे अद्याप्यगे भसाप्य पयरीरोग नष्ट होताहै । इयमें
केवल दूध पिलाना अथवा इयने ऊपर बरफका काड़ा बनाकर
क्यादिगणका चूर्ण ३ भासे और पी डालकर पिण्डके तो बार
मर्दमेंसे अद्याप्यगे अग्राप्य पयरीरोग दूरतो । वैद्य, तीक्ष्ण,
शिलाजीत, शमी, हीराशतीत, हॉग, धनिया यद कपरा-
दिगाई ॥ १४९ ॥

१५० पापाणभेदी रसः (प्रथमः)

शुद्ध सूतं द्विधा गन्धं शिखितुत्थरसान्वितम् ।
श्वेतापुनर्नवावासारसैः श्वेतवचाद्रयेः ॥ ६३९ ॥
प्रतिद्राचिरुपहं मर्द्यं शुष्कं तद्द्रावसंयुतम् ।
स्वेदयेदौलिकायन्त्रे दिनेकं ते विचूर्णयेत् ॥ ६४० ॥
रसः पापाणभिन्नाम द्विगुञ्जश्चादमरीहरः ।
गोपालककंदीदुग्धोभूधान्नीमूलचूर्णकम् ॥ ६४१ ॥
कुलत्थकायसंयुक्तमनुपानं प्रशस्यते ।
सघृतं गोक्षुरकायं रात्रौ तस्मै प्रदापयेत् ॥ ६४२ ॥

रसायनस, र र, वै. क, ध., र. चं, र को. चि. र म, र दी., व रा., वै. चि, भै र, अरमर्यधिकारो । कुनचिच्छिखितुत्थस्थाने शिलाजतु गृहीतम्, भावनाया श्वेतवचाद्रवस्थाने श्वेताऽपराजिता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, शुद्धतृतीया और रसौत १-१ भा., लेकर सबकी नीलवर्ण कजलीकर सफेदपुनर्नवा, अदुसा, श्वेतवच इन प्रत्येकके स्वरससे ३-३ रोज मर्दनकर परन्तु प्रत्येक भावनाके बाद गोलाबनाकर जिसकी भावनी दीहो उसीके रसमें १-१ रोज दोलायनसे स्वेदनकर सुखादे फिर दूसरे रसकी भावना देकर स्वेदन दे । अखीरमें इसकी २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली एण्डककडी, छोटीदूधी, भूधानी इनकी जड़का चूर्ण कुलथीके काथमें मिलाकर इसके साथ लेनेसे पथरीरोग दूर होताहै रात्रीको सोतेसमय गोखरूके काथमें घी डालकर पिलाना ॥ १५० ॥

१५१ पापाणभेदीरसः (द्वितीयः)

रसेन सितवर्षाभ्या रसं द्विगुणगन्धकम् ।
घृष्टं पचेच्च मूपायां द्वौ मापौ तस्य भक्षयेत् ॥ ६४३ ॥
गोपालककंदीमूलं कुलरथोदौ पिबेदनु ।
गोकण्डकसदाभद्रामूलन्वाभ पिबेन्निति ॥
अयं पापाणाभिन्नाम्ना रसः पापाणभेदकः ॥ ६४४ ॥
र र स, अरमर्यधिकारो ।

टि०—निरालाप गोपालककंदी १ गोकण्डककंदीति च चन्दौ स्वर्षं शोषनाजमयौ सजातो दुरयेने टीकाकारैश्च सतत्स्थाने स्वरसमनीषित्वात्परि, तत्तत्तान्निर्देशनषयुर्देहानव्योतिषोनिर्वाणतां प्रकथयिष्यतीतिरुत्था मौनाऽऽलम्बनमेव श्रेयस्करम्, ताभ्या शब्दाभ्या किं वस्तु गृहीतं व्यभिति विचारं तु एरण्डवाकडी हिं० पोषैषु गु० शक्तिप्रसिद्धमेव इत्यं अर्थोपमिति वदाम "गोपालककंदीमूलं पिष्ट पर्युषिताम्भाम् । पीयमानं विराणेण पातवत्स्वमरीं हृदात्" इति राजमार्तण्डेयवचमपानुवादेन ज्यपुसपत्नताऽपिपदिमहारा वैनिस्तु कभिषकुसमिलोपरिनिर्दिष्ट एवाऽयं निरुपरि, तथाचायं राजमार्तण्डेय भद्रमेयो बहुधाऽऽम्नामीरोगिणु गितु ज्याऽऽसीर्वादी गृहीतो गृहने च अन्वैरपि भिषवर्षं रेतत्रयणे प्रदलितं व्यभिति नञ्निवेदनम् इन्द्रनाम्णा कर्कश्या वैतादृशी शक्तिनास्त्वेवेति निश्चयेन ज्ञायते । तृतीयपापाणभेदी रसे गोपालककंदी दुग्धमितिगोडेन चाऽऽम्लिसान्नायस्य द्रुदा पुष्टिरिति कर्कशीपातावन्यत्र पुत्रचिदपि दुग्धमत्स्यऽभावात् । वृक्षत्राऽऽऽजानाम्रोपाकर्कंदीरसेण पातवत्कंदीति पाठ

इतोऽस्ति पातालतुम्बिकेत्वरपर्यावाया पाताल्वर्न्यामप्यरमरीभेदेन शक्तेरभावात्स पाठो निरामुपेक्ष इत्यलमितिस्तरेण ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा लेकर दोनोंकी नीलवर्ण कजलीकर सफेद इटसिट (पंजाबी) के रससे १-२ रोज मर्दनकर शरावसम्पुकर लवणयन्त्रमें पकावे । स्वाहाशीतल होनेपर निवाकर इसमेंसे २ माशे फाकर एण्डककड़ीकी १ तोला जड़को ५ तोले कुलथीके अष्टावशेष काठुमें मिलाकर पीवे । रातको सोते समय गोखरू और गंभीरीकी जड़का काढापीवे इससे पथरीके टुकड़े टुकड़े होकर निकल जातेहैं ॥ १५१ ॥

१५२ पापाणभेदीरसः (तृतीय)

रसं द्विगुणगन्धेन मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
यसुः पुनर्नवा वासा श्वेता ग्राह्या प्रयत्नतः ॥ ६४५ ॥
तद्भूयैर्भावयेदेनं प्रत्येकन्तु दिनत्रयम् ।
पन्थं मूपागतं शुष्कं स्वेदयेज्जलयन्त्रतः ॥ ६४६ ॥
पापाणभेदी नामाऽयं नियुञ्जीताऽस्य वल्लकम् ।
गोपालककंदीदुग्धे भूम्यामलकमूलिकाम् ॥
कुलत्थन्वायथतोयेन पिष्ट्वा तदनु पाययेत् ॥ ६४७ ॥
र र स, र व, यो. स, र मृ, अरमर्यधिकारो ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्ध गन्धक २ भा., दोनोंकी नीलवर्णकजली कर सफेदपुनर्नवा, लालपुनर्नवा, अदुसा, वच अथवा सफेदकोयल इन प्रत्येकके रसमेंसे ३-३ रोज मर्दनकर गोला बनाय मूपामें रखकर सुराले और जलयन्त्रसे १ दिन स्वेदन कर रखाछोडे । इसमेंसे ३-३ रती एण्डककडीके दूधमें मिलाकर खिलाने और ऊपरसे भुईआबलेकी जड़का चूर्ण आधातोला कुलथीके काठेमें मिलाके पिलानेसे पथरी दूर होतीहै ॥ १५२ ॥

१५३ पापाणवज्ररसः (प्रथमः)

शुद्ध सूतं द्विधा गन्धं रसैः श्वेतपुनर्नवैः ।
मर्दयित्वा दिनं खल्वे रुद्धा तद्भूधरे पचेत् ॥ ६४८ ॥
दिनान्ते तत्समुद्भूत्य मर्दयेद्दुग्धसंयुतम् ।
अदमरीं वसितशूलञ्च हन्ति पापाणवज्रकः ॥ ६४९ ॥
गोरक्षकंदीमूलकायं कौलत्थकन्तथा ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं बुद्ध्या दोषवलावलम् ॥ ६५० ॥
र चि, र सं, वै चि, र मु, र च, ध, यो म, र की, चि क, र र, रसायनसं, ना वि, अरमर्यधिकारो ।

टि०—यो म, वै चि, गुडस्थाने पापाणभेदपूर्णां गृहीतम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्धगन्धक २ भा, लेकर नीलवर्णकजलीकर श्वेतपुनर्नवाके रससे एकरोज मर्दनकर गोला बनाय भूधरयन्त्रमें बन्दकर दिनमरकी अग्निदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निवाकर १ माशेकी मात्रा बचावनेपुराने शुद्धसेयाप देकर एण्डककडीकीजड २ तोलेका अथवा कुलथीका अष्टावसप्ततय पिलाने अथवा दोषवलावल देकर कामकरे ॥ १५३ ॥

१५४ पापाणवज्ररसः (द्वितीयः)

डिगन्धसूतखिदिनं विमृद्य

पुनर्नवाश्वेतवसुद्रवेण ।

पुटेन मूपाकुहरे निवेद्य

कालशामानच्छरणैः प्रयत्नात् ॥ ६५१ ॥

समूलतमस्य रसेन मद्यो

गोक्षुरतोयेन दिनत्रयञ्च ।

पापाणभिच्छर्करया च बह्व-

द्रयोन्मितश्चाश्मरिरोगनुत्स्यात् ॥ ६५२ ॥

र., अश्वरीरोगे ।

टि०—मावनाया मनुपाने च विमेषात्प्रथमयोगात् पृथक् पाप-
श्चोष्णि, अत्र समूलकस्य रसेनेति परं मद्येयमन्तम् तत्राऽऽप्युप-
स्थात्प्रसिद्धत्वात् । परन्तु तन्स्थाने गोपाण्यतंतया (एण्डरकाई हि०)
मूल व्यवहरणीयम् । अश्वरीभेदे निष्कामने चाऽऽहृतसत्तित्तवत्त्वात् ।

भाषा—प्रथमपापाणवज्रकी चीजोंको पूर्ववत् भूषणरन्ध्र
पाकर एण्डरकाई और गोखरूके रसमें ३-३ रोज मर्दनकर
६ रतीकीमात्रा क्षयरके साथदेनेसे अश्वरीरोग दूरहोताहै । इय-
योगमें तत्र नामकी वनस्पति आईहै वह प्रसिद्धनहींहै अश्वरि
एण्डरकाईसे कामलेना यह उससेकम काम नहीं करता ॥१५४॥

१५५ पापाणवज्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं द्येतपौर्ननेघट्टैः ।

भावनाप्रितयं देयं रुद्धा तं भूषरे पुटेत् ॥ ६५३ ॥

पापाणभेदचूर्णन्तु समं संयोज्य मर्दयेत् ।

निष्कमरिकां हन्ति पूर्वोक्तादनुपानतः ॥

योगधाहान् प्रयुञ्जीत रसानदमरिदान्तये ॥ ६५४ ॥

र. वि., वि. सा., र. को, नि. र., यो. र., र. र., क. रा.,
साधनगं., अश्वरीरोगे ।

भाषा—शुद्धासि द्वा शुद्धान्यक लेकर नीलगर्भकमली-
कर गफेक्षुननेवारे रससे ३ भाजनार्थ देकर भूषणरन्ध्रमें पकाकर
उपरी बराबर पापाणभेदका चूर्ण मिलादे । इयमेंसे ३ रतीकी
मात्रा देकर एण्डरकाई की जड़नादिम अपना पुत्रधीरा हाथ
पित्रानेगे अश्वरीरोग नष्ट होताहै ॥ १५५ ॥

१५६ पिङ्गलेष्वररसः

मस्मसूतं विषं गुण्टी यथा यद्भिः फलप्रिक्रम ।

प्रलयाजं विडङ्गानि भृङ्गिभस्त्रातगन्धकम् ॥ ६५५ ॥

शिरितनुरयं कषातुल्यं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।

त्रिफलाकायसंयुक्तं कान्तपामे स्थितं निशि ॥६५६॥

कर्ममात्रं लिहत्स्नातः सर्वयुक्तनिवृत्तये ।

पष्णसापयत्तितं हृत्ति रसोऽयं पिङ्गलेष्वरः ॥६५७॥

र. गु., वि. क., र., क., र. को, पुत्रे ।

भाषा—गारदमस्य, शुद्धश्याम, गोष्ठ, कच, निवृत्तसूत्र,
त्रिफला, पत्तचरीक, विडर, भंगरा, शुद्धभिल्वों और गन्धक,
मुष्यमस्य, पीतत्र ये सब समभाग सहर पुनश्च रसमें । इय-

मते १ तोला द्वावो २ तोले त्रिकलाके काटेमें मिलाकर
कान्तलोहके पात्रमें रखकर रातभर रहनेदे सुबहमें खावे । ऐसा ६
महीनेतक करनेसे समस्तपुत्र और बलोपलिन नष्ट होतेहै ॥१५६॥

१५७ पित्तकृन्तनो रसः

सूतकञ्च मृततारमस्मकं

गन्धकेन सहितं समांशकम् ।

मर्दितं हि खलु भृङ्गवारिणा

चाऽर्धयाममपि कुञ्जकुटे पुटे ॥ ६५८ ॥

पाचितं हि सकलं विचूर्णितं

लेहितं हि मधुशर्करायुतम् ।

पित्तदोषशमनं मयोदितं

पित्तकृन्तनमिदं प्रशस्यते ॥ ६५९ ॥

र. प्र. सु., र. म. मा., र. च., पित्तरीगे ।

भाषा—शुद्धपाण, चांदीकीभस्म, शुद्धान्यक तत्र समभाग
लेकर नीलगर्भकमलीकर भंगरेके रसमें १-२ रोज मर्दनकर
शरावगम्पुत्रमें बन्दकर उस्कुटपुटकी आंचदे । स्वादुशीतकरोने-
पर निकालकर रखडोडे । इयमेंसे २ या ३ रतीकी मात्रा
क्षयरमधुके साथ देनेसे पित्तोत्पन्न दोष शान्तहोताहै ॥ १५७ ॥

१५८ पित्तमज्जाऽह्वशो रसः

शुद्धान्यकटङ्गञ्च तालकञ्च मनःशिला ।

सर्वं हंसपदोद्भवैर्दिनमेकं विमर्दयेत् ॥ ६६० ॥

घालुकायन्यके पाच्यं पहयामानतं निरुच्य च ।

देया शुङ्गानुपानेन मधुपित्तं विनाशयेत् ॥ ६६१ ॥

व. रा., वै. वि., मधुपित्त ।

भाषा—शुद्धान्यकऔर टङ्ग, हरिताल और मनशिल
समभागलेकर नीलगर्भ कमलीकर हंगराके रसमें एकरोज
मर्दनकर गुग्गार वालरायन्यमें ६ पहर पावनकर रखडोडे ।
इयमेंसे १-३ रती समदोचिनानुपानके साथ देनेसे मधुपित्त
नष्टहोताहै । मधुपित्तका उच्छेद बन्दराजीयमें देयग्या ॥१५८॥

१५९ पित्तमज्जनो रसः

प्रवाले माशिकं तुल्यं त्रिवारमार्द्रवारिणा ।

मर्दितं दुग्धसितया मेघ्यं पित्तनिवारणे ॥ ६६२ ॥

मध्याज्येन सितायुक्तं मेयितं घातपित्तनुत् ।

पित्तमज्जनो योगः पित्तं नाशयति क्षणात् ॥ ६६३ ॥

र. च., पित्तरीगे ।

भाषा—प्रवालमस्य और माशिकमस्य समभागलेकर
अदरकमेघमें तीनभाजनदेकर रखडोडे । इयमेंसे ३ रतीकी-
मात्रा क्षयरमिलानुपुत्र तृणकाय देनेसे पित्तरीगे नष्टहोताहै ।
मधु, घी और क्षरककाय देनेसे कानपित्त नष्टहोताहै ॥१५९॥

१६० पिचमज्जनरसः

पारदं गन्धकं ताम्रं मुमन्दीरगमर्दितम् ।

काचकूयां विनिशित्य घालुकायन्यके तथा ॥६६४॥

पचेद्भिषक् च सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
त्रिक्षारं पञ्चलवणं हिङ्गुगुग्गुकुष्ठप्रकम् ॥ ६६५ ॥
कटुत्रयञ्च त्रिफला गान्धारी जातिकाह्वयम् ।
दीप्यत्रयं त्रिफेनञ्च मूयाम्लं विपवत्सकम् ॥ ६६६ ॥
पलाह्वयञ्च सौभाग्यं कुबेरो यद्भिषूलकम् ।
तिन्तिडीफलग्रन्थी च चूतं च दाडिमीफलम् ॥ ६६७ ॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
भावयेत्सवाराञ्च शृङ्गवेररसेन च ॥ ६६८ ॥
गुञ्जैकं मधुना लेहां यामे यामे च भक्षयेत् ।
अम्लपित्तं निहन्त्याग्नौ ग्रहणीं दुस्तरां तथा ॥ ६६९ ॥

ब. रा., वै. वि., अम्लपित्ते । अस्मिन्ग्रन्थे मानाया निष्का-
र्षमिति मूले इत्यथे परन्तु वस्तुयोग्यस्याति तीक्ष्णत्वाभिप्रेकार्थ-
स्थाने गुञ्जैकमिति पाठ इतोऽस्ति

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, तावेकाचूरा समभागलेकर
मुसलीकेरससे २-३ रोजमर्दनकर सुखाकर सातकपडिमिठीकीहुई
आतवी शीशोमें रखकर बालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरी
अग्निदेवे । स्वाहाशीतल होनेपर निकालकर सजी, सुहागा,
यवक्षार, पाचोनमक, मुनाहींग, गुगल, कूठ, त्रिकटु, त्रिफला,
भट्टकटैया, जायफल, जाविनी, दीप्यत्रय (अजवाइन देशी,
खुरासानी और खरजवाइन), त्रिफेन (अहिफेन, समुद्रेन
और अम्बर) शुद्धसोमल, शुद्धबलणम और इन्द्रजव, छोटी
तथा बड़ी इलायची, सुहागा, करजकेबीज, चित्रकनी जड़,
इसलीके फल, पिपलामूल, आमकी मज्जा, अनारदाना येसब
समभाग लेकर कपडछान चूर्णकर अदरकके रससे ७ भावनाए
देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रत्ती मधुकेसाथ पहर
२ के अन्तर पर लेनेसे अम्लपित्त और दुस्तरग्रहणीरोग
गह्योतेहै ॥ १६० ॥

१६१ पित्तभञ्जीज्वराकुहाः

मृताऽन्नके भूमिनिम्बकाथैर्दध्यात्सुभावनाः ।
ससाहं कृतमालस्यं गुह्यव्याध्वा दिनत्रयम् ॥ ६७० ॥
तिक्राया विशतिदिनं ततो गजपुटे पचेत् ।
सप्तवारां गजपुटे पाचनीयं भिषकमैः ॥ ६७१ ॥
रक्तिकापञ्चकं देयं विपप्लया ज्वरिताय वै ।
एष पित्तज्वरं हन्ति विषमाल्ख्यं महाबलम् ॥ ६७२ ॥
जीर्णज्वरं बहुविधं चातुर्यादिव्रवं तथा ।
क्षीणानां बलकृच्चैव बालानां रोगनाशनं ॥ ६७३ ॥
गर्भिणीनां ज्वरहरः पित्तभञ्जी ज्वराकुहाः ।
पथ्यं दध्योदनं देयं सक्षितं मुद्गजं तथा ॥ ६७४ ॥
यूपो मांसरसो वाऽथ गोदुग्धमथवा भवेत् ।
सर्वपित्तधिकाराणां विषमार्णां निवारणः ॥ ६७५ ॥
र. ग. मा., ना वि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—अन्नकभस्ममें चिरायतके काथकी ७ दिन, अम
लवास और गिलोयकी ३-३ दिन, कुसुकीके काथकी २०
दिन भावनाए देकर गोलायनाय सुखाकर धारावसमुद्रकर गज

पुटकी आचदे । इसीतरह सात गजपुट देकर रखछोड़े । इसमेंसे
५ रत्ती पीपलकेसाथ देनेसे पित्तप्रधान विषमज्वर नानाप्रकारका
जीर्णज्वर, और चातुर्यकादि वारीकाज्वर नष्ट होताहै । क्षीणोको
बल देताहै बालकोंके तमामरोगोंको दूर करताहै । गर्भिणीके
ज्वरको दूर करताहै । इसपर पथ्य शकर, दही, भात दूध अथवा
भूगवा यूप अथवा मांसरस या केवल गोदुग्ध रोगीकी अव-
स्थानुसार देना । समस्त पित्तविकारोंके लिये और विषमरोगोंके
लिये यह अत्युत्तम औषध है ॥ १६१ ॥

१६२ पित्तभञ्जीरसः

व्योमपारदगन्धाद्भ्रमजयपालकटङ्गणान् ।
बहिचन्द्ररसद्विद्विभागाङ्गम्भाभसा व्यहम् ॥ ६७६ ॥
फलायप्रमिताः कृत्वा गुटिकाः पित्तभञ्जिकाः ।
वितरेदामशूलदौ कृमिशूले विशेषतः ॥
पथ्यं तक्रोदनं चाऽत्र स्तम्भार्यं शीतला क्रिया ॥ ६७७ ॥
रसायनस, र चि, र. क, वै चि, नि र., र का, शूल-
धिकारे । नि. र, वै चि, पीडारीति नाम । र. का, शूल-
भञ्जीति नाम । उत्रचिद् व्योमस्थाने व्योप गृहीतम् ।

भाषा—अन्नभस्म, शुद्धपारा, गन्धक, जमालगोटा और
शुद्धाग ये क्रमशः ३-१-६-२-२ माग लेकर नीलवर्णकज-
लीकर जमीरीके रससे ३ रोज मर्दनकर मटरबराबर गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २ गोली योग्यतानुसार
आमशूल और कृमिशूलोंमें देना इससे दस्तहोगे, मानासे
अधिकरचेन होनेपर छाछभात खानेको देकर तमाम शीतल-
क्रिया करता ॥ १६२ ॥

१६३ पित्तमुद्गररसः

पारदं हिङ्गुलोथञ्च ह्यर्द्धपातनतो नयेत् ।
कुङ्कुटाण्डरसाङ्गागष्टङ्गणक्षारमेव च ॥ ६७८ ॥
गन्धकस्य तथा भागो घृतेन परिमर्दयेत् ।
सिद्धं रसं समादाय जीरतोयेन दापयेत् ॥ ६७९ ॥
भाषत्रयं प्रतिदिनं प्रहणीरक्तदोषनुत् ।
ज्वरदाहविनाशश्च रक्तपित्तं नियच्छति ॥ ६८० ॥
ब रा., रक्तपित्ते ।

भाषा—ऊर्द्धपातनयन्त्रसे क्षिणिकमेंसे निकालाहुआपारा,
ऊँकटुटाण्डकीजर्दी, सुहागा और शुद्धगन्धक ये सब समभाग
लेकर पारोगन्धकनी नीलवर्णकजलीकर अन्वचीकुँको मिलाकर
भौंडीदेर मर्दनकरे । गाढा होनेपर अन्दाजसे गायका पी बाल-
क पिंर मर्दनकरे । गोलिया बनानेलायक हो तब गोलिया
बनाकर रखछोड़े अथवा अवलेहुरूपमें रखे । इसमेंसे ३ मारोकी
मात्रा जीरेके पानीकेसाथ देनेसे प्रहणीदोष, रक्तदोष, ज्वर,
दाह और रक्तपित्त ये सब नष्ट होतेहैं ॥ १६३ ॥

१६४ पित्तलरसायनम्

रीतिकान्ताऽप्रतालानि विडङ्गं त्र्युपणं तिलाः ।
दीप्यचित्रकमहातमज्जानः सहदेविका ॥ ६८१ ॥

ब्रह्मवृक्षफले विष्णुप्रियाया मूलमुत्तमम् ।
 भ्रामराज्यसमायुक्त निष्कमात्र प्रयोजयेत् ॥ ६८२ ॥
 दुग्धाशी सूर्यमाराध्य श्वित्रज्वयति मण्डलात् ।
 कासश्वासादिशमनं पित्तलस्य रसायनम् ॥ ६८३ ॥
 वृ क , रसायने ।

भाषा—पीतल, कान्तलोह, अभ्रक, हरिताल इनतीभस्में, विडङ्ग, त्रिफल, तिल, अजवान, चित्रकमूल, मिलावेकीमन्ना, सहदेवी, पलाशगीज, तुलसीकी चूड़, ये सब समभाग लेकर कूट कपड़छानकर मधु और घीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ माशेकी मात्रालेवे और केवल दूधपीकर सूर्यनारायणी आराधना करे तो ४९ दिनमें श्वेतपुत्र और कासश्वासादि दूरहों ॥ १६४ ॥

१६५ पित्तविध्वंसनरसः

(भद्रकालीरस , वातमम्भोहन)

शुद्ध सूतं विपञ्चाऽन्न न्यूपणं गन्धदङ्गणम् ।
 धूर्तवीज सेन्यवञ्च तुल्य तुल्य विचूर्णितम् ॥ ६८४ ॥
 रत्नमध्ये विनिःक्षिप्य कठिलद्रवमर्दितम् ।
 वज्रमूपागतं हृत्वा चालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ६८५ ॥
 द्विषामान्ते समुद्धृत्य मापमेवाऽनुपानतः ।
 भक्षयेच्चर्मपित्ते तु सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६८६ ॥
 व रा , वै चि , चर्मपित्ते ।

टि०—अस्य रसस्य वैचरिणामणो वर पाठं विन्यस्य कठिलद्रव स्थाने मत्स्यपित्त निहितं तस्य नाम च भद्रकालीरस इति स्थापितं तत्राऽपि विचार—पित्तशमनार्थं चैत्रम् मन्थादनीयस्वादिं वरखलीद्रवभा वना दातव्या, अत्रार्थं चैत्रदाभयोरपि भावनाया न काऽपि दाप्य वलम म्भोहनरोगोऽपि धैरवद्रव्ये तत्रैव निलम्बनात् पठित् ।

भाषा—शुद्धपारा और वडनाग, अभ्रकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, शुद्धगन्धक, मुहागा और धतूरकेजीज, सेनामक येसब समभाग लेकर पारान्धककी नल्लिपर्ण चूड़कीकूट तफ चीजें बारीककरक मिलाकर जत्रलीकरखोंके रसे मर्दनकर गोलान्नाय वज्रमूपामें समुद्धर मुपाकर बालुकायन्त्रमें दाप हू पाककर पर बालु अधिक न दे कवल २-२ अहुल्टी चारों तरफ बालसे टकारहें अन्यथा दोपहरमें पाक न होगा । स्वाद्गशीतल होनपर निहालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा समयोचितानुपानक साथ देनेसे चर्मपित्तादि समस्तपित्तविकार नष्टहोतहें ॥ १६५ ॥

१६६ पिताऽग्निवारिदरसः

अयोमहशोद्भवयङ्गरसम्

विभावयेदाडिमगोस्तनीजैः ।

रसेखिधाऽय युगबहुमात्र ।

सितापयोमि विनिहन्ति पित्तम् ॥ ६८७ ॥

रस रा , पित्तरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्धपारा, वज्रभस्म, सुवर्णभस्म येसब समभागकर १-२ पहर मर्दनकर अनार और द्राक्षकरतले

३-३ भावनाए देकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकरके पानीके साथदेनेसे समस्तपित्तरो गोको यह नष्टकरताहै ॥ १६६ ॥

१६७ पिताऽङ्गुशरसः

शुद्धपारदगन्धञ्च दङ्गणञ्चाऽन्नभस्मकम् ।

पतानि समभागानि खल्वमये विनिःक्षिपेत् ॥ ६८८ ॥

भद्रमुस्तकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं तथा ।

काचकूप्या विनिक्षिप्य पुटमेकन्तु भूधरम् ॥ ६८९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्र प्रदापयेत् ।

मूर्च्छापित्तविनाशाय सर्वपित्तनिवारणम् ॥ ६९० ॥

वै चि , पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक औरसुहागा, अभ्रकभस्म सब समभागकर नीलवर्णकजलीकर नागरमोथेके कान्ठीकी ३ रोन भावना देकर मुलाकर अच्छीतरह कपडमितीकीहुई आतशीशी शीमें भरके सूकरयन्त्रमें पुटदे । स्वाङ्गशीतलोनेपर १ रती जचितानुपानके साथ देनेसे मूर्च्छापित्त प्रयति समस्त पित्तवि कारोंको यह नष्ट करताहै ॥ १६७ ॥

१६८ पित्तान्तकरसः (प्रथमः)

जातीकोपफले मांसी कुष्ठे तालीसपत्रकम् ।

माक्षिकं मृतलोहञ्च अम्रं दिव्य सर्माशिकम् ॥ ६९१ ॥

सर्धंतुल्य मृत तारं सम निष्पिप्य चारिणा ।

द्विगुञ्जामा वटी कार्या पित्तरोगविनाशिनी ॥ ६९२ ॥

कोष्ठाश्रितञ्च यत्पित्तं शाखाश्रितमयाऽपि या ।

श्लक्ष्णैवाऽम्लपित्तञ्च पाण्डुरोग हलीमकम् ॥ ६९३ ॥

दुर्नामघ्नान्तिचान्तीश्च क्षिप्रमेव विनाशयेत् ।

रसः पित्तान्तको ह्येव काशिराजेन भापितः ॥ ६९४ ॥

र स , र सु , पित्तारोगे ।

भाषा—जायफल, जावित्री, जटामानी, कूठ, तालीसपत्र, सोनामासी, लोह और अभ्रकभस्म सब समभाग रखर सुकी येसब रतभस्म डालकर पानीकेसाथ पीयरकर दोदो रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिता अनुपानके साथ देनेसे कोष्ठ अथवा शाखाश्रित पित्त, श्ल, अम्ल-पित्त, पाण्डुरोग, हलीमक, बवामीर, वान्ति, प्रान्ति, इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ १६८ ॥

१६९ पित्तान्तकरसः (वातपित्तान्तकः) (द्वितीय)

मृतसूताम्रमुण्डाकैतीक्ष्णमाक्षिकतालकम् ।

गन्धक मर्दयेत्तुल्य यष्टिद्राक्षाऽमृताद्रवे ॥ ६९५ ॥

जलमण्डपजे पाठाद्रवे क्षीरत्रिदार्जिजे ।

मर्दयेद्ये दिन रत्ने सितासौत्रयुता वटी ॥ ६९६ ॥

बहुमात्रा निहन्त्याऽपि पित्तं पित्तज्वर क्षयम् ।

दाहत्पूणाश्रमादृष्टोप हन्ति पित्तान्तको रसः ॥ ६९७ ॥

सिताक्षीरं पित्रेघ्नानु पष्टिकाथं सिताऽन्वितम् ।
पित्रेघ्ना पित्तशान्त्यर्थे शीततोयेन घालकम् ॥ ६९८ ॥
व. रा., र. र. कौ., र. क., र. सं., र. र., र. चं., र. व. ल.,
र. र. स., र. को., वै. चि., वि. क., पित्तरोगे ।

६९८-र सं., र र, एतयोर्ब्रह्मणोस्तथा च रसचण्डासौ द्वितीयस्थाने
वातपित्तान्तक इति नाम । र. र. कौ., र. र. स, एतयोर्ब्रह्मणो द्वा-
सारपित्तान्तक नमेति । बन्धपित्तान्तकानाम्नि जलमण्डपने द्रवैरित्यस्य
स्थाने धानीशान्तरीन्द्रात्रैरितिदृश्यते । मृतमृदाभ्रमुण्डजर्कश्च्यन मुण्डस्थाने
मुष्णा निहिता इत्यने, अतस्तस्याऽप्येवाऽन्तर्भावं स्मृत्यति । धानीशान्ता
बर्षाभांवाताविणेपे मूलद्रव्ये च मुष्णा निरेतनेनाऽपि नाऽस्ति विवर्तिते ।

भाषा—पारा, अन्नक, मुण्ड, ताम्र, लोह, माक्षिक, हरि-
ताल इनगवरी भस्मं और शुद्धगन्धक समभाग लेकर बारीक-
पीसकर मुलहृदो, द्राक्ष, गिलोय, शेवाल, पात्रा, क्षीरविदारी,
इन प्रत्येकके स्वरस अथवा ब्रायोमें १-१ रोज मर्दनकर ३-३
रतीकी गोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घास्
और शहदेकेसाथ मिलाकर खानेसे पित्त, पित्तन्वर, क्षय, दाह,
तृषा ये सब नष्ट होतेंहैं । इनको खानेकेबाद घास् डालाहुआ
दूध अथवा मुलहृद्रीका ब्राथ पीवे अथवा ठंडे पानीकेसाथ
सुगन्धवाला मिलानर पीवे ॥ १९९ ॥

१७० पित्तान्तकरसः (सर्वपित्तविनाशकः) (तृतीयः)
रसेन्द्रो घत्सनाभश्च गगनं दरुदं वलिः ।
तालं तुल्यानि सर्वाणि सत्व्ये कज्जलिकां कुटु ॥ ६९९ ॥
दिनेकं भृङ्गनीरणं मर्दयेद्य ततो भिषकः ।
कृपिकोदरमध्यस्थं दिनमेकं विपाचयेत् ॥ ७०० ॥
मात्रा चणोन्मिता योज्या पित्तजेषु गदेषु च ।
रसः पित्तान्तको नाम पित्तोरोगनिश्चन्तनः ॥ ७०१ ॥
रसायनसं, वै. चि., व. रा., पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और बज्जनाग, अन्नकभस्म, शुद्धशिंग
रिफ, गन्धक और हरिताल सब समभाग लेकर पारेगन्धककी
नीलवर्णकज्जलीमें ये सब चीजें मिलाकर भंगरेके रसमें एकरोज
मर्दनकर सुखाकर आतशीशीतौमें भत्के १ रोज बाज्जनायन्त्रमें
पकाकर रखजोड़े । इसमेंसे चनेप्रमाणमात्रा उचिततुणानके साथ
देनेमें समस्तपित्तरोग दूर होतेंहैं ॥ १७० ॥

१७१ पिनाकपाणिरसः
घङ्गात्पथं सुतगन्धं नार्गांशष्टङ्गुणः शिला ।
शिलाजतु द्वितीयांशा विशतिःत्राऽऽयस रविः ॥ ७०२ ॥
तृतीयांशस्तिन्त्रिंशोऽंशं त्रिंशोऽंशं विचूर्णयेत् ।
कपित्थकाञ्चनरसेर्भावितो वल्लभात्रकः ॥ ७०३ ॥
यस्या पाण्डूदरप्लीहगुल्मकृच्छ्रविनाशनः ।
पिनाकपाणिनामाऽयं रसो योगीन्द्रसूचितः ॥ ७०४ ॥
र स, पाण्डुरोगे ।

भाषा—वज्रभस्म, शुद्धसोनामाखी, पारा और गन्धक
१-१ भाग, शुद्धशुभागा और मैन्सिल ३ आठवा भाग, शिला-
जीत २ भा, लोहभस्म बीसवा ३ भा, ताम्रभस्म तीसवा

३ भाग, इमली तीसवा ३ भाग लेकर सबमें इक्का मिलाय
रथ और कचनारके रसमें भातना देकर ३-३ रतीकी गोलिया
बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुलहृदीकेसाथ लेनेसे
पाण्डु, आठप्रकारके उदरोग, गुल्म, मूत्रकृच्छ्र इन सबको यह
नष्ट करताहै ॥ १७१ ॥

१७२ पिप्पलीखण्डः

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्क्षीरं चतुर्गुणे ।
अर्द्धाऽऽढकं घृतं गव्यं शुद्धं खण्डाऽऽढकं तथा ॥ ७०५ ॥
विपचेत्पाकवर्द्धयः पश्चाच्चैतानि दापयेत् ।
चातुर्जातं नयं व्योपं श्रीरसण्डं नलदाऽऽनुदे ॥ ७०६ ॥
कर्पूरं जातिपत्रञ्च कुङ्कुमं मधुकं नतम् ।
पृथक् शुक्तिमितं सर्वं चूर्णाकृत्य विनिक्षिपेत् ॥ ७०७ ॥
मृताऽर्धं कुडयोन्मानं मधुनः कुडयं तथा ।
विमिश्र्य नित्यसेवेत् वल्यं वाजीकरं परम् ॥ ७०८ ॥
दाहं तृष्णां भ्रमं छर्द्दिं मूच्छामंश्रिवपञ्चयेत् ।
कासं श्वासं क्षयं पाण्डुं प्रमेहं विपमज्वरम् ।
जयेद्वाजो वलं कुर्यादग्निभ्यां चाऽतिवृजितम् ॥ ७०९ ॥
ना. वि., श्वासे ।

भाषा—एकपेर पीपल लेकर चाखेर दूधमें, पत्रावे, मावा
होखानेर गायका धी २ सेर और घास् ४ सेर डालकर चाखनी
तेयाकरे फिर तण, पत्र, इलायची, सोंठ, मिर्च, पीपल,
नारियल, रस, नगरमोथा, शुद्धकूपर, जावित्री, बेशर, मुल
हृदी और तगर २-२ कर्प, अन्नकभस्म १६ कर्प, मधु १६
कर्प देसन उसमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखजोड़े । इस
मेंसे अग्निबलानुसार एकएक अथवा दोदो तोलेकी मात्रा लेकर
दूध पीनेमें यह बलको बडाताहै वाजीकरहै दाह, तृषा, भ्रम,
वगन, मूच्छां मन्दाग्नि, कास, श्वास, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, विप
मन्वर, और ओज क्षय इनगवरो दूरकरताहै ॥ १७२ ॥

१७३ पिप्पलीपाकः (वृहन्) (प्रथमः)

प्रस्थन्तु पिप्पलीचूर्णं क्षीरे पलशतद्वये ।
पचेन्मन्दाग्निना धीमान् घृतप्रस्थेन संयुतम् ॥ ७१० ॥
घनीभूते मधुनिभे सुगन्धीनि विनिक्षिपेत् ।
खण्डप्रस्थेनयं तस्मिन्मधुप्रस्थाऽर्द्धमेव च ॥ ७११ ॥
सुनिष्पन्नेऽखलेहे तु द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
चातुर्जातं पञ्चकोलं मरिचं तगरं तथा ॥ ७१२ ॥
जातीफलं जातिपत्री देवपुष्यं कुबेरदृक् ।
आकल्लुकाऽन्धिशोषञ्च तगरं जीरकद्वयम् ॥ ७१३ ॥
शतपुष्पा शटी धान्यं विडङ्गं ताम्रमेव च ।
सुवर्णमाक्षिकं लोहं प्रत्येकन्तु पलार्धकम् ॥ ७१४ ॥
तुगारुर्पर्योः शुक्तिश्चूर्णसेषां विनिक्षिपेत् ।
सुनिष्पन्नेऽखलेहेस्तु स्थाप्योऽयं शुभमाजने ॥ ७१५ ॥
सदा सेव्यो नरैस्त्वेव आयुर्मेधाऽभिकाङ्क्षिभिः ।
शुक्रवृद्धिं करोत्याशु वाजीकरणमुत्तमम् ॥ ७१६ ॥

वलीपलितनिर्मुक्तः पूर्णधातुः प्रजायते ।
 अनेन सेव्यमानेन स्त्रीशतं रमयेन्नरः ॥ ७१७ ॥
 सर्वरोगविनिर्मुक्तो दृढकायो महावली ।
 तेजोवृद्धिं करोत्यायु कन्दर्पाऽऽकान्तरूपकः ॥ ६१८ ॥
 यथावलं नरैः सेव्यः स्त्रीपुंमिर्वालवृद्धकैः ।
 अशीतिं वातजात्रोगान्नाशयत्येव वेगतः ॥ ७१९ ॥
 तथाऽष्टादश कृष्णानि विशन्मेहमरोचकम् ।
 गुल्मं प्लीहं तथा श्वासं कासञ्च तमकादिकम् ७२० ॥
 वातरक्तं रक्तपित्तं तथाऽष्टाबुदराणि च ।
 महाध्याधिमपस्मारमुन्मादं नाशयत्यपि ॥ ७२१ ॥
 गुणानन्यांश्च कुर्याद्भि रोगानीकं विनाशयेत् ।
 नराणाममृतं होप देवानाञ्च यथा सुधा ॥ ७२२ ॥
 पा. व., वीर्यवृद्धौ ।

भाषा—एकसेर पीपलके चूर्णको ८०० तोले दूधमें मन्द आचने पराये, पाक होनेपर १ सेर घी डालदेवे । मधुकी तरह गाटा होनेपर शकर ३ सेर और मजु ३ सेर डालकर पराये । चासनी तयार होनेपर तज, पत्रज, इलायची, पञ्चनेल (पीपल, पिपलामूल, बन्व्य, चित्रक, सोंठ), मरिच, तगर, ज्ञापफल, जावित्री, लौंग, बरञ्ज, अकलकरा, समुद्रशोष, तगर, स्याह्यपेदजीरा, सोंक, कचूर, धनिया, विडङ्ग, ताभ्रमस, सोनामारी, लोहमस, शुद्धपर और बंगलोकन ये सब २-२ तोले वारीक चूर्णकर चासनीमें डालकर अच्छीतरह मिलाकर रखोड़े । सातदिन वीतनेक बाद अम्रिल देसपर १-१ अथवा २-२ तोले खाकर दूध पीनेमें आयु, मेधा, शुक्र इनकी वृद्धि और उत्तम वाजीकरण होताई । वलीपलितमे निर्मुक्त होकर समस्त धातुओंसे शरीर परिपूर्ण हो जाताई द्रव्यके सेवनमें ८० वातरोग, १८ प्रकारके बुद्ध, २० प्रकारके प्रमेह, अहृदि, गुल्म, गीहा, तमनादिधाम, कास, वातरक्त, रक्तपित्त, ८ उदररोग, अपस्मार, उन्माद, इन सबको यह गूट करताई ॥ १७३ ॥

१७४ पिप्पलीपाकः (द्वितीयः)

पिप्पलीप्रस्थमादाय पचेत्सारे चतुर्गुणे ।
 प्रस्थादिकं घृतं द्विष्यं शुद्धरत्नपण्डकं तथा ॥ ७२३ ॥
 लेहं पचेद्धनं तावथायत्पाकं सुपाचितम् ।
 ततो द्रव्याणि चैतानि सुशुष्कणानि प्रयोजयेत् ॥ ७२४ ॥
 पलायद्रागपुण्यञ्च लवङ्गं नलदं तथा ।
 नागरं पिप्पलीं मुस्ता धीरण्डं मरिचं नतम् ॥ ७२५ ॥
 कटुत्रिकं जातिपत्री कुङ्कुमं मधुकं तिलाः ।
 प्रत्येकं चाऽष्टमात्राणि रसमस्मयुतानि च ॥ ७२६ ॥
 सर्वैः समांशं तच्चूर्णं लेह्यस्तायु साधयेत् ।
 मधुनः कुडवं दत्त्वा र्यादेद्भिर्वलं यथा ॥ ७२७ ॥
 वृष्यं पुष्टिकरं रस्यं चक्षुष्यञ्चाऽतिरघनम् ।
 पत्यं द्वापकं रस्यं छदिमूर्च्छां न्रमापहम् ॥ ७२८ ॥

दाहदृष्णाप्रशमनमोजस्यं धातुवर्धनम् ।
 बोधनं चेन्द्रियाणां वै प्रमेहान्हन्ति विशातिम् ॥ ७२९ ॥
 दोषत्रयप्रशमनं क्षयरोगविनाशनम् ।
 वीर्यस्तम्भकरञ्चैव तथा वाजीकरं परम् ॥
 वातान्तरकरणं वल्यं पिप्पलीपाकसञ्ज्ञकम् ॥ ७३० ॥
 पा. व., वाजीकरणे ।

भाषा—१ सेरपीपलकेचूर्णको चौगुने दूधमें पकावे । मावाहोनेपर घी आधासेर, शकर ४ सेर डालकर चासनीहोने-तरक पराकर इलायची, तज, नागकेसर, लौंग, राम, सोंठ, पीपल, नागरमोथा, नारियल, मरिच, तगर, शिकरु, जावित्री, केशर, मुल्लठी, किल और पारदभूम्येसव १-१ तोला डालकर २॥ तारनी चासनी बनाकर उतारले । ढंढाहोनेपर पाषाण शहद मिलाकर रखोड़े । इसमेंमे अम्रिल देसकर मात्रा खाकर अग्ने दूधपीनेमें रुपना, पुष्टि, हृदि, नेत्रज्योति और अम्रिको बढ़ताई । बल और दृढताको करताई छदि, मूर्च्छा, भ्रम, दाह, दृष्णा, धातुस्रीणना इन्द्रियदौर्बल्य, २० प्रकारके प्रमेह, क्षय, धातुना पतलावन, वातवृद्धि इनमको यह नष्टकर शरीरको मजबूत बनाताई ॥ १७४ ॥

१७५ पिप्पलीपाकः (तृतीयः)

अर्द्धद्रोणं शुभं दुग्धं कणाप्रस्थादमेव च ।
 द्वांसिंघट्टसान्द्रे तु रण्डप्रस्थद्वयान्नितम् ॥ ७३१ ॥
 वानरीमुसलीकन्दं चातुर्जातकरोचना ।
 करभो देवकुसुमं मस्तकी करहाटकम् ॥ ७३२ ॥
 प्रन्थिकं नागरं धान्यं शरी रदिरसारकम् ।
 लौहं प्रत्येककर्षकमेतान्येव विचूर्णयेत् ॥ ७३३ ॥
 घनसारोऽर्द्धकषणं शीतले शौद्रकौडवम् ।
 क्षिपेत्कणाऽवलहोऽयं प्रमेहाशौबलक्षयान् ॥
 कासं श्वासं ज्वरं हिककां छदिं मूर्च्छाक्षयत्रयेत् ७३४ ॥
 चि. र. म.,

भाषा—आठेस दूधमें ३ सेर पीपल डालकर परावे, जब कडुईमें लगेनेले तज गाटा २ सेर, शिल्लेरहिल बेवाचनेर्वाज, दोनोंमुगरी, तज, पत्रज, इलायची, नागेशर, गोरोचन, उंटक-टालेहीज, लौंग, मस्ताकी, अकलकरा, पिपलामूल, सोंठ, धनिया, कचूर, कन्था, लोहभूम्य ये प्रत्येक १-१ तोला मिलाकर आधातोला शुद्धपरमिलावे । एतदम ढंढाहोनेपर १६ तोले शहद मिलाकर रखोड़े । इसमेंमे अम्रिल देसपर १-२ तोलेकी मात्रा लेकर दूध पीनेमें प्रमेह, बवालीर, धातुक्षय, ओज क्षय, कास, श्वास, शय, दिना, छदि, और मूर्च्छां येसव नष्टोते १७५

१७६ पिप्पलीलोहयोगः

पिप्पलीलोहचूर्णञ्च पयसा प्ठीहनाशनम् ।
 मन्दाग्निगुणमयातंश्च जयेन्नियन्तिरेजान् ॥ ७३५ ॥
 ग नि., उदररोगे ।

भापा—शेवड़ीपीपली पीतकर ३ रती लोहभस्म मिलाकर दूधनेसाथ पीजावे । ऐसा २१ तोतकरनेसे जीर्णकर, असाध्यन्दीहा और अरुचि नष्टहोतेहै । प्रतिदिन सेवन रखनेसे मन्दाग्नि, गुल्म, वातरोग, येसव दूरहोतेहै ॥ १७६ ॥

१७७ पिप्पल्यादिरसायनम् ।

पिप्पल्या दश पट्ट पलं मरिचजं भाङ्गीविडङ्गाह्वयम्,
विश्वाम्नाजित्तुपलं दहनकं भृङ्गीरजश्चय्यरुम् ।
लोहप्रन्थि पलद्वयं सितपलातोऽष्टौ मधुप्रस्थकौ,
तत्सर्वं परियोज्य धान्यपुटके पक्षस्थितं सेवयेत् ७३६
कासश्वासी च मन्दाग्निं क्षयं पाण्डुमरोचकम् ।
हम्याहुःस्त्रप्रविषमं पिप्पल्यादिरसायनम् ॥ ७३७ ॥

वै चि, कासधासे ।

भापा—पीपल १० पल, मिर्च ६ पल, भारङ्गी, विडङ्ग, सोंठ और जीरा ४-४ पल चित्रमूल, भगवा चव्य, लोहभस्म, पिपलामूल २-२ पल, मिथी ८ पल, मधु ३२ पल लेकर सवरो इक्के मिलाय सुहव-द्वर अनाजरी राशिमें रखदे । १५ दितके बाद निकालकर अग्निबल देखकर एकएकतोला रामेसे काम, धास, मन्दाग्नि, क्षय, पाण्डु, अरुचि, और सराबस्त्रण का आना येसव नष्टहोतेहै ॥ १७७ ॥

१७८ पिप्पल्यादिलोहम् (प्रथमम्)

पिप्पल्यामूलकौद्राक्षाकोलाऽस्थिमधुसर्करा-
विडङ्गपुष्करै युक्तं लौहं हन्ति सुदारुणाम् ॥
छर्दिं हिक्कां तथा तृष्णां त्रिात्रेण न संशयः ॥७३८॥
र स, नि र, घ, र र, भै र, र सु, र च, र कौ, र, र, को, र चि, र सि, र क, हिक्काधासे ।

भापा—पीपल, आवला, द्राक्ष, बेल्कीगिरी, मधु, शरर विडङ्ग, पोहकरमूल, लोहभस्म येसव समभाग लेकर वारीक चूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे २-२ मासे मधु अथवा दूधके साथ लेनेसे भयङ्कर छर्दि, हिक्की और प्यास ये ३ रात्रिमें नष्टहोतेहै ॥ १७८ ॥

१७९ पिप्पल्यादिलोहम् (द्वितीयम्)

पिप्पलीमूलचित्राऽन्नत्रिकत्रयेणुसैन्यध्वम् ।
सर्वचूर्णसमं लौहं हन्ति सर्वोदरामयम् ॥ ७३९ ॥
र स, र सु, र चि, र र, उदराऽधिकारे ।

भापा—पीपलामूल, चित्रक, अन्नकभस्म, सोंठ, मिर्च, पीपल, त्रिकला, तज, पत्रज, इलायची, शुद्धकपूर और तेषव येसव समभाग, लेकर वारीकचूर्णकर सक्कीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३ या ४ रतीकी मात्रा योग्यता सुषार मधु अथवा दूधके साथ देनेसे समस्त उदररोग दूरहोतेहै ॥ १७९ ॥

१८० पिप्पल्यादिवद्री (मधुवातारि)

पिप्पली पिप्पलीमूलं दिह्लुलक्ष शिलाजतु ।
गुग्गुलु वर्धमानञ्च माक्षिकेण गुडेन वा ॥ ७४० ॥

पथ्याशुष्यमृताकाथं पिप्पलीचूर्णमिश्रितम् ।

भक्षयेन्निष्कमाश्रन्तु मधुवातं विनाशयेत् ॥ ७४१ ॥
वै चि, व रा, मधुवाते ।

भापा—पीपल, पिपलामूल, शुद्धशिंगरिफ, शिलाजतु, शूगल, एरण्डी जड ये सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर मधु अथवा शुद्धके साथ ४-४ मासेगी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली हर्द, सोंठ, गिलोय, इनकेनाडेमें पीपलके चूर्णका प्रसेप देकर ऊपर पीनेसे मधुवात नष्ट होताहै ॥ १८० ॥

१८१ पीतकं चूर्णम् (प्रथमम्)

पटोलदार्यामधुकं प्रियङ्गुभ्रतिविपाघनम् ।
सनागपुष्पं प्रायन्ती भूमिर्बवं तिकरोहिणी ॥ ७४२ ॥
विभीतकं दाडिमत्वग्घरितालं मनःशिला ।

समांशानि त्रिमांशं सरौलेय रसाञ्जनम् ॥ ७४३ ॥
पीतकं चूर्णमेतद्धि मध्वाकं प्रतिसारणम् ।
दन्तमूलगतास्योष्ठजिह्वातालुविकारजुत् ॥ ७४४ ॥

न नि, दन्तरोगे ।

टि०—यवप्यय योगो ग्रन्थकारेण प्रतिभारणे नियुक्तन्ताऽपि मधु भेऽस्य प्रयोगजीर्णकरमद्यशरीरतिशयाऽतिभारकाम्भ्यामादयशीत्र सुप्रशान्तिं यावन्तीति रहस्य न विस्मयीयम् ।

भापा—पटोलपत्र, सुल्हठी, प्रियणु, अतीस, नागरमोधा, नामवेसर, त्रायमाण, चिरायता, कुटकी, बहेडे और अनारबी छाल, हरिताल, मैनसिल ये सब १-१ भाग, शिलानीत, छड़ीला और रसौत तीसरा भाग मिलाकर रखछोडे । इसका मधुमें मिलाकर भक्षण करनेसे दन्तमूल, मुद्द, ओष्ठ, जिह्वा, तालु इनके विकारोंको यह नष्ट करताहै । यद्यपि यहयोग ग्रन्थकारने दन्तमञ्जनरूपसे लिखाहै परन्तु इसको समयोचितानुगानेसाथ देनेसे यह जीर्णकर, सद्गुहणी, प्रतिशयाय, अतिसार, धास कास इत्यादिरोगोंको नष्ट करेगा । खानेके लिये इसरो बनाना हो तो हरिताल और मैनसिलकी भस्म डालना । भस्म न मिलके तो शुद्धकरके देना ॥ १८१ ॥

१८२ पीतकं चूर्णम् (द्वितीयम्)

मनःशिला यवक्षारं हरिताल ससैन्यध्वम् ।
दार्यां त्वक् चैति तच्चूर्णं माक्षिकेण समायुतम् ७४५
मूर्च्छित घृतमण्डेन कण्ठरोगेषु धारयेत् ।

मुखरोगेषु च श्रेष्ठ पीतक नाम कीर्तितम् ॥ ७४६ ॥
यो म, उ मा, र का, भै र, घ, र र, टो, च स, यो त, मुखरोगे ।

भापा—मैनसिल, यवक्षार, हरिताल, सैन्यध्व, दाहल्दीबी छाल, इन सबका वारीकचूर्णकर धी और मधुमें मिलाकर मुखमें रखनेसे मुखके समस्तरोग दूर होतेहै ॥ १८२ ॥

१८२ १/२ पीतकं चूर्णम्

बुधे दार्यां रोधमन्द् समद्वा ।
पाटा तिका तेजिनी पीतिका च ॥

चूर्णं शस्तं घर्षणं तद् द्विजानां ।
रक्तप्लावं हन्तिकण्डूं रुजञ्च ॥

ग नि.,

भाषा—कुष्ठ, दाहहृदी, लोध, नागरमोया, मजीठ, पाटा, इटकी तेजबली छाल अथवा तुम्बुल शुद्ध मैन्शिल और हस्ताल सब समभाग लेन चूर्ण बना रखवे सुबह साम इसके मज्जने दातोंसे लोहिका जाना खुजली और पीड़ा ये सब नष्ट होतेहैं ।

१८३ पीतमृगाङ्गरसः (मस्कमृगाङ्कः)

संशुद्धं पारदञ्चैव सुशुद्धं गन्धकं भवेत् ।
यङ्गं शुद्धं समादाय नवसागरमेव च ॥ ७४७ ॥
सप्रभागानि सर्वाणि भर्दयित्वा सुखलयेके ।
काचकूप्यां विनिःक्षिप्य पावकेस्थापयेद्बुधः ॥ ७४८ ॥
मुखे मुद्रा च नो देया धूमं संलक्षयेत्ततः ।
निर्धुमे जायमाने तु सिद्धः पीतमृगाङ्ककः ॥ ७४९ ॥
मधुमेहन्तु मेहानां गणं नाशयते ध्रुवम् ।
मधुना भक्षयेच्चैव सुक्ष्मैलान्चूर्णकेन च ॥
रससागरसिद्धान्ते सुश्रेष्ठं स्वर्णभस्म तत् ॥ ७५० ॥
र च, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक वज्र और नवसागर समभाग लेकर वज्रको गलाकर पारमें डालदे समभागसेन्धानमक और नीचूस डालके रखल करे काला होनेपर पानी फेंकदे और दूसरातमक और नीचूका रस डालके घोटै बाला होनेपर फेंकदे ऐसे बारंबार करे जब कालापन दूर हो जाय तो पिष्टि का पानी सुखाकर सबचीजोंकेसाथ चारपहर मर्दनकर आतशी शीशमें भरके चूहेपर रखदे, मुंहको खुला रहनेदे, भीतरसे गन्धक तथा नवसागरका धूआ निकलना बन्दहोजाय तभी अग्नि निका लले अथवा बैसेही अज्ञारोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीको फोड़कर अन्दरसे रसको निकालले यह एकदम सुवर्णके रङ्गका निकलेगा । इसकी २-२ रती मधुकेसाथ अथवा इलायचीके चूर्णकेसाथ देनेसे यह मधुमेहको नष्ट करताहै । इसको लोग सुवर्णभस्म कहकर अगलोंको दियाकरतेहैं कितनेही लोग स्वर्णमृगाङ्कके नामसे व्यवहार करतेहैं ॥ १८३ ॥

१८४ पीयूषघनरसः (प्रथमः)

हेमाऽप्रतारणि मृतानि सूते
दत्त्वा तु सूतेन सम च गन्धम् ।
गन्धेन तुल्यं दरदञ्च दत्त्वाऽ-
मृतारसेनैकदिन विमर्श ॥ ७५१ ॥
कौरण्टभृङ्गाऽग्निविषैर्दिनैकं
सूतेन तुल्येऽथ विनिक्षिपेत्तु ।
पुटे सुताम्रस्य मृदा च लिप्त्वा
सामुद्रपूर्णेऽथ पुटेत भाण्डे ॥ ७५२ ॥
ससम्पुट तच्च विमर्श यामं
गुह्यचिकान्पूषणशृङ्गवैरैः ।

वदीत वल्लं गदिताऽनुपानै
ज्वरेषु पीयूषघनो रसेन्द्रः ॥ ७५३ ॥

र. दी., र. चं., ज्वराधिकारः ।

भाषा—सुवर्ण, अन्नकरजत इनकीभस्म, शुद्ध पारा, गन्धक और शिगरिफ सब समभागलेन पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीकर सब चीजें मिलाकर गिलोयके स्वरस अथवा हाथसे एकरोज मर्दनकर कटसरैया, पीतकटसरैया, भंगरा, चिन्कमूल और घटनाग इनप्रत्येकके स्वरस अथवा काढेमें १-१ रोज मर्दनकर पारेकीवरावरके तावेके सम्पुटमें रखकर ३-४ कपड़मिठी देकर सुखाकर लवणयन्त्रमें रखकर ४ पहरकी आच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखलोड़े । इसमेंसे ३-३ रती गिलोय, त्रिकटु, अदरस यथोचिति इनकेसाथ अथवा त्रैलोय्यचूडामणिरसमें कहेहुए अनुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ १८४ ॥

१८५ पीयूषघनरसः (द्वितीय)

गन्धं रसेन्द्रं दरदञ्च मुक्तां
विमर्शं ताम्रस्य पुटे पुटेत ।
पूर्वप्रकारेण गतौषधीभि-
र्विर्मर्दितस्याऽथ वदीत वल्लम् ॥ ७५४ ॥
ज्वरेषु सर्वेषु यथाऽनुपानैः
श्लेषु सर्वेष्वपि मान्यकाश्रयं ।
शीतज्वरे श्रीतुलसीरसेन
पिष्ट्वा मरीचानि वदीत वल्लम् ॥ ७५५ ॥
नीरस्य पादेन नियोज्य बुधं
कुस्तुम्युरीनीरयुतं पचेत् ।
दुग्धाऽवशेषं कणया युतञ्च
वदीत चोष्णज्वरनाशनाय ॥ ७५६ ॥
पेकाहिके तण्डुलवारिपिष्टं
वदीत मेघघ्वनिमूलचूर्णम् ।
चातुर्थिकादौ विजयां स्वशक्ति-
प्रमाणयुक्ताञ्च कटुत्रयेण ॥ ७५७ ॥
पित्तोत्तरे चामलशर्कराभ्यां
गन्धेन दुग्धेन घृतेन पक्वम् ।
घत्तूरबीजं मृतशुभ्रमम्रं
वदीत या तण्डुलवारिणा वा ॥ ७५८ ॥
गोजिह्विकामूलरसेर्मृतस्य
ताम्रस्य गुग्गा च विरेचनाय ।
शुण्ठीगुड्गुचोन्द्रयवाभ्युवाह-
भूनिम्बघान्वातिविपाकपायम् ॥
सर्वाऽतिसारेषु नियोजयेच्च
ज्वरेषु सर्वेष्वपि चारनालैः ॥ ७५९ ॥
र. च, र. दी., ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, शिंगरिफ और मोती समभाग लेकर नीलवर्ण बन्बलीकर पूर्वाचारसद्री तरह औषधोंके स्वर-सोंमें मर्दनकर पारेकी बराबरके ताम्रसम्पुटमें बन्दकर ३-४ वषडमिठी देकर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देकर निःसाले । इसमेंसे ३-३ रती पूर्वोक्तानुपानसे देनेसे समस्तज्वर, शूल, अग्निमान्द्य इनको यह नष्ट करताहै । शीतज्वरमें तुलसीके रससे १ माशा मरिचकेसाथ ३ रती मिलाकर देवे । पानीमें चतुर्थांश दूध मिलाकर उसमें आधातोला घनिया डालकर पकावे । जब पानी जलकर दूधमात्र रहजाय तब पीपल डालकर देनेसे उष्ण-ज्वरका नाश होताहै । ऐकाहिक ज्वरमें तुलसीके रसकेसाथ इक्षुको देकर ऊपरसे चाबलेके पानीमें १ तोला कटिवाली चौला ईकी जड़ पीसकर देवे । चातुर्विधादिज्वरोंमें रोगीकी शकिके अनुसार त्रिकटु और भाग्निसाथ देवे । पित्तप्रधानज्वरमें आवलेके चूर्ण औरशकरकेसाथ देकर ऊपरसे घृतयुक्त पकाया हुआ दूध दे, अथवा शुद्ध धतूरेके बीजोंके ३ रती चूर्णकेसाथ ३ रती अश्रकको देकर ऊपरसे चाबलोका धोवन फिलावे । गोभीकी जड़के रससे मंगुए ताजेकी १ रती देनेसे रेचन होताहै । सोंठ, गिलोय, इन्द्रजव, नागरमोथा, चिरायता, धनिया, अतीस, इनके काठके साथ देनेसे समस्त अतीसार नष्ट होतेहैं । समस्तज्वरोंमें खड़ी कार्जिकेसाथ देनेसे भी लाभ होताहै ॥ १८५ ॥

१८६ पीयूषवह्नीरसः

सुतमग्नं गन्धकञ्च तारं लौहं सटङ्कणम् ।
रसाञ्जनं माक्षिकञ्च शाणमेकं पृथक्पृथक् ॥ ७६० ॥
लवङ्गं चन्दनं मुस्तं पाठाजीरकघान्यक्रम् ।
समङ्गाऽतिविषा लोघ्रं कुटजेन्द्रयवं त्वचम् ॥ ७६१ ॥
जातीफलं विश्वविल्वं कनकं दाडिमीच्छदम् ।
समङ्गा धातकी कुष्ठं प्रत्येकं रससम्मितम् ॥ ७६२ ॥
भावयेत्सर्वमेकत्र केशराजरसैः पुनः ।
चणकाभा वटी कार्या छापीदुग्धेन पेयिता ॥ ७६३ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं दग्धविल्वं समं गुडैः ।
हन्ति सर्वानतीसारान् ग्रहणीं चिरञ्जामपि ॥ ७६४ ॥
आमसम्पाचनो सम्यग्बहिष्टुद्धिकरस्तथा ।
पीयूषवह्नी नामाऽयं ग्रहणीरोगनाशनः ॥ ७६५ ॥

र स. भै. र. र. सु. , ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक, अश्रक, रजत औरलोहभस्म, भुनासुहागा, रसाञ्जन और माक्षिक ४-४ माश, लवङ्ग, लालचन्दन, नागरमोथा, पाठा, जीरा, धनिया, मजीठ, अतीस, लोघ, कुटज, इन्द्रजव, तज, जायफल, सोंठ, बेल, शुद्ध धतूरेकेबीज, अनारकीडाल, लज्जाल, धावडीके फूल और कुट येप्रत्येक पारेकी बराबर डालकर काले भगरेके रससे मर्दनकर सुखाले । फिर धरतीके दूधसे पीसकर चनेप्रमाण गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली देकर बेलनी रात समभाग गुडकेसाथ मिलाकर ३ मासे देनेसे सबप्रकारके अतीसार और पुरानी सङ्ग

हणी नष्टहोतेहै । इसके देनेसे आमका परिपाक होताहै और अग्निकी वृद्धि होतीहै ॥ १८६ ॥

१८७ पीयूषसागररसः

नागं वङ्गञ्च कान्तञ्च गगनं हेम सुतक्रम् ।
दरदं दङ्गणं ताघ्रं समं सर्वं विमर्दयेत् ॥ ७६६ ॥
निशाकन्याघनोशीरत्तवङ्गसलिलैः पृथक् ।
त्रिवारं भाधयेत्सिद्धो रसः पीयूषसागरः ॥ ७६७ ॥
वल्लभानः सिताशौद्रयुक्तो हरति शुकुजात् ।
विकाराद्वाशयेत्सद्यो बन्ध्यानां नष्टरेतसाम् ॥ ७६८ ॥
शुकुक्षयवतां शीघ्रद्राविणां प्र्यरेतसाम् ।
अवीजर्धमिणां छिन्नशुक्राणां क्षतशोपिणाम् ॥ ७६९ ॥
वालानाञ्चैव वृद्धानां पण्डानां शुकुशोपिणाम् ।
सेवनात्पुत्रदः शीघ्रं जायते नाऽत्र संशयः ॥ ७७० ॥
रसायनस, पाण्डपचिकित्सिते ।

भाषा—सीसा, वङ्ग, कान्तपाषाण तथा कान्तलोह, अश्रक, सुवर्ण, पारा, शिंगरिफ, सुहागा और ताम्र इनसबकीभस्में सम-भाग लेकर हल्दी, धीकुआर, नागरमोथा, रस और लौह इनके यथालभ स्वरस अथवा कार्योंसे ३-३ भावनाएदनेसे यह पीयूषसागर नामकारस तैयारहोगा । इसमेंसे ३ रती शकर और मधुकेसाथदेनेसे यह समस्तशुकुदोषोंको नष्टकरताहै । बन्ध्या, नष्टशुक, शुकुक्षीण, शीघ्रद्रावी, अवीजर्धनी, छिन्नशुक, क्षती और शोपी, इनसबकेलिये यह उपकारकहै और पुनोत्पत्तिको देनेवालाहै ॥ १८७ ॥

१८८ पीयूषसिन्धुरसः (प्रथमः)

शुद्धः सूतो मौकिक तुर्यगन्धौ
कान्तं ताघ्रं कांस्यरौप्यं सुनीलम् ।
स्वर्णं वज्रं ताप्यमाणिक्यतास्यै
राजावतों रीतिक्रा वङ्गनागौ ॥ ७७१ ॥
सर्वं मर्द्य हृष्ककोलद्रयेण
वज्रोपाठाप्रन्थिजैः सूरणस्य ।
दन्तीमुण्डो काकमाचो हलाह्या-
भृङ्गाऽकांऽग्निव्योपतीक्ष्णाभिरचम् ॥ ७७२ ॥
शुष्कं कृत्वा कूपिकां पूरयित्वा
सम्यग्गोये योगिनीं पूजयित्वा ।
माप दद्याद्द्रांसिन्ध्वस्युक्तं
सूतेन्द्रोऽसौ हन्ति पीयूषनामा ॥ ७७३ ॥
अशस्ताप मूत्रकृच्छ्रं प्रमेह
शल्लं पाण्डु वह्निमान्द्यं क्षयञ्च ।
वातं गुल्मं विद्रधिं प्लीहाहिके
शोफं तूनीं चोदरं पीनसञ्च ॥ ७७४ ॥
श्वासं कास रक्तपित्ताऽम्लपित्तं
कुष्ठं मेदः कामलायां ग्रहण्याम् ।

सर्वो तन्द्रां नाट्यवाताऽऽहृतञ्च
भूताऽऽवेशो नाशयेदनु सत्यम् ॥
पथ्यं सात्म्यञ्चाऽऽलवर्ज्यञ्च सर्वं
नाघाह्वर्यं सर्वरोगप्रशान्त्यै ॥ ७७५ ॥
र.श. , अशुं सु ।

भाषा—शुद्ध पारा, मोती, तृतीया और गन्धक, कान्तपा-
पाण तथा लोह, ताम्र, वामा, रजत, नीलम, सुवर्ण, हीरा,
सोनामारी, भागिन्य, पत्रा, राजावर्त, पीतल, वज्र और नाग
इनसवनीभस्मं समभाग लेकर पारे गन्धकनी नीलवर्णकजलीमें
मिलाकर मिखावा, बेर, डंडाग्रह, पाठा पिपलासूल, सुरण,
दन्तीमूल, गोरसमुण्डी, मन्त्रोय, कलिहारी, भागरा, आरु,
चित्रकमूल, सोंठ, मिर्च, पीपल और राई इनप्रत्येकके स्वरस
अथवा काढेकी १-१ दिन भावना देकर सुखाकर रखछोड़े ।
अच्छे सुहृदमें योगिनीकी पूजाकरके १ माशाकी मात्रा अदरस,
सैधव, चित्रकमूल इनकेसाथ देनेसे वनासीर, प्वर, मूनहृच्छू,
प्रमेह, शूल, पाण्डु, अग्निमान्य, क्षय, वायु, गुल्म, विदधि,
प्लीह, हिचकी, शोथ, तूनी, उदररोग, पीनस, श्वास, कास,
रक्तपित्त, अम्लपित्त, कुष्ठ, मेशेरुदि, कामला, प्रहणी, सबप्रकार-
कीतन्द्रा, नाट्यवात, भूताऽऽवेश इनसबको यहशीघ्र नष्टकरताहै ।
खटाईको छोड़कर जो रोगीकेलिये सात्म्यहो वह सब पथ्यहै ।
जिस २ रोगमेजिस २ पदार्थका निषेधहै उसको न प्याय १८८

१८९ पीयूषसिन्धुरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं पद्मं जौणन्धं
काचि पात्रे बालुनायन्ययोगात् ।
भस्मीभूतं योजयेदत्र हेम
ततुल्यांशं भस्म लोहाऽभ्युयोश्च ॥ ७७६ ॥
सूतासुल्यं गन्धरु मेलयित्वा
रजले मर्द्यं सूरणस्य द्रवणेण ।
दन्तीमुण्डीकाकमाचीहलाख्या
भृङ्गाऽर्काणामग्निजातं द्रवञ्च ॥ ७७७ ॥
क्षिप्त्वा पश्चाद्धान्यराशौ त्रिचक्ष
चूर्णाभूत मापमात्रं ददीत ।
अशोरोमे दारुणे च प्रहृष्या
शूले पाण्डावम्लपित्ते क्षये च ॥ ७७८ ॥
श्रेष्ठं क्षौद्रं चाऽनुपापानं प्रशस्तं
रोगोक्तं वा मासपट्टप्रयोगात् ।
सर्वे रोगा यान्ति नाशं जरायां
वर्षहृदं सेवनीयं प्रयत्नात् ॥ ७७९ ॥
पथ्यं दद्यादम्लतैलादियोपि
हृज्यं देयं सर्वरोगप्रशान्त्यै ।
पुष्टिं कान्तिं वीर्यवृद्धिं सुदाढर्यं
सेवायुक्तो मानवः सलभेत ॥ ७८० ॥
र.चि., र च खायनस., र.पु, र शो, नि र, र श, यो

म, र का, रसपारिजात, अशुं सु ।

भाषा—आतसीसीधीमें पद्मगन्धकजारण किया हुआ
शुद्धपारा, सुवर्ण, लोह और अभ्रभस्म शुद्धगन्धक सब
समभाग लेकर सुरण, दन्ती, गोरसमुण्डी, मन्त्रोय, कलि-
हारी, भंगरा, चित्रकमूल इन सार्तोंके रसोंसे १-१ भावना
देकर गोलाबनाया एरण्डपत्र वीरहमें लपेटकर अनानकी राशिमैं
३ रोज रपकर सुखाय चूर्णकर रखलेवे, अथवा १-१ मासेकी
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली मधु अथवा
रोगाऽनुकूल द्रव्यके साथ देनेसे भयंकर ववासीर, प्रहणी, शूल,
पाण्डु, अम्लपित्त, क्षय इनसबको यह नष्ट करताहै । छ महिने
लगातार इसका प्रयोग करनेसे समस्तारोग नष्ट होतेहैं । दोषों
सेवन करनेसे बुडापा दूर होताहै । खटाई, तैल, खोसज इनको
छोड़कर यथेष्ट आहार विहार करे । यथार्थ सेवन करनेसे पुष्टि,
कान्ति और वीर्य इनकी वृद्धि होकर शरीरकी दृढताको
प्राप्त होताहै ॥ १८९ ॥

१९० पीयूषसुन्दररसः

सूतद्रङ्गणगन्धादमवह्लिजानां समांशकाः ।
ततुल्यसितया युक्ताः सर्वं सम्मर्द्यं यत्नतः ॥ ७८१ ॥
तन्नाशकमत्स्यपित्तेन भावयेच्च त्रिवारकम् ।
पीयूषसुन्दरं देयं गुटिकावल्लसमिमा ॥ ७८२ ॥
देयाऽऽर्द्रकसेनाऽथ नवश्वरविनाशिनी ।
वार्ताकसहितं दद्यात्तक्रमकं हितं ततः ॥
शीतोपचारता सद्यः चिदध्याज्जरशान्तये ॥ ७८३ ॥
र.क.यो., श्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा और गन्धक तथा मरिच सम
भाग लेकर सबकी बराबर चार डालकर ३-४ पहर मर्दनकर
मेला और मल्लकीके पित्तोंकी ३-३ भावनाएँ देकर ३-३
रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अद-
रसके रखले देनेसे नरज्वरका नाश होताहै । उन्ताककेसाथ
छाछभात खानेको देना और शीतोपचार करना ॥ १९० ॥

१९१ पीयूपादि वटी (भृगुवटी)

वत्सनाभं विपं शुद्धमारुहकपट्टवणम् ।
लवङ्गं कुङ्कुमं जातीफलं जातीदलं समम् ॥ ७८४ ॥
तुर्यांशं प्रथमाच्छुद्धं भर्जितं टङ्गण क्षिपेत् ।
पष्टांशा द्वादशांशा वा कस्तूरी प्रथमाच्छुभा ॥ ७८५ ॥
सम्मर्द्याऽऽर्द्रकजद्रवै वटी मापनिभा कृता ।
भक्षिता मधुना किं वा ताम्बूलेन सुसात्म्यतः ७८६
पीयूपाख्या वटी हन्यादभ्यासाद्वातजान्गदान् ।
पित्ताऽधिरौधिनी चैषा बलघातुविवर्धिनी ॥ ७८७ ॥
शैल्यापनोदिनी रम्या मुखसौन्दर्यकारिणी ।
भृगुणा ज्ञानशीलेन ऋषिणा निर्मिता वटी ॥ ७८८ ॥
अस्याः संसेवनात्सस्य शीताम्भोभिः सदा मुनेः ।
न पीडा ज्ञानतः काचिदभयच्छेयसी ततः ॥ ७८९ ॥
रसायनसं., धनुरोगे ।

भाषा—शुद्धवचनाग, अरुलकरा, पड़पण (पीपल, पिप-
लामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिचै), लौंग, केसर, जायफल,
जावित्री, रस १-१ तोला, भुनासुहागा ३ माशे और उत्तम
कस्तूरी २ माशे अथवा १ माशा लेफर थारीक चूर्णकर अद-
रखके रससे मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा पानके रससे देनेमें वातजन्य-
रोगोंको दूर करतीहै पित्तको भङ्गकती नहीं । बल और धातु-
ओंको बढ़ातीहै शीतलो दूर करतीहै मुखमें सुगन्धि देतीहै ।
अधिक ज्ञानकरनेके अन्वयायी श्शुभ्रपिने इखरो बनायाहै ।
इसके सेवनसे उनको अधिकज्ञानजन्य कोई पीड़ा नहीं
होतीथी ॥ १९१ ॥

१९२ पुत्रप्रदरसः

शुद्धसूतं त्र्यहं स्वेद्यं मन्दाग्नौ दधि माह्रिये ।
शुटिते शुटिते दद्याद्दधि तुर्यंशुद्धि चोद्धरेत् ॥ ७९० ॥
तस्मिन् स्वर्णं क्षिपेत्प्राञ्चतुःपठितमांशकम् ।
मर्दयेत्त्रिभुवनैरेण यावदैक्यं हि जायते ॥ ७९१ ॥
पुनः संस्वेद्य तं सूतं वटशुद्धाऽहिवह्नियैः ।
कामुमाच्या च जीवन्त्या रसः स्याद्यामगुग्मकात् ७९२
दिनं शीताऽभुक्तुग्मस्यं दिनैकं दधि माह्रिये ।
एवं सिद्धरसाद्बलं प्रत्यहं ब्रह्मचर्ययुक् ॥ ७९३ ॥
मासैकं सेवते भर्ता सितादुग्धौदनप्रियः ।
त्रिकलानिम्बकार्पासीरसैर्नारी क्रमात्पृथक् ॥ ७९४ ॥
सप्त सप्तदिनं पीत्वा पश्चादनुसमागमे ।
रसं बलं त्र्यहं चैकं कार्पास्यम्युसितायुतम् ॥ ७९५ ॥
टङ्गुणः स्फटिका सूतः पक्काम्लिकरसाश्वितः ।
त्रिदिनं मधुना योनौ लेपः शुद्धिकरः परः ॥ ७९६ ॥
महिष्या दधिमध्यस्थं दिवा सूतं त्रिमापकम् ।
स्त्रीसेवासामये रात्रौ भक्षयेद्दधिसंयुतम् ॥ ७९७ ॥
सर्वलक्षणसम्पन्नं सूतं जनयते घरम् ॥ ७९८ ॥
तापादिकैः समुत्पन्नैर्देयं द्राक्षासितादिकम् ।
कार्यैः शीतोष्णचारश्च युक्त्या शिपजा सदा ॥ ७९९ ॥
आयुर्बुद्धिं बलं कान्तिं नष्टवीर्यं विवर्धनम् ।
कुयोद्गोहरः पुत्रप्रदो रुद्रविनिर्मितः ॥ ८०० ॥

र स. क, रसायनसं., र को, स्त्री वि, पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—शुद्धपारेको भेंसके दहीमें दोलायन्त्रसे मन्दाग्निपर
३ रोज स्वेदनकरे, दही समाप्त होनेपर नया डालताजाय ।
चौकरोज निकालकर उसपारेसे चोंसलडा हिस्ता सुवर्ण मिलाकर
नीचूकास डालकर अवतक दोनों एक न होजाय तबतक मर्दन
करे । फिर दूसरी पीटली बनाय बटके दसे और पान, मकोय,
अर्कपुष्पी (अभावंमें डोडी) इनप्रत्येककेरस अथवा काथोंसे
अलग अलग १-१ रोज स्वेदन करके कौर घडेमें ठडा पानीभर
उसमें एकरोज पीटलीको रखके फिर एकरोज भेंसके दहीमें रखके
इसतरह यह रस तैयार होगा । इसमेंसे ब्रह्मचर्यका पालन करता

हुआ ३-३ रती यथोचिताऽनुपानके साथ १ महीनेतक देवे ।
शकर, दूध और चावलके सिवाय कुछ न खाय, इसतरह पुरुष
भेवनकरे । स्त्रीको ऋतु आगमनके सातरोज पहिले त्रिकला,
नीम और कपासके रसकेसाथ १-१ गोली रोजाना देवे ।
अग्नीरमें कपासके रससे ३ रोजतक ३-३ रती पूर्वोक्तरसकी
देवे । फिर सुहागा, फिटररी और पारा समभाग लेफर पकी-
इमलीकेरससे घोटकर मधु मिलाकर तीनदिन तक योनिमें लेप
करे इससे योनि शुद्ध होजायगी । भेंसके दहीमें सुवर्णद्वयके समय
३ माशे ऊपरना पारा डालकर रात्रिमें स्त्रीसम्भोगके समय दहीके-
साथ उसपारेको खावे । सम्भोगके अन्तमें स्त्रीपुरुष दोनों यथाऽ-
वस्थित आपे परतकर रहें । इसतरह करनेसे समस्त शुभलक्षण
युक्त पुत्रको पैदा करताहै । अगर ज्वर बगैरह होजायतो दास
और शकर का शरबत देना स्त्री शीतोष्णचार करे । इसके निर-
न्तरसेवन करनेसे आयु, बल, कान्ति और शुभकी वृद्धि होती
है ॥ १९२ ॥

१९३ पुत्रवर्धमानरसः

पलाध्रं प्रतिमे स्वर्णं ताध्रं दत्त्वाऽक्षमात्रया ।
निर्वापयेच्छतं धारात्रिक्षिप्य शुक्रपिच्छकम् ॥ ८०१ ॥
ततश्च सारणायन्त्रे सूत्रस्थाने प्रकाशिते ।
सारणातैलसंयुक्ते जीर्णपङ्कणगन्धकम् ॥ ८०२ ॥
रसं हि द्विपलं क्षिप्त्वा सारणाविधियोगतः ।
सारयित्वा ततः पश्चात्पिष्टीभूतं शनैःशनैः ॥ ८०३ ॥
तस्माद्यन्त्रानु निष्कास्य गालयित्वा च वाससा ।
मातुलुङ्गरसैः पिष्टं चतुर्निष्कमितं ह्यनु ॥ ८०४ ॥
गन्धकं विधिना यावज्जारयित्वा चतुर्गुणम् ।
तमादाय रसं सम्यग्विचूर्ण्य परिगाल्य च ॥ ८०५ ॥
पष्ठशिन मृतं बज्रं समवेकान्तकं मृतम् ।
निक्षिप्य मातुलुङ्गस्य रसैः पिष्ट्वा च वासरम् ॥ ८०६ ॥
पुटेद् द्वादश चाराणि रुद्ध्वा द्वादशकोपलेः ।
वन्धुजीवरसेनाऽथ लक्ष्मणासरसेन च ॥ ८०७ ॥
पुनः सन्नूप्यं सम्पूज्य योगिनीः पितृदैवताः ।
पुत्रिण्या पुत्रनाथाश्च पूजितन्या विधानतः ॥ ८०८ ॥
इति सा प्राणुयाद्रूमं रामा संवत्सराऽन्तरे ।
आदिवन्ध्यादिदोषा या याश्चान्या दुष्टयोनयः ॥ ८०९ ॥
प्राण्यु जीवितं पुत्रं भाग्यसौभाग्यसंयुतम् ।
पुंसामपि च यन्ध्वत्वं स्वल्परेतस्त्वमेव च ॥ ८१० ॥
वीजदोषा विचित्राश्च विनश्यन्ति न संशयः ।
एवं यः सेवयेत्सूतं वर्धमानः सपुत्रैः ॥ ८११ ॥
स्त्री वि, पुत्रप्राप्तये ।

भाषा—आधेपल शुद्धसुवर्णको गलाकर शुद्धतावा १ कर्षं
मिलावे और विजोरेके रसमें षोडशश गन्धक मिलाकर बुझावे,
ऐसे १०० बार बुझावे यह सुवर्णताम्र बीज तैयार हुआ । इसके
बाद पङ्कणगन्धकजारित २ पल शुद्धपारेको सारणायन्त्रमें
रखकर मूषाका अर्धभाग सारणातैलसे भरदे । फिर वैपुओंकी

मिट्टी, मधु, काकविष्टा, आरु परकी टिट्टी, जवानमेंसों के दोनोंकानोंका मल, येसन समभाग लेकर खलकर कपड़छान-चूर्णकरले। इसचूर्णका विजोरेके रसमें कल्क बनाय सारणा तैलमें चतुर्थांश देकर पकावे। पकनेपर छानकर रखलेवे (मछली, कछुआ, पीलामेंढक, जहरीजोंक, मेंढा, सुअर इन सबकी चर्बीको समभाग मिलाया। इसका सारणतैल साकेतिक नामहै) प्रथमोज वीजमें चतुर्थांश मूनागादिचूर्ण डालकर विजोरेके-रससे २-३ पहर मर्दनकर गोली बनाकर सारणातैलमें भीगे हुए चारतहकपड़ेमें पोतली बनाय मध्यच्छिद्रयुक्त टक्कीपर रखकर मूपाके ऊपर टकड़े और सारणातैलमें एकफुडे को भिगोकर दोनोंके सुंहर लपेटकर नमक अथवा राखको विजोरेके रसमें भिगोकर सन्धि बन्द करदे। फिर मूपाके तृतीयाद्यप्रमाणका गर्त बनाकर मूपाको उसमें रखकर मिट्टीसे गर्तको जमीन बराबर करदे। मूपाके सुंहर खदिर बौरहके सारिष्ट कोयले रखकर धौकनीसे धोके। जब देखे कि वीज गलकर भीतर चलागया तब धौकना बन्दकरदे। स्वाङ्गसौतल होनेपर निकालकर कपड़ेमें छानले जितना हिस्सा वीज का न मिलाहो उसको फिर इसीतरह करके मिलावे। जब नि शेष वीज पारेमें प्रविष्ट होजाय और छाननेसे कुछभी न निकले तब इसपर विजोरेके रसमें पीसाहुआ गन्धक १ कर्प देकर कण्डययन्त्र बौरहमें जारणकर। ऐसे पारेसे बौगुना गन्धक जल जाय तब इसको घोट्टर कपड़छान-करले फिर पारेसे पठाइ हीरा और समभाग वैकान्तभस्म मिलाकर विजोरे का रसदेकर एकदिनभर मर्दनकर गोला बनाय श्राव सम्पुटकर १२ जखली कण्डोंकी आचदे। इसीतरह दुप-हरियाके रसमें मर्दनकर आध देनेके बाद लक्ष्मणाके स्वरससे मर्दनकर आचदे। यह पुत्रवर्धमानरस तैयार हुआ। इसको शीशामें रख योगिनी, पितृदेव, और बालप्रहोकी विधिपूर्वक पूजाकर सुसुहृत्तमें एक सर्प प्रमाण मात्रा नागकेसर प्रथमि पुसवन द्रव्यसे साथ सेवन करे और बकाराटक तथा तीक्ष्ण पदार्थोंसे परहेज करे तो एकवर्षके भीतर स्त्री गर्भको धारणकर। जिनको गर्भधारणके पहिले या मध्यमें या अन्तमें कुछ ररा विद्या होतीहो बिवा जिनकी योनि दूषित हो वेभी इसके सेवनसे दीर्घायु और सौभाग्ययुक्त पुत्रको प्राप्त होतीहै। पुश्यों कोभी बन्ध्यात्व, स्वल्परेतत्वक प्रथमि विचित्र २ दोषदुआररतेहै वे सब इसके सेवनसे नशहोजातेहै। जिसको पुत्रप्राप्तिकी उत्कृष्ट इच्छाहो व स्त्रीपुश्य दानों इसका सेवनकरे। परन्तु इसरसको बनाकर तुलसी विसीको नहीं दिलाना चाहिये नहींतो इससे महा अनर्थ होनेकी सम्भावनाहै कमसे कम एकसालभरके बाद देना। इसमें गळती करनेसे लोक परलोक दोनों विगडेंग १९३

१९४ पुनर्नवायुगुलुः

पुनर्नवामूलशतं विशुद्ध

स्वकमूलञ्च तथा प्रयोग्यम् ।

दत्त्वा पल वोडशकञ्च शुष्य्या-

सङ्घुट्य सम्यग्विपचेत्सुपात्रे ॥ ८१२ ॥

पलानि चाऽष्टादश कौशिकस्य

तेनाष्टशेषेण पुनः पचेच्च ।

परण्डतैलं कुडवञ्च दद्या-

द्वत्वा निवृच्चूर्णपलानि पञ्च ॥ ८१३ ॥

निकुम्भचूर्णस्य पलं गुड्व्याः

पलद्वयञ्च द्विपलं प्रतीह ।

फलत्रयं त्र्युपणचित्रकाणि

सिन्धुत्वमम्लताविडङ्गकानि ॥ ८१४ ॥

कर्प तथा माशिरुधातुचूर्ण

पुनर्नवाचूर्णपलं तथैरुम् ।

चूर्णानि दत्त्वाप्यवतार्य शीत

खादेन्नो निष्कसमप्रमाणम् ॥ ८१५ ॥

चाताऽल्लजं वृद्धिगदंश्च सप्त

जयत्यवद्य त्वथ गृध्रसौञ्च ।

अङ्गोरपुष्ट्रिकवस्तिजञ्च

तथाऽऽमवातस्य वलं निहन्ति ॥ ८१६ ॥

र का, वातराजाधिकारः ।

भाषा—पुनर्नवा और एरुडकी ताजी साफकीहुईजड़ सौ १०० कर्प, सोंठ १६ पल लेकर सबको कूटकर मिट्टीके नवीन पात्रमें अठगुना पानी डालकर पकावे। अष्टाऽल्लजोप रहनेपर छानकर उसमें १८ पल भेंसागुगुलु डालकर पकावे। फिर इमेंसे एरुडतैल पावभर, निशोत्ता चूर्ण ५ पल, शुद्ध जमालगोटा अथवा हसनी जड़ १ पल, गिलोय, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, सेंधक, मिलावा और विडङ्ग ये प्रत्येक २ पल, शुद्ध सोनामाखी १ कर्प और पुनर्नवाका चूर्ण ४ कर्प डालदे। जब गोलीबन्धने लायक होजाय तब उतारकर रखलोडे। इसमेंसे ४-४ मासोकी मोलिया बनाकर खानेसे वातरक, सातप्रकारकी अण्डरुद्धि, ग्रन्थी, जाघ, ऊरु, पुष्ट, त्रिक और वस्तिवात, आमवात इनके बलको यह नशकरताहै ॥ १९४ ॥

१९५ पुनर्नवाद्योगः

पुनर्नवा नागवला वाजिगन्धा शतावरी ।

गोधूरे सुराठीकन्दं मृतं सूत समंसमम् ॥ ८१७ ॥

चूर्णं मध्याज्यसंयुक्तं निष्कं भुक्त्वा पितृवयः ।

तण्डुलं वानरीबीजं चूर्णयेत्सितया समम् ॥ ८१८ ॥

आलोडयेद्रथ क्षौरैस्तेनकुर्वाद्दूपिप्लाम् ।

तां घृतै र्भक्षयेच्चाऽनु रमयेत्कामिनीकुलम् ॥ ८१९ ॥

र रा, बाजीकरणे ।

भाषा—पुनर्नवा, नागवला, असगन्ध, शतावर, गोखरु, मुसली, पारदभस्म, सब समभाग लेकर घाटीकचूर्णकर १-२ पहर खलकरके रखलोडे। इसमेंसे ४ मास चूर्ण मनु और धीकेसाथ चाटकर दूपपीवे। चाबल, छिल्लेकरहित केवाचके बीज इनका घाटीकचूर्णकर बराबरकी शकर डालकर गायके दूधमें सानकर पड़ी बनावे। इनपुदियोंको धीकेसाथ खानेसे बहुलता-स्त्रियोका सन्नकरताहै ॥ १९५ ॥

१९६ पुनर्नवादिलेहः

पुनर्नवाया मूलानां तुलामानं पचेत्ततः ।
 हस्तिकर्णां चाद्गन्धा शैलेयं शिशुमूलकम् ॥८२०॥
 कुनिम्बाऽऽरबधौ नीली घरा दारु द्विकुण्डली ।
 निर्गुण्डी नीलिनी शिम्बी नागरं वक्षुरूपिके ॥८२१॥
 अग्निमन्थो द्वितुलसी सुनिपणञ्च गोशूरम् ।
 एतानि समभागानि पृथग्दशपलानि च ॥ ८२२ ॥
 द्रोणे पादाऽवशेषेऽस्मिन् कपाये च परिलुते ।
 त्रिशतपलं गुडं दत्त्वा पुराणं च विपाचयेत् ॥ ८२३ ॥
 त्रिकटु त्रिकला राक्षा नतचञ्चलाऽग्निप्रथिकम् ।
 तालीसं जातिका पत्रं घटाटं धनिका निशा ॥ ८२४॥
 विडङ्गञ्चाजमोदञ्च चातुर्जातञ्च रामठम् ।
 तक्रोलं मापकं भार्ही कान्तलोहञ्च युष्करम् ॥ ८२५ ॥
 जीरद्वयञ्च मण्डूरं सैन्धवं हस्तिपिप्पली ।
 सर्वमेतत्समञ्चैव पृथक्कर्षं विचूर्णयेत् ॥ ८२६ ॥
 सान्द्रपाकं भवेत्तस्याः युक्त्या पुष्परसं क्षिपेत् ।
 लेह्यराजं चावतार्यं द्विकालं सेवयेत्ततः ॥ ८२७ ॥
 कामलापाण्डुरोगघ्नं कासं श्वासं हलीमकम् ।
 पेकाहिकं द्व्याहिकं च पुराणं श्वयंयुं हरेत् ॥ ८२८ ॥
 स्यरसादक्षपहर रक्तपित्तञ्च विद्रधिम् ।
 नाशयेन्नाऽय सन्देहः कश्यपो मुनिरव्रजीत् ॥ ८२९ ॥
 वै चि, पाण्डुनामलयो ।

भाषा—पुनर्नवाकी जड़ १०० पल लेकर अष्टगुणित पानीमें पकावे, चतुर्थांशवशेष रहनेपर छानकर अलग धरे। फिर हस्तिकर्णपलाश, असागन्ध, छडीला, सहिजनकी जड़, चिरायता, अमिलतासका गूदा, नीलकीजड़, त्रिकला, देवदारु, विघारा, गिलोय, समाल, कालादाना, सेम, सोंठ, चित्रकमूल, नीला आरु, अरणी, स्याह और सफेद तुलसी, सुरवारी, गोखरू, ये प्रत्येक १० पल लेकर अवकुटकर ३२ सेर पानीमें काडा बनावे। चतुर्थांशवशेष रहनेपर छानले फिर दोनोंकाडे इकट्ठे मिलाय ३० पल पुरानागुड डालकर पकावे। दूर्वांशु होनेपर त्रिकटु, त्रिकला, राक्षा, तगर, चञ्च, चित्रकमूल, पिपलामूल, तालीसपत्र, जावित्री, कौडीभस्म, धनिया, हल्दी, विडङ्ग, अजमोद, चातुर्जात, मुनाहर्षि, शीतलबीनी, मापगर्णी, भार्ही, कान्तलोह भस्म, पोहकरमूल, स्याह और सफेद जीरा, मण्डूरभस्म, सैन्धव, गजपीपल ये सब १-१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर डालदे। गोली बधने लायक होनेपर उतारकर ठंडा होनेपर इतना मधु डाले कि चाटने लायक हो जाय। इसमेंसे १-१ तोला दोनों समय रोचाना खानेसे कामला, पाण्डु कास, श्वास, हलीमक, रोचाना अथवा तीसरे दिन आनेवाला ज्वर, जीर्णज्वर, शोथ, स्यरभङ्ग, क्षय, रक्तपित्त, विद्रधि, येसब नष्ट होतेहैं ॥ १९६ ॥

१९७ पुनर्नवामण्डूरम् (प्रथमम्)

पुनर्नवा त्रिवृद्धं व्योषं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
 कुष्ठं हरिद्रिं त्रिकला दन्ती चञ्चं कलिङ्गकाः ॥ ८३० ॥

पिप्पली पिप्पलीमूलं मुस्तञ्चैति पलोन्मितम् ।
 मण्डूरं द्विगुणं चूर्णितं गोमूत्रे द्व्याढके पचेत् ॥८३१॥
 कोलवदुटिकाः कृत्वा तत्रेणाऽऽलोड्य ना पिबेत् ।
 ताः पाण्डुरोगान् प्लीहानमशांसि विपमज्वरम् ॥
 श्वयंयुं प्रहणीदोषं हन्तुः कुष्ठं किर्मांस्तथा ॥ ८३२ ॥
 च सं, भा प्र, ग नि, नि. र, च द, वै, चि., व मा, मै र, चि र, र. र, रससागर, दो, यो म, पाण्डुधिकारे ।
 गदनिग्रहस्य प्रथमपुस्तके पिप्पलीस्थाने तिक्ता रूढिता ।
 भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, दाहहल्दी, त्रिफला, दन्ती, चञ्च, इन्द्रजव, पीपल, पिपलामूल, नागरमोथा, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूरभस्म सबसे दूनी लेकर सबको आठसेर गोमूत्रमें पकावे। गोली बधने लायक हो जाय तब बेर बराबर गोलिये बनाकर रखलोडे। इनमेंसे अग्निबलके अनुसार १-१ अथवा २-२गोली तकमें मिलाकर पीनेसे पाण्डुरोग, शीहा, अर्श, विपमज्वर, शोथ, प्रहणीदोष, कुष्ठ और किमि इन सबको यह नष्ट करताहै ॥१९७॥

१९८ पुनर्नवामण्डूरम् (द्वितीयम्)

पुनर्नवा त्रिवृद्धयोपं विडङ्गं दारु चित्रकम् ।
 कुष्ठं हरिद्रात्रिकला दन्ती चञ्चं कलिङ्गकम् ॥८३३॥
 कटुका पिप्पलीमूलं मुस्तं शृङ्गी च कारवी ।
 यधानो कद्दलञ्चैति पृथक् पलमितं संमम् ॥८३४॥
 मण्डूरं द्विगुणं चूर्णाद्गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
 गुडेन वटकान् कृत्वा तत्रेणाऽऽलोड्य तान् पिबेत् ८३५
 पुनर्नवादिमण्डूरवटकोऽद्विगुणिर्मितः ।
 पाण्डुरोगं निहन्त्याशु कामलाञ्च हलीमकम् ॥८३६॥
 श्वासं कासञ्च यक्ष्माणं ज्वरं शोथं तयोदरम् ।
 शूलं प्लीहानमाभ्यानमशांसि प्रहर्णां किमीन् ॥
 वातरक्तञ्च कुण्डञ्च सेवनात्राशयेधु ध्रुवम् ॥ ८३७ ॥
 भा प्र, नि. र, र सु, र. कि, चि क, पाण्डुरोगे । चि. क, पुनर्नवादिबट्टीति नमः ।

भाषा—पुनर्नवा, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, विडङ्ग, देवदारु, चित्रकमूल, कुठ, हल्दी, त्रिकला, दन्तीमूल, चञ्च, इन्द्रजव, कुठकी, पिपलामूल, नागरमोथा, नरकडाशांसी, कारवी (अभावमें मगरेल), अजवाइन, कायफल, ये प्रत्येक १ पल, मण्डूर सबसे दूना लेकर सबको अष्टगुने गोमूत्रमें पकावे। गोमूत्र क्षीण होनेपर मण्डूरके बराबर गुड़ डालकर पकावे। चासनी होनेपर बेर बराबर गोलिये बनाकर रखलोडे। इनमेंसे १-१ गोली छानमें मिलाकर पीनेसे पाण्डु, कामला, हलीमक, श्वास, कास, यक्ष्मा, ज्वर, शोथ, उदरशूल, शीहा, अर्श, प्रहणी, कृमि, वातरक्त और कुष्ठ इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ १९८ ॥

१९९ पुनर्नवामण्डूरम् (तृतीयम्)

वर्षाभू घटपो मानो लोहकिट्टं मधूरकम्
 भार्ही च समभागानि मूत्रे दशगुणे पचेत् ॥८३८॥

अन्तर्धूमविपद्भवेन मधुसर्पिर्द्युतञ्च तत् ।
पतत्रिदोषजं हन्ति शूलञ्च परिणामजम् ॥ ८३९ ॥
र. का., द्युलाधिकारे ।

भाषा—इद्रसिद्ध (पंजाबी), वरुण, मानकन्द, लोहकिट्ट, शुद्धतृतीया, भारती येसव समभाग लेकर दशगुने गोमूत्रमें डालकर मुंहबन्दकरके पकावे जय गोमूत्र जल जाय तब उत्तारकर शीतल करके रखछोड़े । इसमेंसे एकमात्रा मधु और धीके साथ लेनेसे यह त्रिदोषज परिणाम शूलको नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

२०० पुरन्दरवटी

सूतकाहिगुणं गन्धमेकधा कञ्जलीकृतम्
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकं सूतसम्मितम् ॥ ८४० ॥
अजाक्षीरेण सम्भाव्य वटिकां कारयेत्ततः ।
आर्द्रकस्य रसैः सेव्या शांततोयं पिबेदनु ॥ ८४१ ॥
काशश्वासप्रशमनी विशेषादग्निवर्धिनी ।
इयं यदि सदा सेव्या तदा स्याद्योगवाहिका ॥
वृद्धोऽपि तरुणः शक्तः स्त्रीशतेषु वृषापते ॥ ८४२ ॥
र. सं., र. चं, घ, र. सु., कासाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेसे द्विगुण शुद्धान्यक लेकर नीलवर्ण कज-लीकर त्रिकटु, त्रिफला ये प्रत्येक पारेकी बराबर डालकर एकदिन बरुकीके दूधकी भावना देकर १-१ माशोरी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसमें मिलाकर सेवनकरे और ऊपरमे १-२ जुल्फु टंडा पानी पीवे तो इससे वास, श्वास, मन्दाग्नि ये सब नष्टहोते हैं । यह वटी योगवाहिका है । इसके निरन्तरसेवनकरनेसे बुढ़ा भी जवान होजाताहै ॥ २०० ॥

२०१ पुष्पधन्वारसः (प्रथमः)

हरजभुजगलौहश्चाऽन्नकं वङ्गभस्म,
कनकविजययष्टयः शालमलीनागवह्ल्याः ।
घृतमधुसितदुग्धं पुष्पधन्वा रसेन्द्रो,
रमयति शतपामा दीर्घमायुर्वलञ्च ॥ ८४३ ॥
भै र, रसायनसं, आ वि, त्रु यो त, र क, र. सु., यो.
त, यो र, रसपारिजात, ध्वजभङ्गे वाजीकरणे च । योगतद्रिषया
सूतवर्तौ न दृश्यते ।

भाषा—गारा, सीसा, लोह, अन्नक, वङ्ग इनसबकी भस्में, शुद्ध धतूरेके बीज, विजयसार, मुल्हठी, सेमरका मुसला, पानकी जड़ सब समभाग लेकर रखलकरके रखछोड़े । अथवा पानके रसमें धोलकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर घी, मधु और शक्कर युक्त दूध पीनेसे सेकड़ों स्त्रियोंको सन्तुष्ट करसकताहै । इसके सेवनसे शरीरमें बल और आयु बढ़तेहै ॥ २०१ ॥

२०२ पुष्पधन्वारसः (द्वितीयः)

मृतरसरविबद्धं हैमभस्म प्रयुक्त,
दरदगानचन्द्रं तायकं कान्तभस्म ।

अहिवलिगुभवञ्चं सयमेतत्समानं
करमिसुररसमुष्टं कोकिलाक्षस्य वीजैः ॥ ८४४ ॥
रसजलनिधिदोषरश्चगन्धासुयष्टि-
त्रिकटुघनसितामि भावियेच्छात्मक्रीमिः ।
मुसलमधुकरजैर् मर्कटीनालजाती-
फलसरलसुजातीपनिकाहास्तिकन्दैः ॥ ८४५ ॥
निकलजलगुडूचोसत्त्ववाराहिकन्दैः
खसफलमृगजाभ्यां भावयेत्त्रिवाग्म् ।
बहुतस्मपि वीर्यं यच्छति क्षीरपाना-
द्बृहतरमपि सेव्यं स्वादु वृष्यञ्च भोज्यम् ॥
रमयति बहुकान्तास्तीव्रमानाऽपहारी
समधुघृतसिताभिः पुष्पधन्वा द्विवह्लः ॥ ८४६ ॥
वा., वाजीकरणे ।

भाषा—गारा, ताम्र, वङ्ग, सुवर्ण, शिंगरिफ, अन्नक, चारी, सोनामाखी, कान्तपाषाण, लोह, नाग इनसबकी भस्में, शुद्ध गन्धक, हीरामसम, सन समभाग लेकर ४ पहर मदनकरके श्वेतापराजिता (सफेद कोयल) तालमरुताना, खस, समुद्रशोष, असगन्ध, मुल्हठी, त्रिकटु, नागरमोथा, शक्कर, सेमलकामुसला, दोनों मुसली, मधु, करज, केवाच, अगर, जायफल, चीड, जावित्री, हस्तिकन्द, त्रिफला, सुगन्धवाला, गिलोयका सत्त्व, बाराहीकन्द, पोस्त और कस्तूरी इन प्रत्येककी कमश ३-३ भावनाएँ देकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर मधु, घृत और शक्करयुक्त दूध पीनेसे बहुतसी स्त्रियोंके तीव्रमानको दूर करताहै और वीर्यसेपरिपूर्ण रहताहै । इसपर स्वादु और श्रेय्य भोजन करना उचितहै ॥ २०२ ॥

२०३ पुष्पधन्वारसः (तृतीयः)

रम्भाकन्दे हैमताऽरुणैर्पिष्टि
पक्ष्वा यन्त्रे भूधरे तां पचेत् ।
गन्धं दत्त्वा पङ्कणार्द्धं रुमेण
पश्चात्कान्तं तेन तुल्यं क्रमेण ॥ ८४७ ॥
दत्त्वा खल्वे शालमलीयधितोयैः
पक्षैकं तन्मर्दयेन्नागवह्ल्याः ।
नौरै यामं पुष्पधन्वा रसः स्या
द्वह्लं दद्यादस्य पूर्वोक्तयुक्त्या ॥
पुष्टिं वीर्यं दीपनं सोऽन दद्या-
द्धन्यद्रोगाग्नोयोग्याऽनुपानैः ॥ ८४८ ॥
र र स, र च, र दी, वाजीकरणे । र. वी, पूर्णेन्दुरस
इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्ध सुवर्ण, रजत और ताम्र इनका बारीक चूर्ण डालकर पिष्टी बनाले । इसपिष्टीको फैलेके कन्दमें रखकर भूधरयन्त्रमें पकाकर सबमें त्रिगुणा शुद्धान्यक कच्छप यन्त्र वीर्यहर्षमें जाएगाकरे । फिर इसकी बराबर कान्तलोहभस्म मिलाकर सेमल और मुल्हठी क स्वरम अथवा वायुमें ७-७

दिन मर्दनर अन्तमें पकेपानके रसमें एक पहर मर्दनकरनेसे यह पुष्पधन्वा रस तैयार होगा । इसकी ३-३ रतीकी मोलिया बनार रजछोडे । इनमेंसे १-१ गोली घृत, मधु और शकर युक्त दूधके साथ पीनेसे अनेक स्त्रियोंकी वृत्ति करता हुआ भी वीर्यसे परिपूर्ण रहताहै । तत्तद्विषयज्ञानपानके साथ देनेसे यह तत्तद्विषयका नाश करताहै ॥ २०३ ॥

२०४ पुष्पधन्वारसः वृद्धाद्यः (चतुर्थः)

कनकहरजकान्तं ताप्यकं वृद्धिभाण्डं,
द्विजकुचलययपीशात्मलीनागिनीभिः ।
घृतमधुपयजण्डैः पुष्पधन्वा द्विवहो,
रमयति बहुकान्ता दीर्घमायुर्विधत्ते ॥८४९॥
शो. र., र. शं., र. सि., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, पारा २ भा, कान्तलोह ३ भा, सुवर्णमाक्षिक ४ भा, इनसबकी रसमें इन्दी मिलाय १-१ पहर खरखर पलाशकीजाल, बौंदके दूध, मुलहठी, सेमलका मुसला, पान इनके रसोंसे १-१ रोज मर्दनर ६-६ रतीकी मोलिया बनाकर रजछोडे । इनमेंसे १-१ गोली घी, मधु और शकरयुक्त दूधके साथ सेवनकरनेसे बहुतसी स्त्रियोंके साथ स्मरणरता हुआभी दीर्घायु और बलसे प्राप्त होताहै ॥२०४॥

२०५ पुष्पधन्वारसः (पञ्चमः)

रसमस्मप्रयो भागाः पङ्गागा गन्धकस्य तु ।
चतुर्थं मौक्तिकं हाटं द्विभागं तालकं शिला ॥ ८५० ॥
तारमस्रकलौहो च वङ्गमाक्षिकनागरम् ।
अयथाऽप्यौ प्रयालञ्च सर्वं खल्वे विमिश्रयेत् ॥८५१॥
त्रिदिनं मर्दयेद्वाहं शुद्धं द्रव्यं विमर्दयेत् ।
भावना गन्धदुग्धेन नलद्रं केतकी जया ॥ ८५२ ॥
फाये मर्कटिधीजानां पौण्ड्रकैस्तुजभाषितम् ।
इतराभ्यगन्धान्प्राणान् इतराभ्यं पृथक् पृथक् ॥८५३॥
लघुद्वैधुरजातानां सिद्धार्थं चञ्चु मर्कटी ।
जातीकोपः पुनर्भूध त्पगेलागोशुरास्तथा ॥ ८५४ ॥
दनुबीजं वरा शृङ्गयोऽशोकबीजं शतावरी ।
मुशली धूर्तवीजानि क्षीरीमांघ्रसौ तथा ॥ ८५५ ॥
ययानीद्वयकं रम्भा खर्जूरं विद्विबीजकम् ।
श्रियद्बुध जटामांसी अक्षवीजञ्च गोस्तनी ॥ ८५६ ॥
आकलत्तञ्च कज्जोलं कर्पूरं धान्यपञ्चकम् ।
एतानि समभागानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ ८५७ ॥
भाण्डे च द्विपलं स्थाप्यं द्विभागे चारिणोडसे ।
सूद्रमिना पचेत्सम्यग्द्विपलं शपयेत्ततः ॥ ८५८ ॥
मर्दयेत्तेन कान्तेन दिनानां द्वादशाऽप्यधिम ।
अदिनं स्पन्दयेद्बुधे द्विपदं तापयेत्ततः ॥ ८५९ ॥
सप्तारधं ददं मर्धं दिनान्ते तत्समुज्जरेत् ।
अनेन भायना देयाः सप्तपथिमिता बुधैः ॥ ८६० ॥

रसः सिद्धोऽयमाख्यातो बहुभाषं प्रयोजयेत् ।
अनुपानयुतं लेहं मधुशर्करया सह ॥ ८६१ ॥
गोदुग्धमोदनं भुङ्ग्यात्सर्पिः शर्करया सह ।
मैथुने दृढलिङ्गः स्यादङ्गनानां शतत्रयम् ॥ ८६२ ॥
प्रत्यहं रमते सेधी स्त्रीणाञ्च प्राणवल्लभः ।
प्रातस्तथाय सेवेत सद्यो द्रवति कामिनी ॥ ८६३ ॥
नष्टेन्द्रियतां मेहं मूत्रकृच्छ्रं तथाऽस्मरीम् ।
योनिशूलं शिरःशूलं सर्वाश्च ग्रहणी जयेत् ॥ ८६४ ॥
सर्वाऽतिसारशोफञ्च सर्वदाहान्धं निश्चितम् ।
अयं धन्वन्तरिख्यातो रसोऽयं रतिवल्लभः ॥ ८६५ ॥
पुष्पधन्वा रसः पूज्यो लोकानन्दकरस्तथा ।
नारीणां रक्षयेत्प्राणान्नराणां सिद्धिदायकः ॥
पूज्यः साक्षाद्रतिपति र्वैद्यानां मुक्तिदायकः ॥ ८६६ ॥

रसपारिजाते, वाजीकरणे ।

भाषा—पारदमस्म ३ भाग, शुद्रगन्धक ६ भा, मोती ४ भा, सुवर्णमस्म २ भा, हरिताल, मेनसिल, रजत, अभ्रक, वङ्ग, सोनामाखी, सीसा इनसबकीरसमें २-२ भाग, लोह और प्रयालमस्म आठ भाग लेकर सबको ३ रोज मर्दनकर गोदुग्धकी भावना देकर खन, केवड़ा, भाग, केवापकेबीज, ईस इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा धाथकी १-१ भावना देकर बला, अमगन्ध और उदकेके धायोंकी १०-१० भावनाएं देवे । फिर लौंग, तालमखाना, जावित्री, सरणों, छूट (काग-रहरी हिं.) केरांच, जायफल, इटसिद, तप, इलायची, गोसूर, पवाडकेबीज, त्रिकला, काकनासींगी और भेंडासींगी, अशोक-बीज, शनावर, सोनोमुगली, सुद्रपत्रके बीज, बंसलेवन, मोचरस, देशी तथा सुरासानी अन्तवान, बेलकाचन्द, सुशारा, चित्रकमूल, विजयशर्कीछाल, त्रियहू, जटामांगी, हठाशके बीज, हास, अफलररा, शीतचनीनी, कपूर, धान्यपञ्चक(पनियां, सौंड, नागरमोधा, मुगन्धबाला और बेलगिरी) सेवत १-१ भाग लेकर शुद्ध-कृष्णरेके इगरे ५ भागको । एतस्यको ३३ कर्पे पानीमें मन्द अग्निर पकावे जन १ पल जल बारी रहनाय तब उतारकर इनसबको मिलार करवाली द्वाओंको १२ दिनतक मर्दनकरे । १२ दिनकेबाद मुग्गादे फिर उगीतह दोण्ड जो दूसराभागदे उसको ३० कर्पे पानीमें पकाकर २ पल सेपहनेपर १० रोजतक मर्दनकरे । इततरह ६० दिन तक मर्दनहोगा । फिर एकभाग अग्नीमको मेरम दूधमें स्वेदनकरे । जब दूध आधा बारी रहनाय और सप्त अग्नीम दूधमें चत्रनाय तब उग दूधको दसमें डालकर दिनभर मर्दनकरे । हमरे रोज मुग्गाह फिर इगीतह मर्दनकरे, उगी सातभागानां दूधकी द । ये सब मिलकर ६० भावनाएं हुईं । इसकी ३-३ रतीकी मोलिये बनाकर रजछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और शकरके साथ अथवा मधु शरयुक्त दूधके साथ सेवनकरे और गोदुग्ध, भात, शर तथा घी गायको पत्रकी सिधिल्ल विना बजुली विद्योंके साथ रमन कामनादे । इन सबके सेवन करने

पैसीमी दबाहना हो वह तत्काल द्रावित होजाती है इसलिये वह पुष्प सिरोंका प्राणवायु होता है । वाजीकरणार्थ इसको रोहन करनाहोतो मैथुनके एक पन्था पहिले रोहन करे । धारीरामव्यर्थ सेवन करनाहोतो प्रातःकाल शयना समय है । इसके सेवनसे इन्द्रियोंकी अदाकि, प्रमेह, मूत्रच्छन्द्, अरमरी, योनिशूल, शिरःशूल, सपत्रकारकी सङ्गहणी, अतिसार, शोथ और दाह नष्टहोते हैं । स्त्रियोंके प्राणोंकी रक्षा करता है और पुरुषोंको सिद्धि देता है । यह रस साक्षात् कामदेव है, बंधोंको यथा देनेवाला है इसलिये पैशोंको एते हमेशा तैयार रखना चाहिये ॥ २०५ ॥

२०६ पुष्पधन्वारसः (पष्टः)

शिलाऽऽलतान्याऽऽम्रमुज्ज्वल
प्रवालवैदूर्यशशिद्रिभागम् ।
सूतस्त्रिधाऽऽऽऽस्यससम्पुक्तं
सुवर्णपत्रोद्भवतो विमर्द्य ॥ ८६७ ॥
विभावयेत्स्तन्यकचालधूर्त-
जयाम्बुमि घानरिजाम्भसा च ।
भापाऽऽवगन्धोरगवह्नितोयै-
र्भावं पृथग्दिन्दिकं तथैव ॥ ८६८ ॥
लयङ्गजातीफलपत्रफली
सिद्धार्थचक्रिधुरगोक्षुरैला-
चिञ्चैः पुनर्भूत्वगिभाऽऽधिशोप-
कङ्कोलद्वृक्षफलत्वग्गुडच्य ॥ ८६९ ॥
पलाण्डुशिथुद्वयमीरुताली-
दीप्यद्वयाऽऽरुक्कररुसारीः ।
रज्जुरमोचारसमोचकन्द
प्रियङ्गुमांसीशशिधान्यपञ्च ॥ ८७० ॥
द्राक्षा तुगायल्लनारिकेलऽ-
गुरुं समानं द्विपलं विचूर्ण्य ।
भाण्डे पचेदृष्टपले च तोये
भृङ्गिना तद्विपलाऽवशेषम् ॥ ८७१ ॥
विभावयेत्तेन जलेन घर्मे
पुनः पुनस्तं मुनिवासराणि ।
पलद्वयं याममफेनमग्नौ
सूतौ विपकं पयसा तथैनम् ॥ ८७२ ॥
कल्केन भावं शरवासराणि
विभावयेत्तं शतपत्रनरिः ।
शुष्कं विमर्द्य विधिवत्प्रयोज्यो
बहुः सितानागलतादलाभ्याम् ॥ ८७३ ॥
पथ्यं सुदुग्धं मधुरं प्रद्या-
त्यमेहवाते क्षयमूत्ररुक्ते ।
शोफाऽतिसारे ग्रहणौपलापे
प्रवाहयोनीष्वखिलाऽऽमयेषु ॥ ८७४ ॥

धन्वन्तरिप्रेरितपुष्पधन्वा
पूज्यो नृणां द्रावयतेऽङ्गनानाम् ।

लिङ्गे हृदत्वं युवतिप्रियत्वं

नष्टाऽल्पवीर्यो रतिवल्लभः स्यात् ॥ ८७५ ॥

र. शं., दो, र. म. ना, र. क. यो., वाजीकरणे ।

रि०—रमपारिगतोयगठेन बद्धा साम्यमावहस्यि मूलद्रव्ये भावन
वाध विशेषतएवगेव पाठो न्यल इति विभावनीयम् ।

भापा—मैनसिल, हरताल, सोनामारी, अत्रक, नाग
बन्ध, प्रवाल, लुगनिया, रजन और मोती इन सबकीभस्मं
२-२ भाग, पारिकीभस्म ३ भाग, लोहभस्म ८ भाग
इनसबको इच्छाकर दो तीन पहर मर्दनकर धतूरेके पत्रस
रस,, खीदुग्ध, गुग्गुणवाला, धतूरेकेजीज, भाग, केचाव
उड़द, असगन्ध, नागरबेल, इनप्रत्येकके रसोंसे १०-१० दि
मर्दनकर सुखाले । फिर लौंग, जायफल, जाविनी, का
पीलीसरसों, चूँच (हिं. कागलहरी), समुद्रशोष, शीतलचीनी
पवाङ्केजीज, तज, मिलोय, प्याज, बडवा और मोटा सहिजन
लज्जल दोनों मुसली, देसी और खरासानो अजवाइन
भिलावा, बीजभार (बीबलाम), छुशारे, मोचरम, वेलाकन्द
प्रियङ्गु, जटामासी, कचूर, पान्यपत्रक (धनिया, सॉट, नाग
रमोथा, गुग्गुणवाला, बेलगिरी), द्राक्ष, बसलोचन, भोजपत्र
नारियल और अगर ये सब १-१ भाग लेकर जवकुदकर दो २
पलकी पांच पुडिया घनालेना । इनमेंसे एक पुडियाको १६
पल पानीमें उवाले, जन २ पल पानी रहनाय तब छानकर
इस पानीसे जप्युंकरसको मिगोकर सुखावे, ऐसे इसकी सातरोज
भावनाएं देकर सुखाकर २ पल शुद्ध अफीमको ८ पल गोदुग्धमें
डालकर मन्द आचसे १ प्रहलक पकावे और इसको धीरे २
मिलाकर पाँचरोज घोटकर सुखालेवे फिर कमलपत्रके रसकी
१ भावना देकर ३-३ रसीकी गोलिया बनावर रखलेवे ।
इनमेंसे १-१ गोली पकेपानमें मिथी डालकर उसके साथ
खानेसे प्रमेह, वातविकार, सय, मूत्रच्छन्द्, शोथ, अतिसार,
सङ्गहणी, प्रवाह, प्रवाह (झरों), सयसत योनिरोग, लिङ्गवै-
धिल्य, अल्पशुक्रता और नष्टशुक्रता इनसबरोगोंको यह नष्ट-
करता है और स्त्रियोंका द्रावणकरता है । यद्यपि यह पाठ पञ्चम
पाठसे बहुत अशोभे मिलता है परन्तु द्रव्य और भावनाओंमें
बहुत अन्तरहोनेसे स्वतन्त्र रसवागया है ॥ २०६ ॥

२०७ पुष्परगरसायनम्

पुष्परगोद्भवं भस्म पलाधममितं शुभम् ।
तदर्द्धं पीतकं चङ्गं तदर्धं ताम्रभस्मकम् ॥ ५७६ ॥
ताम्रस्यार्द्धञ्च रजतं जातलपं तदर्द्धकम् ।
वज्रभस्म तदर्धञ्च सर्वतुल्यं मृताऽम्रकम् ॥ ८७७ ॥
तत्समं सूर्यकान्तञ्च मारितं बलिना सह ।
तुल्येन बलिना सार्द्धं दशवारं पुटेद्वज्जु ॥ ८७८ ॥
नीलाङ्गनाऽऽलताप्यानां पृथक्तानि पुटमि च ।
इति सिद्धमिदं प्रोक्तं पुष्परगरसायनम् ॥ ८७९ ॥

क्षयादि सर्वरोगघ्नं सुपुण्याधिहरं परम् ।
 सुदगुन्मार्तिशामनं पुत्रीयं घृष्टमुत्तमम् ॥ ८८० ॥
 शिष्यं गुन्महरं स्त्रीणां नानाव्याधिनिवृत्तम् ।
 वीपनं परमं प्रोक्तं कामलापाण्डुनाशनम् ॥
 बहुनाऽत्र विमुक्तेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ ८८१ ॥
 र. पू., रगायने ।

भाषा—योगसागरमीशम् २ तोले, पीतल और पद्मभस्म
 १-१ तोला, ताप्तभस्म १ मासो, रजसभस्म ३ मासो, सुवर्णभस्म
 १॥ माया, सुरगंधे आषी हीरेकीभस्म और इलायची बराबर
 अन्नभस्म तथा समगन्धदेकर मारक इष्यस्वरागकेपाथ पोटकर
 दस गजपुट देकर भस्म त्रियागुत्रा सूर्यरान्त अन्नरफी बराबर
 बालदेना । फिर शयबीजोंको मिलाकर सबही बराबर गन्धक
 देकर उगीतरह मारकरमे पोटकर १० गजपुटे । फिर नीला-
 धनभस्म, हरीताल और सोनामार्गी इनप्रत्येकको अलग २
 समभाग मिलाकर पूर्वत्र मदनकर १-१ गजपुट देनेमे यह
 पुस्तकालयायन सिद्धहुआ । इगदो बनाकर एकरमे भर रदनेदेना ।
 इसके बाद एकएक अपरा आषी आषी रसीकी मात्रा तप-
 शोभोचितानुमानके साथ देनेमे क्षय, डूग, सुदक्याधि, गुल्म,
 कण्ठ्यन्त्र, ननुगन्धत्व, रफगुल्म, कामला, पाण्डु, मन्दागि, इन
 सब रोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ पुष्याऽङ्गुसरसः

सूतं साऽद्रयिषं लोहं ध्योपञ्च यवशूकजम् ।
 मदेयेत्सुरसापह्निभृङ्गद्राघे द्विनप्रयम् ॥
 गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत स्योल्यादौ स्वाऽनुपानतः ॥ ८८२ ॥
 रसायनम्., मेदोतीगे ।

भाषा—पारद और अन्नभस्म, शुद्धबध्नाग, लोहभस्म,
 सौंठ, मिर्च, पीपल, यरगार सब समभाग लेकर गुल्मी, त्रिप्रह,
 भंगरा, इनके स्वस्वोमे ३-३ रोनु भाजना देकर १-१ रसीकी
 गोलियां बनाकर रसाजोड़े । इनमेसे १-१ गोली मेदोपुदि-
 प्रमृतिरोगोंमे अपने २ अनुपानकेसाथ देनेमे यह तत्तद्रोगोंको
 दूरकरताहै ॥ २०८ ॥

२०९ पूजापाकः (रतिवल्गुः) (प्रथमः)

पुत्रं दक्षिणदेशाजं दशपलान्मानं भृशं कर्तयेत्,
 तत्स्वियं जलयोगतो मृदुतरं संकुट्य चूर्णांकृतम् ।
 तच्चूर्णं पटशोधितं यसुगुणे गोशुद्धदुग्धे पचेत्,
 गव्याज्याञ्जलिंसंयुतेऽतिनिविडे दद्यात्तुलार्धां सिताम् ।
 पक्वं सञ्ज्वलनात्क्षितिं प्रतिनयेत्तस्मिन्पुनः प्रक्षिपेत्,
 दद्यात्तच्चदुदीर्यामि बहुला दग्नाऽऽद्वारतंहिताः ।
 पला नागबला बला सचपला जातीफलं लिङ्गिनी,
 जातीपत्रकपत्रपत्रकयुग्मं तथा त्वचासंयुतम् ॥ ८८३ ॥
 चिद्रया वीरण्यारिवारिद्वरा धारी घरी चानरी,
 द्राक्षालेशुरगोक्षुराय महती खर्जूरिका क्षीरिका ।

धान्याकं सकमेरकं समधुकं शृङ्गाटकं जीरकम्,
 पृथ्वीकाऽथ ययानिका वरटिका मांसीमिसी मेथिका ।
 कन्देष्वत्रविदारिकाथ मुशली गन्धर्गन्धा तथा,
 कचूरं करिकेसरं समरिचं चारस्य बीजं नयम् ।
 बीजं शालालिसममर्थं करिकणाबीजञ्चराजीवजम्,
 इयेतंचन्दनमत्र रत्नमपिच धीर्मंशुपुष्यैःसमम् ॥ ८८६ ॥
 सत्यंवेति पृथक् पृथक् पलमितं सञ्चूर्ण्यं तत्र क्षिपेत्,
 सूतं यद्भुजङ्गलोहगगनं सन्मार्जितं स्वेच्छया ।
 कस्तूरीयनसारचूर्णमपिच प्राप्तं तथा प्रक्षिपेत्,
 पश्चादस्य तु भौदकात्स्विरचयेद्विज्यप्रमाणानय ८८७
 तान्भुञ्जयाऽतिसदा यथाऽनलबलं भुञ्जीत नाऽम्लं रसं,
 पूर्वस्मिप्रक्षिते गते परिणतिं प्राप्तांजनाद्दक्षयेत् ।
 नित्यं धीरतियद्गुणाऽऽऽत्यक्तमिमं यः पूजापाकं भुजेत्,
 स स्याद्वीर्ययुक्तिवृद्धमदग्नो याजीव शकौ रतौ ८८८
 दीनाऽऽमिर्बलयान्बलोविहरते हृष्टः सुपुष्टः सदा,
 धृष्टो योऽपियुयेव सोऽपिश्चिरः पूर्णन्दुवत्सुन्दरः ।
 पतस्मिप्रतिवल्गुमे यद्रिपुनः सन्धक् सुरासानिका,
 धत्तस्य च धीजमर्ककरमः पाथोधिशांपस्तया ८८९ ॥
 सन्माञ्जुकलकं तथा रसफलं त्यक् चोऽपि निक्षिप्यते,
 चूर्णांऽर्द्धां विजया तथा सहि भयैत्कामेश्वरो भौदकः
 यो. र., भा. प्र., वृ. यो. त, र. कि., पा. व., यो. म.,
 दो., बाजीकरणे । यो. म. कामेश्वरोदकति नाम । रतिवल्गुमे
 विश्वस्वनामधित्यया प्रेशेगन्महाकामेश्वर ॥

भाषा—चिकनीगुपारी १० पल लेकर सरोतेते बारीक
 टुकड़ेकर दोलायन्त्र बनाय पानीकी भाषणे स्वेदनकरे । जब
 एकदम कोमलहोजाय तब कूटकर कपडछान चूर्णकरले । इस-
 चूर्णको अठगुने मायकेदुग्धमे (द्रवहोनेकेसाथ १६ गुनामी
 लेसफे में) पकावे । अग्निमन्दरग्ये और धीरे २ बलतारहे,
 बड़ाहीके पेटमें न लगनेपावे । मावा होजानेपर आपणेर धी
 बालकर त्वचमूने । अन्धीतरह सिकजानेपर ५० पल शकरकी
 एकतार(चाखनी) होनेपर मिलादे और बलातारहे । दोपारी
 चारानी होनेपर अग्निपरले उतारकर छोटीइलायची, नागबला,
 खरोटी, पीपल, जायफल, शिवलिङ्गिके बीज, जावित्री, पत्र,
 तालीसपत्र, तज, सौंठ, स्या, सुगन्धबला, नागस्त्रोया, त्रिफल,
 बंगलोचन, शतावर, छिलवेरहित बेवाचके बीज, बीजरहित
 द्राक्ष, तालमशाना, गोपरा, छुहारा, खिरनी, धनियां, कसेरु,
 सुकहटी, सिंयाड़ा, जीरा, बड़ीइलायची, देसी अजवाइन,
 कीडीभस्म, जयमांसी, सोंक, मेथी, विदारीकन्द, स्याह बसफेद
 सुमली, असगन्ध, कचूर, नागकेसर, सफेद मरिच, चित्तौजी,
 सेमलके बीज, गजरीपल, कमलगुठा, सफेद तथा लालचन्दन
 और लख इनना बारीकचूर्ण १-१ पल, पारा, बड़, नाग, लोह
 और अन्नक इनकीभस्में १-१ कपसे २-२ कपतक, कचूरी
 २ कप, कपूर १ कप मिलाकर एकएक पलके लू बनाकर
 रखछोड़े । इनमेसे अमिबल देखकर आधा अथवा एक लूह

खाकर ऊपरसे दूधपीवे । पचजानेपर पध्यभोजनकरे । इसके सेवनसे वीर्यकीवृद्धि, वाजीकरण, अमिक्री दीप्ति, बल, पुष्टि इनसबको प्राप्तहोकर दीर्घायुको प्राप्त होताहै । इन योगमें खुरा सानी अजवाइन, शुद्ध धतूरेके बीज, अजलमरा, समुद्रशोष, माजुफल, खसखस और तज १-१ पल और सबसे आधी मुनीहुई भाग डालनेसे यह महाकामेश्वरमोदक कहलाताहै २०९

२१० पूरुपाकः (वृहत्) (द्वितीयः)

पाच्यं पूरुजो दशाऽध्रममलं मार्दवं कटाहेऽग्निना,
स्विन्नश्चाऽऽशुणे पयस्यपि घृतप्रस्याऽद्धकैऽस्मिन्घने ।
जातीकोपफले च पद्मदुशटी द्राक्षा चरा वानरी,
चातुर्जाततुगाऽव्दधान्यमुसलीदीप्याजयष्टीधुरम् ॥
अथवा शीतवलात्रयं कारिकणा मांसां वरां मोधिका,
शृङ्गादं मिश्रिजीरवारिविजया गोक्षूररज्जूरकम्
धात्री शाल्मलि कोलचोरकनरुं कुम्भत्रिनेत्राऽध्रक,
पृथ्वीकाऽभयवद्देवकुसुमं दद्यात्पृथक्कार्पिकम् ८९१
पञ्चाशत्पलखण्डपाकलितः स्यात्पूरुपाकः पृथु-
वृष्यः पाण्डुराहः प्रमेहदलनो रेतो विवृद्धिप्रदः ।
पित्ताऽस्त्रे प्रदरे क्षये करपदे दाहेऽम्लपित्तं वपु-
दाहे पाण्डुगदे हुताशनहतापैतेषु शस्तो मतः ॥ ८९२ ॥

४ यो त, प्रमेह ।

भाषा—१० पल चिन्नी सुगरीका वारीक चूर्णकर मिथीवी कडाहीमें अठगुना गायका दूध डालकर पकावे । मावा होनेपर आपसेर भी डालकर मूलले फिर ५० पल शकरकी दोताखी चादानी मिलाकर जायफल, जाविनी, पत्रकटु (सोंठ, मिर्च, पीपल, चन्प, चित्रक, पिपलामूल), कचूर, द्राक्ष, त्रिफला, छिलके रहित केवाचने बीज, तज, पत्रज, इलायची, वसलोचन, नागरमोथा, धनिया, स्याह और सफेदमुसली, देशी व खुरासानी अजवाइन, अजमोद, मुल्हठी, तालमलाना, असगन्ध, शुद्ध कपूर, बला, नागबला, अतिरला (गुलसिकरी), गन्धीपल, जटामासी, शतावर, मेथी, सिंघाड़े, सोंक, जीरा, सुगन्धवाला, भाग, गोखरू, लुहारे, आवले, सेमल का मुसला, बेरकी मन्ना, चौरक (राजवाइन), शुद्धधतूरेके बीज, दन्ती, सफेद निसो-तरी जड़कीछाल, द्राक्ष, अश्रकमस, बडी इलायची, खल, चक्रमस, लौंग येसव १-१ तोला लेकर वारीक चूर्णकर मिलाकर रखदे । इसमेंसे, २-२ तोले खाकर ऊपरसे दूध पीनेसे पण्डत्व, धातुक्षीणता, प्रमेह रक्तपित्त, प्रदर, क्षय, हायपैरौकीजलन, अम्लपित्त, तमाम शरीरका दाह, पाण्डुरोग और मन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ २१० ॥

२११ पूर्णकलावटी

रसं गन्धं घनं लौहं धातकीपुष्पविद्वकम् ।
विषं कुटजबीजञ्च पाठाजीरकधान्यरुम् ॥ ८९३ ॥
रसाजन दङ्गुणञ्च शिलाजतु पलं तथा ।
पलं जातीफलं मुस्ता प्रत्येकं तोलकत्रयम् ॥ ८९४ ॥

भेकपर्णी पञ्चमूली बलाकञ्चट्टदाडिमम् ।
शृङ्गाट केशरं जम्बू दधिमस्तु जयन्तिका ॥ ८९५ ॥
केशराजो भृङ्गराजः प्रत्येकं तोलकृद्दयम् ।
दिग्भावा वटिका कार्या तत्रेण परिपेविता ॥ ८९६ ॥
इयं पूर्णकला नाम ग्रहणीगदनाशिनी ।
शूलज्जी दाहशमनी वहिदा ज्वरनाशिनी ॥
भ्रमच्छदिच्छेदकरी सङ्गहग्रहणीजयेत् ॥ ८९७ ॥
र. स, र. क., ग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अश्रक और लोहमस, धावड़ीके फूल, बेलगिरी, शुद्धबलाना, इन्द्रजव, पाठा, जीरा, धनिया, रसीत, मुनासुहागा येसव ३-३ तोले, शिलाजीत, जायफल, नागमोथा ये प्रत्येक १-१ पल, काङ्गड़े, लघुपञ्चमूल (शालपर्णी, पृथिपर्णी, भटकटैया, वनभाटा और गोखरू), बला, चौलाईकी जड़, अनारकाछिलका, सिंघाड़े, केशर, जामुनकी छाल, दहीका पानी, जैत, स्याह और सफेद भगरा, येप्रत्येक २-२ तोले लेकर सबका वारीक चूर्णकर पारे गन्धकनी नीलचूर्ण कजलीमें मिलाकर छाछसे ४ पहर घोटकर २-२ मादोकी गोलिया बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली छाउकेसाथ लेनेसे ग्रहणी, शूल, दाह, मन्दाग्नि, ज्वर, भ्रम, वमन येसव नष्टहोते है ॥ २११ ॥

२१२ पूर्णचन्द्रोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धञ्च तालकं लौहं गगनञ्च पलंपलम् ।
कर्पूरं पारदं गन्धं प्रत्येकं वटकोन्मितम् ॥ ८९८ ॥
जातीकोपो मुरा पत्रं शटी तालीसकेशरम् ।
व्योषं चोचं कणामूलं लवङ्गं पित्तुसन्मितम् ॥ ८९९ ॥
भक्षयेत्प्रातरुत्थाय गुददेवद्विजाचकं ।
नानारूपमतीसारं ग्रहणीं सर्वैरुपिणीम् ॥ ९०० ॥
अम्लपित्तं तथा शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
रसायनवरश्चाऽयं वाजीकरण उत्तमः ॥ ९०१ ॥
र. स, र. च, अतिसारे ।

भाषा—रसमाणिक्य, लोह और अश्रकमस १-१ पल, शुद्धकपूर, पारा और गन्धक १-१ बर्ष, जायफल, जाविनी, सुरामासी, पत्रज, कचूर, तालीसपत्र, केशर, सोंठ, मिर्च, पीपल, तज, पिपलामूल, लौंग, ये प्रत्येक एकबर्ष लेकर सबका वारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखडोडे । इसमेंसे ३-३ रसी उचि-ताऽपुनानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारका अतिसार, सङ्गहणी, अम्लपित्त, शूल, परिणामशूल, ये सब नष्टहोतेहै । यह रसायनहै और उत्तम वाजीकरणहै ॥ २१२ ॥

२१३ पूर्णचन्द्रोदयरसः (द्वितीयः)

गन्धताम्ररसटङ्गुणनाम
तारकाञ्जनसुमाक्षिकयुग्मम् ।
कान्तविद्रुमसुचक्रमौकिरु
तीक्ष्णलोहसृगनाभिरघ्नकम् ॥ ९०२ ॥

कुङ्कुमत्तारजचन्दनचन्द्र-
मालतीपुष्पसुमद्रितयामम् ।

बह्मनामरसयोजितयुक्ति-
रात्रिकस्वरसपानविशेषम् ॥ ९०३ ॥

श्वासक्रासमथपीनसरोगं
मेहकुष्ठधिराऽऽमयनाशम् ।

राजयश्महरदेहसुवर्ण-
दीप्तिकारकमिदं हि सुवृष्यम् ॥ ९०४ ॥

पूर्णचन्द्रोदयो नाम रसः सर्वाधिसिद्धिदः ।

युक्त्या सुयोजितः पुंसां नानाऽऽतङ्कविनाशनः ॥ ९०५ ॥

रसायन स , वै. चि. (ल) सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, पारा और सुहागा, ताम्र, नाग, रजत, सुवर्ण, सोनामाखी, कासामाखी, वान्तलोह, मृगा, बह्म, मोती, फोलाद, अभ्रक इनसप्तमीभस्म, कस्तूरी, केसर, लक्ष्मामाखी, सपेदचन्दन, शुद्धकपूर येसब समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्ण बज्जलीमें मिलाकर मालतीपुष्पससे एक पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिएं बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकगैरह उचित्ताऽनुपानकेसाथ लेनेसे श्वास, कास, पीनस, प्रमेह, दुग्ध, रक्तविकार, राजयश्म, धातुशीघ्रता इनसबको नष्टकर शरीरमें सुवर्णके सदृश कान्तिकी पैदा करताहै । अनुपानादि युक्तिविशेषसे यदि इसका प्रयोग क्रियाजायतो यह नानाप्रकारके रोगोंको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ पूर्णचन्द्रोदयसिन्दूरम्

तुल्यं तुल्यं रसं गन्ध खल्वगम्ये विनिःक्षिपेत् ।
कपित्थमूलसारेण मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ ९०६ ॥
यटिकां छायाया शुष्कां भाण्डमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
काचकूप्यां विनिक्षिप्य घालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ९०७ ॥
दीप्ताऽग्नौ च द्विपञ्चामं स्वाङ्गरीतं समुद्धरेत् ।
कपित्थमूलसारेण त्रिदिनं मर्दयेत्कमात् ॥ ९०८ ॥
विल्वमूलकपायेण मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः ।
चानुजातककपूरलवङ्गकुसुमान्वितम् ॥ ९०९ ॥
सर्वै रससमञ्जैव मेलयित्वाऽथ चूर्णकम् ।
लाजचूर्णं सितामिश्रं मधुना सह सेवयेत् ॥ ९१० ॥
बहुद्वयमितः सूतो वमनस्त्वग्मनस्तथा ।
कासादिपञ्चछर्दानामरुचेर्नाशकः परः ॥ ९११ ॥
हृद्रोगं स्वरभङ्गञ्च मन्दाशिक्षं निवारयेत् ।
पूर्णचन्द्रोदयो नाम निर्मितः शूलपाणिना ॥ ९१२ ॥
व रा., वै. चि. , छर्द्याम् ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण बज्जलीकर वैयकी जड़की छालक रससे ३ रोज मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया बनाकर सुखाले और ६-७ कपडमिमीकीहुई आतशी शीशमें भरके बालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी तेज अग्निदेवे । स्वाङ्गरीतल होनेपर निकालकर कैथकीजडकी छाल

और बेलकी जड़ इनके स्वरस अथवा हाथोंसे ३-३ रोज मर्दनकर तेज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, शुद्धकपूर, लौंग इनसबका वारीक चूर्णकर रसकी बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी मात्रा लाजचूर्ण, मिश्री और मजुकेसाथ सेवन करनेसे वमन, कास, सब प्रकारकी छर्दि, अरिचि, हृद्रोग, स्वरभङ्ग, मन्दाग्नि इन सब रोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २१४ ॥

२१५ पूर्णचन्द्रोत्तरः (बृहत्) (प्रथमः)

द्विकर्षं शुद्धसूतस्य गन्धकञ्च द्विकार्षिकम् ।
लोहभस्म पलञ्चाऽऽत्रं जारितञ्च पलांशिकम् ॥ ९१३ ॥
द्वितोलं रजतञ्चैव बह्मभस्म द्विकार्षिकम् ।
सुवर्णं तोलकञ्चैव ताम्रं कांस्यञ्च तत्समम् ॥ ९१४ ॥
जातीफलञ्चैन्द्रपुष्पमेलाभुङ्क्ते जौरकम् ।
कर्पूरं वनिता मुस्तं कर्षिकर्षं पृथक् पृथक् ॥ ९१५ ॥
सर्वं खल्वतले क्षिप्या कन्यारसविमर्दितम् ।
भाययित्वा घरातोयैः केवुकानां रसेन च ॥ ९१६ ॥
परण्डपैत्रैरावेद्य धान्ये रात्रिदिनोपितम् ।
उद्धृत्य मर्दयित्वा तु वटिकां चणसम्भिताम् ॥ ९१७ ॥
खाद्ये च पर्णखण्डेन संयुक्तां व्याधिनाशिनीम् ।
सर्वव्याधिविनाशाय काशीनाथेन भाषितः ॥ ९१८ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम सर्वरोगेषु योजयेत् ।
बल्यो रसायनो घृष्यो धात्रीकरण उत्तमः ॥ ९१९ ॥
अयमष्टौलिकां हन्ति कासश्वासमरोचकम् ।
आमदाहं कटीशूलं हृच्छूलं पित्तशूलकम् ॥ ९२० ॥
अग्निमान्द्यमजीर्णञ्च प्रहर्णां चिरजामपि ।
आमवातमम्लपित्तं भगन्दरमपि द्रुतम् ॥ ९२१ ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च प्रमेहं वातशोणितम् ।
नातः परतरः श्रेष्ठोविद्यते वाजिकर्मणि ॥ ९२२ ॥
रसस्याऽस्य प्रसादेन नरो भवति निर्गदः ।
मेधाञ्च लभते वाम्नी तुष्टिपुष्टिसन्वितः ॥ ९२३ ॥
मदनस्य समं कार्ति मदनस्य समं बलम् ।
गीयते मद्नेत्रैव मदनस्य समं वपुः ॥ ९२४ ॥
प्रियाञ्च मदनप्रायाः पश्यन्ति मदनाऽऽकुलम् ।
स्त्रीणां तथाऽनपत्यानां दुर्वलानाञ्च देहिनाम् ॥ ९२५ ॥
क्षीणानामल्पशुकाणां घृद्धानां वातरेतसाम् ।
ओजस्तेजस्वरूपाऽयं स्त्रीषु कामवियर्धनः ॥ ९२६ ॥
अभ्यासेन निहन्ति मृत्युपलितं सर्वाभयध्वंसकः,
घृद्धानां मदनोदयोदयकरः प्रौढाङ्गनासङ्गम् ।
नित्यानन्दकरः सुखाऽतिसुखदो भूपैः सदा सेव्यते,
दृष्टः सिद्धफलो रसायनवरः श्रीपूर्णचन्द्रो रसः ९२७
र स , भै र , र र , ध , र , सु , र च , व रा , वाजीवरणे ।

टि०—केवुकानिशब्दो वनाऽन्धकारे पतितोऽस्ति, कश्चिद्वालीशकवद मन्थने कटुकमित्यादीत्यादि भ्रमचनकानि वचनानि लिखितवन्त । परन्तु कटुकनामसु चालीनामसु च केवुकेनि नाम न दृश्यतेऽत एतेरोगे न दृश्यन्तनामामादयन्ति । भाष्यप्रकाशने वनेषु क्लेशकान्तात्पूर्वं द्रव्यतो

विशयने चत्ववित्पदायोऽयम् । शुण्डद्वया स्वल्पकमलकारणयो जलवहणी
वर्तते यत्फल मुकुलाकार तदन्तर्गतेति सममन्दशानि असंरयेपानि वीथानि
परिपूरितानि भवन्ति तानिचाऽऽस्यदे मधुराप्यति स्थिपानि च भवन्ति ।
अन एव गुनैरेदो तत्प्रधानां धीतेलनि नाम प्रसिद्धम् । तेषु वस्तु
शरीतव्यमित्यस्माक सम्मति ।

भापा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ तोले, लोह और
अन्नकमस्य ४-४ तोले, चादी और वज्र भस्म दो २ तोले,
सुवर्ण, ताम्र, कास्य इनसमरी भस्में, जायफल, लौंग, इला-
यची, भगरा, जीरा, कपूर, वनिता (त्रियङ्गु अथवा अनन्त-
मूल), नागरमोया ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर भारीक चूर्णकर
पारमन्धकनी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर धीकृआर, निफला
और केवुर (धीतेला गु०) के रस अथवा क्वाथोंसे १-१ रोज
मर्दनकर एण्डपत्रोंमें लपेटकर धान्यराशिमें रखदे । चौथेरोज
निकालकर एण्डपत्रोंको फेंकद और गोलेको मर्दनकर चने बरा-
बर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानके
साथ खानेसे अष्टौलिका, वास, श्वास, अहचि, आमशुल, कटि-
शुल, हृच्छुल, पित्तशुल, अमिमान्य, अनीर्ण, पुरानी सङ्गहणी,
आमवात, अम्लपित्त, भगन्दर, कामला, पाण्डुरोग, प्रमेह,
वातरक इत्यादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै । यह उत्तमट्टय,
वाजीकरण और रसायनहै कन्ध्यास्त्रियोंको पुन पैदा करताहै ।
दुबैल, क्षीण, अल्पशुक्र, वातशुक्र इनसबको दूरकरताहै । रानेसे
बहुतही शीघ्र अपना प्रभाव दिखाताहै इसलिय यह राजा-
लोगोंके सेवन करने योग्यहै ॥ २१५ ॥

२१६ पूर्णचन्द्रोरसः (द्वितीय)

मृतसूताऽन्नलोहं वै शिलाजतुविडङ्गकम् ।
ताप्यं क्षौद्रघृतं तुल्यमेनीकृत्य विमर्दयेत् ॥ २२८ ॥
पूर्णचन्द्ररसो नाम्ना मायिकं भक्षयेत्सदा ।
शाल्मलीपुष्पचूर्णञ्च क्षौद्रैः कर्षं पिबेदनु ॥ २२९ ॥
दुबैलो बलमाप्नोति मासैकेन यथा शशी ।
कृशानां बृहणं देयं सर्वं पानाद्यमेपजम् ॥
निद्रा चैव दिवा रात्रौ छागमांसाशनं तथा ॥ २३० ॥
र र स, र सं, र सु, र क, भै र, रसायनस, र च,
चि क, व रा, र र दी, र बी, ना वि, रसपारिजात, र क
ल (ना) रसायनाऽधिकरि ।

भापा—पारा, अन्नक, लोह इनरीभस्में, शिलाजीत,
विडङ्ग, शुद्धसोनामाषी, मधु और धी सब सयभाग लेकर मर्द
नकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा खाकर सेमलके फूलोंका
चूर्ण १ तोला मधुके साथ चाटनेसे एक महीने में जिसतरह
चन्द्रमा बरताहै उसीतरह दुबैल आदमी बलवान् होताताहै ।
कृश आदमियोंके लिये बृहण अप्रपान देना और चकरैका मास
खानको दना, रातदिन सोनेकी छुपी रखनी चाहिये ॥ २१६ ॥

२१७ पूर्णचन्द्रोरसः (तृतीयः)

सूत गन्धञ्चाऽभ्यगन्ध्यां शुद्धर्चां
यष्टीतौर्यं मर्दयेदेकचक्षम् ।

शुद्ध शङ्खं मौक्तिकं लोहकिट्टं
भस्मीभूतं सूततुल्यञ्च दद्यात् ॥ २३१ ॥

भूकृष्णाम्ण्डे चार्सरं तद्विमर्धं
गोलं कृत्वा भूधरे तं पुट्टेत्तु ।

चूर्णं कृत्वा नागचह्नीरसेन
दद्यादेव मर्दयित्वेकयामम् ॥ २३२ ॥

मध्याज्याभ्यां पूर्णचन्द्रो रसेन्द्रः
पुष्टिं वीर्यं दीपनञ्चैव कुर्यात् ।

प्रायो योज्यः पित्तरोगे ग्रहण्या-
मशौरोगे पित्तजे शाल्युक्तः ॥ २३३ ॥

स्त्रीणां रोगे शाल्मलीनीरयुक्तो
शैलेय वा शर्षपातुल्यभागम् ।

शुद्धं गन्धं वाजिगन्धाञ्च यष्टीं
पत्तवा दुग्धे तच्च कादर्यं ददीत ॥ २३४ ॥

एवञ्चाऽऽज्य पाचयित्वा प्रदद्या-
द्यथा यष्टी मागधी चाऽभ्यगन्धा ।

मध्याज्याभ्यां शाल्मलीसत्त्वमुक्ताः
शम्भुकै वा भर्जितैराज्यमिष्टैः ॥ २३५ ॥

र दी, र चि, र सु, ध, यो म, रसायनस, र क, र
र, र र स, र च, नि र, रं चि, र का, वाजीकरणे ।

भापा—शुद्ध पारा और गन्धकनी नीलवर्णकज्जली, अस
गन्ध और गिलोय समभाग लेकर चूर्णकर सुलहठीके वाथसे
१ रोज मर्दनकर सख्वा, मोती और मण्डूकी भस्म, प्रत्येक
पाके बराबर ढालकर मुईकोड्याके रससे एकदिन मर्दनकर
गोला बनाय भूधरयन्त्रमें पुट्टदेव । स्वाज्ञशीतल होनेपर निका-
लकर चूर्णकर पानके रससे एकरोज मर्दनकर भूधरयन्त्रमें पत्रावे
फिर एक पहर मधु और धीमें मर्दनकर १ मासेसे २ मासेतककी
मात्रा देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको वडाताहै अतिक्रो दीप्त
करताहै । पित्तके रोग, ग्रहणी, पित्तज बवासीर इन सबको नष्ट
करताहै । प्राय पित्तप्रधान रोगमें एडुआ (मुञ्जन्) के
साथ देना । स्त्रीरोगोंमें सेमलकी छालने रखके साथ अथवा
पापाणभेद और शकर समभागके साथ देना । इस आदमियोंको
यह रस देनेके बाद शुद्ध गन्धक, असगन्ध, मुलहठी ये आधे
आधे तोले दूधमें पकाकर पिलाना अथवा दूधमें धी पकाकर
पिलाना अथवा मुलहठी, पीपल, कर्तगन्ध समभागका चूर्ण १
तोला मधु और धीके साथ ऊपरसे चपाना । अथवा सेमलका
मुसला, गिलोयसल्ल और मोती ३ माश दूधके साथ देना
अथवा धौधेके कीड़ेको धीमें मूनकर धी सहित पिलाना ॥ २१७ ॥

२१८ पूर्णचन्द्रोरसः (चतुर्थः)

हैमी भूतिः सूतभूत्या समाना
तद्वज्जाला गन्धकं मौक्तिकञ्च ।
घसैकं तं शृङ्गवेराऽभितोयै-
मर्धःशोष्यो वल्लभदृष्ट्यां प्रवेष्ट्य ॥ २३६ ॥

भाण्डके सलवणके शिषेच त-
द्रोमयेन परिवेष्ट्य भाजनम् ।

शोषयेच्च पुटयेत्तृणाऽग्निना

पूर्णचन्द्र इति जायते रसः ॥ ९३७ ॥

यश्माणं जयति प्रसदा चपलाशौद्राऽन्वितः शलजुतः,
सामुद्रेण ससर्पिणा ससितया धात्याऽम्बुपित्ताऽपहः।
कुण्डल्यम्बुयुतो जयत्यपि महातापश्च पिच्छोद्भवं,
शालमल्पम्बुगुह्यचिकाम्बुसहितः पाण्डुं सितार्संयुतः॥
पुष्टिदृष्टिवलवीर्यवर्धनो

जायतेऽखिलभदाऽपहारकः ।

स्त्रीगदापहरण शिशुरक्षा-

कारकः स्वगद्जानुपानकैः ॥ ९३९ ॥

र, र श, र प्र सु, र दी, र च, बाजीकरणे । रसचण्डा-
शुरसप्रकाशमुभाकरयो विप मौक्तिकञ्च न दृश्यते तत्पाने नागो
दृश्यते, भावनाया केवल चित्रेण मर्दनम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा इनकी भस्मे, शुद्धवटनाम और
गन्धक, मोतीभस्म सब समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण
कजलीमें मिलाकर अदरक और चित्रमूलके रस अथवा धापसे
१-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय सुचाकर ४ तह कपडा लपे
कर ऊपरसे १-२ ऋद्धमिमी करके घुब सुखाले फिर लवणके
भीतर बन्दकर गोबरसे बर्तनके मुहको बन्दकरके सुखाले और
निर्वात स्थानमें इतने घासकी अग्नि दे कि वह नमक गरम
होकर कपडा जलजाय । स्वास्त्रशीतल होनेपर निकालकर रस-
छोड़े । इसमेंसे १ अथवा २ रत्तीकी मात्रा पीपल और मधुके
साथ देनेसे यह यश्माणो दूर करताहै । शैन्धव, धी और शरके
साथ देनेसे शुक्रको मिटाता है, आनलेके रससे अम्बुपित्तको
दूर करताहै । गिलोयके छिद्र अथवा धापके साथ देनेसे पित्त
बनित घोर दाहको शान्त करताहै । सेमलकी छाल और
गिलोयके बाटेके साथ देनेसे पाण्डुको दूर करताहै । शकरके
साथ देनेसे पुष्टि, नेत्रज्योति, बल, वीर्य इनको बढ़ताहै ।
अपने २ अनुपानके साथ देनेसे स्त्री और बालकोंके रोगोंको
दूर करताहै ॥ २१८ ॥

२१९ पूर्णचन्द्रोरसः (पञ्चमः)

चपला पर्वटीयुक्ता जम्बीररसमर्दिता ।
तयो द्विगुणमामिष्ठ्य शुक्तिचूर्णं विचक्षणैः ॥९४०॥
कुम्भुटीपुटपाकेन तद्रसं बहुमात्रकम् ।
प्रयोगो ज्वरनाशाय पूर्णचन्द्रायमीरितः ॥ ९४१ ॥
र क यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—पीपल और रसपर्वटी दोनों समभाग लेकर कजली
बनाय जम्बीरीके रससे मर्दनकर दोनोंसे दूना मोतीकी सीपका
चूना मिलाकर धरलकर गोला बनाय कुम्भुटीपुटसे पाच
करके ३ रत्तीकी मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे यह ज्वरकी
दूरकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० पूर्णाऽध्रकरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धमन्नकञ्च मनःशिलाम् ।
चूर्णितं वरुणद्रावै मर्दयेद्द्विचसद्वयम् ॥ ९४२ ॥
काचकूप्यां निवेद्याऽथ वालुकायन्त्रके पचेत् ।
पञ्चामान्ते समुद्धृत्य सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं शीतपैत्यनिराकरम् ॥ ९४३ ॥
वै चि , व रा , पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक बराबरलेकर नीलवर्णकज
लीकरले । फिर अन्नभस्म और शुद्ध भैनसिल बराबर २
मिलाकर वरुणके अन्नचरसे दोदिन मर्दनकर गोला बनाय
आतशी शीशीमें रखकर बालुकायन्त्रमें रखके और ६ पहरकी
अग्नि देकर स्वास्त्रशीतल होनेपर निकालले । इसकी २ रत्तीकी
मात्रा उचितानुपानके साथ देनेसे शीतपित्त निश्च
होताहै ॥ २२० ॥

२२१ पूर्णप्रतिज्ञरसः

सूतं गन्धकतालकं मणिशिला शुद्धं मृतं हिङ्गुलं,
भागैकं निखिलं समांशरसकं खरेण घिमिर्घाऽम्भसा ।
निर्गुण्डोसुरसाम्भसाऽऽर्द्रकरसैर्द्रैर्द्रिगुञ्जोन्मितं,
तारुण्याऽखिलतापजे च विषमे जीर्णज्वरे धानुगे ॥
दोषे चैव हि सन्निपातबहुले सामे निरामे सति
हन्वाद्यै घटिकाऽर्द्धकेन सकलान् पूर्णप्रतिज्ञोरसः ९४४
रसायनसः, रसायन, ज्वराऽधिकारे । रसायने वृद्ध-
वसन्तमालतीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत अथवा
भैनसिल, ताम्र और शिगरिकभस्म १-१ भाग लेकर सनकी
बराबर शुद्ध खरिया डालकर पानीसे धोकर २-२ रत्तीकी
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे २-२ गोली निर्गुण्डो,
तुलसी और अदरकके रसोंके साथ देनेसे तरुणज्वर, विषम,
जीर्ण, धानुग, सन्निपात, साम और निराम ज्वर इन सबको यह
नष्टकरताहै ॥ २२१ ॥

२२२ पूर्णन्दुरसः (प्रथमः)

शालमल्युत्थेर्द्रैर्भैर्पक्षैकं शुद्धपारदम् ।
यामद्वयं पचेच्चाऽपि वक्षे बद्धाऽथ मर्दयेत् ॥ ९४५ ॥
दिनेकं शालमलीद्रावै मर्दयित्वा वटीकृतम् ।
घेष्टयेन्नागवल्ल्याऽथ निशिपेत्काचभाजने ॥ ९४६ ॥
भाजनं शात्मलीद्रावै पूर्णं यामद्वयं पचेत् ।
वालुकायन्त्रमध्यस्थं द्वये जीर्णे समुद्धरेत् ॥ ९४७ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेत्प्रातः नागवल्लीदलान्तरे ।
मुसलीं ससितार्ं क्षीरं पलेकं पाययेदनु ॥ ९४८ ॥
रसः पूर्णन्दुनामाऽयं सम्मग्वीर्यकरो भवेत् ।
कामिनीनां सहस्रैकं नर कामयते ध्रुवम् ॥ ९४९ ॥
यो र, वृ यो त, र म, ध, र कौ, रसायनस, र र,
बाजीकरणे ।

भापा—शुद्धपारेको सेमलकीछालके पानीसे १५ दिन तक मर्दनकर गौली बनाय बलमें बाधनर २ पहर सेमलकी छालके-रसमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकरे । फिर सेमलके रससे मर्दनकर गौलीबनाय पानमें लपेटनर आतशी शीशीमें रखकर सेमलका-रस भरदेवे और बाळकायन्त्रमें रत्नर दोपहत्तरक पकावे, द्रव-जीर्ण होनेपर निकालले । इसमेंसे २ रत्ती पानके रसके साथ देकर मुशली, शकर और दूध १ पल ऊपरसे पिलावे । इसके सेवनसे धीर्य स्थिर होताहै और बहुतसी छिर्योंके साथ रमण करसक्ताहै ॥ २२२ ॥

२२३ पूर्णन्दुरसः (द्वितीयः)

क्षारैश्च लघुणै र्वहिराजिकाभ्याञ्च काञ्जिकम् ।
दत्त्वा दत्त्वा दिनं सम्यक् पारदं मर्दयेत्ततः ॥ ९५० ॥
क्षालयेत्काञ्जिकैरेव मर्दयेत्कटुकैरपि ।
क्षालयेत् ऋक्षणसम्पिष्टराजिकाविपहिङ्गुजाम् ॥ ९५१ ॥
मूपां कृत्या तदन्तःस्थं सूतं तं वस्त्रवेष्टितम् ।
स्वेदयेत्काञ्जिके दोलायन्त्रे तं क्षालयेत्पुनः ॥ ९५२ ॥
गुल्हटाऽनुमार्गेण शिवादिद्रुतपूजनः ।
अङ्घ्रिणा तारपत्रेण रसपिष्टि विधाय च ॥ ९५३ ॥
तां पिष्टिं स्वेदयेद्रम्भागमं स्थलपेन वह्निना ।
ततस्तां स्वेदयेदेतै दोलायन्त्रगतां पुनः ॥ ९५४ ॥
गुडचीदुग्धशम्बूकच्छागरकैश्च गोक्षुरैः ।
रम्भाफलवरीहस्तिपिपलीकोकिलाक्षकैः ॥ ९५५ ॥
धन्तुरपत्रमूलोत्थैः कापैः खात्सवल्कलैः ।
अहिफेनजयानीरैः काथैरग्निसमुद्भवैः ॥ ९५६ ॥
अपामार्गद्वयकाथै र्वांश्यालकभैरपरि ।
गोक्षुरीतिलपर्णां च निर्गुण्डी कारुमाचिका ॥ ९५७ ॥
राजिका छिक्रिका गुड्या खुरासानी तदुद्भवैः ।
अश्वगिःरिभृङ्गमण्डूकीजयन्तीमुनिवासकैः ॥ ९५८ ॥
नागार्जुनीकासमर्दाव्राहीतुलसिकारसैः ।
दशमूलभैः काथैरर्कमूलदलोद्भवैः ॥ ९५९ ॥
पञ्चकोलभयैः काथैस्तथा ज्योतिष्मतीभयैः ।
अर्कपुष्पीशहूपुष्पीधातकीभाङ्गिकोद्भवैः ॥ ९६० ॥
मातुलोद्भवतैलेन मर्दनं सप्तवासराम् ।
दडेन वाससा गोलं बद्धा सम्पीडयेद् दृढम् ॥ ९६१ ॥
गतन्नेहं विमुच्याऽथ पूर्ववत्स्वेदनं चरेत् ।
पुरन्दरभयैः पुष्यैः सोपणै र्जातिजातकैः ॥ ९६२ ॥
चातुर्जातै र्जातिपत्रैरकारकरभैरपरि ।
वानरीशकरामायैः पूर्णन्दुः स्याद्रसोत्तमः ॥ ९६३ ॥
कार्पासमज्जया सेव्या बह्लोऽस्य सितया सह ।
यस्य सन्ति ग्रहे लक्षं पीनोन्मत्तपयोधराः ॥ ९६४ ॥
रसायनं, र र दी., र क, बाजीकरणे ।

भापा—शार, लण, चित्रक, राई और काजी डालकर पारेको मर्दनकर काञ्जिसे धोकर साफ करले फिर त्रिबद्धसे

मर्दनकर धोडाले । इसके बाद खून बारीक पिमीहुईराई, बज नाग और होंगकी मूपांमें रत्नर वस्त्रसे वेष्टित करके काञ्जिकपूर्ण दोलायन्त्रमें ४ पहर स्वेदनकर साफकरले फिर सम्प्रदाय विधिसे शिमादिनोंका पूजनकर पारेसे चतुर्थांश चादीके बर्क डालकर पिष्टी बनाले फिर इस पिष्टीको केलेकेरन्दमें रत्नर बहुतमन्द अग्निसे स्वेदन करे अर्थात् बहुत थोड़ी अग्नि देवे जिसमें कि केलेका बन्द धुनजाय पर जले नहीं । फिर गिलोय, दूध, सखलेके कीडोंका मास और बकरेका रक्त, गोरारू, बेलेमा फल, शता-वरी, गजपीपल, तालमरुपाभा, धतूरेके पत्ते और जड़, पोस्त, अफीम, भाग, चित्रक, दोनों अपामार्ग, खरेटी, गोकर्ण, हुरहुरके पत्ते, निर्गुण्डी, मकोय, राई, नखछिकनी, सफेदगुड्या, खुरासानी अजवाइन, कनेर, भगरा, ब्राह्मी, जैत, अगम्यय, अइसा, छोटी दूधी, कसौदी, ब्राह्मी, तुलसी, दशमूल, आककी जड़ और पत्ते, पत्रकोल (पीपल, पिपलामूल, चन्च, चित्रक और सोंठ), मालकागनी, अर्कपुष्पी, बह्लपुष्पी, थावड़ी, भार्जी, इनके यथासम्भव अन्नस्वरस अथवा काथीसे दोलायन्त्रमें क्रमसे १-१ गेज स्वेदनकर धतूरेके बीजोंके तैलमें ७ रोज लगातार मर्दनकरे फिर ४ तह कपड़ेमें उठाकर खूननोरसे दवाकर तैल निकाल दे और साफकरले । इसके बाद सपेद अर्जुन (सारखोल) कोरइयाके फूल, मरिच, जायफल, तन, पत्रन, इलायची, जाबिनी, अकलकरा, बेंसाच, शकर, मानकन्द अथवा उड़द इनके १६ गुने बरकमें उस गोलेको बन्दकर मूथरयन्त्रमें स्वेदन करे । यह पूर्णन्दुरस तैयार हुआ । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा ३ मास कपासकी मज्जाके साथ सेवन करनेसे बहुलपी छिर्योंमें सन्तुष्ट कर सक्ताहै । तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे यह तमाम रोगोंको दूर करताहै ॥ २२३ ॥

२२४ पूर्णन्दुरसः (तृतीयः)

शुद्धसूत्रयो भागा भागैकं ताप्रचूर्णकम् ।
कृत्वा पिष्टिं निरुद्ध्याऽथ रम्भाकन्दोदरे पुनः ॥ ९६५ ॥
सृष्टिंश्च शोषितं पक्त्वा दिनैकं करिपाऽग्निना ।
पयं सप्तदिनं पक्त्वा कन्दैकन्दे दिनंदिनम् ॥ ९६६ ॥
उद्धृत्य बन्धयेद्वह्ले दृढे चैव चतुर्गुणे ।
क्षुद्रशम्बूकमांसात्कं छागरक्तगतं पचेत् ॥ ९६७ ॥
दोलायन्त्रे त्र्यहं वायवेयं रक्तं पुनःपुनः ।
गुड्या गजपिपल्या कदव्या कोकिलाक्षकैः ॥ ९६८ ॥
गोक्षुरीवानरीमूलजातीमूलभयैर्द्रवैः ।
पाचयेत्तत्कपाथैर्वा दोलायन्त्रे दिनत्रयम् ॥ ९६९ ॥
ततः क्षीरे सितायुके तद्वत्पक्त्वा दिनावधि ।
उद्धृत्य मुशलीकाथै र्भयं यामचतुष्टयम् ॥ ९७० ॥
रसः पूर्णन्दुनामाऽयं खादेन्मांससितायुतम् ।
गोक्षुरी वानरीधीजं गुड्याची गजपिपली ॥ ९७१ ॥
कोकिलाक्षस्य बीजानि मज्जा कार्पासबीजजा ।
शतावरी च रम्भायाः फलं सर्वं समं भवेत् ॥ ९७२ ॥

सर्वतुल्या सिता योज्या मधुना लोडितं लिहेत् ।
पलाङ्गमनुपान स्यात्ततः पेयं गवां पयः ॥

कामिनीनां सहस्रेकं रमते कामदेववत् ॥ ९७३ ॥
र. ख, मै सा, यो म, र सि, रसायने वाजीकरणेच ।

टि०—अन्यत्रेभ्यु तारे पिष्टि सप्पादिता, रसायनकण्डे तु तारस्थाने
ताम्र हरने तलेरसमायादा स्याजानुपूर्वक वा स्यादिति न निश्चीयते ।
परन्तु तात्रेण सप्पादिभेदातिभ्रान्त्यादिपर भविष्यति, अवस्तारणैव
सप्पादनीयमिति युक्त प्रतिभाति । र मि अरिम्न विच्छिन्न पाठ ।

भाषा—शुद्धपारेके तीनभागोंमें १ भाग शुद्धताम्रका वारीक
चूर्ण डालकर पिष्टी बनाकर केलेके बन्दमें रखकर उमीकी
डाटेसे बन्दकर २-३ कण्डमिठी करके सुखाले और एकदिन
करीषकी जामिमें पकावे । इसपर ७ दिन नये नये बन्दोंमें
रखकर स्वेदनकरे । फिर ४ तह मोटेवस्त्रमें बाधकर पोटली
बनाय पांचिना माम मिलेहुए बकरेके रक्तमें दोलायन्त्रसे
३ रोज तक पकावे, रक्त धारम्मार देताजाय । इसके बाद गिलोय,
गनपीपल, केला, तालमखाना, गोखरू, केवाचकी जड़, चने
लीकी जड़, शङ्खडालातुआ दूध इनप्रत्येकके यथासम्भव
स्वरस अधवाक्वार्थोंसे १-१ रोज स्वेदनकर मुसलीके बवायसे
१ रोज मर्दन करनेसे पूर्णन्दुरस तैयार होगा । इसमेंसे १ या
२ रत्तीकी मात्रा मास और शकरके साथ खाकर गोखरू, केवा-
चके बीज, गिलोय, गनपीपल, तालमखाना, कपासकी मन्ना,
शतावर, पत्रा केला सब समभागलेकर सबकी बराबर शकर
मिलाकर मधुसे चाटम बनाकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ तोले
खाकर ज्वरसे गायका दूधपीवे । इसके सेवनसे हजारों स्त्रियोंको
कामदेवकी तरह सन्तुष्ट करसक्याहे । टि०—इसकी पिष्टी बना
नेमें रसायनखण्डने यद्यपि ताम्र दियाहै परन्तु और प्रन्थोंमें
ताम्रकी जगह तार (बादी) मिलताहै । इसलिये तारके स्थानमें
ताम्र होना लेखक प्रमादसेभी होसक्याहै । कदाचित् ज्ञानपूर्वक
लिया होतो तावेका चूर्ण नहीं किन्तु ताम्रकी श्वेतभस्मका
प्रयोग करना ॥ २२४ ॥

२२५ पूर्णन्दुरसः (चतुर्थः)

पिष्टो रसः सहैमाऽङ्गिः स्वेषो रम्भाऽङ्गिजै रसैः ।
तपिष्टं वस्त्रदोलायां यन्त्रे पाच्यं पृथग्दिनम् ॥ ९७४ ॥
केतकीशालमलीदुग्धमुसलीशौद्रजै त्रैधैः ।
यानरीगोश्वुरच्छिन्नाशिवाकदलिधात्रिजे ॥ ९७५ ॥
पूर्णन्दुः स्यात्त्रिगुञ्जोऽयं कुर्यात्स्वास्थ्यन्तु बल्लुयुक् ।
पुष्टिदस्तुष्टिदः कामवृद्धिदः कान्तिवर्द्धनः ॥ ९७६ ॥
संच्य तालीं वरीं कच्छू याजिगन्धां पुनर्नयाय् ।
श्वद्ग्रां शर्करां रात्रौ शृतक्षीरेण पाययेत् ॥ ९७७ ॥
ना वि, रसायने ।

भाषा—शुद्धपारेमें शुद्धखण्डका चतुर्थांश चूर्ण या बर्क
मिलाकर पिष्टी बनाकर केलेके बन्दक रसमें स्वेदनकरे । इसके
बाद केवाड़ा, सेमल, गोदुग्ध, मुसली, मधु केवाच, गोखरू,
गिलोय, हरे, केला, आवला इनके रसोंमें १-१ रोज स्वेदन

करनेसे यह रस तैयारहोगा । इसमेंसे ३-३ रत्ती खस, मुसली,
शतावर, केवाच, असगन्ध, पुनर्नवा, गोखरू, शकर इनको
डालकर पकाए हुए दूधके साथ देनेसे पुष्टि, हर्ष, काम और
कान्ति बढ़ेहै ॥ २२५ ॥

२२६ प्रचण्डखेचरी गुटिका

चूर्णमध्वरुरस्यैव गुह्यक्षते समं क्षिपेत् ।
त्रिदिनं मातुलुङ्गाऽम्लेस्तत्सर्वं मर्दयेद् दृढम् ॥ ९७८ ॥
सूततुर्यं मृतं वज्रं तस्मिन् क्षिप्त्वाऽथ मर्दयेत् ।
तप्तखल्वे दिनं चाऽम्लेस्तद्रोहं चाऽन्धितं पुटेत् ॥ ९७९ ॥
द्विनैकं भूधरे यन्त्रे भागैकं पूर्वपारदम् ।
क्षिप्त्वा तस्मिन् दृढं मर्धं मातुलुङ्गद्वयै दिनम् ॥ ९८० ॥
रुद्धाऽथ पूर्ववत्पत्तवा पुनर्द्वयश्च पारदः ।
मयं पाच्यं यथापूर्वमेवं कुर्याच्च सप्तधा ॥ ९८१ ॥
रसं पुनःपुनर्दत्त्वा स्यादेव भस्मसूतकः ।
योजयेत्सर्वरोगेषु जरामृत्युहरो भवेत् ॥ ९८२ ॥
भागैकं नागचूर्णस्य भागैकं पूर्वमस्मनः ।
दुतसूतस्य भागैकं खोटं कुर्याच्च पूर्ववत् ॥ ९८३ ॥
तद्विज्ञाम्य गते नागे द्रावित जायेत्पुनः ।
पूर्ववल्लोहरत्नान्तं जीर्णं बद्धा स्थिता मुखे ॥ ९८४ ॥
प्रचण्डखेचरी नाम्नी गुटिका ये गतिप्रदा ।
पूर्ववल्लभते वीर्यं फलमत्यन्तदुर्लभम् ॥
निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्ष्यं तक्रैः पिबेदनु ॥ ९८५ ॥

र. ख, रसायने ।

भाषा—सुसुक्षित पारेमें पोड़ेके खुरका चूर्ण समभाग
डालकर बिजोरेके रससे तीनरोज मर्दनकरके चौथे रोज पारेके
बराबर हीरेकी भस्म तप्तखरलमें डालकर बिजोरेके रससे १ रोज
मर्दनकर गोला बनाय अन्यमूषांमें बन्दकर १ दिन मूषरयन्त्रमें
पकाकर एकभाग लुप्तसित पारेका देकर एकदिन पूर्ववत् मर्दनकर
गोला बनाकर एकदिन मूषरयन्त्रमें पकावे । ऐसे ७ बार करनेसे
यह प्रचण्डखेचरी गुटिका तैयार होगी । इसमेंसे १-१ रत्ती
तप्तद्रोहराऽनुगानके साथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर जरा
और मृत्युको हटातीहै । शुद्ध सीसेका चूर्ण शुद्ध हुतपरा और
यह भस्म सब समभाग लेकर अन्यमूषांमें रखकर घसन करनेसे
खोट तैयार होगा । फिर इसको धमनकरके इसमेंसे नागको
जलादेना । इसके बाद इसे गलाकर इसमें यथासम्भव लोह
और रत्नोंका जरणकर गोली बनाकर मुहमें रखनेसे आकाश
गामी होताहै और अन्यन्त दुर्लभ जो वीर्यवृद्ध्यादि गुणहै
उनको प्राप्तहोताहै । गोलीमें एक फण्टेके बाद मुहमेंसे निकाल
कर निर्गुण्डीकी जडका एकतोला पूर्ण छाछके साथ पीवे ॥ २२६ ॥

२२७ प्रचण्डभैरवोरसः (प्रथम)

कासीस गन्धकं सूत द्रव्यं मधुपुष्पकम् ।
गुड्डी शालमली धान्य भूमिम्बोऽमरतुम्बुरू ॥ ९८६ ॥

तिलमुद्गपटोलानि द्राक्षां कूम्भाण्डभस्म च ।
 शिण्टिका कन्यका भार्गी बलाहयसमायुतम् ॥१८७॥
 सर्वमेतत्समाहृत्य मध्याज्ये गुटिकाः शुभाः ।
 छर्द्यपस्मारमुन्माद्वातरोगांश्च दुस्तरान् ॥ १८८ ॥
 कासं श्वासं क्षयं हिकां दुर्नामञ्च प्रमेहकम् ।
 पित्तज्वराऽरुचिञ्चैव तिमिरं चक्षुरामयम् ॥
 गलरोगेषु सर्वेषु कर्णस्तम्भं हरेद्ब्रुघम् ॥ १८९ ॥
 र र, अपस्मारो ।

भाषा—शुद्धकसीस, गन्धक, पारा और शिंगरिफ, महुआ, गिलोय, सेमला सुगला, धनिया, चिरामता, देवदारु, तुम्बुल, तिल, गूल, पटोल, द्राक्ष, पेटेवीभस्म, पीला कटसरैया, धीकु आर, भारती, बला, नागपला, सब समभाग लेकर पारेगन्धकी नीलवर्ण कञ्जलीमें शिंगरिफ और कसीसको मिलाकर १ पहर घोटकर दूसरी चीजोंका चारीक चूर्ण मिलाकर ४ पहर घोंटे । फिर मधु और घी मिलाकर १-१ माछेकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथारोगांशुपानसे देनेसे छर्दि, अपस्मार, उन्माद, दुस्तर वातरोग, कास, श्वास, क्षय, हिचसी, बवासीर, प्रमेह, पित्तज्वर, अरुचि, तिमिर, चक्षुरोग, गलरोग, कर्णस्तम्भ, इनसफरोगोंको यह नष्ट करताई ॥ २२७ ॥

२२८ प्रचण्डभैरवोरसः (द्वितीयः)

शुद्धौ सूतेन्द्रगन्धौ च ताम्रभस्म समांशकम् ।
 जम्बीरजागवल्ल्युत्थै रसेः सम्मिश्रिमदितम् ॥ १९० ॥
 ताम्रसम्पुटके रुद्धा कुन्कुटाख्ये पुटे पचेत् ।
 अर्धाङ्गकम्पनातातौ भक्षयेत्तु द्विगुञ्जकम् ॥
 दाहसन्तापमूर्च्छांसु चायौ पित्तसमन्विते ॥ १९१ ॥
 प रा, मूर्च्छांयाम् ।

भाषा—शुद्धरस और गन्धक, ताम्रभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर जम्बीरी और पानके रसोंसे एकदिन मदनकर गोला बनाय उनी प्रमाणके ताम्रसम्पुटमें बंदर कुन्कुटपुटमें पाचन करना । स्वादशीतल होनेपर निकालकर रखलेना । इसमेंसे २-२ रती तत्परोहारांशुपानके साथ देनेसे अर्धाङ्ग और कम्पनात, दाह, सन्ताप, मूर्च्छा, वातपित्तकु त्नामरोग नष्ट होतेहैं ॥ २२८ ॥

२२९ प्रचण्डरसः

अमृतं पारदं गन्धं मर्दयेत्प्रहृद्यम् ।
 सितशुषाररसेः पश्चाद्वायुषेदेकधितम् ॥ १९२ ॥
 तिलप्रमाणं दातव्यं नवज्वररयिनाशानम् ।
 उद्वेगे मस्तके तैलं तक्रं चाऽस्ति प्रदापयेत् ॥
 अनुपिथेदाद्रिरसं प्रचण्डसन्निभके रसे ॥ १९३ ॥
 रै, र, रगवि, र, सु, र क (प्रवरः), वै क, ज्वराऽधिकारः ।
 वै क नवज्वररयिनाश इति नाम ।

शुद्धौ सूतेन्द्रगन्धौ च ताम्रभस्म समांशकम् ।
 जम्बीरजागवल्ल्युत्थै रसेः सम्मिश्रिमदितम् ॥ १९० ॥

निपलित्तो भावना प्रदत्ता । अत्र तु शृङ्गेरि(मोक्षुपानत्वेन निवो नित । अरिभैरवे रसे शिला प्रक्षिप्य निष्पापनामेक एव रम ।

भाषा—शुद्धवटनाग, पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकञ्जली कर संभाहृकरससे २१ भावनाए देकर तिलप्रमाण गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रससे देनेसे नवज्वर नष्ट होताई । यदि घराहट मालूमहो तो मस्तकमें ताजा तिलकातेल लगावे और छाछपीनेको देवे ॥२२९॥

२३० प्रतापतपनोरसः

गन्धकं गरलं तालं सूतकं लोहदङ्गणम् ।
 खपरं स्वर्जिकाक्षारं मञ्जिष्ठं हिङ्गुलं समम् ॥ १९४ ॥
 रसेन मर्दितं पिण्डं निर्गुण्डीहस्तिगुण्डयोः ।
 अष्टयामं पचेत्कूप्यां निरद्ध्य सिकताह्वये ॥ १९५ ॥
 ततः सिद्धं समादाय रक्तिकामार्द्रकेण तु ।
 सधिपातविनाशाय प्रतापतपनो रसः ॥
 दधिभक्तं तथा दुग्धं छागमांसञ्च योजयेत् ॥ १९६ ॥
 भै, र, र, सु, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, गरल, पारा और मुहणा, हरिताल, लोह, खपरिया इनकीभस्में, सन्धी, मज्जोड, शुद्धहिङ्गुल ये सब समभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर निर्गुण्डी और हाथीशुण्डीके रससे १-१ रोज मदनकर गुप्पार आतवां दीशीमें भरकर पाउना यन्त्रमें ८ पहरकर पकावे, स्वादशीतल होनेपर निकालकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रती अदरखके रसके साथ देनेसे सधिपात नष्ट होताई । भूत लगनेपर दहीमात, दूध अथवा बकरेका मान देवे ॥ २३० ॥

२३१ प्रतापमार्तण्डरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं हतं शुल्वं विषं हिङ्गुल्युग्मकम् ।
 निर्गुण्डीहृङ्गेरिऽङ्गि र्दंतं हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥ १९७ ॥
 तैलाऽभ्यङ्गं जलजानं तृणाऽऽतं तक्रसेचनम् ।
 गात्रे चन्दनमालेथं पश्चात्ताम्रलभक्षणम् ॥
 शशुमोदफलनेत्र्य देयं हन्ति ज्वरं क्षणात् ॥ १९८ ॥
 र क यो., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्ध वटनाग और दोनों शिंगरिफ (दृग्पद और शुक्नुग्द) समभाग लेकर चारीक पीस पारेगन्धकी नीलवर्ण कञ्जलीमें मिलाकर निर्गुण्डी और अदरखके रसमें एकरोज मदनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली निर्गुण्डी अथवा अदरखके रसके साथ देनेसे यह नवज्वर को तन्हाय नष्ट करताई । अधिक गर्मी लगे तो ठंडी मालिना कराके धान करावे । प्याय अधिक हो तो छाछी पारा शिरपर धाले । छात्रोंमें दाह हो तो चन्दनका लेप करे और ताम्बूल रानिना दे । शुषुय और पंक आमके रसमें देनेसे ज्वर तन्हाय उतर जाताई ॥ २३१ ॥

२३२ प्रतापमार्तण्डरसः (द्वितीयः)

रसहिङ्गुलनेपालमर्कशीरं समानकम् ।
दन्तित्वचा च संयुक्तं याममात्रं तु भर्दयेत् ॥ १९९ ॥
गुडामात्रांस्तु घटकान् गुडेन सह सेवयेत् ।
पथ्यं दध्योदनं देयं चतुर्यामज्वरं हरेत् ॥
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००० ॥
र क यो , ज्वराऽधिकारो ।

भाषा—पारा, शिंगरिफ और ताप्रभन्, आत्रका दूध, दन्ती, दालचीनी ये सब समभाग लेकर एक पहर आठके धूपमें मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुड़के साथ देनेसे ४ पहरके ज्वरको नष्ट करताहै, पथ्यमें दहीभात देना ॥ २३२ ॥

२३३ प्रतापमार्तण्डरसः (तृतीय)

त्रिपं टङ्गनेपालं हिङ्गुलं प्रमर्षार्थितम् ।
जम्बीरफलजद्रावै मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १००१ ॥
मरिचप्रमाणत्रिका श्रद्धायानुष्कास्तु कारयेत् ।
रसः प्रतापमार्तण्डः सर्वज्वरनिवारणः ॥ १००२ ॥
र क यो , र सं , भै र , ना वि , र सु , रससारसद्गुह, वा ,
रघायनप , ज्वराऽधिकारो । ना वि (मार्तण्डोदयभास्करः),
ना. विलासे टङ्गणस्थाने हिङ्गुलं हिङ्गुलस्थाने टङ्गणं हरयते । अनु
पाने गुडाऽम्बिकाभि सह इति विशेषः ।

भाषा—शुद्ध घलनाग, सुहागा, जमालगोटा और शिंगरिफ क्रमशः समभाग लेकर बारीक चूर्ण कर जम्बीरीके रससे २ पहर घोटकर मरिच प्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखा कर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगान्प्रोचित अनुपानके साथ खानेमें तमाम ज्वर दूर होतेहैं ॥ २३३ ॥

२३४ प्रतापमार्तण्डरसः (चतुर्थः)

रसहिङ्गुलजेपालं पृथ्वीदन्त्यम्भुमर्दितम् ।
दिनाऽर्धेन ज्वर हन्याद्गुडेन सितया सह ॥
चतुर्वर्णमिद्रं खादेत्सर्वज्वरप्रशान्तये ॥ १००३ ॥
व रा , ज्वराऽधिकारो ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ और जमालगोटा समभाग लेकर कालीजीरी और दन्तीके स्वरस अथवा वायसे दोपहर मर्दनकर डेढ़ १॥ माशेकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुड़ अथवा शर्करके साथ लेनेसे समस्तज्वर नष्ट होतेहैं ॥ २३४ ॥

२३५ प्रतापलङ्केश्वररसः (प्रथमः)

अपामार्गस्य मूलानां चूर्णं चित्रकमूलैः ।
बल्कलै मर्दयित्वाऽथ रस निष्पीड्य रक्षयेत् ॥ १००४ ॥
तेन सूतसमं गन्धमम्रकं दरद विपम् ।
टङ्गुणं तालकञ्चैव मर्दयेद्विनसत्तकम् ॥ १००५ ॥
त्रिदिनं मुशालीतोयै भाग्येद्वर्मरक्षितम् ।
मूपाञ्च गोस्तनाकारामापूर्थं परिरक्षितम् ॥ १००६ ॥

सप्तभि मूर्त्तिकावस्त्रे वैद्ययित्वा पुटेह्यु ।
रसतुल्यं लोहवङ्गं रजतं ताम्रक तथा ॥ १००७ ॥
मधूकसारजलद्वौ रेणुका गुग्गुलुः शिला ।
चाम्पेयश्च समांशं स्याद्भागार्थं शोधितं विपम् ॥ १००८ ॥
तत्सर्वं मर्दयेत्तल्लये भावयेद्विपनीरतः ।
आतपे सप्तधा तीक्ष्णं मर्दयेद्वटिकाद्वयम् ॥ १००९ ॥
कटुत्रयकपायेण कनकस्य रसेन च ।

समुद्रफलनीरेण विजयावारिणा तथा ॥ १०१० ॥
चित्रकस्य कपायेण ज्वालामुख्या रसेन च ।
प्रत्येकं सप्तधा भाव्यं तद्वत्पित्तैश्च पञ्चभिः ॥ १०११ ॥
सर्वस्य समभागेन विषेण परिधूपयेत् ।
गुर्जकं घट्टिचूर्णेन शृङ्गवेररसेन च ॥ १०१२ ॥
द्वीत रोगिणं तीक्ष्णमौषधिविस्मृतिशान्तये ।
धुरेण तालुन्याहत्याऽऽर्द्रकनीरेण मर्दयेत् ॥ १०१३ ॥
नोद्धात्यन्ते यदा दन्तास्तदा कुर्यादमुं विधिम् ।
सेचयेन्मन्त्रविद्विश्च धाराशुम्भशते नरम् ॥ १०१४ ॥
भोजनेच्छा यदा तस्य जायते रोगिणः परम् ।
दध्योदनं सितायुक्तं दद्यात्तक्तं सजीरकम् ॥ १०१५ ॥
पाने पानं सितजातं यदीच्छेत्तत्तदन्तिकम् ।
पथं कृतेन शान्तिः स्यात्तापस्य रसजस्य च ॥ १०१६ ॥
सचन्द्रचन्दनरसाऽऽलेपनं कुक्षु शीतलम् ।
वल्कलामहिकाजाती पुष्पागवकुलाऽऽवृताम् ॥ १०१७ ॥
विधाय शाय्यां तत्रस्थं लेपयेच्चन्दनैः मुहुः ।
हायभावविलासोक्तिकटाक्षैश्चाऽप्यलोकनैः ॥ १०१८ ॥
पीनोत्तुङ्गकुचोत्पीडैः कामिनो परिरम्भौ ।
रम्यवोष्णानिनादायै गायनैः ध्रुवणाऽमृतैः ॥ १०१९ ॥
पुण्यश्लोककथायैश्च सन्तापहरणं कुर ।
पभिः प्रकारेस्तापस्य जायते शमनं परम् ॥ १०२० ॥
वर्जयेन्मैथुनं तावद्यावन्न बलवान्भवेत् ।
दद्यात्सर्वेषु धातेषु सिद्धगुग्गुलुवह्निभिः ॥ १०२१ ॥
दद्यात्कणामाक्षिकाभ्यां कामलाक्षयपाण्डुषु ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

अयं प्रतापलङ्केशः सन्निपातनिवृत्तनः ॥ १०२२ ॥
रसायनस , र म , र श , र क , र वा , भै र , यो म ,
र सु , सन्निपाते ज्वरे च ।

भाषा—अपामार्गकी जड़के चूर्णको चित्रकमूलके स्वरससे मर्दनकर कल्क बनाले, फिर इसकी बराबर शुद्ध पारा डालकर ४ पहर मर्दनकर पारेकी बराबर शुद्ध गन्धक, अम्रकभरम, शुद्ध शिंगरिफ बहनाग, सुहागा और हरिताल डालकर ७ रोज मर्दनकरे फिर ३ रोज मुसलीके स्वरससे धूपमें मर्दनकरे । इसके बाद गोस्तनाकार मूपांसे रखकर ७ वपडमिठी देकर सुखानर लघुपुटकी भावसे । स्वाहशीतल हानेपर निकालकर लोह, वाङ्ग, रजत और ताम्र, महुएकवार, नागरमोहा, रेणुका, गुग्गुल, मैन्सिल, चम्पाके फूल, ये प्रत्येक पारेकी बराबर और

पासे आधा शुद्ध बछनाग लेकर बछनाग के स्वरस अथवा काड़ेकी सात भावनाएं देकर कड़े धूपमें २ घण्टे तक रखके फिर त्रिफल, धतूरा, समुद्रफल, भांग, चित्रकमूल, ज्वालासुरां इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएं देकर पत्रपित्तोंसे १-१ भावना देकर सब दवाके बराबरके बछनागकी धूनी देकर रखोड़े । इसमेंसे १-१ रतीकी भांजा चित्रकमूलके चूर्ण अथवा अदरकके रसके साथ देनेमें तीव्रसञ्ज्ञानाश और विस्मृतिमें नष्टकरताहै । खानेसे दवा काम न करे तो तालमें छुसे पाछ देकर अदरकके रसमें दवाको मिलाकर उसजगह मर्दनकरे तो होश आजायगा । यदि इसपर भी होश न आवे और दांत न खुले तो मन्त्रशास्त्र कुशल आदमी पानीके १०० चण्डोंकी मत्थे पर चारादे । होश आने पर ऊपर रोगीको तीव्र भूख लगी हो तो दही, मात, शकर अथवा जीरा मिलीहुई छाछदेवे । प्यास अधिक हो तो शकरका शकृत दे, अधिक कहेसे क्या जो वह मागे सो देवे । अगर इसपरह करने परभी च्चर शान्त न होतो कपूरके साथ चन्दनकी घिसकर टंटा लेफरे । रुई, मोगरा, चमेली पुत्राग और मौलश्रीके पुष्पोंमें शम्पा बनाकर उसपर वैठालकर वारम्बार चन्दनका लेप करे । हाथमाथके साथ कटाक्ष युक्त अवलोकन करती हुई नवयुवतियोंका आलिंगन करावे । वीणा वगैरहकी मधुर आवाज और ध्रुवप्रिय गायन, परमेश्वरकी क्या इत्यादि प्रकारोंसे तापका तीव्र शान्त हो जाताहै । मैथुन तबतक वर्जन करे जब तक कि बलवान न हो । वातविकारोंमें वातहर योगराजादि मूलग और चित्रकमूलके साथ देवे । कामला, क्षय और पाण्डुमें पीपल और शहदेसे दे । तप्तशोषहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूर करताहै और सन्निवृत्तकी खास औषध है ॥ २३५ ॥

२३६ प्रतापलङ्केश्वररसः (द्वितीयः)

प्रत्येकं रसगन्धयो द्विपलयोः कृत्वा शुभां कज्जलीं, तस्यां श्लेच्छलुलायलोचनमनोधात्रीप्रकुञ्चव्रयम् । पथ्याया वदरत्रिकं त्रिकटु पट्टशाणं चचा धर्मिणी, चेलाम्भोधरपत्रकद्विदक्त्रिकञ्जकाऽध्वगन्धाह्वयम् ॥२३६॥ चिन्तितसमधूकसारमखिलं कर्पोनिर्मतं न्यस्य तत, प्रोन्मयोऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतसुतं स्वागस्तिकञ्चूपणेन । भूधात्रीविजयासरित्पतिकलेऽज्वालामुखीभृङ्गजैः, प्रत्येकं चिदधोत निश्चलमतिः सप्त क्रमाद्भावनाः १०२४ पित्तैरयो पञ्च विधाय पञ्चभिः

करञ्जमात्राऽमृतधूपनं ततः ।

दत्त्वाऽऽर्द्रकस्य स्वरसेन तन्दूलाऽऽ-

कृतिं विद्व्यादृष्टिकां मियग्गरः ॥ १०२५ ॥

देयका सन्निपातेप्रतिहतकरणे मोहनेत्रप्रसुप्तयोः, स्याद्बुद्धे साऽजमोदाप र्नाथिकृतिपुऽपूपणेन प्रहण्याम । दातव्या जीरकेण द्विपतुरगचूर्णं प्राणसंरक्षणाय, काऽरण्याऽस्सोऽधिरैतममृतसमरसं धैर्यमायोऽभ्यर्चता ॥

र. र. स, र., र. को., र. सु., र. शं., र. वा., र. मृ. ज्वराऽ-धिकार । र. को. प्राणेश्वर इति नाम । र. का कारुण्याम्भोधि-रिति नाम ।

टि०—प्रोन्मयोऽर्द्धकरञ्जकाऽमृतसुतमित्यत्र गन्धकारत्याऽभिप्रायमज्ञाय नाप्यायोऽस्याप्यानि घट्टिनि, द्वितीयान्धिमिक्तिक्रमया च भावना-स्थिति भवति । रम्यराजशूरे प्रमाणे व्यत्याम इतोऽस्ति तदनुमारेण स्मो न निश्चयनीय इति विशेषवचना ।

भाषा—दो २ पल शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीकर तापमरुम, शुद्ध गुग्गुलु और मैनसिल ३-३ पल, हरे, सोंठ, मिर्च, पीपल, वच, अनन्तमूल अथवा रेणुका, विडङ्ग, नागरमोथा, पत्रज, नागदेशर, कमल, असगन्ध ये प्रत्येक १ ॥ कर्प महुएकाहीर १ कर्प लेकर वारीक चूर्णपर एक दो पहर शुद्धखरहर सप्त योगसे आधा करञ्ज और शुद्ध बछनाग मिलाकर अगस्त्य, सोंठ, मिर्च, पीपल, भुईआंबला, भांग, समुद्रफल, ज्वालासुरी (अग्निशिखा) और भंगरेके यथा सम्भव स्वरस अथवा क्वाथों से ७-७ भावनाएं देकर पीच-पित्तों (मछली, भेंसा, सूजर, बरना और मोर इनके पित्तों) की १-१ भावना देकर करञ्ज फलकी बरानर बछनागकी धूनी देकर अदरकके रससे घोटकर १-१ चावल भरकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली देनेसे घोर सन्निपात निवृत्त होताहै । शुल्बमें अजमोदके साथ, घात-विकारोंमें त्र्युषणके साथ, प्रहृणीमें जीरेके साथ देनेसे इन सबका नाश होताहै । हाथी, घोडा और मनुष्य वगैरहके प्राणोंकी इससे रक्षा होतीहै इसलिये इसका प्राणेश्वर नाम रक्ता गयाहै ॥ २३६ ॥

२३७ प्रतापलङ्केश्वररसः (तृतीयः)

चिपादिकाग्रं रसगन्धद्वयं

सताम्रकुष्ठायसपिप्पलीरजः ।

विमर्दितं काञ्चनपनधारिणा

प्रतापलङ्केश्वरसञ्जको रसः ॥ १०२७ ॥

र. र. स, र. र. को., र. क. वि. क, रमेन्द्रमं., कुष्ठाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, तापमरुम, कुल, लोहभस्म, पीपल सब समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें सबको मिलाकर कचनारके पत्तोंके रसमें २-२ रोज मर्दनकर १-१ मादोभी गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ खानेसे वैपादिकशुद्ध नष्ट होताहै ॥ २३७ ॥

२३८ प्रतापलङ्केश्वररसः (चतुर्थः)

पकेन्दुचन्द्राऽनिलवाधिकाष्टा-

फलकमाथैः क्रमतो विमिश्रम् ।

सुताऽम्रगन्धोपणलोहरश्च-

घन्योत्पलामसम विपं सुपिष्टम् ॥ १०२८ ॥

प्रसुतिचापाऽनिलदन्तबन्ध-

माद्रांशुना घोरसुसन्निपातान् ।

पुरामृताऽऽर्द्रत्रिफलायुतोऽयं
गुदाऽङ्कुरान् वल्लमितो निहन्ति ॥ १०२९ ॥
निजाऽनुपानि निजपथ्ययुक्त्या
सर्वाऽतिसारग्रहणीगदांश्च ।
प्रतापलङ्केश्वरनामधेयः
सूतः प्रयुक्तो गिरिराजपुत्र्या ॥ १०३० ॥

र ल, रसायनस, र श, र कौ, वै र, र को, र च, ह
यो त, व से, वै वि, यो स, यो म, वै चि, र, टो, चि
र म, मै सा, र मु, थो र, र का, र बो, र क यो, रस
पारिजात, सुतिकारोगे ।

टि०—अत्र नानाप्रकारेण सङ्घाया मदेता लिखिता सन्ति परन्तु रस
राजकर्मण्य संज्ञेते युक्तियुक्तो दृश्यतेऽत्र स प्याऽस्माभि स्वामि ।
बन्धोत्पत्तेति स्थाने विश्वेस्पति पाठस्तु प्रामादिक त्वाच्छेते सङ्घाया
न्यूनत्वापत्ति गुंणाऽप्यर्थाधेति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, अक्षरभस्म १ भा, शुद्ध
गन्धक १ भा, मरिच ३ भा, लोहभस्म ४ भा, शङ्खभस्म
८ भाग, जङ्गलीवण्डाकी भस्म १६ भा, शुद्धवज्रनाग १ भाग
लेकर सबको बारीक पीसकर पारे गन्धककी नीलवणकजलीमें
मिलाकर २-२ रोज घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती
अदरखके रसकेसाथ देनेसे प्रसुतिपात, धनुर्वात, दन्तवन्ध,
घोरसनिपात इनको यह नष्टकरताहै । शुद्धपूगल, गिलोय, अद
रख और त्रिफलाके साथ देनेसे यह बवाधीरको नष्टकरताहै ।
अपने अपने अनुमान और पर्योके सेवनके साथ लेनेसे तमस्त
अतिसार और ग्रहणी प्रथति रोग नष्टहोतेहै ॥ २३८ ॥

२३९ प्रतापलङ्केश्वररसः (पञ्चमः)

आदौ प्रतापलङ्केश्वरस्तत्कमोऽयं निरूप्यते ।
दशधा शुद्धियोगेन पातितं समुखीकृतम् ॥ १०३१ ॥
जीर्णवीज कलांशेन पाङ्गुण्याज्जीर्णगन्धकम् ।
पल्लव्यं समादाय भानुदुग्धेन मर्दयेत् ॥ १०३२ ॥
निदिनं घञ्जदुग्धेन हृत्पर्णाक्रायवारिणा ।
वत्सनाभेन तत्पश्चाज्ज्वालामुख्या रसेन तु ॥ १०३३ ॥
ग्रहंन्यहं मर्दयित्वा चैकैकेन यथाक्रमम् ।
ततः सोमाऽनले यन्त्रे मर्दितं स्थापयेद्रसम् ॥ १०३४ ॥
दत्त्वाऽथ सुहृदं लेपं बुल्ल्यामारोपयेद्बुधः ।
जलपूर्णं ततः कृत्वा ह्यधस्ताज्ज्वालयेत्कामात् ॥ १०३५ ॥
मृदुमप्योत्तमं घञ्जि सप्तसप्तदिनावधि ।
परुर्विशदिने पूर्णं यन्प्रादुत्तारयेद्रसम् ॥ १०३६ ॥
भस्मीभूत रस कृत्वा शुद्ध तत्र बलि क्षिपेत् ।
पद् च साम्येन लोहानि भस्मीभूतानि निःक्षिपेत् १०३७ ॥
अध्रसत्वं कान्तसत्वं भस्मीभूत निर्धोजयेत् ।
कल्पयेद्भावनामानं रससाम्येन शुद्धिमान् ॥ १०३८ ॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र काकमाचीरसेन तु ।
खल्वेव दत्त्वा दिनैकन्तु कृष्णधत्तूरकद्रवैः ॥ १०३९ ॥

परण्डनीरै भूषानीरसैस्त्रिकटुकद्रवैः ।
आर्द्रकस्य रसे ज्वालामुखीनीरै जयारसैः ॥ १०४० ॥
भृङ्गीरसै वैजयन्तीरसैस्तिलदलारसैः ।
अश्लघेतसनरीण जम्भीरोद्भयवारिणा ॥ १०४१ ॥
मण्डूकपर्णिकातोयै रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।
मर्दयित्वा तत्र दद्याच्छुद्धीधिपमनुत्तमम् ॥ १०४२ ॥
रसाच्च दशमं भागं हारिद्रं तद्भावतः ।
तद्भावे साकुकं स्यात्सर्वाऽभावेऽमृत क्षिपेत् ॥ १०४३ ॥
मर्दयेत्सर्वमेकत्र विजयारसयोगतः ॥
दिनमेक ततो देया भायना पित्तसम्भवा ॥ १०४४ ॥
मापूरं मरस्यजं पित्तं शौकरं छागसम्भवम् ।
माहिषं रोहिषं काकं विद्याभोतमत्रं तत ॥ १०४५ ॥
हारिणं व्याधजञ्जैति पित्तान्येतानि निर्हेरतु ।
सप्तसप्त प्रदातव्या भावनाः पित्तसम्भवाः ॥ १०४६ ॥
तिक्रोऽभावे प्रदातव्यास्ततोऽन्युना न कारयेत् ।
आदौ तु कृष्णसर्पस्य गरलेन च भावना ॥ १०४७ ॥
घन्वनागस्य गरले भाग्येदेकगरकम् ।
पारावतस्य पित्तेन सर्वस्याऽन्ते विमर्दयेत् ॥ १०४८ ॥
गृहोत्वा सिद्धसूतं तमुर्द्धभाण्डे विलेपयेत् ।
अधोभाण्डे घत्सनाभं रसतुल्यं विमर्दितम् ॥ १०४९ ॥
निक्षिप्य सुहृदं क्षिप्या यत्र बुल्ल्यां निवेशयेत् ।
मन्दबद्धिमधः कुर्यात्प्रहरद्भयमाहतः ॥ १०५० ॥
एवं कृते रसः सिद्धो भवत्येव न चाऽन्यथा ।
योगिनीभैरवान् सिद्धाऽक्षेत्रपालं गुरुस्तथा ॥ १०५१ ॥
गन्धपुष्पादिनैवेद्यै र्बलिदानै र्थोचितैः ।
पूजयित्वा स्वर्णकूप्यां रसेन्द्रं स्थापयेद्बुधः ॥ १०५२ ॥
महाप्रतापलङ्केशनामाऽयं रसभूपतिः ।
सन्निपातं महाघोरं दण्डाऽऽलसकमेव च ॥ १०५३ ॥
अपस्मारं धनुर्वातं कण्ठकुञ्जकमेव च ।
क्षयादिकांस्तथा रोगान् रोगयोगोक्तयुक्तितः ॥ १०५४ ॥
रसेन्द्रो ह्यपति व्याधीश्वरकुञ्जव्याजिनाम् ।
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ सन्निपाते नियोजयेत् ॥ १०५५ ॥
पित्तोत्तरे तथा देयः कर्पूरेण रसेश्वरः ।
श्लेष्मोत्तरे त्रिकटुना रक्तिकामानयोगतः ॥ १०५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽप्रसशयः ।
रसवीर्यविद्वृद्धयर्थमुदकं ढालयेत्ततः ॥ १०५७ ॥
यावद्देहं भवेत्कम्पः सर्वथा दुःसहस्त्वतः ।
चन्दनं चाऽथ कर्पूरं द्वादशांशं विनिःक्षिपेत् ॥ १०५८ ॥
इक्षयश्च तथा देया द्वाक्षासर्जूरपारिकाः ।
तवरज शर्करां चा योजयेद्दीर्घबुद्धये ॥ १०५९ ॥
श्लेष्मोत्तरे सन्निपाते दुग्धमकं प्रयोजयेत् ।
अन्यत्र दधिमतं स्यात्तत्पण्डशर्करया युतम् ॥ १०६० ॥
दिनत्रयं प्रयत्नेन यथेष्टं भोजयेद्भिषक् ।
रसवीर्यविघाताय कारवेहं न योजयेत् ॥ १०६१ ॥

स्वर्णं रौप्यं रविस्तीक्ष्णं त्रपुसीसाऽऽभ्रकान्तजम् ।
 सत्वमित्यष्टलोहानि कथितानि रसाऽऽगमे ॥१०६२॥
 पतेपां मारणं वक्ष्ये शिवचोदितवर्त्मना ।
 जम्बीरवारिणा पिष्ट्वा रसभस्माऽथ पूजैः ॥१०६३॥
 निम्बुकौवारिणा वाऽथ स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ।
 समभागेन सूतेन सस्पृष्टं रचयेद् दृढम् ॥ १०६४ ॥
 पुष्टित्वाऽऽरूप्यजैश्छाणं भस्मीभूतं समाहरेत् ।
 पुटेनैकेन भस्म स्यान्नाऽत्र कार्या विचारणा १०६५ ॥
 एवं सर्वाणि लोहानि भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।
 रसभस्म यदा न स्याद्भस्माक्षिकयोगतः ॥ १०६६ ॥
 पूर्वोक्तैश्च रसैः पिष्ट्वा लोहपत्राणि लेपयेत् ।
 पुष्टयेद्भस्मतां यान्ति निद्व्याप्तिं तथा कृते ॥१०६७॥
 एवमेतानि लोहानि मारयित्वा ततः परम् ।
 पुरा यद्ग्रहमाणेन क्रमेण च यथाक्रमम् ॥ १०६८ ॥
 अर्कक्षीरेण पुष्टयेद्गोचरदातं शुधः ।
 वज्रीक्षीरेण पुष्टयेद्गाराएकमतः परम् ॥ १०६९ ॥
 हृद्यारसेन पुष्टयेद्भस्मनाभेन यत्नतः ।
 पुनश्चार्कपयोभिस्तद्वायवेदेकविंशतिम् ॥ १०७० ॥
 एवं सिद्धानि लोहानि रसेन्द्रे निक्षिपेद्बुधः ।
 अन्यथा नैव योज्यानि सन्निपातादिभेज्जे ॥ १०७१ ॥
 रताले, सनिपाते ।

भाषा—यौधनद्रव्योमे १० धार मर्दनकरके पातनकरनेपर
 सुभुक्षित बनाकर पोडकोश बीज और पङ्कगुणगन्धक जारण-
 क्रियाहो ऐसा शुद्धपारा २ पल लेकर आन्कादूध, डंडायुहरका
 दूध, अमलोनिया, बछनाग, ज्वालामुखी इन प्रत्येकके द्रवसे
 ३-३ रोज क्रमेण मर्दनकर सोमाऽऽजलव्यन्त्रोमे स्थापनकर मज्ज-
 वृत कण्डमिष्टीसे सन्धि बन्दकर सुखाकर चूल्हेपर रल ऊपरकी
 हंडीमें जल भरदे और नीचे मृदु, मध्य तथा तीक्ष्ण ऐतेकक्रमे
 ७-७ दिन अर्थात् २१ दिन तक अग्नि देकर अखीरमे कोय-
 लेंपर रहनेदे । इतसमय भैरवादिर्कोको बलिदेवे । स्वाज्ञशीतल
 होनेपर यन्त्रमेंसे पारको निवालकर शुद्धगन्धक, पट्लोह
 (सुवर्ण, रजत, ताम्र, नाग, वज्र और लोह) की भस्में, अन्नक
 राव्य और कान्तस्रचरी भस्म सब समभाग लेकर पारं गन्धककी
 पञ्जलीन शेषजीनोंको मिलाकर भकीय, कालापनूरा, एण्ड,
 भूपानी, त्रिपु, अदरस, ज्वालामुखी, भाग, भंगरा, वैजयन्ती,
 हुहुर, अम्बोवैत, जन्मीरी, झाड़ी, इन प्रत्येकका यथासम्मान
 स्वाम् अथवा हाथ रसकी बराबर ढालकर १-१ रोज मर्दनकरके
 रससे दसार्थ हिस्सा शुद्ध शर्शोविष, अभाजनें हादिक, तदभावमे
 सायुष, द्वागषके अभावमे शुद्ध बछनाग मिलाकर भागके रससे
 एरदिन मर्दनकर सुखारर मोर, मछली, घुआर, बररा, भंगरा,
 रोज, बीआ, गन्ध, हरिण, वाघ इन प्रत्येकके पित्तकी क्रमश
 ७-७ भागनाए देवे । अधिरपिणके अभावमे २-३ भागना
 देवे इतनेमे न्यून न देवे । इसके बाद कान्त्यापरा जहर,
 धामिन सापरा जहर, कपूररक्षापित, इनरी क्रमसे १-१

भावना देवे । फिर सुंघषिसकर बराबर कीहुई दोहंडी लेकर
 एकमें इस रसका लेपकरदे और एकमें पारेकी बराबर शुद्ध-
 बछनागको पानीमें पीसकर लेपकरदे । फिर इनदोनोंका डमरु-
 यन्त्र बनाय ६-७ कण्डमिष्टीमें सन्धिबन्दकर धूममें सुपाकर
 चूल्हेपररखे । यह ध्यान रहे कि रसवाली हंडी ऊपर और
 विषवाली नीचेरहे । नीचे दोपहर तक मन्दाग्नि जलावे, स्वाज्ञ-
 शीतल होनेपर निवालकर योगिनी, भैरव, रससिद्ध, शेरात्रल
 और गुल्लोगोंकी विधिपूर्वक गन्ध-युग्म-नैवेद्य और बलिदानमे
 पूजाकर सोनेकी डिब्बीमें इसरो रखदे । इसमेसे १ रत्तीकी
 माना अदरसके रससे देनेसे महाघोरसमिपात, दण्डाऽलवक,
 अपस्मार, धनुर्वात और कण्डुकज्वरको यह नष्टकरताहै । तत-
 श्रेणहराजुगनके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़ोंके
 क्षयादिक रोगोंको नष्टकरताहै । पित्तप्रवाणव्याधिमें कपूरकेसाथ,
 कफप्रधानव्याधिमें निकटके चूर्ण अथवा कायकेसाथ देवे । इस-
 रसमें पित्तोंकी भावना आईहै और पित्तयुक्तसोमें अजक पानी
 सिरपर न डालाजाय तबतक उनकी शक्ति प्रकट नहीं होती,
 इसलिये परमेश्वर का नाम लेकर सन्देहमें छोड़कर जनतक
 रोगीको कम्पैदा न हो तबतक सिरपर पानी डाले । रसनीगर्मी
 किसीतह सहन न होसकीहो तो ऐसे स्थानपर सकेदचन्दन
 और शुद्धकपूर बारहवें हिस्सेका रसमें मिलाकरदे । ईश, ब्राह्म,
 राजूर, वशालोचन, शकर इनका प्रयोगकरे । श्लेष्मप्रधान सन्धि-
 पातमें दूधभातदे अन्य रोगवस्थामें दही, भात और क्षरदे ।
 इसके बाद ३ रोजतक इच्छानुसार खानेरोदे । रसवीर्यका
 नाश न हो इसलिये करेले खानेमें न दे ।

सुवर्ण, चांदी, ताम्र, फोलाद, रागा, सीसा, अभ्रक और
 कान्तकासत्थ ये रसतन्त्रमें लोह शब्दमें कहेजातेहैं । इनका
 मारण शिवजीके कहेहुए प्रकारसे में लिखताहूँ । इतीतरहमे
 मारणकर इन रसमें इनका योग करना तन यथावत फल होगा
 अन्यथा नहीं । पारेकी भस्मको जमीरी अथवा विजोरे या
 साधारण नीचके रसमें मर्दनकर सुवर्णके पारीक पत्रोंपर लेपकर
 द्वावगमयुष्टमे बन्दकर २० कण्डोंकी आचदे । इयमें पारेको
 सुवर्णकी बराबरलेना इयमें एकही पुष्टमे भस्म होगी । इतीतरह
 ताम्रमलोहकी भस्म करले । जह्जार पारेकी भस्म न हो वहापर
 सुवर्णमाक्षिकको शुद्धपारेके साथ धोदकर लोहके पत्रोंपर लेपकरे,
 पोदनेके लिये पूर्वांक नीचुओंका रसदे । इततरह करनेसे पूर्वांक
 ताम्रमलोहोंकी निष्क्य भस्म होगी । इनभस्मोंको समभाग
 मिलाकर आकके दूधरी १०८ पुष्ट, डंडायुहरके दूध, अमलो-
 निया और बछनागके द्रवोंकी ८-८ भागनाएँ देकर आकके
 दूधकी २१ भागनाएँ देनेसे यह लोह सिद्ध होंगे । इन्हींकी
 योगमें देना अन्यथा नहीं ॥ २३१ ॥

२४० प्रतापलङ्केधररसः (लघुः) (पद्यः)

सुन्दं भस्मीकृतं सूतमाहरेद् छिपलं बलिम् ।
 तावन्मानगन्तु सद्भूरा मर्दयेद्विद्यसद्वयम् ॥ १०७२ ॥

नष्टपिष्टवमापन्नं ग्राहयेद्रसराजकम् ।
 माहिपाऽक्षपुरादर्शं हृत्पर्णां तावती स्मृता ॥१०७३॥
 गद्याणत्रितयं ध्योपं पङ्कगद्याणा हरीतकी ।
 वचाकर्पं भद्रमुस्ता कर्पमेकं विडङ्गजम् ॥१०७४॥
 अश्वगन्धा कर्पकं स्याच्चित्रमूलत्वचस्तथा ।
 पत्रकं कर्पमेकं स्याद्रणुका कर्पकं तथा ॥१०७५॥
 मधुसारस्य कर्पः स्यान्नागकेसरकर्पकम् ।
 वत्सनाभं पलं प्रोक्तं भृङ्गी गद्याणकं भवेत् ॥१०७६॥
 सर्वमेतच्छृण्वन्चूर्णं सूतचूर्णनं मेलयेत् ।
 ततः प्रमदयेत्त्रीणि दिनान्यथ विभावयेत् ॥१०७७॥
 भृङ्गराजरसैः सप्तवारान् मुनिरसैस्तथा ।
 समुद्रफेनजैस्तद्भृत्पर्णांभायना तथा ॥१०७८॥
 ज्वालामुखीरसेनैव त्रिकटो विजयारसैः ।
 घाटाहपित्तेन तथा पित्तै रोहितमत्स्यजैः ॥१०८०॥
 माहिपे रौहितैः पित्तै मांयुरैश्छागलैस्तथा ।
 कृष्णसर्पस्य पित्तेन गरलेन च भायना ॥१०८०॥
 पारावतस्य पित्तेन हरिणस्य च पित्ततः ।
 भाययित्वा ततः कर्कं सम्पुटस्योर्द्धपात्रगम् ॥१०८१॥
 विलिप्य चाऽधोभाण्डस्य चूर्णितं निक्षिपेद्विपम् ।
 पूर्ववत्सम्पुटीकृत्य जुह्यामुपरि धारयेत् ॥१०८२॥
 मन्दाग्निं ज्वालयेत्पश्चात्प्रहरद्वयमाहतः ।
 जुह्या यन्नं समुत्तार्य स्वाङ्गशीतलतां गतम् ॥१०८३॥
 उद्धृत्य यन्त्रात्सूतेन्द्रं खल्वभये विनिक्षिपेत् ।
 मर्दयित्वाऽऽर्द्रकरसै र्वटिकास्तण्डुलोपमाः ॥१०८४॥
 कृत्वा करण्डकं स्थाप्याः शीतं वायुं विवर्जयेत् ।
 सत्रिपाते द्दोतैकां निःसञ्चत्यमुपागते ॥१०८५॥
 आर्द्रकस्य रसेनैवाऽनुपातं चार्द्रजं रसम् ।
 रसेश्वरप्रदानेन दन्तात्कीलस्तदाभवेत् ॥१०८६॥
 सर्वथा ग्रहणाऽशक्तं निःसंशत्वेऽथवा तथा ।
 आर्द्रकस्य रसेनैव सूतं सम्मर्द्य कर्णयोः ॥१०८७॥
 नात्यां सम्भृत्य प्रथमेघ्रासाविवरयोस्तथा ।
 लिङ्गद्वारेऽथवा कुर्याद्भ्रमर्ष्यं वा विद्यार्यं च ॥१०८८॥
 रसं निक्षिप्य मृद्धीयाद्विटिकाद्यं प्रयत्नतः ।
 बल्लाद्वारेणवा कुर्यात्सूतयोगं निपग्वरः ॥१०८९॥
 रसप्रयोगमात्रेण नेत्रमुद्गादयेत्कमात् ।
 कर्णाभ्यां संश्रुणोत्येवं दन्ता उत्कीलिताः क्षणात् १०९०
 सावधानस्ततो दद्याद्रसेन्द्रं तण्डुलाऽयधिम् ।
 आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्मुद्गरसं ततः ॥१०९१॥
 धमनं यदि जायेत जीवत्येव न संशयः ।
 यान्तिश्च नैव जायेत म्रियते च विनिश्चयः ॥१०९२॥
 जातायामय धान्स्यान्तु पानीयं ढालयेद्दुह्नु ।
 यावच्छैत्यं स्वभावेन शरीरे सम्प्रजायते ॥१०९३॥
 दाधिकं भोजयेत्पश्चाच्छकंरासहितं हितम् ।
 घटिकाभिश्च तिसृभिः सत्रिपातो नियतं ॥१०९४॥

ताम्बूलपत्रेण समं घटीमेकां ततोऽर्पयेत् ।
 क्षयरोगेषु योक्तव्यो नागवह्नीवलेन वै ॥१०९५॥
 क्षयरोगं निहन्येद्यं प्रहरणीरोगमुत्कटम् ।
 जीरकेण समं दद्यादुष्मे चैवाऽऽजमोदकैः ॥१०९६॥
 अश्वश्च राजिकाशाकं राजिकासंयुतं तथा ।
 तैलं घृत्नाककारीरं कर्कोटीकारवेष्टकौ ॥१०९७॥
 कलिङ्गमथ कृष्णभाण्डं यत्किञ्चिर्भिन्दात्मकम् ।
 वर्जयेदम्बलसेवाञ्च दिवा स्वापं तथैव च ॥१०९८॥
 रसस्योपद्रवेऽत्यर्थं खण्डजोरन्तु भक्षयेत् ।
 अथवा चणकाभलेन जीरकं खण्डसंयुतम् ॥१०९९॥
 कलम्बं श्वेतसञ्जञ्च अश्वगन्धामयापि वा ।
 सर्वथोपद्रवश्चेत्स्याद्भ्रमनं कारयेद्विपक्व ॥११००॥
 शर्करां दधिंसंयुक्तां खादयेद्यथा पयः ।
 तवरजेन संयुक्तमाकण्ठं पाययेद्विपक्व ॥११०१॥
 शीतोदकेन च स्नानं सर्वथा कारयेत्तथा ।
 श्रीखण्डेन प्रलिम्पेत्तं निर्याते स्वापयेत्ततः ॥११०२॥
 वितरेद्दर्द्ररुक्माणि व्यञ्जनानि च वर्जयेत् ।
 एवं प्रयोगमात्रेण सर्वं रोगाः प्रयान्ति वै ॥११०३॥
 यस्य रोगस्य यो योगस्तेनैव सहयोगतः ।
 रसेन्द्रो हरति व्यधिं नरकुञ्जरवाजिनाम् ॥११०४॥
 श्लेषेप सूतकः प्रोक्तो देवीशास्त्राऽनुसारतः ।
 सत्रिपातादिरीपाणां विनाशकरणे क्षमः ।
 लघुः प्रतापलङ्केशः कथितोऽयं महारसः ॥११०५॥
 रसात्, सत्रिपाते ।

भाषा—शुद्ध करके भस्म किया हुआ पारा और शुद्ध गन्धक २-२ पल लेकर दोरौजु मर्दनकर फिर नष्टपिठी किया हुआ पारा २ पल इसमें मिलाकर मर्दनकरदे । फिर भेसापुगल और अमलोनिया १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल ६-६ मासे, हरे ३ तोला, कच, नागरमोथा, विडङ्ग, असगन्ध, चित्रकमू- लकीछाल, पद्मन, रेणुका, महदुष्काहीर अथवा मुलहठी का सत्त्व, वे प्रत्येक १ कर्प, शुद्ध घटनाग १ पल, भंगरा ६ मासे, इनसक्का बारीक चूर्णकर पूर्वकबलीमें मिलाकर भंगदेकरसमें ३ दिन, अगस्त्य, समुद्रफेन, अमलोनिया, ज्वालामुखी, त्रिभद्र, भाग इनकेरस अथवा क्वाथोनी ७-७ भावनाएँ देकर घुसर, रोहमच्छली, भेसा, रोस, मोर, बकरा, कालाघाष इनके पित्तोकी ७-७ भावनाएँ और काले चाँपका जूहर, कजूर तथा हरिणकेपित्तोकी १-१ भावना देकर एकह्मीमें लेपनकरदे । दूसरी ह्मडीमें पूर्ववर कहेहुए विषोमेंसे त्रिसोएकका चूर्णकर पोरनी भस्मके बराबर रखदे । फिर इनका इमरूप्यन बनाय बूलेपर विपनाली ह्मडीको ररादे और दोषहरतक मन्दाग्नि जलावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर रमनो निकालकर अदरकके रससे १ तोजु मर्दनकर १-१ चावलभरती गोडियां बनाकर शीथीमें रखदे । यह ध्यान रखते कि यन्त्रमेंसे रमनो ऐसे निवातंपानमें निकाले कि जहाँ वायुमा अधिक रुकां न हो ।

शीशीको हमेशा शीत और वायुमे बचावे । इसमेंसे १-१ गोली रात्रिपातमें रोगीको सञ्चारहितहोनेपर अदरखके रसके साथ देकर ऊपरसे अदरखनाही रस थोड़ासा और पिलावे । यदि अत्यन्त वेहोशी होनेकी वजहसे सुंहमें दवा न जासकीहो तो अदरखके रसमें एकगोली मिलाकर कानोंमें डाले और एक दुमुही नली नाकोंमें लगाकर रसको सुंहमें भरकर नलीद्वारा नाकोंमें फूँके दे । अथवा लिङ्गके रास्तेसे पिचकारी द्वारा दवाको चढ़ावे अथवा शूके मध्यमें पाछेदेकर १ गोलीको बारीक पीस उसजगह पर आधी घड़ी तक बर्षण करे, इसीतरह ताड़ पर भी प्रयोगकरे । रसप्रयोगप्रभावसे चेतना आकर नेत्रोंको उपाहेगा, और कानोंसे मुनने लगेगा और दात खुलजायगे । इसतरह सञ्चार प्राप्तहोनेके बाद १ गोली अदरखके साथ खिलानर मूंगका यूप देना उसके यदि वमन हो जाय तो समझना कि रोगी बच जायगा यदि वमन न हो तो यह नहीं जीवेगा इसतरह निश्चय ही समझलना । वान्ति होनेपर मल्येपर थंडा पानी डाले । जन असव्य होकर शरीर कापनेलगे तब पानीका डालना बन्दकर शक्करके साथ दहीभात दे । इसतरह ३ गोलीसे सत्रिपात दूर हो जाताहै । अखीरमें ताम्बूलके साथ १ गोली देकर बन्दकरदे । इसीतरह ताम्बूलमें १-१ गोली देनेसे क्षय निवृत्त होताहै । सद्ग्रहणीमें जीरा, गुल्ममें अजमोद अनुपान समझना । पथ्य अन्न देना । राईका शाक अथवा राईकी चीजे, तैल, वेणन, करीर, ककरोड़ा, करेला, ताम्बूल, कोहळा, छोटी वड़ी सब तरहकी ककडी, खटाई, दिनका सोना इनको छोड़ देवे । इस रसके खानेसे वान्ति प्रवृत्ति उपद्रव हों तो जिरिका चूर्ण शक्कर मिलाकर देवे अथवा खाड़ और जिरिके ऊपर चनेका खार देवे । कड़म्य (कबमीरी) का शाक, बच अथवा असगन्ध देवे । अगर किसीतरह वमन वान्त न हो तो वमनकारक पदार्थ देकर पेटको ताफ करे । उसके बाद शकर और दही खानेको दे अथवा दूधमें जवास की शक्कर डालकर कण्ठक भरपेट पिलावे । इसमें खान हमेशा ठडे पानीसे कराना चाहिये । दाह होनेपर सफेद चन्दनका लेपकर निर्वात त्यागमें मुलावे और भीगेकपडे पहिनावे । इसतरह प्रयोग करनेसे समस्तरोग दूर होते हैं । जिसरोगका जो अनुपानहै उसके साथ देनेसे मनुष्य, हाथी और घोड़े वगैरह के सब रोग अच्छे होतेहै । देवीशास्त्रके अनुसार यहरस कदा गयाहै ॥२४०॥

२४१ प्रतापलङ्केश्वररसः (सप्तमः)

गन्धेशकफलकव्योपजातोफलद्वलानि च ।
अभ्यमाराऽऽकलकञ्च समं सर्वं विचूर्णितम् ॥११०६॥
चित्राऽऽद्रकजलैस्त्रिस्त्रि भांविंत्तं मुटिकीरुतम् ।
चल्लमात्रं निहन्त्यागु पाण्डुवातभगन्दरान् ॥११०७॥
र. का, पाण्डुतोषे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कायफल, सोठ, मिर्च, पीपल, जायफल, जावित्री, दूधमें स्वेदन कीहुई सजेद कनेरकी

जड़ और अकलकुरा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर चित्रकमूल और अदरख के क्वाय और द्रवसे ३-३ भावनाएं देकर ३-३ स्तीकी गोल्या बनाकर रखजोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके साथ देनेसे पाण्डु, वातव्याधि, और भगन्दर नष्ट होतेहैं ॥ २४१ ॥

२४२ प्रतापलङ्केश्वररसः (अष्टमः)

गन्धं ताप्यज्जतालकञ्च गगनं तीक्ष्णं समांशोक्तं,
ताम्रं चूर्णितभागमिश्रितगर्गं सर्वैर्द्विनिघ्नं रसम् ।
पक्षीकृत्य सुसिन्धुवारहृतभुग्यावासकक्रोडिका-
शिपूसूरणवाह्निमान्यहरणीकृष्णारसै र्मर्दयेत् ॥११०८॥
कृत्वा तद्वरगोलकं सुशिशिरं गन्धाश्मसिद्धार्थजे-
स्तैले मध्वविपाचितं च सुधिया युक्त्या च बद्धा घटीः
भूतोन्मादसुसन्निपातजगदान् शूलानुदावर्त्तमान् ।
गुल्माऽपस्मृतिजात्रुजश्व सकलान् हन्यादुधै योजितः ॥
रसेन्द्रम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, सोनामाची और हरिताल, अश्रक और फोलादकी भस्म १-१ भाग, ताम्रभस्म और शुद्ध बध नाग चूर्ण ३ भाग, पारा सबसे दूनालेकर कजलीकरले फिर संभाव, चित्रक, जवाला, ककोड़ा, सहिजन, सुरण, हर्द, पीपल इन सबके स्वरस अथवा क्वाथोंकी १-१ भावना देकर गोला बनाय सुखाकर शरावतम्बुटमें बन्दकर कुन्डमुटकी आच दे । स्वाहशीतल होनेपर शुद्ध गन्धक और पीली सरसोंका तैल इनमें पीञ्जलीके प्रकारसे पकावे । स्वाहशीतल होनेपर मधु वगैरहके साथ २-२ स्तीकी गोल्या बनाकर रखजोडे अथवा वेसेहो रहनेदे । इसमेंसे १ माना उचितानुपानके साथ देनेसे मूलोन्माद, सत्रिपात, शूल, उदावर्त, गुल्म, अपस्मार इनसबको यह गष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ प्रतापलङ्केश्वररसः (नवमः)

रसगन्धाऽऽमृतं नागं वद्धं चेलुकद्वयम् ।
जम्बीराऽऽद्रकसंयुक्तं मापमान्नु दापयेत् ॥१११०॥
मागध्या वचया युक्तं सर्ववातनिहन्तम् ।
सर्वज्वरहरं श्रेष्ठमन्यैश्च विपमोक्तम् ॥११११॥
सूतिकावातसम्भूतं हन्ति शीघ्रं न संशयः ।
प्रतापादिकलङ्केशः सर्वरोगनिवारणः ॥ १११२ ॥

र. क. गो.,

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बटनाग, लीसे और रागे कीभस्म, इशुमूल, त्रिफुट्ट, येचय समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीकर अन्य सन्धीजोंको मिलाकर रखजोडे । इसमेंसे १-१माशा जमीरी अथवा अदरखके रसके साथ अथवा पीपल और वचके साथ देनेसे समस्तवातविकार, अन्यदवाओंसे विपमताको प्राप्तहुआज्वर, सूतिकावात प्रशन्ति नष्टहोतेहैं २४३

२४४ प्रतापलङ्केश्वरसः (दशमः)

द्विपलं रसञ्च गन्धं
 मृदितं कज्जलयेषु चतुःपलन्तत् ।
 द्रवस्य पलं पुरस्य
 विक्रूनां निदधीत साऽर्द्धकर्म ॥ १११३ ॥
 हीरामणोरथ पलञ्च शिशाञ्च मुस्ता
 मेथी विडङ्गघनचित्रकपत्रकौन्तीः ।
 मधूकसारगजकेशरवाजिगन्धाः
 कर्णोन्मिताः पृथगमू विदधीत चूर्णम् ॥ १११४ ॥
 विपं विघृष्याऽभ्युभिरर्द्धनिकं
 तसिकमेतत्सकलं विमृष्ट ।
 भृङ्गेन सामुद्रकफेनकापां-
 सजैर्मुनिन्यूषणभाग्यंवीभिः ॥ १११५ ॥
 ज्वालामुत्तीभाग्यंनलाऽऽर्द्धकैश्च
 पृथक् पृथक् सप्त विभाषनाः स्युः ।
 मयूरमत्स्याऽऽज्वराहवाह-
 द्विपाञ्च पित्तेः पृथगेकवारम् ॥ १११६ ॥
 भाण्डद्वयं सम्पुटितं निघाय
 रसं विलिम्बेदुपरिस्थभाण्डे ।
 विपञ्च गद्याणमितं विघृष्टं
 मन्थस्यभाण्डे विनिघाय रुद्धा ॥ १११७ ॥
 चुड्यां विपाच्य शिरिणा मृदुनाऽहरेकं
 शीतं समाधिरुतमर्दितमार्द्रकेण ।
 कुर्वीत तण्डुलमितान्वटकान्प्रताप-
 लङ्केश्वरो भजति सिद्धिमयं रसेन्द्रः ॥ १११८ ॥
 तत्रैकं घटकमुपास्य घेद्यवयोः
 प्युजीवेज्जगति विजित्य सन्निपातम् ।
 नासायामथ विधमेदमुप्य चूर्णं
 व्याघाते करणगतेहनुप्रदे च ॥ १११९ ॥
 कृत्या तण्डुलमाग्रमन्तविवशे मौद्गन्तु पूर्णं पिबेत्,
 पान्ती जीवति शीतलेन पयसा सिकः प्ररुग्पाऽवधि ।
 उष्णैश्चावथ भक्षिते दधिसिताभक्तं मुहूर्तद्वया-
 द्ब्रह्मानः सुप्तमेति रोगहरणादुल्लाघफुल्लाननः ॥ ११२० ॥
 प्रत्यहं च घटकेकमिहाश्रन्यःमकुण्ठयनमुत्तिजयी स्यात् ।
 क्षुयदा भवति यत्रन काले क्षेपतोऽभ्युहरेत् रजाधर्म ॥
 व्योषेण धातरोगेऽद्याद्गृह्यणां जीरसंयुतम् ।
 नोष्णं भक्षेद्भ्रसत्यातो यथां जीरञ्च भक्षयेत् ॥ ११२१ ॥
 मूलं वा पाजिगन्धायाः पाण्डुरं वा कदम्बकम् ।
 चणकाऽऽम्लपट्टोलाऽम्भो जीरजातीकलैः पिबेत् ॥ ११२२ ॥
 अतिव्याप्तौ घामतश्च दुग्धं दाकरया पिबेत् ।
 मयुराऽऽहात्मशोयासंसिकः शीतलाऽम्भसा ११२३
 मलयज्वरसलितो मालतीमहिकाभिः
 परिमलितमुशीतयासमप्यास्य शीतम् ।

गलमलितमरालोदारकपूरहारः,
 शितमृदुपरिधानं सन्दधानो जलाऽऽर्द्रः ॥
 समणिघलयुक्चाचालमञ्जीकराप्रातः,
 कलितसलिलयन्त्रामोच्छलच्छीकरार्द्रः ।
 किसलयशयनीये कीर्णपुष्पे शयानः,
 परिहरति रसातिप्राप्तिजं देहदाहम् ॥ ११२६ ॥
 र. मृ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल, गन्धक ४ पल, शुद्ध शिंगरिफः
 और गुगल १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीपल डेट १। कर्प, हीरा,
 भस्म १ पल, हरे, नागरमोषा, मेथी विडङ्ग, बन्दाल, चित्रक, पत्रज,
 रेणुमा (रोष पहाड़ी), महुएझड़ी, नागकेशर, असगन्ध १-१
 कर्प लेशर सबका बारीक चूणकर पारे गन्धकी नीलगणै कजलीमें
 मिलाकर पानीमें पिसेहुए २ मासे बटनागवे द्वसे एक भावना
 देवे । फिर भंगरा, समुद्रनेन, लाल कपासके फूल, अण्डस्य,
 त्रिकटु, सफेददन्, अमिषिराता, भारती, त्रिपक और अदरखके
 यथासम्भव स्वस्त अथवा कापोंसे ७-७ भावनाएं देकर मोर,
 मज्जी, बन्सा, सुभर और भेंसे के पित्तोंरी १-१ भावना
 देकर एक पकेके भीतर तमाकका लेप करदे । दूसरे पडेमें ६
 मासे पिसाहुआ शुद्ध बटनाग विटाकर पूर्णपकेको ऊपर रखकर
 उमस्यन्त्र बनाय ६-७ कपड्मिठीसे सन्धिबो बन्दकर मुखार
 घुल्लेपर रत एक दिनकी बहुतमन्द आंचदे । स्वाङ्गशीतल
 होनेपर निमालकर अदरखके रसकी एर भावना देकर १-१
 चावलभरकी गोलिया बनाय छायाशुभ्रकर रखडोके । इनमेंमे
 १-१ गोली बारीक पीसर सन्निपातमें नम्य देवे तो कानोंमे
 सुनने लगे और हनुप्रदसे निरुत हो । कण्ठ सुलनेपर १ गोली
 अदरख बगैरहके राफेगाय देकर मूणका दूध पिलावे । यदि
 वमन हो जाय तो समझना कि जीवेगा, अन्यथा नहीं । दाह
 मान्द्र होनेपर बन्ध होनेतर तिरपर टैट पानीकी घारादेवे ।
 कालागन्ना तुयाके दो पडीवेवाद् दही धार और भात रानेको
 देवे । इसके सिलानेमे सन्निपाती रोगरहित होजाताई ।
 इस रसकी रोज एरएक गोली खिलानेमें राजयश्म, इष्ट, सुप्त-
 गात्रता प्रशुति नष्ट होतेहै । इनवे देनेके बाद जन्मद भूत न
 मान्द्र हो सततक न राय । कातोगमें त्रिष्टुके साथ, मन्दीमें
 औरके साथ देवे । रसयोगके बाद गरमचीजें न राय ।
 रसकी शरीरमें पैलानेके लिये बच, जीरा, अशगन्धकी जड़,
 सफेदकदम्बरी छाल, इनमेंसे किमी एरके २ मासे चूणको घनेक-
 क्षार, पत्तलके स्वसा, जीरा तथा जायकउठे साथ प्रशुतिके,
 साथ पीवे । यदि रसका अधिक अठर होनेमें वमन होने लगा
 हो तो धार मिला हुआ दूध पिलावे, मयुर आदार देवे, शीतल
 जलकी शिरपर घाटा टोके, बन्दनघातेपकरे । मालती और
 मोषेर प्रशुतिने सुगन्धित और सगदी टो बगैरहमें टड दिचे
 हुए मरानमें बीटे । कपुली माला, सफेद और बारीक कर्पे
 पदिने । गुलाब जल बगैरहमें करणोंको लर रणे । मणिपुत्र
 कडवाकी भासातु और उठलने हुए कर्णोंके पुंराके दुग्धो-

वाली स्त्रियोंके हाथों में लिये हुए गुलाबजलकीरहके फड़हातोंसे उड़ते हुए जलकणोंसे भीगता हुआ नवीन पत्रोंसे निर्मित, मुगन्धितपुष्पोंसे आच्छादित बिजौनेमें सोनेसे रसकी अतिव्याप्तिसे पैदा हुआ देहका दाह दूहोताहै ॥ २४४ ॥

२४५ प्रतिज्ञावाचकोरसः

सूतं शुद्धं भागमेकञ्च तालाद्
द्वौ भागौ चेद्वेदसङ्ख्या शिलायाः ।
ताम्रस्यैवं भागयुग्मं प्रकुर्या-
द्ब्रह्मातं वै वेदभागं तथैव ॥ ११२७ ॥
अर्कक्षारैर्भाचयेच्च त्रिवारं
कृत्या चूर्णं कारयेद्गोलकं तत् ।
स्यालीमध्ये स्थापितं तच्च गोलं
दत्त्या मुद्रां भस्मना सैन्धवेन ॥ ११२८ ॥
श्रूमस्यैवं रोधनञ्च प्रकुर्या-
च्छाणैर्दद्यात्स्वेदने मन्दचह्नौ ।
पश्चात्तोयेनैव भाव्यञ्च चूर्णं
गोलं कृत्वा मन्दचह्नौ विपाच्य ॥ ११२९ ॥
पश्चादेनं भक्षयेद्द्वै रसेन्द्रं
चलञ्चैकं शर्कराचूर्णमिध्रम् ।
तद्वत्कृष्णामाक्षिकेणैव जूर्ति
ह्न्यादेतत्सर्वदोषोपस्थितां वै ॥ ११३० ॥
र. प्र. सु., र. (मा.) ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, शुद्ध हरिताल २ भा., मै-
सिल ४ भा., ताम्रभस्म २ भा., मिलावां ४ भा. लेकर मिला-
वोंको बारीक बूटले और पारे प्रथमकी कजलीकरके मिलादे ।
फिर इसमें आम्का दूध डालकर ३ दिनतक धूपमें मर्दनकरे और
गोला बनाकर ६-७ कपडिगिडीकीहुई हंडीमें रखकर गोलैको
एक ढक्कीसे बन्दकर उसपर छनीहुई राखभरदे । राखपर बारीक
पीसाहुआ सेंधानमक रखकर जल्लिकण्डोंकी ४ पहतरक मन्द
आच देवे । धूना न निकलने पावे, कहींसे निकलता हो तो
नमक अथवा भस्मसे बन्दकरदे स्वाज्ञशील होनेपर गोलैको
निकालकर केवल पानीसे घोटकर पूर्ववत् गोला बनावे और ४
पहरकी मन्दाग्निसमें परावे । स्वाज्ञशीलहोनेपर निकालकर
रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती शङ्कर, पीपल अथवा शहदके
साथ देनेसे यह सब प्रकारके ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ २४५ ॥

२४६ प्रतिश्यायहरोरसः (गन्धमर्दनः)

सुलभासमगन्धकसूतवर्चं
गिरिकर्णिरसे कृतमर्दनकम् ।
चपलारसशुण्डिरसैस्त्रिद्विनं
शुद्धितं घनघोणशजातिहरम् ॥ ११३१ ॥
रसेन्द्रम्., प्रतिश्याये ।

भाषा—सुल्सी, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर
सुल्सी का बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें

मिलाकर कोयल, पीपल और सोंठ के स्वरस अथवा हाथोंसे
१-१ रोज मर्दनकर १-१ मासेकी गोल्या बनाकर रखजोड़े ।
इसमेंसे १-१ गोली गरम दूधके साथ लेनेसे प्रतिश्याय
(शुक्राम) दूरहोताहै । नाभमें कीड़े पड़ेहों अथवा घाव
होगयाहो तो इसगोलीको कोयलके रसमें चिमकर नस्यदे और
घावपर लगावे, शोथ हो तो ऊपरसे लेपकरे ॥ २४६ ॥

२४७ प्रदरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

लोहभस्म द्विकर्पं स्याद्रङ्गं कर्पमितं भवेत् ।
उत्परं कैरवाख्यञ्च गैरिकं घृतपाचितम् ॥ ११३२ ॥
शालमलीशालनिर्यासौ कर्पमानौ पृथक्पृथक् ।
दूर्वादाडिमधात्रीणां स्वरसैः सप्त भावयेत् ॥ ११३३ ॥
पापाणभेदमापैस्त्रिं चर्तुं चर्तुं प्रयोजयेत् ।
विविधे प्रदरे घोरे वैद्यवृन्दविवर्जिते ॥ ११३४ ॥

नू. क. प्रदरे ।

भाषा—लोहभस्म दोकप, बज्रभस्म और खपरिया, अभावमें
जस्तकी भस्म, कहरवा, धीमें पकायाहुआ सोनागुरु, मोचरस, राल,
ये प्रत्येक १ कप लेकर सबका बारीक चूर्णकर दूध, अनार और आव-
लेके स्वरसोंकी ५-७ भावनाएं देकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३
रत्ती पापाणभेदके चूर्णके साथ देकर शङ्कर मिलाकर दूध पिलानेसे
और केवल दूधभातका भोजनमें उपयोगकरनेसे नानाप्रकारके
प्रदर जिनको कि वैद्योंमें असाध्य कहकर छोड़ दियाहो उनको
यह नष्टकरताहै । पापाणभेद देसभेदेसे बहुततरका आताहै
परन्तु जो कि हिमाद्रि प्रथति ठंडे प्रदेशोंमें बटपत्रके सद्य
पत्रवाली छोटीवृत्ता पत्थरोंमें सटीहुई रहतीहै उसका नाम
पहाडीलोग 'पापानभेद', कहते हैं प्रायः समीलोग जानतैंहै ।
बचा के सदरशुद्धके लालरङ्गके वाजारमें मिलतेहैं इसीका प्रयो-
गकरनेसे इसमें यथार्थ लाभ होगा । यह रस तैयार नहो तो
३ रत्ती मुदांसज शङ्करमें मिलाकर फरफड़े और पापाणभेदकी
चूर्णमें बराबरकी शङ्कर मिलाकर ३ मासे ऊपरसे फंकाकर दूध
पिलादे । इस प्रयोगसे बहुतही विलक्षण फायदा होताहै
परन्तु कच्चा मुदांसज अधिक दिन तक नहीं देना, अधि-
देनेसे वान्ति होतीहै और शरीरमें एकताहकी ऐंठन पैदाहोतीहै
इसलिये शुद्धकरके देना चतुर्थीस सेंधानमक मिलावे चौथुन
पानी देकर १ प्रहर घोटके रखदे दूसरे दिन पानी को निकाल-
और नवीन सेंधानमक मिलाकर घोटके रखदे ऐसे २१ रोज
करनेसे यह सपेद होजाताहै और तमाम दुग्धोंसे रहितहो
जाताहै यह औषदशिक विकारों की परमौषध है ॥ २४७ ॥

२४८ प्रदरान्तकलोहम् (द्वितीयम्)

हरितालं लोहताम्रं बद्धमम्रं वराटिका ।
त्रिकटु त्रिफला चित्रं विडङ्गं पटुपञ्चकम् ॥ ११३५ ॥
चविका पिप्पली शहं वचा ह्युपपाकलम् ।
शटी पाठा देवदारु द्राघिडी वृद्धदारुम् ॥ ११३६ ॥

पतानि समभागानि सञ्चूर्ण्य वटिकां कुरु ।
शर्करामधुसंयुक्तं घृतेन भक्षयेत्युतः ॥ ११३७ ॥
रक्तञ्च प्रदरं हन्याच्छ्वेतपीतञ्च नीलकम् ।
योनिशूलं कुक्षिशूलं कटिशूलञ्च सर्वजम् ॥ ११३८ ॥
मन्दाग्निमर्चवि पाण्डुं कृच्छ्रभ्वासञ्च कासरम् ।
आयुःपुष्टिकरं बल्यं रजोवर्णप्रसादनम् ॥ ११३९ ॥
र सं, र क, र सु, प्रदे ।

भाषा—दृष्टिताल, लोह, ताम्र, वज्र, अभ्रक, पीलीकौडी इनकी भस्में, त्रिफळ, त्रिकला, चित्रकमूल, विडङ्ग, पाचौनमक, चव्य, पीपल, शङ्खभस्म, वच, हाठवेर, कुठ, कचूर, पाठा, देव दाह, छोटी इलायची और विधारा सब समभागलेकर एक जगह मिलाकर आवलेके रससे १-१ मासेकी गोलिया बना कर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोलीकाचूर्ण शर्कर, मधु और घृतमें मिलाकर खानेसे रक्त, श्वेत, पीत और नील प्रदर, योनिशूल, कुक्षिशूल, कटिशूल और साधारणतया समस्त शूल, मन्दाग्नि, अरचि, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, श्वास, कास इन सबको नष्टकर आयु और पुष्टिको बढाताहै रजको साफ करताहै और शरीरके वर्णको अच्छा करताहै ॥ २४८ ॥

२४९ मद्रान्तकोरसः

शुद्धः सूतस्तथा गन्धो वङ्गभस्म च सौष्यकम् ।
रूपरञ्जं घराटञ्च शाणमानं पृथक् पृथक् ॥ ११४० ॥
तोलकत्रितयञ्चैव लोहचूर्णं क्षिपेद् बुधः ।
द्विनैकं कन्यकानरिं मेर्द्वेयञ्च भिषग्वरः ॥
असाध्य प्रदरं हन्ति भक्षणघ्राऽप्रसशयः ॥ ११४१ ॥
र स, र सु, घ, र वि, र च, र र, व रा, भै र, प्रदे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वज्र, चादी, खपरिया, पीलीकौडी इनसबकी भस्में ४-४ मासे और ३ तोले लोहभस्म लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर १ दिन धीकुंआरके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधवरीरहके साथ देनेसे असाध्यभी प्रदर दूरहोताहै ॥ २४९ ॥

२५० मद्रारिरसः (प्रथमः)

रस गन्धं सीसं मृतमिति समस्तेस्तु रसजं,
समानं सर्वैः स्यात्तुलितमपि लोभं वृपरसैः ।
दिनं पिष्टं नाम्ना प्रदररिपुत्रेषांऽपहरति,
द्विवहः श्त्रौत्रेण प्रदरमतिदुःसाध्यमपि च ॥ ११४२ ॥
ध्रु यो त, वै, र, र च, र की, वै क, नि र., रसाय
नस, यो र, प्रदे । रसायनस. प्रदररिपुत्रिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा नागभस्म १-१ भाग, रसौत ३ भा, लोघ ६ भा, लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर अदुपाके रसमें १-२ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साथ देनेसे दुःसाध्यभी प्रदर नष्ट होताहै ॥ २५० ॥

२५१ मद्रारिरसः (द्वितीयः)

पारद्गन्धकटङ्गानेकैकभागसम्मिश्रात् ।
चतुरो भागात्रसकाद्गोद्रेण विभायितान् ॥ ११४३ ॥
मधुना सुभायितं तत् स्त्रीपुरुषाणाञ्च गुह्यजात्रोगान् ।
हन्याद्ब्रह्मप्रभितं दुग्धाऽनुपानतो नियमात् ॥ ११४४ ॥
र सं, प्रदे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा १-१ भाग, खपरिया ४ भाग, लेकर सबकी कजलीकर गायके दूधसे १-२ रोज मर्दनकर मधुमें ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूधके साथ देनेसे स्त्री और पुरुषोंके गुप्त-रोगोंको यह नष्ट करताहै ॥ २५१ ॥

२५२ मद्रारिरसः (तृतीयः)

मोचं निशां मधुकर्षरवङ्गभस्मा-
न्यादाय चूर्णमिह सूक्ष्मतमं विधाय ।
पन्वाऽर्कपत्रजजलेन समं गृहीतः सर्वा-
ण्यसौ रसवरो प्रदारणि हन्ति ॥ ११४५ ॥
र सु, र. स, प्रदे । र सं मधुकादिचूर्णमिति नाम ।

भाषा—मोचरस, हल्दी, दाखल्दी, मुल्हठी, खपरिया और वज्रभस्म समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखछोडे । इसमेंसे १ मासा चूर्ण आकके पत्रेदुप पत्तोंके जलके साथ देनेसे यह समस्त प्रदरोंको दूर करताहै ॥ २५२ ॥

२५३ मद्रारिलोहम्

वत्सकस्य तुलां सम्यग्जलद्वेगे विपाचयेत् ।
अष्टभागाऽवशेषान्तु कषायमवधतारयेत् ॥ ११४६ ॥
घस्त्रपूते घनीभूते द्रव्याणीमानि दापयेत् ।
समह्रां शात्मल पाठां विल्वं मुस्तञ्च घातकौम् ॥ ११४७ ॥
अरुणां ध्योमकं लोहं प्रत्येकान्तु पलंपलम् ।
घल्लमानं प्रयुञ्जीत कुशमूलपयो ह्यनु ॥ ११४८ ॥
श्वेतं रक्तं तथा नीलं पीतं प्रदरमुत्कटम् ।
कटिशूल कुक्षिशूल देहशूलञ्च सर्वगम् ॥ ११४९ ॥
मद्रारिरस्यं लौहो हन्ति रोगान् सुदुस्तरान् ।
आयु पुष्टिकरञ्चैव बलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ ११५० ॥
भै र, घ, प्रदे ।

भाषा—इहाकी छाल ४०० तोले लेकर १६ सेर पानीमें १कावे । अष्टमांशाऽवशेष रहनेपर ज्वारकर धानले और अग्निकर चढाकर पराये । जब गाढा होजाय तब मज्जीठ, लज्जावती, मोचरस, पाठा, बेलगिरी, नागरमोथा, पावईने फूल, अतीष, अभ्रक और लोहभस्म ये सबके १ पल मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोली कुशकी जड़के काठेके साथ देनेसे शपेट, लाल, नीला और पीला दुस्तर प्रदररोग, कटिशूल, कुक्षिशूल और समस्त देहमें फैलनेवाला दुःसाध्य प्रदररोगवधुन समस्त दुस्तररोगोंको यह नष्टकर आयु, पुष्टि, बल, वर्ण और अग्निरो बढाताहै ॥ २५३ ॥

२५४ प्रभाकरवटी

माक्षिकं लोहमध्रञ्च तुगाक्षीरं शिलाजतु ।
क्षिप्त्वा खलोदरे पश्चाद्भावयेत्पार्थवारिणा ॥११५१॥
वल्लह्यमितां कुर्याद्वटीं छायाविशोपिताम् ।
प्रभाकरवटी सेयं हृद्रोगानखिलाजयेत् ॥ ११५२ ॥
भे र, हृद्रोगे ।

भाषा—शुद्ध सोनामारी, लोह और अन्नकमल, वस-
लोचन, शिलाजीत, सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर अजुंनकी
छालके स्वरस अथवा वाथसे १ दिन मर्दनकर ६-६ रतीकी
गोलिया बनाकर छायाशुष्कर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली
अजुंनकी छालके वाडेके साथ देनेसे यह हृदयके तमाम रोगोंको
दूर करती है ॥ २५४ ॥

२५५ प्रभावतीवटी (प्रथमा)

हेमाऽम्राऽऽलकतीक्ष्णताप्यकमलान्येषां समं सप्तकं,
सूतञ्च द्विगुण विशोधनवधूस्तुवह्निशोभाजनम् ।
पाठासूरणासिन्धुवारविजयैरण्डद्रवैर् मर्दितं,
तेले कङ्कुणिगन्धके पट्टभवे कल्काद्वटीं कल्पयेत् ११५३
प्रभावतीति कथिताऽऽद्रकद्रवैर् निषेविता ।
ततश्चाऽनुपिवेत्तोयं दशमूलप्रसाधितम् ॥ ११५४ ॥
सपिप्पलीकं पिवतो जलज्ये-
न्मरुद्धिकारण्युदरण्यपस्मृतिम् ॥
शुलमानुदावर्तचर्चं चलाऽचलं
शूल विसूचीप्रभयं धनुश्चलम् ॥ ११५५ ॥

र र. स, वातव्याधौ ।

टि०—तेले वहुणिगन्धके पट्टभवे कल्काद्वटीं कल्पयेदिति पद स्वार्था-
वबोधेऽन्यथं प्रतिभाति, तत्र छन्दोरोधोर्भाषे पद्युष्पन्नस्य दोषोऽस्ति ।
तिलतेले ज्योतिष्मतीगन्धकी समानी निक्षिप्य मसुष्ट कृत्वा बन्धोत्प्रेक्ष्णीप
नेत् । स्वाङ्गशोथलाङ्गते श्वेन मस्य निष्कास्य तेन प्रतिमार्णीय धार कृत्वा
तेन वटीं प्रकल्पयेदिति पवरचमिपुरमिप्राय । सोऽन्येकस्मिन् पथे न
समाविष्टस्त्वैपदापोऽनीति विद्वद्धि विभावनीयम् ।

भाषा—मुक्क, अन्नक, हरिताल, फोलाद सोनामाखी,
और ताम्र, इनकीभन्में १-१ भाग, पारदमल २ भा, लेकर
सबका वारीक चूर्णकर दन्ती, त्रियङ्गु अथवा अनन्तमूल, धूहरका
दूध, चित्रकमूल, सहिजनकी छाल, पाठा, सूरण, समात्त भाग
और एरण्डकी जड़ इन प्रत्येकके यथालाभ स्वरस अथवा
वाथोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाले । और तिलकेतेलमें माल
कामनी तथा गन्धक समभाग डालकर शरावसम्पुटकरके १०
सेर जलली कण्डोंमें फूकदे जिसमें कि जलकर सयमी सपेद
राख हो जाय । फिर इस सफेदमलमेंको लेकर १६ गुने पानीमें
खूब मसलदे । दो रोजके बाद ऊपरका पानी जितारले और
उसको बडाहीमें औंठाकर गुडकी एकतारी चाशनीके सदसा
कल्क बनाकर इसीके साथ पूर्वोक्त रसकी ६-६ रतीकी गोलिया
बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १ अथवा २ गोली खिलाकर १
मासा पीपलका प्रशेष दिया हुआ दशमूलका काडापीवे तो

इससे जलोदर वातविकार, उदरविकार, अपस्मार गुल्म,
रामस्त उदावर्त, चञ्च अथवा अचल हेजेका दूध, और धतुर्वात
के सन नष्ट होतातेहै ॥ २५५ ॥

२५६ प्रभावतीवटी (द्वितीया)

भागमेरुन्तु कर्पूरं तर्दधं शुद्धगन्धकम् ।
तत्समानि विडङ्गानि जातोपत्रलपङ्कजम् ॥ ११५६ ॥
जातीफल तथा चैला व्योपञ्चाऽपि समंसमम् ।
शुद्धशुष्कचूर्णमिदं सर्वं मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ ११५७ ॥
गुडेन मापमानान्तु वटिकां कारयेद्बुधः ।
इयं प्रभावती नाम्ना ह्याढ्यवातविनाशकृत् ॥११५८॥
व. रा, आढ्यवाते ।

भाषा—शुद्ध कपूर १ तोला, शुद्ध गन्धक, विडङ्ग, जावित्री,
लौंग, जायफल, इलायची, सोंठ, मिर्च और पीपल ६-६ मासे
लेकर वारीक पीस १-२ पहर सुखा मर्दनकर बराबरका पुराना
शुद्ध मिलाकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे ।
इनमेंसे १-१ गोली दूध वगैरहके साथ लेनेसे ऊहस्तम्भ नष्ट
होताहै ॥ २५६ ॥

२५७ प्रमदानन्दोरसः

अयो रौप्यं तथा हेम रसं गन्धं शिलाजतु ।
वह्निद्वयेण सममद्यं रक्तिमाना वटोश्चरेत् ॥ ११५९ ॥
नाम्नाऽसौ प्रमदानन्दो रसो ह्याशु विनाशयेत् ।
त्रिफलातोययोगेन सर्वाञ्जरायुजान्गदान् ॥ ११६० ॥
जरायुरोगिणीनारी नच सेवेत पूरुषम् ।
न रादेदुप्रवीयाणि नाऽपि कुर्यादतिश्रमम् ॥११६१॥
आ वि, जरायुरोगे ।

भाषा—लोह, चादी, मुगुण इतकीभन्में, शुद्ध पारा, गन्धक
और शिलाजीत सन समभाग लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण
कजलीमें सब चीनोंको मिलाकर चित्रककी जडके काठसे १-२
दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोडे ।
इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके काठसे देनेसे जेरके अटकनेसे
जितने उपद्रव होतेहैं उनसमने यह नष्ट करताहै । जरायुरो
गिणी स्त्री पुरुषका सङ्ग न करे, उपवीर्यचीजन न राख और
अत्यन्त परिश्रम न करे ॥ २५७ ॥

२५८ प्रमदेमाऽङ्कुशोरसः

विशुद्धो रसो मासमुन्मत्ततेले
दशाऽहानि तैले तथोपबुधस्य ।
विपाच्योऽष्टयामैः क्षति बल्यतैली
मृदुस्वर्णपत्राणि सूताऽष्टमांशात् ॥ ११६२ ॥
दिनं पेपयेत्तत्समं गन्धकं हि
कृतां फजलीं तां विपाच्याक्यामम् ।
यथा त्यक्तगन्धोर्द्धक्यां प्रयाति
स्वशीतं समादाय सिन्दूरकल्पम् ॥११६३॥

व्यहं स्यात्सत्वकृकपायै विमर्द्य
 व्यहं वैजयै जातिसारै दिनेकम् ।
 तथा कोकिलाक्षस्य घर्षं कपायै-
 विदायांऽथ भूमौ क्षिपेद्रोलकं तम् ॥११६४॥
 मृदा ह्यचहुल्कोन्मानयाऽऽच्छाद्य पश्चा-
 द्दण्योपलङ्घनद्वर्वाहि विधाय ।
 सुशीतं मृदुस्येदमातं रसेन्द्रं
 गृहीत्वा ततो भागमानं यदामः ॥ ११६५ ॥
 रसाह्वयंमवैकान्तजातीप्रसूनं
 लवङ्गं द्विभागं त्रिभागं भुजङ्गम् ।
 सितं कान्तसञ्ज्ञं विधं केशराख्यं
 त्रिजातं तथा वङ्गभस्म द्विभागम् ॥११६६॥
 अहोःफेनतापीजयोरद्वैभागं
 विमर्द्याऽथ यामं मरुद्भूसूनैः ।
 विदारीवरावासकै नांगवह्नी-
 यलाशालमलीमर्कटीमूलजातैः ॥ ११६७ ॥
 पयोभिश्च गोधाऽद्विरम्भासमुत्थैः
 शताङ्गसहादीप्यमुण्डीसमुत्थैः ।
 महापत्रिकायष्टिहस्तिद्रवैश्च
 विभाष्यं त्रिवारं ततो गोलमस्य ॥ ११६८ ॥
 दिनं स्वेदयेत्प्रासत्सत्वकपायै-
 निबध्याऽम्बरे दौलिकायन्त्रमप्ये ।
 अकृपापदोपस्य तैलेन भाव्यो
 द्विवारं तथा स्वर्णबीजस्य तैलेः ॥ ११६९ ॥
 तथा वैजयै जातिसारस्य तैले-
 द्विवारं विभाष्योऽथ गोलं निबध्य ।
 ततो मृत्पट्टैरिधिराधारयन्ने
 पचेत्पूर्वघत्स्वाङ्गरीतं ततस्त्रिः ॥ ११७० ॥
 उशीरेण भाव्यः सुगन्धेन तद्व-
 च्याऽऽजाङ्गकेनाऽथ कस्त्रिकान्द्रिः ।
 विभाष्यं शिवद्विद्रुकुचाग्निः शिफाली-
 द्रवैः शातपत्रोद्भवैः सिद्ध एवः ॥११७१॥
 तमेनं स्वनुर्यादाकर्षुत्पुलकं
 निपेयेत वह्नुद्वयं वाऽस्य मात्रा ।
 लवङ्गं सित्ता पुण्यसारोऽनुपानं
 द्वितं क्षीरपानं विधज्यांऽम्बलयोगैः ॥ ११७२ ॥
 पठित्वा च पञ्चाऽक्षरं राजमन्त्रं
 कुमारीश्च यन्त्राणि सम्पूज्य यत्नात् ।
 निपेयेत पूर्वोक्तरीत्या रमेन्द्रं
 निपेयेदसौ कामिनीसङ्गमञ्च ॥ ११७३ ॥
 त्रिदोषप्र पयोऽबलाघर्षहारी
 घर्षीकार्यधारी महास्तम्भकारी ।
 सदा पुण्यजातयानकारी मराणां
 तथा पातकारी न चाजोकं च कारी ॥११७४॥

यामेकवारं भजते नवाऽङ्गनां
 साऽऽजन्मदार्यं भजते विनिश्चला ।
 बहुप्रकारं भजतोऽपि सङ्गमं
 तेजो बलं नैव जहाति क्रिञ्चित् ॥ ११७५ ॥
 रसमेनं सेवयित्वा न सेवेत स्त्रियं यदि ।
 निर्गच्छेन्नैत्रयो वीर्यं नेत्रनाशस्तथा भवेत् ॥ ११७६ ॥
 नाऽङ्गं शौथिल्यभावं व्रजति न च कटि-
 स्तुष्यते तस्य कान्ति-
 ह्येमाभा जायतेऽष्टादशविधमनुलं
 नाशमेति प्रमेहम् ।
 नष्टं वीर्यं प्रपन्नं भवति यदि पुमान्
 सेवेत रम्यकान्तां,
 पण्डो वा वाञ्छितुल्यो जनयति तनयान्
 सिंहतुल्यप्रतापान् ॥ ११७७ ॥
 एनं रसञ्च प्रमदा भजेत
 कुमारिकातुल्यवपुष्मती स्यात् ।
 पतद्रसास्वादनतः पुमास्तां
 युवाऽपि यातुं न समर्थ एव ॥ ११७८ ॥
 गर्भाशयगतान्द्रोपान्दन्ति वातरक्तोद्भवान् ।
 प्रमदेभाङ्कुशोनाम रसरराजः सुसिद्धिदः ॥ ११७९ ॥
 वृ. यो. त., र. म. मा., दो , र. मु. रसपरिजात, रसाय-
 नप., वाजीकरणे ।
 भाष्य—शुद्धशरेको एकमहीनेतक घटोरेकेरीकमे पद्यावे
 फिर १० रोजतक चित्ररके तेल्ले पद्यावे । पद्यावेगमय अमि
 इनी देनी चाहिये कि रातदिनेमें १ पत्र तेल जले इगनरह
 पारेका बोधनवर सोनेके कण्टकेची पत्र पारेमे आटां हिम्मा
 डालकर पोटे, जप गुग्गु अदर्य होजाय तप पारेकी पषापर
 शुद्धान्धव डालकर नीलवर्ण कबली कर ६-७ कण्टमिटी
 कीहुई आनदी शीशीमे भारेके वाउद्यायन्त्रमे रग १२ पहर
 तीक्ष्ण अग्निदे । शीशीका मुंद् मुजा रहनेदे । जप गन्धक
 शीशीका मुह रोकले तप सोहेही गामघालकामे उमे जगदे,
 ऐमे ३-४ पहरत करतारहे फिर बालाघारो शीशीके पेदे तप
 डालकर देरे, जप भूमरहित घलाघामे ल्याहुमा भाग काल
 बर्गका होजाय तप शीशीके मुंद्मे राधियामिटी अथवा ईटकी
 दाट ल्याकर कण्टमिटी वरेदे, काच थोडे समदतक धनहरदे,
 कण्टमिणी गुप्तमेग फिर अधिहरदे । इगनरह १२ पहरकी
 आंच देकर लडकी ल्याला बन्दहरदे और ऊन्नीं कौयगें पर
 रहने दे । बादके स्वाङ्गीकल होनेपर शीशीकी कण्टमिटी
 ट्याकर छारपानीमे शीशीको फोडकर गिन्दूके रखे रगधो
 चारुमे मुग्गले । फिर इमे पोम्मेके कारणे ३ रोज मर्दनकर
 मुर्गीके अन्दरेकी जदी अथवा गांकेके शीकीके तेल्ले ३ रोज
 मर्दनकर जायकलेके तेल्ले ३ रोज मर्दनघरे । तदनन्तर रसा-
 मपाने के कारणेमे एकरोज मर्दनकर गोलबन्दाय गोमे रसकर
 कारणे दोभंजुन मिमीमे दवापर हो अरती कण्टकी आंचे ।

स्वाङ्गशीतल होनेपर स्वेदित पारेको निकालकर अन्न और वैकान्तभस्म, जावित्री और लौंग ये पारेसे २ भाग, नागभस्म ३ भाग, चादी और कान्तलोहकीभस्म, शुद्ध बलनाग केसर, तज, पत्रज, इलायची और वक्रभस्म ये प्रत्येक २ भाग, अफीम और सोनामारी आधा ३ भाग मिलाकर शङ्खुपुष्पोंके फूलोंसे १ पहर मर्दनकर विदारी, त्रिफला, अङ्गुसा, पान, बला, सेम-रता मुसला, केवाचकीजड, गोदुग्ध, लज्जाल, केलाकंद, सोंफ, मापपर्णी और मुद्गरपर्णी अजमोद, गोरखमुण्डी, कषी, मुलट्टी, हाथीका भद अथवा हस्तिचर्म पलाशकी छाल इन सबके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे ३-३ चार भावना देकर गोला बनाय कपड़ेमें बांधकर दोलायन्त्रमें पोस्तका डाय भरकर १ रोज स्वेदनकर समुद्रतोषके तैले दो भावनाएँ देकर धतूरेका तैल, सुर्माके अण्डेकी जूदी अथवा गाजेके बीजोंका तैल, जायफलका तैल इन प्रत्येककी २-२ भावनाएँ देकर गोला बनाय तीन-कपड़े लपेटकर भूयस्यन्त्रमें पूर्वांक प्रकारसे दो जल्ली कपडोंकी आच देवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर खस, एलादिगग, अगह, कस्तूरी, केबड़ेकीजड हारसिंगार और कमल इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंकी ३-३ भावनाएँ देनेसे यह प्रमेहमाहु-शरस तैयार हुआ । इसमेंसे ६ रतीकी मात्रा लेकर १॥ रती शुद्धकपूर, लौंग २ नाग, मिथी और मधु मिलाकर खावे और ऊपरसे दूधपीवे । इसमें अधिक दुग्धना सेवन हितकारकहै अम्बवर्गका त्यागकरे । लेनेके पहिले अन्नम दिवाय इस पत्राक्षर मन्त्रका जपकरे, कुमारी और यन्त्रकी पूजाकरे । इसके सेवनमें स्त्रीप्रसन्न करना उचितहै, यह त्रिदोषप्रहै स्त्रियोंके गर्बको हरण करताहै वशीकरणहै और अत्यन्त स्तम्भनकारकहै पुरुषोंकी नपुंसकताको दूर करता है । जिस स्त्रीकेसाथ एश्वारभो इसरसका सेवन करनेवाला सन्न करे तो वह जीने तक अन्य पुरुषोंकी तरफ मनोवृत्तिको न दौडाती हुई अनन्यभक्ता होतीहै यह पुरुषमी अनेक प्रकारोंके बन्धोंके साथ रमणकरता हुआभी तेज और बलनी किसीतरहनी हानिको नहीं प्राप्त होता । इस रसका सेवनकरके अगर स्त्रीसन्न न करे तो नेत्रोंका बौर्य कम होजाताहै अथवा नेत्र ही नष्ट हो जाते हैं । क्रमपूर्वक यदि इस रसका सेवनकरे तो कोईभी अवयव क्षिथिल नहीं होता । शुक्रार्थमें प्रायः मनुष्योंकीचर्मर झुक्रजाया करतीहै सो इसरसके सेवन करनेवालेकी नहीं होती और सुवर्ण सदस कान्ति बनी रहतीहै । अठारह प्रकारके प्रमेह, शुक्रदोष, नपुंसकता, इन सबको यह दूर करताहै । इसरसको यदि बुद्धी औरत खावे तो कन्यासदृश अवयव हो जातेहैं युवावस्थापन्नमी पुरुष इसके सन्तोष देनेके लिये समर्थ नहीं होता । स्त्रियोंके बात और कर्मसे उत्पन्न होनेवाले गर्भाशयके रोगभी इससे नष्ट हो जातेहैं ॥ २५८ ॥

२५९ प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (प्रथमः)

रसगन्धकताप्राप्तजयायङ्गालकमोत्तरम् ।

भागाः स्युस्तुलितस्तास्तु गृह्णीतस्तसम्भवाः ॥११८०॥

विमर्द्यं मुराहीरम्माशात्मलीगोशुद्धयैः ।

द्विमायं ससितं खादेमेहकुञ्जरकेसरी ॥ ११८१ ॥

र. को, र क ल, प्रमेहाधिकारः ।

टि०—रसकल्याणायां मुराहीरभागोह्युत्तराणां भावना न दृश्यते, इत्यनेन लक्ष्यभावना । अन्त्याप्यथवत्यस्य भावनाया न कोऽपि दोषः ।

भापा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अन्नकभस्म, भाग, वक्रभस्म ये सब क्रमशःभागसे लेवे और सबकी बातपर मिलोयका सत्व मिलाकर मुसलो, केलेका मन्द, सेमलकी छाल और गोखल इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ मासकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकरके साथ टाकर ऊपरसे दूध पीनेसे सब प्रकारके प्रमेह नष्टहोतेहै ॥ २५९ ॥

२६० प्रमेहकुञ्जरकेसरीरसः (द्वितीयः)

रसगन्धाऽऽयसाऽऽप्राणि नागवह्नौ सुवर्णकम् ।

यज्जकं मौक्तिकं सर्वमेकीकृत्य विचूर्णयेत् ॥ ११८२ ॥

शतावरीरसेनैव गोलक शुष्कमातपे ।

शुद्धा शुष्कं तमुद्धृत्य शपवे सुदृढे क्षिपेत् ॥११८३॥

सन्धिलेपं मृदा कुयार्द्रितं च गोमयाऽग्निना ।

पुटेद्यावच्चतुर्थां चोद्धृत्य स्वाङ्गशीतलम् ॥ ११८४ ॥

शृङ्खण खल्वे विनिक्षिप्य गोलञ्च मर्दयेद्बृहदम् ।

देवब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वा धृत्वा करण्डके ॥ ११८५ ॥

खादेद्रकिमितं प्रातः शीतं दुग्धं पिबेदनु ।

अष्टादश प्रमेहांश्च जयेन्मासप्रयोगतः ॥ ११८६ ॥

तुष्टिं तेजो बलं वर्णं शुक्रवृद्धिमनुत्तमाम् ।

अग्ने बलं वितनुते मेहकुञ्जरकेसरी ॥

दिव्यं रसायनं श्रेष्ठं नाऽत्र कार्यां विचारणा ॥११८७॥

नि र, र च, र ट, कौ, व. रा, वै वि, रसपारिजात, प्रमेहे

भापा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अन्नक, नाग, वक्र, सुवर्ण, हीरा और मोती इन सबकीभस्में समभाग लेकर पारोशान्धकी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर १-२ पहर शता बरीके रससे घोटकर गोला बनाय धूपमें सुखावे । सूखनेपर समुद्रमें रखकर ६-७ कपडमिट्टीसे बन्दकर गडमें इतने कपडोंकी आचदे कि ४ पहरमें लड़ी होजाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर वारीक पीसकर देवता और ब्राह्मणोंका पूजनकर शीशीमें भरदे । इसमेंसे १-१ रतीकी मात्रा लेकर ठंडा दूध पीवे । इसतरह १ महीने तक करनेसे यह १८ प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट कर उल्साह, तेज, बल, वर्ण, शुक्रवृद्धि, अभिन्नल इन सबको करके बलीपलित्तदिकोंसे रहित करताहै ॥ २६० ॥

२६१ प्रमेहकुञ्जरकेसरी रसः (तृतीयः)

(हेमकुञ्जरकेसरी)

हेमखर्परकाऽयोऽध्रयङ्गाश्च भागवर्द्धिताः ।

पारदः पञ्चभागः स्याद्गृह्णीयाः सत्यकन्तया ॥११८८॥

मर्दयेन्मुसलीरम्भाशात्मलीगोधुरद्रव्यैः ।
सिद्धो घृहृद्वयमितो मेहकुञ्जकेसरी ॥ ११८९ ॥
सेवितो मधुना सार्द्धं धात्रीगोधुरस्ततथा ।
काथं मधुसमायुक्तमनुपानाय दापयेत् ॥ ११९० ॥
पियेन्मधुसमायुक्तं रात्रौ पेयः शिवारसः ।
मासत्रयप्रयोगेण मेहान् सर्वाण्यप्यपोहति ॥ ११९१ ॥
अदमर्यां मातुलुङ्गस्य मूलं पर्युपिताऽऽभुजा ।
येह्यास्मभिज्जलयुता मूत्रकृच्छ्रनिवारणः ॥ ११९२ ॥
गर्भिणीशूलविष्टम्भे ज्वराऽतीसारयोस्तथा ।
ययोक्तेनाऽनुपानेन दातव्यो भिपजा सदा ॥ ११९३ ॥
र. शं., र. सु., रसपरिजात, प्रमेहे । रसपरिजाते मेहेभक्के-
सरीति नाम ।

भाषा—मुत्रणं, रपरिया अथवा जस्त, लोह, अत्रक, वज्र इनसबकी भस्में कमद्रव्यभागते लेना । पारदभस्म और गिलोयका सत्व ५-५ भाग लेकर सबको १-२ पहर छुन्क-मर्दनकर मुशली, केलेका बंद, सेमली छाल और गोखरु इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा कायोंसे भावना देकर ६-६ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय देकर आंचले और गोखरुके कट्टेमें मधु डालकर ऊपरसे पिला-नेसे यह समस्त प्रमेहोंको ३ महीनेमें नष्टकरताहै । रातको सोतेसमय हंरंकाकाड़ा मधु मिलाकर पिलाना चाहिये । पपरीमें विजोरकी जड़ बासीपानीमें घिसकर देवे । मूत्रकृच्छ्र और गर्भिणीके शूल, विष्टम्भ, ज्वर तथा अतिसारमें विडङ्ग और पापाणभेद के चूर्णके साथदेवे ॥ २६१ ॥

२६२ प्रमेहकुलान्तकोरसः (प्रथमः)

सूतं वरुं सूतं तुल्यं मृताऽम्रं सूतकारित्रया ।
लघुनं सर्वतुल्यांदां सर्वमेकत्र पेपयेत् ॥ ११९४ ॥
वदरामां धर्तीं कुर्यात्प्रमेहस्य कुलान्तकः ।
लघुनं छागमूत्रेण वसामेही पियेदनु ॥ ११९५ ॥

र. र., र. को., र. क. ल, रसायनसं., व. रा., र. का, यो. म, प्रमेहे ।

भाषा—पारा और वज्रभस्म १-१ भाग, अत्रकभस्म ३ भाग, लघुन ५ भाग लेकर १-२ रोज मर्दनकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर बकरेके मूत्रमें लघुनमिलाकर पीनेसे वसामेह निवृत्तहोताहै ॥ २६२ ॥

२६३ प्रमेहकुलान्तकोरसः (मेहकुलान्तकः) (द्वितीयः)

सूतं घणं सूतञ्चाऽम्रं शुद्धं पारदगन्धकम् ।
भूनिम्बं पिप्पलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥ ११९६ ॥
रसाञ्जनं विडङ्गाद्बिल्वगोधुरदाडिमम् ।
प्रत्येकं तोलकं ग्राह्यं शुद्धमम्रजतोः पलम् ॥ ११९७ ॥
गोपालककंदीमूलस्वरसे र्घटिकां कुह ।
प्रमेहान्वियार्ति हन्ति मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ ११९८ ॥

अदमरीं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं छागोदुग्धं पयोऽथवा ॥
धात्रीफलस्य निर्घासं काथं कौलत्थजं पियेत् ॥ ११९९ ॥
शै., र., ध., प्रमेहे ।

भाषा—वज्र और अत्रकभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, निरायता, पिप्पलामूल, त्रिकटु, त्रिफला, निमोत, रसांत, विडङ्ग, नागरमोथा, बेलगिरी, गोखरु, अनाके छिलके ये सब १-१ तोला, शुद्ध शिलाजीत १ पल लेकर सबका भारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जीमें मिलाकर एरुडसरवृजेकी जड़के रसमें घोटकर १-१ माशेरी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बकरी अथवा गायके दूध, आंचलेकेरस अथवा कुलथीके कापरेसाय रोगकी अवस्था देखकर देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, अमरी, कामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अर्घचि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ प्रमेहेकेतूरसः (प्रमेहसेतुः)

सूतमम्रं षटशीरं मर्दयेत्प्रहरद्रव्यम् ।
विशोष्य पक्वं मूपायां सर्वरोगे प्रयोजयेत् ॥ १२०० ॥
विशोपान्मेहरोगेषु त्रिफलामधुसंयुतम् ।
युञ्जति बहुमेकन्तु रसेन्द्रस्याऽस्य वैद्यराट् ॥ १२०१ ॥
र. चं, र का, रसायनसं., र. शि., र. सं., र. धि., र. सु., प्रमेहे । र. चं, र वा., एतौ द्वौ प्रन्थौ विहाय सर्वेषु प्रन्थेषु प्रमेहसेतुरितिलान्मा व्यवहृतः ।

भाषा—पारे और अत्रककी भस्मको २ पहर बड़े दूधमें मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयन्त्रमें पानके अन्दर स्वेदनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-ताऽऽपानके साथ देनेसे यह सररोगोंको नष्टकरताहै । प्रमेहोंमें मधु और त्रिफलाके साथ देना ॥ २६४ ॥

२६५ प्रमेहजकेसरीरसः (प्रथमः)

मृताऽम्रकान्ततीक्ष्णानि सूतभस्माऽब्धिशीपकम् ।
सूतं नागं सूतं वरुं सूतमण्डूमेव च ॥ १२०२ ॥
तुल्यं तुल्यं विचूर्ण्याऽथ मेहारे र्वाञ्जकन्तया ।
दिनन्तु त्रिफलाद्रावे पञ्चाङ्गेराकुलीरसेः ॥ १२०३ ॥
कतकस्य च सारंण भावयेच्चूर्णयिन्निकम् ।
त्रिवृत्सेवनाच्चैव गोतक्रेण दिनेदिने ॥ १२०४ ॥
मेहानां विशर्ति चैव मूत्राऽऽघातञ्च नाशयेत् ।
मेहकेसरिनामाऽयं ह्यरपादेन निर्मितः ॥ १२०५ ॥
वै. चि, प्रमेहे ।

भाषा—अत्रक, कान्तलोह, फोलाद, पारा, नाग, वज्र, मण्डू इनसबकी भस्में और समुद्रसोप, समभाग लेकर सबकी बराबर वकायनके बीज लेकर भारीक चूर्णकर सबको इकड़ा मिलाय त्रिफला, अङ्गोला पञ्चाङ्ग, निर्मलीकाहीर इनके यथाभाग स्वरस अथवा कायोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली

गोतकके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और मूत्राऽऽघात नष्ट होतेहैं ॥ २६५ ॥

२६६ प्रमेहगजकेसरिरसः (द्वितीयः)

मृतं वरुं सुवर्णञ्च कान्तलोहञ्च पारदम् ।
मुक्तां गुडत्वचश्चैव सूक्ष्मैलां पत्रकेसरम् ॥ १२०६ ॥
समभागं विचूर्ण्याऽथ कन्यानीरेण भावयेत् ।
द्विमापां घटिकां खादेद्गुग्धाऽन्नं प्रपियेत्ततः ॥ १२०७ ॥
प्रमेहं नाशयत्यागु केसरी करिणं यथा ।
शुकप्रवाहं शमयेत्त्रिरात्राऽत्र सशयः ॥
चिरजातं प्रवाहञ्च मधुमेहञ्च नाशयेत् ॥ १२०८ ॥
र. वि., र. च., र. सु., र. स., प्रमेहाऽभिन्ना ।

भापा—वज्र, सुवर्ण, कान्तलोह, पारा और मोती इनकी भस्में, दालचीनी, छोटी इलायची, पत्रज, नागसेर, सब समभाग लेकर घाटीक चूर्णकर पीडुआरके रसमें १-२ रोज मर्दनकर २-२ माशेनी मोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर दूधभात खानेसे यह शुकके प्रवाहनी ३ दिनमें नष्ट करताहै । इसीतरह बहुतदिनके प्रमेह और मधुमेहको नष्ट करताहै ॥ २६६ ॥

२६७ प्रमेहगजसिंहोरसः (मेहद्विरदसिंहः) (प्रथमः)

पारदाऽन्नकयो रंभस मृतं लोहाऽष्टकं समम् ।
टङ्गणश्चैव मध्वाज्यं प्रत्येकं सूततुल्यकम् ॥ १२०९ ॥
चाण्डालीराक्षसीपुष्पे दिनं मद्यै निरुद्धच च ।
मूपायां भूधरे पक्वं दिनेकं तत्र चूर्णयेत् ॥ १२१० ॥
मेहद्विरदसिंहोऽयं रसः शौद्रै द्विरक्तिकम् ।
लिह्नेच्चाऽनुपिवेत्तकैः निष्कैकं टङ्गणं सदा ॥ १२११ ॥
र. र., व. रा., यो. म., र. क यो., र. को., प्रमेह ।

भापा—पारा, अन्नक, अष्टलोहों (सुवर्ण, चांदी, तावा, फोलाद, वज्र, नाग, अन्नक और कान्तफा सत्त्व) कीभस्में, भुनामुहाणा, मधु और घृत सब समभाग लेकर सैमल और कपासके फूलोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय मूधरयन्त्रमें एकदिन स्वेदनकर निरालकर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रती मधुपेसाय चाटकर ४ मासे भुनामुहाणा छाछमें डालकर पिला-नेसे तमाम प्रमेह नष्टहोतेहैं ॥ २६७ ॥

२६८ प्रमेहगजसिंहोरसः (द्वितीयः)

चाण्डालीराक्षसीपुष्परसमध्वाज्यटङ्गणम् ।
रसं सर्मांशोपरसं समं हेन्ना विमर्दितम् ॥ १२१२ ॥
सर्मांशं घृतिलोहं वा मूपायां विपचेत्कमात् ।
प्रमेहगजसिंहोऽयं रसः शौद्रै द्विरक्तिकः ॥ १२१३ ॥
र. र स, र. सु., र. को., र. का., प्रमेह ।

भापा—नेमल और लालनपासके फूलोंका रस, मधु, पी, मुहाणा, पारा और उपरस (हस्ताल, फिट्करी, गन्धक, मुर्दा-सज, मैनासिल, सोनागेरू, सफेद सुरमा और कसीस) देसब समभाग, इनसबकीवरावर सुवर्ण अथवा नाग-वज्रभस्म लेकर

मर्दनकर गोलावनाय मूधरयन्त्रमें ४ पहरकी अमि देवे । स्वादशीतलहोनेपर निरालकर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रती मधुपेसाय चाटनेसे सबप्रकारके प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै २६८

२६९ प्रमेहगजाङ्गुशोरसः (मेहगजाङ्गुशः)

रसेनतुल्यं कनकस्य भस्म
पुनर्नजामूलरसेन मर्द्यम् ।
तच्छाल्मलीमूलरसेन चाऽपि
दिनत्रयं चाप्रलकीरसेन ॥ १२१४ ॥
तद्घ्नकेणैवसमानभागं
विमर्दयेद्रोस्तनिकारसेन ।
सिद्धो भवेत्प्रमेहगजाङ्गुशाख्योऽ-
प्यशेषमेहाङ्गयति प्रसह्य ॥ १२१५ ॥
सितामधुभ्यां सकणामधुभ्यां
वा पिप्पली शर्करया समेतः ।
घृत्तो जयत्यागु यथाऽनुपाने-
रगुक्कलं पथ्यमिहोपदिष्टम् ॥ १२१६ ॥
विचर्जयेत्प्रमेहगदाऽभिभूतः
क्षीरं दधिश्चौद्रगुडाऽम्भलयम् ।
सामुद्रनिद्रा लघुनाऽम्भलीशण-
घातां कयोपिद्धहृतीफलञ्च ॥ १२१७ ॥

र., स्वपारिजात, प्रमेह ।

भापा—पारा और सुवर्णभस्म वरान लेकर पुनर्नवा अथवा सैमलकी जड़के रससे ३ रोज मर्दनकर ३ रोज आवलेके रससे मर्दनकरे । फिर इसमें समान अन्नकभस्म मिलाकर दासके रसकी भावना देकर ३-३ रतीकी मोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दाकर, मधु अथवा पीपल, मधु अथवा पीपल और दाबरके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । शुकने न बडानेवाली जो चीजेंहै वे रसानेकोदे । दूध, दही, मधु, गुड़, सदाई, मद्य, समुद्रतटपरसोना, लहसुन, तीक्ष्णपदार्थ, वेणु, खी, मटरट्टैया इन सबका त्याग करे ॥ २६९ ॥

२७० प्रमेहदानानलरसः

शैवमीमवलयः सर्मांशका-
स्ताम्रभस्म कुश तत्सर्मांशकम् ।
तच्च गध्यपयसा विमर्दितं
वासरत्रितयकं निरन्तरम् ॥ १२१८ ॥
ततः शिवामर्कटिवीजयष्टि
द्राक्षेष्टुगोक्षुरकखर्जुरीभिः ।
मांसीशिवारण्डसितामराल-
पादीदधित्याऽम्बुरसेनवाऽपि ॥ १२१९ ॥
जम्बीरनारङ्गरसेन कृत्वा
गुडुचिकासश्चरसेन चाऽपि ।
विभावितः सिद्धिमैपति सूतो
द्विवह्ममात्रो जयति प्रमेहान् ॥ १२२० ॥

स्वीयाऽनुपानै मंथुना शिवाया
नीरेण वा शर्करया समेतः ।
मोचाऽङ्गिनीरेण तथा प्रसूता-
नीरेण वा गोपयसा प्रदेयः ॥ १२२१ ॥
मधुप्लुतो हन्त्यखिलान्गुदाऽङ्कुरा-
स्तथाऽश्वरीं कृच्छ्रकजं प्रसह्य ।
प्रमेहदावानल एव सूतः
सर्वप्रमेहेषु नियोजनीयः ॥ १२२२ ॥
र., प्रमेहे ।

भाषा—पारा, सीसाभ्रम और शुद्धगन्धक ये सब सम-
भाग और ताम्रभ्रम सन्नी बराबर लेकर गायके दूधसे लगातार
३ रोज तक मर्दनकर हँ, केवाचके बीज, मुलङ्गी, दाश, ईश, गोखरू,
खजूर, जटामानी, हँ, सांड, मिथ्री, हंसराज, वैय, सुगन्धवाल,
जंभीरी, नारङ्गी, गिलोयना सब इनके यथा-
सम्भव स्वस अथवा बायोसे १-१ भावना देकर ६-६ रसीची
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, हँ, शकर,
केलेकाकंद, स्त्रीदुग्ध, गोदुग्ध इन सबमेंसे रोगौचिकी देकर किसी
एकके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै । मधुके साथ
देनेसे कवाशीर, पयरी और मूत्रचूत्रो दूर करताहै ॥ २७० ॥

२७१ प्रमेहध्वान्तभास्करोरसः

शम्भो र्बीजं रौप्यतुर्यांशयुक्तं
लोहं ताम्रं खञ्ज सुतेन तुल्यम् ।
मर्द्य कन्यारात्रिपथ्याशिवाम्बु-
कृष्णाऽनन्तापाटलानां रसेन ॥ १२२३ ॥
सिद्धः सूतो रक्तियुग्मप्रमाणो
हन्यान्मेहं शर्करारात्रियुक्तः ।
पथ्याऽङ्गोह्रश्रीद्रयुक्तोऽपि नूनं
मेहध्वान्तसर्वसने भास्करोऽयम् ॥ १२२४ ॥

घृंहणं शीतलं धृष्यमनुपानादिकञ्च यत् ।
तत्सर्वं धर्जयेद्यत्नात्प्रमेहो धर्ममाचरेत् ॥ १२२५ ॥
र., प्रमेहे ।

भाषा—रजतभ्रम ४ तो., पारा, लोहा, ताम्र, अप्रक
इनसन्नी भ्रमं १-१ तोला लेकर २-३ पहर सूती खरलकर
पीतुआर, हल्दी, हँ, आंबला, सुगन्धमाला, पीपल, अनन्त-
मूल, पाटल, इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वरग अपना बायोसी
१-१ भावना देकर २-२ रसीची गोलियां बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली शकर और हल्दीके चूर्णके साथ अपना
हँ, अश्लोकबीजाल और मधुके साथ देनेसे यह समस्त प्रमे-
होंको नष्टकरताहै । पातुओंको बड़ानेवाली, ठंडी, श्वचीजे
अनुपानादिमें प्रमेही न ले और धर्ममा सेवनकरे ॥ २७१ ॥

२७२ प्रमेहध्वान्तविवस्वानरसः

रसाऽश्वकौ तुष्यसमानमागौ
जम्बीरनीरैस्त्रिदिनं विमर्द्य ।

कुर्वीत मृपाकुहरे निषेद्य
वह्नी ततस्तस्य पुद्गानि सप्त ॥ १२२६ ॥
बीजाङ्गमुष्काऽश्वयुग्मश्चतस्रः
स्युर्भांवना द्वे ककुभात्त्रिवारम् ।
यष्टीसिताकेतकजीररम्भा-
खर्जूरिकाजातिदलेः प्रतिस्वम् ॥ १२२७ ॥
एवं हि सिद्धस्य रसस्यवह्नी
मधुप्रयुक्तः सहसा शिशूनाम् ।
सन्तापशोषो बलहीनताञ्च

वृषाञ्च वासासलिलैः प्रमेहान् ॥ १२२८ ॥
निवर्तयेद्वासरसतकेन
दुग्धोदनं स्यादिह भोजनाय ।
नीरेण वञ्चलनवप्रमाला-
न्निषेच्य तैः शर्करया समेतैः ॥ १२२९ ॥
सर्वप्रमेहान्निहन्ति दत्तो
दिनवयं विधातिघत्सरस्य ।
अन्नं ससर्पिः सलितं प्रयोज्यं
दिनानि सप्तत्रिगुणानि चाऽत्र ॥ १२३० ॥
घरामधुभ्यां सहितञ्च यस्य
पञ्चाऽधिकं वरसरविधातिः स्यात् ।

हैयद्बोनेन गवाञ्च पथ्यं
त्रिःसप्तसहस्रानि दिनानि कार्यम् ॥ १२३१ ॥
प्रद्विप्रगोधुमरसेन हन्ति
सर्पिदाद्वयस्य दिनत्रयेण ।
अन्नं ससर्पिः समुडञ्च देयं
मधुचुदण्डेस्त्रिदिनं विधातुम् ॥ १२३२ ॥
अह्नानि सम्यग्निदिनाद्यसह-
गतानि यानि स्फुटनं दद्रीत ।
विज्ञागुडाभ्यां युतमप्रमग्नि-
न्द्राक्षादिनीरेण विमिश्रितं सत् ॥
दिनत्रयं लह्वनजं विज्ञायं
विनाशयेद्वास्तनिकासिताभ्याम् ॥ १२३३ ॥
पथ्यं देयमुमाशम्भुयास्तुदेव विनिर्मिते ।
पातुं जगन्ति कृपया मेहध्वान्तविदस्वति ॥
र. र. स, र. को, र. र. कौ, र. क, र. क. थो, प्रमेहे ।

३०—र. र. बी. हरगौरास इति नाम र. र. प्रमेहरर इति
नाम । र. क. थो उमाशम्भुमिनिनाम, स उदरे मत्, तत्र मन्थये
विशेषतः निमित्तं कदाचित्तेनान्जोभिरो मन्थना एव इति विधिः ।
नीरेण वञ्चलनवप्रमाला- निषेच्य एते ताम्बूयऽगाम्नेत्रिदिने सर्वस्य
मेह, प्रमेहरसे वञ्चलनरेण विषेणः विमिश्रणं इव बीजव बोधयत्
काम्ययुजितम् ।

भाषा—पारा और अप्रकभ्रम आधा ३ भाग, दुग्धभ्रम
१ भाग, लेकर जंभीरीके रसमें ३ रोज मर्दनकर मन्थनय
तारापरगुटमें बन्दकर १० मीर बण्डोंकी आचर । ऐसे ७ मर्द-

देकर बीजक(बीजला म) अभावमें असन, मोटा, बहेड़ा, ध्वास्त इनके कापोंको ४-४ भावनाए देकर कहुएकी छालक बाड़े की २, मुलहठी, शम्भर, केवड़ा, जीरा, केलेकामर, खजूरकी ताड़ी, जावित्री इनप्रत्येकके सयासम्भव स्वरस अथवा कापोंकी ३-३ भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओइ । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय देनेसे बर्षोंकाजर, शोष, कृशता और प्यास दूरहोती है । अइसेके रसकेसाय देनेसे ७ रोजमें प्रमेहोंको नष्टकरताहै इसमें भोजन दूधचावलदेना । बगुलीकी नईपत्तियोंके रसमें घाकर डालकर देनेसे २० वर्षके आदमीके प्रमेहोंको ३ दिनमें नष्टकरताहै । यहापर अम्रोनो घी और शकरकेसाय देना, पच्य २१ दिनतकरराना । २५ वर्षके आदमीको त्रिफला और मधुकेसाय देना और गायके मख्यनकेसाय २१ दिन तक पच्य देना । ३० वर्षके आदमीको गेहूके काठेकेसाय देना यहापर तीनरोज तक घी, गुड, मधु, ईर इनकेसाय अन्नदेना । एसा न करनेसे अन्नमें दाह होकर सुक्ष्मच्छिद्रोंसे रक्तपित्तनिकलने लगेगा । एसीहाल होजाय तो इमली और शुद्धकेसाय अन्नदेना और शाखा बगैरहाका रस पिलाना । दाख और शकरकेसाय ३ रोजतक देनेसे लहानकृत शोषको दूरकरताहै ॥ २७२ ॥

२७३ प्रमेहनाशनोरसः (मेहनाशन)

लोहभस्म रसभस्म ताप्यक
गन्धकेन सहित समांशकम् ।
घातबीजकरसेन माचितं
लेहित सकलमेहनाशनम् ॥ १२३५ ॥

र प्र सु, प्रमेहे ।

भाषा—लोह, पारा, सोनामाखी इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर ४ पहलतक सूखा मर्दनकर इन्द्रजवंके रससे १-२ दिन भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओइ । इनमेंसे १-१ गोली उचिताऽनुयागक साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २७३ ॥

२७४ प्रमेहनिःकृन्तनोरसः (मेहनिःकृन्तन)

पारदस्य पले द्वे च चत्वारि गन्धकस्य च ।
लोहाऽन्नस्यर्णमाशीर्णां नागं वङ्ग पलोन्मितम् ॥ १२३६ ॥
सर्वे तद्वालुकपायन्त्रे पचेन्मृद्वग्निना क्षणम् ।
ब्राह्मीकुमारोमाण्डूकीभृङ्गराजसैः सह ॥ १२३७ ॥
पुनरालोड्य यत्नेन पचेद्भोमयवह्निना ।
पुनरिद्धो रसो ज्ञेयः सर्वान्मेहात्त्रिकृन्तति ॥ १२३८ ॥
र को, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा २ पल शुद्ध गन्धक ४ पल, लोह, अन्नक, सोनामाखी, नाग और वङ्ग इनकीभस्में १-१ पल लेकर बारीक चूर्णकर बालुकपायन्त्रमें थोड़ीदेर पकाकर स्वाज्ञीतल होनेपर ब्राह्मी, धीकुआर, हुरहुड, भगवा इन प्रत्येकके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर ७ कण्डमिठी देकर २ सेर कण्डोंकी आपदे । स्वाज्ञीतल होनेपर

निकालकर रखओइ । इसमेंसे ३-३ रत्ती उचिताऽनुयागक साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै ॥ २७४ ॥

२७५ प्रमेहयद्वोरसः

सूतभस्म मृत कान्तं मुण्डभस्म शिलाजतु ।
शुद्ध ताप्य शिलां व्योष त्रिफलाऽङ्गोलभोजकम् १२३९
फपित्थं रजनीचूर्णं भृङ्गराजेन भावयेत् ।
त्रिशङ्करं विशोभ्याऽथ मधुयुक्तं लिहेत्सदा ॥ १२४० ॥
मापमात्रे हरेन्मेहान्मेहबद्धरसो महान् ।
महानिम्बस्य बीजानि पिप्पुा पदसह्यकानि च १२४१
पल तण्डुलतोयेन घृतनिष्कहयेन च ।
पकीकृत्य पिषेच्चऽनु हन्तिमेहं चिरन्तनम् ॥ १२४२ ॥

शा स, र र को, र र स, नि र, वै चि, र क यो,
यो त यो म, र का, र प्र सु, र सु, चि र भ, रसा
यनस, रसचि, भै सा, व रा, प्रमेहे ।

१०-र स, र चि, प, र म, एषु प्रमेहवधेति नाम तत्र मुण्डस्थाने लोहं गृहीतम् । अङ्गुलीनस्थाने विचनीरकं कृतम् । महानिम्ब बीजानि पण्डितकानि गृहीतानि, प्नावाग्निरेष । र स, र चि, र क ल, र सु, नि र, वृ यो त, यो त, या र, दो, र को, र र दी, एषु मेघनादिति नाम, मुण्डस्थानेऽन्नकं गृहीतम्, अङ्गुलीनस्थानेऽङ्गुलीनकं कृतम् । वैपित्थरानीचूर्णमिदस्य स्थाने कार्यान्वीन रजनीनिह्न, भावनाया बृहस्पान चित्रगृहीतमेनावाग्निरेष । रसराजके मेघवधेति नामेशानो दरयने तत्तु लेखकप्रमादात्पच्यम् । वैपित्थानां गणकमपित्तया प्रक्षिप्य भवननेति नाम्ना दितीयो योगं कृत्वाऽस्ति इतिविशेषः । सूतभस्मगं धरुयुक्तं बीजाऽप्रमत्सिद्धिना मुताप्यव्योषत्रिफलाऽङ्गुलीनी गवेषनीरकपित्तकपासोनी रजनीनां समभागान् गृहीत्वा भृङ्गचित्रभावनया रमनपादने भवति सर्वेषां समावेशो गुणाऽपिक्वच । अत सर्वे योगा कश्चित्स्यात्प्रमां वनीया इत्यस्मात् सम्यग् । माग्निवचन्नेनीरकावरोर रसात्रमुन्दरस्य उत्तीवस्थाने इमबद्धेति नाम तत्र सर्वनोऽधिको रसात्रमुन्दरऽज्ञानविज्ञान ।

भाषा—पारा, कान्त, मुण्ड, इनकी भस्में शिलाजतु, शुद्ध सोनामाखी, और मैनसिल, सौंठ, मिरच, पीपल, त्रिफला अङ्गुलीबीज, कैष और हल्दी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर एकपलह मिलाकर भगरेके रससे ३० बार भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखओइ । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय खाकर बकायनके बीज ६ तथा चावलके शोषनसे पीसकर उसमें ६ माशे घी डालकर पीनेसे बहुत पुराने प्रमेह नष्ट होतेहैं । मूलमें इसकी मात्रा निष्कमात्र कीधी यह आजकलके जमानेमें सहन नहीं होसकी इसलिये मापमान यह पाठ कर दिया है ॥ २७५ ॥

२७६ प्रमेहभैरवोरसः (मेहभैरव)

रसं गन्ध विप लोह जातोपत्रञ्च तत्फलम् ।
अधिशोषाऽह्रिफेनञ्च पारसीकञ्च चित्रकम् ॥ १२४३ ॥
देवपुष्पं सम सर्वं सर्वस्तुल्यं मृताऽन्नकम् ।
भाययेत्सप्तधा सर्वं चित्रमूलकपायकै ॥ १२४४ ॥

यथासात्म्येन संयोज्यं सर्वमेहापनुत्तये ।
अर्शांसि प्रहर्णां शौर्यं पाण्डुं शुक्रक्षयं नृणाम् ॥
यथाऽनुपानतो हन्ति सिद्धः श्रीमेहमेखः ॥ १२४५ ॥
र सु, दो, र र दी, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बलनाग, लोहभस्म, जावित्री, जायफल, समुद्रशेष, शुद्ध अनीम और खुरासानी अनवानन, चित्रकमूल, लौंग ये सब समभाग इन सनकी बराबर अप्रकृतभस्म डालकर सनका बारीक चूर्णकर चित्रक्री जड़के काड़ेसे भावना देकर १-१ रत्तीनी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचियाऽनुपानके साथ देनेसे समस्त प्रमेह, अर्श, सद्गुहणी, शोथ, पाण्डु, शुक्रक्षय इनको यह अपने अपने अनुपानसे दूर करताहै ॥ २७५ ॥

२७७ प्रमेहमर्दनोरसः (मेहमर्दनः)

शुद्धसीसोद्वयं भस्म निर्व्यूढं ध्योमिनि सप्तधा ।
ततो विच्यूर्णं तन्मध्ये कान्तभस्मसमं क्षिपेत् ॥ १२४६ ॥
गोमूत्रकशिराधातुद्रवेण परिमर्दयेत् ।
शोषयित्वा विमर्द्याऽथ क्षिपेन्नागररुण्डके ॥ १२४७ ॥
मेहमर्दननामाऽयं द्रियो भालुकिना खलु ।
शुद्धाद्वयमितो देयो निम्बाऽऽमलकसंयुतः ॥ १२४८ ॥
निहन्ति सकलान्मेहान् सर्वोपद्रवसंयुतान् ।
तत्तद्रोगहृते द्रव्येः सर्वरोगनिवर्हणः ॥ १२४९ ॥
रोगाऽनुरूपं दातव्य पथ्यमत्र यद्योचितम् ॥ १२५० ॥
र र स, र सु, र को, र क, ल, र र कौ, प्रमेहे । रस रसकौमुद्या “ ज्योत्रि सप्तधा ” इत्यस्य स्थाने “ हेत्रि सप्तधा ” इति पाठ ।

भाषा—शुद्ध नागभस्मको मित्रकमूलके साथ मिलाकर अप्रकृतभस्म डालकर धौंके । इसतरह इसे ७ बार करनेसे यह भस्मरूपमें होजायगा । इसमें कान्तलोहभस्म बराबरकी डालकर समस्तसे पोषशाश शुद्ध मैनसिलको गोमूत्रमें मिलाकर उससे ३-४ पहर मर्दनकर गुलाकर सीसेकी डिब्बीमें रखडोड़े । इस मेंसे २-२ रत्ती बकानय और आवलेके चूर्णकेसाथ देनेसे समस्त उपद्रवयुक्त असाध्य प्रमेह नष्टहोताहै । तत्परोग्रहाऽनुपानके साथ देनेसे अन्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै । इसमें पथ्य रोगाऽनुकूल देना ॥ २७७ ॥

२७८ प्रमेहमुद्रोरसः (मेहमुद्रः)

रसाञ्जनं विडं दाह विल्वं गोक्षुद्राडिमम् ।
भूमिन्वपिप्यलीमूलं त्रिकटु त्रिफला त्रिवृत् ॥ १२५० ॥
प्रत्येकं तोलकं देयं लोहचूर्णन्तु तत्समम् ।
पलैकं शुग्गुलु दत्त्वा घृतेन घटिकां कुरु ॥ १२५१ ॥
मापैका निमित्ता चेयं मेहमुद्ररसज्जिका ।
श्रीमद्रहननायेन लोहनिस्तारकारिणा ॥ १२५२ ॥
अनुपानं प्रकर्तव्यं छागोदुग्धं जलञ्च वा ।
मेहानां विंशतिं हन्यान्मूत्रकृच्छ्रं हलीमकम् ॥ १२५३ ॥

अमरुं कामलां पाण्डुं मूत्राऽऽघातमरोचकम्
अर्शांसि प्रणकुष्ठञ्च वातरक्त भगन्दरम् ॥ १२५४ ॥
र स, र सु, र. च, र. चि, भै. र, र र, प्रमेहे ।

भाषा—सौत, विड (जो कि बीजोंके जारणमें काम आताहै), विडनमक, देवदारु, बेलगिरी, गोखरु, अनारके छिलके, चिरायता, पिप्लामूल, त्रिकटु, त्रिफला और निसोत येसब १-१ तोला, लोहभस्म सबकी बराबर, शुद्ध गुग्गुलु १ पल लेकर सनका कपड्डाल चूर्णकर ३-४ पहर गोघृत देकर कुटेहुए गुग्गुलुमें धीरे २ मिलवै । घोड़ा २ घृत डालता जाय । जब एकत्रीव होजाय तब १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बकरीके दूध अथवा जलके साथ देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, हलीमक, पथी, धामला, पाण्डु, मूत्राऽऽघात, अरुचि, बकरीर, ण, कुष्ठ, वातरक्त और भगन्दर इनसगरो यह नष्ट करताहै ॥ २७८ ॥

२७९ प्रमेहमृगाङ्को रसः (मेहमृगाङ्कः)

पारदो गन्धकं वज्रं मृगनाभिञ्च दिङ्गुलुम् ।
धान्यकं बुद्धुं चैव धात्री चैवेलवालुकम् ॥ १२५५ ॥
त्रिकटु त्रिफला मुस्ता कर्पूरञ्च समंसमम् ।
श्रीगन्धवारिणा चापि मर्दयेद्यामयुग्मकम् ॥ १२५६ ॥
रक्तमूत्रधिकारांश्च हन्ति मेहकुलानि च ।
शर्कराज्याऽनुपानेन महादाहञ्च नाशयेत् ॥
स्यातो मेहमृगाङ्कोऽयं काश्यपेन विनिर्मितः ॥ १२५७ ॥
वे चि, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, वज्रभस्म, कस्तूरी, दिङ्गुलु, लमस, धनिया, पेशर, आवला, गेंडुला, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोया, कपूर येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर छपेद चन्दनके काड़ेसे २ पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और धीके साथ देनेसे सब प्रकारके प्रमेह और महादाह मिटतेहै ॥ २७९ ॥

२८० प्रमेहरसायनम् (मेहरसायनम्)

रजतञ्चैकभाग स्याद्रन्धकञ्च द्विभागिकः ।
वज्रभस्म त्रयो भागाश्चत्वारो नागभस्मनः ॥ १२५८ ॥
पञ्चभागो भवेत्सूतो हिङ्गुलो रसभागिकः ।
खल्वे निधाय कदलीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥ १२५९ ॥
दिनत्रयञ्च खर्जुरीकपायेण विमर्दयेत् ।
मापोमितां भस्ममात्रां शुद्धाऽनुपानतः ॥ १२६० ॥
पाददाह हस्तदाह शुल्मं लालाप्रमेहकम् ।
षड्भूयं मूत्रकृच्छ्रं प्रमेहं पित्तसम्भयम् ॥ १२६१ ॥
श्वस कासं पीनसञ्च पाण्डुं यक्ष्माणमेव च ।
अतीसारं वीर्यहानिं चातान्श्च विविधाञ्जयेत् ॥ १२६२ ॥
शूलमष्टविधं हन्ति सर्वज्वरहरं परम् ।

सर्वाङ्गसौन्दर्यकरं सर्वं मेहघ्नमुत्तमम् ॥
इदं रसायनवरं सर्वरोगनिर्वहणम् ॥ १२६३ ॥

रसायनस, प्रमेहे ।

भाषा—रजतभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, वज्रभस्म ३ भा, नागभस्म ४ भा, पारदभस्म ५ भाग, हिङ्गुलभस्म ६ भाग, लेकर सबको बारीक पीसकर २ पहर सूखा मर्दनकर केला और रजतके स्वरस अथवा काठसे ३-२ रोज मर्दनकर १-१ भाशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचिताऽनुपानके साथ देनेसे हस्तपाददाह, शुल्प, लालाप्रमेह और बहुमूत्र, मूत्रकृच्छ्र, पित्तप्रमेह, श्वास, कास, पीनस, पाण्डु, राजयक्ष्म, अतीसार, वीर्यदानि, नानाप्रकारके वायु, आठ प्रकारका शूल, समस्तज्वर ये सब दूरहोतेहैं ॥ २८० ॥

२८१ प्रमेहशुरसः

कान्ताऽभ्रमण्डूरहरीतमोनां
विचूर्णितानां क्रामश. शरांशम् ।
रसांशभृतांशमथो शरांशं
द्वात्रिंशदष्टोत्तरमुत्तमायाः ॥ १२६४ ॥
शुद्धं मृदित्वा गुटिकां विधाय
तक्रेण पीतं तलपोटकस्य ।
बीजञ्च तेषां द्विगुणं प्रकल्प्य
मेहामयानान्शु जयेत्प्रमेही ॥ १२६५ ॥
र र स, र र. को, प्रमेहे ।

भाषा—कान्तलोहभस्म ५ भाग, अभ्रकभस्म ६ भाग, मण्डूरभस्म और हर ५-५ भाग, त्रिफला ४० भाग, लेकर बारीक चूर्णकर पानीसे ३-४ पहर मर्दनकर २-२ भाशेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली ४ भाशे तुवरकके बीजोंको छाछमें पीसकर इसके साथ लेनेसे सबप्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २८१ ॥

२८२ प्रमेहसेतुरसः

एकं सूतो द्विधा वज्रो द्वाभ्यां द्विगुणगन्धक ।
कूपीपम्बो महासेतु र्वङ्गस्थानेऽथवा यिधुः ॥ १२६६ ॥
र चि, रसायनस, र को, र च, र का, प्रमेहे । र का,
रसायनस, र को, एषु महासेतुरिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, वज्रभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर गन्धक जारण तक बालकान्यन्त्रमें पकाकर स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालले । यहापर वज्रकीजगह चादीका विकल्पहै चाहे वज्र डाले चाहे चादी डाले इसमें आव अधिक नहीं देना । क्योंकि वज्र अथवा चादीका जो योगहै वह केवल गस्कारार्थ नहींहै किन्तु सदयोगार्थहै । अधिक आचेदनेसे पारा ऊपर चला जायगा और गन्धक जल जायगा इसलिये गन्धन जारण तकही आचेदना । अथवा गन्धक की दृष्टिहोकर कुछ दिस्ता गन्धक का जल्ने लगे उससमय आव बन्दकरदेना । स्वाह्नशीतल होनेपर निकाल लेना । यह

पाक प्राय दोपहरमें होजायगा इसमें गन्धक भी शामिल रहेगा ॥ २८२ ॥

२८३ प्रमेहसिन्धुतारकोरसः

निष्काऽष्टादशरुस्सुतो गन्धकस्य च विंशतिः ।
तालसत्त्वाच्च दश द्वौ तद्वत्सोममलस्य च ॥ १२६७ ॥
वङ्गस्य पट्ट पङ्कसकात्सीसकाद्य चऽऽन्नकात् ।
अर्कक्षीरेण सम्मर्द्य पुटैर्द्वजपुटेन च ॥ १२६८ ॥
त्रिरष्टौ द्वादश तथा द्वात्रिंशत्प्रहरं पुन ।
बहिस्त्रिधाऽर्कक्षीरेण भावयित्वा पुन.पुन. ॥ १२६९ ॥
एवं पुटैस्त्रिभिः सिद्धः कपोतप्रीवसन्निभः ।
मेहरोगहरोऽयं स्याद्द्रोसो मेहाऽऽग्धितारक. ॥ १२७० ॥
र का, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ ॥ कर्प, शुद्धगन्धक ५ कर्प, हरितालसत्त्व और सोमल ३-३ कर्प, शुद्ध वङ्ग, रापर, सीसा और धान्याऽभ्रक डेढ २ कर्प लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर ३-४ दिन आक्रेद्वधमें मर्दनकर गोला बनाय धरावसम्पुटमें बन्दकर गन्धकमें ३ पहरकी आचेद । स्वाह्नशीतल होनेपर निकालकर पूर्वैतत् मर्दनकर ८ पहरकी आचेद । तीसरी बार १२ पहरकी, चौथीबार ३२ पहरकी आचेद । इसके बाद आक्रे दधमें ३ भावनाए देकर गोलाबनाय पूर्वैतत् ३-८ और १२ पहरकी तीन आचेद । येसव मिलकर सात आचे हुई, यह कञ्चुकरकी गर्दनके रङ्गका रस सिद्धहोगा । इस जगह कपोतप्रीव सन्निभ रसकामधेनुशालेने लिप्साहै पर इसका रस लालहोगा । जिस धातुको आक्रेके दधकी अधिक भावनाए दीजातीहै उसका रङ्ग प्राय करके लाल हुआकरताहै । इसरसकी १ अथवा २ तली चलायल देकर मलाई वगैरहके साथ देनेसे यह अग्राभ्य प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ प्रमेहहरो रसः (प्रथमः)

वीर्यं पुरारे वैलिमन्नसञ्ज्ञं
जम्बीरनीरेण चिमर्द्य भस्म ।
रसाऽर्धभागेन ददीत शुल्प
सर्वं ततो गोपयसा चिमर्द्य ॥ १२७१ ॥
रज्जूरमत्स्यपिण्डिकहंसपादी-
द्रावेण सत्त्वेन गुह्यचिक्रायाः ।
मांसीशिवामर्कटवच्यदन्ती
वीजैस्तदीयैः सलिले विमाच्य ॥ १२७२ ॥
ततो रसः सिद्धयति बहुमस्य
शुक्रप्रमेहे सति शालमलीनाम् ।
मूलाभ्युना वा कुसुमाभ्युना वा
दद्यात्पयोमत्तकमत्र योज्यम् ॥
क्षौद्रेण दुर्नाम्नि तथाऽऽमरीपु
गवां पयोभि निखिलप्रमेहे ॥ १२७३ ॥
र र. स, र को, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, धान्याऽप्रकृ तीनों सम-
भाग लेकर जंबीरीरसगणे मर्दनकर टिकियापनाय धारावगमुदमें
बन्दर जगपुटकी आचदे । ऐसे पारा और गन्धक धारवार
देता जाय । जब निम्नभस्म होजाय तब इगभस्मते आधी
ताम्रभस्म मिलाकर गोदुर, सारसी लाई, राव, हंगराज,
गुद्दीतावर, जयामाली, हंस, कंचाच, जमालगोटा, इनके
सयासम्भार स्वरा अथवा हाथोंसे १-१ भागना देकर ३-३
रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोजे । इसमेंसे १-१ गोली सैम-
लकी जड़ अथवा फूलों रसके साथ देनेसे शुद्धप्रमेह नष्ट होता है ।
सायके दूधके साथ देनेसे तमाम प्रमेह नष्ट होते हैं । बवागीर
और फरीमें मधुक साथ देना । इसके प्रयोगमें दूधभातके
सिक्का और कुछ नहीं देना ॥ २८४ ॥

२८५ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (द्वितीयः)

गन्धेन सूतं द्विगुणं प्रष्टुद्य
विमर्दयेत्त्रोक्षुरनीरयुक्तम् ।
शुष्कञ्च हस्ताऽथ सुततताम्र-
चक्रञ्च तस्योपरि विन्यसेद्य ॥ १२७४ ॥

चक्रे यिल्लञ्च ततः प्रष्टुद्य
मृयोदरे ध्यापय द्रुग्गेन ।
हेमः सुतास्य रसेन पिष्टि
ताम्रस्य चाऽस्मिन् सततं क्षिपेद्य ॥ १२७५ ॥
संसेवयेत्तन्नुतञ्च पट्टं
प्रिसक्तकान्मेहद्विमुक्तये तत् ।
नानाप्रमेहा विलयं प्रयान्ति
पथ्यादिनः काश्चिद्विर्जितस्य ॥ १२७६ ॥

र. दी., र. वि., र. सु., र. का. र. को, प्रमेहे । र. को हृत्गौर
इति नाम । र. दी. हेमताररसः ।

टि०—मप्रयुक्तं भ्यननपुननेत्रभस्मिन् साऽद्वेक्षोरखुदितोऽस्ति स
हलितिसिरमदीपिरायाम्पादिन ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भा, शुद्ध पारा २ भाग लेकर गोदा-
रके रसके मर्दनकरे । जब पारेकी चक्र मिटजाय तब इसकी
टिकिया बनाकर मुताले । इन टिकियाको मिठीके बर्तनमें
रखकर टिकियाकी धारवर शुद्धतावेकी टिकिया बनाकर अग्निमें
शुद्धकरके पारोगन्धकी टिकियापर रखदेवे । इसमेंसे गन्धक
जलगायगा और पारा तावेकी टिकियापर लयजायगा । इस
चक्रिकाको मृपामें रख गुहागा डालकर धमनकरे तो इसका
खोट तैयार होगा । इन खोटमें मुर्गण तथा तारपिठीको खोटकी
धारवर डालकर द्रुग्गणके योगसे धमनकरे । जब इसकी भस्म
होजाय तब निकालकर रखोजे । इसमेंसे ३-३ रत्ती छाछके
साथ मेत्रन करनेसे २१ रोगमें नानाप्रकारके प्रमेहनष्टहोगे । इसके
प्रयोगमें क्वारादिगण और प्रमेहवर्धक चीजे बर्जितहैं ॥ २८५ ॥

२८६ प्रमेहहरोरस (मेहहरः) (तृतीयः)

रसस्य कर्पमादाय खल्वे निःक्षिप्य बुद्धिमान् ।
रक्ताऽगस्यप्रसूनानां स्वरसेन विमर्दयेत् ॥ १२७७ ॥

ससरात्रं तथा साधु श्वेतदूर्वारसेन च ।
निष्कण्डयं द्रुग्गणकं दत्त्वा खदिरसारातः ॥ १२७८ ॥
फर्पूरं रसनुत्पञ्च सर्वमेकत्र भर्दयेत् ।
यावधिकणतां याति युक्ता चन्दनवारिणा ॥ १२७९ ॥
दरेणुमायान्वटकांश्चायायां परिशोषयेत् ।
प्रातर्निशायां भग्याहे सेवनीयः प्रयत्नतः ॥ १२८० ॥
अयं मेहहरः प्रोक्तस्तथा शोषहरः परः ।
रसो मेहहरः सर्वपिडिकानाशनः परः ॥ १२८१ ॥
र क., प्रमेहे ।

भाषा—एकतोला शुद्ध पारा लेकर लाल अणस्त्यके रसमें
७ रोज मर्दनकर सफेद दूधके रसके ७ रोज मर्दनकर गुहादे ।
पिर इसमें गुहागा और सैरसार ८-८ मात्रे, शुद्ध कपूर १
तोला डालकर मर्दन करे । जब एकदम धारीक हो जाय तब
सफेदचन्दनके काड़ेमें मटर धारवर गोलियें बनाकर छायामें
मुगाकर रखोजे । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचिताऽनुपानके
साथ रोजाना तीनों समय देनेसे पिडिका सहित समस्तप्रमेह
नष्ट होते हैं ॥ २८६ ॥

२८७ प्रमेहहरोरसः (मेहसूदनः) (चतुर्थः)

समांशको सूतवली विमृष्टौ
ताभ्याञ्च लाहादित्रयं समानम् ।
श्वदंप्रया मर्द्ये च भूधराख्यं
दत्त्वा पुटे मेहहरो रसः स्यात् ॥ १२८२ ॥
षडैकमात्रञ्च सितामधुभ्यां
घात्रीरसशौद्रयुतं प्रयुक्तम् ।
घरामधुभ्यामपि मेहयोर्गौ-
र्विनाशपत्येन समस्तमेहान् ॥ १२८३ ॥

रसायनस, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, सोना, चादी
और लोहभस्म २-२ तोले लेकर पारे गन्धककी नीलवर्ण
कचलीमें मिलाकर गोदरुके रसके मर्दनकर गोला बनाय सूधर
पुटेमें आचदे । स्वात्शीतल होनेपर निकालकर रखोजे ।
इसमेंसे ३-३ रत्ती धारवर, मधु, अथवा आवलेका रस और
मधु अथवा त्रिकला और मधु अथवा अन्य प्रमेहनशक अनु-
पानोंके साथ देनेसे यह तमाम प्रमेहोंको नष्ट करता है ॥ २८७ ॥

२८८ प्रमेहहरोरसः (मेहहरः) (पञ्चमः)

मृतं सूतं मृतं ताम्रं तारमसम च हाटकम् ।
हंसपाद्रीरसेनैव समभागञ्च खल्वके ॥ १२८४ ॥
दिनैकं मर्दयेत्त्रोलं काचकूप्यां निवेशयेत् ।
चालुकायन्त्रके चैव द्वियामं परिपाचयेत् ॥ १२८५ ॥
स्याद्दशीतलमुद्गस्य गुञ्जामानं प्रदापयेत् ।
पञ्चाङ्गे निम्बतुल्यानां कपायमनुपापयेत् ॥
हतिं हारिद्रक मेहं सर्वमेहकुलान्तकः ॥ १२८६ ॥
य रा., प्रमेहे ।

भाषा—पारा, तांग, चादी और सुवर्ण इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रससे १ रोज मर्दनकर गोला बनाय वाचनी शीशिमि डालकर बालकान्यत्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा नीमके सहस्र तिक्तशुष्कोके पत्राङ्गके काढेके साथ देनेसे यह हारिदक प्रमेहको नष्ट करताहै । साधारणतया प्रमेह-हर योगोंके साथ देनेसे साधारण प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥२८८॥

२८९ प्रमेहहरोरसः (पष्टः)

रससौम्यशिलाताम्रं मर्दयेद्वेद्यामरुम् ।
कुमार्यां च कदल्या च छिक्काकृष्माण्डजै रसैः ॥१२८७॥
तद्रसैरेव संस्वेद्य मर्दयेद्रजनीद्रवैः ।
पुटेद्रजपुटेऽभ्यथपलाशोद्गुम्बरेन्धनैः ॥
चिञ्चाक्षाराऽन्तरेऽयं तु रसो मेहहरो भवेत् ॥१२८८॥
र का., प्रमेह ।

भाषा—पारा, चादी, चावा इनकी भस्में, शुद्ध सैनसिल सब समभाग लेकर घोंडुआर, केलेका कन्द, नकछिक्नी, सफेद कोंडवा इनके रसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोला बनाय ४ पहरतक इन्हींके रसमें स्वेदनकर इमलीके क्षारमें बन्दकर गज पुटमें पीपल, पलाश अथवा गुलर इनकी लफड़ियोंकी आचदे । ऐसे प्रत्येक भावनामें अलग २ मर्दन, स्वेदन और पुट देता जाय । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती प्रमेहहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २८९ ॥

२९० प्रमेहहरोरसः (सतमः)

राजावर्तस्य रत्नस्य भस्म गन्धकसाधितम् ।
तुल्यञ्च भस्मना तेन घनसत्वञ्च काञ्चनम् ॥१२८९॥
मर्दयेच्चुल्यसूतञ्च तत्तन्मारणकै र्वैः ।
सत्त्वतुल्येन सूतेन तावता गन्धकेन च ॥ १२९० ॥
कज्जल्या कृतया सार्धं पूर्वभस्मानि मेलयेत् ।
त्रिदिनं मर्दयित्वा तु मूपायां विनिरुद्धय ॥१२९१॥
पञ्चाढकमितैः शालितुषैश्च पुटमाचरेत् ।
स्वतःशीतं समाहृत्य भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १२९२ ॥
आकुलीमूलबन्बूलबीजगुञ्जाजटोरुवैः ।
कपायेरष्टवारान्हि पट्टचूर्णं विधाय च ॥ १२९३ ॥
विनि-क्षिपेत्करण्डाऽन्ते यत्नेन स्यापयेत्ततः ।
तत्तन्मेहहरै र्वैः संयुक्तो रसराडयम् ॥ १२९४ ॥
निहन्ति सकलान्मेहान् दुरात्मानं विचर्जयेत् ।
अयं हि सर्वमेहघ्नो भेषजेषु प्रशस्यते ॥ १२९५ ॥
देवो धर्मवतामयं मानवानां विदोषतः ।
रसोऽयं नन्दिनाऽऽदिष्टः प्रच्छो मेहनाशनः ॥१२९६॥
र. को., र. र. स., मेहाऽधिकारे ।

भाषा—गन्धकयोगसे सिद्धकी हुई राजवर्तकी भस्म, नकसत्व, सुवर्णभस्म और शुद्ध पारा सब समभाग लेकर

सम्को इक्का मर्दनकर यवालाभ मारकवर्णोंके स्वरससे मर्दनकर फिर अभ्रकसत्वकी बराबर शुद्ध पारा और गन्धककी नीलवर्ण कज्जली मिलाकर मारकद्रव्योंके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर मूपां बन्दकर ५ सेर धानके छिलकोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर अङ्गोदमूल, बन्बूलबीज, सफेद गुञ्जाकीज इन प्रत्येकके कापोंसे ८-८ बार भावना देकर सुखाकर बत्नमें छानकर शीशिमि रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मेहहराऽनुपानके साथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको दूर करताहै । इसे दुरात्माको नहीं देना ॥ २९० ॥

२९१ प्रमेहहरोरसः

वङ्गस्य भस्म भागैकं कर्पूरो भाग एव च ।
द्वौ भागौ जातिपण्याश्च द्विभागं करहाटकम् ॥१२९७॥
विदार्याश्चतुरो भागा धात्रीतालोसकास्समाः ।
पद्मागा सिक्ता प्रोक्ता सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥
गोदुग्धाद्यनुपानेन सर्वमेहहरो भवेत् ॥ १२९८ ॥
र बो , प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्धकपूर १-१ भाग, जाविनी, अकरा २-२ भाग, विदारीकन्द, आवले और तालीसपत्र ४-भाग, शकर ६ भाग, लेकर सबका बारीक चुनकर रखजोड़े इसमेंसे ३-३ मासे गोदुग्ध वगेरहके साथ लेनेसे समस्तप्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २९१ ॥

२९२ प्रमेहान्तकोरसः (लघु) (प्रथमः)

हाटकञ्चैरुभागञ्च रजतञ्च द्विभागिकम् ।
वङ्गभस्म त्रिभागं स्यान्नागभस्म चतुर्गुणम् ॥१२९९॥
रसभस्म वाजभागं पद्मभागं हिङ्गुलं तथा ।
सर्वं खर्जूरतोयेन दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ १३०० ॥
मेहान्तको रसो नाम्ना सर्वमेहनिवारणः ।
सिताश्वैद्रयुतं दद्यान्मात्रां बह्वमितां भिषक् ॥१३०१॥
रसायनस , प्रमेह ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भाग, वङ्ग ३ भाग, नाग ४ भाग, पारा ५ भाग, हिङ्गुल ६ भाग इन सबकी भस्में लेकर सबको एकजगह मर्दनकर खर्जूरकी ताड़ोंसे ३ रोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोतिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और मधुके साथ मिलाकर बचानेसे यह सब प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ २९२ ॥

२९३ प्रमेहान्तकोरसः (महान्) (द्वितीयः)

स्वर्णं तौष्यञ्च गगनं रसभस्म तथैव च ।
कान्तलोहं ताम्रभस्म नागं विद्रुममौक्तिकम् ॥१३०२॥
शहभस्म च सर्वेषां चैकेको भाग इरितः ।
वङ्गस्य रसमागाः स्युः वलिश्च रसभागिकः ॥१३०३॥
कान्तभस्म चतुर्भागं सन्धकं शुद्धं समाहरेत् ।
भाष्यञ्च त्रिकलाकापैश्चिषमूलरसेन च ॥ १३०४ ॥

चन्दनस्य कपायेण वाजिदन्तरसेन च ।
मर्दयेत्सप्तदिवसाभ्रावाचल्लङ्घयन्मिता ॥ १३०५ ॥
बहुमूत्रं चेभुमेहं लालामेहं क्षयन्तथा ।
पाण्डुरोगं श्वासकासौ तिमिर वातजं हरेत् ॥ १३०६ ॥
हस्तदाहं पाददाहं नष्टशैर्यत्वमेव च ।
घन्ध्या स्त्री पुत्रसम्पन्ना भयेदेव न संशयः ॥
महामेहोऽन्तको नाम रसो लघ्वो महागुरोः ॥ १३०७ ॥
सायनस, प्रमेह ।

भाषा—सुवर्ण, चारी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, ताम्र, नाग, विद्रुम, मोती, शङ्ख इन सबकी भस्में १-१ भाग, वज्र-भस्म और गन्धक ६-६ भाग, कान्तभस्म ४ भाग, लेकर सबको बारीक पीस त्रिफला, चित्रमूल, सपेदचन्दन, बडी इन्ती इनसबके यथासम्भव स्वस्त अथवा वायोसे ७ रोज मर्द कर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिताज्जुगानके साथ देनेसे बहुमूत्र, श्शुमेह, लाल मेह, क्षय, पाण्डुरोग, श्वास, कास, वातजनिमिर, हाथपैरका दाह, नष्टशुक्रा, इनसबको यह नष्टकरता है । इसरसको घन्ध्या खाय तो पुनवती होय ॥ २९३ ॥

२९४ प्रमेहान्तकोरसः (तृतीयः)

स्वर्णञ्च ताराऽमृतसूतमग्नं
मण्डूरतीक्ष्णं रविनागभस्म ।
प्रवालवैक्रान्तकमौक्तिकानि
कान्तं चर्लिं चङ्गमथ द्विभागम् ॥ १३०८ ॥
खल्वे विनिक्षिप्य सुमर्दितं तत्
फलत्रयेणाऽथ दिनत्रयञ्च ।
तद्रोलकीकृत्य पुटं प्रदाय
पुनर्विमर्चाऽथ सुगाढमेतत् ॥ १३०९ ॥
तद्द्रव्यजाताच्च चतुर्थभागं
शिलोद्भूतं सूतविषं तदर्द्धम् ।
लवङ्गजातीफलकुङ्कुमञ्च
कस्तुरिका निष्कमितं पृथक् पृथक् ॥ १३१० ॥
सपिप्पलीक मधुनाऽथलीढं
फोलप्रमाणं पयसाऽथवाऽद्यात् ।
घृताकया शर्करया युतं वा
युक्त्वाऽनुपातै विनिहन्ति रोगाम् ॥ १३११ ॥
प्रमेहधातुक्षयधातुजान्गदा-
न्मूत्रस्य कृच्छ्राणि विवृद्धदाहम् ।
श्वासञ्च कासं विनिहन्ति वर्णं
जीर्णश्वराऽरोचकगुल्मरोगान् ॥ १३१२ ॥
घन्ध्या च सम्यग् भजते च गर्भं
नष्टेन्द्रिये दीर्घविवर्धनं स्यात् ।
मेहान्तको नाम रसोत्तमः स्या-
च्छुद्धे च काये विनियोजनीयः ॥ १३१३ ॥
वै. वि. (ल), प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण और रजतभस्म, शुद्ध बछनाग, पारा, अभ्रक, मण्डूर, फोलाद, तावा, नाग, प्रवाल, वैक्रान्त, मोती, कान्तलोह और वज्र इनभीभस्में शुद्धगन्धक २-२ भाग लेकर १-२ पहर इन्के मर्दनकर त्रिफलाके वाथसे ३ रोज घोट कर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २० सेर कण्डोकी आचदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर फिर त्रिफलाके काढ़िसे ३ रोज मर्दनकर आधेमन कण्डोकी आचदे । स्वाज्ञशी-तल होनेपर निकालकर तोलकर चतुर्धाश शुद्ध मैनसिल और मैनसिलसे आधी पारदभस्म और शुद्धमछनाग, तथा लौग जायफल, केसर, कस्तूरी, येसब ४-४ भागों लेकर सबका बारीक चूर्णकर पूर्वचूर्णमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती गधु और पीपल केसाथ अथवा दूधकेसाथ अथवा घी, शर्करके साथ अथवा तप्तद्रोहहस्ताज्जुगानोंके साथ देनेसे प्रमेह, धातुक्षय, धातुगतोग, मूत्रकृच्छ्र, बडीहुई जलन, श्वास, कास, जीर्णज्वर, अरोचक, गुल्म, बन्ध्यात्व, नष्टेन्द्रियत्व इन सबको यह नष्टकरता है । इसका प्रयोग करते समय वमन विरचनादिकसे रोगीको शुद्धकरलेना ॥ २९४ ॥

२९५ प्रमेहान्तकोरसः (चतुर्थः)

वज्रं नागं चाऽञ्जकञ्च लोहं कान्तञ्च पररदम् ।
ताम्रञ्च तीक्ष्णदर्दं गन्धकं त्रङ्गणन्तथा ॥ १३१४ ॥
रसकञ्च समांशानि खट्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
हंसपादीरसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ १३१५ ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य बालुकायन्मध्यगम् ।
यामहयेन सम्पक् स्याद्गशीतं विचूर्णयेत् ॥ १३१६ ॥
कर्पूरं कुङ्कुमञ्चैव चानुजातञ्च चन्दनम् ।
जातीफलं जातिपत्रं चूर्णां सकलं क्षिपेत् ॥ १३१७ ॥
विम्बीपत्रसेनैव मर्दितञ्च दिनत्रयम् ।
पुनस्तु गोलकं कृत्वा छायाशुष्कं सुपेषयेत् ॥ १३१८ ॥
शर्करानघनीताभ्यां हन्ति मेहांश्चिरोत्थितान् ।
मेहान्तकरसो नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ १३१९ ॥
वै वि., (ल), मेह ।

भाषा—वज्र, नाग, अभ्रक, लोह, कान्तलोह, पारा, ताम्र, फोलाद इनसबकीभस्में, शुद्ध शिगरिफ, गन्धक और मुहगा, खर्पूरभस्म येसब १-१ तोले लेकर हयराजके रससे ३ रोज मर्दनकर सुखाकर काचकी शीशीमें भरकर बालुकायन्त्रमें दोष हर पकावे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर पीसकर शुद्धकर्पूर, केसर, तज, पत्रज, इलायची, नागसेसर, सपेदचन्दन, जायफल, जाविनी सब डेढ १॥ तोले लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वोक्तसमें मिलाकर कुङ्कुक पत्रद्वरससे ३ दिन मर्दनकर १-१ भागोकी गोलियें बनाकर छायाशुष्कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मखन और मिश्रीकेसाथ देनेसे बहुतदिनके प्रमेहोंको यह नष्ट करता है । और तप्तद्रोहहस्ताज्जुगानोंकेसाथ देनेसे सभीरोगोंको दूरकरता है ॥ २९५ ॥

२९६ प्रमेहान्तकोरसः (पञ्चमः)

रसभस्मत्रयो भागाश्चतुर्थांशान्तु हाटकम् ।
 सौव्यं तीक्ष्णं तापकञ्च नागं वैक्रान्तमभ्रकम् ॥ १३२० ॥
 शिलागन्धकचूर्णञ्च प्रत्येकं सूततुल्यकम् ।
 सुमुहूर्ते क्षिपेत्खल्वे त्रिफलाद्रवमदितम् ॥ १३२१ ॥
 मोदकाभ्यायया शुष्कास्त्रिःपुटेत्सङ्गशीतलम् ।
 उशीरचन्दनरसे चतस्रो भावनास्तथा ॥ १३२२ ॥
 चतुर्गुणाप्रमाणेन शर्करामधुसंयुतम् ।
 मधुमेहं चेषुमेहं दाहतापौ च नाशयेत् ॥ १३२३ ॥
 उदकं शुक्रमेहञ्च लालातन्तुविनाशनम् ।
 क्षयमेहं वातमेहं कासश्वासाग्निहन्ति च ॥ १३२४ ॥
 अद्गदाहं शिरोदाहं नानारोगाग्निवारयेत् ।
 वन्ध्या च लभते गर्भं नष्टवीर्यं प्रसन्नताम् ॥ १३२५ ॥
 बलपुष्टिकरं ह्येतद् भक्षणाद्भृशं भवेत् ।
 मेहान्तकरसो नाम्ना सूत्ररोगनिवारणः ॥ १३२६ ॥
 वै चि, प्रमेहे ।

भाषा—गारदभस्म ३ भा, सुवर्णभस्म १ भा, चादी, फोलाद, तावा, सीसा, वैक्रान्त, अभ्रक इनकी भस्में, शुद्ध मैन-सिल और गन्धक ३-३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अन्ते सुहूर्तमें त्रिफलाके काठसे १-२ रोज मदनकर वेर बराबर गोलिया बनाकर छायामें सुपाय धरावसमुद्धमें बदकर ५ सेर कण्ठीकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निवालरर फिर ३ रोज त्रिफलाके काठमें मदनकर आचदे । इसप्रकार ३ आचें देकर खस और सफेद चन्दनके काठिकी २-२ भावनाएँ देकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शक्कर और मधुके साथदेनेसे मधुमेह, इशुमेह, दाह, ताप, उदकमेह, शुक्रमेह, लालामेह, तन्तुमेह, क्षयजन्यमेह, वातमेह, कास, श्वास, अद्गदाह, शिरोदाह, इनरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसके सेवनसे वन्ध्या पुत्रको प्राप्त होतीहै । नष्टवीर्य प्रसन्नताको प्राप्त होताहै बल और पुष्टिको करताहै ॥ २९६ ॥

२९७ प्रमेहान्तकोरसः (षष्ठः)

स्वर्णञ्च तारं मृतमभ्रसूतं
 कान्तञ्च तीक्ष्णं रविनागभस्म ।
 प्रवालमुक्ताभसितेन युक्तं
 प्रत्येकमेतच्च चतुःप्रमाणम् ॥ १३२७ ॥
 वैक्रान्तभस्म त्रुगान्धकौ च
 तथैकभागेन नियोजयेत् ।
 सुहूर्तमात्रं विनिपिष्य यत्ना-
 त्पलत्रयं वा रविचूर्णयुक्तम् ॥ १३२८ ॥
 लामञ्जकैश्चन्दनवालकाभ्यां
 वसन्तद्रव्या कमलस्य कन्दैः ।
 विभाष्य सभ्यक् स्वरसैश्च सप्त
 सर्वैः समा चाऽन सित्ता प्रयोज्या ॥ १३२९ ॥

मापैकमानेन निपेयणीयः
 सितामधुभ्यां कणया समेतः ।
 सुष्टुःप्रयुक्तः करपद्मदाहं
 लालेशुमेहं बहुभुजजातम् ॥ १३३० ॥
 निहन्ति शीघ्रं क्षयमेहपाण्डुर
 श्वासञ्च कासं तिमिरं निहन्ति ।
 अशीसि कुण्डं ह्युदरं दृश्च
 काकादिवन्ध्या लभते च गर्भम् ॥
 नष्टेन्द्रियो वीर्यभरञ्च शीघ्रं
 मेहान्तको नाम रसोत्तमोऽयम् ॥ १३३१ ॥
 र. क ओ, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, अभ्रक, पारा, कान्तलोह, फोलाद, तावा, सीसा, प्रवाल, मोती इनकी भस्में प्रत्येक ४ तोले, वैक्रान्त और त्रुगभस्म, शुद्ध गन्धक १-१ तोला लेकर सबका बारीक चूर्णकर ३ पल आकरी जड़नी छालका चूर्ण मिलावे । फिर पतलीखस, चन्दन, सुगन्धवाला, पावर, कमलचन्द इन प्रत्येकके यथासम्भन्न स्वरसे अथवा क्वाथोंसे ७-७ भावनाएँ देकर सुखाकर सक्की बराबर शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा शक्कर, मधु और पीपलके साथ सेवन करनेसे हाथ-पैरोंकी जलन, लालामेह, इशुमेह, बहुभुज, क्षयप्रमेह, पाण्डु, श्वास, कास, तिमिर, बवासीर, उदररोग, प्रदर, काकवन्ध्यादि दोष, नष्टेन्द्रियत्व और मूर्च्छादितोग इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९७ ॥

२९८ प्रमेहारिरसः (प्रथमः)

सूतस्ताम्रमयोऽन्नकञ्च कुटिलं सर्वं समांशीकृतं,
 तच्छ्रेष्ठाजलद्वयेण दिवसं सम्मर्दयेद्यत्नतः ।
 सशौद्रो जयति प्रसह्य सितया वा मेहघृन्दं महा-
 मूत्राघातमपि प्रकृद्गुदजान् बह्नीन्मितो मेहहा ॥ १३३२ ॥
 र, र पा, प्रमेहे । रसपरिजाते प्रमेहप्रभञ्जनेति नाम ।

भाषा—पारा, तावा, लोहा, अभ्रक, हीरा इनकी भस्में बराबर लेकर बारीक चूर्णकर त्रिफला और नागरमोथके काठसे १-१ रोज भावना देकर सुखानर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु अथवा शक्करके साथ सेवन करनेसे प्रमेह, मूत्राऽपत्त, बवासीर इन सबको यह नष्ट करताहै ॥ २९८ ॥

२९९ प्रमेहारिरसः (द्वितीयः)

सूतखर्परफासीसं मर्दयेद्विचसन्नयम् ।
 पला जातीकलं यष्टिमधुक हिमवालकम् ॥ १३३३ ॥
 मधुकपुष्पं रविदिरः शिवा गोशुष्कस्तथा ।
 कर्पूरं जटिलाऽङ्गुली तेन तुल्य विमिश्रयेत् ॥ १३३४ ॥
 लाङ्गली तुम्बिनी दुग्धं दधिमुदरसेः पृथक् ।
 मर्दयेत्त्रिदिनं सिद्धस्ततो मेहगणाऽपहः ॥
 मधुना निष्कमात्रोऽयं भवेत्क्षीरोदनाशिनम् ॥ १३३५ ॥
 र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा, खपरिया और बर्मीस १-१ तोला लेकर ३ रोज़ शुद्ध मर्दनकर कजली बनाले फिर श्लायची, जायफल, मुञ्जटी, सपेदचन्दन, सुगन्धबाला, महुआ, वीर, हरे, गोखरू, भीमसेनीकपूर, जटामांठी, अष्टौलकीमन्वा, ये सब १-१ तोला लेकर बारीक बूनेकर पूर्वयोगमें मिलाकर क्लि-
हारी, कड़वांजूबी, दही और मूंग इन प्रत्येकके यथासम्भव स्वल्प अथवा हाथोंमें ३-३ रोज़ मर्दनकर ३-३ मासकी गोलियां बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय खानेसे तामा प्रकारके प्रमेह नष्ट होतेहैं ॥ २९९ ॥

३०० प्रमेहारिसः (तृतीयः)

रसकपूरकालकर्म कर्म बलिरसायनम् ।
तैलद्रुणतः कर्म मरिचं शुक्तिमाप्रकम् ॥ १३३६ ॥
कज्जलीं कारयेदेषां मर्दयेन्निम्बुजे रसेः ।
पादपालिकेस्ततो घट्टयः कार्यांश्चणकमाधिकाः १३३७
सशर्करं ततः प्लावेद्यत्वारिंदादिनावाधि ।
प्रमेहारिसं नाम्ना पथ्यहीनोऽपि दातव्येत् ॥१३३८॥
स्वायनम्., उपदेशः ।

भाषा—रसकपूर, गन्धकरगान, तैल और मुद्गा १-१ तोला, मरिच २ तोला इनसबकी कजलीकर ६ पल नीबूके रसमें मर्दनकर थोने प्रमाण गोलियां बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घररेके साय खानेसे यह ४० दिनमें उपद्रव-
जन्य व्याधि और तामा प्रमेहोंको नष्टकरताहै । इसे पथ्य हीन आदमीभी गारर लाभ उठाएगाहै ॥ ३०० ॥

३०१ प्रमेहारिसः (चतुर्थः)

रसग्लौ मरिचं कम्बुजीरं मृदारसन्निभकम् ।
भाषाफलं खाद्रिच्छ भसितं घट्टपत्रजम् ॥ १३३९ ॥
सितपूगस्य भसितं प्रत्येकं कर्मसम्मितम् ।
माषो भञ्जिततुल्यस्य कांस्ये ताप्रेण मर्दयेत् ॥१३४०॥
घृतं घृतं मेलयित्वा स्थापयेत्कृपिकोदरे ।
दार्कटापृतमिध्नत्तरादेपामगुद्लः साह ॥ १३४१ ॥
पलप्रमाणं पथ्याथे गोभृमं जूणतूयरी ।
घृतं सितं पदालञ्च कोदातक्यञ्च मेधिका ॥१३४२॥
आर्द्रकं गृध्रभना च गुण्टी च जीरकस्तथा ।
जीर्ण किरह्णं दोग्गमुपदेशाकुलोद्भयम् ॥
शुभं तच्छमयेद्गुना साऽत्र कार्या विचारणा ॥१३४३॥
स्वायनम्., उपदेशः ।

भाषा—सहकूर, मरिच, कज्जली, मुद्गंज, कान्ठक, गौ, कटाव और तलेद गुण्टीकी भूम के सब १-१ तोला, द्रुणम १ माता, मेरर सबको बारीबारीगबर बगिरे बर्-
मने हाथके हरेके सायके मीरेकाप ३-३ रोज़ मर्दनकर लीपोंमें रखाछोड़े । इनमेंसे ३-३ लीपे घरर और पीसे मिलाकर बन-
वेगाव लामेसे पुतासे पुता कराए और फिररतोग नरतेहैं ।

गहूँ, ज्वार, अरहर, धी, घरर, परवल, तुई, मेथी, अदरक, हुतुद, मोंठ, जीरा ये सब इनमें पथ्यहै ॥ ३०१ ॥

३०२ प्रमेहारिसः (पञ्चमः)

टङ्कणञ्च रसराजगन्धकंसीसकञ्च रसकेन संयुतम् ।
नागवह्निजरसेन मर्दितं सर्वमेहहृतरोगनाशनम् १३४४
र. प्र. सु. र. चं, नि. र., र. क. ल, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध मुद्गा, पारा और गन्धक, सीसा और खपरिया भूम समभाग लेकर पालके रसमें दोतीन रोज़ मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरदान कपूरकेन कलित करके खानेसे यह गमलत प्रमेहोंको नष्ट करताहै ॥ ३०२ ॥

३०३ प्रमेहारिसः (षष्ठः)

पारदभस्म शिलाजतु कृष्णा
लोहमलं त्रिकलाऽङ्गुलयीजम् ।
ताप्यनिदारजतोपलकान्त-
द्योपरजः खपुरञ्च कपित्थात् ॥ १३४५ ॥
सर्वमिदं परिष्कृत्य समादां
भृङ्गस्नेन विभाष्य सुषेधः ।
विंशतियारमिदं मधुलीदं
विंशतिमेहहरं शतदण्डम् ॥ १३४६ ॥
र. र. स., प्रमेहे ।

भाषा—पारदभस्म, शिलाजीत, पीपत्र, मगूरभस्म, त्रिकला, अष्टौलके बीज, सोनामागी, हन्दी, चंद्रीभस्म, कान्ठसायानभस्म, मोंठ, मिचं, पीपत्र, गूत्र, और कंध, सब समभाग लेकर बारीक बूनेकर भांगरेके रसमें २० बार भातनाई देकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुके साय खानेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोंको नष्ट करताहै । यह गहकें बाह्य अथवाया हुमाहै ॥ ३०३ ॥

३०४ प्रमेहारिसः (सप्तमः)

सूतेमाऽस्रकान्तानि गव्यां शीरेण मर्दयेत् ।
विदिनं शीरकाकोठी मर्दिनं विषमप्रथम् ॥१३४७॥
ततो लघुपुटं दद्याद्गुडामात्रं प्रयोजयेत् ।
वितामधुम्यामपया त्रिकलाशौद्रताऽपि वा ॥१३४८॥
धीर्घृष्टिं बलं पुष्टिं कानिशाऽपि प्रयच्छति ।
मेहात्तां नादानं धृष्टं परं कृप्यं रसायनम् ॥ १३४९ ॥
र. वा., प्रमेहाऽपिघारे ।

भाषा—पारा, मोता, अरक, कान्ठके इतकीभामे गम मग लेकर बारीक बूनेकर लोडुन और शीरकाकोठीके रसमें ३-३ रोज़ मर्दनकर सायमधुमें कदर ३-४ सेर कपतीकी भाव देवे । एकराजोता होनेपर त्रिकलाकर मर्दनकर रखाछोड़े । रसमेंसे १-१ लीपे घरर, मधु अथवा त्रिकला और मधुके साय खानेसे यह गमलत प्रमेहोंको नष्ट करताहै । पी. र. पुष्टि, कानि और कदरको रसायन लानेसे ॥ ३०४ ॥

३०५ प्रमेहारिसः (अष्टमः)

सूतं वाहुमितं वलिं शशिमितं सम्मर्द्य तत्कज्जलीं,
कृत्वा मागधिकाशिवोत्थसलिलैः सम्मर्द्य घर्षं पुनः ।
कृप्यां पारदकालिकां सुपिहितां मृत्स्नां शुक्रैः सप्तभिः,
संवेष्ट्य त्रिदिनं विशोष्य लवणाऽऽपूर्णं क्षिपेद्भाण्डके ॥
पस्तवायामचतुष्टयं तु शिशिरां भित्त्वा च तां कृपिकां,
तं सूतं हिलघं लवञ्च गगन लोहं लवं मर्दयेत् ।
सिद्धो बहूमितः सितासुमधुना वत्सादनीसत्त्वतो,
नोचेत्क्षौद्रकणायुतश्च तरसा सर्पप्रमेहाञ्जयेत् ॥
रोगाधीश्वरपाण्डु कामलहरिद्राभत्वपित्तोद्भवान्,
सर्वांश्च प्रदरामयान्विजयते मेहारिनामा रसः ॥३५१॥

र. र. स., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपार २ भाग, गन्धक १ भाग लेकर नीलवर्ण
कज्जलीकर पीपल और हरेके कोड़ेसे १-१ पहर मर्दनकर
सुलाकर ६-७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशी शीशीमें भरके मुह-
पर कपड़मिट्टी देवे । सूतनेपर लवणयन्त्रमें ४ पहरकी मध्यम
अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर शीशीमेंसे रसको निकालकर
इसमेंसे २ भाग लेकर अत्रक और लोहभस्म १-१ भाग मिला-
कर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती शकर, मधु अथवा गिलोयके
सत्त्व अथवा पीपल और मधुके साथ वेनेसे सम्पूर्ण प्रमेह,
राजयक्ष्म, पाण्डु, कामला, पीलापन पित्ताधिभ्य, प्रदर, इन
सबको यह नष्ट करताहै ॥ ३०५ ॥

३०६ प्रमेहेभकण्ठीरवोरसः (मेहेभकण्ठीरवः)

पिपैां गन्धकसूतकौ समलवौ सङ्घ्नभूत्या युतौ,
मर्द्यौ श्रीकलकार्यो बहुकलीग्राह्यो रराऽग्निद्रवैः ।
प्रत्येकं दिवसत्रयं सुरकृतासत्त्वेन बह्णोन्मितो,
हृन्त्यन्मेहगण भवेद्भवसवरो मेहेभकण्ठीरवः ॥ ३५२ ॥

र, र पा, र प्र सु, प्रमेहे ।

टि०—रसप्रकाशसुधाकरे अथ योगस्य धातकीस्वरोने मर्दन विधाय
बहुसुम्नमनाया मधुसुपानेन प्रमेहाऽपिसारयो र्नियोगं श्लोऽपि, नाम च
मेहाङ्कुल इति स्वपिनम् । पत्तु स योनेऽस्मादभिन्न । धातकी स्वस्मभो
बनाया भक्तिश्चैव सा अत्रैवाऽनुष्ठेया । शुद्धनीमलवयोपस्त्वनुकृत्यामेवा
ऽऽवहति सामयिककारणवशात्कालान्धित्तत्र प्रतिशुद्धता भास्वत तर्हि तयोभो
न कर्णाय इति सर्वं समञ्जसम् ।

भाषा—शुद्धपार, गन्धक और बह्मभस्म समभागलेकर
नीलवर्ण कज्जलीकर नारियल, मगैरल, बहुफली, ब्राह्मी, त्रिफला
और चित्रक इन प्रत्येकके स्वरस अथवा कायोंकी ३-३ रोज
भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन
मेंसे १-१ गोली गिलोयके सरवके साथ लेनेसे समस्तप्रमेह
नष्टहोतेहै ॥ ३०६ ॥

३०७ प्रमेहेभकेसरीरसः (वसन्कुसुमाकरः)

हेमसूतौ च लोहाऽन्नं बह्मभस्म क्रमाद्बहु ।
पञ्चभागाऽमृतं सप्त मालतीगोक्षुरोद्भवैः ॥ ३५३ ॥

मेहेभकेसरी नाम धात्रीचूर्णं भवेद्बहु ।

अनुपानविशेषेण मधुना सर्वमेहजित् ॥ ३५४ ॥
र क यो, प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्ण १, पारा २, लोह ३, अत्रक ४ और वस ५
इनसबकी मन्त्रे क्रमशःभागसे लेकर शुद्धबलनाग ५ भाग डाल
कर सबका बारीक चूर्णकर मालती और गोखरूके रसकी ७-७
भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन-
मेंसे १-१ गोली आवलेके चूर्ण और मधुके साथ अथवा
तत्तद्रोगहराऽनुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त प्रमेहोंको
नष्टकरताहै ॥ ३०७ ॥

३०८ प्रलयानलोरसः

पारदं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलं दङ्गुणं समम् ।
त्रिंशत् पञ्चलवणं दीप्यकं कृष्णजीरकम् ॥ ३५५ ॥
मृतं तीक्ष्णं मृतं ताप्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
कटुत्रयकपायेण बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ३५६ ॥
पड्यामान्ते समुद्धृत्य फणिपित्तेन भावयेत् ।
शुक्रामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥
अनुपानविशेषेण रसोऽयं प्रलयानलः ॥ ३५७ ॥
वै चि, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, बलनाग, शिंगरिफ, और सुहागा,
सञ्जी, यवशार, फलाशसार, पाचौनमक, अजवाइन, कालीजीरी,
लोह और ताप्रभस्म सत्र समभाग लेकर बारीक चूर्णकर त्रिकटुके
कालेमें एकदिन मर्दनकर सुलाकर बालुकायन्त्रमें ६ पहरकी
अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर कालेसर्पके
पित्तकी १ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख
छोड़े । इसमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे देनेसे यह समस्त
सन्निपातों को दूरकरताहै ॥ ३०८ ॥

३०९ प्रलयानलरुद्ररसः

(प्रसन्नभैरवः, कालाश्रिभैरवः)

हिङ्गुलोत्थरसाद्भागो द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।
वाणभागी खगोदन्तौ कालमाणा मनःशिला ॥ ३५८ ॥
दङ्गुणं नेत्रभागञ्च रसकादहतभागकाः ।
एकभागान्तु नेपालं नेत्रभागं हलाहलम् ॥ ३५९ ॥
दरदं चाऽग्निभागञ्च द्वौद्वौ च ताप्रलाहयोः ।
खल्वे रसैरशेषन्तु क्षीरिणाऽर्कस्य मर्दयेत् ॥ ३६० ॥
सिन्धुवाराऽग्निधन्तूरजम्बोरैः कारवेहकैः ।
विषचेत्ताम्रपात्रान्ते द्वियामं बालुकाऽग्निना ॥ ३६१ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सखदमध्ये विमर्दयेत् ।
गन्धतालं विषं श्लेच्छं भागार्धं निक्षिपेत्सतः ॥ ३६२ ॥
दशमूलकपायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।
पिप्लयीषुद्धतीपचकलनोरिणं मर्दयेत् ॥ ३६३ ॥
पञ्चकोलकपायेण मर्दयेद्यामयुग्मकम् ।
बहुमात्रप्रमाणेन शृङ्गवेररसेन च ॥ ३६४ ॥

योजयेत्तरुणे पित्तश्लेष्मवातज्वरऽपि च ।
 द्व्याहिके तरुणे चाऽपि चातुर्थिकविरात्रिके ॥ १३६५ ॥
 प्रत्यहान्तरिते चाऽपि घातुगे चाऽस्थिगेऽपि वा ।
 अन्येश्च विविधे देधि जनिते रुजि योजयेत् ॥ १३६६ ॥
 दाहस्थेदोहरुणे जाते मुहुमुहुदुरुपागते ।
 पयः शाल्योदनं पथ्यं दधिनकसमभित्तम् ॥ १३६७ ॥
 सितयामिश्रतोयेन नारिकेलाम्बुना तथा ।
 कदलीफालपक्वानि सर्वे च मधुरा रसाः ॥ १३६८ ॥
 ताम्बूलं चन्द्रसंयुक्तं देयं तत्र भिषग्परैः ।
 घापीकूपतडागादिद्वान्नं क्षुण्णयथेच्छया ॥ १३६९ ॥
 प्रलयानलकृदाऽऽख्यो रसः कालाऽग्निभैरवः ।
 प्रसन्नभैरवो नाम्ना कथ्यते प्राणिनां हितः ॥
 शिवेन बलिनाऽचिन्त्यकिरातेनादितः पुरा ॥ १३७० ॥

र. क. यो., वा., व रा, वै. वि., स्थायनमं., र. प. ज्वरा-
 धिकारे ।

टि०—रसयनम प्रलयाकालादिद्वन्द्वम इति नाम । स्तनद्वयां
 मृत्युञ्जय इति नाम अक्षिपयान्तर विदित्यभेदेन न हस्वने । वद-
 दन्त्यभवात्प्रत्ययान्तरात् उच्यते घट समन्वयित इति प्रतीयेते ।

भाषा—दिहृलोत्थ पात्रा १ भाग, शुद्धगन्ध २ भाग,
 अन्नक और गोदन्तीहरिताल ५-५ भाग, शुद्धमेनसिल ३ भाग,
 भुनामुहागा २ भाग, शुद्धरसैर अथवा जलसम्बन्ध ६ भाग,
 शुद्धजन्तुलोटा १ भाग, सपंसा विप अथवा शुद्ध बछनाग २
 भाग, शुद्धसिंहारिफ ३ भाग, ताव और लोहभस्म २-२ भाग,
 लेकर सपसा घासीक पूणैर पादगन्धकी नीलरंग कबलीमें
 मिलाकर आकका दूध, सभाद्र, चित्रमूल, पत्रा, जंभीरी,
 करेला इनके यथागन्ध स्वस अथवा बाधोसे १-१ रोज
 मर्दनकर गोला बनाय तापपत्रमें बन्दर पात्रनायनमें २ पहर
 की आंग देवे । ररात्रसीतल दोनेर निकालकर शुद्ध गन्धक,
 हरिताल, बछनाग और सिंगारिक आधा आधा भाग मिलाकर
 दसमूल, पीपत्र, वनभांडिके फल, पत्रकोल इनके बाधोसे २-२
 पहर मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रयटोडे । इनमेंसे
 १-१ गोली अरारोके बरसमें देनेमें तरुण पित्तश्लेष्मज्वर,
 वातज्वर, द्वाहाहिक, चातुर्थिक, विराय, घता, घातुग, अक्षिपय,
 नानालहके दोषमें होनेवाला ज्वर, दाह और रवेर शुद्ध ज्वर
 इन सबमें दूर करगोडे पदमें दही, छाछे साथ भान अथवा
 दूधभात देना, घारका घारबन, नारियलका पानी, पड़ेकेले, साथ
 लहके मगुररसार्थ, कपूरुयुक्त ताम्बूत्र, ये साथ देना । बाघड़ी,
 कृभा, तागाव बगैरमें कण्ठ भान करे । इसको कहीं प्रलयाऽ-
 नलकृद, कहीं कालाऽग्निभैरव और कहीं प्रसन्नभैरव
 नामसे पुकारोडे ॥ ३०९ ॥

३१० मलापान्तकरसः

सौभाग्यमागधीनुष्टोमरिचानां पूष्यं पिबुव ।
 शुद्धपत्रं बीज नवमासकसमितम् ॥ ३३३ ॥

लवङ्गनिफलागन्धपारदान्प्रतिकोदकान् ।
 नलजम्बूकजद्रवैः पिष्ट्वा गुञ्जाह्वयान्मिताम् ॥ १३७२ ॥
 अष्टादशाङ्गकायेन व्याध्यादिजनितेन वा ।
 बृहद्वाह्यादिजातेन घटौ दद्यात्प्रलापके ॥ १३७३ ॥
 नू क, सभिपाते ।
 भाषा—भुनामुहागा, पीपल, सोंठ और मरिच १-१ तोल,
 शुद्धपत्रके बीज ९ मासे, लौंग, त्रिकला, शुद्ध गन्धक और
 पात्रा ६-६ मासे लेकर घासीकपूणैर पादगन्धकी नीलरंग-
 कबलीमें मिलाकर नलपर और सोनापादाके बाधोसे १-१ रोज
 मर्दनकर २-२ रतीकी गोलियां बनाकर रयटोडे । इनमेंसे
 १-१ गोली अष्टादशाङ्ग अथवा व्याध्यादि अथवा बृहद्वाह्या-
 दिजाथके साथ देनेमें प्रलाप सभिपातरोहोताडे ॥ ३१० ॥

३११ प्रवालपञ्चामृतोरसः

प्रवालमुक्ताफलशङ्खशुक्ति-
 कपर्दिकानाञ्च समांशभागम् ।
 प्रवालमात्रं द्विगुणं प्रयोग्यं
 सर्वैः समांशं रथिदुग्धमेव ॥ १३७४ ॥
 एकौहृतं तत्तल्लु माण्डमये
 शिख्या मुगे बन्धनमत्र योजयम् ।
 पुटं विदध्यादतिशीतले च
 उक्त्य तद्रसं भरत्करण्डे ॥ १३७५ ॥
 नित्यं द्विवारं प्रतिरोगयोगः
 बहुप्रमाणेन प्रयोग्यमेव ।
 गुग्गोदररुण्डोहविषयकास-
 भ्यासाऽग्निमान्दानकमागतोत्थान् ॥
 अजीर्णमुत्रारुहदामयं
 बालप्रहातौ परमं प्रदास्तम् ॥ १३७६ ॥
 मेहामयं मूत्ररोगं मूत्ररुण्डं तथाऽऽमरीम् ।
 नाशयेन्नाऽत्र सन्देहः सत्यं गुग्गुयन्त्रो यथा ॥ १३७७ ॥
 पथ्याधितं भोजनमादरेण
 समाचरेद्विमलचित्तवृत्त्या ।
 प्रवालपञ्चामृतामधेया
 योगोत्तमः सर्वगदाऽप्यहारी ॥ १३७८ ॥
 दो. र., स्थायनमं., नि. र., र. प., दुग्धे ।
 भाषा—संगा ३ भाग, मोती, पट्ट, मोतीटोपीप, पीपी-
 कीही इतकी भांसे १-१ भाग लेकर सबकी बराबर आकका
 दूध डालकर विगिके बर्तनमें भर गुग्गुमुररके मज्जुटोही
 भांसे । स्वात्रसीकरोनेर त्रिहालर रोगीमें रगटोडे ।
 रोगीमें ३-३ रती मुख नाम मधु प्रती टम्बोकोविजनुनी
 के साथ देनेमें दुग्ध, उर, लौंगा, कटोहर, कण, कण,
 मन्तामि, कटाश्लेष्म, अरुण, उग्रत, टोंग, मगुरर, प्रमेह,
 मूत्ररोग, मूत्ररुण्ड, पपी, इत्याव रोगीको यह दूरकरोडे ।
 पथ्य रोगीको बरना । इनको स्तनद्वयात्प्रत्ययान्तरात् उच्यते
 यह तमानरोगीको दूरकरोडे ॥ ३११ ॥

३१२ प्रवालयोगः (प्रथमः)

पिवेत्तथा तण्डुलधावनेन
प्रवालचूर्णं कफमूत्रकृच्छ्रे ।

च. सं., ग. नि., मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—चावलके धोवनसे प्रवालकी पिष्टी करवके ।
इसमेंसे १-१ माशा चावलके धोवनकेसाथ देनेसे कफमूत्रकृच्छ्र
निवृत्तहोताहै ॥ ३१२ ॥

३१३ प्रवालयोगः (द्वितीयः)

प्रवालमुक्ताञ्जनशहचूर्णं
लिह्याच्चथा काञ्चनगैरिकोत्थम् ॥ १३७९ ॥

मु. सं., पाण्डुधिकारे ।

भाषा—मूंगा, मोती, सफेदसुरमा और शहभस्म इनको
गोमूत्रके साथ देनेसे अथवा सोनागेरुकीभस्म गोमूत्रकेसाथ
दनेसे पाण्डुरोग निवृत्त होताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ प्रवालयोगः

पला प्रवालकं हिङ्गु लघणञ्च समं भवेत् ।
मद्येनोष्णेन तर्पितं मेहं ससिकतञ्जयेत् ॥ १३८० ॥
मे. सं., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—श्लायची, प्रवालभस्म, भुनाहॉग, सेंधानमक
येसव समभागलेकर चारीकचूर्णकर १-१ माशेकी मात्रा उष्ण-
मद्यके साथ लेनेसे यह सिक्तासहित प्रमेहको नष्टकरताहै ३१४

३१५ प्रवालरसायनम्

चतुःपलं प्रवालस्य भस्मनो मृततारकम् ।
तत्समं द्विशुणं ताप्रं प्रवालमर्द्धभागिकम् ॥ १३८१ ॥
त्रिंशद्विभागिकं बज्रं षोडशांशञ्च नीलकम् ।
व्योमसत्त्वं सप्तं सर्वैस्तालकं सर्वतः समम् ॥ १३८२ ॥
विमर्शं लिङ्गिनीतोषै र्थावदिनचतुष्टयम् ।
सर्वांश्शुद्धसूतेन तस्माद्विशुणमन्थकैः ॥ १३८३ ॥
विहितां कज्जलां सम्यग्दापयित्वा यथापुरा ।
प्रवालादीनि भस्मानि विनिक्षिप्य विमिश्रय च ॥ १३८४ ॥
निर्वाप्य गोघृतैः सम्यग्दादशाऽध्वपुरातनैः ।
शरावसम्पुटे रुद्धा घृताकं स्वेदयेच्छनैः ॥ १३८५ ॥
विचूर्ण्य भावयेद्भृङ्गस्तै वीरांश्च सप्त च ।
व्योषाऽऽज्यसहितं हन्ति ज्वीरोगं दिनैस्त्रिभिः १३८६ ॥
क्षयञ्च मण्डलाघ्नं प्रहर्षां पाण्डुकामले ।
कुन्तकामलिकारोगमुदावर्त महोदरम् ॥ १३८७ ॥
प्रमेहं मेदसो बृद्धिं वातव्याधिं कफाऽऽमयम् ।
गुदरोगञ्च मन्दाग्निं मूत्रघातमशेषतः ॥ १३८८ ॥
स्मरमन्दिरजं व्याधिं घन्यारोगांश्च गात्रजान् ।
व्योषाऽऽज्यचित्रतोषैश्च मद्यपानमशेषतः ॥ १३८९ ॥
भूषोभूयो विस्वर्षति देहिनी यस्य जायते ।

रसोऽयं तस्य दातव्यो मण्डलानां त्रयं खलु ॥
आमरोगे च दातव्यो भिषगिभ वत्सरावधि ॥ १३९० ॥
र. च., रसायने ।

भाषा—प्रवाल और रजतभस्म ४-४ पल, ताप्रभस्म ८
पल, ताप्रसे आधी प्रवालपिष्टी और ३० वां भाग, हीरेकीभस्म
तथा षोडशांश नीलमभस्म और सबकी बराबर अन्नरसस्वर, इन-
सबचीजोंके बराबर शुद्धहरिताल लेकर सबका चारीक चूर्णकर
शिवलिङ्गीके अन्नस्वरसे ४ रोज मर्दनकरे । सब पिण्डसे आधा
शुद्ध पारा और पारेसे दूना शुद्ध गन्धक लेकर नीलवर्णकजलीकर
बेरेके कोयलों पर इसको पिघलाकर प्रवालादिक समस्त द्रव्य
धीरे २ मिलावे । कुलकसर रहजायतो १२ वर्षका पुराना गायका
घी डालकर एकजीवकरे । फिर इसको गोघृतसे चिकनेकियेहुए
शरावमें डालकर शरावसम्पुटकर भूषरयन्त्रमें स्वेदनकरे । स्वाज्ञि-
शीतलहोनेपर निकालकर चारीकचूर्णकर भंगरेके रससे ७ दिन
मर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली त्रिकटु और धीके साथ देनेसे ३ रोजमें यह ज्वरको
नष्टकरता है । आधे मण्डलमें क्षय, प्रहर्षा, पाण्डु, कामला,
कुन्तकामला (कुम्भकामला), उदावर्त, महोदर (जलोदर),
प्रमेह, मेदोदृष्टि, वातव्याधि, कफरोग, गुदरोग, मन्दाग्नि,
मूत्रघात, योनिरोग, वन्ध्यारोग, शरीरजरोग, इनसबको यह
नष्टकरताहै । त्रिकटु, धी और चित्रककाय इनके साथ देनेसे
समस्त मद्यपानज रोगोंको नष्टकरताहै । जिस आदमीको बार-
म्बार हैजा हुआ करताहै उस आदमीको ३ मण्डलतक देना ।
आमरोगमें १ वर्षतक देना ॥ ३१५ ॥

३१६ प्राचेतसं चूर्णम्

त्वक् सप्तपर्णात्कुटुजात्सनिम्बा-
द्वद्दामयोशोरनतानि ताप्यम् ।
रोध्रं विदध्यान्नवमं नवाह्नं
प्राचेतसं चूर्णमुदाहरन्ति ॥ १३९१ ॥
लौहैऽथ हैमे त्वय राजते वा
पात्रे स्थितं सन्ननि भूपतीनाम् ।
क्षौद्रेण लोढं सचराचराणि
विषाणि हन्याद्भुवि मानुषाणाम् ॥ १३९२ ॥
चि. क., विषाधिकारे ।

टि०—अत्र नवमं=नवमद्रव्य लोष तत् नवाह्नं नव अह्नानि अर्था-
द्भाग यस्य सत्रवाह्नमिति व्याख्येयम् । कैश्चित्तु नवाह्नं प्राचेतसं विद-
ध्यादिति नियोजितं तत्र सत्यम् १ नवमं नवाह्नं विदध्यादित्यर्थकं स्यादिति
सहस्रैराकल्पनीयम् ।

भाषा—सप्तपर्ण, कुटज, नीम, नागरमोषा, कुठ, खस,
तगर, शुद्ध सोनायाखी येसव १-१ भाग और लोष ९ भाग
लेकर सबका इक्षु चूर्णकर लोह अथवा सुवर्ण अथवा चांदीके
पात्रमें रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशो मद्यके साथ चाटनेमें स्थावर
और जहम दोनों विषोंको यह नष्टकरताहै । राजालोगोंके
घरमें इसका हमेशा रहना अत्यावश्यक है ॥ ३१६ ॥

३१७ प्राणदापर्पटी

सूताऽऽज्ञाऽयोहिवद्गोपणविपमखिलां-
शेन गन्धेन लौहां,
कोलाद्रौ विद्रुतेन क्षणमथ मिलितं
ढालितं गोमयस्ये ।

रम्भापत्रेऽमुनाऽन्येन च दृढपिहितं
प्राणदा पर्पटीस्या-
त्पाण्डौ रैके प्रहण्यां ज्वररुजि कसने
यक्ष्ममेहाऽग्निमान्द्ये ॥ १३९३ ॥

प्राणदा पर्पटी सैषा भापिता शम्भुना स्वयम् ।
तत्तद्रोगोऽनुपानेन सर्वरोगविनाशिनी ॥ १३९४ ॥
पृ यो. त, नि र, र, च, यो र, क्ष्वाऽधिकरे ।

भाषा—शुद्धपारा, अत्रक, लोह, नाग, वन इनरीभस्म, कालीमिर्च, शुद्ध बजनाग, येसव समभाग और सबकी बराबर शुद्ध गन्धक लेकर पाण्डुगन्धकनी नीलवर्णकजली कर देकरे कोयलोर प लोहेकी कड़ाहीमें घृतयोगसे गलाकर बाकी चीजोंको मिलादे । एकदम गलजानेपर ताजे गोबरपर रखे हुये केलेके पत्तेपर ढालकर सूखे पत्तेसे ढककर गोबरसे दवादे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे पीपलप्रवृत्तिकेसाथ आधीरत्तीसे ५ रतीतक मात्रा बडापर खावे और उसीकमसे कमकरे । ऐसे जबतक पूर्ण आरोग्यलाभ न हो ततक इसी-मको जारी रखे । एकदम आराम होनेपर आधी रत्तीकी मात्रा पर लाकर छोड़े । इसके सेवनसे पाण्डु, प्रवाहिका, प्रहणी, ज्वर, कास, यक्ष्म, प्रमेह और अभिमान्य नष्ट होतेहैं । तत्तद्रोगोचिताऽनुपानके साथ देकर रोगोचित पथ्य पालन कर-नेसे यह सभीरोगोंको नष्टरुतीहै ॥ ३१७ ॥

३१८ प्राणनाथरसः (प्रथमः)

लोहभस्म पलैकन्तु द्विपलं भृङ्गजद्रचम् ।
घराभाङ्गीमयं द्रावं पलैकैकं नियोजयेत् ॥ १३९५ ॥
पलैकस्मिन्स्त्रीफलोत्थे सर्वे भर्ज्यश्च खपरि ।
लोहांशं माक्षिकं शुद्धं मर्द्यं पूर्वोदितं द्रव्यैः ॥ १३९६ ॥
रुद्रा त्रिभिः पुटेः पाच्यं द्रव्यं मर्द्यं पुनः ।
मृतं स्रितं मृतं धङ्गं निष्कं निष्कं विमिश्रयेत् ॥ १३९७ ॥
द्वौ निष्कौ शुद्धगन्धस्य चतुर्निष्का वराटिका ।
एकीऽथ्य पुटे पाच्यं पूर्वलोहविमिश्रितम् ॥ १३९८ ॥
पूर्वोक्तैस्तु द्रव्यं मर्द्यं पुटेनैकेन पाचयेत् ।
सप्तनिष्कान्मरीचानां तुल्यद्वन्द्वणयो दश ॥ १३९९ ॥
मैलयेषु पृथक् सर्वे प्राणनाथाऽऽह्वयो रसः ।
भक्षयेत्प्रिकपादार्यमसाध्यं राजयश्मनुत् ॥
शोफोद्राऽशोप्रहणीज्वरगुल्महरं तथा ॥ १४०० ॥
नि. र, र को, र का., र र, क्ष्वाऽधिकरे । र र प्राणना-
थरस इति नाम । तथाच "वराभाङ्गीभव द्राव पत्रैक नियोज-
येत् ।" इति पाठो न दृश्यते, तथा च वरस्थाने नामं नियोजितम् ।

भाषा—लोहभस्म १ पल, भंगरेका रस २ पल, त्रिपला और भाङ्गीका रस १-१ पल लेकर पहिले त्रिफलाका रस मिठीके खपड़ेमें ढालकर उसमें लोहेको मिलाकर सेके । रस सुखजानेपर लोहकी बराबर शुद्ध सोनामाषी ढालकर भंगरा और भारतीके रसोंसे कमसे मर्दनकरे । रसमुखजानेपर गोला बनाय भूषयन्त्रमें रखकर २ सेर बण्डोंकी आवेदे । स्वाज्ञ-शीतल होनेपर निकालकर फिर दोनों रसोंसे मर्दनकर पुटेदे । ऐसे तीनवार करके चौथीवार फारद और वनभस्म ४-४ माशे मिलाकर शुद्धान्यक ८ माशे, पीलीकौड़ीकी भस्म १ कर्प मिलाकर पूर्वोक्तखसोंसे मर्दनकर १ पुटेदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर मिर्च १॥ कर्प, शुद्धशुद्दागा ३॥ कर्प मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ माशा उचिताऽनुपानके साथ देनेसे अमाष्यराजयक्ष्म, शोष, उदर, वनासीर, प्रहणी, ज्वर और गुल्म इनसबको यह नष्ट करता है ॥ ३१८ ॥

३१९ प्राणनाथरसः (द्वितीयः)

अयोरजो विशतिनिष्कमानं
धिभावितं भृङ्गस्ताऽऽदकेन ।
घट्टरभाङ्गीत्रिफलारसैश्च
तुल्यांशताप्यं विपचेत्पुटेपु ॥ १४०१ ॥
सूतश्च निष्कं समभागतुल्यं
गन्धोपलाहौ चतुरो वराटात् ।
पक्त्वा पुटाऽग्नौ समलोहचूर्णा-
त्पचेत्तथा पूर्वरेसेन मिश्रान् ॥ १४०२ ॥
चूर्णेऽस्मिन्मरिचान्सप्त तोल्यद्वन्द्वणकान्दश ।
संयुजेत्तरपृथक्त्रिष्कान् प्राणनाथाऽऽह्वयोदितः ॥ १४०३ ॥
अद्वैपादौ रसाद्भक्ष्यः केवलद्राजयश्मिभिः ।
शोफोद्राशोप्रहणीज्वरगुल्माद्युपद्रुतैः ॥ १४०४ ॥
र. र. स, रसधि, राजयक्ष्मणि ।

टि०—प्रथमप्राणनाथाद्रुग्नेषु साम्यभावहरति प्रथियायामन्तरत्ता-
रपक्व पाठो गृहीत इति विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धलोहेका वारीकचूरा ५ कर्प लेकर भंगरा, पत्रा, भारती, और त्रिफलाके ४-४ प्रस्थ रसोंकी भावना देकर गुलाबे फिर ५ कर्प शुद्धानोनामाषी ढालकर भारेके रसमें घोट टिकिया बनाय गुलाकर गरपुडकी आवेदे फिर पत्रा, भारती और त्रिफलाके रसोंमें घोटघोटकर गरपुडकी आवेदे । ऐसे ४ गरपुड देनेकेबाद शुद्धपारा और तुल्य ४-४ माशे, शुद्धान्यक ८ माशे, पीली कौड़ी १ कर्प लेकर एव चीजें पारे गन्धक की नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर पूर्वखसोंसे टिकिया बनाय गरपुडकी भाव दद । इसकेबाद लोहभस्म ५ कर्प, मरिच १॥ कर्प, शुद्ध तृतिया और शुद्दागा दार ३॥ कर्प मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे ४-४ रती उचिताऽनुपानकेसाथ देनेसे राजयक्ष्म, शोष, उदररोग, वरागीर, प्रहणी, ज्वर और गुल्मादिक फिर नष्ट होतेहैं ॥ ३१९ ॥

३२० प्राणवह्नोरसः (प्रथमः)

द्वरादुत्थितं सूतं काश्मीरोद्भवगन्धकौ ।
लौहं ताम्रं घटादञ्च तुल्यं दिङ्गुफलत्रिकम् ॥१४०५॥
स्नुहीक्षीरं यवक्षारो जैपालो दन्तिका त्रिवृत् ।
प्रत्येकं शाणभागन्तु छागीक्षीरेण पेपयेत् ॥१४०६॥
चतुर्गुणां घटीं खादेद्वारिणा मधुना सह ।

प्राणवह्नुभनामाऽयं महानानन्दभाषितः ॥१४०७॥
श्लेष्मदीपं समाऽऽलोभ्य युक्त्या च त्रुटिवर्धनम् ।
निहन्ति कामलां पाण्डुमानाहं श्लीपदं तथा ॥१४०८॥
गलमण्डं गण्डमालां वृष्यानि च हलीमकम् ।
ऊरुस्तम्भं शूलशोथौ सङ्ग्रहप्रहणीकृष्येत् ॥१४०९॥
यान्ति मूर्च्छां श्रमं दाहं कासं श्वासें गलप्रहम् ।
असाध्यं सन्निपातञ्च रक्तगुल्ममरोचकम् ॥१४१०॥
वातरक्तं तथा शोषं कण्डूं विस्फोटकाऽपचीम् ।
नाऽतःपरतरं किञ्चित्कामलाऽतिव्रजापहम् ॥१४११॥

र. सं., घ., र. चि., भै., र. क., र. सु., र. चं., पाण्डुरोगे ।

टि०—केयुविह्वलेषु अयं पाण्डो गुल्मेऽपि पठितस्तत्र पूर्वाऽपरज्ञानवि-
स्मृति मूलम् । उपरितनाऽद्वैतकोऽपि लेखकप्रमत्तदपगत इति तु केनाऽ-
पि न विचारितम् ।

भाषा—शिंगरिफसे निकालाहुआ पारा, केदार, शुद्ध
गन्धक, लोह, ताम्र, पीलीकौडी और तुल्य इनकोबस्में, भुना-
होग, त्रिफला, शूरकादूष, यवक्षार, शुद्ध जमालगोटा, दन्ती
और निशोत ये प्रत्येक ४-४ मासे लेकर वारीक चूर्णकर पारे
गन्धककी नीलवर्ण कबलीमें मिलाकर बकरीके दूधमें २-३
दिन मर्दनकर ४-४ रतीकी गोलियाँ बनाकर रखओङ्गे । इनमेंसे
१-१ गोली मधु अथवा जलके साथ देना । श्लेष्मकी न्यूनाऽ-
धिकता देखकर मानामें न्यूनाऽऽधिक्य करलेना । इसके सेवनेसे
कामला, पाण्डु, आनाह, श्लीपद, गलमण्ड, गण्डमाला, व्रण,
हलीमक, ऊरुस्तम्भ, शूल, शोथ, सङ्ग्रहप्रहणी, वमन, मूर्च्छा,
श्रम, दाह, कास, श्वासे, गलप्रह, असाध्यसन्निपात, रक्तगुल्म,
अरोचक, वातरक्त, शोष, खजली, विस्फोटक, अचवी इनविको
यह नष्टकरताहै । कामलाको दूरकरनेमें इसके सदृश अन्ययोग
नहींहै ॥ ३२० ॥

३२१ प्राणवह्नोरसः (द्वितीयः)

रसं विपं मल्लमन्नं गन्धकञ्च मनःशिलाम् ।
मर्दितं पर्यट्टावै वज्रमुपाऽन्तरे क्षिपेत् ॥१४१२॥
विपाच्यं भूधरे यन्त्रे स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
खल्वमच्ये विनिःक्षिप्य मत्स्याजश्लिषित्तैः १४१३
पाचितं याममावन्तु गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
गुल्मघ्नातं निहन्त्याशु सर्वपातयिकारनुत् ॥१४१४॥

व. रा., वै. चि., गुल्मघ्नाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्रनाग, सोमल, अन्नरुमत्स्य, गन्धक
और मैनसिल सब समभाग लेकर नीलवर्ण कबलीकर पित्तपात्रके

रससे १-२ रोज् मर्दनकर गोला बनाय वज्रमुपायमें बन्दकर
भूधरयन्त्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर मठली,
बकरी और मोरके पित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रतीकी
गोलियाँ बनाकर रखओङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली वातहराजु-
पालकं साथ देनेसे गुल्मघ्नात विना समस्त वातविकारोंको यह
नष्टकरता है ॥ ३२१ ॥

३२२ प्राणिकल्पदुमोरसः

सूतं गन्धं कान्तपापाणमिध्रं
प्राह्वै चीजै र्मर्दयेदेकघञ्जम् ।
गोलं कृत्वा टङ्गणेन प्रवेष्ट्य
पश्चान्मृत्खागांमयाभ्यां धमेत्तम् ॥१४१५॥

शुष्के यन्त्रे सत्त्वपातप्रधाने
किट्टे सूतो यद्दत्तामेति जूनम् ।
शुद्धं पश्चात्क्षारकाचप्रयोगा-
देस्नातुल्यं सूतमावर्तयेत्तत् ॥१४१६॥
वक्त्रे गोलः स्थापितोवसरार्धे
रोगान्स्वार्जं हन्ति सौरुषं करोति ।

यद्वा टुग्धे गोलकं पाचयित्वा

दद्याद् दुग्धं पिप्पलीभिः क्षयेत् ॥१४१७॥

लौहं पात्रे पाचयित्वा तु देयं

शुष्के पाण्डौ कामले पित्तरोगे ।

वाते गोलं व्योपघातातरितैलं

पन्त्या तैलं गन्धतैलं ददीत ॥ १४१८ ॥

भाङ्गीमुण्डीकासमर्दाऽऽतरूप-

द्रावै गोलं पाचयेच्छुष्मनुत्यै ।

कासे श्वासे तत्र दद्यात्कपायं

माध्वीकाकं पिप्पलीचूर्णयुक्तम् ॥१४१९॥

यस्मिन्नोगे यः कपायोऽस्ति चोक्त-

स्तस्मिन्गोलं पाचयित्वाकपायम् ।

दद्यात्तत्तद्रागनाशाय पथ्य-

मुकीगोलः प्राणिकल्पदुमोऽयम् ॥ १४२० ॥

यो. म., रसायनं., वा. प्र., र. दी., रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, कान्तपापाण और पलाशके बीज
समभाग लेकर १ रोज् मर्दनकर पानीके संयोगसे गोलाबनाय ऊपर
मुद्राकेकालेपर बरदेना । मुलनेपर मिठी और गोबरका लेपकरदेना
फिर सत्त्वपातनयन्त्रमें रखकर धमनकरना । इससे पारा किट्ट-
होकर बन्धको प्राप्त हो जायगा । इनरो मुहगा और काचकेसाथ
गलाकर साफ करके बराबरके सुवर्णके साथ गोलीरूपमें ढालेना ।
इसगोलीको वर्षभर मुहमें रखनेसे समस्तरोग दूरहोकर आदमी
सुखी होताहै । अथवा इसगोलीको दूधमें ढालकर थोड़ा गरमकर
पिप्पलीका थोड़ासा चूर्ण ढालकर पिलानेसे शय दूर होताहै ।
लोहेके पानमें दूधके साथ पकाकर पिलानेसे शुष्कपाण्डु, कामला
और पित्तरोग नष्टहोते है । त्रिभद्रके बल्कसे एण्डीका तैल पका-
कर उसतैलमें इसगोलीको थोड़ी देर पकाकर निकालले और

उसतैलम् गन्धकका तैल मिलाकर देनेसे चातन्व्याधि दूरहोताहै । भारती, गोरखगुडी, कलौदी, अइस इनके रसोंमें इसगोलीको पकाकर देनेसे श्लेष्मरोग दूरहोतेहैं। कासश्वासमें भारज्यादिकाथयमें महुएका आसव और पीपलका चूर्ण डालकर देना । जिसरोगका जो काढ़ाहै उस उसमें इसगोलीको पकाकर देनेसे तत्तत् समस्त रोगोंको दूरकरतीहै ॥ ३२२ ॥

३२३ प्राणेश्वररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मृताऽपत्रं विपसंयुतम् ।
समं तन्मर्दयेत्तालमूलीनीरैस्त्र्यहं बुधः ॥ १४२१ ॥
पूरयेत्कूपिकां तेन मुद्गयित्वा विशोषयेत् ।
सप्तभि मृत्तिकावर्षे चैषयित्वाऽथ शोषयेत् ॥ १४२२ ॥
पुटेत्कुम्भप्रमाणेन स्वाह्नशीत समुद्धरेत् ।
गृहीत्वा कृपिकामध्यान्मर्दयेच्च दिनं ततः ॥ १४२३ ॥
अजाजी चित्रक हित्नु स्वर्जिका टङ्गुणं जगत् ।
गुग्गुलुः पञ्चलघणं यवक्षारो यवानिका ॥ १४२४ ॥
मरिचं पिप्पली चैव प्रत्येकञ्च समानतः ।
एषां कपायेण पुनर्मावयेत्सप्तधाऽऽतपे ॥ १४२५ ॥
नागवह्नीद्वलयुतः पञ्चगुञ्जो रसेश्वरः ।
दद्यान्मवञ्चरे तीमे कोष्णं वारि पिबेद्बु ॥ १४२६ ॥
प्राणेश्वररसो नाम्ना सन्निपातप्रकोपजित् ।
शीतञ्चरे दाहपूर्वं गुल्मे शूले त्रिदोषजे ॥ १४२७ ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यात्कुर्याच्चन्दनलेपनम् ।
तापेन्द्रकप्रशमनो नानाऽस्तीसारनाशनः ॥
भवेच्च नाऽत्र सन्देहः स्वास्थ्यञ्च लभते नरः ॥ १४२८ ॥

र, स, र म, भै र, र की, यो म, र गु, र वा, रसायन स, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पाटा १ भा, गन्धक २ भा, अत्रकमलम और शुद्धवल्गना १-१ भागलेर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर तालमूलीके स्वरससे ३ रोज मर्दन कर मुलाकर ७ कपइमिरी दीडुई आतशीशीशीमें बन्दकर कपइमिरीसे मुंहबदकर कुम्भपुटकी आच देवे । स्वाह्नशीतल होनेपर शीशीमेंसे निकालकर एकरोज मर्दनकर जीरा, चिन्कमूल, धुनाहींग, सजी, सुहागा, फिटकरी, गुगल, पाचों नमक, यवक्षार, अजवाइन, मरिच और पीपल ये प्रत्येक इसयोगानी बराबर लेकर सबका क्राथ बनाकर ७ बार धूपमें भावना देकर ५-५ रतीकी गोलिया बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली पानमें रखकर नवज्वरोंमें देवे । यदि ज्वर बहुततीव्र मात्रामें होतो थोडा ऊपरसे गरमपानी पिजावे । इसके सेवनसे सति पात, शीतज्वर, दाहज्वर, त्रिदोषजगुल्म और शूल येवच नष्ट होतेहैं । इसके देनेके बाद रोगीकी जिस चीजपर इच्छाहो वह खानेको देना । चन्दनप्रयुति शीतस्तुओंका लेपकरना । यह ज्वरकी उत्कृष्टतामें दूरकरताहै । और अतिसारका नाश करताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ प्राणेश्वररसः (सर्वाङ्गसुन्दरः) (द्वितीयः)

अध्नसत्त्वं पातयित्वा भस्मीकुर्याद्विचक्षणः ।
त्रिफलातालमूलीजै रसैः समर्द्यं सम्पुटेत् ॥ १४२९ ॥
शरावसम्पुटे क्षिपवा वाराहेण ततः पम् ।
यावद्भस्मीभवेत्सर्वं मर्दयित्वा पुटेत्कमात् ॥ १४३० ॥
इत्थं भस्मीकृतं व्योम समं सूतं मृतं तथा ।
गन्धकं शोधितं कृत्वा प्रत्येकञ्च पलंपलम् ॥ १४३१ ॥
खल्वे निक्षिप्य मुशलीनीरैः सम्मर्दयेद् दृढम् ।
दिनत्रयं प्रयत्नेन कल्कं सम्पादयेत्ततः ॥ १४३२ ॥
सनालायां काचकूप्यां तं कल्कं निक्षिपेद् बुधः ।
काचकूप्या मुखं कन्ध्यात्खट्विन्या यत्नतो भिषक् १४३३
कूपिकां लेपयेत्पश्चान्मृदा कर्पटयुक्तया ।
सर्वाङ्गं शोषयेत्पश्चादातपेऽतिखरे बुधः ॥ १४३४ ॥
क्षिपेद् भूधरके यन्त्रे कूपिकां तां त्रिभागिकाम् ।
कुम्भकूप्युपुटं दत्त्वा स्वाह्नशीतलतां गतम् ॥ १४३५ ॥
निर्धूय कर्पटमृदं खट्विनीरससंयुताम् ।
कूपिस्थं मर्दयेत्सर्वं सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ॥ १४३६ ॥
तन्मध्ये प्रक्षिपेदेतदौषधं चूर्णितं भृशम् ।
क्षारत्रयं पञ्चपटु त्रिकटु त्रिफला पुरम् ॥ १४३७ ॥
वाहीकजं भद्रयवं त्रिजगद्विजयादलम् ।
वैश्वानरश्चाजमोदो यवानी च सर्माशतः ॥ १४३८ ॥
पारदस्य प्रमाणेन ग्राह्यं सर्वमिदं ध्रुवम् ।
सूक्ष्मचूर्णं विधायित्तत्सर्वं सूते विनिःक्षिपेत् ॥ १४३९ ॥
शुष्कमर्दनयोगेन सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
एवं सिध्यति सूतेन्द्रः सर्वरोगकृते पटुः ॥ १४४० ॥
नागवह्नीदलेनैतं सूतं युञ्जीत बुद्धिमान् ।
गुञ्जापञ्चप्रमाणेन सूतेन्द्रः सर्वरोगहा ॥ १४४१ ॥
अहर्मुखे समुत्थाय सूतेन्द्रं भक्षयेद्बुधः ।
अनुपानं प्रयुञ्जीत कवोष्णं सलिलं सदा ॥ १४४२ ॥
चुलुकद्वयमागञ्च नाऽधिकं सम्प्रयाययेत् ।
तृडभावे वारमेकं शीतं वारि पिबेद्दिने ॥ १४४३ ॥
क्षाराऽम्लचिद्वल वर्ज्यं भोजनं तैलसम्भयम् ।
तैलाभ्यङ्गं शाकजातं वर्जयेच्छयनं दिवा ॥ १४४४ ॥
आचरेद्ब्रह्मचर्यञ्च हितसेवी सदा भवेत् ।
अहितं वर्जयेद्यत्नाद्रससेवाविधौ नरः ॥ १४४५ ॥
एवं संसेव्यमानोऽयं रसो रोगान्निवर्तयेत् ।
निश्चेतनस्यं यो याति सन्निपातात्कथञ्चन ॥ १४४६ ॥
प्राणेश्वरं रसं दद्यात्सत्याऽपि भिषगुत्तमः ।
पूजयित्वा देवविप्रकुमारी यौगिनी रसम् ॥ १४४७ ॥
निजशक्त्यनुसारेण रसेन्द्रं योजयेत्ततः ।
अन्यथा नैव सिद्धिः स्याद्रसेन्द्रे सेवितेऽपि च ॥ १४४८ ॥
सन्निपातं निहन्त्येव रसो युक्त्या निषेधितः ।
ज्वरान् सर्वोश्च गृहीतान् गुल्म पञ्चविधं हरेत् ॥ १४४९ ॥

विकारान् चातजांश्चूले परिणामभव हरेत् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च मन्दाग्निं ग्रहणीमपि ॥१४५०॥
शिववत्सेवितो हन्ति रसः प्राणेश्वरो रुजः ।
इति प्राणेश्वरो नाम्ना रसः सर्वगदाऽपहः ॥१४५१॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवे ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥१४५२॥

रसाल, र र स, रससागर, र म्, गुल्मे ।

टि०—रसाऽङ्कुरे गजाऽङ्गिनी शम्भुऽङ्गानां तत्स्थाने त्रिणादिज्यादल
नियोजितम् । गजाङ्गिनीशम्भवेन दुग्धुलविलम्बितेति युनानी वैद्यके प्रसिद्ध
वीच योज्यम् । केचित्तु गुञ्जामिनीति पाठ मत्सा गुञ्जा नियोजयन्ति तत्तु
न सम्बन्धुभायामेतद्व्यवभावात् । गुञ्जावदङ्कुरे साहृदय गच्छतीति गुञ्जा
किनी अत्रापि स एवाप्ये प्रमेठीभवति गुञ्जापत्रेण तत्राप्य साहृदयभाव
इति । अतएवाऽङ्गा कृष्णपुण्या तदध्वधार कुर्वन्तीति विभावनीयम् ।

भाषा—अन्नकका सत्व निकालकर त्रिफला और ताल
मूलीके रससे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर बराहपुटकी आचदे
जबतक भस्म न हो ततक पूर्वांशरसोंमें मर्दनकरके पुट देता
जाय । जब भस्म होजाय तब उसमें पारेकीभस्म और शुद्ध
गन्धक १-१ पल मिलाकर तीनरोज मुशलीके रससे मर्दनकर
क्लकबनाले । उसक्लकको आतशी शीशीमें भरके खड़ियामिठी
की डाट लगादे और ऊपरसे ६-७ कपड़मिठीकर अच्छीतरह
सुखाकर खरेमें ३ भागतक गाड़कर कुम्भकुटके बराबर ऊंचा जड़-
लोकणजोंका पुटदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर कपड़मिठी और डाटको
हटाकर शीशीको साफकरके रखको निकालले । फिर उसमें
सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचौनमक, त्रिकटु, त्रिफला, गुगल,
भुनीहींग, इन्द्रजव, भाग, चित्रकमूल, अजमोद, अजवायन
इनसबको समभाग लेकर बारीक चूर्ण करके पारेके बराबर
मिलाकर १-२ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५
रती पके पानके रसमें खाकर दो उल्लू योड़ागरम जल पीवे,
प्यास न हो तो एकही उल्लू पीवे । क्षार, अम्ल, दाल,
तेलके पदार्थ, तैलाभ्यश, सम्पूर्ण शाक, दिनका शयन, इनको
छोड़कर हितकारक पदार्थ और ब्रह्मन्वय का सेवनकरे । सति-
पातकी निधेयतावस्थामें देव, ब्राह्मण, कुमारी और योगिनीका
शचयनुसार पूजनकर इमारसका योगकरे, पूजनके विना फल नहीं
होता । इसरसके देनेसे सनिपातादिकज्वर, शीहा, पाचप्रकारका
गुल्म, वातज्वरार, शूल, परिणामशूल, कामला, पाण्डु,
मन्दाग्नि और ग्रहणी येसब नष्ट होतेहैं । यह कईवारका
परीक्षितहै ॥ ३२४ ॥

३२५ प्राणेश्वररसः (सिद्धाद्यः) (तृतीयः)

गन्धेदाऽस्रं पृष्ववेदभागमन्यच भागिकम् ।
स्वर्जाटङ्गयवक्षाराः पञ्चैव लवणानि च ॥ १४५३ ॥
वराभ्योपेन्द्रवीजानि द्विजिरीऽग्निघानिकाः ।
सहिद्भुवीजसारञ्च शतपुष्पा सुचूर्णिता ॥ १४५४ ॥
सिद्धप्राणेश्वरः सूत प्राणिनां प्राणदायकः ।
माप्येकं भृशवेदस्य नागवह्नीदले युतम् ॥ १४५५ ॥

उष्णोदकाऽनुपानञ्च दद्यात्तत्र पलत्रयम् ।
ज्वराऽतिसारेऽतिसुतौ केवले वा ज्वरेऽपि वा १४५६
ज्वरे त्रिदोषजे घोरे ग्रहण्यादिगदेऽपि च ।
वातरोगे तथा शूले शूले च परिणामजे ॥ १४५७ ॥
र स, र च, र क, मै र, र, चि, रसायनस, र. सु, र
का, यो म, र सि, ज्वराऽतिसारे ।

टि०—र स, र च पतयोर्वन्योर्वितीत्यने भागे व्यत्यान क्ल्वा
सर्वरसाऽपिस्तथा प्रक्षिप्य पाठान्तर स्थापित स नोचिन, सत्तरमत्त्व
त्रैव निवेशनीय इति सुधीभिराकलीनीयम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अन्नभस्म ४-६ भाग,
सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचौनमक, त्रिफला, त्रिकटु, इन्द्र
जव, सपेदजीरा, स्याहजीरा, चित्रक, अजवायन, भुनाहींग,
विज्रजतगुडल और सोंफ येसब १-१ भाग लेकर सबका बारीक
चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकमळीमें मिलाकर १-२ पहर
घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा पानमें रखकर खाकर
ऊपरसे गरमजल पीनेसे ज्वरातिसार, अतिसारकी अधिकता,
साधारण ज्वर, त्रिदोषन ज्वर, ग्रहणी, वातरोग, शूल, परि-
णामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२५ ॥

३२६ प्राणेश्वररसः (चतुर्थः)

शम्भुकुतुल्यं रसगन्धकक्लक
पित्तै विमर्द्याऽथ पुट ददीत ।
जयारसेनैकदिन विमर्द्य
वह्लाएकं चातभवे ददीत ॥ १४५८ ॥
मरीचचूर्णेन घृतान्वितेन
प्राणेश्वरः सप्तदिनं त्रिसप्त ।
मरीचमाज्येन युतं निशायां
जयां निषेधत ततः सुखी स्यात् ॥ १४५९ ॥
र दौ, र म्, अतिसारे ।

टि०—शम्भुकुतुल्यं शम्भुकुतुर्देमिति पाठा दृश्यते, तत्र शम्भूक
भस्मनाम्लारो भागा द्राक्षा पारदाभ्योपेक्षेकेक इति विशेष ।

भाषा—घोंपाकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग
लेकर नीलवर्णकमळीकर यथालाभ पत्रपित्तोंसे मर्दनकर गोला
बनाय भूषपुटमें आचदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर
एकदिन भागके रससे मर्दनकर ३-३ मासोकी गोलिये बनाकर
रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली घृत और कालीमिचौके साथ
७ अथवा २१ दिनतक देनेसे वातज्वरतिसार निरुत होता
है । रातमें सोतेसमय शक्त्यनुसार मिर्च, धी और भाषा
सेवन करे ॥ ३२६ ॥

३२७ प्राणेश्वररसः (पञ्चमः)

रस गन्ध समं शुद्धं शृतं ताम्र शृतं रसम् ।
दिनेकं तालमूल्याद्यं याराहा रसमर्दितम् ॥ १४६० ॥
मुसल्या या द्रवे मर्द्यं यथालाभं दिनं ततः ।
निरुद्धं काचकूप्यां तु वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १४६१ ॥

दिनं वा भूधरे पक्त्वा समादाय विचूर्णयेत् ।
त्रिंशारं पञ्चलयणं त्रिफलाद्योपचित्रकैः ॥ १४६२ ॥
सजीरकैः सेन्द्रयवैर्हिंदुगुग्गुलुदीप्यकैः ।
सर्वैः समैः पूर्वसमं चूर्णांकृत्य विमिश्रयेत् ॥ १४६३ ॥
मापमात्रं प्रदातव्यं किञ्चिदुष्णोदकं पिबेत् ।
सन्निपाताऽचले वज्रं सज्जरप्रहणीप्रणुत् ॥
कुर्वात्प्राणपरिष्ठाणमतः प्राणेश्वरो रसः ॥ १४६४ ॥

नि र., र. सु., र. का., र. क यो., र. को., सू प्र., सन्निपाते ।
टि०— र. म., र. म मा., दो., र. शं., व रा., र पा., प्यु
प्रणेषु अग्निश्रेव पाठे तापस्थानेऽन्नक निवोऽय रमान्तरता स्वीकृता ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताघ्न और पारदभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर तालमूली, काराहीकन्द और मुसलीके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर सुखाकर बालुकायन्त्रमें पकावे अथवा एकरोज भूषयन्त्रमें पकावे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पाचौनमक, त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, जीरा, इन्द्रजव, हौग, गुग्गुलु और अजवाइन सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पूर्वसमं बराबर प्रमाणसे मिलाकर एक पहर घोटकर रसछोड़े । इन्मेंसे १-१ माया गरमपानीके साथ देनेसे सन्निपात और ज्वरसहित प्रहणी नष्ट होती है ॥ ३२७ ॥

३२८ प्राणेश्वरसः (लघुः) (पठः)

त्रिंशारं ग्रन्थिकं त्र्यूपह्निजीरकयवानिकाः ।
तेजोवती धूर्तवीजलवङ्गाऽऽकराऽनलम् ॥ १४६५ ॥
रसगन्धौ विषं शिशु निर्गुण्ड्यार्द्रकधूर्तजैः ।
विधाय भावना गुञ्जाद्वयं द्विगुणशर्करम् ॥ १४६६ ॥
सद्यो जलाऽजुपानेन रसः शीतज्वराऽपहः ।
लघुःप्राणेश्वरः सोऽर्धं रसो गुणो ज्वरे मतः ॥ १४६७ ॥
र. का., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—सब्जी, सुहागा, यवक्षार, पिपलामूल, त्रिकटु, दोनोंजीरे, अजवाइन, तेजबलरी छाल, शुद्ध धतूरेकेबीज, लौंग, अकलबरा, चित्रकमूल, शुद्ध पारा, गन्धक, बल्लनग, और सहिजनकीछाल, येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पाठे गन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाकर संभाद्र, अदरक और धतूरेकी १-१ भावना देकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रसछोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली शरकरे साथ देकर ताजा पानी पिलानेसे यह शीतज्वरको नष्टकरता है ॥ ३२८ ॥

३२९ प्राणेश्वरसः (सप्तमः)

पुनर्वाहाऽऽक्येणिकानां
पाठासुदुग्धाकलहप्रियाणाम् ।
शुद्धद्रवैः सूतवरः सुपिष्टः
स्विन्नश्च गन्धेन चतुर्गुणेन ॥ १४६८ ॥
योज्योऽथ मद्यो हृदिनीजलेन
प्राप्तीसहास्वर्णपुनर्नयानाम् ।

कासघ्नमाचीहरिवह्नुमानां
दितत्रयं गोलमयो विधाय ॥ १४६९ ॥
स्यादथा पचेत्तत्सकृताख्ययन्त्रे
रसैर्धिमद्यो दिवसं रसः स्यात् ।
प्राणेश्वरः शुष्कतमेऽल्पभृष्टे
कटुत्रयं टङ्कणशुष्कलोशाम् ॥ १४७० ॥
अस्मिन् प्रयुञ्ज्याद्दलवर्णकान्ति-
पुष्टिप्रदे बुद्धशुखोद्भवे च ।
आदौ तथाऽन्ते ससितो द्विमापः
प्रवक्ष्यमाणेषु गदेषु देयः ॥ १४७१ ॥
ज्वरे त्रिदोषप्रभवे क्षये च
श्वसे सक्रासे प्रहणीविकारे ।
गुल्मेऽथ पिप्ताऽसृजि पाण्डुरोगे
तथाऽतिसारेऽतिक्वशेऽतिरुक्षे ॥ १४७२ ॥
ततस्तु तैलेन विमर्शं देहं
सूर्य्यसयुग्मेऽद्वियुगस्य सन्धौ ।
सीमन्तिनीनां करपल्लवस्थैः
सुवर्णकुम्भैः सलिलप्रयोगम् ॥ १४७३ ॥
विष्णुभ्ररेकाऽवचि सन्निपाते
ज्वरे त्वज्जिणे कुशले विदध्यात् ।
कण्ठाऽवगाहे प्रहणीगदेषु
गुल्मेऽथतीसारनिपीडितेषु ॥ १४७४ ॥
पाण्डो क्षये सेचनमेव शस्तं
पिप्ताऽधिके क्षीणतमे जरस्तु ।
अन्येषु रोगेषु विचार्य शक्ति
काप्योऽस्युयोगः सकलाऽऽमयघ्नः ॥ १४७५ ॥
देवो न कुष्ठे न च भूतदोषे
कृम्यदिते नैव रसः कदाचित् ।
अन्यान् जयत्येव गदान् स्वशफ्त्या
सम्यक् प्रयुक्तः सलिलप्रयोगात् ॥ १४७६ ॥
दध्योदिनं शर्करया समेतं
पष्यञ्च मुद्राम्बु हितं कुरोऽल्पे ।
घृताकवलीफलजीरकाणि
सदाऽदितान्यत्र च कारयेद्गम् ॥ १४७७ ॥
रसायनम्, र. का., र. र. दी., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—पुनर्वा, अलकन्दा, बन्दाल, पाठा, चमारदूधी, करिहारी, इनके रसोंसे १-१ दिन पारेको मर्दनकर गोला बनाय चतुर्गुणित गन्धकको मलाकर बीबमें रसदे दो पहरतक गन्धकको मन्दाग्निर रदनेदे फिर नीचे उतारदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर गन्धकको नुरचकर निकालदे और पाठेको करिहारी, माद्री, सुदरणा, माधवनी, यवरा, पुनर्वा, कण्ठोदी, मकोय, दुग्धी इत्यत्रयेके रसोंसे १ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावगप्युदमे बन्दकर बाण्डुकायन्त्रमें पकावे । पारा

शीतल होनेपर निकालकर १-१ रोज़ पूर्वोक्त रसोंसे मर्दनकर सुखादे फिर अत्रिपर बोझासेकर त्रिकटु और मुनासुहागा सम-भागका चूर्ण सोलहवा हिस्सा मिलादे और १-२ पहर घोटकर रखले । यह बल, बर्ण, कान्ति और पुष्टिको करताहै, इसमेंसे २-२ माशेकी मात्रा शकरके साथ देनेसे त्रिदोषज ज्वर, क्षय, श्वास, कास, ग्रहणी, गुल्म, रक्तपित्त, पाण्डु, अतिसार, अत्यन्त-हृष्टता और अत्यन्तरूक्षता इनसबको यह दूरकरताहै । दवा देनेके बाद तैलसे मारिशकर मत्स्या, स्कन्ध और पैरोंकीसन्धि योंपर ठंडेपानीकी धारादे । जब असह्य ठंड लगने लगे तब बन्दकरदे । ग्रहणी, गुल्म और अतिसारमें कण्ठयन्त पानीमें प्रवेशकरावे । पित्ताधिक्यव्यापि और अत्यन्त क्षीणताप्रवृत्ति रोगोंमें रोगीकी शक्ति देखकर जलप्रयोगकरना । कुष्ठ, मूत्रदोष, कृमिदोष इन्में जलप्रयोग नहीं करना । जलप्रयोगके बाद दही, शकर के साथ भातदेना, वृषा और अल्पप्राण आदनीकी सुदका यूप देना । बैंगन, बोंडुला, जीरा और करेले सबंदा अहितकरावै इसलिये इसप्राणेश्वरके प्रयोगमें मूलकरमी न देवे ॥३२९॥

३३० प्राणेश्वररसः (अष्टम)

दुग्धिकानान्तु मध्ये यां वेष्टयन्ति पिपीलिकाः ।
सजाते तां करस्परौ त्यक्त्वा गच्छन्ति दूरतः ॥४७८॥
मधुसज्जीवनी नाम पञ्चाङ्गां तां समानयेत् ।
वर्तितं खरमूत्रेण स्थापयेद्दिनसप्तकम् ॥४७९॥
गालयित्वा च वस्त्रेण ब्रह्मतथैव पलद्भयम् ।
सुल्लयं खर्परमारोप्य ग्रहैः संज्वालयेदथः ॥४८०॥
शुद्धसूतस्य गद्याणाम् विशांति खर्परे क्षिपेत् ।
आदरूपककाष्ठेन परेणाऽगस्त्यजेन वा ॥४८१॥
काष्ठान्यां चालयेत्सुत क्षिप्त्या मूत्रं मुहुर्मुहुः ।
वख्रपूते शनैः क्षिप्ते निक्षिपेद्दुग्धिकारसे ॥४८२॥
धमातो रीत्याऽनया सूतो मृतः स्याद्रससन्निभः ।
रौप्यं वङ्गं तथा ताम्रं स्वर्णञ्च तत्रिजर्णजम् ॥४८३॥
कान्तायसं तथा नागं पण्णां पत्राणि चै पृथक् ।
कृत्वा कण्टकवेष्यानि स्रच्छान्येकाद्गुलानि च ॥४८४॥
निम्बुकस्य रसे क्षिप्त्या विन्यसेन्मृतपारदम् ।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्या सूताभ्यक्तदलानि च ॥४८५॥
छाणकानाञ्च विशल्या लोहं लोहं क्रमात्पुटम् ।
पवं विनाऽष्टकं स्वेद्यं सूतेन हेमजानि च ॥४८६॥
स्याङ्गशीतं क्षिपेत्तत्रैव दुग्धगन्धकसंयुतम् ।
भृङ्गराजरसेनैकं वासरं मदीषेद्य तम् ॥४८७॥
काञ्चनारतरो मूलं त्यक्त्वा श्रीराण्डमर्दितम् ।
घञ्जीक्षीरेण चैकाहमर्कक्षीरेण वासरम् ॥४८८॥
पवं चतुर्दिनं पिप्पला कार्यां वर्तुलगोलकः ।
शरावसम्पुटे क्षिप्त्या चतुर्भिर्दृष्टाणकैः पुटम् ॥४८९॥
दृष्टते गन्धको यावत्तावदेयं मुहुर्मुहुः ।
मृतभ्येताम्रकं चूर्णं तावत्स्यान्मृतताम्रजम् ॥४९०॥

चूर्ण पीतरूपदीनां शङ्खचूर्णं तुरीयकम् ।
प्रत्येकं पट्टं च गद्याणाम् क्षिपेत्पीठीञ्च हेमजाम् ॥४९१॥
सूक्ष्मां खल्वे कृतां पिष्टिं वज्रीक्षीरेण वासरम् ।
एकाहं चाऽऽकटुग्धेन पिप्पला चैकात्मतां गतम् ॥४९२॥
प्रपानं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटे च तान् ।
वख्रमूत्तिकया लिप्त्वा देयं गतान्तरे पुटम् ॥४९३॥
स्याङ्गशीतं क्षिपेत्कृप्यां खल्वे सञ्चूर्णयेद् दृढम् ।
तच्चूर्णं कुम्पके क्षेप्यं सञ्जातः सत्वरो रसः ॥४९४॥
साज्यं बहुत्रयं प्राह्यं क्षिपेन्मरिचैः सह ।
अद्यादाश्रमेहेषु गुल्मयो वातरक्तयोः ॥४९५॥
वक्रकोष्ठे च मन्दाग्नौ क्षये शूले त्रिदोषजे ।
कामहीने वलक्षीणे श्लेष्मरोगिणु वायुषु ॥४९६॥
मरीचाऽऽस्यैरजाणोऽपि ज्वरेऽपूर्णादकेन च ।
मरिच्यज्यादिकं नैव देयं सर्वज्वरेषु च ॥४९७॥
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोग्यं मधुरभोजनम् ।
क्रमाद्भोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम् ॥
रसं गृह्णाति यो नित्यं स भवेद्धेमकान्तिमः ॥४९८॥

रं के लीं, रसयि,

भाषा—दूधीके भेदोंमें जिसपर बीडिया लड़ीरहतीहै और हाथके लगतेही उसे छोड़कर दूर भगजातीहै उस वज्रीका नाम मधुसज्जीवनीहै । इसके पञ्चाङ्गको एक सिलपर पीस जवानगंधके चतुर्गुणित मूत्रमें धोलकर हठीमें बन्दकर ७ दिन तक एकात्मता रखदे, आठवें दिन कपड़ेसे धानकर रखले । इसकेबाद १० तोले शुद्धपारेको मिश्रीके नये खपड़ेमें डालकर बूलेपर चगादे और नीचे वेर बगैरहकी सारिलकड्डीकी आन जलावे । उसमें २ पल मधुसज्जीवनीका बनाया हुआ द्रव डालकर अहसा और अगस्त्यकी दो लकड़ियोंसे बलावे । द्रव जलनानेपर दूसरा डालता जाय । इसतरह करते २ पारा जब मूर्च्छित होजाय तब इसके मूत्रामें डालकर कोयलोंपर रखकर धनन करे और द्रव डालता जाय तो यह एकदम सफेद राखकी तरह होजायगा । फिर चारदी, वङ्ग, ताम्र, उत्तमसुर्गण, कान्तलोह और सीसा इन छ धातुओंके चारोंक २ कण्टकवैर्षी १-१ अङ्गुले १०-१० तोले पत्र बनाकर सुवर्णके पत्र और पारेकीभस्मको नीचूके रसमें डालदे । फिर शरावसम्पुटके २० जवलीकण्ठकी आवेदे, ऐसे आठ आवे देवे । फिर इसमें दूधमें शोषाहुआ १० तोले गन्धक डालकर भगरा, कनारकी छाल, सफेद चन्दन, शूहर और आकका दूध इनप्रत्येकमें १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४ कण्ठकी आवेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् रसोंमें घोटकर आवेदे । जब गन्धक सारा जलजाय तब आवेदेना बन्द करावे । फिर चांदीके पत्रोंको डालकर पूर्ववत् आवेदे और उसीतरहसे वङ्ग, तावा, कान्तलोह और सीधेके पत्रोंको डालकर जाण करे । पूर्वलोहकेरानेपर दूसरेको डाले । फिर सफेद अभ्रक, तामा, पीलीकडी और राखकी ३-३ तोले भस्म पूर्व

भन्ममे मिलाकर धूर, आक इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर छोटी २ टिन्डियां बनाकर छायाशुष्ककर शरावसम्पुट में बन्दकर भूपरयन्त्रमें आंचदे । स्वादशीतल होनेपर निकाल कर धूर और आकके दूधमें १-३ रोज़ मर्दनकर आतशी शीशीमें भरने १ दिनरातकी बालुकायन्त्रमें आंचदेवे । स्वाद-शीतल होनेपर खरलकर शीशीमें भरदे । इसमेंसे ९-९ रती २२ कालीमिर्चानेगायदेनेसे १८ प्रमेद, दोनोतरहने गुल्म, वात रफ, बद्धकोष्ठ, मन्दाग्नि, क्षय, त्रिदोषबन्धुल, शुभ्रशीतला, श्लेष्म और वायुरोग इनवधको यह इकरताहै । मरिच और धीके साथ देनेसे जीणज्वरनष्टहोताहै । साधारणज्वरमें गरमपानीके साथ देना । मरिच, धी, तैल, क्षार और अम्ल येराव ज्वरोंमें न देवे, मधु-भोजनकरावे । इतरहकरनेसे एकमहीनेमें अमाष्यसे अताष्य-रोग नष्टहोतेहै और सुवर्णके सदृश वान्ति होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ प्राणेश्वररसः (नवमः)

सूतं गन्धकमध्नकं साममहस्तालीद्रव्यं मर्दितं,
कूपिस्थं रतिकातिरुद्धवदनं मृद्वप्रवदं पुटेत् ।
पीतो भृङ्गिकया युतो रसनूपः प्राणेश्वरः साऽमृतो,
व्यापक्षारज्यायुतोऽथ मधुना सर्वाऽतिसाराञ्जयेत् ॥
र श, अतिसारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नरभन्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर एकरोज तालमूलीके रससे मर्दनकर आतशीशीशीमें कल्ककोभरके रतुडियामिठीसे ढाट लगाकर सम-स्तपर २-३ कपडमिठी देकर सुखावे । शीशीको ३ भागसक छद्रेमें बन्दकर बुक्तुटोच पुटेदे । स्वादशीतल होनेपर निकालकर रगछोड़े । इसमेंसे ५-५ रतीकी मात्रा गंगरे अध्या मिलोयेके रसके साथ अथवा त्रिकटु, तीनोंक्षार और भागके साथ अथवा मधुनेसाथ औचिनी देकर देनेसे यह समस्त अतिमारोंको इकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ प्राणेश्वररसः (दशमः)

रसाऽन्नगन्धान्सविपान्समानान्
सुशुद्धियुक्ताक्षिपुणः प्रगृह्य ।
पुनर्नवालाङ्गलिदेयदाली-
सुवर्णदुग्धीजरसेन वृष्याः ॥ १५०० ॥
दिनं दिनं धर्मविभावितं त-
च्छुष्कं विधायाऽथ पुनश्च तत्र ।
धत्तूरकासप्रसुकाकमाची-
ब्राह्मीसहादेव्यपराजितानाम् ॥ १५०१ ॥
सर्वोष्ययामिश्च विमर्षं सम्यक्
मृत्कर्पटैः सम्पुटके निरुद्धव्य ।
भाण्डे पचेद्बालुकसम्भृते त-
मूर्द्धपुटेत्कूपपण्डङ्कणार्थैः ॥ १५०२ ॥
कलांशकं तत्र विपं नियोज्यं
प्राणेश्वरोऽयं शिव पच साक्षात् ।

प्राणेश्वरकोणे विरचय्य पत्रं
मध्ये रसं सर्वदले दिगीशान् ॥ १५०३ ॥

सम्पूज्य वह्ने सहनागवह्नी-
दलेन सिद्धं सिकताऽनुपानम् ।

ज्वरग्रहण्योरतिसारगुल्म
क्षयेष्वजीर्णं सहकासपाण्डौ ।

जीरेण देयं न तु पौत्रिकाणि

मांसानि शस्तोऽत्र जलामियोगः ॥ १५०४ ॥

र. शं, अतिमारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बलनाग, अन्नरभन्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर पुनर्नवा, करिहारी, बन्दाल धूरा, धूरी और पाटाके रसोंसे १-१ दिन भाचना देकर सुखाले । फिर धूरा, बगौंशी, मकोय, ब्राह्मी, मायपर्णा, सुद-पर्णा, मूर्वा, अपराजिता इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर गुणकर बालुकायन्त्रमें ४ पहरी अग्नि देवे । स्वादशीतल होने पर निकालकर इमसे सोलहवां हिस्ता त्रिकटु, मुद्गागा और शुद्ध बलनागका चूर्ण मिलाकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । अष्टकोण पात्रमें अष्टदल पत्र बनाय धीचमें रसको रखे, आठों दलोंमें दिक्पालोंको स्थापनकर पूजाकरे । फिर इसमेंसे ३ रती पानमें रचकर देवे और ऊपरने शक्करका पानी फिलावे तो ज्वर, प्रथमी वे नष्टहो । अतिसार, गुल्म, क्षय, अजीर्ण, कास, पाण्डु, इनमें जीरेकेसाथ देवे । सुअकामस भूलकरभी न दे । जलयोग इसमें प्रशस्तहै ॥ ३३२ ॥

३३३ प्राणेश्वररसः (महान्) (एकादशः)

गन्धकाऽन्नं समं सूतं चाराहीरसमर्दितम् ।
हंसपादीरसेनाऽपि मर्दयेत्त्रिदिनं मृदु ॥ १५०५ ॥
काचकूप्यन्तरे शिन्वा मुत्तं तस्य निरुद्ध च ।
पाचयेद्बालुकायन्त्रे तथा यामचतुष्टयम् ॥ १५०६ ॥
स्वाद्शीतलमादाय मर्दयेदेभिरोपधैः ।
पञ्चकोलञ्च त्रिशारं जीरकद्वयदीप्यकम् ॥ १५०७ ॥
मरिचं पञ्चलवणं गुग्गुलुञ्च विपद्मयम् ।
त्रिजातकं लवङ्गञ्च चरास्ताऽव्यगन्धिका ॥ १५०८ ॥
जम्बीराऽऽद्रकभृङ्गाणां रसैः सम्मर्दयेत्पुष्यक् ।
ससारात्रं ततो गुञ्जाप्रमाणं घटकीकृतम् ॥ १५०९ ॥
तत्सद्रोगाऽनुपानेन सेवयेत्सर्वरोगजित् ।
सन्निपातमभिन्यासं धनुर्वातञ्च तान्द्रिकम् ॥ १५१० ॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च पाण्डुकामलिपीनसाव ।
शोफं गुल्मं तथाऽर्शांसि क्षयञ्च ग्रहणीगदान् ॥ १५११ ॥
ज्वरं कुष्ठ प्रमेहञ्च नाशयेन्नाऽन संशयः ।
सर्वेषां घातरोगाणां महाप्राणेश्वरो रसः ॥ १५१२ ॥
व, रा, वै चि, वातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, अन्नरभन्म समभाग लेकर चाराही और हवराजनेरसमें ३-३ दिन मर्दनकर आतशी

श्रीश्रीमि भरकर सुंहर खडियामिठीकी बाटेदेकर समस्तपर
६-७ कपडमिठी देकर सुवादे । सुखनेपर ४ परहरतक बाहुका-
यन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर पत्रकोल,
त्रिद्वार,, दोनोंजीर, अजवाइन, मरिच, पत्रलवण, गुणल,
सपेविय, बरुनाग, त्रिजात, लौंग, त्रिफला, रास्ना, अतगन्ध,
जंभीरी, अदरक, मंगरा, इन प्रत्येकके यथासम्भव द्वासे अथवा
स्वायोंसे ७-७ रोजू मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगहरानुपानके साथ देनेसे
सन्निपात, अभिग्न्यास, धनुवांत, तान्दिक, कास, श्वास, अभि-
मान्य, पाण्डु, कामला, पीनस, क्षोय, गुल्म, यवासीर, क्षय,
ग्रहणी, ज्वर, कुष्ठ, प्रमेद, वाततोगइनसंघको यह नष्टरताहै ३३३

३३४ श्रीहार्दूलरसः

सूतकं गन्धकं व्योपं समभागं पृथक् पृथक् ।
पभिः समं ताभ्रमस्य योजयेच्चैव बुद्धिमान् ॥१५१३॥
मनःशिला वराटश्च तुष्यं रामठलोहकम् ।
जयन्ती रोहितश्चैव क्षारट्ण्डणसैन्ययम् ॥ १५१४ ॥
विडं चित्रं कानकञ्च रसतुल्यं पृथक् पृथक् ।
भावयेत्त्रिदिनं यावत्त्रिवृच्चित्रकणाऽऽद्रकैः ॥१५१५॥
शुद्धामात्रां घटीं स्यादेत्सद्यः श्रीहविनाशिनीम् ।
पिप्पलीमधुसंयुक्तां द्विगुञ्जां वा प्रयोजयेत् ॥१५१६॥
श्रीहानमप्रमांसञ्च यरुहुल्मं सुदुस्तरम् ।
आमाशयेषु सर्वेषु चोदरे शोषविद्रधौ ॥ १५१७ ॥
अग्निमान्द्ये ज्वरे चैव श्रीहृि सत्यंज्वरेषु च ।
श्रीमद्रहननायेन श्रीहार्दूल ईरितः ॥ १५१८ ॥
र. सं., र. वि., र. सु., व्हीहाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पात और गन्धक, त्रिकटु, ये प्रत्येक १ तो०
ताभ्रमस ५ तो०, शुद्धमेनसिल, पीलीकौड़ी, तुष्य और लोह
द्रुकी मसमें, मुनाहींग, जंत, रोहिद्रा, यवशार, मुहागा, मन्धव,
विद्वार अथवा विद्वनमक, चित्रमूल, घट्टरेके बीज, येसब
एक १ तोला लेकर सबका थारीक चूर्णकर परोगन्धकी नील-
वर्ण कबलीमें मिलादे । फिर निसोत, चित्रक, पीपल और
अदरकके रसोंसे ३-३ रोजू भावनाएं देकर १-१ रतीकी
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ अथवा ३ गोली पीपल
और मधुके साथ देनेसे प्लीहा, अप्रमास (हृदयादिदोके रफ-
वदादिप्रोतोमें मांसवृद्धि), यरुह, गुल्म, आमाशयकेरोग,
उदररोग, क्षोष, विद्रधि, अभिमान्य, ज्वर, सम्पूर्णज्वर येसब
नष्टहोते हैं ॥ ३३४ ॥

३३५ श्रीहान्तकोरसः

हृतं शुक्लञ्च तारञ्च गगनाऽऽयसनुक्तिकाः ।
दूरदं पुष्करं सूतं गन्धकं नवमं तथा ॥ १५१९ ॥
गुग्गुलुं त्रिकटुं रास्ना तथा जैपालबीजकम् ।
त्रिफलां कटुकां पुन्तीं देधदालीं तु सैन्ययम् ॥१५२०॥

विवृतां तु यवक्षारं चातारितैलमर्दितम् ।
अद्रोदराणि पाण्डुत्वमानाहं विपमज्वरम् ॥ १५२१ ॥
अजीर्णमामं पित्तञ्च कफञ्च सर्वमशूलकम् ।
कासं श्वासञ्च शोथञ्च सर्वमानुष्यपोहति ॥
प्लीहान्तको रसो नाम प्लीहोदरविनाशनः ॥१५२२॥
वै. क., वै., र., घ., व्हीहाऽधिकारः ।

भाषा—ताभ्र, चांदी, अश्रक, लोह, मोतीकीसीप और
शिंगरिफ इनकीमसमें, पोह्वरमूल, शुद्ध पात और गन्धक, गुणल,
त्रिकटु, रास्ना, शुद्ध जमालगोटकेबीज, त्रिफला, कुटकी, दन्ती-
मूल, बन्दाल, सैन्धव, निसोत और यवक्षार समभाग लेकर
थारीक चूर्णकर परोगन्धकी नीलवर्ण कबलीमें मिलाकर १-२
पहर शुद्धमर्दनकरे । फिर एण्डके तैलमें मर्दनकर ३-३ रतीकी
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके
साथ देनेसे ८ प्रकारके उदररोग, पाण्डु, आनाह, विपमज्वर,
अजीर्ण, आम, पित्त और कफकेरोग, समस्तशूल, कास, श्वास,
क्षोष येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३५ ॥

३३६ श्रीहारिरसः (प्रथमः)

कपेकं तालचूर्णस्य तत्पादांशं सुवर्णकम् ।
पलाईं मृतताभ्रञ्च तत्समं शुद्धमस्रकम् ॥ १५२३ ॥
मृगाऽजिनस्य मस्माऽपि कर्पमत्र प्रदापयेत् ।
लिम्पाकाऽद्वित्वचस्तद्रत्सर्वमेकत्र कारयेत् ॥१५२४॥
अस्य गुग्गुप्रमाणेन घटिकां कारयेत्ततः ।
मधुना वह्निचूर्णं स्यादेत्त्रिस्यं यथावलयम् ॥ १५२५ ॥
असाध्यमपि श्रीहानं हन्त्ययदयं न संशयः ।
यारुतं पाण्डुरोगञ्च गुल्मादिकमगन्दराम् ॥ १५२६ ॥
र. सं., र. सु., श्रीहाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ तोला, सुरणभसम ३ मासों, ताभ्र
और अश्रकमसम २-२ तोले, मृगचर्ममसम तथा अमिलतासर्फी
जड़की छाल १-१ तोला लेकर सबका थारीकचूर्णकर अमिलताग
कीजड़कीछालके रसमें २-३ रोजू मर्दनकर ६-६ रतीकी
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रमूलके
चूर्ण और मधुकेसाथ देनेसे अमाशयकीहा, यरुह, पाण्डु, गुल्म
और भगन्दर येसब नष्टहोते हैं ॥ ३३६ ॥

३३७ श्रीहारिरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टंकं विपं व्योपं फल्गुत्रिकम् ।
तोलैकं समादाय जैपालञ्च तदूर्ध्वकम् ॥ १५२७ ॥
किंनुकास्य रसेनेव याममाप्रन्तु मर्दयेत् ।
गुग्गुमात्रां घटीं छत्यां छायायां शोषयेत्ततः ॥१५२८॥
घटिकेका प्रदातव्या शृङ्गयेत्ससेन च ।
शुदाऽङ्कुरे गुल्मदाले श्रीहशोषे कफरामके ॥१५२९ ॥
उदापते चातदाते श्वासकासज्वरेषु च ।
रसः श्रीहारिनामाऽयं कोष्ठामययिनाशनः ॥
आमथातगदच्छेदी श्रेष्ठाऽऽयमयिनाशनः ॥१५३०॥
वै. र., वै. क., श्रीहृदधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और बछनाग, त्रिकडु, त्रिफला, ये सब १-१ तोला, शुद्धअमालोगोदा सबसे आधा लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर पलाशकेरससे १ पहर मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अद्रखके रसके साथ देनेसे बवासीर, गुल्म, दूध, प्लीहा, कफात्मक-शोध, उदावर्त, वातशूल, श्वास, कास, अमाशयकेरोग, आम-वात, श्लेष्मविकार इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३३७ ॥

३३८ ग्रीहार्णवरसः

हिङ्गुलं गन्धकं टङ्गमम्रकं विपमेव च ।
प्रत्येकं पलिकं भागं चूर्णयेदतिचिक्कणम् ॥१५३१॥
पिप्पलीमरिचञ्चैव प्रत्येकञ्च पलाङ्ककम् ।
मर्दयित्वा घटीं कुर्याद्ब्रह्मणामां प्रयत्नतः ॥१५३२॥
सेव्या शेफालिदलजै वंदी माक्षिकसंयुता ।
ग्रीहार्णं पट्प्रकारञ्च हन्ति शीघ्रं न संशयः ॥१५३३॥
ज्वरं मन्दानलञ्चैव कासं श्वासं वर्मि भ्रमम् ।
ग्रीहार्णव इति ख्यातो गहनानन्दभाषितः ॥१५३४॥
र स, र चि, र च, र. सु, प्लीहाशुषिकारे ।

भाषा—शुद्धसिगरिक, गन्धक और सुहागा, अम्रकमसम और शुद्धबछनाग १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर घोटकर कजलतमानकरके पीपल और मिर्च २-२ तोले लेकर बारीकचूर्णकर मिलादे । फिर खस और हारसिगारके पत्तोंकेरससे मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकैसाथ देनेसे छ प्रकारकी प्लीहदृढि, ज्वर, मन्दाग्नि, कास, श्वास, वमन और भ्रम नष्टहोतेहै ॥ ३३८ ॥

३३९ प्लीहोदरगुल्महरोरसः

क्षमागुणौ सूतकवह्नौ विमर्दितौ पकसूर्यपत्ररसे ।
कृत्वा गोलं पुटयेत्तद्वरसुकुसलिलेन मर्दयेत्त्रिदिनम् ॥
प्लीहोदरहृत्स्तौ रोहितकवाथयुग्यहः ।
सैन्धवयुक्तौ गुल्मे स्नुप्रसयुक्तौऽपि मण्डलत्रितयात् ॥
प्लैह्यपृष्टे हृदिरे विश्वाद्याऽकपयः क्षिपेत् ।
प्लीहोपशान्तिस्तेन स्याद्वासयप्रमिते दिनेः ॥१५३७॥
दारु कुण्डं हैमवती शताह्वाहिङ्गुसैन्धवाः ।
अर्कक्षीरयुतो लेपः सर्वोदरगदापहः ॥ १५३८ ॥
र, ग्रीहोदरे ।

टि०—अस्य रसस्यापाततो द्वितीयवर्द्धशरण सम्य प्रतीयत परभावना दावनिविशेषत्वात्स्वतन्त्रप्राप्य स्याति इति विद्विप्रिराकलीनीयम् ।

भाषा—पारा १ भाग और बहनभसम ३ भाग लेकर पके-हुए आकके पत्तोंके रससे मर्दनकर गोलाबनाय बराहपुटकी आध देवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर धूरके दूधसे ३ रोजमर्दनकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोहिप-केसाथने देनेसे ग्रीहा नष्टहोताहै । सैन्धव अथवा उष्णपदके

रसकेसाथ २१ रोजतक देनेसे गुल्म नष्टहोताहै । ग्रीहाकी पीठ-परसे जोंकवगैरहसे रक्त निकलवाकर आककादूध डालदे । इससे ८ रोजमें ग्रीहाकी शान्ति होजातीहै । देवदारु, उष्ट्र, रेवंचीनी, सोंफ, हींग और सैन्धव सब समभागलेकर आककेदूधमें घोट-कर लेपकरनेसे उदररोग नष्टहोतेहै ॥ ३३९ ॥

३४० फणिपतीरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं चाऽम्रकं लोहभस्मकम् ।
ताम्रभस्म समं मर्द्यं जम्भनीरेण संयुतम् ॥१५३९॥
द्विदिनं गुटिका कार्यां काचकूप्यां विनिक्षिपेत् ।
विलिप्य मृत्तिकावखं बालुकायन्त्रके पचेत् ॥१५४०॥
पञ्चामान्ते समुद्भूत्य गुजामात्रं प्रदापयेत् ।
अनुपानविशेषेण शुक्लवातं निहन्ति च ॥१५४१॥
व. रा, शुक्लवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रक, लोह और ताम्र भस्म सब समभाग लेकर नीलवर्ण कजलीपर जंभीरीनीचूके रसमें २ रोज घोटकर छोटी छोटी गोलियां बनाय सुखाकर आतशी शीशीमें भरके समस्तार ३-४ बपङ्गमिठी देकर अच्छी-तरह सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रखकर ६ पहरकी अग्नि देवे । स्वाज्ञशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती अनुपान विशेषसे देनेसे शुक्लवात (शुक्लवात) नष्टहोताहै ॥ ३४० ॥

३४१ फणिभूपणरसः

पारदं दरदं वह्नं मृतनागं मृताऽम्रकम् ।
सर्वैः समं शुद्धताल मर्द्यो निर्गुण्डिजे रसे ॥ १५४२ ॥
पाचितो बालुकायन्त्रे द्वियामं मन्दवह्निना ।
स्वाज्ञशीतलमुद्भूत्य मात्स्यमाहिपकच्छपैः ॥१५४३॥
वाराहशिखिजैः पित्तं भांविताश्च पृथक्पृथक् ।
अनुपानविशेषेण देयो वल्लहयो हितः ॥ १५४४ ॥
सन्निपाताभिहन्त्याशु त्विच्छापथ्यं समाचरेत् ।
शम्भुना कथितः पूर्व रसोऽयं फणिभूपणः ॥१५४५॥
वै चि, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और सिगरिक, वद, नाग और अम्रक भस्म सबसमभाग लेकर इनमबकी बराबर शुद्धहरिताल डालकर एकदोदिन मर्दनकर संगालके रससे एकदिन घोटकर गोला बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर दो पहर बालुकायन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाज्ञ शीतल होनेपर निकालकर मछली, भेना, बजुभा, सूअर और मोरके पित्तोंसे एक एक भावना देकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपान विशेषसे देनेसे यह सन्निपातोंको नष्टकरताहै । मूखलानेपर इच्छासुखर पथ्य-देना ॥ ३४१ ॥

३४२ फणियोगः

मृतस्य कृष्णसर्पस्य शोषेणुच्छान्यवर्जितम् ।
अन्तर्धूमपुटे दार्धं तद्रसम् न्यूपसंयुतम् ॥१५४६॥

वचा चाऽतिविपा कुष्ठमम्रमस्य समं भवेत् ।
भक्षयेत्कणियोऽयं वल्लेकं गलिताऽपहः ॥१५४७॥
वाकुचीवीजचूर्णञ्च निम्बपञ्चाङ्गसंयुतम् ।
मध्याज्याभ्यां लिहेत्कर्पं कुष्ठमनुपानकम् ॥१५४८॥
र. क. ल., गलितपुष्टे ।

भाषा—तत्काल मरेहुए कालेसांपका शिर, पुच्छ और अन्तर्द्विया निकालकर हंडीमें बन्दकर अन्तर्द्विम दग्धकरे । स्वाङ्ग-शीतल होनेपर निकालकर त्रिफुट्ट, वच, अतीस, कुष्ठ और अम्रक-भस्म सब समभाग लेकर एकजगह खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती लेकर वाकुचीकेनीज और निम्बपञ्चाङ्गके ३ मासो चूर्ण और मधु तथा पुतले मिलाकर खानेसे गलितपुष्ट दूरहो ३४२

३४३ फिरङ्गकुटारोरसः (प्रथमः)

प्रादिरं रसकपूर्वं त्रिफला कुष्ठकं मधु ।
कौशिकञ्च लवङ्गला समं सर्वं नियोजयेत् ॥१५४९॥
चतुर्विधा यवानो च गन्धकं शुद्धसूतकम् ।
भङ्गातकं गुडञ्चैव कर्पकर्वं विचूर्णयेत् ॥ १५५० ॥
कर्पमात्रं निषेधेत् बलयणविवाजितः ।
सप्तके तु व्यतिक्रान्ते गच्छेत्पथ्यं फिरङ्गकम् ॥१५५१॥
र. र. कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—खैर, रसकपूर, त्रिफला, कुष्ठ, मधु, गूगल, लौंग, इलायची, देशी तथा खुरासानो अजवाइन, अजमोद, खरजवा-इन, शुद्ध गन्धक, पारा और भिलावे तथा शुद्ध १-१ तोला लेकर पारे गन्धरफ्ती नीलवर्ण कजलीकर अन्य यस्तुओंके चूर्णमें मिलाकर एकजीव होनेतक कुटे । इसमेंसे १-१ तोला दही नर्गहके साथ निगलवादे और खानेको घी तथा गँहूचनेकी रोटी दवे । इसप्रकार ७ दिन कीतनेपर भयंकरावस्थापन फिरङ्गरोग नष्ट होता है ॥ ३४३ ॥

३४४ फिरङ्गकुटारोरसः (द्वितीयः)

आकारकरभो दन्तीवीजञ्चैव समांशकम् ।
रसं कुरण्टजे द्राघे मर्दयित्वा नियोजयेत् ॥ १५५२ ॥
फिरङ्गारण्यदावाग्निः कुष्ठमणकुटावकः ।
यथेच्छं भोजनं कुर्यात्कटुतैलगुडांस्पर्जेत् ॥ १५५३ ॥
र. र. कौ., फिरङ्गरोगे ।

भाषा—कटुगंरयाक रसमें २-३ दिन घोटाहुआ पारा अष्टकरा और जमालगोटा तमभाग लेकर १-२ पहर मर्दनकर रटाछोड़े । अथवा कटुगंरयाके रसमें १-१ मासोकी गोलिया बनाकर रटाछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ देनेसे फिरङ्ग, कुष्ठ और मग नष्ट होते हैं । कइवातेल और शुद्धको छोड़कर यथेष्ट भोजन करे ॥ ३४४ ॥

३४५ फिरङ्गनाशनचूर्णम्

नागञ्च पारदञ्चैव प्रत्येकं निष्कमात्रकम् ।
तयोस्तुल्यं भृष्टहिङ्गु तद्वत्संमहिफेनकम् ॥१५५४॥

एकीकृत्याऽखिलञ्चूर्णं मापैकं भक्षयेन्नरः ।
क्षाराऽम्लं वर्जयेत्तावदावत्सादति भेषजम् ॥
इत्येवं नाशयेत्क्षिप्रं फिरङ्गाऽऽयमुद्धतम् ॥१५५५॥
र. र. कौ., फिरङ्गरोगे ।

टि०—अरिभ्योने निष्परिमिता मानाऽतिमावहा आग्नीदोऽस्य स्वाने मापैकमिति पाठ इतोऽस्ति ।

भाषा—नाग और पारदभस्म (अभावमें रसविदूर) समभाग, इनदोनोंकी बराबर भुनाहींग और आधा अक्षीम लेकर सबको इकट्ठा मर्दनकर कजली बनाले । इसमेंसे १-१ माशा जलकेसाथ देनेसे यह भयङ्करफिरङ्गरोगनो नष्टकरताहै । दवाका प्रयोग चले ततक क्षार और रसाई न लाय ॥३४५॥

३४६ फिरङ्गनाशिनीवटी (प्रथमः)

आकारकरभञ्चैव दीप्यं जातीफलन्तथा ।
दरदं निष्कमात्रांश्च विचूर्ण्य गुटिकाञ्चरेत् ॥
नागधहोरेसेनैव सेव्या नित्यं फिरङ्गजित् ॥ १५५६ ॥
र. र. कौ., फिरङ्गरोगे ।

भाषा—अजलकरा, अजवाइन, जायफल और शिंगरिफ समभागलेकर पानकेरसमें मर्दनकर ४-४ मासोकी गोलिया बनाकर रटाछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ देनेसे फिरङ्ग रोग नष्टहोताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ फिरङ्गनाशिनीवटी (द्वितीयः)

दरदं सूतकञ्चैव निष्कमात्रं पृथक्पृथक् ।
जीर्णं गुडं पलं दत्त्वा लोहपात्रे विमर्दयेत् ॥१५५७॥
तुलसीस्वरसेनैव निम्बवण्डादिनत्रयम् ।
निम्बपत्रञ्च खदिरं सूर्यभक्तं पलंपलम् ॥ १५५८ ॥
फणिफेनं त्रिशाणञ्च सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
सायं प्रातश्च भोक्तव्यं मापैकं स्थाऽनुपानतः ॥
दुग्धौदनं चरेत्पथ्यं सप्ताहेन फिरङ्गजित् ॥१५५९॥
र. र. कौ., फिरङ्गरोगे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा ४-४ मासो, पुरानागुड ४ कप लेकर लोहेकेपात्रमें तुलसीके रसकेसाथ नीमके छपड़ेसे ३ दिन मर्दनकर नीमकेपत्ते, खैर और हुडुहर १-१ पल, अनीम १२ मासो डाक्टर सबको एकजगह पीटकर रटाछोड़े । इसमेंसे १-१ मासो उचितानुपानके साथ दवे । पथ्यमें दूधमात तिला नेमे फिरङ्गरोगनष्टहोता है ॥ ३४७ ॥

३४८ फिरङ्गनाशिनीवटी (तृतीयः)

लघुज्जातीफलहिङ्गुलं स्या-
दाकारचन्द्रं विडकं समांशम् ।
कयोन्मितं सर्वमयं हि कुर्या-
दपि प्रमाणान्वटकान् प्रमाते ॥
भुक्त्वा च दुग्धौदनपथ्यमश-
तिरन्ति रोगं प्रवले फिरङ्गम् ॥ १५६० ॥
र. र. कौ., फिरङ्गरोगे ।

भावा—जौग, जायफल, शिंगरिफ, अकलकरा, रसकपूर, विडङ्ग येसव १-१ तोला लेकर पानीकेसाथ ७ गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रात काल ७ रोचक लेनेसे प्रबलफिरङ्गरोग नष्टहोताहै । इनमें पच्य दूधभात देना ॥ ३४८ ॥

३४९ फिरङ्गविध्वंसनोरसः

पारदश्च लवङ्गश्च मस्तकी जातिपत्रिका ।
समभागानि सर्वाणि रसाङ्गं गन्धकं शुभम् ॥ १५६१ ॥
गन्धकस्य दशांशं तु शुद्धं फेनाद्रम निक्षिपेत् ।
नागपह्यारसेनैव गुटिका मुहसन्निभा ॥ १५६२ ॥
देया प्रभातसायाह्ने गोधूमसघृताशने ।
सप्तरात्रेण हन्याद्यु रसः फेरङ्गनाशनः ॥ १५६३ ॥
चि र म, फिरङ्गरोग ।

भावा—शुद्धपारा, लौग, मस्तकी और जावित्री १-१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, शुद्धसोमल २ भाग लेकर सबकी कबली कर पानके रसमें घोटकर भुगवरावर गोलिया बनावे । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातदिनमें फिरङ्गरोग नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० फिरङ्गशमनीवटी (प्रथमा)

गैरिक रसकपूरमुपलाश्च पृथक् पृथक् ।
दङ्गमान विनिष्पिप्य ताम्बूलीदलै रसैः ॥ १५६४ ॥
घटपञ्चतुर्दश श्रेयाः फिरंगदघातिकाः ।
साथ प्रात समश्रोयादेकैकां दिनसप्तकम् ॥ १५६५ ॥
गोधूमविकृती द्वाद् घृतेन सितया सह ।
फिरङ्गवाधिनाशाय घटिकेयमनुत्तमा ॥ १५६६ ॥
र प्र, फिरङ्गरोगे ।

भावा—गेरू, रसकपूर, मिश्री ४-४ मासे लेकर पानके रसमें पीसकर १४ गोलिया बनावे । इनमेंसे १-१ गोली, सुबहशाम पानीकेसाथ खानेसे सातरोजमें फिरङ्गरोग नष्ट होताहै ॥ ३५० ॥

३५१ फिरङ्गशमनीवटी (द्वितीया)

दङ्गैकपारदमित खदिरद्विदङ्ग-
माकारकादिकरमञ्च विघृण्य सप्त ।
घृत्वा घटीश्च खलु माक्षिकरामदङ्गै
प्रात फिरङ्गशमनाय गिलेच्च नित्यम् १५६७
कट्टम्ले च पतित्याज्ये भोज्य रूक्ष विशेषत ।
सप्तमि दिवसे नृणां फिरङ्गो नश्यति ध्रुवम् ॥ १५६८ ॥
चि क, भै र (परिशिष्टे) फिरङ्गरोगे ।

भावा—४ मासे शुद्धपारा लेकर १२ मासे मधुमें मिलने तक घोटकर खैर और अकलकरा ८-८ मासे डाक्टर एक ओषधोनेपर ७ गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रात काल पानीकेसाथ निगलनेसे ७ दिनमें फिरङ्गरोग नष्टहोताहै । कट्ट अम्ल और रूक्षभोजन न करे ॥ ३५१ ॥

३५२ फिरङ्गशमनीवटी (तृतीया)

कपर्द्वय श्रीशिवयोश्च वीर्य-
मक्षप्रमाणानि च तण्डुलानि ।
पिप्पुा बलायाः स्वरसेश्च सप्त
त्रिघ्ना घटीः सप्तदिने नियोज्याः ॥ १५६९ ॥
घटीत्रयस्याऽपि निषेय नित्य
धूमञ्च यो बाह्यफिरङ्गरोगी ।
स सप्तमि वां दिवसेश्च तस्मा-
द्धिमुच्यतेऽम्ल लवण त्यजेच्चैत् ॥ १५७० ॥
चि क, भै र, फिरङ्गरोगे । भैषज्यरत्नावल्या परिशिष्टे धूम
प्रयोगेति नाम्ना व्यवहृत ।

भावा—शुद्ध पारा और गन्धक, चावल १-१ कर्ष लेकर चावलको घारीक पीसकर घारे गन्धककी नीलवर्णकच लीमें मिलाकर बलाके अन्नस्वरस घोटकर २१ गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे रोजाना तीन बक् निवातस्थानमें १-१ गोलीका धूआले । अम्ल और लवण छोड़े तो ७ रोजमें बाह्यफिरङ्गवाधिसे निरुक्त होजाता है ॥ ३५२ ॥

३५३ फिरङ्गशमनीवटी (चतुर्थी)

मुशल्याकुलदृष्ट्याऽपि पारसीरुयचानिका ।
महातकफलञ्चाऽपि पलमानं पृथक्पृथक् ॥ १५७१ ॥
पलाङ्गमानः सूतः स्यात् पदपलोऽत्र शुड स्मृतः ।
एकीकृत्याऽखिल क्रुयाद्वटी कर्पप्रमाणत ॥ १५७२ ॥
खादेदेनां घटीं प्रात यवदाराग्यदर्शनम् ।
गोदध्नश्चाऽनुयानेन फिरङ्गाऽऽभयनाशनीम् ॥
निम्बुकैत्र विना नैव वर्जनीयमिहाऽपरम् ॥ १५७३ ॥
र प्र फिरङ्गे ।

भावा—मुगली, अकलकरा, छुत्तानीअजवाइन, मिलावा ये सब ४-४ कर्ष शुद्धपारा २ कर्ष, पुरानागुड ६ पल लेकर पहिले गुड़में मिलनतक पारेको घोटकर दूसरी चीजे डालकर एकजीव होनेतक कूटकर मिलावे और इसकी १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातके दहीक साथ निगले तबतक कि पूरा आरोग्य प्राप्त न हो । इनमें नीबूको छोड़कर और सबचीजे खावे ॥ ३५३ ॥

३५४ फिरङ्गशमनीवटी (पञ्चमी)

यवानी द्विपला प्राक्षा खदिरश्चाऽष्टदङ्गक ।
पलङ्क्याऽष्टदङ्गा स्यात्सत्र सूत विनिक्षिपेत् ॥ १५७४ ॥
सपाददङ्गुतुलित दरदायमनुत्तमम् ।
महातकफलान्यत्र नवसह्यमितानि च ॥ १५७५ ॥
पञ्चकर्पाऽऽज्यसंयुक्ताः फायां घटपञ्चतुर्दश ।
तार्येका भक्षयेत्प्रात सायङ्काले च बुद्धिमान् ॥ १५७६ ॥
उपदेशान् समस्तांश्च तद्गया पिङ्गिका अपि ।
सर्शोयं ग्रन्थिगतञ्च पूयन्वावादिक्वयेत् ॥ १५७७ ॥

उपवंशसमुद्रूतां पीडाश्चाप्यु व्यपोहति ।
यस्येन्द्रियस्य मांसानि शीयन्ते प्रतिवासरम् ॥
तदुद्भवान् कूर्मांश्चाऽपि शीघ्रमेव विनाशयेत् ॥१५७८॥
र. प्र., फिक्झारोग ।

भाषा—अजवाहन २ पल, रैर २ कर्प, गुगल २ कर्प, शिगारिकने निकालाहुआ शुद्धपारा ५ मादो, मिलावां ९ नग लेकर गुगलमें पाचनपयीमिलाकर नरम होनेतक कूटे फिर इसमें पारा डालकर एकजीव होनेतक घोटकर और चीजोंका बारीक चूर्ण मिलाकर १४ गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम खानेसे सबप्रकारके उपदंश, फुंसी, शोथ, गठिया, पृथ्थभाव और पीडा येसब शान्त होतेहैं । जिसरी इन्द्रियवामास दररोज गिरताहो उसरीनी इसकेप्रयोगसे तमाम पीड़े मरकर आराम होजायगा ॥ ३५४ ॥

३५५ फिक्झारियोगः

मार्कवख्रिफला दन्ती ताम्रचूर्णमयोरजः ।
उपदंशं निहन्त्येप बृहमिन्द्राशानि यथा ॥ १५७९ ॥
सु सं., उपदंशे ।

भाषा—मंगरा, त्रिफला, दन्ती अथवा जमालगोदा, तावा और लोहेकी भस्म सब समभाग लेकर तावे और लोहेकी भस्मको मंगरा और त्रिफलाके रसकेसाथ १-२ रोज मर्दनकर सबचीजोंका बारीक चूर्णकर मिलाकर ४-४ रसीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे एक अथवा दोगोली जलप्रयुक्ति उचि तातुपानके साथ देनेसे समस्त उपदंशोंको यह नष्टकरताहै ३५५ ॥

३५६ फिक्झारिरसः (प्रथमः)

रसकर्पूरमरिचं लवङ्गं बृहदेदिका ।
समभागानि सर्वाणि नागवल्ख्या दलद्रवैः ॥१५८०॥
गुटिका कोलमात्रा स्यात्प्रातः सायं प्रदापयेत् ।
गोधूमं सघृतं पथ्यं फिक्झारीरसो वरः ॥ १५८१ ॥
चि र भ, फिक्झारोगे ।

भाषा—रसकपूर, मरिच, लौंग, बड़ी इलायची सब सम-भाग लेकर बारीकचूर्णकर पानके रससे बेरबराव गोलियें बना कर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जलप्रयुक्तिसाथ सुबहशाम देनेसे फिक्झारोग नष्टहोताहै । पीकेसाथ गंहुकोरोटी पथ्यमें देना ॥ ३५६ ॥

३५७ फिक्झारिरसः (द्वितीयः)

रसकर्पूरतुल्यञ्च राला हिङ्गुलकं मुष्टिः ।
खदिरञ्चैव सौभाग्यं पुगं कङ्गोलकन्तथा ॥१५८२॥
तुल्यंतुल्यं समादाय नागवल्ख्या गुटो कृता ।
देया कोलप्रमाणेन द्वे सन्ध्येऽलवणाऽम्बिकम् १५८३
फिक्झारी रसः ख्यातो सर्वोपद्रवनाशनः ।
सप्तकेन न सन्देहो गोधूमं मुद्रतण्डुलैः ॥ १५८४ ॥
चि र भ, फिक्झारोगे ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, शुद्धतुल्य अथवा भस्म, राल, शिगारिक, इलायची, रैर, मुनासुहागा, सुपारी, शीतलजीनी सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पानके रसमें घोटकर बेरबराव गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम देनेसे समस्त उपद्रवसहित फिक्झारोग ७ दिनमें नष्टहोताहै । खानेको मूंग, चावल और गंहु देना ॥ ३५७ ॥

३५८ फिक्झारिलेपः (प्रथमः)

सौराष्ट्रीं गैरिकं तुल्यं पुष्पकासीससैन्धवम् ।
रोध्नं रसाञ्जनं दार्वीं हरितालं मनःशिलाम् ॥१५८५॥
हरेणुकैले च तथा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
तच्चूर्णं क्षौद्रसंयुक्तमुपदंशेषु पृजितम् ॥ १५८६ ॥
सु सं., उपदंशे ।

भाषा—फिट्फिट्टी और मगमाटी (कच्छी), गेरू, तुल्य, पुपाञ्जन (कजल), हीराकसीस, सेंधव, लोथ, रसौत, दारहल्दी, हरिताल, मैनसिल, हरेणुक (रोण, पहाड़ी) इलायची सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर धीमे मिलाकर लगानेसे सबप्रकारके उपदंश निरस्तहोतेहैं ॥ ३५८ ॥

३५९ फिक्झारिलेपः (द्वितीयः)

स्वर्जिका तुल्यकासीसं शैलेयञ्च रसाञ्जनम् ।
मनःशिलासमैश्चूर्णं प्रणयीसर्पनाशनम् ॥१५८७॥
सु सं., उपदंशे ।

भाषा—सजी, तुल्य, कमीस, छड़ील, रसौत और मैनसिल समभागलेकर बहुतबारीकचूर्णकर रखोड़े । इसको सौवार धोएहुए धीवगेरुहके साथ मिलाकर लगानेसे सबप्रकारके ज्वर और विषपं नष्टहोतेहैं ॥ ३५९ ॥

३६० वदरीपाकः

कुवेरप्रस्थमादाय क्षिप्त्वा रात्रौ चतुर्गुणे ।
क्षीरे प्रातः पचेत्सम्यग्घृताद्धर्मस्थसंयुतम् ॥१५८८॥
खण्डं वर्णकृतं कृत्वा सुगन्धं सुविनिक्षिपेत् ।
कर्पूरवासिते पात्रे मृन्मयेऽगुरुधूपिते ॥१५८९ ॥
तस्मिन् सङ्कुट्य चूर्णानि दापयेद्भियगुत्तमः ।
चातुर्जातं त्रिकटुकं जातोपन्नफलन्तथा ॥ १५९० ॥
देवपुष्पं विडङ्गञ्च मिथि नांगवला घनम् ।
निशाद्वयं तथा लोहं शुद्धं बङ्गं पलाद्धकम् ॥१५९१॥
प्रत्येकं चूर्णितं कृत्वा भस्मयेद्य पलं गुधः ।
सर्वान् वाताऽऽमयांश्चूलानग्निमान्यं बलक्षयम् १५९२
प्रमेहं मूत्रकृच्छ्रञ्च शर्कराऽद्धमरिपाण्डुज्वत् ।
पीनसं प्रहृणीरोगमतीसारमरोचकम् ॥ १५९३ ॥
चि. र. भ, वातादौ ।

हि०—अथ क्षीरसन्धेन जल प्राशाम्, रात्रौ क्षीरे बदरीफलप्रयोगे तदि कृतिमावात्पाकाऽप्योपप्लवत् । क्षीरसन्धेन दुराप्रदक्षेप्याग्नं वदरीफलकण्ये कृत्वा घनेन साकमस्युग विधाय तत्र दुग्धं तिबोनीयन्, विहृनीनावाऽऽ शङ्काविराद्यत् ।

भाषा—एकसेर सुषे पकेदारवेर लेकर रातमें ४ सेर पानीमें डालकर संवैरे पकावे । सेरभर पानी रहनेपर मसलकर छानले फिर आपसेर घी और एकसेर शकर डालकर पकावे । खौलनेपर ४ सेर दूध डालकर दोताकी चादानी बनाकर उतारले । फिर चातुर्जात, त्रिहृद्, जाविनी, जायफल, लौंग, विडङ्ग, सोंफ, नागवला, नागरमोया, हल्दी, दाख्दचरी, लोह, ताम्र और वज्र-मन्म ये प्रत्येक २ कर्ष लेकर बपडछान चूर्णकरके साशानीमें मिलाकर अगसे घृष देकर बपूरसे वासिन विवेहृण मिठीके बतनेमें रखदे । ६-७ दिने बाद ४-४ तोले दूध बगैरहके साथ लेनेसे सब प्रकारके वातज्याधि, शूल, मन्दाग्नि, पलक्षय, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शरर, पथरी, पाण्डु, पीनस, प्रहणी, अति-हार और अर्धचि इनको यह नष्टकरता है ॥ ३६० ॥

३६१ बलादिपण्डूरम्

बला शतावरीमूलं यथैरपुंडं पलद्वयम् ।
गुडस्य द्विपलं दत्त्वा पचेत्सान्द्रत्वमागतम् ॥३५९४॥
जीरकस्य पलत्रयं पिप्पल्याश्च पलन्तथा ।
चातुर्जातकचूर्णन्तु प्रत्येकं द्रह्मणं क्षिपेत् ॥ १५९५ ॥
यावन्वेतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विशुणं तथा ।
गोमूत्रे त्रिकलाफवाये निषिकं श्लशणचूर्णितम् १५९६
पतह्लादादिकं नाम मण्डूरं हन्ति हुस्तरम् ।
अम्लपिचं सुदुवारं शूलं तौवं नियच्छति ॥१५९७॥
र. का, अम्लपिते ।

भाषा—बला, शतावरीकेमूल, जब, एरण्डकीजड़ और गुड २-२ पल लेकर सबसे चौगुना पानी डालकर पकावे । चाशानी होनेपर जीरा, पीपल १-१ पल, चातुर्जात (तज, पत्रज, इलायची और नागसेसर) ८-८ मासे, गोमूत्र और त्रिफलाके फ्वायमें कुताकर दूंकानुआमण्डूर २० तोले डालकर खूबमिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ माथा उचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य अम्लपित और तीव्रशूल नष्टहोताहै ॥ ३६१ ॥

३६२ घस्यामयान्तकं चूर्णम्

निजातकं त्रिषुषञ्च चन्दनोशीरपालुकम् ।
घनसारं शिलासारं कर्पूरकतकोत्पलम् ॥३५९८॥
सितनामा कृष्णरम्भा धान्यकाऽमृतशर्करा ।
गोधुरश्च मृणालश्च पद्मकं पद्मकेसरम् ॥ १५९९ ॥
सर्वेषाञ्च समकुर्वान्मृद्धिकां त्रिफलां सिताम् ।
घृतेन मधुना चाऽपि पियेत्सर्वत्र मेहसुत् ॥ १६०० ॥
मूत्राऽऽमयान्मूत्ररुच्छान् सोमरीगाभिहन्ति तत् ।
वस्यामयान्तकं चूर्णं शम्भुना निर्मितं पुरा ॥३६०१॥
वै. चि, मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—त्रिजात, त्रिषुष (बला), सफेदचन्दन, रास गेंडुला, अश्रक और लोहमन्म, बपूर, निर्मली, कमलाटा, सफेद कोयल, नील, केलेका कन्द, धनिया, गिलोय, शकर, सोपल,

भर्सांड, पयाक, पद्मकेसर ये सब समभाग, इन सबकी बराबर मुनका, त्रिफला और शकर मिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे रोगीका बलाबल देखकर घी और मधुकेसाथ ६-६ मासे देनेसे मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, सोमरोग और वस्तिके तनामरोग नष्टहोताहै ॥ ३६२ ॥

३६३ बहुमृत्रघ्नवटी

बीजवन्धेशुरकलीतं घांशी सिद्धकसाक्षिमम् ।
शुक्तिघिदुमयोर्भूती मज्जानायक्षप्ययोः ॥ १६०२ ॥
शिलाजतु त्रुटिवर्द्धः सर्वं सञ्जर्ण्यं माक्षिकैः ।
घटीं यथान सुप्तवां बहुमूत्रप्रमेहिणाम् ॥ १६०३ ॥
सि. मे. म, बहुमृत्रप्रमेहे ।

भाषा—बीजवन्द, टालमत्ताना, मुल्हठी, वंसलोचन, वेरजा, साक्षिमभित्री, मोतीकीसीप और मूंगेकीभसम, बहेडा और हेंकी मन्ना, शिलाजीत, श्लायची, वज्रमन्म सब सम-भागलेकर बारीकचूर्णकर चितोत्रा, शिलाजीत और मधुमेंमिलाकर २-२ मासेकी गोलियें बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबह शाम अन्नपान विशेषसे देनेसे यह बहुमूत्रप्रमेहको हर-करतीहै ॥ ३६३ ॥

३६४ बहुमृन्तान्तकोरसः (प्रथमः)

रसं गन्धमयोऽन्नञ्च वङ्गं सर्वं समंसमम् ।
रसस्य पादिकं हेमरम्भापुष्परेखेन च ॥ १६०४ ॥
मर्दयित्वा घटी कार्या चणकाभाऽनुपानतः ।
रसो शुद्ध्या दातव्यो बहुमृन्तान्तकामिधः ॥१६०५॥
आ. वि, बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अश्रक और वज्रमन्म येसब १-१ कर्ष, सुवर्णमन्म ४ मासे लेकर सबकी नीलवर्ण कजलीकर केलेके पुष्पके रससे ढोडकर चनेप्रमाण गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गिलोयके रसकेसाथ देनेसे बहुमूत्र नष्टहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ बहुमृन्तान्तकोरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरश्च तथा लौहं यद्गाऽहिकेनसारकी ।
उदुम्बरमवं बीजं विल्वमूलं सुरभिषा ॥ १६०६ ॥
सर्वं समं जन्तुफलरसैः सम्मर्दितं भवेत् ।
रक्तद्वयमितां खादेद्द्विटिकामनुपानतः ॥ १६०७ ॥
औदुम्बरकलद्रावं दद्यान्मेहप्रशांतये ।
मांसप्रघातं भक्ष्यञ्च तथा गोधूमपिष्टकम् ॥ १६०८ ॥
बहुमूत्रं तथा चाऽन्याप्रोगांश्चैव तदुद्गृह्यात् ।
बहुमृन्तान्तकरसो नाशयेद्विकल्पतः ॥ १६०९ ॥
तृष्णाऽधिक्ये प्रदातव्यं श्रुतशीतमिदं शुभम् ।
सारिवा मधुकं द्राक्षा धर्मः सरलचन्दने ॥ १६१० ॥
पथ्या मधूकपुष्पञ्च सर्वञ्च समभागिकम् ।
जले संस्थाप्य रजनीं पराहे वज्रपालितम् ॥
प्रोक्तो गहननायेन सद्यस्तृष्णाहरः परः ॥ १६११ ॥
र च, बहुमूत्रमेहे ।

भाषा—रससिन्दूर, लोह और वग भस्म, शुद्ध अफीम जमालगोटा, गूलरकेबीज, वेलचीजड़, तुलसी सब समभाग लेकर वारीकपीस गूलरके फलोंकेरसके साथ मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गूलरके फलके रसकेसाथ देनेसे बहुसून और तदुद्भव उपद्रव इनसबको यह नष्ट करता है । प्यास ज्यादा लगनेपर सारिवा, मुलदही, द्राक्ष, दर्भ, चीठ, चन्दन, हँस, और महुएके फूल समभाग लेकर काढा बनाकर टढाकरके पिखावे । इन्हीं चीजोंको रातमें जळमें भिगोकर सुबहमें पखसे धानकर देसकेहै खानेको मासप्रधानभक्ष्य और गेहूकी रोटी देना ॥ ३६५ ॥

३६६ वाकुची वटी

**द्वारिशांशपलयाकुचीं शुभजलद्रोण्यां विशुष्कां पुन-
र्दिशांशेनपुरस्य कान्तरसयो निष्कैः पृथक् पञ्चभिः ।
ताम्बूलीरसमर्दितास्तिलदलाऽङ्गस्याऽमृतै लेंपितं,
पक्वं चाऽथ विधानतोऽथ भजनात्कुष्ठामयध्वंसकः ॥
र. र कौ, कुष्ठे ।**

भाषा—३२ पल वाकुचीको १६ सेर पानीमें उबालदे । जब सब पानी जलजाय तब उतारकर ६॥ कर्प शुद्ध गुगल कान्तलोह और पारेकीभस्म सवा १॥ कर्प मिलाकर पान और हुरहुरकास वालकर १-२ रोज मर्दनकर मिठीके पात्रमें लेपनपर फिर हठीका सुहबन्दकर २-३ कपमिठी लगाकर सुखाले । फिर इसे भूषयन्त्रमें कुम्भतुष्टसे स्वेदितकरे । इसमेंसे ३-३ मासे जलवगैरहके साथ देनेसे यह कुष्ठोंको दूर करताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ वाकुच्यादिचूर्णम्

**पलानि सङ्गृह्य दशेन्दुराज्याः
फलत्रयस्याऽपि समानमेतत् ।
विडङ्गसारस्य पलानि सप्त
शिलाजतौऽर्द्धञ्च पुरस्य चैकम् ॥ ३६१३ ॥
शतञ्च मङ्गातकसत्फलानां
पलं तथा पुष्करमूलनान् ।
पलत्रयं लोहभवं सुचूर्णं
तुरी पलाद्वां षथ कर्पमागाः ॥ ३६१४ ॥
सपत्रमुस्ताकणयष्टिकानां
सचित्रकप्रन्धिककेदारणाम् ।
न्यप्रोधमूलोपणहुहुमाना-
मेकत्र सचूर्ण्यं सम तु रण्टम् ॥ ३६१५ ॥
खादेश्याग्नि प्रयतस्तु मात्रां
कुष्ठान्यथोपाण्यपयान्ति नाशम् ।
जशाधिकारा. पडपि प्रयुञ्ज ।
धियत्राणि चित्राण्युद्गराणि चाऽष्टौ ॥ ३६१६ ॥
क्षयाश्च हृच्छू* खलु पाण्डुरोगः
कण्टामया विशतिरेच मेहाः ।**

उन्माद्रोगज्वरनेत्ररोगा

**नासोद्भवाः पञ्चत्रिधाश्च गुल्माः ॥ ३६१७ ॥
वातमशीतिविकारं चत्वारिंशत्प्रभेदज पित्तम् ।
श्लेष्माणं विशतिकं विनाशमायाति हृष्टमपि ॥ ३६१८ ॥
भवति रुचिरदीर्घाँरुवर्णां मनुष्यः,
समधिकशतवर्षं जीवतीह प्रगल्भम् ।
विघटितघनरोगो वह्निमासप्रयोगा-
द्युचिततपनहारी हृष्टपुष्टो वृषश्च ॥ ३६१९ ॥
ग नि, वृष्टाधिकारे ।**

भाषा—वाकुची और त्रिकला १०-१० पल, विडङ्ग तण्डुल ७ पल, शिलाजीत ३॥ पल, शुद्ध गुगल १ पल, मिलावे १०० नग, पोहकरसूल १ पल, लोहभस्म ३ पल, मुनी मिट्टकड़ी २ तो, जड़पत्तेसहित नागरमोया, पीपल, मुलदही, चित्रक, पिपलामूल, नागविसर, वटकीजड़की छाल, मरिच और केसर १-१ कर्प लेकर वारीकचूर्णकर सबकी धरावर शकर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे अमिनल देखकर आधा अथवा १ तोला खानेसे समस्तकुष्ठ, ६ प्रकारके अर्थ, धिन, चित्र, आठों उदररोग, क्षय, कृच्छ्र, पाण्डु, कण्ठविकार, २० प्रमेह, उन्माद, ज्वर, नेत्र तथा नासिकाकेरोग, पाचप्रकारकेगुल्म, ८० वातव्याधि, ४० पित्तरोग, २० कफरोग बेशब नष्टहोतेहै । इसके सेवनसे उत्तमकान्ति और गौरवर्ण होताहै । १०० वर्षतक निरामयहोकर जीताहै जटिलरोगमें ३ महीनेके प्रयोगसे निरामय होकर हृष्टपुष्ट होताहै ॥ ३६७ ॥

३६८ वाकुच्यादि लेहः

**शशाङ्कलेखा सविडङ्गसारा
सपिप्पलीका सहुताशमूला ।
सायोमला सामलका सतैला
कुष्ठानि सर्वाणि निहन्ति लीढा ॥ ३६२० ॥
ग. नि, कुष्ठे ।**

भाषा—वाकुची, विडङ्गतण्डुल, पीपल, चित्रमूल, मरहूर, आवले और तिलका तैल सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर तैल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे यथाभिनल खानेसे समस्तकुष्ठ दूरहोतेहै ॥ ३६८ ॥

३६९ वाकुच्यादि लोहम्

**वाकुची त्रिकला वृष्णा विडङ्ग सुरस्ताऽमृता ।
अयोमधुस्थितं पत्रं जराभ्युविपापहम् ॥ ३६२१ ॥
ग नि, रसायने ।**

भाषा—वाकुची, त्रिकला, पीपल, विडङ्ग, तुलसी, मिलेय और लोहभस्म सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे यथाभिनल खानेसे यह मुग्धा, मृत्यु और विपत्ते दूरकरताहै ॥ ३६९ ॥

३७० वालचन्द्र रसः

चन्द्रवह्वर्कभागांश्च स्वर्णगैरिकचन्द्रजान् ।
मर्दयेद्ब्रह्ममात्रेण वालचन्द्रो नियोजितः ॥ १६२२ ॥
वमिक्षयाऽतिसारर्ति हृत्प्रासाऽरचिपीनसान् ।
गरदूषीविपश्वासाप्रकपितं निहन्त्यल्म् ॥ १६२३ ॥
र. स. , र. शि. , क्षये ।

भाषा—सुवर्णमस १ भाग, सोनागेरु ३ भाग, मोती १२ भाग, लेकर सबका बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती यथारोगानुपानकेसाथ लेनेसे वमन, क्षय, अतिसार, जी मिचलाना, अर्धचि, पीनस, कुत्रिमजहर, दूषीविप, श्वास, रतपित्त इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ३७० ॥

३७१ वालयकृदरिलोहप्र

सहस्रपुदितञ्चाऽंशं लोहञ्चैव तथा रसः ।
जम्बीरवीजातिविषे मूलं प्लीहाहिरसम्भवम् ॥ १६२४ ॥
रक्तचन्दनमदमज्जः प्रत्येकञ्च समांशकम् ।
शुद्धचीस्वरसेनैव धान्यद्वयमिता वटी ॥ १६२५ ॥
वालानां याकृतं घोरं ज्वरं प्लीहानमेव च ।
शोथं विवन्धं पाण्डुञ्च कासं मुखगदं तथा ॥ १६२६ ॥
उदरं नाशयेदाशु भास्कर स्तिमिरं यथा ।
वालयकृदरि नाम लौहः श्रीशिवभापितः ॥ १६२७ ॥
आ. वि , यहदोमे ।

भाषा—सहस्रपुटी अन्नक, लोह और पारेकी भस्म, जम्बी-
रीके बीज, अतीस, शएपुङ्गी अड़, लालचन्दन, पाषाणभेद
सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर गिलोयके स्वरस अथवा ज्ञापसे
मर्दनकर १-२ नाबलकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
एक अथवा दो गोलिया औचिती देखकर अवस्थोचितानुपानके
साथ देनेसे बच्चोंका घोर यह्व, ज्वर, लीहा, शोथ, विवन्ध,
पाण्डु, कास, मुखकेरोग और उदररोग नष्ट होतेहैं ॥ ३७१ ॥

३७२ वालरोगान्तको रसः (वैद्यनाथवटो)

पलं शुद्धस्य क्षृतस्य गन्धकस्य च तत्समम् ।
सुवर्णमाक्षिकस्याऽपि चाऽर्द्धभाग नियोजयेत् १६२८
ततः कज्जलिकां कृत्वा पात्रे लोहमये दटे ।
केशराजस्य शृङ्गस्य निर्गुण्ड्याः पर्णसम्भवम् १६२९
स्वरसं काकमाच्याश्च प्रीष्णमुन्दरकस्य च ।
सूर्यावर्तकवर्षाभूमेकपर्णांरसैस्तथा ॥ १६३० ॥
श्वेताऽपरजितायाश्च रसं दद्याद्विचक्षणः ।
देयं रसाङ्गमागेन चूर्णं मरिचसम्भवम् ॥ १६३१ ॥
शुभे शिलामये पात्रे यामं दण्डेन मर्दयेत् ।
शुष्कमातपसंयोगाद्दृष्टिकां कारयेद्भिप्रकम् ॥ १६३२ ॥
प्रमाणे सर्पपाकात्वालानाञ्च प्रयोजयेत् ।
दन्ति त्रिदोषसम्भूतं ज्वरञ्चैव सुदारणम् ॥ १६३३ ॥

कासं पञ्चविधञ्चाऽपि सर्वरोगं निहन्ति च ।
शिद्धानां रोगनाशाय निर्मितोऽयं महारसः ॥ १६३४ ॥

र. सं. , भैर. , र. सु. , र. र. , र. च. , ध. र. क. , वालरोगे । र. सु. ,
र. र. , र. चं. , ध. , एषु ग्रन्थेषु वालरस इति नाम ।

टि०—र. र. , ध. , र. सु. , र. च. , भै. र. र. स. , एषु द्वितीयस्थाने
रसप्लुतमे च श्रद्धणीरोगे वैद्यनाथवटीति नाम्ना परी रती निहितो
ऽस्ति तत्र माक्षिकमरिचवोरभागेऽस्ति, भावनासु कुचेलजयन्तीन्द्रारा
नोक्त्या विशेषतया जित्तिता सन्ति, कावमाचीवर्षाभूस्यांनतकाना
आऽभानोऽस्ति, श्यापातती विदोषो दृश्यते परन्तु सीऽकिञ्चिलर,
माक्षिकमरिचसवोगेन शुणाऽधिक्यात् । कुचेलजयन्तीन्द्रारानोक्त्यानां
भावनारस्व-रन्प्लुतध्या इति सर्वस्याऽपि सामञ्जसात् । एव ससर्पण-
वृत्त्या अन्धवैवाज्यमैव करणीय ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सोनानाखी
३ भाग लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर लोहके पात्रमें स्याद सफेद
भंगरा, निर्गुण्डीके पत्ते, मकोय, हरमल, हुडुहर, इदसिद,
वाझी, सफेद कोयल इनके स्वरसोंकी १-१ भावना देखर इससे
आधा मरिचका चूर्ण मिलाकर पत्थरके खरळमें एकवहर घोट-
कर सर्पप्रमाण गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
उचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषज्वर, पाचप्रकारकी खाती
इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ वालमुन्दररसः

सुशुद्धं श्वेतवैकान्तं सप्ताहं भाग्यमातपे ।
अम्लवेतससमिष्टं तेनैव द्रुतिमानुयात् ॥ १६३५ ॥
यतां द्रुतिं शुद्धसूतं समं शौद्रैर्दिनत्रयम् ।
मर्दितं लेहयेन्मापं मासाद्वालो भवेधरः ॥ १६३६ ॥
वत्सराद्ब्रह्मनुदयः स्यादसोऽयं वालमुन्दरः ।
वाङ्गुचीवीजकर्वकं मध्याज्याभ्यां लिहेदनु ॥ १६३७ ॥
र. र. , रसायन सं , रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धनिये हुए सफेद वैकान्तको अम्ल
वेतके रसमें बड़ीभूपमें ७ रोजतक रसके तो इसका इवहोजाताहै ।
इसकी बराबर शुद्ध पारा मिलाकर शहदेकेसाथ ३ रोज मर्दनकर
रखछोड़े । इसमेंसे सरतोंसे लेकर मरिच प्रमाण तक मात्रा लेकर
बावुचीके बीजोंका चूर्ण, मधु और धीकेसाथ चटानेसे बालक
निरोग होकर हृष्टुष्ट होजाताहै यदि इसका वर्षभर लग्यवार
प्रयोग किया जायतो बच्चा निरामय होकर दीर्घायु होजाताहै ।
टि० इस प्रयोगमें बाङ्गुचीके १ बर्ष बीजोंका चूर्ण अनुगानमें
लिखाहै तथा १ महीनेमें जवान और १ बर्षमें मज्जमान होना
समझमें नदीं जाता । इसके अनुमार इसकी मात्रा अधिकसे
अधिक ३ मासेकी होनी चाहिये, परन्तु यह मालूम होताहै कि
प्रन्थकारने केवल अनुमानसे इसप्रयोगको लिखादियाहै किसीको
खिलया नदीं और स्वयं तो चायगेही क्यों ? इससे यह सिद्ध
होताहै कि इसमें प्रयोगधारासे अधिक काम लियागयाहै ।
इसलिये बच्चोंको सर्पप्रमाणासे देना और बाङ्गुचीने बीजोंका
चूर्ण ३ रतीसे ६ रतीतक देना ॥ ३७३ ॥

३७४ वालसूयोदरसः (प्रथमः)

एकमागं रसं दद्याद्भिमागं हिङ्गुलन्तथा ।
त्रिमागं गन्धकञ्चैव वसुभागा च रार्परी ॥ १६३८ ॥
नागं विशतिभागञ्च जीर्णं व्योम चतुर्गुणम् ।
पुटानां शतसहस्रा च कुमारीरसमर्दितम् ॥ १६३९ ॥
मर्दयेद्वाद्रकरसैर्भावनया परिसंयुतम् ।
भापमात्रमिदं सेव्यं क्षीराऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥ १६४० ॥
जीर्णज्वरं सन्निपातं पाण्डुज्वरमरोचकम् ।
भगन्दराख्यञ्चाऽशीसि मूत्रसन्तापदाहकम् ॥ १६४१ ॥
अपस्मात्क्ष भ्रमणमुन्मादं कामलां तथा ।
पुराणं द्वन्द्वजं छर्दिं सर्वरूपं क्षयं तथा ॥ १६४२ ॥
सर्वघातुज्वरञ्चैव सन्निपातारूपयोदरा ।
अशीतिं वातसम्भूतां विशतिं श्लेष्मसम्भवाम् ॥
सर्वरोगं हरेच्छीघ्रं वालसूयोदयो रसः ॥ १६४३ ॥
वै. नि (ल.), सरंरोगे ।

भापा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धशिगरीफ २ भाग, शुद्ध-
गन्धक ३ भाग, शुद्धखारिया ८ भाग, नागमस २० भाग, अभ्र-
कमस ४ भाग, लेकर सक्का बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी
नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर धीवृंकार और अदरपके रसोंकी
क्रमसे भावना देताहुआ घराह्युत्की आंचदे । ऐसे १०० पुट
पूरे होनेपर दोनोके रसोंकी ७-७ भावनाएं देकर १-१ मासोकी
गोलिया बनाकर रगडोडे । इनमेंसे १-१ गोली दूध, घी और
मधुके साथ देनेसे जीर्णज्वर, सन्निपात, पाण्डु, अरोचक, भग-
न्दर, क्याधीर, मूत्राघात, मूत्ररूच्य, अपस्मार, भ्रम, उन्माद,
कामला, पुराणा द्वन्द्वज ज्वर, वमन, चर्षत्प क्षय, घातुगतज्वर,
८० वातरोग २० कफरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७४ ॥

३७५ वालसूयोदरसः (द्वितीयः)

सूतात्त्रैगुण्यगन्धं विपकनकयुगं भानुतीक्ष्णे च नेत्रे,
तालाख्यं तद्यतुर्थं गगनशरमितं कान्तमन्त्रेण तुल्यम् ।
मारीचञ्चाऽष्टभागं त्रिचतुरकयुतौ नागचङ्गां क्रमेण,
तारे द्वे सूक्ष्मचूर्णं मुनिदियसमितं घासकेशोरमेन ॥
एतं दद्याद्दहन्तं ज्वररदनदहन्तं व्यासकासादि छर्दिं,
पाण्डुं शूलप्रमेहाक्षपतिं शुद्धजः-प्लोहगुन्मानशेषात् ।
घातव्याधेः कुठारः क्षयमुदरद्वजःपीनसांश्चैव सर्वांश्च,
दिकादीप्रकपित्तभ्रमसन्नकफरुता-
लिङ्गदोषांश्च सर्वांश्च ॥
योगाणां योनिशोषानपहरति तथा मूत्ररूच्यंश्च सर्वांश्च,
नाझाऽप्यं वालसूयैः सकलगदहः-
स्यापितोऽप्यं मुनीन्द्रैः ॥ १६४५ ॥

र. क. यो., भा., व रा, सरंरोगे ।

दि०—अथ वट अर्पणो दि०दरउन्नुन मन प्रीन-
लपनी भगते मन्त्रे द्रव्यगन्धका प्रमोने व वैष्णव १५४ ३१ वट-
रिणी संक्षेपम् ।

भापा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक ३ भाग, शुद्धवटनाग
और धतूरेकेबीज, ताम्र और लोहभस्म २-२ भाग, हरिताल-
भस्म ४ भाग, अभ्रक और कान्तलोहभस्म ५-५ भाग, मरिच
८ भाग, नागभस्म ३ भाग, वटभस्म ४ भाग, रजतभस्म २
भाग, लेकर सक्का बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कज-
लीमें मिलाकर अहुसा और ईसके रसोंसे ७-७ रोजुभावना
देकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रगडोडे । इनमेंसे १-१
गोली अरस्योचितानुपानकेसाथ देनेसे दाह, ज्वर, श्वास, कास,
वमन, पाण्डु, शूल, प्रमेह, क्याधीर, होहा, गुल्म, वातव्याधि,
क्षय, उदररोग, पीनस, हिचकी, रक्तपित्त, वात और कफके रोग,
लिङ्गदोष, योनिदोष, मूत्ररूच्य इनसबको यह नष्टकरताहै ३७५

३७६ वालकीरसः

रसकञ्च प्रवालञ्च शृङ्गभस्म च हिङ्गुलम् ।
कर्पकचूर्णकेणाऽऽज्यं केशारन्तु समादाकम् ॥ १६४६ ॥
मर्दयेच्चलयोगेन जलेनेनं प्रदापयेत् ।
वातश्लेष्मातिसारेषु किमिकासज्वरार्तिहृत् ॥ १६४७ ॥
रसायन सं., बालरोगे ।

भापा—खारिया, प्रवाल, मृगशृङ्ग, शिंगरिफ इनतीभस्में
और कचूर १-१ तोला, केशर सबकी बराबर लेकर पानीमें
घोटकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रगडोडे । इनमेंसे १-१
गोली जल अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे वातश्लेष्मविकार,
अतिसार, किमि, कास और ज्वर नष्टहोताहै ॥ ३७६ ॥

३७७ विभीतकायोदरकः

विभीतकाऽयामलनागराणां
चूर्णं तिलानाञ्च गुडञ्च मुरयम् ।
तक्रानुपानो घटकः प्रयोज्यः
क्षिणोति घोरानपि पाण्डुरोगान् ॥ १६४८ ॥
ग नि, मु. सं, पाण्डुरोगे ।

भापा—बहेडेनीछाल, मगहरमस, सोंठ और तिल एम-
भाग लेकर सबकी बराबर पुराणा गुड मिलाकर ३-३ मासोकी
गोलिया बनाकर रगडोडे । इनमेंसे १-१ गोली छाण्डेयाप
देनेसे घोर पाण्डुरोग दूहोवेई ॥ ३७७ ॥

३७८ विल्वादिश्लेहः

तुलार्द्रं विल्वमूलञ्च तदर्द्रं सरसीरुद्रम् ।
श्रीणं श्रीणार्द्रं सलिलमष्टभागान्शोषितम् ॥ १६४९ ॥
आर्द्रकस्य रसं प्रस्यं प्रस्यार्द्रं भृङ्गजं रसम् ।
कापोंसकलमञ्जा च कपित्थकलसाकम् ॥ १६५० ॥
आमलकया रसश्चैव प्रस्यार्द्रं पृथक्पृथक् ।
तुलार्द्रंशकंरायुक्तं क्षिण्यमाण्डे विनिःशियेत् ॥ १६५१ ॥
प्रिजातकं त्रिकटुकं धान्यं मुस्ता ययानिका ।
जीरकद्वयसिन्धूर्यं मधुकञ्चाऽप्यसौ रजः ॥ १६५२ ॥
प्रत्येकं पलमापञ्च लयङ्गञ्च पलद्वयम् ।
सूक्ष्मचूर्णमिदं सर्वं शृङ्गापादप्रगालितम् ॥ १६५३ ॥

गोघृतं कुडवश्चैव माशिकं कुडवद्वयम् ।
धान्यराशिषु दातव्यं पक्षं वा मासमेव वा ॥१६५४॥
अनुपानविशेषण यथारोगं यथावलम् ।
अरोचकञ्च यमनमुद्गारञ्चाऽग्निमन्दताम् ॥ १६५५ ॥
शोथमाध्मानहृच्छूले श्वासकासौ च गुल्मकम् ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च भ्रान्तिञ्च क्षयच्छर्दिर्विनाशनः ॥१६५६॥
मेहपाण्डुहरश्चैव पित्वाऽरुच्यन्द्रनाशनः ।
एष विल्वादिको लोहश्चन्द्रयाम्बुन्द्रभाषितः ॥१६५७॥
वा, सर्वरोगे ।

भाषा—बेलक्रीजइ ५० पल, कमल २५ पल लेकर जवजुट
चूर्णकर ३२ अथवा १६ सेर पानीमें पकावे । अंशभागवशेष
रहनेपर उतारकर छानले । इसमें अदरककास १ सेर, भंगरेका
रस, बवास और बैयकी मन्दा, आंवलेका रस आधा ३ सेर,
शर ५० पल मिलाकर चिकने घर्तनेमें रखकर त्रिजात, त्रिकटु,
धनिया, नागमोथा, अजवाइन, स्याहफेदजीरा, सैषामक,
मुलहठी और लोहमस १-१ पल, लौंग २ पल इनसबका
घारीक चूर्णकर मिलादे । फिर गोघृत ४ पल, मधु ८ पल डाल-
कर सुंहन्दकर धान्यराशिमें १ महीना अथवा १५ दिन तक
रखकर निकाले । इसमेंसे अनुपानविशेषसे शरीर और रोग-
फलसे देखकर उचितमात्रा कायमकरके देवे । साधारणमात्रा
१ तोले तककी है । इसके सेवनसे अहचि, बमन, उद्गार,
अभिमान्य, शोथ, आध्मान, हृदयशूल, भास, कास, गुल्म,
ऊर्ध्वश्वास, भ्रान्ति, क्षयकीबमन, प्रमेह, पाण्डु, रक्तपित्त इन-
सबको यह नष्टरताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ बुसुधुवल्लभोरसः (प्रथम)

सूतगन्धकसिन्दूरशङ्खमुक्तिचराटिकाः
भर्जिते स्फटिकाटङ्के तरसमं पञ्चकोलरुम् ॥ १५८ ॥
धीजपूराऽम्बुना कृत्या घटीः सेवेत प्रत्यहम् ।
बुसुधार्थी मिताहारैरर्जाणैर्नाऽभिभूयते ॥ १६५९ ॥
रसायनगार, अजीर्ण ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, खासिंदूर, शङ्ख, तीप
और पीली कौड़ी इनकी भस्में, मुनी चिट्कडी और मुद्गमा
ये सब समभाग इनसबकी बराबर पञ्चकोल (पीपल, पिन्नासूल,
बन्ध, चित्रक और सोंठ) लेकर सबका घारीक चूर्णकर परितान्ध-
की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर बिजोरैरसमें १-१ मासेकी
गोलियां बनाकर रखोदे । इनमेंसे १-१ गोली खाकर मिलाहार
रखनेसे बुसुधार्थी अजीर्णमें पीडित नहीं होता ॥ ३७९ ॥

३८० बुसुधुवल्लभोरसः (द्वितीयः)

यद्वा भद्राततेलेन मालितं परियापितम् ।
धीजपूराप्यु गन्धकं लिहात्सोद्रेण भुक्तये ॥ १६६० ॥
रसायनगार, अजीर्ण ।

भाषा—मिश्रण के लेके साथ गन्धका मलाहा विचार

के रसमें बुसाकर रखोदे । इसमेंसे ३-३ मासे मधुकेसाथ
खानेसे अत्यधिकभोजन करनेपरभी अजीर्ण नहीं होता ॥ ३८० ॥

३८१ बुसुधुवल्लभो रसः (तृतीयः)

ईश्वराऽनुग्रहीतश्चेच्छतगन्धेन रक्षितम् ।
स्वर्णसिन्दूरमेवाद्यादजीर्णादिरुक्तापहम् ॥ १६६१ ॥
रसायनगार, अजीर्ण ।

भाषा—ईश्वरानुग्रहसे यदि शतगुणगन्धक जाणकिये हुए
पारेका स्वर्णसिन्दूर बनाकर एक अथवा दो रत्तीकी मात्रामें
खायाजाय तो अजीर्णकी शङ्का नहीं रहती ॥ ३८१ ॥

३८२ बृहत्यादिलोहम्

बृहतीशर्करानागतिलसारसमन्वितम् ।
लोहं कुष्ठं निहन्त्यानु सर्वरोगहरो हि सः ॥ १६६२ ॥
र. र., कुष्ठे ।

भाषा—भट्टकटैया, शहर, नागकेश, साफकियेहुएतिल
ये सब समभाग लेकर सबकी बराबर लोहमस मिलाकर
२-३ पहर पोटकर रखोदे । इसमेंसे ४-४ रत्ती शहदकेसाथ
खानेसे यह बृहती दूरकरता है । और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ
देनेसे समस्त रोगोंको दूरकरता है ॥ ३८२ ॥

३८३ घोलपर्वटी रसः

सूतगन्धकसुकुजजलिकायाः
पर्वटी समयुता समभागम् ।
घोलचूर्णविहितं प्रतिवाप्यं
स्याद्रसोऽयमसृग्गामयहाती ॥ १६६३ ॥
यहयुग्मयुगलं प्रतिदेयं
दाकरामधुयुतः किल दत्तः ।
रक्तपित्तमुद्गजसुतियोनि-
श्यायमानु विनिवारयतीशः ॥ १६६४ ॥

यो. र, रसायनग., र. चं., र. वि., र. सु, र. बो., र., पा नि. र.,
र क स, र. का., र. दी, र. स, र. प्र, यो. त, र. क्षपिने। र. वि.
घोलयद्दरत्तारिः । रत्तामभेनी सिस्त्रोदयेति नाम, द्विती-
यस्थाने वायवीचित्रराज्यान्तरीरिचिरां भावनां प्रदाय घयात्प
पटी कार्येति विज्ञेय । नाम च घोलयद्दरत्त इति, अतिशय-
राऽधिकारे स्थापितम् । र. रा, र. स, र. प्र एष रत्तारिस्स
इति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली-
के मोहकीकण्ठीमें बेरके बीयकों पर गन्धक कजरीके बरा-
बर हीरादिमिष्ठानका पूर्ण डालकर एरजीबदोनेपर गोबररसमें
हुए केलेक पत्तेर डालकर पर्वटी बनाये । स्वाच्छीकृत होवेपर
निहालकर रखोदे । अथवा कजलीकी पर्वटी बनाकर उगड़ी
बराबर हीरादिमिष्ठानका पूर्णनिहालकर रखोदे । इसमेंसे ६ रत्ती-
कीमात्रा घाट और मधुके साथ देनेसे रक्तपित्त मुनी बरा-
गौर, योनिशय इनसबको दूर करकरता है ॥ ३८३ ॥

३८४ बालवद्धरसः (प्रथमः)

गुडूचिकासत्त्वसमं रसेन्द्रं
गन्धं समांशं निखिलेन वर्षरः ।
विमर्दयेच्छाल्मलिकामवाङ्गिः
स्याद्बालवद्धो मधुयुक् त्रिमापः ॥१६६५॥
रक्तार्शसां नाशकृदेषु सूतः
पित्तार्शसां पित्तजविद्रधेश्च ।
रक्तप्रमेहस्य खुडस्य चाऽपि
स्त्रीणां प्रवाहस्य भगन्दरस्य ॥ १६६६ ॥

नि. र., व. र., वृ. यो. त., रसायन सं., र. चं., र. प्र., र., जि.
र. भ., र. कौ., र. ति., र. पा., अर्शोऽधिकारः । र. शुक्रप्रमेहाऽधि-
कारः, रसेश इति नाम ।

टिप्—“गोल वज्ररसेशयो. सुरक्ष्णा सत्त्वाशयो बोलक, दत्त्वा युर्विभाम-
निक दिवसक शेषालामूलद्रव्यैः । शुक्रविद्रव्य पुट ददौन तुषनः शीत समाह्वय-
तप, दद्याद्दशमितप बीजवर्तैः शुक्रप्रमेहे रस ॥” इति शुक्रप्रमेहे रसायनो
पाठोऽस्ति सत्र बोल चतुर्वाशिन निवोऽजितम्, शाकम्बलीस्थाने शेषालामूल
निवोऽजितम् । तुषाग्निना पक्कथ शुक्रोऽस्ति परन्तु थक्करणादोऽयुद्धवी-
सत्त्वयोमेषोभावात्नाम प्रक्रियाऽनुचितैव प्रतिभाति, बीजवर्तैः शुक्रप्रमेहेऽ-
नुगानन्तु समीचीनमेवाऽस्ति, अतन्तथाऽप्यनैवान्तर्भावः वरणीयः ।

भाषा—शिलोयुक्तासत्त्व, शुद्ध पारा और गन्धक समभाग
तथा हीरादम्बन सबके बराबर लेकर पारेगन्धककी नीलनर्प
बज्जलीमें सबको मिलाकर सेंमलकेमुसलेके स्वरस अथवा
छालके काढ़में मर्दनकर ३-३ मासेकी गोलियां बनाकर रस
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे खुनी
और पित्तज बवासीर, पित्तज विद्रधि, रक्तप्रमेह, वातरफ, प्रदर
और भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ बालवद्धरसः (द्वितीयः)

रसमस्य विपं तुल्यं गन्धकं द्विगुणं मतम् ।
बालतालकवाहीककांडीमाक्षिकं निशा ॥ १६६७ ॥
कण्टकारी यवशरारो लाङ्गली जीरसैन्धवम् ।
मधुयुक्तारं सञ्चूर्ण्य सताहं चाऽऽर्द्रकद्रवैः ॥१६६८॥
शुटिकां यदराकारां श्लेष्मकासापनुत्तये ।
मक्षयेद्बालवद्धोऽयं रसः सभासापानुजित् ॥१६६९॥

र. रा., र. सु., र. को., नि. र., व. रा., र. क. ल., र. का.,
वासाऽधिकारः । र. का. वाहीकस्थाने पाटाऽमी दर्यते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धधनाग १-१ भाग, शुद्धगन्धक
२ भाग, हीरा दम्बन, हरितालभस्म, भुनाहीग, नेरुमागी जड़,
सोनामाली, हल्दी, मट्टकट्टया, यवशार, शुद्धकरिहारी, सकेद-
जीरा, रोधानमली, महुरा हीरा देवय १-१ भागलेकर बारीक-
चूनेर पारेगन्धकी नीलनर्पबज्जलीमें मिलाकर ७ रोजनक
अरुछोडे रसमें पोटर के बराबर गोलिये बनाकर रसछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली यषारोगानुगानके साथ देनेसे श्लेष्मरोग,
मांसी, आम, पाणु इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८५ ॥

३८६ बालवद्धरसः (महान्) (तृतीयः)

पारदं गन्धकञ्चैव टड्डुणं चन्द्रकं पृथक् ।
पतानि कर्पमात्राणि द्विभागं धूर्तबीजकम् ॥१६७०॥
त्रिभागा विजया प्रोक्ताऽहिफेनं बुट्टिरिव च ।
वेदभागास्ततो नागवह्नयोश्च रसाह्वयाः ॥ १६७१ ॥
बालस्य मुनिभागाः स्युरेकीकृत्य विमर्दयेत् ।
भावनाश्रितयं दद्यात्कतकम्प्रायवारिणा ॥ १६७२ ॥
गुज्जामां वटिकां कृत्या यद्यीमधुक्जरीकैः ।
दद्यात्सितामधुभ्यां चाऽऽर्द्रे ह्यतिसारके ॥१६७३॥
सोमरोगे क्षये पाण्डौ प्रमेहे भूत्रकृच्छ्रके ।
रक्तमूत्रे मूत्रदाहे मूत्राघाते प्रयोजयेत् ॥
बालवद्ध इति ख्यातो महाप्रवर्षट्टानुगः ॥ १६७४ ॥
रसायन सं., अद्यदरादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और कपूर ये प्रत्येक
१-१ भाग, शुद्धचूर्णके बीज २ भाग, भांग ३ भाग, अर्जीम
और इलायची ४-४ भाग, नाग और वज्रभस्म ६-६ भाग,
हीरादम्बन ७ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धकी
नीलनर्पबज्जलीमें मिलाकर निर्मलीके काढ़की ३ भावनाएं देकर
१-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १ अथवा २
गोली मुलदही और जीरेकेसाथ, अथवा धान और मधुकेसाथ
देनेसे अतिसार, सोमरोग, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, रक्त-
मूत्र, मूत्रदाह, मूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८६ ॥

३८७ बालवद्धरसः (चतुर्थः)

रसेन बालं द्विगुणं दिनैकं
विमर्दयेच्छाल्मलिकारसेन ।
पुटेत्ततो भूधरयन्त्रमद्ये
गुडूचिकाशाल्मलिकोत्पानीरैः ॥१६७५॥
तं भागयित्वाऽथ ददौत यद्द-
चतुष्टयं तद्विगुणं तु यद्द ।
वञ्चूलं च कापमिहानुदद्या-
द्ब्रह्मातकं च त्रिफलातिलैश्च ॥
कापं पिवेद्वा कुटजस्य रात्रौ
शौद्रेण संयोज्य फलनयेण ॥ १६७६ ॥

र. शी., अर्शोऽधिकारः ।

भाषा—हीरादरसनमें दूना शुद्धपारालेकर १ रोज मसतह
छालकेकाढ़में मर्दनकर गोला बनाय सतापानुपुटे कन्दर
मूरयन्त्रने गुन्नुपुट दे । रसाऽशीतक होनेपर मिश्रण
और भेमलके कषायोंमें १-१ रोज भावना देकर टेंडु १॥ मासेकी
गोलियां बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वञ्चूलके कषाय-
केसाथ दे । अथवा भिदोंमें त्रिकया और त्रिनेक कापके
साथ देनेमें सब प्रदाहके बरगार नष्टोते हैं । रात्रिमें बुदेवाही
छालका बारा त्रिकया और मजु मिलाकर केने ॥ ३८७ ॥

३८८ बोलादिवती

बोलं सुगन्धेन समं गुह्वची-
सत्त्वेन तुल्यं त्रिकलाजलेन ।
विमर्दयेच्छालमलिकारसेन
दिनत्रयं चाऽथ निषेवयेत् ॥
गद्याण्युग्मं मधुना तु मासं
पित्ताद्भवाऽर्शांसि लयं प्रयान्ति ॥ १६७७ ॥
र दी , पित्ताऽर्शांसि ।

भाषा—शुद्धगन्धक, हीरादक्खन और गिलोयका सत्त्व
समभाग लेकर त्रिकला और सैमलकी छालके बाइसे ३-३ रोज
मर्दनकर १-१ तोला मधुके साथ १ महीने तक खानेसे पित्तज
बवासीर नष्टहोता है ॥ ३८८ ॥

३८९ ब्रह्मपञ्जर रसः

चतुःपलं शुद्धसूतं पलैकं मृतहाटकम् ।
पलाशकुङ्कुलद्रविस्तसैलैश्च दिनत्रयम् ॥ १६७८ ॥
मर्दयेत्तसखल्वे तु सर्वतुल्यञ्च गन्धकम् ।
शोधितं निक्षिपेत्स्मिन्पूर्वाङ्कैर्मर्दयेद्दिनम् ॥ १६७९ ॥
मापमानां वर्टी खादेद्दत्तरामृत्युजिद्भवेत् ।
जीवेद्ब्रह्मदिनं घोरौ रसोऽयं ब्रह्मपञ्जरः ॥ १६८० ॥
धानरीकाकतुण्डयुग्धबीजचूर्णं समसमम् ।
शालमलितोऽम्बुद्राद्यैर्भाष्येद्विषसत्रयम् ॥ १६८१ ॥
अथैश्च भृङ्गैश्चैर्द्रावैर्भाषितं चूर्णयेत्ततः ।
पुरातनगुडैस्तुल्यं कर्पकमनुमक्षयेत् ॥ १६८२ ॥
र ख , रसायनम् , रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा ४ पल, सुवर्णमसम १ पल लेकर पलाशकी
कलियोंके स्वरस और पलाशबीजोके तैलमे ३-३ दिन
मर्दनकर सुनहरीरंगका शुद्ध गन्धक सबकी बराबर मिलाकर
कमलीकर पूर्वोक्तद्रवियोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासकी
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर केवाच
और काननासिकाके बीज समभाग लेकर सैमलकी छाल और
भाग्येके रसमे ३-३ रोज मर्दनकर सुषाय बारीकरीसकर
इसमेंसे १-१ तोला पुराने गुहके साथ मिलाकर खानेसे एक
वर्षमेंसे बलीपलितसे रहितहोकर वीर्याणुको प्राप्त होताहै ॥ ३८९ ॥

३९० ब्रह्मरन्ध्ररसः

रसाऽन्नगन्धकं तालं दिङ्गुलं मरिचं तथा ।
टङ्गुणं सैन्धवोपेतं सर्वांशममृतं तथा ॥ १६८३ ॥
सर्वपादसमोपेतमहिषीपित्तमर्दितम् ।
ब्रह्मरन्ध्रे प्रयोक्तव्यं सन्यासज्ञानविभ्रमे ॥ १६८४ ॥
सहस्रकलशैः ज्ञानं लेपनं चन्दनादिभिः ।
शुभुद्ररस भोग्यं तर्कभक्त यथेप्सितम् ॥ १६८५ ॥
ध र , र.सु , ज्ञानाऽपिभोर ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और दिङ्गुल, अन्नक-
मसम, मरिच, मुनासुहागा और सैन्धानमक समभाग, शुद्धवल्-
नाग सबकीबराबर लेकर सबसे चतुर्थांश भैसेके पित्तकी भावना
देकर सुषायकर रखछोड़े । इसमेंसे सन्यास और ज्ञानविभ्रम
सन्निपातमें ब्रह्मरन्ध्रमें पाठलगाकर मसले तो इससे सन्निपाती
चेतनामें आजाता है । उससमय एकहजार ठंडे पानीके घड़े तिर-
पर ढाले और चन्दन बगैरहकालेपकरे । ईश, मूग, तक और
भात चयेट खावे ॥ ३९० ॥

३९१ ब्रह्मरसः (प्रथमः)

भागैकं मूर्च्छितं सूतं गन्धावल्गुञ्चित्रकापम् ।
चूर्णन्तु ब्रह्मबीजानां प्रतिद्वादशभागिकम् ॥ १६८६ ॥
भागार्त्विशद्दृश्याऽपि क्षौट्रेण गुटिका कृता ।
अयं ब्रह्मरसा नाम्ना ब्रह्महत्याग्निनाशनः ॥ १६८७ ॥
द्विनिष्कं भक्षणादन्ति प्रसुतिकुष्ठमण्डलम् ।
पातालगाहडीमूलं जलैः पिष्ट्वा पिषेदन्तु ॥ १६८८ ॥
र स , र चि , र म , र.र कौ , रसायनस , र सु , र.च , र
का , यो म , र सि , छुटे ।

भाषा—मूर्च्छितपारा १ भाग, शुद्धगन्धक, बाङ्गची, चित्रक
और पलाशबीज १२-१२ भाग, पुरानागुड ३० भाग लेकर
सबका बारीक चूर्णकर मधुमें ८-८ मासकी गोलिया बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पातालगाहडीकी अड़ १ तला
पानीमें पीसकर इधनेसाथ लेनेसे सुनवहरी और मण्डल इत्यादि
कुष्ठों को यह नष्टकरताहै ॥ ३९१ ॥

३९२ ब्रह्मरसः (द्वितीयः)

स्तगन्धकमाक्षिकलौहं पिष्टं फलप्रयकाथे ।
प्रहरचतुष्कं भूधरगर्भे पाकं विधाय गुडैकम् ॥ १६८९ ॥
सवरानीरः सूतो प्रहास्यो रक्तपित्तादीन् ।
जयति हितौषधयोगैः पथ्याक्षौट्रेण चाऽम्बुपित्तादीन्
र.ल , अम्बुपितादिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोतामाखी और लोहमसम
समभागलेकर सबकी नीलवर्ण कच्चीकर ४ पहर त्रिकलाके
काठेमें घोटकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर सूषयन्त्रमें
एक पुटदेवे । स्वाह्नयोक्तहोनेपर निशालकर रखछोड़े । इसमेंसे
१-१ रती त्रिफलाके काडेकेसाथ अथवा हर् और मधुनेसाथ
अथवा तत्तद्रोगहरानुपाननेसाथ देनेसे यह रक्तपित्त और अम्ब-
पित्त प्रभृतिको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

३९३ ब्रह्मरसः (तृतीयः)

रसं ब्रह्म प्रयश्यामि पारदं गन्धकं समम् ।
किंशुकस्य च बीजानि टङ्गुणञ्च मन शिला ॥ १६९१ ॥
अपामार्गस्य बीजानि केदारजनकस्य च ।
जम्बीरस्य रसे सव्यं दिनानां पञ्च मर्दयेत् ॥ १६९२ ॥

शुष्कं कुर्यात्पुनः सर्वं मर्दयेन्मस्यभेदसा ।
 दिनत्रयं पचेद्देवं कटुत्रयविमिश्रितम् ॥ १६९३ ॥
 भेदसा तिभिजातेन मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।
 आर्द्रकस्य रसैः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥
 श्लेष्मज्वरविनाशः स्यादेकविंशतिघासरैः ॥ १६९४ ॥

सू. प्र., ज्वरे ।

भाषा—शुद्धघारा और गन्धक, पलाशके बीज, शुद्ध शुद्धाग और मैनसिल अपामार्ग और भागेरेके बीज समभागलेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाकर जंभीरीके रसमें ५ दिन मर्दनकर गुलाकर मछलीकी चर्बसि दो ३ रोज मर्दन कर समभाग त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर मछलीकी चर्बसि ३ दिन और अदरखके रससे ५ दिन मर्दनकरके १-१ माशेकी गोल्या बनाकर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसवर्गहके साथ २१ रोजतक देनेमें कफज्वर नष्टहोजाता है ॥ ३९३ ॥

३९४ ब्रह्मराक्षसरसः

षेदकपर्पो रसः प्रोक्तो नयसारस्तु कर्पकः ।
 सूततुल्यं गन्धकं स्यात्तदर्थं तालकं मतम् ॥ १६९५ ॥
 तालतुल्यो यवक्षारो नागः कर्पमितो भवेत् ।
 काकमाच्या रसैर्भावं सप्तवारं प्रयत्नतः ॥ १६९६ ॥
 उन्नतस्य रसेनाऽपि सप्तवारन्तु भाषयेत् ।
 पचेत्तं चालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरावधि ॥ १६९७ ॥
 पुनस्तत्र क्षिपेद्गन्धं षेदकपर्पञ्च भाषयेत् ।
 पूर्वोक्तेस्तु द्रव्यै र्यन्त्रे चालुकाख्ये पचेत्ततः ॥ १६९८ ॥
 अधःस्थो भस्मतामेति ब्रह्मराक्षसपारदः ॥ १६९९ ॥
 नानाऽनुपानमाश्रेण सर्वरोगाभिरुत्तति ।
 मृणैर्कं भुज्यते नित्यं नरैषैतत्समासता ॥ १७०० ॥

२ को, रसायनसं, सर्वरोग ।

टि०—अथरसो रसमिदूरादभिज्ञोऽस्ति तथाऽपि प्रतिग्राहिसंघेण तत्र स्थानाऽऽप्यदनालिनद्वारभ्य कृषरहितसि, मिन्दूरा तथाहीरासि मर्दकं भुज्यते नित्यं नरणेति फलभागे वनिधिरसोऽर्धवादात्प्राप्तनी नोद्वयम् ।

भाषा—शुद्धघारा ४ तोले, नक्सादर १ तो, शुद्धगन्धक ४ तो, शुद्धहिरताल और यवक्षार २-२ तोले, शुद्धनाग १ तोला लेकर शीशानो गलाकर धाराओहे । फिर गन्धकमिलाकर कजलीकर हरितालका वारीकचूर्णमिलाकर ४ पहल मर्दनकरके यवक्षार मिलादे । फिर मशय और धतूरेकेरसे ७-७ भावनाएँ दकर गुलाकर १-७ कफमिठी दीहुई आतशी शीशीमें भरकर गुजगुई रसकर १० पहली भावदे । इसतरह करनेसे जिससमय पारेका उन्नत बनरहोजाय तब सिद्धमसना पाहिये । इसमें प्रायः आतशी शीशीमें तत्रय धारा होजायगा । भागदघाराई कहीं आंच न लगनेसे कसर रहानेसे कुटभना पारेका कप उड़ा हो से १-३ दीघिया और उन्नयेन ।

इसमें यह ध्यान रखना कि कहीं आंच अधिक लगनेसे धारा अधिक उड़जायगा तो शीशीमें नीचे बैठा हुआ केवल क्षार मिलेगा, यह क्षार निकम्माही केवल श्वास कासपर काम करेगा । इसलिये बहुत संभलकर इतनी आंचदेकि गन्धकजलकर सिन्दूर तैयार होजाय । इसमेंसे १-१ रसी उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरताहै । इसके रसानेसे बहुतज्यादा मूल लगने लगेगी । कुडदिनके अन्याससे बलीपल्लितादिकसे निम्बुक होजायगा ॥ ३८५ ॥

३९५ ब्रह्मवटी

शुद्धं सूतं तिधा गन्धं रसतुल्यं विपं क्षियेत् ।
 कृष्णाभ्रताम्रलोहञ्च मर्दयेत्पूपगद्रवैः ॥ १७०१ ॥
 आर्द्रकस्य द्रवैः पश्चात्कमाद्रवैर्दिनं दिनम् ।
 कृष्णजीरकपुनाङ्गमजमोदा जयन्तिका ॥ १७०२ ॥
 यमानी तिलवर्णी च ब्राह्मी धत्तूरभृङ्गिराद् ।
 यथान्यश्चार्द्रकर्णीकौ शिशुहस्तिकशुण्डिके ॥ १७०३ ॥
 श्वेतापराजिता चासा चित्रकश्चेतिकायतः ।
 भाषयेद्द्विदिना कार्या वदरास्थिसमा शुभा ॥ १७०४ ॥
 योग्येयं यामयामान्ते मरिचैरार्द्रकद्रवैः ।
 इयं ब्रह्मवटी नाम सन्निपातकुलान्तिका ॥
 पथ्यं स्थान्मुद्रयूपेण दिवास्वापञ्च चर्जयेत् ॥ १७०५ ॥

२. सु, २. का, २. को., ज्वराऽधिकारे । २. को. प्रभावती वर्तति नाम ।

टि०—अत्र कर्णीकरादेन कर्णिकाराऽपरपथ्यं आरम्भको वहीतव्य । शिरालीकन्दमिति केषाचिद्व्याख्यानन्वमूल्यम् ।

भाषा—शुद्धघारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्ध बधनाग, कृष्णाभ्रक, तागा, लोह इतनीभस्में १-१ भाग लेकर सन्नी नीलवर्णकजली बनाय त्रिकटु, अदरख, कालाजीरा, पतङ्ग, भजमोद, जैत, गुलासानीभजवाइन, हुरहुर, मात्री, धतूरा, भंगरा, भजवाइन, अदरख, अमिलतास, सहजित, हाथीगुण्डी, सपेद कोयल, अहसा और चित्रक इनके यथामन्भव स्वरसे भवती हाथोंसे १-१ रोज भावना देकर बरको गुडकीके बराबर गोल्या बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और अदरखके रसके साथ १-१ पहलवादे देनेसे यह तमामरिचार्थोंको नष्ट करतीहै । मृणैक युक्तकेसाथ चावल पथ्यमें देवे । दिनेमें सोना वर्जितहै ॥ ३९५ ॥

३९६ ब्रह्माण्डगुटिका

नागचक्षीदलद्रवैः सप्ताहं शुद्धपाच्यम् ।
 मर्दयेत्तप्तखल्वे तु क्षालयेत्काञ्जिरेस्ततः ॥ १७०६ ॥
 तत्क्षिपेद्विपकन्दस्य गर्भं निष्कचतुष्टयम् ।
 विषेण तन्मुखं यद्वा स्थूलघाराहर्मासजे ॥ १७०७ ॥
 पिण्डगर्भं निरुद्धाय मुखं श्रेण सीधयेत् ।
 सन्ध्याकाले घट्टि दत्त्वा बुध्दं मदिरायुतम् ॥ १७०८ ॥
 ततश्चुल्यां टांहापामं तेजे धत्तूरसम्भय ।
 तं पत्रेद्विजनिपत्रे सुपिण्डं मन्द्यदिना ॥ १७०९ ॥

सन्ध्यामारभ्य यत्नेन यावत्सूर्योदयं तथा ।
 दृष्टाञ्जागरणं कुर्यादन्धया तत्र सिद्धयति ॥१७१०॥
 प्रातरुदृत्य गुटिकां क्षीरभाण्डे यितिःक्षिपेत् ।
 तत्क्षीरं शुष्यति क्षिप्रमेतत्प्रत्ययमनुत्तमम् ॥ १७११ ॥
 दृष्ट्वा तां धारयेद्वक्त्रे वीर्यंस्तम्भकरां रती ।
 क्षीरं पीत्वा रमेद्रामाः कामाकुलकलान्विताः ॥१७१२॥
 मुखाद्दस्तं यदा प्राप्ता तदा वीर्यं पतत्यल्पम् ।
 ब्रह्माण्डगुटिका नाम शोषयन्ती महोदधिम् ॥१७१३॥
 र ख , र (मा) र सु , र , र मं , र , र , वृ यो त , र सि ,
 टो , यो म , र क ल (ना) वीर्यंस्तम्भने । र म , वृ यो त , र .
 वा एव वीर्योधिनीति नाम ।

टि०—भाषित्वन्वृत्तैनीयरसावतारे “ विषजयस्थितशोभनपारतो वनवराहस्या परिरेष्ठित । वनकवीरजतैलविपाचितो व्रजति यामयुगेन सुषुद्धताम् ॥ एव सुषुद्धा गुटिका मुखानुधेता यदा स्वानुपुरात्रमोक्षेत् । वीर्यं निरुन्ध्यात्पुत्रोत्पन्नं दत्तं स मुञ्जीतमनोदुःखा ॥ ” इत्यकारक स्वतन्त्रतया पाठ प्रचलित, परन्तु स न रसान्तर, इति वृषीभिः विभावनीयम् । वृष्योपगतद्रव्या द्वितीयस्थाने “ रत्नं कनकौत्सेन साद्वैद्याणकवचम् । दिनानि सप्त सम्भवं विषमर्थो समाक्षिपेत् ॥ इमं तलत्र निक्षिप्य तनुञ्ज राधयेद्रिपात् । मत्तमि श्रुंतिवाग्भिश्च वेष्टयित्वा विशोषयेत् ॥ माह्विषे मासपिण्डे तु रथुले क्षिप्याञ्च सीवेदेत् । मासस्य षोडशीं कृत्वा दृढ वनेषु वेष्टयेत् ॥ तत्क्षणे वेष्टयेत्सप्तसूत्राक्षरैर्मन्त्रकैः । गोमयेन च सल्लिप्य गोलं तदुज्जयेद्रिपकम् ॥ हस्तयन्मिती गौं गोरुक्त्वा लिप्यत्पूरित । तन्मन्त्रे निक्षिपेत्तोल दग्धा शीतं समुद्धरेत् ॥ तस्या गुटिकां प्राह्या निष्कनैतुकराधिनी । सा मुने येन निक्षिप्ता रमेत्सेत्स हनाशक्तम् ॥ यावत्सा गुटिका वक्त्रे तावत्र द्रवते चर ॥ ” अथ प्राची वीर्योधिनीनाम्ना निहिताऽऽरित, अत्राऽपि विषयन्ते निधानं तस्माननेव केवलमभिधाने विधेय । हस्तप्रयमितगौमी पारदं स्वात्सवि नवेति सूत्रा स्नेहः । तद्वेष्टया सपत्नैरुपरिपात्रो विभावार्हं प्रतीयतेऽतः स्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावं वरणीय । गतपाकत्वा कृत्वा परीक्षणाय । अस्तिस्वाधितैवाऽनिलगुणीवाऽऽरित सा केनाऽपि प्रकारेण कर्तुमीक्ष्णाऽऽरित इत्यत्र नास्ति केपाञ्चिदपि विवादः ।

भाषा—४ मांशे शुद्धपारोको पके पानके रससे ७ दिनतक तप्तखल्वमें मर्दनकर काशीसे धोकर साफकरले फिर बछनागके गोलेकन्दमें रखकर उसीकी चकतीसे बन्दका गुह बन्दकर जगली सुअरवी मासवेशीमें रखकर बोरसे सीदे । फिर सन्ध्या कालके अचूटे सुहृत्तमें कुकटुट और मद्यकी रसराजको थलि देकर लोहेको कड़ाहीमें मासवेशीको रखकर धूरेका तैल ८० तोले डालकर मन्दासिसे सन्ध्यासमयसे आरम्भकर सूर्योदयतक पकावे । इसमें जागरण हठसे करना चाहिये । अगर निद्रा आ जायगी तो यह सिद्धि नहीं होगी । प्रातः स्वाहाशतौल होनेपर उसगोलीको निकालकर गोदुग्धके घड़ेमें डाले, डालतेही दूध सूखजायतो समझना कि यह सिद्ध होगई । इस गोलीको मुहमें रख दूध पीकर बहुतसी खियोंके साथ प्रसन्न करनेपरमी मुहमेंसे दसे हाथमें न लेले तबतक वीर्यं स्थलित नहीं होता है ॥१७१६॥

३९७ ब्रह्मास्त्ररसः (प्रथम.)

ब्रह्मास्त्रमथयश्यामि सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
 स्तम्भेभ्यः प्रिगन्धश्च तत्समं गरलं त्वधे ॥ १७१४ ॥

त्रिभिः समं यिषं योज्य मरिचं सर्वतुल्यकम् ।
 यटाहकेकिमहिपपित्तैः सप्त विभावितम् ॥ १७१५ ॥
 लाङ्गल्या देवदाल्या च ज्वालामुख्याद्रुकद्वयैः ।
 पकर्विशतिधा भाव्यं प्रत्येकं घर्मशोपितम् ॥ १७१६ ॥
 द्विगुञ्जामात्रनस्येन मृतमुत्थापयेद्भुयम् ।
 दध्यन्नं ससितं पथ्यमुपचाराश्च शीतलाः ॥ १७१७ ॥
 सर्वोदरगदप्रोऽयमसाध्यमपि साधयेत् ।
 अस्थिशूलानि सर्वाणि नाशाययेव सर्वथा ॥१७१८॥
 वृ यो त , रसायनसं , चि क्र , र का , र म मा , यो त ,
 ज्वराऽधिकारे ।

टि०—अत्र विगन्धश्चनेन गन्धवमहदादभ्यत्रयसमूहोऽभिप्रेतः स च गन्धकरहिताल्मन शिलात्मको भवितुमर्हति, तद्वृत्ताना तु क्लिपेत् एकान्तिर्गन्ध कृताऽऽस्ति अथस्त्रिभि ममगिति न विरुद्धयेत् । चिचिस्तात्र मकलयस्त्रीकारेण तु त्रिनिरितिह्नाक्लित्वसङ्ख्याविशिष्टो गन्ध इति मत्वा भीरीरत्र शुद्धमिह निगम मित्यप्रति । रसकामेनी तु निगन्धानीति पाठ विधाय शङ्का निरायीति शातव्यम् ।

भाषा—पारदभस्म, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल १-१ तोले सर्पविष ४ तोले, शुद्ध बछनाग ८ तोले, मरिच १६ तोले लेकर सबका घारीक चूर्णकर २-३ पहर सूखा मर्दनकर सुअर मोर और भैसाके पित्तोंकी ७-७ भावनाए देकर सुखाले फिर करिहारी, बन्दाल, हुलहुर और अदखके रसोंकी २१-२१ भावनाएँ देकर सुआकर रसछोड़े । प्रत्येक भावना सुखासुलाकर देनी चाहिये । इसमेंसे २ रती नस्य देनेसे श्लेष्मावस्थाभी सन्निपाती होशमें आजायगा । भूतलगनेपर शकर, दही, मात देना और शीतोपचार करना । इससे समस्त उदररोग और सब प्रकारके शूल नष्ट होते हैं ॥ ३९७ ॥

३९८ ब्रह्मास्त्ररसः (द्वितीयः)

द्वितुल्यञ्च त्रिपापाणं गन्धकञ्च शिला विषम् ।
 नेपालं वरदं चाऽन्नं सिन्धव मरिचं चिडम् ॥१७१९॥
 त्रिशार टङ्गुण हिङ्गु सर्वतुल्यन्तु पारदम् ।
 ज्योतिष्पत्यास्तु तैलेन मद्ययेद्दिनपञ्चकम् ॥ १७२० ॥
 दोलायन्त्रे दिनं परुत्वा ततः खल्वे विमर्दयेत् ।
 मयूरमहिषीमस्त्रयवाराहच्छामपन्नगाः ॥ १७२१ ॥
 शशका जन्तुकाः श्वान एषां पित्तैस्तु भावयेत् ।
 गुञ्जामानं क्षुरैर्मित्वा ब्रह्महारे विनिक्षिपेत् ॥१७२२॥
 नश्यन्ति तत्क्षणेनैव सन्निपाताः सुदासणाः ।
 सूक्तापस्मूर्तिर्विकृता धार्थिर्यश्वासफासकाः ।
 ब्रह्मास्त्रोऽयं रसः ख्यातः सन्निपातकुलान्तकः १७२३
 व रा , र क यो सन्निगतः ।

टि०—भाषातः पाशुपताऽऽरेपि यत्समानता प्रतीयते परन्तु इत्थं प्रमाणयोर्भावनयाश्च महदन्तरालास्तन्मन्त्रं यथाऽप्य पाठोऽस्ति । अत्र पाशुपदीका वचनासुक्ष्मप्रभृतयो विद्वान्नेन द्राष्टा भवता नरसा राऽऽप्य व्रतितव्यम् । चूत्त्रिश्च गन्धपापाण कान्तस्य च सुल विधे । एवंकमेव वर्वात् लोडचूर्णन्य जाते । रसांगे ९ प ० । रति ॥

भाषा—शुद्ध तृतीया, दाने फिरङ्ग, स्याह—सफेद और पीला सोमल, गन्धक, मैगसिल, बछनाग, जमालगोटा, रिंग-रिफ, अन्नकमस, सेंधानमक, मरिच, यथासम्भव धातुवादोफ विड अथवा नवसादर, तीनोंक्षार (सजी, अपामार्ग और यव-क्षार), मुनासुहागां और हींग समभाग, इनसबकी बराबर शुद्ध-पारा लेकर सबकी नीलवर्णकञ्जली बनाय मालकांगनीके तैलसे ५ रोज मर्दनकर दोलायन्त्रमें एकरोज इसी तैलमें स्वेदनकर मोर, भैंसा, मछली, सूअर, बकरा, सांप, खरगोश, गीदड़ और कुत्तेके पिसोंकी १-१ भावना देकर रखोड़े । इसमेंसे १ रत्ती लेकर ब्रह्मरन्ध्रमें पाहलमाकर मसलनेसे दाहणसन्धिपात, सूकता, अपस्मार, हिचकी, बधिरता, श्वास, कास देसब नष्ट होते हैं ॥ ३९८ ॥

३९९ ब्रह्माक्षरसः (मृत्युञ्जयः) ३

सूतं गन्धं शिला तालं वत्सनाभेन संयुतम् ।
गिरिकर्णोज्ज्वैश्च कटुत्रयसमन्वितम् ॥ १७२४ ॥
पतत्सर्वं समं कृत्या कङ्कु गीतैलमर्दितम् ।
नष्टपिष्टीकृतं पश्चात्क्षिपेद्भ्रव्यकरण्डके ॥ १७२५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव दद्यान्मापार्धमात्रकम् ।
सन्धिपातो महाघोरस्तत्क्षणदेव नश्यति ॥ १७२६ ॥
अर्द्धैरक्तिकमात्रन्तु नस्य देयं ध्रुताऽऽधि ।
ध्रुनञ्च घमनञ्च यदि योज्या रसोत्तमः ॥ १७२७ ॥
ततो न ज्ञायते मृत्युर्न स्याच्चेतो यमान्यम् ।
भिषजा तद्दिनं द्याज्यं भैषज्यं नैव दापयेत् ॥ १७२८ ॥
र. क. यो., र. प. सन्धिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मैगसिल, हरिताल और वज्र-नाग, कोयलके बीज और त्रिफल समभागलेखर पारे बगैरहकी नीलवर्णकञ्जलीकर बछनाग बगैरहके बारीकचूर्णमें मिलाकर २-३ पहर घृणा पोष्टकर मालकांगनीके तैलसे ४ पहर मर्दनकर काचकी शीशीमें रखोड़े । इसमेंसे आपेमापे मायोकी खुराक अदरपके रसकेसाथ देनेसे महाघोर सन्धिपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमेंसे आधारलीका नश्यदेना । अगर एकवारके देनेसे छींक न आवे तो दूसरीवारदेना । इसके देनेसे छींक और वमन होजायतो दूसरीवार मात्रादेना, बहुरोगी बचेगा । यदि दोनों न होंतो उसमें यत्न नहीं करना वह उसीदिन मरजायगा । इसलिये-लोमोंके दुग्ध करनेपरमी उसरोज दूसरी मात्रा न देनी ३९९

४०० ब्रह्माक्षरसः (चतुर्थः)

कृष्णचित्रकमूलञ्च कृष्णामलकमेव च ।
कृष्णनिर्गुण्डिकामूलं कृष्णञ्च तुलसीवल्गुम् ॥ २७२९ ॥
पतत्सर्वं समं कृत्या पट्टपूतं विषाय च ।
रुग्णवर्णं सूतभस्म लोहपद्माऽहिभस्म च ॥ १७३० ॥
चतुर्भस्म सममृत्या तदर्द्धं कृष्णपरदम् ।
उदकेकांशं गन्धकञ्च तालकञ्च मनःशिला ॥ १७३१ ॥

नेपालं त्रिफला च्योपं रामठं माक्षिकं तथा ।
एतत्सर्वं समं पूर्वं पट्टपूतंविधाय च ॥ १७३२ ॥
तत्सर्वं निक्षिपेत्खल्वे कृष्णोन्मत्तरसेन च ।
भृङ्गनिम्बार्द्रकरैर्जम्बीरस्वरसेन च ॥ १७३३ ॥
मर्दयेद्दशवारंश्च सम्प्यगज्जनतुल्यकम् ।
मरीचधोजमात्रेण वटकाय कारयेद्भिषक् ॥ १७३४ ॥
पवमुष्णाम्बुना युक्तं नासायाञ्च प्रयोजयेत् ।
नागवल्क्यमृतेन्द्राणीरसैर् युक्तं प्रयोजयेत् ॥ १७३५ ॥
अर्धमण्डलमात्रेण वातजालं विनाशयेत् ।
सप्तवारं त्रिवारं वा वातानेताम्विनाशयेत् ॥ १७३६ ॥
हरीतक्याऽप्य गोमूत्रैर् मधुना भृङ्गजाम्बसा ।
ईदृग्विधानुपानैश्च कुष्ठानाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १७३७ ॥
सर्वं कुष्ठा विलीयन्ते श्वेतकुष्ठं विशेषतः ।
पम्मासं सेवयेदित्यं कुष्ठवर्जं वपु भवेत् ॥ १७३८ ॥
पुनष्पन्माससेवायां रक्तवर्णं भवेद्बपुः ।
त्रिमासं सेवयेत्पश्चात्कृष्णं भवति तल्पुः ॥ १७३९ ॥
देहसिद्धिं भवेत्तस्य जीवेदाचन्द्रतारकम् ।
अनुपानविशेषेण ज्वरादीन्नाशयेद्भुवम् ॥ १७४० ॥
र. क. यो., र. कौ. (शा) कुष्ठे ।

भाषा—कालेचित्रककी जड़, पुराने आंवले, काले संगालू की जड़, कालीतुलसीकीजड़ सब १-१ तोला लेकर बारीक चूर्णकर पारेकी कालीमस, लोह, बज्र, नाग इनकीमसमें १-१ तोला, काळपारा २ तोले, शुद्धगन्धक, हरिताल, मैगसिल, जमालगोटा, त्रिफला, त्रिफट्ट, मुनीहोंग, सोनामाखी, ये प्रत्येक १-१ तोला लेकर सबको इकट्ठे मिलाय कालाधतूर, मंगण नीम, अदरक, जंभीरी इन प्रत्येकके रसोंसे १०-१० बार मर्दनकर कञ्जलसदा होनेपर मरिच प्रमाण गोलियों बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथ देवे और पके-पान, गिलोय, महर इनके रसोंमें मिलाकर नस्य देवे । सात-दिनके प्रयोगसे यह समस्तनासविकारोंको दूरकरताहै । हँ, गोमूत्र, मधु तथा मंगरा इनमेंसे किसीएकके साथ ७ बार अथवा ३ बार देनेसे सम्पूर्णकुष्ठोंकी दूररताहै विशेषकर श्वेत-कुष्ठमें लाभदायकहै । छ महीनेनक सेवनकरनेसे शरीर कुष्ठ-रहितहोजाताहै उसकेबाद छ महीनेतक सेवन करनेसे रक्तवर्ण होजाताहै । एकवर्षके सेवनके बाद ३ महीने सेवनकरनेसे शरीर काला होजाताहै और देहसिद्धिसे प्राप्तहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ ४०० ॥

४०१ ब्राह्मीवटी

रग्ज्जातीकलदेवपुष्पमरिचाऽयोभस्मजातीच्छदाः,
विम्बाऽऽकलकृष्णान्यकेसरिकृष्णाक्षियाऽऽजमोदायचाः
कुष्ठं तुम्बुकमूमिनिम्बदरदाऽयुर्गंध गन्धाऽम्बदं,
मुक्तार्पदाऽऽरुग्णजीरककृष्णामूलं विडङ्गानिच ॥ १७४१ ॥
मागिष्यं शततुप्पिका मलयजं चन्द्रोदयः पौरुकरं,
कस्तूरी शतमूलिनी सुणमणि मालं त्रिपृष्टिमम् ।

दीप्यं यावनदेशजं यशभकं निष्कैरुमेपां पृथक्,
ब्राह्मयाश्चाऽर्द्धपलं सुवर्णमसितचक्रिकञ्च तन्मदयेत् ॥

ब्राह्मयद्भिर्मधुना विधाय चषटीः
सम्यक् त्रिगुञ्जाभिताः,
श्यासाऽपस्मृत्तिसन्निपातक
सनोन्मादापतन्त्राऽपहाः ।
बुद्धिभ्रंशघनुःसमीरणगदौ
यक्षमाणमुग्रं बल-
क्षीणत्वं ग्रहणीं हरन्त्यथ गदा-
न्योग्यानुपानैर्लघु ॥ १७४३ ॥

नू. क. अपस्मारार्दौ ।

भाषा—तत्र, जायफल, लौंग, मरिच, छेदभस्म, जाविनी, सोंड, अकलकरा, धनिया, गजपीपल, चिदकमूल, अजमोद, बच, मोठीडुठ, मुन्डुल, चिरायता, शुद्धशिंगरिफ, अगर, अस-गन्ध, अम्बर, मोती, नीलकण्ठीवसलोचन, श्याहजीरा, पिपला-मूल, विडङ्ग, माणिक्यभस्म, सोंफ, सपेदचन्दन, चन्द्रोदय, पोद्दकमूल, कस्तूरी, शतावर, कहरवा, नीलमकीभस्म, सपेद निसोत, मूंगेकीभस्म, अजवाइन देशी, खुरासानी अजवाइन, संगेयशक्कीभस्म ४-४ माशे, ब्राह्मी २ तोले, सुवर्णभस्म ४ माशे लेकर ब्राह्मीके रसकी एकभाबना देकर सुखाकर मधुसे ३-३ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखलोङ्गे । इन्मेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे श्वास, अपस्मार, सन्निपात, खाती, उन्माद, अपतन्त्रक (हिस्टीरिया), बुद्धिभ्रंश, धनुर्वात और समस्तवायुरोग, उपवेग यक्ष्मा, बलक्षीणता, ग्रहणी, इनसबको नष्टकरती है ॥ ४०१ ॥

४०२ ब्राह्मरसायनम्

पञ्चानां पञ्चमूलानां भागान्दशपलान्मिताम् ।
हरीतकीसहस्रञ्च त्रिगुणामलकं नवम् ॥ १७४४ ॥
विदारिगन्धां वृहतीं पृथिपर्णीं निदिग्धिकां ।
विद्याद्विदारिगन्धार्थं श्वदंप्रापञ्चमं गणम् ॥ १७४५ ॥
विल्याऽग्निमन्थदयोनाकं कादमर्यमथ पाटलीम् ।
पुनर्नवाशूर्पण्यौ बलामैण्डमेव च ॥ १७४६ ॥
जीयकपंभकौ मेदां जीवन्तीं सशतावरीम् ।
शरेक्षुदर्भकाशानां शालीनां मूलमेव च ॥ १७४७ ॥
इत्येव पञ्चमूलानां पञ्चानामुपकृतपयेत् ।
भागान्ययोक्तान्स्त्वर्षं साध्यं दशगुणेऽभसि १७४८
दशमागावशेषन्तु पूतं तद्वाहयेद्रसम् ।
हरीतकीञ्च ताः सर्वाः सर्वाण्यामलकानि च ॥ १७४९ ॥
तानि सर्वाण्यनस्थीनि फलान्यापोथ्य कूचनैः ।
धित्थीय तस्मिन् निर्युद्धे चूर्णानीमानि शपयेत् १७५०
मण्डूकपर्ण्यैः पिप्पल्याः शङ्खगुण्ठ्याः द्वयस्य च ।
मुस्तानां सविडङ्गानां चदनाऽगुरुणोस्तथा ॥ १७५१ ॥
मधुकस्य हरिद्राया वचायाः कनकस्य च ।
भागांश्चतुष्पलान् कृत्वा सूक्ष्मैलायास्त्वचस्तथा १७५२

सितोपलासहस्रञ्च चूर्णितं तुलयाऽधिकम् ।
तैलस्य द्वाद्यादकं तत्र दद्यात्प्रीणि च सर्पिणः ॥ १७५३ ॥
साध्यमौदुम्बरे पाने तत्सर्वं मृदुनाऽग्निना ।
घ्रात्वा लेह्यमदग्धञ्च शीतं शौद्रिण संयुजेत् ॥ १७५४ ॥
क्षौद्रप्रमाणं स्नेहार्द्धं तत्सर्वं घृतभाजने ।
तिष्ठेत्सम्मूर्च्छितं तस्य माथां काले प्रयोजयेत् १७५५
यानोपरुन्ध्यादाहारमेवं मात्रां जरां प्रति ।
पष्टिकः पयसा चाऽत्र जीर्णं भोजनमिष्यते ॥ १७५६ ॥
वैखानसा वालखिल्यास्तथा चान्ये तपोधनाः ।
रसायनमिदं प्राप्य बभूवुरभिताऽऽयुषः ॥ १७५७ ॥
मुस्तया जीर्णं वपुश्चाऽऽयमवापुस्तरणं वयः ।
वीततन्त्रान्मलमश्यासा निरातङ्गाः समाहिताः ॥ १७५८ ॥
मेधास्मृतिवलोपेताश्चिररात्रं तपोधनाः ।
ब्राह्मं तपो ब्रह्मचर्यं चेद्ब्रह्मात्यन्तनिष्ठया ॥ १७५९ ॥
रसायनमिदं ब्राह्मयामायुष्कामः प्रयोजयेत् ।
दीर्घमायुर्वयश्चाऽऽयं कामांश्चेष्टान् समन्वते ॥ १७६० ॥
च स, रसायने ।

भाषा—शालपर्णी, वनभाटा, प्रथिपर्णी, भटकट्टैया, गोखरु यह विदारिगन्धादि १ पञ्चमूल है । विल्व, अरणी, सोना-पाटा, गभारी, पाटला, यह विल्यादि पञ्चमूल २ है । पुन-र्नवा, सुदुर्पर्णी, मापपर्णी, बला, एण्ड यह पुनर्नवादि ३ पञ्चमूल है । जीवक, ऋषभक, मेवा, जीवन्ती (अर्क्युणी), शतावरी यह जीवकादि ४ पञ्चमूल है । नरकट, ईश, डाम, कास, धान यह शारादि ५ पञ्चमूल है । इन प्रत्येक पञ्चमूलके १० पल लेकर जवडुकर दशगुना पानी डालकर मिठीके पात्रमें हाथ करें और उसमें एकहजार नग हों, तीनहजार नग आवले डालदे । जब हों और आवले पकजावे तब इनको अलग निकाले और मसलकर कपड़ेमें छानले । दशमभागवशिष्ट हाथको छानकर कड़ाहीके आकारके बनाए हुए गीले मूलके पात्रमें डाले । पात्रपर ६-७ कपडमिठी लमादे अथवा २-३ अड्डल कीचड़ लमाकर चढावे और उसीमें हों तथा आवलोंके कटके डालकर मिलादे । फिर ब्राह्मी, पीपल, शङ्खपर्णी, नागरमोथा, मोथा, विडङ्ग, सपेदचन्दन, अगर, मुल्लुठी, हल्दी, बच, सुवर्णभस्म और छोटी इलायचीके छिलके ४-४ पल, शकर १००० पल, लेकर बारीक पीसकर उसीमें डालदे । इसवेवादे तिलका तैल ८ सेर, घी १२ सेर डालकर बहुत मन्द आंचसे पकावे । परन्तु यह ध्यान रखने कि अबलेह जल न जाय, मूलरवेही कड़छेदे चलाता रहे । जब अबलेहकी गोली बंधने लगे तब उताकर रखले । एवदम ठंडा होनेपर १० सेर मधु मिलाकर पीके बर्तनमें रखकर १५-२० दिनवादे इतनीमात्राले जोकि अन्तेके समयमें बाया न पहुँचावे । दवाके अञ्जीतरह पचनानेपर साठो चावल दूधकेसाथ खावे । इसके सेवनसे वैला नच, बालखिल्य प्रशुति ऋषिलोग नवीन शरीरको प्राप्त होकर तन्द्रा, क्रम, श्वास वगैरह समस्त रोगोंसे निर्युक्त हुए और मेवा,

स्मृति, बलसे युक्त होकर मन्त्रचर्मसे रहकर ऋषय तपकिया । यह ऋषयसामान्य सेवन करता हुआ मनुष्यभी दीर्घायु, उत्तम धारी और इष्टमनोरथको प्राप्तकरता है ॥ ४०२ ॥

४०३ भक्तभस्मवटी

चूर्णीकृतं पञ्चपलं तुपाऽम्ले
द्विभक्तं शिवायुग्मिपतिन्दुवीजम् ।
हिह्वु किमिच्छन् त्रिपटु त्रिदीप्यं
पलं पृथक् श्रूपणगन्धयुक्तम् ॥ १७६१ ॥

चूर्णीकृतं निम्बुरसेन भाव्यं
कोलास्थिमाना घटिका विधेया ।
संसेविता हन्ति नृणामजीर्णं
हृद्रोगमुल्लं क्षतजोत्यगुलमम् ॥ १७६२ ॥
प्लीहाऽग्निमान्यार्तिमथाऽऽमवातं
शूलातिसारं प्रहणीकमञ्जु ।
जलोदरार्शःकिमिजंश्च रोगा-
ह्नन्याद्बह्वन्धातरुफोद्भवांश्च ॥ १७६३ ॥
र मु अनीणांऽधिकारे ।

टि०—अस्य योग्यं मूत्रमग्निमा वयस्मिन् तद्विषयस्य जन्म-
व्यापारस्यस्यचयाऽप्य पाठं गुणं स्वादिति शुद्धया स्वतन्त्रपथे बद्ध-
पलत्तु वरमासात्तर निष्कारय त्रिपटुनि दत्तमि तेन तन्मघोऽप्य
स्वतन्त्र इव प्रतियाति, पलत्वस्य बीज स पृथ योग । पारदनिष्कामनेन
तन्मघोऽग्निदीनवर्षकारोति शुभीभि विषमवनीयम् । मूत्रयोगदस्य
प्रमाणे च वैविध्य मन्त्रनिमि भेद दर्शयितुमेवाऽऽमामि स्वतन्त्रतया
पठो गृहीत ।

भाषा—पाच ५ पल कुचिला और हरेको तुपाऽम्लम् ४ पहर
स्वेदितकर छोलाकाले और भीतरका अङ्गुरमी निकालदे । उची-
तरह हरेक बीजको निकालदे और दोनोंकी चटनीसी बना
कर मुनाहीग, दिग्ग, सेपा, सबल साभरनमक, तीनों अजवाइन
(देसी, गुताखानी और खारजवाइन), सोड, मिचे, पीपल और
शुद्धानपक १-१ पल लेकर एकत्र बारीक चूर्णकर पागेन्पकको
नीलवर्णकबर्षीमे मिलाकर १-२ पहर एक मदनकर नीपूके
रगमे १ दिन पोटकर बेरकी शुद्धीके पसार गोठिये बनाकर
रसाङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली रज्ज्वल प्रकृतिकेसाथ लेनेमे
अजीर्ण, हृद्रोग, गुल्म, रक्षगुल्म, ग्रीह अग्निमान्य, आमवाल,
दुल, अतिसार, प्रदर, जलोदर, रसाधार, किमिरोग और
कफसात्ररोग इनसबको यह दूरकरता है ॥ ४०३ ॥

४०४ भक्तविपाकरटी

माशिकं रमगन्धौ च हरितालं मनःशिला ।
गगनं कान्तलौहञ्च यथायोग्यं समाहरेत् ॥ १७६४ ॥
त्रिपटुन्ती यादियादं चित्रकञ्च महौषधम् ।
पिप्पली मरिचं पथ्या यमानी र्प्याजोरकम् ॥ १७६५ ॥
रामदं कटुना पाठा सैन्धव साऽजमोदकम् ।
जातीकल यथसातं समभागं पिचूषयेत् ॥ १७६६ ॥

माद्रुकस्य रसेनैव निगुणह्याः द्यरसेन तु ।
स्योर्वर्तरसेनैव ज्योतिष्मत्या रसेन च ॥ १७६७ ॥
आतपे भावयेद्देह्यः खल्वपात्रे च निर्मले ।
पेषयित्वा घटीं कुर्याद्बुद्धाफलसमप्रभाम् ॥
भक्षयेच्छाणमानेन लवङ्गस्य च योगतः ॥ १७६८ ॥
र र., र चं, र.मु, रसं, अजीर्णं ।

टि०—रसत्वाके रसायनाधिकारे पाठ । र मु, मुचोत्तरया
वतीति नाम ।

भाषा—शुद्ध सोनाभासी, पाटा, गन्धक, हरिताल और
मैनसिल, अन्नक और कान्तलोहमन्त्र सब समभाग, निसोत,
दन्तोमूल, नागसोया, चित्रकमूल, मोठ, पीपल, मरिच, हरे,
अजवाइन, स्यादहीग, मुनाहीग, कुटनी, पाठा, सेधानमक,
अजमोद, जायफल, यवशार, सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर
पारे गन्धककी नीलवर्णकबर्षीमे मिलाकर १-२ पहर सूखीपोट-
कर अदरक, निगुण्डी, हुरहुर, माट्टागनी इनप्रत्येकके यथा-
सम्भव रसस्य अथवा काषीसे १-१ भावना देकर १-१ रसीकी
गोलिया बनाकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली ४ मासे
लौकिकचूर्णकेसाथ खानेसे अग्नि एकदमप्रदीप्त होजाता है
अजीर्णनी शक्ती नहीं रहती ॥ ४०४ ॥

४०५ भक्तोत्तरचूर्णम् ।

अन्नकं गन्धकञ्चैव पिप्पली लवणानि च ।
त्रिशारं त्रिकला चैव हरितालं मनःशिला ॥ १७६९ ॥
पारदञ्चाऽजमोदा च यमानी शतपुष्पिका ।
जोरकं हिह्वु मेथी च चित्रकं चविका यथा ॥ १७७० ॥
दन्ती शैलेयकं मुस्ता त्रिवृता मृतलोहकम् ।
अञ्जनं निम्बवीजानि पटोलं शुद्धदारकम् ॥ १७७१ ॥
सर्षाणि चाऽश्ममात्राणि शृङ्गणचूर्णानि कारयेत् ।
शतं फनकवीजानि शोषितानि प्रयोजयेत् ॥ १७७२ ॥
सर्वमेकीकृतं युक्तया यथाशक्त्या प्रदापयेत् ।
एतदग्निपिचूषकचर्ममृषिभिः परिकीर्तितम् ॥ १७७३ ॥
श्लोपदान्यन्प्रयुद्धिञ्च घातयुद्धिञ्च दारणाम् ।
अदचिञ्चाऽऽमवातञ्च शूल घातसमुद्भयम् ॥ १७७४ ॥
शुटमञ्जैयोदरव्याधोन्नादायन्यानु तक्षणात् ।
भक्तोत्तरमिदं चूर्णमभिधम्यां निर्मितं पुरा ॥ १७७५ ॥
वे क, ने र, अन्नाऽऽदृष्टपिचारे ।

भाषा—अन्नकमन्त्र, शुद्धगन्धक, पीपल, पांचनेमक,
तीनोपार, त्रिपला, हरिताल और मैनसिलकी मन्त्र, शुद्धपाटा,
अजमोद, अजवाइन, मोठ जीरा, मुनाहीग, मेथी, चित्रकमूल,
कन्ध, वग दन्तोमूल, छोला, मोषा, किण्वल, लोहमन्त्र,
गरेद गुल्मा, नीमकेबीजकी गिरी, फनक, दिग्ग देण
१-१ गोली और शुद्ध चूर्णके बीज १०० भा लेकर बारीक
चूर्णकर पागेन्पककी नीलवर्णकबर्षीमे मिलाकर १-२ पहर
पोटकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली दसिन्दुरनकेसाथ

देनेसे मन्दाग्नि, श्मीपद, अन्त्ररुद्धि, भयङ्करवातरुद्धि, अरुचि, आमवात, वातज्वल, गुल्म, उदररोग इनसबको यह नष्ट करताहै ॥ ४०५ ॥

४०६ भगन्दरहरोरसः (व्याधिहरणं)

सूतस्य द्विगुणं गन्धं तथैव रसचन्द्रकम् ।
प्रसारिण्या रसेः पश्चान्मर्दयेद्दिनसप्तकम् ॥ १७७६ ॥
घर्षं विप्रोप्य तत्सर्वं काचकृष्णं विनिक्षिपेत् ।
सुद्रयित्वा मुखं तस्यास्ताश्च भूमौ निधापयेत् ॥ १७७७ ॥
ऊर्ध्वाऽधश्च मलं द्रवा घोटकस्य विचक्षणः ।
त्रिमासाऽन्ते समुद्धृत्य खादेद्ब्रह्माचतुष्टयम् ॥
भगन्दरं निहन्त्येव साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ १७७८ ॥
वै द, र, प्र, भगन्दरे ।

दि०—नि र, वै क, र, च, व रा, वै रि, एषुप्रमेपुपदशाऽधिकार व्याधिहरणान्ना एक पाठो निहितारुति स च बहुलाजोऽनेनना न केवल पाक विधि स तथा—“द्विगुणोत्थ रस भाग दिभाग रसचन्द्रकम् । रसतुल्य बलिं दद्यात्तुल्यमलेषु कञ्जरीम् ॥ पत्रगुला पुटे रुद्ध दक्षिणे चन्द्रागणम् । दिनेकान्तरमादिमं खादशीलं समुद्र रत्न ॥ पूर्येद्भुविप्रादीन्व्यापारान् प्रयोन्वेद । गुञ्जाचतुष्टयं खादन्नागण हीद्वैद्युतम् ॥ पश्वोऽपि लभत पुस्तक बाजीकरणमुत्तमम् । अपुत्र पुत्र मामेति जीवेच्च शरदां शतम् ॥ वरीपलितद्वेषुलवातरुष्म निवर्हणम् । अथ व्याधिहर यत् पूज्यपादेन निर्मित ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और रखपूर २-२ भागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर प्रसारिणीके रससे ७ दिनतक मर्दनकर धूपमें सुपाकर आतशीशीशीमें भरके मुँहन्द्वारदे और कनरबत्तार खोदेहुए गरुमें घोड़ेकी ताजीखोदमें दबावे । तीन महीनेके बाद निफालकर दसमेंसे ४-४ रसी उचितावृत्तानके साथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य भगन्दर नष्टहोताहै ॥ ४०६ ॥

४०७ भगन्दरारी रसः

सूतं गन्धं मृतं तापत्रमन्नकं द्रवं समम् ।
मरिचं द्विगुणं द्रवा मर्दयेच्चिक्राऽभ्युना ॥ १७७९ ॥
त्रिदिनं भावयित्वाऽथ भक्षयेद्रक्तिकाद्वयम् ।
भगन्दरं पञ्चविधं जयेच्छ्रीशाम्भुशासनात् ॥ १७८० ॥
र म, मा., र का भगन्दरं ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताप, अन्नकमस्य शुद्धसि गरिक समभाग और सपसे दूनी मरिच लेकर बारीक चूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर १-२ पहर शुद्धमर्दनकर चिक्रकमूलक कायसे ३ रोज मर्दनकर २-२ रसीकी गोलिया बनाकर रखाओहै । इनमेंसे १-१ गोली महामभिजादिक्रम प्रगतिके साथ देनेसे यह भगन्दरको जल्दी नष्टकरताहै ॥ ४०७ ॥

४०८ भगन्दरोपदंशारीरसः

रससारककास्तीसतुयपीटङ्गणं विपम् ।
विपयेद्भुमस्यन्त्रे धेदयामान्निमपयत् ॥ १७८१ ॥
लघुपिहितं दद्याद्ब्रह्मयुष्ममित रसम् ।
भगन्दरोपदंशानां नाशकं धेष्टमौषधम् ॥ १७८२ ॥
र, का, उष्मे ।

भाषा—शुद्धपारा, शोरा, कर्सीस, पिटकड़ी, मुद्गाणा और बलनाग सब समभागलेकर कञ्जलीकर डमरुयन्त्रमें ४ पहरकी लूहेपर अग्निदे । स्वाशशीतलहोनेपर निफालकर रखाओहै । इतमेंसे २-२ रसी लघुके कर्कमें कबलितर निगलवादे और नमकरहित भोजन देवे तो भगन्दर तथा उपदंश नष्टहोवे ॥ ४०८ ॥

४०९ भङ्गादिगुटिका

भङ्गाऽष्टपलिका प्राह्या तथा ज्योतिष्मती मता ।
द्वादशप्रमिता प्राह्या पारसीकयवानिका ॥ १७८३ ॥
नवटङ्कमितो प्राह्यो ह्यजमोदरुत्थया मतः ।
टङ्काऽष्टदशकस्तद्वर्जितं धूर्तवीजकम् ॥ १७८४ ॥
टङ्कपट्टमिता प्राह्या जातिपत्री तथैव च ।
नवटङ्कमितं प्रोक्तं फलं जात्याश्च तत्समम् ॥ १७८५ ॥
अहिफनं तथैव स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णितम् ।
शुद्धश्च द्विगुणस्तस्मात्समभ्रमाऽर्द्धकर्मम् ॥ १७८६ ॥
लेह्यत्साधयेत्तपु कृतं चूर्णं विनिक्षिपेत् ।
गुटीं निष्कमितां दद्यात्पिपेद्युष्महर्निशम् ॥ १७८७ ॥
पण्डः पीरुपमासाद्य मोदेन रमते स्त्रियम् ।
दुर्बलोऽपि बलं प्राप्य हठेन रमते स्त्रियम् ॥ १७८८ ॥
परुवारं रतिसहश्चतुवारं स्त्रियं भजेत् ।
हस्तकर्मकृतं दोषं नाशमायाति निश्चितम् ॥
नष्टरीर्यविवृद्धिः स्याद्बहुहण्यंमपद्यते ॥ १७८९ ॥

र. कु नाजीकरणे ।

भाषा—माग और मालकागनी ८-८ पत्र, सुरातानी अजवाइन (जोरि कालेरकीगहो) १२ पत्र, अजमोद ९ टङ्क, मुनेहुए धतूरेके बीज १८ टङ्क, जावित्री ६ टङ्क, जायफल, और शुद्ध अफीम ९-९ टङ्क लेकर बारीक चूर्णकर अफीमकेसाय घोड़ाघोड़ा मिलाकर घोटदे जियमेंकि अफीम ठीक तौरपर मिलजाय । फिर इनचूर्णमें दूने उरानेगुर्की २॥ तारकी चायनी बनाकर धीरेधीरे सब दवाइयां मिलाकर पारसीभन्म आधाकर मिलावे और ४-४ मासकी गोलियां बनाकर रखाओहै । इनमेंसे १-१ गोली दुर्बलसाय देकर केवल दुर्बली बीनेसे पण्डत्व, दीर्घत्व, हस्ताक्षरदोष, नष्टरीर्यत्व इनगको दूरकरके हृष्ट बनातीहै और आयुको बढ़ातीहै ॥ ४०९ ॥

४१० भङ्गातकपाकः (प्रथम)

मह्यतान् परिप्लव घृन्तरहितान् प्रह्योम्मितान्मसि,
प्रस्थं विंशतिमानके हुतमुजि धातान् पयस्यादके ।
कल्परीमाद्यमुपागतं च बुडये घातं पुन भोजितान्,
रत्वे सूर्यमत्या विमर्दिततनूत् एत्या भिषग् दाययेत्
यज्ञं पारद्भूतिकां कनकजां कर्पादंमानं पूषकं,
त्यक्शरीरं मद्यपन्तिकां मणिशिलां कर्ममाणाः शिपेत्
रत्नयोतिलवङ्केशारमितित्वग्जातिपत्रं पूषकं,
कर्पादंमिनं सुचन्दनपत्रं कर्पादंकरुटिकां ॥ १७९१ ॥

पलां चकलपत्रविभ्रमगधाः शृङ्गां शिवायुग्मकम्,
धार्त्रां जीर्युगोपकुञ्चिमरिचं धान्यं तिलान् कार्षिकान्
प्रस्ये फेनविवाजिते मधुमवे सग्मिधय सर्वं सुधीः,
सौवर्णेऽप्यथ राजते मणिभवे मातेंऽपि वा स्थापयेत्
कर्पाऽर्द्धं विनियुज्य प्रातरस्माद्युक्ताऽनुपानि क्षणात्,
वाताऽस्त्रं गलिताऽस्थिपादकरजं त्वग्दाहपिडकाचितं
पामस्तोऽविचर्चिकाः किटिभक्तं कण्डूप्रतापाऽन्वितम्,
शुकतुंभुटिवातरोगनिवहं हन्त्यशिशुर्धादिजान् ॥७२३
३ क. इडाऽधिकारे ।

भाषा—अन्तरहित ताजे और मोटे एकप्रस्य भिलावोंको
२० प्रस्य पानीमें डालकर मन्द आचमे पकावे । चतुर्थ्या
रहनेपर भिलावोंको निकालकर पानीको फेंकदे । फिर १
आडक गोमुत्रमें डालकर पकावे । चतुर्थ्या दूध यानी रहनेपर
भिलावोंको निकालकर दूधको फेंकदे फिर पावभर गोमुत्रमें दूध
मन्द आचमेभूने । अच्छीतरह सिकजानेपर उतारकर ठाहोनेपर
मक्खनके सदृश बारीक पंसे फिर बह, पारा, सुवर्ण इनकी-
भस्मे आधाआधाकर्प, तन, वंमलोचन, मेंहरीके फूल, २१ बार
गोमुत्रमें बुझाईहुई मैनासिल येसब १-१ कर्प, खनजोत, लौंग,
केसर, सोंफ, कसमीतन, जाबिनी, येसब २-२ कर्प, सपेद-
चन्दनकाचूर्ण १ पल, अच्छीकस्तूरी आधाकर्प, इलायची, भोजपत्र,
तमालपत्र, सोंठ, पीपल, काकडासोंगी, मेंटासोंगी, दोनोंहैं
आबल, स्याह-सफेदनीर, मगरैल, मरिच, धनिया और तिल
१-१ कर्प इनसबको इकडे मिलावे और गरमकर पननिकालेहुए
१ प्रस्य ठंडेमुमें मिलाकर सुतर्ण, चादी, मणि अथवा
मिठीकेवर्तनेमें रखडोहे । इसके ७ दिन धान्यकीराशिमें
रखकर निकाले फिर ७ दिनबाद आधा २ तोला ततद्रोग
हरानुपानकेसाथ प्रात कालमें देनेमें वातरक, गलितुत्र जिसमेंकि
हड्डी, पैर नख गलेने लगेहों दाह और पिडकाओंसयुक्तहों । पामा,
स्फोट, विचर्चिका, किटिभ, कण्डू, प्रचण्डदाहयुक्त कुट्ट,
शुक और शत्रुदोष, भयकर वातरोग, आल और मस्तकत्रेण,
आस, कास, इनसबको यह नष्टकरताहें ॥ ४१० ॥

४११ भद्रातकपाकः (द्वितीयः)

भद्रातकानां द्वौ प्रस्यो द्रोणे दुग्धे विपाचयेत् ।
द्विप्रस्यञ्च घृत दद्यात्प्रस्यं शुद्धाञ्च शर्कराम् ॥१७९४॥
त्रिफलां त्रिपलां मुस्तां मज्जिां धान्यजीरके ।
चातुर्जातिकां विषयीपत्रककेसरान् ॥ १७९५ ॥
लवङ्गजातीकङ्कोलं विदारीकन्दमुपपलम् ।
वंशज लोहताम्रे च कर्पूरं खदिरसमम् ॥ १७९६ ॥
प्रस्यार्द्धं निक्षिपेच्चूर्णं भक्षयेत्कर्पमात्रकम् ।
रकपित्तञ्च कुण्डञ्च दद्रुपामाविचर्चिकाः ॥ १७९७ ॥
चक्रितं वातरकञ्च प्रबलतृणशोणितम् ।
अङ्गसुरणाधिप्यं दीधित्यञ्च कुलीङ्गवम् ॥
घातव्याधिमशेषञ्च पिचकान्ति परित्यजत् ॥१७९८ ॥

पा व ,

भाषा—दोसेर टोपीनिकाले हुए भिलावोंके डूकड़ेकर १९
सेर गायेके दूधमें पकावे । माघा होनेपर भिलावोंको निकाल
कर फेंकदे और मावेमें धी २ सेर, शकर १ सेर डालकर इतना
पकावे कि मात्र का पानी जलगाय और दाइर गलकर मावे
के साथ एक जीव होजाय । फिर नीचे उतारकर त्रिफला ३
पल, नागरमोथा, मजीठ, धनिया, दोनोंजीर, चातुर्जात (तन,
पत्रन, इलायची और नागकेसर,) हाऊंर, मुलहड़ी, पत्रन,
केसर, लौंग, जायफल, शीतलचीनी, विदारीकन्द, कमलठा,
वंसलोचन, लोह और ताम्रमन्म, शुद्धकपूर और खैरघार येसब
डेढ १॥ कर्प, लेजर बारीक चूर्णकर पाकमें मिलाकर धीके वर्तनेमें
रखडोहे । ६-७ दिनेबाद इसमेंसे १-१ तोला खानेसे
रखपित्त, कुट्ट, दद्रु, पामा, विचर्चिका, चकते, पीव और लोह
निकलता हुआ वातरक, अङ्गोका पङ्कना, बधिरता, कुलर-
म्परागण शिथिलता और तमाम वातव्याधि नष्टोतेहें । पित्त
कारक पदार्थोंकात्याग करे ॥ ४१२ ॥

४१२ भद्रातकरसायनम् (प्रथमम्)

मह्लातकी शतपला तदर्द्धं विलम्बमूलकम् ।
कादमरी कण्टकारी च व्याघ्री तुण्डा च पाटला १७९
गोधुमरुद्वयनिर्गुण्डयौ शतमूली सुगन्धकः ।
मरीचानि यवासाश्व पटोली रेणुकण्टकौ ॥ १८०० ॥
पुनर्नवा वंशमूल शरपुडो त्रिवृद्धला ।
वज्रवह्नी यष्टिमधु लामञ्जो शिष्टिकुण्डलम् ॥१८०१ ॥
चित्रमूलं हस्तिकर्णौ घनमूलमयीश्वरी ।
मूर्वा च पद्मकन्दश्च हार्द्रकं निम्बमूलकम् ॥१८०२ ॥
चतुर्विंशच्च मूलानि विलम्बमूलार्द्धकं क्षिपेत् ।
अष्टद्रोणजले पाच्यमष्टभागाऽवशेषितम् ॥१८०३ ॥
आदाय स्वरसांश्चाऽस्मिन् भृङ्गी मत्स्याशिका तथा
हंसशर्करा कारकमावो तुलसी मणिकारिका ॥१८०४ ॥
यतेषां स्वरसञ्चैव प्रस्यं प्रस्यं विनिक्षिपेत् ।
त्रिकटु त्रिफला चय्यं राक्षा भाङ्गी मधुसुहो ॥१८०५ ॥
अन्यिकञ्च विडङ्गानि कणामूलञ्च रेणुकम् ।
जीरद्वयञ्च कुण्डञ्च धान्यकं कटुतोहिणी ॥ १८०६ ॥
लाक्षा च रजनी मांसी मुस्ता श्रीगन्धचौरकम् ।
हयगन्धिमरालञ्च शिलाजतु शिलाफलम् ॥१८०७ ॥
जातीफलञ्च तल्पत्र बुद्धमं नागकेसरम् ।
द्राक्षोशीरञ्च खर्जूरमुदीचयं रोचनं तथा ॥१८०८ ॥
गन्धकं बृहदारक्ष लोहभस्म च वङ्गकम् ।
अन्नकं नागमस्माऽथ श्रीगन्धवंशरोचनाः ॥१८०९ ॥
जटाभांसी गजकणा धाराही च शतावरी ।
तालीसपत्रं तनकोलं मिसी धान्यं लवङ्गकम् ॥१८१० ॥
कृष्णाऽगुरु तुगाक्षोरी मुसली तगरं तथा ।
पतानि समभागानि प्रत्येकं पलमानकम् ॥१८११ ॥
नरिकेलजलञ्चैव नारिकेलफलन्तथा ।
आर्द्रकस्याऽपि स्वरसः स्तुग्न्धवीरसौ तथा ॥१८१२ ॥

गोक्षीरं प्रस्थमादाय गोघृतं प्रस्थमात्रकम् ।
पुराणं तालजगुडं मधुप्रस्थद्वयं क्षिपेत् ॥ १८१३ ॥
धन्वन्तरि पूजयित्वा कर्ममात्रं तु सेवयेत् ।
हन्यथादश कुष्ठानि शुद्धमश्लनिवारणम् ॥ १८१४ ॥
सर्ववातमपस्मारमुदरं श्वासरोगकम् ।
मूत्राघातं मूत्ररुच्छ्रं वातारोगं हरेत्तथा ॥ १८१५ ॥
रक्तमेहं तन्तुमेहं व्रणञ्च मधुमेहकम् ।
हस्तिमेहं सुरामेहं पुराणज्वरनाशकम् ॥ १८१६ ॥
अशीतिं घातजात्रोगान् सर्वशूलं व्यपोहति ।
तुरङ्गजवसंयुक्तो मत्तङ्गबलविक्रमः ॥ १८१७ ॥
गच्छेद्गन्धर्वदण्डोः कन्दर्प इव मूर्तिमान् ।
शतं वाऽपि सहस्रं वा रमयेद्वनिताः पुमान् ॥ १८१८ ॥
सोमरोगं ग्रन्थिवातं शुक्लरोगं विनाशयेत् ।
वीर्यवृद्धिकरं पुंसं चर्मदोषनिवारणम् ॥ १८१९ ॥
सर्वं कुण्डं क्षयं हन्ति सर्वान् मेहान् व्यपोहति ।
महामह्लातको नाम ह्यश्विनोदेवनिर्मितः ॥ १८२० ॥
वै. चि. रसायने ।

भाषा—टोपीनिकालेहुए भिलावे १०० पल, वेलकीजड ५० पल, गंभारी, भटकटैया, वनभाटा, काकनासिका, पाडर, दोनों गोखर, दोनों संभाळू, शतावर, कुकरोंचा, मरिच, जवासा, पारवल, रेणुका (रोण पहाड़ी), मैनफल (मॉडोल गु), पुनर्नवा, वासकी जड, शम्पुङ्ग, निसोत, बला, हडजोड, गुलहडी, बारीक-खस, कटसरैया, महर, चित्रकबीजड, हस्तिरुणपलास, नागर-मोथा, इसरोड, मरोडपली, पत्तकन्द, अदरख, नीमकी जड, इन चोतीस चीजोंकी जड २५-२५ पल लेकर सबका जवउट चूर्ण कर १६ द्रोण पानीमें डवाले । अष्टमागावशेषरहनेपर छानले फिर भंगरा, मछेली, हसरज, मकोय, तुलसी, अरणी, इनप्रत्येकका अन्नस्वरस १-१ सेर, त्रिकडू, त्रिकला, कव्य, रास्ना, भारती, डंजायुहर, गठिवन, विडङ्ग, पिपलामूल, रेणुका (रोण पहाड़ी), दोनोंजीरे, कुट, धनिया, कुटकी, पीपलकीलास, हल्दी, रोहण, नागमोथा, विरोजा, खरजवादन बसगन्ध, हसरज, शिलाजीत, हजरतयहूद, जायफल, जाविरी, केसर, नागकेसर, दाक्ष, खव, छुआरे, गुगन्धवाला, गोरौचन, शुद्धान्धक, विपारा, लोह, वज्र, अन्नक, और सीसेकीभस्म, सफेदचन्दन, बंसलोचन, जटामासी, गज-पीपल, बाराहीकन्द, शतावर, तालीसपत्र, शीतलचीनी, सोंफ, धनिया, लौंग, कालाअगर, तीखुर, स्याद्ध सफेद सुसली और तगर १-१ पल, नारियलका जल तथा गिरी, अदरख, डडा यूहर और जमीरीकारस, गावका दूध ये प्रत्येक १-१ सेर गोघृत १ सेर, पुराना ताड़ना गुड और मधु २-२ सेर लेवे । इनमेंसे सुखीदवाओंको अल्पा निकालकर कपडछान चूर्णकरले । फिर पूर्वमें किया हुआ साथ और पीछेके रखल, धी, दूध तथा गुड इनबकी इकट्ठा मिलाकर पकावे । जब कड़ठेमें बल्क लगने लगे उससमय चूर्णको डालकर चलावे । जब गोली बधने

लगे और हाथके न लगे उससमय उतारकर रखले । ठंडाहोनेपर मधु मिलाकर चिकने बर्तनेमें रखजोड़े । ६-७ दिन बीतजानेपर इसमेंसे १-१ तोला उचितापुानकेसाथ सेननरनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, गुग्गु, शूल, समस्त घातव्याधि, मूगी, उदररोग, श्वास, मूत्राघात, मूत्ररुच्छ्र, रक्तमेह, तन्तुमेह, व्रण, मधुमेह, हारिद्रिमेह, सुरामेह, पुरानाज्वर, समस्तशूल, सोमरोग, ग्रन्थि-घात, शुक्ररोग, वीर्यनाश इनतबको दूरकर आदमीको बल, वीर्य, वर्णयुक्त बनाकर बन्दपंसदश बनादेता है ॥ ४१२ ॥

४१३ भङ्गातकरसायनम् (द्वितीयम्)

विडङ्गलोहमह्लातगुण्डोराज्यमधुप्लुताः ।
सेवेत नियतो नित्यं ब्रह्मचारी व्रते स्थितः ॥ १८२१ ॥
रक्ताऽल्पत्वकृता रोगा नाशमायान्ति सत्वरम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तो मासत्रितयसेवनात् ॥ १८२२ ॥
नू. क रसायने ।

भाषा—विडङ्ग, लोहभस्म, शुद्धभिलावे और सोंठ सम-भाग लेकर बारीक चूर्णकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ मासे मधु और धीमें मिलानर प्रात काल सेवन करनेसे पाण्डु, वली-पलित, अशक्ति और तमाम धातुओंके अभावको दूरकर मनु-व्यको दीर्घायु बनाता है । इसका प्रयोग कमसेकम ३ महीनेतक करना चाहिये ॥ ४१३ ॥

४१४ भङ्गातकलोहम्

चित्रकं त्रिकला मुस्तं ग्रन्थिकं चविकाऽमृता ।
हस्तिपिण्डपल्यपामागं दण्डोत्पलकुठेरकाः ॥ १८२३ ॥
पर्यां चतुष्पलान्भागाञ्जलद्रोणे विपाचयेत् ।
भङ्गातकसहस्रे द्वे छिन्त्वा तत्रैव दापयेत् ॥ १८२४ ॥
तेन पादाऽवशेषेण लोहपात्रे पचेद्भिपक्व ।
तुलाईं दोष्णलोहस्य घृतस्य कुडवद्वयम् ॥ १८२५ ॥
द्र्युपणं त्रिकलां वह्निं सैन्धवं विडमौद्भिदम् ।
सौवर्चलं विडङ्गञ्च पलिकांशं प्रकल्पयेत् ॥ १८२६ ॥
कुडवं वृद्धदास्य तालमूल्यास्तथैव च ।
सूरणस्य पलान्यष्टौ चूर्णं कृत्वा विनिक्षिपेत् ॥ १८२७ ॥
सिद्धे शीते प्रदातव्यं मधुनः कुडवद्वयम् ।
प्रातर्भोजनकाले वा ततः खादेद्यथाबलम् ॥ १८२८ ॥
अशोसि ब्रह्मणोदोषं पाण्डुरोगमरोचकम् ।
किमिगुल्माश्रमेहांश्छूलञ्चाणु व्यपोहति ॥ १८२९ ॥
करोति शुक्रोपचयं वलीपलितनाशनम् ।
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं परम् ॥ १८३० ॥

वै मा, र चि, रसायनस, लो. प, र क, रसागर, टो, हा स, थो म, र. का, आर्योरोगे ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिकला, नागमोथा, गठिवन, कव्य, गिलोय, गजपीपल, अपामार्ग, ब्रह्मदण्डी, जगलीतुलसी, इनप्रत्येकके ४ पल लेकर जवउटकर एकद्रोण (१६ सेर) पानीमें लोहेके पात्रमें पकावे और पकावतसमय २००० भिलावे कुटकर डालदे । सतुथोशावशेष रहनेपर छानकर सीठीपेंकदे । फिर

फोलादभस्म ५० पल, धी आघसेर, त्रिकटु, त्रिकला, चित्रक, संधानमक, नवसादर, खरियानमक, संबल, विडङ्ग येसव १-१ पल, विधारा, तालमूली ४-४ पल, सूरण ८ पल इनसवका धारीकचूर्णकर उसीमें डालकर पकावे । तिलहोजानेपर उतारकर एकदम ठंडाहोजेपर आघसेर मधु मिलाकर चिकने बर्तनमें रखावे । ३-४ दिनबाद इसमेंसे ६-६ मासे सुबह अथवा भोजनके समय खानेसे बवासीर, प्रहणी, पाण्डु, अर्घचि, त्रिमि, गुल्म, पथरी, प्रमेह, छूल, बलीपलित, इनसवको नष्टकर आदमीको जवान बनाता है ॥ ४१४ ॥

४१५ भद्रातकाऽमृतम्

भद्रातकचतुष्पट्टिपलं दुग्धञ्च तत्समम् ।
दुग्धाच्चतुर्गुणं वारि पाच्यं दुग्धाऽवशेषितम् ॥१८३१॥
दुग्धतुल्यं घृतं योज्यं घृतपादां सितान् क्षिपेत् ।
मधुघातयौ सितानुलये सितान्दर्द्धमभयारजः ॥१८३२॥
मृतलोहं शुद्ध्याश्च प्रत्येकमभयाऽर्द्धकम् ।
क्षिपेत्स्निग्धघटे सर्वं धान्यराशौ निवेशयेत् ॥१८३३॥
सप्ताहाद्बृद्धं तत्तु खादन्निष्कत्रयं त्रयम् ।
भद्रातकाऽमृतं नाम हन्ति रक्ताशंसां बलम् ॥
क्षारं तीक्ष्णं न भोक्तव्यं तैलान्यद्भक्ष्यं वर्जयेत् ॥१८३४॥
घ. रा. वै. चि., र. को. , अशोधिकारे ।

भाषा—६४ पलदूधमें टोपीउतारकर डूकड़े किये हुए मिलावे ६४ पल डालकर चौगुना पानी मिलाकर पकावे । दुग्धमात्र अवशेष रहनेपर मिलावोको निकालकर घृत ६४ पल और शकर, मधु तथा आवले १६-१६ पल, हरेकचूर्ण ८ पल, लोहभस्म, गिलोयका सत्र ये प्रत्येक ४-४ पल लेकर धारीक चूर्णकर पहिले दूधमें धी डालकर मावा बनाकर सेकले फिर नीचे उतारकर सवचीजें मिलादे । एकदम ठंडाहोजेपर मधुमिलाकर चिकने बर्तनमें बन्दकर अनाजके ढेरमें दबादे । सातदिनबाद निकालकर १-१ तोला रोजाना खानेसे यह खूनीबवासीर के बलको नष्टकरताहै । क्षार और तीक्ष्णपदार्थ न खाय, तैलान्यन्न न करावे ॥ ४१५ ॥

४१६ भस्मामृतरसः (प्रथम)

धान्याऽन्नं सूतकं तुल्यं मर्दयेन्मारकद्रवैः ।
दैनिकं तिलकल्केन पटं लिङ्घ्याऽयं वर्तिकाम् १८३५
कृत्वैव तस्य तैलेन विलिप्य च पुन पुनः ।
प्रज्वाल्य ताम्रघः पात्रे सतैलं पारदं पचेत् ॥१८३६॥
स दिनं भूधरे पत्रयो भस्मीभवति नाऽन्यथा ।
योजितो रसयोगशस्तस्तद्रोगहरो भवेत् ॥ १८३७ ॥
मर्दनं तप्तखल्वेऽस्य विशेषादप्रिकारकः ।
अत्र प्रकरणे घट्टे शुद्धसूतस्य मारिकाः ॥ १८३८ ॥
औषधी याः समस्ता वा व्यस्ताऽव्यस्ता दशोत्तराः ।
योजिता धन्ति द्वेषेति सूतं गन्धं त्रिनाऽपि ताः ॥

मेघनादो वज्रबह्वी देवदाली च चित्रकम् ।
बला शुष्ठी जयन्ती च कर्कोटी तुम्बिका तथा १८४०
कटुतुम्बीकन्दरम्भाकन्दवारणशुण्डिकाः ।
कोपातक्यमृताकन्दं कन्यका चक्रमर्दकम् ॥ १८४१ ॥
सूर्यावर्तः काकमाची गुञ्जानिर्गुण्डिका तथा ।
लाङ्गली सहदेवी च गोक्षुरः काकतुण्डिका ॥१८४२॥
जातीलज्जालुककुकाहंसपाद्मङ्गराजकम् ।
ब्रह्मवीजश्च भूधात्री नागवह्वी वरी तथा ॥ १८४३ ॥
स्तुह्यर्कदुग्धं तुलसी धुस्तूरो गिरिकर्णिका ।
गोपाली पटुरेताभि वज्रमृपागतं पचेत् ॥ १८४४ ॥
प्रायाणश्च तुया दग्धा दग्धा बलमीकमृत्तिका ।
लोहकिट्टञ्च घलाहर्मजाक्षीरेण मर्दयेत् ॥
मुकेशाणसंयुक्ता वज्रमृपा प्रकीर्तिता ॥ १८४५ ॥
र. चि. , रसायने ।

भाषा—धान्यान्नक और शुद्धपारा समभागलेकर मारक-गणको औषधियोंके रस और तिलके कल्के एकदिन मर्दनकर साफकपड़ेपर लेपकरके बत्ती बनाय तिलके तैलमें बारम्बार डुगकर बीचमेंसे चीमटेसे पकड़कर पानमें रखकर आग लगावे, बत्ती जली जायगी और पारेसहित तैल टपकता जायगा । इसपारे सहित तैलने मृपामे बन्दकर एकदिन भूधरयन्त्रमें अग्नि देनेसे भस्महोगी । इसमेंसे १-१ रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेमें यह समस्तरोगोंको दूरकरता है । इसपारेको तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे अग्निवर्षक गुण अधिक होजाताहै । प्रकरणानुरोधसे पारेको मारनेवाली दवाओंका नाम लिखा जाताहै ये गन्धकके बिनाही पारेकीभस्मको करदेतीहै । कांठवालीचौलाई, तिधारी-हड़जोड़, बन्दाल, चित्रक, बला, सोंठ, जैत, खेखसा, कड़वी-तूथी, तूथीचौजड़, केलेकाकन्द, हाथीशुण्डी, कड़वीतोरी, गुड़-चीरन्द, शीकुआर, चक्रवर्ज, हुरहुर, मकोय, गुञ्जा, निर्गुण्डी, करिहारी, सहदेवी, गोखरु, वामनासिका, जाती, लम्बाल, राई, इंसरान, भागरा, डाकैचौज, भूधानी, पान, रातावरी, सेहुण्ड, आक वादू, तुलसी, घूरा, कोयल, गोपालीलता, (गोवाली० म०) और नमक इनमें घोटकर वज्रमृपामें रख पकानेसे पारेकी भस्म होती है । फयर, जलेहुएतुय, जलीहुईविम्बीकी मिठी, लोहकिट्ट सब समभागलेकर आघेपहर बकरीके दूधमें मर्दनकर मनुष्यके पेश और शनको धारीक कतरके उसमिठीमें बूटकूटकर एकजीव करदे । इससे बनाईहुई मृपाको वज्रमृपा कहतेहै ॥ ४१६ ॥

४१७ भस्मामृतरसः (द्वितीयः)

अप्रसूतगवां मूत्रैः पेपयेद्रक्तमूलिकाः ।
तद्भव मर्दयेत्सूतं तुलयगन्धकसंयुक्तम् ॥ १८४६ ॥
तप्तखल्वे चतुर्धाममधिकच्छिन्नं विमर्दयेत् ।
तल्पिणं पाचयेद्यत्रे त्रिसंघटे महापुटे ॥१८४७॥
पर्वं दशपुटैर्धैव मर्धं पाच्यं पुनः पुनः ।
तद्बुद्धय पुन मर्धं वज्रमृपां निरोधयेत् ॥ १८४८ ॥

भूषणरूपे पचेद्यन्त्रे दशधा भस्मतां प्रजेत् ।
 द्रवैः पुन पुनर्मथं सिद्धोऽय भस्मसूतक ॥१८४९॥
 मूलिकामारितः सूतो जारणाक्रमर्वाजितः ।
 न क्रमेदेहलौहेषु रोगहर्ता भवेद्बुधम् ॥ १८५० ॥
 र चि, यो म सर्वरोगे ।

टि०—“गौं बाहे भवेत्तो मथे गौं रज कुण । उरुयन्त्रमिदं मिदं बाहे गौं बृहद्युग्मम्” इति चक्रयन्त्रलक्षणम् । चक्रयन्त्रादन्यत्राऽस्ति किञ्चिदपि निम्बद्वाराख्यत्राम् । योगमहाणवे रससिन्दुरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर खतनोत वगैरह कालमूलिकाए वछुड़ीके मूनमें पीसकर इसद्रवसे ४ पहर निरन्तर मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटेमें बन्दकर चक्रयन्त्रमें महायुग्देवे । स्वात्तसीतल होनेपर निकालकर फिर इसीतरह मर्दनकर आचड़े । इसलइह द्रव्यपुटेके बाद मर्दनकर गोला बनाय सुधरयन्त्रमें १० पुट देगेने भस्म होजाता है । इससे १-१ रती तत्तद्रोगहरानुपानके साथ देनेसे यह तमामरोगोंको दूर करताहै । जारणात्रमिना मूलिकाओंसे माराहुआ पारा देह और लोहमें बेधन नहीं करताहै केवल रोगोंको दूरकरताहै । इस लिये प्रथम धीजादिका जारणकर पारोकी भस्मकरनी अच्छी है ॥

४१८ भस्मेश्वररसः

भस्म पौडशनिष्कं स्यादारण्योपलकोद्भवम् ।
 निष्कत्रयश्च मरिच विपनिष्कश्च चूर्णयेत् ॥१८५१॥
 अयं भस्मेश्वरो नाम ससिपातनिष्कन्वत् ।
 पञ्चगुञ्जामितं खादेदाद्रकस्य रसेन तु ॥ १८५२ ॥

र स, ३ यो त, नि र, भा प्र. र सु, टो र म रर-
 दी, रसायनस, र चि, र क ल र वा यो म, र क यो
 र सि, ससिपाते । यो म आमवाते । रसकामधेनी अरण्यो
 प्लभस्माऽद्रकमरिचं नियोजितम् ।

भाषा—जङ्गलीकण्डोंकी भस्म ४ कर्प, मरिच १२ माशो शुद्धबलनाय ४ माशो लेकर सबका बारीक चूर्णकर २-३ पहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५ रती अदरकके रसकेसाथ देनेसे यह सन्निपातरो नष्टकरताहै ॥ ४१८ ॥

४१९ भागोत्तरचट्टी

रसभागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो भवेत् ।
 त्रिभागा विष्पली पथ्या चतुर्भागी विभीतकः ॥१८५३॥
 पञ्च भागस्तथा वासा पङ्कणा सप्तभागिका ।
 भार्गी सर्वमिदं चूर्णं भाव्य बन्धूलजै द्रवैः ॥१८५३॥
 एकविंशतिवारान्तु मधुना गुटिका कृता ।
 विभीतकप्रमाणेन प्रातरेकान्तु भक्षयेत् ॥
 कास श्वास हरेत्क्षुद्राक्षवायस्तदनु कृष्ण्या ॥१८५५॥
 भै र, र म मा, र को, र क ल, वै चि यो र रसाय
 नत्, र सु, नि र, र का, यो चि, र च, टो, व रा, र र दी

र स, ध र क, र श, र र स, चि क, र स क, यो त, र कौ,
 र, वै मृ, व यो त, वै र, र पा, र मृ, श्वासे कासे च ।

टि०—चि क, र स क, र कौ, र पा, र यो त, वै र, प्लेपु
 प्लेपु तथाच नि र, र का, यो त, र कौ रसायनस, एषु
 प्लेपु द्वितीयस्थाने कासकर्तरीति नाम स्थापितम् । सर्वं समान खदि
 रसारचूर्णमधिक दृश्यते । र सुन्दरे एकस्थाने सप्तोत्तरावर्गीति नाम
 स्थापितम् । व रा विजयपैरव रस इति । र स, ध र क, एषु
 प्लेपु र सु, द्वितीयस्थाने च रसगुटीति नामस्थापितम् । र श श्वास
 कासारीति नाम । र कौ बन्धुलादिवटी । र च, सप्तमस्तवटी
 वैवायुते भार्गीस्थान विषयस्थिा दृश्यते नाम च कासश्वासासीति
 स्थापितम् । रसायतारे भार्गीस्थाने बहिरा नियोज्य भूताहुशेति नाम
 स्थापितम् । र का, र क ल, र र स, नि र, र यो एषु प्लेपु
 भार्गी निष्ठास्य अग्रिरस इति नाम दत्त तेन किमभाषण फल
 प्रकटितमिति न शक्ये पाठाधिक्यञ्च वैपशिरसु न्यस्तमिति स्पष्टमेव
 अतस्तत्प्राप्त्यनाभाववत्येताऽन्तीति सखदयेत्प्रकल्पनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भा, शुद्धगन्धक २ भा, पीपल ३
 भा, हरं ४ भा, बड़ेकेकी छाल ५ भा, अद्रककी जड़की छाल
 अथवा पते ६ भा भार्गी ७ भा, लेकर सबका बारीकचूर्ण
 कर बन्धुलीके छालकेकालसे २१ भावनाए देकर सुलाकर मधुके
 साथ बड़ेकेकी गुटलीके बराबर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इन
 मेंसे १-१ गोली भटभट्टैयाके रस और पीपलके रसके साथ
 देनेसे यह कासश्वासको नष्टकरताहै ॥ ४१९ ॥

४२० भाण्ड्यरसः

रसकपूर्क धृत्या फले इन्तदाऽस्य वै ।
 आरण्योपलसम्भूते निर्धूमेऽङ्गारके पचेत् ॥१८५६॥
 द्रव शुष्क भवेद्यावत्तावत्पाच्य प्रयत्नतः ।
 पच्यमेव प्रकारेण बसुसह्ये फले पचेत् ॥ १८५७ ॥
 गृहीत्या तु ततस्तस्मिन् तुर्यांश दरद क्षिपेत् ।
 खले खलु विमर्शाऽथ काचपात्रे निधापयेत् ॥१८५८॥
 ततो निष्पृफ्लादं च क्षिप्त्या शुङ्गाह्वय बुधः ।
 विधायोष्णा चोपयित्वा पुनर्निष्पृफलनयम् ॥ १८५९ ॥
 चोपयेत्तक्षण तश्च घटिकादंश्च स्वापयेत् ।
 पवं सप्तदिनाभ्यासासुपदशान्निहन्ति ये ॥ १८६० ॥
 वातरक निहन्त्याशु नाम्ना भाण्ड्यरसस्त्ययम् ।
 किञ्चित्सिताविमिश्रश्च पच्य केवलमोदनम् ॥१८६१॥
 र क ल, फिरते ।

भाषा—रसकपूर्ककी बकड़ी बगरकके फलमें रसकर जङ्गली
 कण्डोंकी निधूम आंचमें रखे । द्रवसूजनपर निबालकर दूसरे
 फलमें रखकर रसमुद्राव । इसतरह ८ फलमें पचानेके बाद
 बसुशोश शिगारिक मिलाकर बारीक घोटकर काचकी धीरीमें
 रखे । इसमेंसे २ रती दवा लेकर आपेनीबूके फलमें रखकर
 गरमरकके बुसवादे । फिर तीन नीपुओंको गरमकरके बुसवा
 कर आपीषझी सुलादे । इसतरह ७ दिनतक बरनसे उपदश
 और वातरकको यह नष्टकरताहै । मोड़ी शकर मिलाकर केवल-
 भात खानेको देवे और बुध न खाय ॥ ४२० ॥

४२१ भानुचूडामणिरसः

सुवर्ण रससिन्दूरं प्रवालं वज्रमेव च ।
लोहं तात्रं पत्रजञ्च यमानीं विश्वमेपजम् ॥ १८६२ ॥
सैन्धवं मरिचं कुष्ठं रादिरं रजनीद्वयम् ।
रसाङ्गनं माक्षिकञ्च समभागञ्च कारयेत् ॥ १८६३ ॥
घारिणा घटिका कार्या रक्तिह्वयप्रमाणतः ।
भक्षयेत्प्रातरत्याय सर्वज्वरकुलान्तिकाम् ॥ १८६४ ॥
र. सं., ज्वराधिरारे ।

भाषा—सुवर्णमसम्, रससिन्दूर, प्रवाल, वज्र, लोह और ताम्रमसम्, पत्रज, अजराइन, सोठ, सेंधानमक, मरिच, कुष्ठ, चैर, दोनोहल्दी, रसौत, शुद्धसोनामाखी, सब समभाग लेकर घारिणीचूर्णर जलसे ४ पहर घोटकर २-२ रतीकी गोळियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह समस्त ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ भारतीरसः

घचा पारदगन्धाऽर्धं वत्सनामं समं समम् ।
मुण्डीद्रावे दिनं मर्द्य मूपायां भूधरे पुटे ॥ १८६५ ॥
पाच्यं चटफपित्तैर्न भावितं दिवसद्वयम् ।
अनुपाननिशेपेण देयं गुञ्जाप्रमाणकम् ॥
सर्वज्वराग्निहन्त्येय नाम्नाऽयं भारतीरसः ॥ १८६६ ॥
वै चि, सर्वज्वरे ।

भाषा—घच, शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नकमसम्, शुद्धवहनाग सब समभाग लेकर घारिणीचूर्णर पारोन्धरुकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर गोरखमुण्डीके रससे १ दिन मर्दनकर गोलेको मूपायें बन्दरवे मूवपुटकी आचरे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर चिड़ेके पित्तकी दोदिन तक भावना देकर १-१ रतीकी गोळियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषमें देनेसे सप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ४२२

४२३ भास्कराऽमृताभ्रम्

घासाऽमृताकेशराजपर्पटीनिम्बभृङ्गकम् ।
मुस्त घृशीरघृहतीबलामूलं शतावरी ॥ १८६७ ॥
पपां सत्वे मंलांमुक्तैर्मदितं विमलाऽन्नकम् ।
सहस्रपुटितं तत्र शतावरायं रसं क्षिपेत् ॥ १८६८ ॥
घाहृद्दशक दत्त्वा घटिकां कारयेन्नियक् ।
भास्कराऽमृतनामेदमम्लपित्तं नियच्छति ॥ १८६९ ॥
शालमप्रयश्च शूलं शूलञ्च परिणामजम् ।
छद्दिहृत्तासमरुचिं तृणानां कासञ्च दुर्जयम् ॥ १८७० ॥
हृद्दहं फामलां रक्तपित्तं यदमापमेव च ।
दाहं शोथं घ्नमं तन्द्रां विस्फोटं कुष्ठमेव च ॥
भ्यातं मूर्च्छाञ्च मन्दाग्निं यदृत्तीहोदरं तथा ॥ १८७१ ॥
भै र., अम्लपित्ताऽधिकारे ।

भाषा—भद्र, मिश्री, बालाभंगरा, पित्तारपका, नीमकी-छात्र, घोरदभगर, नागरमोषा, सपेदुननीरा, बनभाटा, बला-

मूल, शतावरी, इनप्रत्येकके शुद्धरससे सहस्रपुटी बनायेहुए अन्नकको मर्दनकर अतीमें शतावरीके रसकी १२ भावनाएं देकर १-१ रतीकी गोळियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, शूल, अन्न-द्रवशूल, परिणामशूल, वमन, मिचली, अर्धचि, तृषा, दुर्जय खासी, हृदयका जकड़ना, कामला, रक्तपित्त, राजयक्ष्म, दाह, शोथ, भ्रम, तन्द्रा, विस्फोट, कुष्ठ, श्वाप, मूर्च्छा, मन्दाग्नि, यक्ष्म, प्लीहा, उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२३ ॥

४२४ भास्करोत्कीर्तिरसः

अलरसयलित्वाप्यं द्रूपणं म्लेच्छगोलं,
मुनिसमहततात्रं सैन्धवेनाऽप्य युक्तम् ।
रसद्वलविपमिधं मर्दयेन्निस्युनीरै-
र्जपति सकलघातं भास्करोत्कीर्तिनामा ॥
व्योपाऽऽर्द्रकैर्गुञ्जमितं प्रयोज्यं
दुर्नामपाण्ड्यामयशूलकुष्ठे ।
अपित्तजे योऽखिलसन्धिपाते
रामाय दत्तः सुखदः शिवेन ॥ १८७३ ॥
र. शि. अवैसि ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, गन्धक, सोनामाखी, सुहागा, सिंगरिफ और मैनसिल सब समभाग लेकर नीचप्रशुतिके रसमें मर्दनकर सबकीबराबरके शुद्धतावेके पत्रपरलेपर सुखाकर शरावसमुद्रमें बन्दर लवणयत्रमें पकावे । स्वाहशीतल होने परनिकालकर पूर्वम् हरिताल प्रशुतिमिलाकर नीच वगैरके रससे घोटकर गोलाबनाय सुखाकर शरावसमुद्रमें बन्दर पूर्व-वत् लवणयत्रमें पकावे । इसप्रकार ७ बार पुटदेकर इससे आधा शुद्धरजनाग मिलाकर नीचकेरससे ८ पहर मर्दनकर १-१ रतीकी गोळियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफळ और अदरकके रसके साथ देनेसे अर्ध, पाण्डु, शूल, कुष्ठ, पित्तदित्त सन्धिपात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२४ ॥

४२५ भास्करोरसः (प्रथमः)

सूतमाक्षिकशिलाऽऽलगन्धकाः
खर्परञ्च हृद्य तुल्यमागिकम् ।
निम्बुनीरपरिमर्दितं दृढं
स्वेदितं लयणमूयकं दिनम् ॥ १८७४ ॥
तुल्यहेमरविसमुद्राघृतं
लेप्य कर्पटमृदा पुटेत्ततः ।
पूर्ववद्भवति यस्मिन्पां हितः
शूलगुल्ममृमिमान्दनादानः ॥ १८७५ ॥
र. शये ।

भाषा—शुद्धपारा, सोनामाखी, मैनसिल, हरिताल, गन्धक और गपरिया सब समभाग लेकर बबली बनाय मीचकेरसमें ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय कानमुष्कमूत्रमें १ दिन स्वेदकर दृढकी बराबर गुर्गांघा घृता मिलाकर गोला बनाय सबकी

बराबर तावेके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर सुखावे । फिर इसे लवण अथवा भस्ममें दबाकर ४ पहली अभिदेकर पनावे । स्वादशतिल होनेपर निकालकर नीबूके रससे मर्दनकर सुजाकर धाराबसम्पुटमें बन्दकर पकावे । ऐसे ७ पुट देनेके बाद निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समयोपिता-मुनकेसाथ देनेसे शूल, शुल्म, कृमि और अग्निमान्द्य वेसव-नष्टोतेहै ॥ ४२५ ॥

४२६ भास्कोरसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं ध्योपं द्वौ क्षारौ लवणानि च ।
टङ्गणञ्चेति तुल्यानि जैपालं सकलैः समम् ॥ १८७६ ॥
भाचना बीजपूरस्य शुष्कं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।
सङ्गाह्य रक्तिकायुग्ममामवातविनाशनम् ॥ १८७७ ॥
गोदुग्धं कैवलं पथ्यं देयमुप्रीपयोऽथवा ।
अन्नञ्च वर्जयेत्तावदामशोकं निवारयेत् ॥ १८७८ ॥
चि. र., आमवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिकटु, सजी, जवाखार, पाचोनमक, मुनासुहागा सब समभाग, शुद्ध जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर विजोरके रसकी एकभावना देकर मूत्रनेपर चूर्णबनाकर अथवा २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ देनेसे आमवात नष्टोतेहै । पथ्यमें गाय अथवा ऊंटीका दूध देवे । जबतक सूजन न उतरजाय तबतक अन्न न देवे ॥ ४२६ ॥

४२७ भास्कोरसः (तृतीयः)

तालं ताप्यं गन्धकं सूतकञ्च शैलाहं वै रोचरेचरसमं हि ।
चूर्णं कृत्वा चाऽऽटरूपेण मर्द्य साद्र्णेणैः सौरसेयै रसेश्चा
मर्दितं हितदनु ताप्रनिमित्ते धारयेच्च सकलं हि सम्पुटे ।
मृत्कन्या च परिपेष्य सम्पुटं पाचयेच्च सततं वृदाऽग्निना
यामयुग्ममितमेच मात्रया यन्त्रके दिक्षुःशतलं स्ययम्
जायतेऽतिच्छिरोमहरसो पूर्वमद्भयति भास्कोरदयः
चित्रकार्दकमेन योजितो राजयश्मकफवातनाशनः ॥
र. प्र. सु. र. दी. राजयश्मनि ।

भाषा—शुद्धरिताल, सोनामामी गन्धक, पारा, मैतसिल, कर्षीर सब समभागलेकर सबकी कजली बनाय अदुषा, अदरर और तुलसी इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोला बनाय तावेके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमें बन्दकर २ पहली कड़ी आचरे । स्वाद-शीतलोनेपर तापगम्पुटमेंसे निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १ अथवा २ रत्ती चित्रक और अदररके रससे देनेसे राजयश्म, रुक और वायुदो यह नष्टरजोड़े ॥ ४२७ ॥

४२८ भास्कोरसः (चतुर्थः)

विषं मूतं फलं गन्धं च्यूर्णं टङ्गुजीरकम् ।
एकैकं द्विगुणं लौहं शहस्रत्रयराटकम् ॥ १८८२ ॥

सर्वतुल्यं लवङ्गञ्च जम्बीरैर्भाचयेद्विपक्व ।
सप्तसाखरपर्यन्तं ततः स्याद्भास्कोरो रसः ॥ १८८३ ॥
गुग्गुद्वायप्रमाणेन वर्दीं कुर्याद्विचक्षणः ।
ताम्बूलीदलयोगेन वर्दीं सञ्चर्य भक्षयेत् ॥ १८८४ ॥
शूलरोगेषु सर्वेषु विस्व्यामग्निमान्द्यके ।
सद्यो वह्निकरो ह्येव तन्त्रनायेन भापितः ॥ १८८५ ॥
भै. र., र सु, अग्निमान्द्याधिरो ।

भाषा—शुद्धवचनाग, पारा, त्रिफला, शुद्धगन्धक, त्रिकटु, मुनासुहागा, जीरा येप्रत्येक १ भाग, लोह, शह, अन्नक और कौडीभस्म २-२ भाग लेकर सबकी बराबर लौह मिलाकर जम्बीरीके रसकी ७ दिनतक भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खानेसे समस्तशूल, दैजा, अग्निमान्द्य इनसबको यह नष्टरताहै ॥ ४२८ ॥

४२९ भीमपराक्रमोरसः

तुल्याभ्यां रसगन्धाभ्यां कृत्वा कज्जलिकां त्र्यहम् ।
द्रावयित्वाऽऽपसे पात्रे मृदुना बदराऽग्निना ॥ १८८६ ॥
निरुध्यमष्टमांशेन सीसभस्मं विनिक्षिपेत् ।
समिग्ध्य कदलीपत्रे निक्षिप्य तदनन्तरम् ॥ १८८७ ॥
आकृष्य परिपेष्याऽथ सीसभस्मप्रमाणतः ।
कान्ताऽन्नसत्त्वयोर्भस्मं राजावर्तकभस्मं च ॥ १८८८ ॥
परिसिद्धं सगोमूत्रं शिलाधान्तं निधाय च ।
एतदे निक्षिप्य तत्सर्वं यत्नेन परिमर्दयेत् ॥ १८८९ ॥
तुल्यगुग्गाऽङ्गुलीबीजचूर्णकृत्कोट्यवारिणा ।
कतकाऽङ्गिकपायेण निम्बपत्ररसेन च ॥ १८९० ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिप्या लोहस्य माजने ।
त्रिफलानां कपायेण सप्तधा परिभाषयेत् ॥ १८९१ ॥
अङ्गुलीबीजवर्चुरन्यासां भृष्टचूर्णितौ ।
समौ रससमौ कृत्वा रसेन सह मर्दयेत् ॥ १८९२ ॥
इति सिद्धरसः सोऽयं भवेद्भीमपराक्रमः ।
नामतः सर्वमेहघ्नां हृष्टप्रत्ययकारकः ॥ १८९३ ॥
वह्नद्रयमितो प्राहो जलेः पर्युषितः सह ।
पथ्यं मेहोचिन्तं देयं यज्यं सर्वं विवर्जयेत् ॥ १८९४ ॥
र र. स. र. सु. र. को., र. र. को., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध पाप और गन्धककी ३ रोजतक पोटर कजलीकर बेरके कोयलेंपर लोहेकी कडोमें फिफ्फार रुक लीसे अष्टमांश निरुध्य सीमेतीभस्म डालकर तापे गोबररसग-हुए केलेके पत्तार डालकर दूसरेपनेसे एक गोबरसे दबावे । स्वादशीतलोनेपर कान्तलोह, अन्नमसक, लात्ररदं, गोमूत्रमें शुद्धकिया हुआ मैतसिल ये प्रत्येक नागभयकी बराबर डालकर शुद्ध गंधेदुग्धा और अङ्गुलीबीजकोट्यवारिणापे १-४ पर मर्दनकर निम्नीकी जडकाकाश, नीमकेपत्तों धा-रय इनप्रत्येककी १-१ भावना देकर सुखाकर लोहेक कडोमें

डालकर त्रिफलाके काढ़िकी ७ भावनाएं दे । अट्टोलेकेबीज, बबूलका गोंद, दोनोंको भूतकर पूर्वरेसकी बराबर डालकर मर्दनकर मिलाकर रखछोड़े । इममेंसे ६-६ रती छेपानीकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेहोंको यह नष्टकरताहै । प्रमेहोके पथ्य देना और तद्विषका निषेध करना ॥ ४२९ ॥

४३० भीममण्डूरम्

यवक्षारः कणा शुण्ठी कोलं ग्रन्थिकचित्रकौ ।
प्रत्येकं पलमादाय प्रस्थं लोहस्य किट्टतः ॥ १८९५ ॥
शनिः पचेद्यःपात्रे यावद्द्विप्रलेपनम् ।
दत्त्वाऽष्टगुणगोमूत्रं किट्टाच्छुद्धाद्विचक्षणः ॥ १८९६ ॥
ततोऽश्वमात्रान्धकान्योजयेत्सत्ररात्रतः ।
आदिमध्याऽयसानेषु भोजनस्योचितस्य वै ॥ १८९७ ॥
स भीमवटको ह्येष परिणामरुगतकः ।
रससंप्रियुषपयोमांसैरश्वत्थरो निवारयति ॥
अध्रविघर्तनमन्ते गुल्मं प्लीहाऽग्निसादांश्च ॥ १८९८ ॥
नि. र., वृ. यो. त., यो. र., र. का., च. द., टो., रससागर., ५ मा., र., यो. म., ग. नि., परिणामशूलाधिकारे । कुत्रचित् चित्रकस्याऽभावो दृश्यते ।

टि०—कोलादिमण्डूर, चविकादिमण्डूर, भीममण्डूरप्रैति त्रयो मण्डूरवत्या सन्ति, तेषु सर्वेषामि एकनातीयानि द्रव्याणि सन्ति । केवलमण्डूरप्रमाणे विनोषोऽग्नि स यथा कौलादिके मण्डूरस्येतरद्रव्यसमताऽग्नि । चविकादिमण्डूरैश्चपलानि मण्डूरस्य निश्चितानि तत्र क्षारशब्देन यवक्षारमात्रस्य ग्रहणं नियेत चेद् द्रव्याणां पत्र पत्रानि भवन्ति, क्षारशब्देन साधारणतया क्षारत्रयं गृह्येत् तर्हि द्रव्येभ्य मण्डूरस्यैकं पलमधिकं भवतीति, भीममण्डूरं च प्रस्थमात्रं मण्डूरस्य नियोजितं तत्रैव द्रव्येभ्यो द्विगुणमित् सात्रमासित्कामिति, इममेतदेव ग्रीह्यस्य म्याननये निनामविष्यः पाठा दत्ता सन्ति, तत्र रोगिण प्रष्टव्यारिक समीक्ष्य यदुचितं योगं नियमन्येत त प्रयोजयेत् मूलेषु कदाचिदं कोलादिमण्डूरं प्रयोजयेत् साधारणे चविनादि मण्डूर, ग्रहण्याचरथापान्त् भीममण्डूरमिति विवेचना ।

भाषा—यवक्षार, पीपल, सोंठ, बेर, गट्टिवन, चित्रक १-१ पल, मण्डूर १ प्रस्थ लेकर दशाओंका बारीक चूर्णकर मण्डूरसे अठगुने गोमूत्रमें तपचीजें मिलाकर लोहेकी कड़ाहीं मन्द आचसे पकावे । जब कड़हींमें दवा लगनेलेगे तब १-१ तोलेके गोले बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे दोपविशेषप्रयोजकी औषिती तमऽकर भोजनके आदि, मध्य और अन्तमें १-१ गोलेका ७ दिनतक योगरत्नमें परिणामजसुलो यह नष्ट करताहै ४३०

४३१ भीमरुद्ररसः

सूत्रराजस्य तौलिकं गन्धकस्य तथैव च ।
अस्त्रार्क्यं ततो देयं तौलिकं कान्तलोहकम् ॥ १८९९ ॥
परंतैःतौपधेनेच भाययेथ पृथक्पृथक् ।
विदालाशुहतीनासीसौगन्धिकसुदाडिभिः ॥ १९०० ॥
मर्कट्याश्चातमगुणायाः स्वरमेन पृथक्पृथक् ।
मापकैकप्रमाणेन चटिकां कारयेद्भिषक् ॥ १९०१ ॥

वटोमेकां भक्षयित्वा पिबेच्छीतं जलं ततः ।
भीमरुद्रो रसो नाम चाऽसाध्यमपि साधयेत् ॥
कुम्भकुरस्य षट्गालस्य विपंहन्तिमुदुस्तरम् ॥ १९०२ ॥
र. सं., र. सु., घ., र., र., र. चं., विषाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पात्र और गन्धक, अत्रक तथा कान्तलोह-मत्स्य १-१ तोला लेकर नीलवर्ण कजलीकर महर, वनमांठा, प्राक्षी, कुसुंयां, अनार, अपामार्ग, केवाच, इनप्रत्येकके स्वरसे १-१ दिन भावना देकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडे पानीके साथ देनेसे यह वाचले बुसे और ग्यालके दुस्तर विपको दूरकरताहै ॥ ४३१ ॥

४३२ भीमवटी

सिन्दूरं विषमुष्टिकं घनमितं लोहस्य भागास्त्रयः,
द्विहोरेद्यमिता मरोचनिकराद्वाणाः कुमारीघनात् ।
पद् स्यु गुंगुलुकस्य सप्त मिलितं चित्रद्रवे मर्दितं,
गुग्गुलुगममिता वटो कवलिता भीमाख्यया भ्राजते ॥
अग्निमान्धकृतान्दोपानपतनसमुद्भवान् ।
सङ्ग्रहप्रदूर्णां हन्यादामवातसमुद्भवान् ॥ १९०४ ॥
श्वासकासौ च हिक्काश्च वातरक्तकृतांगदान् ।
शूलगुल्मौ स्वानुपानैस्तत्तद्वेगहरी हरेत् ॥ १९०५ ॥
नू. क. अभिमान्ये ।

भाषा—रससिन्दूर और शुद्धकुचिला २-२ तोले, लोह-मत्स्य ३ तो., मुनाहींग ४ तो., भिचं ५ तो., एलुआ ६ तो., गुगल ७ तो. लेकर सबका बारीक चूर्णकर चित्रकके काढ़ेसे तीनतोंज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूध अथवा उचिनातुपानिकेसाथ देनेसे मन्दाभि, हिस्टोरिया, सङ्ग्रहप्रदूर्णा, आमवात, श्वास, कान, हिवकी, नातरक, शूल, गुल्म, हस्तकको यह नष्टकरताहै । यह मन्दागिके लिये उत्तमयोग्यहै ॥ ४३२ ॥

४३३ शुक्तपाकरसः (प्रथमः)

गन्धकं सूतकञ्चैव भृङ्गराजेन मर्दयेत् ।
हिद्दुभागो विडङ्गानि रोहिणी च दशांशकम् ॥ १९०६ ॥
यथा त्रिफटुका युक्ता भागमेकं हि सैन्धवम् ।
निर्गुण्डरीरसतो मय्यं गुटी चामलकीकला ॥ १९०७ ॥
भोजनान्ते च तद्भुक्तं भुक्तपाको महाहरसः ।
सर्वव्याधीन् हरेत्साऽथ बलवीर्यविघर्धनः ॥ १९०८ ॥
र हा , अभिमान्यादिमंत्रोणे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पात्रा १-१ भाग लेकर नीलवर्ण कजलीकर भंगरेकेसमे एतदिन मर्दनकर गुगां दे । फिर होंग १ भा., विडङ्ग और वट्टकी दशांश ३; भाग, बच, त्रिफटु और सैन्धानक १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर संगान्दूरे रगमें एतदिन मर्दनकर आंचलेके पत्तके बराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े ।

इतमेसे १-१ गोली भोजनके अन्तमें देनेसे यह खाएहुएकी पाचनकरके बल और वीर्यको बढ़ाताहै ॥ ४३३ ॥

४३४ भुक्तपाकरसः (द्वितीयः)

वज्रमृत्नासामालिसकाचकूप्या रसं क्षिपेत् ।
चित्रमूलं समानीय विल्वपर्णं पेपयेत् ॥ १९०९ ॥
समभागं ततः क्षित्वा कूपीमध्ये च मेलयेत् ।
निर्धूमवह्नौ तद्वार्यमर्द्धाऽर्द्धं च पुनः क्षिपेत् ॥ १९१० ॥
स्वार्प्यं यामद्वयं पश्चात्प्रयत्नेन समुद्धरेत् ।
जातीफलं त्रिकटुकमेलां मुस्तां विशेषतः ॥ १९११ ॥
मेलयेत्सर्वयोगांश्च भुक्तपाको विनाशयेत् ।
ज्ञानज्योतिस्तु कृपया कौतुकार्यमभापत ॥ १९१२ ॥
रं ज्ञा, सर्वरोगे ।

टि०—यद्यप्यत्र साधारणतया समविल्वपत्रेण चित्रमूलेनैव कृत्वा वाचकूप्यां स्थितस्य पारदस्योपरि निक्षेप उक्तस्तथापि यथास्थित पारद कूप्या न निक्षेप्य किन्तु षोडशस्य चित्रमूलचूर्णं दत्त्वा विल्वपत्रसेन साकं द्विदिनान्तर्घे पारद सम्पन्थ कूप्या निक्षेपणीय इति रहस्यम् ।

भाषा—षोडशस्य चित्रकमूलस्य चूर्णमिलाकर पुटपाकसे निकालेहुए अथवा खूब कूटकर बलसे निकालेहुए विन्वके पत्र रससे २ तीन रोज़ षोडशआ शुद्धपारा वज्रमिमीलगाईहुई काचकी शीशीमें डालकर चित्रकमूल और बेलकेपत्ते समभागलेकर बारीकरीसकर दोभागबनावे । एकभागको शीशीमें डालकर चलाकर पारेमें मिलादे और निर्धूम अग्निपर रखदे । जब रस जलजाय तब दूसराभागभी दवाका डालदे । इसरो दोपहरतक अद्वारोपर रखे । इतनेमें पत्ते जलनायगे और पारा उन्हीमें अदृश्य होजायगा । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर जायफल, त्रिकटु, इलायची, नागरमोथा ये प्रत्येक पारेकी धरावर मिलाकर १-२ पहर घोटकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ मासा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भोजनको पचाकर समस्तरोगोको दूरकरताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ भुक्तपाकवटी

अम्रं गन्धकपारदां सद्वरदां ताप्रं सतालं शिला,
घृङ्गश्च त्रिफला विषश्च कुन्टी भाव्याश्च दन्त्यम्बुना ।
शुद्धो व्योपयथानिचित्रकजलं ज्ञे जीरके टङ्गुणं,
पला पत्रलघ्नहिङ्गु कुन्टी जातीफलं सैन्धवम् १९१३
पतान्याद्रकचित्रदन्तिसुरसामुयारसे विव्यजैः,
प्रत्येकं दिनसङ्ख्यायाऽथ सकलं गाढं विमर्चाऽप्यतः ।
खादेद्ब्रह्ममिदं तथा च सकलव्याधौ प्रयुज्ययाद्बुधः,
विड्वन्धे कृष्णे त्रिदोषजनिते शामानुबन्धेऽपि च ॥
मन्दासौ विषमन्वरे च सकले श्ले त्रिदोषोद्भवे,
हन्त्याधीनपि भुक्तपाकवटिका भूयश्च सम्भोजयेत् ॥

र सु., र सं, अजीर्णाऽधिकारे । र सं भक्तपाकवटी नित नाम ।

भाषा—अम्रकमस्य, शुद्ध गन्धक, पारा और शिगरिफ, ताप, हरिताल, वन्तीकी भावना दियाहुआ मैनगिल, बह्र इन

वीभस्में, त्रिफला, शुद्ध वटनाग, कारुडासीगी, त्रिकटु, अज-
वाइन, चित्रककी जड़, सुगन्धवाला, दोनोजीरे, भुनासुदागा,
इलायची, पत्रज, लौग, भुनाहींग, कुटकी, जायफल, सेधानमक
ये सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलकण्ठ
कब्जलीमें मिलाकर अदरख, चित्रक, दन्ती, तुलसी, मरोङ्गली,
बेल, इन प्रत्येकके स्वरगोसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रतीकी
गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगहरा-
नुपानके साथ देनेसे यह समस्तव्याधियोंको दूरकरतीहै । विशेष-
पकर विड्विबन्ध, कफप्रधान सतिपात, आम, मन्दाभि, विष
मन्वर, समस्तशूल इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३५ ॥

४३६ भूतनाथभैरवोरसः

आकाशवह्नोरसतो रसं षोडा विभावेयत् ।
यद्दतीफलजै द्रवैस्तालो मुनिविभाधितः ॥ १९१५ ॥
पङ्गाग्रमितं सौम्यं घृतात्पञ्चदशद्रवैः ।
चतुरंशाष्टकस्य शिवाश्लेषविभाधनाः ॥ १९१६ ॥
पङ्कजापालाऽहिफेनांशा लघ्नमरिचानि च ।
शिवनेत्रपुट्रेस्त्रेधा वचा ब्राह्मी च दाकुची ॥ १९१७ ॥
त्रिध्वंशा भृङ्गराजस्य द्वादहांशा भावनाः ।
निम्बकाष्ठेन घृष्टोऽयं भूतनाथादिभैरवः ॥
तत्तदोगानुपानेन सर्वज्वरहरोमतः ॥ १९१८ ॥

र. का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—आकाशवलेके रससे ६ रोज पारेको मर्दनकरे और
बनभटिके फलोंके रससे पारेकी चारुन हरितालको घोटै ।
पारेमें ६ भाग सखियेको लेकर १५ गुने धतूरेके रसमें मर्दन
कर सुखावे । सुदागा ४ भाग लेकर श्वाशुकी भावनादे । जमा-
लगोटा और अफीम ये ६-६ भाग, लौग और मिर्च ३-३
भाग लेकर बारीकचूर्णकर बच, माझी और बाउचीकी ३-३
भाबनाए देकर सबको इन्डा मिलाय भंगेरेके रसनी १२ भावनाए
देकर १-१ रतीनी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इसके घोटनेमें
नीमका ताजा उष्ण काममें लेना चाहिये । इनमेंसे १-१ गोली
तत्तदोगहरानुपानके साथ देनेसे समस्तज्वर नष्टहोतेहै ॥ ४३६ ॥

४३७ भूतनाथरसः

सूतं ताद्रमयोऽन्नकं समलयं सर्वैः समं गन्धकं,
हेमाकांऽग्निहयारिपुष्कररसे भयः प्रयुग्यासखत् ।
कृप्यन्ते विनियोजितं लज्जमृच्छीरेः समावेष्ट्य तव,
यन्त्रे सैरुतके निवेद्यैव विपवेष्टत्वा गणेशं दिने १९१९
स्वाङ्गं शीतलतामुपागतमपि त्यक्त्या च कृप्यादिवं,
भूपांशेन विषेण सखरतलं तन्मर्दयेत्सततः ।
गुडा स्पृशं चलापनोदनकरी रुद्रशं पसंयुता,
भूतेशस्य सुलेपनं हितकरं स्यात्कृष्णलाभिः पृथक् ॥
१. र. दो, २. र. घ, ३. दो. सर्वथवर इति नाम । रगदीपिकायां
भावनाया पुष्करस्थाने वासा दृश्यते । रसायने ३ एरुमादेव
बन्धुनो द्विगुणो गन्धो निर्वोर्णः १, अन्वयसर्वं सम इति विद्वेय ।

भाषा—शुद्धपारा, तांग, लोहा, अत्रक इनकी भस्में सब समभाग, सप्ती बराबर शुद्धगन्धक देकर नीलवर्णकजलीकर घन्त्रा, आक, चित्रक, सफेद कनेर, पोहकरमूल इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा बाणोंसे १-१ दिन मर्दनकर शुष्ककजलीकर काचकीशीशीमें भरके नमक और मिठीमें कपडेको भिगोकर ६-७ कपडमिठीकरे । सूखनेपर बालुकायन्त्रमें रखकर १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर पोल-शांश शुद्धघनागका चूर्णमिलाकर २-३ पहर मर्दनकर रखोडे । इसकी १-१ स्ती कुट और शकरके साथ मिलाकर देनेसे स्पर्श-वातको नष्टकरतीहै । वेदान्त्यायनमें गुञ्जाके चूर्णके साथ गोमू-श्रवणहरमें पीसकर लेपकरना ॥ ४३७ ॥

४३८ भूतभैरवरसः (प्रथमः)

रसः सतालः सशिलः सलोहः

स्रोतोऽञ्जनं सार्कमिदं हि गन्धम् ।

पिष्टं नृमूत्रेण समं समन्ता-

द्वयोद्धिभागोऽथ बलिः पचेच्च ॥ १९२१ ॥

लौहे क्षणं हन्ति घृतेन मापोऽ-

पस्मारमप्युन्मदमानसत्वम् ।

पिवेदनुच्युपणहिहृद्युक्तं

सर्पिर्नृमूत्रं हचकेन सार्धम् ॥ १९२२ ॥

भूतोन्मादेषु सर्वेषु रसोऽयं भूतभैरवः ।

स्वर्णजैः पंचभिर्बीजै देयः सर्पिर्विमिश्रितः ॥ १९२३ ॥

यो. र., भा. प्र., र. सं., र. र., घ., र. सु., र. को., ट. यो. त., र. क. ल., र. क., नि. र., चि. र. भा., र. र. दी., रसायनसं., दो., वै चि., ब. रा., र. का, यो. म., भै. र., यो. त., अपस्मार । भैपन्त्यरत्नावत्या धन्वन्तरे द्वितीयस्थाने च चण्डभैरव इति नाम इहस्यते । अत्र गोमूत्रेण भावना इहस्यते. अत्राणे च 'हिहृद्युक्तं' लोहं कृष्टं गवा मूत्रेण सर्पिषा । वर्षमात्रं विवेक्षाशु रसेऽस्मिन्-चण्डभैरवे, इत्यधिकः ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल और मैनसिल, लोहभस्म, सफेदसुरमा, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक येसब १-१ भाग लेकर-मनुष्यके मूत्रसे २-३ रोज मर्दनकरफिरसे शुद्धगन्धक ११ भाग मिलाकर सबकी नीलवर्णकजली बनाय पर्यटोके प्रहारसे पर्यटो बनाकर रखोडे । इसमेंसे १-१ भागा धोकेसाथ मिलाकर चटावे और उपरसे जिङ्गु, हींग, धी, मनुष्यकासून और कालानमक मिलाकर पिलानेसे अपस्मार और उन्माद नष्ट होतेहैं । मूतोन्मादोंमें घन्त्रके बीज ५ नग घीमें मिलाकर इसके साथ मात्रा देनी चाहिये ॥ ४३८ ॥

४३९ भूतभैरवरसः (द्वितीयः)

नं. १-पातः स्वैदां मुपं स्वर्णजारणं गन्धजारणम् ।

कृत्वा प्रायुक्तमागं सहजाय भोक्तमेव च ॥ १९२४ ॥

रसेन्द्रस्य समादाय पलमेकं प्रमर्दयेत् ।

कृष्णघसूरतैलेन दिनत्रयमनन्दिस्तः ॥ १९२५ ॥

यन्त्रेऽथ कच्छपे दत्त्वा कृष्णघसूरतैलतः ।

गन्धकं भावयेत्पश्चाच्छोधितं प्रोक्तयुक्तितः ॥ १९२६ ॥

ऊर्द्धाऽधो गन्धकं दत्त्वा पादांशेन पुट्टेद्रसम् ।

पुटाष्टकं प्रदातव्यमेवमुक्तक्रमेण वै ॥ १९२७ ॥

अयं रसेन्द्रो त्रिपते तैलगन्धकयोगतः ।

भस्मीभूतं समादाय रसेन्द्रं रोगनाशनम् ॥ १९२८ ॥

गुञ्जामानेन संदद्यात् त्रिदोषविपमञ्जरे ।

कासे श्वासे पीनसे च मास्ते च भगन्दरे ॥ १९२९ ॥

कुष्ठे प्रमेहेऽग्निमान्द्ये क्षयरोगोद्वारायै ।

पाण्डुरोगे सन्निपाते भूतभैरवनामकम् ॥ १९३० ॥

नं. २-व्योपाद्र्वीबीजपूरेण पटुभिः कोष्णवारिणा ।

रसेन्द्रं वितरंसन्निपातोत्यश्लेष्मभेदने ॥ १९३१ ॥

देवदालीफलान्द्येन चूर्णेन सह योजितः ।

रसेन्द्रो नश्यतो हन्ति मूर्च्छांयं सन्निपातजम् १९३२

यद्वा शुण्ठी च मरिचं गोमूत्रं सैन्धवं समम् ।

शिरोपवीजं सूतेन्द्रं मर्दयित्वाऽञ्जयेत् दृशि ॥ १९३३ ॥

गाढां मूर्च्छां सन्निपातोद्भवां प्रहरति क्षणात् ।

नं. ३-तालं क्षारं समाक्षीकजौरकं गन्धकं तथा १९३४

घन्ध्याकन्दं लाङ्गलीयं पीनं शुण्ठीञ्च सार्द्रिकाम् ।

मधूकबीजममृतं सर्वं सञ्चूर्णयेत्समम् ॥ १९३५ ॥

प्रत्येकं तत्समं कृत्वा रसेन्द्रं मर्दयेत्ततः ।

निर्गुण्डी निजतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ १९३६ ॥

गुञ्जामाणां घटिकां कृत्वा दद्याज्ज्वरादिते ।

सद्यो उ्वरं निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ १९३७ ॥

नं. ४-विषं ताप्यं त्रिकटुकं सूतेन्द्रं योजयेत्समम् ।

रीतिभूति नांगमस्य मृतताम्रं समांशतः ॥ १९३८ ॥

मर्दयित्वा महिषजै रौहितैः शिखिसम्भवैः ।

सम्भाव्य पित्तैस्त्रिन्वारान् गुञ्जामाना वटीः किरैत् ।

सन्निपाते महाघोरं सर्वसञ्जाविचर्जिते ।

ददीत घटिकामेकां सद्य उत्थापयेद्बुधः ॥ १९४० ॥

नं ५-तालञ्च वस्त्रनामञ्च गुणान् पौडश संहरैत् ।

रसेन्द्रं विपमानेन मेलयेन्मर्दयेत्ततः ॥ १९४१ ॥

उद्वारुणिकादुधै निर्गुण्डीवारिणा ततः ।

त्रिजगद्विजयानरिं वहुशो भावयेद्द्रसम् ॥ १९४२ ॥

यद्वा तालं समं ग्राह्यं रसेन्द्रेणाऽमृतेन च ।

मायूरं भावयेत्पित्तै रोहिषित्तैश्च छागजैः ॥ १९४३ ॥

आरण्यमाहिपोत्थैश्च प्राञ्जीन्वारान्विभावयेत् ।

घटीः कृत्वा ततो दद्यात्सन्निपातादिताय वै ॥ १९४४ ॥

आर्द्रकस्य रसेनेव सन्निपातं क्षणाद्देव ।

नं ६-भस्मं सुतं बलिवसां समभागं समाहरैत् ॥ १९४५ ॥

तैले गन्धं मालयित्वा टालयेच्चित्रजे रसे ।

उक्षमूत्रैस्ततः कुयोत्कजलीं पारदेन वै ॥ १९४६ ॥

कजलीपादभागेन लोहभस्म निषो जयेत् ।

मुदं ताप्यं नटशिलां गन्धकं सर्वमेकतः ॥ १९४७ ॥

गुडेन मर्दयेत्सर्वं ताम्रपत्राणि लेपयेत् ।
 तत्समानि ततो ध्मात्वा भास्करं भस्मतां नयेत् ॥१९४८॥
 मेलयित्वा सन्निपातभूतभैरवपारदे ।
 मर्दयेत्सिन्दुवारारिम् मुहुराजरसेस्तथा ॥ १९४९ ॥
 मण्डूषिनीरसेश्चिन्नारैश्च पिचुमन्दैः ।
 तरुणैः काकमाधीरसैः शक्रासनोद्भवैः ॥ १९५० ॥
 मर्दयेत्ताम्रदण्डेन पात्रे ताम्रभये ततः ।
 पश्चात्प्रभाययिपित्तैः प्रागुक्तैस्त्रिवारकम् ॥१९५१॥
 राजिकामात्रगुटिकाः कुर्यात्सुतधरस्य वै ।
 सन्निपाते महाघोरे तिक्तो दद्याद्दुदो युंघः ॥ १९५२ ॥
 घटीप्रदानतो पश्चान्नियोति मलमूत्रके ।
 जीयेत्सद्यस्तदा रोगी ह्यन्यथा तं परित्यजेत् ॥१९५३॥
 भोजयेद्वाधिकं भक्तं सलिलं ढालयेत्ततः ।
 ययेष्टमशनं दद्यात्सन्निपातचिकित्सने ॥ १९५४ ॥
 ज्वरे घातभये कुर्यात्स्वाथञ्च दशमूलजम् ।
 अनुपानाय घातारितैलेनाऽङ्गं प्रमर्दयेत् ॥ १९५५ ॥
 कम्पज्वरे पर्यटनं कराथं दद्याद्द्विचक्षुणः ।
 ग्रहण्यं जीरकभयं ज्वरेऽथ विषमेषु च ॥ १९५६ ॥
 अतीसारं च मन्दाग्नी क्षयरोगे च कामले ।
 शुण्ठीश्वदंष्ट्रयोः क्वाथं कासश्वासगुदामये ॥१९५७॥
 आमवाते यटी देया प्रागुक्तक्वाथयोगतः ।
 इति शोकाः सन्निपातभूतभैरवसञ्चक्रः ॥ १९५८ ॥
 रसाळ, ज्वरे ।

भाषा—(न. १) पातन, स्वेदन, सुखकरण, स्पर्णकरण
 और गन्धकजाण ये संस्कार पारेके करके एकपल लेकर काले
 धतूरेके बीजोंके तैलसे ३ दिनतक मर्दनकरे । शुद्धगन्धक १
 तोला लेकर बारीकचूर्णकर कच्छपन्ध्रमें आधा नीचे विछा-
 कर ऊपर पारेको रख ऊपरसे आधातोला गन्धक रखकर काले
 धतूरेकातैल इतना ढाले कि पारा और गन्धक ह्वजगय । फिर
 यन्त्रपर काण्डमिठीकर भूषणपुटदेवे । ऐसे ८ पुट देनेसे पारेकी
 भस्महोजायागी । इसमेंसे १-१ रत्नी उचितानुपानकेसाथ देनेसे
 त्रिदोष, विषमज्वर, कास, श्वास, पीनस, वातरोग, भ्रान्द,
 कुष्ठ, प्रमेह, मन्दाग्नि, क्षय, उदररोग, पाण्डु, वेसव नष्टहोतेहै ।

२—त्रिकटु, अदरक्ष, बिजोरा, पाचों नामक और गरम-
 जलकेसाथ देनेसे वात और श्लेष्मप्रधानसन्निपातको नष्टकरताहै ।
 वन्दाळके बीजोंके चूर्णकेसाथ नस्य देनेसे सन्निपातजमूर्च्छाको
 दूरकरताहै । अथवा सोंठ, मिर्च, सेंधाभमक, गोमूत्र, सिरसके
 बीज सब समभागसे चूर्णकेसाथ इसपारेको मिलाकर अन्न कर
 नेसे सन्निपातज मादमूर्च्छा दूरहोतीहै ।

३—शुद्धहरिताल, तीनोंझार, सोनामाखी, जीरा, शुद्ध
 गन्धक, बाणखेखसा और करिहारीक पुष्टमन्द, सोंठ, अदरक्ष,
 महुएकेबीज, शुद्धबछनाग, ऊपरकीहुईर पारेकी भस्म सब सम
 भाग लेकर बारीकचूर्णकर सभाके कन्द अथवा जड़के रससे
 १ रोज निरन्तर मर्दनकर १-१ रत्नीकी गोलिया बनाकर रख-

छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह
 तत्काल आयेहुए ज्वरको नष्टकरतीहै ॥

४—शुद्धबछनाग, सोनामाखी, त्रिकटु, पारद, पीतल, नाग
 और ताम्र इनकी भस्में देखाव समभाग लेकर १-२ पहर मर्दन-
 कर भेगा, रोहू, मोरके पित्तोंसे ३-३ भावनाए देकर १-१
 रत्नीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सञ्ज्ञा-
 रहित महाघोरसन्निपातमें देनेसे यह उसको नष्टकरताहै ।

५—शुद्ध हरिताल ३ भा, बछनाग और पारदभस्म सोलह
 १६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर चमारदूधीके दूध, निर्गुण्डी और
 भागके स्वरससे ७-७ भावनाए देकर तैयारकरे अथवा हरिताल,
 बछनाग और पारदभस्म समभाग लेकर मोर, रोहू, बररा और
 जलबीसेके पित्तोंसे ३-३ भावनाए देकर १-१ रत्नीकी
 गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक्षके रस
 अथवा समथोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातको एक-
 क्षणमें दूरकरताहै ।

६—पारदभस्म, शुद्ध गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर
 संभाळ, भगरा, प्राण्डी, चित्रक, नीम, कपास, मकोय, गांजा
 इन प्रत्येकके यथास्तम्भव स्वरस अथवा कार्थसे तावके पात्रमें
 तावके ढण्डेसे १-१ रोज मर्दनकर पूर्वोक्तपित्तोंसे ३-३ भावनाए
 देकर राईके बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३
 गोलिया उचितानुपानकेसाथ मूर्च्छायुक्त सन्निपातमें देनेसे यदि
 मलमूत्रत्यागहोजाय तो साध्य समझना अन्यथा असाध्यहै,
 उससेलिये यत्न नहीं करना । सञ्ज्ञा आनेपर दहीमात खानेको
 देना और शिरपर पानीकी धारा छोड़ना । एकदम अच्छाहोनेपर
 यथेष्ट भोजनकरना । वातज्वरमें दशमूलका काटा देना, और
 एरण्डके तैलकी मालिशकरना । कम्पज्वरमें पित्तपापकेका काड़ा
 और प्रहणी तथा विषमज्वरमें जीरेकाकाथदेना । अतिसार,
 मन्दाग्नि, क्षय और कामलमें सोंठ और गोरोक्षका काथ देना ।
 श्वास, श्वास, बवासीर, आमवात इनमें दशमूलका काथ देना । इस
 छटे भूतभैरवमें धतूरेके तैलमें गन्धकको गलाकर चित्रके काथ
 और तैलकेमूत्रसे युक्ताना । युद्ध, सोनामाखी, भूतसिल और
 गन्धक सबको शुद्धकेसाथ मर्दनकर इसकी बराबरके तावके पत्रों-
 पर लेपकर धमनकरनेसे भस्महोगी यह भस्म काममें लाना
 दूसरी नहीं ॥ ४३९ ॥

४४० भूतभैरवरसः (तृतीय.)

अंशाः पञ्चदशाऽत्र तालकभयाः शुद्धाद्यं सङ्गन्धकात्,
 सप्ताऽष्टौ नव तिनित्डीफलभया विल्याद्वा द्वौ घटा ।
 हेमाद्वा त्रय पत्र सप्त कथिता चित्रस्य पथ्याश्च पद-
 पद सूतस्य विशोधितस्य महतां भ्रूतातकानां द्वा ।
 सेहुण्डार्कपयोमिरभिरभितः सङ्घूर्ण्य तद्वाय्वते,
 रोहीतस्य जटाजलेन मृदितं सूक्ष्मं कृतं खलगतम् ।
 पत्नीकृत्य समस्तमेतद्मृतं भागैकमत्र क्षिपेत्,
 ताम्बूलोद्भववारिणा सुमृदितं शस्याम्भसा वा नृत्तम् ॥

मिश्र चायसपात्रकेऽथ सकल रुद्धा च धान्याऽऽकरे,
 धार्य तत्खलु चैकविंशतिदिनं चाद्भृत्य मात्रां शुभाम्
 दद्याच्छागालमूनकञ्च नियत तच्चाऽनुपाने हितं,
 प्राज्ञो व्याधियुताय नित्यमनया रीत्या ददातीत्यधम् ॥
 नीलं दोषभवं तथा बहुदणं धातौ गतञ्चाऽरुणं,
 श्वेतं स्फीतमनल्पकं भृशरुञ्जं कुण्डञ्च वर्णं हरेत् ।
 कुण्डाऽष्टादश भूतभैरवरसो हन्याच्च तूर्णं क्षितौ,
 वातव्याधिनिवृत्तनस्तनुभवान्दोषानय नाशयेत् ॥
 एवं समासात्खलु सर्वकुष्ठानयं रसोऽथ क्षपयेद्वि तूर्णम्
 निराकरोत्येव च धातुदोषान्भवत्यवद्यं सुभगं शरीरम्
 भुञ्जीतभक्तं सततं न शाकं घृतञ्च गोधूमयुतं भजेत् ।
 काष्णं शृतं दुग्धमवद्यमद्यात्पथ्याथमेतत्प्रदिशन्ति सत
 रसवि, र सु, र स, र वि, र च, र पा, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और गन्धक १५-१५ भाग, इमली
 ९ भाग, बेलगिरी १० भा, त्रिफला २ भा, सत्यानाशीकी
 जड़ ३ भा, चित्रक ७ भा, हरेँ और शुद्ध पारा ६-६ भाग,
 बड़े मिलावे १० भाग, लेजर सबका घारीक चूर्णकर पारे,
 गन्धक, और हरितालकी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर सेहुण्ड
 और आकके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर रोहिड़की जड़की
 छालके पानीसे एकदिन मर्दनकर तबमे चतुर्थांश शुद्ध घटनाप
 डालकर पान अथवा दूबके रससे एकदिन घोटकर लोहेक पात्रमें
 रख मुहन्दर बनाजनी खतोमें दगोडे इन्नीसवें दिन निकालकर
 ३-३ रत्तीकी गोलीय बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 वस्त्रके सूत्रेसाथ देनेसे नील, अधिकपीडायुक्त, धातुगत,
 लाल, सफेद, फैलाहुआ, ये सब कुछ नष्टोतेहै । तत्तद्गो
 चित्तानुपानक साथ देनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टरताहै ।
 इसके सेवनेसे आदमीका दिव्यशरीर होजाताहै । धातुगत जितने
 दोषहै उनसबको दूरकरताहै चावल, गेहूँ, धी, गरमदूध, पानेको
 दे, शाक किसीभी चीन्का नदे ॥ ४४० ॥

४४१ भूतभैरवरसः (चतुर्थ)

आखुहा गरडनानरसञ्चाहारगौरसकल क्रमवृद्धम् ।
 कारवह्निरसमर्दितं पचेत्तत्राजे शिरसि लाजपाकतः ॥
 भूतभैरवरसो गुडाश्वितो वल्लिजैः सह निषेवितश्चिरम्
 शीतपूरुलशुन समभ्रतां हन्ति शीत मतिमात्रमाशितः
 र स, दो, र सि, र वो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सोमल १ भा, सोनाभारीकी २ भा सोंठ
 ३ भा, पारा ४ भा, गन्धक ५ भाग लेजर घारीकचूर्णकर
 पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलानर करलेन रगसे ३ रोच
 मर्दनकर गोला बनाय ताम्रके सम्युग्मे बन्दकर २-३ कपड़
 मिट्टी करके सुराले फिर लवण अथवा मसम या बालमें रख
 कर नीचे बमरद आये । जब ऊपर पान डालने फूलगाय तत्र
 जाच देना बन्द करदे । स्वादशतित हानेपर निकालकर कपड़
 मिट्टीसे हटादे और ताबके सम्युग्महित घोटकर रखले । ताबके

सम्युक्ता जो कच्चाभाग रहाहो उसे निकालदे । इसमेंसे १-१
 रत्ती गुड़ और कालीमिर्चे साथ सेवन करके दही, भातकेसाथ
 लशुन खिलानेसे शीतपूर्वक आनेवाले ज्वरको यह नष्टकरताहै ४४१

४४२ भूतभैरवरसः (पञ्चम)

सूतसूर्यविषट्पण्डुगन्धैः वृण्णधूतंभवतैलनिबन्धै ।
 भूतभैरवरसः शशियुक्तः सन्निपातमुपहन्त्युपभुक्तः ॥
 र (मा), रससारसङ्ग्रह, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, ताम्रभस्म, शुद्धवल्गनाग, सुहागा, गन्धक
 सन समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर बाले धतूरेकेतैलेसे १-१
 रोच मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखओड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ४४२

४४३ भूतभैरवरसः (षष्ठ)

पारद गन्धक ताम्र मर्द्य वह्निकपायके ।
 वज्रमूपात्रे पाच्य बालुकायन्त्रके दिनम् ॥ १९६८ ॥
 मार्जारजम्बुजैः पित्तै मौचितं प्रहरद्वयम् ।
 गुञ्जामात्रं चानुपाने दैय शीतोदकेन च ॥ १९६९ ॥
 सन्धिक तत्क्षण हन्ति दध्यन्तं पथ्यमाचरेत् ।
 नारिकेलोदकं दाहे रसोऽथ भूतभैरवः ॥ १९७० ॥
 वै चि, र प, वा, सन्धिकसन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभागलेकर
 कञ्जली बनाकर चित्रके काथमें एकरोज मर्दनकर वज्रमूपात्रे
 रपकर बालुकायन्त्रमें एकदिन(रातकी अग्नि देकर विट्ठी और
 गीदडकेपित्तोसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या
 बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली ठडे पानीकेसाथ देनेसे
 सन्धिकसन्निपातको यह तत्क्षणदूरकरताहै । भूतलगनेपर
 दहीमात देना । दाहहोनेपर नारियलका जल पिलाना ॥४४३॥

४४४ भूताहुशोरसः (षष्ठमः)

सूतयस्ताम्रमन्त्रञ्च मुकाञ्चाऽपि सम समम् ।
 सूतपादोत्तम यज्ञं शिलागन्धकतालकम् ॥ १९७१ ॥
 नुत्य रसाञ्जन शुद्धमग्निफेनं शिलाञ्जनम् ।
 पञ्चानां लवणानाञ्च प्रतिभागं रसोन्मितम् ॥ १९७२ ॥
 भृङ्गचित्रकत्रोणां दुग्धैश्चाऽपि विमर्दयेत् ।
 दिनान्ते पिण्डिकां दृष्ट्वा रुद्धा गजपुत्रे पचेत् ॥ १९७३ ॥
 भूताहुशरसो नाम नित्यं गुञ्जाद्वय लिहते ।
 आद्रिकस्य रसेनाऽपि भूतोन्मादिनियारणम् ॥ १९७४ ॥
 पिप्पल्याक पिषेचाऽनु दशमूलकपायकम् ।
 स्वेदयेत्कट्टुमन्या च तीक्ष्ण रूक्षञ्च वज्रयेत् ॥ १९७५ ॥
 माहिषञ्च घृत क्षीर गुर्वन्नमपि भक्षयेत् ।
 अभ्यङ्ग कट्टुतैलेन हितो भूताहुशो रसः ॥ १९७६ ॥
 र स, र च, र सु, ध, र र, रगानयन, र को, भै र,
 चि र भ, र का, र र गी, उन्माद । र र कोमुगं प्रायो
 शुद्ध पाठ ।

भापा—शुद्धपारा, लोह, ताम्र, अन्नक और मोती इनकी भस्मे १-३ तोला, हीराभस्म ३ माशे, शुद्धमैन्सिल, गन्धक, हरिताल, वृत्तिया और रसौत, समुद्रकेन, काले सुरसे की भस्म ये प्रत्येक ६-६ भाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर भंगरा और चित्रकके स्वरस तथा सेहु पडके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटरी आवचे । स्वान्नीतल होनेपर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे २-२ रती अदररके रससे देकर पीपलने प्रसेपयुक दसमूलका काड़ा पिलानेसे और कड़वीतुंबीके स्वरस वा स्वेद देनेसे भूतोन्माद नष्टहोता है । तीक्ष्ण और रुक्ष पदार्थोंका त्यागकरे । भैरवाधी, दूध और भारी अन्न इनका भक्षणकरे । कड़वे तैलकी मालिश इसमें हितकरहे ॥ ४४४ ॥

४४५ भूताङ्गशोरसः (द्वितीयः)

शुद्धसूतस्य भागैकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
भागद्वयं मृतं ताम्रं मरिचं दशभागिकम् ॥ १९७७ ॥
मृताऽन्नस्य चतुर्भागं भागमेकं विपं क्षिपेत् ।
भूताऽङ्गुशस्य भागैकं सर्वमम्लेन भावयेत् ॥ १९७८ ॥
सोऽयं भूताङ्गुशो नाम यामैकं घातकासजित् ।
अनुपानं लिहैक्षौद्रैर्विभोतरुफलरवचम् ॥ १९७९ ॥
र. र. र. सु. र. क. ल. नि. र. वै. चि. यो. चि. र. म. र. को. र. म. मा. व. रा. र. र. स. र. का. यो. म. कासाऽधिकारे । र. र. स. स्वयमग्निरस इति नाम । योगमहाणवे त्रिभाग ताम्रं योजितम् ।

भापा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक और ताम्रभस्म २-२ भाग, मरिच १० भा., अन्नकभस्म ४ भा, शुद्ध बछनाग और धतूरेकेबीज १-१ भाग लेकर नीचूके रससे मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली खाकर ऊपरसे बड़ेडैकीछालकाचूर्ण मनुसे चाटनेसे वातजलासी निवृत्त होतीहे ॥ ४४५ ॥

४४६ भूतेश्वररसः (प्रथमः)

ताम्राऽन्नलोहानि रसोऽमृतञ्च
फलत्रयं गुग्गुलुकः शिलाजतु ।
करञ्जबीजं विपतिन्दुबीजं
सवोणि चैतानि समानि पिष्ट्वा ॥ १९८० ॥
निक्षिप्य तत्सप्तदिनञ्च भाण्डे
गद्याणमेकं मधुना च साज्यम् ।
सेवेत दुग्धेन युतञ्च पथ्यं
नरिणं वा स्त्री तु विवर्जनीया ॥ १९८१ ॥
र. दी., कुंठे ।

टि०—अथ प्रथमकुण्डलोरेण बहुधा साम्यभावहति परन्तु श्रेय्य प्रमाणे विशेषतास्यकत्वा पाठो गृह्यते । अतएव रसरीषिकायास्तुभय स्वीडेकोऽस्ति । अस्मिन्योगे उग्रद्रव्ययोगलाभ्यापिगी मात्रा न समीचीनाऽस्ति कदाचित्कुण्डिपु नैतदप्योक्तमनुभूयेत तथाऽपि प्रथमतो माषादाश्रय्य शनैर्माना बद्धनीयेति सुबुद्धो विवसति ।

भापा—ताम्र, अन्नक, लोह और पारा इनकीभस्मे, शुद्धबछनाग, त्रिफला, शुद्धगुल और शिलाजतु, पूतीकरञ्जबीज, कुचिला सब समभाग लेकर १-२ पहर मर्दनकर क्षीरीमें भरले । सातदिनकेबाद इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर धीरे २ छ माशे-तककी मात्रा धी और शब्दकेसाथ देवे । जहा मात्रा असह्य मालूमपड़े वहा रुकजानाचाहिये । इसके सेवनसे समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहे । इसमें दूध अथवा जलकेसाथ पथ्य देना और स्त्रीसङ्ग वर्जितकरना ॥ ४४६ ॥

४४७ भूतेश्वररसः (द्वितीयः)

विश्वोषणं टङ्कणपारदञ्च
सगन्धकं चूर्णसमाशयुकम् ।
नेपालबीजं निवृत्ता च गुञ्जा
गुञ्जाप्रमाणा गुटिका प्रसिद्धा ॥ १९८२ ॥
विरचनी मूत्रविकारशोधिनी
अग्ने हिता दीपनपाचनी च ।
जलोदरे प्लीहि गुदाऽङ्गुरे च
संशोधिनी शीतजलेन पीता ॥
सङ्घाहिणी चूर्णजलेन सत्यं
भूतेश्वरते नाम च सुप्रसिद्धः ॥ १९८३ ॥
र क यो , उदरोगे

भापा—सोड, मिर्च, धुनासुहागा, शुद्धपारा, गन्धक, जमा-ल्लोटा, निसोत और सफेदगुञ्जा समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर पानीके योगसे गुञ्जा-प्रमाण गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली ठडे जलकेसाथ देनेसे मलावरोध, मूत्रविकार, मन्दाग्नि, जलोदर, हीहा, बवासीर, इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ४४७ ॥

४४८ भूतेश्वररसः (तृतीयः) (पित्तकालान्तक-नाराच.—रुस्मीविलासः)

शुद्धं सूतं विपं गन्धं नेपाळं द्रव्यं समम् ।
मर्द्यं वह्निकपायेण दोलायन्त्रे दिनं पचेत् १९८४ ॥
मत्स्यपित्तस्तुहीक्षीरे द्वियामं खल्वमध्यके ।
मापैकमाद्रिकैर्द्वयं ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९८५ ॥
अर्कमूलकपायेण सन्निपातं निहन्ति च ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं सृष्टिं तर्कं पिबेदनु ॥
भूतेश्वररसो नाम भूतेश्वरविनिर्मितः ॥ १९८६ ॥
वै चि , ज्वराऽधिकारे ।

टि०—बसवराजीववैचिन्तामण्यो शिर पित्ताऽधिकारे त्रिरावृत्त पाठ लिखित्वा तस्य निचकुलान्तक इति नाम स्थापित, तथाऽनुपानादी नामभावोऽस्ति केवल शिर पित्त नियन्त्रतीति इत्वा स्थापितम्, तत्र छिन्नावापारिकं योचनीयम् । जहावाते पुनर्लम्बीविलास इति लिखित्वा इममेव पाठ विन्यस्य सूत्रे नाराचोऽय महाहरस इति लिखित्वा तत्र पित्त कुलान्तके मत्स्यपित्तेन भावना नाऽस्ति, अन्यत्र तु सर्वत्र मत्स्यपित्तं स्तुहीक्षीराभ्यामुपायान्धां भावनाऽस्तीति विशेषोऽनुपाय ।

भाषा—शुद्धपारा, बछनाग, गन्धक, जमालगोटा और शिंगरिफ सब समभाग लेकर कजलीकर चित्रकके काठेसे मर्दनकर गोलाबनाय चित्रककेकाथमें दोलायन्त्रसे १ दिन पकाकर मत्स्यपित्त और सेहुण्डके दूधसे २-२ पहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह ज्वरको नष्टकरता है। आकनी जड़केकाठेसे देनेसे सत्रिपातको नष्टकरताहै। पथ्य दहीभात है, प्यासलगनेपर छाछ पिलाना ॥ ४४८ ॥

४४९ भृङ्गादिचूर्णम्

भृङ्गी ब्राह्मी च शुण्ठी त्रिफलकणवचा-
वाकुचीकुष्ठयुक्तं,
भल्लात चाऽश्वगन्धा शिखिरारलनिशा-
पोडश भस्मसृतम् ।
कांस्ये पात्रे रजश्च त्रिफलजलयुतं
प्रातरुत्थाय पीतं,
पण्मासाद्रोगहारी पलितबलिह-
रस्वर्णदेही शरीरी ॥ १९८७ ॥

वे चि, रसायने ।

भाषा—भगरा, ब्राह्मी, सोंठ, त्रिफला, पीपल, वच, वाकुची कुष्ठ, शुद्धमिलोवे, अश्वगन्ध, चित्रक और अपामार्ग, शुद्धबछनाग, हल्दी और पारेकीभस्म सब समभाग लेकर चारीकचूर्णकर मिलाकर रखछोड़े। इसमेंसे १-१ माशा कासेके पात्रमें त्रिफलाके काठेके साथ प्रातःकाल पीनेसे ६ महीनेके प्रयोगसे समस्तरोगद्रोहोकर बलीपलितरहित होजाताहै ॥ ४४९ ॥

४५० भेदकमञ्जरीरसः

समांशमरिचैः सार्द्धं तालकं दडूणो वलिः ।
मत्स्यपित्तं तृतीयांशं शर्करा सरुलैः समा ॥१९८८ ॥
शृङ्गवेररसेनाऽत्र द्विगुञ्जतुलितो रसः ।
दत्तो नवज्वरं हन्याज्जलयोगञ्च कारयेत् ॥ १९८९ ॥
र.सु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—मरिच, शुद्धहरिताल, सुहागा और गन्धक सब समभाग लेकर चारीक चूर्णकर इससे तृतीयांश मछलीका पित्त और बराबरकी शर्करा मिलाकर अदरखके रससे मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली देकर मत्स्यपर जलकी घाटा देनेसे नवज्वर दूरहोताहै ॥ ४५० ॥

४५१ भेदीज्वराद्भुशोरसः

पारदं वरसनामञ्च प्रत्येकं निष्कसमितम् ।
द्विनिष्कं गन्धकञ्चैव दडूणञ्च द्विनिष्ककम् ॥१९९० ॥
मरिच पञ्चनिष्कं स्यात् पणिनष्कं दन्तिबीजकम् ।
सिंहीफलरसे र्मर्धं द्वियाम श्लश्णतां नयेत् ॥१९९१ ॥
गुञ्जामात्रां वर्दीं ह्रत्वा छायागुष्काञ्च कारयेत् ।

आर्द्रकद्रवसंयुक्तां ज्वरे जीर्णे प्रयोत्रयेत् ॥
सर्वज्वरहरा शीघ्रं नाम्ना भेदी ज्वराद्भुशः ॥१९९२ ॥

व.रा., वै.चि, ज्वराधिकारे । वैयचिन्तामणो हित्कुलम-
धिकं नियोजितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग ४-४ माशे, शुद्धगन्धक और सुहाहागा ८-८ माशे, मरिच २० माशे, शुद्धजमालगोटा २४ माशे, लेकर सबकी कजलीकर भटकटैयाके फलोंके रससे २ पहर मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे यह जीर्णज्वरको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ भैरवगुग्गुलुः

परण्डमूलस्य लघो गुंढुच्याः
पुनर्नवायाः सफलत्रयस्य ।
प्रत्येकशः प्रस्थमथार्द्धप्रस्थं
शुण्ठ्या जलद्रोणयुगे पचेत्तत् ॥ १९९३ ॥
अष्टाऽवशिष्टेन पुरस्य प्रस्थं
पचेत्कपापाद्भवति स्म सान्द्रम् ।
त्रिवृत्कणागुण्ठीमरीचकानां
पलं पलं माक्षिकधातुकर्यौ ॥ १९९४ ॥
सद्गन्धकस्य द्विपलं यवानी
रुमिष्णकुष्ठे लवणञ्च दन्ती ।
फलत्रयं कार्पिकमानमुच्चै-
रानूर्ण्य सन्निक्षिपति स्म शीते ॥ १९९५ ॥
श्रीभैरवो गुग्गुलुरेप रोगा-
न्निहन्ति वृद्धांश्चूयधृतशेषान् ।
क्षयं प्रवृद्धं गलगण्डयुक्तम्
कुष्ठौघजातं कसनान्तमस्नान् ॥
वाताऽक्षमात्रं यदि दुस्तरञ्च
श्रीशम्भुना कीर्तितं पप योगः ॥ १९९६ ॥
र क, कुशाधिकारे ।

भाषा—छोटे परण्डकीजड़, गिलोय, पुनर्नवा, त्रिफला १-१ सेर और सोंठ आधासेर लेकर जबकुष्ठ चूर्णकर ३२ सेर पानीमें औटावे। अष्टमास सपरहनेपर छानकर १ सेर शुद्धगुग्गुलु डालकर पकावे। जब गुग्गुलु गलकर रावके सदशहोजाय तब निसोत, पीपल, सोंठ, मिर्च १-१ पल, शुद्ध सोनामाखी २ कर्प, शुद्धगन्धक २ पल, अजवाइन, विडङ्ग, कुष्ठ, खैरानमक, दन्तीमूल, त्रिफला ये १-१ कर्प लेकर इनका चारीक चूर्ण डालकर पकावे। जब गोली बघनेलायक होजाय तब उत्पारकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बघेहुए शोथ, क्षय, गण्डमात्र, कुष्ठमुदाय, सम्पूर्णपासी, दुस्तर वातरक इन सबको नष्ट करती है ॥ ४५२ ॥

४५३ भैरवरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं विषं द्रुं मरिचं चष्यचित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव सम्मर्द्यं वटिकां ततः ॥ १९९७ ॥
गुञ्जात्रयप्रमाणेन खादेत्तोयाऽनुपानतः ।
स्वरभेदं निहत्याशु भ्वासं कासं सुदुस्तरम् ॥ १९९८ ॥
र. सं., घ, र चं, र. सु, भै. र, स्वरभेदे ।

टि०—भैरव्यरसावल्यादौ मधुख स्यान्नेषु द्रुणस्थाने म्योषमिति
दृश्यते, तनु न सम्बद्धं प्रतिभानि मरिचस्य पृथक् सर्वत्रोपलब्धे
श्वसादौ द्रुणस्थानेनद्वयाद्य, तथा च श्वसभैरव इति नाम
स्थापितं विकाशामाऽधिकारं ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, बलनाग और शुद्धाग, मरिच,
चष्य, चित्रक सबसमभाग लेकर बारीक धूँगर भरकरके रससे
एकरोज मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली जलनेसाथ लेनेसे स्वरभेद, दुस्तरभास,
काश येसब नष्टहोतेहैं ॥ ४५३ ॥

४५४ भैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं प्रहीतव्यं रक्तिकाशतमात्रकम् ।
त्रिगुणां शर्करां लोहं निम्बदण्डेन मर्दयेत् ॥ १९९९ ॥
बाममात्रं ततो दद्याच्छुतखादिरच्युण्कम् ।
सूततुल्यं ततः कुर्यान्मर्दनात्कज्जलोपमम् ॥ २००० ॥
विंशति वटिकाः कार्याः स्थाप्या गोधूमचूर्णके ।
निःशेषानिःशुता ह्यात्वा पिडिकास्ताः कलेवरे २००१
भैरवं देघमभ्यर्च्यं बलिं तस्मै प्रदाय च ।
विधाय योगिनीपूजां दुर्गामभ्यर्च्यं यत्नतः ॥ २००२ ॥
वटिकास्ताः प्रयोक्तव्या भिपजा जानता क्रियाम् ।
दिवसत्रितयं दद्यात्तिस्रस्तिक्रो यिजानता ॥ २००३ ॥
चतुर्थांश्च समारभ्य एकामेकां प्रयोजयेत् ।
पथं चतुर्दशदिने नारोगो जायते नरः ॥ २००४ ॥
पथं शंकरस्य साङ्गमुष्णाऽङ्गं कृतमन्त्रि च ।
कुर्यात्साकाङ्क्षमुत्थानं सद्गन्धोजनमिष्यते ॥ २००५ ॥
जलपानं जलस्पर्शं कदाचन न कारयेत् ।
दुःसहायान्तु तुष्ण्यायामिश्रुदाडिमकादिकम् ॥ २००६ ॥
शौचकार्येऽप्युष्णवारि वाससा प्रोञ्छनं द्रुतम् ।
वाताऽऽतपाऽभिसम्पर्कान् दूरतः परिचर्जयेत् ॥ २००७ ॥
मेघाऽऽगमे घा शीते वा कार्यमेतद्विजानता ।
मुखरोगे तु सञ्जाते मुखरोगहरी क्रिया ॥ २००८ ॥
धमाऽऽधभाराध्ययनस्वप्नालस्थानि वर्जयेत् ।
ताम्बूलं भक्षयेन्नित्यं कार्दादिषुवासितम् ॥ २००९ ॥
क्रिया श्लेष्महरी युक्ता यातपित्ताऽविरोधिनी ।
लवणं वर्जयेद्वृद्धं दिवा निर्द्रां तथैव च ॥ २०१० ॥
रात्रौ जागरणञ्चैव स्त्रीमुखालोफनन्तथा ।
सप्ताहद्वयमुत्कम्य स्नानमुष्णाम्बुना चरेत् ॥ २०११ ॥

पथ्यं कुर्याद्वितमिदं जाङ्गलानां रसादिभिः ।
व्यायामार्घं वर्जनैयं याधन्न प्रकृतिं भजेत् ॥ २०१२ ॥
एवं श्रुतविधानस्तु यः कारोत्येतदौषधम् ।
स एव पापरोगस्य पारं याति जितेन्द्रियः ॥ २०१३ ॥
पिडका विलयं यान्ति बलं तेजश्च वर्धते ।
रुजा च प्रशमं याति प्रथियशोधश्च शाम्यति ॥ २०१४ ॥
अस्थनां भवति दाढ्यश्च आमवातश्च शाम्यति ।
भैरवेण समाख्यातो रसोऽयं भैरवामिधः ॥ २०१५ ॥
र. सं., भै. र, उपदेशे ।

भाषा—शुद्धपारा १०० रती, शकर ३०० रती लेकर
लोहेकेपात्रमें नीमके डंडेसे १ पहर मर्दनकर प्रोरेकी बराबर
सफेदखैरकाचूर्ण डालकर कज्जली बनावे, इसकी २० गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ गोली सनेहुएगोहूके आठमें
बनलितकर भैरवको बलिदेकर योगिनी और दुर्गाकी पूजाकर
निगलवादे । तमामशरीर फूटगवाहो तथा पिडकाओंसे व्याप्त
होगयाहो तो तीनरोजतक ३-३ गोलियादे, चौथे दिनसे १-१
गोली ११ दिनतकदे । ऐसे १४ दिनमें मनुष्य बीरोग होजा-
यगा । पथ्यमें थोड़ाही और शकरनेसाथ गरमगरम देवे । एकदम
मूत्र लगे उसबच एकवार भोजनदेवे, जलपान और जलस्पर्श
मूलकरमी न करे । यदि अस्वच्छानुष्णाहो तो ईल और अनार-
प्रशक्तिरसदेवे । शौचकार्यमेंही गरमपानीसे प्रक्षालनेकेनाद तुर्त
कपड़ेसे पोंछाडले । वायु, धूप और अमिका दूरेसे परित्याग-
करे । वर्षा अथवा शीतकालमें श्वसप्रयोगका करना उचितहै ।
शुद्ध आकर दु सद्गहोनेपर सुप्रयोगको दूरकरनेवाली क्रियाकरनी ।
परिधम, मार्गचलना, भार उठाना, दिनका सोना, रात्रिजाग-
रण और आलस्य इनको छोड़दे । मुहका स्वाद खराबहोनेपर
कपूरखैररससे वासित पान खावे । वातपित्तकी अविरोधक श्लेष्म
हर क्रियाकरनी, नमक और खटाईको छोड़दे स्त्रीके मुखतक-
को न देखे । चौदहदिनकेयाद गरमजलसे स्नानकरे और
जहली जानवरोंके मांसरससे हितकारकपथ्यले । जबतक प्रकृ-
तिलय न हो तबतक शरिभ्रम न करे । जो हस्तहृदय स्थयकरता-
हुआ इस औषधिका सेवनकरेगा वही जितेन्द्रिय इसपापरोगसे
छुटेगा । इसके सेवनसे फुडिया नष्टहोजातीहै बल और तेज
बढताहै । पीडा, गाँठ और सूजन तथा आमवात नष्टहोजातेहै
हृदिया मजबूत होजातीहै ॥ ४५४ ॥

४५५ भैरवरसः (तृतीयः)
द्विगुणितशुचिगन्धं पारदं कण्यकाङ्गि-
दिनमृदितमशेषं विन्यसेत्कूपिकायाम् ।
यसनमृदवलितं सप्तशः सिकते त-
द्विषच तरणियामं वह्निवृद्ध्या क्रमेण ॥ २०१६ ॥
तदनु दरदतुल्यं कूपिकानाललक्षं,
रसममलमतन्द्रो मूर्च्छितं चाददौत ।
हरिदलविज्याम्भोमर्दितं चातपे तत,
त्रिगुणितमुनिवारान सप्तहृत्को विमर्द्य ॥ २०१७ ॥

क्षितितलगतयन्त्रे सङ्ख्यद्वात्सजाती,-
फलगलितसुतेलाङ्गैरवोऽयं द्विवलुः ।
निशि सह सितया यैः सेवितो दुग्धमोज्यै,-
र्द्धयति बहुशुक्रं नान्यथा यावदुक्तिः ॥ २०१८ ॥
र. श. , टो., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा गन्धक २ भा लेकर नीलवर्णक ज्वली-
कर धौङ्गारके रससे एकदिन मर्दनकर सुराकर ६-७ कपड़
मिट्टी दीहुई आतशीशीशीमें रखकर बालुकायन्त्रमें १२
पहरकी कमरुद अग्निदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर रसको निहालकर
दुल्सी और भागके रसोंसे २१ रोज मर्दनकर गोलावनाय
भूकरयन्त्रमें स्वेदितकर लौंग और जायफलसे निकालेहुए
तेलमें २-४ भावनाए देकर रखओड़े । इसमेंसे ६-६ रती
क्षत्रकेसाथ सेवनकरके ऊपर दूधपीनेसे धातुगतमस्तपिमार
दूरहोतेहैं । रात्रिमें विषयसे २ घंटे पहिले लेनेसे यह शुक्रत्व-
म्भन करता है पर विषयकी अभिलाषासे इसका सेवन किया
जायतो उसदिन केवल दूध लेनाचाहिये । इसका हमेशा सेवन
रखनेसे समस्तरोग दूरहोतेहैं ॥ ४५५ ॥

४५६ भैरवरसः (चतुर्थः)

शुवर्ण पारदं कान्तं सूतं सर्वं समं भवेत् ।
शतावर्षायाः शिफाद्रावै भांघयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१९ ॥
त्रिदिनं निफलाक्याधै भृङ्गद्रावै दिनत्रयम् ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां भक्षयेद्भैरवं रसम् ॥ २०२० ॥
मापैकैकं घर्षमात्रं जीवेच्चन्द्रार्कतारकम् ।
मूलचूर्णं शतावर्षायाः कृष्णाजपयसा युतम् ॥
पलेकैकं पिबेच्चानु क्रामकं परमं हितम् ॥ २०२१ ॥
र सं, रगायनस, रगायने ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, कान्तलोह इनकीभस्में समभागलेकर
शतावरी, शिफला और भंगराके अन्नस्वसोंसे ३-२ दिन मर्दन-
कर रखओड़े । इसमेंसे १-१ मात्रा मधु और पीकेसाथ १
वर्षनक निरन्तर सेवनकरनेसे दीर्घायु होताहै शतावरीका चूर्ण ४
तोले कालीबकरीक दूधके साथ ऊपरसे लेनेतो शरीरमें इसका
क्रामण होताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ भैरवरसः (पञ्चमः)

शुक्रं रसं समाहृत्य वेदमाश्रयणं शुभम् ।
अन्नक गन्धकश्चैव तावन्मात्रं प्रदापयेत् ॥ २०२२ ॥
श्वेतं सौवीरश्चाऽपि चतुर्धाद्वयं सैन्धवम् ।
जम्भीरस्य च नीरेण मर्दयेत्सर्वमेकतः ॥ २०२३ ॥
निक्षिप्य काचकूप्यां तपिरुद्धय चाऽतियत्नतः ।
वालुकाभिः समापूर्य याममात्रं ततः परम् ॥ २०२४ ॥
अग्निञ्च मध्यमं क्षुपांचतः शीतं समुद्धरेत् ।
कनकस्य पलायध्यातप्यं सूतं विधाय च ॥ २०२५ ॥
मासिकस्य पलञ्चाऽत्र गन्धकस्य चतुष्टयम् ।
द्वयमेकत्र तदहत्या गन्धकः मासिकन्तया ॥ २०२६ ॥

हेम' पत्रञ्च तन्मध्ये धृत्वा रक्षा शरावके ।
उपर्यपि भयेच्चाऽन्यः शरावः सन्धिमुद्रितः ॥ २०२७ ॥
कुञ्जराख्यः पुटो मुख्यस्तत्र देयः सुसंयतः ।
स्वाङ्गशीतं तमादाय भस्मीभूतञ्च काञ्चनम् ॥ २०२८ ॥
सूतं तच्चाऽपि सञ्चर्य पूर्वसूतेन मेलयेत् ।
ज्वालामुखीरसैः सूतं मर्दयेदेकतोऽपिलम् ॥ २०२९ ॥
ततो गन्धेन हविषा रसञ्च मर्दयेद् दृढम् ।
रुत्वा तद्गोलकं सर्वं मृन्मृषान्तगतञ्च तत् ॥ २०३० ॥
विमुद्द्रच सकलं भाण्डे मृन्मये तत्र दीयते ।
अग्निं हि बालुकाभिस्तं दिनसप्तावधि रथ्या ॥ २०३१ ॥
अग्निं तत्र शनैः कुर्याच्छीतमादाय पारदम् ।
विचूर्ण्य रस्यते भाण्डे राजते वाऽथ काञ्चने ॥ २०३२ ॥
शुद्धामेकामतो दद्यात्प्रतिवासरमुत्तमम् ।
कासे श्वासे ज्वरे मेहे गुल्मे दुष्टक्षये तथा ॥ २०३३ ॥
श्लेष्मेण मधुना साकं रसं शुग्मुलुनाऽथवा ।
धृतेन सह दातव्यः कुष्ठे कर्मायं वरामवम् ॥
अग्निमान्द्ये च दातव्यो रक्तारोगे महारसः ॥ २०३४ ॥
रसि, रक्तारोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, अन्नकगन्धक और लोह
सुरमा ४-४ पल, सेंवानमक १ पल लेकर सवरी कजलीकर
जमीरीके रससे १-२ रोज मर्दनकर २-३ कपड़मिट्टीदीहुई
आतशीशीशीमें ढालकर मुद्दन्दरकरदे । फिर बालुकायन्त्रमें
रख एकाहरकी मध्यम अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निहाल
कर रखओड़े । एकपल सोनेके वारीकपत्रकराने शुद्धमोनामापी
१ पल और गन्धक ४ पल लेकर वारीक चूर्णकर दारासम्पुष्टमें
सोनेकेपत्रोंके कालीधे रतकर मजपुष्टकी आचरे । स्वाङ्गशीतल
होनेपर सोनेकी सहमको तिलाकर पहिलेसमें मिलाकर दूरदूर
और शय्यकेशीसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय मिर्गी
सूयाने बन्दकर बालुकायन्त्रमें रखकर ७ दिनकी मन्द आचरे ।
स्वाङ्गशीतलहोनेपर निहालकर सोने अथवा चादीके पात्रमें
रखओड़े । इसमेंसे १-१ रती रोजाना त्रिकुटु और मधुकेसाथ
अथवा मूलक्रेसाथ अथवा पीकेसाथ देनेमें वाय, श्वात, ज्वर,
प्रमेह, गुल्म, दुष्टक्षय और मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै ।
कुष्ठमें पीकेसाथ देकर त्रिन्वाका धाय देना । इसमें रक्षाभि
तमामरोग दूरहोगे ॥ ४५७ ॥

४५८ भैरवरसः (षष्ठः)

पीतेन गन्धकेनेव तुल्यः स्याच्छुद्धपारदः ।
लाङ्ग्यफेनकासीससूताचूर्णान्तु पद्मणम् ॥ २०३५ ॥
कृष्णोन्मत्तरसेनैतद्भावयेद्यं दिनप्रथमम् ।
यद्दुग्धमप्रमाणेन बन्धनीया सुषेयंटी ॥ २०३६ ॥
नारङ्गाऽऽर्द्धरसैः द्वया सन्निपातविमुक्तये ।
ज्ञानं जलेन दातेन भोजनेन हृषिमकःकम् ॥
सन्निपातमसाप्यन्तु हन्त्यसौ भैरवो रसः ॥ २०३७ ॥
सो. स. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पात्रा १-१ तोला, शुद्ध करि हारी, अफीम और कमीस २-२ तोले लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर कालेधतूरेके रससे ३ दिन भावना देकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नारद्री और अदरक के रससे देनेसे और शीतजलसे छानकराकर दहीभात खिलानेसे यह असाध्य सन्निपातको दूरकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ भैरवरसः (सप्तमः)

पीतेन गन्धेन समश्च सूतः

सत्त्वं गुह्यज्या अपि तत्समानम् ।

शिलादिपि चाऽप्यपराजिता च

भागस्त्वमीषां द्विगुणो नियोज्यः ॥ २०३८ ॥

कटुत्रिकाऽङ्गोलकदेवदारय-

खिभागिकाः स्युः परिचूर्ण्य सर्वम् ।

तथा रसैः शिष्टद्वन्द्वैश्च

सम्मर्द्य सार्द्धं गुटिका विधेया ॥

बलप्रमाणा विषमे त्रिदोषे

कर्पूरसार्द्धं मिषजा प्रदेया ॥ २०३९ ॥

यो स, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पात्रा, गिलोयसत्व १-१ भाग,

शुद्ध अथवा भस्मकियाहुआ सोमल, कोयल २-२ भाग, त्रिकटु, अङ्गोलकीछाल और बन्दाल ३-३ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर सहजिमकी जड़कीछालके रससे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कपूरकेसाथ देनेसे त्रिदोष और विषमज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ४५९ ॥

४६० भैरवरसः (अष्टमः)

सूतं गन्धं लोहमण्डूकित्तं

सर्वैस्तुल्यो घत्सनाभो नियोज्यः ।

आर्द्रं भृङ्ग बीजपूर जयन्ती

निर्गुण्डयोषां बलप्रूतं द्वैवैश्च ॥ २०४० ॥

युक्त्या वैद्यो भावयित्वा विधेया

शाणाऽर्द्धाऽर्द्धाः सन्निपातस्य तुल्ये ।

शीते नीरे निर्मलैः छानमत्र

पत्ये दुग्धं शर्करामि हितञ्च ॥ २०४१ ॥

यो स, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पात्रा और गन्धक, लोह और मण्डूकभस्म समभाग, सबकी बरानर शुद्धबलनाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर अदरक, भगरा, विनोरा, जैत, निर्गुण्डी इन प्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उषितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात नष्ट होता है उबेपलसे रोगीको छानकराना और पथ्यमें शकर, दूध और भात देना ॥ ४६० ॥

४६१ भैरवरसः (नवमः)

आदौ नागरसस्य योगविधया गद्याणकं निःक्षिपेत्,
पकैकं विषशुल्यलोहगगनं तालञ्च गद्याणकम् ।

एतत्वे जातिदलस्य चासकरसैर्भृङ्गोद्भवैः सतथा,

सिद्धः सिद्धरसखिदोषशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥

किंकायैः कथितैश्च किंशुकभैः किंचाऽग्निदाहैर्घनैः,

किंचा मद्यविभूषणैः किमखिलैरस्यैरुपायैरपि ।

हेलानिर्जितसर्वरोगनिवहप्रागल्भ्यलब्धध्वजः,

प्रातोऽयं यदि सन्निपातशमनः स्वामी रसो भैरवः ॥

मुक्तैः सर्वचिकित्सकैः किमखिले जाते त्रिदोषे श्वरे ।

बलद्वन्द्वमितं हि भैरवमुं सम्यङ्गियुज्याऽऽदरात्,

पश्चाच्चेदनुपानकल्पनमदौ जातीकलं सज्जलं,

खानं भक्तमशालिकं दधिसितामिश्रञ्च दद्याद्दुधः ॥

र. दो, र का., र (मा), सन्निपाते । र (मा) सन्निपातभैरव

इति नाम ।

टि०—रसेभविष्युत्वाऽत्र लोहविमारमान्विते । सतकृत्वखिदोषा न्करोऽय भैरवा भवेदिति भैरवनाम्ना रसकामभेदु रमावतार (माणि क्यचन्द्र) यो स्वतन्त्र पाठ कल्पित, परन्त्वस्माद्भूतगुणोऽस्ति हरि- ताहरहितलाभ्यूनद्रभ्यभावनावत्त्वाच्चाऽनो न पृथक्तया सदृशैति इति विद्वद्भिर्विभावनीयम् ।

भाषा—नित्य नागभस्म, शुद्धबलनाग, तावा, लोह, अन्नक और हरितालभस्म ६-६ मासे लेकर सबका बारीक चूर्णकर जाविनी, अहसा, भगरा इनकेरसोंसे ५-५ रोज मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उषितानुपानके साथ देनेसे यह सप्ताम व्याधियोंको नष्टकरताहै । इसरसके रहतेहुए कथित (वाय), टेसुप्रशुतिका सेक, अग्नि- प्रशुतिसे दाह, मय अथवा, आभूषण इनसमस्त उपायोंकी क्या उत्तरतहै क्योंकि यह अकेलाही सबरोगोंको दूरकरदेताहै फिर अधिकतरलोफ उठानेकी क्या आवश्यकताहै जिससमय वैद्योंने रोगीको छोड दियाहो तब त्रिदोषज्वरमें ६-६ रत्तीकी मात्रादेकर जायफल और शोड़ागमजल देवे । स्नानकराके लाल चावलदही और शकरमिलाकर देवे ॥ ४६१ ॥

४६२ भैरवीवटी (प्रथमा)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं मर्दयेद्विशुकद्रवैः ।

दिनं भाव्यञ्च मर्द्यञ्च शोषयित्वा तु भृङ्गजैः ॥ २०४५ ॥

चतुर्धा भावयेद्वावैस्तिरुपण्यां प्रवैस्तथा ।

भावितञ्च विशेष्याऽथ चूर्णयेद्बलगातितम् ॥ २०४६ ॥

चूर्णतुल्यं सूतं ताभ्रं ताभ्रादृष्टांशकं विषम् ।

कृष्णाशीतविडङ्गानि कृष्णाजीराऽऽसनं बला ॥ २०४७ ॥

ताभ्राऽर्द्धं प्रतिचूर्णं स्यात्सर्वमेकान कारयेत् ।

यामैकं भृङ्गजद्रवैर् मर्दयेत्कल्कत्वं गतम् ॥ २०४८ ॥

स्निग्धभाण्डगतं पाच्यं पिण्डं यामं कृष्णाऽग्निना ।

घणमात्रा घटी योऽया चित्रकाऽर्द्धकसैन्धवैः ॥ २०४९ ॥

सम्पक् चिद्रोपजं हन्ति सत्रिपातं सुदारुणम् ।

भैरवी गुटिका ख्याता दध्यत्रं पथ्यमाचरेत् ॥२०५०॥

नि. र., र. मु., र. को., र. का., र. क. यो., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भा., गन्धक २ भागलेखर नीलवर्ण-
कजलीकर ईसकेरसे १ दिन मर्दनकर सुखाय भंगरा और
दुग्धकेरसकी ४-४ दिन भावनाएँदेकर सुखाले । फिर बराबरकी
ताम्रमसम और अष्टमांश शुद्धबलनाग, पीपल, कपूर, विडङ्ग,
कालीजीरी, असन, बला ये प्रत्येक ताम्रसे आधे मिलाकर १-२
पहर घोटकर भंगरेकेरसे एकरोज् मर्दनकर चिकने वर्तनमे
डालकर मन्दाभिमे १ प्रहर परावे । गोलीबननेलायक होनेपर
बनेप्रमाण गोलिये बनाकर रखाओड़े । इनमेसे १-१ गोली
चित्रक और सेंधानमककेसाथ देनेसे दाहणसत्रिपातको यह
नष्टकरतीहै इसमें पथ्य दहीभात देना ॥ ४६२ ॥

४६३ भैरवीवटी (द्वितीया)

पाठापारद्गन्धकाऽमृततलतामाक्षीकृतालाऽनलैः,
काश्मीरीविपतिन्दुलाङ्गलिजटापृष्ठीसर्वालौपथैः ।
ककौट्याऽपि च मोक्षया वृहतिकानिर्गुण्डिवारापृथक्,
भाव्यं, सप्तदिनं जयेत्सविपमान्दभाञ्जराण्कोलिका ॥
र. प., ज्वरः ।

भाषा—पाठा, शुद्ध पारा और गन्धक, गिलोय, सोना-
माती, हरिताल, चित्रक, भंगरा, शुद्ध कुचिला और कलिहारीकी
जड़, सुल्हटी, हीराबोल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर
पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमे मिलाकर खेरसा, पाट, बन-
भाडा, संभाळ इनप्रत्येककेरसोंसे ७-७ रोज् भावनाएँदेकर बरफी
गुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखाओड़े । इनमेसे १-१ गोली
दहीकेसाथ देनेसे सयोज्वर और विषमन्वर नष्टहोतेहै ॥४६३॥

४६४ भैरवीवटी (तृतीया)

पिप्पली मरिचञ्चैव टङ्गुणं दरुं तथा ।
शुद्धं मनःशिलागन्धं हरितालं तथैव च ॥ २०५२ ॥
विशुद्धं पारदं श्लोकं तथा शुद्धं विपं स्मृतम् ।
रौप्यमृतिश्चाऽस्रकञ्च पलमानं पृथक्पृथक् ॥२०५३॥
धूर्णं सूक्ष्मं विधायाऽथ भावयेत्तु रसैः पुनः ।
कदलीमूलकं चिपं घत्तूरस्य च मूलकम् ॥ २०५४ ॥
पृथक्पृथक् पलमितं कुट्टयित्वा जले क्षिपेत् ।
पांडशशो क्याथयित्वा घस्त्रपूतं समाचरेत् ॥२०५५॥
रत्नैश्च क्षिप्त्या भावयेत्तु कुशामुद्रनिभां घटीम् ।
भैरवास्या घटी ख्याता रसशङ्करमञ्जिता ।
कासभासांसी निरुन्धेया सर्वन्याधिघिनानाशिनी २०५६
र. मु., श्वाते ।

भाषा—पीपत्र, मरिच, शुद्ध श्लोका, शिगरिक, मीनसिल,
गन्धक, हरिताल, पारा और बलनाग, चादी और अत्रमसम
१-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धकी नीलवर्णकजलीमे
मिलाकर बेन्दासन्द, चित्रक, घत्तूरकीज १-१ पल लेकर अला

२ कूटकर १६ गुने पानीमें काथकरे । चतुर्थावशेष रहनेपर
छानले फिर इसकायसे पूर्वोक्तसको मर्दनकर भंगराकर गोलिये
बनाकर रखाओड़े । इनमेसे १ अथवा २ गोली उचितानुपानके
साथ देनेसे कास श्वासादि समस्तदोषोंको यह नष्टकरतीहै ४६५

४६५ भैरवीवटी (चतुर्थी)

तिन्तिडीकं विपं शुद्धं दधशहं नियोजितम् ।
जातीफलं कुट्टियुतं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २०५७ ॥
रसं गन्धं समरिचं निम्बूरसविमर्दितम् ।
चित्रकेण तु चारैकं घटिका भापमात्रिका ॥ २०५८ ॥
देया यत्नेन सततं नाम्ना मन्दाग्निभैरवी ।
कासे श्वासे प्रतिश्याये विपरोगादिके ज्वरे ॥
सर्वरोगेषु विलयाता घटी भैरवसञ्ज्ञिता ॥ २०५९ ॥
र. मु., अजीर्णः ।

भाषा—तिन्तिडीक (शामक यूनानी), शुद्धबलनाग, शह
भसम, जायफल, इलायची, शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच सब
समभाग लेकर नीरु और चित्रके रसे १-१ भागना देकर
१-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखाओड़े । इनमेसे १-१ गोली
उचितानुपानके साथ देनेसे मन्दाग्नि, कास, श्वास, प्रतिश्याय,
विष, ज्वर इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४६५ ॥

४६६ भोगसुन्दरीवटी

हिङ्गुलञ्च चतुर्जातं लवङ्गौषधचन्दनम् ।
जातिजं केशरं कृष्णा त्याकल्लमहिफेनकम् ॥ २०६० ॥
कस्तूरीन्दु समं सर्वं तत्समे धिजयासिते ।
धुद्रकोलमिता कार्या घटिका भोगसुन्दरी ॥ २०६१ ॥
रसायनसं., र. को., वृ. यो. त, चाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धशिगरिक, चातुर्जात, लौंग, सोंठ, सफेदचन्दन,
जायफल, केशर, पीपल, अकलवरा, अफीम, कस्तूरी, कपूर
सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर इसकी बराबर भाग और छर
मिलाकर छोटैबेबराबर गोलिये बनाकर रखाओड़े । इनमेसे
१-१ गोली दूधमेसाथ खानेसे यह बीदेका स्तम्भन करतीहै
और मन्दाग्नि, सद्ग्रहणी तथा श्वात कास को नष्टकरतीहै ४६६

४६७ भोगपुरन्दरीवटी

आकारकर्मं प्राद्यं पलेकं केशरन्तया ।
डिड्डञ्च फले जात्याः पञ्चदशप्रमाणकम् ॥ २०६२ ॥
विटङ्गं देयकुसुमं टङ्गकं दरुं मतम् ।
तन्मानमहिफेनञ्च जलेनैव विमर्दयेत् ॥ २०६३ ॥
सूक्ष्मकोलफलोन्मानां गुटिका रचयेद्बुधः ।
एकैकां भक्षयेद्वात्रौ पयः पयं यथेच्छितम् ॥ २०६४ ॥
किञ्चित्पुणं बलं कृत्वा गुटी भोगपुरन्दरी ।
धीयैस्तम्भकरी नृणां स्त्रीणां सोऽप्यप्रदायिनी ॥२०६५॥
र. कु., पौदल्पन्मे ।

भाषा—अमरना १ पल, केशर २ टंक, जायफल ५ टन, लौघ ३ टंक, शुद्धसिंघरिफ और अफीम १-१ टंक लेकर सबका बारीकचूर्णकर जलकेसाथ १-२ पहर घोटकर छोटवेर बराबर गोलिया बनाकर छायाशुष्कार रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रतिसमयसे २ घंटेपहिले दूधकेसाथ लेनेसे शरीरमें तेजी जाकर वीर्यका स्तम्भनकरतीहै और स्त्रियोंको आनन्ददेतीहै ४६७

४६८ भ्रमनाशिनीचूर्ण

रसं त्रिपंगन्धरुद्रन्दशकौ समाश्र संघं त्रिगुणोपणञ्च ।
सशृङ्गवेरेण सम विमर्द्य वटीञ्च कुपान्मरिचप्रमाणाम् ॥
कृष्णा दाताह्वा शुण्ठो च पथ्या यासा पलंपलम् ।

पद्मलो सुगुडश्चाऽथ गुडिका भ्रमनाशिनी ॥ २०६७ ॥

ब्राह्मीरसेनाएगुणेन हैय-

इचीनमेभिः परिपाचनीयम् ।

ब्राह्मीवचापिप्लिकुकुप्रविधा-

नीलोत्पलैः सन्धवामिश्रितैश्च ॥ २०६८ ॥

यो. सं, रसायन स, रससारसङ्गह, र. सि, भ्रमरोगे ।

टि०—रसायन म, रससारसङ्गह, र सि, एणु नागार्जुनीति नाम्ना पथा योगेऽस्ति सोऽस्तिभेदवान्तर्भवति । नागरथाने दङ्गणन्दु भ्रमात्सजातमिति बौद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक, नागमस १-१ तोला, मरिच ३ तोले लेकर बारीकचूर्णकर शारेगन्धककी नील वर्णकजलीमें मिलाकर अदरखके रसमें मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । यह प्रथमगुडिना तैयारहुई । पीपल, सोंक, सोंठ, हर्द, धमाता १-१ पल, पुरानागुड ६ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर गुडमिलाकर ३-३ माशेरी गोलियें बनाकर रखछोड़े, यह द्वितीयगुडिका तैयारहुई । ब्राह्मी, बच, पीपल, कुंड, सोंठ, नीलोपर और सैधानमक इनका कल्क डालकर ८ सेर ब्राह्मीके रसमें १ सेर मन्सन पकाकर रखछोड़े । फिर भ्रमरोगीके वमनविरेचनादिते शुद्धकर प्रात कालमें १ गोली प्रथम रसमेंसे ब्राह्मीरसके साथदे । मध्याह्नमें द्वितीय गोली दे और रात्रिको दूधके साथ यथाशक्ति ब्राह्मीपूत दे । इसप्रयोगसे समस्तप्रकारके भ्रम, अपस्मार, श्वास, कास और वातकुलम नष्टहोते है ॥ ४६८ ॥

४६९ मकरध्वजरसः (प्रथमः)

स्वर्णभागौ च चङ्गश्च मौक्तिकं कान्तलोहकम् ।
जातीकोपफले रूप्यं सिन्दूररसकांस्थिकम् ॥ २०६९ ॥
कस्तूरी विद्रुमं चन्द्रमन्त्रकञ्चैकभागिकम् ।
स्वर्णसिन्दूरतो भागांश्चत्वारः कल्पयेत्सुधे ॥ २०७० ॥

गुञ्जा द्विगुञ्जं बहलं चा सम्बन्धोश्च यलाऽथलम् ।
यथासात्सङ्गुपानेन सर्वरोगेषु क्षापयेत् ॥ २०७१ ॥
नातः परतरः श्रेष्ठः सर्वरोगनिपद्मनः ।
सर्वलोकहितार्थाय शिवेन परिकीर्तितः ॥ २०७२ ॥
र. सं, र. सु, रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा—तोनेकीभस्म २ भाग, वह, मोती, कान्तलोह, जावित्री, जायफल, चांदी और कांस्थमस, रससिन्दूर, कस्तूरी, प्रवालभस्म, कपूर, अन्नकभस्म १-१ भाग, स्वर्णसिन्दूर ४ भाग लेकर सबको मिलाकर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रतीतककी माथा बलाबल देखकर तत्तद्वोगहरानुगुणवेसा । देनेसे यह समस्तरोगोको दूरकरताहै । इसकी बराबर सर्वरोगहर दूरी औपधि नहींहै ॥ ४६९ ॥

४७० मकरध्वजरसः (द्वितीयः)

सिन्दूरं हेमलोहश्च देवपुष्पं सचन्द्रकम् ।
जातीफलं मृगमदञ्चैकत्र परिमर्दयेत् ॥ २०७३ ॥
पर्णाम्भसा ततः क्रुयाद्वटिकां बल्लसम्भिताम् ।
सेविता छागपयसा प्रमेहांस्तत्कृतान्गान्नाम् ॥ २०७४ ॥
फलेऽप्यं धातुक्षयं फासं जीर्णञ्च विषमञ्जरम् ।
रसोऽयं क्षापयेत्तूर्णं मकरध्वजसञ्चकः ॥ २०७५ ॥

भै. र, प्रमेहपिटिकाऽधिमारो ।

टि०—जातीफल लवङ्गत्र चूर्ण मरिच तथा । प्रत्येक ताएक दसवा मुक्कंरथ च मापकम् ॥ अण्डज मापमानत्र सर्वतुल्यमपेश्वरम् । यत्नता मर्येतरत्नवे चतुर्गुणा वनी चरेत् ॥ एष चन्द्रोपधा नाम रसो वाजीकर पर । हस्तिरोगानुपशोध बलवीर्याऽशिवर्धन ॥ रति भैषज्यरत्नावल्यां ध्वजमहाऽधिमारो पाठ्यं हृदयेते सोऽस्तिभेदवान्तर्भवनीय पृथक् पाठस्याऽ नावश्यकम् ॥ प्रमाणतैविचर्याऽप्यनावश्यकवल समप्रमाणेनाऽद्भुत कार्यकरत्वात् ।

भाषा—रससिन्दूर, मुर्ग और लोहभस्म, लौघ, शुद्धकपूर, जायफल, कस्तूरी समभाग लेकर पानरेरसे एररोज मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे बकीके दूधसे १-१ गोली सेवनकरनेसे समस्तप्रमेह, पण्डता, धातुक्षय, वास, जीर्ण और विषमञ्जर इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ४७० ॥

४७१ मकरध्वजरसः (तृतीयः)

यज्जहेमार्कसुताऽन्नलोहभस्म क्रमोत्तरम् ।
सर्वं कन्याद्रवे मर्द्यं शातरमस्याश्च ब्रवेत्स्यहम् ॥ २०७६ ॥
सदुद्धा काचकृष्णन्त वातुकायां ज्यहं पचेत् ।
तत्कटकं मुशालीफ्याथै यन्ना कर्कशैरसंगुतेः ॥ २०७७ ॥
द्विनेकं मर्दयेत्खल्वे रुद्धाऽन्तर्भूधरे पुटेत् ।
यामादुद्धृत्य सञ्चूर्ण्यं सिताकृष्णात्रिजातकैः ॥ २०७८ ॥
समैः समै विमिश्रयाऽथ गुञ्जैकं भक्षयेत्सदा ।
भाग्धीं मुशाली यष्टीं वानरीयीजकं समम् ॥ २०७९ ॥
चूर्णं सिताऽऽज्यगोक्षीरैः पलाऽर्द्धं पाययेदनु ।
कामिनीनां सहस्रैकं रममाणो न मुहति ॥
सेवनाद् दृढनाथः स्याद्रसोऽयं मकरध्वजः ॥ २०८० ॥

रसायन त, रसायने ।

टि०—चतुर्बकालाशिरद्रे । उपद्रान्द्रव्याणि ब्रह्मज्ञाऽभस्वर्णाङ्गि-
पारतीक्ष्णानि ब्रह्मवृद्धानि सन्ति, द्वितीयबालनष्टके च ब्रह्मज्ञाऽभस्व-
भाकीक्ष्णानि ब्रह्मवृद्धानि सन्ति एव पद्ममन्दकामन्देवैऽपि, तृतीय-
मकरध्वजश्च च कर्कशकामुगाऽभस्वोहभस्मानि सन्ति इत्यत्र भाषणतो

बहन्तरं न प्रनीयते परन्तु प्रमाणे भावनासु पादाऽप्राक्यो नि क्षेपत्रव्येषु च महदन्तरात्स्वल्पव्या एव चत्वारः पादाः स्थापिता इति बोद्धव्यम् ।

भाषा—हीरा १ भा, सोना २ भा, तावा ३ भा, पारा ४ भा, अश्रक ५ भा, लोह ६ भा, इनसवरीभस्मं लेकर १-२ पहर मर्दनकर घीचुमार और सैमलक्रीडालके रसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर सुगानर ६-७ व ११ मिमी दी हुई आतशीशीशीमें भरकर ३ रोजतक बालुकायन्त्रमें पाकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुखलीवेकाडे, सेहुण्ड और आकके दूधसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय धारावसम्पुटमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें रख १ पहरकी आच देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे बराबर दायर, पीपल और त्रिजात मिलाकर रखोडे । इसमेंसे १-१ रसी खाकर पीपल, सुसली, सुलहड़ी, केनाचनेबीज सब समभागवा चूर्णकर शकर, धी और गायके दूधकसाय २ तोले लेनेसे बहुतसी त्रियोंकेसाय सम्भोगकरताहुभाभी स्वक्षित नहींहोता । विरकालकक मेवनरनेसे दीर्घायु होता है ॥४७१॥

४७२ मकरध्वजरसः (चतुर्थ)

लोहं वलिः पारदभस्म सर्वं
तुल्यं धनं गाधुरभोचताल्य ।
चतुर्भवं गोस्तनिकाश्वगन्धा-
खर्चुरिकामकैटिकावरीभिः ॥ २०८१ ॥
एषां लवान्सर्वसमांश्च खण्डं
स्यात्पञ्चभार्गुं सिकताऽधवाऽपि ।
सर्वं वरास्यायजलेन घृष्टं
वारान्दश ह्य च तथैशुवामि ॥ २०८२ ॥
कर्पप्रमाणं वटकञ्च खादे-
हृष्टं ततो विंशतिकर्पमानम् ।
पिबेदलं स्याद्रतिशक्तिसक्तौ
विचर्जनैर्यं मकरध्वजेन ॥ २०८३ ॥
र श, वाजीकरणे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारदभस्म १-१ तोला, अश्रकभस्म, गोरोस, मोचरस, तालमूली, चातुर्जात, बडीदाश, अशगन्ध, छुहारे, केवाचनेबीज, शतावर ये सब ३-३ माश लेकर सबका वारोक चूर्णकर इसचूर्णसे पचगुनी खाड मिलाकर त्रिफलाके वाचसे आठ, और ईसके रससे चारह भावनाए देकर १-१ तालकी गोल्या बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली गाकर पावभरदूध पीवता बहुतगी त्रियोंके साथ यष्टरमणकरमाफाहै और विरकालकक अचितासुपानकेसाय सेवन करनेसे समस्तरोगोंसे मुक्त होसक्याहै ॥ ४७२ ॥

४७३ मञ्जिष्ठादियोगः

मञ्जिष्ठा प्रापुयं वीजं जीरञ्च शतपुष्पिका ।
धार्मीफलञ्च दूदं गन्धकञ्च मन शिला ॥ २०८४ ॥
एतेषां समभागानां पूर्णं दृढमिते नर ।
अश्वयम्भुना साधे पतेत्सप्याऽमरी ध्रुवम् ॥ २०८५ ॥
र प्र, अरनरीरोगे ।

भाषा—मञ्जिष्ठ, सीरकेनीज, जीरा, सोंफ, ओबले, शुद्ध शिगरीफ, गन्धक और मैनसिल सन समभाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर रखोडे । इसमेंसे ४-४ माशो मधुकेसाय खानेसे पथरी गिपेट्तीहै ४७३

४७४ मणिपर्पटी

वज्रं मरकतं पुष्पमिन्द्रनीलं सुचूर्णितम् ।
रसं द्विगुणगन्धञ्च कज्जली कारयेद्बुधः ॥ २०८६ ॥
द्रावितां लोहपाने तु पर्पटधकारता नयेत् ।
निर्गुण्डी तुलसीशिमूधचूररविचङ्गिजेः ॥ २०८७ ॥
रसं व्योपववारम्भासुररसेरपि भावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेनाऽपि सप्तधा परिभावयेत् ॥ २०८८ ॥
एवं सिद्धो रसो नाम्ना विख्याता मणिपर्पटी ।
कासश्वासश्वयोन्मादपाह्नमौट्टरतमोम्रमान् ॥ २०८९ ॥
सन्निपातज्वराऽजीर्णघातव्याधिभगन्दरान् ।
नासिकागलगजात्रोगानपतन्त्रविमूचिकाः ॥
शुद्धाप्रमाणतो हन्ति तत्तद्रागानुपानके ॥ २०९० ॥

र र स, र र को, र क ल र को, नासारोगे ।

भाषा—हीरा, पत्रा, पुखराज और नीलक्रीभस्मं, शुद्ध पारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकर बेरकीलकडीके त्रियोलोंपर लोहेके पात्रमें गर कर भस्मोंको मिलादे । फिर ताजेयोवरपर रखेहुए बेलः पत्तेपर डालकर दूसरेलेनेपेतेमें टकरर तापेगोबरसे दवाद स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर टुनारा कज्जलीवनाय समान तुलसी, सहिनन, घनूर, आक, चिन्क, त्रिफुड, त्रिफला केलाकन्द इनके रसोंसे १-१ भावना दनेकेसद अदरससे रसरी ७ भावनाए देकर १-१ रतीकी गोल्या बनाकर रख छोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाय देनेसे बाण, श्वास, क्षय, उन्माद, नपुसकता, जहता, तम, भ्रम, सन्निपात, ज्वर, अजीर्ण, बालव्याधि, भगन्दर, नामिका और गलेकेरोग, अपतन्त्रर, हेजा, इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ४७४

४७५ मण्डूरचूर्णम्

शुद्धचूर्णञ्च मण्डूरं गाम्भेः पाचयेद्दिनम् ।
यज्ञवल्क्या रसेः पेप्यं चित्रतुङ्गुलसंयुतम् ॥
भक्षितं दृढमात्रञ्च हासाप्यं श्वयधुञ्जयेत् ॥ २०९१ ॥
र र, व रा, वै वि, शोयाऽधिकारं ।

नि-व रा, वै वि अन्थावत्रमण्डूरति नाम, चित्रतुङ्गुलान्तरि स्थाने स्थाने चित्रत्वक्भारमुनमिनि पाय ददव तप २०९१ ॥ ४७५ ॥

भाषा—मण्डूरभस्मको एकदिन गाम्भेमें पचाकर दृढमात्र रसों १ गन मर्दनकर सुगानर रखोडे । इसमेंसे ४-४ माश ही मात्रा १ तोला चित्रकके दूगोंक साथ दोसे दद अथाभ्यरोग को दूरकरतीहै ॥ ४७५ ॥

४७६ मण्डूरपाकः

पुरातनं वर्षशते व्यतीते
 किट्टं समानीय पलानि चाऽष्टौ ।
 त्रि.सप्तवेलं ज्वलनेतिततं
 मूत्रं गवां सित्तमथो विचूर्ण्य ॥ २०९२ ॥
 प्रस्थाद्विमानेन गवां जलेन
 सार्द्धं ततः पकमतीव गाढम् ।
 भाण्डालसमुत्तार्य कटाहकान्ते
 संस्थाप्य तापे परिशोषणीयम् ॥ २०९३ ॥
 मध्ये प्रदेया त्रिफला समाना
 तस्मिन् कृते सूक्ष्मपरगारूपे ।
 मूत्रेण पिण्डं विपुले शपाये
 युगे विनिर्माय चिमोचनीयम् ॥ २०९४ ॥
 इयं ततः कर्पटमृत्तिकाभ्यां
 संवेष्ट्य सन्ध्यां छगणैः कृतेऽग्नौ ।
 यामनयञ्च ज्वलमानग्रही
 क्रायेन तेन त्रिफलोद्भवेन ॥ २०९५ ॥
 संसिच्य संसिच्य तथा विधेयं
 धूमो यथा गच्छति याति शोषम् ।
 पक्वं समाहृत्य विचूर्ण्य मध्ये
 क्षेप्यं चतुर्थाराधिनष्टलोहम् ॥ २०९६ ॥
 पलैकमात्रां त्रिफलाजलेन
 ततोऽप्यु निष्काप्य चतुर्गुणासु ।
 कार्यं समादाय जलाद्विभागं
 किट्टं कटाहे परिमोचनीयम् ॥ २०९७ ॥
 चूर्णाहितं तं परिभावनीयं
 रसेन भूपस्य दिनं समप्रम् ।
 मुण्ड्या द्वितीये दिवसे रसेन
 शार्ङ्गलनीरेण दिने तृतीये ॥ २०९८ ॥
 पासादमुष्मात्प्रथमं पाको
 मण्डूरजाम्ना प्रथितो घरायाम् ।
 नागाऽनुनेन प्रकटीरतोऽयं
 हिताय लोकस्य निर्णीडितस्य ॥ २०९९ ॥
 शोफामपाण्डानलमन्द्रतायां
 भगन्द्रे कृच्छ्रमुदात्तिशूले ।
 प्लीहाभिभूदौ विमिकण्डरोगे,
 मण्डूरपाकः कथितो मुनीन्दैः ॥ २१०० ॥

र. (मा.) पाण्डुपिछारे ।

भाषा—वसमेकम् १०० वर्षपुरातनमण्डूर ८ पत्र लेहर
 बंदेहेकेकोयलेमि गरमकर २१ बार गोमूत्रमे पुसाकर बासीकचूना
 कर भाषमेर गोमूत्रकेगापाकादे और गण्डाहोनेर कान्तलोहकी
 कडाहीमे डालकर पूत्रमे मुगाले फिर इके बत्तार त्रिफलाका-
 चूर्णमिपाकर गोमूत्रमे मर्दनकर गोलकनाय बोराराधमे बन्द

पर कपडमिठी देकर ३ पहर बण्डोंकी अभिमे गरमकर त्रिफलाके
 काडेमे घुसादे । इसतरह बईवार करेके इममे चौथाभाग लोह
 भस्म मिलाकर एकपलत्रिफलाके अर्द्धांशेय काडेमे डालदे और
 अभिपर बत्तार बाधको जलादे । फिर अभिलताम, गोरम-
 शुण्ठी, और चित्रकके स्वरस अथवा हाथोसे १-१ रोत्र भार-
 नादेकर मुलाकर रखाडे । इसमेमे ३ रतीस ९ रतीसकफी-
 मात्रा सप्तद्रोणदात्रुपानकेसाथ देनेसे शोफ, आम, पाण्डु,
 मन्दागि, मूत्रकृच्छ्र, घूल, बवालीर, भगन्दर, गीहा, त्रिभि
 और बण्डरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ मण्डूरयोगः (प्रथमः)

शतवर्षं समादाय लोहसिद्धिपाकं शुभम् ।
 पलानि पञ्च तक्षुणं तुल्यशौद्रसमन्वितम् ॥ २१०१ ॥
 भद्रातकाऽऽप्यष्टशतं विनिक्षिप्य विदाहयत् ।
 तदक्षमात्रं तत्रेण पीत्वा जीर्णं च तक्रमुक्त् ॥
 पत्रं लभेत सप्ताहात्पाण्डुरोगी सुखं परम् ॥ २१०२ ॥
 ग. नि., पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षका पुराना लोहेकाकिट्ट ५ पल लेहर कूट
 डाले फिर इमकी बत्तार मयु और भिलवि ८०० नग डालकर
 जलादे । स्वातसीतण्डोनेकर कूटछानकर रखाडे । इसमेमे
 १-१ तोला छालेपाय पीकर छालहीपर रहनेसे सातदिनेमे
 पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ मण्डूरयोगः (द्वितीयः)

क्षुद्राह्वयञ्च निर्गुण्डो भृगुर्धो विभ्रिका तथा ।
 अरुकापांसंभृद्गाहभृद्गुराजविपाणि च ॥ २१०३ ॥
 तीर्यं पर्यटकं ब्राह्मी मूत्र्यमूत्र्यं च कार्यम् ।
 परण्डोऽतिशिया गुण्डो चित्राऽपामार्गमन्स्यटक् ॥
 एकैकपलमायेण गोमूत्राऽऽदकपाचितम् ।
 मण्डूरं जीर्णपाकञ्च क्षिपेद्रम्यरुण्डके ॥ २१०५ ॥
 युक्तोत्तरमिदं सादेकामलापाण्डुरोफजित ।
 श्वासकासशयहरं मण्डूरं सर्वरोगजिन ॥ २१०६ ॥
 र. क. यो., पाण्डुपिछारे ।

भाषा—दोनों मटकईया, निर्गुण्डी, सुरमही, कुंदर,
 सफेदमाक, कजरा, भंगरा, कालाभंगरा, समस्तशिर, सुगन्ध-
 बाला, पित्तपाक, प्राग्नी, पालमाक, मरोङ्गली, कंगीजीरी,
 एण्ड, अतीग, गोंड, चित्रक, अगमार्ग, मछेडी ये सब १-१
 पत्र लेहर जबकूटकर ४ तर गोमूत्रमे चतुर्थाराधेय कटाहके
 फिर छानकर उगमे १०० वर्षपुराणे मण्डूरका चूर्ण १ पत्र
 डालकर पकावे । इस जलजानेर मण्डूरका बासीकचूनाकर रगले ।
 भोजनदेवण्ड ३-३ मात्रा खानेसे कानला, पाण्डु, मुञ्ज, शप, काग,
 शय बरूहर समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ मण्डूरयोगः (महान्) (विजयानलमण्डूरम्) ३
 शुण्डलीचित्रकाऽलकमूले नुमनुनर्नयाम् ।
 त्रिफला लोहकिट्टश्च पृथग्दत्तपरत्वे भवेण ॥ २१०७ ॥

गोमूत्रद्रोणसंयुक्तं पचेत्पादावशेषितम् ।
 भृङ्गराजरसप्रसृतं मोरट्स्वरसं तथा ॥ २१०८ ॥
 हरिद्राऽऽर्द्रकयोश्चापि गोमयस्वरसन्तथा ।
 ज्यूपणञ्च विडङ्गानि त्रिफला चित्रकं तथा ॥ २१०९ ॥
 देवदारु हरिद्रे द्वे पिप्पलीमूलमेव च ॥
 हिन्दुचव्यवचाः पाठा कालजीरकमेव च ॥ २११० ॥
 एषां हि कार्पिकान्भागान्चूर्णं कुर्यात्पृथक्पृथक्
 मण्डूरं पेपितं श्लक्ष्णं शुद्धमज्जनसन्निभम् ॥ २१११ ॥
 एतद्रोगमूत्रसंयुक्तं शनैर्मुद्रंभिना पचेत् ।
 समान् प्रकुर्याद्दत्तकान् प्रभाते देयतापरः ॥ २११२ ॥
 उपयुञ्जीत तत्रेण पाण्डुरोगं भगन्दरम् ।
 पञ्चक्रासाह्निकेन्यागु मुखदन्तहृजो हरेत् ॥ २११३ ॥
 अर्शोसि कामलां शोफमुदरञ्च विनाशयेत् ।
 महामण्डूरकं ह्येतद्विन्यानुमतं शुभम् ॥ २११४ ॥
 र. क. यो., वै चि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—गिलोय, चित्रक, आक और पुनर्नवाकीजड, त्रिफला, पुरानामण्डूर, ये सब १०-१० पल लेकर जवजुटचूर्णकर १६ सेर गोमूत्रमें पकावे । चतुर्थास काडा रहनेर छानले परन्तु मण्डूरके टुकड़ोंको अलग छोटकर रखले । फिर काटेको कड़ाहीमें डालकर मण्डूरको सुरमेवेसदर बारीककर उसमें डालकर भगरा, लताकरज, हल्दी, अदरक और गोबरना १-१ सेर रख, त्रिकटु, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, देवदारु, दोनोहल्दी, पिपला मूल, हींग, चण्य, वच, पाठा, कालाजीरा ये प्रत्येक १-१ तोले लेकर अलग २ चूर्णकर पूर्वकाठेमें डालदे और मन्दायिले पकाकर जलको जलादे । फिर नीचे उतारकर १-२ दिन मंदनकर शीशोमें रखले अथवा गोमूत्रमें घोटकर ३-३ माशेकी गोलिया बनाकर रखडोडे । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल श्चन्देकाला स्मरणकर आठकेक्षण केलेसे प्राण्डु, भगन्दर, पाचप्रकारके कास, मुखदन्तारोग, कामला, शोथ और उदररोग ये सन नशोतेहैं ॥ ४०५ ॥

४८० मण्डूरयोगः (चतुर्थः)

मण्डूरस्य रजो लोहं भृङ्गराजरसाऽऽप्लुतम् ।
 लोहघृष्टं रजो यावत् कृष्णाचूर्णाऽर्द्धसंयुतम् ॥ २११५ ॥
 द्वाभ्यां तुल्यगुणोपेतं सहृद्रप्रहणीहरम् ।
 आमशलाऽप्लवित्तन्तं बलपुष्टधनिकारकम् ॥ २११६ ॥
 कामलापाण्डुरोगघ्नं पथ्यं पाचनदीपनम् ।
 मेपजं चामवातेषु हितं तत्रेण केवलम् ॥ २११७ ॥
 र. क., शुले ।

भाषा—मण्डूर और लोहमस्य समभाग लेकर भंगरेके स्वरसमे १-२ दिन लोहेके बर्तनमें लोहेकेउण्डेसे उरलकर सुखावे । फिर इससे आधा पीपलका चूर्ण और सबनी बराबर पुरानागुड़ मिलाकर आधे आधे तोलेकी गोलिया बनाकर रखडोडे । इसमेंसे १-१ गोली तक बगैरहके साथ देनेसे, सद्गृह, ग्रहणी, आम, शुल, अम्लपित्त, मदागि, कामला, पाण्डु,

आमवात इनसरोरोगोंको यह नष्टकरताहै । आमवातमें केवल छाछपर रखना ॥ ४८० ॥

४८१ मण्डूयोगः (पद्यः)

अतिरक्तं यदाऽर्शोभ्यो निपतत्यतिपीडनात् ।
 दृश्यते रक्तमत्यन्तं लोहकिर्तं तदाऽऽनयेत् ॥ २११८ ॥
 गवां मूत्रेण तत्पत्न्या ततस्तत्स्वस्मचूर्णितम् ।
 अतिस्वस्माञ्जसम्पिप्य त्रिफलां कटुक्रान्विताम् ॥ २११९ ॥
 क्रिष्टस्याऽर्द्धेन सम्मिश्र्य चूर्णं शर्करया युतम् ।
 दीयते त्रिदिनाद्भृङ्गं रक्तं तिष्ठति नाऽन्यथा ॥ २१२० ॥
 मुद्गाञ्च मसूरान् दीयते पथ्यभोजनम् ।
 अर्शोसि प्रशामं यान्ति काश्यं चैवाऽतिवेगतः ॥
 अत्यन्तं बलमाप्नोति परमां रतिमश्नुते ॥ २१२१ ॥
 र. का, अर्शोऽधिकारः ।

भाषा—रकारोंमें दबजाने सा बटजानेकी घबहसे जब अत्यन्तरकजानेलगे तब गोमूत्रमें शुद्धकियेहुए मण्डूरका अत्यन्त बारीकचूर्णकर त्रिफला और कटुकीकाचूर्ण मण्डूरसे आधेप्रमाणमें मिलाकर सनकीबराबर शर्कर मिलाय रखडोडे । इसमेंसे ३-३ माशेकी मात्रा धनगोभीके स्वरस, रसौत अथवा छाछके साथ देनेसे और केवल छाछपर रखनेसे ३ दिनमें रक्त बन्द होजा ताहै । मूंग, मसूर खानेको देना । इसके भेवनसे सबतरहके ववासीर और कृशता नशोतीहै ॥ ४८१ ॥

४८२ मण्डूरयोगः (सप्तमः)

दग्ध्वाऽक्षकाष्टौ मेलमायसन्तु
 गोमूत्रनिर्वापितमष्टवारान् ।
 विचूर्ण्य लीढं मधुना चिरेण
 कुम्भमह्वयं पाण्डुगदं निहन्ति ॥ २१२२ ॥
 सु स, यो. म, वै चि, र, मा, ग नि, नि. र, भा प्र,
 कुम्भकामलायाम् ।

टि०—यो म, च द, एतयो " मण्डूर शशित पर्वा रोहना वा गुडन तु । मलयन्मुच्यते दग्धत्वरिणामममुद्रवात् ॥ " इति पाठे दृश्यते सोऽस्यैवयोगस्य प्रपञ्चोऽस्ति । योगमहर्षीवीरगोमूत्रमण्डूरस्याऽप्यत्रै वान्तर्भाव ।

भाषा—सौवर्षमें पुराने मण्डूरको बहेडेकीलकड़ीके कोयलोमें लालकरके आठवार गोमूत्रमें बुझाकर बारीक चूर्णकर रखडोडे । इसमेंसे १-१ माशा मधुनेमाथ चाटनेसे बहुततीव्र कुम्भ कामला और पाण्डुरोगको यह दूरकरताहै ॥ ४८२ ॥

४८३ मण्डूरयोगः (अष्टमः)

मण्डूरयष्टीमधुपिप्पलीना-
 मेलसितापनजगोस्तनीनाम् ।
 चूर्णं समांशं मधुद्वययुक्तं-
 स्त्रीणत्वजीर्णरिज्जदाहरन्तु ॥ २१२३ ॥
 रसायनस., जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—मण्डूरमस्य, सुलठी, पीपल, इलायची, शर्करा, पत्रज, द्राक्ष, श्वस समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखडोडे । इसमेंसे

३-३ मासे मधु और दूधकेसाय सेवनकरनेसे श्रुता, शीर्ष
ज्वर और दाह इनको यह नष्टकरताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ मण्डूररसायनम्

मण्डूरं शाम्भुक्तं भस्म गन्धं खण्डपृतात्वितम् ।
रोगान्दहन्ति पलं धत्ते शूलघ्नं दीपनं परम् ॥ २१२४ ॥
र सि, शूलाऽपिकारः ।

भाषा—मण्डूर और शौंभाकीभस्म, शूद्धगन्धक सय सम-
भाग मिलाकर घोटकर रसाडाई है । इसमेंसे १-१ मासा लेकर
१-१ तोले घी और दाहकेसाय मिलाकरखानेसे यह दूध और
मन्दाप्रितो नष्टर बलको उत्पन्नकरताहै ॥ ४८४ ॥

४८५ मण्डूरलवणम्

शूत्याऽम्लिचर्णं मलमायसन्तु
सूत्रेऽभिपिचेत्रेदृश्या गवाञ्च ।
तत्रैव सिन्धुत्वयसमं विपाच्यं
निरुद्धमञ्च विभीतकाम्नी ॥ २१२५ ॥
तत्रेण पीतं मधुनाऽध्वयाऽपि
मण्डूरमिश्रं लवणं प्रयुक्तम् ।
पाण्ड्वामयिभ्यो हितमेतदस्मा-
त्पाण्ड्वामयघ्नं नहि निश्चिद्व्यत् ॥२१२६॥

वि र, र (मा), उ यो त, चि क, यो र, टो, वै चि, सु
स., पाण्डुरोगे ।

१०-सुधुन मिश्रुद्धवनिर्वापिनगाम्ने मण्डूरस्य निर्वापो विहित,
अथ तु मण्डूरनिर्वापिने गाम्ने मिश्रुद्धवनिर्वापो इति विशेष, तत्र
सुधुनीयरीही भद्रना प्रतिभाति क्षारयुक्तगण्डु निर्वपिण मण्डूरस्य
शीघ्र भ्रमभीभावात् । चिकित्सात्रिलिखा विभीतकलवणमिति नाम
स्थापितम् ।

भाषा—सौ वर्षके पुराने मण्डूरको बहेड़ेकेकोयलोंमें कालकर
गायकेमूत्रमें चूर्णहोनेतक बुझावे । फिर इसकी बराबर संधा
नमकमिलाय सबसे चौगुना गोमूत्र डालकर इडीमें बन्दकर
बहेड़ेकी लरुनीसे ४ पहरेकी आगिकर पकावे । स्वाह्नशीतल
होनेपर निकालकर रखाछोड़े । इसमेंसे ३-३ मासा छाछ अथवा
मधुकेसाय देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै । पाण्डुरोगियोंकेलिसे
इससे उत्तम अन्य औषधि नहींहै ॥ ४८५ ॥

४८६ मण्डूरवटकः (प्रथम.)

न्यूपणं त्रिफलामुस्तं विडङ्गं चञ्चचिन्नकौ ।
दार्वां त्यङ्गाक्षिकोधातुं श्रौंथिकं देवदाक च ॥२१२७॥
पपा द्विपलिकान्भागशूर्णं शूत्या पुधक्पृथक् ।
मण्डूरं द्विगुणं चूर्णां चतुद्धमज्जनसन्निभम् ॥ २१२८ ॥
सूत्रे चाऽष्टगुणे पक्त्वा तस्मिन्स्तु प्रक्षिपेत्तत ।
उदुम्बरसमान्नुयाद्वटकास्तान्यथाऽग्नि च ॥ २१२९ ॥
उपयुञ्जीत तत्रेण सात्स्यं जीर्णं च भोजयेत् ।
मण्डूरवटका ह्येते प्राणदा पाण्डुरोगिणाम् ॥२१३०॥

खुट्टान्यजरकं शोफमुस्तम्भकफामयात् ।
असौसि कामलां मेहं प्लीहानं नाशयन्ति च ॥२१३१॥

च स, शू मा, र का, घ, भे र, रसघागर, भा प्र, टो, वै
चि, र क यो, च द, शू यो त, ग नि चि र, र प्र, रसा-
यनस, अ ह, नि र, र ग दी, वै द, र को, अ स, र का,
प रा, र म मा, र र स, चि सा, र र, र स, यो र, वै,
र, र को, र सु, र चं, ग नि, वै चि, चि र भ, वै क, यो
म, चि क, पाण्डुधिकारः ।

१०-अथ मण्डूरवटकं मण्डूरवटकं मण्डूरवटवृक्ष हसमण्डूर,
शूण्यादिमण्डूर इति नामानि श्रुतीतानि । तत्र मण्डूरवटक, मण्डूरव
ज्वटक, शूण्यादिमण्डूरयो मण्डूर समस्तद्रव्याद दिगुण, हसमण्डूर
च समम् । मण्डूरवटके मांशिन्य यौगोऽस्ति । हसमण्डूरमण्डूरवज्वट
कयो मांशिक न इत्यने, मांशिवनिकासनस्य प्रयोजन न प्रतिभाति ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नामरमोषा, विडङ्ग, चञ्चय,
चित्रक, दाहद्वली, तज, सोनामासी, त्रिफलासूल, देवदाक, य
सब २-२ पल लेकर सफा कला २ चूर्णकरकरके । फिर
एकदम सुरमाके सहस पीसेहुए सबसे द्विगुणमण्डूरको अठगुने
गोमूत्रमें पकाकर ऊपरके चूर्णको छाल १-१ तोलेके गोले
बनाकर रखाछोड़े । इसमेंसे १-१ गोला छाछकेसाय देनेसे और
जीर्णहोनेपर सात्स्यभोजनकरनेसे पाण्डु, बुध, अजीर्ण, शोथ,
ऊरुस्तम्भ, कृमिविकार पचासी, कामला, प्रमेह और प्लीहा
इनसबको ये नष्टकरतेहै ॥ ४८६ ॥

४८७ मण्डूरवटकः (द्वितीय.)

लोहस्य किट्टं त्रिफलानिपिकं
पुटैश्च पर्वं त्रिफलोदकेन ।
कटुम्रयं चञ्च्यफलत्रयञ्च
तत्तुल्यमानञ्च शुद्धं पुराणम् ॥ २१३० ॥
गोमूत्रञ्च द्विगुणं प्रगृह्य
शूत्यानुतोयेन विपाचयेच्च ।
पिण्डत्वमायाति हि यावदेव
ततस्तुमासं विनिवेश्य भाण्डे ॥२१३३॥
तताऽक्षमात्रं परिपेयणीयं
निहन्ति शूलं परिणामजञ्च ।
दुर्नामरोगञ्च कफञ्च मेहं
श्यास्तञ्च कासं ग्रहणीं निहन्ति ॥२१३४॥
र दी, पाण्डुरोगे ।

भाषा—सौवर्षके पुराने मण्डूरको बहेड़ेके कोयलोंमें तथाकर
त्रिफलाके काटेमें बुझाबुझाकर चूर्णकरके त्रिफलाके काटेमें घोट
कर जबतकभस्म न होनाय ततक पुटदे, फिर त्रिकटु, चञ्चय,
त्रिफला समभाग, इनसबकी बराबर मण्डूरभस्म और पुराणगुड
डालकर सबसे दूने गोमूत्र और चित्रककेबाथमें डालकर पकावे
जब गाढाहोजाय तब उतारकर विकनेवतनमें रखाछोड़े । एक
महीनेके बाद इसमेंसे १-१ तोला खानेसे परिणामशूल,
पचासी, कफप्रमेह, श्यास, कास, और सङ्ग्रहणी वेतन
नष्टहोवेहै ॥ ४८७ ॥

४८८ मण्डूरवटी

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ताखदिरमूलकम् ॥
 कणा शुण्ठी यवक्षारं पञ्चानां चूर्णितं समम् ॥२१३५॥
 चूर्णतुल्यन्तु मण्डूरं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
 तत्तुल्ये च गवां क्षीरे पचेन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २१३६ ॥
 पिण्डितं कोलमात्रं तद्वक्ष्येच्छूलनुद्भवेत् ।
 प्रातर्मध्यन्दिने रात्रौ भक्षयेद्द्विदिकात्रयम् ॥ २१३७ ॥
 यो. म., शूलाधिकारे ।

भाषा—नागरमोथा, रैरकीजड़, पीपल, मोंठ, यवसार, ये सब समभाग, मण्डूरमसम सनके बराबर लेकर सबका बारीक-चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकावे । धनहोजानेपर बराबरके दूधमें डालकरपकावे । जब मोलीबननेलायक होजाय तब ६-६ माशेकी गोलियां बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली छुनूह, शाम और मध्याह्नमें छानेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं ॥ ४८८ ॥

४८९ मण्डूराश्वलेहः

मण्डूरलोहाऽग्निविडङ्गपथ्या
 व्योषांशकः सर्वसमानताप्यः ।
 मूत्रे श्रुतोऽयं मधुनाऽपलेहो
 पाण्ड्यामयं हस्त्यचिरेण घोरम् ॥ २१३८ ॥
 ग. नि., यो. म., सु सं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—मण्डूर और लोहमसम, चित्रकमूल, विडङ्ग, हें, त्रिकुट सब समभाग, सोनामाखी सबकी बराबर लेकर सबका बारीक चूर्णकर अठगुने गोमूत्रमें पकाकर अवलेह तैयार करे । इसमेंसे ३-३ माशेकी गोलियां बनाकर उचितानुष्ठानकेसाथ छेनेसे यह बहुतहीदीप्त पाण्डुरोगमें नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० मण्डूरारिष्टम्

मण्डूरस्य तु शुद्धस्य तुलाऽर्द्धं परिकल्पितम् ।
 तद्ब्रह्मोहस्य पत्राणि तिलोत्सेधप्रमाणतः ॥ २१३९ ॥
 गुडाजीर्णांस्तु पञ्चाशत्कोलप्रस्थत्रयं तथा ।
 निकुम्भचित्रकाम्भ्यां च पले द्वे द्वे सुचूर्णिते ॥२१४०॥
 पिपलीनां विडङ्गानां कुडवं कुडवं पृथक् ।
 शीक्षाऽपि विफलाप्रस्थानु जलद्रोणे विपाचयेत् २१४१
 अर्द्धमासस्थितो धान्ये पेयोऽरिष्टः प्रमाणतः ।
 द्रोणानुभवतो न्यस्य पाण्डुरोगं नियच्छति ॥ २१४२ ॥
 किमीनशांसि कुष्ठञ्च कासभ्यासरुफामयान ।
 मण्डूरारिष्टको ह्येषः शोफपाण्ड्यामयापहः ॥२१४३॥
 ग. नि., यो. र., शोफपाण्ड्यामये ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, लोहके पत्र अथवा बारीकचूर्ण और पुानागुष्ट ५०-५० पल, जहलीबेर ३ सेर, दन्तीमूल और चित्रकका चूर्ण २-२ पल, बीज और विडङ्ग ४-४ पल, त्रिकुटा ३ सेर लेकर १६ भेर जलमें पकावे । चतुर्धातु जल-जानेपर उनाकर विद्येनैर्बननेमें पन्धरके अनाजही रादिदि

दनादे । १५ दिनगद यह अरिष्ट तैयार होजायगा । इसमेंसे १-१ अथवा २-२ तोले सुबहशाम अथवा भोजनकेबाद पीनेमें पाण्डु, किमि, अंस, कुष्ठ, कास, श्वास, कफरोग और सूजन ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ४९० ॥

४९१ मद् करीगुटिका

त्वक् पत्रं केशाच्छैला चन्द्रमा जातिपत्रिका ।
 कणा गोक्षुरकं जातीफलञ्चाऽभ्रकवङ्गकौ ॥ २१४४ ॥
 लोहचूर्णन्तु दङ्गैकं प्रत्येकं कारयेद्दूधः ।
 चतुःपलं मधु प्रोक्तं तथा चाऽन्यानि निःक्षिपेत् २१४५
 आकारकरभक्षेव रोचनां कपिकण्डुजम् ।
 गुग्गु मस्तङ्गिकञ्चैव मुदाली मरिचानि च ॥ २१४६ ॥
 लवङ्गसहितं ह्येतत्सर्वं दङ्गैरुसम्मितम् ।
 भृङ्गा सार्धपला प्रोक्ता सम्यग्धौताऽद्वैभर्जिता २१४७
 सिता पञ्चपला प्रोक्ता कालपेया प्रकीर्तिता ।
 सर्वेषाञ्च सुजात्यानां मूक्षमचूर्णं विधाय च ॥२१४८॥
 मधुष्णं कारयेत्तेषु सर्वं चूर्णं चिनिःक्षिपेत् ।
 भर्जयेत्तिजयापत्रं यद्वा गन्धः प्रजायते ॥ २१४९ ॥
 शतपनीयपानीयं जातीतेलं समं वदेत् ।
 मानमात्रं प्रदातव्यं भृङ्गां सम्मर्त्येत्ततः ॥ २१५० ॥
 लेहे च दरुं देयं पुनश्चूर्णं सितां ततः ।
 कर्पूरम्बुगनाभिभ्यां प्रतिवापं प्रदापयेत् ॥ २१५१ ॥
 पतन्मद्करी रम्या विशेषाद्भानुवर्द्धिनी ।
 कामिनां कामदा नित्यं विशेषाद्गुणदायिनी ॥ २१५२ ॥

र. कु., वाजीकरणे

भाषा—तज, पत्रज, नागनेपर, इलायची, कचूर, जावित्री, पीपल, योखर, जायफल, अश्रक, वङ्ग और लोहमसम ४-४ माशे, मधु ४ पल, अकल्फरा, गोरोबन, बेनाचके बीज, बडू लफा गोद, मस्तगी, सुमली, मरिच, लोंग १-१ टड्ड, धौरे अपभुनी भाल १॥ पल, कालपीमित्री ५ पल लेकर सबका कर इष्टान चूर्णकरे । गोदको धौरे मन्द आंचपर सेकचूर्णने । मस्तगीको बपड़ेमें बांध अत्युष्णपानीमें २-३ गोते देकर निहा-लकर चूर्णकरके मिलादे । फिर सब दवाओंके बराबर गुलाबजल और जायफल या जावित्री का तैलथेवे । पहिले मिश्री, दहर और गुलाबजलकी दोवारकी चादानीकर और शुद्धविषादुग्धा त्रिगणिक १ टंक बारीकचूर्णकर मिलादे । इसनेबाद तैलमें मिलाकर अन्य औषधोंको मिलादेवे । टंगहोनेपर शुद्धकरी और कचूरी ३-३ माशे मिलाकर ३-३ माशेकी गोलि-यां बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूध और शरदंमयाप छेनेसे श्वास, काम, सङ्घट्ठा, मन्दाग्नि, धातुशीलता, उन्माद, नयुनदत्व येसब नष्टहोतेहैं । रतिगमयसे २ पट्टे पहिले लेकर दूधनिसे संप्रेक्ष्यम्भन और धीयगिद्ध होतेहैं । यदि गोली स्वम्भनाथं ही हो तो उपरक दूधके गिलाप करे बीज न गावे ॥ ४९१ ॥

४९२ मदनकामदेवासः (प्रथम)

अथाऽन्य सम्प्रक्ष्यामि कामवृद्धिकर परम् ।
 रागराजप्रशमन वलपुष्पिप्रधनम् ॥ २१०३ ॥
 अक्षीणशुक्रकरण वाजीकरणमुत्तमम् ।
 प्रागुक्तेन विधानेन दशधा पातित रसम् ॥ २१०४ ॥
 स्वेदितं प्रातयुक्तयेव तस्य चात्पादयेन्मुखम् ।
 खट्वे लोहमय स्थाण्यो रसेन्द्रा वह्नितापिते ॥ २१०५ ॥
 तप्तेन लाहजेनेव मर्दकन प्रमदयेत् ।
 सिंही नियासवागेन तथा केचुलिते समम् ॥ २१०६ ॥
 एकविंशदिन यावद्द्वारानमतात्तित ।
 खल तप्त सदा कार्यं शीते दापस्य दर्शनात् ॥ २१०७ ॥
 सर्वदोषा रस कार्या रसाद्गुणमभौषणम् ।
 एव जातमुखे सूते धीजं दद्यात्कलांशकम् ॥ २१०८ ॥
 सौवर्णं स्वेदयेद्दालायात्रे च त्रिदिने रसम् ।
 पटुशाराम्लयज्ञानैलित पनेऽथ भूर्जक ॥ २१०९ ॥
 रस दत्त्वा वह्निर्दद्यात् दृढं वख चतु पुत्रम् ।
 सूत्रेण पोष्टला वन्ना दोलायाञ्च निवशयेत् ॥ २११० ॥
 अम्लकाधिकयागेऽ स्वेदयेद्विजसत्रयम् ।
 मक्षारमूत्रज वाऽथ चतुर्थंऽह्नि समुद्धरत् ॥ २१११ ॥
 प्रासस्तु जायते सर्वाऽन्यथ स्वेदनमर्दने ।
 पूर्ववद्विद्धीनाऽत्र यावद्वास मुनायति ॥ २११२ ॥
 तत सूत निषेद्याऽथ यत्रे क्षमाधरसञ्जके ।
 पूर्वानियुक्त्या द्वैयेत्र जायते पद्मणु शुभ ॥ २११३ ॥
 त सूत मर्दयेत्खट्वे काकमागीरसै युञ्च ।
 तारवीज पादभाग दद्या किजुलजै रसै ॥ २११४ ॥
 यावत्पिष्टि भेषेलूते मर्दयेत्तमनारतम् ।
 सवाताया तथा पिष्ट्या दिनपञ्चममर्दनम् ॥ २११५ ॥
 काकीकिञ्जुलजै नीरिस्तत कुर्वति मालकम् ।
 काकीकिञ्जुलकान् पिष्ट्वा गात्र सम्यग् प्रयेष्टयेत् ॥ २११६ ॥
 विन्यसेद्दालार्यं मृषामये तद्वपराधनम् ।
 एत्वा भूधरस्य तस्या मृषा सम्पाचयेत्तत ॥ २११७ ॥
 फरीपाऽर्द्धि तता दद्यात्त्रिदिन स्वेदमाचरत् ।
 उद्धत्य मृषा तद्यत्राद्रसे त्रं तारपत्रक ॥ २११८ ॥
 तत्रराजस्य मध्यं तं रसेन्द्रं विनिवशयेत् ।
 तत सूतं प्रयुञ्जत तत्रराजेन संयुतम् ॥ २११९ ॥
 विषुष्यं पयसाऽहुन्या गर्भिण्या यल्लक्षयम् ।
 अजुपानञ्च तदूर्ध्वं पिष्टेच्छुभे रसा समम् ॥ २१२० ॥
 अम्लं ययैश्च सशार लयाञ्च विशाहि यत ।
 षड्भुञ्जत कषायञ्च सर्वमय विषयेयम् ॥ २१२१ ॥
 भुञ्जत मधुर द्राव्यञ्चाराथ षड्गीकलम् ।
 घालस्य नारिकेलस्य मज्जान सम्प्रभाषयेत् ॥ २१२२ ॥
 रण्डयुत नारिकेलजलं पयश्च पानसम् ।
 पत्रं पत्रमप्य वा रसयाधिविपुद्धिम ॥ २१२३ ॥

इत्येवमादि यद्वर्ष्यं तसर्वं भक्षयेद्बुध ।
 पत्र ससेव्यमानस्य रसेन्द्रस्य गुणाऽदृश्यु ॥ २१२४ ॥
 क्षयरोग क्षय याति नष्टशुक्रश्च शुक्रनाम् ।
 अशोतिर्यपेदयो वा जराजजरिताऽपि वा ॥ २१२५ ॥
 ऊर्ध्वलिङ्गं सदा तिष्ठेद्द्रावयेद्दनिताशतम् ।
 अप्रहीणमला ग्लानिर्जित सम्प्रहर्षवान् ॥ २१२६ ॥
 अस्याऽजुपान वष्यामि शास्त्राक्तं कामवर्धनम् ।
 बहुद्वय शर्करया स्वोक्त्याऽऽदी रसं तत ॥ २१२७ ॥
 विदारीकन्दचूर्णञ्च मधुयणा च मापकान् ।
 तत्रराजयुतानेतान् गोदुग्धेन सम पिथेत् ॥ २१२८ ॥
 अक्षीणरेता जायेत यदि स्त्रीणा शतं यजेत् ।
 शतावरीगोभुक्काप्रिस्तुय मापचूर्णनम् ॥ २१२९ ॥
 निस्तुपास्तु तिलान्खण्ड सुषर्णेभुरस तथा ।
 रात्रौ पिथेच्च सूतेन्द्रमेतै र्द्रव्यै सम तत ॥ २१३० ॥
 कर्पूरं लेहता दत्त्वा स स्यात्स्त्रीशतकामुक ।
 मध्याच्युक्त स्वरसे भावितञ्च विदारीजम् ॥ २१३१ ॥
 शतदा कपिञ्चुलजै यजिञ्च समभागिकम् ।
 समशर्करया युक्त गादुग्धेन सम पिथेत् ॥ २१३२ ॥
 अक्षीणरेता स पुमान् जायते नाऽत्र संशय ।
 मातु दुग्धस्य धीजानि गोमूत्रेण विभाजयेत् ॥ २१३३ ॥
 एकविंशतिशारास्तु निवृण्ण्याऽथ रनेध्वरम् ।
 विनिष्यन् मुस्तापण्ण गोदुग्धेन समं पिथेत् ॥ २१३४ ॥
 एकविंशदिन यावज्जायत पूर्णवीर्यवान् ।
 जायते नाऽत्र सद्वा रसेन्द्रस्य प्रभाषयेत् ॥ २१३५ ॥
 सूतेन्द्रं सयते यस्तु न स्यादस्याऽहुनाशतम् ।
 न कामणे महाशोभे र्त्तरायेरुपपीडयेत् ॥ २१३६ ॥
 एष सूतत्र प्रात शुक्रवृद्धिकर पर ।
 मदन्याय कामदेयो रस परमदुर्लभ ॥ २१३७ ॥
 रतालं वाजीकरणे ।

भाषा—अथपातुगयोगरहित अथवा गिगरिका निदान
 हुआ पारा लेकर हन्दी रं एडून सर यमनगल्लर पार ।
 पात्रांग इगमयुरायमेव मित्रकर विचार वारुते रम १-१
 रोज मनहर गुणकर वनस्पत्यो क्त तियर् अथवा अध
 पातनकर । ए । रगवारकरके कात्रागे ४ पदर वनहर गदक
 लमत्वमे रगकर इग वरावक बैनुभौको डाउर १-२
 पदर गुग्गुलुनकर अष्टशोके सख २१ रोज दिनसत मन
 कर वाचमे गगन ठा न हो । २२ वै रोज वनस्पत्यनकर
 अथवा मलमडाशत शोहर साररत्न । इयमे पादयांग गानेके
 वल्लर वाडा शोडा लमत्वमे डालर म नर करररर
 मन्ग एत्रावशोत्रादगा विर गिधानमक छाया गुहाग अर
 दनगात नाडूदराय १ गुग्गु अर आकरा रूप मिलकर से
 विदुगा बाररुभाजयगा रगकर उगम ४ एर मन्गक
 इगमे मूत्रयगा रग लेउदय वनद गदिशो अथवा
 शारतुग गाग्गु रोजदिन ४ नकर । ५ दिन निररर

तोलन देखे, प्रास समस्त जीर्ण हो गयाहो तो फिर इसीतरह स्वेदन और मर्दनकरे । जब प्रासजीर्ण होजाय और पारेका असली वजन आजाय तब भूधरयन्त्रमें रखनर पट्टणमन्थक जारणकरे । फिर सकोयके रससे तप्तखल्वमें एनरोज मर्दनकर अष्टमाश चारीकेबक मिलाकर १-२ पहर मर्दनकर बैजुओका रस डालकर मर्दनकरे । पिष्टीरूप होजायेपर काक और बैजुओके रससे ५-५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय काक और बैजुओके लगदमें गोलैको रखकर मूपामे रखदे और सुंढवन्दकर भूधर-यन्त्रमें रखकर क्रीपकी अभिस तीनदिन स्वेदनाकरे । स्वाह-शीतलहोनेपर निःकालकर रसठोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्ती की मात्रा चारोपेयकी और तीघुरकी गोली बनाय उसके अन्दर क्वलितकर खावे । तीघुरकेमाथ ६ रत्ती मिलाकर छोटीदूधोके रसकेसाथ गर्भिणीगायत्री देवे, जब उसमात्रका पैदाहो तब उसका शहरमिला हुआ दूध अनुपानमें रखे । अम्ब, धार, लवण, विदाहि, कटु, कपाय इनसबका परित्यागकरे, मधुरान-खावे । केलैके फलका शार, ककै नारियलकी गिरी और शकर मिलाहुआ नारियलका जल, केलैका पत्रा या कचाफल इत्यादि जो जो वृथ पदार्थहै उनका सेवनकरे । इसप्रयोगसे धाय, नष्टग्रन्था येसब नष्टहोकर अस्मीवर्षका जर्जरित दुग्धाभी फिरसे शुक्रपूर्णहोकर ग्लानिरहितहोकर बहुततीक्ष्णियोक्साय उत्साहपूर्वक रमणरमचाहै । शास्त्रोक्त कामवर्धन इसका अनुपान विद्वतरहै कि ६-६ रत्ती इसरसको शारके साथ खाकर इधारी, सुल्टडी और तीघुर ये प्रत्येक १-१ भाशा गोदुग्धकेसाथ पीनेसे अक्षीणशुक्र होताहै अथवा शताव, गोराह, घुलीहुई उड़दकीदाल, तिल, खाड, शुद्धकपूर, पीली ईपकारस इनकेसाथ रातमें इसरसराजको लेभेसे अक्षीण शुक्रहो-ताहै । अथवा विदारीकन्दके चूणको विदारीकन्द स्वरससे कई-बार भावितकर बराबरका बेवापके धीजोंका चूर्ण डालकर दोनोंकी बरानर शकर मिलावे । इसनेसाथ रसराजको देकर गोदुग्ध पिलावे । अथवा विजोरेके धीजोंको २१ दिनतक गोमूत्र-में भिगोकर सुखाकर चूर्णकरले । इसकेसाथ रसकोलेकर ज्वर गोदुग्धपीनेसे २१ दिनमें धीमेंसे पूर्णहोजाताहै इसके सेवन करनेसे बुझापा और रोग आक्रमण नहीं करते ॥ ८९० ॥

४९३ मदनकामदेवरसः (द्वितीयः)

परण्डश्लेचेराऽऽयुक्ताकामाचीद्रवे रसः ।
प्रत्येकमर्दनाच्छुद्धो जायते द्वापवर्जितः ॥ २१८८ ॥
श्रेयाऽऽह्निककल्पायायां सप्तश्ल्याऽथ शोषयेत् ।
क्षिप्या मृतं साऽग्निचूर्णं मृषायामेयमेव हि ॥ २१८९ ॥
पर्वे शुद्धं रसं श्ल्या समगन्धेन योजयेत् ।
काकमाच्याः शुभेस्तोत्रे मर्दयेत्स्वा ह्यं दानैः ॥ २१९० ॥
क्षिप्या काचपट्टीमध्ये मृदा कर्पटसम्प्राया ।
काचपट्टीमुखं श्ल्या दत्त्वा धक्त्रेऽथ चमिकाम् २१९१ ॥
मृत्तित्कर्पटं यद्वा काचपात्रमथो मुखम् ।
लिम्पेद्रसमृदा गाढमद्दुल्लक्ष्यमुत्थितम् ॥ २१९२ ॥

शोषयित्वा क्षिपेद्वाण्डे वालुकाभिः प्रपूरिते ।
अधोमुखं काचपात्रं पचेद्यामत्रयं शनैः ॥ २१९३ ॥
स्वाह्नशीतं समादाय योजयेद्रोगशान्तये ।
गुञ्जाह्वयं क्रमेणैव पर्णखण्डेन संयुतम् ॥ २१९४ ॥
शतावरी गोक्षुरश्च धीजश्च कपिकच्छुञ्जम् ।
गाङ्गेरुकी चातिरज्ज्वा धीजमिश्रुकोद्भवम् ॥ २१९५ ॥
अनुपानं पिवेद्दुग्धमस्य चूर्णस्य कर्षकम् ।
सतिलं भक्षयेन्नित्यं कादलं शर्करान्वितम् ॥ २१९६ ॥
हृद्यं वृष्यं श्रमहरं रसं मांसं पयो घृतम् ।
शाल्यत्रं मायगोधूमं पायसं सेवयेन्निति ॥ २१९७ ॥
यत्किञ्चिच्छीतलं द्रव्यं तत्सर्वमविचारतः ।
अत्र देयं प्रयत्नेन रसवीर्यविवृद्धये ॥
अनेनाऽऽशीतिवर्षांऽपि युवेव सुरतं चरेत् ॥ २१९८ ॥
र. क. रसायने ।

भाषा—एण्डकीजड, अदरल और मन्त्रोयके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर शुद्धकियेहुए पारेको लेनर सकेदुर्नवाधी चौथुनी जड़केरसकी सुपावनाय पारेकी बराबर चिन्मूलका वारीकचूर्ण कीचमें डालकर उसपर पारेको रस इसी रूपसे दवा कर कल्कमें सुपाका मुह बन्दरकरे, और १-२ कपडमिठी देकर सुखादे । फिर जल्लोम्णोंकी निर्धूम अमिपर छोटपौड-कर सुखावे । जब कपडमिठी जलजाय तब निकालकर नीचे रखले । स्वाहशीतल होनेपर धीरेसे पारेको निःकालकर पूर्ववत् द्रवोंमें मर्दनकर मूपामे बन्दरकर अमिपर सुखावे । ऐसे ७ बार सुखाकर बराबरकी गन्धर मिलाकर नीलवर्णरज्जलीकर भकोयके रससे १-२ रोज मर्दनकर आतशीशीतोंमें भर ईट अथवा खडियामिर्गकी ढाट लगाकर ३-४ कपडमिठी समस्तर लगा-कर हई टालकर कूटीनुई मिठीका दो अहुल मोटा लेप बडाकर धूममें सुखादे । सुखनेपर अधोमुख वालुगान्धयन्त्रमें रमइ ३ पहरकी मध्यम अभिस पकावे । स्वाहशीतल होनेपर निःकाल कर रसठोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती पकेपानमें रखनर सिलोरे और ऊपरसे शताव, गोराह, केवांचेधीज, गंगेन (गुलति-की), कडुई, तालमत्ताना सब समभाग लेनर वारीशूर्ण कर, इसमेंसे १ तोला दूधनेसाथ अनुपानने तारेपर देना चाहिये । तिल और शरकेसाथ पकाकेला हमेशा रित्वावे । इसके हृदय और धातुओंकी निबलता, ग्लानि, राजयन्त्र, बन्धव्यत्व, न्युसक्तत्व प्रवृत्ति अनाप्य रोग दूरहोवेहै । रात्रिमें सम्भोगसे पहिले सेवन करनेसे यथेष्ट स्तम्भन होताहै । रसमें मातरस, मांग, दूध, धी, उत्तमचापल, अइद, गेहू, रीर तथा जो बुद्धभी ठडी चीपे है अथवा प्रयोगकरनेसे रसवीर्यकी श्रद्धि होताहै । इसने हमेशा सेवनेसे ८० वर्षका युद्धाभी जवान कीतरह रनि करणचाहै ॥ ४८२ ॥

४९४ मदनकामदेवरसः

प्रत्येकं चतुरश्रं रमयली तारं मृतं चांशरं,
तायजेम तनश्च शास्त्रान्तरसात्तन्त्रयमामर्षयन् ।

काकोल्याऽथ सुदुग्धयाऽप्यपरया त्रिखिचिदायांशता-
 वर्या त्रिखिरयो विभाव्य सकलं काचस्य कृप्यां क्षिपेत्
 पक्वं यामचतुर्थं सिरुतिका-
 यन्त्रास्वतः शीतलं,
 प्रोद्धृत्याऽत्र विभावना वितनुया-
 त्सत्ताऽथ वारान् क्रमात् ।
 रक्तादुत्पलतः क्षुरेण च शता-
 वर्या विदार्या रसैः,
 तालीजातरसेन नागवलयया
 पश्चाद्रसैश्शाल्मलैः ॥ २२०० ॥
 पन्नकन्दरसतोऽथ गोस्तनी-
 शकैरेक्षुरसतोऽभ्रगन्धया ।
 आमलक्युदककोलकन्दतो
 हस्तिरुन्दरसतश्च भावयेत् ॥ २२०१ ॥
 पृथगेभिरोपधरणे विभावितो
 रस एव सिद्धिमुपयाति रोगिणाम् ।
 अनुरागदो मदनकामदेव इत्य-
 भिविश्रुतो रतिविशेषफलदायकः ॥ २२०२ ॥
 गुञ्जाचतुष्टयमितं सितया समेतं
 द्राक्षान्वितं समुपयुज्य कलाविलासी ।
 क्षीरेण चैक्षुररसेन कृताऽनुपानः
 शाल्यक्षमुद्रवटकामिपमापमुक् स्यात् २२०३
 कलमात्रञ्च भुञ्जानः
 कलरवपललेन जाह्नलेनाऽपि ।
 मदन इव कामदेवो
 महिषीशतशो मनोरमा रमयेत् ॥ २२०४ ॥
 वृद्धमिह कामदेवं जन्धवतो ह्यभ्रगन्धरसादस्य ।
 सुरतं भवति वधूभिः सुरतरणीभि रथया सुरेन्द्रस्य ॥
 चान्पेयगौर्यैश्चपलायताक्ष्यः
 कल्हारगन्धाः कमनीयवेपाः ।
 काञ्चीरग्लाररणाधितम्बा
 विम्बाधरास्तं रमयन्ति कान्ताः ॥ २२०६ ॥
 अधोनीलितलोचनान्तसुभमा निर्धतमानप्रहा,
 धम्मिल्लोघनोपदर्शितभुजाश्ललाः सलीलाङ्गनाः ।
 हाटाऽलङ्कृतकन्धरा युधतयः स्मेराननास्तं सदा,
 क्षिप्रन्यस्या रससेविनं शिथिलतक्रोधा रतिं कुर्वते ॥
 किमत्र मलयऽनिलैः किमिह सान्द्रचन्द्राऽऽतपैः,
 किमङ्गुथतचन्दनैः किमरविन्दसौगन्धिकैः ।
 मनांसि हरिणीदृशां मदयतीह संसेवितो,
 मनोजरतिबहुभो मदनकामदेवो रसः ॥ २२०८ ॥
 बलेन नारी परितोपमेति
 न हीनरीर्यस्य कदापि सौख्यम् ।
 अतो यथार्थं रतिलम्पटस्य
 रीर्याऽभिबुद्धिं प्रथमं विदध्यात् ॥ २२०९ ॥
 र. मृ., र. क., खीकिलास, वागीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ भाग, रजत और
 सुवर्णमस १-१ भाग लेकर पारेगन्धवर्षा नीलवर्णनजलीकर
 सैमलकीज, काकोली, छोटी और बड़ी दूधो, विदारिकन्द,
 शतावर इन प्रत्येकके स्वरस अथवा काथोंसे २-३ रोज़ मदनकर
 सुखाकर ६-७ कपधमिष्टीदीहूई आतशीशीशीमें भरके मुहबन्द-
 कर ४ पहर बालुकापत्रमें पकावे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर लालकमल,
 तालमखाना, शतावरी, विदारी, मुसली, नागवला, सेमल,
 पञ्चकन्द, द्राक्ष, शकर, ईख, असगन्ध, आवले, सुगन्धवाला,
 वाराही, हस्तिरुन्द इन्प्रत्येकके यथालाभस्वरस अथवा काथोंसे
 ७-७ भावनाएं देकर सुखाकर रखजोड़े । इनमेंसे ४-४ रती
 शकर अथवा द्राक्षकेसाथ लेकर दूध अथवा ईखकारस पीवे ।
 पुराने चाबल, मूग, बहे, मास, उदद, कोयल, जंगली जानवरों-
 कामास अथवा मासरस सेवनकरनेसे अकथनीय रतिसुखको
 प्राप्तहोताहै । असगन्धकेसाथ सेवनकरनेसे वृद्धमनुज्यमी
 बहुतसी स्त्रियोंकेसाथ रति करसक्ता है । कामशास्त्रोक्त सर्व-
 लक्षणसम्पन्न स्फुटभावोंकेसाथ होपयुक्तस्त्रियोंका भी बोध इन-
 रसके सेवकको देखकर नष्टहोजाता है । मलयानिल प्रभृति
 कामोद्दीपक सामग्रीकी कोई जुस्तत नहीं पड़ती क्योंकि यद्येष्ट-
 शक्ति न रहनेपर उद्दीपकभावोंका आधरण कियाजाता है ।
 इसरसके सेवनकरनेवालेके लिये उद्दीपकभावोंकी कोई अन्याय-
 दयकता नहीं रहती । रतिके विषयमें वीर्यकी दृष्टा मुख्य है
 और इसरसके सेवनसे वह नितान्त पुष्ट होजाताहै । हमेशा
 ब्रह्मचर्यपूर्वक यदि इसकासेवन किया जायतो समस्त धातुभय,
 राजयदम, समस्तभ्रोट, अन्तस्मार, उन्माद, पुष्य तथा स्त्रीका
 बन्धत्यत्व दोष इत्यादि अशास्त्ररोगोंको नष्टकर यह आदमीको
 रोगरहित चिरजीवी बनाता है ॥ ४९४ ॥

४९५ मदनकामदेवरसः (चतुर्थ.)

गोलं गन्धकसूतयोस्त्रिकटुककायेन वद्धाऽथ भू-
 कृष्णाण्डान्तरवस्थितं विपिहितं तेनेन लिप्त्वोपरि ।
 मापे द्वैघृहूलमाज्यपकमथ तत्कृष्णाण्डमभ्याद्धरे-
 त्चूर्णैश्च संयुतः सुरकृताचूर्णस्य मुष्टिद्वयम् २२१०
 जया शतावरी कृष्णा फपिकृच्छुफलं तिलाः ।
 प्रत्येकं पलसम्माना यथाः पञ्चपलोन्मिताः ॥ २२११ ॥
 तावन्माचफलं द्वे च यष्टीं मुष्टिद्वयां शुभाम् ।
 निक्षिप्य सप्त सप्ताऽत्र भावनाः क्रमशश्चरेत् ॥ २२१२ ॥
 महाबलायलानागधलाभि द्राक्षयाऽपि च ।
 कृष्णाधामीभुमिध्याऽपि दन्तपात्रे निनेद्य च २२१३
 मत्स्यपिण्डकायुतं घृहृद्वयमानं भजेधिशि ।
 अनुपानमिहमार्कः धारोष्णं सुरमेः पयः ॥ २२१४ ॥
 दोषमार्तवर्जं हत्या कुर्याद्वीर्यवर्धनम् ।
 ध्यजोत्साहं तथा स्त्रीषु धार्जीकरणमुत्तमम् ॥ २२१५ ॥
 अलं मलययापुना कुमुदयान्धयेनाऽप्यलं,
 मधुप्रतसहायका. कलितपञ्चमाः के पिपाः ।

अमुं भज विशङ्कितं रतिसरोजिनीभास्करं,
मनोजपरिद्वेषतं मदनकामदेवं रसम् ॥ २२१६ ॥
र. र. स., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण-
कजलीकर त्रिकटुके हाथसे एकरोजु मर्दनकर गोलावनाय मुई-
कोहलेके भीतर रखकर उसीकी डाटलगाकर मुईकोहलेकेरससे
उड़के आटेकी भिंगोकर दोअहुलमोटा लेपबुझादे । फिर धीमे
मन्दआगिसे पकावे, जब आटा जलनेलगे तब उतारकर रखले ।
स्वाङ्गशीतल होनेपर मुईकोहलेमेंसे कजलीके गोलेको निकालले ।
फिर तुलसीकाचूर्ण २ पल, भांग, शतावर, पीपल, छिलकेरहित
केवांचनेचीजऔरतिल १-१ पल, जब और बेलका सूताफल
५-५ पल, दोनों प्रकारकी शुल्हठी २-२ पल लेकर वारीक-
चूर्णर १-२ पहर इन्हे मर्दनकर बन्नी, खैरटी, नागबला,
द्राक्ष, पीपल, आंवला और ईख इनके रसोंसे ७-७ भावनाएँ
देकर हाथीदांतके पात्रमें रखदे । इसमेंसे ६-६ रत्ती रावके साथ
रात्रिको खाकर गायका धारोष्णदूध पीवे । इसके सेवनसे रज
और बीर्यके दोष, ध्वजभङ्ग प्रथति नष्टहोकर उत्तमवाजीकरण-
होताहै । इसरसकेसेवनकरनेपर मलयद्रिका वायु, चन्द्रमा, भौरे
और कमलप्रभृति कामको जापतकरनेवालोंकी कोई आवश्यकता
महीं, इसके खानेमात्र हीसे मनुष्य कामान्ध होजाताहै ॥४९५॥

४९६ मदनकामदेव रसः (पञ्चमः)

तारं यजं सुवर्णञ्च ताम्रं सूतकगन्धकम् ।
लोहं क्रमविबुद्धानि कुर्यादितानि मात्रया ॥ २२१७ ॥
विमर्य कन्यकाद्रायै न्यसेत्काचमये घटे ।
विमुच्य पिठरीमये धारयेत्सैन्धवाऽऽवृते ॥ २२१८ ॥
पिठरीं मुद्रयेत्सम्यक् ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
यहिं शनैः शनैः कुर्याद्दिनेकं तत उद्धरेत् ॥ २२१९ ॥
स्याङ्गशीतञ्च सञ्चर्ष्य भावयेदर्कदुग्धकैः ।
अभ्यगन्धा च काकोली वानरी मुसली क्षुरा ॥ २२२० ॥
त्रिभ्रिवेलं रसेर्यां शतावयांश्च भावयेत् ।
पद्मकन्दकसेरुणां रसेः काशस्य भावयेत् ॥ २२२१ ॥
रक्तिकैकां रसस्याऽस्य चूर्णेनेतेन योजयेत् ।
कस्तूरीव्यापकायूरं कङ्कालैलालवङ्गकम् ॥ २२२२ ॥
प्रति रक्तिकथञ्चैतच्छकैरसमकं भजेत् ।
गोदुग्धद्विपलेनैव मधुराहारसेवकः ॥ २२२३ ॥
अस्य प्रभावात्सौन्दर्यं लभेताऽन्न न संशयः ।
तदणी रमयेद्ब्रह्मीः शुक्रहानिर्न जायते ॥ २२२४ ॥
दा. सं., र. सु., रसायनवर्., र. कौ., र. क., र. म., यो. र.,
चि. र. भ., मै. सा., ट. यो. त., र. क., वाजीकरणे । वृ. यो. त.
मदनकामदेवर इति नाम ।

भाषा—चांदी १ भा., हीरा २ भा., सोना ३ भा., तावा
४ भा. इनकी भरमें, शुद्धपारा ५ भा., शुद्ध गन्धक ६ भा.,
तोहराम ७ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलरंगकजलीमें घब-

चीजोंको मिलाकर १-२ दिन धीकुंआरके रससे मर्दनकर सुपा-
कर आतशीशीशीमें भरेके मिट्टीकेपात्रमें रखे । शीशीके चारों
तरफ वारीकपीसाहुआ सिंधानमक ऊपरतकभरे । फिरधीरे २
एकरोजु अभिदेकर अद्धारोंपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर
निकालकर आककादूध, असगन्ध, काकोली, केवांच, मुशली,
तालमराना, शतावर, पद्मकन्द, कसेरु और फास इनप्रत्येकके
रसोंसे ३-३ वार भावनाएँ देकर मुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे
१-१ रत्तीलेकर कस्तूरी, त्रिकटु, शुद्धकपूर, शीतलचीनी, इला-
यची और लौंग २-२ रत्ती लेकर वारीकचूर्णकर पचावकी
शकर मिलाकर २ पल गायके दूधकेसाथ सेवनकरनेसे और
मधुर आहार खानेसे सौन्दर्यको प्राप्तहोकर बहुतसी स्त्रियोंके
साथ रमणकरनेपरमी शुक्रीहानि नहींहोती ॥ ४९६ ॥

४९७ मदनकामदेवरसः (षष्ठः)

रौप्यभस्म शुभं प्राह्यं दशगद्याणसम्मितम् ।
पारदेन हतश्चैव पूर्वप्रोक्तविधानतः ॥ २२२५ ॥
दशकं तुत्यपापाणात्तारमाक्षिकतो दश ।
सर्वं खल्वे विनिक्षिप्य सूक्ष्मं कार्यं प्रयत्नतः ॥ २२२६ ॥
वाससा गालयेच्चूर्णमर्कटुधेन पेपयेत् ।
दिनेकं दिनमेकञ्च धतूरस्य रसेन च ॥ २२२७ ॥
दिनेकं वत्सनामस्य श्रीखण्डेन च वासरम् ।
करवीरस्य मूलेन पुनः श्रीखण्डवारिणा ॥ २२२८ ॥
सर्वापेधैरेवमेवं शुष्कं शुष्कं विमर्दयेत् ।
गोलं कृत्वा शरावस्यं वस्त्रमृत्तिकाया ततः ॥ २२२९ ॥
गते हस्तप्रमाणेऽथ क्षिप्त्वाऽग्निं ज्वालयेदधः ।
स्वाङ्गशीतञ्च तन्मूर्णं कृत्वा कुम्भे क्षिपेत्सुधीः २२३० ॥
मदने कामदेवोऽयं जायते वीर्यकृद्द्रसः ।
शुक्रामात्रस्तु दातव्यः सेव्योऽयं पीष्टिकोपधेः २२३१ ॥
अवीर्यं शुष्करवीर्यं च द्रवह्रियं तथैव च ।
अनुत्थानेऽपि लिङ्गस्य निष्कामेऽस्यच्छवीर्यके २२३२ ॥
बलक्षीणे तथा पण्डे द्योऽयं वीर्यकृद्द्रसः ।
स्यात्तत्र्यं ब्रह्मचर्येण यावदायाति पूर्णताम् ॥ २२३३ ॥
रसो निरन्तरं प्राहो ह्यम्लयज्जैत्रं भोजनम् ।
सेव्यमानेप्रतिदिनं प्रकारेणाऽमुना रसे ॥ २२३४ ॥
भवेत्पोडशावर्षीयः कामदेवसमो नरः ।
मद्दानिकरः स्त्रीणां भवेद्याऽऽप्यन्तवत्सहः ॥ २२३५ ॥
रसवि, वाजीकरणे ।

भाषा—उदयचन्द्रराममें बंधेहुए प्रकारसे पारदशुष्कभस्म-
कीहुई चांदी, दानेफिरा और ह्यामाम्नीकीमम्म ५-५ तोले
लेकर सबको सारलमें डालकर आककादूध, धतूरा, षण्णग,
चन्दन, यकंदबरेरकी जड़कीछाल और सपेदचन्दन इनप्रत्येकके
यथागम्भवत्तरण अथवा क्राभोंसे १-१ दिन पीठपर गोल
बनावे । इसमें प्रत्येक मात्रना गुग्गुलुसाकर देसीकादिदे ।
फिर गोलेको शतावसमुद्रमें बन्दकर ३-६ करदमिटी देध

मुखाकर एकहाथगह्वरे स्तूपेन पहिले अग्निरस आधेतकण्डेभके सम्पुटको रस ऊपर तक कण्डोंसे भरदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर शीशीमें रखलेवे । इसनी १-१ रती पौष्टिक अनुपातोंके साथ देनेसे वीर्यकाअभाव, शुक्लवीर्यता, शीघ्रप्रात, लिङ्गातुल्यान, इच्छाराहित्य, अस्वच्छवीर्य, बलशीणता, पण्डता येसब नष्टहोकर कामरुपी बनजाताहै । जनतक वीर्यसे परिपूर्ण न होजाय तबतक ऋचावर्षे रखे । इसरसका सेवनकरनेवाला स्त्रियोंके दर्पको दूरकर उनका अत्यन्तप्रिय होताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ मदनकामदेववटी

आकलङ्कं केशरदेवपुष्पं
जातीफलोतिङ्गणहंसपाकम् ।
एतानि चूर्णानि समानि कृत्वा
मूलाह्वंमात्रं कुट्ट नागफेनम् ॥ २२३६ ॥
क्षीरेण फेनं परिपाच्य यद्दं
मूलात्सिता पद्भुणामनयोज्या ।
विमर्द्य चूर्णं गुट्टिकां निशायां
मुखे स्थिता कामयते शतानि ॥ २२३७ ॥
र. (मा.) वाजीकरणे ।

टि०—केचित्निर्वा बटिकां मित्रोत्पा विषादवन्ति तथा—आकलङ्क, केशर, लवङ्ग, जातीफल, त्वग्गरदानि प्रति द्यूकृतितयप्रमाणानि । कश्चोकेतिङ्गे प्रति द्यूकृतितयके, खाल्माहिकेने च प्रति द्यूकृतय गृहीत्वा सूक्ष्मचूर्णं विषाय अधिफेनमाद्रंकरसे द्यूकृतिकराराशी मेलयेत् । अर्द्धाहक पोस्तुनि कुट्टयित्वा त्रिभेककले काथयित्वा पादाऽवशिष्टेन काथेन अर्द्ध प्रत्यक्षार्थं मेलयित्वा सार्द्धं यत्नतुल्या विषाय सर्वं वस्तुना तत्र निश्चिन्त्य धर्षणेनैकरसता सन्ध्याय बदरीरजप्रमाणा बटिका विषाय रक्षयेत् । तास्त्रैकैका रतिसमभयाद्विषादव्यापाम् दुग्धेन निमेष्य सोत्साहो रमणीयु रमते, रति ।

भाषा—अकलङ्करा, केशर, लौग, जायफल, उट्टिन्न और शिमरिफमसम समभाग, सधसे आधी दूधमें पकाईहुई अफीम और ६ गुनी शकर लेकर काण्ठोपधियोंका चूर्णकर अफीमकेसाथ पोकर एकजीव करदे फिर शकर मिलकर चूर्णरूपमें रखडोके, अथवा शकरकी नाशानीमें १-१माशेकी गोलियाबनाकर रखे । इनमेंसे १-१गोली मुष्टमें रखकर रतिकरनेसे बहुतदेरतक स्तम्भन-होताहै । ऋचावर्षपूर्वक दूधकेसाथ सेवनकरनेसे श्वास, कास, मन्दाग्नि, प्रहृणी, अरुचि, नपुसकत्व प्रभतितोगनष्टहोतै ॥४९८॥

४९९ मदनकामरसः

पद्मवीजं कसेरुख्य कन्दं नालञ्च कर्णिकाम् ।
मुशलीभृङ्गराड् द्राक्षा पर्कं श्लेष्मातकं फलम् २२३८
विजयामकटीमाषाः शणयीजानि वै तिलाः ।
कोकिलाक्षस्य धीजानि भृक्प्याण्डी शतावरी २२३९
शृङ्गादं चिभेदं फञ्जीवीजानि चाऽभ्वगन्धिना ।
एतत्सर्वं समं पिप्पुा पादांश्च चाहरेत्पृथक् ॥ २२४० ॥
पादांशस्याऽष्टमांशेन शुद्धं मृतं विमिश्रयेत् ।
पारदाद्यमांशञ्च कर्पूरं तत्र नि.क्षिपेत् ॥ २२४१ ॥

चातुर्जातकमेकैकं कर्पूरादिगुणं भवेत् ।
सूततुल्या सिता योज्या मर्द्य रम्भाद्रघै दिनम् २२४२
तद्गोलं डमरी यन्त्रे क्रमवृद्ध्याऽग्निना पचेत् ।
दिनान्ते चोर्द्धलघनं तद्ग्राह्यं रम्भाद्रघै हृदम् ॥ २२४३ ॥
मर्दितं सितया तुल्यं मापैकं भक्षयेत्सदा ।
रसो मदनकामोऽयं बलवीर्यविवर्धनः ॥ २२४४ ॥
दिव्यरूपा भजेद्रामाः कामाङ्कलकलान्विताः ।
भागवत्यन्तु यत्पूर्वं पृथक् चूर्णं सुरक्षितम् ॥ २२४५ ॥
कुलीरमांसच्छागाण्डचटकाण्डानि वै पृथक् ।
प्रत्येकं चूर्णयेत्तुल्यं सर्वतुल्यं गवां पयः ॥ २२४६ ॥
तत्सर्वं चालयन्दव्यां पचेद्यावत्सुपिण्डताम् ।
प्रसार्य काष्ठपात्रान्तश्चायाशुक्लं विचूर्णयेत् ॥ २२४७ ॥
अस्य चूर्णस्य कर्पूरं चतु.पण्डशदकं क्षिपेत् ।
चातुर्जातरुचूर्णन्तु क्षिपेद्द्विभ्रिंशदंशतः ॥ २२४८ ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या रक्षयेन्मृतने घटे ।
कर्पूरं गवां क्षीरैरनुपातैः सदा पिबेत् ॥ २२४९ ॥
र ख , वाजीकरणे ।

भाषा—कमलगटा, कसेरु, कमलकंद, कमलनाल और कर्णिका, मुशली, भंगरा, द्राक्ष, लसोकेके पकेफल, भाग, केवाचके बीज, उड़र, शणकेबीज, तिल, तालमखाना, मुँई-कोहळा, शतावर, सिपाडे, कचरी, कागसेबीज, असगन्ध येसब १-१ तोले लेकर चूर्णकरले । इसमेंसे चतुर्घास लेवे और पारा २ माशा, कपूर २ रती, तज, पत्र, इलायची, नागकेदार १-१ रती, शकर २ माशा डालकर केलेकेकन्दकेरससे एकदिन मर्दनर गोलाबनाय उमरूयभ्रमं रखकर क्रमद्वयाग्निसे दिनभरपकावे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर कदलीकन्दके रससे मर्दनकर मुखाय बराबरकी शकर मिलाकर रखडोके । इसमेंसे १-३ माशा खाकर दूध पीनेसे बल और वीर्य बढताहै और दिव्यरूप स्त्रियों-केसाथ रमणकरनेमें समर्थ होताहै । पूर्वोक्त औपधियोंका ३ भाग अवशिष्ट चूर्णलेनर केरुकेकामास, कसेरु और चिंकेके अण्ड, येसब समभाग लेकर वारीक पीतकर सवरी बराबर गायने दूधमें डालकर कण्ठीसे चलाताहुआ पकावे । जन पिण्ड होजाय तब काण्ठके पीपर विष्टाकर छायाशुद्धकर चूर्णकरले । इसचूर्णसे ६४ वा हिस्सा शुद्धकपूर और ३२ वा हिस्सा चातुर्जात छोडकर सक्की बरानर शकर मिलाय नये बतनेमें रखडोके । इनमेंसे २-२ तोले गायकेदूध अथवा पौष्टिक अनुपातोंके साथ सेवन करनेसे उत्तम वाजीकरण होताहै ॥ ४९९ ॥

५०० मदनगोलकः

शुद्धसूतसमं गन्धं माक्षिकं तत्समं कुर ।
मर्दयेन्मातुलुङ्गाम्बैः स्वर्णपत्राणि लेपयेत् ॥ २२५० ॥
मारयेत्पुटयोगेन यानता भस्मतां प्रजेत् ।
तद्भस्म तारयद्भञ्ज प्रवालं मौक्तिकाऽन्नकम् ॥ २२५१ ॥
कान्तं येनान्तमुल्यञ्च रसमसम् च वृद्धितः ।
यन्ध्याककांटीकक्रन्दगोजिह्वास्वरमेस्तथा ॥ २२५२ ॥

भावयेत्सप्तवारिणा रवितापेन शोषयेत् ।
 गोलं मृत्कपटे योज्यं त्रिधा वेष्ट्य विशोषयेत् ॥२२५३
 लवङ्गं पूरयेद्भाण्डे तन्मध्ये गोलकं त्रिपेत् ।
 भाण्डवपत्रं निम्बद्वयाऽथ चतुर्धामं विपाचयेत् २२५४
 स्वाङ्गशीतं समुद्भृत्य भावयेत्सदनन्तरम् ।
 शास्त्रमत्या च विद्यायां च हलिन्या शतवीर्यया २२५५
 कपिकच्छुनिकण्डेन फेतकीस्तनवारिणा ।
 रूढन्या च मुसल्या च गौर्यां धात्र्या विशालया २२५६
 वासातगर्गतकार्प्यं मालत्या शतपत्रकैः ।
 कुडमेन ततो भाव्यो रसो मदनगोलकः ॥ २२५७ ॥
 बल्लहयदत्ता मात्रा गोशुद्धेशुद्धकेण च ।
 शिलाजतुसमायुक्तो कर्मांटीरस्मत्तोऽपि वा ॥ २२५८ ॥
 अक्षरैर् शर्करां भित्त्वा शतस्रपण्डान् करोति वै ।
 यत्नं पुष्टिं तथा तुष्टिं कान्तिञ्च कुरुतेऽनलम् ॥२२५९॥
 सप्तधातुगतं शोषं जयेत्कासं सुदारुणम् ।
 शीणानां व्याधिभिर्भ्रंशं यण्डानां क्षीणरेतसाम् २२६०
 रामा यस्य शुद्धे सन्ति तेन मेघ्यो रसोत्तमः ।
 मेघनात्कामसम्प्राप्तिः कामिनीदर्पहारकः ॥ २२६१ ॥

रसायन सं, र. सु, रसायनेराजीकरणेच ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धर और सोनामारी १-१ तोला
 लेकर नीलवर्णकालीकर बिजोरेकरसे मदनकर ३ तोले घुग्गे
 बारीक पत्तोपर लेकर । फिर गोलाबनाय धारावपत्रमुत्रं यन्दर
 १५ सेर बण्डोकी आवेदे । इत्यतएव भस्म होनेपर कारम्पार
 करताजाय । यही सुरभंगमन, रजनी, यज्ञ, प्रवाल, मोती, अन्नक,
 कान्तकोह, वैशान्त, तांबा, पारदमम येसब धमद्वभागले
 लेकर बासुगेयोरेन्द और जहलीगोभीके रगोसे ७-७
 भावनाए देकर गोलाबनाय धूपमें गुगाले । गोलेपर गुगागुगावर
 तीन कपडमिरी देवे । फिर एष्टेदीमें आविष्टक लींग भरकर
 गोलेमें रगदर ऊपरतक लींगोमें भरकर कपडमिरी करदे और
 घुग्गेपर ४ पदवी बृहस्पति देवे । प्याजशीतल होनेपर
 निहाऊर सेमल, विदारीकन्द, बरिहाटी, धनावर, केमोच,
 गोग्ग, केवडेरे कोमकडेरे, इन्दी, सुपरी, हल्दी, आंरु,
 इन्द्रायनी, अद्राया, तण्ण, एक, मालती, गुग्गुलु और वेणारके
 यथायन्मर स्वराय अथवा वायोसे १-१ भावना देकर १-१
 रसीदी मात्रा गोग्ग, शास्त्रमत्या, विशाजी, इनके साथ
 अपना रंगगेरेगाप देनेमें यह भरमरिने गेहूँसे टुकडे करदा-
 लाई कर, पुष्टि, उत्साह, कान्ति और अग्निसे ब्रह्मांड ।
 मन्नेपाशुभोमें प्रथमगु शोष और भीषण गौरीको नदरकाई ।
 रोमोसे शीत, शीतल, हतवर्षरे सिद्धे उत्तम भीषणदे जिक
 परसे बहुली सिद्धे हो उपरोक्त रसायन बनानाएदि ५००

५०१ मदनजनकोरसः

मूर्त्तं चार्त्तं धनवगमनं सायरीयश्च सुर्व,
 यामं मयं मद्भक्तलनः कुण्डिनाभाण्डपणम् ।

जीर्णं नीरं पुनरपि तथा शास्त्रमलीताप्रवह्नी-
 मूढम्पाण्डमीमदनजनकं सेवयेत्सुख्युग्मम् ॥ २२६२ ॥
 धात्रीरखण्डं मुसलितुरगीशोद्रसर्पियुतञ्च,
 दुग्धं पीत्वा रमयति शतं कामिनोकामदाता ।
 दीर्घं जहाद्वलितपलितं सायमिष्टञ्च भोज्यं,
 सर्वाप्रोगाङ्गयति जनयेत्कीर्तिवीर्यस्य पुष्टिम् ॥२२६३॥
 र सं., र. शि., वाजीकरणे । र. शि. पुण्यन्वावलेटः ।

भाषा—पारा, कान्तलोह, सोना, अन्नक, सोनामारी और
 रजतभस्म सब समभागलेर मद्भक्तके जलसे एकत्रगइ मदनकर
 मुसाय काचकी कूमीमें भरके बालुकायन्त्रमें रगदर आवेदे ।
 पानी जलजावेर दुबारा डालदे । फिर सेमल, मजीठ, भुई
 बौहडा इनके स्वराय अथवा काडुसे १-१ भावना देकर १-१
 रसीकी गोल्यां बनाकर रसछोडे । इनमेंसे १-१ गोली भावना,
 सुपरी, अथगन्ध, मधु और भीषेगाय देकर दूध पिलानेसे
 शर्करावियोवेसाथ सम्भोगकरनेपरमी शुक्र क्षीणनहोता ।
 बहुतदिनकर सेवनकरनेसे यवीपरितनो दूस्वर पुष्टि और बरसो
 बड़ाकर अनुयको सुखवस्थापन करताई । इसके मेवनमें विदा-
 रीपदाय और शीका त्यागकरना ॥ ५०१ ॥

५०२ मदनभरवोरसः

रसं मणिशिलां गन्धं सैन्धवं मृतताम्रकम् ।
 वृहत्तफलजत्राये मर्दितं शुटिकीरुतम् ॥ २२६४ ॥
 भूषायां भूपुटे यामं बालुकायन्त्रके पचेत् ।
 स्वाङ्गशीतलमुद्भृत्य गन्धपित्तेन भावयेत् ॥२२६५॥
 चणमात्रं प्रदातव्यं नारिकेलजलेन च ।
 अथवा त्रिकुट्ट्राये नाशयेत्तत्रिधमम् ॥
 दूधधरं दापयेत्पथ्यं रसं मदनभरव । ॥ २२६६ ॥
 वै वि, वा, रसायन १, तिलविभ्रमे ।

भाषा—शुद्धपारा, मेनसिल और गन्धक, गंगानमक, लम्
 भस्म सब समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकालीकर वनमरिने
 पत्तेके रसमें एष्टिन मदनकर गोलाबनाय सगुणसमुने मन्
 कर मूपदवन्ने १ पदर एष्टेनकर भाषायन्त्रमें एकरदरदी आंरु
 देवे । स्वाजशीतल होनेपर गन्धकेरितमें एक भावना देकर
 चनेप्रमाण गोसियां बनाकर रगधेवे । इनमेंसे १-१ रसी
 नारियलके जत्र अथवा त्रिकुट्टके प्रायमें देनेसे यह तिलविभ्र
 को नदरकाई । इनमें पथ्य दहीभावेना ॥ ५०२ ॥

५०३ मदनमञ्जरीरसिधा

वापारो ध्योमभागाम्नादनु निगदिनं भागयुग्मश्च परं-
 नागेकं शम्भुपीजं त्रितयमपि मूर्त्तं तन्ममा गिदधुनी ।
 यानुजाते रजतार्तापन्मग्निचक्रा नागरे देवपुष्टे ।
 जार्तापत्रश्च आगदिनयमय पूषक, मयमेंचक पूषक १
 मयेंचपदा गिता स्वाजलमपु-
 रतिमा मोदकोदृष्य भंगत,

खादेदमिं समीक्ष्य प्रसभ-
मभिनयानन्दसंवर्धनाय ।
योगो वाजीकराख्योऽयमिह
निगदितो भैरव्यानन्दनाम्ना,
नि.शेषन्याधिहन्ता दलित-
यहचधृद्दामरुन्दर्पदः ॥ २२६८ ॥

वृ यो त, भा प्र, वै र, चि. र. भ, रगयनस, वाजीकरणे ।
रसायनसङ्घे भैरव्यानन्द इति नाम ।

भाषा—अप्रकभन्म ४ भाग, वरुभन्म २ भा, पारद
भस्म १ भाग, शतावर ७ भा, चातुजांत, जायफल, गरिव,
पीपल, सोंठ, लौंग और जावित्री २-२ भाग लेकर समरा
घारीकचूर्णकर सबसेदनी धाकर मिलाकर धी और मधु अन्दा
जसे देकर ३-३ मासेकी गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे
१-१ गोली दुग्ध प्रयति उचितानुपानकेसाप देनेसे श्वास, कास,
धातुशय, प्रमेह और हीवताको नष्टकर उत्तम वाचीकरणको
करताहै ॥ ५०३ ॥

५०४ मदनमोदकः (प्रथमः)

उन्नत्तस्याऽर्द्धभागेन मृता च सह भर्जितम् ।
कणाऽऽकटाहिसिन्धुत्थं सङ्घं चाऽऽधिसंयुतम् ॥
कङ्गोलकं बलायुग्मं हिंन्नामोवाऽऽधगोशुरम् ।
इधुरं मरुटी क्रोशं जात्याः परं फलन्त्या ॥२२७०॥
चन्दनं देवकुसुमं चारं सादकराऽन्तरुम् ।
वरी शुक्राग्निघाटाह्यो मुशली सुपयी जलम् ॥२२७१॥
वांशोमधुञ्जराशोपांदायुक्तं सफलफणितम् ।
यावन्येतानि द्रव्याणि तावती धिजया मता ॥२२७२॥
सर्वतुल्या सिता ग्राह्या यावदायाति बन्धनम् ।
घृतेन मधुना मिथं मोदकान् कारयेन्निपक्व ॥२२७३॥
त्रिभुगन्धिसमायुक्तं कर्पूरेणाऽधियासितम् ।
स्थापयेत्स्निग्धभाण्डे च श्रीमन्मदनमोदकम् २२७४
सर्वरोगहरं होतद्विशोपाद्गहर्णाहरम् ।
मेधायुः कान्तिधैर्यञ्च बलपुष्टिविधर्धनम् ॥ २२७५ ॥
दृढदेहकरं नृणां बलीपलितनाशनम् ।
वर्षत्रयं सदां सेव्यं चिरजीवी भवेत्तदा ॥ २२७६ ॥
र. शि, वाजीकरणे ।

भाषा—ध्रुवके शुद्धबीजोंका चूर्ण १ तोला, अप्रकभस्म ६
मासे, लेकर दोनोंको एकपहर मदनकर बडाहीमें रखकर मन्द
कमिसे सेके, फिर पीपल, अकलखटा, नागभन्म, संधानमक,
कुड, शीतलबीनी, बला, नागबला, हंसकीबड़, केलेफानन्द,
असगन्ध, गोखरू, तालमखाना, केनाचकेबीज, बसेरू, जाय
फल, जावित्री, सफेदचन्दन, लौंग, चिरोनी, मिलावे, लाल
कचनार, शतावर, क्षीरविदारी चित्रककीबड़, बाराहीचन्द,
सुसली, स्याहजीरा, सुगन्धबाला, बसलोचन, महुआ, समुद
शोष, विषादा, रावकीपाइवी देसक ३-३ मासे इन सबकी
बराबर भाग लेकर सबका घारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय एक

पहर खरलेकर सबकी बराबर धाकर डालकर त्रिभुगन्धि १-१
तोला, शुद्धकूर ३ मासे मिलाकर धी और मधुसे ३-३
मासेकी गोलिया बनाकर चिकनेवर्तनमें रखाओड़े । इनमेंसे
१-१ गोली ययोचितानुपानके साथ देनेसे समस्तरोग नष्ट
होतेहैं । विशेषनया प्रदानी, विबुद्धिता, कान्तिधैर्य और बल
तथा पुष्टिका हास, बलीपलित सेषय मद्योतेहै । तीनवर्षतक
लगातार इसका सेवनकरनेमें चिरजीवी होजाताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ मदनमोदकः (द्वितीयः)

स्वर्णसिन्दूरलोहाप्रचङ्गयानीरचीनजाः ।
शास्मलीधन्वकाश्मीरजीरजातीलवङ्गकान् ॥२२७५॥
शोषण्योपत्वनाक्षीयः पृथक् कोलमितान्क्षिपेत् ।
जातीपत्ररीद्राक्षायलाकरेऽऽश्लिक्काः ॥२२७६॥
पलात्मगुस्ताकुष्टाऽऽध्विदारीहृष्यकेदारान् ।
मांसीकपूरकङ्गोलगोशुराणां पिचुद्धयम् ॥२२७७॥
सर्वस्माद्धर्धभागेन मातुलानां सुभर्जिताम् ।
सर्वस्माद्भेद्यभागेन सितां दद्याद्विशोधिताम् ॥२२८०॥
निर्माय तन्तुलीं तस्याः क्षिपेत्सर्वमखुनमात् ।
शाणमात्रमनुकम्य वर्षधेयदुर्द्धकर्यकम् ॥२२८१॥
उष्णं पयः पिबेच्चाऽनु वर्षधेयदन्यपेक्षया ।
नष्टेन्द्रिया नष्टशुक्रा बलीपलितजर्जराः ॥ २२८२ ॥
सेचनादस्य जायन्ते युवान इव हर्षिताः ।
स्त्रीणां मदनमृदानां भवन्ति प्राणरहभाः ॥२२८३॥
प्रहणीश्यासकासाशो.प्रमेहमधुमेहजाः ।
व्याधयो विनिवर्तन्ते हृद्यो वृष्यो रसायनः ॥२२८४॥
चू क, वाजीकरणे ।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, लोह, अप्रक और वरुभन्म, बेतके
बीज, चोपचीनी, सेमलका सुसला, धामनरीछाल, वैशर, जीरा,
जायफल, लौंग, समुदशोष, त्रिकुट, बसलोचन अथवा तीखुर
४-४ मासे, जावित्री, शतावर, द्राक्ष, बला, कारुइसींगी,
इलायची, केनाचकेबीज, कुड, नागमोया, क्षीरविदारी और
काष्ठविदारी (मुईकोहजा), नागकेशर, जदामासी, शुद्धकूर,
शीतलबीनी और गोखरू २-२ तोले, इनसबसे आधी भुनीभाग
और सषसे दूनी स्वच्छधरकी तीनतारी चशनीलेकर छपरकी
चीजोंका घारीकचूर्ण क्रमसे मिलाकर ४-४ मासेकी गोलिया
बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १ गोलीसे आरम्भकर क्रमसे दो
गोलीतक बढ़ाकर परमदूषकेसाय सेवनकरे, पाचनशक्ति बढने
पर दूधको बढातावय । इसकेसेबनसे नष्टेन्द्रिय, नष्टशुक्र और
बलीपलितव्यासनजंरितमी जवानोंकी तरह हर्षयुक्तहोकर मदो
न्मत्तत्रियोंके प्राणवशम होतेहैं और प्रहणी, श्यास, कास, क्वा
सीर, प्रमेह, मधुमेह इनसबको नष्टकर मनुष्यको हृष्टप्र बनाकर
पुन युवावस्थामें लाताहै ॥ ५०५ ॥

५०६ मदनसजीवनरसः

थिपलं पारदं शुद्धं गन्धकञ्च चतुष्पलम् ।
मृतमम्रकसत्त्वञ्च स्वर्णं कान्तञ्च कार्पिकम् ॥२२८५॥

द्विपलं हेमविमलं भूनागायः पलत्रयम् ।
 एमिः सर्वैश्च सम्पेव्य प्रकुर्यान्नष्टपिष्टिकाम् ॥२२८६॥
 वालुकायन्त्रचिन्यस्तलोहपात्रे क्षिपेत्तदा ।
 अथस्ताज्ज्वालयेदग्निं मर्दयेत्तदनन्तरम् ॥ २२८७ ॥
 मण्डून्त्या प्राक्षिकायाश्च मुशल्याश्चित्रकस्य च ।
 हस्तिशुण्ड्यास्तथा कृष्णनिर्गुण्ड्या गोक्षुरस्य च २२८८
 रसं कुडवमानेन क्षिपेत्खल्वे मुहुर्मुहुः ।
 तत आकृष्य सन्धिष्य मधुना सह यत्नतः ॥२२८९॥
 महामृषोदने क्षिप्त्वा विनिरुद्धय विशोष्य च ।
 दशभिश्छगणैर्द्वयं पुष्टं सम्पूज्य भैरवम् ॥
 करण्डे क्षेपयेत्पिष्टा समभ्यर्चितकृत्यकः ॥ २२९० ॥
 रसः प्यातो नाम्ना भुवि मदनसञ्जीवन इति,
 द्विपल्लभाभ्यां तुल्यो घृतमधुसितादुग्धसहितः ।
 निर्पातः सप्ताहं प्रचुरमधुराहारसहितो,
 नरं कुर्यान्नारीशतसुरतसुप्रतिहृदयम् ॥ २२९१ ॥
 हन्यादुन्मादुमुग्धं क्षयगदमरुचिं कामलामम्लपित्तं,
 सर्वाङ्गित्तोद्धरोगाशुधिरभवगदान् रक्तपित्तज्वरांश्च ।
 रक्तार्शः पित्तगुल्मं सततमतिमहानाहमन्तविदाहं,
 पाण्डुं मेहांश्च मोहं प्रदरगदमपि स्त्रीजनस्योग्रमाशु ॥
 र. र. स., र. वी., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्धपारा २ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, अन्नरससत्त्व,
 सुवर्ण और कान्तलोहमस १-१ वयं, सुवर्णमाक्षिक २ पल,
 नमस्कके पानीमें कान्तिरसयेहृष्ट वैशुप और लोहमस २-३
 पल लेकर पारे और वैशुपोंको ४ पहर मर्दनकरनेसे नष्टपिष्टिका
 होजायगी । इसकेबाद सुवर्ण, अन्नरसत्त्व, सोनामाली, लोह-
 मसम और गन्धक इनको क्रमसे डालकर २-२ पहर लोहेके
 खलमें मर्दनकर वालुकायन्त्रपर इसखलको अथवा दूसरे लोहेके
 पात्रमें रखकर क्षयकालीनो डालदे और नीचे आग्नि जलावे ।
 गरमहोनेपर छोटी और बड़ी ब्राप्ती, मुशली चित्रक, हाथी-
 शुण्डी, काळासनाह, गोखर, इन प्रत्येकका १-१ पात्र धमसे
 रस मुगावे । सबकास एकदम सूखजानेपर निकालकर मधुमें
 खरखर गोला बनाय सोमलनी मृषामें रखकर दशवसन्मुष्टमें
 बन्दकर २-४ वयंदिग्धी देकर गुसादे । फिर दश जतली-
 ष्टुओंकी आच देकर निकालकर भैरव और कन्याओंका पूजनकर
 पीसकर शीशामें रखडोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्ती घी, मधु,
 रावर और दूधकेसाय लेनेसे और मधुरआहारकरनेसे यह-
 त्तवी त्रियाँको गुष्ठ करसफाई और यषोक्तातुपानकेगाय
 द्वेनेसे भयंकर उन्माद, धाय, अर्धचि, कामला, अम्लपित्तादि
 समस्तपित्तोद्धर, रुधिर और रक्तपित्तत्रयिकार, रक्तार्श, पित्त-
 गुल्म, आनाह, भीनरहीजलन, पाण्डु, प्रमेह, मोह, प्रद,
 शूलरोगो यह नष्टकरताहै ॥ ५०६ ॥

५०७ मदनसन्दीपनचूर्णम्

गोक्षुरः क्षुरको मेघो मरुटी शतपुत्रिका ।
 मधुकः क्षीरकाशोनी तालमृत्पमृताऽप्यु च ॥ २२९३ ॥

शास्मलीलोहगणे विदारी तालमस्तकम् ।
 हस्तिकर्णो बला धात्री जातीफलकसेरुकम् ॥ २२९४ ॥
 शृङ्गादको मापपर्णी भृङ्गराट् कुडुमं वचा ।
 शिलाजतु शिवावीजं पारदं धातुमाक्षिकम् ॥ २२९५ ॥
 वटस्य कोमलाः पादा पलायष्टिकतण्डुलाः ।
 रक्तशालिश्चगोधूममापका यवकास्तथा ॥ २२९६ ॥
 पतचूर्णीकृतं सर्वं सितशर्करया समम् ।
 विडालपदकं खादेत्सर्पिणा मधुना सह ॥ २२९७ ॥
 शीतं पयोऽनुपानञ्च कामिनीं कामयेधरः ।
 वीर्यहीनो भवेद्यस्तु जीर्णो व्याधिप्रपीडितः ॥ २२९८ ॥
 प्रमेही मूत्रकृच्छ्री च स्त्रीदोषात्पतितध्वजः ।
 सोशीतिवार्षिको वृद्धो युगेव रमतेऽङ्गनाः ॥ २२९९ ॥
 पुत्रञ्च जनयेद्दीरमरोगं दीर्घजीविनम् ।
 नेपजं विविधैः किं स्यादन्वैश्च शतसहस्रकैः ॥ २३०० ॥
 फलं नै किञ्चित्त्राऽस्ति केवलं गौरयं बहु ।
 वालसर्थं यथातोयं दुर्धेत च दिनेदिने ॥ २३०१ ॥
 तथाऽने नृणां देहः पुष्टो भवति नान्यथा ।
 योऽस्ति मण्डलम्पन्नन्तु स गण्डेऽप्रमदाशतम् ।
 जगतस्तु हिताथोयं चूर्णं मदनदीपनम् ॥ २३०२ ॥
 च., र. र., वाजीकरणे ।

भाषा—गोखर, तालमखाना, नागरमोथा, केवाचकेबीज,
 शतावर, मुलहठी, क्षीरकाशोली, तालमूली, गिलोय, सुगन्ध-
 वाला, मेमलकामुसला, लोह और अन्नरसमस, विदारीकिन्द,
 ताडकलकी भन्ना, हस्तिकर्णपलाशकी छाल, बला, आंवले, जाय-
 फल, कशेरू, सिपाड़े, मापपर्णी, शृङ्गराज, केसर, वच, शिला-
 जीत, हरेकी मींगो, पारा और सोनामाचोबीजमस, वटकीजडा,
 इलायची, मुलेठी, मुंघंधिवावल, साठीचावल, गेहूँकासव, ठ-
 दकीदाल, छिलकेरहित जव, सब समभाग लेकर बारीक चूर्ण-
 कर सबबीजवाच रावर मिजकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ तोल
 मधु और पीके साथ खाकर धारोण्य दूध पीनेसे अतकभी
 आदमी यथेष्ट शीगल करसफाई । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे
 वीर्यहानि, व्याधिसंजीगता, प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, योनिदोषसे
 पतितःत्रज, बन्धक्यत्व, इनसब दोषोंको यह दूरकरताहै ॥५०७॥

५०८ मदनसुन्दररसः (प्रथमः)

माक्षीकं धातुमाक्षीकं लौहचूर्णं शिलाजतु ।
 पारदञ्च यथात्रैव गन्धकञ्च समं समम् ॥२३०३॥
 घृतेन भावयित्वा तु पात्रे कृत्वा तु चाऽऽयसे ।
 निष्कमाश्रमाणन्तु भक्षयेत्प्रत्यहं नरः ॥ २३०४ ॥
 मत्स्याण्डं तिलपिष्टञ्च घृतेन च परिन्दुतम् ।
 क्षीरिणाऽनुपिषेद्व्रायो शकरामधुमिधितम् ॥ २३०५ ॥
 मासमाश्रं पिषेत्प्रियं वीर्यवृद्धये दिनेदिने ।
 म पुमाश्रमयेन्नारीमजस्रं यत्को यया ॥ २३०६ ॥
 र. र., प, वाजीकरणे ।

भाषा—स्वामाखी, सोनामाखी, लोहमस, शिलाजीत, शुद्धपारा निफला और गन्धक समभाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें सबचीजें मिलाकर पीसे लोहेके पात्रमें १-० रोज मर्दनकर लोहेकपात्रमें रखडोड़े । इसमेंसे ४-४ मासे रोज खाकर मछलीकाअंडा, तिलकक और पी मिलाकर दूधकेसाथ शत्रिमें पीनेसे बीर्यकीवृद्धि और वाजीकरण होताहै । शकर और मधुकेसाथ एहमहीनेतक खानेसे स्त्रियोको चटकनी तरह रमणकरताहुआभी बीर्यकी हानिको नहीं प्राप्तहोता ॥ ५०८ ॥

५०९ मदनसुन्दररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं देवपुष्प-
मैला मस्तिः स्याद्वराहं तथैव ।
अन्धेः शोषः कल्लरुद्धोलमघ्नं
जातीपत्री खाखसीयं फलञ्च ॥ २३०७ ॥
सर्वं समं श्लेच्छलयवानिका च
तत्केसरं कुङ्कुमवह्निजञ्च ।
जातीफलं हिङ्गुलकं विपञ्च
योज्यं त्रिभागं त्वहिकेनरुञ्च ॥ २३०८ ॥
एतत्समानं कनकस्य बीजं
भाव्यं जयाद्रि मुनिसंख्यया च ।
मात्रां पिवेदात्मबलानुरूपां
घृतं सुदुग्धं ससितं प्रपेयम् ॥
शुक्रं व्युतं नैव भवेद्वधवाये
निम्बूफलास्वादनतोऽन्तरेण ॥ २३०९ ॥

टो., र. पा. वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौह, श्लायवी, मस्तागी, तन, ससुद्रशोष, अकलरा, घीतलपीनी, अन्नभसम, जावित्री और पोस्त १-१ तोला, सुतरानी अजवाइन, नागकशर, केशर, मरिच, जायफल, शुद्ध शिंगरिफ, बडनाग और अरीम ३-३ तोले, इनसबके बराबर शुद्धवृरके बीज लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भागक स्वरससे ७ दिनतक मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखडोड़े । इसमेंसे १ गोलीसे लेकर ३ गोलीतक आत्मसाध्य सुगार लेकर दूधमें पी और शकर डालकर पीनेसे रतिगमयमें नीबूकेपुसेबिना शुद्ध स्थलितनहींहोता । इसे उचितानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, सङ्गहणी, उन्माद, गटिया येसब नष्टहोतेहैं ॥

५१० मदनानुशुद्धशुद्धपाम्

टङ्गानुवृत्तीयांशो सेन्यथं लघुणं म्यसेत ।
पञ्चमांशं सोममलं पडंशो हरितालकम् ॥ २३१० ॥
एकादशांशं सूतञ्च मर्दयेद्य दिनाशुना ।
रसोन्महातरसे वातहारिरेमे पुनः ॥ २३११ ॥
काचहृष्यां विनि.क्षिप्य यदि यामांस्तु पांडरा ।
दत्त्वा तथातसीयणं टङ्गुं मदनानुशुद्धम् ॥
गुआद्वयप्रमाणेन स्वरभेदादिनाशनम् ॥ २३१२ ॥
र. का. स्वरभेद ।

भाषा—शुद्धाग १ भा., सेचानमक ३ भा., सपेदसोमल ३ भा., शुद्धहरिताल १ भा., शुद्धपारा १ भा. लेकर सबको हरेकसादा, लघुनकास्वरस, मिलावेरतातल, एहमसाध्यरस इनमें कमसे १-१ दिन मर्दनकर सुलाकर बपडमिरीदीर्घ आतसी-शीशीमें बालुकायन्त्रमें १६ पहकी जाचदे । स्वात्तशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इधमेंसे २-२ रती उचितानुपानके साथ देनेसे स्वरभेद, श्वास, कास, आनाह, आध्मान इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१० ॥

५११ मदनोदयरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोत्पलद्वयैः ।
यामं मद्यं पुनर्गन्धं साधं तत्र विनि.क्षिपेत् ॥ २३१३ ॥
पूर्वद्रव्यैर्दिनं मद्यं रसाहं गन्धकं पुनः ।
दत्त्वा तद्वदिनं मद्यं काचहृष्यां निराधयेत् ॥ २३१४ ॥
दिनेकं बालुकायन्त्रे पक्वमुद्दत्य चूर्णयेत् ।
शुक्लप्याण्डोकापयेण भावयेद्विनसप्तकम् ॥ २३१५ ॥
छायायां तत्सितातुल्यं निपेकं भक्षयेत्सदा ।
दानमूलं सर्वोजञ्च मुदाली शरैरा समम् ॥ २३१६ ॥
गवां क्षीरैः पलाहं तु अनु राशौ सदा पियेत् ।
अनन्तं वर्धते वीर्यं रसोऽयं मनोदयः ॥ २३१७ ॥

र. र., घ., र., र., रामशरी, र. की., रसायनं, र. क., रस-सागर, रसायने ।

टि०—रसेन्दुरानुपेयसगागयो अभिनयसामेदं नाम्नाऽयमेव पाठ उक्तोऽस्ति, तत्र रक्तोत्पलद्वयैः मद्यं भवेत्तु प्रदत्तोऽयं तु पात्रोत्तर भूष्पाण्डोकापयान्ति, अनुपाने च दानार्थान्मूले पत्तिलके इति विरोधो दृश्यते परन्तु मोंडरिन्ध्रिच गडमिनीभावनायाऽप्य सत्यंयथादने सवत्र सामश्रय भविष्यति, पादत्रयने तु महतीवमिति बोद्धव्यम् । अथ पादोऽन्तःशुद्धेणाऽऽगतत माहदयमवहनि परन्तु पात्रभेदमादाय एवैव पाठ स्वीकरोऽस्तीति विद्विज्ञातव्यमिति ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी समानभागमें नीलवर्ण-कजलीकर लालमलकेफूलोंकेरसमें एरपहर मर्दनकर कज-लामे आधी गन्धक मिलाकर पुनद्रवसे एरदिन मर्दनकर पारेमें आधी शुद्धगन्धक फिर डालकर एकरोज मर्दनकर सुगार आतसीशीशीमें डालकर बाउकायन्त्रमें एरदिनरात पकावे । स्वात्तशीतल होनेपर शुद्धोहोकेरसमें ७ रोज भावना देकर छायामें सुगार रखडोड़े । इसमेंसे ४-४ मासेकी मात्रा बराबरकी शकर मिलाकर खावे और उपरसे छात्रीजड़ और बीज, मुदाली तथा शर सब समभागका पूर्ण २ तोले फीरु-कर गायका दूध पीवे हो बीर्यकी अत्यन्तवृद्धिहोतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ मदनोदयरसः (द्वितीयः)

धैरान्तकान्तगगनं रमहंमनुल्यं
नागं लथं तदनु चार्द्धपयि विमद्यं ।
धात्रीयरीमुमालिशाल्मलिमर्दयि-
रेभिश्च दुग्धमितया मदनोदयालयः ॥ २३१८ ॥

५१६ मधुपक्वहरीतकी योगः (प्रथमः)

सुपन्वपथ्यापलपञ्चकञ्च
 सूत्रे गवां प्रस्थमिते विपाच्य ।
 प्रस्थे पुनः काञ्चिकदुग्धतन्त्रे
 पन्त्वा ततो निष्कुलिका विधाय ॥२३२९॥
 व्योपं यवानी कुटजस्य वीजं
 सुस्ता जलं दाडिममल्लवेतम ।
 तुघातकीपुष्पमजाजियुग्मं
 कणाजटा मोचरसं सुविल्वम् ॥ २३३० ॥
 सौवर्चलं सैन्धवमश्मभेदं
 जम्ब्याप्रमजाऽतिविपाऽतिपाठाः ।
 लवङ्गजातीफलतुर्यजाता-
 न्येतानि तुल्यानि च तत्र जातम् ॥ २३३१ ॥
 कपिथिमण्डूरमयो दशार्शं
 समस्तचूर्णाद्धिमिता सिता च ।
 अनेन पथ्याः परिपूरणीयाः
 सूत्रेण युक्त्या परिवेष्टनीयाः ॥ २३३२ ॥
 स्थाल्यां ततस्ताः क्रमशो निधाय
 तृणानि मुक्त्वा परितो विमुच्य ।
 मन्दाग्निना याममथो विमुच्य
 विधाय शीता मधु निक्षिपेच्च ॥
 ताः सेव्यमाना ग्रहणीप्रमेह-
 भ्यासापहा वह्निकराः सुकृप्याः ॥ २३३३ ॥
 पा. व., ग्रहण्यादी ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई नाजुकी हई ५ पलको एक-
 १ सेर गोमूत्र, काजी, दूध और छाछमें क्रमसे पकाकर गुठली
 निकाल निरङ्क, अजवाइन, इन्द्रजव, नागसोया, सुगन्धवाला,
 अनारदाना, अम्लवेत, धावड़ीके फूल, दोनोजीरे, पीपल, जटा-
 मारी, मोचरस, बेलगिरी, संचल, सेंधानमक, पाषाणभेद,
 जामुन और आमकीगिरी, अर्वांस, बड़ीपाठा, लौंग, जायफल,
 तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, कैचकीमन्था, मण्डूर
 और लोहभस्म ये प्रत्येक सबसे दशावा भाग और धानसे आधी
 शरर लेकर बारीक चूर्णकर हठीमें भरकर कथेसुतेषे बांधदे फिर
 एकदहीमें घास बिछाकर बहुलसंभालकर जुनकर रखदे और
 ऊपरसे घाससे दवाकर बहुतही मन्द अग्निमें एकपहरतक पका-
 कर नीचेउतारले । स्वाद्गदीकृत होनेपर निकालकर मधुमें
 डालकर रखदे । इनमेंसे यथाशक्त सेवन करनेसे ग्रहणी, प्रमेह
 भाव, मन्दाग्नि, धातुक्षीणता वेषण नष्टवेदे ॥ ५१६ ॥

५१७ मधुपक्वहरीतकीयोगः (द्वितीयः)

हरीतक्याः शतं द्रोणे पयसः परिपाचयेत् ।
 शूनाथशेषमुत्साथे निष्कुलीकृत्य च क्षणात् ॥२३३४॥
 रसगन्धकलोहानां पलेनापूये वेष्टयेत् ।
 मूत्रेण मासमेकन्तु मधुमये विनिःक्षिपेत् ॥ २३३५ ॥

पथ्याशी भक्षयेदेकां सवरोगविमुक्तये ।
 क्षयपाण्ड्वाममन्दाग्निमेहग्लानी व्यपोहति ॥ २३३६ ॥
 रसायन., क्षये ।

भाषा—अच्छीतरह पकीहुई मोठीहई १०० नग लेकर
 १६ सेर दूधमें पकावे । खोआ होजानेपर उतारकर हठीमें
 गुठली निकाल शुद्धपारा और गन्धक तथा लोहभस्म १-१
 पलकी कजलीकर हठीमें भरकर कथेसुतेषे बांधकर मधुमें डालदे ।
 ६-७ दिवके बाद इनमेंसे १-१ हई छानेसे क्षय, पाण्डु, आम,
 मन्दाग्नि, प्रमेह और ग्लानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥५१७॥

५१८ मधुमण्डूरम्

शुद्धीत्वा भिषक् प्रस्थमण्डूरभागं
 शृत्य त्रैफले मर्दयित्वा च यामम् ।
 पुटं पाचयेद्यामयुग्मं कृशानी
 पुटानीह देयानि चन्द्राश्विचारम् ॥ २३३७ ॥
 तथा घेनुसूत्रे कुमारारसे च
 विधेयश्च पञ्चामृते योगराजः ।
 भवेत्सिन्धुनागैः पुटैः सिद्धिदोऽय-
 मचिन्त्यप्रभावश्च मण्डूर पयः ॥ २३३८ ॥
 मधुमण्डुर पय कणामधुना
 चिरपाण्डुगर्दं तनु हेममितः ।
 जनको रुधिरस्य परं यत्नो
 चिविधातिहरस्त्वनुपानयलेः ॥ २३३९ ॥

रसायनषं, वै.वि., नि.र., र.मु., यो.र, वै.चि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—एकसेर पुराना मण्डूर लेकर त्रिफलाके काटेमें
 मर्दनकर साफ़कर दोपहर अग्निमें गरमकर गोमूत्रमें सुतावे ।
 इततरह २१ भावनाएँ देकर गोमूत्र, पीऊंभार और पयायुलेमें
 २१-२१ भावनाएँ देवे । प्रत्येकभावनानि अन्तमें २-२ पहरकी
 आंच देनीचाहिये । इततरह ८४ भावनाएँ तथा पुट देनेमें
 यह अचिन्त्यप्रभाव मण्डूर तैयार होगा । इनमेंसे १-१
 माशाकी मात्रा पीपल और मधुके साथ देनेमें पाण्डुरोग मिट-
 ताहै और नया रुधिर पैदाहोकर बलवत्ताहै । अतुगानविद्योयो
 यह सवरोगोंको दूरकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ मधुमालिनीवसन्तः

दृग्दमध खर्गं वै भावयेन्मस्तयारं,
 लकुचफलमवाङ्गिष्ठायाया शोणयेद्दे ।
 तदनु मृदुशरानी धारयेद्गोहपात्रे,
 दृग्दपिचुकतुल्यैस्ताम्रशुडोत्थगोतिः २३४०
 जनितसकलतोयं दालयेत्तस्य योद्धुं,
 असरुदयोद्धव्यां घर्षयेत्मावकाशम् ।
 गुलिक्रगमनमात्रं मुष्कताञ्च प्रयातम्,
 भयति तु यन्प्रमाणं कर्तुरे स्थासत्तदप्य२३४१
 मरिचनिभमथेयं गौरयह्वाजशृणं,
 लघुचजनिततोयं गौरयेत्मावकाशम् ।

कृतमरिचसमानं दापयेदाज्यखण्डैः-

हैरति शिशिरतापंजीर्णवृत्तिं समीरम् २३४२

मधुमालिनिनामाऽयं वसन्तो वैद्यपूजितः ।

अनुपानविशेषेण बलपुष्टिप्रदायकः ॥ २३४३ ॥

गर्भवृद्धिकरश्चाऽसौ गर्भिणीनां सुखावहः ।

रोगनाशात्परं दद्याद्बलरुद्धिर्वर्धनम् ॥ २३४४ ॥

र. चं., जराऽधिकारः ।

भाषा—शिंगरिफ और खरियारको बड़हरके रससे ७-७

घार घोटकर छायामें सुखाय बेरकीलकड़ीके कोयलोपर लोहेकी कड़ाहीमें रख जितनेतेले शिंगरिफको उतनेही मुर्गीके अण्डे लेकर उनको सफेदी और जर्दी धीरे २ डालकर सुखावे और लोहेकीकड़हीसे बारम्बार चलाताजाय, जब गोलिया फूटजाय और शुष्कहोजाय तब दवासे आधे कचूरके मिर्चनरतर डुकरे करके डाले और उतनाही सफेदमिर्चका चूर्ण डालकर सबको बड़हरके फलके रसकी ७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली धी और शकरकेसाथ देनेसे शीत तथा जीर्णन्वर और धातुको यह दूरकरताहै । अनुपानविशेषसे बल, पुष्टि, गर्भवृद्धि, अग्नि इनसबको बढ़ाताहै ॥

५२० मधुसूदनरसः (प्रथमः)

मृताऽन्नगन्धं लवणानि पञ्च

ताप्यञ्च सर्वन्तु समानभागम् ।

विचूर्ण्य ताम्रस्य पुटे निवेद्य

सूतेन तुल्येन पुटे ददात ॥ २३४५ ॥

सर्वं विचूर्ण्यऽथ पुटेत नीरे-

जयन्तिकामर्कटशर्वरीयैः ।

उन्मत्तवासाधिपतिन्दुचित्रि-

विषेण पश्चात्परिपाचयेत् ॥ २३४६ ॥

लोहस्य पात्रे घटिकाढ्यञ्च

रसस्ततः स्यान्मधुसूदनाऽयम् ।

बलप्रमाणेन ददात चामुं

शुण्ठीघृताक्तं द्विदलं विचर्यम् ॥ २३४७ ॥

र. दी., घृताऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा, अथकभस्म, शुद्धगन्धक, पाचोनमक और सुवर्णमाक्षिक १-१ तोला लेकर बजलीकर एकतोले तांबेके सम्पुटमें रख कपड़मिठी देकर ५ सेर बण्डोंकी आचदे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर अस्मद्दुये सम्पुटसहित खरलकर जेत, बेवाच, हल्दी, धातू, इषिया, चित्रक, बधनाग इनके यथासम्भव स्वस अथवा षायसि १-१ भावना देकर सुखाकर रोंहेके सम्पुटमें बन्दकर दो पड़ीकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर ३-३ रत्ती सौंठ और धीमें मिलाकर देनेसे ममस्त दृढ नष्टोतहै ॥ ५२० ॥

५२१ मधुसूदनरसः (तृतीयः)

यज्ञेदात्रं दिनं मघं मधुना मधुसूदनः ।

पक्वोदुम्बरम्प्याल्यस्तन्मापोयहृत्सूत्रजित् ॥ २३४८ ॥

रसायनम्, बहुमूर्धने ।

भाषा—वज्ञ, पारा, अथक इनकी भस्में समभाग लेकर एकदिन मधुनेसाथ मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पेंगेगूलकेफल और मधुकेश्याय देनेसे यह बहुसूदनको नष्टकरताहै ॥ ५२१ ॥

५२२ मनोभैरवरसः

त्रिशारं पञ्चलवणं मृतताम्रं रसं समम् ।

अर्कमूलकपायेण दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ २३४९ ॥

संशोष्य बालुकायन्ने दिनेन वज्रमूपया ।

स्वाङ्गशीतलमुद्दृत्य खरपित्तेन भावयेत् ॥ २३५० ॥

दातव्यं मापमानञ्च मधुकस्याऽनुपानतः ।

तत्क्षणेन विनश्येच्च तान्द्रिकः सन्निपातरुः ॥

मनोभैरवनामाऽयं रसः सर्वत्र पूज्यते ॥ २३५१ ॥

वै.चि. (सन्धिके), वा. तन्द्रिके ।

भाषा—तीनोंशार, पाचोनमक, ताम्र और पारदभस्म सब समभाग लेकर आककीजइकीछालके कायेसे तीनदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर बज्रमूपममें रख बालुकायन्नेमें एकदिने पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर गधेनेपितसे १ भावना देकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुल्हठीकेकाटेवेसाय देनेसे तन्द्रिक और सन्धिक सन्निपात नष्टहोताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ मनःशिलादियोगः (प्रथमः)

मनःशिलायाः फलपूरकस्य

रसेः कपित्थस्य च पिप्पलीनाम् ।

सौंद्रेण चूर्णं मरिचैश्च युक्तं

लिहृज्जयेच्छर्दिमुडीर्णवेगाम् ॥ २३५२ ॥

व. सं., छर्दिरोगे ।

भाषा—शुद्धमैन्सिल्लको विजोरा, कैप और धीफलके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी मात्रा लेकर २१ मरिचोंके चूर्ण और मधुनेसाथ देनेसे असाध्य बमन बन्दहोताहै ॥ ५२३ ॥

५२४ मनःशिलादियोगः (द्वितीयः)

चन्दनं तगरं कुण्डं हृदि छे त्वगेव च ।

मनःशिला तमालश्च रसः केदार पत्र च ॥ २३५३ ॥

शार्ङ्गलस्य नरक्षेव सुपिष्टं तपडुलाभुना ।

हन्ति सर्वविषाणेष्वेव घञ्जिवज्रमिधासुरान् ॥ २३५४ ॥

व. सं., विषाऽधिकारः ।

भाषा—वषेचन्दन, तगर, कुठ, दोनोंहल्दी, तब, मैन सिल, तमालपत्र, पारदभस्म, केदार और शेरका मापुन सब समभाग लेकर शरीक चुपेकर रखछोड़े । इनमेंसे चावलकेपोहन केसाथ १-१ मासा देनेसे असुरोंको इन्द्रे बज्रदीतरह सब समस्त विषोंको दूरकरताहै ॥ ५२४ ॥

५२५ मनःशिलादियोगः (तृतीयः)

मनःशिला व्याघ्रनरानसुत्तेरभ्युपेधितैः ।

पाननम्याञ्जनालेपाः मरुतोयविषापहाः ॥ २३५५ ॥

व. सं., विषाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध भैतसिल, वाघकानल और तुलसी समभाग लेकर पानीमें पीसकर पिलाने, नस्यदेने, अन्न और लेपकरनेसे समस्त शोथ और विषोंको यह दूरकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ मनःशिलादिवटी

मन.शिलाकुण्डलज्वजीज-
शिरीषकाश्मीरभवेः समांशोः ।
विनिर्मिता वृश्चिकसम्भवस्य
संहारिणी स्याद्गुटिका विपस्य ॥ २३५६ ॥

रा भा , वृश्चिकविवे ।

भाषा—शुद्धभैतसिल, कुठ, बरुण और सिरसकेबीज, केसर येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पानीसे गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानीकेसाथ पिलाने और दश स्थानपर लगावे तो विष्वक्काविष दूहो ॥ ५२६ ॥

५२७ मन्थानभैरवरसः (प्रथम.)

तृतीयपञ्चवक्त्रोद्गृह्यः

र म , र को , श स , र प्र सु , र चि , र र स , र सु ,
चि. र भ , र च , चि क , र. क , र का , र सि , दो , र म
मा , रसायन स , धातुकासाधिकादि ।

टि०—र का , दक्षमस्थाने कटुमीनियोक्ता । रसायनस्य प्रवृत्ता
रेणास्य नाम पञ्चवक्त्रेति शानाद्वाऽशानाद्वा स्थापित तदेकान्तोऽप्यु
चिन, बहुप्रत्यये मन्थानभैरवेति नाम्ना प्रतिद्वय योगस्य नामान्तरक
रणाऽप्योक्तत्वात् । विश्व अन्तिमशक्ते रक्तपित तिहन्त्याश्चु भास्वर
स्तिमिरु मेथेति पाठपरिवर्तनस्याऽपि फल न भावते दृष्टसामर्थ्या रक्त
पित्तनाशकत्वस्याऽप्यन्यत्वात् । दैवशत्रुपदवभूतरक्तपित्तनाशकत्वेनाऽ
नुभूय तथा शूत स्यादित्यनुमीयते परन्तु सर्वत्र तथाऽप्युक्तकणस्याऽ-
योग्यत्वात् ।

५२८ मन्थानभैरवरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं गन्धकं ताम्रभस्म
सर्वं पिष्ट्वा चाऽथ जम्बीरमध्वे ।
दालायन्त्रे पाच्येत्तद्दिनेकं
पत्रं पिष्ट्वा चाऽपि जम्बीरमध्वयात् ॥ २३५७ ॥
नीत्या भाव्यं घश्यमाणद्रवैस्त-
त्पिष्ट्वा पिष्ट्वा खल्वमध्ये यथावत् ।
हिङ्गुद्रविष्यादरूपेन्द्रनिम्ब-
जातैर्द्रावै. सर्पनेत्र्या रस्तेश्च ॥ २३५८ ॥
प्राह्मीद्रावैर्माननेथोरस्तेश्च
द्रावैस्तद्द्वन्द्वसपाद्या रस्तेश्च ।
हस्तीशुण्डीमूत्रादीसुवर्ण-
द्रावैस्तद्द्वन्द्वतशरै. क्रमेण ॥ २३५९ ॥
द्रावैस्तद्द्वन्द्वायसीसम्भवैश्च
नित्यं नित्यं चैकमेकं दिनं तत ।
सर्वं पिष्ट्वा लोहपात्रे विमुद्गय
पक्त्वा यन्त्रे बालुकायां दिनेकम् ॥ २३६० ॥

विशालिकाचित्रकदीप्यजीर-
कटुत्रयाणां सविपैरजोभिः ।
समै विमिश्रं खलु सन्निपाते
रक्तित्रयं मुद्गजयूपमोत्रे ॥ २३६१ ॥

चि क्र सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और ताम्रभस्म समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जमीरीकेसममे गोलाबनाय चारतट्टकपडेमें लपेट पकेजम्बीरकेबीचमेंरख उसीके सममे दोलायत्रसे एकदिन पकाकर हाँस, अडूसा, इन्द्रजव, नीमकीछाल, सर्पाक्षी, माफ्ती, मत्स्याक्षी, हसराज, हस्तिशुण्डी, रुद्रजटा, घबुरा, एरण्डके पत्ते और मकोयेके स्वरस अथवा कायोंसे १-१ रोज भावना देकर गोलाबनाय लोहेकेसम्पुटेमें बन्दकर ३-४ बपङ्गमिटीदेकर सुखाकर बालुकायत्रमें एकदिन पकाने । स्वातन्त्रीतलहोनेपर इन्द्रायण, चित्रक अबवादन, जीरा, त्रिकटु, शुद्ध बरुणाम, इन-सबका समभागका चूर्ण इतरसकी बराबर मिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मूगके यूप और मात्सेसाथ देनेसे समस्त सन्निपात नष्टहोतेहै ॥ ५२८ ॥

५२९ मन्थानभैरवरसः (तृतीयः)

सूतं शुल्बशिलालकाऽम्बरवर्लि सङ्कुट्य मिथीकृतं,
कुष्ठं नागबलाविदारिकवरीगारुण्डवैरण्डकम् ।
दत्त्वा खल्वतले विमर्दितदृढं सर्पाभुवः स्वे रसे
घट्टिकैकमिता नियद्गुटिका घातञ्च पित्तञ्जयेत् ॥
र म , र , वातपित्तयो ।

टि०—अत्र द्वितीयपदे विदारिक च बरी पाठा दृश्येते तत्र समीचीन
दत्तेति क्लान्तेन सह सम्भ-यात् । अत्र उन्मीयते छन्दो भद्रभिया विदा
रिणाश्चन्धस्थाने विदारि इति प्रयुक्तमुन्मीयते, अथवा विदारिती कन्दाय
विदारिकन्दम् । कवरी इति शब्देन लघुवम्बुलिका प्राद्या, अथवा कवरी
अभिधेना स्यादिति विद्विक्त्राकलनीयम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्ध भैतसिल और हरिताल, अम्बर, शुद्धगन्धक येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर कुठ, नागबला, विदारि, बर्द अथवा बडुलकीपत्ती, गोखरू, एरण्डी जड़, इतसिट इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मदनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-तानुपानसे देनेसे वात और पित्तकेरोग नष्टहोतेहै ॥ ५२९ ॥

५३० मन्थानभैरवरस (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं लोहं ताम्रञ्च सीसकम् ।
मरिचं पिप्पलीं विश्वं सप्रभागानि चूर्णयेत् ॥ २३६३ ॥
अर्द्धभागं त्रिं दद्यान्मर्दयेद्वासपद्यम् ।
शुद्धवेराऽनुपानेन दद्याद्ब्रह्मरथोन्मितम् ॥ २३६४ ॥
नवज्यरे महाघने सन्निपाते सुदारुणे ।
शातज्यरे दाहपूर्वे शुल्मे शूले विदारुणे ॥
वाञ्छितं भोजनं दद्यान्नुयांश्चन्दनलेपनम् ॥ २३६५ ॥

र सु , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र और नाग-भस्म, मरिच, पीपल, सोंठ, येसव १-१ तोला, शुद्ध बछनाग ६ माशे लेकर बारीक चूर्णकर पोरगन्धकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अदरकके रससे दोरोज मर्दनकर २-२ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नवम्बर, महापौर सति-पात, दाण्ण शीतम्बर, दाहपूर्वम्बर, गुल्म और त्रिदोषजघ्न इनसमये यह नष्टकरताहै । त्रिदोषजघ्न्याधिमें इच्छानुसार भोजन देना । दाह अधिकहो तो चन्दनका लेप करना ॥५३०॥

५३१ मन्मथरसः

मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरकैः ।
मर्दितं ह्रस्वताऽन्नं मूपास्थं पुष्टपाचितम् ॥ २३६६ ॥
गन्धकेन रसः पिष्टः कल्हाररसमर्दितः ।
विपन्वो बालुकायन्त्रे चतुर्ग्रामैः क्रमाऽग्निना ॥ २३६७ ॥
शाल्मलीचूर्णसंयुक्तं चासराण्येकविंशतिम् ।
भक्षयित्वा चतुर्गुणं गव्यं क्षीरं पिबेदनु ॥ २३६८ ॥
सर्वाङ्गोद्वर्तनं कुर्यात्सर्वयैः शाल्मलीरसैः ।
अन्वहं मधुराहारः रमेत स्त्रीसहस्रकम् ॥ २३६९ ॥
र को , र स , वाजीकरणे ।

टि०—हेमवताऽभागा गन्धरसयोश्च पृथक पाक इत्वा एकत्र मिश्रय्य मुसलीकदलीकन्दवाजिगन्धाकसेरकल्हाराणां रसे क्रमश एवैरुदित मर्दयित्वा ब्यवहार कर्तव्य इति रहस्यम् । केतनशैलीशैबिल्यदरि मलयप्रतिमानाद् द्रौ र्मौ स्थासिनीं, वस्तुतस्त्वेक एव रस । द्रव्यो सद्योगेनैव मूलस्थलक्षुतिरेति न पृथक्चेति सद्व्यवैर्बिभावनीयम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा और अप्रकभस्म समभाग लेकर मुसली, केलेका कन्द, असगन्ध, कसेह इनके रसोंमें १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसमुष्टमें बन्दकर ४ पहर क्रमा क्रिसे बालुकायन्त्रमें पकावे, फिर समभाग शुद्धगन्धक और परिकी कज्जलीको सफेदकमलके रससे मर्दनकर गोलाबनाय बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकाल कर पूर्वसर्कीबराबर इसका मिश्रणकर मुसली, केलेकाकन्द, अस गन्ध, कसेह और सफेदकमलके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-४ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सेमलके सुसलेके ४ मासोचूर्णके साथ खाकर ऊपरसे गायकादूध पीवे । ऐसे ब्रह्मचर्यपूर्वक २१ दिनतक करनेसे बहुतमी स्त्रियोंके साथ रमण करसकाहै इसमें मधुराहारका सेवनकरनाचाहिये ॥५३१॥

५३२ मन्मथाभ्ररसः

रसगन्धकयोः प्राहां पलमेकं सुदोषोपितम् ।
अन्नं निश्चन्द्रकं दद्यात्पलार्द्धञ्च विचक्षणैः ॥ २३७० ॥
कर्पूरं तोलकं दद्याद्द्वयञ्च कोलसम्मितम् ।
ताम्रं तोलार्द्धकं तत्र निःशेष मारितं पुनः ॥ २३७१ ॥
लोहकुर्यं सुजीर्णञ्च वृद्धदारकजीरकम् ।
विद्यारीं शतमूलीञ्चैधुरवीजं वलान्धया ॥ २३७२ ॥
मर्कट्यतिविपारञ्चैव जातौकोपफले तथा ।
लवङ्गं विजयावीजं श्वेतसर्जं यमानिकाम् ॥ २३७३ ॥

शाणभागान् गृह्णात्येतानेकीकृत्यैव पेपयेत् ।
गुञ्जाद्वयन्तु कर्तव्यं कोष्णं क्षीरं पिबेदनु ॥ २३७४ ॥
गृहं यस्य दातं नार्यं विद्यन्तेऽतिऽप्रायिनः ।
न तस्य लिङ्गशैथिल्यमौषधस्याऽस्यसेवनात् ॥ २३७५ ॥
न च शुक्रैः क्षयं याति न चलं ह्रासमाप्रजेत् ।
कामरूपी भवेन्नित्यं वृद्धः पांडुशवर्षवत् ॥ २३७६ ॥
रसः श्रीमन्मथाऽन्नोऽयं महेशेन प्रकाशितः ।
अस्य भक्षणमात्रेण काष्ठं जीर्यति तत्क्षणात् ॥
नाशयेद् ध्वजभङ्गादीन् रोगान्योगहृतात्पि ॥ २३७७ ॥
शे र, र सु, र स, रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, निश्चन्द्र अप्रकभस्म २ कर्प, शुद्धरसकूपर १ तोला, वृद्धभस्म ४ माशे, ताम्रभस्म ६ माशे, लोहभस्म १ कर्प, विद्यारा, सफेदजीरा, क्षीरविद्यारी, काष्ठविद्यारी, शतावर, तालमखाना, बला, केवाच, अनीस, जावित्री, जायफल, लौंग, गाजेकेनीज, सफेदराल, अजवाइन सत्र ४-४ माशे लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर १-२ रोज मर्दनकर रखछोड़े । अथवा ऊपरकहीहुई दवाओंके अन्तम्वरससे भावना देकर २-२ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमदूधसेसाय सेवनकरनेसे अन्याहृतवेगहोकर बहुतमी स्त्रियोंका सन्नकरताहोआभी शुक्र और बल्की क्षीणताको प्राप्त नहीं होताहै । रूढ़ आदमी भी १६ वर्षके सदस्य दिलाई देताहै । अग्नि इतना प्रदीप्तहोताहै कि काष्ठकी भी हजम करसकाहै टोटकादिकसे कियेहुए पञ्चभज वीरहको यह नष्टकरताहै ५३२

५३३ मलदारणगुटिका

सपारुदं गन्धकलोहचूर्णं
नेपालताम्रं त्रिकटौ समेतम् ।
अफेनकं चित्रकचत्सनाभ
सदङ्गणाऽङ्गोद्युतं समानम् ॥ २३७८ ॥
आकहुरं भृङ्गरसेन वरया
देवालिःकभावनया प्रसिद्धः ।
कासे ज्वरऽजीर्णविसृचिकायां
श्वसादरे चैत्रमरोचके च ॥
जीर्णज्वरौघे मलशोपिवृन्दे
मूच्छांश्यालप्रहमस्त्रिपाते ॥ २३७९ ॥

र (मा) ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म, शुद्धमाल गोटा, ताम्रभस्म, त्रिकटु, अफीम, चित्रकमूल, बलनाग, सुना मुहणा, अद्रोल्कीनड और अकलहरा समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर भारता, उषा धूर और नागकेमरके यथासम्भव स्वरस अथवा बाणोंकी १-१ भावना देकर १-१ रस्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाय देनेसे बाल, ज्वर,

अनीज विसृजित्वा श्वाभ उन्मत्तोग अरोच्य, जीगम्बर
मन्त्रोप मच्छा वात्प्रद और सत्रिपात नष्टदोतै ॥ ५३३ ॥

५३४ मलद्वारणमुन्दररसः

आमादपारद्वररद्वृत्तिरूपाना
भागा सम द्विगुणमेलितवाग्जनाम ।
गीराणदालिप्यभावनया निम्ब
निम्बा रसा हि मन्त्रद्वारणमुन्दरगऽयम् ॥ ३८०
र (मा) विट्पिबये ।

भाषा—गुद गणक और घारा ताम्रमस्य गुदगुणाग
स्य समभाग उन्नर राचगे दूने गुदजमाप्रोत्त डाक्टर ५ पत्र
पोन्कर बदाङ्क स्यम एतदित मन्त्रकर चनप्रमाण मोलिय
यनाहर रराजोहे । इनमें सकि अथवा कायागुगर १ म २
गोरीत ठड पानीक साथ दनम बफाहुआ मत्र दूतदोकर
निह्य जातवे और नञजनिज जितनी गिरावते हैं के तर
निवृत्त होजातीहै ॥ ५३४ ॥

५३५ मूत्रचूर्णम्

सामक्षारस्य चूर्णं वै कापामान्तरस्यस्थितम् ।
धारयेद्गुदताऽदूर भिन्नं तत्र भयजम् ॥ ५३५ ॥
पश्याति स्फाटयित्वाऽऽयु तथाऽपश्याति नाशयत् ।
न पीडा जायते तत्र न व्यथाऽपि भयेद्गुद ॥
न राहति पुनर्देह गुदपार्श्वयन्त्रिये ॥ ५३६ ॥
र का, अर्जोऽधिकार ।

भाषा—गदेल्लोमला बारीक रूपकरक कपायक बीचम
उपकर गुणक भीतर मस्योक पात ३ तिनका रानेम पक
हुए पत्कर गिरावते हैं उलपन नहींदोत और किमीतरकी
विना पीडा भी नहींदोती ॥ ३५ ॥

५३६ मटपञ्चरत्नरस

स्फाटिका धरन्द्यै रत्नाभे हृष्णापीतकां ।
एतान् पञ्चागुपापाणान् शुद्धायां समभागिकान् ॥ ३७३
रस्य निःशुद्धिचूर्णेषुऽथ निपेद्भूमयप्रक ।
रत्नमान्दरसद्योय प्रतिद्वर्त्त चतुसुपाण ॥ ३७४ ॥
दापयत्सममर्जैरिदिर्नास्वरत्नं तथा ।
सन्धिये तत हृद्या सुन्यापरि निधापयत् ॥ ३७५ ॥
मन्दासो पात्रयेधामरुण्यविधानत ।
शुद्धिदस्याऽऽप्यमत्तु स्याद्दानीं समुत्तर ॥ ३७६ ॥
सधयानविकारगु घातकृष्णये तथा ।
भ्याम कामेऽथ विपमत्तर चैव त्रिदापज ॥ ३७७ ॥
द्वयं गुञ्जाऽल्मुत्र वा पथ्य नन्नादन तिमम् ।
पूतनाशक्या द्य सधयानगदपु प् ।
पथ शातादृक्काऽप्य पभृगगरमोषम ॥ ३७८ ॥
र ५ कापाग ।

भाषा—एतै हक गलन बरकर कुनेक मण भयकर
दि। मत्र कपा और पीता ह। पांशपद र पिदोधा म

भागमें लेकर रसमें छोटी २ ककड़ियाकर एकपदेमें डालकर सोम
सम चौगुना ककड़कन्दका रस और उननाहा गितलिपीकाल
गन्धर दोनों पड़ोंके सुहर कण्डिमिम ह् गधि बदारत् ।
धोडा सुलतानगर गृहण स्या ५ पदका भाग्यव ।
कमी २ उपक पत्र ५ तद् भोगाहुआ कण्डा राद । तार
पदकवाद कायत्रोप रगर रङ्गी म्गाना बद् करत् ।
स्वात्कीतित होनपर ऊपरके पदमें समहुए पूर नि ग । इद
धारेम उताकर रगछाई । इनमें आधी अथवा १ रता पा और
धररे साथ मित्राङ्क दनम समस्त वातविहार नहोत ।
प्यायानपर टा पानीपीये । पथ्यमें छाछभात दना चादिये ।
विशेष सूचना—यद्यपि सूत्र्य एवाहो उन्नमः
गिराठ परन्तु इनतर वास्व्यारकर जवाककि समस्त गोम
कप म्यायां न होजाय । य १० या १२ आम विपुत्त अर
स्वायी होजायगा उममस्य इकी १ रताका कमगत्त ह्
मात्राए करनी चादिये । अथ म्यायी करन । इममें क्येरी
प्या अधिक तीक्ष्णता आजानीहै ॥ ५३६ ॥

५३७ मट्टमयोगः

शुभं पूरितमग्नि शतमह्ययुजा दीशामुग्नेन ।
दत्तायत्पुत्रमिच्छे भ्याम काम उदर प्रमिच्छाऽयम् ॥
नि भ म भामऽधिकार ।

भाषा—नागमोटाहमें ५ तोडे सगिया पीगहर डालर
और भास्करूपम भरक भाडकही पणोम मुको बकर
मुनानीमिरीकेपाथ कुीहुद रुदम मन्त्रुतवाइमिरी करक
हीमें रगद । इंगपर साधारणकाइमि दकर गन्धुकी
भांचरे । स्वात्कीतित होनपर निहातर रगछाई । इनम
१-२ रती उचितापानक माप इनम भय कय और
गीतचरको दद नष्टकराई ॥ ५३७ ॥

५३८ मट्टसिन्दूररस (प्रथम)

नन्वर्गमित मृता रन्वन्त्रय तन्मम् ।
यत्तु कर्षमिता मत्तु म्वात्पत्राक्षमभिम् ॥ ३७९ ॥
गधकथति तन्मये काशुष्या निधापयत् ।
पथ्यवृद्धातिना सव्ययाऽनुकाययसो पात्र ॥ ३८० ॥
यदि गृह्णायामश्च दन्वा नीतिं समुत्तर ।
स्वाऽयं महसिन्दूर सव्ययाविकारना ॥
युतागुपातना हृद्यासन्धियातनादिकान्नादान् ॥ ३८१ ॥
एगदना नि भ म कपाग ।

भाषा—गुद गण और साधुर १-२ बर गद सदन
र ५ गुदगाद ५ । इ। मत्र गदो जीगम्बरकर
१-७ कण्डिमिरी दीगु अर्जोमोषो मत्र कपायक
नद मन्व और म्वात्पत्राक्षम १५ पत्र अत्रिद । म्वा
दीगु नर उदुनि नि लक्षण म्वात्पत्राक्षम निहातर
मत्र १ । इनम १-२ रती उचितापानक माप इनम
भय कय और गीतचरको दद नष्टकराई ॥ ५३८ ॥

५३९ महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (द्वितीयः)

नैम्बूकनीरेण दिनत्रयन्तु
श्वेतादिरूपांश्चतुरोऽपि मल्लान् ।
यथोत्तरं त्रयवलाग्निथस्ताम्
समांशस्तृतेन विमर्दयेत् ॥ २३९३ ॥
ताभ्यां समानेन सुगन्धकेन
कृत्वा मर्सीं कृपिकया पचेत् ।
सर्वाथंकर्यां खलु कोष्ठिकायां
यामत्रयं शीतलमुद्धरेत् ॥ २३९४ ॥
मल्लादिचन्द्रोदयमामनन्ति
सर्वापधेभ्योऽपि प्रधानवीर्यम् ।
विम्बुचिकासन्निपतत्त्रिदोषान्
व्याधौनपाकर्तुमनन्यशस्त्रम् ॥ २३९५ ॥

रसायनसार., सन्निपाते ।

भाषा—श्वेत, रक्त, पीत और कृष्ण सोमल समभाग लेकर सबकी बराबर पारा डालकर यहांतक मर्दनकरे कि पाग पी जाय फिर इसकी बराबर शुद्ध गन्धक डालकर बालुकायन्त्रमें रख सर्वाथंकारी भट्टीमें ३ पहरकी अग्निदेकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपातके साथ देगेसे हैजा, सन्निपात और त्रिदोषजन्याधियां नष्टहोती है ।

५४० महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (तृतीयः)

स्नुहीपयस्वर्कपयस्सु महं
त्रिभाषितं मर्दनशुष्करूपम् ।
बुभुक्षुसुतद्विगुणेन शुद्ध-
गन्धेन घृष्ट्वा च मर्मि विदध्यात् ॥ २३९६ ॥
तां कृपिकास्थां सिकताऽऽख्ययन्त्रे
यथा धहिर्धमविधि प्रबोद्धा ।
पिपथुरहोऽर्द्धमतां ददीत
शीशीमुत्रे मूत्कवलीं सुरुद्धाम ॥ २३९७ ॥
अर्द्धद्वितीयं दिनमग्नितापं
वर्द्धरफाष्टस्य ददीत तीव्रम् ।
कृत्वा स्वयं शीतमयोर्द्धशीशी-
गलस्थचन्द्रोदयमाददीत ॥ २३९८ ॥
कर्पूरजातीफलदेवपुष्प-
कस्त्रिकानकमर्दलिकाभिः ।
लिह्यादिर्म मासमशक्तशुक्र
आरोग्यहतां भ्रूणाना मनुष्यः ॥ २३९९ ॥

रसायनसार., सर्वरोगे ।

भाषा—डेजापहर और आकके दूधमें ३ रोज़ सोमलको ढंकर सुखादेवे । इसकी बराबर बुभुक्षितपारा और दूना ढ्गन्धक डालकर नीलवर्णकब्जलीकर आतशीशीशीमें भरके ढुकायन्त्रमें रख आचदे । दोपहरतक शीशीका मुंह खुला करे धुंएकी बाहरजानेदे । जबगन्धक जलजाय तब शीशीका

मुहबन्दकर डेढ़दिनकी बबुलकेकाष्ठसे तीक्ष्ण अग्नि देवे स्वाज्ञशीतल होनेपर गुकिसे शीशीको फोड़कर गलेमें लगेहुए सिन्दूरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती शुद्धकपूर जायफल, लौंग, कस्तूरी, अन्वर और इलायचीके साथ मिलाकर मधुसे एकमहोनेतक सेवनकरनेसे तमामरोगोंसे मुक्तहोता है ।

५४१ महसिन्दूरसः (मलचन्द्रोदयः) (चतुर्थः)

मनःशिलालाऽसितप्रस्तराणां
मन्दारदुग्धेन सुभाषितानाम् ।
दिनानि चत्वारि विधाय गोलं
छायामु शुष्कं च पर्याभिराकैः ॥ २४०० ॥
समन्ततो द्व्यङ्गुलमुच्छूर्यं त-
द्याऽऽच्छाद्य शुष्कं निखनेत्पृथिव्याम् ।
त्रिंशद्दिनान्येव ततो बुभुक्षु-
सूतेन तुल्येन विमर्दयेत् ॥ २४०१ ॥
ताभ्यां समानेन च गन्धकेन
दुग्धाज्यशुद्धेन मर्सि विदध्यात् ।
चन्द्रोदयभ्राष्ट्रिकया पचेत्
दिनानि चत्वार्यवधानचेताः ॥ २४०२ ॥
घटीश्चतस्रोऽनलके तु गत्या
रुद्धाप्रवेगं प्रसिताग्निकेतुम् ।
स्वयञ्च शीते सिकताऽऽख्ययन्त्रे
कृपीगलस्थं रसमाहरेत् ॥ २४०३ ॥
अत्यन्तमुग्रं यदि तं विधित्तु-
र्नलीडमर्वाष्यविधे तु पूर्वम् ।
पट्टसप्तविंशतिकजीर्णगन्धं
सूतं नियुज्यादिह कर्मसिद्धौ ॥ २४०४ ॥

रसायनसार., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, हरिताल और कालासोमल स माग लेकर ४ दिनतक आकके दूधसे षोडशक गोला बन छायामें सुखाकर आकके दूधमें डुबाकर रखदे । दूध सूखजा पर फिर डुबादे । इसनष्ट जतक गोलेके चारोंतरफ दो अङ्गुल दूध न चढ़जाय तबतक करताहै । फिर उसपर कप मिठी खपेटकर ३० दिनतक ज्मीनमें गाड़दे । इकतीसवें दि निकालकर सुवर्णमासदिये हुए बुभुक्षित पारेको समभाग मिलावे और सबकी बराबर शुद्धगन्धक डालकर नीलवर्णकब्जलीव आतशीशीशीमें डालकर बालुकायन्त्रमें चढ़ाकर ४ घण्टेतक शीशी में मुंह गुलावरके । बादमें डाटलगाकर कपडमिठी करदे और रोज़तक अग्निदेकर पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसे अत्यन्त उपवीर्य बनानाहो तो नलीडमर्दयन्त्रमें ६, ७, २० अथवा जहातक इच्छाहो उत्तरेगुण गन्धकजारणक पारा डालनाचाहिये तो वैरीही उग्रता आजायगी ॥ ५४१ ॥

५४२ मल्लादिवटी (प्रथमा)

शतमहं पातवर्षं पञ्चशानमिदं तथा ।
दशपञ्चमिदं शाणं खादिदं तत्र निक्षिपेत् ॥ २४०५ ॥

यमयोः कज्जलीं कृत्वा नागवह्नीरसेन च ।
पिष्ट्वा कुर्याच्च घटिकां मुञ्जिकाह्वयमानतः ॥ २४०६ ॥
सार्यं प्रातश्च भोक्तव्या मासैकं पर्णखण्डकैः ।
गोदुग्धं केवलं पथ्यं फिरङ्गञ्चोद्धतं जयेत् ॥ २४०७ ॥
र र कौ., फिरङ्गे ।

भाषा—गीतवर्णं शुद्धसोमल १ कर्षं, कृत्वा ४॥ कर्षं
उलकर कज्जलीकर पानकेरससे १-२ रोज मर्दनकर १-१
रतीकी गोलिया बनाकर सुबहसम पानमें खानेसे १ महीनेमें
बड़ाहुआ फिरङ्गरोग दूरहोताहै । इसमें गोदुग्धके सिवाय और
कुछ खानेको न देना ॥ ५४२ ॥

५४३ मल्लादिवटी (द्वितीया)

सितं सोमलं तालकञ्चाऽपि तुल्यं
श्वहृद्भारवेल्या रसेन प्रमथेत् ।
वटी शुद्धमुद्गप्रमाणा निहन्या-
ज्यरांश्छीतपूर्वांश्च क्षणेनैव सर्वांश्च ॥ २४०८ ॥
र र, वै द, वा, ज्वराऽधिकारे । बाह्य शिलाशारे द्वियु
णितो योजित नाम च शीतज्वरनिवारणति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध सफेद सोमल और हरिताल समभाग लेकर
दोनोंका अल्पन्मसूक्ष्मचूर्णकर तीनरोज करेलेके रसमें मर्दनकर
छोटे स्रंग बनाकर गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१
गोली ज्वर आनेसे एकपट्टा पहिले तुलसीकेपत्ते अथवा भाग
१ रती, भटवटैया १॥ मासा और घट्टेका आपापसा इसके
साथ देकर २, ३ घंटे पानी पीनेको न देनेसे रोजका, वृतीयक,
चातुर्थिक और तमाम विपमज्वर नष्टहोतेहै । टि०—यद्यपि
मूलमें करेलेका रस बताया हुआहै परन्तु उसकी अगह कबोड़ेका
रस दिया जायतो अधिक काम करताहै यह हमारा निजी
अनुभवहै । विगडेहुए प्रतिशयायमें १-१ गोली गायके पारोष्ण
दूधसे देनेसे बहुत अल्पसमयमें तमाम दोगोंसे निर्मुक्त होजा-
ताहै । परन्तु पहिले मलशुद्धि करलेना और तान्ने प्रतिशयायमें
न देना उद्यमय उष्ण औषध देनेसे कफशुष्कहोनेकेकारण
आपासीसी अथवा अर्थावभेदसे आदमी पीडितहोताहै ।
कदाचिन्मूत्रसे ऐसा होगयाहो तो मुलद्वी, बीदाना, गाजुनी,
बनसा, रेसाततमी, प्राश, और ल्योङ्गा १-१ तोलेलकर
जबडुकर इसकी ७ पुडिया बनाना । एफुडिया १० तोले
पानीमें रातको भिगोदेना सुबहमें पोरुा ममलकर छानकर
शपर डालकर पिलाइना और दूसरी पुडिया भिगोदेना उसे
सायंकालमें पिलाना । ऐसे ७ पुडियोंके समाप्तकरनेसे नवीन
प्रतिशयायमें उष्णोपचारमें पैदाहुई तमामशिकायतें दूर होजा
सीधे वती द्विमको प्रमाणात् (लग्ना) मेंही देनेसे अद्भुत
गुण होताहै । किसीको स्वाभाविक श्वास कास हो और शीतो
पचार प्रतिकूल हो तो श्का काय करके देना ॥ ५४३ ॥

५४४ मल्लादिवटी (तृतीया)

गायत्रीशी वलिर्महः धृग्वहचतुष्टयम् ।
समुद्रान्तरसेः कर्पायं गुडाः सपपसोदरा ॥ २४०९ ॥

सन्धिवातगलकुष्ठदुष्टनाडीघ्नणञ्चरान् ।
फिरङ्गशोथपथनकफमान्द्योदरापहाः ॥ २४१० ॥
कासश्चसनहिनकादीक्षिप्तन्त्येव न संशयः ।
अनुपानं जले शीतं तैलाभ्यादि विमर्जयेत् ॥ २४११ ॥
सि भे. म, वातव्याध्यधिकारं ।

भाषा—कृत्वा, शुद्धपारा, गन्धक और सोमल समभाग
लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जवाकरे रससे १-२ रोज घोटकर
शरसोंके बराबर गोलियें बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
टेंडजलेग्याथ देनेसे सन्धिवात, गलितकुष्ठ, दुष्टनाडीघ्नण, पापने
उत्पन्नहुआ ज्वर, उपदंश, सूजन, वातु, कफ, मन्दाग्नि, जलो-
दर, कास, श्वास, हृत्किर्गी बर्गरहनेको यह नष्टकरतीहै इसके
प्रयोगमें तैल, खटाई बगैरह न खाय ॥ ५४४ ॥

५४५ मसूरिकारी रसः (मूर्च्छितरसः)

विल्वपत्ररसेनैव मूर्च्छितः पारदेश्वरः ।
हिलमोर्चरसेनैव पीतो मधुसमायुतः ।
मसूरीं सर्वजां हन्ति ह्यस्थिजां सत्यदेहजाम् ॥ २४१२ ॥
र वा, मसूिकाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारेको बेलजके रससे यहातक मर्दनकरे कि
मूर्च्छित होजाय । इसमेंसे १-१ रती मधुसा अथवा कुरकुरके
रस और मधुके साथ देनेसे अक्षिपयन्त धातुओंमें व्याप्त मसू-
रिका को यह नष्टकरताहै ॥ ५४५ ॥

५४६ महाफलपः

रसगन्धकयोर्भागं गन्धमूलीरसं तथा ।
तत्समं मर्दयेत्प्राज्ञो भाण्डे यत्नेन धारयेत् ॥ २४१३ ॥
भूमौ निधापयेन्मामं ततः पश्चात्समुद्धरेत् ।
गुटिका मुद्गमानेन भक्षणीया दिनेदिने ॥
पणमण्डलानि संवेत महाफलपो भयंभुवम् ॥ २४१४ ॥
र. शा, रसायने ।

टि०—अत्र गन्धमूलीरसप्रतिष्ठा मन्ववारम्य वा वा अभिनेतेन न
निश्चयथापनन्, टीकावामुत्पन्नारिसगन्धकयन्तेरपत्तायुगानि
कृतोऽस्ति ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कज्ज-
लीकर अनन्तमूल अथवा कपूरकाचरीके रसमें दोतीनरोज मर्दनकर
किमीपात्रमेंडालकर एकहाथ गहरे गडुमें दबादे । एकमहीनेमेंप्राप्त
निष्कालकर सुगरावर गोलियें बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१
गोली दूधपगरहनेग्याथ ६ मण्डल (२१४ दिन) तक खानेमें बगी-
पलिनादिमें निम्नहोकर युवावस्थाको प्राप्तहोताहै ॥ ५४६ ॥

५४७ महागन्धकः

रसगन्धकयोः कर्पं प्राथमिकं मुद्रांशितम् ।
ततः कज्जलिकां कृत्वा मृदुपाकेन स्वाधयेत् ॥ २४१५ ॥
जातीफलं तथा कौरं लघुङ्गाऽरिष्टकरं ।
सिन्धुपारकलत्रैश्चमेलनीयैर्न तर्पेय च ॥ २४१६ ॥

एपाञ्च कर्ममात्रेण तोयेनाऽथ विमर्दयेत् ।
 मुकाग्रहं पुनः स्थाय्यं पुटपाकेन साधयेत् ॥ २४१७ ॥
 घनपङ्कं वह्निलिप्त्वा पुटमध्ये निधापयेत् ।
 गुञ्जापट्टप्रमाणेन प्रत्यहं भक्षयेन्नरः ॥ २४१८ ॥
 एतत्प्रोक्तं कुमाराणां रक्षणाय महोपधम् ।
 ज्वरघ्नं दीपनञ्चैव चलवर्णप्रसाधनम् ॥ २४१९ ॥
 दुर्बलं प्रहर्णारोगं जयत्येव प्रवाहिकाम् ।
 सूतिक्राञ्च जयेदेतद्रक्षाशां रक्तसम्भवम् ॥ २४२० ॥
 पिशाचा दानवा दैत्या बालानां विघ्नकारकाः ।
 यत्रोपधवरस्तिष्ठेत्तत्र सीमां न यान्ति ते ॥ २४२१ ॥
 बालानां गद्युकानां स्त्राणाञ्चैव विशेषतः ।
 महागन्धकमेतद्धि सर्वन्याधिनिपूदनम् ॥ २४२२ ॥
 र स , भै र , र सु , र च , अतिघोरैः ।

टि०—अय रमी बकुलवर्णकर्मण सह मापोमित्वा दत्तो रक्तप्रदेरे
 ऽतिकार्यकारी भवति, माय मन्वाहे पुराद्धि वेति प्रयोग वर्तव्य ।
 द्वित्रदिनाऽन्यन्तरे ष्व महाप्रवाह रणद्धीति शुभीभिराकरनीयम् ।

भाषा—१-१ कर्प पांरे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर
 मृदुपाककी पर्यटी बनाले फिर जायफल, जावित्री, लौंग, नीम
 तथा समालक्रेपते, इलायची इनप्रत्येककाचूर्ण १-१ तोला लेकर
 पर्यटी मिलाय पातीसे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मोती-
 कीसोपमें भरके समुद्रकर दो २ अङ्गल कालीमिठी लगाकर
 जलतेहुए कण्डोमें रखद । जब गोला लालहोजाय तब निम्ना
 लकर रखले । स्वाहाशीतलहोनेपर ६-६ रत्तीकी गोलिया बना
 कर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपायकेसाय
 देनेसे ज्वर, शब्बी (प्रवाहिका), दुर्निवार प्रहणी, सूतिकारोग,
 रक्षाश इत्यादि समस्त व्याधियोंको दूरकरताहै । और बच्चोंके
 तमामरोगोंको नष्टकरताहै । जिसपरमें यह औषध रहताहै वहा
 बालप्रहोंका तथा अन्य मृतादिकोंका बर्षोपर असर नहींहोता
 इसीतरह ब्रिजोंके प्रदरादि समस्तव्याधियोंमें यह अत्यन्त
 उपकारीहै ॥ ५४७ ॥

५४८ महाज्वालमरीचिप्रयोगः

मरिचानि समानीय महिषीपित्तमभ्यत ।
 शोषयित्वा ततः पश्चाद्भावयित्वा समुद्धरेत् ॥ २४२३ ॥
 अभ्यगन्धावत्सनाभरसे दद्यात्पुटं बुध ।
 दूष्णं चारिणा पिष्ट्वा ततो दद्यात्तथाऽऽतपे ॥ २४२४ ॥
 हरितालं तथा दत्त्वा दिनान्ते शोषयेद्भृशम् ।
 गन्धकञ्च तथा देयं चित्रमूलं तथैव च ॥ २४२५ ॥
 जयपालं तथा दत्त्वा धुतूरस्य फलं तथा ।
 भृङ्गीरसं तथा दत्त्वा शोषयेदातपे सुधीः ॥ २४२६ ॥
 मधुनाऽपि तथा शार्प्यं सर्वं यामचतुष्टयम् ।
 शोषयेन्महिषीपित्तमध्ये सप्ताहमादरात् ॥ २४२७ ॥
 चतुर्दिनं वराहस्य मत्स्यपित्ते द्विचतुष्टयम् ।
 एवं सुविधिना कृत्वा शुष्नीभूतानि कारयेत् ॥ २४२८ ॥

एकैकं दापयेद्धीमान् रोगाणां तत्त्वयिन्द्रियकम् ।
 असाध्ये मानवे दद्यात्सन्निपातसमाकुले ॥ २४२९ ॥
 महाज्वरे शैत्यशून्ये महीभूते च तिष्ठति ।
 अरिष्टसन्निपाते च जलोदरमहारुजि ॥ २४३० ॥
 पादे पादभवे शोफे महाहिमसमागमे ।
 दिग्मन्वरे तथाकाशनासिनेऽपि प्रशस्यते ॥ २४३१ ॥
 जले प्रपतिते चाऽथ कुशासनमहीगते ।
 रोगिणां रोगशान्तिः स्यादेकैकस्य च भक्षणान्त् २४३२
 कालञ्च वञ्चयत्येपः कुटिलेषु न दापयेत् ।
 इति प्रकाशितो यांगो ज्ञानच्योतिर्यतोऽश्वरैः ॥ २४३३ ॥
 र हा , सन्निपाते ।

भाषा—धोईहुई मिचं लेकर भेंसके पित्तमें डालकर सुखाले ।
 इसीतरह असगन्ध और बलनामके वायसे १-१ पुट देकर इसके
 बराबर मुहागेको पानीमें घोलकर एक पुट देवे । फिर मिरचोंके
 दशवाभाग पानीमें पीसेहुए हरिताल और गन्धककी १-१
 भावना देकर चित्रकमूल, जमालगोटा, धतूरेकेफल, भगरा,
 मधु इनप्रत्येककी १-१ रोज भावना देकर सुखावे । इसके
 बाद भेंसके पित्तकी ७ रोज, सुअरके पित्तकी ४ रोज और
 मछलीके पित्तकी २ रोज भावनाए देकर अच्छीतरह सुखकर
 रखलोहे । इनमेंसे १-१ मरिच प्रमाण असाध्य सन्निपात,
 महाज्वर, सर्वाङ्गशीतना, वेधोशी, अरिष्टयुक्तनिपात, जलोदर,
 पादरोग, पादशोथ येसब नष्टहोतेहैं । अत्यन्तशीत हिमालय
 आदि प्रदेश अथवा ऋतुमें, जलमें डूबेहुएको तथा मरणासनको
 देनेसे तत्काल सञ्ज्ञाहोतीहै । यह कालको ब्रजित करताहै इसे
 कुटिल आदमियों को न बताना ॥ ५४८ ॥

५४९ महावलविधानाभ्रम्

गगनं फज्जलसदृशं स्निग्धमरोपदोपरहितञ्च ।
 यहशोद्धर्वाऽलसुपमल्ले सुकं वल्ले निबद्धञ्च ॥ २४३४ ॥
 दत्त्वा सलिलं तावत्करणे धर्षञ्च पङ्कतां नीतम् ।
 निपुणं गृहीतमुदकादजनपुञ्जयनीमृतम् ॥ २४३५ ॥
 द्वित्रिवारपरिपुष्टितं रवितरमधिताऽल्पदुग्धकादिरसे
 चूर्णितमिदं शिलायां कुडचमेकं तदादाय ॥ २४३६ ॥
 प्रथमं चतुष्टयगुणे गोमूत्रे वा पचन्मृदुज्वालम् ।
 निपुणोवाहं दत्त्वा समुद्रयामं तथा दुग्धे ॥ २४३७ ॥
 शुष्णं विडङ्गचूर्णं गगनार्थं त्रिकटुसम्भवञ्च रजः ।
 त्रिकटुसमं त्रिफलोत्थं पूयकं तद्वर्द्धञ्च वन्ध्यायाः २४३८
 नतकारिकर्णीं वृद्धरक्तानलनीलिकानाञ्च ।
 मूलस्य तालमूल्या रक्ताश्वमारहपुषाणाम् ॥ २४३९ ॥
 पत्ररुसुवाजिगन्धाशतावरीमूलसम्भवञ्चाऽपि ।
 अमलिनपुनर्नवाकितकारीबलामूलानाम् ॥ २४४० ॥
 चूर्णं कण्टकपर्णीमधं साऽमृतभृङ्गराजस्य ।
 निबृताऽप्यायस्त्रिभुवनविजयस्य केशराजस्य २४४१
 सुविदितपाकं शीतं गगनचूर्णञ्च भाजने सर्वम् ।
 समधुसितैरनुसूतेः समिधस्यसर्विपोऽष्टविल्वेन २४४२

पिष्ट तदनुशिलाया सुस्निग्धमाण्डे निघाय सुविधिम्
 सात्साह सुविनाता गृह्याद्याद्वारुप्रकर कल्पम् २४२३
 मृदुदुष्टतवमनचिरेक वैद्यप्रद्वेण सात्म्ययोगेन ।
 याति शरीरविशुद्धिं दीपितदेहानला नीरुह २४२४
 पूजितगुरुदेवाऽनलवित्थिसिद्धसाधुमान्यजन ।
 स्निग्धीद्वन्दपरितुप्त दीनग्लानिसहित सत्कृत्य २४२५
 स्थिरसङ्कल्पविनात प्रशातसर्वत्रिय सर्वात्मा च ।
 परिहृतपरोपकार परिहितत्रासा समुज्जितक्राधा ॥
 श्रद्धाधानाश्रायाद्रेपञ्जराजस्य मापकान्धे ।
 पुण्ये दिवसे हृत्वा शुटिका तथा भक्षयेत्प्रात ॥२४२६॥
 अनुपानं शीतजलं सततमनातिभोजन नाऽत्र ।
 हिताहिताद्य सुखद शान्ताम्लदधिपरिहाणञ्च २४२७
 अतितिककटुकपायश्चाराऽभिव्यन्दीतोष्णरूक्षाणि ।
 वातलघुदिवाहिदुर्जगुरुष्यसव्यानि घस्तूनि ॥२४२८॥
 पानं हृत्वाध्ययन रतिमतिशातलं दिवास्वप्नम् ।
 प्रत्युपदेशं द्वेषं वातातपजागरणोद्धृतात् ॥ २४२९ ॥
 चिन्ताशाकविपाद्व्यायाममदकराभादकरान् ।
 पिशितञ्चानूपदेशं शातपानं वर्जयेदनिशम् ॥ २४३० ॥
 हृत्करमयूरकल्पकतिचिरिशाखाजाम्बपासङ्गम् ।
 जाङ्गलपिशितं इयामं माप पत्तालञ्च वातारुम् २४३१
 शुक्लत पिशितरस सैन्धव सघृतं सधान्याकम् ।
 स्वस्तिकरपथिकलाहितशालीनतिनिस्तुपान्मुद्रान् ॥
 मसुकफलानि द्राक्षा पत्रात्रफलानि चैव शस्तानि ।
 स्वादु च परिणतिमयुरकेलिकरञ्चाऽपि वासव तायम्
 प्रतिस्नाहकरुमतत्र माद्रा प्रसङ्गैश्चामान् ॥
 रुनिविचाराऽभित्ता भेषजस्य पर्यन्तं भवति ॥२४३२॥
 रसायनराजं कुर्वन्मनुजो मनाऽभिलाषं प्राप्नोति ।
 नागानुनोपदिष्टं पन्मासापविहितविधिना च्छा २४३३
 अपगतसकलबाधिर्बलिपितृवर्जिताऽतिमहातजा
 शूर प्राज्ञो योग्या त्रिवर्गपञ्चभाजनो दक्ष ॥२४३४॥
 मदमत्तबुद्धरयलं सौकुमार्यास्ताहसम्पत्र ।
 पादशवपयया स्याद्दुर्गमप्रमत्तं सुचिरजायवनापेत ॥
 जावेद्वर्षसहस्रं सतताभ्यासाद्य सवसपत्र ।
 चन्द्रकमनायकाति पवनयला धामसमधामा २४३५
 यदृत्तित्वाऽप्याहाऽपस्मारसिन्धवभशापान् ।
 कासश्वासविसर्पमहणाशुल्मादमतीशायान् ॥ २४३६॥
 प्रदृजलादुरभस्मकपमिपामाक्षीपदप्रमेहाद्य ।
 विषधमगन्दरुष्टुविषमरुपाण्डुरागाद्य ॥२४३७॥
 श्रुतियदनादरालचनमस्तप्यरागान्समृष्टरुच्छ्राद्य ॥
 आगुरु रसायनराजं शमयति युक्त्या मयुक्तस्तु २४३८
 सामं सर्मारमुपहन्ति कर्षं सपित्तं
 साध्नञ्च पित्तमयं जाडरयद्विमान्यम् ।
 पातप्रकापनितान् कफक्राद्धं सवान्
 पित्ताद्भयाद्यं निखिलास्तं गदास्तथेयदृ३३

भाषा—धान्याप्रको रसलीके सन्ध शरीक पीस ह्व
 और मोरखसुपनीकी तड साथमें डालकर कर्ममें पोहनी बनाय
 पानीमें मसलकर निकाले । पानीको १-२ खान रखकर
 नितरकर अलगकर दे और नीच जमे हुए अन्नको धूममें सुखादे ।
 फिर आक्नेदुधमें २-३ दिन घोटकर मित्रिया बनाय सुखाकर
 गजसुपनी आव दे । एस २-३ आव देकर सिद्ध कियाहुआ
 अन्नक ४ पल लेकर इधमें चौथना अथवा अठथना गाम्भ
 देकर मन्द आचमें सुखावे । इसीतरह गोदुध डालकर ४ पहरकी
 मृदु अभिय पकावे । इसक बाद अन्नसे आधा आधा
 विडङ्ग विकट्टु और त्रिफलाका चूण छोटे फिर बापखेखेका
 जगु तगर हस्तिकणपत्या विधारा रक्तचित्रक कालादाना
 तालमली राखनेकेकेरूळ शक पत्रज असण शतावर
 निमलीकेबीज पुननवा आक अरगी, बलामूल भक्तैया
 मिलेय भगरा निमोत भाग कालाभगरा, बसन् बीजेमिल
 कर ५ पल उसीपाकमें मिगके पकावे । पादशोणपर उतारकर
 छाद्योनेपर इनसबकीबराबर शर और ३२ तोला धी तथा
 गोली धनेलेयाक मधु डालकर २-३ पहर घोटकर एकनीय
 होनपर चिकनेवनम रणजोड़ । निपुणवैद्यकीसलाहम सात्म्य
 द्रव्य मृदुनमनचिरचन केकर चौष्टनी शुद्धिकर अभिरो प्रीति
 कर शुद्ध देव अभि अतिथि सिद्ध साधु और मान्यजनोरा
 सत्कारकर भद्रा रसताहुआ इधमेंसे आठभागो दया साव ।
 दवा पचनेपर पतयुक्त चावल और दूधप्रयुति सात्त्विक भोजन
 कर । दीर्घोपर दयारकर बुरतानोंस २८ । राकल स्थिर रक्त
 इन्द्रियोंको कावचकरे सबमें अपना आत्माको देयता हुआ
 यथाशक्ति परोपकार करे और कौपका छोड़द । दवाके ऊपर
 प्यास लानपर छा जलीवे मोचन नियमन करे । गाक
 भन्ध दवा इन्नेये रहित और हिताहितवा विचार करताहुआ
 पय्यका पात्रकर । अनन्तवररा कडुगा कगीला धार,
 अभियन्दि तोष्ण रूपा बालक विगाही दुर्जर और भारी
 पदायौका खन न कर । मद्यगन मोरल पन्ना अनन्तवि
 योम लीनहाना अधिक टागुत दिनकामोना जवातना
 द्वेष अनन्तवायु और धृक्का खन जादरीय चिन्ता गाक
 विपाक कमल मद और उन्मादवाकपगथ तत्राय
 देशतयमास गीतयवृति मद्यप्रयुति पीनकपगप इनगम
 छोड़दे । हृत्तर मयू लवा तील गरुगो कहरा मडा
 शरव और तमाग जगरीमाग कालेउत्तर परल बणन
 माग मांसल सैधानमक वा यनियो बुरवातीगाक साठ,
 लल और सफेद चावल मूककी पुर्णहृदाल गुपरी द्राप
 पक और माठ आमरूळ रगनेमें व्याप्ति और पाधन
 मयुर पगथ उत्सादजनत पन्थे ऊपरताहाहुआ बगवतहा
 पानी दयव प्राम्द । एग दवाका माया प्रीति न अपका
 प्रतिमासाह बनाकर अथवा जैना दामदम गण्डहासे ६ मही
 नम पूरोंक समन्त दवाको लयन करनावादिद । यह नगातुन
 वा कटाहुआ रणपनद । इका यथाशक्ति विधि । मिन्ध

सेवन करनेसे समस्तव्याधि और बलीपलितसे रहित होजाताहै । अत्यन्त तेजस्वी, क्षुब्ध, विद्वान्, वाचाढ, त्रिवर्गसाधन करनेवाला, बलसे परिपूर्ण, मुकुमारता और उत्साहसे सम्पन्न, १६ वर्षकी आकृतियुक्त बहुतमी प्रजावाला होकर हृजारवर्षकी आयुको भोगताहै पूर्णमासीके चन्द्रमाकीतरह दिव्यकान्ति और पवनकेसहस्रावेगवाला होजाताहै । यक्ष्ण, अतिमार, शीहा, अपस्मार, सिष्म, राजयधम, शोष, कास, श्वास, विसर्प, यक्ष्णी, गुल्म, पयरी, शोथ, प्रदर, जलोदर, भस्मक, वमन, पाप्मा, श्लिषद, प्रमेह, विन्ध्य, भगन्दर, कुष्ठ, विपमञ्जर, कान, मुह, उदर, नेत्र और मस्तकके समस्तरोग, मूत्रकृच्छ्र, वायु, कफ, पित्त, रक्तपित्त, मन्दाग्नि, वात, पित्त और कफके प्रकोपसे होनेवाले गमस्त उपद्रव, इनसम्बन्धे यह नष्टकरताहै ॥ ५४१ ॥

५५० महारसः

भस्म मृतस्य तीक्ष्णस्य मरिचाज्यं समंसमम् ।
स्नुक्क्षीरकाकमाचीभ्यां मर्दयेद्याममात्रकम् ॥२४६४॥
निरुद्धय भूधरे पाच्यं दिनेकेन महारसम् ।
निष्काङ्कं भावयेद्यानु पाययेद्विषसंयुतम् ॥
सर्पाक्षीं कर्पमानान्तु पीत्वा चातातिसारान्तु ॥२४६५॥
वि. र., र. को, र. सु, वै. वि, वि. र. भ., अतिसारे ।

भाषा—पारद और फोलादकीभस्म, मरिच और धी समभाग लेकर शूहरकेदूध और मकोयकेरसे १-१ पहरमदनरगोलावनाथ भूधरयधम एकदिनपकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निम्बालकर रख छोड़े । इसमेंसे २-२ भागो दहीनेसाथ मिलाकर १ कप सर्पाक्षीका पूर्ण डालकर पीनेसे वातातिसार नष्टहोताहै ॥ ५५० ॥

५५१ महार्णवरसः

विषं सूतं गन्धकञ्च तालकञ्च विमर्दयेत् ।
घञ्जदन्तीरस मयं गुटिका मापमानिकाः ॥ २४६६ ॥
एकेकां भक्षयेद्यस्तु मलयज्वरविनाशिनीम् ।
हरते सर्वरोगांश्च महार्णवरसो मतः ॥ २४६७ ॥
र. झ., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध घटनाग, पारा, गन्धक और हरिताल समभाग लेकर नीलवर्णकब्जलीकर मराठीके रसे १ रोज मदनकर उदरपरावर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे मलयज्वरभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ महाभरवरसः

मृतं सूतं मृतं ताप्रं मृतंलोहं मृताऽधकम् ।
मृतं कान्तं खमं खल्ये मयं हंसपदीरसे ॥ २४६८ ॥
विशाध्य धालुकापयत्रे फाचकृष्यन्तरं दिनम् ।
एक्यं विपूर्णपेयत्वये फोलपित्तेन मर्दयेत् ॥ २४६९ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वथा सन्निपातजिन ।
महाभरवनामाऽयं रसो भरवनामतः ॥ २४७० ॥
३. वि, ज्वं ।

भाषा—पारा, ताग, लोहा, अथक और कान्तलोह इनकी भस्में समभाग लेकर हंसराजके रसेमें एकदिन मदनकर मुलाय आतशीशीशीमें भरेके बालुकायन्त्रमें १ दिनकी आचरे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निम्बालकर ज्वलीसुअके पित्तेसे मदनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके साथ देनेसे यह सन्निपातदिकोंको नष्ट करता है ॥ ५५२ ॥

५५३ महेंद्ररसः (प्रथमः)

संयुक्तं गरलं सूतं तालकञ्च मनःशिला ।
गौरीपापाणकं तुल्यं सर्वं खल्ये विमर्दयेत् ॥ २४७१ ॥
धतूरपत्रज्वरसे दिनेकं मन्दवह्निना ।
दोलायन्त्रे विषाव्याऽथ शूद्रणचूर्णन्तु कारयेत् २४७२
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानविशेषतः ।
सन्निपाताग्निहन्त्याशु महेंद्रः स रसोत्तमः ॥२४७३॥
वै. वि., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध घटनाग, पारा, हरिताल, मैनसिल और संशिया समभाग लेकर नीलवर्णकब्जलीकर धतूरकेपत्रोंकेरसे १ रोज मदनकर गोलावनाथ कपड़ेमें बांधकर दोलायधम धतूरके रसेमें १ दिन मन्दअग्निसे स्वेदितकरे । फिर मुलाकर पूर्णकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात और सन्पूर्णवातव्याधियां नष्ट होतीहैं ॥५५३॥

५५४ महेंद्ररसः (द्वितीयः)

एकभागं रसं शुद्धं हेमभागसमन्वितम् ।
द्विगुणं गन्धकं दद्याद्विष्योपधिचिमाधितम् ॥ २४७४ ॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेप स्थिरायते ।
भुङ्गराजेन सम्भाव्य धनीयाहटिकां शुभाम् २४७५
महेंद्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहम् ।
निहन्ति सकलाप्रोगाम् कामणेन समन्वितः ॥२४७६॥
र. का, पाण्डुरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेके वर्ण १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग लेकर पारमें १-१ सोनेकावर्ष डालकर पोटला जाय, जब इसकी पिष्टिका होजाय तब थोड़ा २ गन्धक देकर नीलवर्णकब्जलीहोनेता पोटकर दिव्योपधियों (रोसन्धुङ्गामणिमें सोमदेवने गोमवर्दीप्रभृति ६४ वनस्पतियों मिलाई हैं उनमेंसे १-२ अथवा जितनी मिलाने उतने) के रसेमें एका कब्जलीको १-२ दिन मदनकर गोलावनाथ चरयन्त्रमें पारद अमिष्ण्यायी होनेतक पकावे, फिर भंगोरेरसकी मात्रामें देकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर छायाशुज्वर रखछोड़े । इनमेंसे १मे ३गोलीतक अमिषरसक देकर सन्निपातानुपानकेसाथ देनेसे कामलादि समस्तरोगोंको यह नष्ट करताहै । टि०—गोते कीपमें एककालिता समुद्र अनिलपक रने बनाकर नीचे दो अष्टक बाद रगहर गन्धुको रस कागुमें भर और छपरने गर्ने आंचे । यह चक्रवन्त करतारा है ॥५५४॥

५५५ महोदधिवटी (प्रथमा)

एकैकं विपसूतञ्च जातीदृङ् द्विकं द्विकम् ।
 कृष्णाग्रिकं विश्वपट्टकं द्विकं गन्धं कपर्दकम् ॥२४७७॥
 देवपुष्पं घाणमितं सर्वं सम्मर्द्य यततः ।
 नाम्ना महोदधिवटी नष्टमग्निं प्रदीपयेत् २४७८ ॥

र. सं., रसायनसं., र. सु., ना. वि., भं. र., यो. म., र. क.,
 र. चं, नि. र., र. मं., र. चि., र. का., अग्निमान्द्ये । रसकामपेनी
 द्वितीयस्थाने अग्निमुमारैति नाम दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध बधनाग और पारा १-१ भाग, गन्धक,
 कौडीभस्म, जायफल और मुहागा २-२ भाग, पीपल ३ भाग,
 सोंठ ६ भाग., लौग ५ भाग, लेडर सखा बारीक चूर्णकर पार
 गन्धकरी नीलगणेश्वलीमें मिलाकर विप्रमूलद्राघ, पान,
 अथवा अदरक रसते ३-३ रत्नीवी गोलिया बनाकर रस
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगानकेसाथ देनेसे यह
 नष्टामिने प्रदीप्त करती है ॥ ५५५ ॥

५५६ महोदधिवटी (शुद्धी) (द्वितीया)

दन्तीयीजमकल्मषं सद्गन्धं गुण्डालवृद्धं समं,
 गन्धं पारददृङ्गञ्च मरिचं श्रौवृद्धदार् विपम् ।
 रस्ये दण्डयुगं विमर्द्य विधिना दन्ताद्रये भौयनाः,
 देयाः पञ्चदशानुनिम्बुकजलेख्येषा विधा चिर्विकः ॥
 त्रेधा चाऽऽर्द्रकजैरसैः शुभधिया समैव चाऽऽवेगितः,
 पश्चाच्छुष्ककलायसम्मिमतयटी कार्या भिपकसम्भ्रता ।
 श्रुद्धांश्च जनयेत् त्रिशूलशमनी जीर्णज्वरघ्नमिनी,
 कासातोचकपाण्डुतोदरगदस्तांमामगङ्गादिनी ॥
 वस्य्याटापहलीमकाऽऽमयहरी मन्दासिसन्दीपनी,
 तिस्रैश्च तु महोदधिप्रकटिता मय्यामयप्लीसदा२४८१ ।
 राायनग., र. सु., श. यो. त, नि. र, यो. र, र. का., र. सं.,
 अग्निमान्द्ये । र. का. शूलासीतिनाम ॥

टि०—सोमद्रागलभस्मोऽभवेवपाठा निदिशोऽपि तथ भवनात्
 निम्बुगुणाने कृद्वागर्गुहीगन्धाय्यत्र मरुध न कऽपि हानि
 प्रनीयते पाठस्त्वेक एव स्थापनीय ।

भाषा—शुद्धनामलोटा, चिक्ममूल, सोंठ, लौग, शुद्ध
 पारा, गन्धक और मुहागा, मरिच, विपारा, शुद्धबजनाग सख
 ममभाग लेडर बारीकचूर्णकर पारोगन्धकवी नीलगणेश्वलीमें
 मिलाकर दोपहर राती पोटकर दन्तीमूलके रसकी १५ भाव-
 नाग देवे, फिर नींबू, चिक्म और अदरग इनप्रत्येककी क्रमसे
 तीन ३ भावनाएं देकर अमिल्लातके गुदेके पानीमें घोलकर
 भावनाएं देकर सुरोमटरबसापर मोलिये बनाकर रराओड़े । इन
 मेंसे १-१ गोली उचितानुगानकेसाथ देनेसे मन्दासि, दाल,
 जीर्णज्वर, सांती, अरुचि, पाण्डु, उदररोग, आमबात, बरि-
 शोध, हरीमक, श्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरती है ५५६

५५७ महोदधिवटी (तृतीया)

रसं गन्धं तथा द्रुमं यज्ञविद्रुममार्तिककम् ।
 शुद्धीत्या समभागेन मर्दयेत्त्रिपलाम्बुना ॥२४८२॥

ततो रक्तिमिताः कुयोद्धीम्यायाप्रशोपिताः ।
 एकैकां दापयेदासां यथादोषानुपानतः ॥ २४८३ ॥
 रुद्रान्प्रत्यमन्प्रवृद्धिं तथाऽन्यान्प्रजानान्दान् ।
 पातपित्तकफोत्थांश्च सर्वान्हन्ति महोदधिः ॥ २४८४ ॥
 भं., र., अन्वृद्धपधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सोना, हीरा, मूंगा इनकी-
 मयमें और मोतीकी पिष्टी ममभाग लेडर नीलगणेश्वलीकर
 त्रिकलाके रसमें २-३ रोज़ मर्दनकर १-१ रातीकी गोलियां
 बनाकर छायाशुष्ककर रराओड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि-
 तानुगानकेसाथ देनेसे अन्धाकरोध और अन्वृद्धिप्रवृत्ति ममस्त
 आंतोकेरोग तथा घात, पित्त, कफोत्थ समस्तरोग नष्ट होतेहैं ५५७

५५८ महोदयप्रत्ययसारः

रसप्रस्तसमुद्रांगन्धकस्य पलत्रयम् ।
 मृतमृताऽमृताप्राऽयः कर्षं कर्षं पृथक् पृथक् ॥२४८५॥
 पलं हिङ्गुलचूर्णस्य माक्षिकस्य पलत्रयम् ।
 पलं कम्पिहृकरुष्याऽपि विपस्याऽऽपलं तथा ॥२४८६॥
 समाहं मर्दयेत्सर्वं दत्त्वा चूर्णोर्दकं मुहुः ।
 ततस्तद्गोल्कं दत्त्वा समाहं घातये विपेत् ॥ २४८७ ॥
 गुडचूर्णं शिलाचूर्णं लिम्पेदङ्गुलिकाधनम् ।
 विपलं गन्धकं दत्त्वा क्रोड्यामय च गोलकम् २४८८
 गोलकस्योपरिद्राघ क्षिपेत्तालपलत्रयम् ।
 मङ्गधाऽतिप्रयत्नेन दद्याद्रजपुटं रजु ॥ २४८९ ॥
 स्याद्गुदीतलमाहृत्य गोलकं लेपनेः सह ।
 विचूर्णं समवारं हि विपतित्नुपल्लोद्भवेः ॥ २४९० ॥
 त्रिवरेषाऽऽपेत् गुष्कं क्षिपेत्प्रभ्यं वरुण्डकेः ।
 त्रिशदंशेन येषान्ममस्य तस्मिन् विनिक्षिपेत् २४९१
 अयं हि नर्दीभ्यरमस्यदिष्टो
 रसो विरिष्टः खलु रोगहन्ता ।
 निःशेषरोगेष्वहत्प्रतापो

महोदयप्रत्ययसारनामा ॥ २४९२ ॥
 हन्यान्मन्त्रेगुदाभ्यान्शयगर्दं कुष्ठञ्च मन्दाग्निनां,
 शूलाध्मानगर्दं कर्षं भ्यमननामुग्मादकापस्मूर्ती ।
 सर्वां घातकज्ञां महाज्वरगदाप्रानाप्रकारान्न्था,
 घातश्लेष्मभयं महामयचर्यं सुष्टप्रहण्यामयम् ॥२४९३॥
 र. र. म., आशोरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ममभागी कम्परीकर
 भातरीशीगीमें भरके अपना अन्वृद्धारसे गन्धकको अलग
 करके । इनरहका गन्धक ३ पत्र, पारा, अग्रह, काप और श्लेह
 इनदीभयमें १-१ कर्षं, शुद्धागिक १ पत्र, माक्षिकमय ३
 पत्र, कमीता १ पत्र, शुद्धकज्जग ३ कर्षं, लेडर बारीकचूर्णकर
 १-२ पहर शुद्धमर्दनकर चूर्णके पानीमें ७ रोज़ मर्दनकर गोला
 बनाय बारीकसे गुगाकर शुद्ध, मीन और कण्ठका घृता लेडर
 पोडानाकी बान्कर कूटे और दो महत्त्वोटा रोगेश्वर कर्षुकर

सुखाले । फिर एक सुखालीमें शुद्धगन्धक ३ पल विद्याकर गोलेको रस ऊपरसे ३ पल शुद्धहरितालका बारीकचूर्ण रखकर टकदे फिर वज्रमिठीसे ६-७ कपड़मिठी देकर सुखाकर गजपुटकी आचवे । स्वाश्रुशीतलडोनेपर मिठीमान निकालकर लेपसहित घोटकर कुचिलेके फलके रससे ७ भावनाए देकर धूपमें सुखाले और ३० वा भाग वैकान्तमसम मिलाकर १-२ पहर घोटकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे सब-प्रकारके अर्श, क्षय, कुष्ठ, मन्दाभि, शूल, अफारा, कफ, श्वास, उन्माद, अपन्मार, समस्तवातविकार, सम्पूर्णज्वर, वातश्लेष्मोद्भवविकार, राजयक्ष्म, दुष्टप्रहरारोग इनसबमें यह नष्ट करताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ महोदयावती

प्रागुक्तेन प्रकारेण मृतं सम्यङ्निपातयेत् ।
निपातितञ्च तं मृतं खल्वमये निवेशयेत् ॥ २४९४ ॥
पञ्चभि र्वर्णैर्भर्चस्त्रिभिः क्षारैस्तथैव च ।
व्योपैरार्द्रकनियार्सैः सर्वैरस्लेस्ततः परम् ॥ २४९५ ॥
मर्दयित्वाऽथ तं मृतं प्रत्येकञ्च दिनत्रयम् ।
अस्लेः प्रक्षालयेत्सृतं पादांशं वर्जयेज्जलम् ॥ २४९६ ॥
रामतं श्वेतमरिचं क्षाराणाञ्च चतुष्टयम् ।
लवणानि तथा पञ्च व्योपमार्द्रकमेव च ॥ २४९७ ॥
राजिका चित्रमूलत्वष्ट् मूलकं कटुरोहिणी ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽथ मर्दयेत्पूर्वजैर्जलैः ॥ २४९८ ॥
तल्पण्डमध्ये तं सृतं विदर्ध्यात् विचक्षणः ।
दोलायन्नेऽथ तं यद्धा धान्याम्लैः स्वेदयेत्ततः २४९९ ॥
दिनानि सप्त यत्नेन स्वेदयेद् दृढबहिना ।
यथा न क्षीयते काञ्ची तथा कुर्याद्विचक्षणः ॥ २५०० ॥
पर्वं संस्वेद्य मृतेनै यन्नाडुत्तार्य बुद्धिमान् ।
अग्नेन क्षालयेत्क्षारैश्च श्रेणैश्चेत् विमर्दयेत् ॥ २५०१ ॥
गिरिकर्णारसैः पूर्वं भृङ्गीनीरैस्ततः परम् ।
निर्गुण्डकारसैः पश्चाज्जपन्तीशुद्धवेरयोः ॥ २५०२ ॥
मण्डूकतिलपर्ण्यांश्च काकमाच्युरवृकयोः ।
घृत्तूरत्रिजगज्जेत्या रस्तुल्यै रसैः कमात् ॥ २५०३ ॥
मर्दयित्वा प्रयत्नेन तथा पित्तं विभावयेत् ।
पूर्वांके दशभिः सृतं सृतुल्यै र्थयाक्रमम् ॥ २५०४ ॥
धूपयेच्च ततः पश्चात्पूर्वांकेविधिमार्गतः ।
मरीचमाना गुटिकाः कर्तव्या रससम्भवाः ॥ २५०५ ॥
सन्निपातनिवृत्त्यर्थं प्रयुञ्जीत विचक्षणः ।
इयं श्रीलोकान्नायेन प्राणिनां करुणावशात् ॥ २५०६ ॥
वटिका सम्प्रदिष्टा हि दृष्टप्रत्यपरारिणी ।
इमां प्राप्य वट्यां कश्चित्सन्निपातात् न दयति ॥ २५०७ ॥
वट्यां दत्त्वाऽऽर्द्रनियार्सैरिक्कटोरनुपानकम् ।
कुर्वात दालयेत्तत्र सुशोतानि जलानि वै ॥ २५०८ ॥
व्यञ्जनानि प्रयुञ्जीत श्रोत्रण्डे लैपयेत्तनुम् ।
एष्यञ्च दधिभक्तं स्यात्तदानीमप दीयते ॥ २५०९ ॥

इक्षुचश्च तथा योज्या रसवीर्यविवृद्धये ।
शर्करा खण्डकारीका द्राक्षा योज्या विशेषतः २५१० ॥
शीतद्रव्यैर्भवेद्वीर्यं पित्तवृद्धीरसोत्तमे ।
लोकनाथमतेनेयं वटी प्रोक्ता महोदया ॥ २५११ ॥
रसाल०, सन्निपाते ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियेहुए पारेको तीनप्रकार पातल कर खरलमें डालकर पाचोनमक, तीनोंक्षार, त्रिकटु, अदरस, यथालाभ समस्त अम्ल इनप्रत्येकमें ३-३ रोज मर्दनकर खटाई के पानीसे साफकरले । मर्दनकरतेमय प्रत्येक चीजें पारेसे चतुर्थांश देना केवल जलका स्पर्श न होनेदेना । हींग, सफेद-मरिच, चारों क्षार (सब्जी, सुहागा, यवक्षार और नवसादर), पाचोनमक, त्रिकटु, अदरस, राई, चित्रकमूल, मूली, कुटकी इनसबका बारीक चूर्णकर पूर्ववत्तैसे गोला बनाय उसके बीचमें पूर्वोक्त पारेको रखकर दोलायन्त्र बनाय धान्याम्लोंसे ७ रोज तक तीक्ष्णाग्निसे स्वेदनकरे । काञ्ची सुपाने न पावे इसका ध्यान रखे । इततरह स्वेदनकर स्वाश्रुशीतल डोनेपर निकालकर काञ्चीप्रसूति अम्लद्रवमें धोकर कोयल, भंगरा, निर्गुण्टी, जैत, अदरस, प्राञ्जी, हुलहुल, मरोग, एण्ड, धतूरा, भाग ये प्रत्येक पारेकी बराबर देकर १-१ रोज मर्दनकर सुखादे फिर यथा लाभ पित्तोंसे भावना देकर कोयलको छोड़कर पूर्वोक्त दस चीजें पारेकीबराबर अग्निपर डालकर पारेको धूपदे । इसके बाद मरिच प्रमाण गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सम योचितानुपानके साथ देनेमें किसीभी सन्निपातसे आदमी नहीं मरता । गोलीको अदरसके रससे देकर त्रिकटुकावाय मिला कर ठंडेजलकी धारादे । भूल लगनेपर इच्छानुसार भोजन दे । दाह मात्रमपनेपर चन्दनका लेप दे । ज्वर उतरनेकेबाद छत दहीभात खानेको दे । रसकी शक्ति धननेकेलिये ईश, शहर, सुहारे और द्राक्ष देवे । इसरसमें शीतद्रव्योंमें शक्ति और पित्तकी वृद्धिहोतीहै ॥ ५५९ ॥

५६० माणिक्यरसायनम् (प्रथमम्)

सुजातिगुणमाणिक्यमसम कर्पसितं शुभम् ।
कनकाऽऽम्रकताम्राणां कान्तस्य भसितं पृथक् ॥ २५१२ ॥
त्रिगुणत्वेन संवृद्धं मर्दयेत्समगन्धकीः ।
पुट्टेनगिरिण्डैश्च पञ्च धाराणि यत्नतः ॥ २५१३ ॥
पवं शिलाळकाम्पाञ्च पुट्टेर्नालाञ्जनेन च ।
तुल्यगन्धात्मयत्ताभ्यां विहितां कज्जलीं शुभाम् २५१४ ॥
लौहं पात्रे परिद्राय्य वादरेणात्पवद्विना ।
माणिक्यादीनि भस्मानि क्षिप्त्या तत्र चिमिश्रयेत् ॥
अथाऽऽर्द्रकसैस्तां तु भस्मानि षोडश कज्जलीम् ।
सम्यक् कृत्वा विचूर्ण्यांश्च क्षिपेद्भ्यस्करण्डके ॥ २५१६ ॥
व्योपायन्यसहितं होतन्माणिक्याद्यं रसायनम् ।
व्योपाऽऽज्यसहितं स्त्रीर्द्रं पण्मासं पच्यमाजिना २५१७ ॥

निहन्ति मकल्याप्रोगान् जरापलितमंयुतान् ।

जीवेत्पदंशतश्चैत्र त्रियाश्विनमोजनः ॥

श्रयादिजान्वादान्मर्जस्ततद्रोगानुपानतः ॥ २०१८ ॥

१. पू, रगयने ।

भाषा—उत्तमकालिके माणिस्यरसि मम्म १ कप, सुतमे मम्म ३ कप, अश्रम मम्म १ कप, काप्रमम्म २० कप, शान्तमम्म ८१ कप, इनगवरीषताय सुदगन्धक वाअर २-३ पर मूत्रा मदनर अदरसके रगमे १-२ रोज् पोटर गोलापनाय वागवमपुत्रमे बन्दर गजुपटरी भावेदे । इगन्ध ५ आदिरे और गन्ध वारम्बार दतात्राय । इगीतद सुद मैनगिउ, हविताउ और नीलापन मेर रसक बराबर मिठावे और अद रसके रगमे पोटर वागवमपुत्रर १-१ पुट दब । म्याद नीलाक होनेर निकाअर इगरी बराबर सुदारे और गन्धर नीलाकमगीर लेंकेकीकहाईमे बरकी लरकी अया बंद मोंकी मन्द आंरर गन्धर माणिस्य वीरगमपुत्रामुओहो मिताअर उगाअर पंटी बाले । म्यादनीलाक होनेर बागीर पूर्णर अदरग अया दूकेरगमे १-२ रोज् मदनर गुगाअर अच्ची मत्रपुतनीमीमे रगदे । इगमे १-३ रगीदीमात्र ३ माने त्रिदुग्गाय मिठाअर पीमे वाअर पन्धूरुंठ ६ मदीमे तह मेनररमे जरा और पलितरगाय गमरतोमोंकी नय बरताहे । इगमे अति इना प्रदीम होताहे कि तीनवारभोजन करना पडताहे । लम्पगहारागुनरगेय देवेय देव हायादि लमरतोमोंकी दूरकरताहे । इगमे ६ मरीनेक गहनरगम १०० बर्षरी आयु होसीके ॥ ५६० ॥

५६१ माणिस्यरसापनप (द्वितीयम)

माणिस्योम्रजनाहययिदुमाणि

ताहयैव्य मम्म मूत्रमादनिवा यिदारी ।

मुन्द्यानि आनि शुक्रन्वयकया यिदारी

आग्राप्य मानुदियमे मूत्रनररगमिः २०१०

मागहयं प्राप्य पयानिपेपिणा

पीपेप पाने भजतेऽह्नाऽऽगमे ।

यामशयो वामभगन्दरायुदा.

यियुगिका म्बुहरी न जयमे ॥ २०२० ॥

न क, बारीरगमे ।

भाषा—माणिस्य, सुतमे, पंटी, मूत्र, पय इत्यनरी मग्मे, बन्धुगे, रिदारीके मत्र लमन्ग मत्र बारीरपुंठरी पीअर और रिदारीबन्दरगमे १०-१२ दिन भजता इर मुन्द्याअर रगमेदे । इगमे १-२ माने सुदगन्धक और भोकरमे बेवज पुषका मेनर रगमेगे यिदोके लय री बरमेगे सुकरी अरी होय । राजराज, पन्धूरुंठ बग म्बु, अंजुर, केरु और म्बुहरी मन्त्र बरताहे ॥ ५६१ ॥

५६२ माणिस्यरसमः (प्रथमः)

यत्तं तारं पत्तं सार्धं तिलापात्र पन्धूरुंठकम् ।

स्यत सुदरगीमञ्ज भातमत्तमपात्र ॥ २०२१ ॥

पतेयां कोलमागञ्ज यटशीरप मदीये ।

ततो दिनप्रथं धर्मं निम्बकपायेन भावयेत् ॥ २०२२ ॥

मुहूर्थायान्दिल्लालयानरीनांगिष्टिषाः ।

नाभाञ्जनमुपऽनाज्योनिर्गुण्डीहयमारणी ॥ २०२३ ॥

पयां क्षापयित्वा पूर्णमेघीरुण्ड्य मरिचटे ।

मृत्पाये कटिने कृत्वा मूत्रमरयुते दटे ॥ २०२४ ॥

पकाकी पाकविष्टयो नमः तिपिण्डकुन्ज ।

पचेदुपहितो सार्धो यदात्मयतमानम ॥ २०२५ ॥

शनं मीथमयेगेन पडिना प्रहृष्टयम् ।

प्रातः समृज्य मातेण्डे स्याद्भोजनं समुच्चये ॥ २०२६ ॥

यदि भाग्यवशादेतन्माणिस्यार्धं शुभं भवेत् ।

तस्मि जानीति भैरव्यं सर्वकुष्ठपिनाशनम् ॥ २०२७ ॥

सर्पिणा मधुना लोहापाये तदपुत्रमदितम् ।

द्वियुञ्जं सर्वकुष्ठानां नाशनं पल्लवर्जनम् ॥ २०२८ ॥

शीतले सार्यं तोष्यं दूष्यं या पाकशीतलम् ।

आनीतं तत्रशलादाजमनुपानं सुरसायहम् ॥ २०२९ ॥

पातकैः शीतपिचं द्विवाञ्जं शार्याञ्जयेत् ।

ज्वरान्ध्यायं चान्तरागान पाण्डुं कण्डुञ्जं क्षामागम् ।

धीमद्रजननायेन निर्मितो पट्टयजतः ॥ २०३० ॥

१ ग, २ प, ३ ति, ४ मु, पुण्ड्रिधर ।

भाषा—मुद इतिना और गन्ध १-१ पुट, सुदमेन गिउ २ कप, सुदारा, वाग, लय, अश्र और लोद इती- मग्मे भाषा अया कपे मेर नीलाक बारीर बारीरपुंठमे । राज मदनर मग्मे मूत्राअर नीमरीठारे कपेमे १ रोज् पोटर गुगादे गिर गिरेय, बोयराउ, बेवज मीमृच्छा क्यारिया, पडिजन, सुमरो, शींग, जिगुडी और म्बुहरीके शीअर ५-६ कपे कानुंमिठार बरीरैरिअर बनी विगीका अगना न होयतो बरीर मत्रपुंठ ६ पायल क्यारिरी लकाअर लहाकी पकरे जामेठार वैय जग होयय और सोटीके लो होयरे । गि उगायरो कुदर बन्धर इग- रगको बन्धरीर ३ लहाय पलाअर लहायरी मज्जम अर्धे । जल वाग म्बुहरीके लहाय मूरीरगारा पुनरर इमे गिउ म्बुहरी । भाग्यवश इगहाअर माणिसके मग्मेलेय होमे सुन्दर मग्मम्बु पादित । इगमे १-२ रग ही और म्बु गिउअर लहाय कपेमे लोदेके लय मदनर कपेके लह मग्ममग्मेगे दूरकरते और कपेके कपेमे । इगमेके लय लय मग्ममग्मम्बु अया भौठार २० रिदुग्गा दूर अदरा बरीरग क्यारिपुंठ नीला उनीके । इगमेकेरगमे क्यारिपीपिल म्बुहरी रिपरी मग्ममग्म, क्यारिप, कण्डु म्बुहरी क्यारि लय क्यारिपे ॥ ५६२ ॥

५६३ माणिस्यरसमः (द्वितीय)

अक्षयमुत्रयो सार्धं विद्विअद्भारगगतिपय ।

पातकैरुप्यजते शार्यं सार्धं क्यारिपयानिपय ॥ २०३१ ॥

ति के म, क्यारिपे १३

भाषा—सफेद अम्रकके पत्रपर हरितालकाचूर्ण विद्यमान अम्रिपर धरे जब हरिताल गलकर उड़नेलगे तत्र दूसरापत्र अम्रक का रखकर दवादे और थोड़ीदेरतक उसे अम्रिपर रहनेदे । जब देखेकि हरितालाल्मया तत्र उतारकर नीचे रखले । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर चाङ्गसे इस माणिक्यरसको निकालकर रखछोड़े । यह माणिक्यके सदृश चमकताहुआ रस तैयारहोगा । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतक पान अथवा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे वात-श्लेष्मज्वर और सनिपात नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ माणिक्यरसः (कुमुदः) (तृतीयः)

तालं कुट्टितमन्नपत्रपुट्टं संस्थाप्य मूलखर्परे,
तद्रन्नाणि नवीनकोलदलजैः कल्काकृतैः पुरयेत् ।
आकण्ठं महिषीमलं तदुपरि प्रोत्कीर्य यामार्थतः,
कुर्याद्बहिमयं हिनस्ति कुमुदः सर्वज्वरान् दुस्तरान्
सि भे म, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध तबकी हरितालका बारीकचूर्णकर सफेद अम्रकके दो टुकड़ोंके बीचमें दवावे और उनकी सन्धिको बरेके कोमल्पतोंके बल्कसे बन्दकर मिट्टीके खपड़ेमें रखकर ऊपरसे ताजेगोबरसे सम्पूर्णको भरके आधे पहरतक मध्यम आचयेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर धीरजसे सम्पुटको निकाल साफकरके अन्दर से माणिक्यके रङ्गके रसको निकालकर कज्जलेके सदृश बारीक घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह तमामज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ माणिक्यरसः (चतुर्थः)

तालकं वंशपत्रार्थं कूम्पाण्डसलिले क्षिपेत् ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि दृज्जाऽम्लेन तथैव च २५३३
शोधयित्वा पुनः शुष्कं चूर्णयेत्तण्डुलाकृति ।
ततः शराचके पात्रे स्थापयेत्कृशलो भिषक ॥२५३४॥
बद्रीपत्रकलेन सन्धिलेपञ्च कारयेत् ।
अरुणाभं हाथपात्रं तावज्ज्वाला प्रदीयते ॥ २५३५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्भृत्य माणिक्याभं हरेत्सम् ।
तद्विकृष्टितयं ग्वादेद्धतम्रामरमर्दितम् ॥ २५३६ ॥
सम्पूज्य देवदेवेशं कुष्ठरोगादिसुच्यते ।
स्फुटितं गलितं कुष्ठं वातरक्तं भगन्दरम् ॥ २५३७ ॥
नाडीवर्णं घ्नं दुष्टमुपदेशं विचर्चिकाम् ।
नासाऽऽस्यस्ममवाप्रोगान् क्षतान्दन्ति मुदात्पान् ॥
पुण्डरीकं चर्मदलं विस्फाटं मण्डलं तथा ॥ २५३८ ॥
र स, भे, र, र को, घ, र वि, र सु, र च, वै क,
र त, कुष्ठे ।

टि—भिन्नभेदनामिमांशस्यवासुभोरपि माणिक्यरसया रसममूलमिति विद्वद्भिर्विभाजनीयम् ।

भाषा—शुद्ध तबकीहरितालको सफेदकोलेकेरस और दही अथवा अन्य किसी गद्याईमें दोलायन्देय ७ अथवा ३ दिन स्वन्दनकर मुखाकर तण्डुलोंके सदृश चूर्णकर शराचकेमें रख

दूसरे शराचके ढकदे । और बरेकेकोमल्पतोंके बल्कसे सन्धिक बन्दकर चूलेपर रख आन्दे । जवनीचेका ढकन एकदम लाल होजाय तत्र आचदेना बन्दकरदे फिर सुद खोलकर देखे उसमें माणिक्यकी तरह नीचे जमाहुआ रस मिलेगा । इसकीमात्रा १ से २ रत्तीतक घी और भोरके मयूके साथ खानेसे फूटाहुआ और गलित कुष्ठ, वातरक्त, भगन्दर, नाडीवर्ण, दुष्टपत्र, उपदेश, विचर्चिका, नासिका और मुखके समस्तारोग, पुण्डरीक, चर्मदल, विस्फोटक और मण्डलकुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ५६५

५६६ माणिक्यरसः (पञ्चमः)

शुद्धं मृतं पलान्यष्टौ कुनटीं तालकं समम् ।
नागपत्रं चाप्यलमष्टौ भागाश्च गन्धतः ॥ २५३९॥
एकत्र कज्जलीं कृत्वा काचकृप्यां विनिःक्षिपेत् ।
वालुकायन्त्रमध्ये तु वह्निः पाण्डशयामरम् ॥ २५४० ॥
भवेन्माणिक्यवर्णाऽयं शुक्रस्तम्भं करोति च ।
जराव्याधिविनाशाय राजरोगकुलान्तकृत ॥ २५४१ ॥
दशरानप्रयोगेण महाव्याधिविनाशनम् ।
रक्तिकाद्दं सदा पथं वृद्धः संयाति योचनम् ॥२५४२॥
र च, र सु, यो. म, र. म भा, रात्रयक्षमणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मेनसिल, हरिताल, सीसके बारीक पत्र, येसन ८-८ पल लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर कण्ड मिट्टीकीहुड़े आतशीशीशमें भरके वालुकायन्त्रमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निवालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरती उचितानुपानसे देनेसे यह शुक्रस्तम्भन करताहै और बुढाप, राजरोगका समूह, महान्याधि (कुशादि), इन सबको नष्टकरताहै ॥ ५६६ ॥

५६७ माणिक्यरसः (षष्ठः)

शुद्धमृतसमं गन्धं कज्जलीं कारयेद्बुध ।
पौडशांशं सुवर्णञ्च माणिक्यञ्च तद्द्वैकम् ॥ २५४३ ॥
सर्पमेकत्र सम्मर्द्य कन्यानारेण भाचयेत् ।
काचकृप्यां सप्तमृद्धिलिप्तायां तन्निवेशयेत् ॥२५४४॥
धारयेत्सिकतायथे वह्निं प्रज्वालयेच्छनै ।
यामपोडशापर्यन्तं शलाकाञ्च दृष्टौ त्वे ॥ २५४५ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्भृत्य सृतं माणिक्यसञ्चिद्यतम् ।
गन्धकञ्च पुनर्दत्त्वा पुनर्माणिक्यहेमके ॥ २५४६ ॥
पूर्ववन्मर्दयेत्तञ्च पाचयेत्तद्देव हि ।
एवं पद्मणकं कार्यं सर्वयोगोपकारकम् ॥ २५४७ ॥
जायते सिद्धिं देहे सर्वप्रत्ययकारकम् ।
सेवयेद्रोगनाशाय तत्तद्रोगाऽनुपानतः ॥ २५४८ ॥
वह्निं वा वह्नियुग्मं वा मधुना कण्ठया सह ।
सेधिनं कामिनीं यामं दशैष्टतिकौतुरुम् ॥
दीयन्गन्धकरदशीघ्नं योगामद्विनाशनम् ॥ २५४९ ॥
स्वायन्त, वाररोग ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकज्ज लीकर पोडशाश सोनेकेवर्कसे आधी माणिक्यभस्म डालकर कज्जलीमें मिलाकर घीकुंआरके रससे एकभावना देवे । सुखनेपर सातपत्रमिमीदीडुई आतशीशीरीमें भरके बालुकायन्त्रमें रस १६ पहरकी अग्निदेवे । शीशीका मुंह खुला रखनेके लिये बीचबीचमें लोहेकी गरमशालाका भीतर डालकर गन्धक जारण करे । गन्धकजारण होनेपर सुहृद्वन्दकरदे । स्वाह्वशीतल होनेपर निकालकर पूर्वके बराबर गन्धक, सुवर्ण और माणिक्यभस्म डालकर पूर्ववत् मर्दनकर बालुकायन्त्रमें पकावे । इसतरह पद्म-गण्धकजारणकरनेसे यह रस सिद्धहोताहै । इसको रोगनिवृत्त्यर्थ देनेमें सबतरहके विश्वासको पैदानरताहै । इसमेंसे ३ अथवा ६ रतीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाय देनेसे १ पहरतक शुरु-स्तम्भन होताहै रतिमें कौतुकको दियाताहै वीर्यको जल्दी बाधताहै और स्त्रियोंके मरुको नष्टकरताहै ॥ ५६७ ॥

५६८ माणिक्यरसः (वृहद्विष्यादि) (सप्तम)

शुद्धं सूतं पञ्चपलं कुन्टी तत्समां क्षिपेत् ।
हाटकन्तु पलं पञ्च माणिक्यन्तु चतुःपलम् ॥२५५०॥
मुक्ताञ्च विद्रुमञ्चैव प्रत्येकं द्विपलन्तथा ।
नागपत्रं पलञ्चैकं शुद्धगन्धकमष्टरुम् ॥ २५५१ ॥
परुत्र कज्जलीशुष्य काचकृप्यां विनिःक्षिपेत् ।
बालुकायन्त्रं चाग्निं यामपट्टमिद्राकं हठात् ॥२५५२॥
भवेन्माणिक्यदिव्यांऽयं कामाग्निबलवर्धनः ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टशुक्रा यलमांसाऽग्निवर्जिताः ॥२५५३॥
व्यवायरहितानाञ्च धातुपुष्टिकरः परः ।
वातिकाः श्लेष्मिकाश्चैव व्याधयः सम्भवन्ति ये २५५४
अस्य प्रभावाद्बहूणी कासश्वासाऽरचिक्षयाः ।
वातश्लेष्मप्रतिशयायाः प्रशमं याति वेगतः ॥२५५५॥
तिमिरं पटलं काचं पिष्टुं नक्तान्धमर्जुनम् ।
आसन्नप्रतिमिरं यच्च शशिनः पश्यति ह्रियम् ॥२५५६॥
जराव्याधिचिनाशाय राजरागचिनाशनम् ।
दशारात्रप्रयोगेण महाव्याधिचिनाशनम् ॥
रक्तिकार्दं सदा सेव्यो घृष्टस्तरुणातं प्रजेत ॥२५५७॥
रसायनसं, सर्वान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, मैन्सिल और सुवर्णभस्म ५-५ पल, माणिक्यभस्म ४ पल, मोती और मूंगीभस्म २-२ पल, शुद्ध नागपत्र १ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, लेकर पहिले पारमें नागपत्र डालकर घोट फिर गन्धक मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर सन्धीजूको मिलाकर आतशीशीरीमें भरके बाटुकायन्त्रमें २६ पहरकी तीनअग्नि देवे । स्वाह्वशीतल होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे आधीआधीरती उचिततुपानकेसाय देनेसे कामाग्नि और बलको बढाताहै । क्षीणेन्द्रिय, नष्टशुक्र, बल, मांस और अगिरहित, रक्तिकरनेमेंअसमर्थ और धातुशीघ्रपुष्टीको यह रोगरहित बनाताहै । वातिक तथा श्लेष्मिक व्याधियोंको अन्य कारको सुखेकी तरह नष्टकरताहै । प्रद्वी, कास, क्षाम, अरचि,

क्षय, वात-श्लेष्मप्रधानप्रतिशयाय, इनको नष्ट करताहै । तिमिर, जाला, मोतियाबिंद, रीतल, रतौंधी, अर्जुन, एकवस्तुको दो दीखना इनसबको खाने तथा लगानेसे नष्टकरताहै । लगानाहोतो मधुमें प्रयोग करना । इसके दशरोग लगातरसेपनसे अमाश्रय-व्याधि नष्टहोताहै । बुद्ध्या और राजरोग बुद्धिदोनोंके सेवनसे नष्टहोतेहै ॥ ५६८ ॥

५६९ मानसूरणाद्यं लोहम्

मानसूरणभङ्गातत्रिवृद्धन्तीसमन्वितम् ।

त्रिकत्रयसामायुक्तं लोहं दुर्नामनाशकम् ॥ २५५८ ॥

र. सं. , र. सु., मै. र. , र अशोऽधिकारो ।

टि०—रमरत्नाकरीवत्रिकत्रयवर्द्धिहोनाऽय समाननामावहति केवल मानसूरणी बाकुचीखाने निहितौ स्त । अस्मिन्नेव योगे बाकुची मिश्रय निष्पादिते सति हयोरपि समावेग सुष्ठुनया भवियति, अपि आरभेदोऽप्यभिहित्तर मिश्रितयोगस्योभयकार्यकरणसम्भवात् । रमरत्ना-करे तु स्थौल्यधिकारः ।

भाषा—मानकंद, सूरण, मिलावे, निसोत, दन्तीमूल, तज, पत्रज, इलायची, अथवा-नागरमोया, चित्रक, विडङ्ग, त्रिकटु और त्रिफला येसन समभाग, इनसबकी बराबर लोहमसम मिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ माशा रक्षाईमें पाषाणभेद और शरकरेसाय, अथवा १ माशा रसाईके साथ अथवा बन गोभीके खरेसेसाय, शुक्राईमें दूध अथवा चित्रकबीजके कायके साथ देवे । इससे सत्रतरहे बवावीर और मेशोरुदि अच्छी होतीहै ॥ ५६९ ॥

५७० मानिनीमानभञ्जनरसः

सूतस्यैको विपस्यैरुः पञ्च कृष्णाभ्रभस्मनः ।
शुद्धगन्धस्यैरुपलं पलञ्च रसभस्मनः ॥ २५५९ ॥
खल्वे च मुनिसंख्यातं मोचासत्त्वेन भाययेत् ।
चिञ्चायाः स्थारसेस्तड्मुद्राख्या दशधा तथा ॥२५६०॥
कोकिलाक्षरुतायेन गार्क्षीरेणैव सप्तधा ।
सप्त धत्तूरुतायेन सर्पवह्नीरमात्तथा ॥ २५६१ ॥
अहिफेनाश्च सप्तैव चानुजातफलत्रयम् ।
जातीफलं जातिपत्री सुराह्नुसुमानि च ॥ २५६२ ॥
प्रत्येकं पलमेतेषां शाणः कर्पूरकेमरुत् ।
कस्तूरिकाञ्च निक्षिप्य तत्सयं परिमर्दयेत् ॥ २५६३ ॥
नागवह्नीरमेनेव गुट्टिका चणकोपमा ।
कृत्वेकां भक्षयेथाऽहिपत्रैः क्षीरं पिषेदनु ॥ २५६४ ॥
वीर्यं प्रचुरतां याति कामिनी सुरतार्थिनाम् ।
ध्वजांथानञ्च शुभ्रते स्त्रीयानिद्वलक्षमः ॥ २५६५ ॥
रममाणो न कृपेचु र्नाणामानन्दवर्धनः ।
रसा हि शिष्टिप्राख्यातां मानिनीमानभञ्जनः ॥२५६६॥
रसायनसं, र सु, वातोदरये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और वाज्राण १-१ पत्र, शुष्णाभ्रभस्म ५ पत्र, पारदभस्म १ पल, लेकर सचकी नील-वर्णकज्जलीकर केनेना रस और इमतीका पना इनकी ७-७

भावनाए देकर मुखालीके स्वरस अथवा काथकी १०, तथा तालमखानेका काथ, दूध, धतूरा और पाचकारस, अफीमका द्रव इनकी ७-७ भावनाए देकर मुखाले फिर चातुर्जात, त्रिफला, जायफल, जावित्री, लौंग १-१ फल, शुद्धकपूर, केशर और कस्तूरी ४-४ मांशे मिलाकर पानकेरसे १-२ रोजमर्दनकर चनेवापर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खाकर दूध पीनेसे बहुतसी त्रिषोकेसाथ रतिकरने-परमी शुक्लशीण नहीं होता इन्द्रियभी शिथिल नहीं होतीहै ५००

५७१ मार्कण्डेयचूर्णम्

शुद्धं सतञ्च गन्धञ्च हिङ्गुलं टङ्गुणन्तथा ।
व्योपं जातीफलञ्चैव तमालं देवपुष्पकम् ॥ २५६७ ॥
प्लार्याजं चित्रकञ्च सुस्तकं गजपिप्पली ।
तगरं सजलञ्चाऽम्रं धातन्यतिविपा तथा ॥ २५६८ ॥
शिग्रवीजं शाल्मलञ्च विशुद्धं नागफेनकम् ।
पतानि समभागानि शृङ्गणचूर्णानि कारयेत् ॥ २५६९ ॥
खादेदस्मात्पतिदिनं मापकं सितया सह ।
मङ्गह्रहणीं हन्ति मन्दाश्रित्वञ्च नाशयेत् ॥ २५७० ॥
धातुवृद्धिं व्योवृद्धिं यलपुष्टिं करोत्यपि ।
मार्कण्डेयनामेदं महादेवेन निर्मितम् ॥ २५७१ ॥

वै क, भै र, ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगारिक और सुहागा, त्रिकटु, जायफल, पत्रज, लौंग, इलायचीकेबीज, चित्रकमूल, नागरमोथा, गजपीपल, तगर, सुगन्धवाला, अश्रकमस, वावडो केफूल, अतीस, सहिजनकेबीज, मोचरस, अफीम, येसव सम भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिला कर १-२ रोज घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ माशा रात्र केसाथ लेनेसे सङ्ग्रहग्रहणी, मन्दाभि, धातुक्षय, शुद्धापा, बल हानि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५७१ ॥

५७२ मार्तण्डभैरवरसः

शुद्धं मृतं समं गन्धं गन्धात्पारांशटङ्गणम् ।
ताम्रपात्रे क्षिपेत्पिष्टं जयन्त्यालोडयेद्वै ॥ २५७२ ॥
शिग्रुमूलरसेनाऽथ भावयेच्च सरतपे ।
कटुत्रयस्य वासाया वह्निरत्रजटाद्रवैः ॥ २५७३ ॥
तिलपण्यां तथा जातीपिप्पलीपत्रमूलकैः ।
द्रवैर्ये तु सप्ताहं शाप्यं शाप्यं विभाषयेत् ॥ २५७४ ॥
ताम्रपात्रात्समुद्धृत्य कृत्वा गालं विशोषयेत् ।
यद्धा यत्नमृदा चाऽथ सूधरे स्वेदयेत्पुटे ॥ २५७५ ॥
द्वियामान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेद्रीपधैः सह ।
विपकरिजात्येला रसस्य द्वादशमादात् ॥ २५७६ ॥
भावयेद्विजयाद्रवै दिनेमेकञ्च भक्षयेत् ।
चतुर्गुणं सकर्षरमधुना मन्त्रिपातजित ॥ २५७७ ॥
मार्तण्डभैरयो नाम रत्नाऽसाध्यञ्च साधयेत् ।
दशमूलं पिषेद्यातु पथ्यं स्वाम्मुद्रयूपकम् ॥ २५७८ ॥
स्तत्रि, नि र, र मु, भमिसाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला, सुहागा ३ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर ताम्रके विशुद्धपात्रमें डालकर जैतका रसभरकर धूपमें रखदे । सूखनेपर सहिजनकी जड़की-छालका स्वरस डालकर कड़ीधूपमें घुसावे । इसीतरह त्रिकटु, अड्डासा, चित्रकमूल, ह्रजटा (ईसरजटा म० अमाचमें अमर-बेल), दुरदुर, जावित्री, पीपलकेपत्र और जड़, इनप्रत्येकके रसोंसे ७-७ रोज भावनाए देकर गोलावनाय घुसाले । फिर ३-४ तह कपड़े लपेटकर २-३ कपड़मिठी देकर सुखाकर दोष हरतक भूधरयत्रमें आव देकर स्वेदनकरे । स्वाशशीतलोनेपर बछनाग, कपूर, जावित्री, इलायची, समभागलेकर वारीक चूर्ण कर परिपक्वसे दशाश मिलाकर भागके स्वरस अथवा काथकी २-४ भावनाए देकर ४-४ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली आभीरसी कपूर और मधुकेसाथ देकर दशमूलका काटा पिलानेसे यह असाध्य सन्निवातरो नष्टकरताहै । सूखलगने पर मृगाकायुप देना ॥ ५७२ ॥

५७३ मार्तण्डरसः

रसञ्च गन्धकं म्लेच्छं विपं नेपालकं तथा ।
फलत्रयं त्रिकटुकं जीरकं चित्रकं तथा ॥ २५७९ ॥
समभागानि चैतानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गस्य रसकैर्मयं गुटिका गुञ्जमात्रिका ॥ २५८० ॥
घटकान्भक्षयेद्यैतानि मरिचैश्च समन्वितान् ।
सर्वज्वरहरं नित्यं सदा शीतज्वरं हरेत् ॥ २५८१ ॥
हृद्रोगञ्च कफं प्रोकमम्लपित्तं सुदारणम् ।
सर्वशूलं तथा गुल्मं क्षयपाण्डुञ्च नाशनः ॥ २५८२ ॥
द्वीपनं पाचनञ्चैव समीरपित्तोरोगजित ।
रोगान्निर्मूलयेत्सत्यं मूलरोगविनाशनः ॥
आधिज्याधिहरश्चैव सर्वव्याधिनिवारणः ॥ २५८३ ॥
र क यो, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगारिक, बछनाग और जमा लोटा, त्रिकटु, जीरा, चित्रकमूल सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर अंगरेके रसेसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समसोचितातु पानकेसाथ देनेसे शीतज्वर, हृद्रोग, कफ, अम्लपित्त, समस्तदुल, गुल्म, क्षय, पाण्डु, मन्दाभि, वात और पित्तकेरोग, अशं प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह हरकरताहै ॥ ५७३ ॥

५७४ मार्तण्डगुटिका

शुद्धं मृतसमं गन्धं मर्दनात्कजलीरतम् ।
तत्ताम्रसम्पुटे रुद्धा लवणेन मृदा दृढम् ॥ २५८४ ॥
पचेद्वीपाग्निना शुष्कं यामिकं भस्मयद्यके ।
सम्पुटेस्थाद्धलम्रं तन्ममुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ॥ २५८५ ॥
तुल्यपारदर्भयुक्तं पृथग्जत्सम्पुटे पचेत् ।
उद्धृत्य तुल्यमृतेन मयुक्तं मर्दितं पचेत् ॥ २५८६ ॥

इत्येवं सप्तधा कुर्यात्पुनः पारदद्वङ्गणम् ।
 तुल्यं तुल्यं क्षिपेत्स्मिन्दिने सर्वं विमर्दयेत् ॥ २५८७ ॥
 वज्रमृपागतं रुद्धा ध्माते खोटो भवेद्रसः ।
 मार्तण्डो गुटिका ह्येषा वर्षकं यस्य घनत्रया ॥ २५८८ ॥
 घलीपलितमुकोऽसौ जीवेदाचन्द्रसारकम् ।
 पलाशबीजजं तैलं पलैकं क्षीरतुल्यरुम् ॥ २५८९ ॥
 कामणं प्रपिबेन्नित्यं तत्क्षणान्मूर्च्छितो भवेत् ।
 तस्य घनने गर्धा क्षीरं स्तोत्रं स्तोत्रं निपेचयेत् २५९०
 प्रमुद्धे क्षीरमधं स्याद्भोजने परमं हितम् ।
 तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां ताघ्रं भवति काञ्चनम् ॥
 वायुवेगो महासिद्धिद्विध्रं पश्यति मेदिनीम् ॥ २५९१ ॥
 र स , र का , रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धकी नीलवर्ण कजलीकर तावकेसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर सुखादे । सूपने पर भस्मयन्त्रमें रस एणपहर दीपामिकी आचदे । स्वाइशीतल होनेपर ऊपरके सम्पुटमें लगेहुए पदार्थको सुरचकर उसकी बराबर कच्चा पारा मिलाकर पहिलेकी तरह सम्पुटमें बन्दकर पकावे । इसतरह ७ बारकरनेकेबाद आठवींबार सम्पुटमें निका लेहुए पदार्थकी बराबर पारा और सुहागा मिलाकर एकदिनभर मर्दनकर बज्रमृपामें बन्दकर घोंकनेसे खोट तैयारहोगा । इसको एणपहर मुहमें ररकर पलाशके बीजोंके एकपल तैलमें बराबरका गोडुय मिलाकर पीनेमें तत्क्षण मूर्च्छा होगी । मूर्च्छितसाधकके मुहमें ताजा गायकादूध डाले, होस आनेपर दूधभात खानेको देवे । इसप्रकार एकवर्षतक प्रयोग करनेपर इसके मलमूत्रसे तावा सुवर्णहोगा । वायुके सट्टा वेग बडेगा और सिद्धियोंको प्राप्तहोगा । इसनेलिये आकषा पातालमें बोर्दनी जगद जानेकी रुकावट नहीं होगी । और निमीनमें गडाहुआनिधि प्रत्यक्ष दिखाई देगा ५७४

५७५ मार्तण्डेश्वररसः

समताप्ययुतं शुद्धं पलविंशतिमानरुम् ।
 प्रभातं हि चतुर्वारं खण्डयित्वा ततश्चरेत् ॥ २५९२ ॥
 तच्चुच्यमाशिकोपेतं पुटेद्विशतितारकम् ।
 गन्धकेन पुटेत्सायथावत्पलमितं भवेत् ॥ २५९३ ॥
 क्षिपेत्पलमितं तत्र गन्धकेन हतं रसम् ।
 शाणमानं मृतं यज्ञं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ २५९४ ॥
 इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं मार्तण्डेश्वरनामवान् ।
 कीर्तितो लोकनाथेन लोकानां हितकाम्यया ॥ २५९५ ॥
 मरीचघृतसंयुक्तः सेवितो मण्डलार्द्धतः ।
 याताघष्टमहारोगांघ्रासकासयुतं क्षयम् ॥ २५९६ ॥
 हलीमकरुञ्च पाण्डुञ्च ज्वरानपि सुदुस्तरान् ।
 इत्यादिगत्रास्तस्योन्विनाशयति निश्चितम् ॥ २५९७ ॥
 परांति शीघ्रं तीर्थं शीघ्रानलदातोपमम् ।
 सन्निपातं जयत्याहुं श्यापाऽऽर्द्रकसमन्वितम् ॥
 सर्वसौख्यकरो नृणां ख्रीणां गन्धत्वनाशनः ॥ २५९८ ॥
 र र स , र , मु , र न , र म मा नान्ध्याप्याकार ।

भाषा—२० पल सोनामाखीका चुंगर नीवू वगैरहमें घोटकर उसके बराबरके ताबेपत्रपर लेपकरके मृपामें रस घनकरनेसे पिण्ड सट्टा बनजायगा । इसमें बराबरकी सोना माखी डालकर २० पुट देवे । इसकेबाद बराबरका गन्धक देकर बारम्बार घनकरे । जब १ पल ताजा गन्धाय तप पुन्देना बन्द करदे । फिर इसकी बराबर केवल गन्धकेसे माराहुआ पारा १ पल, हीरकीभस्म ४ मास लेकर सबको एकत्र मर्दनकर रस छोडे । इसमेंसे दो चावलकी मात्रा मिर्च और धीरे साथ सात दिनतकखानेसे वातादि आठ महारोग, श्वास कास, क्षय, हली मरु, पाण्डु, दुस्तरज्वर, भन्दाभि, प्रवृत्ति रोगोंको दूरकरताहै । निकटु और अदरलकेसाथ देनेसे तबप्रकारसे सत्रित और खियोंका वाह्यपना नष्टहोताहै ॥ ५७५ ॥

५७६ माहेश्वररसः (प्रथमः)

रसं भस्मीकृतं कौलं गन्धकं शोधितं समम् ।
 लौहं कर्पूरं ताप्रमर्दकौलकसम्मितम् ॥ २५९९ ॥
 सुयणं जारितं दद्याच्छाणार्द्धं चन्द्रभस्मरुम् ।
 अम्रं कर्पूरं दद्याच्छाणार्द्धं सुविचक्षणम् ॥ २६०० ॥
 श्यामाधीजं वरीञ्चैव यथामतिउलान्तथा ।
 पलाशं शङ्खपुष्पञ्च शाणमानं त्रिनिक्षिपेत् ॥ २६०१ ॥
 जलेन घटिका कृत्वा गुञ्जामात्रां प्रदापयेत् ।
 सेचनादस्य कन्दर्परूपां भवति मानवः ॥ २६०२ ॥
 सहस्रं याति नारीणामुस्ताहां जायतेऽधिकः ।
 निर्यं स्त्रीसेनानाघस्तु क्षीणशुक्रो भवेन्नरः ॥ २६०३ ॥
 पूर्णशुक्रो भवेत्सोऽपि सेचनादस्य नाऽन्यथा ।
 महायला महाशुद्धिर्जायते नाऽत्र संशयः ॥ २६०४ ॥
 स्थूलानां कर्पकः श्रेष्ठः कृशानां पुष्टिकारकः ।
 रसो विनाशयेद्भोगान् सप्तसप्ताहभक्षणात् ॥ २६०५ ॥

र स , र सु , रसायनवर्जीकरणयो ।

भाषा—नारदभस्म और शुद्धगन्धक आपाआधाकर्प, लोह-भस्म २ कर्प, ताप्रभस्म ४ मास, सुवर्णभस्म २ मास, अम्रक और रजतभस्म २-२ कर्प, कालादाना २ मास, शतवरा, बज्रा, गेरु, इन्धयचीकेबीज, सारगुणी ये ४-४ मासो लहर सबका बारीकचूणकर अनेसाथ एतरोज घोटकर १-१ रत्तीकी गोल्यानाकर ररगेडे । इनमेंसे १-१ गोली उचिनापुगाने साथ दनेसे बहुशुक्रो खियोंकेसाथ रतिकरने परमी शुक्रका क्षय नहीं होता । जो अत्यन्त स्त्रीसङ्गरनेसे क्षीणशुक्ररोगगण्डो बढी इतने सेवन करनेसे शुक्रमें परिपूर्ण होबानाहै । इनके सेवनसे बज और पुष्टि वदनेसे स्थूलको हृद्य और कृशको स्थूल बनानाहै असाध्यरोगोंको ७ सप्ताहमें नष्टकरताहै ॥ ५७६ ॥

५७७ माशिकबद्धगुटी

ध्याममाशिकमत्त्वञ्च तारं ताघ्रं मुरायणम् ।
 गृह्णन् समायुक्तं रत्नादिगुणसूयिता ॥ २६०६ ॥

गुटी बद्धा वरारोहे मधुरत्रयसंयुता ।

यक्त्रस्था नाशयेत्साक्षात्पलितं नाऽत्र संशयः २६०७
रसेन्द्रमं., रसायने ।

भाषा—अत्रक तथा स्वर्णमाक्षिकसत्त्व, शुद्धचांदी, तांबा, सुवर्ण और पारा समभाग लेकर गलाकर किसी साँचमें छिद्रयुक्त गोली बनाले । उसमें काल अथवा काला डोरा डालकर सुँहमें रखे और ध्यानरहे कि गलेमें न उतरजाय, इसीलिये डोरेका विधान किया गया है । इसके बाद शकर, धी और मधु तीनों समभाग मिलाकर सुँहमें भरकरले और थोड़ा २ गलेमें उतरने दे जिसमें कि सुँहमें १-२ घंटा गोली पड़ीरहे इसतरहका यत्न-करे । इसप्रयोगसे सफेदकेस फित्से काले होजायगे ॥ ५७७ ॥

५७८ मासिकयोगः

एवञ्च मासिकं धातुं तापीजममृतोपमम् ।

मधुरं काञ्चनाभासमम्लं वा रजतप्रभम् ॥ २६०८ ॥

पिबन् हन्ति जराकुष्ठमेहपाण्डुनामयक्षयान् ।

तद्भावितः कपोताञ्च कुलरथाञ्च विघर्जयेत् ॥ २६०९ ॥

मु. सं., वै. क., यो. र., वै. वि., प्रमेहाऽधिकारे ।

टि०—वैचक्यद्रुमादीं “ मासिकं धातुना लीह मेह हरति सर्वथा ” इति पाठो दृश्यते तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति यो. र., वै. वि., यतयोः “ शुद्धीसत्त्वसंयुक्तं पित्तमेह व्योषेहति ” इत्यधिक पाठः ।

भाषा—तापीतदोद्भव सुवर्णमासिक मधुरहोता है और कञ्च-नकेससा कान्तिहोती है तथा रजतमासिक अम्लहोता है । इन-दोनोंकी मसमें समभाग मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे १ माशेतककी मात्रा दूधकेसायलेनेसे बुढ़ापा, कुष्ठ, प्रमेह, पाण्डु और क्षय इनसबको यह नष्टकरता है । इसका सेवन करनेवाला कपूतर और कुलधीका परित्याग करे ॥ ५७८ ॥

५७९ मासिकवटकः

मासिकं तालकमितं तद्वर्द्धं गन्धकं रसम् ।

तथाऽत्रञ्च समादाय मुक्तास्वर्णानि च पादिकी २६१०

काकमात्रीपत्ररसेस्त्रिधा सम्भाव्य यत्नतः ।

रक्तिद्वयमिता कार्या मासिकादिवटीशुभा ॥ २६११ ॥

वेष्टिता पद्मपत्रेण धान्यराशौ निधापिता ।

यथायोग्याऽनुपानेन सेविता संहरेन्नृणाम् ॥

नेत्ररोगाञ्च निखिलान्नानोपद्रवसंयुतान् ॥ २६१२ ॥

आ. वि., नेत्ररोगाऽधिकारे ।

भाषा—सुवर्णमासिक और हरितालमस १-१ तोला, शुद्धपारा, गन्धक और अत्रकमस ६-६ माशे, मोती तथा सुवर्णमस ३-३ माशे लेकर पारंगन्धककी नीलवर्णकञ्चलीमें मिलाकर मकोयकेपत्तीकेरसे तीनदिनमर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलीयां बनाकर छायामें अर्द्धशुष्कर कमले ताँजेपतेमें लपेट-कर सूतसे बांधर धान्यकीराशिमें ७ दिनतक रखकरनिकालले और अच्छीतरह शुष्माकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रि-तापुपानकेसाय सेवनकरनेसे नानातरहकेउपद्रवोंकेसाय नेत्रोंके समस्तरोगोंको यह दूरकरती है ॥ ५७९ ॥

५८० मासिकदिचूर्णम्

मासिकं पारदं गन्धं खर्परं गिरिमृत्तिकांम् ।

शिलाजत्वम्रलोहानि शाल्मल्याः कुसुमं त्वचम् २६१३

विदारिं गौक्षुरं बीजं चैकत्र परिमर्दयेत् ।

मायमात्रं प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनियुत्तये ॥ २६१४ ॥

शै. र., शुक्रमेहे ।

भाषा—मासिकमस, शुद्धपारा, गन्धक, खपरिया, गैर, शिलाजतु, अत्रक और लोहमस, सेमलेकेकूल तथा छाल, विशा-रीकन्द, गोपल, हीरादक्खन, सब समभागलेकर घारीक चूर्ण-कर पारंगन्धककी नीलवर्णकञ्चलीमें मिलाकर १-२ रोज़ सुषा-मर्दनकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ माशा दूध वगैरहकेसाय देनेसे यह शुक्रमेहको नष्टकरता है ॥ ५८० ॥

५८१ मांसजरणरसः

नागवह्नीदलोद्भूतवारिसाधितपारदः ।

वन्ध्याककांटकीकन्दपुटितो त्रियते क्षणात् ॥ २६१५ ॥

मृतं नागं विपं व्योषं सैन्धवञ्च सुवर्चलम् ।

समांशं भक्षितं चूर्णं मांसाहारचिनाशनम् ॥ २६१६ ॥

अर्जाणशुलभाध्वानच्छर्दिमास्तनाशनम् ।

विस्तृचिकागुल्मकासानुर्द्धवातं तथैव च ॥ २६१७ ॥

र. (मा.), र. चो., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—फेरे नागरबेलेके पानोंकेरसेसे शुद्धपारेको पिष्टी-होनेतक पोटकर गोलीबनाय बाँधलेखसाके बन्दमें रखकर ६-७ कपड़मिठी देकर दोसरे कण्ठोंको आंचदे । स्वाङ्गीतलेहीनेपर निकालकरदेखे यदि मस होनेमें कुछ कसरहीहो तो दुबारा करे । इसतरह कीहुई पारदमस, नागमस, शुद्धबधनाग, त्रिकटु, सैन्धा और सेंचल नमक येसब समभाग लेकर खरकर रखओड़े । इसकेले १-१ रत्ती उज्जितपुत्रप्रक्षेसाण देनेसे अत्य-धिकसायाहुआमांस जल्दी पचजाता है । अजीर्ण, दूध, आम्बान, वमन, घातप्रकोप, हैजा, शुल्म, कास, ऊर्द्धवात इनसबको यह नष्टकरता है ॥ ५८१ ॥

५८२ मिहिरोदयरसः

मासिकं रजतं लोहं सिन्दूरं बह्विवारिणा ।

भावयित्वा विमर्शोऽथ स्रग्ना रक्तिमिता वटीः २६१८

एकेकां खादयेदासां त्रिफलाद्भि्रहर्मुखे ।

मिहिरोदयनामाऽयं स्नायुमूलं रसां हरेत् ॥ २६१९ ॥

आ. वि., श्वापुरोगे ।

भाषा—सुवर्णमासिक, चांदी और लोहमस, रसमिन्दु सब समभागलेकर चित्रकमलेकेबापसे २-२ रोज़ मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलीयां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाकेबापसे प्रातःकालनेनेसे यह नष्टकेको जड़से खोता है ॥

५८३ मिहिरोदयवटी

लोहमस्रं सुवर्णञ्च चिद्रुमं राजपट्टकम् ।

सयं समं प्रदातव्यं सिन्दूरञ्च द्विभागिकम् ॥ २६२० ॥

परण्डमूलजेनेव रसेन परिभाषयेत् ।
 प्याथैस्तथा जटामांस्या घटी रक्तिक्यात्मिका २६२१
 पथ्यापयोऽनुपानेन घटीयं मिहिरोद्या ।
 अर्द्धाविभेदकं हन्ति पीता घातमनन्तरम् ॥ २६२२ ॥
 सूर्यावर्त तथा शङ्खैकजञ्च द्विदोषजम् ।
 त्रिदोषजं शिरोरोगं साध्यासाध्यं न संशयः ॥ २६२३ ॥
 आ. वि. शिरोरोगे ।

भाषा—लोह, अन्नक, सुवर्ण, मृंगा, राजावर्त इनकी भस्म १-१ भाग, रससिन्दूर २ भाग लेकर सबको बारीक पीस एण्डमूल और जटामांसीके ढाथसे १-१ रोज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली हरेके काढ़ेकेसाथ लेनेसे अर्धाविभेद, अनन्तकात, सूर्यावर्त, शङ्ख, एकदोषज, द्विदोषज और त्रिदोषज साध्य अथवा जटाप्य शिरकैरोगोंको यह नष्टकरताहे ॥ ५८३ ॥

५८४ मुक्तागर्मपोट्टलीरसः (प्रथमः)

भौतिकं कनकसूतगन्धकं घृष्टितोऽग्निपयसा विमर्दयेत्
 वासरं पृथुवराट्कांस्ततः पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत् ॥
 मुक्तगर्मवर्षपोट्टलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।
 रक्तिकात्रयमितं रसं पिबेद्ब्रह्मपट्टमरिचैर्घृतप्लुतेः ॥
 सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुरु तत्र संशयम् ।
 रोगजालरहितेऽपि योजयेत्पुष्टिर्दासिधृतिवीर्यवृद्धये ॥
 र. शं. र दी., क्षये ।

भाषा—मोतीकी भस्म १ भाग, सुवर्णभस्म २ भा, शुद्धपारा ३ भा और गन्धक ४ भाग लेकर चित्रकमूलेके ढाथसे एक-रोज मर्दनकर बडेकौडोंमें भरके शुद्ध, शुद्धागा और चूनेसे सुंढ-बन्दकर हंडीमें रख डकनलगाकर ३-४ कपडिमिठी करदे । सुखनेपर एकमन कण्डोंकी आचडे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा १८ रती काली-मिर्चके चूर्णकेसाथ धीमें मिलाकर खानेसे यह समस्तरोगोंको निवृत्तकरताहे । इसको रोगरहितमनुष्य खाय तो प्राण्डि, आमिरीसि, धैर्य और वीर्यकी वृद्धि होतीहे ॥ ५८४ ॥

५८५ मुक्तागर्मपोट्टलीरसः (द्वितीयः)

मृतं स्वर्णं मुक्ता विपचपलमंशं समपलि,
 द्विघटं सम्मर्द्य ज्वलनपयसा गोलकमिदम् ।
 समृद्धैर्लेपैर्यं मुनिमित्तमथो रोपय पुटे,
 सुपाण्डस्यं भाण्डे विपच दिनमेकं हिममिदम् ॥
 तथा शुद्धे पाण्डौ ज्वररुजि समेहे गदपतौ,
 विशुके मुक्तापोट्टलिरथ मरीचाज्यविहिता ॥
 र. शं. क्षये ।

भाषा—सुवर्ण और मोतीभस्म, शुद्ध बल्लाग और पारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कबलीमें सबचीजें मिलाकर चित्रकमूलेके ढाथसे दोरोग मर्दन कर गोलावनाय २-३ तह मलमलके कपड़ेमें लपेटकर ७ कपड-

मिठी देकर सुखावे । फिर शरावसमुद्रमें बन्दकर लवण अथवा भस्म अथवा वाष्पकायत्रमें रख एकदिनकी मध्यम अग्नि देवे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे २-२ रती मरिच और धीकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, प्रमेह, राजरोग, शुष्क-क्षय, हस्तबन्धो यह नष्टकरताहे ॥ ५८५ ॥

५८६ मुक्तादिचूर्णम्

मुक्ताप्रवालवैदूर्यशतस्फटिकमजजम् ।
 ससागन्धनाचाऽकं सूस्मैला लवणद्वयम् ॥ २६२८ ॥
 ताभ्राऽपोरजसी रूप्यं ससौगन्धिं करोहकम् ।
 जातीफलं शणाद्वीजमपामार्गस्य तण्डुलाः ॥ २६२९ ॥
 पर्णं पाणितलं चूर्णं तुल्यानां क्षौद्रसर्पिषा ।
 हिष्कां श्वासञ्च कासञ्च लीढमागु नियच्छति ॥ २६३० ॥
 अज्जात्तिभिर् काचं नीलिकं पुष्पकं तमः ।
 पेल्यं कञ्जमिन्धन्दं मन्दञ्च तदप्रणाशयेत् ॥ २६३१ ॥
 च घ., अ घं., द्विकाभासकासेपे ।

टि०—“शुद्ध समुद्रकेनश्च मण्डूकीश्च समुद्रजम् । स्फटिकं कुरु-विन्दञ्च प्रवालमन्लकन्त्या ॥ वैदूर्यशतकं मुक्ताप्रवालप्रपानि च । समभागानि सम्पिष्यं सार्द्धं सोनोऽग्नेन तु ॥ चूर्णाऽग्नेन कारवित्वा भाजेने भेषज्जने । सस्याप्यौभयत कालमभवेत्तत उप ॥ अर्माणि पिष्ट्वा हत्वात् सिराजालानि तेन वै ॥ घु स, उ अ १५१५-२८, ३ इति सुश्रुतीयप्रयोगे प्राय प्रपानानि द्रव्याणि समागतानि परन्तु स अन्नतया नित्यस, अग्निवेशेन तु दिवस्तपु भ्याव्य कृत्वा तद्वर्णने प्रयुक्तमिति सुधीभिर्विनाशनीयम् । सुश्रुतीयप्रयोगोऽपि मङ्गले प्रयुक्तभेष-कारकोत्तरुणान्यतिशयिष्यत इत्यरमकमभिप्राय । एवं—“मष्टौ भागा नञ्जन्त्य नीलोत्पलमसुने । औदुम्बरं शालकुम्भं राजतञ्च समासत ॥ एकदशैनाम्मांशान् चोन्वेकुञ्चने भिषक । मृषाक्षितं तदाभ्यातमावृत जावेदरसि ॥ सद्रिराऽस्मन्तवाङ्गिर् गोशङ्खिरिप्यापि वा । गर्वां चङ्कुरसे मूत्रे दग्निं सर्पिणि माक्षिके ॥ तैलमद्यसामञ्जसर्वगन्धेदकेषु च । द्राशरसेऽशुक्लिकारसेषु सुदिनेषु च ॥ सारिवाहिकयावे च चयावे न्योत्प-लाक्षिके । निषेच्यैत्पथकं चैन ध्यात ध्यात पुन पुन ॥ ततोऽन्तरीये ससाङ्गोत्पलं स्थित जले । विशेष्यं चूर्णयेत्मुक्तां स्फटिकं चिदुन तथा ॥ कालानुसारं च तथा शुक्तिरावाप्य योषात । प्तचूर्णांश्च श्रेष्ठं निहितं भाजने शुभे ॥ हस्तरफटिर्वैदूर्यं शङ्खं शैलसंमर्दवै । शालकुम्भेऽथ शार्ङ्गं वा राजते वा सुनरुत्ने ॥ सहस्रपाकपरुषु कृत्वा राज प्रयोजयेत् । तेनाऽभिताक्षो चूर्ति वेत्तुर्वेनप्रमिद ॥ अमध्यं सर्वभूताना दृष्टि-रोगविवर्जितं ॥ घु स उ २८८५, अयमपि योगे मङ्गले चरन्तीक योग्युणानतिशयिष्यते प्रधाततया प्रमेह, मूत्रणी, पाण्डु, धातौ न-क्षयादिकं शीघ्रं शमयिष्यति इति तत्त्वम् ।

भाषा—मोती, मृंगा, लसनिया, शङ्ख, स्फटिक, शैताघ्न, सुवर्ण इनकी भस्में, शुद्ध गन्धक, श्वेतकाचभस्म, सूर्यकान्तभस्म अथवा आककी जङ्गी छाल, छोटीश्लायची, संधा और साभर-नमक, ताक्ष, लोह और चादीभस्म, सहस्रदलकमल (श्रीकमल नामक भूदान की तर्क होताहे), कसेरु, जायफल, शणकेबीज, अपामार्गिके पावल वैसव समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रखडोहे । इसमेंसे ३ माशेसे ६ माशेतक प्रकृति, वैश और कालादिकको विचारकर मधु और धीकेसाथ देनेसे हिचकी, श्वास, कास, इनसबको यह नष्टकरताहे । अन्ननकरनेसे तिमिर, भ्रौतिया,

नीलिफा, पुष्प और तम, रील, चुजली, आंघोंका दुपना, मन्ददधि इनसबरो नष्टकरताहै । यहपर यह विशेषकर ध्यानमें रखना उचितहै कि जब इसयोगसे अन्ननेनिमित्त बनानाहो तब धातुओंकीभस्म न लेकर शुद्धरके बहुत थारीकरेता करके भंगरा-वीरहकेससे यहातक घोट कि धातुओंकेरुण नाबूद होजाय ॥

५८७ मुक्तापञ्चामृतसः

मुक्ताप्रवालखुरवङ्गककम्बुशुक्ति-
मूर्ति वसुदधिदिगिन्दुसुधांशुभागाम् ।
इक्षो रसेन सुरभेः पयसा विदारी-
कन्यावरीसुरसहस्रपदीरसेश्च ॥ २६३२ ॥
सम्मर्द्यं यामयुगलञ्च घनोपलामि-
र्दद्यात्पुटानि मृदुलानि च पञ्चपञ्च ।
पञ्चामृतं रसविभुं मिपजा प्रयोज्यं
शुद्धाचतुष्टयमितं चपलारजश्च ॥ २६३३ ॥
पात्रे निधाय चिरसूतपयस्विनीनां
दुग्धेन च प्रपिबतः खलु चाल्पमोक्षुः ।
जीर्णज्वरः क्षयमियाद्यं सर्वरोगाः
स्वीयानुपानकलिताश्च शर्मं प्रयान्ति २६३४

यो. र, नि. र, र. त, ज्वराधिपारो ।

भाषा—मोती ८ भाग, मूगेरीपिठी ४ भाग, हिरण-
सुरीरगाफी भस्म २ भा, शङ्ख और मोतीसीपभस्म १-१ भा,
लेकर बारीकपीसकर ईशकास, गायकादूध, विदारीकन्द,
घोंकुआर, शतावर, तुलसी, हंसराज, इनसबकेरसोंसे २-२ पहर
मर्दनकर गोलाबनाय गुदाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर दो सेर
जङ्गलीकण्डोंकी आचदे । स्वाद्गशीतलहोनेपर निकालकर फिर
इसीतरह आचदे । ऐसे प्रत्येक औषधिकी ५-५ पुट्टे देकर
पञ्चामृतकी पाचआंचे देवे । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा पीपलके-
चूर्णकेसाथ मधुमें मिलाकर खावे ऊपरसे बहुतदिनकी व्यायीहुई-
गायका दूधलेकर थोड़ाभोजनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षयप्रभृति सम-
स्तरोग अपने २ अनुपानोंकेसाथ लेनेसे शान्त होतै ॥५८७॥

५८८ मुक्ताभस्मयोगः

कटुकामैरिकाम्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च ।
वीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिप्तम् ॥ २६३५ ॥
यो र, र सु, र च, रसायनसं, र क ल हिक्यायाम् ।

टि०—हिकाश्वासनिवर्धनमिति पूर्वस्मादधिक्रियते ।

भाषा—उट्टकी, सोनागेरु और मोतीभस्म समभाग लेकर
मिलाकर रखडोहै । इसमेंसे ३-३ माशेकीमात्रा विजोरेकेरससे
लेनेसे हिवकी और श्वास नष्टहोते हैं । इसीतरह ताम्र और
सुवर्णमाक्षिभस्म समभागमिलाकर २ रत्तीकी मात्रा विजोरेके-
रसकेसाथलेनेसे श्वास और हिवकी नष्टहोते हैं ॥ ५८८ ॥

५८९ मुक्तामृगाङ्गरसः

यक्ष्मं तीक्ष्णञ्च कान्तं रजतरसमर्थं भस्म यद्वाहि तुल्यं,
मुक्ता सर्वैः समाना द्विगुणमथ रसाद्गन्धकं टङ्गणञ्च ।

पादांशं सर्वमेतत्तुपभयमृदितं पूर्ववद्यन्त्रपक्वं
स्थाङ्गं शीतं मृगाङ्गं मृगमदतुलितं यक्ष्मरोगे प्रशस्तम् ॥
र ५, राजयक्ष्माधिकारो ।

भाषा—सुबर्ण, फोलाद, कान्तलोह, चांदी और पारा
इनकीभस्में १-१ भाग, वज्र और नागभस्म ढाई २॥ भाग,
मोतीकीभस्म १० भा, शुद्धगन्धक २ भा., मुनामुहाण ५॥
भा, लेकर सबका बारीकचूर्णकर तुपान्त्रमें ४ पहर मर्दनकर
गोलाबनाय गैन्फलके पत्तोंसे लपेटकर ३-४ वपइमिटी रसा-
कर सुखाले । सूखनेपर नई हंडीमें पिसेहुए समुद्रके नमकमें
गोलेको दबाकर ४ पहरकी मृदुआंच देकर पकावे । स्वाद्ग-
शीतलहोनेपर निकालकर घतुरा, भाग, सससस, तिल और
घोंकुआर इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ४-४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय
सैवानमक बारीकपीसकर गोलेपर सुरकाः फिरे धतूरेप्रभृतिके
रसमें उड़के आटेको सानकर गोलेपर चटाय लवणयन्त्रमें रस
३ पहर मन्दअगिसे पकावे । स्वाद्गशीतल होनेपर निकालकर
रखडोहै । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा बराबरकीकस्तूरीकेसाथ
मिलाकर देनेसे उध्वनौंसदितराजयक्ष्मका यह नष्टरताहै ५८९

५९० मुखरोगहरीवटी (प्रथमा)

रसगन्धौ समौ ताम्ब्यां द्विगुणञ्च शिलाजतु ।
गोमूत्रेण विमर्द्यांश्च सप्तधाऽऽद्रवणेन च ॥ २६३७ ॥
जातीनिम्बमहाराप्तीरसैः सिद्धयति पाकहा ।
कणामधुयुता हन्ति मुखरोगं सुदारुणम् ॥ २६३८ ॥
शुद्धाऽऽहकमिता तालुगलौष्ठदन्तरोगानुव ।
महाराप्युष्यध्वगन्धाम्ब्यां मुखञ्च प्रतिसारयेत् ॥२६३९॥
धारणात्सेवनाद्यैव हन्ति सर्वान्मुखामयान् ।
सर्वास्यामयजित्सेव्यो मधुना पर्पटीरसः ॥ २६४० ॥
र सं, र. सु, र चि, रसायन सं, र. कौ, भै र, र का, र
सि, र. क मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धशिलाजीत
४ भा., लेकर पारेगन्धककी नीलरूपकमालीकर शिलाजीतमें
मिलाकर गोमूत्र, अदरक, चमेली और नीमकीछाल तथा महा-
राप्ती (मराठी) इनके रसोंकी ७-७ भावनाए देकर ८-८
रत्तीकीमोलिये बनाकर छायाशुष्ककर रखडोहै । इसमेंसे १-१
गोली पीपल और मधुकेसाथ खानेसे यह मुखके समस्तरोगोंकी
दूरकरतीहै । मुखमेंरखनेसे गले, ओष्ठ और दातोंके रोगोंकी
नष्टकरतीहै । मराठी और असगन्धके चूर्णसे दन्तमज्जन करवा-
चाहिये । इसगोलीको खानेमें तथा दातोंमें घिसनेकेकाममें
लानाचाहिये । इसीतरह मधुकेसाथ पर्पटीरसके लनेसे भी
समस्त मुखरोग नष्टहोतै ॥ ५९० ॥

५९१ मुखरोगहरीवटी (द्वितीया)

अन्नककम्बुकम्बजयुतं
त्रिफलात्रिपलाशाफलैस्त्रिदिनम् ।
पमटङ्गणकेन विमर्दय तं
वटिकां कुरु तांतु सुवेष्टय सृष्टा ॥२६४१॥

गुडगुग्गुलुगोमयटुङ्गकैः
 कमतश्च सुवेष्ट्य विशोष्य ताम् ।
 धमयेत् दृढानलयन्त्रये
 ध्रुवबन्धनमेति सन्निह्युतः ॥ २६४२ ॥
 सितकावसुटुङ्गकाज्ययुतं
 निपुणं धमयेच्च मलं सकलम् ।
 विजहाति स तेन समं कनकं
 वरतारसुगुल्बदलं यदि वा ॥ २६४३ ॥
 रसराजसमं कुरु तत्प्रितयं
 धमयेत् रसेन तु लेपय तम् ।
 सुदिने गुरुसंयुतमान्यनरा-
 जुपचारगणैरुपपूज्य ततः ॥ २६४४ ॥
 वदने गुटिका प्रणयेत् धृता
 दशने दृढदा मुखरोगहरा ।
 अनिलादिगदानपहन्ति सदा
 किल माससुधारणयाऽथ भवेत् ॥
 वरचुद्धिकरा बलदा प्रगला
 पलितादिहरा च समायुगले ॥ २६४५ ॥

र दी. मुखरोगे ।

भाषा—अत्रफस्त्व अथवा धान्याम्रक, शङ्ख, शुद्धपारा, समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेमें मिलाकर एकदिन सुखा-मर्दनकर त्रिफला, चित्रक, पलाशकेवीज इनके काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर सबकी बराबर शुद्धाग्रा मिलाकर तीनोंके इकट्ठेवायेसे एकदिन मर्दनकर गोली बनाय पुराने बर्रके कतरन और मिट्टीको कूटकर एकजीव होनेपर एकलेपदेकर सुखावे । फिर गुड, गुग्गुलु, गोबर और शुद्धाग्रा इनका १-१ लेपदेकर सुखाकर कुटालीमें रख द्वाप्रिसे धमनकरनेसे खोट (किष्टवदसपार्थ) वैचार होगा । इससमस्तको इकाडकर सकेदकाच, शुद्धाग्रा और धी मिलाकर कुटालीमें रखकर धमनकरनेसे मल अलग होकर रस घृष्यक होजायगा । फिर सुवर्ण, चांदी और तांबा इनका बारीकरोता अथवा बर्क रसकीबराबर मिलाय गलाकर पत्र बनावे और पूर्वसके ऊपर सपेटकर गोलीकेवदस बनाले । शुभमुहूर्तमें गुरु और पूज्यलोगोंकी पूजाकर इसगोलीको सुद्धमें रखनेसे दन्तरोग, मुखरोग, चात, पित्त तथा कफरोग एक्यही-नेमें दूरहोतेहै । बुद्धिकी मन्त्रता, धातुओंकी कमजोरी, बली और पलित दोषवर्षमें नष्टहोतेहै ॥ ५९१ ॥

५९२ मुखरोगहरीवटी (तृतीया, चतुर्था)

कनकाक सुतारयुतं भयजं

यदि वा कुरु तं वदने निहितम् ।

यदि वाऽकैजचक्रनिबद्धरसं

घनकान्तयुतं वदने सुखदम् ॥ २६४६ ॥

र दी. मुखरोगे ।

भाषा—शुद्ध सोना, तांबा, चांदी और अमिस्थायी पारा इनसबको गलाकर गोलीबनाय मुखमें रखनेसे मुख और दातोंके

रोग दूरहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । अथवा अनलरस (स. १२५) में कहेहुए प्रकारसे पारको बांध अम्रफस्त्व और कान्तसत्यको मिलाकर नियामनगणसे २-३ दिन घोटकर कुटालीमें रखकर गलावे और गोलीके आकारमें बनाकर रखले । इसगोलीको मुहनेरखनेसे तमाम मुखरोग नष्टहोतेहै ॥ ५९२ ॥

५९३ मुद्रायोत्क रसः

पारदो गन्धकश्चैव त्रिद्वारं लवणत्रयम् ।

गुग्गुलुर्वत्सनाभश्च प्रत्येकन्तु द्विमापकम् ॥ २६४७ ॥

कृष्णोन्मत्तजटातीरं भांवेत्यस्तवारकम् ।

गोधुनेन्द्रकमारीपकरञ्जचित्रतेजिकाः ॥ २६४८ ॥

भृङ्गुरयकलताभिश्च त्रिफलावृहतीरसे ।

मर्दिता घटिका कार्या कृष्णलाफलसञ्जिमा ॥ २६४९ ॥

ततो वटीद्वयं दत्त्वा यत्नात्पाठादिभिर्युतः ।

रसः सर्वज्वरं हन्ति क्षणमात्रान्न संशयः ॥ २६५० ॥

शै र, र सु, ज्वराऽधिकारे ।

टी०—अत्र रसे भृङ्गुरयकलताभिश्चित पाठे केनचिद् भूमिशिष्येति व्याख्यात तत्र सन्त्यक् भूमिशिष्येऽप्रसिद्धत्वात् । तस्माद्भरिति पृथक्वत् तत्र पृथ्वीकाशब्देन सुधुवादी व्यबहृत, लोके तस्य बालीगीतीति नाम । यद्यपि बल्लणादिभिः तत्स्थाने बद्धप्रकार स्वाऽऽज्ञानमुद्राभावि परन्तु तत्र वैमाचारीत्य नाऽभिहित प्रकरणानुरोधाद्भूभरपतिविवरणे पठदित्तरणे विवेकवित्याग । अमरप्रमृतिभिः वैभरपतिविज्ञान रसात्कल्पनाभ्यस्तत्तदर्थोचने पृथ्वीराश्वो बृहदेत्किंवाया सङ्केतित, तदनुमारेण चेदत्र भृङ्गुरयस्य व्याख्या क्रियेत तर्हि बृहदेत्किंवा प्रदीतव्या । कुम्भकेन सहचरी प्राची रक्तवर्णाभ्यन्तरः, ल्याकरभ्येन मजिष्ठा प्राक्षा प्रकरणानुरोधात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, तीनोंशार (सजी शुद्धाग्रा और यवक्षार) तीनोंनमक (सेंधा, साभर और सचल), गुग्गुलु, शुद्धबछनाग ये प्रत्येक २-२ माशे लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर कालेघट्टेकी नष्टके रससे सातवार भावनाएं देकर गोखल, कुरैया, मरसा, बरज, चित्रक, तेजवल अथवा तुडुल, बालीजीरी, पियावासा, मजीठ, निफा, बनभाटा, इनप्रत्येकके बयासम्मव स्वस अथवा काथोंसे १-१ रोज मर्दनकर गुष्ठाप्रमाण गोलियाबनाकर छायाशुष्ककर रखलोवे । इसमेंसे २-२ गोली पाठा, खस, सुभन्धवात्यकेबाध अथवा हिनकेसाथ देनेसे सबप्रकारकेज्वर क्षणमात्रमें नष्टहोताहै ॥ ५९३ ॥

५९४ मुशलीपाकः

मुशलीकन्दचूर्णन्तु क्षीरेऽष्टगुणिते पचेत् ।

प्रस्थमात्रं प्रदातव्यं चूर्णमेपां पृथक् पलम् ॥ २६५१ ॥

व्योषं निजातं ह्युपा शताह्वा शतमूलिका ।

अजाजी दीप्यकश्चैव चिनको गजपिपली ॥ २६५२ ॥

ययानी ग्रन्थिकं धात्री शटी गोक्षुरघान्यकम् ।

अश्वगन्धाऽभयामेधाः सिन्धुदायो लवङ्गकम् ॥ २६५३ ॥

जातीफलं जातिपत्री नागकेसरकं धुर ।

बला चातिबला नागबला मकैटवीजकम् ॥ २६५४ ॥

यष्टी शाल्मलिनियांसः श्रृङ्गाटाऽऽजुजयीजकम् ।
 त्वकृशीरिका घालकश्च कङ्कोलाऽऽफलकं हिमम् २६५५
 लुञ्चितानां तिलानान्तु प्रस्थाऽर्द्धमिह योजयेत् ।
 भस्मसूतपलाऽर्द्धन्तु पलमन्नकलोहयो ॥ २६५६ ॥
 सर्वद्विगुणखण्डस्य पाकं कृत्वाऽत्र योजयेत् ।
 भेषज्यानां गणं सर्वं घटीः कुर्याद्विचक्षणः ॥ २६५७ ॥
 अर्धमुष्टिमितास्तास्तु शुभेऽहनि विचक्षण ।
 इष्टदेवं समभ्यन्यै खादेदेकामहर्मुखे ॥ २६५८ ॥
 ततः किञ्चित्पयः पेयं खादेद्वटकमुत्तमम् ।
 मन्दाग्निगुल्ममेहार्शः श्वासकासव्रणक्षयात् ॥ २६५९ ॥
 फामलां पाण्डुरोगश्च शुक्रक्षैण्यश्च दृक्क्षयम् ।
 घातरोगं पित्तरोगं कफरोगं तथैव च ॥ २६६० ॥
 पाण्डवश्च प्रदरं स्त्रीणां शुक्रदोषपुर क्षतम् ।
 रजोदोषं भ्रूणदृच्छं भ्रूणाघातं तथाऽऽमरीम् ॥ २६६१ ॥
 मलदोषं तथाऽऽनाहं कार्श्यं प्रावलय्यमुल्यणम् ।
 घातरक्तञ्च हन्येप मुशलीकन्दलेहक ॥ २६६२ ॥
 अश्लेष्कान्तिकृत्तेजोवृद्धिदृक्कामवृद्धिरुत् ।
 अभिव्यां निर्मितो योगो घलीपलितनाशन ॥ २६६३ ॥
 क्षीणशुक्रान्नपाण्डुना नारीश्च क्षीणवीर्यजा ।
 तालमूल्यचलेहोऽयं निर्मितो धरणीतले ॥
 नास्त्यनेन समो योगो विशेषाच्छुक्रवृद्धये ॥ २६६४ ॥
 रसायन स, वृ यो त, रसायने ।

भाषा—एरुसर मुशलीकाचूर्णं लेकर ८ सेर इयमे मन्द
 आचसे पकावे । मावाहोजानेपर त्रिकटु, तत्र, पत्रज, इलायची,
 हाउबेर, साँफ, शतावर, जीरा, अन्नमोद, चिचक, गजवीपल,
 अजवाइन, गडिवन, आवला, नरकचूर, गोखरू, धनिया, असगन्ध,
 हूँ, नागरभोधा, ससुद्रतोष, लौंग, जायफल, जाविनी, नाग-
 केसर, तालमखाना, बडा गगेरु, कंधी, नागबला, केवाच,
 मुलहठी, मोचरस, सिंघाडे, कमलाग्रा, तीवुर, सुगन्धवाला,
 शीतलचीनी, अकलफरा, सफेदबन्दन, येसव १-१ पल, छिल
 वेरहित तिल आधसेर, पारदभस्म आधापल, अन्नक और लोह-
 भस्म १-१ पल लेकर सस्ते दूनी शकरी चानकीकर मावेको
 छालकर कुण्डपानीकाअंठाहोतो मुखादना । फिर सबचीजे मिलाकर
 २-२ तोलेके मोदकबनालेना । इतमेंसे १-१ मोदक शुभमहूर्तमें
 इष्टदेवकापूजनकर प्रात कालखाकर थोडा गरमदूध पीवे । इसके
 सेवनसे मन्दाग्नि, गुल्म, प्रमेह, अर्श, श्वास, कास, मण, क्षय,
 कामला, पाण्डु, शुक्रवी क्षीणता, दृष्टिकोमजोरी, वात, पित्त
 तथा कफरोग, नुसुक्त्त, प्रदर, शुक्रदोष, उर क्षत, रजोदोष,
 भ्रूणदृच्छ, भ्रूणाघात, पयरी, मलदोष, आनाह, कृपाता, बडा-
 हुआवातरक इनसबको यह नष्टकरताहै । हमेशा सेवनकरनेसे
 तमामरोगोंसे निरुक्तहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ५९४ ॥

५९५ मुस्तादिमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णितं कृत्वा मुस्ता घट्टमूलकम् ।
 कणा शुण्ठी यक्ष्मरं पञ्चानां समचूर्णकम् ॥ २६६५ ॥

चूर्णतुल्यञ्च मण्डूरं गोमूत्राऽऽणुणं भवेत् ।
 तत्तुल्यञ्च गवां क्षीरे पचन्मृद्वग्निना शनैः ॥ २६६६ ॥
 पिण्डितं कोलमात्रन्तु भक्षयेच्छूलनुद्भवेत् ।
 प्रातर्मध्याह्नरात्रौ भक्षयेद्वटिकात्रयम् ॥
 मांसं पिष्टञ्च गुर्वर्धं मापादींश्च विवर्जयेत् ॥ २६६७ ॥
 व रा, श्ले ।

भाषा—१०० वर्षपुरानेमण्डूकीमन्म और नागरभोधा,
 शरवेरीकीचड़कीछाल, पीपल, साँड, यवपार ससमभागका
 चूर्ण मण्डूकीबराबर लेकर अठगुना गोमूत्र और दूध डालकर
 लोहेकी कड़ाहीमें मन्दाग्निसे पकावे । गुड़कीतरह चायानीहोनेपर
 उठाकर बिकनेवर्तनेमें रखडोड़े । इसमेंसे सुबह, मध्याह्न और
 रात्रिमें आधेआधे तोलेकी दो अथवा तीन गोल्या खावे ।
 मांस, पिष्टमयपदार्थ, उड़द और भारीबीजे न खाये । इसके
 सेवनसे समस्तशूल, पाण्डु और कामला प्रशस्ति रोगनष्टहोतेहैं ५९५

५९६ मूत्रकृच्छररसः

विदारी गोक्षुरं यष्टी केशरश्च समं पचेत् ।
 तत्कपायं पिथेत्सौद्रं रसभस्मयुतं पुनः ॥
 मूत्रकृच्छ्रं हरेत्सर्वं सप्ताहात्पित्तसम्भवम् ॥ २६६८ ॥
 भै र, घ, मूत्रकृच्छ्रे ।

भाषा—विदारी, गोखरू, मुलहठी, नागकेसर, सब सम
 भाग लेकर दो तोलेका चौगुने पाणीमें काड़ाबनावे । चतुर्थांश
 बरोप रहनेपर छानकर मधुका प्रथेपदेकर एकरती पारदभस्म
 मधुमें चाटकर काडा पीवे तो सातदिनकेसेवनसे पित्तोत्त
 मूत्रकृच्छ्र नष्टहोवे ॥ ५९६ ॥

५९७ मूत्रकृशान्तकरसः (प्रथमः)

शतावरीरसैः पिष्ट्वा मृतं सूतञ्च तालकम् ।
 शिखितुल्यञ्च तुल्यार्शं दिनेकं मर्दयेद् दहम् ॥ २६६९ ॥
 तद्वेले सार्ये तेले शान्यं यमपञ्च चूर्णयेत् ।
 मूत्रकृशान्तकश्चाऽस्य क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ २६७० ॥
 भक्षणान्नाऽत्र सन्देहो मूत्रकृच्छ्रं निहत्यलम् ।
 तुलसीं तिलपिण्याकं धिल्वमूलं तुपायुना ॥
 कर्पकं वाऽनुपानेन सुरया वा सुवर्चले ॥ २६७१ ॥
 र स, घ, र, र, यो म, र सु, र चि, र क, र चं, र र
 को, चि क, र र स, र का, व रा, र क ल, र को, भ्रू
 ण्छ्रे । र क शिखितुल्यस्थाने गन्धक नियोजितम् । कुत्र
 चित्तालस्थाने ताम्र नियोजितम् । र का. मूत्रकृच्छ्रादिः ।
 यो म मृतसूत ।

भाषा—पारद, हरिताल और तुल्यमन्म समभाग लेकर
 शतावरीके अश्लेष्वरसे एकरो न मर्दनकर गोलाबनाय सरसोंके
 तैलमें एकपहर मध्याग्निसे पाचनकरे । स्वाहारीतलहोनेपर
 निकालकर रखडोड़े । इतमेंसे ४-४ रती मधुकेसाय देकर
 तुलसी, तिलकीछली, बेलकीचड़कीछाल सब समभाग लेकर १
 तोला तुपायु अथवा मय अथवा सखलकेजलकेसाय लेनेसे
 मूत्रकृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

५९८ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (द्वितीयः)

रसगन्धययक्षारं सितातक्रयुतं पिबेत् ।
 मूत्रकृच्छ्रण्यशेषाणि निहन्ति नियतं नृणाम् ॥२६७२॥
 र. सं., र. का., र. चं., र. र. दी., रसायन सं., मूत्रच्छ्रे । र.
 का., र. र. दी., गन्धो न इत्येते नाम च मृतमस्मप्रयोगः ।
 भाषा—शुद्धांशु और गन्धकडी नीलकण्ठकडी, यषधार
 और शरर सब समभाग मिलाकर रखाओइं । इनमेंसे ३-३ मासे
 छाछकेसाय लेनेसे सयप्रकारके मूत्रच्छ्र नष्टहोतेहैं ॥ ५९८ ॥

५९९ मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (तृतीयः)

पारदाभ्रकयेजान्तह्रमरुन्तानि गन्धकम् ।
 मौक्तिकं विद्रुमञ्चैष प्रत्येकं स्यात्समं समम् ॥२६७३॥
 जम्भारसेन सम्मर्द्य मूषायां सन्निरोधयेत् ।
 पञ्चैशिरापुरं दत्त्वा ततः सूतं विभूषयेत् ॥ २६७४ ॥
 मापमात्रं रसं दद्याधन्यनीतसितायुतम् ।
 मूत्रकृच्छ्राश्मरुतिमिह्यातपित्तकफाम्पयान् ॥
 क्षयानलिलरोगांश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ २६७५ ॥
 वै. वि., मूत्रच्छ्रे ।

धे. ०—यद्यप्यत्र पुत्रक्षिप्पनाम न निर्दिष्टम् तथाऽपि गजपुत्र उत्रेय ।
 पारदकषयी च बाष्पार दत्त्वा जम्भारसामप्यं पुटन्तर देयमित्ति
 निर्दिष्टावल्नीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अम्रक, वैकान्त, गुग्गुं,
 कान्तलोह, मोती, प्रवाल इनहीभस्में सब समभाग लेकर पारे
 गन्धकडी नीलकण्ठकडीमें सबको मिलाय जंभीरीकेरससे ४
 पहर मर्दनकर गोलाबनाय लगवमपुत्रमें बन्दकर ३-४ कण्ड-
 मिरी देकर गजपुत्री भाषेदे । स्वात्तपीठलोनेपर निकालकर
 पूर्वहीसाथपर पाँचगन्धकडी कडी मिलाय जंभीरीकेरसमें
 गोलाबनाय गजपुत्री भाषेदे । एते २५ भासे देनेकेसाथ
 मिलाकर एररोज मर्दनकर शीशीमें रगणोइं । इनमेंसे १-१
 मासा मस्तन और शररकेसाय देनेसे मूत्रच्छ्र, पथरी, प्रमेह,
 वात पित्त और कफके तनामविचार तथा क्षयादि समग्ररोग
 इष्ये नष्टहोतेहैं ॥ ५९९ ॥

६०० मूत्रकृच्छ्रान्तकरसः (चतुर्थः)

स्थाल्यसंममलाऽऽसुर्यं पिपाय तनुयामगमा ।
 यद्वा मूत्रेण तद्वक्यं र्थियासश्च प्रसारयेत् ॥ २६७६ ॥
 फोन्मन्त्राग्निना तापघायतृत्वा जले पठेत् ।
 र्थियासः स्याद्भ्रातृतेऽत्र शिंश्यापानीयमाहेन २६७७
 तल्लक्ष्यं घनमस्पर्शतीं प्लाऽष्टमं मकत्प्यजम् ।
 पक्ष्मणे गन्धकः जीर्णं सिन्दूरं रसमुत्तमम् ॥ २६७८ ॥
 शादेन्मायशर्षां मायां मूत्रच्छ्रान्तराश्रमात् ।
 र्थियासः केपलीं वैषं सारदाः सितया युतः ॥२६७९॥
 रसायनसार., मूत्रच्छ्रे ।

भाषा—नर्दीहीमें भाषेदेकडीभरके सिन्दूर कडीकडीकर
 ककर मुक्तीके कणकर कौंधरे । अत्र सारविगेजा वैक्यकर

चीनीकेव्यालेमें ढकड़े । उग्रहीहीके प्लेहर पर मन्द क्षमि
 जलावे, बीचबीचमें देवता रहे जब विरोजा गलहर हमाम पानीमें
 पड़नाय सब नीचे उतारकर रखावे । स्वाहदीकण्डोनेपर पानीको
 फेंकदे और विरोजेको बिनी शीशीमेंभरके रखावे । इनमें
 अठमांशु मकरध्वज अथवा पशुगणपटकारित रसयिन्दूर मिला-
 कर १-२ पहर घोटकर २-२ मासेकी मोलियां बनाकर रखा-
 ओइं । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः और सायंकाल देनेसे सब
 तरहके मूत्रच्छ्र दूरहोतेहैं । केवल दृग्द्विष्यादुभाविविरोजाभी
 शररकेसाय देनेसे काम करताहै ॥

विशेष सूचना—यद्यपि इष्ये केवल पानीमें इगघा
 पातनलिलाहुआहे पर १ सेर गेंदुमें १६ सेर पानी डालकर
 कोरे मिठीके बर्नपर कपहायापर २० तोले विरोजारसमें
 और धीरे २ गेंदुओंको पछावे केवळ बाण विरोजेमें छगे,
 उकान आकर पानीका सन्धक न हो । गेंदु पकनेक ऊपरछा
 विरोजा पिलकर नीचे बर्नके घेंदुमें जा संगेगा । पानी टमा
 होनेपर धीरेसे गेंदुओंको निकालकर पशुओंको खानेको देदेना
 और पानीको फेंककर विरोजेको निकाल लेना इतही विगेजेका
 साथ रहतेहैं । जहाँ दरामे इगका उपयोग हो वहाँ इगहीको
 काममें लेना ॥ ६०० ॥

६०१ मूत्रदोषाहुशरसः

अम्रकं पारदं स्वर्णं लोहं यङ्गं शिलाजतु ।
 समभागानि धेतानि यमुनीरे यिमर्दयेत् ॥ २६८० ॥
 त्रिदिनें मुदासीतोपेतिकण्टकत्तरनेन च ।
 मूत्रदोषाऽऽद्रुद्राम्याऽऽस्य घल्लयुग्मं प्रदापयेत् ॥२६८१॥
 पातकुण्डलिका नाम मूत्रमद्गाधमरीगदान् ।
 यानोत्पयान जपेदोषान् पक्षिसर्दीपानः परः ॥२६८२॥
 र. म मा., मूत्राणै ।

भाषा—अम्रक, पारा, गुग्गुं, लोह और बह इनहीभस्में,
 शिलाजीव देगब समभाग लेकर इटगिट, मुग्गी और गोगकं
 दयागम्भ मवाय अथवा कापोंमें ३-३ रोज मर्दनकर १-१
 रानीकी मोलियां बनाकर रगणोइं । इनमेंसे १-१ गोली उषि-
 तागुगानकेसाय देनेसे वातउग्रजलिका, मूत्रमद, पथरी और
 वात्पथनलेप नष्टहोतेहैं तथा अष्टासि प्रदंसदोषाहैं ६०१

६०२ मूच्छीसूदनरसः

मूर्त्तं मूर्त्तं मूर्त्तं ताव्यं तुन्यमार्गं प्ररसयेत् ।
 अन्य मूत्रादयं रसादेयमुना मरिचैः सह ॥ २९८३ ॥
 पिबेत्तदनुभक्तप्रदाः प्यारगं कांशमिमितम् ।
 जीर्णित्यरकत्तर्यगीं बाणध्यागयिनाः ॥ २९८४ ॥
 अग्निमान्द्ययिग्यध्यां राजपायमयिमर्दनः ।
 धानुपुष्टिकरक्षयं बलदः कान्तिशरकः ॥
 मध्यायिवाश्च प्रयोक्तव्यो हृद्ययपकारकः ॥ २९८५ ॥
 वै ६., मूच्छीसूदनम् ।

भापा—पारा और सुवर्णमाक्षिकभस्म समभापलेकर १-२ पहर मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा मधु और ७-१४ अथवा २१ कालीमिर्चकेचूर्णकेसाथ लेकर ऊपरसे शङ्खाह्वलीका १ तोलास पीनेसे जीर्णश्वर, कफ, कास, श्वास, अभिमान्य, मलस्राविवन्ध, राजयक्ष्म, धातुक्षीणता, बल तथा कान्तिका हास और सूच्छा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६०२ ॥

६०३ मृगजरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं सूतं तीक्ष्णं तुल्यं वासाद्रघै दिनम् ।
मर्दितं भापमात्रन्तु भक्षयेन्मृगजं रसम् ॥
सर्पाक्षीमधुना लेह्यमनुस्यद्रकपित्तके ॥ २६८६ ॥
र र. रसायन स, यो म., रक्षपित्त ।

भापा—शरा और लोहभस्म समभाग लेकर अह्नयेके पतलेरससे एकरोज मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर अन्याह्वलीका १ तोला रस ३ माशे मधु मिलाकर ऊपरपीनेसे रक्षपित्त नष्टहोताहै ६०३

६०४ मृगजरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं टङ्गुणञ्च मन.शिला ।
एलात्यज्जोलजाजी च समभागञ्च खल्वके ॥ २६८७ ॥
शतावरीकपायेण दिवसं मर्दयेद् दृढम् ।
शर्करामधुसंयुक्तं सूर्यावर्तं निहन्ति च ॥ २६८८ ॥
व. रा, वै चि., शिरोरोगे ।

भापा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और मैनसिल, श्लायवी, तज, बेल्कीमन्जा, सफेदजीरा, येसव समभाग लेकर वारीक-चूर्णकर पारगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर शतावरीके स्वरससे एकदिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और मधुकेसाथ मिलाकर देनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ६०४ ॥

६०५ मृगामालारसः

मार्कण्डेयी त्रपुसं शीर्षं सुदग्धं मृगशृङ्गकम् ।
कार्पासवीजमज्जाञ्च तुल्यमङ्गुलीवीजकम् ॥ २६८९ ॥
पेषयेन्महिर्नीतकं दिनैकं वटकीकृतम् ।
भापह्वयं सदा रसादेन्मृगमाला प्रमेहजित् ॥ २६९० ॥
अक्षपाठाऽभयादायकपायमनुपाययेत् ।
मासमात्रप्रयोगेण प्रमेहगणनादानम् ॥ २६९१ ॥

र. र., र को, व रा, यो म, रसायनस, र सु, प्रमेह अधिकारः । र सु. नागमस्माद्वियोगः ।

३१०—अथापिऽशानान्मावर्णकालीत्याने मारितमितिपाठो निवोचित ।
मार्कण्डेयस्येन भृश्याह्वली प्राज्ञा ।

भापा—आवळ (सु) का पत्राङ्ग, वज्र, नाग और मृग-शृङ्ग इनकी भस्में, कपासकेबीजोंकीमज्जा सब समभाग, सरकी चरावर अङ्गुलीकीमज्जा लेकर भेतकेमड़ेसे एकरोज मर्दनकर २-२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर काससे बहहा, पाठ, हर् और दाहह्वरी का हाथ पीनेमें एकमहीनेमें सबप्रकारके प्रमेह नष्टहोताहै ॥ ६०५ ॥

६०६ मृगाङ्गुपोट्टीरसः

शूर्जयत्तनुपजाणिं हेन्नः सूक्ष्माणि कारयेत् ।
तुल्यानि तानि सूतेन खरत्रे क्षिप्या विमर्दयेत् ॥ २६९२ ॥
काञ्चनाररसेनैव ज्वालामुल्या रसेन वा ।
लाङ्गुल्या वा रसेस्तावथावद्भवति पिष्टिका ॥ २६९३ ॥
ततो हेन्नश्चतुर्थांशं टङ्गुणं तत्र निक्षिपेत् ।
पिष्टमौक्तिकचूर्णञ्च हेमद्विगुणमावपेत् ॥ २६९४ ॥
तेषु सर्वसमं गन्धं क्षिप्या चैकत्र मर्दयेत् ।
तेषां कृत्वा ततो गोळं वासोभिः परिवेष्टयेत् ॥ २६९५ ॥
पथ्यान्मृदा वेष्टयित्वा शोषयित्वा च धारयेत् ।
शरावसम्पुटस्यान्ते तत्र मुद्रां प्रदापयेत् ॥ २६९६ ॥
लवणापुरिते भाण्डे धारयेत्तञ्च सम्पुटम् ।
मुद्रां दत्त्वा शोषयित्वा चतुर्भिर्गोमयैः पुटेत् ॥ २६९७ ॥
ततः शीते समाहृत्य गन्धं सूतसमं क्षिपेत् ।
घृष्टा च पूर्ववत्खल्वे पुटेद्भजपुटेन च ॥ २६९८ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा मुञ्जायुग्मं प्रकल्पयेत् ।
अष्टमि मर्तिसै र्युक्तः कृष्णानययुतोऽथ वा ॥ २६९९ ॥
विलोक्य देया दोगादीनैकेना रसरक्तिका ।
सर्पिणा मधुना वाऽपि दद्यादोपाघपेक्षया ॥ २७०० ॥
लोकनाथसमं पथ्यं कुर्यात्स्वस्थमनाः शुचिः ।
श्लेष्माणं प्रहर्णां कासं श्वासं क्षयमतीचरुम् ॥ २७०१ ॥
अग्निमान्द्यं धातुशोषं प्रजलात् कफजान्मादान ।
मृगाङ्गुोऽयं रसो हन्यात्कृशत्वं घलहीनताम् ॥ २७०२ ॥

शा. सं, नि र, रसायन स, रसं स, भै सा, ना वि, र प्र, र (मा), चि र भ, वै द, र प्र सु, टो, यो म र क, रात्र यक्ष्मणि । योगमहाणवै ज्वालामुलीत्याने कार्पासत्रपुसमभावना हस्यदे ।

भापा—यवासम्भनसुषुशान्तमस्कारवियाहुआ पारा खरल में डालकर सुर्णनेवर्क १-१ करके डाल्कानाय, एफर्बक मिल जानेपर दूधगाडाले । इमतदह बराबरके चर्णोंको मिलाकर पिष्टी बनाले फिर कचनार, हुरहुर, करिहारी, इनप्रत्येकके अह्नस्वरससे १-१ रोज मर्दनकर सुवर्णसे चतुर्थांश सुहागा और द्विगुण मोतीकीपिष्टी और सबकीचरावर शुद्धगन्धक डालकर १-२ रोज पूर्वोक्तसोंसे मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमलके कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे १-१ अहुल करद्वेकेसाथ दुटीहुईमिठीका लेपदेकर सुखादे । फिर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखकर बपइमिठी देकर अच्छीतरह सुखावर इतने बण्डोंकी आवदे कि गन्धकमात्र जले । स्वाङ्गशीतहोनेपर निम्बालक पोषकी चरावर गन्धक देकर पूर्वोक्तोंमें १-१ रोज मर्दनकर पूर्ववत् लवणयन्त्रमें बन्दकर गपुटकी आवदे । स्वाङ्गशीत होनेपर निम्बालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्तीतककी मात्रा आठ-काठीमिर्च अथवा तीनपीपत्रके चूर्णकेसाथ देवे अथवा धी और मधुकरा देवे । लोकनाथसमं कृशहृके अनुषार पथ्यकरावे ।

इसके सेवनसे कफ, प्रवृणी, कास, श्वास, क्षय, अरुचि, मन्दाग्नि, धातुशोथ, उल्कटकफरोग, वृशता, निर्वैलता, इनको यह नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ मृगाङ्करसः (प्रथम)

स्याद्भसेन समं हेम मोक्षिकं द्विगुणं भवेत् ।
गन्धकञ्च समं तेन रसतुल्यन्तु टङ्गुणम् ॥ २७०३ ॥
तत्सर्वं मृदितं कृत्वा काञ्चिकेन च पेयेत् ।
भाण्डे लवणपूर्णस्थ पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २७०४ ॥
मृगाङ्कसञ्चको द्वेष्यो राजयक्ष्मनिवृन्तन ।
गुञ्जाचतुष्टयं चास्य मरिचै सह भक्षयेत् ॥ २७०५ ॥
पिप्पलीदशकै वांऽपि मधुना सह लेहयेत् ।
पथ्यन्तु लघुमि मांसैः प्रयोगेऽस्मिन् प्रयाजयेत् २७०६ ॥
व्यञ्जनं घृतपकेश्च नातिक्षारैरहिहृभिः ।
पलाजाजीमरीचैस्तु संस्कृतेरविदाहिभिः ॥ २७०७ ॥
घृन्ताकविल्वतैलानि कारवेल्गुञ्ज चर्जयेत् ।
स्त्रियं परिहरेद्दूरं कोपञ्चाऽपि विवर्जयेत् ॥ २७०८ ॥

र स, र म, इ यो त, र सि, र र, नि र, र सु, मै र, चि र भ, यो र, रसायनस, र क ल, र च, र श, र कौ, र र दी, टो, र शि, वै द, र (मा), र वि, र, र कौ, र प्र, र का, यो म, वै चि, र बो, र स, र प, र या राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णभस्म १-१ भाग, मोती और गन्धक २-२ भाग, मुनासुहागा १ भा, लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर काञ्चीकेसाथ १-२ रोज मर्दकर गोलावनाय शरावसम्पुर्ण बन्दकर लवणयत्रमें रखकर चार पहरतक पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा ७, १४ अथवा २१ बालीमिचौक चूर्णकेसाथ अथवा १० पीपल और मधुकेसाथ लेव । लघुमासका भोजनकरे । श्लायची, जीरा, मरिच, इनसेसजुक्त और अविदाही, अत्यन्तहींग और शारोंसे रहित चीमें पनाए हुए ब्यञ्जनका सेवनकरे । वेंगन, बैल, तैल, फेरला, ह्री और क्रोपको बिल्कुल छोड़देवे । ॥ ६०७ ॥

६०८ मृगाङ्करसः (द्वितीय)

सूतं शङ्खं वराटं रविमपि निरितलं तुल्यगन्धञ्च मुक्तां, मुक्तादं लोकरुनाथं विपमपि तुलितं भूपभागेन तस्य ।
अन्यम्भोमि दिनेकं दिनकरपयसा वासरेकं सुघृष्टं, गोले घृन्ता सुवेष्टयं लण्यारसनमृन्नागवल्हीदलाय ॥
पाच्योसौ पिष्टयन्धक्षयगद्हरण स्यान्मृगाङ्गाभिधान तुल्य पथ्यानुपाने प्रथमति च महाव्याधिसंहारपुनर्युत्तर, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, शङ्ख कौडी, ताबा इनहीभस्में सम भाग, इनसेबनी बराबर शुद्धगन्धक और मुक्कापिठी, मोतीसे भाषा लोकरुनाथस, इनसबसे सोदका हिस्सा बध्नाग डालकर

चित्रकक बाय और आककेदूपसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय चातह मलमलके कपड़ेमें पोष्टलीवनाय लवण, चिचडे और मिठीसे १-१ लेप देकर इसगोलेक बराबर नाग र्वेलके पत्तोंमें सफेदकर सूतसे वेष्टितकर उड़द अथवा गँहूने आटेकी बाटीमें बवलितकर चीमें पकावे । बाटा बालाहोनेलेगे तब उतारलेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर इसमेंसे बहुत थोरसे मिठीबगेरहके सम्पुटको हटाकर रसको रखले । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा बराबरके हरेके चूर्णकेसाथ देनेसे क्षयप्रवृत्ति सम्पूर्ण महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०८ ॥

६०९ मृगाङ्करसः (तृतीयः)

हेमी भूति द्विगुणिता सूतभृत्या द्विमौक्तिका ।
चतुर्गन्धा सूतपादटङ्गुणा दृढमर्दिता ॥ २७१० ॥
निग्न्यम्बुना पिष्टयन्ने पक्वो यामचतुष्टयम् ।
सर्वं मृगाङ्कवज्ज्यै मृगाङ्को रोगनाशन ॥ २७११ ॥
र, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, सुवर्णभस्म और मोती २-२ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर पारेसे चतुर्थीस मुहागा डालकर एकरोज नीबूकेरससे मर्दनकर गोलावनाय चातह मलमलके कपड़ेमेंलेपेदकर उडद अथवा गँहूकी बाटीमें बन्दकर ४ पहर चीमें पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती मरिच, पीपल और मधुकेसाथ देनेसे राजयक्ष्मादि महाव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० मृगाङ्करसः (चतुर्थ)

नरसारं सेन्धवञ्च पञ्चविल्वमितं पृथक् ।
निधाय डमस्यग्ने वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ २७१२ ॥
प्रज्वालयेद्दूर्ध्वभाण्डलक्षं सत्त्वं समाहरेत् ।
तत्सत्त्वं चूर्णितं रङ्गं समं गन्धं तयोः समम् ॥ २७१३ ॥
चिचुर्यैकत्र काचोत्थकृपिकाया विनि क्षिपेत् ।
मृष्टितवालुक्यायन्त्रित्ययापौ दिवसद्वयम् ॥ २७१४ ॥
सुल्पाममिमयो द्वत्या यामानं द्वादश वा पचेत् ।
वृषीतलस्यं तद्रसं स्वर्णामं स्वाङ्गशीतलम् ॥ २७१५ ॥
शृङ्गीयान्मारितास्यवर्णाङ्गवेदुणदाताऽधिकम् ।
वृष्यमायु प्रदं सर्वमेहानाञ्च विनाशनम् ॥ २७१६ ॥
काफ्य परममेतद्धि मृगाङ्को गुहर्गोपित ।
प्रमेहापशमे धातुयथैने निधितं हि तत् ॥ २७१७ ॥
र कौ, सि भे म, क्षये ।

भाषा—नोसादर और सैयानमफ ५-५ कल लेकर बारीक पीत दमस्यग्नेमें रख ४ पहरकी अग्नि दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर थोरनेसे हठीकामुद टपाइकर ऊपर उठेहुए नोसादरकेचूर्णको निकालले पीत इतनी बराबर अपामार्गके पचाइप्रवृत्तिमें किया हुआ शींगधारार और दोनोकीबराबर गन्धक डालकर बारीकचूर्ण कर कपड़मिचौकीदुई आतशीदीसीमें रखकर कपड़यत्रमें दोरोज अथवा १२ पहरकी अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर श्मीमेंसे

सुवर्णकेससदा भस्मको निकालकर रखओहे । यह भस्म सुवर्णभस्मसे सौगुनी गुणकारकहोतीहै । इसमेंसे ३-३ रती उचितानुपानके साथदेनेसे यह प्रमेहमात्रसे निश्चितरूपसे नष्टकर पातुओंको बढाताहै; श्वपा, आयु तथा कामक्रीडि करताहै ॥ ६१० ॥

६११ मृगाङ्करसः (पञ्चमः)

श्वेतमल्लस्तु भागैको तत्समं तालकं शिला ।
कांडिका मल्लभागा तु सर्वं पल्लवे चिचूर्णयेत् ॥२७१८॥
पञ्चरत्नस्य विधिना पाचयेन्मन्दबहिना ।
स्वर्णामो ह्यर्द्धं गोप्राहो मृगाङ्को रस उत्तमः ॥२७१९॥
सर्ववातगदं चैव हिकायां कुष्ठरोगिणि ।
घृतशर्करया देयो दुग्धाद्यं पथ्यमुत्तमम् ॥
तक्रान्नं वा शीतवारि उष्णद्रव्यं विचर्जयेत् ॥ २७२० ॥
र. चं., वातरोग ।

भाषा—शुद्धकपेदसोमल, हरिताल, मैनसिल, फिटकरी, इन समभाग लेकर वारीक चूर्णकर मल्लपञ्चरत्नसमे कहेहुए प्रकारसे बहुतमन्द आचमे ४ पहर पकावे । स्वाद्गदीतलहोनेपर ऊपरसे पात्रमें सुवर्णकेससे फूल मिलेंगे इन्हें निकालकर रखओहे । इसमेंसे आधी अथवा १ रती घी और शपकैसाप देकर दूधभात अथवा छाछभात खानेकोदे । छटापानी पीवे, गरमचीजोंसे परहेज रखे । इनके वेगनेसे सयप्रकारके वातरोग, हृदिदी, बुद्ध, कास, श्वास प्रवृत्ति तमामरोग नष्टहोतेहैं ॥ ६११ ॥

६१२ मृगाङ्करसः (षष्ठः)

नागमस्य रसभस्मना समं
माक्षिकञ्च कुरु तत्समानरुम् ।
मौक्तिकं निरिखिलतत्समांशकं
पांशुनी च समभागिकाखिलैः ॥ २६२१ ॥
गन्धकं समलयं निखिलोदारीः
मृततुर्यलज्जामागट्ठुणम् ।
मर्दितं तुपजलेन दिनान्तं
घरतकैः सलवणैः समृत्तिकैः ॥ २७२२ ॥
पतुलञ्च विदर्धात गोलकं
यष्टेष्य परिशोष्य चाऽऽतपे ।
पाचितो भवति क्षेप मृगाङ्कः
कामंडे लयणयन्त्रके तथा ॥ २७२३ ॥
पूर्यन्त्यस्यपिनादादेतुकः
सर्वरोगमिनिवारणसूत्रमः ।
दीपनोऽथ घल्लुष्टिघ्नतः
मूत्रिकागर्जिनामाकारणम् ॥ २७२४ ॥
पथ्यानुपानप्रभृति सर्वं पूर्यमृगाङ्कयत् ।
नियोज्यं प्रयत्नेन भिषजा विजिमिच्छता ॥२७२५॥
र, रात्रदन्धनि ।

भाषा—नाग और पाण्ड १-१ भाग, सुवर्णमाक्षिक २ भाग, मौक्तिक ४ भाग, गोलक ६ भाग, शुद्धगन्धक १६

भाग, मुहागा १ भागलेकर तुषाम्बले एकरोज मर्दनकर गोला बनाया चारतद्वपडेमें बांधकर नमक और मिठीसे अल्पा २ धमरसे कपड़ेको भिगोकर कपड़मिठी लगाय मुत्ताकर मूषर अथवा लयणयन्त्रके ४ पहरकी अग्निमें पकावे । स्वाद्गदीतलहोनेपर निकालकर रखओहे । इसमेंसे ३-३ रती उचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, बलरहित्य, कृशता, मृत्तिकारोगप्रवृत्ति समस्त रोगोंको यह नष्टकरताहै । पथ्य और अनुपानप्रवृत्ति महाशुद्धकीतरह देवे । अवान्तरूपद्रवोंको घटुतेमंभालकर निश्चितहोए ॥ ६१२ ॥

६१३ मृगाङ्करसः (सप्तमः)

सुवर्णताम्रयोर्मस्य कर्पं कर्पं पृथक्पृथक् ।
गन्धञ्च द्विगुणं दत्त्वा कुमारीस्वरस्मेन वै ॥ २७२६ ॥
विमर्द्य मृगाङ्कान्ते कृत्वा रन्दं ततो मुत्तम् ।
ट्ठुण्णेनाकेतुमधेन मर्दयेत्त्वा पुष्टेत्युनः ॥ २७२७ ॥
पुष्टेन कुञ्जराच्येन स्वाद्गदीतञ्च भक्षयेत् ।
हरितकीमधुयुतं मापमात्रं प्रयत्नतः ॥ २७२८ ॥
सगुडं घृतसम्मिथ्रं भक्षयेद्वा हरितकीम् ।
विद्वान्योश्चाऽनुलोम्प्याथ वेदनायाश्च क्षान्तयो ॥२७२९॥
पक्तिशूलप्रदानो दाहं मन्दानलञ्चयेत् ।
पार्श्वशूलं तथाऽऽभ्यानं प्रस्वेदञ्च जयेद्ध्ययम् ॥२७३०॥
ना. वि., र. म. मा., घृले ।

टि०—“प्रायेणमृगाङ्कान्तेनाशुभिन नवम् ।”

भाषा—सुवर्ण और ताम्रमस्य १-१ कर्प, शुद्धगन्धक २ कर्प लेकर नीलवर्णम्बलोत्तर पीडुआरकेससे १-२ रोजनर्दनकर मृगाङ्कके आठअहुलज्जामागने भरके श्दकनीतर निकली हुई हरीकीटाटसे बन्दकर मुहागेने आचनेरूपमें मर्दनकर कपड़ेपर इसकोलेप चढ़ाकर कपड़ेको समस्तनींगर लेनेकर ६-७ कपड़मिठी देकर सुब सुबाले और गजपुटकी अग्निदेकर स्वाद्गदीतलहोनेपर कपड़मिठीको हटाकर गोंगवाहिन बीदर रखओहे । इसमेंसे १-१ मात्ता हरे और मधुकृषाप अथवा शुद्ध, घृत और हरेकषाप लेनेसे मलमूत्रविषय, शरीरबीषम, पक्षिशूल, दाह, मन्दाग्नि, पार्श्वशूल, आभ्यान, अतिस्वेद कष ४ नष्टहोतेहैं ॥ ६१३ ॥

६१४ मृगाङ्करसः (अष्टमः)

रसयलितपनीयं पांशुपेचुल्यभागं,
तदनु युगलभागं मौक्तिकानां शुभानाम् ।
ययजचरणभागां मर्दयेत्सयमेत-
दिनमपि तुपयारा गोलकैः लघ्यमत्रे ॥२७३१॥
निषाय मुद्रां विदर्धात भाण्डे
सुहृत्वां समुद्रे लयणेन पूर्णं ।
दिने पण्यधारल्लृगाङ्कानाम्
क्षयाऽग्निमान्ये प्रहर्षायिचारे ॥ २७३२ ॥
योऽप्यः सदा पण्डितमर्षिणा या
एष्णामधुष्यां रात्रने त्रिमुत्र-

यस्य सदा पित्तकर हि वस्तु
लोकेशवत्पथ्यविधि निरुक्त ॥ २७३३ ॥
वै वि क्षये ।

भाषा—शुद्धपारा गन्धक और सुवर्णमसम सब समभाग मोती २ भाग चबूखार १ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कजली कर तुपायसे एकरोज मदनकर गोलाबनाय चारतहकपडेमें लपेटकर २-३ कपड़मिठी लगाकर सुखादे । इसगोलेको दो शरावोंमें बन्दकर लवणयत्रमें रख मन्द मध्य और खरामिसे दिनभर पकावे । स्वाद्दशीतलहोनेपर निकालकर बारीक पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा २१ या २९ काली मिर्च और धीकसाथ अथवा ३ या ७ पीपल और मधुकैसाथ देनेसे क्षय म दाग्नि सङ्ग्रहणी प्रवृत्ति रोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पित्तकारकवस्तुओंका परहेचकरे ॥ ६१४ ॥

६१५ शृगाङ्कुरसः (नवरत्न राजशृगाङ्कुर रत्नगर्भशृगाङ्कुर)

माणिक्य वज्रमेक गरुडयमिभब नीलक पुष्परंग गोमेद विद्रुम द्विविदुरमणिमयो मसम शङ्खस्य शुके ।
ताप्य नागश्च वङ्ग दरुदशिलखिल ऋङ्गुण राजयर्त,
गन्ध त्रिहैमतार रविघ्ननममल तालक हृच्छिला च ॥
बैकान्त का तलोह रसकयुगलक वेदभागा सुमुकाम्
सूत सर्वाऽष्टभाश त्रिदिनमधिरत मर्दनीय सुयन्तात् ।
त्रिमोष्य कन्यकाद्रि विपद्दहनवलायारिणा सप्तवारं,
गाल मूलकपैर्न वांलवणधिरचित्ते पाचयित्वा दिनेकम्
सम्मर्द्य स्वाद्दशीत शृगमदसलिलै पिप्पलीशौद्रयुक्त
हृन्त्याञ्जसश्च कास क्षयतमकगदाप्रत्नगर्भा शृगाङ्कुर ॥
र प क्षये ।

भाषा—माणिक्य हीरा पन्ना नीलम, पुखराज गाभेद प्रवाल लतनिया शङ्ख सीप सोनामाखी नाग वज्र शिग रिफ सुतिया महागा काजवद इनप्रत्येककीभस्में १-१ भाग शुद्धगन्धक ३ भाग सुवर्ण रत्न ताप्य अभ्रक हरिताल मैन्सिल वैकान्त कान्तलोह, खपरिया दानेफिरङ्ग इनसषकीभस्में १-१ भाग मोती ४ भाग पारदभस्म सबसे अष्टभाशलेकर इकठ मिलाय तीनरोज निरन्तर पुञ्जमर्दनकर चौकुआर थल नाग चित्रक बला इनप्रत्येककेरत अथवा काथोंसे ७-७ भाग नाए देकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपडेमें लपेट २-३ कपड़मिठी देवे । सुखनेपर लघुशरावोंमें लवणकैचीच रखर एक रोज भूपर अथवा लवणयन्त्रम पकावे । स्वाद्दशीतलहोनेपर निकालकर कस्तुरीकजलसे मदनकर ३-३ रत्तीकी गोलीयाबना कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकैसाथ लेनेसे क्षय कास क्षय तमकसाथ इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१५ ॥

६१६ शृगाङ्कुरसः (नागदि) (दशम)

कनकपत्रसम शुचि पारद
विमलखल्यतले पिशितैः शने ।

दृढतरं सततं दिवसत्रय
शुभमुहूर्तदिने परिमर्दयेत् ॥ २७३६ ॥
पारदाहिगुणमात्तिक रजो
मौक्तिकाहिगुणगन्धकोऽमल ।

पारदाऽर्धशुचिद्रुणस्तताऽ-
प्येयमेव विधिना प्रकल्पयेत् ॥ २७३७ ॥
काञ्चनारसकेन चूर्णक मर्दयेत्परिविधाय गोलकम् ॥
सङ्घिपेत्तदनु गर्भशुभके वह्निरप्यथ दिनं समुज्ज्वल ॥
इति च शिशुशृगाङ्कुर सम्भवेद्राजयोग्यो
मधुसहितकणामि वां मरीचाज्यकेन ।
सकलरुजि गृहीत शीघ्रमारोग्यदायी,
हिमकरसमकान्ति यस्तनौ सन्तनाति २७३९
र मु क्षये ।

भाषा—सोनेककक, शुद्धपारा समभागलेकर शुभमुहूर्त देखकर बकर वगैरहके माससे तीनरोज मर्दनकर पारसे दून मोतीमिथी और मिथीसे दूनाथचक तथा पारसे आधाशुहागा देकर कचनारकेरससे ३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुर्ण में बन्दकर भूपरयत्रम रखकर एकदिनकी अग्नि देवे । स्वाद्द शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा मधु और पीपल अथवा मिर्च और धीकसाथ लेनेसे यह समस्त रोगोंको नष्टकर चन्द्रमाकसदा शरावकीकान्तिको बनाताहै ६१६

६१७ शृगाङ्कुरसः (वालादि) (एकादश)

रसभस्म पल सुशुद्धमेव
पलक वै शुचिहाटकस्य भस्म ।
शुचिगन्धपलद्वयं सुशुद्ध
पलकाङ्गु शुचिमालतीभवश्च ॥ २७४० ॥

सकलस्य विचूर्णक विधेय
युग्मभागविमलायिदालमुत्ता ।
सह चामलकीफलोद्भवे वा
यवजै धान्यरसे विमर्दयेद्वा ॥ २७४१ ॥
परिमर्द्य दिनानि सप्त खल्वे
शुभगोल परिसविधाय तस्य ।
हृदस्पयुगं विधाय पश्चा
त्तनुमध्ये परिमाचनीय एव ॥ २७४२ ॥
अपि सूषयुग निरुध्य पश्चा
त्परिशुद्धेच्छुभयालुकाहयत्रे ।
अपि यत्रवर विमुच्य चूल्या
दिनमेक ज्वरने शनेविधेय ॥ २७४३ ॥
सकले कथिते प्रकारवर्षे
रचनेशस्य भये सुभद्रं च ।

ननु वालशृगाङ्कुर सुरभ्य
क्षयहारी मुखदायका गदारि ॥ २७४४ ॥
हैम पात्र रौच्यक वा विदाल
मन्द मन्द माचनीया शृगाङ्कुर ।

चूर्णं कृत्वा खल्वमये सुरभ्ये

कष्टे रोगे सेवनीयो हि राक्षा ॥ २७४५ ॥

र. सु, क्षये ।

भाषा—गारा और सुवर्णभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, मुनासुहागा १ तोला, लुपामारी, हीराबोल और मोती २-२ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पकेआबलोद्वैस्वरस अथवा धान्यकेस्वरससे सातरोज मर्दनकर गोलाबनाय चारतह मलमल के कपड़ेमें पोटली बनाय शरावसम्पुटमें रख ६-६ कपड़मिट्टी देकर सुखाकर बालुकायत्रमें रखकर एक अहोरात्रकी आज देवे स्वाद्गन्धीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण अथवा चादीकी डिब्बीमें रखलेवे । इसमेंसे एकसे तीनरती तक तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षयप्रवृत्ति असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१७ ॥

६१८ मृगाङ्गरसः (बालादिः) (द्वादशः)

सौभाग्यसिद्धिरथ मौक्तिकहेमगन्ध,

कल्कः समूनयनभूयुगतुल्यभागः ।

धान्याम्लपीडितवपुःपरिशोषितस्य,

भाण्डे ततः परिभृतः पुटितो दिनान्तः २७४६

क्षयं विषं हेमरजं भ्रमाद्यं गुल्मं ज्वरं सङ्घृणीञ्च कुष्ठम्

श्यासञ्च कासञ्च गुदामयं वै निहन्ति वै बालमुगाङ्गुपपः

र. सु, क्षये ।

भाषा—सुहागा १ भाग, पीलीसरसों २ भाग, मोती १ भाग, सुवर्ण भस्म ४ भाग, गन्धक ८ भाग लेकर सबको पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर धान्याम्लसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतहकपड़ेमें पोटली बनाय शरावसम्पुटमें रख ३-४ कपड़मिट्टी देवे । सुखनेपर भस्म, लवण अथवा बालुकायत्रमें रखकर ४ पहरकी अग्निदे । स्वाद्गन्धी-तलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीतककीमात्रा योग्यतादेखकर तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, स्वावर तथा जलमविष, कामला, भ्रम, गुल्म, ज्वर, सङ्घृणी, कुष्ठ, श्वास, कास, गुदरोग, इत्यादिकोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ मृगाङ्गरसः (बालादिः) (त्रयोदशः)

विषभागो भवेदेको द्विभागं गैरिकं मतम् ।

भूमुक्तानां त्रयो भागा सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ २७४८

बल्लोमधुक्रुपायुक्तं पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।

वातरोगेषु सर्वेषु कासेषु प्रहणीषु च ॥ २७४९ ॥

अनुपानविशेषेण करोति विविधानं गुणान् ।

रसो बालमुगाङ्गोऽयं जीर्णज्वरहरः परः ॥ २७५० ॥

रसायनस, वातरोगे ।

भाषा—शुद्धबल्लोम १ भाग, शुद्धगोनागेरु २ भाग, श्रेष्ठ मोती ३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और पीपलकेनाथ देनेसे समस्त वातरोग, खाँसी, प्रहृणी, जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधभात देना ॥ ६१९ ॥

६२० मृगाङ्गरसः (बालादिः) (चतुर्दशः)

पूर्ववत्पातितं सतं दशवाराञ्च शुल्वतः ।

अन्नपिण्डौ ततः कृत्वा दशवाराञ्च पातयेत् ॥ २७५१ ॥

अधःपातं ततः कुर्यात् त्रिफलाशिष्टुवह्निभिः ।

पञ्चभिर्लवणैः क्षारै राजिकाव्योपमानुभिः ॥ २७५२ ॥

घञ्जीदुग्धं घैतसनाभे नष्टपिष्टं रसं चरेत् ।

अम्लवर्गेण सम्मर्द्यं विलिम्पेत्पात्रमूर्द्धगम् ॥ २७५३ ॥

तेन कल्केन संरच्य सम्पुटं दीप्तवह्निना ।

उपरिष्ठात्प्रदत्तेन ज्वलन्निष्छान्णकैः पुटेत् ॥ २७५४ ॥

अधः पतति सूतेन्द्रस्त्यक्त्वा दोषानशेषतः ।

जम्बीरं धीजपूरञ्च नारङ्गं चाम्लवेतसम् ॥ २७५५ ॥

चाङ्गेरीमलिकाञ्चैव बदरं चणकाम्लकम् ।

शिग्रुञ्च यज्ञकन्दञ्च सूरणं मीनलोचनम् ॥ २७५६ ॥

वह्निं घनरवां वर्षाभुवं वसुभटं तथा ।

हलिनीं विषनाल्यो च यवचिञ्चीं कटुत्रयम् ॥ २७५७ ॥

पट्टनि पञ्च क्षाराञ्च नवसारञ्च रामठम् ।

चर्मारं नाम क्षारं स्यादुपक्षारं समाहरेत् ॥ २७५८ ॥

एतत्सर्वतु सञ्चर्ष्यं सन्ध्यात्ताम्रभाण्डके ।

दिनानि सप्त संख्याप्य ततस्त्वेनं प्रमर्दयेत् ॥ २७५९ ॥

दिनानि सप्त संज्ञाल्य तप्तकाञ्चिक्रयोगतः ।

तप्तखल्वे रसं दत्त्वा भूलताभिः प्रमर्दयेत् ॥ २७६० ॥

गृहकन्यारसै सुकं दिनत्रयमनारतम् ।

जायते पारदः सोऽयं जारणे चरणे क्षमः ॥ २७६१ ॥

चतुःपट्टयंशभागेन हेमबीजञ्च चारयेत् ।

द्वात्रिंशद्भागतः पश्चाद्द्विंशतिं पोडशं तथा ॥ २७६२ ॥

ज्वारयित्वा जारयित्वा यन्ने भूधरके क्षिपेत् ।

गन्धकं जारयेत्पश्चात् स्तोकं स्तोकं यथाक्रमम् २७६३

। आदौ तु राजिकामानं पश्चात्सर्पपमात्रया ।

यवमानं द्वियवकं त्रियवञ्च चतुर्वयम् ॥ २७६४ ॥

पञ्च पट्टं सप्त नव च दशैकादशसङ्ख्यया ।

क्रमवृद्धया च गद्याणमानं भवति यावता ॥ २७६५ ॥

पश्चाद्दद्याणकं जार्यं रसेन्द्रे च पुटे पुटे ।

एवञ्च पट्टाणं यावद्गन्धकं जारयेद्दुधः ॥ २७६६ ॥

अधिकञ्ज्वारयेद्यं गुणाच्चैराऽधिको भवेत् ।

पट्टेषु गन्धके जीर्णं रसो भवति रोगहा ॥ २७६७ ॥

एवं संसृत्सूतेन्द्रे पुनः खल्वे निवेशयेत् ।

कृष्णचक्षुस्काञ्चैस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ २७६८ ॥

यन्ने सौमानले क्षिप्त्वा ज्वालयेद्यं दिनत्रयम् ।

मर्दनञ्च पुनस्तद्वत्पुनर्यन्ने विपाचयेत् ॥ २७६९ ॥

एवं रसेश्वरं कुर्यात्संस्कारेण समन्वितम् ।

तापत्कार्यां क्रिया चैत्रं यावद्भस्मोभवेत्ततः ॥ २७७० ॥

रसभस्म पलेकं स्याद्द्वैमभस्म पलं तथा ।

शुद्धस्य दानवैन्द्रस्य पलद्वयमुदाहृतम् ॥ २७७१ ॥

मौक्तिकं द्विपलं दद्यात्पादांशो मालतीभवः ।
 तत्सर्वं मर्दयेत्खल्वे चाम्बलेतसयोगतः ॥ २७७२ ॥
 तदभावे तु यवजकाञ्जिकेन प्रमर्दयेत् ।
 दिनानि सप्त सम्मर्दं तत्कल्कं गोलकं चरेत् ॥२७७३॥
 छायायां शोषयेत्तत्र मृपायां गोस्तनाकृतौ ।
 निक्षिप्य चाऽन्ययेन्मृपां तां मृपां सागराह्वये २७७४
 यन्त्रे विनिक्षिपेद्दीमांश्चुल्लीमारोपयेत्तु तत् ।
 चतुःप्रहरमात्रं तं रसेन्द्रं स्वेदयेद्बुधः ॥ २७७५ ॥
 स्याद्गुणोत्तममुद्धृत्य रसेन्द्रं यत्नतः क्षिपेत् ।
 विचूर्ण्य स्वर्णजे पात्रे शीतवातविषजितम् ॥२७७६॥
 स्वर्णाऽभावे रौप्यपात्रे नाऽन्यस्मिन् स्थापयेद्रसम् ।
 अयं बालमृगाङ्गाख्यो रोगराजस्य घातकः ॥२७७७॥
 च्यवनाद्यनुभूतोऽयं कथ्यते शास्त्रवर्त्मना ।
 मैरव्यं योगिनीचक्रं सम्पूज्य मुरघातिनम् ॥ २७७८ ॥
 अग्निं विप्रंस्तोषयित्वा कृतपापविनिष्कृतिम् ।
 यथाशास्त्रोक्तमार्गेण शुद्धात्मानं द्विजोक्तितः ॥२७७९॥
 रसेशं सप्रपूज्याऽथ नमस्कार्यं रसं गुरुम् ।
 वृद्धान्देवान् द्विजान् पश्चात्कृतमाङ्गलिकं भिषक् २७८०
 रसेन्द्रं सेवयेन्नित्यं चतुर्गुणप्रमाणतः ।
 आज्येन मरिचैः सार्धं सेवयेच्च रसेश्वरम् ॥ २७८१ ॥
 दशभिः पिप्पलीभिर्वा मधुना सह सेवयेत् ।
 घृतपकानि शाकानि रामटे र्धोजितानि च ॥ २७८२ ॥
 सैन्धवं मणिमन्थञ्च लवणार्थं नियोजयेत् ।
 पलामजाजौ मरिचं संस्कारे धान्यकं भवेत् ॥२७८३॥
 अविदाहीनि शाकानि तथा संस्कृत्य योजयेत् ।
 वृन्ताकभेदं सर्वन्तु यर्जयेत्कारवेह्लकम् ॥ २७८४ ॥
 श्रीफलं चिर्मटीजातिं सर्वांमत्र विषर्जयेत् ।
 अङ्गनासङ्गतिर्वर्ज्यां कोषं यत्नाद्विषर्जयेत् ॥ २७८५ ॥
 न स्वप्याद्विषये धीमान् राशौ नैव प्रजागरः ।
 धर्जयेत्तिलसम्भूतं विकारं तैलमेव च ॥ २७८६ ॥
 सर्पपादीनि तैलानि सर्वाणि परिवर्जयेत् ।
 अभ्यङ्गञ्च घृतेनैव शिरःस्नानं समाचरेत् ॥ २७८७ ॥
 नात्युष्णैरग्न्युभिः स्नानं नातिशीतेः समाचरेत् ।
 कायं पिबेत्पिशिरीधिन्यां त्रिकटांभूषणसंयुतम् ॥२७८८॥
 यल्लीतुवरिकामूलं पलमष्टाऽयशोपितम् ।
 पिशुलीमूलमथवा काषयत्यलमात्रकम् ॥ २७८९ ॥
 कासनाशाय योक्तव्यो व्योपयुक्तो निद्रागमे ।
 भक्षयेत्काकिनीमूलं रामडेन समायुतम् ॥ २७९० ॥
 सर्वयान्तिप्रशान्त्यर्थं भक्षयेद्येषु सर्वदा ।
 ह्मायतकीपत्रचूर्णं गुटिकां मधुना कृताम् ॥ २७९१ ॥
 मुरे सन्धारयेच्छब्दयत्कासकन्दचिनाशिनीम् ।
 कोविदारव्यचं दध्ना जीरकेण च भोजयेत् ॥२७९२॥
 सर्वाऽक्षिप्रदान्त्यर्थं भृष्टजीरकमेव धा ।
 कोविलाक्षस्य धीजानि जीरकेण गुडेन च ॥२७९३॥

ईपत्कर्पूरसंयुक्तं रसतापे प्रयोजयेत् ।
 जातीफलं वक्त्रशुद्धौ योजयेत्सततं बुधः ॥ २७९४ ॥
 वक्त्रशोषो यदा तु स्यात्पाटलाभिघनादयोः ।
 मत्स्याध्या मूलमथवा धारयेद्बुधेन बुधः ॥ २७९५ ॥
 सद्यः शोषो निवर्तते प्रत्येकं मिलितैरथ ।
 रक्तं चमेघदा रोगी कुयोत्तत्र चिकित्सितम् ॥२७९६॥
 लवङ्गमथ कङ्गोलं श्रीखण्डं रक्तचन्दनम् ।
 उशीरं तगरं शुण्ठी पिप्पलीं नागकेदारम् ॥ २७९७ ॥
 पलां कालाऽगुरुं मुस्तां कर्पूरमथ पत्रकम् ।
 जातीफलं तवशीरं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २७९८ ॥
 अष्टौ भागास्तथा प्राह्यास्तयराजस्य धीमता ।
 विचूर्ण्य सर्वमेकत्र योजयेद्भक्तवान्तिहृतम् ॥ २७९९ ॥
 हृत्पापश्च निवर्तते चूर्णेनाऽनेन निश्चितम् ।
 पवं प्रयोगान् कुर्वीत क्षयरोगस्य शान्तये ॥ २८०० ॥
 भिषग्दक्षः सदा भूयाच्चिकित्सासु सुजायुतः ।
 ये ये विकारा जायन्ते तांस्तान् यत्नाधियतयेत् ॥२८०१॥
 चिप्प्रघृद्धरोगश्च शक्तिशून्यश्च भोजने ।
 भ्रमगात्रमुपेक्षेत रहस्यं भिषजामिदम् ॥ २८०२ ॥
 कथञ्चिद्बलसम्पत्तौ कृत्या यान्तिविरेचने ।
 रसेश्वरं प्रयुञ्जीत नान्यथा सम्प्रयोजयेत् ॥ २८०३ ॥
 सामुद्रकं सुसञ्चर्ण्य भानुदुग्धेन भावयेत् ।
 पाययद्बल्यदुग्धेन कण्ठस्थमलशुद्धये ॥ २८०४ ॥
 यवचिञ्चीञ्च सम्पिप्य खादयेच्छर्करायुताम् ।
 अतितापस्य शोफस्य कर्तव्यं रेचनी तथा ॥
 स्वसंवेद्यप्रकारेण रसेशःसम्प्रकीर्तितः ॥ २८०५ ॥
 र्मालं, धयाऽधिकारो ।

भाषा—पातनान्तसंस्कारक्रियेदुए पारेमें चतुर्धा अथवा समभाग शुद्धतावेना चूरा डालकर जंभीरीप्रवृत्तिकेरससे पिठी-होनेतक मर्दनकर मुखाके दमवार पातनकरे । इसीतरह अन्नक-सर्वकेसाथ दशवार पातनकरे । फिर त्रिकल, सहिजन, चित्र-कमूक, पांचोन्नमक, सब्जी, मुद्गाग, यवशार, राई, त्रिकटु, आठ और सेतुण्डकादृष, बलनाग इनप्रत्येककी १-१ भावना देकर अम्बलवर्मे मर्दनकर पिठीबनाय चक्के के भीतर लेपकर दूसरे पड़े-पर इनको उल्टा रखकर ६-७ बपङ्गमिठी से सन्धिवन्दहर मुसाल और खाली चक्केको राशेमें रख ऊपरके पड़ेपर जलदेदुए कण्ठे इसअन्धानुसे रक्ते कि कन्ठसे पारा अलगहोकर नीचेके वर्तनेमें चलाजाय । स्वाशशीतल होनेपर पारेको निचालकर जंभीरी, बिजोरा, नारसी, अम्बलेन, अम्बोनिया, इमली, जैरी, चनेकासार, सहिजन, जूही और माषारण सूरण, मंछेरी, चिप्रक, बन्दाल, इटमिट, पुनर्वा, कलिसारी, बलनाग, नारी, तिलकी, त्रिकटु, पांचोन्नमक, यवशार, सब्जी, मुद्गाग, घोरा, नवगादर, हीम, सकेद गोमल, वगशार (गुण और हीराक-सोत) देसव समभाग लेकर बातीचूर्णकर दाँडेही गरु अथवा कषादीमें शुद्धताके बराबर नीचे ऊपर रग बीबने पारेको इह-

कर तावैके वर्तनसे ढकदे । सातदिनकेयाद ७ दिनतक तावके लण्डेसे मर्दनकर गरमकाञ्चीसे धोकर पारेको अलगकरले । फिर तप्तखल्वमें रप केंचुप और धीबुआरके द्रवोंसे ३-३ दिन निरन्तरमर्दनकरनेसे पारा धातुओंके खाने और जारणकरनेमें समर्थ होजाताहै । चोंसठ, बत्तीस और षोडशास सुवर्णकाबीज पारेमें क्रमसे प्राप्तदेकर जारणकरे फिर थोड़ा २ गन्धकडालकर भूषरयत्रमें जारणकरे । एकतोलेमें राई, सरसों, एकयव, दोयव, तीन, चार, पाच, छ, सात, नव, दश और ग्यारह यव, इस क्रमसे ६ माने तक प्रमाण बडावे । इसतरह क्रमसेक्रम पड्डुण गन्धक जारणकरे । पड्डुणसे अधिक जारणकरनेसे अधिक गुण होताहै । इसतरह पारेका संस्कारकरकाले धतूरेके रससे तीनरोज मर्दनकर सोमानल (डमरू) यत्रमें तीनदिनकी अग्निदे । स्वाहा शीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन और पातनकरे । जब तक पारदभस्म तल्प्य न होजाय तबतक इसक्रमको बारम्बार करताहै । यह पारदभस्म और सुवर्णभस्म १-१ पल, शुद्ध गन्धक और मोती २-२ पल, सुहागा १ कर्ष लेकर सबको कजलीकर अम्लवेतकेरससे ७ रोजतकमर्दनकर गोला बनाय छायामें सुखावे । अम्लवेतके अभावमें जबकीकाञ्चीमें मर्दनकरे । फिर गोलेको गोस्तानाट्टित्मूपामें रख स्वेदनयत्रमें चूल्हेपर बडा कर ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णके पात्रमें रक्खे, शीत और वायु न लगे । सुवर्णपात्रके अभावमें चादीके पात्रमें रक्खे, इनके अतिरिक्त अन्यपात्रमें न रक्खे । यह रोगराजका नाशकरनेवाला बालमृगाङ्करस तैयार हुआ । इस का व्यवधानदिनोंने अनुभवकियाहै । भैरव, योगिनीचक्र, सुरारि, अग्नि, ब्राह्मण, इनका पूजनकर प्रायश्चित्त करे और शाखोकुमार्गसे आत्माको शुद्धकर रसेध, रस, गुह, इन्द्र देव, द्विज, इनका यथाशक्ति पूजनकर स्वस्तिवाचन और नान्दीथाङ्कका अनुष्ठान करके ४रती काँमात्रा घी और मरिचके साथ अथवा १० पाँपल और मधु केसाथ सेवनकरे । हींगरहित घीमें पकेहुए शाक, सेंधानमक, इलायची, जीरा, मरिच, घनिया येसब मसालेमें डाले । दाह करनेवाले शकोंको न खाय, सबतरहके बेंगन, करेला, नारियल, ककड़ी, ह्रीप्रसन्न, कोप, दिनकीनिद्रा, रात्रिजागरण, तिलपुष्पदार्पण, तैल, सरतों, उबटन, शिरस्नान, अत्यन्तगरम या ठंडे जलसे स्नान, इनसबको छोड़देवे । रात्रिको प्यास लगे तो त्रिकटुका काढा बनाकर थोड़ासा त्रिकटुका चूर्ण मिलाकर पीवे । सुदुर्घणी अथवा त्रिशूली (सभाद्र) कीजइ १-१ पल्का अष्टावशेष काय बनाकर त्रिकटुका चूर्ण डालकर रात्रिमें पीनेसे खासी नष्टहोतीहै । गुञ्जाकीजइ हींगक साथ लनेसे सबप्रकारकी बमन बन्दहोतीहै । आवळ अथवा सनायके पत्तोंकचूर्णकी मधुमें गोली बनाकर मुहमें रखनेसे सबतरहकी खासी नष्टहोती है । सबतरहकी अफचिक्रो नष्टकरनेके लिये सफेदफूलक कच नारकीछालाचूर्ण दही अथवा जीरेके साप देवे अथवा क्वल मुनाहुआजीरा देवे । अथवा मछेडीकीजइ मुहमें रक्खे । अथवा पाट, कटिवाली चोलाई, मछडी इनसबकीजइकी गोलीयें

बनाय मुहमें रखनेसे तत्काल मुखशोष मिटताहै । अगर रससेबनसे रफकी बमन हो तो लौंग, शीतलचीनी, बफेद और लालबन्दन, रस, तगरगण्डोका (गुजराती), सोंठ, पीपल, नागसेसर, इलायची, काला अगर, नागसोया, कपूर, पत्रज, जायफल, तीखुर ये सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर चूर्णसे अठगुना बसलोचन डालकर एकरोज मर्दनकर रखडोहे । इसमेंसे १-१ माशा मधुप्रभृतिकेसाथ देनेसे रफकीबमन बन्दहोतीहै और हृदयका ताप निश्चिन्तसे निवृत्तहोताहै इसतरह उपद्रवोंको समाप्तहोनाक्षय क्षयरोगकी चिकित्सा करे इनके अतिरिक्त और उपद्रव उपस्थित हों तो उनको यत्रसे दूरकरे । जिमकारोग बहुत बडुगयाहो और भोजनकरनेकी शक्ति जातीरहीहो, गांध सुखायेहों । नेत्र भीतर उतरगयहों उसे मरणसन्न समझकर छोड़दे । जिसका शरीर फूटगया हो उसकीभी चिकित्सा न करे । शरीरमें बलसम्पत्ति अच्छीहोनेपर बमन विरेचन कराके प्रस्तुति रसको द । समुद्रकानमक आक्के दूधमें भिगोकर ३-३ रती गायके दूधकेसाथ लेनेसे कण्ठकेमलकी शुद्धि होगी तितलीके पीसकर शङ्करकेसाथ १ माशा खिलानेसे अल्पन्तज्वरको दूर करती है और मलको रचनकरतीहै ॥ ६२० ॥

६२१ मृगाङ्करसः (महादाघ) (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं स्वर्णमसम जम्बीरं मर्दयेद्दिनम् ।
तयोर्द्विगुणितं तात्रं त्रिभिस्तुल्यन्तु गन्धकम् २८०६
यद्गुणं गन्धकाऽर्द्धञ्च सर्वं जम्बीरजं द्वैवैः ।
मयं यामेश्वनुभिस्तद्गुह्ये बद्धा विपाचयेत् ॥ २८०७
दोलायन्त्रे सारनाले यामाहुद्वयं शोषयेत् ।
ततो मृन्मयभाण्डान्तर्लेपणञ्चाऽद्भुल्लयम् ॥ २८०८ ।
ऊर्ध्वाऽधः पृष्ठतः कृत्वा गालकं बन्धयेष्टितम् ।
लघुणं पूरयेद्भाण्डमन्धयित्वा दिने पचेत् ॥ २८०९ ।
सुल्यां क्रमाग्निसिद्धः स्याद्रसो महामृगाङ्ककः ।
अनेनैव प्रकारेण मृगाङ्कान् पाचयेद्रसान् ॥ २८१० ॥
राजरोगनिवृत्त्यर्थं देयं शुक्लामितं घृतैः ।
दशभिर्मरिचैः सार्द्धं पिप्पलीमधुनाऽपि वा ॥ २८११ ॥

२, चि र भ, र का, र क यो, र को, राजयक्ष्मणि ।
टि०-चिकित्सारत्नाभरणे तयोर्द्विगुणितं तात्रमित्यत्र स्वाने तयोर्द्विगुणित्वा मुक्तामिति पाठोऽस्ति । स्वर्णमसमन्वये रत्नयन्त्रमित्यत्राऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा और सुवर्णभस्म समभागलेकर जमीरीक रसमें एकरोज मर्दनकर दोनोंसे दूनी ताक्षभम्, तथा तीनोंकी बराबर शुद्धगन्धक और गन्धकसे आपासुहागा डालकर सबको जमीरीक रससे चारपहर मर्दनकर गोलाबनाय चारतरहपडेमें लपेटकर दोलायत्रमें एकपहरकाञ्चीसे स्वेदनकर मिट्टीकेवर्तनमें दोअहुल पिशाहुआ नमकविठाकर गोलेको रख नमकसे वर्तनको मरदे और मुखमुद्राकर एतदिवकी क्रमाभिदेवे । स्वाहा शीतलहोनेपर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे १ रतीसे ३ रती तक धोकेसाथ अथवा दशमरिच और मधुकसाय अथवा तीन पीपल और मधुकेसाथ देनेसे यह रात्रोगका निवृत्तकरताहै ६२१

६२२ मृगाङ्करसः (महादाय.) षोडश.)

निरुध्यं भस्म सौवर्णं द्विगुणं भस्म सूतकम् ।
त्रिगुणं भस्म मुक्तोत्थं शुक्रपिच्छं चतुर्गुणम् ॥२८१२॥
सूतताप्यं पञ्चभागं तारभस्म चतुर्गुणम् ।
सप्तभागं प्रवालञ्च रसतुल्यञ्च दङ्गणम् ॥ २८१३ ॥
सर्षमेरुत्र सम्मर्द्य त्रिदिनं लुङ्गाणिणा ।
ततश्च गोलकं कृत्वा शोषयित्वा रसतापे ॥ २८१४ ॥
लघणैः पात्रमापूर्यं तन्मध्ये गोलकं क्षिपेत् ।
तन्मुसन्तु मृदा रुद्धा पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २८१५ ॥
आकृष्य चूर्णयेच्छुद्धं चतुःपष्टिभिर्भागतः ।
यज्ञं वा तदभावे तु वैक्रान्तं षोडशांशिकम् ॥२८१६॥

महामृगाङ्कः खलु षण् सिद्धः

श्रीनिन्दिनाथप्रकटीकृतोऽयम् ।

बहोऽस्य सेव्यो मरिचाऽऽज्ययुक्तः

सेव्योऽथवा पिप्पलिकासमेतः ॥ २८१७ ॥

तत्रोपचाराः कर्तव्याः सर्वे क्षयगदोदिताः ।
घर्ष्यं घृष्यञ्च भोक्तव्यं त्यजेत्सूतविरोधि यत् ॥२८१८॥
यक्ष्माणं यहुरूपिणं ज्वररगणं शुल्मं तथा विद्रधिम् ।
मन्दार्श्रिं स्वरभेदकासमदर्थिं यान्तिञ्च मूच्छं भ्रमम् ॥
अष्टाथैव महागदान् गरगदान् पाण्डूभिर्मान् कामलाः ।
पित्तोद्यांश्च समप्रकां यद्विधानन्यांस्तथानाशयेत् ॥
र सं, र घु, र च, भ र, र पा, र क, र क यो., रान-
यस्मिणि । रसपारिजातं ताप्यस्थाने तारं नियोजितम् ।

भाषा—निरुध्यं सुवर्णभस्म १ भाग, पारदभस्म २ भाग,
मोतीभस्म ३ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म ५
भा., रजतभस्म ४ भा., प्रवालभस्म ७ भा., मुद्रागा ७ भाग
लेहर सारहा शारीकचूर्णैश्च १-२ पहर केवल मर्दनकर विजोर-
केरससे तीनदिनतक मर्दनकरं । फिर गोलापनाय कङ्गीपुष्पे
सुगाकर चारतद्वयपत्रेमे लपेट २-३ कपडमिठी दकर सुगाकर
लवणयक्ष्मे रत्न मुसमुद्राकर चारपहरकी भूमि देवे । स्वात्र
हीतत्रोनेर निक्काछर शारीक पीपलर इगसे ६४ वां हिल्ला
हीरबीभस्म अभावमे सोलद्वी हिल्ला वैक्रान्तभस्म मिण्डर
रसगोडे । यह नन्दिकेपरका कदाहुआ मृगाङ्करसै । इयमेमे
३-३ रसी मरिच और पी अथवा पीपल और पीकेछापलनेमे
एव ज्यद्रपुक यस्या, ज्वरमुद्राय, सुन्म, विद्रधि, मन्दामि,
स्वरभेद, वाय, मर्दधि, बनन, मूच्छं, भ्रम, आठमहातो, बना
बडी ज्वर, पाण्डुतो, कामला, पित्तोरपणमप्रतो, इत्यादिदो दो
यह अनुपानभेदमे मरदकरसै ॥ ६२२ ॥

६२३ मृगाङ्करसः (महादाय.) (सप्तदशः)

स्वर्णं तारं समुक्तं व्रतनिविमलयं माशिकं पञ्चमूली,
लोहं व्याघ्रञ्च शुल्यं मृतममलत्रती नागयज्ञी च गन्धप
भाग्येन्दुं दिनेकं घनतरपटने मर्दयेत्त्रिप्रयारं,
बन्धाघात्रांशुविदारीमुद्रालियरिजपाशास्मल्लोत्तमूले ॥
गोलं घेष्टयं पटादीमदनतदभयैर्गुंस्तया चाऽपिगुच्छं,

गतं सामुद्रयुक्तं लघुतरदहने पाचिनं घेष्टयाम् ।
दत्त्वा तयोडशांशं त्रियमतिविमलं गन्धकं तेन तुल्यं,
मर्द्यं धूर्तं जयाभिः रसखसतिलजैर्वाशिमिः कन्दकायैः
पिण्डं सिन्धुद्वयेन प्रविलुलितमयो घेष्टिनं मापपिष्टे ।
स्थायं यन्त्रं त्रियामं लवणविरचिते पाचयेदग्निना तु
स्वाङ्गं शनैः कुमारीचटुकवलियुते पूजितं पल्लमात्रं,
कृष्णाक्षीर्दे मृगाङ्कः क्षयतिमिररविभाषितो जाणनेयः
१. ५., क्षयरोगे ।

दि०—“द्वे तार तथा मुका त्रिमु माशिक पति । रत्न लोहाङ्क
शुल्य वदनाती च गन्धकम् ॥ आदाय भागद्वैतसुषु च दण्ड शिंत् ॥
मर्दयेद्वातेवेदीमानेकेकेन दिनयन् ॥ कुमारी चाऽग्रा शारी विदारी
शास्मनी बरी । सुशरी विजया रमेद्र खरासखल्यन् ॥ बचने-
विन्यादेमकुमारीनां पण्डयन् ॥ सिन्धुचूर्णं विन मापदङ्गाग्यात्र ले-
येत् ॥ स्थाय्यं ल्यायन्त्रे तु त्रियम पाचयन्तु ॥ स्वाङ्गीतं मनुद्वय
पूजयेत्तुन्दैवन् ॥ बलिगुणमिधियु सुदुर्गै वै चूर्णयन् ॥ महाश्या
इके वेग वीक्षणसुषुपमोरेवि ॥ निपलीमधुमुपुते बहमात्र प्रमुष्यते ॥”
इतिपद्ये रसायनमन्त्रे नागवहीयप्रमो न्यलय कृत्वा बलनाभ
निक्कास्य सर्वमन्त्रक निवृत्त्य पठान्तर स्वाशिनैर्गणि परन्तु तीद
विदुषु राक्षसेविभागात् दण्डयवेगस्याऽनुस्वयावत्सातवेग इत्या सुदुती
भूयैरन्तरसायां बधायनमभिकभावनाया निप्यादिने योगे इत्येवैग-
येत्कलसमावेतो मतिश्रुति मुद्राऽपिस्वमेने स्पष्टरीर ।

भाषा—सुवर्णं १ भाग, रजत ३ भा., मोती ३ भा,
प्रवाल ४ भा., सोनामासी ५ भा, हीरा ६ भा., पाटा ७ भा.,
लोह ८ भा, अत्रक ९ भा., तावा १० भा, सीगा ११ भा,
रंगा १२ भा, इनयुवकीभस्मे और शुद्धगन्धक १३ भा, लेहर
१-२ पहर सुते पोटर पीडुआर, आंबला, विदारीकन्द,
सुगली, दानावर, भांग, मेमरका सुगला, धतूरेकी जड़, इन-
त्येकवेस्वरसमे ३-३ दिन मर्दनकर गोलापनाय मदनरुके
पत्रोमे लपेटकर ४-५ कपडमिठी देकर सुगावे । सुखनेर
एवाचित्त संवेचोडे गतेके बीचमे आठअहुल्कादरा और गोलेके
आनेलायक दूगरापी मोदकर नीचेपोशागा तन्पच विठाकर
गोलेको ररा करमे घेपानमक मरेदे । करके गर्भमे योडे २
कपडोकी ४ पदरत आचरे । स्वात्रतीकत्रोनेर निक्काकर
औपपसे सोलद्वी हिम्पा शुद्धयन्त्राग और गन्धक मिनाकर
पत्र, भांग, खयगन, तिल, पीडुआर इनत्येकेरगोमे १-१
तोत्र मर्दनकर गोलापनाय इहोईकाओ कुरासे घेपेनमकचो फे-
कर गोलेर आभाअहुत्कमोडा केपदकर सुगावे उदरके आटेमे
बन्दकर सगयक्ष्मे २ पहर कोयलोडी आचरे । स्वात्रतीक-
त्रोनेर निक्काछर रसगोडे । फिर कुमारी, और बटुकी पूजा
और भित्तको बनि भिबेदनकर इगयुकी ३ रसीकीमाया ३ वा
१ पीपल और मपुकेगाप दनेमे दद सपतोगतो मरदकरसै ६२३

६२४ मृगाङ्करसः (महात्वादि) (अष्टादशः)

रत्नभस्म त्रिभागञ्च भांगैः तारभस्मचक्रम् ।
मुनापञ्चञ्च रुद्रतिरिः काश्मीरञ्च त्रिभागिषयत्र २८२४
गामेयञ्च द्विगुणं वादमरिच नियोजयेत् ।
पद्मरागेन्द्रनीले च राजायन्त्रं भागिषम् ॥ २८२५ ॥

गर्होद्वरावैकान्तं प्रवालं हेममाक्षिकम् ।
 शङ्खशुक्तिवराटानां पृथग्भागाधियोजयेत् ॥ २८२६ ॥
 सुवर्णं रसतुल्यं स्यात्ताम्रं हेमसमांशकम् ।
 कांस्यञ्च क्रतुभागञ्च रीतिकाभागमात्रकम् ॥
 मण्डूरं भागमात्रं स्यात्सर्वमेकरु चूर्णयेत् ।
 सुवर्णं रसतुल्यञ्च तीक्ष्णं कान्ताऽभ्रगन्धकम् ॥ २८२८ ॥
 यङ्गं मुजङ्गं भागञ्च रसपाकञ्च पूर्ववत् ।
 एष राजमृगाङ्कः स्यात्सर्वरोगविनाशनः ॥ २८२९ ॥
 क्षये प्रयोज्यो मधुपिप्पलीभ्यां
 श्वासे च भाङ्गामधुनागरेश्च ।
 मध्वाज्यतैलेन मरीचकैश्च
 पाण्डो गदे नीरमधुप्लुतोऽसौ ॥ २८३० ॥
 शतावरीशर्करया समेतो
 वीर्यस्य वृद्धिं कुरतेऽवलीढः ।
 घासाररक्षौद्रयुतो निहन्त्या-
 त्पित्तं सरक्तं सितयाऽम्बुपित्तम् ॥ २८३१ ॥

र. क. यो., सर्वरोगे ।

टि०—“रसमस्मययो नाम पद्मम हेममस्मकम् । श्वतारश्च
 भागं क्वचनमेव चतुर्गुणम् ॥ गोमेदकञ्च द्विगुणं वाग्नीर सप्त मौक्तिकम् ।
 पद्मरागेन्द्रनीलञ्च राजावतं त्रयं च ॥ गर्होद्वरावैकान्तं प्रवालं हेम
 माक्षिकम् । वैद्यं पुष्पपाणञ्च नागवज्रं तथैव च ॥ तीक्ष्णं कान्तं श्वोम-
 गन्धं त्रिफलाचित्रकाम्बुसा । भावना गन्धदुग्धेन सेखुवासागणेन च ॥
 उशीरद्वयनीलेन पृथक् सप्तकम्बुधया । पश्चात्पान्दुरैर्वा मन्थ्यं सुसिद्धी
 रसाङ्गुणेन ॥ महामात्रं प्रयुज्यते मधुना मेहनाशनम् । वलीपलितहृत्स्य
 कामदे सुखवर्धनम् ॥ वसन्तकुसुमाख्यातो वसन्तपदपूर्वकः ॥” इति
 पाठोऽपि रत्नाकरीपथयोगे एव वसन्तकुसुमाकरनाम्ना लिखितोऽस्ति
 परन्तु पाठ्यकल्पने गौरवाङ्गमत्पादवत्पादधिकारसाम्याच्चैक एव पाठ
 कल्पनीयः ॥

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजतभस्म १ भा, मुष्ठा
 पिष्टी, स्फटिक और केशर ३-३ भाग, गोमेद ६ भा,
 मालिन्क्य, नीलम और लाजवर्द १-१ भा., पद्म, वैकान्त,
 प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, शङ्ख, सीप, पीलीकौड़ी इनसबकी भस्में
 १-१ भाग, सुवर्ण और ताम्रभस्म ३-३ भा, कांस्यभस्म ६
 भा, पीतल और मण्डूरभस्म १-१ भा, कहरवा ३ भा,
 फोलाद और कान्तलोहभस्म, अन्नकमन्म, शुद्धगन्धक, वज्र और
 नागभस्म, येसव १-१ भाग लेकर ३-४ पहर शुष्कमर्दनकर
 हींगके पानीसे ४ दिन मर्दनकर गोलावनाय कडीपुष्पमें सुलाय
 ४ तह कपड़ेमें पाठली बनाय २-४ कपडमित्री लगाकर सुखादे ।
 फिर सञ्जीवार, जवापार और पालोनकर समभागमें मिलेहुए
 ४ सेरको बारीक पीसकर उसकेबीचमें गोलेशोरख सुहृदन्दकर
 ४ पहरकी मन्थन अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर
 रखलोडे । इसमेंसे १ से ३ रतीतकफ्रीमाना मधु और पीपलके
 साप हयमें, भारती, सोंठ और मधुके साप अथवा मधु, घी,
 तैल और मरिचकेसाप श्वासमें दे । पाण्डुने मधुके शरवतकेसाप
 दे । वीर्यवृद्धिके लिये शतावर और शर्करकेसापदे । अङ्गुलेकेरस
 और मधुकेसाप रक्तापित्तमें और शङ्खके साप अम्बुपित्तमें देवे ।

इसतरह यह ऊपरके हुररोगोंको और अनुपानभेदसे अन्यरोगोंको
 भी नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६२५ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (ऊनविंशः)

अथाऽपरं प्रवक्ष्यामि रोगराजस्य भेदनम् ।
 प्रागुक्तेन प्रकारेण मृतेन्द्रं शोधयेद्बुधः ॥ २७३२ ॥
 मुखमुत्पादयेत्तद्द्रवसेऽग्निस्वायितानं नयेत् ।
 पूर्वांतेन प्रकारेण दद्याद्वासचतुष्टयम् ॥ २८३३ ॥
 पूर्वांतेन प्रकारेण जारयेद्गन्धकाच्छतम् ।
 गुणान्नफसत्त्वस्य पद्मं जारयेद्रसे ॥ २८३४ ॥
 ताप्यसत्त्वसमायुक्तं ताप्यचूर्णप्रवापितम् ।
 शुद्धसौवर्णवीजन्तु चारयेच्च समांशतः ॥ २८३५ ॥
 एवं जीर्णं रसे वज्रं जारयेच्च शतांशतः ।
 मृनागसत्त्वं हेम्ना च समावृत्तं तु कारितम् ॥ २८३६ ॥
 ततः कृत्वा वज्रभस्म वक्ष्यमाणक्रमेण तु ।
 भस्मना तेन वज्रस्य मारयेत्तं रसेश्वरम् ॥ २५३७ ॥
 चतुःपट्टिणेण सूते वज्रभस्म चिनिःक्षिपेत् ।
 मर्दयेदम्बुवर्गेण नानाधचूर्कद्रवैः ॥ २८३८ ॥
 एकविंशदिनं यावन्मर्दयेच्च निरन्तरम् ।
 यन्त्रे सोमानले भिस्वा दिनान्यधिकविंशतिम् ॥ २८३९ ॥
 ज्वालयित्वा धीतिहोत्रं स्याद्गुहातलमुद्धरेत् ।
 गृहीयाद्भस्मतां यातं रसेन्द्रं वज्रयोगतः ॥ २८४० ॥
 पश्चात्तद्भस्मना हेम भस्मी कुर्वीत वृद्धिमान् ।
 तद्भस्मैव रजतं भस्मीकुर्वीद्विचक्षणः ॥ २८४१ ॥
 ताम्रं तीक्ष्णं वङ्गनागावन्नकान्तं प्रमारयेत् ।
 सूतसाम्येन सर्वेषां लोहानां भागमाहरेत् ॥ २८४२ ॥
 मुकाचूर्णेन्तु सर्वेषां समानं परिगृह्य च ।
 रसाच्च द्विगुणं गन्धं द्रव्यं पादतः क्षिपेत् ॥ २८४३ ॥
 तत्सर्वं मर्दयेत्पलाकाङ्गिकैश्च ययोद्भवैः ।
 दिनत्रयं प्रयत्नेन पश्चाद्गोलरुमाचरेत् ॥ २८४४ ॥
 छायाशुष्कञ्च तं गोलं पक्वमृपागतं कृतम् ।
 सागरे यन्त्रराजे तं दत्त्वा पार्कं समाचरेत् ॥ २८४५ ॥
 चतुर्धामप्रमाणेन मध्ये वह्निं विधाय वै ।
 ततः सिद्धं रसेन्द्रं तं स्याद्गुहातं समुद्धरेत् ॥ २८४६ ॥
 सम्मथं ब्रह्मविष्णुशान्नां योगिनीभैरवादिक्ताम् ।
 वह्निं दत्त्वा भूतवर्गेण पावकं तर्पयेद्भूतैः ॥ २८४७ ॥
 सहस्रादधिकं हुत्वा गुरुविप्रान् प्रपूज्य च ।
 एवं कृत्वा रसेन्द्रं वै ब्राह्मो नैवाभ्यथा बुधैः ॥ २८४८ ॥
 विचूर्ण्य स्थापयेत्पत्रे सौवर्णे राजतेऽथवा ।
 नित्यं सम्पूजयेद्देवं रसेन्द्रं सिद्धिकामुकः ॥ २८४९ ॥
 अन्यथाऽपहरेदेवो भैरवो रसमुत्तमम् ।
 ततो रसेश्वरं दद्याद्गोराजनिवृत्तये ॥ २८५० ॥
 राजसर्पमानन्तु नाधिकं योजयेद्बुधः ।
 पूतेन मधुना साकं व्योपचूर्णेन संयुतम् ॥ २८५१ ॥

अनुपानञ्च धारोष्णं गन्धं दुग्धं प्रयोजयते ।
 तवराजेन संयुक्तमज्जदुग्धमथापि वा ॥ २८०२ ॥
 पय्यञ्च पूर्ववत्तुयाञ्चिकित्सा तद्वदेव हि ।
 एरुमण्डलयोगेन रोगराजं निहन्त्यसौ ॥ २८०३ ॥
 रसेन्द्रो नाऽन्यथा चिन्त्य एतद्दीश्वरभाषितम् ।
 पण्मासस्य प्रयोगेण छिद्रं पश्यति मेदिनीम् ॥ २८०४ ॥
 ब्रह्मलोकावधि जगत्पश्येत्करतलाभ्युद्यत ।
 संवत्सरप्रयोगेण खेचरो जायते नरः ॥ २८०५ ॥
 अदृश्यः सर्वभूतेषु बलवान् स्यान्मुसारिवत् ।
 स्वच्छन्दचरितो गौरीकान्तवज्रायते नरः ॥ २८०६ ॥
 तस्य मूत्रपुरीपाभ्यां शुब्धं भवति काञ्चनम् ।
 सर्वान् रोगान्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ २८०७ ॥
 अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगोक्तयोगतः ।
 अयं राजमृगाङ्गाख्यो रसेन्द्रः सम्प्रकाशितः ॥ २८०८ ॥
 यत्कीर्तनात्सर्वरोगा विनश्यन्ति न संशयः ।
 यद्दर्शनाच्च पापानि विलयं यान्ति तत्क्षणात् ॥
 देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ २८०९ ॥
 रसालं, क्षयाधिकारे ।

भाषा—पूर्वोक्तप्रकारसे अग्निन्धायी संस्कारपर्यन्त क्रिया कर पूर्ववत् चारमास देकर दातगुणित गन्धक और पशुगुण अन्नसत्त्व जाणकर सुवर्णमानिस्सत्त्वका प्राप्त देकर शुद्धसुवर्ण माशिकके चूर्णका अक्षिपर प्रपेन देवे । सुवर्णमाशिकसत्त्व नि शेषनया जारितहोनेपर शुद्धसुवर्णबीज बराबरके हिस्सेका जारणकरे फिर सौवा हिस्सा हीरा जारणकरे । षेनुओंके सत्त्वको सुवर्णके बराबर लेकर गलावे और इसमें शुद्धहीरेको लपेटकर व्याप्रीकन्दप्रथितिनं बन्दकर भस्म बनावे । इसभस्मका एक हिस्सा ६४ गुने पारेमें मिलाकर यथासम्भन अम्बवर्णको एक-द्वितकर उनके रसोंसे मर्दनकर तिनती धतूरेकीजाति मिलवके उनप्रत्येकके रसोंसे २१ दिनतक निरन्तर मर्दनकर उमरुयत्रमें बन्दकर २१ दिनकी क्रमशःद्व अग्निदेकर पकावे । स्वाद्गदीतल-होनेपर बज्रकेयोगसे मरेहुएपारेको निकालकर रखडोडे । इस मेंसे एकहिस्सा ६४ गुने सुवर्णमें डालकर पूर्ववत् अम्ब और धतूरवर्णसे २१ रोज मर्दनकर उमरुयत्रमें २१ रोजकी अग्निदे । स्वाद्गदीतलहोनेपर निकालकर इसमें ६४ गुनी रजत मिलाकर पूर्ववत् मर्दन और पाचनकरे । इसरजतभस्ममें ६४ गुना तावेका चूरा मिलाकर पूर्ववत् भस्मकरे । इस ताम्रभस्मसे फोलाद और फोलादसे बज्र, बज्रसे नाग, नागसे अन्नक और अन्नकसे कान्त लोहकी भस्म करे । पारदभस्मके बराबर आठों रोहोंकी भस्म लेवे और इनसबकी बराबर मोतीकाचूर्ण, रससे दूना शुद्धगन्धक, रससे शतुर्घास मुहंगा मिलाकर सन्नको काञ्ची और सबके मणसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्कर पकीहुई मूपामें बन्दकर बालकायत्रमें ४ पहर मध्यम अग्निमें पकावे । स्वाद्ग दीतलहोनेपर निकालकर ब्रह्मा, विष्णु, ईश, महादेव, योगिनी, भैरव प्रभृतिको बलि देकर अग्निको सहजगुणिनि तर्पणकर गुह,

धाद्यन इनकी यथाशक्ति पूजाकर पारेको खरलकर सुवर्ण अथवा चादीके बर्तनमें रखकर विभिपूर्वक रोनुपूजाकरे अन्यथा दवाके गुणको भैरव हरणकरलेंगे । इयतरह सुरक्षितकियेहुए रसको मोटी-राईके प्रमाण लेकर धी, मधु और त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ मिलाकर खिलादे करसे धारोष्णदुग्ध पिलावे अथवा बंधलोचनकाचूर्ण डालकर धकरीका दूध पिलावे । पय्य सुद्द्रामृगाङ्गीतरह करे । उपरवर्तीकी प्रतिक्रियाभी वैसेहीकरे । इयतरह एकमण्डल तक करनेसे यह रोगराजको नष्टकरताहै । ६ महीनतक प्रयोग-करनेसे शुष्बीमें ऐसाकोईहिस्सा नजर नहीं पड़ता कि ज्वासे उसे जानेका रास्ता न मिले । ब्रह्मलोकतक ससारको हस्तगत आम-लकवर देखेगा । एकचपके प्रयोगसे आकाशगमिता सिद्धहो-तीहै । समस्तमूर्तोंके अन्दय होताहुआ दिव्यबलयुक्त होताहै । स्वच्छन्दगतिको प्राप्तहोकर महादेवके सहा गुणोंको प्राप्तकर ताहै । उमकेमूत्र और पुरीपसे ताका सुवर्णहोजाताहै । तत्परो गहरागुणकेसाथ यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । उसमनु-यके दर्शनकरनेमें समस्त पाप नश्वहोतेहै ॥ ६२५ ॥

६२६ मृगाङ्करसः (राजायः) (विशः)

एकैकभागेन सुवर्णसूत-
 वैक्रान्तभस्मान्यथ गन्धकञ्च ।
 भागद्वयं मौक्तिकभस्म देयं
 तुर्यांशतो हीरकभस्महेमः ॥ २८६० ॥
 ततः परं टङ्कणकञ्च सूत-
 तुर्यांशकं सन्निपजा प्रदेयम् ।
 सर्वाणि चैकत्र निधाय सत्त्वे
 जम्बीरनीरेण दिनं विमर्चम् ॥ २८६१ ॥
 तत्रोलकं शुष्कमनातपे च
 मृत्कपटेनाऽपि च वेष्टयित्वा ।
 ततो वितस्तिप्रमिते च भाण्डे
 दशाहुलायामयुत्तेसमं तन् ॥ २८६२ ॥
 विस्तीर्णवन्ने चतुरहुलीभिः
 क्रिदं क्षिपेत्तत्र पट्टहुलीकम् ।
 तस्योपरिप्रादथ गोलकं तं
 निधाय भाण्डे पृथुसुहृत्कियायम् ॥ २८६३ ॥
 दीपाग्निनाऽऽदौ प्रहरं पचेच्च
 मध्याग्निनाऽथप्रहरयञ्च ।
 चण्डाग्निना चाऽपि सप्तद्वयाम-
 मेयंपुटो वासर एक एव ॥ २८६४ ॥
 तं स्वाद्गदीतं स्वत उद्धरेत्
 तद्योजयेत्तरेणयं यद्विम ।
 कुमारीकाणामथ योगिनीनां
 तृप्तिं यद्नामापि सहिजानाम् ॥ २८६५ ॥
 सम्पूज्य मिडेभ्यश्चिन्मराजं
 सत्त्वे च चूर्णं निदधीत तस्य ।

उदीरितो राजमृगाङ्क पप-
स्ततो भवानीं प्रति शम्भुनाऽस्तो ॥२८६६॥
क्षौद्रेण सेव्यो दशपिप्पलीभि-
श्रुणेत साकं भिपजां समीपे ।
क्षयं निहन्त्याशु च वह्निदायी
पाण्डुं प्रमेहं ग्रहणीं पिनष्टि ॥ २८६७ ॥
शूलं समूलं सकलं निहन्ति
चाशांसि सर्वज्वरस्तत्रिपातान् ।
रोगान् प्रहृष्टान् प्रसभं पिनष्टि
हरि रंया पातकसङ्गमाशु ॥ २८६८ ॥

र. सु., र. सं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोना, पारा, वैकान्तभस्म और शुद्धगन्धक १-१ भाग, मोतीकी पिष्टी अथवा भस्म २ भा, हीरकीभस्म ३ भा, सुहागा ३ भा, लेकर सबको ३-४ पहर सुखा मदनकर जमीरीकेरससे एकदिन घोटकर गोलाबनाय छायाशुष्कर चारतह मलमलके कपड़ेमें लपेटकर ३-४ कपडिमिठी देकर अच्छीतरह सुखाय एक बालिस्तलम्बा दशअहुलचोडा और चारअहुलचोडे सुहागान्तलेकर उसमें ६ अहुलतक लाहेकेकिडका चूरा पिठाकर ऊपर गोलेकोरल किडके चूर्णसही ऊपरतक भरदे फिर बालुका अथवा लवणयंत्रमें रखकर बड़े चूल्हेपर रख एकपहर दीपामि, फिर दोपहर मध्यमाभि अखीरमें ४ पहर चण्डामि देकर पकावे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर रखलोड़े । भैरव, अग्नि, कुमारी, योगिनी, सुगान्द्राक्षणा इनकी अच्छीतरह तृप्तिकर गणेशका पूज नकर भवानी और शङ्करकी प्रणामकर दशपीपल और मधुकै-
साय इसरसकी १ से ४ रत्तीतकनी मात्रा देनेसे क्षय, अग्नि-
मान्य, पाण्डु, प्रमेह, ग्रहणी, शूल, अर्थ, ज्वर, सन्निपात इन-
सबको यह इसतरह नष्टकरताहै जैसे परमेश्वरका स्मरण पाप-
सङ्घातको नष्टकरताहै ॥ ६२६ ॥

६२७ मृगाङ्करसः (नवरात्नाद्यः राजाद्यः) २१

मृतं गन्धकहमत्तरसकं वैकान्तवज्राऽऽयसं,
वह्नं नागजविद्रुमं सुविमलं माणिक्यगारत्तमजम् ।
ताप्यं मौक्तिकमुष्परागजलजं वैदूर्यकं शुल्बकं,
शुकीतालकमप्रदिह्नुलदिला गोमेदनीलं समम् ॥२८६९॥
गोक्षरैः फणिपल्लिंसुबद्रोमुण्डीकगात्रिकैः,
शोफनीशतपुपिप्तामधुकजै मङ्गेशुकङ्गोलजैः ।
लिघानागबलात्रिजातकथने पिप्पुप्रियापालकैः,
अमृष्टाऽपित्विपाऽऽतरूपमुशलीयन्धाविदारीयरी-
कन्याजैः स्वरसै विभाष्य सकलं कृत्वाऽथ तद्रोलकं,
यन्त्रे सागरराजजे पुटयुगे यामद्वयं पाचयेत् ।
पश्चात्स्वाङ्गमुशीतलं सुमुदितं गोक्षीरसम्भावितं,
सर्वैश्चेभुरसैश्च मालतिलुमैः कर्पूरकस्वरिजैः ॥२८७१॥
सिद्धं दन्तकरणटकं सुनिहितं गुञ्जाद्वयं योजयेत्,
सर्वव्याधिषु चाऽनुपानकभित्ता तं चक्ष्यमाणेषु च ।

सर्वांशेषु च पिप्पलीमधुयुतं भङ्गातयुकं क्षयं,
श्यामाभिर्दशभि वृतेन मधुना च कोनविशोषणे २८७२
पित्तं चेन्दुकचेन चाऽऽश्रुजये श्रीलखण्डखण्डायुनः,
स्थौल्ये चाऽऽद्रमगुन्धुनं प्रहणिकां जोरेण शोषं जयेत्
शूले रामटजासवेन सहितं श्वासे च कासे तथा,
व्याधौभाङ्गियुक्तं गुल्मविषये द्राक्षाशिशिरसयुतम् ॥
मेहे शर्करया तथा च तुवरैरम्बालापिते सित्ता,
क्षौद्राभ्यां ज्वरदोषशान्तिषु हितं जोरेण धान्येन च ।
इत्थं राजमृगाङ्कमेतखिलं व्याधौ प्रयुज्याद्विषकं,
यस्याऽऽकगेनमात्रतोऽपि सकला रोगाः प्रगद्यन्ति हि
र. सु (राजयक्ष्मणि), नि. र., र सु., र. बो., रसायनं,
यो. र., एषु नवरत्नराजमृगाङ्क इति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्ण, चादो, खपरिया, वैकान्त, हीरा, लोहा, बज्र, नाग, प्रवाल, स्यामाखी, माणिक्य, पना, सोनामाखी, मोती, पुलराज, शङ्ख, लवणिया, ताप्य, मोतीकीसौर, हरिताल, अन्नक, शिगरिक, नैनसिल, गोमेद, नीलम, इनसबको भस्म समभाग लेकर दोपहर शुष्कमर्दतकर गोखर, नागखेल, विधारा, वेर, गोरखगुडी, पीपल, चित्रक, पुनर्वा, सोंक, मुलहठी, भाग, ईख, शीतलचीनी, गिलोय, नागन्ना, तज, पत्रज, इलायची, नागमोया, तुलसी, तगर-
गण्डोला (गुजराती), पाठा, अनीस, अइसा, सुमली, वासले
खमा, विदारीकन्द, शनावर, धीकुआर इन प्रत्येकके रत्तीसे
१-१ भावना देकर गोलाबनाय छायाशुष्कर चारतह मलमलके
कपड़ेमें बांधकर ऊपरसे २-३ कपडिमिठी देकर छायाशुष्कर
दोशरावोंमें लवणचोच गोलेकोरल सन्धि बन्दकर दे । सुखनेपर
दोपहली अग्निदे । स्वादशीतलहोनेपर निकालकर गोदुग्धकी
भावना देकर पूर्णकजस्तुओंकी क्रमसे १-१ भावना देकर तमाम
जातिकीईख, मालकीकेकूच कपूर और कस्तूरीकी क्रमसे भावनाए
देकर २-२ रत्तीकी गोलियाबनाकर छायामेंसुखाय हाथीदांतकी
ठिबकीमें बन्दकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तदी
गहरानुगणकेसाय देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै । साधा
रणया पीपल, मधु और भिलवेकृन्नाय क्षयको नष्टकरताहै ।
१० पीपल, धी और मधु अथवा १९ मरिच, घृत और मधु
केसाय पित्तको नष्टकरताहै । शुद्धकपूर और तगण्डोला अथवा
सफेद चन्दन और खाडकेसाय अम्लपित्तको, तथा अदरक और
मधुकैसाय स्थूलनाको नष्टकरताहै । जोरकेसाय ग्रहणी और
द्रोषको नष्टकरताहै । दिद्रनासकेसाय शूलको नष्टकरताहै ।
भटकटैया और मारुतीकेसाय श्वाससासको, दास और होंकसाय
प्रमेहको नष्टकरताहै । शकर और मधुकैसाय अम्लपित्त और
रक्तपित्तको एव जीरे और धनियेकेसाय ज्वरोंके अद्रुतोंको नष्ट
करताहै । इसतरह तप्तदुग्धानविशेषसेसाय समस्तरोगोंमें शक्य
प्रयोग अन्याहृतकोंयें होताहै ॥ ६२७ ॥

६२८ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (द्वारिशाः)

मृतं सृतं सृतं ताप्यं तुल्यभागं प्रकल्पयेत् ।
अस्य गुञ्जाद्वयं दद्यान्मधुना मरिचैः सह ॥ २८७५ ॥

तदनु स्वस्तो योज्यस्तुल्यः कर्णस्तम्भितः ।
जीर्णज्वरकफध्वंसी श्वासकासविनाशनः ॥ २८७६ ॥
अग्निमान्यविबन्धघ्नो राजयक्ष्मविमर्दनः ।
धातुपुष्टिकरश्चैव बलदः कान्तिकारकः ॥ २८७७ ॥
वै द, जीर्णज्वरे ।

टि०—मृगाङ्गेषु प्रायश पाकः समायाति परन्तु तदभावेऽपि
मृगाङ्ग इति नामदाने प्रथमः प्रथमः ।

भाषा—पारेवीभस्म (अभावमें बन्दोदय) और सुवर्ण
माक्षिकभस्म समभाग लेकर १-२ पहर घोटकर रखाउड़े ।
इसमेंसे २-२ रत्तीजीमात्रा मधु और २९ कालीमिर्चिकेमाय
लेक करसे एकतोला तुलसीकास पिनावे । इसमें जीर्णज्वर,
कफ, श्वास, कास, अग्निमान्य, मूलमूत्रविबन्ध, राजयक्ष्म, धातु,
बल और कान्तिकाहास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (त्रयोविंशः)

मृतं ताघ्नं मृतं स्वर्णं मृतं लोहं सगोनसम् ।
प्रत्येकं पलमानञ्च द्विगुणञ्च शिलाजतु ॥ २८७८ ॥
प्रवालं मौक्तिकं शुद्धं कर्पं कर्पञ्च चूर्णयेत् ।
खले त्रिमूत्रं तत्सर्वं वर्षणस्य रसेन वै ॥ २८७९ ॥
साधयेत्सप्तदिवसात्तच्छुष्कं भक्षयेन्नरः ।
गुञ्जामात्रं द्विगुञ्जं वा यथायत्नमधाऽपि वा ॥ २८८० ॥
मूध्रमेलाचूर्णसंयुक्तं मधुना तद्दिनेदिने ।
मूत्रसाईं वीर्यनाशं प्रमेहं राजरोगकम् ॥
प्रणश्यति न सन्देहो यथा सूर्याद्वयस्तम् ॥ २८८१ ॥
ना वि, वापीकरणे ।

भाषा—तास, सुवर्ण, लोह और बिकान्त १-१ पल,
शुद्धशिलाजीत २ पल, प्रवाल और मोतकीपिठी १-१ कर्प
लेकर १-२ पहर खालीमर्दनकर सातदिनतक बरखोरसमें
मर्दनकर गोलाबनाय चारतइपडेमें छपेट शरावसमुद्रमें बन्दकर
२-३ कण्डमिठी चढाय मृगाङ्कर खणयन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि
देवे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर रखाउड़े । इसमेंसे एकतीरि
दोरशीतक औचित्ती दसपर छोटीशलायनीकेचूर्ण और मधुके
साधनेने मूत्राघत, शुभ्रनाश, प्रमेह, रात्रोग प्रवृत्ति रोगीको
यह इततरह नष्टकरताहै जेमे सुर्दोदय अंधेको नष्टकरताहै ६२९

६३० मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (चतुर्विंशः)

स्वर्णं तारं तत्रनष्टिलं नागैर्नान्तपृथक् ।
सर्वैस्तुल्यो रम इति पृथक् नान्यकं मृततुल्यम् ।
दश दत्त्वा मद्भक्षसलिलं मर्दयेत्पट्टारं,
मृषास्वेषो पुटनविधिनो मूधराघषे रमेन्द्र ॥ २८८२ ॥
इमं रसेन्द्रं निखिलाऽऽमयग्रं
पल्लुकमानं त्यनुपानयोगात् ।
धीराङ्कुरेणोत्तमिदं भयान्ये
रसो घटो राजमृगाङ्गनामा ॥ २८८३ ॥
ककारादिवर्ण्यं रसे योगगोहे
सद्वर्णं पलं जातलं योजनीयम् ।

विशेषः परो यो यथोक्तः स कार्यो
मुनीनां मतं वेत्ति कः पण्डितोऽपि ॥ २८८४ ॥
र शि, सर्वरागे ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रत्न २ भा, ताम्र ३ भा, शङ्ख
४ भा, नाग ५ भा, बैकान्त ६ भा, इनसबकीभस्में लेकर
सबकी बराबर २ शुद्धपार और गन्धक डालकर सरकोनीलरंग-
कञ्जलीकर मुल्ला (इतिमन्त्र्य) कादत्र थोडा २ डालकर आठ
पहरतक मर्दनकर गोलाबनाय चारतइपडेमें छपेटकर १-२
कण्डमिठी चढाय शरावसमुद्रमें बन्दकर मूधरायन्त्रमें चारपहरकी
अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निकालकर रखाउड़े । इसमेंसे ३-३
रत्ती तत्तद्रोगहरानुपानकेमाय देनेसे राजयक्ष्मादि समस्तरोगीको
यह नष्टकरताहै इसमें ककारादिवर्णका निषेधरहला ॥ ६३० ॥

६३१ मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (पञ्चविंशः)

मृतं सूतं मृतं ताघ्नं मृतं तीक्ष्णं मृताऽऽन्नकम् ।
नवरत्नजभस्मानि कान्तसिन्दूरकिटकम् ॥ २८८५ ॥
समांशं चित्रकद्रविः कुमारीहंसपादजैः ।
घृष्ट्वा तन्मृषिकामध्ये बालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २८८६ ॥
विदिनं पाचयेदेतत्स्वाङ्गशीतं समुज्जरेत् ।
पाराहीकन्दधान्यं श्लैकं शुकाऽसृग्मिमादितम् ॥ २८८७ ॥
रसो राजमृगाङ्गोऽयं नागाङ्गुलिमापितः ।
तच्छूर्णं पल्लुमात्रेण रोगजातं निहन्ति च ॥ २८८८ ॥
र. क. यो, सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तावा, फोलाद, अन्नक, नवरत्न इनका
भस्में, कान्तसिन्दूर और मङ्गूरभस्म समभाग लेकर १-२
पहर सूता मर्दनकर चित्रकमूल, पीतुभार, हंगराज इनके यथा-
सम्भवे स्वस्र अथवा कषायोमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाब
नाय मुलाकर चारतइ करमें छपेट २-३ कण्डमिठी चढाकर
कड़ीधूममें सुगाय शरावसमुद्रमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें ३ दिनतक
कमपूढ अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतहोनेपर निशारकर पाराहीकन्द,
आंशके, बंधेई पत्राकेमूल और जह, इनप्रदेहके स्वरगोमें
१-१ रोज मर्दनकर रखाउड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतकजीमात्रा
तत्तद्रोगहरानुपानकेसाध देनेसे यह समस्तरोगीको नष्टकरताहै ॥

६३२ मृगाङ्करसः (रानाद्यः) (षड्विंशः)

समरसरसके द्वे मौक्तिकं गन्धकञ्च,
निखिलदल्पकान्तिः काञ्चनीयैरपितम् ।
पचनमतिमुपुपन्था लघुर्णं यन्त्रके च,
जयति सखलरोगं राजरोगं विरोधात् ॥ २८८९ ॥
र. क. यो, दक्षनाऽधिकारे ।

भाषा—पुट पारा और शारिया ०-१ भाग, मुल्लापिठी
और इन्द्रज्योत २-२ भाग, सुर्नभस्म सगरे ३२ भाग
लेकर ताकरी कीरगोण्डकीतर चित्रक, पीतुभार और हंग-
राजकेप्यास कषया कापोसे १-१ दिन मर्दनकर लोकायन्त्र
मृगाङ्कर चारतइपडेमें छपेट २-३ कण्डमिठी देकर बंधेई

मुस्ताकर शरावसम्पुत्रमें बन्दकर लवणयत्रमें चारपहरकी अमि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीतककीमात्रा तत्तद्रोगहरानुपानकेमाथ देनेसे यह राज्यक्षम-प्रयुति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तविंश)

शुद्धस्य पलमादाय पारदस्य शुभेऽहनि ।
हेमरौप्यं पृथक्कान्तं वीनाप्ययसम्मितम् ॥ २८९० ॥
गन्धकश्च छिनिष्कं स्याच्चतुर्निष्कं तु माक्षिकम् ।
तन्मात्रं लोहभस्म स्यादेकैकृत्याऽखिलं रसैः ॥ २८९१ ॥
वाक्कुच्याः खल्वेद्येद्वसप्रितयं पाचयेत्पुनः ।
कुमार्याः स्वरसेनैव सप्तवारन्तु मार्कवैः ॥ २८९२ ॥
त्रिवारं नागवल्ग्यास्तु पञ्चवारात्रसेस्तथा ।
रेणुक्कान्यायतस्त्रिः स्युरेका जातिफल्द्रवैः ॥ २८९३ ॥
पञ्च धात्र्याश्च तोयेन वास्तुलोणीरसेस्तथा ।
निर्गुण्ड्याः स्वरसैः कार्यं पञ्चाङ्गप्रभवैर्नरैः ॥ २८९४ ॥
मृषिकायां निरुद्धयाऽथ सप्तधा पुट्माचरेत् ।
पञ्चाङ्गप्रभवेस्त्वेवं मुण्डयाश्च स्वरसैस्तथा ॥ २८९५ ॥
द्विवारं विभज्जनितैस्त्रिधा कृष्माण्डकादिभिः ।
विडङ्गशारिधान्याथैर्भांयित्वा पुनः पुटेत् ॥ २८९६ ॥
सप्तधा मत्स्यभूनागमेककर्मैतकोद्भवैः ।
पिचैः सम्मर्दयेत्तत्राऽसृजा कुक्कुटस्य च ॥ २८९७ ॥
छागस्केन सम्मर्द्य सप्तधा पुटयेन्नृपक ।
शृङ्गणं कृत्वा तु तं सतं शुभे कारण्डके क्षिपेत् ॥ २८९८ ॥
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत वातक्षयनिवृत्तये ।
घृतौदनं भवेत्पथ्यं सिद्धार्थं ब्रह्मेहलेपनम् ॥ २८९९ ॥
समुद्रफलभाङ्गीभ्यां श्लेष्मक्षयनिवर्हणम् ।
घृतौदनं समरिचं पथ्यमभ्यङ्गकर्मणि ॥ २९०० ॥
गुण्ठीघृतविमिश्रं हि तत्रैः सप्ताहमाचरेत् ।
भाङ्गीक्षिताऽनुपानेन पिचश्लेष्मक्षयापहम् ॥ २९०१ ॥
पथ्यं सक्षीरमरिचं घृतं गव्यं हितं भवेत् ।
अभ्यङ्गे घृततैलं स्यात्पिप्पलीशर्कराऽन्वितम् ॥ २९०२ ॥
वातपित्तक्षयं हन्ति भोजनं सघृतौदनम् ।
भाङ्गीशुस्वरसैर्भुक्तं श्लेष्मवातक्षयापहम् ॥ २९०३ ॥
शीतं घृतौदनं पथ्यमभ्यङ्गं तिलतैलतः ।
निर्गुण्ठीकाकामाचीभ्यां क्षयं हन्ति त्रिदोषजम् ॥ २९०४ ॥
शर्करापिप्पलीसर्पिं मिश्रमत्रं हितं भवेत् ।
दधिसर्पिर्घृतं कुर्यादभ्यङ्गं सप्तधा परम् ॥ २९०५ ॥
रक्षस्यं कथितं सम्यग्रसेन्द्रो राज्यक्षमणि ।
मृगाङ्क इति विख्यातः प्राणिनां धातुपोषकः ॥ २९०६ ॥
र.क यो , राज्यक्षमणि ।

भाषा—शुभमुहूर्तमें शुद्धपारा १ पल, सुवर्ण, रजत, कान्त-लोहमक्षम और शुद्धगन्धक २-२ तोले, सुवर्गमाक्षिक और लोह-भस्म ४-४ तोले लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर एकरोज शुद्धमर्दनकर वाङ्गचीके स्वरस अथवा

काथये तीनरोज मर्दनकर सुखादे फिर दुमारीके स्वरसमें ७ दिन, भगोबरससे ३ दिन, पानेवरससे ५ दिन, रेणुक्कान्यासे ३ दिन, जायफलकेकाथसे १ दिन, आवला, ब्युआ, लुणी और निर्गुण्ठीकापत्राङ्ग इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे ५-५ दिन भावनाएं देकर गोलावनायमुखाकर ४ तहसपडेमें लपेटकर ६-६ बपइमिठी लगाय सुखाकर शरावसम्पुत्रमें बन्दकर ३-३ बपइमिठी लगादे । सुनेपर भूधरयत्रमें ५-५ सेरकण्डोकी सात आंचेदे । औपधरो सम्पुत्रमेंसे न निराले । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निरालकर गोरखमुण्डीके पत्राङ्गकेस्वरससे २, सोंठकेकाठसे ३, कृष्माण्डादिण (कृष्माण्ड, वटुक, कालशाक, ककंदी, ककंठ्य, ककौटक, कलिज, करमर्द, करीर, वतक, कचोह, काञ्जिक), विडङ्ग और शारिवाके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे ३-३ भावनाएं देकर पूर्ववत् शरावसम्पुत्रान्त त्रियाकर सात आंचे दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मण्डलीकापित, केंचुआंका स्वरस, मेंढ रुवापित, केंकड़ेका स्वरस, पाचोपित, बुक्कुट और बक्केका रक इनप्रत्येककी १-१ भावनादेकर गोला बनाय सुखाकर चारतहकपडेमें लपेट २-३ बपइमिठीदेकर सुनेपर शरावसम्पुत्र में बन्दकर पूर्ववत् ५-५ सेर कण्डोकी भूधरयत्रमें ७ आंचे दे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पीसकर शीशोंमें रखओड़े । इसमेंसे १-१ रतीकीमात्रा घी, मलाई, मक्खन प्रयुति वातहरानुपान केमाथ वातक्षयमेंदे । घी और चावल पथ्यमें द, कुटैलका अभ्यङ्गकरे । समुद्रफल और भारङ्गीकेसाथ श्लेष्मक्षयमेंदे । घी, चावल और मिचं पथ्यमेंदे, सोंठ घी और छाछका ७ दिनतक अभ्यङ्ग करावे । भारङ्गी और शकरकेसाथ पित्तश्लेष्मक्षयमेंदे, गायकाथी, दूध, और मरिच पथ्यमेंदे, घी, तैल और पीपलका अभ्यङ्गकरावे । पीपल और शकरकेसाथ वातपित्तक्षयमेंदे, घी और चावल पथ्यमेंदे, भारङ्गी और ईखकेरसेसाथ श्लेष्मवात क्षयमेंदे, ठंडे चावल और घी पथ्यमेंदे, तिलकेतैलसे अभ्यङ्ग करावे । संभाळ और मकोयके रससे त्रिदोषक्षयमेंदेकर शकर, पीपल और घीमिश्रित अत्र पथ्यमेंदे । घीमिलेहुए दहीसे अभ्यङ्ग करावे । इसतरह तत्तद्रोगहरानुपान, पथ्य और अभ्यङ्गकेसाथ इसका प्रयोगकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६३३ ॥

६३४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टाविंशः)

स्याद्रसेन समं तीक्ष्णं तुत्यश्च द्विगुणं तयोः ।
गन्धकं तैः समं प्रोक्तं रसापादश्च दङ्गणम् ॥ २९०७ ॥
शुक्तिरुन्दरसैः पिष्ट्वा तत्सर्वं गुलिनीकृतम् ।
भाण्डे लवणपूर्णं तत्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ २९०८ ॥
मापकत्रितयेनाऽथ माहिवाऽऽप्येन संयुतम् ।
दशमागधिकायुक्तं देयञ्च मधुनाऽथवा ॥ २९०९ ॥
गुञ्जीमितं मरीचेश्च नागवल्गुदलान्वितम् ॥ २९१० ॥
मृगाङ्कनामयोगोऽयं राज्यक्षमनिवर्तकः ॥ २९१० ॥
र.क यो , राज्यक्षमणि ।

भाषा—गारा और लोहभस्म १-१ भाग, तुत्यभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, सुहाया १ भाग लेकर सबका बारीक

चूर्णकर लहसुनकेरसस १-२ रोच मर्दनकर गोलावनाय सुलाकर चारतदकपड़ेमें लपेटकर ३-४ कपडमिटो देवे । सुखनेपर शराव सम्पुत्रमें बन्दकर २-३ कपडमिणी देकर सुलाकर लवणयन्त्रमें रख चारपहरकी मध्यम अग्नि देव । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीसीमात्रा ३ मास भेषमें पीनेसाथ अथवा १० पीपल और मधुके साथ अथवा १० मरिच और पानकेरसकसाथ देनेस यह सबप्रकारके राच यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६३५ मृगाङ्करसः (राजाघ) (ऊर्नाश)

नीलरज्जाऽहिवैदूर्य महानील प्रवालरुम् ।
 गामेर्द्ध मौक्तिकञ्चैव माणिक्य पुष्परामरुम् ॥ २९१० ॥
 ताम्र तीक्ष्णाऽध्रकं किट् कान्तसिद्धरहाटकरुम् ।
 गन्धसूत चिपं ताल समाश चित्ररुद्रैव ॥ २९११ ॥
 तन्मूलिकारसे मर्यं बालुकायन्त्रके पचेत् ।
 दिनाऽर्धं लयणैर्युक्तं स्वाहशीतलमुद्धरेत् ॥ २९१२ ॥
 वाराहीटङ्कणश्राफ्किंशुकैश्च सुभावित ।
 मृगाङ्को योगराचाऽय दृष्ट प्रत्ययकारक ॥
 भक्षयेत्प्रतिकामान क्षयरामादिनादान ॥ २९१३ ॥
 र ब यो , राचयक्ष्माधिकारे ।

भाषा—नीलम, हीरीसीमन्म सफा नहरमोहरा (सर्पका नहरमोहरा न मिलनेपर चाह निष्का डालसकहै) लवणिया ऊबेदेईरानीलम प्रवाल, गोमेद मोती, माणिक्य पुषराच, ताम्र फोलाद अद्रक और मण्डर इनसगरी भस्में बान्तजोह कीशालभस्म सुवर्णभस्म शुद्धगन्धक, पारा बछनाग और हरिताल सबसमभाग लेकर सफा बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीचकणैरुझलीमें मिलाकर १-२ रोच मर्दनकर चित्रमूलक साथसे ७ रोचमर्दनकर गोलावनाय सुलाकर चारतद कपड़ेमें लपेट ३-४ कपडमिणी देकर शरावसम्पुत्रमें बन्दकर १-२ कपडमिणी लगाकर सुखनेपर लवणयन्त्रमें दोपहरकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर चाराहीकन्द, सुगण श्राप और टाक इनके स्वस अथवा कायोंसे ३-३ भावनाए दहर सुलाकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ रती तसरोहदागुननकेसाथ देनेन क्षयप्रयति समस्तलोकोघ्नो यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ मृगाङ्करसः (राचघ) (त्रिश)

प्रथाऽंशा मारिताल्यूतादेकांशतो हर्ममस्मत् ।
 एकांशता मृतताम्रस्य शिलागन्धश्च तालकम् ॥ २९१४ ॥
 प्र येकं भागयुग्मं स्यादेतत्सर्वं त्रिषृणैव ।
 यदाटी पूरयेत्तन छागीझारण द्रुग्म् ॥ २९१५ ॥
 पिन्ना तेन मुख रज्जा मृन्नाण्डे ताद्य धारयेत् ।
 शुष्क पथेद्रज्जुने स्वाह्नागत सम्पुद्धरेत् ॥ २९१६ ॥
 रसा राजसृगाह्नाऽयं चतुर्गुणं क्षयापह ।
 मरिचस्त्रयविनात्या कणामि दशभिस्तथा ॥ २९१७ ॥

मधुना सर्पिया चाऽपि दद्यादेत रस सिष्यक ।
 अनेन नश्यति श्मिप्र घातश्चे मभव धय ॥ २९१९ ॥
 भा प्र र स, नु यो त, र सु र र स, र र, वै र, भै र, ध, र क, चि सा, र चि, रसचि वा र म, र र ही नि र, शा स यो त र प्र सु, रसायनवार, र म मा, र च, र को रसायनम, चि र भ, र प्र, नि क, र स क, यो र, र का यो म र क यो, वै चि, रस स, र क ल, दो, र पा, राजयक्ष्मणि ।

पि—वै चि वा भयमृगाङ्कृति नाम । कुत्रचित्ताग्रस्थाने ताद निधानितम् । रमरीमुवा थाय रिकायात्र गन्धमस त्रिभाग समानि भवन्तश्च इमभ्यैते दृढमिति पाठा नूनतया बहिष परतु पीकहृद्गन् मृन्नाण्डेरनिर्दिष्टवास्तवभरणतश्च विभागत्रन समारबन्तिकाचयश्चैव प्यैरुद्धरेत् बुद्धे पथवसानाताम्रभस्मनि चतुर्भागान् हेमभस्मनि च पञ्चभागं च प्रत्युपयानम् परतु अथ पथर रविमुत्तौर्गन्धैवदपितम् । अथ पाठस्य मूल्युत्तरिर्निर्दिष्ट पाठ एवाऽस्ति बह्वन्वयत्वात् । रसरत्नापिराशाना प्रत्युपस्थितस्ययु सकल पूर्ववर्तितान्त्वत्ताम्रभ रमन पञ्चभागैव हेमभस्मन्तश्च द्विभाग्यच मनसि सकल्पित प्रतिभाति । चतुर्भागपञ्चभागया कयना तु पथरपयनाऽप्यादेव प्रतिकलिम्ब तत्रा दार्ढ्यनिवृत्त । हेमभस्मना दिग्गुणत्रन योग्येत् न विधिभक्षिर इति विद द्विर्विभावेर्नियम् । कातावापारवित क्षयस्मनमहाधासायगुप्रमहा न्यागऽस्यमारजेता प्रतिनिवर्तिता-नौरथापिन्ती इति परत्याग विनेपयित्स्त्रि ष्व ॥

भाषा—चारदभस्म ३ भाग स्वयभस्म १ भा, ताम्र भस्म १ भा, शुद्धमसिल, गन्धक और हरिताल २-२ भाग लेकर बखलाकर पीलीकौड़ियोंमेंमर्दे । फिर शुद्धाफसो बगरी बंदूनों पीपलकर कौड़ियोंका सुष्पन्दकर मिर्गिफवतनेमें भरो सम्पुत्रकर सुलाकर गजपुत्री आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीसीमात्रा १९ कालीमिर्च अथवा १० पीपल और मधु तथा पीनेसाथ देनेसे वातश्लेष्म प्रथान्तय नष्टहोताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ मृगाङ्करसः (राजाघ) (एत्रिश)

हेमसूते द्रमुक्ताना गन्धस्य रविभस्मन ।
 रजतस्य प्रवालस्य भागयुक् प्रमाद्भवत् ॥ २९२० ॥
 सर्वमेतत्तु सप्तियव्य वाराहीचन्द्रवारिणा ।
 त्रिदिने गालक कृत्वा मृषया सन्निराद्ययेत् ॥ २९२१ ॥
 भाण्डे लययुग्मं तु पचेत्तामचतुष्पथम् ।
 उज्ज्वल तस्मिन् शाते च निपनुष्ठित क्षिपेत् २९२२
 निरत्यं निहित यज्ञमलाभे पाडनादात् ।
 येनगतमस्म क्षेत्रस्य रागे मनुकगयुत्तम् ॥ २९२३ ॥
 क्षयं माघ श्वाभ्रसासायवर्षितमराचकम् ।
 गुल्म हाहादं मर् मन्ना घातान् मन्नामला २९२४
 एतन्नामयान् हस्ति मज्जं चाऽऽनरीगम् ।
 दिव्यतेजायन् कान्तिमायु प्रतापशाऽयंरत्न २९२५
 रसायनं, राचयक्ष्मणि ।
 पि—सर्वे कर्णमृगाङ्कृति नाम । कुत्रचित्ताग्रस्थाने ताद निधानितम् । रमरीमुवा थाय रिकायात्र गन्धमस त्रिभाग समानि भवन्तश्च इमभ्यैते दृढमिति पाठा नूनतया बहिष परतु पीकहृद्गन् मृन्नाण्डेरनिर्दिष्टवास्तवभरणतश्च विभागत्रन समारबन्तिकाचयश्चैव प्यैरुद्धरेत् बुद्धे पथवसानाताम्रभस्मनि चतुर्भागान् हेमभस्मनि च पञ्चभागं च प्रत्युपयानम् परतु अथ पथर रविमुत्तौर्गन्धैवदपितम् । अथ पाठस्य मूल्युत्तरिर्निर्दिष्ट पाठ एवाऽस्ति बह्वन्वयत्वात् । रसरत्नापिराशाना प्रत्युपस्थितस्ययु सकल पूर्ववर्तितान्त्वत्ताम्रभ रमन पञ्चभागैव हेमभस्मन्तश्च द्विभाग्यच मनसि सकल्पित प्रतिभाति । चतुर्भागपञ्चभागया कयना तु पथरपयनाऽप्यादेव प्रतिकलिम्ब तत्रा दार्ढ्यनिवृत्त । हेमभस्मना दिग्गुणत्रन योग्येत् न विधिभक्षिर इति विद द्विर्विभावेर्नियम् । कातावापारवित क्षयस्मनमहाधासायगुप्रमहा न्यागऽस्यमारजेता प्रतिनिवर्तिता-नौरथापिन्ती इति परत्याग विनेपयित्स्त्रि ष्व ॥

पूर्वमिन्द्र नास्ति पूर्वमिन्द्रसुख्य दङ्गमस्ति अत्र तु तन्नाऽस्ति इति महाश्विनोपेक्षित, वस्तुतस्तु पूर्वरसयैनाऽप्यमग्नशोऽस्तीति गृह्यहस्पयम् ।

भाषा—सुवर्ण, पारा, मोती इन्दीमन्मै, शुद्धगन्धक, ताम्र-मस्म, रजत और प्रवालमस्म येस्य त्रयमृद्धभागेसे लेकर कज्जलीक' वाराहीचन्दके स्वरससे तीमदिततक मर्दनकर गोलाबनाय मुखाकर चारतहसमुद्रमें लपेट २-३ कपड़मिठी कर सुखनेपर शरावसमुद्रमें बन्दकर कपड़मिठीलाकर सुखादे फिर लवणयत्र-में ४ पहरकी आचदे । स्वाशशोतलहोनेपर निकालकर १०० नग शुद्धचिलोका चूर्ण और निरुध्य हीरकीमस्म सोलहवां भाग मिलावे । हीरके अभावमें वैक्रान्तमस्म लाकर रखलोड़े । इसमेंसे १-१ रती मधु और पीपलकेसाय देनेसे क्षय, मन्दाग्नि, श्वास, कास, अम्लपित्त, अरुचि, गुल्म, प्रीहा, उदररोग, प्रमेह, समस्तवातविकार, कामला, झूल, पथरी इनसबको नष्टकर तेज, कान्ति, आयु, बुद्धि और बखरी बढ़ाताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ मृगाङ्गरसः (राजाद्यः) (द्वात्रिंशः)

रसमस्म त्रिभागं स्यात् पद्भूभागं हेममस्मकम् ।
मृततारञ्च भागेकं वज्रञ्चैव चतुर्गुणम् ॥ २९२६ ॥
गोमेदकं द्विगुणकं काश्मीरं सप्त मौक्तिकम् ।
पद्मरागञ्च नीलञ्च राजावर्तं तथैव च ॥ २९२७ ॥
तार्क्ष्यं सुपर्णवैक्रान्तौ प्रवालं हेममाक्षिकम् ।
वैदूर्यं पुष्परागञ्च नागवद्भौ च तीक्ष्णकम् ॥ २९२८ ॥
कान्तं गन्धं व्योमसत्त्वं पञ्चभागं पृथक्पृथक् ।
शतपत्ररसेनेयं मर्दितञ्च दिनत्रयम् ॥ २९२९ ॥
काचकूप्यां धिनिःक्षिप्य यत्रे विद्याधरे पचेत् ।
कुङ्कुमाऽगुरुकस्तूरिमर्दितञ्च पृथक्पृथक् ॥ २९३० ॥
ख्यातो राजमृगाङ्कोऽयं रोगराजं निवारयेत् ।
पीनसं श्वासकामीं च पाण्डुकामलशीतलम् ॥ २९३१ ॥
शोफोदराशोऽग्रहणीचातपित्तहलीमकान् ।
दीपनं वृष्यमायुष्यं श्रीकान्तिवल्लवधेनम् ॥ २९३२ ॥
योजयेदनुकूलैश्चाऽथवाशौद्रकणान्वितम् ।
वातघ्नैरेव तत्पीतं घान्तिप्रीतनिवारणम् ॥
भोजनं हेमपात्रे स्यादथवा कदलीदले ॥ २९३३ ॥

वै चि, र, क यो, वा, र पा, क्षये ।

टि०—र, क यो. सुवर्णमृगाङ्क, वा महाश्वयमृगाङ्क इति नाम । रसपारिजिते एकभाग स्वर्णमस्म नियोक्त नाम च नवरत्नराजमृगाङ्क इति स्थापितम् ।

भाषा—पारदमस्म ३ भाग, सुवर्णमस्म ६ भा, रजतमस्म १ भा., हीराभस्म ४ भा, गोमेदमस्म २ भा, केसर और मोती ७-७ भा, माणिक्य नीलम, लाजवर्द, पद्म, बहरवा, वैक्रान्त, मृंगा, सुवर्णमाक्षिक, लमनियां, पुसराज, नाग, वज्र, फोलाद, कान्तलोह और अत्रकसत्त्व इनसबकी मस्मै तथा शुद्ध गन्धक ५-५ भाग लेकर सबकी कज्जलीकर कमलकेफूलके रससे तीनदिनमर्दनकर मुखाकर ६-७ कपड़मिठी दीहुई आतशी-शीशीमें डालकर बालकायन्त्रमें पकावे । स्वाशशोतलहोनेपर

निकालकर केसर, अगर, कस्तूरी इनप्रत्येककी १-१ भावना देकर मुरारार रखलोड़े । इनमेंसे १-१ रती ततद्रोगहरानुपान-केसाय देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । विशेषतः पीनस, श्वास, कास, पाण्डु, कामला, शीतपित्त, सूजन, आठ उदररोग, बवासीर, सङ्गुहणी, वातपित्त, हलीमक, इनसबको नष्टकरताहै । पीपल और मधुकेसायदेनेसे मन्दाग्नि, नुपुंसकता, अग्न्यायु, धी, कान्ति और बलके अभावको दूरकरताहै वातम अनुपानोंकेसाय देनेसे वाग्नि और शीतको निरुत्त करताहै । इसक सेवनकरने-वालेको सुवर्णपात्र अथवा केलेके पतेमें भोजन देना चाहिये ६३८

६३९ मृगाङ्गरसः (राजाद्यः) (त्रयत्रिंशः)

मुक्तातारपविप्रवालशिलजं स्वर्णं निरुद्यं पुनः,
गन्धं पारददङ्गणे विपयुते सम्प्रदयेद्वाद्रैकैः ।
माध्या नागलतादलादथवृष्यानीरेण गोलं पचे-
द्यत्रे लावणिके दिने रसवरः सिद्धो मृगाङ्गाऽभिधः ॥
मान्द्ये चोपगन्धसर्पिषा मधुकणा मेदःक्षये गुल्महृत्,
शुण्ठ्याऽजातियुतोऽधिवह-
मशितः सोऽयं त्रिदोषघ्नरे ।
देयो मोहतृपासु शोपजडरे चातुर्थिकादी ज्वरे,
मेहप्रीहमरुद्द्राऽङ्गुरगदे श्वासे च पाण्डौ क्षये २९३५
पाण्डुशोऽपस्मृतिपीनसे ज्वररुजां भूतेषु बालामये,
रोगानेकविधाऽनुगानवशतस्तत्सौख्यदोऽयं रसः ।
आयुः पुष्टिरलप्रसादकरणो लावण्यकान्तिप्रदो-
नित्याऽभ्यासवशादनन्तकलदो भूपैः सदा सेव्यताम् ॥
र. शं., राजयस्मणि ।

भाषा—मोती, रजत, हीरा, मृंगा, मेनसिल, सुवर्णइन्दी-मस्म, शुद्धगन्धक, पारा, मुशगा और बडनाग समभाग लेकर वारीकचुनेकर पारिगन्धकको नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर अद-रस, मकोय, पान और अङ्गाके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय मुखाकर चारतह कपड़में लपेट २-३ कपड़मिठी देकर सुखनेपर शरावसमुद्रमें बन्दकर ऊपरसे २-३ कपड़मिठी देकर लवणयत्रमें एकदिनको मध्यम अग्निसे पकावे । स्वाश-शोतलहोनेपर निकालकर रखलोड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीसक औषिती देखकर मरिच और पीकेसायदे । मधु और पीपल-केसाय मद्देजनिवहयमेदे । सोंठ और जीरकेसाय गुल्ममें दे । त्रिदोषघ्नज्वर, मोह, प्यास, शोफ, उदररोग, चातुर्थिकादि विषमज्वर, प्रमेह, प्नीहा, वायु, बवासीर, श्वास, पाण्डु, धातु-क्षय, नुपुंसकता, अपह्मार, पीनस, साधारणज्वर, सूतवाधा, बालराग, श्ल्यादि समस्तरोगोंको यह ततद्रोगहरानुपानकेसाय देनेसे नष्टकरताहै । इसके रोजाना सेनसे आयु, पुष्टि, बल, लावण्य और कान्ति बढ़तीहै ॥ ६३९ ॥

६४० मृगाङ्गरसः (राजाद्यः) (चतुत्रिंशः)

सूतं गन्धं वरदकुन्दी तालकं ताम्रमस्म,
स्वर्णं नागं गगनरसकं मौक्तिकं ताप्यवज्रम् ।

पतःसर्प त्रिदिनमृदितं रत्नमालाद्रवेण,
गुञ्जा चैका हरति सकलाग्रोगराजादिरोमान् ॥

र. सं. राजयश्मणि ।

भाषा—शुद्धगरा, गन्धक, शिगरिफ, मैनसिल और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण, नाग, अन्नर, खपरिया, मोती, सोना-माखी और हीरा इनकीभस्में समभागलेकर परिष्कृतकी नीलवर्णकजलीमें भिलाकर रतनत्रोतेके स्वरससे तीनरोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर चारतह कपड़ेमें बाधकर २-३ कपड़-मिठी लगाकर सुखादे । फिर शराबसम्पुटमें बन्दकर भूरग्यन्त्रमें दोसरे ऋणोंकी आचड़े । स्वाहाशीतलशोनेपर निकालकर रखाजोड़े । इसमेंसे १-१ रती तन्त्रोगहरातुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयप्रथति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ मृगाङ्करसः (राजाद्य) (पञ्चत्रिंशः)

सूताऽहिवज्रकरुके गन्धमौक्तिकविद्रुमम् ।
लोहताऽरकतापीजं शर्तं चित्रकरारिणा ॥ २९३८ ॥
मर्दयित्वा विचूर्णयाऽथ तेनाऽऽपूर्यं चराटकान् ।
टङ्कणेनाऽर्कयसा लिम्पेत्सर्पां मुखानि तु ॥ २९३९ ॥
चूर्णकभाण्डनिहितासुद्धा गजपुटे पचेत् ।
निर्गुण्ड्याद्राऽग्निपयसा भावयेत्सतथा पूयकम् ॥ २९४० ॥
रक्तिकाप्रमितं त्वेतत्पिण्डीशोर्दसंयुतम् ।
घृतोपणकयुक्तो धा रोगराजं निश्रुतति ॥
सर्वैरोगेषु वा दद्यात्सं राजमृगाङ्करम् ॥ २९४१ ॥
र सं. र क सो. राजयश्मणि ।

भाषा—गण, नाग, हीरा, सुवर्ण इनकीभस्में, शुद्धगन्धक और मुक्तापिठी, मृगा, लोह, रजत, तावा, सोनामाखी और शङ्ख इनकीभस्में सब समभाग लेकर कजली बनाय १-२ रोज चित्रकमूलके काषण्ये मर्दनकर बड़ेकीडोंमें भरके आकके दूधमें पीसे हुए मुहांगेसे इनका मुंह बन्दकर सुखाकर चूनापुत्रेहुए धारावोंमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठी चडानर सूखनेपर गजपुटकी आंचद । स्वाहाशीतलशोनेपर निकालकर निर्गुण्डी, अरख और चित्रक केरोंसे ७-७ भावनाए देकर सुखानर रखाजोड़े । इसमेंसे १-१ रतीहीमात्रा पीपल और मधु अथवा धी और मरिचके-साथ देनेसे यह राजयश्मको नष्टकरताहै । तन्त्रोगहरातुपानके-साथ देनेसे समस्तरोगोंको हरकरताहै ॥ ६४१ ॥

६४२ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (पञ्चत्रिंशः)

माणिक्यं नीलतुण्ड्यञ्च लघुनं स्फटिकं वलिम् ।
गोमदेकं मरकतं सुविश्राहकपर्दकम् ॥ २९४२ ॥
परिवेवं शङ्खनाभिं क्षुद्रमेकैःशाणकम् ।
तुत्पकञ्च शिलां ताल रीतिक्राधातुपञ्चकम् ॥ २९४३ ॥
ताम्रमण्डूकरकान्ताऽयस्वतारं ताप्यं मुञ्जङ्गमम् ।
पर्णं काञ्चनताप्यञ्च रसरुस्य च सत्वरकम् ॥ २९४४ ॥
अथोरसरुकोप्यञ्च मुक्ता च विद्रुमगततः ।
पेयान्तः घृतजं भस्म तुल्यं माषोत्तरं भवेत् ॥ २९४५ ॥

हेम सर्वाशकं सर्वसमानं गगनं धरम् ।
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेद्वातपे खरे ॥ २९४६ ॥
गन्धक्षीरेक्षुरजनीमालद्वयसुमुस्तकम् ।
शतान्तरिकुमायेतिवासापाठाकलत्रिकम् ॥ २९४७ ॥
तामलत्रयमृता शूद्रा भाङ्गी कट्टी कटुत्रिकम् ।
विदारी कदलीकरुं कसेद-मंघुयष्टिका ॥ २९४८ ॥
कादमर्गयोक्षुरं पञ्चे जयंती भृङ्गराजकम् ।
अगस्त्योलाङ्गली तालवृली मुण्डी च जीरकम् २९४९ ॥
पञ्चमूली मोचरसः पलाशाऽङ्गि वलाद्वयम् ।
श्रीमूलं वटशूद्राणि पञ्चरुदञ्च पायकम् ॥ २९५० ॥
चातुर्जातशटीमांसीकुण्डजातीफलोद्भवेः ।
शतपत्रैः पूयकं सप्त हिमकुङ्कुमयो. क्रमात् ॥ २९५१ ॥
कर्पूरमृगनाभिभ्यां रसराराजोत्तमो भवेत् ।
चल्लयश्चपलया सितया मधुसर्पिणा ॥ २९५२ ॥
मेहाऽशी क्षयगुलमोष्णवातव्याधुदराणि च ।
ग्रहणांशोपकुण्डानि पाण्डुशलाऽप्लवितकम् ॥ २९५३ ॥
कासश्वासाऽग्निमान्द्यञ्च रक्तपित्तं भगन्दरम् ।
ग्रीहाऽतिसारहिक्माश्च घातक्तयगन्धरान् ॥ २९५४ ॥
वलिं जरां स्त्रीयधैक्ष्य रोगानन्याञ्चपेयरम् ।
अमितायुं वलं पुष्टिं वीर्यवृद्धिं दृढां दशम् ॥ २९५५ ॥
खीनुंसुबुद्धयैश्च श्रियं प्रसां स्मृतिं शुभाम् ।
रसो राजमृगाङ्कोऽयं परं प्रोक्तः रम्यायनम् ॥ २९५६ ॥
र श. र. बो. राजयश्मणि ।

भाषा—माणिक्य, नीलम, पुत्तराज, लपनिया, स्फटिक-मणि, गोमेद, पत्रा, सीप, शङ्ख, पीलीकौडी, गोमतीचक, शङ्ख नाभि, छोटे सरले इनसबकी भस्में और शुद्धगन्धक ४-४ मासे, शुद्धतुलिया १ मा, मैनसिल २ मा., हरिताल ३ मा., पीत लभस ४ मा., हीराभस्म ५ मा, तावा ६ मा, मण्डू ७ मा., कान्तलोह ८ मा, रूपामाखी ९ मा., नाग १० मा, वज्र ११ मा, सोनामाखी १२ मा, खरपरव १३ मा, लोह १४ मा, खरपर १५ मा, चादी १६ मा, मोती १७ मा, मृगा १८ मा, पैरान्त १९ मा, पारा २० मा, तुण्ड २१ मासे इनसबकी भस्में तथा सुवर्णभस्म राससे चतुर्थांश और अन्नरभस्म सबकी बरानर लेकर सबको एकदिल शुद्धमर्दनकर गोदुग्ध, ईसाका-रख, हन्दी, तगलगटोला, नामरमोषा, मोषा, धातार, पीडु-आर, चित्रक अदुवा, पाठा, त्रिकला, मुंदिभांवा अथवा इला-यची, गिलोय, काकडालोंगो, भारती, कुट्टी, त्रिकटु, विदारी, कदलीकरुद, कसक, सुशुटी, गभारी, गोसक, लाल और सफेद बमल, जैत, भगरा, अगन्ध, करिहारी लाम्बूरी, गोरगमुडी, जीरा, पयमूली (मोरलेवा म०), मोचल, पलाशकी जड़की टाल दोनों रौंटी, चेत्रीज, वटहट्टे, पदरुद, गिनीसं चातुर्जात, कपूर, जटामांवी, वृद्ध जायकन, गुणव इनचपेछे स्वरग अथवा वापोंमें और सफेदबन्दन, बेरग, कपूर, हन्दी इनप्रत्येकके शोभे ७-७ भावनाए देकर सुखाकर रखाजोड़े ।

इसमेंसे ३ से ६ रत्नीतन्त्रीमात्रा औचित्य देखकर पीपल, शकर, मधु और धौकेमाथ देनेसे प्रमेह, वशासीर, धय, सुल्म, उष्णरोग, उदररोग, सङ्गहणी, कुष्ठ, पाण्डु, झूल, अम्बुलित, कास, श्वास, मन्दाग्नि, रक्तपित्त, भगन्दर, ग्रीहा, अतिपात्र, द्विचरी, वातरक्त, स्रवतरद्वेषण, ज्वर, बलीपलित, सुदापा इनसबको यह दूरकरताई । हमेशा सेवनकरनेसे आयु, बल, सुष्टि, वीर्य, रष्टि, कान्ति, बुद्धि, स्मृति चेतन बढ़तेहैं ॥६४०॥

६४३ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (सप्तत्रिंशः)

सुवर्ण रजत कान्तं ताम्रं त्रुपुससीसकम् ।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं कमबुद्ध्या कृतांशकम् ॥२९५७॥
व्यामसत्त्वभयं भस्म सर्वस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
कज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरैः समांशिकाम् ॥ २९५८ ॥
प्रद्राव्य लोहपात्रेऽथ पूर्वभस्मचयं क्षिपेत् ।
काष्ठेनाऽऽलोच्य तत्सर्वं सद्रथं हि समाह्वयेत् ॥२९५९॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तवारं विभावयेत् ।
आकुलीवीजसम्भृतन्यायलोहेन यत्नतः ॥ २९६० ॥
रद्धं तन्महामृगायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः ।
इति मिद्धो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पट्टगालितः ॥२९६१॥
कान्तपात्रस्थितो राशौ जलेस्त्रिफलसंयुतेः ।
गुञ्जात्रयमितः प्रातर्दातन्यो मेहोरोगिणाम् ॥ २९६२ ॥
मृगचारिमुनीन्द्रेण मेहवृहद्विनाशनः ।
निर्दिष्टोऽयं रसो राजमृगाङ्क इति कर्तितः ॥ २९६३ ॥
दीपनः पाचनो वृष्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः ।
तापघ्नो रुचिकृत्सर्वरोगघ्नो योगसंबुतः ॥ ३०६४ ॥
र र. स, र को, र. मु, प्रमेहः । र को सिंहशाईल इति नाम ।

भाषा—सुवर्ण १ भाग, रजत २ भा, कान्तलोह ३ भा., ताम्र ४ भा, वक्र ५ भा., नाग ६ भा., इनसबकोभस्मं, अत्र कसतवमम २१ भाग, सुदपार और गन्धककीकजली ४२ भाग लेकर लोहके कचछमें कजलीको गलाकर पूर्वकी समस्तभस्मोंको डालकर बाधे चलाकर एकजीवनरदे । इनको पर्यंठी विद्यालये छटार घाटीर पीसकर अष्टौलरीजोंके फलसे १-२ रोज मर्दनकर गोलामनाय मुन्वाकर चारह छेदेकचछमें बाँझ १-२ कपडमिठी बरदे । सूतलेपर शरावगन्धुमें बन्दर २-३ कपडमिठीके मुत्तार मूपरधमं दोसेर रुदासी भाचदे । स्वाह-शीतलदोनेपर निगालर रगछाडे । इसमेंसे ३ रत्नीकीमात्रा मधुमें मिलाकर कान्तलोहके पात्रमें रातभर रहनेदे । मुषदमें त्रिचन्द्रके जलनेसाय इसको छेदेसे यह तनाम प्रमेहाका नट-करताई । तत्ररोगहदानुगन्नेसाय देनेसे मन्दाग्नि, नपुषकता, प्रद्वी, पाण्डु, ज्वर, अग्नि रुदादिरोगोंको नटकरताहै ६४३

६४४ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (अष्टत्रिंशः)

मृताऽस्रांशं हिरण्यताम्रत्रिकान्ताऽपरमपुप्रागकान्, गौतमिन्द्रमयस्रंरत्नमुमानेपडान्ममानान्हेत् ।

एकीकृत्य सुगाढमेव रक्के सम्मर्द्य तद्भावये,-
चातुर्जातविदारिगोक्षुरगुहृचोव्यालरम्माजलेः ॥
काङ्कुरैः सुरसाहृशतवृषके गोक्षीरतः सप्तधा,
भाव्यो भृङ्गशतावरीमुशलिङ्गानोरैः कृतं गोलरुम ।
गुफं सम्मुद्योगतो लवणजे यन्ने पचेयामकं,
मधं मधमथोऽयतायं सुहिमेंसिद्धास्ततः पूजयेत् ॥
कस्तूर्यां स च भावितश्च रसरापनाम्ना मृगाङ्को भवेत्,
सेव्यो चल्लमितः कणामवुयुतः सर्वानशेषाजयेत् ।
यक्ष्माणं ग्रहणी प्रमेहनचयं नाफोदरं क्षीगतां,
अशोऽरोचक वातरोगनिवहाङ्गीणजगन्ध्रातुगान् ॥
र. को, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—गारा, अत्रक, सुवर्ण, रजत, सुवर्कान्त, फोलाद, वह, नाग, सीप, प्रवाल, हीरो, वैजान्त और ताक्ष इनसबकी भरमें समभाग लेकर एकदिन राती मर्दनकर चातुर्जात (तत्र, पत्र, इलायची, नागकेसर), विदारिकन्द, गोरारु, गिलोय, चित्रक, केलाकन्द, कचूर, तुलसी, सफेदकन्दन, अहुमा, गायत्रादूध, भंगरा, दानार और मुसली इनसबके यथासम्भवं स्वरस अथवा ज्ञापोसे ७-७ भावनाए देकर गोला बनाय मुत्तार चारह कचछमें छपेट २-३ कपडमिठी देकर सूतलेपर शरावसम्पुटमें बन्दर एम्पहर लवणयन्त्रमें मन्द आचरेके । स्वाहशीतलदोनेपर निगालर मिद्ध और साधुभोजा पूजनर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रत्नीकीमात्रा १० पीपल और मधुके साथ देनेसे राजयक्ष्म, मद्गहणी, प्रमेह, मृजन, उदररोग, क्षीणता, अर्थ, अधिचि, वातरोग, जोगेज्वर, धातुगतज्वर, इन सबको यह नटकरताहै । इसके अनिरीक तत्ररोगानुपानकेसाय देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ मृगाङ्करसः (राजाद्यः) (ऊनचत्वारिंश)

कयंकमानो रसगन्धको हि
स्वादेममसमप्रभयः पित्तुश्च ।
शुद्धस्य वक्षस्य पित्तुश्च तठ-
त्तया च मुक्तां द्विपिचुप्रमाणाम् ॥ २९६८ ॥
पात्रांशतष्टुण्णकं प्रदद्या-
त्तयसे त्रिमर्चाऽथ महाऽम्बुलेतम ।
नद्रावयेद्वै यस्काञ्चिरेन
प्रमर्द्य सर्वं दिनसप्तकेन ॥ २९६९ ॥
गालं विधायाऽर्चकरै विशोष्य
मृगगतं तं खलु पाचयेद्वि ।
शीतं समुज्वल्य तना रसेन्द्रो
त्रिगुण्यं घाषो यच्छेदसाय ॥
हेमस्त्रभाये रजतस्य पात्रे
नाऽन्यस्य पात्रेषु निवेदनीयः ॥ २९७० ॥

अयं राजमृगाङ्काऽऽन्या योगराजस्य घातकः ।
पर्यं पूर्वानिचिना कारयेन्मतिमान् भिन्नकामः २७१॥
र र. मु, रस ग र. क को, राजयक्ष्मणि ।

चूर्णयेत्तदनु हेमपत्रिकां सूतमस्म विपगन्धमौक्तिकम् ।
वृद्धितश्च परिमर्दयेत्ततश्चित्रकाऽऽर्द्रकरसेन यत्नतः ॥
पूर्णचन्द्रवद्यं विपाचितो जायते मृतकजीवरो रसः ।
पूर्णचन्द्रवद्यश्च योजितो रोगहा भवति वीथ्युष्टिदः ॥
र. दी., र., सर्वरोगे ।

टि०—अथ पाठस्याऽऽशयमनुष्ठा रसाञ्जनेर स्वकौलकल्पनयाऽन्य.
पाठो प्रविणस्स मुद्गरिनादेव इति रहस्यम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बलनाग, गन्धक, कौड़ी और नागमस्म,
सब समभाग लेकर सबकी नीलवर्णचन्दीकर चित्रककेकापसे
१-२ रोज मर्दनकर कस्क बनाकर चारभागकरे । एकभागको
शरावमें थिठाकर ऊपरसे कलकके बराबरवज्रना सुवर्णका वारीक
पत्र रख दूसरे शरावसम्पुटसे बन्दकर २-३ कपड़मिठीदेकर
किसी ठीकरमें रखदे । ऊपरसे चारअहुल ताजी राखको जमाय
एक पहाकी साधारण आबदे । स्वाद्वशीतलहोनेपर धीरेमे मुद्रा
उघाड़कर कलका दूसराभाग पूर्ववत् जमाकर दूसरी आबदे ।
ऐसेही तीसरी और चौथी आबदे । ऐसाकरनेसे सुवर्णपत्रकी
भस्म होजायगी और शरावमें सफेदरूपोंकी पारदभस्म मिलेगी
उसे घुस्कर अलग रखले फिर सुवर्णभस्म १ भा, पारदभस्म
२ भा., शुद्धबलनाग ३ भा, शुद्धगन्धक ४ भा, मौक्तिकपिष्टी
५ भाग लेकर चित्रककरसेसे १-२ रोज मर्दनकर पूर्णचन्द्रसकी
तरह पकावे । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकाकर रखलौड़े । इसकी
पूर्णचन्द्रसकी तरह देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर वीथ्येकी
पुष्टिकरताहे ॥ ६४८ ॥

६४९ मृतकन्दर्पजीवनरसः

रसभस्माऽध्रकं चङ्गं तीक्ष्णं कस्तूरिकाञ्जनम् ।
आकल्यकं लवङ्गञ्च दरदं जातिपत्रिका ॥ २९८८ ॥
जातीफलं धूर्तयीजं सममेकत्र मर्दयेत् ।
ताम्बूलीस्वरसेनेय तथाऽऽर्द्रकरसेन वै ॥ २९८९ ॥
घङ्गेरुप्रमिता मात्रा लेहयेन्मधुसर्पिपा ।
श्टतशीतं पयः पीत्वा ताम्बूलं भक्षयेत्सुधीः ॥ २९९० ॥
मासमात्रप्रयोगेण मृतकन्दर्पजीवनम् ।
रमेद्रामाशतं नित्यं कामतुल्यो नरो भवेत् ॥ २९९१ ॥
सतताऽभ्यासयोगेन वृद्धोऽपि तरुणायते ।
जीवेद्दशशतं सार्धं वलीपलितवर्जितः ॥ २९९२ ॥
सर्वान् रोगान्निहन्त्याशु नाऽत्र कार्यां चिन्तारणा ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
स्निग्धाऽत्र भोजयेन्नित्यं तैलाऽम्लं वर्जयेत्सुधीः ॥
र धं., वाजीकरणे ।

भाषा—पारा, अम्रक, बत और फोलादभस्म, कस्तूरी,
सुवर्णभस्म, अकलछरा, लौंग, दिगारिकमस्म अथवा विशेषशुद्धि-
युक्त, जाकिरी, जायफल, शुद्धवर्णेषीज सब समभागलेकर
वारीकचुण्णकर पान तथा अदरगरेरमेने १-१ रोज मर्दनकर
३-३ रतीशे मोतियां बनाकर रसलौड़े । इनमेंसे १-१ गोली
मधु और धीरेसायलेकर अपौटा दूध पीकर ताम्बूलमग्नकरे ।

इसतरह एकमहीनेके प्रयोगसे नामर्दमी मर्दहोकर अनेक स्त्रियों-
केसाथ रमणकरनेकी शक्तियुक्त होजाताहे । इसके नित्यर
अभ्यासकरनेसे बुद्धिशी वलीपलितश्चे निर्मुक्त तथा मवरोगोंसे
रहिलहोकर १०० वर्षतकजीताहे । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे
यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहे । इनमें स्निग्धअत्रका भोजन
और तैल खटाईसे परहेज करे ॥ ६४९ ॥

६५० मृतकजीवनी गुटिका

पारदं सारलौहञ्च कान्तलौहसमन्वितम् ।
माक्षिकस्याऽपि सत्वञ्च सर्वं गगनसम्भवम् २९९४
पूतानि समभागानि मर्दयेच्च प्रयत्नतः ।
निचुलोद्भवतोयेन गोलकं कारयेत्ततः ॥ २९९५ ॥
नवाहुलप्रमाणे च मूषागर्मैऽथ तं न्यसेत् ।
निर्गुण्डां काकमाचीञ्च गोजिह्वां दुग्धिकान्तथा ॥
गृहकन्यामधूकञ्च सैन्यवज्रोपरि न्यसेत् ।
स्वेदयेत्पुटयोगेन सा पिण्डी हृदतां प्रजेत् ॥
स्थापिता मुखमध्ये तु वीथ्येथैर्यैरुी भवेत् ॥ २९९७ ॥

र. र., धं., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, फोलाद, कान्तलोह, माक्षिक और
अत्रकसत्व येसब शुद्ध और समभाग लेकर जलवेतरेरसेसे मर्दन-
कर गोलावनाय ९ अहुल प्रमाणकी मूषामें इसे रख निर्गुण्डी,
मकोय, बनगोमी, दूधी, पीकुंआर, बहुआ, सैन्यव, येसब सम-
भाग लेकर वारीकचुण्णकर टिकियाके ऊपर रख मूषाका सम्पुट
बनाकर भूधरयत्रमें बालकासे दवाकर कुक्कुटपुटसे स्वेदनकरनेसे
वह गोली हट होजायगी । इसे मुंहमेंरखनेसे वीथ्ये स्थिरहोताहे ॥

६५१ मृतप्राणदायीरसः

रसं गन्धकं टङ्गुणं वत्सनाभं
सर्पं मर्दयेद्भूर्तयीजेन व्यामम् ।
ततो वत्सनाभेन हेमैश्च यीजं
रसे भांवेयेच्च त्रिवारं त्रिवारम् ॥ २९९८ ॥
कटुव्यादिर्जेः पञ्चवारं ततः स्या-
द्यं सूतराजो मृतप्राणदायी ।
ज्वरं मन्निपाते ज्वरं वृतने वा
महाश्लेष्मरोगे च गुग्गुप्रमाणम् ॥ २९९९ ॥
पयः पायसं दाधिकं तक्रभक्तं
सिता वा नये हि ज्वरे च्याऽऽर्द्रनीरेः ।
ज्वरे च्याऽतिसारे घनद्रावयुक्तेः
ग्रहण्यशंसां शौद्रयुक्तं मित्ताऽऽल्यम् ३०००
चले आयुगे प्रिक्रटमिर्पातं
प्रकल्पेऽपयाहूक पफाद्वायते ।
अपस्मारसुन्मादायार्तं निहन्ति
प्रयुक्तः मित्तापञ्चमिर्धर्तयीजेः ॥ ३००१ ॥

वि. घा, नि र., रगायनप, र. र. से, र. भो., से. (मृतस
जीवनी), रघायनसं., र. धं., वै. वि, र. पा, एण मूषाप्रति

नाम तत्र त्रिवारं त्रिवारमित्यस्य स्थाने दन्तिवारा त्रिवारमिति पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बटनाग समभाग, धतूरेकेबीज सबकीबराबर, सबकी नीलवर्ण कज्जलीकर बटनाग, और धतूरेकेबीज इनकेसोसे ३-३ रोज मर्दनकर त्रिकटुके रससे ५ दिनतक मर्दन करनेसे यहरस (मृतप्राणदायी) तैयार-होताहै । इसमेंसे १-१ रती उचितानुपानसे लेनेमें ज्वर, सन्निपात, नवीनज्वर, महाश्वेप्परोग येसब नष्टहोतेहैं । दूध, खीर, बहीकेपदार्थ, छाछ, चाबल, शकर येसबवर्ष्यमेंदे । नवीनज्वरमें अदरखकेरससे, ज्वर और अतिसारमें नागमोषेकेकाडेसे, प्रदोषी और बवासीरमें मधु तथा शकलेसाधे । वातज्वरमें त्रिकटु और चित्रककेसाथ, प्रकम्प, अपनाहुक, एकाङ्गवात, अप स्मार, उन्माद इनमें शयन और ५ नग धतूरेकेबीजोंकेसाथदेनेसे इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६५१ ॥

६५२ मृतसञ्जीवनरसः (प्रथमः)

गरलाऽमृतसौभाग्यशिलतापीजतालकम् ।
नतेशजातिपत्राणि गन्धहिङ्गुलमागधीः ॥ ३००२ ॥
श्रुश्लाऽजकिरिचूडालशिविमत्स्योत्पमायुभिः ।
भाघयित्वा घटीः कुर्याद्द्विसुसर्पसन्निभाः ॥ ३००३ ॥
नागवह्नीद्वलद्रावेस्तुलसीपत्रसम्भवेः ।
शुद्धवेररसे चाऽपि सन्निपाते प्रदापयेत् ॥ ३००४ ॥
श्यासाद्युपत्र्याऽऽपिघ्ने गतसञ्ज्ञेऽलरचेतने ।
मृतसञ्जीवनः स्तौऽपि सञ्जीवयति मानवम् ॥ ३००५ ॥
बू क., सन्निपाते ।

भाषा—नालेतापकाजहर, शुद्धबटनाग, सुहागा, मैतसिल सोनामाली, हरितालभस्म अथवा रममाणिक्य, लार, पारद भस्म अथवा रसतन्दूर, जावित्री, शुद्धगन्धक और शिगारिक, पीपल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर रीछ, बकरा, घुअर, सुर्गा, मोर और मछलीके पिलोंसे १-१ भावना देकर छोट सरसोंके बरार गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखोहें । इनमेंसे १-१ गोली पान, तुलसी और अदरख इनमेंसे किमी-एकके रससे देनेसे श्वासादि उपद्रवयुक्त होकर सम्मानशोभर्द्धी और यत्सिञ्जित प्राणतानु बारी रहगयाहो इसतरहक सन्निपातकी नष्टकर मनुष्यको फिरसे जीवन्तताहै ॥ ६५२ ॥

६५३ मृतसञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

गन्धकं गगनं तालं माक्षिकञ्च मनःशिला ।
पारदश्चाऽश्वगन्धा च नेपालं टङ्गुर्ण तथा ॥ ३००६ ॥
मुषया रोहिणी चैव फटुकाऽलायुर्वीजकम् ।
मरिचं मागधी चैव मधुकस्य च र्थाजकम् ॥ ३००७ ॥
पहताप्रविर्भातञ्च श्मभया धरणीफलम् ।
पञ्चशारसुतं चैव समभागानि योजयेत् ॥ ३००८ ॥
खल्यान्द्रे चिनिःशित्य कारयद्द्वारसद्रयेः ।
निष्पज्जर्मात्पञ्चमानुलुङ्गमेन च ॥ ३००९ ॥

फटुकाऽर्कसैश्चिञ्चाताम्बूलोत्थै रसैर्मुहुः ।
यहिना सैन्धुवारैश्च रसे धीमायु विमदयेत् ॥ ३०१० ॥
शुष्णभाण्डे चिनिःशित्य चालुःकाम्नी विपाचयेत् ।
यत्किमप्रविधानेश्च ब्राह्मयेत्याङ्गशीतलम् ॥ ३०११ ॥
करणश्रीशके स्थाप्यं रक्षयेन्मृत्युमृत्युदम् ।
कालसंहारणं नाम पूजयेद्दीश्वरं शिवम् ॥ ३०१२ ॥
आर्द्रकस्यरसेनैव गुजामार्थं प्रदापयेत् ।
मृतसञ्जीवनो नाम रसोऽप्यं भैरवोदितः ॥ ३०१३ ॥
प्रलयानिलसंहारं यथा मेघाऽनिलेन च ।
तथैव सन्निपातश्च नष्टो भवति तक्षणात् ॥ ३०१४ ॥
मृतयःकाष्ठानुल्योऽपि बोध्यते शीघ्रमद्भुतम् ।
प्राणानेव प्रसुप्तेभ्यः पुनरायतयेद्भवम् ॥ ३०१५ ॥
विषोपविषसहार्तरिभिन्यासादिदोषकैः ।
उन्मादप्रान्तिस्सम्भूतैर्भूच्छ्रोतैस्स्य प्रथोजयेत् ॥ ३०१६ ॥
कासे श्वासे महाशूले पक्षाघाते जलोदरे ।
अनुपानविरोपैश्च सर्वांश्चाशयति क्षणात् ॥ ३०१७ ॥
र. क. यो. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, अश्रक, हरिताल और सोनामाली-कीभस्म, शुद्ध मैतसिल और पारा, असगन्ध, जमालगटा, सुनासुहागा, ताजीबच, रोहण, कुटकी, कङ्गीतमहीकेबीज मरिच, पीपल, महुआकेबीज, बज्र और ताम्रभस्म, बहदा और हूरंकीछाल शूर्पकीदहा, यव, तिन्त्र, पलाश, अगामागं, सेटुण्ड इन-पाचोंकेसार, येसब चीजें समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमेंमिलाकर करेला, नीम, जमीरी, धतूरा, बिजोरा, कुटकी, आक, इमली, पान, चित्रक, संघान्द इनप्रत्येकके रसोंकी ३-३ भावनाएँ देकर ६-७ कपडिमिदी-दीहूर्दे आतरीशीशोंमें भर मुहबन्दकर बाजुगायत्रमें रखकर ५ पहरकी क्रमामि देकर पकावे । स्वात्रतीतलहोनेपर भरवको बलि देकर निकालकर काचकी शीशोंमें रखोके । शिवजीका पूजनकर इनमेंसे १-१ रतीकी मात्रा अदरखके रसकेसाथ देनेसे सन्नि-पात तक्षण नष्टहोताहै । जो सन्निपाती सुर्द्धीतरह निन्दे और अकङ्ककर श्लेष्मीतलहोणयाहो बहमी इतनेदेनेसे क्षीप्रसञ्ज्ञाको प्राप्तहोजाताहै । विष, उपविष अथवा अभिन्याग, उन्माद, भ्रान्ति प्रप्रतिमे मूर्च्छितहो देनेसे सोएहुओंकी तरह फिरसे सञ्ज्ञाको प्राप्तकरताहै । अनुपानविरोपमें काम, शयन, महादहन, पक्षाघात, जलोदरप्रप्रति समतरतोगेका यह नष्टकरताहै ६५३

६५४ मृतसञ्जीवनरसः (तृतीयः)

श्लेच्छस्य भागाद्यत्यारो जैपालस्य प्रथा मताः ।
द्वौ भागौ टङ्गुणस्यैव भागेकममृतस्य च ॥ ३०१८ ॥
तन्वयं मर्दयेच्छूणैर्गुणैः कामं भिषग्वरः ।
शुद्धपराऽमुना देवो श्यायचिन्नकर्मण्येव ॥ ३०१९ ॥
गुञ्जाद्रयमितस्तापं हृत्येव चिनिःशयः ।
गनसारेण श्वापेण चन्दनेन पिडेयनम् ॥ ३०२० ॥

विद्व्यात्कास्यपात्रे च सेचयेद्रोगिणं म्रियम् ।
 शाल्यत्रं तक्रसहितं भोजयेद्विशुसंयुतम् ॥ ३०२१ ॥
 सन्निपाते महाघोरे त्रिदोषे विपमञ्चरे ।
 आमवाते घातशूले गुल्मे ग्रीहि जलोदरे ॥ ३०२२ ॥
 शीतपूर्वे दाहपूर्वे विपमे सततञ्चरे ।
 अग्निमान्द्ये च वाते च प्रयोज्योऽयं रसेश्वरः ।
 मृतसञ्जीवनो नाम विख्यातश्च रसायने ॥ ३०२३ ॥
 र सं, वै क, नि. र, र. चं, रसायनं, र. सु., मी र., र. म.,
 व. रा., र. (मा.), टो., र. का., यो. म., ना वि., रसायनप.,
 ज्वराऽधिकारः ।

टि०—अत्र स्पष्टशब्देन वैश्विचात्र गृहीत वैश्विच हिडगुड गृहीत ।

भाषा—ताम्रमस ४ भाग, शुद्धजमालगोदा ३ भा, भुनाछुहाणा २ भा., शुद्धबलनाग १ भाग लेकर सबको एकपहर तक इकडे मर्दनकर रखडोहै । इसमेंसे २-२ रत्तीकी मात्रा अदरखके रसमें त्रिद्रु, चित्रक और संन्यवका चूर्ण डालकर लेनेसे यह ज्वरको तत्क्षण नष्टकरताहै । सन्निपाती मृतप्राय होगयाहोतो एक अथवा दोमाशेकी मात्रा देना । दाहमालम-होनेपर सफेदचन्दन, कपूर और मक्खनका लेपकरना, कासेकी कटोरीसे हाथपैरोंको घिसवाना, सिरपर ठंडेलकी घारा देना । मूत्र लगनेपर पुरानेबाबलोंकाभात छाछकेसाथ देना । प्यास लगनेपर ईखकारसप्रवृत्ति शीतद्रवदेना । महाघोरसन्निपात, त्रिदो-पोत्यरोग, विपमञ्चर, आमवात, घातशूल, गुल्म, ग्रीहा, जलो-दर, शीतपूर्व अथवा दाहपूर्व विपमञ्चर, सततञ्चर, मन्दाग्नि, असाध्य वातरोग इनसबमें इसरसका प्रयोग संमालकर करना ६५४

६५५ मृतसञ्जीवनरसः (चतुर्थः)

रसगन्धौ समौ ग्राह्यौ मृतपादं विपं क्षिपेत् ।
 सर्वतुल्यं मृतञ्चाऽग्रं मघं धुस्वरजे टैवे ॥ ३०२४ ॥
 सपांश्याश्च द्रव्यै र्थामं कपायेणाऽथ भावयेत् ।
 घातक्षयतिविपा मुस्तं शुण्ठीजीरकयालकम् ३०२५ ।
 यमानी धान्यकं विल्वं पाठा पथ्या कणान्विता ।
 कुटजस्य त्वचं बीजं कपित्थं दाडिमं यलाम् ॥ ३०२६ ॥
 प्रत्येकं कर्पमात्रं स्यात्कृष्टितं फ्याथयेज्जलैः ।
 चतुर्गुणं जलं दत्त्वा यावत्पादाऽवशेषितम् ॥ ३०२७ ॥
 अनेन त्रिदिनं भाव्यं पूर्वाह्नं मर्दितं रसम् ।
 रुद्धा तद्बालुकायन्त्रे क्षणं मृद्वग्निना पचेत् ॥ ३०२८ ॥
 मृतसञ्जीवनो नाम चाऽस्य गुञ्जाचतुष्टयम् ।
 दातव्यमनुपानेन चासाध्यमपि साधयेत् ॥ ३०२९ ॥
 पद्मप्रकारमतीसारं साध्याऽसाध्यं जयेद्भुवम् ।
 नागराऽतिविषामुस्तं देवदारुकरुणा वचा ॥ ३०३० ॥
 यमानी घालकं धान्यं कुटजत्वग्गरीतकी ।
 घातकीन्द्रयौ विल्वं पाठा मोचरसं समम् ॥
 पूर्णितं मधुना लेहमनुपानं सुखायहम् ॥ ३०३१ ॥
 र. सं., र. वि. र. र., र. यो. त, नि. र., रसायनं., यो. र.,

र को., टो., र. र दी., र. क., वि. र., वि. र. म., र. का., यो. म., ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पादा और गन्धक १-१ तोला, शुद्धबलनाग ३ मासे, अक्रभमस सबकी बराबर लेकर नीलवर्णकजलीकर घट्टा और अन्याहलीके स्वरससे १-१ पहर मर्दनकर घाबड़ी, अतीस मोधा, सोंठ, जीरा, सुगन्धवाला, अजवाइन, धनिया, बेलगिरी, पाठा, हरे, पीपल, कुटजकीछाल और बीज, वैष, अनार, बला येसब १-१ कर्प लेकर जबकुटकर चौने पानीमें डालकर चतुर्थांशवशेष धायकर छानकर रकवे, इससे तीनदिन-तक मर्दनकर गोलाबनाय द्वारासम्पुष्टमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें द्रुतहोनेतक पकावे । स्वाद्गन्धीतलहोनेपर निकालकर रखडोहै । इसमेंसे ४-४ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे ६ प्रकारके साध्य अथवा असाध्य अतिमारोंको यह नष्टकरताहै । सोंठ, अतीस, नागरमोधा, देवदारु, पीपल, वच, अजवाइन, सुगन्ध-वाला, धनिया, कुम्भ्याकीछाल, हरे, धावडो, इन्द्रजव, बेलगिरी, पाठा, मोचरस सब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर ६ मासे मधुकेसाथ ऊपरसे चढ़ानाचाहिये ॥ ६५५ ॥

६५६ मृतसञ्जीवनरसः (विस्चीविश्वंसः) (पञ्चमः)

द्रुणं माक्षिकं शुण्ठी पाण्डे गन्धकं विपम् ।
 गरलं समभागेन सर्वेषां हिङ्गुलं समम् ॥ ३०३२ ॥
 मर्दयेज्जम्भजे द्रव्यै र्थौ कार्या प्रयत्नतः ।
 श्वेतसर्पपतुल्या च मृतसञ्जीवनो रसः ॥ ३०३३ ॥
 विस्चीं नाशयत्याशु दध्यन्ने पथ्यमाचरेत् ।
 त्रिदोषोत्थमतीसारं हन्त्युपद्रुसंयुतम् ॥ ३०३४ ॥
 मै. र., र. सु., विषुच्यधिकारः ।

भाषा—भुनाछुहाणा, सोनामाखी, सोंठ, शुद्ध पादा, ज्वर, और बलनाग, सर्पना जहर येसब समभाग, शुद्ध हिङ्गुल, सबकीबराबर लेकर नीलवर्ण कजलीकर जलीकी रससे मर्दन सफेदरसोंकीबराबर गोलियाबनाकर रख डोहै । इसमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे हैजा, उपद्रुसहित त्रिदोष-सारको यह नष्टकरताहै मुखलगनेपर पथ्य देना मान देना ६५६

६५७ मृतसञ्जीवनरसः (षष्ठः)

रसनागौ समभागौ सम्मर्द्य समेन शिलाजम्बु ।
 निशिय पञ्चमूत्रे जारयेत्स्वेदयेत्पुटप्रयत्नैः ॥ ३०३५ ॥
 एकत्र तथा सर्वं मूत्रायाज्जाङ्गलाऽम्भसा त्रिदिनम् ।
 पश्चान्तामान्यपुटे वंश्या यद् भावयेद्य क्रमात् ॥ ३०३६ ॥
 कन्याभृद्ममूरकमागधिकानागरे विडङ्गश्च ।
 मधुसूपापलाशबीजं यांजिभजलाङ्गलमुशालिकार्कम् ।
 स हि मर्दयेत्सन्निपाते लकुचाम्भसा मन्थयेत् ॥ ३०३७ ॥
 यहत्रयमाश्रोऽसी दिनत्रयेणैव निजयेद्रोगम् ॥ ३०३८ ॥
 तत्तत्पादनुपानं चतुरोऽशतीतिष्ठ निजयेद्वायुम् ।
 अष्टगणित्तिह्यान्मर्षाण्यपि हरति गुल्मजातम् ॥ ३०३९ ॥

त्रिफलाकायेन सुतो विष्टम् कामलां पुनर्नवाया ।
गोपयसा विष्टम् शूलञ्चैरण्डजे जयति ॥ ३०४० ॥
स्वेदं चित्रकरसतः कटुकार्शतीत्याऽऽममेहहृजः ।
कफत्वातक्रिमिदांघं हरति कुमारो रसेन रसराजः ३०४१
र. सु. वातरोगे ।

भाषा—पारा और नागमन्म समभाग, दोनोंकीबराबर शिलाजीत भिलाकर पद्ममूत्र (गाय, भैस, गयो, बकरी और भेड़का मूत्र) से मर्दनकर गोलाबनाय धरावसम्पुटमें बन्दकर भूषणबन्धमें स्वेदनकरे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मूत्रवालकर मर्दनकर गोलाबनाय धरावसम्पुटमें बन्दकर भूषणपुटमें स्वेदनकरे । ऐसे तीनपुटदेकर जहली जानवरोंक मूत्रसे तीनरोज मर्दनकर गोलाबनाय धरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटही आचदे । तीनआचे देनेकेबाद नीचेलिखे अण्डो-कीभावनाएं दे । यथा—पीडुंआर, भंगरा, अपामार्ग, पीपल और सोंठ (१) विट्क, सुल्हठी, ढाककेपीज (२) अमगन्ध, कलिहारी, मुशली (३) इनकी ब्रह्मसे १-१ भावना देनेके बाद १-१ रती बड़हलकेजल और सेंपेनमक्केसाय देनेसे तीनरोजकेभीतर रोगोंको दूरकरताहै । वातप्र अनुगानकेसाय देनेसे ८४ प्रकारके वातरोगोंको दूरकरताहै । त्रिफलाकेजायके-सायदेनेसे आठप्रकारके ज्वर, गुल्मसमूह और विष्टमप्रभृतिको नष्टकरताहै । पुनर्नवाकेसाय कामलाको, गायकेदूधसे विष्टमको और एण्डकीजइकेजायकेसाय शुल्को नष्टकरताहै । चित्रक केवरसकेसाय स्वेदको कुटकी और मिथ्रीकेसाय पयरी तथा प्रमेहको नष्टकरताहै । पीडुंआरकेरसे कफवात और कृमि-दोषको नष्टकरताहै ॥ ६५० ॥

६५० मृत सञ्जीवनरसः (सप्तमः)

रसभागो मयेदेको गन्धको द्विगुणोमतः ।
विपतालककटुकद्विदालाहिहुल्ललोहकम् ॥ ३०४२ ॥
यह्निकिष्टुभृहाह्मेममाशिकममन्नकम् ।
हस्तिगुण्डी विषं कुर्मी तन्दुलीयकताम्रकौ ॥ ३०४३ ॥
पणां प्रत्येकमेकैकं भागमादाय शृणुयेत् ।
आर्द्रकस्य त्रयेणैव मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ ३०४० ॥
जम्बीरस्य रसो प्रायः पलप्रयपरीक्षितः ।
त्रिफलायाश्च निर्गुण्डयाः प्रत्येकञ्च पलप्रयम् ॥ ३०४५ ॥
रसस्य पलमानन्तु चान्नेयोः परिशीर्तितम् ।
काचभूष्यां विनि क्षिय्य यन्त्रे क्षिप्या प्रयत्नान् ३०४६
उक्त्याऽऽङ्कनियान्ति मर्दयित्वा विशाषयेत् ।
मृतसञ्जीवनो नाम रसाऽय विदितो भूवि ॥
गुञ्जादयं दर्शिताऽस्य सन्निपातापनुचय ॥ ३०४७ ॥
र. र. त. नि. र. र. गु. वि. क. रसायन, र. १, र. ६
यो, गु. प्र. र. को, र. र. दो. भ. र. र. घ. र. स. य. रा
ज्यराशिकारे ।
रि-०-६ क. यो बाहुल्येन अनुगान्तिरसिपय विधि, य
पुनर्नवाकृष्यने कानी मुर्दनपुनर्नवाकृष्यने विष्टमप्रभृ

विनया गृहीता । अत्रैवाऽधिकतरान्ता प्रयोग रसगण्यदने न काऽपि हानि । रसाऽऽयोन्योऽप्येकद्वयवार्तिना रसैस्त्वमुचये दिदीर. पाट-
हृनोऽपि मोऽप्येववाऽन्तर्भावनीय । स्मरलदीपितायामस्य सञ्जीवनरस इति नामस्थानिन्, सदर्भमदुदा स्मरजगुन्दु स्तन्त्र एव पाठ मह-
गृहीतस्त्वन्मूलमाननेन ।

भाषा—शुद्ध गन्धक २ भाग, शुद्धपारा, इस्त्रा (बटना-
गमेद), हरिताल, कटुक, (सुदांसत्र), भैतसिल और सिंग-
रिफ, लोहमन्म, चित्रक, त्रिरुद्र, भंगरा, सुवर्णमण्डिक और
अभ्रकमस, हाथीगुण्डी, शुद्धवज्रनाग, निमोत, पट्टिवाली
चौलाईकीज, ताम्रमस्य वेष १-१ भाग लेकर सनका बारीक
पूणकर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाकर अदरखेकरसमें
तीनरोज मर्दनकर जमीरी, त्रिफला, निर्गुण्डी इनकास्वरस
३-३ पल, अमलोनियाकारम १ पल लेकर सबको ७ कपड-
मिठी दीहुई आतवीशीरीमें भूके ईटकी ढाटमें सुंध्यन्दर
७-८ कपडमिश्रलादे । सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रस कम्पुद
तीनपहरकी अग्निदे । स्वाह्नशीतल होनेपर निकालकर अदरखने
रसेसे २-३ रोज घोटकर २-२ रतीकीगोलियां बनाकर रस
छोदे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिनापुनानकेसाय देनेसे
सन्निपातादि सप्तम् दुर्भरोग निवृत्तहोतेहै ॥ ६५० ॥

६५१ मृतसञ्जीवनरसः (अष्टमः)

नागं सुद्वारितं हृन्त्या गुण्डं मृतं सप्तं क्षिपेत् ।
मृताट्टुद्विगुणगन्धश्च शूर्णाहृन्त्य शनैः शनैः ॥ ३०४८ ॥
निक्षिप्य चालयेद्दण्डैः माद्रेनिगुण्डिसम्भवेः ।
नागं मृतं मृतं शाल्या हिमज्वालानियतितम् ॥ ३०४९ ॥
सुल्ल्या उच्चार्य यत्नेन शारं धवलनाभिजम् ।
शूर्णितं मृततुल्यञ्च निक्षिपेन्मर्दयेत्तथा ॥ ३०५० ॥
दृढं पारदं तुल्यं योजयेन्मग्नाप्रदायवित् ।
ययनेष्टमनं शूर्णं तुल्यं संयेज्य यत्नतः ॥ ३०५१ ॥
विमूय यत्प्रपूतञ्च हृन्त्या रसेत्सुभाजने ।
गुञ्जैकं वा द्विगुञ्जं वा हाद्रकस्वरसेन च ॥ ३०५२ ॥
जिह्वेके सन्निपाते च प्रयुयां प्रतिमारणम् ।
प्रतिज्ञाऽऽनयेजिह्वास्तम्भञ्चाऽपि हनुप्रहम् ३०५३
तथा च पिच्छिलास्यञ्च मन्वाभ्रमर्म्म शिरोप्रहम् ।
अर्दितञ्च जयेदागु धीमर्द्रोक्षतामनात् ॥ ३०५४ ॥
गुञ्जामात्रञ्च हातय्यं यद्दुर्दये धृते सति ।
गुण्डां विचेष्टियां जिह्वां गुफनिहोपमां तथा ॥ ३०५५ ॥
प्रतिज्ञानपरिसर्यं नाऽत्र कथायां विचारणा ।
मृतमर्ज्ञयनो होय सन्नद्राययमागतः ॥
नागादिद्रायणाप्येषु लोहापारं प्रकुर्यात् ॥ ३०५६ ॥

र. गु. दो, जराशिकारे ।

ही-०-६ रसायनगुण्य परकनक्षिपय रसगण्य इतर्न म
हृन्त्यादि केष्य, म् कषिपयत्न विष्टमप्रभृ

भाषा—शुद्धनीमेषु दोहोई कपडमें मर्दन कर बताराका
शुद्धपारा जातेहै । पारसे दूने शुद्धगन्धक बारीकपूणकर सेना

२ डाल्नाजाय और संभाङ्के ताजेडपेसे चलाताजाय । इन-
दोनोंकीसफेदभस्महोनेपर चूल्हेमें उतार पाग्की बराबर दाह-
नाभिदोभस्म डालर एकपहर मर्दनकर शुद्धशिरिक और
पारा १-१ भाग क्या डालकर सबकी बराबर लहसुनकाकल्क
मिलाकर यथातक मर्दनकरे कि मूसजाय, फिर कपड़ेमें छानकर
शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे १ या २ रत्ती की मात्रा अदरखके
रसमें मिलाकर जिह्वकमप्रिपातमें जीभपर मलनेसे जिह्वास्तम्भ,
हनुमद, मुहकी चिपचिपाहट, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ, शिरका-
जकइना, लकवा येस नष्टहोतेहैं । यदिरोगकीप्रवृत्ताहो तो
एकरसी अदरखकेरसमेंमिलाकर खानेकोदेनेसे सूखी, चेष्टा-
रहित और शुक्की जिह्वाकेसदा रगवाली जीभ प्रकृत्यापन्न
होजातीहै ॥ ६५५ ॥

६६० मृतसञ्जीवनरसः (नमः)

पारदं मुमृतं ताम्रं ताप्यं मौक्तिकमेव च ।
हेमवज्रप्रवालञ्च सर्वमेकत्रचूर्णयेत् ॥ ३०५७ ॥
चतुर्थांशं शुद्धगन्धं दत्त्वा कृप्यां सुधीः पचेत् ।
स्वादद्दुग्धाढ्यञ्चाऽस्य यथाऽलमथाऽपि वा ॥ ३०५८ ॥
पिप्पलीमधुना चैवं पिप्पलीरसण्डकेन वा ।
गुडगुण्डिकया वाऽपि पञ्चकोलेन वाऽथवा ॥ ३०५९ ॥
मृतसञ्जीवनी नाम शिरोरोगं निरुन्तति ।
अनुपानभेदेन सर्वशीर्षामयापहः ॥ ३०६० ॥
र. मा., ना. वि., शिरोरोगे ।

भाषा—पारा, तावा, सोनामाखी, मोती, सोना, हीरा,
मूंगा इनकीभस्में समभाग, शुद्धगन्धकमबसे चतुर्थांश डालकर
कञ्जलीकर आतशीशीशीमें भर बालुकायन्त्रमें ४ पहरकी अग्नि
देकर पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे
२ रत्ती अथवा योग्यतानुसार पीवल, यधु अथवा पीवल, शकर
अथवा गुड, सोंठ अथवा पञ्चकोलकेसाय देनेसे तमाम शिरोरोग
दूरहोतेहैं । और अनुपावभेदसे यह अवान्तर शिरोरोगोंकोभी
नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ मृतसञ्जीवनरसः (दशमः)

शुद्धं सृतं विषं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणीम् ।
भृङ्गराजस्य नीरिण मर्दयेद्विषसनयम् ॥ ३०६१ ॥
मापमात्रां वटीं कुर्यादाद्रकस्याऽनुपानतः ।
देयो हि मृतसञ्जीवीयां रसोऽयं सन्निपातनुत् ॥ ३०६२ ॥
व. रा., वै वि., वा., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्रनाग, गन्धक और शिरिक, कुटकी
सब समभागलेकर कञ्जलीकर भगरेकेरखे ३ रोज मर्दनकर १-१
माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरख
के रसकेसायदेनेसे यह सन्निपातकी दूरकरताहै ॥ ६६१ ॥

६६२ मृतसञ्जीवनरसः (एकादशः)

मरिचं टङ्गुणं सृतं माक्षिकं कान्तलोहकम् ।
अन्नकञ्च समांशानि वह्निन्वायेन मर्दयेत् ॥ ३०६३ ॥

काचकृप्यां विनिक्षिप्य बालुकायत्रपाचितम् ।
मरीचाऽऽद्रकमंयुकं द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ३०६४ ॥
पथ्यं क्षीरोदनञ्चैव तापे दद्यात्सशर्करम् ।
प्रातःकाले तु सेवेत सद्यः स्वेदं विमुञ्चति ॥ ३०६५ ॥
व. रा., स्वेदपिते ।

भाषा—मरिच, शुद्ध मुहागा और पारा, सोनामाखी,
कान्तलोह और अन्नकभस्म येसब समभागलेकर वारीककञ्जली-
वनाकर चित्रकके घायसे १-२ रोजमर्दनकर मुलाकर कपड़-
मिठीकीहुई आतशीशीशीमें भर बालुकायन्त्रमें ४ पहरपकावे ।
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती
मरिच और अदरखकेसाय देनेसे अत्यन्त पतौनका निरुत्तना
बन्दहोताहै । दाहहोनेपर दूधमात दे । ज्वरहोनेपर शहरकेसाय
दूधमात दे इसकाप्रयोग सुबहमें करे ॥ ६६२ ॥

६६३ मृतसञ्जीवनीकल्पः

चित्रकेण तथा पूर्वस्तथा शुण्ठीविडङ्गतः ।
लोहेन भृङ्गराजेन बलया निम्बपञ्चकैः ॥ ३०६६ ॥
स्वादिरेण च निर्गुण्ड्या कण्टकायांऽथ चासकात् ।
वर्षामुवा तद्रसैर्वा भाषितो वटिकीकृतः ॥ ३०६७ ॥
चूर्णं घृतैर्वा मधुना गुडाद्यै वारिणा तथा ।
ओं हूं स इतिमन्त्रेण मन्त्रितो योगराजकः ॥
मृतसञ्जीवनी कल्पो रोगे मृत्युञ्जयो भवेत् ॥ ३०६८ ॥
आ. पु., रसायनाधिकारे ।

भाषा—चित्रक, सोंठ, विडङ्ग, लोहभस्म, भगरा, बला,
निम्बपत्राङ्ग, खैरलीछाल, संभाङ्ग, भटकटैया, अहसा, इतसिद्ध
येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर इनप्रत्येकके स्वरसे अथवा
घायसे ३-३ भावनाएँ देकर ३-३ माशेकी गोलिया बनाकर
अथवा चूर्णरूपमें रखछोड़े । इसमेंसे २-३ माशेकीमात्रा मधु-
गुड अथवा जलप्रथति अनुपानकेसाथ “ओं हूं स” इसमन्त्रसे
१०८ बार अभिमन्त्रितकर लेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्ट-
करताहै और आयुको बढ़ाताहै इसीलिये इसका मृतमधीवनी
कल्प नाम रक्खागयाहै ॥ ६६३ ॥

६६४ मृतसञ्जीवनीवटी (प्रथमा)

कटुतुषवीं कारुमाचीं निर्गुण्डी च कुमारिका ।
गोजिह्वा सैन्धवं गुञ्जा ह्याद्रकञ्च समंसमम् ॥ ३०६९ ॥
पिष्ट्वा तेन प्रलेप्तव्या मूपा सर्वाऽङ्गुलावधि ।
पारदं व्योमसत्त्वञ्च कान्तं तीक्ष्णञ्च मुण्डकम् ३०७०
ताप्यसत्त्वञ्च तुल्यांशं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
दिनं जम्बीरञ्च द्रवैस्तन्मूपायां विनिक्षिपेत् ॥ ३०७१ ॥
आच्छाद्याऽऽलेप्य कल्केन चान्धयित्वा विशोषयेत् ।
करीयासौ द्विचारात्रं पुटे पक्त्वा समुद्धरेत् ॥ ३०७२ ॥
पुनः प्रलितमूपायां क्षिप्या रुद्धा पुटेत्ततः ।
इत्येवं दशमूपामु प्रलितामु विपाचयेत् ॥ ३०७३ ॥

जायते गुटिका द्विव्या मृतसञ्जीवनी परा ।
 घक्त्रे शिरसि कण्ठे वा कर्णे वा धारिता करे ३०७४
 हेत्ता सुषेष्टिता सम्यग्व्यस्तम्भकरी परा ।
 घलीपलितखालित्ये मृत्युशङ्काघिनाशिनी ॥ ३०७५ ॥
 वर्षमात्राप्त सन्देशो जीवेद्वर्षशतत्रयम् ।
 शुद्धगन्धपलेकन्तु गवां क्षीरैः पिबेत्सदा ॥
 अनेन त्वनुपानेन देहे सद्भ्रमते रसः ॥ ३०७६ ॥

र. सं., र. म. मा., र. का., रसायने ।

भाषा—कड़वीवृषी, मकोय, निगुण्डी, चीडुआर, वन-
 गोभी, सेंधानमक, सफेदगुआ और अदरक येसब समभाग
 लेकर बारीकपीस मूपाकेभीतर चारोंतरफ १-१ अहुल मोटा
 लेनकरके शुद्धपारा, अभ्रकसत्त्व, कान्तलोह, फोलाद, सुण्डलोट,
 स्वर्णमाक्षिकसत्त्व सबसमभावा बारीकचूर्णकर पासे मिलाय
 एकरोज घोटकर जमीरीनेरससे मर्दनकर गोलाबनाय उसीमूपाके
 ढाल दहन देकर पूर्वोक्तकसे सन्धिबन्दकर कल्ककी १
 अहुलमोटी खोल चढ़ादे । खोलपर २-३ कपड़मिठी चढाकर
 सूखनेपर कसीकी अमि इसप्रमाणसे देवे कि एकदिवरातमें
 घान्त होजाय । स्वाद्वशीतलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरह
 मर्दन लेपनकर अमिदेवे । इसतरह दस मूपाओंमें पकानेसे
 गुटिका तैयारहोगी । इसमें पारा हरकच नया देताजाय । इस
 गोलीको सुवर्णमें मडवाकर मुँद, सिर, कण्ठ, कान, हाथ इनमेंसे
 किसीभी स्थानमें धारण करनेसे अवस्थाके हासको टिकतीहै ।
 बली, पलित और खालित्यकी दूरकर मृत्युकी शङ्काको दूरक-
 रतीहै । एकवर्षभरके निरन्तर प्रयोगसे ३०० वर्षकी आयु
 होतीहै । शुद्ध गन्धक ४ तोले लेकर गायकेदूधसे रोज पीना
 चाहिये । इससे शरीरमें गोलीकप्रभाव न्यासहोताहै ॥ ६६४ ॥

६६५ मृतसञ्जीवनीवटी (द्वितीया)

शुद्धसूत्रं वज्रभस्म सत्त्वमभ्रकताप्ययोः ।
 कान्तलोहसमं हेम जम्बीरे मर्दयेद् दृढम् ॥ ३०७७ ॥
 सप्ताहं सर्वतुल्यांशं गोलं कृत्वा समुद्धरेत् ।
 गोहिजावायसीयन्ध्यानिगुण्डीमधुसुन्दरधैः ॥ ३०७८ ॥
 लेपयेद्ब्रह्मपान्ते गोलं कं तत्र निक्षिपेत् ।
 तत्कल्कशुद्धादितं कृत्वा पक्षैकं भूधरे पचेत् ॥ ३०७९ ॥
 यामं यामं समुद्धृत्य लिप्त्वा मूपां पुनः पुनः ।
 रुद्धाऽथ पूर्ववत्पाच्यमेनं पश्चात्समुद्धरेत् ॥ ३०८० ॥
 यवचिर्शीपलाशाख्यराजीकापांसतण्डुलैः ।
 एतैः प्रलेपयेन्मूपां गुटिकां तत्र निक्षिपेत् ॥ ३०८१ ॥
 टङ्गुणं श्वेतकाचञ्च दत्त्वा यामे दृढं दृढम् ।
 खदिराऽङ्गारयोगेन द्रुतोऽयं जायते रसः ॥ ३०८२ ॥
 मूपायां विडयोगेन समं हेम च जायेत् ।
 तत्रस्त्रियामकैः मर्दयं सगोमूत्रं दिनैकतः ॥ ३०८३ ॥
 अन्धमूपागतो ध्मातो बद्धो भवति घञ्जयत् ।
 मृतसञ्जीवनी नाम गुटिका घक्त्रमध्यागा ॥ ३०८४ ॥

वर्षमानाञ्चर्यां मृत्युं हन्ति सत्यं शिवोदितम् ।
 शस्त्रस्तम्भञ्च कुरुते प्रसायुर्जायते नरः ॥ ३०८५ ॥
 र. मं., रसायने., र र स., र. का., रसायने । रसायनसङ्ग्रहे
 ताप्यस्थाने तांलं दहयते ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अभ्रक और सुवर्णमाक्षिकसत्त्व,
 कान्तलोह और सुवर्ण इनसबकीभस्में समभाग लेकर जमीरीके
 रससे ७ रोज मर्दनकर गोलाबनाय वनगोभी, मकोय, बादा
 खेसता, निगुण्डी, मधु और सेंधानमक सबसमभागलेकर
 बारीकपीस ब्रह्मपानमें चारोंतरफ १-१ अहुलमोटा लेप लगाकर
 उसमें गोलेको रस दहनलगाय उसीकल्कसे सन्धिबन्दकर १-१
 अहुलमोटी खोल चढ़ाकर ३-४ कपड़मिठी सुलतानी और रईको
 कूटकरलगादे । सूखनेपर एक पहर मूषरपुटकी अमि दे । स्वाद्व
 शीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन, लेपन तथा अमिका विधा-
 नकरे । इसतरह १५ दिनतककरनेकेबाद तितली, ढाक, राई,
 बिनौले, इनके कल्कसे मूपाको पूर्ववत् लेपदेकर जमीरीके रसमें
 पूर्ववत् घोटकर गोलीकोरख सुहागा, सफेदकाच, पोडशास मूपाके
 ढालकर औषधकल्कसे सन्धिबन्दकर उसीकी खोल चढ़ाकर ३-४
 कपड़मिठीदेवे । सूखनेपर खैरकी आचसे दृढ धमनकरनेसे इसरसकी
 द्रुतिहोजायगी । मूपाका दहन हटाकर गोलीकी बराबर सुवर्णका
 चूर्ण बोझा २ देवे । मिलजानेपर बिडोंका प्रक्षेप करे जिससे
 कि पहिले दियाहुआ सुवर्ण जलजाय । जलजानेपर द्वारा सुवर्ण
 दे और बिडोंका प्रक्षेपकरे । इसतरह समान सुवर्णका जारण
 होनेपर अमिसे निकाल खरलमें ढालकर ३ पहर गोमूपासे मर्दन-
 कर गोलाबनाय अन्धमूपाके वन्दकर धमनकरनेसे वज्रकीतरह
 कठिनहोजाता है । इसगोलीको एकवर्षभर मुँहमें रखनेसे जरा और
 मृत्युपहितहोकर बहुत दिनतक जीता है और उसके शरीरको
 कोईभी घाय क्षति नहीं पहुंचासकता ॥ ६६५ ॥

६६६ मृतसञ्जीवनीवटी (तृतीया)

यः पूर्वांतः सूतो लक्ष्मार्द्धञ्च वेधते लोहान ।
 बद्धः सारणयोगे मुखस्थञ्च जारयेद्द्रवम् ॥ ३०८६ ॥
 युक्तः समांशानगैः सुरलोहायस्कान्तताप्यसत्त्वैश्च ।
 अभ्रकसत्त्वसमेता गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ३०८७
 हेमयुता गुलुच्छके सुकुटे वा कण्ठमूषकणो वा ।
 मृत्युभयशोकराणवियशब्दजरासततदु. खसद्घातम् ॥
 यस्याऽङ्गे निहितेयं गुटिका मृतसञ्जीवनी नाम ।
 सोऽसुरयक्षकिन्नरपूज्यतमः सिद्धयोगीन्द्रैः ॥ ३०८९ ॥
 प्रक्षात्य तोयमध्ये गुटिका घटिकाद्वयं ततः क्षिप्त्वा ।
 तच्चयं वदनगता मृतकस्योत्थापनं कुरुते ॥ ३०९० ॥
 तोयं तदेव पिबति स्वस्थं पथ्यान्वितस्ततः पुरःपः ।
 लभते दिव्यं स य मृत्युजरावर्जितः सुदृढम् ३०९१
 र ह., रसायने ।

भाषा—पहिले शुद्धकियाहुआ पारा जो कि लक्ष्मसे ऊपर
 घातुओंका वेधन करसकाहो उसमें ढालेहुए रत्नोंको सारणा

तीलोंसे जो आरण करसकाहो ऐसा गुटिकास्त्र पाद लेकर नाग, सुवर्ण, लोह, कान्तलोह सुवर्णमाधिक और अन्नकसत्व, येसव समभाग लेकर बद्धपरिमे बराबर प्रमाणसे मिलाकर गोलीबनाय सुवर्णसे वेष्टितकर चोटी, मुकुट, माला, कान इतने रखनेसे मृत्यु, भय, शोक, रोग, विष, शत्रु, बुढ़ापा और निरन्तर दुःख-सङ्घात इनसबको नष्टकरती है । जिसकिरीके शरीरपर इसगुटिकाको रखदे वह अमुर, यक्ष, किन्नर, सिद्ध और योगियोंसे सम्मानित होता है । इगोलीको धोकर दो घण्टे पानीमें रख उसपानीको सन्त्यास रोगादिनोंमें मृतप्राय होगयाहो उसके मुँहमें डालकर इस गोलीको रखनेसे सन्ज्ञाको प्राप्तहोकर उसपानीको पीजाताहै । भूखलानेपर पध्यदेना उससे मृत्यु, बुढ़ापा प्रथिते-रहित छुट्ट दिव्य शरीरको प्राप्तहोताहै ॥ ६६६ ॥

६६७ मृतसञ्जीवनीवटी (चतुर्थी)

कैशूरं रसगन्धरुञ्ज वृद्धं तीक्ष्णोद्भवं भस्मकं,
कालेयेन्द्रयवाऽजमोदहुतमुक् चिञ्चास्थिकं धातकी ।
पला मांसिलवङ्गशालमलिमलं जातीफलं दङ्गणं,
नीली सिन्धुमर्चं विपं सममिदं प्रयेकनिष्कान्वितम् ॥
सर्वेषां सदृशञ्च थिल्वफलकं कान्ताऽन्नसिन्दूरकं,
सिन्दूरञ्च सफेनकं सुविमलं धुस्तरवीजं नवम् ।
भङ्गापत्रककोकिलाक्षसहितं निष्कप्रमाणं पृथक्,
धुस्तरस्वरसेन सन्ततमिदं सम्मर्दयेयामकम् ॥३०९३॥
जम्बोरस्वरसेन मर्दितमिदं गुञ्जाप्रमाणा वटी,
सेव्या चेम्पुना जयेद्भ्रशमिमें रक्तातिसारं परम् ।
सर्वेषु ग्रहणीगदेषु विविधेष्वामातिसारेषु च,
तद्वच्छूलयुतांश्च दुस्तरतराधानाऽतिसारग्रजान् ॥

व. रा., ग्रहण्यतिसारयोः ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और शिगरिक, फोला-दभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर रखडोड़े । इसमें केशर, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रक, इमलीकेबीजोंकीगिरी, हङ्गनोद, पावड़ीकेकूल, इलायची, जटामांभी, लौंग, मोचरस, जायफल, मुनामुहागा, नील, संधानमक, शुद्धबलनाग येसव ४-४ मासे, बेलगिरी छवनेबराबर, कान्तसिन्दूर, अन्नसिन्दूर, रससिन्दूर, समुद्रफेन, शुद्धरुगामाखी और धतूरेकेबीज, भांगकेपत्ते, सालम-राना, येसव ४-४ मासेलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय धतूरा और जंभीरीकेस्वरसमे १-१ पहर मर्दनकर १-१ रतीकी गोलीया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुश्रेयाधदेनेसे रक्तातिसार, समस्तग्रहणीरोग, नानातरहके श्वासातिसार, शूलयुकुदुस्तर अतिसार, इनयसके यह नष्टकरतीहै ॥ ६६७ ॥

६६८ मृतसञ्जीवनीवटी (पद्यमी)

रसरजगुल्यगन्धकमुरतिलैः पीतभृङ्गमरिचैश्च ।
प्रादीक्षिततरसाल्या गुटिकाः कायांश्च चणकामाः ॥

एका देया प्रथमं त्रिदोषविचलस्य मूर्च्छितस्याऽपि ।
अन्या मुहूर्तपरतः प्रहरादन्याऽपरा नैव ॥ ३०९६ ॥
जीवति मृतोऽपि पुरुषस्त्रिदोषजान्विततन्द्रिकायुक्तः ।
श्रीनागार्जुनगदिता गुटिका मृतसञ्जीवनी ख्याता ॥

र. स. क., र. का., रसायनसं., सत्रिपाते ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक, सुवर्णभस्म, चिरायता, फोलाभंगरा, मरिच सबसमभाग लेकर बारीकचूर्णकर मण्डूकपर्णी और ब्राह्मीके रसकी ३-३ भावनाएं देकर चने-प्रमाण गोलियों बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे तान्द्रिकसत्रिपात-प्रथितमूर्च्छिताऽवस्थामें एकगोली दोनोंब्राह्मीके रसोंकेसाथदेना, थोड़े समयकेबाद दूसरी गोली देना । यदि दोनोंकेदेनेमें मूर्च्छा जायत न हो तो एकपहरकेबाद तीसरीगोली देना । इसके देनेसे मूर्च्छासे विमुक्त होजाताहै । यदि तीसरीगोली देनेसभी देववशात् मूर्च्छा जायत न हो तो उसकीचिकित्सा मत्तायु सम-झकर न करना ॥ ६६८ ॥

६६९ मृतसञ्जीवनीवटी (षष्ठी)

मधुयष्टि लंबङ्गञ्च शिलाजतु शुट्रिस्तथा ।
सुयस्त्रे भावना कार्या नवतण्डुलवारिणा ॥ ३०९८ ॥
याममात्रं दृढं मर्द्यं वटी फोलसमा स्मृता ।
कृष्णकापांसनीरेण तृष्णादाहज्वराजयेत् ॥ ३०९९ ॥
मूर्च्छाद्यमुग्ररोगञ्च यातपित्तञ्च नाशयेत् ।
मृतसञ्जीवनी प्रोक्ता पूज्यपादैरुदीरिता ॥ ३१०० ॥
वे. वि., दाहाऽधिकारः ।

टि०—मुक्त्रे इत्यस्य स्थाने सहजमिति वर्तमानमप्ये पाठे दृश्यते परन्तु इत्था दीर्घपरिश्रमेण साधारणवैदिकानिर्माणस्याऽभिहितत्वात् तन्व्याने सुयस्त्रे इत्येव पाठोऽस्माभिः प्रकल्पित इति विद्विः क्षमणीयम् । किञ्च सप्तमवत्यां महत्साधनेन सहजवैषिपापाणो गृहीतो न तु सहजम-वना दत्ता अतोऽत्र नैवचित्तामनिकारस्य भ्रमननिव श्व तथाविध-पाठोऽस्तीत्यवगतन्वयम् ।

भाषा—शुद्धटी, लौंग, शिलाजीत, इलायची सब याममाग-लेकर बारीकचूर्णकर नवीनचावलकों के धोवनसे एकपहरतक दृ-मर्दनकर येसववार गोलीया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कालेकपासके पानीकेसाथ देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छादिमयद्वारोग और वातपित्त इनको यह नष्टकरतीहै ६६९

६७० मृतसञ्जीवनी वटी (सप्तमी)

यष्टीमधुलङ्गञ्च शिवायत्कं शुट्रिस्तथा ।
सहस्रधैथी कतफवीजं तण्डुलवारिणा ॥ ३१०१ ॥
यामप्रथं दृढं मर्द्यं वटिका फोलसम्मिता ।
कृष्णकापांसनीरेण तृष्णादाहज्वराजयेत् ॥ ३१०२ ॥
मूर्च्छाभ्रमादिरोगांश्च यातपित्तञ्च नाशयेत् ।
मुधासञ्जीवनी नाम पूज्यपादैरुदीरिता ॥ ३१०३ ॥
र. र. कौ., र. पा., तृष्णायाम् ।

भाषा—शुद्धटी, लौंग, हर्षदीपल, छोटीइलायची, दृ-सर्वेपोषापादीमन्म, निर्मलीकेबीज पषवगमभागलेकर बारीक-

चूर्णकर नवीन चावलके धोयनेसे तीनपहर मर्दनकर बेरवारपर गोलिया बनानर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कालीकवासके स्वरससे देनेसे तृष्णा, दाह, ज्वर, मूर्च्छा, भ्रम, वातपित्तादि-जनितक्षाममारोग, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ६७० ॥

६७१ मृतोत्थापनरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं शिला च विषहिङ्गुलम् ।
मृतकान्ताऽम्रताम्राऽयस्तालकं भाक्षिकं सममा३१०४।
अम्लयेतसजम्बीरचाङ्गेरीणां रसेन च ।
निर्गुण्डीहस्तिगुण्डयोश्च द्रव्यै र्भयं दिननयम् ॥३१०५॥
रुद्धा तु भूषरे पाच्यं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ।
चित्रकस्य कपायेण मर्दयेत्प्रहृष्टयम् ॥ ३१०६ ॥
मापमात्रं प्रदातव्यं हिङ्गुव्योपाद्रिकद्रव्यैः ।
सकर्षुरानुपानं स्यान्मृतस्योत्थापने रसे ॥ ३१०७ ॥
पीडितं सन्निपातेन गतं वाऽपि यमालयम् ।
तत्क्षणाज्जीवयत्येव पथ्यं हर्षिरेः प्रयोजयेत् ॥३१०८॥

मे र, र. स, र सु, नि. र, व रा., र. को, र प्र, सू. प्र, सन्निपाते । र. को. आनन्दभैरवः ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शुद्धपाप, मैनसिल, बडनाम और शिगरिक, कान्तलोह, अन्नक, ताम्र, लोह, हरिताल और सोनामाखीभस्म सब १-१ भाग, लेकर कजलीबनाय विजोरा, जभीरी, अमलोनिया, सभाद्र, हाथीशुण्डी इनप्रत्येकके स्वर छोसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय हारावसमुद्रमें बन्दकर ४ पहरतकमूषरयन्त्रमें पकावे । स्वाप्नशीतलहोनेपर निकालकर चित्रकके काड़ेसे दोपहर मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हींग, त्रिकटु, अदरकका रस और शुद्धकपूर इनकेसाथ देनेसे मृतावस्थापर सन्निपाती तत्क्षण उठकर बैठजाता है । मृतवल्गनेपर दूधभात खाने को देना ६७१

६७२ मृतोत्थापनरसः (द्वितीयः)

अन्नं ताम्रं तथा लोहं प्रत्येकं संस्कृतं पलम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य शुद्धीयात्कुशलो भिषक् ॥ ३१०९ ॥
आज्ये पलद्वादशके दुग्धे तत्स्वरससङ्घये ।
क्षिप्त्वा तत्र क्षिपेच्चूर्णं सुपूतं घनतन्तुना ॥ ३११० ॥
विडङ्गनिफलायह्निकद्रव्यां तथैव च ।
पिष्ट्वा पलोन्मितानेतान्यथासम्मिश्रतां नयेत् ॥३१११॥
ततः पिष्ट्वा शुभे भाण्डे स्थापयेत्तद्विचक्षणः ।
आत्मनः शोभने चाऽपि पूजयित्वा गुरुं रविम् ३११२ ॥
घृतेन मधुना मये. पाययेन्मापकाऽधिकम् ।
अष्टौ भाषान् क्रमेणैव वर्षयेच्च समाहितः ॥ ३११३ ॥
अनुपानञ्च दुग्धेन मारिकेलोदकेन वा ।
जीर्णं देयञ्च शाल्यञ्च मुद्रमांसरसादयः ॥ ३११४ ॥
रसपानाऽधिरक्षानि द्रव्याभ्यन्यानि योजयेत् ।
हृच्छूलं पार्थशूलञ्च आमवातं कटिप्रहम् ॥ ३११५ ॥
गुल्मशूलं शिर.शूलं यरूहीहादिकं तथा ।

अग्निमान्यं क्षयं कुष्ठं कासं ध्यातं विचर्चिकाम् ॥
अदमर्तं सूत्रकृच्छ्रञ्च योगेनाऽनेन साधयेत् ॥३११६॥
र. र स., शुलाऽधिकारे ।

भाषा—अन्नक, ताम्र और लोहभस्म ४-४ तोले, गाय-का पी ४८ तोले, गायकादूध २८ तोले लेकर सबको लोहेकी कड़ाहीमें डालकर मधुप आंचसे यदातक पकावे कि दूध, पी तमाम जलजाय । फिर इसके कपडधानकर विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, त्रिकटु, ये प्रत्येक ४-४ तोले का बारीक चूर्णकर परिपक रसमें मिलाकर ३-४ पहर मर्दनकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे रोगी और वैद्यके शुभनक्षत्रमें शुद्ध और सुयुंकी पूजाकर घृत, मधु अथवा मयकेसाथ १ माशेके लगभग देवे और प्रह-तिकी औचित्य देकर क्रमसे आत्मारो तक बढावे । पूर्वोऽ-नुपान अनुकूल न पड़ेतो दूध अथवा नारियलके जलनेसाथ दे । इसके पचजानेपर पुराने चावल, मूंगकादूध, गाम्बर और रसके अविच्छेद द्रव्योंको दे । इसके सेवनेसे हृदयशूल, पार्थशूल, आम-वात, कटिप्रह, गुल्मशूल, शिर शूल, यश्व रूहीहादि उदररोग, मन्दाग्नि, क्षय, कुष्ठ, कास, श्वास, विचर्चिका, पथरी, मृत-कृच्छ्र येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६७२ ॥

६७३ मृतोत्थापनरसः (तृतीयः)

क्षारत्रयं शम्भुवीर्यं दर्दं देवपुष्पकम् ।
पञ्चद्व्यमितानेतान् द्विद्व्यंश्चाऽप्यतः परम् ॥ ३११७ ॥
शिला शुद्धा प्रथोक्तव्या तालकं गन्धकं चवा ।
मस्तकी गरलं कुष्ठं मृतताम्राऽम्रतङ्गुणम् ॥ ३११८ ॥
छोहभस्म च सम्मेल्य कटुतैलेन मर्दयेत् ।
कूपिकां घालुकायन्त्रे विपचेधामयुग्मकम् ॥ ३११९ ॥
स्वाप्नशीतलमुद्गत्य खल्वमधये विनि.क्षिपेत् ।
लशुनस्याऽथ तैलेन नेपालबीजतैलतः ॥ ३१२० ॥
चित्रकस्य कपायेण हार्द्रकस्य जलेन वा ।
सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रप्रमाणतः ॥ ३१२१ ॥
मृतः सोऽपि पुनर्जीवितोगमृत्युभयापहः ।
मिष्टार्थं प्रायसं दद्यादुपचारेञ्च शीतलैः ॥ ३१२२ ॥
राजोपचारेः कुर्वीत गान्दलेपंसुचन्दनैः ।
मृतोत्थापनको नाम रसोऽयं सर्वरोगजित् ॥ ३१२३ ॥
र. स, वा, र क यो, सन्निपाते ।

भाषा—यबक्षार, सजी, सुहागा, शुद्धपाप, शिगरिक और लौंग येसब ५-५ टङ्क, शुद्धमैनसिल, हरिताल और गन्धक, वच, मस्तकी, सर्वकाजहर, कुष्ठ, ताम्र और अन्नकभस्म, शुभ-सुहागा, लोहभस्म येसब २-२ टङ्क लेकर कजली बनाय ४ पहर कटुतैलेसे मर्दनकर कपडमिट्टीकीहुई आलशीशीशीमें भर वालकायन्त्रमें दो पहरतक पकावे । स्वाप्नशीतलहोनेपर निकाल-कर लशुन और जमालगोट का तैल, चित्रककी जड़काकाठा, अदरकका स्वरस इनसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ शीशीमें गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-

पानकेसाथ देनेसे मृतकल्पभी सन्निपाती फिरसे जीवित और तमाम उपद्रवोंसे रहित होजाता है । मूखलगनेपर मित्राण और खीर देवे । दाहदोहेपर शीतोपचारकरे, चन्दनलेपनादि तमाम राजोचित उपचारकरे ॥ ६७३ ॥

६७४ मृत्युञ्जयभैरवोरसः

रसवली मधुपद्वयपट्टपुटे

रविपुटेरपि वायसितो विषम् ।

तिथिपुटे वंचया जयपालकं

शितिगलाद्रवमैश्च हिडिम्यिकाम् ॥ ३१२४ ॥

क्रमविद्युद्धयतीः सुविभाव्य ताः

सकलतुल्यकणामपि पट्टपुटेः ।

विटरसस्य च निम्बुरसैः समं

युतिफलेन समः स च मृत्युजित् ॥ ३१२५ ॥

तस्मान्मुना पिप्पलीभिः सर्वज्वरहरो मतः ।

सर्वत्र पुटशन्दोऽत्र भावनाथेऽभिधीयते ॥

कणातसाऽमृत्युयोगेन सर्वरोगेषु शस्यते ॥ ३१२६ ॥

र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धकी कञ्जलीको मधुमी ६ भावनाए देवे । शुद्ध वज्रनागको मकोयकेरसकी १२ भावनाए देवे । शुद्ध जमालोटे को बचके स्वरस अथवा काषकी १५ भावनाए देवे । मेनसिलको नीलीके रसकी १५ भावनाए दे और इन सबकीपरावर पीपलका चूर्णमिलाय खदिर, नीबू और विद्युआके अहस्वरसे ६-६ भावनाए देकर १ से २ रतीतकनी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमजल अथवा पीपलकेसाथदेनेसे सत्रप्रकारके ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । अन्नन-कलेसे तमामविषोंको दूरकरताहै । तत्तद्रोगहरासुपानकेसाथ देनेसे समस्ततोगोंको नष्टकरताहै ॥ ६७४ ॥

६७५ मृत्युञ्जयरसः (प्रथमः)

विषं सूतकृगन्धौ च पित्तं मत्स्यवराहयोः ।

आजमाधुरपित्ते च महिषस्याऽपि योजयेत् ॥ ३१२७ ॥

हरितालञ्च सत्र्यापं वानरीवीजसंयुतम् ।

अपामार्गं चित्रमूलं जयपालञ्च कल्कयेत् ॥ ३१२८ ॥

एतत्सर्वं ममांशेन अजाभूत्रेण मर्दयेत् ।

मापेण सदृशं कार्यां वटिका सद्रिप्यग्बरेः ॥ ३१२९ ॥

महाज्वरे महाशीते महाशीतज्वरेऽपि च ।

मज्जागते सन्निपाते विमूर्च्छां विषमज्वरे ॥ ३१३० ॥

अस्ताभ्ये मानये युञ्ज्यादेकाहाञ्ज्वरनाशिनी ।

जलाद्रेऽङ्गदीथिल्य नासाभ्याये च पीनमे ॥ ३१३१ ॥

अर्जाणं मूर्च्छनोत्थाने श्लेष्मोन्व्यानेऽतिदुर्जये ।

शोथकामलपाण्ड्यादिसर्वरोगापहारकः ॥ ३१३२ ॥

मृत्युञ्जयो रसां नाम ज्ञानज्योतिःप्रकाशिनः ।

भृङ्गराजरसेनाऽयं रमराजः प्रदीपते ॥ ३१३३ ॥

निर्वातेनिर्जनस्थाने घटुधरसमावृते ।

प्रभ्येदः क्षणमात्रेण जायते निर्माहृदयम् ॥ ३१३४ ॥

मूर्च्छितः पतितो भूर्मा दह्यमानः पुनः पुनः ।

एवं चिह्नं समालीन्य वदेन्नैरज्यमातुरे ॥ ३१३५ ॥

पथ्यं यद्याचते रोगी तद्दातव्यं प्रयत्नतः ।

दुष्योद्वंशं शीतजलं दातव्यं तद्विचक्षणैः ॥ ३१३६ ॥

एवं महारसः श्रेष्ठः शम्भुना प्रेरितो भुवि ।

कृपया सर्वभूतानां ज्ञानज्योतिःप्रकाशितः ॥ ३१३७ ॥

र. शा., भे. र., र. सु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध वज्रनाग, पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर मछली, भूअर, वररा, मोर, मेसा इन्के-पित्त, शुद्धहरिताल, त्रिकटु, केवाचकेबीज, अपामार्ग, चित्रक-बीज, शुद्धजमालोटा, येसय समभागलेकर पारोगन्धकी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय बकरीकेमूत्रमें २-२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली भंगरेके रसकेसाथदेनेसे भीषणज्वर, शीताज्वर, अत्यन्त टंडेकर आनेवालाज्वर, मज्जाप्रभृति धातुगत तथा सन्निपातज्वर, हैजा, विषमज्वर, जलोदर, अज्ञीथिल्य, नासाघाव (जुकाम), पीनस, अजीर्ण, मूर्च्छाकाप्रारम्भ, अतिदुर्जयश्लेष्मकाउभार, शोथ, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसनाप्रयोग निर्जन और निर्वातस्थानमें करके बहुतसे बख ओढ़ानेसे थोड़े समयमें सर्वाङ्गमें पसीना शुद्धोजानायाग और दाहकेमारे चित्रने लगेगा तब समझना कि यह रोगसे निर्मुक्तहोसुका । यदि दवाके देनेसे वैसाही मृतप्राय पड़ा रहेतो उत्तपर किसीभी दवाका प्रयोग न करना वह अवश्य यमालयको जायगा । होशमें आकर खानेको मागे तो दहीभात और ठंडा जल देना ॥ ६७५ ॥

६७६ मृत्युञ्जयरसः (द्वितीयः)

सूतं गन्धकटङ्गुणं शुभविषं धुस्त्वरीजं कटुं,

नीत्वा भागमथोत्तरं द्विगुणितं चोमत्तमूलाभ्युना ।

कुर्यान्मापवटीं सुखाऽतितुलदां सर्वाञ्ज्वराप्रादाये,

देप श्रीशिवशासनात्प्रजनितः सूतश्च मृत्युञ्जयः ३१३८

नारिकेलसितायुक्तं वातपित्तज्वरञ्जयेत् ।

मधुना श्लेष्मपित्तोत्थं ज्वरं निष्णांशयेदुक्चम् ॥

सन्निपातज्वरं घोरं नाशयेद्दार्द्रनीरतः ॥ ३१३९ ॥

भे. र., र. सु., ध, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा, शुद्धाणा ३ भा. वज्र-

नाग ४ भा., धनुंकेबीज ५ भा., कुट्टी ६ भाग लेकर वारीकान्ग-

कर पारोगन्धकीनीलवर्ण कञ्जलीमें मिलाकर धनुंकेरसमें १-२

रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलियें बनाकररखजोड़े । इनमेंसे १-१

गोली नारियलकेजल और मिश्रीकेसाथदेनेसे वातपित्तज्वर

नष्टहोवे । मधुकेसाथदेनेसे श्लेष्मपित्तज्वर, अदरवांकेरसमें सापा-

रण और सन्निपातज्वर नष्टहोताहै ॥ ६७६ ॥

६७७ मृत्युञ्जयरसः (तृतीयः)

रमविषदितिपुत्रान्वाप्ययवामूर्त्तलोत्थं,

मिहिरतुंगजाराणावधयेत्तुल्यमानाग ।

दश च तदनु देया भावनाः सिन्धुवारै-
खिरथ हृदभयाऽऽर्द्रै र्थहिमत्स्याऽऽजपित्तैः ॥३१४०॥
गुञ्जामात्रः प्रयोक्तव्यः सद्यः सर्वज्वरापहः ।
सिद्धो मृत्युञ्जयो नाम रसोऽयं भुवि दुर्लभः ॥३१४१॥
र शि, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिष्टुकेववायकी १०, बदालकेफलोकेरसकी ७, संभाद्रके रसकी १०, अमलोनिया, हरे, अदरक, मोर, मछली और बकरेके पित्तसे ३-३ भावनाएँ देकर १-१ रसौकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिता अनुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको तत्क्षण नष्टकरताहै ६७७

६७८ मृत्युञ्जयरसः (चतुर्थ)

मृतताप्राऽग्रं तालं हरवीर्यञ्च गन्धकम् ।
समुद्रफेनञ्च समं खल्वमध्ये विनि क्षिपेत् ॥ ३१४२ ॥
लाह्वलीद्रावकै र्भयं कृत्वा गजपुटे पचेत् ।
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य शिथिलच्छायाऽहिमत्स्यजैः ३१४३
पित्तै र्भाविं चतुर्थ्यामं देयं बह्लेकमानकम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वथा सन्निपातनुत् ॥
रोगमृत्युभयं हन्ति मृत्युञ्जयरसो हित ॥ ३१४४ ॥
वै चि, ज्वरे ।

भाषा—ताम्र और अभ्रभस्म, रसमाणिक्य, शुद्ध पारा और गन्धक, समुद्रफेन येसब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर करिद्राके अक्षररससे मर्दनकर गोल बनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर गजपुटकी आवधे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मोर, बकरा, सर्प, मछली इनप्रत्येकके पित्तोंकी ४-४ पहर भावनाएँ देकर ३-३ रसौकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनुपानविशेषसे सन्निपातको दूरकर रोग और मृत्युके भयको नष्टकरतीहै । ६७८ ॥

६७९ मृत्युञ्जयरसः (पञ्चम)

पारदभस्म शिलाजतुयुक्तं
तीक्ष्णजभस्म शुभ्रमेलय तावत् ।
दानवभस्म विभागयुतं वै
भस्मयुतं जलजातकपयुतं ॥ ३१४५ ॥
सर्वमिदं परिमृद्य समांशं
नागलतादूलतौययुतञ्च ।
चित्रकमूलजले परिमृद्य
भापसमानवटी, परिकुर्यात् ॥ ३१४६ ॥
आर्द्रकजेन रसेन वर्दीं वै
दापय नित्यमत्तन्द्रितवुद्धिः ।
दोषसमूहभयज्वरवेगं
यत्र याति परिपक्वपायात् ॥
मृत्युञ्जितरि नामरसेऽस्मिन्
ध्याधिगणा न गदा गणनीया ॥ ३१४७ ॥
र क यो ज्वरे ।

भाषा—पारदभस्म, शिला तीत, फोलादभस्म, गन्धकभस्म (अभावमें ताम्रभस्म), शङ्ख और बौडीभस्म सब समभाग-लेकर एकपहर शुद्धमर्दनपर पान और चित्रककी जड़के स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर उडवरावर मोलियें बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे जो कि वायु वीररहसे काबूमें न आताहो ऐसे त्रिदोषज्वरको यह तत्क्षण नष्टकरताहै और अनुपानविशेषसे तमामरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६७९ ॥

६८० मृत्युञ्जयरसः (सिद्धाद्य) (षष्ठः)

गन्धाऽऽमा वत्सनामो
रसवरसहित सप्तधा भावनीयो,
व्योषाम्भोराशिर्वाजे-
स्त्रिदशसुररसजै र्भांगिचिन्वाऽऽर्द्रजैश्च ।
त्रिगारानेय पित्तै-
रजतिमिशिक्षिजैश्चायथा शोपयित्वा,
दत्तो गुञ्जाप्रमाणो मरणभयहर,
सिद्धमृत्युञ्जयोऽयम् ॥ ३१४८ ॥
र क यो, ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, बछनाग और पारा समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर त्रिष्टु बदालकेबीज, तुलसी, भारतीय चित्रक और अदरक, इन प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा बवाभोंसे सात ७ भावनाएँ देकर बररा, मछली और मोर अथवा कुम्भट इनकेपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रसौकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको दूरकरताहै ६८०

६८१ मृत्युञ्जयरसः (सप्तमः)

यलिः सूतो निम्बुरससमरसो भस्मसिक्ता-
ह्ये यत्रे कृत्वा समरविकृणाट्टुपरजः ।
त्रिघ्नस लुहाम्मोखकदलित, क्षौद्रहयिपा-
ज्वलीढोबह्लेकं द्रवयति समस्तं गद्गणम् ॥
जरां वर्षिकेण क्षपयति च पुष्टिं वितनुते,
तनो तेज स्फारं रमयति धधूनामपि शतम् ।
रस श्रीमाम्मृत्युञ्जय इति गिरीशेन गदित,
प्रमाणं का वाऽन्य कथयितुमपारं प्रभवति ॥
वृ यो त, र, कौ, र, चि, र, ल, यो म, आ, प्र, रसायने ।
त्रि० अन्य रसिदूरलेपि मेषादानात्मन्वया स्त्रीरुणाऽपि ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारेकीनीलवर्णकजलीकर नीचूके रससे यहवत्क मर्दनकरे कि सूखनेपर धूममेंभी चमक न मान्द पड़े । फिर कपडिनीदीहुई जानशीशीमीमें भरके भस्म अथवा बाडकायुग्में रख अन्तुमविदाधकियासे रससिन्दूर बनावे (अन्तुमविदाधकी बिया चन्द्रोदयप्रथमकी टीकामें देयो) । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इस्वीबराबर ताम्रभस्म, पीपल और भुनाशुद्धाया मिलकर तीप्तोचक विजोरेरेरसमें मर्दनकर

सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और धीकेसाथ मिलाकर खानेसे समस्तारोगदूरहोकर शरीर पुष्टहोताहै शरीरमें तेजको बढ़ाताहै, नपुंसकताको दूरकरताहै एकवर्षतक लगातार प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकरताहै ॥ ६८१ ॥

६८२ मृत्युञ्जयरसः (अष्टमः)

द्विसंशरं त्र्युषणं पञ्चलवर्णं शतपुष्पिकाम् ।
समभागमिदं सर्वं पटचूर्णं समाचरेत् ॥ ३१५१ ॥
तत्समौ रसगन्धौ च कृत्वा कज्जलिकां शुभाम् ।
सर्वमेकत्र सम्मेल्य मर्दयेद्विसत्रयम् ॥ ३१५२ ॥
अयं मृत्युञ्जयो नाम्ना रसः शीघ्रफलप्रदः ।
कथितो मथ्यलार्थेण सन्निपातहरः परः ॥ ३१५३ ॥
सन्निपाते प्रयोक्तव्यो रक्तिकापञ्चमात्रकः ।
चित्रकाऽऽर्द्रकसिन्धूत्यकटुभिर्वा समन्वितः ॥ ३१५४ ॥
पीततोयं त्रिदोषार्तं निर्वाते शाययेत्ततः ।
पृथ्यं दध्योदनं देयं याचमानाय नाऽन्यथा ॥
गुणो न जायते यस्य तस्य देयो रसः पुनः ॥ ३१५५ ॥
हन्याद्वातगर्दं तथा कफगर्दं मन्दानलत्वं ज्वरं,
शूलं सर्वमहामयाञ्जठरजां पीडां यकृत्पाण्डुताम् ।
शोफं गुल्मरुजं तथा ग्रहणिकां भ्रूहिहामयं विद्वहं,
यान्ति गुल्मकृतां सकासमभितः श्वासञ्चहिकामपि ॥
आदीं सर्वोदराणाञ्च देयमुक्तं विरेचनम् ।
गोमूत्रं चाऽथ गोक्षीरे यंज्यैरमण्डतैलकम् ॥
कर्पमात्रं प्रयत्नेन शुद्धे देयो रसः पुनः ॥ ३१५७ ॥

र. र. स., र. घ., र. को., र. प्र., र. म. भा., उदराऽधिकारे ।

भाषा—सर्षपी, यवक्षार, त्रिकटु, पांचोन्नमक, सौंफ, सब-समभाग लेकर बारीक चूर्णकर सबसे दूनी शुद्धपारद और गन्धकको नीलवर्णकज्जली मिलाकर तीनरोज शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ५-५ रती चित्रक, अदरक, सेंधानमक और कुटकी इनकेसाथ देकर थोड़ाजलपिलाकर निर्वात स्वानमें मुलादेना । पत्तीना आनेपर पध्यमांगे तो दहीभात देना अन्यथा नहीं । इसके देनेसे कुछ असर न मालूम हो तो एक घण्टे बाद दूसरी मात्रा देना । इसके प्रयोगसे त्रिदोषजनितव्याधि, वातरोग, कफरोग, मन्दाभि, ज्वर, शूल, समस्त महारोग, उदररोग, यष्टन, पाण्डु, शोथ, गुल्म, ग्रहणी, शीहा, मलाबरोध, गुल्मजनितमान्ति, कास, श्वास, हिंका इनसबमें यह नष्टकरताहै । उदररोगोंमें देनेकेपहिले गोमूत्र अथवा गोदुग्धकेसाथ एण्डतैलका विरेचन देना । कोष्ठशुद्धहोनेपर रसका प्रयोग करना ६८२

६८३ मृत्युञ्जयरसः (नवमः)

त्रिकटु त्रिफला सूतगन्धसौ टड्गुणं विषम् ।
यष्टी निशा कुचेराक्षो दन्तिवीजमथाऽपि च ॥ ३१५८ ॥
यत्तानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
भृङ्गराजसेनेय मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ॥ ३१५९ ॥

गुटिका मापमात्रास्तु छायाशुष्काश्च कारयेत् ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥

मृत्युञ्जयो रसो नाम सर्वरोगविदारणः ॥ ३१६० ॥
यो. र. क्षये ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्ध पारा, गन्धक, टंकण और वल्गनाग, मुल्लठी, हल्दी, करंजकेबीज, शुद्धजमालगोटा येसब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धकहीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर गंगेकेरससे ३ रोज मर्दनकर उद्दवरावर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मोली तत्तदोप-हरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ६८३ ॥

६८४ मृत्युञ्जयरसः (दशमः)

यज्जभस्म रसभस्म मौक्तिकं
मर्दितञ्च खलु निम्बुवारिणा ।
तच्च कुष्कुटपुटेन पाचितं
चूर्णयेन्मधुयुतं हि वल्लकम् ॥
वर्षमात्रमपि सेवितं जये-
न्मृत्युमेव सकला रुजा अपि ॥ ३१६१ ॥
र. प्र. घ. रसायने ।

भाषा—हीरा, पारा और मोतीभस्म समभाग लेकर नीबूकेरसमें १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय चातहृकपेमें लपेटकर २-३ कपड़िमिठी देकर सुखनेपर कुल्कुटपुटेमें पकावे । स्वाद्शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधुकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे बुढ़ापा और समस्तारोग दूरहोतेहैं ॥ ६८४ ॥

६८५ मृत्युञ्जयरसः (एकादशः)

प्रवालमुक्ताफलवज्रताराः
सुवर्णताम्राऽऽम्रकनागसाराः ।
यथोत्तरा वज्रशिलाऽऽलगन्धाः
पलोन्मिताः सूतकसप्तभागाः ॥ ३१६२ ॥
चतुश्धतुः शङ्खरुपदकानां
सुतिकजम्बीरविमर्दितानाम् ।
अफेनमाक्षीरुविपनयाणां
पलं पलं दन्तिफलान्धितानाम् ॥ ३१६३ ॥
समस्तमेफीकृतमत्र चूर्णं
दिनद्वयं चित्ररुवारिपूणेम् ।
विशुष्कमद्भारकःकारुतुण्डयो
स्तुगकैवृताऽमरनागशुण्ड्यः ॥ ३१६४ ॥
किरातभङ्गातनिकुम्भकुम्भाः
कुटेरधीरारुवीररम्भाः ।
वलातिवृषागन्धलाऽऽलुरुर्णा
कटुत्रिकं शीतशिवाऽऽर्द्ररूप्यः ॥ ३१६५ ॥
नताऽमृते काण्डरुहा सलजा
विषं घृपाक्षा भृगुजा सगुजा ।

अमीभिरुर्वाभुजगार्तियुक्तै-
वराहगोधाशिरिमोनपित्तैः ॥ ३१६६ ॥

पृथक्पृथक्साधितमन्तरस्थं
दृष्टे पुटे ताप्रमये विपकम् ।

सुशीतमुद्गत्य दृत्तं रजश्च
रसो हि मृत्युञ्जयनामधेयः ॥ ३१६७ ॥

प्रणम्य मृत्युञ्जयमीशमर्कै-
मुपेन्द्रवज्राऽधिपकारिशराजान् ।

प्रयुज्य विप्रान्भिपजश्च सम्प-
प्रसं प्रयुञ्जीत यवप्रमाणम् ॥ ३१६८ ॥

सितोपलारकियुगेन मिश्रं
नराय दद्यात्तमद्गलाय ।

सितादिसर्वं मधुरं फलानि
सुदाडिमादीनि च मांसवर्गम् ॥ ३१६९ ॥

यलं विदित्वा सकलं विदध्या
श्रचाऽप्रकिञ्चित्परिहार्यमस्ति ।

विहाय कर्करककटुकोल-
कपित्थकफाँटकफारवेहम् ॥ ३१७० ॥

करीरकोशातकिकाकमाची-
सविल्ववृन्ताकतिलादिकं स्यात् ।

विजित्य मृत्युं बहुदोषमुग्रं
रोगी पुनर्जीयति तत्रमघात् ॥

अशोषदोषान्तकरो रसोऽय-
मतस्तु मृत्युञ्जयनामधेय ॥ ३१७१ ॥

दो, यो चि. ज्वराधिकारे ।

भाषा—प्रवाल १ तो, मोती २ तो, हीरा ३ तो, रजत ४ तो, सुवर्ण ५ तो, ताप्र ६ तो, अन्नक ७ तो, नाग ८ तो, फोल्द ९ तो, (इनसर्वभूमिमें) वज्रभस्म, शुद्ध मैनसिल, हरिताल और गन्धक ये सब ४-४ तोला, शुद्धपारा ७ तो, शुद्ध धौर कौडीकीभस्म ४-४ तोले लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय चिरायता, और जमीरीके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर अफीम, सोनामाखी, शुद्ध बछनाग, सांलुक और हरिश्क, शुद्ध जमालगोटा १-१ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्णपिण्डमें मिलाकर दोरोंज चित्रकके रससे मर्दनकर मुखान्तर पीयाबासा, काबनासिका, चूअर, आक, धतूरा, देवदारु, करिडारी, सोंठ, चिरायता, भिलावा, जमालगोटा, विधारा, जगलीतुलसी, शतावर, कनेर, केला, बला, निशोत, नागबला, मूषाकर्णौ, त्रिकटु, सफेदचन्दन, अद रस, गोकर्ण, रुमर, गिलोय, इव, लम्बाल, बछनाग, अडुसा, इन्द्रायन, भारद्वा, सफेदपुष्पा, कचरी, पान, कुट्ट, इनप्रत्येकके यथाष्टमम्व स्वरस अथवा कापोंसे १-१ भावना देकर सुअर, गोद, कुक्कुट अथवा मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर गोलानया समस्तपिण्डकेबावापर तावके सम्पुटमें भरके ६-७ कण्डिमिठी देकर सुखनेर बाहुकायब्रमें ४ पहरकी अमि

देकर पकावे । स्वाद्वशीतल होनेपर निवाल्कर रखछोड़े । इसमेंसे जबप्रमाण माना महादेव, सूर्य, उपेन्द्र, इन्द्र, धन्वन्तरि इनसबकी पूजाकर ब्राह्मण और वैश्योंको सन्तुष्टकर दो तोले शहरके साथ मिलाकर कृतमङ्गलरोगीको देना । शहर वगैरह मधुरपदार्थ, अनारवगैरहफल, मासवर्ग रोगीके बलानुसार देना । ककड़ी, आड़, काननी, बेर, बैय, ककौड़ा, करेला, करीर, लोई, मकोय, बेल, बॅगन, तिल इनको छोड़कर सबचीज खाय । इसकेसेवनसे समस्तसन्निपात और असाध्यरोग नष्ट होकर मनुष्यकिरसे जी उठताहै । समस्तदोषोंका नाश करनेसे इसका नाम मृत्युञ्जयहै ॥ ६८५ ॥

६८६ मृत्युञ्जयरसः (द्वादशः)

भागोक्तं मरिचश्च लोहमपि सद्गन्धाश्च भागद्वयं,
लौहै न्यस्य गवां घृतेन घटिकाभेकां पचेत्प्रायके ।
तालं वह्निलवं समुद्रलरिकं म्लेच्छं शरांशं विपं,
सर्वांशं जयपालकश्च कटुकीकाथासथा चित्रकात् ॥
भाध्यं राममितं तथाऽऽद्रकरसात्त्रि- सतृकृत्यो दृढं,
सम्मर्द्याऽऽतपशोपितं शतदलेः पुष्पैः समभ्यर्चितम् ।
गुञ्ज्याद्भुजमितं ज्वरे तु सहसा सामे निरामे नवे,
जीर्णं वा विपमे समीरणामवे पित्तोत्थिते श्लेष्मजे ॥
इन्द्रोत्थे घनसन्निपातजनिते सोपद्रवेऽप्युत्थणे,
शीत्ये स्वेदयुतेऽपि मान्यजठराऽऽनाहृषु सर्वातिपु ।
शुष्के शोकयुतेऽपि पाण्डुगदके विष्टम्भजत्वादिपु,
व्योषाऽऽर्द्रेण ससैन्धवेन च सद्यजीराऽऽभुना पित्तजे ॥
पित्ते क्षौद्रसितादिना तदनु वा वायं भवेच्छीतलं,
सोष्णं वा तिलतैलेलेपिततनुः तापाऽनुरूपं पुनः ।
रके जीयति नाऽन्यथाऽप्यतिरुचौ मुद्राम्बु सच्छर्करं,
पथ्यं भक्तमरिष्टदुग्धदधियुक् द्राक्षेशुसदाडिमम् ॥
खर्जूरं ससितञ्च लेपनमहो कफूरकस्तुरिका,
काश्मीरं शितनीपजं तदनु वा रम्भादलेः संस्तरः ।
पीनोद्भक्तकुचरशलीसुल्लानास्वालिङ्गनं चुम्बनं,
पथ्यं प्रयुज्यथे रसे समुचितं सत्तालवृन्ताऽनिलः ॥
र श, र प, र यो, ज्वराधिकारे ।

टि०—रसपदार्थों जयपाल पद्मगो निवोचित । रसोत्थचन्द्रोदे गपाऽऽभ्रभागद्वयमित्यस्य स्थाने दुग्धाऽभ्रभागद्वयमिति निवोचित तत्र दुग्धपारमशयेन श्वेतमहो प्रदीतव्यं, सन्निवोचनमपि साधु प्रति भाति परन्तु तामात्रा मुद्रतमा कर्तव्या, मल्लोचनेन तीक्ष्णवीर्ये वात् । रसोत्थचन्द्रोदरसपदार्थो भाँव्य रामयितमित्यस्य स्थाने स्वयमिति पाठोऽस्ति, अन्यसर्वं समानम् ।

भाषा—मरिच और लोहभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग, लेकर लोहेकेवर्तमें डालकर सबकी बराबर मायका धी डालकर एकघड़ी पकावे । धीसुखनेपर उदारपर हरितालभस्म अथवा रसमाणिष्य ३ भा, ताप्रभस्म ४ भा, शुद्धबछनाग ५ भा, शुद्धजमालगोटा सबकीबराबर मिलाकर कुटकी, चित्रक, इनके स्वरस अथवा स्वायसे ३-३ भावना देकर अदस्तकेरसकी

ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्तल्लनासु प्रियो भवेत् ।
 ततहाटकसंकाशः श्रीधीमेधाविभूषितः ॥ ३१८७ ॥
 इष्येगो मयुराक्षो वाराहश्चतिरेव सः ।
 अपरः कामेद्वो वा मानिनीमानमर्दनः ॥ ३१८८ ॥
 शाल्यत्रं गोपयः खण्डं सित्ता जाङ्गलमामिपम् ।
 गोधूमजानिकाराक्षं मापात्रं कदलीफलम् ॥ ३१८९ ॥
 पनसञ्जाऽपि सञ्जं वातामं नारिकेलकम् ।
 मधुरञ्च भजेत्प्राशं वर्षमात्रमतन्द्रितः ॥
 मात्राऽस्य मापप्रमिता सदा सेव्या नरोत्तमैः ॥ ३१९० ॥

र. सु., रसायनस., र. सं. क., र. म. मा., र. प्र., प्रमेहाऽधिकारे

भापा—सुवर्णं, रजत, हीरा इनकीमस्में समभाग लेकर सुशली, सूपाकर्णा, विजोरा, मोचरत, केवाच इनके रसोंसे ३-३ दिन भावना देकर उद्धवरावर गोलियों बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ततद्रोगहराशुणकसेष्य देवेनेसे राज्यक्षम, सबप्रकारके प्रमेह, जीर्णज्वर, अतिसार, प्रलूणी, बहुमूनता, पातुशीलता, नसुवकता, इनसबको यह दूरकरताहै । बुद्धोपेकी हृदाकर बुद्धि और कान्तिको बढ़ाताहै । श्रियोंके मनको भङ्गकरताहै । चाबल, गायकादूध, शकर, जात्रलभास्य, गेहूँ और उद्धके पदार्थ, बेला, कटहर, खजूर, बादाम, नारियल, समस्त मधुरपदार्थ इतमें सेवनकरनेयोग्यहै ॥ ६९० ॥

६९१ मृत्युञ्जयरसः (लघुः) (सप्तदशः)

कर्पं शम्भुञ्जवस्यैकं कर्पं स्याद्वरदस्य च ।
 जैपालस्य च शुद्धस्य त्रयमेतद्विद्वयम् ॥ ३१९१ ॥
 बृद्धदारकर्नारेण खल्वे कृत्वा विमर्दयेत् ।
 अथोद्धवरेणानां स्वरसेन विभावयेत् ॥ ३१९२ ॥
 शृङ्गवेरसेनाऽसुं रविचारं विमर्दयेत् ।
 गुञ्जामात्रां वर्टी कृत्वा सितया सह भक्षयेत् ॥
 मृत्युञ्जयरसो नाम नयज्वरहरः परः ॥ ३१९३ ॥

र. प्र., र. सु., ज्वराऽधिकारे ।

भापा—पारदभस्म, शुद्ध शिगरिक और जमालगोटा समभाग लेकर एकद्वार सूत्रामदेकर विचारा, मूल, इनके रसोंसे २-२ दिन और अदरखके रससे १ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शरकरसाथ रानेसे नवज्वरका नाश होताहै ॥ ६९१ ॥

६९२ मृत्युञ्जयरसः (महान्) (अष्टादशः)

सूतकञ्च त्रिपुं नागं गन्धकञ्च चतुष्टयम् ।
 समं सर्वं विष्टुष्टयं शिपिना तद्विद्वयम् ॥ ३१९४ ॥
 तस्य कल्कस्य पार्दकं मुग्गये दृढभाजने ।
 क्षिप्या हेज्ञोऽपि कर्तव्या पत्रेण समपत्रिका ॥ ३१९५ ॥
 दातव्या तस्य कल्कस्य हुपरिष्ठाट्ट दृढायसी ।
 पुनः शराचके दत्त्वा कुर्यात्सन्धिनिराधनम् ॥ ३१९६ ॥
 विशोष्य घालुकां दद्यादुपरिष्ठात्सन्मन्ततः ।
 यामनेरुमथं शूल्यां पाचयेन्मन्वद्वदिना ॥ ३१९७ ॥

अनेनैव विधानेन पत्रिकां मारयेत्कमात् ।
 समाप्येवञ्च सकलं हेमचूर्णं रसस्य च ॥ ३१९८ ॥
 त्रिपुं भागेकमेकञ्च चतुर्भागञ्च मौक्तिकम् ।
 गन्धकं भागमेकं स्यात्पश्चात्सर्वं तदौषधम् ॥ ३१९९ ॥
 मर्दयेदेकतः कृत्वा चित्रकस्य रसेन च ।
 पुष्टित्वा किञ्चिदेतत्पिष्टरूपं तदुद्धरेत् ॥ ३२०० ॥
 क्षये कासेऽम्लपित्ते च श्वासे कण्डूमायेषु च ।
 शाल्मलीद्रवसंमिश्रं पुष्टितोः प्रयोजयेत् ॥ ३२०१ ॥
 मरिचेन समं देयो कफरोगेषु पारदः ।
 शूले च परिणामे च घृताक्तमधुमिश्रितः ॥ ३२०२ ॥
 गुडचीजीरके युक्तः स्वरभङ्गे प्रदापयेत् ।
 पित्ताऽधिकेषु रोगेषु शाल्मलीद्रवमिश्रितः ॥ ३२०३ ॥
 अन्यान् सर्वानयं रोगाप्रोगयोग्याऽनुपानतः ।
 नाशयत्यचिरेणाऽयं दुस्तरानतिवेगतः ॥ ३२०४ ॥
 तैलं राजीवविवल्यञ्च पत्रेयेदम्लसेवनम् ।
 अयं मृत्युञ्जयो नाम रसो रोगारिक्तमः ॥ ३२०५ ॥
 वारणप्रमितं कुर्याच्छरीरमजराऽभरत् ।
 न शन्यन्ते गुणा यत्तु रसस्याऽस्य नरे ध्रुवम् ॥ ३२०६ ॥
 रसचि., र. सु., र. प्र., सर्वरोगे ।

भापा—शुद्ध पारा, कलनाप और गन्धक, नागभस्म एक समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर चित्रकसेरसे दोरोगु-मर्दनकर चार विभाग करदे । कल्कसे चतुर्थांश सुवर्णलेकर पत्तेके-सदृश बारीकपत्र बनाकर उत्तर एकभाग कल्कको लपेटकर शरावसम्पुष्टमें बन्दकर ३-४ कपडमिठीदेकर मुराया बाङ्कका-यथमें १ पहर पकावे । स्वाशशोतल्लोनेपर निकालकर इतीतह से लेपनकर पकावे । ऐसे चाएटोंमें कल्कको घमासतरनेपर सुवर्णकीभस्म होजायगी । परन्तु क्रमसे अमिको १-१ पहर बढ़ावे, चौथीभाग ४ पहरकी देनी चाहिये नहींतो कथा रहेगा । यह सुवर्णभस्म, पारदभस्म, शुद्धवजनाग और गन्धक १-१ भाग, मोतीकीपिठी अथवा भस्म ४ भाग लेकर सबको एकदिन चित्रकसेरसे इक्के घोटकर गोलायनाय पानोंमें अच्छीतह लपेटकर कचेसूते बांधे । फिर एकवालित्वाका खड़ा रोद बीचमें दूतरा खड़ा गोलायनेलायक रोदकर ऊपर ४ अहुल बान्दने डक्रे । बाकीके रट्टोंमें जल्लीकण्ठीके दुक्केमरके आचरे । स्वाशशोतल्लोनेपर निकालकर पानसहित घोटकर १ से २ रती-तककीगोलिया बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि तातुपानकेसाथ क्षय, बाल, अम्लपित्त, श्वाय और सुत्रलीमें दे । पुष्टिकेदिये मोचरसनेसाथ दे । कफरोगोंमें ७-१४ अथवा २५ मरिचोवेसाथ, शूल और परिणामशूलमें धी और मधुके-साथदे । स्वरभङ्गमें गिलोय और जीरेकेसाथ, पिनापिष्टरोगोंमें मोचरसनेगाथ दे । इतप्रकार अन्यान्य दुस्तररोगोंको यह योग्या-नुपातमें देनेसे नष्टकरताहै । तैल, कमल, बेत, अम्लगदामोंको छोड़े । इयके हेमसा सेवनकरनेसे समस्तरोगोंमें मुष्टीको दीर्घायुको प्राप्तदोताहै ॥ ६९२ ॥

६९३ मृत्युञ्जयरसः (ऊनविंशः)

गायत्रिकामद्वितमामलन्या
रसेन लौहं कनकस्य चूर्णम् ।
धान्रीरजस्तुल्यमिदं नराणां
रिष्टं समुत्पन्नमपाकरोति ॥ ३२०७ ॥

लो. प. (स.) अरिष्टनाशे ।

टि०—यद्यप्यभिन्योगे रिष्ट समुत्पन्नमपाकरोतीति सामान्यतया सर्-
लपीतिरिष्टिषु परन्तु नैतावता उत्पन्नरिष्टस्य निरसनं बुद्ध्यात्कं भवति ।
अन्यैव सरलरीत्या चेदरिष्टे नाशमाचार्यदं तर्हि इदानीमपि योगकारेण
साकामसद्विद्वान्नाम् सम्भाषणादिक्रमपि समुदयित्युत । तेन रौचकत्वा-
कृत्यमात्रमिदं वाच्यं प्रतिभाति आतः पूर्वं कृतगायत्रीपुराधरणः सुशुलीयमे-
थासुष्कामीयारम्भानेपदेशविधानेन विवक्ष्यतेन तुल्यमस्य पुराधरण-
कृत्यं तदारिष्टोपशान्तिः सम्भाषणीया । यथा "भ्रमोपशममायुक्तं
सम्बलरकलप्रदम् । विवक्ष्य चूर्णं पुष्ये तु हुतं वाराम् सहस्रशः ।
श्रीधत्तेन नरः कल्पे समुत्पन्नं दिने दिने। समर्पितेषु तु तृत्यादलक्ष्मीनाशान्
परम् ।" इत्यादीर्यदि सुशुतं चि., २८।८।१० पुराधरणमन्तरायनेन
योगेन शुभावाप्त्यवश्यं भवितुम्येति मत्वा प्रयोगकरणे धानीरजमोऽर्धं
कुरु कर्षं वा यथाशक्तिव शुशीत्या सुशोभसम्नो रक्तिकेन निक्षिप्य धन-
मधुना समालोच्य लोहं यथाशक्ति यथोचितं वा धानीरजानुपाय
कर्तव्यम् शनैः शनैः कनकभरमप्रमाणं रक्तितुर्धमागादाभ्य रक्ति-
त्रितयपर्यन्तं वर्द्धनं कर्तव्यमिति कल्पपरहस्य मधुशुतसमावापत्तु यथोचितं
कर्तव्यं इति दिक् ।

भाषा—परिपक्व और छायाशुष्क किये हुए आबल्लोंके चूर्णकी
धराधर आबल्लोंके रससे निहत्सभसम किया हुआ सुवर्ण, ये दोनों
समभाग मिलाकर रखछोड़े इसमेंसे दो रत्तीसे चार रत्तीतक
कीमात्रा लेकर परिपक्वआबल्लोंका आधेतोले से एकतोलेतक रूप
मिलाके "अजपा" गायत्री अथवा इन्द्रगायत्रीसे एक हजार
अभिमन्त्रितकर चाटनेसे उत्पन्नरिष्टभी दीर्घायुको प्राप्त होता है ।

६९४ मृत्युञ्जय लोहम् (प्रथमम्)

त्रिफला लोहजं चूर्णं रक्तचित्रकजा जटा ।
शूतकोशाप्रजं वीजं पालाशं क्षुद्रदुग्धिका ॥ ३२०८ ॥
एतदष्टकमादाय पृथक् पञ्चपलान्मितम् ।
मिश्रयित्वा पलाशस्य सर्वाङ्गरसमावितम् ॥ ३२०९ ॥
महाफालजर्वाजानां भागत्रयमथाऽऽहरत् ।
भागं शृण्णतिलस्यैकं मिश्रयित्वा निपीडयेत् ॥ ३२१० ॥
तेन तिलेन तक्ष्णं पिण्डीकार्यं विमर्दनात् ।
स्निग्धे भाण्डे तदाधाय शरायेण निरागधयेत् ॥ ३२११ ॥
लिप्त्वा तदा सुधान्यस्य पलाशौघे निधापयेत् ।
मासमाप्राप्तमाहृत्य पूजयित्वा दिवां शियम् ३२१२ ॥
तौलिकं भक्षयेत्प्रातस्तौलिकं भोजनोपरि ।
एवं मासत्रयाऽभ्यासात्पलितं हृत्यसंदायम् ॥
सर्पिकेण जरां हत्वा मृत्युं जयति मानवः ॥ ३२१३ ॥
यो. म., रसायनाधिहारः ।

भाषा—त्रिफला, लोहेछायाशरीता, रक्तचित्रकजीरक,
आम और जटलीआमरी सुद्धी, पलाशापक, छोट्टीरूपी

५-५ पल लेकर बारीकचूर्णकर पलाशके पञ्चाङ्गके रससे ३-४
भावनाएं देकर बराबरकेकालेतिल और तिगुना महर (महावा-
ष्णी)केबीजोंका तैल ढालकर एकदिनमर्दनकर चिकनेवतमें
रखकर शरावसे ढक कपडमिट्टीकर जब वा गेहूँकी राशि अथवा
पयारमें दबादे । एक महीनेकेबाद निकालकर रखछोड़े । फिर
शिव और गौरीका पूजनकर अच्छे मुहूर्तमें इसमेंसे १-१ तोला
सुवह और भोजनके ऊपर खावे, भोजनमें दूध, भातकेविषय
कुछ न ले । इसतरह ३ महीनेतककरनेसे बाल कालेहोजातेहैं ।
एकवर्षतक प्रयोगकरनेसे बुढ़ापेको दूरकर मनुष्य मृत्युको
जीता है । टि०—लोहेकेरेतेमें त्रिफलाकाचूर्ण और पलाशके
पञ्चाङ्गकास्वरस ढालकर यहांतक मर्दनकरे कि लोहेकीभसम
होजाय इसमें त्रिफलाकाचूर्ण थोड़ा २ देना चाहिये । इसतरह
लोहभसमतैयारहोनेपर सबचीज़े मिलावे ॥ ६९४ ॥

६९५ मृत्युञ्जयलोहम् (द्वितीयम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं जारिताऽम्रं तथा समम् ।
गन्धकाङ्गिणुषं लौहं मृतताम्रं चतुर्गुणम् ॥ ३२१४ ॥
द्विस्तारं टङ्गणचिदं घटाटमथ शहकम् ।
चित्रकं कुन्दी तालं कटुर्कं रामठं तथा ॥ ३२१५ ॥
रोहीतकं त्रिषृचिञ्चे विद्याला धवलाङ्गुठम् ।
अपामार्गस्ताललिण्डमम्बिका च निशायुगम् ३२१६ ॥
कानकं तुत्थकञ्चैव यरुग्मर्दं रसाञ्जनम् ।
पतानि क्षितिभागानि चूर्णयित्वा चिभाययेत् ॥ ३२१७ ॥
आर्द्रकस्वरसेनेच शुद्ध्याः स्वरसेन च ।
मधुनः कुडवाद्भाष्यं वटिका मापमाप्रतः ॥ ३२१८ ॥
अनुपानं प्रदातव्यं बुद्ध्या दोषानुसारतः ।
भक्षयेत्प्रातस्तथाय सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ ३२१९ ॥
प्लीहानं ज्वरमुप्रञ्च कासञ्च विपमज्वरम् ।
चिरजं कुलजञ्चैव श्ठीपदं हन्ति दारुणम् ॥ ३२२० ॥
रोगानीकयिनाशाय धन्वन्तरिहृतं पुरा ।
मृत्युञ्जयमिदं लौहं सिद्धिदं शुभदं नृणाम् ॥ ३२२१ ॥
र. सं., र. सु., मे. र., ध., र. चि., उदराधिहारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अश्रुकमस १-१ भाग,
लोहभसम २ भा., ताम्रभसम ४ भा., यवशर, समीगर,
शुनाशुदाग, नवसादर, गोलीकीड़ी तथा शहकमस, चित्रक,
शुद्ध वैतसिल और हरिताल, कुटकी, शुनाहीग, मारवाडी रोहि-
केकीछाल, निशोत, इमली, इन्द्रायण, राफेर अद्रोहकीरक,
अमामग, ताड़वाली, अमलीनिया, हल्दी, दारुहल्दी, धनुर्के-
बीज, शुद्धतुतिया, धरपुद्ध, रमीत येपथ १-१ भाग लेकर
सबका बारीकचूर्णकर पारकम्बुकी नीलशर्कराकीमै मिलाकर
अर्धप और गिलेयके स्वरससे १-१ तोल मर्दनकर १९ तोले
मधुमें घोटकर १-१ मासेकीगोठिया बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली उचितानुपानकेयाग प्रातःकाल देनेसे दीह, उष-
ज्वर, भीषणछाट, विपमज्वर, बहुतदिनका तथा वंशपक्वभसम
पलाशाप, इनगवको यद नष्टरहाई ॥ ६९५ ॥

६९६ मृत्युहारीरसः

अयः १३ तिलोत्सेधं प्रतप्तं चतुरङ्गुलम् ।
 एकविंशतिपर्यायं धात्र्या निर्वाणयेत्से ॥ ३२२२ ॥
 ततः शतपलं स्थाल्यां क्षिप्वा धात्रीरसोत्तमम् ।
 कृत्वा ततः सुपिहितं भस्मराशौ विनिःक्षिपेत् ३२२३ ॥
 मासिमासि समुद्भूय लोहदण्डेन घटयेत् ।
 तस्मिन्विशुष्यति प्राग्द्वसं धात्र्या विनिःक्षिपेत् ३२२४ ॥
 द्रवीभवति तत्सर्वं वत्सरात्पत्रमायसम् ।
 ततः समन्ततोऽङ्गुष्ठपर्वमानमुत्सेन तु ॥ ३२२५ ॥
 आयसेन स्रुयेणाऽयःपात्रे कल्कीकृतं ततः ।
 शृतं पृथक् समाशेन सेवेत मधुसर्पिणा ॥ ३२२६ ॥
 जीर्णं साऽऽज्यं रसक्षीरयुपान्यतममिश्रितम् ।
 पट्टिकोदनमश्रीयादुपयुज्येत वत्सरम् ॥ ३२२७ ॥
 वर्षमन्यञ्च शिश्राघ्नो यन्त्रितात्मा कुटी वसेत् ॥
 अगम्यो रुज्जराभृत्युशब्बाऽग्निविपतोऽरिभिः ।
 जीवेद्द्वर्षसहस्रं वै सर्वमावेष्यतीन्द्रियः ॥ ३२२८ ॥

र र स, रसायने ।

भाषा—तिलसदृशमोटो और ४-४ अङ्गुल चीड़े लोहेके पत्र बनाकर गरमकरके पकेहुएआवलोंके स्वरसमें २१ बार बुझावे । इसप्रकार १०० पल लोहेको बुझाय किसी मजबूत मिट्टीकी हंडीमें भरदे । हंडीमें उतनाही आवलोंकारस भरके ढकन लगाय अच्छीतरह कपड़मिट्टीदेकर मनुष्यकेबराबर ऊंची भस्मकी डेरीमें दबादे । १-१ महीनेकेबाद निकालकर लोहेके ढण्डेसे मर्दनकर फिर रसभरकर दबादे । ऐसे १ वर्षबाद निचा लकर अण्डेके प्रथमपर्वके बराबरमोटो लोहेके ढण्डे अथवा कड़छीसे घोटकर क्ल बनाले । इसमेंसे १-१ तोला कल्क लेकर अग्निपर रस पकाकर सुखाले, इसमें मधु और धी मिलाकर सेवनकरे । पाचन होनेपर दीकैसाय मासरस, दूध और मूगकेयूषकेसाथ साठीचावल छाया और एकवर्षतक उत्तम अन्नका सेवनकरे । इसका सेवन कुटीप्रवेशविधिसे जितेन्द्रियहोकर कर नेसे व्याधि, बुडापा, मृत्यु, शय, अग्नि, विप और शत्रुओंसे अगम्य होकर एकहजारवर्षकी आयुको प्राप्तहोताहै ॥ ६९६ ॥

६९७ मृदारभस्ययोगः

खण्डं मृदारुष्टस्य निक्षिपेत्त्रिमुजो ज्यहम् ।
 शरावसम्पुटे न्यस्य पुटं दद्यान्न्यसतः ॥ ३२२९ ॥
 जायते शोभनं भस्म भावयेत्त्रिफलाऽमृभिः ।
 कुमारीमृजम्बीरैरुदयेकैकं चिक्रेण वै ॥ ३२३० ॥
 सिद्धं भस्म ततो जातं योज्यं मेहोपदेशाय ।
 हृदिद्रामधुसंयुक्तं मेहं गुञ्जामितं लिहेत् ॥ ३२३१ ॥
 देवपुष्पमरीचाभ्यामुपदेशोऽथवा घृते ।
 अथवा शर्करामिश्रं सेवयेद्रोगमुक्तये ॥ ३२३२ ॥

रसायन स, मेहाधिकारे ।

भाषा—सुदांसकके टुकड़ेकर नीचूकेरसमें ३ रोज भिगोकर शरावसम्पुटमें बन्दकर १० सेर कण्डोंकी आच देनेसे उत्तम-भस्म होजातीहै । इसको त्रिकला, धीकुआर, गोमूत्र और जमीरीके स्वरसोंकी ३, १, १, ३ इसक्रमसे भावनाए देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रसीकी मात्रा हल्दी और मधुकेसाथ प्रमेहमेंदे । लौंग और मरिचकेचूर्ण अथवा घृत अथवाशकरके-साथ उपदेशमें देवे तो इनरोगोंसे निवृत्त होजाताहै ॥ ६९७ ॥

६९८ मृद्विरेचनम्

इन्दुलोचननेत्राणि शिखिभागञ्च योजयेत् ।
 श्रुटिगन्धकम्पुद्गरशतपुष्पाविचूर्णितम् ॥ ३२३३ ॥
 मापद्द्वयं गवां दुग्धैः सेवयेद्दिनपञ्चकम् ।
 रेचयेन्मृत्तिकां मुद्गां शिश्यां हितमौषधम् ॥ ३२३४ ॥
 र च, पाण्डुरोग ।

भाषा—द्वालयची १ भाग, गन्धक २ भा, सुदांस २ भा, सोंक ३ भा, लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ मासे गोदुग्धकेसाथ देनेसे ५ दिनोंमें बच्चोंकी सार्द्धहुईमिठी दस्तमें निकलजातीहै ॥ ६९८ ॥

६९९ मेघडम्बररसः

तण्डुलीयद्रवैः पिष्टं सूततुल्यञ्च गन्धकम् ।
 वज्रमूषागतं कृत्वा भूधरे भस्मतां नयेत् ॥ ३२३५ ॥
 दशमूलकपायेना भावयेत्प्रहण्डयम् ।
 गुञ्जाम्नयं जयत्याशु हिक्राभ्यासवर्णज्वरान् ॥ ३२३६ ॥
 अनुपाद्वेन दातव्यां रसोऽयं मेघडम्बरः ।
 अभया पिप्पली भाङ्गीं पुष्करं कर्कटी शटी ॥
 शर्कराऽष्टगुणे योज्यमनुपानं सुखावहम् ॥ ३२३७ ॥
 र र, र की, नि र, रसायनस, र सु, र की, वै चि, र चि, र च, शै सा, र सि, र (मा) र म., र का, यो म., व रा, र क ल, टो, द्विधाशासयो । वसवराजीये अनुपाने अभयास्थाने नागरे द्रयते ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण कबलीकर काचवालीचौलाईके रससे २-३ दिनमर्दनकर गोरीबनाय मुर्गी अथवा बतलके अण्डेमें छोटोअहुली जानेनायक गोलछिद्रकर अन्दरका पदार्थ निकालकर गोलीकोरतौ रसभरके दूसरे अण्डेकी रोल घड़ाय संपेदन्नभ्रक और चूनेकोपानीमें बारीक पीस आधा अहुलमोटा लेपचढादे । सूतनेपर पुतागिर्द और मुल्लानीमिट्टीको बारीककूटकर एकगोल और चढादे । सूतजानेपर मृधपरबमें रख इन्डुल्युष्टकी अमिदे । ऐसे ४-५ अमिये देकर पारेकी भस्म बनाले । अथवा त्र्यम्पुषामे गोलेटो रख रसभरकर सम्पुष्टप्रयुत त्रियाकर आचदेकर भस्म बनाए । स्वाभावशतलडोनेपर निकालकर दशमूलक कादिसे २ पहरतक घोटकर २-२ रसीकी गोळिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली हों पीपल, भारङ्गी, पोहवरमूत्र, काकडागौनी, और कचूर समभाग लेकर अठगुनी शररमिलाकर शतकसाथ देनेसे हिवर्षी, भ्रात, ज्वर, और ऋणमात्रको यह दूरकरताहै ॥ ६९९ ॥

७१० मेघनादरसः (एकादशः)

तारं तार्प्यं यद्विरससहितं मर्दितं वासुरैकं,
कन्याऽनन्तासुरतरजलैर्वाल्काऽङ्गिर्विभाव्यम् ।
देयं तृष्णाश्रमविपमथिते भ्रान्तचित्तिषे व्यथातै,
सिद्धस्तृष्णादवगणदलने मेघनादो रसेशः ॥३२६६॥
र., तृष्णायायाम् ।

भाषा—रजत और सोनामालीकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर पीछेदार, जवासर, देवदारु, सुगन्धवाला इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काथोसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओइं । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपाननेसाथदेनेसे तृष्णा, श्रम, विपम ज्वर, चित्तविक्षेप, और तमाम पीडाओंको यह नष्टकरताहै ७१०

७११ मेघनादरसः (द्वादशः)

द्वन्द्वं टङ्कणञ्चैव सैन्धवञ्च कटुत्रयम् ।
त्रिकला हारहृरा च कृमिघ्नं रामठं तथा ॥ ३२६७ ॥
दस्युदीर्यं समानञ्च दन्तीं सर्थाऽर्द्धभागिका ।
जम्बीरवाारा सम्मर्द्यं चणकस्य प्रमाणतः ॥ ३२६८ ॥
उष्णोदकानुपानेन कृम्यामान्तं विरेचनम् ।
तस्योपरि हितं देयं पथ्यं दध्योदने परम् ॥ ३२६९ ॥
उदरे पाण्डुशोफे च शोफोद्वरजलोदरे ।
सर्वज्वरे च विपमे मेघनादः प्रशास्यते ॥ ३२७० ॥
र. च, र. घ, यो. र, रचनाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिगरिफ, सुहागा, सैषानमक, त्रिकटु, त्रिकला, हुहुर, विडङ्ग, हींग, चोरक, अजवाइन येसन समभाग, शुद्धजमालगोटा सबसे आधा लेकर सबका बारीक चूर्णकर जमीरी-केरसे १-२ रोज मर्दनकर चनेप्रमाणगोलियां बनाकर रख-छोइं । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे कृमि और आम निकलनेतक विरेचनहोताहै । भूखलगनेपर दही और चावल देना । इसकेदेनेसे उदर, पाण्डु, शोभोदर, जलोदर, तमस्त विपमज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ७११ ॥

७१२ मेघनादरसः (त्रयोदशः)

कारयेच्छोधनेः शुद्धताम्रगन्धकपारदान् ।
गन्धकं द्विगुणं ताम्रात्खल्वेव दुग्धेन पेपयेत् ॥३२७१॥
तस्य पूषाद्वयस्यान्तस्ताम्रपत्रं क्षिपेद्बुधः ।
शापावसम्पुटे क्षिप्त्वा वल्लभुद्भयाञ्च वेष्टयेत् ३२७२
उत्तलैः पूषणगर्तायामप्ये प्रक्षिप्य दीपयेत् ।
तन्मध्यात्ताम्रमाहृष्य खल्वे नीरेण पेपयेत् ॥३२७३॥
तच्च मृत्तान्धमूषायां घातं टोपैः प्रमुच्यते ।
ताम्रतुल्यं चतुर्थांशं स्वस्यं गन्धकस्तथाः ॥ ३२७४ ॥
सम्पेव्य कज्जलीं कृत्या ताम्रचूर्णं क्षिपेत्सुधीः ।
ताम्रादष्टगुणं चूर्णमतो मात्तीरसं क्षिपेत् ॥ ३२७५ ॥
मिश्रचूर्णं समं चूर्णं मरीचीनां क्षिपेत्ततः ।
ताम्रस्याऽर्द्धं बल्मनाभं विपखण्डेन भावयेत् ३२७६

मेघनादरसो नाम्ना निष्पन्नः सर्वरोगहा ।
यद्ब्रह्मात्रो जलसमं मरिचस्य क्रमेण वै ॥ ३२७७ ॥
स गद्याणकमात्रो हि दातव्यो दृढरोगिणु ।
पित्तक्षयाऽथलाऽजीर्णाऽतीसारश्च घर्जयेत् ॥३२७८॥
र.कं.ली, सर्वरोगे ।

टि०—अत्र काकमात्रोऽप्यन्त्याने अन्त्यपूर्वाक्षरलेपेन मान्तीशब्द सन्निवेशित इति बोद्धव्यम् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग, शुद्धताम्रपत्र १ भाग लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकर दूधकेसाथ कजलीको पीसकर तावेके पत्रपर रोटीकी तरह चूदादि फिर शरावसम्पुटने वन्दकर ६-७ कपइमिठीलेपेटदे । सुखनेपर पूरे गजपुटकी आचदे । स्वाहशीतल होनेपर निमालकर मिठीकी अन्धमूषामें धमनकरके गलानेसे यह समस्तदोषोंसे रहितहोजा यगा । फिर तावेकी बराबर गन्धक और चतुर्थांश पारा लेकर नीलवर्णकजलीकर तावेसेसाथ मिलाकर तावेसे अठगुना पत्थर काचुगा और चुनेसे अठगुना मरुगोकारस, इस समस्तपिण्डकी बराबर मरिचकाचूर्ण, तावेसे आधा शुद्धबलनाग मिलाकर बलनागरेस अथवा काथसे एकरोज पोटकर सुखाकर रखओइं । इसमेंसे १ मरिच प्रमाणसे ३ रत्तीतक धीरे २ बडावे और ३ रत्तीपर मात्रा कायमकरे । इसतरह ६ मासोतक सेवनकरनेसे बहुहुतुराने और हृष्टीले मूलबद्धरोगोंको यह दूरकरताहै । पित्तक्षयी, कृश, अजीर्णा और अतिसारी पर इसप्रयोगको न करना ॥ ७१२ ॥

७१३ मेथीपाकः

मेथीपलचतुष्कञ्च कणा द्विपलमानतः ।
सञ्चूयं घटदुग्धेन पाचयेद्बहिना ततः ॥ ३२७९ ॥
प्रस्थद्वयमितं खण्डं मुच्यते चूर्णकं तदा ।
सूतं लघुद्गं त्रिगुण्डं लोहं केशरमधुकम् ॥ ३२८० ॥
पुष्पं जातीफलं जातीपत्री नागकुबेरकैः ।
एतेषां पलमानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ ३२८१ ॥
प्रभाते पलमानेन योजयेद्भाग्ययोगतः ।
तस्य सर्वशिरोत्पन्नं रागजालं धुवं हरेत् ॥ ३२८२ ॥
सर्ववातसमूहञ्च भ्रमच्छर्दिकफपथाम् ।
मेथिकापाकनामाऽयं वृद्धानां प्राणदायकः ॥ ३२८३ ॥
रसायनसं, वातरोगे ।

भाषा—मेथी ४ पल, पीपल २ पल लेकर बारीकचूर्णकर १६ सेर दूध डालकर भावा बनाये । तैयारहोनेपर २ सेर शकर डालकर चाशनीकरले फिर पारदमम अथवा रससिन्दूर लौंग, खजूर, ताड़ और ईखकागुड़, लोहभस्म केशर, अमरक-भस्म, नागकेशर, जायफल, जाबिनी, नागभस्म, करंजके बीजोंकी गिरी, येसब १-१ पल मिलाकर रखछोइं इसमेंसे १-१ पल दूधकेसाथलेनेसे समस्तशिरोरोग, वातविकार, भ्रम, छर्दि, कफरोग, इनसबको यह नष्टकर बुढ़ोंको किरते जवानी देताहै ॥ ७१३ ॥

७१४ मेदिनीसाररसः

पलत्रयमितं लोहं मृतं शुल्चं पलत्रयम् ।
 भृङ्गराजाऽऽम्युगोमूत्रत्रिफलाकथितं पृथक् ॥३२८४॥
 पुटेरिवाचं यत्नेन ततस्तस्मिन्विनिक्षिपत् ।
 अत्यम्लकाङ्गिकं पञ्चात्पचेद्यामचतुष्टयम् ॥ ३२८५ ॥
 पुनश्च तुल्यगन्धेन दद्याच्च पुटविंशतिम् ।
 पलभानं मृतं सूतं रुद्रांशमसूतं तथा ॥ ३२८६ ॥
 कटुत्रयं समं सर्वैः पिष्ट्वा सन्ध्याविधारयेत् ।
 रसोऽयं मेदिनीसारो नन्दिना परिकीर्तितः ॥३२८७॥
 सेवितो बलमानेन घृतत्रिकटुकान्वितः ।
 हन्ति कुष्ठानि सर्वाणि चित्राणि विविधानि च ॥३२८८॥
 गुल्मसूहिहामयं हिकां शूलरोगं हरेत्तथा ।
 उदावर्तं महारोगं कफं मन्दानलस्यथा ॥ ३२८९ ॥
 गलप्रहं मदोन्मादं कर्णदन्तव्याधां तथा ।
 सर्पादिजं विषं घोरं ब्रणं लूतां भगन्दरम् ॥ ३२९० ॥
 विद्रधिश्चाऽऽनवृद्धिश्च शिरस्तोदश्च नाशयेत् ।
 दधिमूलकमाषात्रविदाहीनि शुरुणि च ॥
 पापकर्माणि सर्वाणि कुष्ठयुक्ता विवर्जयेत् ॥ ३२९१ ॥
 र म मा , र को , र र स , र र की , कुष्ठे ।

भाषा—लोह और ताम्रभस्म ३-३ पललेकर भगर, गोमूत्र और त्रिफलाकेकायसे ३-३ भावनाए देकर एकदमखरी काञ्ची मिलाकर ४ पहर मन्द अभिसे पकावे । फिर अभिपरसे उतारकर ठाढ़ोनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाकर पूर्वोक्तद्रवोंकी २० पुटे देकर पारदभस्म १ पल, शुद्धबलभाग पलका ११ वा भाग, त्रिकटु सबकीबराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकी-मात्रा धी और त्रिकटुकेसाथ लेनेसे चित्रविचित्र तमामकुष्ठ, गुल्म, प्लीहा, हिका, शूल, उदावर्त, महारोग, कफरोग, मन्दाभि, गलप्रह, मद, उन्माद, कान और दातोंकीपीडा, सर्पादिकोंका जहमविष, ज्ञण, मकड़ीकाविष, भगन्दर, विद्रधि, अन्नरुदि (सारणगड), शिरकीवेदना, इनसबको यह नष्टकरताहै । दही, मूली, उड़द, विदाही और गरिष्ठ पदार्थ, समस्तपापकर्म इन सबका कुठी त्यागकरे ॥ ७१४ ॥

७१५ मेदोध्वंसीरसः

रसगन्धकतालानां शुद्धानां भागमुत्तमम् ।
 दन्तीबीजञ्च मतिमाभ्रिश्चैर्यैकत्र भवेद्यत् ॥ ३२९२ ॥
 त्रिदिनं कटुकीद्रावैः कृतमालद्रवैस्तथा ।
 पुनर्नवायाः समाहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ३२९३ ॥
 एवं कृत्वा त्रिवारं तु ततः सिद्धो भवेद्रसः ।
 रक्तिकादितयं सादेत्सौद्रतयोर्यं पियेरुणुः ॥
 मेदसः सप्तरात्रेण निवृत्तिं जायते ध्रुवम् ॥ ३२९४ ॥
 र म मा , ना वि , मेदारोग । ना वि मेदोश्च इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल और जमालाटा समभागलेकर कजलीबनाय कुटकी और अभिलतासके बापोंकी

३-३ दिन, पुनर्नवाके स्वरसकी ७ दिन भावना देकर गोला बनाय सुखाकर शरावसम्पुटेमें बन्दकर कपड़मिठीकरदे । सुखने पर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञसीतलहोनेपर निकालकर फिर इसीक्रमसे मर्दनकर आचदे । इसप्रकार ३ बार करनेसे यहरस तैयार होगा । इसमेंसे २-२ रती मधुकेसाथ खाकर मधुसा शरवत पीनेसे ७ दिनमें मेदोदृष्टि नष्टहोतीहै ॥ ७१५ ॥

७१६ मोहाद्रिवज्रपातरसः

कर्पूरं रसकं व्यक्षं पिष्ट्वा गन्धं पलद्वयम् ।
 पलं नागाऽऽभ्रयोः सर्वं सञ्चूर्ण्य सिकताघटे ॥ ३२९५ ॥
 पकं मृषागतं यामं पचेद्भूयः क्षिपन्द्रयम् ।
 केतकाऽऽफलुनिर्गुण्डीशिप्रुप्रग्रन्थिकचित्रकम् ॥ ३२९६ ॥
 वन्ध्याऽऽहिवह्लीरुर्णात्यध्याघ्रीलुङ्गरसोद्भवम् ।
 अथगन्ध्याभयं वाराग्निघाङ्गिप्रसागरान् ॥ ३२९७ ॥
 पडसैः सप्तवसुदिकुङ्किर्भुवनत क्रमात् ।
 कुमार्यां पुटयेद्योढो रसो मोहाद्रिवज्ररुः ॥ ३२९८ ॥
 भुक्तो मापो निहन्त्याशु सर्वाऽर्शाऽरौचकग्रहान् ।
 मन्दाग्न्युन्मादमेदासि गण्डमालाऽर्शुर्दाऽपचीः ॥
 क्षुद्ररोगाश्च विविधान् गरुडः पत्रगानिव ॥ ३२९९ ॥
 र कौ , अशौरोगे ।

भाषा—शुद्धखपरिया और पारा १-१ कर्प, गन्धक २ पल, नाग और अन्नभस्म १-१ पल लेकर बालुकायधमें स्वेदनकर निकालकर फिरसे कजली बनाय वेवढेकेस्वरसकी ३, अकलरुकी २, निर्गुण्डी ३, सहिजन ४, पिपलामूल ६, चित्रक ६, नाक्षत्रेखसा ७, पान ८, गोरखमुण्डी १०, भटकटैया ३, विजोरा ३ और अलगन्धकी १४ इननवके स्वरस अथवा वायोंसे उक्तसद्रूपामे क्रमश भावनाए देकर धीनुवारकेरसमें १-२ रोज घोटकर १-१ मासकी गोखिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सम्पूर्ण बवासीर, अरुचि, गलप्रह, मन्दाभि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अलुद, अपची, क्षुद्ररोग इनसबकोयह सर्पोंको गरुडकी तरह नष्ट करताहै ॥ ७१६ ॥

७१७ मोहान्धसूर्यरसः

गन्धेद्रां लघुनाऽऽभ्रमोभि मर्दयेद्यामभाप्रकम् ।
 तस्योदकेन संयुक्तं नस्यं तत्प्रतियोधयत् ॥
 मरिचेन समायुक्तं हन्ति तन्त्रा प्रलापकम् ॥ ३३०० ॥
 र चि , र क , रसायनस , चि र म , र सु , टो , भै र , र
 र दी , र का , यो म , र सि , र स , व रा , वै क , सतिगाले ।
 र स अञ्जनरसः , व रा महागन्धनूर्यरसः , वै क ज्वरा-
 कुश इति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली-कर एकगाठवाले लहसुनके रससे १ पहर घोटकर रखछोड़े । इसको लहसुनके रसमें मरिचके साथ घोटकर नन्देनेने तन्त्रा और प्रलापको यह दूकरताहै ॥ ७१७ ॥

७१८ मौक्तिकभस्मप्रयोगः

कटुकीगैरिकाभ्याञ्च मुक्ताभस्म तथैव च ।
वीजपूरस्य तोयेन ताम्रं तद्वत्समाक्षिरुम् ॥ ३३०१ ॥
र का., र. सु., हिकाशासयो. ।

भाषा—गुटकी और गेरूकेसाथ मोतीकीभस्म तथा बिजो
केके सकेसाथ सोनामाखी और ताम्रभस्म देनेसे हिका और
श्रास नष्टहोतेहै ॥ ७१८ ॥

७१९ मौक्तिकरसायनम्

जयन्तीरससम्पिष्टं शुक्रपिच्छेन मारितम् ।
मौक्तिकं रसमात्रं हि द्विगुणं स्वर्णभस्मकम् ॥ ३३०२ ॥
त्रिगुणं कान्तजं भस्म ब्योमसत्त्वं चतुर्गुणम् ।
दत्त्वा च गन्धसौभाग्यं शृङ्गवेरेण भावितम् ॥ ३३०३ ॥
पुटेद्विश्रितिवाराणि विद्राव्य पट्टगालितम् ।
सर्वतुल्येन यत्निना रसेन कृतकज्जलीम् ॥ ३३०४ ॥
विद्राव्य पूर्ववद्भस्म मुक्तादीनां विनिःक्षिपेत् ।
विमिश्र्य निक्षिपेत्तत्र क्षीरं छागीसमुद्भवं ॥ ३३०५ ॥
संशोषितं विचूर्ण्योऽथ चाग्निकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
पिप्पलीमधुना सार्द्धं सेवितं वल्लुमात्रया ॥ ३३०६ ॥
रसायनविधानेन कुरुते वत्सरेण हि ।
वलीपलितनिर्मुक्तं धार्द्रकेन विवर्जितम् ॥ ३३०७ ॥
नयनद्वयसम्पन्नं शतायु ब्रानशालिनम् ।
दिव्यश्रवणसम्पन्नं मत्तदन्तियलावृतम् ॥ ३३०८ ॥
विधादे जयदं नित्यं धीर्धैर्यविनयान्वितम् ।
लीढं मध्वाज्यतैलैश्च कणोपेताश्वगन्धया ॥ ३३०९ ॥
क्षयरोगं निहन्त्येव मण्डलाऽर्द्धेन निश्चितम् ।
तत्तद्रोगानुपानैश्च निहन्ति सरुलामयान् ॥ ३३१० ॥
बन्ध्यापुत्रप्रदं ह्येतत्सृष्टिकामयनादानम् ।
वालानां परमं पथ्यं घृष्यमायुष्यमुत्तमम् ॥ ३३११ ॥
नागोदरोपविष्टश्च हन्ति स्त्रीणाञ्च वेगतः ।
हृयङ्गवीनसंयुक्तं तवराजेन संयुतम् ॥
गर्भिणीसर्वरोगेषु प्रशस्तं परिकीर्तितम् ॥ ३३१२ ॥
र चू., रसायने ।

भाषा—जैतकरसमेंपिसेहुएशुद्धगन्धकके योगसे मारीहुई
मोतीकीभस्म ६ भाग और उसीतरह मारीहुई स्वर्णभस्म २ भाग,
कान्तलोहभस्म ३ भाग, अन्नरसत्वभस्म ४ भाग, शुद्धगन्धक और
सुहागा ४-४ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर अदरस करकेसुकी २०
भावनाए देवे । सुखाकर आतशीशीशीमें अथवा लोहेकी कड़लीमें
गलाकर परंपटीबनाय कपड़छानचूर्णकरे । फिर सबकी बराबर
शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर परंपटीबनाय कपड़छान
चूर्णकर पूर्वराशिमें मिलावे । इनदोनोंको मिलाकर १-२ पहर सूर्य
मर्दानकर बक्रीके दूधसे १-२ रोज मर्दानकर ३-३ रस्तीकी
गोलिया बनाकर अथवा चूर्णकर रखलोए । इसमेंसे १-१ गोली
अथवा ३ रस्तीचूर्णको रसायनविधिसे एकवर्षभर खानेसे बली,

पलित और बुडापेका नासहोताहै । दोनों नेत्रोंकी ज्योति
फिरसे आतीहै सौवर्षकी आयु होतीहै । दिव्यज्ञान, धवन,
बल, बुद्धि, धैर्य, विनय, इनसे युक्त होताहै । विवादमें अजेय
होताहै । रोगप्रशमनार्थ प्रयोगकरना हो तो मधु, घी, तैल
अथवा पीपल और अश्वगन्धकेसाथ खानेसे २५ दिनमें क्षय-
रोगको दूरकरतीहै और तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह
समस्तरोगोंको नष्टकरतीहै । बन्ध्या पुत्रको प्राप्तकरतीहै ।
सुप्तिका रोगोंसे निम्मुक्तहोतीहै । बालकेंके लिये बहुतगुणकारकहै
उत्तमबुध्य और आयुष्यहै । स्त्रियोंके नागोदर और उपविष्टको
बहुतजल्दी दूरकरताहै । मक्खन और बंशलोचनकेसाथ देनेसे
गर्भिणियोंके समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ ७१९ ॥

सर्वेशानदयालायेन रसयोगाऽन्धौ निरस्याऽजनि,
नानादेशविदेशजायुभिरजां विशानराद्याऽश्रयम्
श्रित्वा विघ्नभरेण मध्यसमये किङ्कृत्यताश्चान्यतां,
यातामाशु हरिप्रपन्नरचिते ग्रन्थः पथगाऽवधिः ॥

अथ यकारादिसाः ॥

१ यकृतप्लीहारि लोहम्

हिङ्गूलसम्भवं सूतं गन्धकं लौहमन्नकम् ।
तुल्यं द्विगुणताम्रन्तु शिला च रजनी तथा ॥ १ ॥
जयपालं दङ्गणञ्च शिलाजतुसमं रसात् ।
पतत्सर्वं समाहृत्य चूर्णाकृत्य विमिश्रयेत् ॥ २ ॥
दन्ती त्रिचूचिनरुञ्च निगुण्डी ज्यूपयं तथा ।
आर्द्रकं भृङ्गराजञ्च रसेरेपं पृथक्पृथक् ॥ ३ ॥
भावयित्वा घटीं कुर्याद्द्वाराऽस्थिमितां भिषक् ।
ग्रीहानं यकृतञ्चैव चिरकालानुबन्धनम् ॥ ४ ॥
पकजं द्वन्द्वजञ्चैव सर्वदोषभयं तथा ।
हन्त्यादप्येदराणीह ज्वरं पाण्डुञ्च कामलाम् ॥ ५ ॥
शोथं हलीमकं हन्ति मन्दाश्रित्वमरोचकम् ।
यकृतप्लीहारिनामेदं लौहं जगति दुर्लभम् ॥ ६ ॥
२. र, घ, उदराऽधिकारि ।

भाषा—हिङ्गूलसे निकालाहुआ पारा, शुद्धगन्धक, लोह
और अन्नकभस्म, भैरसिल, हल्दी, शुद्ध जमालगोटा, भुना
सुहागा और शिलाजीत १-१ भाग, ताम्रभस्म २ भाग लेकर
सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय
दन्तीमूल, निशोत, चित्रक, निगुण्डी, त्रिकटु, अदरस, भागरा
इनप्रत्येकके यथासम्भन्न स्वरस अथवा कापोंसे १-१ भावना
देकर बेरकीयुठलीके बराबर मोलियें बनाकर रखलोए । इनमेंसे
१-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे बहुतदिनके, एक्ज,
द्वन्द्वज, और सर्वदोषज प्लीहा और यकृत, उदररोग, ज्वर,
पाण्डु, कामला, शोथ, हलीमक, मन्दाभि, अरोचक इनमन्को
यह नष्टकरताहै ॥ १ ॥

२ यकृत्यहीहोदरहरलोहम्

दिव्यापधिहतं लोहं पुटितं पुटनीपधे ।
 प्लीहोदरविनाशाय दद्याद् द्वे द्वे पुटे पृथक् ॥ ७ ॥
 माणेन घण्टकर्णेन सूरणेनाऽधिकं पुनः ।
 अन्नकं निहतं कृष्णं सूतकं विधिमुच्छ्रितम् ॥ ८ ॥
 लोहाऽर्द्धमन्नकं शुद्धं सूतमन्नाऽर्द्धभागिकम् ।
 त्रिगुणामयसश्चूर्णात्त्रिफलामन्नसंयुतात् ॥ ९ ॥
 द्विरष्टवारिणो भागमष्टशेषन्तु कारयेत् ।
 तेन चाऽष्टाऽवशेषेण समेनाऽऽज्येन यत्नतः ॥ १० ॥
 रसेन यद्गुपुत्राया द्विगुणक्षीरसम्मितम् ।
 अयसश्चाऽर्द्धभागं तु पूर्वं पाके विनि क्षिपेत् ॥ ११ ॥
 लोहमय्या पचेद्द्व्यां पात्रे चायसि मृन्मये ।
 पचेत्पाकविधिस्तस्य यद्विना मृदुना शनैः ॥ १२ ॥
 कन्दकापांसिका चर्ब्यं विडङ्गं सवृहद्वलम् ।
 शरपुङ्खाश्च पाठाश्च चित्रकश्च महोपधम् ॥ १३ ॥
 लवणानि च सर्वाणि सक्षारं वृद्धदासकम् ।
 दीप्यकश्च तथा शीघ्रुमायसाऽन्नसमं क्षिपेत् ॥ १४ ॥
 प्लीहोदरयकृत्मान्द्रुन्ति शस्त्राऽग्निभिर्विना ।
 प्रयोज्योऽयं महावीर्यं लोहो लोहविदां वरैः ॥ १५ ॥
 भै र, घ, र र, र क, उदराऽधिकारे ।

भाषा—मैनसिल और अमलोनियाके योगसे वारितर कियाहुआ और मानकन्द, हेस अथवा बयनदा, और सूरणके रसकी १-१ भावना दियाहुआ लोह २ तो, निश्चन्द्र कृष्णाऽन्नकभस्म १ तो, विधिपूर्वकमुच्छ्रितकियाहुआ पारा आधा तोला (रससिन्दूर) लैवै। फिर अन्नक और लोहभस्मसे तियुनी निम्फलाको १६ गुनेपानीमें उवाले। अष्टभागवशेष रहनेपर छानकर सीटीकोपेंकदे। वायकी बराबर पी और शतावरीका रस और वायसे दूना गायकाद्घ, लोहभस्ममेंसे आधीलोह भस्म, डालकर मन्दअग्निसे पकाये। मावेका पानीजलब्रानेपर कल्ककी गोली बनने लगे तब उतारकर पहिली अवशिष्टभस्में और सूरण, जगलीकपास, चर्ब्य, विडङ्ग, एरण्डमूल, शरपुङ्ग, पाठा, चित्रकमूल, सोंठ, तमाम नमक और क्षार, विषायेकी जड़, अनवाशन, घृहरकाद्घ, य त्रयेक अवशिष्ट लोह और अन्नकके बराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर पूर्वपाकमें मिलाकर रखलोड़े। इसमेंसे २ माशसे ४ माशेतककी मात्रा गरमनल-बौरह समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, उदररोग, यकृत, शुष्मश्त्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २ ॥

३ यकृदरिलोहम् (प्लीहारि)

द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽन्नकस्य पलाऽर्द्धकम् ।
 कर्षं शुद्धं मृतं ताम्र लिम्पाकाऽङ्घ्रित्वचं पलम् ॥ १६ ॥
 मृदाऽजिनभस्म पलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
 नयगुञ्जा प्रमाणेन घटिका कारयेत्त्रिपक्वम् ॥ १७ ॥
 यावत्प्लीहोदरश्चैव कामलाश्च हलीमकम् ।

कासं श्वासं ज्वरं हन्याद्द्वलवर्णाऽग्निकारकम् ॥
 यकृदरि त्विदं लोहं वातगुल्मविनाशनम् ॥ १८ ॥

र स, र चि, र च, भै र, र सु, उदररोगे।
 टि०—अत्र द्विकर्षं लोहचूर्णस्य चाऽन्नकस्य पलाऽर्द्धकमिति पाठेन साधारणतया लोहचूर्णं शुद्धमन्नकमिति प्रतीतिर्भवति परन्तु उभयोर्भेदस्य प्रतीतयम् । र स, र चि, र ह, र सु, एषु क्रमेणु ग्रीहारिनाम्ना स्वतन्त्र पाठो दृश्यते तत्र अन्नकस्थाने पारदगन्धर्वो नियोजितौ अन्यत्वं समानमस्तीत्यतोऽत्रैव पारदगन्धर्वककान्तौ प्रदाय एक एव रसो निष्पादनीयः । पारदगन्धर्वकान्तया अधिकत्वेन दाने क्षलभावो गुणवृद्धिस्तु सारामेवाऽस्ति, एकपाठहासश्च महत्फलम् ।

भाषा—लोह और अन्नकभस्म २-२ कर्षं, ताम्रभस्म १ कर्षं, अमलतासकी जड़कीछाल १ पल, मृगचर्मकीभस्म १ पल लेकर सबको इकट्ठेर अभिलतासकीजड़की छालके वादेसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखलोड़े। इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे ग्रीहा, यकृत, कामला, हलीमक, कास, श्वास, ज्वर, बलवर्णामिनास, वातगुल्म इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ २ ॥

४ यकृद्वारणसिहरसः

सिन्दूरमन्नकं तालं लोहं कर्षप्रमाणतः ।
 माक्षिकश्चाऽभयाप्यायै मर्दयेदतियत्नतः ॥ १९ ॥
 घलुमानां घटी कृत्या छायाशुष्कां समाचरेत् ।
 यकृद्वारणसिंहोऽस्ती रस्तो यद्विद्विद्वन्तः ॥ २० ॥
 आ वि, उदराऽधिकारे ।

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक हरिताल, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनसबकी भस्में १-१ कर्षं लेकर बारीकचूर्णकर हरेककाढेसे १-२ रोज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह यकृत रोगको दूरकरताहै और तप्तदोगरानुपानकेसाथ देनेसे कासश्वासादिको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

५ यक्ष्मदावाऽभिरसः

सूतगन्धर्वविमौक्तिकं समं
 ऋद्धवेरद्वहनाऽग्निमर्दितम् ।
 सूततुल्यरविसम्पुटाऽऽचूतं
 पूर्ववेद्ध्यति यश्मिणां हितम् ॥ २१ ॥
 र, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मौक्तिकपिटी सबसमभाग लेकर अदरस तथा विषककेस्वरस और मिलावके तेलसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय पारेकीबराबर शुद्धतावेके सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी दकर गजपुटकी आचदे। स्वाहाशीतलहानेपर निकालकर तावक सम्पुटकी जितनी भस्म होगईहो उससबको मिलाकर पूर्वक बराबर शुद्धपारा और गन्धक मिलाकर अदरस बौरहके रसोंसे पूर्ववेद मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर सुखनेपर हरे गजपुटकी आचद। स्वाहाशीतल होनेपर निकालकर रखलोड़े।

इलमेंसे १-१ रती समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह राज-
यक्ष्मको दूरकरताहै ॥ ५ ॥

६ यक्ष्मशूरमः (महद्रिक्रुमारः)

स्वर्णं ताम्रं पादं चाऽष्टभागं

गन्धाद्भागः षोडश स्युश्च शुद्धात् ।

सर्वं खल्वेव न्यस्य भाव्यं दिनेकं
पार्थक्येन व्योपलुङ्गाऽऽर्द्रकाऽद्भिः ॥ २२ ॥

बह्विद्रावैस्त्रैफले भृङ्गवारा

कन्याम्भोभिः शोणकपासिपुष्पैः ।

ब्राह्मीमुण्डोन्नाणितालीसगुप्ता-
भृङ्गभाण्डोन्दीवरीवारिणा च ॥ २३ ॥

गुञ्जावीजैः कज्जलां काचकूप्यां

धिपत्वा किञ्चिद्द्वेषञ्चाऽत्र देयम् ।

पार्थ्यं यामान् षोडशैव प्रयत्ना-
त्सिद्धः सूतो जायते यक्ष्मशत्रुः ॥ २४ ॥

ताम्बूलीनां पत्रयुग्मे लवङ्गैः

सायं प्रातः सप्तभिः सेवनीयः ।

अग्नौ मन्दे मारुते क्षीणवेहे
कासे श्वासे रोगराजे प्रशस्तः ॥ २५ ॥

वर्ज्यञ्चाऽस्मिन् प्रायशो भोज्यमापा-
स्तेलं तीक्ष्णं राजिकामत्स्यमांसम् ।

अभिष्यां वै पण्णुले चोपदिष्ट-
स्ताभ्यामुक्तस्तारकानायकायै ॥ २६ ॥

रसायनस्य, अग्निमान्ये ।

भाषा—सुवर्ण और ताम्रमस, शुद्धपारा ८-८ भाग, शुद्ध-
गन्धक १६ भाग लेकर सबझी नीलवर्णकजलीकर निकट,
बिजोरा, अदरक, चित्रक, त्रिकला, मगरा, धीकुंवार, लाल-
कपासकेफूल, ब्राह्मी, मोरखसुण्डी, इन्द्रायण, तालीसपत्र, केवाच,
काण्डविदारी, शतावर, सफेदगुञ्जाकेबीज इनप्रत्येकके यथासम्भव-
स्वरस अथवा काथोंसे १-१ रोज भावना देकर मुसाकर फिरसे
कजलीवनाय ६-७ कइमिमीदीहुई आतशीशीशीमें भरके
ऊपरसे पिताहुआग्रहागा १६ वा हिस्सा डालकर घालकायन्त्रमें
रखकर १६ पहरकी मन्द आचसे पकावे । शीशिकासुह
एकदम बन्दहोजाय तो गरम शलाकाले खोलदे पर हरबक
शलाका न डाले क्योंकि गन्धक जारणकरना अभीष्ट नहींहै ।
स्वाश्वरीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इलमेंसे ३-३ रतीकी
मात्रा दो पान और ७ लवङ्गके बीधेमें रखकरदे । ऐसे सायं
प्रातः दोनोवक देनेसे मन्दाग्नि, वातक्षीणता, कास, श्वास,
राजयक्ष्म इनसबको यह नष्टकरताहै । इलमें उड़द, तैल, तीक्ष्ण-
पदार्थ, राई, मछली और मांससे परहेज करे ॥ ६ ॥

७ यक्ष्महररसः

शुद्धसूतविपके च हाटकं गन्धकेन सहितं समांशकम् ।
मर्चं चाऽऽर्द्रकरनेन चित्रकैः प्रक्षिपेच्च सुखदे सुभाजनै

ताम्रभाजनमथोपरिस्थितं रोधयेत्पट्टमृदा सदैव हि ।
याममात्रं पुटितं शनैःशनैर्निक्षिपेच्च जलमूर्द्धभाजने ॥
ताम्रपात्रकुहरे रसां भवेद्वैद्यो गाराजचिनिवहेणक्षमः ॥ २८ ॥
र. प्र सु, र. चं, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और घटनाग, सुवर्णमस, शुद्धगन्धक
समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर अदरक और चित्रकके स्वरसों-
से १-१ रोज मर्दनकर मजबूत मिट्टीके घड़ेमें डालकर ऊपर-
तावेका वर्तन रख दोनोंकी सन्धि बन्दकर चूल्हेपर बड़ाय एक
पहरकी मन्द आचदे । ऊपरके वर्तनमें पानीभरदे । स्वाश्वरीतल
होनेपर समुद्रकी खोलकर रसको निकालकर रखछोड़े । इलमेंसे
१-१ रती उचितानुपानकेसाय देनेसे यह उषधसहित राज
यक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ७ ॥

८ युवतिलीडारसः

एकभागशुद्धसूतो माक्षिकं गन्धकस्तथा ।
विषं ताम्रं नेत्रसहस्रं द्विगुणं शुद्धमन्नरुम् ॥ २९ ॥
द्वौ भागौ नागवङ्गाभ्यां तारमसम त्रिभागिकम् ।
जातीफलस्य भागौ द्वौ तद्वद्भां जातीपत्रिका ॥ ३० ॥
त्रिकटोश्च त्रयोभागाश्चातुर्जातं च तुल्यकम् ।
ज्योतिष्मत्याश्च द्वौ भागौ त्रिगुणं हेमवीजकम् ॥ ३१ ॥
मर्कट्यशोकवीजञ्च विडङ्गं मृतिभागिकम् ।
कुष्ठञ्च शिमुवीजानि भृङ्गवीजञ्च तत्समम् ॥ ३२ ॥
चन्द्रसहस्रं चाजमोदं दीप्यकञ्चैकभागिकम् ।
प्रियालं यदरीजीरो कदम्बं नारिकेलजम् ॥ ३३ ॥
चन्दनं मधुकोशीरं दशभागं पृथक्पृथक् ।
शुद्धचीसारभागेकं विदारीं मुशलीभुरम् ॥ ३४ ॥
मधुपिष्टश्चाऽथगन्धा कोकिलाक्षाणि धान्यकम् ।
शतावरी च कदलीं शैरीर्यं शाल्मलीभवम् ॥ ३५ ॥
टङ्गुणं रविपुष्पाणि खर्जूरौर्वर्गीजकम् ।
रक्ताऽथमारपुष्पाणि दशपट्टोषडांशकम् ॥ ३६ ॥
अपामार्गस्यैकभागखिलफला च त्रिभागिका ।
सर्वं सुश्माकृतं चूर्णं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३७ ॥
भावना गव्यदुग्धेन विदारीद्रवकेण च ।
नारिकेलोदकं भर्त्विष्यं शाल्मलीसारभावितम् ॥ ३८ ॥
रम्भासारेणेशुरसेः कृष्णांमचरसेः क्रमात् ।
अलर्कं पलमात्रन्तु छायागुष्कञ्च मेलयेत् ॥ ३९ ॥
शर्करासर्पिणा युक्तमपराहे च भक्षयेत् ।
पथ्यञ्च क्षीरमाज्यञ्च शर्करा कदलीफलम् ॥ ४० ॥
नारिकेलं प्रियालञ्च खर्जूरं पनसन्तथा ।
पतानि पथ्यान्याहारं ध्वजोच्छ्रयः प्रजायते ॥ ४१ ॥
शुक्रबृद्धिकरं श्रेष्ठं युवतीशतसहस्रम् ।
महामोहकरं वश्यं रतिदं मद्कारकम् ॥ ४२ ॥
अश्ववेगयुतं कृत्वा महारतिसुखप्रदम् ।
रामारञ्जनकारित्वात्क्रीणामत्यन्तमौष्यदम् ॥ ४३ ॥

नष्टेन्द्रियत्वं मेहत्वं मूत्राघाताऽऽमरीहजम् ।
 योनिदोषं रजोदोषं लिङ्गसङ्कुचितोन्नतिम् ॥ ४३ ॥
 क्षयञ्च रक्षपित्तञ्च वातरक्तमसृग्द्वरम् ।
 हन्ति पाण्डुञ्च ग्रहणीं शूलं सर्वोऽतिसारकम् ॥ ४४ ॥
 नराणां तनुते पुष्टिं सर्वव्याधिधिनाशकः ।
 नाशः शुबतिलीलाद्यो रसः पुष्टिरुरः परः ॥ ४६ ॥
 र. क. यो वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध घरा, सोनामाली और गन्धक १-१ भाग, शुद्धवछनाग, ताम्र, अन्नक, नाग और वज्रभस्म २-२ भाग, रजतभस्म ३ भा, जायफल २ भा, जावित्री १ भा, त्रिकुट ३ भा, चातुर्जात, तुल्यभस्म, मालकगनी २-२ भाग, शुद्ध धतूरेकेबीज ३ भा, केनाच और अशोककेबीज, विडर, कुठ, सहिजन और भगरेकेबीज, अजमोद, अनरादन १-१ भाग, चित्तौजी, बेरकीमन्ना, जीरा, कदम्ब, नारियल, सफेदवन्दन, देशीमुल्हठी, खस ये प्रत्येक १० भाग, गिलोयसत्त्व, विदारीकन्द, मुसली, मोसूरु, सुल्हठी (ईरानी), असगन्ध, तालम खाना, धनिया, शतावर, केला, सिरस और सैमल क बीज, भुनासुहागा १-१ भाग, आकनेकूल १० भा, छुआरा और ककड़ीकेबीज ६-६ भाग, लालकनैरेकैकूल १६ वा हिस्सा, अवामार्ग १ भा, त्रिफला ३ भा, लेडर सबका वारीकचूर्णकर पाणेगन्धकको नीलवर्णकजलीमें मिलाकर गायकान्ध, धीरे विदारी और काष्ठविदारी, नारियल, मोचरस, केलेकाकन्द, ईख, कालापत्रका, इनकेयथासम्भव स्वरस अथवा बाधोसे १-१ भावना दकर सफेद आकनीजइकीछाल १ णल मिलाकर डेड १॥ भासा कीमात्रा शकर और चीन्हेसाथ शमको खाय । पथ्यमेंदूध, घी, शकर, बेले, नारियल, चित्तौजी, छुहारे और कटहलखावे । इसकेसेवनसे ध्वज और शुक्कोटद्विशोतीहे । उत्तम वाजीकरणाहे । मोह और वरयको करनेवालाहे । रति और मद्को करताहे । नष्टेन्द्रियत्व प्रमेह, मूत्रापात, पथरी, योनितोग, रजोदोष, लिङ्गसङ्कोच, क्षय, रक्षपित्त, वातरक्त, रक्तप्रद, पाण्डु, प्रहणी, शूल, समस्त अतिवार इत्यादि समस्त रोगोंको दूरकरियाँको अत्यन्त आनन्ददायक होताहे । स्तम्भनाशप्रयोगकरना हो तो उसरात्रिको अन्न न पावे ।

९ योगराजगुग्गुलुः (प्रथमः)

नागरं पिप्पली चयं पिप्पलीमूलचित्रकां ।
 भृष्टं दिङ्मज्जमोदञ्च सर्पं गा जीरकद्वयम् ॥ ४७ ॥
 रेणुकेन्द्रययाः पाठा विडरं गजपिप्पली ।
 प्रत्येकं शाणिकानि स्युं द्रव्याणीमानि विराति ।
 द्रव्येभ्यः सकलेभ्यश्च त्रिफला द्विगुणा भवेत् ॥ ४९ ॥
 एभिश्चूर्णाहृतैः सर्वैः समो देपस्तु गुग्गुलुः ।
 परं रौप्यञ्च नागञ्च लोहं सारं तथाऽन्नकम् ॥५०॥
 मण्डूरं रससिन्दूरं प्रत्येकं पलसम्मितम् ।
 शुद्धपाकसमं बुयोदिमं दद्याद्यथोचितम् ॥ ५१ ॥

एकपिण्डं ततः कृत्वा धारयेद्दतभाजने ।
 गुटिकाः शाणमात्रस्तु कृत्वा प्राहा यथोचिताः ५२
 गुग्गुलु यंगराजोऽयं त्रिदोषघ्नो रसायनः ।
 मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नवाऽत्र विद्यते ॥ ५३ ॥
 सर्वान्यातामयान्कुष्ठान्यन्शांसि प्रहणीगदम् ।
 प्रमेहं वातरक्तञ्च नाभिशूलं भगन्दरम् ॥ ५४ ॥
 उदावर्तं क्षयं शुल्भमपस्मारामुरोप्रहम् ।
 मन्दार्द्रिभ्यासकासांश्च नाशयेद्वर्क्य तथा ॥ ५५ ॥
 रेतोदोषहरः पुंसं रजोदोषहरः स्त्रियाम् ।
 पुंसामपत्यजनको वन्ध्यानां गर्भदस्तथा ॥ ५६ ॥
 राजादिकाथसंयुक्तो विविधं हन्ति मारुतम् ।
 फाकोल्यादिष्टतापित्तं कफमारुवधधादिना ॥ ५७ ॥
 दार्याश्रितेन मेहंश्च गोमूत्रेण च पाण्डुताम् ।
 मेदोवृद्धिञ्च मधुना कुष्ठं निम्बश्रितेन वा ॥ ५८ ॥
 छिन्नाकाथेन वाताऽन्नं शीथं शूलं कणाश्रितात् ।
 पाटलाकाथसहितो विषं मूषिकञ्च जयेत् ॥ ५९ ॥
 त्रिफलाकाथसहितो नेत्रार्द्रिं हन्ति दारुणम् ।
 पुनर्नवादेः काथेन हन्यास्तस्र्वोदराण्यपि ॥ ६० ॥

शा. सं. रसायन सं. ना वि, ध, र कि, द्वा मा, सो. त, वातादिरोगे ।

टि०—ना वि, प, र कि, द्वा मा, वा त इत्यादि प्रमेयेषु धातुर स्त्रि पाठोऽस्ति । रक्तिकरो भाग्यो अत्रे “ इवा मुवां च वक्रन् । देव दास्यको कुष्ठ एवा मुस्ता च सैष्वन्वम् । वृत्त विकृत्यक पथा धन्य कञ्च विभीतकम् । धानी लचमुशीरञ्च यशशास्त्रेऽस्तिगन्धपि ॥ एतानि समभागानि मुहमूर्च्छानि वारयेत् । यान्त्येनानि चूर्णानि तावदेवाऽत्र गुग्गुलु ॥ इतिवाद्यो हस्ये तत्र फलशब्देन मदनकल प्रकृतम् । पथ्या विभीनवधानीनां श्लेष्माशिविन्ध्यान्वयेन सन्तन्नामधयनाश्रयति सदाने सत्रिविद्यलात्र सर्ववृहत्तदुप्य किं वा सहातमना भवति, वेदगुग्गुलुवेव सर्वसमाहृताऽस्ति इति विदोषसत्तम एषोव योग स्वीकरोम्य । नागरादीनां मध्येक पत्रोत्थपरिमितानां सहाते र्थमि कारपत्न्यजा, पुनर्नवमूल, मिशुवारपत्राणि, श्वेतत्रिभुल्ल, मिन्वत्क, श्रावणिका, हसदी इति सप्तद्वयमि प्रत्येक द्वावत्करपरिमितानि । इद्रवाहनिगामूल वरणत्वक् च मध्येक विंशतिगोष्पपरिमित दत्त्वा स्वातुनाशं वय योगेण नियमद्वयम इत्यपि पृथग्गण । अथत्र योगेऽ म्ययोगेऽऽस्वाधिकतनपुनःशोऽस्ति, भवनय युक्त्या मंत्रेऽपि वयोऽ मिश्रणियो वैद्य इव योग नियमद्वयान्ति विनीऽऽस्तक प्रथमा । अन्धियेनै मैथुनाऽऽहारपानानां त्यागो नवाऽत्र विद्यते इति लिखितं हस्ये परन्तु धनुषदिवयोगे इद न सङ्गच्छते, एतरोविन वरपाटक सेवायां विद्यते प्रत्यपट्टलत्वात्, तथात्वात् कर्पाटकारिवैभवात्प्रत्येकं वरणीयम् । धनुषदिवयोगे तु वयण्डिनि रत्नोदभवऽस्ति, इति वि निर्दिष्टत्वात् प्रयोग करणीय ।

भाषा—तोद, पीपत्र, चय्य, पाटलामूल, चित्रक, मुनाहोग, अजमोद, पीरीसरगो, इयाहकदजीरा, रेणुका (योग पहाड़ी), इन्द्रजव, पाठा, विडर, गजरीसल, कुटकी, अनीग, भारती, वच, मुवां (सरोककी), १-१ टका, एवमे द्वी-त्रियला, इतवर्को बराबर शुद्धमूल, वज, रजत, नग, लोह, कोकर, अन्नक, मण्डूर इनहीभस्में तथा रससिन्दूर १-१ पल

लेकर गिलोय अथवा दशमूलकेवापये गुगुलको पकाकर छानले और फिरसे गुड़की चासानीक सहस्र पकाकर सबचीजें मिलाकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर धीके बर्तनेमें रखलोके, यह शाश्वतकरका सिद्धान्त है । परन्तु रसविक्रमप्रयत्नियोंमें विशुद्ध गुगुलको ज्वलनप्रयत्नमें गोघृतकेसाथ यहतक कुटवाना कि उसका द्रवहोजाय फिर इसमें ऊपरके चूर्णको धीरे २ ढालकर कूटताजाय । समस्तवस्तु मिलजानेपर पूर्ववत् गोलिया बनाकर रखलोके । इसतरह इसका विधान मिलताहै पर इतनीहीविधिसे इसे तैयार न समझना । सबचीजें मिलजानेपर लोहेके खरलमें लोहेकी मुसलीसे ६-७ रोज मर्दनकराना जिसमें कि गुगुल और दवाओंका सुदापन कोशिशकरनेपरभी मादम न हो । इसमें मात्रा ४ माशेकी लिखी हुई है सो धातुरहितकी सम्झना । शाश्वतकरने इसका खलासा नहीं किया यह उनका भारी भूलहे क्योंकि उनके लिले मुताबिक पाठसे गुगुल बगैरह द्रव्य और धातुएं लगभग समप्रमाण होजातीहैं । इसकी ४ माशेकी मात्रा आजकलके जमानेमें धातुयुक्तगुगुलकी तो दक्किनार केवल गुगुलकी इतनीमात्राको कोई सहन नहीं कर सकता । इसलिये इसकी अधिकसे अधिक १ माशेकी गोली होसकतीहै इसेभी सबलोग सहन नहीं करसके अतः ३-३ रतीकी गोलिया बाधनी चाहिये और धातुरहित गुगुलकी २ माशेकी गोलीसे अधिक नहीं बाधना । अपवादरूपसे कोई ४ माशेकी गोली कदाचित् इन्जमकरसके पर इससे सखके लिये ४ माशेकी गोलीका प्रमाण बाधना अनुचितहै । इससे सेवनमें मैथुन, आहारपानादिकके परहेज करनेकी आवश्यकता नहीं बनाईहै परन्तु यह धातुरहितके प्रयोगमें समझना । धातुरहितके सेवनमें कमसेकम ककारादिवर्ग का त्यागकरना अत्यावश्यक समझना । इसकी १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे समस्तवातविकार, कुष्ठ, अंस, प्रहृणो, प्रमेह, वातरक, नागिमुल, भगन्दर, उदावते, क्षय, गुल्म, अपस्मार, ज्वरतन्त्र, मन्दाग्नि, श्वास, वास, भर्त्सि, शुक्र और रजोदोष, स्त्री तथा पुरुषका बन्ध्यत्वदोष, इससबको यह नष्टकरताहै । दिग्दर्शनार्थे अनुपानोकीकल्पना नीचेलिपे प्रकारसे करना । रात्रादिकार्थे सायमानातरहकेवातविकार, कासोत्थादिके पित्तविकार, आलस्यवादिसे कफविकार, दाहदहकी वाटेमें प्रमेह, गोमूत्रने पाण्डुता, मधुने मेदोर्द्धि, निम्बप्रभाहके वापसे कुष्ठ, शुद्धीके कापसे वातरक, पीपलके काड़ेसे दोष और दूध, पाठकेवापसे चूहेकापिप, त्रिफलाके कापसे नेशोकी भयकररीडा, पुनर्नबादिकापसे समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै । इसतरह जहा जैसी औचिनी हो बहापर अनुपानद्रव्ययोग वैद्य अपनीनुदिदिक्करे ॥ ९ ॥

१० योगराजगुग्गुलुः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला पाठा शतांश रजनीद्रव्यम् ।
अजमादा घवा टिङ्गु ह्युषा हस्तिपिप्पली ॥ ६१ ॥
उपकुञ्चिका शर्दी धान्ये पिष्टं सायबलन्तथा ।
सन्ध्रयं पिप्पलीमूलं त्वगेला पत्रकैरम् ॥ ६२ ॥

फणिञ्जकञ्च लौहञ्च सर्जकञ्च विकण्टकम् ।
राक्षा चाऽतिविषा शुण्ठी यवक्षाराऽम्बलेतसमा ॥ ६३ ॥
चिचकं पुष्करञ्चयं वृक्षान्लं दाडिमं ख्युः ।
अश्वगन्धा त्रिवृद्धन्ती बदरं देवदारु च ॥ ६४ ॥
हृदिा कटुका सूचां प्रायमाणा दुरालभा ।
विडङ्गं मृतवङ्गञ्च यमानी चासक्तोऽन्नकम् ॥ ६५ ॥
पतानि समभागानि शृण्णचूर्णानि कारयेत् ।
शोधितं गुग्गुलुञ्चैव सर्वचूर्णसमं नयेत् ॥ ६६ ॥
घृतेन कुट्टयित्वा च स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् ।
रसवातेन ये भग्नाः कटिभग्नाश्च ये जनाः ॥ ६७ ॥
एकाङ्गं शुण्पते येषां कुष्ठं वाऽपि क्षतोत्तरम् ।
पादां विस्तारितौ येषां येषां वा शृङ्गसीप्रहः ॥ ६८ ॥
सन्धिघातं कौटुशीर्षं वातं सर्वशरीरगम् ।
अशीतिं वातजाघ्नोर्गांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥ ६९ ॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव हन्त्यवश्यं न संशयः ।
अर्थं वृहद्योगराजगुग्गुलुः सर्ववातहा ॥ ७० ॥

भे. र. — आमवाताऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, छोटी और बड़ी पाठा, सोंफ देसी और रूमी, हल्दी, दाहहल्दी, अजमोद, बब, मुनीर्दीग, झाङ्गीपत्ती या फल, गजपीपल, कालीजीरी, मर्गैल, कचूर, पनिया, विडनमक, संचल, सैन्धव, पिपलामूल, तज, इलायची, पत्र, केश, मरुता, लोहभस्म, राल, गोखर, राक्षा, अर्जोस, सोंठ, यवक्षारा, अमलवेत, चिचक, पोहकरमूल, चन्च, कोकम, अनार, एण्डेकीजह, असगन्ध, मिशोत, दन्तीमूल, बेरडीछाल, देवदारु, हल्दी, कुटुकी, मरोङ्गली, प्रायमाण, जवासा, विटन, वङ्गभस्म, अजवाइन, अड्डा, अन्नभस्म ये प्रत्येक समभाग लेकर बायीचूर्णकर ज्वलनयुद्धमें शुद्धगुलको ढालकर गोघृत देकर द्रवहोनेतक कुटवाकर सबचीजोंके चूर्णको घोड़ा घोड़ा मिलाकर कुटवावे । अन्तमें २-३ रोज मर्दनकरके चिकने बर्तनेमें रखलोके । इसमेंसे १ माशेसेलेपर २ माशेतक उचि तापानकेसाथ देनेसे आमवात, कटिवात, एकाङ्गघोष, कुष्ठ, उर क्षत, सञ्जता, कुष्ठरी, सन्धिघात, कौटुशीर्ष, समस्तशरीरस्थवातविकार, ८० प्रकारकी वातन्धाधि, ४० पिपरीय और २० कफरोगोंको यह नष्टकरताहै । तप्तदोगहरानुपानकेसाथ समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १० ॥

११ योगराजरसः

त्रिफलायाम्रयो भागात्रयपरिकटुकस्य च ।
भागाध्विप्रकमूलस्य विडङ्गानां तथैव च ॥ ७१ ॥
पञ्चाऽस्मजनुनांभागास्तथा स्युष्ममलस्य च ।
माक्षिकस्य च शुद्धस्य लौहस्य रजसस्तथा ॥ ७२ ॥
अष्टौ भागाः सित्तायाश्च तत्सर्वं गृह्णमूर्णितम् ।
माक्षिकेणाऽऽप्लुतं स्याद्यव्यमायसे भाजने नुभे ॥ ७३ ॥
उदुम्बरसमां मात्रां ततः स्यादधिघाऽग्निना ।
दिनेदिने प्रयुञ्जीत जीर्णं मोक्ष्यं यदीन्सितम् ॥ ७४ ॥

वर्जयित्वा कुलस्थानि काकमाची कपोतकम् ।
योगराज इति ख्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥ ७१ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं सर्वरोगहरं शिवम् ।
पाण्डुरोगं विर्यं फालं यश्मार्णं विषमज्वरम् ॥ ७६ ॥
कुष्ठान्यजीर्णकं मेहं शोषं श्वासमरोचकम् ।
विशेषाद्बाल्यपस्मारं कामलां गुदजानि च ॥ ७७ ॥
च स, अ ह, र प्र, म नि, टो, वै द, वै चि, र र यो
र, अ स, र च, व यो त, वै क, लो, प, र्द, चा, नि र, र
सु, यो म, ना वि., पाण्डुकामलाऽधिकारो ।

टि०—गदनिमे “मुस्ताकम्पिलवोर्भोगे देवधाऽपि पृथक्पृथक्,
श्लषिक पाठो दृश्यते । लो प अमजतुल्याने भण्डुर निबोधितम् ।
चरके “ताभ्याऽपि चतुरीयाऽपीमला पत्रपला वृक्षः । विषकत्रिफला
श्लषिकविदे पालिके सह ॥ दफराऽश्लोमिन्ना चूर्णिता मधुना
प्लुता ।, श्लषाकारण योग विजिल्य त्रिफलायास्तयो भागा श्लषपला
क्षिप्तम् । तत्र पाठान्तरताया न अस्ति त्वं उपरिऽक्षिप्तैव त्रिफ
लायास्तयो भागा श्लषादिना विवरण इत्यस्ति । र च तान्यादियोग ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, चित्रक, विडङ्ग ३-३ भाग,
शुद्धशिलाजीत, रूपामाखी, सोनामाखी, लोहभस्म ५-५
भाग, शकर ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मधुमें मिलाकर
लोहेकेपात्रमें रखकर ६-७ रोज धान्यराशिमें रखछोड़े । इसमेंसे
अमिषल देखकर ३ मासोसे १ तोलेतककी मात्रा प्रतिदिन
सेवनकरे । जीर्णहोनेपर कुलथी, मकोय और कबूतरको छोड़
कर इच्छानुसार भोजनकरे । यह अमृतसप्तशयोगेह समस्त
रोगोंको नष्टकर रसायनकेफलको देताहै । पाण्डु, विष, कास,
राजयश्म, विषमज्वर, कुष्ठ, अजीर्ण, प्रमेह, शोथ, श्वास,
अरुचि, कामला, बवासीर इनको यह नष्टकरताहै विशेषतया
अपस्मारको दूरकरताहै ॥ ११ ॥

१२ योगराजलोहम्

त्रिफला धातुचीवीजं भृङ्गराजकटुत्रिकम् ।
गुह्येऽयमजातीयं केशराजं समुस्तकम् ॥ ७८ ॥
धात्रीखदिरसिन्धूर्यं यमानां जीरकद्वयम् ।
कान्तभस्म विडङ्गानि सर्वचूर्णानि कारयेत् ॥ ७९ ॥
लोहं सर्वसमं होष योगराज इतिस्मृत ।
सर्वकुष्ठधिकारेषु विहितो लोहकोविदेः ॥ ८० ॥
र र, र क, कुष्ठे ।

भाषा—त्रिफला, धातुचीकेबीज, भगरा, त्रिकटु, गिलोय,
पवाङ्केबीज, बालाभगरा, नागरमोया, आबला, खैरसार,
सोधानक, अजवाइन देशी तथा खुरासानी, स्याह और सफे
दजीरा, कान्तलोहभस्म, विडङ्ग, सब समभाग लेकर बारीक-
चूर्णकर सबकी बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । अथवा
इसयोगमें कहींहुई त्रिफला बौद्धवनस्पतियोंके स्वरस अथवा
धातुके १-१ भागना देकर १-१ मासोकी गोलिया बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कुष्ठराजानुगन्धेमाय देनेसे यह
समस्तपृथकों नष्टकरताहै ॥ १२ ॥

१३ योगवाहक रसः (प्रथम)

गन्धकं चूर्णयित्वा च नवमीतेन संयुतम् ।
वस्त्रे बद्धा प्रदीपस्य शिखायाः सन्निधिं कुम् ॥ ८१ ॥
तदुद्भूतेन तैलेन रसपिण्डं सटङ्कणम् ।
यद्धा चूर्णेन वस्त्रेण गौरीयन्त्रे विनिःक्षिपेत् ॥ ८२ ॥
तद्बद्धं गन्धकं दत्त्वा पिधायाऽग्निं शनैः शनैः ।
पट्टणे गन्धके जीर्णं रसो भवति रोगहा ॥ ८३ ॥
रसस्य तुर्यभागेन तात्रपिपिष्टं प्रकल्पयेत् ।
इष्टिकायां तथा क्षिप्त्वा पट्टणं गन्धकं क्षिपेत् ॥ ८४ ॥
पिपिष्टं तां तु समुद्भूत्य मत्स्याक्षीद्रवमध्यगाम् ।
शिलाभेदद्रव्यं युक्तां स्वेदेयन्मुहुवहिना ॥
योगवाहकरसोऽयं योज्यो योगेषु निर्भयः ॥ ८५ ॥
र मृ सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धका बारीकचूर्णकर मक्खनमें मिलाकर
खादीकेपत्रेपर लेपकरके बीचमलोहेकीशालाका डालकर शिथिल-
वतीवनाय दोनोंओर आग लगादे और नीचे बासेकी थाली
रखदे । इसमेंसे जितना तैल टपके उसको किसीशीशोमें भरले,
यह गन्धकदुति तैयार हुई । शुद्धपारमें चतुर्थीस मुहागा देकर
इसतैलसे यथातक मर्दनकरे कि चमकरहित होकर गोली बध-
जाय । इसगोलीको चूनापुतेहुए वस्त्रमें पोडलीके आकारमें बाधकर
चूनापुतेहुए गौरीयत्र (योगवाहक-न ३ में कहेहुए) में पारेकी
बराबर नीचे ऊपर गन्धक देकर बीचमें पोडलीवरो रख ऊपरसे
अश्वत्थाराकार टीकरा रखकर ऊपर जललीकणोंके छोटे २ टुकड़े
जमाय निर्वातन्यानामें अग्नि लगादे । पर यह ध्यान रखले कि
गन्धकमात्र जलजाय, पारा न उड़े । स्वात्तशीतलहोनेपर पूर्ववत्
दूसरागन्धक रखकर आंचदे । ऐसे बहुगन्धक जाणकारके पारेसे
चतुर्थीस शुद्धतम्रका चूर्णमिलाकर गन्धक तिके सहारेसे पिटी
बनाय पूर्ववत् पट्टणगन्धकजाणकर मत्स्याक्षी और पधाण-
भेदकेवलसे अथवा वायुमें दोलायन्त्रवनाय ४-४ पहर पका-
नेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै । निडरडोकर इसका
तमामरोगोंमें प्रयोगकरे ॥ १३ ॥

१४ योगवाहकरसः (द्वितीयः)

मेघनादवचाहिङ्गरसोनानां हि गोलरुम् ।
कृत्वा तन्मध्यं घीयं लवणेऽयं निवेशयेत् ॥ ८६ ॥
संस्वद्य सम्पुटं सम्यग्दृष्टं देहि सुगोमयम् ।
चुडुयां नर्यं समारोप्य वह्निं यामचतुष्टयम् ॥ ८७ ॥
मध्यज्वालं समुज्ज्वाल्य स्याद्गशीतलतां नयेत् ।
ऊर्ध्वद्वारं समादाय वस्त्रे धद्धा च गन्धरुम् ॥ ८८ ॥
मध्यं पारदं कृत्वा सोमानलेन तापये ।
ऊर्ध्वगोशस्य चत्वारो गन्धकस्याऽष्टभागकाः ॥ ८९ ॥
मैन्धयस्य च भागो द्वौ श्वेताजयन्तिकाऽष्टव ।
मुद्गादि त्रीण्यहानि त्वं गोलरुं तं विशेषयेत् ॥ ९० ॥
ततां मूयां जले क्षिप्त्वा गृहाण रसभस्मरुम् ।
संस्वद्य कण्टकायां र्ययेष्टं विनियोजये ॥ ९१ ॥

सत्तद्रोगहरैर्द्रव्यैः सन्ध्ययुक्त्या नियोजितः ।
निहन्ति रोगसङ्घातं हृद्यप्रन्थ्यकारकः ॥ १२ ॥
र. मृ. सपैरोगे ।

भाषा—कृत्वालीचौलाई, घब, उत्तमहीम और एक-
अंधियालहसन समभागलेखर कन्कबनाले । उसकल्केगोलेमे
पूयोफ (योगसाहक नं. १ मेंकहीहुई) गोलीको बन्दर गोला-
बनाय दमरूपमे सत्रगरे भातर रस ४-५ कपामिटी देकर
मुंह इततह बन्दकरे कि सन्धिसे पाता न निकलने पावे । फिर
यत्रको चूल्हेपर रस करके पकेके पेटेपर गोबर रत्नद । चून्देमे
४ पहर्की मन्थनामिरे । स्वादशीतलहोनेपर यत्रको उपाह
करके पकेमे लगेहुए पारेको निहालकर इयके समभाग गन्ध-
को नीचे कर रस पहिलेकी तरह दमरूपक बनाय ४ पहर्
की आंच देकर पारेको उड़ावे । इसपारेके ४ भाग, शुद्धगन्धके
८ मा., कांचशीतह चमकदार सन्ध्य २ भाग लेकर नीलरूपे
कजलीबनाय सफेदकोयल और तिनलीके रसोसे ३-३ रोज
मर्दनकर गोलाबनाय घरायगन्धुमेमे बन्दर कपडोमे लालकर
इन्हीके रसोमे सुतावे । इतीप्रकार भट्टरडेया कपीरह मारकगोके
रसोमे सुतावे और मर्दनकर गरमकरे । ऐसे जरउक पाता
अमित्पायी न होजाय तबतहकरे । अमित्पायी होनेपर निका-
लकर रसछोडे । इसको तत्तद्रोगहरातुगाननेपाय देनेमे यह
गमस्तोगोको नष्टकरताहे ॥ १४ ॥

✓ १५ योगवाहकरसः (तृतीयः)

रसस्य तुष्यभागेन तापशुष्णं प्रकल्पयेत् ।
जम्बीरोत्पद्रये मर्षं दिनान्ते तत्समुद्धरेत् ॥ १३ ॥
पक्षे पक्षेष्टिकायन्त्रे तुल्यं गन्धेन पाचयेत् ।
एयन्तु पशुष्णं यावत्कार्यं गन्धकजारणम् ॥ १४ ॥
पायाणमेदिमत्स्यादांशुद्वयेः विष्टन्तु मर्दयेत् ।
तत्रोलं यष्टेपद्रवे कन्के पायाणमेद्वज्ज ॥ १५ ॥
मात्स्यपाश्वाद्य घनालेवं कृत्वा पातनयन्त्रके ।
स्येद्वेषाममाप्रन्तु रसोऽयं योगवाहकः ॥ १६ ॥
गुञ्जादयं प्रदातार्यं हिष्भायस्ययोग्यासजित् ।
द्वारांश्च विषेष्टाऽन्तु सङ्कलर्यं कणायकम् ॥ १७ ॥

र. को. र. क. र. मृ. र. वा. र. रा. सो न. दिवादान् ।

भाषा—कोरिचिचमरान नीलीकजली निमन्थय, गरम
रसो — "इतत् कन्कबन्धुनेकच" वयुत्तं गलेपिष्टम् । इनेनका-
लानुसृत्य सोः कृतेन कान्ते ० कन्क" तात्तं विरे इत्तं कन्क-
कायकम् । ऐतत्तं इत्तं कन्की गोलाबनी सिधिलेत् ॥ शिरोर
त्त कोहुनेके बनेसुती सिधत्त ॥ लयः शिन्तु कृत्वात्तं कन्क
शिरोरत्तं कन्की गोलाबनी गुलाबगन्धि रसोः ४ मा. इत्तं कन्क-
काः शुद्धं कन्कपुत्रे ॥ लीकजलीके रसोः विरेकजन्कन्क" इति ।

भाषा—रसयोग हृदयमेमे हृदयपुष्पं चतुर्षु दिशांकर
त्रयोदशे रसमे एकोत्र मर्दनकर लोकीबनाय कपीरह मरकारके
बनेमे कोरकर लोकी बरके शि ८ अहा लोकी और १
कजिन्ध धोके कोहुनेकेके किनी लीकजलीके रसोः लोकीके

इतनागदरा रागा बनावे कि जिनमे पारदपिष्टीकी पेटनी आवा-
नीये रहके और नीचे कर चतुर्षु दिशांकर गन्धकापुष्पोंके रहके ।
फिर इत्यरुहेको सोप अपना पत्थरकेबुनेये पोतापर सुतावे और
पोलीसे चतुर्षु दिशांकर गन्धक नीचे तथा ऊपर देकर पोलीको
रसादे । इसपारेके ऊपर घोड़ेकेगुत्के आधाका लम्पा ठोका
रसकर छोटे २ जललीकगडोके चुकके जमाकर इतनी आंचे
जिनमे कि हटेने अन्दरका गन्धक जलवाय पर पाता न उडे ।
स्वातशीकलहोनेपर निहालकर रसछोडे इततह १२ बार आंच
देकर पशुष्णगन्धकजारणकरके पायाणमेद और मत्स्यपाशके
रसोसे १-१ रोज मर्दनकर गोलाबनाय पूर्वकर पातत्र
कपडेमे रस कपडेकोरोंये लपेटकर गोली बनाले । १४ गोलीपर
पायाणमेदके कन्कका आषाभहुल लेवेदेकर एकराहा लने
फिर मत्स्यपाशिकालेय देकर गुत्ताय दमरूपकमे रसाह ६-१
कपामिटीमे मुंह बन्दकर एकराहक मन्थामि देकर स्येदिताह ।
स्वातशीकलहोनेपर निहालकर रसछोडे । इसमेमे २-२ लोकी
माथा कुत्थीमेलेहुए दममूलकेकाड़ेमेपाय देनेमे दिवशी रस-
भा और श्वातको यह नष्टकरताहे तत्तद्रोगहरातुगाननेपाय देनेमे
यह गमस्तोगोको नष्टकरताहे ॥ १५ ॥

✓ १६ योगवाहकरसः (चतुर्थः)

मूत्रं तापत्रं कान्तपायाणगन्धं
कापांसादियफायतो यामरैकम् ।
घर्षेत्पश्चात्पाचनारूपे च यत्रे
शीत्येषामे यदातः पाचयेत् ॥ १८ ॥
ताप्रे लसं नागपह्नीगुदुक्षी-
नीरे मूत्रं मर्दयेत्कासरैकम् ।
उक्तः मूत्रो योगयाहोऽस्य यत्तं
द्वारांशुपूतमागेन मूत्रम् ॥ १९ ॥

र. दी., गरोगोपाधिष्टो

भाषा—इत्तया, ताप और कान्तपायाणगन्ध, एता-
न्यत्र तव शयभाग लेखर नीलरूपकजलीकर कपडकोरोंके
कपापुसे १ रोज मर्दनकर गोलीबनाय इतकेबाबर हृदय-
पत्रके सन्धुमेमे बन्दर ४-५ कपामिटी देकर सुतनेत हात
रखेमे एकोत्र कन्क अमिमे पकावे । इतकीकलहोनेपर
निहालकर ताँकेगन्धुमेमे लगेहुनापरी गोलीकेगाय देकर
मायाणमेद और मत्स्यपाशके रसोसे १-१ रोज मर्दनकर १-१
लोकीके लोतिका बनाकर रसछोडे । इसमेमे १-१ लोकीके रस-
मेमेपाय देनेमे यह गमस्तोगोको नष्टकरताहे ॥ १९ ॥

१७ योगवाहकरसः

रसं दूतुनी तापगन्धं समानं
महातराशौ चर्ष्यादिसमं ।
दिवाशियानेदि मिर्षं विद्वरोयं
मुदे दृशित्पाशऽय योग्यायकम् ॥ १०० ॥

महाघातहारी क्षुधादीप्तिकारी
समस्ताऽऽमये योगवाही प्रदिः ।

प्रसृतस्त्रियां बालकानां कृशानां
महाध्याधिविध्वंसनोऽयं रसः स्यात् ॥१०१॥

१. सि., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, हरिताल और गन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर खौलताहुआपानी देताहुआ २२ रोजतक निरन्तर मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह भयङ्कर व्याधियोंको नष्टकरताहै । प्रसूता स्त्री, बालक और कृश इनके भयङ्कररोगोंको दूरकरताहै ॥ १०१ ॥

१८ योगसारचूर्णम्

द्राक्षाऽभयात्रुटिकणाशट्टिचिश्चभार्गी-
शृङ्गीनिदिग्धिकयुताः पृथगेकभागाः ।

भागद्वयं सुसृततीक्ष्णभयञ्च चूर्णं
चत्वार एव जतुनोऽद्रिमवस्य भागाः ॥१०२॥

सर्वं विचूर्ण्य मधुना धरणाभिमितं त-
त्त्वादेभिहन्ति खलु पञ्चविधञ्च कासम् ।

श्वासं क्षयं कफसमीरणसम्भवाञ्च
रोगांस्तमांसि सधितेषु सुदृष्टमेतत् ॥१०३॥

यो. म., हिक्कायायाम् ।

भाषा—द्राक्ष, हरे, इलायची, पीपल, कचूर, सोंठ, भारङ्गी, काकड़ासींगी, मेढासींगी, भट्टकटिया येसब १-१ भाग, लोह भस्म २ भा, शिलाजीत ४ भागलेकर बारीकपीसकर ४-४ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ सुबहरान देनेसे पावप्रकारकी खासी, क्षास, शय, कफरोग और हिचकीप्रवृत्ति दु साध्य वातरोग इनसबको यह इततरह नष्टकरताहै जैसे सूर्य अन्यकारको । यह कईबारका अनुभूतहै ॥ १०३ ॥

✓१९ योगसाररसः

मृतं गन्धं विपं ताद्रमसम् नेपालतालके ।
क्षारत्रयं पटोलञ्च पञ्चकोलं सरामठम् ॥ १०४ ॥
शुद्धं चूर्णं समालोढ्य जम्बीराम्बेन मर्दयेत् ।
लग्नस्य कपायेणाऽप्यक्षेत्रेन रसेन च ॥ १०५ ॥
ताम्बूलवह्नीनिर्गुण्डीमातुलुङ्गाद्रिकद्रवैः ।
ततश्च घटिकां मापमात्रां कृत्वा प्रयोजयेत् ॥ १०६ ॥
सविगुल्मेषु शूलेषु श्वासकासोदरेषु च ।
आनाहं चाऽप्युदायते सखिपाते च दायेषु ॥ १०७ ॥
योगसाररसो ह्येष जातुफर्णेन निर्मितः ।
उदायते समभ्यज्य स्विन्नग्राग्नमुपाचरेत् ॥
आनाहं च तथा कार्यं घस्या घत्याश्च कर्मणा ॥१०८॥
४. रा., गुले चले च ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग, ताम्रमन्म, शुद्धजमालगोटा, रसमाणिक्य, सखी, सुहागा, सबशार, पटो-
लपत्र, पञ्चकोल, मुनाहॉग, शङ्खभस्म सब समभागलेकर बारीक-
चूर्णकर जम्बीरी, लहसुन, बहेड़ा, पान, संभाल, धिजोरा, मद्-
रस इनके रसोंसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकी गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ
देनेसे सबप्रकारके गुल्म, द्यूल, खास, कास, उदररोग, आनाह,
उदायते, प्रकण्डसन्निपात इनको यह नष्टकरताहै । उदायतेमें
बातइतलीसे समस्तअन्नमें मालिशकारके स्वेदनकरे । आनाहमें
वस्ति और वतियोंका प्रयोगकरे ॥ १९ ॥

२० योगसाराऽन्नकम्

कणाशिलोद्रेक्समानमन्नं

विलीढमाज्येन पयोऽनुपानम् ।

निहन्ति यक्ष्माणमपि प्रवृद्धं

ससैन्यमेवाऽन्नं न चिप्रमस्ति ॥ १०९ ॥

लो ५, यक्ष्मरोगे ।

भाषा—पीपल और शिलाजीत १-१ भाग, अन्नकभस्म
२ भागलेकर सबको इत्रा घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३
रती धीके साथ सेवनकर गरमदूधपीनेसे अत्यन्तबडाहुआ
उपद्रवसहित राजयक्ष्म नष्टहोताहै । इसमें सहाय नहीं करना २०

२१ योगामृतोरसः

शुद्धसूतपलान्यष्टौ शुद्धं ताम्रं पलद्वयम् ।
चूर्णितं सूतकं मयं कुर्यात्तन्नप्रतिष्ठिकाम् ॥ ११० ॥
शुद्धं गन्धं द्विद्विपलं तनुल्यं कटुतेलकम् ।
तयो मध्ये ताम्रपिष्टौ लोहापत्रेऽप्यग्नद्विना ॥ १११ ॥
पंचेद्यावद्रव्यं जीर्णं समुक्ष्य विचूर्णयेत् ।
विपं पचा व्युपगन्तुं तुल्यं मुस्ताविडङ्गकम् ॥ ११२ ॥
विपस्य विगुणं योज्यं सर्वमेकरु चूर्णयेत् ।
सर्वं सूतसमं चूर्णं शौण्डिमिथं घटीकृतम् ॥ ११३ ॥
द्विगुणं भक्षितं हन्ति प्रसुप्तिं मण्डलं तथा ।
गुडेन भक्षितो हन्ति सर्वकुष्ठानिरुन्तनः ॥ ११४ ॥
१. का, कृशाधिकारे ।

भाषा—८ पल शुद्धसूतेमें २ पल शुद्धताम्रका चूर्ण मिला-
कर ४ पद मर्दनकर बहुत बारीक कपमें रखकर गोभीबनाले ।
फिर शुद्धगन्धक २ पल कड़ाहीमें विछाकर पोल्नीरस २ पल
गन्धक उपर रखकर दवादे । ऊपरसे कड़ातेल ४ पल डालकर
बहुतमन्दआँधले पकावे । द्रवसूयमानेपर उतारकर रखले ।
स्वाह्नरातिलरोगेपर ऊपरसे गन्धकको सुरबद्ध ताम्रपिटीका
बारीकचूर्णकर शुद्धबछनाग, बच, त्रिदण्ड १-१ भाग, नगरमोषा
और विडङ्ग ३-३ भागलेकर बारीकचूर्णकर चूर्णकपिटीमें सम-
भागने मिलाकर मधुकेसाथ घोटकर २-२ रतीभी गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शुद्धकेसाथ देनेसे दृग्-
गात्रता और मूत्रस्तादि समस्तदुष्टोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१ ॥

२२ योगीरसः (त्रिमूर्त्यादिः) (प्रथमः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं चतुर्भागं सूताऽन्नकम् ।
 निर्गुण्डीकारवल्लीभ्यां धुन्नाऽऽद्रकचिन्केः ॥ ११५ ॥
 गिरिकर्णाजयन्तीभ्यां तिलपर्ण्या भृङ्गराजकैः ।
 कार्पासीकाञ्चनीदन्तीकदम्बकेदारारजैः ॥ ११६ ॥
 मर्दयित्वा तु तच्छुष्कं कटुतेलेन सेचयेत् ।
 शरावसम्पुटे रुद्धा वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ ११७ ॥
 स्वाङ्गशीतलमादाय हेमभस्म तु तारकम् ।
 नागवह्नी पञ्चपट्टं त्रिद्वारं हिङ्गुलं समम् ॥ ११८ ॥
 पूर्येद्वालुकालयन्त्रे त्रियामं पाचयेत् दृढम् ।
 स्वाङ्गशीतलमारुण्य विषं पादमिते क्षिपेत् ॥ ११९ ॥
 वह्नीजपञ्चभागांश्च पञ्चपित्ते विभावयेत् ।
 नानाऽनुपानैः संयुक्तं रेणुमार्यं प्रयोजितम् ॥ १२० ॥
 साध्याऽसाध्यांश्च दोषांश्च सर्वरोगान्विनाशयेत् ।
 सर्वशास्त्राऽनुसारेण योगीरस उदाहृतः ॥ १२१ ॥
 र. क. यो., सर्वरोगेषु ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धगन्धक २ मा., अन्नक-
 भस्म ४ भाग लेकर नीलवर्णः चालीकर संभालू, करेला, धमूरा,
 अदरक, चिपक, कोयल, जैती, हुरहुर, भंगरा, कपासकेफूल,
 हल्दी, दन्तीमूल, कदमकेफूल, कालाभंगरा इनप्रत्येककेरसोसे
 १-१ रोज मर्दनकर मुग्गकर कटुतेलेसे मर्दनकर गोलाबनाय
 चारहकरसेमें पोट्टी बनाय ३-४ कपडमिठी लगादे ।
 सूपनेपर शरावसम्पुटेमें बन्दर २-३ कपडमिठी लगाकर
 मुत्ताय वालुकायन्त्रमेर ४ पहरेकी मन्द अग्निमें पकावे ।
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्ण, रजत, नाग और वज्र
 इनकीभस्में, पाचोनमक, सवी, मुद्गाभा, यवभार, सिंगरिफ
 येवप मिलकर समभागमें मिलाकर पूर्वदोसे १-१ रोज मर्द-
 नकर तेलेसे पूर्वगत् गोलाबनाय शरावसम्पुटेमें बन्दर वाउ-
 कायन्त्रमें तीनपहरकी कड़ीआंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निफा-
 लकर इससे चतुर्थांश शुद्धवचनाग और ५ भाग मरिच मिला-
 कर ५ पिठोसे १-१ रोज मर्दनकर मुत्ताकर रगछोड़े । इसमेंसे
 रोगकेबीजवराकर नात्रा समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह
 ग्राह्य अथवा असाध्य समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२ ॥

२३ योगेन्द्ररसः

विशुद्धं रससिन्दूरं तद्द्वन्द्वं शुद्धहाटकम् ।
 तत्समं कान्तलोहञ्च तन्ममञ्चाग्रमेव च ॥ १२२ ॥
 विशुद्धं मौक्तिकञ्चैव यद्गञ्ज तन्समं मतम् ।
 कुम्भारिफारस्य मौल्यं धान्यराशी दिनप्रथमम् ॥ १२३ ॥
 तन्नो गतिद्वयमितां घटीं कुर्याद्विचक्षणः ।
 योगवाही रसो दोष सर्वरोगवृत्त्यान्त्रकः ॥ १२४ ॥
 घातपित्तभयान् रोगान् प्रमेहान्पशुमुप्रताम ।
 मूत्रापातमपस्मानं भगन्दरुमुदाभयम् ॥ १२५ ॥

उन्मादमूर्च्छं यस्मान् पक्षाघातं हृतेन्द्रियम् ।
 शूलाऽम्बुपित्तकं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२६ ॥
 त्रिफालारसयोगेन शुभया सितयापि वा ।
 भक्षयित्वा भवेद्रोगी कामरूपी सुदर्शनः ॥ १२७ ॥
 रात्रौ सेव्यं गवां क्षीरं रुद्रानाञ्च विशेषतः ।
 योगेन्द्राख्यो रसो नाम्ना कृष्णात्रेयविनिर्मितः ॥ १२८ ॥
 मै. र., घ., नातन्याध्यधिकारः ।

भाषा—रससिन्दूर १ भाग, सुवर्ण, कान्तलोह, अन्नक,
 मोती और वज्र इनकीभस्में आधा आधामाग लेकर एररोज
 घीकुआरके रसमें मर्दनकर गोलाबनाय एण्डके पत्तोंमें लपेटकर
 कच्चे दोरेसे बांधकर धान्यराशिमें तीनरोजतक रक्ते । चौथेरोज
 निकालकर २-२ रतीरी गोलियां बनाकर छायाशुक्कर रग-
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगान्स्थोचितानुपानकेसाय देनेसे
 वातपित्तजरोग, प्रमेह, बहुमुत्रता, मूत्रापात, अपस्मार,
 भगन्दर, शुद्धरोग, उन्माद, मूर्च्छा, राजयक्ष्म, पक्षाघात,
 इन्द्रियोकी कमजोरी, शूल, अम्बुपित्त इत्यादि समस्तरोगोंको
 यह नष्टकरताहै । त्रिफलास्वरस अथवा शकरकेसाय द्रवका सेवन
 करनेसे मनुष्य कामरूपी होजाताहै । कमजोरीको रात्रिमें एक-
 गोली देकर गायकाद्रूप पिलानाचाहिये ॥ २३ ॥

२४ योगेश्वररसः

सूतकं गन्धकं लौहं नागञ्चापि घटाटिकायम् ।
 ताम्रकं घृह्णभस्मापि व्योमकञ्च समांशकम् ॥ १२७ ॥
 मूत्रमैलापत्रमुस्तञ्च विडङ्गं नागकेसरम् ।
 रेणुकाऽऽम्बलकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ॥ १२८ ॥
 एगञ्च द्विगुणं भागं मर्दयित्वा प्रयत्नतः ।
 भायता तत्र दातव्या धात्रीफलरसेन च ॥ १२९ ॥
 मात्रा चणकतुल्या च गुट्टिकेयं प्रकीर्तिता ।
 अदमरीं बहुभूषञ्च प्रमेहं मूषरुच्युक्तम् ॥ १३० ॥
 घृणं हन्ति महाकुष्ठमशासि च भगन्दरम् ।
 योगेश्वरं रसो नाम महादिवेन भाषितः ॥ १३१ ॥
 र. चि. र. मं., र. मु., प्रमेहाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, नाग, पीसीक्षीरी,
 ताम्र, वज्र और अन्नक इनकीभस्में १-१ भाग, लोटीह्लावनी,
 पत्रज, नागरमोषा, विडङ्ग, नागधेतर, रेणुका (रोग-पहाडी),
 आंवले, पिनलामूल, देवव २-२ भाग लेकर बातीरूपमें
 पारोगन्धकी नीलवर्णः चालीमें मिलाकर आंवलेके रसकी ३-४
 भागनाएँ देकर बनेप्रमाण गोलियां बनाकर रगछोड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली ताम्रपण्डितानुपानकेसाय देनेसे पयरी, बहुमुत्र,
 प्रमेह, सुषरुच्य, नपाप्रसारेक्षण, मूत्रापात, कवागिर और
 भगन्दर इनगणको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ योगोत्तमाटी

शुष्कं त्रिफला क्षारी त्वयणान्यथ चित्रकम् ।
 तालीमं चायिकं शुद्धी निजे टे गजपिपट्टी ॥ १३५ ॥

पला त्वचं विडङ्गानि पौष्करं नागकेसरम् ।
 ताप्यं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३७॥
 यावन्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमयोरजः ।
 तावच्छिलाजतु दैवः सर्वैस्तुत्यस्तु गुग्गुलुः ॥१३६॥
 सङ्घृष्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।
 खादन्ना मधुना युक्त्या तांयक्षीररसाशनः ॥ १३७ ॥
 निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वैर्तुषु निरत्ययम् ।
 अशीति वातजात्रोगांश्चत्वारिंशच्च पित्तकान् ॥१३८॥
 विंशतिं श्लेष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विंशतिम् ।
 उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयंशुं पवनात्मकम् ॥ १३९ ॥
 विंशतिं सूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीव्रणानि च ।
 हन्यथादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥
 फासं श्वासं तथा हिकं हृच्छूलं छद्यरोचकम् ।
 गुल्मांश्च पाण्डुरोगश्च ज्वरप्रकारजम् ॥ १४१ ॥
 चत्वारो ब्रह्मणीदोषाः पट्टशंसि तथैव च ।
 सर्वास्ताशाशयत्याशु तप्तः सूर्योदयो यथा ॥ १४२ ॥
 तथाऽर्बुदं गण्डमालां विद्रधिं सभगन्दरम् ।
 हस्ते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनि र्थथा ॥
 योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यप्रजिता ॥ १४३ ॥

ग नि., यो. म., सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, सजी, यक्षोर, पाचोन्नमक,
 चित्रकमूल, तालीसपत्र, चव्य, कांजरासीगी, मेढासीगी, हल्दी,
 दाहहल्दी, गजपीपल, इलायची, सज, विडङ्ग, फेहहरसूल,
 नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अन्नमोद, नागसोधा येसत सम-
 भाग, इनसवकीबराबर लोहमस्र और शिलाजीत, इनसवकी-
 बराबर शुद्धगूललेकर योगराजपुगलकीविधिसे १-१ तोलेकी
 गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय
 खाकर जल, दूध, अथवा मांसरसलेवे । मूत्रलगनेपर यद्ये
 भोजन करे । यह सब ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै । इसकीमात्रा
 मूत्रमें १ तोलेकी लिखीहै पल्लु वह सबकेलिये अनुकूल नहीं
 होसकी । इसलिये ४ माशेकी गोलियें बनाकर मुटिकलसे
 इस जमानेमें चलनेकी इतलिये २-२ माशेकी गोलियें
 बनाकररक्ते । इसकेसेवनसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग,
 २० श्लेष्मरोग, २० प्रमेद, ८ उदररोग, वातप्रधानमूत्रज, २०
 मूत्रहन्त्र (मूत्रापातकी मिलाकर), दुष्टनाडीव्रण, ८ इड, ५
 धातुशय, ५-५ प्रकारकेफास, आस, हिककी, हृच्छूल, वमन,
 अक्षि, गुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीमहणी, ६ बवागौर, अर्बुद,
 गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसवकी यह इनतरह नटकरताहै
 जेगे सूर्योदय तककी और इन्द्रकावज्र शशोके ॥ २५ ॥

२६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कांस्थं मृतञ्चाऽन्नं गन्धतुल्यं पुटेः पचेत् ।
 सिद्धं शुजात्रयं खादेषानिदोषं व्यपाहति ॥ १४४ ॥
 ना. वि, योनितोने ।

भाषा—कास्थ और अन्नकभस्र १-१ भाग, शुद्धगन्धक
 २ भाग लेकर रक्तोषक महामञ्जिष्टादिप्रभृतिद्रव्योंसे १०-२०
 पुटदेकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती योनिदोषहरानुपानके-
 सायदेनेमें और निम्बककल्केमें मिलाकर अन्दरलेपफरनेसे योनि
 कन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

२७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताप्त्रे वा कृत्वाऽऽदी भस्मसूतकम् ।
 युक्त्या क्रमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५ ॥
 यो. म., रसेन्द्रमं., क्षीरोगधिक्कारे ।

हिं—“मृतं सत् सत् ताम्र विद्याशारागुनानिदम् । भावयेद्ब्रह्म
 वेन्माष मुशलीचाऽर्द्धकद्वैव ॥ अनुपान श्लेक्षित्य वपुःशुभ्रदान्त्ये ॥”
 इति योगमहाश्वेयै चलाधिरारे पाठोऽस्ति तत्त्वाऽप्यनैवान्तर्भाव वर
 नीय । विशेषभावनाऽनुपानान्तु कृतमपि गुणावहमेव सम्पत्त्ये, अनु
 पानानि तु सर्वैर्ज्वाऽनिलिखतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें
 अथवा सबमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके-
 साय देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै । इसमें यदि गन्धक-
 केसाय पारदभस्म मिलाई हो तो ३ रसीतककीमात्रा देसकेहै
 यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाय मिलाई हो तो २ रसीकी
 मात्रा समतनी । निम्बककल्केसाय मिलाकर लेपभी करसकेहै २५

२८ योपिडुलभरसः

सिन्दूरमन्नं रौप्यञ्च वैकान्तं हेमदङ्गणम् ।
 धराम्भसा भावयित्वा बहुमात्रा घटीश्चरेत् ॥ १४६ ॥
 योपिडुलभनामाऽयं रस्तोऽण्डाधारसम्भयान् ।
 निहन्ति निखिलाप्रोगान् हृयंशो हरिणानिन् ॥ १४७ ॥
 आ. वि, अण्डाधारगदाधिकारे ।

हिं—अण्डाधारगत्स लक्षणानि—“उदराम्भसा कृच्छ्रा मूत्र-
 स्वात्तरफले । ज्वराऽरोचरदृशता अरति र्भैर्यशुष्य ॥ पननी बेणिनी
 छदा जिह्वा रक्तोन्मूल तथाअण्डाधारदरैका प्रोषा काइशयी कुपे ॥”

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक, रजत, वैकान्त और सुवर्णभस्म,
 शुद्धमहागा सब समभाग मिलाकर २-३ रोज त्रिपुल्यानेजपमें
 भावनादेकर ३-३ रसीकी गोमयकी बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे
 १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे श्रियोके समस्त-
 रोगोंको यह इयतरह नष्टकरताहै जैसे सिंह मृगोंको ॥ २८ ॥

२९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तनुटारः)

गुग्गुपारदवलप्रयालकं हेममाक्षिकमुजङ्गरङ्गम् ।
 मारितं सफलमेतदुत्तमं भाष्येषथ पृथगथ द्रव्येतिश ॥
 चन्दनस्य वमलस्य मालतीकौरकस्य वृषपल्लवस्य च ।
 धान्यधारणकशाशतावरिशात्मलीयटजजगुद्रविभिः

रक्तपित्तकुलकण्डनानिघो
 जायते रसधराऽन्नपित्तनाम ।
 प्राणदो मधुघृषद्वयं
 मेयितस्तु यत्पुरणलं मतः ॥

पला त्वचं विडङ्गानि पौकरं नागकेसरम् ।
 ताप्यकं दीप्यको मुस्ता समभागानि कारयेत् ॥१३५॥
 यावन्त्येतानि द्रव्याणि तावन्मात्रमथोरजः ।
 तावच्छिलाजतु दैव्यः सर्वैस्तुल्यस्तु गुग्गुलु ॥१३६॥
 सङ्कृष्ट्य गुटिकां कुर्यादक्षमात्रप्रमाणतः ।
 खादेषा मधुना युक्त्या तोयशीररसाशनः ॥ १३७ ॥
 निर्यन्त्रितं सदा भोज्यं सर्वतुर्पु निरत्ययम् ।
 अशीर्तिं वातजाप्रोगांश्चत्वारिंशच्च पैत्तिकान् ॥१३८॥
 विशर्तिं श्लेष्मिकांश्चैव प्रमेहांश्चैव विशर्तिम् ।
 उदराणि तथा चाऽष्टौ श्वयथुं पवनात्मकम् ॥ १३९ ॥
 विशर्तिं मूत्रकृच्छ्राणि दुष्टनाडीम्रणानि च ।
 हन्त्यष्टादश कुष्ठानि सप्त चैव महाक्षयान् ॥ १४० ॥
 कासं श्वासं तथा हिकामां हृच्छूलं छद्यरोचकम् ।
 गुल्मांश्च पाण्डुरोगञ्च जयेत्पञ्चप्रकारजम् ॥ १४१ ॥
 चत्वारो प्रहणीदोषाः पडशीसि तथैव च ।
 सर्वास्ताप्राशयत्याशु तमः सूर्योदयो यथा ॥ १४२ ॥
 तथाऽसुदं गण्डमालां चिद्रधिं सभगन्दरम् ।
 हरते सर्वरोगांश्च वृक्षमिन्द्राशनं रथ्या ॥
 योगोत्तमेति विख्याता गुटिका वैद्यपूजिता ॥ १४३ ॥
 ग नि, यो म, सर्वरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, सजी, यवशीर, पार्वीनमक
 चित्रकमूल, तालीसपत्र, चव्य, काकड़ासींगी, मेंढासींगी, हल्दी
 दासुहल्दी, मज्जीपल, इलायची, तन, विडङ्ग, मोहरकमूल
 नागकेशर, शुद्धसोनामाखी, अजमोद, नागरमोथा येसव सम
 भाग, इनसवकीबराबर लोहभस्म और शिलागैत, इनसवकी
 बराबर शुद्धगुलकेकर योगराजगुलकीविधिसे १-१ तोले
 गोलिया बनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसा
 खाकर जल, दूध, अथवा मासरसलेवे । भूखलानेपर यथा
 भोजन करे । यह सब ऋतुओंमें अनुकूल पड़ताहै । इसकीमात्र
 मूलमें १ तोलेकी छिलीदे पण्टु वह सबकेलिये अनुकूल नह
 होसकी । इसलिये ४ माशेकी गोलियें बनाकर मुश्किल
 इस जमानेमें चलसकेगी इसलिये २-२ माशेकी गोलि
 बनाकररखे । इसकेसवनसे ८० वातरोग, ४० पित्तरो
 २० श्लेष्मरोग, २० प्रमेह, ८ उदररोग, वातप्रधानमूत्रन,
 मूत्रकृच्छ्र (मूत्रापातको मिलाकर), दुष्टनाडीम्रण, १८ कुष्ठ
 पातुक्षय, ५-५ प्रकारकेकास, श्वास, हिचकी, हृच्छूल, वम
 अश्वि, गुल्म, पाण्डुरोग, ४ प्रकारकीप्रहणी, ६ ववासीर, अ
 गण्डमाला, विरधि, भगन्दर इनसवको यह इस्तरह नष्ट
 जैसे सूर्योदय तमको और इन्द्रकावज हवाको ॥ २५ ॥

२६ योनिकन्दोन्मूलनरसः

मृतं कास्यं मृतञ्चाऽत्रं गन्धतुल्यं पुटैः पचेत् ।
 सिद्धं शुजात्रयं खादेद्योनिदोष व्यपोहति ॥ १ ॥
 ना. वि, योनिरोगे ।

भाषा—कास्य और अत्रकभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक
 २ भाग लेकर रक्तशोधक महामञ्जिष्टादिप्रशुतिकार्योंसे १०-२०
 पुटदेकर रखओगे । इसमेंसे ३-३ रती योनिदोषहरानुपानने
 पायदनेसे और निम्बवल्कलमें मिलाकर अन्दरलेपरनेसे योनि
 रुन्दादि समस्तरोग दूरहोतेहै ॥ २६ ॥

२७ योनिदोषहरोरसः

गन्धे वा तारताम्रे वा कृत्वाऽऽदौ भस्मसूतकम् ।
 युक्त्या कमे प्रयोक्तव्यं योनिदोषविनाशनम् ॥ १४५ ॥
 यो म, रसेन्द्रम, स्त्रीरोगाधिकारे ।

टि०—“युत यत मृत ताम्र चित्राक्षाराम्नुनादिनम् । भावयद्गुह
 येनाप मुचलीचाऽऽदिक्रये ॥ अनुपान स्थितिवत् कारकशुभ्रशान्तये ॥”
 इति योगमहाविषे द्वाधाधिकारे पाठोऽस्ति तस्याऽप्यवैवातमर्वा वर
 णीव । विशेषभावनाऽनुपानानु कृतमपि युगावहमेव सम्पत्स्यते, अत
 पानानि तु सर्वदेवाऽनिल्यतानि भवन्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक, रजत और ताम्रभस्म इन एकएकमें
 अथवा सचमें समभाग पारदभस्म मिलाकर योनिदोषहरानुपानके
 साथ देनेसे यह योनिरोगोंको नष्टकरताहै । इसमें यदि गन्धक-
 बेसाध पारदभस्म मिलाई हो तो ३ रतीतककीमात्रा देसकेहै
 यदि रजत अथवा ताम्रभस्मकेसाथ मिलाई हो तो २ रतीकी
 मात्रा समझनी । निम्बवल्कलेसाथ मिलाकर लेपभी करसकेहै २७

२८ योपिद्मभरसः

सिन्दूरमम्रं रोप्यञ्च वैकान्तं हेमटङ्गुणम् ।
 वराभसा भावयित्वा बहुमात्रा वटीश्चरेत् ॥ १४६ ॥
 योपिद्मभनामाऽयं रसोऽण्डाधारसम्भवान् ।
 निहन्ति निखिलाप्रोगान् हर्षयन्ते हरिणानिव ॥ १४७ ॥
 आ वि, अण्डाधारगदाधिकारे ।

टि०—अण्डाधारगदस्य लक्षणानि—“उदरोन्वया कृच्छ्रा मूत्र
 स्वाथत्वरक्तौ । ज्वराऽपचिकहलासा भरति बेलसशुष ॥ धमनी वेगिनी
 शुद्रा गिह रक्तोन्वला तथा।अण्डाधारगदस्यैवा भोक्तुं शक्यते शुभे ॥”

भाषा—रससिन्दूर, अत्रक, रजत, वैकान्त और सुवर्णभस्म,
 शुद्धगुहागा सब समभाग मिलाकर २-३ रोज त्रिफलाकेकापसे
 भावनादेकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखओगे । इसमेंसे
 १-१ गोली समयोचितानुपाननेसाथ देनेसे जियोंके समस्त
 रोगोंको यह इस्तरह नष्टकरताहै जैसे सिंह मृगोंको ॥ २८ ॥

२९ रक्तपित्तकुलकण्डनरसः (रक्तपित्तजुटारः)

शुद्धपारदवलिप्रवालकं हेममाक्षिकमुजङ्गरङ्गकम् ।
 मारितं सकलमेतदुत्तमं भावयेच्च पृथगथ द्रवैस्त्रिधा ॥
 चन्दनस्य कमलस्य मालतीकोरकस्य वृषपपुण्ड्रस्य च ।
 धान्यवारणकणाशातावरीशास्मलवीवडजटागुडचिभिः
 रक्तपित्तकुलकण्डनाभिधो
 जायते रसरतोऽत्रपित्तानाम् ।
 प्राणदो मधुसुपद्रवैरयं
 सेविनस्तु वसुकुण्डलो मतः ॥

नाऽस्त्यनेन सममत्र भूतले
भेपजं किमपि रक्तपित्तिनाम् ॥ १५० ॥

नि. र., घृ. यो. त., र. सु., र. क. ल., रसायनं., र. चं., र. कौ., यो. त., यो. र., चि. क., र. का, वै चि, रक्तपित्ते । वै. चि, यो. र., र. सु., नि. र. रक्तपित्तकुठारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक, नाग और वज्र इनकी भस्में समभाग लेकर नीलवर्ण कञ्जलीकर सफेद चन्दन, कमल और मालतीके फूल, अङ्गुमेके पत्ते, धनियां, गजपीपल, शतावर, सेमलकामुसला, बटहीजटा और गिलोयके यथाशुभवस्वरूप अथवा हाथोंसे ३-३ भावनाएं देकर ८-८ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली अङ्गुमेके रस और मधुके साथ देनेसे यह रक्तपित्तको जड़से नष्ट करता है । रक्तपित्तके लिये इसकी बराबर और कोई दवा नहीं है इसलिये रक्तपित्तके रोगियोंके लिये यह प्राणप्रद है ॥ २९ ॥

३० रक्तपित्तप्रमेहहारीरसः ।

खल्वे समादाय विशुद्धसूत-
कर्पञ्च रक्तस्य घटोद्भवस्य ।
प्रसूननीरेण च सत वारा-
न्वासारसेनाऽपि च तावदेव ॥ १५१ ॥
द्वारसेनाऽपि च तद्वदेव
चारान्विमर्शाऽप्यथ द्रुणञ्च ।
द्विनिष्कनात्र खदिरस्य साऽ-
कर्पप्रमाणञ्च शिबञ्च चन्द्रः ॥ १५२ ॥
तुल्यः पुनश्चन्दनचारिणाऽपि
सन्मये कुयाञ्च हरेणुत्वान् ।
छायाविशुष्काञ्च यदा प्रसुज्य
मेहाज्येदाद्रिकानोररुण्डैः ॥
नरक्तपित्तां पिटिकाञ्च हन्या-
त्यनेहजान् श्रातरले मनुष्यः ॥ १५३ ॥

वि. न., रक्तपित्ते प्रमेह च ।

भाषा—एकफेरे शुद्धपाराके अग्न्येव डालकर, जड़के पत्ते, सफेद वज्र इनके रसोंसे ७-७ बार मर्दनकर सुमाछाना ८ भाग, शैलास, सफेद चन्दन और कपूर १-१ रूप डालकर चन्दनके साथसे ७ दिन मर्दनकर मध्य घरावर गोलियां बनाकर छायाविशुष्क रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली अङ्गुमेके रस और मधुके साथ मिलाकर प्राण काल खानेमें प्राणियोंके नाशिनक पान और प्रमेहको यह नष्ट करता है ॥ ३० ॥

३१ रक्तपित्तशामकः ।

पद्मचर्जाणि नरेण हेम-
माञ्जीकमस्त विगुणं प्रमुष्टन ।
पित्ताऽप्यरोगोपदानाय नैव्यं
धानाऽस्तुना माञ्जीकमिधितेन ॥ १५४ ॥

रसायनतार, रक्तपित्ते ।

भाषा—पद्मपत्रगन्धकजारितपारा (रससिन्दूर) १ भाग, सुवर्णमाक्षिकमलम २ भाग लेकर अङ्गुमेके पत्तोंके रससे २-४ दिन घोटकर रखडोढ़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककी मात्रा अङ्गुमेके पत्तोंके रस और शहदके साथ देनेसे यह रक्तपित्तको नष्ट करता है । ३१ ॥

३२ रक्तपित्तहरीरसः (प्रथमः)

मृतं सूतं मृतं तादृं तीक्ष्णं वासारसे दिनम् ।
मर्दितं मासमात्रनु भक्षयेद्रक्तपित्तनुत् ॥ १५५ ॥
वृषपत्राणि निष्पीड्य रसं समधुशर्करम् ।
पिवेत्तेन शमं याति रक्तपित्तं सुदारुणम् ॥ १५६ ॥
र. म. मा, र. सु, ना वि., रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा, तांबा और लोहा इनकी भस्में समभाग लेकर अङ्गुमेके पत्तोंके रससे एकरोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर एकतोले अङ्गुमेके रसमें ३-३ भाग मधु और शर्करा मिलाकर पीनेसे १ महीनेमें घोररक्तपित्त नष्ट होता है ॥ ३२ ॥

३३ रक्तपित्तहरीरसः (मृगाङ्गरसः) (द्वितीयः)

कडारमायसं चूर्णं सूतेन्द्रे समचारितम् ।
लोहारिवर्गसंयुक्तं रक्तपित्तहरं परम् ॥ १५७ ॥
रसेन्द्रमं, र. सु, रक्तपित्ते ।

टि०—रत्ताजसुन्दरे “पटोलमायमचूर्णं सूतेन्द्रसमचारितम् । लोहारिमृगससुन्द्रे रक्तपित्तहरं परम् ॥” श्लोकारोपे महाभद्रतया विचारमहत्त्वैव पाठे विन्यस्त ॥ लोहारिवर्गो यथा—शिकला विशुद्धा दन्ती कडुकी तालमूला । शुद्धदारुश्च शूक्ष्मवृषपत्रकचिचक । शूक्ष्मवेदविटकी च मृगमहातकीपत्रम् । दाटिमस्य च पत्राणि शतपुत्री पुनर्नवा ॥ कुठारकामकी कन्दरसन्त्री मेकस्य पर्णिका । हस्तिवर्गपलाशश्च कुलिश केशराजक ॥ माग खण्डितकर्मथ गौगिहा शोहमारका ॥” यथा-प्रत्येभितोपधैरिग रस मर्दयित्वा प्रयोग करणीय इति रहस्यम् ॥

भाषा—युग्धुक्षित पारोमें समभागसे कडारलोहेके चूर्णको चारितकर लोहारिवर्गमें २-४ दिन घोटकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ रत्ती रक्तपित्तहरानुपानके साथ लेनेसे यह रक्तपित्तको नष्ट करता है ॥ ३३ ॥

३४ रक्तपित्तान्तःशरीरसः (पित्तमुद्रः)

पित्तमुद्रो ब्रष्टव्यः

र. च., र. र. घ., र. सु., व. रा., रक्तपित्ते ।

टि०—वसवराजीवे पित्तमुद्ररसानाम्नास्य रणे निधितोऽस्ति सत्र प्रथम-पेरुवांसे पाद्रे विशुद्धलोहञ्च अङ्गुपतनयो नयेदिति कृममलि तदो-या पाद्रे दरदशैश्च पूंन् यन्त्रेण मेलयेदिति पाठ. समीचीन ।

३५ रक्तपित्तान्तकोरसः

सूतद्विभागे धलिमाक्षिके च
शिलाजमेतत्त्रयतुल्यमस्य ।
तुल्या गुहूची हिमघान्युषात्र्यो
श्राद्धाकिरातेत्रयघटुमत्वक् ॥ १५८ ॥

वासासोद्गावितशुक्लपिष्टं
नीतं खितायष्टिमधुप्रमाणम् ।
धारोष्णदुग्धेन निवेदणीयं
पित्ताऽऽहरागं नयतेऽन्तमेतत् ॥ १५९ ॥
रसायनवार , रक्षपिते ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, शुद्धगन्धक, सुवर्णमसिक और शिलाजीत येतीनों पारेकी बराबर, मिलोय, सपेदबन्दन, पनिया, आबला, मुनक्का, चिरायता, इन्द्रजव और बुरैयाकी-छाल येसब मिलकर पूर्वगणकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर १-२ पहर शुष्कमर्दनकर अङ्गुलैकेपल्लोके रसे १-२ रोज मर्दनकर १ से २ मासोतककी गोलिया बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली शकर, सुल्हठी और मधुकेसाय चाकर जारसे धारोष्णदुग्धीनेसे उपद्रवोत्पन्नहोत यह रक्षपित्तको नष्टकरताहै ॥

३६ रक्तमाहेश्वरोरसः

मृतं गन्धं मृतं स्वर्णं रससिन्दूरकान्तकम् ।
सर्वद्विगुणमभ्रञ्च ताम्रभस्म द्विभागकम् ॥ १६० ॥
यङ्गं नागं तथा रौप्यं प्रत्येकं सूतसाम्यकम् ।
लोहभस्म त्रिभागञ्च मुण्डसिन्दूरकन्तथा ॥ १६१ ॥
सर्वे खल्वे विनिःक्षिप्य मर्दयेदतियत्नतः ।
सर्जरं यष्टिकां द्वाक्षा मधुपुष्पं शतावरी ॥ १६२ ॥
लोध्रफादभयंहीवेरपत्रकेसरपत्रकम् ।
मृणालचन्दनाशीरनीलोत्पलघनं समम् ॥ १६३ ॥
श्रीगन्धं बालकं कुष्ठं बलाशाल्मलिमूलकम् ।
रम्भाकन्दं गाशूरकं माधवी सहदेविका ॥ १६४ ॥
परूपकरुपायेण भावयेच्छतवारकम् ।
बलुप्रमाणञ्चैव शर्करामृतमाक्षिकैः ॥ १६५ ॥
भक्षयेद्धतमिथन्तु रक्षपित्तहरं परम् ।
सर्वपैतृहरो नृणां रत्नमाहेश्वरोरस ॥ १६६ ॥
ब रा , पित्तरोग ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, सुवर्णमसम, रससिन्दूर और कान्तभस्म १-१ भाग, अभ्रकभस्म १० भा , ताम्रभस्म २ भा , वज्र, नाग, रजतभस्म १-१ भाग, लोहभस्म और मुण्डसिन्दूर ३-३ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारिगन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाकर छुदारा, ब्रह्मदण्डी, सुल्हठी, द्राक्ष, महुआ, शतावर, लोध, गम्भीरीकेफल, हाऊजेर, पद्म केसर, कमलगट्टा, भसांड, सफेदबन्दन, रस, नीलोफर, नाग रमोथ, बिरोजा, गेंडुला, कुष्ठ, खरेटी, वेमलकामुसला, केलेका बन्द, गोसह, माधवीलता, सहदेवी और फाल्सा येसब १६-१६ तोडे लेकर जबकुटकर इसके १०० भाग बनाकर रखले । इनमेंसे १-१ भागसा अट्ठुने जलमें चतुर्विंशत्वारशिश्टिकाथकरे । इसकायसे ऊपरकेरसको सुखनेतक मर्दनकरे । फिर दूसरे भागको पूर्ववत् उबालकर काढाबनाय उसमें मर्दनकरसुखावे । ऐसे १०० भावनाए देकर इसरसको तैयारकरे । यद्यपि इत

रसेतैयार करनेमें बहुतदिनउपोगे परन्तु यथार्थगुणतभीहोगा । अनुकल्पसे तैयार करनाहो तो तप्तखल्वमें दशको रजकर पूर्वो-क्तद्वयो शोषणकरता जाय तो इसतरह अधिकसेअधिक एक-सप्ताहमें यह रस तैयारहोजायगा । इसकी ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली शकर, पी और मधुके-साय लेनेसे रक्षपित्त और समस्त रक्षपित्तकारोंको यह नष्टकरता है । इसमें पृत्युक्त पण्य देना ॥ ३६ ॥

३७ रक्तवातान्तरकसः

शुद्धं सूनं विपश्चात्रं गन्धं त्रिकटुकं समम् ।
चित्रमूलरुपायेण दिनं मर्द्यञ्च वासया ॥ १६७ ॥
अर्कमूलरुपायेण दिनं जम्बीरनीरकैः ।
दौलायन्त्रे पचेद्यामं मापमात्रञ्च भक्षयेत् ॥
क्षीणवातं निहन्त्याशु रक्तवातं घिनाशयेत् ॥ १६८ ॥
ब. रा., वै चि, क्षीणवाते ।

टि०—भावनाविशेषस्यलोहभस्मनद्याऽभावान्द्वितीयेकामनेनौ नाऽन्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध पारा और वज्रनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धगन्धक, त्रिकटु सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारिगन्धककी नील-वर्णकजलीमें मिलाकर चित्रककीजड़, अङ्गुला, आकबोजकी-छाल, जमीरी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा कायोंसे १-१ रोजमर्दनकरनेकेबाद उन्नीसवर्षोंसे १-१ पहर स्वेदनकर १-१ मासकी गोलियां बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली उचि तानुपानकेसाय देनेसे यह क्षीणवात और रक्तवातको नष्टकरताहै । क्षीणवात और रक्तवातकेक्षण कसवराजीयमें देखलेना ॥३७॥

३८ रक्तारिरसः

रसं गन्धं समं मर्दत्कजलीं लिङ्गिकारसे ।
काकिनारीससंयुक्तं भागैकं बालचूर्णकम् ॥ १६९ ॥
पर्यटीकदलीपने पात्याऽस्याश्चूर्णकं लिहेत् ।
रक्षपित्तकमशीसि रक्तप्रदरुन्तिख्याया ॥ १७० ॥
ब रा , रक्षपिते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण-कजलीकर १ भागहीरादस्फुटका चूर्णमिलाय शिवलिङ्गी और सफेदगुग्गाकीपत्तीके रसोंसे १-१ रोजमर्दनकर पर्यटीविधानसे पर्यटीबनाकर रखओडे । इसमेंसे २ रसलिये १ मासोतक कम-बुद्धिसे चढावे और हाफकरे । अतुपान रोगवदस्थाको देख कर युक्तकरे । इसकेबेवनासे रक्षपित्त, ध्वनीबवासीर और रक्तप्र-दर नष्टहोतेहैं । यद्यपि बोलको लोगोंने हीराबोललियाहै परन्तु उसके डालनेसे योग्यकगुण नहींहोगा इसलिये जहाँजहाँ रक्तकी बन्दकरनेकेलिये खानेमें आताहै वहाँ सबजगह बीजकनियारिका मद्दणकरना । यह आकारसाम्यहोनेसे भ्रम होयगाहै ॥ ३८ ॥

३९ रजतादिलोहम्

भस्मीभूतं रजतममलं तत्समं व्योमचूर्णं,
सर्वैस्तुल्यं त्रिकटु सवरं साय आज्येन युज्यते ।

लीढं प्रातः क्षुपयतितरां यश्मपाण्डुरदराः।
श्यासं फासं नयनजस्जः पित्तरोगानरोपान् ॥१७१॥
र. सं., र. चं., र. क., र. सु., यस्मणि ।

भाषा—चांदी और अन्नक भस्म १-१ भाग, त्रिकुट्ट,
त्रिफला और लोहभस्म २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर एकरोज
घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ रत्तीसे १ मासेतक धीमेसाथ
प्रातःकाललेनेसे राजयक्ष्म, पाण्डु, उदररोग, बवाधीर, श्वाभ,
कास, नेत्ररोग और तमामपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ३९

४० रजतादिवटी (महदादिः)

कर्मप्रमाणं रजतं मौक्तिकं स्वर्णगैरिकम् ।
फालमानन्तु वैक्रान्तं सिन्दूरं सशिलाजतु ॥ १७२ ॥
लीहमन्नप्रवालञ्च त्रिधा चित्रकवारिणा ।
फाकमाञ्चीरसेनापि सप्तधा च विभावयेत् ॥ १७३ ॥
गुञ्जाद्वयमितां कृत्वा घटिकां पयसा सह ।
प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत ह्यायुरोगनिवृत्तये ॥ १७४ ॥
शै. र., स्नायुरोगे ।

भाषा—रजत और मोतीभस्म, सोनारंग १-१ क्यं,
वैक्रान्तभस्म, रससिन्दूर, शुद्धशिलाजोत, लोह, अन्नक और
प्रवालभस्म ३-३ क्यं लेकर बारीक घोटकर चित्रकरेकाटेसे
३, और मजोके रससे ७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हमेसा प्रात-
काल धूपसेसाथलेनेसे यह प्रायुरोगको नष्टकरताहै ४० ॥

४१ रतिकान्तमुन्दररसः (मदनमुन्दरः)

रौप्यवद्भस्मसलाहहेमकं वैठताऽन्नमपि सप्तमाघितम् ।
मोञ्चजेन रतिकान्तमुन्दरः स्यादिहप्रयलजीव्यवृद्धये ॥
क्षीरमोचरसश्रापशकरासंयुतां द्विगुणरक्तिकामितः ।
मृष्टसाम्यद्विहतवल्पभोजनाद्योग्याह्नि पक्वं रसायनम्
र. सं., बानीचरने ।

भाषा—रजत, बज्र, पारा, लोह, मुगं, वैक्रान्त, अन्नक
इनसबकी भस्में समभाग लेकर मोचरससे ७ भावनाएँ देकर
२-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
मोचरस, समुद्रशोष और शकरमिलेहुएधूपसेसाथ सेवनकरनेसे
स्तम्भनकर रक्तिसुररो देताहै और अन्यन्त बौध्दी बुद्धिको-
करताहै । शुद्ध और सात्व्य, दिनकारक, बल्प भोजनकरनेसे
यह समस्तरोगोंको दूरकर अन्यन्तरसायनका कामकरताहै ४१

४२ रतिकापरसः

प्रातरभाजसा रत्तीणां मर्दयेद्भस्ममृत्तकम् ।
मृत्तं तादृशं तादृशं गन्धकश्च स्वसं दिनम् ॥ १७७ ॥
रितान्नापञ्चसैयुगेः चाहं भुञ्ज्या पिप्येतपयः ।
रतिकामपरसो नाम कामिनीगमणे हितः ॥ १७८ ॥
पानरामूलगोभूमं कौकिल्याक्षस्य धात्रकम् ।
भाषाभोक्षुरसः सर्पं लोहितं पाण्येदनेः ॥ १७९ ॥

तेनैव घटकाः कार्या नित्यं स्यादेद् द्वयं द्वयम् ।
अनुपानमिदं सिद्धं सेवनाद्रमयेच्छतम् ॥ १८० ॥
र. सं., रसायने ।

टि०—मूलश्लोके नैर्च्यमात्रऽऽनीकृतयाने वृत्तमिति कृतमिति । अत्र
प्राग्भस्मजना रत्तीणां मर्दयेद्भस्ममृत्तकमिति सन्दर्भे । यदाप्राताप्रभस्मानि
शुद्धगन्धकश्च समभाग गृहीत्वा प्राग्भस्मजना दिनैक मर्दयित्वा नित्यं
वमाना वदिकाः कृत्वा भुञ्जयेदित्यर्थः प्रतीयते । परन्तु “ पिप्येतऽन्नरत्न
नारोममृत्तकानिर्तयं युक्तमनापृष्टाः । यस्मै प्रवच्छन्त्यरत्तो गरीध
दुशान्दुर्गुणविषसेवनदात्ता ॥ तेनाद्यु रक्तं कुपिजाथ शंषाः कुर्वन्ति क्षीर
ज्वरं प्रित्तिद्रव ॥ सु. नि. ७ । ११-१२, ॥ इत्यादिना रजोमसुगादुर्गुणो
दोद्भवकथनादभेदाशुचिरिददात्वाच्च रत्तीणां प्राग्भस्मजना मर्दनं विषय
भयं स्यात्प्रायेदिति क्रियाऽप्याहारोप ग्रन्थमद्भिः कर्तव्या । भस्ममस-
रस्तु दीक्यायां प्रद्वितीयेऽपि, मर्दनेनकरने परत्तान्मृत्तको मदीय
इति बोधव्यम् ।

भाषा—सुमुशान्तमंस्कारकियेहुए पारोको प्रयमातेवसे शुद-
वाकर गोलीबनाय बज्रमूषा अथवा शुक्लटण्डलेमें बन्दकर राखिना
और सफेद अन्नकको बारीक घुटवाकर लेकर रत्तीकी एक-
खोलबजाकर ४-५ कपड़मिठी देकर सुराले । सुतनेपर ल्यु-
पुटकी आंचदे । स्वाप्रदातील होनेपर निकालले । कुछ बयरहें
तो दुबारा इसीतरहरकरनेसे भस्महोगी । यहभस्म, रजत और
ताम्रभस्म, शुद्धगन्धक साथ समभागलेकर नवीनपलाताधी
जड़कदवने एसरोज मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली धूपसेसाथ रतिगमनेसे २ घंटा-
पूर्वलेनेसे यथेष्टस्तम्भन होताहै । विशेषस्तम्भनकी इच्छा हो
तो बेबाचकी तावीजह, मिश्रास्ता, तालमराना और उदर
समभाग लेकर ईश्वरसंस्तानकर १-१ तोलेके बंधनाकर
धीरे पढ़ावे, अधिकदिन रखनेहो तो कार्वाहीमें ठाढ़े । इन-
मेंसे २-२ क्ये रोज अनुपानरूपसे खानेसे बहुतगी खिप्येक्याप
रमणस्तवचाहै राखी अथवा नमक मीनेसे स्तम्भन होगा ॥१८०॥

४३ रत्नकरण्डोरसः

भूनागाऽन्नकयोः सत्त्वं कान्तं होमाञ्चम्यकम् ।
मुक्ताफलानि रत्नानि ताप्यं यन्प्रान्तमेव च ॥ १८१ ॥
भस्मीकृतमिदं सर्वं पृथक्पृथक्प्रमितं मतम् ।
निष्कमाप्रमितं शुद्धं राजापयतेरत्नस्तथा ॥ १८२ ॥
पतन्वये समं योज्यं मर्दयेत्स्याऽन्त्येतमैः ।
गन्धा गुणोदरे कौष्ठ्यां धमेदाफादावृन्तम् ॥ १८३ ॥
शतवारं धमेदेयं मर्दयेत्स्याऽन्त्येतमैः ।
ततः सन्नृणितं याम्निगुणाभस्मं द्विशालरत्न १८४
मरिचं पशुशालोयं क्षिप्त्वा सभयं यदातः ।
रस्ये वारपुद्गैः क्षिप्त्वा स्यापयतेत्तदनन्तरम् ॥ १८५ ॥
सोऽयं रत्नकरण्डको रस्यरो मप्याय्यगद्भान्तोः ।
हृत्पाच्छान्तमगदं ज्वरं ग्रहणिको कामश्च क्षिप्त्वाऽऽमयम्
शुद्धं शोषमहोदरं बहुविधं कुष्ठश्च हृत्पाद्वान्,
यन्तो गुण्यकरः प्रदीपनकरः स्वस्वगोत्रिणां विगदान् ॥
१. १ ग. र. को. श्यामएणदे. ।

भाषा—कैतु और अश्रककासात्र, कान्तभाषण और कान्तलोह, सुवर्ण, अश्रक, रजत, मोती, नवरत्न (हीरा, पद्मा, माणिक्य, पुष्पराज, नीलम, ल्मनिया, गोमेद, मोती और मृगा) सुवर्णमाक्षिक, वैकान्त, साजर्द इत्यस्यकीभस्में ४-४ मासे लेकर अमलवेन अथवा विजोरेरसमे १-२ रोज मर्दनकर कुटालीमें रटाकर धमन करावे । धूमरहितरस्यवर्णहोनेबाद बाहरनिकालकर छटाकरले । फिर पूर्ववत् १-२ पहर विजोरमें मर्दनकर धमनकरे । इत्यतह चौवार षरनेकेबाद मोतीभस्म ८ मासे, मरिच २० मासे डालकर एकरोजमर्दनकर शीरीमंभरदे । इत्यमें १ चावल, सेलेर २ चावलतकनीमात्रा मधु और धीकेसाय देनेसे श्वात, ज्वर, सद्गुह्नी, काम, हिव्ची, घृल, शोष, उदररोग, नाना-प्रकारकेउष्ण, धातुजोकोक्षीणता, पण्डत्व, मन्दाग्नि इत्यस्यको यह नष्टकरताहै । स्वस्थ आदमीके सेवनकरनेमें आयुकी वृद्धि कोकरताहै ॥ ४३ ॥

४४ रत्नगर्भपोटली

रसं वयं हेमतारं नागं लोहञ्च ताम्रकम् ।
तुल्यांशं मरिचं देयं मुक्तापिष्टममाक्षिकम् ॥ १८७ ॥
दाहं तुत्यञ्च तुल्यांशं सप्ताहं चित्रकट्टयेः ।
मर्दयित्वा विचूर्ण्याऽथ तेनपूर्वां घटाटिकाः ॥ १८८ ॥
द्वृणं रविदुग्धेन मुखं लिप्त्वा निरोधयेत् ।
मृद्भाण्डे ता निरुद्धयाऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् १८९ ॥
आत्राय चूर्णयेत्सर्वं निर्गुण्ड्या सप्त भावयेत् ।
आर्द्रकस्य रसेः सप्त चिप्रकस्यैरुर्विदरतिः ॥ १९० ॥
द्रव्ये मांयं ततः शोष्यं देयं गुञ्जाप्रमाणकम् ।
क्षयरोगं निहन्त्याशु साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ १९१ ॥
योजयेत्पिप्लीहीश्रीः सधृते मीरिचैस्तथा ।
महारोगाऽष्टके कासे श्वासे चैराऽतिसारके ॥
पोटली रत्नगर्भं सर्वरोगकुलान्तिका ॥ १९२ ॥

र स, र र, वि क, र च, र सु, यो र, व, यो त, र, चि, र म, नि, र, र.को, रसायनस, भै र, र क, यो म, र, दा, दो, र. (मा), भै.सा., र को, र का, र क यो, यश्मणि ।

टि०—केपुकेपु पुस्तकेपु “दानावर्णञ्च वैरान्त गोमेद पुष्पराजम् ॥” इति पद्य दस्यने, ताम्ररूपाने प्रजुप्तान्तेपु अश्रक गृहीतम् । “ तुल्यांश मरिच ” इत्यस्य स्थाने तुल्यांशं मारितमिति पाठ ।

भाषा—पारा, हीरा, सुवर्ण, चादी, नाग, लोह, ताम्र, मोती, प्रवाल, सोनमाखी, शङ्ख और तुत्य इत्यस्यकीभस्में १-१ तोला, सफेदमिर्ब ७ तोले लेकर बारीकचूर्णकर चित्रकके स्वरसे अथवा हाथसे ७ रोज मर्दनकर सुखाकर रसेचरावर पीली कोट्टियोंमें भरके सुहागेको आक्केरूपमें मर्दनकर कौट्टियोंका अच्छीतरह सुहनन्दकर मिठीनीं मनजूतखलहीमें बन्दकर ६-७ काण्डमिठीकरदे । अच्छीतरह सूखनेपर गजपुटवी आकदे । स्वाज्ञ-शीतलद्घोनेपर निकालकर निर्गुण्डी और अदरखैररसे ७-७ भावनाए देकर सुखाकर चित्रकके स्वरसे अथवा हाथकी २१ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।

इसमेंसे १-१ गोली पीपल, मधु अथवा धी और मिर्चकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य क्षयरोग, आठप्रकारके महारोग (वातव्याधि, प्रमेह, कुष्ठ, अशं, भगन्दर, अदमरी, मूत्रगर्भ और उदर) काश, श्वास और अतिमार इनसबके बचको यह नष्टकरताहै । तत्तदोगद्वारापुनानेसाथ देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४ ॥

४५ रत्नगिरीरसः (प्रथमः)

सूताऽश्रस्वर्णताम्राणि गन्धं चाद्धाशिलोहकम् ।
लोहाहार्दं मृत्यैकान्तं मर्दयेद्भृङ्गजद्रव्ये ॥ १९३ ॥
पर्पटीरसवत्पाच्यं चूर्णितं भावयेत्पृथक् ।
दिग्भुवासकनिर्गुण्डीगुडुच्युत्राऽग्निभृङ्गजैः ॥ १९४ ॥
क्षुद्रामुण्डीजयन्तीभिर्मुनिद्राह्नीसुतित्तजैः ।
कन्यायाश्च द्रव्ये भांयं त्रिविधारं पृथक्पृथक् ॥ १९५ ॥
ततो लघुपुटे पाच्यं स्वाङ्गशीर्तं समुद्धरेत् ।
घहं दद्यात्कणाधान्ययुक्तं चाऽभिनवज्वरे ॥ १९६ ॥
मुद्गाभ्रं मुद्वयं वा सर्नारं तन्मत्करुम् ।
रसे चोक्तं पथ्यमस्मिन् शकं सर्वज्यरोदितम् ॥ १९७ ॥
रं. चि, र मं, भै. र, रसायनस, र शि, नि, र, र को, र शं, यो. म, व रा, दो., र सु, र का, र क. यो., ज्वराऽ-धिकारे ।

भाषा—पारा, अश्रक, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्में, शुद्दगन्धक १-१ भाग, इनसबसेआधी लोहभस्म, लोहसे आधी वैकान्तभस्म लेकर सबको एकजगह भगोरेरससे एकरोज मर्दनकर सुलाकर २-३ काण्डमिठीकीहुई आतशीशीशामें रखकर २-३ पहर अभिपर पकावे और शालका डालकर देखतारहे । एकजीव होनेपर ताजेगोबरपर रक्सेदुए केलेपेपत्तेपर डालकर दो तीन केलेके पत्तोंसे ढककर गोबरसे दबादे । स्वाज्ञशीतलद्घोनेपर धीरजसे निकालकर सहजन, अहसा, निर्गुण्डी, गिलोय, बब, चित्रक, भंगरा, भट्ट-कटैया, गोरखमुण्डी, जैती, अण्णस्य, ब्राह्मी, चिरायता, धीकुं-बार इनप्रत्येकके दधासम्भव इवरस अथवा हाथोंसे ३-३ भावनाए देकर गोलवनाय सुलाकर घारावसम्पुटमें बन्दकर ७-७ काण्डमिठीदेकर ५ सेरकण्डोंकी आचकेवे । स्वाज्ञशीतलद्घोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा पीपल और धनिषेसेसाथ मधुवर्णीरहमें मिलाकर देनेसे यह तन्काळ भवज्वरको नष्टकरताहै । ज्वर उतरनेपर अच्छीतरह सूखलेगोते मूंगकायूष अथवा दाल अथवा उचित हो तो छाछ, भात और ज्वरोक्त-शाक देवे ॥ ४५ ॥

४६ रत्नगिरीरसः (द्वितीयः)

रसाऽश्रहैमं रवितारहैम-
गन्धं द्विनिघ्नं सकलं विमुद्य ।
भृङ्गैतथनीरैः कदलीद्वले च
पाच्यं ततो रत्नगिरि भवेत्सः ॥ १९८ ॥
श्यासे च कासेऽप्यनिवारितेऽप्यैः
हतोद्गये यश्मणि पीनसे च ।

पाण्डौ सशोभे पवने सरके

वह्नः प्रयोज्यो मधुपिप्लीम्याम् ॥१९९॥

र. सं., शशे कासे च ।

भापा—गारा, अत्रक, स्वर्णमाक्षिक, तांबा, चांदी और सुवर्ण इनकी भस्मे १-१ भाग, शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर सबको कज्जलीतरह घोटकर मंगरेकरसे एकरोज मर्दनकर अच्छीतरह-सुराकर घृताकलोहेकीकड्डीमें गलाकर गोबरपररखेहुए फैले-पत्तेपर ढालकर दूसरेपत्तेसे ढक गोबरसे दबादे । स्वाह्नशीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और पीपलके-साथ देनेसे अन्ययोगसे असाध्य क्षतोज्वर आस और कास, राजयक्ष्म, शोथयुक्तपाण्डु, बालक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६ ॥

४७ रत्नप्रभासः

स्वर्णमाक्षिकमम्रञ्च नागवह्नी च पित्तलम् ।

माक्षिकं रजतं यज्ञं लौहं तालञ्च खर्परम् ॥ २०० ॥

फदल्याः काकमाज्याश्च वासकस्योत्पलस्य च ।

स्वरसेन जयन्त्याश्च कर्पूरसलिलेन च ॥ २०१ ॥

भाययित्वा यथाशास्त्रमहोरात्रमतः परम् ।

सम्मर्द्याऽतन्द्रितः कुर्यान्निपगुञ्जामिता यतीः ॥२०२॥

एकैकाञ्च प्रयुञ्जीत प्रातरासां यलाभ्युना ।

उष्णेन पयसा वाऽपि केशराज्रसेन वा ॥ २०३ ॥

इयं रत्नप्रभा नास्ती यदिका सर्वमिन्द्रिदा ।

सर्वेच्छीरोमाह्वी च यस्या बृथ्या रसायनी ॥ २०४ ॥

ॐ र., परित्शेठे (रसायने)

भापा—सुवर्ण, मोती, अत्रक, नाग, वक्र, पीतल, सोना-नाची, चांदी, हीरा, लोह, हरिताल और खपरिया इनसबकी-भस्में समभागलेकर फैलेनाकन्द, मकोय, अहवा, कमल, जैती और कपूर इनसबके स्वरस अथवा हाणसे १-१ अहोरात्र मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गोटोकेस्वरस अथवा गरमदूध अथवा मंगरेकरसे देनेसे यह ममन्तरोगोंको दूरकर बल और शक्तिको देकर दीपां-गुनो करतीहै और रामधर क्षीरोगोंकी परीपणै ॥ ४७ ॥

४८ रत्नभागोत्तररसः

पञ्च मरकतं पद्मरागं पुष्पञ्च नीलकम् ।

पद्मं वाऽथ गोमेदं माक्षिकं चिद्रमं तथा ॥ २०५ ॥

कमपृष्टमिदं सर्वं धैरान्तं चाऽष्टभागकम् ।

तनुल्यं ताप्यजं भस्म तद्वह्निलयमस्म च ॥ २०६ ॥

मयंतरिमगुणां तुल्यरसगन्धककज्जलीम् ।

सर्वमेकत्र सम्मर्द्य छागीदुग्धेन तद् द्रव्यम् ॥ २०७ ॥

धिषाय पपटीं यन्नाल्परिपुण्यं प्रयत्नतः ।

पन्थ्याकर्षादिकीकन्दरसेन परिमर्दयेत् ॥ २०८ ॥

फाननीत्पल्यदिशान्या पुटेररोद्रशायकम् ।

एवं रमोयिनिपयो रत्नभागोत्तररमिधः ॥ २०९ ॥

महापन्थ्यादिपन्थ्यानां मर्द्यासां सन्ततिप्रदः ।

देर्माश्राग्ये पित्तिर्दिष्टः पुंसां पन्थ्यन्तरांगतु ॥ २१० ॥

सोऽयं पाचनदीपनोद्गहरो वृष्यस्तथा गर्भिणी,-
सर्वव्याधिविनाशनी रतिकरः पाण्डुप्रचण्डार्तिनुत् ।

धन्यो बुद्धिकरश्च पुत्रजननः सांभाग्यरूपोपितां,
योऽन्यात्कृमपाकरोति महसा पुंसामशोपार्तिनुत् २११

र. र. सं., र. चं., स्त्री. वि., र. बो., र. र. कौ., सन्तानार्थे ।

भापा—हीरा, पना, माणिक्य, पुसरज, नीलम, ल्य-
निया, गोमेद, मोती, प्रवाल, इनसबकी सांश्रोकाधिधानसे
बहुईभस्मे क्रमशःभागसे लेवे । फिर वैशान्त, मुग्गमाक्षिक
और रौप्यमाक्षिक इनप्रत्येककीभस्मे पूर्वद्वयोसे अठगुनी और
सबसे तिगुनी शुद्धपोगन्धककीकज्जली मिलाकर सबको दोरोज
बकरीकेदूधमें मर्दनकर मुष्पाकर फिरसे फैलीयनाय घृताक
लोहेकीकड्डीमें बेरकीलकड़ोके कोयलोपर गलाकर गोबरपर
रखेहुए बेलके पत्रपर ढालकर दूसरे बेलके पत्तेमें ढकर गोय-
से दबादे । स्वाह्नशीतलरोनेपर निकालकर कज्जलीयनाय
वांश्लेसगाने बन्दरेमेंसे १-२ रोज मर्दनकर गोरानुगुणोसे
स्वरसकी १६ भावनाएं देकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपाननेमाय देनेसे स्त्री और
पुरुषोंके महावन्थ्यत्वादि समस्तदोषोंको दूरकर शुभमन्तिको
पैदाकरताहै । मन्दाभि, पण्डव, पाण्डु, बुद्धिनाद, योनित्र और
पुण्योके पण्डव्यादि समन्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ४८ ॥

४९ रत्नाकरचिन्तामणीरसः

अष्टसत्त्वञ्च हेमाद्यं ताप्याद्यष्टदृतिस्तथा ।

सर्वतुल्यं रमं क्षित्या तद्द्वामिन्द्रकदुतिम् ॥ २१२ ॥

मीनाक्षी चैव सपांक्षी व्याघ्रोफन्दं पुनर्नया ।

मिन्द्रेत्री तथाऽऽद्यतां काकमाक्षी तुला मयी ॥२१३॥

पीतपर्णी घुणा कुम्भी विशाला च रदन्तिका ।

सोमचह्नी मृगी हंसी श्रयिका श्रयिकास्तथा ॥२१४॥

पतासामीषधीनाञ्च प्रत्येकं मसथा पुंटेत् ।

काचकुर्यां तथा क्षित्या पक्षेकञ्च हठाग्निना ॥ २१५ ॥

धूमवेयी र्मो दिव्यः पङ्घातुन् घेघयेदयम् ।

पवमेन प्रकृत्यं सप्तथा च प्रयत्नतः ॥

स्वदीयेधी रसो दिव्यो नाम्ना रत्नाकरो रसः ॥२१६॥

रत्नागर, रसायने ।

भापा—सुवर्गादि अष्टपातुओंकी निष्पन्नभस्म पनाय यथा
नाय सबका सार निकाले और गुणादिपातु तथा ठनके बचे-
पातुओं (अष्टपातु)की दृष्टियां शक्यमनाग लेकर सबको बतपर
शुद्धारा, पाण्डे आधी अत्ररुति मिलाकर ७-८ भागमिर्दोरी-
हुई आशीर्वादीनामें ढालकर मन्थनायी, पपटी, व्याघ्रीकन्द,
पुनर्नया, मिन्द्रेत्री, मीनाक्षी (आरज गुं) मकोय, मी-
दगुणा, गन्धाय (गोलककड्डीपूत), पीतपर्णी, मीन,
जगन्मो, इन्द्रकान्ती, इन्द्रो, गोबररो, मृगी, हंसी, पण्ड-
ओंको दुककरनेवायी और जरा कितनाभय देनेवायी श्रयि
औरपिणी हैं उन प्रदेच्छाम इन्ध्र अतिर गत्ये । ॥ १६ ॥

७-७ पुण्डेरक काचकीरूपिमें डालकर १५ दिनतक हठाभिते धमन करनेपर यह धूमवेधी रस तैयार होगा और सार्तोधातुओंको स्वकीयधूमसे सुवर्ण बनावेगा । इसकेस्पर्शसे महान्यायि योंसे निवृत्तहोकर दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥ ४९ ॥

५० रत्नाकररसः

हेमहीरकचेकान्तवङ्गऽम्ररसगन्धका ।
समभागमिता योज्या सर्वतुल्यमयो मतम् ॥ २१७ ॥
खल्वे निःक्षिप्य सर्वाणि भाययेत्ककुभाम्मसा ।
गोधूमस्य यवस्यापि कायेन सप्तधा पृथक् ॥ २१८ ॥
ततः कन्याऽभ्युना प्राशस्त्रीन्यारान् परिपेचयेत् ।
रक्तशाल्यन्तरे पिण्डं निशाः सप्त च धापयेत् ॥ २१९ ॥
समुद्भूत्य वटीश्चाऽथ कुर्यात्स्विन्नकलायवत् ।
अजुनेनस्य कपायेण काञ्जिकेनाऽऽसवेन वा ॥ २२० ॥
गोधूमस्य यवस्यापि कायेन हविषाऽपि वा ।
यथादोषानुपानेर्वा प्रदद्यात्परमौषधम् ॥ २२१ ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चाऽपि श्लैष्मिकं सात्रिपातिकम् ।
मिमिजं हृद्दृश्चाऽपि कौष्ठिकं पृथुकं तथा ॥ २२२ ॥
तथा घरणिकं घोरं गदं विश्लेषकाभिधम् ।
मेदःसूत्राभिधञ्चाऽपि परिक्षयगदं तथा ॥ २२३ ॥
आयामिकाश्च यश्माणं घातपित्तकफामयान् ।
हन्त्ययं निखिलाप्रोगान् वृक्षानिन्द्राशनि र्थया ॥ २२४ ॥
आ वि , हरेगोऽधिकरे ।

टि०—बौद्धिकदीना लक्षणाणि आबुद्धेर्विशाने निहितानि सानि च यथा—आमवातादभीपाताचयाऽऽनरमिक्तद्रवात् । हृत्कोष्ठे जायते शोथो गद एष हि कौष्ठिक ॥ १ ॥ ज्वरो दाहोऽरुचि कर्मो वैषम्यं वह्निमल्लय ।
श्वस शक्ती राजयश्मा कोष्ठे पृथक् सञ्चय ॥ २ ॥ मूर्च्छाऽश्लेष प्रला पश्च नाडीविषमवादिनी । गदाद्य घोरतरादस्माद् भागवालोऽपि प्रमु च्यते ॥ ३ ॥ इति कौष्ठिक ॥ शोणितस्य गती रोष्ठे व्याहृतयायामना त्मन । तलेषी पृथुता याति भिष्याऽऽरविहरत ॥ ४ ॥ हृदिपथु स्थंया तत्र दीर्घव्य श्वसत्पृथ्वात् । अरति भ्रममोहौ च चिद्धानि पृथुकेगरे ॥ ५ ॥ इति पृथुक ॥ आमवाताद् वृक्षोपायः शीतार्द्रत्वनिषेवणात् । हृत्कोष्ठे वृक्षरणी क्षिप्र पीकते हृत्कृतमान ॥ ६ ॥ एत दाहोष्णता शोथो गौरव महती व्यथा । कोष्ठसंविपन कागो दीर्घव्य श्वसत्पृथ्वात् ॥ ७ ॥ नासा गार्गेण रक्तस्य सृष्टि वैदेश मन्दता । शाखासु शोकी घमनी भवेद्विषम गामिनी ॥ ८ ॥ नासा वरगिकी श्लेष्म व्यापि विद्विद्रुच्यते । जालमात्र शिथिलस्योऽय वैषम्येन्य वदाचन ॥ ९ ॥ इति वरणिज ॥ हृत्कोष्ठ-श्लेषको व्यापि नांन्या विश्लेषिका मता । जातेऽभिर्व्य महति व्यापी कोष्ठ देहोऽनुरोऽऽस्थप ॥ १० ॥ सन्ध्यासारविद्य सन्ध्यावार्धौ श्रीवाया पृष्ठे शत । वेदना जायते तीव्रा मर्मप्रणमणीदनी ॥ ११ ॥ तीक्ष्णभेदी समा कर्पो दाहस्तत्र च जायते । मुहुमुहु श्वसतोऽपि शीता त्वक श्वेदनिर्गम ॥ १२ ॥ आयान्नानाहमोहाश्च वैषम्यं कृशताऽऽरुचि । क्रमादिद्रिय विषयो मरणप्राऽप्यनात्मन ॥ १३ ॥ इति विश्लेषिका ॥ हृत्कोष्ठपथी मूत्रेषु मेदः कणचनो गदः । मेदः सूत्राल्पया प्रोत्थे मुनिभित्तत्त्वे रिमि ॥ १४ ॥ मन्द मन्द व्रजेऽपि भवेत्कृदवपेयुः । भवनादो भ्रमो मूर्च्छां स्वायुना बलमथय ॥ १५ ॥ हृद्वृत्ते वापि सभेदान्पृथुस्य श्वसमा भवेत् । जालमात्रशिक्षित्स्योऽय व्यापि परमदारुण ॥ १६ ॥ इति मेदः मूत्रम् ॥ श्वाल्मभायने मोतो व्यापि नांन्या परिक्षय । कोष्ठेऽस्या क्षय

वासो दीर्घव्य सदन भ्रम ॥ १७ ॥ हृदिपथु वह्निमान्य क्रमाच्छोकश्च जायते । एतैरन्यैश्च विश्लेषिकैः व्यापि परिक्षय ॥ १८ ॥ इति परि-क्षय ॥ हृत्कोष्ठप्रसृति नांन्या व्यापिपायामिको मत् । श्वस शोथो भ्रमो मूर्च्छां हृत्कोष्ठो वह्निमन्दता ॥ १९ ॥ जलेदरमनिद्रत्व बलमांसपरिक्षय । परिरन्यैश्च विश्लेषिकैः र्थायामिको गद ॥ २० ॥ इत्यायामिका ॥

भाषा—सुवर्ण, हीरा, वैकान्त, वज्र, अन्नक इनकीभस्में, सुद्रुपारा और गन्धक सब समभाग और सबकीबराबर लोहभस्म लेकर कहुआ, गेहू, जव इनप्रत्येककेकार्योंसे ७-७ भावनाए देकर धीऊआकरसमें ३ भावनाए देवे फिर गोला बनाय एण्ड-पत्रमें लपेटकर डोरेने बांधकर लालचावलकीराराशिमें ७ रोजतक द्वादः । आठवेंरोज निकालकर उबलेहुए मटरबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अजुनेकाकाठा, वाञ्जी, आसव, गेहू तथा जवका काठा, धी इनमेंसे किसी एककेसाथ अथवा दोपानुसार अनुपानोक्तेसाथ देनेसे वातिक, वैतिक, शैदिमक, किमिज, कौष्ठिक, पृथुक, आवरणिक, विश्लेषक, मेद-सूत्र, परिक्षय, आयामिका प्रसृति समस्त हृदयके रोग और यश्माको यह इस्तरह नष्टरताहै जैसे कि इन्द्रका वज्र श्वेतोका नाशकरताहै ॥ ५० ॥

५१ रत्नेश्वररसः (प्रथमः)

यजं वैकान्तमन्नञ्च सिन्दूरमपि माक्षिकम् ।
मौक्तिकं हेमरौप्यञ्च सममिक्षुजचारिणा ॥ २२५ ॥
शताघरीरसेनाऽपि विद्यार्याः स्वरसेन च ।
विभाव्य घटिकाः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ॥ २२६ ॥
त्रिफलाजलयोगेन रसो रत्नेश्वरो हरेत् ।
मस्तिष्कस्नायुजान्याधीनंशुधातं विशेषतः ॥
अंशुधातं प्रकृतव्यो विधि मूर्च्छानिपृदनः ॥ २२७ ॥
आ वि अशुधाते ।

टि०—अशुधातलक्षण यथा—“वण्डाशोरसुना शीर्ष्णि तसे चण्डेन जायते । अशुधाताऽभिषो व्यापि प्राणिना प्राणपीडन ॥ १ ॥ सुण्ड-तिषोर त्वमप्या भ्रमो नेत्रस्य रक्तता । मूत्रनेत्रस्य मूर्च्छांयो हलासी विष-माऽपरा ॥ २ ॥ श्वसहृच्छ्च स्पन्देनानिरोधश्चान् सम्भवे । प्राय काऽऽन्यरुक्षाना मयानां जायते च स ॥ ३ ॥ इति,

भाषा—हीरा, वैकान्त, अन्नक, रससिन्दूर, सोनामाखी, मोती, सुवर्ण, चांदी इनकीभस्में समभागलेकर ईल, शताघर और विद्यारीके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके पानीकेसाथ देनेसे मस्तिष्क, स्नायु, अशुधातादि समस्तोरोगोंको यह नष्टरताहै । अशुधातमें विशेषकर मूर्च्छाको दूरकरनेवाले उपाय करने चाहिये ॥ ५१ ॥

(५२ रत्नेश्वररसः (द्वितीय)

अर्द्धभागेन सूतेन तारं ताम्रेण मेलयेत् ।
मारयेत्सकतायन्त्रे शिलाहिहृत्कलग्न्यैः ॥ २२८ ॥
अयं रत्नेश्वरः सूतः सर्वरोगनिवृत्तनः ।
अलं श्लात्वा चतुःपट्टिरोगांस्तैस्त्वैश्च लक्षणैः ॥ २२९ ॥

एष रत्नेश्वरः स्रुतः सर्वरोगेषु जुष्यते ।
हेम्नोऽन्तर्योजितो ह्येपो हेमतां प्रतिपद्यते ॥ २३० ॥
शेषोऽर्कश्चेद्गन्धकं वा कुन्दक्या वा हतद्विपैः ।
शोधयेत्कनकं सम्यगग्नौ वा कालिकापाहैः ॥
वर्णहासे तु ताप्येन कारयेद्दर्पमुत्तमम् ॥ २३१ ॥

रसायनस, यो म., रसायने ।

टि०—योगमहाणवे अर्षपादीनतुल्येन तार तात्रेण योजयेदिति पाठो
दृश्यते परन्तु तत्र अदारपद पादरक्षिते वर्णान्तरापादकत्वाऽभावात् ।

भाषा—शुद्धपात्र २ भाग, चादी और तावेका बारीकचूरा
१-१ भागलेकर १-२ रोज इक्का मर्दनकर तीनोंकी बराबर
मैनसिल मिलाकर धीकृत्कारके रसमें १-२ रोज मर्दनकर गोला
बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ षण्डमिठी देकर अच्छी-
तरह सुखनेपर बालकायत्रमें एक्कोज पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर
निकालकर फिर उसीतरह कमसे हिङ्गल और गन्धक देकर
पाककरे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । दोपोंके
६४ भेदोंको तदीयलक्षणोंसे अच्छीतरह समझकर अथवा वैसेही
इसमेंसे १-१ रती तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्त
रोगोंको दूरकरताहै । इसभस्मकी बराबर सुवर्णमिलाकर धौंकनेसे
सब सुवर्णहोजाताहै यदि धौंकनेसे ताबा अलगा होजायतो गन्धक
अथवा मैनसिल अथवा नागभस्म देकर धमनकरे । मिलानेपर
सोनेमें कालिमा आजायतो कालिकाको दूरकरनेवाली चीजोंका
योगकर धमनकरे । रगकी न्यूनता होनेपर सोनानाखीकेसाथ
गलानेसे उत्तमवर्णहोजाताहै ॥ ५२ ॥

५३ रत्नेश्वरवटी

कान्तंशुक्लं समं चूर्ण्यं वज्रमूपान्धितं धमेत् ।
तत्खोटसिद्धचूर्णन्तु गन्धकारलेन मर्दयेत् ॥ २३२ ॥
रङ्गा सम्यक् पुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ मर्दयेत् ।
पूर्ववत्क्रमयोगेन पुटेद्वाराश्वतुर्देत् ॥ २३३ ॥
वज्रेण द्वन्द्वितं स्वर्णमनेनैव तु रक्षयेत् ।
मूपामध्ये धमन्नेवं सप्तवारं समं क्षिपेत् ॥ २३४ ॥
तत्खोटं चूर्णितं भाव्यं स्त्रीपुष्पेण दिनावधि ।
तत्तुल्यं द्रुतसूतन्तु स्रं यामं विमर्दयेत् ॥ २३५ ॥
वेष्टयेद्दर्पप्रेषण वस्त्रेवद्धा पचेत्प्यहम् ।
दोलायत्रे सारनाले जातं गोलं समुद्धरेत् ॥ २३६ ॥
गान्धारी जीवनी चैव लाङ्गली चेन्द्रवारपी ।
पतासां पिण्डरुत्केन वेष्टयेत्पूर्वगोलकम् ॥ २३७ ॥
अन्वयित्वा दिनं पक्त्वा भूधरे तं ममुद्धरेत् ।
पुनर्लेप्यं पुनः पाच्यं चतुर्दश दिनावधि ॥ २३८ ॥
मुटिका जायते दिव्या नाम्ना रत्नेश्वरी तथा ।
वक्त्रस्था वर्षमाग्रन्तु नन्दिनुल्लो भवेन्नर ॥ २३९ ॥
जीवेद्दर्पमहस्राणि दिव्यतेजा महाबलः ।
वर्षद्वाद्दशपर्यन्तं यस्य वक्त्रे स्थिता तु सा ॥ २४० ॥
तस्य संश्लेषेऽस्यर्षादप्लोहानि काञ्चनम् ।

जायन्ते नात्र सन्देहः सत्यमीश्वरभाषितम् ॥
पञ्चाङ्गचूर्णं मध्वाज्यै रुदन्त्युत्थं लिहेदनु ॥ २४१ ॥
र. स, रसायने ।

भाषा—शुद्धकान्तलोह और ताप्रसमभागलेकर वज्रमूपामें
बन्दकर धमनकरे । गलजानेपर अग्नि बन्दकरदे । स्वाज्ञशीतल-
होनेपर खोटको निकालकर गन्धकके तेजावसे १-२ दिन मर्द-
नकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आवेदे ।
स्वाज्ञशीतलहोनेपर फिर पूर्ववत् करे, ऐसे १४ बार पुटेदेनेके
वाद शीशीमें भरकर रखडोड़े । हीराकी टुटिकेसाथ मिलायेहुए
सुवर्णको गलाकर बराबरके हिस्सेमें इसे डालनेसे असलीरत्न
आजायगा । इसमें बराबरके चूर्णको डालकर वज्रमूपामें बन्दकर
४ पहर धमनकरे, ऐसे सातवार करनेकेबाद यह खोट तैयार
होगा फिर इसका चूर्णकर स्त्रीपुष्पसे एकदिन भावनादेकर
उसकी बराबर द्रुतपाद डालकर फिर एकदिन स्त्रीपुष्पसे मर्दन
कर गोलीबनाय भोजपत्रमें लपेटे चारतहकपड़ेमें बांधकर बाष्पीमें
दोलायन्त्रसे तीनदिनतक पकावे फिर गान्धारी ? जीवनी ?
करिहारी और इन्द्रायणके कल्कसे पूर्वको गोलको लपेटकर
वज्रमूपामें बन्दकर एकदिन भूधरयज्ञमें आवेदे । स्वाज्ञशीतल
होनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् पाककरे । ऐसे १४ दिनकर
नेकेबाद रत्नेश्वरी मुटिका तैयारहोगी । इसे एकवर्ष मुहमें
रखनेसे नन्दिकेश्वरकेबराबर दिव्यतेज और बलतुच्छोकर
१००० वर्षतक जीताहै । बारहर्षतक जियके मुहमें यह गोली
रहजाय उसके पसीनेके छूनेसे आठौलोह वज्रन होजातेहैं ।
इसगोलीको मुहमें रखनेवाला रुदन्तीके पञ्चाङ्गके चूर्णको मधुमें
मिलाकर खावे, यह इसका अनुकामण है ॥ ५३ ॥

५४ रविताण्डवसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं कुमारीरसमर्दितम् ।
ज्यहान्ते गोलकं कृत्वा ततस्तेन प्रलेपयेत् ॥ २४२ ॥
तयोः समं ताप्रपत्रं हण्डिकान्तनिवेशयेत् ।
तद्गाण्डं भस्मनाऽऽपूर्य चूर्ण्यं तीव्राग्निना पचेत् २४३ ॥
द्विदिनान्ते समुद्धृत्य चूर्णयेत्स्वाज्ञशीतलम् ।
जम्बीरस्य रसेः पिष्ट्वा रङ्गा सप्तपुटेः पचेत् ॥ २४४ ॥
गुञ्जं मधुनाऽऽप्लेन लिह्यादन्ति भगन्दरम् ।
मुशली लणञ्चातु ह्यारनालयुतं पिषेत् ॥ २४५ ॥
मुञ्जात मधुराहार दिवास्वापञ्च मथुनम् ।
वर्जयेच्छीतलाहारं रसेऽस्मिन्नविताण्डये ॥ २४६ ॥

र. स, र त, र च, वै थि, र क, र र म, भि सा, र, र, व
रा, यो त, र क, ने, र क यो, र, र की, भगन्दर ।

टि०—र स, र त, र च, वै थि, र क, र र म, भि सा, र, र, व
र, र क, र क, र क यो, यो, र र यो, र र यो, र र यो, र र यो
र, र र दी एतु गरिताण्ड इति नाम्ना भि र, प, पत्राधि
विभाषेति । र की, भगन्दर इति । र य, र व र लणे
पिनाकगणिति । र मकार इति । र म र म, र

चिर म, र नि, र कौ, र या, र सु, र पा, र म (मा) एषु भगन्दरहर इति । र र, र दी, अनथास्त्रिगुणाव्य इति । र र कौ, र नि, या म, एषु भगन्दरहरैसरीति नाम । र सं, त्रिस्थाने षटोऽसि । रमनत्रिध्याभिकस्थाने । र षकस्थाने । वै चि एषस्थाने । र क षकस्थाने । र र स एषस्थाने । वै सा एषस्थाने । र र षकस्थाने । वै रा एषस्थाने । र का त्रिस्थाने । र क या एष स्थाने । वा एषस्थाने । र र कौ त्रिस्थाने । र चि त्रिस्थाने । र सु त्रिस्थाने । र क ल त्रिस्थाने । र र दी एषस्थाने । वै र एषस्थाने । य एषस्थाने । र दी त्रिस्थाने । र कौ एषस्थाने । र षकस्थाने । र प्र षकस्थाने । चि र भ एषस्थाने । र नि एषस्थाने । र कौ एष स्थाने । र कौ एषस्थाने । र म (मा) एषस्थाने । र र षकस्थाने । यो म षकस्थाने । एषस्वयं योगस्य दशानामस्थाने महाव्यामाहकत्व म्न सर्वेषां रविनाष्टत्र एवाऽन्तर्भाव इतोऽसि ।

रसद्रवत्वया रसायनाऽधिकार उदयदाित्यनाशा "आवर्तिने रस एषु शिष्टा द्विगुणाधिक । आर्द्रकद्रवमुदीना विदात्या मर्दिन पचेत् ॥ शुद्ध ताम्रमूपाया त गुणाम्बित रमम् । समर्पिनांगर अमुका ताम्गु प्रसव पिबेत् ॥ रसाऽयमुदयदित्य स्यात्तरारनीहर ॥" अयं योग रसायनाऽधिकार निरुत्ताऽसि ।

र चि, र सु, र मे, र क, र वा, एषु अवराऽधिकार ज्वरशूलहरनाश "रसगन्धको हृत्वा बज्जली भाण्डमध्यगाम् । तवाऽभावदर्ना ताम्र पानी मन्वद्य शोषयेत् ॥ पादाशुभ्रममाण नुल्लवा कोठेन तां पचेत् । यामदय तनस्तत्स रसात्र समाहरेत् ॥ सन्वृष्ये शुभाशुभल नित्य वा विचक्षण । तावृल्लदयोगेन दपालत्वेज्वरपन्मुम् ॥ वीरसे भवमन्त्रिष्व नयाय ज्वरिणे दितम् । स्वराद्रमा भवत्येव देधि सवेपु पाप्मुम् ॥ चातु र्भिकान्निषमाश्रयमामानि नञ्चरम् । साधारण सन्निपात न्यत्येव न सशय ॥" अयं योग निरुत्ताऽसि ।

य, च द एषयाम्बन्ध्या ग्रंथवधिकार ताम्रयोग इति नाम्ना "स्थाल्यां समथ दास्यो मापिनो रसाय चकौ । नखशुण्णतुपरि तण्डु शीथ दिमापिबम् ॥ तता मैनाल्लाप्रस्य विषाय शुक्पालम् ॥ व्युपौ पूरयेद्भृङ्ग सर्वां स्थालीं तनोऽनल ॥ स्थाल्येषो नास्किं यावदेवस्नेने नृन्यस च । रक्षितैना समादाय विपदा भूधारत्कित्राम् ॥ रतिमना व्युष णस्य विच्छिन्न च रत्कित्राम् । धनन मधुनाऽऽल्लव्य प्रथमे दिवसे तत ॥ रत्कित्रेदि प्रतिदिन कुयासात्रादिषु त्रिषु । स्थिराविद्धरत्किन्तु यदा भेदाऽनिकश्चित् ॥ रक्तशुद्धी विच्छिद्यस्य भवोऽय मन्प्रदर्शित । तदा विद्धङ्ग स्वधिकमन्यथा रत्कित्राद्वयम् ॥ द्वादशाह यागवृद्धितता हामक माऽप्ययम् । ग्रहणीमन्त्रितत्र क्षय शान्त्व सभया ॥ ताम्रवाण न्यत्येव चक्षुषोऽपिबन्धेन ॥" अयं योग निरुत्ताऽसि ।

र द, र च, र कौ, र सु, र र कौ, र म मा एषु अन्वेषु "विमर्दिताभ्या रसाय भवन्त्या नीरण कुर्वादिह गोलक तम् । भाण्डे नवीने विनिवेद्य पश्चात्प्राकृत्यापरि ताम्रप्रात्रम् ॥ सार्धं सुहृत् विनिरुद्धय धीमातुदीपयेदीह हवानुनाऽस्य । अथस्तत मिद्धवति पर्यधीय नव-वराण्यकशानुमेव ॥ विनिय पूव रमनाश तादृशेराज निम्बुद्रव नीरकार्द्र । बतोऽभिता चाऽऽवदतायमिग्रामनो निनीज्य स्वगपेप टेन ॥ पर्माद्रो यावदत परञ्च तनोदेन पथमिह प्रयोज्यम् । कुर्वादि नाना जित्व यदास्य ज्वरस्य शङ्काऽपि तदा भवेत्किम् ॥" अयं योगी नववराऽधिकारऽसि तत्र र स, र कौ, र र कौ, र र म मा एषु नववराण्यकशानुमेवेति नाम, र च ज्वराङ्गुणेति र सु पर्यधीरस इति नाम स्थापितम् । र र स र र बीशयोद्वितीयस्थाने नञ्चवराऽरीति नाम ।

रसायने भगद्वन्नाशहरस इति नाम्ना भगन्दराऽधिकारे "रस द्विगुणापेन कुमारीद्रवमुत्तुम् । दिनत्रय विष्ट्रीयाततो गोलकमान

वत् ॥ ताम्रस्य पुटक कृत्वा तस्यमांशमथ शिपत् । सम्यह्निरुद्धय यनेन भरमना परिपूरयेत् ॥ अग्निं प्रज्वालयेच्चण्ड प्रहरदमात्रत । सन्वृष्यं पुटयेत्स ज्वरीरद्रवसयुतम् ॥ गुजामात्र सम तीयास्तेन मधुना युतम् । मगन्दरादितुल्यधेनाह मधु धरेत् ॥" अयं योग निरुत्तोऽसि ।

निष्पुष्टरानावरे सन्निपाताऽधिकार मोहेश्वर (मोरेश्वर) नाम्ना "शुद्ध स्रुं दिधा गथ दिनेकत्राऽऽर्द्रकद्वये । मर्दयित्वा च त गोल गोलार्द्धे ताम्रमण्डु ॥ शिपवा निरुद्धय तत्सर्पि शुम्भुपाया निरुद्धय च । रात्रौ गन्पुं पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ शुद्धैक नागरसम सद्यत सञ्जि पातनुत् ॥ अनुपानं पिबत्वश्वात्त वारि पल्लयम् ॥ दध्यत्र दापयेत्स्य उपार्थो शीतल जलम् । कृशत्र कुले स्थूल नर मोहेश्वरो रस ॥" अयं योगी निरुत्ताऽसि ।

र सु, र कौ, र वा, र क ल एषु अन्वेषु अवराऽधिकार रक्त मोहेश्वरति नाम्ना "शुद्ध स्रुं दिधागथ दिनेकत्राऽऽर्द्रकद्वये । मर्दयित्वा तु दग्गाल गालात् ताम्रमण्डु ॥ शिक्त्वा निरुद्धय तत्सर्पि मूपात्ते च निरुद्धय च । रात्रौ गन्पुं पाच्य प्रातरादाय चूर्णयेत् ॥ शुद्धैक नागरी सार्धं सद्यत सन्निपातनुत् ॥ अनुपानं पिबत्वश्वात्तवारि पल्लयम् ॥ दध्यत्र दापयेत्स्य उपार्थो शीतल जलम् । कृशत्र कुले स्थूल रसमाहे अतो रस ॥" अयं योगी निरुत्तोऽसि ।

र र स, र म मा, र र, र ये, र प, र क, र प्र, चि सा, र को, प, शा स, यो म, र स, र यो त, र र, र सु, र चि, भै र, चि क, र च, नि र, र वा, र कौ, र व व, र प्र सु, र चि भ, र म, वै र, र का, ना, चि, र म न, र पा एषु अन्वेषु शूलगजवेसरीति नाम्ना "शुद्ध स्रुं दिधा गन्ध यामैक मर्दयेद् दम् ॥ द्वास्तुले शुद्धताम्रमण्डु तन्निरोधयेत् ॥ ऊर्द्धोऽपी स्थण दत्ता शुद्धयेत् धारयेत्किञ्च । कृदा गजपटु पाच्य स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ॥ समुष्ट चूर्णयन्मूत्रम फण्डण्डे दिष्टुज्वम् । मशयुलेर्वशलातो दिष्टुगुणुदी च जीरयम् ॥ वचामरिचक चूर्णं कर्षमुणजले पिबेत् । अताथ नाशचच्छूल रस स्वाच्छूलकरारी ॥" अयं योग शूलाऽधिकार निरुत्तोऽसि ।

व रा, वै चि, पतवो शोभाङ्गु भाति नाम्ना "ताम्रत्रय त्रिभागेन रसगणेन लषयेत् । निम्बद्रवण सयोम्य सुदीपाय विनि-शिपत् ॥ ऊर्द्धोऽभा गथक दत्ता पाचयेदतिवन्दत । मत्वाशीर्मर्दिन इत्वा शुद्धण्डे वाङ् कान्तिने ॥ याममात्रत्र पत्तयेव स्वाङ्गशीतमुद्धरेत् ॥ गुजामात्रां बर्दी इत्वा ह्रमवाशुभ्रसयुताम् ॥ आर्द्रस्य रसेनाऽपि शोषपाण्डुनिधेनम् । शाफाङ्कुरारोती नाम्ना एवामना हितकारव ॥" अयं योग नाशचच्छूल कार निरुत्तोऽसि ।

रसायनारे श्लेष्मोदरारण्यशानुमेव इति नाम्ना "गन्धेन तुषित शिविकी मयेत्येनकषत्रसेने । ताम्रपत्रकुदरे निवेद्य दत्ताप्रकान्तएत तुदीपयम् ॥ पाञ्चैषभरुष्टयानुल्लङ्घीचचारैर् भाव्य सप्तम । केया दरारण्यह्यातुपेय बहामिन शेम्बनउमजुत्वात् ॥ शुष्ठीयुगमाश्रय गुडाद्रैकान्यामाद्रैवेपाऽपि शुशान्भितेन । बद्धयन्मुन शैषकमयुनेन धृतापणैर्वाङ्गमुपमात्तये ॥ बीजस्य कोठेन सप्राकृत र्जोत्पुण्ड्रस्य विनाशनाय । ति सार्धं रक्त स्य गुल्मारेतो कन्यारिकामैवशिशुष्य ॥" अयं योग उदराऽधिकारे निरुत्तोऽसि ।

रसमुक्तवल्ग्यां शसकासारिरस इति नाम्ना "गपधर्म्मिन रस यममित्ति वाम कुमारीद्रवैर्,मैर्द बहिमिकाङ्गयमल तल्लस्यमैर्भि तम् । भाण्डे यामचतुष्टय पच हृत् सुस्वाङ्गरीतो रस, शामयान्तरवि रराशुशुद्रय यास दिष्टुषो जयेत् ॥ चूर्णं दास्यत् द्वापरिणवद्वान्याभ्याम कानां इत, तदादे तामकादिकाप्रदहन म्प्यायतु प्रत्यहम् । गाभ्याद्रो प्यतर सुषेन शुलस सवेप निद । स, स्वादेर प्रतिभाशुयामिदरा श्रीशामुना निर्मित ॥" अयं योग शसकासारिधिकारे निरुत्तोऽसि ।

रि, र, या च एतयो शसनेनारस इति नाम्ना "श्लार्द्ध परिभेययामगुल कन्यारैर्,मैर्दे-चर्द्रदेन समतु शुलबदल टिप्सा

पदीयन्त्रके । क्षिपया वातुःस्वन्त्रतोऽग्निमभिधो दद्याद्भिषग्बुद्धिमायु ।
पक्वैकाहमथाह्वरत्रिदितो बहोभिन्धः श्रामजिह्व ॥” अयं योगः
श्लासाधिकारो निहितोऽस्ति ।

र. चि., र. च., नि. र., वै. चि., एषु ग्रन्थेषु श्लासेमादिरस इति
नाम्ना “आच्छादितशिला तार्म्यं द्रिगुणा वातुकाद्ये । पक्त्वा सन्मुख्यं
गन्धेऽथो द्विनाऽर्द्धं ता पुन. पचेत् ॥ श्लासेमाद्रिनामाऽय महाश्लासवि-
नाशनः । वर्णशुद्धिकरो श्लेष सुवर्णस्य न सद्यः ॥” अयं योगः श्लास-
कामाधिकारो निहितोऽस्ति ।

र. स., र. र. स., शा. स., र. र., र. क., भ., भे. र., नि र., वै. र., र.
मु., र. म. मु., र. च., र. प्र., र. चि., र. द्रा., रत्नयनम., वै. सा., शो.
म., र. (सा.), र. कौ., चि. र. म., यो. च., व. रा., र. शो., र. सि., र.
को., र. का., र. क. यो., वै. चि., र. क. ल., र. त., चि. क्. ऋष्यमन्यु
श्लासाधिकारो स्यार्थवर्तमान्ना ॥ गन्धक श्लोक मयं यामिकं कन्यका-
द्रवेः । द्वयोस्तस्य ताम्रत्र पूर्वकत्केन ऐपयत् ॥ दिनेकं हृष्टिजा-
यन्त्रे पचेच्छीतं समुद्रोदत् । स्यार्थवर्तमानान्ना द्रियुजः श्लासकसमुप ॥
इन्द्रवाहसिन्धुमूलं देवदारुकटुत्रयम् । शर्करामहितं सादेदुर्द्ध्वाशानि-
भृत्तये ॥” अयं पाठो निहितोऽस्ति । रसराजशर्करे अत्यवयोगस्य
श्लासकुडोरिति नाम । चिकित्सात्रमकल्पवृक्षया ताम्रपाकान्नाऽय रसो
विन्यस्यः, विशेषे गन्धको द्रियुज इति श्लोकस्य । अनुपानार्थं विशेषो
यथा—“वमननपर्विकर कारयित्वा च पश्चात्समधुक्कमधुयुक्तं रक्ति-
कैःकामागम् ॥ सद्यमथ च तत्र वाऽनुपान्यान्व्यञ्ज, निपादिदनु-
पान पीर्णान्यस्य पथ्यम् ॥ यदि कथमपि दद्यादन्तःपित्तत्रकास
श्लसनमपि च श्लेष कामलापाण्डुरोगम् । अपहरति च कुष्ठप्रकपितं
तथाशो, यद्यमथ रुषिरं वा वातपूर्वं निहन्त्यात् ॥ स्वास्त्रिभ्यमेहनिभि-
रांशं निज्जिव्यं बृद्धदोषोपि ताम्रपुराणमुवेन्नमुत्थ ॥ यो ताम्रपाकर-
समपि समन्तरोगेऽनुक्तस्यमादरश्चमल परिजीवनीह ॥” यत्रकुत्रचित्स्-
ताऽर्द्धं गन्धकमिति पाठो लभ्यते तत्रयोजन तु न प्रतिभानि, गन्ध-
काऽधिक्ये तु सन्धकं ताम्रमरणमिति प्रत्यक्षफलम् ।

रसचि., र. का., एतयोः स्वच्छन्दभैरव इति नाम्ना ज्वराधिकारो
“वेदकर्म रसो आरुतो गन्धो द्वादशकारकः । श्लका कज्जलिकायार्थं क्षिपि-
त्ताम्रस्य समुपे ॥ अष्टकर्मप्रमाणेऽस्ति न्धुवा चत विधेयत् ॥ सन्धिल्ये
विषायाऽथ स्वास्त्रिभ्यश्चैव क्षिपेत् ॥ शरावेग विषायाऽथ मुदा सन्ध-
यिधेयत् ॥ अहोरात्रं विरेयः स्वादहिल्लज्ज च पारदे ॥ उत्तयं शीतल
तत्र मधुना समप्रापयेत् ॥ शैथिल्यं च ज्वरे द्याविशुभो मरिचः सह ॥
कान्तिऽथ ज्वरे द्याविऽस्य विषयशुतम् ॥ योगयोगानुपानेन देवः
स्वच्छन्दभैरव ॥ त्रिकलरसस्युक्तं सर्वरोगे प्रयुज्यते ॥” अयं योगो
ज्वराऽधिकारो निहितोऽस्ति ।

युनाऽधिकप्रमाणेन गन्धेशयो कज्जली विषाय केवलया वेनङ्गनाऽपि
स्वरसेन भावितया वा तया ताम्रपात्रसर्वोपचिह्नान्धयो वा लेप दत्ता
गोत्र विषाय सन्धया उपरि ताम्रपात्रमाच्छाद्य वा यत्राऽग्निं प्रदत्तस्तेन च
यावन्तीभग्नस्य ताम्रपात्रस्य पत्राणां वा भरण मज्जन तेन केवलेन मणु-
क्षितेन भावितेन वा नान्नाऽनुपानेर्द्विद्विषु रोगेषु प्रयोगः कृतोऽस्ति तेषां
योगानां प्रयोगनीडवाय रतिनाऽप्ये महप्रशः श्लोऽस्ति । अग्निन्योगे
वाग्निर्विद्वचने अग्निभेदे इति गूः ररयम् । दोषनिश्चरानायाऽजोपि-
तदोस्तयो र्ने दोषायाऽस्त्विति सुर्ध्वनिर्दिष्टं विमर्शनीयम् । ते च योगा
यथा—उद्वारित्वः, १ अरकशुद्धः, २ ताम्रयोगः ३ नरन्तरारण्यऽसा-
नुनेयः, ४ भलनानारन, ५ मरेऽथ, ६ रत्नमारेऽथ, ६ श्लयज-
मेरी, ७ शोभाऽथ, ८ शोभाऽथ, ९ शोभाऽथ, १० श्लयजसाऽपि, ११
श्लयजसाऽपि, १२ श्लयजसाऽपि, १३ श्लयजसाऽपि, १४ श्लयजसाऽपि,
१५ श्लयजसाऽपि ।

भाषा—शुद्धपारा १ भागं और गन्धक २ भागलेख
नीलवर्णकज्जलीकर धोक्करके रसमें ३ दिन मर्दनकर ३ भाग
ताम्रकेपत्रोंपर लेपलगाय ६-७ कपड़मिटोदीहुई हण्डीमेंरस
पिण्डको शरावसे टककर सन्धिवन्दकर छनीहुई किसीभी रातको
हण्डीके मुंहतक द्वादकाकर भरके दोमहल संधानमक यारीक-
पीसकर राखपर द्वाके थोड़ेसे पानीके छीट लगाय टप्पनरख
सन्धि वन्दकर ६-७ कपड़मिटो लगाकर सुखाकर दो दिनरा-
तकी कड़ीभांचेदे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर जमीरीके-
रघसे एकरोज मर्दनकर छोटी २ टिकियां बनाय सुखाकर
शरावसमुपे वन्दकर ७ गजपुटी भांचेदे । स्वाहशीतल
होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती मधु और
धीकेसाय देनेसे यह भगन्दको नष्टकरताहै । मुसली, और
सेधेनमकको काञ्चीकेसायमिलकर अनुपानकी जगहलेवे ।
मधुपारार सेवनकरे । दिनका सोना और टंटाभोजन छोड़देवे ५५

५५ रविताण्डवरसः (द्वितीयः)

दशभागं ताम्रमस्य दरदो दशभागिकः ।
उभयोः कज्जलीं वृत्त्या लुङ्गनीरेण मर्दयेत् ॥ २७७ ॥
पत्रीकृतस्य नागस्य दशभागान् प्रकल्पयेत् ।
कृप्यां निधाय वै पश्चात्कमवृक्षाऽग्निना दिनम् ॥ २४८ ॥
एवं कुर्वीत नवधा यद्दि द्याद्यथाविधि ।
रसः कुङ्कुमवर्णः स्यात्प्रोक्तोऽयमनुभूतितः ॥ २४९ ॥

रसायनसं., रसायने ।

टि०—द्वितीयनागसिन्दुरेणाऽय बहुधरेषु साम्यावबहवदिग्निनामेर
स्वात्स्वतन्त्रतया निहितोऽस्ति वस्तुतस्तु ताम्ररसकोऽभ्यन्तरिण्य
विषायेकस्मै वापनाऽमायोऽस्ति ।

भाषा—ताम्रमस्य और शिंगरिफ १०-१० भागलेख
दोनोंको बिजोरेकेरससे एकदोरोज मर्दनकर १० भाग शुद्धधि-
येहुए सीसेकेपत्रोंपर लेपदेकर आनवीशोदीमेंमर्दे । फिर अच्छी-
तरहुनुसमुद्रादेकर कमष्ट अग्निसे एकदिन पकावे । स्वाहशीतल-
होनेपर निकालकर शिंगरिफका लेपदेकर एक एक दिन पकावे ।
इततरह ९ आंवे देनेसे यह कुङ्कुमवैसदरा पैयारहोगा ।
इसमेंसे १-१ रती अपना अग्निवलेदरकर देनेसे यह समन्त-
रोगोंको दूरकरताहै ॥ ५५ ॥

५६ रविमभोरसः

श्वीभेदोऽथ ह्यहं भाव्यं फपित्याङ्गीरविप्रमः ।
यहां मेहं सितार्शोद्रेः प्रातः सायं सितान्ययुक् ॥ २५० ॥
रसायनसं., मेहाऽधिकारो ।

भाषा—शुद्धतांबा, नाग और पारकीभगमोंको इष्टानिधाय
धैर्यकरसमें ३ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती दौ-
माया शरर और मधु अथवा शरर और धीकेसाय शुद्धगज
दनेसे यह प्रमेहोंको दूरकरताहै ॥ ५६ ॥

५७ रविमुन्दोरसः

सतिगुर्जं चित्रयथाजदां
मरीचयुक्तं विप्रभागयुक्तम् ।

दन्तीरसे भावनया त्रियुक्तं
रसः प्रसिद्धो रविमुन्दरोऽयम् ॥ २५१ ॥
वातज्वरार्तिं सरुलाऽऽमयत्वं
मन्दाऽनलत्वं शिरसो शुक्लम् ।
सर्वं निहन्त्युप्रतरं विकारं
गुञ्जाप्रमाणा घटकीकृता वा ॥ २५२ ॥
कुलत्ययूर्पं त्वथवा तु कृष्ण-
शाल्युत्थमण्डं प्रपिबेद्धितेन ।
कोष्ठाऽसिद्धिं विदप्रति रूपं
निहन्ति वातज्वरवातदोषम् ॥ २५३ ॥

र. च., र. सु., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—सैषानमक, चित्रकीज, चङ्गभसम, मरिच, शुद्ध-
बछनाग सब समभाग लेकर दन्तीरेस्वरससे ३ भावनाए देनेसे
यह रस तैयारहागा । इसकी १-१ रतीकीमात्रा कुलथीके यूप
अथवा शाहजीरा चावलोक मांडकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, वात
ज्वर तथा अन्य वातविकारोको यह नष्टकरताहै ॥ ५० ॥

५८ रविमुन्दरीवटी (प्रथमा)

विषं गन्धो रसः शुष्ठी मरीचाऽऽमलवेतसम् ।
पिप्पलीधूर्तवीजानि समं स्तुन्क्षीरभावितम् ॥ २५४ ॥
भावना च त्रिधा देया दन्तीमूलस्य सतथा ।
चित्रकस्याऽपि हेमन्श्च विवृत्तश्चाष्टैरस्य च ॥ २५५ ॥
मुद्गप्रमाणा घटिका रविमुन्दरसञ्चिका ।
करोत्यग्निबलं पुंसां प्वरं कालं व्यपोहति ॥ २५६ ॥
वातशूलामवात्रोगानन्यांश्च श्रेष्मसम्भयान् ।
अजीर्णं पङ्क्तिं जित्वा कोष्ठार्तिं वर्धयेत्सदा ॥ २५७ ॥
र. सु., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धबछनाग, गन्धक और पारा, सोंठ, मिरच,
अम्लवेत, पीपल, शुद्धधूर्तरेवीज सबसमभाग लेकर बारीकचूर्ण-
कर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर थूहरके दूधसे ३
भावनाए देकर दन्तीमूल, चित्रक, धतूरा, निलोत और अदरक
के यथासम्भव स्वरस अथवा क्वाथोंकी ७-७ भावनाए
देकर मूगबराबर गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, वास,
वातश्रेष्मजरोग, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै ५८

५९ रविमुन्दरीवटी (द्वितीया)

बुधोत्थरसगन्धांश्च मल्लाद्दिगुणता नयेत् ।
पिचुमुन्दरसे धौर्तेरकस्तुग्दलजाम्भसा ॥ २५८ ॥
भावयेदेकविंशत्या घटिका राजिकाऽऽकृतिः ।
धातुने सन्निपातोत्ये जीर्णं चोपद्रव्ये युंते ॥
निहन्ति च ज्वरं सर्वं रविस्तिमिरकं यथा ॥ २५९ ॥
चि. र., ज्वरं ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, पारा और गन्धक २-२ भाग,
शुद्धसोमल १भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कजलीकर नीम,

धतूरा, आक और थूहरवैपते इनके यथासम्भव स्वरस अथवा
क्वाथोंसे २१-२१ बार भावनाए देकर राईके बराबर गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ
दनेसे धातुग, सन्निपातज और उपद्रवोंकेसाथ जीर्णज्वरोंको
यह अन्धवारको सुर्वकीतह नष्टकरताहै ॥ ५९ ॥

६० रसकन्दर्परसः

सूतभस्माऽहिबद्धञ्च ताम्रं धलिसुवर्णकम् ।
रौप्यकान्तप्रवालाऽम्रं कर्पञ्च पृथगीरितम् ॥ २६० ॥
मौक्तिकञ्च द्विभागं स्यात्सर्वमेकत्र कारयेत् ।
भावनाश्च पृथग्दद्याद्दंसपाद्यन्निकयका- ॥ २६१ ॥
तालमूलीविदारीभृशर्कराशाल्मलीद्रवैः ।
कूप्यां पुनर्द्रवैरभि विपचेच्च शलाकया ॥ २६२ ॥
कूपीमध्यात्समाहृत्य नृक्षमतां प्रतिपादयेत् ।
भावयेत्तत्पुनः सर्वं निर्गुण्डीभृद्भ्रजैस्तथा ॥ २६३ ॥
चन्द्रकस्त्रिकाभ्याञ्च सुसिद्धो रसराम् भवेत् ।
शुक्लपुङ्गांश्च सिद्धांश्च कुमारीयोगिनीगणान् ॥ २६४ ॥
पूजयित्वा यथाऽध्यायं ब्राह्मणान्वेदयारमान् ।
ध्यात्वा शिवं शिवां देवीं देवं धन्वन्तरिं तथा ॥ २६५ ॥
रसः कन्दर्पनामाऽयं कामिनामर्थसाधकः ।
नृपञ्चाक्षरं देवीं जपेद्युतसहस्रया ॥ २६६ ॥
हुत्वाऽग्नौ भोजयेद्दिग्गान् देयः सर्गार्थसिद्धये ।
सिताकृष्णामधुयुतो वल्लोऽस्य जयति ध्रुवम् ॥ २६७ ॥
क्षयमेहादिकान्सांघान् सर्गपथैश्च प्रयोजितः ।
घन्ध्या प्रसूयते पुत्रं वृद्धोऽपि तरुणो भवेत् ॥ २६८ ॥
सर्गव्याधिचिन्तिमुक्तो रमते स्त्रीसहस्रकम् ।
रसः कन्दर्पनामाऽयं शम्भुनाथेन निर्मितः ॥ २६९ ॥

र. श., क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, नाग, वज्र, ताम्र, सुवर्ण, चादी, वान्तलोह,
कान्तपाषाण, प्रवाल, अभ्रक इनकीभस्में और शुद्धगन्धक १-१
कप, मुक्तापिटी २ कपलेकर बारीक चूर्णकर एकजगह मिलाकर
हसराज, चित्रक, धौकुआर, तालमूली, विदारीकन्द, दीमकका
मूलज्वर, सेमलका मुसला इनप्रत्येककी १-१ भावना देकर
सुखाकर ६-७ कपडमिठीकीहुई आतशीशीशमें डालकर बालु-
कायत्रमें रख पूर्वोक्तव्य क्रमसे डालकर पकावे और लोहेकी
शलाकासे चलातारहे । श्व समाप्तहोनेपर शीशमेंसे निकालकर
सूपनेपर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तद्रवोंसे १-१ भावना देकर
निर्गुण्डी, भगरा, कपूर और कस्तूरी, इनकी १-१ भावना
देकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर सुखाकर रखछोड़े । गुरु,
द्रव, सिद्ध, कुमारी, योगिनी, वेदपारगनाद्वय, शिव, उमा
और धन्वन्तरिका यथासम्प्रदाय पूजनकर नवार्ण (ॐ ह्रीं ह्रीं
ह्रीं चामुण्डायै विद्मः) और पञ्चाक्षर (ॐ नमः शिवाय) मन्त्रोंका
दश-दशहजार जपकरे । जपका दशाश हवनकर ब्राह्मणभोजन-
कराय इतरसकी १-१ गोली शहर, पीपल और मधुवेसाथ

देनेसे क्षय, प्रमेह, बन्ध्यत्व, पण्टत्वप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ ६० ॥

६१ रसगन्धकुरोपः

पलाशाऽस्थजमोदाभ्यां क्षाराश्च रसगन्धकौ ।
कृमिशूलहरौ तद्वदाखुपण्यम्भसा सह ॥ २७० ॥
चि.क. किमिशूल ।

भाषा—पलाशकेजीजोंकीमज्जा, अजमोद, सजी, गुहागा, खवहार, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर एकजगह घोटकर रखडोढ़े । इनमेंसे ३ मासोंकीमात्रा मूपाकर्णिकेरसके-साथ देनेसे यह क्रिमि और शूलको नष्टकरताहै ॥ ६१ ॥

६२ रसगर्भापसलोहम्

श्रासुरीमन्दिरधूमधान्य-
वराग्निसिन्धुत्यजयाद्विभृङ्गैः ।
भेकाऽऽद्रकत्र्यूपणतिककाण्ड-
स्यन्दार्कभक्तासितसिन्दुवारैः ॥ २७१ ॥
शुद्धेन कर्पाग्निमत्तमूत्केन
गन्धाश्मना भृङ्गविशोधितेन ।
कर्पाग्निमतेनाक्षमितञ्च लोहं
पुटेन सिद्धं मृदुना यथावत् ॥ २७२ ॥
तद्वक्षितं त्र्यूपणतुल्यभागं
जयत्यतीसारमतिप्रबुद्धम् ।
दुर्नामकाऽग्निप्रहणीविकारं
शोथञ्च शूलं परिणामजातम् ॥ २७३ ॥
लो. प., अतिसार ।

भाषा—ईंट, राई, रहधूम, धनिया, त्रिपला, चिन्क, सेन्धव, भांग, स्याहसेफेदभंगरे, वाग्नी, अदरख, त्रिकटु, चिरा-यता, हलदियासाइकाशीर, हुरहुर, कालीनिगुण्डी इनप्रत्येकके-साथ पारको १-१ रोज तप्तखलमें घोटकर गरमसाँसे वार वार साफकर ईंट और सेंपेको छोड़कर सनकेन्वरसोंमें दोलाय-ध्रमें १-१ रोजफकार शुद्धकियाहुआपारा १ कप, गलाकर भंग-रेकेसमें ६-७ बार ढाढकर उमीकेससे ६-७ बार मर्दनकर सुखायाहुआ गन्धक १ कप और लोहभूम १ कप लेकर सव-कीनीलवर्णकञ्जलीकर गोलाबनाय धारावगम्पुटमें बन्दकर कुचकुट-पुटकी आंचद । स्वाज्ञशील होनेपर निकालकर फिरसे पार और गन्धककायोगकरे । एते ६ ७ पुट देनेकेबाद इमें रखाडोढ़े । इसकी १-१ रती समभाग मन्दाटुंकेसाथ देनेसे अन्यन्त यज्ञ-हुमा अतिमार, पवासीर, अन्धादि, प्रहणी, शोथ, परिणामशुद्ध इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२ ॥

६३ रसगुग्गुलुः (प्रथमः)

प्राहाः पातनयन्त्रेण शुद्धञ्चन्तसमो रसः ।
रत्तिकारातमेतस्य शर्करा त्रिगुणा भवेत् ॥ २७४ ॥
ततश्चतुर्गुणो प्राहो गुग्गुलु महिषाक्षकः ।
पूतं रसममं दधानमर्दयेथ प्रयदातः ॥ २७५ ॥

विंशति र्घटिकाः कार्यास्तिस्रस्तिस्रो दिनत्रयम् ।
एकादशदिनेरन्या देया एकादशैव ताः ॥ २७६ ॥
समाहृद्वयमेवञ्च कारयेद्विपजांवरः ।
लवणं घर्जयेत्पथ्ये पादाऽऽर्द्रांशानमिष्यते ॥ २७७ ॥
दिनद्वये व्यतीते तु पादेन पथ्यमाचरेत् ।
मसूरसूपं सगुडं व्यञ्जनं चाऽथ कल्पयेत् ॥ २७८ ॥
पुनर्नवा पटोलानि तिकपनी च गोक्षुरम् ।
पटुपर्त्री कोकिलाक्षं शाकार्यं घृतभर्जितम् ॥ २७९ ॥
शर्करा लवणस्थाने वेशाचारे घनीयकम् ।
लवङ्गाऽजाजिह्वानि धान्यकं जीरकाणि च ॥ २८० ॥
पाकार्यं सम्प्रदातव्यं संस्कारार्थं भिपन्वरैः ।
भैरवस्य रसस्यान्याः क्रिया अत्र प्रयोजयेत् ॥ २८१ ॥
रसगुग्गुलुखं हि सर्वाङ्गित्वाऽऽमयानयम् ।
कुष्ठोपदंशानामानं व्रणं यातादिसंयुतम् ॥
कामदेवप्रतीकाशश्चिरजीवी भवेन्नरः ॥ २८२ ॥
भै. र., घ., उपदेश ।

भाषा—एकदशदिनकेयहए पारकी १०० रती और शर्कर ३०० रती, इनदोनोंसे चौगुना भेसापूजल लेकर पारकी-वरावर घी डालकर ३-४ पहर खूब कूटे । एकजीवहोनेपर सबकी २० गोल्या बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे ३-३ गोल्या तीनदिनतकदेकर फिर ११ दिन तक १-१ गोली देवे ऐसे १४ दिनतक दवाका प्रयोगकरे । नमक छोड़दे, भोजन अटमात्र करे । दो दिन बीतनेपर चौथाहिस्ता भोजनकरे, ऐसे प्रतिदिन एक एक अंश बढ़ाताजाय । मसूरकीदालको पीसकर शुद्धमिलाकर गुलगुलेबनावे । पुनर्नवा, परवल, गिलोय, गोसूत, दुर्गी, तालमखाना, इनमबके पत्तोंको धीमें सेककर नमकहित साक बनावे, नमस्की जगह छारमें कामले । गूगालेने धनिया, लौंग, जीरा, हिंगदेवे । अजीबे मात्रा होनेपर धनिया और भुनेजीरेना चूण देवे । अन्यपथ्यवर्गह भैरवस (नं. २) कीतरहकरे । इसके मेवनेसे कुष्ठ, उपदेश और वातादिदो रोगोंसे उत्पन्नहुए प्रणोमें निवृत्तहोकर कामदेवताका वास्तियुक्त होकर चिरजीवी होताहै ॥ ६३ ॥

६४ रसगुग्गुलुः (द्वितीयः)

पले कुष्ठं पुरोः पञ्च त्रिफला त्रिपला भवेत् ।
ततः सूतपले चास्य कर्पः सर्वप्रणापहः ॥ २८३ ॥
यो म, रगायनं, मगाऽधिकार ।

टि०—रसायनमहश्च कुष्ठवने कृष्णा दरवने, गुग्गुवने तद्वत्त निर्वाचितम्, पत्तु अस्त्युत्तम्य कर्पिकेनाश्च न मममति मन्दिरेर वृत्तिः कल्पेत् ।

भाषा—कुष्ठ १ पल, शुद्धपल ५ पत्र, त्रिफला ३ पल, शुद्धपल १ पत्र लेकर सबको एकत्रगुग्गुलुकर १-१ तोलेके गोलेबनाकर रखाडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोला रोजगुना मात्रा नमकहित घी और चनेका सेबनखनेसे मक्खनहंके त्रापुत जातेहैं ॥ ६४ ॥

६५ रसगुटिका (प्रथमा)

सूतमन्नकसत्त्वञ्च दृढं स्थाल्यां निपापयेत् ।
 सूतकं शिपिपित्तस्य मध्ये मुन्त्वा प्रयत्नतः ॥ २८४ ॥
 दौलिकायन्नरूपेण सत्त्वं स्थाल्यां हि मुच्यते ।
 तां स्थालीं स्थापयेदमं यावत्सत्तदिनं भवेत् ॥ २८५ ॥
 तत उद्धृत्य तदुद्धन्मम्लयल्लीरसै र्दंडम् ।
 पाचयेद्वह्नियोगेन सप्तवारान्समाप्तधीः ॥ २८६ ॥
 तत उद्धृत्य सूतं तं द्वितीये शिपिपित्तके ।
 मुन्त्वाऽथ काचकूप्यां तत्क्रियते मुखमुद्रणम् ॥ २८७ ॥
 गर्तायां वायुकां भृत्या प्रथमं हाडुलद्रव्याम् ।
 तस्योपरि कौमुदाल्ब्यं दीयते वह्निना पुटम् ॥ २८८ ॥
 तत उद्धृत्य वह्निवाह्ये स्थापयेच्छिपिपित्तके ।
 ततः कृप्यां तथा कृत्या द्वितीये हाडुलद्रव्याम् ॥ २८९ ॥
 एवं तच्च तथाकृत्या तृतीयेऽहुलमात्रतः ।
 एवं वह्निप्रयोगेण गुटिका बज्रवज्रजेत् ॥
 पाठामत्स्यस्य पिशितखण्डमध्येऽथ सेच्यते ॥ २९० ॥
 र. हा., स्तम्भने ।

भाषा—गारा और अन्नकसत्त्व १-१ कर्पलेकर मोरके दो पित्तोंमें अलग २ रखकर पित्तोंका सुहृद्वन्दकर किसीहण्डीमें दोला यन्नकी तरह अलग २ लटकाकर धूपमें सुरक्षितस्थानमें रखदे जहा कि सूर्योदयसे सूर्यास्ततक धूपपड़े । ध्यान रहे कि कोई जीवजन्तु उठा न लेजाय । इसतरह ७ दिनकेबाद दोनोंपित्तोंको एकसाथ अमलोनियाकरससे ७ रोज स्वेदनकर दवानिकालकर दूसरे मोरकेपित्तेमें इक्केभरदे । फिर पित्तेका मुँद बाणकर ६-७ कपडिमिठीदीर्घाकाचकी शीशीमें डालकर डालगयाय ३-४ कपडिमिठीकरदे । सूखेनेपर शीशीको खंभेमें रखके ऊपरसे २ अहुल बालसे आच्छादितकर इन्डुटपुटकीआचदे । स्वाज्ञसोतहोनेपर फिर तीसरे पित्तेमें रख एकअहुलबालसे ढककर आचदे । इस तरहकरनेसे इसकी कड़ी गोली तैयारहोगी । इसगोलीको पाठा मछलीकामास और शकरबेबीचमें रखकर सुईमेंरखनेसे स्तम्भन नहोताहै ॥ ६५ ॥

६६ रसगुटिका (द्वितीया)

रसस्तु पादिकस्तुल्या विडङ्गमरिचाऽस्रकाः ।
 गङ्गापालङ्कजरसे मर्दयित्वा पुन.पुनः ॥ २९१ ॥
 रक्तिमात्रागुदाशोभी वह्नेरत्यर्थदीपनी ।
 कण्टकिफलान्तर्मुखक्षारो गोरोरचनाजलम् ॥ २९२ ॥
 लेपमात्रेण विस्त्राव्य हठाद्वन्ति गुदाद्गुरान् ।
 भावितं रजनीचूर्णं स्नुहीक्षीरे पुन.पुनः ॥
 वन्धनास्तुदृढं योगश्चित्तव्यर्शनं संशयः ॥ २९३ ॥

भै र, यो म. अशोरोग ।

भाषा—विडङ्ग, मरिच और अश्रक १-१ तोला, शुद्धपारा ३ मासे लेकर सबका बारीकचूर्णकर गन्नामेंहोनेवाले जहली पालकके रसमें ६-७ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी मोरिया

बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अशोरोगको दूरकरतीहै और अश्रिको प्रदीप्तकरतीहै । कटहरकेफलकेमुलकेकाधार गोरोरचनेपानीमें मिलाकर लेपकरनेसे अङ्गुरोंको पकाकर नष्टकरदेताहै अथवा धूरकरचूर्णमें बारम्बार भिगोयाहुआ हल्दीकाचूर्ण मससोपर लगानेसे उन्हें काट डालताहै । पूर्वोक्त गोलीका प्रयोगकरतेसमय इनदोनोंमेंसे किसीएकका प्रयोगकरना आवश्यकहै ॥ ६६ ॥

६७ रसचन्द्रिकावटी

त्रैलोक्यविजययावीजं वीजमुन्मत्तकस्य च ।
 कण्टकारीवीजकञ्च हैजलं वीजमेव च ॥ २९४ ॥
 वीजञ्च वृद्धदारस्य समी गन्धकपारदौ ।
 आद्रेके घटिका कार्या कलायपरिमाणतः ॥ २९५ ॥
 एषा तोयाऽनुपानेन प्रातः खाद्या हितदिना ।
 चिरजं सर्वजञ्च शिरोरोगं सुदारणम् ॥ २९६ ॥
 आमवातं श्लेष्मरोगं मन्थास्तम्भं गलप्रहम् ।
 ग्रहणी श्श्रीपदं हन्यादन्ववृद्धिं भगन्दरम् ॥ २९७ ॥
 कामलां शोथपाण्डुत्वं पीनसाशं गुदामयात् ।
 यासुदेवेन कथिता घटिका रसचन्द्रिका ॥ २९८ ॥
 र स, र सु, र च, शिरोरोगे ।

भाषा—गाजा, धतूरा, भट्टवटीया, जलवेत, विधारा इन-सर्वकेबीज, शुद्धपारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजली कर अश्रखकेरससे १-२ रोज मर्दनकर मटरवरावर गोलीमें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम जलकेसाथ अथवा तत्तदोगहरानुपानकेसाथ लेकर हितभोजनकरनेसे बहुत दिनका और त्रिरोपण भीषण शिरोरोग, आमवात, श्लेष्मरोग, मन्थास्तम्भ, गलग्रह, सङ्ग्रहणी, फीलपात्र, अन्नशुद्धि, भगन्दर, कामला, शोथ, पाण्डु, पीनस, बवासीर, गुदाकेरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ६७ ॥

६८ रसचन्द्रोदयः

चन्द्रं सूतं गन्धकञ्च तालकं विपसंयुतम् ।
 भागार्जं दृङ्गं दद्याजयपालं तथैव च ॥ २९९ ॥
 कटुत्रयं तदर्थञ्च त्रिफलामूलमूलकम् ।
 मद्यं तत्समभागेन गव्यमूत्रेण कोविदैः ॥ ३०० ॥
 कुष्ठादीन्रुते व्याधीन् प्रमेहांश्च क्षयं तथा ।
 गुल्मशूलमालाजीर्णं घ्रामिकं कण्ठशूलकम् ॥ ३०१ ॥
 ज्वरञ्च सन्निपातञ्च विस्त्रुचौ विपमज्वरम् ।
 श्लान्त्योतिर्तिरक्तोऽसी रसश्चन्द्रोदयाऽभिधः ॥ ३०२ ॥
 र हा, उष्ठादौ ।

भाषा—रसकपूर, शुद्धगन्धक, हरिताल और बधनाय १-१ तोला, शुद्धमुहागा और जमालगोटा ६-६ मासे, त्रिफळ, त्रिफळा, सुखीमूली ३-३ मासे लेकर बारीकचूर्णकर सबके-बराबरके गोमूत्रसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगहरानुपानकेसाथ देनेसे

भयङ्करकुष्ठ, प्रमेह, क्षय, गुल्म, शूल, मलाजीर्ण, भ्रम, कण्ठशूल, ज्वर, सन्निपात, हेजा, विषमज्वर, इनसबनो यह नष्टकरताहै ६८

६९ रसचूडामगीरसः

सूतभस्म विषं ताम्रं जयपालं सुगन्धकम् ।
हेमतेलेन सम्प्रथं ततो लघुपुटं ददेत् ॥ ३०३ ॥
भावयेत्कनकद्रावरंजामहिषमीनजैः ।
पित्तैः पृथक् सप्तमितं विषधूमेन शोपयेत् ॥ ३०४ ॥
सप्तवारं त्रिवारं वा पश्चाद्द्रावणं भावयेत् ।
रसचूडामणिः सिद्धःसाक्षाच्छुभ्रैर्यं महः ॥ ३०५ ॥
ततोऽस्य रक्तिकां युञ्ज्याद्द्रावणं चाऽऽर्द्धनिम्बुयुक् ।
महारोगे सन्निपाते नवे चाऽप्यनवे ज्वरे ॥ ३०६ ॥
जलाऽवगाहनं कुर्यात्सेचनं व्यजनाऽनिलम् ।
तत्क्षणांमङ्गलघ्नानं कुड्डुं चन्द्रचन्दनम् ॥ ३०७ ॥
पथ्ये यथेषितं खाद्यं स्वादुद्राक्षेशुदाडिमम् ।
सितां समुद्रकरसां काञ्जिकं चानमेव वा ॥ ३०८ ॥
शूले शुल्मेऽग्निमान्यादां प्रहण्युदरपाप्मसु ।
वाते सर्वाङ्गैकैकाङ्गते वाऽप्यनिले तथा ॥ ३०९ ॥
प्रसूतिवाते सामे वा स्वानुपानैः प्रयोजयेत् ।
रक्तदोषं विना चैनं योजयेद्भर्जयेदिह ॥ ३१० ॥
तेलाऽम्लराजिकामीनक्रीधशोकाऽध्वचन्द्रकमम् ।
विल्वारजालसुपवीफलवृन्ताकमैथुनम् ॥ ३११ ॥

३ यो.त, रसायनस, र क, र सु, र चि, र.स, यो म,
र का, टो, ज्वरे सन्निपाते च ।

भाषा—गरदभस्म, शुद्धमलनाग, ताम्रभस्म, शुद्धजमाल-
गोटा और गन्धक सन समभागलेर नीलवर्णकजलीकर धतूरेके-
तेलेसे १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय शारावसमुद्रमें बन्दर
लघुपुटकी आधे। स्वादुद्राक्षीतलहोनेपर निकालकर धतूरेकारस,
बकरा, भेंसा और मछलीकेपिसासे ७-७ भावनाए देकर इस
रसकीबराबर बठानाक्रीधुनी ७ बार या ३ बार देकर अदरखके
रससे १ रोज भावनादेकर आधीआधीरतीकी गोलिया बनाकर
रखछोड़े। इनमेंसे १ गोलीसे २ गोलीतक अदरख और नीचुके-
रसकेसाथ देनेसे महारोग, सन्निपात, नया या पुरानाज्वर देसान
नष्टहोतेहैं। इसरसको देकर जल्मे बैठावे या जलकी सिरपर
धारादे। पत्थेकी हवाकरे। असशरीत मानुमहोनेपर जलसे
अलगकर केसर, कपूर और चन्दनका शरीरमें लेपने। भूस
मादनहोनेपर सपेच्छ भोजनदे। मीठीशाल, ईख, अनार,
शकर, और मूंगकापुप यथेष्टदेवे, काष्ठीसे स्नानकरावे। धुत,
शुक्ल, अमिमाम्ब, प्रहणी, उदररोग, एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गवात,
प्रसूतिवात, आमवात, इन रोगोंमें अपनेअपने अनुरागोंकेसाथ
देनेसे सबको नष्टकरताहै। रक्तदोषरगलेको छोड़कर अन्ययन
रोगोंमें इसे देसछेहै। इसमें तैल, खटाई, राई, मछली, मोष,
शोक, रास्ता, बेग, काष्ठी, बरेला, बँगन और मैनुनका
त्यागकरे ॥ ६९ ॥

७० रसनायकद्रव्यम् (रत्नगर्भेश्वरः)

स्वर्णरौप्यरविचङ्गनागकाः
कान्तविद्रुमपविमुक्तमाक्षिकाः ।
सर्वमेकसममभ्रसूतकाः
धूर्तभृङ्गहलिभानुभाषिताः ॥ ३१२ ॥
अञ्जयन्त्रविहितो रसरराजो
बलमात्रमशितो गृहहन्ता ।
रत्नगर्भे इति कीर्तिमुपेतः
शम्भुना निगदितः प्रभुणाऽसौ ॥ ३१३ ॥
सूतवज्रकनकाऽभ्रककान्ता-
धूर्तवज्रिरविद्रुग्धमर्दिताः ।
जायते पुटितमर्दनयोगा-
त्सर्वरोगहरणे समर्थकः ॥ ३१४ ॥

र शि, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुभ्रं, चांदी, ताम्र, बज्र, नाग, कान्तलोलह, कान्त-
पाषाण, प्रवाल, हीरा, मोती, सोनामाखी, अभ्रक, पारा इनकी
भस्में समभागलेकर धतूरा, भगरा, करिहारी, आक इनकेरसोंसे
१-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय शारावसमुद्रमेंबन्दर ६-७
कपडभिरिद्वे। सूतनेपर बाल, रास अथवा नमक इनमेंसे
किसीएकमें हणुडीमें दानरुपर शारावसमुद्रकेर ४पहरकी तीक्ष्ण
अग्निमें पकावे। स्वादुद्राक्षीतलहोनेपर निकालकर रराजोड़े। अथवा
पारा, हीरा मोना, अभ्रक कान्तलोलह इनकीभस्म समभागलेकर
बतूरेकेरस, सेतुण्ड और आरुकेरूपमें १-१ रोज मर्दनकर गोला-
वनाय शारावसमुद्रमें बन्दर पहिलेकीतरह भस्म, लग्न अथवा
बाहुणायकमें पकाकर रखछोड़े। येदोनों रसनायकरस तयार
होंगे। इनकी आधीआधीरतीकीभाजा तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ
देनेसे ये समस्तरागोंको दूरकरतेहैं ॥ ७० ॥

७१ रसपर्वटी (प्रथमा)

जयापनरसेनाऽपि वर्धमानरमेन च ।
भृङ्गराजरसेनाऽपि काकमाचया रसेन च ॥ ३१५ ॥
रत्न संशोधय यत्नेन तत्समं शोधयेद्बलिम् ।
भृङ्गराजरसैः पिष्ट्वा शोषयेद्दंरुदिममि ॥ ३१६ ॥
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पश्चाच्चूर्णं कारयेत् ।
चूर्णयित्वा समं तेन रत्नेन सह मर्दयेत् ॥ ३१७ ॥
नष्टमृतं यदा चूर्णं भयेत्कजलसन्निभम् ।
निर्धुमं चट्टराङ्गं द्रवीकुप्यात्प्रयत्नतः ॥ ३१८ ॥
महिषीमलविन्यस्ते तत्र तत् कदलीदले ।
निक्षिप्य तदुपर्यन्यत्यत्र दत्त्वा प्रपीडयेत् ॥ ३१९ ॥
शीतलत्वं गते पत्रात्समुद्भूय चिचूर्णयेत् ।
परं सिद्धा भवेद् व्याधिघातिनी रसपर्वटी ॥ ३२० ॥
ज्वरादिव्याधिभिर्यासं विन्ध्यं दृष्ट्वा पुरा हरः ।
चकार रूपया युक्तं सुधावत्प्रपर्वटीम् ॥ ३२१ ॥

रक्तिकासम्भितां तावद्भृशज्वरकसंयुताम् ।
 गुञ्जाऽर्द्धभ्रष्टहृद्गाढ्यां भक्षयेद्रसपर्वटीम् ॥ ३२२ ॥
 रोगानुरूपमैषज्वरेण तां भक्षयेद्बुधः ।
 पिबेत्तदनु पानीयं शीतलं चुलुकत्रयम् ॥ ३२३ ॥
 प्रत्यहं वर्धयेत्तस्या एकैकां रक्तिकां मेषकम् ।
 नाऽधिकां दशगुञ्जातो भक्षयेत्तां कदाचन ॥ ३२४ ॥
 एकादशदिनाऽऽरम्भात्तां तथैवाऽपकर्षयेत् ।
 एवमेतां समश्रीयान्नरो विशतिवासरान् ॥ ३२५ ॥
 शिवं शुं तथा विप्रान् पूजयित्वा प्रणम्य च ।
 श्रद्धया भक्षयेदेतां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ३२६ ॥
 ज्वरञ्च ग्रहणीञ्चाऽपि तथाऽतीसारमेव च ।
 कामलां पाण्डुरोगञ्च शूलप्लीहज्जलोदरम् ॥ ३२७ ॥
 एवमादीन्गदान्हात्या हृष्टः पुष्टश्च वीर्यवान् ।
 ज्जिरेह्यंश्रुतं इत्यर्थे प्रलौक्यप्रलितप्रकृतितः ॥ ३२८ ॥

भा प्र, चि क्र, र सु, र क ल, नि र, यो म, र त, भै र, र सु, रसामार, र, प्र सु, र म, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—“हाद्य रत्न ताम्र यच्च परिदीयते । विषयाख्या तु सा शेषा सर्वरोगनिपुडनी ॥” इति रतेन्द्रसारसङ्घे दृश्यते परन्तु प्रयाणामधिक तथा योगे पञ्चाग्न्युष्णीनि नाम स्वापयितुमुचित न तु विषयपदीति । रसमागरे गिरिकर्णविषमानकाकामाचीशृङ्गवेरैरते थारदस्य स्वैदनादिक विहितम् । भैषज्वरनाबल्ल्याञ्च जयन्यरेण्डाऽऽर्द्धककामाचीभी रस शोधन विहितम् । र, प्र सु, र म् एतयोरदण्डप्रुष्टाद्रिवर्णीकाकामाची दाडिमवीररते प्रत्येक पारदस्य मर्दन विहितमते द्राग्निभीरीज्वर साऽप्येव नियोनीयः । भावप्रकाशार्थे स्वैदन विहितम् । रसमागरे निर्दिशे श्रेष्ठ द्राघन विहितम् । एव भैषज्वरनाबल्ल्यामपि मर्दनशोधनरूपेण शोधन निदर्शितम् । अधिक तु न तद्वानिरेनिन्यायासुकूप्येन जवाचप न्तीनिरेण्यरेण्डशृङ्गकामाची दाडिमीवीरान्तीति सर्वोपधत्तै मर्दन स्वैदनादिभी रसशोधन विधाव सर्वेषा ग्रन्थानां मामत्रस्य सन्पाथैक ष्व पाठ मन्मादनीय इत्यस्मात्क समसि । र वि, यो र, वृ यो त, ना वि, र च, रसायन, र नि, नि र, र का, यो म, दा, र स, र क ल, य, र र दी, र सु, चि र म, चि क्र, र र स, र कौ, वै, र, र म्, ग्रहण्यधिकारे । एषु मन्थेषु “मन्थसकजलौ लोहं द्रुता बादर बहिना । गामयोपदिग्निन्मन्तकरीदरुपातनात् ॥ कुर्वीत्पर्विकाकारामस्या रक्तियत्र क्रमात् । दशगुण्यत्क वायुधयोग प्रहराद्वत् ॥ तदुक्तं वसुधामय भक्षय इतिसे पुन । क्लीय एव मामाग्न्यदण्डमत्र तिथियते ॥ वर्ज्यं विदाहिलीरम्भल्ल तैलञ्च साधयम् । ग्रहणीश्ववृण्णार्थो शोषाजीर्णादि नाशिनो ॥” ईदृशं पाठो दृश्यते, तत्र पारदमन्थयो शुद्धिनिष्कास नाऽतिरिक्तो विशेषो न दृश्यतेऽतस्तस्याऽप्येवाऽन्तर्भाव करणीय । कावाऽप्यधिकोक्तत्वाद् शुद्धवक्त्राशाम्बावे तु गौणकल्पोपदेशाऽम्बावेऽपि जनाना स्वाम्यान्तिकी प्रवृत्तिभेदतीति श्रुत्वा तदर्थं स्वतन्त्रपाठकल्पनस्याऽन्याय्यत्वमिति सुधीर्निर्विभावनीयम् । साधारणगोष्ठे च टोडरानन्दे द्वितीय स्थाने वीचकशास्त्रालिखेष्टपूणमपूनि शसुपानत्वेन विहितानि सङ्ग्रहण्या तदतिप्रशस्तारम् ॥ कुञ्जचित् “श्रद्वाशुषिगामूलं सवच क्षीरपाचितम् । पत्नीरससुक्तं कसताहादशरतीप्रयुज् ॥” इति पाठोऽऽरम्भीरीये अनुपानत्वेन गृहीत । कुञ्जचित् “कृष्णधरुजं बीजं पत्रमपि पपरीरस । ताम्रगोम्यं प्रशमयेद्भ्याद भूतसम्भवम् ॥” इति पाठ उन्मादे अनुपानत्वेन गृहीत । वि ब्र एव विशतिवारणि पर्वटी रसपर्विकाम् । रुद्रगुण्येन सम्भ्राव्य क्रियापाने प्रदापशेदितिविशेष । र कौ, वै र एतयो “पर्यत्या दिग्गुणी जीरस्युर्वायो रामदस्य च । दीपते मधुना चैषा शिशोर्धुञ्जकः ॥

ध्वम् ॥ श्रेष्मतिताऽनिलधारासामपीनमपाण्डुता । श्लैश्मत्सादृश्यानि हन्यादरमाञ्चर नवम् ॥” इत्यधिकतया पाठो दृश्यते । तत्राऽनुपानानां मान्यतत्वात् तद्वेदेन पाठभिरता भवितुमर्हत्य सौष्टे पाठोऽप्यैवाऽन्तर्भावतीति नोभ्यम् । भैषज्वरनाबल्ल्याञ्च पर्वटीसेवनप्रपञ्चवितरतो निरुक्तिते सोऽप्यस्ताप्यसोऽद्रव्य । स यथा—

श्रीविन्यवामिपादौ नला धन्वन्तरिञ्च सुरभिवनम् ।
 रसगणकपण्डित्वापरिपाटीपादत्र वक्ष्ये ॥
 मन् रते ज्वन्त्या” पश्चादेरण्डसम्भूते ।
 कार्दकरसे च मृत पत्ररते कावमाच्योश्च ॥
 ममसुदिताऽनुपूष्यां मर्दनशुक्लं करण गृणीयात् ।
 प्रलरमानमप्ये शुद्धिरिव पारदसोक्ता ॥
 शुचपिच्छमन्त्रायौ नवनीलनमुषुति ।
 मद्युण कठिन क्षिन्ध श्रेष्ठे गन्धक इत्यते ॥
 इत्वा मद्र गन्धकमतिकुशलं शुद्रतण्डुलाकारम् ।
 तद्भृशरान्मर्दनन्तर भावयेत्यजे ॥
 तदनु च शुष्ण कुर्वीद्वल्लिखमानञ्च सप्तपा रौद्रे ।
 तदनु च शुष्ण चूर्णं कृत्वा विन्यस्य लौहिकामप्ये ॥
 निर्धूमवदखाद्याहारे न्यस्त विलास्य तैलसमम् ॥
 पात्रस्थितशुद्धरात्ररसस्यो दाल्धयेत्सिपुण ॥
 तस्मिन् प्रविष्टमात्रं पठित्वस्य याति गन्धकचूर्णम् ।
 पुनरपि रौद्रे शुष्ण केतकर गता समानता नीतम् ॥
 शुद्धे सूते शोषितगन्धकचूर्णेन तुष्यता कार्या ।
 तावन्मर्दनमनयो यांश्च वर्णीऽपि दृश्यते सूत ॥
 पश्चात्कजलमदृश चूर्णं लौहीद्विपत्त द्येन ॥
 निर्धूमवदखाद्याऽहारे न्यस्त विलास्य तैलसमम् ॥
 सप्तो गोमयनिधिरे कदलिदले दाल्धयेन्मृदुनि ।
 लौहीरियतमवशिष्टं वठिन तत्र प्रदीतव्यम् ॥
 पश्चात्पण्ड्या पर्वटिका वीर्यत लकै ।
 मयूरचन्द्रिलत्कार विद्म वन तु दृश्यते ॥
 तत्र निर्दि विनानीयद्विधा नैराऽन सद्युष ।
 मसुदितिके कार्या ३ भ्या च पटवी मनुजे ॥
 जीरकपुपे हिङ्गोर्द्वे शयेच बालक च्चर ।
 जीरङ्गिद्वुरसेन स्वनुपान सल्लिख्यारया कार्याम् ॥
 रसगन्धकपटिका भक्षणमात्रे तु नाम्मस पानम् ।
 प्रथम गुञ्जातुगत प्रतिदिनमेकैकद्विती भक्षयम् ।
 दशगुञ्जापरिसाणाञ्चाऽपि मर्दनीयमेकैकद्वितीदिनानि ।
 ताऽऽपिपयोपमन्यन्निनमाहात्म्यमवर्षेपयम् ॥
 न्यायामथाऽऽऽप्या रनान न्यायामहितमत्यन्तम् ।
 पाक स्तोत्र सर्पिर्बीरकषाभ्यांकेवशरीरश्च ॥
 तिन्धुद्वेने रचनमोदनपानानि शाल्या भक्ष्या ।
 कृष्ण वातिलक्षरमविद्वर्षी च वात्यकम् ॥
 अक्षतनुप्रसेते कदलिद्वमरिण पटोश्च ।
 वसुकपलशृङ्गवेरौ भक्ष्यौ शाकेषु कावमाची च ॥
 लावणवतकतिविरि मयूरमासञ्च हिनरर भवति ।
 मयूररोहितमीनो वाऽदनीयौ कृष्णमत्स्याश्च ॥
 नीरक्षीर न्यायानमर्दनीयं द्रव्यवददी च ।
 रम्भाफलद्वल्लकमूलानां वर्जनं वायम् ॥
 तिक निम्बाद्रिवमपि नाथ नीष्ण तथाऽऽञ्च ॥
 आनुपमासजलवरात्रिपण्ड्या मर्षया स्वायज्यम् ॥
 क्लीणा सम्भापगमपि गन्धक कृष्णमत्स्येषु ।
 नाऽप्यल न दधिशाक पटया भक्षणे भव्यम् ॥

गुडरूपश्चाकरादिव इशुविकारो न भक्ष्य इशुश्च ।
 न दल न फल न लताप्यर्दनीया कारवेहस्य ॥
 श्लोकं पुरामिह भक्ष्य पथ्ये माकाइशुसुत्यानम् ।
 रुतर्षाडाया भानमवश्यमेव महानिशावाञ्च ॥
 समजलमिश्र पत्र धीर यदाऽपि न लपक्वञ्च ॥
 वधमपि भाजनसमातित्रम जात ज्वर विरक च ॥
 वमने च नारिकेलमिलि दुग्धञ्च पातव्यम् ।
 स्वप्ने जागे रमिने विरेकश्च धीरमव पातव्यम् ॥
 न शायते वमुष्ण लक्ष्याऽलक्ष्या प्रतीयते यदि वा ।
 अशक्तिश्चिनिश्चिनमन्तवद्दृष्टावै रूनमवधार्या ॥
 किं चतु वाच्य रागी यदा दधा भवति साकाङ्क्ष ।
 पाययितव्य दुग्ध तदा ददा निर्दयीभूय ॥
 विहिताकरणे चास्यामविहितकरणे च रोगापत्तानाम् ।
 व्यापत्तयाऽपि बहुधा दृष्ट्वा प्रामाणिके वैदुश ॥
 तस्मादवधातव्य भक्तितव्य भाजनं निपुणै ।
 एवमपि त्रियमाणा भवति श्रेयस्करा नियतम् ॥
 असाँगम ग्रहर्णा सामा दृष्ट्वाऽनिमात्तै च ।
 कामलपाण्डुव्याधीर्ग्रीहानञ्चाऽतिदाम्ण्य इति ॥
 गुडमज्जदरभरभनराग हत्यामवनाश ॥
 अष्टाशैव कुण्डान्येवमायादिरोगाश्च ॥
 श्यमम्पित्तशमनी त्रिदापदमनी धुषानिव मनीया ।
 अग्नि निमज्जमुदर ज्वालाज्वलि करत्यागु ॥
 रमण्यवपपष्टिका त्वपवाय व्याधिसङ्घानम् ।
 वर्णापलिनस्यै पुष्प दीर्घायुष कुण्ड ॥
 व्याधिप्रभावहरणादपमृत्युशाननाशकराणाम् ।
 मर्त्यानाममृदन्धरी रमण भवपर्वण ज्यति ॥
 शम्भु प्रपण्य भक्त्या पूजा इत्या च विष्णुचरणाम् ॥
 रमण्यवपपष्टिया भक्ष्या तनाऽतिसिद्धिदा भवति ॥
 नृणां मन्त्रा भुवमित्यमाराण्य मतनशालिा कुण्डे ।
 श्रावत्नादुविनिर्मिता मन्त्रप्रमपर्वण श्रेष्ठा ॥
 उक्तमव हि वन्त्य नानारागनया तथा ।
 औपत्रियैवेवाऽन वन्त्या नातरयिया ॥
 प्रत्यावविनाश्राधै श्रेयपालवर्जि न्यसत् ।
 इन्मद्रव्य प्रात यौगिनीनामत परम् ॥ इति ॥

विशेषमन्त्रचम

“ प्रथम गुग्गुलुगत प्रतिदिनेमैकैकशुद्धितो भक्ष्यम् । दश
 गुग्गुपरिमाणाम्नाऽधिकमदनीयमेकविंशतितानि ॥ ” इति वि-
 न्यव्यासिप्रयोगे गुग्गुद्वयात्प्रथममारम्भ इत्या प्रतिदिनेमैकैक-
 गुग्गुप्रमाणं वर्षयित्वा नवमदिने दशगुग्गुपरिमाणं भविष्यति
 ततोऽनन्तर द्वादशदिनानि यावत् तत्रप्रमाणं स्थिरं भवति द्वाविं-
 शतितमं दिनमारभ्य प्रतिदिनेमैकैकगुग्गुया हासं कर्तव्यं इत्य-
 त्रिंशद्दिने प्रयोग समाप्यते । भावमिभ्रादिमते प्रथमं गुग्गुत
 आरभ्य प्रतिदिनेमैकैकगुग्गुया तृदि, एकादादिनादारभ्य
 प्रतिदिनेमैकैकगुग्गुया हास इत्यं विंशतितदिनेक प्रयोग समा-
 प्यते । एतावता कात्रन रोगस्य देववतामि क्षयता सम्पद्यते
 तर्हि द्वितीयप्रयोगाऽऽरम्भा निरर्थकोऽस्ति । देववताप्रथमप्र-
 योगेनोत्पापता न हृद्यत तर्हि द्वितीयवृत्त्यादिप्रयोगा अरि-
 ममादरणीया । विन्ध्यकागिमते द्वितीय प्रयोगो मासद्वय
 समाप्यते । भवमिभ्रादिमते तु चत्वारिंशत्ता दिनेरिति

विशेष । एतस्मिन्नुभयविधप्रयोगे जलनिषेधमत्यावश्यक-
 मन्त्यन्ते चिकित्सका । केचित्तु गुग्गुप्रशालादिक्वमपि दुग्गा-
 दिना कारयन्ति । जलरूपदीनमात्रेणाऽपि मृत्यु सम्पत्त्यते
 इत्यादीत्यादिविभीषिका प्रदर्श्य रोगिणमद्रप्रणाथितं कुर्वन्ति
 तत्र क्रीडयापातव्यमिति विचारे—प्रथमतो जलरक्तगवेषणाऽ
 त्यावश्यिनी प्रतिभाति । अप एव समजर्दी तामु योजमवा-
 सृजदिति मनुवाक्येन स्थूलसृष्टिनिर्माणे जलम्य प्रयातत्वमा-
 याति । प्रत्यक्षतोऽपि स्त्रीयुससयोगे व्युत्थयोर रुजकयो र्गमो-
 पादानकारणत्वादन्यतत्वाऽपेक्षया शरीरे जलीयभागस्याऽत्यधि-
 कत्वादेकान्ततो जलजनं न युक्तिसहम्, दुग्गादावपि प्रसुरज
 लीयभागत्वादुत्कटवृत्तोद्भावाऽभावाद् दुग्गजलेन मन्दाभ्यादि
 रोगसङ्कोरोदयाय जलवर्जने तात्पर्येण तथाविधवचनान्युपल-
 भ्यन्ते, उत्कटवृत्तोद्भवे तु स्वच्छजलमहणे दोषाऽभावोऽस्तीति
 बोध्यम् । यत्र तु स्वच्छजलाभावोऽस्ति तत्र कृमिरीत्यापि
 तत्स्वच्छता सम्पादनीया । फलीयस्वरसन्तु पौरस्त्यपाथात्य-
 वैया ऐकमत्येन व्यापारयन्त्येव तत्र न कश्चित्प्रत्यवायो हृद्यत
 इति प्रत्यक्षविषयः । “ तृतीय एव मासाऽऽज्यदुग्धमत्र विधी-
 यते ” इत्यादिवाक्य केनाऽभिप्रायेण निहितमस्तीति न श्यायते,
 प्रहणीरोगाऽभिभूतस्य तृतीय एव दिवसे तादृशद्वयदयाऽभा-
 वात् । पर्वटीसेवने मार्गद्वयम् दुग्धतत्कलसेवनेनैव, लक्ष्यसे-
 वनेन द्वितीय । तत्र प्रथमो मुख्यकल्पो द्वितीयस्तु बालभीत्युऽ
 भारस्त्रीषेणानामगत्योपयोगित्वात्क्रियते । प्रथमकल्पे स्वरव-
 प्रहत्यानुकूल्येन तदुद्भवयो निर्णय करणीय । केवलतत्कप्रयोगे
 रात्रावपि तत्सेवाया दोषाऽभावोऽस्ति । यत्र तु द्वयोरेपि सम-
 यपरत्वेनोपयोग क्रियते तत्र तु रात्रौ दुग्धस्यैवोपयोग क-
 रणीयो न तत्रम्य । तत्रम्य सम्यक् पाकौत्तरं दुग्धस्य प्रयोगे
 दुग्धप्राप्तौत्तरं तत्रस्योपयोग च न कश्चिप्रहत्यायोपस्थान
 भवति । यत्र तु द्वयो मन्थ जन्मप्रसृत्यस्य विहृदताऽस्ति
 तत्र तत्सेवने दुरामहो न करणीय । फलेषु मासुत्पायतुत्पायता
 सर्वोत्तमाऽस्ति । मिष्टनिम्बवृत्तेवाऽपि ताग्नेवाऽस्ति । पद्मो
 धृताया गोपालकट्टी सेवनीया, वेगाऽधिक्य कर्त्रिवायाम ता
 नोपयोग्या, अग्न्यानि लघुनि मसुराभ्यनम्यानि फलानि यान्यु-
 पलभ्यन्ते तानि प्रत्यक्षदुग्धानि चेतप्रयोगयानि । प्रयोगगमा-
 सावप्रयोगे विरचनकल्पवत्करणीयति हृद्यम् ।

भाषा—भाग, एण्ड, भगश और मकोयकसोते १-१
 दिनपारको रवेदनकर । भगके रसने शुद्धगन्धकको बार
 मदनर धूमने ३ बार या ७ बार गुत्तावे । फिर इशुदके
 पार और गन्धकको समभागलेकर नीलांगनरगगीकर पीपुने
 हुईलाहकीकफटीमे निर्गम सेरकेयोगनेष गगनर ताजे मैके
 गोमरपर रसगुए केलेदेगेपर कालर ऊगरे दृशर केरहाण
 रग गोबरे देषाड । एवात्रदीतगनेपर निकारर रसलेके ।
 शिख, शुभ तथा प्राङ्गणनेगेकी पूजापर इगमेगे १-१ एकोकी
 माया १ मासा मुनेदुएदीरे और आपीरनीमुनीहीमे गण
 अपवा केवल आपीरनीहीमे गण अपवा समनेगएटाए

साय खाकर ३ बुल्ड ठढापानीपीवे । इसकीमात्रा रोज १-१
रती बढावे और १० रतीतकबडाकर ग्यारहवें दिनेसे १-१
रतीकमकरे । इसतरह श्रद्धापूवक इसकासेवनकरनेसे ज्वर, सङ्गहणी,
अतिमार, कामला, पाण्डु, शूल, हीहा, जलोदर इत्यादि समस्त
रोगोंको दूरकर आदमीको हृद्युष्ट और वीर्ययुक्त बनाकर बली
पल्लितादिकको दूरकर सौ वर्षसे अधिक आयुको करतीहै ॥७१॥

७२ रसपर्वटी (द्वितीया)

विमृद्य बलिपार्वदं तुलसिजेन हत्वा घटीम् ।
निधाय नवभाजने तदनु गोलकस्योपरि ॥ ३२९ ॥
निधाय दृढशुल्वजं त्रिघटिकं निरुद्धं पचेत् ।
प्रदीपदहनेन सिद्धयति ततोऽधरे पर्वटी ॥ ३३० ॥
विद्युष्य जरणादिना तु रसनामयो काकुदम् ।
तथाऽऽर्द्रकरसान्वितं तुलितयल्लमेयाऽश्रतः ॥ ३३१ ॥
पटावृतशरीरमास्थितवतश्च धर्मोद्गमाः ।
घृधि प्रति समश्रत सुनयतकशाल्योदनम् ॥ ३३२ ॥
दिनत्रयेण निश्चितं नयज्वराननेकराः ।
शर्मं प्रजन्ति यानल न जेतुमोपधीवलम् ॥ ३३३ ॥
यो च, रसायनस, र सि, जस्ताऽधिकरे ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली
कर तुलसीकरसे एकरोज भर्दनकर गोलाबनाय मिठीके नये
वर्तनमें रखकर ऊपरसे तावेनीकटोरीसे ढककर दृढसन्धिबन्दकरदे
और कटोरीको बाह्यसेढककर दीपामिसे ३ घडीतक आचदे ।
स्वाश्रुतीतलहोनेपर घारीकपीसकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती
कीमात्रा अदरककेरसकेसाय मिलाकर खिलावे । खाबेसेपहिले
जीरेप्रयतिकेचूर्णसे जीम और ताड़वगैरहको साफकरले । दवा-
देनेकेबाद गर्मकपड़ा ओढाकर सुलावे । एकचुराकने यदि पसीना
न हो तो आयेपण्टेकेबाद दूसरीखुटावदेदे । खूपसीनाहोनेके
बाद अच्छीतरह शरीरको पोंछजले । भूखलगेनेपर ताजीछाछ
और पुरानेचाबलेदे । इसतरह तीनरोजकरनेसे अन्य औषधियोंसे
जो नवज्वर शान्त नहींहोतेहै उनको यह पर्वटी नष्टकरतीहै ७२

७३ रसपर्वटी (तृतीया)

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं मर्द्यं भृङ्गीरसैः क्षणम् ।
पाचयेद्दोहपानस्थं चाल्यं लघुपुटेन च ॥ ३३४ ॥
लोहमस्माऽध्यावा ताम्रं पादाशेन विनि क्षिपेत् ।
पाच्यं प्रचालयन्नेव यामार्द्धं मृदुबहिना ॥ ३३५ ॥
तक्षिपेत्कदलीपत्रे गोमयस्योपरि स्थिते ।
तत्पत्रं धारयेद्दूर्ध्वं तद्दूर्ध्वं गोमयं क्षिपेत् ॥ ३३६ ॥
तत सञ्चूर्णयेत्खल्वे निर्गुण्ड्या भावयेद्दिनम् ।
जयन्तीत्रिफलाकन्यावासाभाङ्गीकटुत्रयं ॥ ३३७ ॥
भृङ्गपत्रिमिनुमिण्डोभि भावयेत्प्रत्यहं पृथक् ।
आर्द्रकस्य द्वयं पश्चाद्भावयेद्दिनसप्तकम् ॥ ३३८ ॥
अङ्गारैः श्वेदेत्येष्ट्यात्पर्वटाख्यो महारसः ।
अष्टयुजं प्रदातव्यं शुष्कात्रं पथ्यमाचरेत् ॥ ३३९ ॥

वर्णस्य त्वचो मूलं फवाथयित्वा पिबेदनु ।
त्रिसप्ताहप्रयोगेण चान्तःस्थां विद्रधि जयेत् ॥ ३४० ॥
चतुर्गुणामितो देयः सम्यक् श्लेष्माऽधिके ज्वरे ।
वासाशुण्ड्यभयाकाथमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३४१ ॥
चञ्चकस्य रसे वाऽथ पेया श्लेष्मज्वरापहा ॥ ३४१ ॥

र सु, र दी, चि र भ, नि र, सु प्र, र को, र सि, यो
म, यो, त, यो स, र का, र (मा) श्लेष्मज्वरे ।

टि०—र का, र (मा) एतयो श्वेतशोबिनीति नाम । र (मा)
लोहताम्रकसेनाराभ्यामपि विकल्प्र प्रदर्शित, भावनायाञ्च सुरसा-
मश्रुण्डीभ्यामपिक्ता प्रदद्या इति विशेषे । रसदीपिकायां लोहस्थाने स्वर्ण
विकल्पित भावनायाञ्च मुनिचिकित्सकाने सुरसामेवनादौ नियोजितौ
इति विशेषे । र स, र च, र र, च, वै क, र सु, भै र, र क
ली, रसचि, र श, दो प्यु हिकाशान्ताऽधिकार नाम च लोहपर्वणीति
यथा—“भागे रसस्य गन्धस्य द्रवितो लोहभस्मन । पतङ्कद्रवीभूत
मृद्वसौ करलीरले ॥ पातयेन्नोमयने त्वेतेपरि योत्सेत् । तत पिण्डा
द्रवमि सप्तभा भावयेत्पृथक् ॥ भार्गी मुण्डी मुनिवर जया नित्युगिञ्जका
तथा । श्लेषवासकन्याद्रवैस्सस्मालुते पचेत् ॥ आगन्ध सर्परे ताभे
पपत्वाख्यो रसो भवेत् ॥” इति ॥ र चि, नि र, वै चि, यो र, र
क ल, रसायनम, भै सा, र का, र र दी एषु श्लेषेषु क्षुधाऽपिक्ते
भाङ्गीमुण्डीकाऽतिस्वल्परसैश्च विजयादे । कन्याद्रवैश्च धोपाजे शुष्क
शुष्क पुष्टेभु ॥” इत्येक श्लोक भावनां वैलशुण्डीयौषक विन्यस्त तस्याऽ
प्यत्र सप्तदशैः श्लेषभावात्सोऽप्यवैवाऽन्तर्भावनीय । कुत्रचिदगन्धगन्धयो
समानयो वज्रलीं पूजा भावना निष्कषस्य ग्रहण्यविचारे प्रयोगो
योजितो यथा र च, भै र, वै क इत्यादिपु श्लेषेषु । तथा च वृष्यु
स्थानेषु लोहस्थाने ताम्र प्रक्षिप्य ताम्रपत्रिका कृता । रसकामेनीं तु
तुल्याभ्या रसगन्धाभ्या द्विगुण ताम्र प्रणिय नने वातक्रेष्मज्वरे सार्धं
वत्सव्य युष्मार्द्रकरसाभ्यां नियोजितम् भावनाश्च न हृदयने नाम च
मृतसञ्जीवनीति स्थापितम् ॥ “छाड पारदतुल्य गन्धक भवेत्तत्खले ।
वासाहृण्णपाप्यात्सर्वसिर्भास्य सत्त्वर तु ॥ मिदो भवति रसेन्दो हन्या
रित्त सरत्तज । वासवरसपरिभागतितो हरीतकीचूर्णम्लुक ॥ मधुसुग्ध
छमिता वा वासात्समयुक्तो वापि । कुले पुष्टि परमां साक्षपित भवे
दाशु ॥” इति पाठो रक्षिपिताऽधिकार रसावतारे । रसेन्दुश्च इति नाम्ना
हृदयते सोऽप्यत्राऽन्तर्भावनीय । पर्वटीकरणेन गुणान्द्वैर्दिर्भविष्यति ।
र प्र सु, र म मा, रसमागर, र का, एषु श्लेषेषु तु लोहताम्रयोः
भयोरपि योग विधाय एक पाठो निहितोऽस्ति यथा—

रसरं फल्युगमित शुभं रुचिरताम्रय समभाविकम् ।
बन्धिताश्च श्लेन विमर्देयदितिक्रियाभिज्ञे त्रवति स्वयम् ॥
तदनुताम्रमयो विनिर्भवतां त्रयमिदं सरसञ्च विमूर्च्छितम् ।
विधयेद्वय लोहसुष्टवर्षिणा तदनु भावयदोपरि दास्यते ॥
भवति सारतमा रसपर्वटी सकल्लोगविधातकी हि सा ।
कुह समानकडुत्रयसञ्जता मरिचसप्तमिता सुखदा भवेत् ॥
अनुपाने प्रयोक्तव्या विकल्पा शौद्रसञ्जता ।
पर्वटी भक्षये प्रातस्तथा न्युपगमसुनाम् ॥
सन्निघताहरा सा तु पञ्चकोलेन सञ्जता ।
भक्षिना मधुना सार्धं सर्वस्वरविनाशिनी ॥
कणाश्रीदिग सञ्जिता सर्वशोफान्निवृन्तति ।
श्यामान्निर्कडुकेनाऽपि वातना प्रहणीभवेत् ॥
गुण्युजविचयायुक्ता वातरक विनाशयेत् ।
वातपक्ष्वाह मन्थयिष्यत्पुष्करसञ्जता ॥

ब्योषे. कन्यारसैर्वाऽपि कफामयविनाशिनी ।
दशमूलश्रेणोऽपि वातम्बरनिवहणी ॥
वाकुचीबीजकल्केन कण्डुपामे विनाशयेत् ।
आरुच्यंरप संहिता सा तु सिन्धुविनाशिनी ॥
गोमूत्रेणाऽनुपानेन चार्शना हि विनाशिनी ।
नतमालोऽनुनक्षेत्र चित्रको मृष्टराजक ॥
शास्मली निम्बपत्राञ्च कल्हारश्च शुद्धचिका ।
निर्गुण्डी च समाशानि कारयेद्विष्णुतमः ॥
चूर्णीकृत्य च ताम्रं परंश्याश्चाऽनुपानकम् ।
अष्टादश च कुष्ठानि निहन्त्येव न सशयः ॥
पर्वटी रसराजस्य रोगान्हन्त्यनुपानतः ।
अपथ्य नैव चाश्रीयाद्दीपदूष्यभ्यपेक्षया ॥” इति

सोऽप्यत्रैवान्तर्भावनीयः । अनुपानवृत्तसया समग्र. पाठस्तु
लिखित एवाऽस्ति । अस्मिन्योगे रसमागरे त्रिकट्वादिगेलन विनैव पर्वटी-
स्वरूपेण स्थापयित्वा तत्तद्रोगपरत्वेन त्रिकट्वादीनां योगः कृतः, पत्र्यां
रोगा अनुपानपरत्वे अपिकाश्च परिगणिता नाम च विज्ञापपर्वटीति
स्थापितमिति विशेषः । र. का अमृतपर्वटीरमायनमिति नाम ।
अत्र पारदगन्धकयोर्योगे प्रधानत्व स्वीकृत्य रसपर्वटीति नाम्ना व्यवहारः
मुष्टुत्तर, तदङ्गभूतग्रेणोपरिनिर्मिष्टदिश लोहताम्रस्वर्णाराणि समा-
यान्ति तत्र प्रधानबुद्धया रसपर्वटीति नाम संयुं योगेष्वधिपत्यभाववति ।
कैश्चित्तु एत विशेषमनालोच्योऽप्रधाने ष्व प्रधानता स्वीकृत्य लोहयोगे
लोहपर्वटी, ताम्रयोगे ताम्रपर्वटी, हेमयोगे हेमपर्वटी, तारयोगे तार-
पर्वटीति नामानि दद्यानि परन्तु अस्मदकरीत्या रसपर्वटीति नाम
प्रधानताप्राप्तिये अत उपरिनिर्दिष्टाः सर्वेऽपि रसा रसपर्वत्यामेवाऽन्त-
र्भावनीयाः । यत्रकुनश्चिद्रावनाया विशेषो लभ्यते चेत्सोऽप्यत्रैवानुपेयः,
तदनुपाने न काऽपि हानिरिति दिक् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भाग लेकर नीलव-
र्णकजलीकर भंगरेकेरससे एकरोज मर्दनकर मुत्पाकर धी पुतीहुई
लोहेकीकड़इमें डालकर बेरकेकोयलोपर फकावे । गलनेपर
इसपर्वटीकाचतुर्थात् लोह अथवा ताम्रभस्म मिलाकर चलातारहे ।
एकजीवहोनेपर प्रथमपर्वटीकीतरह डालदे । स्वातन्त्र्यतलहोनेपर
प्रथमकीतरह कजलीवनाय निर्गुण्डी, जैत, त्रिफला, घोड़ेवार,
अड्डा, भारती, त्रिकटु, भंगरा, चित्रक, अमृत्य, मोरपतुण्डी
इनप्रत्येकके स्वरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर अदरलके रससे ७
भावनाएं देकर प्रथमपर्वटीकीतरह स्वेदन देवे । स्वातन्त्र्यतल
होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे ४-४ रती अड्डा, सोंठ
और हँके ढाणकेसाथ देनेसे श्लेष्माऽधिकसन्निपात और कन्धके
ढाणकेसाथ देनेसे श्लेष्माज्वर नष्टहोताहे ॥ ७३ ॥

७४ रसपर्वटी (चतुर्था)

भागमेकमिह सूतभस्मनो
भागयुग्ममिह गन्धकस्य च ।
मृतपादमपि हेमभस्मकं
तालभस्म यत्रिवाऽन्नभस्मकम् ॥ ३४२ ॥
लोहभस्म यदि वाऽर्कजं क्षिपे-
होहपात्रजटरे प्रपाचयेत् ।
द्रावितं मयति तयदातदा
निःक्षिपेण कदलीदले ततः ॥ ३४३ ॥

आटरूपसुरसाजयन्तिका-
क्षुद्रिकात्रिफालिकासुभृङ्गिका ।
मेघनादकटुकन्यकारसेः
प्रत्यहञ्च परिमर्दयेद्रसम् ॥ ३४४ ॥
वत्सनाभजरसैस्ततस्त्विमं
लोहपात्रनिचितं पचेत्क्षणम् ।
जायते स रसपर्वटी रसः
शृङ्गवेरकनकैर्नियोजितः ॥ ३४५ ॥
बहुयुग्मपरिमाणकस्त्वयं
श्यासकासविनिवृत्तियायकः ।
पिप्पलीभिरनुपाययेत्ततः

काथमत्र सुरसाऽऽरूपजम् ॥ ३४६ ॥

र. क., र. म., काशश्वांसयोः ।

भाषा—पारदभस्मसे दूने शुद्धान्यकको गलाकर पारेसे
चतुर्थात् सुवर्ण, हरिताल अन्नक, लोह और ताम्र इनतीभस्मों-
मेंसे किसीएकको डाले । अथवा जैसी योग्यता समझे वेदासरे ।
इसको प्रथमपर्वटीकीतरह तैयारकर बारीकचूर्णकर अड्डा, तुलसी,
जैती, भटकट्टिया, त्रिफला, भंगरा, कटिवालीचौलाई, बड्डा
घोड़ेवार और बलनयकेरसोंसे १-१ रोज मर्दनकर बुद्धाकर
लोहेके पात्रमें रसकर थोड़ेथेर पकाकर पीतकररखडोड़े । इसमें
६-६ रतीकीमात्रा अदरप और धतूरेकेरसकेसाथ देकर तुलसी
और अड्डेकेसाथमें पीपलकाप्रक्षेपकरके पिलानेसे श्वांसकाफको
यह निवृत्तकरतीहे ॥ ७४ ॥

७५ रसपर्वटी (महा) (पञ्चमी)

वेदमायो रसो द्राह्यो गन्धस्तस्माद्भिभागिकः ।
कृत्वा कजलिकां सूक्ष्मां घृताकां बह्विनाऽऽद्रात् ३४७
लोहपात्रे स्थिता तावत्पर्वटी क्रियते रसः ।
जया द्वादशमापा स्याद्गुण्ठी पणमापिका भवेत् ३४८
पिप्पली मरिचं चैव सैन्धवं सलुवचंलम् ।
स्वर्जिकाविडमेतानि प्रत्येकञ्च चतुष्टयम् ॥ ३४९ ॥
मापाणां शृङ्खते सर्वं पिष्टं प्रत्येकदास्तथा ।
तदेकक्रियते सूक्ष्मं मिश्रयते युज्यतेतराम् ॥ ३५० ॥
गन्धयुक्ते शुभेभाण्डे तत्र सर्वं निर्धायते ।
खादेद्रमिलालपेक्षी काञ्जिकेनाऽम्भसाऽथवा ॥ ३५१ ॥
अशःसुं शुद्धपीडामु प्रदरेषु प्रशस्यते ।
कामलायां प्रहण्याञ्च मन्दाग्री च प्रयुज्यते ॥
महापर्वटिकाऽऽरुणोऽयं रसो योगस्य घाहकः ॥ ३५२ ॥
र. का. (प्रदाऽधिकार), यो. म. रसायने । योगनदाने
मुद्रितः पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा ४ मासे, शुद्धान्यक ८ मासे लेकर
दोनोकी नीलरजकजलीकर प्रथमपर्वटीकीतरह पर्वटी तैयारकर
भाग १२ मासे, सोंठ ६ मासे, पीपल, मरिच, हिन्पत्र, संधक,
सब्जी और बिडनमक ४-४ मासे लेकर पारसे अल्य २ पीणकर
एकजगह मिलाकर गुण्णयुष्पचयनेम डालकर रखाडोड़े । इसमेंसे १



माशसे २ माशेतकको मात्रा काशी अथवा जलकेसाय देनेसे बचातीर, युदाकीपोडा, प्रदर, कामला, ग्रहणी और मन्दाग्निको यह नष्टकरती है । तत्तोगोपितानुपानोंकेसाथ देनेसे समस्तरो-गोंको दूरकरती है ॥ ७५ ॥

७६ रसपर्पटी (लक्ष्मीविलामः) (पष्ठी)

रसमसितमयोऽन्नगन्धमेतान्
दृढमुदकेन विमर्दयेत्कुमार्याः ।

क्षिप खुकुदलेषु मध्यलम्बे
त्रिरजनि धान्यचये च पुष्पिताप्रा ॥ ३५३ ॥

र. वि., दीर्घरोगे ।

भाषा—गारा, लोह और अन्नरुभस्म, शुद्धगन्धक, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर धीउत्तारकरसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय एण्डकेपत्तोंमें लपेटकर ३ दिन धानकीराधिमें रखदे । चौथेरोज निकालकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इयमेंसे १ से २ रतीतक तत्तद्गोहरानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षयादि-समस्तरोगोंको नष्टकरती है ॥ ७६ ॥

७७ रसपर्पटी (सप्तमी)

लोहापत्रेऽथवा ताप्रे पलेकं शुद्धगन्धकम् ।
मृद्वग्निना द्रुते तस्मिन् शुद्धमृतपलप्रयम् ॥ ३५४ ॥

क्षिप्त्याऽथ चालयेत्किञ्चिद्वाहनुष्णघाततः पुनः ।

ढालयेत्कदलीपत्रेऽथवा स्थिरपट्टे क्षिती ॥
इत्येवं पर्पटीबद्धं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३५५ ॥

यो. म., रसायने ।

टि०—पारदस्य प्रमाणाधिक्यवर्जनाय पृथक्पाठं कृणुयादिति ।

भाषा—लोहे अथवा ताबेकेपात्रमें १ पल शुद्धगन्धकको-गलाकर ३ पल शुद्धपारेको ढालकर लोहेकीकड़छीसे पर्पणकरे । एकत्रीबहोनेपर गोबरपररक्खेहुए केलेकेपत्तेपर अथवा भीगहुए-कपड़ेपर ढालकर पर्पटीतैयारकरले । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा तत्तद्गोहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरती है ७७

७८ रसपर्पटी (अष्टमी)

लोहस्य पात्रे तु रसेन गन्धं
धत्तूरतोयेन दिनं विमर्ष्य ।

किञ्चिद्विषपत्तैलमत्रथ यद्वा
प्रद्रव्यं तापस्य तु भाजने तत् ॥

चित्रार्द्रतोयेन विमर्दयेद्य
क्षालामिमान्द्योऽरुचिहा रसः स्यात् ॥३५६॥

र. दी., क्षालामिमान्द्यो ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी कजली बनाय लोहेकेपात्रमें धतूरेकेरसे एकरोज मर्दनकर सुखाकर ताबेकेपात्रमें थोडा तैल पोतकर प्रथमपर्पटीकीतरह तैयारकर चित्रक और अद-रखके रसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्गोहरानुपानकेसाथ देनेसे यह शूल, मन्दाग्नि और अरुचि इत्यादिकोंको नष्टकरती है ॥७८॥

७९ रसपिट्टिका

सूतहेमरविपिट्टिका कृता
द्विग्विभागविपस्युता शुभा

सूतभाजनयनाङ्गनोपगा
शूलिनीरसविमर्दिता दिनम् ॥ ३५७ ॥

जालिनीरसविमर्दिता तथा
याममेव ससिताऽऽर्द्रजे रसेः ।

सेविता द्विगुणरक्तिकामितोन्मा-
दरोगमखिलं धुनोति सा ॥ ३५८ ॥

अपस्मारविधिश्चात्र वातव्याधिहरस्तथा ।
नारायणं नाम तैलं महापेशाचिकं घृतम् ॥ ३५९ ॥

फल्याणकं तथा सर्पिरुन्दत्सर्पदर्शनम् ।
त्रासनं तु फयाघाते धैर्येण राजसेवकैः ॥ ३६० ॥

आध्यासनं मित्रजनैर्धनदानैः प्रियादिभिः ।
शुद्धा हेतुप्रतीकारं कुर्यात्तस्योपमर्दनम् ॥ ३६१ ॥

र., उन्मादे ।

टि०—शूलिनीलक्षण रसेन्द्रचूडामर्गो-मिद्वारारपना या शब्दा कालकरकला । निशूलिनि ममाख्याता प्रसिद्धा रमन्वन्ने ॥ इति ॥

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण, ताप्रे समभागलेकर सुवर्ण और ताप्रेना बारीकचूतारले अथवा बर्कबनाकर पारेमें थोडा २ ढालकर धोटे । मिलजानेपर पारेसे दशवा हिस्सा शुद्धवल्गनाग और पारेसे दूनी सुरेकीभस्म मिलाय निशूलिनी और जालिनी बूटीकेरसे १-१ रोज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहर और अदरखके रसेकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त उन्माद, अपस्मार और वातव्याधियोंको यह नष्टकरती है । इनतीनों रोगवालोंको नारायणतैल, महापेशा-चपूत, कल्याणघृत तथा बहुत्पुराना घृत खिलाना । उन्माद-वालेको खासकर दंतितोड़ेहुए सपसे कटवाना, राजपुखोंसे डराना, कोड़ेलावाना, मित्र धनदान और प्रियखियोंसे आधा-सन देना । कारणको समझकर उसका प्रतीकार करना इत्यादि उपायोंसे उन्मादी प्रकृतिस्थ होजातेहै ॥ ७९ ॥

८० रसप्रयोगः

पारदं दरदं गन्धं बरसनाभञ्जं तालकम् ।
टङ्कणं त्रिकटुञ्चैव समभागानि कारयेत् ॥ ३६२ ॥

आर्द्रकस्याऽम्भसा भाव्यं शिष्टमूलस्य धारिणा ।
पुनर्नयाचित्रकयोर्भावयेदातपे खरे ॥ ३६३ ॥

द्विगुञ्जं वटकं कुर्याद्धान्यराशीं निधापयेत् ।
अग्निमान्वादिक्वान्द्रोपांश्चाग्रमुन्मूलयेद्द्वलात् ॥३६४॥

र. क यो., अजीर्णाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, द्विगुरिक, गन्धक, बछनाग, हरिताल या रसमाग्निक्य, शुद्धाग और त्रिकटु देसव समभागलेकर नील-वर्णकजलीकर अदरख, सहजिन, पुनर्नवा और चित्रकके रसोंसे कभीपूषमें १-१ भावना देकर ३-२ रतीकी गोलियां बनाय छायाशुष्ककर एण्डकेपत्तोंमें रख/पोहरीबनाय धान्यराशियों

रोज्जतक रखदे । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अग्निमान्द्यग्रन्थित समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ८० ॥

८१ रसभस्म

शरावनिहितं सूतं द्विप्रवह्नं मुहुर्मुहुः ।
दत्त्वाऽग्निं सूर्ययामान्तं निम्बकाष्टेन धर्षयेत् ॥ ३६५ ॥
एवं भवेत्पीतवर्णा रसराजस्य भृतिका ।
यथाऽनुपानं रोगेषु प्रदद्याद्भिपगुत्तमः ॥ ३६६ ॥
अर्जितं विविधोपायैर्जह्ममाद्भिपजोमया ।
इदं तत्त्वं प्रलब्धन्तु पालनीयं चिकित्सकैः ॥ ३६७ ॥

वै. मू., रसायनर्ष., र. कौ., व. रा., र. सि., नि. र., वातव्या-
धौ, मेदोऽधिकारे च ।

भाषा—मिर्द्यके मज्जवृत्ताग्रमं दोभागशुद्धवह्नको गलाय एकभाग पारको छोड़कर नीमकेताजे सोटेसे धर्षणकरताहुआ १२ पहर की अग्निदेवे । इसतरह पीतवर्णकी पारदभस्म तैयार-
होगी । स्वाज्ञशीतलहोनेपर इसमेंसे १-१ रसी तत्तद्रोगहरानु-
पानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥ ८१ ॥

८२ रसमण्डूरम्

कुडवं पथ्याचूर्णं द्विपलं गन्धाश्म लौहकिटञ्च ।
शुद्धरसस्याऽर्द्धपलं भृङ्गस्य रसं सकेशराजस्य ३६८
प्रस्थोन्मितञ्च दत्त्वा पात्रे लौहोऽथ दण्डसङ्घृष्टम् ।
शुष्कं घृतमधुयुक्तं मृदितं स्थाप्यञ्च भाजने स्निग्धे ॥
उपयुक्तमेतदचिराद्भिहन्ति कफपित्तजान्त्रोगाम् ।
शूलं तथ्याऽम्बलपित्तं ग्रहणीञ्च कामलामुग्राम् ॥ ३७० ॥

त्रै. र., र. र., यो. म., र. चं., च. व. , र. क., दो. शूलाधिकारे

भाषा—हैर् ४ पल, शुद्ध गन्धक और मण्डूर २-२ पल,
शुद्धपारा आधापल लेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकर हरे-
काचूर्ण मिलादे । फिर स्याह और सफेद भंगरेके १६-१६
पल रसमें मिलाकर लोहेकेपात्रमें अग्निपर चढ़ाय लोहेकी कड़-
छीसे घोटताहुआ पकावे । रससुखजानेपर उदारकर ठंडाहोनेपर
१-१ पल घी और मधु मिलाकर घोटकर चिकनेवर्तनमें रख-
छोड़े । इसमेंसे ३-३ गांशे उचितानुपानकेसाथ देनेसे
कफपित्तजोग, शूल, अम्बलपित्त, सङ्ग्रहणी और कामलाको यह
नष्टकरताहै ॥ ८२ ॥

८३ रसमाता

हेमाऽध्रकरस्ताः शुद्धाः सिन्दूरञ्च चतुष्टयम् ।
कृष्णामण्डफलनीरेण भावयेदेकविंशतिम् ॥ ३७१ ॥
मेथिकाकाद्यतः पूर्वमभ्रगन्धारसेन च ।
कृष्णागोक्षीरसहिते हरिणीक्षीरपूरकैः ॥ ३७२ ॥
बहुशो भावयेत्तस्य तवक्षीरी चतुर्गुणा ।
द्राक्षा खञ्जूरफलकमुस्तकेलासृचूर्णकम् ॥ ३७३ ॥
धीचन्दनाञ्जतक्रोलजार्ताचूर्णं तथैव च ।
क्षिप्त्वा रक्षाश्रारिकेलफलनीरेण भावयेत् ॥ ३७४ ॥

कृष्णागोक्षीरसंयुक्तं निष्कामात्रं तु सेवयेत् ।
शंकरानवनीताभ्यां सेवयेदेकमण्डलम् ॥ ३७५ ॥
क्षाराम्ललवणं तैलं वर्जयेत्स्त्रीषु सङ्गमम् ।
मधुरेषान्नपानानि भोजयेद्विषसत्रयम् ॥ ३७६ ॥
अतिशुष्कस्य कायस्य पुष्टिं वितनुतेतराम् ।
स्त्रीणाञ्च पुरुषाणाञ्च कुरुते कायधर्षणम् ॥ ३७७ ॥
आयुष्करी वक्ष्यकरी सत्त्वसन्तानकारिणी ।
रसमातेति विख्याता नाम्ना लोके महीयते ॥ ३७८ ॥
र. कौ. (हा.), रसायने ।

भाषा—गुवर्ण, अत्रक और पारा इनकीभस्में तथा रस-
सिन्दूर १-१ तोला लेकर सफेद बॉहळेकेरसकी २१ भावनाएं
देकर मेथीकाकाद्य, असगन्धकाद्य, काळीगाय और हरिणीका
दूध, बिजोरेकास इनकी १४-१४ भावनाएं देकर सुखाकर
इससे चतुर्गुणिततीव्र अथवा बंधलोचन मिलाकर द्राक्ष, धुआरे,
नागरमोथा, इलायची, बहेडा, सफेद चन्दन, कमलगन्धा, कषाय-
चीनी, जाविनी इनसबका १-१ तोलाचूर्णमिलाकर नारियलकं-
जलसे ६-६ भावनाएं देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे
४-४ गांशेकीमात्रा काळीगायके दूधकेसाथ अथवा शर्कर और
मक्खनकेसाथ ४९ दिनतक देनेमें यह सबतरहके शोषोंको दूर-
कर पुरय तथा क्षियोंके समस्तदोषोंको नष्टकर आयु और
सन्तानको देतीहै । इसके प्रारम्भमें ३ रोज्तक मधुर और शृ
अनपान देवे और क्षार, अम्ल, लवण, तैल इनको प्रयोगसमाप्ति-
तक छोड़देवे और ऋप्रवर्षसे रहे ॥ ८३ ॥

८४ रसराजरसः (प्रथमः)

गोमये तैलमास्थाप्य त्रिवारं शोधयेत्प्रपु ।
द्रावयित्वा समं सूतमेकीकृत्य विचक्षणः ॥ ३७९ ॥
धृत्वाऽपामार्गमूलन्तु मुखे चर्वणमाचरेत् ।
गण्डपं तत्र निःक्षिप्य तैलं त्रिः शोधयेद्बुधः ॥ ३८० ॥
ताम्बूलचर्वणं कृत्वा गण्डपं निक्षिपेद्बुधः ।
दाढ्यमायाति तत्तस्यःपेपयित्वा तु गोलकम् ॥ ३८१ ॥
नागवह्नीदलेनैव योज्यं गुञ्जाचतुष्टयम् ।
उपदेशे च दुःसाध्ये रसोऽयं दिनसप्तकम् ॥ ३८२ ॥
ताम्बूलचर्वणं कार्यं विशोषाच्च गर्दातिभिः ।
पर्यं शालयोदनं देयं घृताक्तं मुद्गसंयुतम् ॥ ३८३ ॥
प्रशस्तं मेथिकाशाकं मुखपाको न जायते ।
रसराजइति स्यात् सुखदः सर्वदा नृणाम् ॥ ३८४ ॥
रसायनसं, वै वि, उपदेशे ।

भाषा—ताम्बूलाचूर्णमें गर्दक तिलकतैलमर बरको पिपला-
कर तीनवार बुझावे । और समभाग शुद्धपारको उपमें मिलाकर
तैलमें बुझाकर खरलमें डाले । फिर अपामार्गकी ताजी जड़की
मुखमें रखकर खावावे । लुआबसे मुखभरजानेपर लुआबको खरलमें
डालकर मिलेहुए बर और पारको घोटे । सुखजानेपर फिर
उसीतरहडुआकरके सुखावे । ऐसे तीनवार करके पारमेंसे तैलकी

चिकनाईको साफकरदे । इसीतरहसे कत्था, चूना लगेहुए पानको चवाकर पारेमें कुले डालकर पारेको तीनवार मर्दनकरके मुखावे । ऐसाकरनेसे गोली कड़ी होजायगी । इसमेंसे ४-४ रसी पानमें रखकर ७ दिनतक खिलावे । जी भिचलाने पर पान खिलावे । भूखलगानेपर पुरानेचाबलेंको धी और मूंगकेसाथ दे । मेथीका शाक खिलावे तो इससे मुखपाक नहींहोताहै और उपदंशके तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहैं ॥ ८४ ॥

८५ रसराज रसः (द्वितीयः)

भागा रसस्य चत्वारो ह्यष्टौ गन्धकभागकाः ।
मनःशिला द्विभागा स्याद्धरिद्रा त्रिफला तथा ॥३८५॥
अम्रयो जयपालाश्च त्रिवृता च त्रिभागिका ।
दन्ती च तुषारं व्योषं पृथगष्टांशकं मतम् ॥ ३८६ ॥
एतेषां चूर्णमादाय दापयेत्स भवनाः ।
जयन्त्या वज्रदुग्धस्य चातारिभृद्गराजयोः ॥ ३८७ ॥
जलोदरमपाकुर्वाद्धारि तर न पाययेत् ।
नाभेरुत्तरभागे हि जलस्रावश्च कारयेत् ॥ ३८८ ॥
र श, जलोदरे ।

भाषा—शुद्धगारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा, मैनसिल २ भा, हल्दी, त्रिफला, शुद्धमिलानेऔरजमालगोटा तथा निशोत ३-३ भाग, दन्तीमूल, तुषारक, सोंठ, मिर्च, पीपल येसब ८-८ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर जेंती, सेहुण्डकादूध, एरण्ड और भंगरा इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७ भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । जलोदरिनेनामिके उत्तरभागकी तक जलस्रावकर इनमेंसे १-१ गोली प्रतिदिन देनेसे फिर पानी नहीं भरताहै । खानेकेलिये दूधभात देवे ८५

८६ रसराजरसः (तृतीयः)

पलेकं शुद्धसूतस्य व्योमसस्त्वश्च कार्ष्णिक्म् ।
तद्वर्द्धं काञ्चनं देयं कन्यारसविमर्दितम् ॥ ३८९ ॥
लीहं सौष्यं मृतं चङ्गं वाजिगन्धां लयङ्गकम् ।
जातीकोषं तथा क्षीरकाकोलीञ्च तद्वर्द्धतः ॥३९० ॥
काकमाचीरसिः पिष्ट्वा पञ्चगुञ्जामिता वटी ।
क्षीरश्च शर्करातोयमनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ ३९१ ॥
पक्षाघातेऽर्दिते वाते हनुस्तम्भेऽपतन्त्रके ।
धनुस्तम्भेऽपताने च याथियं मस्तकत्रमे ॥ ३९२ ॥
सर्वघातविकारिषु रसराजः प्रकीर्तितः ।
वल्गो वृष्यश्च भोग्यश्च वाजीकरण उत्तमः ॥ ३९३ ॥
भै.र, घ, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धगारा १ पल, अत्रकसत्व १ कप, स्वर्गभस्म आपारुषं मिलाकर कुमारीरससे १ रोच मर्दनकर लोह, चादी और वज्रभस्म, असगन्ध, लौंग, जाबिनी, क्षीरकाकोली येसब ४-४ माशेलेकर सबको इक्के मिलाय मनोयरेरससे २-२ रोजमर्दनकर ५-५ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शररमिलेहुए दूध अथवा पानीकेसाथ देनेसे

पक्षापात, लकवा, हनुस्तम्भ, हिस्टीरिया, घनुवात, खींचतान, बधिरता, सिरकाघ्नमना, और समस्तवातविकारोंको नष्टकर खल, वृष्यता और वाजीकरणकोकरताहै ॥ ८६ ॥

८७ रसराजरसः (चतुर्थः)

कस्तूरी हिमरश्मि कुङ्कुमसिते
जातीफलं हाटकं,
चाम्पेयं वृषहेमयीजयिजया
यष्टी जयन्ती विपम् ।
प्रत्येकं समभागमानविधृत
वह्लं धृतक्षौद्रयुक्,
लीढं तत्क्षणमूर्च्छनं वितनुते
पौण्ड्रादिजैस्तजयेत् ॥ ३९४ ॥
स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं गमयति सकलं
वीर्यपातं न याति,
लिङ्गान्तो याति वृद्धिं स्थिरतरवपुषां
स्तम्भकृद्योनिभद्रम् ।
सर्वाङ्गं सन्धिवातं व्रणविविधगर्ति
ग्रन्थिलताः स्फुटन्ति,
पूयं दुर्गन्धलूता ह्रवति च बहुलं
तीव्रदुःखेन युक्तम् ॥
दाहं मोहश्च तृष्णां क्षयकृमिच्छदातां
पीनसं पाण्डुरोगान्,
गुल्माऽऽध्माने च शूलं ग्रहण्णिगुदरुजं
कुष्ठरोगान्निहन्ति ॥ ३९५ ॥

व रा, व्रणेयु ।

भाषा—कस्तूरी, शुद्धकपूर, केसर, दावर, जायफल, अक्करा, चम्पा, अहूसा, घनुके बीज, भांग, मुलहठी, जेंती और शुद्धवज्रनाग येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रसीकीमात्रा मधु और घृतेकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गसन्धिवात, समस्त ऋण, गाढ, पैलाहुआमकड़ीका विप, दाह, मोह, प्यास, क्षय, कृमि, हृशता, पीनस, पाण्डु, गुल्म, आध्मान, शूल, ग्रहणी, गुदरोग, कुष्ठ, पण्डत्व, प्यजभङ्ग, इनसबको यह नष्टकर स्त्रियोंके गर्वको दूरकरताहै और सबप्रकारके शुद्धदोषोंका नाशकरताहै । इसे वाजीकरणार्थे सेवनकरला हो तो सन्ध्यासमयमें सेवनकरे इसके सेवनेसे यत्किञ्चित् मूर्च्छां जैसी प्रतीतहो तो उससमय ईश चूर्णमेंसे दे ॥ ८७ ॥

८८ रसराजरसः (पञ्चमः)

मुक्ताप्रवालरसेहेमसिताऽऽम्रान्तं
चङ्गं मृतं सकलमेतदलं विभाज्य ।
छिन्नारसेन च घरी सलिलेन साप्त
पश्चाद्देन्मधुहविर्मरिचिन सप्तम् ॥
लिह्यादुरःशतहरं रसराजकार्यं
मापप्रमाणमतवृद्धयेहेतुमेनम् ॥ ३९६ ॥

नि. र., वै. क., र. सु, चि क, वृ. यो. त, र चं, यो. र, उर. क्षतस्ययादौ ।

भाषा—भोती, मूंगा, पारा, सुवर्ण, सफेद अभ्रक, कान्त लोह, कान्तपाषाण, वज्र, इनकीभस्मं सब समभागलेकर वारीक चूर्णकर इकडे मिलाय गिलोय और शतावरेके रसकी ६-७ भावनाए देकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु, धी और ७ मिर्चकेसाथ देनेसे यह उर क्षतको नष्टकरताहै और कामकी पूर्णवृद्धिको करताहै ॥८८॥

८९ रसराजरसः (पष्ठ)

भृङ्गाऽह्निकेनफलिनीविपमुष्टिचिलेपिते ।
वखे निर्घ्नस्य विधिचन्द्रसगन्धकखर्परम् ॥ ३९७ ॥
गौर्यौ पचेह्लावपुटे शतेन च नियोज्य तु ।
ऊर्द्धाऽधोहोमवीजानि पेपयेदशतः क्रमात् ॥ ३९८ ॥
तेषां तोयैः पुनः कृत्वा प्रूपिकामर्कशोपिताम् ।
तत्कर्मैः प्रतिपुटं दिग्धां कृत्वा पुटेच्छतम् ॥ ३९९ ॥

रसराजो भवत्येव सर्वरोगहरो रसः ।
जम्बूवर्णाऽतिकृतिनी रूक्षो वीर्यवली भवेत् ॥ ४०० ॥
जातीफललवङ्गाभ्यां रतौ वीर्यं निरोधयेत् ।
पटुद्वीप्यशिवाविभ्यै वैश्वानरविबर्द्धन ॥ ४०१ ॥
क्षयग्रस्तु तथाऽशौघ्रस्तकृष्णाऽभ्यान्वितः ।
प्रहृष्यां जातिकोशेन रेके कुटजवारिणा ॥ ४०२ ॥
प्रमेहे शात्मलीद्रावै र्यदर्याऽक्षिगदे हितः ।
सामे वाऽपि निरामे वा समे वा विपमज्वरे ॥ ४०३ ॥
देयो नताब्दफटुकाकारविश्वभृतने वे ।

रास्नाऽम्भसा चातरोगे पित्तरोगे सिता वृष्टिः ॥४०४॥
अक्षत्वचा कफव्याधौ पाण्डुरोगेऽजग्रन्थकैः ।
अश्मर्यामश्मभेदेन कुपे वल्गुजघायसैः ॥ ४०५ ॥
भगन्दरे गुडेनैव व्रणे पौनर्नवायुतः ।
मेदोरोगेऽम्बुमधुना प्रदरेऽशोकवारिणा ॥ ४०६ ॥
श्लेहिहृत्करञ्जाभ्यामरुचौ रुचकेन वा ।
छर्द्या धानीरसेनैव क्षिण्ये पर्णेन दापयेत् ॥ ४०७ ॥
द्राक्षारसेन शोषे च सञ्जानाशे किरतरकैः ।
मृच्छर्द्यां चन्दनाभ्रमभि विद्रघौ चरुणाऽम्बुना ॥
सर्वेष्वन्येषु रोगेषु ताम्बूलीद्वलयोगतः ॥ ४०८ ॥

वृ. यो. त, र कौ, वाजीकरणाऽधिकारे ।

भाषा—भगरा, अफीम, मात्कामनी, शुद्धकुचिला ६-६ मासोलेकर पानीमें पीस साधमलमलेके टुकड़ेपर लेपकरके सुखाले । फिर पारा, गन्धक और खपरिया १-१ तोला, घनूरेकेबीज १० नग लेकर नीलवर्णकम्बलीकर ऊपरकहेहुई औषधियोंके द्रवोंसे एकरोज मदनकर गोलावनाय ऊपरकहेहुएकपडेमें रख कच्चेसूतेसे खूब लपेटदे । फिर उपर्युक्तद्रवोंकेसोते पुतीहुई कुल्हड़ीमें बन्द कर शरावसम्पुटदेकर ३-४ जहलीकण्डोंके टुकड़ोंसे ढक्कर आचदे । स्वात्रतीतलदोनेपर निकालकर २० नग घनूरेकेबीज मिलाकर

पूर्वोक्तद्रवोंसे मदनकर गोलावनाय उन्हींके कल्में बन्दकर पूर्ववत् शरावसम्पुटकर आचदे । ऐसेप्रतिपुटमें १०-१० घनूरेकेबीज बढाताहुआ आचदे । ऐसे १०० भाचें देनेसे यह रसराज जासु-नके रङ्गका अत्यन्तकठिन और रूक्ष तैयारहोगा । इसमेंसे आधी-रतौसे १ रतीतक जायफल और खवङ्गकेसाथ देनेसे वीर्यका अविरोधहोताहै । सेंधव, अजवानन, हर् और सोंठकेसाथदेनेसे अमि कोयढाताहै । पीपल और हर्तमिलीहुई छाछकेसाथ देनेसे क्षय और वनासीरको नष्टकरताहै । जाविनीकेसाथ प्रहृणी, कुँरैयाने-काठकेसाथ विरेचन, सेमलेके द्रवकेसाथ प्रमेह, बदरीद्रवसे अक्षि-रोग, तगर, नागरमोया, वृद्धकी, अक्लकरा और सोंठ इनकेका-टेसे साम अथवा निराम और सम अथवा विपमज्वर, रात्राने काथसे वातरोग, इलायची और शङ्करकेसाथ पित्तोग, बहेड़ेकी-छाल्ये कफरोग, बरनेकेसूतेसे पाण्डुरोग, पापाणभेदसे पयरी, वातुची और मकोयनेसाथ कुष्ठ, गुस्से भगन्दर, पुनर्नवासे व्रण, मधुके शर्वतेने मेदोरोग, अशोककेकाठसे प्रदर, हीम और कर ज्ञसे शूल, सञ्जन्मकसे अघचि, आवलेके स्वरसे वमन, नाग रवेलेसे क्षीणता, द्राक्षारसे शोष, फिरायतेसे सञ्जानाश, सफेद-चन्दनकेरङ्गसे मूर्च्छा, वरुणकेसाथसे विद्रघीरोगको नष्टकरताहै । इनके अतिरिक्त अन्यव्याधियोंमें नागरवेलेकेसाथ देना ॥ ८९ ॥

९० रसराजरसः (सप्तमः)

पारदं गन्धकाङ्गोह्लमूलयलकलमाक्षिकम् ।
विपतिन्दुकतालञ्च समङ्गा दुग्धिका तथा ॥ ४०९ ॥
अर्को गन्धर्वहस्तश्च जयन्ती कटुचिञ्चिका ।
पलंपलं समादाय पलमात्रा च पिप्पली ॥ ४१० ॥
अर्कसेहुण्डमेपीणां दुग्धैः कुर्याच्च भावनाः ।
तिस्रो वापि चतस्रो वा चूर्णे सूक्ष्मे विचक्षणः ॥४११॥
देवदालीरसैः पश्चात्तिस्रो देयास्तु भावनाः ।
सर्वं विमर्धं संशोष्य छागीभूनेण गोलकम् ॥ ४१२ ॥
कारयेन्मृपिकामध्ये कुक्कुटाख्यपुटे पुटेत् ।
रक्तिंका प्रदातव्या गुडेन परिवेष्टिता ॥ ४१३ ॥
रिब्वं तेन भवेयुश्च विस्फोटास्तदनन्तरम् ।
स्फुटन्ति स्फोटास्ते सर्वे विन्द्वस्तिलसत्रिमाः ४१४
निष्पद्यन्तेऽथ कृष्णास्ते रसराजप्रभावतः ।
मापास्तिला प्रयोगेऽत्र भोकव्यास्तिलभोजनम् ४१५
कुल्लयञ्चाऽपि वार्ताकं पुण्डरीकं प्रयोजयेत् ।
सूरणं कारवेल्ञ्च कर्कोटीं छागसम्भवम् ॥ ४१६ ॥
मांसं सवेसवारञ्च सतैलशुहतीफलम् ।
नद्यन्ति सर्वकुष्ठानि सङ्घान्यष्टादशैव हि ॥ ४१७ ॥
यत्कुल्होमोदर्याहविद्रधीनपि नाशयेत् ।
अग्निञ्च ध्रुवते दीप्तं वृद्धिं तेजोवलयस्य च ॥ ४१८ ॥

रसचि, र का, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अङ्गोलीजहरीछाल, सोनामासी, शुद्धकुचिला, हरितालभस्म, मनीठ, छोटोद्वीपी, आठ और एण्डनी जङ्गीछाल, जैती, वृद्धकी, इमलीकेफल

और पीपल येसब १-१ फल लेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर आक, सेतुण्ड और मेडकेदूधोंसे ३-३ अथवा ४-४ भावनाएं देकर सुलाकर बन्दाकेपत्रात्रके स्वरसकी ३ भावनाएं देकर सुलाकर बकरीकेमुत्रमें पीसकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कषईमिठीदेकर जुहुट पुटकी आयवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती गुडमें बवलिकर निगलवादेवे । कुछदिनके प्रयोगसे थिन्नें फोले उत्पन्न होंगे उन्हें फोड़देना ; उबके अन्दर चमईमें कालेलिके सट्टा जगह २ चिद्र उत्पन्नहोंगे । इसके प्रयोगमें उडद, तिल, कुलथी, बैंगन, कमल, सूरण, करेला, बबई, बकरेकामास, बेसन, तैल, बनभट्टा येसब खानेको देने चाहिये । इससे १८ प्रकारकेपुष्ट, यष्ट, गुल्म, उदररोग, डीहा, जहृत्पाद, मन्दागि, तेज और बलका अभाव, इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ९० ॥

९१ रसराजरसः (अष्टम)

शह्युक्तिकयोः कर्षो द्वौ कर्षो गन्धकस्य च ।
पिष्ट्वाऽर्कदुग्धेस्तद्रोलं सम्पुटेऽग्नी दिनाऽध्वरुम् ४१९ ।
स्वाहशीतं रक्तिकाऽस्य घेदवेदोपणे. सह ।
गोघृतेन समं लिह्यात्क्षयकासनिकृन्तनः ॥ ४२० ॥
चि र भ, क्षयकोसे ।

भाषा—शह्य, मोतीकीसीप १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक २ कर्ष लेकर सबकाबारीकचूर्णकर आकेदूधमें १-२ रोज मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २ पहरकी अग्निदेवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा ४-४ रती कालीमिर्चोंके चूर्ण और घीकेसाथ देनेसे यह क्षयजवांसको नष्टकरताहे ॥ ९१ ॥

९२ रसराजरसः (नवमः)

मृतमृताऽस्रकं कान्तं विपं ताप्यं शिलाजतु ।
तुल्यांशं मधुसर्पिर्भ्यां लिहेद्भुजाऽष्टकं सदा ॥ ४२१ ॥
पण्मासेन जरां हन्ति जीवेप्रह्लादिनत्रयम् ।
अश्वगन्धाभूलचूर्णं सप्तभागं घृतैः समम् ॥ ४२२ ॥
भाग्माऽष्टकं गुडं तस्मिन् पिप्पलीं तत्समां क्षिपेत् ।
मृद्वग्निना तु तत्सर्वं पिण्डितं भक्षयेत्पलम् ॥ ४२३ ॥
रसायन, रसायने ।

भाषा—पारा, अत्रक, कान्तलोह और सोनामाखी इनकी मक्के, शुद्ध बलनाग और शिलाजतु सबसमभाग लेकर सबको इक्के घोटकर चूर्णकररखे । इसमेंसे ८-८ रतीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ खावे और अश्वगन्धकीजड़का चूर्ण ७ भाग, पुरानाशुद्ध और पीपल ८-८ भाग लेकर गुडको अग्निगलाकर असगन्ध और पीपलकेचूर्णको मिलाकर ४-४ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक अनुमानके तौरपर ६ महीनेतक खानेसे बुडापसे रहित होकर स्वामाषिक आयुके तिथिनी आयुको भोगसकाहे ॥ ९२ ॥

९३ रसराजरसः (दशमः)

पातितं स्वेदितं सूतं पूर्वांशविधिना हरेत् ।
पलये निक्षिप्य तं सूतं पीतवेणीभवे रसैः ॥ ४२४ ॥
मर्दयेत्त्रिदिनं पश्चाद्यन्त्रे सौमनले क्षिपेत् ।
सम्यङ्क्षिप्य तद्यन्त्रं चुह्यामारोपयेद्बुधः ॥ ४२५ ॥
ज्वालयेत्त्रिदिनं पश्चात्पुनर्वेणीभवे रसैः ।
मर्दयेत्सम्पचेदेवं सप्तवारानतन्द्रितः ॥ ४२६ ॥
निरुध्यं जायते भस्म रसेन्द्रे नाऽत्र संशयः ।
स्वाहशीतलमुद्धृत्य भावयेद्दूर्तजै रसैः ॥ ४२७ ॥
त्रिजगद्भ्रज्यानीरं र्वसनामद्वैतस्ततः ।
भूमिभ्यनीरैः सर्वाग्ने भावयेत्पारादेऽध्वरम् ॥ ४२८ ॥
पञ्चविंशतिवारान्तमेकैकेन विभावेयत् ।
पवं विभाविर्तं सूतं ज्यरे नूत्ने प्रयोजयेत् ॥ ४२९ ॥
मुस्तापरपटयोः क्वाथै र्वरैः सद्यो विनश्यति ।
गुञ्जाद्वयप्रमाणेन नाऽधिकं वितरेद्बुधः ॥ ४३० ॥
यथेष्टं भोजयेत्पश्चात्सर्वांशं चान्दधर्जितम् ।
तापाऽधिभ्यं यदा कुर्यादुदकं ढालयेद्बहु ॥ ४३१ ॥
अयं रसेऽध्वरो देयः सर्वरोगेषु युक्तिः ।
शुद्धचीसत्त्वसंयुक्तमजादुग्धेन योजितम् ॥ ४३२ ॥
तवराजयुतं दद्यात्क्षयरोगे सुदारुणे ।
लोहचूर्णेन संयुक्तं गवां मधितसंयुतम् ॥ ४३३ ॥
पाण्डुरोगे प्रयुज्जीत ग्रहण्यां तरुसंयुतम् ।
धानीनारेण मधुना प्रमेहान् विशति जयेत् ॥ ४३४ ॥
वत्सकाऽऽम्बरकाथै र्जयेदशांसि सर्वश ।
खदिरकाथवलिना सर्वं कुष्ठं निवारयेत् ॥ ४३५ ॥
हन्ति पञ्चविधं वायुमेरण्डस्नेहसंयुतम् ।
वातव्याधिंश्च तेनेत्र वरीतोयेन वा जयेत् ॥ ४३६ ॥
पापाणभेदवापेन कौलत्यावायसंयुतम् ।
अदमरीं हन्ति यद्वाऽय विष्णुकान्तापुर्तं हरेत् ॥ ४३७ ॥
गोक्षुरकाथयोगाद्वा चैकपत्र्यावृतं तु ॥
यत्रहृत्त्रेषु युज्जीत कर्पूरं मलयोज्यै ॥ ४३८ ॥
शिलाजतुसमायुक्तो मग्नान्तरिवाक ॥
उप्राक्षारेण संयुक्तो हार्दिराश्लित्वाऽङ्गै र् ॥ ४३९ ॥
सर्वे, क्षारश्च लरणरक्षारं समकुर्व ॥
हिन्दुचित्रकुबेराक्षयुक्तस्तु परिष्कार ॥ ४४० ॥
शूलं निहन्ति नि शेषं सामान्यं ॥ ४४१ ॥
पडलोहमस्मसंयुक्तमाग्निप्रारुण ॥ ४४२ ॥
शुद्धीरिणं संयुक्तो हार्दिराऽङ्गै र् ॥ ४४३ ॥
घनुनांतं निहन्त्येव नाऽत्र ॥ ४४४ ॥
सर्वां सर्वां प्राहास्तु ॥ ४४५ ॥
पृष्टवरी कथराया शई ॥ ४४६ ॥
तेनाऽवगाई कुर्यात् सैः ॥ ४४७ ॥
दशममूलं पश्चात्पारयेत् ॥ ४४८ ॥

एवं हि यद्गुरोर्गेषु सूत्रेन्द्रं युक्तिवित्तमः ।
प्रयुञ्जीताऽप्रमत्तस्तु शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ॥ ४४५ ॥
रसराज इति स्यातो भस्मनामा सुविस्तरात् ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ४४६ ॥
रसानं, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—इष्टिकाप्रयुक्तिद्वयोंमें पारेको घोटकर ऊर्ध्व, अध-
और तिर्यक्पातनेसे शुद्धकर पीलेफुल्वरी बन्दाके फूलोंकेरससे
३ रोज मर्दनकर डमरूयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी अग्निसे पकावे ।
स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् मर्दन और पाचन-
करे । इसतरह ७ बारकरनेसे पारेकी निरुध्य भस्म होजायगी
फिर धतूरा, भांग, बडनाग, चिरायता, इनप्रत्येकके स्वरसोंसे
२५-२५ भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रतीकी
मात्रा नागरमोया और पित्तपापड़ेके काथसे देनेसे यह नवज्वरको
नष्टकरताहै । ज्वर उतलेपर अम्बलजित यथेष्टभोजनकरावे ।
अधिकदाहहोनेपर सिरपर जलझी धारादे । गिलोयसर्षप, तीरुतुर
अथवा बंशलोचनकेसाथ देकर बकरीका दूध पिलानेसे भयङ्कर
क्षयरोगको नष्टकरताहै । लोहभस्मकेसाथ देकर तक्रपिलानेसे
पाण्डुरोग; केवल छाछसे प्रद्वी; आंवलेकेरस और मधुसे २०
प्रकारके प्रमेह; डूँरिया और मिलावेके काथसे सषप्रकारके बवा-
सीर, खदिरकेकाथ और गन्धकसे समस्तदुष्ट, ऐरण्डतेलसे
अथवा शतावरके काथसे समस्तवायुरोग, पापाण्मेदके काथमें
कुल्थी अथवा कोयलका काथ मिलाकर देनेसे पथी; पानक-
साथदेकर गोखरुके काथमें कपूर और चन्दन मिलाकर देनेसे
मूत्रकृच्छ्र; शिलाजीतके साथ भगन्दर, छंटनीके दूधकेसाथ समस्त
उदररोग; समस्तक्षार, उपक्षार, हींग, चिचक और वरञ्जकेसाथ
देनेसे परिणामशूल, क्षारकेसाथ देनेसे सामान्यशूल, ६ लोहोंकी
भस्म और अम्वरकेसाथ अथवा बडनागकेसाथ अथवा हलदि-
याजहकेसाथ देनेसे धनुर्वातको यह नष्टकरताहै । इसके देनेसे
यदि धनुर्वात शान्त न हो तो तमामसन्धिया, सिर, शृष्टवंश
तथा कन्धोंमें दम्भदेवे और तैलमें बैठावे । कड़वीतूँबीसे रज-
निकाले फिर एकखुराक पारदकी देकर दशमूलका काढा देवे ।
इसीतरह युक्तिमें निपुण वैद्य शास्त्रसहितवर्तके इसरसका समस्त-
रोगोंमें प्रयोगकरे ॥ ९३ ॥

९४ रसराजरसः (एकादशः)

रसेन्द्रभुजगी तुल्यौ ताभ्यां द्विगुणमज्जनम् ।
ईपत्करूरसंयुक्तं दशांशं सक्तुं विपम् ॥ ४४७ ॥
यलानागबलाकृष्णामालतीपार्थजै रसैः ।
ताम्रपात्रस्य मध्यस्थं मर्दयेत्त्रिदिने भिपक् ॥ ४४८ ॥
युक्त्या नयनमध्यस्थं सन्निपातरुजापहम् ।
विष्यातो रसराजोऽयं सर्वनेत्ररुजापहः ॥ ४४९ ॥
रसेन्द्रम्, नेत्ररोगे ।

भाषा—पारद और नागभस्म समभाग, शुद्ध सुमां इन-
दोनोंसे दूना, सक्तुकविय और कपूर दशवा हिस्सा लेकर बला,

नागबला (गुलसिकरी), पीपल, मालती और अजुनकेरसोंसे
ताम्रके बर्तनमें ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसका अञ्जनकरनेसे
सन्निपात दूहोताहै और नेत्रके समस्तरोगमित्तेहै ॥ ९४ ॥

९५ रसराजरसः (द्वादशः)

हरजकनकताप्यं लोहकान्ताऽमृतुल्यं
जलजरसविभाव्यं वासराणां प्रयं तत् ।
हरति च रसराजो प्लहयुग्मः सिताल्यः
क्षयभवमतितापं रक्तपित्तं स्वपथ्यैः ॥४५० ॥
२, रक्तपित्ते ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, सोनामारी, लोह, कान्तापापाण
और अत्रक इनकीभस्में १-१ पललेकर धारीक चूर्णकर बमले
फूलोंकेरसमें ३ रोज मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रतीकी
मात्रा धावरकेसाथ देनेसे क्षयज्वर और रक्तपित्तो यह
नष्टकरताहै । इसमें पथ्य रोगानुकूल करे ॥ ९५ ॥

९६ रसराजेन्द्ररसः (प्रथमः)

पलं शुद्धस्य सूतस्य पलं ताम्रमयस्तथा ।
अम्रं नागं पलं बद्धं पलं गन्धकतालकम् ॥ ४५१ ॥
पलं शुद्धविषं चूर्णं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मर्दयेत्काकमाच्याश्च शृङ्गवेररसेन च ॥ ४५२ ॥
मत्स्यवापराहमायूच्छ्यागमादिपिप्तकैः ।
मर्दयेद्भिन्नभिन्नञ्च त्रिकटोरप्युभिस्तथा ॥ ४५३ ॥
सिद्धोऽयं रसराजेन्द्रो धन्वन्तरिसुसंस्कृतः ।
गुञ्जामां रसं दद्यात्सुरारससंयुतम् ॥ ४५४ ॥
मेघवारिप्रवाहण धारितं वारिमस्तके ।
अनिवारो यदा दाहस्तदा देया च शर्करा ॥ ४५५ ॥
भोजनं दधिसंयुक्तं वारमेरुतु दापयेत् ।
ईश्वरेण हतः कामः केशवेन च दानवः ॥
पायकेन यथा शीतमनेन च तथा ज्वरः ॥ ४५६ ॥

१. सं., र. सु., यो. सं., र. च., मै र, व. रा., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्र, लोह, अत्रक, नाग, व
इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, हरिताल और बडनाग १-१ पल लेकर
धारीकचूर्णकर पारिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर मकोय
अदरल इनकेरस और मछली, सुअर, मोर, बकरा, भैंसा इन्हीं
पित्त और त्रिकटुककाथसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रतीके
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तुलसीके
रसकेसाथ देकर मस्तकपर अखण्ड जलधारादेवे । इससे दाह
शान्त न हो तो शकर और दहीमिलाहुआ भात देवे । इससे
साध्यासाध्य समस्तज्वर नष्टहोतेहै ॥ ९६ ॥

९७ रसराजेन्द्ररसः (द्वितीयः)

हिङ्गुलोत्थं रसं गन्धं केशराजाम्बुशोधितम् ।
रसाद्दे हेमतारञ्च नागं हेमार्द्रकन्तथा ॥ ४५७ ॥
क्षिप्वा खल्वतले पश्चाद्वासाकाथेन भावयेत् ।
काकमाच्याश्चिरकस्य निर्गुण्डयाः कुटजस्य च ॥ ४५८ ॥

स्थलपद्मस्योत्पलस्य सप्तकृत्वो द्रवैः पृथक् ।
ततो रक्तिमिताः कुर्वाद्भिटीश्वण्डांशुशोपिताः ॥ ४५९ ॥
अन्नजात्रिखिलाग्रोगान् सर्वदोषोद्भवास्तथा ।
हन्त्ययं रसरारजेन्द्रो मृगराजो यथा मृगान् ॥ ४६० ॥
भै. र, अन्नद्रव्यधिकारे ।

भाषा—शिंगिरफले निकालहुआपारा और भंगरेके रसेमें शोधाहुआ गन्धक १-१ तोला, सुवर्ण और चादीमस ६-६ मासे, नागभस्म ३ मासे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर जडूसा, मकोय, चित्रक, निर्गुण्डी, कुरैयाकी छाल, गोरख मुण्डी, कमल इन्प्रत्येकके स्वस्त अथवा बाधोसे ७-७ भावनाएं देकर १-१ रसीकी गोलिया बनाकर धूपमें सुखाकर रखछोटे । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सब-प्रकारके अन्तर्द्विषोक्तेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ९७ ॥

९८ रसरारजेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं भागं भागैकं शुद्धतालकम् ।
भागार्द्धं स्फटिकं दद्यात्खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ४६१
सुहीक्ष्णैरे इदं भाव्यं त्रिदिनं मर्दयेत्तथा ।
अर्कक्षीरं दिनं त्रीणि कुमारीरसतस्तथा ॥ ४६२ ॥
पुस्तररसकेनेव क्रमाद्भाव्यं पृथक् पृथक् ।
काञ्चकूप्यां विनिःक्षिप्य बालुकायत्रके पचेत् ॥ ४६३ ॥
चतुर्धामन्तु पक्ञ्च स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
रसरारजमिदं भस्म पूर्णचन्द्रसमानकम् ॥ ४६४ ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तये ।
झीहिमात्रप्रमाणेन सर्वव्याधिनिवारणम् ॥ ४६५ ॥
ज्वरे च जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्ड्याः सन्निपातके ।
नागरेण सितायुक्तं रक्तपित्ते च योजयेत् ॥ ४६६ ॥
शुद्धच्या राजरोगेषु लाजचूर्णेन छर्दिषु ।
मन्दाग्नौ जम्भनीरेण सितायुक्तेन तापजित् ॥ ४६७ ॥
नालिकेराम्बुना युक्तं मूर्च्छा कल्याणकाह्वयैः ।
वैदेहीरससंयुक्तं श्वासकासनिवारणम् ॥ ४६८ ॥
पित्तमन्दस्य निर्यासेः शर्कराघृतसंयुतैः ।
प्रमेहविशर्तैः हन्यान्मूत्रकृच्छ्राणि सर्वशः ॥ ४६९ ॥
तण्डुलोदकसंयुक्तं मेहतापनिवारणम् ।
शतावरीरसे युक्तं पित्तक्षयनिवारणम् ॥ ४७० ॥
व्याघ्रीनागारसंयुक्तं कासक्षयनिवारणम् ।
फार्पीसारससंयुक्तं शुक्रमेहनियारणम् ॥ ४७१ ॥
केशरैः घृतसंयुक्तैः पीनसांख्रिधिधान्दरेत् ।
वायुचीतैलसंयुक्तं सर्वकुष्ठनिवारणम् ॥ ४७२ ॥
अक्षचूर्णसमायुक्तं शूलानां त्रिशतं हरेत् ।
कन्यागोपीसमायुक्तं महातीसान्नाशानम् ॥ ४७३ ॥
मधुघृजिसमायुक्तं शिरोधाधानिवारणम् ।
एते रोगा विनश्यन्ति रसरारजप्रभावरतः ॥ ४७४ ॥
३ वि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा, और हरिताल १-१ भाग, फटकड़ी आधा भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर सेहुण्ड और आक्कादूध, धोङ्गुआर, धतूरा इनके द्रवोंसे ३-३ दिनमर्दनकर सुखाकर फिरसे-कजलीकर ६-७ कपडिमिठीदीहुई आतशीशीशीमिभरके बालुका-यत्रमें पकावे । गन्धकारणहोनेकेबाद डाटलगाकर ३-४ कपडिमिठी देकर सुखाकर ममदूध ४ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर चन्द्रोदयविधानसे शीशीको फोडकर रसिकालकर रख-छोटे । इसमेंसे १-१ चावलभरकी मात्रा जीरा और पीपलके-साथ देनेसे ज्वरको और निर्गुण्डीके हाथसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै । सांठ और शकलेसाथ देनेसे रक्तपित्त, शुद्धचीसे रागरोग, लाजचूर्णसे वमन, जंभीरीकेरसेसे मन्दाग्नि, शकरसे दाह, तारियलकेजल अथवा पित्तपापड़ेकेहाथसे मूर्च्छा, पीपलकेरसेसे श्वास, कास, नीमकेगोंद, शकर और धीकेसाथ सबप्रकारकेप्रमेह; चावलके पानीसे सबप्रकारके मूत्रकृच्छ्र और प्रमेहनितदाह, शतावरीकेरसेसे पित्तक्षय, भटकटैयाकेरसऔर सांठकेसाथ कासज-नितक्षय, कपासकेपत्तोंकेरसेसाथ शुक्रमेह, धी और केशरकेसाथ ३ प्रकारसे पीनस, बाकुचीतैलसे सबप्रकारके उष्ण, बहेड़ेके-चूर्णसे ३०० प्रकारकेशूल, धीकुवार और गोपीचन्दनसे महाति-सार, अनारकेरसेसे शिरोरोग नष्टहोतेहै ॥ ९८ ॥

९९ रसरारसरसः (प्रथमः)

गन्धकं पलमानेन पारदं कर्पसम्मितम् ।
कुनटी नवसारञ्च रसकं कर्पकर्मकम् ॥ ४७५ ॥
कारवल्लीरसे र्मथं लेपयेत्सम्पुटोदरे ।
कण्टपेधिप्रकर्तव्यं पलैकं ताम्रसम्पुटम् ॥ ४७६ ॥
सृश्मलेपं वहिः कुर्यात्ततो मृन्मयसम्पुटे ।
हृत्वा मृत्कपर्दान्तर बालुकायत्रगं पचेत् ॥ ४७७ ॥
यामाश्रकं प्रयत्नेन ज्वलिते खादिराजले ।
धुंधां घटुतरां कुर्यात्सुसिद्धो रसरारसरसः ॥ ४७८ ॥
नागवल्लीदले युक्तं वह्नुमानेन दापयेत् ।
ज्ञातव्यो गुरुमार्गेण पक्त्वाऽपन्वस्य निर्णयः ॥ ४७९ ॥
र सि , रसायने ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ पल, पारा, मैनसिल, नवसादर, और खपरिया १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर जलीकरे-लेकरसेसे एकरोज मर्दनकर गोलानयाय एकपल्लावेके कण्टक-वेधी सम्पुटमें रखे और ऊपरसेभी पतला लेपकरदे । इससम्पु-टको शरावसम्पुटमें बन्दकर सात कपडिमिठी देकर अच्छीतरह सुखाले । सुखनेपर बालुकायत्रमें रखकर ८ पहर रैरकी लकड़ीकी आचदे और बायके ऊपर धान अथवा ज्वार रखदे । जबबहु फूलजाय तब समझना चाहिये कि सिद्धहोगया । सम्पुटको वैशेदीकोयलोपर रखनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सम्पुट सहितसलकर रखछोटे । इसमेंसे ३-३ रसीकी मात्रा पानमें रखकर खानेसे अलन्तपुधाको करताहै । वात और कफज समस्तव्याधियोंको नष्टकरताहै ॥ ९९ ॥

१०० रसराक्षसरसः (द्वितीयः)

सूतं खल्वे विमृष्टाऽथ लशुनेन दिनाऽष्टकम् ।
शोभाञ्जनरसे तावद्राजिकायां दिनाऽष्टकम् ॥ ४८० ॥
काकमाचीरसेस्तावद्गोहृद्रावे दिनाऽष्टकम् ।
जलयन्त्रेऽग्निना सिद्धो भवेत्पोडश्यामतः ॥ ४८१ ॥
रसराक्षसनामाऽयं कुर्याद्बहुतरां क्षुधाम् ।
एतद्रसप्रभावेण राजमान्यो भिपग्भवेत् ॥ ४८२ ॥
र.सि., अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्धपारेको तप्तपरलोम डालकर लहसन, सहिजन, राई, मकोय और लोहद्राव (लोहको गलानेवाला तेजाव) में क्रमसे ८-८ रोज मर्दनकर लोहेकी कड़ाहीकेबीचमें गोलेको रख लोहेकी कटोरीमें ढककर जलमुद्रासे बन्दकर बहुसमन्द अग्निजलावे। मुद्रा पिपलकर अच्छीतरह कटोरीको पकड़ले उससमय उसमें धीरजसे पानी भरदे। पानीभरनेके पहिले कटोरीपर कोई वज्र-नदार चीज़ रखदे जिसमें कि मुद्रा फट न जाय। फिर धीरे २ आंच लगावे ऐसे १६ पहर आंच देनेसे यह रस तैयारहोया। स्वादशीतलहोनेपर जलको कमड़ेवैरहसे निकालले और मुद्राको धीरजसे रोलकर रसको निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे १ चावल से १ रत्ती तक उचितानुपानकेसाथ खानेसे यह अत्यन्त क्षुधाको बढ़ाताहै। इसके प्रभावसे वैद्य राजमान्य होताहै ॥ १०० ॥

१०१ रसराक्षसः (राक्षसरसः) (तृतीयः)

ताम्रं पारदगन्धकौ त्रिकटुकं तीक्ष्णञ्च सौवर्चलं,
खल्वे मर्दनकं विधाय सिकताकुम्भेऽष्टयामं ततः ।
स्विन्नं तस्य च रक्तशाकिनिभवं क्षारं समं मेलयेत्,
लुङ्गाऽन्लोत्थरसे विभाव्य सकलं नाम्ना रसो राक्षसः
मन्दासौ सततं द्ददीत हुतभुक्कायेन संयोजितं,
व्याधिग्रस्तकलेवराय नितरां मुक्तोत्तरं शूलिने ।
श्रीसुयायि महेश्वराय गुरवे कृत्वा नर्ति चाद्रात्,
रुणानां क्रमतोऽस्य दानसमये गुञ्जाऽष्टकं वर्धयेत् ॥
र.र.स., र.को., वि.क., र.क.ल., र.सं., र.क. अग्निमान्ये ।

भाषा—ताम्र और फोलादभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, त्रिकटु, संचल, सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर आतशी-शीशीमें ८ पहर स्वेदनकरे। स्वादशीतलहोनेपर निकालकर समभागमें लालगुञ्जाके क्षारको मिलाकर बिजोरेसेरससे २-३ भावनाएँ देकर सुलाकर रखछोड़े। इसके प्रारम्भमें सूर्य, महेश्वर और गुरुको प्रणामकर एकगुञ्जाकीमात्रा चित्रककेकाड़ेसे देनेसे मन्दाग्नि नष्टहोता है। इसकी १-१ रत्ती ८ दिनतक बढ़ावे और वैशेही हासकरे। परिणामशुलीको भोजनकेबाद देवे १०१

१०२ रसराक्षसः (चतुर्थः)

पल्लव्यं रुद्रभयं सुशोधितं
शाखोटतोयेन पुनर्विभावितम् ।
दिनत्रयं तच्च विमर्द्य गाढं
समानगन्धेन पुनर्विचूर्ण्य ॥ ४८५ ॥

यदा भवेद्भजनसन्निकाशं
पूर्वांक्ततोयेन पुनर्विभाव्यम् ।
तत्कालसम्भारितछागमांसे
संक्षिप्य संलोहितचित्रकस्य ॥ ४८६ ॥
रसेन पूर्णं खलुतालमूली-
निर्यांसयुक्तं च विमर्द्य गाढम् ।
तन्मांसपिण्डं त्वपरं निवेदय
मापस्य पिष्टेन निरुद्धय यत्नात् ॥ ४८७ ॥
तत्सप्ततैले विनिवेदय चूर्त्यां
मन्दाग्निनेयं विपचेत्प्रयत्नात् ।
पश्चाऽक्षरीं चात्र जपेद्विधिज्ञो
देवीमिमां सिद्धरसेश्वरीं वै ॥ ४८८ ॥

एकलीपेंद्रांजपेदेवां पच्यमाने रसेश्वरे ।
बलिं दत्त्वा समभ्यर्च्य कुमारीः सर्वसिद्धिदाः ॥ ४८९ ॥
ततः सिन्दूरवर्णामं घटकतं समुद्धरेत् ।
अष्टोत्तरसहस्रजुं जप्त्वा पश्चाक्षरीमिमाम् ॥ ४९० ॥
तस्माद्यत्नात्समुद्धृत्य मुहूर्तं शोभने तिथौ ।
भिपक्व सन्तोष्य विप्रादीघ्नकिंकेरुजु भक्षयेत् ॥ ४९१ ॥
मधुसर्पियुतं भक्तं पश्चाद्भोजनमाचरेत् ।
अनुपानं पिबेद्गुह्यं रसायनमतानुगम् ॥ ४९२ ॥
यथेष्टं भोजनं कार्यं कृपायकटुवर्जितम् ।
अनेन विधिना कृत्वा नरः स्यात्कामदेववत् ॥ ४९३ ॥
योपिच्छतं भजेन्नित्यं सद्गुरुं काममोहितः ।
अकृत्वा मैथुनं रेतस्स्फुटित्वा लोचनं व्रजेत् ॥ ४९४ ॥
सदैव मग्मयाकारो नाऽत्र कार्या विचारणा ।
रसराक्षसनामाऽयं राजयोग्यं रसायनम् ॥ ४९५ ॥

र.कौ., दो., र.प्र., र.सु, वाजीकरणे ।

टि०—रसराक्षसन्दरे रसराक्ष इति नामकरणज्जु भ्रमोत्पादकत्वात्-
मुक्ति, मूले रसराक्षसनामाऽयमिति स्पष्टतया तत्रात्मकरणात् ।

भाषा—अच्छीतरह शुद्धकियाहुआ पारा २ पल लेख सीहोके दूधमें ३ रोज मर्दनकर शुद्धकियेहुए बराबरके गन्धकमें मिलाकर सीहोके रससे मर्दनकर अन्नके सहा होनेपर गोला-बनाय तत्कालमारैहुए बरनेके मांसमें रखकर गोलासा बनाले और उसमें लालचित्रक तथा ताबमूलीकारस भरके मुईदोरेसे सीकर एकदूरे मांसपिण्डमें रख उड़के आटेमें बाडी बनाय गोलाइचनेलायक तिलकेतैलेमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । पकाते समय ॐ ऐ ह्रीं ऐ ह्रीं इतमन्त्रका जप करताहै। इसकेप्रारम्भमें बैरवको बलिदे और कुमारीकन्याओंको भोजन-करावे। जब गोला सिन्दूरवर्णहोजाय तब तैलसे बाहर निकालकर रखले। उसीस्थानपर अष्टोत्तरसहस्र १००८ पूर्वां पश्चाक्षरीकाकरके गोलेमेंसे धीरजसे रसराजको निकालकर रखले। अच्छे सुहूर्त, तिथि, नक्षत्रादिकमें ब्राह्मणभोजन सूर्यरह करके १-१ रत्तीकी मात्रा मधु और धीकेसाथ खाकर दूध पीवे। कृपा और कटुको छोड़कर यथेष्टभोजनकरे। इततरहकरनेसे

मनुष्य साक्षात् कामदेवके सद्य होजाताहै और बहुतेरी स्त्रियोंकेसाथ उत्साहपूर्वक रमणकरकाहै । मूलसे इसकासेवन- कर स्त्रीसङ्ग न करनेसे तमामशरिरमें शुक्र फूटनिकलताहै और गर्मीकेमार आखें चलीजातीहै इसलिये यह राजालोगोंके योग्य है गरीबलोगोंको नहीं देना ॥ १०२ ॥

१०३ रसरक्षरसः (पञ्चमः)

सूतं विपं त्रिकटुकारगफेनयुक्तं
मयं चतुर्गुणमितं मलयभागयुक्तम् ।
आकैः पर्योमिरथ पिष्टतमं दिनैर्न
निक्षिप्य पिष्टममलं सितकाचकृष्याम् ॥५९६॥
मुद्रां विधाय सुद्रां मीपगष्ट्यामं
पन्त्वा पुनर्दिनचतुष्टययह्यिदृश्या ।
द्वात्रिंशद्द्विंशदधरे विपरिक्रमेण
कुयांदिनानि दश सावहितो हितार्थी ॥५९७॥
गुञ्जार्दकं तु सितया सह नागवल्ख्या
ऋक्षो यथा विधृतमांसचयोंऽन्नमस्थ्यात् ।
स्यादिन्द्रियादिषु वृषश्च यथेष्टभोज्ये
तुतः कदापि न पुमानपि मन्द्वर्हिः ॥५९८॥

र. का, अग्रिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, त्रिकटु, अफीम येसब १-१ भाग, शुद्धसोमल ४ भाग, लेकर वारीक चूर्णकर आक्के दूधसे १ रोज मर्दनकर सुखाकर ७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशी-शीशीमें भरके मुहपर ढाट लगाय ६-७ कपड़मिट्टीसे मुहको बन्दकर वालुकायन्त्रमें रखकर क्रमशःदागिसे ८ पहरकी आचदे । छडाहोनेपर निकालकर आक्के दूधसे ४ पहर मर्दनकर पूर्ववत् क्रमशःदागिसे १-१ रोज पकावे इसतरह पाचरोज पकानेके बाद मर्दनकर ७ पहरकी क्रमागिसे पकावे इसतरह १-१ पहर कम करताहुआ ५ दिनतक अगिसे पकावे । कुल १० दिनकी अगि देवे । पहिलीबारजो ऊपर उड़ाहुआ भागहै उसे लेकर नीचेका कचरा फेंकदे । दूसरे दिनसे नीचे ऊपरका सबभाग निकालकर मर्दनकर आचदेताजाय । इसतरहकरनेसे १० वै दिन बघट विलुल तलष्य होगी इसे निकालकर रखछोड़े । इससेसे आधी आधी रसीकीमात्रा शकर और पानकेसाथ खाकर ककारादि-गन्गको छोड़कर यथेष्टभोजन करनेसे अत्यन्त कृशमनुष्यभी भालुकीतरह मांससेपरिपूर्ण होजाताहै । इन्द्रिया भी प्रबलहो-जातीहै । अन्नरसमन्दाग्नि भी इसके सेवनकेबाद कमीभोजनसे वृत्त नहींहोताहै ॥ १०३ ॥

१०४ रसवरोरसः

आदौ सूतवरं विमर्द्यं सलिलैर्वांसाभयं वांसरं,
पश्चाद्ग्रन्थकताम्रमस्मसहितं खल्वे दृढं मर्दयेत् ।
भाग्यं त्रिफलाऽऽत्तरूपककणाकन्याविषावारिभिः,
प्रत्येकं दिवसनयं रसवरं सजायते कासहा ॥५९९॥
गुञ्जापञ्चकसमित्तो मधुकणायुकोऽथवा वासकं,
द्राक्षायुद्धुन शृङ्गवेरचपलाश्ट्नीनिपाश्रीयुक् ।

वा भागीं चपलाऽऽणान्निविजयाश्रीद्रान्वितः पायितः,
काये चाप्युलिके शिवामधुयुतः कासं जयेद्द्रुतम् ॥
या कृष्णामधुयुक् शिवामधुयुतो वा नागवह्नीरस-
शुद्रातोयसुसन्धवाऽन्निरसयुग्भायम्युविश्वायुतः ॥

र, कासे ।

टि०—र स, प, एतयोर्द्वेष्योत्तरयभारवरनाम्ना “ कर्प मेक रम शुद्ध गन्धक सचतुर्गुणम् । विषाय कज्जली क्षण्णा ततो निम्बु क्तापरिणा ॥ बल्क कुर्वीत खल्वेन वाक्चामचतुष्टयम् । द्विकर्पमथ ताम्रस्य तदुपप्राणि सर्वश ॥ कलेन तेन निम्बुवसेनाऽऽप्यखलके । स्वापयेदातप तीमे पिच्छीकृत्य तत परम् ॥ मूपास्ये निरुद्धवाऽय कुनकुयारैस्त्रिभिः पुष्टैः । पनेच्छुल्ला निनि शिष्य शुष्कैरप्यकोपैः ॥ तप आकृत्य सम्यक् कण्डे त विनि शिष्येत् । रमोऽय सर्वरोगो गुण सुदयमास्तर ॥ इति सर्वाणि शूलानि तमागीव दिवाकर । फांसखण्डि- क्त्वा सार्धं देवक्षेत्परं अयु ॥ पथ्य रोगोन्नि देय रमस्यानुचित त्वयेत् ॥” अथ योग शूलाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र. र, प, व से शु तु तत्रपदीनाम्ना “ रमगन्धकताम्राया चूर्णं कृत्वा समाशनम् । पुष्टपाकविधिं पक्त्वा मधुनाऽऽलोक्य सखित् ॥ सर्वरोगहरश्चेत्तर्पदास्य रमायनम् ॥” अथ वाग सर्वरोगाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

र र, प, अनयोर्द्वेष्योस्ताम्रयोगेति नाम्ना “ काकमावीशृङ्गवेर- जयासूक्तके श्वक । सप्तया मुच्छित शैले रस निमैलताङ्गत् ॥ सद्य- पत्रीकृत तात्र गन्धचूर्णेन योनिर्निम् । पुच्छेत्तन्मसूपाया चूर्णं सत्रेण कार- येत् ॥ तच्चूर्णं त्रिकटुपे तयोर्जयेमधुमपिपा । प्रहलीशयुरोगेषु हित तोपद्रवेषु च ॥ अल्पपिचे च जुषे च ज्वर मेहे च कासते ॥” अथ योगी प्रहलीरोगाऽधिकार निहितोऽस्ति ।

भैषज्यरत्नाकरव्या तात्रयोगेति नाम्ना “ तात्रपत्र रवे क्षीर निर्गु- ष्टीस्वरस तथा । त्रिकण्डेन सुदीर्घरि तात्र दम्भा क्षिपत्त ॥ रस स्याऽर्द्धपल शुद्ध गन्धकस्य पलन्तवा । कञ्जस्यदैन तन्परीरसेन तात्रन पलम् ॥ परिलिप्याऽन्धमूपाया दयालवब्रुपदाहवृत् । सम्पूर्णं मधुमपिर्भ्यो ततो रक्तिमि न खित् ॥ भगन्दरे सर्वमेवे खाप सर्वत्रयेषु च ॥” अथ योगी भगन्दराऽधिकार निहितोऽस्ति ।

रससारे, रसकान्पेनौ च तावेन्द्ररस इति नाम्ना “ श्वतुच्चस्रन स्रत गन्धकत्र क्रमपाचिनम् । सम्भाल्य खदिरबाभै मंत्रिष्ठाशिनान च ष शृङ्गजेन वर्दी बद्धा कुष्ठाशुदरनाशिनी । तावेन्द्रो नच निरुत्त कक्र- वातहर स्थुन ॥ एव रसो प्रकतर्था वनेऽल्लेन्दुरसौ ॥” अथ दण्ड कुष्ठाऽधिकारे निहितोऽस्ति ।

रसायनम्, र वि, र वी, वा म, रमणा, शु तु तन्वन्त- धिवारं त्रिनेत्ररस इति नाम्ना “ रसप्रथमत्राग्नी निम्बुवररत्नै र्दिनम् । मर्दयेदातप पश्चाद्वातुकदन्वमजगन् ॥ कन्धूपायन दन् श्रय तीमाशिनाना एवेत् ॥ पन्त्रयेन क्वृत्ते क्वेचो रोगेषु वै रसः ॥ गुणामिते देहसिद्धये पुष्टिर्बन्धय च । म्येषु हेनःऽन्नम्येनैस्त्रि नि- द्धयति कन्याया ॥” अथ दण्डे निहितोऽस्ति ।

रसमारसद्वयदरलणमुक्त्वा विनेत्ररस इति नाम्ना “ रस- ष्ठाधिकारे “ रसत्रागन्धकताम्रिणाऽन्वितोऽन्नम् ॥ इत्येन मर्द- ताना पुष्पकानां निवेचित मरुत । गुणप्रमाणात्त र्द्रकन्धिभूवचुत्तु- कम् । र्दण्डेनैवाशिमन्थवा धमिहुतुमुपकल्पेत् ॥ श्वनपति सुल- षेप तदद्रसमावित शुद्ध । लवणैरुत्तुनैर्द्वैष्टै रचितं कषाऽन्नि- त्तिरम् ॥ एतव हरिनाश्रु शृङ्गघ्नानरिः शुद्धमेतन्म् ॥ मधुननु पतिशुल समशनी नल विनेत्ररस ॥” अथ दण्डे निहितोऽस्ति ।

र म क, र ट, स, स्यायनम्, र, प, र, (मा.), र का, र ति, शु मन्धुप रसिताऽधिकारं रन्वरी नाम्ना “ स्रत गन्ध तथा शुद्ध

क्रमादेकत्रिंशत्तमम् ॥ तुल्याकं भावयेदादत्तसेधाऽपि त्रिंशत्तम ॥ गोल
कृत्वाऽप्यमपायां ऋदा गजपुटे पथेत् ॥ धनमुच्छ्रया च शुष्के शीतौद समित
क्षुत् ॥ त्रिदोष नाशयेच्छीर्षं क्रियां शीता प्रयोजयेत् ॥ रघूल कृश कृश
रघूल करोत्यग्निप्रदीपनम् ॥ त्रिदोषपालित रक्त प्रणनाड्यभिपातनम् ॥
यकृतलीहोहित यच्च यच्च कुष्ठकर रसक ॥ शोषयेदुदुष्टरक्त तद्रमो
रक्तारिःशुष्कम् ॥ अथ योगोऽस्ति । रसवर्तारं ताभ्रमण्डु रस निवेश्य
तल्लग्न्युद्वग् मूत्रपाया निवेश्य पुट दद्यादिति विदोष ॥

र. र. स., रसेन्द्रम., अनयां रसपिठिकेति नाम्ना “पयतात्रे रम.
पिठो बलिना हिभिना हित. ” अथ योगो हिम्बाऽधिकारो निहितोऽस्ति ।
भै. र., वै. क. अनयोः रसराजोति नाम्ना “गन्धेन गृत ताग्र शुद्ध-
गन्धेन तुल्यवत् ॥ द्रव्योः पाद शुद्धरस मर्दयेच्छूद्रगन्धैः ॥ पुष्टेजमुटे
विद्वान्स्वाह्नशीर्षं समुद्धरेत् ॥ गुञ्जाद्रय खिरेःशोर्द्रेः शीहृद्युत्तमविनाशनम् ॥
यकृतूल ज्वर हन्ति कान्तिपुष्टिविषभनः । रसरज इति ख्यातो रोग-
वारणक्रेतरी ॥” अथ योगः श्लाघाऽधिकारो निहितोऽस्ति ।

रसावतारं रसेश इति नाम्ना कामाऽधिकारं “यतगन्धरव्य ममा-
शना धामकार्द्वरत्तेन मर्दिताः । जायते निर्विम प्रथमत्तो क्षालने
हरिकेशेव रसेश ॥ बल्युग्ममशितोऽग्निपिप्लीप्राणदामयुयोऽपनाशनम् ।
पञ्जकासविनिर्गतनक्षमः रवीयपथ्यमहितो मृगाङ्गवत् ॥” अथ योगो-
निहितोऽस्ति ।

शु. यो. त., रसायनम्., र क., र मि, यो. र., र. चि., नि. र., र. कौ.,
र. का., र. म., यो. म., चि. र. म., र. र. कौ., एषु ग्रन्थेषु कुष्ठाऽधिकारो
शशिलेखात्रयीति नाम्ना “शुद्धयज्ञ सम गन्ध तुल्यञ्च मृतताम्रकम् ।
मर्दितं वाजुन्नीकायैर्दिनेकं बद्धनीकृतम् ॥ निष्कामा सदा खादिच्छि-
द्र्यां शशिलेपिकाम् । वाजुन्नीकेत्तर्पकं सशोद्रमनुपायेत् ॥” अथ
योगोनिहितोऽस्ति । तत्र र. म., यो. म., चि. र. म., एषु ग्रन्थेषु शशि-
धररस इति नाम, र. र. कौ., उच्छररस इति नाम । केषुचित्पुस्तकेषु
“तुल्यञ्च मृतताम्रकम्” इत्यस्य स्थाने तुल्यञ्च मृतताम्रकमिति पाठो
दृश्यते ॥

रमकामेनो श्लाघाऽधिकारो शूलगजक्रेतरीति नाम्ना “रस पल्लव
गन्धाऽष्टक निन्दुकर्द्वैः । शिमर्षं शुद्धताम्रस्य पत्राणि स्थापयेत्तत् ॥
निम्बरेषु च पक्षैक क्षिपेत्क-नलिकाञ्च ताम् ॥ शतवसस्पुटे धृत्वा शोषिते
मुदिते मृशम् ॥ खेडचूर्णं सदीचूर्णं शङ्खचूर्णं गुडैः सह । शूलकर्मदिलिप्ति
च शुष्केऽग्नि वैद्यमाकरम् ॥ स्वाज्ञशीतलमादाय रसः स्वाच्छूलक्रेतरी ।
अनुपातवशात्पर्वेणाश्चूलञ्च नाशयेत् ॥” अथ योगो निहितोऽस्ति ।

प्ले योगा. पृथक्पृथक्नाम्ना विभित्रविभित्रग्रन्थेषु नानाऽधिकारेषु
निहितः सन्ति, केषुचिद्ग्रन्थेषु तु द्विचतुरादिसंयोगेषु पुन. पुनरव-
स्थापिता. मन्ति तदाऽप्यभाववत्येके विचारः समापितो यदप्रभतहय-
द्विषिन् भ्रमदोषे निपत्य नाऽशरीरचालकस्त्रिभक्तिकारं कर्मो योगो निहि
तोऽस्ति । पूर्वोक्तयोगाश्चाऽप्य कश्चिन्नना मन्नातेति विचार न कु-
वानीहेऽशानाऽन्धकारनिरुद्धशानन्व्यातिपि विषये साधारणवैचानामपि-
कतया छात्राणां का कथेति सुतरा विदुषा हृदि विचार. मसुद्रेति ।
अप्रपतनकारणन्तु पक्षयाऽपि भोगस्य नाना नामकरण र छन्दोऽनुपेन
मूलद्रव्यनामानामन्विषो जन र भावनाविशेषा. ३ विविधान्यनुपानानि
च ४ । एतद्भ्रमनिरावर्णाय मूलत्वञ्च गवेषणीयमस्वावश्यकं तत्पथा-
गन्धेशकर्मयोगेन घटितयोगस्य नानान्याश्रितु कार्यकरणक्षमत्वायेन
येन मिथया यत्र यत्र रोगे यो यो योगः परीक्षित इत तत्र तत्र लिपितः,
मुख्यत्वेन कारण प्रकृतिमयदोषादिविचार एव तन्मूल्य मिषजा
निर्धारित्व्यतो वेनकानाऽपि प्रकारेण गन्धेशकर्मयोगेन वा तात्रमस्य
निर्णाय यत्र योगः कृतोऽस्ति तेषां भ्रमनिराकरणाय प्रयोगसौधवाय
योपरिनिर्दिष्टरमा. रसरवनाम्नाऽन्वर्षद्वय्या. प्रवीक्ष्यथाऽह । भावना
क्षानुपानानि तु खेडया न्यूनाऽधिकान्यपि ममानुप्रायमानानि-

न दोषावहाणि, इति सुधीभि विभावनीयम् । अत्र क्रमेणाऽभोलिखित-
योगा प्केनैव योगेन शुद्धया रुदा भविष्यतीति महत्साधनम् । एतद्वि-
रण हृदि सम्यागकल्प्य णेषु योगेषु निर्दिष्टमरण्या ते तं रोगा उपकृति
सर्ला भविष्यन्ति । अन्तर्भावितयोगाना नामानि यथा-उदयमास्कर. १,
ताम्रपर्वटी २, ताम्रयोग ३, ताम्रयोगो द्वितीय ४, ताम्रेन्द्ररस. ५,
निनेरस. ६, द्वितीयथापि निनेर ७, रक्तारि ८, रसपिठिका ९,
रमराज. १०, रसेश. ११, शशिधेया वटी १२, शूलयज्जेक्रेतरीति १३ ।

भाषा—अह्रसेवेरससे एररोज शुद्धपारोतो घोदकर इस्की
परावर शुद्धगन्धक और ताम्रमस्य मिलाकर नीलवर्णकजलीकर
भारती, चित्रक, त्रिफला, अहस, पीपल, धीकुंनार, अतीस
मुगन्धवाला इन प्रत्येककेस्वरस अथवा वायोसे ३-३ रोज
मर्दनकर ५-५ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली मधु, पीपल; अथवा अहस; अथवा द्राक्ष अथवा
अदरक, पीपल, काकडासींगी, अतीस और मधु; अथवा
भारती, पीपल, अतीस, चित्रक, भाग और मधु; अथवा चबूद
की छालका काटा, हरे और मधु; अथवा पीपल और मधु;
अथवा आंवला, मधु, अथवा पान, भटकटैया, चित्रककारस
और सैन्धव; अथवा भारती, मुगन्धवाला और सौंठकेसाय देनेसे
यह दुस्तकासको नष्टकरता है । इन अनुपानोंमें से जहा
जिसकी योग्यता हो वहां उसका योगकरे ॥ १०४ ॥

१०५ रसवीररसः

विगुणं शुद्धसूतस्य योजयेच्छुद्धगन्धकम् ।
लोहपपटिकाचूर्णं सूततुल्यं चिनिःक्षिपेत् ॥ ५०२ ॥
स्तुहाकंपयसा मर्द्यं तत्सर्वं दिवसत्रयम् ।
तच्छुष्कं चाऽन्धितं पक्त्वा करीपाश्रो दद्यानिशम् ॥
ततश्च टङ्गुणं काचं दत्त्वा रुद्धा धमेद् दृढम् ।
गुञ्जैर्क मधुना खादेद्भ्रसवीरो महारसः ॥ ५०३ ॥
अन्देकेन जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥
मुशलीमूलचूर्णन्तु गुञ्जापत्रद्वैः पिबेत् ॥
छागीमूत्रेण वातं वै कर्पकं कामकं परम् ॥ ५०४ ॥

र. सं., रसायनसं., रसायने । रसायनसंं करवीररसेति नाम ।
भाषा—शुद्धपारा १ भाग और गन्धक ३ भाग, लोह-
पर्वटी १ भाग लेकर सबको नीलवर्णकजलीकर सेहुण्ड और
आकके दूधसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलायनाय सुखाकर अन्ध-
नूपामें बन्दकर ४-५ कपडिमिठी देकर करीपकी अगिममें एक
दिनरत पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर अन्धनकर । स्वाज्ञशीतलहोने-
और काच समभागमें देकर तीव्र धमनकर । स्वाज्ञशीतलहोने-
पर निकाकर कारीकी पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती-
कीमात्रा मधुकेसाय खाकर सफेदगुञ्जाके रससे मुशलीका चूर्ण
एककप पीवे अथवा बकरीके मूत्रसे पीवे । इतरसके सेवनसे
एकवर्षमें बुढ़ापेको जीतकर दीर्घायुको प्राप्तहोता है ॥ १०५ ॥

१०६ रसशार्दूलरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं शुद्धं सर्मर्दयेदित् ॥
प्रतिहोहं सूततुल्यं लोहं मृतं क्षिपेत् ॥ ५०५ ॥

ब्राह्मी जयन्ती निर्गुण्डी यश्रीमधु पुनर्नवा ।
नलिकागिरिकर्ण्यकैरुष्णयुतैर्दुरालभाः ॥ ५०६ ॥
आटरूपः काकमाची द्वैवेरां विमदेयेत् ।
गुञ्जात्रयं चतुर्गुञ्जं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥
रोगोक्तमनुपानं वा कयोर्णं वा जलं पिबेत् ॥ ५०७ ॥
र.स., र.चि., र.मु., रसायनस., यो म., सूतिकारोगे ।
टि०—यद्यत्नवलादिशनाऽधिकमारोगाऽय मूलद्रव्येषु साम्यमात्र
हति परन्तु भावनास्वल्पिनविशेषत्वात्स्वतन्त्रतयैत्र पात्रो निहितोऽस्ति,
प्रति न विकल्पणीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, आर्योलोह
(सोना, चादी, तांबा, रागा, सीसा, कान्तलोह, कासा और
पीतल) १-१ भाग लेकर सयकी नीलवर्णकञ्जलीकर ब्राह्मी,
जेती, निर्गुण्डी, मुलहठी, पुनर्नवा, नालीशाक, बोजल, आक,
कालाधतूता, जडासा, अड्सा, मकरोय, इनप्रत्येकके यथासम्भव
स्वरस अथवा बाराँसे १-१ रोज मर्दनकर ३-३ अथवा ४-४
रतीकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्त
दोगहरानुपायकेसाय अथवा बटुण्णजलकेसाय देनेसे यह सम-
स्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १०६ ॥

१०७ रसशार्दूलरसः

अम्रं ताम्रं तथा लोहं राजपट्टं रसं तथा ।
ऊर्णं टङ्गुणञ्चैव यवक्षारं समांशकम् ॥ ५०८ ॥
तथाऽत्र तालकञ्चैव निफलायाश्च तोलकम् ।
तोलकञ्चाऽमृतञ्चैव पङ्कजाप्रमिता वट्टी ॥ ५०९ ॥
ग्रीष्मसुन्दरकस्याऽपि नागवह्नीरसेन च ।
भावयेत्सप्तधा हन्ति ज्वरं कासाद्गुण्डहृम् ॥
सूतिकाऽऽतङ्गुशोथादिस्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ ५१० ॥
र.सं., र.चि., र.मु. सूतिकारोगे । र.चि. गन्धकमधिकतया
नियोजितम् ॥

भाषा—अम्रक, ताम्र, लोह, राजावत (लाजवर्द) और
पारा इनकीभस्में, मरिच, मुद्गागा, यवक्षार, हरितालभस्म,
निफला और शुद्धवटनाग १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर
हरमल और पानके रसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर ६-६ रतीकी
गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तदोगहरानु
पानकेसाय देनेसे ज्वर, कास, अम्रप्रह, सूतिकारोग, शोथ और
स्त्रियोंके तमामरोग नष्टहोतेहै ॥ १०७ ॥

१०८ रसशार्दूलरसः (महान्) (तृतीयः)

अम्रकं पुटितं ताम्रं स्वर्णं गन्धञ्च पारदः ।
शिला टङ्गु यवक्षारः निफलायाः पारदलम् ॥ ५११ ॥
गरलस्य तथा ग्राह्यमर्द्धैकैकसम्मितम् ।
त्वणोलापत्रकञ्चैव जातीकोपलपङ्कम् ॥ ५१२ ॥
मांसी तालीसपत्रञ्च माक्षिकञ्च रसाज्वनम् ।
एषां द्विकार्पिकं भागं देयञ्चाऽपि विचक्षणैः ॥ ५१३ ॥
द्रव्ये किञ्चित्स्थिते चूर्णं मरिचस्य पलं क्षिपेत् ।
भावना च प्रदातव्या पुर्वात्तेन रसेन च ॥ ५१४ ॥

निहन्ति विविधात्रोगाञ्चरान्दाहान्वर्मि भ्रमम् ।
तथाऽतिसारकञ्चैव वह्निमान्द्यमरोचकम् ॥
विशेषाद्भिर्भिरीरोगं नाशयेद्विचरेण च ॥ ५१५ ॥

र.सं., र.मु., र.क. सूतिकारोगे ।

भाषा—अम्रक, ताम्र, स्वर्ण इनकीभस्में, शुद्ध पारा,
गन्धक, मैनसिल, मुद्गागा, यवक्षार और निफला १-१ पल,
शुद्धवटनाग ८ मासे, तज, इलायची, पत्रज, जावित्री, लवङ्ग,
जटामाषी, तालीसपत्र, सोनामारी, रसौत २-२ कर्प लेकर
वारीकचूर्णकर हरमल और पानकेरसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर कुछ
द्व रहनेपर एकपल मरिचका बारीकचूर्ण डालकर ३-३ रतीकी
गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तदोगहरानु-
पानकेसाय देनेसे ज्वर, दाह, वमन, अतिसार, मन्दाग्नि
अर्दि, तथा खागकर गर्भिणीविशेषोंको यह नष्ट करताहै १०८

१०९ रसशेखररसः

पारदञ्चाहिफेनञ्च द्विर्द्वादशकरत्तिकम् ।
अय.पात्रे निम्बकाष्ठे मर्दयेत्तुलसीद्रव्यैः ॥ ५१६ ॥
तस्मिन् सम्मूर्च्छिते दद्याद्दरु रससम्मितम् ।
मर्दयेच्च तुलस्यैव ततश्चैतानि दापयेत् ॥ ५१७ ॥
जातीकोपफले चैव पारसीक्यवानिकाम् ।
आकारकम्भञ्चैव द्वात्रिंशत्तिककाः प्रति ॥ ५१८ ॥
मर्दयेत्तुलसीतोयैरेतेषां द्विगुणं शुभम् ।
दद्यात्खदिरसस्त्वञ्च वटिका चणकप्रभा ॥ ५१९ ॥
सायं द्वेद्वे प्रयोज्ये च लयणाऽम्लञ्च वर्जयेत् ।
गलत्कुष्ठं तथास्फोटान् दुष्टान् गर्दभिकामपि ॥ ५२० ॥
ये स्यु र्ग्रेणा नृणामन्ये उपदेशपुर.सराः ।
तान्सर्वांशशयत्याशु सिद्धोऽयं रसशेखरः ॥ ५२१ ॥
र.सं., घ., भै., र.क., उपदेशे ।

भाषा—शुद्धपारा २ रती, अफीम १२ रती लेकर लोहेके
पात्रमें तुलसीकेरसकेसाय नीमके ताजे ङ्णैसे घोंटे । पारद
अच्छीतह मिलानेपर पारकी बराबर शिगरिक डालकर घोंटे ।
एकजीव होनेपर जावित्री, जायफल, खुरासानी और देशी
अजवाइन, अरुकरा ३२-३२ रती मिलाकर एकरोज मर्दनकर
इनसबको बराबर उत्तमकट्या मिलाकर सनेप्रमाण गोलिये बना
कर रखडोड़े । इनमेंसे २-२ गोली शुद्धसाम देकर नमक और
खटाई से परहेनकरनेसे गलितकुष्ठ, फोड़े, दुष्टव्य, गर्दभिका,
उपदेशजित तमामाषाव येसब नष्टहोतेहै ॥ १०९ ॥

११० रससिन्दूरम् (प्रथमम्)

पलमात्रं रसं शुद्धं तावन्मात्रन्तु गन्धकम् ।
विधिवत्कज्जलीं कृत्वा न्यमोधाऽङ्गु रवारिमिः ॥ ५२२ ॥
भावनात्रितयं दद्यात् स्थालीमध्ये निधापयेत् ।
विरज्य क्वचोयन्त्रं बालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ ५२३ ॥
दद्यात्तदनु मन्दाग्निं भिषग्यामचतुष्टयम् ।
जायते रससिन्दूरं तरुणादित्यसन्निभम् ॥
अनुपानविशेषेण करोति विविधान्गुणान् ॥ ५२४ ॥

र. सं., नि र, र. क, र. चं, र को., आ प्र, यो.
र., यो. म., र. क. यो, वै. चि., वै चि. (ल.), र. पा,
सर्वरोगाधिकारे ।

३०—र को पारदाद्विगुणेन गन्धकेन कान्तौ कृत्वा महर्षिशक्ति
मिर्वामेरुभिः प्रदाय स्वाद्गन्धीत समाहृत्य द्विगुण गन्ध निषाय पाक
कुयादेव वारपय कुर्मादित्यभिहितम्, नाम च हरगौरीति स्थानिन् ।
उत्रचिद्व द्विगुण गन्ध नियुज्य कृषीपावो विहित ।

“गन्धक पारद तुल्य जम्बीररसमर्दितम् । कुमारीचित्रकजैत्र तुलसी
त्रिफला मधु ॥ हृषपादी सहादेवी पारिभद्र कुरुष्वक ॥ प्लेषा स्वरसै
सम्यक भावयेत्कुदालोभिषक् ॥ काचकृत्या विनि शिष्य बाहुवायन्त्र
मथ्यत । त्रिदिन पाचयेदतस्वाद्गन्धीतलमुद्धरेत् ॥ इन्द्रगोपसमच्छाय
मिन्दूर सर्वनिद्रिदम् ॥” इत्याकारक पाठो रसायनपरीक्षायां रत्ना
कर्तृपथयोगे च निहितोऽस्ति । “पारदश्चैवमागन्तु द्विभाष गन्धकस्तथा ।
खले षसपदीद्रावै कुमारीश्व विमर्दितम् ॥ दिनाई बाहुकायन्त्रे मिन्दूर
सर्वरोगजित् ॥” इति रत्नाकरौपथयोगे द्वितीय पाठोऽस्ति ॥

“तुल्य गन्ध रस शुद्ध खलमध्ये विनि शिष्येत् । हृषपादीरसै मयै
दिनमेव च मज्जनीम् ॥ गुटिका वारविलास्य वाचशुष्यन्तरे शिष्येत् ।
कृप्यन्तद्धारामिन कृत्वा रजतपत्रकम् ॥ तद्ग्राह्यन्ते काचकृत्या शिष्येन्-
द्रक्षुभुतम् ॥ ह्वण माषमात्रञ्च ददेत्कृषीदरे शिष्येत् ॥ बाहुकाभि
पूर्विला भाण्डवन्न निरोपयेत् । द्विषव्याप्त पेषेदेष स्वाद्गन्धीतल
मुद्धरेत् ॥ षटशाः चूड शिष्या ततुल्यमरिचान्वितम् । चूर्णाकृत मई
यित्वा पुषामात्र प्रदायेत् ॥ सर्वे रोगा विनश्यन्ति ह्यनुपानविशेषेण ।
मनुष्याणां हितकर सस्किन्दुरुसुप्तम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाकरौ
पथयोगेऽस्ति ॥ “गन्धक पारद तुल्य शिष्या ततुल्यैकारसै । रसमच्छ-
भृतरसै सम्मयं नि शिष्येत् ॥ बाहुवायन्त्रमार्गेण काचकृत्याञ्च पाचयेत् ।
दिनाषे नयनानन्द सिन्दूर भवति ध्रुवम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाक
रौपथयोगे वसवराजीवे वैचित्रिचन्द्रमणौ च निहितोऽस्ति ।

“पारदाद्विगुण गन्ध जम्बीररसमर्दितम् । नागवहोरीसै मयै दादिनो
सुप्तुमोद्धरे ॥ रसै सम्मयं गुटिका कारयेत्कृषिकान्तरे । शिष्या सख्यं
विलिष्याऽप्य पवेत् द्वादशामात्रम् ॥ बालश्वश्रुतीकाश मिन्दूर जायते
रस ॥” इत्याकारक रत्नाकरौपथयोगे पाठोऽस्ति ॥ “पुराणवासुदेव
रसपादीपुनर्नवे । मण्डूकपर्णाम्बाक्षीया किन्दुकद्वयपुष्पकै ॥ वासावर्पाश
पुष्याभ्या रसे सम्यक् प्रमर्दयेत् । पातनादित्थव कार्यं तत उच्यतेऽस्य ॥
चतुर्मासगन्धकञ्च दत्त्वा चैव प्रमर्दयेत् । काचकृत्या विनि शिष्य शुद्धसै
येद् दृढम् ॥ बाहुकास्त्वेन दन्त्रेण पाचयेद्विसत्रयम् । मिन्दूर जायते
क्षीरमिन्द्रगोपसमप्रमम् ॥ अनुपानविशेषेण सर्वरोगाश्रयकारकम् ॥” इत्या
कारक पाठो रत्नाकरौपथयोगेऽस्ति ॥ “गन्धक भूममारञ्च शुद्ध रस
मम समम् । यामैक चूर्णयेत्तले काचकृत्या विनि शिष्येत् ॥ रुद्धा द्वादश
यामास्तु बाहुकायन्त्रपाचनात् । रसोऽयैस्वाद्गन्धीतै तु पूर्वैश्च गन्ध-
रत्नैश्च ॥ अथ स्य रसमिन्दूर सर्वरोगेणु शोचयेत् ॥” इत्याकारक पाठो
रत्नाकरौपथयोगेऽस्ति ॥ “पलमेक रसेन्द्रस्य शुद्धगन्ध चतुष्पन्म् ।
हृषपादीरसैवै मर्दयेत्पामात्रम् ॥ अर्धमूलकपापेण कुमारीचित्रा-
रिणा । मयुनाऽऽर्दकनीरेण प्रत्येक याममात्रकम् ॥ वटकान् कारयेच्छु-
ष्वान् वाचकृत्यन्तरे शिष्येत् । सुवनप्रतिवे वसै शंदा युक्तैश्च वेष्टयेत् ॥
बाहुकायन्त्रविधिना पाचयेद्विसत्रयम् । पञ्चमगन्ध भाति मिन्दूर भवति
ध्रुवम् ॥” इत्याकारक पाठो रत्नाकरौपथयोगेऽस्ति ॥

“रसनिद्रादि रस परिशोधितो विगन्धकस्तोऽपि हि गन्धक ।
विमच्छेदमये कृतखर्पे ह्यमच्छाररज परिस्रुयताम् ॥ अनिद्रादाऽपि
युने द्रवति स्वय तदनु तत्र रस परिस्रुयताम् । विशदलोहमयेन च
दर्शिना विषयेत्येह रसयममितम् ॥ वदतु काचपर्यं विनिषेव्य वे सिक
तत्र चूडयोगे हि पाणिन । द्विदशयाममय कृतवह्निना भवति रसरसस्त

लभरसता ॥ गन्धकेन नरेण हि सेविता भवति वाचिचर सुपद सदा ।
स च वडीपल्लिनि च नाशयेच्छतशरत्तु निरामयकृत्यम् ॥” इत्या
कारक पाठो रसप्रकाशसुषाकारेऽस्ति ॥

“पारद पल्लेक स्याद् द्विष्य शुद्धगन्धकम् । रक्तकार्पागतयेन धृष्ट
काचस्य दूष्यके ॥ निशिष्य टङ्कणेनैव मुक्त तस्य निरोपयेत् ॥ बाहुवा
यन्त्रमथ्यत्वा दृषीञ्च वुरता दृढाम् ॥ अहोरात्र पचेद्गौ शस्त्रविकुशले
भिषक् ॥ शतश्रादय पात्रस्य कृषिगन्तलेरनिद्रम् ॥ दरेरेन सम रक्त
मोज्ज्वल मय सङ्गयेत् ॥ मञ्जुनामपमेत्रञ्च घृतेन मधुना सह ॥ पश्चा
दुद्भुष गुट चाज्य कृष्णमुषमि शंकराम् ॥ द्वाशाशर्जुमधुप्रमृत्नीनय
भक्षयेत् ॥ विपलामधुना शान्ति याति सित चित्तोत्थितम् । निर्गुण्डिका
रसेनाऽप दुर्वावा वातवेदना ॥ प्रथम याति वेगेन नूतनञ्च वपुर्भवेत् ॥
अर्थाऽऽवर्तितुद्येनेन गृह्णेने यथय रस ॥ वन्ध्याऽपि च भवत्येव जीव
वल्गा सुपुत्रिका ॥” इत्याकारक पाठो र च, र त, नि र, र स,
र नु, रमपारिगताऽकारितः । र त, नि र रत्तयो द्विगुणगन्धक-
जार्णसिन्दूर इति नाम । रमपारिगते भावनाया रक्तकापायनोपस्थाने
वन्धकाणोय दृश्यते ।

“पारदस्य श्रवो भागा भागैक गन्धकस्य च । वन्धवाकाकामान्योश्च
तुलसीतण्डुलीयै ॥ वषट्कार्या पराशस्य द्रवै मयै दिनयम् ॥ बदरादि
प्रमाणेन वटी कुयात्प्रयत्नत ॥ कृषिर्षां पूर्येत्ताभि वन्नसृष्टिद्या बरि
पुत्र मते प्रदातव्य वन्नसृष्टिवा पुन ॥ एव सप्तमदादध्यान्मृत्तिका
वस्तु नयेत् ॥ शुष्का काचपर्यं दत्त्वा बाहुकायन्त्रमथ्यन् ॥ पचेद् द्वादश
यामास्तु स्वाद्गन्धीतलमुद्धरेत् । मिन्दूराम भवेद्गन्ध गृहीत्वाऽप्य प्रयत्नत ॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगहर परम् ॥” इति पाठो रत्नाकरौपथयोगेऽस्ति ॥
र म क, र म मा, रमयत्नत स्यु अन्नेषु “पारदाद्विगुण गन्ध दत्त्वा
वार्णमिन्द्रादेव । पूर्ववत्पाचितो शेष तदा मदनकामम् ॥” इति पाठो
मदनकामदेवरस इति नाम्ना निहितोऽस्ति । उत्रचिद्वत्स्यन्तम् गन्ध
निशेष्य भावनाया सर्पाश्वा द्रवै मर्दयित्वा बाहुकायन्त्रे पाणिन ।
“सतुल्य घ्न जीर्णं दान्ध्या तुल्यञ्च गन्धकम् । रविश्रीरे दिन मयंमथ्य
यित्वा तु भूषेत् ॥ पुत्रेन भवेत्सिद्धो रमो हेरष्यगर्भक ॥” इति रत
रत्नाकर पाठोऽस्ति, परन्तु तत्र रसमिन्दूरत्वाऽऽभावनायाऽपथञ्चिर्षे
व्यामन्तर्भावो भवितुमर्हति । भूषेत् पुददानाममेषिकाऽस्तिमयोऽश्वत्थि
श्रम एव हस्तगतो भवित्थनि तदपेक्षया रविश्रीरे विवृष्ट पर्यं निषाय
नागवहोदरे मर्दयित्वा भूषेत् प्रत्येव श्वामकामादौ निशेषनीय इत्य
स्माक सम्मति ।

एते पाठा अथमरससिन्दूरजन्तभावीनया । द्विगुणद्विगुणचतुः
गन्धकमानस्य तु चतुर्गुणत्वकयोगेन रसस्य सप्पादनात्मन्वन्दर्भावी
भवित्थनि । अथिचतु न तद्वादिनिश्यायेन गुणशुद्धिरपि सुभाषा
भवित्थनि, भावनाया विशेषधर्माद्येष्टव्यं तस्योपनिर्दिष्टद्रेण भावनाया
प्रदाय रसमयान्दरे मर्वासां भावनानामन्तर्भावीलोकिनी गुणमयच
सम्पत्त्यते । यैवैवभावनामर्दस्य पाठान्तरकल्पने गौरवात्, विगेषुपाऽ
हाम्भाच । मम्यक् सुशोधिने रसे रमपावमनये दृष्टुमादिदानस्य तु
नात्यन्तौचिनी इति प्रमिताम्, अतोऽर्थाऽप्यसिलियंम्वान्तानि रसे विषाण
कथञ्च भावनाद्वेष्ये निर्वीष्य कर्जळो कृत्वा अयोनिर्दिष्टद्वयै प्रमेण
वाचञ्चरवावारात् भावयित्वा रस सप्पादनीय इत्यस्माव सम्मति ।
भावनाद्वय्याणि यथा—अर्कमूलश्रीराऽऽर्दक-गृहभूम-तण्डुलीयक-वल्
कारी जम्बीर-कुमारी चित्रक तुलसी त्रिफला-मधु हृषपादी-सहादेवी-पारि-
भद्र-कुरुष्वक-रत्नाकर-भृत्त-रत्नाकर-वह्नी-दादिनीकुसुम-वास्तुले-रुण्ड पुनै
वा मण्डूकपर्णां माद्री किंशुञ्च दस्यपुष-वासा-कार्पायन्त्र-पथाराद्रजना ।
एताभि म्वांनभिश्चन्द्रोदयकर्जळो भावयित्वा चन्द्रोदय निषाय रस
मिन्दूरस्थाने व्यापारित्थ महान् गुणलभ । माम्पनिममये यन्-
सुशुक्तिपादरेन चन्द्रोदय जना निषाददन्ति तथा वरगे तु वैचर्ना
शक्तिरि नाऽपि तन्मयस्वर्गण्य मित्रद्वयेन पुनस्थान कृत्वा यथा-

शिवतुल्यलभोऽपि भविष्यति जनानामभिरुण्णलमादायुर्वदकीर्तिरपिका भविष्यति, स्वर्णरिक्ताऽप्यत्र न चेत्तर्हि स्वगन्धं मयूरशिरसाद्देव वक्त्रे वा कृष्णतुल्यदीर्घे वल्के वा पत्रपदिनाति चन्द्रियाऽभंगनाऽपि विमृष्ट पूर्वोपपत्तयुक्तमथ्ये शुच्यचक्रिका पिपाय धरावमस्युत्र कृत्वा पूर्णगन्धुदयैनेद्विभवेव पुं स्वर्णं भरमतामेव्यति तन्मूल्यञ्च स्वर्णाऽप्यश्याऽप्यभिमाम्रया लभ्यते इति सङ्घट्टे ईष्याचकल्योभयश्रेयं स्कर यथास्यात्पाऽनुषेयमित्यस्माक विनीता प्रायेना । स्वर्णरहितमिन्दु रमयोगासु धनाऽभावमुक्त्वा सन्तीति स्पष्टतया प्रतिभाति । कृष्णपरि रसवैसेतथाविप्रयोगा पनिकरदिरु ननोभयसाधारण्येन सुखना भवेद्यु रिति युद्धया दक्षिता । तत्राऽभीदानीनक्षिदानमन्तरा वैशुपयन्मादिना हाय्येन योऽय चन्द्रोद्यादीना प्रकारश्रुतितस्तान शान्तिनिर्दिष्टमार्गाऽप श्याऽप्यन्यैव गुणधीनताऽस्ति, इति प्रत्यक्षप्रयोग कृत्वा ननै विवेचनी यमिति साम्प्रद स्म । अतदशान्तिनिर्दिष्टमार्गैव रसोत्पादनं कृत्वा शान्तिनिर्दिष्टगुणाऽऽशा तपु तेषु कर्तव्या नाऽन्यथा । एतद्व्यामप्यवगते पनेच्छ यस्य कस्यापि हृदि विद्युरसि तर्हि पाश्चात्यवैशुतादिद्वन्द्वारा निर्मितानि लोहादिभस्मानि व्यबह्वय प्रत्यङ्गीकुर्वन्तिवत्प्रमतिविस्तरण ॥

भाषा—युद्ध पात्र और गन्धक १-१ पलकेकर नीलवर्ण कजलीकर बदाङ्कुरोंके स्वरससे तीमन्दमर्दनकर सुखाकर ६-७ कपइमिठीकीहुई आतशीशीशमें भर बाहुकायत्रमं रस अभि- देवे । गन्धकनाशणहोनेकेबाद खडियामिठी और युद्ध अथवा सुखानीमिठीसे सुह वन्दकर ४-५ कपइमिठीदेकर ४ पहरनी तीक्ष्ण अभि देवे । स्वाश्वातीतलहोनेपर निनालकर रखडोड़े । इसनेसे १ रससे ३ रसोत्तक मात्रा तत्तदोगहरातुपानके साथ देनेसे यह समस्तसोर्गोंको नष्टकरताहै ॥ ११० ॥

१११ रससिन्दूरम् (द्वितीयम्)

गुह्यं सूतं शुभं गन्धं प्रत्येकं तु चतुष्पलम् ।
द्विपलं नवसारञ्च फेनञ्चापि पलं तत ॥ ५२ ॥
पलाहं वत्सनाभञ्च वत्सनाभसमा खटि ।
शुण्ठीमरिचपिप्पल्यं पृथक्कुर्यं नियोजयेत् ॥ ५२६ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे यायत्कजलसन्निभम् ।
विजयाभूर्त्तशुण्ठीनां जातसारेण सप्तधा ॥ ५२७ ॥
प्रत्येकं मर्दयेत्खल्वे काचकूर्यां विनि.क्षिपेत् ।
सप्तमि श्रुत्तिकावस्त्रे वांलुकायन्त्रके पचेत् ॥ ५२८ ॥
कामाऽग्निना सप्तदिनं स्वाद्गशीतं समुद्धरेत् ।
इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥
परं वृष्यतमं पुंसां रमयेत्स्त्रीदातं मुदा ॥ ५२९ ॥
र क यो , सर्वरोगेषु ।

टि०—“ युद्धयुद्धस्य भारिकं चूलाकालवष तथा । रसतुल्य वत्सनाभं शुक्रपिच्छ त्रिभागवत् ॥ त्रिदिनं मर्दयेत्खले यायत्क जलसन्निभम् । कुसु म्भुपुष्पमारेण मर्दयेत्त्रिदिनं तत ॥ रक्तकापांसुपुष्पोरसै रज्जुलकाद्देव । हीरेरक्तकल्हारेस्त्रीरसप्रकोशरे ॥ रसै समर्थं वलेन धूमोर्कैश्च काचकूर्यां विनि क्षिपेत् ॥ सप्तमि श्रुत्तिकावस्त्रे वांलुकायन्त्रक पचेत् ॥ क्रमाग्निना सप्तदिनं स्वाद्गशीतं समुद्धरेत् । इन्द्रगोपसमच्छायं सिन्दूरं सर्वसिद्धिदम् ॥ शुभ्रैक सितया सर्पिमैयुक्त निवेधितम् । पर वृष्यतमं पुंसां स्त्रीसह रमयेन्मुदा ॥ अभ्यासादिति निर्दिष्ट नाम्ना विजयसुन्दरम् । नृपार्थां कौतुकार्थं वैश्वनीयमष्टोत्तये ॥” इति पाठोऽभ्यन्तरग्रन्थयो र क

यो , रसायनम् , निहितोऽस्ति तत्र पारदादीना समभागत्व गन्धकत्व त्रिभागात्ताऽस्ति, भावनायात्र विद्विदिशेयोऽपि तत्र पूर्वनिश्चये योगे त्रिगुणगन्धकदानं कृत्वा कुसुमभस्मकापांसुपुष्पाऽम्लिकाहीरेरक्तकल्हारेस्त्रीरसप्रकोशरसोऽपि भावना रसैरपि भावना प्रदाय एक एव रस सम्पादनीय इत्यस्माक सम्मति ।

“ पारदो दशभागश्च तत्समानश्च गन्धक । नवमारसद्वयं स्यात्क जर्ली कारयेत्तत ॥ बहिर्भूतं च्यक्तव्यारसेन परिभाषयेत् ॥ काचकूर्यां विनि क्षिप्य दापनेत्तपिका मुने ॥ सुकर्मैश्चिभि लिप्त्वा रात्रौ काम चतुष्टयम् ॥ अग्निं प्रज्वालयेन्मन्द रमभ्रम प्रणयेत् ॥” इत्याकारक पाठो वैचलितस्योपमहापवोरुद्धोऽस्ति । योगमाहाण्डे च रसपरं टिकेति नाम्ना व्यबहारस्तु प्रमादिव सञ्जात इति प्रतिभाति ॥ “ रस गन्धकयो कृत्वा कज्जलीं तुल्यभागयो । नरसार समागम्य किञ्चिच्च श्रीरारिणा ॥ त्रिदिनं मर्दयेत्तेन काचकूर्या निवेशयेत् ॥ काचकूर्या अभवेत्तु बाहुकायत्रम पचेत् ॥ समुद्धरेज्जालसन्निद्रगोपेन सप्तमि भम् ॥” इति रत्नाकरौपयोगे पाठोऽस्ति ॥ “ सत क्षिप्या ममाग्नेन दिनाति श्रीषि मर्दयेत् । पृथक् पृथक् सम कृत्वा पारद गन्धक तथा ॥ नरसार धूसारा पट्टक याममात्रवत् ॥ निम्बूसतेन समर्थं काचकूर्यां विनि क्षिपेत् ॥ मुले पाषाणपुष्टिका दत्त्वा घृत्वा प्रलेपयेत् ॥ सप्तमि श्रुत्तिकावस्त्रे पृथक् मशोष्य वेष्टयेत् ॥ सच्छिद्राया मुद स्यात्सर्वा काच कूर्पा निवेशयेत् ॥ पूर्येसिक्तारासैरगल्यनमतिमाभिपकू ॥ निवेश्य तुल्यया दहन भन्द मथ्य खर जमात् ॥ प्रज्वाल्यकमिनायामान् स्याद्ग शीतं समुद्धरेत् ॥ रमभ्रमोऽप्य तुल्यया तामुद्धरन् बलिं त्यजेत् ॥ अथ स्थ रससिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥”, इति पाठो रत्नाकरौपयोगे पाठोऽनने चोऽस्ति ।

“ पारदाच कृतीयांश्च गन्ध दत्त्वा तु मर्दयेत् । दशाशनवमारोणं युज चोन्मवापरिणा ॥ तल्ले समर्थं तल्लं काचकूर्या निवेशयेत् । गुरुक सम्पदायेन बाहुकायत्रमभ्यगम् ॥ पंचेषोऽनयापामश्च मन्थमथ्यदटा त्रिभि । सुपत्र शीतल्ले प्राशो हरगौरी रमो भवेत् ॥” इति पाठो र म. क , र म मा , रसायनम् , र क , र त , र का , एषु पुस्तकेषु निर्दि तोऽस्ति । तत्र र त पारदाचकूर्यांशगन्धक, अष्टमाशनवमार विबुज्य मातुतुङ्गाभावनाया सम्पादित । अन्यं बहिर्दिशेयोगेनाऽपि नाम च चतु र्भागं प्रकथीयन्ति स्मिति ।

“ सत पत्रपल स्वर्पोरहितस्तुल्यभागो वलि—, द्वौ तद्वौ नवमा दरस तुवरीकृषैश्च समर्दित । कूर्या काचमुनि शिवतश्च सिक्तावचने त्रिभि बामरे , पत्रो बहिर्भिरुदवत्यक्षणा मिन्दूरनामा रस ॥” इति पाठ आ प्र , र स , व रा., मे सा , वै क , र (मा) , र मु , नि. र , रसायनम् , इ यो त , र त , वै वि (ल) , वी र एषु पुस्त केचक्षित । र स , मे सा प्तयो सर्वपां समभागत्व कृतम् , टङ्गुगञ्च न दहनो इति विशेष । रसतरदिष्यां नरसार चतुर्थांश नियुज्य केचिद्र सान्तर वदन्तीत्यभिहितम् ॥ “ वृषी सप्तद्वयस्यै परिष्ठा शुष्काऽप्य ग्नेश्वरैः, तुल्यौ तौ नरसारापादरुक्लौ समर्थं तस्या न्यसेत् । तप्येत् निष्कारयत्के तल्लेति पक्त्वाऽग्नेनाम शिम, भिष्ठा तुङ्गुमिष्वर रसवर भस्माऽऽदेदैवराट ॥” इति पाठ आ प्र , व रा , र मु , र मु , नि. र , रसायन स , र त , वै वि (ल) , वै वि , र प्र , एषु पुस्तकेचक्षित । वैचचिन्तामणौ जम्बीररसेन भावना प्रस्था । रसमदीये ममाग्नेन नरसार न्दुज्यत् तल्लभस्मेति नाम स्वपितम् तदशनाद । रसोदयेत्सोका इशीतं तुङ्गुं ग गन्धकं त्यजेत् ॥ तल्लभस्मरसो योगवादी स्यात्सर्वरोगा निरिति श्लोके कूर्ङ्गं गन्धकं त्यजेत्कलभरसा रमो प्राश्च इत्यत्र तु गन्धका पेश्या तल्लस्थल बोद्धव्यं न तु कूर्यपेश्या तल्लस्थलम् । यदाचिद्विदश मेव तल्लस्थलमभिधेत चेत्तर्हि भवतु नाम रससिन्दूरदीना नृपीकौष धानां सर्वेषां तल्लस्थलम् , परन्तु रसमयुद्धेत्तद्विद्वदभयप्राप्तादास तल्ल स्थल स्वीकृत्युचिन्तम् उपरिनिर्दिष्टेषु भावनासु मूद्धयेत् च

मल्लिचिदिगेषमादाय यत्रत्र ग्रन्थेषु स्वतन्त्रतया पाठाः प्रकल्पिताः सन्ति परन्तु उपरिनिर्दिष्टेषु या निर्दिष्टा भावनास्तामा नर्मानामपि एकमदानेनाऽपि श्लेषभावाद्विद्वानमयस्याऽप्यधिकशाल्यर्थेनाऽनु-
द्धानेऽपि गुणद्वैरेव सत्त्वात् । तथा कृत्वा एकस्यैव रसस्य मय्यादानेन स्वल्पक्रमे विशेषगुणलामात्तथाऽनुप्रेषयित्वयन्माक सम्मतिः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ पल, नवसादर २ पल, अक्षौम १ पल, शुद्ध बलनाग और खडियामिश्री आधा-
आधापल, सोंठ-मिर्च और पीपल १-१ कर्प लेकर बारीक चूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भांग, धतूरा, सोंठ, हुसुम्म और लालकपासके फूल, लज्जाल अथवा हाधा-
जोड़ी, हाजवेर, लालकमल, खस, पत्रकेशर और अशोक इन-
प्रत्येकके चारस अथवा चार्धसे ७-७ भावनाएं देकर सुराकर ७ पत्राङ्गमिश्री दीहुई आतशीशीशीमें भरके वायुकायन्नमें क्रम-
वृद्धामिस ७ दिनकी आंचदे । गन्धकजाणके बाद शीशीका मुंह
बन्दकरदेनाचाहिये नहीं तो कुछ न मिलेगा, स्वाङ्गशीतलहोनेपर
निकालकर रगडोड़े । इसमेंसे १-१ रती शबर, घी और मधु-
केसाय सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै और बहुतसी
त्रियोंकेसाथ रमणकरनेपरभी शुक्ररसालित नहीं होताहै ॥१११॥

११२ रससिन्दूरम् (तृतीयम्)

भागो रसस्य त्रय एव भागा
गन्धस्य मापः पवनाशनस्य ।
सम्प्रथं गाढं सकलं सुभाण्डे
तां कज्जलीं काचघटे निदृच्यात् ॥ ५३० ॥
संस्त्रय मृत्कपटैके घटीं तां
मुखे सचूर्णां खटिकाञ्च दत्त्वा ।
क्रमाग्निना धीणि दिनानि पक्त्वा
तां वायुकायन्नगतां ततः स्यात् ॥ ५३१ ॥
बन्धकपुष्पारुणमीशजस्य
भस्म प्रयोज्यं सकलामयेषु ।
निजानुपाने मरणं जराञ्च
हन्त्यस्य बहः क्रमसेवनेन ॥ ५३२ ॥

र. सं., नि. र., र. क., रसायनसार., यो. र., गे. सा., र.
(मा.), वै. द., र. प्र., आ. प्र., र. प्र. सु., वै. चि., र. कौ., वै. क.,
वै. चि. (ल.), रसायनसं., यो. म., र. त., ना. वि., र. सं., ७.
यो. त., मन्तरेण ।

११०—रसप्रकाशमुपाकरो मातुतुङ्गभावनं प्रदाय काचघटे पाचन
रिदितम् नाम च उदयभास्वर इति स्थापितम् । कुम्भपित्रं पट्टा-
गन्धक जाणो नियोजितम् । रसप्रदीपं एक बैधरसेन च प्रयोदश-
प्रदायाः चन्द्रोदयस्य मान्ना भरतने प्राप्ते च निमित्ता. पर ते न
चन्द्रोदयस्य प्रकाराः अपि तु रससिन्दूरनिष्पात्रकाराः, चन्द्रोदय-
शब्दस्य स्तोत्रदिक्षुसिन्दूर एक व्यवहारं प्रयोगात्, पारद समस्तुं ते
प्रकाराः प्रथमतः विरिञ्चानां विचारिनां कृते उपर्युक्तस्य इति बोद्धव्यम् ।

“ भुक्तं पारदं शुभं शुद्धं गन्धकं तन्ममम् । मत्पाराशीविषकदावे-
हंमदीपुनर्भवे ॥ कुमारीकाञ्जामाचौरे भोर्कथिचा पुनः पुनः । क्वच-
न्यथां विनि श्लिष्य वाजुःपत्रमप्यगम् ॥ क्रमाग्निं विज्जना यति-

सिन्दूर भवति ध्रुवम् । अनुपानविशेषेण संप्रयोगेह परम् ॥ ” इति जाटे
पाठोऽस्ति ॥ “ शुद्ध रस पत्रपलप्रमाणं सुगन्धकं पत्रपलद्वयम् । शुद्धो-
विष पत्रपलप्रमाणं नाग तथा शुद्धपर्यवेव ॥ कुमारीकाञ्जिः पुत्रि
त्रियैव सताऽभियुक्तस्त्वन्मैत्तमम् । शुष्कं पुनः काचघटे न्यसेपत्रमा-
ग्निना वामरपत्रकञ्च ॥ पथैत्पयवर्नात्मिकतास्यवन्धे बन्धुक्पुष्पारुण-
मिभं स्यात् । सेनेन शुद्धैरुमिहाद्रेकं ज्वरादिपाण्डूदकुमुमेहम् ॥ निजा-
नुपाने ब्रह्मर्षी निजिति रत्नामृगो वाजुवतुल्यवीर्यं ॥ ” इति रसेन्द्रचन्द्रमुने
पाठोऽस्ति ॥ “ रसताज्जलान्यष्टौ गन्धकं दिशुण ततः । शुद्धगान्धय
चाक्ष्राणि भाक्षिकं पलेने च । सर्वकज्जलिका कृत्वा भावयेज्जलपदैः ।
वयादुरित्तया निन्दैः समष्टत्वेऽप्य भावयेत् ॥ वीरपुत्री विधेदेवापन्ना-
वर्षालिगन्धया । सम्प्रथं शुष्कं तत्कावे मिकतायां विधानेने ॥ याम-
द्रादशकं यावत्सर्वरोगहृदं रसः ॥ ” इतिरसेन्द्रचन्द्रमुने पाठोऽस्ति ॥
“ विमलनागचरैकविभागिकं हरजमागचतुष्टयमिश्रितम् । सतमेव विद्युष
शिलातले वल्लिनाञ्च सना बुरु तद्विषयकं । दिनमिततञ्च सुविद्युष च
कम्पसास्रस्य येनकोऽस्तिनिशेषेने ॥ तदनु मृत्कपटस्य तु कज्जलीं गनि-
रकाचघटे विनिवेशय ॥ दिवमसुगन्धयः कृत्वाग्निना स च भेदरणः
कमलच्छविः । मरुत्पदोविनाशनवहिकुद्रु बलकर परमोऽपि हि कानि-
कृत् ॥ नयनरोगविनाशघतो भवेत्कमलामुक्तविज्जमकारकः । न मत्तु
कमेविकाचरोगहा निशरनागयुतः सृष्ट पारदः ॥ ” इति र. प्र. सु.,
र. क. यो., ना., प्यु ग्रन्थेषु पाठोऽस्ति, र. क. थो. नाग सतमो
नियोजित ॥

“ एकभाग रस उवाच दिभाग हितुल तथा । त्रिभाग गन्धकौ
रविबीनं चतुर्गुणम् ॥ नागो विंशतिभागश्च चित्रनेमरमर्दिम् । काच-
कृत्वा विनि श्लिष्य धियार पाचिन क्रमात् ॥ इन्द्रगोपमं कर्णमूर्ध्ग रस-
मुत्तमम् । तत्स्वयं भवेद्भ्रमं राचबलममन्त्रकम् ॥ ” इति पाठो रत्नाक
रौषधीगवाहृत्यो हंसने । परन्तु नागनागप्रयोरथ स्थत्वेन सिन्दूरं रधि
दिशेपाऽभ्यागतं भोऽप्यवेवाऽभ्यामानीयः । सिन्दूरपाके पारदं उक्तं
धुना सम्पादनमन्तरा कथंचिदपि भाति. प्रथमे विशेषप्रयोगानुसारात् ।
पुत्राग्निपारदमयोगेन रसम्पादनपश्चे नागसङ्घयोगस्य हेरे निरिद्धाया
तत्प्रक्षेपणकाऽयोग्यः । नागमुत्तमायास्तु देहलोहविराणमन्त्रैरा मत्र
थिना इति प्रतीयते स्वतन्त्रतया मरुतीत्यय मयोगेकरणे तु नाऽपि
प्रत्यवायगन्धाप्रियोगानां सहस्रशो दृढकरत्वात् । सिन्दूरमप्यदं ना-
गवद्भरिताऽप्यथातुमयोग कृत्वा पत्रपारतः पारदस्योईपाने कृते तन्-
रथपानानुत्तमा भूति भेदवर्द्धगारदसिन्दूरस्य विपुष्पायंकरी भवे
तीति चिकित्सके नै वित्तरणीयम् । एका विद्या इत्येकरीति न्यानेन
श्रमालत्वञ्च प्रत्यसंभवे । अतः सर्वाऽपि काऽभिद्वयमुत्तमं सायेया-
दने “ मर्कं पर इतिपदे निजद- , मिनि न्यायेनाऽप्य नागमुत्तमा
एकत्रैवाऽभ्यामिना इति विपुषेताकननीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १ कर्प, शुद्धगन्धक ३ कर्प, नाग १ मादा
लेकर पहिलेनागको गलाकर पारदो मिलावे फिर गन्धक देकर
नीलवर्णकजलीकर आतशीशीशीमें भरके पूर्ववा वायुकायन्नमें
रस गन्धकजाणकर ३ दिनकी अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर
निकालकर रगडोड़े । इसका रंग दुपहरियाके फूलकेपरस होया ।
इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा तत्पदोद्दहातुगानकेसाथ देनेसे
सपरतोगोंको दूरर जरा और मरणसे रक्षित करताहै ॥ ११३ ॥

११३ रससिन्दूरम् (चतुर्थम्)

पलद्वयं शुद्धयुतं गन्धकञ्च तदुर्ध्वकम् ।
स्तुत्कारजरेनेयं भायना दिनममत्रकम् ॥ ५३३ ॥

सर्पस्य गरलेनैव काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ।
 कूप्या दृढं मुखं रोष्यं धृत्वा सैकृतयन्त्रके ॥ ५३४ ॥
 यामपोडशकं धहिं ज्वालयेत् क्रमसंस्थितम् ।
 कूपिकागलसम्यद्धं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ५३५ ॥
 अयं सूतधरः ख्यातो देवे विजयदायरुः ।
 गुञ्जाद्धं रोगहृत्सर्वभ्रुघातौ जायते शिवः ॥ ५३६ ॥
 नि. २., १।

टि०—अयमपि रस प्रथमरससिन्दूरेऽन्तर्भवितुमर्हति, परन्तु न तथा
 द्रुत संयोगलभावनयाऽस्य रसस्याऽतितीक्ष्णत्वात् । अतोऽस्य स्वतन्त्र
 तथैव पाठ स्थापित इति शुभीभिर्विमर्शनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा २ पल, शुद्धगन्धक १ पलकी नीलवर्ण
 कजलीकर धूर और आकके दूधसे ७-७ रोज मर्दनकर सर्पके
 जहरसे भावना देकर सुलाकर प्रथमरससिन्दूरकी तरह १६ पहरकी
 क्रमवृद्ध अग्निदेकर पकानेसे यह रक्तवर्णरस तैयार होगा । इसमें
 से आधीआधीरस्तीकीमात्रा तत्तद्दोस्रगहरातुपानकेसाथ देनेसे यह
 तमाम रोगोंको नष्टकरताहै और इसके खानेसे अत्यन्तमूख
 जापटहोतीहै ॥ ११३ ॥

११४ रससिन्दूरम् (पञ्चमम्)

गन्धकं सूदृढं स्थूलं निर्वणं जालमद्भुतम् ।
 वर्तुलं छिद्रितं कृत्या मध्ये शुद्धं रसं क्षिपेत् ॥ ५३७ ॥
 उपरिघ्रातुनगन्धं दत्त्वा कुर्याच्च मुद्रणम् ।
 अयः शलाकया पश्चात्ततया सन्धिरोधनम् ॥ ५३८ ॥
 सूत्रेण वेष्टयेद्गन्धं भिद्यते न यथाऽम्भसा ।
 दालासु स्वेदयेद्गन्धं वेदप्रहरमात्रया ॥ ५३९ ॥
 रसं गन्धान्यपापाणे पुनरैव निधापयेत् ।
 दिनसप्ताऽधधि यावत्सायत्सोऽपि क्रमो भवेत् ॥ ५४० ॥
 एवं निपद्यते स्वच्छः पञ्चरागमणिप्रभः ।
 अद्भुतः सर्वकार्याणि धाञ्छितानि च साधयेत् ॥ ५४१ ॥
 पतस्माज्जायते सूतभस्मकं नृपवल्लभम् ।
 सर्वरोगहरं श्रीदं सन्मनःकामितप्रदम् ॥ ५४२ ॥
 श्वेतं पीतं तथा रक्तं श्यामं कृष्णञ्च कर्तुरम् ।
 जायते नाऽत्र सन्देह एवं वर्णक्रमेण वै ॥ ५४३ ॥
 सर्वपां चोत्तमं कृष्णं विशातव्यं प्रयत्नतः ।
 पीतगन्धकसंयुक्तं कुमारीरससंयुतम् ॥ ५४४ ॥
 कृष्णवर्णं भवेद्भस्म देवानामपि दुर्लभम् ।
 निर्गुण्डीरससंयुक्तं चपलेन समन्वितम् ॥
 रक्तवर्णं भवेत्सूतं धलीपलितनाशनम् ॥ ५४५ ॥
 यो. म, रसायने ।

भाषा—पीतवर्णगन्धकका गोल डेला लेकर समालकर बीचमें
 छिद्रकरे । उसमें शुद्धपारेको भरके गन्धककी डलीकी डाटदेकर
 लोहेकी गरमशलाकासे दोनोंकी सन्धि बन्दकरदे और कचेसूतसे
 लपेटकर गेद जैला बनाले जिसमें कि पानीसे गन्धक घुल न
 जाय । फिर पादको रत्नकरनेवाली दिव्यौषधियोंका स्वभस्मकर
 ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत्

दूसरे गन्धकके डेलेंमें पारेको बन्दकर ४ पहरकी आचदे इसतह
 ७ रोजतक आचदेनेसे माणिस्यकेमदश पारेका रजहोजायगा ।
 इसपारसे तमाम अभीष्टकार्य सिद्धहोते है यह राजालो-
 गोंके काममें लानेयोग्य होताहै । तत्तद्दोस्रगहरातुपानकेसाथ
 इसरी १-१ रती देनेसे असाध्यसे असाध्य सवरोग निवृत्तहोते
 है और लक्ष्मीको देताहै । इसीतरह श्वेत, पीत, श्याम, कृष्ण,
 कर्तुर इन रत्नोंको पैदाकरनेवाली दवाओंमेंसे जिसरा रसभरा-
 जायगा वहीरत्न पारेका होगा । दैवसंयोगसे इन २ रत्नोंका
 गन्धक भी मिलसके तो बहुत आसानी से काम होगा । सध
 रत्नोंमेंसे कृष्णरत्नका पारद उत्तमकाम करताहै । पीले गन्धकमें
 पारेको रखकर घीकुवारके रससे काले रत्नका पारद होगा यह
 देवताओंकोभी दुर्लभ है । निर्गुण्डीरसमें चपल्युक्त पारेको
 स्वेदनकरनेसे रक्तवर्णहोताहै । इसके पानेसे वलीपलितका
 नाशहोताहै ॥ ११४ ॥

११५ रससिन्दूरम् (षष्ठम्)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तयोः कज्जलिकां कृताम् ।
 महेन्द्रीरससम्पिष्टां सार्द्रां काचघटे न्यसेत् ॥ ५४६ ॥
 पलाण्डुस्वरसं तत्र क्षिपेद्द्वै चूलिकापटुम् ।
 रसात्पृथञ्च विधिना तद्धतं वालुकाप्यके ॥ ५४७ ॥
 यन्त्रे सम्पाचयेद्यवत्प्रहरद्वादशं यथा ।
 क्रमाग्निना ततः सम्यग्रसः स्यात्तलसंस्थितः ॥ ५४८ ॥
 एवं चारत्रयं कुर्यादुत्तमोऽस्ती भवेद्भस्मः ।
 निर्गुण्डीस्वरसेरेवं सिद्धो भवति नाऽन्यथा ॥ ५४९ ॥
 यो. म, रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—पारा और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजली-
 कर महरके रससे २-३ रोज मर्दनकर आतशीशीशोमें पारेकी
 बराबर नवसादर डालकर इसे गीलाही भरके ऊपरसे प्याजका
 रस भरदे । प्रथमरससिन्दूरकीतरह वालुकायन्त्रमें रख १२
 पहरकी क्रमामिते आच देनेसे यह तलम्भ भस्महोगी । स्वाङ्ग-
 शीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्वोक्तप्रकारसे मर्दनादि करके
 आचदे । ऐसे ३ बारकरनेसे यह उत्तम प्रकारका रस तैयार
 होगा । इसीतरह निर्गुण्डीके रससेभी तैयारहोताहै ॥ ११५ ॥

११६ रससिन्दूरम् (सप्तमम्)

सूतद्विगुणितं गन्धं सूतार्धसैन्धवं खल्वे ।
 श्वेतजयन्त्या नीरैस्त्रिदिनं सममर्धं गोलकं कृत्या ५५०
 शुष्के तस्मिन् क्षिप्या सूपायां सन्धिमालिष्य ।
 शुष्के च सन्धिलेपे मृपास्थं यावदेकतां याति ॥ ५५१ ॥
 तावद्ब्रह्मो किञ्चिद्भ्रूया वा भूधरे पत्न्या ।
 उपलभ्य गन्धकगन्धं क्षिपेज्जले तदिति तां सूपायाम् ५५२
 तस्माद्भ्रूय तं रसं त्रिकण्टकरसेन भावितं भूयः ।
 सर्ववैद्येषु नियुज्यात्सम्पूर्णितं तत्तदनुपानैः ५५३
 र क, सर्वरोगेभु ।

भाषा—शुद्धपारेसे दूना गन्धक और आषा सैन्धव लेकर नीलवर्ण कज्जलीकर सफेदजैतीके स्वरससे ३ रोज मर्दनकर गोला-यनाय सुलाफर मूषामें रस सन्धिवन्दकर सुराकर इतनी अग्नि देवे कि अन्दरका पदार्थ गलजाय अथवा भूषयत्रकी अग्निदेवे जय गन्धकका गन्ध आनेलगे तब मूषाको निकालकर पानीमें बुझादे । शीतलहोनेपर मूषामेंसे निकालकर गोचरके रससे ६-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी मोलिया बनाकर रखठोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोणहरानुपानकेसाथ देनेसे यह सध-रोगोंको दूरकरताहै ॥ ११६ ॥

११७ रससिन्दूरम् (अष्टमम्)

भाग्याश्राद्धौ पारदस्य द्वादशैव बले मताः ।
तदूर्ध्वं तालकं प्राक्तं तालकाधौ मनःशिला ॥ ५५४ ॥
शुद्धं ताम्रं शिलातुल्यं रसकं ताम्रतुल्यकम् ।
सर्वमेकत्र सम्मर्धं कुमारीदाडिमोर्ध्वैः ॥ ५५५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्सम्यक् काचकृष्ण्यं विनिःक्षिपेत् ।
निश्चिद्रं वेष्टयेत्पश्चाद्ब्रह्मखण्डैः सम्युक्तैः ॥ ५५६ ॥
शोषयित्वा क्षिपेद्गण्डे बालुकासहिते भिषक् ।
त्रिदिनं पाचयेद्युल्यां मृदुमध्योत्तमक्रमैः ॥ ५५७ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्धृत्य सिन्दूरं रक्तवर्णकम् ।
सिद्धं भवति सिन्दूरं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ५५८ ॥
सन्निपाते ज्वरे धारे क्षयकासे तथैव च ।
विशेषाद्वातरक्तञ्च कुष्ठान्यष्टौ दशाऽपि च ॥ ५५९ ॥
उदराणि च सर्वाणि वातरोगान्विनाशयेत् ।
सतताऽभ्यासयोगेन बलीपलितनाशनम् ॥ ५६० ॥
गुञ्जाह्वयं प्रयुञ्जीत तत्तद्रोगानुपानकैः ।
नाशयिष्यति तत्सर्वं शिवेन परिभाषितम् ॥
महाचिक्रमरसो नाम भिषगाश्चर्यकारकम् ॥ ५६१ ॥
र. क., यो., ।

टि०—अथ योग पत्रमनालसिन्दूरणाऽनुपानं ममानं प्रनीयते । परन्तु तत्र ताम्रपर्यवारभावान्द्रव्यनाऽभ्यासाद्य विशेषबाल्वन्धु-पवाऽप्ययोगः । तन्मूलादयं निष्पादितव्येति हि भवतु नाम तन्मूलबोऽप्ययोगं परन्तु साग्नतिक्रमद्वयनया रक्तवर्ण एव प्रतिभाति ॥ रत्नाकरोपध-योगे एव कीरतिरिक्तमदहनान्नां शिरीषगण्डेषुमेव रमे निहितोऽपि तत्र प्रमाशान्वयं मिश्रित्वि फल न पद्याम ॥ "शुद्धवर्णशिलातालव्य गन्धक बोधयेत् । इन्द्रवैश्वान्तुष्टयं वमना भाववस्तथा" इत्यादिना दिवांशो वीरविभ्रमं निष्पादित । अत्र स्वगण्डाऽऽपिचतनाय प्रथेयं, ताम्र-पर्यवारभाव इति मूलदृष्टया विशेषं प्रनीयते परन्तु सम्यक्विचार नाऽस्ति बध्निदिशेय । ताम्रवर्णवर्णवृद्धमानालवर्णवर्णवत् गुणव्यतिर-त्वात्सर्वेष्वपि रससिन्दूरेषु रत्नादानेन शल्यभावाच्च नाऽप्ययोगान्तरमा-मांशोमुचितः । एव "निर्धेत्य गुहाटकं निगदितं निष्कारकं तालकं, निष्कारकमग्निनां मणिसिक्तं शुद्धं यत् पन्थम् । सम्यगन्धवर्णव-शुषितं दाहिक्रिकापुष्पत्र-वैरिफेदिनं तिम्रं शुद्धं वाच्यं च निशि-पेत् ॥ गदायाम् तु दिनत्रयं सन्निपातयेत् शिरीषगण्डेषु-द्वयमात्रं गुरी-रितिक्रमत्वेन दोषान्तेषु रक्षेत् ॥" इति सुश्रुतौ वीरविभ्रमं, अथाऽपि भागवत्यप्यदमनया नाऽस्ति बध्निदिशेय । भागवतिष्पनाऽपि रक्तवर्ण-कवर्णोऽस्ति । ए । "नगान्तरी परद्वयं चतुःषु द्वाःरत्नमाऽ ।

शिलातालव्यगन्धानां भागमङ्गवा प्रकीर्तिता ॥ सुवर्णं भागमेकत्र दाहि-नीपुष्पत्रवै-रिणि चतुर्थो वीरविभ्रमः । अत्र तु सुदृष्टव मद्भ्रकारण्य-ज्ञानगन्धना प्रनीयते । रसायनम्, वृ. शं. त. एनश्रीमन्धोरप्यमेव पाठो वीरविभ्रमनाम्ना निहिलाऽस्ति नवाऽपि पूर्वनिर्दिष्टं कथा आश्र-यणीयं इति दिक् ॥

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, शुद्धगन्धक १२ भा., शुद्ध-रिताल ६ भा., मैनसिल-ताम्र और खपरिया ३-३ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर धीधुंवार और अनावरखोंसे ३-३ रोज मर्दनकर सुराफर प्रथम रससिन्दूरकीताह आग-दोषीशीमें बन्दकर बालुकायत्रमें मृदु, मध्य और तीक्ष्ण इत-नमेंसे ३ रोजकी अग्निदेवे । इसमेंसे ३-२ रत्तीकीमात्रा तप्त-द्रोणहरानुपानकेसाथ देनेसे सनिपात, महाघोरज्वर, क्षयकास, वातरक्त, १८ कुष्ठ, सम्पूर्णउदररोग, वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । हमेशाके अन्याससे बलीपलितदिवांशो नष्टर-दोषायुक्तो करताहै । अनुपानविशेषसे अन्य भयङ्कररोगोंकोभी नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

११८ रससिन्दूरम् (नवमम्)

पारदस्य पलं ग्राह्यं शुद्धस्य विधिपूर्वकम् ।
पिष्टं च्छाऽथ वस्त्रेण पूर्वं सम्यग्यथाकामम् ॥ ५६२ ॥
अधरोत्तरगन्धेन निक्षिपेन्मृषिकोदरे ।
श्वेतकुक्कुटरेकेन दङ्गणक्षारचारिणा ॥ ५६३ ॥
लिप्त्वा वस्त्रं विशोष्याऽथ रुद्धा कर्पटमृत्त्रया ।
बालुकापूर्णभाण्डे तु चुल्ल्यसौ पाचयेच्छनैः ॥ ५६४ ॥
यामानद्यौ जायते तत्सिन्दूराऽरणसन्निभम् ।
स्वाङ्गशीतलमादाय करण्डं विनिवेशयेत् ॥ ५६५ ॥
र. क. यो., ।

टि०—यथाऽस्तिपाठाऽनुष्ठाने विद्विदिपि नाऽवशिष्टं मन्थयिषि-अनं शमनायत्य यथा भवेत्तथा निशेयं कुण्डोऽस्ति इति विद्विदिष्पाक-लनीयम् ॥

भाषा—एकपल शुद्धपारा लेकर अरणी अथवा तिपतियाकें रसमें २-३ रोज घोटकर गोला बनाय मुर्गके अण्डेमें रस दूरें अण्डेकी खोलसे टकरर शुद्ध और मुहांगेसे सन्धिवन्दकर १-२ कपडिमिटो शुद्धमुहांगेकी करदे । फिर पारसे चतुर्गुणगन्धक लेकर पारीकगीत घराबमें आषा विष्टाय ऊपर अण्डेरो रस ऊपरसे आधे गन्धकमें टकरर घरावसम्पुटमें बन्दकर अण्डेकी-सफेदी, मुहागा और जल इनसे कपडिमिटोकर ऊपरसे मुलाती बगैरहै २-३ कपडिमिटोकरदे । गुरागेपर बालुकायत्रमें बन्दकर ८ पहरेकी अग्निदेवर म्याङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रसठोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती तप्तद्रोणहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरो-गोंको दूरकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ रससिन्दूरम् (दशमम्)

अथ यद्ये रसेन्द्रस्य सिन्दूरप्रममुत्तमम् ।
मूर्तं पलं समं गन्धं मर्दितं कज्जलीतनम् ॥ ५६६ ॥
कुमायाः स्वरज्येनैव यामह्वयविमर्दनात् ।
शिलादिङ्गुलमेपानां विमलाहितुल्यं क्रमात् ॥ ५६७ ॥

प्रत्येकं गन्धकाद्यैव घेदसह्यपतुलां तथा ।
 कुमारीस्थरसेनेय द्वियामं मर्दयेद्रसम् ॥ ५६८ ॥
 काचकूप्यां विनिश्चिष्य घर्षन्नमृत्तिकया युतम् ।
 पल्मीकमृत्तिकामध्ये ऋषुःकुटाण्डरसं क्षिपेत् ॥ ५६९ ॥
 मापयूपसमायुक्तं मर्दयेत्कञ्जलोपमम् ।
 वस्त्रं संलिय्य तालानां पत्रमानदलान्वितम् ॥ ५७० ॥
 सप्तवस्त्रैः समालिय्य पूर्वमृह्यणान्वितम् ।
 तालपत्रोच्छ्रयं कृत्या कृषिकां लेपयेन्मृदा ॥ ५७१ ॥
 सिन्दूरमारणे चैव रसकर्मणि शस्यते ।
 तस्यं पूर्वरसं क्षिप्या घटिकां घनप्रतोन्यसेत् ॥ ५७२ ॥
 मृदा मृह्यणैः सन्धिं घालुक्रायघ्नके क्षिपेत् ।
 क्रमाऽग्निनाऽकृत्यामं तु सिन्दूरं भवति ध्रुवम् ॥ ५७३ ॥
 पद्भुजे गन्धके जीर्णं रसो व्याधिहरो भवेत् ।
 अथ सिन्दूरवर्णाद्वयं कारयिष्ये समासतः ॥ ५७४ ॥
 सरंरोगहरं नृणां पल्लोपलितनाशनम् ।
 उपपातकसम्भृतकुष्ठादीनां त्रिनाशनम् ॥
 महासुखकरञ्चैव देवानामपि दुर्लभम् ॥ ५७५ ॥

र क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पात और गन्धक १-१ भाग लेकर नील-
 वर्णकञ्जलीकर २ पहर घोंडवारकरसेने मर्दनकर मैनसिल, शिग-
 रिक और धान्यापत्र ४-४ भाग, रूपामापी २ भाग लेकर
 प्रत्येकको क्रमसे मिलाकर कुमारीकेरसे २ पहरमर्दनकर सुसा
 कर फिरसे कञ्जलीकर आतशीशीशीमें डालदे परन्तु दीमककी
 मिठी, सुगीके अण्डेरी सपेदी, उफ्फका यूप मिलाकर मोमके-
 सण पीसकर बपड़ेपर लेपदेकर आतशीशीशीपर बपड़मिठीक-
 रके सुखावे ऐसे ७ बपड़मिठी देकर सुखाईहुई आतशीशीशी-
 होनीचाहिये । रससिन्दूर बनानेमें इसीतरह शीशीपर बपड़-
 मिठी करनेमें बहुत मजबूत शीशीतयारहोतीदे। दूदनेकी शहा-
 नहीं रहती । फिर शीशीको बाहुजायत्रमें चढ़ाकर गन्धकजीर्ण
 होनेपर खादियामिठी अथवा पुरानी ईटकी डाटल्याकर पूर्वोक्त
 मिठीमें रोधानमक मिलाकर डाटवीसन्धि बन्दकरदे और
 इसीका बपड़ेपर लेपदेकर मुहपर ७ बपड़मिठी देकर महादेव
 जैसा बनादे । सुखनेपर भन्द, मध्य और सर इसप्रकारसे १२
 पहरको आचदे । स्वाहादीतलहोनेपर नीचे और ऊपरका तमामरस
 निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्धक डालकर दो अथवा चार पहरतक
 घोंडवारकेससे मर्दनकर सुयाकर पहिलेकीतरह १२ पहर १कावे ।
 इसतरह सातशीशिया उतारकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रतीसे
 ३ रतीतककीमात्रा तसद्रोगहरानुपाननेसाथ देनेसे यह तमाम-
 रोगोंको नष्टरताहै । प्रायथितकरके पन्धपूर्वक इसकासेवनकरनेसे
 स्वभावतः दुःसाध्य कुष्ठदिककाभी नाशहोताहै सातवींशीशीमें
 जो नीचेका भागहै उसे फेकनहीं देना उसमें अन्नक और रूपा-
 मापीकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३-३ रतीकीमात्रा उचि-
 तानुपाननेसाथ देनेसे श्वात, कास, बन्धत्व प्रश्रुति नष्टहोतेहै ११९

१२० रससिन्दूरानुपानानि

शुभेऽह्नि पल्लमात्रस्य सेवनात्सकलामयान् ।
 जयेदाशु प्रयुक्तोऽयं विष्णुचर्मामियाऽसुरान् ॥ ५७६ ॥
 भूयां रोगविशेषेषु ह्यनुपानविधि यथा ।
 ज्वरेषु जीरकृष्णाभ्यां निर्गुण्डया सन्निपातके ॥ ५७७ ॥
 मृद्वीकया सितायुक्तं रक्तपित्तेषु योजयेत् ।
 पिप्पल्यामधुनावाऽपि श्वासकामेषु योजयेत् ॥ ५७८ ॥
 घृतेन राजयश्माणमुष्णेषु शीतवारिणा ।
 अरुचौ मातुलुङ्गेन लाजाचूर्णेन छद्दिषु ॥ ५७९ ॥
 मदास्ये निम्बनीरैः सितायुक्तञ्च द्रापयेत् ।
 नारिकेलजलेनेर मूच्छीं कल्याणकाह्वयेत् ॥ ५८० ॥
 अपस्मारं च सभ्याम् भृङ्गान्निरणं योजयेत् ।
 चतुःसमेन युतञ्च ज्वरे च सन्निपातके ॥ ५८१ ॥
 गुण्ठीजीरकजातीभिर्विन्मूच्याञ्च विणेपतः ।
 धान्यनागरनिर्गुण्डीरजीर्णं परंभेदके ॥ ५८२ ॥
 चाह्वयो प्रष्टर्णादांषे सास्ये भृष्टा हरीतकी ।
 अथवा भृष्टगुण्ड्या च तीक्ष्णैः क्षीणे च पानसे ॥ ५८३ ॥
 वायुचीचक्रवीजैश्च कुष्ठेषु रक्षिण्य वा ।
 मांसयूपैश्च वातेषु तैले वा लघुनेन वा ॥ ५८४ ॥
 आस्थ्यास्फोटं चन्दनेन घातान्ने फोकिलाभ्रजैः ।
 दन्तधावनसारेण दन्तरोगे विशोपतः ॥ ५८५ ॥
 पेल्लेयेन विषयन्धेषु दिध्माऽऽभ्याने कुलत्थजैः ।
 फासप्राऽऽद्रकयायेण क्षयरोगं विनश्यति ॥ ५८६ ॥
 कदलीश्वरसेनेन शुनवृद्धिः प्रजायते ।
 मेधावृद्धिर्द्वैलं पुंसां कान्तिपुष्टिविषर्धनम् ॥ ५८७ ॥
 आयुःप्रवर्धनञ्चैव घलीपलितनाशनम् ।
 सतताऽभ्यासयोगेन जीयेद्भ्रष्टंशतं नरः ॥
 मधुराहारयुक्तस्य देहसिद्धिकरं परम् ॥ ५८८ ॥

र. क. यो ।

टि०—“ दृष्टीगर्जोदरतुष वत् शौद्रार्जुनत्वग्रनयुपसेत्र । विषा-
 ग्निनाशीयुतप्र पथ्य शुद्धीदन वा धत्वजित्तव ॥ ” इति रसाञ्जतरो
 दयने ॥

भाषा—अनुकूलचन्दनशरादिकेमें ३-३ रतीके प्रयोग-
 करनेमें स्वर्णसिन्दूर जिंवा रससिन्दूर समस्तरोगोंको इसतरह
 नष्टकरताहै जैसे विष्णुभगवानका चक्र असुरोंका नाशकरता है ।
 विशेषरोगोंमें अधोलिखितप्रकारसे अनुपान समझना । ज्वरोंमें
 जीरा और पीपल, सन्निपातमें निर्गुण्डी, रक्तपित्तमें शकरयुक्त
 दाश, श्वात और कासमें मधु तथा पीपल, राजयश्ममें घृत,
 उष्णरोगोंमें टडाजल, अरुचिमें विनोरा, वमनमें लाजवूर्ण,
 मदास्यनेमें नीमकाजल अथवा शण्ड, मूच्छामें नारिकेलका जल
 अथवा पित्तपण्डा या कल्याणपूत, श्वात और अपस्मारमें
 भंगरा, ज्वर और सन्निपातोंमें औचित्ती देखकर चतुःसम-
 चूर्णकेसाथ देना । (हरि, लौण, सैन्धव, अजवादन (१)
 चन्दन, अगर, कस्तूरी और केशर (२) जायफल, लवङ्ग,

जीरा, मुहागा (३) ये चतुःसम कहलाते हैं । हैजेमें सोंठ, जीरा, जावित्री, अजीर्ण और पर्वमेदमें धनियां तथा सोंठका काथ; प्रथममें तिरतिया अथवा भुनीहरे अथवा भुनीसोंठ; पीनसमें कालीमिच; दुष्टोंमें वाडुची और पवांडकेबीज अथवा खरका वाय; नातव्याधियोंमें मांसरस, तैल अथवा लड्डन; मुपपाकमें सफेदचन्दन; वातरकमें तालमखाना; दन्तोरोगोंमें दन्ताधानमृक्षोका रस; विषन्धोंमें एल्वा; हिवकी और आध्मानमें कुलथीकावाय; क्षयरोगमें कसौजी और अदरकका स्वरस; शुःस्थायमें केला और ईरका रस; इसतरह यथौचिति रोग और रोगीकी अवस्था देखकर अनुपातीको करनेसे यह तमामरोगोंको दूरकरताहै । अर्जुनीकी छालकेरस और मधुकेसाथ रससिन्दूरको ३-३ रती देनेसे हृद्दोग, रक्तशुति और उदररोग नष्टहोतेहैं । मेडासींगीयुक्त दूधकेसाथ पच्यदेना अथवा मूंगकीदाल और भात देना, घी विलकुल न देना ॥ १२० ॥

१२१ रससिन्दूरवटी

रससिन्दूरटङ्ककं टङ्ककं गन्धकस्य च ।
 टङ्कणत्रिकट्णनाञ्च टङ्ककञ्च प्रदापयेत् ॥ ५८९ ॥
 रक्तिकाद्वितथं तुत्यं योजयेद्वैद्यसत्तमः ।
 भृङ्गराजरसे भाव्यं घटां कुर्याद्विचक्षणः ॥ ५९० ॥
 आर्द्रकस्याऽनुपापाने प्रदेयं रक्तिकाद्वयम् ।
 पेकाहिकं द्रयाहिकं वा चातुर्थिकतृतीयकौ ॥
 विषमञ्च त्रिदोषोत्थं हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ५९१ ॥
 र. घु., विषमञ्चरः ।

भाषा—रससिन्दूर, शुद्धगन्धक, मुनामुहागा और त्रिकटु ४-४ मादो, मुना तृतीया २ रती लेकर १-२ दिन भंगरेके रससे मर्दनकर २-२ रतीकी गोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली २-२ घण्टेके अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे एकाहिक, द्रयाहिक, त्रयाहिक, चातुर्थिक, त्रिदोषज विषमञ्चर, इनको यह नष्टकरताहै ॥ १२१ ॥

१२२ रसादिगुटिका (प्रथमा)

रसवलिघनसारचन्दनानां
 सनलदसेव्यपयोर्दजीवनानाम ।
 अपहरति गुटी मुखस्थितेयं
 सकलसमुत्थितदाहमाशु वाऽति ॥ ५९२ ॥
 श्र. यो. त., रसायन स., बं. र., वै. वि. र. घु., वि. र. म., नि. र., व. रा., यो. र., दाहाऽधिकारे ।

टि०—अत्र रसशब्देन वारदो प्राद्य. स च भरमरूपः स्वात्सर्हि सर्वोत्तमः, तदभावे रससिन्दूरारिरूपे मृच्छितो मद्यः, तदभावे विमुद्गां द्वितिरूपः । क्लिष्टगन्ध, पनीडप्रस स च घृतरूप । सारो लोष्ठ, केचित्तु पनमारनिमामैरपदात् स्वोत्थस्य कर्पूरमिति व्याख्यावानवन्ति । चन्दन शुभ्र, नन्दशुभीर, सेव्यञ्च तदेव शुभ्रमरूपं कृत्वात्तं वा, पयोरो मुस्ता, जीरानानि जीरमीयागप्रोन्गानि औषधानि तान्यथा—काकोनीश्वरकाकोनीजीवककर्मकमुद्गापनीमाषण्डिमिशामहामिमांश्चिन्नशकटकं तंशुतुगाक्षीरिपक्वकर्मोत्पीरंश्चिन्द्रिमीराजीवनो मधुकजेति ॥ काको-

व्यादिरसं पित्तशोषिणाऽनिलनाशनम् । जीवनो बृहणो बुध्यः स्तन्यशे-
 प्मकरन्तया ॥ इति सुश्रुते च, अ. ३८।३५-३६ निर्दिष्टान्यथादशौष-
 धानि । चरके तु “ जीवकर्मकौ मेदा महामेदा काकोली क्षीरकाकोली
 मुद्गापण्यौजीवनी मधुकजेति दशैवानि जीवनीयानि भवन्ति ” इति
 दशमस्कंधपानित्वात् दशैव गृहीतानि । एषु यथालाभमौषधानि ग्रहीत-
 व्यानि, सर्वेषां सूक्ष्मचूर्णं विधाय जीवनीयगणकापेन जलेन वा वटिकाः
 कृत्वा मुने धारणीया इति तत्त्वम् । साम्प्रतिस्त्रैवास्तु जीवनशब्देन
 कश्चिज्जल घृतमये नियोजयन्ति, परन्तुपरिनिर्दिष्टमन्त्रोपे निष्पादितो
 चेद्वी तर्हि अत्यन्तमीमाकास्त ज्वर दाह शीघ्रमेव ज्वरेण सह शम्पति
 जीवनीयद्रव्याणाञ्चेदभावस्तर्हि चिन्नशकटाया मधुयद्यथाश्वाऽद्वय योग-
 कर्तव्यः वटिकास्तु पूर्वप्रकारेणैव वन्थनीया न तु घृतेन, सन्तवादि-
 ज्वरे घृतदानस्याऽनुचितत्वादिति दिष्टम् ।

भाषा—गारदमस अथवा रससिन्दूर अथवा शुद्धपारद, जीवनीयगणवायमें निर्वापित कियाहुआ शुद्धगन्धक, जीवनीय-
 गणकेयोगसे कीहुई अन्नक और लोहभस्म (अभावमें चाहे
 जिस योगसे की हो पर सोमलप्रभृति तीक्ष्णवस्तुओंके योगसे
 निष्पादित न हो), सफेदचन्दन, मोटी-बारीक और काली
 रस (कालाबाला सु०), नागरमोथा और यथालाभ जीवनी-
 यगणकी औषधियां (यदि कोईभी न मिले तो मिलोय और
 मुलहठी अवश्य लेवें) लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगणककी
 नीलवर्णकमलीमें मिलाकर यथालाभ जीवनीयगणके वायसे
 १-२ रोज मर्दनकर वेरवारव गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली सुहमें रखनेमें त्रिदोषनदाह और पिपासातो यह
 शान्तकरतीहै । रक्तपित्त और गर्मीसे जायमान श्वास और कासको
 समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे तन्काल नष्टकरतीहै । पारदभस्ममें
 योगसे बनीहुई हो तो सर्वोपद्रवयुक्त क्षयरोगकी रस ११
 औषधहै । इसमें पनसारशब्दसे बहुतसेलोग केवलकर्पूर, भविर्था
 कामचलातेहैं और जीवनशब्दमें घी अथवा पानीका योग ११
 इसतरहकरना अच्छा नहीं क्योंकि जीवनीयगणका
 अथवा जल नहीं करसकताहै घृतयोगसे बडी बनानेमें तिरतियाकं
 कज्वरोंमें उपद्रवहोनेका सम्भवहै ॥ १२२ ॥

१२३ रसादिगुटिका (द्वितीया)

रसरजतगुटीं पटीयसीं
 यो घदनसरोरुहमध्यगां दधाति ।
 स जयति तृपितस्तुयं
 भृशमवमिव त्रिमार्गं मिठीकर जारते मुक्तानी
 र. बौ., र., यो. त., यो. र., वै. वि. र. घु., वि. र. म., नि. र., व. रा., यो. र., दाहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा (जिसमें तलहोनेपर निकालकर रखजोड़े ।
 दिक्में कालिमा न आतीहो) हातुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरो-
 लेकर इकट्ठा मर्दनकर मूर्च्छि १८ ॥
 रोज मर्दनकरे । बीच-बीचमें रससिन्दूरम् (दशमम्)
 करे फिर गोली बनाकर रस सिन्दूरप्रममुत्तमम् ।
 २-२ रोज स्वेदनकरनेमें मर्दितं कज्जलीट्टमम् ॥ ५९६ ॥
 रखजोड़े । पहिले गोलियेंनेव यामद्वयमिर्दनाम् ।
 देना चाहिये जिसमेंमेघानां चिन्मलद्वितुल्यं कमात् ॥ ५९७ ॥

सौकीर्णसि जितसमय अत्यन्त प्यासलगे और किसीसे शान्त न होती हो उससमय इसगोलीको मुहमें रखनेको देनेसे बहुतशीघ्र प्यास चलीजातीहै । इसे अमिस्थायीकरना हो तो रीठके कल्कलमे बालुकर त्रिपतियाकास भरकर तिपतिया और वनगोभीके चतुर्गुणितकल्कमें बन्दकर इतनी आचदेवे कि कल्क मानहीजले । ऐसे जतक अमिस्थायी न हो ततक करता जाय । अमिस्थायी होनेपर अधिकआचलगनेसे गोलीका स्वरूप विगड़नेका सम्भवहै । इसतद अमिस्थायी होनेनेबाद इसे दूधमें उवाकर पीनेसे शुक्रदोष निवृत्त होकर तमामधातुओंकी वृद्धिहोतीहै और मन्दाग्नि नष्टहोताहै ॥ १२३ ॥

१२४ रसादिगुटिका (तृतीया)

पारदस्तालको गन्धखय. शुद्धा समा. स्मृता ।
जातीफलं जातिकोपं भङ्गायीजं लघुङ्गकम् ॥ ५९४ ॥
यवानी तुत्यकं शुद्धं शुद्धं ज्युषं समं पृथक् ।
नागवह्नीद्वारसे मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ५९५ ॥
अस्पृहानिसोदानस्य नीरैरपि तथाविधम् ।
अष्टगुञ्जामिता कार्या गुटिका च भिषग्वरैः ॥ ५९६ ॥
प्रभाते चैव सायाह्ने वटी देया विशेषत ।
मधुना नीरयुक्तेन गिलेत्ता वै वटी शुभाम् ॥ ५९७ ॥
पक्षाघातं निहन्त्याशु रसादिगुटिका त्वियम् ।
चन्द्रेण समाख्याता योगरत्नसमुच्चये ॥ ५९८ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और रसमाणिक्य, जायफल, ग्विनी, गान्धकीज, लौंग, अजवाइन, तुत्यमस, सोंठ, मिर्ग, पीपल सब समभाग लेकर बारीक चूर्णकर पारे, गन्धक रस्तालकी नीलगणकजलीमें मिलाकर पान और सोदान सप्त पीरि (यूनानी) कीजङ्केस्वरस अथवा हाथोंसे २-२ रके सुखा (नकर ८-८ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे होनीया गौली सुवदशास मधुनेचुर्वतवेसाय निगलनेसे यह पक्षा- मिटी कर नही रहत नष्टकतीहै ॥ १२४ ॥

होनेपर १२५ रसादिचूर्णम् (पारदादिचूर्णम्)

मिर्गिण्धकचूर्णैः शैलोशीरमरीचिकैः ।
दशिकैश्चैश्च सूक्ष्मं चूर्णमहमुखै ॥ ५९९ ॥
जैसा बनादे । सूक्ष्मेभ्योदेतिपेप्युपिपातस्य च ।
पहरकी आचदे । स्वाप्रसीताभिनयेप्रकाशितम् ॥ ६०० ॥
निकालकर पूर्वप्रमाणमें गन्ध, व रा, र प्र, यो र, र च, र
पौडुनारकेरससे मर्दनकर सुखाकर, तुण्णायाम् । र च, र सु, एत
इसतद सावतीशिया उतारकर रने शैलोशीरचिन्त्रकै इति पय
१ रतीकनीमाया तसद्रोगहस्तुपान, र सु, रसायन्त, र का
रोगोंको नष्टकरताहै । प्रायश्चित्तकरके प
स्वभावत दुःसाध्य कुष्ठादिककामी नाकपूर, छड़ीला, तस और
जो भीचिफा भागहै उसे फेकनहीं देना उषचूर्णकर पारेगन्धकनी
माखीकी तैयारभस्ममिलेगी । इसकी ३-३ मर्दनकर धरावरकी
तानुपानकेसाय देनेसे श्वास वास, पण्डित्य प्रवर्ध

शरकरेसाथ ३-३ रती प्रातःकाललेकर वासीपानी पीनेसे अत्यन्तबड़ीहुई तृपाको यह नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

१२६ रसाध्रकम्

सुवने विप्रगोहेषु पत्रिका देवकन्दली ।
पथिना सर्वदेवानां मस्तकादिमनोहरी ॥ ६०१ ॥
शुद्धसूतज्जमानिय सममत्रेण मेलयेत् ।
तस्या रसं विनिक्षिप्य मर्दयेत्तृतमत्रकम् ॥ ६०२ ॥
याममात्रेण तत्सर्वं मिलत्येकत्र निश्चितम् ।
पिण्डरूपमिदं सर्वं घृण्यते दिवसत्रयम् ॥ ६०३ ॥
काचवृष्ये विनि क्षिप्य वालुकायत्रमध्यगम् ।
देवकन्दलयष्टीनां ज्वालयेद्याममात्रकम् ॥ ६०४ ॥
पश्चादपरकाष्ठानि ज्वाल्नीयानि यत्नत ।
द्वादशप्रहरस्यान्ते शीतीभूतं तदुद्धरेत् ॥ ६०५ ॥
रत्निकात्रितयं दत्त्वा मधुना सह भक्षणं ॥
अत्यग्निं कुरुते दीप्तमतिपार्कं करोति च ॥ ६०६ ॥
अक्षीणाङ्गश्च जायेत कल्पजीवी भवेन्नरः ॥
जराजर्जरदेहानां पलितानि विनाशयेत् ।
यामादपि भवेच्छ्रीमान्मतिमांश्च भवेद्भुजम् ॥ ६०७ ॥
रसायि, रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और अत्रक समभागलेकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर देवकन्दलीके कन्दके रससे मर्दनकरनेसे १ पहरमें येसब मिलकर गोला जैसा बननायगा पर इसको तीनरोतक उसीरसेसाथ अण्डमर्दनकरते रहना, अखीरमें यह चूर्णके रूपमें होजायगा । इसे सुखाकर ६-७ कपडिमिटीदीहुई सफेद आतसीशीसीमें भरके वालुकायत्रमें १२ देवकन्दलीके सुखे ढण्ड- लोंसे एवपदर अग्नि देकर फिर किसीभी सारिष्काठकी क्रमवृद्ध १२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाप्रसीत होनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमाना मधुनेसाय देनेसे यह जठ- राग्निको अत्यन्तप्रदीप्तकर अत्यधिकभोजनको पचाताहै । इसके निरन्तर सेवनकरनेसे बलीपलितोंसेसाथ बुडापा दूहोकर सर्वा- ङ्गपरिपूर्ण होताहुआ दीर्घायुको प्राप्तहोजाताहै ॥ १२६ ॥

१२७ रसाध्रगुगुलुः

कर्पद्वयं पारदस्य लौहं गन्धश्च तसमम् ।
लोहगन्धसमञ्जसं गुग्गुलुं कुड्यद्वयम् ॥ ६०८ ॥
अमृताया रसप्रस्थे रसप्रस्थे फलत्रिकात् ।
सान्द्रीभूते रसे तस्मिन् क्षेपं दत्त्वा विचक्षणः ॥ ६०९ ॥
त्रिकटु त्रिफला दन्ती गुडूची चैन्द्रारणी ।
विडङ्गं नागपुष्पञ्च त्रिवृता च सुचूर्णितम् ॥ ६१० ॥
प्रत्येकं कर्पमादाय सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मक्षयेत्कोलमात्रन्तु छिन्नाकाथाऽनुपानत ॥ ६११ ॥
वातरक्तं महाघोरं स्फुटित गलितजयेत् ।
अष्टादशविधं कुष्ठं ह्मिरोगाऽश्मरीं तथा ॥ ६१२ ॥
भगन्दरं गुदग्रंभं भ्येतकुष्ठं सकामलम् ।
अपची गण्डमालाश्च पामाकण्डूविचर्चिकाः ॥ ६१३ ॥

चर्मकीलं महादद्रुं माशयेन्नाऽत्र संशयः ।

वातरक्तविनाशाय धन्वन्तरिकृतः पुरा ॥

रसाऽध्रगुग्गुलुः ख्यातो वातरक्तेऽमृतोपमः ॥६१४॥

श्री. र., वातरक्तं ।

भाषा—शुद्धपादा, लोहमसम और शुद्धगन्धक २-२ कर्षं, अप्रफमसम ४ कर्षं, शुद्धगुल ८ पल लेकर गिलोय और त्रिफलाके चतुर्भागवशित १-१ प्रत्ये वायुमें गुल और अन्य-बीजोंको डालकर मन्दाग्निमें पकावे । चासनीके सदस्य होनेपर त्रिफला, त्रिफला, दन्तीमूल, गिलोय, इन्द्रायणरीज, विडङ्ग, नागकेसर, निसोत, इलाय चूर्ण १-१ कर्षं क्रमसे मिलाकर घोंटे । एकजीवहोनेपर झरवे बराबर गोलियें बनाकर रखडोङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली गिलोयके काथकेसाय खानेमें तमाम वदनमें फूटकर गलितावम्बाको प्राप्तहुना वातरक्त, अठारहडुड, क्रिमि, पथरी, भगन्दर, शुद्धशंश, सपेदवृद्ध, कामला, अपनी, गण्डमाला, पामा, खजली, विचित्रिका, मस्ते, महादद्रु इनसमस्तो यह नष्ट-करताहै इयके सेवनमें क्षारका त्यागकरना उचित है ॥ १२७॥

१२८ रसाऽध्रगुठी

सहदेवी चला चैव सूर्यावतौऽथ मारिषः ।

अपामार्गाऽमृता चैव सम्यक् सम्पादयेद्विषक ६१५

एषां पलानि चत्वारि प्रत्येकं कुट्टयेत्ततः ।

अत ऊर्ध्वञ्च तदस्या मण्डूरं यत्पुरातनम् ॥ ६१६ ॥

गोमूत्रेण पचेत्तावद्यावन्नोमृदशोपणम् ।

तस्मादुद्धृत्य तच्चूर्णं कुर्यात्पलचतुष्टयम् ॥ ६१७ ॥

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं गुड्डी चित्रकं त्रिवृत् ।

दन्ती विडङ्गमेकैः कर्षंमेषान्तु चूर्णयेत् ॥ ६१८ ॥

एकपत्रीकृतस्याऽथ चक्रकान्नस्य यत्पलम् ।

वायंन्नाऽम्भिरात्रस्य चारिपर्णारसाऽप्लुतम् ॥ ६१९ ॥

आतपे शोषयेत्तीक्ष्णं दिनमेकं सुरक्षया ।

सूरणस्य रमेः पिप्पला तत्र द्रुणकरस्य च ॥ ६२० ॥

दत्त्वाऽष्टौ मापकांस्तत्र पुष्टपाकेन पाचयेत् ।

मृन्मये सुखे पात्रे मृदुना गोमयाऽग्निना ॥ ६२१ ॥

रसाद्दृशामापाश्च कर्षं गन्धकतः पृथक् ।

रमे मण्डकपर्ण्याश्च मूर्च्छितौ फञ्जलीकृतौ ॥ ६२२ ॥

घृतस्य मधुनश्चाऽपि पृथक् पलचतुष्टयम् ।

तत्सर्वमेततः एव्या खिग्धे भाण्डे निधापयेत् ॥ ६२३ ॥

ततोऽष्टौ मापकान् खादेदयथा द्वादशैव च ।

कर्षं याऽपि तथा कुर्यात् पुष्टा दीपवलायलम् ॥ ६२४ ॥

दुग्धश्चापि पिथेत्रोगी धर्मो मन्दत्वमागतै ।

ततोऽपानुपानञ्च भेयेत् प्रहणीमादे ॥

अजाधरीरानुपानञ्च भ्यामे कामे प्रयोजयेत् ॥ ६२५ ॥

श्री. र., रसायने ।

भाषा—सहदेवी, चोटी, द्रुहुर अथवा सुयंनुगी, सर्मा, अमामार्ग, गिलोय इन्द्रदेवका हवरण ४-४ पल लेकर १०० कर्षंसे पुरातनमण्डकका बारीचूर्णकर पूर्वोक्तगोको डालकर

लोहेकी सारमें पीसे । मन्स्वनैसा होनेपर १६ अथवा ८ गुने गोमूत्रमें पल ४ डालकर पकावे और बीच २ में चलाताजाय । गोमूत्र सुखजानेपर उतारकर त्रिकटु, त्रिफला, नागमोषा, गिलोय, चित्रकमूल, निसोत, दन्तीमूल और विडङ्ग १-१ कर्षं, धान्याश्रकियाहुआ बज्राश्रक १ पल लेकर भातडाएकर रखेहुए अत्यन्तखेद पानी और सेवारकेरसमें भिगोभिगोकर कड़ीधूपमें १-१ रोजसुखावे । इसमें ८ मासे मुहागादेकर जहरीसुरणकेरससे पीस गोलापनाय जहरीसुरणके अन्दर रखकर ६-७ कपड़मिट्टीकर सुखारर जललीकण्डोंका हलका पुट्टे जिनमें कि सुरणकारस जलकर गोलैका रसपुत्रजाय । स्वाज्ञरीतरहोनेपर निकालकर रखे । फिर शुद्धपादा १२ मासे, शुद्धगन्धक १ कर्षं लेकर नीलवर्णकजलीवनाय मण्डकपर्णाकेरसमें १-२ रोज घोंटे कर कजलीवनाय पुराना घी और मधु ४-४ पल, कजली और पुट्टदियाहुआ मण्डूर सबको इक्के मिलाय चिकनेवर्तनमें रखडोङ्गे । ७-८ रोजवेबाद इसमेंसे रोगी और रोगकाबलावल देखकर ३ मासेसे १ तोलेतककी मात्राखिलाकर कारसे दूधपिलानेसे मन्दाग्नि नष्टहोताहै । प्रहणीमें गरमजलवेसाय और श्याम, कासमें बन्नीके दूधकेसाय देवे ॥ १२८ ॥

१२९ रसाऽध्रमण्डूरम्

गन्धकाम्बरसूतानां प्रत्येकं शुक्तिमानकम् ।

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरं मुष्टिकद्वयम् ॥ ६२६ ॥

प्रसृतञ्च हरीतम्याः पापाणजतुनः पिचून् ।

कर्षंके कान्तलोहस्य सर्वं रौद्रे विभावयेत् ॥ ६२७ ॥

भुङ्गाराजरसप्रस्ये केशाराजरसे तथा ।

निर्गुण्डीमानकन्दानामाद्रिकस्य रसेष्वपि ॥ ६२८ ॥

त्रिकटुत्रिफलाचञ्च्यमुस्तकानां पृथक्पृथक् ।

कर्षंके क्षिपेच्चूर्णं मदेवमधुसर्पिणां ॥ ६२९ ॥

भक्षयेत्प्रातश्चायं मात्रया युक्तितः पुमान् ।

निहनित सर्वजं शोषं सर्वाङ्गकान्स्थयम् ॥ ६३० ॥

कासश्वासतृपादाह्लोहच्छादितयुतं तथा ।

अम्लपित्तं निहत्येव शूलमदधिघ्नयेत् ॥ ६३१ ॥

अग्निपुष्टिकरं चूर्णं हृद्यं घातानुलोमनम् ।

कामलां पाण्डुरोगञ्च श्लेष्मकुष्ठाऽहचिञ्चरम् ॥

श्रीहृत्गुल्मोदरं हन्ति प्रहर्णां सप्रजाहिकाम् ॥ ६३२ ॥

श्री. र., शोषाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पादा, अन्नमसम २-२ कर्षं, बारीक पिताहुआ शुद्धमण्डूर और हरे २-२ पल, त्रिफला ३ कर्षं, कान्तलोहमसम १ कर्षं लेकर सबकी नीलवर्णकजलीवनाय अंतरा, कालभंगरा, निर्गुण्डी, मानकन्द और अदरकके १-१ प्रत्येगोमें डालकर तीक्ष्णधूपमें सुखावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला, चञ्च्य, नागमोषा इन्द्रदेवका १-१ कर्षं गुण्डालकर अजलीवनाय घोंटेकर कपड़ानकरले और मधु तथा घी अन्दाग्निमें मिलाकर मदनकर चिकनेवर्तनमें रखडोङ्गे । इसमेंसे १ मासेसे ३ मासेतक मुहादेव खानेसे एकात्रत्र दिनेपरतोष, कण, शंश,

तृपा, दाह, मोह, वमन, अम्लपित्त, आठप्रकारका शूल, मन्दाग्नि, धातुक्षय, हृद्रोग, उदासित, कामला, पाण्डु, श्लेष्मकृच्छ, अरुचि, ज्वर, ग्रीह, शुल्म, उदररोग, प्रहणी, प्रवाहिना इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १२९ ॥

१३० रसामृतसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणं गन्धं माक्षिकञ्च शिलाजतु ।
शुद्धचीं चन्दनं द्राक्षां मधुपुष्पञ्च धान्यकम् ॥ ६३३ ॥
कुटजस्य त्वचं बीजं घातकीं निम्बप्रप्रकम् ।
यशीमधुसमायुक्तं मधुशर्करयान्वितम् ॥ ६३४ ॥
विधिना मर्दयित्वा तु कर्ममात्रन्तु भक्षयेत् ।
धारोष्णपयसा युक्तं प्रातरेव समुत्थितः ॥ ६३५ ॥
पित्तं तथाऽम्लपित्तञ्च रक्तपित्तं विशेषतः ।
निहन्ति सर्वदोषञ्च ज्वरं सर्वं न संशयः ॥
रसामृतसो नाम गहनानन्दभाषितः ॥ ६३६ ॥

र. सं., र. क., र. सु., ध., र. चं., रक्तपित्त ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., सोनामाखी, शिलाजीत, गिलोय, सफेदचन्दन, द्राक्ष, महुएकेफूल, पनिया, सुरैयाकीछाल और बीज, धावड़ीकेफूल, नीनकेपते, मुलट्टी १-१ भाग लेकर वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर १-२ दिन घोटकर शिलाजीत वगैरहने एकजीव करदे फिर सबकी बराबर शकर मिलाकर मधुमें आधे आधे तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रात काल खाकर धारोष्ण दूध पीनेसे पित्त, अम्लपित्त, रक्तपित्त, त्रिदोषजन्यज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १३० ॥

१३१ रसामृतसः (द्वितीयः)

त्रिकटु त्रिफला मुस्ता विडङ्गश्चित्रक तथा ।
एषां सञ्चूर्णितानान्तु प्रत्येकन्तु पलं भवेत् ॥ ६३७ ॥
कर्मद्वयं गन्धकस्य तदर्थं पारदस्य च ।
विडालपदमात्रन्तु लिह्यात्तन्मधुसर्षपैषा ॥ ६३८ ॥
शीतोदकं चातुपिबेत्कामाद्रयं पयस्तथा ।
अम्लपित्ताऽग्निमान्यञ्च परिणामरुजं तथा ॥
कामलां पाण्डुरोगञ्च हन्यादेतद्रसायनम् ॥ ६३९ ॥

यो. र., इ. यो. त., र. कौ., र. क. ल., नि. र., रसायनसं., टो., र. का., वै. चि., चि. क., अम्लपित्त ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोया, विडङ्ग और चित्रक-मूल १-१ पल, शुद्धगन्धक २ कर्ष और पारा १ कर्ष लेकर सबका बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर सबकीबराबर शकर, और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधेतोलेसे एकतोलेतक खाकर ठंडापानी अथवा दूध पीवे तो इससे अम्लपित्त, मन्दाग्नि, परिणामशूल, कामला, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकर आयुको बढ़ाताहै ॥ १३१ ॥

१३२ रसामृतसः (तृतीयः)

मातुलुङ्गद्रवैः सूतं भाषितं वासरावधि ।
गन्धकञ्च पलान्यष्टौ नागं तत्पादसंयुतम् ॥ ६४० ॥
एकीकृत्याऽथ सम्भाव्य हस्तिशुण्डीरसेस्तथा ।
धूमसारैस्त्रयहं भाव्यं रामठेन त्र्यहं त्र्यहम् ॥ ६४१ ॥
शुष्कं काचघटे न्यस्य यामानष्टौ प्रदीपयेत् ।
सिकताख्येन यन्नेण वैधो बुद्धिविशारदः ॥ ६४२ ॥
रक्तिकाद्वितयं सेव्यं मदात्ययनिवृत्तये ।
मधुनाऽऽमलकैर् नित्यं राजाहन्तु रसामृतम् ॥ ६४३ ॥
र. सु., र. प्र., र. क., मूच्छाऽधिकार ।

भाषा—८ पल शुद्धपारेको एकरोज विजोरेकेरसे मर्दनकर शुद्धगन्धक ८ पल और नागभस्म २ पल लेकर सबको इक्के मर्दनकर हस्तिशुण्डी, शृङ्गम, और होंगके यथासम्भार स्वरस अथवा काथोंसे ३-३ दिन भावनाएं देकर सुखाकर आतशी-शीरीमें रख बाळुकायन्त्रमें ८ पहरकी अमिदेकर पकावे । स्वाश्नीतलछोनेर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती मधु और आंवलेकेचूर्णकेसाथ लेनेसे मदात्ययरोग दूर होताहै ।

१३३ रसायनवटी

क्षारं मल्लजमीदाजं शुभतरं संशोध्य वल्लैर् धनैः,
कृत्या पोट्टलिकां सुतगुखाचितां तां काजिके निम्बुजे ।
दोलायन्नगतां पचेच्च सलिले कृष्माण्डजे निर्मले,
नोचेत्सप्तपुटे विमर्दितममुं तुर्येण गन्धेन च ॥ ६४४ ॥
तुर्येणैव सुटङ्कणेन विपचेन्निवातके खातके,
पश्चाच्छीतलमुद्धृतं शुभतरैर्द्विध्रारसे मर्दितम् ।
अष्टाविंशतिवारकं दलरसेः श्रीद्रोणगुष्पीमयैः,
ताम्बूलीदलसम्भवैः शुभतरैस्तुर्येण सम्मलेयत् ६४५,
छायायां खादिरोत्यपत्रजनितैः श्रीकारवेल्ल्यारसे,
रेवं विंशतिवारकं सुवटिकां सिद्धार्थतथाऽधिकाम् ।
खादेत्प्रागुदयाद् द्रवैर्दिनमनु श्लेष्मोत्थरोगे ज्वरे,
यश्माणं रुधिरादिसम्भवयुतं रोगं तथ्यऽऽप्रादिज्जल,
अस्थित्वय्यिहितं शिरोगतरुजं पादादिजातां रुजं,
विस्फोट्टादिरुजं रसायनवटी सा नाशयेन्निश्चितम् ।
श्रीधन्वन्तरिण्येमाशु रचिता देवाहता तत्क्षणात्,
खाद्या तत्करणैः सदा मतिमता राज्ञां सदा सम्मता ॥
र. प्र., श्लेष्मरोगे ।

भाषा—शोषनक्रियेहुए पारेको १०८ बार मोटेकपड़ेमें रण २ कर छानले जिसमें कि उसकी तमामकालिमा कपड़ेपर जानाय फिर दूधमें शोधन कियाहुआसोमल और पारा ४-४ तोले लेकर एक जगह शुष्कमर्दनकर नीचूकारसे जयया काबी योड़ी २ डालकर इसतरह मर्दनकरे कि गोलीहोजाय फिर इस-गोलीको गाढ़े मलमलके टुकड़ेमें बांधकर बोलायन्त्र बनावे और काबी, नीचू तथा सफेदकोहलेके रसोंमें डालकर ४-४ पहर स्वेदनकरे परन्तु यह ध्यानरखते कि पौष्टी द्रवोंसे ४ अङ्गुल

ऊंचीरहे और उफान खाकर द्रवभी उसको स्पर्श न करसके केवल वाष्पहीलगे । फिर इसगोलीसे चतुर्विंशतिदिन और सुहागा मिलाय पूर्ववत् एकदिन खरलकर शरावमस्युद्धमें बन्दकर निवांस्तथासमं एकनालित्स्ताका गढ़ा बनाकर सेरसर जहली-कण्डोंके टुकड़ोंसे ढककर आंचलावे । स्वाद्वाञ्छीतलहोनेपर निका-लकर गिलेयकेस्वरससे १ रोज मर्दनकर पूर्ववत् समुद्धकर आंचदे । ऐसे २८ आंचे देकर पूर्ववत् चतुर्विंश गन्धक और सुहागा मिलाकर पीतुंवारकीकन्दसेमर्दनकर पूर्ववत् २८ आंचे दे फिर घृमा और पानकेरसोसे मर्दनकर २८-२८ आंचे दे । यहध्यानरहे कि दूरे-द्रवमें जब मर्दनकरनाशुरूकरे उसममय प्रथमवार मूत्रद्रव्यसेचतुर्विंश गन्धक और सुहागा मिलालियाकरे फिर २७ वार बैसेही आंच देवे । तदनन्तर रौर और केलेकेरससे २१-२१ दिन केवल-मर्दनकर कुछ सखोंसेबड़ी गोलिये बनाकर छायाशुष्ककर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानेसायदेनेसे श्लेष्मरोग, ज्वर, राजयक्ष्म, रुधिरविकार, आमवात, अस्थि और त्वग्दोष, शिरोरोग, हस्तपादादिगतोरोग, विस्फोटप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह निधयरूपसे नष्टकरतीहै ॥ १३३ ॥

१३४ रसायनामृतलोहम्

त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं जीरकद्वयम् ।
यमानीद्वयभूनिर्म्यं त्रिवृद्धन्ती च निम्बकम् ॥ ६४८ ॥
सर्वेषां कार्पिकं भागं सैन्धवं कर्ममन्त्रकम् ।
खण्डं पीडशफलं प्रस्थञ्च त्रिफलाजलम् ॥ ६४९ ॥
जम्बीराणां रसं दद्यात्पलपीडशकं तथा ।
पाच्ये सर्वं प्रयत्नेन लौहं दत्त्वा पलद्वयम् ॥ ६५० ॥
सिद्धे पाके पुनर्देयं घृतं पलचतुष्टयम् ।
सर्वरोगेषु संयोज्यं महामृतसरसायनम् ॥ ६५१ ॥
गुल्मं पञ्चविधं हन्ति यश्चलूरीहोदराणि च ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं जीर्णज्वरं तथा ।
रोगान्सर्वान्निहन्त्यायु भास्करस्तिमिरे यथा ॥ ६५२ ॥
भै. र. घ., गुल्मे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोधा, विडङ्ग, दोनोंजीरे, दोनों अजवाइन, चिरायता, निर्रोत, दन्तीमूल, नीमकीछाल, पेंधानमक, अन्नरुमस, येस १-१ कर्प, शर १६ पल, त्रिफलाकाकाड़ा १ प्रस्थ, जंगीरीकार १६ पल, लोहमस २ पल केसर सवरो इन्हे मिलाकर धीमीआचले परावे । लूकी चादनीहोनेपर ४ पल पुराना पी टालकर उतारले । ६-७ दिन धीतजानेपर ३ मासेमे ६ मासेतक यथाऽप्रिकल देवहर सम योचितानुपानकेसाय देनेमे ५ प्रकारके गुल्म, यश्च, गीहा, उदररोग, कामला, पाण्डु, शोथ और जीर्णज्वरप्रवृत्ति समस्त-रोगोंको यह दूरकरतीहै ॥ १३४ ॥

१३५ रसेन्द्रगुटिका (घृती) (प्रथमा)

कर्पं नुदरसेन्द्रस्य गन्धकस्याऽन्नकस्य च ।
ताम्रस्य हरितालस्य लौहस्य च त्रिरस्य च ॥ ६५३ ॥

मनःशिलायाः क्षाराणां वीजस्य कनकस्य च ।
मरिचस्य च सर्वेषां समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ६५४ ॥
जयन्ती चित्रकं माणं खण्डकणोऽथ मण्डुको ।
शनाशानं भृङ्गराजं केशराजं तथाऽऽर्द्रकम् ॥ ६५५ ॥
निर्गुण्डीस्वरसेनाऽपि घृत्त्रमात्रेण मर्दयेत् ।
कलायपरिमाणान्तु वटिकां कारयेद्विपक्व ॥ ६५६ ॥
आर्द्रकस्वरमेनेव पञ्चकासान् व्यपोहति ।
हन्ति हिकां तथा श्वासं यश्माणं सभगन्दरम् ॥ ६५७ ॥
अग्निमान्द्यार्चिं शोथमुदरं पाण्डुकामलाम् ।
रसायनी च तृप्या च घलवर्णप्रसादनी ॥ ६५८ ॥
वृंहणं मधुरं स्निग्धं मत्स्यं मांसञ्च जाङ्गलम् ।
घृतपकं सदा भक्ष्यं रूक्षं तीक्ष्णं विवर्जयेत् ॥ ६५९ ॥
र. सं., र. चं, नि. र., घ., र. र., भै. र., र. मु., र. वि., र. क. कासाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक, ताम्र, हरिताल, लोह इनकीमसं, शुद्धचठनाग और मैनसिल, सब्बी, सुहागा, यवक्षार धतूरेकेबीज और मरिच १-१ कर्प केसर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण कबलीमें मिलाकर जेंती, चित्रक, मानरन्द, जहलीसूरण, वाद्री, भाग अथवा गाजा, भंगरा, बालाभंगरा, अदरक और निर्गुण्डी इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर मद्रवरावक गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसमे देनेमे ५ प्रकारकेसाध, दिवरी, श्वास, राजयक्ष्म, भगन्दर, मन्दागि, अर्चि, शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला इनसबको नष्टकर धातु और बल तथा बर्णकी वृद्धिको करताहै । धातुओंको बढ़ानेवाला मधुर और स्निग्ध भोजन, धीमे मुनीहुईमटलियां और जहलीमान इनका भोजनकरे । तीक्ष्ण और रूक्षपदार्थोंका त्यागकरे ॥ १३५ ॥

१३६ रसेन्द्रगुटिका (द्वितीया)

माक्षिकञ्च शिखिप्रीचमन्त्रकं तालकं तथा ।
पतास्तु मिलितान्स्वाम्नाभाययेदार्द्रकद्रवेः ॥ ६६० ॥
रत्तित्थयप्रमाणान्तु कल्पयेद्वटिकां मिषक्व ।
जीर्णात्रे भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६१ ॥
पञ्चकासं क्षयं श्वासं रक्तपित्तं विनादायेत् ।
पाण्डुक्रिमिज्वरहरी रुद्यानां पुष्टिघर्षनी ॥ ६६२ ॥
शुकृवृद्धिकरी चैषा अम्लपित्तविनाशिनी ।
बहिस्सन्दीपनी श्रेष्ठा त्वरौचकविनाशिनी ॥ ६६३ ॥
र. गं., र. चं., घ., र. र., र. मु., भै. र., कासाऽधिकारे । भै. र., यदमरोगे ।

भाषा—गोनामाची, तृप्या, अन्नक और हरिताल इन कीमसंमे सब समभाग केसर अदरककेरसमे १-२ रोज पीटकर १-२ रसोंकीगोलियां बनाकर रखछोड़े । भोजने परचापनेपर १-१ गोली देकर दूध और मांसरस पित्रके तो ५ प्रकारकेसाध, धय, श्वास, रक्तपित्त, पाण्डु, क्षिमि, ज्वर, रुचणा, रुच्याय, अम्लपित्त, मन्दागि और अर्चि इनको यह नष्टकरतीहै १३६

१३७ रसेन्द्रगुटिका (तृतीया)

कर्म शुद्धरसेन्द्रस्य स्वरसेन जयाऽऽर्द्रयोः ।
शिलायां खल्वयेत्तावद्याद्यत्पिण्डं घनं भवेत् ॥ ६६४ ॥
अम्भःकणाकामाचीवासामि भांययेत्युनः ।
सौगन्धिकमलैर्भृङ्गस्वरसेन सुभावितम् ॥ ६६५ ॥
चूर्णितं रससंयुक्तमजाक्षीरपलङ्घये ।
खल्वितं घनपिण्डन्तु गुटिः स्थिन्नकलायवत् ॥ ६६६ ॥
रुत्याऽऽर्द्रौ शिचमभ्यर्च्य द्विजातीन्परितोष्य च ।
जीर्णान्नो भक्षयेदेकां क्षीरमांसरसाशनः ॥ ६६७ ॥
सर्वरूपं क्षयं कासं रक्तपित्तमरोचकम् ।
अपि वैद्यशतैस्त्यक्तमम्लपित्तं नियच्छति ॥ ६६८ ॥

शे र, च द, वै द, यो म, दो, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—एकतोले शुद्धगोरको भाग और अदरखकेरसमे यहतक घोटै कि गोलीबेधनेलायकहोजाय । फिर जलपीपल, मकोय, अहसा, पीलाकमल, भंगरा इतके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर २ पल बकरीकेदूधसे मर्दनकरे । गाढाहोनेपर फूलेहुए मटरकेबराबर गोलिया बनाकर रखओड़े । भोजन पचजानेके बाद १-१ गोली दूध अथवा मासरसकेसाथ देनेसे सबप्रकारका क्षय, कास, रक्तपित्त, अरुचि और सैकड़ों वैद्योंसे छोड़ाहुआ अम्लपित्त, इनसबवर्गोंको यह नष्टकरतीहै ॥ १३७ ॥

१३८ रसेन्द्रगुटिका (चतुर्थी)

रसेन्द्रगन्धाश्मजतुप्रवाल-
लीहानि वैद्यः समभागकानि ।
रसेन्द्रपादप्रमितञ्च हेम
विभाव्य निम्बाशनचह्रितोयैः ॥ ६६९ ॥
ततो घटी र्धल्लमिता विमर्द्य
विधाय शुद्धा यद्वारवारान् ।
फलश्रिककायजलेन वाऽपि
प्रातः प्रयुञ्ज्यात्प्ररुपाग्मुना वा ॥ ६७० ॥
रसेन्द्रयट्यास्वयगदाग्निहन्ति
घातामयान्मेहगणान्परांश्च ।
करोति घट्टे र्धलधीर्ययोश्च
वृद्धिं विशेषेण रसायनीयम् ॥ ६७१ ॥

शे. र, सुखतोमे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत, प्रवाल और सोह भस्म, सब समभाग लेकर परिके चतुर्थीस शुक्लभस्म मिलाकर सक्की नीलवर्णहज्जलीकर नीम, असन, चित्रककी जड़, इनके यथासम्भव स्वरुप अथवा ऋषोंसे १-१ रोजमर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली जंगलीलसोड़ा, त्रिफला अथवा अगर इनक यथासम्भन स्वरस अथवा ऋषोंकेसाथ लेनेसे वातरोग, प्रमेहगण, घनस्तम्बर मन्दाग्नि, बलवीचहानि इनसबको दूरकर आयुको बढ़ानीहै १३८

१३९ रसेन्द्रचूडामणीरसः (वृहत्तालकेश्वरः) १

कृष्णपण्डस्वरसे घराकथितके नीरे तथा निम्बुजे, नीरे शुक्तिजचूर्णजे घटजटाकाये ततः काञ्जिके ।
छिन्नायाः स्वरसे रसे मुनिभये पुह्णाजले स्वेदितं,
गुञ्जावल्गुजतलेकेन मिलितं स्वेद्यञ्च ताले ततः ६७२
एवं शुद्धतमं सकाञ्जिकमरैः खल्वे शुभे मर्दयेत्,
सेहुण्डाकैजदुग्धमेलनपरः शुष्कं रहः सप्तशः ।
कन्यामानुलशुद्धपत्रजरसे दुग्धैरजासम्भवे-
स्तैलैः प्रागुदितैर्मनाक् समकृतं तद्यत्रिका निर्मिता ॥
मध्ये भस्म पलाशजं शुभतरे यन्ने सुमन्यथानके,
धृत्या तत्र च तां ततस्तदुपरि द्वात्रिंशदायामं पचेत् ।
पालाशस्य हठाग्निना खदिरजै वैश्वानरैरन्वहं,
निर्धूमं सुपरीक्षितं च बलिना तुर्येण सूतेन च ६७४
पिष्टं खल्वयरे स्तुगादिसकलेस्तुर्येण यज्ञेन च,
सम्यक् सम्पुटयन्त्रके सुविधृतं तद्बालुकायन्त्रगम् ।
यामं द्वादशकं सुखं सुविषचन्द्राभितं दापयेत्,
तस्मात्तुर्यदिनात्परं दिनमनु ह्यात्वा तथा वर्धयेत् ६७५
यावद्रक्तित्तुप्रयं न सहते जीर्णं गुडं भक्षयेत्,
द्वात्रिंशन्मरिचैः समं समशानं पथ्यं जलेनोदनम् ।
रोगे मीपणके सुपञ्चकृतिकः साधु भवेद्भक्षणं,
व्याध्याद्यैर्विहितं कफादिजनितं रोगं व्यधादिं हरेत् ॥
द्वन्द्वं सर्वविधं सुमण्डलयुतं सुमिश्रं घातासृजं,
कुष्ठाऽऽदादराहृद्दस्तायनमिदं खल्वापहृत्सुत्समम् ।
पथ्यं चाऽम्लविचर्जितं त्वलवणं रूक्षं मरुष्टं शुभ-
माढक्याश्च बुल्लयकः सुचणको रोगान्तकालावधिम्

र. का, कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—शुद्धतक्कीहरितालको सपेदरसोहृद्ग, त्रिफला, नीधु, सीपके चूनेका पानी, बटकी जटा, काशी, गिलोय, मगस्त्य, शरपुद्ग, सफेदगुग्गु और वाडुचीकातेल इनप्रत्येकके यथासम्भन-
रसोंसे १-१ दिन स्वेदनकर रसलेमं बारीक कपडिगानचूर्णकर सेहुण्ड और आक्केदूधसे ७-७ दिन मर्दनकर पीडुनार और धनुरैकारस, बकरीकादूध तथा गुग्गु और वाडुचीकातेल इन प्रत्येकसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय पलाशपत्राङ्की सपेदराखको छानकर एक मजतुट हण्डीमें भरके बीचमें टिक-
ड़ियोंकी धोड़े २ अन्तरपर जमाय बीचमें अन्नकके टुकड़े लगादे जिसमें कि एकसे दूसरी टिकड़ी मिल न जाय । ऊपरसे पलाश-
कीरास भरके धोड़ीसी दवादे फिर बूधेवर चट्टाय पलाश, रीर और चित्रककी लसड़ियोंकी तेज आचने ३२ पहर क्रमसे पकावे । स्वाश्रुतीकलोनेपर निडालकर अगिरर रखकर परीशाकरे । अगर निर्धूम मान्दम हो तो इससे चतुर्थीस पारा और गन्धक लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मिलावे और खुश्यांश बज्रभस्म मिलाकर सेहुण्डकीरसदूधमें १-१ रोज मर्दनकर टिकड़ियां बनाय गुग्गुकर शरावमण्डुमें बन्दकर १-७ कपडिमिठी लगाय वाडुकायक्रमे रस

१२ पहरकी अग्नि देकर पनावे । स्वाज्ञसीतलहोनेपर निकाळकर रखोहे । इसमेंसे १-१ रती उचितानुपान के साथ ४ रोजतक देवे । पांचवेंरोजसे १ रती माना बढ़ावे फिर ४ दिनबाद १ रती बढ़ावे । इसप्रकार ४ रतीतक अथवा जितनी सहन करसके उतनी बढ़ावे पर ४ रतीसे अधिक न देवे । इसके ऊपर ३२ कार्ली-मिचं पुरानेगुडमें मिलाकर खिलावे । जल्केसाथ भात खानेको दे । अन्यन्तभीषण रोग हो तो वमन विरेचनादिपञ्चकर्मकरके समयोचितानुपानवेसाय देनेसे कफादिजनितरोग, दृष्ट, मण्डल-कुष्ठ, मुक्ति, वातरक्त, अठारहप्रकारके कुष्ठ, खली (हायपेरोकी ऐंज) इनसरोगोंको यह नष्टकरताहे । इसमें पथ्य अम्ल और लवणको छोड़कर रुक्ष, मोठ, अरहर, फुल्यी और चने देना जवतक कि रोग निरुत न होजाय ॥ १३९ ॥

१४०. रसेन्द्रचूडामणीरसः (द्वितीयः)

सूक्ष्मभुजगाम्रवङ्गकाः कान्तताप्यविमलासमाक्षिप्ताः
भागवृद्धिमिलिता विमर्दिता धूर्तपत्रविजयाभवे रसेः
सम्पसत चपलामृतवह्नीभागिकासुख्यलताजलतौषैः
धारिचाहमृतवयष्टिकावरीवानरीभुजगदृष्टिसम्भवैः ॥
अर्धभागमहिफेनकैत्यसेम्भदेयैस्तुरसपुष्पसम्भवैः ।
चन्दनार्ककरहादपिप्पलीध्रावणोद्भवसमुद्भवैरसैः ॥
कुङ्कुमेन च ततो विभावयेन्नाभिजद्रघुयुतं विभावयेत्
सिद्धिमेति रसराडयं शुभः कामिनीमद्विधुननःपरः
शर्करामधुयुतो द्विरक्तिकः स्तम्भहृत्त्रिधुवनेचरेतसः ।
संसेव्य मृतं नचरात्रिभोज्यं कुर्वीत पेयं पय एव केवलम्
तृतीययामे रससेवनन्तु

दृष्ट्या निशायाः प्रहरं व्यतीते ।

मेघैत कान्तां कामनीयगात्रां

धनस्तनीमुञ्जलचरदवस्त्राम् ॥

रत्युत्सुकां कातरलोलनेत्रां

विलोहलहारावलिमादधानाम् ॥ ६८३ ॥

किं कामे तनुकामिनां मलयजे-

नाऽप्यदयकेनाशु किम्,

किं चन्द्रेण परोपतापजनिना

पुंस्कोकिलेनाऽपि किम् ।

सहस्रदाः सन्ति यदा तरुण्यां

मदालसाः पीनपयोधरा दृष्टाः ॥

तदा रसेन्द्रः परिपेषणीयो-

विकारकारी च भवेत्ततोऽन्यथा ॥ ६८४ ॥

र. र. स., र. चं., वात्रीवरणे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, नाग, अन्नक, वरु, कान्तलोह, कान्तमाक्षिक, रगतमाक्षिक और सुवर्णमाक्षिक देसक अमृद-भाग्य लेख धरारा, माग, पौषण, मिलेय, मारुती, अमरक, नागरमोया, षडनाग, सुरद्वी, सदावरी, धेवाच, सरांसी इनोरम अथवा कर्षणों ७-७ रोज मदनदर ममन्तरिजये

भाषा शुद्ध अफीम डालकर तुलसीकीमधुरी, चन्दन, आफ, अकलसरा, पीपल, दोनोंगोरसगुडी, कुकुम और कस्तूरी इन-प्रत्येकके द्रवोंसे १-१ भावना देकर २-२ रतीकीगोलियों बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ लेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहे । इसको स्तम्भनाथ लेना हो तो शामहोनेसे पहिले १ गोली दूधके साथ लेवे और भोजन न करे केवल दूध पीवे । एकपहर रात्रि जानेके बाद मनोभिलपिन रत्युत्सुकां क्रीडिषाथ सम्भोग करनेपर यथेष्ट स्तम्भन होता है । इसरसकेसेवनकरनेकेबाद कामोद्दीपक तमाम हावभावोंकी सुखत नहीं रहतीहे । इसरसकासेवन वहीकरे जिसके घरमें कामातुर बहु-तमीत्रिया मौजूदहों नहीं तो यह विकार पैदा करेगा ॥१४० ॥

१४१ रसेन्द्रनागरसः

नागं कपालमध्ये क्षिप्त्वा चाग्निं निधापयेत्कमशः ।

त्रिञ्चाकयचक्षारं स्वल्पं स्वल्पं चिकीर्य कुन्तलेन ६८५

भागं पारदर्शीसं घृष्टा घृष्टा विचूर्णितं सम्यक् ।

तिलमानं जग्धि मधुना तरवद्वयजेन मिश्रितं कमशः

पिडिकासहितविशेषां प्रमेहगणार्तिं कुष्ठमनिलञ्च ।

हन्त्यल्पदिनाभ्यासास्तुपथ्ययोगाद्रसेन्द्रनागोऽयम्

र. चं., र. र. स., र. गु., र. को., र. र. की. प्रमेह ।

टि०—अय प्रयोगो यथावस्थितो न सेवनीय, अपरिपक्वमधुयोग-दायनाशुप्रभवकरं भविष्यन्तीदृशिररणीयवत्स दत्ता चतुर्वर्गमेत विषय कुण्डल्यन्ते भूत्वा पत्रघृष्टिकावर्षे वैदृष्टिवा सारवन्पुडे निषाय वातकायन्ते दिशदिनानि पक्त्वा स्वाङ्गीणन्मन्मोर्षी मृत्वीव । नित्यत्वा यात्रधेनिषवणीयोऽन्यथा दिश्राऽप्रयोऽन्ये प्रदानत्या र्णी तत्र न विरमणीयम् ।

भाषा—शुद्धनागको मिट्टीकेठीकेमें डालकर अग्निर रसके गलजानेपर उसकी सवारके शुद्धारके डालकर इसलीके फेंके फलोंके थिल्लेका धार थोड़ा थोड़ा डालकर घोटतानाय । इस तरह ४ पहर घोटनेसे उसपारेकेसाथ नागकीभस्म होजायगी । इसमेंसे एकतिलभरमात्रा तुवरकके बीजोंकेसाथ सेवनकरनेसे पिडकासहितप्रमेह, कुष्ठ और वातरोगनष्टहोतेहैं ॥ १४१ ॥

१४२ रसेन्द्रमङ्गलरसः

तालसत्त्वं मृतं तांघ्रं मृतं लाहं मृतं रसम् ।

हृत्तमघ्रं हतं तारं गन्धं तुल्यं मनःशिला ॥ ६८८ ॥

सौर्यापराजगकासांसं नीलीं भृष्टातकानि च ।

शिलाजत्वकैर्मूलन्तु कदलीकन्दचित्रकम् ॥ ६८९ ॥

त्यघमङ्गोलजां कृष्णां कृष्णघनूरुमूलकम् ।

आयलुजानि वीजानि गौरीमार्थीकलानि च ॥ ६९० ॥

हेमाह्लां फनमाठयं फलिनीं पिपतिन्दुरुकम् ।

तेजिन्यां लाहकिट्टञ्च पुराणममृतञ्च तत्र ॥ ६९१ ॥

त्यञ्च मीनकाशस्य पुनरुत्पत्तं दृष्यक ।

तैलिन्यां घटकास्तासु मयंमेकत्र पूर्णगेज ॥ ६९२ ॥

खरुपे निषाय दातव्या पुनरेषाञ्च भावनाः

प्रादपण्डी शिवाया पुता देवदात्री च नीलिका ॥ ६९३ ॥

वाणशोणा नृपतरु निम्बसारो विभीतकः ।
 करञ्जो भृङ्गराजश्च गायत्री तित्तिडीफलम् ॥ ६९४ ॥
 मलयमूलमेतेषां तिक्त्रस्तित्त्रस्तु भायनाः ।
 दातन्या कुम्भिकां कृत्वा सम्यक् संशोष्य चातपे ६९५ ॥
 भाण्डे तद्धारयेद्भाण्डं मुद्रितं चाथ कारयेत् ।
 यामं मन्दाग्निना पको पुटमध्यं ह्यसौ रसः ॥ ६९६ ॥
 पुण्डरीकं निहन्त्येव नात्र कार्या विचारणा ।
 द्विमासाभ्यन्तरे पुंसामपथ्यं न तु भीजयेत् ॥ ६९७ ॥
 रोगाः सर्वे विलीयन्ते कुष्ठानि सकलाणि च ।
 भानुभक्तिप्रवृत्तानां गुरुभक्तिहृतां सदा ॥ ६९८ ॥
 रसिन्द्रमङ्गलो नाम्ना रसोऽयं प्रकटीकृतः ।
 अनुग्रहाय भक्तानां शिवेन करुणात्मना ॥ ६९९ ॥
 रसायनसं, र. म., र. का., कुष्ठअधिकारः ।

भाषा—हरितालसत्त्व, ताम्र, लोह, पारा, अभ्रक और चादी इनकीभस्में, शुद्धगन्धक, वृत्तिया, मीनसिल, सौवीराञ्जन, कसीस, नीलक्रीपती, पहेहुप भिलवि और शिलाजीत, आकरी जङ्गीछाल, केलकाचन्द, चित्रकनीजङ्, अड्डोलनीछाल, पीपल, कालेयवृक्षकीजङ्, बाकुची, प्रियङ्गु और माधवीलताकेजीज, सत्यानाशी, अफीम, मालकाम्गण, कुचिला, तरहेतेजक, तेजवल, तुम्बुल, पुरानामण्डूर, सफेदकनेरकीजङ्गीछाल २-२ पल, तिल, सफेदमरसों, राई, तुमुम्भ, अलसी ८-८ भासे लेकर सतक कपड़छान चूर्णकर १ पहर सारा रखकर ब्रह्मण्डी, मयूरशिखा, शरपुत्र, बन्दाल, नील, लालकटसरिया, लालकपासकेफूल, अमिलतास, नीमकामद, बहेड़ा, कर्क, अंगरा, रौर, इमलीके-फल, कद्रमरकीजङ् इनप्रत्येकके रसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर सुदाहर ६-७ कपडमिश्रीदीहुई आतशीशीशीमें भरके बाउ-कान्दयमें रख सुहृदकर एणपहर मन्दाग्निसे पकावे । स्वा-दीतिलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माया उचितानुपानकेसाथ देनेसे दो महीनेमें यह पुण्डरीकपुष्टको नष्ट करताई । कुष्ठदिसमस्तरोगोंकेलिये यह परमौषधे । इसके सेवनकरनेवालेको सूर्य और गुरुकी सेवाकली उचितहै ॥ १४० ॥

१४३ रसेन्द्ररसः (प्रथमः)

यद्गं रसें ताग्रमयश्च भस्म
 सर्वैः समानं गगनं धिमर्द्यं ।
 गोक्षुररत्तमाऽऽमलकीगवाक्षी-
 रसैः पूषण्वासरकं रसेन्द्रः ॥ ७०० ॥
 निष्कार्दमात्रो मधुना निर्पातो
 जयेत्प्रमेहं दधिरस्तुतिश्च ।
 बृष्माण्डनीरं ससितश्च पेयं
 कृष्माण्डलखण्डेन युतश्च शकम् ॥ ७०१ ॥
 र., प्रमेहे ।

भाषा—बज्र, पारा, ताम्र और लोह इनकीभस्में १-१ भाग, अभ्रकभस्म सबकी बराबर लेकर गोरास, केलकाचन्द, औरता, इन्द्रायण इनके दयागम्भार स्वस्य अथवा बाधोंमें

१-१ रोजमर्दनकर २-२ मादोकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ देकर सफेदसोहळेका रस, शरकरालकर पिलानेसे प्रमेह और दधिरसाबको यह नष्टकर ताई । इसमें सफेदकोहळेकारासक देना पथ्यहै ॥ १४१ ॥

१४४ रसेन्द्ररसः (तृतीयः)

शुद्धं सूतं समञ्चाऽऽनं मृतताम्रं विषं समम् ।
 गन्धकञ्च समं पिष्ट्वा सूर्यमूलकपायके ॥ ७०२ ॥
 मृगान्ते चालुकायत्रे दिनेकं मन्दपहिना ।
 पाच्यं चूर्णीकृतं सूक्ष्मं मापं चैवाऽनुपानतः ॥ ७०३ ॥
 खादेहोषज्वरं हन्ति सप्रिपातनिकृत्तनः ।
 रसेन्द्ररसनामाऽयं शम्भुना परिकीर्तितः ॥ ७०४ ॥
 वै. वि., ज्वराधिकारः

भाषा—शुद्धपारा, बज्रनाग और गन्धक, अभ्रक और ताग्र-भस्म येसब समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर आककीजङ्गी-छालके कड़ेसे १ रोज मर्दनकर गोलावनाय बज्रमृगाममें बन्दकर ६-७ कपडमिश्री देकर चालुकायन्त्रमेंरस एगदिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाहृशीतलोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-१माया उचि-तानुपानकेसाथ देनेसे यह दोपीकुमार और सतिपातको नष्टकरताई

१४५ रसेन्द्ररसः (चतुर्थः)

सूतो गन्धो गगनतपनीं ह्यध्वनिगनाश्रमांशा,
 निम्बपुण्ड्रयम्भ.सलितमसकृत्सूर्यतापातिव्युज्ज. ।
 धातं गुल्मं प्रहणिमुदरं कासञ्जालं ज्वरादीः,
 कुष्ठं पाण्डुं हरति ह्यति त्रि स्याऽनुपानाद्रसेन्द्रः ७०५
 र शि, सर्वरोगाधिकारः ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, शुद्धगन्धक ४ भा., अभ्रकभस्म ८ भा., ताग्रभस्म १ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर नीबू और थिक्करकेरसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रसीकी गोलियाँ बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली तत्तदोगोचितानुपानके-साथ देनेसे वायु, गुल्म, प्रहणी, उदर, कास, शूल, ज्वर, वग-सीर, कुष्ठ और पाण्डु इनको यह शीघ्र नष्टकरताई ॥ १४५ ॥

१४६ रसेश्वररसः

सूतगन्धो सर्मां मर्द्यो धन्वपासरसेऽन्यहम् ।
 ततो लाहोऽम्रसंयुक्तो चन्द्रनाभ्युधिर्मर्दितो ॥
 सिद्धो रसेशो यत्किं सूच्छां क्षौद्रकणापुतः ॥७०६॥
 र., सूच्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीकर जवा-सके रसमें ३ रोज मर्दनकर पारदेके बराबर लोह और अभ्रककी भस्म मिलाकर चन्दनकेरसमें ३ रोजमर्दनकर ३-३ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलनेसाथ देनेसे यह सूच्छाको दूरकरताई ॥ १४६ ॥

१४७ रसेश्वररसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं गैरिकं तुल्यभागं मर्द्यं धन्त्रं बहुतोयेन पथ्यात्
 शुद्रानांयै धांसरेकं गुहृचीतोयैस्त्यायन्द्दृङ्गवेराम्युना च

सप्ताहं कटुकारसेन सुरसानीरेण ताघहिनं,
विश्यायाः स्वरसेन वासरयुगं धात्रीरसे मूर्धितः ।
सिद्धिं यानि रसेश्वरो ससितयुक् सचन्द्रवैराभ्युना,
तापंहन्त्यचिरेण बह्ययुगलो मुद्गाम्बुमकाशिनाम् ७०८
र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और गेहूँ समभाग लेकर मालनागनी, मटरदेया, गिलोय और अदरकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर वृटकीके रससे ७ दिन, तुलसीके रससे १ दिन, सोट और आवलोंके रसोंसे २-२ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकरमिलेहुए अदरकके रसके साथ देनेसे ज्वर शीघ्र नष्टहोताहै । मूत्रलगनेपर मृगकायूप और भातदेना ॥ १४७ ॥

१४८ रसेश्वररसः (द्वितीयः)

मृतो गन्धकभागिको दिवसयुक् सम्मर्दितो भूशिया,
घाभिः सूतदलाऽहफेनसहितो विश्वाधिपाक्षौद्रयुक् ।
वालाश्रीफलघातनीगुडयुतो स्वीयाऽनुपानैरपि,
सिद्धः सख्यतिसारनामहरणः श्रौसूतनामाभिधः ७०९
र, अतिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लकर नीलवर्ण-
कजलीकर भुईआबलेकेसमे एकदिन मर्दनकर पारेसे आपी
अफीम मिलाकर १-२ दिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सोट, अनीस और मधुकेसाथ
अथवा सुगन्धवाला, बेलगिरी, धावड़ीनेफूल और गुडकेसाथ अथवा
तनूरीगहरारुपानोंकेसाथ देनेसे यह अतिसारको दूरकरताहै ॥ १४८ ॥

१४९ रसेश्वररसः (तृतीयः)

रसोऽथगन्धा मुशली शतावरी
मुस्ता गुडूची मधुकरुटी च ।
गोक्षरकं कौकिलवीजचूर्णं
केतन्यकन्दस्वरसे दिनैस्त्रिः ॥ ७१० ॥

त्रिवारभृङ्गेण च भावयेत्-
दुग्धाऽष्टकं दुग्धसितायुतञ्च ।
गोधूमपर्यं निशि सर्वमेहं
रसेश्वरोऽयं स तु कामुकानाम् ॥ ७११ ॥
रसायनस, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—पारदभस्म, असगन्ध, मुशली, शतावरी, नागरमोधा,
गिलोयसत्त्व, चक्रोत्तरे की जड़, गोखरू, तालमखाना समभाग
लेकर वारीक चूर्णकर केतकीकन्द और भगराके रससे ३-३ रोज
भावनाए देकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली शकरकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको
दूरकरताहै । इसमें रात्रिकेसमय गेहूँ खानेकोदेवे । यह कामियों
केलिये उत्तम वाजीकरणहै ॥ १४९ ॥

१५० रसेश्वररसः (चतुर्थः)

गन्धत्रययुतं सूतं मारयेत्सुटयोंगतः ।
पचेत्तं चक्रयत्रे च गन्धकेन समन्वितम् ॥ ७१२ ॥

विषं फलांशकं दत्त्वा वीपनीपथिभाषितम् ।
पित्तेश्चोपविषे भांवं वटी मापप्रमाणिका ॥ ७१३ ॥
ख्यातो रसेश्वरः सूतः सन्निपातविनाशनः ।
मिपग्निभश्च प्रदातयं शीतज्वानञ्च रोगिणे ॥ ७१४ ॥
अगदः सर्पदष्टस्य मृतसञ्जीवनः परः ।
क्रामणेन समायुक्तः सर्वव्याधि विनाशनः ॥ ७१५ ॥
रससार, रसायने ।

भाषा—एकवर्षपारमें गन्धक, हरिताल, और मंनसिल
१-१ वर्षका वारीकचूर्ण थोड़ाथोड़ा डालकर सूच्छिन्नकरे । कुछ
वाकीरहनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाकर कजलीकर चक-
यन्त्रमें पकावे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर पारेसे १६ वा
हिस्सा शुद्धवज्रनाग मिलाकर दीपन औषध, पित्त और उप-
विषोंके यथाकामस्वरस अथवा कायोकी भावनाए देकर उड़द
बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उच्चि-
तानुपानकेसाथ देनेसे यह सनिपातको दूरकरताहै । रसकी
तीव्रताकेलिये ठंडेपानीसेधानकराना । सर्पदष्टको ३-३ घण्टेके
अन्तरसे रिताना और लेपकरना, नाक-आंख और कानोंमें
डालना । कामण औषधियोंकेसाथ देनेसे यह सब बीमा-
रियोंको नष्टकरताहै ॥ १५० ॥

१५१ राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरीरसः

वत्सनाभरसगन्धमौक्तिकं
चित्रकाऽऽद्रकरसेन पेपितम् ।
निक्षिपेत्त्रिजलसम्पुटे ततो
लेपितञ्च लवणाद्यमूत्रन्या ॥ ७१६ ॥
पूर्ववच परिपाचितो भवे-
द्राजयक्ष्मकरिमत्तकेसरी ।
त्र्युपपाद्रकरसेः सुभाषितं
योजयेच्च सुकर्णैर्मधुप्लुतैः ॥
शुद्धवैरकणवृणितोऽथवा
मागधीमधुगुडूचिकान्वितः ॥ ७१७ ॥

र दी, र प्र. सु, र च, राजयक्ष्मणि ।

टि०—प्र सु, र च, पतये वैश्वहरनाम्ना पाठाऽपि तस्मिन्
सर्वाण्येव वक्तुमि भावनाक्षयमेव रसेन समाना मन्ति, केवल हरिण
रसे सुकास्थनि सुवर्णमसि त्रिजिरेषो दृश्यते । पत्तन्निमित्तं रसे सुवर्णम
धिकनवा नियुज्य द्रव्ये पाठवाकरनात् सम्यस्यते गुणवृद्धिरपि महती
मन्त्यस्यते, अतन्मत्तयाऽप्यत्रैवाऽन्तर्भाव करणीय ।

भाषा—शुद्धवज्रनाग, पारा और गन्धक, मोती और
सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर विश्रकमूल
और अदरककेरससे १-१ रोज मर्दनकर औषधके बराबरके ताम्र
सन्पुटमें रखकर सन्धिबन्दकर वाबीकीमिट्टी और नमकके कण्ड
मिश्रीकर सुताकर कण्डेडनकीहुई सफेदराक ४-४ अहुल ऊपर
नीचे देकर हंडीमेंरख चूल्हेपर एकद्वार मन्दागिसे पकावे ।
स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर निकट और अदरककेरसकी १-१
दिन भावनादेकर पीवल और मधु अथवा अदरक और पीवल

अथवा पीपल, मधु और गिलोयकेसाथ देनेसे यह राज्य क्षमको नष्टकरताहै ॥ १५१ ॥

१५२ राजयक्ष्महररसः

रसेन्द्रशुद्धिणी तुलसी ग्राह्यां तिन्दुकमानको ।
खल्वयेममतिमान्नेद्यो प्रहरे नांगनेप्रकेः ॥ ७१८ ॥
तवस्तत्सिद्धिमायाति दद्यात्तण्डुलसम्मितम् ।
मधुना वा सिताऽऽप्येन लिह्याच्छोपस्य शान्तये ७१९
कुलित्यसुपभक्तञ्च शोभाजनदलोद्भवम् ।
शाकं त्वलायुसम्भृतं मरिचं तुण्डिकेरिकम् ॥ ७२० ॥
द्विसप्ताहं भजेद्यक्ष्मी जीयितुं रोगमुक्तये ।
अनुभूतः प्रयोगोऽयं स्वयं प्रोक्तो पिनाकिना ॥ ७२१ ॥
रसायनसं, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारिकीर्भस अथवा रससिन्दुरादि मूर्च्छितपारा और शुद्ध बचनाग दोनों समभाग लेकर २८ फहरतक खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावलकीमाना मधु अथवा धी, शकर के साथ देनेसे राजयक्ष्मी अच्छा होजाताहै इसमें कुल्यधीकीवाल और सहिजनकीचली, लौकी, इंदूल, कालीमिर्च इनका सेवन करावे । चौदहदिनकेसेवनसे रोगीको अद्भुत फायदा नजर आनेलगाताहै ॥ १५२ ॥

१५३ राजयक्ष्महरयोगः

नवनीतसितामधुप्रयुक्तो
घरखो हेमभवः क्षयं क्षिणोति ।
वितथ प्रभवेदयं प्रयोगो
यदितन्मे शपथः सदा शिवस्य ॥ ७२२ ॥

वे मृ, रसायनस, नि र, र च, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सोनेकावर्क एकभाग लेकर मरदान, मिथी और शहद उचितमात्रामें शामिलकर रोजाना एकबकलाकेको देवे तो इससे क्षयनष्टहोजाताहै यहप्रयोग जिनको रक्षितरताहो उनपर अच्छाकामकरताहै ॥ १५३ ॥

१५४ राजराजेश्वररसः (प्रथमः)

आतत्रे मर्द्धबोद्धं गन्धकं मृततत्प्रकम् ।
सुहस्तमर्द्धितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२३ ॥
भृङ्गराजद्रव्यं वृत्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला ग्वादिरेसारममृता यावु चीफलम् ॥ ७२४ ॥
प्रत्येकं मृततुल्यं स्यात्पूर्णाहृत्य विमिश्रयेत् ।
मध्वाज्याभ्यां लौहपत्रे कर्पं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥
द्वद्विक्रिभुमुनि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुजेन निहन्यानु राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२६ ॥
र स, र म र चि, यो म, र क, गुणयोगाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताप्रमत्स, रसमागिकस्य अथवा शुद्धरिताल सब समभागलेकर धूपमें घंटकर नीलकण्ठ कजरीकर भंगरेकरससे एकरोजमर्दनकर त्रिफला, वीरगार, गिन्नेय, बाजुची के प्रन्देक पारिकेबाराबलेकर बारीकचूर्णकर सबको इच्छे मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २ रतीकीमात्रा १-१

तोले मधु और धीकेसाथ मिलाकर खानेमें दाद, क्रिडिभ और मण्डकुष्ठ नष्टहोते हैं ॥ १५४ ॥

१५५ राजराजेश्वररसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं शुद्धगन्धं तालकं माक्षिकं समम् ।
त्रिभारं दीप्यकं हिड्डु मर्द्धितं दिवसद्वयम् ॥ ७२७ ॥
त्रिभ्रमूलकपायेण घालुकायश्नके पचेत् ।
द्वियामान्ते समुद्भूत्य मत्स्यपिप्पेन भावयेत् ॥ ७२८ ॥
गुजामार्द्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ।
अनुपानविशेषेण राजराजेश्वरो रसः ॥ ७२९ ॥
वे चि, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामार्घी, सभी, सुहागा, यवशार, अजवाइन, भुनीहींग सब समभाग लेकर नीलकण्ठकजलीकर त्रिभ्रमूलके काठेसे दोरोजमर्दनकर २-३ कपडमिरीदीहुई आतवीशीशीमें भरके वाजुकायश्नमें रख दोपहरकी अग्निदेवे । स्वाश्रुशीतलहोनेपर निकालकर यथालाभ मच्छरीके पित्तकी भावनादेकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सबप्रकारके सन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ राजलीलागुटिका

शिलायाः शुद्धसूतस्य चत्वारिंशदश रत्तिकाः ।
कणाख्यगुग्गुलीस्तद्वत्तथा सौगन्धिकस्य च ॥ ७३० ॥
रत्तिनाविंशतिप्रांशा जलकामाजयात्पचाम् ।
अशीति दन्तिमीजस्य पयसा शोधितस्य च ॥ ७३१ ॥
चूर्णयित्वा ततः सर्वं फलकायेन मर्दयेत् ।
निबुम्भस्य कपायेण कृमिप्रचरसेन च ॥ ७३२ ॥
कारयेद्राजलीलाख्याः पद्विंशद्गुटिकास्ततः ।
पैरैकां शीलयेत्प्रातः शीतेनाऽऽलोच्य धारिणा ॥ ७३३ ॥
याताद्विमुच्यते प्राणी यावदुष्णं न शीलयेत् ।
पाण्डुज्वरार्थं शोफादीन्निवृच्छति गदान्हाटात् ॥ ७३४ ॥
ट. मृ, मण्डुधिकारः ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल, पारा, कणागुल और गन्धक ४०-४० रती, अन्याहुली, भाग और तज २०-२० रती, दूधसे शोषाहुआजमालगोटा ८० रती लेकर सबका बारीकचूर्ण कर मैनसिल, पारा और गन्धककी नीलकण्ठकजलीमें मिलाय त्रिफला, दन्तीमूल और विडङ्ग इनके स्वस्त अथवा काठेमें एकदिन घोटकर ३६ गोलिया बनावे इनमेंसे १-१ गोली सुबह उठे पानी के साथ सेवनकर । इससे दस्तदोष, ज्वरक टंडापान, पीतारहेगा तबतक दस्तदोषोंके और गरमपानीकीनेसे बन्द होवे । इसके सेवनसे पाण्डु, ज्वर, बवालीर और शोष प्रकृति बरोग नष्ट होते हैं ॥ १५६ ॥

१५७ राजलीलारसः

अयाऽपरं शुद्धसूतस्य चत्वारिंशदश रत्तिकाः ।
कणाख्यगुग्गुलीस्तद्वत्तथा सौगन्धिकस्य च ॥ ७३५ ॥
रत्तिनाविंशतिप्रांशा जलकामाजयात्पचाम् ।
अशीति दन्तिमीजस्य पयसा शोधितस्य च ॥ ७३६ ॥
चूर्णयित्वा ततः सर्वं फलकायेन मर्दयेत् ।
निबुम्भस्य कपायेण कृमिप्रचरसेन च ॥ ७३७ ॥
कारयेद्राजलीलाख्याः पद्विंशद्गुटिकास्ततः ।
पैरैकां शीलयेत्प्रातः शीतेनाऽऽलोच्य धारिणा ॥ ७३८ ॥
याताद्विमुच्यते प्राणी यावदुष्णं न शीलयेत् ।
पाण्डुज्वरार्थं शोफादीन्निवृच्छति गदान्हाटात् ॥ ७३९ ॥

तोलकांश्चतुरः सूताञ्जुद्धाद्गन्धकतस्तथा ।
 कणागुग्गुलुतस्तद्गन्धकीरिण्याश्चतुरस्त्वथ ॥ ७३६ ॥
 कडुप्रतश्च चतुरस्तित्तिरीफलतस्तथा ।
 देवदालीरसैः पूर्वं दन्तीकायेन तत्तथा ॥ ७३७ ॥
 त्रिदिनं त्रिदिनं मर्चत्रिधुताकाथतस्ततः ।
 भावनाश्च ततो देयाः पञ्चविंशतिसहस्रया ॥ ७३८ ॥
 एतैरेवौषधैः सूते वटीः पञ्चात्प्रबन्धयेत् ।
 मरिचस्य प्रमाणेन छायायां शोपयेद्बुधः ॥ ७३९ ॥
 एवं संसाध्य वटिका रोगिणे सम्प्रयोजयेत् ।
 आपादपूर्वपक्षे च पाचनं सम्प्रदापयेत् ॥ ७४० ॥
 सेन्धवं मणिमन्थाख्यं घृतेन सह पाययेत् ।
 दिनत्रयं प्रयत्नेन केतकीस्तनवारि च ॥ ७४१ ॥
 मुद्गाकाथो भयेत्पथ्ये विलेपी शालिजाऽथवा ।
 त्रिकटुत्रिफलाकाथमेकतः पाययेत्त्रिपक्व ॥ ७४२ ॥
 त्रिदिनं पूर्ववत्पथ्यं प्रयुञ्जीत विचक्षणः ।
 एवं संस्वेदितं पञ्चाद्रेचयेत् रसेश्वरम् ॥ ७४३ ॥
 शीतोदकेन वटिकामेकां वचाच रोगिणे ।
 पलद्वयञ्च पानीयं नाऽऽधिन्यं न च हीनता ॥ ७४४ ॥
 पाययित्वा रसयुतं ताम्बूलं सम्प्रदापयेत् ।
 यावद्विरिच्यते जन्तुस्तावद्द्वारांश्च चारिषः ॥ ७४५ ॥
 रेचनानि च तापानि न हीनान्यधिकानि वा ।
 मलाश्च प्रथमं यान्ति तत आमानि यान्त्यथः ॥ ७४६ ॥
 यावच्छीतोपचारः स्यात्तावदेवो भयेद्बुधम् ।
 आतपस्य च सेवायां विरेको विनिवर्तते ॥ ७४७ ॥
 कराङ्गी तापयेद्द्रां स्तम्भनं तक्षणाद्भवेत् ।
 शाख्यन्नं गोघृतं पथ्यं क्षैर्यमथवा भवेत् ॥ ७४८ ॥
 दुग्धोदनं वा भुञ्जीत तवराजेन संयुतम् ।
 एकवारं दिने देयं पथ्यं रात्रौ न हीयते ॥ ७४९ ॥
 निशीथिन्यां प्रयुञ्जीत मधुना पिप्पली दृश ।
 पथ्यञ्च कार्तिकं यावत्क्रिया कार्या विचक्षणैः ॥ ७५० ॥
 पाचनं शुक्लपक्षे स्यात्कृष्णपक्षे विरेचनम् ।
 एवं क्रियायां सिद्धायामुदरं विनिवर्तते ॥ ७५१ ॥
 गुल्मह्रीहामवाताश्च पक्विशूलं भगन्दरम् ।
 अशीसि ग्रहणीद्रोपानदमरी मूत्रकृच्छ्रकृम् ॥ ७५२ ॥
 निवर्तयेन्न सन्देशः पाक्षिकाप्रयोगतः ।
 राजलीलाभिधो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ ७५३ ॥
 जलोद्गरादिशास्त्रयर्थं सम्प्रदायात्प्रकाशितः ।
 दृष्टप्रभावः सुष्टोऽन लोकोपकृतिहेतवे ॥ ७५४ ॥
 देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादिनः कामियों
 रसालकोरैः उदराधिकारैः ।
 भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कणागुल, जड, रेवन्चीनी, शुद्धजमालगोटा सब ४-४ ते
 शक्ये यथासम्भवस्वरतः ७१२ ॥
 श्लोकैः ७१२ ॥

दकर मरिचप्रमाणगोलिये बनाकर रखओहै । इसस्वरूपप्रयोग-
 करना हो तो आपादकृष्णपक्षमें ३ दिनतक घीमें मिलाकर १-१
 तोला सीसानमक देवे ऊपर से केतरीकीजइका पानी ४-४ तोले
 पिलावे । भूखलानेपर मूंगकायूप अथवा चावलकी काडी देवे
 फिर तीनदिनतक त्रिकटु और त्रिफलाकावाय पिलावे, पथ्य
 पूर्ववत् देवे । इमतरह पाचनदेकर स्वेदनरराके रेचनदेवे । उरके
 लिये पूर्वोक्त १ गोली देकर २ पल ट्टापानी पिलावे फिर १
 गोलीपानमें रखकर देवे । इमवेलेनेसे पहिले मल फिर आम
 निकलनाहै । जनक शीतोपचार करतारहेगा तबतक दस्तहोते-
 रहेंगे, घूममें बैठने तथा गरमपानी पीनेसे विरेचन बन्द हो
 जायगा । यदि इससे बन्द न हो तो हायपर अग्निसे सेरुने
 चाहिये । भूखलानेपर गायकाषी, चावल अथवा रीर अथवा
 दूधचावल अथवा तीसुरकीखीर बनाकर देवे । दिनमें एकवार
 पथ्यदेनाचाहिये रात्रिमें नहीं । रात्रिमें १० पीपलनाचूर्ण मधु-
 केसायदेवे । इमतरह जनक कार्तिक न आवे तबतक क्रिया
 करे । शुक्लपक्षमें पाचन और कृष्णपक्षमें विरेचन देवे । इमतरह
 करनेसे उदररोग, गुल्म, प्लीहा, आमवात, पक्विशूल, भगन्दर,
 ववासीर, प्रहणी, अशमरी, मूत्रकृच्छ्र इनसबको यह ८ पक्षमें
 निवृत्तकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ राजवटी (महदाद्या)

रसगन्धकमग्नश्च प्रत्येकं कर्पसम्मिमतम् ।
 वृद्धदारकवङ्गञ्च लौहं कर्पासकं शिपेत् ॥ ७५५ ॥
 स्वर्णं ताम्रञ्च कर्पूरं प्रत्येकं कर्पपादिकम् ।
 शक्राशानं वरी चैव श्वेतसर्जलवङ्गकम् ॥ ७५६ ॥
 कोकिलाक्षं विदारि च मुशली शुक्रशिम्विकम् ।
 जातीफलं तथा कोपं बला नागबला तथा ॥ ७५७ ॥
 मापद्भयेन संयुक्तस्तालमूल्या रमेन च ।
 पिद्धा च वटिका कार्या चतुर्गुणा प्रमाणतः ॥ ७५८ ॥
 मधुना भक्षयेत्प्रातः त्रिपुसुज्वरशान्तये ।
 घातुस्थांश्चामिधुगुद्गुचिकान्तिः ॥ ७५९ ॥
 वातिकं त्रै. सु., र. चं, राजयश्मणि ।
 ज्वरं त्रै. सु., र. चं, एतयो र्बेदशङ्काम्ना पाठोऽस्ति तस्मिन्
 यत्तस्मिन् भावनाश्चाप्यनेन रसेन समाना मन्ति, केचन तस्मिन्
 त्रैकोस्थाने सुवर्णमसि इतिविशेषो दृश्यते । परन्त्वस्मिन् रसे सुवर्णम
 चिकनया निरुज्य द्रव्यो पाठ्योरिकाठ सम्प्रत्यते गुणवृद्धिरपि महती
 सम्प्रत्यते, अतस्तस्याऽप्यत्रैवाऽन्तर्भावं करणीयम् ।
 भाषा—शुद्धवचनाग, पारा और गन्धक, मोती और
 सुवर्णमस्य समभागलेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर चिपकमूल
 और अदरककेरतसे १-१ रोज मर्दनकर औषधके बराबरके ताम्र-
 सन्धुमें रखकर सन्धिबन्दकर वावीकीमिठी और नमकसे कर
 मिठीकर सुखाकर कपड्डनकीहुई छपेदाल ४-४ अहुल ऊपर
 नीचे देकर इंडीमेरख चूल्हेपर एकपहर मन्दाभिसे पकावे ।
 स्वाद्दशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटु और अदरककेरतको १-१
 दिन भावनादेकर पीपल और मधु अथवा अदरक और पीपल

तेन घोटकर ४-४ रतीनी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गली मधुक्साय खातेसे विषम, धातुस्थ, वातिक, पैसिक, सात्प्रातिक इत्यादि समस्तज्वर, कास, श्वास, क्षय, कृशता, बलहानि, शुक्रमास, ऊर्द्वगण्धेमरोग, दास्यसन्निपात, कामला, पाण्डु, प्रमेह, रक्तपित्त इनसबको यह नष्टकरतीहै १५८

१५९ राजवल्लभरसः (प्रथम)

रसगन्धी पृथङ्निष्फो निष्कमात्र. प्रदीपन. ।
साह्यं पलं प्रदातव्यं ब्रूलिकालवर्षं भिषक् ॥ ७६३ ॥
खल्वे सम्मर्दयेत्तच्च शुष्कवस्त्रेण गालयेत् ।
मापमात्रं प्रदातव्यो भुक्तमांसादिजारकः ॥
अजीर्णेषु त्रिदोषेषु देयोऽयं राजवल्लभ ॥ ७६४ ॥
र म, रसायनस, र च, यो म, र सु र चि, नि र, भै सा, ना चि, र का, र स, अजीर्णः । र स प्रदीपन-रसेति नाम ।

टि०—त्रेण साक दत्तशेदशविदनाशामक ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बडनाग ४-४ मास, शुद्धनवसादर ६ कर्ष लेकर पारा-गन्धक और बडनागकी नीलवर्ण कब्जलीकर नवसादरको मिलाकर कर्षसे छानकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ मासा तत्प्रपृथति समयो वितावुपानकेमाथ लेनेसे यह मासादि गरिष्ठपदार्थको तत्क्षण जीर्णकरताहै । अजीर्ण और त्रिदोषान्धव्याधियोंमें यह अत्यन्त उपकारकहै ॥ १५९ ॥

१६० राजवल्लभरसः (तालकेश्वर) (द्वितीय)

पारदं मौक्तिकं वर्द्धं गगनं हेमनागकम् ।
यलिवज्जञ्च शुल्वञ्च चैकान्तं तालकं शिला ॥ ७६५ ॥
अमृतं म्नेच्छलोलोहानि प्रवालं चन्द्रभूतिका ।
समभागेन तत्खल्वे शुष्कं मर्द्यं दिनद्वयम् ॥ ७६६ ॥
कूपमाण्डककलकतीयैना भाष्येद्विसनयम् ।
मार्कवस्त्ररसे भूँ राजराजेश्वररसः (१६७) ॥

भूक्षन्तैर्ष्ये मर्दयेत्सूतं गन्धकं मृतताप्रकम् ।
सुहस्तमर्दितं तालं यावत्तत्र विलीयते ॥ ७२. ॥
भृङ्गराजद्रवं दत्त्वा दिनमात्रं विमर्दयेत् ।
त्रिफला ग्वादिंरसारममृता बाकुचीफलम् ॥ ७२५ ॥
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याद्गुणीकृत्य विमिश्रयेत् ।
मध्याज्याभ्यां लौहपात्रे कर्षं भक्षयेत्सदा ॥ ७२५ ॥
दुद्रुकिटिभकुप्राणि मण्डलानि विनाशयेत् ।
द्विगुञ्जेन निहन्त्याशु राजराजेश्वर रस ॥ ७२६ ॥
र स, र सु र चि, यो म, र क, कुष्ठरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ताम्रमस, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहृत्ताल सब समभागलेकर धूपमें बैठकर नीलवर्ण कब्जलीकर भगरेकरसे एकरोमर्दनकर त्रिफला, खैरसार, गिलोय, बाकुची ये प्रत्येक पारिकेबराबरलेकर बारीकचूर्णकर सबको इकट्ठे मर्दनकर रखओड़े । इसमेंसे १ रतीकीमाणा १-१

वल्लभमात्र. प्रदातव्या द्रोषाणामनुपात ।
सर्षपा वातुर्चा कुष्ठमजाजी च हरीतनी ॥ ७७५ ॥
वराटी मरिचं शुभ्रं रजनोद्वियवातुकम् ।
पतत्खल्वे चिनि.क्षिप्य वस्त्रसूत्रेण योजयेत् ॥ ७७६ ॥
दिनत्रयं ततो ज्ञात्वा चूर्णं दृष्ट्वा पुनस्ततः ।
प्रहण्यामतिसारे च वराटी जरणं जया ॥ ७७७ ॥
राजवल्लभविल्यात पूज्यो गोप्यतमः सदा ।
पथ्य रोगानुसारं स्यात्सर्षपकुष्ठतुलान्तः ॥ ७७८ ॥
र श, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और मोती, वड, अन्नक, सुवर्ण और नागमस, शुद्धगन्धक, हीरा, तावा, वैनाप्त और हृत्तालमसम शुद्धमैसिल, बडनाग और शिंगरिफ, लोह, प्रवाल और चादी कीमसम समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकब्जलीमें मिला कर सूटादोरोन मर्दनकर सफेदकौहट्टा, भगटा, अइस, मिला केका तैल, अदरक, खैर, नीम, कचूर, पद्मकाठ, गिलोय, अन वादन, बाकुची, त्रिपात मरवा, सहदेवी, पुनर्वा, त्रिफला, गोखरु, इनप्रत्येककेद्वीसे १२-१२ कर्षमर्दनकर गोलाबनाय शरावसमुत्तमं बन्दकर हाथभरके खट्टेमें कण्डोंकीआंचदे । स्वाहा शीतलहोनेपर निकालकर दूसरे प्रवमें धोणकर आंचदे । इसतरह सबमें पुटदेनेकेबाद दो कर्ष शुद्धबडनागकावारीकचूर्ण मिलाय जमीरीनीबूकरसे दोरोन मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गली तत्त्रोणहृत्प्राणानके साथ देनेसे मण्डल, भिन, दद, कण्ड, औदुम्बर, पयाम देसव कुष्ठ, रात्रिमें पित्तप्रकोप, सबप्रकारकीप्रदहणी, रक्तपित्त, कण्ड और छातीकाअवरोध, पाण्डु गुल्म, जलोदर, रक्तदोष, समस्तशूल, येश्वरोग नष्टोतेहै । कुष्ठोंमें सफेदसरसों, वावची, कुठ, जीरा, हर्द, पीलीकौड़ीकीमसम, सफेदमिचं, हल्दी, दाहहल्दी, गेंडुला, येसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर जवान बनेरेसेसूत्रमें ३ दिन तकमर्दनकर सुखाकर रखओड़े । इसमेंसे कुष्ठप्रधानव्याधियोंमें अनुपातरूपसेदेवे । पीलीकौड़ी, चीरा और भाग इनविषय प्रदहणी और अतिसारमें देवे । इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ १६० ॥

१६१ राजवल्लभरसः (तृतीयः)

लोहभस्मविडङ्गानि त्रिफला च शिलाजतु ।
पर्णं पिप्पलीमूलं चय्यं रुष्णतिला. समम् ॥ ७७९ ॥
इत्यं त्रिगुणो वह्नि लोहाद्भ्रूल्लतकी तथा ।
एकं पंतञ्च लोहादां सर्वस्य द्विगुणो शुड. ॥ ७८० ॥
सुबहमेने निहन्त्याशु ह्यशामन्द्राप्रिपाण्डुताम् ।
दृष्टापर्णान्दरं कास श्वयथुञ्च विनाशयेत् ॥ ७८१ ॥
बन्द होजायर्णं तु ।
शोय प्रथति भस्म, विडङ्ग त्रिफला, शिलाजीत, त्रिकुट, शालिल और चातुर्गत समभागलेकर लोह अथाऽपरं प्रवहं मिलावे मिलाकर बारीकचूर्णकर सबसे शुद्धशास्त्रीकमाने, ३ तोलेकी गोलिया बनाकर रखओड़े ।

१७३ रामवाणरसः (पञ्चमः)

द्विनिष्कं रसकञ्चैव मयूरं चैरुनिष्करम् ।
निष्कारं मृषिकारिश्च कारय्यह्यारसेर्दिनम् ॥ ८२९ ॥
मर्दयेद्दुट्टि कीकृत्य भक्षयेद्दुडङ्संयुतम् ।
मुद्गमात्रप्रमाणेन ह्यपकमतियोरकम् ॥ ८३० ॥
चातुर्थिकज्वरं हन्ति रामवाणश्च नामतः ।
क्षीरान्नमेव पथ्यं स्यादन्यथा विकृति भवेत् ॥
मत्स्येन्द्रभाषितं गुप्तं पुत्रायाऽपि न कथ्यते ॥ ८३१ ॥
रसायनस, र का ज्वराऽधिकारे ।

टि०—द्विनिष्कृत्य सोममल द्वारा मर्दयेत्स्वहृत् । कृष्णपुत्रतोयेन मर्दनाच्च ज्वराङ्कुरः ॥ साध्याऽसाध्यात्रिद्वन्त्यासु ज्वराश्च विषमौल्लु ॥
इति रसभाषितेन ज्वराङ्कुरान्मा पाठोऽस्ति तत्र खर्परस्थाने पारदी हृद्यते तत्र रसनेऽत्रैव प्रयोगे दत्त्वा पत्रकारवह्नीत्या भावना प्रदाय पक्व पत्र रती निष्पादनीय ।

भाषा—शुद्ध खपरिया ८ मासे, तृतिया ४ मासे, सोमल २ मासे लेकर बारीकचूर्णकर एकदिनकरेलेकरससे मर्दनकर मूंग बराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुडकेसाथ देनेसे यह अपक घोरचातुर्थिकज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य खीर खिलाना अन्यथा उपद्रव करेगा ॥ १७३ ॥

१७४ रामवाणरसः (षष्ठः)

श्वेतं क्षारं च पीतं च पारदं मृतसिंहकम् ।
मनःशिला बलिश्चैपामेकभागं पृथक्पृथक् ॥ ८३२ ॥
त्रिभागं श्वेतखदिरं सर्वं सञ्चूर्ण्य मर्दयेत् ।
नागवह्नीदलरसैश्चतुर्थांशं भिषग्वरः ॥ ८३३ ॥
मुद्गमात्रा घटी कार्या एकांतां भक्षयेन्नरः ।
पथ्यं मुद्गाढकीचूर्णं लवणेन चिना वृत्तम् ॥ ८३४ ॥
चतुर्दशदिनान्येषमुपदेशी चरेन्नरः ।
सोपदेशं सर्ववातं साध्याऽसाध्यञ्च नाशयेत् ॥
रामवाणरसो नाम्ना कथितो रससागरं ॥ ८३५ ॥
र मु, वातव्याधधिकारे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल, पारद और वज्रभस्म, शुद्धमनसिल और गन्धक १-१ भाग, सफेदकट्या ३ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पाननेरससे ४ पहरमर्दनकर मूंगबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयो चिन्तातुपानकेसाथ देनेसे १४ दिनकेभीतर उपद्रवसहित साध्य अथवा असाध्य वातरोग नष्टहोताहै । इसमें मूंग और अरहर-कोदाल, गेंढका आटा और घी खानेको देना । नमक मूलकर भी नहीं देना ॥ १७४ ॥

१७५ रामवाणरसः (सप्तमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं तत्समं चन्द्रपुष्पकम् ।
जातीफलं त्रिकटुकं यवक्षारञ्च तत्समम् ॥ ८३६ ॥
विषं सूतसमं दद्यात्सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
नागवह्नीदलयुतं रामवाणो महारसः ॥ ८३७ ॥

रक्तिकैरुप्रमाणेन सन्निपातेऽतिदारुणे ।
विषमेषु च सर्वेषु प्रयोक्तव्यो महारसः ॥ ८३८ ॥
र प्र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक १-१ भाग, रसकपूर, जायफल, त्रिकटुक, यवक्षार २-२ भाग, शुद्धवह्नाग, एक भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर एकरोज पानके रससे घोटकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिन्तातुपानकेसाथ देनेसे दाहणसन्निपात, विषमज्वर इनको यह नष्टकरताहै ॥ १७५ ॥

१७६ रामवाणरसः (अष्टमः)

सूतं टङ्गुणमन्नकञ्च द्रुदं तीक्ष्णं रवि कान्तजं,
स्वर्णं मांशिकधिद्रुमं बलिबसां तारं त्रुपं माक्षिकम् ।
भूमिश्चन्द्रकलाग्धिनेत्रमनवः पक्षाधुतुः कालपो,
गुग्मं नेत्रमिषुप्रमाणं ऋतवस्त्वेतानि भागैः क्रमात् ८३९
कस्तूरी घनसारजातिफलज्जात्यम्पत्रद्विष्टं तथा,
सर्वं पर्वतनाच्च माननिचयाद्योज्यञ्च वैदमितम् ॥
श्रीखण्डनिफलाखट्वकजलजैः पुद्भागजम्बीरवा-
हंघिरोत्पलमल्लिकाकुमुदजैर्द्रविर्मिशं भावयेत् ॥ ८४० ॥
भाषा—मधुशर्कराकपयसा कालद्वयं सेवये-
द्वल्मह्नीहभगन्दरज्वरसुरसान्द्रोपाज्येत्सत्त्वरम् ।
मैहान्मूत्रमन्धा रजश्च शमयेत्कज्जुंश्च दोषाज्ये-
देतश्चैवमनेकरोगहरणं विश्वेश्वरं निर्मितम् ॥ ८४१ ॥

वै चि (ल), रसायने ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, मुनासुहागा १ भा, अन्नक १६ भा, शिंगरिक ४ भा, फोखद २ भा, ताम्र १४ भा, कान्त लोह २ भा, सुवर्ण ६ भा, मोती १२ भा, मृगा २ भा, इनसबकीभस्में, शुद्धगन्धक २ भा, चादीभस्म ५ भा, वज्रभस्म ६ भा, सोनामाखी ६ भा, कस्तूरी, शुद्धकपूर, जायफल, जायत्री, पत्रज और लवङ्ग ४-४ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर सफेदचन्दन, त्रिफला, एरण्डमूल, कमल, पुत्राग, जमीरी, सुगन्धवाला, हीवेर, सफेद कमल और मोहर तथा कुमुदकेमूल इनप्रत्येकके इत्रोंसे यथाशक्ति भावनाए लेकर ४-४ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम मधु और शकर मिलेहुए दूधकेसाथ अथवा यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भगन्दर, ज्वर, प्रमेह, मूत्ररोग, मूत्रकृच्छ्र, इनसबवर्गोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७६ ॥

१७७ रामवाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी) ९

जाती लवङ्गं तालञ्च द्विनिष्कन्तु पृथक्पृथक् ।
निष्कं मृषिकपापाणं धत्तरेण विमर्दयेत् ॥ ८४२ ॥
गुज्जामात्रा घटी. कुयांछौपायायां शोषयेत्ततः ।
शर्करामरिचं योज्यं शीतं चातुर्थिकं जयेत् ॥ ८४३ ॥
मुद्गसारिण पयसा योजयेद्वा समाहितः ।
रामवाणरसो नाम शीतमातङ्गकेशरी ॥ ८४४ ॥

भाषा—जायफल, लवङ्ग और रसमाणिस्य ८-८ माशे, शुद्धसोमल ४ माशे लेकर वारीकचूर्णकर धनुर्वेरसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामिसुयाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शर, मरिच अथवा सुंगकेयूपकेसाथ देनेसे यह चातुर्थिज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

१७८ रामवाणरसः (दशमः)

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।
धुतूरपत्रस्वरसे पेपितं गुट्टिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥
क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्त्रिडिकाकृति ।
रामवाण इति ख्यातो भिषगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥
र. क. यो., ज्वरे ।

भाषा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतृतीया, सोमल समभागलेकर वारीकचूर्णकर धनुर्वेरसे एकरोज मर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली शक्करयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और वारीसे आनेनाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य कराताहै ॥ १७८ ॥

१७९ रामवाणरसः (एकादशः)

रसं तुल्यं शिलां तालं खपरं मरिचं समम् ।
मर्दयेज्जम्भनोरिण रसोऽयं रामवाणकः ॥ ८४७ ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध धारा, तुल्य, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकरसे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली जंभीरीवेरसे अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० रामवाणरसः (शीतकुलान्तकः) १२

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।
खपरं श्वेतपापाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य जम्बोरिण विमर्दयेत् ।
यत्कान् मापमात्राञ्च शर्कराजीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥
अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम् ।
रामवाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नीलाञ्जन, तुल्य, सोमल, खपरिया, गोदन्तीहरिताल, मैनसिल और हरिताल इनरीभस्म, (नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके डालना) सब समभागलेकर जंभीरीके रगसे १-२ रोज मर्दनकर उद्दबराबर गोलियें बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली शर और जीरेकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

१८१ रामवाणरसः (शीतमातङ्गकेशरी) १३

गौरीपापाणकं शुद्धं क्षीरतुल्यं तथैव च ।
सुधा मयंसमा योज्या जम्बोरिण निमृच च ॥ ८५१ ॥

चणप्रमाणवटकांश्चायायां शोषयेद्बुधः ।

रामवाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेशरी ॥ ८५२ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल और तृतीया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचूना मिलाकर जंभीरीके रसे १ रोज मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुयाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

१८२ रामवाणरसः (अमोघादिः) १४

शुद्धं द्वयं दृङ्गणतालसन्धकम्
नीलाञ्जनं सूतविषे बलेयैसाम् ।
द्वयञ्च पापाणरसाञ्जनं शिला
पृथक् समं जम्भरसेस्त्रिमर्दितम् ॥ ८५३ ॥

निर्गुण्डिकापत्ररसेस्त्रिमर्दितं

पुटं ततः कुन्कुटकप्रमाणकम् ।

अमोघकं विशुत्तरामवाणकम्

बहुद्वयं शीद्रसितादिमेधितम् ॥ ८५४ ॥

पेकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च

शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च ।

पथ्यञ्च शाल्योद्गनमुद्गसूपं

धन्वा च त्रेण रसेञ्च जाङ्गलेः ॥ ८५५ ॥

शुक्त्या चेशुरसादिकञ्च कदली खञ्जुरिकादाडिमं,
कापित्थं तनुलेपनं मलयजेः प्रौढाङ्गनाऽऽद्विङ्गनम् ॥
र. क. यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धधारा, घन्नाग, गन्धक, सफेद और धोलासोमल, रसौत, मैनसिल पेशत समभाग लेकर वारीकपीस परिलम्बककी नीलवर्णकदलीमें मिलाकर जंभीरी और निर्गुण्डीनेपत्रस्वरसे ३-३ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपडमिठी देकर सुताकर कुन्कुटपुटकी भाषदेवे। स्वाभावशीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा शर और मधु बगुह केसाथ देनेसे पेकाहिक, द्वाहाहिक, त्र्याहिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनयमको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेचाबू और सुंगकीदाल अथवा दही छाछ अथवा जंगलीपट्टुरक्षिमोका मासस, ईखकारस, केला, सजूर, अनार, वैद्य देसब देवे। चन्दनका लेकर प्रौढत्रियोका आतिष्ण करावे ॥ १८२ ॥

१८३ रामवाणरसः (पञ्चदशः)

रसगन्धकताप्राणि दृङ्गुणं त्रिफला विषम ।
पतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥
कारवह्नीरसेनेय मर्दयेद्याममानकम् ।
कुञ्जाप्रमाणपटिकां भक्षयेद्द्राक्षाकामुना ॥
रामवाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिवृत्तनः ॥ ८५८ ॥
र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बडनाग, ताप्रमस्र और त्रिकला समभाग, जमालगोटा सबकी बराबर लेकर बारीक चूर्णकर परिगन्धकहीनीलवर्णकजलीमें मिलाकर करेलेकेरसासे १-२ दिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विपमन्वरोको नष्टकरताहै ॥१८३॥

१८४ रामवाणरसः (पोडडाः)

हिङ्गुलं रसकं रसेन्द्रशिखितुल्याऽऽलं शिला गन्धकं, ताप्यं गौरशिला विशुद्धिसहितं सयं समं भागतः । कृष्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं मापप्रमाणा वटी भुन्त्वा शीतलमर्पितं ज्वरघर्णं निवासयेत्तत्क्षणात् ८५९, र र कौ, र. पा, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, खपरिया, पारा, तुल्य, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, सोनाभार्यी और सोमल सबसमभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर कालेधतूरेकेरसासे १-२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८४॥

१८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम् । यीजं नैकुम्भकं मयं दन्ताकाथेन थामरुम् ॥ द्विगुञ्जः शूलविष्टम्भाऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥८६०॥
भै र, र सु, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालगोटा सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धकही नीलवर्णकजलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेकापसे एकपहर घोटकर १-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे शूल, विष्टम्भ, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

१८६ रात्नादिलोहम्

रात्नाऽभ्यगन्धार्कुरभेकपर्णाशिलाद्वयम् । त्रिकत्रयसमायुक्तं लोहं यश्मान्तद्वन्मतम् ॥ ८६१ ॥ सर्वोपद्रवसंयुक्तमपि वैद्यविजितम् । हन्ति कासं स्वराऽऽघातं राजयश्मक्षतक्षयम् ॥ यलवर्णाऽग्निपुट्रीनां वर्धनं द्रोपनाशनम् ॥ ८६२ ॥

र स, र सु, घ., र. च, र. क, र. र, यो र, ना वि, नि र, लो प, भै र, रू थो. त राजयश्मणि ।

टि०—र सु द्वितीयस्थाने दशाङ्गुलोहमिति नामस्थानिन् । यो र, रू थो स, ना वि, ष्णेपु चतुर्दशाङ्गुलोहमिति नाम । लो प चतुर्दशाङ्गुल इतिनाम । भै र यश्मान्तद्वयोहमिति नाम अथ त्रिक्रयसमायुक्तं लोहं, त्रिकला, त्रिमश्रा मश्रा, योगरत्नाकरतीर्थपटे अथगन्धस्थाने तालमू निवोनिमित्ति विशेष, नाम च चतुर्दशाङ्गुलोहमिति ।

भाषा—रात्ना, अथगन्ध, कपूर, माझी, मैनसिल, त्रिकट्ट, त्रिकला, त्रिमद (विडङ्ग, नागरमोषा, चित्रक) सब समभाग,

इनमन्वकीबराबर लोहमस्र डालकर रात्नादिद्रव्योंके काथोंसे १-१ दिनमर्दनकर १-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णबनाकर रखलेतेहैं लेकिन रात्नादिकी भावना दियेहुएके बराबर कामनहींकरताहै । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैद्योंसे ख्यातेहुए सर्वोपद्रव्युक राजयश्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरभङ्ग, उर-क्षत, धातुक्षय, बलवर्णनाश, मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर पुष्टि कोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

१८७ राक्षसरसः

समांशं योजयेत्शुद्धं पारदं गन्धकं तथा । नागार्जुनीरसे मयं सुरसावाकुचीभवेः ॥ ८६३ ॥ मयूरपर्णीकौमारीमधुयष्टिसमुत्थितैः । वाराहकर्णास्वरसे वैहुफलयास्तथैव च ॥ ८६४ ॥ पतासां रसमादाय भाधनायां पृथक्पृथक् । कुकुटाण्डं तत्र मृष्ट्वा छिद्रयुक्तं समाचरेत् ॥ ८६५ ॥ तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भृत्या महारसम् । यस्मृत्तिकायाऽऽलिप्य कौक्कुटञ्च पुटं चरेत् ॥८६६॥ पकं नीतं पुनर्मयं पुनः पकं पुनस्तथा । पर्यं विचारसेस्कोरे रसरक्षोऽस्तुतोपमम् ॥ क्षुधाकरं वीर्यकरं बलवर्णाऽग्निवर्धनम् ॥ ८६७ ॥

र सु, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकही नीलवर्णकजलीकर छोटी दूयी, तुलसी, बाकुची, मोरशिका, घीउजर, मुल्हठी, अथ-गन्ध, बहुफली इनके रसासे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय मुर्गीका अण्डा (जिसमें बच्चा न पड़ा हो) लेकर बुचिसे छिद्रकर भीतरकाद्वल निकालकर उसमें गोलेनोरपर दूसरे अण्डेकी दोलसे ढक्कर गुड़चूनेसे बन्दकर ६-७ बपङ्गमिटीदेकर मुखाकर कुन्कुटपुट्रीकी आवेदे । स्वात्तदातलहोनेपर निकालकर फिर उसीतरहकरे । ऐसे ३ बार करनेसे यह अत्यन्त सश होजाताहै । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह क्षुमा वीर्य, बल, वर्ण और अग्निको बढाताहै ॥ १८७ ॥

१८८ रुद्रपर्पटी

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं सम्मर्ष्यां द्रवेः पुनः । धातारिराद्रिकं भृङ्गी काकमाच्यार्द्रिकर्णिका ॥ ८६८ ॥ द्विनैकं मर्दयेत्पलवे पाचयेत्पर्पटीं तथा । श्योः मर्दं मृतं तात्रं शित्वा मूढग्निना पचेत् ॥८६९॥ रक्तवर्णं भनेद्यायसावत्याच्यं प्रचालयेत् । यक्षिपेतदलीपत्रे स्थाप्यं त्रिगुण्युटं पुनः ॥ ८७० ॥ आच्छाद्य तेन योगेन हाथश्रोद्धञ्च गोमयम् । इन्धं विचूर्णयेत्पश्चाच्चूर्णपादं विपं क्षिपेत् ॥ ८७१ ॥ रुद्रपर्पटिका होयरा देवा गुञ्जाद्वयं द्वयम् । घृणितं कटुनिर्गुण्डया मूलं निष्कल्पं पिबेत् ॥ ८७२ ॥

भापा—जायफल, लवण और रसमाणिक्य ८-८ भागो, शुद्धगोमूल ४ भागो लेकर बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर छायामेंसुखाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शकर, मरिच अथवा मूंगकेयूपकेसाथ देनेसे यह चातुर्थिकज्वरको दूरकरताहै और शीतको तत्काल नष्टकरताहै ॥ १७७ ॥

१७८ रामवाणरसः (दशमः)

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।

धुनूरपत्रस्वरसे पेपितं गुट्टिकीकृतम् ॥ ८४५ ॥

क्षीरशर्करया युक्तं भक्ष्यं तिन्त्रिद्विकारुति ।

रामवाण इति ख्यातो भिपगाश्चर्यकारकः ॥ ८४६ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भापा—सुरमाकीभस्म, शुद्धतृतीया, सोमल समभागलेकर बारीकचूर्णकर धतूरेकेरससे एकरोज मर्दनकर मरिचबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शकरयुक्त दूधकेसाथ देनेसे यह शीत, विषमज्वर और बारीसे आनेनाले ज्वरोंको निकालकर वैद्यको आश्चर्य करताहै ॥ १७८ ॥

१७९ रामवाणरसः (एकादशः)

रसं तुल्यं शिलां तालं रत्नं मरिचं समम् ।

मर्दयेज्जम्भनीरेण रस्तोऽयं रामवाणकः ॥ ८४७ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भापा—शुद्ध पात, तुल्य, मैनसिल, हरिताल, खपरिया और मरिच समभागलेकर बारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जंभीरीकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे तमामाविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० रामवाणरसः (शीतकुलान्तकः) १२

नीलाञ्जनञ्च तुल्यञ्च गौरीपापाणमेव च ।

रत्नं रत्नं श्वेतपापाणं शिलाचूर्णञ्च तालकम् ॥ ८४८ ॥

खल्वमध्ये धिनिक्षिप्य जम्भरीरेण विमर्दयेत् ।

वट्टकान् मापमानांश्च शर्कराज्जीरसंयुतान् ॥ ८४९ ॥

अनुपानविशेषेण शीतज्वरनिवारणम् ।

रामवाण इति ख्यातः सर्वशीतकुलान्तकः ॥ ८५० ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भापा—नीलाञ्जन, तुल्य, सोमल, खपरिया, गोदन्तीहरिताल, मैनसिल और हरिताल इनकीभस्में, (नीलाञ्जनको छोड़कर जिसकी भस्म न हो उसे शुद्धकरके बालना) सब समभागलेकर जंभीरीकेरससे १-२ रोज मर्दनकर उद्भवराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शकर और जीरेकेसाथ अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ १८० ॥

१८१ रामवाणरसः (शीतमातङ्गकेगरी) १३

गौरीपापाणकं शुद्धं क्षीरतुल्यं तथैव च ।

मुञ्च सवेसमा योज्या जम्भरीरेण त्रिमृष्ट च ॥ ८५१ ॥

चणप्रमाणवट्टकांश्छायायां शीपयेद्बुधः ।

रामवाण इति ख्यातः शीतमातङ्गकेसरी ॥ ८५२ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भापा—शुद्धसोमल और तृतीया समभागलेकर दोनोंके बराबर पत्थरकाचना मिलाकर जंभीरीकेरससे १ रोज मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरका नाशकरताहै ॥ १८१ ॥

१८२ रामवाणरसः (अमोघादि.) १४

शुद्धं द्वयं टङ्कणतालसञ्चकम्

नीलाञ्जनं सूतविषे बलेर्बसाम् ।

द्वयञ्च परापररसाञ्जनं शिला

पृथक् समं जम्भरसैस्त्रिमर्दितम् ॥ ८५३ ॥

निर्गुण्डिकापररसैस्त्रिमर्दितं

पुटं ततः कुन्कुटकप्रमाणकम् ।

अमोघकं चिथ्युतरामवाणकम्

बलद्वयं शोण्डसितादिसंचितम् ॥ ८५४ ॥

पेकाहिकं द्वित्रिचतुर्थकञ्च

शीतज्वरं तद्विषमज्वरञ्च ।

पथ्यञ्च शाल्योदनमुद्गसूयं

दध्ना च तरेण रसेश्च जाङ्गलैः ॥ ८५५ ॥

भुक्त्या चेश्वरसादिकञ्च कदली खड्गुरिकादाडिमं,

कापित्थं तनुलेपनं मलयजैः श्रोत्रोद्गानाऽऽदिल्लनम् ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भापा—शुद्ध सुहागा, हरिताल, सुरमा, शुद्धपात, पञ्जाण, गन्धक, सफेद और पीलासोमल, रसौत, मैनसिल येसम समभाग लेकर बारीकपीस पारेण्यकनी नीलवर्णकम्बुलीमें मिलाकर जंभीरी और निर्गुण्डिकेपत्रस्वरससे ३-३ रोज मर्दनकर गोला बनाय शरावसमुद्धमें बन्दकर ३-४ कपइमिठी देकर सुगाकर कुम्बुटपुटकी आंचदेवे। स्वाभावशूलहोनेपर निकालकर रखछोड़े। इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा शकर और मधु बगैरह बेसाय देनेसे एकाहिक, दूधाहिक, दूधार्दिक, चातुर्थिक, शीतज्वर, विषमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै। इसमें पथ्य पुरानेबारा और मूंगकीदाल अथवा दही छाउ अथवा जगलीपुत्रुगुडिआँवा मासस, ईसफारस, केला, राइर, अनार, वैद्य बेसव देवे। चन्दनका लेपकर प्रौढप्रियोंका आलिरन करावे ॥ १८२ ॥

१८३ रामवाणरसः (१७दशः)

रसगन्धकताप्राणि टङ्कणं त्रिफला विषम् ।

एतानि समभागानि नेपालं तुल्यभागिकम् ॥ ८५७ ॥

कारवर्द्धारमेनेभ मर्दयेद्याममायकम् ।

मुञ्जाप्रमाणवट्टिकां भक्षयेदाट्टिकांमुना ॥

रामवाण इति ख्यातः सर्वज्वरनिर्गुण्डनः ॥ ८५८ ॥

र. क. यो., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बजनाय, ताभ्रमम्म और त्रिफला समभाग, जमालोटा सन्की बरार लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धकनीलीवर्णकजलीमें मिलाकर बरेलेकेरमसे १-२ दिनमर्दनकर १-१ रसीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अक्षरकेरस अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त शीत और विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८३॥

१८४ रामवाणरसः (पोटशः)

हिहूलं रसकं रसेन्द्रशिलसितुल्याऽऽलं शिला गन्धकं, ताप्यं गौरशिला विष्टुद्धिसहितं सर्वं समं भागतः । छण्णोन्मत्तरसेन मर्दितमिदं मापप्रमाणा वटी मुक्त्वा शीतसमर्पितं ज्वरगणं निवार्यसेत्तक्षणात् ८०९
र र बी, र पा, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, लपरिया, पारा, तुन्ध, हरिताल, मैनसिल, गन्धक, सोनामारी और सोमल सप्तसमभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर कालेयचूर्णकेरसगे १-२ रोज मर्दनकर उड़द बराबर गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिता नुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥१८४॥

१८५ रामरसः

गन्धकं पारदं तुल्यं मरिचञ्च त्रिभिः समम् । यीजं नेतुम्भकं मर्द्यं दन्तीवाधेयं यामकम् ॥
छिगुञ्ज. शूलविष्टुष्टमाऽनिलं सामज्वरं जयेत् ॥८६०॥
शे र, र सु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक तथा मरिच समभाग, शुद्ध-जमालोटा सन्कीबरार लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर दन्तीमूलकेवापमे एकपहर घोटकर २-२ रसीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ लेनेसे शूल, विषम, वायु और आमज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ १८५ ॥

१८६ रामादिलोहम्

राम्नाऽभ्यगन्धाकरुंरमेकवर्णाशिलाहृदयेः ।
त्रिकप्रयसमायुक्तं लोहं यस्मान्तद्वन्मतम् ॥ ८६१ ॥
सर्वापद्रवसंयुक्तमपि वैद्ययिजितम् ।
हन्ति कार्सें स्वराऽऽघातं राजयश्मशतक्षयम् ॥
घलज्वाऽग्निपुष्टीना वर्धनं दौषनाशनम् ॥ ८६२ ॥
र ग, र सु, प., र च, र क, र र, यो र, ना रि,
नि र, लो प, शे र, वृ यो त राजयश्मनि ।

हि०—र सु द्विपयान दशाङ्गुलमिति जन्मधासित्म् । या र, वृ या त, ना रि, म्नुषु चतुर्दशाङ्गुलमिति नाम । ए प चतुर्दशायस इतिनाम । शे र यस्मान्तकलोहमिति नाम भव त्रिक प्रयसमन विकटु, त्रिफला, त्रिदश प्रकषा योपरतनवतीपण्डे अथवा ग्याम्भने तन्ममं निवार्यमिति वि०प, नम च चतुर्दशाङ्गुलो इमिति ।

भाषा—राम्ना, असगन्ध, कपूर, माझी, मैनसिल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिदश (विष्टु, मागलोया, चित्रक) सब समभाग,

दशवन्कीबराबर लोहमसम ढालकर राम्नादिद्रव्योंके वाथोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिया बनाकर रखजोड़े । यद्यपि बहुतसेलोग केवल चूर्णनाकर रखलेतेहैं लेकिन राम्नादिकी भावना दिखेहुएके बरार कामनहींकरताहै । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे वैद्योंसे त्यागेहुए सर्वोपद्रव्यक राजयश्मको यह दूरकरताहै और कास, स्वरमद्ध, उर-क्षत, धातुक्षय, बलवर्णनाश, मन्दाग्नि इनघरको नष्टकर पुष्टि कोकरताहै और समस्तदोषोंका नाशकरताहै ॥ १८६ ॥

१८७ राक्षसरसः

ममांशं योजयेच्छुद्धं पारदं गन्धकं तथा ।
नागार्जुनीरसे मर्द्यं सुरस्तावाकुचीभवेः ॥ ८६३ ॥
मयूरपर्णांजीमारीमधुयष्टिममुरियतेः ।
धाराहर्षणीस्वरसे र्धुफल्यास्तथैव च ॥ ८६४ ॥
पतासां रसमादाय भावनायां पृथक्पृथक् ।
कुटुटाण्डं तत्र शूद्रा छिद्रयुक्तं ममाचरेत् ॥ ८६५ ॥
तत्रास्थितञ्च निष्कास्य तत्र भूत्वा महारसम् ।
घञ्जमूर्तिरुयाऽऽलियं कौक्कुटञ्च पुटं चरेत् ॥ ८६६ ॥
पकं नीतं पुनर्मर्द्यं पुनः पकं पुनस्तथा ।
एवं त्रिवारसंस्कारे रसरक्षोऽमृतोपमम् ॥
शुधाकरं वीर्यकरं धलवर्णाऽग्निवर्धनम् ॥ ८६७ ॥
र सु, वातव्याघ्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकनी नीलवर्णकजलीकर छोटी दूधी, तुलसी, वाडूची, मोरशिया, पीतुंवार, मुलहठी, अश-गन्ध, बहुफली इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गुर्गीका अण्डा (जितमें पचा न पडा हो) लेकर युक्तिसे छिद्रकर भीतरकाद्र निवाकर उगमें गोलेरोरप दूसरे अण्डेकी खोलगे ढककर गुडबूनेसे बन्दकर ६-७ कपडमिरीदेकर सुराकर कुक्कुटपुष्टकी आचदे । स्वाज्ञशीतलोहेपर निकालकर फिर उमीतरहकरे । एसे ३ बार करनेसे यह अष्टनेत्र सश होजाताहै । इनमेंसे १-१ रसी उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुषा वीर्य, बल, वर्ण और अग्निको बढ़ाताहै ॥ १८७ ॥

१८८ रद्रूपपटी

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं सम्मर्थयाम् द्रवैः पुनः ।
यातारिराद्रिकं भृङ्गीं काकमान्याट्टिकणिना ॥ ८६८ ॥
दिनेकं मर्दयेन्पत्रत्ये पाचयेत्पट्टा तथा ।
द्वयोः पार्दं मृतं ताष्टं क्षित्वा मूढश्रिना पचेत् ॥ ८६९ ॥
रत्नवर्णं भयेघानत्तावत्पाच्यं प्रचालयेत् ।
प्रक्षिपेत्तुर्लीपत्रे स्थाप्यं क्षिण्युटे पुनः ॥ ८७० ॥
आच्छाद्य तेन योगेन हाथशोद्धञ्च गामयम् ।
दर्शयेत्विभूषयेत्प्रश्चात्तुणपादे विरं क्षिपेत् ॥ ८७१ ॥
रद्रूपपटिका हापा देया गुञ्जाद्वयं द्वयम् ।
शर्णितं कटुतिगुण्ड्या मूलं निष्कट्य पिषेत् ॥ ८७२ ॥

भृङ्गराजरसेनैव लिहेद्वा मधुना सह ।

वातिकान्तिनिहन्त्याशु सर्वथैव न संशयः ॥ ८७३ ॥

नि. र., र. को., र. र., व. रा., र. का., वै चि, कासधासे ।

टि०—दिनीयाताम्रपर्णव्या साकमत्सा आधानत साम्य प्रतीवते परन्तु ताम्रपर्णव्येयवाऽस्य योगस्याऽतिभीषणत्वात्स्वतन्त्र एवाऽयं योगोऽस्तथाऽयं योगस्य रद्रपर्णटीति नाम कर्ण सार्थकम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भागनी नीलवर्ण-कमलीकर एण्ड, अदरक, अंगरा, मकोय, कोयल इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर अठ्ठीतरह सुखाकर घीपुनीहुई-कड़ाहीमें डालकर बदराहारकी मृदुअम्रिसे पकावे । इन होपेकर चतुर्थांश ताम्रभस्म डालकर चलाताहुआ पकावे । जब पर्णटीका रंग गन्धक न जलकर कुछ ललाईपरहोजाय तबपर्णटीविधानसे पर्णटी तैयारकर सबसेचतुर्थांश शुद्धबलनाका बारीकचूर्ण मिलाकर १-२ पहर खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती-कीमात्रा अंगरेकरसे अथवा मधुकेसाथ खाकर कटेपत्तोवाली निगुण्टीकी जड़का चूर्ण ६ मासे मधुकेसाथ ऊपरसे चाटनेसे यह वातजन्य कासको नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

१८९ रुद्ररसः

तीक्ष्णं शुल्यं नागतारं स्वर्णञ्च मरिचं पृथक् ।

एकद्वित्रिचतुष्पञ्च सप्तपट्टशुद्धसूतकम् ॥ ८७४ ॥

चाङ्गेरीद्रवकैर्मैथं दिनेनैकं तच्च गोलकम् ।

गोलकं लेपयेत्तेन ततो वखेण वेष्टयेत् ॥ ८७५ ॥

मृगाङ्कवृत्पेत्स्याल्यां चालुकाभिः प्रपूरयेत् ।

उद्धृत्य चूर्णयेच्छुष्कं हरतुल्यो रसोत्तमः ॥

मृगाङ्कवृत्स्यं हन्ति तथा मात्राऽनुपातकम् ॥ ८७६ ॥

र. सु क्षयाधिकारे ।

भाषा—गोलादभस्म १ भाग, ताम्रभस्म २ भा., नागभस्म ३ भा., रजतभस्म ४ भा., सुवर्णभस्म ५ भा., मरिच ७ भा. और रससिन्दूर ६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर त्रिपतियाकेरससे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३-४ तह मलमलके कपड़ेमें रस चारोंओर कथासूत लपेटकर गेदरेसहस्र बनाले फिर शरावणप्रभृतेषु बन्दकर ६-७ कड़ाहीदिनेदेकर हंडीमें ४-४ अङ्गल ऊपरनीचे वाद्यमें दगकर ४ प्रहरकी अमि देवे । स्वाह-शीतल होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उचितमात्रामें यथा-सोमानुपातकेसाथ देनेसे यह सबतरहके क्षयोंको नष्टकरताहै । इसमें पष्य और अनुगल मृगाङ्कीतरह देना ॥ १८९ ॥

१९० रुद्रवटी (प्रथमा)

शुद्धपारद्द्रुहानुमरीचेः

पारद्वाहिगुणगन्धकमयः ।

यत्सम्ममयमुदुम्बरादुधं

घाकुचीभवकपायच्यै पां ॥ ८७७ ॥

मैथिमाल्य परिपेष्य दिनेक-

मक्षमानयतिशः परिकल्प्य ।

माक्षिकैः समशिताऽपिलपामा-

हन्ति रुद्रवटिकाव्यरसोऽयम् ॥ ८७८ ॥

चि. क., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकमलीकर कुट्टन, गूलकादूध, वाकुची इनके यथासम्भव इव अथवा हाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६ मासेसे १ तोलेतरकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ रिलानेसे यह सबप्रकारकी पामाओंको नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

१९१ रुद्रवटी (द्वितीया)

कान्तलोहं मृतञ्चाऽम्रं सूतं ताप्यं सतालकम् ।

गन्धकं गुग्गुलुं शुद्धं चिडङ्गं त्रिफलाकुलम् ॥ ८७९ ॥

व्योषाऽम्रिदेवदारुष्युद्धिफेननिशाह्वयम् ।

गिरिकर्णोपुनर्नव्यामूलचूर्णं समं समम् ॥ ८८० ॥

भृङ्गराजद्रव्यै मैथं दिनेनैकं वटकीकृतम् ।

सर्वकुष्ठानि हन्त्याशु वटीयं रुद्रनामिका ॥

मासमात्राग्निहन्त्याशु मुखरौ सर्वधातुजाम् ॥ ८८१ ॥

रसायनसं., यो. म., र. का., इष्टाधिकारे ।

भाषा—कान्तलोह, अश्रकमस, शुद्ध पारा, सोनामासी, रसमाणिक्य, गन्धक, गूल, विजा, त्रिफला, बेर, त्रिफळ, चित्रक, देवदारु, समुद्रफेन, दोनोंहल्दी, कोयल, पुनर्नवादीजइ येसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर अंगरेकरससे एकरोजमर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानु-पातकेसाथ देनेसे यह तमामप्रकारके रोगोंको नष्टकरताहै ॥ १९१ ॥

१९२ रुद्रेश्वररसः (वातशूलहा) ?

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृताऽप्रार्कमनःशिलाः

सेन्ध्वं माक्षिकन्तालं धुनूरं हिड्डुं मूरणम् ॥ ८८२ ॥

महाराष्ट्रया च निगुण्ट्या वासंरण्डद्रव्ये दिनम् ।

मयं रुद्धा पुटे पाठ्यं कुम्भकुटाण्डोदरे निपद्य ॥ ८८३ ॥

पृथग्मसं लिहेत्क्षौद्रं रुद्रशो वातशूलजित् ।

हिड्डुं सौवर्चलं शुण्ठीमक्षमुष्णाशुना पिषेत् ॥ ८८४ ॥

ना. वि, र. को., यो. म., र. क. उ. र. र, घृले ।

टि०—शुद्धा मृदुपे पक्का इण्डुगुण्टे तथेष्टेरिनि पठान्य रूपने परन्तु कुम्भकुटाण्डोदरे इति पठ मनीषीनामावकी पठना दीना निपटैरपान ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अश्रक तथा ताम्रभस्म, शुद्ध मैतिल, सेन्धव, सोनामासी, हरिताल धुनूरकेबीज, हाँस और सुण्णकद्रु समभाग लेकर पाँउरान्यककी नीलवर्णकमलीमें मिलाकर मराठी, निगुण्टी, अदुसा और एण्डके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुगीके अण्डेमेंमरके दूगरेअण्डेकीगोष्ठ चगाय शुद्धपुनेमें मणिपचन्दर ६-७ कड़ाही देकर बन्द अथवा कपायकमें ४ पहरकी अमि देवे । स्वापनीकठोदरेन निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासेकी मात्रा मधुकेसाथ

देकर हींग, सचल और सोंठकाचूण १ तोला गरमपानीके साथ लेनेसे सबप्रकारके श्लेष्मिकी यह नष्टकरताहै ॥ १९२ ॥

१९३ रुद्रेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तं व्योम च मारितम् ।
 गण्डर्षं वायुचीवीजं निशा श्लेष्मातवीजम् ॥ ८८५ ॥
 वेडङ्गं त्रिफला वह्नि भृङ्गं कृष्णा तिलाऽभये ।
 श्योनाककुसुमं तुल्यं चूर्णयेच्च सितायुतम् ॥ ८८६ ॥
 हांस्यपात्रस्थितं भक्षेत्कैकं मधुसर्पिषा ।
 तर्षकुण्डहरः सोऽयं महारुद्रेश्वरो रसः ॥ ८८७ ॥
 रसायनसः, यो. म, र, का, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कान्तलोह, अन्नक, मण्डर, शक्तीमसमें, वायुची, हल्दी, लतोड़ेकेबीज, विडङ्ग, त्रिफला, चित्रक, अमरा, पीपल, तिल, हरे, सोनापाटाकेकूल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर बराबरकी शक्कर मिलाकर रखछोड़े । इस मेंसे १-१ तोला कांसेकेवर्तनमें बराबरके घी और मधुकेसाथ धानेसे यह समस्तकुष्ठोंको दूरकरताहै ॥ १९३ ॥

१९४ रेतोरोधनपोट्टलीरसः

आकृष्टजातीफलजातिकैला-
 कस्तूरिकाकुङ्कुमहिङ्गुलानाम् ।
 पटे पट्टः पोष्टलिकां प्रणोय
 निक्षिप्य दुग्धे विपचेद्धसन्त्या ॥ ८८८ ॥
 ज्ञात्वाऽर्धशेषं ससितं पयस्त-
 त्रिष्कास्य तां पोष्टलिकां पिबेद्यः ।
 भवन्ति भोगाय न तस्य शक्ताः
 प्रचण्डकामाः शतशोऽपि रामाः ॥ ८८९ ॥
 सि. मे. म., वाजीकरणे ।

भाषा—अकलकरा, जायफल, जायित्री, श्लायची, कस्तूरी, केशर और शिंगरिफ सबसमभागलेकर ४ रतीसे १ मासेतक मलमलकेधोयेहुएटुकड़ेमें पोष्टलीबनाया दूधमें छोड़ेदेवे और चूल्हे-पर चढ़ादे । जब अधोटा दूधहोजाय तब पोष्टलीको निकालकर उस दूधको पीकर सम्भोगमें प्रवृत्त हो तो मदेन्मत्त बहुतसी क्रिया उसके तृप्तकरनेके लिये समर्थ नहीं होती हैं ॥ १९४ ॥

१९५ रेतोरोधिनीगुटिका (प्रथमा)

जातीफलस्य फणिफेनभृतोदरस्य
 लिप्तस्य सत्पुत्रमुद्गा परिपाचितस्य ।
 पलाकुरङ्गसुमकुङ्कुमहिङ्गुलाख्या
 रेतो रण्डि गुटिका पयसा निपीता ॥ ८९० ॥
 सि. मे. म., वाजीकरणे ।

भाषा—जायफलमें छेदकर एकमाथा अफीम डालकर गेहूँके आटेके अन्दर बन्दकर पुटपाककरे । शीतलदोनेपर निवालकर इसमें श्लायची, कस्तूरी, लौंग, केशर और शुद्धशिंगरिफ ये प्रत्येक अफीमकेबराबर मिलाकर ३-३ रतीकी गोलियाँ

बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यको रोकतीहै ॥ १९५ ॥

१९६ रेतोरोधिनी गुटिका (द्वितीया)

धन्तुरवीजविपमुष्टिरुगन्धसूत-
 जातीफलानि सलिलेन पृदाकुवह्याः ।
 पिप्पुा चिशिष्य मसृणं गुटिकीकृतानि
 रन्धन्तिधातुमधिमन्मथकेलि यूनाम् ॥ ८९१ ॥
 सि. मे. म, वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध धन्तुरेबीज, कुचिला, गन्धक और पारा, जायफल सब समभागलेकर पकेपानोंनेरससे एकदिनमर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली सम्भोगसे १ घटा पहिले दूधकेसाथलेनेसे वीर्यका स्तम्भनहोताहै १९६

१९७ रेतःस्तम्भकपारदः

शुद्धं सूतमिपुप्रतोलकमितं गन्धं तथादोधितं,
 पश्चात्तं परिगृह्य संयुतमुखां शुक्तिं समुदाद्यताम् ।
 तत्कीटं परिहृत्य शुक्तिजठरादन्तः क्षिपेद्गन्धकं,
 प्रोक्तस्याऽर्द्धमथान्तरे विनिहितं सूतं समस्तं ततः ॥
 सूतस्थोपरि शेषगन्धकरजः संक्षिप्य तन्मध्यगं,
 सूतं शुक्तिरूपायन्ययोपरिगया सम्मुद्रय मुद्गरकैः ।
 तां शुक्तिं परिशोष्य सूर्यकिरणात्सन्दीप्यतेऽग्निस्तुपै-
 र्धान्यानां गजसञ्ज्ञके वरपुटे तत्स्वाङ्गसंश्रिततलम् ॥
 सञ्चूर्ण्यांशुकगालितं किल भवेद्गुञ्जोमितं पुष्टिकु-
 द्रेतःस्तम्भनश्लथयोऽनु च पिबेत्सायं सितासंयुतम्
 ध, चि र भ, रसायनस, र. सु, वाजीकरणे । रसा-
 यनसङ्गहे स्तम्भनरस इति नाम ।

टि०—अत्र योगे शुक्ती गन्धकप्रभे पारदस्यापनमुष्टिम् । परन्तु प्रथमतस्तस्य यथास्थितिरव दुसारा अनिचञ्चलत्वात् । ततोऽन्तरं तुप पुटे अग्नौ स्थितिरपि दुर्बारा, केवला शुक्तिरेवाऽवशेषता भविष्यति । अतः प्रथम देनैकेनापि प्रकारेण पारदस्य नियमन विधाय शुक्ती स्थापनीय इति गृह्य रत्नसम् । अन्योपायाऽभावोऽपिगणिते शुक्ते वा नष्टपित्ता विधाय शुक्ती स्थापयित्वा शुक्तिजठरावमपुगन्तुर्गमिना कृत्वा पुट प्रदेशे हल्यस्माक सम्पत्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ५-५ तोलेलेकर गन्धकका बारीकचूर्णकर जीतीहुई सीपका मुद्ग खोलकर जीवको बाहर निकालकर आधा गन्धक उसमें विडाकर ऊपर परिकोरखकर बचेहुएगन्धकसे ढकड़े । फिर दूसरी सीपसे ढककर चूना और गुड़से सन्धिको बन्दकर ६-७ कपडमिठी देकर गुलाकर चावलकी भूसीकी गजपुटेमें आच देवे । स्वाज्ञाशीतलदोनेपर निवालकर सीपसहित चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रतीकीमात्रा शक्कर-डालेहुए दूधकेसाथ लेनेसे यह वीर्यका स्तम्भनकरताहै ॥ १९७ ॥

१९८ रोगनाथरसः

अर्धाश्वत्थुर्यौ रसनागनिष्कौ
 पृथकपृथगगन्धकट्टणजम् ।

शङ्खस्य निष्कौ मृतताप्रप्तौ द्वौ
वराटिकानां नवसम्पुटानाम् ॥ ८९४ ॥
मध्ये च पक्त्वा कदलीद्रवाद्रौ
भूयोऽर्द्धभागेन गजोपकुल्या ।
तदूर्ध्वपादं मरिचं प्रदद्या-
द्गन्धास्तुनिष्कं च घृतेन लिङ्घ्यात् ॥ ८९५ ॥
अश्रीयात्पूर्ववत्पथ्यं घासराण्येकविंशतिम् ।
रोगनाथो रस्तो नाम्ना रोगराजनिकृन्तकः ॥ ८९६ ॥

र. को., र. र. स., राजयक्ष्मणि ।

टि०—रसेन्द्ररत्नकोषे द्वितीयस्थाने अल्प लोकनाथेतिनाम, गजना-
नाथ, समानयोगस्य दिननामदानस्याऽनौचित्यात् ।

भाषा—शुद्धतृतीया २ मासे, शुद्धपारा, नागभस्म, गन्धक
और सुहागा ४-४ मासे, शङ्ख और ताम्रभस्म ८-८ मासे
लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर पीली ९ कौड़ियोंमें भरकर आकृते-
द्वयमें पिघट्टए सुहागसे सन्धि बन्दकर कौड़ियोंको शरावसम्पुटमें
रख ६-७ बपइमिटी देकर सूखनेपर गन्धुटकी आंचदे ।
स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर समस्तसे आधीगजपील और
उससे आधीमरिच तथा ४ मासे शुद्धगन्धक मिलाकर
केलेकेबन्दकेरसे १-२ रोज मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े ।
इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा धीरेमाथ सेवनकरनेसे २१ दिनमें
यह राजरोगको नष्टकरताहै ॥ १९८ ॥

१९९ रोगपञ्चाननरसः

सूतटड्डी वरागन्धकच्यूपणं
वत्सनाभो घनस्तुल्यतो मर्दयेत् ।
भृङ्गनीरेण तट्टुल्मघातोदरं
रक्तिकामा घटी रोगपञ्चाननः ॥ ८९७ ॥

रसायनसं., वै. वि., गुल्मे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुहागा, त्रिफला, गन्धक, त्रिकटु,
वज्रनाग और अन्नकमस्य येसब समभाग लेकर पोरगन्धककी
नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर भंगरेकेरसे १-२ दिन मर्दनकर
१-१ रतीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
उचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म और वातोदर नष्टहोताहै ॥ १९९ ॥

२०० रोगभञ्जनरसः

मृतं सृतं मृताऽन्नञ्च मृतं तात्रं विपं समम् ।
जम्बीरफलजद्रावै र्भेदितं प्रहरत्रयम् ॥ ८९८ ॥
दोलायन्त्रेण तत्पाच्यं शिशिरिपित्तेन भावयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥
सर्वे रोगा धिनश्यन्ति रस्मोऽयं रोगमञ्जनः ॥ ८९९ ॥
वै. वि., सन्निपाते ।

भाषा—पारा, अन्नक, तात्र इनकीभस्में और शुद्धवज्रनाग
समभागलेकर जम्बीरीकेरसे ३ पहर मर्दनकर गोलाबनाऊ जम्बीरी
केही रसेसे ३ पहर स्वेदनकर मोरकेपित्ते १-२ भावनाएँ देकर
१-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ०-१ गोली

समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै ।
रसव्याप्तिकेलिये जलघारादेना अन्यावश्यकहै ॥ २०० ॥

२०१ रोगपुरदलनरसः

स्वर्णं रूप्यञ्च तात्रं सममथहरजं
वार्धिभागञ्च गन्ध-
स्याऽष्टौ भागान्विमर्द्य त्रिदिन-
मनलजोथेन वारार्कघर्मे ।
संयोज्याऽजादिपित्तं विपमपि
हरजात्पोडशांशञ्च दत्त्वा,
देयो बहुद्वयोऽयं गदमु-
दलनः पावकच्यूपणेन ॥ ९०० ॥
तैलाम्यक्ताय कुर्वात्सलिलविधि-
मथो रोगिणे दध्युपेतं,
भक्तं खण्डं मरीचं यद्वि भवति
मनोवासना पथ्यभुक्तौ ।
उद्धृतं सन्निपातं जयति लघुतरं
शैत्यतन्द्राविमोहं,
वातव्याधींश्च सयानं कफजनि-
महारोगनाशे प्रसिद्धः ॥ ९०१ ॥

र. ल., र. शं., सन्निपाते ।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्ध
पारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर बारीकपीस परेगन्ध
ककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर चित्रकमूलकेकादसे ३ रोज
मर्दनकर धूपमें सुखाकर पानोंपित्तोंकी १-१ भावनादेकर पार्ले
पोडशांश शुद्धवज्रनाग डालकर ६-६ रतीकी गोल्या बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और त्रिकटुकेसाथ देनेसे
पोरसन्निपात, शीत, तन्द्रा, मोह, वातव्याधिया और कपरोग
नष्टहोतेहैं । इसकासेवनकरनेवालेको तैलाम्यक्ताकरके, मस्तकपर
जलकी घारादेना । मुखकानेपर दही, भात, खांड, मरिच,
येसब देनेचाहिये ॥ २०१ ॥

२०२ रोगविघ्नगणेशरसः

रसह्यूपणं गन्धगुल्याऽऽयसञ्च
भुजङ्गः समा वत्सनाभोऽन्नकश्च ।
समं चूर्णितं बहुद्व्याऽनुपाने-
रजोपैः सदा रोगविघ्नो गणेशः ॥ ९०२ ॥

रसायनसं., वै. वि., र. ल., र. शं., र. का., दो, र. को., सर्व-
रोगे । र. का., दो., विघ्नगणेश इतिनाम । वै. वि. अन्नकम्पाने
अनलो द्रवयते । र. का. अन्नकस्याऽभावः ।

भाषा—शुद्धपारा, त्रिकटु, गन्धक, ताम्र, सोह और नाग
इनकीभस्में, शुद्धवज्रनाग, अन्नकभस्म सब समभागलेकर घोटकर
रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह
समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २०२ ॥

२०३ रोगविदारणरसः

हरवीर्यं वत्सनाभं इडुणं माक्षिकं कणाम् ।
तालकं गन्धकं चात्रं त्रिपापाणञ्च सैन्धवम् ॥ ९०३ ॥
सर्वं भृङ्गस्य नीरेण मर्दयेत्प्रहरत्रयम् ।
गुल्लामात्रं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ ९०४ ॥
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तुष्णार्थं शीतलं जलम् ।
अयं घन्वन्तरिप्रोक्तो रसो रोगविदारणः ॥ ९०५ ॥
वै चि , ज्वराऽधिकारे ।

भापा—शुद्ध पारा, बछनाग, सुहागा, सोनामाखी, पीपल, रसमाणिक्य, शुद्धान्धक, अश्रवभस्म, स्याह, सफेद और पीलासोमल, संधानमक समभाग लेकर वारीचपीसकर पारेगन्ध बन्नी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भंगरेकरसे ३ पहर मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त सन्निपातोंको नष्ट करताहै । इसमें दही, भात और ठंडाजल पच्य देना ॥ ९०३ ॥

२०४ रोगान्तोरसः

दशधा पातितं मृतं स्वित्रं प्रागुक्तयुक्तितः ।
रसेश्वरं समादाय प्रखरीत्सलिले भृशम् ॥ ९०६ ॥
खल्वमध्ये विनिःक्षिप्य मर्दयेदुपविशकात् ।
दिवसांस्तत्रैवैलेद्यक्रिकां रचयेद् दृढाम् ॥ ९०७ ॥
चक्रिकां दृढभाण्डस्य सन्ध्यान्मध्यभाण्डके ।
उपरिष्ठास्मृतकलकं मर्दितं विनिवेशयेत् ॥ ९०८ ॥
तस्योपरिष्ठात्प्रखरीत्सलिलं निवेशयेत् ।
दृढं शरायं सन्ध्याद् दृढो लेपः क्रमेण वै ॥ ९०९ ॥
जलपूर्णं विधायाऽथ सुल्यां यन्नं निवेशयेत् ।
दिनानि त्रीणि संकाथ्य रसं यन्त्रात्समुद्धरेत् ॥ ९१० ॥
अन्यं भाण्डं समादाय वत्सनाभस्य चूर्णकम् ।
भाण्डमध्ये विनिःक्षिप्य तस्योपरि रसं क्षिपेत् ॥ ९११ ॥
उपरिष्ठाद्दत्सनाभचूर्णं रससमं क्षिपेत् ।
पूर्ववत्सन्धिलेपञ्च हृत्वा यन्नं जलोपितम् ॥ ९१२ ॥
सुल्यामारोपयेद्दृढं जिजालयेदुपविशकात् ।
दिवसान् पारद्ः साऽयं भस्मीभवति साऽन्यथा ९१३ ॥
गृहीत्वा भस्ममृतं तं निम्बुद्रावेण मर्दयेत् ।
स्तोकमात्रं तेन लिम्पेद्देमन्त्राणि धुम्निमान् ॥ ९१४ ॥
ऊर्द्धाऽधो माक्षिकं दत्त्वा पुटयेद्बन्धगोमयैः ।
भस्मीभूतं भवेद्देम तद्भद्रजतमारणम् ॥ ९१५ ॥
ताम्रं तीक्ष्णं घृह्णनागौ तथा युक्त्यैव मारयेत् ।
मृतानि तानि लोहानि गृह्णीयात्सूतपादतः ॥ ९१६ ॥
माक्षिकं गन्धकं तालं मनोहा हिङ्गुलं तथा ।
तुल्यञ्च रसकञ्चैव सूतपादाशतः क्षिपेत् ॥ ९१७ ॥
पकीकृत्य रसेः सार्धं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
शुष्कमर्दनयोगेन दिनमेकं त्रिचक्षणः ॥ ९१८ ॥

वाते त्रिकटुना देयः श्लेष्मण्यपि तथैव हि ।
पैत्तिकेषु विकारेषु गुह्रवीसत्स्युक्तया ॥ ९१९ ॥
युक्तो योग्यः शर्करया मूलजे शिखिवन्नया ।
कुण्डेषु खदिरकाथं वाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ ९२० ॥
प्रयुज्जीत रसं वैद्यस्तसद्योगोक्तयोगतः ।
रोगान्तक इति ख्यातः सर्वव्याधिविनाशनः ॥ ९२१ ॥
दृष्टप्रभावः सुष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवै ।
देवीशास्त्राऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ ९२२ ॥
रसाल , ज्वराऽधिकारे ।

भापा—नियामक औषधियोंमें मर्दनकरके दशवार ऊर्द्ध-पातितकियाहुआ शुद्धपारा लेकर कुकरोथेकीजङ्केरसे २० रोजतकमर्दनकर चक्री बनाय मजबूत पड़ेकेवीचमें रखकर कुकरोथेकेमूलके कलककीटिकड़ी पारेसे चौगुनेबजानकी ऊपर ढक्कर मिट्टीकेमजबूतढक्कनसे ढक्कर जलमुद्रासे बन्दकर घड़ेमें पानीभरदे और चूल्हेपरचढ़ाय ३ दिनतक निरन्तर अग्निदेवे । ठंडाहोनेपर यत्नपूर्वक परिको निकालकर फिरसे पूर्वोक्त औषधिवेरसे पोटर टिकियावनाय दूसरे नवीनघड़ेमें पारेकी बराबर बछनागया चूर्ण बिछाकर ऊपर रसचक्रिनाकोरख उसीकेबराबर दूसरे बछनागकेचूर्णसे ढकदे और मजबूत शरावसे ढक्कर जरमुद्रा करपानीसे भरकर चूल्हेपर चढ़ाय २० दिनकी अग्निदेवे । पानीकम होनेपर दूसरा ढालताजाय । बीसवैरोज्ञ पानी बिलबुल मुखादे । १-२ अङ्गुलपानी वाक्रीरहेनेपर आचबन्दकरदे और यन्नको चूल्हेपर रहनेदे । स्वाज्ञशीतल होनेपर धीरजसे मुद्रासे खोल भीतरसे पारेकीभस्मको निकालकर थोड़ासा नीबूकास डालकर मर्दनकर सुबर्णके वारीचपर्णोंपर लेपकर मुखाकर शरावसम्पुटमें नीचेऊपर सोनामाखीकाचूर्ण देकर सुबर्णपर्णोंको बन्दकर २-४ काण्डमिट्टीकरदे । सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर सुबर्णभस्मको निकालकर रखछोड़े । इसीतरह चारी, तावा, फोलाद, बह और नागकी भस्मकरे । येसबभस्में १-१ भाग, पारदभस्म ४ भा , शुद्ध सोनामाखी, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शिंगरिफ, तुल्य और खपरिया १-१ भाग लेकर षण्को इक्के मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकी मात्रा वायु और श्लेष्मणो त्रिकटुकेसाथ, पित्तमें शफरयुक्त मिलोयसत्त्व, बवासीरमें मोरशिरा और कुष्ठमें वाकुचीकाचूर्ण डालेहुए रीरेके काथकेसाथ देनेसे यसब नष्टहोवेहै । इसीतरह तत्तद्रोगद्वारानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ ९०४ ॥

२०५ रोगभसिहरसः (श्रीसण्डवटी)

सूतद्वयीघनवराऽनलवेल्लभाङ्गी-
तिकारुद्रयययिपः सवचैः समांशैः ।
रोगभसिह इति यातकफामयघ्नः
सान्द्रोऽयमल्पपुटितो विहितो द्विगुञ्जः ॥ ९२३ ॥
एते गुंढप्रमृदिते रसवर्जितैः स्या-
न्नीखण्डनामगुटिका विहिता द्विगुञ्जा ।

शैल्याद्यजीर्णरूफवातभवान्विकारा-

न्हत्याद्रकटवयुताऽप्यथ केवला वा ॥ १२४ ॥

र. स., ध., टो., र. र. दी., रसायनध., र. का., वातव्याध्य-
विकार । रसायनसङ्गहे व्याधिगज्जेमरीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, अभ्रकभस्म, त्रिफला, चित्रक, विडङ्ग, भारद्वाज, कुट्टकी, त्रिकटु, वच और शुद्धबल-
नाग समभागलेखर विपको छोड़कर इसयोगमें आईहुई वनस्प-
तिओकेकाटेमें १-१ भावना देकर गोलावनाय पकेपानोंमेंरख
सूतमेलपेटकर एकवालितकेखट्टेमें रखकर उपरसे बालुभर
बराहसुटकी आचद । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर २-२
रत्तीकी गोल्या बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
तत्तद्रोगहरातुपाननेसाथ देनेसे यह तमामवातव्याधियोंको दूर-
करताहै । इसमेंसे धातुओंको निकालकर गोली बनाईजायतो
उसकानाम ध्रुवखण्डवटीहै और उसको अदरखनेरस भयवा
वेनलपानीकेसाथ देनेसे कफ और वातविकार दूरहोतेहैं २०५.

२०६ रोमवेधरसः

शुद्धीत्रियं सर्पमहाविषञ्च

शुद्धं समं सूतकगन्धकञ्च ।

एकाऽधिकं विशतिवासरानि

निधाप्य यत्रे सजलज्वरेणे ॥ १२५ ॥

गुडैकमात्रं सघृतं प्रपिष्टं

नवज्वरे चाऽप्यधिज्वरारते ।

अभ्यङ्गमात्रेण निहन्ति सर्वा-

न्यथा सुजङ्गं गरुडो गरीयान् ॥ १२६ ॥

रोमवेध इति ख्यातो रसरराजश्चिकित्सकैः ।

कौतुकार्थं नरेन्द्राणां धन्वन्तरिचिनिमित्तः ॥ १२७ ॥

रसायनं., र. सु., भै सा., टो., र. का., यो. म., र (मा.) ज्वराधि-
कार । रसायनसङ्गहे सर्वरोगाऽधिकार । र (मा.) मर्दनज्वरारि ।

भाषा—शुद्धबलनाग, सर्पविष, शुद्ध पारा और गन्धक
समभाग लेखर पारे गन्धककी नीलवर्णकल्लोंमें विपको मिला-
कर १-२ दिन मर्दनकर शीघीमें भरके सुदृपर मोमबगुरहसे
इसतहबन्धकरे कि पानी जानेकी शक्ती भ रहे । फिर इसे जहा
हनेसा पानी भरारहातो भयवा धिस्ता हो उसजगह हाथभर
रखा गोदकर नीचे गाढ़े और ११ रोजक रहनेदे । इसके-
बाद इसमें १ रत्तीलेखर घीमेंमिलाय तमाम दारीपर मालि-
शकर कपडा ओटाकर मुकीदे । इससे परीनाहोकर तक्षण
आट्टप्रकारका ज्वर निकलजाताहै ॥ २०६ ॥

२०७ रोहीतकलोहम्

रोहीतकसमायुक्तं त्रिकत्रययुतं त्वयः ।

मूहानमप्रमांसञ्च पाटलञ्च विनाद्येय ॥ १२८ ॥

र. मं., र. वि., ध., र. क., भै र., र. सु., र. चं., र. र., र. वा.,
रसायनं., यष्टनीहाऽधिकारः ।

भाषा—रोहिंदेसीफल, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिमद (विडङ्ग,
नागरमोषा, त्रिफ) गव समभाग, इनमन्की बराबर लेंद

भस्म मिलाकर इन्हींकेकाथोंसे ३-४ भावनाएं देकर ३-३
रत्तीकी गोल्या बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शर-
पुद्गमूलगुरहके क्वाथसे लेनेसे प्लीहा, अप्रमास, यष्ट, इनस-
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ रौप्यरसवटी

पारदं राजतं चूर्णं समं शुद्धं विमर्दयेत् ।

गोलं कृत्वा च संस्थाप्य दिनमेकं करण्डके ॥ १२९ ॥

द्वितीये दिवसेऽङ्गारं लोहपात्रे त्रिनिःक्षिपेत् ।

लोहदण्डेन सट्टुप्य शुभ्रं भस्म च कारयेत् ॥ १३० ॥

तदौष्यभस्म निष्केकं द्विनिष्कं कुङ्कुमं शुभ्रम् ।

जातीकोपफले चैव लवङ्गं शङ्खजीरकम् ॥ १३१ ॥

प्रतिकर्षं तथा नारीकेलमजा च भृषला ।

मल्लान्ताकाश्च निर्वीजात्पलं प्राणं प्रयत्नतः ॥ १३२ ॥

तिन्तिडीफलमांसञ्च योजयेत्पलपञ्चकम् ।

विधिवत्सर्वमेकत्र मर्दयेत्सुदृढं भिषक् ॥ १३३ ॥

कोलमाना च वटिका तिलतेलेन योजयेत् ।

किं वा कौमुभ्मतेलेन सद्यो निष्कासितेन वा ॥ १३४ ॥

घेनुदध्नाऽथवाऽऽप्येन सायं प्रातः प्रयोजयेत् ।

आम्रशुक्रादिसम्भूतं रसं कर्षञ्च पाययेत् ॥ १३५ ॥

वटी रौप्यरसा नाम सर्वमेहविनाशिनी ।

पूतिमेहं विशेषेण पथ्यं सवामन्यामाचरेत् ॥ १३६ ॥

वर्जयेद्दर्पपर्यन्तं पतसं तुम्भिर्जं फलम् ।

अन्या च वटिका नास्ति पूतिमेहविनाशिनी ॥ १३७ ॥

र. चं., प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध ५.५ और चादीका धारीकरेता समभाग
लेखर एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शीघीमें बन्दकर रखडोड़े ।
दूसरेदिन लोहेकी कडाहीमें डालकर नीचे बेरकीलवङ्गीकी गांठ
जलावे और लोहेके बटसे धर्षणकरतानाय । ऐसे ४ पहर रण-
नेसे जन एकदम श्वेतगंधीजाय तब उतारकर रखले । फिर
चांदीभस्म ८ मासे, बेदार ८ मासे, जावित्री, जायफल, वनश,
सज्जराहत १-१ कर्ष, नारियलमीमवा, योजनिकालेहुए मिलवे
और इमलीकीमवा १-१ पत्र लेखर सबको धारीकरीसे बरपा-
वर गोरिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्काल
निकालेहुए तित्त अथवा इयुम्मके तिलकेसाथ भयवा गादयी
दही भयवा धीकेसाथ सुदृहदाम देकर ऊपरसे आनप्रभृतिके
अचारका १ तोलासे पिलावे । इसकेपेनसे पूतिप्रमेह नष्ट
होताहै इगमें पथ्य साधारण रन्ध्राजताहै विदेपकी सुपुत्र
नहीं, पर बटहर और तुमही एकवर्षक नताय । इसकेपेनसे
मुत्राकरो नष्टकरनेकेलिये दूसरी दवा नहींहै ॥ २०८ ॥

२०९ रौप्यरानरसः

रनेन्द्रभागद्वितयं क्लेच्छशरं चतुर्गुणम् ।

पाफजहारत्नं मर्षं त्वय्ये द्विपमपञ्चकम् ॥ १३८ ॥

ताम्रसमुदके रज्ज्वा सज्जिते दृष्टिद्वयान्तरं ।

नियेदय पाटुकां वत्सा दयौऽग्निः प्रहृष्टकरुम् ॥ १३९ ॥

स्याद्गशीतं समुद्रव्य मधुदङ्गुणसंयुतम् ।
धमेन्प्रागतं तावथावद्वन्मति तारयन् ॥ ९४० ॥
रोप्यराजरसः सोऽयं भगन्दरकुलान्तकः ।
चक्षुमात्रममुं लीढा मधुना सह पथ्यभुक् ॥ ९४१ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्काथं पश्चात्पथ्यं हितञ्चरेत् ।
मुक्तः स्वल्पैरहोभिः स्याद्भगन्दरमहागदात् ॥ ९४२ ॥
वृ. यो. त. दो, र. का, वै र, र. क ल, र. कौ, रसायनस.,
चि. र. भ, भगन्दर ।

भाषा—शुद्धपारा २ भाग, सगरास्क ४ भागलेकर बारी-
कचूर्णकर काकचूर्णरसमे ५ रोज मर्दनकर ताप्रसमुद्रमे वन्द-
कर २-४ कपमिठी देकर छिन्नहित हैजीकेबीचमें रख ऊप
रसे बाजुकसे टकर ८ पहरकी अभि दवे । स्वाद्गशीतलहोने-
पर निचाकर मधु और मुहागा मित्राकर मूशमे धमन करावे ।
जब चादीकीतह चकरखानेलेगे तब ढालकर रखओडे । फिर
इतका बारीकचूर्णकर ३-२ रती मधुनेचाप खाकर त्रिफलाका-
काथ पीकर रितमोजन करनेसे थोडेहीदिनमें भगन्दररोगसे
निवृत्ति होताहै ॥ २०९ ॥

२१० लङ्केश्वरोरसः (प्रथमः)

मृताऽन्नगुल्यानि च मारितानि
सगन्धकं तालशिलाद्रयो च ।
विषाऽम्लप्रेतो च सप्तं समस्तं
दिनत्रयं चान्दरसं विषेप्यम् ॥ ९४३ ॥
समासिकेणैव मृतेन कुर्वा-
द्वदं द्विगुञ्जाच्च शतारहर्नाम् ।
लङ्काधिप्राप्यस्तु रसः प्रसिद्धो
निहन्ति कुप्रांश्च शतारकादीन् ॥ ९४४ ॥
फलनयं निम्नचाऽरण्ये च
पटोलमूलं कटुना निशाण्या ।
कायोद्धनं चानुपिषेच नित्यं
लङ्काधिपारयं तु रसं निषेज्य ॥ ९४५ ॥

चि क, र म, र चि., र मु, र र, र, व रा, र का,
वै चि, रमेन्म, यो म, र र कौ, सताउठे । यो म
स्यादियुटी । र र कौ कुपुडलनेति नाम ।

भाषा—पारा, अन्नक, ताज इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक,
हरिताल, शिलाजीत और बटनाग, अनलत्रैत, सोनामाखीकी
भस्म समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीप्रभृतिकरससे ३ दिन
मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखओडे । इनमेंसे
१-१ गोली त्रिफला, नीमकीछाल, बच, मन्डीत, परबल्कीजङ्,
कुटकी और हल्दी समभागक साथकेचाप लेनेसे यह शताएन
प्रभृतिघट्टोंको नष्टकरताहै ॥ २१० ॥

२११ लङ्केश्वरोरसः (द्वितीयः)

भस्म मृताकलोहानां कृष्णागन्धकदङ्गुणम् ।
कुष्ठं मुन्यञ्च मुन्यांश्च मयं धुन्वते उबे ॥ ९४६ ॥

दिनेकं तद्वटी कुर्यान्मापमानाञ्च भक्षयेत् ।
रसो लङ्केश्वरो नास्ति प्रसुप्तिमण्डलप्रणुत् ॥ ९४७ ॥
गन्धकं त्रिफलाचूर्णं निर्विषीं गुग्गुलुं समम् ।
लिहदेरण्डतेलेन कर्पूरमनुपानकम् ॥ ९४८ ॥
र र., र, र. का, कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—पारा, तावा और लोह इनकीभस्में, पीपल, शुद्ध-
गन्धक, मुहागा, कुठ और तृतीया समभागलेकर बारीकचूर्णकर
धतूरेकेससे एकदिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर
रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली खाकर शुद्धगन्धक, त्रिफला,
निर्विषी और गुग्गुलुसमभागलेकर १ तोलाऊपरसेएकतैलेकेसाथ-
खिलानेसे सुप्तता और मण्डलप्रथति कुष्ठोंको यह दूरकरताहै ॥

२१२ लङ्केश्वरोरसः (तृतीयः)

तालकं मासिकं तुल्यं हरवीजं सगन्धकम् ।
कान्ठीकान्दतोयेन मर्दयेद्विनसप्तकम् ॥ ९४९ ॥
सुल्फ्यां पाचयं चतुर्धामं सितया च ज्वरापहः ।
अयं लङ्केश्वरो नाम शीतमातङ्गकेसरी ॥ ९५० ॥
र. मु., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, सोनामार्या, तुल्य, पारा और
गन्धक समभाग लेकर पोगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाकर
सेखेसेकेरन्दनेरसे ७ दिनकर मर्दनकर मुलाकर ६-७ कपड-
मिठीदीहुई आतशीशीचीमें ढालकर बाजुकायत्रमें रख ४ पहरकी
अभिदेवे । स्वाद्गशीतलहोनेपर निचाकर रखओडे । इन्मेंसे १
रतीसे ३ रतीतक शक्केसाथदेनेसे यह शीतग्वरकानाशकरताहै ॥

२१३ लङ्केश्वरोरसः (चतुर्थः)

शिवशिरोपणलोलहनमोद्रा-
न्द्रिजन्तुपांपलभस्मनिमात्रं क्रमात् ।
शशिशशीन्दुकुशानुघनेसकै-
रपि मितानय पोडराभूमितान् ॥ ९५१ ॥
परिविमृच तथाभ्युघटीरसै-
भंचति रावणपासपुरीश्वरः ।
इरति सृतिगदांश्लिभज्वरं
निजधियाऽऽकरोरसितादियुक् ॥ ९५२ ॥
चि क, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हरे और मरिच १-१ भाग, लोह-
भस्म ३ भा, अन्नकभस्म २ भा., शुद्धभस्म ११ भा,
मोती १६ भा, लाजवर्द १ भागलेकर सबको बारीकचूर्ण करारि-
यलेकेपानीसे २-२ रोज मर्दनकर २-३ रतीकी गोलिया बना
कर रखओडे । इन्मेंसे १-१ गोली औचिती देखकर अदरख-
केस कपका घट्टप्रभृति केसावदेनेसे यह प्रसृतिरोग और
सहितरोगको दूरकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ ललितनाथोरसः

प्राधा मुमुक्षितः मृतः सपंदोपथिविजितः ।
महदेयी च मुगली कर्मेटी च कुमारिका ॥ ९५३ ॥

मुण्डी भृङ्गा रसेरपां प्रत्येकं सप्त भावनाः ।
 दुग्धाऽर्मेण पलद्वन्द्वं स्वेदयेत्त्रिदिवं भिषक् ॥ ९५४ ॥
 सूरणात्तर्दिनिक्षिप्य मृत्कपर्पटविलेपिते ।
 शरावयन्ने वहिञ्च दद्याद् द्वादशायामकम् ॥ ९५५ ॥
 मृत्कृपिकायां निक्षिप्य वहावाकाशयत्रतः ।
 मदिरापुष्पविमुड्भिः पाचयेद्दिनसप्तकम् ॥ ९५६ ॥
 तत एरण्डतैलेन ज्योतिर्यत्रे विपाचयेत् ।
 पुनः शीतं गृहीत्या तत्तैलेनाऽनेन मर्दयेत् ॥ ९५७ ॥
 विषतिन्दुकभङ्गातनिम्बस्त्रुर्ग्याजपञ्चकम् ।
 ऋषिज्योतिष्मतीधूर्तनाकुलीकरवीरकम् ॥ ९५८ ॥
 अजमोदाफलै रेषां तैले पातालयन्नजे ।
 विषं विभाव्य तत्तैले गन्धं तालं चिमर्दयेत् ॥ ९५९ ॥
 जैपालं सर्वतुल्यञ्च गन्धतुल्यं लवङ्गकम् ।
 जातीपत्रफले कृष्णामैतेषां तैलमाहेरत् ॥ ९६० ॥
 तत्तैले मर्दयेत्सूतं तच्च जातीफलान्तरं ।
 फाचकूप्यां चिनिक्षिप्य वहि द्वादशायामकम् ॥ ९६१ ॥
 मुत्सिद्धोऽयं रसः प्रोक्तो नाथस्तु ललितहास्यः ।
 रक्तिकापादमानेन हन्ति सर्वाऽऽमयाज्जवात् ॥
 मदात्ययक्षयश्वासान्मादाकसादिक्ान्मादान् ॥ ९६२ ॥
 र. का., मदात्ययाऽधिकारः ।

भाषा—समस्तदोषोसेनिर्मुक्त और शुभ्रुक्षित पारा लेकर सहदेवी, मुशली, ककड़ी, पीतुवार, गोरखमुण्डी और मंगरेके-रसोसे ७-७ दिन मर्दनकर गरमकाजीसे साफकरले फिर इसमेंसे २ पल पारेको एकद्रोणदूधमें तीनदिनतक स्वेदनकर पके-हुए मोटे सूरणके बन्दमें रोदकर रखदे और ऊपरसे उसीकी डालग्याय सन्धिबन्दकर ६-७ कपड़मिट्टीदेवे । सूत्रनेपर किसी-मिठीवीनादकेअन्दर रखकर दूसरीनादसे बन्दकर चूलेपर रख १२ पहर की साधारण अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरेजमे निकालकर ४ तह मलमलके कपड़ेमें बाधकर मिठीकेघड़ेमें मय-भर नालके मुंहपर इसे लटकादे और नीचे मिठीकाही घड़ालगकर मुंहबन्दकरदे और धीरे २ मयकेघड़ेमें नीचे आंचदे जिसमें कि मयनेकुहारे उसपोहलीपर लगालार पधतेरहे । यत्र इसतरहका वनावे कि आपाईकेकरावेमेंसे मयभरनेपर स्वयं निकलजाय और पीछेकेघड़ेमें समासहोनेपर दूसरीभरसके, आचवीचमें बन्द न करनी पड़े । ऐसे ७ दिनतक स्वेदितकर स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर एरण्डतैलमें डालकर बहुतमन्दाग्निसे सातरोजतक आचदे पर यह ध्यानरहेकि तैलमें आग न लगनेपावे । आठवे-रोज स्वाज्ञशीतलहोनेपर पारेकोतैलसे निकालकर रखलमें डाल बुचिला, मिलावा, निचौली, गृहरकादूध, पिस्ता, बादाम, चिरोजी, अखरोट, चिलगोजा, गोरुचन, मालकागनी, धतुरक-बीज, नाडुली ?, सपेदनकेलोजीज, अजमोद, जैनेफल, इनका पातालयत्रसे तैलनिकाल उसमें ७ दिनतक पारेको धोट । बचे-हुएतैलमें पारेकेरावर बजनाम, नथच और हरिनालको भावना देवे । फिर लौंग, जाविनी, जायफल, पीपल तथा शुद्धजमा

लगोटा ३-३ भाग, इनसबको भावना देकर पातालयन्नसे तैल निकालनर पूर्वोक्तपारदको इसतलमें ७ रोज मर्दनकर बराबरके जायफलकेसाथ धोटकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आचवीशीशीमें डालकर वालुकायन्नमेंरख १२ पहरकी जमाग्नि देवे । स्वाज्ञ शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ चावल गमयोचित अथवा तप्तद्रोणहरातुपानकेसाथ देनेमें यह मदात्यय, धय, श्वास, उन्माद और कासप्रयत्तिरोगोंको नष्टरताहै २१४

२१५ लवङ्गपाकः

प्रस्थमेकं लवङ्गस्य पिष्ट्वा दुग्धाऽऽढके क्षिपेत् ।
 घनीभूते च तस्मिन्स्तु शंकराप्रस्थमात्रकम् ॥ ९६३ ॥
 जातीफलञ्च कङ्गोलं कृष्णा शुण्ठी मरीचकम् ।
 त्रिफला रजनीयुग्मं वृष्टी तगरकेशरम् ॥ ९६४ ॥
 जातीपत्र्यश्वगन्धा च पीप्लवं त्रिफलं बलाम् ।
 अहिकेनं लवङ्गञ्च विषं गोक्षुरकं तथा ॥ ९६५ ॥
 कर्पूरं खुरसानञ्च चयकं नागकेशरम् ।
 एतानि कर्पमात्रानि चूर्णाकृत्य विनिःक्षिपेत् ॥ ९६६ ॥
 सूतं सूतं तथा त्राघ्रं शाणमात्रं क्षिपेत्सुधीः ।
 भक्षयेच्चुक्तिमान्स्तु गव्यं दुग्धं पिवेदनु ॥ ९६७ ॥
 तुष्टिः पुष्टिः प्रोक्तो वीर्यस्तम्भकरो मतः ।
 पञ्चकासं तथा पाण्डुं श्वासं गुल्मं प्रमेहकम् ॥ ९६८ ॥
 अश्मरी सूत्रकृच्छ्रं घातं हन्ति तथाऽऽर्जुदम् ।
 पित्तं प्रदरकुष्ठञ्च हिकानेत्रशिरोव्यथाः ॥ ९६९ ॥
 रसायनस., चि. र. म, र को., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ लवङ्गको ४ प्रस्थ दूधमें डालकर पकावे । गाटा होनेपर एकप्रस्थ शकर डालकर चाशनी तैयाकरे । फिर जायफल, शीतलबीनी, पीपल, सोंठ, मरिच, त्रिफला, हल्दी, दाहहल्दी, इलायची, तगर, केशर, जाविनी, असगन्ध, पीह करसूल, पियलामूल, बला, अफ्रीम, लौंग, शुद्धबलनाग, गोखर, शुद्धकपूर और खुरासानी अजवाइन, चय और नागकेशर १-१ कर्पका बारीकचूर्ण तथा पाद और ताम्रमस ४-४ माशोलेकर पूर्वोक्त चाशनीमें मिलाकर जमादे । इसमेंसे आपोतोलने २ तोलेतक यथाभिन्नलक्षकर गायकादूध पीनेसे तुष्टि, पुष्टि और वीर्यका स्तम्भन करताहै । पाचप्रकारकी खासी, पाण्डु, श्वास, गुल्म, प्रमेह, पथरी, सूत्रकृच्छ्र, बायु, अर्बुद, पित्त, प्रदर, कुष्ठ, हिचकी, नेत्र और शिरकेरोग इनतयमों यह नष्टरताहै ॥ २१५ ॥

२१६ लवङ्गादिचूर्णम् (वृहत्) (प्रथमम्)

लवङ्गं जीरकं कौन्ती सैन्धवं त्रिसुगन्धकम् ।
 अजमोदा यमाना च मुस्तकं सकटुप्रयम् ॥ ९७० ॥
 त्रिफला शतुपुष्या च पाठा भूमिष्वागधुरम् ।
 जातीकोपचक्रिदा र्वा नीलटं चन्दनं मुरा ॥ ९७१ ॥
 शटी मधुरिका मेथी द्रुणं टण्णजीरकम् ।
 शारद्वयं बालकञ्च त्रिल्वं पोप्लरकतथा ॥ ९७२ ॥

चित्रकं पिप्पलीमूलं विडङ्गं सधनीयकम् ।
 रसाऽप्रगन्धकं लोहं समं सर्वं विचूर्णितम् ॥ १७३ ॥
 उष्णोदकातुपानेन मन्दाग्ने दूर्घपनं परम् ।
 शीततोयाऽनुपाने वा बुद्ध्या दोषगतिं भिषक् ॥१७४॥
 आमातिसारप्रहणां चिरफालोत्थितामपि ।
 शूलं विष्टम्भमानाहं विस्वची शोथकामले ॥ १७५ ॥
 हलीमकं पाण्डुरोगं हन्ति कासं विशेषतः ।
 लघ्नाद्यं महत्चूर्णं शर्मिरासहितं पिबेत् ॥ १७६ ॥
 आध्मानं शमयेच्छीघ्रं लघ्नस्य्याऽनुपानतः ।
 अश्विभ्यां निर्मितं होतल्लोकाऽनुग्रहहेतवे ॥ १७७ ॥
 भै र , ग्रहण्याम् ।

भाषा—लौग, जीरा, रोग (पहाड़ी), मँधानमक, तज, पत्र, इलायची, अजमोद, अजवाइन, नागरमोथा, त्रिकटु, त्रिफला, सोंफ, पाठा, खिरायता, गोखल, जाविनी, जायफल, दाहदही, रस, चन्दन, सुरामासी, कचूर, सोआ, मेथी, मुना-सुहागा, स्याहजीरा, सब्जी, यवक्षार, मुगन्धवाला (तगर-गण्डोला), बेलगिरी, पोहङ्करमूल, चित्रककीजड़, पिपलामूल, विडङ्ग, धनिया, शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक और लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धकरी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशेकीमात्रा शकर-केसाय लेकर गरमपानी पीनेसे अग्नि प्रदीप्तहोताहै । पित्तप्रधा नरोगोंमें ठंडापानी पिलावे । इसके निरन्तरसेवनसे आमाति सार, पुरानी ग्रहणी, शूल, विष्टम्भ, आनाह, हैजा, शोथ, कामला, हलीमक, पाण्डु, कास, आध्मानप्रभृति समस्तरोप नष्टहोतेहैं । खड्गके अनुपानकेसाथ यह आध्मानको बहुत क्षीण नष्टरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ लघ्नादिचूर्णम् (वृहत्) (द्वितीयम्)

लघ्नातिविषा मुस्तं पिप्पली मरिचानि च ।
 सैन्धवं हपुषा धान्यं कदफलं पुष्करं तथा ॥ १७८ ॥
 जातीकोपफलाऽजाजी सौवर्चलरसाङ्गनम् ।
 धातकी मोचकं पाठा पत्रं तालीसकेदारम् ॥ १७९ ॥
 चित्रकञ्च विडङ्गञ्चैव तुर्गुरुर्विल्वमेघ च ।
 त्वगेला पिप्पलीमूलमजमोदा यमानिका ॥ १८० ॥
 समङ्गा वस्तकं गुण्टी दाडिमं यावश्शुकजम् ।
 निम्वं सर्जरसं क्षारं सामुद्रं तङ्गणन्तथा ॥ १८१ ॥
 हीचेरं कुटजञ्चैव जम्ब्याञ्च कटुरोहिणी ।
 अत्रकं पुटितं लोहं शुद्धगन्धरुपादम् ॥ १८२ ॥
 पतानि समभागानि श्लेष्मिणीं साध्निपातिकीम् १८३
 मधुना वा लिहेचूर्णं पिबेत्तण्डुलवारिणा ॥ १८३ ॥
 सर्वदोषहरञ्चैव ग्रहणां हन्ति दुस्तराम् ।
 घातिकीं पित्तीक्ष्णैश्चैव श्लेष्मिणीं साध्निपातिकीम् १८४
 पक्वाऽपक्वमतीसारं नानावर्णं सवेदनम् ।
 कृष्णाऽरुणञ्च पीतञ्च मांसधावनसन्निभम् ॥ १८५ ॥

ज्वराऽरोचकमन्दाग्निं कासं श्वांसं वर्मि तथा ।
 अम्लपित्तं तथा हिकामं प्रमेहञ्च हलीमकम् ॥ १८६ ॥
 पाण्डुरोगञ्च विष्टम्भमशांसि विविधानि च ।
 ग्रीहशुल्मोदरानाहशोथाऽतीसारपीनसान् ॥ १८७ ॥
 आमवातं तथा जीर्णं सङ्ग्रहग्रहणी जयेत् ।
 उदरं प्रदरञ्चैव लघ्नाद्यमिदं शुभम् ॥ १८८ ॥
 भै. र , ग्रहण्याधिकारे ।

भाषा—लौग, अतीस, नागरमोथा, पीपल, मरिच, सैन्धा-नमक, शाळ, धनिया, जायफल, पोहङ्करमूल, जाविनी, जाय-फल, जीरा, संचल, रसौत, धावडीकेफूल, मोचरस, पाठा, तेजपात, तालीसपत्र, नागकेसर, चित्रकमूल, विडनमक, तुम्बुल, बेलगिरी, तज, इलायची, पिपलामूल, अजमोद, अजवाइन, मजीठ, डुरैयासीछाल, सोंठ, अनारदाना, यवक्षार, नीमकीछाल, राल, सनीसार, समुद्रनमक, मुनासुहागा, तगरगण्डोला, इन्द्रजव, जासुन और आमकीगिरी अथवा छाल, कुटकी, अत्रक और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा येसब समभागलेकर बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतककीमात्रा मधुकेसाथ चाटकर ऊपरसे चाबलोंने धोवनकापानी पीनेसे दुस्तरसङ्ग्रहणी, सन्तरहका अतिसार, ज्वर, अहचि, मन्दाग्नि, कास, श्वास, बमन, अम्लपित्त, हिकी, प्रमेह, हलीमक, पाण्डु, विष्टम्भ, "नाना-तरहके बवाधीर, प्लीह, शुल्म, उदररोग, आनाह, शोथातिसार, पीनस, आमवात, अजीर्ण, सङ्ग्रहग्रहणी, प्रदर इनसबको यह नष्टरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ लघ्नादिचूर्णम् (तृतीयम्)

लघ्नं तङ्गणं मुस्तं धातकी विल्वधान्यकम् ।
 जातीफलं सर्जकञ्च शताह्ना दाडिमन्तथा ॥ १८९ ॥
 जीरकं सैन्धवं मोचं नीलोत्पलरसाङ्गनम् ।
 अत्रकं धङ्गकञ्चैव समङ्गा रक्तचन्दनम् ॥ १९० ॥
 विष्वञ्चाऽतिविषा शृङ्गी खदिरं वालकं समम् ।
 पतचूर्णं प्रदातयं सङ्ग्रहग्रहणीहरम् ॥ १९१ ॥
 नानावर्णमतीसारं ज्वरञ्चैव नियच्छति ।
 आमरक्ताऽतिसारञ्च शूलशोथनिषुदनम् ॥ १९२ ॥
 भृङ्गराजरसेः प्लाव्यं भावयित्वा दिनत्रयम् ।
 छागीदुग्धेन मतिमान्नाभिणीमनुपानतः ॥ १९३ ॥
 भै र , गर्भिणीरोगाऽधिकारे ।

भाषा—लौग, मुनासुहागा, नागरमोथा, धावडीकेफूल, बेलगिरी, धनिया, जायफल, सपेदराल, सोंफ, अनारदाना, जीरा, सैन्धानमक, मोचरस, नीलोपर, रसौत, अत्रक और वामभस्म, लज्जाल, लालचन्दन, सोंठ, अतीस, काकड़ासींगी, खैर, मुगन्धवाला सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक अम्लपल देखकर उचितानुपानके-साथ देनेसे सन्तरहके अतिसार, ज्वर, शूल, शोथ, इनसबको

यह नष्टकरताहै । इनको भंगरेनेरखते ३ रोज़ भावनादेकर बकरी-
नेहूचकेमाय वनेसे गमिणीके तमासरोगोको दूरकरताहै ॥ २१८ ॥

२१९ लघुद्वादिवर्ती

लघुद्वाजातीफलधान्यकुण्डं जीरद्वयं त्र्युपणत्रैफलञ्च ।
पलात्सर्वं टडुक्वराटमुस्तं वचाऽजमोदं चिडसेन्धवञ्च
तद्वर्द्धकं पारदगन्धमन्त्रं लौहञ्च तुल्यं सुविचूर्णं सर्वम् ।
तन्नागवह्नीदलतीयपिष्टं बह्वप्रमाणा वटिकाश्च कृन्वा
प्रातर्विदध्यादपि चोष्णतोये

रियं निहन्त्याहहणीचिकारम् ।

आमाऽनुबन्धं सरजं प्रवाहं

ज्वरं तथा श्लेष्मभयं सशूलम् ॥

कुष्ठाऽम्लपिचं प्रयत्नं समीरं

मन्दानलं कोष्ठगतञ्च यातम् ॥ २१९ ॥

र. सं., अजीर्णाऽधिभारे ।

भाषा—सौं, जायफल, धनियां, कुठ, स्याह-सफेदबीरा,
त्रिकटु, त्रिफला, इलायची, तब, शुनायुहागा, कौड़ीमसम,
नागसोया, वच, अनमोद, विडनमक, संधानमक येसब सम-
भाग, इनसबसेआधी शुद्धपारेगन्धककीनीलवर्णकज्जली और
अप्रकमसम तथा सषडीबराबर लोहमसम डालकर अच्छीतरह
मर्दनकर रखाजोहे । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा उचितानुपान-
केयाप अथवा गरमपानीसे देनेसे ग्रहणी, पुरानाआम, पीडा-
युक्तप्रनाहिका, कफ औरशूलयुक्त ज्वर, पुष्ट, अम्लपित्त, प्रबल-
वात, मन्दाग्नि, कोष्ठवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० लघुनपाकः (प्रथमः)

रस्तीनकं प्रस्थमितं विमृद्य

दुग्धामेषोनापि विपाच्यमानम् ।

गुल्वाऽम्लकं लोहरसं लघु-

कर्षुमाकञ्जकमभ्यगन्धा ॥ २२० ॥

द्विनिद्रा नागरं नागकेसरं त्रिफला समम् ।

जातिपत्री जातिफलं मागधी मरिचं ममम् ॥ २२० ॥

प्रस्थकालण्डसहितं हरते समीरं,

गुल्मवषयां विपमसर्वसमीरणार्तिम् ।

मन्दाग्निशूलरुफहृद्दन्नाशकारि,

पाचः स्मृतः सुफयिना च रस्तीनकस्य ॥ २२० ॥

रसायनसं, वातघ्नान्धधिकारे ।

भाषा—एकस्थ एकतोती छिलेनुए लघुनके बारीकदूधके-
र १ टोलेनुमें पचाये । नागहोनेर ताम, अषष्ट, कोह
और पारा इतकीभस्में, सौं, शुद्धदूर, कटुकरा, अशगन्ध,
हृदी, दारदरी, कोठ, नागधेयार, त्रिफला, जातित्री, जायकत,
पीपल और मरिच १-१ तोला और घनर १ द्रव्य केकर
मासेमें मिठाकर रखाजोहे । इसमेंसे १-१ तोला अपरा दवा
मिश्रण सेवनकरनेसे प्रबलवात, शुन, विपनवात, मन्दाग्नि,
दन्, कफ, द्रोण इतसनको यह नष्टकरताहै ॥ २२० ॥

२२१ लघुनपाकः (द्वितीयः)

निस्तुपं लघुनं कृत्वा रात्रौ तत्रे चिनिःक्षिपेत ।
तदुग्रगन्धनाशाय प्रातःप्रांरं जलाप्लुतम् ॥ २२० ॥

प्रस्थमात्रनु तत्पिप्ला क्षीरप्रस्थचतुष्टये ।

विपाच्य सान्द्रोभूतेऽस्मिन् सर्पिपः कुडवं क्षिपेत् ॥

रास्ना सहचरी छिन्ना शर्डी यिथ्वा मुष्टमम् ।

गुद्धदारकदीप्याग्निशतहासुपुनर्वाः ॥ २२० ॥

फलत्रयं पिपली च कृमिघ्नः कर्मममितम् ।

विचूर्णं कुडवं शीते मधुनस्तत्र योजयेत् ॥ २२० ॥

सिताप्रस्थचतुष्पञ्च पञ्जलोहरमेन्द्रकम् ।

कर्पूरं भृगुनाभिञ्च यथालाभं विमिश्रयेत् ॥ २२० ॥

पालिकां भक्षयेन्नामामाद्यवातहनुग्रहं ।

आक्षेपकादिभङ्गेषु कटथस्तम्भमुग्रहं ॥ २२० ॥

सर्वाङ्गे सन्धिभङ्गं च प्रबले मारते हितः ।

लघुनस्य सुपाकोऽयं वर्णायुःपुष्टिकारकः ॥ २२० ॥

पा. व., रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ एकतोतीछिलेनुए लघुनको रातको
छाछमें डालकर रखदे । मुग्रहमें घोकर अन्दरका अङ्कुर निदान
बारीकीससत्र ४ प्रस्थहृयमें डालकर मन्दाग्निमें पचाये । गास-
होनेर ४ प्रस्थ शकर और पावकर की डालकर पाककरे ।
लङ्किकी चासनी होनेर उतारकर रगले । उजमें राम्रा, पियारास,
मिलोय, कचूर, सोंठ, देवदाह, विषास, अजवान, चिरकटु,
सौंफ, पुनर्वा, त्रिफला, पीपल, विडड, पांचोलेह और
पारदभस्मका षण्डानकियाहुआ १-१ कप चुनं मिठावे ।
एकदम ठंडाहोनेर पानभर वाहर तथा शुद्धकचूर और क्यूरी
दयाशचि मिठाकर रखले । इसमेंसे १ तोलेनेकेकर ४ तोलेपर
औरकिनी देखकर राममेंसे उरन्तम्भ, हनुग्रह, आशेष, लहना,
दु गदुदियुक्त उरन्तम्भ, सर्वांतवात, सन्धिभङ्ग और प्रबल
वातवेदना इनसबको यह नष्टकर घने और पुष्टिको करताहै २२१

२२२ लहरीतरङ्गरसः

मृत्तान्नाऽयोऽकेयद्धानां गुद्धपाटगन्धयोः ।

पञ्चविंशतिभागाः स्युः पृथक् पञ्च विपस्य च १००३

नवसारकृताः पञ्च भागा हाद्दा टडुपात् ॥

मानयो द्रुगमृत्प्याश्च भावयेत्कन्यकाटयेः ॥ २२० ॥

पक्षिंशतिवापांश्च तापदाईकजे रमेः ।

सप्तधा भूतेनेन तथा कन्यारसेन च ॥ २२० ॥

काचपृष्ठाश्च मेघद्वयं चालुकायन्त्रं पचेत् ।

यामहादनाकं यापन्त्याद्गर्शाते स्ममुदरेत् ॥ २२० ॥

गुग्गुलुयं प्रयं वापि यथायोग्यश्च भक्षयेत् ।

सत्रिंशत्तराङ्गानि राजपदमानुपुत्रणम् ॥

योगी श्लाघात्न-उहरीतरङ्गोऽयं महारसः ॥ २२१ ॥

र. मु., नं. गा., यो. स., गमिणी ।

भाषा—अन्नक, लोह, ताम्र, वज्र, इनकीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक २५-२५ भाग, शुद्ध बलनाग और नवसादर ५-५ भाग, मुहागा और दालचिकना १२-१२ भाग लेकर वारीक-चूर्णकर पारिगन्धकनी नीलवर्णककलीमें मिलाकर पीडुंवार और अदरखके रससे २१-२१, धतूरेकेल और पीडुंवारके रससे ७-७ भावनाएँ देकर अच्छीतरह सुखाकर ६-७ कपडमिठी दीहुई आतशीशीशीमें भरके वाङ्कान्यत्रमें रख सुंढवन्दकर १२ पहकी कमाभि देवे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे २ से ३ रत्तीककी मात्रा औचित्य देखकर खिला नेमे सत्रिपात, यद्वाहुआराजयक्ष्म, इनसवको यह नष्टकरताहै ०२२

२२३ लक्ष्मणालोहम् (प्रथमम्)

लक्ष्मणायाः पलशतं काथयित्वा यथाविधि ।
 काथे पूते पुनः पके घनीभूते च निःक्षिपेत् ॥१०१२॥
 अशोकं कुशमूलञ्च मधुकं मधुकं यलाम् ।
 पाठां विल्वं पलोन्मानं लोहं सर्व्वलम् तथा ॥ १०१३ ॥
 लक्ष्मणालोहनामदं भेषजं स्त्रीगदापहम् ।
 जगतामुपकाराय दन्नाभ्यां परिनिर्मितम् ॥ १०१४ ॥
 शै. र., स्त्रीरोगाधिकारः ।

भाषा—लक्ष्मणाकापत्राङ्ग १०० पल लेकर चतुर्गुणित-पानीमें काथकरे । चतुर्धाशोधनेपर रहनेपर मसलकर छालकर फिरसे पकावे । फल तैयारहोनेपर अशोककीछाल, कुशकीवड, महुएकाहीर, मुलढी, बला, पाठा और वेलगिरी १-१ पलका वारीक चूर्णकर इसवीबराबर लोहमस लेकर सबको सिद्धकिये-हुए धन्ये मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ४ रत्तीसे १ मासेतक-कीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह बिनियोंके समस्तरो-गोंको दूरकरताहै ॥ २२३ ॥

२२४ लक्ष्मणालोहम् (द्वितीयम्)

लक्ष्मणाहस्तिरुणाभ्यां त्रिकत्रयसमन्वयात् ।
 अश्वगन्धासमायोगाह्नीहं पुंसघनं स्मृतम् ॥१०१५॥
 पुषोत्पत्तिकरं सूर्य्यं कन्यासूतितिवर्तकम् ।
 कृशस्य यलदं श्रेष्ठं स्यामियहरं परम् ॥ १०१६ ॥
 शै. र., र. सु., शूद्राधिकारः, वाजीकरणे

भाषा—लक्ष्मणा, हरितिकर्णपलाय, त्रिकटु, त्रिफला, त्रिज्वत और अश्वगन्ध समभाग लेकर सबकी बराबर लोहमस मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे ३ रत्तीसे १ मासे लक्ष्मीमात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह प्रमूतिरोगको दूरकरताहै । कृशको बलिष्ठ बनाताहै और समस्तरोगोंको नष्टकरताहै । इसकेसेवनसेकन्याओंकी उत्पत्ति बन्दहोकर पुत्रोत्पत्तिहोतीहै ॥ २२४ ॥

२२५ लक्ष्मीकान्तरसः (प्रथमः)

कान्तं सृतं ताप्यपापाणगन्धं
 प्राह्ये वीजं मर्दयित्वा धमेत ।

गोलान् कृत्वा वेष्टयित्वा मुदाद्यै-
 ध्मापेत्यश्वाच्छोधयेत्क्षारकाद्यैः ॥१०१७॥
 कान्ताश्माक्षं यज्ञमूर्त्तं प्रलिय्य
 सृतं दद्यात्पोडशांशश्च हेम ।
 ध्मापेद्वाहं सूतराजे तु दद्या-
 ज्जीर्णं श्रासे श्रासमन्यं तथैव ॥ १०१८ ॥
 एवं तुल्यं पद्भुणञ्चापि जायं
 सूते वीजं ताप्यसत्त्वेन तुल्यम् ।
 नं सूतेन्द्रं कच्छपे यद्वराजे
 शुद्धे सृतं जारयेत्सुर्य्यभागम् ॥ १०१९ ॥
 तं सूतेन्द्रं जारयेद्धेमगर्भे
 लक्ष्मीकान्तः सूतराजोऽथ मिद्धः ।
 तुषे शम्भौ जायते लक्ष्मणेष्ठी
 चन्द्राऽकांऽसौ ताप्यसत्त्वेन युक्तः ॥
 वन्त्रे गोलं धारयेत्सुरैकं
 तुषे शम्भौ देहसिद्धिं ध्रुवा स्यात् १०२०
 र. दी., वाजीकरणे ।

भाषा—कान्तलोह, पारा, सोनामाखी, गन्धक सब सम-भागलेकर पलाशकी फलियोंकेस अथवा काथसे १-२ दिन मर्दनकर गोलिया बनाय ऊपर कालीमिठी पोतकर सुखादे । सुलनेपर सतरपातनयत्रमें रखकर धमनकरके सत्वपातनकरे । सत्वको मुहागावगैरह देकर मलसे रहितकरले । फिर इसका चूर्ण बंधेकेसाथ मिलाकर पानीमें सरलकर बज्रमूर्त्तमें लेपदेकर सुसुक्षितपारा डालकर १६ वा हिंसा सुवर्णबीजदेकर गाडधमन-करावे । सुवर्णबीजहोनेपर दूसरा श्रास देकर जीर्णकरे । इसतरह बराबर अथवा पद्भुण पारेमें बीजका जारणकर पारावका सुवर्णमाक्षिकसत्व मिलाकर रखले । फिर कच्छपयत्रमें अग्नि-ध्यायी और सुसुक्षित शुद्धपारेको रख ऊपर रखनेहुए ताप्ययु-क्तपारेका चतुर्धा जारणकरे और इनपारेको हेमगर्भपारेमें जारण करे यह लक्ष्मीकान्तपद तैयारहुआ । यह किया शिव-जीके प्रथम होनेपर होसचौहै अन्यथा नहीं । यह रस माक्षि-कसत्त्वेनाप देनेसे यन्दक्रिया अथवा सूर्य्यक्रियामें लक्ष्मणित-धातुको रूपान्तरमें परिणतकरताहै । उपरकेहुए लक्ष्मीकान्त-रगके पिण्डको एववर्णमें लगातार सुंढमें रखनेसे देहसिद्धिहोतीहै ।

२२६ लक्ष्मीकान्तरसः (द्वितीयः)

शुद्धौलायां पूरयेत्सूतराजं पिष्टीभूतं यज्ञगर्भेण हेन्मा ।
 मासाह्येधो यत्रतत्र द्विमासाद्बद्धं यत्नात्सूतराजं प्रग्रह्य
 ध्मापेत्यश्वापिमिलः सुकृतुल्यः
 सूतः खोटी जायते लक्ष्मणोकः ।
 उक्ताभ्यागन्मारितो जातिःऽसौ
 सूते वीजे सारितः पूर्व्वतुल्यः ॥ १०२२ ॥
 र. दी., वाजीकरणे ।

भाषा—पूर्व्वपर पारा, सुवर्णमाक्षिक, गन्धक, हीरा और सुवर्ण समभाग मिलाकर पलाशबीजोंके सत्व अथवा काथसे

एकदोदिन मर्दनकर छोटी २ गोलिया बनाय सुनाकर काली-
मिठीसे पोतदे । सुखनेपर हठधमन कराके सत्रनिकाले । इस-
सत्त्वमे मुद्गाने वगैरहोये शुद्धर इसके करावर बहेडेका नूण
मिलाय बज्रमुपारमें लेपर हीरेकामत्त और सुवर्णमिलानेसे-
पिठीमूत अमिस्थायी और सुभुक्षितपारेको डालकर एक या दो
महीनेतक प्रतीधारने । दियेहुए प्राणकी एकताहोनेपर धमन-
रावे । ताव आनेपर यह शुनके सद्य शुभहोजायगा श्मपारेका
चौथा हिल्ला शुद्धभुक्षित और अमिस्थायी पारमें जारणने
पर इसपारेको पूर्वपरिष्कृतपारमें जारणकरनेमे साणतिलसे
सारणमंस्कार देनेपर यह सूर्य और चन्द्रक्रियामें लक्ष्येयी
होताहै । माक्षिस्रवनेमाथ इसकागोलाबनाय एकपंक्त निर-
न्तर सुम्भेरग्नेसे श्वसे देहसिद्धि होतीहै ॥ २२६ ॥

२२७ लक्ष्मीकान्तरसः (तृतीयः)

ताप्यं गन्धं क्षारकान्ताऽश्मतालं
निम्भूतोयै मर्दयित्वा विलिप्य ।
तद्भट्ट भ्रापाद्रस्मतामेति सूतं
गन्धं तुल्यं तेन कृत्वाऽम्लयुक्तम् ॥
हेम्रः पत्रं लेपयित्वा पुष्टे
भस्मीभूतं जायते तारमेवम् ॥ १०२३ ॥

र. दौ., वाजीकरणे ।

भाषा—सौनामानवी, गन्धक, मुद्गागा, सजी, यवक्षार,
कान्तपाषाण और हरिताल सजसभागलेकर नीचूकेरसमे १-२
रोजमर्दनकर बज्रमुपारमें लेपर शुद्ध और अमिस्थायी सुवर्ण-
दिवीजसे पिठीइतपारेको डालकर हठधमनकरानेसे पारदभस्म
होतीहै । श्मभस्मनीकरावर शुद्ध गन्धकको नीचूप्रकृति अम्लमे
मर्दनकर सुवर्ण अथवा रजनेकेपत्रपर लेपदेकर द्रावणमण्डुकर
गजपुष्टी आवेदनेसे उत्तमभस्म होतीहै । श्वसे आधीरतीसे
एकरतीतक समयोचितानुपाननेसाथदेनेसे यह समस्तारोगोंको
दूरकरताहै ॥ २२७ ॥

२२८ लक्ष्मीनारायणरसः (प्रथमः)

शुद्धगन्धकमेतच्च टङ्कणं विपहिङ्गुलम् ।
रोहिण्यतिविषया कृष्णा वत्सनाऽन्नकसैन्धवम् १०२४
एतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
दन्तीद्रावैः फलद्रावैर् मर्दयेच्च दिनजयम् ॥ १०२५ ॥
यल्लह्यां वटी कृत्वा आर्द्रकस्य जले दैदेत् ।
दुष्टज्वरे सन्निपाते विस्त्र्यां विपमज्वरे ॥ १०२६ ॥
अतिसारे प्रहण्याश्च रसामे मेहशूलजित् ।
मृतिकावातदोषांश्च लक्ष्मेश्मिन् राघवः ॥ १०२७ ॥
इष्टान्नं भोजयेत्पथ्यमभ्यङ्गं स्नानमाचरेत् ।
कर्पूरयुक्ताम्बूलं प्रसूनं हरिचन्दनम् ॥ १०२८ ॥
नारिकेलोदकं पीत्वा नारीणां सङ्गमेव च ।
लक्ष्मीनारायणो नाम रसानामुत्तमो रस ॥ १०२९ ॥
यो. र., र च., वातरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक, मुद्गागा, वटनाग और शिपारिफ,
उदकी, अतीस, पीपल, इन्द्रज, अश्रकभस्म, संधानक सत्र
समभागलेकर वारीकचूर्णपर दन्तीमूल और त्रिकलाके वाद्यमे
२-३ रोज मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रगजोड़े ।
इतनेमे १-१ गोली अरुखकेसाथ देनेमे दुष्टज्वर, सन्निपात,
हैजा, विपमज्वर, अतिसार, प्रहणी, रक्षातिमार, प्रमेह, शूल,
सुतिमारोग वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै । भूखलानेपर
शुष्ट और पच्य भोजन देवे । लडेजलसे स्नान, बधूयुक्ताम्बूल,
पूलोंकीमाला, चन्दनलेप, नारियलफाणी, खीमूद्गास इनका
सेवनकर ॥ २२८ ॥

२२९ लक्ष्मीनारायणरसः (द्वितीयः)

पलानां द्विशतं सूतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
शङ्खद्रावसमाशेन द्वौ मासौ मर्दयेच्छुभेः ॥ १०३० ॥
अथ प्रक्षालयेत्सूतं तोयैस्त्रिशतवारकम् ।
तत्सूतं चामृतसमं सर्वकञ्चुकवर्जितम् ॥ १०३१ ॥
अष्टादशस्वमंस्कारैः शोधितं शास्त्रमार्गतः ।
तं रसेन्द्रं भाण्डमध्ये निक्षिप्याऽथ पवेन्द्रियक् १०३२
निगन्तरमहोरात्रं भन्दमध्यखराग्निना ।
मासान् पञ्च विधानेन गन्धकं प्रासमर्पयन् ॥ १०३३ ॥
गन्धकं शुद्धिमापकं मृशमचूर्णं विधाय च ।
भारमानन्तु सद्गृह्य जीर्णैर् जीर्णैः सुहृः क्षिपेत् ॥ १०३४ ॥
अथ तत्स्वाङ्गसंशोतं खल्वमध्ये विनिःक्षिपेत् ।
पोडशोपचारैश्च पूजयित्वा जनार्दनम् ॥ १०३५ ॥
शतचरीमद्रससे मर्दयित्वाऽथ भावयेत् ।
मणिञ्च गारुडं नीलं वैदूर्यं वज्रमौक्तिकम् ॥ १०३६ ॥
गोमेदकं पुष्परागं राजावर्तं प्रवालकम् ।
चन्द्रकान्तं सूर्यकान्तं नीलाञ्जनरसाञ्जने ॥ १०३७ ॥
वराटशङ्खशुक्तीश्च विमलां माक्षिकद्वयम् ।
चतुर्विधञ्च पाषाणं त्रितुल्यं टङ्कणद्वयम् ॥ १०३८ ॥
विपत्रयं सुवर्णञ्च वैकान्तं कान्तलोहकम् ।
अन्नकं रजतं वज्रं नागं कांस्यं सुरीतिकाम् ॥ १०३९ ॥
खपरं कान्तपाषाणं शोधितं विधिपूर्वकम् ।
तत्सर्वं भस्मसात्कृत्वा गन्धकं तालकं शिलायम् ॥ १०४० ॥
मृगनाभिञ्च कर्पूरं काश्मीरं गोमती क्षिपेत् ।
प्रत्येकं मानिकायुग्मं द्वौ मासौ तद्विमर्दयेत् ॥ १०४१ ॥
हीरोरुमुन्वरोशीरकदलीचन्दनद्रव्यैः ।
हिमास्तुभिश्च प्रत्येकं प्रस्थमात्रे विमर्दयेत् ॥ १०४२ ॥
अक्षमात्रां वटीं कृत्वा लायाशुष्काञ्च कारयेत् ।
सर्वमेकत्र संयोज्य ताम्रपात्रे सखके ॥ १०४३ ॥
पूजयेदुपचारैश्च लक्ष्मीनारायणं स्मरन् ।
धूपद्वीपैश्च नेवैद्यैस्ताम्बूलं दक्षिणादिभिः ॥ १०४४ ॥
वेण्णवेन विधानेन होमं तत्र च कारयेत् ।
वेदधोयं प्रकुर्यात् स्वस्तियाचनपूर्वकम् ॥ १०४५ ॥

दद्याद्दानानि विप्रैर्भ्यो यथाविभवमाचरेत् ।
 धनं शय्यां मणिं छत्रं कपिलां धेनुमेव च ॥ १०४६ ॥
 ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चात्तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ।
 तत्कर्तारश्च भिषजः पूजनीया विशेषतः ॥ १०४७ ॥
 एतद्दान्यपुटे स्थाप्यं मासमात्रात्समुद्धरेत् ।
 पूर्ववत्पूजयित्वाऽथ सेवयेत्समुद्धरेत् ॥ १०४८ ॥
 एककालं द्विकालं वा चतुर्गुञ्जाप्रमाणतः ।
 पतस्य चाऽनुपानन्तु लक्ष्मीनारायणं घृतम् ॥ १०४९ ॥
 अथवा तु यथासात्म्यमनुपानं प्ररूपयेत् ।
 एतदेवि महालक्ष्मीनारायणरसो मतः ॥ १०५० ॥
 चिरस्त्रीपुंसवन्व्यत्वं नष्टौजस्यश्च नाशयेत् ।
 पुनोत्पत्तिकरं नृणां जरामरणनाशनम् ॥ १०५१ ॥
 महार्थिश्चशतिसहस्रधाकानदमरीपिटिकाप्रणान ।
 विंशतिं कुष्ठरोगाणां राजयश्मदिकान् क्षयान् १०५२
 पित्तजानखिलाप्रोगान् प्रणान्वे सर्वसन्धिजान् ।
 श्लेष्मजांश्चासकासादीन् गुल्मानां पञ्चकं तथा १०५३
 अशांसि पट्टप्रकाराणि जलोदरमहोदरम् ।
 अशांतिं वातरोगाणां ज्वरांश्च विविधानपि ॥ १०५४ ॥
 मूच्छांरोगमपस्मारं प्रमेकश्च भगन्दरम् ।
 जिह्वारोगांश्च विपजानन्यांश्च प्रहजानादान् ॥ १०५५ ॥
 इत्येतामिषितिलाप्रोगान्नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
 दण्डवृद्धिकरं नृणां धीर्यवृद्धिकरं तथा ॥ १०५६ ॥
 लक्ष्मीनारायणो नाम रसोऽयं लोकरूपितः ।
 पूर्वं शिवेन कथितं पाठयेत् तद्रसायनम् ॥ १०५७ ॥

र. व. यो. वाजीकरणे ।

भाषा—२०० पल पारेको मनुवृत्पत्थकी रसलमे डाल-
 कर बराबरका तीक्ष्णशहदाव देकर दोमदीनितक मर्दनकर ३००
 वार गरमपानीसे धोवे । इततरहकरनेसे यह पारा समस्त-
 कबुक्तियोंसे दूरहोकर अथवा सदृशहोजाताहै । जहांपर पारदके
 विशेष संस्कार न करावे वहापर दसपारेसे कामलेवे अथवा
 अष्टादशसंस्कारपर छात्रमार्गसे शुद्धकियाहुआपारा लेहर मज-
 वृत्तमिथैवेतनेमें डालार निरन्तर मन्द, मध्य और सर
 अग्निते पांचमदीनेतकरपावे । इसमें शुद्धकिंचेहुए गन्धरका
 चूर्ण २००० पल लेहर थोडा २ डालताजाय । एसे समस्त-
 गन्धक जाणहोनेसेपाद पारेको स्वाहसीतल्लहोनेपर निकालकर
 रखलोकै । फिर पोथ्योपचारसे जशार्दनभगवानका पूजनकर दता-
 परीके स्वच्छरससे एकरोज मर्दनकर पत्ता, नीलम, लयनियों,
 हीरा, मोती, सोमेर, पुसराज, लाजवरे, प्रगल, चन्द्रकान्त,
 सूर्यकान्त, नीलाग्रज, रसाग्रज, कौडी, शूद्र, सीप, रौप्यमा-
 शिक, स्वर्णमाशिक, काश्यमाशिक, माणिक, स्वटिक, माज-
 राज, परीरोजा, तृतिया, दानेफिरक, कमीग, दोनांसुहाग,
 तीनप्रकाशेविष, सुरगे, बैरान्त कान्तल्लोह, अन्नक, रत्न,
 वर, नाग, कांस्य, पीतल, रापरिया, कान्पापाण इनवर्षी
 भस्मे, शुद्धगन्धक, रगमाजिक्य, भनमिड, कन्तूरी, कपूर,

केसर, गोरोचन सेसव १०-१० मांगेलेकर बारीकनूर्णकर
 पारा-गन्धक, हरिताल और मैनसिलरी नीलेवर्णकबलीमें
 मिलाकर सुगन्धवाला, पूलरीडाल, राग, केलेमाकन्द, चन्दन
 और कपूर इनके १-१ प्रमथ प्रयोगे मर्दनपर छोटदराअनारवर
 गोलिया बनाकर छायाशुल्कर तापेकेपात्रमें मुहन्दर रख-
 छोडे इसकेसेवनकेसमय लक्ष्मीनारायणका ध्यानकरताहुआ-
 भूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल और दक्षिणाओंमें पूजनपर वेणु-
 विविधे होमकर वेद्वचन और स्वस्तित्वाचनकराके अपनी
 शकलनुसार ब्राह्मणोंको वस्त्र, शय्या, मणि, छत्र और गौबैंग-
 रह दक्षिणादे । इनरसके बनावेवाले वैद्यका पूजनकर उस ताम-
 सम्पुद्रो धान्यराशिमें रखदे । एमहीनेनेपाद निकालकर पूरे-
 वत् पूजनपर फिर उसतामसम्पुद्रो धान्यराशिमें रखदे । एह-
 महीनेनादनिनालकर पूर्ववत् पूजनपर अच्छेमुहूर्तमें प्रारम्भपर
 दिलमें एकसमय सा दोवार ४-४ रत्तीकीमात्रा लक्ष्मीनारायण-
 वत् अथवा समयोचिनानुगानकेमाथ मेवनरनेसे बहुतदिनका
 स्त्री और पुरुषोंका वासपन, ओजग अभाव, बुद्ध्या, बीसप्र
 कारके प्रमेह, पयरी, प्रमेहपिडिसा, २० प्रकारके कुष्ठ, राजयश्म,
 क्षय, समस्त पित्तरोग, समस्तसन्धिजन्य, काशधासादिक कफज-
 रोग, पाचगुल्म, ६ प्रकारकेअर्थ, जलोदर, ८० वानरोग, समस्त-
 ज्वर, मूच्छा, अपस्मार, प्रमेक, भगन्दर, जिह्वारोग, विपज, प्रहान,
 अण्डरूढि इननरोगोंको यह लखरपुष्पत्वका पीदाकरताहै २२९

२३० लक्ष्मीनारायणरसः (तृतीयः)

लक्ष्मीनारायणं यस्ये दुर्लभं त्रिदशैरपि ।
 सर्वरोगोपशमनं देहसिद्धिकरं परम् ॥ १०५८ ॥
 शान्त्वेयं पुरयो लोके हामरत्नाय कल्पते ।
 जरामरणनिमुक्त आधिपत्याधिविजितः ॥ १०५९ ॥
 रसभस्मपलेकन्तु गन्धमातु पलप्रथम् ।
 अम्रलोहमुषणोतां भस्म चैकेकदाः पलम् ॥ १०६० ॥
 वज्रकान्तप्रपादानां भस्म त्वेकं पलं पृथक् ।
 शिलावराटमुक्तानां पृथग भस्म पलं पृथक् ॥ १०६१ ॥
 पलंपलं पृथग्रौप्यं सुजङ्गवद्भ्रजं रजः ।
 द्रदातपलमेकन्तु विपं त्रिपलसम्मिमतम् ॥ १०६२ ॥
 एवं भस्मानि सहस्र मयाण्येकत्र कारयेत् ।
 शाकवृक्षस्य निपासि मर्दयित्वा दिनप्रथम ॥ १०६३ ॥
 पुनश्चेयं पुटे दद्यात्पुटसहस्रैकविंशतिः ।
 चित्रकाद्रकनिगुण्डैस्सुवर्णादिपुमाकर्यैः ॥ १०६४ ॥
 विप्रातकन्दमिकद्रलुकांश्च भांययतिद्रदाः ।
 मत्स्यमाहिप्रमापूरकोलकुपुट्टपित्तकैः ॥ १०६५ ॥
 गरलेनाऽकंपयसा प्रत्येकं भांययतिद्रदाः ।
 ततः कच्छपयन्त्रे तु विपंगुणामधो न्यनेत् ॥ १०६६ ॥
 ऊर्ध्वपात्रं प्रयनेत् रग्नेनाऽनेन लेपयेत् ।
 मन्घिलेपः प्रकतंत्र्यां मृदा कर्पटकेन च ॥ १०६७ ॥
 ततस्तु पूजयेद्यन्त्रं वनपुष्पैः सुदांभनेन ।
 गणेशपूजनश्चाहो दुर्गा विष्णुश्च पञ्चमेन ॥ १०६८ ॥

कुमारीं पूजयेत्पश्चात्पायसैर्भधुसर्पिणा ।
 ततो यन्त्रं समारोप्य चुल्लिकोपरि यततः ॥ १०६९ ॥
 दीपाग्निस्तत्र कर्तव्यं याममेक विचक्षणैः ।
 स्याद्गृहीतं समुद्रतः तद्यन्त्रं चोद्विषेत्पुनः ॥ १०७० ॥
 अनेन विधिना सम्यक् प्रयुक्तो रसकोविदैः ।
 वैद्यानाञ्च नृपाणाञ्च रसज्ञानां कलाविदाम् ॥ १०७१ ॥
 सर्वेषाञ्च मनुष्याणां चमत्कारां भवेत्क्षणात् ।
 गुञ्जामाप्रमयं दत्तो ह्यनुपानविशेषतः ॥ १०७२ ॥
 अनेन विधिना सम्यग्रसो भवति सिद्धिदः ।
 जलयोगः प्रकर्तव्यो यावत्कम्पः प्रजायते ॥ १०७३ ॥
 ततः पथ्यं प्रदातव्यं शर्करादधिभक्तकम् ।
 चन्दनैर्लेपयेद्गङ्गा कर्पूराऽऽगुरुमिधितैः ॥ १०७४ ॥
 तालघृन्ताऽनिलो देवो यावद्भवति विञ्चरः ।
 उन्मादं दन्तबन्धञ्च मौढ्याऽपस्मारतन्द्रिकाम् ॥ १०७५ ॥
 गानाणाञ्च तथा शैत्यं तत्क्षणाच्छमयेद्रसः ।
 अशीतिं वातजाग्रोगाञ्चत्वारिंशच्च पित्तकान् ॥ १०७६ ॥
 विशतिं श्रेष्ठजाम्बूञ्चैव द्वन्द्वजाञ्च विशेषतः ।
 अष्टादशैव कुण्डानि तथा कासक्षयावपिः ॥ १०७७ ॥
 श्वासकासां तथा शार्कं कामलाञ्चैव पाण्डुताम् ।
 प्रमेहविशतिञ्चाऽपि घ्नानानां विशतिं तथा ॥ १०७८ ॥
 एवं पञ्चविधानोपान्युल्मस्याऽपि तथैव च ।
 पङ्क्तिभ्यान्पि चाशीतिं ग्रहणीनां चतुष्टयम् ॥ १०७९ ॥
 अथुदं गण्डमालाञ्च विद्रधिञ्च भगन्दरम् ।
 एतेन पङ्क्तिना रोगा चिन्त्यन्ति रसेन वै ॥ १०८० ॥
 लक्ष्मीनारायणो नाम रसो लोकोत्तरः स्मृतः ।
 यथा सर्वेषु देवेषु देवो नारायणः स्मृतः ॥ १०८१ ॥
 तथा रसेषु सर्वेषु लक्ष्मीनारायणो मतः ।
 रूपया परया देवि कथितस्तव्य पार्वति ॥ १०८२ ॥
 न चाऽस्य शम्यते वक्तुं प्रभावस्त्रिदशैरपि ।
 जानाति य इमं लोके स एव परमेश्वरः ॥ १०८३ ॥
 ये पूजयन्ति सततं रसराममेतं
 सद्भावभक्तिसहितास्त्वथ भावयुक्ताः ।
 तेषां कदाचिदपि न ज्वरदाहपीडा
 चाऽन्येऽपि कैऽपि न भवन्ति शरीरदोषाः ॥

र शः, रसायनाधिकार ।

भाषा—पारदभस्म १ पल, शुद्धगन्धक ३ पल, अशक, लाह, सुवर्ण, हीरा, कान्त, प्रवाल, भैरसिह, बौडी, मोती, रजत, नाग और वज्र इनकीभस्में १-१ पल, शुद्धशिंगरिफ १ पल, शुद्धवचनाग ३ पल, हेकर सबका वारीकचूर्णकर सागकी छालकेस्वरस अथवा हाथसे २१ दिन मदनकर चित्रक, अदरस निर्गुण्टी, धतूरा, सहिजन, भगार, चिरायता, मूरण, त्रिकुट, गुग्गुलु, अदरस इनकेस्वरस, मधुकी, भैसा, मोर, सूअर, और मुर्गा इनकेपित्त, सापरा चहर, आककादूध इनप्रत्येकस्वसे ३-३ भावनाएँ देकर एकमिस्त्रीकीरुहाहीमें भीतरकीतर्पे इमे पीतद

और दूसरीरुहाहीमें इसकीबराबर वचनागकाचूर्ण विछाकर दोनोंकीसन्धिबन्दकर २-४ कपड़मिट्टी देकर यत्र, गणेश, दुर्गा, विष्णु, कुमारीबन्ध्या इन प्रत्येककी छालपुष्पोंसे पूजाकर अशीरमें कुमारीबन्ध्याका पूजनकर रौर, मधु और पीसे कुमारीबन्ध्याको सन्तुष्टकर यत्रको चूल्हेपर चढाय वचनागवाली पत्राहीके नीचे १ पहर दीपाग्नि देकर पचावे। स्वाद्गृहीत होनेपर धीरजसे यत्रको सोल ऊपरकी कड़ाहीमें अंगदुए रखको रखछोड़े। इसमेंसे १-१ रतीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर मस्तकपर जलकी धारा डाले। मूखलगनेपर धार, इहाँ और भाग सानेको देवे। चन्दन, कपूर और अगरका शरीरपर लेपकरावे। जवत दाहमालूमहो तबतक ताडके पत्तैसे हवाकरे। इसप्रयोगमें उन्माद, दन्तगन्ध, वेदोशी, अपस्मार, ताम्बिद्र सतिपात, शरीरशैत्य, ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्म रोग, द्वन्द्वरोग, १८ प्रकारकेकुष्ठ, कास, क्षय, श्वास, क्षोथ, कामला, पाण्डु, २० प्रकारकेप्रमेह और कृण, गुल्म, ६ प्रकारका बवासीर, ८ प्रकारकीग्रहणो, अतुद, गण्डमाला, विद्रधि, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहै। जिसतरह दवताओंमें लक्ष्मीनारायण श्रेष्ठहै वैसेही रसोमें यह श्रेष्ठहै। जो लोग इस रसको भक्तिपूर्वक जानतेहैं उनको ज्वर, दाहादिजन्य शरीरपीडा कभी भी नहीं होती ॥ २३० ॥

२३१ लक्ष्मीनारायणरसः (चतुर्थ)

धीरखण्डं शिखितुत्यञ्च टड्गुणं तालकं समम् ।
 पुनर्नवामूलरसे मर्दितं प्रहरत्रयम् ॥ १०८५ ॥
 विपचेद्याममानञ्च दोलायत्रेण बुद्धिमान् ।
 गुञ्जाद्वयं पिबेच्चाऽनुपानैः सर्वज्वरपहैः ॥
 दोपज्वरं हरेत्सीमं लक्ष्मीनारायणो रसः ॥ १०८६ ॥
 वै. चि. ज्वराधिकारे ।

भाषा—चन्द, शुद्ध तुल्य, मुहगा और हरिताल सम भागलेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवानीजकेस्वरस अथवा हाथसे ३ पहर मदनकर पुनर्नवासे रसमें दोलायन्तसे १ पहर स्वेदनकरे। स्वाद्गृहीतहोनेपर निवारकर २-२ रतीकी गोल्या बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरकेउपद्रवोंको नष्टकरताहै ॥ २३१ ॥

२३२ लक्ष्मीविलासमोदकः

शुष्पण निफला वहि श्वातुजातककेसरम् ।
 यवानी नपजजातीजं मुशली कपिरुष्णुजम् ॥ १०८७ ॥
 उच्चदाधृतवीजानि पर्णमूलाऽहिफेनकम् ।
 ज्योतिष्मती विडङ्गानि शृङ्गाटकरहाटकम् ॥ १०८८ ॥
 कुरण्डशोपगायत्रीलोहवङ्गाऽम्भभस्मरुम् ।
 बहुयष्टादशवाणेश्च विशाखा भागमाहरेत् ॥ १०८९ ॥
 चतुर्थांशां मातुलानां सितानां द्विगुणभागिकाम् ।
 कर्पमात्रा वटी भुङ्क्त्वा स्वग्भन परमं भवेत् ॥ १०९० ॥

कासश्वासप्रतिद्वयानाशनं कान्तिवर्धनम् ।
सतताऽभ्यासयोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ १०९१ ॥
टो., वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, त्रिकण्ठ, चातुजात, केसर
३-३ भाग, अजवाइन, दोनोनख, जावित्री, जायफल, मुशली,
वेवांचनेवीज ८-८ भाग; उर्तिगन, धतूरेवीज, पानकीजइ,
अफीम १०-१० भाग, मालकागनी, विडङ्ग, सिंघाड़े, अरु-
न्धरा ५-५ भाग; बहुफली, समुद्रशोष, खैर, लोह-वज्र और
अप्रक्रमम् २०-२० भाग; भांग सबसे चतुर्थांश तथा शकर
सबसे दूनी लेकर शरकी चादानीमें सबका बारीकचूर्ण मिला-
कर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे आधी
अथवा १ गोली दूधकेसाथ लेनेसे अलान्त स्तम्भनहोताहै ।
और श्वास, कास, प्रतिद्वय ये सब नष्टहोतेहैं हृदयेशाके सेवनसे
बलीपलितसे रहितहोकर सुवासस्थापन होताहै ॥ २३२ ॥

२३३ लक्ष्मीविलासरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतञ्च तालञ्च तालादं रसखपरम् ।
घनं ताम्रं घनं कान्तं कांस्यं गन्धं पलंपलम् ॥ १०९२ ॥
केशराजरसेनैव भावयेद्विसत्रयम् ।
कुलत्प्यस्य रसेनैव भावयेच्च पुनःपुनः ॥ १०९३ ॥
पलाजातीफलाख्यञ्च तेजःपत्रं लवङ्गकम् ।
यवानीं जीरकञ्चैव त्रिकटु त्रिफला समम् ॥ १०९४ ॥
नतं भृङ्गं धंशगर्भं कर्पमात्रञ्च कारयेत् ।
भावयेच्च रसेनैव गोलयेत्सर्वमौषधम् ॥ १०९५ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या चणकप्रमिता शुभा ।
शीताम्बुना पिबेद्धीमान् सर्वकासनिवृत्तये ॥ १०९६ ॥
मत्स्यं मांसं तथा क्षीरं पथ्यं स्यात्स्निग्धभोजनम् ।
क्षयं कासं तथा श्वासं सज्वरं वाऽथ विज्वरम् १०९७ ॥
हलीमकं पाण्डुरोगं शोथं शूलं प्रमेहकम् ।
जर्शानाशनं करोत्येव घलवृद्धिञ्च कारयेत् ॥
वर्जयेच्छकामम्लञ्च भृष्टद्रव्यं हुताशनम् ॥ १०९८ ॥
र. सं., घ. र. घ., मै र, वासाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और हरिताल १-१ कर्ष, खपरिया
८ मासे, वज्र, ताम्र, अप्रक, कान्तलोह, कांस्य इनकीमत्से,
शुद्धगन्धक १-१ पल लेकर सबही नीलमणकजलीकर काला-
भगारा और कुलथीके स्वरसोंसे ३-३ रोज भावनाए देकर
इलायची, जायफल, पत्रज, लौंग, अजवाइन, जीरा, त्रिकटु,
त्रिफला, तगर, भंगरा, बंसलोचन येसब १-१ कर्ष लेकर बारीक
चूर्णकर प्रथम औषधमें मिलाय पूर्वद्वोंसे १-१ रोज मर्दन-
कर चनेबराबर गोलियें बनाय छायामें सुलाकर रखछोड़े । इन-
मेंसे १-१ गोली टंटेपानीकेसाथ लेनेसे सबप्रकारके कासनिवृत्त
होतेहैं । इसमें मछली, मास और दूध प्रयुति श्लिग्धभोजन
पथ्यहै । तत्तद्भोगहरापानकेसाथ देनेसे ज्वरसहित अथवा
रहित क्षय, कास और श्वास, हलीमक, पाण्डु, शोथ, घल,

प्रमेह, अर्थ, निर्वेकता इनसबको यह नष्टकरताहै इसमें शाक,
खटाई, भुनेहुएदूध और अम्लिका परित्याग करे ॥ २३३ ॥

२३४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं दिनं शुष्कं विमर्दयेत् ।
जम्बीरनीरेण दिनं मर्दयेन्मतिमान् भिषक् ॥ १०९९ ॥
निःक्षिपेद् दृढमृपायां वासोभिर्मुनिसंघैः ।
वेष्टपेत्सिकतायन्त्रे यामैर्द्रादशभिः पचेत् ॥ ११०० ॥
स्थभावशीतमुद्गत्य श्लेष्णे खल्वे विमर्दयेत् ।
ताम्रमसमं कणा कुण्डं प्रत्येकं सूतभागतः ॥ ११०१ ॥
प्रक्षिप्य मर्दयेद्द्रादं त्रिदिनं लुङ्गवारिणा ।
प्रदद्यात्स्य सूतस्य श्लेष्णैरसितायुतम् ॥ ११०२ ॥
यद्युष्णं दीर्घतापे वातरोगे महत्यपि ।
निरामं नाशयेदाशु पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ ११०३ ॥
विषमज्वरजीर्णाऽशोःक्षयमेहहलीमकाः ।
स्वानुपानाच्छमं यान्ति रसराजप्रभावतः ॥ ११०४ ॥
सेवितो मधुसर्पिभ्यां धर्ममेकं जितेन्द्रियैः ।
जराभरणरोगादीन् कुष्ठरोगान् सुदारुणान् ॥
लक्ष्मीविलासनामाऽयं शङ्करेण कृतो हरेत् ॥ ११०५ ॥
र. का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग लेकर कजलीकर
जंभीरीकेरससे एकरोज मर्दनकर ६-७ कणइमिठीदीहुई आतशी
शीशीमें डालकर सुंघबन्दकर बालुकायन्त्रमें रख १२ पहरेकी क्रमाति
देवे । स्वात्शीतल होनेपर निकालकर ताम्रमस्य, पीपल और
कुठ १-१ भाग मिलाकर विजोरेकेरससे ३ दिन मर्दनकर ६-६
रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अद-
रख और शकरकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर तथा प्रचण्डवातरोग
नष्टहोतेहैं । पीपल और मधुकेसाथ निरामज्वर, और
तत्तद्भोगहरापानकेसाथ देनेसे विषम तथा जीर्णज्वर, बवासीर,
क्षय, प्रमेह, हलीमक येसब नष्टहोतेहैं । जिते प्रयहोकर मधु और
पूतकेसाथ एकवर्षतक सेवनकरनेसे भयङ्कुरप्रवृत्तिरोगोंसे निवृत्त
होकर बुढ़ापेसे रहित होताहै ॥ २३४ ॥

२३५ लक्ष्मीविलासरसः (तृतीयः)

पलं धन्नात्रचूर्णस्य तदर्धं गन्धकं भवेत् ।
तदर्धं धन्मभस्माऽपि तदर्धं पाटदं तथा ॥ ११०६ ॥
तत्समं हरितालञ्च तदर्धं ताम्रमसमकम् ।
रससाम्येन कर्षूरं जातीकोपफले तथा ॥ ११०७ ॥
शुद्धदारकवीजञ्च धीजं स्वर्णफलस्य च ।
प्रत्येकं कार्षिकं भागं मृतस्वर्णञ्च शाणिकम् ॥ ११०८ ॥
निपिप्य घटिका कार्या द्विगुणाफलमानतः ।
निहन्ति सधिपातोत्थानाद्गन्धोरान् सुदारुणान् ११०९ ॥
गलोत्थानघ्नवृद्धिञ्च तथाऽतीसारमेव च ।
कुष्ठमेकादशविधं प्रमेहान्चिदति तथा ॥ १११० ॥

श्रीपदं कफवातोत्थं चिरजं कुलजं तथा ।
 नाडीव्रणं व्रणं घोरं मुद्रोरोगं भगन्दरम् ॥ ११११ ॥
 कासपीनसयक्ष्मादीः स्थौल्यदौर्गन्ध्यरक्तजुत् ।
 आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ १११२ ॥
 उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरस्यमेव च ।
 सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीरोगञ्च विनाशयेत् ॥ १११३ ॥
 वटिकां प्रातरेकैकां मांसं पिष्टं पयो दधि ॥ १११४ ॥
 वारिभक्तं सुरासीधुसेवनाक्ामरूपधृक् ।
 वृद्धोऽपि तरणस्पर्द्धी न च शुक्रक्षयो भवेत् ॥ १११५ ॥
 र चि, र, सु, रसचि, र, स, र क, कफरोगं ।

भाषा—वज्राघ्नकभस्म १ पल, शुद्धगन्धक २ कर्प, वज्र-
 भस्म १ कर्प, वारद और हरितालभस्म ८-८ मासे, ताम्रभस्म
 ४ मासे, शुद्धकषू ८ मासे, जावित्री, जायफल, विधारा और
 धतूरेकेबीज १-१ कर्प, सुर्यभस्म ४ मासे लेकर सबका यारीक
 चूर्णकर पानवैरहकेरसेसे घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर
 रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगरानुपानकेसाथ देनेसे
 सक्षिपातन और गलग्रह, अन्नशुद्धि, अतिसार, ११ प्रकारकाजुष्ट,
 २० प्रकारके प्रमेह, चिरज अथवा कुलज कफवातनशीपद, नाडी-
 व्रण, लुप्तग्न, मुद्ररोग, भगन्दर, कास, पीनस, राजयक्ष्म, बवासीर,
 स्थूला, दौर्गन्ध्य, रक्तदोष, सबप्रकारका आमवात, जिह्वास्तम्भ,
 गलग्रह, उदररोग, कान, नाक, आस और मुंहकाभिगाह,
 सबप्रकारका शूल, शिर शूल, स्त्रियोंकेरोग दे सब नष्टहोतेहैं ।
 इसका निरन्तर अन्यासकरनेसे और मास तथा आटेके बनाए
 हुए पदार्थ, दूध, दही, भक्षाधिविवाहितजल, मद्य, ताड़ी इत्यादि
 पदार्थोंकासेवनकरनेसे शुकसे परिपूर्णहोकर शूद्र आदमीभी
 जवानोंकी बराबरी करने लगताहै ॥ २३५ ॥

२३६ लक्ष्मीविलासरसः (चतुर्थः)

पलं कृष्णाञ्चूर्णस्य तदूर्ध्वं रसगन्धकौ ।
 तदूर्ध्वं चन्द्रसञ्ज्ञस्य जातीक्रोपफले तथा ॥ १११६ ॥
 घृद्धदारक-जीजञ्च बीजं घुस्त्ररकस्य च ।
 त्रैलोक्यविजयावीजं विदारीमूलमेव च ॥ १११७ ॥
 नारायणी तथा नागबला चातिथला तथा ।
 बीजं गोक्षुरकस्याऽपि नेचुलं बीजमेव च ॥ १११८ ॥
 एतेषां कार्पिकं चूर्णं पर्णपत्ररसैः पुनः ।
 निष्पिप्य वटिकाकार्यां त्रिगुञ्जाफलमानतः ॥ १११९ ॥
 निहन्ति सक्षिपातोत्थानादान् घोरान्श्चतुर्विधान् ।
 वातोत्थान् पैलिकञ्चैव नाऽस्त्यत्र नियमः क्वचित् ॥
 कुष्ठमष्टादशाख्यञ्च प्रमेहान्निश्वतिं तथा ।
 नाडीव्रणं व्रणं घोरं मुद्रामभगन्दरम् ॥ ११२० ॥
 श्रीपदं कफवातोत्थं रक्तमांसाश्रितञ्च यत् ।
 मेदोर्गतं धातुगदं चिरजं कुलसम्भम् ॥ ११२१ ॥
 गलग्रहोद्यमन्नवृद्धिमतीसारं सुदारुणम् ।
 आमवातं सर्वरूपं जिह्वास्तम्भं गलग्रहम् ॥ ११२२ ॥

उदरं कर्णनासाक्षिमुखवैरुतमेव च ।
 कासपीनसयक्ष्मादीः स्थौल्यदौर्गन्ध्यनादानः ॥ ११२३ ॥
 सर्वशूलं शिरःशूलं स्त्रीणां गदनिपुदनम् ।
 वटिकां प्रातरेकैकां खादेन्नित्यं यथाथलम् ॥ ११२४ ॥
 अनुपानमिह प्रोक्तं मांसपिष्टं पयो दधि ।
 वारिभक्तसुरासीधुसेवनाक्ामरूपधृक् ॥ ११२५ ॥
 वृद्धोऽपि तरणस्पर्द्धी न च शुक्रस्य संक्षयः ।
 न च लिङ्गस्य शीथिल्यं न केशा यान्ति पकताम् ११२६ ॥
 भै र, र सु, र स, र, र, चं, घ, र म मा, वृ यो त, र
 चि, र, र, स्वायनम, र, क, यो म, र सि, ज्वराऽधिकार ।

भाषा—वज्राघ्नकभस्म १ पल, शुद्ध पारा और गन्धक
 २-२ कर्प, रजतभस्म, जावित्री, जायफल, विधारा, धतूरा
 और गाजेकेबीज, विदारीचन्द, शानार, नागबला, अतिथला
 (शुलसिकरी), गोपल और वेतकेबीज १-१ कर्पलेकर शरीक
 चूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर पानकेरसेसे
 ३-३ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 तत्तद्रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे चार प्रकारका सक्षिपात, वात
 और पित्तज्वर, १८ वृष्ट, २० प्रमेह, नाडीव्रण, दुष्टग्न, मुद्र-
 रोग, भगन्दर, कफवातोत्थ अथवा रक्तनासाश्रित शीपद, मेद
 अथवा धातुगत, चिरज अथवा कुलगत गलग्रह, अन्नशुद्धि,
 दाहणअतिसार, सर्वरूप आमवात, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, उदर
 रोग, कान आल और मुंहका बिगाह, कास, पीनस, यक्ष्म,
 बवासीर, स्थूला, दौर्गन्ध्य, सबप्रकारके शूल, शिर शूल,
 स्त्रियोंके रोग, ध्वजमत्तादि पुरणोंके रोग इनसबको यह नष्ट
 रताहै । इसमें मासमिश्रित आटेकेबनेहुए पदार्थ, दूध, दही और
 भक्षाधिविवाहितानी, मद्य, ताड़ी, इनकेसेवनकरनेसे शूद्रभी पुरुष
 त्वसे परिपूर्णहोकर जवानोंकी बराबरीकरताहै । निरन्तर सेवन
 करनेसे लिङ्गकी शिथिलना और केशोंकी सफेदी नहीं होती २३६

२३७ लक्ष्मीविलासरसः (पञ्चमः)

कान्ताऽयोऽन्नरुसत्त्वताघ्नकनकं वज्रञ्च ताराहिकं,
 तीक्ष्णं चिद्रुममौक्तिकं समलवं चैतैः समः पारदः ।
 सम्मर्द्यं मधुना त्र्यहं तद्विलितं निक्षिप्य भूपान्तं,
 पाच्यं ताक्ष्यं पुष्टं ततोऽनलजले यामाष्टकं भाजयेत्
 शतानुरी भूमिसिता विदारी गोक्षुरेक्षुकम् ।
 बला नागबला चातिथला शालमलि कर्कटी ॥ ११२९ ॥
 पोटाऽमृतोद्भवा यष्टी शुण्ठी द्राक्षेष्टिका जया ।
 उद्विङ्गणोदुम्बरञ्च खालसं सारिवाद्ययम् ॥ ११३० ॥
 एषां रसैः सप्तवारं भावयेद्यं पृथक् पृथक् ।
 पञ्चानमृगमेदं भाव्यः सुसिद्धी रसाद्भवति ॥ ११३१ ॥
 गुञ्जाभयमितः सेच्यः परं वृष्यो रसायन ।
 अष्टौ महागदान् मेहं क्षयं पाण्डुञ्च कामलाय ॥ ११३२ ॥
 नष्टेन्द्रियं क्षीणानुक्रमतिसारं चिरन्तनम् ।
 मृत्रकृच्छ्रं गर्ं शोषं वन्तीफलितमेव च ॥ ११३३ ॥

हृन्त्यात्कान्तिं धीर्यवृद्धिं पुष्टिञ्च विपुलं यत्नम् ।
दत्ते लक्ष्मीविलासोऽयं पुंसां लक्ष्मीप्रदायकः ॥११३४॥

र. पा., नि. र., र. चं., र. सु., रसायनसं, र प., यो. र., र. क. यो., राजयक्ष्मणि ।

टि०—विपण्डुरलाकरादौ त्रुटित. पादोऽस्ति, तरदुद्धा जने पाठ-
द्वयी स्थापिता तद्विधानदिग्भिन्नमिति विद्विदि विमर्शनीयम् ॥

भाषा—कान्तलोह, लोह, अन्नकसत्व, ताम्र, सुवर्ण, वज्र,
रजत, नाग, फोलाद, प्रवाल और मोती इनकी भस्में समभाग
लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर ३ दिनतक मधुमें
खरलकर वज्रमूत्रांसे बन्दकर छक्कुटपुटकी जाचदे । स्वाज्ञाशीतल
होनेपर निकालकर चित्रकमूलकेवायसे दोरोजु भावना देकर
शतावर, दीमकना मूलपर, (कागेशवत्सराममें विवरणदेखो)
विदारीकन्द, गोखरू, ईख, बला, नागबला, गुलसिकरी, सेम-
लकामुसला, ककड़ी, तिपतिया, गिलोय, मुलहठी, साँठ, द्राक्ष,
ब्रह्मण्डी, भांग, उर्दुगन, गुल, पोस्त, अनन्तमूल, पोटबेल
(मराठी), इनके यथासम्भव स्वस्व भयवा कायोंसे ७-७
भावनाएं देकर यथाशक्ति कस्तूरीकी भावना देकर ३-३ रत्तीकी
गोलियां बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा
समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे आठमहारोग, प्रमेह, क्षय,
पाण्डु, कामला, इन्द्रिय तथा शुष्की कमजोरी, पुराना अति-
सार, मूत्रकृच्छ्र, गर, शोथ, बलीपक्ति, ह्याना, वीर्यबीहानि
इनसबको नष्टकर यह मनुष्यको फिरसे विपुलरत्नयुक्त बनाताहै २३७

२३८ लक्ष्मीविलासरसः (महान्) (पद्यः)

लौहमद्यं विपं मुस्तां फलत्रयकटुप्रथमम् ।
धुस्वरं वृद्धवारञ्च बीजमिन्द्राशनस्य च ॥ ११३५ ॥
गोधुग्द्वयकञ्चैव पिप्पलीमूलमेव च ।
पतत्सर्वं समं प्रायं रसे धुस्वरकस्य च ॥ ११३६ ॥
भावायित्वा घटी कायां द्विगुणाफलमानतः ।
महालक्ष्मीविलासोऽयं सन्निपातनिवारकः ॥ ११३७ ॥

र सं., र. सु., व. सा., र. र., शिरोरोगे ।

भाषा—लोह और अन्नकभस्म, शुद्धबलनाग, नागरमोघा,
त्रिकला, त्रिकटु और धतूरा-विचारा-नात्रा इनकेबीज, दोनो-
गोखरू, पिपलामूल, वेसव समभाग लेकर सबका धारिकपूर्णकर
धतूरेकेरसे १-२ रोजु मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बना-
कर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे
सबप्रकारके त्रिशोषजतोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३८ ॥

२३९ लक्ष्मीविलासरसः (सप्तमः)

सुवर्णमुक्ताफलमन्नकञ्च
रसेन्द्रभस्मायसविद्रुमञ्च ।
कस्तूरिकाकुङ्कुमजातिपत्री-
लथामेलात्यकृतुल्यभागिकम् ॥ ११३८ ॥
सप्तमर्दयेन्नागलतारमेन
पृष्ठा व्यहं यत्नमितञ्च दद्यात् ।

सितामधुभ्यां सह सेवनीयः
सर्वाभ्यं हन्ति न संशयोऽत्र ॥ ११३९ ॥

कामस्य वृद्धिं नितरां करोति
नारीशतं गच्छति नित्यमेव ।
पण्डोऽल्पवीर्यो यद्बुधम्रमेही
यथाऽनुपानेन च सेवयेत् ॥
क्षयापहं धातुविघर्षेणञ्च
लक्ष्मीविलासो रसरज गपः ॥ ११४० ॥
र. चं., वाजीकरणे ।

भाषा—सुवर्ण, मोती, अन्नक, पारा, लोह और प्रवाल
इनकी भस्में, कस्तूरी, केरा, जाविनी, लौंग, इलायची, तज,
सब समभागलेकर धारिकपूर्णकर पानकेरसमें ३ दिन मर्दनकर
३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोडे । इनमेंसे १-१ गोली
शकर और मधुकेसाथ सेवनकरनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ।
निरन्तरेसेवनकरनेसे शुक्रकीवृद्धिकर नपुंसकी मर्द होजाताहै ।
मधुमेहम अनुपानकेसाथ देनेसे बहुमून नष्टहोताहै ॥ २३९ ॥

२४० लक्ष्मीविलासरसः (अष्टमः)

हेमभस्म च भागेकं रौप्यभस्म द्विभागिकम् ।
शुल्यभस्म त्रिभागञ्च कान्तभस्म चतुर्गुणम् ॥ ११४१ ॥
पञ्चभागञ्च तीक्ष्णं स्यान्मण्डूरं पद्भिर्भागिकम् ।
निश्चन्द्रं ध्योमकञ्चैव भस्म स्यात्सप्तभागिकम् ॥ ११४२ ॥
अष्टभागञ्च वङ्गं स्याद्भागं स्याद्यवभागिकम् ।
दशैकादशभागे च प्रवालमौक्तिके शृते ॥ ११४३ ॥
रत्नमधुमे निधायाऽथ तत्तुल्यं सूतभस्मकम् ।
मर्दयेत्प्लावितं द्रव्ये भांविष्येजातिपत्रकैः ॥ ११४४ ॥
त्रिकटुत्रिकलाचातुर्जातद्रव्यैश्च कौडुमेः ।
मृगनाभिरसेञ्चैव मुनिवारान् पृथक्पृथक् ॥ ११४५ ॥
गुञ्जामात्रं लिहेत्सम्यक् सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ।
द्वन्द्वजं छद्दिरोगञ्च भ्यासं कासञ्च कामलाम् ॥ ११४६ ॥
दीर्घवाते पञ्चगुल्मान् सर्वेशुलं विनारायेत् ॥ ११४७ ॥
उन्मादञ्च मतिभ्रंशमष्टोदरमहागदान् ।
महानां विशतिश्चैव पण्डित्यञ्च क्षयं नयेत् ॥ ११४८ ॥
अरोचकमग्निमान्द्यं प्रहणीदोपनाशनम् ।
बलीपलितविध्वंसि नारायेत्कुम्भकामलाम् ॥ ११४९ ॥
दृष्टिपुष्टिकरं चलयं कम्पवातञ्च नारायेत् ।
असाध्यरोगनाशाय साध्यो लक्ष्मीविलासकः ११५०
वे. वि. (ल.), र. म. ना., रसायने ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ भाग, रजतभस्म २ भा., ताम्र-
भस्म ३ भा., कान्तभस्म ४ भा., फोलादभस्म ५ भा., मण्डूर
भस्म ६ भा., निश्चन्द्रमन्नकभस्म ७ भा., वज्रभस्म ८ भा.,
नागभस्म ९ भा., प्रवाल १० भा., और मोती ११ भाग,
लेकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर जाविनी, त्रिकटु,
त्रिकला, चातुर्जात, केरा, कस्तूरी, इनप्रत्येककेद्वयोसे ७-७

भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोलीतक अमिष देखाकर शक्कर, घी और मधुकेसाय देनेसे राजरोग, पाण्डु, हृन्मज्ज, छर्दिरोग, श्वास, कास, कामला, दीर्घकालीन वातरोग, पांचप्रकारकेगुल्म, सव-प्रकारके शूल, उन्माद, मतिभ्रंश (विक्षिप्ता), अष्टोदरीयमहारोग, २० प्रकारकेयमेह, पण्डित, अरवि, मन्दाग्नि, प्रद्वेषी, वली; पलित, दृष्टिही कमजोरी, कम्पवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४० ॥

२४१ लक्ष्मीविलासरसः (नवमः)

रसकनकपविप्रवालमुक्ता

गगनाहित्रपुक्रान्ताभ्रमेतत् ।

तनुतरमखिलं चिमाचितं त्रिः

कनकरसैः स्नुहिजेः सुकासमर्दः ॥ ११५१ ॥

कन्येधुवज्रोस्वरसे विमर्द्य

पन्मश्च गन्धर्वदले विवध्य ।

निधाय धान्ये त्रिदिने गृहीत्वा

धृष्णं वराक्षौद्रयुतञ्च दद्यात् ॥ ११५२ ॥

प्रमेहञ्च कासं व्रणं पाण्डुहिके

महाशूलमन्दानलश्लेष्मवातान् ।

अपस्मारकुष्ठे हलीमन्ज्वरञ्च

निहन्त्याच्च लक्ष्मीविलासो रसोऽयम् ॥ ११५३ ॥

रसायनवं., वै. वि., प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, प्रवाल, मोती, अन्नक, नाग, वज्र, कान्त और ताम्र इनकीभस्में समभागलेकर धूरा, डंज-थोहर, कसौजी, घीडुंवार, ईर, मोहर इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला बनाय एण्डकेपतोंमेंलपेट कचे सुतसे बांध-का धान्यराशिमें गाड़दे । चौथेरोज निकालकर खरलकर रखजोड़े । इनमेंसे आधीरत्तीसे १ रत्तीतक त्रिफला और मधुके-साय देनेसे प्रमेह, खासी, ऋण, पाण्डु, शिचकी, महाशूल, मन्दाग्नि, श्लेष्मवात, अपस्मार, कुष्ठ, हलीमक, ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २४१ ॥

२४२ लक्ष्मीविलासरसः (दशमः)

सूताऽयोऽन्नकगन्धकं समलवं सूताङ्गितुल्यं सितं,
स्वर्णं भूसितया वृषेण वरया यथां विद्यायां पृथक् ।
मर्द्य कन्यकया तथैव सितया ज्येष्ठाह्वया मोचया,
तद्गोलं परिस्त्रय यश्चकरजेः पत्रैस्त्रिघण्टंन्यसेत् ११५४
राशौ तण्डुलजेऽयया सुमनजे तुयं दिने चोद्धरेत्,
वृत्तं गुञ्जवतुष्टयं विजयते मेहादिकानामयान् ।
क्षौत्रेण त्रिफलायुतेन मधुना रुग्णायुतेन क्षयं,
कासं पञ्चविधं तथा तदनुजं पाण्डुञ्च हिकामयान् ॥
यश्म्राणं पवनान्दलीमकमहापस्मात्सुख्याञ्जयेत्,
प्रोक्तोऽयं शशिशेखरेण च मुदा लक्ष्मीविलासाभिधः
रसायनवं., र. प., र. पा., रसायने ।

भाषा—पारा, लोह, अन्नक इनकीभस्में, शुद्धगन्धक सम-भाग लेकर धारसेचतुर्थांश रजत और स्वर्णभस्म मिलाकर दीमकका मूलर (कामेशवत्सरसमें विवरणदेखो), अड्डा, त्रिफला, शतावर, विदारी, घीडुंवार, शक्कर, केलेफाकन्द, मोचरस इनके इतोंसे १-१ रोज मर्दनकर गोलावनाय एण्डकेपतोंमें लपेट कचे सुतसे बांधकर चावल अथवा फूलोंकी ढेरीमें ३ दिनतक दबादे । चौथेदिननिकालकर खरलकर रखजोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा त्रिफला-मधु अथवा पीपल मधुकेसाय देनेसे ५ प्रकारकाकास, पाण्डु, हिका, राजयक्ष्म, वायु, हलीमक, अपस्मार प्रथति सबरोगोंकी यह नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ लक्ष्मीविलासरसः (एकादशः)

वेदेन्दुनेत्राङ्गरसाङ्गभागा

भूक्षतगन्धोपणतिन्दुःङ्काः ।

भृङ्गाद्र्युजायवनीनवाभि-

भान्यं त्रिंशः स्येद्यमदोऽर्कपत्रे ॥

लक्ष्मीविलासः स विद्यालक्ष्मीं

तनीं तनोति क्षयिणः प्रयोगैः ॥ ११५६ ॥

र. र. स., रसायने ।

भाषा—अन्नकभस्म ४ भाग, शुद्ध पारा १ भाग., गन्ध २ भा., मरिच, कुचिला और भुनागुहागा ६-६ भाग लेकर बायीकचुपकर परिगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भंगरा, अदरक, सफेदगुडा, सुरासानी अजवाइन और पुनर्नया इतने स्वरसोंसे ३-३ भावनाएं देवे । प्रत्येक भावनाके पीछे आक्के-पकेपतोंके दोनेमें रख दो दो अहुल मिश्रीकालेरदेकर जलते हुए कण्डोंमें रखते । गोला लालहोनेपर बाहर निकालकर फिर दूसरेस्वरससे भावनादेकर आक्केपतोंमें रख पूर्वपर स्वेदनकरे । इसतह स्वेदनकरनेकेबाद ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपान-केसाय देनेसे सबप्रकारका क्षय निवृत्त होकर क्षयप्रस्त रोगीके शरीरमें कान्ति और बल प्रकटहोतेहैं ॥ २४३ ॥

२४४ लक्ष्मीविलासरसः (द्वादशः)

वङ्गनागो च भागौ द्वौ भागैकं रसमस्मनः ।
गगनस्य च भागैकं हेमरौप्यं द्विभागिकम् ॥ ११५७ ॥
वैक्रान्तकान्तभागौ द्वौ मेलयित्वा चिमर्दयेत् ।
भावनाः खलु दातव्याः कुमारीरसतः शुभाः ११५८
एकविंशद्धानीरैः सप्तधा भावयेद्भिपक् ।
योजितो रसवर्याऽयं महालक्ष्मीविलासकः ॥ ११५९ ॥
प्रमेहाभिव्यशतिं हन्याद्वातपित्तकफोद्भवान् ।
यश्म्राणं पाण्डुरोगञ्च स्यामरोगं तयोऽङ्गमदीम् ११६०
मृदाघातं मूत्ररुन्ध्रं झटिरयेव विनाशयेत् ।
वर्जयेत्स्नानमन्यङ्गं प्रमेहजनकं गणम् ॥ ११६१ ॥
र. पा., प्रमेहाधिकारे ।

काचूर्णं अच्छीतरह मिलाकर रखछोड़े । इसमें १-१ माशेकी-
मात्रा शुद्ध अथवा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, कास,
बवासीर, झीहा, पाण्डु, ज्वर, प्रमेह, शोथ, विट्मन्, सङ्ग्रह-
ग्रहणी, सर्वातिसार, समस्तशूल, आमवात, सूतिकारोग, इन-
सबको यह नष्टकरताहै । इसका निरन्तर सेवनकरनेवालेको वात
पित्तकृकञ्ज व्याधियां नहीं होतीहैं । काष्ठभी खाया हुआ भस्म
होजाताहै । भारीअन्न, मैथुन, ज्ञान, मांस, काजी, खटाई, दूध,
मछली और दही येसब साम्न्वहोतेहैं ॥ २४७ ॥

२४८ लाईचूर्णम् (चतुर्थम्)

शाणं शाणं रसं गन्धं तयोः कुर्याच्च कज्जलीम् ।
मृताऽन्नं भृष्टवाहीकं त्रिसुगन्धञ्च बालकम् ॥११७८ ॥
जातीफलं लयङ्गञ्च कुष्ठं जीरं कुलिञ्जनम् ।
व्योषं मोचरसं विल्वं कारवीं पटुपञ्चकम् ॥११७९ ॥
पतानि शाणमात्राणि भृष्टा भङ्गाऽपिलैः समा ।
लाईचूर्णमिति रयातं रुच्यं दीपनपाचनम् ॥ ११८० ॥
प्रातस्त्रकेण शाणं तदेयं शाणार्द्रकं निशि ।
सतकं हन्त्यतीसारं ग्रहणीञ्च प्रवाहिकाम् ॥
कुर्यान्निद्रावयलं पुष्टिं यथाहं बालके पुनः ॥ ११८१ ॥
र. (मा.), र. सु., अतीसार ।

भाषा—शुद्ध पाठा और गन्धक ४-४ माशेकी नीलवर्ण-
कज्जली, अन्नकमसम्, भुनीहॉग, तज, पन्नज, इलायची, सुग-
न्धबाला, जायफल, लौंग, कुष्ठ, जीरा, कुलिञ्जन, त्रिकटु, मोच-
रस, बेलगिरी, कलौजी, पांचोन्नमक, येसब ४-४ माशे, भुनी-
मांग सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाकर
रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशा प्रातःकाल और १॥-१॥ माशा
रात्रिको छाछकेसाथ देनेसे ग्रहणी, प्रवाहिकाइत्यादिकोंको नष्ट-
कर सुखकीनिद्रा और पुष्टिको बढ़ाताहै ॥ २४८ ॥

२४९ लाईचूर्णम् (पञ्चमम्)

पञ्चलवणं त्रिशारणं स्यात्प्रत्येकं त्र्युपणं पिबुः ।
गन्धकान्मापका ह्यष्टौ चतुरो मापका रसात् ११८२ ॥
इन्द्राशानात्पलं शाणव्रितपाऽधिकमिष्यते ।
खादेन्मिश्रीकृताच्छाणमनुपेयञ्च काञ्जिकम् ॥११८३ ॥
मापकादिक्रमेणैव मनुयोज्यं रसायनम् ।
अत्यन्ताऽग्निकरञ्चाऽन्न भोजनं सार्वकामिकम् ॥
प्रसिद्धयोगिनीलाईप्रोक्तं चूर्णं रसायनम् ॥ ११८४ ॥
यो. म., र. का., र. चि., भै र, अतिमारि । र. चि., भै. र.
नायिकाचूर्णमितिनाम ।

भाषा—पाचोन्नमक १२-१२ माशे, सॉठ, मिचं, पीपल
१-१ कर्प, शुद्धगन्धक ८ माशे, शुद्धपाठा ४ माशे, और भुनी-
मांग १ पल १२ माशे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पाण्डुगन्धक-
कीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशेसे
शुरूकर ४ माशे तक बढ़ाये ऊपरसे काजी पीये, भोजन थोड़ा-
करे । इसकेसेवनसे अग्नि अत्यन्त प्रदीप्तहोकर अतिमारिदिकोंका
नाश होताहै ॥ २४९ ॥

२५० लाईचूर्णम् (षष्ठम्) (पष्ठम्)

कर्पं गन्धकमर्द्धपादमुभौ कुर्याच्छुभां कज्जलीं,
ज्यक्षं ज्यूपणतश्च पञ्चलवणं स्यादूर्ध्वकर्पं पृथक् ।
तच्छक्राशनं चूर्णतुल्यनिहितं तत्सर्वमेकीकृतं,
खादेच्छाणमितं सकाञ्जिकपलं मन्दाग्न्यतीसारनुत् ॥
र. कौ., र. क. ल., चि. र. भ., वै. चि., वै. र., प. यो. त., यो.
त., र. सु., लो., नि. र., र. का., यो. म., र. र., र. चं., अतिमा-
राऽधिकारे । र. चि. नायिकाचूर्णमितिनाम ।

टि०—रसानुन्दरे नियट्टरस्ताके च शुद्धहिड्युजीरकद्वयञ्च क्या-
रुचि निशिसम् । रसकामनेनी केवल जीरकद्वयमधिकतया म्यत्तम् पाद-
दगन्धकयोश्च समानी भागौ शुद्धीती । बहुषु स्थानेषु साऽध्वं कर्पं पृथ-
गितिपाठे दृश्ये पर स्यादूर्ध्वकर्पं पृथगित्येव पाठः साधुः प्रतिभाति,
साऽर्ध्वकर्पेतिपाठे लवणाऽऽवियोगः स्यात् । र. र., र. च., श्लयी रसायना-
मृतमिति नाम, फलमागश्च विशेषतया निहितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ कर्प, शुद्धपाठा ८ माशेकी नीलवर्ण
कज्जली, त्रिकटु ३ कर्प, पाचोन्नमक ८-८ माशे, भुनीमांग
सबकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर एकजगह मिलाकर
रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ माशे लेकर काजीपीनेसे मन्दाग्नि
और अतिसारप्रभृतिको नष्टहोतेहैं ॥ २५० ॥

२५१ लाईचूर्णम् (षष्ठम्) (सप्तमम्)

सूतं गन्धं त्रिकटुकं दीप्यं च जीरकद्वयम् ।
सौवर्चलं सैन्धवञ्च रामठं विडमेव च ॥ ११८६ ॥
शक्राह्वयस्य चूर्णं तु चूर्णतुल्यं प्रदापयेत् ।
सङ्ग्रहं शूलमानाहं हन्त्याशानाऽतिसारकम् ॥ ११८७ ॥
यो. र., वै. चि., नि. र., र. का., यो. त., अतिसार ।

भाषा—शुद्ध पाठा और गन्धक, त्रिकटु, लज्जवान, दोनो-
जीर, सत्रल, सैन्धव, भुनीहॉग, विडनमक येसब समभाग लेकर
सबकीबराबर भुनीमांगका चूर्णमिलाकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े ।
इसमेंसे १ माशेसे ४ माशे तक मात्रा उचितानुपानकेसाथ देनेसे
सङ्ग्रहग्रहणी, शूल, आनाह और अतिसार इनसबको यह नष्ट-
करताहै ॥ २५१ ॥

२५२ लाङ्गल्यादिगुटिका

लाङ्गली त्रिवृता लोहचूर्णं दशपलं पृथक् ।
त्रिशन्तु गुटिकाः पथ्याः कुर्यान्नुद्धरसाण्डुताः ॥११८८ ॥
छायागुत्काश्च तत्राऽर्द्धां गुटिकां भक्षयेत्ततः ।
जीर्णं रसेन रुक्षेण पेया पूर्वं न भोजयेत् ॥ ११८९ ॥
यत्रितो ब्रह्मचर्याद्यैः क्रमेण गुटिकामपि ।
खादेत्प्रातस्तु मासैकं भवेत्कामचरः क्रमात् ॥ ११९० ॥
एवं सर्वाणि कुष्ठानि जयत्यतिबलाग्नयि ।
धीमिधास्मृतियुक्तस्तु नित्यं जीयेत्समाः शतम् ११९१ ॥
ग. नि., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध करिहारी, निशोत, लोहमस १०-१० पल
लेकर बारीकचूर्णकर भंगरेडेरसे १-२ रोजुगोटकर ३० गोलियां

बनाकर छायाशुक्कर रखोड़े। इनमेंसे आधीआधीगोली खावे। जीर्णहोनेपर रूक्षासासरसे पेया बनाकरदे। पहिले भोजन न दे। इसके सेवनमें ब्रह्मचर्याक पालनकरे। धीरे २ सात्स्यहोने पर प्रतिदिन १-१ गोली भी खासकाहे। एकमहीने बाद यथेष्टभोजनकरे। इसकेसेवनसे समस्तकुष्ठोंसे रहित और बुद्धि, मेधा, स्मृतियुक्तहोकर १०० वर्षतक जीताहे। २५२ ॥

२५३ लाङ्गत्यादिलोहम्

चिचुदलाङ्गलीमूलकटुत्रयफलत्रये ।
द्राक्षागुग्गुलिभिस्तुस्य लोहचूर्णं नियोजयेत् ॥११९२॥
मातुलिङ्गरसेनैव त्रिफलाया रसेन च ।
विमृद्य यत्नतः पश्चाद्भुटिकाऽङ्गोलसम्मितम् ॥११९३॥
भक्षयेन्मधुना साऽङ्गं करोति शृणु यात्र गुणान् ।
आजानु स्फुटितं धोरं सर्वाङ्गस्फुटितं तथा ॥
तत्सर्वं नाशयत्याशु साध्यऽसाध्यञ्च शोणितम् ११९४
र स, र. सु, ध, र. र, वातरके।

भाषा—विशुद्धकरिहारी, त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, गुगल वेसन-समभाग, लोहमन्म सबकीबराबर लेकर चिचोरा और त्रिफलाके रसेसे १-१ रोज मर्दनकर ८-८ मासेकी गोलिया बनाकर रख छोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथलेनेसे घुटनोक्त तथा सर्वां श्वेमे फूटे हुए साध्य अथवा असाध्य वातरक्तो यह नष्टकरताहे।

२५४ लिङ्गमाहेश्वरसः

शार्वं धीर्यञ्च देत्यं द्रवकुनटिका खपरं तालरुञ्ज,
कङ्कुष्ठश्चादमजातं रसशशिसकलं तुल्यभागेन प्राह्वम् ।
जात्याख्यं देवगुप्पाङ्गुलरुमरिचं शुण्ठिपाञ्चालिके द्वौ
भागौ मर्द्यौ च रविपद्मजलयो भावयेत्सप्त वारान् ११९५
तद्द्राव्यञ्च भाग्यां कथमपि सुरसाकासमर्दद्रव्यैश्च,
घर्मे भाव्यं द्विवह्नात्मकृतगुटिकं सेवनीयं पयोभिः ।
हन्त्यात्सर्वोपदेशं व्रणमपि विविधं गण्डमालां भगर्भं,
पथ्यं गोधूमयुक्तं बहुलघृतयुतं कोष्णनीरञ्च पाने ११९६
रसायनतः उपदते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, दिगारिक, मेनसिल, लपरिया, हरिताल, मुर्दासङ्ग, शिलाजीत, और रसकयूर सबसमभाग, जावित्री, लौंग, अकलकरा, मरिच, सोंठ, पीपल, २-२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारिगन्धक नीलवर्णकजलीमें मिला कर आकनीजइन्दीछालके स्वरस और दूधसे ७-७ भावनाए देकर भारती, तुलसी, कलौजी, इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ रोज मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ सेवनकरनेसे सक्तरहने उपद्रव, मानातरहनेजग, गण्डमाला, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरताहे। इनमें गेहू, धो और गरमपानी पच्येहे। २५४ ॥

२५५ लीलाविलासरसः (प्रथम)

शुद्धमृतस्य भागो द्वौ द्वौ भागौ गन्धकस्य च ।
मुक्ता चैमान्तकान्ताऽङ्गं हेममसम् दशांशकम् ॥११९७॥

पोडशांशं ताप्रमसम् भागैकं रौप्यमसमकम् ।
सम्मर्द्य भावयेत्सत्त्वे त्रिफलाभृङ्गजे द्वयेः ॥ ११९८ ॥
एकविंशतिवाराणि भावयेच्छोपयेत्पुनः ।
द्राक्षादाडिमपुष्पोत्थनारिकेलाम्बुमर्दितम् ॥ १२९९ ॥
निगुञ्ज वा चतुर्गुञ्जं मधुना संयुतं लिहेत् ।
पित्तयुक्ते ज्वरे हृद्ये ह्यम्लपित्ते सपित्ते ॥ १२०० ॥
चत्वारिंशत्पित्तदोषे शूले पक्तिसमुद्भवे ।
योनिशूले गुल्मशूले प्रदरे रक्तदोषजे ॥
महालीलाविलासोऽयं पित्तरोगे प्रदास्यते ॥ १२०१ ॥
र. पा, पित्तरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भाग, मोती, वैकान्त, कान्त, अन्नक और सुवर्णमसमे ये प्रत्येक १० वाभाग, ताप्रमन्म १६ वा भाग, रजतमसम् १ भागलेकर पारिगन्धककी नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय त्रिफला और भगरेकेरसेसे २१-२१ भावनाए देकर मर्दन और शोषणकरे। इसकेबाद द्राक्ष, अनारकेफूल, नारियल इनकेस्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३ अथवा ४-४ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिलाकर चाटनेसे पित्तयुक्तद्वन्द्वज्वर, अम्लपित्त, ४० प्रकारके पित्तदोष, पक्तिशूल, योनिशूल, गुल्मशूल, प्रदर, रक्तदोष इनसबको यह नष्टकरताहे। २५५ ॥

२५६ लीलाविलासरसः (द्वितीयः)

रसा वलि ध्याम रविश्च लौहं
धात्र्यक्षनीरैरिखिदिनं विमर्द्य ।
तदल्पघृष्टं मृदु माकेवेण
सम्मर्दयेदस्य च बहुयुग्मम् ॥ १२०२ ॥
हल्पम्लपित्तं मधुनाऽवलोढं
लीलाविलासो रसराज एष ।
दुग्धैः सुकृष्माण्डरसैः सुधान्या
पन्नं शनेस्तत्ससितं भजेद्वा ॥
छादिं सशूलं हृदयस्य दाहं
निवारयेदेष न संशयोऽस्ति ॥ १२०३ ॥

र. स, र. चि, वै चि, या र, भै सा, र. र. स, र. श, र. सु, चि र. म, चि. क, र. च, वृ सो त, यो. म, नि, र., दो, र. म, र. क ल, रसायनम, र. र. कौ, र. कौ, र. कौ, र. र. दी, भै र, यो त, र. म. गा, ना वि, र. क, व. रा, र. का, र. पा, अम्लपित्ते ॥

शु०—कुत्रचिदाहस्थाने रौप्य हृदयने, पाचनमपि कुत्रचिद् हृदयन भावनापात्र हरीतक्या मर्दनमधिकज्ञाया हृदयने । रसपारिजाते भाव नाया "पञ्चविंशतिवारञ्च तावन्निर्बैदिपदये" इत्यदर्शनेको विशेषण हृदयने ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक, ताप्र और लोह-मसमे सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर आवले और बहेदे केरसेसे ३-३ रोजमर्दनकर भगरेकेरसेसे शोशीदेस्वर्दनकर ६-६ रतीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली

मधुकेसायलेनेसे अम्बपित्त, वमन, घृल्लयुक्तहृदयकाशह, इनसव-
को यह नष्टकरताहै । दूधमें सफेद बौहला अथवा कच्चे आबलोंका
रस डालकर पकावे । फटजानेपर दसकापानी अनुपानमें देवे २५६

२५७ लोकनाथपाट्टलीरसः

पारदभूति हैमभूत्या कार्या समानांशः ।
द्वाभ्यां समानगन्धः पयसा गन्धेन मर्दयेद्वियसम् ॥२०४
चित्रकनीरेण तनस्त्रिदिनें पयसाऽथ सूर्यस्य ।
त्रिगुणितपीतवरटाक्रमेणं क्षिप्तं निरोधितं यत्नात् ॥२०५
कापांसटङ्कणाभ्यां चूर्णांछित्तेऽथ भाण्डके क्षिप्तम् ।
रुद्धं गजपुटसञ्ज्ञे विपाचितं तत् त्रियामायाम् ॥२०६
दृष्ट्वा भैरववटुकान् कुमारिकावृद्धवैद्ययोगीशान् ।
प्रातःकाले स्नात्वा दृष्ट्वा पूर्वार्धे लेपनमुद्धृत्य ॥२०७॥
पलवतले निक्षिप्य सचराचरं मर्दयेद्यत्नात् ।
सर्वोपद्रवधुतैः सिद्धा स्यात्पाट्टली रम्या ॥ १२०८ ॥
बल्लह्वयोन्मितैषा मरिचैः घृतान्वितैश्च संसेव्य ।
अनेकवृत्ताश्च रोगाः सर्वे नाशं प्रयान्त्येव ॥ १२०९ ॥
मुसं विलेप्याऽथ घृतेन पूर्वं
सम्पूज्य गोविप्रभिपङ्कमारीः ।
दत्त्वा घृतं स्वर्णघृतं द्विजभयः
संसेवयेन्माङ्गलिकं विधाय ॥ १२१० ॥
शुभे दिने सुनक्षत्रे लज्ज्या चन्द्रवलं सुधीः ।
वल्बालङ्कुरणैः पूज्य प्राणाचार्यं कृतादरः ॥ १२११ ॥
कृत्वा स्वस्वयन्तं पूर्वं सर्वतोभद्रसञ्ज्ञके ।
लोकेशं पूर्वमभ्यर्च्यं प्राङ्मुखोद्भ्रुमुखोऽपि वा ॥२१२
प्राणाचार्यं नमस्कृत्य लज्ज्यानुहधत्तसम् ।
हाटके राजते पात्रे काचके वाऽपि शौक्तिके ॥१२१३॥
इमं मन्त्रं समुच्चार्यं प्राङ्मुखोद्भ्रुमुखस्तथा ।
भेषजं सेवयेत्प्राज्ञः स्थित्वा चोत्कटकासनः ॥१२१४॥
“ ब्रह्मा यक्षश्च खट्वेन्द्रभुवन्द्राऽकाऽनलाऽनिलाः ।
ऋषयस्सीपधोग्रामा भूतसहाश्च पान्तु मे ॥२१५॥
रसायनमिवर्यीणां देवानाममृतं यथा ।
मुषेयोत्तमनागानां भेषज्यमिदमस्तु मे ॥” १२१६ ॥
एवं संसेव्यमाने तु रसे बह्वुद्रयो भवेत् ।
वमि विरेको दाहोऽसतिशोरोरुप्रागगौरवम् ॥ १२१७ ॥
अरोचकाग्नितीप्त्यनुग्रहेकादयस्तथा ।
मुखपाकोऽल्पनिद्रत्यं रसव्यापत्तदुच्यते ॥ १२१८ ॥
प्रतिकार्यां पृथगिमे चाऽन्यथा यल्लहानिद्राः ।
वमो मुह्यच्छिक्तोर्षं मधुना घान्तिनाशनम् ॥१२१९॥
मातुलुङ्गाङ्गितोर्षं वा मधुना यद्विपत्ररुम् ।
लाजाः कणामधुयुता नाभिराशी जन्तेःसूशेता ॥१२२०॥
शासिरुण्डस्तु मधुना दग्धा वा विजया तथा ।
विरेकोपद्रवहरा भूषाश्री तण्डुलाग्मुना ॥ १२२१ ॥
दाघे सुधाजले शस्तं शीतनीयाऽवगाहनम् ।
सकुष्ठेन घृतेनाऽसलेपनं तद्गधयापहम् ॥ १२२२ ॥

शिरोरुक्शमनः शल्पफलालेपस्तुपाग्मुना ।
घृतेन मर्दनं देहजाड्यापहरणं तथा ॥ १२२३ ॥
मातुलुङ्गफलेकेशरं हितं
सेन्धवेन मरिचैश्च संयुतम् ।
धान्यं कसगुडशर्करं घृतेः ।
पाचितं त्वरुचिसङ्गनाशनम् ॥ १२२४ ॥
मोचाफलं घृतसितासहितञ्च तीव्र-
बह्नेः सुशान्तिकरणं घृतमेव शस्तम् ।
शुकच्युतो ससितमोचफलाग्मु शस्तं
वा शुकगानमथवा सघृते पयो वा ॥१२२५॥
गुडाद्रकं वा कफकोपनाशनं
मोचाफलस्यैव च भस्मकं वा ।
पलाशवीजं मधुना च वेष्ट-
स्तथा कृमीनाशयति प्रसह्य ॥ १२२६ ॥
काथः खदिरमूलत्वक्साधितो मुखपाकहा ।
खदिरादिवटी शस्ता या च पूर्व प्रकीर्तिता ॥
उत्रिद्रहरणं सर्पिः पानकं तु मुह्यमुह्यः ॥ १२२७ ॥
एते यदा स्यु बह्वोऽप्युपद्रवा-
स्तदा रसः कर्मकरः स्फुटं भवेत् ।
दिनान्तेरेणैव रसः प्रदेयो
मरीचचूर्णं सघृतं दिनेन ॥ १२२८ ॥
शाणद्वयाऽनुघृद्य रसाऽनुपाने घृतं देयम् ।
प्रथमदिवसादारभ्य त्रिसप्तको भवेद्यावत् ॥ १२२९ ॥
पथ्यं तण्डुलमुद्रमापतुवरीजातं हितं पूर्वतः,
सताहं घृतपुरितं सुमनसां संयावपिष्टोद्भवम् ।
शाकं चास्तुकमेधनादसुरसाद्युकाशिवावाहृतं,
नेपथ्रं कर्ममर्दकं सुरमितं हिङ्गादिभिः साधितम् ॥२३०
वमि विरेको दिवसे तृतीये पष्टेऽथवा सप्तदिनान्तरे वा ।
यदा रसेशः परिवर्जनीयो दिनानि तावन्ति पथिकमाय
हृतं चूर्णं शुरुष्णं दधिघृतवहलं पाययेद्भूरि दुग्धं,
क्षीरं पादाऽवशिष्टं फलमघृतसितापष्टियुक्तञ्च शीतम् ।
सेव्यं युक्तं वा द्वितीये बहुगुणसहितं सप्तके पुष्टिकामो,
भूमौ चोत्तानशायी मृदुतपदायने रात्रिशोये न उप्यन
तृतीये सप्तकेऽप्येवं ससितं घृतपाचितम् ।
नारिकेलाम्बुसंसिद्धं क्षीरं चानिसेयेत् ॥ १२३३ ॥
सर्पिणा मर्दनं शस्तं खानमुष्णाग्मुना हितम् ।
क्षुषोद्गमे हितं पथ्यं त्रिचतुःपञ्चवारकम् ॥ १२३४ ॥
पूर्णं त्रिसप्तके रोगो रोगमुक्तः प्रजायते ।
पूर्णदेहः पुष्टियुक्तश्चतुर्थे सप्तके भवेत् ॥ १२३५ ॥
सप्तकप्रितये स्वस्थः सेवते पूर्वभायतः ।
पुष्टिर्षीयथलाऽऽरोग्यं प्रयाति घृपुषि धियम् ॥१२३६॥
केचिदिच्छन्ति संलितं जातरूपं रसेभ्यरम् ।
अहिमिच्छेत् द्विधा सम्यग्जातरूपं महीतले ॥१२३७

भाषा—प्राद और सुवर्णभस्म समभाग, शुद्धगन्धक दोनोकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर एकरोज् गायकेदूधसे मर्द-नकर चित्रकलीजइनेस्वरस और आककेदूधसे ३-३ रोज मर्द-नकर सबमे तिलुनी पीलीकौड़ियोंमें भरके कपास कौर मुद्गाकेको कूटकर इससे कौड़ियोंकी सन्धि बन्दकर चुनेसे तुतेहुए वर्तनमें रखकर शरावसम्पुटक समस्तपर ३-४ कपइमिठीदेकर सुखने पर रात्रिमें गजपुदकी आवचे । स्वाहाशरीतलहोनेपर निकालकर भैरव, यदुक, कुमारिका, शुद्धवैद्य और योगिराजोंका पूजनकर प्रात काल स्नानपूजादि करके शरावसम्पुटसे निकालकर खरल-कर रखाछे । इससेसे ६-६ रती २९ मरिच और धीनेसाथ रोजाना सेवनकरनेसे अनेकप्रकारके ज्वर नष्टहोते । इन्के सेव-नके पहिले गौ, ब्राह्मण, बैध, कुमारिका इनकी पूजापर धी और सुवर्णकी दक्षिणा देवे । स्वस्तिवाचनप्रवृत्ति कराके शुभ वार, नक्षत्रयुक्त शुद्धमें चन्द्रयलका विचारकर वज्र और अलङ्कारोंसे प्राणाचार्यकी पूजाकर सर्वतोभद्र मण्डलमें लोकेशोंकी पूजा पूर्व या उत्तरमुखहोकरकरे । प्राणाचार्यकी आहा मिलनेपर सुवर्ण, रजत, काच अथवा शुक्लके पात्रमें औषधको रख आगे कहेहुए मन्त्रको बोलताहुना वीरासनसेभैठ औषधका सेवनकरे । "ब्रह्मा यक्षय देन्द्रेन्द्रमूचन्द्राऽर्जुनलाऽनिला । ऋषयस्तोषधीप्रामा मूनसहाय पान्द्रु मे ॥ रसायनमिवर्षीणा देवानाममृत यथा । सुधेधोत्तमानागानां भैषज्यमिदमस्तु मे ॥" इसमन्त्रको बोलकर सेवनकरे । इसतरह इसरसके सेवनकरनेसे अग्नि प्रदीप्तहोता है । इसके बीचमें कर्मवशात् उपद्रवरूप बमन, विरेचन, दाह, अस और शिरकीपीडा, आखोंकीखाली, शरीरकाभारीपन, अर्धचि, भस्मक, शुक्लक्षण, मुखपाक, निदानाया ये विपत्तियां उपस्थित होती हैं इनका तत्काल प्रतीकार करना उचित है नहींतो ये बलकी हानिको करके अनर्थ पैदाकरती हैं । बमनमें मधुनेसाथ गिलोयका पानी, विजोरेकीजइकास, मधुयुक्त मयूरपिच्छभस्म पीपल और मधुयुक्तलाजचूर्ण, नाभि और शङ्खपर जलका पोता देवे । विरेचनमें मधुयुक्त छोटीमार्दका चूर्ण, दहीकेसाथ भागका चूर्ण अथवा चावलकेधोवनकेसाथ भूषाश्रीकाचूर्णदेवे । दाहमें चूनेकापानी, टंकेजलका तीला, कुठकाचूर्ण मिलेहुए पीका अतोपर लेव, इनसव उपचारोंको करे । तुषाम्नुसे पित्तीहुईबिल-गिरीका मस्तकपरलेपरनेसे मस्तकभीडा शान्तहोती है । पृता-म्यत्र करनेसे देहका भारीपनजाता है । सन्धव और मरिचके-साथ विजोरेकीमन्त्रा अथवा गुड और शङ्खकेसाथ पीमें भुना हुआ पनियां देनेसे अर्धचि नष्टहोती है । धी और धारनेकेसाथ केलेफल अथवा केवल धी देनेसे मस्मकरोग शान्त होता है । शुक्लविक्रममें धारकेसाथ केलेकेफलका पानी अथवा सिरका अथवा पूतपुच्छपू देना । सुषुप्त अदरस अथवा केलेकीभस्म शुष्केगाय देनेसे कफप्रकोष नष्ट होता है । मधुऋगाय पलाश-बीज अथवा विडर देनेसे क्रिमियोंका नाशहोता है । मन्दिरो जइहीछालका क्षाप अथवा सारिदाशिवकीका सेवन मुखरङ्गको दूरकरता है । बारम्बार धीके धीनेमें निदानाद्य दूरोता है । ऊर-

कहेहुए उपद्रव जिममनुष्यको उपस्थितहो तो समस्तना चाहिये कि इसे रस बहुतजल्दी काम करेगा और उसे एकदिनके अन्तर-से औषधदेना । बीचके दिनमें मरिचकाचूर्ण डालकर केवल धी देना । अनुपात्रमें प्रथमदिन ४ मासे अथवा ८ मासे धीसे आरम्भकरना और २१ दिनतक प्रतिदिन उबलप्रमाणकरतेजाना । पहिलेसाताहमें चावल, मूंग, उड़द और अरहरकी दाल देना फिर गेहूँके आटेका हलवा और देवर, यशुआ, चौलाई, तुलसी, तिपतिया, आंवले, बनभट्टा, करीज, करोंदा इनका हींगवहीहसे छोंकाहुआ शाकदेना । तीसरे, छठे अथवा सातवें दिनकेबाद जव बमन या विरेचन होनेलगे तो उतनेहीदिन रसका अन्तर करदेना । हय, शृन्ध, भारी और गरम तथा जितमें दही, दूध और धी अधिकआये वह पशायं देना । मावा, बागमतीचावल, धी, शङ्खरुचसाठीचावल ये दूसरे सताहमें सेवनकरे । जितको पुष्टिकी इच्छाहो वह जमीनमें कोमल शाय्यपर चित्त सोवे और ब्राह्मणमुहूर्तमें उठजाय । इसी-तरह तृतीयसताहमेंभी करे और शङ्खकसाथ धीमें पकाएहुए पशायं और नारियलकेजलमें पशयाहुआ दूधपाक खावे तथा धीसे अम्यत्र और गरमजलसे स्नानकरे । मूलव्यनेपर ३-८ अथवा ५ बार दित और पय्य भोजनकरे । तीनसताह पूरे होनेपर रोगी रोगसे रहित होजाता है चौथे सताहमें शरीर-सम्पत्त से पूर्णहोता है । तीनपताहमें स्वस्थ होनेकेबाद आगे यदि अधिकसेवनकरनेकी इच्छा हो तो पूर्वक्रममें सेवनकरे । वितनेहीलोग इसमें पारसे कीहुई सुवर्णभस्मका योग चाहते हैं और सुवर्णके अभावमें पारदयोगमें कीहुई नागभस्म द्विगुण डालाकरते हैं ॥

टि०—इसमें मुखपाकको शमनकरनेकेलिये रात्रिद्विबटी-का सेवन कइहो उसका विधान अपोलिखित है । "गायत्री-त्वच् तुल्या सार्दां द्वयी विट्खदिरस्य च । सप्तशोणमिते तोये पाच्ये पादाऽवधोपनिम् ॥ पनीभूतं वज्रपूतं तस्मिन् इव्यायि नि क्षिपेत् ॥ प्रत्येकं कर्पमानाणि पुनरावर्तिते क्षने ॥ एलाभ्या-लज्जलचन्दनरक्तछात्रं इयामा तमाल विक्सापनलोदयटप ॥ लम्बाफलत्रयसाम्ननाथतकीधीधीपुणंगरिककट्टद्विदृक्कलानि ॥ पत्रेऽरोप्रवट्शय्यवायसमली त्वमात्रिनातिकलकोपलवज्रकानि । पूर्णाह्वा पलचतुष्यचन्द्रयुक्तं तस्मिन्क्षिपेत् पलमितं धृष्येव सर्वम् ॥ कङ्कोलनातिकल्युक्तमिदं समस्तमेहीहृते बद्रुगुणं भवति प्रसक्तम् ॥ जिह्वीक्रीडाशुद्रनागलदन्तरोगानन्तगानपि जयेदुचि-माध्यापि ॥ शीतोद्वाहस्य युष्टिका चणकोमिता स्याद्दीर्घव्य-दन्तमलनाऽर्धचिरोगनुष्ये ॥"

भाषा—सैरकीछाल १५० पल और विट्खदिरकीछाल २०० पल लेकर जवजुटकर ७ शोण पानीमें उपाळे । चतुर्धा-साऽरोरदन्तेपर कइहमें छानले । फिर इयमें इलायची, भर्तीड, खय, सफेदचन्दन, लालचन्दन, अनन्तमूल, पत्रज, मजीठ, नागमोषा, अण, सुन्हरे, लवन्ती, शिफला, रसौत, धाव-कीहीछाल (अभावमें पुय), पमछाट, सोनागेर, दाहहल्दी,

जायफलक्रीडाल, तालीसपत्र, पठानीलोथ, बड़केदूसे, जवाल, जदामासी, तज, हल्दी, जायफल, जाविनी, लौंग इनसबका चूर्ण १-१ कर्पे डालकर मन्दागिसे पकावे । गोलीबंधनेलायक होने पर उतारकर चार मगज (वासम, खीरा, ककड़ी, कद्दू इनके मगज) शुद्धकपूर, शीतलचीनी, जायफल येसब ४-४ कर्पे मिलाकर रहने दे । उंडाहोनेपर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मुहमें रखकर चूसनेसे जीम, ओष्ठ, ताल, मुख, गला, दन्त, अत्र तथा श्यामलिकाकेरोग, मुखकीदुर्गन्ध, दन्तमल और अर्धचि इनको नष्टकर रचिरो पैदाकरोहै । यहपाठ प्राचीन रसावतारकाहोहै परन्तु कईजगह क्लिष्ट पाठ होनेकीवजहसे चक्रदत्तने जगह २ पाठमें फेरफारकर दियाहै और उसीको भेषज्यरत्नावलीवालेने यथावस्थित लेलियाहै । चक्रदत्तनी हिन्दीटीकामालेने औरभी दुर्दरा कर डालीहै जैसे कि जायफल, कोशफल इत्यादि । इसलिये रसावतारके पाठके अनुसार इषगोलोको तैयारकरनाचाहिये । फलचतुष्टयकीजगह ग्रन्थकारके आशयको न समझकर फलचतुष्टयकपूरका योग करदियाहै वह अन्यधिक योगहोगयाहै । ग्रन्थकारने यूनानीमें प्रसिद्ध चारमगजके स्थानमें फलचतुष्टय शब्दसे कामलियाहै सो पाठमेंको ध्यानमें रखनाचाहिये । यह गोली शुद्धकपूरकेलिनेभी रास उपयोगी बन्तुहै ॥ २५७ ॥

२५८ लोकनाथपोट्टली (हेमगर्भादिः) २

मृतरसयुग्मभागो हाटकं चन्द्रभागं,
यसुगुणसुकपदं द्रुणाप्रागामेकम् ।
सितविपशशिभागं सर्वतुल्यं सुगन्धं,
तिथिदिनमनलाद्रि बज्रदुग्धेन घृष्ट्वा १२३८
तदनु च कृतगोलं पकभाण्डे च धृत्वा,
गजपुटविधिपकं पोह्लीलोरुनाथम् ।
घृतमरिचसमेतं बहुमात्रं प्रदद्या-
द्द्रवपतिमयहारीश्वासहारी विरानात् १२३९
यद्भुक्ततनुपुष्टिं वंदिदीप्तिञ्च कुर्यां-
त्कटुकतिलजविल्वं धर्जयेच्चाऽम्लवर्गम् ।
घृतमधुरसुशार्कं भोजयेद्युक्तार्थम्,
मधुकणमनुपानं योजनीयं भिषग्भिः १२४०
यवक्षाराऽऽज्यविश्वञ्च कथितं पोह्लीकमे ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं मान्यहृद्गलद्रोपनुत् ॥ १२४१ ॥
वमनशमनमुक्तं मातुलिङ्ग्यास्तु मूले-
र्भेषुमहितकणा वा दग्धवृन्ताकमज्जा ।
स्वरसमपि शुद्ध्या लाजचूर्णं ससिन्धु,
शिथिरसलिलधारा मूर्ध्नि देयाक्रमेण १२४२
कफविहृतिनिवृत्त्यै क्षौद्रयुक्तं घृष्ट्वैर-
मरिचसहितमक्षयं भृष्टरम्भाफलं वा ।
नुपविरहितधाना हन्यस्करण्डयुक्त्या,
घृष्टिमरिचघृतेनाऽरौचकक्रमः संदेव ॥ १२४३ ॥
र. सं., र. का., क्षयाप्रियारि ।

भाषा—पारदमस २ भाग, सुवर्णमस १ भा, पीली-
कौड़ी ८ भा, सुहागा १ भा, शुद्धयषुदेसोमल १ भा., शुद्ध-
गन्धक सप्तकीवरावर लेजर मवका बारीरचूर्णकरचित्रमूलकेजाय
और सेहुण्डकेदूधसे ५-५ दिन मर्दनकर गोलानाथ मुखार
पकेहुएमिठीवेवर्तनेमें धरके ६-७ कपइमिठीकर गजपुटी आचदे ।
स्वाङ्गशीतलदोनेपर निनालकर रखडोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे ३
रत्तीतक माना प्रकृतिसात्म्य टैफरपी और मरिचनेशय
वेनेसे ३ दिनमें यक्ष्मा, क्षास, मन्दाग्नि इत्यमवको नष्टकरताहै ।
तीक्ष्ण, तिलनेपदार्थ, बेलगिरी और खटाईका त्यागकरे ।
पीमें पमायाहुआ धातु पच्येदे । यह मधु, पीपल, यवधार,
घी और सोंठ इन अनुपानोंने अग्निमान्य, हृदय और गलेके
दोषोंको दूरकरताहै । वपानमें विजोरेदीजड अथवा मधु-पीपल,
अथवा मुनेहुए इन्ताककी मन्जा, अथवा गुडबोस्वरस अथवा
सेन्धवसहित लाजचूर्णनेसाध देवे और मिरपर ठडेजलकी धारा
देवे । कफविकारमें मधु, अदरक अथवा मुनाहुआ केलेफाल
मरिचकेसाथदेवे । धनियेके चावल शक्कर में मिलाकर देनेसे रक-
पित्त, तथा इलायची, मरिच और पीसे अरुचि बज्रहोतीहै २५८

२५९ लोकनाथरसः (प्रथमः)

शुद्धो वुमुक्षितः सूतो भागद्रवमितो भवेत् ।
तथा गन्धस्य भागो ह्यौ कुर्यात्कजालिकां तयोः १२४४
मृताद्यनुगुणेष्वेय कर्षेणैव विनिःक्षिपेत् ।
भागैकं द्रव्णं दत्त्वा गोक्षीरेण विमर्दयेत् ॥ १२४५ ॥
तथा शहस्य खण्डानां भागानष्टौ प्रकल्पयेत् ।
क्षिपेत्सर्वं पुटस्यान्तर्ध्वणलितशरावयोः ॥ १२४६ ॥
गते हस्तोन्मिते धृत्या पचेद्गजपुटेन च ।
स्वाङ्गशांतं समुद्रस्य पिष्ट्वा तत्सर्वमेकतः ॥ १२४७ ॥
पद्भुञ्जासमितं चूर्णमेकान्तिशदृषणैः ।
घृतेन चातजे दद्यान्नयनातेन पिप्तजे ॥ १२४८ ॥
क्षौद्रेण श्लेष्मजे दद्यादतीसारं क्षये तथा ।
अरुचौ प्रहणीरोगे कादर्थं मन्दानले तथा ॥ १२४९ ॥
कासश्वासेषु शुल्मेषु लोकरुनायो रसां हितः ।
तस्योपरि घृताश्लक्ष्णं भुञ्जीत फलत्रयम् ॥ १२५० ॥
मश्ल क्षणंरुमुच्यतः शर्याताऽनुपधानके ।
अनम्लमन्त्रं सप्तानं भुञ्जीत मधुरं दधि ॥ १२५१ ॥
प्रायेण जाङ्गलं मांसं प्रदेयं घृतपाचितम् ।
सदुग्धमकं दद्याच्च जातेऽर्शां सान्ध्यभोजने ॥ १२५२ ॥
सघृतान्मुद्गरयककान्यञ्जनेष्ववचारयेत् ।
तिलाऽऽमलककूलेन सघृतेन विमर्दयेत् ॥ १२५३ ॥
अभ्यङ्गयेत्सर्पिषा च स्नानं कोष्णांश्चैव न च ।
कचिच्चैलं न गृह्णायात्त विल्वं कारवेहुरुम् ॥ १२५४ ॥
वार्ताकं शफरं क्षिञ्जां त्यजेद्दद्याथायामंयुने ।
मांसं सन्धानकं हिङ्गुमुष्टौ मापामसूरान् ॥ १२५५ ॥
कृष्णाण्डं राजिकां कार्पं काञ्जिकं चैव धर्जयेत् ।
त्यजेद्युक्तमिद्राञ्च कांस्यपात्रे च भोजनम् ॥ १२५६ ॥

ककारादियुते सर्वं त्यजेच्छुक्रफलादिकम् ।
 पथ्यादिलोकनाथस्य शुभनक्षत्रमासरे ॥ १२५७ ॥
 पूर्णातिथौ शुद्धपक्षे जाते चन्द्रबले तथा ।
 पूजयित्वा लोकनाथं कुमारीभोजयेत्ततः ॥ १२५८ ॥
 दानं दद्याद् द्विषष्टिकामध्ये प्राज्ञो रसोत्तमः ।
 रसात्सञ्जायते तापस्तदा शरकर्या युतम् ॥ १२५९ ॥
 सत्त्वं शुद्ध्या गृह्यायादंशरत्ननया युतम् ।
 रत्नैर् द्वाडिमं द्राक्षामिश्रुण्ण्डानि चारयेत् ॥ १२६० ॥
 अरुचो निस्तुपुं धान्यं घृतभृष्टं सशर्करम् ।
 दद्यान्तथा ज्वरे धान्यं गुडचौकायमाहरेत् ॥ १२६१ ॥
 उशीरवासककाथं दद्यात्समधुशर्करम् ।
 रक्तपित्ते कफे श्वासे कासे च स्वरसंक्षये ॥ १२६२ ॥
 अग्निभृष्टज्याचूर्णं मधुना निशि दीयते ।
 निद्रानाशेऽतिसारे च प्रहृण्यं मन्दपात्रके ॥ १२६३ ॥
 सौच्यलाऽभयाऽरुणाचूर्णमुष्णजलेः पिबेत् ।
 शूलेऽजीर्णे तथा कृष्णा मधुयुक्ता ज्वरे हिता ॥ १२६४ ॥
 ग्रीहोदरे वातरुके छर्द्याञ्चैव गुदादरे ।
 नासिकादिषु रक्तेषु रसं द्वाडिमपुष्पजम् ॥ १२६५ ॥
 दूर्वायाः स्वरसं नस्ये प्रदद्याच्छर्करायुतम् ।
 कौलमज्जा कणा यद्विषक्षभस्म सशर्करम् ॥ १२६६ ॥
 मधुना लेहयेच्छर्दिहिकाक्रोपस्य शान्तये ।
 विधिरेष प्रयाज्यस्तु सर्वस्मिन् पोडूलोरसे ॥ १२६७ ॥
 मृगान्हे हेमगर्भं च मौक्तिकार्ये रसेषु च ।
 हृत्पयं लोकनाथाख्यां रसं सर्वाज्ञा जयेत् ॥ १२६८ ॥
 शा स, र च, वै क, या चि, जि र, वै चि र का, र
 प्र गु, भे सा, या न, र (मा.), र म मा, रमायनष, चि र
 भ, दो, र श्, रायश्मणि। र का लोकेश्वरपोडूलोति
 नाम। रसामृते शङ्खे न दृश्यते तस्यान्य करणाऽभावात्सो
 ऽप्यत्रैवाऽन्तर्भवति ।
 भाषा—शुद्ध और गुमुक्षि। पारा, शुद्धगन्धर् २-३ भागकी
 नीरुपणे इत्यनेन शोभेन चौशुनी पीलीकीदिशोभेन भरक एक-
 गाग गुहागोके गायके दूधमें पीसकर कौडियोंका मुह बन्दरे।
 फिर शक्न दूधके ८ भाग लस्कर नूनायुतेषु दाराकोके अन्दर
 शङ्खपट्टोके भीष्में कौडियोंका अमाकर सन्धिबन्दकर ६-७
 बण्डमिश्रीदकर एरनेपर एरदापके गठमें गरपुटदव। स्वाय-
 धोतलदोनेपर निकलकर रसाहाडे। इनमें ६ रतीकीमात्रा
 २९ कालीमिर्च और पीकसाय वातरोगने द। पितरागोमें
 ममन और बजरागोमें मधुनेपाय द। इनरह रोग अपना
 समयचित्तानुगानकसाय दनष अनीसार, क्षय, अरुचि ग्रहणी,
 रुग्णा, मन्दाग्नि, क्षाम, श्पण, शुष्म, इनसवश यह नष्टकर
 ताडे। रसदामेनकर ३ भाग पी और भाग दनर घोडीदरत
 तर्कियारहितव्यापार चित मल्लव। अम्लरहित मृत्तुक अय,
 मधुरदही, दूधमें पत्तायाहुआ बंगलपशुसिदोईभंग और
 रूपभातद। अग्नि प्रदीप्तदोनेपर कृष्णासमय पीमें लक्ष्मण मृगक

बन्धे। पृत्युक्त तिल और आलूकेकेक अथवा केवलघीसे अम्य-
 इतर बहुष्णजलसे स्नानकरे। तैल, वेत, कोला, बेंगन, मछली,
 इमली, बसत, मैथुन, मय, अचारकैरह, हींग, सोठ, उखद,
 मसूर, कौहला, राई, कोष, काशी, अयोग्यनिद्रा, कास्यपात्रमें
 भोजन, ककारादिसाक और फल इनका परित्यागकरे। इसका
 सेवनकरतेममय शुभ नष्ट, वार, पूर्णातिथि, शुक्लपक्ष और
 चन्द्रबल देखकर लोकनाथकी पूजाकर कुमारियोंको भोजनकराके
 दानदे। रसकेदेनेसे यदि ताप हो तो शकर और बंशलोचन
 मिलाहुआ मिलीयकामत्त, छुहारे, अनार, श्राध और ईतका
 उपचारकरे। अरुचिमें पीमें मुनेहुए शकरयुक्त धनियेके चावल,
 ज्वरमें धनिया और मिलीयका वाय, रक्तपित्तमें मधु और शकर
 मिलाहुआ रस और अङ्घ्रिकावाय, कफ, श्वास, कास और
 स्वरभ्रममें मधुसेसाध भुनीभागमचूर्ण, निद्रानाश, अतिसार ग्रहणी
 तथा मन्दाग्निमें गरमजलेसाय सखल, हरे और पीपलनाचूर्ण;
 शूल, अजीर्ण और ज्वरमें मधुयुक्तीपल, प्सीहोदर, वातरक,
 वमन, बवासीर और नासिकादिर्कोके रक्तपात्रमें अनारके फूलोंका
 रस अथवा शकर बालकर श्वेतदूर्वाके रससे नस्य दे। वमन और
 दिक्वकीके प्रकोषमें शकरयुक्त वेरडीगिरी, अथवा मसूरपि-
 ष्टभस्म मधुनेपाय चढावे। यहप्रकार, मृगाह, हेमगर्भ और
 मौक्तिकप्रथति पोडूलोरसोंमें करना उचितहै ॥ २५९ ॥

२६० लोकनाथरसः (लोकेश्वर) (द्वितीयः)
 पलं कपर्दचूर्णस्य पलं पारदगन्धयोः ।
 मापञ्च द्रव्यस्यैकं जम्बीराद्भिर्चिर्मर्दयेत् ॥ १२६९ ॥
 पुष्टेहोकेश्वरा नाम्ना लोकनाथा रसोत्तमः ।
 ऋते कुष्ठं रक्तपित्तमन्याघ्नो गान् वलाजयेत् ॥ १२७० ॥
 पुष्टिर्येषप्रसादीज्जकान्तिलाषण्यदः परः ।
 काऽस्ति लोकेश्वरादन्यां नृणांशम्भुसुरोद्भूतातः १२७१ ॥
 पथ्यं शाल्यादानं सर्पिं र्दधि शार्कं सरिद्भुक्तम् ।
 नित्यं याम्बुयादूर्ध्वं कार्यं वारप्रथं दिया ॥ १२७२ ॥
 न्यहाहान्तेऽरुचौ घाऽपि लज्जः मृतो न चेत्युतः ।
 अष्टमेऽह्नि प्रदातव्य, पूर्ववत्कार्यसिद्धये ॥ १२७३ ॥
 प्रथमे सप्तमे देया लावण्यरुणमुद्रकाः ।
 द्वितीये मायगोभूमा भस्याः पूर्वादित्रयं यत् ॥ १२७४ ॥
 देयानि मत्स्यमांसानि तृतीये मर्दनादिकम् ।
 तैलविल्याऽऽरुनालानि कोषवीस्यमज्जागान् १२७५ ॥
 त्यजेत्कादीनि द्वय्याणि ह्यं स्यादु च शीलयेत् ।
 वार्यो सेत्यं पय, कोष्णं पित्तं तु ससितं हितम् १२७६ ॥
 अत्यग्नां चोरव्याजानि तिलेभुक्रदलीफलम् ।
 रत्नरमामंमृद्धीकामितादि सरुलं भजेत् ॥ १२७७ ॥
 वीर्यच्युतौ नारिकेलजलं तालफलानि च ।
 आनाहाऽरुचिम्बुच्छोऽर्पित्थोमोद्गारविम्बुक्रिकाः १२७८ ॥
 पतेषु लघुशाल्यधं केवलं सघृतं हितम् ।
 अतिगान्धो पिथेच्छिन्नारसं शोडशं मंयुनत्रं ॥ १२७९ ॥

सक्षौद्रं वासकं रक्तपित्ते रुचिविपर्यये ।
 भृष्टधान्यं सितायुक्तमथवा क्षौद्रसंयुतम् ॥ १२८० ॥
 यवाश्रं मधुसंयुक्तं पिबेद्वा माहिर्यं दधि ।
 घृताऽन्नं भक्षयेन्नित्यं सुरसोष्णेन च वारिणा ॥१२८१॥
 छिन्नाऽभ्युसहितं देयं दाहेऽजीर्णं सुधाजलम् ।
 आद्रकं सर्पपं रम्भाफलं भृङ्गं कफोल्बणम् ॥ १२८२ ॥
 अन्येऽभ्युपद्रवा ये स्युस्तत्तच्छान्त्ये यथोपधम् ।
 द्वात्रिंशद्विधस्य कार्यं स्नानामामलकैस्तिलैः ॥
 युक्तं सेव्यं वले जाते शनैरग्निप्रलादनु ॥ १२८३ ॥

र.स, नि र, र. ल, घ, टो., भै सा, र र क्षी, र कौ,
 र म, त्र यो त, र चि, र सु, रसायनस., र (सा), योर,
 यो.म, र का, र क्षि, राजयक्ष्मणि। बहुषु स्थानेष्वय पाठो
 लोकेश्वरान्ना प्राणो वेति नान्ना व्यवहृतः ॥

भाषा—कौडीभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल,
 मुहारा १ मासा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर जमीरीकेरसे एक-
 दिन मर्दनकर गोलावनाय योडागुप्ताकर शरावसम्पुटमें बन्द
 कर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े।
 छुष्ट और रक्तपित्तको छोड़कर अन्यसर्वरोगोंको यह दूरकरताहै।
 पुष्टि, वीर्य, प्रसाद, ओज, कान्ति और लावण्यको देताहै।
 इधमें पथ्य सफेदचावल, धी और दही, हींगसे छोंकडुआशाक,
 दो दो पथ्यकेबाद अत्यन्त भूखलानेपर दिनमें ३ बार देनाचाहिये।
 तीनदिनकेबाद वान्ति अथवा अर्घि मालूम पड़े तो समझना
 चाहिये कि रस अनुकूल नहीं पड़ा, तब ७ दिनका अन्तरकर
 आठवेंदिनसे फिर शुरूकर। पहिले सप्तकमें लवा, सुरण और
 मृग देवे। द्वितीयसप्तकमें उड़द, गेहूँ और पूर्वोक्तपदार्थ, तृती
 यमें मछली और मास अधिकतया देवे और अम्यञ्ज करावे।
 तैल, वेल, काझी कोष, छी, दिनमें शयन, रात्रिजागरण,
 कफाराठक इनका त्यागकरे। हृद्य और स्वादुका सेवनकरे।
 घातप्रकोपमें कवल दूध और पित्तप्रकोपमें शङ्ख बालाहुआ
 कटुष्ण दूर पीये। भस्मकमें चिरोजी तिल, ईश, केलेकाफल,
 यजूर, माम, किसमिस और मिश्राण्ण सेवनकर। वायुलावमें
 नारियलका जल और तालकन, आनाह, अर्घि, मूर्च्छा धूमो-
 द्वार और हेमा इनम हल्क सफेदचावल कवल पीकरुथ्य देवे।
 अत्यन्तशीतमें मधुमिलाकर गिलायका स्वरसद। रक्तपित्तमें
 मधुकरुण्य अह्नकारस, अर्घिमें शङ्खयुक्त मुनाधनियां अथवा
 मधुकुण्य जश्वेपदार्थ अथवा मधुमिलाहुआ भैसका दहीद्व।
 दाहमें गिण्ठेयक स्वरसेकेमाय घृतयुक्त अग्ने। अजीर्णमें घृतेका
 पानी, कःपयपानन्याधिमें अदरक, सरसो कलेकाकल और भगदा
 देव। इषीतह्द अन्यभी उपद्रव यदि अन्ततयामृत उपस्थित हों
 तो उनही शान्तिहेलिय तप्तदीप्य देवे। ३२ वैदित आबल
 और तिलहाककल लगाकर प्राणकराये। शारीरिक और अग्निबल
 होजानेदेश्द उचिन्नसुभोग्हा मदनकरे ॥ २६० ॥

२६१ लोकनाथरसः (लोकेधा.) ३

भस्म मृतस्य भागिकं चतुः। शुद्धगन्धकात् ।

क्षित्या घराट्टिकागमं ट्ठूणेन निरुद्धय च ॥ १२८४ ॥

भाण्डे रुद्धा पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीत समुद्धरेत् ।
 लोकनाथरसो नाम क्षौद्रैर्गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १२८५ ॥
 नागरातिविपामुस्तं देवदारुवचान्वितम् ।
 कपायमनुपानन्तु सर्वातीसारनाशनम् ॥ १२८६ ॥
 चतुर्गुञ्जो घृते देयौ विशद्भि र्भरिचैस्तया ।
 जातीमूलपलेकन्तु छागीक्षीरेण पाचयेत् ॥
 शर्कराम्भोयुतश्चाऽनु पीत्वा कृच्छ्रहरं ध्रुवम् ॥१२८७॥

र स, चि क, चि र भ, र. र. स, ना चि, नि र, रम
 स, र. र, वै चि, र सु, र क ल, रसायनवार, र को, यो
 म, र कौ, चि र, घ, टो, व रा, र चि, रसायनस, र चं,
 चि सा, र क, वै र, र का, र र कौ, र म. मा, कल्लिार
 मूत्रकृच्छ्रे च। मूत्रकृच्छ्राऽधिकारे अस्मिन् पाठे शुद्ध सुतो
 नियोजित।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर
 बारीकचूर्णकर पारेसे चौगुनी पीलीकौड़ियोंमें भरकर आक
 अथवा गौबेदूधमें पिसेहुए मुहारेसे कौड़ियोंकासुंहे बन्दकर
 शरावसम्पुटमेंरख कपःमिठीदेकर सुखाकर गजपुटकी आचदे।
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखाडोड़े। इतमेंसे ४-४ रतीकी
 मात्रा धी और ३० कालोमिर्चोस्ताय अथवा केवल मधुकुण्य
 देकर सौंठ, अतीस, नागमोषा देवदारु और बककाकाया पिला-
 नेसे धमस्त अतिपारोंको यह नष्टकरताहै। एकपल चमेलीहो
 जडको बकरीके दूधमें पकाकर शङ्ख डालकर पिलानेसे मूत्र
 कृच्छ्र नष्टहोताहै ॥ २६१ ॥

२६२ लोकनाथरसः (चतुर्थ)

पारदं गन्धकञ्चैव समभागं विमर्दयेत् ।
 मृताऽन्नं रसतुल्यञ्च पुनस्तत्रैव मर्दयेत् ॥ १२८८ ॥
 रसाहिगुणलोहञ्च लोहतुल्यञ्च ताप्रक्रम ।
 मूर्ति घराट्टिकायाश्च ताप्रतस्त्रिगुणां कुम् ॥ १२८९ ॥
 नागवह्लोरसेनैव मर्दयेद्यतनो भिषक् ॥
 पुट्टेद्रजपुटे विद्वान्स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ १२९० ॥
 यत्कृच्छ्रहोदरं गुल्मं श्वयथुञ्च विनाशयेत् ।
 पिप्पलां मधुसमुत्कां सगुडां वा हरीतकीम् ॥
 गोमूत्रञ्च पिषेष्ठाऽनु गुडं वा जीरकान्वितम् ॥१२९१॥

र स, घ., वै क, र च, भै र, र चि, र सु, र का, यो
 म, शोहाऽधिकारे। वैपुचिन्धनेषु ताप्रलोहयोर्भागे त्रैगुण्य हयवत्।
 यो म कन्यकामुना मर्दनं कृत, गजपुटपाच्य न रवयेत्।

भाषा—धमभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जली,
 अत्रभस्म पारेकीघराबर, पारेसे दूनी सोहूँ और ताप्रभस्म,
 ताप्रसे तिगुनी कौडीभस्म लेकर एकको पानडेरेगसे १-२ दिने
 नर्दनकरनाय अथवा शरावसम्पुटमें बन्दकर १-७ कपःमिठीदेकर
 सुखानकर गजपुटकी आचदे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर
 रखाडोड़े। इतमेंसे ३-३ रतीकी मात्रा मधुसुतीरन अथवा
 गुडयुक्त हरीतकीकेमाय देकर गोमूत्र अथवा जीरकयुक्त

देनेसे यहूद्व, डोहा, उदररोग, शुल्म, और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २६२ ॥

२६३ लोकनाथरसः (लघुः) ९

घराटभस्म मण्डूरं चूर्णयित्वा घृते पचेत् ।
तत्समं मारिचं चूर्णं नागवल्क्या विभायितम् ॥१२९२॥
तच्चूर्णं मधुना लेह्यमथवा नवनीतकैः ।
मापमात्रं क्षयं हन्ति यामे यामे च भक्षितम् ॥
लोकनाथरसो ह्येष मण्डलाद्राजयश्मनुत् ॥ १२९३ ॥
शा. सं., र. र., वै. द., रसायनस., र. को., नि. र., यो. म., र. क यो., र. क. ल., ना. वि., क्षयाधिकारे ।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म समभागलेकर बारीक-चूर्णकर चतुर्गुणित घीमें पकावे । घृतसुलजानेपर समभागमरिच कानूर्णमिलाय पानकेरसमें १-२ दिन पोटकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु अथवा मक्खनकेसाथ १-१ पहरवाद देनेसे यह एकमण्डलमें राज्यश्मको नष्टकरताहै ॥ २६३ ॥

२६४ लोकनाथरसः (षष्ठः)

घराटतुल्यं मण्डूरं तद्वर्द्धं तीक्ष्णलोहकम् ।
तत्पादांशं सूतं सूतं सूताहिरुण्णगन्धकम् ॥ १२९४ ॥
खल्वादरे विनिःक्षिप्य मर्दयेदिवसत्रयम् ।
वर्षामूलमारणेण यज्रयल्लीरस्तेन च ॥ १२९५ ॥
यासाध्यया तालमूल्या चित्रमूलेन मर्दयेत् ।
तद्रोलं चातपे शोष्यं दिनान्ते तत् उद्धरेत् ॥ १२९६ ॥
शरायै मृद्भये स्थाप्यं कुन्कुटाख्ये पुटे पचेत् ।
सूक्ष्मं चूर्णं ततः कृत्वा तत्समं मारिचं रजः ॥ १२९७ ॥
भावनाऽनन्तरं द्रव्यं नागवल्लीरसाद्रिकम् ।
भृङ्गराजश्च निर्गुण्डीमुण्डी शिप्रुरसस्तथा ॥ १२९८ ॥
फलत्रयकपायेण छायाशुष्कञ्च कारयेत् ।
निष्काऽर्द्धं मधुना लेह्यं यामेयामे च भक्षयेत् ॥ १२९९ ॥
क्षयक्षयरुतं व्याधिं यातपित्तकफोद्भवम् ।
कासं श्वासं प्रतिदयायं शोफपाण्डुदामयात् १३००
हृत्पीडकं चाऽस्थिगतं घनिहन्ति च सत्त्वरम् ।
दीपनं धीर्यरूपध्वं सर्वरोगनिग्रहणम् ॥
लोकनाथरसो नाम शम्भुदेवेन निमित्तः ॥ १३०१ ॥
वै. वि (ल.), व, रा , क्षयाधिकारे ।

भाषा—कौड़ी और मण्डूरभस्म १-१ भाग, फोलादभस्म आधाभाग, फोलादमें चतुर्गुणपरदभस्म, पारसेदना शुद्ध-गन्धक लेकर बारीकपीसकर क्षरिटादीजड़, सेतुष्ककादूध, अस्ता, तालमूड़ी और चित्रमूल इनके स्वरगोंसे १-३ दिनमर्दनकर गोला बनाय सुनाकर शरायसमुष्टमें बन्दकर १-४ कपड़मिठी देकर सूपनेर कुण्डपुटकी आवेदे । स्वाश्रुतीत्यङ्गोनेपर निष्काकर उतकीबाबर मरिचका चूर्णमिलाय पान, अररव, भेनरा, निर्गुण्डी, गोरखगुण्डी, तदित्रन और चिच्छन इन्हें

रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ मासकी गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिलाकर १-१ पहरके अन्तरमें देनेसे क्षय, बात-पित्त-कफजड्याधियां, कास, श्वास, प्रतिदयाय, शोफ, पाण्डु, बवासीर, अस्थिगत हृत्पीडक, मन्दानि पीयंसास प्रभृति घररोगोंको यह दूरकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ लोकनाथरसः (घृह्न) ७

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं खल्वे कृत्वा तु कञ्जलीम् ।
सूततुल्यं जायिताऽर्धं मर्दयेत्कन्याकाऽम्युना ॥१३०२ ॥
ततो द्विगुणितं दद्यात्ताम्रं लीहं प्रयत्नतः ॥
काकमाचौरसेनेव सर्वं तत्परिमर्दयेत् ॥ १३०३ ॥
सूताथ द्विगुणं गन्धं घराटीसम्भवं रजः ।
पिष्ट्वा जम्बीरजोरेण मृषायुग्मं प्ररूपयेत् ॥ १३०४ ॥
तन्मध्ये गोलकं क्षित्वा यत्नेनचछाद्येद्विष्पकम् ।
शरायसमुष्टं कृत्वा मृद्भस्मलवणाम्बुभिः ॥ १३०५ ॥
शरायसन्धिमालिष्य चातपे शोषयेत्क्षणम् ।
ततो गजपुटे दत्त्वा स्याद्गुणितं समुद्धरेत् ॥ १३०६ ॥
पिष्ट्वा तु सर्वमकत्र स्थापयेद्भ्राजने शुभे ॥
खादद्वेद्वेद्वयञ्जाऽस्य सूत्रं चाऽनु पिपेधरः ॥ १३०७ ॥
मधुना पिप्पलीचूर्णं सगुण्डां वा हरीतकीम् ।
अजाजीं वा गुडनेत्र भक्षयेत्सुख्ययोगतः ॥ १३०८ ॥
यष्टुत्पीहोदरोत्थञ्च श्वयधुञ्च विनाशयेत् ।
घाताष्टीलाञ्च कमठीं प्रत्यष्टीलां तथैव च ॥ १३०९ ॥
कांस्यक्रोडाऽप्रमांसञ्च शूलञ्चैव भगन्दरम् ।
वह्निमान्यञ्च कासञ्च लोकनाथरसोत्तमः ॥ १३१० ॥
र. सं., वै. र, र. वि, र सु, प्लीहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धघात १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्ण-कञ्जली और अत्राभस्म १ भागलेकर घीउंराकरगमें एकदिन-मर्दनकर, ताम्र और लोहास २-२ भाग मिलाकर मकोयक रसेसे एष्टोत्र मर्दनकर गोलाबनाय शुद्धगन्धक और बौद्धीभस्म २-२ भागलेकर जंभीरीकेरसमें १ दिन मर्दनकर दोमृषाबनावे । उद्यमें गोलेकोरख शरायसमुष्टमें बन्दकर ४-५ कपड़मिठी देकर धूपमें सुलाकर गजपुटकी आवेदे । स्वाश्रुतीत्यङ्गोनेपर निष्काकर रखडोड़े । इनमेंसे १-६ रसोलेकर गोमूत्र अथवा मधुशुष्क-पीपल अथवा शुद्धकुठरे वा शुष्कजरीरा समभाग मिलाकर अनुगानरूपमें लेनेसे यहूद्व, प्लीहा, उदर, शोथ, वाताऽपीला, कमठी, प्रल्टीला, कांस्यक्रोड, अपमांस, शूल, भगन्दर, मन्दानि, काय इनगबको यह नष्टकरताहै ॥ २६५ ॥

२६६ लोकनाथरसः (अष्टमः)

भागाः सप्त कपर्दभस्म मरिचं पादाधिकान्दी विर्यं,
चिकान्दी रमभस्म विदातिमिताः स्यु गन्धकांसा द्वा ।
चत्वारो हाहिकनकस्य बनकः पादान भाग.स्युतः
चूर्णं तन्मृदिनञ्च सयंगददा स्याद्गुणनाया रसः १३११

प्रहृष्यां कफजे व्याधीं वानोद्रेके च पित्तिके ।
 प्रमेहे मूत्रच्छेद्रे च फासे श्वासे ब्रमे तथा ॥
 सिताऽऽप्यमोचामरिचैः संयुतो दीयते रसः ॥३३२॥

क्रोधं न कुर्यान्न च तैलमेवां
 न राजिकां पित्तकरं न क्रिञ्चित ।
 न मेथुनं जागरणं न रात्रौ
 न कामचारः त्रियते कदाचित् ॥ ३३१३ ॥

खचि , प्रहृष्याम् ।

भाषा—शौरीभन्म ३ भाग, मरिच १। भाग, शुद्धवज्जना
 १ भाग, पारदभन्म २० भाग, शुद्धगन्धक १० भा, अरिचो
 ४ भा., सुवर्णभन्म ३ भाग लेखर सबडा थारीमूर्च्छांर रस-
 छांड़े । इयमेमे १ रसति ३ रसतिव शशर, घो, मॉचरम और
 मरिचकेनाथ देनेने प्रहृषी, कफजन्वाधि, वात और पित्त
 प्रधानन्यायियां, प्रमेह, मूत्रच्छ, कास, श्वास और धन
 इनसबको यह मट्टरनाई । कोष, तैल, राई, पित्तकारकपदार्थ,
 मैथुन, रात्रिजागरण, स्वच्छन्दगमन इनमपका त्यागकरे ॥३६६

२६७ लोकनाथरसः (नयमः)

पञ्चमि लंबणं मूतं त्रिभिः क्षारस्तथैव च ।
 मर्दयद्दीपनाशाय गुणाधिन्मयविधित्मया ॥ ३३१५ ॥
 एवं संशोष्य मूतेन्द्रं राजिकाहृद्गुण्टिभिः ।
 चूर्णितैः पिण्डिकां कृत्वा तन्मध्ये मूतकं क्षिपेत् ॥ ३३१६ ॥
 ततस्तां स्वेद्ययेत्पिण्डौ वरये बद्धा तु काञ्जिके ।
 दोलाय प्रगतं यत्नादौषो यामचतुष्टयम् ॥ ३३१६ ॥
 एवं मूत्रं रमं कृत्वा क्रमेणाऽनेम मर्दयेत् ।
 गिरिकर्णां तथा भृङ्गराजनिर्गुण्टिके तथा ॥ ३३१७ ॥
 जयन्ती शृङ्गेरञ्च मण्डूकौ चपलच्छट्टः ।
 काकमाचीं तथोन्मत्तो रुद्रुकश्च ततः परम् ॥ ३३१८ ॥
 एतामामोषधीनाञ्च रसतुल्यै रसैः क्रमात् ।
 ततस्त्वनूतराजस्य कायां मरिचमात्रिका ॥ ३३१९ ॥
 वटिका मन्निपातस्य निवृत्त्यर्थं गिरारुरैः ।
 इयं श्रीलोकनाथेन मन्निपातनिवृत्त्यर्थे ॥ ३३२० ॥
 दीर्घानि गुटिका पुण्या एष्टव्ययकारिणां ।
 इमां प्राप्य वटीं यश्चात्सन्निपाताद्भिमुच्यते ॥ ३३२१ ॥
 मयूरमीनवाराहच्छटागामाहिरगम्भरे ।
 प्रत्येकेनाऽप्य सर्वेषां भाजिता चेदियं भयेत् ॥ ३३२२ ॥
 पातयेत्तत्र तापानि मुशंतातानि पशुनि च ।
 शरैरादिभिर्युक्तं भक्तमन्मिन् प्रदापयेत् ॥ ३३२३ ॥
 इसचञ्च तथा योज्या रमवीर्यविजृम्भये ।
 दीतत्रथे भयेदीर्यं पिचयदे महात्मने ॥ ३३२४ ॥

र. नि, र. र. म, र. सु, र. दी, रसादनम., र. का १ दो.
 त, रसनाप, र. दी, दो न, मू प्र, र मू जगदप्रिभरं ।
 रसाथारं मुषणलोकनाथ इति नाम ॥

भाषा—पार्शोनिमक और तीनोंक्षारोंसे १-१ रोज़ पारको
 मर्दनकर गरमछाओसे साकरले फिर राई, हीम, सोडका
 काओमें गोला बनाय उसके भीतर पारको रस दोलायन्त्रसे
 ४ पहर काओमें स्वेदनकर निकालले फिर गोक्षण, भगरा,
 निर्गुण्टी, जैनी, अदरक, ब्राह्मी, पीपलीछाल, मनोय, धतूरा,
 एण्ट इनसबके पारकेवरावरखराओमें क्रमात् मर्दनकर मिचं बरा
 वर गोखिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा
 समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको निवृत्तकरताई ।
 इसमें मोर, मछली, सूअर, बकरा और भैंसेके पित्तोंसे भावना
 देकर गोली बनाई हो तो मत्सेपर टेंडजलकी धारा देना । शर
 और दहीयुक्तभात, ईश्वरगृह टंडे पन्थे खानेको देना इनसे यह
 मुहुतवी चमत्कृतिको दितालताई ॥ ३६७ ॥

२६८ लोकनाथरसः (दशमः)

स्वर्णं मूतसमानकं हृदतरं निग्मन्मुना मर्दितं,
 पिष्टिः क्षमागुणसम्मिताऽन्नकन्दूदा मृपान्विता भूधरे
 पका घञ्चतुष्टयं शुभतरं स्याद्रस्म गन्धादमना,
 तुल्यं चित्रकपट्टञ्चैरसलिलै र्घ्नत्रयं मर्दितम् ॥ ३३२० ॥
 तद्भारिद्रिकपट्टकोदरगतं हालालुडारककतो,
 रुद्धं पूर्णविलितमाण्डतलमं संरुध्य चास्यं पुष्टे ।
 मयं तल्पकपट्टकं हृदतरं बहृद्धयं सर्पिषा,
 युक्तः सन्मरिचैश्च मूतकारः श्रीलोकनाथाभिधः ।
 मृगाङ्गवट्राजयश्महारी मूतपत्रो भजेत ।
 पथ्यादिं धृयंरसस्य नेयनं मनःकवयम् ॥ ३३२७ ॥
 र, क्षयाप्रधिकार ।

भाषा—तीनोंकेरुद्ध अथवा वारिकर्ण और पात समभ
 कर नीचुरेसते १-२ रोज़ मर्दनकर सन कलास निकालद ।
 दो दो षण्टेखाद रणबदलनासाथ फिर इनपिण्डोंके बराबर शुद्ध
 गन्धमिलकर एकरोज़ मर्दनकर गोलाबनाय कथोमब्रह्मे
 कञ्चो दोमृषाबनाय अगडे भीतर गोलेधो रण सन्निधन्दकर
 ३-४ कफमिनी देकर मुरानेतर भूधरयन्त्रमें ४ पन्थी आंच
 स्वाहाशौकलुनेनेर निकालकर धरापका शुद्धगन्धक निगय ३
 रोज़ निग्मक और अदरक रसोंसे मर्दनकर पारके वरगुण्टि
 पीलीकड़ियोंके अन्दर भरये मच्छट्ट और मूरारं रूपमे
 सुदन्दकर धूमेमे पुष्टेए भाण्डमें बन्दकर मुरामुदादेपर ३-४
 कफमिनी बराबर मुरानेतर गापुटरी आंचये । त्यापनीरु-
 होनेतर निकालकर रखओड़े । इनमें ६-८ रसिकोमाया पी
 और मरिचकेसाथ देनेसे यह रात्रयश्नादिगमनरोगोंको दूर
 करताई । इनमें पथ्यवीरु १ दिनकर मूलाकड़ी लव घना २६८

२६९ लोकनाथरसः (एकादश)

धराधिमागा रमगन्धनाला
 त्रिदाच्छिद्राट्टपमादिशः स्युः ।
 ताद्यं शरानां दिनगमकन्त-
 जन्मर्थांतरैः परिसमं गोलम् ॥ ३३२८ ॥

निधाय सम्पुष्ट्वरेऽधियामं
 पुटं प्रदद्याद्गुह्यु शीतलन्तत् ।
 पिवेत्त्रिगुञ्जं मधुदिक्कणायुतं
 ग्रीहज्वरे धातुगते क्षयादौ ॥ १३२९ ॥
 सगर्भयोपिच्छिद्युर्दुर्वलानां
 सुनवावहोऽयं कथितो गुणाढ्यः ।
 स्याल्लोकनाथोऽखिलरोगहर्ता
 द्रोपानुरूपश्च भजेत पथ्यम् ॥ १३३० ॥
 र. सं., क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैन्सिल, सुहागा
 और सुवर्णमादिक ३०-३० भाग, ताम्रमस ५ भाग लेकर
 नीलवर्णनजलीकर जमीरीवेरससे ७ रोज मर्दनकर गोला-
 बनाय शरावसम्पुष्टं बन्दकर २-३ कपडमिरीदेकर मुत्ताकर
 १ ग्रह लघुपुष्पी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निरालकर
 रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा मधु और १० पीपलके-
 साथदेनेसे ग्रीह, धामुतज्वर, क्षयादिरोग, गर्भक्ती स्त्री और
 दुर्बलशक्तीके तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दोपा-
 नुरूप देना ॥ २६९ ॥

२७० लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) (द्वादशः)

रसस्य भस्मना हेम पादांशेन प्रकल्पयेत् ।
 द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेच्चित्रकाम्बुना ॥ १३३१ ॥
 चराचरांश्च सम्पूर्यं दङ्कणेन निरुद्धय तु ।
 भाण्डे चूर्णप्रलितेऽथ क्षिप्या सन्धाय मृत्स्नया ॥ १३३२ ॥
 शोषयित्वा पुटेद्रतैऽपरनिमानेऽपरहके ।
 स्वाहशीतलमुद्गत्य चूर्णयित्वा तु विन्यसेत् ॥ १३३३ ॥
 एष लोकेष्वरो नाम्ना पुष्टिर्विषयवर्धनः ।
 गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥ १३३४ ॥
 खाद्येत्परया भक्त्या लोकेशं सर्वरोगहृत् ।
 अङ्गकाश्येऽग्निमान्ये च कासे पित्ते रसक्षये ॥ १३३५ ॥
 मरिचे घृतसंयुक्तेः प्रदातव्यो दिनत्रयम् ।
 लवणं वर्जयेत्त्र साज्यं सद्धिं भोजनम् ॥ १३३६ ॥
 एकविंशतिं यावन्मरिचं सघृतं पियेत ।
 पथ्यं मृगाङ्गुवदेयं शयीतोत्तानपाद्घः ॥ १३३७ ॥
 यमने सम्प्रवृत्ते तु गुड्डीचौद्रयमाहरेत् ।
 मानुलुङ्गस्य मूलं घालाञ्जाचूर्णं ससैन्यवम् ॥ १३३८ ॥
 पिप्पलीं मधुसंयुक्तां खाद्येद्भान्तिशान्तये ।
 स्नानं शीतलतोयेन मग्निं धारां विनिःक्षिपेत् ॥ १३३९ ॥
 पेंते विकारे सञ्जाते फल्गुलीफलमाहरेत् ।
 भृङ्गा तन्मरिचैः सार्धं भोजयेत्कफनुत्तये ॥ १३४० ॥
 आद्रिकां गुडयुक्तां घा गुडार्द्रकमयापि घा ।
 भृङ्गा कुस्तुम्वरौ जीरे व्यापारौ चूर्णयेत्ततः ॥ १३४१ ॥
 शर्करागुडमिथं वा वृद्धीताऽग्निशान्तये ।
 अजमोदा विडङ्गानि पिङ्गा त्रेणेण पाययेत् ॥ १३४२ ॥

कृमिकोपप्रशान्त्यर्थं कायं वातप्रमुस्तयोः ।
 संस्कृत्य दुग्धेन दध्ना विरेके सम्प्रयोजयेत् ॥ १३४३ ॥
 ईपद्भृङ्गा जयाचूर्णं मधुना खाद्येच्चिन्ति ।
 अङ्गतोदे घृतेनाऽङ्गं मर्दयेत्त्वोष्णवारिणा ॥
 स्नापयेद्भोगिणं वैद्यो लोकनाथमुत्समरम् ॥ १३४४ ॥
 र. सं., घ., र. ल., रसायनसं., वृ. यो. त., र. वि., नि.
 र., र. र. स., र. म. मा., र. को., र. चं., यो. र., र. सु,
 र. सं., र. म., यो. म., ना. वि., दो., वै. चि., र. व. यो.,
 र. का., र. क. ल., चि. र. म., र. (मा.), र. र. क्षये ।

टि०—रसरत्नमनुष्ये द्वितीयस्थाने स्यात्सर्द्धभागेन स्वर्णं निरुज्य
 मृगाङ्गुपोट्टलीति नाम स्थापितम् । माणित्वचन्द्रीपरनावतारे द्वौ
 पाठौ प्रकथितौ, एवमित्यु पाठे साधारण कनकभरय नियो-
 जित, द्वितीये पट्टपुण्यगन्धमारित कनक योजितम् । हेमनारद
 गन्धना एवमथ पट इतिभागे विशेष । रसायनमङ्गलरस्य
 द्वितीयस्थाने अभिद्रीपनीऽद्विधेति नाम स्थापित तत्र गन्धवस्थाद्यौ
 भागा कल्पिना जीवच्छम्भुके चाऽवरोप कृत इतिविशेष । रसरत्न-
 द्वीपिकायां दङ्कणेन कपट्टमणमसि अत्र तु मधुप्रक्षिप्तमिति विशेषो
 हृदये परन्तु स गणनायोग्यो नाऽस्ति उभयथाऽपि रसायनमेव तन्मेलन
 क्षीरिण्येकमर्दन्तु विशेषतायामेव र्धवस्थिति, तस्याऽत्राप्यनुष्ठाने क्षल्य-
 भावोऽस्तीति सुधीमिराकल्पनीयम् । रसायनेनो दोडरानन्दे रसायन-
 सङ्गमे च उभयोरपि सङ्गमहृत्स्वस्नानतामेव चोत्पत्ति । रसरत्नकरे “घृत
 मूत चतुर्भागं मातृकं शुद्धमेकम् । अष्टभागं शुद्धगन्धं द्विकैक चित्रके
 द्वैः—” इत्यादिना वैदिकेयनात्रा एवो रसोऽस्ति सोऽप्येताऽन्मन्वन्ति ।
 गन्धमन्त्रे भागाऽधिकायाः तदावता रसान्तर्तां प्राप्तुमर्हति वृद्धिदानेन
 गन्धकस्योद्भिद्यमानत्वात् ॥

भाषा—पारदमस ४ भाग, सुवर्णमस १ भा, शुद्धग-
 न्धक ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकके रससे
 एकरोज मर्दनकर पारेसे चौधुनी कौडियोंमें भरके सुहागसे
 सुद्वन्दकर घुनातुट्टए भाण्डमें रखकर शरावसम्पुष्टसे बन्दकर
 ४-५ कपडमिरी देवे । सुखनेपर हाथभरके रुद्धमें दोषहरकेबाद
 इतनी आंचदेवे कि सबेर तक थंडीहोजाय । स्वाहशीतलहोनेपर
 निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रतीकीमात्रा पीपल और
 मधुकेसाथ देनेसे यह पुष्टि और वीर्यको बढ़ताहै । कृशता,
 मन्दाग्नि, कास, पित्तप्रकोप और रसक्षय इनरोगोंमें ३ रोजतक
 मरिच और धीकेसाथदे । इसमें नमकछोड़दे घृत और दधियुक्त
 भोजनदे । चारदिनकेबाद २१ दिनतक घी और मरिच पीवे,
 पथ्य मृगाङ्गुकीतरद दे जमीनपर चित्तरोवे । रसायन्यासिके-
 काण यमनहोनेपर गिलेय अथवा विजोरेनीजकाहवरस अथवा
 सैन्ययुक्तलाजचूर्ण, अथवा रात्रिमें मधुयुचपीपल देवे । पित्त-
 विकारमें शीतलजलसे स्नान, मत्स्यर शीतलजलकी घारा और बेले
 देना । कफविकारमें मरिच कषायित्वा अथवा गुडयुक्त आदीचर्
 (आतामो जंजवील य०) अथवा गुडयुक्त अदरसदेना । अर्धयमें
 शुनापनिवा, जीरा और विकट्टदेसाय अथवा टावर वा गुट्टेसाय
 देना । किमिप्रकोपमें अजमोद और विट्ठ छाष्टमें पीसकर देना ।
 विरेचनमें एरडमूल और नगरमोदेसाय देना और टगीतरद

धीरपाककरके देना अथवा भुनीभालराचूर्ण रात्रिमें देना ।
हृत्फूटनमें धीसे अभ्यङ्गकरायणमजलेखानकराना ॥ २७० ॥

२७१ लोकनाथरसः (लोकेश्वरः) १३

हो भागी गन्धकस्याऽप्ली शङ्खचूर्णस्य योजयेत् ।
एकमेव रसस्यांशमर्कशरीरेण मयेयेत् ॥ १३४५ ॥
चित्रकस्य द्रव्येणैव शोषयित्वा पुनःपुनः ।
एकीकृत्य रसेनाऽप्य क्षारं दत्त्वा तद्वृद्धकम् ॥ १३४६ ॥
अर्कशरीरेण कुर्वीत गोलकानथ शोषयेत् ।
निरुद्ध चूर्णलितेऽप्य भाण्डे दद्यात्पुटं तथा ॥ १३४७ ॥
लोकनाथरसो ह्येष प्रहणीरोगहन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिच्चाऽऽज्यसामन्वितम् ॥
ददीत दधिभक्तञ्च ग्रहण्याञ्च विद्योततः ॥ १३४८ ॥

र. र. स., र. म., प्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, राक्षचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागनेपरवाहृष्टा बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णरज्जुलो-
मेंमिलाकर आकडेदूध और चित्रककेजायकी सुग्गासुपाकर
३-३ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर सबसे आधेप्रमाणमें
सुहागा मिलाकर १-२ दिन आकडेदूधमें धोकर बैरबरापर
गोलिये बनाकर अच्छीतरहसुग्गाकर चूनापुतेहुए बतनमें बन्दकर
२-४ कपडमिठीदेकर गुग्गोनेपर गरजपुखी आंचदे । स्वाश्रुतील
होनेपर निकालकर रगडोडे । इधमेंसे ४-४ रती मरिच
और धीकेसाप देनेसे और दहीभात खिलानेसे प्रहणीरोग
निवृत्तहोताहे ॥ ३७१ ॥

२७२ लोकनाथरसः (लोकेश्वरपोट्टली) १४

प्रत्येकं दद्याद्वाद्याणाः शुद्धगन्धकमृतयोः ।
कज्जलीमर्कदुग्धेन येषयश्च दिवद्युयम् ॥ १३४९ ॥
द्रव्यं सेहुष्टदुग्धेन पिष्ट्वा रुन्ध्या च गोलकम् ।
वराटेपु च तदित्याद्या पेष्येद्भ्रमृत्स्नया ॥ १३५० ॥
पुटान्मुत्पलकं दद्यान्क्रमेणांतरयधितः ।
ददाते गन्धको यायलक्ष्मिस्तुष्टिभिरस्य ॥ १३५१ ॥
शुष्णं ततः कपदीनां पूर्णं गद्याण्यदिदातम् ।
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये दद्याद्वाद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥
आर्द्रचित्रकमूलाणां स्वरमेन च भाययेत् ।
मृतमृतञ्च तन्मध्ये क्षिप्या पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥
गुटीः रुन्ध्याऽऽतपे नुष्पकास्तनो प्रासा च कुम्भिका ।
पूर्णं तिल्याऽऽतपे शुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥
सृष्टिकाया मुग्गे पक्वाद् हटं देयं पिधानकम् ।
सन्धि घनमृदा तिल्या गन्तमध्ये क्षिपेत्ततः ॥ १३५४ ॥
ज्यलिना शोतलीभूता देया सुष्प्याऽपरः पुटः ।
रुन्ध्या पूर्णं गुटीनाञ्च संशोन्मुष्पिकागनम् ॥ १३५५ ॥
सन्नातोऽयं रसः सन्धक मित्तो लक्ष्मिदापोट्टली ।
उनीयधेः समं देया रसो घ्राण्यनुष्टयम् ॥ १३५६ ॥
सद्गुह्यायामनीमारो प्राप्ति च सहजे तथा ।
घ्रात्रिदानमिच्छे मिथो घृतयुक्तोऽप्याय रसः ॥ १३५७ ॥

गुहृचोसत्त्वसहितः परं ज्वरयिनाशनः

पष्टिकातण्डुला माया गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥
दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम् ।
नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वज्रं क्षाराऽस्तैलकम् ॥ १३६० ॥
रसि, र. कं. ली., प्रहणीरोगे ।

रि०—रस इलायणवर्णनायपोट्टलीराक्षचोष्टुलोष पाठः मरु.
प्रतिभाति परन्तु पाके भावनासु च विशेषत्वात् पाठव्यक्तोः ब्रह्म-
योगिन एकनाद द्वयोरपि स्वतन्त्रतया पाठः स्थापित इति विद्वि-
विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर नील-
वर्णरज्जुकीकर आक और सेहुष्टकेदूधमें ३-३ दिन मर्दनकर
१० तोले पीलीकौड़ियोंमें भरके बज्रमिठीसे सन्धिबन्दकर
चूनापुतेहुए भाण्डमें बन्दकर २-४ कपडमिठीदेकर सूखनेपर
इतनी आंचदे कि केवल गन्धककी जडे पारा न उडे । स्वाश्र-
रुतीलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीबराबर गन्धकदेकर पूर्वे
द्वोंसे मर्दनकर आंचदे, ऐसे पद्मगन्धकजारणकर अलगरसदे ।
फिर कौड़ीगन्ध १० तोले और शङ्खगन्ध ५ तोलेका बारीक
चूर्णकर अदरत और चित्रकमूलेकायमें १-१ रोज मर्दनकर
पूर्वाकम्भ मिलाकर १-२ पहलमर्दनकर मुपारीकेयदत गोलिये
बनाय धूरमें सुखाकर चूनापोतकर सुगईहुईरुद्धईमें भरके
शरासम्भुटमें बन्दकर ४-५ कपडमिठी समस्तपर लगाय गर-
पुटकी आंचदेवे । स्वाश्रुतीलहोनेपर निकालकर पूंवर मर्दन-
कर सुपास देहुतापुटेदे । स्वाश्रुतीलहोनेपर निकालकर रग-
डोडे । इधमेंसे डेड १॥ मासेकीमात्रा पुत्रुकु ३२ कालीमिचो-
केमाथ अथवा रोगोचितानुपात्रनेमाथ देनेसे सद्गुहणी, आम
अथवा रुद्ध अतिसार, नश्रुहोताहे । गुहृचोपरसेसाय देनेसे
यद् ज्वरको नश्रुकरताहे । साठोचावल, उदर, गेहूं, ज्वर, सपेद
चावल दही, दूध, घृत और मधुरप्रवृत्ति तमामभाहार, नारकी,
साखर येसय इधमें पथ्यहे । क्षार, अम्ल और तेल नहीं खाने
चाहिये ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनाथरसः (पोट्टली)

गोलं जम्भरमेन गन्धरसयोस्तनुत्पताप्राऽऽघृतं,
गोलं लायणवन्धगर्भनिहितं रुद्धा पचेत्त शनैः ।
यामानघ कपदोजेन स्रकलं नुत्येन तद्गम्भना,
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिष्ट्वा पुटं क्षापयेत् ३६१
संयुक्तमिति पोट्टलीं महाविषां मारोच्यपूर्णं ता-
मशोषादिति लोकनाथविधिना दीपत्यकामादिपु ।
शोषामाऽनिलगुल्मशूलमहज्जन्ध्यासप्रहण्यशोभि,
श्रीः यश्मणि पाण्डुरोगमहिते सन्नापरमायाऽरुन्ध्यां ॥
नि ., र. वै., र. पा., कायापिठे ।

भाषा—गननाय शुद्धपारे और गन्धक की नीलवर्णरज्जुकीको
बारीकीकेरगमें मर्दनकर गोलकायाप बराबरकेरुतिदे गन्धक
बन्दकर १-७ कपडमिठी देकर गुग्गोनेपर लघुपथ्यमें बन्दकर
८ पदकी क्माति देवे । स्वाश्रुतीलहोनेपर निकालकर उगही

बराबरकी पीलीकौड़ियोंकीभस्म मिलाय चित्रकमूलकेकाउसे १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचरे । स्वात्रशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े । इतमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और निचौके चूर्णके साथ मिलाकर समयोचितानुपानकेसाथ लेकर द्वितीयलोकनाथमें कहेहुए पथ्यके अनुसार चलेसे दुर्बलता, कास, श्वास, शोफ, काम, वातप्रकोप, शुल्म, शूल, सहजश्वास, प्रहृणी, बवासीर, पूर्णरूपराजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अक्षि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

२७४ लोकनाथकरसः

पीतस्थूलकपर्दानां ग्राह्यं विंशोत्तरं शतम् ।
 तत्रे द्रोणमिते वाप्यं मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥
 तक्रजोर्णे च नि.सारे गृह्णीयात्तत्पुनः पचेत् ।
 वारानस्यञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४ ॥
 लेलीतकस्य शुद्धस्य सार्धसत्ताऽक्षरुं द्वयोः ।
 खल्वे कज्जलां कृत्वा पूरयित्वा विमुदयेत् ॥ १३६५ ॥
 टङ्कणेनाऽकंदुग्धेन भावितेन चतुर्दश ।
 वारान कुमारिकाद्रिञ्च शोपयित्वा पुनः पुटेत् १३६६
 विमुदय त्रिपुटे दत्त्वा स्वाद्गशीतलमुद्धरेत् ।
 गुञ्जापञ्चोन्मितं दद्यात्पङ्कजासम्मितोपणैः ॥ १३६७ ॥
 ततः पलमितं पञ्चास्तिपत्रैश्चाङ्गेरिकाघृतम् ।
 पथ्यं दुग्धोदनं कुर्यात्स्यजेद्व्यायामजागरम् ॥
 सिद्धोऽयं सिद्धनाथेन कथितो लोकनाथकः ॥ १३६८ ॥
 जयेत्सर्वरोगानशोपानसाध्यान्
 विशेषाद्ब्रह्मप्यामतीसाररोगे ।
 रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे
 महायक्ष्मिण्योगवाही प्रदिष्ट ॥ १३६९ ॥
 र का , अतीसाराऽधिकारे ।

भाषा—पीली और मोटीकींही १२० लेकर दूनापानी-
 डालकर बनाईहुई एकद्रोणजालमें डालकर धीरे २ पकावे । जब
 छाछका तमामपानी जलजाय तब कौड़ियोंको निकालकर फिर
 उसीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौड़ियोंको साफकर
 शुद्धमुक्षितपारा ५ कर्षं, शुद्धगन्धक ७॥ कर्षंकेकर दोनोंकी
 नीलवर्णकज्जलीकर कौड़ियोंमेंभर आक्केदूध और धीनुवारके
 स्वरससे १४-१४ भावनाए दियेहुए सुद्गासे मुह बन्दकर मुखा
 पर लघुपुटकी आचरे । स्वात्रशीतलहोनेपर आक्केदूध और
 कुमारीकेरससे १४-१४ भावनाए देकर टिकड़ीबिनाय शराव
 सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचरे । ऐसे ३ आबे देनेकेबाद
 स्वात्रशीतलको निकालकर रखजोड़े । इतमेंसे ६-६ रत्तीकी
 मात्रा गरिचकेचूर्णकेसाथ लेकर एकपल चाङ्गेरीपुतरीके, पथ्यमें
 दूधभात खाय कसरत और रात्रिगारणको छोड़े तो समस्त
 अत्यान्वयोरोग, प्रहृणी, अतीसार, रात्रयक्ष्म, कास, शूल, शोथ,
 अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै और योगवाहीहै २७४

२७५ लोकेश्वररसः

तालकं दरदं चत्सनामं सर्वं समं समम् ।
 सर्वं भूमिम्बनारेण मर्दयेत्त्रोलकीकृतम् ॥ १३७० ॥
 धञ्जमुपान्तरे क्षिप्त्या लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।
 बालुकायन्नके पाच्यं द्वियामं मन्दवर्हिना ॥ १३७१ ॥
 स्वाङ्गशीतलमुद्भृत्य च्छागपित्तेन भावयेत् ।
 गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातान्निहन्ति च ॥
 लोकेश्वररसो नाम्ना दाम्भुना परिकीर्तितः ॥ १३७२ ॥
 वै चि , ज्वराऽधिकारे ।
 भाषा—शुद्धहरिताल, शिंगरिफ और बछनाग समभाग
 लेकर विरायतकेबाधसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय धञ्जमुपामें
 बन्दकर ३-४ कर्षमिडीदेकर मुखाकर बालुकायन्नमें रख
 दोपहरकी मन्दाग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर बकरेके-
 पित्तसे १-२ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलियेबना-
 कर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ
 देनेसे यह तमामसन्निपातको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ लोहगर्भरसः (पित्तपाण्डुरिः)

रसभस्म चतुर्भागं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।
 वह्निर्मुस्ता बिडङ्गञ्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥
 कटुनयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेकम् ।
 मधुना बलमानञ्च लीडं पाण्डुहरं परम् ॥ १३७४ ॥
 रसोऽयं लोहगर्भक्यः पथ्यं देयं मृगाङ्गवत् ।
 त्रिफलावृषभूमिम्बतिकादार्यमृताहृतः ॥
 काथो मधुसमायुक्त कामलापाण्डुरोगजित् ॥ १३७५ ॥
 रसायनसं, चि क्र, र सु, र का, ना वि, र र स, र क
 ल, र को, र क पाण्डुरोगार न ल पाण्डुरोगप्र ॥ र र स, र
 को, र क एतेषु ग्रन्थेषु पित्तपाण्डुरीतिनाम । पित्तपाण्डुरिविद्या
 लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भा, लोहभस्म ८ भा, चित्रकीनइ,
 लग्नसोषा, बिडङ्ग, त्रिफला, कुँसाकीकाल और त्रिकटु १-१
 भाग मिलाकर रखजोड़े । इतमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मुखके
 साथदेकर त्रिफला, अज्व, विरायता, कुटरी, दाहल्दी और
 मिलेय इनकाकाय मधुपुर्कपिलानेमें कामला और पाण्डु नष्ट
 होतेहै । इसमें पथ्य मृगाङ्गीकृताह देना ॥ २७६ ॥

२७७ लोहगुग्गुलुः (प्रथमः)

स्तुहीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठाद्भुम्बरजं फलम् ।
 बलकलानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥
 पत्न्या पादावशोपेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।
 पिण्डभावे द्रवे किञ्चिद्वरिषे तु नि क्षिपेत् १३७७
 शोभाञ्जनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।
 करीपाश्र्मो समुद्भृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥ १३७८ ॥
 चूर्णितं द्विपले तद्य गुग्गुलो घृतकल्कितम् ।
 पर्णोदय पचेद्भूयो यापहेहृत्यमागतम् ॥ १३७९ ॥

क्षीरपात्रकरके देना अथवा भुनीभागकाचूर्ण रात्रिमें देना ।
दहकूटनमें घीसे अभ्यङ्गरायगरमजलेसोपानमराना ॥ २७० ॥

२७१ लोकनायरसः (लोकेश्वरः) १३

द्वौ भागौ गन्धकस्याऽष्टौ दाहचूर्णस्य योजयेत् ।
एकमेव रसस्यांशमर्क्षरिणं मर्दयेत् ॥ १३४५ ॥
चित्रकस्य द्रवणेण शोषयित्वा पुनःपुनः ।
एकीकृत्य रसेनाऽथ क्षारं दत्त्वा तद्वृक्षकम् ॥ १३४६ ॥
अर्क्षरिणं कुर्वति गोलकानथ शोषयेत् ।
निरुद्धय चूर्णलितेऽथ भाण्डे दद्यात्पुटे तथा ॥ १३४७ ॥
लोकनायरसो ह्येष प्रहणीरोगघ्नन्तनः ।
गुञ्जाचतुष्टयञ्चाऽस्य मरिचाऽऽज्यसमन्वितम् ॥
ददीत दधिभक्तञ्च प्रहण्याञ्च विशेषतः ॥ १३४८ ॥

र. र. स., र. सु., प्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २ भाग, शङ्खचूर्ण ८ भा., शुद्धपारा १ भागलेकर शङ्खका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजली-
मेंमिलाकर आकवेदूष और चित्रककेबाथकी सुखासुखाकर
३-३ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर सबसे आधेप्रमाणमें
शुद्धाग मिलाकर १-२ दिन आकवेदूषमें घोटकर बेरबरावर
गोलिये बनाकर अञ्जीतरहनुपार चूनापुतेदुए बतनमें बन्दकर
२-४ कपडमिमीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आवड़े । स्वाहसोतल
होनेपर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे ४-४ रती मरिच
और भीषेसाय देनेसे और दहीभात खिलानेसे प्रहणीरोग
निवृत्तहोताहै ॥ २७१ ॥

२७२ लोकनायरसः (लोकेश्वरपोट्टी) १४

प्रत्येकं ददा गद्याणाः शुद्धगन्धकमृतयोः ।
कज्जलीमर्कटुग्नेन पोषयेच्च दिनद्वयम् ॥ १३४९ ॥
द्वपदं सेहुण्डदुग्धेन पिन्ना कृत्वा च गोलकम् ।
वराटेपु च तत्क्षिप्या येष्टयद्भजसुखलन्या ॥ १३५० ॥
पुटानुत्पलकैः दद्यान्मेषोत्तरवर्धितैः ।
ददाते गन्धको यावत्क्षीरस्तिष्ठेधिरततयः ॥ १३५१ ॥
कृत्वा ततः कपदीनां पूर्णं गद्याणर्विदातम् ।
शङ्खचूर्णं क्षिपेन्मध्ये ददागद्याणसम्मितम् ॥ १३५२ ॥
आर्द्रचित्रकमूलाणां स्वरसेन च भावयेत् ।
मृतमृतञ्च तन्मध्ये क्षिप्या पूगप्रमाणिकाः ॥ १३५३ ॥
गुटीः कृत्वाऽऽपते गुष्कास्तनो प्राहा च कुम्भिका ।
पूर्णं लिप्त्वाऽऽपते गुष्कां तन्मध्ये गुटिकाः क्षिपेत् ॥
गुणिकताया मुने पश्चाद् वटं देयं पिधानकम् ।
सन्धिं यवमूत्रा लिप्या गर्भमध्ये क्षिपेत्ततः ॥ १३५५ ॥
ज्वलित्वा क्षीतलीमूत्रा देयौ सुक्याऽपरः पुटः ।
कृत्वा पूर्णं गुटीनाञ्च मर्दयेत्पिकापतम् ॥ १३५६ ॥
सञ्जातोऽयं रसः सम्यक् सिद्धो लोकेशपोट्टी ।
उनीरपथे समं देयो रम्भो पतञ्जलपुष्टयम् ॥ १३५७ ॥
सङ्कष्टपामर्तमारो हारो च मद्भजे तथा ।
द्राघिदानमरिचै मिथो घृतयुक्तोऽथवा रसः ॥ १३५८ ॥

गुडूचीसत्त्वसहितः परं ज्वरविनाशनः

पष्टिकातण्डुला भाषा गोधूमा यवशालयः ॥ १३५९ ॥

दधि दुग्धं घृतं पथ्यं मधुरं प्रायशो वरम् ।

नारङ्गं शर्करा द्राक्षा वज्रं क्षाराऽऽम्लतैलकम् ॥ १३६० ॥

रसि., र. कं. ली., प्रहणीरोगे ।

रिषो—रसकहालीयलोकनायपोट्टीगन्धपोट्टीकोष पाठ. सदृशः
प्रतिभाति परन्तु पाके भावमासु च विशेषत्वात् पाठद्वयकुर्युं कदाचि-
योगिन एकत्वाद् द्यौरपि स्वन्मनया पाठं रथापि इति विरदि-
विमर्शनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक ५-५ तोले लेकर नील्-
वर्णकजलीकर आक और सेहुण्डकेदूधसे ३-३ दिन मर्दनकर
१० तोले पीलीकौडियोंमें भरके बज्रमिमीसे सन्धिबन्दकर
चूनापुतेदुए भाण्डमें बन्दकर २-४ कपडमिमीदेकर सूखनेपर
दतनी आवंके कि केवल गन्धककी जले पारा न उड़े । स्वाह-
सोतलहोनेपर निकालकर फिर पारेकीबराबर गन्धकदेकर पुन-
द्वोंसे मर्दनकर आवंके, ऐसे पट्टगन्धकजारणपर अलगरमदे ।
फिर कौडीमसम १० तोले और शङ्खमसम ५ तोलेका बारीक-
चूर्णकर अदरख और चित्रकमूलेकेबाथमें १-१ रोज मर्दनकर
पूर्वोक्तमसम मिलाकर १-२ पहरमर्दनकर गुपारिवेतरस गोलिये
बनाकर धूपमें सुखाकर चूनापोतर सुखाईहुईरुद्धहीमें भरके
दाराबसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपडमिमी समस्तपर लगाय ग-
पुटकी आवड़ेवे । स्वाहसोतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दन-
कर गुपारि दूषरापुटेदे । स्वाहसोतलहोनेपर निकालकर रस-
छोड़े । इसमेंसे डेड १॥ मासेकीमात्र प्रत्युक्त ३३ कालीमिचौ-
षेसाय अथवा रोगोकिनाउपाननेसाय देनेसे सङ्गहणी, आभ
अथवा सङ्ग अतिघार, नष्टहोताहै । गुडूचीसावनेसाय देनेसे
यद् ज्वरको नष्टकरताहै । छाछीचात्रक, उजड़, गूँह, जव, सफेद
चाल दही, दूध, घृत और मधुप्रदृति तमामआहार, नारली,
शरर येसु इयमें प्यदहै । धार, अन्न और तेल नहीं खाने
चाहिये ॥ २७२ ॥

२७३ लोकनायरसः (पोट्टी)

गोलं जम्भरसेन गन्धरसयोस्तनुत्पलताप्राऽऽवृत्तं,
गोलं लावणयन्त्रगर्भनिहितं गृह्णा पचेत्तं इतिः ।
यामानत कपदेजेन सकलं तुष्येन तद्गम्भना,
युक्तं चित्रकवारिणा लघुतरं पिन्ना पुटे दापयेत् ॥ ३६१ ॥
संयुद्धामिति पोट्टीं सधियां भारीचघूर्णेन ता-
मश्रीयादिति लोकनायत्रिजिना दीर्घल्यकागादिपु ।
दोषनामाऽऽनिलगन्धुलसङ्गभ्यासप्रहृष्टयदीनि,
प्रोदं यद्यपि पाण्डुरोगसाहिते मन्तापमाग्याऽऽरुची ॥
नि र., वै वि , र. पा., कृत्वापिच्छरं ।

भाषा—यममाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजलीको
जम्भीकीकेरगने मर्दनकर गोलकनाय बराबरकेबिडे गम्पुडेमें
बन्दकर १-२ कपडमिमी देकर गुपारिेन लानबन्धमें बन्दकर
८ परदकी बन्तामि देवे । स्वाहसोतलहोनेपर निकालकर उमदी

बराबरकी पीलीकौड़ियोंकीमसम मिलाय चित्रकमूलकेकाढ़से १-२ रोज मर्दनकर गोलाबनाय शराबसम्पुटमें बन्दकर लघु पुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखाजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समभाग अतीस और मिर्चके चूर्णकेसाय मिलाकर समयोचितानुपानकेसाय लेकर द्वितीयलोकनायमें कोहेहुए पथ्यके अनुसार चलनेसे दुर्बलता, वास, खास, शोफ, काम, वातप्रकोप, गुल्म, शूल, सहजखास, प्रहणी, बवासीर, पूर्णरूपराजयक्ष्म, पाण्डु, सन्ताप, मन्दाग्नि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७३ ॥

२७४ लोकनायकरसः

पीतस्थूलरूपदर्शानां प्राह्यं विशोत्तरं शतम् ।
तत्रे द्रोणमिते काथ्यं मथिते द्विगुणोदके ॥ १३६३ ॥
तक्रजीर्णे च निःसारं गृह्णीयात्तत्पुनः पचेत् ।
वारत्रयञ्च सूतस्य क्षुधितस्याऽक्षपञ्चकम् ॥ १३६४ ॥
लेलीतरुस्य शुद्धस्य सार्धसप्ताऽक्षकं द्वयोः ।
खल्वे कज्जलिकां कृत्वा पूरयित्वा विमुद्रयेत् ॥ १३६५ ॥
टङ्कणेनाऽर्कंदुग्धेन भावितेन चतुर्दश ।
वारान् कुमारिकाद्भिश्च शोषयित्वा पुनः पुटेत् १३६६
विमुद्रय त्रिपुटं दत्त्वा स्वाज्ञशीतलमुदरेत् ।
गुग्गापञ्चोन्मितं दद्यात्पङ्कजासम्मितापणैः ॥ १३६७ ॥
ततः पलमितं पञ्चान्वियेच्चाङ्गेरिकाघृतम् ।
पथ्यं दुग्धोदनं कुर्यात्प्यजेद्द्वयायामजागरम् ॥
सिद्धोऽयं सिद्धनाथेन कथितो लोकनायकः ॥ १३६८ ॥

जयेत्सर्वरोगानशेषानसाध्यान्
विशेषाद्गृह्णामतीसाररोगे ।
रसो यक्ष्मकासे च शूले च शोथे
महावह्निहृद्योगवाही प्रदिष्टः ॥ १३६९ ॥

र का, अतीसारऽधिकारे ।

भाषा—पीली और मोटीकौड़ी १२० लेकर दूनापानी-डालकर बनाईहुई एकद्रोणछाछमें डालकर धीरे २ पकावे । जब छाउका तमामपानी जलजाय तब कौड़ियोंको निकालकर फिर जलीतरह पकावे । ऐसे ३ बार पकाकर कौड़ियोंको साफकर शुद्धबुधुक्षितपारा ५ वर्ष, शुद्धगन्धक ७। कपड़ेकर दोनोंकी नीलवर्णकमलीकर कौड़ियोंमेंभर आकरेदूध और घीकुनारके स्वरससे १४-१४ भावनाए दियेहुए सुहागसे मुह बन्दकर सुखाकर लघुपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर आकरेदूध और कुमारीकेरससे १४-१४ भावनाए देकर टिक्कीबनाय शराबसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । ऐसे ३ आच देनेकेबाद स्वाज्ञशीतलको निकालकर रखजोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी-मात्रा मरिचकेचूर्णकेसाय लेकर एकपल चात्रेरीपृत्तीवे, पथ्यमें दूधभात खाय कसत और रात्रिजागरणको छोड़े तो समस्त असाध्यरोग, प्रहणी, अतीसार, राजयक्ष्म, कास, शूल, शोथ, अत्यन्तमन्दाग्नि इनसबको यह नष्ट करताहै और योगवाहीहै २७४

२७५ लोकेश्वररसः

तालकं द्रवदं वत्सनामं सर्वं समं समम् ।
सर्वं भूनिम्बनीरेण मर्दयेद्गोलाकौकृतम् ॥ १३७० ॥
वज्रमूपान्तरं क्षित्वा लेप्या वस्त्राऽनुमृत्तिका ।
वालुकायन्त्रके पाच्यं द्वियामं मन्दवाह्निना ॥ १३७१ ॥
स्वाज्ञशीतलमुद्भृत्य च्छागपित्तेन भावयेत् ।
गुग्गामात्रं प्रदातव्यं सन्निपाताच्चिह्नितं च ॥
लोकेश्वररसो नाम्ना शम्भुना परिकीर्तितः ॥ १३७२ ॥
वै.चि, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, शिपिरिफि और बलनाग समभाग लेकर थिरायतेकेकाथसे एकरोज मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूपामें बन्दकर ३-४ कपडिमिठीदेकर सुखाकर वालुकायन्त्रमें रख दोपहरकी मन्दाग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर बकरेके-पित्तसे १-२ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलीयेवनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह तमामसन्निपातोंको दूरकरताहै ॥ २७५ ॥

२७६ लोहगर्भरसः (पित्तपाण्डुरिः)

रसमसम् चतुर्भांगं लोहभस्माऽष्टभागिकम् ।
वह्निमुस्ता विडङ्गञ्च त्रिफला कुटजत्वचः ॥ १३७३ ॥
कटुत्रयञ्च संयोज्य प्रत्येकं भागमेककम् ।
मधुना वल्लभात्रञ्च लीढं पाण्डुरं परम् ॥ १३७४ ॥
रसोऽयं लोहगर्भाख्यः पथ्यं देयं मृगाङ्कवत् ।
त्रिफलावृषभूनिम्बतिकादावर्धयंमृताकृतः ॥
काथो मधुसमायुक्त कामलापाण्डुरोर्गजित् ॥ १३७५ ॥

रसायनं, चि क्र, र सु, र.का, ना वि, र र स, र क. ल, र.को, र क. पाण्डुरोगे । र क. ल पाण्डुरोगः । र र स., र. को, र क पृतेपु प्रमेथ्ये पित्तपाण्डुरीतिनाम । पित्तपाण्डुरिखन्वा लोहस्य द्वौ भागौ प्रकल्पितौ ॥

भाषा—पारदभस्म ४ भा, लोहमसम ८ भा, चित्रककीजह नागरमोथा, विडङ्ग, त्रिफला, कुरैयाकीछाल और त्रिकटु १-१ भाग मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधुके-साथदेकर त्रिफला, अङ्गुस, थिरायता, कुटनी, दासहदी और गिलोय इनकावाय मधुयुक्तपिलावेसे कामला और पाण्डु नष्ट-होताहै । इसमें पथ्य मृगाङ्ककीतरह देना ॥ २७६ ॥

२७७ लोहगुग्गुलुः (प्रथमः)

स्नुहीत्वक् खादिरं काष्ठं काष्ठोद्गुम्बरजं फलम् ।
वलकालानां पृथक् पञ्च पलमष्टगुणे जले ॥ १३७६ ॥
पस्त्या पादावशेषेण लोहं पञ्चपलं पचेत् ।
पिण्डीभावे द्रवे किञ्चिद्वशिष्टे तु निःक्षिपेत् १३७७
शोभाङ्गनकमूलस्य कल्केनावृत्य पाचितम् ।
करीपात्री समुद्भृत्य हरितालं पलद्वयम् ॥ १३७८ ॥
चूर्णितं द्विपलं तच्च गुग्गुलो गृह्णतकृतिकम् ।
पकीकृत्य पचेद्भूयो यावद्देहत्वमागतम् ॥ १३७९ ॥

गुल्मे कुष्ठे क्षये स्थौल्ये शोथे शूले च पाकजे ।
पाण्डुरोगे प्रमेहे च वातरोगे तथैव च ॥
सिद्धमेतत्प्रयुञ्जीत घलीपलितनाशनम् ॥ १३८० ॥
र. र., गुल्माऽधिकारे ।

भाषा—मेढुण्डकादृष, तज, सैरकाहीर, कदमरकाफल, वट, पीपल, गूदर, पाकर और वेतनी छाल १-१ पल लेकर अठगुने पानीमें पकावे । चतुर्धासहजानेपर छानले फिर इसमें ५ पल लोहमस डालकर पकावे । घोड़ापानी बाकी रहनेपर सहिजनकीजइकीछालकाकल्क १ पल डालकर कपोपामिपर रखदे । इसमें रसमाषिण्य और घीमें कुट्टाहुआगुल २-२ पल मिलाकर चलाताहुआ पकावे । अवलेहकेसहसहोनेपर उतारकर थिकनेवर्तनेमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशेकीमात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, वृष्ट, क्षय, स्थूलाता, शोथ, परिणामशूल, पाण्डु, प्रमेह, वातरोग, इनसबको यह नष्टकर घलीपलितका नाशकरताहै ॥ २७७ ॥

२७८ लोहगुग्गुलुः (द्वितीयः)

अयःपलं स्यात्त्रिपलं पुरस्य
व्योपस्य योज्यानि पलानि पञ्च ।
पलानि चाऽष्टौ त्रिफलारजस्तः
करं प्रदेयं ह्यमरत्वसिद्धये ॥ १३८१ ॥

रसायन सं, यो. र., मा. प्र., रसायने ।

भाषा—लोहमस १ पल, घीमें कुट्टाहुआगुल ३ पल, त्रिकटु ५ पल, त्रिफला ८ पल इनसबका बारीक चूर्णकर गुगुलको घी देकर दोदिनतक घनसेकुट । द्रवहोनेपर चूर्ण घोड़ाथोड़ा मिलाताजाय, जितना चूर्णमिलके उतना कूटकूटकर मिलावे । बाकीबचेहुएचूर्णको पीवीमदसे मिश्रितकरे इसमेंसे ३ माशेमें शुद्धर १ कपतककीमात्रा धीरे ० बड़ावे । औषधपाक होनेकेबाद पध्यदेवे । इससे तमाम वाताधिकारनष्टहोकर आयु बढ़ताहै २७८

२७९ लोहगुटिका

लोहस्य रजसो भागात्रिफलायास्तथा प्रयः ।
शुडस्याऽष्टौ तथा भागा गुडान्मूत्रं चतुर्गुणम् १३८२
पलत्सर्वञ्च विपचेद्द्रवपाकविधानवित् ।
लिह्येद्य तद्यथाशक्ति क्षये शूलोऽन्नपाकजे ॥ १३८३ ॥

च. द., र. र., र. का., टो. यो. म. अन्नप्रदशूले । यो. म. मण्डूरवटकेतिनाम ॥

भाषा—लोहमस, त्रिफला ३-३ माग, गुड ८ मा. गोमूत्र ३२ भागपर गुडकेसहस चारानीबनाय रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ माशेकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, और परिणामशूलको यह नष्टकरताहै ॥ २७९ ॥

२८० लोहपत्रकम् (विट्पत्रादिहोम्)

अणोरजो ध्यांपयिड्रगुणं
समं पिथेन्माशिकसर्पिणालयम् ।

प्रमेहशोथोदरकामलाशार्-
गुल्मप्रहण्यामयपाण्डुरोगी ॥ १३८४ ॥

लो. प. (स.) पाण्डुधिकारे ।

भाषा—लोहमस, त्रिकटु, विट्पत्र येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा पी और मधुकेसाथलेनेसे प्रमेह, शोथ, उदर, कामला, बवासीर, गुल्म, ग्रहणो और पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८० ॥

२८१ लोहपर्वटी (शक्यादिः)

पलैः षोडशभिः शक्याः कपायं विधिना चरेत् ।
वख्यूते कपायेऽस्मिन् पुष्पणं गुडमावपेत् ॥ १३८५ ॥
पलैः षोडशभिस्तुल्यं गुडपाकं पचेत्ततः ।
त्रिफला ज्यूषणं क्षारं त्रिजातं चित्रमूलकम् ॥ १३८६ ॥
दीपकं मुस्तकं भार्गी शुष्ककन्दं कलिङ्गकम् ।
अक्षमानेन सञ्चर्ष्य लोहं पलचतुष्टयम् ॥ १३८७ ॥
उत्तार्याऽथ गुटे क्षिप्त्वा दद्यात्सम्यक् प्रचालनम् ।
घृताके भाजने कृत्वा प्रस्तौर्ष्यं तदनन्तरम् ॥ १३८८ ॥
ततः खण्डानि कुर्वीत मानमालोच्य यत्नतः ।
वयोऽवस्थां बलं वह्निं क्षात्वा मात्रां प्ररूपयेत् १३८९
हन्ति क्षयाश्च सर्वाश्च पाण्डुरोगं सकामलम् ।
प्लीहाष्टौले विशेषेण गुल्मशूलोऽसमास्तथा १३९०
सर्वानुदररोगांश्च ग्रहणोश्च कफामयान् ।
सर्वान् वातविकारांश्च गदान्कफमद्वन्द्वान् ॥ १३९१ ॥
ततो भक्षणं मात्रेण पलं वह्निं विवर्धयेत् ।
पित्ताऽधिकेन दातव्या शटी लोहस्य पर्वटी ॥ १३९२ ॥
तेलञ्च कारवेलञ्च सर्पमेतत्परित्यजेत् ।
इशुसारश्च रज्जुरे नारिकेलोदकं तथा ॥ १३९३ ॥
द्राक्षादाडिमकं पथ्यं कल्पयेद्भिपगुत्तमः ।
अस्यांद्रकं समुत्पन्नं सिताहुग्धञ्च पाययेत् ॥ १३९४ ॥
रसवागर, सर्वरोगे ।

भाषा—१६ पल कचूरका अठगुणितजलेमें छापर चतुर्धावावरो रहनेपर छानकर १६ पल पुरानागुड डालकर पकावे । पलीचातानी होनेपर उतारकर त्रिफला, त्रिकटु, सबो, यव-क्षार, सुनासुशामा, त्रिजान, चित्रकमूल, अनवादन, भागलोथा भारही, सूरण, इन्द्रजव, येसब १-१ कप और लोहमस ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर चारानीमें मिलाकर उतारले । पालीबोतेहमें पीलाकार डालकर टेंगाकरले । इसमेंसे ३ माशेमें ६ माशेतरकीमात्रा अरुधया, पल तथा अमिशा विचारकर देनेमें समस्तशय, पाण्डु, कामला, प्लीहा, अश्लेषा, विशेषणया गुल्म, शूल, ममस्तदश्रमेण, ग्रहणी, रसल वात और कफ-विचार, मन्दासि इनसबको यह नष्टकरताहै । पित्ताधिक्यमें इसे न देवे । तेल और कचूरका परिष्कारकर । ईशुक्यराव, सुदार, नारियलछाजल, शाय, अनार येसब पच्य हैं । इसमें पनगुट्ट मात्रापनेपर क्षारमिलाहुआ दूध देवे ॥ २८१ ॥

२८२ लोहभास्कररसः

नीलनीरजसमुत्थकेशर-
 त्पद्मकात्सहरुसेरुकाद्रजः ।
 तुल्यमेभिरखिलैः समाशक्तं
 लोहभास्कररजः सितासमम् ॥ १३९५ ॥
 तण्डुलोद्गमनुपायिनां नृपां
 रक्तपित्तमतिदाहणञ्जयेत् ।
 पायुजानि रथिरात्मकानि वा
 यक्ष्मपीनसमसृग्दन्तथा ॥ १३९६ ॥

लो प (स), रक्तपित्तैः ।

भाषा—नीलोफरकीकेशर, पद्मकेशर और कसेरु समभाग
 इनसबकीबराबर लोहभस्म लेकर सबको इकट्ठे मिलाकर रखछोड़े,
 इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतककीमात्रा बराबरकी शक्कर मिलाय
 फाकर शक्करमिलाहुआ चावलका धोवन पीनेसे अन्त्यन्तभीषण-
 रक्तपित्त, खुनीबवासीर, राजयक्ष्म, पीनस, रक्तप्रद, इनसबको
 यह नष्टकरताहै ॥ २८२ ॥

२८३ लोहमृत्युञ्जयरसः (मृत्युञ्जयः)

रसगन्धकलीहास्रं कुण्ठी मृतताम्रकम् ।
 विषमुष्टिं वराटञ्च तुल्यं शङ्खं रसाञ्जनम् ॥ १३९७ ॥
 जातीफलञ्च कटुकीं द्विक्षारं कानकं तथा ।
 हिङ्गु व्योषं सैन्धवञ्च प्रत्येकं सूततुल्यरुम् ॥ १३९८ ॥
 शृङ्गशृण्णोक्तं सर्वमेकत्र परिभाषयेत् ।
 सूर्यावर्तरेसेनैव विलेपप्ररसेन च ॥ १३९९ ॥
 सूर्यावर्तेन मतिमान् यट्टिकां कारयेत्ततः ।
 ग्रीहानं यष्टुतं गुल्ममण्डिलाञ्च विनाशयेत् ॥ १४०० ॥
 अप्रमांसं तथा शोथं तथा स्रग्दिराणि च ।
 वातरक्तञ्च कमठं चान्तर्विद्रिभिये च ॥ १४०१ ॥
 र स, र सु, घ, र चि, प्लीहाशुद्धिकारः ।

टि०—कानकन केचिज्यपालफलमिच्छन्ति तन्मते धुरस्थाने जैषा
 लकल नियोज्यम्, भयमन निष्कारं यत्र रेचनस्याऽत्यवयवता प्रतीयेत
 तत्र अवयवकल निषोध्य यत्र तु ज्वरादीनां विशेषतोपन्यास तत्र पशूर
 बीजान्येव योज्यानि । पशू बीजद्रामण्डे उक्तान्योषधुत्तुञ्जवरसस्य स्वत-
 न्द्वया पाठो न करणीय किन्तुमयापाठोस्तुक्तानि बलूनि सर्वाण्येव
 कोरुष्य सूर्यावर्तविलेपपादैकपशूचीना भावनाभिरक्त एव सति निष्पाय
 इति विशेषे विहापनम् ॥

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, लोह और अप्रकभस्म, शुद्ध-
 मैनसिल, साम्रसम, शुद्धखिला, बौही—तुल्य और शङ्खभस्म,
 रसौत, जायफल, कुटकी, सजी, सुहागा, शुद्धधतूरेबीज,
 मुनीहोय, त्रिकटु, सैषामक, यसव समभाग लेकर वारीकचूर्ण-
 कर पारेगन्धककी नीलशर्फकलीमें मिलाय हुडुकर अथवा
 सूर्यमुखी और बेलप्रकरसे १-१ दिन मर्दकर हुडुकरके-
 रसे ३-३ रत्तीकी मोलिया बनारर रखछोड़े । इसमेंसे १-१
 गोली समयअथवा रागोचितानुपानकेसाथ देनेसे प्लीहा, यक्ष्म,
 गुल्म, अघ्रीरा, अप्रनास, शोथ, समस्तउदर, वातरक्त, कण्डुदी
 और अन्तर्विद्रि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ लोहयोगः (प्रथमः)

सप्तरात्रं गवां मूत्रे भावितं वाऽप्ययोरजः ।
 पाण्डुरोगप्रशान्त्यर्थं पयसा प्रपिवेन्नरः ॥ १४०२ ॥
 ग. नि, टो, भा. प्र, पाण्डुतोः ।
 भाषा—लोहका वारीकचूर्ण अथवा भस्म ७ दिनतक
 गोरूममें खरकर ३-३ रत्तीकीमात्रा दूधकेसाथ लेनेसे पाण्डु-
 रोग नष्टहोताहै ॥ २८४ ॥

२८५ लोहयोगः (द्वितीयः)

धात्रीफलं शर्करया समानं
 पञ्चाङ्गनिम्बेन युतं त्रिसप्त ।
 लोहस्य पादेन युतं तु मुक्तं
 कण्डूतिक्तां हन्ति च मण्डलानि ॥ १४०३ ॥
 र दी., कुष्ठे ।

भाषा—आबले, शकर और नीमकापञ्चाङ्ग समभाग लेकर
 सबसे चतुर्थांश लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे एकमाशेसे
 ३ माशेतककी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ २१ दिनतक
 खानेसे खुजली और मण्डलहुठको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ लोहयोगः (तृतीयः)

पुटितं भावितं लोहं पृथक्कार्यैरेकशः ।
 उदावतहं गुड्यात् ससितं वा यथामलम् ॥ १४०४ ॥
 र क, र चि, उदावतं ।

भाषा—उदावतह योगसे मारकर उन्हींसे भावनादिया-
 हुआ लोह शर्करकेसाथ अथवा यथा दोषहरानुपानकेसाथ देनेसे
 यह उदावतको नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ लोहयोगः (चतुर्थः)

सिद्धं शम्भुकर्जं भस्म लोहयुक्तं पिवेन्नरः ।
 उष्णोदकेन तक्षिप्रं हन्ति शूलं द्विधा स्थितम् १४०५ ॥
 रसागर, घृले ।

भाषा—लोहभस्मयुक्तखलेबीभस्म ६ रत्ती गरमपानीके-
 साथ लेनेसे एकाद अथवा सर्वाशूलको यह नष्टकरताहै ॥ २८७ ॥

२८८ लोहयोगः (पञ्चमः)

धूर्णानि लोहत्रिफलाशिलानां
 शौद्रेण लीढानि पृथक् समं वा ।
 मेहान्मसमस्तानपि नाशयन्ति
 पीतः फदाचित्स्वरसो शुद्धय्याः १४०६ ॥
 रा मा, ग नि, प्रमेहाधिकारे । गदनिग्रहे शिलानामित्यस्य
 स्थाने शिवानामितिपाठ ।

भाषा—लोहभस्म, त्रिफला और शुद्धमैनसिल समभाग
 लेकर वारीकचूर्णर आपेमाशेसे १ माशेतककीमात्रा मधुकेसाथ-
 लेकर गिलोयकावाय पीनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहै । त्रिफ-
 लादि चार चीजोंमेंसे एकएककेसाथ लोहकायोगकरके देने-
 मेंभी प्रमेह नष्टहोतेहै । मैनसिलकेसाथ लोहकीमात्रा १ से ३
 रत्तीतकदेना ॥ २८८ ॥

२८९ लोहयोगः (षष्ठः)

श्वान्निधः शरुतश्चूर्णं सप्तकृत्स्नः मुभावितम् ।
विडङ्गानां कपायेण त्रैफलेन तथैव च ॥ १४०७ ॥
क्षौद्रेण लीढ्वाऽपि चित्रसामामलकोद्भवम् ।
अक्ष्वाऽभयारसञ्चक्ष्वाऽपि विधिरौऽप्यसामपि ॥ १४०८ ॥

मु. सं. , किमिरोगे ।

टि०—यत्र अयसामिति बहुवचनेन सुवर्णादयोऽपि लोहा प्रतीतव्याः, तेषां भस्म चेद्वृत्तिं तर्हि विडङ्गानां त्रैफलेन च कपायेण प्रत्येकं सप्तमा-
वना दत्त्वा यथाशिवल मात्रा प्रकल्प्य क्षौद्रेण लोहवित्वा आमलकस्य
अभस्यया वा रस पावयेद् । यथावस्थितरूपोद्भवन्ति तर्हि तेषां
युष्माणि पनायतिमाराहृत्या विडङ्गानां कपाये त्रैफले च कपाये प्रत्येक
ति माहृत्यो निर्वापयेदेव इते यच्चूर्णं निष्पद्यते तस्मिन्पूर्वोक्तान्यां
बाधाम्ना सप्तमश्र भावना दत्त्वा अवस्कृतयो निष्पाचान्ता यथाशिवल
मात्रा निर्णय प्रयोज्येव ।

भाषा—जरकनी विष्टाको विडङ्ग और त्रिफलाके काष्ठे
७-७ भावनाएँ देकर १-१ मासे मधुमें मिलाकर लेवे और
ऊपरमें आले, चढ़ेदे अथवा हरेका रस पीवे तो इससे त्रिभि-
रोग नष्टहोताहै । अथवा जरकनीविष्टा, विडङ्ग, त्रिफला इन
प्रत्येककेब्राधमें किसी अन्यतम लोहको सातसातवार बुसावे ।
बारीकचूर्णहोजानेपर उसीकावल्क और क्वाथ देकर मर्दनकर
आवनेकर भस्मबनावे । अथवा अयस्कृतियोंके विधानसे केवल
चूर्णलेकर उसकी यथाशिवल मात्रा कायमकर सेवनकर ऊपरसे
आंवला, विडङ्ग अथवा त्रिफलाकारस पीलावे । इससे समस्त
किमिरोगे नष्टहोताहै ॥ २८९ ॥

२९० लोहयोगः (सप्तमः)

मृदान्तःपाचितां मुष्कां लोहचूर्णसमन्विताम् ।
सगुडामभयां दद्यात्सर्वशूलं पशान्तये ॥ १४०९ ॥
इ. , कि. , र. चि. , शूले ।

भाषा—गोमूत्रमें पकाकर सुखाईहुई हरेका चूर्ण और
लोहभस्म समभाग लेकर बरानरके गुफमें मिलाकर रखडोढ़े ।
इसमेंसे २-२ मासेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपाने-
साय देनेसे सबप्रकारकेशूल शान्तहोतेहै ॥ २९० ॥

२९१ लोहरसायनम् (प्रथमम्)

त्रिफलाया रसे मूत्रे गवां क्षीरे च लावणे ।
क्रमेण चेद्दुर्दीक्षरं किंशुकक्षार एव च ॥ १४१० ॥
तीक्ष्णायसस्य पत्राणि वद्विषणीनि क्षापयेत् ।
चतुरङ्गुलदीर्घाणि तिलोत्प्लेक्षसामानि च ॥ १४११ ॥
क्षाल्या तान्यञ्जनाभानि मूक्षमचूर्णानि कारयेत् ।
तानि चूर्णानि मधुना रमेनामलकस्य च ॥ १४१२ ॥
मुक्तानि लेङ्गाङ्गुलमे स्थितानि घृतमाचिते ।
संपत्सरं विघ्नयानि यत्पह्ले तदेव च ॥ १४१३ ॥
दद्याद्दालोदनं मामे सर्वयामोडयन्मुष्धः ।
संयन्सुराण्येव तस्य प्रयोगो मधुनार्पितः ॥ १४१४ ॥

प्रातः प्रातर्वलापेक्षी सात्म्यं जीर्णं च भोजनम् ।
एष एव च लोहानां प्रयोगः सम्प्रतीर्तितः ॥ १४१५ ॥
अनेनैव विधानेन हेमन्श्च रजतस्य च ।
आयुःअरुर्भूत्सिद्धः प्रयोगः सर्वरोगमुत् ॥ १४१६ ॥
अभिघाते न चातुङ्कै र्जरया न च मृत्युना ।
अधृष्यः स्याद्रजप्राणः सदा चातिथलेन्द्रियः ॥ १४१७ ॥
धीमान् यशस्वी यान्तिस्त्रयः श्रुतधारो महाबलः ।
भवेत्समां प्रयुञ्जानो नरो लौहरसायनम् ॥ १४१८ ॥
चं सं. रसायने ।

भाषा—लोहादेके तिलके बराबर मोटे और ४-४ अङ्गुल
रत्ने पत्रनाय अग्निमें लालवर्णकर त्रिफला, गोमूत्र, गोदुग्ध,
लवण, इंगोरल और पलायकेशारमेंबुसावे । जब वे जलकर सुरमा
के सदृशहोजाय तउनका बारीकचूर्णकर आबलेकेरससे ६-७
रोज मर्दनकर कपःछानचूर्णरके मधु और आबलेकारस मिलाय
अबलेहेमन्श्च बनाकर धीके वतनेमें डालकर एकवपतक जरनी-
खतीमें रखडोढ़े । प्रतिभास अबलेइको अच्छीतरह चलादिया-
करे । एकवर्गमाद इसमेंसे थामिल देकर ३ मासेसे १ तोले-
तककी मात्रालेवे । जीर्णहोनेपर सात्म्य भोजनकरे । इमीतरह
तमामलोहोंकी रसायन तैयारकरे । रासकर सुवर्ण और रजत-
कीरसायनको तैयारकर काममें लावे । इससे हड्डिले और
पुराने तमामरोगे नष्टहोकर आयुकी रूढ़िहोताहै । अभिघात,
रोग, बुद्धापा और मृत्यु इनके डरने भिम्भुकोकरे बल, इन्द्रिय
और बुद्धिसे परिपूर्णहोजताहै तथा एहहाधीके बराबर पराक्रम
होकर यशस्विता, वाक्सिद्धि और श्रुतिधरता प्राप्तहोताहै २९१

२९२ लोहरसायनम् २

गुग्गुलुस्तालमूली च त्रिफला रजदिरं शृषुपम् ।
त्रिवृताऽलम्बुपा चैव निर्गुण्डी चित्रकं स्तुही ॥ १४१९ ॥
एषां दशपलाभ्यामांस्तोये पञ्चाढके पचेत् ।
पादशोपन्तनः कृत्वा कपायमवतारयेत् ॥ १४२० ॥
पलद्वादशकं देयं तीक्ष्णलोहस्य चूर्णितम् ।
पुराणसर्पिणः प्रस्थं शर्कराष्टयलानि च ॥ १४२१ ॥
पचेत्ताम्रमेयं पात्रे मुशीते चायतारिते ।
प्रस्थाई माशिकं देयं तालाजतु पलद्ध्यम् ॥ १४२२ ॥
पलायचोः पलाहेश्च विडङ्गानि पलद्ध्यम् ।
मरिचञ्चञ्जनं रुष्णा द्विपलं त्रिफलाग्नितम् ॥ १४२३ ॥
पलद्ध्यन्तु फालीसं शृङ्गचूर्णाङ्कनं मुषेः ।
चूर्णं दत्त्वाऽथ मथितं स्निग्धे भाण्डे निधापयेत् १४२४ ॥
ततः संशुद्धवेहन्तु भक्षयेदक्षमायकम् ।
अनुपाने पिष्टेऽभीरं जाङ्गलानां रमन्तथा ॥ १४२५ ॥
यातश्लेष्महरं श्रेष्ठं कुष्ठपहेन्व्यपहम् ।
कामलां पाण्डुरोगश्च श्वयथुं सभगन्दम् ॥ १४२६ ॥
मूच्छामोहविपान्मादगपानि विधिघातित च ।
स्यूलानां कर्णं श्रेष्ठं मेदुरे परमौषधम् ॥ १४२७ ॥

कर्पयेच्चातिमात्रेण कुक्षि पातालसन्निभम् ।
 वल्यं रसायनं मेथ्यं धार्जिकरणमुत्तमम् ॥ १४२८ ॥
 श्रीकरं पुत्रजननं धलीपलितनाशनम् ।
 नाश्रीयात्कदलीकन्दं काञ्जिकं फरमर्दकम् ॥
 फरीरं कारवेल्हञ्च पट्टकारादि वर्जयेत् ॥ १४२९ ॥
 भै.र., र.र., र.को., भा. प्र., टो., च. द., वै द., वै.क.
 र.प्र., यो.म., र.का., स्थौल्याधिकोर ।

भाषा—शुद्धगुल, तालमूली, त्रिफला, खैरसार, शुद्धकष-
 नाग, निसोत, गोरखमुण्डो, निगुण्डीकन्द अथवा संभाल्की-
 छाल, चित्रकमूल, धूहकाक्ष, येसव १०-१० फल लेकर २०
 प्रस्थ पानोमें पकावे । चतुर्थीश्रावण रहनेपर जानकर फोलादका
 यारीकरेता १२ फल, पुरानाची १ प्रस्थ, शकर ८ फल डालकर
 बिनाकलई कियेहुए तबिके पात्रमें पकावे । अबलेहैयारहोनेपर
 उताले । स्वादशीतलहोनेपर मधु भाषाप्रस्थ, शिलाजीत
 २ फल, इलायची औरतब २-२ कर्प, विडङ्ग मरिच, सुरमेकीभस्म,
 पीपल, त्रिफला, और कत्तीस भस्म येसव २-२ फललेकर
 कपड़छानचूर्णकर अबलेहमें मिलाकर धीके चिकनेवतनमें रख ४०
 रोजतक धान्यराशिमें रखे । इसकेबाद वमन विरेचनादिगोसे
 वारीकोशुद्धकर इसमेंसे १-१ कर्प अथवा अमिषल देकर मात्रा
 कायमकर ऊपरसे गोटुम्य अथवा जंगलीपशुपक्षियोंका मांसरस-
 पिलावे । इससे वात, श्लेष्म, कृण, प्रमेह, ज्वर, कामला, पाण्डु,
 शोफ, भगन्दर, मूच्छा, मोह, विष, उन्माद, नानातरहके बनायडी
 जुहर इनसबको यह नष्टकरताहै । स्थूल और मेदस्त्रियोंको पतला-
 करनेकेलिये यह उत्तम औषधि है । अत्यन्त पडेहुए पेटको यह
 पातालजैसा बनादेताहै । बल, रसायन, मेधा, सम्भोगशक्ति,
 शरीरकान्ति, पुत्रोत्पादनशक्ति इनसबको देताहै । बलीपलितका
 नाशकरताहै । इसमें केलामर, काञ्जी, करोंदा, करीर, कोरला
 इन छः ककारोंका सत्नसे वर्जनकरे ॥ २९२ ॥

२९३ लोहरसायनम् (तृतीयम्)

विडङ्गसारो मेधाख्यो रक्तघ्निरल्पकरः ।
 हस्तिकर्णः सितार्कस्तु श्वेतपर्याप्तमुद्गर्यम् ॥ १४३० ॥
 वाकुची मुण्डिका भृङ्गो राजको बुद्धदारकः ।
 गुह्यच्यतिवला राक्षा तालमूली शतावरी ॥ १४३१ ॥
 पिण्डारकश्चैडगजो वेडालः केशराजकः ।
 एकैकं पलमेतेषां ग्राह्यं सुमधुकं पलम् ॥ १४३२ ॥
 रसस्यैकं पलं ग्राह्यं लोहस्य पलविंशतिः ।
 चत्वारिंशत्तथाऽध्रस्य शुल्वञ्चाऽपि चतुष्पलम् ॥ १४३३ ॥
 गन्धकस्य पलान्यष्टौ पट्टपलानि मनःशिला ।
 स्वर्णमाक्षिकचत्वारि पट्टपलानि शिलाजतोः ॥ १४३४ ॥
 त्रिफला त्रिकृद्नाञ्च प्रत्येकञ्च पलत्रयम् ।
 सर्वाण्येतानि सञ्चर्ष्यं घृतो न मधुना सह ॥ १४३५ ॥
 स्निग्धे भाण्डे समालोडय स्थापयित्वा विचक्षणः ।
 भक्षयेत्कामयोगेन लोहं सर्वरसायनम् ॥ १४३६ ॥
 वै.से., घ. र.र., रसायने । घ. र.र. एतयोश्च कस्याप्यभावेदस्यते

भाषा—विडङ्गतरुण्डुल, नागसोधा, लालचित्रक, मिलावे,
 हस्तिकर्णपलाय, सफेदाककीजइकीछाल, सफेदपुनर्नवा, वाकुची
 गोरखमुण्डी; भंगरा, अमिलतासका घृता, विधारेकीजड़, गिलोय,
 अतिवला (गुलसिकरी) राक्षा, तालमूली, शतावर, पिंडार,
 वेवाड, विलाईलोडन, कालाभंगरा, मुलहठी, शुद्धपारा येसव
 १-१ पल, लोहभस्म २० पल, अभ्रकभस्म ४० पल, ताम्रभस्म
 ४ पल, शुद्धगन्धक ८ पल, मैनसिल ६ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म
 ४ पल, शिलाजीत ६ पल, त्रिफला और त्रिकटु ३-३ पल
 लेकर सबका बारीकचूर्णकर धी और मधु सबकीबराबरलेकर
 सबको एकजगह मिलाकर धीकेवतनमें रखदेवे । ४० दिन-
 बीतनेकेबाद इसमेंसे यथोचित मात्रामें पानोसे यह तमाम
 रोगोंको नष्टकर दीर्घायुको करताहै ॥ २९३ ॥

२९५ लोहरसायनम् (द्वाप्रसायनम्) ५

पारदं विधिना शुद्धं पलद्वितयसम्मितम् ।
 चतुष्पलं लोहचूर्णं चतुर्विंशपला सितम् ॥ १४३७ ॥
 मनोहा गन्धपापाणं हरितालञ्च शुद्धकर्म ।
 कासीसं हिङ्गु कुण्डञ्च चवोशीरसाजनम् ॥ १४३८ ॥
 सारं खदिरचूक्षस्य जातीफलसमन्वितम् ।
 द्विपलं सूक्ष्मचूर्णन्तु सर्वेषां परिकीर्तितम् ॥ १४३९ ॥
 गगनाहिपलं कृष्णालोहवत्पुटितं क्षुतात् ।
 शास्त्रोक्तपृथगुद्दिष्टैः संयुज्य विधिनोचितम् ॥ १४४० ॥
 त्रिंशति त्रैफले तांये प्रस्थेन सह सर्पिषा ।
 शृङ्गबेररसप्रस्थं निष्काश्यं वक्ष्यमाणकैः ॥ १४४१ ॥
 त्रियर्णादितचित्रञ्च चास्थिसंहारसुरणम् ।
 वर्षाजातं सगोधूमसुमिकृष्माण्डतण्डुलाः ॥ १४४२ ॥
 शोभाजनं तालमूली मोरटं शङ्खपुष्पिका ।
 पृथगष्टपलञ्चैषां वारिद्र्येण विपाचयेत् ॥ १४४३ ॥
 अष्टभागावशिष्टेन कणायं कारयेत्सुधीः ।
 मधुनः पलानि द्वात्रिंशत्क्षिपेत्तत्र सुशीतले ॥ १४४४ ॥
 त्रिकटु त्रिफला सिन्धु विडं सौषचलन्तथा ।
 दङ्गणो यावश्चकश्च सुरदारुपरम्पराः ॥ १४४५ ॥
 अल्पवेतसम्पृदीका महार्द्रमधुयष्टिकाः ।
 शृङ्गी डुरालभा मुस्तं विडङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ १४४६ ॥
 जीरकञ्च संधान्याकं पलाजं चूर्णकं पुष्यम् ।
 दासेनेदं पुरा प्रोक्तं नराणां हितकाम्यया ॥ १४४७ ॥
 न चाऽत्र परिहारोऽस्ति विहाराहारयज्ञेण ।
 अन्नपानानि सर्वाणि भक्ष्यभोजन्यानि यानि च ॥ १४४८ ॥
 तानि प्रकृतिभेदज्ञो बुद्धिपूर्वं प्रदापयेत् ।
 सर्वेभ्याधिहृद्यैतत्स्वस्थाऽस्वस्थहितं सदा ॥ १४४९ ॥
 वै. से. रसायने ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकियाहुआपारा २ पल, लोहभस्म
 ४ पल, शकर २४ पल; शुद्धमैनसिल, गन्धक और हरिताल,
 कनीसभस्म, मुनीहौंग, कुट, वच, लख, रसोत, खैरसार, जाय-

फल २-२ पल लेकर वारीकचूर्णर पारेगन्धककी नीलवर्णकज-
लीमें मिलावे । लोहेके प्रकारसे कीहुई कालेअन्नकीभीम २ पल;
त्रिफलाकाबाबा ३० पल, पुरानाधी, और अदरखकारसे १-१
प्रस्थ, स्याह-सफेद और लालचित्रक, हड़जोड़, सूरण, इटसिड,
गेंडू, मुईबोंहळा, साठोचावल, सहिजनकीछाल, तालमूली, मोरट
(लताकरंज या मोरवेल), राहुपुपी येसब ८-६ पल लेकर
सबको जवकुट्टर एकद्रोणपानीमें पकावे । अष्टमागवशय रह
नेपर छानकर पूर्वद्वयमें मिलाकर पकावे । लेह तैयारहोनेपर
उतारकर चित्रक, त्रिफला, सैन्धव, विड, सखल, सुनाछुहागा,
यवशार, देवदारुकेफल, अम्लवैत, द्राक्ष, सोंठ, मुलहठी, काक-
डासींगी, जवास, नागरमोथा, विडङ्ग, लालचन्दन, जीरा,
धनिया येसब २-२ कपलेकर मिलावे । एकदम टटाहोनेपर
३२ पल मधुमिलाकर ४० दिनतक धान्यराशिमें रख निचाळ
कर रखडोड़े । इसमेंसे यथाशिल मात्रा कायमकर खानेसे
यह समस्तव्याधियोंको नष्टकर बुद्धापको दूरकरताहै । रोगी
और निरोगी दोनोंकेलिये हितकारकहै ॥ २९४ ॥

२९५ लोहरसायनम् (पञ्चमम्)

तत्सिद्धं सिद्धनाथेन निर्मितं सत्यहेतुना ।
आमवातादिनाशाय लिख्यते चाधुनेरितम् ॥ १४५० ॥
विडङ्गं नागरं धान्यं गुडुचौ जीरकद्वयम् ।
पलाशार्वाजं कोलञ्च पिप्पलीं सुस्तकन्तथा ॥ १४५१ ॥
त्रिवृच्च त्रिफला दन्ती रालकं वृद्धतीक्ष्णम् ।
चविका ग्रन्थिकं चिन्तं स्वर्चं वृद्धदारकम् ॥ १४५२ ॥
पञ्चायसां मृतानाञ्च प्रत्येकं तद्विकारिकम् ।
आमवातघ्नञ्च यथाविधि निषेचितम् ॥ १४५३ ॥
२ तस्मिन्नेव पाठे श्वासादिरोगे द्वितीयः प्रक्षेपः—
शिरः शूलमुखश्वासकफपित्तापनुत्तये ।
लिट्यते चाधुना दिव्यं रसायनमनुत्तमम् ॥ १४५४ ॥
दार्कटा मधुकं द्राक्षा मुशली श्रायमाणकम् ।
वासा गुडुचौ कालिङ्गं ध्योपञ्च त्रिफला विवृत् १४५५
दन्ती किमिहरं चूर्णं वृद्धदारं द्विकारिकम् ।
सुदुपाके विनिःक्षिप्य सम्यक् सिद्धं समाचरेत् १४५६
सेवितं हरते नित्यं रक्तपित्तं सुदारुणम् ।
३ पूर्वस्मिन्पाठे फ्रीहादिरोगे तृतीयः प्रक्षेपः—
ग्रीहोदं यरुहूलं दारुशारत्रिभिर्विना ॥ १४५७ ॥
विनाशाय प्रयाज्यानि चूर्णानामानि देहिनाम् ॥
कटं कापालिका चर्व्यं विडङ्गं सवृहद्वलम् ॥ १४५८ ॥
शरपुष्पा च पाठा च चित्रक समहोपधम् ॥
पृथग्गर्दपलां मायां क्षिपेद्दोहरसायने ॥ १४५९ ॥
लवणाञ्च च सर्वाणि सशारं वृद्धदारकम् ॥
दीप्यकञ्च प्रमुञ्जीत पाकार्यमभयामुरी ॥ १४६० ॥
फ्रीहादिरिनाशाय कपरुपं पृथक्पृथक् ॥
मानेन सण्डकणैः सूरणेनाऽधिकं पुनः ॥ १४६१ ॥

४ पूर्वस्मिन्नेव पाठे राजयक्ष्मणि चतुर्थः प्रक्षेपः—
राजयक्ष्मणि श्वासे च कासे रक्तोत्थणे हितम् ।
महोपधं सतालीसं कारुणं नागकेशरम् ॥ १४६२ ॥
जीवन्तीमभयां मृद्धां सर्वाभ्यो द्विगुणान्तथा ।
शर्कराञ्च क्षिपेत्तत्र गुडुचोसत्त्वमेव च ॥ १४६३ ॥

व से., र का, उदररोग । रसकामधेनी तृतीय एव प्रक्षेप-
ऽस्ति सम्पूर्णपाठो नाऽस्ति ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, धनिया, गिलोय, स्याहसफेदजीरा,
पलाशकेरौज, पकेवेर, पीपल, नागरमोथा, निसोत, त्रिफला,
दन्तीमूल, संपेदराळ, भटकटैया, वनभाटा, चव्य, पिपलामूल,
चित्रकमूल, यच, विधारेकीजइ येसब १-१ पललेकर जवकुट्टर
अष्टगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावक्षिष्टरहोनेपर छानकर ३६
कपं शक्कर मिलाकर पाकरे । चारानी तैयारहोनेपर कान्त,
फालाद, सुवर्ण, चादी और ताम्रभस्म तथा अलम्बुवादिचूर्ण
(गोरखगुण्डो, गोखरू, गिलोय, विधारा, पीपल, निमोत,
नागरमोथा, वटण, पुनवा, त्रिफला और, सोंठ समभागवाचूर्ण)
येसब २-२ कपलेकर वारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर
रखडोड़े । ४० दिनबीतनेबाद ६६मेंसे अश्विनवलेदेखकर ३ मासेमें
आधेतेलेतक लेवे । औषधचोणहोनेपर रोमोचित पथ्यकेसेवन-
करनेसे आमवात नष्टहोताहै । १ ॥ इसीहिसावसे लेह बनाकर
शर, मुलहठी, द्राक्ष, सुसली, नायमाण, अहसा, गिलोय,
इन्द्रजव, त्रिकटु, त्रिफला, निसोत, दन्तीमूल, विडङ्ग, विधारा
पञ्चलोहभस्म २-२ कपलेकर वारीकचूर्णकर लेहमें मिलाकर
पूर्ववत् ४० दिनबीतनेबाद यथाशिलमात्राकेर पथ्यसेवनक-
रनेसे शिर शूल, मुखरोग श्वास, कफ और पित्तव्याधिया
तथा भयङ्कररूपित नष्टहोताहै । २ ॥ इसीतरह पूर्वलेहमें सूरण,
कपुक्वाचरी, चव्य, विडङ्ग, कायफल, शरपुष्पाकीजइ, पाठामूल
चित्रक, सोंठ और प्राचोलेहोकीभीम ३-३ कप. पाचोनमक,
सत्वी, यवशार, सुहागा, विधारेकीजइ, अजवाइन, हरे, सरसो,
मानकन्द, खड्गणै (सर्दोकाकन्द म०) येसब १-१ कप
मिलाकर रखडोड़े । चालोसदिनकेबाद मानाकायमकर खानेसे
और उचिनपथ्यपालनसे प्लीहा, उदर, यकृत औरगुल्मरोग
येसब शूल-शार और अश्रिकमेंसेविना अच्छेहोतेहै । ३ ॥
इसीतरह पूर्वलेहको द्विगुणशरसे तैयारकर सोंठ, तालीसपत्र,
काकनज यू०, नागकेशर, जीवन्ती, हरे, अयजोदा येसब २-२
कपं और गिलोयसब २८ कपं मिलाकर ४० रोजतक रखर
यथाशिलमाना कायमकर सेवनकरनेसे तथा योग्यपथ्य पाल
नेसे श्वास, कफ, रकागमनऔर कण्डूआ राजयक्ष्म इरतेताहै २९५

२९६ लोहरसायनम् (षष्ठम्)

त्रिफलायाः प्रचुरांति प्रत्येकं पलसत्तमम् ।
धारिण्यष्टगुणे पन्था पञ्चभागेन शेषयेत् ॥ १४६४ ॥
पदशारावास्तु दुग्धस्य हस्तिपः पलपञ्चरुम् ।
पुटितात्रायसः पञ्च शुद्धोऽस्तस्य पलद्वयम् ॥ १४६५ ॥

विडङ्गं त्रिफलाजीरद्वयं त्रिकटु चूर्णितम् ।
लोहचूर्णसमं ग्राह्यं क्षमधुदं ततः पचेत् ॥
ग्रहणीगदमत्युग्रं हन्येतद्रातसम्भवम् ॥ १४६६ ॥
व से, र का, वातग्रहण्याम् ।

भाषा—हरड़, बहेड़ा, आवला ७ पल लेकर अठ्युने पानीमें पकावे । पत्रभागावशिष्टको छानकर दूध ३ प्रस्थ, धो ५ पल, लोहभस्म ५ पल, अन्नरुभस्म २ पल, विडङ्ग ५ पल, त्रिफला ६ पल, स्याहसफेदजीरा ७ पल, त्रिकटु ८ पल लेकर सबकावारीकचूर्णकर इक्केमिलाय पकावे । लेहूतियार होनेपर किसी चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे अमिबल देखकर मात्रा कायमकर सेवनकरनेसे यह वातजसङ्गहणीको नष्टकरताहै २९६

२९७ लोहरसायनम् (सप्तमम्)

विभीतकाऽभये धात्री प्रत्येकन्तु पलाएकम् ।
वारिण्यष्टगुणे साध्यं पङ्कनेनाऽवतारिते ॥ १४६७ ॥
अयःपलानि पञ्चैव पयसोऽष्टौ शरावकात् ।
सर्पिषो दशपलान्यत्र दद्याद्धोहं विपाचयेत् ॥ १४६८ ॥
त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं प्रत्येकन्तु द्विकार्पिकम् ।
विडङ्गं भद्रमुस्तञ्च जीरकद्वयमेव च ॥ १४६९ ॥
पृथगर्घपलं ग्राह्यं क्षुयात्पाकन्तु मध्यमम् ।
पैत्तिके ग्रहणीरोगे याजयेन्मतिमान्भिवक् ॥ १४७० ॥
व से, र का, पित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—हरड़, बहेड़ा, आवला ८-८ पल लेकर जबजुकर अठ्युने जलमें पकावे । छत्रभाग वाकीरहनेपर उतारकर छानले फिर इसमें लोहभस्म ५ पल दूध ४ प्रस्थ, धो १० पल, त्रिकटु, त्रिफला, विडङ्ग, नागरमोया, स्याहसफेदजीरा येसब २-२ कर्ष लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वद्वयमें मिलाकर मध्यमपाक करे । ४० दिनवाद प्रकृतिके अनुसार मात्रा कायमकर सेवन करनेसे पित्तजसङ्गहणी नष्टहोतीहै ॥ २९७ ॥

२९८ लोहरसायनम् (अष्टमम्)

प्रत्येकं पदपलं धात्री शिवा घेमीतकत्वचम् ।
उदकानां शरावैस्तु पङ्क्तिशत्या विपाचयेत् ॥ १४७१ ॥
पञ्चभागावशिष्टेन लोहं पञ्च पलानि च ।
दधि दत्त्वा च तन्मान खरपाकं विपाचयेत् ॥ १४७२ ॥
त्रिकटु त्रिफला वह्नि विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
चूर्णं लाहसमञ्चाऽत्र प्रक्षिपेद्वतारिते ॥ १४७३ ॥
श्लैष्मिकं ग्रहणीरोगं हन्यादेतद्रसायनम् ॥ १४७३ ॥
व से, र का, श्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—आवले, हर और बहेड़े ६-६ पल लेकर १३ प्रस्थ पानीमें पकावे । पत्रभागावशिष्ट रहनेपर छानकर लोहभस्म और दही ५-५ पल डालकर खराककरे । द्याहोनेपर दधमें त्रिकटु, त्रिफला, चित्रकमूल, विडङ्ग नागरमोया इनका वारीक चूर्ण लोहकी बराबर डालकर रखछोड़े । इसमेंसे अमिबल देखकर उचितमात्रासे खानेसे यह श्लैष्मिक ग्रहणीरोगको नष्टकरताहै ॥

२९९ लोहरसायनम् (नवमम्)

लोहं पूर्वं पुटेच्छुद्धं गृहीत्वा पलपञ्चकम् ।
पुनर्नवावरीमूलं त्रिफला पुटितं पुनः ॥ १४७४ ॥
वराचतुर्गुणं लोहात्पचेदष्टगुणे जले ।
सप्तभागावशेषेण द्विशराव्यं पयः क्षिपेत् ॥ १४७५ ॥
शतावरीरसञ्चाऽपि लोहतुल्यं प्रदापयेत् ।
पलानि दश चाज्यस्य मृदुपाकेऽवतारिते ॥ १४७६ ॥
द्विजीरकं विडङ्गञ्च पलाशवीजमेव च ।
ज्यूपणं त्रिफला चर्ष्यं चूर्णमेपां पय समम् ॥
वातपित्तोत्तरं हन्ति ग्रहणीगदमुक्तम् ॥ १४७७ ॥
व से, र का, वातपित्तग्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्धकरकेभस्मकियाहुआ लोह ५ पललेकर पुनर्नवा, शतावर, त्रिफला इनप्रत्येककेम्बरसोंसे मर्दनकर १-१ पुट दे । फिर २० पल त्रिफलाको अठ्युनेपानीमें डाल सप्तभागा वशिष्टकायकर छानकर पूर्वोक्त लोहभस्म ५ पल, दूध १ प्रस्थ, शतावरीकास्वरस ५ पल, धो १० पल डालकर मृदुअग्निसे पकावे । बल्ककीश्लिग्मगोलिया बननेलेगें तब उतारले । फिर उसमें स्याहसफेदजीरा, विडङ्ग, पलाशकेबीज, त्रिकटु, त्रिफला और चर्ष्य इनकाचूर्ण १ प्रस्थ मिलाकर रखछोड़े । ४० दिन बीतनेकेवाद यथात्रिबल मात्रा नियतकर खानेसे वातपित्तप्रधान भयङ्कग्रहणीरोग दूरहोताहै ॥ २९९ ॥

३०० लोहरसायनम् (दशमम्)

अष्टादश पलान्यत्र त्रिफलाया विपाचयेत् ।
सलिले द्वाधाढके चास्मिन्नभागाऽवशेषितम् १४७८
विपचेत्पूर्वग्राह्यं पुटितं वक्ष्यमाणैः ।
वरायाः केशराजस्य चार्द्रकस्य रसेन च ॥ १४७९ ॥
एतत्पञ्चपलं ग्राह्यं सर्पिर्दशपलानि च ।
शतावरीरसस्याऽष्टौ नारिकेलोदरुस्य च ॥ १४८० ॥
पलाईं मरिचं रुष्णा नागरं पलसम्मितम् ।
पर्दिशमापकं चूर्णं त्रिफलायाः प्रकल्पयेत् ॥ १४८१ ॥
त्रिचत्वारिंशता मापैरधिकं चूर्णितं पलम् ।
चित्ररुस्य विडङ्गस्य पचेत्पाककरं ततः ॥
घातश्लेष्मोत्तरं चैव क्षुश्चिरोगे तथा हितम् ॥ १४८२ ॥
व से, र का, वातश्लेष्मग्रहण्याम् ।

भाषा—दोआडकपानीमें १८ पल त्रिफलाको पकाकर नवभागावशिष्टकर छानले फिर त्रिफला, कालाभगरा, अदरक इनके यथासम्भवस्वरस अथवा जाधोंसे भावनादीहुईलोहभस्म ५ पल, धो १० पल, शतावरकास और नारिकेलकाजल ८-८ पल, मरिच और पीपत्र २-२ कर्ष, सोंठ १ पल, त्रिफला २६ मासे, चित्रकबीज ४३ मासे, विडङ्ग १ पल इनसबका कपड-छानचूर्ण डालकर ररपाककरे । ४० दिनबीतनेकेवाद यथात्रिबलमात्रा नियतकर खानेसे वात और श्लेष्माधिक उदररोग नष्टहोताहै ॥ ३०० ॥

३०१ लोहरसायनम् (दातरसायनम्) ११

सृष्टिं पुटितं शुद्धमयसः पलपञ्चकम् ।
 शतावरीरसे सम्यक् पुटितं पञ्चधा पुनः ॥१४८३॥
 अष्टौ पलानि गृह्णीयात्त्रिफलायाः पृथक्पृथक् ।
 सलिलस्यामर्णे पक्त्वा पादशिष्टेष्वतारिते ॥ १४८४॥
 छात्रिशच पलान्यत्र पयसः सर्षपौ दश ।
 मध्यपाकं ततः पक्त्वा लेपां कर्पूर्यं पृथक् ॥१४८५॥
 त्रिकटुं विफलां बह्विं विडङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
 पलाशस्य च बीजानि क्षिप्त्वा कुर्याद्रसायनम् ॥
 पिप्पलेष्पाधिकञ्चैव निहन्त्याद्दहणीगदम् ॥ १४८६ ॥
 वं.से.,र.का., पिप्पलेष्पमदहण्याम् ।

भाषा—अयस्कृतिकं प्रकारसे मारेहुए ५ पलशुद्धलोहमें
 शतावरीके अक्षररसेसे ५ भावनाएं देवे । फिर हरे, बहेडा,
 आंबला ८-८ पल लेकर एकट्रोणपानीमें पकावे । चतुर्थांशव-
 शेषरहनेपर छानकर दूध ३२ पल, घी १० पल और पूर्वोक्त-
 लोहमस ५ पल डालकर पकावे । मध्यपाकहोनेपर त्रिकटु,
 त्रिफला, चित्रमूल, विडङ्ग, नागरमोथा और पलाशकेबीज
 २-२ कप लेकर बारीकचूर्णकर अच्छीतरह मिलाकर रखठोड़े ।
 ४० दिनबीतनेकेबाद यथाप्रिवलमाना निर्धारितकर सेवनकरनेसे
 पित और श्लेष्मप्रधानग्रहणीरोग नष्टहोताहै ॥ ३०१ ॥

३०२ लोहरसायनम् (अयोरजीयम्) १२

त्रिफलायास्तु कुडवं पिप्पलीकुडवं तथा ।
 विडङ्गमरिचानान्तु द्वे द्वे चैव पले स्मृते ॥ १४८७ ॥
 पलं पलञ्च कुर्वति दन्तीचित्रक्रयोरपि ।
 पलातः पिप्पलीमूलाद्द्रावणौ पलानि च ॥ १४८८ ॥
 शृङ्गघेरपले द्वे च गव्यात्वञ्च पलानि च ।
 शोषायद्देपलानि स्यु यानि तानि निबोध मे ॥१४८९॥
 रास्ना यला गोशुक्रं मधुकं देवदाद्य च ।
 यथा सातिविषा पात्रा मुस्ता कटुकपोहिणी ॥१४९०॥
 कद्रफलं शारिषे द्वे च इयामा भङ्गातकानि च ।
 पुनर्नवं सनेजोहे त्यक् च पत्रं शतावरी ॥ १४९१ ॥
 निदिग्धिकाव्यान्नरं मञ्जिष्ठा कुशकं बला ।
 त्रिपला त्रिवृता भार्मी कुडजस्य फलत्वचः ॥१४९२॥
 पतदाहव्य संभारं द्विस्तापत्स्यादयोरजः ।
 तर्पकभ्यांठनं युक्त्वा लेहयेन्मधुसर्षिणा ॥ १४९३ ॥
 क्षीरञ्चाऽपु पिथेयुक्त्वा निरञ्जं सेवयेत्सदा ।
 अयोरजीयमित्येतत्त्वयात् मिन्द्रसायनम् ॥ १४९४ ॥
 भंयत्सप्रयोगेण शतवर्षानि जीवति च ।
 चर्पद्भेन मनुजो द्वे जंषिचटरदां शतम् ॥ १४९५ ॥
 निहन्त्याच्छुष्यं घोरं वृक्षमिन्द्राशानि यथा ।
 पाण्डुरोगमयाशांनि मन्दुमञ्जि विमीनपि ॥ १४९६ ॥
 भगन्दरं कामलाञ्च बुध्निनि जटराणि च ।
 सप्तहानमरुत्मारं शूलानि परिकर्तिकाम् ॥ १४९७ ॥

अतिसारं प्रमेहांश्च क्षतं श्वांसं क्षयन्तथा ।
 यस्मिन्मस्मिन्विकारे तु योगोऽयं सम्प्रयुज्यते ॥१४९८॥
 तं ते निहन्ति वै रोगं देवारीन् केशवो यथा ।
 अनुप्रयोगो लाजानां सक्तुतो मधुना सह ॥ १४९९ ॥
 क्षीराऽपुपानलेहोऽयं दिवसान् सप्त पञ्च वा ।
 अशःस्वामातिसारेषु विधिस्स्यात्परिकर्तने ॥१५००॥
 ततः क्षीणेषु कासेषु ज्वरेषु विषमेषु च ।
 घर्षात्सञ्चितः श्वयथुरस्मान्मासेन शाम्यति १५०१
 रसायनप्रयोगाच्च पूर्वोद्दिष्टाद्यथाविधि ।
 शालीन् सपट्टिकांश्चैव रसान्नविकृतीस्तथा ॥१५०२॥
 क्षाराम्लध्वपांश्चाऽपि गोधूमांश्च विवर्जयेत् ।
 आगन्तुश्वयथुर्वापि यो वा स्याद्दोषसम्भवः १५०३
 लङ्घनैश्च चिलेपैश्च क्षीरसेकेः प्रशाम्यति ।
 अविषाको ज्वरच्छर्दां दीर्घस्यं परिकर्तिका ॥
 श्वासातिसारौ हिक्का च शूनस्योपद्रवाः स्मृताः १५०४
 मे. सं. क्षयौ ।

भाषा—त्रिफला और पीपल ४-४ पल, विडङ्ग और
 मरिच २-२ पल; दन्ती और चित्रमूल १-१ पल, इलायची
 और पिपलामूल ८-८ पल, अदरक २ पल, गायकापूत ५ पल,
 रास्ना, बला, गोखरू, मुल्हठी, देवदाद, वन, अगोच, पादा,
 नागरमोथा, कुटकी, कायफल, स्याहसफेदशारिवा, अनन्तमूल,
 मिर्चावे, पुनर्नव, तेजबल, तज, पत्रज, शतावर, भद्रकटैया,
 बबनहा, मनोठ, इशकीजद और बला २-२ कप; निसोत,
 भारङ्गी, कुईयाकीछाल और बीज ३-३ पल लेकर बारीकचूर्णकर
 लोह अयस्कृति सघसे इनीमिषाय १-२ दिन रखकर रख-
 छोड़े । इसमेंसे यथाप्रिवल माना कायमकर मधु और घीकेसाथ
 लेकर दूधरीवे । परिषाकहोकर मूलत्वानेपर केवलरूधतेवे । इयका
 १ वर्षतक प्रयोगकरनेसे १०० वर्षक निरामयहोकरजीतावे ।
 दोषपके सेवनसे २०० वर्षकी आयु होतीहै । रोगनिहरणार्थ
 सेवनकरनेसे भयङ्करोष, पाण्डु, अदरी, मन्दादि, विमि,
 भगन्दर, कामला, इष्ट, उदर, शीहा, आत्मार, शूल, पेटका
 कटाव, अतिघार, प्रमेह, उर क्षत, श्राय, क्षय इनसबको यह
 नष्टकरताहै । इनके अतिरिक्त जियकिमीरोगमें इसका प्रयोग
 कियाजाय उसे यह शीघ्रनष्टकरताहै । लात्राके सक्तु, मधु और
 दूध इनके लेहैरसाय ७ या ५ रोजतक लेनेसे अर्थ, आमातिसार,
 पेटकाकटाव, क्षीणता, कास और बिषमज्वर नष्टहोतेहैं । एह-
 वर्षपदा सञ्चितशोष एकमहीनेमें अच्छाहोताहै । रसायनप्रयोगमें
 बालक, छाटी, रस, अरकी बनारसे, क्षार, अम्ल, लवण और
 गेहूँ इनको छोड़ने । इसमें देवयान्ताय आगन्तु घोष आजायको
 रज्जुन, लेप और दूधकेकण्ठे मिश्रहोताहै । शोषी आदमीको
 अविषाक, ज्वर, वनन, दुर्बला, पेटकाकटाव, श्राय, अतिघार,
 हिक्का ये उपद्रव होतेहैं ॥ ३०२ ॥

३०३ लोहरसायनम् (त्रयोदशम्)

निरग्निभागितं कान्तं त्रिभिषेले विभावयेत् ।
 द्विष्ठा ध्यंषं निष्ठायासा निगुण्डीकदलीभ्यो १५०५

दाडिमां विपभूतागो पलाशालम्बुये वरी ।
 कुरण्टी कदलीकन्दयश्चलफलगोश्वराः ॥ १५०६ ॥
 गाङ्गेरुनी च पातालगरुडस्तद्रसः पृथक् ।
 लोहपात्रे च सञ्चर्य तल्लोहं मधुसर्पिणा ॥ १५०७ ॥
 लोढा पिथेहराक्षोधमनुपानं सुप्रायवहम् ।
 मासत्रयं तथा क्षोद्रपिप्पलीसंयुतं लिह्वेत् ॥ १५०८ ॥
 कासं श्वासञ्च मन्दाग्निं शोथं वातञ्च कामलाम् ।
 छिन्नासत्त्वमधुमिश्रं ग्रहणीं तापजां रुजम् ॥ १५०९ ॥
 अण्डबुद्धिञ्च रक्ताऽस्रं मूत्ररोगान्विशेषतः ।
 सेपितं सर्वरोगप्रमिदं लोहरसायनम् ॥
 पुष्पपौत्रदामायुष्यं यल्लक्षणप्रसादनम् ॥ १५१० ॥
 वै, द रसायने ।

टि०—अथ पाठ स्वयमशिरमास्तदशोऽस्ति परन्तु निम्नशरीरविप-
 भूतागगाङ्गेरुनीया विशिष्टभावनायुक्तत्वात्प्रकृतेन सङ्गृहीतं, निशा
 गाङ्गेरुनीयशोऽस्ति भावयोग्यतामावस्थोऽस्ति विपभूतागयो विजानीय
 द्रव्यत्वात्तदन्तर्भावोऽस्ति इति विद्विदि विभावनीयम् ॥

भाषा—स्वयमामिलोढीं प्रक्रियते मोरुहं कान्तलोहो
 गिलोय, त्रिकटु, हल्दी, अङ्गु, निर्गुण्डी, बेला, दसरोड,
 अनार, बछनाग, केंचुए, पलाशका अन्नस्वरस, गोरखमुण्डी,
 शतावर, पियावासा, कदलीरन्ध्र, बबूलफली, गोप्सू, गुल्-
 सिक्की, पातालगादडी इत्ये ययासम्भव स्वस्ते अथवा कायोसे
 ३-३ बार भावनाए देकर रखोके । इसमेंसे यथाश्रित क मात्रा
 नियतकर मधु और पीनेसाथ सेवनकर त्रिकलावाक्याय पीने
 तथा पच्यपालनेसे ३ महीनेमें कास, श्वास, मन्दाग्नि, शोथ,
 वातविकार और कामला इनसबको यह नष्टकरताहै । जिसे
 मधु और धीका अनुपान अनुकूल न हो वह पीपल और मधुकें-
 साय सेवनकर । गिलोयसत्त्व और मधुकेसाथसेवनकरनेसे ग्रहणी
 और ज्वरकादाह शान्तहोताहै । शिरकालतक सेवनकरनेसे
 अण्डबुद्धि, रक्तपित्त और मूत्ररोग येसब नष्टोकर बल, बर्ण
 प्रसाद और पुत्र पौत्र तथा आयुष्यको देताहै ॥ ३०३ ॥

३०४ लोहरसायनम् (चतुर्दशम्)

लोहाऽस्रसूतकशिलाजतुकान्तलोह-
 चक्राङ्गचूर्णसहितं विपचूर्णमस्ति ।

यः सन्ततं घृतमधूपहितं मनुष्यः

स स्याज्ज्वरमरणरोगभयं विमुक्तः ॥ १५११ ॥

र. (मा.) रसायने ।

भाषा—लोह, अन्नक, और पारदभस्म, शुद्धशिलाजीत, कान्त-
 लोहभस्म, गिलोय, शुद्धबज्जनाग येसब समभाग लेकर बारीक
 चूर्णकर एकजगह मिलाकर रखोके । इसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्ती
 तक मात्रा धी और मधुकेसाथ मिलाकर निरन्तर सेवनकरनेसे
 बुनापा, मृत्यु और रोग इनकेभयसे निरुन्मुक्तहोताहै ॥ ३०४ ॥

३०५ लोहसत्त्वम्

श्वेतं काचञ्च सौभाग्यं माघ्वीकं मधु सिक्थकम् ।
 सायनं सार्पखलिं पुराणगुडमित्यपि ॥ १५१२ ॥

कुडवानि दशाद्यात्प्रत्येकं तानि सर्वशः ।
 द्विगुणेऽभ्युनि नि. काच्य लेपयोग्यञ्च साधयेत् ॥ १५१३ ॥
 निरङ्गसारस्यादाय कुडवानि च सप्ततिम् ।
 तमततानि पत्राणि तेन लिप्तानि सन्धमेत् ॥ १५१४ ॥
 तावद्धमेद्यावदेतल्लोहलेपः समाप्यते ।
 चत्वारिंशत्कुडयकं श्वेतसर्जाभयं रजः ॥ १५१५ ॥
 फार्थ्यं दशगुणे तोये पदशोपेणाऽवतारयेत् ।
 तथैव नवसारस्य धारमेवञ्च साधयेत् ॥ १५१६ ॥
 सर्वं संसाधितं वस्त्रधृतं सूक्ष्मं पृथक् पुनः ।
 अथ तत्पक्वम्पाण्डशकलेऽर्द्धे सुकोरिते ॥ १५१७ ॥
 क्षारन्तु सर्वशः क्षित्या तत्तुल्यघटमध्यगम् ।
 कृत्वाऽश्वमलमध्ये तन्निजल्पनाद्गलपूरणात् ॥ १५१८ ॥
 पिधानार्थञ्च तद्वत् मिश्रमेव प्रकल्पयेत् ।
 संपादकुडयं सोमक्षारचूर्णं विनिक्षिपेत् ॥ १५१९ ॥
 मुखं पिधाय घृत्तेन दिनानामेकयिंशतिम् ।
 घर्मं संस्थापयेत्तावत्कारुपक्षः सितो भवेत् ॥ १५२० ॥
 सिद्धं विनाय गम्भीरमृत्पात्रे विनिधाय च ।
 आतपे शोपयेत्सप्त दिनान्यश्वमलान्तरं ॥ १५२१ ॥
 संस्थाप्य मासपदकं तु उद्भूय स्थापयेत्पुनः ।
 एरुविंशदिनान्येव मुष्ममुद्गादयेत्ततः ॥ १५२२ ॥
 सप्त लोहस्य पत्राणामुत्तरोत्तरतः स्थितौ ।
 यदा तच्छुद्धयेद्विन्दुस्तदा सिद्धं भवेदिति ॥ १५२३ ॥
 न चेत्तद्वैकविंशत्या दिनानाञ्च पुनस्तथा ।
 विमुद्ध्य स्थापयेद्युक्त्या सम्यग्श्वमलान्तरं ॥ १५२४ ॥
 सिद्धे खलु च तद्गौहं निक्षिप्याऽतिखरातपे ।
 विमुद्ध्य मासत्रितयं स्थापयेत्सावधानतः ॥ १५२५ ॥
 प्रतिमासं तन्मुखं तु समुद्गादयाऽवलोकयेत् ।
 ततो मधुरपुच्छानां भाजनं सम्प्रकल्पयेत् ॥ १५२६ ॥
 तनाऽयः स्थापयित्वा तु तत्रापि घटमध्यगम् ।
 यवकाञ्जिकतः पूर्णं तत्पात्रञ्च पिधापयेत् ॥ १५२७ ॥
 मासत्रयं स्थापयित्वा सूक्ष्मखण्डं भवेद्ययः ।
 सौवीरणेव सम्भाव्य बहुशोऽतिखरातपे ॥ १५२८ ॥
 पाचयेद्गुमलयन्त्रे सत्त्वमात्स्यमग्निना ।
 पोडशग्रहं यावद्ब्रह्मीयाच्छीतलञ्च तत् ॥ १५२९ ॥
 तत्सत्त्वमर्थं तस्मिन्तु द्रव्यसत्त्वे विमर्द्य च ।
 मासत्रयं पूर्ववच्च स्थाप्यमश्वमलान्तरं ॥ १५३० ॥
 गृहीत्वा कान्तलोहस्य पाने दहनरे गुभे ।
 पिपें निम्बद्रव्ये सत्त्वं लिप्तं पलमितं पुनः ॥ १५३१ ॥
 श्वेतमृत्तिकया बद्धं मुद्रितं सम्पुटञ्च तत् ।
 विशोष्य पञ्चकुडवशोवालस्यमुपर्यधः ॥ १५३२ ॥
 इष्टिकायन्त्रतः पक्वं द्वात्रिंशत्ग्रहं क्रमात् ।
 लाजाकारञ्च तत्सत्त्वं सर्वरोगहरं भवेत् ॥ १५३३ ॥
 अष्टमांशस्तु गुञ्जायाः सर्वगुल्मोदरापहः ।
 सद्यो राक्षससद्बुद्धे सर्वन्याधिनिवहणः ॥ १५३४ ॥
 र का, उदाधिकारे ।

भाषा—सफेदकाच, सुहागा, महूपकामय, मधु, मॉम, सातुन, सरसौकी खली, पुरानागुड येसब ४०-४० पल्लेपर दूना पानीदेकर औदावे । लेपकीतरह गाढाहोनेपर उतारकर रखले । फिर १७॥ प्रस्थ निरङ्गलोह (सुण्डभेद) के बारीकपत्र बनवाकर उनपर पूर्वोक्तेपल्लगाय धमनरखावे, जबतक कि बहलेप समाप्त न होजाय । फिर १० प्रस्थ सफेदसजीको १० गुने पानीमें औदावे, छडाहिसत्ता बाकोरहनेपर उतारले । इसीतरहसे १० प्रस्थ नौसादरकोभी पकाकर उतारले और दोनोंको अलग २ छानकर इनका क्षार बनाकर पकेहुए सफेदकोहलेमें छेदकरके खबक्षार छालदे । ऊपरसे ५ पत्र सफेदगोमलकाचूर्ण डालकर छेदमेंसे निकालोहुई चकतीसे बन्दकर सूखानुत मिश्रीकेवतनमें कोहलेको रस मनुष्यकेगलेतक गहरे रङ्गमें घोड़ेकी ताजीलीद केबीचमें गाड़दे, बहएडा। ऐसे टिकानेपर होनाचाहिये कि दिनभर धूपलगतीरहे । २२ वें दिन निरालर उसमें कौएमा-पल्ल डरावे, वह सफेद होजायतो सिद्धसमये । फिर दूसरे गहरे मिश्रीकेपात्रमें रखकर सफेदमिश्रीकर सातदिन धूपमें सुखाकर पहिलेकीतरह गलेप्रमाण गहरे खोंमें घोड़ेकी लीदमें दवावे । छ महीनेकेबाद निकालकर फिर ताजीलीदमें दवावे । २१ दिनबाद सुंह उपाङ्कर लोहेकेबारीक ७ पत्रोंकी तहजमाकर ऊपर एकबिन्दु इसक्षारका डाले यदि सालोंपात्रोंमें छेदहोजाय तो सिद्धसमझनाचाहिये । बसकरहनेपर फिर २१ रोज सुण्ड-द्रव्यकर ताजीलीदमें दवावे और फिर परीक्षणकरे । जब सिद्ध-होजाय तब सुखमुद्रणकर दूसरे लोहेके पात्रमें रखकर पूर्ववत् सावधानीकेसाथ ३ महीनेतक लीदमें गाड़दे । प्रतिमहीने उसका सुंह उपाङ्कर देखले कहीं बतनमें नुक्सान न हुआहो और उष्णका वाणभी निकलजाय । तीन महीनेबाद निकालकर रखले यह द्रवसव तैयारहुआ । सीनेकेपहोकी छत्रङ्गीमें पूषोक्त लोहेके पत्रोंको रखकर मजजुत षडेमें रखदे और जबकीकाञ्चीसे षडेको-भर सुंहबन्दर ३ महीनेतकलीदमें गाड़दे तो इसलोहका बारी-कचूर्ण होजायगा । इसचूर्णको निचालकर सौवीर (काञ्चीवि-शेष) की अल्पन्तकड़ेधूपमें बहुतगी भावनाएं देकर उमरूपयन्त्रमें बन्दकर १९ पहरकी बड़ी आंचदे । स्वात्तकीतलहोनेपर निकाल कर पूर्वोक्तेद्रवसत्त्वमेंसे आधागत्व मिलाकर मदनकर षडेमें भर ३ महीनेतक घोड़ेकी लीदमें दवावे । तीनमहीनेकेबाद निका-सकर रखले । इसमेंसे १ पल्लपरव निकाल कान्तलोहके मजजुत पात्रमें डालकर नीबुकारस मिलाय इन्द्रापीस समस्त पात्रपर लेपकरदे और इसपात्रको चीनीनेपात्रमें रखकर शतावधामुद्रण अच्छीतरह सुखाकर पुरानी मोटी ईंधमें राखा मोद सवागेर सियालके बीचमें इगाम्मुद्रको रख नीचे ३२ पहरकी प्रमाणा दे । स्वात्तकीतलहोनेपर पीरजमे संपुष्टको नोलकर निखाले । इसमेंसे धानकी खीलोरी सरह कान्तगत्व निखलेगी । इसमेंसे एकरसका आटाई दिन्दा देनेसे घाम्गुम और उदररोग नष्टोत्तरे और शारावरीलण्ड जटागति प्रदीप्त होजाताहे । अनाघ्य बाल और बन् ब्याधिपोंको यह लम्हाउ नष्टरताहे ।

कान्तलोहकीतरह इससे समस्तपात्रोंकीभस्म होतीहै और वह अद्भुतकाम करतीहे ॥ ३०५ ॥

३०६ लोहसारकल्पः

आलिप्य तापीरुवरवीरकाभ्यां
वैश्वानरे प्रज्वलिते निधाय ।
तप्तं सुतप्तं विनियोज्य तप्ते
निर्वाप्य चारान् बहुशः सुलोहम् ॥ ३५३५ ॥
एभिः प्रकारैः सुसृताश्च लोहा-
च्चूर्णांकृताश्चाऽपि पलानि चाऽष्टौ ।
सर्पिःपलं तैलपलं पलानि
चत्वारि चाष्टौ हि वरारसस्य ॥ ३५३६ ॥
तत्रस्य चाम्लस्य चतुःपलानि
कर्पूञ्जं कर्पू पृथगापधानाम् ।
व्यापाऽजमोदाचयिकाऽनलानां-
मूलं प्रद्यादपि पिप्पलीनाम् ॥ ३५३७ ॥
सिन्धुप्रसृतं सविडङ्गचूर्णं
तत्रेण हन्याद्गहर्णां समस्ताम् ।
अशांसि शोथं परिणामशूलं
शूलञ्च दीप्तं तु करोति वह्निम् ॥ ३५३८ ॥

र का., सद्गह्वयधिकारे ।

भाषा—कोलादके बारीकपत्रोंपर सोनासापी और सफे-दकरनेकीजङ्गी पानीमें पीसकर लेपकरे । सुनेपर राशी-छाछमें सुशावे । ऐसे जबतक पत्रोंका चूरा न होजाय तबतक-करे । यहलोहचूर्ण ८ पल, धी १ पल, तैल १ पल, पिक्कलाका स्वस १२ पल, राशीछाछ ४ पल, सोंठ, मिर्चे, पीपल, अज-मोद, चन्दय, चित्रककीजड़, पिपलामूल, सैन्धव, विडङ्ग इन-सबका बारीकचूर्ण १-१ कर्पू लेखर सगरो मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे यथावधि मात्रालेकर छाछरीनेसे सवप्रकारकी प्रवृथी, बवासीर, पोथ, परिणामशूल, साधारणशूल, मन्दाभि इतमरने यह नष्टरताहे ॥ ३०६ ॥

३०७ लोहसिन्दूरम् (लोहवेवसिन्दूरम्) १

सूताऽञ्जकं विशुद्धञ्च हयमारैः सुमर्दितम् ।
त्रीणि पत्राणि नागस्य तत्पिष्टं लेपयेच्छुभम् ॥ ३५३९ ॥
पुष्टितं त्रियते तद्वट्टुर्णं मधु योजितम् ।
लेपयेत्तारपत्राणि तित्तिडीतगाम्भसा ॥ ३५४० ॥
द्वानारेण सिन्दूरं जायते सर्वदोगजित् ।
हंसपाद्री जपापुण्यं ताम्बूलं खदिगान्वितम् ॥ ३५४१ ॥
सुरैः पृथक्के घर्षणं रेतैः शुद्धरसं क्रमात् ।
गन्धद्रिगुणसंयुक्तं हौत्र्यं चारौ प्रमर्दयेत् ॥ ३५४२ ॥
निश्चिप्य फाच्यप्याञ्च तन्मुण्यं सप्रिर्गंधयेत् ।
एकविंशति यामेषु वायुकायप्रपाचनात् ॥
शुद्धं भवति सिन्दूरं सर्वलोहेषु येषधयेत् ॥ ३५४३ ॥
र. क. को., संयोग ।

भाषा—शुद्धपारा और अभ्रकसमभाग लेकर लालरनेरके पुष्पन्वरससे मर्दनकर इनकी बराबरेके नामके तीन पत्रननाकर उनपर लेकर सुखाकर शरावसामुद्रमें बन्दकर गजपुटकी आचदे तो इगळीभस्महोजायगी । इसभस्ममें बराबरका सुहागा और मधुदेकर श्मली और तगरकेगानीसे पीचकर भस्मकेबराबर चांदीकेपत्रोंपर दसमास लेपरर सुखाहरगजपुटकी आचदे । इसतरह १० बारलेखदेकर आचदेनेसे सिन्दूरसदृशभस्म होगी । फिर इसकी बराबर शुद्धपारा डालकर लालडंडीका पकाहुआ हसरान, ओडहुलेकेफूल, कन्याचूना लगाहुआपान, चन्पू और लालकनेरकेफूल इनके यथासम्भन स्वरस अथवा वायोंसे १-१ रोज मर्दनकर उससे द्वियुग शुद्ध गन्धक मिलाकर हंसराजकी रङ्गके स्वरससे २-२ दिन मर्दनकर सुखाय नीलवर्णकञ्जलीकर ६-७ कपइमिनी दीहुई आतशीशीशीमें डालकर मुहबन्दकर बाहुकायब्रमें रखकर ३१ पहरकी कमामि देवे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर रखोड़े । यह रोमोचित अथवा समयोचि तातुपानकेसाथदेनेसे समस्तरोगोंको नष्टकरताई । धातुवाध-रम्प्रदायसे समस्तलोहोंके रङ्गो बरहताई ॥ ३०७ ॥

३०८ लोहसिन्दूरम् (लोहसुन्दरः) २

सूतभस्म सूतलोहगन्धकी भागवर्द्धितमिदं विनिक्षिपेत् ।
दीर्घनालदृढकृपिकोदरे
मूत्राया च परिवेष्य तां क्षिपेत् ॥ १५४५ ॥
सुहृिकोपरि च कृपिकामुखे
प्रक्षिपेच्च धरशालमलीद्रवम् ।
त्रैफलञ्च सगुडूचिकारसं
पाचयेच्च मृदुवह्निना दिनम् ॥ १५४५ ॥
स्वाङ्गशीतलमिदं प्रगृह्य च
श्वूपगार्द्रकरसेन भावयेत् ।
लोहसिन्दुरसोऽयमौरितः

शुष्कपाण्डुविनिवृत्तिसिद्धः परः ॥ १५४६ ॥

इ चि, जि, इ, इत्यस्य, इ, इ, इ, क, इ, दो, इ, का, शो, म, वै चि, र, मृ, पाण्डुधिकारे, र दी त्रियोनिरितिनाम ।

भाषा—पारद और लोहभस्म, शुद्ध गन्धक कमरुद्वभगमसे लेकर एकदिन शुष्क मर्दनकर ६-७ कपइमिनी दीहुई लम्बी-नालकी आतशीशीशीमें डालकर आपेत्क सेमलकाद्रव भरदे और बाहुकायब्रमें रख बहुतगन्ध आचसे पकावे । सेमलकाद्रव सूख नेपर त्रिफला और गिलोयकारस भरके पकावे । समागत्र सूखानेप आचबन्दकरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर त्रिफल और अदरककेरससे १-१ रोज मर्दनकर २-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिततातुपानकेसाथ देनेसे यह शुष्कपाण्डुरो दूरकरताई ३०८

३०९ लोहसुन्दररसः

गन्धसूतकलवह्णदलेत्याल्लुवायसकृपाह्विचिपाणाम् ।
गोलिका मुञ्जकृता कफहृदी धुत्प्रयोधजननी कमयुक्ता ॥

कृष्माण्डं काञ्जिकं तैलं शार्कं लायणिकं चणाः ।
पर्जनीया रसेऽमुष्मिन् पुष्टिका चणकाकृतिः ॥ १५४८ ॥
र (मा), अग्निमान्पि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लौंग, पत्रज, इलायची, तज, नवायस, पिफलामूल, शुद्धवजनाय सब समभाग लेकर बराबरकेमुद्रमें मिलाय चनेकीबराबर गोलियेबनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लेनेसे यह कफत्रनितरोगोंकोनष्टकर अगिरोप्रदीप्तकरताई । इससेसेवनमें कोंडला, काञ्जी, तैल, शार्क, नमक्के पदार्थ, चने देस्य त्याज्यहै ॥ ३०९ ॥

३१० लोहादिमोदकः

मृतलोहमिन्द्रयवं शुण्ठी भद्रातचिन्कम् ।
विल्वमज्जा निडङ्गानि पथ्या तुत्यं विचूर्णयेत् ॥
सर्वतुल्यो गुडो योज्यः कर्पं भुक्त्वाऽर्शोसां जयेत् १५४९
नि र, र र र, अर्शोतोगे ।

भाषा—लोहभस्म, इन्द्रयव, सोंठ, शुद्धमिलावे, चित्रक-बीज, बेलगिरी, विडङ्ग, हंसकीछाल येसब समभागलेकर सबकी बराबर गुडमिलाकर १-१ तोला खानेसे बवासीर नष्टहोताई ॥ ३१० ॥

३११ लोहादियोगः

लोहं ताम्राऽभ्रसूतं सुरकुसुमजलं चन्द्रसजातिपत्रं,
पत्रजातीफलैला समरिचकरुहाऽजमोदाऽहिकेनम् ।
सामुद्रं सिन्धुसोपानपि घृतमधुना मर्दयित्वाऽस्य दङ्गं,
सादेदध्रेऽतिजीर्णं नियतमिह रतौ
स्तम्भनं रेतसः स्यात् ॥ १५५० ॥

इ यो त, र, का, बाजीकरणे ।

भाषा—लोह, ताम्र, अभ्रक और पारदभस्म, लौंग, खस, शुद्धकपूर अथवा रसकपूर, जायिनी, पत्रज, बायफल, इलायची, मरिच, अकलका, अजमोद, अनीम, नारियल, विधारेकीजइ और तमुद्रगोप सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर मधु और घीमें पत्रोत्र मर्दनकर १ मासेसे ३ मासेतक सम्भोगसमयसे दो घण्टेपहिले खानेसे पूर्णस्तम्भन होताई ॥ ३११ ॥

३१२ लोहाऽध्रकरसायनम्

आज्यं चतुष्पलं शुद्धं घनं लोहञ्च विशुद्धम् ।
शुद्राद्रारिष्टेष्वधीवमधुकर्पाणिनादिभिः ॥ १५५१ ॥
तिग्मांशुकरसंपकं पुष्टितञ्च चतुष्पलम् ।
प्रस्थाऽर्द्धं पयसो दद्यात्तारिकेलोदकस्य च ॥ १५५२ ॥
पचेत्पाकविधानज्ञो घह्निना मृदुना शनैः ।
त्रिफलात्रिकट्ट वह्नि विडङ्गं जीरकद्रवम् ॥ १५५३ ॥
जातीफलं जातिकोषं लवङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
पङ्कजलकञ्च सज्जुष्यं शाणमारं क्षिपेत्पृथक् ॥ १५५४ ॥
पाकं शाल्यं समुद्धृत्य भ्रामराऽष्टपलान्वितम् ।
मायकादिं विधानेन खादेन्मापाष्टकं पुनः ॥ १५५५ ॥
सर्वव्याधिं विनिर्मुक्तो जीवेद्द्वर्षंशतं सुखी ।

नागाजुनेन रचितं रसायनमिदमुत्तमम् ॥
विनापि परिहारार्थे लोहादितफलप्रदम् ॥ १५५६ ॥
वं. से., रसानाऽधिकारे ।

भाषा—पुराणाधी ४ पल, भट्टकृष्टया, अदरक, नीम, सफेदपुनर्वा, महुआ, लघुपद्मल इनके स्वरसोंमें घोटघोटकर सुदंके तीक्ष्णतामें मुखार गजपुटकी ७-७ आंचे देकर सिद्ध कियाहुआ अन्नक और फोलाद ४-४ पल, दूध और नारियल कापानी ८-८ पल डालकर मन्द आंचसे पकावे । पानी जल-जानेपर त्रिफला, त्रिकटु, चित्रकमूल, विडङ्ग, स्याहमफेदजीरा, जायफल, जावित्री, लौंग, नागरमोया, शीतलचीनी इनका-चूर्ण ४-४ मासे डालकर भावेको लालहोनेतकमेकदे । उंडा-होनेपर ८ पल भोरोंकामधु मिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ मासाले प्रारम्भकर क्रमसे ८ मासेतक मात्रा बढ़ावे । जीर्ण होनेपर हल्का पच्य लेवे । इसके एकवर्षके प्रयोगसे समस्तस्व्या-पियोंसे निवृत्तहोकर १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । लोहो-कपपच्य नर्दां करनेसेभी यह शुभकरताहै ॥ ३१२ ॥

३१३ लोहामृतम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिफलां दन्तीं विदारिं मार्कवं वलाम् ।
पीचरिं तालमूलञ्च पृथगष्टपलोन्मितान् ॥ १५५७ ॥
अक्षधात्रीशिवानाञ्च प्रस्थं प्रस्थं सुकुट्टितम् ।
विपाच्य सलिलद्रोणे सुपूतेऽष्टांशोषिते ॥ १५५८ ॥
प्रस्थं चायोरजः शुद्धं गन्धकञ्च तद्वर्द्धकम् ।
खण्डस्य कुडवं दत्त्वा नारिकेलपयस्तथा ॥ १५५९ ॥
एकीकृत्य पचेद्दोहं रसेन सर्पिणा सह ।
अवतार्य ततः शीते मधुनोऽष्टपलं क्षिपेत् ॥ १५६० ॥
चिकटुं त्रिफलां दन्तीं विडङ्गं नागकेशरम् ।
पलाशवीर्यं त्रिवृतां हनुपां जीरकद्वयम् ॥ १५६१ ॥
तालीसपत्रधान्याकं बराङ्गं वंशलोचनम् ।
भागतः पलिकं चूर्णं माक्षिकञ्च पलद्वयम् ॥ १५६२ ॥
शिलाजतुरजस्तद्वत्तिस्त्वा भाण्डे निधापयेत् ।
लौहे लौहेन सङ्घृष्य मधुदत्त्वा घृताऽर्द्धकम् ॥ १५६३ ॥
कृत्वा चानु पिपेतकीरं जलं वा नारिकेलजम् ।
त्र्यहं मापमितं कृत्वा वर्षेष्टद्विकान्कमात् ॥ १५६४ ॥
शुक्लप्यात्रपानानि पयोमांसरसाः शुभाः ।
सेवनीयाः प्रयत्नेन पाचकं वीक्ष्य चात्मनः ॥ १५६५ ॥
अथिताग्निश्च भुञ्जीत कर्तव्यापेक्षया वलात् ।
एवं कुर्वन्नवं कान्तं प्राप्नुयद्दिहमात्मनः ॥ १५६६ ॥
तेजस्वी बलवान् चाम्गी मन्दाधिर्माति देववत् ।
अस्योपयोगात्सततं सुखेन परिहृष्यति ॥ १५६७ ॥
अम्लोपित्तं तथा शूलमग्निमान्यं क्षयं ज्वरम् ।
प्रहणां पाण्डुरोगञ्च परिणामभवं रज्जम् ॥ १५६८ ॥
ये च कुक्षिगता रोगा मन्दांनलमवाञ्च ये ।
तान् सर्वांशार्थेद्रोगान् लौहामृतरसानयम् ॥ १५६९ ॥
र. र., र. क., अम्लपित्ते ।

भाषा—चित्रक, त्रिफला, दन्तीमूल, विदारिबन्द, भंगरा, बला, शतावर, तालमूली, येसब ८-८ पल, बहेड़ा, आवले और हरे १-१ प्रस्थ लेकर अच्छीतरह कूटकर १ द्रोण पानीमें पकावे । अष्टांशार्थेद्रोण रहनेपर छानकर लोहमस्य १ प्रस्थ, शुद्धगन्धक आधाप्रस्थ, चाँड और नारियलकाजल ४-४ पल, पी १ प्रस्थ डालकर मन्दआंचसे पकावे । लेह तैयारहोनेपर उतारकर एकदम ठंडाहोनेपर मधु ८ पल, त्रिकटु, त्रिफला, दन्तीमूल, विडङ्ग, नागकेशर, पलाशकेबीज, निशोत, शाक, स्याहमफेदजीरे, ताळीसपत्र, घनिया, रज, वंसलोचन, इनका यारीकचूर्ण १-१ पल, स्वर्णमाक्षिकमस्य और शिलाजोत २-२ पल लेकर सबको इन्ने मिलाय चिकने वतनमें भरके रखडोड़े । इसमेंसे ६ मासेसे १ तोलेतन्कीमात्रा लोहेकेवतनमें डालकर ४ मासे धी और ८ मासे मधु मिलाकर लोहेके ढंढेसे थोड़ी-देर मर्दनकर चाटे और ऊपरसे दूध अथवा नारियलकाजल पीवे । आरम्भमें ३ रोजतक १-१ मासेकी मात्रा लेकर प्र-द्वितिके सात्त्विकरे फिर रोजाना १-१ रत्तीकी मात्रा बढ़ाकर १ तोलेतक मात्रा बढ़ावे । भारी और दृष्य, दूध, मांसरस, ये हितकारकहैं, परन्तु अपनी जट्टात्रिकानल देखकर सेवनकरे । जैसेजैसे अग्निवृत्ताजाय वैतवेने गरिष्ठ अन्नका सेवनकरे । इसतह प्रयोगकरनेसे नवीन और सुन्दर तेज, बल, वाणी इनसेयुक्त शरीरको प्राप्तहोताहै । निरोगहोकर देवताकेसदृश हृदयुद्धताहै । अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि, क्षय, ज्वर, प्रहणां, पाण्डु, परिणामयुक्त, कुक्षिरोग, और मन्दाग्निसेजायमान समस्त उपद्रव इनसबको यह शोषही नष्टकरताहै ॥ ३१२ ॥

३१४ लोहामृतम् (द्वितीयम्)

मुस्ताऽमृताकणा यष्टि र्विहः शुण्ठी फलययम् ।
त्रिडङ्गञ्च स्रग् चूर्णं सर्वांशं मृतलोहकम् ॥ १५७० ॥
मधुना भक्षयेन्मासं पाण्डुरोगहरं परम् ।
इदं लोहामृतं नाम स्वयमग्निरस्तोऽपि वा ॥ १५७१ ॥
र. र., ना वि, चि क, पाण्डुरोगे ।

टि०—अथ रसो द्वितीयनवायत्नेन तुल्योऽस्ति परन्तु तत्र भागाना वैलक्षण्यादव प्रथमेव स्थापित । अथ योगधित्वाकामकल्पयन्त्या पाण्डुपिकारे मुस्तारिलोहनाम्ना निश्चितोऽस्ति तत्र यष्टित्रिकल्योरभावी-ऽस्ति नैवावता तत्र योगान्तरता सम्माननीया इति विदस्य विदपि ।

भाषा—नागरमोया, गिलोय, पीपल, मुलठी, चित्रक-मूल, सोठ, त्रिकला और विडङ्ग सब समगमा लेकर बारीक-चूर्णकर सबकीबराबर लोहमस्य मिलाकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ मासमा मनुकेसाथ खानेसे यह पाण्डुरोगको दूरकरताहै यह उपस्थित न हो तो स्वयमग्निरससे कामलेसकेहै ॥ ३१४ ॥

३१५ लोहामृतम् (तृतीयम्)

माक्षीकमाक्षिकशिलाजनुपास्तानां
चूर्णं सलोहकचिडङ्गशिनासितानाम् ।

साज्यञ्च विंशतिदिनानि भजेत्प्रकाम

योऽशीतिकोऽपि वनितानिकरे युवेव १०७२

वि ऋ र र स र र कौ ओ प चि र भ यो वि
र र दी यो म ग नि र म मा नि र ना वि वृ स
र च रसाणव, रसायनस भै र, र क ल च द र को र
का र र रसायनाऽधिकारे ।

०—वि ऋ वानीकरणे। यो म भै र र क ल च द र
को र वा र र प्लेपु पाररहित पाठ । भै र यस्मारिणेहम् र
र कौ पूणचद्र नि र ग नि शिथलत्वाऽधिकोहम् र च वि
र म शिलाजतुपोग यो म माधिर्ययोग (वापीकरणे) रसायनगड
भेदे च मानिनायवलेह इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—शुद्धसोनामाखी मधु शिलाजतु पारद और
लोहमन्म विन्द् हर् रं दारक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर
सबसे इन्हेमिलाकर रखछोड़े इसमेंसे यथाशक्तिबल मात्रा निय
कर घीकेसाथ २० दिनतक सेवनकरनेसे अस्तीवरसका बुद्धाभी
नवानिकेसदा त्रियोंके सङ्को खराकृताहे ॥ ३१५ ॥

३१६ लोहामृतम् (चतुर्थम्)

तन्नूनि लोहपत्राणि तिलोत्सेधसमानि च ।
कपिकामूलरुत्केन सलिष्य सार्येण वा ॥ १०७३ ॥
विशोष्य सूर्यकिरणे पुनरेवाऽवलेपयेत् ।
त्रिफलाया जले ध्मात वापयेच्च पुन पुन ॥ १०७४ ॥
तत सञ्चूर्णितं कृत्वा कर्पटेन तु गालयेत् ।
भक्षयेत् मधुसर्पिभ्यां यथास्येतत्प्रयोगत ॥ १०७५ ॥
मापक त्रिगुण चाऽथ चतुर्गुणमथापि वा ।
छागस्य पयस कुर्यादनुपानमभायत ॥ १०७६ ॥
गवा घृतेन दुग्धेन चतु षट्त्रिगुणेन च ।
पक्तिशूत्रं निहल्येत मासेनेकेन निश्चितम् ॥ १०७७ ॥
लोहामृतमिदं श्रेष्ठं ब्रह्मणा निर्मितं पुरा ।
ककारपूर्वकं यच्च यथाऽम्लं परिकारितम् ॥
सेज्य तत्र भवेदत्र मासं चानुपसम्भरम् ॥ १०७८ ॥
च द, यो म श्ले ।

भाषा—फोलादेके तिलप्रमाण मोटे पत्र बनवाकर आवळ
कीछालकेबदक अथवा सफेदसर्तोकककले प्रत्रोपर लेपदेकर
धूपमें सुखाकर फिरसे लेपकरके धनतकराय त्रिफलावेवायमें
सुभावे इततरह जतकपत्रोंका चूण न हो नाय तबतक बरतारहे ।
फिर वायको ट्ठाकर लोहचूर्णको घरलकरके कण्डूआनकर रखलेवे ।
इसमेंसे अश्विबलागुत्तार मात्रा कायमकर मधु और घीकेसाथ
१ मासेमे ४ माहेतक खाकर बकरीका अभावमें गायकादूध ६५
गुना पीनेसे एधमहीनेमें निश्चितरूपमें यह पचिचुलको नष्टकर
ताहे । इसमें ककारादिगुण अम्ल और आदुग्मगा वर्तितहे ३१६

३१७ लोहामृतम् (पञ्चमम्)

शुद्धची ईसपादी च रत्नमाग फलत्रयम् ।
गोपालिका गोरसना मुग्धुद लोहनिम्बकी ॥ १०७९ ॥

एषा रसे दोलयेत्तद्विरिद्रोपनिवृत्तये ।

पलद्वादशक कृत्वा कृष्णलोहस्य खण्डश ॥ १०८० ॥
भङ्गत्वाऽगणदश गण्डीरमूले पिण्ड प्रकल्पयेत् ।
धृत्वा प्रथमयेत्ताघचावत्सर्वं मृतं भवेत् ॥ १०८१ ॥
सिद्धे रान्युपिते वीज सूर्यावर्तस्य दापयेत् ।
कर्पं त्रिकटुकस्याऽपि विकल्पं चूर्णसमुत्तम् ॥ १०८२ ॥
मधुत्रिपलस्युक यथाग्नि चोपयोजयेत् ।
अशासि कामला कुष्ठ पाण्डुरोग कूर्मोस्तथा ॥ १०८३ ॥
वर्हि गुल्मोदरं शूल विशोपात्परिणामजम् ।
शोधाग्निहन्ति सर्वाश्च विस्तराप्ताऽथ सशय ॥
पतहोहामृतं नाम सर्वव्याधिषु पूजितम् ॥ १०८४ ॥
र का अशोऽधिकारे ।

भाषा—पर्वतकादोष दूरकरनेके लिये १२ पल फोलादेके
बारीकपत्रोंको गिलोय ईसराज रत्नमाला (रत्नचोत),
त्रिफला ग्वालीरता (मराठी) गाडुवा तुम्बुल अयर नीम
कीछाउ इनके यथासम्भव स्वस अथवा हाथोंमें स्वेदितकर
१८ टुकड़ बनाय गण्डीर (कोङ्गान्दल प) कीजककलते
लेपकर धूपमें सुखाकर अग्निमें छालकरके कोङ्गान्दलेहीरसमें
सुभावे । इसीतरह जवतकरवारीचचूर्ण न होजाय तबतककरे ।
एकरात्रिकेबाद रसेमें चूरेको निकालकर बारीकपीसकर उसमें
हुहुर १ कर्प और त्रिकटु ३ कप तथा मधु ३ पल मिलाकर
रखछोड़े । इसमेंसे अश्विबले अनुत्तार १ मासेकीमात्रा खानेसे
क्वासीर कामला कुष्ठ पाण्डु क्रिमि मदाग्नि गुल्म उदर
शूत्र परिणामशूल और शोष इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ३१७ ॥

३१८ लोहेश्वरोत्सः

ताप्राऽऽरवङ्गरसकरुणागलोहोऽऽलसोमकम् ।
गद्य शिला चैरुमागा सार्धभागस्तु सूतक ॥ १०८० ॥
सम्यक् चूर्णाकृतं मर्धमेकादशदिनं भृशम् ।
परण्डभृङ्गनिर्गुण्डीभृङ्गाशुत्तूरकन्यका ॥ १०८६ ॥
शिरनेत्र तुण्णी त्रेका पाण्डी मुमला रधि ।
अथ पुष्पी शङ्खपुष्पी गान्धारी गजगुण्डिका ॥ १०८७ ॥
गोमी तेजोयती नीलरुण्डी च चर्वरी तथा ।
कारुमाची कान्तपुण्डी कर्वाणी तालमूलिका ॥ १०८८ ॥
सहदेयी फारुपादी त्रिपत्री च त्रिनेत्रकम् ।
रत्नमाग च गोरश्री चर्मरङ्गारसेरत ॥ १०८९ ॥
शापयित्वा पाचयेत्तद् द्व्यग्निशं प्रहराग्निना ।
पुन सर्वं समादाय तदेकादशमानकम् ॥ १०९० ॥
तालसत्त्व सोमसत्त्वं शिलासत्त्वञ्च तन्त्रमम् ।
तृतीयादाग्नाग्नेन रसेरपा विमदेयेत् ॥ १०९१ ॥
मार्कियस्तुलसी कण्टकारी च सहदेविका ।
अर्कशरीरत्रियाम तु शापयित्वा निपाचयेत् ॥ १०९२ ॥
यामपोडशक काचकूप्या चाप्यथ तथा ।
लोहेश्वररसाऽयं स्यात्सर्वव्याधिहर पर ॥ १०९३ ॥
र का, वातव्याकषयिकारे ।

भाषा—ताम्र, पीतल, वज्र, खपरिया, नाग, लोह, हरि-
ताल, सोमल इनकीभस्में, शुद्ध गन्धक और मैनसिल १-१
भाग, पारदभस्म १॥ भाग लेखर सबका वारीकचूर्णकर ११
दिनतक सूयामर्दनकर एण्ड, भंगरा, निगुण्डी, भांग, घग्ग्रा,
पीतुंवार, खास, वृष, वकयान, पाटला, मुशली, आक, अन्या-
हूली, साहाहूली, उकरोधा, हाथीशुण्डी, बनगोमी, तेजवल,
नीलकण्ठी, खई, मकोय, वाकनासिका, वासुखेसता, ताल-
मूली, सहदेवो, वाकजहा, मोरवेल, त्रिनेत्र (हृत्पुलकिलकिल),
रत्नमाला (रत्नजोत पं.), मोरसमुण्डी, आवळ इनसबके यथा-
सम्भव स्वस्व अथवा हाथोंसे मर्दनकर सुपाकर वातशीशीशीमें
डाल ३२ पहरकी ऋत्रिदेवे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर समस्तको
निकालले । फिर इसमेंसे ११ भाग, हरिताल, सोमल और
मैनसिलसत्त्व येतीनों ११ भाग और शुद्धगन्धक सबसे तृतीयांश
मिलाकर भंगरा, तुलसी, भटकट्टिया, सहदेवो, आककाहूष इन-
सबमें ३-३ पहर मर्दनकर ६-७ कपडमिरीदीहुई आतशीशीमें
डालकर बालुकायत्रमें रख शीशीकामुह बन्दकर १६ पहरकी
आचदे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर निकालकर फिर भंगरे वगैरहेकरसमे
मर्दनकर १६ पहरकी आचदे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर निकालकर
रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चाबलकी मात्रा रोगोचितानुपाकेमाथ
देनेसे यह समस्तव्यापियोंको दूरकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ वङ्गचन्द्रपारदगुटिका

वङ्गतीक्ष्णो समो कृत्वा ध्माप्यते यज्ञसूयथा ।
वङ्गसुचारयेत्सम्पक्व तीवाऽङ्गारैः प्रयत्नतः ॥ १५९४ ॥
अनेनेव प्रकाशेण त्रिगुणं वाहयेत्ततः ।
वीजं पाषाणं कृत्वा सूतं पलमितं भवेत् ॥ १५९५ ॥
मर्दयेत्कल्पकाद्राये मर्दयेथं विशोपयेत् ।
गोलस्थस्थेदनं कार्यमहोभिः समभिस्तथा ॥ १५९६ ॥
निफलाकाशमध्ये तु त्रियामैः स्वेदयेत्सुधीः ।
कुमार्याः स्वरसेनेव भृङ्गराजरेने हि ॥ १५९७ ॥
भृङ्गरसेन च तथा त्रिदिने स्वेदयेदने ।
पकेकेनोपधेनेव फाचकृत्यां निवेशयेत् ॥ १५९८ ॥
भूमिस्थां मासयुग्मेन पश्चादेनां समुद्धरेत् ।
यद्धं मृतवरं प्राणं शुभचन्द्रसमानभम् ॥ १५९९ ॥
मुरास्या कुरुते सम्पृग्द्वयसन्निभं घृषुः ।
कामिनीनां दातं गच्छेद्वह्नीपलितपानितः ॥ १६०० ॥
र. सु., रसायने ।

भाषा—यज्ञ और पोटाद समभागलेकर वज्रमूषामें रख
धमनकरे । वङ्गकेजन्मानेर उतनाही दूरा टालकर जरावे ।
इसतक तिगुनी वज्रको जरावेये यह तीक्ष्ण वज्रवीज तैयार
हुआ । इसमेंसे १ कप वीज और १ कप सुसुक्षितपारा रातमें
बाउकर पीतुंवारकेरसमे ७ दिनतक मर्दनकर गोलापनाय ४
तद् मलनलेकेचोडेमें पोहरी बनाय पीतुंवारके रसमे ७ दिनतक
स्वेदनकरे । फिर ३ पहर त्रिफलाकेरसमें स्वेदनकर पीतुंवार,
भंगरा और भांगकेरसोसे ३-३ दिन स्वेदनकर बाचहीतीक्ष्णमें

डालकर १-१ औपधिकारसमके २-२ महीने ज़मीनमें
गाड़े । ऐसा करनेपर यह निर्मलचन्द्रमाकीतरह बढ़होजायगा ।
इसको मुँहमें रखनेसे शरीर वलीपलितोंमें रहितहोकर वज्रके
समान मजबूत होजाताहै । और बहुतनीसियोंकेसाथ रक्षण-
करनेपरभी किभीतरहकाविकारनहींहोता ॥ ३१९ ॥

३२० वङ्गयोगः (प्रथमः)

पूतीकस्वरसं वाऽपि पिबेद्वा मधुना सह ।
पिबेद्वा पिप्पलीमूलमजामूत्रेण संयुतम् ॥
सत्तरात्रं पिबेद्दृष्टं त्रुषु वा दधिमस्तुना ॥ १६०१ ॥

* सु. सं., किमिरोगे ।

टि०—अत्र घृष्टमित्यनेन न केवल धर्षयित्वा दापयेत् किन्तु वक्ष
शुष्यते दावयित्वा अल्पकल्पिप्रक्षेप कृत्वा निम्बकाष्टादिना धर्षयेत् ।
पूर्वतरे दक्षि क्षीणे त्रुषुणि च शुष्कता याते पुनरपि दधि दत्त्वा धर्षये-
दिति निरन्तर सप्तरात्रमर्षयित्वाहोरात्र धर्षणेन भस्म निष्पाद्य दधिमस्तुना
यथाशिवल द्यादित्यभिस्तथि ॥

भाषा—तीलादिकमें शुद्धकियेहुए वज्रको गलाकर दही
अथवा दहीकापानी देकर नीमके ताने ढण्डेसे ७ दिनरातमर्दन-
कर भस्म बनाले । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधुनेसाथदेकर
शुद्धरज्जुनारस अथवा पिप्लामूलको चकरीकेमूत्रकेसाथ अथवा
दहीकातोड़ पीनेसे तमाम किमिरोग नष्टहोताहै ॥ ३२० ॥

३२१ वङ्गयोगः (द्वितीयः)

शाल्मलीत्वग्रसोपेतं सक्षौद्रं रजनीरजः ।
वङ्गभस्म हरेन्मेहाद्य पञ्चानन इव द्विपात्र ॥ १६०२ ॥
रसायनं., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—मोचरस अथवा सेमलकी छालकास, हल्दीकाचूर्ण
और वङ्गभस्म ३ रत्ती मिलाकर शहदमें लेनेगे यह समस्त
प्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३२१ ॥

३२२ वङ्गयोगः (तृतीयः)

वङ्गभस्मसमं शुद्धं शिलाजत्वमृतोद्भवम् ।
सत्त्वं सितोपलेनाऽथ मधुना सह मर्दयेत् ॥
त्रिमासं भक्षयेत्त्रिन्यं मृत्रापातनिवृत्तये ॥ १६०३ ॥
र. प्र., मृत्रापाते ।

भाषा—वङ्गभस्म, शिलाजीत, फिलोयमल चयनमभाग
लेकर मक्के दूनी मिश्रीमिलानर रमजोड़े । इसमेंसे ३-३ मांश
मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त मृत्रापात निरासोवैरै ॥ ३२२ ॥

३२३ वङ्गयोगः (चतुर्थः)

यज्ञाऽनमथनागाऽन्नं नागं चन्द्रञ्च केपलम् ।
मेहरोगे प्रयोक्तव्यं शिलाजतुसमन्वितम् ॥ १६०४ ॥
र. मं. र. च. र. क. र. सु., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वज्रऔर अन्नप्रभम्भ कपरा नाग और अन्नप्रभम्भ
अथवा शृण् २ नाग और वज्रभम्भ समभागयिलाजीतकेसाथ
लेनेगे यमग्रप्रमेह नष्टहोवैरै ॥ ३२३ ॥

३२४ वङ्गरसायनम्

वङ्गभस्मसमं कान्तं व्योमभस्म च माक्षिकम् ।
 मर्दयेत्कन्यकाम्भोभिर्निम्बपत्ररसैरपि ॥ १६०५ ॥
 भूपालावर्तभस्माऽथ चिनिःक्षिप्य समांशकम् ।
 गोमूत्रकशिलाधातुजलैः सम्यग्विमर्दयेत् ॥ १६०६ ॥
 ततो गुग्गुलुतोयेन मर्दयित्वा दिनाऽष्टकम् ।
 विशोष्य परिचूर्णयाऽथ समभागेन योजयेत् ॥ १६०७ ॥
 भृष्टवञ्चलनिर्यासे वाङ्गुचीबीजचूर्णकैः ।
 ततः क्षिपेत्करण्डान्त विधाय पटगालितम् ॥ १६०८ ॥
 गोतन्त्रपिष्टरजनीसारेण सह पाययेत् ।
 चतुर्भिर्वल्लकैस्तुल्यं रम्यं वङ्गरसायनम् ॥ १६०९ ॥
 निश्चितं तेन नदयन्ति मेहा विशतिभेदकाः ।
 शालयो मुद्गरुपश्च नवनीतं तिलोद्भयम् ॥
 पटोलं तित्तनुण्डारं तत्रं पथ्या प्रदास्यते ॥ १६१० ॥
 र. चू, रसायने ।

भाषा—वङ्ग, कान्त, अप्रक, और स्वर्णमाक्षिकभस्म सम-
 भागलेकर धौंङ्गार और निम्बपत्रस्वरससे १-१ रोज मर्दनकर
 तीनोंकी बराबर राजवर्दकीभस्म मिलानर गोमूत्र और शिला-
 जीतकेद्रवसे १-१ रोज मर्दनकर गिलोयकैरहकेसाथ बाथकर
 द्रवबनाहुण्टगुगलसे ८ दिन मर्दनकर सुखाकर धीमे सिराहुआ
 बज्जुलका बौद और बाकुची समभागमें मिलकर शीशीमें रख
 छोड़े । इसमेंसे १२-१२ रत्तीकीमात्रा गायत्रीछासे पिती-
 हुईहल्दीकेसाथ लेनेसे अक्बरही २० प्रकारके प्रमेह नष्टहोते
 हैं । चावल, मूंगबीदाल, मक्खन, तिलका तेल, परवल, ककवी
 कुन्दर, छाउ चैसव हितकरहैं ॥ ३२४ ॥

३२५ वङ्गाऽवलेहः (प्रथमः)

वङ्गभस्म द्विवल्लञ्च लेहयेन्मधुना सह ।
 ततो गुडसमं गन्धं भक्षयेत्कर्ममात्रकम् ॥ १६११ ॥
 गुडुचीसत्त्वमधवा शर्करासहितं तथा ।
 सर्वमेहहरो वङ्गाऽवलेह उत्तमः स्मृतः ॥ १६१२ ॥
 र स, र. चि, र सि, रसायनतं, र. का, र. सु, घ,
 प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—वङ्गभस्म ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक मधुकेसाथ लेकर
 शुद्धगन्धक और पुरानागुड समभाग अथवा गिलोयकासत्त्व
 बराबरकीशर्करकेसाथ मिलानर १ तोला लेनेसे समस्तप्रमेह
 नष्टहोतेहैं ॥ ३२५ ॥

३२६ वङ्गाऽवलेहः (द्वितीयः)

मारितं त्रपुसं सीसं हरिणं शृङ्गमाजुलम् ।
 कार्पासवाङ्गुचीतत्रं माहिषञ्च प्रमेहजित् ॥ १६१३ ॥
 पिचुमन्दस्य निर्यासं धात्रीवायेन पेपितम् ।
 शिलाधातुसमायुक्तं शुक्रमेहविनाशनम् ॥ १६१४ ॥
 य रा, शुक्रमेह ।

भाषा—वङ्ग, नाग, हरिणकाष्ठ इतरीभस्म, अड्डालके-
 धीय, विनोलेकीमीगी, बाहुची, भैगवीछाउ अथवा आरलेके-

बाथसे पिसाहुआ नीमकागोंद और शिलाजीत इनयोगमेंसे
 १-१ अथवा समस्त एकत्रितर लेनेसे सम्पूर्णप्रमेह तथाप्यास-
 कर शुक्रप्रमेह नष्टहोताहैं ॥ ३२६ ॥

३२७ वङ्गाष्टकम्

रसं गन्धं मृतं लौहं मृतरूपञ्च र्परम् ।
 मृताभ्रकं मृतं ताम्रं सर्वतुल्यञ्च घङ्गकम् ॥ १६१५ ॥
 पुटद्रजपुटे चिद्धान् स्याद्गुणीतं समुद्धरेत् ।
 रक्तिद्वयप्रमाणेन मधुना लेहयेन्नरम् ॥ १६१६ ॥
 निशाचूर्णं क्षौद्रयुतं पिबेद्वाजीरसं ह्यनु ।
 वङ्गाष्टकमिदं स्यातं महादेचप्रकाशितम् ॥ १६१७ ॥
 प्रमेहाश्विंशतिं हन्याद्दामदोषं विसृचिकाम् ।
 विषमज्वरगुल्माशौंमनातीसारपित्तजित् ॥
 वीर्यवृद्धिं करोत्याशु सोमरोगनिर्दहणम् ॥ १६१८ ॥
 भै. र., प्रमेह ।

भाषा—शुद्धगारा और गन्धक, लोह, रजत, स्रपरिया,
 अभ्रक और ताम्रभस्म येसन समभाग, इनवक्कीबाराबर वङ्ग-
 भस्म लेकर पारेगन्धक की नीळवर्ण कज्जलीकर सन एकजगद
 शुक्रमर्दनकर प्रमेह और ज्वरहर औषधमें ६-७ रोज मर्दन
 कर गोलाबनाय सुखाकर शरावत्समुष्टमें बन्दकर गजपुटकी
 आचद । स्वाशशीतलहोनेपर निकालकर रखाछोड़े । इसमेंसे २-२
 रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथलेकर १ मासेसे ३ मासेतक हल्दीका-
 चूर्ण और मधु मिलानर १ या २ तोले आलेना स्वरसपीवे ।
 इससे २० प्रकारकेप्रमेह, आमदोष, हैजा, विषमज्वर, गुल्म,
 बवासीर, मूत्रापात, अतिमार, पित्तविकार, वीर्यह्रास, सोमरोग
 इनसबको यह नष्टरताहैं ॥ ३२७ ॥

३२८ वृद्धेश्वररसः (प्रथमः)

चिञ्चाश्वारेण संसिद्धं वङ्गं सार्धचतुष्पलम् ।
 तद्भस्मान्तं तालकस्य पलाङ्गिर्द्वैः पुनःपुनः ॥ १६१९ ॥
 कन्याद्विषमिकां शुष्कां पुटद्रजपुटेन च ।
 त्रिगुडं सेवितं युक्त्या सर्वमेहहरं परम् ॥ १६२० ॥
 र. का, प्रमेह ।

भाषा—वङ्गकी तैलतकादिमें शुद्धकर कच्चाहीमें गलाकर
 इमलीके क्षारता प्रसेपदेकर नीम अथवा बन्जुकी ताम्नीलक-
 डीसे रगड़ताजाय । जन तमाम वङ्गका चूगहोजाय उससमय
 क्षार डालना बन्दकरदे और एणपहरतक कच्ची आचदेताहुआ
 ङ्गमेंसे चलाताजाय । फिर तमामभस्मको इनाकर ऊपरसे
 लाहकेछोटेरेमे डककर ४ पहरकी कच्ची आचदे । स्वाशशीतल-
 होनेपर निगालर पानीडालर चलादे म्थिर होनेपर पानीको
 नितारकर दूसरापानीभरेदे । इसतरह ३-४ बारकरनेगे इमलीका
 क्षार तमाम निष्कलायया फिर धूपमें सुखाकर एकपे शुद्धरी-
 तालका यादीकचूर्ण डालर धोतुंवारकेससे १-२ रोज मर्दनकर
 सुखाकर शरावत्समुष्टमें बन्दकर गजपुटकीआचदे । इसप्रकारज-
 त्त वङ्गकी मरचनेमेहप्रभम् न होजाय तरतक बारम्बार

करताजाय । जब विशुद्धभस्म तैयार होजाय तब उसमेंसे १ रत्तीसे ३ रत्तीतककी मात्रा मधुकेसाथ खिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै ३२८

३२९ वङ्गेश्वररसः (द्वितीयः)

रसभस्मसमायुक्तं वङ्गभस्म प्रकल्पयेत् ।
अस्य गुञ्जाद्वयं हन्ति मेहान्क्षौद्रसमन्वितम् ॥
गुञ्जामूलं पिबेत्क्षीरैरनु तस्य प्रदान्तये ॥ १६२१ ॥

र. सं., र. चि., व. यो. त., र. क. ल., घ., भै. र., र. घु., र. र., रसायनसं., टो., र. क., र. चं., चि. र. म., वै. र. वं. द., यो. म., वै. चि., र. र. दी., चि. क. यो. र., नि. र., यो. त. व. रा., र. र., भै. सा., र. (मा.), र. पा., चि. सा., र. र. यो., र. व. घु., र. वृ. प्रमेहाधिकारे ।

टि०—यं. र., नि. र., व. रा., व. रि. य्पु तथा र. र., रसायनम. धतव्योद्वितीयस्थाने प्रमेहद्वारिणस इति नाम । भगव्यसारायुक्ततायां माणिक्यचन्द्रीयरत्नावगौर च अस्य प्रयोगस्य प्रातिनिधिकवगम साय तु धनायवद्गई नित्येभ्य विहितनित्येभ्यः । रसायने “सुत्रामलकपौषेण पथ्य देय सनककम् । निलिपीपीत्र तत्रेणषक्ता दद्यात् हिङ्गुकरम् ॥ धृत वृद्ध न दद्यात् निलैलञ्ज भोजयेत् । मार्कं चूर्णमादाय सण्ड नादयेत्रिंशि ॥” इत्यधिक पाठोऽस्ति । र., र. यो. प्लसी. “वङ्गभस्म रसभस्मना सम मर्दितं ककुभनोपनां दिनम् । क्षौद्रयुक्तमधुमेदनादानं बह्युगमशितं विमलकम् ॥ शास्त्रं मधुवुन पथः पित्तभोजनं मृगारं मसूत्रकम् । कुण्डलीरससुतु मधु देय रात्रिचूर्णमन्वा मधुना वा ॥” इति पाठोऽस्ति तस्याऽप्यथैवाऽन्तर्भावः करणीयं कुभनोपम दैमस्याऽप्युपानुयुगेन श्लथभावाः, दिवाऽनुपानानामपि तथैव रिपतिरिति सुषीभि विभावनीयम् । “गुञ्जस्य रमराजस्य भस्म बहस्य भस्य च । अजुनस्य स्वच सर्वमं शास्त्रनिश्चै रते. ॥ मर्दयेद्वायं घैमं कुयो. टुशमितं बर्धम् । मधुपेदतु मसूद्रं विष्वच्छात्मजि रत्नम् ॥” इति पाठो वैद्विद्यापदीनाम्ना रमद्रामेनोवलि स च रमावताररमबोधचन्द्रोदयप्रतिने पाठेन बहुलाः समानः केवल तयोर्जुनस्य भावनाऽस्ति रमकामनौ तु सर्वमममनुंलत्वचूर्णं मिश्रय शास्त्रनिश्चै भावनाऽस्ति तयोस्तु शास्त्रप्रियोऽनुपानत्वेन गृहीत इत्यपि बहुलाः समता, अतस्त्वाऽप्यथैवाऽन्तर्भावः करणीयः । अनेनप्रकारेण रसमप्यारदे गुणा-बद्धता चाऽस्ति पाठान्तरु न करणीय एव प्रमेहादकत्वात् । रमप्रा-शयुष्माके वातमेहान्तरुभ्रान्ना प्यो रभो निहितोऽस्ति तत्र अथारसेभ्य भावना अधिकाऽस्ति अतो वनमानसं जवारसस्य भावनायामनुष्ठितायां श्लथभावात्तथाऽप्यथैवाऽन्तर्भावोऽस्तु । रमचूर्णानुपानमरदिविषा तु पाठ्यवमपि स्वतन्त्रतया स्थापितं न तु प्रमादं ष्वाऽस्ति ॥

भाषा—पारद और वङ्गभस्म समभाग मिलाकर अथवा बहस्य पादभस्म करके १४घं । इतमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरताहै । रागकर १ मासेमें २ मारो १४ घंटेरुगुणाकीज दूधमें पित्तकर ऊपरसे पिजानेसे विशेषफलमहोताहै ॥ ३२९ ॥

३३० वङ्गेश्वररसः (तृतीयः)

वङ्गभस्म रसं गन्धं रोष्यं कर्पूरमसूत्रकम् ।
कर्पूरं मानमेगं मृताङ्गि ह्रिमौक्तिकम् ॥ १६२२ ॥

केशराजरसे भांश्यं द्विगुञ्जाफलमानतः ।
प्रमेहांश्चिदशितञ्चैव साध्याऽसाध्यमथापि वा ॥ १६२३ ॥
सूत्रकञ्चुं तथा पाण्डुं धातुस्यञ्च ज्वरज्वयेत् ।
हलीमकं रकपित्तं चातपित्तकफोद्भवम् ॥ १६२४ ॥
ग्रहणामामदोषञ्च मन्दाश्रित्यमरांचकम् ।
एतान्सर्वाग्निहत्याद्यु वृक्षमिन्द्राशनि रथ्या ॥ १६२५ ॥
वृहद्रञ्जैश्चरो नाम सोमरोगं निहत्यलम् ।
यहुसूत्रं बहुविधं सूत्रमेहं सुदाहणम् ॥ १६२६ ॥
सूत्रातिसारं कृच्छ्रञ्च क्षीणानां पुष्टिवर्धनः ।
ओजस्तेजस्करो नित्यं स्त्रीषु सम्पद्युवापयते ॥ १६२७ ॥
यलवर्णंरुरो रुच्यः शुक्रसञ्जननः परः ।
छागं वा यदि वा गव्यं पयो वा दधि निर्मलम् १६२८
अनुपानं प्रयुञ्जीत बुद्धा दोषगतिं भिषक् ।
दद्याच्च बाले प्रौढे च सेयनार्थं रसायनम् ॥ १६२९ ॥
र. सं., र. चि., घ., भै. र., र. घु., र. च., र. कों., प्रमेहे ।

भाषा—वङ्गभस्म, शुद्ध पारा और गन्धक, रजतभस्म, रसपूर और अद्रकभस्म १-१ कर्षे, सुवर्ण और मोतीभस्म ४-४ मासे लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय बालेमेंगवैरसमें १-२ रोजमर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रचद्योड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे साध्य अथवा असाध्य २० प्रकारके प्रमेह, सूत्रकञ्चु, पाण्डु, धातुस्यञ्जर, हलीमक, रकपित्त, वात, पित्त और कफोद्भव ग्रहणीदोष, आमदोष, मन्दाग्नि, अर्धचि, सोमरोग, यहुसूत्र, नानातरहका भयंकरसूत्रमेह, सूत्रातिमार, सूत्रकञ्चु धातुशीला, ओज क्षय, स्तम्भनाभाव, यलवर्णनाश, अर्धचि, शुक्रक्षय इनसबको यह नष्टकरताहै । इयमें पकरी अथवा गायकादूध अथवा दही दोषगतिको समझकर देवे । बालक और बुढ़ोंको देनेसे यह रसायनका काम करताहै ॥ ३३० ॥

३३१ वङ्गेश्वररसः (चतुर्थः)

वङ्गेश्वरं प्रवश्यामि रसे स्त्रीहोदरापहम् ।
मन्दाग्निघातने शास्त्रमन्वृत्तविवर्जनम् ॥ १६३० ॥
अनृतने प्रकरेण रसभस्मान्तिकीः नियाः ।
कृत्वा सूत्रं समादाय स्वल्पमध्ये विनिःक्षिपेत् ॥ १६३१ ॥
साधारणोक्तमार्गेण कुटिलं भस्मयेदुधुचः ।
पश्चात्तत्र प्रदेयानि पुटानि दत्ता सहयया ॥ १६३२ ॥
क्षौरिण भानोः सम्मथं कुकुटाख्यानि यजतः ।
पलमाने मृतभस्मन्येतन्नातञ्च वङ्गजम् ॥ १६३३ ॥
पलञ्च द्वे पले ताम्रात्साधारणमृताञ्जयेत् ।
सामान्यशुद्धं गन्धञ्च द्वे पले सर्वमेकनः ॥ १६३४ ॥
मर्दयेद्भास्करभवेः पयोभि दियमत्रयम् ।
तं मूत्रं पुटयेत्पश्चाद्द्वैर्धाञ्जैरुपानयेत् ॥ १६३५ ॥
मृषायां तं रसं क्षिण्णा कुक्कुटाप्यं पुटं ददेत् ।
एष वङ्गेश्वरो नाम्ना रमेन्द्रः सम्प्रकाशितः ॥ १६३६ ॥

गुल्मप्लीहादरच्छेदशोषकारीश्रुतो भुवि ।
 गुञ्जाद्वयप्रमाणेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ १६३७ ॥
 घसोर्भेदस्य चूर्णेन घृतेन सुरभीमुवा ।
 पर्यञ्च पूर्वपल्लुयात्प्लीहागुल्मोदरच्छिदे ॥ १६३८ ॥
 रसाल, टो, उदराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धकरके भस्मविद्याहुआ पारा और साधारण शुद्धभस्म समभागलेकर बारीक चूर्णकर आकवेदूपसे मर्दनकर मुखाकर कुम्भट्टपुत्रकी आचदे । ऐसे १० आंचे देनेकेबाद एक पल शुद्धगुल्मपारदभस्ममें घट्टभस्म १ पल, ताम्रभस्म और शुद्धगन्धक २-२ पल मिलाकर बारीकचूर्णकर आकवेदूपसे ३ रोज मर्दनकर कुम्भट्टपुत्रकी आचदे । स्वाह्नीतल होनेपर घट और कमलके फलोंकेरससे मर्दनकर १०-१० कुम्भट्टपुत्रदे । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा पुनर्वाके चूर्ण और गोशूलकेसाथ देनेसे यह मन्दाग्नि, अन्वहृदि, गुल्म, प्लीहा और उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३१ ॥

३३२ वज्रेश्वररसः (पञ्चमः)

तुल्यांशं रसताप्लेहमगगनं नागञ्च लोहं तथा,
 ताप्यं विट्प्रमोक्तिकञ्च रसकं चङ्गं समं नि.क्षिपेत् ।
 सर्वं गोशूरयानरीसमुशालीरम्भाविदारीवरी-
 गोदुग्धे मुंशालीशुवारिमृदितं स्यात्सप्त धारान्पृथक् ॥
 विशन्मेहगर्णं निहन्ति सहसा वज्रेश्वरोऽयं महान्,
 सद्यो वेद्यहिताय भैरवसमः श्रीपूज्यनाम्नोदित. १६३९.
 र. पा, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—पारा, रजत, सुवर्ण, अप्रक, नाग, लोह, सोनामारी, विट्प्रम, मोती, खपरिया और वज्र इनकीभस्में समभागलेकर गोखरू, केवाच, सफेद मुशली, केलाकन्द, विदारी, धातावर, गोदुग्ध, बाली मुशली, ईष इत्येतेके रसोंसे ७-७ भावनाए देकर मुखाकर रखोजे । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा समय अथवा उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह तमामप्रमेहोंको नष्टकरताहै ॥ ३३२ ॥

३३३ वज्रेश्वररसः (वासुकिभूषण) ६

सूतभस्म वज्रभस्म भागैकं सम्प्रकल्पयेत् ।
 गन्धकं मृत्ताम्रञ्च प्रयेञ्च चतुष्पलम् ॥ १६४० ॥
 अर्केश्वरिं दिनं मद्यं सर्वं तद्रोलकीष्टम् ।
 रज्जा तद्गुह्ये पक्त्वा पुटेकेन समुदरेत् ॥ १६४१ ॥
 एष वज्रेश्वरो नाम प्लीहागुल्मोदराञ्जयेत् ।
 घृते गुञ्जाद्वयं लेहां निष्का श्वेतपुनर्वनाम ॥
 गवां सूत्रे. पियेत्रानु रजनीं वा गवां जलेः ॥ १६४२ ॥
 र सं, र क ल, र र स, र को, र चि, १ यो त, नि र,
 ध, र घु, र र, र को, र म, वि सा, रसायन, टो, र
 क, भै सा, र (मा), व रा, र का, यो म, वै चि, र. र-
 को, ना वि, र म सा, र पा, भै र, रसचि, र. दी., र. घृ,
 यष्टप्लीहाऽधिकारे ।

टि०—यो म “पुष्यरोते रक्तगुल्मे श्नीपु दवाद्यु रसम्”, इत्यधि-
 पाठ । र र, र क, यो म, भै र, रसचि, र दो, र घृ, एषु ग्रन्थेषु
 उदराधिकारे “घृतेन वज्र तु सम नियोज्य तपुल्लशुलेन च गन्धकेन ।
 विमद्वेदकेरतेन वाम मृदा च सलिप्य पुं दरीत । वासारासैल परिभा
 वयेच रसो भवेदानुविभूषणोऽयम् ॥ प्लीहश्च शुभ्रम्लय च शन्तयेऽय
 नवज्ज दवाद्युचूर्णयुक्तम् ॥ अर्कस्य पत्राणि समीपकानि लिप्त्वा पुटित्वा
 क्षुत्पुपायेत् ॥”, इति रोगो निहितोऽसि सौश्र्मरसोऽभिन्नतर्पयति ।
 पृथक् पाठस्थापनस्य कारणे तु उक्तग्रन्थकारा एव प्रथया ।

भाषा—पारे और वज्रकीभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक
 और ताम्रभस्म ४-४ पल लेकर बारीकचूर्णकर आकवेदूपसे
 एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय भूधरयज्ञमें पकावे । स्वाह्नीतल
 होनेपर रखोजे । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा धीकेसाथ
 लेकर ४ मासे सफेदपुनर्वाकीजह अथवा हल्दी गोसूत्रकेसाथ
 पीनेसे प्लीहा, गुल्म और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ३३३

३३४ वज्रेश्वररसः (सप्तमः)

वज्रमृतकयोः कृत्वा सारणां वन्यकाट्टवैः ।
 सम्मर्द्य घटिकाः कृत्वा पाचयेत्काचभाजने ॥ १६४३ ॥
 यावच्चन्द्रनिभः शुभ्रो वज्रेश्वरसो गोशुं ।
 पाण्डुप्रमेहद्वीर्बल्यकामलादिकनाशनं ॥ १६४४ ॥
 नि र, र चि, र च, वै चि, पाण्डुरोगे ।

टि०—यद्यपि रसशास्त्रे प्रवारविशेषेण धातुविशेषनमेलनप्रवा
 रस्य साधारणभेदेन व्यवहारस्तथाऽप्यत्र गौणभेदेन सम्भेदनमात्रत
 मभिधेयम् ।

भाषा—हरितालकेयोगसे मारेहुए वज्र और शुद्धपारेको
 मिलाय धींशुवारकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलियां बनाय
 मुखाकर आतशीशीधीमें ढालकर मुह्दन्दकर बालुकायज्ञमें
 रस ४ पहरकी आचद । स्वाह्नीतलहोनेपर निकालकर देखे
 इसकारण एकदम सफेदरोगाय तो सिद्ध समझे नहीं तो फिर
 पूर्ववत् मर्दनकरे । जब मरकपनकीतरह सफेद पारेकीभस्म
 होमाय तब निकालकर रखाजे । इसमेंसे २-२ रतीकी मात्रा
 रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह पाण्डु, प्रमेद, दुर्बलता,
 कामलाप्रगति रोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३३४ ॥

३३५ वज्रेश्वररसः (महान्) <

वज्रं कान्तञ्च गगनं हेमपुष्यं समं समम् ।
 कुमारीरसतो भाष्यं सप्तवारं भिषग्वरैः ॥ १६४५ ॥
 एष वज्रेश्वरो नाम प्रमेहान्बिद्यति जयेत् ।
 मृष्टच्छुं सोमरोगं पाण्डुरोगं महाश्मरीम् ।
 रसायनघटः श्रेष्ठो नागाहुनत्रिनिर्मितः ॥ १६४६ ॥
 नि र, व रा, रसायनं, यो र, वै चि, प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वज्र, कान्तलोह और अप्रकभस्म, धतूरेकेपूत
 समभागलेकर बारीकचूर्णकर धींशुवारकेरससे ७ दिनतक मर्दन-
 कर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखाजे । इसमेंसे १-१
 गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे २० प्रकारके
 प्रमेद, मृष्टच्छुं, सोमरोग, पाण्डु, अवाच्य पथरीरोग इनसबको
 यह नष्टकरताहै ॥ ३३५ ॥

३३६ वङ्गेश्वररसः (वृहन्) ९

मृतं गन्धं मृतं लोहं मृतमग्नं समाशिकम् ।
 हेमवङ्गञ्च मुक्ता च ताप्यमेवं समसमम् ॥ १६४७ ॥
 सर्वेषां चूर्णितं कृत्वा कन्यारसविमर्दितम् ।
 गुञ्जाद्वयप्रमाणेन वटिकां कुरु यत्नतः ॥ १६४८ ॥
 बृहद्भङ्गेश्वरो ह्येष रक्तमूत्रे प्रशस्यते ।
 श्वेतमेहं हस्तिमेहं कृच्छ्रमूत्रं तथैव च ॥ १६४९ ॥
 सर्वप्रकारमेहांस्तु नाशयेद्विकल्पतः ।
 अग्निवृद्धिं वयोवृद्धिं कान्तिवृद्धिं करोति च ॥ १६५० ॥
 क्षयरोगं निहन्त्यागु कासं पञ्चविधं तथा ।
 कुष्ठमष्टादशविधं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ १६५१ ॥
 शूलं श्वासं ज्वरं हिकाम् मन्दाशित्वमरोचकम् ॥
 क्रमेण शीलितो हन्ति वृक्षमिन्द्राशानि यथा ॥ १६५२ ॥
 भै. र., र सु, प्रमेह ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अत्रक, सुवर्ण, वङ्ग, मोती, सुवर्णमाक्षिक इनकीभस्में समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाकर धीकुरवारकरसे १-२ रोजमर्दनकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे रक्तमूत्र, श्वेतमेह, हस्तिमेह, सूक्ष्मच्छ्र प्रश्रुति समस्तमेह, मन्दाग्नि, क्षय, पाचप्रकारका कास और श्वास, १८ प्रकारकाकुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, शूल, ज्वर, ह्रिचकी, अपचि, श्लेष्मको यह नष्टकर कान्ति और आयुकीवृद्धिको करताहे ॥ ३३६ ॥

३३७ वङ्गेश्वररसः (दशमः)

रस्तेन यङ्गं द्विगुणं प्रगृह्य
 विद्राव्य निक्षिप्य समुद्रजञ्च ।
 विमर्दयेदम्लजलेन गोलं
 कृत्वा सुसंवेष्टय पुटेत तीमम् ॥ १६५३ ॥
 ततः क्षिपेत्तज्जलपात्रमध्ये
 नीरं तु सन्त्यज्य गृह्णाण स्रुतम् ।
 तद्रक्तिगुग्मं मधुना समेतं
 द्दीत पर्यं मधुरं समुद्रम् ॥ १६५४ ॥
 तिलीत्यपिण्डीञ्च विषाच्य तत्रः
 द्दीत हिङ्गुं दधि वर्जयेच्च ।
 मार्कण्डिकाचूर्णमपि प्रदेयं
 राज्ञीं गुटेनाऽपि घृतेन देय ॥ १६५५ ॥

र दी., र. चि, र. क, र सि, र का, र. म्, वै म्.,

र. च, रसायनञ्च, प्रमेह ।

टि.—“समानभागे शुचिताम्रचन्द्रे तथा समान लवण प्रसिद्धम् । शरावयो पथि विषय मुद्रां ददर्शय तस्य यमाजनिभक्तम् ॥ तेषु विषं प्रसप्त विशेषतोय यथागुणान् गन्तु संवनीयम् । समस्तमेहान्कममि दापि बासापहारि श्लेष्मनाशकः ॥ शुभस्य दाढ्येभविधानदक्ष प्रमत्त नागीमुखदानकीञ्च ॥ इदं हि तस्य जटिलस्य सेवां विषयं वेदेन मया प्रलभ्यम् ॥” इति पाठो वै म्, र च, रसायनञ्च, र. सि, म्पु ग्रन्थे

निहितोऽस्ति परन्तु स मोरश्रेण परीक्षामञ्जुल्वेव साधुवाच्यं विश्वस्य निहित प्रतीयते, तत्रिद्विद्विदिशा मया स्वयमेव दिश्रवार निरपेक्ष कष्टमन्वभावि, अतोऽन्वेन जनेन कष्ट न करणीयमिति विश्रुति । ताग्र- निक्षिपत्याऽप्यवश्यता प्रतीयते चेन्मृत ताग्र नियुज्य रसो निष्पादनीय इति सर्वं समञ्जस भविष्यति ।

भाषा—शुद्धवङ्गको गलाकर बहसे आधा शुद्धपारा मिलाकर सेधेनमकका पूर्ववत् प्रशेषदेकर भस्म तैयारकर जमीरी-प्रभृतिके रससे एकदिनमर्दनकर टिकडीवायव्य सुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर देखे यदि विशुद्धभस्म तैयार होगईहो तो रखलेवे नहीं तो फिर अम्लवर्णमें मर्दनकर आचदे । इसमें नमकमिलाहुआ है इसलिये पानीमें घोलकर रखदे । स्वच्छपानीको नितारकर फेंकदे । इसतरह २-३ बार-करनेसे विशुद्धभस्म अलगहोजायगी । इसे सुखाकर शीशीमें भरकरले । इसमेंसे २-२ रती मधुकेसाथ देकर तिलकूल्को छानमें पकाकर जमरसे दे, रात्रिमें आबलकीजकूकीछाल अथवा पुष्पाचूर्णं गुष्ठ अथवा घृतकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको दूरकरता है । इसमें हींग और दहीका निषेध है ॥ ३३७ ॥

३३८ वङ्गेश्वररसः (द्वादशः)

सूताञ्च गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य
 गन्धेन वङ्गञ्च समं चिमर्द्य ।
 यूपोदरे भूधरयन्त्रमध्ये
 विषाचयेत्तत्र समानभागम् ॥ १६५६ ॥
 लोहस्य भस्माऽपि नियोजनीयं
 विमर्दयेद्गोशुकरचारिका तत् ।
 गुञ्जाद्वयं शकरीया समेतं
 गुह्यचिकासत्त्वयुतञ्च दद्यात् ॥ १६५७ ॥
 मेहाश्लिहत्यात्सकलान्त्समूला-
 न्वियर्थयेद्धानुगणं नितान्तम् ।
 स्तम्भञ्च कुप्याद्भ्रिताविलासे
 निजानुपानैः सकलामयग्नम् ॥ १६५८ ॥

र. क्ष, र क, र दी, प्रमेहाऽधिकार ।

भाषा—शुद्धपारा १भाग, शुद्धगन्धक और वङ्गभस्म २-२ भाग, लोहभस्म ५ भाग लेकर सबको पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय १-२ दिन गोशुक्लवेदाथसे मर्दनकर सुखाकर रखडोहे । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा शककर और गिलो-यसत्वकेसाथ मिलाकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह, धातुक्षय, शीघ्रशुक्रपतन इत्यादिदोषोंको यह नष्टकरताहे ॥ ३३८ ॥

३३९ वङ्गेश्वररसः (त्रयोदशः)

शुद्धं यङ्गरजोऽथ गन्धरसको स्थापण्ड्रवं तुत्यकं
 ध्याङ्गुस्याऽर्द्धपिबुं हि ताप्यकनको सौवीरको मर्दयेत् ।
 आद्राद्भिः पिबुमन्द्जातपयसा सम्भावयेद्दिश्रुति,
 गोलार्च्यत् शुभेऽद्वि तञ्च पुटयेच्छीतं समाकपयेत् ॥

यद्वात्मलक्ष्मीप्रवालमधुना कृष्णामधुभ्यां त्वयो,
पीतः क्षौद्रयुतामलैः फलरसैर्याज्यो भिषग्जानता ।
विशन्मेहसुदारणाऽद्मरिभयान्दुर्भ्रष्टरुद्राञ्जयेत्,
सद्योऽयं हृते वर्णां सपलितान् यज्ञेश्वरो रोगहा १६६०
र. श. प्रमेह ।

भाषा—यज्ञभस्म, शुद्ध गन्धक, पपरिया, पारा और
सुविषा १-१ कर्प, कालामुसा ८ माघो, मोनाभासी,
सुवर्ण, सनेदुमुसा इनकीभस्में १-१ कर्प लेकर पारीकपूर्णकर
पारेगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरप और भीमके-
स्वर्णमेंसे २०-२० भावनाए देकर टिकडिया बनाय
सुखाकर शरावसमुद्रमें धन्दर गजसुदकीआंचेदे । स्वाज्ञशी-
लहोनेपर निकाकर रखडोडे । इसमेंसे ३-३ रतीकीमाया
आयनेकेपत्तोंके स्वरस और मधु अथवा पीपल मधु अथवा
आवले और मधु या अन्य अनुकूल फलरसकेसाथ देनेमें दाख्य
२० प्रकारकेप्रमेह, पपरी, मूत्ररुच्छ और बलीपलित इनघबको
यह नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

३४० वज्रेश्वरसः (चतुर्दशः)

रसमेकं त्रयो यज्ञं यज्ञसाम्पेन गन्धकम् ।
मर्दयेद्विनोमेकन्तु बुमार्याः स्वरसे धुधः ॥ १६६१ ॥
संस्थाप्य गोलकं भाण्डे रोधयेत्सुदृढं सुरम् ।
याचयेद्वाल्वाकायस्त्रे दिनमेकं दृढाग्निना ॥ १६६२ ॥
स्वाज्ञशीलमादाय सम्पूज्य द्विजदेवताः ।
पिप्यलीमधुना युक्तं सर्वमेहेषु योजयेत् ॥ १६६३ ॥
क्षीराश्रं योजयेत्प्यमनल्पक्षारचर्जितम् ।
रसो यज्ञेश्वरो नाम सर्वमेहनिहन्तः ॥ १६६४ ॥
नि र, वै चि (ल), वै वि, रसायनस, र च, वै क, यो.
र, वै चि, र पा, प्रमेहाधिकारे ।

टि०—र च रसनगडामुरिनिनाम । वै क, नि र, वै वि
एषु द्वितीवस्थाने चिद्विनामाम् प्रथमस्थाने “शुद्धयामम गंध
यज्ञश्च द्वियुग भवेत् । एवत्र मर्दयेत्सर्वं बलमेक, प्रमेहियाम् ॥ शर्वरान
धुगयुक्तं पयश्च क्षारचर्जितम् । एष वज्रेश्वरो नाम सर्वमेहनिहन्तः ॥”
इति पाठे दृश्यते परन्तु स वृत्ति प्रतिभाति, स्वयं वाऽप्यु परन्तु
तस्याऽप्यत्रैवाऽनर्थाव वरणीय । पाककरणेन शरायुगा शरितरमुदे
प्यनीति विदग्ध विमर्शनीयम् । रसायनमर्दये द्वितीयस्थाने रसमा
म्येच नवसारमधिकतया त्रियोग्य गोडशब्दहराऽग्निना पके योगे
निष्पादितस्तस्याऽप्यत्रैवाऽनर्थाव वरणीय । गन्धकारणेन साकं नर
सारस्वाऽपि सुतरां जाण्य भविष्यति । नरसारजारणेन क्षनेरप्यभाव ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, शुद्धवज्र और गन्धक ३-३ भाग
लेकर नीलवर्णकजलीकर धीतुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी
बनाय सुखाकर शरावसमुद्रमें बन्दकर ६-७ कपडमिठीदेकर
वाल्वाकायमें एकदिनकी आंचेदे । स्वाज्ञशीलहोनेपर ब्राह्मण
और देवताओंका पूजनकर पीपल और मधुकेसाथ १ रतीसे
३ रतीतक देनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । क्षीर इसमें
पथ्यदे सबतरुहके क्षारोंसे परहेचके । इसका निरन्तरसेवनकरनेसे
समस्तप्रमेह नष्टहोवेहै ॥ ३४० ॥

३४१ वज्रेश्वरसः (पद्यदशः)

शुद्धं तालं शुद्धसूतं यज्ञं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
प्राहयेत्समभागेन सूर्येश्वरि विमर्दयेत् ॥ १६६५ ॥
दिनस्तकपर्यन्तं मर्दयेद्ये निरन्तरम् ।
फाचह्यायं क्षिपेन्मुद्रां दत्त्वा चैव भिषग्वरः ॥ १६६६ ॥
द्वादशपरदं दद्यान्मन्दाग्निञ्च न संशयः ।
पुनरेव प्रकृतं त्रिधिरूपं न संशयः ॥ १६६७ ॥
रसो प्राहाः प्रयत्नेन रक्तिकाऽर्द्धं प्रदीयते ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं वातार्थाधि विनाशयेत् ॥ १६६८ ॥
उन्मादे नष्टुक्ते च वृद्धिहाने च दीयते ।
कुष्ठं मूत्रं ज्वरञ्चैव नाशयेद्ये विमद्भुतम् ॥ १६६९ ॥
र सु, वातव्यान्धधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, वज्र और गन्धक समभाग
लेकर नीलवर्ण कजलीकर आचनेदूधसे ७ रोज मर्दनकर सुखा-
कर ६-७ कपडमिठीदीहोई आतसीशीशीमें भरके सुदृबन्दकर
वाल्वाकायमें रख बाह्यपरकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाज्ञशील
होनेपर निकाकर फिर उसीतरह मर्दनकर आंच दे । जबतक
भस्म सिद्ध न होजाय तबतक क्षीतरह आंच दे । सिद्धहोनेपर
निकाकर रखडोडे । इसमेंमे आधीआधी रती सुवह्याप
पानमें रसकर देनेसे समस्तवातव्याधि, उन्माद, शुक्लशय,
मन्दाग्नि, कुष्ठ, मूत्र और ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३४१ ॥

३४२ वज्रेश्वरसः (वृद्धावः) १६

यज्ञं रसं तादृमयोजभस्म
सर्वैः समानं गगनं विमुद्य ।
गोक्षुररम्भाऽऽमलक्ष्मीगवाक्षी-
रसैः पृथग्व्यासरक्तं रसेन्द्रः ॥ १६७० ॥
मापार्द्धमात्रो मधुना शुहीतो
जयेत्प्रमेहं रुधिरसृतिञ्च ।
कृष्माण्डनीरं ससितञ्च पयं
कृष्माण्डखण्डेन युतञ्च शाकम् ॥ १६७१ ॥

प्रमेहं क्षयकासञ्च कृच्छ्रं प्रदरजं रजः ।
सर्वांगोगान्धरस्येव धलीपलितनाशनः ॥ १६७२ ॥
वीर्यं तेजो धलोत्साहौ रमयेद्रमणीशतम् ।
अनुपानघिशोषेण तसद्रोगेषु योजयेत् ॥ १६७३ ॥
यज्ञेश्वराऽनुपानानि लिख्यन्ते फानिचिन्मया ।
श्यासे विश्वमतीसारे जातीफलसुजीरके ॥ १६७४ ॥
मरिचं शिमूलानां स्वरसेन समान्यतम् ।
शैत्ये द्वीप्योभये प्रोक्ते करहाटकिरातकी ॥ १६७५ ॥
अजीर्णं रच्यं गुण्डी प्लीहि गोमूत्रद्वङ्गणम् ।
सगुडं धानुहानां च सुरसाधातुखाससैः ॥
नागवह्नीदलसमं सम्प्रोक्तं धानुपानकम् ॥ १६७६ ॥
रसायनं, इषे !

भाषा—वह्न, पारा, ताम्र, लोह इनकीभस्में समभाग, अप्रकभस्म सबकीबराबर लेकर गोखरू, केलेकाकन्द, आवले और इन्द्रायणके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २ से ४ रती-तकनीं गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ लेकर शकरमिलाहुआ सफेदकोहलेकास पीनेसे समस्तप्रमेह, रुधिरसाव, धयजकास, मूत्रकृच्छ्र, रक्तप्रद, वली, पलित, वीर्य-तेज और बलकाहास, नपुंसकत्व इनसबको यह नष्टकरता है । श्वासमें सोंठ, अतिसारमें जायफलऔर जीरा, शीतप्रधान-व्याधिमें मरिच और सहिजनकीजड़कास अथवा देसी और खुरासानी अजवाइन, अकलकरा और चिरायता, अजीर्णमें सचल और सोंठ, प्लीहामें गोमूत्र और मुहागा, धातुशीणतामें गुड़ अथवा तुलसी, शिलाजीत और पोस्तकेडोडे अथवा पानकेरसकेसाथ देवे ॥ ३४२ ॥

३४३ वङ्गेश्वररसः (सप्तदशः)

वङ्गभस्म त्रयोभागा वङ्गपार्द रसं क्षिपेत् ।
रसतुल्यं विपं योज्यं त्रिभिस्तुल्यं मृतायसम् ॥१६७७॥
गन्धकं विपतुल्यं स्यान्मर्दयेद्बहुजद्वयेः ।
कूपिकायां विनिक्षिप्य तेजोयन्त्रे तु पाचयेत् ॥१६७८॥
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
देवपुष्पं सकर्पूरं चातुर्जातं फलयिकम् ॥ १६७९ ॥
जातीफलत्रिकं सर्वमेतदेकत्र चूर्णयेत् ।
सर्वं खल्वतले क्षिप्या भृङ्गद्राघैर्दिनत्रयम् ॥ १६८० ॥
मर्दयेन्मधुना गाढं नाम्ना वङ्गेश्वरो रसः ।
प्रमेहेषु च सर्वेषु सूत्रकृच्छ्रे क्षये तथा ॥
सूत्रोत्थवातरोगेषु गुल्मे सर्वहरः स्मृतः ॥ १६८१ ॥
रसायनस., प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—वह्नभस्म १२ मासे, पारदभस्म और शुद्धवज्र-नाग ३-३ मासे, लोहभस्म १८ मासे, शुद्धगन्धक ३ मासे लेकर सबको मिलाय वारीकचूर्णकर भगरेकेरससे एकदिन मर्दन कर सुलाकर ६-७ कपड़मिठीदीहीहुई आतशीशीशमें भरके बालकायन्त्रमें रख १२ पहलीक अग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर लौंग, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची, नागकेसर, हरे, बहेड़ा, आवला, जायफल, विडम्, नागरमोधा, चिन्क येसब ३-३ मासे लेकर वारीकचूर्णकर पूर्वरसमें मिलाय भगरे-केरससे ३ रोज मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथ सेवनकरनेसे समस्त-प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, मूत्राशयोन्धवातरोग और गुल्म इन-सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३४३ ॥

३४४ वङ्गेश्वररसः (अष्टादशः)

रसं वह्नं समं कृत्वा चतुर्भागं तु गन्धकम् ।
कुमारीरससंयुक्तं दिनमेकं चिमर्दयेत् ॥ १६८२ ॥
फलत्रयकपायेण त्रिदिनं मर्दयेत् हृदम् ।
सुदीपमध्वर्तप्रामौ घालुकायन्त्रं पचेत् ॥ १६८३ ॥

स्वाङ्गशीतं समादाय चूर्णयेद्भिपगुत्तमः ।
अश्वगन्धाऽमृतासारमोचारसशताधरी- ॥ १६८४ ॥
गोक्षुरधात्रीकृष्णाण्डीवाराहीपत्रमागधी- ।
त्रिफलाकर्कटीमुस्तायष्टीमधुसमन्वितम् ॥ १६८५ ॥
सर्वसाम्यसितायुक्तं चूर्णं पलाङ्गसंयुतम् ।
गुञ्जचतुष्टयं भात्रा गोक्षीरस्याऽनुपानतः ॥ १६८६ ॥
प्रातरुत्थाय सेवेत लवणाम्लौ विवर्जयेत् ।
यहुमूर्धं सूत्रकृच्छ्रं रक्तशुक्रप्रमेहकम् ॥ १६८७ ॥
मधुमेहं नष्टशुक्रं नष्टलिङ्गञ्च नाशयेत् ।
सर्वप्रमेहराम्नो वङ्गेश्वर इति स्मृतः ॥ १६८८ ॥
रसायनस., वै. चि., यो र., र. पा. प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और वह्नभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक ४ भागलेकर सबकी नीलवर्णकञ्जलीकर घीकुवारेरससे एकदिन-मर्दनकर ३ दिन त्रिफलाकेकाट्टेसे मर्दनकर सुलाकर ६-७ कपड़-मिठीदीहीहुई आतशीशीशमें बन्दकर बालकायन्त्रमें रख दीध, गन्ध और तीव्रइसक्रमसे १२ पहलीका आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । पिर अश्वगन्ध, गिलोयसत्त्व, मोचरस, शतावर, गोखरू, आवले, सुईकोहला, बाराही, पत्रज, पीपल, त्रिफला केशव नागरमोधा, मुळहठी, सबसमभागके चूर्णमें बरा-वकी शकरमिलावे । इसमेंसे २ कप चूर्ण और पूर्वरसकी ४ रती मिलाकर गोदुग्धकेसाथ रोजाना सुबहमेलेसे बहुमून, मूत्रकृच्छ्र, रक्तशुक्र, शुक्रप्रमेह, मधुमेह, शुष्कक्षय, ध्वजभङ्ग, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसके प्रयोगमें लवण और अम्ल वर्जितकरना ॥ ३४४ ॥

३४५ वङ्गेश्वररसः (उनविंशः)

सूतं गन्धकतालसाऽम्रसशिलं प्रोक्तं तथा माक्षिकं,
सर्वं तुल्यमथापि वङ्गभस्मलं चाऽर्द्धाऽर्द्धभागं नयेत् ।
तत्सम्मथं च दुग्धिकाभवरसैस्तद्वसपादीद्यैः,
स्तदाद्रिद्विहरीतकीभवरसै र्वावदनयो वासराः ॥
पवं यत्नत्रिघ्नौ परेशकृपया जायेत वङ्गेश्वरः,
सर्वान्मेहदाग्निहन्ति सततं मृधादिदोषाज्जयेत् ॥ १६८९ ॥
र. सु., प्रमेह ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, रसमाणिक्य, अप्रकभस्म, शुद्ध-मैनासिल और सोनामाखी समभाग और वङ्गभस्म सबसेचतुर्थास लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर छोटीदूधी, हसरज, हल्दी, हरे इनके रसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलिया बनाकर रख-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्तप्रमेह और मूत्राशयोन्धेपे नष्टहोतेहैं ॥ ३४५ ॥

३४६ वङ्गेश्वररसः (विंशः)

भागचतुर्षं वह्नं सूतं हि शङ्खं रत्नं विभागैकम् ।
पुण्यत्रिकं हरितालं काञ्चिकपिष्टं शरापसम्पुटके ॥ १६९० ॥
पुटेद्भजाख्ये यन्ने वङ्गेश्वरनामतः प्रसिद्धरसः ।
वङ्गेश्वरोऽयमप्येते बलदो नृणां हि रमिकानाम् ॥ १६९१ ॥
रसवि., वाजीकरणे ।

भाषा—वज्रमस्य ४ भाग शङ्खमस्य और पारा १-१ भाग रसमाणिक्य अथवा हरितालमस्य और गोदन्तीमस्य २-२ भाग लेकर एकदिन काञ्चीमें मर्दनकर दारावसम्पुटमें बन्दकर गजपुष्पी आचरे । स्वाद्ग्राहीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़ । इसमेंसे १ रतीसे २ रतीतक अभिचलासुमारामात्रा उचितानुगमकेसाधन देनास यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर नपुषक त्वको दूरकरताहै ॥ ३४६ ॥

३४७ वज्रेश्वररसः (एकविंश)

रसवज्ररखेतिभिस्समान

जतु चादमप्रभव मधुप्रयुक्तम् ।

सितयाऽखिलमेहनाशनाय

खलु मापद्भ्यसम्मित निषेचेत् ॥१६९२॥

चि क्र, प्रमेहाधिकार ।

भाषा—पारद वज्र, अत्रक ताम्रमस्य समभाग लेकर सबकी बराबरशुद्ध धिलाजीत मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रतीकी मात्रा मधु और शक्कर मिलाकर देनेसे समस्तप्रमेह नष्टहोतेहै ॥

३४८ वज्रेश्वरादिवटो

मृत वज्र मृत लाह मृगनाभिश्च कुङ्कुमम् ।

अत्रक पारदश्चैव हिङ्गुलु गन्धकस्तथा ॥ १६९३ ॥

मस्तकी नागफेनश्च कङ्गोल जातिपत्रकम् ।

जातीफलं प्रियाल त्वक् शुण्ठी मकैटिवीजकम् १६९४

यला तुगा च कपूरा लवङ्गं गजपिप्पली ।

आकल्लरुभश्चैव नागा भुजगवल्लरी ॥ १६९५ ॥

नागकेशरमुस्ताश्लिचन्दन श्यञ्ज क शटी ।

मरिच पत्रकं यष्टी शात्मलीत्वक्च कटुफलम् १६९६

वर्षाभ्रमुंशली चैव क्षीरकन्द शतावरी ।

वृष्णाऽश्वगन्धा कनकं मासीमोचरसौ यला ॥१६९७॥

भृङ्गराजश्च गोकण्ट हुन्दुरु सयवानिक ।

समुद्रशापवीजानि त्रिपञ्चाशन्मित गणम् ॥ १६९८ ॥

योजयेत्समभागश्च सूक्ष्मचूर्णित्ति भिपक् ।

अष्टादा विजया शुद्धा सिता सर्वसमा क्षिपेत् १६९९

गुटिका मधुसर्पिर्भ्यां कर्ममात्रा विधीयते ।

प्रभाते वाऽथ मध्याह्ने सन्ध्याया वा विशेषत १७००

एका खादेदनुपिबेत्य शर्करया युतम् ।

यल्लवृद्धिमवाप्नोति रैतावृद्धि विशेषत १७०१ ॥

रैत स्तम्भ वय स्तम्भ घलीपलितनाशनम् ।

क्षेप्यज्यरातिसाराश्च प्रहर्षां नाशयेदपि ॥ १७०२ ॥

नारीयदयक्श्चैव नारीद्रव्यकरन्तथा ।

कान्तिद प्रतिभाद्भुजु बुद्धिमेधाधियर्धनम् ॥

सैवत्सप्रयागेण सर्वव्याधिविनाशनम् ॥ १७०३ ॥

४ यो त काञ्चीकरणे ।

भाषा—वज्र और लाहमस्य कस्तूरी केशर अत्रक पारा और हिङ्गुलमस्य, पुद्गलपत्र, मन्तपी, अक्षीम, शीतल

चीनी, जावित्री, जायफल, चिरोजी, तन सोंठ, वेवाक्की गिरी, बला, बसलोचन, शुद्धकपूर, लौंग, गन्धीफल अक्लहरा, नागमस्य, कुल्लिन, नागकेशर नागरमोथा, चित्रक, लाल और सफेद चन्दन, चव्य कचूर, मरिच पत्र, गुल्हठी सैमलकीछाल कायफल पुनर्ना मुशली, क्षीरविदारी अथवा दृधियाकन्द, शतावर, पीपल असगन्ध घृतुखेवीन, नटा मासी, मोचरस महाबला स्याहमफेदभगरा, गोखरु, कुदरु, अत्राइन, समुद्रशोषकैवीज, येसव समभाग आठ्वाहिल्ला भाग, शक्कर सबकीबराबर मिलाकर मधु और पीमें १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल, मध्याह्न अथवा सन्ध्याकालमें लेकर दूध पीनेसे बल और शुक्लीवृद्धिहोतीहै शुक्ल और अवस्थाकास्तम्भनहोताहै । वली, पलित, क्षय ज्वर, अतितार प्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै । कान्ति प्रतिभा, बुद्धि मेधा, इनसबको बढ़ाताहै । वर्षाभ्रमलातार प्रयोगकरनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहै ॥ ३४८ ॥

३४९ वचालोहम्

वचामप्यैस्तुल्यमयोमयं रजा

विलीढमाज्येन मधुस्रवणेन तत् ।

निहन्ति शूलं परिणामसम्भव

यलोद्धत कसमिवासुरं हरि ॥ १७०४ ॥

लो प, टो, शूलधिकार । टोडरानन्दे आमय न दद्यते ।

भाषा—वच और शुद्ध समभाग लेकर दोनोंको बराबर लोहमस्य मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रतीकी मात्रा पी और मधुकेसाप लेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० वज्रकायवटी

भ्रामकं माक्षिश्चैव लाहत्रयसमन्वितम् ।

शक्तिबीजसमायुक्तं बीजनयसमन्वितम् ॥ १७०५ ॥

त्रिदण्डीमर्दितं सूतमेकीहृत्य च गोलकम् ।

अन्धभूयागतं घ्रातं समावर्तं तु कारयेत् ॥ १७०६ ॥

पूजा हृत्या क्षिपेद्वज्रे पण्मासात्स भवेत्प्रिय ।

अभय सर्वशत्रूणां वज्रकाया महावल ॥ १७०७ ॥

रसाग्ने, रसायनाधिकारः ।

भाषा—भ्रामकमेह सुवर्णमाक्षिक, सुवण, रजत ताम्र, शुद्धान्धक, सुवर्ण-रजत और ताम्रबीज तथा त्रिदण्डी (दिव्यी वधि) क रसमें मर्दनकरके गोलीबनायाहुआ पारा, यसक समभाग लेकर अन्धभूयामें बन्दकर धमनहराके गोलीबाधे । फिर कुमारीवर्षाहकी पूजाकर शिवगोलीको ६ महीनेतक सुदमें रखेनेसे और रसायनोष्प विधिसे रहनेसे वज्रकाय और महाबल होकर समस्तशत्रुओंक भयसे रहित होजाताहै ॥ ३५० ॥

३५१ वज्रोचरीगुटिका (प्रथमा)

शुद्ध सूत सूत पत्र ध्यामसत्त्वं सहाटकम् ।

अम्लवर्णं सर्मं सर्मं मर्दयेद्वियसप्रथम् ॥ १७०८ ॥

तद्गोलकं दृढं कृत्वा छायायां शोषयेत्ततः ।
 गोजिह्वा ब्रह्मकार्पासी राजिका यवचिञ्चिका ॥१७०२॥
 वन्ध्या सर्वं समं पिष्ट्वा पूर्वगोलं प्रलेपयेत् ।
 रुद्धा गजपुटे पक्त्वा समुद्धृत्याऽथ लेपयेत् ॥१७१०॥
 रुद्धा मृष्या धमेद्गाढं गुटिका वज्रखेचरी ।
 जायते धारिता धन्त्रे वत्सराभ्युत्थुनाशिनी ॥ १७११ ॥
 भृताडवटचूर्णन्तु पलेकं सितया युतम् ।
 भक्षयेत्कामणार्थन्तु ब्रह्मायुर्जायते नरः ॥ १७१२ ॥
 र. खं, र. का., रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, अन्नरसस्रव, सुवर्ण इनलीमस्में
 समभागलेकर जमीरीवगैरह अम्बुवर्गसे ३ रोज मदनकर गोला-
 बनाय छायामें सुजाकर बनगोमी, लालपासकेबीज, राई,
 तितली, वांशसेरसा येसब गोलैकी बराबरलेकर अच्छीतरह-
 पीस गोलैपर लपेट धारावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे ।
 फिर दूसरा लेपदेकर वज्रमृषामें बन्दकर दृढधमनकरानेसे
 गुटिका तैयारहोगी इसे एकनपतकमुहमें रखे और कालीमुसली
 तथा पापाणभेद समभागलेकर बराबरकीशकरमिलाय एकपल
 लेकर दूधपीनेसे समस्तरोगोंसे निमुक्तहोकर पूर्णायुक्तो प्राप्तहोताहै ॥

३५२ वज्रखेचरीगुटिका (द्वितीया)

वज्रमसमं समं सूतं हंसपाद्या द्रवैरुग्रहम् ।
 मर्दितं द्वन्द्वल्लिप्तायां मृषायां चाश्वितं पुटेत् ॥१७१३॥
 मूथराख्ये दिवापानी समुद्धृत्याऽथ तस्य वै ।
 पूर्वार्धं पार्वं दत्त्वा हंसपाद्या द्रवैरुग्रहम् ॥ १७१४ ॥
 मर्दितं द्वन्द्वल्लिप्तायां मृषायां चाश्वितं धमेत् ।
 तत्खोटं धमनाच्छोष्यं काचटङ्गणयोगतः ॥ १७१५ ॥
 नक्षत्रार्थं भयेद्यावत्तावद्दाम्यं पुनःपुनः ।
 तद्रत्नं व्योमसत्त्वज्ञं फाञ्चनञ्च समं समम् ॥ १७१६ ॥
 समावर्त्य ततः कार्या गुटिका घन्त्रमध्यगा ।
 वज्रखेचरिका नाम वत्सराभ्युत्थुनाशिनी ॥ १७१७ ॥
 वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यक्रायो भवेन्नरः ।
 निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु कर्ममाज्यैः पिबेदपु ॥ १७१८ ॥
 र. खं, रसायने ।

भाषा—हीराभस्म और अम्लियायी उजुखित पारा सम-
 भागलेकर हमराजकेरससे ३ दिन मदनकर गोलावनाय नागवज्र
 भस्मलिप्त अन्यमृषामें बन्दकर एकदिनरात मूथरवर्गमें अमि-
 देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर पूर्वप्रमाणमें नयापारा मिला-
 कर हंसराजके रससे ३ दिन मदनकरगोलावनाय द्वन्द्वलिप्तमृषामें
 बन्दकर धमनरनेसे खोटैतैयारहोगा । इसखोटको प्रकाशमृषामें
 रखकर धमनकर और मुद्गा तथा काचनमर्करी चुकटी देता
 जाय, हमसे तमाममलजलकर एकदमभेद चमकदार वस्तु जुती
 होजायगी फिर जगडीबराबर अन्नकमव और शुद्धसुवर्ण मिलाकर
 एकनगद गलाकर गोलीबनाय मुहमें रखे करसे निर्गुण्डीके
 कन्दअपवाजकका एकनपंचूर्ण पीमें मिलाकर लेवे । इसतरह एक-
 वर्षपर प्रयोगरनेसे वलीपलितने निर्मुक्तहोकर वज्रकायहोताहै ॥

३५३ वज्रगर्भपोटलीरसः

वज्रहेमरसमस्मगन्धकान्मुद्गितश्च परिमर्दयेद्विनम् ।
 चित्रकार्द्वकरसे वराटकान्पूरयेच्च पुटयेच्च पूर्ववत्
 वज्रगर्भपरपोटलीरसो जायते क्षयविनाशनः परः ।
 रक्तिकात्रयमितं रसं ददेद्दृढपुटूमरिचै घृतप्लुतैः १७२०
 सर्वरोगविनिवृत्तये तथा योजयेच्च कुरु नाऽत्र संशयम्
 रोगलेशरहितोऽपि योजयेत्पुष्टिबुद्धिवलवीर्यवृद्धये ॥
 र. दी., क्षयादिरोगे ।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, पारदभस्म, शुद्धगन्धक, ये क्रमदृढ-
 भागसेलेकर अच्छीतरह शुष्कमर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे
 एकदिन मदनकर समभाग पीलीकौडियोंमें भर गाय अथवा
 आककेदूधमें पिसेहुए सुहागेसे कौडियोंका मुंहबन्दकर जमीरी
 अथवा विजोरके अन्दर कौडियोंको डालकर ४ तह मलमल
 बगैरहके कपड़ेसे लपेटकर कचेसूतने गंदकेसहरा बनाय ऊपर ६-७
 कपडिमिठी लगाकर अच्छीतरह मुखाय हायभर लम्बेचौड़े गट्टेमें
 जहलीकण्डोंकी आंचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर
 खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा १८ रत्ती-
 मरिचकेचूर्णकेसाय धीमेंमिलाकरदेनेसे क्षयादिसमस्तरोगोंको यह
 नष्टकताहै रोगरहितमनुष्यको देनेसे शरीर, बुद्धि, बल और
 वीर्यकी वृद्धिहोतीहै ॥ ३५३ ॥

३५४ वज्रगर्भरसः

सूतं गन्धं हेमभस्माद्देकेन
 घृष्ट्वा यामं कान्तमृषासुगमं ।
 क्षिप्या रुद्धा भूधरे तं पुटेत्
 सूतः सिद्धो जायते वज्रगर्भः ॥ १७२० ॥
 यर्षेदन्नं नागवहोरसेन
 मध्वाज्याभ्यां रक्तिकां तस्य द्यात् ।
 दिव्यो देहो जायते वत्सराऽर्द्धं
 रोगाः सर्वे मासतो यान्ति नाशम् १७२३
 क्षारं तीक्ष्णं भूरि चाऽम्लञ्च वर्ज्यं
 सूताऽर्जीर्णं जायते तेन यस्मात् ।
 सूताऽर्जीर्णं नाभिदेशे तु शूलं
 दाहो मान्यं जाड्यमालस्यनिन्दे ॥१७२५॥
 सत्त्वत्यागो जायते बुद्धिनाश-
 स्तस्यगार्थं कन्यकाकन्दमाज्यम् ।
 दद्यात्तद्वा स्रण्डमाष्यीकयुक्तं
 प्रातःकाले त्रैफलं चूर्णमत्र ॥ १७२५ ॥
 व्योषं यद्वा बीजपूरस्य नीरैः
 पथ्यं यद्वा शुण्ठिखण्डप्रयुक्तम् ।
 जीर्णं पश्चात्त्वण्डमासेवयेत्
 रात्रौ दुग्धं प्रातःप्राज्यं समक्तम् ॥ १७२६ ॥
 दध्याज्यं वा सन्ततं घाऽपि गोजं
 त्येलाजाजीसैन्धवं यौ मरीचैः ।

पथ्यं प्राह्यं गौल्यबाहुल्ययुक्तं
 ज्ञानं कोष्णेनैव नीरेण कार्यम् ॥ १७२७ ॥
 पानं नीरैः शीतलै वांसयुक्तै-
 ध्यानं कुर्यात्पार्वतीवल्लभस्य ।
 शक्त्यादानं योगिनीतर्पणञ्च
 हिंसा धर्त्या प्राणिमात्रे च नित्यम् ॥ १७२८ ॥
 भक्तिः कुर्याद्ब्राह्मणानां गुरुणां
 तैलाभ्यङ्गं धर्म्येष्वाऽतिशीतम् ।
 यातं धर्मं रम्यदेहप्रसिद्धयै
 कुर्यादितत्सर्वमेव प्रयत्नात् ॥ १७२९ ॥

१. दी , रसायने ।

भाषा—शुद्ध पारा और मन्थक १-१ भाग, सुवर्णमसम्
 आधाभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर वान्तपापाणकीमूपायं बन्द-
 कर भूधरयन्त्रमें आवेदनेसे यह वज्रगर्भरस तैयाहोताहै । पान-
 करकेमें १ रती अश्रकमसम् और १ रती वज्रगर्भरस मिलाकर
 मधु और धीकेसाथ देनेसे ६ महीनेमें दिव्यदेह होजाताहै । एक-
 महीनेके सेवनसे समस्तरोग दूरहोतेहैं । क्षार, तीक्ष्ण, खटाई
 इनसे पारेका अजीर्णहोजाताहै इसलिये र्हनें न देवे । दैवसंयोगसे
 सुताऽजीर्णहोगयाहो तो नामिमेशूल, दाह, अग्निमान्ध, जडता,
 आलस्य और निद्रा होताहै । धरीर सचहीन होजाता है ।
 बुद्धिभ्रष्ट हो तो उक्की निशुचित्तिलिये धीर्बुवारका कद धीकेसाथ
 अथवा शकर या मध्वासक्के साथ, अथवा प्रात काल त्रिकला या
 त्रिकटुनाचूर्ण विजोरेके रससे देवे । अथवा सौंठ और शकरके-
 साथ देवे । जीर्णहोनेपर रात्रिमें शकर और दूध देवे । प्रात काल
 धीकेसाथभातदेवे । अथवा गायका दही और धी देवे । इला-
 यची, जीरा, सैन्धव और मरिचकेसाथ पच्य देवे । अथवा
 गुस्ते बनेहुए पदार्थ पच्यमें देवे । धोड़े गरमजलसे स्नानकरावे
 सुगन्धद्रव्याधिकारित ठंडाजलीधे । परमेधकाऽप्यानकरे और
 यथाशक्ति दानदेवे । योगिनियोंका तर्पणकरे । प्राणीमात्रकी
 हिंसासे परहेजकरे । श्राद्ध और गुरुजनोंमें भक्तिरखे । तैला-
 भ्यङ्ग, अतिशीतवात, धूप इनसक्का त्यागकरे ॥ ३५४ ॥

३५५ वज्रगुग्गुलुः

त्रिकटु त्रिकला दन्ती चित्रकं त्रिवृता शटी ।
 विडङ्गं मुस्तकं रात्रि वाङ्कुचीन्द्रयं वचा ॥ १७३० ॥
 अङ्कोटमूलं कुष्ठञ्च राजवृक्षस्य मूलरुम् ।
 पत्तेपं पलिकं प्राह्यं तत्समं गुग्गुलुं गुरम् ॥ १७३१ ॥
 भङ्गातैतैलं द्विपलं गोघृतेन जडीकृतम् ।
 तत्र तापं हरीतालं द्वयोः कुर्यात्पलद्वयम् ॥ १७३२ ॥
 सर्वमेष्नीकृतं यन्नात्पेपयित्वा सुपिण्डकम् ।
 घृतभाण्डे तु संस्थाप्य खादेन्मापचतुष्टयम् ॥ १७३३ ॥
 गुग्गुलु घञ्जनामाऽयं गहनानन्दभाषितः ।
 देदी कालं पयो धहिं दग्ना या युष्टिवर्धनम् ॥ १७३४ ॥
 यातरक्तं निहन्त्यानु नानादोषसमुद्भवम् ।
 शरीपदं शोथशूलानि मेहमेदोगलामयात् ॥ १७३५ ॥

मूहिगुल्मोदराष्ट्रीलाकासभ्यासमरोचकम् ।
 जीर्णज्वरञ्च सानाहं वलयपांशिवर्धनम् ॥
 सद्ब्रह्महणीं दुष्टां पाण्ड्वादित्रितयं जयेत् ॥ १७३६ ॥
 र र , वातरक्तं ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिकला, दन्ती, चित्रक, निशोत, कपूर,
 विडङ्ग, नागरमोषा, हल्दी, बाजुची, इन्द्रजव, वच, अङ्कोलकी-
 जड़, कुठ और अमिल्लासकीजड़ १-१ पल, शुद्धपुगल सबकी
 बराबर, मिलावेकाले २ पल, ताप और हरीतालमसम् १-१
 पल लेकर बारीक पीस गुग्गुलुकी धीवीसहायतासे कूटकर द्वा-
 ओंको एकजीव मिलाकर धीके वर्तनमें रखओड़े । इसमेंसे ४-४
 माशेकी मात्रामें देश, काल, अवस्था और अग्निबल देखकर
 कमी अथवा वृद्धिकरके उपयोगकरे । इससे सेवनकरनेसे वातरक्त,
 श्लेष्म, शोथ, शूल, मेह, गलेकेरोग, प्लीहा, गुल्म,
 उदररोग, अष्टीला, कास, श्वास, अरचि, जीर्णज्वर, आनाह,
 बल-वर्णाभिनारा, दुष्टसद्ब्रह्मणी, पाण्डु, कामला, हलीमक इन-
 सबको यह नष्टकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ वज्रगुटिका (प्रथमा)

शैलस्य धातो रजसां शिलाभ्यः
 सूर्यप्रतापाज्जतुसत्रिकाशम् ।
 कृष्णं स्रवेन्मृत्समानगन्धि-
 शिलाजतुं प्राज्ञतामास्तदाहृः ॥ १७३७ ॥
 स्रव्यादिधातो गैलितं दृपद्भ्य-
 स्तेभ्यः प्रदास्तं प्रवदन्ति पूर्वम् ।
 विशोधयेत्तमुदिने सुपूते
 द्विपञ्चमूलीसलिले कटाहो ॥ १७३८ ॥
 लोहिं समालोच्य दिवाऽरुस्य
 सन्तापनं रश्मिभिरैव कुर्यात् ।
 प्रणीततापात्सरवद्द्रोह्या
 पुनःपुनस्तप्तमयोद्धरेद्य ॥ १७३९ ॥
 तावत्प्रदेयं सलिलं ध्रमेण
 गाढस्य सन्दर्शनमेव यावत् ।
 तावच्छिलाजत्वमिसन्निविष्टं
 समुद्धृतं यावद्दशोपतश्च ॥ १७४० ॥
 अष्टौ पलान्यस्य विशोषितस्य
 ततः क्रमाद्वापयितुं यतेत ।
 द्विपञ्चमूल्यो चिरविल्वमुस्ता
 पटोलनिम्बत्रिफलाः पलांशाः ॥ १७४१ ॥
 सुपिण्डली रोहिणि जीरकञ्च
 द्रोणेऽम्बसस्ताग्निपलान्यथोक्तान् ।
 प्रकाश्य चैवाष्टमभागशेषं
 तस्मात्सृजेद्वायनमलयमल्पम् ॥ १७४२ ॥
 पात्रेऽथ लोहिं परिशोषयेत्-
 स्तुन.पुनर्माषितमेव यावत् ।

पलद्वये मागधिकर्कटाख्ये
 चूर्णाकृते लोहरज.समांशे ॥ १७४३ ॥
 पलं बृहत्याः सनिदिग्धिकायाः
 सितोपलामष्टपलोम्भितां तु ।
 पलत्रयं वेणुजरोचनाया-
 मधुत्रयं तद्विनिवेद्य कृत्या ॥ १७४४ ॥
 त्रिपष्टिसंख्यान्वटकान्विधिशः
 खादेत्सुरावारिपयोऽनुपानात् ।
 रसेन वा लावकपिञ्जलानां
 तोयेन वा दाडिमसंस्कृतेन ॥ १७४५ ॥
 मुक्तैस्तथाऽमुक्तवति प्रदेया
 रोगार्दिते निम्परिहारिणी च ।
 कुण्डोदरश्वासगलामयोश्च
 भगन्दरान्मूत्रविबन्धगुल्मान् ॥ १७४६ ॥
 यश्माणमर्शांसि सकासहिकां
 ग्रीहाऽप्रमांसं विपमज्वरांश्च ।
 वल्लेश्च दीप्ति परमां करोति
 चर्लाश्च हन्यात्पलितानि चैव ॥ १७४७ ॥
 सेव्या त्वयं वज्रक्रानामधेया
 मुनिप्रदिष्टा वटकप्रधाना ।
 घञ्याः कुलत्याश्च सकाकमाञ्यः
 कपोतमांसश्च सदा प्रयोगे ॥ १७४८ ॥
 ग. नि. वृष्टाऽधिकारे ।

टि०—शिलाजतुशोषन पत्राङ्गलोहोऽपीदृशमस्ति परन्तु उत्राकांदि-
 पत्राणुसमेगेन योग्यम् नन्वादनमस्स्यप तु केवले शिलाजतुनि काष्ठी-
 पथिनिश्रेणेन योग्यम्पादनमिति विधेय ।

भाषा—मुग्धं, रजत, ताम्र, लोह इनघातुओंका सुस्मादा
 पर्वतोंमेंसे सुयुक्तै प्रयत्नापसे हृदहोकर लाखकीतरह बाहर
 निकलताहै और उसमें गोमूत्रका गन्धहोताहै उसे जाननेवाले
 शिलाजतु कहतेहैं । इनमेंसे कृष्णवर्ण जो लोहयुक्तद्वयहै वह
 सबसे श्रेष्ठ मानाजाताहै । इनकाद्वय स्वकीयघातुकेरगका हुआ-
 करताहै । बाहर आकर उसमें दानरबिटादि घातत मल मिश्रित
 होजातेहैं । मूलसे वे खालियेजाय तो नानातरहके उपद्रवोंको
 फरतेहैं । इसलिय उनको शुद्धकरके काममें लेनाचाहिये । दश-
 मूलके गरमजापको कड़ाहीमें डालकर अशुद्धशिलाजीतको
 अच्छीतरह धोकर कड़ीधूपमें रम्बे और रोज उसे हिलाताहै ।
 जब तमामात्र पानीमें मिलाजाय तब उसे हिलाना बन्दकरके
 उसीजगह पहाहनेदे । इसद्रवके ऊपर मलाईकी तरह एक थर
 (पटल) जमजायगा उसे धीरजसे निवालकर दूसरे पात्रमें
 रसादे और उपद्रवको अच्छीतरह चलादेवे । षाय मूलकर इसके
 गांड़े होजायेपर दूसरा षाय बालदियाकरे । इसकियाको प्रोथ्म
 ऋतुं प्राग्भ्यमे शुद्धरे । जब शिलाजीत निकलआवेगा और
 केवल मल नीचे रहजायगा तब घर जमना बन्दहोजायगा ।
 उसे मल समझकर पेंकदेवे । निचालेदुप शिलाजीतको मुग्धाकर
 रमजोड़े इसका चाहे जिस दोगमें उपयोगकरे । बतमानगमयमें

व्यापारीलोग इस प्रक्रियासे तैयार नहीं करतेहैं किन्तु जहांपर
 अधिकप्रमाणसे यह निकलताहै वहांपर खोदकर खाने बनालीहै
 और वहाकी मिट्टी तथा पत्थर खोदकर उसे गरमपानीमें औटा-
 कर छानलेतेहैं उसपानीको फिर आगपर गाढ़ाकरके बेच
 तेहैं । इसमें खराबी यह होतीहै कि प्रथमतो इनमेंसे समस्त
 मल जुदा नहीं होता दूसरे यह कड़ाहीमें संभालखनेपरभी
 पेटमें ल्पकर जलनेलगाताहै उससमय इसमें रहेहुए ब्रेहादिक
 बहुतसे पदार्थ जलकर भस्महोजातेहै और इसका जो असली-
 स्वादहै वहभी सराबहोजाताहै । इसीलिये व्यापारियोंसे लिये-
 हुए शिलाजीतमें शाओकगुण नहीं मिलतेहैं । मधुमेहादिकमें
 जो मुथुतवर्गहने इसके गुण लिखेहैं वे शुद्ध शिलाजीतकेहैं
 और वे सर्वहै । अस्तु ।

पूर्वोक्तप्रकारसे शोधेहुए ८ पल शिलाजीतसे लेहेके चार-
 लम् डालकर दशमूल, शुद्धकरज, नागरमोथा, परवल, नीम, त्रिफला
 १-१ पल, पीपल, रोहण, दोनोंजीरे २-२ पल लेकर १६ सेर
 पानीमें ढायाकरे आठवाभाग रोप रहनेपर छानकर धूपमें रखदे
 जिसमेंकि ढाया बिगडने न पावे इसमेंसे थोडा २ ढाया शिलाजी-
 तमें डालकर धूपमें रखकरघोटे (धूपमें द्रव जल्दी सूखजायगा
 नहीं तो बहुत समय लगेगा) तमामढाया मूगजानेपर पीपल,
 काकड़ासीगी १-१ पल, लोहमस, २ पल, बनभाटा, भट-
 कट्टिया १-१ पल, मिथी ८ पल, बंसलोचन ३ पल लेकर
 सबका वारीकपूंककर पूर्वोक्त शिलाजीतमें मिलाकर धी, दावर
 और मधु इतना मिलावे कि गोलिया धनजायं । इसकी ६३
 गोलियां बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मद्य, जल,
 दूध अथवा लवा और सफेदतित्तिरोंकामासख, अथवा अनारका
 शरबत तथा भोजन इनमेंसे जैसी योग्यताहो उपकेसाय
 देनेसे ड्रष्ट, उदर, श्वास, गलरोग, मन्दार, मूत्रविबन्ध, शुष्म,
 राजयक्ष्म, बवासीर, कास, दिचकी, ग्रीहा, अम्रमांघ, विपम-
 ज्वर, मन्दाग्नि, बलोपलित, इनसबको यहयोग नष्टकरताहै ।
 वृष्टातिरिक्तरोगोंमें इतनी मोटी मात्राकी जुबत नहीं । अग्निबल
 देखकर मात्राका निर्धारणकरे । कुष्ठरोगमें प्राय कर अत्यधिक-
 मात्राका उपयोग हुआकरताहै । उसी अधिकारमें इसे प्रत्य-
 कारने लिपाहैइसलिये उसकी इतनी अधिकमात्रा बनजाहै ।
 इसप्रयोगमें कुलधी, मकंज और कपोतमासको टोहरकर बोई-
 विशेष परहेज नहींहै ॥ ३५६ ॥

३५७ वज्रगुटिका (द्वितीया)

कान्तं घञ्जं हिङ्गुलाञ्जे रसेनै
 कृत्या खोटै भृषणपशभकम् ।
 मन्दं मन्दं पाचितं स्यादुट्टीयं
 दास्यारम्यं धारयेच्चस्य वज्रसे ॥ १७४९ ॥

र. ल., टो., र. पा., रसायने ।

भाषा—घान्तलोह, हीरा, हिङ्गुल, अन्नक, शुद्धशिलाता,
 इनका खोट बनाय १५ दिनतक भूषणपशभक मन्दमन्द अग्निपर
 पकानेसे गोली तैयारहोगी । इसगोलीको मुग्धरखनेमें षाय
 आर अर्धोक्तमुग्धायका निवारणहोताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ वज्रगुटिका (तृतीया)

रोहिणीं चिरविविञ्च कुटजञ्च फलत्रिकम् ।
मुस्तञ्च पिप्पलीमूलं यष्ट्याहं निम्बनागरम् ॥ १७५० ॥
पतत्कपायै विधिवद्भावनाश्च पृथक्पृथक् ।
शिलाजतुपलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ॥ १७५१ ॥
वांश्याः कर्कटशृङ्गवाश्च भागध्याश्च पलं पलम् ।
धानी दशपलाद्भृङ्गं व्याघ्रीमूलत्वचं तथा ॥ १७५२ ॥
पत्रं त्वगेलां गन्धार्थं दन्वा चूर्णानि कारयेत् ।
तं विमृश यथान्यार्थं दद्यान्मधु पलत्रयम् ॥ १७५३ ॥
वर्तयेद्द्वैतकान्धीमानुदुम्यरफलोपमानम् ।
तत्रैकं भक्षयेत्काले सानुपानं यथावल्गम् ॥ १७५४ ॥
विडङ्गकाथयूपामुसुरारिष्टरसादिभिः ।
क्षीरे वा दाडिमाग्नेयां पथ्यभोजी भवेन्नरः ॥ १७५५ ॥
स जयेत्पाण्डुरोगांशः कुप्रेमेहगलप्रहान् ।
वज्राचोऽयं समाख्यातो वटको हि महागुणः ॥
नित्यमाश्रमिणां योज्यमेतत्स्याच्च रसायनम् ॥ १७५६ ॥
र. का., पाण्डुरोगे ।

भाषा—रोहण, वरुण, ऊँयाकीछाल, त्रिफला, नागरमोथा, पिपलामूल, मुलढी, नीमनीछाल और साँठ इनकेवापोंसे यथाक्रम ८ पल शिलाजीतको भावनादेकर ८ पल शकर, वंश-लोचन, काकड़ासीगी और पीपल १-१ पल; आवले और बनभटिकी जहकीछाल ५-५ पल, पत्रज, तज और इलायची १-१ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर शिलाजीतमें मिलावे। और पूर्वश्रावणसे १-१ भावना देकर मुखनेपर ३ पल मधुदेकर १-१ तोलेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े। इनमेंसे १-१ गोली अथवा अश्विल देखकर मात्रानियतकर विडङ्गकाकाथ, मुदूप, मय, अरिष्ठ, मासस, दूध, जनारकारस इनमेंसे किसीएक अनुपानके-साथ सेवनकरनेसे तथा पथ्यभोजनकरनेसे पाण्डु, बवासीर, कुष्ठ, प्रमेह, गलमह इत्यादि समन्तरोगोंको यह नष्टकरताहै। इसके निरन्तरसेवनकरनेसे यह रसायनका कामकताहै ॥ १५८ ॥

३५९ वज्रघनोरसः

कण्टकारीरसैः सप्तदिनं भाव्यन्तु सोमलम् ।
पवं वारत्रयं काचकूप्यां सत्वं तु पातयेत् ॥ १७५७ ॥
एतत्सत्त्वे पादसूतं सगन्धं कज्जलीहृतम् ।
कण्टकारी मृषिकायां शरावे पाचयेत्पुनः ॥
यामाएकं वज्रघनो रसः सर्वोद्दरार्तिजित् ॥ १७५८ ॥
र. का., उदराधिकारे ।

भाषा—भटकटैयाके अङ्गस्वरससे ७ दिन सोमलको मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिठीदीडई आतशीशीघीमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख ४ पहरकी कमामिद्वे। स्वाद्वाशीतलहोनेपर निकाळकर पूर्ववत् ७ दिनमर्दनकर सत्त्वपातनकरे। इसतरह ३ बारकरके इससे चतुर्थांश शुद्धपारा और गन्धक मिलाय नीलवर्णकज्जलीकर भटकटैयाके कल्की मृषामें बन्दकर शराव

सम्पुटमें रख ६-७ कपडमिठीदेकर सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रख ८ पहरकी कमामिसे पकावे। स्वाद्वाशीतलहोनेपर निकाळकर रखछोड़े। इसमेंसे आधे आधे नाकलभरकी मात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त उदररोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३५९ ॥

३६० वज्रतुण्डावटी (प्रथमा)

स्वर्णताराऽर्कमुण्डञ्च बङ्गं नागाऽन्नसत्त्वकम् ।
पतत्सर्वसमं चूर्णं चूर्णांशं मृतवज्रकम् ॥ १७५९ ॥
सर्वतुल्यं शुद्धसूतं सर्वं दिव्यौषधीद्रवैः ।
मर्दयेद्दिनमेकन्तु वज्रमृषान्धितं धमेत् ॥ १७६० ॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं जायते धारिता मुखे ।
जराभृत्यशस्त्रसहं नाशयेद्दत्त्वरत्निकम् ॥ १७६१ ॥
वज्रकायो महावीरो जिवेद्द्वर्षशतत्रयम् ।
कुमार्याः स्वरसं प्राशं गुठेन सह लोडयेत् ॥
पलेकं क्रामकं लेह्यमनुपानं सदैव हि ॥ १७६२ ॥
र. स., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड, बङ्ग, नाग, अन्नक-सत्त्व, इनसबका बारीकचूर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश हीराभस्म और सबकी बराबर शुद्धपारा मिलाकर एकदोदिन शुष्क मर्दनकर दिव्यौषधियोंके द्रवसे एकरोज मर्दनकर वज्रमृषामें बन्दकर धमनकरनेसे गोली तैयारहोगी। इसगोलीको एकवर्षतक निरन्तर मुखमें धारणकरनेसे वज्रकाय तथा अत्यन्त पुष्टार्थयुक्त होकर ३०० वर्षतकजीताहै। वृद्धाण, मृत्यु और शस्त्रसमुदायके बरसे रहितहोजाताहै। धीकुवारका स्वरस शुद्धकेसाथ मिलाकर १ पल पीनेसे रसका शरीरमें सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६० ॥

३६१ वज्रतुण्डावटी (द्वितीया)

कान्तपापाणामाक्षीकं टङ्कणं कर्कटास्थि च ।
स्नुहाक्षीरभृन्नागं सर्वमेतत्समं भवेत् ॥ १७६३ ॥
स्त्रीस्तन्येन दिनं मर्द्यं तेन मृषां प्रलेपयेत् ।
तन्मध्ये द्रुतसूतन्तु वज्रभस्म समं समम् ॥ १७६४ ॥
क्षिप्वा रुद्धा पुटे पाच्यं गजाख्ये याममात्रकम् ।
ततः प्रलिसमृषायां क्षिप्त्वा रुद्धा धमेदढाता ॥ १७६५ ॥
पवं पुनःपुनः कार्यं वज्रसूतं मिलत्यलम् ।
ततस्तस्यैव दातव्यं समं काचं सटङ्कणम् ॥ १७६६ ॥
पवं मृषाशते देयं तुल्यं तुल्यं धमन्धमन् ।
तेजःपुञ्जो रसेन्द्रोऽसौ भवेन्मार्तण्डसन्निभः ॥ १७६७ ॥
गुटिका वज्रतुण्डेयं वज्ररस्या मृत्युनाशिनी ।
वर्षमात्रात्र सन्देशो द्रुतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७६८ ॥
तस्य सूत्रपुरीपायां पूर्ववत्काञ्चनं भवेत् ।
पञ्चाङ्गं भक्षयेत्कर्षं रदन्त्या मधुसर्पिणा ॥ १७६९ ॥
र. स., रसायने ।

भाषा—कान्तपापाण, सुवर्णमाक्षिक, मुहणा, बँकड़ेकी-हड्डी, पूहर और आककादूध तथा केजुप समभागलेकर स्त्रीके दूधसे एकरोज मर्दनकर इसभस्मका वज्रमृषामें लेकर सुखाकर

कल्ककी बराबर शुद्ध हृत्पारा और वज्रभस्म डालकर मुंहबन्द-
कर २-४ कपड़मिठीदेकर सूखनेपर गजपुष्टमें एकपहरकी आचदे ।
स्वाङ्गीतल होनेपर निकालकर फिर उठीतरह मूषामें रख
घमनकरावे । ऐसे धारम्भार करनेसे वज्र और पारा मिलजाया
फिर उसकी बराबर काच और सुहागा डालकर घमनकरावे ऐसे
१०० बार घमनकरनेसे सूर्यकेसदृश तेज पुष्पयुक्त रस तैयारहोगा ।
इस गुटिकाको एकपतक मुंहमें रखनेसे रुद्रसदृश पराक्रमवाला
होताहै । इसके मूत्र तथा पुरीषसे धातुओंका रग बदलजाताहै ।
रुदन्तीका पञ्चाङ्ग १ कर्म मधु और घीमें मिलाकर रोज खावे ३६१

३६२ वज्रधररसः (प्रथमः)

रसगन्धकताप्राप्तं क्षाराल्सीन्यरूपो घृण्यम् ।
अपामार्गस्य च क्षारं लवणं द्विद्विमापिकम् ॥१७७०॥
चाङ्गेयां हस्तिगुण्डयाश्च रसेः पिष्टं पचेत्पुटे ।
भक्षयित्वा ततो गुञ्जां ग्रहण्यां काञ्जिकं पिबेत् १७७१
पक्तिश्ले च कामे च मन्दाग्रायाद्रकद्रचम् ।
अम्लपित्ते च धारोष्णं क्षीरं वज्रधरो ह्ययम् ॥१७७२॥
र. र. स., र. र. की., ग्रहण्यधिकारं ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताप्त और अप्रकमस्म, सज्जी,
सुहागा, यवक्षार, वरुण, अङ्गुसा, अपामार्गक्षार, सैन्धव, चेषस्य
२-२ माशेलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण वज्रलीमें
मिलाकर अन्तेनिया और हाथीगुण्डीके रसोंसे १-१ रोज मर्दन-
कर टिकिया बनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर ३-४ कपड़मिठी-
देकर सूखनेपर गजपुष्टकी आचदे । स्वाङ्गीतलहोनेपर निकालकर
रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा काञ्जिकेसाय देनेसे
ग्रहणीरोग नष्टहोताहै । पक्तिश्ल, काम और मन्दागिमें अद-
रखके रसकेसाप देना । अन्तेपित्तमें पारोष्णद्रवकेसाप देना ३६२

३६३ वज्रधररसः (द्वितीयः)

वज्रसूताऽद्भेद्घ्नान्तु भस्म योज्यं समंसमम् ।
सर्वैश्च तालकं तुल्यं शिषुघनूर्जै द्वैवे ॥ १७७३ ॥
मयः स्नुहाकजैः क्षीरं दिनेकञ्चाऽथ भावयेत् ।
सप्ताहं याकुचीतैलेस्तन्मापैकन्तु भक्षयेत् ॥
रसो वज्रधरः स्यातः सर्वेषु घृणितरुतनः ॥ १७७४ ॥
र. र. स., रसायनं., र. र. की., र. क्षं, र. का., र. र.
दी., वृथाधिकारं ।

टि०—रसायनकर्मपर रसायनदीपिकायात्र मुञ्जानीद्वामहानिर्घ-
ण्डयोऽनुपरने विद्येयनवीर्यवस्या सन्त्योऽपि न रसान्तरनाघोतिका
समवर्तनेन रोगपरत्वेन चाङ्गुसानामानातिवत्तया ।

भाषा—हीरा, पारा, अप्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग
लेकर सबकी बराबर हरितालमिलाकर सहिजन और धतूरेकारस
भूमर और अकाङ्क्षाद्रूपरूपप्रत्येकद्रवोंमें १-१ दिन मर्दनकर ७ दिन
वाङ्गीके शैलसे मर्दनकरे । श्वमेसे उद्दरराषामात्रा वाङ्गीके
शैलकेसाप रानेसे यह समस्तघुण्डोको दूरकरताहै ॥ ३६३ ॥

३६४ वज्रधररसः (तृतीयः)

वज्रसूताऽद्भेद्घ्नान्तु भस्म शुद्धं तु माक्षिकम् ।
तुल्यं सप्तदिनं मयं दिव्योपधिरसे हंडम् ॥ १७७५ ॥
रुद्धा तत्त्रिदिनं पाच्यं चालुकायन्त्रं पुनः ।
उद्धृत्य त्रिदिनं भाष्यं भृङ्गसर्पाक्षिजे द्वैवे ॥ १७७६ ॥
मापैकं मधुसर्पिण्यां वज्रधारारसं लिहेत् ।
मासपट्टकप्रयोगेण रुद्रतुल्यो भवेन्नरः ॥ १७७७ ॥
वलीपलितनिर्मुक्तो वायुवेगो महायलः ।
पुनर्नवाभृङ्गतिलयाजिगन्धाः समांशकाः ॥
सर्वतुल्या सिता योज्या चूर्णितं भक्षयेत्पलम् ॥१७७८॥
रसायनसं., र. खं., रसायने ।

भाषा—हीरा, पारा, अप्रक, सुवर्ण इनकीभस्में समभाग
लेकर सबकी बराबर सुवर्णमाक्षिकभस्म मिलाकर ७ दिन
दिव्योपधियोंके रसोंसे मर्दनकर टिकिया बनाय मुलाकर शरा-
वसम्पुष्टमें बन्दकर ३ दिनतक चालुकायन्त्रीकी आंचदेवे । स्वाङ्ग-
शीतलहोनेपर निकालकर भंगरा और अन्धाहूलीकेरसोंसे ३-३
दिन मर्दनकर उद्दरराषार गोशियां बनाम रखजोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली मधु और चीकेसाय ६ महीनेतक लगातार सेवन-
करनेसे मधुपलितसेरहितहोकर वायुवेग और महान्त्युक्-
होताहै । पुनर्नवा, भंगरा, तिल और असगन्ध समभाग लेकर
बारीक चूर्णकर सबकीबराबर शकर मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे
१-१ पल खानेसे रसका सङ्क्रमणहोताहै ॥ ३६४ ॥

३६५ वज्रधररसः

वज्रपारदयो भस्म समभागं प्रकल्पयेत् ।
सूतपादं मृतं स्वर्णं सर्वं मयं दिनावधि ॥ १७७९ ॥
हंसपाद्या द्वैवेचं तत्रोले चाग्निधते पुष्टे ।
अर्कक्षीरैः पुनर्मयं तद्भद्रजपुटे पचेत् ॥ १७८० ॥
भक्षयेत्सर्वेषु घृष्टं यावन्मार्धं विवर्धयेत् ।
शरण्याः साधकानान्तु रसोऽयं वज्रपञ्जरः ॥ १७८१ ॥
चित्रकाऽऽद्रकसिन्यत्थं मृतं तीक्ष्णं सुवर्चलम् ।
समं सर्वं सदा चानु भक्ष्यं स्यात्कामणे हितम् १७८२
मासपट्टप्रयोगेण जीवेद्वाचन्द्रतारकम् ।
वलीपलितनिर्मुक्तो दिव्यकायो महायलः ॥ १७८३ ॥
र. रं., रसायनसं., रसायने ।

टि०—हंसपादीसे घृष्ट विषये १ पुणजोड़े । तुल्यमभस्म हन पूर्व-
वर्णादित् पचेत् । यवच्छस्य चार्थानामनेनाऽनेन भग्मना । अन्-
पिठेन मीरवे प्रथमाग्नि च मारयेत् । रात्रिचाङ्गोऽङ्गैरभ्य वाचनाप-
विधिषि । चित्राद्रकसिन्यत्थं मृतं तीक्ष्णं सुवर्चलं मयं ॥ संशितं पन्-
यन्तो ग्मोऽथ वज्रपञ्जरः । शरण्या परिष्कृतानां म्पाधिर्पापवृत्त्युभि ।
इति पाठो रमरत्नानुसूचये निहितं धनुन् तस्य मूलं न क्षायते वग्माद्-
प्रत्याङ्गुलं । मन्त्रात्तनु रसायनारम्भेण एव प्रथिमाभि, तत्र च वज-
परत्वेनां भागविधिषेण त्रयांशमपि श्येण रस्यथा प्रथिपरित ।
रमरत्नानुसूचयेपाठेनाङ्गुलपाठो वज्रपञ्जरभग्मना ९१ विषय भग्नी-

कृतस्नानपत्रस्वोपयोगो वर्णिन स कोल्बलित इव प्रतिभाति, अतो रसायनस्यैवैव पत्र पाठ सापुत्रिति सुधीभिर्विभर्षनीयम् ।

भाषा—हीरे और पारदकी भस्म १-१ तोड़ा, स्वर्णभस्म ३ माघे लेकर घोटकर हसर्राजकेरससे एक दिनरात मर्दनकर गोलिया बनाय शरावसमुत्पन्न बन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर सुखनेपर गजपुटकी आवड़े । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर आकके दूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् पुटदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखले । इसमेंसे १-१ संपर्पकी मात्रा समय अथवा रोगोचिन्तानुपानकेसाध सेवनकरे और प्रतिदिन १-१ संपर्पका प्रमाण बढाताजाय । उड़दबराबर मात्रा पूर्णहोनेपर उसेही नियतकर सेवनकरे । इसको ६ महीनेतक लगातार सेवन करनेसे बलीपलितार्थसे रहितहोकर महाबल और दिव्यशरीरयुक्त बनकर दीर्घजीवी होताहै । चित्रक, अदरक, सैन्धव, लोहभस्म, सबल समभाग लेकर ३ माघसे १ तोलेतक अनुपानरूपसे सेवनकरनेसे रसका शरीरमें प्रापण होता है । यह प्रयोग बहुतसमालोकर करना उचितहै कहीं जल्दी गुण लानेके लिये उड़द बराबर खुराक शुद्धसे सेवनकरजायगा तो 'आचन्द्रतारकम्, का यही अर्थ होगा कि दिनमें खायोहो तो राततक और रातको खायोहोतो सुबहतक आयुको भोगकर यमपुरका नासी बनजाय । ऐसे भीषण प्रयोगोंको समालोकर काममें लानाचाहिये ॥ ३६५ ॥

३६६ वज्रवद्गुटिका (प्रथमा)

वज्रंयोगमजसत्त्वकं सरुणक चन्द्रं रश्मिं कान्तकं, नागं वज्रमथायसं हृदतरं सूतं कृतं तत्समम् । वज्ररस्यै रसगोलकं रतिकरं सर्वार्थदे तापहै, यपैकेण निहन्ति दोषानिचर्य कल्याणुपा युज्यते ॥३८४ रसायनं, र. को, र का रसायने । र को नागाहुंनी बदीति नाम । र का वज्रादिगुटीति नाम ।

भाषा—हीरा और अन्नकसत्त्व, सुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्तलोह, नाग, वज्र और फोलाद येसब समभाग, दिव्यौषधियोंके योगसे अग्निस्थायीकियाहुआपारा सबकी बराबर लेकर इन्हे मलाय गोलीबनाकर मुहुंमें रखनेसे दिव्यस्तम्भन होताहै । एकवर्षतक निरन्तर मुहुंमें रखनेसे समस्तरोगोंसे रहितहोकर दीर्घायु होताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ वज्रवद्गुटिका (द्वितीया)

सुभगं माक्षिकञ्चैव वज्रमन्नकमेव च । हेम शुक्लं तथा तारं समभागानि कारयेत् ॥ वज्रवद्धा तु गुटिका वज्ररस्या सर्वसिद्धिदा ॥१७८५॥ रसायनं, रसेन्द्रम रसायनाधिकारे । टि०—रसेन्द्रमज्ञे माक्षिक न दृश्यते तत्केन कारणेन निष्कामितमिति न शक्यते ।

भाषा—दिव्यौषधियोंसे बाधाहुआपारा, माक्षिक, हीरा और अन्नक इनकासत्त्व, सुवर्ण, ताम्र, रजत सबसमभागलेकर गोलीबनाय मुहुंमें रखनेसे यह समस्तसिद्धियोंको देतीहै ॥ ३६७

३६८ वज्रवद्दरसः

वज्रभस्मावृते हेमपिष्टिके पङ्कणं वलिम् । पूर्ववद्दधरे पन्त्या वद्धोऽयं योगवाहकः ॥ १७८६ ॥ र. सि, सर्वरोगे ।

भाषा—तोलद्वेव अथवा बतीसवें हिस्से सुवर्णके घ्राससे पिष्टीयनापहुएपारमें चतुर्थांश हीरेकीभस्म डालकर दिव्यौषधियोंके स्वरससे १-२ रोज मर्दनकर टिकियाबनायसुखाकर बराबरका गन्धक नीचेऊपर रख शरावसमुत्पन्न भूपरयन्त्रकी इतनी आचदेवे कि गन्धकमान जलजाय पर पारा न उड़े । इस तरह पङ्कणगन्धक जारणकरनेसे यह योगवाहकरस तैयारहोताहै । इधमेंसे १ संपर्पभरसे शुरूकर रोजाना १-१ सरसों बढाकर १ रतीतकमात्रा बढानेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३६८ ॥

३६९ वज्रमूर्तिरसः

कान्ताश्माऽश्माङ्गारमूपां प्रलिप्य वज्रं शिस्तं ध्मापयेद्दृङ्गेण । चूर्णं तत्स्याद्वेष्टयित्वा सुदृष्ट्वा लिप्या ध्मापेत्तेन मूपात्रयं तु ॥ १७८७ ॥

एवं वज्रं पातयेद्देमगमें तुल्यं यद्वा पाद्भागक्रमेण । सूत्रे तके चारनाले कुलत्ये गत्ये पन्त्या घासरेकं प्रयत्नात् ॥ १७८८ ॥ निम्बूतोयै पेपयित्वा पचेत्त-स्थालीपाके रक्तामेति यात्रत् । लौहै पात्रे निक्षिपेत्तत्र किञ्चि-न्निम्बूतोयै सूतकं सैन्धवञ्च ॥ १७८९ ॥ घर्षयत्पश्चाद्गोहृदपण्डेन यत्ना-स्तोके चान्यत्रिक्षिपेत्तत्क्रमेण ।

ज्ञात्वा हस्ते मन्धरत्वं क्षिपेत सोष्णं तस्मिन् काञ्चिकं क्षालयेत् ॥१७९०॥ पिष्टिं वल्ले यन्धयित्वा निपात्य पात्रं तं वै गोलकं स्यापयेत् । एवं प्राञ्चं पक्वताप्यस्य सत्वं यद्वा शिस्तं मादिपे पञ्चके तत् ॥ १७९१ ॥ क्षारं दत्त्वा गोलकं ध्मापयित्वा सत्त्वं ताप्यस्येन्द्रगोपग्रमं स्यात् । शृशण तीक्ष्णं तुल्यकं मागवृद्ध्या मूषामध्ये ध्मापयेद्दृङ्गेण ॥ १७९२ ॥ किद्दृञ्जातं ध्मापयित्वाऽतियत्ना-त्कन्यातोयै निक्षिपेत्स्वध्यात्म् । सत्त्वं तस्याऽपीन्द्रगोपग्रमं स्यात्प्रागं किञ्चिद्वाह्येन्मादवाय ॥ १७९३ ॥ शृशणं त्यन्न काञ्चिकक्षीरपकं क्षारं छाशं मादिपं पञ्चपञ्च ।

पिष्टा गोलान् बन्धयित्वा धमेत
गाढं सत्त्वं द्वित्रिवारं पतेत ॥ १७९४ ॥
पतसत्त्वं वज्रगर्भं सुवर्णं
तौत्थं सत्त्वं माक्षिकस्याऽपि तुल्यम् ।
कृत्वा सूतं दापयेत्पादभागं
निम्बतायैः पिष्टिकां तस्य कृत्वा ॥ १७९५ ॥
वस्त्रे यद्धा क्षारसामुद्रजाद्यैः
सम्यग्युद्धा स्वेदयेत्सप्तरात्रम् ।
यन्त्रे चाप्ये काञ्जिकेनातियत्ना-
द्बद्धा पिष्टिं मापत्रे वैष्टयित्वा ॥ १७९६ ॥
तेले यत्नात्पाचयेद्याममेकं
कृष्यां पित्तं वाहिणिं निक्षिपेत् ।
शुद्धे सूते कान्तपापाणमूपा-
गर्भे प्राप्ते पिष्टिकां तां कलांशाम् ॥ १७९७ ॥
दत्त्वा गन्धं निक्षिपेत्पादभागं
रुद्धा मूपां भूधरे तां पुटेत् ।
यन्त्रे चाप्ये पिष्टिकां तां विपाच्य
यद्वा यन्त्रे कच्छपे पादभागम् ॥ १७९८ ॥
पश्चाद्गन्धं कान्तपापाणमूपा-
कोष्ठ्यां शुद्धं पद्मं जारयेत् ।
गुजामानं सर्वरोगेषु दद्या-
द्योग्यैस्तैस्ते वैज्रमूर्तीरसेन्द्रः ॥ १७९९ ॥
र दी , वाजीकरणे ।

भाषा—कान्तपापाण और बहेड़ेके कोयलोंको मूपावनाय कईवार इसीमिठीकालेप देदेकर सुखाकर चिकनी बनाकर हीरेको डालकर धमनकरे और वारम्बार थोड़ा थोड़ा सुहागा डालता-जाय । हीरेका चूर्ण होजानेपर निकालकर शुद्धसुवर्णके पत्रेमें लपेटकर उसीमूपामें रखकर धमनकरे । इसतरह ३ बारकरनेसे यह हीरा सुवर्णकेसाथ मिलजायगा । प्रतिवार सुहागा डालकर जितना हीरा सुवर्णमें मिलानाहो उतना मिलावे फिर गोमूत्र, छाछ, काष्ठी, कुलथीकापाठा इनमें १-१ दिन सुवर्णगर्भमें हीरेको पकावे । फिर नीचूरेससे एकदिन पीसकर गोलीबनाय नीचूरे रसमें लालरत्नहोनेतक स्वेदनकरे । इसवेवाद निकालकर लोहेके सरलमें इसकीतरावर शुद्धपारा और सैन्य डालनर थोड़ेसे नीचूरेरसकेसाथ मर्दनकरे । गाढा होनेपर थोड़ाथोड़ा नीचूरेरस डालताजाय । जबदस कि पारा चमलताको छोड़कर घट होगया तब गरमसाड़ी डालकर साफरले और गाटेकपड़ेमें दवावर कचेपारेको निकालद । बर्षाहुई गोलीनी शीशीमें रखले । इसी तरह सुवर्णमाक्षिककाभी सत्त्व निरालले । अथवा भेषकं गोबर, मूत्र, दही, दूध और धीमोमिलाकर दसगे सुवर्णमाक्षिकको १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय मूपामें रख धमनकरे और सुहागा देताजाय । इत्यल्लक्षणगे धीरल्लुट्टीके सदस लालरत्ना सत्त्व निकलेगा । फोलादका रता १ भाग और चमकदार तृतिया २ भाग मिलाकर मूपामें रख सुहागेका प्रयोगदेकर धमनकरे तो

इसका किट होजायगा, इसकिटको फिरसे धमनकर धीचूरेवाके रसमें बहुतसंभालकर डाले जिसमें कि वाहर उठेनहीं । ऐसे ७ बार करनेसे यह भी लालरत्ना होजायगा परन्तु यह अत्यन्त कठिनरहेगा इसलिये इसको गलाकर बहुतस्वल्प नागमिलादे जिसमें कि यह बमल होजाय । उत्तमजातिके अभ्रनको काष्ठी और दुग्धमें १-१ दिन स्वेदितकर बारीक चूर्णकर सुहागा, राख और महिपपत्रक मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर छोटी छोटी गोलिया बनाकर सुखाकर गाढ धमनकरे तो उसका किट होजायगा । उसकिटमें फिर पूर्वोक्तचूर्ण मिलाकर धमनकरे । इसप्रकार २-३ बारकरनेसे इसमेंसे सत्त्व निकलेगा । यसवसत्त्व और वज्रगर्भसुवर्ण समभाग लेकर सबसे चतुर्थांश शुद्धपारा डालकर थोड़ाथोड़ा नीचूरेरस देदेकर लोहकी सरलमें लोहेके ढण्डेसेपोट । पारेकी चमलता दूरहोनेपर ४ तरह गाड़ेकपड़ेमें बांध सेंधेनमकके-बीचमें इस पोष्टीको रखकर काष्ठीसे ७ दिनतक स्वेदनकरे । पर यह ध्यान रखले कि काष्ठी पोष्टीमें लगने न पावे केवल चाप्य लगे । काष्ठीका स्पशेहोनेसे नमक बहजायगा । दैववशात् भूलहोजाय तो दूसरे नमककी पोष्टीमें बांधलेवे और काष्ठीकी हण्डोको रोजाना बदलतारहे । आठवें दिन वज्रपिठीको निका-लकर उड़दके आटेके गोलेमें बन्दकर १ पहरतिलकेतेलमें पका-कर निकालले । स्वाज्ञशीतलहोनेपर वाटीमेंसे पोष्टीको निका-लकर चौड़ेमुहकीशीशीमें वस्त्रेसे जुदीकर धीरजसे रखदे और उसमें पिठी हचनेलायक मोरकापित्त भरकर सुरक्षितरखद । कान्तपापाणकीमूपांमें शुद्ध बुभुक्षितपारेको डालकर पारेसे पोढसाध पित्तस्य पिष्टिकाको डालकर पारदसे चतुर्थांश ऊपरसे गन्धक डाल मुहबन्दकर भूधरयन्त्रमें आंचदे । स्वाज्ञ-शीतलहोनेपर निकालकर सैन्यवनभक्तमें पूर्ववत् पोष्टीबनाय ७ रोजतक वाप्ययन्त्रमें पकावे । फिर कच्छपयन्त्रमें अथवा कान्तपापाणमूपांमें रख पद्मणगन्धक जारणकरे । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त असाध्यरोगोंको नष्टरताहै । इसीतरह पित्तस्य पिष्टिकाक प्रशेषसे १६ गुना रस तैयारहोसकतहै । धातुवादीकी ग्रन्थकारने कुछ सूचना नहीं दीहै परन्तु उद्य दत्तामही यह अवयवकाम-करेगा । पर कितना करेगा यह साधकोको साक्षात् करके दखना चाहिये ॥ ३६९ ॥

३७० वज्ररसायनम् (प्रथमम्)

एकं कर्पं सूतं वज्रं ताद्यद्भागसत्त्वकम् ।
ततश्च द्विगुणं स्वर्णं स्वर्णतुल्यं खसत्त्वकम् ॥ १८०० ॥
तायन्मात्रञ्च कान्ताऽप्यः सर्वे धारितरं शतम् ।
अष्टमांशश्च सूतश्च सर्वेभ्यः परिकीर्तितः ॥ १८०१ ॥
नुकपिच्छः समः सर्वे मर्दयेद्यणकाम्प्यैः ।
ततो भूनागसत्त्व हि गन्धकेन ममं शिंपत् ॥ १८०२ ॥
विधाय गोलनं रम्यं छायागुणैः समाचरेत् ।
पुटितं शतनारांश्च शते धाराश्च ताप्यैः ॥ १८०३ ॥

शुनः पित्तैश्च दुग्धैश्च चारणा विशतितस्ततः ।
 गुञ्जाटङ्गणसिद्धेन भूनागेन समायुतम् ॥ १८०४ ॥
 धर्तयित्वा तु तं गोलं कल्केनाऽनेन लेपयेत् ।
 अर्द्धांशुहृदलेनाऽथ परिशोष्य खरातपे ॥ १८०५ ॥
 निक्षिपेद्वालुकायत्रे प्रपचेदिनपञ्चकम् ।
 ततस्त्रिकोणसेहण्डदुग्धे र्गन्धकसंयुतैः ॥ १८०६ ॥
 मर्दयित्वा तु तं गोलं पुटेद्वाराणि विशतिः
 पटेन गालितं कृत्वा क्षिपेदन्तःकरण्डके ॥ १८०७ ॥
 गुञ्जामितं भजेदेनं रम्यं वज्ररसायनम् ।
 शाताऽज्ञातेषु सर्वेषु गदेषु विविधेषु च ॥ १८०८ ॥
 तत्तद्रोगानुपानेन दातव्यं भिषजा खलु ।
 न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्यो ह्यनेन न शाभ्यति ॥
 रसायनप्रकारेण सेवितो मण्डलधरम् ।
 देहसिद्धिं करोत्येष विश्वविस्मयकारिणीम् ॥
 विल्वमेकं विना सर्वे पथ्यमत्र प्रकीर्तितम् ॥ १८१० ॥
 र. च, रसायने ।

भाषा—हीरेकीभस्म, केंचुआँकासत्त्व १-१ कर्ष, सुवर्ण-
 भस्म, अत्रकसत्त्व और कान्तलोहभस्म २-२ कर्ष येसब वारि
 तर लकर इकठे खरलकरे । फिर इनसबसे आठवा हिस्सा पारा
 और शुद्धगन्धक सबकाबराबर लेकर नीलवर्णकज्जलीकर विद्युद-
 चणकधारसे एकरोज़ मर्दनकर गन्धककी बराबर भूनागसत्त्व
 मिलाकर एकरोज मर्दनकर गोलाबनायसुखाकर गजपुटकी
 आचदे । स्वाज्ञातीतलोहेपर निकालकर पूर्वांकप्रमाणसे गन्धक
 मिलाय चनेकेसारमें एकरोज मर्दनकर गजपुटकी आचदे ।
 ऐसे १०० आंचे दनेकेबाद स्वर्णमाक्षिकसत्त्वमिलाकर पूर्वप्रका
 रसे १०० आंचे दे । फिर कुत्तीके पित्त और दूधसे २०-२०
 भावनाए देकर गोला बनाय सुखाकर गुञ्जा, सुहागा और
 केंचुए समभागका चूर्णकर चनेकेसारमें पीसकर उसगोलेपर
 आधाअह्लमोटा लेपदेकर कड़ीपूपमें सुखाकर शरावसम्पुटमें
 बन्दकर ६-७ कपड़मिठीकरदे । सूखनेपर बालुकायन्त्रमें ५
 दिनकी अग्निदेवे । स्वाज्ञातीतलोहेपर निकालकर बराबरका
 गन्धकमिलाय तिथारीपुअरकदूधमें एरदिनं मर्दनकर गोला-
 बनाय सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । ऐसे
 २० आंचे दनेकेबाद कपड़से छागकर शीशीमेंरखछोड़े । इसमेंसे
 १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाध ज्ञात अथवा
 अज्ञात नानातरहकेजटिलरोगोंमें देनेसे समस्तरोग नष्टहोतेहैं ।
 सत्सारमें ऐसा कोईभी रोग नहीं जो इससे नष्ट न हो । रसा
 यनप्रकारसे इसका ३ मण्डलका सेवनकरनेसे समस्तसत्कारको
 विस्मयदनेवाली देहसिद्धिको प्राप्तहोताहै । कबलधिल्वको
 छोड़कर दुनियामें समस्त पदार्थ इसमें पच्यहै ॥ ३०० ॥

३७१ वज्ररसायनम् (द्वितीयम्)

त्रिंशद्भागमितं हि वज्रभसितं स्वर्णं कलाभागिकं,
 तारं चाष्टगुणं शिवामृतवर रद्राराकं व्याघ्रकम् ।

पादांशं खलु ताप्यकं वसुगुणं वैशान्तकं पङ्कणं,
 भागोऽप्युकरसाद्वरोऽयमुदितः पाङ्गुण्यसंसिद्धये ॥
 र. च, रसायने ।

भाषा—हीराभस्म ३० मासे, सुवर्णभस्म १६ मासे,
 रजतभस्म ८ मासे, हँ और शुद्धकलनाग ११-११ मासे, अत्रक
 भस्म ४ मासे, सुवर्णमाक्षिक ८ मासे, वैशान्तभस्म ६ मासे
 लेकर सबको मिलाकर रखछोड़े । इसका चतुर्थांशभी रसायन-
 प्रकारसे खानेसे समस्तरोगोंसे निवृत्तहोकर मनुष्यको दिव्य
 देहसिद्धि होतीहै ॥ ३७१ ॥

३७२ वज्रवती

शुद्धसुताग्निमरिचं सुताह्निगुणगन्धकम् ।
 काकोदुम्बुरिकाक्षीरे दिनं मयं प्रयत्नत ॥ १८१२ ॥
 यरान्योपकपायेण वर्टीञ्जास्य समाचरेत् ।

विहाद्वज्रवतीं ह्येषा यामारोगविनाशिनी ॥ १८१३ ॥

र. स, र. चि, र. सु, र. का, र. क. ल, कुष्ठरोगाधिकारे ।
 टि०—रसकामेना द्वितीय पाठोऽस्मिन्नेवाऽधिकारे वद्विचूडिकेति
 नाम्ना कृतोऽस्ति सध गन्धकस्त्रिगुण, मरिचस्थाने व्युपगमिति विद्या
 ङ्गाऽस्ति पाठस्तु एकपवादस्ति । त्रिगुणगन्धकपेये शुष्कीपित्तस्वोधाऽ
 पिषतया दाने न काऽपि क्षति, पाठान्तरस्तु नारत्वेव बहुप्रथमत्वा
 दात्, नाम तु वज्रवद्वेनेनितम् ।

भाषा—शुद्धपारा, चित्रक, मरिच १-१ भाग, शुद्धगन्धक
 २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें
 मिलाकर कट्टमरकदूध, त्रिफला और त्रिकटुक काठसे १-१ दिन
 मर्दनकर ३-३ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली त्रिफला और त्रिकटुककापनेसाथ खानेसे पामारोग
 नष्टहोताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ वज्रवल्त्यादिगुणुः

वज्रवल्त्यर्जुनीं वासाविशालोलोहटङ्गुपान् ।
 रसगन्धकसिन्धूस्थान्सभमाणेन चूर्णयेत् ॥ १८१४ ॥

चूर्णाद्गुणत्रयं प्राह्यं गुग्गुलुं घृतपिहितम् ।
 वज्रवल्त्यादिको नाम गुग्गुलुः परिनिर्मितः ॥ १८१५ ॥

गहनानन्दनाथेन भद्ररोगविनाशनः ।
 नानाभर्षं निहन्त्यानु घलवर्णाऽग्निवर्धनः ॥ १८१६ ॥

रुभिदुग्धाऽक्षिरोगाणां हन्ता प्रन्थिव्यथापहः ।
 कश्चिद्द्रोगशमन आमवातनिपूदन ॥ १८१७ ॥

र. र, भद्राऽधिकारे ।

भाषा—हल्जोड, अर्जुन, अहध, महर अथवा इन्द्रायण,
 लोहभस्म, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और गन्धक, सिन्धव सब
 समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें
 मिलाय सबवृणसे तिगुना शुद्धगुग्गुलेकर धीके योगसे कूटकर
 द्रव बनाये और थोडा २ चूर्णालकर मिश्रताजाय । इसमेंसे १
 मासेसे २ मासेतकमात्रा रोग अथवा समयोचितानुपानकेसाथ
 दनेसे भद्र, बलवर्णाभिनासा, कृमि, कुष्ठ, अक्षिरोग, प्रन्थिव्यया,
 कटि और हृदय, आमवात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ वज्रशेखररसः (प्रथमः)

विष्णुनान्ताघनरसाः सर्पाक्षी शङ्खपुष्पिका ।
 गोजिह्वा क्षीरिणी नीली ब्रह्मवृक्षो मृदन्तिका ॥ १८१८ ॥
 निचुलः कारुमाची च रसैरेषां विमर्दितम् ।
 पक्कं तुपकरीपासौ रसाहिगुणगन्धकम् ॥ १८१९ ॥
 पर्पटीरसघटपक्कं खसत्वेनाऽऽरणेन च ।
 युतं गन्धकतुल्येन ताप्येन च रसाहिणा ॥ १८२० ॥
 कृतावापं घरीमुण्डाहस्तिकण्यमृतालिका- ।
 मूर्धाविदारिकाजातेर्मर्दितं घृतमिश्रितम् ॥ १८२१ ॥
 कपाये दशमूलस्य विपक्कं लेहनां गतम् ।
 रसतुल्यत्रिजाताऽग्निव्योपयष्टाह्लासंयुतम् ॥ १८२२ ॥
 स्निग्धभाण्डगतं कुष्ठं क्षयी च कृतशोधनः ।
 मञ्जिष्ठात्रिकपायस्य कृत्वा मासं निपेषणम् ॥
 मापप्रमाणं सेवेत रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२३ ॥
 गुञ्जाचित्रकदाह्नचूर्णरजनर्भहातका लाङ्गली,
 स्तुनक्षीरोक्षमकन्थका घनवरा धूम्रोद्गमः सूतकः ।
 गोमूत्रैजगौ विटङ्गमरिचे सक्षौद्रक्षाराम्यु च,
 पामादद्रविचर्चिकाफिटिभजित्कण्डूप्रमुद्गतेनात् ॥

र. र. स., कुष्ठे ।

भाषा—विष्णुनान्ता, नागरमोथा, रसौत, अन्धाहूली,
 शङ्खाहूली, बनगोभी, छोटोदूधी, नील, पलाश, शदन्ती, जलवेत,
 मकोय इनगणके रसोंमें शुद्धपारेसे दूनागन्धकडालकर की हुई
 नीलवर्णकब्जलीको १-१ भाषणा देकर सुपाकर फिरकेकब्जलीकर
 तुप अथवा करीपकी अमिर घृताक लोहेकीकड़लीमें गलाकर
 पर्यंटीतैयारकरले । इसमें गन्धकी बराबर लालअण्डरतव और
 पारेमें चतुर्धा सोनामासी मिलाकर घनावर, गोरखमुण्डी,
 हस्तिकर्णपलाश (टोडाइन हिं०), गिलोय, भगता, मूर्धा,
 विदारीकन्द इनकेरसोंत १-१ दिन मर्दनकर अन्तमें गोपूतने
 मर्दनकरे । फिर इसमें १६ गुना दशमूलकाय देकर मन्द
 आचने पकावे । लेह तैयारहोनेपर श्मश्रीघातार तत्र, पत्र,
 इलायची, चित्रक, त्रिकटु और मुलट्टी सबसमभागकापूनेमिला-
 कर घृते आण्डने रसछोड़े । इसमेंसे १-१ मास महामञ्जि-
 ष्ठादिशयकेसाथ एकमहीनेतक सेरानकरनेमें और अपोनिदिष्ट
 उषधनकरनेमें कुष्ठ, क्षय, पामा, दडु, विचर्चिका, फिटिभण्ड
 और कण्डू नष्टोत्तेह । मर्दयुग्मा, चित्रक, शङ्खभस्म, हली,
 भिलावे, करिहासी, गृहकाट्य, पीतुवार, नागरमोथा, त्रिकला,
 गुदगू, सुवपाशा, गोमूत्र, पत्ता, विडम्, मरिच, मण्डू, सर्वा,
 गुदागा, यवभार और पानीसथ समभाग लेकर एकत्राद मिलाकर
 रसछोड़े यह उषधकी सामग्रीहै ॥ ३७४ ॥

३७५ वज्रशेखररसः (द्वितीय)

घृत्नान्तं हेमफान्श घट्टमं स्फटिकनत्पा ।
 गुदगन्धरसाभ्याश्च समं रतल्ये प्रमर्दयेत् ॥ १८२५ ॥

अस्थिमंहारज्जरसं युधो दत्त्वा दिनत्रयम् ।
 मधुना मापमात्रं वा सेवेताऽग्निबलं प्रति ॥ १८२६ ॥
 सद्योव्रणेऽग्निदाहे च भग्ने च विपमज्वरे ।
 नाशनार्थं प्रयोक्तव्यो रसोऽयं वज्रशेखरः ॥ १८२७ ॥
 टो., मणाऽपिभारे ।

भाषा—वैकान्त, सुर्ण, कान्त, विट्टम, स्फटिक, इनकी-
 भस्में, शुद्धगन्धक और पारा सब समभागलेकर नीलवर्णकब्जली-
 कर हड़कोइकरसे ३ दिन मर्दनकर सुखाय मथुसे १-१
 माशेकीगोलिया बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय
 अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे सद्योव्रण, अग्निदाह, भग्न,
 विपमज्वर इनसबमें यह नष्टकरताहै ॥ ३७५ ॥

३७६ वज्रमुन्दरीवटी

आरक्तं मेवनादन्तु तथा पापाणभेदकम् ।
 स्त्रीस्तन्यसहितं पिष्ट्वा तेन मूर्पां प्रलेपयेत् ॥ १८२८ ॥
 भागेकं मृतवज्रस्य स्वर्णचूर्णस्य षोडश ।
 क्षिप्त्या तस्यां निरुद्धयाऽथ याममात्रं दटं धमेत् ॥ १८२९ ॥
 उद्धृत्य निक्षिपेत्खल्वे शुद्धसूतञ्च तत्समम् ।
 मर्दयेच्चाट्टकद्रावे यांचद्भवति गोलकः ॥ १८३० ॥
 चाण्डालीकन्दमादाय स्त्रीस्तन्येन सुपेषयेत् ।
 अनेन गोलकं लिप्त्वा घञ्जमूर्पां निरोधयेत् ॥ १८३१ ॥
 पक्त्वा गजपुटे प्राह्णा गुटिका वज्रमुन्दरी ।
 वर्षेकं धारयेन्नरे जीयेद्ब्रह्मदिनप्रथम् ॥ १८३२ ॥
 ब्रह्मवृक्षस्य त्वक्चूर्णं क्षीरनित्यं पले पिबेत् ।
 क्रामर्णं हानुपानं स्यात्साथकस्याऽतिसिद्धिदम् ॥ १८३३ ॥
 तदुद्धृत्यमले लिप्ते ताद्रन्तु धमनेन हि ।
 जायते कनकं दिव्यं सत्यं शङ्करभाषितम् ॥ १८३४ ॥

र. ख र. का, रसायने ।

भाषा—मरुता और पापाणभेदको शीके दूधमें पीवकर
 मूर्पामें लेपदेकर हीरकीभस्म १ भाग, सुवर्णचूर्ण १६ भाग
 डालकर एकवदतक दृष्टमनकरकेपर फिर निवालकर इतकीबराबर
 शुद्ध और सुमुक्षितगारा टालकर अदरनरेरतमें गोला पनेनकर
 घोटकर चाण्डाली (दिव्योपधि) अथवा सेमलेकन्दको शीके
 दूधमें पीवकर गोलेपर आधाअहुल मोटा लेप देकर वज्रमूर्पामें
 बन्दकर ६-७ कपमिही देकर मजपुटकी आचद । सागरीतत्र-
 होनेपर निवालकर रसछोड़े । इसे एकत्राद लगाकर मूर्धमें
 रगनेसे और पलाशकीछालका १ पत्रमें दूधकेसाथ प्रतिदिन
 लनेमें रगरो व्याप्तिकोकर दिव्यशरीरहोजाताहै और उसके मल-
 मुत्रमें तापरो लेपदेकर धमनकरनें दिव्यमुर्गाहोताहै ॥ ३७६ ॥

३७७ वज्रहेमरसः

शुद्धकृन्तुगुञ्जाम्बुः शानन्दान्तरस्थयोः ।
 धमेत्सुटोऽन्धमूर्पायामेकत्वं यज्जगन्मयोः ॥ १८३५ ॥
 निम्बुकास्युत्साम्यासः कस्तः पिष्टीष्टानो मिथः ।
 सृष्टिपुस्तरेतान्यस्तुत्यगन्धकर्मयुतः ॥ १८३६ ॥

जीवनी देवदाली च हंसपादी पुनर्नधा ।
 पुष्टितं भूधरं सप्तवारानासां रसेन च ॥ १८३७ ॥
 पुनस्तैर्नैव गन्धेन रसकल्कोऽथ कल्कितः ।
 शुद्धधातुविषोपेतध्रुवमूपायिनिर्गतः ॥ १८३८ ॥
 पित्ताग्निफेनसंयुक्त आर्द्रकद्रवभाषितः ।
 राजीप्रभाणा गुटिका रसाऽयं सर्वरोगहृत् ॥ १८३९ ॥
 २ (मा), सर्वरोगे ।

भाषा—गुह, सुहागा, गुञ्जा और विजोर्प्रभृतिकारस
 इनसबका कल्कवनाय अन्यमूषामें लेपकर खरगोशके दातकाचूर्ण
 विधाय मुक्कनेपत्रमें हीरेकेचूर्णको लपेटकर रखदे और ऊपरसे
 खरगोशके दातका चूर्ण डालकर मूषाको बन्दकर ३-४
 कपड़मिठीदेवे । सूखनेपर दृढ धमन करानेसे हीरे और सुक्कवा
 मिलाप होजायगा । इसको निकालकर नीचूके रसे २-४ रोज
 मर्दनकर गोलावनाय खीर^१ और घनूकेतेलमें शुद्धगन्धकको
 मर्दनकर जीवन्ती, बन्दाल, हसपदी, पुनर्नधा इनकेकल्ककामूषामें
 लेपकर पिष्टीकेबराबर गन्धकको विधाय पिष्टीको रस उतनाही
 गन्धक और ऊपरखकर मुहन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर
 सूखनेपर भूधरपुट्टी आवचे । स्वाहरीतल्लहोनेपर निवालकर
 फिर उसीतरह मर्दनकर गन्धकके धीचमें रस भूधरपुट्टे । ऐसे
 ७ पुट्ट देनेकेबाद इसकीबराबर सप्तधातुओं (सुक्क, चारी,
 कान्त, तीक्ष्ण, ताप्त, नाग, वज्र)की भस्में और शुद्धवज्राग
 मिलाय नीचूकेरसे मर्दनकर टिक्की बनाय चक्रमूषामें बन्दर
 भूधरपुट्टी आवचे । स्वाहरीतल्लहोनेपर निवालकर पक्वपित्त,
 समुदपेन और अदररखे द्रवोंसे १-१ भावना देकर राईके
 बराबर गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय
 अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकर
 दीर्घायुको करताहै ॥ ३७७ ॥

३७८ वज्रक्षाररसः (क्षारयोग) १

द्वौ क्षारी टङ्कणं सुतं लवङ्गं लवणत्रयम् ।
 पिप्पली गन्धकं शुण्ठी मरिचं पलसम्मितम् ॥ १८४० ॥
 कर्ममेकं विषं दत्त्वा सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
 अर्कदुग्धस्य दातत्या भावना सप्तवारपरम् ॥ १८४१ ॥
 अन्धमूषागजपुटे स्वाह्नरीतं समुद्धरेत् ।
 ततो लवङ्गमरिचस्फटिकानां पलं पलम् ॥ १८४२ ॥
 सम्मथं सुदृढं सर्वं दृढभाण्डे निधापयेत् ।
 तस्य गुञ्जाद्वयं खादेद्वृक्तं श्रावयति क्षणात् ॥ १८४३ ॥
 पुनर्भाजनयान्द्राञ्च जनयेत्प्रहरापरि ।
 आममामं द्राघयति श्लेष्मरोगनिवृत्तनम् ॥ १८४४ ॥
 वै चि अनिणं ।

भाषा—गजी, यवशात गुहागा, शुद्धघार, लौग, लीनों
 नमक, धौपल, शुद्धगन्धक, सोड और मरिच १-१ पल शुद्ध
 बज्राग १ कर्पूलेर बारीकचूर्णकर पीलेगन्धककी नीलगन्धकनीमें
 मिलाकर आकडेरूपसे ७ दिन मर्दनकर गोलावनाय अन्ध

मूषामें बन्दकर २-४ कपड़मिठीदेकर सूखनेपर गजपुट्टी आवचे ।
 स्वाह्नरीतल्लहोनेपर निवालकर लौग, मरिच, मुनी फिट्कड़ी
 १-१ पल मिलाकर एकदिन अच्छीतरह मर्दनकर शीथीमें
 भरलेवे । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ
 देनेसे भोजनको तत्क्षण जीर्णकर दुबारा भोजनकी इच्छाको
 पैदाकरताहै । कच्चाभाष खाकर यदि इसकासेवनकियाद्यो तो
 एक पहरके बादही पचादेताहै । श्लेष्मरोगभी इससे नष्टहोताहै ॥

३७९ वज्रक्षाररसः (द्वितीय)

सामुद्रं सैन्धवं काचं यशस्वरं सुवर्चलम् ।
 टङ्कणं स्वर्जिकाक्षारं तुल्यं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ १८४५ ॥
 अर्कक्षारैः स्नुहीक्षारैः शोषयेदातपे त्र्यहम् ।
 अर्कपत्रं लिपेत्तेन रक्षा भाण्डे पुटे पचेत् ॥ १८४६ ॥
 तं क्षारं चूर्णयित्वाऽथ त्र्युषणं त्रिफलारजः ।
 जीरकं रजनीं यद्भिर्नयकस्य समं ततः ॥ १८४७ ॥
 क्षाराऽर्कं योजयेत्सम्यगेकीकृत्य विचूर्णयेत् ।
 वज्रक्षारमिदं चूर्णं स्वयं प्रोक्तं पिनाकिना ॥ १८४८ ॥
 सर्वोदरेषु गुल्मेषु द्रवैः शोफे च योजयेत् ।
 अग्निमान्ये त्वजीर्णं च भक्षेन्नित्यद्वयं तथा ॥ १८४९ ॥
 याताऽधिके जलेः कोष्णे धृतं पित्ताऽधिके हितः ।
 कफे गोमूत्रसंयुक्त आरनालम्बिद्रोपनुत् ॥ १८५० ॥

यो र, र वि, र र स, चि क, टो, र क, वै वि, यो,
 चि, रसायन स, वै र, चि सा, वै क, चि र भ, र. मु, र
 का, यो म, नि. र, य यो त, भा. प्र, ना वि, वै द, उदर-
 रोगाधिकारे । कुत्रचि त्र्युषणादिचूर्णं क्षारसम नियोजितम् ।

भाषा—गमुद्रनमक, सैन्धव, काचनमक, यवक्षार, सबल,
 मुनासुहागा और सब्जी समभाग लेकर आक और धूरके रूपसे
 ३-३ दिन मर्दनकर आकके पके पत्तोंमें लपेटकर हण्डीमें बन्दकर
 ३-४ कपड़मिठी देकर सूखनेपर गजपुट्टी आवचे । स्वाह-
 शीतल्लहोनेपर निकालकर त्रिकटु, त्रिफला, जीरा, हल्दी, वित्र-
 ककीजइ सप्त समभाग लेकर बारीकचूर्णकर क्षारमें आंधे प्रमा
 णमें मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ८-८ मातेरी मात्रा यथो-
 चितानुपानकेसाथ दमेने समस्त उदररोग, शुष्म, दृढ, शोथ,
 मन्दाग्नि, अजीर्ण प्रथति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । वाता
 धिक्कमें गरमजठ, पित्तमें घृण, कफमें सूत्र और त्रिद्रोषमें
 काङ्गीकेसाथ देना उचितहै ॥ ३७९ ॥

३८० वज्राहसुन्दरीवटी

घ्नसौप्तिकमुल्याऽप्रहेमतारसमग्निर्नै ।
 यज्ञायसादिभिर्मुक्तः क्रियते घादिकं रस्य ॥ १८५१ ॥
 यज्ञाणां द्राघणं यद्ये पाददस्य च घ्ननम् ।
 लघुद्राघण्यं लोहेषु संयोगार्थं परस्परम् ॥ १८५२ ॥
 अस्थिद्राघण्यस्य हृत्वा यज्ञं निरोपितम् ।
 जलभाण्डे त्रिनिक्षिप्य स्वदेवोदिनसप्तकम् ॥ १८५३ ॥

वङ्गिकारससङ्घट्टं नष्टपिष्टन्तु पारदम् ।
 स्पृक्कारुन्दस्य मध्यस्थं चम्पनार्थं ततः पुटेत् ॥१८५४॥
 रेतितं लोहचूर्णन्तु दङ्गणेन तु भाषितम् ।
 लघुद्रावि भवेदेवं ताप्रपात्रे न संशयः ॥ १८५५ ॥
 सर्वास्तानेकतः कृत्वा मृषामध्ये स्थिति भवेत् ।
 गुटिकाजायते रम्या नान्ना वज्राङ्गसुन्दरी ॥ १८५६ ॥
 मुखस्थ्या सिद्धिदा प्रोक्ता जरामृत्युविनाशिनी ।
 सङ्ग्रामे विजयी धीरो वज्रदेहो महाबलः ॥ १८५७ ॥
 सर्वलोकरप्रियो नित्यं नारीणां बहुभस्तथा ।
 गुटिकेयं समाल्याता यथोक्ता ग्रहप्रयामले ॥ १८५८ ॥
 न. ज., यो म, रसेन्द्र मं, र, रसाणव, र खं, र. का,
 रसायनाधिकारे ।

टि०—कुमारो भ्रमर ग्राह्य शुद्धेन मह लेहेयत् । फलैवमनुपान
 स्वाजराप्रसृष्टिद्वयलम् ॥ इत्यधिक पाठो हस्तलिखित रसायनखण्डे
 दृश्यते । "ममो रसात्रयो रत्नवर्णेण परिभूषितो । गुटिकावराभ्यां तु
 मुखस्था युद्धारिणी" इति रसावतारो वृत्ति पाठोऽस्ति तस्य वज्राङ्ग-
 मृन्दपमिवान्तर्भावः ॥

भाषा—हृद्जोड़ने कल्केमें हीरेको बन्दकर दोलायत्र बनाय
 हृद्जोड़का अन्नरसस्य अथवा हाथ वर्तनेमें भरके ७ दिनतक
 स्वेदन करनेसे यह शरीर द्रुतहोनेके योग्य होजायगा । शुद्धपरिको
 हिरण्यपुरीके रससे ७ दिन मर्दनकर पिंडी बनाले । फिर इसको
 स्पृष्टा (दिव्यीपथिकारंज) अथवा अनन्तमूलकी जड़केकल्केमें
 रस श्रावणसम्पुटमें बन्दकर मूषरपुटकी आचदे । इसप्रकार बार-
 म्बार करनेपर जनगोली कड़ी होजाय तब निकालकर रखले ।
 तमामलोहोंके बारीकचूरेको तावेनेपात्रमें रख मुहागेके जलसे
 ७-७ भावनाएं देवे फिर बज्र, नाग, ताप्र, अन्नरसच, सुवर्ण,
 रजत, हीराप्रयतिल और समस्त लोह इनको इक्काकर हृद्जोड़
 के रससे कईवारलेपकीहुई घन्नमृषामें रखकर धमनकरनेसे
 गुटिका तैयारहोगी । इनको सुंहेमें रखनेसे बुद्धि और मृत्युका
 भय नहीं रहता । सङ्ग्राममें वज्रदेह और महाबल होकर विजयी
 होताहै । समस्तलोह तथा हिरयोका प्रियहोताहै । यह क्रम-
 यामलमें कड़ीगर्दहै । एकल घोलुवारके रसमें गुड मिलाकर
 पीनेसे इसका शरीरमें कामणहोताहै ॥ ३८० ॥

३८१ वज्रिणीगुटिका

कान्तघनसत्त्वममलं हेम च तारं यथाकृतद्वन्द्वम् ।
 समजर्णं धीजघरं चञ्चयुतं वज्रिणी गुटिका ॥१८५९॥
 एषा मुखहृत्परगता कुन्ते नपनागतुल्यरलम् ।
 तद्वपुरिषि दुर्मध्यं मृत्युजरादोगनिर्मुक्तम् ॥ १८६० ॥
 र. ह, रसायने ।

भाषा—कान्तगोह, अन्नकमल, ताप्र, सुवर्ण और रजत
 देसब समभाग, और समभागमें सुवर्णादिवीजजरणरुके सम-
 भागमें हीरा मिलायाहुआ पारा सवरी धरापर लेकर द्वन्द्व-
 मेलोपद्रव्यरसमें इंडे मलाय गोलीबनाकर बुद्धेमें रत्ननेसे ९ हाथि-
 ओके बलहोके देतीहै । शुद्धेमेंरत्ननेमालेकारारी चप्रादिकेंसे
 दुर्मध्य और मृत्यु जरादिरोगमें रचित होताहै ॥ ३८१ ॥

३८२ वज्रेश्वररसः (वज्ररसः) (प्रथमः)

कपं स्वर्परसत्वस्य पण्मापे हेमि विद्वुते ।
 पणिष्कसूतं गन्धादमन्यदृनिष्के प्रवेशितम् ॥१८६१॥
 प्रवालमुक्ताफलयोश्चूर्णं हेमसमांशयोः ।
 क्रमाद्भिन्नचतुर्निष्कं मृतायःसीसभास्करम् ॥१८६२॥
 चाङ्गेयंभलेन यामांखीन्मर्दितं चूर्णितं पृथक् ।
 द्वौ निष्कौ नीलिऋकृद्वीध्यामाऽयस्काग्नतालकात् ॥
 अङ्गुलैऋकृणीयीजतुत्येभ्यश्चतुरः पृथक् ।
 अष्टौ च दङ्गणक्षाराद्वराटानाञ्च विदधतिः ॥ १८६३ ॥
 महाजम्बीरनीरस्य प्रस्थद्वन्द्वेन पेययेत् ।
 एतद्वृक्षरावस्यं शुद्धं खार्यास्तुपस्य च ॥ १८६४ ॥
 ऋपीभारे च पचेदथ मापद्वयं ततः ।
 एतावदन्धकात्पादं मरिचाद्भाषितादपि ॥ १८६५ ॥
 मधुनाऽऽलोडितं लिह्यात्तन्मूलीपत्रलेपितम् ।
 गतेऽस्य घटिकाामाने प्रतियामञ्च पथ्यभुक् ॥१८६६॥
 नोचेदुद्धीपितो वह्निः क्षणाद्वादन्पचत्यतः ।
 दिनमेकं निवेष्ट्यैनं त्याज्यान्यामण्डलास्यजेत् १८६८
 ततः परं यथेष्टादी द्वादशान्दं सुसी भवेत् ।
 एकमेकं दिनं सुस्त्या वर्षेष्वयं महारसम् ॥ १८६९ ॥
 वर्षद्वादशपर्यन्तं ज्वरशङ्कां व्यपोहति ।
 वर्षादी च त्यजेत्याज्यं क्षयपर्वतभेदनः ॥ १८७० ॥
 र. र स, र सु, र च, र को, र र, र. का, र. पा,
 राजयदमणि ।

टि०—र, र. को, र. वा, र. पा, एषु ग्रन्थेषु "वर्षं वर्ष-
 सत्त्वस्य ममादौ हेमविदुते । निक्षिपेच्चूर्णयित्वात्पणिष्क शुद्धगन्धकम् ।
 अङ्गुलैऋकृणीयीन तुष ताल चतुर्बहु । मुक्ताप्रवालचूर्णत्र प्रति
 निष्पाद्यक क्षिप्रम् ॥ मुक्तलोहस्य निष्को द्वौ दङ्गणरायाऽष्टनिष्कम् । द्वौ
 निष्कौ नीलिऋकृद्वीध्यामाऽयस्काग्नितालकात् ॥ निरं लिष्कस्य योज्य सर्वं
 एते विन्दयेत् । चाङ्गेयंभलेन यामेकं खर्बाराखे दिनद्वयम् ॥ म्हा
 पुटादक देव रिनेक गुणनिधिः । जम्बीरीत्यद्रोहेषु पिन्ना पिन्ना पुं
 पचेत् ॥ ततो वनोष्णैश्च देव गन्धपु मर्दत् ॥ आदाय चूर्णयेच्छुद्ध
 चूर्णं शुद्धगन्धकम् । गन्धापे मरिच चूर्णमेवीकृत्य दिमापकम् ।
 लेहेन्मधुना मांशं नागवतीदोजित्वम् ॥ पथ्यादीं प्रतिपाम रसादमुके
 विषद्वन्द्वैः । रसो वज्रेश्वर स्यात् क्षयपर्वतभेदनः ॥" इति पाठो-
 ऽस्ति । पतलारण्येन न मृत्येत्, अस्य मूलावच्छन्तु पूर्वनिर्दिष्ट प्वा-
 स्तीति गुणीभि दिमावर्णनीयम् ॥

भाषा—६ मासे सुवर्णको मलावर १ कपं रापरसच
 मिलावे । २ कपं गन्धकको मलावर १॥ कपं पारामिलावे फिर
 प्रवाल और मोती ६-६ मासे, लोह ३ कपं, नाग ३ कपं और
 ताप्र १ कपं (इनपथका बारीकचूर्ण) लेकर अमरोनियाके
 रससे तीन तीन पहर अलग २ मर्दनकरे । फिर इन्डेमिलाय
 नील और कुटको ८-८ मासे, अन्नरसच, कान्तलोह और
 हरितालकावारीकचूर्ण, अङ्गुल और मालखानीकी मीनीं,
 शुद्धतिया देसव १-१ कपं, मुहामा २ कपं, कौडीमम्म ५ कपं
 लेकर पूर्वोक्तयोगमें मिलाय २ ग्रन्थ बितोंके रससे मर्दनकर

जाय और बटकी ताजीबरोहसे चलाताजाय फिर ३ दिन बन्दाल-
केस्वरसे मर्दनकर रखछोड़े । गर्मीकेमहीनेमें १ रत्ती पानमें
डालकर खावे और प्रतिदिन १-१ रत्ती बडावे । ऐसे १६
रत्तीहोनेपर मात्राको स्थिरकरे । इन्द्रायणकीजड़, वाकुची,
यन्दाल, इनकाधमभागचूर्णमिलाकर १-१ कर्ष मधुकेसाथ खानेसे
बारीरमें इसका अनुक्रमणहोताहै । एकवर्षतक इधप्रयोगकेकरनेसे
३०० वर्षकी आयु होतीहै और वज्रशरीरहोगाताहै ॥ ३८५ ॥

३८६ वडवाग्निमुखीवती

शुल्वाऽध्याघनभस्म वेद्महृत्लिनीव्योषाम्भुनिम्बच्छद्वैः,
संयुक्तैश्च हरिद्रया समलवैः साऽध्याशुभ्राऽमृतैः ।
भृङ्गाऽम्भोविपतिन्दुकाद्रकरसे. सम्पिष्य गुञ्जा मिता,
संशुष्का वडवामुखीति गुट्टिका नाम्नोद्विता तारया ॥
क्षिप्रं क्षुत्प्रतिबोधिनी खलु मता सर्वाभयघ्नसिनी,
श्रेष्मन्व्याधिविधूननी कसनहृच्छ्वासापहा शूलनुत ।
क्षुद्रैर्मन्यहरा च गुल्मशमनी भूलातिभूलकपा,
शोफन्याधिहराऽत्र किं यदुगिरा सर्वाभयोत्सादनी ॥
र र स, र क, ना वि, सर्वेरोमे । र क. भक्तविपाकय-
टीति नाम ।

भाषा—ताशा, लोह, अन्नरुमस, विडङ्ग, करिहारी,
त्रिकट, नागरमोया, नीमकीडाल, हृदी येसब समभागलेकर
सबसेआधी रौप्यमाक्षिकभस्म और शुद्धबलनाग मिलाकर भगरा,
खस, कुचिला और अदरलके रसोंसे १-१ दिनमर्दनकर १-१
रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय
अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे धुपाको जाणतकर समस्त
रोगोंको दूरकरतीहै । श्लेष्मन्वाधि, कास, हृद्योग, श्वास, शूल,
भूखकीविषमता, गुल्म, बवासीर, शोथ इत्यादि समस्तरोगोंको
यह दूरकरतीहै ॥ ३८६ ॥

३८७ वडवाग्निरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताम्रं तालं समं समम् ।
अर्केश्वरीं दिवं मर्द्य क्षौद्रं रेंहो त्रिगुञ्जकम् ॥ १८९२ ॥
वडवाग्निरसो नासा स्थूलममाशु नियच्छति ।
पलं क्षौद्रं पलं तोयमनुपानं सदा पिवेत ॥ १८९३ ॥
र स, र र स, र र कौ, र म मा, र वि, र को, यो
र, र (मा), र क ल, र र, नि र, वै क, र च, घ, र
रूदी, र स क, भै सा, व रा, रसायनस, चि सा, टो, र
सु, वै र, वै चि, र कौ, चि र भ, र क, र श, भै र,
मेदोऽधिकारे ।

टि०—वै र, वै चि र भ, र कौ, र क, र श, एषु ग्रन्थेषु
वडवानलरस इति नाम स्थापितम् । र स, घ, र सु, र वि,
भै र, एषु ग्रन्थेषु द्वितीयस्थाने वडवाग्निरेवमिति नाम्ना द्वितीय
पाठ स्थापितोऽस्ति तत्र गणकस्थाने लोह निबोधितम्, शुद्धप्रस्थाने
सद्रम्य गृहीतम् । अस्मिन्नेव रसे वडुभयमपि उहीला योगे निष्पादिते
भवति इत्यारभ्यैकस्मिन्स्थाने निवेश । कुत्रचित्प्रथमभाषा नोऽपि गृहीतम् ।
रसमन्त्रैकस्त्रिकायां तालस्थाने तार निबोधितमिति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और हरितालभस्म
समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर आककेदूधसे एकदिन मर्दन
कर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली मधुकेसाथदेकर एकभस्ममें बराबरकाजल मिलाकर ऊपरसे
पीनेसे यह स्थूलताको क्षीण नष्टकरताहै ॥ ३८७ ॥

३८८ वडवाग्निरसः (द्वितीय)

कान्तं पद्मरसे घृष्टं पुटपक्वं वरासे ।
मार्कवस्वरसे घृष्टं सप्तकृत्वस्त्वयमोलम् ॥ १८९४ ॥
निष्कदादशकं कान्तं निंदाक्षिप्तमयमोलम् ।
दङ्गणं मरिचं तुत्यं पृथक् कर्षत्रयं भवेत् ॥ १८९५ ॥
चूर्णान्येतानि संयोज्य स्थापयेच्छुद्धमाजने ।
शुद्धदेहो नरस्तस्य पानं यद्भोजनोत्तरम् ॥ १८९६ ॥
अद्यात्पथ्यं तत. स्वल्पं ततस्ताम्बूलभाग्भवेत् ।
उदराग्निं नरस्याऽस्य वडवाग्निरसो भवेत् ॥
वहुनाऽत्र किमुक्तेन रसायनमयं नृणाम् ॥ १८९७ ॥
र र स, अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—कान्तलोहका बारीक चूरा बनाय कमलकेफूलोंमें
घोटकर गजपुटकी जाचदे । स्वादुशीतलोहनेपर त्रिकलाके रसमें
घोटकर आचदे इसतरह बारितर भस्मकरले । मण्डूको बहेकेंके
कोयलोंमें तातापार ७ बार गोमूत्रमें बुनाकर शुद्धकरले और
भगोकेरसमें घोटघोटकर पुण्डेकर भस्मकरले । फिर कान्तलोह
भस्म ३ कर्ष, मण्डूभस्म ७ कर्ष, भुनासुहाया, मरिच और
तुत्यभस्म ३-३ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय रख
छोड़े वमन विरेचनादिकसे बारीकी शुद्धकर इसमेंसे १ रत्तीसे
लेकर १ माशेतककी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानके
साथ देकर स्वल्पपथ्य दे और ऊपरसे पानकाबीड़ा खिलावे ।
इससे अग्नि एकदम प्रदीप्तहोगाताहै और हमेशा सेवनकरनेसे
यह रसायनकाकाम करताहै ॥ ३८८ ॥

३८९ वडवानलरसः (प्रथम)

अधुना कथयिष्यामि वडवानलसन्त्रकम् ।
रसेन्द्रस्य च संप्रदातोऽस्त्रिपातोऽतिदाएण ॥ १८९८ ॥
अवश्य विनिवर्तेत का कथा ज्वरमात्रके ।
पूर्वमुत्पातितं सूतं भस्मीकुव्याद्विचक्षण ॥ १८९९ ॥
भस्मीकरणयोगोऽय कथ्यते सम्प्रदायत ।
विष्णुकान्तामुत्तराया वारणीश्च समाहरेत् ॥ १९०० ॥
उत्तरावारणीदुधे सस्यारिजरसेस्तथा ।
हसपादीरसेस्तद्वर्केश्वरीरस्तत परम् ॥ १९०१ ॥
यज्ञीश्वरीं ब्रह्ममूलरसे. सम्यक् प्रमर्दयेत् ।
कपिकचत्रुशिकारिं विष्णुकान्तारसेस्तथा ॥ १९०२ ॥
गारुडमूलनीरैस्तु रसे. पौनर्नवेस्तथा ।
पाठारसे देवदालीरसेश्च यवचिञ्चिजे ॥ १९०३ ॥
शतावरीरञ्जुनीजे मृत यत्नात्प्रमर्दयेत् ।
दिनानि दश सम्मर्द्यं दिवानकमतन्द्रित ॥ १९०४ ॥

तस्य कल्कस्य गोलं तु यन्त्रे सोमानले क्षिपेत् ।
 लेपञ्च सुदृढं दत्त्वा यन्त्रं चुल्यां नियेदायेत् ॥ १९०५ ॥
 एकविंशदिनं यावद्दग्निं संज्वालयेद्धः ।
 यन्त्रादुत्तारयेत्सुतं भस्मीभूतं सुपाण्डुरम् ॥ १९०६ ॥
 भस्मैतन्मारयेत्सोहं सुघर्णाद्यमसंशयम् ।
 लेपेन पुटयांगेन सर्वलोहानि मारयेत् ॥ १९०७ ॥
 एतद्भस्म समादधात्तोलमेकं महोन्ज्वलम् ।
 गन्धं मनःशिलां तालं प्रत्येकं तोलमाहरेत् ॥ १९०८ ॥
 सल्यमध्येऽथ तत्सर्वं मर्दयेद्धारणीरसेः ।
 दिनप्रयं निम्बुकीर्जिस्त्रिदिनं मर्दयेत्ततः ॥ १९०९ ॥
 चक्रधारान्समादध्यात्सर्जावान्निशतिद्वयान् ।
 पूर्वमर्दितफलकान्तः क्षिप्या रश्मिं विमर्दयेत् ॥ १९१० ॥
 दिनमेकं प्रयत्नेन तस्य गोलञ्च कारयेत् ।
 गोस्तनाकारमूपायां पद्मकुलकमानतः ॥ १९११ ॥
 पत्रायां निःक्षिपेद्गोलं मुक्तं सम्यङ्निरोधयेत् ।
 मूपासं धरणीमध्ये निरुत्तरेदर्शमुद्धतः ॥ १९१२ ॥
 विदध्यात्प्रकटां पद्मादुपलं धनसम्भवेः ।
 चत्वारिंशत्समाख्यातिश्चतुर्भिरधिकैः पुटेत् ॥ १९१३ ॥
 स्याद्भ्रूरीतलमहाहृष्य पूजयित्वाऽथ भेरवीम् ।
 रत्नैश्च सङ्घर्ष्य निक्षिप्य कण्ठे दन्तनिर्मिते ॥ १९१४ ॥
 ततः परीक्षा कर्तव्या रसस्य मतिमज्जनेः ।
 पात्रिकां जलपूषोञ्च कृत्वा तत्र निवेदायेत् ॥ १९१५ ॥
 सिद्धं रसं घट्टमानं पात्राऽऽच्छाद्येत चाऽन्यथा ।
 चतुर्भिः प्रहरैः सूतः पानीयं शोषयेद् ध्रुपम् ॥ १९१६ ॥
 पानीयशोषणत्वेन घडवानल ईरितः ।
 ज्वरितस्य ततो देवो गुञ्जामानो रसेश्वरः ॥ १९१७ ॥
 प्रदानक्षणमात्रेण देहेऽतिलधिमा भवेत् ।
 ज्वरयोगो निरर्तत शिरोऽर्ति नन्दयति क्षणात् ॥ १९१८ ॥
 सुसुप्ता महती सद्यो जायते भोजयत्ततः ।
 दुग्धमक्तं दाधिकं वा यावन्नृषिः प्रजायते ॥ १९१९ ॥
 सर्वेषां न निवर्तत सुसुप्ता यदि तत्र ये ।
 अन्यद्रसात्तरं तत्र कथ्यमानं प्रयोजयेत् ॥ १९२० ॥
 पूर्वशुद्धं रसं नीत्वा गन्धकेन समांशतः ।
 प्रमत्तमेपीचसया मर्दयेद्दिवसं ततः ॥ १९२१ ॥
 गोस्तनाकारमूपायां क्षिप्याऽथ पुटयेद्रसम् ।
 पूर्ववत्स्वाद्भ्रूरीतं तं पात्रेऽन्यस्मिन् विनिःक्षिपेत् १९२२ ॥
 पूर्वप्रयुक्तसूतस्य जायते चेदुपद्रवः ।
 तदुपद्रवनाशार्थं रसमेनं प्रयोजयेत् ॥ १९२३ ॥
 गुञ्जामानेन संहन्यादुपद्रवमसंशयम् ।
 एतत्सूतप्रयोगेण घनुयातो विनश्यति ॥ १९२४ ॥
 कण्ठकुञ्जकसञ्जोऽपि दन्तसङ्गीलनं तथा ।
 अयदर्थं नाशामपाति रसेन्द्रस्य प्रभायतः ॥ १९२५ ॥
 घनुयाते कण्ठकुञ्जे शैत्यं चातं विवर्जयेत् ।
 घडवानलसञ्जोऽयं रसेन्द्रो रोगभेदकः ॥ १९२६ ॥

सर्वेषामेव रोगाणां चन्द्रवालं निहन्ति वै ।
 अनुपानप्रयोगेण सर्वरोगनिवारणः ॥ १९२७ ॥
 रसात्, ज्वराऽधिकारं ।
 भाषा—ऊर्ध्वं, तिर्यक् और अरःपातनविद्येहए शुद्धपारकी
 भस्मकरे, उसकेलिये विष्णुकान्ता (सपेद्रकोयल) और चमार
 दूधी पारिके बराबरकेर कल्कचनाय पारिके मिलादे । फिर १-२
 पहरमर्दनकर गोवर्ष, चमारदूधीकादूध, अगियापास, हयराज,
 आक और पृथ्वीकादूध, फलाशवीजकास, केवांशकीज, काली-
 कोयल, गोसन्कीज, पुनर्ना, पाठा, कन्दाल, तिली, घता-
 पर, क्षीरकज्जुकी (यहतन्त्रप्रयोगमें इसीनामसे आयाकरतीहे
 यह एक घुआकी जातिहे इसमें काट नहींहोते । पत्ते पानकेसदृश
 दृढदारहोतेहे डंडी हरी और काली होतीहे बनास प्रान्तमें इसे
 नागदौन बोलेहे । नागदौन यह शब्द प्रत्येकप्रान्तमें अलग २
 वनस्पतिमें रूढहे रसौपधियोंमेंभी इसका परिगणन आयाहे)
 इनप्रत्येकके ययासन्भव स्वस्य अथवा दूधप्रभृतिरससे १०-१०
 दिन निरन्तर मर्दनकर गोलबनावे, बीचमें विधाम न होना-
 चाहिये दिनरातमर्दनकरे । फिर इसकी रोटीबैसी बनाय सोमा-
 नलयन्त्रमें रखकर ६-७ बपइमिटीसे सुंढवन्दकर समस्तपर
 ६-७ बपइमिटी मुखासुलाकरदेवे । फिर इसयन्त्रको बृहस्प
 रण २१ दिनतक नीचे निरन्तर भूमिदेवे, ऊपरकी हंडीपर
 पानीकापोता रखताजाय जिसमें कि अमिकी तेजुसे पाए उद
 न जाय (आजकल जो सोमानलयन्त्रके लक्षणमिलतेहे वे रसा-
 द्धारकताकेबेमतेले विद्वद्हे क्योंकि “ यन्त्र युक्त्वा निवेशयेत् ।
 एकविंशदिनं यावद्दग्निं संज्वालयेद्ध ” ऐसा वाचनिकमुताबे
 इन्होंने इसथाको सिद्धकियाहे) । २१ दिनकेबाद आगदेना
 बन्दकरदे और कोयले यथास्थित रहवेदे, पोतेकोभी हटादे ।
 स्वाद्भ्रूरीतलोनेपर यन्त्रको युक्तिये खोले ऊपरकीदृष्टीमें एकदम
 सपेद्ररस लगाहुई मिलेगी । कभी २ मोचेकी हण्डीमेंभी पदजाया-
 वतीहे इससबको बागनुवगेरहसे धोरजसे निकालकर रखोडे ।
 इसभस्मको मारकड्योकेलरसमें मिलाकर चित्तीभी पातुनेपत्रपर
 लेपकरे अग्निदेनेसे उत्तमभस्महोतीहे और विशेषगुणप्रद-
 होतीहे । यह पारकीभस्म, शुद्धगन्धक, मैनसिल और हरिताल
 १-१ तोषा केकर एकदिन शुद्धमर्दनकर इन्द्रायणकेपत्राङ्क
 और निम्बुल्लार्कीजकेरससे ३-३ दिनमर्दनकर ४० नग जीते-
 हुए सखलौको लेकर उनकेरसमें एकदिन निरन्तर मर्दनकर गोला-
 बनाय ६ अहुलकी पकीहुई गोस्तनीगुणामे बन्दकर मुसमुना-
 कर ३-४ बपइमिटीसमस्तपर लगाय मुखार आधीमूपाको-
 जिमीनमें गाड़े और ऊपरसे ४४ नग जलकीकण्डोंकीआचरे ।
 स्वाद्भ्रूरीतलोनेपर भेरवीकी पूजाकर चूर्णकर हापीदांतकी डब्बोंमें
 रखकर जलभरेपानमें डब्बोको डुवाकर रखे । इसमेंसे ३ रती
 रस पानीभरेहुएचनेमें डालकर सुद्धकदे तो ४ पहरकेभीतर
 पकेपापानी मुखपायगा, इसीलिये इसको घडवानल कहतेहे ।
 इसमेंसे १-१ रती उष्णितानुपानकेसाथ देनेसे क्षणभ्रमेमें शरीर
 हल्का होजाताहे और ज्वरज्वरितशिरोवेदनाप्रधति निवृत्तहोकर

मूखलगातीहै उसवक्त दूधमात अथवा दहीमात वृत्तकरके रिलाना । यदि मूख किसीतरहमी शान्त न हो तो नीचेलिखा-हुआ रस देना ।

पूर्वप्रकारसे शुद्धकियाहुआ पारा और गन्धक समभाग लेकर मस्तभेदही चर्बीसे एकदिनभदेनकर गोस्तनाकारमूपामे डालकर अच्छीतरह कपड़मिठीकर पूर्ववत् ४४ कण्ठोंकी, आवेदे स्वाज्ञ-शीतलहोनेपर निकालकर दूसरेपानमें रखडोड़े । अगर पहिले-रससे उपद्रव मालूम हो तो इसमेंसे १-१ रत्ती देनेसे तमाम उपद्रव नष्टहोजातेहै । इसके अतिरिक्त धनुर्वात, कण्ठकुञ्जक, दन्तवन्ध, येसब नष्ट होजातेहै । धनुर्वात और कण्ठकुञ्जकमें ठंडीचीनी और वायुका वर्जनकरे । इसमेंसे तत्तद्रोगहराणुपानोंके-साथ देनेसे यह तमामरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३८९ ॥

३९० वडवानलरसः (द्वितीयः)

गद्याणा दश ताम्रस्य तेषां पत्राणि कारयेत् । तानि कण्ठकवेध्यानि द्व्यङ्गुलीकाहुलानि च ॥१९२८॥ शुद्धसूतस्य गद्याणान्स्थाल्यन्ताविन्यसेद्दश । विशति निम्बुकानाञ्च खण्डानि शतशः क्षिपेत् १९२९, ततश्च ताम्रपत्राणि लयणं काञ्जिकेन च । आरनालधृतास्थालीमारोप्य चुहिकोपरि ॥ १९३० ॥ हठाद्बहिः प्रदीयेत् त्रिदिनञ्च दिवानिशम् । सक्षारे यहिना दग्धे काञ्जिकं प्रक्षिपेन्मुहुः ॥ १९३१ ॥ जायन्ते तानि पत्राणि श्वेतलव्यसमानि च । शुद्धगन्धकगद्याणशतं पिप्प्लाऽनु चूर्णयेत् ॥ १९३२ ॥ स्थालिकायां क्षिपेत्ततः पुनः प्रसारयेत् । पुनश्च गन्धकं दत्त्वा पूर्ववत्पत्रदापनम् ॥ १९३३ ॥ पिप्पलीघन्तूरकस्यैवदेयामृद्धीतयोपरि । पिघायाऽऽस्यं शराचेण दद्यात्कपटमृत्तिकायाम् ॥ १९३४ ॥ सुल्ब्यां स्थालीं निघायाऽऽसि एतुवामंज्वालयेद्दत्तत् । शीतामुत्तारयेत्स्थालीं ताम्रमेतायता मृतम् ॥ १९३५ ॥ विनाघन्तूरकं पिण्डं यामयुग्मं पुनः पचेत् । दत्त्वा हस्तिपुटं खल्वे क्षिपेत्ताम्रं रसान्वितम् ॥ १९३६ ॥ (आद्याणान्तप्रमाणाः स्यु र्गजलायककुपकुट्टाः) पिप्प्ला चूर्णं विघायाऽथ निर्गुण्डीस्वरसेन च । आद्रुण्डकरीलस्य त्रिफलाया जलेन च ॥ १९३७ ॥ गुण्येऽनुष्के पुनर्दयाः प्रत्येकं सप्त भावनाः । त्रिकट्फ्युभया देयाध्वंकार्विशतिभावनाः ॥ १९३८ ॥ सप्तेशोश्च रसेनेव कनकस्य रसेन च । निःसहायारसेनाऽपि यत्तनाभविषेण च ॥ १९३९ ॥ सर्वगुण्यञ्च तच्चूर्णं कृष्यां क्षेप्यं प्रयन्ततः । रक्षणीयमसौ नाम वडवानलरको रसः ॥ १९४० ॥ घट्टिकः शीतनीरेण पञ्चामृतजलेन वा । प्रत्यहं सततं प्राह्यः प्रातरुत्थाय रोगिणा ॥ १९४१ ॥ द्वादिशतिभेदेषु शलेषु विविधेषु च । अष्टादशसु कुष्ठेषु दशतीप्रतारोगिषु ॥ १९४२ ॥

अशःसु सकलेष्वेव गुरुरोगे विशेषतः ।

मन्दाग्रो चाऽन्यरोगेषु देयोऽयं रसरारकः ॥ १९४३ ॥

तेलक्षाराऽन्यवर्जञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ।

क्रमाद्रोगा विलीयन्ते सेचिते वडवानले ॥ १९४४ ॥

रसचि., र. कं. ली., सर्वरोगे ।

भाषा—पाचतोले शुद्धतावेके कण्ठकवेधीपत्र घनवायु १-१ अथवा २-२ अहुलके टुकड़े करावे । पाचतोले शुद्धपारेके मनुवृत्तहृष्टीमें डालर पकेहुए २० नीबुओंके छोटेछोटे सैकड़ों टुकड़ेकरके डालदे और ऊपरसे उन ताम्रपत्रोंके टुकड़ोंको फैलादे । ऊपरसे ४० तोले सैन्धवको काझीमें पीसकर डालदे । वाजीबचोहूई हृष्टीको साधारणकाझीसे भरके चूल्हेपर चढ़ादे और तीनदिनरातकी कड़ी अग्निदेकर पकावे । जब काझीसूखकर नीबू जलेलेंगे तब और काझी डालदे, ऐसे बारम्बार काझीको देवे अन्तमें कुलीगलाही उतारले । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरजसे तावेके पत्रोंको निकालले, इनकारत एतद्दम चादीकेसदस्त होजायगा । फिर ५० तोले शुद्धगन्धक पीसकर थोड़ासा दूसरी-हंडीमें विछाकर कुष्ठपत्रोंको विछादे । इसीतरह गन्धक और पत्रोंकी तह जमाकर धतूरेकेपत्रोंकाकलक हंडीमें मुंहतक भरके शरावसम्पुटकर ६-७ कपड़मिठी देकर सूरनेपर हंडीको चूल्हे-पर रख ६ पहरकी तीक्ष्णामि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर धीरजसे सम्पुटको खोलकर कलको पेंकडे और अवशिष्टपदार्थको ज्योंका त्यों रखकर दोपहरकी चूल्हेपर अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर दूसरे सम्पुटमें धतूरेकेरससे भिगोकर रखकर सम्पुटनकार २-४ कपड़मिठीदेकर गजपुटकी आवेदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह पीसकर निर्गुण्डी, अदरक, पियावासा, अमिलतास, त्रिफला इनके स्वरसोंकी ५-७ भावनाए देकर त्रिकटु की २१, ईश, धतूरा, आजास-बेल और यधनागके रसोंकी ७-७ भावनाए देकर अच्छीतरह सुराकर दहीमें रखडोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकी मात्रा ठंडेजल अथवा पञ्चामृतवेत्ताय औचित्यी देनकर प्रात काल देनेसे २० प्रकारके प्रमेह, नानातरहवेचूल, १८ प्रकारके कुष्ठ, ८० प्रकारकेपत्रारोग, समस्तवासीर, याकशयुद्धरोग, मन्दाग्नि इन सबको यह नष्टकरताहै और तत्तद्रोगहराणुगणकेसाथ देनेसे प्रायः सभीरोगोंको नष्टकरताहै । तैल, क्षार, रटाई, ये इयमें अपर्यह्ये । मधुरभोजन सेवन करानाचाहिये ॥ ३९० ॥

३९१ वडवानलरसः (तृतीयः)

रसवलिकुलिरानि स्युः पट्टन्यग्निजातो,

जलनिधिगुभफेनः कान्तलोहोऽङ्गनञ्च ।

मुजगरिषु गराहं तालकश्चेति तुल्या,

नय रचिभयदुग्धे मर्दितं भाजयेच ॥ १९४५ ॥

गजपुटगतमेतद्भाजयेत्काकमाची-

कनकविषकफलाहाप्राहृयशोथघ्ननीरः ।

तरणिःसुजयन्तीशीलकूर्पाक्षिरफ-

त्रिवृदितिसुरमाहायामकानां जलेन १९४६

तिमिमहिपमयूरच्छागपित्तं विमिश्रो,
भवति रसरोष्यं चाडवाग्निः प्रगल्भः ।

पत्रजनितरोगान्स्त्रिपातात्वाःफोत्था,
खयति हि निजघ्नः प्रोक्तरोगाऽनुपातैः १९४७
रघायनतं., र. र. दी., टो., र. वा., वातव्याघ्रधिकारे । र. र.
दी., टो. एतयोर्घडवाऽग्निरिति नाम ।

भाषा—शुद्ध पाटा और गन्धक, हीराभस्म, पांचौनमक,
अम्वर, समुद्रफेन, कान्तलोह, अपत्र (कालापुरमा), सुवर्ग-
माक्षिक इनकीभस्में, शुद्ध बलनाग और हरिताल येसब समभाग
लेकर पाठीकचूर्णकर पाँचान्धककी नीलवर्णरज्जलीमें मिलाकर
आग्नेदूषणे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर
१-७ कपडमिठी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वात्र-
शीतलहोनेपर निचालकर मनोय, धनुरा, कुचिला, श्यामी, पुन-
नंवा, आक, सपेदपुननंवा, जैत, कोयल, भंगरा, निगोत, तुलसी,
अड्वा, इनके यथासम्भस्वरग अथवा ऋषींसे १-१ भावना
देकर सूखनेपर मछरी, भेंसा, मोर और बकरेके पित्तोंसे १-१
भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपातनेयाथ देनेसे सन्नि-
पात, और कफजनित समस्त व्याधियां नष्टहोती हैं ॥ ३९१ ॥

३९२ बडवानलरसः (चतुर्थः)

शुल्वं तालकगन्धकी जलनिधेः फेनोऽग्निगर्भाशयः,
कान्ताऽयोलवणानि हेमपधनं गोनिर्गतं तुत्यकम् ।
भागो द्वादशको रसस्य तदिदं यज्ञान्मुष्टुष्टं दानैः,
सिद्धोऽयं बडवानलो गजपुटे रोगानशोपाञ्जयेत् १९४८
आर्द्रकस्य द्रवेणाऽमुं दशाराणि भावयेत् ।
दिनद्वयं चिप्रकस्य द्रावणेन तु भावयेत् ॥ १९४९ ॥
पादांशममृतं दत्त्वा चिप्रद्रावैः क्षणं पचेत् ।
मात्रया योजयेच्चाऽनु दशमूलपटतं पयः ॥ १९५० ॥
वातश्लेष्मप्रधाने च दद्यात्सूपणचिचिकम् ।
स्वेदञ्च कट्टुरुग्निग्या प्रमुञ्जीताऽतिपलतः ॥
दाहञ्च जल्योः कुर्याच्छीतप्रातश्च सर्जयेत् ॥ १९५१ ॥
र. र. घ., र. चं, र. शि, र. धं, र. क. यो, र. (मा.),
र. मू., वाताऽधिकारे । र. च, अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—ताम्र और हरितालभस्म, शुद्धगन्धक, समुद्रफेन,
अम्वर, कान्तलोहभस्म, पांचौनमक, मुनासुहागा, गोरोचन,
मुनातुतिया येसन १-१ भाग और पारदभस्म १२ भाग
लेकर सबको इन्के मर्दनकर धूपरकेदूषणे एकदिन मर्दनकर
गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपडमिठी देकर
सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वात्रशीतलहोनेपर निचालकर
अरखनेसेसरी १० दिन और चिचिकेवरसकी २ दिन भावनाएं
देकर सुखाकर चतुर्थीस शुद्धबलनाग मिलाकर चिचिके ऋषये
एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय फेफेपानोंकेअन्दर लपेटकर एक-
वालिस्तके मूषरयन्त्रमें रखकर लघुपुटकी आंचदे । स्वात्रशीतल-

होनेपर निचालकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखाओड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली दशमूलकेद्वार्यकेसाय अथवा दूधकेसाय
देनेसे यह तमाम वातरोगोंको नष्टकरता है । वातकफप्रधान-
व्याधियोंमें त्रिकटु और चिचिकेसायदे । कृत्ती प्रभृति वात-
रोगोंमें कङ्गीतुमडीकास्वेद और जांघोंमें दाह देवे तथा शीत
और वायुगे परदेइ रखे ॥ ३९२ ॥

३९३ बडवानलरसः (पद्यमः)

घञं कान्ताऽघ्नकं शुल्वं रसगन्धकतुत्यकम् ।
नीलाञ्जनाधिफेनाऽग्निजरायुलयणेः समैः ॥ १९५२ ॥
दानैर्मुतं योगपुष्टं पुटितं बडवानलः ।
द्विमुञ्जश्च घनुवातं सन्निपातोद्रादिकम् ॥ १९५३ ॥
र. शं., सन्निपाते ।

भाषा— हीरा, कान्तलोह, अपत्र और ताम्र इनकी-
भस्में, शुद्ध पाटा, गन्धक और तुत्य, सुरमेकीभस्म, समुद्रफेन,
अम्वर, पांचौनमक, सप्त समभागलेकर नीलवर्णरज्जलीकर सन्नि-
पातप्र दशमूलप्रभृतिजायोंसे भावनादेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर
३-४ कपडमिठी लगाकर धूपरयन्त्रमें स्वेदितकर २-२ रत्तीकी
गोलियां बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा
रोगोचितानुपातनेसाय देनेसे घनुवात, सन्निपात और उदररोगोंको
यह नष्टकरताहै ॥ ३९३ ॥

३९४ बडवानलरसः (षष्ठः)

कान्तञ्च सूतं हरितालगन्धं
समुद्रफेनं लयणानि पञ्च ।
नीलाञ्जनं तुत्यकमेव रूप्यं
भस्म प्रवालानि घटाटकाश्च ॥ १९५४ ॥
वेकान्तशम्भुकसमुद्रशुक्ति
सर्वाणि चैतानि समानि कुर्यात् ।
सूतं भवेद् द्वादशभागकञ्च
स्नुल्वर्कदुग्धेन विमर्दयेद्य ॥ १९५५ ॥
दिनत्रयं यह्निरस्तेस्तथा
निवेशयेत्ताम्रजसम्पुटे तत् ।
मृदा च संल्लिप्य सुसम्पुटे-
तद्रसस्ततः स्याद्बडवानलाख्यः ॥ १९५६ ॥
तरपाद्भागोने विर्षं नियोज्य
कृशानुतोयेन पचेत्क्षणं तत् ।
वातप्रधाने च कफप्रधाने
नियोजयेत्सूपणचिचिकुत्यकम् ॥
दोषत्रयोत्येऽपि च सन्निपाते
वाताऽधिकत्यादि निषृद्दनाय ॥ १९५७ ॥
शे. र., र. दी, र. घ., र. मू., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—कान्तभस्म, शुद्ध पाटा, हरिताल और गन्धक,
समुद्रफेन, पांचौनमक, सुरमेकीभस्म, शुद्धतुत्य, रजत, प्रवाल,
कौडी, वैकान्त, पौषा, मोतीकीसीप, इत्यवकीभस्में १-१

भाग, पारदभस्म १२ भाग लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर घृह और आकडे दूध तथा चित्रकके कायसे ३-३ दिनमर्दनकर गोला-बनाय तावैकेसम्पुटमैवन्दकर गजपुटकी आवडे । स्वाह्नशीतल-होनेपर चतुर्थांश शुद्धवज्रनामिलालके रखछोडे । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा त्रिकटु और चित्रककेचूर्णकेसाथ देनेसे वात अथवा कफप्रधान अथवा त्रिदोषप्रधानसमिपातोंको यह नष्टकरताडे । इसमें दोषोंके प्रबलीकरणको विचारकर अनुपातोंका योगकरे ॥ ३९४ ॥

३९५ वडवानलरसः (सप्तमः)

फान्तं माक्षिकराह्वनाभिलवणं वैकान्तनीलाञ्जनं,
गोलाले रविपिनकर्यमिति युक्तं शम्भूकसूताऽष्टकम् ।
निपिप्याऽथ दिनं सुयन्निलजलतो गतान्तरं त्रिःपुटान्,
सिद्धोऽयं वडवानलो विजयते गुञ्जाऽथ सर्वांमयान् ॥
र. सि., सर्वरोगे ।

भाषा—फान्त, सुवर्णमाक्षिक, शहनाभि इनकीभस्में, सैन्धव, वैकान्त और सुमेकीभस्म, शुद्धमैन्सिल, हरिताल, आनकीजइकीछाल और अफीम १-१ कर्ष, घोंघा और पारा ८-८ कर्ष लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर घृहकरेदूधसे एक-दिनमर्दनकर गोलाबनाय श्रावसम्पुटमें वन्दकर ६-७ कपइ-मिठीदेकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर फिर सेहृद्धकेदूधसे एकदिन मर्दनकर पूर्ववत् गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३ आंचे देनेकेबाद राखकर रत्नछोडे । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताडे ॥ ३९५ ॥

३९६ वडवानलरसः (अष्टमः)

स्वर्णं रौप्यसमं रसो द्विगुणितो द्वाभ्यां तथा गन्धकः
फान्तं स्वर्णसमं तथा विषमपि द्वाभ्यां समस्तालकः ।
तद्वरिसिन्धुलता समुद्रजनिता शुक्तिश्च फेनस्तथा,
क्षीरान्णाऽसुप्तसुप्तयेन द्विस्रं सप्तद्वितीऽथयम्बुना ॥
सर्पादाऽर्कजसम्पुटे सुपुटितो मूकपट्टेराचूतो,
गर्तान्तर्यडवानलो रसधरः पित्तैश्च सम्भावितः ।
सिद्धोऽस्ती धनुषोऽनिलं क्षपयति स्वीयाऽनुपाने युतो
गुल्मग्रीहभगन्दुप्रहणिकामन्दाग्निगुलनः ॥ ३९६ ॥
यहोन्मितः सथेयातमाद्रिकायु सितायुतः ।
जयेदधदयं मृतेदास्वधोमागगतानपि ॥ ३९६ ॥
गृहभ्रातरायेनेय मापतेलेन वा तथा ।
मर्दनं घाऽर्कतेलेन धनुषांतापनुसये ॥ ३९६ ॥
र., वातरोगे ।

भाषा—स्वर्ण और रजतभस्म १-१ भाग, पारदभस्म और शुद्धगन्धक ३-३ भाग, फान्तभस्म और शुद्ध वज्रनाम १-१ भाग, हरिताम्बुम अथवा रसमानिष्य, प्रवाल, मोतीकी लीपमम और समुद्रेन २-२ भाग लेकर चारिकपूनेकर पोरणभस्मकी नीतानेद्वन्तमें मिलाकर आकडे दूध और चित्रककेचूर्णसे १-१ दिनमर्दनकर गोलाबनाय बाराबरेके

सम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपइमिठी देकर सूखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर पांचोंपित्तोंसे यथाशक्य भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे धनुषांतमें वातत्र अनुपानकेसाथ ३ गोली एकघाय देनेसे हृजेनहीं अन्यत्र औचिनी देखकर १ अथवा २ गोलियां समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गुल्म, प्लीहा, भग-न्दर, प्रणो, मन्दाग्नि इत्यादिरोगोंको यह बहुतशीघ्र नष्ट-करताडे साधारणतया समस्तवातविकारोंमें अदरखकेस और शरकरकेसाथ देना । यह रस अधोभागगत वातविकारोंकोभी नष्टकरताडे । धनुषांतमें गृहभ्रातराया अथवा मापतेल अथवा अर्कतेलेसे मालिा करनीचाहिये ॥ ३९६ ॥

३९७ वडवानलरसः (नवमः)

शुद्धस्तस्य कर्षिकं गन्धकं तत्समं मतम् ।
पिप्पलीं पञ्चलवणं मरिचञ्च फलत्रयम् ॥ ३९६ ॥
क्षारप्रयं समं सर्वं चूर्णं कृत्वा प्रयत्नतः ।
निर्गुण्डयाश्च द्वयेणैव भावयेद्विनमेकतः ॥
वडवानलनामाऽयं मन्दाग्निश्च विनादायेत् ॥ ३९६ ॥
र. सं., अजीर्णाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा औरगन्धक, पीपल, पांचौनमक, मरिच, त्रिकटा, तीनोंक्षार, सब समभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर निर्गुण्टीकेसक्री एकदिन भावना देकर छायागुनकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक योग्यता देकर देनेसे यह मन्दाग्निनो नष्टकरताडे ॥ ३९७ ॥

३९८ वडवानलरसः (दशमः)

शुद्धसूतस्यभागः स्याताम्रचूर्णञ्च तत्समम् ।
द्विभागो गन्धकश्चैव त्रिभागश्च कटुत्रयम् ॥ ३९६ ॥
वह्निसूतस्यैकभागः कुष्ठं भागसमन्यितम् ।
ज्वालामुखीरसे मर्द्यं यद्दरास्थिप्रमाणकम् ॥
वडवानलनामाऽयं प्रथुतीयातनाशनः ॥ ३९६ ॥
व. रा., यो. म., वै. वि., रसेन्द्रं., मृतिहारोणे । रसेन्द्रमत्रसे
वडवामुलेतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और तावभस्म १-१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग, त्रिकटु ३ भाग, त्रिपकईजह और वृष्ट १-१ भाग लेकर चारिकपूनेकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर ज्वालामुखी (अमिसिता अथवा करिदाही) केरगणे एक-दिनमर्दनकर गुलाबर जइलीबेरीगुठनीके बराबर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-चिनानुपानकेसाथदेनेसे यह प्रथुतिताद्यो नष्टकरताडे ॥ ३९८ ॥

३९९ वडवानलरसः (एकादशः)

पारदं गन्धकं ताप्यं यद्यथाऽर्कसमञ्जसम् ।
अथयम्बुनाऽपिप्रेण सम्मयाऽथ द्विगुत्रकम् ॥ ३९९ ॥

भक्षयेत्पर्णखण्डेन हिंदुसिन्धुसुवर्चलेः ।
 दाडिमश्च तथा बिल्वं कार्पिकं भृङ्गजटयैः ॥ १९६८ ॥
 पिप्पला तु सुरया युक्तं देयं स्यादनुपानकम् ।
 सर्वगुल्मं निहन्त्याशु शूलश्च परिणामजम् ॥ १९६९ ॥
 र.सं., ध., र.चं, र.मु, रसायनसं., र.क, टो, र.र.दी, र.का, र.र.स, र.क यो., भै.र, र.को., वै.चि, व.रा., निर, र.र.कौ, गुल्मरोगाधिकारे ।

टि०—ध., र. का, र.र स, र.क यो, भै र, र को, वै चि, व रा, नि र, र र कौ, एषु ग्रन्थेषु शिविवाडवनाम्ना एषो रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यरमादभिन्न एवाऽस्त्यतस्तस्याऽप्यथैवाऽस्त्यर्थात् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक, यवशार, ताम्र और अभ्रकभस्म सबसेसमभाग लेकर चित्रकमूल और पके-पानकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बना कर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथ खारर भुनार्र्दंग, सैन्धव, सचल, अनारदाना, बेलगिरी समभागकाचूर्ण बनाय १ तोला भंगरेकेरसमें पीसकर तीक्ष्णमयकेसाथ फिलानेसे सबप्रकारके गुल्म और परिणामशूलको यह स्तकाल नष्टकरताहै ॥ ३९९ ॥

४०० वडवानलरसः (वृहन्) (द्वादशः)

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
 अम्रकं वत्सनाभश्च दारुजङ्गमजं विपम् ॥ १९७० ॥
 जैपालात्साऽर्द्धशतकं सर्वं सञ्चर्य मर्दयेत् ।
 मत्स्यमाह्वियमायूरच्छागपित्तं विभावेयेत् ॥ १९७१ ॥
 घटिकां शीततोयेन कुर्याद्ब्रुह्मप्रमाणतः ।
 वडवानलनामाऽयं मारिकेलजलेन वै ॥
 भक्षयेत्सन्धिपातातौ मुकत्वस्मात्सुखी भवेत् १९७२
 र स., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, अभ्रकभस्म, शुद्धबछनाग, दालचिक्ना, सर्पविप येसव १-१ तोला, शुद्धजमालगोटा १५० नग लेकर घक्का बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर मछली, भेंसा, मोर और बकरे पित्तोंसे १-१ दिन भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली ठंडेपानी अथवा नारियलके जलनेसाथ देनेसे सबप्रकारकेसभिषात निवृत्तहोतेहै । जुहुर रत पद्मेनर जलयोगकरना ॥ ४०० ॥

४०१ वडवानलरसः (स्वल्पः) १३

शुद्धताम्रस्य भागैकं मरिचस्य तथैव च ।
 विपं तत्तुल्यकं दद्यात्सर्वं शृङ्गं सुवर्णितम् ॥ १९७३ ॥
 लाङ्गलीरससंयुक्तं तत्सर्वं पुटके पचेत् ।
 रक्तिकाऽर्द्धं समग्रं वा वटीमानं प्ररूपयेत् ॥ १९७४ ॥
 दोषे व्योपसमायुक्तो त्रिदोषशमनो भवेत् ।
 भक्षयेत्पचने चोत्रं वडवानलसञ्ज्ञितम् ॥ १९७५ ॥
 र स, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म और मरिच १-१ भाग, शुद्धबछनाग २ भाग, लेकर सबका बारीकचूर्णकर करिहारीकन्दकेरससे एक

दिन मर्दनकर गोलानाय पानमें लपेटकर पुटपाककरे अथवा भूषरयन्त्रमें ह्वेदेनकर अभी अथवा १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली औचित्तोदिसकर समय अथवा रोगोचितानुपानके साथ देनेसे यह सत्रिपातज न्याथि-योंको नष्टकरताहै । साधारणतः त्रिकटुसेसाथ देनेसे सत्रिपात नष्टहोताहै । प्रबलवातन्याथियोंमें वातत्र अनुपानोंकेसाथ देना ४०१

४०२ वडवानलरसः (चतुर्दशः)

सूतं भुजङ्गममृतं लवणं हरिद्रा
 व्योपं धनञ्जयजटाऽवनिभूषरित्री ।
 अष्टौ दशद्वयनिधित्रयभागसङ्घैः
 शोभाञ्जनाऽर्द्धकरीरकवीजपूरैः ॥
 निम्बूफणीश्वरलतोथपलाशतोयैर्भावं
 विशोष्य विशादं प्रविधाय चूर्णम् ॥ १९७६ ॥
 रसायनसं., र.स, र. (मा.), र सं. क, र. का, यो. चि, वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा और नागभस्म ८-८ भा, शुद्धबछनाग और सैन्धव १०-१० मा, हल्दी और त्रिकटु, ५-५ मा., चित्रकमूल गन्धक और भुईआवला ३-३ भागलेकर बारीक-चूर्णकर सहिजन, अदरक, करीर, विनोरा, नींबू, पान, पलाशकी बड़कीछाल इनप्रत्येकके अथासम्भबत्वरस अथवा द्रवोंसे १-१ भावना देकर सुखार चूर्णवनाय कथछानकर रखोछे । इनमेंसे ३-३ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे मन्दाग्नि, समस्तवातविकार, अरुचि, शूल, वमन इनघबको यह नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ वडवानलरसः (पञ्चदशः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं ताम्राऽर्द्धद्वयम् ।
 सामुद्रश्च यवशारं स्वर्जितेन्धवनागरम् ॥ १९७७ ॥
 अपामार्गस्य च शारं पालाशं वत्सनाभकम् ।
 प्रत्येकं सूततुल्यं स्याच्चण्डाम्लेन मर्दयेत् ॥ १९७८ ॥
 हस्तिकर्णाय द्वयेश्वाहो हार्द्रयुक्तं पुटेल्लघु ।
 मारिकं भक्षयेत्त्रित्यं रसोऽयं वडवानलः ॥
 सर्वान् गुल्माग्निहन्त्याशु प्रहणीश्च विशोषतः ॥ १९७९ ॥
 यो. र, रसायनसं., र क यो, र म मा, (शुल्मे) र. स., व रा, र को, र का, प्रहण्यधिकारे ।

टि०—र स, व रा, र को, र का, एषु वडवानलरस इति नाम । अत्र पलाश वत्सनाभकमित्यस्य स्थाने पलाशवर्णस्य च इति, तथा हस्तिकर्णाय द्वयेश्वाहो इत्यस्यस्थाने हस्तिगुण्टीद्वैधाराणिकिति वाट ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और अभ्रकभस्म, मुनाग्रहागा, समुद्रनमक, यवशार, सजी, सैन्धव, सोंठ, अगामाग और पलाशकाशर, शुद्ध बछनाग येसव समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर चण्डाम्ल, हस्तिकर्णपलाश, अदरक इनके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर पुटपाक अथवा भूषरयन्त्रसे गरमहोनेतक ह्वेदेनकर उकदरवार गोलिया बनाकर रखोछे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा

रोगोचितानुपानकेषां देनेसे समस्त गुल्म और प्रद्वणीरोगको यह नष्टकरताहै ॥ ४०३ ॥

४०४ वडवानलरसः (पोडशः)

द्विद्वलसम्भवं सूतं गन्धकं शृतताप्रक्रम ।
सम्पक्कं शुद्धं तथा कान्तं वङ्गं चापि शिलाजतु ॥
तुल्यं रसाङ्गनञ्चैव तालकं शङ्खमेव च ।
वराटकञ्चाऽपि तुल्यं जयपालं द्विगुणीकृतम् ॥१९८१॥
हृषुपां पञ्चलवर्णं पञ्चकोलकसंयुतम् ।
विडङ्गं पिप्पलीमूलं प्रियङ्गुरजमोदकम् ॥ १९८२ ॥
द्वौ क्षारौ कुष्ठमेला च लवङ्गं जीरकद्वयम् ।
शटी दन्ती त्रिवृद्यैव त्रिफला गजपिप्पली ॥१९८३॥
सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्ये भावयेत्त्रिफलाजलैः ।
सप्तधा खलु पोषाणे प्रचण्डातपशोपितम् ॥ १९८४ ॥
हरीतकीरसेनाऽथ पुनः सञ्चर्ष्ये यत्नतः ।
पञ्चरक्तिप्रमाणान्तु यदिकां कारयेद्भिरपक् ॥ १९८५ ॥
पैकेकां सादयेत्प्रातः शृङ्गवेररसाऽऽप्लुताम् ।
हन्ति कुष्ठं तथा मेद आममारुतमेव च ॥ १९८६ ॥
श्रीपदं गण्डमालाञ्च गलगण्डं भगन्दरम् ।
नाडीं दुष्टप्रणञ्चैव अन्नवृद्धिञ्च दाक्षयाम् ॥ १९८७ ॥
अम्लपित्तं रक्तपित्तं पक्विक्षुलं हलीमन्त्रम् ।
यातरक्तं यातरक्तमुपदंशं सपीनसम् ॥ १९८८ ॥
पञ्च गुल्मास्तथाऽऽनाहं श्लेहशोथज्वरानपि ।
उदराणि तथा कासाग्रसोऽप्यं वडवानलः ॥ १९८९ ॥

र. र., व. रा., वृष्टे ।

भाषा—द्विद्वलमे निकालाहुआ पारा और गन्धक, साप्र, कान्तकोह, वत्त इनकीभस्में, शिलाजीत, भुनाहुआ तृतिषा, सौत, हरिताल, दह, कौडी इनकीभस्में १-१ माग, छुद जमालगोटा २ माग, डाऊ, पांचोमक, पञ्चकोल, विटक, पिलामूल, प्रियङ्गु (गेहुंला), अजमोद, दोनोशार, वृष्ट, श्लायनी, लौग, दोनोजरी, कपूर, दन्तीमूल, निचांत, त्रिफला, और गजरीफल १-१मागलेखर बारीकबुनेकर पोरगन्धककी नील पांशुमयीमे मिलाकर पन्चकोलमे त्रिफला और हरेकिपांशोसे कहीपुसमे ७-७ भावनाएं देकर ५-५ रत्तीकी गोलियेचनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरसकेरसेताप सेनेसे वृष्ट, मेद, आमवात, शीपद, गण्डमाला, गलगण्ड, भगन्दर, नाडीमग, दुष्टरा, अन्नादि, अम्लपित्त, रक्तपित्त, पक्विक्षुल, हलीमक, वातरक्त, वातकर, उपदंश, पीनस, पांचोमूल, अनाह, श्लेहा, शोथ, ज्वर, उदर, काय इनगुषो यह नष्टकरताहै ॥ ४०४ ॥

४०५ वडवानलरसः (सतदशः)

रसगन्धी समी गृतमागनुस्यस्तु टङ्गणः ।
त्रिभित्त्रिकटुकैः सुव्यं सङ्घपं टङ्गुपांताकम् ॥१९९०॥
सूतांदाहो भीममेतः पिपं गृतनुपांताकम् ।
निम्बुनरीण सत्प्रादं वासमर्दुरेण थ ॥ १९९१ ॥

पञ्चकोलकपायेण मर्दयेत्सप्तधासरम् ।
जम्बीरनरीण तथा भृङ्गनिर्गुण्डिजद्रवैः ॥ १९९२ ॥
भद्गातकानां कायेन शृङ्गवेराऽऽभुना तथा ।
वडवानलसूतः स्यात्सर्वाऽजीर्णापिनाशनः ॥ १९९३ ॥
शृङ्गवेराऽभुना मापं विसृच्यां सम्प्रयोजयेत् ।
विलम्बिकामजीर्णञ्च पद्विषं नाशयेत्क्षणात् ॥१९९४॥
दिनं दिनं न्यैः सेवेत भीमाहारः स जायते ।
तीर्णामित्रिजायते तस्य पद्सं नं प्रशाम्यति ॥ १९९५ ॥

२., र. यो., अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और शुद्धाग, सौत, मिर्च, पीपल, सैन्धव और छुदकपूर १-१ माग, छुदपत्तनाग ३/४ माग लेखर बारीकपूर्वकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय नीच, कगोजी, पञ्चकोल, जंभीरी, भंगरा, निर्गुण्डी, भिलांगो, अदरक इनप्रत्येककेदोनोंसे ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखाछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक औषिती देखकर अदरसकेरसेकेगाथ देनेसे हैजा, विलम्बिका, ६ प्रकारका अजीर्ण इनसबको नष्टर तीर्णामित्रो करताहै जोकि पद्मभोजन करनेपरभी दान्तनहैहोता ॥ ४०५ ॥

४०६ वडवानलरसः (अष्टादशः)

रसं गन्धं शिलां तालं मयं निर्गुण्डिकारसेः ।
त्रिदिनं निम्बुनरीण तावदेव विभाषितः ॥ १९९६ ॥
सर्वस्माद्दिगुणा मर्चाः शम्भुका जीवसंयुताः ।
गोस्तनाकारमूपायां भूपरे पुटयेत्ततः ॥ १९९७ ॥
सिद्धो भवति सूतेशो वडवानलसञ्चितः ।
गुञ्जा जयेत्सन्निपाताग्विपमाऽविपमानपि ॥
पथ्यं दुग्धोदनं शस्तमतितापे पृथग्विधिः ॥ १९९८ ॥
२., र. सु., र. क. यो., घषिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, मेनसिल और हरिताल गम-भाग लेखर निर्गुण्डी और नीचूकरतोंसे ३-३ दिन मर्दनकर सपसे दूनेप्रमाणमें जीवैरुप पोषे दालकर मर्दनकरे । फिर गोलकनाथ गोस्तनाकारमूपाये बन्दकर २-४ कपडमिठीदेखर सूतनेपर भूपथ्यमें पुटदे । स्यात्सीतल होनेपर निहालकर रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ रत्तीरीमात्रासमय अथवा रोगोचिता-नुपानकेगाथ देनेसे घषिपात और विषम अथवा नित्यभोजनसे ज्वरको यह नष्टकरताहै । इनमें पथ्य दूग्धातरना । अन्यन्त दाह मादमहोनेपर उगरे ज्वनकरनेका उपायकरना ॥ ४०६ ॥

४०७ वडवानलरसः (उनविंशः)

त्रिसिन्दूरं समं घृत्या निश्चन्द्रं सुस्ततालकम् ।
अमूनं ताम्रपूर्णञ्च रेणुकां यत्रिमूलकम् ॥ १९९९ ॥
समांशेन ततः गृहं गन्धकं मलयन्मुष्ठीः ।
विषमुष्टिञ्च भार्गवकं कारञ्चयन्मेन तु ॥ २००० ॥
पाण्ड्याद्या तन्मसंमेषयिदतिगम्यया ।
शरिपर्यं तयों याज्यं मर्दयिष्या विचक्षणः ॥ २००१ ॥

गुजाऽर्द्धं भक्षयेत्प्राज्ञः सर्वव्याधिं विनाशयेत् ।
 वातक्षयाऽऽमरीकुष्ठसन्निपातभगन्दरात् ॥ २००२ ॥
 कूर्मासनं लिङ्गभङ्गं कटीशूलं ततः परम् ।
 शुद्धभङ्गमपस्मारं लूतामुन्मादनाशनम् ॥ २००३ ॥
 कर्णाऽश्नोश्च शिरःपीडा गलग्रहश्च छिद्रकम् ।
 ग्रीहानं पङ्कतां शोथं लोहजालश्च पीनसम् ॥ २००४ ॥
 प्रमेहग्रहणीश्लेष्मविपमज्वरनाशनम् ।
 अत्रबुद्धिं शिरःस्वेदमशांसिपाण्डुकामलाम् ॥ २००५ ॥
 अरुचिं मूत्ररुच्छ्च देयं जीवस्य संशये ।
 हरते सर्वरोगांश्च शृङ्गवेररसेः सह ॥ २००६ ॥
 घडवानल इति ख्यातो रसानामुत्तमो रसः ।
 सर्पलोकहिताधीयं हुक्तोऽस्ती यतिकोविदैः ॥ २००७ ॥
 रं ज्ञा, रसायने ।

भाषा—त्रिसिन्दूर (अभ्रक, कान्त और लोहसिन्दूर),
 हरितालभस्म, शुद्धबछनाग, ताम्रभस्म, रेणुका, चित्रकमूल येसव
 १-१ भाग, शुद्धपारा और गन्धक सबकी बराबर, शुद्धकुचिला
 १ भाग लेकर सबकावारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण-
 कजलीमें मिलाकर करञ्जवीछालकेरससे ०१ दिन मर्दनकर आक,
 सेहण्ड और अगुलियायूहरके दूधसे १-१ दिन मर्दनकर आधी
 आपोरत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातस्य, अमरी,
 कुष्ठ, सन्निपात, भगन्दर, कडुहरी, ध्वजमज्ज, कटिशूल, शुद्धप्रस,
 अपस्मार, मक्की, उन्माद, कान आल और सिरकीपीडा, गल
 ग्रह, तालुछिद्र, ग्रीहा, पङ्कता, शोथ, गलरोहिणी, पीनस, प्रमेह,
 प्रह्वणी, श्लेष्मविकार, विपमज्वर, अन्त्रबुद्धि, सिरकापसीना,
 बवासीर, पाण्डु, कामला, अरुचि, मूत्ररुच्छ्च इनसबको यह
 नष्टकरताहै और जिससमय कोईभी दवा काम न करतीहो,
 जीवन सहायप्रस्तहो, उससमय अदरखकरकेसाथ इसका
 प्रयोगकरना ॥ ४०० ॥

४०८ बडवानलरसः (विंशः)

तालादेको रसादेक पकः सीसकभस्मनः ।
 द्वी भागौ गन्धकाच्छुद्धान्मरिचात्पोडशांशकः २००८
 चूर्णं कृत्वा रक्तिकैका घृतेन सह भक्षिता ।
 विसृच्चिं सर्वशूलानि ग्रीहानमुदरन्तथा ॥ २००९ ॥
 गुल्मं सङ्ग्रहणीरोगं श्वासकासगलाऽनिलान् ।
 अग्निमान्वादिकात्रोगान् हन्यसौ बडवानलः २०१०
 वै मृ, र सु, रसायनस, र पा., नि र, अजीर्णाऽधिकारो ।
 र सु, नि. र., र पा, एतेषु तात्त्व्याने वन्न नियोजितम् ।
 भाषा—हरिताल, पारद और नागभस्म १-१ भाग, शुद्ध
 गन्धक २ भा, मरिच १६ बां भाग लेकर सबका वारीकचूर्ण
 कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा धीकेसाथ देनेसे
 हैजा, सबप्रकारकेशूल, ग्रीहा, उदररोग, गुल्म, सङ्ग्रहणी, श्वास,
 कास, गलरोग, वातरोग और मन्दाग्नि येसव नष्टहोतेहैं ॥ ४०८ ॥

४०९ बडवानलरसः (एकविंशः)

तुल्यः पारदपारदाभ्युदकृतो मयोंऽर्द्धयामाद्रसः,
 गृह्णीयादिति सप्तधा रससमं घृष्टं विषं सङ्घिषेत् ।
 खल्वे स्याद्बडवानलः ससिक्तो यस्तण्डुलोन्मीलितः
 मुत्ताधामयसन्निपातदहनः पथ्यं सिताऽम्भोदधि ॥
 र. श, सन्निपाते ।
 भाषा—शुद्ध पारा, शिगरिक और नागमोथा १-१ तोला
 लेकर एकपहर मर्दनकर एकतोला शुद्धबछनागका बहुतवारीकचूर्ण
 डालकर एकदिनभर घोटें, इसीप्रकार दूसरेदिनभी डालें । ऐसे ७
 दिनतक नया बछनाग डालकर १-१ दिन मर्दनकरें । इसमेंसे
 १-१ चावलभर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे
 कुष्ठवात और सन्निपात प्रशुतिको यह नष्टकरताहै । इसमेंपथ्य
 शकरका शरवत और दहीदेना ॥ ४०९ ॥

४१० बडवानलरसः (द्वाविंशः)

रसांशकं विपञ्च स्यात् पट्टपट्टगन्धकतालयोः ।
 दन्तीवीजस्य पङ्कगाः पञ्चभागान्तु टङ्कणम् ॥ २०१२ ॥
 चत्वारो धूर्तवीजस्य व्योपभागत्रयं भवेत् ।
 एतानि वह्निमूलस्य कायेन परिमर्दयेत् ॥ २०१३ ॥
 आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं गुजाद्वयं द्वयम् ।
 बडवानलसञ्जोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ २०१४ ॥
 नारिकेलोदकं देयं पिबेच्च शर्करोदकम् ।
 क्षीरानं दापयेत्पथ्यं घडवानलनामके ॥ २०१५ ॥
 र क, र क.यो, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और घटनाग १-१ भाग, शुद्धगन्धक,
 हरिताल और जमाल्मोटा ६-६ भाग, मुनाछुदागा ५ भा.,
 शुद्धधतूरेके बीज ४ भा, त्रिकटु ३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर
 पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय चित्रकमूल और अद-
 रखके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-
 चितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ।
 अल्पन्तप्यास लगनेपर नारियलहाजल और शक्करका शरवत
 देना । ज्योदा मूख लगनेपर दूधभातदेना ॥ ४१० ॥

४११ बडवानलरसः (त्रयोविंशः)

लम्बितवह्निजरायुज्ररसाऽभि-
 पेकाऽभिमुच्छित्तोरसेन्द्रः ।
 गामयस्थयटिकान्तरसंस्थः
 स्वल्पवह्निपुटितो मुहुरेवम् ॥ २०१६ ॥
 गन्धके द्विशुणितेऽथ मुजोर्णे
 जारयेत्तदनु हेम विशुद्धम् ।
 पञ्चपित्तकटुतोयसूच्छित्त. सूतः ॥
 एकोऽपि हि विद्रोपोदधि-
 श्लेषो बडवानलः ख्यातः ॥ २०१७ ॥
 र (मा), त्रिदोष ।

भाषा—मोटा जललीकण्डा लेकर बीचमें दो अहुलका खड़ा बनाकर गोबरसे लीपकर चित्रना बनाले और सूखनेपर नीचेसे आगलगावे । जब कण्डेमें आपेतक आग पहुंचजाय तब खड़ेमें पारेको डालकर ऊपरसे अन्वरको पानीमें हलकरके पारेपर चोवा देवे अथवा अमिश्रित्वामें १-२ दिनपारेको घोटकर टिकड़ीबनाकर रखे और ऊपरसे चोवादे । ऐसे एकपड़तक आंचलानेकेबाद चोवादेना बन्दकरदे और पारेपर दीबलीरय बपड़मिठीसे सन्धिबन्दकरदे । अथवा कण्डेमेंसे निकालकर दो दीबोंमें बन्दकर २-३ कपड़मिठीदेकर बहुतहल्की आंचदे फिर अमिश्रित्वाकेरसमें मदनकर टिकड़ीबनाय पूर्ववत् चोवादे । ऐसे ज्वतक भस्म न होजाय तवतक करताजाय फिर कण्डेहीपर द्वागन्धक जारणकरे । इसेवादे द्विगुण सुवर्णके चूर्णमें मिलाकर अमिश्रित्वाके रसेसे घोटकर थोड़ी थोड़ी आंचदे । जब सुवर्णकीभस्म होजाय तब इसमें पाचोंपित्तों और कुटकीके स्वरसकी १-१ दिन मावनाएं देकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे यह अकेला त्रिदोषपीसमुद्रको सुखानेकेलिये वडवानलजैसा कामकरताहै ॥ ४११ ॥

४१२ वडवानलरसः (चतुर्विंशः)

त्रिकटो द्वादश भागाः दशाष्टौ सैन्धवस्य च ।
द्वोच भागौ हृदिद्याया एकः केरभकस्य च ॥ २०१८ ॥
वत्सनाभस्य नागस्य सूतस्य त्रितयं तथा ।
प्रवलाऽग्निकरः प्रोक्तो रसोऽयं वडवानलः ॥ २०१९ ॥
र. (मा.), अमिमान्द्ये ।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, सैन्धव १८ भा., हल्दी २ भाग, बहुरा, शुद्धवज्रनाग और नागभस्म १-१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर ३ भाग लेकर सफ्फा बारीकचूर्णकर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर रखओड़े । इसमेंसे ३ से ६ रतीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे यह प्रचण्डामित्रो करताहै और मन्दाभित्रजित समस्तारोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

४१३ वडवानलरसः (पञ्चविंशः)

रसमागो भवेदेको गन्धको द्विगुणो मतः ।
त्रिगुणञ्च विषं प्राहं कणाभागचतुष्टयम् ॥ २०२० ॥
लाङ्गली पञ्चधा प्रोक्ता सर्वभेदप्र मर्दितम् ।
भाषयेन्निष्ठुकद्रव्ये दिनमेकञ्च शोषयेत् ॥ २०२१ ॥
मरिचस्य प्रमाणेन घटिकां कारयेद्बुधः ।
घायोऽधतुर्पातिश्च हन्ति श्रेष्ठादातानि च ॥ २०२२ ॥
कुष्ठरोगांश्च सर्वांश्च ह्रीहृत्सुमोदराणि च ।
शुभ्रसौं कटिशूलञ्च शूलमूलान्यनेकराः ॥ २०२३ ॥
भेदोवृद्धेश्च शमनो पहिर्दीप्तिकरः परः ।
अयं नागाहृत्तप्रोक्तो रसो ये वडवानलः ॥ २०२४ ॥
मा. वि., नि. र., वातव्याध्याधिकारः ।

३१—विण्टुसतारो द्वाङ्गुलानां विनागम्लविण्टुसतारो विषय
नागरिनामा ४३४३ पाट प्रथमः, तत्र सप्तपदात्तु भक्तः प्रथमः
पाटपरवमः पाट ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., गन्धक २ भा., शुद्धवज्रनाग ३ भा. पीपल ४ भा., करिहारी ५ भा., लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलगन्धकजलीमें मिलाकर नीचूकेरसकी एकदिन भावनादेकर मरिचबरावर गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे ८४ वातरोग, समस्त श्लेष्म और कुष्ठरोग, गीह, गुल्म, उदर, श्प्रसी, कटिशूल, साधारणशूल, सैकड़शूलोंकेकारण, वेद, मन्दाभि, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

४१४ वडवानलरसः (षड्विंशः)

रसं गन्धञ्च द्रवदं सोमलं जयपालकम् ।
तालञ्च वत्सनाभञ्च समभागं विचूर्णयेत् ॥ २०२५ ॥
कारवल्लीरसेनैव गुटिका मुद्गसन्निभा ।
शर्करासहिता देया पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ॥ २०२६ ॥
वडवानलनामाऽयं वातरोगान्निनाशयेत् ।
कफजान् व्रणविस्फोटानुपुद्गशमवानपि ॥ २०२७ ॥
र सि, वातव्याध्याधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिगारिफ, सोमल, जमाल, गोटा, हरिताल और वज्रनाग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलगन्धकजलीमें मिलाकर करेलेकेरसमें एकदिन मदनकर मूंगबरावर गोलियेबनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली शर्करकेसाय देनेसे समस्तवात और कफकेरोग, व्रण, विस्फोट, उपदेश इनसबको यह नष्टकरताहै । इनमें दूध, भात पच्यदेता ॥ ४१४ ॥

४१५ वडवानलवटी (प्रथमा)

पारदस्य त्रयो भागास्तावन्तो गन्धकस्य च ।
नागस्य भस्मनस्तद्व्यत्यारो गगनस्य च ॥ २०२८ ॥
कटुत्रयं त्रिभागं स्यादष्टौ स्युः दक्षिभस्मनः ।
द्वौ क्षारौ सैन्धवं हेम विडं सौवर्चलं तथा ॥ २०२९ ॥
खर्परं प्रावमेदी च पृथग्भागं समाहरेत् ।
सञ्चूर्यं शृङ्गेर्यस्य नीरेण परिभाचयेत् ॥ २०३० ॥
मातुलुङ्गस्य नीरेण शमीमूलरसेन च ।
ज्वालामुखीरसेनाऽपि चणकशारवारिणा ॥ २०३१ ॥
प्रत्येकं भावनास्तित्तो दातव्या गुरुयुक्तिः ।
शृङ्गेर्यरसेनेन प्राप्ता चङ्गमिता वटी ॥ २०३२ ॥
अग्निमान्द्यं निहन्त्येषा वडवानलसञ्चिन्वता ।
मन्देऽप्रावर्च्यौ गुल्मे हाजार्णं च जलोदरे ॥ २०३३ ॥
विमूर्च्छां प्रहृष्टीरोगे तथा ये राजपहमणि ।
वैध्यानीरेण विदिता पहिर्दीपनकारणात् ॥ २०३४ ॥
र. का., अमिमान्द्ये ।

भाषा—पारदा, गन्धक और नागभस्म ३-३ भाग, अश्रकमम् ४ भाग, त्रिकटु ३ भा., दक्षिभस्म ८ भा., घृवी, सुहाग, गन्धक, शुद्ध धर्मेकेबीज, विट्शर, गन्धक, शिगारिफा, पावानभेद देवर १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे

गन्धकरी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर अदरक, विजोरा, शमीकी जड़कीछाल, हुरहुर अथवा सूर्यसुरी, चनेकाखार, इनप्रत्येकके शक्की ३-३ भावनाएं देकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अरुचि, गुल्म, अजीर्ण, जलोदर, हेजा, प्रहणी, राजयक्ष्म, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१५ ॥

४१६ बडवानलवटी (द्वितीया)

तालं ताप्यं कनरुकुन्दनीकान्तगन्धाऽर्कसूतैः, स्तुल्यांशुस्तेररणमधुरं दीप्यकं सर्वतुल्यम् । पतैः सर्वैस्त्रिकटु च समं कज्जलीहृत्य सर्वं, हिङ्गुवम्भोभि मुनिमितदिनें भावियेतसप्तहृत्यः ॥२०३५॥ जयन्त्याः कारुमाच्यथाश्च निर्गुण्ड्याश्चाद्रिकस्य च । स्वरसे भावयेत्पिप्ला सष्टदेव दिनेदिने ॥

कर्तव्या मापकेस्तुल्याभ्यायागुप्ताश्च गोलिकाः २०३६ हृन्त्येपा धडयानलाख्यगुटिका संसेचितोष्णाम्बुना, सर्वं शूलगदं किर्मीश्च सफलान्यैषम्व्यवृत्तिं क्षुधः । मन्दाग्निं प्रहणीगदं श्वयथुरुक्क पाण्डुञ्च गुत्तमार्शत्सी, वातश्लेष्मगदं तथोदररुजं श्वासञ्च कासी ज्वरम् २०३७ र. र. उ., र. बो., चि. क. शूले ।

भाषा—शुद्धहरिताल, सोनामारी, सुवर्णभस्म, शुद्धमैन-सिल, कान्तलोह, शुद्धगन्धक, ताम्रभस्म और शुद्धपारा येसब १-१ भाग, निशोत और पुरानागुड़ ८-८ भाग, नई अजवाइन २४ भाग, त्रिकटु ४८ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारोग्णककी-नीलवर्णकजलीमें मिलाकर हृणिकेजलसे ७ दिन, जैत, मकोय, निर्गुण्डी अदरक इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१ मासकी गोलियें बनाय छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ अथवा गरमजलकेसाथदेनेसे एषप्रकारके शूल, हृमि, क्षुधाकी विषमता, मन्दाग्नि, प्रहणी, शोथ, पाण्डु, गुल्म, बवासीर, वातश्लेष्मरोग, उदररोग, क्षाम, कास, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ४१६ ॥

४१७ वमनामृतयोगः

गन्धकः कमलाशुध्वा यष्टीमधु शिलाजतु । यद्राशो टङ्कणाश्चैव सारङ्गस्य च शृङ्गकम् ॥२०३८॥ चन्दनञ्च तयक्षीरी गोरौचनमिदं समम् । चिल्वमूलकपायेण मर्दयेद्याममाप्रकम् ॥२०३९॥ मात्राञ्चैव प्रक्षुर्वीत धहृत्स्यैव प्रमाणतः । नानाविधाऽनुपानेन छदिं हृन्ति त्रिदोषजाम् ॥२०४०॥ नि. र. र. उ., र. क. बो., छर्षाम् ।

भाषा—शुद्धगन्धक, कमलाशु, मुल्हठी, शिलाजीत, छाया, भुनागुदाग, शृङ्गभस्म, सफेदचन्दन, बसलोचन, गोरौचन, एष समभागलेकर बारीकचूर्णकर बेलकीजड़कीछालकेकाठेये १ पद-मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषन वमनको नष्टकरताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ वमनेश्वररसः (प्रथमः)

अङ्गोलवीजाज्ञागी द्वौ भागमेकञ्च तुल्यकम् । सूतगन्धकशुल्बञ्च समभागानि कारयेत् ॥२०४१॥ सूक्ष्मचूर्णं विधायादौ भावयेद्व्यवणाम्बुना । देवदालीरसेनाऽथ मदनस्य फलाम्बुना ॥२०४२॥ आटरूपवचानित्यपटोलमधुयष्टिका- । कायेन भावयेत्तैः सूक्ष्मचूर्णेन्तु कारयेत् ॥२०४३॥ गुञ्जात्रयं प्रदातव्यं तप्ततोयाऽनुपानतः । वामयेदम्बलपित्तानि देहशुद्धिश्च जायते ॥२०४४॥ सर्वाऽजीर्णं कफं पित्तं धमनं कुष्ठानशनम् । अतिवृद्धे च दातव्यं धान्नीफलसितासमम् ॥२०४५॥ र. सि, वमने ।

भाषा—अङ्गोलकीमींगी २ भाग, तुल्यभस्म १ भाग, शुद्धपारा, गन्धक और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर एषकी नीलवर्णकजलीकर नमक, बन्दाल, मैनफल, अहृष्टा, बच, नीम, परवल और मुल्हठी, इनकेवापोंसे १-१ भावना देकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती गरमपानीकेसाथदेनेसे वमन होतीहै और अम्बलपित्त, अजीर्ण, कफ, पित्त, धमन, कुष्ठ इनको यह नष्टकरताहै । अतियोग होजानेपर आबोलकाचूर्ण, सापर-बालहरदेना ॥ ४१८ ॥

४१९ वमनेश्वररसः (द्वितीया)

येणीवीजं रतं गन्धं नृपं चन्द्रेनुभागिकम् । देवदालीरसे भाव्यं सप्तधा समतुल्यकम् ॥२०४६॥ योजयेन्मापमात्रन्तु उष्णाम्भःसंयुतं तथा । ऊर्द्धजशुगदातीनां स्वस्वधानां शुद्धिमिच्छताम् ॥ पित्तान्तरमनं सम्पक्क कुर्याद्यूनं धर्मोश्वरः ॥२०४७॥ ना. वि, वमने ।

भाषा—बन्दालकेबीज १६ भाग शुद्धपारा और गन्धक १-१ भागलेकर बीजोंका बारीकचूर्णकर पारोग्णककी कजलीमें मिलाकर बन्दालकेरससे ७ भावनापंदेकर बराबरका शुद्धतुल्य मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मास गरमपानीकेसाथ देनेसे यष्टेवमनहोर शुद्धितोजातीहै और इससे ऊर्द्धजशुगल तमायारोग नष्टहोजातेहैं ॥ ४१९ ॥

४२० वरुणाचं लोहम्

द्विपलं घर्षणं धान्यास्तदूर्वा धातुपुष्पिकाम् । हरीतक्याः फलाऽर्द्धं भृष्टिपर्णी सदृशिकाम् ॥२०४८॥ कर्पमानञ्च लोहाऽर्द्रं चूर्णमेकत्र कारयेत् । भक्षयेन्प्रातरग्न्याय द्वाणमानं विधानवित् ॥२०४९॥ मृद्याघातं तथा घोरं मृष्टच्छुञ्च दाहणम् । अरुमर्तं विनिहन्त्यानु प्रमेहं घिरमज्वरम् ॥२०५०॥ घलपुष्टिकञ्चैव लोहं सप्यमापुष्ट्यमेव च । वरुणाचमिदं कृत्वा सर्वप्याधिपित्तानाम् ॥२०५१॥ र. उ., घ., र. वि, र. उ., र. घ., मूरर. च्छे ।

भाषा—वक्षकीछाल २ पल, बांवेले १ पल, धावङ्गीके-
फूल और हरे २-२ कर्षे, पृश्निर्णा, लोह और अन्नकमल १-१
कर्षलेकर वारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे प्रातःकाल ४-४ माशे
समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ लेनेसे अत्यन्तभयङ्कर-
मूत्रापात, मूत्रकृच्छ्र, अशरी, प्रमेह, विषमज्वर, इनसबको
नष्टकर बल और आयुको बढ़ाताहै ॥ ४२० ॥

४२१ बल्लभामृतसः (प्रथमः)

शुद्धं तालं द्विधा गन्धं तालाऽर्द्धं हाटकं शुभम् ।
दिनेकं मर्दितं कृष्णतुलसीरससंयुतम् ॥ २०५२ ॥
तद्रोलाहटकान्कुप्यादिकैकान्मरिचौपमान् ।
पूरयेत्काचकूप्यां तु रुद्धा सम्यङ्मुद्गशुकेः ॥ २०५३ ॥
शुकेऽत्र बालुकायत्रे पुटे मन्दाग्निना पचेत् ।
यामद्वादशपर्यन्तं स्वाङ्गशीतं समाहरेत् ॥ २०५४ ॥
शतवेधो भवेत्तेन तारं कृष्णं करोति च ।
तत्तारं जायते स्वर्णं समवीजेन मिश्रयेत् ॥ २०५५ ॥
रसायनमिदं श्रेष्ठं प्रयोगो बल्लभाऽमृतम् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन तत्तद्रोगनिवर्हणम् ॥ २०५६ ॥
पथ्याशानोपमोगेन वलीपलितनाशनम् ॥ २०५६ ॥
र. क. यो., रसायने ।

भाषा—शुद्धरिताल १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा., सुवर्ण-
केकक आषाभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर कालीतुलसीकेरघसे
एकदिन मर्दनकर मरिचकरवार गोलिया बनाकर मुखारक ६-७
कपफमिथीदीहूद आतशीचीमीमें भरके ४-५ कपफमिथीसे
मुद्गबन्दकर सुखाय बालुकायन्त्रमें मन्दाग्निसे १२ पहर
तक पकावे । स्वाङ्गशीतलोनेपर निकालकर रखछोड़े ।
इसमेंसे एकभाग लेकर १०० भाग चांदीमें गलाकर छोड़नेसे
कालाकरदेताहै । उसचांदीमें बराबरका सुवर्ण मिलावेसे सुवर्ण-
होताहै । यह उत्तम रसायन है । तत्तद्रोगानुपानकेसाथ देनेसे
यह घमस्तरोगोंको दूरकर वलीपलितानाशक रहितकर दीर्घ-
युक्तो देताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ बल्लभामृतसः (द्वितीयः)

घञ्जयेप्रान्तवाप्राऽन्नं कान्तं तीक्ष्णञ्च द्विद्वुल्लम् ।
गन्धकं माक्षिकञ्चैव सूतभस्म समं समम् ॥ २०५७ ॥
वाराही घन्धककांटी मर्दितञ्च पृथक्पृथक् ।
गोलकं छायाया शुष्कं बालुकायन्त्रं पचेत् २०५८ ॥
स्वाङ्गशीतलमादाय खल्वमप्ये चिनिःक्षिपेत् ।
मत्स्यमाहिपमापूरच्छागवाराहपत्रगाः ॥ २०५९ ॥
पतेयां पित्ततो भाव्यं पर्यायिण यथाक्रमम् ।
गुडामार्थं प्रदातव्यं सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०६० ॥
दाहप्रपं ज्वरं हन्ति विषमज्वरनाशनम् ।
क्षयगुल्मभ्यासकासान् प्रहृणीमत्तिसारकम् ॥ २०६१ ॥
द्राक्षोऽद्यादीनि भस्याणि गुडोदकनियेषणम् ।
लोकोपकरणायाय शङ्खरेण शुभापितम् ॥
यद्बल्लभामृतयोगेन सर्वरोगविनाशनम् ॥ २०६२ ॥
र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—हीरा, वैकान्त, ताम्र, अन्नक, कान्त और फोलाद
भस्म, शुद्धशिंगरिफ, गन्धक, सोनामाखी और पारदभस्म
सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर वाराहीकन्द और बांवेलेउधके
स्वरसोते १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय छायाशुष्कर बालु-
कायन्त्रमें बन्दकर एकदिनरातकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलोनेपर
निकालकर मछली, भेसा, मोर, बकरा, सूजर और सांके-
पित्तोते १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती समय
अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे दाहप्रपंचकज्वर, सन्निपात
और विषमज्वर, क्षय, गुल्म, श्वास, कास, प्रहृणी, अतिसार
इनसबको यह नष्टकरताहै । अधिकगर्मी लगेनेपर दास, ईस
और गुडका शरवत पिलाना ॥ ४२२ ॥

४२३ वसन्तकुसुमाकरसः (प्रथमः)

प्रवालरसमौक्तिकाभ्वरमिदं चतुर्भांगभाक्,
पृथक्पृथगथो मृते रजतहमनी ह्यंशके ।
अयोभुजगवङ्गकं त्रिलवकं विमयाऽखिलं,
शुभेऽहनि विमोचयेद्विपणिदं धिया सप्तशः २०६३
द्रवैर्वृषनिशेक्षुजैः कमलमालतीपुष्पजैः,
पयः कदलिकन्दजैः शृंगजचन्दनाडुद्रवैः ।
वसन्तकुसुमाकरो रसपतिस्त्रिगुञ्जोऽशितः,
समस्तगद्दहद्रवैस्त्रिल निजाऽनुपानेरयम् ॥ २०६४ ॥
क्षिणोत्पत्यु मधुपणैःक्षयगदेषु सर्वेष्वपि,
प्रमेहवजि रात्रिभिः समशुशकैराभिः सह ।
सितामलयजद्रवैर्भेहति रक्तपित्तऽथवा,
सितामधुसमन्वितं वृषमपहृषानां द्रवैः ॥ २०६५ ॥
त्रिजातगजकेशरैरपि च तुष्टिपुष्टिप्रदो,
मनोभवकरः परो वमिपु शङ्खगुप्पीरसैः ।
अभीररसदकैरामधुभिरम्लपित्ताऽऽमये,
परेषु तु यथोचितं ननु गदेष्वमुं सेचयेत् ॥ २०६६ ॥
वृ. यो. त., र. क. यो., र. सं., रसायन प., र. र., ति. र., यो.
र., र. यो., र. चं., वि. क., घ., र. का., र. गु., रसायनं., भै. र.,
टो., व. रा., र. प., वै. वि., शा. सं., वा., र. शि., र. र. रा., रस.
सं., र. म. मा., वै. वि., र. पा., रसायने वाजीकरणे च ।

टि०—रसायनयद्दमहस्य द्वितीयपरिणयमेव पाठोऽर्द्धमूर्तिनाम्ना
लिखितस्तथा “ विनाभ्य गन्धकेव सुवर्णय रसेन च । विनाभ्यमशु-
नीरण दवाङ्गुदे तथा । ” इति विधेयेन निष्पादितस्तत्र सर्वस्य कजर्णी
विषय कौषियवकाऽऽवेष्टिनां फोट्टिका विषय फोट्टीपाकवन्त्रके
विषय्य पृथक्कमलसाम्नां पृथक्विनाभ्य फोट्टीं कृत्वा गन्धुऽत्र दत्त्वा
रोगेषु निरोधति इति विधेयः । बाहदस्य द्वितीयपरिणयमेव वैकान्त नीलप्रा-
धिक्याय प्रक्षिप्ते । अथिद्वकतारिगमनां प्रमाणे भव्यय मोऽप्यविधि
त्करः । “ वैगान्तस्य च भोगेक दिनाग हेमभग्न प । अत्रभ्यय च
भागो द्वी मुताविदुम्योस्तया । बह्वभस्य विभाग स्वाङ्गस्य भगन-
स्तया । वासादीन्य च भागाथ सर्वमेक मर्दिनम् ॥ अनीरादिभ्य
गोदुग्धैरहीरोद्रववारिभिः । बृधद्वैस्त्रिभिरैः सतया माषवत्पृथक् ॥
भाविजो रसराजः स्वादमन्नुपुष्पावरः । पठोऽप्य मधुना कृतः भोग-
रोगे ह्ये नयेत् ॥ गूढाऽग्निद्वैरहीभ्य मूत्रापागरासरीभ्यम् । तुष्णां
दाहं ताडयेत् नादवेनात्र उच्यते ॥ अथुदिकरुषे पृथः सर्वेण विव-

द्वेष । इत्यग्नीं ज्वरं श्वात क्षययोगे कृशाङ्गताम् ॥ नाजत परतर किञ्चिदसायमभिहित्यते ॥” इति पाठे वैषम्पयणव्याख्या दृश्यते तत्र वैश्रान्तिमेवाऽधिकं नियुक्तं लोहनागौ च त्यक्तौ । तथा अम्बरस्थानेऽन्नक गृहीतम् अथावस्थितेनाऽप्येतद्गुणसम्भवात्स्यक् पाठकल्पना न युक्तिरसा । वैश्रान्तिऽधिकं भक्तिश्चैतन्नियोगेऽपि क्षत्यभावः ।

भाषा—प्रवाल, पारा, मोती, इनकी भस्म और अम्बर ४-४ भाग, रजत और स्वर्णमस्य २-२ भाग, लोह, नाग और वज्रभस्म ३-३ भाग लेकर सबको १-२ पहर मर्दनकर अच्छे दिन अह्वा, हल्दी, ईख, कमल, माल्तीपुष्प, गोदुग्ध, केले वाकन्द, कस्तूरी, सफेदचन्दन इनके देवोंसे ७-७ भागनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त रोगोंको दूरकरता है । साधारणतया मधुमरिचसे समस्तक्षय, हल्दी, मधु और शकरसे समस्तप्रमेह, शकर और सफेदचन्दन अथवा अह्वासके स्वरस, शकर और मधुसे रक्षपित्त, चातुर्गर्तसे न्युंसकत्व, शङ्खपुष्पीके स्वरसे वमन, शतावरीके स्वरस, शकर और मधुसे अम्लपित्तको यह नष्टकरता है ॥ ४२३ ॥

४२४ वसन्तकुसुमाकररसः (द्वितीयः)

मृतसूताऽन्नकं स्वर्णं कान्तं तारं स्मरंशिकम् ।
प्रवालमुक्तावज्रञ्च भस्मितं नागयङ्गयोः ॥ २०६७ ॥
तद्धं मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्त्रिकाभयम् ।
जातीपुष्पसमुद्भूतरसेन दिवसत्रयम् ॥ २०६८ ॥
कोकिलाक्षस्य शाल्मल्या आर्द्रगान्धारिसम्मयैः ।
खर्चुरक्षद्वीद्राक्षाकेतकीमधुपष्टिजैः ॥ २०६९ ॥
मधुश्रीरक्षुजरसैर्वाँरिवाराहिकन्दजैः ।
रक्तागस्त्यप्रसूनोत्थैर्मथं स्वैद्यं पयोन्वितैः ॥ २०७० ॥

सम्मिश्रय शर्कराद्राक्षामुशालीमापगोक्षुरैः ।
कण्टकैः कोकिलाक्षो धात्री रम्भाफलं मधु २०७१
सूताखनुगुणं यामं मथं शाल्मलिजैर्द्रवैः ।
वह्नुत्रयं सदा खादेत्साक्षात्कामसमप्रभः ॥ २०७२ ॥
गवां क्षीरं पिबेद्याऽनु वसन्तपद्वर्षिकम् ।
रूपयौवनसम्पन्नां स्वानुक्लां स्त्रियं व्रजेत् ॥ २०७३ ॥
मुद्गाभ्रशालिगोधूमद्राक्षादाडिमशर्कराः ।
नवनीतं कृष्णरम्भाफलं कर्पूरसंयुतम् ॥ २०७४ ॥
मृगनामीन्दुकादमीरयुक्तचन्दनचञ्चितः ।
मालतीमल्लिकाकुन्दकेसरस्त्रिविधपित्तः ॥ २०७५ ॥
विधिमेवं नरः हृत्या रमयेत्प्रमदाशतम् ।
एकरात्रमतिक्रम्य क्षिरात्रे तत्र धर्ययेत् ॥ २०७६ ॥
त्रिपञ्चपद्मणञ्चैव दशारामे तु पौष्टदा ।
पक्षे तु विंशतिं कुर्वाणमेषैर्चैर्दत्तं व्रजेत् २०७७
र क यो, वाजीकरणे ।

दि०—रत्नाकरौषधयोगे “ मृगनाऽन्नकं स्वर्णं कान्तं तारं स्मरंशिकम् । गोक्षीरपि विमर्शोऽथ छायावाचं निरीक्षयेत् ॥ काचकृत्यां विनि शिष्ये वाऽनुकाचपत्रके दिनम् ॥ स्वाङ्गदीनलमादाय विशेषेण विनि शिष्ये ॥ प्रवालकुसुमाकररसः ॥ भागेन मर्दयेत्सम्यक् सेन्दुकस्त्रिका-

वाग्निम् ॥ जातीपुष्पसमुद्भूतसेन दिवमत्रयम् । खर्चुरक्षद्वीद्राक्षा वाराहीकन्दवात्रिजैः ॥ मर्दयेत्पु विंशत्याऽनु वगन्तपदपूर्वकम् । सप्तनारी रमते पुष्पो वीर्यवान्भवेत् ॥” इति द्वितीय- पाठे दृश्यते तत्राऽन्नकं माँवेऽनायाससिद्धं, रूपयौवनापाऽनुश्रान्तिषु क्षयभावोऽस्ति, पादान्तर विभ्रमहास्य महाप्रकम् ।

भाषा—पारा, अन्नक, सुवर्ण, कान्त और रजत २-२ भाग, प्रवाल, मोती, हीरा, नाग और वज्रभस्म १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर कपूर, कस्तूरी, जावित्री, तालमखाना, सेमलकामुसला, अदरक, फागली (म०) राजूर, केलाकन्द, द्राक्ष, केबड़ा, मुल्हठी, मधु, दूध, ईख, सुगन्धवाला, वाराहीकन्द, लालजगत्स्यकेफूल, इनप्रत्येकके इत्थे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय इनसबकास्वरस और दूध इकट्ठामिलाय दोलायन्ते एकदिन स्वेदनकरे । फिर शकर, द्राक्ष, मुशली, उड़द, गोखल, केवाच, तालमखाना, बहेड़ा, आवला, केलेकाफल और मधु येसब पारसे चौपुनेचौपुने डालकर एकपहर सेमलकेसुसलेके स्वरससे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियाँ बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर गोदुग्ध पीकर रूपयौवनसम्पन्न ऐसी स्वागिलपित एकलीकेसाथ सप्तरत्नाचाहिये । दूधरीरात्रिको धीरे २ खियोंकी सङ्घा बढ़ावे । १० दिनमें १६ खियोंकेसाथ और १५ दिनमें २० खियोंकेसाथ सम्भोग करसकाहे और इसीतरह हमेशाकेसेवनसे प्रसन्नराफि बढ़तीहीजातीहै । यदि ब्रह्मचर्यकेसाथ इसनासेवनकरेतो तमाम अताप्यरोग और क्षय नष्टहोजातेहैं । इत्थे मूग, चावल, गेहूँ, द्राक्ष, अनार, शकर, मक्खन, केला, कपूर, येसब पध्यैहैं । कस्तूरी, कपूर, केशर और चन्दन इनका लेपकरे । माल्ती, मोगरा, कुन्द, केशर इनकी माला पहिने ॥ ४२४ ॥

४२५ वसन्तकुसुमाकररसः (तृतीयः)

हेम तारं प्रवालञ्च वज्रं वैदूर्यमौक्तिकम् ।
अन्नकं मृतलोहञ्च द्विगुणं सूतभस्मकम् ॥ २०७८ ॥
वह्नुं नीलञ्च वैश्रान्तं नागभस्म प्रयोजयेत् ।
एतद्विशुद्धं युञ्जीत भावनेऽनुगणेन च ॥ २०७९ ॥
शतपत्रप्रसूनान्ते मालत्याः कुसुमाभ्युभिः ।
पथ्यान्मुगमर्द्रे भाव्यं सुसिद्धो रसरौड् भवेत् ॥ २०८० ॥
मधुना सपिपा दध्ना गुडामात्रप्रमाणतः ।
क्षयकासाऽऽरुचिभ्यासशोथपाट्टामयांस्तथा ॥ २०८१ ॥
मूत्रकृच्छ्रास्मरं हन्ति मेहानां विंशतिं तथा ।
प्रहर्णां कामिलाञ्चैव सर्वरोगप्रजन्तथा ॥ २०८२ ॥
शूलाऽऽभ्यानी यद्विनारां कामदः पुष्टिर्धनः ।
रैतोवृद्धिकरः पुंसां प्रजाजननमुत्तमम् ॥
कुसुमाकरविष्यातो वसन्तपद्वर्षिकः ॥ २०८३ ॥
वा, वाजीकरणे ।

भाषा—युग्म, रजत, प्रवाल, हीरा, स्मरिणी, मोती, अन्नक और लोह १-१ भाग, पारा, वज्र, नीलम्, वैश्रान्त और नागभस्म २-२ भाग, लेकर वारीकचूर्णकर दानवनाशिके ईख,

गुलाब और मालतीबेफूल, कस्तूरी, इनप्रत्येकके द्रवोंसे ३-३ भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, धी अथवा दहीप्रशुति उचिनातु पाननेसाथ देनेसे क्षय, कास, अर्धचि, श्वास, शोथ, पाण्डु, मूत्रकृच्छ्र, पयरी, २० प्रकारके प्रमेह, प्रदहणी, कामला, शूल, आभ्रमान, मन्दाग्नि, इत्यादि, शुक्रनाश, कण्ठ्यत्व इनसबको नष्टकर यह आयुको बढाताहै ॥ ४२५ ॥

४२६ वसन्तकुसुमाकररसः (चतुर्थ)

हेमतारविपवद्गमौक्तिकं विद्रुमायसमिदं विभावयेत् ।
घारियुगमकपय शतपत्रकदलीकमलकन्दनिशाभिः ॥
जातिकामृगमदेन्दुवृषैश्च भाययेमुनिदिनं प्रतियोगम् ।
सिद्धिदश्च रसनायक एव जायते सकलरोगनिहन्ता
प्रमेहविपपाण्डुके प्रहणिकाऽल्पपित्ते तथा,
क्षये श्वसनशूलके कसनरक्तपित्ते हितः ।
कणामधुविमिश्रितस्तदनु स्याद्धैगुजामितो,
वसन्तकुसुमाकरो मद्गजेन्द्रकण्ठीरव ॥२०८६॥
रसायनस, वै वि, क्षये ।

भाषा—सुवर्ण और रजतमस, शुद्धघटनाग, वज्र, मोती, प्रवाल और लोह इनरीभस्में सब समभाग लेकर दोनोंसस, गोदुग्ध, गुलाबकेफूल, केला और कमलकेबन्द, हल्दी, जावित्री, कस्तूरी, कपूर, अहस इनप्रत्येककेद्रवोंसे ७-७ दिन भावनाएँ देकर १॥-१॥ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिनातुपाननेसाथ देनेसे प्रमेह, विष, पाण्डु, प्रदहणी, अम्लपित्त, सबप्रकारके क्षय, श्वास, शूल, कास, रक्तपित्त प्रशुति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै । साधारणतया श्वास, कास और शूलमें पीपल तथा मधुनेसाथदेना ॥ ४२६ ॥

४२७ वसन्ततिलकरसः

हेसो भस्म च तोलकं घनयुगं लौहात्त्रयं पारदात्,
चत्वारो यल्लिजं सुवद्गुगल चैकांशुत मर्दयेत् ।
मुक्ताविद्रुमयोरसेन समता गोक्षरवासोशुणा,
सर्वं घन्यकरीपकेण सुदृढं तत्तत्पचेत्स तथा ॥२०८७॥
कस्तूरीघनसारमर्दिततनुः पश्चात्सुसिद्धोमवे-
त्कासश्वाससंपित्तवातकफजित्पाण्डुक्षयादीन्दरेत् ।
शूलादिप्रहणीं विपादिहरणीं मेहास्तथा विशति,
दृष्टीमादिहरतो ज्वरादिशमनो वृष्यायवोधन २०८८
१ र, २ र, ३ र, ४ र, ५ र, ६ र, ७ र, ८ र, ९ र, १० र, ११ र, १२ र, १३ र, १४ र, १५ र, १६ र, १७ र, १८ र, १९ र, २० र, २१ र, २२ र, २३ र, २४ र, २५ र, २६ र, २७ र, २८ र, २९ र, ३० र, ३१ र, ३२ र, ३३ र, ३४ र, ३५ र, ३६ र, ३७ र, ३८ र, ३९ र, ४० र, ४१ र, ४२ र, ४३ र, ४४ र, ४५ र, ४६ र, ४७ र, ४८ र, ४९ र, ५० र, ५१ र, ५२ र, ५३ र, ५४ र, ५५ र, ५६ र, ५७ र, ५८ र, ५९ र, ६० र, ६१ र, ६२ र, ६३ र, ६४ र, ६५ र, ६६ र, ६७ र, ६८ र, ६९ र, ७० र, ७१ र, ७२ र, ७३ र, ७४ र, ७५ र, ७६ र, ७७ र, ७८ र, ७९ र, ८० र, ८१ र, ८२ र, ८३ र, ८४ र, ८५ र, ८६ र, ८७ र, ८८ र, ८९ र, ९० र, ९१ र, ९२ र, ९३ र, ९४ र, ९५ र, ९६ र, ९७ र, ९८ र, ९९ र, १०० र

भाषा—सुवर्णमस १ तो, अग्रभस्म २ तो, लोह भस्म ३ तो, पारदभस्म ४ तो, शुद्धगन्धक और वज्रभस्म २-२ तोले, मोती और प्रवालभस्म ४-४ तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इच्छेमिलाय गोसक, अहसा, ईश इनके स्वर छोसे १-१ दिन मर्दनकर गोलापनाय घाराकवमुष्में बन्दकर १। सेर कस्तूरीकी आंचरे । स्वाशरीतलदागैर मिहाकर फिरसे मर्दनकर आंचरे । ऐसे ७ बार आंचदेकर कस्तूरी और कर्पूरके

द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिनातुपानके साथ देनेसे कास, श्वास, पित्त, वायु, कफ, पाण्डु, क्षय, शूल, प्रदहणी, विष, २० प्रकारके प्रमेह, ह्रोग, क्वर, शोष इनसबको दूरकर पूर्ण पुष्टत्वको देताहै और आयुको बढाताहै ॥ ४२७ ॥

४२८ वसन्तमालतीरसः (सुवर्णवसन्तमालती) १

स्वर्णं मुक्तादरदमरिचं भागवृद्धया प्रदिष्टं,
स्वर्पयैर्घो प्रथममखिलं मर्दयेन्मृद्धानेन ।
यावत्स्नेहो व्रजति विलयं निम्बुनीरेण ताघ-
द्रुजाइन्द्रं मधुचपलया मालतीप्राग्वसन्तः ॥ २०८९ ॥
सवितोऽयं हरेत्तुर्णं जीर्णञ्च विपमज्वरम् ।
व्याधीनन्यांश्च कौसादीन् प्रदीप्तं कुरतेऽनलम् २०९०
भै र, घ, रसायनस, र सु, र कौ, र प, वै वि (ल),
वै व, सि भे म, वै वि, रसायनप, र सु, र क्ष, र बो, र शि,
यो र, नि, र, र च, य यो. त, र का, र सि, र क ल,
र. म मा, र प्र, र वा, ज्वराऽपिहोर र सु, र री, र शि,
र यो, एष वसन्तराज इति नाम ।

भाषा—सुवर्णभस्म अथवा बर्क १ भाग, मोती २ भा, शिगरिच ३ भा, मरिच ४ भा, सपरिया ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर सबसे १५ वा हिस्सा अथवा चतुर्मास मकखन देकर ३-४ दिन मर्दनकर कागजीनीबूकरस डालकर चिचनार्ई रहितदोनेतक मर्दनकर टिकडिया बनाकर रखडोढ़े । इसमेंसे २-२ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे सबप्रकारके जीर्ण तथा विपमज्वर और श्वासकासादिक उपद्रवोंको दूरकर अतिक्रो प्रदीप्तकरताहै ॥ ४२८ ॥

४२९ वसन्तमालतीरसः (द्वितीय)

रसकं वल्लिजं सूतं शुद्धं गन्धं समंसमम् ।
मर्दयेन्नवनीतेन जम्बनीरेण भावयेत् ॥ २०९१ ॥
यावद्वायञ्च शुष्कञ्च तावत्तं कारयेन्निपक ।
वल्लमात्रं ततो द्यात्विप्पलीमधुसंयुतम् ॥ २०९२ ॥
धातुक्षयेऽग्निमान्द्यं च विपमे चाऽतिसारिणि ।
दुर्नामप्रदरातीं च प्रहर्णारक्तपित्तजे ॥ २०९३ ॥
र सु, धातुक्षये ।

भाषा—शुद्धसपरिया, मरिच, पात और गन्धक समभाग-लेकर नीलगणकजलीकर मकखनडालकर १-२ दिन मर्दनकर जमी रीकेसेसे चिचनार्ई जानेतक मर्दनकर फिर इसनी टिकडियें बनाकर रखडोढ़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ देनेसे धातुक्षय, मन्दाग्नि, विपमज्वर, अतिपात, कवापीर, प्रदर, प्रदहणी और रक्तपित्त इनको यह दूरकरताहै ॥ ४२९ ॥

४३० वसन्तमालतीरसः (तृतीयः)

एकादो मरिचाद्युभौ रसकतः सम्मर्दयेन्मृद्धानेन,
पश्चात्प्रिम्बुरनेन मर्दनविधि योरदृढं गच्छति ।

आर्द्रजे मधुकोटये वां जले वैह्योऽस्य दीयते ।
शूलाग्निमान्द्यनाशाय चित्रचित्ताऽऽर्द्रजे जलेः ॥२३५॥
कोष्ठरोधप्रशान्त्यर्थं ज्यपालाऽऽज्यनागरेः ।
समाक्षिर्गं शङ्खभस्म सर्जीरं ग्रहणीगदे ॥ २३६ ॥
आमवातेऽस्याऽनुपाने त्रिफलाकाथसंयुतम् ।
कोष्णमेरुण्डतैलं स्यात्सद्यो वातगदान्दरेत् ॥२३७॥
देवदात्यशिकटुकत्रयकाथैस्तथाऽर्शसि ।
गुडचीजीरककणानागरे ज्वरदान्तये ॥ २३८ ॥
र. दी., घृले ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकजली-
कर अपामार्ग और आकडेव्रोंसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ी-
बनाय लोहेकेपात्रमें रख थोड़ासा ससोंका तैल ऊपर डाल
मन्दाग्निसे पकावे । जब चटनीके सहदशोकर पेटमें लगनेलगे
तब ताम्रपात्रमें निकालकर ताँबेके ळण्डेमें लुबपोटे । एकजीव
होजानेपर पारेका सोलहवा हिस्सा शुद्धवचनाग मिलाकर बकरे
और भैंसेके पित्तोंसे ७-७ भावनाएँ देकर चित्रक, आक और
त्रिकटुके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रतीकी गोलियें
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक अथवा मुलहठी
अथवा चित्रक, कुटनी, अदरक इनके द्रवसेसायदेनेसे शूल और
अग्निमान्द्य नष्टहोताहै । शुद्धजमालगोटा, घी और सोंठनेसाय-
देनेसे कोष्ठबद्धताको दूरकरताहै । शङ्खभस्म, जीरा और मधुक-
साय देनेसे ग्रहणीरोग, त्रिफलाजैत्रायसे आमवात, कटुष्ण
एरुण्डतैलेसे वातरोग; वन्दाल, चित्रक और त्रिकटुकेवायसे
बवासीर; गिलोय, जीरा, पीपल और सोंठनेसायदेनेसे समस्त-
ज्वर नष्टहोतेहै ॥ ४४१ ॥

४४२ वह्निभास्कररसः

सुवर्णमम्रं वैकान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लोहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पूरसम्मिश्रितम् ॥२३९॥
रक्तचित्रकतोयेन तथा ग्राहया रसेन च ।
त्रिस्तम्बतुल्यः सम्भाव्य कुयाद्विह्यमिता घटीः ॥२४०॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।
अन्याश्च शिरसो रोगान्बहिस्तुण्णगणानिव ॥२४१॥
वह्निवद्भासते यस्माद्धीर्मेव रसोत्तमः ।
ख्यातः पृथ्वीतले तस्माद्राख्यया वह्निभास्करः २४२
आ. वि., शिरोरोगे ।

भाषा—सुवर्ण, अम्रक, वैकान्त और रजत इनकी भस्में
४-४ माशे, लोहभस्म, शुद्धपारा और गन्धक, माक्षिकभस्म,
१-१ कर्पूरे लेकर नीलवर्णकजलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके
रसे २१-२१ भावनाएँ देकर ३-३ रतीकी गोलियेंबनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपाननेसाय देनेसे
मस्तिष्कभ्रमसञ्चितजल और नानातरहके शिरोरोग नष्टहोतेहै ४४२

४४३ वह्निरसः (प्रथमः)

जातीजातं त्रिकर्पं मरिचमपि
पलं चाऽर्द्धकर्मप्रमाणं,

गन्धं सूतं लघुं विपमिद-
मखिलं तित्तिडीकस्य तोये ।
पिष्ट्वा मापेकमात्रा वितरति-
वृहन् वह्निमान्द्यो च सद्यो,
रोगांश्चूलाऽनिलादीन्दहति-
कृतगुणो वह्निरामा रसोऽयम् ॥ २४३ ॥
वै. घृ., नि. र., र. घृ., रसायनतं., अजीर्णे ।

भाषा—जायफल ३ कर्प, मरिच ४ कर्प, शुद्धपारा, गन्धक,
लौह, शुद्धवचनाग भाषा आधाकर्म लेकर वारीकचूर्णकर पारे-
गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पकी इमलीकेजलसे एकदिन
मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली समयोचितानुपाननेसाय देनेसे यह तत्क्षण भन्दा-
मिको नष्टकर शूल और वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४४३ ॥

४४४ वह्निरसः (महान्) (द्वितीयः)

चतुः सूतस्य गन्धाद्यौ रजनी त्रिफला शिला ।
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्यात्त्रिघृजेपलाचित्रकम् ॥२४४॥
प्रत्येकञ्च त्रिभागं स्याद्गन्तीत्र्युपणजीरकम् ।
प्रत्येकमष्टभागं स्यादेकीकृत्य चिचूर्णयेत् ॥ २४५ ॥
जयन्तीस्तुक्रुपयाभृद्भयहियावातारितेलैः ।
प्रत्येकेन क्रमाद्भाज्यं सप्तवारं पृथक्पृथक् ॥ २४६ ॥
महावह्निरसो नाम्ना निष्कमुण्णजलैः पिबेत् ।
धिरेचनं भवेत्तेन तर्कं मुक्तं ससैन्यवम् ॥ २४७ ॥
दिनान्ते द्वापयेत्पृथं वजयेच्चञ्चीतलं जलम् ।
सर्वांदरहरः प्रोक्तः श्लेष्मयातहरः परः ॥ २४८ ॥

र. सं., वै. चि., शा. सं., र. प्र. घृ., र. चि., र. क. ल., र. र. स.,
यो. म., र. घृ., र. क., र. र. कौ., व. रा., र. र., र. का., रसायनतं,
र. को., उदराऽधिकारे ।

टि०—योगमहाणने वय पाठा प्रकल्पिता, एकोऽग्रिषुलचूर्णनन्ता
व्यवहृतं, द्वितीयो अलोदरहरः, तृतीय. पाठ उर्जुक (वह्निरस)
नाम्ना व्यवहृत । व. रा., र. र एण्यो वैद्वितीय इति नाम । रस-
कामेनो द्वितीयस्थाने उदरारिपयोग इति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., हल्दी,
त्रिफला, जैनसिल, निस्तो, शुद्ध जमालगोटा और चित्रक ३-३
भाग, इन्दीमूल, त्रिकटु, जीरा ८-८ भाग लेकर सबका वारीकचूर्ण
कर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय जेत, सेहुण्डकादूध,
भंगरा, चित्रक, एरुण्डाकतिल इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ
देकर रखछोड़े । (तैल बहुत थोड़ाथोड़ा देकर ७ भावनाएँ
पूरीकरे अन्यथा असम्भवहै) इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा
गरमजलनेसायदेनेसे रचनहोगा । सन्ध्यासमय लवणयुक्तछाछ-
भातदेना । ठंडेजलसे परहेज रचना । इसनेसेवगले समस्तउदर-
रोग, कफरोग और वातज्वररोग नष्टहोतेहै ॥ ४४४ ॥

४४५ वह्निसिद्धोरसः

लोहं गन्धं टङ्गुणं भ्रामयित्वा
साधैस्तरिमन्तूतोऽन्यश्च गन्धः ।

कन्याम्भोमि मर्दितः काचकृष्यां
क्षिप्तो वह्नी सिद्धये वह्निसिद्धः ॥ २१४९ ॥

यो म., र. सि., रसायनसं, रसायनाऽधिकारे ।

भाषा—लोहेको गलाकर समभाग गन्धक और मुद्गागा
वाले । चक्रखानेपर इससे आधा पारा और गन्धक ढालकर
उतारले फिर धींजुवाकरेससे १-२ रोज मर्दनकर सुवाकर
आतशीशीशीमें बन्दर एकदिनरात बालुकायन्त्रमें अग्निदे ।
स्वाग्नीशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १ रतीसे ३
रतीतक समयोचितानुगानकेसाथ देनेसे यह प्रहणीप्रभृति सम-
स्तारोगोंको दूरकरताहै ॥ ४४५ ॥

४४६ वाजीकरणयोगः (प्रथमः)

सत्त्वं गुह्यच्या गगनं सुलोह-
मेलसितापिप्पलिचूर्णमिश्रम् ।

लोहाऽयलहे मधुना विमिश्रं
स्त्रीणां शतं याति यहच्छया ना ॥ २१५० ॥

र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—गिलोयसत्त्व, अत्रक और लोहमस, इलायची,
शकर और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखडोड़े । इसमेंसे
अमिकल देखकर १ माशेसे ३ माशेतक मधुमें मिलाकर सेवन-
करे और रातको दूधकेसिवाय कुछ न लेवे तो अभीष्टसमयतक
स्त्रीसङ्गकरसकाहै ॥ ४४६ ॥

४४७ वाजीकरणयोगः (द्वितीयः)

रसमस्माऽन्नकं लोहं धूर्तब्रैह्मैस्त्रिभाषितम् ।
विजयायीजतेलेन त्रिमास्यं सिन्धुजद्रवेः ॥ २१५१ ॥
बल्लमात्रं सितायुक्तं रात्रौ च क्षीरभोजनम् ।
रामात्रययुतं रम्यं वाजीकरणमुत्तमम् ॥ २१५२ ॥

र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारद, अत्रक और लोहमस समभागलेकर
बारीकचूर्णकर घृत्, भाग और तुवरकके बीजोंके तैलोंसे ३-३
भावनाएँ देकर रखडोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा शकरके-
साथ खाकर दूधपाने और रातको भोजन न करे तो तीन बुव-
तियोंको छुडा बरसताहै ॥ ४४७ ॥

४४८ वाडवरसः

पट्टना पूरयेत्स्थालीं तन्मध्ये पट्टमृषिकाम् ।
तन्मध्ये रामठीमृषां तन्मध्ये मृतकं क्षिपेत् ॥ २१५३ ॥
विषं निघृष्य सूतांशं धारिणाऽऽलोड्य सतमिः ।
कृते लेंपेः सम्पुटिते तेन चेवं ददेच्छनेः ॥ २१५४ ॥
पह्निं प्रज्वालयेद्योषं हठाद्यामचतुष्टयम् ।
तद्गस्य तिलमात्रन्तु द्यात्सर्वेषु पाप्मसु ॥ २१५५ ॥
प्रहण्यां जडरे शूले मन्दाग्नी पवनामये ।
युक्तमेतन्निहन्त्येव कुयाद्दहतरां सुधम् ॥
तापे शीतक्रियां कुयाद्ग्राडवाप्ये रसोत्तमे ॥ २१५६ ॥

र. वि., र. मु., रसायनसं, यो म, र का, र मि, इ या त,
र. (मा) श्वराऽधिकारे ।

टि०—नाशिकचन्द्रीधरसावरोड्य ज्वरारिनाम्ना भख्यापिन
रन्तु तत्र बत्सनाभलेपनाऽभावात्तुष्टित पाटोऽस्ति, अतस्तस्यायाजन्त
नीच उचिन । पावऽनन्तर तत्र समग्रपालदन्तीकीजानि निबोध्य
क्रमाद्विदिभागवत्वा निबोड्याऽऽनुरातेन सन्निध्य युक्तिवा कृत्वा
हन्ति, इति तु विवेगोऽस्त्येव । अत एव तस्य ज्वरारिनाम्ना इयम्
पाठ कृतोऽस्तीति सुप्रसिद्धिर्निभावनीयम् ।

भाषा—सैंधेनमकको बारीकपीसकर आधी हंडी भरे और
उसमें नमककीमूषाबानकर रखे । उसमूषामें शुद्धहींगकीमूषा
जनाकर रखे । फिर उसमें बराबरके गीलेबछनागकेसाथ थोटा-
हुआ शुद्धपारा रख हींग और नमक के उसीक्रमसे बन्दकर
पानीमें पिसेहुएबछनागसे कपड़ेको मिगोकर मूषापर ७ बार
हमेंटकर गलेतक हंडीको नमकसे भरे और ऊपरसे बन्दबन्द-
कर ३-४ कपडमिठीकरदे । सूखनेपर चूलेपर चढाय ४ पहरकी
हूयामिदे । स्वाग्नीशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे
५ तिलप्रमाण 'मन्म सप्तस्तपासुरोगोंमें देनेसे उनको यह नद-
करताहै । प्रहणी, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातरोग इनसबको
नष्टकर अत्यन्त शुभाको बढ़ाताहै । दाहहोनेपर शीतक्रियाकरे ॥

४४९ वातकुलान्तकरसः

शृगनाभिः शिला नागकेसरं कलिषृक्षजम् ।
पारदो गन्धको जातीफलमेला लघ्नकम् ॥ २१५७ ॥
प्रत्येकं कार्पिकक्षेत्रे शृशणचूर्णानि कारयेत् ।
जलेन मर्दयित्वा तु घटीं कुयाद्विरक्तिकाम् ॥ २१५८ ॥
थथाव्याध्यनुपानेन योजयेद्य चिकित्सकः ।
अपस्मारो महाघोरो मूर्च्छारोगे च शस्यते ॥ २१५९ ॥
घातजान्स्वरोगांश्च हन्यादचिरसेवनात् ।
नातः परतरं श्रेष्ठमपस्मारेषु वर्तते ॥
ब्रह्मणा निर्मितः पूवं नाम्ना वातकुलान्तकः ॥ २१६० ॥
र. स, र चं, ध., र. मु., वाताऽधिकारे ।

भाषा—क्यूरी, शुद्ध मैनसिल, नागकेसर, बहेड़ा, शुद्ध-
पारा और गन्धक, जायफल, इलायची, लौंग देसर १-१ कर्प
लेकर बारीकचूर्णकर पारिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय
जलेसे मर्दनकर २-२ रतीकी गोलेमें बनाकर रखजोड़े । इन-
जलेसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुगानकेसाथ देनेसे
महाघोर अपस्मार, मूर्च्छा, वातरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै

४५० वातगजाङ्घुशरसः (प्रथमः)

मृतं मृतं मृतं लोहं ताप्यगन्धकतालकम् ।
पथ्या शृङ्गाविषं व्योपमग्निमन्थञ्च टङ्कणम् ॥ २१६१ ॥
तुल्यं रखये दिनं मयं मुण्डीनिर्गुण्डिकाद्रवेः ।
द्विगुणां घटिकां रादोत्सर्वयातप्रशान्तये ॥ २१६२ ॥
कणाचूर्णयुतक्षेप जिह्वाक्षयं पिबेदनु ।
साध्याऽसाध्यं निहन्त्यानु रसो घातगजाङ्घुशः २१६३
समाहाद्भ्रूसर्पं हन्ति दारुणं सन्निपातकम् ।

क्रोष्टुर्दार्पिकवातज्ञाऽन्यथादुकसप्यकम् ॥ २१६४ ॥

ऊरस्तम्भं हनुस्तम्भं मन्यास्तम्भं विनाशयेत् ।
पक्षाघातादिरोगेषु कथित परमोत्तम ॥ २१६४ ॥
रसोऽप्युशोपणो ह्यत्र युक्तोऽन्यो योगमाहकः ।
राक्षाऽमृतादेवदारुशुण्ठीवातारिजं शृतम् ॥
सगुग्गुलं पिवेत्कोष्णमनुपानं सुखावहम् ॥ २१६६ ॥

र स, घ, र सु, र क यो, र क ल, नि र, वै चि, र
र स, चि र, र च, रसायनघ, टो, र का., र म, यो म, र
क, चि क, ना वि, यो त, यो र, र स क, शा स, र यो
त, र र, र कौ, र (मा), भै सा, व रा, रसेन्द्रम, र, चि
र म, र सि, र प्र सु, वाताऽधिकारे ।

टि०—यो, र, र स क, शा स, व यो त, र, र, र बौ,
र (मा), भै सा, व रा यो त, रसेन्द्रम, र, चि र भ, र
नि, र, प्र सु, र पा एषु तथा च र र स, रसायनघ, र च,
र सु, नि र, र क ल, वै चि, र का, एतेषा द्वितीयस्थाने
स्वच्छन्दभरवरस इति नाम स्थापितम् । तत्र प्रथेप श्चत्रीस्थाने निगुण्ठी
शुद्धीत् । रसपक्षाघाताकारे मुष्णनिर्गुण्डशौ निष्पत्य धनपूरद्वेषेण
भावना प्रदत्ता, कृष्णासर्पि शौद्रेरनुपान नियोजितम् । रसावतरे
भावनाया निगुण्ठीसुरसे शुद्धीते, प्रथेप पथ्यास्थाने शिक्षा नियोजिता ।
चिकित्सारहस्ये वातारिवदीति नाम । वसवराग्नीये द्वितीयस्थाने
स्वच्छन्दनायकेति नाम । रमराजमुन्दरे अगिसाराऽधिकारे ब्योप
निष्पत्य भावनाया मुष्णस्थाने शुण्ठी शुद्धीत्वा वातारिरस इति नाम
स्थापितम् । नि र, र, वै चि, एतेष्वेवस्थाने समीरपत्रमेति
नाम स्थापितम् ।

भाषा—पारा, लोह, सुवर्णमाक्षिक् इतवीमस्मं, शुद्ध गन्धक
और हरिताल, हर्, काकडासौंगी, शुद्धबधनाग, त्रिकटु, अरणी,
मुनासुहागा, सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर एकदिन शुष्क-
मर्दनकर गोरखमुण्डी और निर्गुण्डीकरसौंगे १-१ दिन मर्दनकर
२-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली
पीपलकेचूर्णनेसाय लेकर जित्नीकाकाय चिलानेसे यह साध्य
अथवा असाध्य वातरोगकां नष्टकरताहै । सातार्दिनमें शुप्रसां,
दासणसतिपाव, मोटुशीपंक, अथवाहुक, ऊरस्तम्भ, हनुस्तम्भ,
मन्यास्तम्भ, पक्षाघात, इनसबको यह नष्टकरताहै । वातरोगमें
अमृतोपण अथवा अन्यकोई योगवाहकरसदेकर राक्षा, गिलोय,
देवदाह, सोंठ और एण्ड्रीकीजडका कडुण्णवाय गुणलेसाथधेना॥

४५१ वातगजाङ्कुशरसः (वृहन्) (द्वितीय.)
सूताऽप्रतीक्ष्णफान्तानि ताप्रतालकगन्धकम् ।
स्वर्णं शुण्ठी बला धान्यं कटुफलं चाभया विषम् ॥ २१६७ ॥
पथ्या श्रेङ्गी पिप्पली च मरिचं दह्णं तथा ।
तुल्यं खल्वे दिनें मयं मुण्डीनिर्गुण्डजैद्वे ॥ २१६८ ॥
द्विगुञ्जा वटिका खादेत्सर्वधातप्रशान्तये ।
साच्याऽसाथ्यं निहन्त्याशु बृहद्वातगजाङ्कुश ॥ २१६९ ॥

र स, घ, र सु, र च, र र, व रा, वातरोगाऽधिकारे ।
टि०—र स, घ, र सु एषु प्रथेप द्वितीयस्थाने र च र र,
व रा, एषु स्वन् प्रथया च "सूताऽप्रतीक्ष्णताप्रश्न मृतातालकगन्धकम् ।
भागी शुण्ठी बला धान्यं कटुफलाऽभया विषम् ॥ मन्पिथ्यं चपलाद्भवे

निचैका भक्षयेद्दगीम् । वातभेपाहरो ह्येष महावातगजाङ्कुश ॥" इति
पाठो दृश्यन् तस्य पूर्वैरिम्नान्ठऽन्तर्धानं सुसाप । स्वणकान्तवीरभवे
तद्दीनोऽपि पाठ प्रवक्ष्यमीत्य इत्यथापदेशान्तरस्याऽनावश्यकत्वम् । शेषा
लाभ प्रयोगयदियेतत्पत्र सर्वत्रैव योगिनोऽनुसरन्तीत्यन्वयदत्तः ॥

भाषा—पारा, अत्रक, फोलाद, कान्त, ताप्र इनकीमसंसे,
शुद्धहरिताल और गन्धक, सुवर्णभस्म, सोंठ, बला, धनियां,
कायफल, हर्, शुद्धबधनाग, इन्द्रायण, काकडासौंगी, पीपल,
मरिच, मुनासुहागा, ये सब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर गोर-
खमुण्डी और निर्गुण्डीकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२
रत्तीकी गोलिये बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली सधय
अथवा रोगोचितानुपाननेसाय देनेसे यह समस्त वातुरोगोंको
नष्टकरताहै ॥ ४५१ ॥

४५२ वातगजाङ्कुशरसः (तृतीय)
अष्टौ भागा रसस्याऽपि विपतिन्दोस्तथैव च ।
गन्धकस्य त्रया भागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ २१७० ॥
गुञ्जामात्रा घटी खादेद्दशीतिघातनाशनम् ।
ऊरस्तम्भं निहन्त्याशु ख्यातो वातगजाङ्कुश ॥ २१७१ ॥
व रा, वै चि, वाताऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और कुचिला ८-८ भाग, शुद्धगन्धक,
त्रिकटु और त्रिपला ३-३ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेण्ण
ककी नीलवर्णकलीमें मिलाय वातप्रद्रव्योंके द्रवसे एकदिन
मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१
गोली वातहरानुपाननेसाय देनेसे यह ८० वातरोग और
ऊरस्तम्भको नष्टकरताहै ॥ ४५२ ॥

४५३ वातगजेन्द्रासिहरसः
अम्रं लौहं रसं गन्धं ताप्रं नागं सटङ्गणम् ।
विषं सिन्धुं लवङ्गश्च हिङ्गुजातीफलं समम् ॥ २१७२ ॥
तदर्द्धं त्रिसुगन्धश्च त्रैफल जीरकन्तथा ।
कन्यारसेन सम्पिप्ये घटी कार्या त्रिरक्तिका ॥ २१७३ ॥
सेव्या पयोऽनुपानेन सदा प्रात सुखान्विते ।
अशीर्षिं वातजात्रोगांश्चार्थाश्च पेषिकान् २१७४
विंशतिं श्लैष्मिकात्रोगान्सेवनादेव नाशयेत् ।
अभिघातेन ये क्षीणा. क्षीणाऽर्द्धाऽवयवाश्च ये २१७५
व्याधिक्षीणा वय क्षीणा. स्त्रीक्षीणाश्चाऽपि ये नरा. ।
क्षीणेन्द्रिया नष्टगुका वहिहीनाश्च मानवा ॥ २१७६ ॥
तेषा वृष्यश्च बल्यश्च वय स्थापनमेव च ।
खञ्जाना पङ्कुञ्जाना क्षीणाना मासचर्दने ॥ २१७७ ॥
अरोगी सुखमामोति रोगी रोगाद्भिमुच्यते ।
रसस्याऽस्य प्रसादेन नास्ति रोगाद्भय कचित् ॥ १७८
भै र, आमवाते ।

भाषा—अत्रक और लोहमसं, शुद्ध पारा और गन्धक,
ताप्र और नागमसं, मुनासुहागा, शुद्ध बधनाग, सेधानयक,
लौह, हर्ग, कायफल येसब समभाग, सबमे भाषा त्रिसुगन्ध,

त्रिकला और जीरा लेकर वारीकचूर्णकर एकदिन धीकुंवारकेरसे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथलेनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० श्लेष्मरोग, अभिघातजन्यक्षीणता, आपे अन्नकीक्षीणता, व्याधि-क्षीणता, आयुकाहास, स्त्रीक्षीणता, क्षीणेन्द्रियत्व, नष्टशुक्रत्व, मन्दामि, खड्गता, पटुत्व, कुब्जत्व, अत्यन्तहृशता, इनसबको नष्टकर यह आदमीको हृष्टपुत्रबानाकर आयुको बढ़ाताहै ॥४५३॥

४५४ वातचिन्तामणिरसः

भागत्रयं स्वर्णभस्म द्विभागं रौप्यमन्नकम् ।
लौहात्पञ्च प्रवालञ्च मौक्तिकान्त्वयसम्मितम् ॥२१७९॥
भस्मसूतं सप्तभागं कन्यारसविमर्दितम् ।
वह्नुमात्रा वटी कार्या भिपग्भि रतियत्नतः ॥ २१८० ॥
यथाव्याप्यनुपापानेन नाशयेद्रोगसङ्कुलम् ।
घातरोगं पित्तकृतं निहन्ति नाऽत्र चिन्तनम् ॥२१८१॥
वृद्धोऽपि तरुणस्पर्द्धां कन्दर्पसमविक्रमः ।
दृष्टः सिद्धफलश्चाऽयं वातचिन्तामणिस्त्वह ॥२१८२॥
भै.र., घ., वातरोगे ।

भाषा—सुवर्णभस्म ३ भा, रजत और अन्नकभस्म २-२ भा., लोहभस्म ५ भा., प्रवाल और मोती ३-३ भा., पारद-भस्म ७ भागलेकर वारीकचूर्णकर धीकुंवारकेरसे एकदिन मर्दन-कर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तनुद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे वात और पित्तरोगोंको नष्टकर यह बूढ़ोंको युवावस्थामें लाताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ वातदावानलरसः

पुनर्भूवह्निनीरेण रसत्रिगुणगन्धकम् ।
मर्दयेत्त्रिगुणं कान्तपात्रके विनिवेशयेत् ॥ २१८३ ॥
पंचेद्रगुणैः सूर्यपत्रपक्षरसैः शनैः ।
ततो वह्निजलं दद्यात् विपञ्च रसपादिकम् ॥ २१८४ ॥
शीतवातपरिशोषणक्षमो जायते सकलवातनाशनः ।
त्र्युपणेन सघृतेन सेवितः शृङ्खेरपयसाऽपि बलकः
त्रिभिराद्यं रसं सिद्धं पर्यं शूरि घृतं हितम् ।
साधितं तिलतैलेश्च मर्दनं वातनाशनम् ॥ २१८६ ॥
र., वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारिकेसाथ त्रिगुने गन्धककी नीलवर्णकबलीकर दृष्टिद (५०) और चित्रककी जड़केकाड़ेसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोलेसे त्रिगुनेवज्रनके कान्तलोहेपात्रमें रखकर आकृतेपत्रपत्तोंका अठगुनारस डालकर धीरेधीरे पकावे । रस जलजानेपर सतनाही चित्रकमूलकावाय छुलावे । फिर रससे चतुर्थांश शुद्धबछनाग मिलाकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकुट और धीकेसाथ अथवा अदरखके रसकेसाथ सेवनकरनेसे शीतवातकी यह नष्टकरताहै । इसमें पच्य अधिकघृतवाला अथवा तिलतैलेमें बनायाहुआ पदार्थदेना और वातनाशकतैलोंकी मालिशकरना ॥ ४५५ ॥

४५६ वातनाशनरसः

सूतहाटकवज्राणि तात्रं लौहञ्च माक्षिकम् ।
तालं नीलाञ्जनं तुत्थं सिन्धुकेनं समांशिकम् ॥२१८७॥
पञ्चानां लयणानाञ्च भागेकं सुचिमर्दयेत् ।
वज्रीशीरे दिनेकनु रुद्धा तं भूधरे पचेत् ॥ २१८८ ॥
मापैकमाद्रकद्रावै लिह्याद्वातविनाशनम् ।
पिप्लीमूलककार्यं सकृष्णमनुपाययेत् ॥
सर्वांवातविकारान्श्च निहन्त्याक्षेपकादिकान् ॥२१८९॥
र. स., शा. सं., त्र. यो. त., र. चं., रसायनप., घ., चि र भ,
रसायनसं., र. सु, भै सा, र. (मा.), र. प्र. सु. एतेषु वातनाशन ।
वै. क., नि. र., र. मं., र. का. एषु वातारिः । र. र. र. स. यष्ट-
घानलः । ना. वि. वातगजाडशः ।

टि०—रसप्रकाशसुभाचरे परबलवगत्याने रसोने निशेषित इति विशेष ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, हीरा, ताम्र, लोह, सोनामाखी, हरिताल, सुरमा, तुत्थ इनकीभस्में, ससुद्रकेन, पांचोंनमक येसब समभाग लेकर वारीक चूर्णकर सेहण्डकेदूधसे १ दिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर भूधरयन्त्रमें पनावे । स्वाङ्ग-शीतलोहेनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा अद-रखकेसाथलेकर पिपलामूलकावाय पीपलकाचूर्ण डालकर पीनेसे आक्षेपनादि समस्त वातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४५६ ॥

४५७ वातपिचारिरसः

मृतं सूतं मृतं तात्रं शिला तालं विपोषणम् ।
कुष्ठं नागथला पथ्या गोशुक्रश्च विदारिकः ॥२१९०॥
परुण्डं मर्दयेत्तुल्यं द्रवैश्चाऽग्निपुनर्नवैः ।
मापमात्रां वटीं खादेद्वातपित्तहृता भवेत् ॥ २१९१ ॥
र. र., र. चं., व. रा., वै. चि., र. का. वातरोगाऽधिकारे ।

टि०—व. रा, वै चि गुल्मवाताऽधिकारे, नाम च विविचमिति । व. रा, वै. चि. एतयोर्विपोषण निष्कास्य गल्बक निवोचिनम् । गोशु-क्राने शिरिरकृष्ट निवोजिन, मात्रा नैकगुणा प्रमिता निर्दिशिता । रस-कामनेने वातपित्तान्तकत्रिकेति नाम्नाऽप्येव षाटो न्यव्यापिनस्तस्य न रसान्तरता, तात्रस्थाने अन्नकपननु प्रमादेव मनात् । परुण्ड-मूलवने भूद्रव्ये निवेशोऽस्ति । रसकामनेने तु तृतीयन्दर्शनेन भावनाद्रव्यत्वेन प्रतिभाजनपी प्रमार्दिनिगल्ययन नैवेद्यवगन्तव्यम् ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमैथिल, हरिताल और बछनाग, मरिच, कुट, शुलसिद्धरी, हर्, गोखन्, विदारीकन्द, एण्डकीजड़नीडाल, सब सममानलेकर वारीकचूर्णकर चित्रक और पुनर्नवाके वाथोंसे १-१ दिन मर्दानेदर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगीचितानुपानकेसाथदेनेसे यह वातपित्तदरोगोंको नष्टकरताहै ।

४५८ वातरक्तशोषीरसः

भायेत्तालकं शुद्धं शरपुत्राज्ये नियम् ।
पकविदातिवारं हि सत्तव चित्रव्यान्वना ॥ २१९२ ॥

दिनत्रयं सोमराज्या भङ्गात्तेन दिनत्रयम् ।
 शोषयेदातपे खल्वे न्यस्य सर्वं सुचूर्णितम् ॥ २१९३ ॥
 तालाञ्च शम्भुवीर्यन्तु तालतुल्यं मृताऽन्नकम् ।
 पचेद्भजपुटे यद्वा काचकूप्यामयापि वा ॥ २१९४ ॥
 त्रिवारञ्च तदुद्भूय स्वाङ्गशीतं सुचूर्णयेत् ।
 चूर्णेन शरपुष्पायाः शाणमात्रेण भक्षयेत् ॥ २१९५ ॥
 गुञ्जैर्न वा द्विगुञ्जं वा त्रिगुञ्जाप्राऽधिकं क्वचित् ।
 यजेत्यह्वयणे यत्नादितदन्त्यचिरेण तु ॥ २१९६ ॥
 वातरक्तमसाध्यं हि कुष्ठमष्टादशान्भिधम् ।
 पाप्माकण्डूविचर्चान्तु द्वाद्विसफोटकानि च ॥ २१९७ ॥
 र. म. मा., ना. वि., वातरक्ते ।

भाषा—शुद्धहरितालका रसमाणिक्य बनाकर शरपुष्पके-
 हायगे २१, त्रिफलाकेहायगे ७, वाङ्गुची और गिलबिन्देदोतो
 ३-३ दिन कड़ीभूषणें रखकर भावनादे । हरितालके भाषा शुद्धपारा
 और बराबरसी अन्नकमलम डालकर गोलबनाय गरपुटही
 आंचदे, अथवा आलतीसीशीमें रगार निकालकर वाङ्गुयायकी
 आंचदे । एगे ३ बार आंचेकर स्वाङ्गशीतकोनेर निकालकर
 रगणोडे । इसमें १ से ३ रतीतक मात्रा ४ मासे शरपुष्पके-
 वृणैसाधये । इसमें लान बिलुत्तल्यन्दरेतो असाध्य वातरक्त,
 १८ प्रकारकेपुत्र, पाप्मा, कण्डू, विचर्चिका, दाद, विस्फोटक
 इनसबको यह बहुतबढ़ी नष्टकरादे ॥ ४५८ ॥

४५९ वातरक्तान्तकवटी

निष्कट्टिममतिः शुद्धा ह्यजमोदा ततो रसात् ।
 निष्कप्रयं विशाल्येन मुशालेनाऽवघातय ॥ २१९८ ॥
 उद्धृतले रत्ना याघहृयं गच्छेत्ततो शुद्धम् ।
 पुताणं त्वय तुल्यांशं दत्त्वा सङ्घटय भोघृतमा ॥ २१९९ ॥
 शुद्धतुल्यं पिनिःशित्य चतुर्दशपटीः कुम् ।
 एकेकां भक्षयेत्प्रातस्त्वाभ्युदासीं मुहुर्मुहुः ॥ २२०० ॥
 गोभूमाश्रं भूरि घृतं रसादेह्वयणयजितम् ।
 पिपय कोष्णं जलं गच्छ यहिः सञ्चर या नया २२०१ ॥
 मुखपाके च मञ्ज्राते दीप्यपोहलिका गुम्मा ।
 मुखे घायां तथा क्षीरित्यकृपायचतुलुकान् कुम् २२०२ ॥
 लाला श्येषघदि तथा भूषयेत्तु यदिच्छसि ।
 न्नानं याष्टसि धैर्यतु कुम् तर्हि यथामुत्तम् २२०३ ॥
 अनेन योगराजेन वातरक्तममुद्रयाः ।
 मन्धिज्जाहा शर्म यानि पीडाः शीघ्रं मुहुस्तराः ॥
 अनुपतेन गैर्वाहा पूषमेय विधि भज्ज ॥ २२०४ ॥
 रसादना, वातरक्ते ।

भाषा—मन्मोदकापुष्प १८ बर्ण, शुद्धपारा १२ मासेनेर
 दोसोरो अन्धमें डालकर हूटे सब पारा उगमें निकलाय लव
 दोसोहीबराबर पुगलपुत्र तथा सादरा ही डालकर हूटे ।
 एहीबराबरे १४ लीतिये बनाकर रगणोडे । इनमेंमे ३० कण्ट १
 लीतलकर अगमें बनकरे । गुग्गुलुनेर अधिक रंग हाडेपु
 र्हेके कलां मांरे । कान किमुत्तल्यरे । लानपुनेर

कटुगजलरीवे । इसके प्रयोगमें लयध मुसपाकहोनेपर लज्जा-
 क्षरो पानीमें भिगोकर बारीकमलमलकेकण्डूमें पोहली बनाय
 मुंहमें रखे । यदि श्मसे शान्त न हो तो बट वगैरह दूधगले
 थुंकोकी छालके कायते कुजे करे । इच्छा हो तो ईरा चूते ।
 कानरनेकी इच्छा हो तो करे । इससे वातरक्त और सन्धिष्य
 शीघ्र नष्टहोते । एकप्रयोगसे यदि कुल्लयापि अवशित रहनाय
 तो इतीपारदेवे ॥ ४५९ ॥

४६० वातरक्तान्तकरसः

गन्धकं पारदं लोहं शिलां तालं घनं तथा ।
 शिलाजतु पुरं गुञ्जं समभागं विचूर्णयेत् ॥ २२०५ ॥
 श्वेताऽपरजिता दावीं चाकुचीं चित्ररुत्तथा ।
 पुनर्नया देवकाष्टं त्रिफला ध्वानपयेल्लके ॥ २२०६ ॥
 चूर्णमेयां पृथक् तुल्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥
 त्रिफलाभुङ्गराजस्य रसेनेत्र त्रिधात्रिधा ॥ २२०७ ॥
 भाययेद्भक्षयेत्पञ्चाचणमाश्रं दिनेदिने ।
 ततोऽनुपानं निम्बस्य पत्रं पुष्पं त्वचं समम् ॥ २२०८ ॥
 शाणमाश्रं घृतैः कुर्यात्सर्वं वातविकारखुत् ।
 वातरक्तं महाघोरं गर्भारं सर्वजञ्च यत् ॥
 सर्वापद्रवसंयुक्तं साध्याऽसाध्यं निहन्त्यलम् ॥ २२०९ ॥
 र. सं., घ., र. नं., र. गु., गै. र., र. र., र. क., पं. क., पारले
 टि—३. क., वातरक्तारिरस ही नाम । र. र. कटुवीणाने
 बन्धितेन विचैरिजम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, लोहमम, शुद्धमिश्रित
 और हरिताल, अन्नकमलम, शिलाजती, गुण्ड लव १-१ भाग
 लेहर पारेगन्धकही नीलवर्णकमरीमें मिलाकर एकदोघोल,
 दारदली, वाङ्गुची, चित्ररुत्त, पुनर्नवा, देवदाह, त्रिफला,
 त्रिष्टु, विष्टु वेगव १-१ भाग लेहर बारीकपुनर पूषोड
 इसमें मिलाकर त्रिफला और भंगरासेगमें ३-३ दिन गर्दन-
 कर चनेमात्र गोतिये बनाकर रगणोडे । इनमेंगे १-१ गोरी
 नीमकेने, दूध और छाल समभागके ४ मासे घृत और पीके-
 लाय सेनेगे समुने वातरक्त और पातविकारोंको यह नष्टकरादे ।

४६१ वातरक्तान्तकलौहम् (घृत्)

अयोभागहृयं देयं प्रत्येकशोकागिकम् ।
 रग्गन्धकमुत्ताऽन्नगम्परापाश काञ्चनम् ॥ २२१० ॥
 भागाऽर्द्धञ्च तथा तालं सपमेकत्र मिश्रयेत् ।
 कुर्यात्तो मेकपण्योश्च द्रोणपुष्पाग्नेमिष्या ॥ २२११ ॥
 भाययेद्भाषयिन्मात्रा श्रेया रतिश्रयामिका ।
 पथ्यापयोऽनुपानञ्च कर्तव्यं हितमिच्छता ॥
 गृह्णातान्तको लौहः सयितो निवर्तं होन ॥ २२१२ ॥
 शोषप्रयं द्वागणपागलः
 गर्भारमुत्तानमघोरदंताम् ।
 प्रमेहमसुप्रमघातिट्पुं
 जानं विनारं विषियं मरानाम् ॥ २२१३ ॥

कापालमौढुम्बरमृष्यजिह्वं

सिध्मं तथा मण्डलपुण्डरीके ।

कुयोद्विशुद्धिं खलु शोणितस्य

वर्णप्रकर्षञ्च बलाऽग्निवृद्धिम् ॥ २२१४ ॥

आ. वि (परिशिष्ट) वातरकः ।

भाषा—लोहभस्म २ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक, मोती, अप्रक, खपरिया, सुवर्ण इनकीभस्में १-१ भाग, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य आधाभाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर खारीजाल(मारायाड़ी), मण्डकपर्णी, द्रोणपुष्पी, इनप्रत्येककेरसोंसे ३-३ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर्, दूध अथवा पानीसेसाथ लेनेसे उपद्रवसहित गम्भीर अथवा उत्तान वातरक, उपद्रव, भयकर प्रमेह, मूत्रच्छू, कापाल, औढुम्बर, ऋष्यजिह्व, सिध्म, मण्डल, पुण्डरीक, इत्यादि समस्त-दुष्टोंको दूरकर रकको शुद्धबनाय वर्ण, बल और अग्निको देतादि ॥

४६२ वातराजवटी (प्रथमा)

सुशुद्धं पारदं गन्धं लोहं माक्षिकभस्मकम् ।

स्वर्णं तारं ताम्रवङ्गं कान्तं तीक्ष्णन्तु तालकम् ॥२२१५॥

दरुदं वत्सनाभञ्च चातुर्जातं सचित्रकम् ।

त्रिकटु त्रिफला भाङ्गां ग्रन्थिकं गजपिप्पली ॥२२१६॥

कुष्ठं जातीद्वयं दारु पुष्करं चाम्बलेतसम् ।

शटी दारुहृदिष्ठे पञ्चकं वाडिमं त्रिवृत् ॥ २२१७ ॥

राक्षा डुरालभा छिन्ना दन्ती जैपालकं विषम् ।

कर्णमात्राणि सर्वाणि द्विपलं गिरिजं मतम् ॥ २२१८ ॥

जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा सचञ्चकम् ।

कङ्गोलकम्बुदीरञ्च द्वौ क्षारी लवणत्रयम् ॥ २२१९ ॥

सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवत्सुखल्वे शोभने दिने ।

निर्गुण्डीवासभृङ्गाङ्गि. काकमाच्यार्द्रकाम्बुना २२२०

तर्कारीसूरणाद्रावैस्त्वथोन्मत्तरसेन च ।

भावनाः खलु दातव्याः सप्त सप्त क्रमादिह ॥ २२२१ ॥

ततः पर्णरसे भाव्यो घटिकां बहुसम्मिताम् ।

छायाशुष्कां तत कृत्वा क्षात्वा रोगवलाऽध्वलम् २२२२

सुदिने शुभनक्षत्रे शिवं दुर्गां विभाकरम् ।

प्रणम्य योजयेत्सम्पयथारोगाऽनुपानतः ॥ २२२३ ॥

अशीतिवातजात्रोगांश्चत्वारिंशच्च पत्तिकाम् ।

विशतिं श्लैष्मिकान्धोरार्च्छासं कासं भगन्दरम् २२२४

कुष्ठं चोर क्षतं शूलं ज्वरं पाण्डुं गलप्रहम् ।

प्रमेहं रक्तपित्तञ्च गुल्मं सङ्घर्षां तथा ॥ २२२५ ॥

साध्याऽसाध्यासिहन्त्याशु सत्यं श्रीशिवमापितम् ।

वातराजवटी होया वातरोगकुलान्तिका ॥ २२२६ ॥

र सु, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, रजत, ताम्र, वज्र, कान्त, फोलाद इनकीभस्में, शुद्ध-हरिताल, शिगरिक और बलाप्रभ-चातुर्जात, चित्रकमूल, त्रिकटु,

त्रिफला, भारद्वाजी, पिपलामूल, गजपीपल, कुठ, जायफल, जावित्री, देवदाह, पोहकरमूल, अम्बलेत, कचूर, दोनोंप्रकारकी दाहहल्दी (उत्तरमें दो प्रकारकी मिलतीहै एकको तुतरा और दूसरीको किल मोटा कहतेहै), हल्दी, आबाहल्दी, पदमकल, अनारदाना, निसोत, रास्ना, जनास, गिलोय, दन्तीमूल, शुद्धजमालागोटा और बल-नाग १-१ कर्ष, शुद्धशिलाजीत २ पल, जायफल, बंसलोचन, असगन्ध, चञ्च, शीतलबीनी, रस, सजी और जवाखार, सेंधा, सचल और समुद्रनमक १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, अद्दस, भगरा, मकोय, अदरक, तर्कारी ?, सूरज, धतूरा, इनप्रत्येकके यथा सम्भवस्वरस अथवा काथोंसे ७-७ भावनाएँ देकर सुखाकर अक्षीरमें पानकेरसे १-२ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिएँ बनाय छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोग और रोगीका बलाबल देखकर शुभनक्षत्रयुक्त शुभदिनमें शिव, दुर्गा और सूर्यभगवानको प्रणामकर समय अथवा रोगोचिदानुपानके साथ देनेसे ८० वातरोग, ४० पित्तरोग, २० प्रकारके कफरोग, श्वास, कास, भगन्दर, कुष्ठ, उर क्षत, शूल, ज्वर, पाण्डु, गलप्रह, प्रमेह, रक्तपित्त, गुल्म, सङ्घर्षणी, इत्यादि साध्यासाध्य तमाम रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४६२ ॥

४६३ वातराजवटी (द्वितीया)

पारदं गन्धकं शुद्धं चातुर्जातं कटुनयम् ।

जीरकं युगलं चन्द्रं पत्रं तालीसकेशरम् ॥ २२२७ ॥

जातीफलं लवङ्गञ्च दीप्यकं घृह्णियालकम् ।

अमृता चन्दनं द्राक्षा मांसी चयं यरी घचा ॥२२२८॥

जातीकोर्षं विडं धान्यं त्रिफला तगरं वृषम् ।

प्रत्येकं कर्षसम्मानं द्विपलञ्च हतायनम् ॥ २२२९ ॥

शुद्धं नवाहिकेनन्तु पलमानं प्रकीर्तितम् ।

सर्वं सञ्चूर्ण्य विधिवन्मर्दयेत्खाखसद्रवैः ॥ २२३० ॥

यामद्वयं तत. कायां घटिका बहुसम्मिता ।

द्वयाद्वलाबलं धीश्य यथारोगानुपानकम् ॥ २२३१ ॥

ऊरुस्तम्भं वातरोगं ज्वरं दाहमनिद्रताम् ।

प्रमेहं रक्तपित्तञ्च उर क्षतमरोचकम् ॥ २२३२ ॥

हन्ति सर्वानशेषेण तमः सूर्यादये यथा ।

अस्य प्रभाधान्मनुजो रमयेद्रमणीशतम् ॥ २२३३ ॥

र सु, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चातुर्जात, त्रिकटु स्वाह-सफेदजीरा, शुद्धबूर, पत्रज, तालीसपत्र नागकेशर, जायफल, लौंग, अजवाइन, चित्रकमूल, तागण्डोला, गिलोय, सपेद-चन्दन, शक्क, जयमांसी, चञ्च, शतावर, वच, जावित्री, त्रिड-नमक, धनिया, त्रिफला, तगर, अद्दसा येसव १-१ कर्ष, लोहभस्म २ पल, शुद्ध अक्षीम १ पल लेकर सबका बारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय पोस्तकेडोडोंके वाथे २ पहर मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिएँ बनाकर रख

छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातग्याधि, ज्वर, दाह, निद्रानाश, प्रमेह, रक्तपित्त, उर क्षत और अरुचि इनसबको नष्टकर उत्तम वाजीकरणको करताहै

४६४ वातराक्षसरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं स्वर्णगन्धं कान्तञ्चाऽन्नकर्मौक्तिकम् ।
ताम्रवैकान्तकं सम्यङ्गारयित्वा चिनि.क्षिपेत् २२३४
पुनर्नवागुद्ध्यग्निःसुरस्ताभृङ्गसिन्धुकैः ।
पृथक् पृथक् दिनं भाव्यं दद्यात्पुष्टं ततः ॥२२३५॥
स्वाङ्गशीतं समुद्भूतं शृङ्खणचूर्णन्तु कारयेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं बह्वुमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २२३६ ॥
मधुपिप्पलिमिश्रञ्च अनुपानं यथाबलम् ।
सर्ववातानशेषांश्च क्षयान्पाण्डुवृ हृदीमकम् ॥२२३७॥
पक्षाघातं धनुर्वातं कम्पमुन्मादकं तथा ।
निहन्त्यात्कुरते दीप्तिं कान्तिपुष्टिःश्लप्रदः ॥ २२३८ ॥
र.पा, वातरोग ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, सुवर्ण, कान्त, अन्नक, मोती, ताम्र और वैकान्त इनकीमसमें समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, भगरा, निर्गुण्डी इनके यथासम्भव स्वरस अथवा काषोसे १-१ दिन भावनादेकर गोला बनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर ४-५ कपडिमिरीदेकर सुख नेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा मधु और पीपलकेसाथ अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार, क्षय, पाण्डु, हलीमक, पक्षाघात, धनुर्वात, कम्प, उन्माद और मन्दाग्नि इनसबको नष्टकर कान्ति, पुष्टि और बलको देताहै ॥ ४६४ ॥

४६५ वातराक्षसरसः (द्वितीयः)

सूतं सूतं तथा गन्धं कान्तञ्चाऽन्नकमेव च ।
ताम्रं भस्मीकृतं सम्यङ्गदयित्वा समांशकम् ॥२२३९॥
पुनर्नवा गुद्ध्यग्निः सुरस्ताभृणपणं तथा ।
पतेपां स्वरसेनेव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २२४० ॥
दत्त्वा लघुपुष्टं सम्यक् स्वाङ्गशीतं समुद्भवेत् ।
वातराक्षसनामाऽयं वातरोगे प्रयोजयेत् ॥ २२४१ ॥
तत्तद्रोगाऽनुपानेन द्विगुज्जामात्रसेवनात् ।
ऊरुस्तम्भं वातरक्त गात्रभङ्गं तथैव च ॥ २२४२ ॥
आमघातं धनुर्वातं वेदनावातमेव च ।
पक्षाघातं कम्पवातं सर्वसन्धिगतं तथा ॥ २२४३ ॥
सुतिवातञ्च शूलञ्च ह्युन्मादञ्च विनाशयेत् ।
तत्तद्रोगाऽनुपानेन याताशीतिविनाशनम् ॥ २२४४ ॥
यो र, घृ. यो त., नि. र, र च, रसायनप, रसायनस, र सु., र. म. मा, र. क यो, वै चि, र पा, वातरोगे ।

टि०—रसपारिजाते "द्योने मरित तुल्य शतकुम्भ निरत्यकम् ।" श्लेष्मकेक विशेषण दृश्यते । तथा च भावनायां 'यूपस्थाने आट रूपभावना दृश्यते ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, कान्त, अन्नक और ताम्रभस्म येसब समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पुनर्नवा, गिलोय, चित्रक, तुलसी, त्रिकटु, इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा काषोसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुष्टमें बन्दकर ३-४ कपडिमिरीदेकर सुखनेपर लघुपुटकी आचदे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, वातरक्त, गात्रभङ्ग, आमघात, धनुर्वात, आघातवात, पक्षाघात, कम्प, सन्धिघात, सुप्तघात, शूल, उन्मादप्रभृति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

४६६ वातविध्वंसनरसः (प्रथम)

रसं गन्धकं नागवङ्गा च लोहं
तथा ताम्रजं ध्योम निश्चन्द्रकञ्च ।
कणाटङ्गणे चोपणं नागरं वै
पृथग्भागमेकं विमर्चैकयामम् ॥ २२४५ ॥
ततो वत्सनाभं चतु.सार्धभागं
दृढं मर्दयेद्वाचना व्योपजा त्रिः ।
वराचित्रकैर्मर्चयेत् कुष्ठतोयै-
स्तथा कारहाटेः सनिर्गुण्डितोयै ॥२२४६॥
मनोधानिकैराट्टकैर्निम्बुनीरै-
श्चिभिर्मांवेद्वातविध्वंसनोऽयम् ।
समीरे च शूले महाश्लेष्मारोगे
ग्रहण्यां तथा सन्निपाते च मौढये ॥२२४७॥
अपस्मारमान्ये सशैत्ये सपित्तो-
दरश्लेष्मकुष्ठाऽर्शसि खीगदे च ।
निपेयेत् गुञ्जाद्वयं चास्य तत्त-
द्दग्नाऽनुपानैर्यं रोगजित्स्यात् ॥ २२४८ ॥
घृ. यो. त, यो र, नि. र, र क यो, वै क, टो, र चं, र को, र सि, व रा, वै चि, र सु, रसायनप, रसायनस, वै चि, र पा, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाम, वङ्ग, लोह, ताम्र, अन्नक इनकीमसमें, पीपल, सुनासुहागा, मरिच, सोड, येसब १-१ भाग, शुद्धवज्रनाग ४। भाग लेकर वारीकचूर्णकर परि-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय त्रिकटु, त्रिकला, चित्रक, भगरा, कुष्ठ, अकलशरा, निर्गुण्डी, अमलोनिया, अदरक, नीबू इनसबके रसोंसे ३-३ भावनाए देकर २-२ रतीकी गोलिया-बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे अमिलव देखकर १ से ३ गोलीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे, भयकरवात, शूल, उत्कटश्लेष्मारोग, ग्रहणी, सन्निपात, मूत्रा, अपस्मार, मन्दाग्नि, शीतपित्त, उदररोग, प्लीहा, कुष्ठ, बवासीर, खीरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६६ ॥

४६७ वातविध्वंसनरसः (द्वितीयः)

रसं गन्धं विपश्चैव ताम्रं लोहं समाक्षिपम् ।
एतत्सर्वं समं योज्यं मिश्रञ्च द्विगुणं भवेत् ॥ २२४९ ॥

जैपालं तालकञ्चैव रसेन सह योजयेत् ।
 श्यूपणञ्च समं योज्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २२५० ॥
 निर्गुण्डीसुरण्द्रावै भ्रानोश्च पयसस्तथा ।
 तर्कारीभृङ्गराजश्च ततो धसूकस्य च ॥ २२५१ ॥
 भावना खलु दातव्या सप्तसप्तक्रमादितः ।
 द्विगुञ्चं भक्षयेत्प्रातर्मरिचिञ्च समन्वितम् ॥ २२५२ ॥
 जानुजङ्गाकटिस्थूलपादगुल्फौष्टशीर्षिकम् ।
 मन्यास्तम्भं हनुस्तम्भं त्रिकस्तम्भञ्च शुष्कम् २२५३
 जिह्वास्तम्भं वाहुभवं त्रिकस्तम्भञ्च पादजम् ।
 अधोभागे च ये वाताः सर्वाङ्गे विचरन्ति ये ॥
 सर्वान्वाताङ्गयेदाशु द्रव्यं नारायणो यथा ॥ २२५४ ॥
 नि र., वै. चि, स्वायन्तं, वातरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, ताम्र, लोह, सुवर्णमाक्षिक इनकी-
 भस्मं १-१ भाग, शुद्धबध्नाग २ भा, शुद्ध जमालगोटा और
 हरिताल १-१ भाग, त्रिकटु सबकी बराबर लेकर सबकाबारीक-
 चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी, सुरण,
 आकडाइध, तर्कारी, भगरा, धतूरा इनके यथासम्भव स्वस
 अथवा बायोसे ७-७ भावनाएं देकर २-२ रतीकी गोलियें
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रात कालमें ७ अथवा
 २१ कालीमिर्चोके चूर्णकेसाथलेनेसे जानु, जघा, कमर, पैर,
 गुल्फ, ओष्ठ और शिकेवातरोग, मन्यास्तम्भ, हनुस्तम्भ,
 त्रिकस्तम्भ, शुष्कता, जिह्वास्तम्भ, अववाहुक, त्रिकस्तम्भ, पाद-
 स्तम्भ, अधोभागगत किंवा सर्वाङ्गतवायु इनसबको यह नष्ट
 करताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ वातविध्वंसनोरसः (लघुः) ३

पारदपुङ्गव गन्धो वत्सनाभोऽद्भमभेदकः ।
 घराटस्तालकञ्चैव हेमश्यूपणजे द्रवैः ॥ २२५५ ॥
 मर्दयेद्रक्तिकामानो वातविध्वंसनक्षमः ।
 श्वासे कासे सन्निपाते क्षीताङ्गे शूलसङ्गहे ॥ २२५६ ॥
 नि र., वै चि, वै चि, र. मु, रसायनस, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, सुहागा, गन्धक और बध्नाग, पापाण-
 भेद, बौझी और हरितालभस्म, सब समभागलेकर धतूरे और
 त्रिकटुके यथासम्भवस्वरस अथवाकायोसे एकएकदिन मर्दनकर
 १-१ रतीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग,
 श्वास, कास, सन्निपात, क्षीताङ्ग, समस्त शूल, इनसबको यह
 नष्टकरताहै ॥ ४६८ ॥

४६९ वातविध्वंसनरसः (चतुर्थ)

तालकं कर्पमेकञ्च पञ्चकर्पञ्च वह्निजम् ।
 मर्दयेन्मार्कण्डेयसैश्वरुवियशतियामकम् ॥ २२५७ ॥
 ततः शुष्कं विचूर्णयांश्च वसुधामं भिषग्वरः ।
 गुञ्जैकं वा द्विगुञ्चं वा केवलं चार्द्रके रसे ॥ २२५८ ॥

प्रातं सिद्धमुखादेतद्वयं सर्वेषु पाप्मसु ।
 अशीर्ति वातजाप्रोगान् कफजान्कुष्ठसुतिजान् २२५९
 संहरेत्सर्वरोगांश्च अग्निमान्यादिकानथ ।
 सिद्धभापितमेतस्य गुणान्बुद्धं न शन्यते ॥ २२६० ॥
 पण्डोऽपि कामरूपी स्यान्मासत्रयसुसेवनात् ।
 अनुपानञ्च पथ्यञ्च सघृतं मधुरं ददेत् ॥ २२६१ ॥
 र. सि, वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ वर्ष, मरिच ५ कर्प लेकर बारीक-
 चूर्णकर भंगरेकरससे २४ पहर मर्दनकर सुखाकर ८ पहर शुष्क-
 मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ रतीसे २ रतीतकमात्रा रोग
 और रोगीकाबलाबल देखकर अदरसके रसकेसाथ देनेसे समस्त-
 पापारोग, ८० वातस्य, नानाप्रकारकेकफरोग, कुष्ठ, सुप्ति,
 मन्दाग्नि, पण्डता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६९ ॥

४७० वातविध्वंसनरसः (लघु) ९

रसं गन्धं विपं कृष्णा हृद्वात्री शुद्धतालकम् ।
 त्रिफला वारणी व्योपं सुरता शिष्टु पोक्करम् २२६२
 समञ्च भावयेदन्तीभृङ्गजैः सप्तधा पृथक् ।
 बल्लयुग्मं शृङ्गवेररसैश्च लवणान्वितम् ॥ २२६३ ॥
 वाहुके सन्निपाते च तथा सर्वाङ्गजेऽनिले ।
 अद्भमयुक्ते तथा शूले गुण्ठीकाथसमन्वितः ॥
 वातविध्वंसनो नाम धनुर्धातं नियच्छति ॥ २२६४ ॥
 रसायनस., वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बध्नाग, पीपल, शुद्धमै-
 सिल और हरिताल, त्रिफला, इन्द्रायणशीजक, त्रिकटु, तुलसी,
 सहिजन, पोहकरमूल, येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-
 गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय दन्तीगूल और भंगरेके रसकी
 ७-७ भावनाएं देकर ६-६ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली लवणयुक्त अदरसके रसकेसाथ देनेसे
 अववाहुक, सन्निपात, सर्वाङ्गधात, पथरी, शूल इनसबको यह
 नष्टकरताहै और सौंठके साथकेसाथ देनेसे धनुर्धातको नष्टकरताहै ॥

४७१ वातविध्वंसनरसः (षष्ठ)

सूतमग्नकसत्वञ्च कांस्थं शुद्धञ्च माक्षिकम् ।
 गन्धकं तालकं सर्वं भागोत्तरयिर्धारितम् ॥ २२६५ ॥
 कज्जलीहृत्य तत्सर्वं वातारिहेहस्युत्तम् ।
 सप्ताहं मर्दयित्वा तु गोलकीहृत्य यत्नतः ॥ २२६६ ॥
 निम्बुद्रयेण सम्पीड्य तिलकलेन लेपयेत् ।
 अधोऽङ्गुलदलेनैव परिशोष्य प्रयत्नतः ॥ २२६७ ॥
 प्रपञ्चेद्वालुकायन्त्रे द्वादशप्रहरं ततः ।
 जठरस्य रजः सर्वांस्तथा च मलसङ्ग्रहम् ॥ २२६८ ॥
 आध्मानकं तथाऽऽनाहं विस्वीची वह्निमान्यकम् ।
 आमदोषमशेषञ्च शुष्कं छर्दिञ्च दुर्जयाम् ॥ २२६९ ॥
 प्रहर्णां श्वासकार्शो च क्रिमिरोगं विशेषतः ।
 हन्यात्सर्वाङ्गशूलञ्च मन्यास्तम्भं तथैव च ॥ २२७० ॥

ज्वरं चैवाऽतिसारे च शूलरोगे निदोषजे ।
पथ्यं रोगानुसारेण देयमस्मिन् भिषग्वरैः ॥
कथितो नन्दिनाथेन वातविष्वंसनो रसः ॥ २२७१ ॥
र सं., घ., र. सु, र. चं., र. म. मा., र. क, र र. स., वात-
रोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धधारा, अन्नकसत्व, काश्य इनकीभस्में, शुद्ध
स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और हरिताल येसब क्रमशुद्धभागसे लेकर
नीलवर्णकजलीकर एण्टीके तैलकेसाथ ७ दिनतक मर्दनकर
गोल्बनाय नीबूकेरसमें पिसेहुए तिलोंके कल्कका आधाअहुल-
मोटा लेपकरदे । सुदानेपर शरावसम्पुटे बन्दकर ६-७ कपड-
मिठी देकर सुखनेपर वाउकायन्त्रमें रण १२ पहरकी अग्निदेकर
पकावे । स्वाह्नशीतल होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२
रतीकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे समस्त
उदररोग, मलसङ्ग्रह, आम्बान, आनाह, हैजा, मन्दाग्नि,
आमदोष, शुल्म, छर्दि, दुर्ज्वमहणी, श्वास, कास, कृमिरोग,
सर्वाह्नशूल, मन्यास्तम्भ, ज्वर, अतिसार, त्रिदोषजशूल इनसबको
यह नष्टकरताहै इसमें पथ्य रोगानुसार देना ॥ ४७१ ॥

४७२ वातविस्फोटहररसः

गन्धाद्रमद्योम हिङ्गुश्च पारसीक्यवानिका ।
अधिपेन विपं चाकुरुह्याश्च जीरकम् ॥ २२७२ ॥
गोक्षीरं विशतिपलं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
पाच्यं मन्दाग्निना सम्पक् स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् २२७३
तन्मध्ये च क्षिपेत्प्रोष्यं खल्वे यामचतुष्टयम् ।
जायते दधियत्तनु मन्थयेत्तत्रयच्छलेः ॥ २२७४ ॥
आहरेन्नवनीतञ्च घृतं कुर्यात्प्रयत्नतः ।
शुद्धामानं घृतं तनु नागवह्नीदले क्षिपेत् ॥ २२७५ ॥
शुद्धसूतञ्च मापेकमहुल्या मन्थयेत्ततः ।
पारदो मूर्च्छितस्तेन जायते नाऽत्र संशयः ॥ २२७६ ॥
तत्पत्रवाटिकां कृत्वा स्वादयेद्बुद्धिमाचरः ।
वातविस्फोटकान्सर्वात्रासिकायकननादानान् २२७७
अङ्गशूलञ्च शुल्मञ्च वह्निमान्यञ्च वातजम् ।
किं पुनर्यहुनोक्तेन सर्वव्याधिधिनाशनम् ॥ २२७८ ॥
पतद्रसायनवरं शम्भुना कथितं पुरा ।
सर्वलोकहितार्थाय सोमदेवेन भाषितम् ॥
एतस्मात्परतो नाऽस्ति विस्फोटे घ्नन्नगे क्रिया २२७९
रसायनस, विस्फोटकरोः ।

भाषा—शुद्धगन्धक, अन्नकसत्व, हींग, खुरासानी अज
वाइन, अनीम, शुद्धघनाग, आक्कीजइकीछाल, अकलकरा,
जीरा येसब १-१ तोला लेकर वारीकचूर्णकर २० पल
गायकेशुद्धमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे । अथोटा होनेपर
उत्तरकर ठडाहोनेपर एक हथिया डालदे और ४ पहरतक खरल
करे तो यह दहीकीतरह जमजायगा फिर इसका मन्थनकर
धी निकालकर गरमकर छानके रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रतीके
अन्दाज धी पके पानपर डालकर एकमाशा शुद्धधारा डाल अहु

लीसे घर्षणकरे । मूर्च्छित होगानेपर पानको चिलादे और
केवल दूधभात खानेको दे । इसके सेवनसे समस्त वातविस्फोट,
नासिका और गलेके धाव, अह्नशूल, शुल्म, मन्दाग्नि इनसबको
यह नष्टकरताहै ॥ ४७२ ॥

४७३ वातव्याधिगजाह्नशोरसः

रसेन द्विगुणं गन्धं रसेराकाशवह्नियैः ।
घृहर्ताफलजैश्चाऽथ भृङ्गराजेश्च सप्तधा ॥ २२८० ॥
भर्जयित्वाऽतस्तीतैलेः कुम्भुटाण्डरसे पुनः ।
अकेशीरण सम्मर्चं कृत्वां द्वादशायामकम् ॥
वह्निं दत्त्वा रसोऽयं स्याद्वातव्याधिगजाह्नशुः २२८१
र. का., वातरोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्धधारेसे दूना गन्धक लेकर नीलवर्णकजलीकर
कड़ाहीमें डालकर अमरवेलकारस बालकर मन्दाग्निसे धीरे २
सेके, रस सुखनेपर दूसा डाले । ऐसे बरानकारस ७ बार
सुखावे । इसकेबाद वनभाटा, भंगरा, अलसीका तैल, कुम्भुटा-
ण्डरव और आक्कादूध पूर्वमसे ७-७ बार मर्दनकर सुखावे
फिर इसकी कजलीकर ६-७ कपडमिठी दीहुई आतशीशीरीमें
भरके सुंघबन्दकर १२ पहरकी वालुनाग्निसे पकावे । स्वाह्नशीतल
होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १ रतीसे ३ रतीतक
व्याधि और रोगीका बल देरकर देनेसे समस्त वातव्याधि-
योको यह नष्टकरताहै ॥ ४७३ ॥

४७४ वातशूलहररसः

पारदेन च विलिप्य दलानि
ताम्रकस्य वलिना द्विगुणेन ।
क्षारकप्रितयमध्यगतानि
वखखण्डनिविडानि च पट्टैः ॥ २२८२ ॥
लेपितानि विधिना पुटितानि
मर्दितानि कननाऽनलतोयैः ।
आर्द्रकस्य च कटुत्रययुक्तं
पोडाराशरसुशुद्धविषेण ॥ २२८३ ॥
पेषितञ्च खलु यहुमलं वा
वातशूलरजि चास्य ददीत ।
वातशूलहर एष रसश्च
सेवनात्रयति शूलचिनाशम् ॥ २२८४ ॥

चि क्र, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धधारेकी दूने गन्धककेसाथ कजलीकर नीबू
वरीरकेरससे मर्दनकर शुद्धतावेके कण्टकेवेधीपत्रोंपर चडावे ।
फिर सजी, मुहागा और यवक्षारकादव बनाय कण्डोपर लेप
ताम्रपत्रोंपर चडाकर सम्पुट बैसा बनाय ३-४ तह कपडा चडावे ।
ऊपरसे दो अहुलमोटा मिठीका लेपदेकर सुखाकर रुचण अथवा
भस्मयन्त्रमें बन्दकर तीनदिनकी प्रमामि देवे । स्वाह्नशीतल
होनेपर निकालकर घत्ता, चित्रक, अदरख इनत्रेसोंसे १-१
दिनमर्दनकर बराबरका त्रिकटुकाचूर्ण और पोडाराश शुद्धयज्जाग

मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा समय अथवा रोगीचिंतातुपानकेसाथ देनेसे वातशूल, वातवफजरोग, आसक्तसाक्षादिकरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७४ ॥

४७५ वातहररसः

रसगन्धाऽन्नशङ्खाऽयो समांशं मर्दयेत्यहम् ।
कन्याकनकचाङ्गेरीद्वये गौलं विशोपयेत् ॥ २२८५ ॥
सप्तवारं मृदाऽऽवेष्ट्य पुटेदारण्यकोत्पलेः ।
स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य रसो वातहरोऽद्भुतः ॥ २२८६ ॥
द्वियह्वो मधुना योज्यः सर्वयातप्रशान्तये ।
पानार्थं पिप्पलक्षारतोयं पेयञ्च वातहृत् ॥
वलाऽजमोदामधुभिः क्रमो योऽयो रसोत्तमे ॥ २२८७ ॥
र पा , वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध परा और गन्धक, अभ्रक, छद्म और लोह भस्म समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर पीपुवार, धत्रा, अमलोनिया इनकेस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ३-४ तह मोटेकपड़ेमें लपेट सूतेसे वेधितकर ७ कपड़-मिरीचिकर सुलाकर जलीकण्डोंकी लघुपुष्टमें आबदे । स्वाङ्ग शीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकीमात्रा मधुकेसाथदेवे और पीपलक्षारकापानी पिलावे । अग्निप्रदीप्त होनेकेबाद बला, अजमोद और मधुकेसाथदे । इसतरहकरनेसे सबप्रकारके वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४७५ ॥

४७६ वातान्तररसः

हेमाऽर्कान्तलोहाऽन्नं सूतभस्म च गन्धकम् ।
वैक्रान्तं विद्रुमं चैव तारं तालसमन्वितम् ॥ २२८८ ॥
सुमुद्गतं खल्वमभ्ये चित्रमूलस्य च द्वयैः ।
चतुर्यामञ्च सम्मर्थं छायाशुष्कञ्च कारयेत् ॥ २२८९ ॥
कुक्कुटीपुटपाकेन स्वाङ्गशीतलमुद्गरेत् ।
इदञ्च चूर्णितं शृङ्घणं तदर्थं सूतभस्मकम् ॥ २२९० ॥
सूतलुप्त्यं सूत्रं ताम्रं सर्वं खल्वे विमर्दयेत् ।
चित्रकार्द्रकनीरेण निर्गुण्डीवारणीद्वये ॥ २२९१ ॥
वासाजम्बीरनीरेण सप्त भाव्यं पृथक्पृथक् ।
गुञ्जामानप्रयोगेण कणामध्वाज्यसंयुतम् ॥ २२९२ ॥
सुप्तयात वातशूलं वेदनावातमेव च ।
स्नायुकम्पं गात्रमङ्गं पक्षाघातं हनुप्रहम् ॥ २२९३ ॥
वायुं भृच्छोञ्च तिमिरं वातशीतञ्च नाशयेत् ।
घन्था च लभते गर्भं नष्टवीर्यं प्रशस्पते ॥ २२९४ ॥
वातान्तररसो नास्ति सर्वरोगनिवारकः ।
लोकानामुपकारार्थमभ्यिदेवविनिर्मितः ॥ २२९५ ॥
व रा , वै चि , नष्टेन्द्रिये ।

भाषा—सुवर्ण, ताम्र, कान्त, लोह, अभ्रक, पारद, वैक्रान्त, प्रवाल, रजत, हरिताल इनकीभस्में और शुद्ध गन्धक सब समभाग लेकर अच्छेसुद्धान्तमें खरलेमें डालकर चित्रकमूले-

काठेसे ४ पहर मर्दनकर गोलाबनाय छायाशुष्ककर शरावसन्मुटमें बन्दकर कुन्कुटपुष्टकी आबदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधी पारद और ताम्रभस्म मिलाकर चित्रक, अदरक, निर्गुण्डी, इन्द्रायण, अहृषा और अभीरी इनप्रत्येकके-रसोंसे ७-७ भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकेसाथ देनेसे सुप्तयात, वातशूल, आघातयात, स्नायुकम्प, गात्रमङ्ग, पक्षाघात, हनुप्रह, वायु, मूर्च्छा, तिमिर, वातशीत, बन्ध्यत्व, नष्टशुक्त्व इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४७६ ॥

४७७ वातारिपाकः (मधुस्नेही)

तालौसं त्रिकटुत्रिजातरुवरा जातीफलं केशरं,
भृङ्गं केदयमुशीरजीरकयुतं दीप्यद्वयं ग्रन्थिकम् ।
रास्नावाह्निकचोरकं करिकणा द्राक्षा तुगा चन्दनं,
कङ्गोलाऽध्वसुगन्धियष्टिधनिकाः खर्जूरमांसी वरी ॥
वाप्राही हयगन्धगोक्षुरफलं मोचेक्षुरं मर्कटी-
वीजं कुङ्कुमजातिपत्रकमदाः कर्पप्रमाणाः पृथक् ।
सम्यक्शोधितगन्धकं दशपलं सर्वस्य तुल्यो मधु-
स्नेहोऽस्याहरद्रोत्थितं शुभरसं कर्पत्रयं योजयेत् २२९७
पकीकृत्य शुभं सिताऽऽज्यमधुना सेव्यं द्विकर्गन्मितं,
कर्पं वा यदि वाऽर्द्धकर्मसमितं वह्नयेलाऽयातये ।
वाताशीतिनिवहणं कफमरुतिपक्षापहं यश्मजिद्,
दुष्टं ग्रन्थिमगान्द्रज्वरहरं कान्तिप्रदं पुष्टिदम् ॥ २२९८ ॥
मेहान्बिशातिमोपदंशसकलानुष्टप्रणोन्मूलनं,
लूतास्फोटविसर्पकञ्च सकलानु कृष्टादिरोगाजयेत् ॥
रसायनस , वातरोगे ।

भाषा—तालीसपत्र, त्रिकटु, त्रिजात, त्रिफला, जायफल, नागकेशर, भगरा, कालाभंगरा, खस, जीरा, दोनों अजवाइन, पिपलामूल, रास्ना, चित्रकमूल अथवा खरजवाइन, चोरक, गजपीपल, श्राक्ष, वसलोचन, सपेद्रचन्दन, शीतलचीनी, नागर-मोया, छड़ीला, मुलट्टी, धनियाँ, खर्जूर, जटामांसी, शतावर, वासहीकन्द, अक्षयगन्ध, शोखल, भोजपत्त, तालमखाना, केवा चकेबीज, केशर, जाविटी, कस्तूरी, गजमद और मार्जारमद १-१ कर्प, शुद्धगन्धक १० पल, शुद्धपारा ३ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीरवर्णकजलीमें मिलाय सबकी बराबर धी और मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे आधे कर्पसे १ कर्पतक अग्निबल देखकर शकर, धी और मधुकेसाथ मिला कर खानेसे ८० प्रकारके वायुरोग, कफवातजन्यरोग, पित्त प्रकोप, राजयक्ष्म, दुष्टयाठ, भगन्दर, ज्वर, कान्तिका अभाव, कृशता, २० प्रकारके प्रमेह, उपदंश, दुष्टप्रण, मक्की, फोड़े, विषर्प और कुष्ठ इनसबको यह हूँकरताहै ॥ ४७७ ॥

४७८ वातामपाकः

वाताममञ्जः प्रस्थञ्च दुग्धे पाच्यञ्चतुर्गुणे ।
पुनः प्रस्थपुते पाच्यः शर्करादकयावकं ॥ २२९९ ॥

क्षेप्यानीमानि मात्राणि जाती जातीफलन्तथा ।
 त्र्युपपञ्च लवङ्गञ्च चातुर्जातञ्च त्रैफलम् ॥ २३०० ॥
 क्षीरकन्दं वत्सनाभमहिफेनं धनं हिमम् ।
 मदनी कुङ्कुमं मांसी कङ्कोलमाकलकम् ॥ २३०१ ॥
 अन्धिशोषं गौधुरञ्च शताह्वाकपिकच्छुक्रम् ।
 अभ्यगन्धा च मुशली मृतपारदमम्रकम् ॥ २३०२ ॥
 वङ्गं लोहञ्च दूर्दं कर्पूरं प्रदापयेत् ।
 पुनर्भृङ्गाधृतं क्षेप्यं कुडवं तद्विचक्षणैः ॥ २३०३ ॥
 यादेत्कर्मप्रमाणञ्च धनं दुग्धं पिवेदनु ।
 धातुपुष्टिकरं वस्यं वर्णाऽऽयुःकान्तिवर्धनम् ॥ २३०४ ॥
 वृद्धो युवायते कामी स्त्रीणाञ्चाऽतीव वल्लभः ।
 वातरोगानशोपांस्तु नाशयेत्साऽत्र संशयः ॥ २३०५ ॥
 पण्डोऽपि रमते नारीं शुटिकायाः प्रभावतः ।
 किंपुनश्चाऽन्यरोगेषु चारणेष्वत्र संशयः ॥ २३०६ ॥

चि. र. म. रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा—शिल्लकेरहितं वादामकीगिरी १ प्रथलेकरं चौष्टने
 दूधमे पकावे । गावाद्दोनेपर सेरपर धी और ४ सेर शरर डाल-
 कर चादानीकरे । पाक तैयारहोनेपर जावित्री, जायफल, त्रिकुट्ट,
 लवङ्ग, चातुर्जात, त्रिफला, क्षीरकाकोली और विदारी, शृद्ध
 बडनाग, अफीम और कपूर, सफेदवन्दन, वस्तूरी, केसर,
 जयामासी, शीतलचीनी, अकलकरा, समुद्रशोष, गोखरू, सौंफ,
 केवाचकेबीज, असगन्ध, मुशली, पारद, अम्रक, वङ्ग और
 लोहमस, शुद्धशिरिष ये सब १-१ कर्प, धीमे सितीहुई भांग
 ४ फल लेकर सबकावारीकचूर्णकर पाकमे मिलाकर रखडोड़े ।
 इसमेसे १-१ कर्प खाकर ऊपरसे अथवा दूधपीनेसे धातुओंकी
 पुष्टिशोकर बल, वर्ण, आशु, कान्ति येसब बढतेहैं । वृद्धा आद-
 नीमी लियोमे जवानकीतरह रमणकरताहै । समस्तवातरोग,
 पण्डत्व और मन्दाग्नि इत्यादि समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥

४७९ वातारिरसः (प्रथमः)

उपायैः पूर्वमाख्याते यैश्चैर्हमरकाद्रिभिः ।
 येनकेनाऽप्युपायेन भस्मीकृत्याञ्च पारदम् ॥ २३०७ ॥
 भस्मनो दश गद्याणा दशैव नवसाराकात् ।
 स्फटिका पञ्च गद्याणा वत्सनामस्य द्वौ मर्तौ ॥ २३०८ ॥
 मरिचस्य च गद्याणौ मर्दयेत्प्रत्येकं दृढम् ।
 विधिना जायतेऽनेन रसो वातारिरसश्चक्रः ॥ २३०९ ॥
 रत्निकाऽस्य प्रदातव्या श्लेष्मवातादिरोगिणु ।
 अष्टादशप्रमेहेषु श्लेष्मगुल्मोदरेषु च ॥ २३१० ॥
 आमवाते च मन्दाग्नी शुल्भयो वातरक्तयोः ।
 बाह्याऽभ्यन्तरशूलेषु समस्तेषु चरेषु च ॥ २३११ ॥
 शूलेषुजीर्णं शोथे च हेयो वातारिसञ्चक्रः ।
 तैलक्षाराऽश्लवर्ष्यञ्च भोज्यं मधुरमिष्यते ॥ २३१२ ॥
 दिनाष्टकं धृतं स्तोत्रं भोजने प्राणमुत्तमम् ।
 रोगाः सर्वे विलीयन्ते मासैकेन न संशयः ॥ २३१३ ॥
 रसचि, वातरोगाधिकारे ।

भाषा—पारदमस और शुद्धनवसाद ५-५ तोले, भुनी
 फिटफट्टी २॥ तोले, शुद्ध बडनाग और मरिच १-१ तोला
 लेकर वारीकचूर्णकर एकदोदिन मर्दनकर रखडोड़े । इसमेसे
 १-१ रती समय अथवा रोगोचिनानुपायनेचाप देनेसे वात
 और बफरोग, १८ प्रकारके प्रमेह, प्लीहा, गुल्म, उदर, आम-
 वात, मन्दाग्नि, वातरक्त, सपकारके ज्वर, शूल, अजीर्ण और
 शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै । इसकेप्रयोगमे तैल, क्षार और
 अम्बवर्जितहै । मधुरभोजन कराना और ८ दिनकर धी थोड़ा
 देना फिर धीरे २ बडाना । इसके एकमहीना सेवनसे समस्त
 रोग नष्टहोतेहैं ॥ ४७९ ॥

४८० वातारिरसः (द्वितीयः)

शिलया निहतं नागं ताप्यभस्माऽर्द्धभागिकम् ।
 पाटं पाटं क्षिपेद्भस्म शुल्बस्य विमलस्य च ॥ २३१४ ॥
 कालाऽम्रसत्त्वयोश्चाऽपि स्फटिकस्य पृथक्पृथक् ।
 सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्यं पुटेत्त्रिफलचारिणा ॥ २३१५ ॥
 त्रिंशद्दोनोपलैरेव त्रिंशद्धारान्विचूर्णयेत् ।
 व्योपवेह्लकचूर्णैश्च समांशैः सहमेलेयत् ॥ २३१६ ॥
 मध्याज्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया ।
 अशीर्तिं वातजात्रोगान् धनुर्वातं विशेषतः ॥ २३१७ ॥
 कफरोगानशोपांश्च सूत्ररोगाञ्च सर्वशः ।
 श्वासं कासं शयं पाण्डुं श्वयथुं सूतिकाज्वरम् ॥ २३१८ ॥
 ग्रहणीमामदोपांश्च वहिमान्शुं सुदुर्जयम् ।
 सर्वाण्युक्तदोपांश्च नाशयेदनुपातनः ॥ २३१९ ॥
 र. क., वातरोगाधिकारे ।

भाषा—मैनसिलकेयोगसेकीहुईनागमस ४ भाग, स्वर्ण-
 माक्षिकमस २ भा., ताम्र, रजतमाक्षिक, काले तथा सफेद
 अम्रककासत्व और स्फटिकमस १-१ भागलेकर त्रिफलाके-
 रसे एकदिन मर्दनकर गोलबनाय शरावसम्पुटमे बन्दकर ३०
 जललीकण्डोंकी आचडे । ऐसे ३० आचं देनेकेसाद त्रिकुट्ट,
 विडङ्ग समभागकाचूर्ण पूर्वसेकी बराबर मिलाय रखडोड़े । इस-
 मेसे ३-३ रतीकीमात्रा मधु और धीकेसाय लेनेसे ८० प्रकारके
 वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ और सूत्रकेतमामरोग, श्वास,
 कास, शय, पाण्डु, शोथ, सूतिकाज्वर, ग्रहणी, आमदोष, दुर्जय
 मन्दाग्नि, समस्त जलदोष इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८० ॥

४८१ वातारिरसः (तृतीयः)

गन्धकाहिरुणं तालं तालकाहिरुणा शिला ।
 शिलया हिरुणं ताप्यं तस्माच्च हिरुणो रसः ॥ २३२० ॥
 कल्पयेत्सर्वमेकत्र यावत्स्याद्दिनसप्तकम् ।
 सर्वस्याऽष्टमभागेन दत्त्वा रत्नामृतं शुभम् ॥ २३२१ ॥
 विपतिन्दुकजद्रावैः पिबन्ना गोलकमाचरेत् ।
 विशोष्य यालुकायन्त्रे तद्धर्मं दिवसद्वयम् ॥ २३२२ ॥
 स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य तुल्यहिङ्गवष्टकान्वितम् ।
 भाष्यद्वीजपूरस्य सप्तवारं रसेन च ॥ २३२३ ॥

सप्तवारं तथा भाव्यं चित्रमूलस्य वारिणा ।
इति सिद्धो रसेन्द्रोऽयं सर्ववातारिसङ्ग्रहः ॥२३२५॥
घृतेन सहितो लीडो यद्ब्रह्ममिमो नृभिः ।
निहन्ति शीतवातार्तिं गुल्मान्प्रविधानपि ॥२३२५॥
चतुर्विधञ्च मन्दाग्निं स्थूलानुद्वज्जान् निमीच ।
आभ्रानञ्च तथा हिक्कां मूढवातञ्च विद्महम् ॥२३२६॥
र क. यो. रसायनञ्च, र सु, र. च, वातरोगाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक १ भाग, हरिताल, २ भा., शुद्धमैन
सिल ४ भा, शुद्धस्वर्णमाक्षिक ८ भा, शुद्धपारा १६ भाग
लेकर सबको ७ दिनतक मर्दनकर सबसे आठवाहिसा लाल-
बछनाग देकर कुचिलेके रसेसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय
सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कण्डमिठी देकर सूख-
नेपर दोदिनतक वायुकायत्रमें पकावे । स्वाज्ञाशील होनेपर
निवालकर इसकी बराबर द्विगुणकमिलाकर विजोरा और चिन
कमूलकेसोंबी ७-७ भावनाए देकर ६-६ रत्तीकी गोलियां
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो
चितातुपानकेसाथ देनेसे शीतवात, ८ प्रकारके शुल्म, ४ प्रकार
की मन्दाग्नि, पेटके मोटे किमि, आभ्रान, हिक्का, मूढवात,
मलसद्ग्रह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४८१ ॥

४८२ वातोन्मूलनरसः

शुद्धं सूतं विपं गन्धं धूर्तवीजं त्रिभिः समम् ।
पञ्चकोलरुपायेण मर्दयेद्विषसह्यम् ॥ २३२७ ॥
मूपयोर्धूषरे पाच्यं स्वाङ्गशीतं विचूर्णयेत् ।
मत्स्यपित्तं भांजयेच्च मर्दयेद्विषसह्यम् ॥ २३२८ ॥
पञ्चकोलरुपायेण गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
स्त्यानवातं हरेच्छीघ्रं सर्ववातविकारञ्च ॥ २३२९ ॥
व रा, वै. वि, स्त्यानवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक समभाग, शुद्ध
धतूरेकेबीज सबकी बराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी
नीलवर्णकालीमें मिलाय पञ्चकोलकेकायसे मर्दनकर मूपामेरख
मूपरयत्रमें पकावे । स्वाज्ञाशीतलशोनेपर निकालकर मछलीके
पित्तसे दोदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोळिया बनाकर रख
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पञ्चकोलकेकायसे देनेसे स्त्यान-
वातादि समस्तवातविकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४८२ ॥

४८३ वानरीपाकः

प्रस्थ निस्तुपमर्कटीभवरजो दौर्घेऽर्मणे पाचयेत्,
यावज्जीर्यति मन्वद्वह्निविधिना मिष्टाऽऽढकं निक्षिपेत् ।
पश्चात्प्रस्थघृते विपाच्य सुधिया शीते त्विमानि क्षिपेत्,
कर्षाशागस्वरूपगजीरणचतुर्जातं हिमं हंसकम् ॥२३३०॥
जातीपत्रफले धृष्टित्रिकटुकं चन्द्राग्निशोषं वणिक्,
कट्टोले करहाटकैतवविपं गोक्षरतालीसकम् ।
पादांशं खुरशाणिकञ्च गगनं यद्गं सुजङ्गं जया,
पालिष्यं त्रिपलं मधुस्थितशुभं भक्षेद्भुतं वृहणम् ॥
र, को, रसायने ।

भाषा—एकप्रस्थ केवाचकीमजाको एकद्रोणदूधमें मन्द
आचर चरुताहुआ पकावे । मावाहोनेपर ४ प्रस्थ दाकर और
एकप्रस्थ धी डालकर वासानीकरे । पात्रतैयार होनेपर नीचे
उतारकर अमर, सुपारी, जीरा, चातुर्जात, सफेदचन्दन, शुद्ध-
शिपारिक, जाविनी, जायफल, इलायची, त्रिकटु, शुद्धकपूर,
समुद्रशोष, गेंहुला, शीतलघीनी, अरुक्करा, शुद्धधतूरेकेबीज
और बछनाग, गोसल, तालीसपत्र येसत्र १-१ कर्षं, खुरासानी
अजवाइन, अश्रक, यज्ञ और नागभस्म ४-४ माशे, धोईहुई
भाग १ पल, मधु ३ पल मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४
माशेसे १ कर्षतक खाकर दूधपीनेसे समस्तशुक्रदोष नष्टकर
पूर्णपुरुषत्वको प्राप्तहोताहै ॥ ४८३ ॥

४८४ वान्तिहृद्रसः

अयः शङ्खं घली सूतं रत्नये तुल्यं विमर्दितम् ।
कन्यारुनरुचाङ्गेरीरसे गोलं विधीयताम् ॥ २३३२ ॥
सप्तमृत्कर्पटैलिप्या पुष्टितो वान्तिहृद्रसः ।
द्विवहः क्रिमिरोगेऽपि साजमोदः सवेहकः ॥२३३३॥
वान्तिहारेण मुनिना प्रोक्तोऽयं मधुना युतः ।
पिप्पलश्वारपानीयं पाययेद्धान्तिहृद्रसः ॥ २३३४ ॥
र ल., यो. र, नि र., र सु, रसायनस., र च., र म मा.,
ना वि., र का, वान्तिरोगे । र. का. वान्तिहर इति नाम ।

भाषा—लोह और शङ्खभस्म, शुद्ध गन्धक और पारा
समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर धीधवार, धतूरा और अम्लो-
नियारेसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें
बन्दकर ६-७ कण्डमिठी देकर सूखनेपर लघुपुटवी आचरे ।
स्वाज्ञाशीतलशोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६ रत्तीकी
मात्रा अजमोद और विडङ्गकेसाथ मिलाकर मधुकेसाथ चटानेसे
तमामप्रकारकीवमन शान्तहोतीहै । प्यास लगनेपर पीपलकी
राखका पानी पिलाने ॥ ४८४ ॥

४८५ वाराहीलोहम्

वाराहिकाभृङ्गरसं लोहचूर्णं शतावरी ।
साज्यं कर्पं पञ्चशती ॥ २३३५ ॥

आ पु, रसायने ।

भाषा—वाराहीकन्द, भगरा, पारद और लोहभस्म, शता-
वर येसाथ समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१
कर्षं धीधेसाथ खावे और पात्रमेंहोनेपर दूधभातका सेवनकरे ।
ऐसे एकवर्षके प्रयोगसे ५०० वर्षकी आयुको भोगसकताहै ४८५

४८६ वारिनिगडगुटिका

पेशानी विल्वपेशी च जातीपत्रफले तथा ।
विषा मोचरसो मुस्ता शुण्ठी सामुद्रशोषकम् २३३६
कनकस्य च बीजानि करवीरजटा तथा ।
अहिफेनं गन्धरसी धूर्तद्रायेण मर्दयेत् ॥ २३३७ ॥

द्विगुञ्जा शुटिका दध्ना गुड्यम्बुनिगुडाह्वया ।
जयेत्सर्वान्तीसारान्नाभिपार्श्वे विलेपतः ॥ २३३८ ॥
र. वा. , अतीसारोपधिकारे ।

भाषा—ईशानकोणमें रहनेवाले बेलहीगिरी, जाबिबी, जायफल, अतिस, मोचरस, नागरमोधा, सोठ, समुद्रशोष, शुद्ध-धतूरेके-गो-ज, सफेदकनेरफीजइकीछाल, शुद्ध अफीम, गन्धक और पाप समभाग लेकर चारोक्चूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्ण-कजलीमें मिलाय धतूरेकेरससे एकरदिनमर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दहीकेसाथ रिलानेसे और नाभिके कण्ठमें लेपकरनेसे यह सरप्रकारके अतीसारोको नष्टकरती है ॥ ४८६ ॥

४८७ वारिशोषणरसः

चतुर्विंशतिभागाः स्युर्गन्धाद्बद्धं तद्वर्द्धकम् ।
वङ्गभागान्नेवेद्वेदः पारदः कृष्णमग्नकम् ॥ २३३९ ॥
चतुर्दशविभागं स्थान्मृतं तद्दीयते पुनः ।
मृतलीहमृष्टभागं मृतताम्रं नवाऽत्र तत् ॥ २३४० ॥
मृतहमर्दयं तत्र मृतरौप्यञ्च सप्तकम् ।
अतिशुद्धमतिस्थूलं मृतं हीरं ध्रयोदश ॥ २३४१ ॥
भाग्यं ब्राह्म्यं माक्षिकस्य विशुद्धस्याऽत्र पौडश ।
अष्टादशमितं ब्राह्मं नव काशीधकं पुनः ॥ २३४२ ॥
तुत्यकञ्च पडेवाऽत्र नवीनं ब्राह्ममेव च ।
तालकञ्च चतुर्भागं शिलाभागत्रयं मतम् ॥ २३४३ ॥
शैलेयं पञ्चभागं स्यात्सर्वमेकत्र नूतनम् ।
मृतमीतिकाभागेकं सौभाग्यं भागयुग्मकम् ॥ २३४४ ॥
कुट्टयित्वा विचूर्णयथा जम्बीरस्य रसेन वै ।
भाययेत्सप्तधा गाढं शुटिका तस्य कारयेत् ॥ २३४५ ॥
पानकद्वितये कृत्वा मुद्रयेत्पानकद्वयम् ।
घटमध्ये निवेद्याऽथ दत्त्वा पूर्वञ्च बालुकाम् ॥ २३४६ ॥
अर्द्धञ्च तां पुनर्दत्त्वा बालुकामुद्रयेन्मुखम् ।
अहोरात्रं द्वादशो स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् ॥ २३४७ ॥
वकुलस्य च योजेन कण्टकारीद्वयेन च ।
गुह्रचूचिकफलाद्यां भाययेत्सप्तसप्तकम् ॥ २३४८ ॥
बुद्धदास्वरसेनाऽपि तथा देवास्तु भायनाः ।
गिरिकर्णयो रसेनाऽपि मत्स्यपरहितपित्ततः ॥ २३४९ ॥
एवं सिद्धो भयेत्सम्पत्सोऽसौ वारिशोषणः ।
देवान्गुन्न्सम्यग्र्यं यतिना ध्यायणांस्तथा ॥ २३५० ॥
रत्निकाद्वितयं देयं सप्रिपाते समुच्छिन्ते ।
मरिचेन खमं देयं तेन जागर्ति मानयः ॥ २३५१ ॥
शुद्धिमेकं च गदे देयं प्रहृष्यामभिमान्यके ।
गुग्गुलि पाण्डो प्रयोक्तव्यं विकट्टमिफलाभ्रमसा २३५२
शूलरोगे प्रयोक्तव्यमुद्गापर्यं विशेषतः ।
बुधे शुबुधे देयोऽयं कारोदुम्पकिन्मसा ॥ २३५३ ॥

अतिवह्निकरः श्रौदो बलवर्णाग्निवर्धनः ।
धन्वन्तरिकृतः सद्यो रसः परमदुर्लभः ॥
सर्वरोगे प्रयोक्तव्यो निःसन्देहं भिपवरेः ॥ २३५४ ॥
र. सं., र. चि., आ. वि., र. घु., रसचि., र. वा., भै. र., यह-
त्तीहाधिकारे ।

भाषा—शुद्धगन्धक २४ भाग, वङ्गभस्म १२ भा., पारद-भस्म ६ भा., अश्रकभस्म १४ भा., लोहभस्म ८ भा., ताम्र-भस्म ९ भा., सुवर्णभस्म २ भा., रौप्यभस्म ७ भा., अत्यन्त शुद्धबहेरीकेभस्म १३ भा., शुद्धमाक्षिक १६ भा., नयाकसीस १८ भा., तुल्य ६ भा., शुद्धहरिताल ४ भा., मैतसिल ३ भा., शिलाजतु ५ भा., मोतीभस्म १ भा., भुनामुद्गाया २ भाग लेकर सबकावारीकचूर्णकर ७ दिन जमीरीकेरससे निरन्तर मर्दनकर छोटीछोटीगोलियें बनाकर श्रावसमुद्रमें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टीदेकर सुखनेपर बालुकायन्त्रमें एकर दिनरातकी अग्निदेवे । स्वाह्नशीतहोनेपर निरालर मालतीकेबीज, दोनोमडकेटया, मिलोय, त्रिफला इनकेस्वरसोसे ७-७ भावनाएं देकर विधारा और कोयलकेस्वरस तथा रोहूमडलीकेपित्तसे १-१ भावनादेकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुह्र, यति और ब्राह्मणोंका सत्कारकर उत्कटसप्रिपातेमें मरिचेकेसाथदेनेसे मनुष्य तन्द्रासे उठैयता है । इसीतरह कफरोग, प्रल्पी, मन्दाग्नि, शीहा, पाण्ड इनमें त्रिकट्टकेरसदेने देना । सुल, उदावर्त, दुष्टशुद्ध इनमें कट्टमके-रसदेना । यह अत्यन्त अग्नि, बल और वर्णको करता है । सबतरहके असाध्यरोगोंमें इसरसि सन्देहप्रयोगकरना ॥ ४८७ ॥

४८८ वारिसागररसः (प्रथमः)

अतः परं प्रवक्ष्यामि रसेश्वरमनुत्तमम् ।
रोगापहानं क्रियां वारिसागरं नाम नामतः ॥ २३५५ ॥
कृष्णाऽम्रकं समादाय वज्रास्यं बलवत्तरुम् ।
एकपत्रं ततः कुर्वाद्रसे कार्पासपत्रजे ॥ २३५६ ॥
स्थापयेत्त्रिदिनं यावत्ततो धर्मं निधापयेत् ।
दिनमेकं रमेस्तेषु व्रीहियुक्तेषु चरुके ॥ २३५७ ॥
निःक्षिप्य मुहृष्टे क्षित्वा पाटुलीं मर्दयेन्करः ।
तत्सर्वं चूर्णितं कृत्वा प्रयाति च यथा यहिः ॥ २३५८ ॥
शृणितं निक्षिपेद्भ्रं रसे कार्पासपत्रजे ।
मर्दयित्वा ततश्चणं तद्रमेः सम्पुटे क्षिपेत् ॥ २३५९ ॥
आरण्यातेपलकेः पद्मालुट्टान्येनञ्च विंशतिः ।
व्याह्वारहसन्भानि मर्दनञ्च पुनः पुटम् ॥ २३६० ॥
ऊनयित्वा पुटे जाते ध्योम राल्ये विनिःक्षिपेत् ।
मर्दयेत्कट्टतेलेन ततः सम्पुटेके क्षिपेत् ॥ २३६१ ॥
निरुद्धय सम्पुटे सम्यद् मुद्गा कण्टयुक्तया ।
पुटयेदुपरिंशानि घागणि च यथाश्रमम् ॥ २३६२ ॥
ततो ध्योम समादाय राल्ये सम्पुटे यदातः ।
कट्टतेलेन तद् ध्योम हटे भाण्डे विनिःक्षिपेत् २३६३

उपरिष्ठात्पुनर्दद्यात्कटुतैलं धनं यथा ।
 अह्नूलक्ष्मणमानेन ध्योभोपरि तथा भवेत् ॥ २३६४ ॥
 भाण्डवन्नं सन्निरुद्धय पिधान्या कर्पटैर्मृदा ।
 शुष्कमारोपयेच्चुल्यां काष्ठाग्निं ज्वालयेदधः ॥ २३६५ ॥
 तावत्प्रज्वालयेद्वाग्निं वायविसैतलां व्रजेत् ।
 निस्तैलं गगनं कृत्वा कज्जलामं विचन्द्रिकम् ॥ २३६६ ॥
 स्यापयेद्गन्धकं पश्चात्तोरै कार्पासपत्रजे ।
 ढालयेदेकवारं तु द्रावयित्वा ततो जले ॥ २३६७ ॥
 सिन्धुवारभवे सप्त धारान् संढालयेद्दलितम् ।
 पूर्वमाग्रेण सूतेन्द्रं पातितं स्विक्रज्जारितम् ॥ २३६८ ॥
 कलांशहेमजीर्णांस्कृणुगन्धकमोजितम् ।
 रसं गृहीतभागैकं पक्षभागञ्च गन्धकम् ॥ २३६९ ॥
 युगभागञ्च गगनं खल्वे सर्वं विनिःक्षिपेत् ।
 मर्दयेत्सिन्धुवारोत्थे दिनमेकं रसेश्वरम् ॥ २३७० ॥
 काकमाचीरसैस्तद्वृत्तुण्यधनूरवारिभिः ।
 जयन्त्यद्विस्तिलदलानोरैर्दण्डोत्पलारसैः ॥ २३७१ ॥
 जातीरसैः क्रदम्बोत्थैर्भृङ्गराजरसैस्ततः ।
 अनलाग्निं महाराष्ट्रीनारैः पिण्पलिमूलजैः ॥ २३७२ ॥
 क्रमेण मर्दयित्वास्तैस्तत्करकं गोलकं नयेत् ।
 गोस्तनाकारमूपायां क्षिप्त्वा सम्यग्निरोधयेत् २३७३ ॥
 मूपां विनिःक्षिपेद्यत्रे बालुकाख्ये ततः परम् ।
 बालुकायत्रयदर्नं पिदग्धाञ्च शरावतः ॥ २३७४ ॥
 सन्निरुद्धय समारोप्य चुल्यां संज्वालयेत्ततः ।
 याममात्रं मध्यवर्द्धि स्वाह्नशीतलतां गतम् ॥ २३७५ ॥
 क्षात्वा यत्रं विनिर्मिय सूतमूपां समुद्धरेत् ।
 मूपावन्नं विनिर्मिय गृह्णीयाञ्च रसेश्वरम् ॥ २३७६ ॥
 पूजयित्वा रसेन्द्रं तं विन्यसेच्च करण्डके ।
 सिद्धं रसेश्वरं पश्चाद्भोगिणे सम्प्रयोजयेत् ॥ २३७७ ॥
 सन्निपाते महाधोरं चतुर्गुञ्जप्रमाणतः ।
 अनलोद्भवचूर्णेन दद्यात्तस्याऽनुपाकम् ॥ २३७८ ॥
 पट्टनि पञ्च जीरं च त्रयः क्षाराश्च सार्द्रकाः ।
 सव्योषाः सोम्रगन्धाश्च यवानांसहिताः समाः २३७९ ॥
 प्रत्येकमेकतश्चर्णं कृत्वा वल्लेण मालितम् ।
 चतुर्मापप्रमाणेन अनुपाणे नियोजयेत् ॥ २३८० ॥
 सन्निपाते निहन्येप रसेन्द्रस्तत्क्षणाद्भुवम् ।
 अग्निमान्ये प्रयुञ्जीत ज्वरभेदेऽतिसारके ॥ २३८१ ॥
 रोगराजे प्रतिद्रापये श्लेष्मव्याधौ च पीनसे ।
 सङ्ग्रहण्यां प्रयुञ्जीत निःशङ्कोऽप्य रसेश्वरम् ॥ २३८२ ॥
 सव्योषाभिहन्येव रसेन्द्रो नाऽप्य सन्दाय ।
 गोधूर्तं गोधृतं गन्धं दधि तनः विवर्जयेत् ॥ २३८३ ॥
 माहिपन्तु प्रयुञ्जीत पयस्तनं धृतं दधि ।
 रसवीर्यविवृद्धिस्तु माहिपेणेन नाऽप्यथा ॥ २३८४ ॥
 पश्चाच्च शालयः प्रोक्ता मीहया मुद्गसंयुताः ।

गोधूममापसहिताः सेचनात्सर्वदा हिताः ॥
 इत्यमुक्तक्रियोवारिसागरोऽयं रसेश्वरः ॥ २३८५ ॥
 र. क. यो, र. वि, र. र., रसायनस, र को, ध, यो. म, र
 सु, र का, सन्निपाते ।
 टि०—र वि, र, र, रसायनस, र को, ध, यो म, र सु, र का
 एतन्मन्त्रेण रत्नावरोपधयोगे च द्वितीयस्थाने अभ्रादीना विरोपविधान-
 मदत्वा भागविशेषज्ञाऽप्रवक्ष्य समभागेन द्रव्याणिनिवृज्य रत्न
 मयादित यथा—
 शुद्ध गत द्विधा गन्ध सन्तुष्य मृताऽन्नकम् ।
 निरुण्डी काकमाची च भृङ्गराद्रिकचिन्मम् ॥
 गिरिकर्णां त्रयणी च तिलपर्णी च भृङ्गराद्र ।
 दन्तीशिशुकदम्बरस्य कुसुम नागकसारम् ॥
 अथाकृष्णामहाराष्ट्रीद्वैरासा यथात्रमात् ।
 याम कृष्णविशोऽप्याऽप्य कटुतैलेन भावयेत् ॥
 शरावमयुषे रूडा वाहुकायन्यग पचेत् ।
 यामैक तन्ममुद्गस्य चूर्णितं कृष्णलवणम् ॥
 न्यून पत्रलवण दिक्षार जीरकद्रवम् ।
 वचाऽऽर्द्राऽग्निपमान्यश्च समभागानि कारयेत् ॥
 अनुपाणे चतुर्माप सन्निपातहर परम् ।
 माहिप दधि पथ्य स्वाद्रससौर्धविषयेनम् ॥
 साव्याऽमाभ्येप्रयोक्तव्यो रसोऽयवारिसागरः । इति ॥
भाषा—बाले ब्रह्मभ्रंशको गरमकर कपासकेपतोंकेरसमें
 बुझावे । अन्नकका चूरा होजानेपर भूपमें ३ दिनतक रखलोडे ।
 फिर छिलकेसहित धान डालकर बखमें पोष्टी बनाय एकदिन
 रखलोडे । फिर धीरे २ इशपोष्टीको रसमें मसाले । इतसे
 अन्नकका बारीकचूरा होकर बखमें बाहर निकल आवेगा पत्थर
 और कोयले बखमें रहजायगे । नितरजानेपर पाणीको निकालवे
 और अन्नकको सुखादे फिर कपासके रससे २-३ दिन मर्दनकर
 टिकड़ीबनाय सुखाकर शरावमयुटमें बन्दकर जल्लीकण्डोंमें
 बराहपुटकी आचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत्
 मर्दनकर पुटदे । ऐसे १५ पुटहोनेपर खलमें डाल कड़वेतेलसे
 मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर सूखनेपर
 बराहपुटकी १५ आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर कटुतेलमें मर्दनकर
 बड़े बनेमें डालकर दो अह्नल ऊपरतक तैलभरके शरावसम्पुट-
 कर ३-४ कपड़मिठी समस्तपर देकर सूखनेपर चूल्हेपर रख
 लकड़ीकी आच जलावे । तमाम हण्डो अग्निसात् होजानेपर
 अग्नि बन्दकरे । भाण्डस्थ वस्तुको पाककी होती पहिचानहै कि
 बिना अन्दरमें पाकहुए हण्डो लाल नहीं होती । स्वाह्नशीतल
 होनेपर तैलरहित निश्चन्द्र कबलकेसदृश भस्म निकलेगी । इसके
 बाद गन्धकको गलाकर कपासके पतोंके रसमें बुझावे । स्वाह्न-
 शीतल होनेपर निरुण्डीकेपतोंके रसमें ७ बार डाले । फिर
 तुषुधान्तसंस्कार किये हुए पतोंमें १५ वां हिस्सा सुवर्णजाण-
 कर बाराहगुना गन्धक जाणकरके रखले । इसपारमेंसे एकभाग,
 शुद्धकियाहुआ गन्धक १५ भाग, पूर्वोक्त अन्नक ४ भाग लेकर
 निरुण्डी, मन्त्रोय, कालापचूरा, जेत, हुरहुर, मन्त्रगुडी, चमेली,
 कदम्ब, भगरा, चिचक, मराठी, पिलासूल, इनप्रत्येकके रसोंसे
 १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय गोस्तनाकारमूपां रख सुह-

बन्दकर ६-७ कपड़मिठी ल्याकर सूखनेपर बालकायुद्धमें रस यत्रवा सुंदबन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर चूल्हेपर एकपहरकी मध्यम अग्नि दे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर रसेश्वरकी पूजाकर शीशीमें रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकी मात्रा चित्रकमूलके चूर्णकेसाथ देकर, पाचोनमक, जीरा, तीनोंक्षार, अदरक, त्रिकटु, वच, अजवाइन इनसबको अलग २ पीस कपड़छानकर एकजगहमिलाय ४ माशेलेकर अनुपातमें देनेसे महाघोर सतिपात एकक्षणमें नष्टहोताहै । इसीतरह मन्दाग्नि, समस्तज्वर, अतिसार, रोगराज, प्रतिश्याय, श्लेष्मरोग, पीनस, सद्गृहणी इनसबको यह नष्टकरताहै । गायकादूध, घी, दही और छाछका निषेधकरे और भेंसकी सब चीजेंदे । भेंसके तकादिकसे रखके बौयकी वृद्धिहोतीहै । सपेद और लालचावल, मूंग, गेहू, उड़द येसब पच्यहोतेहै ॥ ४८८ ॥

४८९ वारिसागररसः (द्वितीयः)

विषा बलिः सिता तालं टङ्गुणं व्योपकं समम् ।
जम्बीररससंयुक्तं मर्देयतिदिनं भिषक् ॥ २३८६ ॥
भापमात्रां वर्ती कुर्याच्छ्यायाशुष्कां तु कारयेत् ।
मुस्तायिल्वगुडैर्युक्तं वातज्वरनिवारणम् ॥ २३८७ ॥
जम्बीरशर्करायुक्तं पित्तज्वरविनाशनम् ।
गुडेन मधुसंयुक्तं कासश्वासज्वरापहम् ॥ २३८८ ॥
आर्द्रकस्य रसेयुक्तं कुक्षिशूलनिवारणम् ।
कुमारीरससंयुक्तं मेहदाहज्वरापहम् ॥ २३८९ ॥
सर्वादिण्डरसे युक्तं सन्ततज्वरनाशनम् ॥ २३८९ ॥
र क. यो , ज्वराधिकारे ।

भापा—अतीस, शुद्ध गन्धक, हरिताल और सुहागा, शक्कर, त्रिकटु येसब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर जम्बीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नागरमोषा, बेलगिरी और गुडकेसाथ देनेसे यह वातज्वरको नष्टकरताहै । जंभीरी और शक्करकेसाथ पित्तज्वर, शुद्ध और मधुकेसाथ कास, श्वास और साधारणज्वर, अदरककेसाथ कुक्षिशूल, पीडुनाकेरसकेसाथ प्रमेह और दाहज्वर, सर्वादिण्डके रससे सन्ततज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ४८९ ॥

४९० वारिसागररसः (तृतीयः)

सूतटङ्गुणविषाऽर्कमुगन्धा-
फेनकं मनशिलाऽभ्लविमर्द्यम् ।
भृथरं लघुपुट्टाद्विनिहन्ति
सतिपातमितियुञ्जसितायुक् ॥ २३९० ॥
दुग्धाघ्नं तन्मिथं चा शिशिरञ्च जलं हितम् ।
शीतोपचारैरन्यैश्च रसोऽयं वारिसागरः ॥ २३९१ ॥
र. शि , सतिपाते ।

भापा—शुद्ध पाटा, सुहागा और बटनाग, ताम्रमस, शुद्ध गन्धक, अफीम और मैनासिल समभाग लेकर बारीकचूर्णकर

पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय जंभीरी कंगूरहके रससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुष्टसे बन्दकर ३-४ कपड़मिठी देकर मध्ययुद्धमें लघुपुट्टी आवचे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती शक्करकेसाथ देनेसे यह सतिपातको नष्टकरताहै । मूलज्वरनेपर दूध, चावल अथवा छाछ, चावल देना । प्यास लगेनेपर ठंडाजलदेना और दाहमें शीतोपचार करना ॥ ४९० ॥

४९१ वारिसागररसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतं विषं गन्धं मृताघ्नं टङ्गुणं शिलात् ।
मुशलीं ह्यमाश्च प्रत्येकञ्च विमर्देयेत् ॥ २३९२ ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं श्लेष्मपित्तविसर्पनुत् ।
दुरालभा पर्यटकं पटोलं कटुकां तथा ।
त्रिफला गुग्गुलुं तुल्यं कपायमनुपायेत् ॥ २३९३ ॥
व रा., वै. वि , विसर्पे ।

भापा—शुद्ध पाटा, बटनाग और गन्धक, अन्नकमन्ध, शुद्ध सुहागा और मैनासिल, मुशली, सफेदकरैकी जड़कीछाल सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मुशली और कनेरकी जड़के काढ़ेसे मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जवाब, पित्तपापडा, पत्तल, कुट्टकी, त्रिफला और गुग्गुलु समभागके-साथकेसाथ देनेसे श्लेष्मरोग और पित्तविसर्प नष्टहोताहै ॥ ४९१ ॥

४९२ बालकादिलोहम्

अम्बुश्रेष्ठाकिमिरिपुवरीत्र्युपणात्रिजिजातं,
लोहं खण्डं द्वयमपि समं चूर्णमाद्यैश्च युक्तम् ।
सर्वान्मेहान्मधुशुतयुतं योजयेन्भापमात्रं,
शीथं पाण्डुं हरति सजरं कामलं चामवातम् ॥ २३९४ ॥
र. शि , प्रमेहाऽधिकारे ।

भापा—मुगन्धवाला, गजपीपल, विडर, शतावर, त्रिकटु, चित्रकमूल, तज, पत्रज, श्लायची येसब समभाग, लोहभस्म और शक्कर सबकोबराबर लेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु और पृतनेसाथ देनेसे यह शोथ, पाण्डु, कामला, आमवात इनसबकोनष्टकर सुवापेको दूरकरताहै ॥ ४९४ ॥

४९३ वासाखण्डायसम्

वासाखण्डायसम्
चासारसेनाऽर्मणसस्मितेन
चूर्णं सितातुल्यमयःसमुत्थम् ।
प्रस्थप्रमाणं कुडवोन्मिताज्ये
पस्त्या कटुष्णे विनिधाय तस्मिन् ॥ २३९५ ॥
त्रिजातकऽव्ययमुस्तधान्य-
द्विज्जिरकेभ्यः परिचूर्णितेभ्यः ।
पलं पलं दर्विक्रया विलोञ्ज
शीतं युतं शौद्रचतुष्पलेन ॥ २३९६ ॥
लीढं जयेत्तत्पत्रलञ्च कासं
पित्तं सरकं क्षयमग्निदादम् ।

करोति पुष्टिं घपुपः प्रवृद्धिं

पलं परां कान्तिमनामयत्वम् ॥ २३९७ ॥

लो. प कासे ।

भाषा—एकदोष अङ्गुलेपत्तोंके रसेमें १-१ प्रत्यक्ष शङ्कर और लोहमस तथा ४ पल घी डालकर हलकी आल्फे पकावे । वन तैयारहोनेपर तत्र, पत्रज, श्लायची, त्रिकुटु, नागसोया, धनिया, दोनोंजीरे १-१ पल लेकर इनका बारीकचूर्ण डालकर कङ्करीसे मिलावे । टडाहोनेपर ४ पल मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-२ माशे लेनेसे प्रबलकास, रक्तपित्त, क्षय, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । शरीरकी पुष्टि, वृद्धि, बल और कान्तिको बढ़ाकर सदैवके लिये आरोग्य देताहै ॥ ४९३ ॥

४९४ विकरालवक्त्रभैरवरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ रविर्क्षरीरैस्तिथिवाराच्चिभावायेत् ।
यामद्वादशकं यहि वार्लुकायन्नतो मतः ॥ २३९८ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्भूत्य धर्माक्षीरेण भावायेत् ।
दद्यात्पूर्ववदग्निञ्च ततश्च तिथिभायनाः ॥ २३९९ ॥
भावनाः स्वस्थ कम्पिल्लयीजैतलेन चानलः ।
यामपोडशकः सोयं विकरालास्यभैरवः ॥ २४०० ॥
र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध घारे और गन्धकवी नीलवर्णकजलीकर आक और सेहुण्ठकेदूधसे १५-१५ दिन मर्दनकर ६-७ कपडमिटी दीहुई आतशीशीचीमें डालकर सुहृवन्दकर १२-१२ पहरकी वातुकाग्नि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर कमीलेकेबीजोंके तैलेसे १५ दिन मर्दनकर १६ पहरकी अग्निदेवे । इसमेंसे १-१ रतीकीमाना समय अथवा रोगोचितानुगन्धेसाय देनेसे तमाम-प्रकारकेज्वर, सन्निपात, वात और कफजन्यव्याधि, खासकर उदररोग और कुष्ठ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४९४ ॥

४९५ विकरालवक्त्रभैरवरसः (नित्योदितः) २

ऋतुभागं सोममलं तालं दिनमितं तथा ।
कन्याङ्गिः पञ्च दश च भावनाश्चिकित्साद्रवैः ॥ २४०१ ॥
अश्वत्थत्वचमम्यस्थं पद्म्यामं दाहयेत्ततः ।
अरण्योपलकैः शीतमश्वगन्धाम्युयोजितः ॥ २४०२ ॥
भावयित्वा रसैस्तन्तु तालं कुष्ठहरं भवेत् ।
नित्योदितोरसः सोऽत्र रसं राज्ञीमितं भजेत् ॥ २४०३ ॥
र. का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धसोमल ६ भाग, शुद्धहरीताल ७ भाग लेकर बारीकचूर्णकर धीकुवार और नकछिक्नीकेरसोंकी १५-१५ भावनाएँ देकर टिकड़ीबनाय पीपलकीछालके चूर्णकेबीजमें रख धरावसम्पुष्टकर ६-७ कपडमिटीदेकर जल्लोकापडोंकी ६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अस्मन्धैररसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ राईके बराबर माना समय अथवा रोगोचितानुगन्धेसाय देनेसे तमामप्रकारके कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ॥ ४९५ ॥

४९६ विकरालवक्त्रभैरवरसः (तृतीयः)

तालं मुनिमितं सोमरसो वर्णं हिडिम्बिका ।
सौभाग्यं विशाभागञ्च निर्विपस्य चतुर्दश ॥ २४०४ ॥
तोरी धारमिता तद्वत्सोमलं तानि निक्षिपेत् ।
कालसर्पमुखे धर्मं शोषयित्वा प्रयत्नतः ॥ २४०५ ॥
विपमेकोनविंशंशमाकलं द्वादशंशकम् ।
मरिचाद् द्विखिलवङ्गात्कणा द्वादशभागिका ॥ २४०६ ॥
सप्तंशंश रजनी सर्वैश्चूर्णैः पोडशधा पुटेत् ।
सप्त त्रिपुटपुष्पस्य कृष्णधृतस्य च द्वयैः ॥ २४०७ ॥
छायाशुष्का वटी कार्या रक्तिका सर्वरोगजित् ।
योगिनीभिरयं प्रोक्तो विकरालास्यभैरवः ॥ २४०८ ॥
पेकाहिके द्वयाहिके च ज्याहिके विपमज्वरं ।
जीर्णज्वरे च तरुण आगन्तौ धातुजे ज्वरे ॥ २४०९ ॥
उद्याऽस्तं गुटी क्षौद्रनिकुटुत्रिफलायुता ।
टङ्गोपणसमायुक्ता सप्तारं वटी स्मृता ॥
धृतवीजाऽर्ककरमयीजेः सन्निपातजित् ॥ २४१० ॥
र का, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धहरीताल ७ भाग, शुद्ध वङ्गनाग और मैनसिल ४-४ भाग, सुहागा २० भा, निर्विंदी १४ भा, फिटकडी और सोमल ७-७ भाग लेकर १-२ दिन मर्दनकर बाले-साधनेमुद्धमें भरके सुखावे फिर साधका जहर १९ वा भाग, अरुलकरा १२ वा भाग, मिरच २ भाग, लौंग ३ भा, पीपल १२ भा, हल्दी सबसे ७ वा भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर त्रिपुट धतूरे (७ या ३ आवर्त जिसके फूलमें आतेहैं) केरससे १६ पुट देकर १-१ रतीकी गोलिएा बनाकर छायामें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुगन्धेसाय देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै । साधारणतया मधु, त्रिकुटु और त्रिफला अथवा सुहागा और मरिचकेसाय अथवा धतूरा, आक और अरुलकराकेबीजोंकेसाय देनेसे ऐकाहिक, द्वयाहिक, ज्याहिक, विपम, जीर्ण, तरुण, आगन्तुक और धातुगत सम्पूर्णज्वर सूर्योदयेसे शामतक नष्टहोतेहैं । ७ दिनों सन्निपात निवृत्तहोताहै ॥ ४९६ ॥

४९७ विक्रमकेसरीरसः

शुल्यमेकं द्विधा तारं मर्दयेद्विधिविद्विपक्व ।
पञ्चाक्षिपं रसं गन्धं मेलयित्वा तु भावायेत् ॥ २४११ ॥
एकविंशतिवारांश्च लिम्पाकसकलद्रवैः ।
रसः सिद्धः प्रदातव्यो शुञ्जामात्रो ज्वरान्तकृत् ॥
सर्वज्वरहृत्ः ख्यातो रसो विक्रमकेसरी ॥ २४१२ ॥
भै. र, र मु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—ताम्रमस १ भाग, रजतमस २ भागलेकर एक-पहरमर्दनकर शुद्धवङ्गनाग, पारा और गन्धक १-१ भाग मिलाकर नीलवर्णकजलीकर अमिलतासकी छालकेरससे २१ भावनाएँ देकर १-१ रतीकी गोलिएा बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१

गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे यह समस्त-
ज्वरोंको दूरकरताहै ॥ ४९७ ॥

४९८ विचित्रवीर्यरसः

रसं गन्धं विपं तुल्यं माक्षिकञ्च मनःशिला ।
बालतालकगुल्बञ्च मुण्डं द्रुदमेव च ॥ २४१३ ॥
हैमरौप्यजभस्माऽपि धाराऽभस्म तुल्यकम् ।
कटुत्रयं चित्रकञ्च निर्गुण्डीमूलसम्भवम् ॥ २४१४ ॥
नेपालं पिप्पलीमूलं सौभाग्यं करहाटकम् ।
मात्स्यमाहिषमायूरच्छागवाराहिकैस्तथा ॥ २४१५ ॥
अन्येषां विविधैः पित्तैर्भेदयित्वा भिषग्वरः ।
छायाशुष्का घटीः कृत्वा काचकूप्यां विनिःक्षिपेत् ॥
निरुद्धथ बालुकायत्रे प्रहराऽर्द्धं पथेल्लथु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य तत्तद्रोगानुपानतः ॥
शीघ्रं प्रशमयेत्तान्श्च चित्रप्रत्ययकारकः ॥ २४१७ ॥
र. क. यो., सजिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, सोनामाखी, मैतसिल,
सुरमकी, हरिताल, ताम्र और मुण्डभस्म, शुद्धशिंगरिफ,
सुवर्ण-रजत और कौडीभस्म, त्रिकटु, चित्रक, निर्गुण्डीमूल,
शुद्धनमालागोदा, पिपलामूल, सुनासुहागा, अकल्बरा सबसमभाग-
लेकर धारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय
मछली, भेंडा, मोर, बकरा, सुअर तथा इन्हींके सदाश अन्य-
जानवरोंके पित्तोंसे १-१ दिन भावनादेकर १-१ रत्तीकी
गोलिया बनाय छायाशुष्ककर काचकीशीशीमेंभर बालुकायन्त्रमें
आपे पहरकी आवेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर रखोहै ।
इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे
यह सबप्रकारके ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ४९८ ॥

४९९ विजयचूडरसः

मर्दयेन्निम्बुकद्रावे रसं वङ्गञ्च गन्धकम् ।
सूपायां भूधरे पाकं कुण्डाहासरपञ्चकम् ॥ २४१८ ॥
तत्र गन्धं मृतं ताम्रं सौवर्चलमथो क्षिपेत् ।
गायत्रीतोषसंश्लिष्टं ताम्रोद्वरविलेपितम् ॥ २४१९ ॥
स्युजभाण्डोदरे रद्धा बालुकाभिः प्रपूरयेत् ।
रद्धा यामहयं पत्न्या प्रहण्यां धातुकज्वरे ॥ २४२० ॥
गुल्मह्रीहोदराऽष्टौलाऽपस्मारे सूत्रकृच्छ्रके ।
परिणामभवे श्ले क्षयादीं सम्प्रयोजयेत् ॥
वह्निं रोगाऽनुपानेन रसस्य भिषजांवरः ॥ २४२१ ॥
र. क., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, वङ्गभस्म और शुद्धान्धक समभाग
लेकर नीलवर्णकजलीकर नीबूवेरससे एकदित मर्दनकर गोला-
बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर सूत्रयन्त्रमें रखकर ५ दिनकी
आवेदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर शुद्धान्धक, ताम्र-
भस्म और सचल पूर्वसमी धराकर २ डालकर रैरेकेजायमें
पीसकर धराकरके ताम्रसमुद्रमें भीतर लेपदेकर हंडीमें समुद्रको

उलटा रख सन्धिवन्दकरदे । फिर बालुकरके हंडीपर ढकन देकर
३-४ कपड़िमीसे बन्दकर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदे । स्वाङ्ग-
शीतलहोनेपर निकालकर ताम्रसमुद्रमेंसे खुरचनर निकालले ।
इसमेंसे ३-२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानेसाथ देनेसे
प्रहणी, धातुगतज्वर, गुल्म, ह्रीहा, उदररोग, अग्रीला, अप-
स्मारे, सूत्रकृच्छ्र, परिणामशूल, क्षयादिदुष्टव्याधि, इनसबको
यह नष्टकरताहै ॥ ४९९ ॥

५०० विजयपर्पटीरसः (प्रथमः)

गन्धकं धुद्रितं कृत्वा भाव्यं भृङ्गरसेन तु ।
सप्तधा वा त्रिधा वाऽपि पञ्चाक्षुष्कं विचूर्णयेत् २४२२
चूर्णयित्वाऽऽयसे पात्रे कृत्वा वह्निगतं सुधीः ।
द्रुतं भृङ्गरसे क्षिप्तं तत उद्धृत्य शोषयेत् ॥ २४२३ ॥
तञ्च गन्धं पलञ्चैकं गन्धाऽर्द्धं शुद्धपारदम् ।
सूताऽर्द्धं भस्म रौप्यञ्च तदर्द्धं स्वर्णभस्मकम् ॥ २४२४ ॥
तदर्द्धं मृतवैकान्तं मौक्तिकञ्च विनिःक्षिपेत् ।
एकीकृत्य ततः सर्वं कुर्यात्पर्पटीकां शुभाम् ॥ २४२५ ॥
लोहपात्रे समरसं मर्दितं कज्जलीकृतम् ।
यद्राऽङ्गारवह्निस्थे लोहपात्रे द्रवीकृते ॥ २४२६ ॥
मयूरचन्द्रिकाकारं लिङ्गं वा यदि हृदयेत ।
मृदो न सम्यग्भङ्गः स्यान्मये भङ्गश्च रौप्यवत् २४२७
खरे लघुभवेद्भङ्गो रूक्षः सूक्ष्मोऽऽणच्छविः ।
मृदुमय्यौ तथा खाद्यौ खरस्त्याज्यो विपोषमः २४२८
जराव्याधिशताऽऽकीर्णं विश्वं हृद्वा पुरा हरः ।
चकार पर्पटीमेतां यथा नारायणोऽमृतम् ॥ २४२९ ॥
आदौ शङ्करमभ्यर्च्य द्विजातीन्प्रणिपत्य च ।
प्रभाते भक्षयेदेनां प्राप्रक्तित्वयसम्भिताम् ॥ २४३० ॥
रक्तिकादिक्वमाद्भृद्धिर्भस्या नेव दशोपरि ।
आरोग्यदर्शनं यावत्तावद्भासस्ततः परम् ॥ २४३१ ॥
अजीर्णं भोजनं नेव पथ्यकालव्यतिक्रमः ।
घृतसैन्धवधान्याकहिद्भुजौरकनागरैः ॥ २४३२ ॥
शस्यते व्यञ्जनं सिद्धं पित्ते स्वाद्भस्ममाक्षिकम् ।
कृष्णमत्स्येन मुद्गेन मासेन जाङ्गलेन च ॥ २४३३ ॥
जाङ्गलेषु शशच्छागी मत्स्ये रोहितमहुरो ।
पटोलपत्रञ्च तथा कृष्णवार्ताकजाजिका ॥ २४३४ ॥
सुस्विन्नपूनीस्ताम्बूलैर्लोभं कर्पूरसंयुतैः ।
क्षुधाकाले व्यतिक्रान्ते यदि वायुः प्रकुप्यति ॥ २४३५ ॥
शिञ्जिन्नातीति शिरःश्ले विरेके वमयी तथा ।
तृष्णायाञ्चाऽधिके पित्ते नारिकेलाम्बु निर्भयम् २४३६
नारिकेलपयः पेयं द्विभैक्ष्यं क्षीरमेव च ।
स्यमे शुक्रच्युतां चैव चम्पकं कदलीदलम् ॥ २४३७ ॥
वर्ज्यं निम्ब्यादिकं शानं पाकाम्लं काञ्जिकं सुराम् ।
कदलीफलपत्राऽऽङ्गि त्रयुवाऽलातु कर्कटी ॥ २४३८ ॥

कूप्माण्डं कार्वेलुश्च व्यायामं जागरं निशि ।
 न पद्येन्न स्पृशेद्भ्रूच्छेत्त्रियं जीवितुमिच्छति ॥२४३९॥
 यद्योपधे त्रियं गच्छेत्कर्तव्या तु प्रतिक्रिया ।
 दुर्घारां प्रहर्णां हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ॥२४४०॥
 आमशूलमतीसारं सामञ्जैव सुदारुणम् ।
 अतिसारं पडशांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ॥ २४४१ ॥
 शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहानञ्च जलोदरम् ।
 पक्तिशूलं चाऽम्लपित्तं प्रमेहान्विपमज्वरान् ॥२४४२॥
 वातपित्तकफोत्थाञ्च ज्वरान्हन्ति सुदारुणान् ।
 जीर्णाऽपि पर्पटीं कुर्वन्व्युपा निर्मलः सुधीः ॥
 जीवेद्ग्रहशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४३ ॥
 भै र, र सु, र मृ ग्रहणीरोगाऽधिकारे ।

टि०—“ रोगशान्ते प्रयोक्तव्यो गुञ्जाद्विप्रमाणत । कल्याणै
 निष्कल्युक्ता मधुवेदसर्पटीम् ॥ पञ्चकोलसमोपेता मधुसारसमन्वित ।
 हन्यात्पण्डिका जीवा सत्रिपात सुदारुणम् ॥ निपली मधुमयुक्ता त्दि
 स्वर्पटिकां क्षयी । त्रिहृत्पूणसयुक्ता हन्यादा ग्रहणीगदम् ॥ नवकाह
 गुण्योपासायुगो विनाशयेत् । स्वृषीनेन सयुक्ता वातशूलनिवर्हणी ॥
 कन्यायूषणमयुक्ता हन्ति वातज्वरं दि सा । दशमूलसमायुक्ता श्लेष्म
 रोगविनाशिनी ॥ सीमरापीयुता हन्ति तीक्षा पामा विचर्चिकाम् ॥
 महात्करुणामायुक्ता हन्ति वद्रेणि द्विचिकाम् ॥ हन्यात्पण्डिकाऽर्शांसि
 ग्वा मृत्राऽनुपानत । शालाऽनुवदाश्चिन् शाल्मलीशूद्राजकी ॥
 निम्बपत्राद्गुण्यो च शोर्ष्यं कुण्डला तथा । निर्गुण्यश्चैव पनाणि
 समभागानि कारयेत् ॥ चूर्णयित्वा तत श्लक्ष्णामनुपाने प्रयोचयेत् ।
 बुध्रोगनिवृत्त्यर्थं प्रयुज्यात्स्वर्पटीरसम् ॥ एव पर्पटिका युक्ता स्वर्सेगाश्च
 नाशयेत् । पथ्यमत्र प्रयुञ्जीत यथादीवानुमरत । शक्ता मृत्विकाराश्च
 त्रिकृद्गमि शाययेत् ॥ ” इति रसायने अनुपाने विशेषोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धान्यकका वारीकचूर्णकर भगरेकरसे ७ अथवा
 ३ बार भावितकर चूर्णबनाय लोहेबेपानमे गलाकर भगरेकरसमे
 गुणावे । यह शुद्धान्यक १ पल, शुद्धान्या २ कर्प, रजतमस
 १ कर्प, युवर्णभसम आधाकर्म, वैकान्तभसम और मोती ४-४ भासे
 लेकर सयकी नीलवर्णकजलीकर पीपुतीहुईलोहेकी वडाहीमें
 गलाकर प्रथमसर्पटीकीतरह तैयारकरे । फिर पर्पटीका वारीक
 चूर्णकर लोहेबेपानमे बेरेकेकोयलोपर गलाय दो कर्प पारा
 मिलाकर उतारकर कजलीबनाकर रखडोड़े । पर्पटीकापाक तीन
 तरहकाहोताहै । मयूस्वच्छिकाकीतरह जिसमें रक्त दिखाईदे और
 तोकनेसे अच्छीतरह न दूट वह शुद्धपाकहै । मयूपाकमें जल्दी
 दूटजातीहै और चादीकीतरह चमकतीहै । सप्याकमें रग लाल
 तथा रूक्षहोताहै और बहुतजल्दी दूटतीहै । गुड तथा मध्य
 पाककासेवनकरे और खरको जहरकीतरह छोड़देवे । अच्छे
 तिथि-सुहृत् देखकर शहरसा पूजनकर ब्राह्मणोंसे सन्तुष्टकर
 सुषहमे २-२ रतीसे आरम्भकरे और प्रतिदिन १ रती बढ़ावे ।
 १० रतीहोनेपर बहीमात्रा स्थिर रखे ऊपर न बढ़े । जब
 व्याधिरहितहोजाय तब १-१ रतीका हाथकर बन्दकरदे ।
 अजीर्णमें भोजन और पच्यकालका लघन न करे । पी, संधा-
 नमक, घनियां, हींग, जीरा और छोट इनसे व्यञ्जन सिद्ध
 करे । पित्तप्रकोपमें स्वादु, अम्ल, मधु, कालीमछली, सूंग

और जागलमासका सेवनकरे । जाइलोंमें खरगोश और बकरा
 श्रेष्ठहै, मछलियोंमें रोहू और मत्सुर, शाकोंमें पटोलपत्र, काले-
 बेंगन, तराई, पकीहुई गुपारी और कपूर ल्याहुआपान सावे ।
 भोजनका अतिकाल होनेसे यदि वायुका प्रकोपहो तो कानोंमें
 सिञ्चिनी, शिर घूल, रेचन, वमन और अधिक व्यासहोगी ।
 इसमें पित्तकोशात्तकरनेकेलिये नारियलकाजल और दूधदे ।
 स्वप्नमें शुक्लसलनहोनेपर दूधपिलावे । चम्पा, कदलीदल,
 निम्बादिशाक, खटाई, वाञ्जी, मध, केलेकाफल-पत्ता और जड़,
 खीरे, कद्, ककही, कोंडला, केरला, व्यायाम, रात्रिजागरण,
 इनका निषेधकरे । अगर जीनेकी इच्छा हो तो छीका स्पर्श
 तर्कनी न करे । दैवसंयोगसे यदि औषधप्रयोगमें छीकाहोजाय
 तो उसका प्रतीकारकरे । इसप्रयोगसे पुरानी घोरप्रहणी, आम-
 शूल, अतिसार, ६ प्रकारके बवासीर, ज्वरद्वयुक्त यक्ष्मा, शोथ,
 कामला, पाण्डु, ग्रीहा, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त, प्रमेह,
 विपमज्वर, वात पित्त और कफप्रधानज्वर इनसबको यह नष्ट-
 करतीहै । जीर्णपुष्य इसकासेवनकरे तो वलीपलितसे निवृत्तहोकर
 पूरे १०० वर्षकी आयुको भोगताहै । साधारणत २ रतीसे ३
 रतीतक त्रिफलाकेसाय सेवनकरनेसे कल्याणिद्धिहोतीहै । पञ्चकोल
 और मधुबेसाय घोरसत्रिपात, पीपल और मधुबेसाय क्षय,
 निसोत और त्रिकटुनेसाधप्रहणी, गुग्गुलुबेसाय पाण्डु, एरण्ड-
 बीजसे वातशूल, पीडुवार और त्रिकटुने वातज्वर; दशमूलके
 वायसे श्लेष्मरोग, वाङ्मूत्रसे मयकर पामा और विचर्चिका,
 भिलावेसे दूट और द्विका, गौमूत्रसे बवासीर नष्टहोताहै । सख्खा
 अजुन, वट, चित्रक, सेंमल, भंगरा, निम्बपत्राद, दोनों गोरख
 सुण्डी, पियावासा, गिलोय, निर्गुण्डीकेपते सयसमभागवेचूर्णवे-
 साय लेनेसे यह शुद्धोको नष्टकरतीहै । इततरह समय अथवा
 रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे समस्तरोगोंको दूरकरतीहै ॥५००॥

५०१ विजयपर्वटी (द्वितीया)

रसं घञ्जं हेमतारं मौचिकं ताप्रमन्नकम् ।
 सर्वतुल्येन गन्धेन कुर्वादिजयपर्वटीम् ॥ २४४४ ॥
 दुर्घारां प्रहर्णां हन्ति दुःसाध्यां बहुवार्षिकीम् ।
 आमशूलमतीसारं चिरोत्थमतिदारुणम् ॥ २४४५ ॥
 प्रनाहिकां पडशांसि यक्ष्माणं सपरिग्रहम् ।
 शोथञ्च कामलां पाण्डुं प्लीहगुलमजलोदरम् ॥२४४६॥
 पित्तशूलमम्लपित्तं वातरक्तं बर्मि भ्रमम् ।
 अष्टाद्वाधियं कुष्ठं प्रमेहान्विपमज्वरान् ॥ २४४७ ॥
 चतुर्विधमजीर्णञ्च मन्दाश्लेष्ममरोचकम् ।
 जीर्णाऽपि पर्पटीं कुर्वन्व्युपा निर्मलः सुधीः ॥
 जीवेद्ग्रहशतं श्रीमान्वलीपलितवर्जितः ॥ २४४८ ॥
 प्रातः करोति सततं नियतं द्विगुञ्जां,
 यस्तां स विन्दति कलां कुसुमायुषस्य ।
 आयुश्च दीर्घमनघं व्युपः स्थिरत्वं,
 हार्नि वलीपलितयोरतुलं धलञ्च ॥ २४४९ ॥

जराव्याधिसमाकीर्णं विश्वं दृष्ट्वा पुरा हरः ।
 चकार पर्यटीमितां यथा नारायणः सुधाम् ॥ २४५० ॥
 भै र, वै क, र चं, र सु ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, हीरा, सुवर्ण, रजत, मोती, ताम्र और
 अत्रक इनकीभस्में समभाग और शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर
 नीलगर्भकजलीकर धींपुतीहुईकड़ाहीमें गलाकर गोबरपर रखे
 हुए बेलेपत्रपर डालकर दूसरे केलकेपत्रसे ढककर गोबरसे
 दबादे । ठंडाहोनेपर निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे १-१ रत्तीसे
 १० रत्तीतककीमात्रा बढ़ाकर अथवा २-३ रत्तीकी नियतमात्रा
 देनेसे पुरानी दुःसाध्यग्रहणी, आमशूल, पुराना अतिघार, प्रवा-
 हिका, ६ प्रकारके वनासीर, उपद्रवसहित यक्ष्मा, शोथ,
 वामला, पाण्डु, हीहा, शुल्म, जलोदर, पक्तिशूल, अम्लपित्त,
 वातरक, वमन, भ्रम, १८ कुष्ठ, प्रमेह, विपमज्वर, ४ प्रकारका
 अनिर्ण, मन्दाग्नि, अरुचि इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५०१ ॥

५०२ विजयप्रतापरसः

नीलं तुर्यं यत्सनाभं साऽश्मजं हरितालकम् ।
 रदन्याश्च रसैः पश्चाद्दृढं मुद्गमात्रकम् ॥ २४५१ ॥
 विजयप्रतापनामाऽसौ सर्वरोगविनाशकः ।
 संहरेद्ब्रह्मणीरोगं ज्वरमेकाहिकं हृदयं ॥ २४५२ ॥
 र हा, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध नीलायोधा, बल्लगण, गन्धक और हरिताल
 समभाग लेकर नीलगर्भकजलीकर खवन्तीकेरससे ३-४ दिन
 मर्दनकर भृगुबराबर गोलिये बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१
 गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाध देनेसे यह समस्त-
 रोगोंको दूरकरताहै । खातरक सद्ब्रह्मणी और एकाहिकज्वरको
 नष्टकरताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ विजयभैरवरसः (विजयानन्दः) १

सतकञ्चुकिर्मुक्तमूर्च्छंशुद्धं रसेन्द्रकम् ।
 मृत्कटाहान्तरे तन्तु स्थापयेच्च समप्रकम् ॥ २४५३ ॥
 सूताद्दिग्गुणितं तालं वृष्णाण्डद्रवदोषितम् ।
 दोलायत्रेण तैलादौ सप्तधा परिदोषितम् ॥ २४५४ ॥
 दन्वाऽऽम्नाय्य द्रवैश्चिप्ट्याः किञ्चिदाम्नाय्य युक्तितः ।
 तयोर्दिग्गुणितं भस्म पलादास्य परिक्षिपेत् ॥ २४५५ ॥
 पुनश्चिप्टीद्रवेषु सर्वमाम्नाय्य यत्नतः ।
 खाखसारकरसैर्भूयः परिष्ठाय्य च पाकवित् ॥ २४५६ ॥
 पचेद्वहितो घृघ्नः शालाऽङ्गारेण यत्नतः ।
 चतुर्विंशतियामन्तु पन्त्वा शीतलतां नयेत् ॥ २४५७ ॥
 अवतार्य काचपात्रे विधाय तदनन्तरम् ।
 प्रयत्नेन कृतप्रायश्चित्तः शोषितदेहकः ॥ २४५८ ॥
 सितहारीतकीयुक्तं स्यादेष्टकिचतुष्टयम् ।
 रक्तिनेकान्मेणैष घर्द्धयेद्विनसत्तकम् ॥ २४५९ ॥
 मधूदकं पिबेद्याऽनु नारिकेलजलञ्च वा ।
 जिह्निनीसम्भवं क्षायमथवा क्षौद्रनागरम् ॥ २४६० ॥

अभ्यङ्गं सुरभीतैलैः कुर्यात्ताम्बूलचर्वणम् ।
 पवनाऽनलसूर्यांशुमत्स्यमांसवधीनि च ॥ २४६१ ॥
 शाकं ककारपूर्वञ्च वर्जयेन्मतिमात्ररः ।
 वातरक्तमाममिश्रमामञ्चाऽपि सुदारुणम् ॥ २४६२ ॥
 सर्वकुष्ठञ्चाऽम्लपिप्तं विस्फोटञ्च मसूरिकाम् ।
 चिजयाय्यो रसो नाम्ना हन्ति दोषानसुन्दरान् २४६३
 र स, र चि, र सु, र च, कुष्ठऽधिकारे ।

भाषा—सतकञ्चुकीरहित शुद्धपारा १ भाग, बोंहळेके रस
 वंगरहसे दोलायत्रमें शुद्धकियाहुआहरिताल २ भाग लेकर
 मिट्टीकी कड़ाहीमें रख कटसरीयाका रस दोनोंके इयनेलायक
 डालकर दोनोंसे दूनी पलाशकीराख डाले, ऊपरसे दूसरा कट
 सरीयाका थोड़ासा रस डाले और चूल्हेपर चढाकर अग्निदेवे ।
 जब कटसरीयाकारस सूखनेलगे तब ताजेपोस्तकारस और आव-
 कादूध थोड़ा थोड़ा डारताजाय और नीचे ससुएकेकोयलोंकी
 आवचे । ऐसे २४ पहरकी आच्येदेनेकेबाद रस डालना बन्दकरे
 जिसमेंकि तमामरस जलकर सफेद राख होजाय । स्वाङ्गशीतल
 होनेपर धीरजसे ऊपरके मैलको जुदाकर नीचेसे पारद और हरि
 तालकीभस्मको निकालकर शीशीमें रखडोढ़े । अच्छे तिथि,
 दिन और सुदृष्टमें प्रायश्रित और पञ्चमसे देहको शुद्धकर
 इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा शकर और होंकेसाथ देकर मधुका
 शरवत अथवा नारियलकाजल अथवा जिह्निनीकावाथ अथवा
 सोंठ और मधु अनुपानरूपसेदे । प्रतिदिन १-१ रत्ती सातदिन
 तक पशवे । चन्दनकेतैली मारिशकरावे पान खानेकोदे ।
 वायु, अग्नि, घृष, मछली, मांस, दही, ककारादिसाक इनको
 छोड़देवे । इसके सेवनसे आमसुकु वातरक और भयकर आम
 वात, समस्तकुष्ठ, अम्लपित्त, विस्फोटक, मसूरिका, रक्तप्रद
 येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५०३ ॥

५०४ विजयभैरवरसः (अमरसुन्दरी २)

सुतकं गन्धकं लोहं विपं चित्रकमप्रकम् ।
 विडङ्गं रेणुका मुस्ता द्राविडीपनकेशरम् ॥ २४६४ ॥
 फलत्रयं त्रिकटुकं शुल्बभस्म तथैव च ।
 पतानि समभागानि द्विगुणो दीयते गूढः ॥ २४६५ ॥
 कासे भ्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विपमज्वरे ।
 सूतायां ग्रहणीमान्द्ये शूले पाण्ड्यामये तथा ॥
 हस्तपादादिरोगेषु शुद्धिकेयं प्रशस्यते ॥ २४६६ ॥

र. म, भै र, र चं, र सि, र चि, रस स, वै क, यो म.,
 रसायनस, र का, र र, भै सा, र यो, र (मा.), घ, र स,
 र सु, र क, व रा, र क यो, यो वि, नि र, चि र भ.,
 र. पा, र क ल. कासाऽधिकारे ।

टि०—यो चि, नि र, र सु, चि र म, र क ल, रस म
 एषु ग्रन्थेषु ताम्रस्थाने आवृष्टक निवीच्य वाताऽधिकारे अमरसुन्द-
 रीति नाम्ना स्थापितोऽप्य वात घ, र स, र सु, र क, व रा,
 रस सं एषु ग्रन्थेषु विजयवटीति नाम स्थापितम् अत्र अत्रकस्थाने,
 ग्रन्थिक नियुक्तिनिमित्त विशेष र सु, नि र प्तयोर्दिनीयस्थाने यथा-

दिग्दीप्ति नाम ब्रह्मपिताराथ । र स, र सु, र च, स्नेपु द्विती-
यस्थाने जयदीप्ति नाम अत्र अन्नकालयनगुणानां स्थाने कल्प-ग्रन्थि
कूपालीजानि क्रमेण नियोजितानीति विधिः । र क यो, चन्द्रप्रभेति
नाम । योगमहादेवे यथावा ब्रह्मणेमान्ये इत्यस्य स्थाने सप्तवां ब्रह्मणी
मान्ये इति पाठान्तरम् । र स, नि र, र सु, र पा, र र स,
र को, यो, र च, ब रा, र स, र व यो, वै पि, र क ल,
ना वि, वा. एषु ग्रन्थेषु नीलकण्ठ इति नाम रत्नाकरीषयोने द्विती-
यस्थाने त्रिमूर्तिरिति नाम, वैद्यनिन्तामणौ द्वितीयस्थाने सृष्टादिर्दीप्ति
नाम रत्तराजमुन्दरे पञ्चसैव रत्स्य नामान्तरेण पञ्चतु स्थानेषु पाठ ।
रसचर्यांती स्थानद्वये, रसमारमहमदे स्थानद्वये, पञ्चतरी स्थानद्वये,
रसेन्द्रमारमहमदे स्थानत्रय्ये, रसेन्द्रकल्पद्रुमे स्थानत्रये, निषण्डर
त्नाचरे स्थानचतुष्ये, बन्वराजीये स्थानत्रये, रत्नावरीषधने स्थान-
त्रये, विदिन्मारत्नामरणे स्थानद्वये, रत्तराजमुन्दरे स्थानचतुष्ये,
योगचिन्तामणौ स्थानद्वये पाठ । र म, भै र, र मि, र वि, वै
क, यो म, रसायनस, र का, र र, भै सा, र मा, र र स,
एषु ग्रन्थेषु कर्मिभिरुपस्थाने त्रिजयभैरवनाम्ना पाठोऽस्ति, सर्वेष्वेवोऽपि
कन्याऽथवाती रत्तराजमुन्दरे हस्त्ये नानारत्नाने पाठवरण मारयति
ग्रन्थवारस्य बुद्धिराहित्यमिति सुभीति विभावनीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, मन्थक और बछनाग, लोह और
अन्नकमल, चित्रकमूल, विडङ्ग, रेणुका (पदाङ्गीरण), नागर-
मोषा, इलायची, पत्रज, नागकेसर, त्रिफला, त्रिफुट्ट, ताम्रभस्म,
येसनसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलकण्ठकञ्जलीमें
मिलाकर १-२ पहर शुद्धमर्दनकर दूनेगुग्गुकी चासनी अथवा
गुग्गु मिलाकर ४ रती अथवा १ माशेकी गोलियाँ बना-
कर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु
पानकेसाथ देनेसे श्वास, कास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर,
सूतिकारोग, प्रद्वणो, मन्दाभि, शूल, पाण्डु और हस्तपादादिरोग
इनमन्त्रको यद् नष्टकरताहै ॥ ५०४ ॥

५०५ विजयभैरवरसः (तृतीयः)

हरचर्यायं वत्सनामं यद्गं नागं सृताऽन्नकम् ।
मर्दयेद्विनमेकञ्च कट्टुत्रितयजे रसे ॥ २४६७ ॥
द्वियामं घालुकायन्त्रे पाचितं घञ्जसूपया ।
स्वाङ्गशीतलमुपुत्यं शुनीपित्तेन भावयेत् ॥ २४६८ ॥
चणमात्रं पिबेद्योऽनु नारिकेलोदकेन च ॥
तत्क्षणेन विनश्येत् ह्यन्तकः सन्निपातकः ॥
हृद्भापथ्यं प्रातःतत्र्यं रसो विजयभैरवः ॥ २४६९ ॥
दै वि, वा, रसायन, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, चङ्ग, नाग और अन्नक
भस्म समभाग लेकर नीलकण्ठकञ्जलीकर त्रिचङ्गुलेरससे एकदिन
मर्दनकर घञ्जसूपामें बन्दकर ३-४ कपडमिठीदेकर सूखनेपर
वालुकायन्त्रमें रखकर दो पहरकी मन्द आंचदे । स्वाङ्गशीतल
होनेपर निकालकर कुत्तीके पित्तोनी एक भावना देकर चनेप्रमाण
गोलियाँ बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली नारियलके
जलकेसाथ देनेसे अन्तकसन्निपात तत्क्षण नष्टहोताहै । इसमें पथ्य
इच्छानुसार देना ॥ ५०५ ॥

५०६ विजयभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं ताघ्रं नीरुणतारं नागयङ्गी तथैव च ।
साधितं पूर्ययोगेन समं सर्वं विनिक्षिपेत् ॥ २४७० ॥
सत्त्वाऽन्नं तालकं सत्त्वं शुनटीतुष्यद्विह्वलम् ।
द्विभागेन कृता ह्येते पल्यमप्ये विनि क्षिपेत् ॥ २४७१ ॥
लाङ्गलीमेघनादथ कुमारी काकमाचिका ।
व्याघ्री तथाद्रिः कमठी धृतकोऽप्यपचिञ्चिनी ॥ २४७२ ॥
स्नुहामिसुरदात्यथ सप्तधा सर्वमौषधैः ।
पचेत्तद्रोलकं कृत्वा यज्जम्बामु भूधरे ॥ २४७३ ॥
स्वाङ्गशीतं ततो नीत्वा मेघनादेन भावयेत् ।
भूधरेण ततः पफं तत्समं पारदं क्षिपेत् ॥ २४७४ ॥
अष्टभागं सुतीक्ष्णञ्च पुनः पञ्च भूधरे ।
मेघनादरसे भान्यं रसेन्द्रः सिद्धतां प्रजेत् ॥ २४७५ ॥
गुञ्जामात्रं रसं खादेदनुपापानेन योजितम् ।
समानममृतासत्त्वं मुशली शतपत्रिका ॥ २४७६ ॥
गजकर्ण्यथगन्धा च विद्वारी व्योपराजतम् ।
गुग्गुलुञ्च शिलां शुद्धं पूर्ययोगविनिर्मितम् ॥ २४७७ ॥
सिता समांशा सर्वेण मध्याज्याभ्यां लिह्येदनु ।
रुच्यथा सर्वभोक्तव्यमामवातनिवृन्ततम् ॥ २४७८ ॥
रसवातं महावातं शोथं मन्दाभिजं हरेत् ।
शुद्धगुल्मी तथाऽर्शोश्च पाण्डुं कासं महोदरम् ॥ २४७९ ॥
राजयश्माऽतिसारञ्च प्रहणीञ्च भगन्दरम् ।
प्रमेहान्द्विरातिञ्चैव बुध्नाऽप्यदाशकं तथा ॥ २४८० ॥
घलीपलितनिर्मुक्तः सेवितः सञ्चरं हरेत् ।
ज्वरं शूलं तथाऽध्मानं सधिपातांस्त्रयोदश ॥
नाशयेत्ताऽप्य सन्देहो रसो विजयभैरवः ॥ २४८१ ॥
रसताम्र, सर्वरोगे ।

भाषा—पारा, तावा, लोह, चादी, सीसा और वज्रभस्म
१-१ भाग, अन्नक और हरितालसत्त्व, शुद्धमैनसिल, सुतिया
और सिंगरिफ २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर करिहारी,
कटियाली चोलाई, पीकुंवार, मनोय, भञ्जद्वैया, बोयल,
कुचिला, धतूरा, भुईआंवला, सेतुण्ड, चित्रक, कन्दाल इनके
सर्वसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय बज्रमूपामें बन्दकर
२-४ कपडमिठी देकर भूधरयचकी अभिदे । ऐसे त्रय्येकके
रसोंमें मर्दनकर अभिदेवे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर
कटियालीचोलाईमें मर्दनकर भूधरपुट्टकी आंचदे । फिर इसकी
बराबर शुद्धपारा और ८ भाग फोलादभस्म मिलाकर कटियाली
चोलाईकेरससे मर्दनकर भूधरपुट्टकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर
चोलाईकेरससे एकदिन मर्दनकर १-१ तलीकी गोलियाँ बना
कर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली बराबरके गिलोमसत्त्वकेसाथ
लेकर मुशली, गुलाबके फूल, हरितकर्णललाटा, अशगन्ध, विदा-
रीकन्द, त्रिफुट्ट, रजतभस्म, शुद्धगूल और मैनसिल तय सम-
भाग और शकर सयकी बराबर मिलाकर ३-३ माशे मधु और

धीकेचाय अनुपानमे लेचे, पच्यमे इच्छामोजनकरे । इत्येवेवगते आमवात, रसवात, महावात, शोथ, मन्दाग्नि, हीहा, गुल्म, ववासीर, पाण्डु, खासी, महोदर, राजयक्ष्म, अतिसार, प्रहणी, भगन्दर, २० प्रमेह, १८ बुध, वलीपलित, ज्वर, दूध, आध्मान, १३ सनिपात और बुडापा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

५०७ विजयरसः (प्रथम)

रसस्यैकं पलं द्रव्या नागञ्च गन्धकं पलम् ।
क्षारत्रयं पलं देयं लघुङ्गं पलपञ्चकम् ॥ २४८० ॥
दशमूलीजयाचूर्णं तद्रूपेण तु भावयेत् ।
चित्रकस्य रसेनाऽथ भृङ्गराजरसेन तु ॥ २४८३ ॥
शिग्रुमूलद्रव्यैश्चाऽपि ततो भाण्डे निरुद्धय च ।
याममात्रं पचेद्गन्नी मर्दयेद्वाद्रकद्रव्यैः ॥
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्मापयुगं सदा ॥ २४८४ ॥
र स , अनीर्णम् ।

भाषा—शुद्धपारा, नागमस, शुद्धान्धक, तीनोंक्षार, १-१ पल, लौंग, दशमूल और भाग ५-५ पल लेकर सक्ता वारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय दशमूल, भाग, चित्रक, भगरा, सहिजनकी जड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस अथवा कायोसे १-१ भावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपड़मिट्टीदेकर सूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर अदरखके रससे १-२ दिन मर्दन कर २-२ माशेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथदेनेसे अनीर्णजन्य तमामाधिकारोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५०७ ॥

५०८ विजयरसः (द्वितीय)

स्वल्पाग्निमान्युत्थं कथ्यते विजयो रसः ।
रसस्यैकं पलं क्षित्वा गुह्योयाद्रन्धकं पलम् ॥ २४८५ ॥
क्षारत्रयं पलं देहि लघुवर्णं पञ्चकं पलम् ।
जयाचूर्णं दशपलं तद्रूपेण सुमर्दय ॥ २४८६ ॥
चित्रकस्य द्रव्येणाऽथ भृङ्गराजरसेन च ।
शिग्रुमूलद्रव्यं द्रव्या पच भाण्डे निरुद्धय च ॥ २४८७ ॥
याममात्रं ततः सिद्धं भावयाद्रकद्रव्यैर्मुहुः ।
ताम्बूलपत्रसंयुक्तं खादेन्मापयुगं सदा ॥ २४८८ ॥
र सि , र मृ अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, तीनोंक्षार, पाचोनमक १-१ पल, थोड़ेहुईभाग १० पललेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भाग, चित्रकमूल, भगरा, सहिजनकीजड़कीछाल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस अथवा कायोसे १-१ भावना देकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपड़मिट्टीदेकर सूधनेपर सूधरयन्त्रमें एकपहरकी अग्निदेवे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर अदरखकेरसकी ७ भावनाए देकर २-२ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१

गोली पानमें रखकर खानेसे मन्दाग्नि और तन्मन्थविकार नष्टहोतेहैं ॥ ५०८ ॥

५०९ विजयवटी (प्रथमा)

पलत्रयं हरीतम्याश्चित्रकस्य पलत्रयम् ।
पलात्वकूपत्रमुस्तानां भागोऽर्धपलिको मतः ॥ २४८९ ॥
रेणुकाऽर्धपलः प्रोक्तस्तद्वै नागकेशरम् ।
व्योपञ्च पिप्पलीमूलं विपञ्च पलमात्रकम् ॥ २४९० ॥
लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वम्भीयांश्च पलं स्मृतम् ।
रसं पलं पलं गन्धं सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ २४९१ ॥
पुरातने गुडे पक्वे तुलाऽर्धे तद्विनिक्षिपेत् ।
हिमस्पदो च मृद्वीयाद्वतेनाकां ततो बुधः ॥ २४९२ ॥
प्रकुर्याद्गुटिकां वैद्यो विजयां वदरास्थिवत् ।
गुभेऽहनि प्रयुजीत वटीमेकां यथायत्नम् ॥ २४९३ ॥
घृतेन भोजयेत्तावद्यावदस्य बलं भवेत् ।
तद्दलोपचयं क्षात्वा पुनर्द्वे द्वे प्रयोजयेत् ॥ २४९४ ॥
अथवा गुटिका साऽर्द्धा यथा न परिपीडयेत् ।
मासद्वयेन श्लेष्माणं पित्तञ्चैव त्रिभिर्हरेत् ॥ २४९५ ॥
चतुर्भिर्वायुदोषाश्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
मासेस्तु सप्तभिर्द्वन्द्वजाताग्नोगात्र व्यपोहति २४९६ ॥
सर्वव्याधिचिनिर्मुक्तं वर्षेणैकेन जायते ।
वर्षद्वयप्रयोगेण वलीपलितनञ्जितः ॥
जीवेद्दशैशतं चैव नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ २४९७ ॥
वै र , भै सा , र र स , र सि , र च , र क ल , यो चि ,
र (मा) , पाण्डुरोगे ।

टि०—“ लोहचूर्णपलञ्चैकं त्वम्भीयांश्च पल स्मृतम् ” इत्यर्द्ध पच बहुपु स्थानेषु न दृश्यते । र क र चित्रकस्थाने वज्री गृहीता नाम च वामेश्वर इति । भैषज्यसारासूत्रनिहाया कणामूलस्थाने पौचर निषोणितम्, गन्धक निष्वास्थ पाद कपमिनी गृहीत, नाम च विजयादिगुड इति स्थापितम् ।

भाषा—हर्षकीछाल और चित्रक ३-३ पल, इलायची, तन, पत्रन, नाममोथा, रेणुका २-२ कर्ष, नागकेसर १ कर्ष, त्रिकटु, पिपलामूल, शुद्धवटनाग, लोहमस, बसलोचन शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय ५० पल गुडकी चाक्षणीकर सबकीजें मिलावे । टडाहोनेपर थोड़ा धी डालकर मसले और बैरकी-गुठलीदेकरवाव गोल्या बनाकर रखछोड़े । शुभनक्षत्रसुदृत्तमें जबतक जटराग्नि प्रदीप्त न हो तबतक धीकेसाय १-१ गोलीदे । बल बढनेपर देह १॥ अथवा २-२ गोल्यादे । इसवातकाच्यान रक्के कि रोगीको पीडित न करे । इसकेसेवनसे ३ महीनेमें श्लेष्म, ३ महीनेमें पित्त, ४ में वायु, ७ में द्वन्द्व और एक वर्षमें समस्तव्याधियोंसे निमुञ्जोताहै । दोषपके प्रयोगसे वलीपलितसे रहितहोकर १०० वर्षतकजीताहै ॥ ५०९ ॥

५१० विजयवटी (द्वितीया)

रेणुका पिप्पलीमूलं वाक्चुकी विपतिन्दुकम् ।
अभ्यगन्धा पलाशास्थि व्योपादिनवर्कं वचा २४९८

विशाला गन्धकं कुष्ठसप्तकं रसभस्म च ।
गुडेन गुटिकां कुर्यात्समेन मधुमिश्रिताम् ॥२४१९॥
तां भक्षयेत्सितासर्पिः क्षीरशाल्यन्नभाग्भवेत् ।
जलोद्दानं वा भुञ्जानो ब्रह्मवर्षपरायणः ॥ २५०० ॥
खादेत्तापे सिताधान्यसर्पिर्नागव्यलारजः ।
घटिका विजयाख्येयं सप्त कुष्ठान्नियच्छति ॥ २५०१ ॥
र. र. स , र. र. कौ , कुष्ठाधिकारे ।

भाषा—रेणुका, पिपलामूल, बाकुची, शुद्धकुचिला, अस-
गन्ध, पलाशकेबीज, त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग,
चित्रक, वच, इन्द्रायणकीजङ्ग, शुद्धगन्धक, कटुठ, नीलाञ्जन,
मैन्सिल, हरिताल, फिटरुडी, कसीस और सोनागेल, पारद
भस्म सबसेसमभागलेर वारीकचूर्णकर बराबरकेगुड़ और मधुके-
साथ १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली उचितानुपानकेसाथ खानेसे सप्तमहादुष्टसे निवृत्तहोताहै ।
शकर, धी, दूध, चावल अथवा जलोदत खावे और ब्रह्मवर्षसे
रहे । दाहमाल्महोनेपर शकर, धनिया, धी और नागव्यलका
चूर्णदेवे ॥ ५१० ॥

५११ विजयवटी (तृतीया)

सूतकाह्नीं विषं गन्धं त्रिव्येकांशेऽद्भुदकेशरम् ।
रेणुकं ग्रन्थिकं वेह्लं सर्वेषां द्विगुणं गुडम् ॥ २५०२ ॥
कोलप्रमाणां घटिकां खादयेत्प्रातरैव हि ।
कासे श्वासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विषमज्वरे ॥ २५०३ ॥
शोफे पाण्डुमये कुष्ठे ग्रहण्यशांभगन्दरे ।
विजया गुटिका होपा रद्रप्रोक्ताऽधिका गुणैः ॥२५०४॥
र. का , भगन्दराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा २ भाग, बछनाग और गन्धक ३-३
भाग, नागरमोथा, नागकेशर, रेणुका, पिपलामूल, विडङ्ग १-१
भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें
मिलाय दूनागुड़ डालकर बेरबराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे
कास, श्वास, क्षय, गुल्म, प्रमेह, विषमज्वर, शोथ, पाण्डु, कुष्ठ,
ग्रहणी, बवासीर, भगन्दर इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ विजयसिन्दूररसः

रसं गन्धं नागतालं सप्तधाधूर्तभाषितम् ।
मुष्कं कृप्यान्तु वह्निः स्याच्चतुर्विंशतियामरुम् ॥२५०५॥
शीतं गृहीत्वा त्रिकटुकचूर्णैरहिफेनतः ।
भृङ्गारसेन गुटिका गुञ्जा सर्वाऽतिसारजित् ॥
रसो विजयसिन्दूरो ग्रहणीं हन्ति दुर्धराम् ॥ २५०६ ॥
र का , अतिसार ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, नाग और हरिताल समभाग
लेकर नागकी गलाकर पारद मिलाय नीलवर्णकजलीकर काले-
धनूरकेरसे ७ भागनाए देकर सूखनेपर ६-७ कण्डमिग्रीदीहुई
आतशीशीशिमै भरने सुहृन्दकर २४ पहलीं आचदे । स्वाङ्ग-

शीतलोनेपर निकालकर त्रिकटु, कचूर और अफीम समभागमें
मिलाकर भागकेरसे १-२ रोज मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि-
तानुपानकेसाथ देनेसे यह दुस्तरसङ्ग्रहणीको नष्टकरताहै ॥५१२॥

५१३ विजयादिगुडः

शुद्धशुद्धशुद्धशुद्धः पुराणः पलिका शिवा ।
चित्रकः पलिको व्योषं ग्रन्थिकं नागकेशरम् ॥२५०७॥
लोहताम्राऽञ्जवीजानि पृथगर्षपलानि च ।
त्वग्गन्धविपतालीसतुम्बुरुणि च काहलम् ॥२५०८ ॥
पारदः पुष्करो भाङ्गी पृथक्परिमितानि च ।
एकीकृता गुडः स स्याद्द्वितीयो विजयादिकः २५०९ ॥
ऋते पित्तं सर्वरोगान्विनिहन्ति न संशयः ।
निर्वातस्थायिनां क्षीरयुक्तभक्तभुजां नृणाम् ॥
उपदेशानयं हन्ति ताल्यः सर्पगणानिव ॥ २५१० ॥
भै सा , र. (मा) ,

भाषा—हरेँ और चित्रक १-१ पल, सोंठ, मिर्च, पीगल,
पिपलामूल, नागकेशर, लोह और ताम्रभस्म, कमलगटा २-२
कण, तज, शुद्ध गन्धक और बछनाग, तालीसपन, तुम्बुल,
(चिरफड म०), हीराकसीस, पारदभस्म अथवा शुद्धपारा,
पोहबरमूल, भारङ्गी १-१ कप लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी
नीलवर्णकजलीमें मिलाय १४ पल गुडकी चासनी बनाय
सबकीसे मिलाय उतारकर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-
पानकेसाथ लेकर बेचल दूधभातरानेपे और निर्वातस्थानमेंरहनेसे
पित्तको छोड़कर उपदेशप्रयत्निसमस्तरोगोंको यह नष्टरस्ताहै ५१३

५१४ विजयानलमण्डूरम्

विजयानलसिन्धूत्थमनोहातुत्यमाक्षिकैः ।
पृथक्पैर् द्विकर्पांशे ग्रन्थिगन्धकदङ्गुणैः ॥ २५११ ॥
वरीपन्नरसैः कान्तात्रिफलेः पुटपाचितम् ।
एभिस्तुत्यं क्रमाद्द्वैः शुण्ठीमागधिकोपपन्नम् ॥२५१२॥
गोमूत्राऽग्निशिश्रेष्ठावर्षाभ्राद्रकभृङ्गजैः ।
पृथक्त्रिपुटितं सम्यक् स्वरसैः सुक्ष्मचूर्णितम् ॥२५१३॥
मण्डूरमज्जननिर्मं तुल्यमेतैः सुचूर्णितैः ।
सर्वमेकत्र संयोज्य प्रभाते युग्ममापकम् ॥ २५१४ ॥
शौट्रेण च घृतेनाऽपि लेह्यं स्यादाद्रैकाम्बुना ।
वातपित्तकफोद्रेकं तज्जगद्धन्दोद्भवान्गदान् ॥ २५१५ ॥
सन्निपातोद्भवानग्निमान्दजांस्त्वग्गतानपि ।
क्षयक्षयकृतान्व्याधींश्चलुगुल्ममहोद्भरान् ॥ २५१६ ॥
पाण्डुशोफप्रमेहांश्च दुर्नीच्य प्रतिवृत्तिकाम् ।
ग्रहण्यशांऽतिसारांश्च कुष्ठाऽपीलाऽपचीव्रणान् २५१७ ॥
श्वासकासप्रतिश्यायजीर्णज्वरभरोचकान् ।
विजयानलमण्डूरो जयत्येव रसायनः ॥ २५१८ ॥
र क यो , अग्निमान्ये ।

भाषा—भांग, चिन्क, संधानमक, शुद्धमैनसिल, तुल्य और सोनामाखी १-१ कर्प, पिपलामूल, गन्धक और सुहागा २-२ कर्पलेनर बारीकचूर्णकर घटावर, कमलकेफूल, त्रिभुज, त्रिफला इनैरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलापनाय धराव-सम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आंचेदे । फिर सोंठ, पीपल और मरिच क्रमदृढ भागसे लेकर रसकी धरावर मिलाय गोमूत्र, चिन्क, हल्दी, गजपीपल, इटसिट, अदरक, भंगरा इनप्रत्येकके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर लघुपुटकी ३-३ आंचेदे । स्वाहा-शीतल होनेपर सबकीधरावर अत्यन्तवारीक मण्डूरभस्ममिलाकर रखाछेदे । प्रात काल इगमेंसे २-२ माशे मधु और धीकेसाय अथवा अदरकके रसकेसाय देनेसे केवल वात, पित्त और कफ-जन्यरोग, हृन्मज और सन्निपातजरोगोंको यह नष्टकरताहै । खासकर मन्दाभि, चर्मरोग, राजयक्ष्म, धातुस्रय, शूल, गुल्म, महोदर, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, तूनी, प्रतितूनी, ग्रहणी, अर्श, अतिसार, कुष्ठ, अष्टीला, अपची, ऋण, श्वास, कास, प्रतिदयाय, जीर्णज्वर और अरुचि इनसबकोदूरकरसुदापेको दूरकरताहै ५१४

५१५ विडङ्गलोहम् (प्रथमम्)

रसं गन्धञ्च मरिचं जातीफलत्वङ्गकम् ।
शुण्ठी द्रुङ्कण तालं प्रत्येकं भागसन्मितम् ॥ २५१९ ॥
सर्वचूर्णसमं लौहं विडङ्गं सर्वतुल्यकम् ।
लौहं वैडङ्गकं नाम कीष्टस्थकिमिनाशनम् ॥ २५२० ॥
दुर्नामाऽरुचिसङ्घातं मन्दाभिञ्च विसृचिकाम् ।
शोथं शूलज्वरं हिकां श्वालं कासं विनाशयेत् ॥ २५२१ ॥
र. स., र. सु., र. चं., ध., किमिरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मरिच, जायफल, लवङ्ग, सोंठ, सुगन्धद्राग, पीपल, हरितालभस्म १-१ भाग, लोहभस्म ९ भाग, विडङ्गकाचूर्ण १८ भाग लेकर सबके बारीकचूर्णको पारेरगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाकर रखाछेदे । इसमेंसे २-२ माशेकी मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे कोष्ठकिमि, बवासीर, अरुचि, मन्दाभि, हैजा, शोथ, शूल, ज्वर, हिचकी, श्वास, कास इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५१५ ॥

५१६ विडङ्गलोहम् (द्वितीयम्)

विडङ्गमुस्तनिफलादेवदारुपट्टपणैः ।
तुल्यमानमयश्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५२२ ॥
शुटिकां मापमानाञ्च कृत्वा खादेद्दिनेदिने ।
कामलापाण्डुरोगात्स्तुखमापघते चिरात् ॥ २५२३ ॥
र. स., लो प, र, सु, र, र, ध, र, क, र, च, च, द, यो म, र, का, दो, पाण्डुकामलोके ।

१८०—र का मण्डूरवकेतिनाम, तत्र लोहयम मण्डूर निश्चितमिति विशेष । चरक्रीयनवापसचूर्णाद् दवदारुपिपलीमूलचव्यानि श्रीणि द्रव्याण्यधिकानि सन्ति गोमूत्रपाकथेति विशेषे ।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, पट्टपण (पीपल, पिपलामूल, चम्प, चिन्क, सोंठ, मरिच) सब सम भागलेकर बारीकचूर्णकर सबरी धरावर लोहभस्म मिलाकर

अठगुने गोमूत्रमें पकावे । गाढ़ाहोनेपर १-१ माशेकी गोलियें बनाकर रखाछेदे । इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे पाण्डु और कामला नष्टहोतेहै ॥ ५१६ ॥

५१७ विडङ्गलोहम् (तृतीयम्)

विडङ्गं त्रिफला व्योषं भस्म लोहान्तु तत्समम् ।
पुरातनगुडेनाऽथ लेहयेदित्तसप्तकम् ॥
श्वयथुं नाशयेच्छीघ्रं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ २५२४ ॥
र सं., र. सु., ध., र. चं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, त्रिद्रु समभाग, इनसबकीधरावर लोहभस्मलेकर सन्कावारीकचूर्णकर रखाछेदे । पुरानेगुड़ेकेसाय १-१ माशेकीमात्रा लेनेसे शोथ, पाण्डु और हलीमक येसब नष्टहोतेहै ॥ ५१७ ॥

५१८ विडङ्गादिलोहम् (चतुर्थम्)

विडङ्गनिफलामुस्तैः कणया नागरेण च ।
जीरकाभ्यां युतो हन्ति प्रमेहानतिदारुणान् ॥
लेहो मूत्रविकाराञ्च सर्वांनय विनाशयेत् ॥ २५२५ ॥
र. स., र. सु., र. र., भै. र., र. चं., च. द., र. चि., र. क. प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, नागरमोथा, पीपल, सोंठ, दोनोंजीर, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीधरावर लोह-भस्म मिलाकर रखाछेदे । इसमेंसे १-१ मात्रा प्रमेहहरानुपानकेसायदेनेसे भयङ्कर समस्त प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५१८ ॥

५१९ विडङ्गादिलोहम् (पञ्चमम्)

विडङ्गं नागरं क्षारः काललोहरजो मधु ।
धवाऽऽमलकचूर्णञ्च प्रयोगः स्थौल्यनाशनः ॥ २५२६ ॥
च. स., अ सं., अ. ह., दो. यो. म., र का., र. को., र. र., र. र. स, ना. वि., च. द., सेदोऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, सोंठ, यवक्षार, लोहभस्म, इन्द्रजव और आवले समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखाछेदे । इसमेंसे १-१ मात्रा समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे यह अति-स्थूलताको दूरकर मन्दाभिप्रशुतिरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५१९ ॥

५२० विडङ्गादिलोहम् (षष्ठम्)

विडङ्गनिफलारुष्णालोहचूर्णाऽऽज्यशर्कराः ।
सखीद्राः शीलिता प्रन्ति वार्धनयं पलितैः सह २५२७
ग. नि, रसायने ।

भाषा—विडङ्ग, त्रिफला, पीपल, लोहभस्म सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर रखाछेदे । इसमेंसे १-१ मात्रा धी, शर्कर और मधुकेसाय सेवनकरनेसे यह वलीपलित्तादिकको दूरकर सुदापेको नष्टकरताहै ॥ ५२० ॥

५२१ विदारणट्टसिहरसः

एकेन्दुवेदाऽष्टरविशितशीशाः
सारं नवं भानुरस्ताः सुरेशाः ।

मन.शिलाखर्परसंयुतास्ते
जम्भाऽभ्रसाऽऽपेय्य तु कृपिकायाम् २५२८
विन्यस्य नालं परिरभ्य चेल-
मूस्ताऽऽघृतां तां लवणाऽऽप्ययथे ।
भाण्डे पचेद्यामचतुष्टये तं
सङ्गृह्य मृतं चणकप्रमाणम् ॥ २५२९ ॥
गौल्येन केनाऽपि घटी प्रदत्ता
निहन्ति सर्वान्विषमज्वरान्ता ।
त्रि.सप्तकं गौल्यमतीच पथ्यं
तेलाऽम्लमुष्यं परिवर्जनीयम् ॥ २५३० ॥
अयं रसोऽपस्मृतिमाशु हन्या
श्रस्यं विदध्यामृकपालतेलात् ।
पित्ते च वान्तिर्भवतीह किञ्चि-
ञ्छटाप्रदद्याद्विषमज्वरार्तां ॥ २५३१ ॥
र.श.टो., र.बो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—मोशद और ताम्रभस्म १-१ भाग, पारदभस्म
४ भा, सुगन्धभस्म ८ भा, शुद्धमैत्रिल १२ भा., खपरिया
१६ भाग लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीकेरसे १-२ रोज मर्दन
कर ६-७ बपणमिट्टीदीहुई आतशीतीशीमें डालकर सुंदनन्दर
लवणयत्रमें रखकर चारपहर अग्निदेकर चनेनराबरमात्रा हलवा
बगैरहकेभीतरपर निगलवाकर २१ घ्रास ऊपरसे हलवा खिलानेसे
समस्तविषमज्वर और अपस्मारको यह नष्टकरताह मनुष्यके
कपालकेतैलका नहयदेना । पित्तप्रकृतियोंको इससे किसीत्रिची-
को बमन होतीहै । विषमज्वर और अपस्मारमें इसका
खासप्रयोगवरना, तैल और खटाईसे परहेजकरना ॥ ५२१ ॥

५२२ विदारणभैरवरसः

हरवीर्यं ताम्रवङ्गमर्कक्षीरणं मर्दितम् ।
दौलायन्त्रे पचेद्याममेणपित्तेन भाधितम् ॥ २५३२ ॥
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं त्रिकटोरुपानतः ।
तत्क्षणेन विनश्येत्तु सुमनेत्रं सुदारणम् ॥
रसो विदारणव्यातो भैरव. प्राणरक्षकः ॥ २५३३ ॥
वै चि, धा., भुमनेत्रसन्निपाते ।

भाषा—पारद, ताम्र और वङ्गभस्म समभागलेकर आकके-
दूधसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय आककेदूधमें एकपहर स्वेदन-
कर हरिणकेपित्तेसे एकभावनादेकर १-१ रत्तीकी गोलियां
बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके अनुपातसेदेनेसे
यह भयङ्कर भुमनेत्रसन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ५२२ ॥

५२३ विद्याधरमण्डूरम्

त्रिफलाव्योपजन्तुर्गुं दन्त्यग्निप्रग्थिकाऽमृताः ।
कुष्ठं तेजोवतीं मुस्ता चिचृद्भलातसुरणी ॥ २५३४ ॥
शताहा नैचुलं बीजं भाङ्गीं च गजपिप्पली ।
शृङ्गी द्विजीरकं धान्यं वृद्धदारुकायकैः ॥ २५३५ ॥

तुम्युरुणि भद्रदाय क्षाराश्च लवणानि च ।
अजमोदा तालमूलीं विशाखा मृतिकं वचा ॥ २५३६ ॥
कोपातकीं फलञ्जैतद्द्रवपत्रकगन्धकीं ।
याद्यन्येतानि चूर्णानि मण्डूरं द्विगुणं तथा ॥ २५३७ ॥
गोमूत्रे त्रिफलाकाये निपिक्तं श्लेष्मणचूर्णितम् ।
कन्दोक्तदशह्वेराध्रावणीकेशराजकैः ॥ २५३८ ॥
रसैः सद्यज्वलीजैर्वन्ध्यातालोत्पसस्यजैः ।
भाययित्त्वैव तच्चूर्णं गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ॥ २५३९ ॥
चतुर्गुणेन त्रिफलाकाये र्वीं बिलेपनात् ।
उपयुञ्जत मतिमान् खादेशैव यथावलम् ॥ २५४० ॥
ये च कुक्षिगता रोगा प्रहृणीमादद्याद्यः ।
एतद्विद्याधरं नाम मण्डूरं सर्वरोगजित् ॥ २५४१ ॥
र.का., अम्बपित्ताऽधिकारे ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, दन्तीमूल, चित्रक,
पिपलामूल, गिलोय, कुठ, तेजबलरीछाल, नागरमोषा, निवोत,
भिलावा, सुरण, सोंफ, वेतकेबीज, भारङ्गी, गजपीपल, काक-
झासींगी, दानोञ्जीर, धनिया, विधारा, पन्ज, तुम्युल, देवदाह,
तीनोंक्षार, पाचोनमक, अजमोद, तालमूली, पुनर्नवा, खरज-
वाहन, वच, कर्बोतीरोईकेफल, एण्डकीजड़, शुद्धान्धक, सब
समभागलेकर बारीकचूर्णकर गोमूत्र और त्रिफलाकेवायमें पुष्पा-
क भस्मकियाहुआ मण्डूर सबसे द्विगुणमिलाकर बरलीसूरण,
अदरक, गोरखमुण्डी, कालामंगरा, हङ्गजोड़, बल्लवेषवा,
ताड़फल इनप्रत्येककेरसोंसे १-१ भावनादेकर अष्टगुना गोमूत्र
और चौगुना त्रिफलाकाकाय डालकर पकावे । जब कड़ाहीमें
एवदम लगनेलगें तब उतारकर षडाकरके १-१ माशेकी गोलियां
बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय बपवा रोगोचि-
तानुपानकेसाथ देनेसे प्रहृणी और हमाम उदररोग नष्टहोतेहैं ॥

५२४ विद्याधरलोहम्

स्वच्छं पत्राकृतं लोहं पलं लिप्तञ्च निर्भेषत् ।
लवणे मांक्षिकोपेतं त्रिफलाकार्षिकोदके ॥ २५४२ ॥
सुपिक्तं लोहमादाय पूर्तं सञ्चर्ष्यं यत्नतः ।
पुटेर्यथाव्याधिहर्दयैः सम्पादितैः पचेत् ॥ २५४३ ॥
पिण्डेन शकरोपायः कलन्व्याऽधुपचरतः ।
करिकर्णपलाशस्य लवणैरप्यरुकरैः ॥ २५४४ ॥
चतुर्गुणे फलरसे लोहाद्यं घृतयोजितम् ।
पाचयेत्त्रिगुणस्तान्पावत्सपि विमुञ्चति ॥ २५४५ ॥
पांडशांठं त्रिपिप्तं ततः संशोधितं रसम् ।
राजिकापिण्डमध्ये तु व्योपपिण्डस्य मध्यगम् २५४६
गनां मले तुगान्नां च यन्नाघृतञ्च काञ्जिकैः ।
सिद्धं सताहमेवन्तु तनः सञ्चर्षयेन्तुनः ॥ २५४७ ॥
चिञ्जाकगवयैः श्रान्मुञ्जीयनिर्वापितेन तु ।
द्विगुणेन गन्धकदिग्दामुल्लरारज्ज्वा पुनः ॥ २५४८ ॥
पाटं विडङ्गमुन्नाग्निं त्रिन्ध्यायोरङ्गं रज्जः ।
लोहादेकीर्णं पिष्टमनुगुणं निवारयेत् ॥ २५४९ ॥

ततो मात्रां प्रयुञ्जीत यथाद्वेषं यथाचयः ।
 आहारपरिहारो च लोहान्तरसमानकम् ॥ २५५० ॥
 कुलत्थञ्च कपोतञ्च फरमर्दककाञ्जिके ।
 करीरं कारवेलेञ्च पदं कफकारणि वर्जयेत् ॥ २५५१ ॥
 विद्याद्विद्याधरमतं लोहं सर्वगदापहम् ।
 न सोऽस्ति रोगः कुक्षिस्थो यमिर्दं न निहन्ति च ॥
 जलापकारानशीसि सर्वोपद्रवयन्ति च ।
 अम्लकं ग्रहणीमेहान्गुल्मानुदरमष्टकम् ॥ २५५३ ॥
 र. र., अशोरोगे ।

भाषा—शुद्धकरके वारीकपत्रेकियेहुए एकपल लोहको लवण और मधुकात्रेपदेकर गरमकरकरके त्रिफलाके १-१ कर्पपानीमें सुखावे जब इसका एकदमचूर्णहोजाय तब लेकर कपड़ानचूर्णकर अशोरोगेहरदवाओंकेसाथ भदनकर पुटदे । एकदम भस्महोनेके-बाद मैनफल, शबर, नाद्रीशाक, धातावर, हस्तिकर्णपलाश, लवण, मिलावां इनप्रत्येकका लोहसे चौगुनाद्वय और आधा धी डालकर मन्दआंचसे पकावे । पानीजलजानेपर १६ वां हिस्सा पारदभस्म मिलाकर घोटकर गोजाबनावे फिर राईकेकल्के-धीचमेंरखे और त्रिबटुवाकल्क ऊपरलेपट ३-४ तह मलमलके कपड़ेमेंबांधकर दोलायन्त्र बनाय काष्ठीमें लटकावे और नीचे गोबर तथा तुपकी आंचदे । इसतरह ७ दिनतक पकावे । काष्ठी-सुखनेपर दूसरी डालताजाय । सातदिनकेबाद स्वात्तनीतल-होनेपर धीरजसे गोलेके निकालकर इमली, गजपीपल और गायकेशुधमें गरमकरके कईवारशुद्धविद्याहुआगन्धक और मैन-सिलकाचूर्ण द्विगुण तथा विडङ्ग, नागरमोषा, चित्रक, त्रिफला और त्रिबटुसमभागकाचूर्ण चतुर्थोद्यमिलाकर १-२ दिन घोटकर श्लिग्मभाण्डमें रखडोड़े । इसमेंसे १-१ माशा रोग और रोगीका बलायल देखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे जल्दोप, समस्त उपश्रवयुक्तव्यासीर, अम्लपित्त, ग्रहणी, प्रमेह, गुल्म, उदररोग प्रश्रुतिसमस्तारोगोंको यह नष्टकरताहै । पेटका ऐसाकोईभी रोग नहीं जिसे यह न मिटासके । इसमें आहार और परिहार अन्य-लोहोंकीतरह समझना । खाकर कुलधी, कवूर, करोंदा, काष्ठी, करीर, करेला इनका परित्यागकरे ॥ ५२४ ॥

५२५ विद्याधराऽध्याय (प्रथमम्)

विडङ्गमुस्तात्रिफलागुहृद्यो
 दन्तीत्रिवृद्धिकटुत्रिकञ्च ।
 प्रत्येकमेषां पित्रुभागचूर्णं
 पलानि चत्वार्ययसौ मलस्य ॥ २५५४ ॥
 गोमूत्रशुद्धस्य पुरातनस्य
 यद्वाऽयसस्तानि चटाकिकायाः ।
 कृष्णाऽध्रचूर्णस्य पलं विशुद्धं
 निश्चन्द्रकं शुद्धमतीव सूतात् ॥ २५५५ ॥
 पादोनकर्यं स्वरसेन खल्वे
 शिलातले मनुकणादलस्य ।

सम्मर्द्य पश्चादतिशुद्धगन्ध-
 पापाणचूर्णेन पित्रुमितेन ॥ २५५६ ॥
 युक्त्या ततः पूर्वर्जासि दद्या
 सर्पिर्मधुभ्यामवमर्द्य यत्नात् ।
 निधापयेत्स्निग्धविशुद्धभाण्डे
 ततः प्रयोज्योऽस्य रसायनस्य ॥ २५५७ ॥
 प्राङ्ग्रापको वाऽप्ययवा द्वितीयो
 गत्यं पयो वा शिशिरं जलं वा ।
 पिबेद्यं योगवरः प्रभूत-
 कालप्रणष्टाऽनलदीपकश्च ॥ २५५८ ॥
 रोगं निहन्यात्परिणामशूलं
 शूलं तथाऽभद्रवसञ्ज्ञकञ्च ।
 यश्चाऽम्लपित्तं ग्रहणीं प्रवृद्धां
 जीर्णज्वरं लोहितपित्तमुग्रम् ॥
 न सन्ति ये यात्र निहन्ति रोगा-
 न्योगोत्तमः सम्यगुपास्यमानः ॥ २५५९ ॥
 र. सं., र. चि., रसायनसं., घ., मै. र., नि. र., र. सि., र. र.,
 र. क., र. सु., र. का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—विडङ्ग, नागरमोषा, त्रिफला, गिलोय, दन्तीमूल, निसेत, चित्रक और त्रिकटु १-१ कर्प, १०० वर्षसे पुराना और गोमूत्रमें शुद्धविद्याहुआ मण्डर अथवा गरमकरके घनमारते समय चटकर उडेहुए लोहके वारीककण ४ पल, कृष्णाऽध्रक-की निश्चन्द्रमल १ पल, अत्यन्तशुद्धपारा १२ मासे, शुद्ध-गन्धक १ कर्प लेकर सबको पारेगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय १-२ पहर शुष्कमदनकर धतूरे और पीपलकेपतोंके रसोंसे १-१ दिन भदनकर सुलाकर इसकी बटाबरका धी और मधु मिलाकर घोटकर चिकने वरतमें रखडोड़े । ७ या १४ दिन बीतनेपर इसमेंसे १ अथवा २ माशा रोग और रोगीका बला-बल देखकर गायकेशुध अथवा उटिजलकेसाथ देवे । इसकेसेवनसे चिरकालसे नष्ट अग्नि, परिणामशूल, साधारणशूल, अत्रद्वयशूल, राजयक्ष्म, अम्लपित्त, बड़ीहुई ग्रहणी, जीर्णज्वर, रक्तपित्त, श्ल्यादिसमस्तारोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५२५ ॥

५२६ विद्याधराऽध्याय (बृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं फलत्रयकटुत्रयम् ।
 विडङ्गं मुस्तकं दन्ती त्रिवृता चित्रकं तथा ॥ २५६० ॥
 आखुपर्णी ग्रन्थिकञ्च प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ।
 पलं कृष्णाऽध्रचूर्णस्य मृत्ताऽयश्च चतुर्गुणम् ॥ २५६१ ॥
 घृतेन मधुना पिष्ट्वा घटिकां कोलसम्मिताम् ।
 एकैकां घटिकां खादेत्प्रातरुधाय नित्यशः ॥ २५६२ ॥
 अनुपानं गवां क्षीरं नीरं वा नारिकेलजम् ।
 सर्वशूलं निहन्याशु वातपित्तभवं तथा ॥ २५६३ ॥
 एकजं द्वन्द्वजज्ञैव तथैव साभिप्रातिकम् ।
 परिणामोद्भवं शूलमामवातोद्भवं तथा ॥ २५६४ ॥

काद्र्यं वैद्यर्ष्यमालस्यं तन्द्राऽरुचिनिदानम् ।
साध्याऽसाध्यं निहत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥
र. सं., र. चं., प., र. सु., शुलाऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोषा, दन्तीमूल, निमोत, चित्रकमूल, सूषाकर्णा, पिपलासूल, येसव १-१ कर्ष, कृष्णाश्रकभस्म १ पल, लोहभस्म ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर मधु और पृतकेसाय मिलाकर बेरबराबर गोलिया बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली प्रातःकाल गायत्रेदूप अथवा नारियलके जलकेसायलेनेसे समस्त-शूल, परिणामशूल, आमवातोद्भवशूल, कृमिवाता, वैद्यर्ष्य, आलस्य, तन्द्रा, अर्धच इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५२६ ॥

५२७ विद्याधरीगुटिका

गन्धम्लेच्छरसाऽमृताऽर्ककटुका व्योषं त्रिवृद्धन्तिका, हेमाहा त्रिफला च द्रवणमतः सर्वैः समैस्तिन्तिर्डी । सम्यक् पक्वफलेस्त्यगस्थिरहितैस्सम्मर्द्यं मापोग्मिता, पीता केन नवज्वरैषु गुटिका विद्याधरी शस्यते २५६६ र. प, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, सिंगरिफ, पारा और बछनाग, ताप्र-भस्म, कुटकी, त्रिकटु, निमोत, दन्तीमूल, सत्यानाशीकीजइ अथवा देवनवीनी, त्रिफला, भुनासुहागा येसव १-१ भाग, सबकीबराबर पकीइमलीका गुदा लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धक की नीलवर्णकजलीमें मिलाय इमलीकेसाय अच्छीतरह घोटकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली जलकेसाय देनेसे यह नवज्वरोंको नष्टकरतीहै ॥ ५२७ ॥

५२८ विद्याधररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं तालकञ्च शिलाजतु ।
खपरिताम्रचूर्णानि प्रत्येकं कर्षमाप्रकम् ॥ २५६७ ॥
तुलसीद्रवकं यामं यामं निगुण्डिकाद्रवैः ।
पिप्पु तत्पिण्डमादाय घणामात्रवटकीरुतम् ॥ २५६८ ॥
एकेकं भक्षयेद्याऽनु मागधीसितया सह ।
नूतने विषमे चैव ज्वराऽऽघाते प्रयोजयेत् ॥ २५६९ ॥
यमनान्ते विरेके च पथ्यं क्षीरीदत्तं तथा ।
विद्याधररसो नाम सद्योज्वरनिवारणः ॥ २५७० ॥

र. क यो, ज्वराऽधिकारः ।
भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, हरिताल, शिलाजीत, खपरिया और ताम्रभस्म १-१ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय १-१ पहर तुलसी और निगुण्डीके रसोंसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेबनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली पीपल और शकरकेसायदेनेसे नवीन, विषम प्रभृति समस्तज्वरोंको यह नष्टकरताहै। यमन और विरेचन होनेके बाद दूधभात खानेकोदेना ॥ ५२८ ॥

५२९ विद्याधररसः (द्वितीयः)

शिलातालताप्यानि गन्धोऽथ शुल्वं सूतं शुद्धसूतञ्च तुल्यांशमेतत् ।

कणाधारिणा वज्रिनीरेण मयं

दिनेकं रसो याति विद्याधराऽऽख्याम् २५७१
तमर्द्धनिष्कमाप्रकं विलिहा सारघेण तु ।
पिषेघ गोजलं नरः सुतीमगुल्मशूलवान् ॥ २५७२ ॥

वै र, ह यो. त, शा सं, र. क ल., वै. क., र. चि., र. म, र. र, र. च, नि. र., र. प्र, प, वै. चि., रसायनसं, र. कौ, र. चि, भै र, चि र. म, भै सा, व रा, र. क, टो., र. म. मा, र. र. दी, र. को., र. शं., र. रु, र. सं, र. र. स, र. का., यो. म., र. र. कौ, ना वि, गुल्माऽधिकारः ।

टि०—“रक्तुल्लम रजोरो र्स्त्रीभि पयोऽनुपाकम् । निलकापो विने भार्यं दन्तीव्योपयुते शुन ॥” इत्येकं पाठे भेषज्यसारानुमनहितायां दृश्यते । कुचविताप्रस्थाने स्वर्णं निरोजितम् ।

भाषा—शुद्धमैन्सिल, हरिताल, स्वर्णमाक्षिक, गन्धक और पारा, ताम्रभस्म सबसमभागलेकर पीपलकेजाय और सेतुण्डकेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसायलेकर गोमूत्र-पीनेसे तीमगुल्म और शूल नष्टहोतेहै। यदि एकगोलीसे काम न हो तो दो गोलीदेना ॥ ५२९ ॥

५३० विद्याधररसः (तृतीयः)

रसोगन्धस्ताम्रं त्रिकटुकटुकीद्रवणरसा, त्रिवृद्धन्तं हेम शुमणिविषमेतत्सममिदम् ।
समस्तेस्तुल्यं स्याद्विमलजयपालोद्भवरजः, ततः स्नुक्शरीरेण प्रचुरस्मृदितं दन्तिसलिलैः ॥ २५७३ ॥
द्विगुञ्जाऽस्य प्रौढं जयति वटिका साममतुलं, ज्वरं पाण्डुं गुल्मं ब्रह्मिणुदकीलोद्भवरजः ।
मरुच्छूलाऽजीर्णं प्रबलमथ सामं क्रिमिगदं, विषहृद्भीहानं प्रबलमपि विद्याधररसः ॥ २५७४ ॥

र स, र. क ल, र. र. दी., भै र, ह यो. त, र. रु, प, र. को, र. शी, रसायनसं, र. म. मा, र. का, चि र, र. र. स, ज्वराऽधिकारः । र. श., र. क. ल, रसायनसं, र. म. मा, र. का., यो. त, चि. र, र. र. स, र. को. एव ह यो. त, र. रु एतयो-द्वितीयस्थाने विनोदविद्याधरेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, त्रिकटु, कुटकी, भुनासुहागा, त्रिफला, निमोत, दन्तीमूल, बरुंकेबीज, आक-बीजइ, शुद्ध बछनाग येसव समभाग, ताम्रकीबराबर शुद्ध-जमालगोटा लेकर बारीकचूर्णकर शोणकरही नीलवर्णकजलीमें मिलाय बृहदकेदूध और दन्तीमूलकेसंगम ३-३ दिन मर्दन कर २-२ रसीकी गोलिया बनाकर रखोड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुसंगम देनेसे साम प्रौढज्वर, पाण्डु, गुल्म, ब्रह्मी, बवासीर, शूल, शूल, अजीर्ण, आम सहित क्रिमिरोग, बदनूल जैहा इनसबको यह नष्टकरताहै ५३०

५३१ विद्यावह्नभरसः

रसो म्लेच्छशिलातालाम्रद्रवण्यर्कभागिका ।
पिप्पु तान्मुपनीतोयैलाप्रघोदरे क्षिपेत् ॥ २५७५ ॥

न्युब्जशरावे संरुद्ध घालुकामध्यं पचेत् ।
स्फुटन्त्यो ब्रीहयो यावत्तच्छिरस्थाः शनैःशनैः २५७६
सञ्चर्य शकैरायुक्तं द्विवर्लं सम्प्रयोजयेत् ।
नाशयद्विपमाख्यञ्च तैलाम्लादि विवर्जयेत् ॥ २५७७ ॥
र. चि., र. सु., भै. र., रसायनसं., र. सं., र. का., यो. म.,
जराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १ भा., शिंपरिक २ भा., मैनसिल ३
भा., हरिताल १२ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर करेलेकरसे
एकदिन मर्दनकर इसकी बराबरवजनके ताम्रपात्रमेंलेपकर
कुन्हड़िमें उत्पारख शारावसमुद्रसे बन्दकर ४-५ कपडमिठीदेकर
अच्छीतरहसूखनेपर ४-४ अहुल चारोंतरफ घालुनादेकर
चूल्हेपर अग्निदेवे । ऊपरसे परीक्षार्थ थोड़े धान डालदे जब धान
फूटनेलगे तब आंच बन्दकरके कोयलोंपर रहनेदे । स्वाहशीतल-
होनेपर निकालकर ताम्रसमुद्रकेसाथ बारीकपीसकर रखले ।
इसमेंसे ६-६ रत्ती शकरकेसाथ देनेसे यह तमामविषमज्वरोंको
नष्टकरताहै । इसमें तैल, खटाई वगैरह अपप्यहै ॥ ५३१ ॥

५३२ विद्यावागीशरसः

मृतसूताऽध्रनागानां स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
महानिम्बस्य चूर्णन्तु चतुर्भिः सममाहरेत् ॥ २५७८ ॥
मधुना लेहयेन्मापं लालामेहप्रशान्तये ।
सक्षौद्रं रजनीचूर्णं लेह्यं निष्कद्वयं तथा ॥
असाध्यं नाशयेन्मेहं विद्यावागीशको रसः ॥ २५७९ ॥
रं. सं., र. क. ल., र. सु., र. चि., रसायनं, र. को., र. चं.,
यों. म., र. का., र. र., व. रा., चि. क., प्रमेहे ।

टि०—यो. म. र. का. पतयो नागस्थाने वज्र नियोज्य स्वर्णं निष्का-
सितम् । रसकामेनैव बल्येव योगस्य त्रय पाठा विन्यस्ताः । तत्र
एकस्य विद्यावागीशरति द्वितीयस्य विद्यावद्वैश्वरेति तृतीयस्य तारके-
श्वरेति श्रीणि जामाणि स्थापितानि, परत्कृतेष्वलात्रामा बुद्धिव्याकुली-
करणाऽतिरिक्त नास्ति किञ्चिदलमिति बोद्धव्यम् । र. र., व. रा.,
चि. क. ए. ग्रन्थेषु "मृतसूताऽध्रनागत्र स्वर्णं तुल्यं प्रकल्पयेत् ।"
इत्यस्य स्थाने "मूल सूताऽध्रवज्राणां तुल्यं भागं प्रकल्पयेत्" इति
पाठो दृश्यते तत्र प्रमादा प्रमादादास पाठ येनेकेनाऽपि प्रकल्पित इति
प्रतिभाति, नाम च र. र., व. रा. पतयो विरयारोगेशर इति, चिकि-
त्साकमकपवल्यानु मेहापीति नाम ।

भाषा—पारा, अत्रक और नागमस १-१ भाग, सुवर्ण-
मसम सबकीबराबर लेकर बकायनकेबीजोंका चूर्ण सबकीबराबर-
मिलाय १-२ दिन सूखे खरलकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१
मासा मधुकेसाथ देनेसे असाध्यलालामेह नष्टहोताहै । इसके
ऊपर ८ माघे हल्दीकाचूर्ण मधुमें मिलाकर खिलावे ॥ ५३२ ॥

५३३ विद्यावागीश्वरीवटी (प्रथमा)

व्योमसत्त्वं मृतं यज्ञं स्वर्णतारकमुण्डकम् ।
तीक्ष्णं कान्तं तालकञ्च सत्त्वं कृत्वा विमिश्रयेत् २५८०
सूक्ष्मं चूर्णं समं सर्वं चूर्णादं शुद्धपारदम् ।
त्रिदिनं चाम्दवर्गेण मर्दितं चान्धितं धमेत् ॥ २५८१ ॥

विद्यावागीश्वरी ख्याता गुट्टिका वत्सरावधि ।
यस्य यक्त्रे स्थिता तस्य जरा मृत्यु न विद्यते २५८
कर्म ज्योतिष्मतीतैले फ्रामणार्थं पिबेत्सदा ।
वाङ्मति जायते धीरो जीवच्चन्द्राऽकृतारकम् २५८
र. खं., र. का., रसायने ।

भाषा—अत्रकसब, हीरा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, मुण्ड
फोलाद, कान्त, हरिताल इनकेसत्त्वोंकीमसम सम्भागलेक
बारीकचूर्णकर इनसबमेंआधा शुद्धपारा मिलाकर एकपहर शुष्क
मर्दनकर किसीभी खटाईसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध
मूषामें बन्दकर धमनकरनेसे इसकी गोली तैयारहोगी । इसके
एकचपतक मुँहमें रखनेसे जरा और मृत्युको जीतताहै । इसके
शरीरमें अनुक्रमणहोनेकेलिये एककर्म मालकांगनीका तैल प्रति
दिनपीवे । इसकेपेनेसे बृहस्पतिकेसदृश बुद्धि होजाताहै ॥ ५३१ ॥

५३४ विद्यावागीश्वरीवटी (द्वितीया)

शुद्धं सूतं विपञ्चाऽऽत्रं विपटङ्कणगन्धकम् ।
मृतलोहाऽष्टकञ्चैव कर्ममात्रञ्च सत्यके ॥ २५८४ ॥
जम्भीरोन्मत्तच्वासामिभ्रिकटुत्रिफलोद्भवैः ।
याममात्रन्तु प्रत्येकं मर्दयित्वा तु गोलकम् ॥ २५८५ ॥
काचकूप्यां निवेद्याऽथ सतयवहसृदा बहिः ।
लवणैः पूरिते यत्रे त्रिदिनं मन्द्वह्निना ॥ २५८६ ॥
स्याद्गशीतलमुद्धृत्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
आर्द्रकस्याऽनुपानेन मञ्जिष्टाया निरुत्तनम् ॥
विद्यावागीश्वरो नाम्ना रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ २५८७ ॥
व. रा., प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धपारा और बडनाग, अत्रकमसम, शुद्धलोमल,
मुनासुहागा, गन्धक, आठोंलोहोंकीमसम १-१ कपलेकर
नीलवर्णकजलीकर जमीरी, धतूरा, अइसा, त्रिकड, त्रिफला
इनके यथासम्भव स्वरस अथवा बाधोंसे १-१ पहर मर्दनकर
गोलाबनाय ६-७ कपडमिठीदुई आतशीशोशीमें रख मुँह-
बन्दकर लवणयन्त्रमें ३ दिनकी मन्दाग्निदेवे । स्वाहशीतल-
होनेपर निकालकर १-१ रत्ती अदरखकेसाथ देनेसे यह मञ्जिष्ट
मेहको नष्टकरताहै ॥ ५३४ ॥

५३५ विरेचनवटी

पारदं गन्धकं विश्वं टङ्कणं विपमुष्टिकम् ।
स्वर्जिका मरिचं कृष्णा समभागानि कारयेत् २५८८
चिडङ्गञ्चाऽभया दन्ती त्रिवृत्रेपालकन्तथा ।
पूर्वचूर्णसमान्वेव भृङ्गद्रावेण भाषयेत् ॥ २५८९ ॥
गुञ्जामप्रमाणवटिका भक्षिता शीतवारिणा ।
विरेचयत्यथैवं हि किमिरोगाञ्ज्वरानपि ॥
विनाशयति ये सन्धक् सत्यं सुद्वचो यथा ॥ २५९० ॥
र. प्र. सु., विरेचने ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा और कुचिला, सोंठ,
सब्जी, मरिच, पीपल येसब १-१ भाग, चिडङ्ग, हरे, दन्तीमूल,

नितोत, शुद्धजमालगोटा, येषवमिलकर ८ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मंगेके-रसमें एकदिनमर्दनकर १-१ रतीकीगोलिया बनाकररखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ठंडेजलसेसाथ देनेसे समस्तप्रितिमिर्माणोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ विरेचनरसः

पातिताल्सेवेदिताल्सूतापलं गन्धकृतः पलम् ।
तित्तिरीफलतो प्राह्यं पलञ्च निफलात्रयम् ॥२५९२॥
कडुपुष्पाकार्कर्मिभं सर्वमेकत्र मर्दयेत् ।
पर्कं निम्बुकतोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ २५९२ ॥
शम्याकफलसारेण मर्दयेत्प्रहराऽष्टकम् ।
त्रिपुष्कायेन दन्त्याश्च रसेनैव प्रमर्दयेत् ॥ २५९३ ॥
पवं सम्मर्दिताल्सूताद्द्विध्याद्द्विकास्ततः ।
यद्रीफलमानेन छायायां शोषयेद्द्वयः ॥ २५९४ ॥
यटीं सन्धारयेद्यत्नाच्छीतथातविर्वाजिताम् ।
दद्यादुदरिणे चैकां कोष्णनीरेण घेघराट् ॥ २५९५ ॥
आमान्तिकं रेचयेत्तं स्तम्भनं दुग्धभक्ततः ।
यिसद्धारप्रयोगेण नश्यते च जलोदरम् ॥ २५९६ ॥
अयं विरेचनो नाम रसः श्रेष्ठतमो मतः ।
देवीशाखाऽनुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥२५९७॥
रसालं, उदराऽधिकारे ।

भाषा—ऊर्जादि पातनकर शुद्धकिमाहुआपारा और गन्धक, शुद्धजमालगोटा १-१ पल, निफला ३ पल, कडुपुष्प (सुर्दासक अथवा रेचनचीनी) १ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पकेनीबू, अमिलतास, नितोत, दन्ती इनके स्वरस अथवा बार्णसे १-१ दिनमर्दनकर जंगली बेरवारवर गोलिया बनाय छायामें सुलाकर रखडोड़े । इनमें शीत और वायुका स्पर्श न हो । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलकेसाथदेनेसे आमनिकलनेतक रेचनहोकर उदररोग नष्ट होतेहै । अधिकरेचनहोनेपर दूधभात देनेसे बन्दहोगे । ऐसे २० बार प्रयोगकरनेसे जलोदर नष्टहोताहै ॥ ५३६ ॥

५३७ विश्वतापहरणरसः

पथ्याकणाऽर्कविपतिन्दुःसुदन्तिवीज-
तिक्तानिवृद्धसबलीन् सदशान्विमर्द्य ।
धृताम्बुना सकलयासरमेप सृतः
स्याद्विश्वतापहरणोऽभिनवज्वरघ्नः २५९८
वै जी, र ल, र सु, र को, रसायनस, वि सा, नि र, वै, वि, र बो, रस स, र क ल, यो र, र पा, ज्वराऽधिकारे ।
टि०—नीर त्रैलोक्यतापहरणेति नाम । र र, रसणि, र घ, र स, र का, र र स, ये, र र दी, र क, यो म, र न मा, र पा म्बुतेषु तथाच रसायनस, र को, र सु, र क ल, प्लेया द्विती पर्याये त्रैलोक्यवन्द्येति नाम, तत्र भावनार्था भूर्गाम्बुस्थाने बजीदुग्ध दृश्यते । रसायनमेतौ कणास्थाने वरा दृश्यते तत्रैव ज्वरध्वान्निदिवा कर मान्ना प्थो रसो निहितोऽस्ति । तथाऽधिकतया नशिका नियो

जित । बजीक्षीरेण मन्मथं पश्चादुन्मत्तवारिणा । कार्दकस्य रसेनेवेति पनेन बजीक्षीराऽऽर्कयो भावनाभ्याश्च विशेषोऽस्ति, अतस्त विशेष-मयससे बंधयित्वा तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भाव सन्निधत् ।

भाषा—हर्ष, पीपल, ताम्रमम्म, शुद्धचिला और जमालगोटा, पुटकी, नितोत, शुद्ध पारा और गन्धक सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय धूनेबेरससे एकदिवस मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १ से ४ गोलीतक रोग और रोगीकी शक्तिका विचारकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह नवीनज्वरको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ विश्वधारापर्वटीरसः (सर्वधरपर्वटी)

रसोपरसलोहानि कार्पिकाणि पृथक्पृथक् ।
तेषु लोहानि सर्वाणि पाषाणकठिनानि च ॥ २५९९ ॥
घनसत्त्वञ्च तत्सर्वं भस्मीकृत्य प्रयोजयेत् ।
रत्नाणि बहुतुल्यानि भस्मीकृत्य च सर्वशः ॥ २६०० ॥
पभिश्चतुर्गुणैः सूतो गन्धस्तस्माच्चतुर्गुणैः ।
कृत्या कज्जलिकांताभ्यां क्षिपेद्दोहस्य भाजने ॥ २६०१ ॥
प्रदाप्य यदपारं निर्क्षिपेत्तदन्तरम् ।
रसोपरसलोहानां रत्नानामपि सर्वशः ॥ २६०२ ॥
चूर्णं भस्म विनिक्षिप्य काष्ठेनाऽऽलोक्य मेलयेत् ।
ततश्च षोडशारेण मिश्रयित्वाऽरुणं विषम् ॥ २६०३ ॥
गोमयोपरि निक्षिप्य निक्षिपेत्कदलीदूले ।
पर्णाऽन्येन तु रम्भाया समाच्छाद्याऽतियत्नतः २६०४
कराभ्याश्चिपिटीकृत्य क्षिपेदुपरि गोमयम् ।
ततः शीतं समाकृत्य चूर्णयित्वा च पर्वटीम् ॥ २६०५ ॥
विनिक्षिपेत्करण्डान्तयुञ्ज्याश्च रसमेपजम् ।
विश्वधाराऽभिधानेयं पर्वटी परिकीर्तिता ॥ २६०६ ॥
सर्वरोगयिनाशाय नन्दिना परिकीर्तिता ।
रक्तियुक्तिसमानेयं मरिचाद्रसमन्वितः ॥ २६०७ ॥
विद्वेष्यां पदप्रकारायां देया वृद्धिषु सप्तसु ।
क्षयरोगेषु सर्वेषु पाण्डुरोगे विशेषतः ॥ २६०८ ॥
प्रहणीरोगभेदेषु गुल्मेष्वप्यविधेषु च ।
मूलरोगेषु शोफेषु ग्रीहोत्थे यद्दामये ॥ २६०९ ॥
प्रमेहं सोमरोगेषु प्रदरे जठरातिषु ।
विशेषेणैव मन्दाग्री सर्वहिक्कावृतेषु च ॥ २६१० ॥
अनुकेष्वपि रोगेषु तत्तदौचित्ययोगतः ।
रसोऽयं किल दातव्यः शिवतुल्यपराक्रमः ॥ २६११ ॥
यद्यद्व्यमसात्स्यं हि जन्मना सह जायते ।
तत्सर्वं सात्स्यमायाति रसस्याऽस्य निषेवणात् २६१२
पीत्या हालाहलं तोयं पर्वताग्रे पयोचूतम् ।
सलिलं तैलस्तुल्यं तज्जलं स्यात्सुधासमम् ॥ २६१३ ॥
भुक्तं यदि च पाषाणं जीर्यतेतत्क्षणात्ततः ।
न तस्मिन्प्रियतं चापि विहारारहारकर्मणि ॥ २६१४ ॥
र को, र र स, र र को, सर्वरोगाऽधिकारे ।

टि०—र. र. स, र. र. कौ. एतयोः सर्वेश्वरपर्यटोनि नाम । एतस्यैव योगस्य नामानामभिधेयव्याहारः सङ्ग्रहकाराणां बुद्धिजाड्यं वीचयति ।

भाषा—रस (शिंगरिफ, सोनामाखी, हूमाखी, चपल, तुलिया, कान्तापाण, कान्तिलोह, वैकान्त और नीलम), उपरस (गोदन्ती हरिताल, गन्धक, मैनसिल, तबकी हरिताल, कडुछ (सुर्दास), कमांस और फिटकडी), लोह (सुवर्ण, चाँदी, पीतल, ताबा, सोसा, रागा, लोह और कांसा) । अश्वकसत्त्व, इनसवकीभस्म १-१ कर्पे, सम्पूर्णरत्नों (माणिक, मोती, रूपा, पद्मा, पुष्यराज, हीरा, नीलम, गोमेद, एमनियां वगैरह) की भस्म ३-३ रती, इनसवसे चौगुना शुद्ध पारा और पाँसे चौगुना गन्धकलेकर पहिले पाँरगन्धककी नीलवर्णचिक्कलोकर धीपुनोहुँदोहेकीकड़ाहीमें डालकर बेरकेकोयलोपर गलाकर रस, उपरस, लोह और रत्नोंकीभस्म कमसे मिलाकर लकड़ीसेचलाकर मिलावे । इसनेवाद्द समस्तने १६ वा हिस्सा शुद्ध लालवटनाग मिलाकर ताजे गोबरपर रक्तेहुए केलेकेपतेपर टालकर दूसरे केलेकेपत्तोंसे दबाकर गोबरसे ढकद । स्वाज्ञ-शीतलहोनेपर निकालकर रत्नजोड़े । इसमेंसे १-१ रती मरिच और अदरकसेसाथदेकर रोग और रोगीकी औचित्ती समझकर २-२ चावल रोजाना बढ़ावे । इसतरहदिनभरमें ३॥ रती या ४ रतीतक बढ़ाकर वही मात्रा स्थिर रखके इमे आरोग्यलाभहोनेतक कायमरखे । अथवा १० दिनकेवाद्द हासकर रुद्धिकरे परन्तु दृग्कमकी अपेक्षा आरोग्यलाभहोनेतक स्थिरमानारखे और आरोग्यलाभहोनेकेवाद्द धीरे २ हासकर योगको बन्दकरे । इसतरहोवनकरनेसे ६ प्रकारकीविदग्धि, ७ प्रकारकी रुद्धि, सम स्तस्यरोग, विशेषकर पाण्डु, महर्गोनेद्, ८ प्रकारके शुल्म, अर्श, शोफ, ग्रीहा, यक्ष्म, प्रमेह, सोमरोग, प्रदर, उदररोग, मन्दाग्नि, हृदिचकी हत्यादि तमामरोग नष्टहोतेहैं । अनुपात समय अथवा रोगीचित्ती देखकर नियतकरे । जो जो इत्य जन्मसे अगात्म्यहोँ वेतव इयके नेवनसे सान्म्य होजातेहैं । पर्वतोंमें हलाहली पीलियाहो तो यह दूध, घीका कामकरताहै । तैलेकेमद्यजल पीनेमें आवेनो वही अत्यन्त काम करताहै । भूलकर खाया-हुआ पच्यभोगी हृन्महोजाताहै इसलिये आहारविहारमें कोईभी परहेज नियत नहींहै ॥ ५३८ ॥

५३९ विश्वमूर्तारसः (प्रथमः)

स्वर्णनागाकंपत्राणां भागाः पञ्च पृथक् पृथक् ।
त्रयाणां द्विगुणः मृतो जम्बीराऽम्लेन मर्दयेत् २६६५ ।
पिष्टं तां निम्बुके क्षित्या द्रोलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
पाचयेद्दागनालान्तस्तस्माद्बुद्ध्यै चूर्णयेत् ॥ २६६६ ॥
ऊर्द्धाऽर्धो गन्धकं दत्त्वा तालकञ्च रत्नोन्मितम् ।
लोहसम्पुटं कृत्वा क्षित्या चैत्रं प्रपूरयेत् ॥ २६६७ ॥
उत्पणस्य च चूर्णेन प्र्यहं मन्दाग्निना पचेत् ।
आदाय चूर्णयेत्स्वर्णं दद्याद्ब्राह्मचतुष्टयम् ॥ २६६८ ॥
आर्द्रकस्य रत्नोपनेन क्षीपं पच्यं न द्वापयेत् ।
विश्वमूर्तारसो नाम्ना मन्थिपानादिरोगजित् ॥ २६६९ ॥

अर्कमूलत्वचः काथं मरिचं मिश्रितं पिबेत् ।

दशमूलकपायं वा ह्यनुपानं सुखायहम् ॥ २६२० ॥

र. चि, र. को., यो. म., रसायनत., र. का., र. क. यो., र. सु., ज्वराऽधिकारे । योगमहाणवे त्रयाणा द्विगुणस्थाने त्रयाणा त्रिगुण इति पाठ ।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताप्रकेवारीकपत्र ५-५ भाग, पारा ३० भाग लेकर खरलमें डाल जंभीरीकेरमसे घोंटे । पत्रोंपर सबपारा चढ़ानेपर गोलाबनाय नोबूके अन्दररख दोला-यन्त्रमें काञ्चीसे दो दिनतक स्वेदनकरे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर पारिके बराबर शुद्धगन्धक और हरितालका चूर्ण लोहेकेसम्पुटमें पत्रोंके नीचे ऊपररख सम्पुटपर ३-४ कपडिमिठी देकर लवणयन्त्रमें बन्दकर ३ दिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रत्नजोड़े । इसमेंसे ४-४ रती अदरकके रसकेसाथ देनेसे सत्रिपातादि समन्तोरोग नष्टहोतेहैं । इसकीमात्रादेनेकेवाद्द तुते पच्य न दे, नहींतो बमनहोकर हैरानी होगी । सधियातमें आमकी जड़काकाय अथवा दसामूलकाकाय मिचं डालकरदेना ॥ ५३९ ॥

५४० विश्वमूर्तारसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं समं गन्धं ताप्रमसम मनःशिला ।
चन्दनं त्रिफला वासा कुष्ठजंरकदंश्लप्यकम् ॥ २६२१ ॥
पतानि समभागानि हंसपादीरमेत च ।
तत्तत्सर्वं सत्वमध्ये त्रिदिनं मर्दयेद्विपक्व ॥ २६२२ ॥
ततस्तु गोलकं कृत्वा यत्रसूपात्तरे शिषेत् ।
सूधरे यत्रके पाच्यं स्वाज्ञशीतलमुद्धरत् ॥
द्विगुञ्जं भृशयेन्निलमुद्धं नाशयेत्कुवम् ॥ २६२३ ॥
व. रा., वै. चि, उर्ददं ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और मैनसिल, ताप्रभस्म, सपेदचन्दन, त्रिफला, अइसा, गुड, जंरा, अजवादन, येधन समभाग लेकर वारीकचूर्णकर पाँरगन्धकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय हंमराजेरगमे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय यत्रसूपायें बन्दकर ३-४ कपडिमिठीदेकर सूत्रनेपर भूषयन्त्रमें पकावे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रत्नजोड़े । इसमेंसे २-२ रतीजं-मात्रा समय अथवा रोगीनिनाशुतानरुसाय देनेसे यह उर्ददको नष्टकरताहै ॥ ५४० ॥

५४१ विश्वमुरोरसः (प्रथमः)

शुद्धिषुवस्रसुतुगककुचैराक्ष्णाऽग्निमूलकम् ।
भूधार्त्रियभृगुञ्जाकरञ्जोदानं मूलकान् ॥ २६२४ ॥
एतेषां भूपुटेनैव तिलं घ्राणं विचक्षणैः ।
सूतगुल्यद्वयोर्भस्म हरितालञ्च गन्धकम् ॥ २६२५ ॥
त्रिकुट्टिफलादिद्रुमाक्षिकञ्च समंदाकम् ।
नागयज्ञभयं भस्म त्रिषं हिङ्गुलमेव च ॥ २६२६ ॥
पतानि पटपूतानि नेन नेलेन मेलयेत् ।
नागयज्ञादिल्लेयं यद्दामार्थं प्रयोजयेत् ॥ २६२७ ॥

अथाऽऽर्द्रकरसोपेतसैन्धवेन प्रयोजयेत् ।
 अष्टशुलादिशुल्मानि नाशयेदेकमानतः ॥ २६२८ ॥
 वातान्दुष्टान्पित्तोरोगानपस्माननेकशः ।
 पीनसादिश्लेष्मरोगान्ग्रन्थिरोगांश्च दारुणान् ॥ २६२९ ॥
 अक्षमरीमूत्रकृच्छ्रादिप्रमेहाभ्यपमज्वरान् ।
 नाशयेच्च गदान्स्वयान्न्यानपि निहन्ति च ॥
 विश्वम्भररसो नाम्ना सर्वरोगहरः स्मृतः ॥ २६३० ॥
 र. क. यो., र. कौ (शा),

भाषा—सहिजनकैबीज, सेहुण्ड, अहुल्या भूहर और आक इनका दूध, कर्ज, चित्रकमूल, मुर्देआवला, बछनाग, सफेद-गुग्गु, पुडिफल, पद्माङ्ग, मूलीकैबीज, सबसमभागलेकर जव-कुट्टवृण्णकर भूहर और आकके दूधमें मिलाय सुखाकर पातालयत्रसे तैलनिकाले फिर पारा और ताम्रभस्म, शुद्धहरिताल और गन्धक, त्रिकटु, त्रिफला, हिंग, सोनामाखी, नाग और वज्र भस्म, बछनाग, सिंगरिफ, येसन समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे, गन्धक और हरितालकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पूर्वतैलकी १-२ भावनाएं देकर रखदोहे । इनमेंसे ३-३ रत्ती पानमें रखकर देवे अथवा सैन्धव मिलेहुए अदरखवैरसके साथ देवे इसमें ८ प्रकारके शूल, गुल्म, दुष्टवातरोग, अपस्मार, पीनस वगैरे कफरोग, दाहप्रन्थिरोग, अक्षमरी, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, विपमज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४१ ॥

५४२ विश्वम्भोरसः

(म्वच्छन्तभैरवः, काससंहारभैरवः) २

शुद्धं मृतं विपश्चाऽञ्चं दिङ्मूलं गन्धतालकम् ।
 तुल्यं तुल्यं खल्वमघ्ये क्षिपेन्मयं दिनद्वयम् ॥ २६३१ ॥
 हंसपादीरुपायेण कुम्भकुटीपुटपाचितम् ।
 चूर्णांकृत्य विभाज्याऽथ पुनः कुम्भकुट्टसञ्चकम् २६३२
 दूर्ग्वाराहतिमिजेः पित्तैर्भावंयं दिनत्रयम् ।
 मापमात्रप्रयोगेण ह्यनुपानविशेषतः ॥ २६३३ ॥
 घस्तिवातं सन्निपातं प्रचण्डं नाशयेज्ज्वरम् ।
 इन्द्रापथ्यं ततो मुख्या स्विसुखण्डानि भक्षयेत् २६३४
 नारिकेलोदकं दाहे पिबेच्चकुरयाऽन्वितम् ।
 विष्णुना कथितः पूर्वं विश्वम्भररसोत्तमः ॥ २६३५ ॥
 वै चि, र क यो, व रा, ज्वर,

टि०—अथमेव पाठो वस्तिवाते वसरापीयथैविन्तामप्यो स्वच्छ न्भैरवनाम्ना लिखितस्तत्र गन्धकोऽस्ति, अत्र पाठे स नास्ति विपश्यैव विराट्पित्तानीयं साऽपि प्रमादादेव सज्जाता इति क्लृप्ता गन्धकमत्रैव समा वेद्य स निष्कासित इति । अर्यैव पाठस्य वैधयिन्तामपौ त्रिगुणा इति नाम स्थापयित्वा छात्राणाङ्कले प्रमवायुरा रक्षिता साऽपि दूरदापरात् । अथिन्त्रेव रसे पित्तमात्रना निष्कात्य वैधयिन्तामणिवसरापीयथोरस्य काससंहारभैरव इति नाम स्थापित, पित्तपट्टीत्येव योगसत्तिरहितयो गात्सकस्युगो शुष्णेष्वधिकोऽस्यत सोऽपि रसेऽत्रैव समाविशति । पित्तानामभावे तु सर्वेऽपिरसासक्तकार्याणि कुर्वन्त्येव परमस्त्वयैति विशेष सर्वत्रैवाऽस्ति इति दिक् ।

भाषा—शुद्ध पारा और बछनाग, अभ्रकभस्म, शुद्धसिग-रिफ, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर दसराजके रससे दोदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर डुकुट्टपुटकी आयेदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निकालकर बडुआ, सुअर और मछलीके पित्तोंसे ३-३ दिन मर्दनकर उद्धवरावर गोलियें बनाकर रखदोहे । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे वस्तिवात, सन्निपात, प्रचण्ड-ज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । मुखलगनेपर यथेष्ट पथ्यदेना । अत्यन्तदाहहोनेपर ईस और नारियलकाजल शकर मिलाकर पिलाना ॥ ५४२ ॥

५४३ विश्वरूपोरसः

त्रिकटुकयवनेतं कारवी कृष्णजीरं,
 दहनजलवद्वं पारसीदा यवानी ।
 सरुमलकणमूलं चेतकीह्रीतकानि,
 घुट्टिजरणविडङ्गं सैन्धवं पत्रमुस्तम् ॥ २६३६ ॥
 मिसिरिवृद्धजमोदा मेथिका त्वक् प्रपथ्या,
 कलितरफलधानी विव्वकालिङ्गमूलीम् ।
 अतिविपविडयुक्तं हिडुनियॉसनानं,
 यशिरनलदजातीकोपजातीफलानि ॥ २६३७ ॥
 दृढरूपदि समस्तं प्रक्षिपेत्सर्वैतुल्या,
 निह वरविपतिन्दुस्ताऽभयांस्तकसिद्धान् ।
 अनुहिममदयुक्तो मापमात्रः स सूतः,
 प्रशमयति विकारांश्छेभवातामजातान् २६३८
 प्रयलमलविबन्धानाहमाटोपमुम्रं,
 ज्वरमरुचिविस्वीं शूलमक्षद्रवादीन् ।
 हरति च सहसाऽयं जाठरान्सर्वरोगान्,
 ग्रहणिगरविमुख्यानाहयश्मातिसारान् ॥
 गिरिदाविहिततन्त्रे भन्त्रयुक्त्या नियुक्तो,
 निखिलगुणनिवास्तो विश्वरूपो रसोऽयम् २६३९
 र. का, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, लहसन, कलोजी, कालीजीरी, चित्रक-मूल, रस, लौंग, छुरासानी अजवाइन, कमलफूल, पिपलामूल, बडीहरी, मुलहठी, छोटीइलायची, जीरा, विडङ्ग, सैन्धव, पत्रज, नापरमोथा, सोंफ, निसोत, अजमोद, मेथी, तज, छोटीहरद, बहेड़ा, आवला, बेल और कुरैयाकीजड़, जतीश, नवसादर, हिंग, नागभस्म, सफेदपुनर्वा, सस, जावित्री, जायफल येसब समभाग, छाछमें हरीकैसाय पकायेहुए कुचिले सबके बराबर लेबर बारीकचूर्णकर रखदोहे । अथवा अदरखवैरसके रससे थोदेकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखदोहे । इनमेंसे १-१ गोली उशीरासव अथवा कर्दूरसवनेसाथ देनेसे कफ और वात-पिकार, प्रवल मलविबन्ध, आनाह, अत्यन्त आटोप, ज्वर, अरधि, हैजा, शूल, अत्रपशूल, समस्त उदररोग, ग्रहणी, गर, राजयश्म, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै । शूलमें

हृदिया निवलाहुआ, विपज खरस्पर्श कुष्ठ तथा अन्य १८ प्रकारकेकुष्ठ, मन्दागि और अरुचि इनसबको यह नष्टकरताहै । जिसजगह दवा काम न करतीहो वहा रफमोक्ष कराना ॥५४६॥

५४७ विश्वेश्वररसः (तृतीयः)

रसञ्च सौष्यं त्रिदिनं विमर्द्य

जम्बीरनीरेण ततः समस्तम् ।

संयोज्य जम्बीररसेन सम्य-

ग्विमर्दयेत्त्रीणि पुनर्दिनानि ॥ २६८३ ॥

कृत्स्नं कुमारीरस्ततस्त्रिवारं

द्विवासरान्धेनुजमुक्त्रकेण ।

द्विवासरानाजभये विमृद्य

शुष्कञ्च शुष्कं प्रतिभावनं पुटेत् ॥ २६८४ ॥

धात्रीरसेनेकवारं पुष्करस्य रसेः क्वचित् ।

त्रिभिः पुटे दग्धशुष्कं भस्म तन्मर्दयेदिनम् ॥ २६८५ ॥

ततो भवेत्सप्रमाणः सिद्धो विश्वेश्वरो रसः ।

त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जीऽयं देयः कन्यारसान्वितः ॥ २६८६ ॥

दुग्धाशनयुतो हन्यात्कासं श्वासं क्षयं तथा ।

भोक्तुं वांस्तुकुडुग्धाक्षमग्निमान्द्याऽरुची जयेत् २६८७

त्रिगुञ्जी मरिचाऽर्द्धेन कफोट्रेकविनाशनः ।

दाम्बूलगुडशौट्रैस्त्रिसप्ताहं त्रिगुञ्जकः ॥ २६८८ ॥

त्रिदोषजं क्षयं हन्याद्दुग्धमक्तमुजो ध्रुवम् ।

शुण्ठीचूर्णसमायुक्तं हितं मांसरसं सदा ॥

अयं सर्वेषु रोगेषु योज्यो विश्वेश्वरो रसः ॥ २६८९ ॥

र. क. र. म., सर्वतो गे ।

भाषा—शुद्ध पारि और चादीके बारीकरेतो ३-३ दिन

जंभीरीरससे अलग अलग मर्दनकर इन्हेंमिलाय १-२ पहर

सुखा घोटकर पिष्टिना बनाय जंभीरी और धीकुवाररसोंसे ३-३

दिन मर्दनकर गोमूत्र और जलरसिमुक्त्रसे २-२ दिन, अफले

और पोहकरमूलकेरससे १-१ दिन मर्दनकर आतशीशीदीमें

भरकर लवण अथवा भस्मयन्त्रमे रस ४ पहरकी आचदे । स्वाह-

शीतकहोनेपर निकालकर फिरसे आचले और पोहकरमूलके

रससे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे । इसप्रकार ३ आचें देकर शीशी-

मेंसे निकालकर रखछोड़े । यदि चांदीसे पारा अलग होजाय

तो उसे बाल्मार चांदीमें मिलाकर घोट और अग्निदेवे । कदा-

चित् ३ बारमें बाल्मारभस्म न हुईहो तो १-२ आचें और

देवे । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा धीउत्तारकरसहेसाय देनेसे

कास, श्वास और क्षयको यह नष्टकरताहै । इसमें बधुपकाराक

और दूधचायल देना । ३ रत्ती मरिचकेचूर्णसेसायदेनेसे मन्दागि,

अरुचि और कफप्रकोषको नष्टकरताहै । दग्धमूल, गुड और

मांसेकेसाय २१ दिननकदेनेसे यह त्रिदोषजस्यको नष्टकरताहै ।

शौट्रफाणुं डालकर मांशरस इसमें हितकरहोताहै ॥ ५४७ ॥

५४८ विश्वेश्वररसः (चतुर्थः)

मृतसूताकीरणञ्च तालं गन्धञ्च कटफलम् ।

मेघपट्टनी चत्वा शुण्ठीमाद्रीं पथ्या च पालकम् ॥ २६९० ॥

धान्यकं मर्दयेत्तुल्यं पर्यटोत्यद्रवे दिनम् ।

मर्द्यं मापं लिहैत्सौट्रैः कफपित्तमदात्यये ॥ २६९१ ॥

रसो विश्वेश्वरो नाम प्रोक्तो नागार्जुनेन च ।

काकमाचोरसश्चाऽनु सैन्धवेन युतं पिबेत् ॥ २६९२ ॥

र. सं., वि. र. म., रसायनसं., ज्वराधिकारि । वि. र. म.,

रसायनसं., चोरेश्वर इतिनाम ।

भाषा—पारा, तांबा और लोहभस्म, शुद्धहरिताल और

गन्धक, कायफल, मेढासींगी, बच, शौट, भारती, हर्ष, सुशुभ-

वाला; धनियां, सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पटोलपत्रके-

वाथसे एकदिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रख-

छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुसेसाय देकर संधानमक मिलाया-

हुआ मकोयकारस पिळानेसे कफपित्तमदात्यय नष्टहोताहै ५४८

५४९ विश्वेश्वररसः (पञ्चमः)

स्वर्णाऽम्रलौहवज्रानां रसगन्धकयोरपि ।

वैकान्तस्य च सद्गुह्य भागांस्तोलकसम्मिताम् २६९३

कपूरस्सल्लिनेऽप्यं भावयित्वा यथाविधि ।

रक्तिकैकप्रमाणेन विदग्धाद्यट्टिकास्ततः ॥ २६९४ ॥

अयं विश्वेश्वरो नाम रसः फुफ्फुसजान्मान्दात् ।

हृद्रोगांश्च जयेत्सर्वांश्च संशयोऽत्र न विद्यते ॥ २६९५ ॥

भे. र., हृद्रोगाधिकारि ।

भाषा—सुवर्ण, अम्रक, लोह और वज्र इनकीभस्मों, शुद्ध

पारा और गन्धक, वैकान्तभस्म येसब १-१ तोला लेकर नील-

वर्णकब्जलीकर कपूरकेजलसे २-३ भावनाएं देकर १-१ रत्ती-

कीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय

अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे फुफ्फुस और हृदयके तमाम

रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४९ ॥

५५० विश्वेश्वररसः (षष्ठः)

त्रिचिकाम्बुद्वेष्टाम्निगुह्याऽऽमोटरसाऽमृतैः ।

भृङ्गाम्बुक्लिकैः विश्वेश्वरो नाम रसो मतः ॥ २६९६ ॥

कासश्वासाऽग्निमान्दाशोःकामलावमिपाण्डुहृत् ।

कुष्ठाऽर्जुणैर्विस्फुच्यतीनांशयेत्सत्तदीपथैः ॥ २६९७ ॥

र. (मा.), कासदवासादौ ।

भाषा—त्रिकुट, त्रिफला और त्रिजात, नागरमोथा, विषक,

विषक, कुट, शुद्ध गन्धक, पारा और घटनाग सबसमभाग-

लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकब्जलीमें मिलाय

भंगोकेरससे २-३ दिनमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियां बनाकर

रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानके-

सायदेनेसे कास, श्वास, मन्दागि, बवासीर, कामला, वमन,

पाण्डु, कुट, अर्जुण और देहूको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ विश्वेश्वररसः (सप्तमः)

रसगन्धककपूरैरुच्युणै रङ्गुणै विपम् ।

कपर्दिकामभस्म स्तमं स्वयमेकत्र कारयेत् ॥ २६९८ ॥

तुलसीरससंयुक्तं देयं शीतज्वरे ततः ।
दाहज्वरे च विपमे सन्निपाते तथैव च ॥
अयं विश्वेश्वरो नाम सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ २६९९ ॥
र का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कपूर, सुहागा और बलनाग, त्रिकटु, कौड़ीकीभस्म सब समभागलेकर तुलसीकेरसमें मर्दन कर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोगीका बलाबलदेखकर समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत, दाह और विपमज्वर, सन्निपात येसब नष्टहोतेहैं ॥५५१॥

५५२ विश्वेश्वरीवटी

वन्ध्यागन्धकणालसूतकविपाक्षारास्थिका लाङ्गली,
सिंहोवीजमधुरूयोलनखरव्यालेन्दुपाटेन्द्रकैः ।
निर्गुण्डीरसमर्दितैरथ कृता कोलप्रमाणा वटी,
वातव्याधिविरोधिनी विजयते लोभेऽत्र विश्वेश्वरी ॥
रस. सं. र (मा) वातव्याध्यधिकारे

भाषा—बाइलेखमेकाकन्द, शुद्ध गन्धक, हरिताल, पारा, बलनाग और करिहारीकीजड़, पीपल, अतीस, तीनोंक्षार, इह-जोड़, भटकटैयाके बीज, महुआ, हीराबोल, नख, चित्रकमूल, शुद्धकपूर, पाठा, इन्द्रजव सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर समालेकरसते १-२ दिन मर्दनकर बेतरावर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वातहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तवातव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ५५२ ॥

५५३ विश्वोद्दीपकाऽध्रम्

अध्रं निर्मलमारितं पलमितं चूर्णीकृतं यत्नत-
अध्रं चित्रकमिन्द्रसूरकनकं मालूरपत्राऽऽद्रकम् ।
मूलं पिप्पलिसम्भयं मधुरिका नीपाऽकंमूलं पृथक्,
चैर्षां सत्यपले विमर्दितामिदं करं क्षिपेद्भ्रूणम् २७०१
शुद्धासम्भितमेतदेव वलितं तत्पारिभद्रद्वये-
संस्कारि चिरजगतुल्लसिचम् श्लथ्मलपिचं ज्वरम् ।
छर्दि दुष्टमसुरिकामलसकं श्वासञ्च कासं तृषां,
भ्रीहानं यकृतं क्षयं स्वरहितं कुष्ठं महारोचकम् ॥ २७०२ ॥
दाहं मोहमशेषदोषजनितं कृच्छ्रञ्च दुर्नामरु-
मार्मं वातविमिश्रितं नयनजं रोगं समुन्मुलयेत् ।
विश्वोद्दीपकनामरोगहरणे प्रोक्तम्पुरा शम्भुना,
सर्वेषां हितकारकं गद्वचतां सर्वायम्यञ्चसन्मम् ॥
पापार्णं यदि भक्षितं तदपि तं कुयांसुजीर्णं पुन-
र्वस्यं वृष्यतरं रसायनधरं मेधाधरं कान्तिदम् २७०३
भै र, र सु, अमिमान्ये ।

भाषा—निधन्त्र अन्नकभस्म १ पल लेकर चञ्च चित्रक, कुटज, धूरण, घृत्ना, बेलपत्र, अदरक, पिपलामूल, सोंफ, कदम्ब, आककीजड़ इनप्रत्येकेके १-१ पल स्वरसोसे मर्दनकर १ कर्षं शुनासुहागा डालकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली निम्बपत्रस्वरसकेसाथदेनेसे बहुतदिनका मन्दाग्नि और गुल्म, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, वमन, मसूरिका, अलसक, श्वास, कास, तृषा, क्षीधा, यकृत, क्षय, स्वरभंग, कुष्ठ, अरुचि, दाह, मोह, समस्तदोषज मूत्रकृच्छ्र, अर्षा, आमवात, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टर कर बल, बुद्धता, मेधा, कान्ति और रसायनको करताहै ॥ ५५३ ॥

५५४ विपतिन्दुगर्भागुटिका

प्रहस्यीजरसराजगन्धका
द्वादशैककरतुल्यभागिका ।
आन्यहाम्लजलमर्दिताङ्गता.

सूर्यभागविपतिन्दुमर्दिताः ॥ २७०४ ॥

सक्षोद्रक्षिग्धभाण्डस्था मासं धान्योपिताः स्थिताः ।
तद्दुष्टयोऽस्पशरोगघ्ना पण्मासाद्विधिसेविताः २७०५
र (मा) स्पर्शवाते ।

भाषा—गलासबीज १२ भाग, शुद्धपारा १ भाग और गन्धक २ भाग लेकर नीलगणैकजलीकर ३ दिन विजोरे प्रयुक्ति-के रससे मर्दनकर १२ भाग शुद्ध कुचिलेका चुंगेमिलाय गोली बननेलायक मधु मिलाकर चिरनेवतनमें रखकर एकमहीनेतक पान्यकी राशिमें गाड़दे । इसमेंसे १-१ माशा रोगोचितानुपानकेसाथ ६ महीनेतक देनेसे स्पर्शरोग नष्टहोताहै ॥ ५५४ ॥

५५५ विपमज्वरहररसः

शिलालविमलरसं रसकताप्यगन्धाद्मयुक्तं
त्रिचारमिति भावितं विमलमारध्वहीरसैः ।
विशोष्य निहितं शुभे लघुनि शुल्यपात्रे दृढं,
कपालविहिते पचेत्तु सिकताख्ययन्नस्थितम् ॥ २७०६ ॥
ज्वलदूर्ध्वशालियह्वेरुत्तार्यैतत्रिचारं तु,
कृष्णाण्डकारवह्नीतोर्यैर्भाव्यं ततस्त्रिवह्लञ्च ।
गुडमोचखण्डयोगाक्षीराग्नेमशानस्य दाहादीन्,
विपमज्वरान्निहन्त्यात्सर्वांनेव त्र्यहणैव ॥ २७०७ ॥
रसायनम्, र श, विपमज्वरे ।

भाषा—शुद्धमैन्सिल, हरिताल, कास्यमाक्षिक, शुद्धपारा, खपरिया, सोनामाखी और गन्धक सबसमभागलेकर नीलगणैकजलीकर करेलेकेरससे सुला सुखाकर ३ भावनाए देकर चरेलेकेरसमें कल्कबनाय बराबरके तावेके सम्पुर्णमें भीतकीतक लेपदेकर ढकनेसे बन्दकर ६-७ कपइमिटी देकर बाहुकायन्त्रमें रख आंचदे और ऊपर थोड़ेसे धान डालदे । जब धानोंकी खोल-होजाय तब उतारकर कोयलोपर रखदे । स्वाद्गशीतलहोनेपर निकालकर ताप्त जितना भस्म होगया हो उसको साथमें लेकर सफेदकोहला और करेलेकेरसोंमें ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे ३ दिनों विपम ज्वरोंको यह नष्टकरताहै । अधिकदाहनालुमहोनेपर शुक्राशयंत, वेला, धारूर और दूधमातका सेवन करावे ॥ ५५५ ॥

५५६ विषमज्वरान्तकलोहम् (प्रथमम्)

पारदं गन्धकं तुल्यं सूताऽर्द्धं जीर्णताम्रकम् ।
ताम्रतुल्यं माक्षिकञ्च लोहं सर्वसमं नयेत् ॥ २७०८ ॥
जयन्त्याःस्थरसेनैव कोकिलाक्षरसेन च ।
वासकाऽऽर्द्रपर्णरसैः पञ्चधा च विमर्दयेत् ॥ २७०९ ॥
पृथक् कलायमानान्तु घटिकां कारयेद्रिपक्व ।
विषमज्वरान्तनामाऽयं विषमज्वरनाशनः ॥ २७१० ॥
वह्निदीप्तिकरो हृद्यः ग्रीहगुल्मविनाशनः ।
चक्षुष्यो वृंहणो वृष्यः श्रेष्ठः सर्वरुजापहः ॥ २७११ ॥
भै. र., र. घु., घ., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, पारेसेआधी ताम्र और सुवर्णमाक्षिकमसम, लोहमसम सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकम्बलीकर जैती, तालमसाना, अद्दस, अदरक और पानकेस्वरसोसे ५-५ दिन मर्दनकर मटरबराबर गोलियां बनाकर रखोके । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-पानकेसापदेनेसे विषमज्वर, भन्दाभि, ग्रीहा, हृद्यकेरोग, गुल्मप्रथति सबरोगोंको यह नष्टकरताहै । चक्षुष्य, वृंहण और वृष्य है ॥ ५५६ ॥

५५७ विषमज्वरान्तकलोहम् (वृहत्) २

शुद्धं सूतं तथा गन्धं कारयेत्कज्जलीं शुभाम् ।
सूतसूतं हेमतारं लोहमस्रञ्च ताम्रकम् ॥ २७१२ ॥
तालसर्वं वङ्गमसम मौक्तिकं सप्रयालकम् ।
सुवर्णमाक्षिकञ्चाऽपि चूर्णयित्वा विभावयेत् ॥ २७१३ ॥
निर्गुण्डीनागवल्ली च काकमाची सपर्पटी ।
त्रिफलाकारवेहञ्च दशमूली पुनर्नया ॥ २७१४ ॥
गुडुची घृष्टकञ्चाऽपि सभृङ्गः केशराजकः ।
एतेपाञ्च रसेनैव भावयेत्त्रिदिनं पृथक् ॥ २७१५ ॥
शुक्रामानां घटीं कुर्याच्छास्त्रविल्कुदाली भिषक् ।
पिप्पलीशुङ्गेनैव लिहेष घटिकां शुभाम् ॥ २७१६ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति निरामं साममेव वा ।
सप्तधातुगतञ्चाऽपि नानादोषोद्भवं तथा ॥ २७१७ ॥
सततादिज्वरं हन्ति साध्याऽऽसाध्यमथापि वा ।
अभिघाताऽभिचारोत्थं ज्वरं जीर्णं विशेषतः ॥ २७१८ ॥
र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, पारा, सुवर्ण, चांदी, लोह, अम्रक, ताम्र, वङ्ग, मोती, प्रवाल सुवर्णमाक्षिक इन सबकीसममें और हरितालवार, देसब समभागलेकर सबकी नीलवर्णकम्बलीकर निर्गुण्डी, पान, मनोय, पित्तपण्डा, त्रिफला, बरला, दशमूल, पुनर्नया, गिलोय, अद्दस, भंगरा, कालाभंगरा इन-प्रभेदके स्वरसोसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ गोली गोलियां बनाकर रखोके । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और सुक्रमाया-देनेसे ८ प्रकारकाज्वर, निघम अथवा घाम, गमधानुगतज्वर,

सततादि नानादोषज्वर, साध्य और असाध्य अभिघातज्वर, अभिचारोत्थ और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५७ ॥

५५८ विषमज्वरान्तकलोहम् (तृतीयम्)

हिङ्गुलसम्भवं सूतं गन्धकेन सुकज्जलीम् ।
रसपर्पटिवत्पाच्यं सूताद्दिहेममसमकम् ॥ २७१९ ॥
लोहं ताम्रमस्रकञ्च रसस्य द्विगुणं क्षिपेत् ।
वङ्गञ्चैव प्रवालञ्च रसाऽर्द्धञ्च चिनिःक्षिपेत् ॥ २७२० ॥
मुक्ताशहं शुक्तिभसम रसपादिकमेव च ।
मुक्तागृहे च संस्थाप्य पुटपाकेन साधयेत् ॥ २७२१ ॥
भक्षयेत्प्रातःकृत्याय द्विगुणाफलमानतः ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं कणाहिङ्गुसंन्धवम् ॥ २७२२ ॥
ज्वरमष्टविधं हन्ति वातपित्तकफोद्भवम् ।
ग्रीहानं यकृतं गुल्मं साध्यासाध्यमथापि वा ॥ २७२३ ॥
सततं सन्तलाख्यञ्च त्र्याहिकं चातुपाहिकम् ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शोथं मेहमरोचकम् ॥ २७२४ ॥
प्रहणीमामदोषञ्च कानं श्वासञ्च दाकणम् ।
भृष्टरुक्ञ्चूतिसारञ्च नाशयेदधिकल्पतः ॥ २७२५ ॥
र. सं., र. घु., भै. र., घ., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—४-४ भाग शुद्ध पारे और गन्धकबी नीलवर्ण कम्बलीकर रसपर्पटीकी तरह पंटी बनाय सुवर्णमसम १ भाग, लोह, ताम्र, और अम्रक मसम ८-८ भा., वङ्ग और प्रवालमसम २-२ भाग, मोती, शङ्ख और सीपमसम १-१ भाग लेकर सबका बारीक चूर्णकर मोतीकीसीपमें बन्दकर ३-४ कपडिमिठी देकर पुटपाकसे स्वेदितकर रखोके । इनमेंसे २-२ रतीकीमात्रा पीपल, हींग और संथेनमककेसाय देनेसे वात, पित्त और कफ-जन्य ८ प्रकारकाज्वर, ग्रीहा, यकृत, गुल्म, सन्तल और सन्त, त्र्याहिक, चातुर्हिक, बायला, पाण्डु, शोथ, प्रमेह, अर्धनि, प्रहणी, आमदोष, कास, भयङ्करधान, भृष्टरुक्, अतिगर, इन-सबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ विषमज्वरारीरसः (शीतारिः)

शुद्धं सूतं तथा गन्धं ताम्रं लोहं मनःशिलाम् ।
ममभागं विमृशाऽप्य भावयेत्तुलसीजलेः ॥ २७२६ ॥
कारयद्दोषभृङ्गराजधूर्तनीरे विमर्दितम् ।
अजाम्बेण दातव्यं यद्दो विषमशान्तये ॥
विषमारारति नामाऽयं विषमोन्मूलनक्षमः ॥ २७२७ ॥
र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और कोहमसम, शुद्ध-मनशिल मय समभाग लेकर नीलवर्णकम्बलीकर तुण्डी, बंगला, भंगरा, धनूरा इनके रसोसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखोके । इनमेंसे १-१ गोली बररीकेसुवर्ण-साय देनेसे यह ममन्त विषमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

५६० विपनाशनोरसः

भागैकं रसनायकस्य विमलं गन्धं रसं तुल्यकं,
गौरालं नवसादरं त्रिकटुकं गुञ्जा सुजातीफलम् ।
सर्वं कज्जलवद्विमृद्य पयसा वज्राक्योरपर्येत,
सिद्धः स्याद्विपनाशानो गृहडवत्प्रकोऽगदोऽयं बुधेः
भित्वा निम्बुरसेन मुग्गुलुयुतो देवो बलोने नरे,
हन्याद्वन्तविषयन्त्रं विषमपि श्वाऽऽखककीटादिजम् ।
नानामारुतनाशनभ्यर्दितं तीमाञ्च पीडाञ्जयेत्,
कौञ्चयाऽपस्मृतिपाण्डुतान्द्रिकहरश्रोन्मादविध्वंसनः
१ बो., विषाऽधिकरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, रसौत, तुल्य, सोमल, हरि-
ताल, और नवसादर, त्रिकटु, गुञ्जा, जायफल सबसमभागलेकर
बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्ण कज्जलीमें मिलाय बृह
और आकेशेधुमेंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोमिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-
चितानुपानकेमाथ देनेसे दन्तविषय, विषमज्वर, कुता, चूहा
और जहरीकीडोंका जहर, नानाप्रकार की वायुपीडा, हृङ्काया-
हुआ कुतेकाविष, कुञ्जता, पाण्डु, तन्दा, उन्माद इनसबको
यह नष्टकरताहै । निर्मलमनुष्यकेलिये नीचुको पीकर उसमें
गूलकेशाय डालकर सुगाना चाहिये ॥ ५६० ॥

५६१ विषयान्तकरसः

रसम्लेच्छालकुन्दगीगन्धखर्परमाक्षिकम् ।
पिप्पला जम्भाऽम्भसाक्षिप्रताम्रपात्रोदरेक्षिपेत ॥ २७३० ॥
गन्धकेन च संलिय्य तत्पचेत्कांस्थपाकयत् ।
भाण्डे लवणपूर्णे तु मध्ये पात्रं निरुद्धय च ॥ २७३१ ॥
यामपात्रं ततः शीते तुल्यपादं चिनि.क्षिपेत ।
विमृद्य घटिकां कुर्याद्रिक्ताप्रयसम्मिताम् ॥ २७३२ ॥
ददेद्दौल्येन केनाऽपि पर्णात्पण्डोपणे युताम् ।
पेकाहिकं द्रव्याहिकञ्च तृतीयकचतुर्थको ॥ २७३३ ॥
प्रस्कन्दनञ्च शमयेत्पूर्वं मुद्रसितायुतम् ।
पथ्यञ्च यज्येन्मार्सं राजिकां तैलमम्लकम् ॥ २७३४ ॥
टो, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, हरिताल, मैनासिल, गन्धक,
खपरिया, और सोनामाखी, सब समभाग लेकर नीलवर्ण
कज्जलीकर जमीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर इसमें द्विगुणतविके-
साम्युत्से लेपर २-४ षण्दमिठी देकर सुरनेपर लवणयन्त्रमें
बन्दकर ढकन लगाकर ३-४ षण्दमिठीसे सुदको बन्दकरदे ।
फिर इसे चूनेपर चढाय एकपहरकी कढ़ी आंरे । स्वात्रतीतल-
होनेपर निकालकर इसमें सनुभंग तुल्यमम्ल मिलाय जमीरी
केरससे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोमिये बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोग और रोगीका बला
ब ३ देसकर शुद्ध गोलीकातपेट पालमें रखकर देनेसे एकाहिक
द्रवादिह, तृणिक और चातुर्थिक इनसबको यह नष्टकरताहै ।

अलन्तसोपमे सुतस्य और शरकरकेसाथ देना । एकमहीनेतक
राई, तैल और खटाई नहीं देना ॥ ५६१ ॥

५६२ विषमारीरसः (महदादिः)

अशोधितं रसं तालं खर्परञ्च मनःशिलाम् ।
माश्रिकं हिङ्गुलं गन्धं शिखितुल्यं यथाक्रमम् ॥ २७३५ ॥
मर्दयेद्याममेकन्तु मिषक् सम्यग्वरुत्तितः ।
इन्द्राणिकाभृङ्ग राजकारवह्नीजयारसेः ॥ २७३६ ॥
वेदघ्नं विमर्दत ततः कुर्यात्सुगोलकम् ।
भाण्डमध्यगतं ताम्रपात्रेणैतं पिघ्रापयेत् ॥ २७३७ ॥
अमयारुक्खलटीकलैः सन्धि लिम्पेद्दुष्कृतितः ।
सिकतापूरितं कृत्वा पात्रं किञ्चित्प्रशयेत् ॥ २७३८ ॥
तत्र त्रिचतुराः सम्यङ्निवेद्याः शालयः शुभाः ।
दीपाग्निना पचेत्तायवायह्नाजा भवन्ति ताः ॥ २७३९ ॥
स्वभायशीतलं प्राह्यमपकाकं न मेलयेत् ।
इन्द्राणिकाकारवह्नीस्वरसेन विमर्दयेत् ॥ २७४० ॥
गुञ्जाप्रयं कोलकेन तुलसीरसतोऽपि वा ।
निर्गुण्डीमरिचाभ्यां वा रसोनेन गुडैः ॥ २७४१ ॥
ज्वराञ्च विषमान्संश्राशयेच्छीतपूर्वकम् ।
दाहपूर्वाच्छीतयुक्ताम्राशयेद्विषमज्वरान् ॥ २७४२ ॥
पथ्यं द्वादित गोक्षीरेः स्नेहाम्लौ यज्येत्तृधुवम् ।
श्रीसङ्गो दूरतस्त्याज्यः शीताम्लः सम्परित्यजेत् ॥
विषमारिं महान् प्रोक्तः शम्भुना रससागरे ॥ २७४३ ॥
र. का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—अशुद्धपारा, हरिताल, खपरिया, मैनासिल, सोना-
माखी, शिंगरिफ, गन्धक, द्रुतिया सब समभागलेकर नीलवर्ण-
कज्जलीकर इन्द्रायण, भगरा, केला और भांगकेन्वरसोंसे ४-४
पहर मर्दनकर गोलायनाय हृङ्गीकेपीचमें रख ऊपरसे तापके-
सम्पुयेतक हूँ, मिलावे और खडियामिठीके कलनेसे सन्धि-
बन्दकर ऊपर ४ अह्नल यादमर चूनेपरचढाय अग्निदेवे । ऊपर
परीशाय ६-७ घानडालदे । पहिले दीपाग्निसे शुरूकर क्रमसे
बडावे । धातोंकीखीलहोनापरे आच बन्दकरदे । स्वात्रतीतल
होनेपर निकालकर जितना तावकासम्पुटजलाहो उतने साथ
घोटकर इन्द्रायण और केलेकेन्वरसोंसे १-१ दिनमर्दनकर ३-३
रत्तीकीगोमियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बेर,
तुलसी, निर्गुण्डी, मिर्च, लवण अथवा मुग्गुकेगायदनेसे शीत-
पूर्वक अथवा दाहपूर्वक समस्तविषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ।
पथ्यमें गायकादूध और चावउदे । पिक्कनाई और अम्लका
परित्यागधरे । श्रीधर और टंडनानीका मेवन न करे ॥ ५६२ ॥

५६३ विषयप्रपातरसः (प्रथमः)

स्फटिकं स्फटिकां ह्यारं स्वर्जिकाक्यं नृमाराजम् ।
संघयप्रणयापाणी तुल्यं मयं विष्णुपीयेत् ॥ २७४४ ॥
मस्तुना कर्णमात्रन्तु पाययेद्विषयुतितम् ।
रसायनं जङ्गमं यद्य गन् कुर्यापियाह्वयम् ॥ २७४५ ॥

तत्सर्वं शमतां याति सत्यं शुरुबचो यथा ।

शिलाऽऽलतित्न्दुनेपालवचाहिङ्गुनि लेपयेत् ॥२७४६॥

नू. क., विषाऽधिकरे ।

भाषा—स्फटिकमणिकाचूर्णं, मुनीहुई फिटरुङ्गी, यवशार लोटासजी, नोसादरकेफूल, सेन्धव, गोदन्तीहरिताल (घाषाण-गुजराती) इनसबको समभागलेकर अलग २ कपइछानकरके सबको एकजगहमिलाकर रतलेवे । इसमेंसे पूर्णविषवेगाविष्ट प्राणीको १-१ तोला दहीकेपानीकेसाथ अथवा ठंडेपानीकेसाथ पिलावे । यदि विषवेग न हो तो दंशस्थानमें पाछलगाकर दवाको भरेदे और मैनसिल, तबकीहरिताल, कुचिला, जमाल-गोटा, वच और हींग, इनको पानीमें पीसकरलेपकरे । इससे सांप, बीछ, कुत्ता, सियार, बाघ, भेडिया या अन्यकोईभी जहरी जानकर, तथा अफीम, गांजा, भाग, बछनाग प्रयुक्तिका-विष, बनावटी अथवा दूषीविष येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५६३ ॥

५६४ विषवज्रपातरसः (द्वितीयः)

निशां सट्कञ्च सजातिकोपं

तुल्यं समांशं कुरु देवदाल्याः ।

रसेन पिष्टो विषवज्रपातो

रसो भवेत्सर्वविषापहन्ता ॥ २७४७ ॥

निष्कोऽस्य सञ्जीवयति प्रयुक्तो

नृमूत्रयोगेन च कालदृष्टम् ।

जटाविषेणाऽऽकुलितं तथाऽन्यै

विषैर्नरञ्जानु तथाऽऽनुरञ्च ॥ २७४८ ॥

र. सं., र. म., र. ल., वै. वि., र. म. मा., ना. वि., उ. यो. त., घ., आ. प्र., र. र., र. कौ., र. चं., भै. सा., र. र. दी., र. का., विषाऽधिकरे ।

टि०—र. ल., वै. वि., एतयो विषप्रहारीतिनाम । र. म. मा. विषप्र हनि नाम । कुषचिद् “निशां सट्कञ्च सजातिकोपं” मित्यस्य स्थाने रश्च विष दृष्टान्मूत्रयोगेति पाठो दृश्यते ।

भाषा—हल्दी, सुहागा, जावित्री, तृतिया सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बन्दाखरेरसे १-२ दिन मर्दनकर रखोहो । इसमेंसे ४-४ माशेकीमात्रा पानीबीरहकेसाथदेनेसे यह स्वावर और जखम समस्तविषोंको दूरकरताहै । मनुष्यके मूत्रकेसाथ देनेसे कालदृष्टकीभी नष्टकरताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ विषसूचिकारसः

रसं विषं सर्पविषं पाषाणं त्रिविधं तथा ।

समांशं पेपयेद्यामं कहुणीतेलमर्दितम् ॥ २७४९ ॥

अत्राने सङ्कटे चैव सन्निपाते महाभये ।

द्रापयेद्वाद्रकद्राचैस्तिलमात्रं विचक्षणः ॥ २७५० ॥

सर्वेषु सन्निपातेषु क्षान्तिमाप्नोति स्त्रीलया ।

विषसूचिकनामाऽयं घृष्टानां हितकारणम् ॥ २७५१ ॥

नारिकेलोदकं दद्यात्पिपेह्यां शर्करोदकम् ।

ह्रींश्रापञ्च सित्ता पथ्यं रसरारजो महानयम् ॥ २७५२ ॥

र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, बछनाग, सर्पविष, सफेद-लाल और पीला सोमल सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर एकपहर माल-कांगनीके तैलसे मर्दनकर रखोहो । इसमेंसे तिलमात्र अज्ञात-सङ्कटसन्निपातमें देनेसे प्राणरक्षाहोतीहै । इसकेदेनेसे दाह उत्पन्नहो तो नारियलकाजल अथवा शर्करा शवंत देना और पथ्यमें दूधमात तथा शर्करा देना ॥ ५६५ ॥

५६६ विषामृतरसः

निर्विषां सूतगन्धो च प्रत्येकञ्च पलंपलम् ।

दन्तीवीजं पलहृन्दं द्विपलं तालकन्तथा ॥ २७५३ ॥

नारिकेलाभ्युना खल्वे मर्दयेत्त्रिदिनं भिषक् ।

गुज्रामात्रं प्रदातव्यं दोषपञ्चरविनाशनम् ॥

नेत्राञ्जनेषूपयोगं विषामृतरसिदं स्मृतम् ॥ २७५४ ॥

वै. चि., दोषञ्चरे ।

भाषा—निर्विषी, शुद्धपारा और गन्धक १-१ पल, शुद्ध-जमालगोटा और हरिताल २-२ पल लेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय ३ दिन नारियलकेजलसे मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे तथा नेत्रोंमें लगानेसे यह सन्निपात और विषोंको नष्टकरताहै ५६६

५६७ विष्णुपराक्रमरसः

शुद्धौ पारदगन्धो च टङ्गुणञ्च विषं समम् ।

त्रिशारं सेन्धवं तुल्यं सर्वं धुत्तूरजं द्वैवे ॥ २७५५ ॥

मर्दितं गोलकीकृत्य कुम्भकुटीपुटपाचितम् ।

खल्वमध्ये तिनिःक्षिप्य मत्स्यवाराहपित्तके ॥ २७५६ ॥

भावितं माषमात्रञ्च देयं शीतोदकं त्वनु ।

सन्निपाते ज्वरे श्वासे दोषे विषमशीतके ॥ २७५७ ॥

अपस्मारे धनुर्वाते कम्पवाते च मूर्च्छने ।

तत्क्षणेन निहन्त्याशु इच्छापथ्यं प्रदापयेत् ॥ २७५८ ॥

मनुष्याणां हितार्थाय सर्वरोगभयापहः ।

विष्णुना कथितः पूर्व रसो विष्णुपराक्रमः ॥ २७५९ ॥

वै. रा., वै. चि., वा., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, बछनाग, तीनोंशार, सेधानमक येसब समभागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर धतूरेकेरसे एकदिन मर्दनकर गोलाग्रनाय शरावसम्पुटमेंबन्दकर २-४ कपइ-मिठीदेकर गोलेहीको कुम्भपुटकी आंचदे । स्वाग्नीतलहोने-पर निकालकर मछली और सूअरके पित्तोंसे १-१ भावनादेकर उद्वारावर गोलियां बनाकर रखोहो । इनमेंसे १-१ गोली ठंडे पानीकेसाथ देनेसे सन्निपात, ज्वर, श्वास, विषमज्वर, अपस्मार, धनुर्वात, कम्पवात और मूर्च्छा इनसबको यह नष्टकरताहै । मूयलग्नवर इच्छानुसार पथ्यदेना ॥ ५६७ ॥

५६८ त्रिपर्णाशनरसः

तीरणाऽन्नकान्तं विषनागगन्धं

तालञ्च ताप्यञ्च मृतं रमेन्द्रम् ।

कौमारकन्दे क्रमभस्मनात्

विसर्पनाशं प्रयदन्ति सन्तः ॥ २७६० ॥

रसेन्द्रमं., वि. क., विसर्पे ।

भाषा—लोह, अश्रक और कान्तभस्म, शुद्धबलनाग, नाग-भस्म, गन्धक, हरिताल, सोनामाषी और पारदभस्म सब समभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर धीउंवाकरेससे मर्दनकर गोली-बनाय धीउंवारकीइनेअन्दर रखदे और शरावसमुद्रमें बन्दकर २-४ कपइमिदीदेकर सूखनेपर लघुपुटकी आवदे जिसमें कि जड जलजाय और गन्धक वगैरह न उड़नेपावे । स्वाहशीतल-होनेपरनिकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा रोगो-चिन्तापुनारकेसाय देनेसे यह विषाणको नष्टकरताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ विसर्पशोषणरसः

तालकं शुल्बकं तुल्यं पारदञ्चाऽर्द्धभागिकम् ।

मर्दयेद्वाङ्गुलीतीयैः करवीरद्वयेस्तथा ॥ २७६१ ॥

शरपुष्पाद्रवेधैव त्रिवारञ्च पृथक्पृथक् ।

ततो गजपुटे पाच्यं त्रिवारं मारितं शुभम् ॥ २७६२ ॥

गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं विसर्पेषु प्रयत्नतः ।

पिप्पलीमधुसंयुक्तं पथ्यागुडमथापि वा ॥ २७६३ ॥

कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतत्त्वविस्तुधीः ।

अयं हन्ति मसूरीञ्च विसर्पन्नायुकव्यथाम् ॥ २७६४ ॥

र. म. मा., ना. वि., विसर्पे ।

भाषा—शुद्धहरिताल, तुल्य और ताम्रभस्म १-१ भाग, शुद्धपारा आधामाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर करिहारी, बनेर, शरपुष्प इनप्रत्येकके रत्तीसे ३-३ भावनाए देकर गोला बनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर गजपुटकी आंचदे । ऐसे ३ गजपुटदेकर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती रोगोचिन्तापुनारकेसाय अथवा पीपल और मधुकेसाय अथवा हरे और शुद्धकेसाय देनेसे सबप्रकारके विसर्प, मसूरीका और स्नायुरोगोंको यह दूरकरताहै

५७० विसर्पारिरसः

मृतं गन्धं लोहचूर्णं दिनेकं

धृष्ट्वा नीरं योचिच्छयाः पचेत ।

मूपामध्ये भूपरे तस्य यद्वं

मध्याज्याभ्यां हस्तपादप्रतापे ॥ २७६५ ॥

दद्याद्यद्वा राजवृक्षस्य नीरं-

माध्वीकाकं त्रैफलेनाऽथवापि ।

घर्षेत्तीन्ने द्रुतापप्रदेशे

ताम्रं मण्डे लेंपयित्वा क्षिपेत् ॥

स्नुह्यर्कोत्थं दुग्धकं दृङ्गुणाकं

धन्यं सपि जायते लक्षणोक्तः ॥ २७६६ ॥

र दी., विसर्पे ।

टि०—गौररसेनाऽथमापातत समान प्रतिभाति परन्तु भावनामि

पाकेन च त्रैलक्षण्यात्पृथक्तया निश्चितोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण समभागलेकर

क्तीलीकेरसे एकदिन मर्दनकर शरावसमुद्रमें बन्दकर भूपर

यन्त्रमेंआचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु और धीकेसाय अथवा अमलतासनेयूदे-पानीकेसाय अथवा मध्यासव या त्रिफलाकेसायकेसायदेनेसे विसर्पे रोग नष्टहोताहै । जलनेकेस्थानमें ताम्र अथवा माडकालेप-देकर सेहुण्ड और आककेदूधमें सुहापा मिलाकर रक्के, अथवा इनचीजोंसे धीवनाकर लगावे ॥ ५७० ॥

५७१ विसृचिर्मर्दनरसः

शुद्धसूतस्य भागेकं नागजिह्वा तथैव च ।

त्रिभागो मृतनागश्च गन्धरुश्चाऽष्टभागिकः ॥ २७६७ ॥

द्वित्रिंशद्भागसम्मानममृतञ्चोपणन्तथा ।

सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा दातव्यं गुञ्जमात्रकः ॥ २७६८ ॥

अजीर्णं च विसृच्याञ्च ज्यरे सामे मरीचकैः ।

त्रिदोषे रक्तिकायुग्मं पर्यं देयं सुशीतलम् ॥ २७६९ ॥

ना. वि., विसृचिच्छायाम् ।

भाषा—शुद्धपात और मैनसिल १-१ भाग, नागभस्म ३ भा., शुद्धगन्धक ८ भाग, शुद्धबलनाग और मरिच ३२-३२ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय १-१ रत्ती मरिचकेसाय देनेसे अजीर्ण, हैजा और सामन्वर नष्टहोतै । त्रिदोषमें २ रत्तीकीमात्रा देवे और शीतोपचारकरे ॥ ५७१ ॥

५७२ वीरचण्डेश्वररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्म विपन्तथा ।

वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बवाहिशुद्धचिकाः ॥ २७७० ॥

दिनं भृङ्गिद्रव्यं मर्धं वाकुच्याश्च कपायकैः ।

भक्षयेत्तोहोपात्रस्यं भूमासे जिह्वकप्रणुत् ॥

वीरचण्डेश्वरो नाम्ना यम्मासात्सर्वकुष्ठजित् २७७१

र. सु., र. को., र. क. ल., वि. क., र. का., कुष्ठे । र. क. ल.

वीरचण्डेति नाम । कुष्ठजित्त्रिफलास्थाने त्रिवृता गृहीता ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बलनाग, कान्तभस्म, वाकुची, त्रिफला, नीमकीछाल, चिचककी जड़ और मिलोय सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय भगरा और वाकुचीकेवाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर सुखाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतक रोग और रोगीका बलावल देखकर उचितापुनारकेसाय देनेसे यह १ महीनेमें ऋष्यजिह्वकको और ६ महीनेमें समस्तकुष्ठोंको नष्टकरताहै ॥ ५७२ ॥

५७३ वीरप्रतापरसः

शुद्धं सूतं विपं गन्धं त्रिंशत्त्रयं कटुत्रयम् ।

मृतं ताम्रं मृतं स्वर्णं प्रवालं मौक्तिकं समम् ॥ २७७२ ॥

त्रिफलायाः कपायेण मर्दयेद्विसत्रयम् ।

दिनं गजपुटे पाच्यं स्वाहशीतलमुद्धरेत् ॥ २७७३ ॥

कौमारकन्दे अन्यत्र वीरभद्रेति पाठद्वयम् । रसमा-
तुत्र जाने केन कारणेन भ्रमवाशुरा
विपरिणामात् । स्वयमपि वाशुरप्रस्ता आसन्निति
रसेन्द्रम्, चि. के. विसर्पे । पाठोऽप्यथैवाऽन्तर्गमनीय ।

भाषा—लोह, अप्रक और
मस्म, गन्धक, हरिताल, सोन
समभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर
वनाय धीञ्जवारकीजङ्गेअन्दर रख
२-४ कपइमिठीदेकर सुखनेपर
अड अलजाय और गन्धक वगै
होनेपरनिकाळकर रखछोड़े ।
चित्तानुपानकेसाथ देनेसे यह

५६९ विसर्पणः (द्वितीय)

तालकं गुल्फकं तुत्यं पारदं
मर्दयेद्वाङ्गलीतोयैः कर्वीरुदं
शरपुद्गाद्रवैश्चैव त्रिवारं च
ततो गजपुटे पाच्यं त्रिवारं
गुञ्जाद्रयं प्रदातव्यं विसर्पणं प्र
पिप्पलीमधुसुन्दकं पथ्यागुडं
कल्पयेदनुपानं हि विसर्पतत्त्वा
अर्यं हन्ति मसुरीक्ष विसर्पेष्वा
र. म. मा., ना वि, विसर्पे

भाषा—शुद्धहरिताल, शु
शुद्धपारा आधाभाग लेकर नीलवर्ण
शरपुद्गा इनप्रत्येकके रसोंसे ३-३

५७० (सः) (तृतीय)

शरावसम्पुटे बन्दकर गजपुटस्थत्कण्टकद्रवैः ।
निकाळकर रखछोड़े । इसमेंसे १ पेच्यं पुन. पुनः ॥ २७९३ ॥
अथवा पीपल और मधुकेसाथवाङ्गे चाऽग्निघातके ।
सबप्रकारके विसर्प, मसुरिका

५७० (पाठातो विनश्यति ॥ २७९४ ॥

सुतं गन्धं लोहयोगे ।
घृष्ट्वा नीरैः ३० तावदीमम् समभागलेकर २१ दिनतक
मूपामये भूधर चनेप्रमाणमोलिये बनाकर रखछोड़े ।
मध्याज्या समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे
दद्याद्यद्वा रं नष्टहोताहै । ऊबले रेवनचीनी अथवा
मांश्वीक अतीस और चित्रकमूल इनको पानीमें पीस-
घर्पेत्तमि हुकर पकाकर शरीरपर लेपकरे ॥ ५७० ॥

ताम्रं मण्ड ९ वीरभद्राऽध्रकम्
स्तुह्यकार्त्तयं दुग्ध-
धन्यं सपि जायते
र. दी., विसर्पे ।
चक्रस्वरससायुसितकम्

दि०—गोबरसेनाऽयनापात समान प्रतिम
पकेन च वैलक्षण्यात्पृथक्त्वा निश्चितोऽस्ति । रोनी ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और लोहचूर्ण १
रितलीकेरससे एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटेमें बन्द २७९६ ॥

वहिमान्द्यमपहृत्य सत्त्वं
कारयेत्प्रखरपाथकोत्तरम् ।
श्यासकासधमिशोथकामला-
श्रीहृद्युल्मजठराऽक्षचिन्नमात्र ॥ २७९७ ॥
रक्तपित्तयद्दृढम्लपित्तकं
शूलकोपजगद्गन्धिसुचिकाम् ।
आमवातवह्युवातशोणितं
दाहशीतबलहानिकादर्यकम् ॥ २७९८ ॥
चिद्रधिं ज्वरगरं शिरोरोगदं
नेत्ररोगमखिलं हलीमकम् ।
हन्ति घृष्यतममेतद्भ्रकं
वीरभद्रमतिवलयमुत्तमम् ॥
भद्रितं विविधभक्ष्यमागलं
काष्ठसहमपि भस्मतां नयेत् ॥ २७९९ ॥
भै. र., र. सु., अग्निमान्ये ।

भाषा—हजारपुटोंमें मोरहुए अथवा ९० दिनतक चिक्र-
के स्वरससे मर्दनकर सुखार अरखकेरससे ३-३ रत्तीकी
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अरखकेरसके
साथ अथवा तत्तद्रोगहटावुपाननेसाथदेनेसे मन्दाभि, श्यास, कास,
पेनन, शोथ, कामला, शीह, गुल्म, उदररोग, अरधि, भ्रम,
रक्तपित्त, यकृत, अम्लपित्त, शूल, बढोदर, हैजा, आमवात,
नातरक, दाह, शीत, बलनाश, कृशता, जहृत्पाद, ज्वर, गर,
शितोरोग, नेत्ररोग, हलीमक, धातुक्षीणता, इनसबको यह नष्ट-
करताहै । कण्टक खाकर एकगोलीलेनेसे तत्क्षण जीर्णकरदेताहै

५८० वीररसः (महादाविः)

निष्कौ द्वौ तुत्यभागस्य रसादेकं सुसंस्कृतात् ।
निष्कं विपस्य द्वौ तीक्ष्णात्कपर्शो गन्धमौक्तिकात् ॥
अग्निपर्णोहरिलताभृङ्गाऽऽर्द्रसुरसारसैः ।
भद्रितं लाङ्गलीकन्धप्रलिते सम्पुटे पचेत् ॥ २८०१ ॥
अर्धेपादे च पाण्डुव्याः काकिण्यो द्वे विपस्य च ।
लिह्नेमरिचचूर्णञ्च मधुना पोष्टलीसमम् ॥ २८०२ ॥
क्षयग्रहण्यतीसारवह्निद्वैर्वल्यकासिनाम् ।
पाण्डुगुल्मवतां श्रेष्ठो महावीरो हितो रसः ॥ २८०३ ॥
अतिस्थूलस्य पूयासृक्काणुद्वमतः क्षये ।
ने योजयेत्क्षीररसान्विरुद्धोपकमत्वतः ॥ २८०४ ॥
र र स, र सु, र को, राजवदन्धिग ।

भाषा—तुत्यमस्म ८ मासे, शुद्ध पारा और बलनाग ४-४
मा, फोलाद्वयमस्म ८ मा., शुद्धगन्धक और मोती १-१ कर्प लेकर
पारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय अगिया
पास, अग्निपर्णा, भगरा, अदरख, तुलसी इनके रसोंसे १-१ दिन
मर्दनकर गोलावनाय कश्मीरीके कन्दके कल्कालेपदियेहुए
पन्पुट्टमें बन्दकर ३-४ कपइमिठीदेकर सुखनेपर गजपुटकी
आवदे । स्वाहशीतलोनेपर निकाळकर अष्टमाश रसमें मृगाह-
पीठली और शुद्धबलनाग २-२ रत्ती मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे

१ से २ रतीतम्मात्रा ८ मिचौकेसाध मिलाकर मधुमें चतुसे क्षय, प्रदही, अतिसार, मन्दाग्नि, काम, पाण्डु, गुल्म, भेद, भयङ्करक्षय क्षनसक्ने यह नष्टकरताहै । इसरसमें दूध और मांसरसका प्रयोग नहीं करना ॥ ५८० ॥

५८१ वीरचित्रमरसः (प्रथमः)

रसं विपं विपञ्चाऽन्नं विपं दृङ्गणगन्धकम् ।
तालकं द्रव्यैश्च हितुर्थं गजपिप्पली ॥ २८०५ ॥
निर्विपान्ते समं हिङ्गुमधुकं कटुरोहिणी ।
दोष्टिपर्वतपापाणं भार्गी मणिशिलात्रयम् ॥ २८०६ ॥
त्रिशारं पञ्चलवणं द्विशिला च द्विजीरकम् ।
कटुत्रयं दन्तिवीजं इष्वर्णिम त्रिरजाजिका ॥ २८०७ ॥
द्विकटुकं चचिसुलञ्च कुण्डं कर्कटशृङ्गिका ।
कट्टोलञ्च जटागाम्नी विपतिन्दुकयीजकम् ॥ २८०८ ॥
तीक्ष्णताम्रभवं भस्म नागं चङ्गञ्च रोष्यकम् ।
मृतमारं मृतं स्वर्णं शुद्धमौक्तिकविद्रुमम् ॥ २८०९ ॥
रत्नं मरकतं नीलं गोमेदं पुष्परागकम् ।
वेदूर्यवज्जभस्मापि समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१० ॥
धनूरवासाखदिरकार्पासैरण्डचित्रकैः ।
त्रिञ्चाऽन्धपाठाहलिनोवृहतीद्वयगोक्षुरैः ॥ २८११ ॥
रक्तमुण्डां प्रलदण्डीमर्कटीशिशुभृङ्गजैः ।
विपमुष्ट्या काकमाचीवज्रयल्लीपुनर्नयैः ॥ २८१२ ॥
जम्बीरकन्याकुण्डजकारवेल्लीपटोलजैः ।
अनन्या चैव निर्गुण्ड्या तीक्ष्णकाण्डक्षत्रिण्टिकैः ॥
न्यग्रोधाऽन्धथपालादापिचुम्बुद्विरीपकैः ।
वृत्तपुत्रागपनमै रकुलेधतुरङ्गुलैः ॥ २८१३ ॥
माधवीमहिष्काटङ्गनागाहस्रकुमारिकैः ।
गाङ्गेरुकीघातकीभ्यां सपांश्याः काकजङ्गुजैः ॥ २८१४ ॥
पादयपामागंधात्रीभिर्भूदन्यक्षशिवोद्भवैः ।
भाचयित्वा वटीं कार्यां हिङ्गुजामानिका मियक् २८१६ ॥
स्नुहीक्षीराऽनुपानेन सर्वैरोमान्विनादायेत् ।
नादायेद्रोगविपिनं तृणपुत्रमिनाऽनलः ॥ २८१७ ॥
सन्निपातेषु सर्वेषु शीघ्रप्रत्ययकारकः ।
वीरचित्रमनामाऽयं सर्वदेशेषु पूजितः ॥ २८१८ ॥

भा. सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वडनाग और पीलासोमल, अन्नमम, मधुविप, मुहागा, गन्धक, हरिताल, शिगरीक, तृति्या, क्षने किंग, गजपीपल, निर्विधी, गुण्टी, वृटनी, शक्रेन्द्रमोमल, भारती, सीनरहरती मेनसिल, सीनोधार, पांचोनमरु, शरु, सोमामरु, दोनोर्जीर, त्रिभद्र, जमालगोटा, पाण्डु, चित्रकनी जह, सीनोराई, पिपलासूल, गजपीपल, चय्य, वृट, काकजामांगी, नीलचचीनी, जटागाम्नी, इचिया, फोलाङ्क, हाव, नाग, धरु, रजत, धीसल, सुगन्ध, मोती, प्रसल, एसा, नीलम, गोमेद, पुष्पराज, सननिया, क्षीरा (क्षयनाभीमग्ने) देयक १-१ भाग और सुनी-

हॉग, १३ भाग लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धकप्रमुतिकी नीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय धतूरा, अहसा, खैर, कपास, एरण्ड, चित्रक, इमली, नागरमोया, पाठा, करिहारी, दोनोभट्टकडैया, गोखरु, पलाय, मोरखमुण्डी, ब्रह्मदण्डी, केवांच, सहिजन, भंगरा, कुचिला, मकोय, हड़जोड़, पुनर्नवा, जंभीरी, घोडुंवार, कुरैया, करेला, परवल, जैती, निर्गुण्डी, राई, पाकर, कटसैया, वट, पीपल, पलाश, नीम, सिरस, आम, नागचम्पा, कटहर, मौखरी, अमिलतास, माधवीलता, मोगरा, जर्दल, गजपीपल, वांजलेखसा, गंगेरु (गुलसिकरी), धावड़ी, सर्पाक्षी, पाक-जङ्गा, वरुण, अपामार्ग, आवले, छोटीदन्ती, येडा और हरेके स्वरसोंसे १-१ भावना देकर २-२ रतीकी गोलियां बनाकर रखोहै । इनमेंसे १-१ गोली थूहरकेदूधकेसाथ देनेमें तृण-पुत्रको अंशिकीतरह सन्निपातादि समस्तसोमोंको यह नष्टकरताहै । बहुतही चीज अपने प्रभावको दियताहै और सन्देशोंमें बरा-बर अगुल पड़ताहै ॥ ५८१ ॥

५८२ वीरचित्रमरसः (द्वितीयः)

पारदं दृङ्गणं गन्धं विपतिन्दुकवीजकम् ।
सेन्धवं ग्रन्थिकं हिङ्गु समभागं विचूर्णयेत् ॥ २८१९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं कोलपित्तो न मर्दयेत् ।
गुञ्जामाघं प्रदातव्यं सवांशैः सन्निपातकात् ॥
निहन्ति तत्क्षणात्क्षीत्रं रसोऽयं वीरचित्रमः ॥ २८२० ॥
वै. चि., रं. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, मुहागा, गन्धक और इचिला, सेगानमरु, पिपलासूल, सुनीहॉग सत्र समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धकनीनीलवर्णकञ्जलीमें मिलाय वराहरेपित्तसे १ दिन-मर्दनकर कपड़ेमें पोश्लो बनाय धतूरेप्रयुक्ति सन्निपातद्रुमोंमें दोलायन्त्रसे १ घंटे स्वेदनकर १-१ रतीको गोलियें बनाकर रखोहै । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा सोमोभिनानुपानसे साथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ५८२ ॥

५८३ वीर्यस्तम्भनवटी

पारदस्य त्रयः कार्याः पञ्च लोहस्य कीर्तिताः ।
मर्दयेद्याममात्रन्तु धूर्तवीजसमुचितैः ॥ २८२१ ॥
तत्कलकं विपमभ्ये तु पत्रव्ययं विले क्षिपेत् ।
पञ्चषाणपतेस्तैले मुष्टिकां पाचयेत्सुर्ध्याः ॥ २८२२ ॥
यकप्रमभ्ये क्षिपेत्साञ्च स्तम्भनं परमं भवेत् ।
नारीसहस्रं रमयेन्मुत्तमभ्ये निधापयेत् ॥
पञ्चषाणविचुष्टिः स्याद्दृष्टिका राजपूजिता ॥ २८२३ ॥
वै. वि., बाजीरले ।

भाषा—शुद्धपारा ३ कण और लोहमम ५ कण लेकर एकदिन शुद्धमर्दनकर धतूरेकीओरेकेने गोलीबनेलायक मर्दनकरे । गोलीको ब्रह्मनागकेकट्टरमें रगकर मुँदको बन्दहीमें बन्दकर १-७ तदनकड़ेमें धीरे धीरे भाटमें गोन्धकेसाथ धतूरे-

दैन्ये आग्नानलेनेक पकानस परिक्रीयाला तैयारहोगी । इस्को मुहमे रखनेसे छड बानीकरणहोताहे और एककी वृद्धिहोताहे ।

५८४ वृकोदरवटी

सूतगन्धकतीक्ष्णाऽग्ने सताप्ये समभागिनि ।
रसाक्षमपर सर्वे पद्मोल जीरकद्वयम् ॥ २८२४ ॥
सौत्रचेल ससि धृथ निडङ्गञ्ज हरातकी ।
अम्लवेतसफ सर्वे बीजपूराभ्युदितम् ॥
गुटिकास्तेन कल्केन काया कोलास्थिमात्रका ॥
योगिन्या बहुव्रातिनीति सतत ब्रैलाक्यविव्याताया,
निर्दिष्टा हि वृकोदरीति गुटिका साण्णाभ्युना सेप्रिता ।
नि शेषाऽनिलदापशोपजरुज श्लेष्माऽऽमरागाद्भय
मन्दाग्नि प्रहर्षां चतुर्विधमहाजीर्णञ्च तूष्णं जयेत् २/२५
र र स र च र को र क स वातव्याध्यधिकार । र
सु प्रभावता वगीति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा औरगन्धक पोलाद अन्नक और सुक्का माक्षिसम्भम पद्मपण (पीपल पिपलामूठ चव्य चिन्नक सोंठ मिच) दोनोनीर सचल सेचव विन्ड हूँ अमलवेत सब समभागकर बारीकचूर्णकर परेगन्धकी नीरगन्धज्वलीम मिश्रय विनोरकसस १-२ दिन मदनर बरकीगुठलीके बराबर गोलिया बनाकर रखोहे । इनमेंस १-१ गोली गरम पानीकढायलेनस वातरोग गोप कफरोग आमरोग मन्दाग्नि ४ प्रकारकी प्रहृणी घोर अजीण इनसबरोनोकी यह तल्पण नष्टकरतीहे । ५८४ ॥

५८५ वृद्धदारुकल्पः

वृद्धदारुत्रिवृद्ध तीरुद्व्याजुंनगाभुरा ।
वाट्याल राजरुर्णां च याजिगाथा शतावर ॥ २८२७ ॥
बापासी पृथ्विपर्ण्यां च वह्निश्चैवाऽपरानिता ।
कञ्चुका तालमूत्रा च घृह पत्रा पत्राशिरा ॥ २८२८ ॥
ग्रन्थिक त्रिन्नकञ्चैव विश्वदेवा वचाऽमृता ।
याणपुष्पां च पाठा च त्रिन्ना घरण एव च ॥ २८२९ ॥
शिम कुशिशृङ्गां च मुण्डा च कात्रिगाप्यया ।
अक्त्भार शताहा च घचा च य फलत्रिन्म ॥ २८३० ॥
यवानी चाजमादा च द्विजार धान्यतण्डुला ।
विडङ्गमुस्ततागस निशे लयणपञ्चकम् ॥ २८३१ ॥
एठा पुष्परनागाह त्वक्पत्र हस्तिपिपली ।
पर्णी कुष्ठ शनी रणु जल हिन्दु स्यालकम् ॥ २८३२ ॥
पायाणभेदा वृक्षाम्ल भद्रत्वायवितुषका ।
पलिचा भागता प्राहा गुडूची त्रिष्वदास्के ॥ २८३३ ॥
रुद्राहापदासृपायां शिलरी विडकङ्गणा ।
स्वजिकायावशुक्राल्या चैवाक्षारा पत्राशिरा २/३४
अन्नकस्य पलान्यष्टौ चत्वारो गंधकस्य च ।
पल्हय रस प्राहा लाह चाष्टपल तथा ॥ २८३५ ॥
गवापी भृङ्गकस्या च शालिञ्च कशारा चकम् ।
मानस द कडिहृद्य दहता हस्तिकर्णक ॥ २/३६ ॥

भह्मता मुशला मुण्डा त्रिफला वज्रपल्पयि ।
एषा रसे पृथग्लह पुटयन्मदयत्तया ॥ २८३७ ॥
ग्रन्थिमा मारिपश्चैव क्षार बृहतिना तथा ।
उत्कटा लोहिता वह्नि माणा वाणश्च तद्रसे ॥ २८३८ ॥
पुटयेदन्नकञ्चैवमयश्चैव यथात्रिधि ।
कालशाकिनिपिष्टन पयसा सयुतेन च ॥ २/३९ ॥
यार्वा पण्डा भवत्तावत्तुऽत्तरविन्मुदुवहिता ।
एकाहृत्य शुभ भाण्डे स्थापयद्रसमुत्तमम् ॥ २८४० ॥
सर्पिणा मकरन्देन भक्षयप्रयहं तु स ।
पित्रेचाऽसु पय क्षार द्रूपं मासरसे तथा ॥ २/४१ ॥
भाजन चाऽग्निस्तापेक्ष कार्यश्चैव सह तथा ।
त्रिहितञ्च मितं चाद्यादौपधे पात्रमागते ॥ २८४२ ॥
आहारेण सम कार्यं नित्यमनाऽप्यवहिता ।
अग्निवृद्धिकर कायरागाणाञ्चाऽपहारक ॥ २८४३ ॥
वात पित्त कफे शूल हृद्भ्रमे भ्वासकासया ।
क्षय च विविधे घार शाय चैवाऽङ्गसङ्गह ॥ २८४४ ॥
आमयाते त्रिन् शूले पत्तिशूल च सजगे ।
अमृपित्त सशूले च शाय सर्वादर तथा ॥ २८४५ ॥
वर्षाये पुत्रप्राप्त्यर्थं पुसश्चैव निपत्तमे ।
अयमेव हिता नियं शुक्रवृद्धिकर पर ॥ २/४६ ॥
४ स रसायन ।

भाषा—विधाता निसोत दन्ती कम्प अन्न वासक नागत्र मलेवारीसाग अगगध गतावर कपाम पेनाशुधि पर्णा, चिन्नरमूल कोयल कञ्चुकी (नाग रौन) तात्रमगे महूलान (उष्णी) पलापल (डागदन) पिपलामूठ अथवा वाराहीकफल लालचिन्नक खरेले वा गिगेय कर्गरीक्षा पाग कुम्भ कण सहिजन गोलोसूरण भगरा गोरसमुण । तालमसाना आक्कात्थ सोंफ कुशिन चय त्रिफला, अजवाइन अन्नमोद दोनाजीर धनियक चात्र विन् पाथा तातीसपय दानोहला पांचोमद दगयचा पोटरमूल नाग चम्पा तत्र पत्र गजरोपत्र आवट डू कपूर रणुछा खस मुनाहोंग मुगधवाला पायाणभं बोहन नागरमोथा और सुरवारी १-१ पत्र मिश्रोय गाठ दवाह सहुष्ण पलापकीञ्चकीछात्र रू पात्रगरीपत्र अरामाग नवनार, माण्डगानी सबी यवन्नसबकानार १-१ पल अत्रफन्म ८ पल शुद्धगण्ड ४ पल शुद्धपारा २ पत्र लोभम्म ८ पत्र लहर सदा वाराकचुशर पात्रगण्डछा नात्राहमयगम मिलय दगु ६ भगरा चामागा सरदधी चामांगला मानरन्द कण चिन्न हस्तिरुणतण्ण मित्र मुना सों त्रिफला दृजराह गठिन ममा यकार, वनभोग उंठ्याग लालचिन्नक मानरन्द, दगुद्ध इनक शोस १-१ दिन मन्नकर इन समन्विपिन्दी बराबर जलनिम्न (दण्डुत्र किलकिल यूनानी) काल्प और गावकात्थ मिलकर मन्नागिम पकाव । पन तदारोशनर त्रररर इम मुगय पृग्मनाह

रखछोड़े । अथवा ३-३ मासकी गोलिया बनाकर मुखारकर खछोड़े । प्रकृति और बलका विचारकर १ गोलीसे २ गोलीतक थी और मधुकेसाय मिलाकर खिलावे । ऊपरसे दूध, खीर, यूप तथा मांसस औचिती देखकर दे । पाचनहोनेकेबाद हल्का और बलकारक खुराक दे । इसकेसेवनकरनेसे वात, पित्त, कफ, शूल, हृद्रोग, श्वाघ, वास, नानातरहके धातुत्रय, राजयक्ष्म, श्लेष्म, अन्नकाजकड़ना, आमवात, त्रिकशूल, पचिशूल, सर्वाङ्गशूल, ज्वलपित्त और उदररोग प्रकृतियों नष्टकर अग्निमें बढानाहै और शरीरको पुष्टकरताहै । यद्यपि ग्रन्थकारसे यहपर वैसेही भाषणमें रखना लिखाहै परन्तु दूधकायोगहोनेसे सङ्गेका भयहै इसलिए इसको मुखारकर रखनाचाहिये ।

विशेषसूचना—ग्रन्थकारने इसपाठको इसतरहलिखाहै कि उससे इतिकर्तव्यता मालूम नहींहोती । इसलिये इसमें जो लोह और अन्नक आयेहै उन्हें साधारणरितिसे तैयार न करना किन्तु इन्द्रायणसे लेकर हृज्जोइतकके रसोंमें मर्दनकर लोहेकीभस्मघरना और गटिवनसे लेकर कटवरीयातकके रसोंसे अन्नकको तैयारकरना फिर इन्हींके रसोंसे अन्नक और लोहको २१-२१ भावनाए देकर इसयोगमें मिलाना ॥ ५८५ ॥

५८६ वृद्धदार्वाचंलोहम्

वृद्धदारान्वृद्धनीगजपिप्पलिमाणकैः ।

त्रिकत्रयसमायुक्तैरामवातात्मकं त्वयः ॥

सर्वानेव गदान्धन्ति केसरी करिणो यथा ॥ २८४७ ॥

र.स. र.र., घ. र.चि. यो. म., र.सु. र.चौ., र. का., आम-वाते । र. क. आमवातान्तकेति नाम ।

भाषा—विधारा, मिश्रोत, दन्ती, गजपीपल, मानकन्द, त्रिकला, त्रिष्टु, त्रिजात घन समभागलेर वारीकचूणकर सवनी वरावर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से ४ रतीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे यह आमवातप्रवृत्ति समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ वृद्धिनाशनरसः (वृद्ध्याटवीकुठारः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं हेममाक्षिरम् ।

पथ्यारसेन त्रिदिनं शुतौलेन वासरम् ॥ २८४८ ॥

मर्दितं निद्धिमायाति रमेन्द्रो वृद्धिनाशनः ।

सुपथ्याश्रुतौलेन मेथिता चहुमात्रकम् ॥ २८४९ ॥

मपकृद्भिज्जपत्याशु कर्णस्फोररसेन वा ।

यलातेलेन धा लिद्याश्चणकस्यायताऽपि वा ॥ २८५० ॥

प्राणदायायशुकाभ्या पथ्यारसचकतैलयुक्तम् ।

वृद्ध्याटवीकुठारोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ २८५१ ॥

रसायनम् .र, मि २, व रा., र.च, हृद्यधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, सुवर्णमाक्षिक ३ भाग केर मालम्बिज्जपलीकर हरीसे स्वरसमें ३ दिन और एण्डकेलेको एकदिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हरे और एण्डकीके तेल, कनरीकी

(शिवलिङ्गी) वास, बलातेल, चनेकाकाथ, यवसारसुकरहरेकाकाथ, हरे तथा कालानमक और एण्डकेलेके रसमें किसीएकेसाथ देनेसे अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८७ ॥

५८८ वृद्धिवाधिकावटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मृतमेतन्नियोजयेत् ।

लोहं रङ्गं तथा ताम्रं कांस्यञ्चाऽथ सुमारितम् २८५२

तालकं नुरुधकञ्चाऽपि तथा शङ्खवराटकम् ।

त्रिकटु त्रिफला चर्मं विडङ्गं वृद्धदायकम् ॥ २८५३ ॥

शर्टी मागधिकामूलं पाठां सहपुष्पां वचाम् ।

एलावीजं देवकाष्ठं तथा लवणपञ्जरम् ॥ २८५४ ॥

पतानि समभागानि चूर्णयेद्य कारयेत् ।

कपायेण हरीतनया वटिकां मापसम्मिताम् ॥ २८५५ ॥

एकैकां वटिकां यस्तु निर्गिलेह्वारिणा सह ।

अण्डबुद्धिरसाध्याऽपि तथ्ये नश्यति सत्वरम् २८५६

भा. प्र., घै. र., वै. द., भै. र, रसायनसं., र. प्र., यो. म. र, क. ल., र म. मा., चि क, वृद्धयधिकार ।

टि०—अथवे पाठ केनाऽपि भूनेन अन्नदिपेकेसगीनाम्ना प्रत्यापित म चिचिन्नामनस्ववृद्धीचारण तत्राग्न्या प्रकाशित, अन्न चिचिन्नामनस्ववृद्धीचरितु न शेष चिन्तु न शेष अन्नमन्त्रमभूतपाऽप्रा-भोऽपि । दिवस्थाने इत न्यूनाऽपिक्वन्तु न पाठान्तरमापकं नदत्ताऽ-भावात् । स पाठो यथा—

यत्त गन्धनान्नाशयनमिन्न रङ्ग सलादे मृत,

ताल नुरुधकान्मनुमल मन्धम्य मर्दे पुन ।

कचूर वडुकवप विषला चर्म विडङ्ग वणा,

पाञ्चालीपत्या च पञ्चलवण गोवीणाशुभुम् ॥

भट्टाशु ह्युपलचञ्च जरेद दास सम पथ्येत्,

बायेनैव शिवाभयेन बहुश शुक्लेकृदा वर्धम् ।

ध्वजं वणिजाशु शीतपथ्या प्राणमिन्तित्वदा-

रसस्याशु प्रलय प्रयाति सहसा रोगाऽण्डवृद्धि पर ॥

नित्य पथ्यरतम्य व्रनहरणी न्यूना वर्ध नामत,

श्रीमदेपनशीन्द्राशिरिपिना व्रनदिरे केपरी ॥ इति ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, कांस्य, शङ्ख, शिवला, तृतिता, शङ्ख और कोंडी इनकीभस्में, त्रिकटु, त्रिफला, चर्म, विडङ्ग, विषारा, कचूर, पिपलामूल, पाठा, साङ्ग, वचा, इलायची, देवदारु, पाचोनमक, येमय समभागलेर वारीकचूणकर पारोणयककी माल्कमन्त्रमभूतमें मिलाय हरेकायमें १-२ दिनमर्दनकर १-१ मासकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जलकेसाथलेनेसे अगाध्यमी अण्डवृद्धि नष्टहोतीहै ॥ ५८८ ॥

५८९ वृद्धिमातङ्गकेसरीरसः

सूतं सूतं ताम्रकञ्च सूतं हेम मृताऽन्नकम् ।

सूतं शुद्धं गोनसञ्च स्वधमेतत्समादायकम् ॥ २८५७ ॥

शुक्तिप्रमाणं प्रत्येकं पार्यतं पलमात्रकम् ।

यामं प्रमर्दयेत् शुद्धं त्रिणमुष्टिर्म ततः ॥ २८५८ ॥

भावनेका प्रदातव्या चित्रकस्य नलस्य च ।
प्रत्येकं भावनास्तिस्रो दत्त्वा संशोष्य चातपे ॥२८५१॥
चिपं कर्पमितं चाऽथ मरिचं पलमाप्रकम् ।
दत्त्वा मापकसम्मानं पर्णखण्डेन द्वापयेत् ॥ २८६० ॥
दोषोत्थमेदोभूत्राऽथवृद्धिप्रजनगदं तथा ।
गोधिकां विद्रधि पाण्डुं मूत्रदोषमरोचकम् ॥
जयेज्वरं धातुगतं श्लोषदं नाशयेदसौ ॥ २८६१ ॥
र. म. मा., ना वि., हृदयधिकारे ।

भाषा—धारा, ताम्र, सुवर्ण, अप्रभ, वक्रान्त इनसर्वीभय्मे
१-० कर्प, शुद्धगन्धक १ पललेकर घारीकचूर्णकर शुद्धचिलेके-
रससे १ पहर भावना देकर चित्रक और नरकटके स्वरसोकी
३-३ भावनाएँ देकर शुद्धजलाग १ कर्प और मरिच १ पल
मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर उद्धवराधर गोलिया बनाकर
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेसाथदेनेसे वात, पित्त,
कफ, मेद अथवा मूत्रजन्यरुद्धि, प्रन्त्ररोग, घद, जुद्धरबाद,
पाण्डु, मूत्रदोष, अरुचि, धातुगतज्वर, श्लोषद इनसम्बन्धो यह
नष्टकरताहै ॥ ५८९ ॥

५९० वृद्धिहररसः

रसं गन्धं चिपं व्योषं तथा लघ्नगणश्चक्रम् ।
त्रिंशदं जयपालश्च मर्दयेद्वृद्धिवारिणा ॥ २८६२ ॥
रक्तिमानां वटीं कृत्वा पाययेत्पयसा सह ।
अनेन प्रशामं यान्ति वृद्धिध्वन्नादयो गदाः ॥ २८६३ ॥
आ. वि. हृदयधिकारे ।

टि०—अथ रसाऽष्टमनाशरसतेनाऽशरस साम्यभावहति केवल
नाराच जकालाऽमावाऽस्ति, भावनाऽपि जीरेकेण दत्ताऽस्ति, पाकश्च
विशेषतया दसोऽख्यन्तरमादस्य स्वन्त्रताऽस्तीति वैद्व्यम् ।

भाषा—शुद्धधारा, गन्धक, बछनाग, त्रिन्ट्र, पांचोन्नमक,
तीनोंशार, शुद्धजलागोदा येसब समभागलेकर घारीकचूर्णकर
चिपकके रससे एतदिनमर्दनकर १-१ रतीकीगोलिया बनाकर-
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकसाथदेनेसे अण्डरुद्धि तथा
ब्रन्त्ररोग निवृत्तहोतेहै ॥ ५९० ॥

५९१ वृषभध्वजरसः

स्वर्णं रोष्यसुनागवद्भ्रसमयुग्लोहं द्विताम्रं नवं,
क्रान्तं वीरसगन्धयोरमलयारिकद्विसहस्रात्मयोः ।
रौद्रे सप्त त्रिमायितं मणिशिला तालद्विभागोऽमलः,
दन्त्याः पट्टिकरुमागरुश्च दरदं कर्कोटिकोदङ्गणम् ॥
भाङ्गीचित्रकसिंहवास्त्रिण्वृषा निर्गुण्डिताम्बूलिका,
रघुन्का सेडगजोशकजजरणा रसनाम्बुविष्णुप्रियाः ।
माध्यक्षेप पृथक् त्रिभिर्वररसैर्वह्नप्रमाणो रसः,
श्वसं सर्वविधं ज्वरं विषमजं कासश्च पञ्चात्मकम् ॥
शुल्मं पीनसमार्तवं जठरजं श्लोऽपतानं महा-
मन्दाग्निश्च घृषध्वजो रसवरो रोगानशोपाञ्जयेत् ॥
६, १, श्वात्कासयोः ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, नाग, वद १-१ भाग, लोह और
ताम्रभस्म २-२ भा., क्रान्तभस्म ३ भा., शुद्धधारा १ भा.,
गन्धक २ भा., अगम्यकेरसमेषोदकर ७ बार धूपमें सुखार्द्धहृद
मैलखिल और हरिताल २-२ भा., दन्ती ६ भा., शिमरिफ,
खेसलानेजड़ और भुनाशुद्धा ३-३ भा.लेकर वारोकचूर्णकर
पारेगन्धककी नीलवर्णकवश्रीमें भिलाय गारदो, चित्रक, भटक-
टैया, इन्द्रायण, अडुसा, निर्गुण्डी, पान, अनन्तसूल, पंवाड़,
एण्डक, जोरा, राधा, रम, तुलसी इन प्रत्येककेरसोंसे ३-३
भावनाएँ देकर ३-३ रतीकीगोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुगारनेसाथदेनेसे श्वाप,
सग्नकारकाज्वर, विषमज्वर, ५ प्रकारका वास, शुल्म, पीनस,
आतंशदोष, जठररोग, शूल, अपतानक (रौचिचान), घोरमन्दाग्नि
इनयन्त्रको यह नष्टकरताहै ॥ ५९१ ॥

५९२ घृष्यगणचूर्णम्

घृष्यगणतुल्यं तत्पुटपन्चं घनं सिताद्विगुणम् ।
घृष्यात्परमतिघृष्यं रसायनं चूर्णरत्नमिदम् ॥ २८६६ ॥
रसायनसं., रसायने ।

टि०—शतावरी, विदारी, गोउरुक, वानरी, रघुरक, नागरला, बला,
अतिबला इति घृष्यगणेनेतद्ब्रह्मम् । अत्र गन्धमुच्छ्रित रससम्प्राप्तियत्र
वदति दासिणात्का, अनुपेय इत्यादि ।

भाषा—शतावरी, विदारी, गोसू, बेवाच, तालमराना,
नागबला, बला, कल्ली और अत्रकभस्म सबसमभागका चूर्णकर
इन्होंके रसोंसे ६-७ भावनाएँ देकर गोलावनाय एण्डकवर्णक-
पत्तोंमें छेपेटकर पुटपाकर रखोड़े । इनमेंसे ३ भाशेसे ६ भाशेक मात्रा यलाहलेदारकर दूधकेसाथ-
देनेसे यह समस्तधातुविनाशको नष्टकर फिरसे जवानो देताहै ।

५९३ घृत्पराजवटी (प्रथमा) .

कृष्णोन्मत्तजयावीजान्युरगश्चाऽहिकेनकम् ।
समुद्रशोषजं वीजं रसगन्धकमेय च ॥ २८६७ ॥
समं सञ्चूणयेत्सर्वं स्थूले जातिफले क्षिपेत् ।
मापपिष्टेन लेप्यं तदारं सम्यग्दढं यथा ॥ २८६८ ॥
कृष्णधन्तूरफलगं दुग्धे दोलागतं पचेत् ।
उद्धृत्य कृष्णधन्तूरफलादन्यफले क्षिपेत् ॥ २८६९ ॥
त्रि.पकमेयं जात्याश्च पले शृद्धं विचूर्णयेत् ।
मरिचेन समान्त्वया घटकान्भिषगुत्तमः ॥ २८७० ॥
रात्रौ भुक्वयेत् दद्यान्मधुना सितया सह ।
घृत्पराज इति ख्यातो योगो घृष्येषु चांतमः २८७१ ।
दो, र. म मा, र पा. वाजोररणे । र. म. मा. घृष्यदा-
शीति नाम ।

भाषा—कालापूरु और गाजेरीज, नागभस्म, आरीन,
समुद्रशोषकीज, शुद्धधारा और गन्धक समभागलेकर घारीक
चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमें भिलाय बडेजायके
अन्दर कोरकर रखे । इनमें धन्तूरकेरसमें मनाटुआ उरक
आदा लपकर धन्तूरकेरसमें गोलेकोरन गोदुग्धमें दल

एकपहर स्वेदनकरे । फिर पहिलेफलमेंसे निकाल दूसरेफलमें
रसकर हर्षदितकरे । इसतरह ३ फलोंमें स्वेदनकरनेकेबाद आउको
निकालदे और जायफलको बारीकीसे मिर्चबराबर गोलियां
बनाकर रखडोडे । योषाभोजनकरनेकेबाद रात्रिमें श्ममेंसे १-१
गोली मधु और शरकेसायदेनेसे यह यथेष्ट स्तम्भनकरताहै ५९३

५९४ वेतालरसः (प्रथमः)

शुद्धं मृतं विषं गन्धं हरितालं समाक्षिकम् ।
मर्दयेच्छलया तावद्यावज्जायेत कज्जली ॥ २८७२ ॥
आद्रकस्य रसेनाऽथ कारयेदुटिकाः शुभाः ।
गुञ्जामात्राः प्रदातव्याः सन्निपाते सुदाखणे ॥२८७३॥
साध्याऽसाध्यं निहन्याशु सन्निपातं भयङ्करम् ।
ईशेन कथितं ह्येष वेतालारयो महारसः ॥ २८७४ ॥
अस्य मात्रा गुञ्जमिता पिप्पली मधुसंयुता ।
योज्या घाते तथा शिशुरसेनाऽऽर्द्ररसेन वा ॥२८७५॥
सितया जंत्रकेणाऽपि देया पित्तज्वरे बुधैः ।
शर्करामधुयष्टीभ्यां मूनिम्बसितयाऽथवा ॥ २८७६ ॥
शीतज्वरेषु योज्या सा पिप्पलीमधुसंयुता ।
अथवा मधुगुण्डाभ्यामनुपानेन रोगजित् ॥ २८७७ ॥
रसायनसं., र. सं., र. चं., वै. क. र. सु., व. रा., भै. र., ज्वराऽ-
धिकारे ।

टि०—रसायनग्रन्थे रसायनाऽधिकारः । र. म. माक्षिकरसने
मरिच निबोधिन् । तथा च—“दन्तपृष्ठी हृदा वरय लोनेन शून-
वारके । कलिते नेत्रिप्रयामे केनाल विनिधायये ॥ स्थलेषु लिङ्गेषु
मोक्षप्रत्ये देक्षि । दानुमर्दनि केनाल यमदुग्निवारकम् ॥” इति श्री
श्रीशारधिकाव्या दृश्येने, आर्द्रकस्य भावनाया अभाव. । कुत्रचिदार्द्र-
करसेन त्रि.सप्तशतके भावना दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, घटनाग, गन्धक, हरिताल और गुञ्ज-
माक्षिक समभागलेहर नीलवर्णकज्जलीकर अद्रककरसमें
१-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखडोडे ।
श्ममेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाय देनेसे पीपल
अथवा अद्याप्य सन्निपातसे यह नष्टकरताहै । संहिन और
अद्रककरसमें बाणु; शर और जंत्रकेसाय पित्तज्वरोग; सुल-
हटा और शर अथवा चिरायता और शरकेसाय शीतज्वर
नष्टहोताहै । अन्यरोगोंमें पीपलमधु अथवा मधु और सौंटेकेसाय
देनेसे समन्तरोग नष्टहोताहै ॥ ५९४ ॥

५९५ वेतालरसः (द्वितीयः)

अन्नकं मृतयोद्दृष्टं शुद्धं मृतं शिलाजतु ।
ताप्यं वायुचिर्योजानि मिफला मुशली समम ॥२८७८
सन्धोरं चूर्णितं लेहं मधुना निष्कामापकम् ।
मायकं नाशयेत्सिन्धु वेतालाऽयं महारसः ॥२८७९ ॥
र. र., व. रा., र. का., वै. चि., उदाहरणिकारे ।

टि०—बनारसमेंसे बाणु कीरुत्तने अणुकीरुत्तनि गृहीतनि ।
इदंरसि मर्दने शक्यमात्रेण ।

भाषा—अन्नक और लोहभस्म, शुद्धपारा, शिलाजोत,
स्वर्णमाक्षिक, वाजुची, मिफला, सुवली और त्रिकटु समभाग-
लेहर बारीकचूर्णकर पारोम्यककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय
रखडोडे । इसमेंसे ४-४ माद्रीकीमात्रा मधुकेसायलेनेसे सिध्म-
रोग नष्टहोताहै ॥ ५९५ ॥

५९६ वेदान्तकरसः

शुद्धाहिफेनयनसारमदावहाक्षाः
सिन्धूरसूततगरोत्पलशारिवाजाः ।
कच्चूरकेदाविजयोत्पलशारिवाजै-
द्रांविष्विमुद्य वटिकांकुच नेत्रगुञ्जाम् ॥२८८०॥
जाङ्गलानां रसेर्दुर्धर्षुष्यैर्वाजीकरैररम् ।
केवल्लेन जलेनाऽपि योजितो वेदान्तकरुन् ॥ २८८१ ॥
विस्वचीप्रहणीगुल्मान् मात्राणां स्फुटनव्यथाम् ।
अन्धश्रमाऽतिसारादीन्स्वानुपानेविनाशयेत् ॥२८८२॥
नू. क., विसूचिकारौ ।

भाषा—शुद्धअश्रीम, कपूर, सुरासानो अजवाइन, बहेडा,
रससिन्धूर, तार, कमलगन्ध, शारिवा येसन समभाग लेकर
बारीकचूर्णकर कच्चूर, सुगन्धगाला, भांग, कमलपुष्प और शारि-
वाकेस्वस अथवा कार्थोंसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी
गोलिया बनाकर रखडोडे । श्ममेंसे १-१ गोली जाङ्गलपुष्प-
पक्षियोंके मासरस, दुध, शृङ्गण और वाजीकरण द्रव्योंकेमाय
अथवा अभावमें केवल जलकेसाय देनेसे दृश, प्रहणी, गुल्म,
अर्द्रका फूटना, मार्गमनादिजनित यकावट, अतिशर प्रयुति
समस्त रोगोंको यह अपने अपने अनुपातोंसे नष्टकरताहै ॥५९६॥

५९७ वेदविद्यागुटी

पारदाऽन्नकान्तानां नागभस्म समं समम् ।
दिनं व्रातासरेसं मर्द्यं वायुकायश्रगं पुनः ॥ २८८३ ॥
उक्षुत्तं चूर्णयेच्छुष्कं जातरिताऽन्नं शिलाजतु ।
ताप्यं मण्डहरयेन्तं कालोसं तुल्यमेव च ॥ २८८४ ॥
सर्वं सर्वसमं चूर्णं फलकेयश ततः पुनः ।
मुस्ताचन्दनपुरागमारिकेलस्य भूयःकम् ॥ २८८५ ॥
कपिन्धरजनीदादीनां चूर्णं सर्वसमं मूलम् ।
जम्बीराणां द्रव्यं मर्द्यं द्वियामं घटकोकृतम् ॥ २८८६ ॥
वेदविद्याघटो नाम्ना भक्षणादिशुभेहजित् ।
मधुपाश्री रसञ्चाऽनु क्षौद्रैरपि गृह्यन्मिना ॥
अङ्गुलस्य तु योजके राशौ दार्यैरसं पियत् ॥२८८७॥
भै. र., र. को., र. का., व. रा., रसायनम्, यो म., प्रमेहाऽ-
धिकार । यो. म. शार्द्रोरसस्थाने शरीरसेन मर्दनं विहितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, अन्नक, कान्त और नागभस्म देवय
समभागलेहर बारीकचूर्णकर शार्द्रोरसमें एकदिन मर्दनकर
गोलायनाय रागसमनुदने बन्दर एकदिनकी आंचदे । मण्ड-
लीकरनेमेंसे निकालकर इसमें अन्नकभस्म, शारिवा, शर्करा-
माक्षिक, मन्दूर, पेदान्त और कामोम देवय समभागलेहर

वारीकचूर्णकर पूर्वचूर्णमें समभाग मिलावे । फिर नागरमोथा, सफेदचन्दन, नागचम्पा, नारियलकीजड़, कैथ, हल्दी, दाहहल्दी, येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पूर्वराशिकेबराबर मिलाय जभीरीकेरससे २ पहर मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और आतलोंकेरस अथवा मधु और गिलोयकेरसकेसाथ देनेसे यह श्शुभ्रमेहको नष्टकरतीहै । अङ्गोलकाबीज १ नग और रसौत १ माशा रात्रिमें दूधकेसाथदेवे ॥ ५९७ ॥

५९८ वेदविद्यारसः

रसभस्म त्रिभागश्च भागेकं तापभस्मकम् ।
मृतमन्नश्च लोहञ्च कासीसश्च मन.शिला ॥ २८८८ ॥
एतानि समभागानि खल्वमप्ये विनि क्षिपेत् ।
निर्गुण्डीमुशलीचासाजयाजेरश्रिमन्थजेः ॥ २८८९ ॥
अभयाऽऽटकेजे मय्यं सप्ताहश्च पृथक्पृथक् ।
तद्गोलं कृपिकायत्रे पड्यामं तु तुपाग्निना ॥२८९० ॥
द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं रक्तमेहप्रशान्तये ।
निम्बयीजकपायश्च थोलयुक्तं पिवेदनु ॥
वेदविद्यारसो नाम्ना रक्तमेहकुलान्तकः ॥ २८९१ ॥
व रा , रक्तमेह ।

भाषा—पारदभस्म ३ भाग, रजत, अघ्रक और लोहभस्म, शुद्ध कसीस और मैनसिलथेसन १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सभाल, मुताली, अडुसा, भाग, अरणी, हरे और अवत्सके रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय आतशीशीशीमें ढाल मुहन्दकर ६-७ वषडमिठीदेकर सूरसेपर ६ पहरकी तुपाग्निमें पकावे । स्वाद्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रतीकीमात्रा नीमकेबीजोंकेकाठमें हीरादक्कनका धूम ढालकर इत्थेसाथदेनेसे रक्तमेह नष्टहोताहै ॥ ५९८ ॥

५९९ वैक्रान्तगर्भरसः

मृतं स्वर्णञ्च वैक्रान्तं मृतं तुल्यञ्च मर्दयेत् ।
चाण्डालीराक्षसीद्राव्ये द्वियामान्ते च गोलकम् २८९२
शुक्लं रज्ज्वा पुटे पाच्यं करीपाग्नी महापुटे ।
भापिकं मधुना लेहां मूत्रकृच्छ्रप्रशान्तये ॥ २८९३ ॥
वैक्रान्तगर्भनामाऽयं सर्वकृच्छ्रामयाञ्जयेत् ।
अपामार्गस्य मूलन्तु तनो पिण्डाऽणु पाययेत् ॥२८९४॥
यो, र, व, र का, वै चि, र क यो, भे र, र र की,
यो म, र को, व रा, नि र, रसेन्द्रम, मूत्रकृच्छ्रे ।
टि०—र का कृष्णान्तरेति नाम । रसेन्द्रम इमरसनान्ना
अयमेवम् । निरिदोऽस्ति । कुण्डलाग्रवभावनाऽधिकतया दत्ताऽस्ति
तस्याऽऽऽप्यनुष्ठाने न वापि क्षति पाठत्वेकं पन्नाऽस्ति । कुण्डलीक
शब्देन वापिकं ग्रहीताव्यम् । भे र, र र की, वा म, र को, नि र
पु मूत्रकृच्छ्रात्तरेति नाम । वनवरातीय पत्रवद्वेति नाम । पुन
विन्मृत्तुल्यमित्यस्य स्थाने गण तुयमिति पाठ्यु प्रमात्रालमननि
पथावस्थितानां कार्यकरपाऽऽवायत्वात् ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वैक्रान्त इनकीभस्में समभाग लेकर चाण्डाली (अभावमें सेमरुकाचन्द) और राक्षसी (अभावमें गरु-

कापात) के कूलोंकेरसोंसे २-२ पहर मर्दनकर गोलाबनाय मुताकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कसीके गजपुटकी आचदे । स्वाद्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे उडदवरावर मात्रा मधुकेसाथ देनेसे मूत्रकृच्छ्र निरुतहोताहै । इसपर ३ मासे अपामार्गकीजड़ छाछमें पीसकर पिलाना ॥ ५९९ ॥

६०० वैक्रान्तगुटिका (प्रथमा)

वैक्रान्ताऽऽम्रककान्तन्तु सस्वयं तु सुरायसम् ।
विभीतकादिसम्भूतं हेम कान्तसमं भवेत् ॥ २८९५ ॥
समावर्त्य ततः सूते योजयेत्पादयोगतः ।
कुमारीरससंघृष्टा वृतेपा गुटिका शुभा ॥
जराभृत्सुहृती ख्याता चक्रस्था नाऽत्र संशयः २८९६
रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—वैक्रान्त, अम्रक, कान्त, तुल्य और सुवर्ण १-१ तोला, बहेड़ा, आवला, हरे इनकीमात्रा २-२ तोले लेकर सबका वारीकचूर्णकर त्रिफलाकी मींगीकेसाथ १-२ दिन धमनकर त्रिकलाकी मम्बाके तैलमें घुसाकर अमिस्थायी तथा सुसु क्षितकियेहुए २० तोले पारमें गलाकर मिलादे । फिर धीकू वारकेरसमें इसे ६-७ दिन मर्दनकर अमीष्टप्रमाणकी गोलिया बनावे । इनमेंसे १ गोली मुहमें रानेसे यह बुदापे और मूत्रयुवो दूरकरतीहै ॥ ६०० ॥

६०१ वैक्रान्तगुटिका (द्वितीया)

पुनरन्यत्प्रपश्यामि प्रयोगं सुनि दुर्लभम् ।
चूर्णयित्वा तु वैक्रान्तं दुग्धमध्याज्यसंयुतम् ॥२८९७॥
ईपट्टङ्गणसंयुक्तमन्यसूयागतं धमेत् ।
तत्सत्त्वं सहसा सूते मर्दयित्वा विचक्षणः ॥ २८९८ ॥
स्वामीष्टां गुटिकां बद्धा मुखमप्ये च धारयेत् ।
जायते दिव्यदेहस्तु मासमात्रस्य धारणात् ॥२८९९॥
रसयन्त्रश्च कुरुते इन्द्रगोपकसन्निभम् ।
सहस्रधैर्यं च भवेत्सर्वलोहानि वैधयेत् ॥ २९०० ॥
रसेन्द्रम, रसायने ।

भाषा—दूध, मधु और धी समभागमें मिलाकर एकपात्रमें रखछोड़े और इसमें वैक्रान्तको गरमकरके यदातक घुसाव कि उसका घूराहोजाय फिर इसवृत्को थोड़े मुदागकेसाथ मूषामें रख धमनकरे तो इसमेंसे सत्त निकलेगा । इसरसको शुद्ध और सुसुक्षित पारमें मिलानेसे गोली धयेगी । इसगोलीको मुहमें रखनेसे एकमहीनेमें दिव्य शरीरहो जाताहै । इसगोलीको पारमें ढालनेसे वीरहठौटीके स्रष्ट रंग होजाताहै । इस रक्षितगोला एकद्वाराका हिल्ला किमीभी धातुमें देनेसे उद्यमें पूर्वकिया अथवा चन्द्रकिया होतीहै ॥ ६०१ ॥

६०२ वैक्रान्तपोट्टली

वैक्रान्तःस्रगगर्भं भसितं सुभाष्यं
व्योषाम्युना लघुचानि चिमर्दनीयम् ।

वैक्रान्तपोद्दहिलसो निषिद्धां गदार्द्धि

कादम्बिनीमिव समीरण यप हस्ति ॥२९०१॥

वैक्रान्तस्य यदा स्थाने प्रवालञ्च सुमाक्षिकम् ।

प्रवालताप्यनामादिः पोद्दहिली सर्वैरोगनुत् ॥ २९०२ ॥

र. सं., र. शि., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—वैक्रान्त, हीरा, अप्रक इनकीभस्में समभागलेकर त्रिन्द्र और बड़हरकेसौ १-१ दिन मर्दनकर अभीष्ट आकारकी गोलिया बनाय मलमले टुकड़में बाधकर पिबलाए हुए गन्ध-कमें ढालकर १ या २ पहकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर चुरचुर गन्धक को निकालद और गोलियोंको रखछोडे । इनमेंसे एकदुपपे एक उड़द तरुकी मात्रा रोगी और रोगजा बलाबल देकर पानीमें घिसकर देनेसे तमाम सतिघात, पक्षाघात और घनुर्वातादि समस्त वातव्याधिया तथा बफरीग बहुतशीघ्र नष्टहोतेहैं । यह अत्यन्त वाजीकरण और दृष्येहै । तत्तद्दोगद्वारापुनानकेसाथ देनेसे समस्तरोगोको नष्टकरतीहै । वैक्रान्तके स्थानमें प्रवालके योगसे प्रवालपोद्दहिली और माक्षिकके योगसे माक्षिकपोद्दहिली नामदेना ॥ ६०२ ॥

६०३ वैक्रान्तवद्धरसः (सुवर्णादिः) १

स्वर्णं वैक्रान्तसत्त्वञ्च द्वन्द्वितं जारयेद्द्रसे ।

समांशं तु भवेद्यावत्ततस्तेनैव सारयेत् ॥ २९०३ ॥

समेन जायते बद्धो धारयेत्तु मुपे सदा ।

संबत्सरप्रयोगेण जराकालापमृत्युजित् ॥ २९०४ ॥

कुमार्यां दलजं द्रावं मितायुक्तं पिबेदतु ।

स्वर्णयंत्रान्तपद्धोऽयं ब्रह्मायुर्यच्छते नृणाम् ॥२९०५॥

र. म., रसेन्द्रम., रसाणव., रसायनाऽधिकारे ।

हि०—रसाणवरोधोऽयं मूषाठ परन्तु तत्र नामाऽनुपानञ्च न दृश्यते । रसेन्द्रमद्रुडपि अनुपान नाऽस्ति नाम च वैक्रान्तमुद्रिकेति दृश्यते ।

भाषा—सुवर्ण और वैक्रान्तपत्र समभागलेकर द्वन्द्वमेलापकयन्त्रमें रसकर मलाकर निकालले । इधमेंसे चतुर्थांश सारणा-यन्त्रमें रस पात्रमें मिलावे और जारणकरें । जब समभाग वैक्रान्त-धीन जाणहोजायगा तब पात्रकी कटिनगोली होजायगी । इसको एकवर्षतक निरन्तर मुखमेंरखनेसे उदपा, मृत्यु, अपमृत्यु येसब नष्टहोकर दीर्घायु होजाताहै ॥ २९०३ ॥

६०४ वैक्रान्तवद्धरसः (द्वितीय)

ददानिष्कं रसञ्चैकं गन्धकं क्षौद्रयेच्छने ।

स्तोत्रंस्तोत्रं तत्र दत्त्वा पचये कृत्वा च पिष्टिकाम् २९०६

उग्रकन्दे विनिक्षिप्य वैक्रान्तं भस्मतं गतम् ।

अर्द्धनिष्कं तथोद्धोऽधः कन्दमध्ये मुलं दृढम् ॥२९०७॥

मृदाऽऽवेष्य पुट्ट्याऽऽथु बुभुट्टार्ये पुनः क्रमात् ।

दाडिमिकुसुमच्छायी रसः स्याद्योगवाहकः ॥ २९०८ ॥

र. ति., यो ग., र., रसायने ।

हि०—अत्र बहुभुभाकथायसौर्धनीरसः स्यात्प्रदाना तत्रानुपाने विनापे दृश्यत, तत्र यत्र यत्र तत्र गच्छति चान्ति इति ।

भाषा—शुद्धपारा २॥ कर्प, शुद्धगन्धक ४ मासे लेकर थोडा २ गन्धकडालकर मर्दनकरेते इसकी गोलीहोजायगी कि जहरीसुरण, बडनाग, अथवा एककली लहसुनके कन्दमें एक माशा वैक्रान्तभस्म पिछाय पारदवटीको रख ऊपरसे एकमात्र दूसरी वैक्रान्तभस्म रस उसीकेपूजेसे मुहन्दकर ६-७ कपड मिठी देकर सुखाकर कुकुरपुटकी आचवे । स्वाहशीतलहोनेपर निवाकर दूसरेकन्दमें उसीतरह रसकर आचदे । इसप्रकार ८ आंचे देनेसे अनारकैफूल जैसा रस होजायगा और यह योग-वाहकहोगा अर्थात् जिस अनुपानकेसाथ दियाजायगा उसी-कामको करेगा ॥ ६०४ ॥

६०५ वैक्रान्तवद्धरसूतः

स्वर्णस्य वसुवर्णस्य तोलैकं रेतितस्य च ।

कर्पञ्च शुद्धवैक्रान्तं रसं पोद्दशकार्ष्णिक्म् ॥ २९०९ ॥

शराचमात्रं गन्धस्य खल्वमध्ये विचूर्णयेत् ।

हस्तिरुण्ण्याश्च पर्णातिथं रसं दत्त्वा दिनद्वयम् ॥२९१०॥

कृष्णघनूरुकार्पासद्वलौतयेन रसेन च ।

सुशोधितं रेतितञ्च नागं दत्त्वाऽथ तोलकम् ॥२९११॥

कुमारीस्वरसेनैव मर्दयेच्च दिनद्वयम् ।

सप्त मूत्रदलसंलिप्ते काचकुम्भे क्षिपेद्द्रसम् ॥ २९१२ ॥

तन्मुखे पट्टिकां दत्त्वा लेपयेत्सप्तधा मुदा ।

मृत्कूर्पटविधानञ्च परिभाषां विलोकयेत् ॥ २९१३ ॥

संस्थाप्य वालुकायत्रे पचेदिनचतुष्टयम् ।

दानैः दानैः प्रदातव्यो वीतिहोत्रो भिषकैः ॥२९१४॥

स्वाहशीतो रसो ब्राह्मो यथारोगानुपानतः ।

दाययेत्सर्वरोगाणां विनिहन्ता न संशयः ॥ २९१५ ॥

जातीफलं जातिपत्री कुङ्कुमं सलयङ्गकम् ।

कोलाफिकरभञ्जय स्वस्थे स्यादनुपानकम् ॥ २९१६ ॥

अतीव काणितजननमतीवोत्साहवर्धनम् ।

अतीव कामवृद्धिञ्च वह्निवृद्धिं करोत्यसौ ॥ २९१७ ॥

श्लोषं क्षयं राजरोगं प्रमेहं विपमज्वरम् ।

प्रलेपकञ्च जीर्णञ्च तथा मन्दज्वरं जयेत् ।

वृद्धानां कानितजननं पुत्रदं श्रोकं परम् ।

आजोवृद्धिकरं श्रेष्ठं महावातविनाशनम् ॥ २९१८ ॥

श्लेष्माभयप्रशमनं कर्मजव्याधिनाशनम् ।

वैक्रान्तवद्धरसूतोऽयं बृंहणं परमो मतः ॥ २९२० ॥

टो, रसायने ।

भाषा—एकनोला उत्तमसुवर्णलेकर बारीकपूणकर शुद्ध वैक्रान्त एककप, शुद्धपारा १६ कप, शुद्धगन्धक ८ कप लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर इतितवर्णकलास, कालापट्टा और कपातके पत्तोंके रसोंसे २-३ दिन मर्दनकर अच्छीतरह शुद्धियेहुए एक तोले नागका बारीकचूर्ण मिलाकर पीउचारकेससे २ दिनमर्दनकर गुलाबकर कजगीवनाय ६-७ कपडमिठीदुईमादशीसीधीमें भर माडियामिठीरी लाटआय रफमिठीसे सुवन्दकर तागा

यन्त्रम् ४ दिनकी बहुतमन्द आन्वेदे । स्वाद्दशीतल्लोनेपर निकालकर २राछोड़े । इसमेंसे १ रसीसे ३ रसीतकमात्रा तत्रदोग हरातुपानकेसायनेसे यह समस्तोयोगों को दूरकरताहै । जायफल, जावित्री, केशर, लौंग, बेरकीमज्जा और अक्लकरा येसब सम भागलेकर वारीकचूर्णकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ माशा अनु पानकीजगह स्वस्य आदमीको देनेसे कान्ति, उत्साह, काम और अमिकीवृद्धिहोतीहै । युक्तिपूर्वक हस्तकासेवनकरनेसे शोष, धय, राजरोग, प्रमेह, विषमज्वर, प्रलेपक, जीर्ण तथा मन्द ज्वर, कान्त्यभाव, बन्ध्यत्व, ओज क्षय, वातविकार, स्लेम्-रोग और कर्मजन्माधिया नष्टहोतीहै ॥ ६०५ ॥

६०६ वैकान्तगुटी

वैकान्तसत्त्वतुल्यांशं शुद्धं सूतं विमर्दयेत् ।
दिनं दिव्यापधद्रावैस्तद्रोलं निगडेन वै ॥ २९२१ ॥
लिप्त्वा लघणगर्भायां यज्ञसूप्यां निरोधयेत् ।
छायायां शोषयेत्सन्धि त्रिदिनं तुपयह्निना ॥ २९२२ ॥
स्वेदयेद्वा फरीपाशौ दियारात्रमयोद्धरेत् ।
तद्रोलं निगडेनैव लिप्त्वा तद्वन्निरद्ध च ॥ २९२३ ॥
छायाशुष्कं धमेद्रादं बन्धमायासि निश्चितम् ।
वर्षकं धारयेद्दक्षत्रे जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ॥ २९२४ ॥
वैकान्तगुटिका छोपा सर्वकामफलप्रदा ।
कर्पकं त्रिफलाचूर्णं मन्त्राज्याभ्यां लिहदनु ॥ २९२५ ॥

र ख , रसायने ।

भाषा—वैकान्तसाय और अमिस्थायी युषुधितपारा सम-भाग लेकर यथालाभ दिव्यापधियोंके स्वरससे गोली बननेतक मर्दनकरे । फिर तिषारीघृह और आरुकादूध, फलासवेधीज, गुल १-१ भाग, सैधानमक २ भाग लेकर घनसेकूटे । कूटते कूटते जब इसमेंसे तारबधने लगे तब इसे तैयासमसे (यहहालन निरन्तर २-३ दिनतक कूटनेसे होतीहै) इसकानाम पारदनिगडहै इसकेअन्दर पारेको बन्दकरनेसे उड़नहींसका इतीलिये इसका नाम निगड अथवा प्राचीनव्यवहारमें निगल ऐसा प्रसिद्धहै ॥ रमाणं ॥) इसका गोलीपर और बिल्बके आकारकी बन्नसूपामें लेपदेकर सूपामें सैधानमकविछाकर गोलीको रकसे और ऊपरसे मंथनमकसे ढक्कर सूपका ढक्कन लगाय उठीनिगडसे सन्धि बन्दकर हाक्वरीरहके धुनेका ऊपरसे लेपदेकर छायाशुष्ककर ३ दिन तुगामिमें स्वेदितकरे । अथवा बर्षाकी अमिमें एक अक्षोराम्र स्वेदनकर निकालकर फिरसे पूर्ववत् मर्दनकर बन्नसूपामें रत्नर पूर्ववत् सन्धिबन्दकर गुप्ताकर धातुदावके चिड़ मालूम होनेतक ढट घननकरावेतो इसके पारेकी वैकान्तसेसाय गोली बपत्रायगी । इसगोलीको रमातार एकवर्षतक सुंदमेंरखनेसे बहुत दोषानुको भोगताहै । जबसे इसका प्रयोग आरम्भकरे तभीसे सुबद्धराम १-१ वर्षे त्रिफलाचूर्णं मधुसेसाय सेवनकरे ॥ ६०६ ॥

६०७ वैकान्तरसः (पडानन)

मूतमूलाऽऽन्नैर्वैकान्तकान्तात्तारं समं समम् ।
सर्वतुल्येन गन्धेन मद्यं भद्रातकान्मितम ॥ २९२६ ॥

दिनेनं तद्वैरेव घटी कुर्याद्दिगुञ्जिकाम् ।
भक्षयेद्ब्रह्मजान्ति ह्रद्ब्रजांश्च त्रिदोषजान् ॥ २९२७ ॥
प्रत्यमुशालीवह्निभागाः कुष्ठस्य षोडश ।
पिप्पलीपिप्पलीमूलं क्षिपेद्भागद्वयं द्वयम् ॥ २९२८ ॥
चतुष्कन्तु विडङ्गानां मरिचं कटुशुण्ठिके ।
ब्रह्मदण्डी तथैकैका चूर्णितं द्विगुणं गुडम् ॥ २९२९ ॥
कर्पाशं भक्षयेद्यानु हार्शारोगप्रशान्तये ।

वैकान्तात्पयो रसो नाम साध्याऽसाध्यप्रशान्तये ॥
नि र , र को , र सु , व रा , वै चि , यो म , रसायनत् ,
र चि , र क ल , र च , र श , र का , अर्शोऽधिकारे ।

टि०—नि र , र को , र सु , यो म , रसायनत् , र चि , र क ल ,
र च , र श , र वा एषु ग्रन्थु पडानन इतिनाम । तथगन्धोऽपि
मर्दनमुदाये पतिन । अत्रतु सर्वद्विगुण । अत्र भद्रातकं मर्दन विहित
पडानने भावनाचर्चैव नारिण, अनस्तरयान्तमवि उचिन प्रतिभानि ।

भाषा—पारा, अन्नक, वैकान्त, कान्त और ताम्र इनकी भरमें समभागलेकर सबकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय गिलावेके तैलसे एकदिन मर्दनकर २-२ रतीवीगोलिया बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितातुपानकेसायनेसे द्वन्द्वज और त्रिदोषजसप्तपित्तोको यह नष्टकरताहै । मुशली और चित्रक ८-८ भाग, कुठ १६ भाग, पीपल, पिपलामूल २-२ भाग, विडङ्ग ४ भाग, मरिच, कुडनी, सोंठ, ब्रह्मदण्डी १-१ भागलकर वारीकचूर्णकर सबसेदना गुडमिलाकर १-१ वर्षके मोदकबनाल । इनमेंसे १-१ मोदक गोलीकेऊपर अनुपानमें देनेसे साध्या-साध्य समस्तव्यासीर नष्टहोतेहै ॥ ६०७ ॥

६०८ वैकान्तरसायनम् (प्रथमम्)

यज्ञान्नक्षीयसत्त्वस्य कर्पमके समाहरेत् ।
निष्कार्दं भस्म येनान्तं भस्म पादवर्जं समम् ॥ २९३१ ॥
स्वर्णं रौप्यं प्रवालञ्च माक्षिकं वृद्धदारकम् ।
तुगाक्षीर्यमूतासत्त्वं कर्पमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३२ ॥
पुराणसर्पिषा शूद्रसिताभ्यां सह याजितम् ।
धान्यराशौ क्षिपेन्मालं मापमात्रनिर्पेयणात् ॥ २९३३ ॥
जरा न लभते स्थैर्यं धारोष्णशीरपायिनात् ।
रोगसद्वा ह्ययं यान्ति वैद्योपधविजिता ॥ २९३४ ॥
वृ क , रसायने ।

भाषा—यज्ञान्नक्षयस्य १ वर्षे, वैकान्त और पारदगन्ध २-२ माश, सुवर्ण, रत्न, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक इनकीगन्धमें, विपारा, बरालोचन और गिलोयस्य १-१ कर्पणकर तुगना यी, मधु और दाक्षर अन्धानमें मिलाकर धीकरनेमें इस सुदबन्दहर पान्यराशिमें गाड़दे । एकमहीनेबाद निकालकर १-१ मासेकी मात्रा अथवा रोग और रोगीका बलाबत देगवर मात्रा वायम-कर धारोष्णद्वैतयाप देनेमें तुगागा नष्टताहै । और त्रिन रोगोंमें वैय तथा औषधियोंने जशव रुदिदाहो के अगन्ध्य-रोग नष्टहोताहै ॥ ६०८ ॥

६०९ वैकान्तरसायनम् (द्वितीयम्)

रक्तिकाऽष्टकसम्मानं वैकान्तभसितं हरेत् ।
 पोढा गन्धकसञ्जीर्णं रसं कर्पूरद्वयं क्षिपेत् ॥ २९३५ ॥
 वैकान्तपादसम्मानं सूतं हेम विनिःक्षिपेत् ।
 विट्टमं मौक्तिकञ्चैव कर्पूरमानं पृथक्पृथक् ॥ २९३६ ॥
 शाल्मलीसारिवाद्राक्षावाराहीवानरीभवेः ।
 प्रत्येकैः स्वस्वैः सप्त भावयित्वाऽद्धमायिकम् ॥ २९३७ ॥
 नागकेसरतालीसकणाककट्टशृङ्गिका-
 नुगाक्षीर्यमृतासत्त्वसर्पिःक्षौद्रविमिश्रितम् ॥ २९३८ ॥
 लिहन्न लिप्यते राजयश्मपद्मदुरासदम् ।
 पुंस्त्वहानिं श्वासक्रासावग्निमान्द्यमरोचकम् ॥ २९३९ ॥
 ग्रहणीं शोषगुदजायुदराणि हलीमकम् ।
 निहत्य कुस्ते नित्यं पुर्यं दीर्घजीवितम् ॥ २९४० ॥
 ४. क., रसायने ।

भाषा—वैकान्तभस्म ८ रत्ती, पद्मगुणगन्धकजारितपारद-
 भस्म २ कर्प, सुवर्णभस्म २ रत्ती, प्रवाल और मोतीकीभस्म
 १-१ कर्प लेकर सेमलकामुला, सारिवा, द्राघ, वाराहीकन्द
 और केवाचके स्वरसोंसे ७-७ भावनाए देकर ४-८ रत्तीकी
 गोलिया बनाकर रसजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नागकेशर,
 तालीसपत्र, पीपल, काकड़ासींगी, वंसलोचन, गिलोयसत्त्व
 इनके ३ मासे समभागचूर्णकेसाथ घी और मधुमें मिलाकर
 सेवनकरनेसे दुःसाध्य राजयश्म, पण्डव, श्वास, कास, मन्दाग्नि,
 अर्धधि, प्रवृणी, शोष, वक्सासीर, ८ उदररोग, हलीमक इन
 रोगको दूरकर यह उपरको दीर्घजीवी बनाताहै ॥ ६०९ ॥

६१० वैकान्तमूतकरसः

पुनरन्यत्रवक्ष्यामि वैकान्तविधिलक्षणम् ।
 वैकान्तकरसं प्राप्य कस्य लोके द्रिच्छता ॥ २९४१ ॥
 ते च सप्तविधाः प्रोक्ताः फर्मं तेषामनेकधा ।
 श्वेतो रक्तस्तथा पीतो नीलः पारावतप्रभः ॥ २९४२ ॥
 मयूरगलकप्रत्यस्तथा मरकतप्रभः ।
 तेषां फर्मं प्रवक्ष्यामि यादृशं यस्य जायते ॥ २९४३ ॥
 श्वेतञ्च चूर्णयित्वाश्मं व्याघ्रीकन्दोदरे क्षिपेत् ।
 स्वधैर्येक्ष दियारात्री यावच्च त्रिदिनं भवेत् ॥ २९४४ ॥
 सुस्वेदितं ततो ध्यात्वा प्रक्षिपेत्पारदं ततः ।
 तद्दण्डाजायते भस्म हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४५ ॥
 सुनिर्वाणं ततो ध्यात्वा पलं पलशते क्षिपेत् ।
 तारन्तु जायते भस्म विद्युदस्फटिकारुति ॥ २९४६ ॥
 तस्मूते मेलयेद्भस्म समभागं विचक्षणः ।
 चारयेत्प्रजतं सूते हयमूत्रेण मर्दयेत् ॥ २९४७ ॥
 अन्धमृगागतं पाच्यं कारयेत् या तुषाट्टये ।
 अहोरात्रं त्रिरात्रं वा भयेद्भस्मिहो रसः ॥ २९४८ ॥
 स्पृष्टौन सर्वलोहानि रजतञ्च इरिष्यति ।
 रतेऽप्यर्घ्यकृतं घर्मं जरादारिद्र्यनाशनम् ॥ २९४९ ॥

स्वेदनं व्याघ्रपचाश्च कन्दे यामं विधाय च ।
 सारयेत्सप्तवारांश्च रसं चैव पलं तथा ॥ २९५० ॥
 तच्चैव बलमानेन क्षिपेद्धेमपले युधः ।
 प्राप्नोति भस्मतां सर्वं पुनर्हमशते क्षिपेत् ॥ २९५१ ॥
 भस्मतां याति तत्सर्वं शुद्धहेमसमप्रभम् ।
 तद्भस्म तु रसेन्द्रेऽथ पुनरुद्धेन मेलयेत् ॥ २९५२ ॥
 भवेद्भस्मिहो ह्येव ततः सिद्धरसो भवेत् ।
 विष्यन्ते सर्वलोहानि कनकं शोभनं भवेत् ॥ २९५३ ॥
 दारिद्र्यनाशनं सूतं सर्वलोहानुक्म्पनम् ।
 पीतन्तु हेमकारि स्यात्स्वेदितो व्याघ्रिकन्दजे ॥ २९५४ ॥
 भाषितो वाजिमूत्रेण पारदीयो महारसः ।
 पलं पलशते क्षिपत्वा पुनर्हमशते क्षिपेत् ॥
 हेमसूतेन तस्मूते क्रोडिवैधी भवेत्प्रसः ॥ २९५५ ॥
 रसेन्द्रं, सर्वरोगे ।

भाषा—वैकान्त मातप्रकारका होताहै और उनकरकार्यभी
 अलग २ हैं । श्वेत १ रक्त २ नील ३ पीत ४ पारावतप्रण्डाभ
 ५ मयूरवण्डाभ ६ और पनेकेरुद्रका ७ । इनमेंसे श्वेत वैकान्तको
 लेकर व्याघ्रीकन्दमें डालकर उसीकेपूदिते बन्दकर ६-७ कपडूमिमी
 देकर सुपाकर सुधरयन्त्रमें रख ३ दिनतक स्वेदनकरे । स्वात्र-
 शीतलोदनेपर निकालकर पापेसाथ मर्दनकरनेसे तत्स्र्ण भस्म
 होजातीहै । फिर धोड़ेकेतानेमूत्रसे एकदिनरात मर्दनकरनेसे निह
 त्यता होजातीहै । इसके १ पलको १०० पल चादीको गलाकर
 डालनेसे विद्युदस्फटिकेरत्नकीभस्म होजातीहै । इसभस्मको
 समभाग पापें मिलाकर धोड़ेकेमूत्रसे मर्दनकर अन्यमृगामें
 बन्दकर एकदिन कर्मां अथवा ३ दिन तुषोंमें अग्निदेनेसे पारद
 अग्निस्थायी होजाताहै । इसकास्पर्शकरनेसे सबप्रकारके लोहोंकी
 चादी होजातीहै । इसीतएव यही क्रिया रक्तवैकान्तमें करनेसे
 रजता होतीहै और बुडापा तथा दारिद्र्य दूरहोताहै । इसी
 व्याघ्रीकन्दमें रख एकपहरस्वेदनकर एकपलसमें सारणकर ३
 रत्तीको एकपल गलेहुए सुवर्णमें डालनेसे भस्म होजातीहै । इस
 भस्मको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे शुद्धसुवर्णके रत्नकी भस्म
 होजातीहै । इसभस्ममें आधाभाग पारा मिलातेसे अग्निघट
 होजाताहै और उसक स्पर्शसे सब लोह सुवर्णतदशहोजातेहैं ।
 इसीतएव पीले रत्नके वैकान्तको व्याघ्रीकन्दमें स्वेदितकर सम-
 भागपारा मिलाकर पूर्ववत् धोड़ेके मूत्रमें मर्दनकरनेसे अग्निस्थायी
 होजाताहै । इसके १ पलको १०० पल सुवर्णमें डालनेसे सम-
 स्तकी भस्म होजातीहै । इसका एकभाग वीटिगुणित पापें
 डालनेसे क्रोडिवैधी होताहै । इसीतएव सुभीरुको वैकान्तको
 इनीप्रविद्यासे स्वकीयरत्नकं धातुमें मिलातेसे उर्वायको पंदा
 करतेंहैं । रोगोंको नष्टकर बुडापको दूरकरना सब साधारण
 कार्यहै । यदापर ग्रन्थकारने षड्विचि अर्थवादसे कामलियाहो
 तो भी यह एकान्त मिथ्या नहींहै इयथाको भ्यान्तों
 रचना उचितहै ॥ ६१० ॥

६११ वैदूर्यरसायनम्

क्रान्ताकल्केन वैदूर्य सहगन्धेन मारितम् ।
 तद्गन्धस्मनाऽऽश्राणेन तद्वद्धं मृतहम च ॥ २९५६ ॥
 तयोः समं तीक्ष्णरजो मृतं रूप्यञ्च तत्समम् ।
 मृतञ्च विमलं सर्वैः समं सर्वं विमदितम् ॥ २९५७ ॥
 मिलितं मोक्षसारेण गोलीकृत्य विशोषयेत् ।
 अङ्गुलाद्धदलेनैव शिलाजेन विमुद्दयेत् ॥ २९५८ ॥
 वालुकायन्त्रमध्यस्थं पक्षाद्धं शनकैः पचेत् ।
 स्वतःशीतं समाहृत्य कुमारीमूलसारतः ॥ २९५९ ॥
 मर्दयित्वा विशोष्याऽथ पीलुमूलजलेस्तथा ।
 तथैव चित्रमूलाङ्गिः कन्धारीमूलसारतः ॥ २९६० ॥
 चिरबिल्वरसैस्तोयै र्शिशोष्य च विचूर्ण्य च ।
 मृतसजीवनं ह्येतद्वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६१ ॥
 आर्द्रकद्रवसंयुक्तं शुद्धामात्रं रसायनम् ।
 दातव्यं चित्रतोयैषां सधिपाते पिसञ्जके ॥ २९६२ ॥
 दन्तबन्धे तु सञ्जाते बहुमात्रममुं रसम् ।
 पादयो र्धर्मयेद्यत्नात्तद्येधमवाप्नुयात् ॥ २९६३ ॥
 जातचेष्टस्य सलिलं मूर्ध्नि शीतं विनिःक्षिपेत् ।
 शतकुम्भमितं स्वाद्गु तीव्रां शुद्ध्यते ततः ॥ २९६४ ॥
 यत्किञ्चिदाचते तस्मिंस्तत्तद्देयममीप्सितम् ।
 आयुधोद्वेषशिष्टं स्यात्सुखी जीवति मानवः २९६५ ॥
 त्रिदोषजातरोगेषु दातव्यं तण्डुलोन्मितम् ।
 पलाद्धंसितया युक्तमन्यथा हन्ति रोगिणम् ॥ २९६६ ॥
 एकद्रोषोद्भवे रोगे संसर्गजनिते तथा ।
 देयमेतद्धि म्रिपजा वैदूर्यकरसायनम् ॥ २९६७ ॥

र. शू, रसायने ।

भाषा—रसनिर्वासे चतुर्गुणित कोयल और गन्धककाकल्क बनाय बीचमें रसनिर्वाको रस शरावमण्डुमें बन्दकर ६-७ कप मिठीदेकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाज्ञसीतल्लोनेपर फिर उषीतरह कल्कमें बन्दकर आचदेवे । ऐसे जबतकभस्म न होजाय तबतक करवादे । यह भस्म २ कप, सुवर्णभस्म १ कप, लोह और रजतभस्म ३-३ कप, रजतमाक्षिक ९ कप मिलाकर केलेकेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सुखाकर ऊपरसे आधाअङ्गुलमोटा शिलाजीतकालेपकरके शरावमण्डुमें रस वालुकायन्त्रमें बन्दकर ७) दिनकी मन्दआंचदे । स्वाज्ञसीतल्लोनेपर निकालकर पीडंवार, पीड, चित्रक, हेम, सुद-कृष्ण इनप्रत्येकके स्वर्णसे १-१ दिन मर्दनकर सुखाकर रख छोड़े । इसमेंसे १-१ रती अदरखेरेरस अथवा चित्रककेवापके साथ देनेसे सञ्चारहित सधिपात नष्टहोताहै । दन्तबन्धमें ३ रती रसको अदरखेरेरसमें मिलाय तण्डुलोंमें मालित्वाकरनेसे दन्तबन्ध एतकर बोलनेलागताहै । उषवक १०० घड़े ठ्यापानी मत्पेपर डालना इतकेबाद तीनमूल मादमलो तष जो कुछ मांग वह धानेको देना । यदि आयु बाकी होगी तो यह निर्विष नीबेण मर्दो तो दवा अपना प्रभाव दिखाकर निवृत्तहोजायगी ।

साधारणरोगोंसे एकचावलभर मात्रा २ कप शरवनेसाय देना । अन्यथा रोगीको मारडालेगी । एक, दो अथवा संसर्गद्रोषोंमें वैदूर्यरसायन देनेसे तत्क्षण लाभहोताहै ॥ ६११ ॥

६१२ वैदूर्यादियोगः

वैदूर्यमुक्तामणिगैरिकाणां
 मृच्छल्लहेमामलकोद्रुकानाम् ।
 मधुदकस्येश्वरसस्य चैव
 पानाच्छर्मं गच्छति रक्तपित्तम् ॥ २९६८ ॥
 च सं., रक्तपिते ।

भाषा—रसनिर्वासा, मोती, माणिक्य इनकीभस्में और सोनागैरु समभाग मिलाकर रोगीका बलाबल देखकर १-१ रती मधुनगैरुदेकेसाय देकर कालीमिठी, शङ्ख, सुवर्ण और आचले इनमें रसवाहुआ पानी, मधुका शरवत अथवा ईलकारस पिला-नेसे रक्तपित नष्टहोताहै ॥ ६१२ ॥

६१३ वैद्यनाथरसः

शङ्खस्य घलयं निष्कं चतुर्निष्का पराटिकाः ।
 कर्पाशं नीलकण्ठकं तुत्यं गन्धाद्मटङ्गणम् ॥ २९६९ ॥
 तारं नागं रसं चाऽथ निष्कांशं पूर्ववत्पुदेत् ।
 घराटचूर्णमण्डूरकल्पितालेपने पचेत् ॥ २९७० ॥
 अस्याऽर्द्धमापं मरिचाऽर्द्धमापं
 ताम्बूलवह्नीरसमावितञ्च ।
 तत्पत्रलिप्तं मधुनाऽवलिष्ट्या-
 द्वायं नवीनेन घृतेन घाऽपि ॥ २९७१ ॥
 नाडीमार्गं निर्गते चाऽल्पमरुपं
 पथ्यं भोज्यं लोकरनाथोपदिष्टम् ।
 यामे यामे चैव मामण्डलान्ता-
 त्सिद्धं सद्यः शोषजिह्वेयनाथः ॥ २९७२ ॥

र. र सं., र च., राजयद्रमणि ।

भाषा—शङ्खनाभि ४ मासे, पीलीकौड़ी, नीलेकाचकी चूड़ी, रतिया, गन्धक, सुशामा १-१ कप, रजत, नाग और पारदभस्म १-२ मासे लेकर बारीकचूर्णकर चित्रककेजायसे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय बौड़ी और मण्डूरभस्मको चित्रककेजायमें मर्दनकर गोलेपर लेपकर शरावमण्डुमें बन्दकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञसीतल्लोनेपर निकालकर रगछोड़े । इसमेंसे ४-४ रतीकी मात्रा समभाग मरिचके चूर्णनेसाय मिश्रण पानकेरससे मर्दनकर पानपरलागकर थोड़ासा मधु डालकर तिलवे अथवा मक्खन या पीनेमायदेवे । आमागयमें पड़नेकेबाद २-३ प्राणमोजनदेकर चित्त गुलाबे और १-१ घरेमें मूल-ल्लोनेपर थोड़ा २ भोजनदे । इधरकार एकमण्डलकर करनेमें यह राजयद्रकको नष्टकरताहै ॥ ६१३ ॥

६४४ वैद्यनाथवटी (प्रथमा)

शार्णं गन्धमथो रसस्य च तथा कृत्वाऽप्रयोः कञ्जलीं,
 तित्तात्पूर्णमग्राक्षमेयं सखन्तं रीद्रे त्रिधा भावयेत् ।

पश्चात्सुपवीशुभेन पयसा ऋषयेऽमले त्रैफले,
संशोष्या गुटिका कलायसदृशी कार्या युधे र्यन्ततः ॥
ज्ञात्वा दोषबलं रसेन सुपवीपत्रस्य पर्णस्य वा,
एकद्वित्रिचतुःक्रमेण घटिकां दद्यात्कटुष्णाम्बुना ।
हन्ति शूलनिचयं नवज्वरं पाण्डुतामरचिदोषसञ्चयम
रेचने च दधिभक्तमोजनं वैद्यनाथसुकुमाररेचनम् ॥
भै. र., र. घ., घ., ज्वराऽधिकारो ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ मासे, कुटकी १
कप लेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय
करलेकेपतोंके रस और त्रिफलाकेवायसे धूपमें २-३ दिन
भावना देकर मटरबारापर गोलियें बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे
१ गोलीसे ४ गोलीतक रोग और और रोगीका बलाबल देख-
कर करेले अथवा पानकेरस या गरमपानीकेसाय देनेसे शूल,
नवज्वर, पाण्डु, अरुचि, शोथ, इनसबको यह दूरकरतीहै ।
जुलाबलग्नेकेबाद दही, भात देना ॥ ६१४ ॥

६१५ वैद्यनाथवटी (द्वितीया)

पथ्या त्रिकटु सूतञ्च द्विगुणं कानकं तथा ।
मन्युमणिरसैरस्मल्लोणिकाया रसैः कृता ॥ २९७५ ॥
गुटिकोदरगुल्मादीन्पाण्डुतामयधिनाशिनी ।
हृमिकुष्ठगात्रकण्डुपिडकाश्च निहन्ति च ॥
गुटी सिद्धफला चैवं वैद्यनाथेन भाषिता ॥ २९७६ ॥
र. सं., भै. र., र. घ., घ., र. वि, उदावर्तनाहाऽधिकारो ।

भाषा—हैं, त्रिकटु और रससिन्दूर १-१ भाग, शुद्ध-
जमालगोदा २ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर मण्डकपर्णी
और अमलोनियारिसोंसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी
गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा
रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे उदर, गुल्म, पाण्डु, हृमि, उग्र,
कण्डु, पिट्टिका प्रयतिको यह नष्टकरतीहै ॥ ६१५ ॥

६१६ वैद्यनाथवटी (दधिवटी) (तृतीया)

पकेष्टिकाहरिद्राभ्यामागारधूमकेन च ।
शोधितं सूतकं प्राणं तोलकद्वयसम्मितम् ॥ २९७७ ॥
भृङ्गराजरसेः शुद्धं गन्धकं सूततुल्यकम् ।
हरितालं विषं तुल्यमैलयालुकात्रकम् ॥ २९७८ ॥
सर्पेरं भासिकं कान्तं सव्यमेकत्र कारयेत् ।
सर्पांदां कज्जलीं प्राहा आयेयैश्च पुनः पुनः ॥ २९७९ ॥
सिन्धुपाररसे चैव ज्योतिष्मत्या रसे तथा ।
रसेऽपराजितायाश्च जयन्त्याः स्वरसे तथा ॥ २९८० ॥
रक्तचिपकमूलोत्थं रसे च परिष्मायेत् ।
घटिकां सर्पपाकारां योजयेत्कृशालो मियक् ॥ २९८१ ॥
ततः सप्त यटीं दद्यादुष्णेन धारिण्या सह
अनुपानञ्च कर्तव्यं कज्जल्याः कण्ठ्या सह ॥ २९८२ ॥
सन्निपातज्वरं चैव सशोथं प्रहर्षणगदे ।
पाण्डुरोगेऽग्निमान्द्ये च त्रिचिधे विषमज्वरे ॥ २९८३ ॥

शुक्रमज्जगते दद्यान्न तु कासे कदाचन ।
नित्यं दध्ना च भोक्तव्यं सितया युक्तमेव च ॥ २९८४ ॥
स्नातव्यं ह्यभयान्नित्यं चयोदोपानुसारतः ।
वारिहीनञ्चाऽलवणं दधि पथ्यं सदा भवेत् ॥
वैद्यनाथवटीनाम्ना वैद्यनाथेन निर्मिता ॥ २९८५ ॥
भै. र., घ., शोधाऽधिकारो ।

भाषा—पकीहुईईट्ट, हल्दी, धरकेधुंए प्रथमिमे शुद्धकिया-
हुआ पारा २ तोले, भंगरेकेरसमें कईबारा बुझायाहुआ गन्धक
२ तोले, शुद्धहरिताल, घटनाग औरतुतिया, गेंहुला, ताम्र, रघ-
रिया, स्वर्णभासिक, कान्तलोह इनकीमसमें १-१ तोला लेकर
सबकोपारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय संभाजू, मालकां-
गण, कोयल, जैती, लालचित्रककीजइ इनसबके यथासम्भव-
स्वरस अथवा क्वाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर सर्पप्रमाण गोलियां
बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे ७-७ गोलिया कज्जली और पीपलके-
साय मिलाकर गरमजल अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे
सन्निपात, शोथसहितमहणी, पाण्डु, मन्दाग्नि, नानातरङ्केचिपम-
ज्वर, शुक्र और मनगतज्वर, इनसबको यह नष्टकरतीहै ।
इसरसको खांसिमें मूलकरमी नहींदेना । दही और शक्करकेसाय
पच्यदेना । अवस्था और दोषोंका सुलाकर मानकरना ।
नमक और जल नहीं देना, दही चाहेजिनना खावे ॥ ६१६ ॥

६१७ वैश्वानरयोगः

भाषितं मातुलुङ्गाम्लैस्ताम्रञ्च मारितं दिनम् ।
आर्द्रकस्वरसेरुदा विषं तुल्यञ्च चूर्णयेत् ॥ २९८६ ॥
पिप्पलीपिप्पलीमूलद्रव्यै युक्तं विभाययेत् ॥
हिङ्गुः करञ्जयीजञ्च गुण्ठीलगुनसेन्धवम् ॥ २९८७ ॥
परण्डुतैलसम्पिष्टं मायिकं भक्षयेत्सदा ।
योगो वैश्वानरो नाम शूलं हन्ति त्रिदोषजम् ॥
साध्याऽसाध्यञ्च शूलञ्च हन्ति वैश्वानरो रसः २९८८
र. को., यो. म. श्लाऽधिकारो ।

भाषा—विजोरेकेरससे की हुई ताम्रमस्य और अदररसे-
रससे एकदिन भावनादियाहुआ घटनाग समभागलेकर पीपल
और पिपलामूलके क्वाथोंसे एकदिनमर्दनकर मुनाहीण, करंजीज,
घोट, एकट्टीलहसन और संघष १-१ भाग लेकर बारीक-
चूर्णकर पूर्वयोगमें मिलाय एण्टेकेरसमें मर्दनकर १-१ मानेकी
गोलियां बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा
रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे छाष्य अथवा अनाप्य त्रिदोष-
शुक्तो यह नष्टकरतीहै ॥ ६१७ ॥

६१८ वैश्वानररसः (वृद्धायः) (प्रथमः)

रसं गन्धं सूतं शुल्यं नागं प्रत्येकतोलाकम् ।
एकत्र कियते घृत्ना पश्चादिमानि निक्षिपेत् ॥ २९८९ ॥
पिप्पलीपिप्पलीसर्पेरं मरिचं चिञ्चिकामयम् ।
नागं स्वयंकाशशरं यवभाट्यं टट्टणम् ॥ २९९० ॥

प्रत्येकं मापपदकं स्याद्ब्रह्मते स्वरुणं तथा ।
 कूप्माण्डकरसं दत्त्वादिर्नमैकं विमर्दयेत् ॥ २९९१ ॥
 अन्धभूपागतं पक्त्वा यावद्यामचतुष्टयम् ।
 उत्तार्य शीतलं नीत्वा रसं बह्वचतुष्टयम् ॥ २९९२ ॥
 अग्निमान्ये ज्वरे दद्यादुदरे पारदं परम् ।
 अतिपुष्टिकरः सम्यग्बुद्धवैश्वानरो रसः ॥ २९९३ ॥
 रसचि, र का, अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और नागभस्म
 १-१ तोला, छोटीपीपल, पीपल और इमलीकाष्ठार, मरिच,
 मोंट, सब्जी, यवसार, मुनासुहागा येसब ६-६ मासेलेकर
 बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय स्वरुण
 और कौहलेकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्ध
 भूपामें बन्दकर मूधरयन्त्रमें रख ४ पहर स्वेदनकरे । स्वाह-
 शीतलशोनेर निकालकर १२-१२ रती समय अथवा रोगो
 चितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, ज्वर, उदररोग, कृवाता, इन-
 सबको यह नष्टकरताहै ॥ ६१८ ॥

६१९ वैश्वानररसः (द्वितीयः)

विष्णुकान्ता च जयपालं लाङ्गली सुरदालिका ।
 यवचिञ्चिजसारणे रसाद्दिगुणगन्धकम् ॥ २९९४ ॥
 पक्षं विमर्दितं सर्वं स्वेद्येन्मुद्वह्निता ।
 गुल्मे गुञ्जात्रयञ्चाऽस्य सोष्णास्तु घृतसैन्धवम् २९९५ ॥
 यातजे कफजे लिह्यान्ध्वाद्रकसमन्वितम् ।
 ससितामाक्षिकं पित्ते सोऽयं वैश्वानरो रसः ॥ २९९६ ॥
 र र. स, र. को, गुल्मे ।

भाषा—शेयल, शुद्ध जमालगोटा और करिहारी, बन्दाल,
 शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर
 पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय तितलीकेरससे १५
 दिनतक लगातार मर्दनकर एरण्डवर्षादेकेपत्तोंमें लपेट एक अहुल-
 मोटा बीचड़ लगाकर अज्ञारोंमें स्वेदनकरे । स्वाहशीतल
 होनेपर निकालकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली घी और सेंधेनमककेसाथ देकर थोड़ा गरम
 पानी पिलानेसे वातिकगुल्म नष्टहोताहै । कफजगुल्ममें मधु और
 अर्द्धरकेसाथ, पैतिकमें शकर और मधुके साथदेवे ॥ ६१९ ॥

६२० वैश्वानररसः (तृतीयः)

संशुद्धपारदसुगन्धशिलाजतूर्ना
 भागद्वयञ्च मुशलीदशभागयुक्तम् ।
 खर्शुरकञ्च सुपयो कटुभागमेकं
 श्रेष्ठं विपञ्च युगभागसमञ्च चूर्णम् ॥ २९९७ ॥
 शृङ्गोदकेन दिनसप्तकमर्दितोऽस्ती
 मध्वन्विता मरिचमात्रगुटी विधेया ।
 नानाविधांश्च शमयेत्तु गदाश्रराणां
 वैश्वानरो हि रसनाम बुसुभुताद ॥ २९९८ ॥
 र. (मा), अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और शिलाजीत २-२ भाग,
 मुशली १० भाग, खुहार, मगरैल और मरिच १-१ भाग,
 शुद्धबछनाग २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नील
 वर्णकजलीमें मिलाय भगोकेरससे ७ दिनमर्दनकर मरिचवरा-
 वर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा
 समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे अमिको प्रदीप्तकर नानाप्रकारक
 रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२० ॥

६२१ वैश्वानररसः (चतुर्थः)

दशाटङ्कमिता शुण्ठी मरिचं पिप्पली च्वा ।
 सीभाग्यञ्च तथा सूक्ष्मं सर्वमेकत्र चूर्णितम् ॥ २९९९ ॥
 मृतकं द्रुमात्रेण गन्धकं तत्समं विपम् ।
 एकत्र चूर्णितं शृङ्गं कर्तव्यं चैकभागतः ॥ ३००० ॥
 एकभागमितं ग्राह्यं सर्वं पर्णं चाम्भसा ।
 कासं श्वासं हरेच्छीघ्रमर्द्धचि तत्क्षणादपि ॥ ३००१ ॥
 गुल्मादिकं महान्याधि यकृतं प्रहणीमपि ।
 नववर्णमितं याति प्रभावो भूमिमण्डले ॥ ३००२ ॥
 खण्डवातादिकान्सर्वायं समं कृत्या व्यपोहति ।
 वैश्वानरमितिल्यातं क्षेपञ्च कुरते ध्रुवम् ॥ ३००३ ॥
 र. का, अरोचकाऽधिकारः ।

भाषा—सोंट, मिर्च, पीपल, वच, मुनासुहागा ये प्रत्येक-
 २॥ कर्प, शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग ४-४ मास लेकर
 बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय पानके-
 रससे मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे कास,
 श्वास, अर्द्धचि, गुल्मादिक महान्याधिया, यकृत, प्रहणी,
 समस्त वातविकार, मन्दाग्नि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२१ ॥

६२२ वैश्वानररसः (पञ्चमः)

व्योषं विपं गदो वह्निं निर्गुण्डीव्याधिघातकी ।
 अजमोदञ्च सर्वेषां समाग्नागन्समाहरेत् ॥ ३००४ ॥
 शृङ्गणचूर्णं ततः कुर्याद्भावयेत्पिचुमन्दजे ।
 काथैरेकोनविंशत्या वारान्भुङ्करसेस्ततः ॥ ३००५ ॥
 सप्त वारान्भावयित्वा मधुना मुष्टिका किरैत् ।
 मायैकमानका राज्ञी मधुना सम्प्रयोजयेत् ॥ ३००६ ॥
 अयं वैश्वानरो नाम्ना योगो हृष्टप्रभाववान् ।
 जलोदरादिरोगाणां विनिवारणदक्षिणः ॥ ३००७ ॥
 रताल, उदराऽधिकारः ।

भाषा—त्रिकटु, शुद्धबछनाग, कुठ, चित्रकमूल, निर्गुण्डी,
 अमिलतासकागुदा, अजमोद सब समभागकर बारीकचूर्णकर
 नीमकेमद अथवा स्वरससे २१ और मंगेकेरससे ७ भावनाएँ देकर
 १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 रात्रिमें मधुकेसाथ देनेसे यह जलोदरादि समस्त उदररोगोंको
 नष्टकरताहै ॥ ६२२ ॥

६२३ वैश्वानरलोहम् (प्रथमम्)

द्विपलं तिमितीडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।
शम्भूकमस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥
चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।
चूर्णं सन्निपथ्य खल्वादीं कारयेदकतां मपक्वा ॥ ३००९ ॥
श्लश्यागमयैलायां खादेन्मापहृद्यं नरः ।
श्लशमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ ३०१० ॥
शे. र., घ., र. क., श्लाऽधिकारे ।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, पौषेकीभस्म और सेधानमक समभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन शुष्कमर्दनकर रखाओड़े । श्लश्यानेकेसमय २-२ मासे उचितानुपानकेसाथ लेनेसे साध्य अथवा असाध्य समस्तश्लोको यह नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

६२४ वैश्वानरलोहम् (द्वितीयम्)

फलत्रिकत्वचो प्राह्याः सचित्रककटुत्रयम् ।
जातीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥
लवणकलिका प्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।
विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणचिदातिः ॥ ३०१२ ॥
मृतलोहस्य विशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।
मधुना गुटिकां कुर्यान्मापमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥
एकैकां भक्षयेत्मातः पञ्चषाण्डुक्षयापहम् ।
वालस्थयिरेषुद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विनोपतः ॥ ३०१४ ॥
योनिश्लेष्पु सर्वेषु बहिमान्धे च दापयेत् ।
अरुचिञ्च हरत्पाशु सृतिमान्कृ प्रणश्यति ॥
वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥
रसायनं., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात, लवण १-१ तोला, शुद्धबछनाग ६ मासे, शकर और लोहभस्म १०-१० तोले लेकर गवका बारीकचूर्णकर दूधके मिलाय मधुके साथ १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातःकालदेनेसे पांचप्रकारके पाण्डु, क्षय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और सुक्तिघातो रोगसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ वैश्वानरवटी (प्रथमा)

गुणं मृतं द्विधा गन्धं मृताऽर्वाऽयः शिलाजतु ।
रत्नमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम ॥ ३०१६ ॥
त्रिकटुं चित्रकं घीरां निर्गुण्डी मुदालीरजः ।
अजमोदां विषादीं प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥
निम्पपञ्चाङ्गुलकार्येभ्योना चैकचिदातिः ।
भृङ्गराजरत्नः सप्त मुण्डिकाभिश्च द्वादश ॥ ३०१८ ॥
निषा नागपलाश्रापे दद्यात् शीघ्रं यिलांष्टयेत् ।
भक्षयेद्दद्यात्स्थ्यामां दृष्टिकां तां दिघामिदिता ॥ ३०१९ ॥

श्लेष्मोदरं निहन्त्याशु नाम्ना वैश्वानरी वटी ।
देवदास्यबहिमूलककै क्षीरेण पापयेत् ॥
भोजनं व्योपदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥
र. सं., र. चं., र. र., र. घु., घा., व. रा., र. क. ल., र. चि., वि. र. म., रसायनं., र. को., र. र. स., र. शं., र. (मा.), रससारसुद्ध, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र. मृ., र. का., उदराधिकारे ।

टि०—कुत्रचिद्विषयकस्य रसमानता, भावनायां पद्माङ्गुलस्य भावना निकालिता तसु न सम्यक् । उदररोगे तस्याऽल्पावयवत्वात् । र. मृ., र. का. एतयो वैश्वानररस नाम्ना एको रसोऽस्ति तत्रैकेन वटी व्यत्यामिताऽनस्ताप्यवैवाऽन्तर्मांशोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध घात १ भाग, गन्धक २ भा., तात्र और लोहभस्म, शिलाजत १-१ भाग, शुद्धबछनाग, त्रिकटु, चित्रक-मूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुदाली, कमीला और अजमोद २-२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय नीम और एण्डकीजइकेकायसे २१-२१ भंगेकेरससे ७, गोरखमुण्डीकेरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएँ देकर गुलाकर मधुमें बेरकीगुल्लीकेबराबर गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली देवदाह और चित्रकमूलको दूधके साथ-पिचकर इतकेसाथदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इत्येप्रयोगमें भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तदूध और तुलसीका पूष देगनादिये ॥

६२६ वैश्वानरवटी (द्वितीया)

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृथक्पृथक् ।
प्रत्येकं लघुनां हिङ्गुं कुचेराक्षं त्रयल्ययः ॥ ३०२१ ॥
एकारां भस्मसूतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।
भावितं सर्वशूलघ्नं मृद्धि वैश्वानरो भयेत् ॥ ३०२२ ॥
व. रा., श्ले ।

भाषा—सैन्धव, सोंठ और नागरमोषा १-१ भाग, लह-सन, सुनीहिंग, करञ्ज ३-३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकेमिलाय एण्डतैले एकदिनमर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक रोगीका बलाबल देकर समयोचितानुपानकेसाथ-देनेसे तपप्रकारकेशूल और शीदा नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

६२७ वैष्णवरसः (ज्वराद्भ्रसः)

हिङ्गुलं यत्ननामञ्च चक्राङ्गी त्रिकटुं वचाम् ।
चित्रमूलकपायेण मदीपेदिवसप्रथमम् ॥ ३०२३ ॥
दोलायत्रे पच्येयामं तदुद्धृत्य विष्णुणयेत् ।
शुक्रामात्रप्रयोगेण शृङ्गयराऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥
द्वन्द्वज्वरं सन्निघातं पुराणं विषमन्यरम् ।
नादायेदखिलं घोरं नाशऽयं वैष्णवो रसः ॥ ३०२५ ॥
रसायनं., वै. चि. (ल.), वै. चि., व. रा., र. व. यो., ज्वराधिकारे ।

दि०—र. क. यो. बुधित. पाठोऽस्ति नाम च उवराडुस इति
स्थापितम् । वै चि., न. रा. पथयोवांतकेसरीनाम्ना पञ्चोत्प्लोऽस्ति
मोऽप्यभिज्ञेनाऽन्तर्भवति ।

भाषा—शुद्ध शिगरीक और बछनाग, गिलोय, त्रिकटु और
वच समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रकबीजकेकाठसे ३ दिन
मदनकर गोलाबनाय ६-७ तहकपड़ेमें पोडलीबनाय एकपहर-
चित्रककेकाठमें दोलायन्त्रसे स्वेदनकर १-१ रसीकी गोलियां
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे
द्रव्ज, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वमेंको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशेहमयुक्त्वतो नृपांदाश्चतयज्युक् ।
क्षिपद्याकाशान्हीजस्मेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥
ततो दिङ्मानतो दद्यादङ्गुणालककान्तकम् ।
मयं नष्टश्च पिष्टश्च धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥
गुटिका जायते दिव्या जपद्दारिद्र्यनाशिनी ।
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्ग्रामे विजयप्रदा ॥ ३०२८ ॥
घञ्जदेहो महार्थायैः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।
गुटिकायाः प्रभावेण नारीणां वल्लभो भवेत् ॥ ३०२९ ॥
र., रसायने ।

भाषा—सुवर्गंग बारीकरता अथवा बर्क और शुद्धपारद
समभाग, हीरकीभस्म १६ वा भागलेकर द्विपदी और आकाश-
बलेकेरसोंसे १-१ दिन मदनकर सुहागा, हरिताल और कान्त-
कोहकोरता परसे दशांश मिलाकर मदनकर । पिठीहोनेपर अन्य-
सूयामें पन्डकर धमनकरनेसे गोली तयारहोजातीहै । इस मुंहमें
रसनेमें सुहाप और दादिरपको यह नष्टकरतीहै । सङ्ग्राममें जीत
श्रोतीहै । इसनेपारणसे पत्रसदृशशरीरहोकर समस्तलोक और
न्यासकर शिर्षको प्रातिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ व्याधिगजकेसरीरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं तालं विषं श्रूयणकं समम् ।
स्फिहत्तु टङ्गुणधारां प्रत्येकं श्राणमाप्रकम् ॥ ३०३० ॥
द्वितीयांशश्च टङ्गुके सूक्ष्मशूर्णानि कारयेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेदिनसप्तकम् ॥ ३०३१ ॥
काकमाचरसेनैव निर्गुण्डारसकेस्तथा ।
मरिचाभा घटी कार्या दोषमार्पण्य दापयेत् ॥ ३०३२ ॥
क्षीरण सह दातव्या च्याऽज्वरनिवृत्तये ।
अर्शतीति घातजान्दन्ति निर्गुण्डया यास्तुकेन था ॥
गुहने सह दातव्या चन्त्याग्निदा पौस्तिकाम् ।
अनुपानेन संयुक्तस्तत्रांगहरः स्मृतः ॥ ३०३३ ॥
नि. र., र. चं., वै नि., वातोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बज्जनाग, नाड,
मिर्च, पौफल, हं, पकड़ा, आंबल, मुनासुहागा और
शुद्धब्रह्मकोष्ठा ६-६ भाग महर मक्का बारीकचूर्णकर
पारे गन्धक और हरितालकी नीलगन्धजलीमें मिलाय भंग,

मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोंसे ७-७ दिन मदनकर मरिच
बराबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
दूधकेमापदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोतेहैं । निर्गुण्डी अथवा
बयुणके स्वरसकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके बायुरोग और गुहने
४० पित्तोग नष्टहोतेहैं । इसीसदृह तत्तदोगहरानुपानेसाथ
देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० व्याधिगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृत्ताऽप्रकं मृतं लोहं मृतं मृतं मृतं रविम् ।
मृतं नागं मृतं कास्यं मण्डूरं विमलां शिलाम् ॥ ३०३४ ॥
सत्त्वं खर्परजं तालं शहं टङ्गुणमाशिकम् ।
मृतं कान्तश्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ॥ ३०३६ ॥
घराटं मणिरागश्च राजापतंश्च गन्धकम् ।
सर्वमेकय सञ्जल्प्य खल्वमप्ये चिनिःक्षिपेत् ॥ ३०३७ ॥
मर्दयेत्सुग्म्मातुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिवं लघु ।
भावयेत्पुटयेदेभि वांरास्त्रांश्च घृषकघृषकम् ॥ ३०३८ ॥
मानुलुङ्गघरावेतसाऽम्लमूयांऽऽर्द्रमार्कयैः ।
त्रिभ्रियेलं भावयित्वा पाचितं लघुपाहिना ॥ ३०३९ ॥
यातपित्तकफोत्क्लिष्टाऽधरान्संसर्गजानपि ।
सन्निपातप्रलयनं सर्वान्नाकाङ्गमाटतम् ॥ ३०४० ॥
सेवितोऽप्रसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहर्णोपधेः ॥ ३०४१ ॥
सेवितो हन्ति रोगांघान्याधिधारणकेसरी ।
क्षिप्रमेकादशविधं दाप्यं पाण्डुकिर्मीजयेत् ॥ ३०४२ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहं मेदादरं तथा ।
अदमरौ शर्करां शूलं मूहिसुचमहलीमकम् ॥
सर्वन्याधिहरं घल्यं घृष्यं मेघ्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥
र. क., सर्वरोगे ।

भाषा—अन्नक, लोह, पारा, टाण, नाग, कांस्य, मण्डूर,
रजतमाशिक, मेनसिल, मपरियाकासाय, हरिताल और शह
इनकीभस्में, मुनासुहागा, सुवर्गमाशिक, कान्तलोह, वैकान्त,
प्रवाल, मोती, कीड़ी, माणिस्य, साजवरं इनकीभस्में, शुद्ध-
गन्धक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारोगन्धककी नीलगन्-
धजलीमें मिलाय महर और आकैनेदूधसे २-३ दिन मदनकर
बिजोरा, त्रिकला, अमलबेत, हुरहुर, अदरस, भंगरा इनकेरसोंमें
२-२ भावनाएँ देकर गोलाबनाय शरणावरीहके पनोंमें तपेप
पुटणाकरके १-१ रसीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली दादर अथवा पीकलेके चूर्ण अथवा मधु और अद-
रसकेस अथवा तपत्रोगहरानुपानेसाथ देनेसे त्रिरोषोंके
पार्थक्य अथवा मसुगमें होनेवाले जटिलज्वर, सन्निपात, भ्रमाय,
मनत्र अथवा तकात्रवातोग, ११ प्रकारके शोष, पण्ड, हर्मि,
प्रकारकाकाष, श्वाण, प्रमेह, मेह, पथरी, कट, दल रीसा,
गुम, हर्नामक प्रयुति समस्तप्याथिरोषोंको नष्टकर यः बग,
दुग्धा और बुधिरों बगताहै ॥ ६३० ॥

६२३ वैश्वानरलोहम् (प्रथमम्)

द्विपलं तित्तिडीक्षारं तथाऽपामार्गसम्भवम् ।
 दाम्बुकभस्मसंयुक्तं लवणञ्च समं तथा ॥ ३००८ ॥
 चतुर्णां समभागाः स्युस्तुल्यञ्च लोहचूर्णकम् ।
 चूषणं सन्निपत्य खल्व्वादीं कारयेदकर्ता म्रियेत् ॥ ३००९ ॥
 शूलस्वामगमवैलायां खादेन्मापद्भयं नरः ।
 शूलमष्टविधं हन्ति साध्याऽसाध्यं न संशयः ॥ ३०१० ॥
 भे. र., घ., र. क., शूलाधिकारे ।

भाषा—इमली और अपामार्गकाक्षार, पौषेकीभस्म और
 सेंपानमक समभागलेकर सबकी बराबर लोहभस्ममिलाय एकदिन
 शुष्कमर्दनकर रखछोड़े । शूलरानिकेसमय २-२ मासे उचितानु-
 पानकैसाय लेनेसे साध्य अथवा असाध्य समस्तशूलकी यह
 नष्टकरताहै ॥ ६२३ ॥

६२४ वैश्वानरलोहम् (द्वितीयम्)

फलत्रिकत्वचो घ्राह्याः सचित्रककटुत्रयम् ।
 जानीफलसमायुक्तं चातुर्जातसमन्वितम् ॥ ३०११ ॥
 लवङ्गकलिका घ्राह्या गद्याणद्वयसम्मिता ।
 विषं गद्याणमेकं स्यात्सिता गद्याणविंशतिः ॥ ३०१२ ॥
 मृतलोहस्य विंशत्या सर्वमेकत्र कारयेत् ।
 मधुना गुटिकां कुर्यान्मापमात्रप्रमाणतः ॥ ३०१३ ॥
 एकैकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चपाण्डुक्षयापहम् ।
 बालस्यविरघृद्धानां स्त्रीणाञ्चैव विणेततः ॥ ३०१४ ॥
 योनिशूलेषु सर्वेषु वह्निमान्द्ये च दापयेत् ।
 अरुचिञ्च हरत्यागु सृत्तिकान्क् प्रणदपयति ॥
 वैश्वानरं लोहनाम सद्यो रोगहरं परम् ॥ ३०१५ ॥
 रसायनम्., पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकला, चित्रक, त्रिकटु, जायफल, चातुर्जात,
 लवङ्ग १-१ तोला, शुद्धबछनाग ६ मासे, शरर और लोहभस्म
 १०-१० तोले लेकर सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठे मिलाय मधुके
 साथ १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
 गोली समय अथवा रोगोक्तिानुपानकैसाय प्रातःकालदेनेसे
 पांचप्रकारके पाण्डु, धय, योनिशूल, मन्दाग्नि अरुचि और
 सृत्तिघातोके इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६२४ ॥

६२५ वैश्वानरवटी (प्रथमा)

शुद्धं मृतं द्विधा गन्धं मृताऽर्काऽयः शिलाजतु ।
 रत्नमानं प्रदातव्यं रसस्य द्विगुणं विषम् ॥ ३०१६ ॥
 त्रिकटुं चित्रकं पीरारं निर्गुण्डं मुदालीरजः ।
 अत्रमोदां विषांशेन प्रत्येकञ्च नियोजयेत् ॥ ३०१७ ॥
 निम्बपञ्चाङ्गुलकाथेर्माथेना चैकरियतिः ।
 भृङ्गराजरसेः सप्त मुण्डिकामिथ्य ऋद्रजः ॥ ३०१८ ॥
 त्रिधा नागलतात्रये देव्या क्षीरे शिलाजयन्तु ।
 भक्षयेद्भद्राऽऽस्व्यामां पटिकां तां दिवानिदिशाम् ॥ ३०१९ ॥

श्लेष्मोदरं निहन्त्यागु नाम्ना वैश्वानरी घटी ।
 देघदाखवह्निमूलकककं क्षीरेण पाययेत् ॥
 भोजनं व्योपदुग्धेन कुलत्थानां रसेन तु ॥ ३०२० ॥
 र. सं., र. चं., र. र., र. सु., वा., व. रा., र. क. ल., र.
 चि., वि. र. भ., रसायनम्., र. को., र. र. स., र. शं., र.
 (मा.), रससासद्भृद्, यो. म., र. क. यो., र. र. कौ., र.
 म., र. का., उदराधिकारे ।

टि०—जुत्रविद्रवकस्य रसमानता, भावनायां पत्राङ्गुलस्य
 भावना निष्कासिता तनु न सम्यक् ? उदररोगे तस्याऽऽलावयस्यत्वात् ।
 र. म., र. का. एतयो वैश्वानररस नाम्ना एको रनोऽग्नि नैवयमेव
 वदो व्यत्यामिताऽस्तस्यायत्रैवाऽग्निर्भावोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पादा १ भाग, गन्धक २ भा., तात्र और
 लोहभस्म, शिलाजीत १-१ भाग, शुद्धबछनाग, त्रिकटु, चित्रक-
 मूल, शतावरी, निर्गुण्डी, मुशली, कमीला और अजमोद २-२
 भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णककलीमें मिलाय
 नीम और एरण्डकीजइकेकायसे २१-२१, भंगरेकरससे ७,
 गोरखमुण्डकीरससे १२ और पानकेरससे ३ भावनाएँ देकर
 गुलाकर मधुमें बेस्कीगुल्लोकेबराबर गोलियां बनाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली देवदाह और चित्रकमूलको दूधके साथ-
 पिसकर इकट्ठेसायदेनेसे कफोदर नष्टहोताहै । इसत्रययोगमें
 भोजनकेलिये त्रिकटुयुक्तदूध और तुलसीका मूष देवनाहिये ॥

६२६ वैश्वानरवटी (द्वितीया)

सैन्धवं नागरं मुस्ता नव भागाः पृषकपृषकम् ।
 प्रत्येकं लघुनं द्विङ्गं कुबेराक्षं प्रयत्नयः ॥ ३०२१ ॥
 एकांशं भस्मसूतञ्च तैलेनैरण्डजेन च ।
 भावितं सर्वशूलघ्नं त्रिद्वि वैश्वानरो भवेत् ॥ ३०२२ ॥
 व. रा., शूले ।

भाषा—सैन्धव, सौंठ और नागरमोथा ९-९ भाग, लक्ष-
 सन, मुनीर्हाँग, कर्पूर ३-३ भाग, पारदभस्म १ भाग लेकर
 सबका बारीकचूर्णकर इकट्ठेमिलाय एण्डतेलेमें एकदिनमर्दनकर
 १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ छे ३
 गोलीतक रोगीका बलाबल देकर समयोचितानुपानकैसाय-
 देनेसे तबप्रकारकेशूल और शीहा नष्टहोतीहै ॥ ६२६ ॥

६२७ वैष्णवरसः (ज्वराङ्कुराः)

द्विद्वन्द्वं वल्लनामञ्च चक्राङ्गौ त्रिकटुं धवाम् ।
 चित्रमूलकपापेण मर्दयेद्वियसत्रयम् ॥ ३०२३ ॥
 शोलापये पचेयामं तदुद्भूत्य विष्णुर्णयेत् ।
 गुञ्जामात्रयोगेण शृङ्गयथाऽनुपानतः ॥ ३०२४ ॥
 हृन्धन्वरे सन्निपातं पुराणं विषमन्वरम् ।
 नाशयेद्विनलं घोरं नाम्नाऽयं वैष्णवो रसः ॥ ३०२५ ॥
 रसायनम्., र. वि. (स.), वै. चि., व. रा., र. क. यो.,
 उदराधिकारे ।

दि०—र क यो भुक्ति पाठोऽस्ति नाम च पुराणानि इति
स्थापितम् । वै वि., व रा पथयोवांतरेसरीनाम्ना पुरोरमोऽस्ति
सोऽप्यरिभेत्तवास्तभवति ।

भाषा—शुद्ध शिगरिक और बछनाग, गिलोय, त्रिकटु और
बच समभागलेकर बारीकचूर्णकर चित्रकनीजइकेकादिसे ३ दिन
मर्दनकर गोलायनाय ६-७ तहकपडेमें पोर्लीबनाय एकपहर-
चित्रककेकायमें दोलायनसे स्वेदनकर १-१ रत्तीकी गोलियां
बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली अदरसकेरसकेसाथदेनेमें
द्रव्य, सन्निपात, जीर्ण और विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥

६२८ व्याघ्रीगुटिका

समांशहमयुक्त्वतो नृपांशमृतवज्रयुक् ।
द्विपद्याकाशरहोजरसेन परिमर्दयेत् ॥ ३०२६ ॥
नतो दिङ्मानतो दद्याद्दृङ्गणालकान्तरुम् ।
मयै नष्टश्च पिष्टश्च धमेदन्धं यथाविधि ॥ ३०२७ ॥
गुटिका जायते दिव्या जरदारिद्र्यनाशिनी ।
मुखस्था सिद्धिदा प्रोक्ता सङ्गामे विजयप्रदा ॥ ३०२८ ॥
वज्रदेहो महावीर्यः सर्वलोकप्रियो भवेत् ।
गुटिकायाः प्रभावेण नारीणां बह्वभो भवेत् ॥ ३०२९ ॥
र., रसायने ।

भाषा—मुक्कण बारीकरेता अथवा वरुं और शुद्धपारद
समभाग, हीरकीभम्म १६ वा भागलेकर द्विपदी और आकाश-
केलेकरतोसे १-१ दिन मर्दनकर सुहागा, हरिताल और कान्त
लोहकरेता परसे दशांश मिलाकर मर्दनकरे । पिठीहोनेपर अन्ध-
नूपामें मन्दकर धमनकरनेसे गोली तयारहोजातीहै । इस मुहमें
रखनेमें सुधांश और दारिद्र्यको यह नष्टकरतीहै । सङ्गाममें जीत
होतीहै । इसकेपाणसे बज्रदृष्टशरीरहोकर समस्तलोक और
वासकर विद्योका प्रीतिपात्र होजाताहै ॥ ६२८ ॥

६२९ व्याधिगजकेसरीरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं तालं चिपं त्र्यपणकं समम् ।
त्रिफला दृङ्गणशारं प्रत्येकं द्वाणमायकम् ॥ ३०३० ॥
वृन्तिमीजश्च टडूकं सूक्ष्मपूष्पाणि कारयेत् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेदिनतप्तकम् ॥ ३०३१ ॥
फाकमाचौरसेनैव निर्गुण्डारसकेस्तथा ।
मरिचामा घटी कार्या दोषमापेश्य दापयेत् ॥ ३०३२ ॥
क्षरिण सह दातव्या च्याऽष्टज्वरनिवृत्त्यै ।
अर्शार्ति घातजान्ति निर्गुण्डया चास्तुकेन या ॥
गुडेन सह दातव्या चत्याग्निहा पित्तिकान् ।
अनुपापानेन संयुक्तस्तसद्रोगहरः स्मृतः ॥ ३०३३ ॥
नि. र., र. च., वै नि., वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और बछनाग, तांड,
मिर्च, पीपल, हरं, चरहा, आवक, मुनामुहागा और
शुद्धमालमोटा ६-४ भाग मकर मक्का बारीकचूर्णकर
पार गन्धक और हरितालकी नीलामेकत्रतीमें मिलाय भंगरा,

मकोय, और निर्गुण्डीके स्वरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गरिच
बराबर गोलियें बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली
दूधकेसाथदेनेसे ८ प्रकारके ज्वर निवृत्तहोतेहै । निर्गुण्डी अथवा
बधुपुत्रे स्वरसेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वायुरोग और गुहसे
४० पित्तोरोग नष्टहोतेहै । इसीतरह तत्तद्रोगहरानुमाननेसाथ
देनेसे तमामरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६२९ ॥

६३० व्याधिगजकेसरीरसः (द्वितीयः)

मृताऽन्नकं मृतं लोहं मृतं मृतं मृतं रविम् ।
मृतं नागं मृतं कास्यं मण्डूरं विमलां शिलां ॥ ३०३४ ॥
सत्त्वं सपंरजं तालं शङ्खं टङ्गणमाक्षिकम् ।
मृतं कान्तश्च वैकान्तं विद्रुमं मौक्तिकस्तथा ॥ ३०३६ ॥
घटाटं मणिरागश्च राजायतंश्च गन्धकम् ।
सर्वमेकत्र सञ्चर्ष्यं खल्वमघ्ये विनिःक्षिपेत् ॥ ३०३७ ॥
मर्दयेत्सुग्गामानुदुग्धैः पुटयेत्त्रिदिनं लघु ।
भावेयुत्पुटयेदेभि वापार्ष्णींश्च पृथक्पृथक् ॥ ३०३८ ॥
मानुदुग्धघरावेतसाऽम्लसूयाऽऽर्द्रमांस्त्रैः ।
त्रिभिर्वैलं भावयित्वा पाचितं लघुबहिना ॥ ३०३९ ॥
घातपित्तकफोलिलशङ्खवरान्संसृजानपि ।
सन्निपातप्रलपनं सर्वाङ्गैकाङ्गमास्तम् ॥ ३०४० ॥
सेवितोऽन्नसितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मयुक्ताऽऽर्द्रकंसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणोपधेः ॥ ३०४१ ॥
सेवितो हन्ति रोगीधान्याधिवारणकेसरी ।
क्षिप्रमेकादशविधं शोषं पाण्डुनिर्मिजयेत् ॥ ३०४२ ॥
कासं पञ्चविधं भ्यासं महं मेदोदरं तथा ।
अदमरं शर्करां शूलं ग्रीहगुल्महलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहरं घल्यं घृष्यं मर्ष्यं रसायनम् ॥ ३०४३ ॥
र. क., सर्वरोगे ।

भाषा—अन्नक, लोह, पारा, ताघ, नाग, कास्य, मण्डूर,
रजताक्षिक, मेनरिल, खपरियाकासख, हरिताल और शङ्ख
इनकीभस्में, मुनामुहागा, सुवर्णमाक्षिक, कान्तलोह, वैकान्त,
प्रवाल, मोती, कीड़ी, माणिस्य, साजवर्द इनकीभस्में, शुद्ध-
गन्धक सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारान्धककी नीलवर्ण-
कजलीमें मिलाय पुर और आकनेदूधसे ३-३ दिन मर्दनकर
विजोरा, त्रिफला, अमलवत, डुरदुर, अदरस, भंगरा इनसे रसोंसे
३-३ भावनाएँ देकर गोलायनाय एण्डबर्गरइके पत्तोंमें लपेट
पुटपात्रकरके १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओडे । इनमेंसे
१-१ गोली दार अथवा पीपलके चूर्ण अथवा मधु और अद-
रसकेरस अथवा तन्त्रोगहरानुमाननेकेसाथ देनेमें त्रिदोषोंके
पापंश्य अथवा मसगंसे होनेवाले जटिलज्वर, सन्निपात, प्रलप,
सर्वांत अथवा एकाज्वरतारोग, ११ प्रकारके शोष, पाण्डु, कृमि,
७ प्रकारकाकाष, श्राग, प्रमेह, मेद, पयरी, दाकर, शूल ग्रीहा,
गुल्म, हलीमक प्रथति सामन्त्याधिविद्योको नष्टकर यह बल,
तपना और मुक्तिसे बढ़ानाहै ॥ ६३० ॥

६३१ व्याधिगजपञ्चाननरसः

यथांशुतकेशलाङ्गलिशिफास्तुग्दुग्धपात्रोद्भवैः,
मर्धां यामचतुष्टयं रसवरः स्वित्तश्च द्रीप्तश्च तम् ।
मृतं स्वीयचतुर्गुणेन वलिना युक्तं सहामण्डुकी-
माचीकाञ्चनलाङ्गलहरिवधुकासप्रविम्वीद्रवैः ॥
पिप्प्ला वासरयुग्ममेव रचितं तद्रौलकं बालुका-
यन्त्रे भाण्डगतं तद्रीपधरसं क्षिप्त्वा मुहुः शोषितम् ।
पश्चादल्पपुटं दद्रीत च कलांशं व्युषणं दृङ्गणं,
देयो वल्लचतुष्टयः सुसितया त्वग्दीपभूतकिर्मान् ॥
हित्वाऽन्याम्सकलाङ्गान्निजजयते पथ्यप्रयोगाद्यं,
धीशम्भर्चनपूर्वकं वलिधिधिं कृत्वा भिषग्योजयेत् ।
पथ्यं भक्तसितासमृचलफले दध्ना च देयं लघु,
धीणे मुद्गरसः सिता समुचिता कार्या च शोतकिया ॥
त्याज्यं पित्तलमात्रमत्र सकलं मांसञ्च जीरं सदा,
त्याज्यं स्वच्छवतां विनुद्भवपुपां घस्रत्रयं सेवितः ।
कार्णिकं काञ्चनसन्निभं किल बलं भीमस्य तं पावकं,
पुष्टिं धीर्यमयं नृणां धितनुते व्याधीमपञ्चाननः ३०४७
र. छ., र. शं., र. का., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—इदंतिट, कालाभंगरा, करिहारीबन्द, शूहरवाइध, पात्रा इन्वेरसोमं ४-४ पहर मर्दनकर स्वेदनकियाहुभापात्रा १ भाग और शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर माषपर्णी, मुद्गरपर्णी, मण्डकपर्णी, मकोय, कचनार, करिहारी, तुलसी, फसोजी, कुंदरू इनके रसोंसे २-२ दिन मर्दनकर ६-७ कपडमिठीदाहुई चौड़ेमुहकी आतशीशीशोमिं भरके वाउ-
नायश्चमं रस धुवींकरसोको देदेकर गन्दाभिते पकावे । औषधके बराबर प्रत्येककारस सूखनेपर निकालकर गोलाबनाय धराव-
समुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदे । स्वाहशोतलहोनेपर निकाल-
कर १६ वां हिस्ता त्रिस्टु और सुनसुहागा मिलाकर रखछोड़े ।
इसमेंगे १२-१० रसीकीमात्रा शकरकेसाथ देनेसे त्वग्दोष और कृमिप्रवृत्ति समस्तव्याधियोंको यह दूरकरताहै । इस्केसेवन-
कम्पके पूर्व शहरका पूजनकर बलि देकर दवाका आरम्भकरावे ।
गात, शकर, सुनखल और दही खानिकोदेवे । अत्यन्त धीण
बादमीकेलिये मूंगफामुप और चकरदेवे तथा शोतकियाकरे ।
पित्तकारकवस्तु, मांस, जीरा इनसबका त्यागकरे । तीनदिनके-
बाद व्याधि कमहोनेलेगी । धीरे २ सुबणंगदश बान्ति,
विपुल पराक्रम और वीर्यशक्तिसे प्राप्तकरता है ॥ ६३१ ॥

६३२ व्याधिदावानलरसः

मृतं कान्तं त्वल्पलिदिश्लाह्येडताप्राऽभ्रताप्यं,
कुष्ठं सिन्धुं हलिनिकृमिनागारिं नुत्ये हि भाष्यम् ।
यद्विष्णोपैः किमिरिपुजयाकुष्ठमुस्तयावानीः
ज्वालायधप्राग्नुधिफलव्याचामिनिनांऽङ्गयैः ॥३०४८॥
मात्रा गुञ्जा निम्बिलजडेरं मेहकुष्ठे प्रहृष्यां,
दोषे शूले सकलगुद्गजे मान्धजीर्णं विमृच्याम ।

पाण्डौ रोगे सकलपवने सन्निपाते ज्वरेऽसौ,
ह्न्यादेतांस्तम इव रवि व्याधिदावानलोऽयम् ॥३०४९॥
नवज्वरे शुण्ठिजलैः सरुष्णैः
परेषु रोगेष्वनुपानयोगात् ।
हितं हिमं चन्दनवारि तत्र
हिताहितं पथ्यविधौ विन्दयम् ॥ ३०५० ॥
र. धि., सन्निपाते ।

भाषा—गारद और कान्तभस्म, शुद्धहरिताल, गन्धक, भनसिल और बछनाग, ताप्र, अत्रक और रूपामाखी भस्म, कुठ, सैन्धव, करिहारीकोजइ, पाठा, सोनामाखी भस्म सब समभाग-
लेकर वारीकचूर्णकर चित्रक, त्रिस्टु, विडङ्ग, भांग, कुठ, नागर-
मोया, अजवाइन, अमिशिया, समुद्रफल, वच, त्रियहू और
अदरखकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रसीकीगोलियें बना-
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चन्दनकेपानी अथवा तप्त-
श्रीगहरानुपानकेसाथ देनेसे सबप्रकारके उदररोग, प्रमेह, कुष्ठ,
प्रहृणी, शोथ, घूल, बवासीर, मन्दाभि, अजीर्ण, हैजा, पाण्डु,
समस्तवातविकार, सन्निपात, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै ।
सोठ और पीपलके कल्केसे नवज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ व्याधिविध्वंसनरसः

समीरपन्नगस्य स्याद्दिगुणा जयपालकाः ।
अजादुग्धेन ते पकाः क्षुण्णा गुञ्जाद्ययं रसः ॥३०५१॥
रण्डव्योपात्रैर्केदतः पृथग्व्या घृतसम्प्लुतः ।
जाड्यगुल्मोदपुष्टीहशूलामविषमज्वरान् ॥ ३०५२ ॥
उष्णेन पयसा स्तम्भो रोकः शीतेन जायते ।
शौद्रजातीफलं दद्यादतिरेकोपशान्तये ॥ ३०५३ ॥
पथ्यं भक्तं गवां तर्कं सर्तीरश्च ज्वरादिषु ।
तापशोषे गुड्व्यम्यु व्याधिविध्वंसकारके ॥३०५४ ॥
र. छ., रसायनसं., टो., र. शं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—समीरपन्नगरस १ भाग, बकरीकेदूधमें उबाले
हुए जमालोटे २ भागलेकर एकपहरमर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे
२-२ रसीकीमात्रा शकर, त्रिस्टु और अदरखकेसाथ अथ
पीकेसाथदेनेसे जहता, गुल्म, उदर, प्लीह, घूल, आम औ-
विषमज्वर इतको यह नष्टकरताहै । ठंडापानीनेसे रेशनहोणा
गरमपीनेसे बन्धहोजायगा । अधिकरेचनहोनेपर मधुमें मिलाकर
जायफलदेना, भूखलानेपर छाछभातदेना । ज्वरहीहालमें
पानीकेसाथ और ज्वरजनितशोषमें मिलोयके स्वल्पकेसाथ देना ॥

६३४ व्याधिगार्दूलगुग्गुलुः (त्रिकलागुग्गुलुः)

त्रिकलायाः पलान्यष्टौ प्रत्येकं योजयर्जितम् ।
गुग्गुलोद्विपलञ्चात्र निःक्षिपेत्तं मुकुटितम् ॥३०५५॥
सर्वं संशुच यत्नेन साऽधोद्वकजले क्षिपेत् ।
एकराशौ स्थितञ्चैतन्न पक्व्या पादावशोपितम् ३०५६
द्विपलं कटुतैलस्य मिलित्वैकत्र पाचयेत् ।
त्रिकटुत्रिकलामुस्तयिङ्गामलकानि च ॥ ३०५७ ॥

गुडुच्यमिन्निवृद्धन्ती चन्यसूरणमानकम् ।
 अष्टाष्टमापकानेताम् प्रत्येरन्तु सुवृणितम् ॥ ३०५८ ॥
 सर्वस्यार्द्धतुलं देयं कालकं विधिशीघ्रितम् ।
 रसगन्धककर्पाण्डं प्रत्येकं कज्जलीकृतम् ॥ ३०५९ ॥
 सम्यक् सिद्धं तु विनाय स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिपेत् ।
 ततो मापद्वयं जग्घा प्रातरण्णोदकं पिबेत् ॥ ३०६० ॥
 प्रथमं कुरुते वह्निं शरीरं स्थिरयौवनम् ।
 धातुवृद्धिं वयोवृद्धिं बलं सुविपुलन्तथा ॥ ३०६१ ॥
 अद्मरीशूत्रकृच्छ्रं दुर्नामं समगन्दरम् ।
 आमघातं शिरोघातमम्लपित्तं निहन्ति च ॥ ३०६२ ॥
 कामलां पाण्डुतां श्वासं प्रमेहं गुदनिर्गमम् ।
 श्लोहान्तं श्लीपदं शार्थं कासं पञ्चविधं तथा ॥ ३०६३ ॥
 शमयत्युदराण्यष्टौ शूलान्यष्टौ विशेषतः ।
 भग्नास्थिविद्धवातेषु सन्धियप्रह्विमाचने ॥ ३०६४ ॥
 हृन्त्यादेयं विधान्याधीनामयातं विशेषतः ।
 ग्रन्थिवातं तथा कुष्ठं विपमज्वरमेव च ॥ ३०६५ ॥
 मेदः कफामयं घातं व्याधिधारणदर्पहा ।
 व्याधिशार्दूलविष्यातो योगोऽयममृतोपमः ॥ ३०६६ ॥
 र र, आमवाते ।

भाषा—हैं, बहड़ा, आवला ८-८ पल, गूगल २ पल
 लेकर अच्छीतरहकूटकर ६ प्रस्थपानीमें डालकर एकदिनरात
 रहनेदे । दूसरेदिन इसको चलाताहुआ पकावे जिसमें कि गुगल
 पात्रमेंलकर जल न जाय । चौथाभाग अवशिष्टरहनेपर उतार-
 कर छानले । कायमें सरसोंकातेल २ पल, त्रिकटु, त्रिकटा, नागर
 मोथा, विडङ्ग, आवले, गिलोय, क्षिप्रकमूल, निसोत, दन्ती-
 मूल, चक्य, सूरण, मानकन्द वेसव ८-८ मासे, अच्छीतरह-
 शुद्धकियाहुआ शिलाजीत ८ कर्ष, शुद्धपारा और गन्धक ८-८
 मासेकी नीलवर्णकज्जली लेकर बारीकचूर्णकर पूर्वकायमें डालकर
 पकावे । गोली चघनेलायक होजाय तब पीकेवतैतमें रखले ।
 १५ या २१ दिन बीतनेपर इसमेंसे २-२ मासेकीमात्रा
 प्रात काल गरमपानीबेसाय देनेसे मन्दाभि, कृशता, बार्धक्य,
 धातु-आयु और बलकाहास, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, बवासीर, भग
 न्दर, आमवात, शिरोवात, अम्लपित्त, कामला, पाण्ड, श्वास,
 प्रमेह, गुदवंश, श्लोहा, श्लीपद, शोथ, कास, उदररोग, शूल,
 अस्थिभग, अस्तम्भ, आमवात, गठिया, कुष्ठ, विपमज्वर,
 मेद, कफ और वातव्याधि इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६३४ ॥

६३५ व्याधिहरणरसः

सुपकं पीतमानीय तित्तुर्म्यामहृत्फलम् ।
 उपरिमाणे छेत्तव्यं तन्मध्यं नरसारकम् ॥ ३०६७ ॥
 बुद्धयं निक्षिपेत्पञ्चाच्छकलं पूर्ववध्यसेत ।
 मृत्कपटैश्च संघेष्ट्य छिद्राणि त्रीणि कारयेत् ॥ ३०६८ ॥
 गर्तमध्ये न्यसेद्भाण्डं तस्यापरि न्यसेत्फलम् ।
 घस्त्रमुत्तिकायुक्तं न्यसेत्सप्तदिनाद्यधि ॥ ३०६९ ॥

पश्चादुद्धृत्य भाण्डस्थं शृङ्गीयाद्रसमुत्तमम् ।
 कुडवं रसकर्पूरं खल्वे सम्मर्द्य बुद्धिमान् ॥ ३०७० ॥
 पश्चात्तद्रससंयुक्तं चतुर्दश दिनाद्यधि ।
 अर्कस्य शीरसंयुक्तं चतुर्दश दिनाद्यधि ॥ ३०७१ ॥
 सम्मर्द्य चक्रिकां कुर्याद्भाण्डे संस्थाप्य युक्तितः ।
 तिर्यग्पातनयन्त्रेण शृङ्गीयादुत्तमं रसम् ॥ ३०७२ ॥
 हृत्त्वैवं सम्प्रदायेन कर्पूराद्रसमुद्धरेत् ।
 तद्रसञ्च समं गन्धं रसाद्गन्तु विमिश्रयेत् ॥ ३०७३ ॥
 खल्वे कज्जलिकां हृत्वा महाकोशातकीद्रवैः ।
 रसञ्च भावयित्वा तु पश्चात्कृप्यां विनिक्षिपेत् ॥ ३०७४ ॥
 बालुकामध्यं कृत्वा द्रव्याभिं खदिरस्य च ।
 द्विपादगन्धकं शोषं चूर्णं कृत्वा विचक्षणः ॥ ३०७५ ॥
 कृपिकायामुले धूमं दृष्ट्वा गन्धं पुनः पुनः ।
 दीयते सूर्ययामान्तं तदा सिद्धो भवेद्भस्त्रः ॥ ३०७६ ॥
 स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य कृपिकाकण्ठगं रसम् ।
 तरुणाऽरणसंकाशं सिन्दूरं जायते वरम् ॥ ३०७७ ॥
 नान्नाऽयं व्याधिहरणो रसो वैद्यैः सुप्रजितः ।
 उपदेशे तथा मेहे पाण्डुरोगे भगन्दरे ॥ ३०७८ ॥
 मन्दानले क्ष्ये कासे श्वासे कुष्ठे घ्नणे तथा ।
 अनुपानविशेषेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ ३०७९ ॥
 रसायनसं, रसायने ।

भाषा—अच्छीतरह पकाहुआ पुष्टवृषीकाफल लेकर ऊपरकी
 तर्फसे टुकड़ा काटकर ४ पल मवसादर डालकर दहनलगाय
 ३-४ कपडमिठी देकर खलनेपर लोहेके खीलेसे ऊपरकी तर्फ
 तीन छेदकरवे । फिर एक घुंटेमें पात्ररखकर उसमें वृषीको रख
 नाइसे ढककर मिठीसे खट्टेको भरदे । सातदिनबाद वृषीकेद्रवको
 निकालले । इषकेबाद ४ पल रसकपूरको इष्टवसे और आरुके
 दूधसे १४-१४ दिनतक मर्दनकर टिकाड़िया बनाय मुखाकर
 डमरुयुग्ममें बन्दकर तिर्यग्पातनयनसे पारेको अलगकरे । यह
 पारा १ भाग, शुद्ध गन्धक तथा साधारणशुद्धपारा आधाआधा-
 भाग मिलाकर नीलवर्णकज्जलीकर कड़वीलौकीकेरससे ३-४
 दिन मर्दनकर मुखाकर ६-७ कपडमिठीदेहुँद आतवाशीशीमें
 भर बालुकायुग्ममें रख रीरकी लकड़ीकी अग्निदेवे । कज्जलीमें
 डालेहुए गन्धकसे आधा गन्धक और पीसकर रखछोड़े ।
 शीशीमेंसे धूआं निकलनेपर थोड़ाथोड़ा गन्धक ऊपरसे देता-
 जाय । ऐसे १० पहरतक अग्निदेनेसे तमामपारा उड़कर शीशीके
 मुहपर लगजायगा । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े ।
 इसमेंसे २ से ३ रतीतक उचितानुपानकेसाय देनेसे उपदेश,
 प्रमेह, पाण्ड, भगन्दर, मन्दाभि, श्वास, कास, श्वास, कुष्ठ, मग
 प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३५ ॥

६३६ व्योममार्तण्डरसः

तुल्यचारिद्रव्याकारं समं
 व्यूपणेन सफलत्रिकेण च ।

तुल्यभागमिलितेन सर्पिणा

लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (घ.), असौरीगे ।

भाषा—नागरमोथा, ताप्रभस्म, त्रिकटु और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकेपरावर धीमें मिलाकर रख-छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेतक देनेसे यह समस्तववा-सीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ व्योमसुन्दरीषटी

कापांस्याः कारुमाच्याश्च कन्यायाश्च दलद्रवैः ।

शुद्धं सूतं दिनं मर्चं क्षाल्यमग्लैः समुद्धरेत् ॥ ३०८१ ॥

तद्रसाग्निष्कचत्वारि निष्कार्दं ताप्रचूर्णकम् ।

पादोननिष्कमत्रोत्थं सत्त्वं पादञ्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥

हेमन्तुल्यं मुण्डचूर्णं सर्वमग्लैर्विमर्दयेत् ।

दिनान्ते गोलकं कृत्वा जम्बीरस्योदरे क्षिपेत् ॥ ३०८३ ॥

त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारनालके ।

उज्ज्वल्य धारयेद्वक्त्रे गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥

वर्षमात्राञ्जरां हन्ति जीवेद्वह्निदिनं नरः ।

चिप्रमूलस्य चूर्णन्तु सक्षौद्रं कान्तपात्रके ॥

आलोढ्य भक्षयेत्कपमनु स्यात्कामणे हितम् ॥ ३०८५ ॥

रसायनलं, रसायने ।

भाषा—कपास, मकोय, धौकुंनार इनकेरसोंमें १-१ दिन

पारेकोमर्दनकर काञ्चीप्रयति रोपदापौसे साफकरके १ कर्ष

लेवे । फिर शुद्धताम्रचूर्ण ३ माशे, अप्रक्षसाव ३ मा., सुवर्ण

और मुण्ड १-१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर

गोलीबनाय चारतह मलमलेके टुकड़ेमें बाधकर जम्बीरीनीचूमें

रख दोलायत्र बनाय काञ्चीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे ।

काञ्ची सुखनेपर नई डालताजाय । सूत्राक्षीशीतलोनेपर गोलीको

निकाळले, यह कड़ी होजायगी । इसकी धुँधलेपर सुहमें रख-

नेसे बुझापा नष्टकरे अत्यन्त दीर्घाहुँहोताहै । एककर्ष चिन्चकी

जड़का चूर्ण मधुकेसाय कान्तलोहेकेपात्रमें छुछेदेर घोटकर

भक्षणकरनेसे इसका शरीरमें अनुक्रमणहोताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ व्योपादिलोहम्

व्योपं विल्वं द्विरजनी त्रिफला द्विपुनर्वचम् ।

मुस्ताम्यधोरजः पाठा विडङ्गं देवदारु च ॥ ३०८६ ॥

वृद्धिश्चैव च भार्गवं सशर्करैस्तेः शृतं घृतम् ।

सर्वांगप्रशामयत्यायु विकारान्मृत्तिकाकृतान् ॥ ३०८७ ॥

च. सं., अ. ह., वृ. मा., ग. नि., पाण्डुरोषम् ।

भाषा—त्रिकटु, बेलगिरी, हल्दी, बाहल्वी, त्रिफला,

लाल और सफेदपुनर्वच, नागरमोथा, फोलादकाचुरा, पाठा,

विडङ्ग, देवदारु, विडुआ, भार्गवी सत्र समभागलेकर बारीक-

पीसकर क्लृप्त बनावे । फिर क्लृप्ते चौगुना घी और घीसे

चौगुनाइध डालकर पकावे । धीमान अवशिष्ट रहनेपर छानकर

रखले और ऊपरकी चीजोंकाही चूर्ण बनाकर रखलेवे । इस-

चूर्णमेंसे १ से ३ माशेतकमाना एकतोले धीमें मिलाकर लेनेसे

सुदृक्षगणनित समस्तविकार नष्टहोतेहै । खानेकेलिये जो चूर्ण

बनावे उसमें लोहमलमका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं मृतं ताप्रं मृतं स्वर्णं मृतायसम् ।

पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि पदं ॥ ३०८८ ॥

खल्वे शतदलीत्येन रसेन परिमर्दयेत् ।

वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥

ततो मापमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत् ।

शुद्धचीसारिवानिम्बमजिष्ठात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९० ॥

काथं चानु पिबेन्नित्यं व्रणदोषप्रशान्तये ।

तान्सवांशशयेद्यु चिद्रघांश्च भगन्दरान् ॥

शोषाग्धानप्रमेहादीञ्जयेच्छ्रीशाम्भुशासनात् ॥ ३०९१ ॥

र. म. मा., ना. वि., अणाधिकारे ।

भाषा—पारा, ताप्र, सुवर्ण और लोहभस्म १-१ पल,

शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके

स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर

रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला और मधुकेसायलेकर

गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मनीठ और त्रिफलाका काय पीनेसे

सषप्रकारकेव्रण, विद्रधि, भगन्दर, शोष, आग्धान, प्रमे-

प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० व्रणगजाङ्गुशरसः

द्रवः पार्वतीपुष्पं कुन्टी पुरुषो रसः ।

शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिविषा चर्वा ३०९२

शरपुष्पा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्ली ।

मरीचाकां च वरुणा धूनकश्च हरितकी ॥ ३०९३ ॥

मर्दितं कटुतेलेन गुटिकां क्षरयेद्विह ।

नाडीव्रणप्रवाहश्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥

चित्रघ्नं दद्रुकुण्ठं प्रतिकान्तु शिरोगदम् ।

पादस्फोटं तथा हस्तं विचर्चा बहुकोटजाम् ॥ ३०९५ ॥

र. र., मै. र., घ., र., च., व्रणशोषे । मै. र. नारायणरस इति-

नाम । घ. द्रवद्वयटीतिनाम । र. चं नारायण इतिनाम भग-

न्दराऽधिकारय ।

भाषा—शुद्ध शिगरिक, फिटकड़ी, कसीस, मेनसिल, गुगल,

पारा, सोनागुरु, गन्धक, वैकान्त, सैन्धव, अतीस, चम्बू,

शरपुष्प, विडङ्ग, अजवाइन, गजपीपल, मरिच, आक्कीजड़,

वल्गकीछाल, राल, हरे येसव समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-

गन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय सरसोंके तैलसे १-२ दिन

मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे

१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपायकेसाय देनेसे नाडी-

व्रण, गण्डमाला, भगन्दर, पुरानाव्रण, दद्रु, कुण्ठ, सङ्गाङ्गाव्रण,

शिरोरोग, हाथ और पैरकी सूजन, कीटयुक्तविचर्का इनसबको

यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ व्रणजपमल्लः

महं सङ्गत यत्नेन कर्षमात्रं भिषग्वरः ।
 शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुग्मोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥
 मृत्कपर्पटेन संवेष्ट्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
 अधो बर्हिं ददेतोप्रमद्योत्तरसातावधि ॥ ३०९७ ॥
 खरमूत्रे निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
 तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥
 व्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपाने भगन्दरे ।
 महामल्लामिधः प्रोक्तस्तज्जै व्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥
 रसायनस, व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—एकवर्ष शुद्धसोमलवी डलीको दो ढकनोंमें बन्द-
 कर कपड़मिथी देकर बूल्हेर रख नीचे कड़ी आत्वदे । ऊपरते
 १०८ कर्ष गणकेसुनका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहोनेर निकाल-
 कर रखलोड़े । इसमेंसे १-१ चावल मात्रा थोकेसायदेनेसे व्रण,
 क्षत, महाकुष्ठ, शतपानक, भगन्दर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

६४२ व्रणमर्दनरसः

दरदोतं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पलंपलम् ।
 पलत्रयं शुद्धतालं मदेयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥
 दिनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।
 निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचहृष्यां विनिक्षिपेत् ॥३१०१॥
 प्रमुद्गद्रास्यं भिषक् पश्चात्सिफतायन्त्रके पचेत् ।
 मन्द्यमध्यक्रमेणैव बर्हिं प्रज्वालयेद्यथः ॥ ३१०२ ॥
 दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
 ततस्तु वृषिकान्तस्थं कचिन्माणिस्यसन्निभम् ३१०३
 पतङ्गां चातियत्नेन प्राहृत्या पृथक्पृथक् ।
 नीत्वाऽथ.स्यं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादतः परम् ३१०४
 सर्पपाभा पतङ्गानां गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।
 चूर्णितं पर्णखण्डेन भक्षयेद्वा यथावलम् ॥ ३१०५ ॥
 यावद्गुञ्जापतङ्गी स्याद्रसो मापमितो भवेत् ।
 तद्बन्धुं बर्हिर्नैव कारयेद्गोष्ठीर्णं प्रति ॥ ३१०६ ॥
 यदाऽशिरोधात्र भवेत्पतङ्गी
 तदा रसः केवल एव नित्यम् ।
 नेवेद्गणानां प्रशमाय विहा-
 स्ततः सुखी स्यादसृगामयानः ॥ ३१०७ ॥
 र म भा., ना वि, व्रणशोचे ।

भाषा—शिखरिफसे निकालाहुआ शुद्ध पारा और गन्धक
 १-१ पल शुद्धरिताल ३ पल, चाँदीका बारीकरता १ पल
 लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर
 सुखाकर ६-७ कपड़मिथीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर डाट
 लगाकर गालकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३
 दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेर सावधानीकेसाथ शीशीको
 पोढ़कर देखे, कहींपर मणिके सहा कहीं पतङ्गकेसहा रत्न
 दिखाईदेगा । इनको अलग २ निकालकर शीशीमें रखलोड़े

और नीचेकाभाग अलग रखसे । पतङ्गीरज्जवालेमेंसे १ सर्प और
 माणिक्यसहा तथा तल्लयकी १-१ रती पानमें रखकर खावे ।
 पतङ्गीकोमात्रा यदाकर १ रतीतक और इसरोंकी १ माशेतक
 करे । इससे अधिक न बढावे । अभिके अवरोपसे पतङ्गी नजर
 न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना
 चाहिये । इसके सेवनसे समस्त रफविकार नष्टहोतेहै ॥६४२॥

६४३ व्रणवडवानलरसः

समाने द्वे च पापाणे तदूर्ध्वं वलिषारदम् ।
 कुन्टीक्षारमेकैकं सूतपादं सुतालकम् ॥ ३१०८ ॥
 सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्विसत्रपम् ।
 नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवी ॥ ३१०९ ॥
 प्रत्येकपनसारेण मर्दनेन पुनःपुनः ।
 यदकान्यदरीषीजमात्रांश्चुष्कांस्तु कारयेत् ॥३११०॥
 शुद्धे कारण्डके क्षिप्त्वा सप्तशो यत्नमृत्तिकाः ।
 सुपर्कं चालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥
 स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।
 अनुपानविशेषेण व्रणांश्च विविधाञ्जयेत् ॥
 शीतिकां विषमान्दन्ति शीतज्वरहरं परम् ॥३११२॥
 र क यो, व्रणे ।

भाषा—सफेद और पीलासोमल १-१ भाग, शुद्ध गन्धक
 और पारा आधाआधाभाग, मैनासिल और शुद्धागा १-१ भाग,
 शुद्धहरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर
 पान, निर्गुण्डी, भगरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३-३ दिन मर्दन
 कर धेरकीगुल्लीकेपरावर गोलियें बनाय सुखाकर ६-७ कपड़
 मिथीदीहुई आतशीशीशीमें भरके डाटबन्दकर गालकायन्त्रमेंरख
 १२ दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेर निकालकर सबको
 पीसकर रखलोड़े । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा
 उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेव्रण, शीत और विषम
 ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

६४४ व्रणहररसः

रसं गन्धं विषं बर्हिं लोहमम्रं समंसमम् ।
 सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥३११३॥
 भावयित्वा घटीः कुर्याद्रक्तिकाप्रमिता भिषक् ।
 रसो व्रणहरो नाम व्रणान्दन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥
 र व., व्रणाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बलनाग, चिन्ककीबड,
 लोह और अत्रकमस समभागलेकर अर्जुन और कचनाके-
 रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलियां बनाकर रख
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह
 समस्तव्रणोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ व्रणान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निदायुर्मं बला यत्वा प्रसारिणी ।
 मज्जिष्ठा पार्थयद्यौ च देव्याद पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

तुल्यभागमिलितेन सर्पिषा

लीढमेतदपहन्ति पायुजान् ॥ ३०८० ॥

लो. प. (घ.), अशौरोगे ।

भाषा—नागरमोषा, ताम्रमस, त्रिकु और त्रिफला समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सबकेबराबर घीमें मिलाकर रख-छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे दोमाशेतक देनेसे यह समस्तववा-सीरोंको नष्टकरताहै ॥ ६३६ ॥

६३७ व्योमसुन्दरीवटी

कापांस्याः काकमाच्याश्च कन्यायाश्च द्वादशैः ।

शुद्धं सूतं दिनं मद्यं क्षाल्यमम्लैः समुद्धरेत् ॥ ३०८१ ॥

तद्रसाग्निष्कत्वादि निष्काद्धं ताम्रचूर्णकम् ।

पादोननिष्कमत्रोत्थं सर्वं पादञ्च हाटकम् ॥ ३०८२ ॥

हेमतुर्यं मुण्डचूर्णं सर्वमम्लैर्विमर्दयेत् ।

दिनाग्नौ गोलकं कृत्वा जम्बीरस्योदरे क्षिपेत् ॥ ३०८३ ॥

त्रिदिनं दोलकायन्त्रे पाचयेत्सारजालके ।

उद्धृत्य धारयेद्दधने गुटिकां व्योमसुन्दरीम् ॥ ३०८४ ॥

वर्षमात्राज्जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनं नरः ।

धिप्रमूलस्य चूर्णन्तु सर्शोर्द्धं कान्तपात्रके ॥

आलोल्य भक्षयत्क्यमनु स्यात्कामप्रेण हितम् ॥ ३०८५ ॥

रसायनं, रसायनं ।

भाषा—कषाय, मकोष, पीडुवार इनकेसोमें १-१ दिन

पारेकोमर्दनकर काष्ठीप्रसृति ल्पेपदापौसे साफकरके १ कप

लेवे । फिर शुद्धताम्रचूर्ण २ माशे, अभ्रप्रसक्त ३ मा, सुवर्ण

और मुण्ड १-१ माशा मिलाकर खटाईमें ४ पहर मर्दनकर

गोलीबनाय चारतह मलमलके टुकड़ेमें बाधकर जमीरीनीचूमें

रस दोलायत्र बनाय काष्ठीमें लटकाकर ३ दिनतक पकावे ।

काष्ठी सुखनेपर नई ढालजाय । स्वाइशीतलहोनेपर गोलीको

निकालले, यह कड़ी होजायगी । दूसरी एकत्रयंमर मुहमें रख-

नेसे सुधापा नष्टोकर अत्यन्त दीर्घायुहोताहै । एककप चिकककी

जड़का चूर्ण मनुकेसाय कान्तलोहकेपात्रमें छुछंदर घोटकर

मधुनकरनेसे दगडा घरीमें अद्भुतमगहोताहै ॥ ६३७ ॥

६३८ व्योपादिलोहम्

व्योपं पित्तं क्षिरजनी त्रिफला क्षिपुनर्नचम् ।

मुस्ताम्यधोरजः पाठा विडङ्गं द्वेद्वयम् च ॥ ३०८६ ॥

घृष्टिकाली च भार्गी च सर्शोरस्तेः शृतं घृतम् ।

सर्पाप्रशामयत्याशु यिकारान्मुक्तिकाकृतान् ॥ ३०८७ ॥

न स., अ. ६, प. मा., ग. नि, पाण्डुरोगे ।

भाषा—त्रिकुट्ट, बेलगिरी, दन्ती, दाहन्दी, त्रिफला,

लास और संकेतुनर्नका, नागरमोषा, फोलादकाचूरत, पाठा,

विडङ्ग, देवदारु, यिडुमा, भार्गी सब समभागलेकर बारीक-

पीसकर बन्ध बनावे । फिर बन्धमें चौगुना घी और पीसे

चौगुनादूध ढालकर पकावे । घीमात्र अवशिष्ट रहनेपर छानकर

रखने और ऊपरकी चीजोंकड़ी चूर्ण बनाकर रखनेसे । इस-

चूर्णमेंसे १ से ३ माशेतकमात्रा एकलोहे घीमें मिलाकर लेनेसे
शुद्धक्षणजनित समस्तविकार नष्टहोतेहै । खानेकेलिये जो चूर्ण
बनावे उसमें लोहमसका उपयोगकरे ॥ ६३८ ॥

६३९ व्रणगजकेसरीरसः

मृतं सूतं सूतं ताम्रं सूतं स्वर्णं मृतायसम् ।

पृथक्पृथक् शुक्तिसमं शुद्धशैलं पलानि पद् ॥ ३०८८ ॥

खल्वे शतद्वलोल्येन रसेन परिमर्दयेत् ।

वारत्रयं तथा जातीदलजेन प्रयत्नतः ॥ ३०८९ ॥

ततो मापमितं नित्यं त्रिफलामधुना लिहेत् ।

शुद्धचीसारिवानिग्ममझिप्रात्रिफलोद्भवम् ॥ ३०९० ॥

कार्यं चानु पिबेन्नित्यं व्रणक्षोपप्रशान्तये ।

तान्सवांश्राशयेदानु विद्वर्षाश्च भगन्दरान् ॥

शोषाभ्रानप्रमेहादीज्येच्छ्रीशम्भुशासनात् ॥ ३०९१ ॥

र. म. मा., ना. वि., व्रणाधिकारे ।

भाषा—पारा, ताम्र, सुवर्ण और लोहमस १-१ पल

शुद्धशिलाजीत ६ पल लेकर गुलाब, कमल और चमेलीके

स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर

रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफला और मधुकंसायलेक

गिलोय, अनन्तमूल, नीम, मजीठ और त्रिफलाका काय पीनेसे

सबप्रकारकेव्रण, विद्रधि, भगन्दर, शोष, आभ्रान, प्रमेह

प्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६३९ ॥

६४० व्रणगजाडुशरसः

दृढः पार्वतीपुष्पं कुन्ती पुटपो रसः ।

शोणितं गन्धको दैत्यः सैन्धवोऽतिविषा चर्वा ३०९२

शरपुष्पा विडङ्गश्च यवानी गजपिप्पली ।

मरीचार्कं च वरुणो धूकञ्च हरीतकी ॥ ३०९३ ॥

मर्दितं कटुतेलेन गुटिकां कारयेद्दिह ।

नाडीव्रणप्रवाहञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ ३०९४ ॥

चिरव्यपं दृढकुण्डं पृथिकान्तु शिरोगदम् ।

पादस्फोर्टं तथा हस्तं विचर्चनीं यहुकाटजाम् ॥ ३०९५ ॥

र. र., भै. र., घ. र., च., व्रणक्षोये । भै. र. नारायणरस इति-

नाम । घ. दृढकुण्डटीतिनाम । र. चं नारायण इतिनाम भग-

न्दराऽधिकारथ ।

भाषा—शुद्ध शिगरिक, फिटकरी, कर्गस, मैनसिल, गुग्गु,

पारा, सोनागुरु, गन्धक, वैशान्त, सैन्धव, अनीस, नवय,

शरपुष्प, विडङ्ग, अजवाइन, गजपीपल, मरिच, आबकीमर्क,

बहगकीछाल, शाल, हरे देसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पार-

गन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय सरसोंके तेलमें १-२ दिन

मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे

१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेरूप देनेसे नाडी-

मर्ग, गण्डमाला, भगन्दर, पुतामस्य, दन्, कुट्ट, सहाहुजाम्, १,

शिरोरोग, हाथ और पैरकी सूजन, शीतदुष्पिषयिणा इनसबको

यह नष्टकरताहै ॥ ६४० ॥

६४१ ब्रणजयमल्लः

मह्यं सङ्गह यत्नेन कर्ममात्रं भिषग्वरः ।
 शुद्धं कृत्वा ततः कोष्ठीयुगमोदरविले क्षिपेत् ॥३०९६॥
 मृत्कार्पटैः संवेष्ट्य ततश्चुल्ल्यां निवेशयेत् ।
 अधो वह्निं ददेतोऽग्रमष्टोत्तरशतायधि ॥ ३०९७ ॥
 खरमूत्रं निषेच्याऽथ स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
 तण्डुलप्रमितां मात्रां हविषा सह योजयेत् ॥ ३०९८ ॥
 ब्रणे क्षते महाकुष्ठे शतपोने भगन्दरे ।
 महामह्नाभिधः प्रोक्तस्तज्जै ब्रणपराजये ॥ ३०९९ ॥
 रसायनसः , ब्रणाधिकारे ।

भाषा—एककर्म शुद्धसोमलकी डलीको दो ढकनोंमें बन्द-
 कर कपड़मिनी देकर चूल्हेपर रख नीचे कड़ी आचदे । ऊपरसे
 १०८ कर्म गणकेसुन्नका चोवादे । स्वाङ्गशीतलहीनेपर निकाल
 कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावल मात्रा धीकेसायदेनेसे ब्रण,
 क्षत, महाकुष्ठ, शतपोनक, भगन्दर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

६४२ ब्रणमर्दनरसः

दूरदोत्यं रसं शुद्धं गन्धकञ्च पल्पपलम् ।
 पलत्रयं शुद्धतालं मर्दयेत्तुलसीद्रवैः ॥ ३१०० ॥
 दिनत्रयं प्रयत्नेन रेतितं शुक्तिमात्रकम् ।
 निक्षिप्य रजतं शुद्धं काचकृत्यां विनिक्षिपेत् ॥३१०१॥
 प्रमुद्रयास्यं भिषक् पश्चात्सिकतायन्त्रके पचेत् ।
 मन्दमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेद्धः ॥ ३१०२ ॥
 दिनत्रयं प्रयत्नेन स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
 ततस्तु वृषिकान्तरस्थं क्रचिग्माणिक्यसन्निभम् ३१०३
 पतङ्गी चालियत्नेन ग्राहयित्वा पृथक्पृथक् ।
 नीत्वाऽधःस्थं समस्तञ्च पृथक्कुर्यादत् । परम् ३१०४
 सर्थपाभा पतङ्गीना गुञ्जामात्रं तथा रसम् ।
 चूर्णितं पणखण्डेन भक्षयेद्वा यथाबलम् ॥ ३१०५ ॥
 यावद्भुजापतङ्गी स्याद्रसो मापमितो भवेत् ।
 तद्भुजं वर्धनं नैव कारयेद्भोगिण्यं प्रति ॥ ३१०६ ॥
 यदाऽग्निरोधाघ्न भवेत्पतङ्गी
 तदा रसः केवल एव नित्यम् ।
 मेवेद्ब्रणानां प्रशमाय विद्धा-
 स्तत सुखी स्यादरुगामयान् ॥ ३१०७ ॥

र म मा , ना वि , ब्रणशोथे ।

भाषा—शिशिरिफसे निकालाहुआ शुद्ध पारा और गन्धक
 १-१ पल शुद्धरिताल ३ पल, चादीका भारीकेरता १ पल
 लेकर सबकी नीलकण्ठकजलीकर तुलसीकेरससे ३ दिन मर्दनकर
 गुलाकर ६-७ कपड़मिटीदीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर ढाट
 लगाकर बाहुकायन्त्रमें रख मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३
 दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहीनेपर सावधानीकेसाथ शीशीको
 पोढ़कर देसे, कहींपर मणिके सद्य कहीं पतङ्गकेसद्य रक्त
 दिक्षार्दिगा । इनको अन्त्या २ निकालकर शीशीमें रखछोड़े

और नीचेकाभाग अलग रखसे । पतङ्गीरक्तवालेमेंसे १ सर्थप और
 माणिक्यसद्यस तथा तल्प्यकी १-१ रती पानमें रखकर खावे ।
 पतङ्गीमात्रा बढ़ाकर १ रतीतक और दूसरीकी १ माशेतक
 करे । इससे अधिक न बढ़ावे । अग्निके अवरोधसे पतङ्गी नष्ट
 न आवे तो उसमें नीचे ऊपर जो रसमिले उसीका सेवनकरना
 चाहिये । इसके सेवनेसे समस्त रक्तविकार नष्टहोतेहै ॥६४२॥

६४३ ब्रणवडवानररसः

समाने द्वे च पापाणे तदूर्ध्वं वलिपारदम् ।
 कुनटीक्षारमेकैकं सूतपादं सुसालकम् ॥ ३१०८ ॥
 सर्वं शुद्धं तु खल्वे च मर्दयेद्विषसत्रयम् ।
 नागवल्ली च निर्गुण्डी भृङ्गराजपुनर्नवौ ॥ ३१०९ ॥
 प्रत्येकपत्रसारेण मर्दनेन पुनःपुनः ।
 वटकान्यद्रीधीजमात्रांश्चुष्कास्तु कारयेत् ॥३११०॥
 शुल्वे कारण्डके क्षिपत्वा सप्तशो वस्त्रमृत्तिकाः ।
 सुपकं बालुकायन्त्रे द्वादशाहं निरन्तरम् ॥ ३१११ ॥
 स्वाङ्गशीतलमादाय सर्वं गोलं विचूर्णयेत् ।
 अनुपानविशेषेण प्रणाञ्च विविधाञ्जयेत् ॥
 शीतिकां विपमान्दन्ति शीतज्वरहरं परम् ॥३११२॥
 र क यो , ब्रणे ।

भाषा—सपेद और पीलासोमल १-१ माग, शुद्ध गन्धक
 और पारा आधाआधाभाग, मैन्सिल और सुहागा १-१ भाग,
 शुद्धरिताल पारेसे चतुर्थांश लेकर सबकी नीलकण्ठकजलीकर
 पान, निर्गुण्डी, भगरा और पुनर्नवाके रसोंसे ३-३ दिन मर्दन
 कर बेरकीशुटलीकेबावर गोलियें बनाय गुलाकर ६-७ कपड़
 मिटीदीहुई आतशीशीशीमें भरके ढाटबन्दकर बाहुकायन्त्रमेंरस
 १२ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहीनेपर निकालकर सबको
 पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १ चावलसे २ चावलतक मात्रा
 उचितानुपानकेसाथ देनेसे नानाप्रकारकेब्रण, शीत और विपम-
 ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६४३ ॥

६४४ ब्रणहररसः

रसं गन्धं विषं वह्निं लोहमर्त्रं समंसमम् ।
 सप्तधा पार्थतोयेन काञ्चनाराऽम्भसा तथा ॥३११३॥
 भावयित्वा घटी. कुर्याद्भक्तिकाप्रमिता भिषक् ।
 रसो ब्रणहरो नाम ब्रणान्दन्ति रसोत्तमः ॥ ३११४ ॥
 र च , ब्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग, चित्रककीजड़,
 लोह और अभ्रकमस समभागलेकर अर्जुन और कचनारके-
 रसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलियां बनाकर रख-
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह
 समस्तभ्रणोंको दूरकरताहै ॥ ६४४ ॥

६४५ ब्रह्मान्तकगुग्गुलुः

कटुत्रयं निशायुग्मं बला घल्या प्रसारिणी ।
 मञ्जिष्ठा पार्ययष्ट्या च देवदाद पुनर्नवा ॥ ३११५ ॥

पृथक् पृथक् शुक्तिरसं पलैकं मृतपारदम् ।
अम्रञ्ज द्विगुणं देयं त्रिगुणं तु मृतायसम् ॥ ३११६ ॥
चतुर्गुणं शुद्धरोलं सर्वमेकत्र मिश्रयेत् ।
अस्थिग्रहलिकातोये सम्यक् शोष्यस्तु गुग्गुलुः ॥
मर्वेपां द्विगुणञ्चाऽत्र दत्त्वा सम्मर्दयेत्ततः ।
अक्षप्रमाणा गुटिका सेव्या नित्यं ततः परम् ॥ ३११८ ॥
पिथ्यन्मांसरसञ्चानु दुष्टव्रणनिपीडितः ।
पृथक्तास्थिवाहीनि व्रणान्याशु प्रयान्ति हि ॥
भग्नविदिल्लसन्धीनां साक्षाद्भस्त्राश्च ये व्रणाः ३११९,
टो., व्रणाधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, हल्दी, दाहहल्दी, बला, असगन्ध, प्रसारिणी, मजीठ, अजुन, सुलझेदी, देवदारु, कुनन्दा, शारदामूल येस्य १-१ पल, अत्रकमस्य २ पल, लोहमस्य ३ पल, शुद्ध-शिलाजीत ४ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर इङ्गोडकेरसमें शुद्धकियाहुआपूगल सबसे दूना मिलाकरकूटे । एकजीवहोनेपर बेरबरावर गोलियें बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली मात्रस अथवा जीवनीयगणकायकेसाय देनेसे पूय, रक्त और हृदिया जिनमेंसे बहबहकर निकलतीहों ऐसे दुष्टव्रण, भग्न, विच्छिद्यस्तन्या, अस्थिभग्न येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६४५ ॥

६४६ व्रणान्तकरसः (प्रथमः)

अभ्या हरिद्रा कर्पूकं श्लेच्छदीप्यस्य कर्पकम् ।
कीटमाराजमोदायाः कर्पमेकं ततो गुडात् ॥ ३१२० ॥
जीर्णात्सार्धं द्विकर्पं स्याद्भस्त्रातकफलानि च ।
सार्द्धद्विसहस्रया सम्यक् पारदः सार्धमापकः ३१२१ ॥
खल्वे सुकुट्टय प्रथमं भस्त्रातेशौ ततः परम् ।
चूर्णं खल्वण सम्पुतं मेलयित्वा गुडेन तु ॥ ३१२२ ॥
कुट्टयित्वा च तत्सम्यग्गुटिकाश्च चतुर्दश ।
बद्धा द्विकालमश्रीयाच्छीततोयानुपानतः ॥ ३१२३ ॥
दन्तस्पर्शं विना प्राह्यमौषधं पथ्यशीलिना ।
गोधूमार्धं घृतस्निग्धं सूपं चाढकिसम्भवम् ॥ ३१२४ ॥
ओदनं तिक्ललयणं शाकं सामान्यमेव च ।
पथं सप्तदिनं क्रुयाद्दृष्टमेऽहि तथा वटीम् ॥ ३१२५ ॥
हिन्दुजीरमरीचादिसंस्कृताश्च निषेवयेत् ।
उत्तरार्द्धं स्नानवर्ज्यमेवं कार्यं विज्ञानता ॥ ३१२६ ॥
अपि तालुनि सञ्जाते व्रणे चालनिकाग्निमे ।
यत्रकुनाऽपि सम्भूते व्रणे श्वेतभ्रियोजयेत् ॥ ३१२७ ॥
व्रणान्तकमिदं प्रोक्तं सर्वतुष्टव्रणापहम् ।
उपदेशसमुद्भूतं गुह्यस्थानसमुद्भवम् ॥ ३१२८ ॥
नाडीव्रणं निहन्त्याशु भग्नन्दरमथापि वा ।
हस्तपादसमुद्भूता विविधा वातवेदनाः ॥ ६१२९ ॥
ताः सर्वाः प्रशमं यान्ति सत्यमेतन्न संशयः ।
ताम्बूलञ्च सदा सेव्यमश्रीयाद्य घृतं यद् ॥ ३१३० ॥
रसायनम्, व्रणाधिकारे ।

भाषा—आवाहरी, खरासानी अजवान, कीडामारी (गुजराती), अजमोद १-१ कर्प, पुरानागुड २ ॥ कर्प, मिलावे २ ॥ नग, पारा १ ॥ माशा लेकर पहिले मिलागोंको कूटकर पाराडालकरकूटे । पारामिलजानेपर गुडडाले । द्रवहोनेपर सब चीजोंकाबारीकचूर्णमिलाकरकूटे । अच्छीतरह गोलोबधनेलायव-होनेपर इसकी १४ गोलिया बनाकर रखछोडे । इनमेंसे १-१ गोली सुबहशाम ठडे पानीकेसाथ दन्तस्पर्शको बचाकर निगल जाय । इसमें गेंहूँ, धी, अरहरकीदाल, भात, तिच और लवण रस साधारणशाक इनका सेवनकरे । ऐसे ७ दिन बीतनेपर आठवेदिन हाँग, जीरा और मरिच कौरहकेयुक्त भोजनकरे । इसमें १४ दिनतक स्नान न करे । इसकेसेवनसे चल्नीबीतरह सेकड़ोछेदवाला ताल अथवा गुह्यादिस्थानज्वण, उपदश, नाडी-व्रण, भग्नन्दर, नानातरहकी वातवेदना येसब नष्टहोतेहैं । इसमें सेवनसे मुंह खरागमालूमपडे तो हमेशा पानका सेवनकरे ६४६

६४७ व्रणान्तकरसः (द्वितीयः)

दरदञ्चैकभागत्तु पञ्चगञ्जाऽपि गन्धकम् ।
सूतराजस्य चैकेन तद्वदं मृतनागकम् ॥ ३१३१ ॥
हंसपाद्रीरसैर्मर्द्यं पुटमेकञ्च चूर्णितम् ।
गुडाज्यमरिचैर्मिथं प्रातःकाले च सेवयेत् ॥ ३१३२ ॥
व्रणक्रीटककुपुत्रानि मण्डलानि च नाशयेत् ।
व्रणान्तक इति खयातो दुष्टव्रणहरः परः ॥ ३१३३ ॥

व. रा., व्रणे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ १ भाग, शुद्धगन्धक ६ भा., शुद्धपारा १ भा., नागमस्य आधाभागलेकर नीलवर्णकमलीकर हसरजवे रससे एकदिन मदनकर गोलबनाय एरुण्डकेपतोंमेलपेट पुटपाकमें स्वेदितकर निकालले । इसमेंसे ३-३ रती प्रातःकाल गुड, मरिच और धीकेसाथ सेवनकरनेसे व्रण, कीट, कुष्ठ और चकने नष्टहोतेहैं ॥ ६४७ ॥

६४८ व्रणान्तकरसायनम्

सितमर्द्धं कर्पमानं दरदञ्च द्विकार्पिकम् ।
त्रिकर्पं श्वेतखदिरं त्र्यंश्च खल्वे विचूर्णयेत् ॥ ३१३४ ॥
आर्द्रकस्वरसेनैव मर्दयेत्तद् दृढं नरः ।
सर्पपप्रमातों मात्रां युञ्जीत भिषगुत्तमः ॥ ३१३५ ॥
घृतानुपानतो दद्यात्सन्धने पथ्यमाचरेत् ।
संयाचकं घृताल्यञ्च पथ्याय योजयेद्बुधः ॥ ३१३६ ॥
व्रणाः शुष्यन्ति रोहन्ति प्रभावेणौषधस्य हि ।
ततः पण्मासपर्यन्तं मुद्गान्नं कारवेह्यकम् ॥
रूपमाण्डञ्च गुडं रम्भाफलं चै वर्जयेन्नरः ॥ ३१३७ ॥
रसायनम्, व्रणाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सफेदतोमल १ कर्प, शुद्ध शिंगरिफ २ कर्प, सफेदकल्या ३ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर १-३ दिन अदरखकेरसे मदनकर सर्पप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोडे ।

इतमसे १ से ३ गोलीतक मात्रा प्रवृत्ति और पलका विचार-
कर धीमेसायदेवे और तत्काल हल्का मिलावे । इसकेप्रभावसे
म्रग अच्छेहोजातेहैं । ६ महीनेतक मूग, करेला, कोंहळा, गुड़
और केले न खाय ॥ ६४८ ॥

६४९ व्रणापहारीरसः

रसाद्विगुणितो गन्धः शिलातालौ च तत्समां ।
पलङ्कया सर्वसमा मर्दयेत्त्रिफलाद्रवेः ॥ ३१३८ ॥
व्रणापहारी सिद्धः स्यात्सेच्यो मापह्वयोनमितः ।
जेतुं सर्वव्रणान्दुष्टान्नाडीनभगान्द्रात्र ॥ ३१३९ ॥
२, व्रणे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक, मैन्सिल और हरिताल
२-२ भाग, गूगल सबकी बराबर लेकर गूगलको धीके योगसे
कूटकर सबचीजोंकी कजलीको मिलाकर त्रिफलाकेरससे एकदिन
मर्दनकर २-२ मासोंकी गोखिया बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानवेसायदेनेसे समस्त
दृष्टव्य, नाड़ीव्रण और भगन्दर नष्टहोतेहैं ॥ ६४९ ॥

६५० व्रणारीरसः

गन्धेशाह्विफणं तुल्यं इयं जम्बीरमर्दितम् ।
कुमार्यां नरमुत्रेण चित्रकेण च सिन्धुना ॥ ३१४० ॥
नौवर्चलेन च पृथग्युक्तया सप्तदिनैः पृथक् ।
व्रणरोगेषु सर्वेषु सद्योजातव्रणेषु च ॥ ३१४१ ॥
हृताभगन्दरे गण्डगण्डमालासु योजयेत् ।
क्षौट्रेण वा यथायोगैस्त्रिचहं पुरसंयुतम् ॥
पथ्यञ्च शालयो मुद्गा गोधूमाः सघृता हिताः ॥ ३१४२ ॥
२. सि., २. नि., रसायनस., व्रणाधिकारे ।

टि०—२ सि, रसायनस गन्धेशाह्विण तुल्यमित्यस्य स्थाने
गन्धेशो वणा तुल्यो इति पाठ । नाम च व्रणरोगकणम इति स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा और अफीम समभागलेकर
पारेगन्धकरी नीलवर्णकजलीकर ३ दिन जमीरीकेरससे मर्दनकर
धीकवार, नरमूत्र, चित्रक, सिन्धु और सप्तलनमक इनप्रत्येक-
केद्रयोसे ७-७ दिन मर्दनकर ९-९ रत्तीकी गोलिये बनाकर
रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु, गूगल अथवा रोगोचितानु-
पानवेसाय देनेसे समस्त व्रणरोग, सद्योजव्रण, मूकझीकाविष,
भगन्दर, गाँठ, गण्डमाला, येसन नष्टहोतेहैं । इसमें सफेदचावल,
मूंग, गेहूँ, धी येसय खानेको देना और नमकसे परहेज कराना ॥

यदीयमंसमंगवित्सर्गसङ्घवे,

जगत्त्रयस्याऽऽरमभायाऽभवोद्भवः ।

हरिप्रपन्नेन हृते प्रमान्विते,

अन्तःस्थवर्गोऽजनि योगसागरे ॥

अथ शकारादिसाः

१ शकटाक्षकिट्टवटी

शकटाक्षकिट्टवट्यः शनैः शनैः पाण्डुरोगघ्नाः ।
तदुपादानपदार्थं कथयामश्चाश्वं तैलम् ॥ १ ॥
सि मे म, पाण्डुरोगे ।

भाषा—गाड़ीकेपहियेके किट्टकी चनेप्रमाण गोलिया बना-
कर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-
पानवेसाय देनेसे पाण्डुरोग नष्टहोताहै ॥ १ ॥

२ शक्तिकौमाररसः

द्रवरसकरुष्णादङ्गुणाऽऽलं शिलांदा
मुनिमिततिमिपित्तं भांययेत्तल्लमाप्रम् ।
ज्वरहररस आर्द्रैः शक्तिकौमारनामा
दधियुतहितपथ्यं शाकधुन्तासुञ्ज ॥ २ ॥
२. सि., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, खपरिया, पीपल, भुनासुहाग, शुद्ध-
हरिताल और मैन्सिल समभागलेकर बारीकचूनेकर रोहूमछली-
केपित्तकी ७ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर
रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली अक्षरपके रसवेसायदेनेसे यह
समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमें दही, भात और बेननकाशय
पथ्यदेना ॥ २ ॥

३ शक्तिरसः (महा)

मृतसूताऽन्नकं धन्नं फान्तताराऽकंहाटकम् ।
तीक्ष्णञ्च तुल्यतुल्यांशं सर्वेषां गन्धकं समम् ॥ ३ ॥
सर्वं पालादातेलेन मर्दयेद्दिनसप्तकम् ।
महाशक्तिरसो नाम क्षौद्रं मांषं लिह्वेत्सदा ॥ ४ ॥
पण्मासेन जरां हन्ति जीवेद्ब्रह्मदिनत्रयम् ।
वन्सरात्सप्तकल्पानि जीवत्येव न संशयः ॥ ५ ॥
इच्छावेगी महासिद्धः पराशक्तियुतो भवेत् ।
तस्य मूत्रपुरीषाभ्यां तात्रं भवति फाञ्जनम् ॥ ६ ॥
पालाशबीजजं तैले क्षौट्रेल्लैर्घं पलाष्टकम् ।
श्रामकैः हानुपानैः स्यात्सस्यकू छन्न्या प्रकाशितम् ॥ ७ ॥
२ ख, रसायनसं., रसायने ।

भाषा—पारा, अन्नक, हीरा, कान्त, रत्न, तास, सुवर्ण
और फोलाद इनरीमत्से समभाग लेकर सबकी बराबर शुद्ध-
गन्धक मिलाकर पलाशरेधीजोके तैले ७ दिनकर मर्दनकर
रखडोढ़े । इनमेंसे १ रत्तीसे शुद्धर धीरेधीरे १ मानेल्हमात्रा
बढ़ावे । ६ महीनेकेनेबनसे बहुत दीर्घायु होतीहै । एष्वभ्यं-
सेवनसे कल्याणीवी तथा इच्छावेगी महासिद्ध होकर वन्द्य शक्ति-
युक्तहोताहै । इसके मूत्र और पुरीषसे तापनर एवंभियादो तीहै ।
इसके प्रयोगसे पलाशरेधीजोंकील धन्न्यनुकार आरम्भकर ८
पल्लकहीमात्रा बढ़ावे तो शरीरमें रमका कामन्दोताहै ॥ ३ ॥

४ शक्रवल्लभरसः

रसगन्धकलोहाऽम्ररौप्यहेमानि माक्षिकम् ।
 शाणमानेन सङ्गृह्य तुगाक्षीरीञ्चकार्पिकीम् ॥ ८ ॥
 पलप्रमाणं विजयावीजञ्चैकत्र मर्दयेत् ।
 विजयावारिणा पश्चान्मापमानां वर्दा चरेत् ॥ ९ ॥
 एकैका भक्षणार्थेया पेयञ्चाऽनु पयः पलम् ।
 श्रीशक्रवल्लभो नाम रसो वाजीकरः परः ॥ १० ॥
 वीर्यस्तम्भकरोऽत्यर्थं प्रमदामदनाशनः ।
 गतो ह्यप्सरसां शक्तो ब्राह्मणं यत्प्रसादतः ॥ ११ ॥
 आ. वि., भे र., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अम्रक, रजत, सुवर्ण और सोनामासी इतनीभस्म ४-४ मासे, बंशलोचन १ कर्ष, गांजेकेबीज १ पल लेकर सबका वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाकर भागके स्वरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली दूधकेसाथ लेनेसे उत्तमवाजीकरण होताहै । वीर्यवीर्यदिके प्राप्तोकर स्त्रियोंके मदको नष्टकरताहै ॥ ४ ॥

५ शङ्करलोहम् (प्रथमम्)

प्रणम्य शङ्करं रुद्रं दण्डपार्णि महेश्वरम् ।
 जीवितारोग्यमन्विच्छन्पर्यृच्छश्च नारदः ॥ १२ ॥
 सूर्योपायेन हे नाथ शक्रक्षारान्निर्मिथिना ।
 दुर्बलानाञ्च भीरूणां चिकित्सां यत्कुरुहेसि ॥ १३ ॥
 तन्निष्पद्यचनं श्रुत्वा लोमानां हितकाम्यया ।
 अर्शसां नाशनं श्रेष्ठं भैषज्यमिदमीरितम् ॥ १४ ॥
 मुण्डवज्रादिलोहानां प्राहामन्यतमं शुभम् ।
 कृत्वा निर्मलमादौ तु कुनट्या माक्षिकेण च ॥ १५ ॥
 पचूरमूलकलेन लिम्पेद्रसयुतेन च ।
 ज्याला च तस्य रोद्धव्या त्रिफलाया रमेन च ॥ १६ ॥
 ततो विहाय गलितं शङ्कनोद्ध समुक्षिपेत् ।
 वद्री निक्षिप्य विधिवच्चञ्चालाऽङ्गारेण निर्धमेत् ॥ १७ ॥
 त्रिफलाया रमे पूते तदाकृत्य तु निर्वपेत् ।
 न सम्यगगलितं यद्य तेनेव विधिना पुनः ॥ १८ ॥
 भ्मातं नियांपयेत्तस्मिँल्लोहं तन्त्रिफलासं ।
 यद्गोहं न मृतं तत्र पाच्यं भूयोऽपि पूर्ववत् ॥ १९ ॥
 मारणाप्रमृतं यद्य तत्पक्वम्ललोहवत् ।
 ततः संशोष्य विधिवच्चूणयेद्गोहमाजने ॥ २० ॥
 लोहेनैव शिलायां वा ह्यदा शृङ्गणवृणितम् ।
 कृत्वा लांहमये पात्रे मादं वा लिप्तरुच्रेके ॥ २१ ॥
 रसेः पद्मोपमं कृत्वा पाचयेद्गोमयाऽग्निना ।
 पुटानि क्रमशो दद्यात्पृथगेषां विधानतः ॥ २२ ॥
 त्रिफलाऽऽद्रकभृङ्गाणां केशराजस्य बुद्धिमान् ।
 बन्दमानकमहातयद्गीनां मूरणस्य च ॥ २३ ॥

हस्तिकर्णपलाशस्य कुलिशस्य तथैव च ।
 पुटेपुटे चूर्णयित्वा लोहात्पोडशिकं पलम् ॥ २४ ॥
 तन्मानं त्रिफलायाश्च पलेनाऽधिकमाहरेत् ।
 अष्टभागाऽवशिष्टे तु रसे तस्याः पचेद्बुधः ॥ २५ ॥
 अष्टौ पलानि दत्त्वा च सर्पिपो लोहमाजने ।
 तात्रे वा लोहदर्व्यान्तु चालयेद्विधिपूर्वकम् ॥ २६ ॥
 ततः पाकविधानतः स्वच्छे शुद्धे च सर्पिपि ।
 मृदुमध्यादिभेदेन गृह्णीयात्पाकमानवित् ॥ २७ ॥
 अभिमन्य विधानेन कृतकौतुकमङ्गलम् ।
 भ्रामराज्यसमायुक्तं लिहैदारक्तिकाक्रमात् ॥ २८ ॥
 वर्धमानानुपानञ्च गव्यं क्षीरञ्च पाययेत् ।
 गव्याभावेऽप्यजायाश्च स्निग्धवृष्यादिभोजनम् ॥ २९ ॥
 सद्यो वह्निकरञ्चैव भस्मकञ्च नियच्छति ।
 हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरान् ॥ ३० ॥
 गुल्माक्षिपाण्डुरोगाञ्च तन्द्रालस्यमरोचकम् ।
 परिणाममयं शूलं प्रमेहमपवाहुकम् ॥ ३१ ॥
 श्वयथुं रक्तप्लावञ्च दुर्नामानं विशेषतः ।
 यलरुद्धं हृणञ्चैव कान्तिदं स्वरयर्दनम् ॥ ३२ ॥
 लाघवञ्च मनोहञ्च नैरोग्यं पुष्टिवर्धनम् ।
 आयुष्यं श्रीरुच्यैव ययस्तेजस्करन्तथा ॥ ३३ ॥
 सश्रीकपुत्रजननं वलीपलितनाशनम् ।
 दुर्नामारिरयं नाम्ना दष्टो धारसहस्रशः ॥ ३४ ॥
 निर्मूलं दहाते शीघ्रं यथात्सलञ्च वह्निना ।
 सौकुमार्योत्पकायत्वे मद्यसेवां समाचरेत् ॥ ३५ ॥
 जीर्णमद्यानि युक्तानि भोजनेः सह पाययेत् ।
 लावतिस्त्रिगोधाश्च मयूरः शशकादयः ॥ ३६ ॥
 चटकः कलविद्धश्च वर्तको हरितालकः ।
 द्येनरुश्च गृहल्लावो वनविष्कारकादयः ॥ ३७ ॥
 पारावतमृगादीनां मांसं जाङ्गलजं तथा ।
 महुरो रोहितः श्रेष्ठः शकुलश्च विशेषतः ॥ ३८ ॥
 मत्स्यराजा इमे प्रोक्ता हितमत्स्येषु योजयेत् ।
 प्रशस्तवार्ताकफलं पटोलं घृहतीफलम् ॥ ३९ ॥
 प्रलम्बाभीरवेभ्रात्रं जातुकं तण्डुलीयकम् ।
 वास्तुकं कालशाकञ्च कर्णालुरुपुनर्नयाम् ॥ ४० ॥
 नारिकेलञ्च खर्चूरं दाडिमं लवलीफलम् ।
 शृङ्गाटकञ्च पम्पहां द्राक्षातालफलानि च ॥ ४१ ॥
 जातीकोपं लवङ्गञ्च पूगं ताम्बूलपत्रकम् ।
 नाश्रीयाह्नुकुचं कोलककन्धुयदराणि च ॥ ४२ ॥
 जम्बीरं बीजपूरञ्च करमर्दकतिन्डो ।
 आनूपानि च मांसानि शकरं पुण्ड्रकादिकम् ॥ ४३ ॥
 हंससारसदातृहमट्टकाकयलाहकाः ।
 मापकन्दफरीराणि चणकञ्च कलिङ्गकम् ॥ ४४ ॥
 कृष्णाण्डकञ्च फर्कटी केतुकञ्च विशेषतः ।
 कञ्जटे वारयेहञ्च कशेरुं कर्कटीं तथा ॥ ४५ ॥

विदलानि च सर्वाणि ककाराद्रांश्च वर्जयेत् ।
 लोहराजस्तथा चायं स्वयं ह्येण भाषितः ॥ ४६ ॥
 जनानामुपकाराय दुर्नामारिरयं ध्रुवम् ।
 स्थानादपि मेरुश्च पृथ्वी पर्यति वायुना ॥ ४७ ॥
 पतन्ति चन्द्रताराश्च मिथ्या चेद्दहमद्युम् ।
 ब्रह्मब्राह्म कृतब्राह्म कुराश्चास्त्यवादिनः ॥ ४८ ॥
 घर्जनीया विदग्धेन भैषज्यगुरनिन्दकाः ।
 रक्तिद्वादशकादूर्ध्वं वृद्धिरस्य भयप्रदा ॥ ४९ ॥
 काले मलप्रवृत्तिलाघवमुदरे विगुद्धिरदरं ।
 अङ्गेषु नावसादो मनःप्रसादोऽस्य परिपाके ॥ ५० ॥
 किमिरिपुवृष्णविलीढं सहितं स्वर्सेन वङ्गसेनस्य ।
 क्षपत्यचिरान्नियतं लोहाजीर्णभयं शूलम् ॥
 भवेद्यदाऽतिसारस्तु दुग्धं पीत्वा तु तं जयेत् ॥ ५१ ॥
 र. र., र. क., भा. प्र., र. चि., यो. म., र. का., अशस्सु ।

भाषा—मुण्डादि ६ लोहोंमेंसे किसीएकके पत्रोंको शुद्धकर
 मैनसिल, सोनामाखी और पारा समभागलेकर बारीकचूर्णकर
 कुकरोंपेकीजड़केसमें कल्कबनाय पत्रोंपर लपेटकर मुखाकर
 सलुएके कोयलोंपर अथवा अन्यसाठिकोयलोंपर धमनकर ।
 तीप्रज्ञाला निकलनेपर पानीरीजगह त्रिफलात्रेयायसे छिटिदेवे ।
 लोहेकेगलजानेपर त्रिफलात्रेयायमें बुझावे । इसप्रकार ७ अथवा
 २१ बारगलाकर बुझानेसे लोहेकीभस्म होकर पायें राखकी-
 तरह जमजायगी । २१ बार बुझानेपर भी जिसकी भस्म न हो
 उसे फेंकदेना क्योंकि यह लोहनही है । फिर उसभस्मको हाथ-
 मेंसे निकालकर मुखाकर लोहे अथवा पत्थरकी खरलमें घोट ।
 बारीकचूर्णहोनेपर कुकरोंपेकेरसे १-२ दिन घोटकर टिकिया
 बनाय मुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटकी आवेदे ।
 स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर त्रिफला, अदरक, भंगरा, काला-
 भंगरा, मानकन्द, मिलावे, चित्रकसूल, जङ्गलीसुण, हस्तिकण-
 पलाश, धृष्टकादृष इनवेद्योंसे १-१ दिन घोटकर स्थालीपाक
 अथवा सूर्यकिरणपाककरके मुखावे फिर उसीकल्कमें घोटकर
 टिकिया बनाय साधारण पुटे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर
 पहिलेकीतरह घोटकर पुटे । इसतरह प्रत्येकद्वयमें पाक और
 पुटेदेनेकेबाद जितनालोहो उसमेंसे १६ पलकेकर १५ पल
 त्रिफलाका जबहुटचूर्णकर अष्टयुगलितपानीमें ढाककर । एकभाग
 अवशिष्ट रहनेपर छानकर इतद्वयमें लोहको घोटकर ८ पल धी
 मिलाकर लोहेके बतमें लोहको कड़छोसे चलावाहुमा मन्दापि
 पर पाककरे । जब पानीका अंश सूखकर धी ऊपर तेरेलग
 और कल्ककी मोठी बंधनेलगे तब उतारकर रखछोड़े । ठंडा
 होनेपर अच्छीतरह घोटकर धीके चिकनेबतमें रख मूहबन्दकर
 यवराशि अथवा धान्यराशिमें एकसप्ताह रखकर निकाल ।
 रोगीको पत्रकमेंसे शुद्धकर अमि, देव, ब्राह्मण और वैद्यप्रथितका
 पूजनकर शुभमुहूर्तमें स्वस्तिवाचनकेपैरह मङ्गलकार्यकर इतमने
 अभिमन्त्रितकर एकरतीबीमात्रा भोरिकमद्यु और धीकेसाय
 मिलाकर सेवे और ऊपरसे गोधूपकीवे । प्रतिदिन १-१ रभी ।

माना बडाकर १२ रतीक करे । गायकेदूध और धोका भोज-
 नमें व्यवहारे । गायकेअभावमें बकरीका उपयोगकरे । श्लिष्य
 और दुग्ध आहारकरे । नियमपूर्वक इसका सेवनकरनेसे तन्मूत्र
 मन्दापि, भस्मक, वात, पित्त, उष्ण, विषमन्वर, शुल्म, नेत्र
 रोग, पाण्डु, तन्दा, आलस्य, अर्धचि, शूल, परिणामशूल,
 प्रमेह, अपवाहुक, शोथ, रक्तलाव, विशेषतः बवासीर, बन्-
 वान्ति और स्वरक्षय, भारीपन, मनोग्लानि, हृत्ता, अलयासु,
 वलीपलित इनसबको यह नष्टकरताहै । मुकुमारनमुष्यकेलिये
 भोजनकेसाथ पुरानेमद्य देवे । मासाहारीको लवा, तित्तिर, गोह,
 मोर, सरगोश, चक्र, क्लबिद्ध, वंटेर, हारिल, यात्र, सिकरा,
 विष्किर, कबूतर, मूग, इन जङ्गलीजानवरोंकामाम, मट्टर, रोहू
 और शकुल मछलिया, बंगन, परवल, दोनों भटकटैया, चिचोडा,
 शतावर, वेतका अग्रभाग, सेवारकोतरह फलनेवाल शाक,
 चौलाई, बसुआ, मरसा, कर्णालुक ! सतहहे पुनर्वा, नारि-
 यल, खजूर, अनार, हरफरिबड़ी, सिंघाड़े, पकाआम, द्राघ,
 ताड़गोला, जावित्री, लीम, सुगारी, पान इनका सेवनकरे ।
 बड़हर, तमामजातिके वेर, जमीरी, यिजोरा, करोंदा, इमली,
 आयुषमाम, करूर, पुण्डूक, ईश, सारस, दाल्चू १ पनडुब्बी,
 कौआ, बलाहक, उड़द, कन्द, बरीर, चना, तरबूज, बौहला,
 खेसरा, वेतुक (धोतेला शुभ०) करेला, कपूर, ककडी, सम्पूर्ण
 दाल, ककारादि समस्तदायं इनसबका त्यागकरे । यह लोह-
 राज उत्तमप्रयोगहै खासकर बवासीरकी उत्तम औषधिहै ।
 ध्वज, कृत्त, रूर, मिथ्याभापी, दवा और गुहनिन्दक इनपर
 इनकाप्रयोग न करे और बतलावे भी नहीं । इनकेसेवनकरनेमें
 समयपर मलमूत्रकी प्रवृत्ति, पेटका हल्कापन, मुखकी शुद्धता,
 विशुद्धद्वार, शरीर और मनकीप्रमत्ता रहनेपर समझनाचाहिये
 कि लोहका परिपाक ठीक होताहै । लोहका अजीर्णहोनेपर
 विद्वज्जचूर्ण अगस्त्यके रसकेसाथ लेनेसे बहुतशीघ्र लाभहोताहै ।
 इसकेसेवनमें अतिपारहोनेपर केवलदुग्धका प्रयोगकरके निवृत्तरुग ।

६ शङ्करलोहम् (द्वितीयम्)

पातितं स्येदित शुद्धं सुमुखं पारदं नयेत् ।
 तारवीजं चतुर्थ्यां पूर्वज्जारयेत्कामात् ॥ ५२ ॥
 गन्धकं पीडशशुणं पूर्ववज्जारयेद्युष्णकम् ।
 ततः सूतं कृत्वाधूतरेतः सभ्यकृ प्रमर्दयेत् ॥ ५३ ॥
 दिनानि सप्त पश्चाद्दि येषान्तिरः प्रमर्दयेत् ।
 दिनसप्तकमम्भोभिस्तिल्पणीमवेत्ततः ॥ ५४ ॥
 यन्त्रे सोमानले द्रव्या कल्कं सप्तं प्रप्लवतः ।
 चुल्ल्यामारोप्य तद्यन्त्रं हठाग्निं ज्वालयेदधः ॥ ५५ ॥
 त्रिदिनं तु ततः सूतं पूर्वज्जसम्प्रमर्दयेत् ।
 एकैकं तु दिनं पश्चाद्यन्त्रे शिष्या च पूर्वयन् ॥ ५६ ॥
 शालनं त्रिदिनं पश्चान्मर्दनं पूर्वयन्करेत् ।
 एवं कृत्वा रमेन्द्रस्य मर्दनं पाचनं ततः ॥ ५७ ॥
 याद्यद्रमेन्द्रो जायेत निरुधो भस्मरूपमाकम् ।
 सप्तपारप्रयोगेण निरुधो जायेत ध्रुवम् ॥ ५८ ॥

ततो गुञ्जाद्वयमिता चिद्ब्याद्धटिका भिषक् ,
एकैकां द्रापयेद्वासामोपदुष्णेन वारिणा ॥ ७७ ॥
जयेद्यिं फुफ्फुसजात्रोगान्द्वयसम्भवान् ।
जीर्णज्वरं तथा घोरं प्रमेहानपि विशतिम् ॥ ७८ ॥
कासश्वासामवातांश्च ग्रहणीमपि दुस्तराम् ।
वटी श्रीशङ्खप्रोक्ता बलपुष्टिविवाधिनौ ॥ ७९ ॥
भै र, ह्रोगे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, गन्धक ८ भा, लोहभस्म ३ भा, नागभस्म २ भा लेकर नीलवर्णकज्जलीकर मन्त्रोय, चित्रक, अदरक, जैती, अइसा, बेलगिरी और अजुनके यथासम्भव स्वरस अथवा वार्धोसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली कटुणपानीके साथदेनेसे फुफ्फुस और हृदयरोग, भयकर जीर्णज्वर, २० प्रकारके प्रमेह, कास, आस, आमवात, दुस्तरसङ्घटणी, कृशता, निर्मेलना इनसबको यह नष्टकरतीहे ॥ ९ ॥

१० शङ्खकल्पः

गन्धेशो कर्षसम्मानौ कर्षमाना घराटिका ।
शङ्खभस्म भवेत्कर्षपट्टं मागधिका तथा ॥ ८० ॥
यमानी पिप्पलीमूलं प्रत्येकं त्रिचिकर्षकम् ।
निम्बुधात्रीभवेद्द्राघिर्माणमाना वटीश्चरेत् ॥ ८१ ॥
मरिचाप्यसमालोढा ग्रहणीं चिरजां जयेत् ।
तत्रेण सेविता सा हि पाण्डूदरविनाशिनी ॥ ८२ ॥
गात्रवृद्धिं वितनुते खण्डमलकसेविता ।
रुरञ्जाऽग्नियमानीभिः शूलगुल्मो व्यपोहति ॥ ८३ ॥
अग्निमान्द्यभवात्रोगान्दुर्जलोत्थाग्निशेषतः ।
शङ्खकल्पो महावीर्या नानारागकुलान्तरुः ॥ ८४ ॥
नू क, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा, कौडीभस्म १-१ कर्ष, शङ्खभस्म और पीपल ६-६ कर्ष, अजवाइन और पिपलामूल ३-३ कर्ष लेकर धारे गन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें सबका चूर्णमिलाय नीचू और आबलोकैस्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलियायानकर रखओडे । इनमेंसे १-१ गोली मरिच अथवा धौकेसाथ लेनेसे बहुतदिनकी सङ्घटणीको यह नष्टकरताहे । तरुकेसाथलेनेसे पाण्डु और उदररोगका नाशकरताहे । शङ्ख और आबलोकैचूर्णकेसाथ सेवनकरनेसे शरीरमे पुष्करताहे । करङ्ग, चित्रक और अजवाइनकेसाथलेनेसे शूल, गुल्म, मन्दाग्नि और जलदोषकेविकारोंको नष्टकरताहे ॥ १० ॥

११ शङ्खगर्भपोट्टलीरसः

प्रत्येकं दश गद्याणां शुद्धगन्धकसूतयोः ।
विशतिं त्रिदिन खल्वे पिष्ट्वा कुर्याच्च कज्जलीम् ॥ ८५ ॥
पश्चादर्कस्य दुग्धेन पेपयेत्कज्जलीं त्र्यहम् ।
तता वक्रयाश्च क्षीरेण पेपयेत्ता दिनत्रयम् ॥ ८६ ॥

आर्द्रक चित्रकं श्वेतं निःसहायां समानयेत् ।
पेपयेत्तद्रसेनैव कज्जली तां दिनत्रयम् ॥ ८७ ॥
पीतानाश्च कपर्दीनां चूर्णं गद्याणविशतिः ।
विशतिः शङ्खचूर्णस्य त्वत्वारिंशच्च मिश्रितम् ॥ ८८ ॥
त्रिदिनं मर्दयेत्खल्वे पूर्वार्कैश्च रसैः खलु ।
त्र्यहं चार्कस्य दुग्धेन वज्रीक्षीरेण च त्र्यहम् ॥ ८९ ॥
तन्मध्ये कज्जली क्षित्वा चित्रार्द्ररसेन च ।
खल्वे पिष्ट्वा च तत्सर्वं वटयो बदरसम्मिता ॥ ९० ॥
दग्धाम्बचूर्णसंलितपन्वद्यद्यन्तरे पुनः ।
प्रक्षिप्य गुटिकास्ताश्च चूर्णलितपिधानकम् ॥ ९१ ॥
दत्त्वा वल्लमृदा लिप्त्वा गतं हस्तप्रमाणके ।
निधाय सम्पुटं त्रिद्वान्पुटं वन्योत्पले लघु ॥ ९२ ॥
पश्चाच्चिरुनीरेण स्वाह्नशीतञ्च पेपयेत् ।
गुटिकाः पूर्वीरत्यैव हत्वा देयं पुनः पुटम् ॥ ९३ ॥
दग्धानां गुटिकानाञ्च चूर्णं कृत्वा तु कुम्पके ।
क्षेप्यं नाम्ना तु निष्पन्नो रसोऽयं शङ्खपोट्टली ॥ ९४ ॥
आमज्वराऽतिसारे च ज्वरे रक्तातिसारजे ।
मलज्वरातिसारे च श्वासे कासे तथैव च ॥ ९५ ॥
क्षेत्रप्रपित्तादिवातेषु मन्दाग्नौ ग्रहणीषु च ।
विशतौ मेहरोगेषु जीर्णजीर्णवलेषु च ॥ ९६ ॥
द्वात्रिंशन्मरिचैः सार्कं सपुटं बहूपशकम् ।
सर्परोगेषु दातव्यं मरीचाज्यं विना ज्वरे ॥ ९७ ॥
शालया दधिदुग्धादि भोजनं मधुरं हितम् ।
कटुम्लक्षारतैलाहद्यं दृष्टितोऽपि विवर्जयेत् ॥ ९८ ॥
विधिनाऽनेन कर्तव्या रसोऽयं शङ्खपोट्टली ।
त्रमेण विनिवर्तन्ते प्राक्ता रोगा न संशयः ॥ ९९ ॥
र, क ली, र श, रसचि, नि र, भा प्र, क्षये । भा प्र अतीसाराऽविकारे ।

भाषा—५-५ तोलेशुद्धपार और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर ३ दिनतक शुष्कमर्दनकर आक और धूरकेदूध, अदरक, सफेदचित्रक और अमरबेलकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकरे । फिर पीलीकौडी और शङ्खकाचूर्ण १०-१० तोले लेकर पूर्वार्कज्योंसे तथा आक और सेहुण्डकेदूधसे ३-३ दिन मर्दनकर पूर्वार्क कज्जलीको मिलाय चित्रक और अदरकरसोंसे १-२ दिन मर्दनकर जङ्गलीबरवावर गोलियें बनाकर पत्थरकेचूर्णमे पुतीहुई हण्डीमें गोलियोंको डाल चूनापुतेहुए साथसे ढक्कर ४-५ कणइमिटीदेकर सूखनेपर एकधाभरके गर्तमें अमिदवे । स्वाह्नशीतलोनेपर निकालकर चित्रकनेस्वरस अथवा कायसे एकदिन मर्दनकर पहिलेकीतरह गोलियाबनाय पुटदेवे । स्वाह्नशीतलोनेपर निकालकर पीसकर रखओडे । इसमेंसे १५ रत्ती कीमात्रा ३२ कालीमिर्चकैनाथ घीमिलाकरदेनेसे आमज्वर और अतिसार, रक्तातिसारमे पैदाहुआज्वर, मलज्वराऽतिसार, श्वस, कास, कफपित्त और वातरोग, मन्दाग्नि, ग्रहणी, २०

प्रकारेणमेह, बहुतदिनका जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । ज्वरको छोड़कर सबरोगोंमें मरिच और धीकसायदेवे । पुराने-सफेदाचल, दही और दुग्धप्रयति मधुरभोजनकरे । कड़, अम्ल, क्षार और तैल्युक्तपादार्थोंको आंखोंसे भी न देखे ॥ ११ ॥

१२ शङ्खचूडरसः

रसाऽप्रहेमभस्मानि वैकान्तं सर्वतुल्यकम् ।
सर्वैः पञ्चगुणं शङ्खचूर्णं शुष्कं चिमयेत् ॥ १०० ॥
लेहयेन्मधुना मापचतुष्कं सानुपानकम् ।
हिकां पञ्चविधां हन्ति सुसुवैरिणं तत्क्षणात् ॥
प्राणायामेनाऽपि हिकां जयेदानु चिचक्षणः ॥ १०१ ॥
रसायनसं., र. चं., नि. र., र. सु., यो. र., वै. चि. वि. सा.,
द्विकारोगे । रसायनसङ्ग्रहस्य द्वितीयस्थानेन शशिचूडरसेति नाम
श्रावकासाऽधिकारे । चिकित्सासारिहिकक्षाश्यासारीति नाम ।
भाषा—गरा, अप्रक और सुवर्णभस्म १-१ भाग, वैका-
न्तभस्म ३ मा., शङ्खभस्म ३० भाग लेकर इकट्ठे मर्दनकर रच-
छोड़े । इसमेंसे ४-४ माघे मधुकेसायलेनेसे सुसुवैरिणी ५
प्रकारकी हिचकियोंको यह नष्टकरताहै । जहापर औषध काम
न करताहो जहापर प्राणायामसे हिचकीका उपचारकरे ॥ १२ ॥

१३ शङ्खचूर्णम्

गन्धकश्चैकभागान्तु द्विभागं सैन्धवं भवेत् ।
त्रिभागं टङ्गुणं चोक्तं चतुर्भागान्तु तुत्यकम् ॥ १०२ ॥
पञ्चभागं कपर्दञ्च पङ्गुणं शङ्खमाहरेत् ।
शिखिलिव्वरसेनैव शृङ्गवेररसेन च ॥ १०३ ॥
वह्निमूलरसेनैव प्रत्येकान्तु पुटत्रयम् ।
तद्भस्म मारिचं चूर्णं घृतेन सह भक्षयेत् ॥ १०४ ॥
अशीसि गुल्मशूलानि मूत्रकण्ठं सुदारुणम् ।
पङ्क्तिं चातिसारञ्च ग्रहणीञ्च चिरन्तनाम् ॥ १०५ ॥
वातज्ञं पित्तज्ञं चैव श्लेष्मजञ्च विशेषतः ।
अजीर्णकं पाण्डुरोगं शोफोदरभगन्दरम् ॥ १०६ ॥
पुष्टिक्रान्तिकरं यत्यमागुप्यञ्च विशेषतः ।
शङ्खचूर्णमिति ख्यातं शाण्डिल्येन च मापितम् ॥ १०७ ॥
र. क. यो., अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्धगन्धक १ भाग, सैन्धव २ मा., सुनासुहागा
३ मा., तुत्यकस ४ मा., कौडीभस्म ५ मा., शङ्खभस्म
६ भागलेकर वारीकचूर्णकर अपामार्ग, वेल, अदरक, चित्रकमूल
इन्के यथासम्भव स्वरस अथवा काथोंसे १-१ दिन मर्दनकर
टिभिया बनाय सुखाकर धारावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी
३-३ आंच देनेके बाद निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३ रतीसे
१ माघे-तक मरिच और धीकसायदेनेसे बवासीर, शुल्म, शूल,
दाण्डमूत्रकण्ठ, ६ प्रकारकाअतिसार, पुरानिसङ्ग्रहणी, वात पित्त
और कफज्विकार, अजीर्ण, पाण्डुरोग, शोथ, उदररोग, भगन्दर,
हृत्ता, कान्त्यभाव इनसबको यह नष्टकर धल और आयुको
देताहै ॥ १३ ॥

१४ शङ्खद्रावरसः (प्रथमः)

अर्कस्तुहीतिलाश्वत्थचिञ्चापामार्गवह्विजम् ।
गृहीत्वा भस्म तस्मान्तु यक्ष्णतं जलं हरत् ॥ १०८ ॥
मृद्वग्निना पचेत्तन्तु यावद्ब्रवणतां व्रजेत् ।
तन्तुल्यावेव सद्गाह्यौ द्वौ क्षारौ टङ्गुणं तथा ॥ १०९ ॥
सामुद्रञ्चाऽपि गोदन्ता कासीसञ्चाऽपि सौरकम् ।
द्विगुणं पञ्चलवर्णं शङ्खद्रावरसे तु तत् ॥ ११० ॥
काचकूप्यां विनिक्षिप्य सप्ताहं चाम्लयोमतः ।
साधितं सकलं चूर्णं वारुणीयब्रमुद्धरेत् ॥ १११ ॥
द्रुतं तेजोजलप्रस्थं स्वच्छं भवति तत्तदा ।
सर्वान्धान्द्रावयति वराटानपि शङ्खकान् ॥ ११२ ॥
अजीर्णस्याऽथ मन्दाग्नेः का घातां द्रावणे पुनः ।
गुल्मघ्नीहोदरं शूलमष्टधाऽपि विनाशयेत् ॥
वैद्यजीवनहेतुश्च शङ्खद्रावरसो ह्ययम् ॥ ११३ ॥
उ. यो. त, मै. र., ध., वै. वि, र. का., यो. त. उदररोगे ।
टि०—शुद्धविदश्वत्थस्थाने आरवथे हरयो, द्रवोरपि योगे
क्षाल्यभावोऽस्ति ।

भाषा—आक, धूर, तिल, पीपल, श्मली, अपामार्ग और
चित्रक इनसबकी अल्प २ सफेदभस्म बनाकर समभागलेकर
१६ गुने पानीमें स्वच्छवर्तनमें भिगोकर रखदे । चारपहरयाद
इसको अच्छीतरहसे ङ्गडे अथवा हाथसे चलाकर रखदे । दूसरे
४ पहर गुजरेपर पानीको ३-४ बार छानकर साफकरले ।
बनसके तो ब्लाटिङ्गपरसे छानले अथवा कचेसुतकी डोरी
डालकर दूसरे पात्रमें नितारले फिर स्वच्छपात्रमें डालकर
इसका क्षारबनावे । इसक्षारकी बराबर सक्की, यवक्षार, सुहागा,
समुद्रफेन, गोदन्तीहरिताल, कसीस और शोराखार तथा पान्चो-
नमक दोभाग लेकर सयका वारीकचूर्णकर काचके मजबूतपात्रमें
भरकर चौगुना शङ्खद्रावनीवृकास डालकर धूपमें रखदे
और प्रतिदिन चलादियाकरे । ७ दिनकेबाद बहुतसेभाळकर
भवकेसे इसका तेजाव निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे
७ बूंदसे ३० बूंदतक समय अथवा रोगीकी औचित्ति देखकर
काचकीनलीवगैरहसे इसतरह गलेमें डाले कि जीभ और दातोंमें
न लगे । जितनेभी शङ्खद्रावहै सभी तीक्ष्णहोतेहैं इसलिये इनमें
चौगुना पानी मिलाकर देना उचितहै इससे किर्गीतरहका मय
नहीं रहताहै । कितनेहीलोग इसकेप्रयोगमें जीभ तथा सुंदमें धी
लगाकर प्रयोगकियाकरतेहैं पर उसकेबरेनेकी कोई उल्लतनहीं ।
इस्युक्तिके गलेमें डालदियाजाय कि दात जिवाप्रक्षतिमें स्पर्श
न हो । इसकेदेनेसे शुल्म, पीह, उदररोग, ८ प्रकारकेशूल,
अजीर्ण, मन्दाग्नि, वेसन नष्टहोतेहैं । इसमें तमामघात, कौडी
और शङ्ख डालनेसे दृढहोजातेहैं अजीर्णवगैरहकी तो कयाही-
क्याहै । यह वैद्योंकी आजीविकाकाहेतुहै पर इसका प्रयोग
अनुभवीवैद्यके पाससे करानाचाहिये नहीं तो इसमें शनश-
उपद्रवहोना सम्भवहै ॥ १४ ॥

१५ शङ्खद्रावरसः (द्वितीयः)

फटकीं पलमेकञ्च पलमेकञ्च सन्धवम् ।
द्विपलं यवजक्षारं द्विपलं नवसादरम् ॥ ११४ ॥
चतुःपलं सुराक्षारं कासीसञ्च पलाऽर्द्धकम् ।
डमरूयन्त्रयोगेन चुल्यां वै बदरीन्धनैः ॥ ११५ ॥
साधयेल्लाघवान्पूर्णं शङ्खद्रावरसः परः ।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ ११६ ॥
वै.वि. वै.चि. गुल्मादौ । वै चि. एकद्विकस्तुपु प्रमाणभेदोऽस्ति
सोऽविभिन्नकरः ।

भाषा—फटकी और संधानमक १-१ पल, यवक्षार
और नवसादर २-२ पल, कसमीशोरा ४ पल, कसीस २ कर्ष
लेकर सबको कद्देपूपमें सुसाकर जवहुटचूर्णकर भवकेसे तेजाव
निकाले । इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह देनेसे यहत्र, ग्रीहा,
वातगुल्म वगैरह समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५ ॥

१६ शङ्खद्रावरसः (तृतीयः)

स्फटिका नवसारश्च सुभ्रवेता च सुवर्चिका ।
पृथग्दशपलोन्मानं गन्धकः पित्तुसम्मिश्रितः ॥ ११७ ॥
चूर्णयित्वा क्षिपेद्गण्डे मृन्मये मूर्ध्नि लेपिते ।
तन्मुखं मुद्गयेत्सम्पङ्क मृत्प्राण्डेनाऽपरेण च ॥ ११८ ॥
मरुन्धोदरकेणैव चूर्णां तिर्यक् च धारयेत् ।
अधः प्रज्वालयेद्बहिर्हि हठाद्यावद्रसः क्षवेत् ॥ ११९ ॥
शाणैकं सेवयेद्यस्तु दन्तस्पर्शविवाजितः ।
गुल्मोदरयक्ष्मकृहीहप्रस्थियक्ष्मादिशूलसुतु ॥ १२० ॥
बलपुष्टिप्रदो ह्येष भुक्तञ्च आरयेत्क्षणात् ।
विलाप्यतां जनैरेतद्रसमाहास्यमद्भुतम् ॥
कपर्वकम्बुलोहानि क्षिप्तान्यस्मिन् गलन्ति हि ॥ १२१ ॥
र. प्र. उदररोगे ।

भाषा—फटकी, नवसादर, सफेदसजी १०-१० पल,
शुद्धान्धक १ कर्ष लेकर इनका जवहुटचूर्णकर भवके अथवा
डमरूयन्त्रसे तेजाव निकाले । इसमें आच कड़ी होनीचाहिये
और पत्तीजेहुए क्षार न चाहिये । चौगुनापानी मिलाकरइसकी
४ मासेकीमात्रा दातोंको बचाकर पीनेसे गुल्म, उदर, यहत्र,
ग्रीह, गांठ, राजयक्ष्म, शूल इनसबको यह नष्टकरताहै । खाये
हुएको तत्क्षण जीर्णकरदेताहै । इसमें कौड़ी और शङ्ख वगैरह
डालनेसे गलजातेहै ॥ १६ ॥

१७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्थः)

सामुद्रं यवजः सूर्यः पर्पटी नवसादरः ।
फटकी सिन्धुसौवर्चां प्रत्येकं पलपञ्चकम् ॥ १२२ ॥
कासीसं द्विपलं प्राहां सर्वमेकत्र योजयेत् ।
घार्षणीयत्रयोगेन चुल्यां वै खाद्विरेन्धनैः ॥ १२३ ॥
साधयेल्लाघवान्पूर्णं शङ्खद्रावरसं परम् ।
गुल्मादिसर्वरोगेषु देयः सर्वसुखप्रदः ॥ १२४ ॥
वै नि. गुल्मे ।

भाषा—समुद्रकेन, यवक्षार, शोरा, रेह, नोसादर, फट-
की, सैन्धव, सञ्जल ५-५ पल, कसीस २ पल लेकर प्रथम
शङ्खद्रावकीतरह भवके अथवा डमरूयन्त्रसे तेजाव निकालकर
रखछोड़े । इसमेंसे चौगुनापानीमिलाय दन्तस्पर्शको बचाकर
लेनेसे गुल्मादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १७ ॥

१८ शङ्खद्रावरसः (पञ्चमः)

प्रत्येकं पञ्चलवणं वाणं तुत्यञ्च कर्परम् ।
स्फटिका कुडवाद्देञ्च तद्वद् नवसादरम् ॥ १२५ ॥
कासीसं टङ्कणं स्वर्जां यवक्षारं तद्वद्देकम् ।
कुडवान्पञ्च भूसारत्सर्वमेकत्र योजयेत् ॥ १२६ ॥
पृष्ठा तु मर्दितं सम्यक्काचकृप्यां विनिःक्षिपेत् ।
तन्मुखे कूपिकां दद्यात्स्थापयेन्मालिकोपरि ॥ १२७ ॥
यामार्द्धं ज्वालयेदग्निं रसेन्द्रो भवति ध्रुवम् ।
शङ्खद्रायमिदं ख्यातं शङ्खद्रावमथो रसम् ॥ १२८ ॥
सेवितं कुरुते देहे तुष्टिं पुष्टिं बलं महत् ।
सर्वाश्छलचिकारांश्च निहन्त्यापञ्चगुल्मकम् ॥ १२९ ॥
प्रमेहान्विशर्ति हन्याज्जराग्निप्रदीपनम् ।
सर्वरोगप्रणाशार्थमश्विनोदेवनिर्मितम् ॥ १३० ॥
वा., शूलेगुल्मे च ।

भाषा—पाषाणमक ५-५ पल, तुत्य, खपरिया और फट-
की २-२ पल, नवसादर १ पल, कसीस, सुहागा, सजी
और यवक्षार २-२ कर्ष, शोरा २० पल लेकर सबको कड़ी-
पूपमें सुसाकर घारीकचूर्णकर ६-७ कपइमिद्रीवीहुदं आतशी-
शीशीमें डालकर दूसरीशीशीकेसाथ डमरूयथवनाय चूहेपर
तिरहीरसकर आचये । नीचेकी शीशीको पानीमें डुबाए रक्ये ।
आधेपहरतक अभिदेनेसे तमाम तेजाव तिछीशीशीमें बला-
आवेगा । शीशीके अभावमें चड़ेका डमरूवनाकर कामलेवे ।
इसको प्रथम शङ्खद्रावकीतरह सेन करनेसे तमामशूल, गुल्म,
प्रमेह और अजीर्ण नष्टहोकर अग्नि प्रदीप्तहोताहै । यह शरीरको
पुष्टकर बलको बढ़ाताहै ॥ १८ ॥

१९ शङ्खद्रावरसः (षष्ठः)

क्षारणां विंशतिः भोक्ता लघणानाञ्च पञ्चकम् ।
पर्पटी नवसारश्च क्षारत्रितयटङ्कणम् ॥ १३१ ॥
तुत्यप्रयं शिलां तालं गन्धकं स्वर्जिकाख्यकम् ।
पाषाणजतु कासीसं मृत्रयगं तथा क्षिपेत् ॥ १३२ ॥
युक्षारं शूहधूमाल्यं पात्रे संस्थाप्य तन्समम् ।
अम्लवर्गैस्तथा मानं भावयेद्य मुद्गमुद्गुः ॥ १३३ ॥
तेजोयन्त्रविधानेन पाककर्मविचक्षणः ।
पातयेन्मृत्रयगं च तोयामं शङ्खगालकम् ॥ १३४ ॥
भस्म पादसंयुक्तं घातरंगेषु योजयेत् ।
गुरुमानां पञ्चकं हस्ति ह्युदराणां तथाष्टकम् ॥ १३५ ॥
शीतज्वरं पुराणञ्च शीथं सर्वाङ्गमाकृतम् ।

प्रमेहान्विशर्शति हन्ति मूत्राघातानशेषतः ॥
हितश्च गजवाजीनां पशूनां मृगपक्षिणाम् ॥ १३६ ॥
वा, सर्वरोगे ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति चित्रकप्रभृति २० वृक्षोंकेक्षार, पांचों-
नमक, रेह, नवसादर, जब-मूली और चनेकाक्षार, सुहागा,
तुतिया, दानेफिरक, जंगल, मैन्सिल, हरिताल, गन्धक, सजी,
शिलाजीत, कसीस, आठमूत्रोंकाक्षार, शोरा, गृहभूम येसब
समभाग लेकर वारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर बराबरका
अम्लदध डालकर धूपमें रकने। प्रतिदिन चलातारहे, द्रवसुखनेपर
दूसरा डालताजाय । एकमहीनेबाद भवके अथवा डमरूयत्रसे
इसका तेजाब निकाले, यह मूत्रवर्णका होगा । इसमेंसे प्रथम
शङ्खद्रावकीतरह पारदमस्मकेसाथलेनेसे समस्तवातरोग, पांचों-
गुल्म, आठों उदररोग, शीतज्वर, पुरानाशोथ, सर्वाङ्गवातन्याधि
२० प्रकारकेप्रमेह, समस्तमूत्राघात इनसबको यह नष्टकरताहे ।
उचितमात्रामें देनेसे, हाथी, घोड़ा, पशु, मृग और पक्षियोंके
तमामरोगोंको यह नष्टकरताहे ॥ १९ ॥

२० शङ्खद्रावरसः (सप्तमः)

क्षारा द्वादश सम्प्रोक्ता लघणानाञ्च पञ्चकम् ।
कासीसं दङ्गुणं तुल्यं गन्धकं स्वर्जिकालघ्यकम् ॥ १३७ ॥
पतानि समभागानि प्रत्येकञ्च पृथक् पृथक् ।
स्फटिकावसादो द्वौ तत्समं योजयेद्बुधः ॥ १३८ ॥
पकीकृत्य तु तत्सर्वं पात्रे संस्थाप्य यत्नतः ।
अम्लचूर्णं मूत्रवर्गं सर्वमेकरुज लोडयेत् ॥ १३९ ॥
सप्ताहं भाग्येदेतत्तेजोयन्त्रे विनिःक्षिपेत् ।
दीप्तशिखा पचेद्यामं पाकसिद्धिविचक्षणः ॥ १४० ॥
शङ्खद्रावो द्रवत्येवं सर्वरोगेषु योजयेत् ।
हन्त्यष्टादश कुष्ठानि लेपमात्रेण सत्वरम् ॥ १४१ ॥
सर्वान्दुष्टवर्णान्घोरान्स्पर्शमानान्निर्हरेत् ।
अष्टोदराणि गुल्मानि शूलानि विविधानि च ॥ १४२ ॥
माप्यमामं सेवेत सप्ताहञ्च निवारयेत् ।
अनुपानविशेषेण सर्वरोगनिवर्हणम् ॥
महादेवीप्रसादेन भैरवेण विनिर्मितः ॥ १४३ ॥
वा, सर्वरोगेषु ।

भाषा—तीक्ष्णप्रकृति १२ वृक्षोंकेक्षार, पांचोंनमक,
कसीस, सुहागा, तुल्य, गन्धक, सजी येसब समभाग, फटकड़ी
और नोसादर सबकी बराबर लेकर वारीकचूर्णकर काचके-
पात्रमें दस विजोरावगेरह अम्लचूर्ण और मूत्रवर्ग जितना
मिलवके उतना ढाले । धूपमें रखकर प्रतिदिन चलातारहे, द्रव
सुखनेपर दूसरा डालताजाय । सातदिनबाद डमरूयत्र अथवा
भक्केसे एकपट्टकी बड़ी आंचकेर तेजाब निकाले । इसमेंसे
प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेनेसे आठप्रकारकेगुल्म और नाना
प्रकारकेशूल ८ दिनोंमें नष्टहोतेहे । १८ प्रकारकेवृक्षोंको लेप-
करनेसे नष्टकरताहे ॥ २० ॥

२१ शङ्खद्रावरसः (अष्टमः)

पारदं वरुदं तालं कासीसं रोमकं विपम् ।
तुल्यद्वयं शिलां तालं स्फटिकां नवसादरम् ॥ १४४ ॥
क्षारद्वादशकं ख्यातं सौभाग्यं पट्टपञ्चकम् ।
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा मृगमये पात्रके क्षिपेत् ॥ १४५ ॥
जम्बीरफलसारेण भावयेत्सप्तवारकम् ।
तेजोयन्त्रविधानेन पातयेत्पाकवित्तमः ॥ १४६ ॥
पीतवर्णं द्रावकं तच्छङ्खद्रावविराटकम् ।
क्षिप्रं भवति पानीयं विचित्रगुणकारकम् ॥ १४७ ॥
द्विकालं मापमानञ्च सेवयेद्द्विमात्रः ।
लाजाचूर्णं निष्कयुग्ममनुपाने प्रदापयेत् ॥ १४८ ॥
अष्टाबुदरात्रोगान्युल्मानां पञ्चकञ्चयेत् ।
अर्शासि पदप्रकाराणि ग्रन्थिशूलादिमास्तान् ॥ १४९ ॥
आध्मानञ्चाऽग्निमान्यञ्च सर्वे सन्धिचूर्णं हरेत् ।
अद्मरीं मूत्ररुच्छञ्च मेहान्विशर्शतिसह्यकान् ॥ १५० ॥
श्वासकासगलप्रस्थीन्धिसर्प गजचर्मकान् ।
कृमिरोगांश्चर्मरोगान्दखकेदासमुद्भवान् ॥ १५१ ॥
अन्नद्वेषमजीर्णञ्च हिन्कासर्वाङ्गशोफजान् ।
तिमिरं दृष्टुकण्ठौ च नाशयेत्साऽन्न संशयः ॥ १५२ ॥
वा, सर्वरोगे ।

भाषा—गारा, शिगरिक, हरिताल, कसीस, कम्बोरदेशका-
कालानमक, बडनाग, तुतिया, जङ्गल, मैन्सिल, हरिताल,
फटकड़ी, नोसादर, १२ क्षार, सुहागा, पांचोंनमक सबसब
भागलेकर वारीकचूर्णकर काचकेपात्रमें डालकर जम्बीरकेसडी
७ भावनाए देकर भवके अथवा डमरूयत्रसे तेजाब निकाले ।
यह पीलेरङ्गका द्रव निकलेगा । इसमें शङ्ख, सीप अथवा कौड़ी
डालतेही गलजायगी । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सुबहशाम
दोनोंसमय लेकनकरके आपातलेज आठचूर्णलेके । इससे ८ प्रका-
रके उदररोग, ५ प्रकारकेगुल्म, ६ प्रकारकेनवासीर, ग्रन्थि,
शूल, वातवेदना, आध्मान, मन्दाग्नि, सप्तप्रकारकी सन्धियोंके
व्रण, पथरी, मूत्ररुच्छ, २० प्रकारकेप्रमेह, क्षाम, कास, गले
कीगाठ, विषर्ष, चर्मदल, किमिरोग, नख और केसोंकेरोग,
अन्नद्वेष, अजीर्ण, हिचकी, सर्वाङ्गशोथ, तिमिर, दाद, स्वात्र
इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ २१ ॥

२२ शङ्खद्रावरसः (महान्) (नवमः)

स्नुहार्थकिञ्चाऽवस्थाश्च हापामागंणं पञ्चमः ।
पृथग्मस्मजलं नीत्वा ह्युद्धृत्य लघणानि च ॥ १५३ ॥
दङ्गुणञ्च यथक्षारं स्वर्जां लघणपञ्चकम् ।
रामटं तालकञ्चैव सीवीरं नवसादरम् ॥ १५४ ॥
सोमलक्षारगोदन्त्यौ ताप्यं गन्धरसी तथा ।
विषं समुद्रफेनञ्च शोरकं स्फटिका तथा ॥ १५५ ॥
शङ्खचूर्णं मध्यनाभि चूर्णं पापानकरोद्भवम् ।
मनाशिला च कासीसं समभागञ्च कारयेत् ॥ १५६ ॥

अम्लयेतसजैर्भाव्यं काचकृप्यां क्षिपेत्ततः ।
 अम्लद्रवान्महन्द्वाद्रुणस्थाने विधारयेत् ॥ १५७ ॥
 वस्त्रानुच्छादितस्तत्र यावत्सप्तदिनावधिम् ।
 मन्दश्चाग्निः प्रदातव्यो वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ॥ १५८ ॥
 काचकृप्यां जले धार्यं रक्षयेद्यत्नतः सुधीः ।
 गुञ्जैर्के पर्णपत्रेण लिप्त्वा भक्ष्यं दिनेदिने ॥ १५९ ॥
 श्वार्स कासं क्षयं जीर्णं ग्रहणीञ्चात्यरोचकम् ।
 उदरं प्लीहगुल्मञ्च हृशांसि नाशयेत्तदा ॥ १६० ॥
 अदमरीं भ्रुकृच्छ्रञ्च ह्यशिशूलं विनाशयेत् ।
 आमवातं महावातं पक्षाघातं धनुस्तथा ॥ १६१ ॥
 उदरामयघ्नमामघ्नं कृमिकूर्मं विनाशयेत् ।
 मन्दकादीन्कृमिन्सर्वांश्चाशयेत्तदाऽत्र संशयः ॥ १६२ ॥
 भुक्त्वा च कण्ठपर्यन्तं गुञ्जैकन्तु रसं लिहेत् ।
 तन्क्षणात्कारयेद्भ्रूम त्वरारिं यथाऽनलः ॥ १६३ ॥
 यामार्द्धाद्द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ।
 महदाश्रयैकर्ता च तत्क्षणाह्नोक्तकौतुकम् ॥ १६४ ॥
 पन्नामिषं क्षिपेन्मध्ये घर्मं धारयते यदा ।
 यमार्द्धेन जलप्रार्यं भवत्येव न संशयः ॥ १६५ ॥
 योगिन्ये भैरवायाऽथ वीरेभ्योऽथ वलीन्दरेत् ।
 पश्चात्तन्मक्ष कर्तव्य इत्याह्वा प्रारमेध्वरी ॥ १६६ ॥
 मापात्रं दधिभक्तञ्च दीपं वेदमुख्यं सुधीः ।
 एवञ्च भैरवे दद्याद्योगिनीभ्योऽथ शामिपम् ॥ १६७ ॥
 कापीसास्थि पीतकृष्णं सिन्दूरं कज्जलं तथा ।
 दधिभक्तं धूपदीपं दद्याच्चतुष्पये निशि ॥
 अन्यथा नैव सिद्धं स्यात्तज्जलं लभ्यते क्वचित् ॥ १६८ ॥

(अथमन्त्रः—ॐ ह्रीं धीं धीं हंसं क्षमलवर्यै असिताज्ञादि
 इहागच्छ इहागच्छ इमं दधिभक्तमापात्रवलिं दह दह ममशान्तिं
 रत्ना कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ कौं धीं ॐ ह्रीं ह्रीं छरलवससहया ब्रह्मादि-
 त्यादि इहागच्छ इहागच्छ इमं मत्स्यमाससिन्दूरकज्जलवलिं
 एणहएणह मम शान्तिं रक्षा कुरु कुरु स्वाहा ॥ ॐ ह्रीं धीं धीं वदुक-
 हनुकादिवीर इहागच्छ इहागच्छ दधिभक्तवलिं एणहएणह मम-
 शान्तिं रक्षा कुरु कुरु स्वाहा इतिवलिदानम् ।)

अन्यथा ह्यित्ये तेजो रसो भवति निष्फलः ।
 तेनेदं बलिदानेन साफल्यं भवति ध्रुवम् ॥ १६९ ॥
 शङ्खद्रावो रसो नाम्ना शम्भुदेवेन भाषितः ।
 गुह्याद्गुह्यतरं गोप्यं पित्रा पुत्रे न कथ्यते ॥ १७० ॥

(अथौषधमक्षणमन्त्रः—ॐ ह्रीं सीं ह्रीं स स ॐ नमो
 भगवते वापुदेवाय धन्वन्तरये अमृतहस्ताय सर्वामयनाशाय
 त्रैलोक्यनाथाय परोपगणनाय हरये अमृताय स्वाहा ।)

रससागर, सर्वरोगे ।

टि०—धै र, वृ यो त, वि क्र, रसावनस, एषु ग्रन्थेषु सौवीर
 स्थाने खड्गनाडीकले अपि क्लया प्रक्षिति, नैतावता विरोपेण पाठान्तर
 तामापान् योग्यतासि । शङ्खद्रावे खड्गनाडीकलप्रक्षेपेण विरोपविशेषा
 ऽनुदयत् । रसायनमन्त्रेदे अमृतायैव इति नाम ।

भाषा—शुद्ध, आक, इमली, पीपल, अपामार्ग इनकी
 सफेदराखमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह निकालेहुएक्षार, सुहागा,
 यवक्षार, सब्जी, पाचौनमक, हींग, हरिताल, सुरमा, नवसादर,
 सोमल, गोदन्तीहरिताल, सोनामाषी, गन्धक, पारा, बध्नाग,
 ससुरफेन, शोरा, फटकड़ी, शङ्ख, शङ्खनाभि, चूनेकापत्थर, मैत-
 सिल, कसीस येसब समभागलेकर वारीकचूर्णकर शङ्खद्रावकीबूके-
 रसमें मिलाकर काचकी धीशीमें भरदे और जहा इरवच अग्नि-
 जलतीहो उसके सहारेपर रखदे जिसमें कि इक्का इरवच शोषण
 होताहै । एकद्रवसूत्रनेपर फिर दूसरीजातिका अम्लद्रव डाल-
 कर छुटावे । ऐसे ७ दिन पूरहोनेपर भक्के अथवा काचके
 डमरूयन्त्रसे तेजावं निकाले । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह लेवे,
 अथवा एकरती पकेपानपर लेवेदेकर भक्षणकरावे । इससे कास,
 श्वास, क्षय, अजीर्ण, ग्रहणी, अरुचि, उदररोग, ग्रीहा, गुल्म,
 ववासीर, पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अस्थिशूल, आमवात, महावात
 व्याधि, पक्षाघात, घनुवात, पेटकी तमामन्याधिया, आम,
 किमि, बकुही इनसबको यह नष्टकरताहै । ग्लेतक गरिष्ठभोजन-
 वरके एकरती इसरसको लेनेसे त्वरारिषी अग्निकीतरह भोजन-
 को पचादेताहै । आपेपहरमें शङ्ख, सीप और कौड़ियोंको
 मलादेताहै । पकलुआमास इसमें डालकरधूपमें रखनेमें आपे-
 पहरमें जलकेसदृश इवहोजताहै । इससे बनानेसे पहिले तथा पीले
 योगिनी, भैरव और वीरोंको बलि देनीचाहिये । बलिमें उडदके
 बडेबौदर, दही—मात, चारवतीका दीपक यह भैरवको बलि
 देवे । योगिनियोंको मासबलि दे । विनीले, पीला और काला
 सिन्दूर, कज्जल, दही, मात, धूप, दीप, इनकी बलि रातमें
 चौराहेपर दे अन्यथा सिद्धि नहीं होती । बलिदानमन्त्र ऊपर
 लिखेप्रमाण समझना ॥ २२ ॥

२३ शङ्खद्रावरसः (लघुः) (दशमः)

सोमलञ्च यवक्षारं स्वर्जिका टङ्गुणं स्फटी ।
 समञ्च पञ्चलवर्णं सोरा च नवसादरम् ॥ १७१ ॥
 काचकृप्यां ततः क्षिप्त्वा वारुणीयन्त्रमुद्धरेत् ।
 यामार्द्धं द्रावयत्येवं शङ्खशुक्तिवराटिकाः ॥ १७२ ॥
 अर्शांसि नाशयेत्तद्वन्महच्छ्रादमरीशिलाः ।
 उदराऽष्टविधं हन्याद्दुल्महीहोदरामयम् ॥ १७३ ॥
 अजीर्णं नाशयेच्छीर्षं ग्रहणीञ्च विमृचिकाम् ।
 भुक्तरोषं न भोक्तव्यं मापमात्रं रसोत्तमः ॥ १७४ ॥
 क्षणमात्राद्भवेद्भ्रूम पुनर्भाजनमिच्छति ।
 प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्यश्च रसोत्तमः ॥ १७५ ॥
 न रन्मथ्यश्च भयं कापि सत्यसत्यं मयोदितम् ।
 न देयं यस्यकस्याऽपि सदा गोप्यञ्च कारयेत् ॥
 रसः शङ्खद्रावो नाम्ना वैद्यानामुपकारकः ॥ १७६ ॥

रससागर, उदररोगाऽधिकारे ।

भाषा—सोमल, यवक्षार, सब्जी, सुहागा, फिटकड़ी, पाचौ-
 नमक, शोरा और नवसादर समभागलेकर सबका वारीकचूर्णकर

दमरूयन्त्र अथवा भवकेसे तेजाव निकालकर रराछोड़े । इसमेंसे प्रथमशङ्खद्रावकीतरह सेवनकरनेसे बवासीर, सूजकृच्छ्र, पथरी, रैती, ८ उदररोग, गुल्म, शीहा, अजीर्ण, प्रहणी, विसृचिका इनसबको यह नष्टकरताहै । उच्छिष्टरहेहुएको न पीये । पानी-बिना लेनाहोतो पानवगेरहमें एकदूद डालकर सेवनकरनाचाहिये । भोजनकरनेकेबाद लेनेसे तत्कालमें सूखलगतीहै । नियमपूर्वक इससेसेवनकरनेवालेको किसीभीव्याधिसे भयनहोईरहता ॥२३॥

२४ शङ्खद्रावरसः (एकादशः)

अर्कस्तुक्सातलाचिञ्चापलाशकदलीतिलाः ।
अपामार्गो मोक्षकश्च कपदेः शङ्ख पथ च ॥ १७७ ॥
पतेपां भूतिजक्षारः पारदः पट्टपञ्चकम् ।
पञ्च क्षाराः समं सर्वेभिर्भागो गन्धकः स्मृतः ॥१७८॥
भूरसा चैव सोरा च कासीसं नवसादरम् ।
पतच्चतुष्टयं सर्वैरौषधैस्तुल्यभागिकम् ॥ १७९ ॥
सर्वेषां कज्जलीं कृत्वा निम्बुनीरेण मर्दयेत् ।
प्रदद्यान्नलिकायन्त्रे वर्हिं यामचतुष्टयम् ॥ १८० ॥
दत्त्वा द्रवं तु गृह्णीयात्सृचिकाद्रावकारकम् ।
एकबल्लं द्विवल्लं वा दद्यान्नलिकया रसम् ॥ १८१ ॥
गुल्माशोः स्त्रीहृमुख्यानां रोगाणामन्तकं परम् ।
शङ्खद्रावरसो ह्येष कृतकर्मा न संशयः ॥ १८२ ॥

रस. सं., र. सि., गुल्माऽधिकारे ।

भाषा—आक, गृहर, अहुलियागृहर, इमली, पलाश, केला, तिल, अपामार्ग, मोखा, कौडी, शङ्ख इनसबसीराखका-
धार, पारा, पांचौनमक, पांचौंक्षार सब १-१ भाग, गन्धक
३ भाग, कटकई, शोरा, कशीस और नोसादर येचारों सब
दवाओंके बराबर लेकर सबकीकजली बनाय नीचूकेरससे
मर्दनकर नलिकायन्त्रसे ४ पहरकीअग्निदेकर तेजाव निराले ।
इसमें सूई डालनेसे गलजातीहै । इसमेंसे ३ रत्तीसे ६ रत्तीतक
पानीमें मिलाय काचकीनलीसे भुंढमें डाले । ऐसे दोनोंसमय-
लेनेसे गुल्म, बवासीर, शीहा वगैरह उदररोग, अजीर्ण और
वातव्याधियोंको यह नष्टकरताहै ॥ २४ ॥

२५ शङ्खद्रावरसः (द्वादशः)

योगिनीभैरवाम्बाश्च बलिमादौ प्रदापयेत् ।
पश्चाद्यन्त्रश्च कर्तव्यमेवाह परमेश्वरी ॥ १८३ ॥
रसः शङ्खद्रयो नाम शम्भुदेवेन भाषितः ।
गुह्याद्गुह्यतमं गुह्यमिदानीं कथ्यते मया ॥ १८४ ॥
शङ्खचूर्णं यवक्षारं स्वर्जिक्षारं सटङ्कणम् ।
समञ्च पञ्चलघणं स्फटिका नरसारकः ॥ १८५ ॥
काचकूर्ण्यां ततः क्षिप्त्वा घारणीयन्त्रमुद्धरेत् ।
यामार्द्धं द्रावयत्येष शङ्खशुक्तिवराटकान् ॥ १८६ ॥
अशांसि नाशयेत् पट् च सूजकृच्छ्रादमरीस्तथा ।
उदराण्युत्सह्यपानि गुल्मप्लीहोद्धारणि च ॥ १८७ ॥

अजीर्णं नाशयेच्छीघ्रं ग्रहणीञ्च विसृचिकाम् ।
भुक्तरोपे च भोक्तव्यो मापमात्रो रसोत्तमः ॥ १८८ ॥
क्षणमात्राद्भेदस्म पुनर्भोजनमिच्छति ।
प्रत्यहं भोजनान्ते च संसेव्योऽयं रसोत्तमः ॥ १८९ ॥
न रज्जायां भयं छाऽपि सत्यं सत्यं यदाभ्यहम् ।
न देयं ययं कस्याऽपि मद्रा गोप्यञ्च कारयेत् ॥
रसः शङ्खद्रयो नाम वैद्यानामुपकारकः ॥ १९० ॥
भै. र., घ., र. त., उदराऽधिकारे ।

भाषा—योगिनी और भैरवोंकी बलिदेकर शङ्ख, यवक्षार,
सजी, सुहागा, पांचौनमक, पटकई, नोसादर, सब समभाग-
लेकर बारीकचूर्णकर नलिकायन्त्रमें तेजाव निराले । इसमेंसे १
माशेसे २ माशेतक पानीमें मिलाकर देनेसे ६ प्रकारकी बवा-
सीर, सूजकृच्छ्र, पथरी, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म, शीहा,
अजीर्ण, ग्रहणी, हैजा इनसबको यह नष्टकरताहै । गलेतकघारकर
इसकोलेनेसे पूर्वशरायाहुआ पाचनहोकर फिरसे भोजनकी इच्छा
होजातीहै । मन्दाग्निवालोंको भोजनकरनेकेबाद इसकासेवन
करना चाहिये ॥ २५ ॥

२६ शङ्खद्रावरसः (महादादिः) १३

शुद्धं काञ्चनमाक्षिकं मृदुतरं कांस्याभिषं तत्तथा,
मिन्धूर्यं विमलं रसाञ्जनचरं केनः श्ववन्तीपतेः ।
क्षारौ स्वर्जिकसाम्भलो सुविमलो

मागास्त्वमीषां समाः,

मसानां सदशनत्तु द्दुष्णमिहाऽ-

स्यादौ नृसारः सितः ॥ १९१ ॥

तत्तुल्या स्फटिकाकारिका त्रिसदृशः शुक्लो यवस्याप्रजः,
कासीसत्रितयं यवाप्रजसमं सञ्चर्ष्यं सर्वं न्यसेत् ।
पाने काचमये मृदाभ्यरचुते यन्त्रे वकाष्ये भिषक्,
तापेन क्रमवर्द्धिना त्ववहितोऽमीषां रसं पातयेत् ॥
यो द्राम्भस्म वराटिकां प्रकुरुते सोऽयं महाद्रावकः,
को वक्तुं प्रभवेदमुष्य नितरां सम्यग्गुणाभूतले ।
पतद्बल्लचतुष्टयं सह गिलेच्छुष्णया लघ्वेन वा,
तत्पश्चात्परिवासितं बहुगुणं ताम्बूलकं भक्षयेत् १९३

प्रासङ्ग्यात्कथयामि तांश्चट्टु

गुणानस्यैव कांश्चित्परान्,

निःशेषं विनिहन्त्यसौ

चिरभवानष्टोदराणि ध्रुवम् ।

गुल्मं पाण्डुहलीकं सुकटिना

मष्टीलिकां कामलां,

मन्दाग्निं विपमाश्रितो

बहुविधोऽश्लोथाश्च शूलानपि ॥ १९४ ॥

सर्वोशांसि भगन्दरान्कृमिगदान्पञ्चैव कासांस्तथा,
द्विक्राष्टीपदकोपचुद्धिमरचिं व्याधिं महादारुणम् ।
नव्यं वा चिरञ्जं ज्वरं बहुविधं छर्दिं किमीन्चिर्शतिं ।
पश्मानं चिरजामवातपिष्टिका वीसपंचिस्फोटकौ ॥

उन्मादं स्वरभेदमर्बुदमपि स्वेदञ्च हृत्पाणिजं,
जिह्वास्तम्भगलग्रहं चिरभवं श्रियाहजामुल्वणाम् ।
नासारुर्णशिशोऽक्षिवक्त्रजगदान्द्रुद्रामर्याश्चापरान्,
हन्यादेव चिरोत्थितान्द्रुविधानन्याश्च रोगानपि १९६
एकः स्यादपरो हि टङ्कणमुखैर्द्रवैः परैः सप्तकैः,
रन्यस्तु स्फटिकारिटङ्कणयवक्षाराप्रकासीसकैः,
जानीयाद्द्रुतो विभागमनयो यन्त्रादिकञ्चाऽपरं,
निर्दिष्टास्त्रय एव भेषजवराः स्वल्पो महान्मध्यमः ॥
टङ्कणादिकासीसान्तैः सप्तद्रव्यैर्मध्यमः,
स्फटिकारिकासीसान्तैश्चतुर्द्रव्यैः स्वल्पः,
स्वर्णमाक्षिकादिकासीसन्नितयान्तैर्मेहान् ॥ १९७ ॥
भै र., उदररोगाधिकारे ।

भाषा—शुद्धसुवर्णमाधिक और कास्यमाक्षिक, काचनमक,
रौप्यमाक्षिक, रसौत, समुद्रफेन, सगी और साभरनमक १-१
भाग, सुहागा ८ भा, सफेद नोसादर तथा फिटकड़ी ४-४ भा,
सफेद यवक्षार १६ भाग, शुद्धकमीस, हरिताल और मैन्सिल
येतीनोंमिलकर १६ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर कपडमिठी
दियेहुए काचके घर्तनमें रखकर नली अथवा डमरुयन्त्रसे बहुत-
सावधानीकेसाथ क्रमामि जलाकर तेजाव निराले । इसमें श्ल
वगैरह सब गलजातेहैं । इसकी १२ रती सौंठ अथवा लवङ्गकी-
गोलीमें क्वलितकर निगलवादे फिर सुवासित पान खिलावे ।
इसकेसेवनसे बहुतदिनकेपुराने आठों उदररोग, गुल्म, पाण्डु,
हलीमक, कटिनअग्रीला, कामला, मन्दाभि, विषमामि, नाना
ताहकेशोष, शूल, सामप्रकारके बवासीर, भगन्दर, कुमि, पाच-
प्रकारके कास, हिचकी, पीलबाव, अण्डबद्धि, अरुचि, नया
अथवा पुराना ज्वर, बमन, २० प्रकारके किमि, राजयक्ष्म,
पुराना आमावस, पिडका, विसर्प, विस्फोट, उन्माद, स्वरभेद,
अर्बुद, हाथपैरोंकापसीना, जिह्वास्तम्भ, गलग्रह, धोवाकीपीडा,
नाक, कान, शिर, आंख, सुह इनके समस्तरोग और शुद्ध
रोगोंको यह नष्टकरताहै । टङ्कणादि कासीसान्त ७ द्रव्योंसे
मध्यम, स्फटिकादि कासीसान्त ४ द्रव्योंसे स्वल्प और स्वर्ण
माक्षिकादि कासीसान्तद्रव्योंसे महान्, इसगह इसके विभाग
करनेसे ३ प्रकारकेशङ्खद्राव तैयाहोतेहैं ॥ २६ ॥

२७ शङ्खद्रावरसः (चतुर्दशैः)

वृषश्चित्रमपामार्गं चिञ्चा कृष्णाण्डनादिका ।
स्तुही तालस्य पुष्पञ्च चर्पाभ्र्येतसं तथा ॥ १९८ ॥
एतेषां क्षारमाहृत्य लिम्पाकस्वरसेन च ।
क्षालयित्वा क्षारतोयं यत्नपूर्तञ्च कारयेत् ॥ १९९ ॥
चण्डातपेन संशोष्य ग्राह्यं तद्रूपणीचिन्तम् ।
एतस्य द्विपलं ग्राह्यं यवक्षारपलद्वयम् ॥ २०० ॥
स्फटिकारिपलञ्चैव नरसारं पलन्तथा ।
पलायं सैन्धवं ग्राह्यं टङ्कणं तोलकद्वयम् ॥ २०१ ॥
कासीसं तोलकञ्चैव मुद्राशहञ्च तोलकम् ।
दारमोचं कर्कञ्च तोलं समुद्रफेनकम् ॥ २०२ ॥

सर्वमेकत्र सञ्चर्य वकयन्त्रेण साधयेत् ।
महाद्रायकमेतद्धि योज्यञ्च रसजारणे ॥
हन्ति गुल्मादिकात्रोगान्यकृद्ग्रीहोदराणि च ॥ २०३ ॥
भै र., घ., उदररोगाधिकारे ।

भाषा—अड्सा, चित्रक, अपामार्ग, इमली, कांहड्केकीलता,
शुद्ध, ताङ्केकूल, इटसिट, बेत इनसबकीरासको अमिलतासके
अहस्वरसेमें भिगोकर कपडछानकर कड़ीपूपमें रखदे । इसके छार
जो क्षारकी पपड़िया बंधजायं उन्हें मलाईकोतरह उतारले ।
६-७ दिनमें तमामक्षार पपड़ीहोकर निकल आताहै । यह क्षार
और यवक्षार २-२ पल, फटकड़ी और नोसादर १-१ पल,
सैधानमक २ कर्ष, सुहागा २ तोले, कमीस और मुद्रासङ्ग १-१
तोला, दालचिन्ना १ कर्ष, समुद्रफेन १ तोला लेकर सबका
बारीकचूर्णकर मलिका अथवा डमरुयन्त्रसे तेजाव निकालकर
रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रती पानवगैरहमें रखकर देनेसे गुल्म,
यकृत और ग्रीहादि समस्त उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २७ ॥

२८ शङ्खनाभिरसः (शङ्खभर्षोष्टली) १

नाभिं शङ्खभवां गवां शुभपयःपिष्टाञ्च मूर्पाकृतां,
भागैः पौडशनिष्ककैश्च तुलितामादाय तस्यां भिषक्
निष्काऽहं भवबीजमस्म च तथा गन्धात्त्रयं निष्ककैः,
क्षिप्त्वा तां परिवेद्येन्धुमतरैर्वह्नेस्ततो मृत्तिकायाम् ॥
लिप्त्वा चोपरि पाचयेद्भजपुटे शुक्लामितं दापयेत्,
पिप्पल्या मधुनाऽथवा घृतयुते मारीचचूर्णैः क्षये ।
जैपालस्य तु चूर्णयुक्तमथवा कोलान्वितं गंधूतैः,
श्ले शुल्मगदे त्रिद्रोपशमनस्याच्छुद्धैर्वद्रवैः ॥ २०४ ॥
चि. क., र र., र को., नि. र., यो. म., र. श., वै चि., र.
पा., र का., राजयक्ष्मणि । यो म शङ्खगर्भेतिनाम, र. र. स.,
रसायनस., ना. वि एषु ग्रन्थेषु मृगाङ्गपौष्टलीतिनाम ॥

भाषा—चारक्य शङ्खनाभिदो गायकैर्द्रुयमें पीसकर मूषा
बनाव २ मास पारदभस्म और १२ मासेगन्धककी कजली
को रखकर मूषाकोबन्दकर ६-७ कपडमिठीदेकर शराव-
सम्पुटमें बन्दकर गजपुटकीआचदे । स्वाश्रशीतलहोनेपर विदाल
कर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रती पीपलमधु अथवा पी और
मरिचकेसाथदेनेसे यह मरोग नष्टहोताहै । शुद्धजमालगोडा अथवा
गोधतयुक्तपत्तोलकेसाथदेनेसे शूल और गुल्म नष्टहोतेहैं । जद
रखकेसाथ त्रिद्रोप शान्तहोताहै ॥ २८ ॥

२९ शङ्खनाभिरसः (द्वितीयः)

भस्मीकृता गजपुटे पुटशङ्खनाभि—
यैज्ञार्कैर्दुग्धमृदिता स तु यज्ञकल्कः ।
गन्धार्थसूतमृतटङ्कपिधानामां
शम्भूकिसासु पुदिता त्रिदिनं हि शीता ॥
आकर्षदाहदलभागयुता च पिष्टा
सङ्गाहजिद्रुचिकरा मरिचाऽऽज्ययुक्ता २०६
रस स, र (मा.) शङ्खगर्भः, प्रहयादौ ।

भाषा—शूहर और आकडेद्वयमे २-३ दिन शङ्खनाभिके-
चूर्णको घोटकर गजपुटकीभाचदे । अथवा एकभाग पारा और
दोभाग शङ्खगन्धककीकञ्जलीको घोंघमें भरके उसीका ढक्कन
देकर आक और शूहकेद्वयमें पीसेहुए मुद्दागंसे सनिबन्दकर
शरावसम्पुटमें रस गजपुटकी भाचदे । तीसरेदिन निकालकर
चतुर्थांश शङ्खभस्म मिलाकर रखछोड़े । इनदोनोंमेंसे किसीएक-
भस्मकी एकमाशेकीमात्रा ५-१४ अथवा २१ मरिच और
घोकेसाथ युक्तिपूर्वकदेनेसे सद्गृहप्रहणी और अरवि नष्टहोतीहे २९

३० शङ्खभास्कररसः

दग्धं शङ्खं चराटञ्च तुल्याकं नयनीतयुक् ।

टङ्काई भक्षयेत्सर्वेशूलार्तः शङ्खभास्करः ॥ २०७ ॥

र. सं. क., र. को., र. क. ल, टो, रसायनम, र का,
शूलाप्रिहार ।

भाषा—शङ्ख और कौडीभस्म १-१ भाग, ताम्रभस्म
दोनोंकीबरान मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे एकमाशेसे दोमाशे
तक रोग अथवा रोगीका बलाबल देखकर मक्खनकेसाथ प्रयोग-
करनेमें विशेषजशुल नष्टहोताहे ॥ ३० ॥

३१ शङ्खमुखरसः (शङ्खनाभिरसः)

शङ्खनाभेश्चतुर्भागाः कुवज्रस्य तथा द्वयम् ।

भागो गन्धस्य शुद्धस्य चैकभागोऽत्र सूतकः ॥२०८॥

ग्रहण्यतांसारसरराजयक्ष्मज्वरराज्वयेच्छङ्खमुखः स एषः ।

रोगोचितताभिः प्रथितक्रियाभि-

लंकेभ्ररोक्तो विधिरत्र शेषः ॥ २०९ ॥

रस. सं., र. (मा.) क्षयाप्रिहार ।

भाषा—शङ्खनाभिरस ४ भाग, वक्रान्तभस्म २ भा.,
शुद्धगन्धक और पारा १-१ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकञ्जली-
कर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा समय अथवा रोगो-
चितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अतिसार, राजयक्ष्म, ज्वर इन-
सबको यह नष्टकरताहे । लोकनाथरसमें कहीहुई प्रक्रियाका
अनुप्राणकर उपद्रवोंको शमनकरना ॥ ३१ ॥

३२ शङ्खवटी (प्रयमा)

पले चिञ्चाक्षरं पलमितमिदं पञ्चलयणं,
द्वयं सन्धनिषष्ठं तदनु लघुनिम्नफलरसेः ।

ततः पित्तं तस्मिन्पलपरिमितं शङ्खशकले,
क्षिपेद्द्वारानसत् प्रमुदितमनेनैव विधिना ॥ २१० ॥

पलप्रमाणं कटुकत्रयञ्च

बचा च हिदुश्च पलाईमानौ ।

विषं पलद्वादशभागयुक्तं

तावाग्रसो गन्धकतोऽपि तावान् ॥ २११ ॥

स्रद्रास्थिप्रमाणेन वटीमितस्य कारयेत् ।

भक्षयेत्सर्वदा धीमन्सर्वाजोग्रप्रदान्तये ॥ २१२ ॥

सर्वादरेषु शूलेषु चिसृच्यां विविषेषु च ।

अग्निमान्द्येषु गुल्मेषु सदा शङ्खवटी हिता ॥ २१३ ॥

भा. प्र. यो. म, र. क. ल, शू. यो. त, र. र. को, टो., र. व.,
ना. वि., ध., ति. र., र. वि., चि. र. म, र. वो, र. को, यो. वि,

रसायनसं, यो र, वै. मृ, र. का., मै. र., वै. चि., र सु, र व
यो, र., र. (मा.), भ. सा., र. वि., र दी., रस. स., चि. क,
अग्निमान्द्ये ।

टि०—रत्नाक्तोपयोगे चिञ्चाक्षारादिरस इति नाम । २५ म.
यो चि प्तयोर्दिह्दुष्योप गतपदामाने गृहीते इति विषय । वृहयोग
तरङ्गिण्या दिह्दुष्योपयोगे स्थाने पलाईमानेन लवङ्ग गृहीत तनु न सत्यम्
दिह्दुष्योपयोगे मारकफिर लवङ्ग सर्वाऽपरत्याह । विषमपाने विल
दयते तत्रपि रसकादिप्रमादविलम्बि प्रतिमानि । विष पलद्वादशभाग
युक्तमित्यत्र द्वादशाना पूर्णां द्वादश इति पूर्णप्रत्ययान्त स चानौ भाग
श्रेति कर्मधारयात्परस्य द्वादशो भाग इति समासो बोध्यस्तान् निषचलि
रसानां प्रत्येक पद पन्नापन्न भवन्तीति ।

भाषा—ईमलीकाक्षर और पाचौनमक १-१ पल लेकर
कागज़ीनीडूकरसमें घोलेदे और एकपल शङ्खको गरमकरके ७ बार
गुहावे । इसकेबाद त्रिकटु १ पल, वच और सुनीहींग २-२
कप, शुद्ध बज्रनाग, पारा और गन्धक ०२-१२ पल लेकर
नीलवर्णकञ्जलीकर पूर्वधारमें मिलाकर ४-५ दिनतक घोटकर
बेरनीगुळीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे स्र प्रहारके
अजीर्ण, उदररोग, शूल, हैजा, मन्दाग्नि, गुल्म इन सबको
यह नष्टकरतीहे ॥ ३२ ॥

३३ शङ्खवटी (वृहती) (द्वितीया)

दग्धशङ्खस्य चूर्णं स्यात्तथा लघणपञ्चकम् ।

तिन्तिडीक्षारकञ्चैव कटुकत्रयमेव च ॥ २१४ ॥

तथैव हिदुक्कं प्राहं विषं पाट्टदग्धकनीच ।

अपामार्गस्य वहेद्य क्वायै निम्बुकजैर्द्रवैः ॥ २१५ ॥

भावयेत्सर्वचूर्णै तद्मल्लवर्गैर्विधेयतः ।

याचत्तद्मल्लतो याति गुट्टिकाऽमृतसुपिणां ॥ २१६ ॥

सद्यो बह्विकरी चैव भस्मकं नाशयेत्सुलु ।

भुक्त्वाऽऽकण्ठं तु तस्यान्ते खादेच्च गुट्टिकामिमाम् ॥

तत्क्षणाज्जात्यत्याशु पुनर्भाजनमिच्छति ।

हन्ति वातं तथा पित्तं कुष्ठानि विषमज्वरम् ॥ २१८ ॥

गुल्माख्यं पाण्डुरोगञ्च निद्राऽऽलस्यमरौचकम् ।

शूलञ्च परिणामोत्थं प्रमेहञ्च प्रवाहिकाम् ॥

वन्त्रह्लावञ्च शोथञ्च दुर्गामानि विधेयतः ॥ २१९ ॥

र च, र सं, र. सु, र. क, मै र, र का, अग्निमान्द्ये । र

सु, मै र. एतयोर्द्वौ पाटौ प्रमादाश्चितौ ।

भाषा—शङ्खभस्म, पांचौनमक, इमलीकाक्षर, त्रिकटु,
सुनीहींग, शुद्धबज्रनाग, पारा और गन्धक सब समभागलेकर
नीलवर्णकञ्जलीकर अपामार्ग तथा चिन्नकक्षया और नीबुक
रसमें मदनकर देखे, यदि खटाई अच्छीतरह म आरदो तो
२-३ नीबुओंकीभावना और दकर बेरनीगुळीकेबराबर
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खानेसे कण्ठ-
तन्त्रपरिषट विषेहुए भोजनको तक्षण जारणकर फिसे भोजन-
कीदृच्छाको उत्पन्नकरतीहे । उचितानुपानकेसाथलेने वात,

पित्त, उग्र, विपमन्वर, शुल्म, पाण्डु, निद्रा, आलस्य, अश्वि,
परिणामशूल, प्रमेह, झड़ी, लालास्राव, शोथ, बवासीर ये सब
नष्टहोतेहै ॥ ३३ ॥

३४ शङ्खवटी (तृतीया)

सार्व कर्प रसेन्द्रस्य गन्धकस्य तथैव च ।
विपं कर्पत्रयं दद्यात्सर्वतुल्यं मरीचकम् ॥ २२० ॥
दग्धशङ्खञ्च तत्तुल्यं पञ्चकपर्पञ्च नागरात् ।
स्वजिका रामठरुणे सिन्धु सौवर्चलं विडम् ॥२२१॥
सामुद्रमोद्भिद्भ्रैव भावयेन्निम्बुकद्रवैः ।
वटी ग्रहण्यम्लपित्तशूलघ्नी वह्निदीपनी ॥
वह्निमान्यकृतान्नोगान्तामदोषं विनाशयेत् ॥ २२२ ॥
र च, र स, र क, अग्निमान्ये । र क. द्वौ पाठौ श्हीतौ
तत्प्रमादात्लिखितमिति प्रतिमाति ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक डेढ १॥ कर्प, शुद्धबछनाग
३ कर्प, मरिच और शङ्खभस्म ६-६ कर्प, सोंठ, सजी, मुनी
हौंग, पीपल, सेंधव, सचल, विड, सामुद्र और खारीनमक ५-५
कर्पलेकर बारीकचूर्णकर नीबूकेरसकी ६-७ भावनाए देकर
बेरकी गुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे ग्रहणी, अम्लपित्त, शूल, मन्दाग्नि
और आमवात इनसबको नष्टकर यह अग्निको प्रदीप्तकरतीहै ३४

३५ शङ्खवटी (चतुर्थी)

चिक्ष्वावल्कलभूतिः पञ्चपला लयणं तावत् ।
निम्बुरसेन च कल्कं तप्तं शङ्खं निपेचयेत्तत्र ॥ २२३ ॥
त्रिकटुकामठसहितं पलांशकं मद्देयेद्दिनं सम्यक् ।
कर्पमितौ रसगन्धौ विपञ्च भृङ्गाभ्युना विमर्चैतत् ॥
सग्निमध्य च सर्वं सम्यक् निम्ब्वम्युना पुनर्मर्चय ॥
वदरास्थिमितायटिका मान्याऽजीर्णं
विस्मृचिकां तीव्राम् ॥ २२५ ॥

शूलाऽऽभ्यानोदरजान्ध्याधीन्सर्वाञ्जयति वातकृताम् ।
शङ्खाभिधानी गदिता कृपीरसान्प्रांशधिपसंयुक्ता ॥
र, र पा, चि सा, यो चि, र वो, रसायन, अग्निमान्ये ।
टिका—चिकित्सासारे हिङ्गुवादिचूर्णमिति नाम । वो चि भावना
न द्द्येते । अस्य योगस्य प्रथमयोगेन समानतायामपि न तदन्तर्भवति
प्रमाणे महदन्तरत्वात् ।

भाषा—इमलीकाक्षार और पाचौनमक ५-५ पल लेकर
बराबरके नीबूकेरसमें मिलाकर ५ पल शङ्खको गरमकरके सुखावे
शङ्खका चूराहोजानेपर त्रिकटु और मुनीहौंग १-१ पल देकर
एकदिन मर्दनकर शुद्धपारा, गन्धक और बछनाग १-१ कर्पकी
नीलवर्णकमलीकर भगरेकेरससे एकदिन मर्दनकर फिर पूर्वयोगमें
मिलाय १-२ दिन नीबूकेरसमें घोटकर बेरकी गुठलीकेबराबर
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा
रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि, अजीर्ण, हैजा, शूल,
आध्मान, उदर और वातरोग इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसमें
कितनेहौलीग सोलहका हिस्सा रससिन्धु और बछनाग डालवेहै

३६ शङ्खवटी (पञ्चमी)

चिक्ष्वाऽश्वत्थस्तुहीक्षारादपामार्गाकितस्तथा ।
क्षाराणि पञ्च सङ्गृह्य ततो लयणपञ्चकम् ॥ २२७ ॥
सैन्धवादिसमादाय सर्वमेतत्पलद्वयम् ।
कर्पं कर्पं विपं गन्धं रसं टङ्गुकन्तथा ॥ २२८ ॥
हिङ्गुपिप्पलिशुण्ठीनां तथा मरिचजीरयोः ।
द्वौद्वौ कर्पौ पृथक्कार्यौ तथा द्वौ शङ्खचूर्णतः ॥ २२९ ॥
फलत्रयाच्च कर्पैकं द्विकर्पन्तु लवङ्गतः ।
पतत्सर्वं समासाद्य शृङ्खणचूर्णाहितं शुभम् ॥ २३० ॥
भावयेद्म्लयोगेन सप्तथा तु प्रयत्नतः ।
रसः शङ्खयटीनाम्ना सेवितः सर्वरोगजित् ॥ २३१ ॥
शुक्लामात्रमिदं खादेद्भवेद्दीपनपाचनम् ।
अजीर्णं वातसम्भूतं पित्तश्लेष्मभवं तथा ॥
पिसुचीं शूलमानाहं हन्यादत्र न संशयः ॥ २३२ ॥
टो, र सु, यो र, इ यो त, र का, वै चि, न रा, यो,
त, नि र, अग्निमान्ये ।

भाषा—इमली, पीपल, शूलर, अपामार्ग और आकृक्षार,
पाचौनमक २-२ पल, शुद्धबछनाग, गन्धक, पारा और सुहागा
१-१ कर्प, मुनीहौंग, पीपल, सोंठ, मरिच, जीरा और शङ्ख-
भस्म २-२ कर्प, त्रिकटु १ कर्प, लौंग २ कर्प, लेकर सबका
बारीकचूर्णकर विचोरे बौरहके रससे सातभावाए देकर १-१
रसकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथो
चितानुपानकेसाथ छेनेसे वातज, पित्तश्लेष्मज अजीर्ण, हैजा, शूल
और आनाहप्रचति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ३६ ॥

३७ शङ्खवटी (षष्ठी)

द्वौ क्षारो रसगन्धको सलवणी व्योपञ्च तुल्यं विपं,
चिक्ष्वाभस्प चतुर्गुणं रसवरो लिम्पाकजते कृतम् ।
वारम्पारमिदं सुपाकचरितं लोहं क्षिपेद्विड्गुं,
भृष्टं शङ्खसमं समुद्रितमिदं गुञ्जाप्रमाणा भवेत् ॥२३३॥
खयाता शङ्खयटी महाग्निजननी शूलान्तकृत्पाचनी,
कास्थ्यासविनाशिनी क्षयहरी मन्दाग्निसन्दीपनी ।
वातव्याधिर्महोदरादिशमनी तृष्णामयच्छेदिनी,
सर्वव्याधिविनाशिनी कृमिहर्त्री दुष्टामयध्वंसिनी ॥२३४॥
र सु, र क, मै र, र का, अग्निमान्ये ।

भाषा—यवक्षार, सजी, शुद्धपारा, गन्धक, सेंधानमक,
त्रिकटु और बछनाग १-१ भाग, अमिलताखेरसमें बनाया
हुआ इमलीकाक्षार ३६ भाग, पाचकद्रव्योंमेंकीहुईलोहभस्म
और मुनीहौंग १-१ भाग, शङ्खभस्म सबकीबराबर लेकर
बारीकचूर्णकर विचोरेबौरहकेरससे ६-७ भावाए देकर १-१
रसकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचि
तानुपानकेसाथदेनेसे शूल, अजीर्ण, कास, श्वास, क्षय, मन्दाग्नि,
वातव्याधि, उदररोग, प्यास, क्रिमि, बवासीर, इनसबको
नष्टकर अग्निको अत्यन्त प्रदीप्तकरतीहै ॥ ३७ ॥

३८ शङ्खवटी (महती) (सप्तमी)

कणामूलं बह्निदन्त्यौ पारदं गन्धकं कषा ।
 विशारं पञ्चलवणं मरिचं नागरं विषम ॥ २३५ ॥
 अजमोदाऽमृता हिङ्गु क्षारं तिन्तिडिकाभवम ।
 सञ्चूर्णं समभागान्तु द्विगुणं शङ्खभस्मकम् ॥ २३६ ॥
 अम्लद्रव्येण सम्माव्य यदा फोलास्थिसम्मिता ।
 अम्लदाडिमतायेन लिम्पाकस्वरमेन च ॥ २३७ ॥
 भक्षयेत्प्रातरुत्थाय नाम्ना शङ्खवटी शुभा ।
 तक्रमस्तुमुरासीधुकाङ्गिहोष्णोदकेन वा ॥ २३८ ॥
 शोषणादिरसेनेव रसेन चिचिधेन च ।
 मन्दाग्निं दीपयत्याशु चङ्वाग्निसमप्रभम् ॥ २३९ ॥
 अशोसि ग्रहणीरोगं कुष्ठमहभगन्दरम् ।
 घृहीहानमदमरं श्वासं कासं महोदरकिमीम् ॥ २४० ॥
 हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च विवन्धानुदरे स्थितान् ।
 तान्मर्वात्राशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ २४१ ॥

शे. र., र. शु., वै. क., र. का., अग्निमान्ये ।

भाषा—नीपल, चित्रक और इन्तीकेसूल, शुद्ध पारा और गन्धक, पीपल, सखी, सुरणा, यवक्षार, पांचोन्नमक, मरिच, गोंड, शुद्धपन्नाग, अजमोद, गिलोय, भुनीहींग, इमलीकाष्ठार येसब समभाग और चारुमन्म सबसे दूनी लेखर सबका बारीक-चूर्णर पारेगन्धककी नीलकण्ठजर्लीमें मिलाय नीचूकेरसकी १-७ भावनाएँ देकर बेरकी गुठलीकेबराबर गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खरे अनार अथवा अनिलताम बेरम, छाछ, दहीकापानी, मय, ताड़ी, काफ़ी, गरमजल, रागोद और हरिण बगैरहका मागरस इत्यादि अनुपानोंकेसाथ औषधीदेखार देनेसे मन्दाग्नि, बचागीर, ग्रहणी, कुष्ठ, प्रमेह, भगन्दर, सीहा, पपरी, श्वास, कास, जलोदर, मिमि, हृद्रोग, पाण्डु, विरग्य इनसबको यह नष्टकरती है ॥ ३८ ॥

३९ शङ्खवटी (अष्टमी)

चिञ्चाक्षारं स्तुदीक्षारमर्कक्षारं पलंपलम् ।
 द्विपलां शङ्खमूनिञ्च रामतञ्च पलाङ्कम् ॥ २४२ ॥
 लवणानि च सर्वाणि पलमात्राणि योजयेत् ।
 शार्दूल्यं पलाङ्कञ्च सर्वमेकत्र नृणयेत् ॥ २४३ ॥
 जम्बीरफरुनेमैथीमनलस्य दिनत्रयम् ।
 भृङ्गराजस्य निर्गुण्टीमुण्टपौधेयं त्रयैः पृथक् ॥ २४४ ॥
 आट्टकस्वरमेनेन प्रत्येकं मर्दयेद्विनम् ।
 यद्वर्षाजमात्रान्तु घटिकां फारयट्टिपक् ॥ २४५ ॥
 एकेकां भक्षयेत्प्रातः पञ्चगुल्मान्यपौहतिम् ।
 नर्त्यगुलं निहन्त्याशु हर्जाणञ्च विगुचिकाम ॥ २४६ ॥
 मन्दाग्निं नाशयेच्छार्दं पथ्यं तैलाभ्यजितम् ।
 इयं शरान्तनीनाम प्रार्थनारणहृत्परा ॥ २४७ ॥

शे. वि., दो. र., वि. पा., शुभम् ।

भाषा—इमली, धूहर और आक्केक्षार १-१ पल, चङ्ख-मन्म २ पल, भुनीहींग २ कप, पांचोन्नमक १-१ पल, सखी और यवक्षार २-२ कप लेखर सबका बारीकचूर्णर जम्बीरी और चित्रकके रसोंसे ३-३ दिन, तथा भंगरा, संभाल, गोरख-मुण्टी और अदरककेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर बेरकी गुठलीके-बराबर गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रात-काल उचितानुपानकेसाथलेनेसे पाचप्रकारकेगुल्म, समस्तशूल, अजीर्ण, हैजा, मन्दाग्निप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह दूरकरती है । तैल और खटाईको छोड़कर सचौड़े पथ्यहै ॥ ३९ ॥

४० शङ्खवटी (नवमी)

शङ्खं सप्तदिनानि निम्बुकरसे निर्वाप्य तप्तं पल-
 द्वन्द्वं चिञ्चिणिभूतितः पलमितः सार्धञ्च सौवर्चलात् ।
 सिन्धुः स्याच्च पलं समुद्रलवणारकाचाङ्घ्रिडाञ्चकृतौ ।
 गद्याणास्त्रिकटो नैच द्विगुणिताः संयोजयेद्यततः २४८
 अष्टौ रामतगन्धयो मिलितयो गद्याणाकाः पारदा-
 चत्वारोऽत्र विपस्य पञ्च कथिताः फोलास्थिमात्रता
 पपा शङ्खवटी निहन्ति पयनं शूलान्यजीर्णामयं,
 मन्दाग्निवमरोचकञ्च शमयेन्मृधस्य कृच्छ्राण्यपि २४९

र. कौ., दो., वृ. यो. त., अग्निमान्ये ।

भाषा—शोपलशङ्खको नीचूकेरसे सौणवधि गरमकरके सुजावे और ७ दिनतक इनीतरह पड़ारहनेदे । फिर इमलीका-क्षार १ पल, संचल १॥ पल, रोषव, सामुद्र, काच और विड-नमक १-१ पल, सौंड, मिर्च, पीपल ३-३ तोले, भुनीहींग, शुद्ध गन्धक और पारा २-२ तोले, शुद्धपन्नाग २॥ तोले लेखर सबका बारीकचूर्णर पांगन्धककी नीलकण्ठजर्लीमें मिलाय १-२ दिन नीचूकेरमसे घोटकर बेरकीगुठलीकेबराबर गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे वायुरोग, शूल, अजीर्ण, मन्दाग्नि, अर्धचि, सूत्रच्छ्र इतसबको यह नष्टकरती है ॥ ४० ॥

४१ शङ्खवटी (दशमी)

स्तुहाकेचिञ्चाऽपामार्गंस्मात्तिलपलाजान् ।
 क्षारोञ्च निपगाद्द्यातप्रत्येकं कर्पमानया ॥ २५० ॥
 लवणानि पृथक् पञ्च प्राश्याणि पलमात्रया ।
 स्वर्जिका च यवक्षारं टङ्गुणितयं पलम् ॥ २५१ ॥
 सर्वमेतन्मसादाय मूस्मचूर्णं विधाय च ।
 निम्बुफलरसे प्रस्थसम्मिमे तपपरिदितेन ॥ २५२ ॥
 तत्र शङ्खस्य शकलं पलं वट्टी प्रताप्य तु ।
 यागग्निगोपयेत्तप्तं सर्वं त्रयति तपथा ॥ २५३ ॥
 नागरं त्रिपलं प्रारो मरिचञ्च पलद्वयम् ।
 पिप्पली पलमाना स्यारतलार्कं भृष्टदिङ्गुक्रम ॥ २५४ ॥
 प्रन्धिकं चित्रकञ्चाऽपि ययानी जगिष्कनथा ।
 जार्तफलं लयङ्गञ्च पृथक्पठयोन्मितम् ॥ २५५ ॥

रसो गन्धो विपश्चादपि द्रव्येषु मनःशिला ।
 पतानि कर्ममात्राणि सर्वं सञ्चर्य मिश्रयेत् ॥२५६॥
 शपावादेन चुकेण सन्नीय घटिकैश्चरेत् ।
 मापप्रमाणा सा धैर्यै वृहच्छङ्खयती स्मृता ॥ २५७ ॥
 सर्वाजीर्णप्रशमनी सर्वशूलनिवारिणी ।
 विमृच्यलसकादीनां सद्यो भवति नाशिनी ॥ २५८ ॥
 भा. प्र., र. सु., नि र., र. क. ल., र. न., यो. म., अग्नि-
 मान्ये ।

भाषा—शुद्ध, आक, इमली, अपामार्ग, केला, तिल, पलाश इनकेदार १-१ कप, पांचेनमक १-१ फल, सबी, यवहार, मुनामुद्गाया ३-३ फल लेकर सबकागरीकचूर्णकर १६ फल नीचुरेसमें धोलकर रखले और एकपल शहको गरमकरके इन्द्रवमें ७ बार घुसावे । फिर सोंठ ३ फल, मरिच २ फल, पीपल १ फल, भुनीहोंग, गठिन, चित्रक, अजवाइन, जीरा, जायफल, लस २-२ कप, शुद्धपारा, गन्धक, चटनाग, मुद्गाया और भैरसिल १-१ फल, चुक ८ फल लेकर पारेगन्धकरी बजलीसहित सबका बारीकचूर्णकर पूर्वद्रवमें मिलाय १-२ दिन घोटकर उदरदार गोलियां बनाकर रखाओ । इनमेंसे १-१ गोली उचितागुप्ताननेसायलेनेसे सघनकरके अजीर्ण, शूल, देहा और अलसप्रप्रतिरोधोंको यह नष्टकरती है ॥ ४१ ॥

४२ शह्वयती (एकादशी)

शुद्धगन्धरसो तुल्यो ह्योस्तुल्यं विपं भवेत् ।
 रामठं मरिचञ्चैच प्रत्येकं सवतुल्यकम् ॥ २५९ ॥
 प्रत्येकं पञ्चतुल्यानि कणाविश्वान्नयानि च ।
 शह्वयती स्वजिका पञ्चसर्वाण्यम्ले विभाषयेत् ॥२६०॥
 यावदत्यम्लमेतस्यात्ततो मात्रां प्रयोजयेत् ।
 सर्वाजीर्णहरी चैयं नाद्या शह्वयती शुभा ॥ २६१ ॥
 शूलशांतिप्रहर्णागुल्मोदायतैकहृद्धान् ।
 आनाहाष्टीलिके हन्ति कान्तिरीयविशयिनी ॥२६२॥
 र. क., अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध शरा और गन्धक १-१ भाग, शुद्धचटनाग २ भा., भुनीहोंग और मरिच ४-४ भाग, पीपल और सोंठ १२-१२ गा., शह्वयती और सबी ५-५ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीचुरेसमें ६-७ मात्राएं देकर बेलीशुद्धी-केसरार गोलियां बनाकर रखाओ । इनमेंसे १-१ गोली उचितागुप्ताननेसाय देनेसे सघनकरके अजीर्ण, शूल, बरामीर, मद्गी, शुष्म, उदावर्न, हृदयघ्नरुहना, आनाद, अजील प्रप्रति समस्तरोधोंको दूरकर कान्ति और अतिके बजती है ४२

४३ शह्वसुन्दररसः

रसगन्धकयो भागं द्वौ भागौ तालताम्रयोः ।
 लोहसर्पेरयोस्त्रिभिर्भागास्ताप्यास्तथा लयमा ॥ २६३ ॥
 पश्चादौ गगनं पिप्पल स्तैस्त्रिभिर् विभाषयेत् ।
 जम्बुविप्रककन्यानां विजयास्त्रिणयोः पूयक ॥२६४॥

वृद्धिकायाश्च तं गोलं कृत्वा जम्भाम्भसा क्षणम् ।
 मर्दितेन च शक्तेन सर्वतुल्येन घेद्येत् ॥ २६५ ॥
 भिराता मृष्टे लिप्त्वा पचेत्क्षणवणनके ।
 पट्ट्यामं स्वाह्वशीतनु समुद्वय विचूर्णयेत् ॥ २६६ ॥
 अर्कोशे सेन्धवं मृताक्षिं द्विगुणितं क्षिपेत् ।
 पुनर्जम्भाम्भसा भाव्यः सिद्धः स्याच्छतसुन्दरः २६७ ॥
 गुञ्जानयमितं शूलं ग्रहण्यशंसितिसारकम् ।
 जीर्णज्वररुचिष्ठीहकामश्यासक्षयादिषु ॥ २६८ ॥
 निजानुपानैः क्षौत्रेण पिप्पलीभिः प्रदापयेत् ।
 जार्तकफलेन माश्यादौ विमृच्यादौ प्रदापयेत् ॥२६९॥
 गर्भिण्याः शूलविष्टम्भज्वरेष्वतिमृत्तौ तथा ।
 ताम्बूलचह्नीपयेण पश्चाच्छागजलेन च ॥ २७० ॥
 र. क., शूलदितोये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, हरिताल और ताम्रभसम २-२ भाग, लोह और सार्भसम ३-३ भा., सुवर्णमाक्षिक १ गा., अश्रकभसम ५ भाग लेकर नीलरग-बजलीरर जंभीरी, चित्रक, धींजवार, भांग और धुरेकेरगोसे ३-३ मात्राएं देकर विजुआकेरसमें एकदिन मर्दनकर गोला बनावे । फिर जंभीरीकेरसमें मर्दनकियेहुए सारकीयदावरवजुनके इत्का लेपदेकर ३० कण्टमिठीदेकर गूखनेर ६ पररही लवणयममें अमिदे । स्वाह्वयतीलदोनेर निराकर १२ वां हिस्ता रोपानमक और पारेसेदना शुद्धचटनाग डालकर जंभीरी-केरसमें १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियां बनाकर रखाओ । इनमेंसे १-१ गोली उचितागुप्ताननेसायदेनेसे शूल, प्रह्वी, बवालीर, अतिमार, जीर्णज्वर, अक्षि, शीह, काय, भास और क्षयप्रप्रतिरोधोंको यह नष्टकरता है । सामान्यतः मधु और पीपलकेगायदेवे । मन्दाभि और देहमें जायफलेकेगाय तथा गर्भिणीकेशूल, विष्टम्भ, ज्वर और अति-सारमें पाननेमाप देकर धोनासा बर्रीकाम्पर पिलावे ॥ ४३ ॥

४४ शह्वामृतरसः

शुद्धं शसमं सुचूर्णममलं शोणाष्टकं सम्मूलं-
 तस्याहं रसभसमं तद्वयमिदं पूर्णवृत्तं युक्तिः ।
 मापाये मधुना विलोडितमर्षो यामाऽमृतापरपट्ट-
 व्याघ्रीभयायमनुप्रपतममृत्-शुभ्रामं मकामं क्षयम् ॥
 पतद्वा नितरां ज्यपतिमरणं मृत्पतिमार्गं यमिं ,
 दुर्पारां प्रह्वीं निहन्ति सक्लं मेदः प्रमेहं हृत्ता ॥ ७१ ॥
 यो. म., जरातिगारे ।

भाषा—शह्वयती २ कप, पारदभसम १ कप मिगकर रखाओ । इधमेंसे १-१ रतीकीमात्रा मधुकेगायदेर अर्गा, विन्नेय, पिप्पलाया और अष्टकेयाश्रकभसं बरन्वार निगनेसे क्षय, क्षय, क्षय, जरातिगार, मृत्पतिगार, क्षय, दुष्पान्पह्वी, मेरोदि और प्रमेह इनको यह हटने निहन्तरता है ॥ ४४ ॥

४५ शङ्खेश्वररसः

शङ्खस्य बलयाग्निष्कं चतुर्निष्कं वराटकम् ।
निष्कार्क्षं नीलतुल्यस्य सर्वतुल्यन्तु गन्धकम् ॥ २७२ ॥
गन्धतुल्यं मृतं नागं नागतुल्यं मृतं रसम् ।
ऋङ्गणं रसतुल्यं स्यान्मद्यं पाच्यं मृगाङ्कयत् ॥
गजयक्ष्महरः मौऽयं नाम्ना शङ्खेश्वरो रसः ॥ २७३ ॥
र. र. स., ना. वि., र. चं., नि. र., र. को., र. र., र. का., यो.
म., वै. चि., र. क. ल., क्षयरोगे ।

टि०—योगमहागौरे केवल दग्धशख मधुना लीढवा रात्रौ भर्जित विजया लेशा हृत्स्य शङ्खेश्वरनाम स्वापिनम्, फलमागे च दुर्बारा-
गपि ग्रहणीभ्येदित्बुक्तम् ।

भाषा—शङ्खनाभिभस्म ४ मासे, पीलीकौडीभस्म १ कर्प, तृतीया २ मासे, शुद्धगन्धक, नाग और पारदभस्म तथा छुहागा प्रत्येकसवकीबराबर लेकर सबका बारीकचूर्णकर बररी अथवा गायके दूधमें १-२ दिन नर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसके प्रथम मृगाङ्ककी तरह देकर उसीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको दूरकरताहै ॥

४६ शङ्खोदररसः (प्रथमः)

मृतभस्म बलिर्लहं विपं त्रिकटुकं समम् ।
पिप्प्ला निम्बुजतोयेन शङ्खे सर्वं चतुर्गुणे ॥ २७४ ॥
क्षिप्या मूर्दशुके लिप्या भाण्डे गजपुटे पचेत् ।
शीते प्राग्बह्निं क्षिप्या बल्लमात्रं प्रयोजयेत् ॥ २७५ ॥
जातीफलञ्च विजया मधुनाऽतिसृती ददेत् ।
ग्रहण्यां चित्रकाद्राम्बु विजया विश्वभेषजम् ॥ २७६ ॥
पृथग्देयं समधुना मरिचैश्च घृतान्वितम् ।
बहिमान्वाक्षये तद्भुदुरात्यनिलामये ॥
पथ्यं दध्ना च तत्रेण क्षीरश्राकेश्च संयुतम् ॥ २७७ ॥
नि. र., र. सु., टो., र. पा. अतिसारे ।

भाषा—पारदभस्म, शुद्धगन्धक, लोहभस्म, शुद्ध बठनाय और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर नीचूकेसमे १-२ दिन नर्दनकर सबसे चौगुने शङ्खमें भरकर बररीकेदूधमें पीसेहुए सुहागेसे सुंढबन्दकर शरावसम्पुटमें रख ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर पीबेयांशु शुद्धबठनागमिलाकर रखछोडे । इसमेंसे ३-३ रती जायफल, भांग और मधुकेसाय देनेसे यह अतिमारको दूर-
करताहै । चित्रक और अदररकेरस अथवा भांग और सोंठ, अथवा मधु, मरिच और पी इन अनुपानोंकेसाय औचित्यी देवकर देनेसे अतिसार, ग्रहणी, मन्दाभि, क्षय, उदर और वातरोग येसब नष्टहोतेहैं । दही, छाछ, दूध और शाकंकेसाय औचित्यी देसकर पथ्यदेवे ॥ ४६ ॥

४७ शङ्खोदररसः (द्वितीयः)

जयार्कधूर्तजैः मृतं गन्धं मद्यं पृथग्निद्रम् ।
भृत्वा शङ्खीदरं वेपथं पुंष्टे पोट्टिकाप्रमात् ॥ २७८ ॥

तथापि योजयेन्मान्ये शूले वा ग्रहणीगदे ।
विश्वेश्वर इति ख्याता वाताधिभ्यस्त्रजापहा ॥ २७९ ॥
रसगन्धकभागैकं शम्बूकाश्चाष्टमागिकाः ।
जयादिमर्दयेद्वायैः पुटेत्पूर्वकमेण च ॥ २८० ॥
शम्बूकस्य भवेत्स्थाने समुद्रशुक्तिरुत्तमा ।
कपर्दशङ्खयुक्तो वा रसोऽयं चतुराननः ॥ २८१ ॥
र. शि., अग्निमान्वाद्यो ।

टि०—रसगन्धवाय्या शङ्खोऽष्टगुणो योज्य. ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धकको भांग, आकन्देदूध और धतूरेकेसमें १-१ दिन दोनोंको अलग ३ नर्दनकर इनसे अट-
गुनी शङ्खनाभिर लेपदेकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लवणयन्त्रमें रखर एकदिनरातकी आंचदे । अथवा अठगुनेघोंपे अथवा मोतीकीसीप या कौहोंमें भरके आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोडे । इसमेंसे १-१ माशा उचितानुपानकेसाथ देनेसे मन्दाभि, शूल, ग्रहणी इनको यह नष्टकरताहै । विशेषर
वातप्रधानरोगोंको दूरकरताहै ॥ ४७ ॥

४८ शङ्खोदररसः (तृतीयः)

कम्पो भस्म चतुष्कर्पं कर्षकमहिफेनकम् ।
जातीफलं ऋङ्गञ्च कर्षकं प्रयोजयेत् ॥ २८२ ॥
चूर्णीकृत्य ततश्चाऽस्य गुञ्जामात्रां प्रयोजयेत् ।
नचनीतेन साकं हि रक्तातीसारहृत्परम् ॥ २८३ ॥
गुदाङ्गरोद्भवं रक्तमामरुक्तं नियच्छति ।
कृच्छ्रसाध्यमतीसारं विविधं शूलमुल्यणम् ॥ २८४ ॥
शमयत्यतिवेगेन रसः शङ्खोदराह्वयः ।
गुडविल्वकपायेण शूलं पकाशयोत्थितम् ॥
आमं पाचयते सद्यः सर्वातिसृत्तिक्रन्तनः ॥ २८५ ॥
रसायनं., यो. र., अतिसारे ।

भाषा—शङ्खभस्म ४ कर्प, अफीम, जायफल, गुनाछुहागा १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर १-१ रतीबीमात्रादेनेसे रक्ता-
तिसार, रक्षांश, आम, कृच्छ्रपाथ्य अतिसार, नानातरहका उत्कटशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । गुड और वेलेकेकादेसे पकापायकेरुक्तो नष्टकरताहै और आमको पचाताहै ॥ ४८ ॥

४९ शङ्खोदररसः (चतुर्थः)

शुद्धं मृतं गन्धकं वै समांशं
विप्रोमत्ते मर्दयेद्वासरेकम् ।
गोले कृत्वा शङ्खमध्ये निधाय
भाण्डे स्थायं मुद्रितव्यं प्रयत्नम् ॥ २८६ ॥
तस्याऽधस्तादध्यामं प्रकुर्या-
द्भि शीते कर्षमात्रं विपं हि ।
शृङ्गा घर्मे भावनाश्चाऽत्र तिष्ठो
दद्यात्तद्वत्कन्यकाया रसेन ॥ २८७ ॥
बल्लं योग्यं जीरकेणाऽथ भृङ्गणा
शीते युक्तं भक्षितञ्च ग्रहण्याम् ।

श्यासे शुद्धे चानिले श्लेष्मजे वा
कासेऽर्शाःसु विड्ग्रहे चातिसारे ॥ २८८ ॥

र. प्र सु, र. म मा., र. श, र., र. बो., र. क. यो, र पा, श्यासाऽधिकारे । र. (भा), रस स. एतयोर्ग्रहणीकपाट इति नाम ग्रहण्यधिकारे ।

ॐ—रमावतारे अभिदानादनन्तरं निजवारसेन परिप्लव्य मृदाद्य मांस विष नित्यञ्च विजयापूर्तमृषाथीकुट्टनातिविवामुस्ताजीरकादिव नस्तुरीहीरेरकथितिलो भावना प्रदत्ता । मुस्तावर्षेनाऽतिविषाम धुष्या वा दन्ता वा कुण्डेन वा निजयाधिभ्या अतिसारप्रतिविषै पुटपायै वां नियोज्य इति विशेषोदरस्यते । रसदीपिकायां रक्षामणिनाम्ना एक पाठोऽस्ति यथा—“सुतं सुगन्धं बदरीन्यायैवीरविनयैकदिनं ततश्च । आपूर्ये शङ्खं परिवेष्ट्य सम्यक् शुश्रूष्यन् भाण्डोदरमप्यतस्यम् ॥ पुष्टे त गोदृक्काभिधानं दधीत वातपुण्ये गेऽस्मिन् ॥ त्रैलोक्यरक्षा मणिरेश मृत शलाभिमान्येऽपि च योननीय । मरीचचूर्णेन घृतशुनेन विरचने जीरकसुगमिप्रम् ॥ इति ॥ अस्याप्यथैवाऽतर्भावं करणीय, भावनासु प्रदीतव्या ष्व तदनुष्ठाने क्षत्यभाव । प्रकृतपाठे शङ्खप्रमाण नास्ति तत्तु स्वबुद्ध्या कल्पनीयं चतुर्गुणं वा स्यादद्युगुणं वा षोडशगुणं वा नियोजनीयम् ॥ “सुतं गन्धं शुद्धशङ्खेन तुल्यं षषैषाम बहिष्पत्तुरनीरे । शुष्कं कृत्वा ताम्रचनेषु बद्धा चूर्णं कृत्वा भावयेदार्द्रक्रेण ॥ दत्त्वा सुतं चासृतं पदमागं लोहेपत्रे पाचयेदग्निनीरे । यामाकादं मोहिनीशिशुनी रैवंतं दद्यादागमारीचकुसुम् ॥ वीर्यं सुप्तिं दीपनं पाण्डुराणे बुयांशांश शङ्खाणीरसेन्द ॥” इति च पाठो रसदीपिकायां समागत । श्यु निडु विशेषविशेषाऽभावात् एकस्मिन्नेव योगेऽन्तर्भावनीयः । विविचपाट स्वार्थेन छात्राणां बुद्धिभ्यामोद्धारः ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धककी नीलवर्णकञ्जली-कर चित्रक और धतूरेकेसोसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय चतुर्गुणित शङ्खमेंभरके ताबे अथवा लोहेकेपत्र अथवा टीकरेसे सुद्वन्द्वदकर ६-७ कपइमिठीदेकर सुखनेपर नमक, बालका अथवा भस्मयज्ञमें रखकर ८ पहरकी तीक्ष्णअग्निदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर एककप शुद्धबलनाग डालकर घीकुवार केरसकी कड़ीधूपमें तीनभाषनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जीरा, भगरा अथवा मधुकेसाथ देनेसे प्रहणी, श्यास, वातशूल, कफशूल, कास, बवा-सीर, विड्ग्रह अथवा अतिसार इनसबको यह नष्टकरलाड़े ॥४९॥

५० शङ्खोदररसः (पञ्चमः)

रसगन्धाप्रकुनटीतालताप्यार्कहिङ्गुलम् ।
अयोद्धेमरजस्तुल्यं कलांशां शङ्खभस्मन् ॥ २८९ ॥
अयं शङ्खोदरो नास्त्रा वल्लुमात्रं नियोजयेत् ।
कणाक्षीद्रयुतश्चाऽयं सर्वैरोगनिवर्हण ॥ २९० ॥
र श, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रङ्गभस्म, शुद्धमैनसिल, हरिताल और सोनातापी, ताम्रभस्म, शुद्धशिगरिक, लोह और सुवर्णभस्म १-१ भाग, शङ्खभस्म १६ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकञ्जलीकर रखलोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती पीपल और मधुकसाथदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताई ॥ ५० ॥

५१ शङ्खोदररसः (षष्ठः)

शुद्धसूतस्य भागैके ताम्रभस्मांशकृद्भयम् ।
भागत्रयं गन्धकस्य मृतलोहांशकृद्भयम् ॥ २९१ ॥
चतुर्गुणं माक्षिकस्य श्योमभस्मांशपञ्चकम् ।
शिलैकांशं प्रमुह्नीयाद्भागौ द्वौ तालकस्य च ॥ २९२ ॥
विशुद्धखर्पेरांशांस्त्रीनस्तं मर्दय खल्वदे ।
निम्बवाट्टिकांशिधचूर्णविजयाकृत्कटयै ॥ २९३ ॥
पृथग्विभाजयेदैतेः शोषयेद्वातपे खरे ।
सर्वोपघादप्रगुणे शुद्धे शङ्खोदरे क्षिपेत् ॥ २९४ ॥
शङ्खोदरं शङ्खनाभिचूर्णेनान्येन लेपयेत् ।
आरण्योत्पलभस्मानि लोहितेष्टकचूर्णकम् ॥ २९५ ॥
सामुद्रलवणं मृत्स्ना तुल्यमेकत्र कारयेत् ।
दद्याच्च कर्पटैलैपांस्त्रीश्च शुष्कान् पृथक्पृथक् ॥ २९६ ॥
शुष्कं विदध्याल्लवणापूर्णभाण्डोदरे क्षिपेत् ।
निरुद्धय पुष्टके सर्वं स्थापयेच्चुल्लिकोपरि ॥ २९७ ॥
यामद्वयं देदेदग्निं ज्वालयेदथ मध्यमम् ।
यामद्वयं ततो मन्दं मन्दं यामद्वयं पुनः ॥ २९८ ॥
स्याद्गशीतं समुत्तार्य लघु नि सारयेन्मृदम् ।
सरसं मर्दयेच्छङ्खं कलाशयिपमिश्रितम् ॥ २९९ ॥
त्रिभांजयेत्त्रिककुटुना त्रिरव्वकरसेन च ।
शुष्कं सिद्धयति सूतोऽयं रसः शङ्खोदराभिध. ३००
शुद्धाद्यमितं दद्यात्पिपलीमधुसंयुतम् ।
कासे श्यासे क्षये जीर्णे चरे च मरिचैः सह ॥ ३०१ ॥
सधूतैस्त्वग्निमान्द्ये च विसृच्यामगरेषु च ।
शोके पाण्डवजाम्भ्रं यथास्थं पाण्डुरोगिणि ॥
ग्रहण्यर्शः सुवातेषु विजयाचूर्णसयुतम् ॥ ३०२ ॥
र श, र का, र बो, वा, ग्रहण्यतिसारयो । वाहृदेऽय पाठो प्रथता नीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, ताम्रभस्म २ भा, शुद्धगन्धक ३ भा., लोहभस्म २ भा, सुवर्णमाक्षिक ४ भा, अत्रङ्गभस्म ५ भा, शुद्धमैनसिल १ भा, हरितालभस्म अथवा रसमा-णिम्य २ भा, शुद्धखपरिया ३ भाग लेकर सबकीनीलवर्ण कञ्जलीकर नीनु, अदरख, चित्रक, धतूरा, भाग, धतूरा इनके स्वरसोसे कड़ीधूपमें १-१ भावना देकर गोलाबनाय अट्युने शङ्खमेंभरके शङ्खनाभिको बकरी अथवा गायकैदूधमें पीसकर सुद्वन्द्वदकर अहलीकण्ठोंकोराख, लालईट, सधुदतमक, लालमिी सबसमभागको पीस इससे ३ कपइमिठी सुलासुलाकरदे । अच्छीतरह सुखनेपर लवणयज्ञमें रखकर सुद्वन्द्वदकर चुल्हेपर च्वाय दोपहर मध्यमामि देकर दोपहर मन्द भाव देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मिठीको दूरकर १६ वां हिस्सा शुद्धखल नाग मिलाकर त्रिकटु और धतूरेकेसोसे ३-३ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुकसाथ देनेसे काठ, श्यास और क्षय तथा

मरिच और धीकेमाधदेनेसे जर्णिवर नष्टहोताहै । मन्दाग्नि, हैजा, आम, गर और शोथमें यथौचित्ति देखकर दवे । बकरी वमनकेसाधदेनेसे पाण्डुरोग, भागकेसाधदेनेसे ग्रहणी और वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ ५१ ॥

५२ शत्र्यादिलोहम्

शटीपुष्करमूलानां चूर्णमामलकस्य च ।
मधुना संयुतं लेह्यं चूर्णं वा काललोहजम् ॥ ३०३ ॥
च स., हिक्काशसयो ।

भाषा—कचूर, पोढरमूल, आमले, फोलादभूम वैसेव समभाग म्हर १-१ माशेकीमात्रा मधुकेसाधलेनेसे हिक्का और श्वास नष्टहोतेहैं ॥ ५२ ॥

५३ शतमूलादिलोहम्

शतमूलासिताधान्यनागकेसरचन्दने ।
त्रिकन्यतिलैः युक्तं लोहैः सर्गदापहम् ॥
वृष्णादाहज्वरच्छूर्दिस्तपित्तरं परम् ॥ ३०४ ॥
भे र., र च, प, र सु, र. सं, वै. क., रकपित्ताशयिहार ।

भाषा—शतावर, शकर, धनिया, नागकेसर, सफेदचन्दन, त्रिकला, त्रिकटु, त्रिमद, और तिल सबसमभागलेपर सखी वाराव लोहमन्मिलानर रखजोड़े। इसमेंसे ३ रतीसे ६ रतीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाध दनेसे प्यास, दाह, प्वर, वमन, रकपित्त, येसब नष्टहोतेहैं ॥ ५३ ॥

५४ शतावरीमण्डूरम् (प्रथमम्)

संशोध्य चूर्णितं कृत्वा मण्डूरस्य पलायकम् ।
शतावरीरूपस्याऽष्टौ दध्नश्च पयमस्तथा ॥ ३०५ ॥
पलान्यादाय चत्वारि तथा गन्धस्य सर्पिणः ।
विपचत्सर्वमेकस्यै यात्रपिण्डत्वमाप्नुयात् ॥ ३०६ ॥
सिद्धन्तु भक्षयमध्ये प्रान्ते भुक्तस्य चाग्रतः ।
वातात्मक पित्तमवं शूलञ्च परिणामजम् ॥ ३०७ ॥
निहन्त्येव हि योगोऽयं मण्डूरस्य न संशयः ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं यद्वा यद्भुजुतारसे ॥ ३०८ ॥
अथवा चोमयोरेव लोटकिट्टस्य सप्तधा ।
रसो गन्ध शुभ पाकं यति स्याद्यदि मडेनात् ॥
तत्रा पाकं विज्ञानीयाम्मण्डूरस्य न संशय ॥ ३०९ ॥

श या स, र का, नि र, वै, चि., भे र, यो म, उ मा, र क यो, र, ना वि., टो., रमामर, प, र. र, च द, यो र, म, नि, दुग्धापिष्कार ।

टि.—र क वा मण्डूरयोग इति नाम । रसरत्नको भैषज्य-रत्नावलीयादौ शतौषधानि “अतु क्वा रज क्वा र । त्रिन्मुलक-लज्जीवाप्यथादिनामम्” इत्यधिक पाठो हरवने । अग्नित्र व्यस्य प्रवेशय दने स रमभावाद् इत्येकेन एव योग कर्त्तव्य ।

भाषा—शुद्धमण्डूर, शतावरीका स्वरुप, शरीकाशानी और दूध ८-८ पल, गायत्री धी ४ पल देकर इन्हें पकावे । घन तिपार

होनेपर चिकनेवर्तनमें रखजोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाध भोजनसे पूर्व, मध्य अथवा अन्तमें लेनेसे वातज, पित्तज और परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै । इसयोगमें मण्डूरको गायकेदूध अथवा शतावरीकेरस अथवा क्रमश दोनोंमें युक्तकर शुद्धकरे । कोईकोई नागरमोया, पीपल, जीरा, धनिया, हरे, तज और इलायचीका चूर्ण ४-४ माशे प्रवेशमें डालतेहैं ॥ ५४ ॥

५५ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्) २

शतावरीरसप्रस्ये प्रस्ये च सुरभीजले ।
अजाया. पयसः प्रस्ये प्रस्ये धात्रीरसस्य च ॥ ३१० ॥
लोहकिट्टपलान्यष्टौ शर्करापलपोडश ।
दत्त्वा चाष्टपलं सर्पिः पचेन्मुद्गग्निना भिपक् ॥ ३११ ॥
मिद्धशीते घनीभूते चूर्णानीमानि दापयेत् ।
यवानां त्रिकला व्योषं पिप्पली गजपिप्पली ॥ ३१२ ॥
द्विजोरकघनानाञ्च शृङ्गस्थान्यश्वसमानि च ।
मधुनस्त्रिपलञ्चाऽन सिद्धे शीते प्रदापयेत् ॥ ३१३ ॥
भक्षेदग्निपलापेशी भक्तस्यादौ विचक्षणः ।
शूलं सर्वोद्भवं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३१४ ॥
रकपित्ताद्गदाहञ्च साण्डपित्तं वामन्तथा ।
हृच्छूलं पाथशूलञ्च पुश्चियस्तिगुटोद्भवम् ॥ ३१५ ॥
कामं श्वासं तथा शोषं प्रहृणोतीपयनाशनम् ।
यकृतलीहोदरं गुल्मं राजयश्मज्वरापहम् ॥ ३१६ ॥
विष्टमनीयदौर्गल्यमग्निमान्यं तथैव च ।
दुर्नामपाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकरम् ॥ ३१७ ॥
सर्वाश्च नाशयत्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ।
दुग्धे निर्वापणं कार्यं मण्डूरस्य गवां जले ॥
ससन्तारोपारं वा मूढा निर्मलतां प्रजेत ॥ ३१८ ॥

र. र, भे र, र का, शूले । भे. र, र का एतयो शर्करालोहमिडिनाम ।

भाषा—शतावरीकारस, गोमूत्र, बकरीकादूध, आवलेहा-रस १-१ प्रस्य, मण्डूरभूम ८ पल, शकर २० पल, धी ८ पल लेकर मन्दाग्निमें पकावे । घनेवारहोनेपर उत्तारकर टा-करके अचानद, त्रिकला, त्रिकटु, पीपल, गन्धीपल, स्याद संफेदनीर, नागरमोया वैसेव १-१ कर्ण, मधु ३ पल मिलाकर चिकनेवर्तनमें रखजोड़े । सातदिनगीतनेकेबाद इसमेंसे ३ माशेतक मोतनरेपड़िले रोगोचितानुपानकेसाध देनेसे त्रिरी पचशूल, पक्तिशूल, रकपित्त, अहदाह, अम्पित्त, वमन, हृदयशूल, पाथशूल, पेठ, मूत्राशय और गुटोद्भवशूल, काम, श्वास, धातुशोष, ग्रहणी, यकृत, मीहा, गुल्म, राजदरद, ज्वर, विष्टम, शुद्धकी दुर्गला, मन्दाग्नि, बवाली, पाण्डु, कामला और हलीमक इनसबको यह शतपल नष्टकरताहै जैसे सूर्य कणधकारको । गायकेदूध अथवा मूत्रमें ७ वा ८ बार मुमाने-देनेमें मण्डूर शुद्धहोजाताहै ॥ ५५ ॥

५६ शतावरीमण्डूरम् (शर्करामण्डूरम्)

विधिवच्चन्द्रमण्डूरचूर्णं प्रस्थसमन्वितम् ।
 द्वौ प्रस्थौ शर्करायाश्च पट्ट पलानि घृतात्तथा ॥३१९॥
 वर्षाश्च स्वरसाधेन्तु घात्रीरसतुलाधिकम् ।
 एकीकृत्य पचेदेतद्यावत्तन्तुली भवेत् ॥ ३२० ॥
 त्रिफलायाः पृथक्चूर्णं कुडञ्च तत्र निक्षिपेत् ।
 व्योषं त्रिलवणं कुष्ठं तुम्बुरुणि च दीप्यकम् ॥३२१॥
 द्विजीरकं विडङ्गानि चातुर्जातक्रमेव च ।
 एषां चूर्णांकृतानाञ्च भागं पलमितं पृथक् ॥ ३२२ ॥
 पलान्यष्टौ शिवाचूर्णात्कुडञ्चयथाप्रजात ।
 पलं पलं कणामूलं चय्यचित्रकमूलतः ॥ ३२३ ॥
 उत्तार्य शीते माक्षीकात्तत्त्रिपलसम्मितम् ।
 खादेदग्निबलापेक्षी भोजनादी विचक्षणः ॥
 शूलं सर्वोद्भवं हन्ति पक्तिशूलं विशेषतः ॥ ३२४ ॥
 र. का, शूलाधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वकशोधनक्रियेणैव मण्डूरवाचूर्णं १ प्रस्थ, शर्करा २ प्रस्थ, गोघृत ६ पल, शतावरीका स्वरस १६ पल, पके आबलोकास्वरस ५० पल लेकर सबकी दोतारी चाशनी तैयारहोनेपर उतारकर हों, बहेड़ा, आबला ४-४ पल, त्रिकटु, तीनोंनमक, कुष्ठ, धनिया, दोनोतरहेके तुम्बुल (चिरफळ म०), अजवाइन, दोनोतीरे, विडङ्ग, चातुर्जात १-१ पल, दूँ ८ पल, यक्षशार ४ पल, पिपलामूल, अग्य और चित्रकमूल १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर चाशनीमें मिलाकर रख । एकदम उदाहोनेपर ३ पल मधु मिलाकर चिकनेवर्तनमें रखछोड़े । इसमेंसे ६ माशेसे १ तोलेक मात्रा रोग और अग्निकायल देखकर भोजनके आदि, मध्य अथवा अन्तमेंदेनेसे त्रिदोषजशूल और खासकर परिणामशूल नश्वरहेते ॥ ५६ ॥

५७ शतावरीमोदकः

शतावरीं श्वदंष्ट्रा च यला चातिबला तथा ।
 मर्कटीशुरवीजं च विदारीकरुणं रजः ॥ ३२५ ॥
 एतानि समभागानि पलिङ्गानि विचूर्णयेत् ।
 चूर्णाञ्चतुर्गुणं देयं शैलीभयविजयारजः ॥ ३२६ ॥
 सर्वमैकीकृतं यावत्तदद्वं माहिषं पयः ।
 तावन्मात्रेण दातव्यं शतावरी रसं तथा ॥ ३२७ ॥
 विदार्यां स्वरसप्रस्थ सितापलशतं न्यसेत् ।
 गोलायित्वा सिता दत्त्वा पात्रे साध्रमये दृढे ॥ ३२८ ॥
 पचेत्पाकविधिज्ञो हि मोदकः परमा हितः ।
 ज्यूपणं त्रिफला शृङ्गी त्रिजातं सैन्धवं शटी ॥३२९॥
 धान्यकं बालकं मुस्तं द्विजीरं कुन्दुर मुंरा ।
 काकोली क्षीरकाकाली द्राक्षा तुङ्गा मृगामण्डजम् ॥
 जातीकोपफलेमासी तालाङ्कुरकशेके ।
 शतपुष्पा चवी दाह ग्रन्थिकं सलबङ्गरुम् ॥ ३३१ ॥
 कुष्ठं यवानिका चात्मगुसा कट्फलमेधिके ।
 खरुरानन्तमूले च तालीसं मयुकृतया ॥ ३३२ ॥

टुणञ्च विचूर्णयाथ प्रत्येकं कोलसम्मितम् ।
 चूर्णाद्वै शोधितं गन्धं शुद्धं पादांशपारदम् ॥ ३३३ ॥
 कज्जलीकृत्य दत्त्वान्तलंडयेत्तिसुगन्धितम् ।
 यथाशक्त्या मोदकश्च कर्पूरेणाधियासयेत् ॥३३४ ॥
 तदुद्धृत्य स्निग्धभाण्डे स्थापयेद्य भिषग्वरः ।
 शिवं सम्पूज्य सगणं धन्वन्तरिमुनिं तथा ॥ ३३५ ॥
 कोलप्रमाणं कर्तव्यं क्षीरञ्चानु पिबेद्यरः ।
 प्रात भोजनकाले वा सायङ्कालेऽपि भक्षयेत् ॥३३६॥
 प्रमदाशतश्च भजते न च शुक्लक्षयं भवेत् ।
 नातः परतरं किञ्चिद्विद्यते वाजिकर्मसु ॥
 शतावरीमोदकश्च वासुदेवेन निर्मितम् ॥ ३३७ ॥
 घ., र. र., वाजीकरण्याधिकारे ।

भाषा—दोनोतरहनीशतावर, गोघृत, खरौटी गगेरन, केवाच और तालमखानेकेबीज, विदारीकरुद १-१ पल लेकर बारीकचूर्णकर सबसे चोशुना भागमाचूर्ण, इनसबसे आधा भेलका पी और शतावरकास, विदारीकास्वरस १ प्रस्थ, शर्करा १०० पल लेकर ताबेधेपात्रमें सबकी चाशनी बनावे । फिर त्रिकटु, त्रिफला, काकडासीणी, त्रिजात, सैनामयक, कचूर, धनिया, सुगन्धशाल, नागरमोथा, दोनोतीरे, कुंदरु, सुरमशी, काकोली, क्षीरकाकोली, द्राक्ष, बसलोचन, बस्तूरी, जानिनी, जायफल, जटामासी, ताववाली, कसेरु, सोंफ, चष्य, देव-दाह, गठिन, लौंग, कुष्ठ, अजवाइन, केवाच, वायफल, मेथी, छुहारा, अनन्तमूल, तालीसपत्र, मुलहठी भुनामुहागा येसब ८-८ मासे, शुद्धगन्धच सबसे आधी और शुद्धपारा चौथाभाग लेकर नीलवर्णःकरुलीकर सबको ऊपरकी चाशनीमें मिलाकर तन, पत्रज और इलायचीकेचूर्णका यथोचित प्रक्षेप देकर अमिका बलाबल देखकर मोदक बनाय कर्पूरेसे अधिवासितकर चिकने वर्तनमें रखछोड़े । फिर गणसहितशिवजी और धन्वन्तरिभगवानका पूजनकर आपतेलोचीमात्रासेशुकररे और धीरे २ बडाता जाय, ऊपरसेदूधपीवे । सुबह, भोजनके समय अथवा सायंकाल प्रकृतिकेउत्पार समयका निर्धारणकर मात्राखावे । इसके सेवनसे बहुतरसीखियोकेसाथ सम्भोगकरनेपरभी शुक्रराक्षय नहीं होता ॥

५८ शतावरीलोहम्

कान्तचूर्णं शतावरीभाषितं भृङ्गराजेन
 मध्वाज्यं त्रिशती भवेत् ॥ ३३८ ॥

आ पु, रसायने ।

भाषा—कान्तलोहभरममें यथाशक्त्य शतावरीकेरसकी भावनाए देकर भंगरेकेरस, मधु और पूतनेसाथ ३ रतीसे १ माशेतककीमात्रा लेनेसे और पष्यपालन करनेसे ३०० वर्ष-तक जीसकाहै ॥ ५८ ॥

५९ शम्भूकभस्मयोगः

शम्भूकजं भस्मपीतं जलेनाग्नेन तत्क्षणात् ।
 पक्तिजं विनिहन्त्याशु शूलं विष्णुत्रियासुरात् ॥३३९॥
 वै वि, २ मा, ४ द, यो. र, नि र, यो त शूल

भाषा—३ मासे षोषकीभस्मको गरमजलकेसाथ लेनेसे यह पक्तिशूलको इसतरहनचक्रताहै जैसे विष्णुभगवान् असुरोंका नाशकरतेहै ॥ ५९ ॥

६० शम्भूकरसः (प्रथमः)

अपिधानञ्च शम्भूकं प्रक्षाल्य सलिलैः शुभैः ।
रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं लेपितं तथा ॥ ३४० ॥
पण्मापमानमितया द्विमापेण च हिङ्गुना ।
ततो द्विपञ्चमूलीयसूक्ष्मकाण्डैः सच्चिद्रुः ॥ ३४१ ॥
पिघाय निखिलां तान्तु पूरयेत्कोद्रुचोद्भवैः ।
पलालैः परितो मूपां पुटयेत्प्रोमयाग्निना ॥ ३४२ ॥
सूक्ष्मचूर्णं ततः कृत्वा गुटिकां सक्कुमध्यगा ।
द्विमापमानगिलितां शूलं जयति दासणम् ॥ ३४३ ॥
अतिसारं महाघोरं प्रहणीञ्जयति ध्रुवम् ।
कुर्पाञ्च वह्निमन्त्युत्रं शम्भूकाख्यो महारसः ॥ ३४४ ॥
टो., ग्रहण्यधिकारे ।

भाषा—जीवरहितषोषको गरमपानीसे धोकर ६ मासे शुद्धपारे और गन्धककीचक्रलीको पानीमें पीसकर चारोंतरफ लेखकरदे । मूरानेपर २ मासे हाँगकालेपदेकर दशमूल और चित्रकके बारीक टुकड़ोंमें बन्दकर कोदोकीपासमें लपेटकर डोरीसे अच्छीतरह बांधकर गेद्वेसदहा बनादे । फिर २-३ कपड़िमिठी लगाकर सुखनेपर गजपुटकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर दशमूल और चित्रककेद्वायमे १-२ दिन घोटकर २-२ मासेकी गोलियां बनाकर रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली सतृकेभीतर रपकर निगलनेसे भयङ्करशूल, अतिसार और सङ्ग्रहणी इनको नष्टकर अग्निमें प्रदीप्तकरताहै ॥ ६० ॥

६१ शम्भूकरसः (द्वितीयः)

दग्ध्वा शम्भूकासिन्धुत्र्यं क्षौद्रेण सह लेहयेत् ।
निष्केकेण जयत्याशु प्रहणीञ्जातिदुःसहाम् ॥ ३४५ ॥
पानं व्यवचयं व्यायाममीर्ष्याञ्च गुरुभोजनम् ।
वेगसंधारणं वर्ज्यं ब्रह्मणीदोषिणा सदा ॥ ३४६ ॥
टो., र. सं., वृ. यो. त. र. चं., ग्रहणीरोगे ।

भाषा—षोषकीभस्म और सेधानमक समभागलेकर ४-४ मासेकी मात्रा मधुकेसाथ लेनेसे दुःसह सङ्ग्रहणी नष्टहोतीहै । मद्यपान, व्यवाय, कसरत, ईर्ष्या, भारीभोजन, वेगसंधारण इनसबका परित्यागकरे ॥ ६१ ॥

६२ शम्भूकादिवटी (प्रथमा)

पलानि त्रीणि शम्भूकाल्लोहचूर्णात्पलद्वयम् ।
रसाञ्जनात्पलत्रैकं लोहकिट्टात्पुनः पलम् ॥ ३४७ ॥
सर्वैः समां शर्कराञ्च मधुना च परिप्लुताम् ।
सर्वमेतत्समाहृत्य मोदकान्कारयेन्नृपकम् ॥ ३४८ ॥
भक्षयेत्तान् प्रयत्नेन शूलं गुल्मे हृदामये ।
विशेषतः पक्तिशूले शोफे पाण्डुरदरे भ्रमे ॥ ३४९ ॥

दुर्नासि कासे रुद्धे च प्रमेहादमरिवृद्धिषु ।

अग्निमान्ये स्मृतिप्रेशे पीनसाद्वाचभेदके ॥ ३५० ॥

ग. नि., यो. म., टो., वृ. यो. त., लो. प., ना. वि., शूलाधिकारे ।
टि०—यो. म., ये., वृ. यो. त., ना. वि. एषु ग्रन्थेषु शम्भूकादि-
मोदक इतिनाम । नारायणविलासे आमवाताधिकारः । लो. प. शम्भू-
कायस इतिनाम ।

भाषा—षोषकीभस्म २ पल, लोहभस्म २ पल, रसौत और मण्डूरभस्म १-१ पल लेकर सबकीबराबर शकर मिलाय मधुमें मोदक अथवा अवलेह बनाकर रखओहे । इसमेंसे ३-३ मासे समय अथवा रोगोचिंतानुपानकेमायदेनेसे शूल, शूल, द्रोण, पक्तिशूल, मूजन पाण्डु, उदर, भ्रम, यवासीर, कास, मूत्ररुद्ध, प्रमेह, पयरी, समस्त अण्डशुद्धि, मन्दाग्नि, स्थिति-
श्रेत, पीनत और अर्षावभेदक येसब नष्टहोतेहै ॥ ६२ ॥

६३ शम्भूकादिवटी (द्वितीया)

शम्भूकं ज्यूपणं लोहं पञ्चैव लवणानि च ।
समांशगुटिकां कृत्वा कलम्भूकरसेन च ॥ ३५१ ॥
प्रातर्भाजनकाले वा योज्यं नास्त्यत्र संशयः ।

हन्ति शूलं हि तस्यैव पक्तिञ्च वाय्पक्तिञ्चम् ॥ ३५२ ॥
रससागर, भं. र., वै. चि., ग. नि., वृ. मा., च. द., नि.
र., यो. र., चि. सा., शूलाधिकारे ।

टि०—कुनचित्लोह न दृश्ये । विक्रिसासारे यूपणस्थाने ऊष्ण-
मिति पाठो दृश्ये तथा च लोहस्याऽभावः ।

भाषा—षोषकीभस्म, निकट, लोह पाचौनमक सबसम-
भाग लेकर नाडीशाककेरसे गोलियां बनाकर रपओहे । इनमेंसे
१-१ गोली भोजनवेसमय अथवा प्रातःकालदेनेसे पक्तिशूल
अथवा साधारणशूलको यह नष्टकरतीहै ॥ ६३ ॥

६४ शम्भूरसः

शुद्धसूतस्य भागेकं कर्पेकञ्च वलेस्तथा ।
अन्नरस्य च कर्पे स्यात्तथैव शङ्खभस्मनः ॥ ३५३ ॥
विपसिन्धुजगत्कोलाः प्रत्येकं शाणसम्मिताः ।
एकत्र मर्दयेत्कुष्कं सर्वं कज्जलसन्निभम् ॥ ३५४ ॥
भुजङ्गवह्नीपर्णेन गुञ्जेको वह्निमान्यजित् ।
अरुचौ वह्निमान्ये च प्रयोक्तव्यो रसोत्तमः ॥
अयं शम्भुरिति रयातो वह्निसन्दीपनः परः ॥ ३५५ ॥
र. वा., अग्निमान्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक और शङ्खभस्म
१-१ कर्पे, शुद्धबलनाग, सेधानमक, सौंठ और बेर ४-४ मासे
लेकर बारीकचूर्णकर पाँचगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय
पानके रसे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर
रखओहे । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा समयोचिंतानुपानके
साथदेनेसे मन्दाग्नि और अहचिको यह नष्टकरताहै ॥ ६४ ॥

६५ शरभेश्वररसः

सुशुद्धं पारदं गन्धं वत्सनाभञ्च हिङ्गुलम् ।
टङ्गुञ्च समं मयं चित्रमूलकपायकम् ॥ ३५६ ॥

संशोष्य बालुकायन्त्रे द्वियामं वज्रमूपके ।
समुद्भूत्य चिचूर्णयाऽथ देयत्रिकटुकद्रव्यैः ॥ ३५७ ॥
वातपित्तरूफैश्चोषं ज्वरं हरति तत्क्षणात् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु रसोऽयं शरभेश्वरः ॥ ३५८ ॥
वै चि , रसायनस , सन्निपात ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बलनाग, शिगरिक और मुद्गाया समभागलेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर चित्रकजीजकै-
काथसे एकदिन मर्दनकर वज्रमूयामें रख ६-७ कपड़मिठी देकर
२ पहरकी बालुकायन्त्रकी अमिदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकाल
कर त्रिकटुकेरसनेसाथ एकरसोसे दोरसोतक देनेसे त्रिदोषजज्वर
और सन्निपात तत्क्षणनष्टहोताहै ॥ ६५ ॥

६६ शर्करालोहम् (प्रथमम्)

स्तितातिक्ताबलायष्टीत्रिफलारजनीयुगैः ।
लोहं लिह्यात्समभाज्यं हलीमरुनिवृत्तये ॥ ३५९ ॥
यो. म , कामलायाम् ।

भाषा—शकर, कुटकी, बला, सुलहठी, त्रिफला, हल्दी
और दाहहल्दी समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर लोह
भस्म मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा कुटकी
बगैरहेक्वायसे २-४ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मौचित्ती देकर २ गुधु
और धीनेसाथदेनेसे हलोमक नष्टहोताहै ॥ ६६ ॥

६७ शर्करालोहम् (योगद्वयम्) २

निम्बं धानी शर्करालोहचूर्णं
ह्रींष्ट्रेणाक्तं गन्धकं वाऽभयाञ्च ॥ ३६० ॥

र दी , अम्लपित्ते ।

भाषा—नीमकीछाल, आवले, शकर और लोहभस्म सम
भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा उचितातुपानके
साथलेनेसे अम्लपित्त नष्टहोताहै । गन्धक अथवा हर मधुकेसाथ
लेनेसेभी अम्लपित्त नष्टहोताहै ॥ ६७ ॥

६८ शर्करालोहम् (तृतीयम्)

त्रिफलायास्ततो धान्याभूर्णं वा काललोहजम् ।
शर्कराचूर्णसंयुक्तं सर्वशूलेषु लेहयेत् ॥ ३६१ ॥
र चि , र र , घ , र स , र मु , शूले ।

भाषा—त्रिफला, आवले और शकर समभागलेकर सबकी
बराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा
उचितातुपानकेसाथलेनेसे सबप्रकारके शूल नष्टहोतेहै ॥ ६८ ॥

६९ शालभादिवटी (अर्कादिगुटिका)

रचिरालभवेश्मगोधापुरीपकुडुमकुसुम्भहरिताले ।
समन.शिलेः सरुर्कटमासाकरसे. कृता गुटिका ३६२
वृश्चिकदंशस्थाने सवृद्धपि सश्लेषणं विधाययादी ।
अपरस्याङ्गे क्षिप्ता तद्विषसङ्ग्रामणी भवति ॥ ३६३ ॥
रा मा , वृश्चिकविषे ।

भाषा—आकपरकोटिरी और छिपकलीकीविद्या, केशर,
कुसुम्भके फूल, हरिताल, मैनसिल सबसमभागलेकर बारीकचूर्ण-
कर कैंकड़ेकेमासस और आककेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर
छोटीछोटी गोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इस
गोलीको पहिले बिन्दूकोट्टेहुएस्थानमें एकबार हुवाकर उसीसमय
दूसरे आदमीके अङ्गमें स्पर्शकरानेसे बिच्छूका जहर चटजाताहै ।
यह साक्षाल्परीक्षाकरनेकेलिये बतायागयाहै । फिरसे इसगोलीको
आककेदूधबगैरहेकेसाथ पित्तकर वृश्चिकादिकीटोंके ढकपर लगा-
नेसे समस्तकीटविष नष्टहोतेहै ॥ ६९ ॥

७० शशाङ्करसः

जारयेदिष्टिकायन्त्रे शुद्धसूते द्विधा बलिम् ।
उद्धृत्य तुल्यगन्धेन जम्बीरं मर्दयेद्दिनम् ॥ ३६४ ॥
भृङ्गवाकुचिश्चिण्टीनामपामार्गाऽपरजिता- ।
सर्पाक्षीणां द्रव्यै र्मर्द्यं प्रतिद्रावं दिन दिनम् ॥ ३६५ ॥
तद्गोलं बन्धयेद्वस्त्रे मृत्क्षितं स्वेदयेत्पु ।
द्वियामं बालुकायन्त्रे स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥
अष्टगुञ्जामितं खादेच्छशाङ्कः श्वेतवृष्टजित् ॥ ३६६ ॥
र. का , कुष्ठाऽधिकारै ।

भाषा—शुद्धपारेको इष्टिकायन्त्रमें रख द्विगुण गन्धक जारण-
करे । फिर द्विगुणगन्धकेसाथ नीलवर्णकमलीकर जमीरी,
भंगरा, वाकुची, नीलकटुसैया, अपामार्ग, काळीकोयल,
अन्धाहूली इनप्रत्येककरनेसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय
४ तह मलमलकेकपड़ेमें लपेटकर ३-४ कपड़मिठी लगाकर
सुखनेपर बालुकायन्त्रमें रख दोपहर मध्यमानिनेसे स्वेदन्करे ।
स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ८-८ रती
उचितातुपानकेसाथ लेनेसे यह श्वेतकुष्ठको नष्टकरताहै ॥ ७० ॥

७१ शशिमरसः

वृद्धिन्निष्ठनाङ्गिर्जैमर्द्यं चङ्गेशाय शशिम्रम ।
तन्मापो मधुयुद्धमेहोऽप्यतिमूत्रे रसोनयुक् ॥ ३६७ ॥
रसायनस , मेहे ।

भाषा—शुद्धपारा, बत और लोहभस्म समभागलेकर विधारा
और गिलोयकीजकेरसोसे १-१ दिन मर्दनकर रखछोड़े ।
इसमेंसे १-१ माशा मधुकेसाथदेनेसे प्रमेह और लहसतनकेसाथ-
देनेसे बहुसून नष्टहोताहै ॥ ७१ ॥

७२ शशिशेखररसः (प्रथम)

रसगन्वापह्रमेमानि मौक्तिकं विदुर्म तथा ।
कन्याङ्गिर्मर्दयेद्वस्त्रे ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ ३६८ ॥
सर्वान् ह्योमगदान्दन्ति ह्यशीतिं भारतोऽप्यान् ।
पैत्तिकाभिखिलांश्चाऽपि श्लेष्मिकानव्ययं ध्रुवम् ३६९
भै. र , क्लोमरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अषक, सुवर्ण, मोती
प्रवाल इनकीभस्में सब समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर एक-

दिन धौकुवारकेरसरी भावनादेकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ या २ गोली रोगोचितानुपानके-साथ देनेसे रामस्त झीमरोग, अस्ती वातरोग, रामस्त पित तथा कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ७२ ॥

७३ शशिशेखररसः (द्वितीयः)

लोहमन्त्रश्च सिन्दूरं मर्दयेत्कन्यकाभ्युना ।

अस्य रक्तिमितं दद्यादन्त्ररोगनिवृत्तये ॥ ३७० ॥

शे. र. , अत्ररीगे ।

भाषा—लोह और अन्नकमस, रससिन्दूर सब समभाग लेकर धौकुवारकेरससे एकदिनमर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया-बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली धौकुवारकेरसकेसाथदेनेसे यह अत्ररीगोंको नष्टकरताहै ॥ ७३ ॥

७४ शाखाकामलायोगत्रयम्

शाखाकामलिनां वदन्ति मुनयश्चेमां यतस्संस्थितां,
शाखास्त्वेव शिलाजतु प्रतिदिनं पेयं सङ्गम्यूचकम् ।
मण्डूरं मधुना युतञ्च नियतं सेव्यञ्च लोहं परं,
निर्षेकं खलु कुम्भकामलागदे युक्तं तु योगत्रयम् ३७१ ।
चि. क. , कामलायाम् ।

भाषा—रोगीका बलाबलदेकर शुद्धशिलाजीत ३ माशेसे १ तोलेक गोमूत्रकेसाथलेवे । अथवा शुद्धमण्डूर १ माशेसे ३ माशेक लेकर गोमूत्रका सेवनकरे । अथवा लोहमन्त्र १ रत्तीसे ३ रत्तीक मधुकेसाथलेत्र गोमूत्रपिनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥

७५ शाम्भवीरसः

शुद्धपारदगन्धौ द्वौ टङ्गुणं नागराऽभया ।
एण्डदन्तिवोजानि गौरीपाषाणकं समम् ॥ ३७२ ॥
मर्चं जम्बीरनीरेण रत्नमभये दिनत्रयम् ।
शरापे दिनमरुञ्च पुटे कुङ्कुटके पचेत् ॥ ३७३ ॥
शान्नाशीतलमुद्दृत्य मद्यैर्मण्डूरतेलेक ।
द्वान्दो मरिचं दत्त्वा मरिचाऽर्द्धं विपं क्षिपेत् ॥ ३७४ ॥
गुञ्जामानं प्रदातव्यं सर्वज्वरहरं परम् ।
दध्यन्नं दापयेत्पथ्यं तुगार्थं नारिकेलजम् ॥
पार्यतीनिर्मितः पूत्रैर्नाम्नाऽयं शाम्भवीरसः ॥ ३७५ ॥

वै चि , र. क. यो , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और सुहागा, सोठ, हरे, एण्ड वीज, शुद्धजमालगोटा और सोमल समभाग लेकर नीलवर्णकज-लोकर जमीरीकेरससे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शारावसम्पुटमें रख कुङ्कुटपुटकी आचदे । स्वादशीतल होनेपर निकालकर एण्डतेलेमें एकदिनमर्दनकर दशवा हिस्सा मरिच और मरिचसे आधा शुद्ध बलनाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । भूखलगनेपर दही, भात खानेकोदे । अधिरूप्यास लगनेपर नारियलफाजलेदे ॥ ७५ ॥

७६ शारभेन्द्ररसः

सूतं गन्धकगुल्मभस्म द्रव्यं तालं शिला टङ्गुणं,
माक्षीकं त्रिफला विपं त्रिकटुकं नेपालतुल्यं समम् ।
निर्गुण्डया रसमर्दितं मुनिदिनं गुञ्जामाणा घटी,
सर्वव्याधिहरं त्रिदोषहरणं सर्वज्वरे सत्वरम् ॥ ३७६ ॥

र. क. यो., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, हरिताल, भैरसिल, सुहागा और सोनामाखी, त्रिफला, शुद्ध-यज्जाग, त्रिकटु, शुद्धजमालगोटा, तुल्यभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर ७ दिन निर्गुण्डीकेरससे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत-द्वेगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै । त्रिदोषको शीघ्रप्राप्तमें लानर समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ७६ ॥

७७ शारिवादिलोहम्

शारिवा नीलिनी रास्ना शुद्धयेला च चिन्कः ।
मानसूरणदाहिन्यस्त्रिद्वृद्धातकाऽभयाः ॥ ३७७ ॥
एभि युतमयो हन्ति प्रमेहपिडिका दश ।
घातरक्त पडशांसि त्वग्मदाभिरितलानपि ॥ ३७८ ॥

शे र , प्रमेहपिडिकायाम् ।

भाषा—अनन्तमूल, नील, रास्ना, गिलोय, इलायची, चिन्कमूल, मानसूर, सूरप, कात्यायना, मिसोत, शुद्धशिलावा और हरे सबभागलेकर बारीकचूनेपर सबकीबराबर लोहभस्म मिलाकर रखछोड़े । अथवा अनन्तमूल बगैरहके स्वरास अथवा बायोसे १-१ भावना देकर १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनन्तमूलबगैरहकेकाय अथवा समरोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे १० प्रकारको प्रमेहपिडिका, घात-रक्त, ६ प्रकारकेजवासीर और त्वचाविरोग नष्टहोतेहै ॥ ७७ ॥

७८ शिरोरोगहररसः (प्रथमः)

रसं गन्धकमप्रञ्च लोहं कर्पमितं पृथक् ।
स्वर्णं शाणमितञ्चैव दात्वाऽप्यञ्च विपं तथा ॥ ३७९ ॥
भृङ्गराजाम्भसा सभ्यइमर्दयित्वा विचक्षणः ।
रक्तिकाधेमिताः कुर्याद्द्विदोषण्डांशुशोषिताः ॥ ३८० ॥
शिरोरोगहरो नाम रसोऽयं हरनिर्मितः ।
हरेत्सर्वायं शिरोरोगान्विरामे यदि खेवितः ॥ ३८१ ॥

आ वि , शिरोरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नक और लोहभस्म १-१ कर्प, स्वर्णभस्म और शुद्धदातचिकना ४-४ माशे लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर अगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर आधीआधीरत्तीकी गोलिया बनाकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली १-१ दिक्के-अन्तरसे समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशिरोरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ७८ ॥

७९ शिरोरोगहररसः (गगनमुखरसः) २
गगनं स्याद्भस्मे चूर्णं तीक्ष्णं शुब्रं सुरायसम् ।
वज्र्यामयस्से घृष्टं सूर्यावर्तविनाशनम् ॥ ३८२ ॥
रसेन्द्रमं , शिरोरोगे ।

भाषा—समभागमें अन्नकराणकियाहुआपारा, लोह, तांबा
और सुवर्णभस्मा समभागलेकर धूर और कुठके इत्रोंसे १-१
दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे सूर्यावर्त नष्टहोताहै ॥ ७९ ॥

८० शिरोवज्ररसः

पलं सूतात्पलं गन्धात्पलं लोहात्पलं रवेः ।
गुग्गुलीः पलचत्वारि तद्वर्द्धं त्रिफलारजः ॥ ३८३ ॥
यष्टीमधु कणा शुण्ठी गोक्षुरं क्रिमिनाशनम् ।
तोलकं दशमूलञ्च प्रत्येकं परिकल्पयेत् ॥ ३८४ ॥
वायेन दशमूल्याश्च यथास्वं परिभाषयेत् ।
घृतयोगेन कर्तव्या मापैकप्रमिता घटी ॥ ३८५ ॥
छागीदुग्धेन वा सेव्या मधुना पयसाऽथवा ।
घातिकीं पत्तिकाञ्चैव श्लैष्मिकीं साक्षिपातिकीम् ३८६
शिरोऽर्तिं नाशयत्याशु वज्रं मुक्तमिवासुरम् ।
शिरोवज्ररसो नाम चन्द्रनाथेन भाषितः ॥ ३८७ ॥
र स , र सु , भै.र , घ , शिरोरोगे । भै र , घ , एतयोः रवि
स्थाने त्रिज्वा नियोजिता नाम च शिर.शुलादिवज्ररस इति
स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और ताम्रभस्म
१-१ पल, शुद्ध गुगल ४ पल, त्रिफला २ पल, मुल्हठी, पीपल,
सोंठ, मोखरू, विडङ्ग और दशमूल १-१ तोला लेकर परिगन्ध
करी नीलवर्णकजलीमें सबकाचूर्णमिलाकर दशमूलकेकाडेमें
घोटकर धीकेयोगसे १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली बरती अथवा गायकेदूध अथवा मधुके
साथलेनेसे वात, पित्त, कफ और सनिपातन शिरोवेदनाओ
यह नष्टकरताहै ॥ ८० ॥

८१ शिलागन्धकवटी (शिलाजतुवटी) १

शुद्धं सूतं समं गन्धं रक्तोपलद्वलद्रवैः ।
यामं मर्द्यं पुनर्मर्द्यं पूर्वार्द्धं विनि.क्षिपेत् ॥ ३८८ ॥
कौटजं त्रिफला निम्बं पटोलघननागरैः ।
भाषितानि दशाहानि रसे द्वित्रिगुणे तथा ॥ ३८९ ॥
शिलाजतु पलान्यष्टौ तावती सितशर्करा ।
त्वन्शरीरीपिप्पलीधार्द्रकं क्रेटास्थान्पलोग्मितान् ३९०
निदिग्धिकाफले मूलेः पलं युज्याद्विजातरुम् ।
मधुनः पलसंयुक्तं धुर्यान्मापसमान्गुडान् ॥ ३९१ ॥
दाडिमाभ्युपय.पक्षिरस्तोयसुवासितान् ।
ताम्भक्षयित्वाऽत्र पिबेन्निर्रक्तो भुक्त एव वा ॥ ३९२ ॥
पाण्डुशुष्ठुज्वरप्लीहतमकाशांमिगन्दरान् ।
पूतितिपमूत्रशुक्राद्विदोपमेहमहोदरान् ॥ ३९३ ॥

कासाऽऽसृक्तपित्तञ्च प्रदं रक्तसम्भयम् ।
तान्सर्चान् सुतरां हन्ति सर्वदोषहरा शिवा ॥ ३९४ ॥
र.र , भै.र , प्रदाधिकारे ।

भाषा—१-१ पल शुद्धपारा और गन्धककी नीलवर्णकजली
कर लालमलके फूलोंकेरससे दोपहर मर्दनकर कुट्टन, त्रिफला
और नीमकीछाल २-२ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर कजलीमें
मिलाकर परवल, नागरमोथा और सोंठके दूने अथवा तिलुने
स्वरससे १० दिन भावनादेकर शुद्धशिलाजीत और शरर ८-८
पल, वशलोचन, पीपल, आवले, वाकजासंगी, भटकटैयाका
पत्राह और त्रिजाल १-१ पलका बारीकचूर्ण और मधु १ पल
पूर्वपिण्डमें मिलाय १-१ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली अनारवेरस, दूध, पक्षियोंकेमास अथवा
जलकेसाथ औचितीदेखकर लेनेसे पाण्डु, कुष्ठ, ज्वर, प्लीहा,
तमकवास, बवासीर, भगन्दर, विष्मूत्रगन्धवाला शुब्र विकार,
प्रमेह, जलेदर, कास, रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह
नष्टकरताहै ॥ ८१ ॥

८२ शिलागन्धकवटी (द्वितीया)

शिलागन्धकयोश्चूर्णं पृथग्भृङ्गरसाऽऽप्युतम् ।
ससाहं भावयेत्सर्पिर्मधुभ्याञ्च विमर्दयेत् ॥ ३९५ ॥
अशंसश्चाऽनुलोम्यार्थं हताश्रियलघर्दनम् ।
रक्तिकाद्रितयं खादेत्कुष्ठान्द्रिसहितो नरः ॥ ३९६ ॥
र स , र च , अशरोगे ।

भाषा—शुद्धमेनासिल और गन्धकको भगरेकेरसकी ७-७
भावनाए देकर इकोमिलाय धीके सयोगसे एकदिन मर्दनकरे
फिर अन्दाजसे मधु डालकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह
बवासीर और मन्दाग्निने नष्टर वायुका अनुलोमन करतीहै ८२

८३ शिलाजतुचूर्णम् (प्रथमम्)

द्विपलं मार्कवं धातुमाक्षिकञ्च पुनर्नवा ।
तुया स्पृका शालपर्णी वासकञ्च दुरारुभा ॥ ३९७ ॥
चूर्णाऽद्धेन समं योज्यं त्रिगन्धं मरिचानि च ।
तालीसं मागधी चैत्र तद्वर्द्धेन शिलोद्भवम् ॥ ३९८ ॥
शिलाभेदं तद्वर्द्धेन सर्वं चैकत्र मिश्रयेत् ।
समेन तिलचूर्णान्तु शर्करायाः समायुतम् ॥ ३९९ ॥
भक्षयेत्क्षीरपानं वा शस्यते घृतसंयुतम् ।
तेन क्षयो राजयश्मा कामला च विनश्यति ॥ ४०० ॥
अपस्मारं जयत्याशु बले धीर्येऽधिको भवेत् ।
शाम्बन्ति च महारोगाः शुक्रादथो जायते नरः ४०१
हा स , क्षये ।

भाषा—भगरा, सोनामासी, पुनर्नवा, बसलोचन, अन-
न्तुसूल, शालपर्णी, अड्डा, जकासा वेसव २-२ पल, तनू,
पत्रन, इलायची, मरिच, तालीसपत्र, धीपल इनसबकाचूर्ण ८
पल, शिलाजीत ४ पल, पापागमेद ३ पल, कार्तिल और

शरर सप्तकीवरावर नैरर साररावारीकचूर्णर १-२ दिन इरुडे
मर्दनकर ररगुडे । इरुमेमे ३ माशेमे ६ माशेतमना धी
मिलेरुए दूधकेसाथलेनेसे धय, राजयदम, कामला, अपस्मार,
वय्यीयनास इनसवमो नष्टकर मनुज्यमो शुक्रपूर्णवनाताडे ॥८३॥

८४ शिलाजनुवृत्तम् (द्वितीयम्)

शैलजमाक्षिकयष्टिरुयुक्तं व्योपचिदङ्गफलत्रययुक्तम् ।
सर्वसमं तलपोट्टकवीजं चूर्णमिदं दशमेहमपोहत ४०२
वै. चि, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत और मुनगंमाक्षिक, मुल्हट्टी,
त्रिकटु, चिदङ्ग और त्रिकला समभाग, इनसवकीवरावर तुवरक
केबीजोंकी मन्ना लेकर सबका बारीकचूर्णकर ३-३ भासा
दूधकेसाथलेनेसे यह श्रेष्ठप्रधान १० प्रमेहोंको नष्टकरताडे ॥८४॥

८५ शिलाजनुवृत्तम् (प्रथमम्)

छिद्रोद्भवाकपायेण शुद्धं सेव्यं शिलाजनु ।
पञ्चकर्मविशुद्धेन वातरक्तप्रशान्तये ॥ ४०३ ॥

र का, वातरकाशधिकारे ।

भाषा—विधिपूर्वक सूर्यतापोशिलाजीत उचितमानामें
शुद्धीकेसाथकेसाथलेनेसे पञ्चकर्मसे विशुद्धरोगीके वातरक्तको
यह नष्टकरताडे ॥ ८५ ॥

८६ शिलाजनुवृत्तम् (द्वितीयम्)

पीतं निरुद्धमचिराद्दिनन्ति मूत्रस्य सहातम् ।
वीरजतरुगणसिद्धं शिलाजनु त्वत्तविशुद्धं तत् ४०४
र. का, मूत्राघाते ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको वीरतर्नादिगणकायकेसाथ देनेसे
बहुतदिनके पुराने मूत्राघातको यह नष्टकरताडे ॥ ८६ ॥

८७ शिलाजनुवृत्तम् (तृतीयम्)

त्रि.सप्तवारांश्छैलेयं मान्यं सालादिजाम्भसा ।
पिवेत्सारादकेनैव श्लक्ष्णपिष्टं यथाबलम् ॥ ४०५ ॥
जाङ्गलेन रसेनाद्यात्तस्मिन्जीर्णं तु भोजनम् ।
विजित्य मधुमेहाख्यमातङ्गं रोगसङ्कल्पम् ॥
सुपूर्वणवलोपेतः शतं जीवत्यनामयः ॥ ४०६ ॥

र का, मेहाशधिकारे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीतको सालसारादिगणकायकी २१ भाव
नाए देकर रखडोडे । इसमेंसे १ मासोलेकर १ तोलेतक रोगीका
अभिल देकर सालसारादिगणकायकेसाथ देवे । मूखलगनपर
जाङ्गलपशुपक्षियोंकेमासरसकेसाथ भोजनदेवेतो उपद्रवयुक्तमधु
मेहको जीतकर बलवर्णयुक्त होकर १०० वर्षतक निरोगी रहकर

रनुवृत्तम् (चतुर्थम्)

भाषा—शुद्धशिलाजीत ३ मासेमे १ तोलेतक लम्ब
देकर प्रातःकाल दूध और शररकेसाथलेनेसे २१ दिन
समस्तप्रमेहोंसेरहितहोजताडे ॥ ८८ ॥

८९ शिलाजनुवृत्तम् (पञ्चमम्)

फलत्रिकननाधविशुद्धमादौ
शुद्धं शुद्धच्या दशमूलशुद्धम् ।
स्थिरादिकाकोलियुगादिशुद्धं
शिलाजनु स्यात्स्ययिषु प्रशस्तम् ॥ ४०८ ॥

र का, क्षयाशधिकारे ।

भाषा—त्रिकला, शिलोय, दशमूल, स्थिरादि और काठो
ल्यादिगणोंकेबाओंसे कर्मो भावनाएदियाहुआ शुद्धशिलाजीत
उचितमानामें लेनेसे क्षयरोग नष्टहोताडे ॥ ८९ ॥

९० शिलाजनुवृत्तम् (षष्ठम्)

शिलाह्वयं वा त्रिफलारसेन
हन्यात्त्रिदोषं श्रयथुं प्रसदा ।
अत्रैः पिवेद्वा गुरभिन्नवर्चाः
सन्वोपसौवर्च्यं माक्षिकेश्च ॥
विद्वात्सहजं पयसा रसे वा
प्रायः समद्यादु रूपकतैलम् ॥ ४०९ ॥

र का, सोयाशधिकारे ।

भाषा—त्रिफलाकेसाथ शिलाजनुजीत ३ मासेमे
१ तोलेतककी मानामें पीथितो देकर लेनेसे यह त्रिदोष
शोधको दूरकरताडे । इसके रोवासे बजनदार अथवा पतले दस्त
होनेमेंतो त्रिकटु, सचल और सोनामारोकेसाथ अनदे । मल
और वायुका अवरोधहोनेपर दूध अथवा जागल मातरसकेसाथ
देवे । यदि इससेभी अवरोध शान्त न हो तो बीचबीचमें एर
ण्डतैलका औचित्य देखकर प्रयोगकरे ॥ ९० ॥

९१ शिलाजनुवृत्तम् (सप्तमम्)

शिलाजनु शुग्गुलुं वा पि. फलीमध नागरम् ।
उरुस्तम्भे पिवेत्सुत्रे दशमूलं भोजलेन वा ॥ ४१० ॥
वै चि, ऊरुस्तम्भे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गुग्गुलु, पीपल आर सोंठ इनसवको
समभागमें मिलाकर कथवा अलग २ औचित्यदेकर गोमूत्र
अथवा दशमूलकेकाठकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ नष्टहोताडे ॥९१॥

९२ शिलाजनुवृत्तम् (अष्टमम्)

लाजाजनुशिलांसीमधुकेशुद्धिं सप्तैः ।
मधुयुक्तैः शिशो लैह, सर्वैश्वरनिवारण ॥ ४११ ॥
हितो, क्षयाशधिकारे ।

भाषा—धानकीखील, शिलाजीत, मैमसिल, जटामासी,
मुल्हट्टी, सप्तसमभागलेकर बारीकचूर्णकर १-२ पहर घोटकर
रखडोडे । इसमेंसे १ रत्तीमे ३ रत्तीतक मधुकेसाथदेनेसे बर्षोंके
सत्रकारकेत्वर नष्टहोताडे ॥ ९२ ॥

९३ शिलाजत्वादियोगः

गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलायां शिलाजतु ।

मासं माक्षिकधातु वा किट्टं वाऽथ हिरण्यजम् ४१२

ग नि, अ सं, अ ह, सु स, भा प्र, चि सा, कामलायाम् ।

टि०—भावप्रकारे चिकित्साकारे च गोमूत्रेण पिबेत्कुम्भकामलाया चिकित्सायु, हस्तदेशनेन योग प्रवर्तित । सुष्ठुते हेमन् किट्टं नास्ति ।

भाषा—शिलाजीत, सोनामाखी, सुवर्णकारिद्र इनमेसे किसीएकको गोमूत्रकेसाथ एकमाहीनेतक देनेसे कुम्भकामला नष्टहोतीहै ॥ ९३ ॥

९४ शिलाजत्वादिलोहम् (प्रथमम्)

शिलाजतु मधु व्योपं ताप्यं लोह्रजस्तथा ।

क्षीरणं लेहितस्यागु क्षयः क्षयमवाप्नुयात् ॥ ४१३ ॥

र स, भै र, र चि, यो म, घ, र च, र सि, र सु, र, (मा), र बा, यो र, र स, क, रसायनस, ग नि, क्षयाऽ-विकरे । र (मा) शिलासाररस इति नाम । र स, क, रसायनम्, एतयो क्षयारिरस इति नाम ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, मधु, त्रिकटु, सोनामाखी और लोहभस्म समभागलेकर इन्द्रेमिलाय १-२ पहर मर्दनकर रख छोड़े । इसमेंसे १ मासेसे २ मासेतकमात्रा औचित्यदेकर दूर्यसाथदेनेसे क्षय नष्टहोताहै ॥ ९४ ॥

९५ शिलाजत्वादिलोहम् (द्वितीयम्)

शिलाजतुयुतं लोह्रवल्गन्तु विधिमारितम् ।

पथ्याशां सेवते यस्तु स यश्मानं व्यपोहति ॥ ४१४ ॥

श्रु यो त, र, सु, यो र, क्षयाऽधिकारे ।

भाषा—२ रतीलोहभस्म और ३ मासेसे १ तोलेतक शिला जीत दोनोंको मिलाकर औचित्य देखकर देनेसे और पथ्यका पालनकरानेसे राजयश्मसहित असाध्यरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

९६ शिलाजत्वादिवटी

शिलाजत्वप्रहेमानि लौहगुग्गुलुद्रङ्गणम् ।

केशराजस्य तोयेन मर्दयेद्विषसह्यम् ॥ ४१५ ॥

वल्गमानां यदां कृत्वा शैवालसलिलेन च ।

प्रातः प्रातः प्रयुञ्जीत शुक्रमेहनित्वृत्तये ॥ ४१६ ॥

भै र, शुक्रमेहे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, अत्रक, सुवर्ण और लोहभस्म, शुद्धगुग्गुल और सुहाणा सब समभागलेकर कालेभगरेके रससे दोदिन मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इन मेंसे १-१ गोली शिवालके पानीकेसाथ प्रातःकालमें लेनेसे शुक्रमेह नष्टहोताहै ॥ ९६ ॥

९७ शिलातालरसः (श्वासकासारि.)

त्रिकण्टकरसे भांग्यं तालमेकं चतुःशिला ।

व्यांमायस्तारपिष्टिश्च इत्या तद्दुटिकां चरेत् ॥ ४१७ ॥

दिनं वासारसेः पिप्पुा वालुकायन्त्रपाचिताम् ।

द्वियामान्ते समुद्धृत्य तच्छुल्यञ्च कटुत्रयम् ॥ ४१८ ॥

निर्गुण्डीमूलचूर्णन्तु व्योमतुल्यं विमिश्रयेत् ।

शिलातालो रसो नाम मापेकं श्वासकासजित् ॥ ४१९ ॥

कटुत्रयं पावकदेवदार-

रास्नाचिडङ्गत्रिफलाऽमृतानाम् ।

चूर्णं समांशं सितया समेतं

कासं जयेद्विष्णुरियागु दैत्याम् ॥ ४२० ॥

र को, र सु, वै चि, र यो, र क, रसायनस, र स क, व रा कासाऽधिकारे ।

टि०—रसेन्द्रकल्पदुमे त्रिकण्टकस्थाने द्राक्षा शूहीता अन्यात्मर्भ समा-नम्, नाम च तालकवटीति स्थापितम् । र स, व श्वासवाग्ना-रीति नाम स्थापितम् । नवतरागी चिद्रकलुषे प्रयोग कृतोऽस्ति ।

भाषा—हरितालभस्म १ भाग, गोमूत्रमें १०० बार सुसाई हुई मैनसिल ४ भा, अत्रक, लोह और तारपिठी (शुद्ध-चादीके गोलत्रिको कोयलोपर रख गन्धक और हरितालकेचूर्णका पत्रसे अष्टमाश प्रक्षेपदेकर जलावे । इसपत्रके बीचमें थोड़ागर्त बनाले । जिससमय तारपिठी बनानीहो तब पत्रको कोयलोपर रख गर्तमें पारा छोडदे । आचलगनेसे पारा गाढा होजायगा, इसको मोटेकपडेमेंसे छानले जो कड़ाभाग हो उसे रखले और दूसरेको फिर उधीतरह गर्तमें रख गरमकर छाने । इस्तरह जितना पारा गाढा करनाहो उतना करले फिर इतपिठीको १-२ पहर नीबूके रसमें घोटकर कालिमा दूफरदे । गोलीको ४ तह मल मलके कपड़ेमें बाधकर कानी अथवा नीबूकेरसमें ४ पहर स्वेदन करनेसे तारपिठी तैयारहोगी । अथवा पारेसे चतुर्थांश रजतभस्म मिलाकर १-२ पहर नीबूके रसके साथ घोटनेसे तारपिठी तैयार होगी ।) १-१ भाग लेकर गोरारू और अइसेरिसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ४ तह कपड़ेमें छपेटे १-२ षपड़मिठी चढाय सुखाकर दोपहर वालुकायन्त्रमें स्वेदितकरे । स्वाइशी-तलहोनेपर निकालकर इसकीबराबर त्रिबट्टकाचूर्ण और अत्रक-कीबराबर निर्गुण्डीकीजड़काचूर्ण मिलावे । इसमेंसे १-१ माशा उचितानुपायकेसाथ देनेसे यह श्वासकासको नष्टकरताहै । इसके ऊपर त्रिकटु, चिन्कमूल, देवदार, राजा, विडङ्ग, त्रिफला, गिलोय सब समभाग और सबकीबराबर शंकर मिलाय एक-मासेसे ३ मासेतक अनुपातमें देनेसे अतिशीघ्र श्वास और कास निवृत्तहोताहै । ऊपरकहाहुआयोग तैयार न होनेपर केवल इस अनुपातसेभी काम चलासकताहै ॥ ९७ ॥

९८ शिलादिगुटिका

कर्पेका च मन शिला द्विगुणिता प्रोक्तोपबुद्धाहया,

ययैश्चापि गतः पुराणपदवीं शुद्धो शुडोऽपि त्रिभिः ।

तान्स्ममेव्य विधाय सप्त गुटिकाः खादेत्मास्तप्लुतम् ।

मुन्येताशु भगन्द्राघ्नुरह, कालाहमक्षेकः ॥ ४२१ ॥

रसायनस, भगन्द्राधिकारे ।

भापा—शुद्धमैनसिल १ कर्प, मर्गल २ कर्प, पुरानागुड ३ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर तीनोंको इकठा कूटकर ७ गोलिया बनावे । इसमेंसे १-१ गोली धीमे मिलाकर खानेसे कईवार वमनहोगी । उपद्रव शान्तहोनेपर गेहूँ और चनेकीरोटी धी तथा धाकुरेसाधखाय । पाचवेंदिनेसे वमन बन्दहोजायगी । इत ७ गोलियोंके पूरेहोनेपर भगन्दसे निवृत्तहोताहै ॥ ९८ ॥

९९ शिलापूतरसः

चूर्ण पाठेन्द्रवारण्यो भाण्डे दत्त्वा मनदिशालाम् ।
तत्पृष्ठे शुद्धसूतन्तु कुन्ददन्तं प्रदापयेत् ॥ ४२२ ॥
सूताद्धं कुन्दीचूर्णं तस्योद्धं पूर्वमूलिका-
चूर्णं दत्त्वा पचेच्चुल्ल्यां यामाष्ट्रे मृदुवह्निना ॥ ४२३ ॥
शिलापूतो रसो नाम हन्ति हिकां त्रिगुञ्जकः ।
रास्नावृहत्यग्निवलाकाथं दुग्धञ्च पाययेत् ॥
हिकिन्तं पाययेद्धमं पत्रैः शिखिनिशोऽप्ये ॥ ४२४ ॥
र र स, र च, र को, र का, हिकायाम् । र. का
शिलाचन्तरसेति नाम, परन्तु तत्र अष्ट पाठोऽस्तीति विद्वद्भि-
रविस्मरणीयम् ।

भापा—पाठा और इन्द्रायणकाचूर्ण घड़ेके घेदेमें विछाकर इससे चतुर्गोश मैनसिल विछावे । सपर मैनसिलकेचरावर शुद्ध पाठा रसकर पारेसेआपे मैनसिलके चूर्णसे टककर पाठा और इन्द्रायणकेचूर्णसे ढकद । फिर पाठका डमरुयत्रवनाय ६-७ कपडमिदीदेकर अच्छीतरह सुखाय चूल्हेपररख ८ पहरकी मृदु-
अग्निसे पकावे । स्वाहशीतलहोनेपर धीरजसे डमरुयत्रका मुह उपाड़ ऊपरकेपात्रमें लगदुए जौहरको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा सोखेचूर्णकेसाथ मिलाकरदेवे, आरसे राखा, वनभाटा, चित्रक, बला इनकाहाय अथवा दूध पिलावे । इसपर चित्रक और हल्दीका धूमपानकरानेसे हिचकी नष्टहोतीहै ९९

१०० शिलावद्वरसः

मृतमृतस्य भागैकं भागैकं शोधितां शिलाम् ।
दिनं जन्जीरसैः द्रावै मर्यं रक्ष्णा धमेहघ्नु ॥ ४२५ ॥
शिलायद्धो रसा नाम गुञ्जेक पित्तशूलजित् ।
एकं हिङ्गु शतं पथ्या त्रि. शुण्ठी द्वि. सुवचंला ।
पतचचूर्णञ्च कर्पैकमनुस्याच्छलशान्तये ॥ ४२६ ॥

र. र, दो, यो म, र र कौ, र क ल, रसायनस, चूलाऽ
धिकारे । योगमहाणैष रसायनसङ्गहे च पद्मभागा मन शिला
नियोजिता । रसायनसङ्गह शिपिवद्वरस इति नाम ।

भापा—पारदमस्य और शुद्धमैनसिल समभागलेकर एकदिन जमीरीकेरसेमें मदनकर वज्रमूपामे बन्दकर बहुत मन्द अग्निमें धमनकरे । इसमेंसे १-१ रती उचितानुपानकेसाथदेकर सुनीहीन १ तोला, हरे १०० तो, सौंठ ३ तो, सन्धी २ तो इनका बारीकचूर्णकर १ तोला अनुपानकेतीरपर पिलानेसे पित्तशूल शान्तहोताहै ॥ १०० ॥

१०१ शिलायोगः

शिलाव्योपाऽभयाहिङ्गुचिडङ्गसैन्यधैः समैः ।
लेहोऽयं समधुः कासहिवकाभ्यामेपु शस्यते ॥ ४२७ ॥
हितो, र. र स, वासादी ।

टि०—सुरतनमधुय च्योपरस्थाने केवल मरिच गृहीत बुधद्वाराऽपि
कनया नियोजितम् । बुधस्याऽत्रैव योग विषायेक एव योगो निष्पादनीय
भापा—शुद्धमैनसिल, त्रिकूट, हरे, सुनीहीन, चिडङ्ग, कुट
और संधानमक समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे
१-१ मात्रा घृत और मधुनेसाथलेनेसे यह कास, हिचकी और
श्वसको नष्टकरताहै ॥ १०१ ॥

१०२ शिलावीररसः

रसभस्मसमं गन्धं शिलाजत्वम्लयेतसम् ।
यामिकं मर्दयेत्सर्वं मधुसर्पिषुतं लिहेत् ॥ ४२८ ॥
निर्पेकैकं वर्षमानं शिलावीरो महारसः ।
जराकालं निहन्त्याशु जीवेद्वर्षशतत्रयम् ॥ ४२९ ॥
पलाद्धं मुशलीचूर्णं भृङ्गराजरसे. पिबेत् ।
धात्रीफलरसे वाऽथ कामकं ह्यनुपानकम् ॥ ४३० ॥

र स, र. क, रसायनस, रसायने ।

टि०—रसेन्द्रकल्पदुमे मधुकस्थाने माशिक गृहीतम् । र को, र
म मा, पथ्ये सर्वरोगप्र इति नाम, अनुपानञ्च न दृश्यते अतस्त
स्यात्रैवाऽन्तर्भाव कारणीय, तत्र मात्रा द्वैमाषिकी निर्धारिता सा स्वकि-
शिलरी, न हि मात्राया निश्चिन्ताऽस्ति तस्या देशकालादिमापन्नत्वात्

भापा—पारदभस्म, शुद्धान्धक, शिलापीत और अम्ल
वेत समभागलेकर बारीकचूर्णकर एकपहर शुष्कमदनकर रख
छोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ४ माशेतक उचितानुपानकेसाथ
एकवर्षतकलेनेसे मुदापेको जीतकर ३०० वर्षकी आयुको प्राप्त
होसक्याहै । आधाफल मुशलीकाचूर्ण भगदा अथवा आवलेके
रसेकेसाथ लेनेसे शरीरमें रसका सङ्क्रमणहोताहै

विशेषसूचना—इसमें ४ माशेकीमात्रा और आधाफल
मुशलीका जो अनुपानलिखाहै सो ग्रन्थकारने किसीको दकर
नहीं देखाहोगा एसा प्रतीत होताहै क्योंकि नित्यनाथ कोई
सतपुणमें नहीं हुएहै जा कि इतनीमात्रा उससमय लोग सहन
करतेहैं । इसीलिये साधारणतया इसकी १ माशेकी मात्रा
और ४ माशे मुशलीकाचूर्णदेना उचित प्रतीत होताहै । हा
कोई भीमाहार हो और प्रतीमात्राको हृन्मकररक्षा हो तो उसे
देनेमें हर्ष नहीं । साधारणलोगोंको पहिले प्रतीमात्रा देनेमें
आमवात होनेका सम्भवहै ॥ १०० ॥

१०३ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदय) १

मन शिलामार्द्रघैर्विमर्दं

देकाधिकं चिदातिरुच्य आद्यम् ।

संशोष्य संशोष्य तथा समेदं

सत्तुल्यगन्धेन मर्षीञ्च कुर्यात् ॥ ४३१ ॥

भृत्वा च कृप्यामय बालुकार्पये
यन्त्रे पचेद्ब्रह्मचतुष्टयं तत् ।
काष्ठाऽग्निना शीतमथावतार्यं
गले विलम्बे रसमाददात् ॥ ४३२ ॥
चन्द्रोदयश्चैव मनःशिलादिः
कुष्ठादिरोगापनयाय दिष्टः ।
इष्टश्च गुञ्जाद्वयमात्रमात्रो
हेमन्तकाले पुरुषाय यूने ॥ ४३३ ॥
रसायनसार., बुधे ।

भाषा—शुद्धमैनसिलको २१ दिनतक अदरखकेरसमें
घोटकर सूखनेपर बराबरका शुद्ध पारा और गन्धक मिलाय
नीलवर्णकजलीकर ६-७ कपडमिनीदीहुई आतशीशीशोमें भरके
प्रथम चन्द्रोदयकीतरह बाउछायक्रमें रख ४ दिनकी अग्निदेवे ।
स्वाहाशीतलहोनेपर युक्तिपूर्वक शीशोमेंसे निकालकर रखजोड़े ।
इसमेंसे १ रतीसे २ रतीतक बुधहराजुपानकेसाथदेनेसे यह
समस्तकुष्ठ और शीतपूर्वकज्वरोंको नष्टकरताहै । इसकाप्रयोग
शीतकालमें जवानआदमीपर करना उचितहै ॥ १०३ ॥

१०४ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) २

नलीडमर्षाख्यविधौ पुरस्तात्
पद्मपङ्क्तिगुण्यादिचलि रमेन्द्रे ।
पन्त्वा ततः शुद्धमन.शिलायां
घृष्ट्वा पचेत्तुल्यसुगन्धकायाम् ॥ ४३४ ॥
पतद्विधानेन यथेषुमं
कुर्यात्प्रियाङ्गुद्विपि रोगसङ्घम ।
वनस्पतिभ्याथरसादियोगे
मर्षी विभाभ्याऽपि रगतियोग्यैः ॥ ४३५ ॥
शुद्धी शिलाया अपि कामचारः
सारप्रपद्यस्य भिषग्वरस्य ।
दिग्दर्शनं तालयिमुच्छंतेन
सन्दर्शितं मुच्छंतेनसिद्धिहेताः ॥ ४३६ ॥

रसायनसार, सर्वरोगाऽधिकारः ।

भाषा—नलीयुक्त डमरूपत्रमें पहिले पारमें पट्टणादि-
गन्धजनारणकर उपशीशारस शुद्धमैनसिल और गन्धक मिलाय
नीलवर्णकजलीकर ४ दिनकी आचदेकर रसगिन्दूर तैयारकरे ।
इसमेंसे १-१ रती तत्प्रयोगहाराजुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त
रोगगणको दूरकरताहै । तत्प्रयोगह वनस्पतियोंकेसाथसे कृत्र
सोमें भावनादेकर यदि सम्पन्नक्रिया हो तो तत्प्रयोगोंको विशय
कर नष्टरेगा । इसीतरह मैनसिलगुडिमें भी वैद्य अपनी
बुद्धिपूर्वक विचारकरसकताहै । बुद्धिमानोंकेलिये केवल दिग्दर्शन
पर्याप्तहै ॥ १०४ ॥

१०५ शिलासिन्दूरम् (शिलाचन्द्रोदयः) ३

हारिद्रमल्लालयिष्यतेले
जैपालमहातकघृतेले ।

व्यस्ते समस्तेऽप्युत्तगालितायां
मनःशिलायां दधिवापितायाम् ॥ ४३७ ॥
उष्णाम्बुसङ्घालितशोपितायां
घर्मेऽनितोमे समशुद्धगन्धम् ।
सुवर्णसङ्घालितसूतराजं
नीत्वा समं लोहकटाहिकायाम् ॥ ४३८ ॥
मन्दाग्निर्गतं त्रयमेतदेकौ-
कृत्य प्रवर्षेण खजेन भूयः ।
सुल्याः कटाहीमवतार्य पङ्क्तौ
निस्सार्य कुर्यात्पटगालितञ्च ॥ ४३९ ॥
समृत्पट्टायाम्बुसङ्घालितायां
भृत्वा मर्षी यामचतुष्टयेन ।
सर्वाथैरुर्षीं सिक्ताख्ययन्त्रे
पन्त्वा गलस्थं रसमाददात् ॥ ४४० ॥
रक्तस्थदोषानपहाय शीघ्रं
धातुनशेषानुपजांयेत ।
शिलादिचन्द्रोदयसन्धकः स्या-
दुष्णस्वभावो मरुनीतमेव्यः ॥ ४४१ ॥
रसायनसार, कफरोगः ।

भाषा—शीलासोमल, हरिताल, बडनाग, जमालगोडा और
भिलावोंसे निकालेहुए तैलमें स्क्वीय इच्छातुमार मैनसिलको
लाकर दहीमें ठंडाकर अत्यन्तकीक्षुण्णमें सुगाकर इसकीबरा-
बर शुद्धगन्धक और सुवर्णसङ्घालितयाहुआपारा समभागलेकर
नीलवर्णकजलीकर लोहेकीकट्टाहीमें रख मन्दाग्निमें पिचकाकर
लोहेकीकट्टाहीसे घोटकर तीनोंको अच्छीतरह मिलाकर सूख-
घोटकर फिरसे कजलीबनाय कपडानगर ६-७ कपडमिनी-
दीहुई आतशीशीशोमें भरके सर्वाथैरुकीगतीपर बाउछायन्त्रमें रस
४ पहरकी कड़ी आचदे । उसकासुद्ध शुभारगनाचाहिये नहीं तो
४ पहरमें रगतेयार नहीं होगा । पर आंचन्दकरतेगमय शीशीका
सुद्ध बन्दकरदेना नहीं तो शीशी खाली मिलेगी । स्वाहाशीतल-
होनेपर युक्तिसे शीशीको फोडकर रगको निकालने । इसमेंसे
रोगी और रोगका बलात्क देपकर आधीरतीमें एकरशीतक
उचितमात्रमें देनेसे यह कामभासादि बन्धधानव्याधियोंको
तत्क्षण नष्टकरताहै । अन्य अनुपानोंकेसाथ यह अनुसृत न पड़े
तो मरुतानके साथ देना ॥ १०५ ॥

१०६ शिलासिन्दूरम् (ननुयंम्)

पौत्रं हरस्य च तदंशान.शिलाञ्च
घृष्ट्वात्पट्टायाम्बुसङ्घालितायाम् ।
तत्काचकृप्यानिहितं सुमुद्रितं
द्वाभ्रिदायामपिहितं मिषताख्ययन्त्रे ॥
तत्पारदं भवति बुद्धिमपुष्पनुच्यं
तद्योगायाहि फलदं च रसायनं च ॥ ४४२ ॥
यो म, रसायने ।

धूमं सुखावे । ऐसे १०० भावनाएँ देकर जमालगोटा और थोड़ेहुईमिचं प्रत्येक ४०० नाग, एण्डबीजोंकीमन्त्रा ६० नाग मिलाकर जमीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर उड़दवरावर गोलियां बनाकर छायाशुष्ककर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोले जमीरीके रसमें घिसकर अन्नकरनेसे रतौंधी, प्रहृषीडा, सर्पविष, पटलदोष, दुर्ज्वरशीतज्वर, वैजा बगैह अजीर्णदोष येसब नष्ट होतेहैं । यद्यपि सहकारक इवविशेष नहीं बतायाहै परन्तु जमीरी-केरसमें मर्दनकियागयाहै इसलिये ध्यानमेंभी उसीसेकामलेवे । इसीतरह शाईंधरमें जयपालम्ब्रजाको नीबुकेरसमें भावना देकर सर्पविषमें अन्नरदिखाहै । नीबुकारस इसमें अनुकूलहै परन्तु सर्पविषकेलिये बहावर मनुष्यलालासे कामलियागयाहै ॥ ११५ ॥

११५ शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः (त्रैलोक्यकीर्तिः)

तालने तुल्या गजमागधी स्या-
त्तद्द्वभागेन नवं पिबुः स्यात् ।
दिनार्धमात्रं सुदृढं विमर्द्य
शीतज्वरारण्यकृशानुमेघः ॥ ४७३ ॥
भुजङ्गवह्नीछदनेन दद्या-
त्कोलास्थिमात्रा जयति ज्वरौघम् ।
दुग्धोदं पथ्यमिह प्रशस्तं
वारत्रयं केवलमेव दुग्धम् ॥ ४७४ ॥
दिने द्वितीये गुडजीरकन्तु
दुग्धोदं दाहनिवृत्तये तु ।
त्रैलोक्यकीर्तिं विपमाधिहन्ति
प्रकीर्तिता सा गिरिराजपुत्र्या ॥ ४७५ ॥
र., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—हरितालमसम अपना रसभाणिक्य, गजपीपल और विनीलेकीर्माणी समभागलेकर ४ पहर शुद्ध मर्दनकर रखोड़े । इसमेंसे केल्कीगुळीयेबराबर मात्रा पानमें रखकरदेनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । इसे दिनमें ३ बार देना । पथ्यमें दूधभात एकबजदेना । बादमें भूखलानेपर केवलदूध पिलाना । दूधोदित गुड और जीरेकेसाथ गोली देना । और अधिकदाह माल्महोनेपर दूधभात देना । इनकेसेबनसे शीतज्वर अपना दाहपूर्व, एकाहिक, द्वापहिक, त्र्याहिक, चातुहिक समस्त-विषमज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ११५ ॥

११६ शीतज्वरारिसः (प्रथमः)

पट्टपलं तालकं गुडं चीजं भृत्तराजस्य वारिणा ॥ ४७६ ॥
सञ्चुर्ण्य भाग्येद्रादं भृत्तराजस्य वारिणा ॥ ४७६ ॥
गुग्गुयाध्याऽपि कृष्णाया काकमाच्या रसेन च ।
अर्कमेहुण्डहुग्धेन दातव्या भावनाः क्रमात् ॥ ४७७ ॥
तत्कल्कं रोटिकाकारं स्याद्व्यामारोप्य यत्नतः ।
संनुक्त्रञ्च पुनर्घार्यं दारपये शुभलक्षणं ॥ ४७८ ॥
तद्य चर्ममृदा लिप्त्वा सन्धिं मृदा विद्यापयेत् ।
ततश्च यादुशायने घार्यं तद्य प्रयत्नतः ॥ ४७९ ॥

तुल्यामारोप्य दातव्यो वह्नि यामत्रयं क्रमात् ।
स्वाङ्गशीतं गृहीत्वा तद्गोलं सञ्चुर्णयेत् दृढम् ॥ ४७६ ॥
तस्मिन् मरिचचूर्णस्य द्विपलं चोथ मेलयेत् ।
नागवह्नीदलेनाऽयं मापमानश्च भक्षितः ॥ ४८१ ॥
हन्ति शीतज्वरं घोरं ध्रुवं तन्नौदनाशिनः ।
रसः शीतज्वरारिं हि वैद्यवृन्दैः सुभाषितः ॥ ४८२ ॥
रसचि., र. शं. शीतज्वरे ।

टि०—रसराजयङ्गे शीतमेवनाम्ना “समानमहातपनालकौ-
हृद सश्रीदितावर्कयोविभावितौ । तद्यक्रिके खर्परयन्मध्यमे धूमवि
ल्ले च पुदिनि तिषा ॥ प्यादिकादी तुदितज्वरेऽप्य प्राक्प्रीतया
लादितेरेच बहम् । गद्याणार्धमैरिचे समेत शाल्योदन दुष्पिद
पथ्यम् ॥ तापो वदि स्यादपरेऽपि तोय वटप्ररोहोत्पुष पिचम । प्रनु-
मान तिषया समेन शीताशर भैरवनामयेम् ॥” इति पाठ्य निरिदोऽपि
म उपरितनपाठस्यैवाऽप्यप्रयोऽस्तीति विद्वद्विभिभावनीयम् । रसचि
न्तामर्णां सिद्धतालेकेश्वरानाम्ना “महातक ताल्वनुष्यभाय सक्किक
यन्वरे च वत्म् । दत्ता शरावत्र सुपथिरोध सुपथिकालान्तिरिरेत्तु
मध्ये ॥ यदा च मवे स्फुटिता भवेयुस्तदा रस स्यात्खटु तालकेषु ॥”
इति पाठ्ये निरिदोऽपि परन्तु शीतज्वरारिणाऽप्य सर्वांगी समान । नाच-
नादी प्रथेपे च येय न्यूनता दृश्यते तत्र मध्यदकरोपरपाम पायस्वेक
पकाऽपि इति विद्वद्विरन्तामिज्य विचारणीयम् ।

भाषा—गुड हरिताल और भिलावे ६-६ पललेकर बारीक-
कूटकर भंगरेरससे एकदिन मर्दनकर सफेद और कालीमकोय,
आक और शूहरकादूध इतप्रत्येकमें १-१ दिन मर्दनकर कल्ककी
रोटी जैसी बनाय हंडीके पेंदपर रखकर सुखाले । फिर शराव-
समुद्रमें बन्दकर ६-७ कपइमिरी देकर अच्छीतरह सुखनेपर
वाल्कायन्त्रमें रस ३ पहरकी मध्यमापि देवे । स्वाङ्गशीतल
होनेपर निकालकर २ पल धोईहुई मरिच मिलाकर खलकर
रखोड़े । इसमेंसे १-१ मात्रा पानमें रखकर खानेसे पोर-
शीतज्वरको यह नष्टकरताहै ॥ ११६ ॥

११७ शीतज्वरारिसः (द्वितीयः)

धन्तुः फेनमहैः शिला सरसकं माश्रीकमेकांशकं,
गुल्लं सोमलमक्षिभागमखिलं त्रि.कारवह्नीरसैः ।
आर्द्राहृत्य रुतः सुकृष्णलमितः शीतज्वरारिः सिता-
मिथो हन्ति सुदुग्धभक्तकभुजः कृष्णास्तशीतज्वरान्
र प, र. बो. शीतज्वरे ।

भाषा—सूक्ष्म, अफीम, मेनसिल, स्वरिया, सोनामाती
१-१ भाग, ताम्रमसम और सोमल २-२ भागलेकर बारीक-
चूर्णकर करेलेकेरसकी ३ भागपर देकर १-१ रत्तीहीगोलियां
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहरकेसाथ देनेसे
दाह अपना शीतज्वरोंको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूध-
भातदेना ॥ ११७ ॥

११८ शीतज्वरारिसः

कर्पमात्रं हने गुल्लं पञ्चाना सर्परी शिला ।
रमद्विगन्धकैः तालै कारवह्नीरसैः पुट्टं ॥ ४८४ ॥

वालुकायन्त्रसंपन्नं गुञ्जामात्रं नियोजयेत् ।
सप्तभि मंत्रिचै युक्तं शीतज्वालां निवृन्तयेत् ॥ ४८५ ॥
र क यो. ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ताम्रभस्म १ कर्ष, खपरिया और मैनसिल ५-५ कर्ष, शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल २-२ कर्ष लेकर नीलवर्ण कजलीकर करेलेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ४ पहरकी वाऽकायामें अग्निदे। स्वाहशीतल होनेपर निकालकर रखजोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती ७ मिर्चीके साथ देनेसे यह शीतज्वालाको निवृत्तकरताहै ॥ ११८ ॥

११९ शीततापहरणरसः

चूर्णतालमनलेन समानं
वज्रिजेन सलिलेन विभाज्य ।
पाचयेत्लघुपुटेऽथ च वल्ल
शीततापहरण. ससितस्तु ॥ ४८६ ॥

यो च, शीतज्वरे ।

भाषा—तीपकाचूना और हरिताल १-१ भाग, शुद्ध भिलावा २ भाग लेकर सबका अलग २ चूर्णकर भिलावकेसाथ मिलाकर धूरकेदूधसे २-४ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव सम्पुटमें बन्दकर ६-७ पहरमिथी देकर लघुपुटकी आचदे। स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े। इसमेंसे २-३ रत्तीकी मात्रा शरकरकेसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टकरताहै ॥ ११९ ॥

१२० शीतपित्तभञ्जनरसः

पारदं गन्धकञ्चैव कालीसं ताम्रमेव च ।
शुद्धं मृत्तञ्च संयोज्य खल्वे गाढं चिमर्दयेत् ॥ ४८७ ॥
भृङ्गराजरसैश्चैव शरपुह्लाद्रवैस्तथा ।
भाषयित्वा तु सप्ताहं ततो गजपुटे पचेत् ॥ ४८८ ॥
वारधयं तता नीतं शीतपित्तप्रभञ्जनम् ।
रसं गुञ्जद्वयं धीमान्गुडेन सह दापयेत् ॥ ४८९ ॥
अनेन चागु नश्यन्ति शीतपित्तादयो गदाः ।
बुध्रान्यपि च सर्वाणि धातरक्तं तथैव च ॥ ४९० ॥
जलायगाहं वायाश्च सेनञ्च प्रजागरम् ।
विद्वाहि चाशनं त्याज्यं शीतपित्तादिरोगिणा ॥ ४९१ ॥
र म मा, ना वि, शीतपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, कनीस और ताम्रभस्म सम भागलेकर नीलवर्णकजलीकर भग्रा और सर्पोंकाकेरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ पहरमिथी देकर सप्तानपर गजपुटकी आचदे। स्वाहशीतलहोने पर निकालकर भग्रा और सर्पोंकाके रसोंसे १-१ दिन मर्दन कर पूर्ववत् गजपुटकी आचद। ठेसे ३ आंचेदेकर बारीक पीसकर रखजोड़े। इसमेंसे २-२ रत्ती गुञ्जसाथ देनेसे शीतपित्त, बुध, वातरक्त येमर नष्टहोते। इसके मर्दनकरनेवालेको शीत ज्वरान, वायु, जागरण, निद्राहीनता छोड़ देने चाहिये ॥ १२० ॥

१२१ शीतभञ्जनरसः (प्रथम)

द्वितुष्यं मरिचं सूतं गौरीपापाणनागरम् ।
कारवह्नोरसै मर्धं कुकुटपुटपाचितम् ॥ ४९२ ॥
मत्स्यपिसेस्ततो भाव्यं गुञ्जामात्रं प्रयत्नत ।
शर्करामनुपानेन देयं शीतज्वरं हरेत् ॥
हृत्प्रकटितः पूर्वं नास्त्राऽयं शीतभञ्जन. ॥ ४९३ ॥
वै वि, वा, शीतज्वरे ।

भाषा—शुद्ध तृत्तिया, हीराकपीस, मरिच, पारा, सोमल, सोंठ समभागलेकर पारद अदृश्यहोनेतक मर्दनकर करेलेकेरससे एकदिनभावना देकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुकुटपुटकी आचदे। स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर मछलीकेवित्तसे एकदिन मर्दन कर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखजोड़े। इनमेंसे १-१ गोली शरकरकेसाथ देनेसे यह समस्त शीतज्वरोंको नष्टकरताहै १२१

१२२ शीतभञ्जनरसः (द्वितीय)

तुष्यमेकं प्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।
कुमारोरससम्पिष्टं कुकुटपुटपाचितम् ॥
तुलसीरससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ४९४ ॥
र क यो, र पा शीतज्वरे । खपरिताते पूर्णचन्द्रोद-
येति नाम ।

भाषा—शुद्ध तृत्तिया १ भाग, हरिताल ३ भा, मैनसिल ४ भागलेकर बारीकपीस पीकुवारकेरसमें एकदिन मर्दनकर शरावसम्पुटमें बन्दकर कुकुटपुटकी आचदे। स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखजोड़े। इसमेंसे १-१ रत्ती तुम्बुकीरगन्ध-साथ देनेसे यह शीतज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२२ ॥

१२३ शीतभञ्जोरसः (शीतज्वरारिसः) १

सूतकं गन्धकञ्चैव हरितालं मन शिला ।
एकनिष्कं द्विनिष्कञ्च चतुर्निष्कं तथैव च ॥ ४९५ ॥
पञ्चनिष्कं रसे. कारवेल्ल्याः सम्यक् प्रम्लषयेत् ।
ताम्रपत्राणि तुल्यानि तेन कल्पेन लेपयेत् ॥ ४९६ ॥
शरावसम्पुटे तानि घृन्वा तेपामुपर्यपि ।
दद्यात्तां पिष्टिमां पश्चात्पुटपाकेन पाचयेत् ॥ ४९७ ॥
ततः सञ्चूर्णयेदेवं रसः शीत्रेण भक्षितः ।
यनेकमाश्रया हन्ति घोरं शीतज्वरं ध्रुवम् ॥ ४९८ ॥

भा प्र, र स, र, च, र क, र सु, भे सा, वै द, वि र, भे र, यो म, र क, रसायनसं., र क ल, र र दी, गो, र का, र स, र र (मा), र क यो, रसायनगर, र र स, र को, यो च, ज्वराऽधिकारे ।

टि०—१. र, र क यो शीतारिसि नाम। रसायनसं. शीतज्वरारिसि नाम। र क ल ज्वरारिसि नाम, वा म शीतज्वरारिसि। र र दी, र का रसायनसं. शीतज्वरारिसि नाम। र र स, र को, यो च, ज्वराऽधिकारे ।

द्रागाद्धरहितमिति पाठ नियाज्य रसान्तर प्रकल्पितम् । ततु न सम्यक् प्रतिभाति, कबल मनाद्रागविभृद तदित्यस्य स्थाने कनापि कारणेन विभ्रम पतिन प्रतिभाति । चिचिद्वाराहस्य द्वितावस्थाने शिलारहित एक पाठ प्रकल्पितस्तानाडशानताडितिरिक स्रममपि कल न परयागम् ।
 र (मा) शुक्लीरसस्थाने करवीररसेन भावना प्रदत्ता । रनावरीपथ योगे गन्धकस्थाने तुल्य नियोज्य रामनाग इति नाम स्थापितम्, तस्याऽपि पाठस्याऽनैवाऽन्तर्भाव इत्यस्य । तुल्यकजाडधिरनवाऽनैव नियोजनीय तथाकरणे गुणवृद्धिर्ब भविष्यति पाठान्युक्ता च महत्त्वम् । रसायनसारेऽप्य पाठो ज्वराङ्गनाम्ना निवृत्तोऽस्ति तत्र सर्वेषा द्रव्याणा समनाऽस्ति, तुल्योत्पन्नात्रचन्द्रिकामध्ये च पाक विहितम् ।
 र र म, र नो, यो च एषु गन्धको न दृश्यते परन्तु तत्रिकाम नस्य फलाभावाऽस्ति प्रस्तुत गन्धकप्रक्षेपेण गुणवृद्धिर्ब भविष्यति अतस्त्वाऽप्यनैवान्तर्भाव ।

भाषा—शुद्ध पाठा १ भाग, गन्धक २ भा, हरिताल ४ भा, मेनसिल ५ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर इनकी बराबरके शुद्धतावके पत्रोंपर लेपदकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २-४ कपडमिनी देकर गजपुटकी आवेद । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर खरलकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ यवप्रमाण उचितातुपानकेशाघदेनेसे यह घोरेशीतकरको नष्टकरताहै ॥ १२३ ॥

१२४ शीतभञ्जीरसः (द्वितीय)

रसहिङ्गुलतालानि तुल्यं शम्भुकजं रज्ज ।
 कन्याङ्गिः सप्तधा भाव्यं पक्वयश्च शरावके ॥४९९॥
 अहोरात्रं पुन शीतं कुम्भाय, सिकृतान्तरं ।
 दत्त पथ्यन्तु तत्रेण भक्त क्षीरणं वा युत ॥
 लवणेन विना सर्धानाशयेद्विपमज्वरान् ॥ ५०० ॥
 र का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पाठा, शिगिरिक, हरिताल, तुल्य और पौधा समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर घीडुगरेकरसे ७ भावनाए देकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें रख एकदिनरतकी अभिदेव । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर रख छोड़े । इसमेंसे १ रत्तीसे २ रत्तीतक समयोचितातुपानकेशाघ देनेसे यह समस्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य तक अथवा दूधमात देना और नमकका परहेज कराना ॥ १२४ ॥

१२५ शीतभञ्जीरसः (तृतीय)

रसगन्धो शिला ताल माक्षीर निपतुल्यके ।
 तुल्यं स्तुम्भोरपुटित सघृत कूर्मपाचितम् ॥
 शीतभञ्जा रसा हन्ति द्विगुञ्जा विपमज्वरान् ॥ ५०१ ॥
 र का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पाठा, गन्धक, मेनसिल, हरिताल, सोना-माखी, बरुनाग और तुल्य समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर शूद्रेकेदूधसे १-२ दिन मर्दनकर सूरीकज्जली बनाय आतवी-शीरीमेंबर मुहबन्दकर बालुकायन्त्रमेंसे ४ पहरी अभिदेव । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती धीकेसापुटनेसे यह समस्तविपम-ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२५ ॥

१२६ शीतभञ्जीरसः (चतुर्थ)

रङ्गो तालं सोमलकं हारिदं शुक्तिचूर्णकम् ।
 तुल्यं बल्लोरसपुटे. शीतभञ्जीरस- पर. ॥ ५०२ ॥
 र का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—नागवज्रभस्म, हरिताल, पीलासोमल, मोतीकी-शीप और तृतीया समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर करेलेके रसनी ६-७ भावनाए देकर मूगगरावर गोलिया बनाकर रख छोड़े । इसमेंसे १-१ गोली उचितातुपानकेशाघ देनेसे यह सम-स्तविपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२६ ॥

१२७ शीतभञ्जीरसः (पञ्चम)

द्विपञ्च पञ्च पञ्चैव टङ्गालनवसारकम् ।
 काकमाचीकन्यकाङ्गि मर्दितश्च दिनं दिनम् ॥ ५०३ ॥
 सूर्ययामैः शरावेण पक्वाऽयं तु रस. पर. ।
 शीतभञ्जी द्विगुञ्जस्तु निहन्ति विपमज्वरान् ॥ ५०४ ॥
 र का, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध सुहागा १० भाग, हरिताल और नोसादर ५-५ भाग लेकर मकोय और धीडुगरेकरसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपडमिनी देकर बालुकायन्त्रमें १० पहरी अभिसे पकावे । स्वाज्ञश्रीतल होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती उचितातु पानकेशाघ देनेसे यह विपमज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ १२७ ॥

१२८ शीतभञ्जीरसः (षष्ठ)

पारदं रसकं तालं तुल्यं टङ्गणगन्धकम् ।
 सर्वमेतत्समं शुद्धं कारवेह्वरसे दिनम् ॥ ५०५ ॥
 मर्दयित्वादर् लिम्पेत्ताम्रपात्रस्य शुद्धिमान् ।
 अङ्गुलार्द्धार्द्धमानेन तं पचेत्सिकताह्वये ॥ ५०६ ॥
 यन्त्रं यावत्स्फुटन्त्येन ग्रोहयस्तस्य पृष्टत. ।
 ततस्तच्छ्रीतल प्राह्यं ताम्रपात्रोदराङ्गिपक् ॥ ५०७ ॥
 मापैकं पर्णतण्डेन भक्षयेन्मरिचं समम् ।
 शीतभञ्जी रसो नाम त्रिदिनान्नाशयेज्ज्वरम् ॥ ५०८ ॥

र स, र सि, र र स, र. क ल, भै र, रसायनस, र को, र सु, र च, यो च, यो म, र सु, र म, र चि, र स क, भा प्र व रा, र क, नि र, चि र भ, र (मा), दो, र का, र क यां, रस स, र र को, शा. स, र प्र सु, र धो, र षा ज्वराऽधिकारे ।

टि०—रसमुक्तावल्या टङ्गणस्थाने कुनरी नियोजिता, अस्मादेव रसात्ताम्रपात्रादल्पनारिकिया निष्कास्य शीतहारीति स्वतन्त्रनाम स्थापितम् ॥ एतत्पाठस्थान "तुल्य टङ्गणमृता पकविप सखरपर तात्क, सर्वं खलनक विमय घटिका तत्कारवहोरेते । शुभैवपमिना सुशुकर युक्ता सञ्जीरकपाऽथवा, परुषविचित्रयुवीरशुण शशाङ्कुण नामत ॥" अथ पाठ वै वि, वै द, नि मा, यो म, र प्र, यो र, बा, एषु निह्निताऽस्ति । र सु, रसायनस, नि र, र का, र यो, र क या एषु तु पाठस्यमपि निहितमस्ति तत्र शीलाङ्गुण विपमज्वरपाट्टनि तावकावनेनादिशिया च नाम्नि स्थापयन्त मर्द

दन्तर प्रतीपत्त परन्तु प्रकृतमे विषयेषु विधाय रसनिष्पादने षड्भाषिक्य पाठ्युत्तमा च मन्थल भतिव्यत्यतस्तस्याऽऽवैशाऽऽन्तर्भावो ह्योऽस्ति इति विद्वद्भिरावलीनम् । रस स, र क ह, र को षु ग्रन्थेषु शीतारिणांमा "शुक्ल गन्धकद्रवणौ गन्धत तुथ रस रसं, ताल तुल्य मिद्र०" इत्यारिक स्वन्वययो दिक्षितोऽस्ति । उपरि निर्दिष्टस्य तस्याऽऽवैशाऽऽन्तर्भावो भुवः । चिकित्सादृष्टये तुथ परित्यक्तम् । पुनश्चिरसकस्थाने ताप्र निवीति तनु न सन्त्यक् । अये ताप्रयाश्रोदरे तुथविधानम् । दन्तप्रयाश्रवमदित्य रस प्रयोगात् स्वन्वयताम्रदानस्य नास्त्यत्यावदयवना । ननु ताप्रयाश्रोदरदिनि प्रथमा ताप्रयाश्रवय धृग- गवस्थानात्कथ भस्मीभूताप्रयाश्रवमद्रह भास्यत इति चेत् तथामति ताप्रयाश्रोदरे ह्यविधानस्यैव वैयर्थ्यात् । प्रथमशीतभस्मिप्रमानोऽय योगो ऽस्ति तत्र च ताप्रद्रव्यभागस्यैव प्रदणमन्ति इति शुभीभिर्द्वैवाकलीनी वम् । अपरिचक्रताप्रयाश्रवमयाऽऽपत्वावयवकथिद्रवयादानस्य निर्वाह करणीय । रसकप्रशेषस्य तु निरारम्भोचिनो प्रतिभाति । र स, र क ष्वनवातुगणे तुलसीमरिच विहितम् । तथाच "धात्रीकलन वा युक्त दाहास्य विषमशयेत् । पथ्य दुग्धीन ददान्मुद्रयूथ मरुकरम् । ज्वरे धातुगणे दशाधिक्रीशीर्द्रव्युत्तम् । अय प्रदानना नाम विषमज्वर नाशन ॥" इत्यथि र पाठ ह्य नाम च पञ्चान्वरस इति स्थापि तम् । शा स, र म सु, ष्वनयो ज्वरारिस इति नाम । रसकाम भनौ द्वितीयस्थाने ताम्राश्लिषविषाण्यधिकस्या नियुञ्जेत् रमोऽन्वयैव प्रमियथा निष्पादित परन्तु तत्र कामन्तुनद्वलमितुरक्षानागडरि । ताप्रयाश्रोदर लिम्पदिनि वाशेन ताप्रयोगस्थाऽऽनायासमिद्रत्वेन स्वन्व प्रशेषस्थाऽऽन्यिष्यात् । तस्यात्तत्र पाकाऽऽभावाऽऽस्तीति प्रतीयेते, हन्तु ष्णु पायडरगुणसूक्त बुदिनपाठाऽऽमादन्म् । रसकामन्तवेवैकवस्थाने ज्ञानभञ्जीननाम "धनगन्धान्तालत्र माषिक द्रव्य विषम् । उपरि शिवितुथत्र समभागानि मध्येत् । शरवडीरसेनेव दिनमेक निरल रम् । मुद्रमाना वनी दत्ता शीतभषी महारस ॥" इति पाठा निदि तोऽस्ति तस्याऽऽथत्र समावेशोऽऽनायासमिद्र ।

भाषा—शुद्धपारा, क्षपरिया, हरिताल, तुल्य, सुहागा और गन्धक समभागलेख नीलवर्णकजलीकर करेलेकरसे एक-दिन मर्दनकर तावकेवर्तनेमें दो जब मोटा लेपकर सुहर ढङ्गन रख सन्धिवन्दकर ६-७ कपडमिठीदेकर अच्छीतहसुखाय बाल कायन्त्रमें रख ऊपर धान डालकर अग्निदे । जब धानोकी छील-होजाय तब अग्निबन्दकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर जितना ताप्रपात्र अच्छीतह जलगाय हो उसकेसहित निकालकर रखओड़े । इसमेंसे उडदवावर मात्रा ७ कालीमिचोकेसाथ पानमें रखकर खानेसे वमनहोकर ३ दिनमें शीतज्वर नष्टहोताहै ॥ १२८ ॥

१२९ शीतभञ्जीरसः (शाङ्गरीन्वराङ्कुश) ८
 हरिद्रा च सुधाक्षारौ सिन्दूरं धूर्तनीजकम् ।
 प्रत्येकं कर्पमात्राणि शोथितानि नयानि च ॥ ७०९ ॥
 हरितालञ्च भङ्गात् पृथक्कर्मचतुष्टयम् ।
 सूक्ष्मं चूर्णं विधायथ भावयेत्ति प्रथक्पृथक् ॥१२० ॥
 काश्माचीभृङ्गराजसुरणानां रसेः क्रमात् ।
 अर्कद्वये स्तुहीक्षीरैस्तद्वदेयं पुत्रत्रयम् ॥१२१ ॥
 शुष्कं तद्वपिडकामध्ये कृत्वा दत्त्वा शरायकम् ।
 विधाय सन्धिसंरोध गुडेन लवणाम्भसा ॥ ७१२ ॥
 तस्योपयोगालान्तञ्च भस्मना पूर्य हृषिडकाम् ।
 तस्या मुसुं मर्दयित्वा मृष्टि, पट्युतै ध्रुवम् ॥७१३ ॥

पश्चाच्छुल्यां समारोप्य हृद्भिर्नि यामयुग्मकम् ।
 स्वाङ्गशीतलमुत्तार्य तोलयेत्सिद्धमौपधम् ॥ ५१४ ॥
 तस्य सिद्धस्य पृष्ठांशं मरिचं दापयेद्बुधः ।
 सूक्ष्मचूर्णं विधायऽथ मानां गुञ्जाह्वयात्मिकाम् ॥५१५ ॥
 पर्णपत्रेण मतिमान् दापयेच्छीतकज्वरे ।
 दाहयुक्ते च विषमे ज्वरान्स्तान्यपोहति ॥ ५१६ ॥
 र.शु, ज्वराधिकारे ।

भाषा—हल्दी, सीपकाचूना, सब्जी और यवक्षार, रस-सिन्दूर, शुद्धधुरेकेवीज १-१ कर्प, हरिताल और भिलावे ४-४ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर भिलवेकेपाय १-२ पहरघोटकर मैसोय, भंगरा, सुरण, आक और धूरकादृष इनके द्रवोंसे ३-३ भावनाए देवे । फिर गोलावनाय सुत्कार हण्डीकबीचमें रख उलट शरावते टकर गुड़ और लवणे सन्धिवन्दकर कपड़े में छानीहुई सफेदरात गलेतमभर ढङ्गनलगाय ६-७ कपड़ मिश्रीसे सन्धिवन्दकर बूलेपरकणाय दोपहरकी बड़ीआवदेकर पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर छडाभाग मरिचमिलाकर १-२ षण् घोटकर रखओड़े । इसमेंसे २-२ रती पानमें रख-कर देनेसे दाहयुक्तज्वर, विषम तथा साधारणज्वर नष्टहोतै ॥

१३० शीतमातङ्गकेशरीरसः
 रसविपशिखिगन्धं संपरञ्चैकनेत्रा-
 ऽनलनिगमशिखाक्षै र्वाजयेच्च क्रमेण ।
 कनकदलरसेन सूक्ष्मपिष्टन्तु गुञ्जा-
 परिमितगुटिकेयं शीतमातङ्गसिंहः ॥५१७ ॥
 र क, यो म, ना वि, वा, वै वि, ज्वराधिकारे ।

टि०—योगमहाणये शीतारिवगीति नाम । बाह्ये द्वितीवस्थाने गन्धरहितमिम दौग शीतयान्द्रुसनाम्ना प्रत्यापिन्वान् परन्तु तत्र योगान्तरताया अभाव स्पष्ट एव सुधिया इदि प्रतिभाति, गन्धकनिष्ठा सने प्रयोगनाऽऽभावात् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, बलनाग २ भा, तृतिया ३ भा, गन्धक ४ भा, क्षपरिया ३ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण-कजलीकर 'कट्टेकेरसेसे १-२ दिनमर्दकर १-१ रसीली गोल्या बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितपुपान केसाथ देनेसे यह शीतज्वरको नष्टरताहै ॥ १३० ॥

१३१ शीतलपर्पटी
 सारं प्रकुञ्चे द्रवति प्रणीय
 मायं बलिं ढालय स्वल्पकुक्षो ।
 सिद्धो रसः शीतलपर्पटीति
 वृच्छेऽस्तिवृच्छे कथितः सर्जीरः ॥ ७१८ ॥
 सि मे म, मूत्रहृच्छे ।

भाषा—एकपलशोरेको कडाहीमें गलाकर नीचे उतार एक माशा शुद्धगन्धक डालकर चलादे । गलजानेपर खरमें डालकर घोंटे और बारीकचूर्णवनाकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ माशा जीरकसाधदेनेसे मूत्रहृच्छे नष्टहोताहै ॥ १३१ ॥

१३२ शीतलानन्दरसः

हमरोप्यरसत्व्योम गन्धं कांस्यं शिलाजतु ।
कन्याद्रि मर्दयित्वाऽथ मुद्गरमां वटीञ्चरेत् ॥५१९॥
यथाद्रोपानुपानेन प्रयोगादस्य निश्चितम् ।
मसूरिकादयः सर्वे नश्यन्ति त्वरया गदाः ॥ ५२० ॥
देव्या शीतलया प्राक्त शीतलानन्दनामकः ।
मसूरिकाभिभूतानां रसोऽयं हितकाम्यया ॥५२१ ॥
आ वि शीतलयाम् ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, पारा, अन्नक, काषा इनतीभस्में, शुद्ध गन्धक और शिलाजीत समभागलेकर धीकुवारकरसे १-१ दिन मर्दनकर सूगरावर गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपाननेसाथदेनेसे यह मसूरिकाप्रयुक्ति समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ १३२ ॥

१३३ शीताङ्गुरसः (चातुर्थिकेभाङ्गुरा)

रसं गन्धकं निर्विषीं वत्सनामं
तुत्यद्वयं गौरिपापाणतालम् ।
चिमदापि गोलीकृतोऽयं रसेन्द्रो
महापूर्यिकाया बलाया रसेन ॥
रसे धूर्तकस्याऽपि शीताङ्गुरोऽयं
सखण्डस्तु चातुर्थिकेभाङ्गुरोऽयम् ॥५२२॥
र प्र, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, निर्विषी, वत्सनाग, वृत्तिया, हीराकसीस, सोमल, रसमाणिक्य सप्तसमभागलेकर नीलवर्ण कजलीकर कद्दो और धतूरेकरसे १-१ दिन मर्दनकर सूग बराबर गोलियेबनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपान अथवा शहरकेसाथदेनेसे यह चातुर्थिकज्वरको नष्ट करताहै ॥ १३३ ॥

१३४ शीतारिरसः (प्रथमः)

पारदं गन्धकं शुद्धं टङ्गुणञ्च समसमम् ।
पारदाद्दिगुणं देयं जैपालं तुपवर्जितम् ॥ ५२३ ॥
सेन्धवं मरिचं चिञ्चाम्बमसम् शर्कराऽपि च ।
प्रत्येकं सूततुल्यं स्याज्जम्गारै मर्दयेद्दिनम् ॥ ५२४ ॥
द्विगुणस्ततोयेन वातरश्रेष्मज्वरपहं ।
रस शीतारिनामाऽय शीतज्वरहर पर ॥ ५२५ ॥

र स भै र र सु, नि र, रसायनस, सू प्र, र क, र सि, धि र भ, र म र च, र क ल र चि, र वा, र र कौ, र क या, वा, मा प्र, रसधि, यो म, ज्वराऽधिकारः ।

टि०—मा प्र रसधि, यो म ध्यु तथा नि र र सु एतयो द्वितीयरथान समंगाररस इति नाम । रस टरलनकाप मानिक्यमधिक तथा प्रसिध्य श्वराङ्गुलि इति नाम स्थापितम् । मानिक्यऽधिकजीति धे त्रिद्विध्या शीतारिरस तद् तराधिके न वायुनुरपति रसस्वेक एव । रसनाकतीपथयणे शुष्टमकचूणञ्च अधिवन्या निमित्त्य ज्वरापरि रस इति नाम स्थापितम् । तुर्थचिन्द्यञ्च अधिक्त्वा दश्यत । नि र, दिनापरथान गोलियाऽधिकेने पाठ ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहापा १-१ भाग, शुद्ध जमालगोटा २ भाग, सेधव, मरिच, पत्तीइमलीकेछिल्लोकी भस्म और शर १-१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर जमी रीकरसे एकदिन मर्दनकर २-२ रतीकीगोलियानाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथदेनेसे वातरश्रेष्मज्वर और शीतजर निवृत्तहोताहै ॥ १३४ ॥

१३५ शीतारिरसः (द्वितीयः)

न्यूपणेन समं सूतं गन्धकस्तु तयोः समम् ।
मर्दयित्वा तु तत्सर्वं कारवल्या दिग्त्रयम् ॥ ५२६ ॥
गुजैकं सितया युक्तं वान्तिशीतज्वरापहम् ।
पथ्यं दुग्धोदं देयमथवा मुद्गसूपकम् ॥
दाहे शीतक्रियां कुर्यादायुर्वेदप्रशास्त्रम् ॥ ५२७ ॥
र पा, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—सोठ, मिर्च, धीपल १-१ भाग, शुद्ध पारा ३ भाग, गन्धक ६ भागकी नीलवर्णकजलीकर कोलेत्रेकरसे ३ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहरकेसाथदेनेसे यह क्मन और शीतज्वरको नष्टकरताहै । पथ्यमे दूधभात अथवा सूगकायुपदेना । अथवा दाहहोनेपर शीतक्रियाकरना ॥ १३५ ॥

१३६ शीतारिरसः (तृतीय)

वत्सनाभोषणञ्चैवाऽऽकलकं मागधी तथा ।
द्वन्दं समुद्रशोषञ्च तुलसीरसमर्दितम् ॥ ५२८ ॥
शीतजरं निहन्त्याशु शीतारि दुर्लभ पर ।
आर्द्रकादिरसेद्वयशीतज्वर्याधिविनाशनः ॥ ५२९ ॥
रस स, ज्वराऽधिकारः ।

भाषा—शुद्धवत्सनाग, मरिच, अकलकरा, पीपल, शिगरिक और समुद्रशोष समभागलेकर वारीकचूर्णकर तुलसीकरसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रतीकीगोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकवगेरु उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शीत ज्वरको नष्टकरताहै ॥ १३६ ॥

१३७ शीतारिरसः (चतुर्थ)

सूतं गन्धकतालकौ च कुन्दौ म्लेच्छ रवि मर्दये-
त्साम्येनाऽथ चिमावयेत्तुपचिजे । सप्ताहमेतत्सुधी ।
शुष्कञ्चाऽथ चिमर्दयेत्सुरं शीतारिसन्धान्वित,
वल्लेकं मरिचं हेरिप्रियरसे दत्ता हिम नाशयेत् ५३०
शीतज्वरास्तु गच्छन्ति हिमाद्रि रसपीडिता ।
पथ्यं क्षीरोदन देयं शीतज्वरविनाशनम् ॥ ५३१ ॥
र श, ज्वर ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मेनसिल, शिगरिक और ताप्रमम्म समभागकी नीलवर्णकजलीकर करलेकरसे ५ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच और तुलमीकरसकासाथदेनेसे यह शीत ज्वरको नष्टकरताहै । इयमे पथ्य दूधभातदेना ॥ १३७ ॥

१३८ श्रीतारिरसः (पञ्चमः)

तालकं तुल्यकं ताम्रं रसं गन्धं मनःशिलाम् ।
 कर्पं कर्पं प्रयोक्तव्यं मर्दयेत्त्रिफलागुम्भिः ॥ ५३२ ॥
 गोलं न्यसेत्सम्पुटके पुट दद्यात्प्रयत्नतः ।
 ततो नीत्वाऽर्कदुग्धेन वज्रीदुग्धेन सप्तधा ॥ ५३३ ॥
 कायेन दन्त्याः श्यामाया भावयेत्सप्तधा पुनः ।
 मापमात्रं रसं दिव्यं पञ्चाशन्मरिचै र्युतम् ॥ ५३४ ॥
 गुडं गद्याणकश्चैव तुलसीदल्युग्मकम् ।
 भक्षयेत्त्रिदिनं भक्त्या श्रीतारिं दुर्लभं परम् ॥ ५३५ ॥
 पथ्यं दुग्धोदनं देयं विपमं शीतपूर्वकम् ।
 दाहपूर्वं हृत्याशु तृतीयकचतुर्थकौ ॥
 द्व्याहिकं सततश्चैव धैवर्ण्यञ्च नियच्छति ॥ ५३६ ॥
 रसायनसः, र का, र सु, टो, चि र भ., शा.स, र. को,
 र. प्र सु, ज्वराधिकारे ।

टि०—चि र भ, शा स, र को, एषु शीतज्वरारिरिति नाम ।
 रसप्रकाशसुखाब्दे तरुणज्वरारिरितिनाम अत्र भावनायां दश्या न दृश्यते
 भाषा—शुद्ध हरिताल, तुल्य, ताम्रमस, पारा, गन्धक
 और मैनसिल १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिफलाके
 ऋषसे एकदिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर
 ३-४ कपड़मिरीदेकर ४ पहर वालकायन्त्रमें पकावे । स्वाज्ञ
 शीतलदोषेण निकालकर आक और घृहकेदूध, दन्तीमूल और
 निसोतकेकायसे ७-७ भावनाए देकर उद्धवरावर गोलिया
 बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली ५० कालीमिर्च,
 ६ माशे पुरानेगुड़ और दो तुलसीकेपत्तोंकेसाथदेनेसे यह शीत
 ज्वर, विपम, दाहपूर्वं और चातुर्थिकप्रथिति तमामज्वरोंको
 दूरकरताहै । इसमें पथ्य दूधभातदेना ॥ १३८ ॥

१३९ श्रीतारिरसः (षष्ठः)

सितमल्लमन.शिलाऽहिफेन-
 रसकाम्भोधिजताप्यतुल्यभागैः ।
 सुपवीरसमर्दितैस्त्रिवारं
 भज श्रीतारिमिं सितार्द्धगुञ्जम् ॥ ५३७ ॥
 सेवनाद्भरते तीव्रं ज्वरं शीतं महोत्तरणम् ।
 मात्रात्रयेण नि.शेयं पथ्यं मुद्गोदनं स्मृतम् ॥ ५३८ ॥
 ३ यो त, रसायनस, र कौ, र श, वै वि, ज्वराऽधिकारे ।
 टि०—सुराजशफरे सितमलो दिवागे निबोक्त भावनाया
 भवानी दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध सफेदसोमल, मैनसिल, अफीम, खपरिया,
 शङ्ख, सोनामाखी सबसेसभागलेकर वारीकचूर्णकर करलेकेरसकी
 ३ भावनाएदेकर आधीआधीरतीकी गोलिया बनाकर रखओड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली शकरकेसाथ देनेसे यह शीतपूर्वं अथवा
 दाहपूर्वज्वरको ३ मात्राओंमें नष्टकरताहै । पथ्यमें दूधभातदेना ॥

१४० श्रीतारिरसः (सप्तमः)

मदनफलसुयीजं टङ्गुणक्षारतुल्यं,
 पलमपि हरनीजं सर्वमेकरं कृत्वा ।

सममिह जयपालं मर्दयेत्स्निग्धसखे,
 त्रिवृत्तिफलदन्ती नागवल्ल्या विमर्द्य ॥ ५३९ ॥
 गुडजलमधुयुक्तं धल्लमेकं प्रदद्या-
 न्मलजलकफपित्तं वातदोषेण मिश्रम् ।
 ज्वरमुदरविकारं श्लेष्मपित्तञ्च रक्तं,
 तनुगतवहुरोगान्मन्ति शीघ्रं नराणाम् ॥ ५४० ॥
 र. र कौ, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—मैनकल (मीठोल म०), इन्द्रजव, मुनासुहागा और
 यवशर १-१ कर्प, रससिन्दूर १ पल लेकर राखवावारीकचूर्ण-
 कर सबकीबराबर शुद्ध जमालगोटा मिलाकर निसोत, त्रिफला,
 दन्तीमूल, पान इनके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी
 गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली गुड़, पानी
 अथवा मधुकेसाथदेनेसे मलदोष, जलदोष, कफपित्तविकार,
 वातदोष, ज्वर, उदरविकार, श्लेष्मपित्त, रक्तपित्त इत्यादि
 समस्तरोगोंको यह दूरकरताहै ॥ १४० ॥

१४१ श्रीतारिरसः (अष्टमः)

तालकखर्परसूपिकयुग्मं काञ्चनपल्लवजातरसैश्च ।
 मर्दय मर्दय पुनरपि मर्दय शीतमयादिनिवारण्युटिका
 नि र, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल, खपरिया, सपेद
 और पीलाधोमल समभागलेकर धतूरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर
 सर्वप्रमाणगोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली
 समयोचित्तापुपानकेसाथदेनेसे यह शीतप्रधानज्वराधियों को नष्ट
 करताहै ॥ १४१ ॥

१४२ श्रीतारिरसः (नवमः)

रसगन्धकद्युमणितोत्रविप-
 त्रिकट्टनि टङ्गुणयुतानि मुहुः ।
 शिखिशूकरानिमिपयित्तचरैः
 परिमर्द्य भावितमदोऽग्निरसैः ॥ ५४२ ॥
 गुटिकीकृतं द्विगुणवह्लिमितं
 घनक्षारज्वरक-रुणाऽऽररसैः ।
 अतिदौत्यमोहयुतमप्यचिरा-
 ज्जयति ज्वरं तमपि मृत्युकरम् ॥ ५४३ ॥
 दशमूलाम्भसो सिद्धो दशाङ्गः प्रथितो गणः ।
 सार्द्रकस्वरसः पीतः साद्दयत्युद्धुरं ज्वरम् ॥ ५४४ ॥
 नि०, र. सु, ज्वराऽधिकारे । र सु, सन्निपातान्तक
 इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रमस, सोमल, त्रिकट्ट,
 मुनासुहागा सबसमभागकी नीलवर्णकजलीकर मोर, सुअर,
 मछली और सापके पित्त तथा चित्रककेकायसे १-१ दिन
 मर्दनकर दो मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे
 औचित्ती देखकर १ या २ गोली शुद्धकपूर, जीरा, पीपल और
 अदरपकेरसकेसाथ देनेसे शीताह, अत्यन्तशीत और मोट्युक

असाध्यसन्निपातको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै । भटकटैया, वनभाटा, दन्तीमूल, पटोल, काकड़ासाँगी, भार्ज्जी, पोहकर-मूल, कुटकी, कचूर, इन्द्रजव समभागलेकर जबकुटकर आधे-तोलेना दशमूलके २० तोलेआधेमें फिरसे बाधकनाकर ५ तोला बाहीरहनेपर अनुपानकीजगहदेनेसे अत्यन्तबड़ेहुए सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ १४२ ॥

१४३ शीतारिसः (दशमः)

सूतं गन्धकमकमल्लकयुतं चेतःशिला खपरं,
तालः साधुसुधेति कारविरसैः सम्मर्दिनं सप्तधा ।
सूपापाचितमष्टमांशमित्थितं हैयङ्गवीनेन त-
दीप्यङ्गुपणतुर्यभागघटितं मत्स्याजपित्ताप्लुतम् ॥
प्रत्येकं मुनिभिः सशर्करमिदं दुग्धेन चलेत्करुं,
पीतं भक्तपयोभुजो विजयते द्राक् सर्वशोतज्वरम् ५४५
२.५, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, ताम्रभस्म, सोमल, मै-
सिल, खपरिया, रसमाण्डिय अथवा शुद्धहिरताल, मोतीकी-
सीप अथवा पत्थराकचूना येसब समभागलेकर नीलवर्णकज-
लीकर कारवी (शुद्धकावी गुज०)के रससे ७ दिन मर्दनकर
गोलावनाय शारासम्युष्टमें बन्दकर ६-७ कपडमिटोदेकर सूख-
नेपर लघुपुकीआचदे । स्वादाशीतलहोनेपर निकालकर अष्टमाश
मस्खनमिलाकर १-२ पहर मर्दनकर अजवाइन और त्रिकटु
समभागकाचूर्णचतुर्थांशमिलाकर मटली और बकरेकेपित्तोंसे
७-७ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखओङ्गे ।
इनमेंसे १-१ गोली शकर और दूधकेसाधेदेनेसे यह सबप्रकार-
केशोतज्वरोंको नष्टकरताहै । इसमेंगन्ध दूधमातदेना ॥ १४३ ॥

१४४ शीताशुद्धूलनम्

शिवेष्टफलसम्भूतभस्मभागाष्टकं शुभम् ।

मरिचस्य तु घत्वारो रसादेको विपस्य च ॥ ५४६ ॥

सूक्ष्मचूर्णाकृतादस्मान्मर्दनं चातियत्नतः ।

असाध्येऽपि हि शीताङ्गे स्वेदनं दीपनं परम् ॥

अन्नपानञ्च चात्तत्र शीतारि दुर्लभः परः ॥ ५४७ ॥

स. स., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—धनेरुके फलोंकीमम्म ८ भाग, मरिच ४ भा.,
शुद्धपारा और घटनाग १-१ भाग लेकर पारा अद्वय होनेतक
मर्दनकर रखओङ्गे । अत्यन्तशीताङ्गानेपर बहुलयमालकर इसका-
मर्दनरत्नेसे शीताङ्ग निरूतहोनाताहै । यह स्वेदन और दीपनहै
इसमें चात्त अन्नपानदना ॥ १४४ ॥

१४५ शीतांशुरसः

शुनटी शुद्धतालञ्च तद्विभ्रं व्योपकं भवेत् ।

मर्दयेत्प्रिमुनीरेण गुञ्जायुग्मं तु मेययेत् ॥ ५४८ ॥

अनुपानं शिशान्नीद्रमुष्णं यारि तथाऽऽऽट्टकम् ।

शीतज्वरं सन्निपातं कामलां गुल्मपञ्चकम् ॥ ५४९ ॥

सर्वथासञ्च कासञ्च नाशयेदुदरं भृशम् ।

सन्निपातं तथा छर्दिमशोर्ति चातरोगजाम् ॥ ५५० ॥

शूलमष्टविधं हन्ति नामो कुक्षौ च विप्रधिम् ।

आध्मानानाहविष्टम् तापं सर्वाङ्गदाहरुम् ॥ ५५१ ॥

जङ्गमं स्थावरञ्चैव विपं हिक्रां विनाशयेत् ।

शोथञ्च भ्रममूर्च्छं च तिमिरञ्च व्यपोहति ॥ ५५२ ॥

मर्दिनं निम्नतोयेन लेपितं गजचर्मनुत् ।

विसर्पमण्डले चैव दुष्टचर्म व्यपोहति ॥ ५५३ ॥

सेवितं लेपितं कुर्याद्भावितं ग्रन्थिमर्दुदम् ।

लेपितं दन्तरोगाञ्च जिह्वानिऋजस्तथा ॥ ५५४ ॥

अर्कपत्ररसैः फणैः पूरणान्द्रोगनाशनम् ।

निर्गुण्डीमिश्रितं नस्यमपस्मारं शिरोरजम् ॥ ५५५ ॥

अञ्जनं यवमात्रञ्च नेत्ररोगविनाशनम् ।

मापञ्च सन्निपातानां कामलाञ्चरशीतके ॥ ५५६ ॥

धनुर्वातञ्च भूतञ्च शोपरोगे च काकथा

भापितो रेवणेनैव रसः शीतांशुनामकः ॥ ५५७ ॥

व रा, धनुर्वाते ।

भाषा—शुद्ध मैसिल और हिरताल १-१ भाग, सौंठ,
मिर्च, पीपल २-२ भाग लेकर सबकावरीकचूर्णकर नीचूकेरससे
एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखओङ्गे ।
इनमेंसे १-१ गोली हरे, मधु, गरमजल अथवा अदरक इनमेंसे
किसीएककेसाथ औचितो देखकरदेनेसे शीतज्वर, सन्निपात,
कामला, पाचोंप्रकारकेगुल्म, श्वास, कास, उदररोग, सन्निपातज-
बमन, ८० वातरोग, ८ प्रकारकेशूल, नाभि और कुक्षिहा
जहरवाद, आग्मान, आनाह, विष्टम, ज्वर, सर्वाङ्गदाह,
स्थावर और जङ्गमविष, हिचकी, शोथ, भ्रम, मूर्च्छा, तिमिर
इनसबको यहनष्टकरताहै । नीमकेजलसे लेपकरनेसे छाजन,
विसर्प, मण्डलुष्ट और चर्मरोग नष्टहोतेहै । खाने और लगा-
नेसे गठ और अर्तुदको गलादेताहै । लेपकरनेसे दात, जिह्वा
तथा नेत्ररोगोंको नष्टकरताहै । आककेपत्तोंके रसकेसाथ मिला-
कर डालनेसे कानकेरोगोंको दूरकरताहै । निर्गुण्डीकेरगकेसाथ
नस्वदेनेसे अपस्मार और मस्तकपीडाको यह नष्टकरताहै ।
यवप्रमाणका अञ्जनकरनेसे नेत्ररोग नष्टहोताहै । एकमादोकी
मानादेनेसे सन्निपात, कामला, शीतज्वर, धनुर्वात, भूतगया
और शोपरोगको दूरकरताहै ॥ १४५ ॥

१४६ शुक्रमातृकावटी

गोक्षरवीजं त्रिफला पत्रमेला रसाञ्जनम् ।

धान्याकञ्चयिका जीरं तालीरुं तद्दुग्धादिमौ ॥ ५५८ ॥

प्रत्येकाऽऽर्द्धपलं दत्त्वा शुग्गुलोः कार्ष्णिकन्तथा ।

रसाऽम्रलोहगन्धानां प्रत्येकञ्च पलं क्षिपेत् ॥ ५५९ ॥

सर्पमेकीकृतं वैद्या दण्डयन्ने विमर्दयेत् ।

घृतभाण्डे तु संस्थाप्य मासमेकन्तु खादयेत् ॥ ५६० ॥

दाडिमस्वरनेनैव छागीदुग्धेन धाम्मना ।

चन्द्रनायेन गदिता घटिका शुभमातृका ॥ ५६१ ॥

विशम्भेहाग्निहत्यांशु यातपित्तादिसम्भवान् ।
इन्द्रजान्सन्निपातोत्थान्मूत्रकृच्छ्रद्वन्द्वमरीगदान् ॥
यलवर्णाऽग्निजननी ज्वरदोषनिपूदनी ॥ ५६२ ॥
र र, मै र, प्रमेह ।

भाषा—गोखरु, त्रिफला, तमालपत्र, इलायची, रसौत, घनिया, चव्य, जीरा, तालीसपत्र, भुनासुहागा, अनार येसब २-२ कर्प, शुद्धगुल १ कर्प, शुद्ध पारा और गन्धक, अध्रक और लोहभस्म १-१ पललेकर सबका बारीक चूर्णकर परिगन्धकनी नीलवर्णकजलीमें मिलाय गोखरुनगैरहृदकायसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासकी गोलियाबनाकर धीवर्तनमें एकमहीने तक रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अनारकेरस, बकरीके दूध अथवा जलकेसाथलेनेसे वातादिजन्य २० प्रकारके प्रमेह, द्रन्द्वज तथा सन्निपातज मूत्रकृच्छ्र और पथरी इनसबको नष्टकर बल, वर्ण और अग्निको पैदाकर ज्वरको यह नष्टकरती है ॥ १४६ ॥

१४७ शुक्रस्तम्भकरीवटी

कर्पूरमहिफेनञ्च कस्तूरी जातिपत्रिका ।
नागवह्नीरसेनैव गुटिका मद्रनाशिनी ॥ ५६३ ॥
शुक्रस्तम्भकरी नित्यं यलमासविधर्षिणी ।
नरश्चटकवद्रुच्छेच्छतवारान्न संशय ॥ ५६४ ॥
रस स, वाजीकरणे ।

टि०—अत्र कर्पूरश्चेन रसकर्पूरमेव ग्राह्यम्, तयोगेनैव यथोक्त गुणलभात् ।
भाषा—शुद्ध रसकपूर, अफीम, कस्तूरी और जावित्री समभागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरसे मर्दनकर उड़दवावर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मलाईवगैरहृदकेसाथलेनेसे यह शुक्रकास्तम्भन करती है । बल और मासको बढ़ाती है तथा सम्भोगेच्छाको बारम्बार जाग्रतकरती है ॥ १४७ ॥

१४८ शुण्ठीखण्डः

नागरस्य रजः सर्पिः पृथग्दशपलोन्मितम् ।
पञ्चाशत्पलिकं क्षीरं खण्डं क्षीरसम पचेत् ॥ ५६५ ॥
व्यापं त्रिजातक धान्यं पट्टान्या जीरकद्वयम् ।
शुद्धी लवङ्गं लोहञ्च वरा जातीफल घनम् ॥ ५६६ ॥
प्रत्येकं चूर्णमेतेषां पलाद्दन्तु विनि क्षिपेत् ।
पलद्वयं चारनीज प्रक्षिप्य विपचेत्सुधी ॥ ५६७ ॥
सादेदक्षिवलापेक्षी शिरोरोगविनाशनम् ।
आमवातप्रशमनं बलपुष्टिविधनम् ॥
कफपित्ताऽनिलहर सेव्यमानं रसायनम् ॥ ५६८ ॥
यो म, शिरोरोग ।

भाषा—१० पल सौंके चूर्णको १० पल धीमें सककर ५० पल गायत्रेद्वयमें डालकर ५० पल शकर मिलाकर चाशनी करे । चाशनीदेवाहोनेपर त्रिकटु, त्रिजात, घनिया, पिपला मूल, दोनोंजीर, काकड़ासींगी, लौंग, लोहभस्म, त्रिफला, जायफल, नागरमोथा येसब २-२ कर्प चिरोनी २ पल डालकर अच्छीतरह मिलाजानेपर उताकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबल

देखकर मात्रा कायमकर देनेसे शिरोरोग, आमवात, बल और पुष्टिकाहास, कफ, पित्त और वायुरोग इनसबको नष्टकर यह दीर्घायुको करता है ॥ १४८ ॥

१४९ शुण्ठीपाकः

प्रस्थार्द्धविश्वोऽष्टगुणञ्च दुग्धं
प्रस्थप्रमाणज्यगुडञ्च तद्वत् ।
विपाचयेत्सन्मुदुवह्निना च

पश्चात्तदन्त क्षिप घव्यमाणम् ॥ ५६९ ॥
चातुर्जातं जातिपत्री वासावह्निफलत्रयम् ।
देवपुष्पं गजकणा भार्गवं शुद्धी कटुत्रयम् ॥ ५७० ॥
आरुहकं लोहचूर्णं वंशलोचनरुद्रफलम् ।
दार विश्वोऽष्टगन्धा च चूर्णमेपा हृतं समम् ॥ ५७१ ॥
चतुष्कर्पमितं चास्माद्यो भजेदिनसप्तकम् ।
तस्य स्वमालिनीर्णाशिरोगव्यूहं विनाशयेत् ॥ ५७२ ॥
सर्ववाताऽज्यत्याशु कफपित्तोद्भवानपि ।
हस्तिना कथित सम्यक् शुण्ठीपाकेति नामतः ५७३
रसायनस, वाताधिकारः ।

भाषा—सौंकाचूर्ण ८ पल, धी और गुड १-१ प्रस्थ, गायकौदूध ४ प्रस्थ लेकर इकेमिलाय मन्दाग्निसे पकावे । पाकहोनेपर चातुर्जात, जावित्री, अहुता, चित्रकमूल, त्रिफला, लौंग, गजपीपल, भार्गवी, काकड़ासींगी, त्रिकटु, अकलवरा, लोहभस्म, वसलोचन, कायफल, दाहहृदी, सौंठ और अस गन्ध इनकाचूर्ण १-१ कर्प डालकर उताकर रखछोड़े । इसमेंसे अग्निबलदेखकर १ कपसे १ पत्रक मात्रा ७ दिनतकखावेने मस्तक, कान और आसकेरोग, सम्पूर्णवातविकार, कफपित्तरोग इनसबको यह नष्टकरता है ॥ १४९ ॥

१५० श्लकुटारसः

टङ्गुण पारदं गन्ध त्रिफला व्यापतालके ।
विप तात्रञ्च जयपालं भृङ्गस्वरसमर्दितम् ॥ ५७४ ॥
द्विगुणं नाशयेच्छुद्धं मरिचेनाद्रिकेण वा ।
सर्वशूलानिहन्त्येषा विष्णुचक्रमिवासुरात् ॥ ५७५ ॥
नि र, व रा, वै चि, र क यो, र पा, श्लाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध सुहागा, पारा, और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, रसमाणिक्य, शुद्धवज्रनाग, ताम्रभस्म और शुद्धजमा लमोटा समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर भगरकेरसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रसौकी गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरिच अथवा अदरखके रसकेसाथदेनेमें यह सब प्रकारके शूलकोनष्टकरता है ॥ १५० ॥

१५१ शूलगजकेसरीरसः (प्रथम)

शुद्धं तात्रपलं वह्नीं घह्विपत्तापितं भृशम् ।
एकविंशतिवारंश्च शीतीकुयांच गाजले ॥ ५७६ ॥
पित्तयेदम्लयोगेषु तप्त शिक्कारसे पुन ।
तद्वत्तप्तं गुडक्षीरं शीतीकुयांयुत्तञ्च तत् ॥ ५७७ ॥

पुनस्तप्ते च गलिते पातयेत्पादपारदम् ।
 दरदोत्थं ततस्तालशिलासोमजसत्त्वतः ॥ ५७८ ॥
 गन्धसत्त्वेन च पुनर्लिप्त्वा पत्राणि शोषयेत् ।
 शरावसम्पुटे धृत्वा वह्निं यामांस्तु षोडश ॥ ५७९ ॥
 त्रिहस्तगतमध्यस्थे तुपच्छागविडन्तरे ।
 शीतं पुनर्गृहीत्वाऽयं रसः शूलेभकेसरी ॥ ५८० ॥
 र. का., शूलाऽधिकारे ।

भाषा—एकपल शुद्धतांबेकेपत्रोंको अमिसातकर २१ वार गोमूत्रमें बुझावे फिर अम्लवर्ष, नकछिनीकेरस और गुड़बुक्क-
 दूधमें २१-२१ वार बुझावे । फिर इसे गलाकर चतुर्थांश हिङ्ग-
 लोत्थपारा मिलाय प्रवेचनाकर हरिताल, मैनसिल, सोमल और
 गन्धक प्रत्येक पारेसे चतुर्थांशलेकर चारीकचूर्णकर नकछिनी-
 केरसमें मर्दनकर पत्रोंपर लेपलगाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७
 कपइमिडीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर ३ हायगहरे गड्डुमें तुप धौर
 बकरीकीमणीणीकेबीचमें रख १६ पहरकी अग्निदेवे । स्वाह-
 शीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रती अद-
 रयवर्षगह उचितानुपातकेसाधनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट
 करताहै ॥ १५१ ॥

१५२ शूलगजकेसरीरसः (महदादिः) २

शुद्धताम्रस्य पत्राणि कुर्यात्तनुतपाणि च ।
 ततस्तानि नरगोजाश्वोपूखरजेषु च ॥ ५८१ ॥
 सूत्रेष्वथद्रव्ये छिन्नाभावे प्रत्येकशः पुनः ।
 एकविंशतिवारान्ध शीतीकुर्याद्दशं नरः ॥ ५८२ ॥
 लिम्पेद्भ्रूसारसौभाग्यच्छिन्नास्वास्वरसतो बुधः ।
 शुष्काणि पट्टमूलेशमृद्धस्त्रान्तरदोषणात् ॥ ५८३ ॥
 पुनस्तप्तानि च भृशं काञ्जिके प्रक्षिपेदपि ।
 विधारमेवं हि कृते जायन्तेऽतिसितानि च ॥ ५८४ ॥
 अथ तानि पुनस्तापयित्वा सूत्रे च सौकरे ।
 प्रक्षिपेद्द्वयपञ्चाशत्किटिचिष्टाद्रवे पुनः ॥ ५८५ ॥
 छिन्नातालद्रव्ये त्रिंशच्च त्रिंश्रे संसृजे पुनः ।
 किटिमिसान्तरं तान्मूत्रपञ्चाशद्दिनानि च ॥ ५८६ ॥
 स्थापयित्वा च शूहीयात्यतीतवर्णयुतानि च ।
 अथ तालं त्रिपलिकं कदलीपुष्पजद्रवैः ॥ ५८७ ॥
 दिनप्रथं मर्दयित्वा संशोष्यातिखरातपे ।
 दृढस्थलेष्टिकागतं चाश्वारिमूलत्वचं क्षिपेत् ॥ ५८८ ॥
 तत्रालञ्च पुनस्ताञ्च दत्त्वा भूयः पिधापयेत् ।
 काचप्रायेण तद्विष्या हठमृत्तिकाया पुनः ॥ ५८९ ॥
 मूत्कपटे विलिप्याऽथ छायापुष्पञ्च कारयेत् ।
 (घर्मीकभृनागभया कृष्णा पीता मृदिष्टिका ॥ ५९० ॥
 चूर्णं लाक्षा च मण्डूरं शुद्धं संजपप्रक्रम ।
 तुल्यञ्च मेघाक्षीरेण सिद्धा छायाविशोषिता ॥ ५९१ ॥
 इयं हठा मृत्तिका स्यात्सर्वकृष्णादिलेपने ।)
 अथ चुस्त्यामिष्टिकां तां संस्थाप्याऽग्निं प्रदापयेत् ॥

दीपवत्प्रहरं भूयः सामान्यञ्च हठाप्यकम् ।
 एकद्वित्रिकपट्टसङ्ख्यामानान्नि क्रमादिह ॥ ५९३ ॥
 शीतीभूतञ्च शूहीयाद्घृतवर्णञ्च सत्त्वकम् ।
 अथ यामत्रयं मेघाक्षीरे सम्मर्दयेच्छिलाम् ॥ ५९४ ॥
 अर्कक्षीरेण च तथा मोचापुष्पद्रवे तथा ।
 कर्पं प्रतिश्वेतचित्रबीजेन सह मर्दयेत् ॥ ५९५ ॥
 काचकृष्णां विनिक्षिप्य यामषोडशकानलम् ।
 शीतीभूतञ्च तत्सत्त्वं वैदूर्यामं प्रजायते ॥ ५९६ ॥
 काञ्चनामं तालजं स्यात्फटिकाभञ्च सौम्यजम् ।
 (अथ शाह्निकसौम्यन्तु गृहीत्वा सार्धमुष्टिकम् ५९७
 तद्द्वन्द्वसूतञ्च मोचापुष्पद्रवे ज्यहम् ।
 अर्कक्षीरेऽस्यहं श्वेतैरण्डबीजेः पुनस्त्यहम् ॥ ५९८ ॥
 अथ ऊर्द्धं लोहात्प्रसम्पुटे तत्रिरोधयेत् ।
 हठमृत्तिकाया वल्लमुद्रा लिप्तञ्च सतशः ॥ ५९९ ॥
 हण्डिकायां छागविशा पूर्णायां स्थापयेच्च तत् ।
 यामद्वादशकं गतं वह्निं दत्त्वा तदुद्धरेत् ॥ ६०० ॥
 हिमवर्णं सौम्यसत्त्वं जायतेऽतिमनोहरम् ।)
 अथ तत्ताम्रपत्राणि दशकूपमितानि च ॥ ६०१ ॥
 तालसौम्यशिलासत्त्वं त्रिचिकर्यप्रमाणतः ।
 पञ्चकूपं तैलविषं गन्धतैलेन मर्दयेत् ॥ ६०२ ॥
 (कपसस्रकगन्धन्तु मातुलुङ्गरसैस्तु पट्टं ।
 लज्जानुद्रवतः पटकं घृष्ट्वा कुर्याच्च वर्तिकाम् ॥ ६०३ ॥
 प्रज्वालयेच्च वै तैलं तेन तैलेन मर्दयेत् ।)
 अथ वज्रं सार्धपलं पलाशं रसकं तथा ॥ ६०४ ॥
 पलाशं नवसारञ्च द्रावयेद्दोहभाण्डके ।
 मुहूर्तमग्निं दत्त्वाऽत्र तत्र हिङ्गुलसूतकम् ॥ ६०५ ॥
 क्षिप्त्वा घृष्ट्वा पुनः पूर्वद्रव्येण सह मेलयेत् ।
 स्नुहीक्षीरे मोरटायाः क्षीरे विहितं विमर्दयेत् ॥ ६०६ ॥
 तत्सर्वं मृत्तिकाकृष्णां क्षिप्त्वा तां पूरयेत्पुनः ।
 युत्तरैरण्डतैलाभ्यां मुद्रां दत्त्वा पचेदथ ॥ ६०७ ॥
 यामद्वादशकं भूयः काचकृष्णां विनिक्षिपेत् ।
 मुद्रां दत्त्वा षोडशमि यामिं रन्ध्रे च सैकते ॥ ६०८ ॥
 पचेंत् नीलवर्णं स्याद्रसः शूलेभकेसरी ।
 तण्डुलप्रमितो दत्तो यथाव्याप्यनुपानतः ॥ ६०९ ॥
 सर्वरोगाग्निहृत्वाऽनु शूलरोगे च का फया ।
 चातव्याधिं क्षयं श्वासं कासं घातात्मामारुम् ॥
 जित्वा रसायनं घाजीकरमेतत्प्रजायते ॥ ६१० ॥
 र. का., शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धतांबेचारीकचूर्णोंको अमिसात कर मनुष्य,
 गौ, बकरा, घोड़ा, ऊट और गधेकेमूत्र तथा नकछिनीकेरसमें
 २१-२१ वार बुझाकर नवसादर और मुहांगेको नकछिनीके-
 रसमें पीपडरसऔर आपाजबनोडा लेपकर गोलाभनाय गुप्ता-
 कर नमक, पांवीकीमिडी, बेडा इनको अच्छीतरहसूखकर कर्पेपर
 लेपेकर गोलेपर बद्धय अच्छीतरह गुलाकर अग्निगार कर

काशीमें बुझावे । ऐसे ३ बार करनेसे पत्रेअत्यन्तसफेद होजायगे फिर इनको तथाकर सुअरकेमूत्र और विष्टाके द्रवमें ४५-४९ बार, और नकछिकनीके स्वरस तथा ताड़ीमें ३-३ बार सुझाकर फिर ३ बार सुअरके मूत्रमें बुझावे । इसवेवाद् सुअरकेताज्रमासमें ४९ दिनतक रखकर निकाले, ये पीलेरङ्गके निकलेंगे । फिर ३ पल हरितालका बारीकचूर्णकर बेलेकेफूलोंके रससे ३ दिनमर्दनकर टिकड़ीबनाय अत्यन्त कड़ीभूपमें सुझाकर अच्छीतरह पकीहुई मोटीईंटमें गोलस्रष्टा खोदकर सफेदकरकीजइकीछालके चूर्णके बीचमें इस टिकड़ीको रख काचनेप्यालेसे मुंहुबन्दकर दृष्टमृत्तिकायुक्तपत्रोंसे सम्पुटकर छायामें सुझावे । (वावी और वैनुओंकी मिट्टी, काली और पीलीमिट्टी, ईटकाचूरा, लाख, मण्डर, गुड, भोजन सव समभागलेकर बारीकचूर्णकर भेङ्केद्रूपसे सानकर द्वापैरसे कूटकर मोमेकेसदस बनावे । इधीकानाम दृष्टमृत्तिका है) । फिर ईंटको चूल्हेपर रख बेरकुरैरद्वीकइसीसे एकपहर दीपामि, दोपहर मध्यमाग्नि और तीनपहर तीव्रामि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तपूर्वक यक्को खोलैतो ऊपरके प्यालेमें धीनेरङ्गकासव मिलेगा, इसे यक्पूर्वक रखछोड़े यह हरितालसत्त्व हुआ । मैनसिलको बारीकपीस मेड़ और आकनेदुध तथा बेलेपुत्रद्रवमें ३-३ पहर मर्दनकर चतुर्थास श्वेतचित्रकके बीजोंकाचूर्ण मिलाय ४ पहर मर्दनकर सुझाकर ६-७ कपड़-मिटीदीहुई आतशीशीशीमें डालकर बालुकायत्रमें १६ पहरकी न्नामिसे पकावे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तपूर्वक शीशीमेंसे वैदुयैरङ्गकेसत्त्वको निकालकर रखछोड़े । फिर सफेदसोमल और सिगरिफका पारा ६-६ पल लेकर १-२ दिन यहातक मर्दनकरे कि पाराअदृश्यहोजाय, फिर बेलेकेपुत्रकेरस और आकनेद्रूपमें ३-३ दिन मर्दनकर समभाग सफेदएरण्डीबीजकीमन्ना मिलाकर ३ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय कड़ीभूपमें सुझाकर छोहेके-सम्पुटमेंरख ऊपरसे ताम्रसम्पुटसे बन्दकर दृष्टमृत्तिकासे ७ कपड़-मिट्टीदेवे । घुलनेपर एकपत्रमें बकरीकीमूँगणियोंके बीचमें सम्पुटको रख अमिलगाकर पड़ेको खोरेमें रखदे । १२ पहरवेवाद् स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अलग रखलेवे यह सफेदवर्णका माहसत्त्व तैयारहुआ ॥

पूर्वोक्ततापत्र १० कर्ष, हरिताल, सोमल, और मैनसिल इनकेसत्त्व ३-३ कर्ष, बडगान ५ कर्ष लेकर गन्धककेतैलसे एकदिनमर्दनकरे । (गन्धक ७ कर्षलेकर बारीकचूर्णकर थिजोर और लहसुनके ६-६ कर्ष स्वरससे १-१ दिन मर्दनकर पोए-हुए सफेदकपड़ेपर लेपकर सिधिलनतीबनाय सरसोंके तैलमें बत्तीको डुबाकर एकदिन सूटीपर टांगकर अधिकतैलको टपका-कर निकालदे । फिर इसबत्तीको लोहेकी शलाकापर रख नीचेके-भागमें अमिलगावे और नीचे कासेबैरुहकी घाली रखदे । बत्तीजलजायागी और तैल टपकजायगा । यहापर इसीगन्धक-तैलकोलेना ।) फिर शुद्धवत् ६ कर्ष, खपरिया और नोसाद २-२ कर्ष लेकर कड़ाहीमें डालकर अग्निदेकर गलावे । गलने-पर शिगरिफसे निकालाहुआपारा २ कर्ष डालकर कड़ाहीको

नीचे उतारकर मर्दनकरे । सबकीकञ्जलीतैयारहोनेपर पूर्वपिण्डमें मिलादे । फिर धूर और मोरटा (धूरकाभेदहै तत्रशास्त्रमें मानवकञ्जुकी) केद्रुपमें ३-३ दिन मर्दनकर टिकड़िया बनाय सुझाकर मिट्टीके चिकनेडुल्लहर्षमें रख धरु और एरण्डीकेतैलसे कुल्हड़ीको भरदे और दृष्टमृत्तिकासे ६-७ कपड़मिट्टी देकर सुखनेपर बालुकायत्रमें रख १२ पहरकी आचदे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निकालकर धूर और मोरटाकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर सुझाकर ६-७ कपड़मिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके दृष्टमृत्तिकासे मुंहुबन्दकर १६ पहरकी बालुकायत्रमें अग्निदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर नीलवर्णकेपदार्थको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावल तप्तद्रोहरानुपानकेसाधनेसे वातव्याधि, क्षय, श्वास, कास, वातक, आमवात प्रभृति समस्तरोगोंको नष्टकर रसायन और याजीकरणके कामकोकरताहै । शूलरोगकी तो यथां ही क्या १ तत्क्षणनष्टहोजाताहै ॥ १५२ ॥

१५३ शूलगजकेसरीरसः (तृतीयः)

कारस्कारफलं स्वर्घ्नं क्षीरप्रस्थद्वयोनिते ।
सूक्ष्मं हृदि सन्निप्य गृह्णीयाद्विप्लोन्मितम् ॥ ६११ ॥
पिप्पली पिप्पलीमूलं मरिचं नागरं च ।
विव्यं हरीतकीमज्जा ह्योरपि कारुजयोः ॥ ६१२ ॥
स्वर्जिकाञ्च यवक्षारं सेंधव्यं रुचकं गडः ।
तथैव क्षारलवणं गन्धकं कर्णमात्रकम् ॥ ६१३ ॥
हिहु टङ्गुणदीप्यानां पलायञ्च पृथक्पृथक् ।
पृथक् चूर्णाकृतं सर्वं पिङ्गुऽऽद्रंकरसेन च ॥ ६१४ ॥
गुटिकाश्चणकाकाराः कृत्वा संशोष्य चातपे ।
यन्मार्ज्यं पलायन्ते शूलप्रभृतयो गदाः ॥
राजते त्रिपु लोकेषु स शूलगजकेसरीः ॥ ६१५ ॥

वे ६, शूलाधिकारे ।

भाषा—दोपल कुचिले लेकर दोप्रस्थ गोदुग्धमें ह्वेदनकर छीलकर बारीकपीसे । फिर इसमें पीपल, पिपलामूल, मरिच, सोंठ, वच, बेलगिरी, हर्, दोनोंकरधौकीमन्ना, सजी, यव-क्षार, सेंधव, संचल, रेहकानमक, विडनमक, शुद्धगन्धक देसव १-१ कर्ष, भुनाहोंग, सुदागा, अजवादन २-२ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर अदरखेपरससे १-२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियां बनाय सुझाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ गोलीसे ३ गोली-तक औषितीदेखकर देखेसे यह समस्तशूलकोदूररताहै १५३

१५४ शूलगजकेसरीरसः (चतुर्थः)

अधार्ज्यं सप्रवश्यामि सर्वंशूलविनाशनम् ।
क्षयादिरोगहं शूलगजकेसरिसञ्चकम् ॥ ६१६ ॥
पूर्वादितप्रकारेण शुध्यमादी विशोधयेत् ।
ततो यापाः प्रकृतंन्या यस्यामार्णोपधीरसेः ॥ ६१७ ॥
पद्मीमानुषयोमूलं पञ्जाङ्गं कनकस्य च ।
मुनिपञ्चाङ्गयुज्यते लाङ्गुलीकन्द पय च ॥ ६१८ ॥

करञ्जस्य च पञ्चाङ्गं मूलानि करवीरकात् ।
 आटरूपकपञ्चाङ्गं चित्रकस्य च कञ्जुकी ॥ ६१९ ॥
 वाजिगन्धेज्जुदी चैव धन्नीकन्दोऽथ शिष्टजः ।
 गुह्रची शकखदिरत्रियुता दन्तिका तथा ॥ ६२० ॥
 बज्रवल्ली शिखरिका दृष्टुमो मुशली तथा ।
 पटवः पञ्च क्षाराश्च उपक्षारास्तथैव च ॥ ६२१ ॥
 पतत्सर्वं सुसङ्घर्ष्य येष्वेयम्हिषीभवेः ।
 पञ्चाङ्गं दुग्धतकोच्च दधिमूत्रे धृतेस्ततः ॥ ६२२ ॥
 स्निग्धे भाण्डे विनिक्षिप्य वासयत्सप्त वासरान् ।
 त्रयीभूते च तत्कल्के शुल्बमाधृत्य ढालयेत् ॥ ६२३ ॥
 त्रिःसप्तवारान्क्षिप्यैवं शुल्बं शुद्धिमवाप्नुयात् ।
 तेन शुल्बेन कुर्वीत पात्रिके पलमात्रिके ॥ ६२४ ॥
 मम्पुटाकारधारिण्यौ तत्र सूतं प्रसाधयेत् ।
 पातितस्विन्नसर्जणीभस्मीभूतस्य कर्पकान् ॥ ६२५ ॥
 चतुरो दानयेन्द्रस्य कर्पानद्यौ प्रकल्पयेत् ।
 पूर्वोक्तयुक्तिशुद्धस्य खल्वे द्वौ निक्षिपेत्ततः ॥ ६२६ ॥
 शुष्कमदनयोगेन मर्दयेत्तौ दिनत्रयम् ।
 कज्जलीं ताम्रपात्रस्य मध्ये चैकस्य निक्षिपेत् ॥ ६२७ ॥
 अन्येन ताम्रपात्रेण सम्पुटं रचयेद् दृढम् ।
 मृद्धान्डसम्पुटं ग्राह्यमतीव सुदृढं तयोः ॥ ६२८ ॥
 एकस्य मध्ये लवणं दत्त्वा तदुपरि क्षिपेत् ।
 सम्पुटं ताम्रजं पञ्चाक्षरद्वन्द्वं लवणं क्षिपेत् ॥ ६२९ ॥
 मातृकेन द्वितीयेन पटुपूर्णेन सम्पुटम् ।
 श्ल्या निरुद्ध्य सुदृढं खटौमुल्लुगैः पटैः ॥ ६३० ॥
 भक्तं हरीतकीकल्केः पिष्टैरेकत्र लेपयेत् ।
 पटुपञ्चकमानेन शोषयेदातपः ततः ॥ ६३१ ॥
 जानुदूर्गं मही खात्वा समिच्छाणैः प्रपूरयेत् ।
 विन्यसेत्सम्पुटं तेषामुपरिप्राञ्च छाणकान् ॥ ६३२ ॥
 पौक्येण प्रमाणेन ज्वालयेद्दहिना ततः ।
 स्याद्दशीतं विनिर्धाय सम्पुटं तं समाहरेत् ॥ ६३३ ॥
 भित्त्वा च सम्पुटं मध्याद्गोल्यास्राप्रसम्पुटम् ।
 त्यक्त्वा यत्नेन लवणं खल्वमध्ये निवेशयेत् ॥ ६३४ ॥
 मर्दयित्वाऽथ सुशुद्धं सिद्धं सूतेभ्ररं ततः ।
 पूजयित्वा भैरवादीन् स्थापयेच्च कण्डके ॥ ६३५ ॥
 बहुमात्रः प्रयोक्तव्यो रसेन्द्रः परिणामजे ।
 शूले यातभवे शुल्बे फणियर्हीदुलेः सह ॥ ६३६ ॥
 अग्निमान्द्यं तथा पाण्डुं रोगराजे हलीमके ।
 प्रहण्यां कामलायाञ्च विकारे षाऽथ जाडं ॥ ६३७ ॥
 हरीतकयनुपानेन दातव्याऽयं रसेभ्यः ।
 पथ्यमत्र प्रदातव्यं शास्त्रदृष्टेन यत्नना ॥ ६३८ ॥
 अथवा घटिकां कुर्वादीपथ्ये रनेभ्यरात् ।
 मरिचं विप्लवीं शुण्ठीं चाजाजीं हिङ्गुवै च ॥ ६३९ ॥
 पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः पटैः सूतेभ्यरस्य च ।
 तत्सर्वमेकतः रत्या खल्वे सम्पविवमर्दयेत् ॥ ६४० ॥

भृङ्गराजभवर्नीं रैस्त्रिदिनं सम्प्रकल्पयेत् ।
 तेन कल्केन चणकप्रमाणा घटिकास्ततः ॥ ६४१ ॥
 एतेकां भक्षयेद्यत्नाद्वटिकां रोगहारिणीम् ।
 वातरोगेषु सर्वेषु घटौ योज्या भिपग्वरैः ॥ ६४२ ॥
 अग्निमान्द्यभवे रोगे शूलजे तु विशेषतः ।
 तत्सम्प्रदायसम्पुक्तः शूलाद्यो गजकेसरी ॥ ६४३ ॥
 रत्नलं, शूलधिकारे ।

भाषा—शुद्धतावेकेवारीकपत्रराय सेहुण्ट और आकका-
 दूध, धतूरा और अगस्त्यकापञ्चाङ्ग, गुग्गा, करिहारीकन्द, कर-
 श्रापापञ्चाङ्ग, सफेदकनेरकीजड़, अहूसिकापञ्चाङ्ग, चित्रक, क्षीर-
 कन्चुकी, असगन्ध, इंगोरन, जहरीमूरण, सहिजन, गिलोय,
 कुंरैया, खैर, निमोत, दन्तीमूल, हहजोड़, अपामार्ग, चक्कड़,
 मुशली, पाचोनमक, पाचोंक्षार, उपक्षार इनसबका बारीकचूर्णकर
 भैसकेदुग्धादिपत्रकमें पीसकर चिकनेवर्तनेमरख ७ दिनतक
 रहनेदे। नमक वगैरह गलजानेपर ताबेको गलाकर २१ घार
 इसमें घुसावे। फिर इसताबेमेंसे ० पलबज्जनका सम्पुटबनवाकर
 ४ पल शुद्धपारे और ८ पलशुद्धगन्धरुकी तीनदिनकेमर्दनसे
 बौहदं नीलवर्णकजली सम्पुटमें ढालकर अच्छीतरहमर्दकरदे।
 और २-३ दृढमृत्तिकाकेलेपदेकर सुखावे। फिर इसको मज्जुत
 षडेके लवणयन्त्रमें रख शरावसे टकरकर खड़िया मिठी, लवण,
 चिम्बे, भात और हरें समभागलेकर एकजगहपीसे और इससे
 शरावसन्धिको अच्छीतरह बन्दकर पाचोनमक इसकल्पमें
 मिलाय समस्तयन्त्रपर लेपदेकर १-२ वषड़मिरीचडाय सुखावे
 फिर शुटनेवावर खड्डा खोदकर रीखेगूहकी सारिएलकड़ी और
 जहलीकणोंसे गड्डुको भरके इसषडेको रख एकपुलकप्रमाण ऊँचे-
 कण्डे युक्तिविशेषसे चुनकर आगलगावे। स्वाश्नीतलहोनेपर
 सम्पुटको खोलकर लवण और कपड़मिरीको अच्छीतरह साफ-
 करदे। जितनाहिस्सा ताबेकाभय होयुकाहो। उसको पीसकर
 रखछोड़े। फिर भैरवप्रश्रुतिका पूजनकर रसकासस्कारकरे। इसकी
 ३-३ रती उचितानुपानकेसाथदेनेसे परिणामशूल नष्टहोताहै।
 पानकेरसकेसाथदेनेसे वातशूलन, मन्दाग्नि, पाण्डु, रोगराज,
 हलीमक, प्रधुणी, कामला येसब नष्टहोतेहैं। हरेंकेसाथ देनेसे
 उदरविकार नष्टहोताहै। इसमें पथ्य रोगोचितदेना। अथवा मरिच,
 पीपल, सोंठ, जीरा, मुनाहींग और लकड़काहुआरस समभागलेकर
 भंगेदेकरसडे ३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखछोड़े।
 इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्तवातरोग,
 मन्दाग्नि और खासकर शूलको यह नष्टकरतीहै ॥ १५४ ॥

१५५ शूलगजकेसरी (शूलद्विप्री) ५

पथ्या दङ्गुणधिभ्यहिङ्गुमरिचं धक्षि विंडं गन्धकं,
 तुल्यं सैन्धवसंयुतं तु शुचिलं सर्वैः समं सम्मतम् ।
 शूलाऽऽभ्यानघिष्यन्धुल्मकसनश्लेष्माभवात्पहा,
 तूर्णाऽऽप्याग्न्युदराऽरुचिन्ध्वरहरी शूलद्विप्री घटी ६४४
 वै र., चि. र. म., वै. चि., नि. र., घृते। नि. र., वै. चि.
 एतयो पथ्याद्विप्रीतिनाम ।

भाषा—हैं, मुनासुहागा, सोंठ, मुनाहींग, मरिच, चित्रक-मूल, विडनमक, शुद्धगन्धक, सैन्धव येसय समभाग और सबकी-बराबर शुद्धकुचिलेकाचूर्ण लेकर सबका बारीकचूर्णकर नीत्रु अथवा अदरखेकरसे १-२ दिन घोटकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिता गुपानकेसाथदेनेसे दृढ, आध्मान, विबन्ध, गुल्म, खासी, छेम्, आमवात, अल्पाग्नि, उदर, अहचि, ज्वर, और शूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १५५ ॥

१५६ शूलगजकेसरीरसः (पष्ठ)

पारदं गन्धकञ्चैव माशिकं पिप्पली तथा ।
आकल्लकं हिङ्गुयुक्तं समभागं विचूर्णयेत् ॥ ६४५ ॥
आर्द्रकस्य रसेनैव गुटीं चणकसन्निभाम् ।
शुद्धचेररने युक्तां दापयेत्प्रियगुत्तमः ॥ ६४६ ॥
सर्वशूलहरी प्रोक्ता पथ्यं द्विदलवर्जितम् ।
त्रिदिनात्सर्वशूलानि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ ६४७ ॥
र सि, चूले ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी, पीपल, अकल-बरा, मुनीहींग सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरखेके रसे घोटकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखेके रस-केसाथदेनेसे समस्तशूल नष्टहोतेहैं । इसकेप्रयोगमें दाल न देवे ॥

१५७ शूलगजकेसरीरसः (सप्तमः)

रसकं गन्धकं शुद्धं ताप्यं जेपालबीजरुम् ।
त्रिकटुं हरवीजं च पथ्यया सह योजितम् ॥ ६४८ ॥
सर्वमेकीकृतं खल्वे शिम्बीपत्रैश्च भापयेत् ।
भायवेत्त्रिवृतातोयस्तथा दन्तिरसेन च ॥ ६४९ ॥
कौसुम्भैश्च तथा कषाये दिनेकं भापयेद्बुधः ।
भापमेकं प्रदातव्यमुष्णवारिसमन्वितम् ॥ ६५० ॥
सर्वशूलहरः श्रेष्ठस्तथा दन्तिरसेन च ।
हस्तिनञ्च यथा सिंहस्तथा शूलेषु केसरी ॥ ६५१ ॥
र को, आमशूले ।

भाषा—शुद्ध खपरिया, गन्धक, सोनामाखी और जमा-लोटोटा, त्रिकटु, शुद्धपारा, हैं सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सैमलकेपत्ते, निसेत, दन्तीमूल, कुसुम्भकेफूल इनकेसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ माशेकीगोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली गरम-पानी अथवा दन्तीमूलकेरसेकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५७ ॥

१५८ शूलगजकेसरीरसः (अष्टम)

रसविगन्धकपदंक्षारेण सिन्धुपिप्पलीविम्बैः ।
अहिवल्लयम्बुविष्टं शूलेभरिं द्विगुञ्जोयम् ॥ ६५२ ॥
यो र, नि र, इ यो त, वै वि, यो सं, यो त, र का,
र र सी, दो, चूलाधिकारे ।

टि०—“क्षार कर्दाद्विषमन्थवी च न्योषत्र सम्मर्षे शुद्धवल्का ।
रसेन गुणाप्रमिन् प्रदिष्ट समीरशूलेभरिं प्रचण्ड ॥” इतिपाठो यो
स, यो त, र का, र र सी, दो य्शु मन्थेयु तथा च यो र, नि र,
वै वि एषु द्वितीयस्थाने दृश्यते, तत्र गन्धकशुषोष्णोष्णोऽस्ति । पूर्व
मिन्ध योगे मरिचाऽभाव कृतोऽस्ति इति व्यत्यान केन कारणेन
सञ्ज्ञत इति न लक्ष्यते, प्रमाद एव तत्कारणमित्यनुमीयते अतस्तयो
पाठयोग्यतां संप्रायेक एव पाठ स्यात्तदीय ।

भाषा—शुद्ध पारा, घटनाग और गन्धक, कौडीभस्म,
सैधानमक, पीपल और सोंठ समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर
पानकेरसेने १-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकीगोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु
पानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्टकरताहै ॥ १५८ ॥

१५९ शूलगजाडुशरसः

निकत्रयं शुद्धसूतं द्विनिष्कं शुद्धदङ्गणम् ।
गन्धकं पञ्चनिष्कं चाप्येकनिष्कञ्च मुस्तकम् ॥ ६५३ ॥
चतुर्निष्कञ्च नेपालं तत्समं सूतताम्ररुम् ।
सर्वतुल्यं तिलक्षारं वृक्षाम्लक्षारचित्रकम् ॥ ६५४ ॥
तद्वत्पलाशजं क्षारं पण्णिपकं ज्यूषसेन्धवम् ।
यद्यक्षारं द्विनिष्कञ्च विडसौर्यकाचकम् ॥ ६५५ ॥
समुद्रलवणञ्चैव पिप्पली च त्रिनिष्ककम् ।
चित्रमूलरसे युक्तं दिनेकञ्च चिमर्दयेत् ॥ ६५६ ॥
सप्तधा चणकक्षारं पाट्टकद्रवमर्दितम् ।
द्विगुञ्जं घटिकां खादिदाट्टकस्य च वारिणा ॥ ६५७ ॥
गुल्माघ्नीलाग्नीहशूलप्रत्यघ्नीलास्तुनीह्वयम् ।
उर्ध्वं सर्वजां बुद्धिं शोधं पाण्ड्यामयं तथा ॥
सर्वरोगान् हरेच्छीघ्रं रसः शूलगजाडुशरः ॥ ६५८ ॥

व रा, चूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा १२ मासे, मुनासुहागा ८ मासे, शुद्ध-
गन्धक २० मा, नागरमोथा ४ मा, शुद्धजमालोटोटा और
ताम्रभस्म १-१ कर्ष, तिलका क्षार ४ कर्ष १२ मा, कोकमका
क्षार, चित्रकमूल, पलाशक्षार, त्रिकटु, सैधानमक २४-२४
मा, यद्यक्षार ८ मा, विडनमक, सचल, काचलवण, समुद्र
नमक और पीपल १२-१२ मासेलेकर बारीकचूर्णकर पार-
गन्धककीनीलवर्णकजलीमें मिलाय चित्रकमूलकेसाथसे एकदिन-
मर्दनकर चनेक्षार और अदरखेकरसे ७-७ भावनाए देकर
२-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
अदरखेकेरसेकेसाथ देनेसे, गुल्म, अघ्नीला, ग्रीह, चूल, प्रत्य
घ्नीला, दूनी, प्रतिवृत्ती, उदरबुद्धि, शोष, पाण्डुप्रसृति समन्त-
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ १५९ ॥

१६० शूलश्रीवटी

शुद्धशूलस्यैव भागेकं द्विभागमहिफेनकम् ।
विषमुष्टिं वेदंभागे घट्टिजं घसुभागिकम् ॥ ६५९ ॥
आर्द्रद्रव्येण यामेकं मर्दयेत्प्रियगुत्तमः ।
घटी गुञ्जोपमा कषायं तिताद्रोम्भाञ्च योजयेत् ॥ ६६० ॥

पक्तिशूल उदावर्तं शूलं च परिणामजे ।
 योज्या युक्तानुपानेन तत्तच्छूलहरी भवेत् ॥ ६६१ ॥
 सन्धिवाते पार्श्ववाते धनुर्वातेऽपतानके ।
 दण्डापतानके चैव ध्रुवरोगे च शस्यते ॥
 प्रहण्यामामवाते च योज्या वैभै र्यशोर्थिभिः ॥ ६६२ ॥
 रसायनसं. शूलाधिकारः ।

भाषा—ताम्रभस्म १ भाग, अफीम २ भा., शुद्धकुचिला
 ४ भा, मरिच ८ भा. लेकर वारीकचूर्णकर अदरखचेरससे
 एकपहर मर्दनकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इन-
 मेंसे १-१ गोली शकर और अदरखचेरसाधनेसे पक्तिशूल,
 उदावर्त, परिणामशूल, सन्धिवात, पार्श्वशूल, धनुर्वात, अपतान
 (खेच), दण्डापतान, ध्रुवरोग, प्रदग्नी, आमवात, इनसबको
 यह नष्टकरतीहै ॥ १६० ॥

१६१ शूलदावानलरसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं विपं गन्धं प्रत्येकं पलमात्रकम् ।
 मरिचं पिपपली शुण्ठी हिड्डु चैव पलद्वयम् ॥ ६६३ ॥
 त्रिञ्चाक्षारं पञ्चलवणं प्रत्येकञ्च पलाएकम् ।
 सप्तवारं दग्धशहं जम्बीराम्लेन सेचयेत् ॥ ६६४ ॥
 पलाएकञ्च संयोज्यं तत्सर्वं निम्बुकद्रव्यैः ।
 दिनं मयं कोलमात्रं भक्षयेत्सर्वशूलनुत् ॥
 शूलदावानलो नाम्ना शूलरोगनिवृत्तनः ॥ ६६५ ॥

वै. र., नि र, टो, चि. र. म, रसायनस., र. क. ल., र. चं,
 र. सौ., यो. र., र. का, यो. त, र. क यो., र. (मा.), शूले ।

टी.—माणियचन्द्रीयरसावतारो शह्ववडीतिनाम्ना ॥ त्रिभाग
 पञ्चलवण विञ्चाक्षार द्विभागिकम् । सर्वेषां द्वियुग निम्बुनीर क्षिप्या
 विलेभयेत् ॥ तस्मिन् शह्व सप्तवार तत्त्वा तत्त्वा क्षिपेद्विषुष । तस्य
 पोडशाभागाथ रामठ पञ्चभागिकम् ॥ एतन्मात्र त्रिकटुक मागेक रस-
 गन्धयो । विप भागैकमानत्र सर्वमेक मर्दयेत् ॥ चणमात्रा वडी कार्या
 दपादात्रैवै रसे । अग्निमान्द्यमजीर्णक चाशयेद्विकल्प्य ॥ इत्या-
 कारक पाठो निहितोऽस्ति, तत्रास्त्यैव पाठस्य व्यत्यसमन्तरा स्वतन्त्रता
 न प्रदीयते मूलन्त्यमेवाऽस्तीति निद्विद्विषिवाकनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग और गन्धक १-१ पल,
 मरिच, पीपल, सोंठ और हॉम २-२ पल, इमलीकाक्षार और
 पाचौनकक ८-८ पल, नीबूकेरसमें ७ बार घुसाएहुए शह्वकी-
 भस्म ८ पल लेकर सबको पारिगन्धककी नीलवणकञ्जलीमें
 मिलाकर नीबूकेरसमें एकदिन मर्दनकर बेरखरावर गोलिये
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाधलेनेसे
 यह समस्तशूलको नष्टकरताहै ॥ १६१ ॥

१६२ शूलदावानलरसः (द्वितीयः)

चिञ्चाक्षारः शुद्धशहचूर्णं लवणपञ्चकम् ।
 क्षाराः पञ्चाग्निसम्भूताः पृथगर्द्धपलाञ्चिताः ॥ ६६६ ॥
 मरिचं मागधी शुण्ठी हिड्डु च द्विपलं पृथक् ।
 पारदं गन्धकं ताप्रं विपञ्चाद्धपलं पृथक् ॥ ६६७ ॥
 सर्वं जम्बीरनरिण मयं तद्विषसप्रयम् ।
 कोलप्रमाणां यटिकां पञ्चगव्यघृताग्निताम् ॥ ६६८ ॥

लेहयेच्छूलशान्त्यर्थं घृताग्रं भोजनं तथा ।
 लघुनक्तवथितं देयं दध्याजं गव्यमेव वा ॥ ६६९ ॥
 पथ्यं नित्यं प्रयुञ्जीत सर्वशूलनिवहेणम् ।
 हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्चाऽजीर्णशूलञ्च गुल्मजम् ॥ ६७० ॥
 आनाहृष्टीहमुदरमश्मरीशकैरादिकम् ।
 क्षयश्चैव न सन्देहो नाशयेद्व्याधिहारकः ॥
 शूलदावानलो नाम्ना पूज्यपादेन भाषितः ॥ ६७१ ॥
 य रा., र. क. यो., शूले ।

भाषा—इमलीकाक्षार, शह्वभस्म, पाचौनक, पाचौंक्षार
 (सञ्जी, सुहागा, यवक्षार, नोसादर और शोरा) २-२कप,
 मरिच, पीपल, सोंठ और शुनीर्हीम २-२ पल, शुद्धपारा,
 गन्धक और बछनाग, ताम्रभस्म २-२ कपलेकर सबका
 वारीकचूर्णकर पारिगन्धककी नीलवणकञ्जलीमें मिलाय जम्बीरीने-
 रससे ३ दिन मर्दनकर बेरखरावर गोलिये बनाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली पत्रगव्य और घीकेसाधलेनेसे सबप्रकारके-
 शूल शान्तहोतेहै । भोजनमें घी और रोटी देवे अथवा लघुन
 डालकर औटाएहुए गाय अथवा बकरीकेदूधका दहीदेवे । इसके
 सेवनकरने और यथार्थपच्यपालनेसे हृद्यशूल, पार्श्वशूल, अजी-
 र्णशूल, गुल्मशूल, आनाह, शोहा, उदर, पयरी, शकर, क्षय
 इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १६२

१६३ शूलध्वंसीरसः

सुतापोरचिकुटिलं मुस्तात्रिफलाम्बुना सुहृढम् ।
 दिवसत्रितयं मयं शूलध्वंसी भवेत्सूतः ॥ ६७२ ॥
 वल्लद्वयमितोऽस्तीं रुद्रपणत्रिपटसंयुक्तः ।
 निम्बुक्षारयुतो वा शिप्राकायेन युक्तो वा ॥ ६७३ ॥
 कफशूलं जयत्याशु द्वन्द्वजं वा त्रिदोषजम् ।
 सामुद्रसर्पिषा युक्तो मरीचाप्ययुतोऽथवा ॥ ६७४ ॥
 पञ्चकोलेन संसिद्धा पेया पथ्या कफामये ।
 विदारीदाडिमरसो सव्योपलवणान्वितः ॥ ६७५ ॥
 कफशूलं जयत्याशु घृतसैन्धवसंयुतः ।
 विञ्चाग्निहिड्डुसिन्धुत्वयिविल्वैरण्डै जयत्यपि ॥ ६७६ ॥
 द्वन्द्वजे सर्वशूले च विधिः कार्या विजानता ।
 शूलान्तको रसश्चैप योज्यः स्वयीयानुपानकैः ॥ ६७७ ॥
 मण्डूरं गोत्रले सिद्धं यराशौद्रयुतं लिहैत ।
 मुन्यते मनुजः शीघ्रं सर्वशूलहिदोषजात ॥ ६७८ ॥
 हिड्डु व्योपं सलवणं शह्वचूर्णं समांशकम् ।
 उष्णादकेन कर्पकं जयेच्छूलं त्रिदोषजम् ॥ ६७९ ॥
 कफशूलहिता कार्या त्रियाप्यामे विशेषतः ।
 सर्वमामहरं सेव्यं यद्रश्मिचल्यर्दनम् ॥ ६८० ॥
 बृहत्यां गोशूरेण्डमुसालीद्विषधुसण्डिकाः ।
 समाक्षिका जयन्त्याशु शूलं पित्तानिलात्मकम् ॥ ६८१ ॥
 पिफलारिपित्तकानां काथं मधुयुतं पिबैत ।
 श्लेष्मपित्तमयं शूलं शह्वच्छदियुतं देहैत ॥ ६८२ ॥

वातश्लेष्मभयं शूलं विश्वहिङ्गसुवर्चलम् ।
 शुण्ठयश्चुनाऽनुपातव्यं हृत्पाश्वजट्टरञ्जयेत् ॥ ६८३ ॥
 वाते निरूहं पिप्पे च क्षीरपानञ्च रचनम् ।
 कफे प्रच्छेदनं तिक्तकृपायरससेवनम् ॥ ६८४ ॥
 र., शूलाधिकारः ।

भाषा—पारा, लोह, तावा, शङ्ख इनकीभस्ममें समभाग लेकर नागरमोथा और त्रिफलाकेकाढ़ेसे ३-३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकीगोलिये बनाकर रखओके। इनमेंसे १-१ गोली एण्डमूल, मरिच और तीनोंनमककेसाथ अथवा नीचूवारकेसाथ अथवा सहजिनकेसाथ, समुद्रनमक, घी अथवा मरिच और पीकेसाथ देनेसे कफज, द्रव्य और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै। कफरोगमें पत्रकोलेसे बनाईहुई पेया पच्यहै। विदारी और अनारकेसमे त्रिकटु और नमक मिलाकरदेनेसे अथवा घी और सैन्धवदेनेसे कफशूल नष्टहोताहै। सोंठ, चित्रक, मुनीहींग, सैधानमक, बेल, एण्डकीजङ्ग इनकेसाथकेसाथदेनेसे द्रव्य और त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै अथवा गोमूत्रमें सिद्धकियेहुए मण्डरको त्रिकण और मधुकेसाथलेनेसे समस्त त्रिदोषजशूलसे निवृत्तहोताहै। मुनीहींग, त्रिकटु, नमक और शङ्खभस्म समभागलेकर एकवर्षकीमात्रा गरमजलकेसाथलेनेसे त्रिदोषजशूल नष्टहोताहै। कफशूलकेलिये जो कर्तव्यहै उसका आमशूलमें अनुग्रानकरनेसे लाभहोताहै। भट्टकट्या, वनमाटा, गोखर, एण्डमूल, मुशली, ईशकीगठ इनकावाथ मधुमिलाकरलेनेसे पित्त और वातशूलको नष्टकरताहै। त्रिफला, नीमकीछाल और कुटकीकावाथ मधुमिलाकर पीनेसे दाह और वमनयुक्त श्लेष्मपित्तशूलको नष्टकरताहै। सोंठ, मुनीहींग और संचलकेसाथ वातश्लेष्मशूलको दूरकरताहै। हृदय, पार्श्व और जट्टरशूलको सोंठकेकाढ़ेकेसाथदेनेसे नष्टकरताहै। वातप्राधान्यमें निरूहवस्ति, पित्तमें क्षीरपान और रचनकराना। कफमें वमन और तिक्तकृपायरसका सेवन कराना ॥ १६३ ॥

१६४ शूलनिर्मूलनरसः

गन्धकं शृणुपर्णं शृङ्गं मरिचं शङ्खभस्मकम् ।
 सैन्धवं रससिन्दूरं जीरकञ्चाऽम्लयेतसम् ॥ ६८५ ॥
 कारस्करस्य बीजानि सुशुद्धानि तद्वृतः ।
 घञ्जाक्षिप्रकनिर्गुण्डयोः शृङ्गरेस्य वारिणा ॥ ६८६ ॥
 भायवित्वा घट्टी कृत्वा बल्लमानां प्रयोजयेत् ।
 विश्वचित्रकजं क्वथयं सहिङ्गमनुपापयेत् ॥ ६८७ ॥
 नानाशूलप्रशमनः शूलनिर्मूलनाभिधः ।
 अतीसाप्रहणिकाविन्मूर्च्छागुल्मविद्रव्यान् ॥ ६८८ ॥
 यट्टस्त्रीहार्तिपाण्डुत्वं शोथापानाविधानपि ।
 तत्तद्रोगानुपानेन हन्ति रोगान्यहनयम् ॥ ६८९ ॥
 वृ क, शूले ।

भाषा—शुद्धगन्धक, त्रिकटु, शङ्खभस्म, मरिच, शङ्खभस्म, सैन्धव, रससिन्दूर, जीरा और अम्लयेत समभागलेकर सबसे आधा शुद्धचित्रका मिलाय बारीकचूर्णकर धूरकराव, चित्रक, निर्गुण्डी और सोंठकेकाढ़ेसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी

गोलिया बनाकर रखओके। इनमेंसे १-१ गोली सोंठ और चित्रकके वाथमें हींगका प्रक्षेप देकर इसकेसाथदेनेसे नाना-प्रकारकेशूल, अतिमार, प्रद्वणी, देजा, गुल्म, जहरपाद, यकृत, रीहा, पाण्डु, शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै। तत्तद्रोगहराव-पानकेसाथदेनेसे बहुतसेरोगोंको नष्टकरताहै ॥ १६४ ॥

१६५ शूलराजलोहम्

कर्पकं कान्तलोहस्य शुद्धमन्नं पलन्तथा ।
 सितायाश्च पलञ्चकं मधुसर्पिस्तथैव च ॥ ६९० ॥
 सर्वमेकीकृतं पात्रे लोहदण्डेन मर्दयेत् ।
 त्रिकटु त्रिफला मुस्तं विडङ्गं चव्यचित्रकम् ॥ ६९१ ॥
 प्रत्येकं तोलकं मानं चूर्णितं तत्र दापयेत् ।
 मक्षयेत्प्रातरत्थाया विशिराम्बन्नुपानतः ॥ ६९२ ॥
 सर्वदोषभयं शूलं कुक्षिशूलञ्च यज्जयेत् ।
 हृच्छूलं पार्श्वशूलञ्च अम्लपित्तञ्च नाशयेत् ॥ ६९३ ॥
 अशांसि प्रहणीदोषं प्रमेहांश्च विसृचिकाम् ।
 शूलराजमिदं लोहं हरेण परिनिर्मितम् ॥ ६९४ ॥
 र सं., ध., र सु, शूले ।

भाषा—कान्तलोहभस्म १ कर्ष, अन्नभस्म, शकर, घी और मधु १-१ पल लेकर सबको इन्टेमिलाय लोहेके छर-लमें लोहके ढण्डेसे मर्दनकर त्रिकटु, त्रिफला, नागरमोथा, विडङ्ग, चव्य, चित्रकमूल १-१ तोलालेकर बारीकचूर्णकर पूर्वोक्तसमें ढालकर घोटकर रखओके। इसमेंसे १ मासेसे २ मासे-तक प्रातः काल उठवानोकेसाथ लेनेसे त्रिदोषज कुक्षि, हृदय और पार्श्वशूल, अम्लपित्त, बवालीर, प्रद्वणीदोष, प्रमेह और देनेको यह नष्टकरताहै ॥ १६५ ॥

१६६ शूलवज्रिणीवटी

रसगन्धरूढोहानां पलाङ्गेन समन्वितम् ।
 त्रिफला रामठं शूल्यं दाटी त्रिकटु टङ्गणम् ॥ ६९५ ॥
 पत्रं त्यगेला तालासं जातीफललचङ्गके ।
 यमानी जीरकं धान्यं प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ॥ ६९६ ॥
 मापेका वटिका कार्या छागीनुग्धेन वा पुनः ।
 एकेका भक्षिता चैव वटिका शूलवज्रिणी ॥ ६९७ ॥
 शूलमपृथिव्यं हन्ति प्लीहगुल्मोदरं तथा ।
 अम्लपित्तामवातञ्च पाण्डुत्वं कामलां तथा ॥ ६९८ ॥
 शोथं गलप्रहं शुद्धिं शरीरं देतुं सभगन्दरम् ।
 वृद्धशालकरी चैव मन्दाग्नेरपि दीपनी ॥ ६९९ ॥
 र. सं., र. चं., र. र, प, र सु, भै र., शूलाधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोहभस्म २-२ कर्ष, त्रिफला, मुनीहींग, साप्रभस्म, कचूट त्रिकटु, मुनामुदागा, पत्रक, तज, इलायची, तालीपात्र, जायफल, लौंग, अजवायन, जीरा और धनिया १-१ कर्ष लेकर बारीकचूर्णकर परि-गन्धककी नीलकण्ठकलीमें मिलाय बटरीके दूधसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ मासेकीगोलिया बनाकर रखओके। इनमेंसे १-१ गोली समयविनाशुग्धकेसाथ देनेसे ८ प्रकारकेशूल,

हीहा, शुभ्र, उदररोग, अम्लपित्त, आमवात, पाण्डु, कामला, शोथ, गल्यह, सबप्रकारकीश्चिद, श्लेष्मिद, भगन्दर, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरती है ॥ १६६ ॥

१६७ शूलविध्वंसिनीवटी

हिङ्गु जातीफलञ्चोष्णं वचामुण्डीसमन्वितम् ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युः सूतः स्यादेकभागकः ॥७००॥
भृङ्गराजरसेनैव खल्वमध्ये धिमर्देयेत् ।
कल्केन तेन कुर्वीत घटीञ्चणकसहिभाम् ॥ ७०१ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः सर्वरोगविनाशिनीम् ।
वातरोगेऽग्निमान्ये च शूलेऽजीर्णे कफामये ॥ ७०२ ॥
अरुचौ वेपथावेवं प्रदेया यद्वक्तोद्युते ।
व्यथायामुद्बन्ध्यापि प्लीहरोगे गुदामये ॥ ७०३ ॥

रससागर, शूले ।

भाषा—मुनीर्हीग, जायफल, मरिच, वच, गोरखमुण्डी ५-५ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १-१ भाग लेकर सबका बारीकचूर्णकर भंगरेकरससे १-२ दिन मर्दनकर चने-प्रमाण गोलियेबनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ प्रातः कालदेनेसे वातरोग, मन्दाग्नि, शूल, अजीर्ण, कफव्याधि, अरुचि, कम्प, बद्धकोष्ठता, उदर-पीडा, ग्रीहा और गुदरोग इनसबको यह नष्टकरती है ॥ १६७ ॥

१६८ शूलविनाशिनरसः

रससौवीरमाक्षीकशिलाजित्ताम्रभागरुः ।
समभागान्श्च गन्धेन सिद्धः शूलविनाशनः ॥ ७०४ ॥
र. मृ., शूलधिकार ।

भाषा—पारा, सफेदसुरमा, सोनामाखी और ताम्र इनकी-भस्में, शिलाजीत, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ दिन मर्दनकर रखोड़े । इसमेंसे ३ से ६ रसौतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तशूलोंको दूरकरता है ।

१६९ शूलशुद्धरसः

शुल्वं संशोधयेत्पूर्वं प्रायुक्तेन विधानतः ।
मारयेत्पूर्वविधिना पुट्टुद्गधादिपञ्चकैः ॥ ७०५ ॥
पूर्वाक्तस्युक्त्या सूतेनैव भस्मीभूतं समाहरेत् ।
पलद्भयञ्च चत्वारि मृताद्धानाः पलानि च ॥ ७०६ ॥
ताम्राद्यगुणञ्चैव क्षारं निर्धम्ममाहरेत् ।
तत्सर्वमेकतः कृत्वा मर्देयेद्भिङ्गुवारिणा ॥ ७०७ ॥
कुवेराक्षारसैश्चैव व्योपनीरेस्ततः परम् ।
लेलीतकेन सम्मथ्यं नीरैराद्रकसम्भवेः ॥ ७०८ ॥
जम्बीरयोञ्जपूरान्दि नांगरञ्जजसुकुजेः ।
उपक्षारेस्तथा क्षारं जम्बीराद्यभस्माऽपि च ॥ ७०९ ॥
एषामाग्निः प्रमृद्दीयात्प्रत्येकञ्च दिनेदिनम् ।
ततः संशोधयेत्पलाच्छुद्धशतुं रसेश्वरम् ॥ ७१० ॥
मापमेकं प्रयुञ्जीत रसेनैव शूलशान्तये ।
अनुपानमिदं कुर्यादाद्रकं व्योपरामउम् ॥ ७११ ॥

रुचकञ्च कुवेराक्षीं सर्वं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
शस्तेन वारिणाऽऽलोड्य पाययेदनु शूलिनम् ॥७१२॥
सर्वेण शूलजातेन मुच्यते नाऽत्र संशयः ।
देवीशास्त्रानुसारेण धिविच्य प्रतिपादितः ॥ ७१३ ॥
शूलशत्रुरितिर्यातः सर्वशूलविनाशनः ।
पथ्ये तु द्विदलं वर्ज्यं नवान्नं सर्वमेव हि ॥ ७१४ ॥
रसालं, शूलाधिकार ।

भाषा—विधिपूर्वकशुद्धकरकेमारोहण तांबेको दुग्धादि पञ्चा-मृतसे मर्दनकर गजपुट्टकी आंचदे । फिर विधिपूर्वक माराहुआ-पारा २ पल, पूर्वोक्तताम्रभस्म ४ पल, कायमशोरा अथवा नोसादर ८ पललेकर हींग, वरञ्ज, त्रिकटु, गन्धककतिल, अदरक, जमीरी, बिजोरा, नारङ्गी, चूका, उपक्षार, क्षार और ययालाभ अम्लवर्ण इनके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ मासेकी गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोलीदेकर अदरक, त्रिकटु, मुनीर्हीग, संचल, करंज सब समभागलेकर बारीकचूर्ण-कर इसमेंसे ३ मासेचूर्ण ठंडपानीमें धोलकर पिलानेसे सब-प्रकारकेशूल नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य सबतरहकीदाल और नये अपको छोड़कर देना ॥ १६९ ॥

१७० शूलसिंहरसः

विपं कर्पं वचा कर्पं त्रिकटुं त्रिफला च पट्ट ।
भार्गीं मुस्ता विडङ्गानां प्रतिरुपञ्च चित्रकम् ॥ ७१५ ॥
गुडेन सर्वतुल्येन गुट्टिका चणमात्रिका ।
शूलसिंहः प्रयोगोऽयं कफशूलहरो भवेत् ॥ ७१६ ॥
एरण्डतैलगुण्ठीभ्यां हिङ्गु सौचचैलान्वितम् ।
उष्णोदकैः पिबेच्चानु रसं वाऽऽनन्दभैरवम् ॥ ७१७ ॥
र. र., टो., र. चं., यो. म., र. क. क., र. को., ना. वि. शूले ।
भाषा—शुद्ध यठनाग और वच १-१ कर्प, त्रिकटु और त्रिफला ६-६ कर्प, भारङ्गी, नागरमोथा, विडङ्ग और चित्रक-मूल १-१ कर्प लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागगुडमिलाय चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तशूलोंको नष्ट-करता है । एरण्डतैल, सोंठ, मुनीर्हीग और संचलचूर्ण ३ मासे गमपानीकेसाथ मिलाकर इसवेसाथ आनन्दभैरवदेनेसेभी शूल नष्टहोता है ॥ १७० ॥

१७१ शूलहरीवटी

हिङ्गुम्वजाजीं समरिचा वचा शुण्ठीसमन्वितान् ।
पञ्चानां पञ्च भागाः स्युस्तथैव सूतकस्य च ॥७१८॥
भृङ्गराजरसेनैव मर्देयेत्खल्वमध्यतः ।
तेन कल्केन कुर्वीत घटीं चणकसम्मिताम् ॥ ७१९ ॥
एकैकां भक्षयेत्प्रातः घटिकां रोगहारिणीम् ।
घातरोगे प्रयोक्तव्या बहिमान्ये तथैव च ॥ ७२० ॥
र. क., र. म., शूलाधिकार ।

भाषा—हींग, जीरा, मरिच, वच, सोंठ, पारदभस्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर भंगरेकरससे १-२ दिन मर्दनकर

यनेप्रमाणं गोलियेवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह वातरोग और मन्दाधिकी नष्टकरतीहै ॥ १७१ ॥

१७२ शूलहररसः (प्रथमः)

सिन्दूरताम्राप्रविषाणि गन्धः

समानि तनुव्यसहस्रवेधी ।

दीप्या कणाः पञ्च पट्टनि हिङ्गु

आर्द्राद्रिरामर्थं च शूलहानिः ॥ ७२१ ॥

रसायनसार., चू. ले ।

भाषा—रससिन्दूर, ताम्र और अन्नकभस्म, शुद्धवज्रनाग और गन्धक १-१ भाग, अमलबैत ५ भाग, अजवाइन, पीपल, पाबोनमक और हींग १-१ भाग लेफ अद्रखकेरसे १ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे यह शूलको नष्टकरताहै ॥ १७२ ॥

१७३ शूलहररसः (द्वितीयः)

सूततुल्यन्तु जैपालं क्षिचैकत्र विमर्दयेत् ।

द्विगुञ्जं भक्षयेन्नित्यं सर्वशूलहरं परम् ॥ ७२२ ॥

ययानीन्द्रययी पाठा यिल्वगुण्ठीरसाञ्जनम् ।

चूर्णं शूलहरं चानु पिबेदुष्णाम्बुना सदा ॥ ७२३ ॥

र. नौ., र. क. ल, शूलाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पाठा और अमालगोटा समभागलेकर यहा तक मर्दनकरे कि पाठा अद्रयद्योजाय अथवा रससिन्दूरबाले । इसकी २-२ रतीकी गोली पानीकेसाथलेकर अजवाइन, इन्द्रजव, पाठा, बेलगिरी, सोंठ और रसौत समभागकाचूर्ण ३ मासो गरमपानीकेसाथ अनुगानमें लेनेसे सर्वप्रकारकेशूल और गुल्म नष्टहोतेहै ॥ १७३ ॥

१७४ शूलान्तकरसः (प्रथमः)

वश्ये शूलान्तरं नाम्ना सर्वशूलविनाशनम् ।

मन्दाग्निमर्त्तचि चैव निवारयति सत्वरम् ॥ ७२४ ॥

शूल्वेन पातितं सूतं दशधा स्वेदितं ततः ।

प्राप्तोन्मुक्तं स्वर्णजीर्णं स्फुराग्निं ततो घट्टितम् ॥ ७२५ ॥

आदित्यगुणतो जायं जीर्णकं समभागतः ।

जम्बीरोमीयन्त्रेऽथ मारयेत्पूर्वयुक्तितः ॥ ७२६ ॥

ताम्रं प्रागुक्तमार्गेण सम्यक् शुद्धञ्च मारयेत् ।

पञ्चाभूतादिवापेन फलेद्भेदादिवर्जितम् ॥ ७२७ ॥

भस्मीभूताच्च सूतेन्द्रात्पलमेकं समाहरेत् ।

मृताद्रवेः पलं प्राद्यं सर्वदोषविर्जितात् ॥ ७२८ ॥

एकत्र मर्दयेत्तौ द्वौ जम्बीराद्यभ्योगतः ।

तत्र कल्के प्रक्षिपेच्च कल्कसाभ्येन लाङ्गलीम् ॥ ७२९ ॥

वन्ध्याकन्दश्च तन्मानं कम्बुकल्कं घृतगुणम् ।

निक्षिप्य खल्वे तत्सर्वं जम्बीराद्यभ्योगतः ॥ ७३० ॥

मर्दयेद्विषसान्नासत दिवानकमतन्द्रितः ।

सुददे सम्पुटे क्षिप्त्वा कल्कञ्च पुटयेत्ततः ॥ ७३१ ॥

आरण्यच्छाणके भारोन्मानकेः स्याद्दशीतलम् ।

आक्षिप्य खल्वे निक्षिप्य सूतं सम्मर्दयेद्बुधः ॥ ७३२ ॥

मागधोमरिचैः सार्धं योजयेच्चूलशान्तये ।

कुचेराक्षीं तयो मांसादित्वा सूतञ्च सादयेत् ॥ ७३३ ॥

अनुपानमिदं दद्याद्दधोपक्वार्धं सहिद्बुक्म् ।

फोणं नियतते शूलं पक्तिजं धातजं तथा ॥ ७३४ ॥

गुञ्जामानप्रमाणेन रसं दद्याद्विचक्षणः ।

अनुपानान्तरं वश्ये रसस्य बलवत्तरम् ॥ ७३५ ॥

दग्धा हरीतकीं क्षारं कुर्यात्सस्यैकभागकम् ।

ययानीं भाग एकः स्याद्वाहीकाद्भागमाहरेत् ॥ ७३६ ॥

माणिमन्थस्य भागः स्याद्दधोपक्वार्धे विनिक्षिपेत्

सूतेन्द्रं विनियोज्याऽथ क्वाथमेनं पिबेदनु ॥ ७३७ ॥

सर्वेषामेव शूलानां नाशो कुर्वाद्रसेश्वरः ।

प्रहणीञ्च विम्वृतीञ्च तादा कुर्वाणमरोचकम् ॥ ७३८ ॥

ग्रीहानं गुल्ममरितलं नाशयेदप सेधितः ।

शालयः कृष्णमुद्गाश्च गवां क्षीरं घृतञ्च गोः ॥ ७३९ ॥

पथ्यमत्र प्रयोक्तव्यमनूतं धर्तयेद्बुधः ।

अयं शूलान्तको नाम रसः प्रोक्तः क्रमागतः ।

देवीशास्त्रानुसारेण विधिच्य प्रतिपादितः ॥ ७४० ॥

रसाल, शूलाधिकार ।

भाषा—शुद्धपाठको समभाग शुद्धतावेके चूर्णमें मिलाकर नीचुनैरहकेरसे घोटघोटकर १० बार ऊर्ध्वपातनकरे । फिर विपनर्गकेसाथ मर्दनकर काञ्चीमें स्वेदनकर तुमुपुना उत्पन्नकर पोडशाश स्वर्णबीजदेकर बाह्यगुणान्धक जारणकरे । फिर समभाग ताम्रभस्म डालकर नीचुनैरहकेरसे घोटकर डमरूयन्त्रमें अभिदेकर ऊर्ध्वपातितकरे । पारदकेयोगसे भस्मकिचेहुए ताम्रको दुग्धादिपत्रासूतमें घोटघोटकर गजुटकीआंचदे । जब बान्ति-शान्त्यादिर्तसे रहित होजाय तब इसकीबराबर पारदभस्म-मिलाय जम्बीरीकीरह अम्बुदोंसे १-२ दिनमर्दनकर इसकल्ककी-बराबर करिहारी और बाउखेखेसेकान्दमिलाय मर्दनकरे । फिर इससे चतुर्गुणित शङ्खभस्म डालकर लगातार ७ दिनतक मर्दनकर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर हठप्रतिक्रिासे ६-७ कपड-मिठीदेकर अच्छीतरहसूखनेपर एकमार जलकीकण्डोंकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती पीपल और मरिचकेसाथदेकर फर्जकेबीजकाचूर्ण ३ मासो फकावे ऊपरसे त्रिकटुकेनाथमें हींगकाप्रक्षेपदेकर कटुणपिलावे । इससे पक्किशूल और वातशूल नष्टहोताहै । इरैकीभस्म, अजवाइन, मुनीहींग, सेंधानामक समभागलेकर चूर्णनाकर रखछोड़े । पूर्वरसकोदेकर त्रिकटुकेनाथमें इसचूर्णका प्रक्षेपदेकर पिलानेसे सबप्रकारकेशूल, प्रहणी, हेजा, अनौण, अरुचि, ग्रीहा, और सबप्रकारकेगुल्म नष्टहोतेहै । पुरानेचावल, कालेसूग, गामका-दूध और घी येसब पक्वहैं ॥ १७४ ॥

१७५ शूलान्तकरसः (द्वितीयः)

भस्मसूतमयश्चापि पलमेकं पृथक्पृथक् ।
 ताम्रभस्मपले द्वे तु गन्धरुस्य पलत्रयम् ॥ ७३१ ॥
 हरितालञ्च कर्पाशं विमलाह्वेममाक्षिरुम् ।
 पलाहं हलिनोरुन्दं नागवज्रौ पलाहंको ॥ ७३२ ॥
 चतुष्पला त्रिभुञ्चेतसर्वं सम्पन्विचूर्णयेत् ।
 भृषात्रीस्वरसेनैव भावयत्सप्तधा भिपक् ॥ ७३३ ॥
 तथा दन्तीरसे बहलं दद्यादाद्रकवारिणा ।
 तेन कोष्ठं विशुद्धे च दधिभक्तञ्च भोजयेत् ॥ ७३४ ॥
 सर्वशूलान्हरत्येषा रसः शूलान्तको मतः ।
 रसः शूलहरः प्रोक्त इति भालुकिभाषितम् ॥ ७३५ ॥
 र. को., र. चं., चि. ऋ. र. र. स., शूले ।
 टि०—यत्र अयमः रथाने खरथेनि पाठो लभ्यते तत्राऽन्नभस्म
 निवीन्यम् ।

भाषा—पारद और लोहभस्म १-१ पल, ताम्रभस्म २
 पल, शुद्धगन्धक ३ पल, रसमाणिक्य अथवा शुद्धहरिताल,
 रौप्यमाक्षिक और स्वर्णमाक्षिक १-१ कर्प, शुद्धकरिहारी २
 कर्प, नाग और बहभस्म १-१ कर्प, निसोत ४ पल लेकर
 बारीकचूर्णकर भुईआंवले और दन्तीमूलकेस्वरसोंसे ७-७ भाव-
 नाएँ देकर ३-३ रतीकी गोलिया बनाकर रखओहे । इनमेंसे
 १-१ गोली अदरखकेरसकेसाथदेनेसे दस्तहोंगे । पेट साफहोनेपर
 दहीमात खानेको देवे । इससे तमामशूल नष्टहोतेहैं ॥ १७५ ॥

१७६ शूलान्तकरसः (तृतीयः)

मृणालं चन्दनं यष्टी शुद्धची वालकं तथा ।
 पतत्सर्वं समञ्जणं चूर्णांशौ शर्करां क्षिपेत् ॥ ७३६ ॥
 सिन्दूरं बह्लमात्रेण तपडुलीदकपाततः ।
 पित्तशूलभिदाहौ च सर्वशूलं प्रशाम्यति ॥ ७३७ ॥
 व. रा., शूले ।

भाषा—भर्सीड, सफेदचन्दन, सुलहठी, गिलोय और
 सुगन्धवाला १-१ कर्प, शर्करा ५ कर्प, रससिन्दूर ३ रती मिला-
 कर १-२ पलपोटकर रखओहे । इसमेंसे ३-३ मासे चावलके-
 धोवनवेसाथदेनेसे पित्तशूल और दाह नष्टहोतेहैं ॥ १७६ ॥

१७७ शूलान्तकरसः (चतुर्थः)

रसहेमाप्रवह्नानां भागास्तुल्यांशोयोजिताः ।
 वरायनाम्युना मर्द्यः सिद्धः शूलान्तको रसः ॥ ७३८ ॥
 शतावरीरसक्षौद्रयुक्तो वा शर्करान्वितः ।
 यष्टयाह्नत्रिफलानिम्बकटुकारुवर्धयुतः ॥ ७३९ ॥
 धात्रीरसक्षौद्रयुतस्सधात्रीचूर्णमाक्षिकः ।
 शिवाद्राक्षायुतो वापि पथ्याक्षौद्रयुतोऽथवा ॥ ७४० ॥
 पाचनं वमनं शस्तं लह्नं कफशूलिनाम् ।
 गोघृमयवरूक्षाणि मृन्नि च हितानि च ॥ ७४१ ॥
 मातुलुङ्गरसो वापि शिपुकापोऽथवा हितः ।
 सक्षारो मधुना पीतः पार्श्वहृद्वस्तिशूलनुत् ॥ ७४२ ॥
 र., शूलाधिकारे

भाषा—पारा, सुवर्ण, अन्नक, वज्र इनकीमलमें समभाग
 लेकर त्रिफला और नागरमोयेकेसाथसे मर्दनकर १-१ रतीकी-
 गोलियांनानाकर रखओहे । इनमेंसे १ से २ गोलीतक शतावरीके-
 रस और मधु अथवा शर्करा अथवा सुलहठी, त्रिफला, नीमकी-
 छाल, कुटकी, अमिलतासकापुद्दा इनकेकाड़ेकेसाथ, अथवा आंवले-
 केरस और मधुकेसाथ, अथवा आमलेकेचूर्ण और शहदकेसाथ,
 अथवा हरेँ और द्राक्षकेसाथ अथवा हरेँ और मधुकेसाथ, अथवा
 विजोरेकेरस या सहजिनकेबाथकेसाथ अथवा यमरार और
 मधुकेसाथदेनेसे पार्श्व, हृदय और वस्तिशूलको यह नष्टकरताहे ।
 कफशूलको पाचन, वमन और लह्नकराना । गैहूँ, जव, रुस-
 पदायं और मधु पच्यमें देना ॥ १७७ ॥

१७८ शूलारिरसः (प्रथमः)

रसं गन्धं समं कृत्वा ताम्रं तुल्यं नियोजयेत् ।
 मरिचं नागरं हिङ्गुं यथाऽजाज्यशिमूलकम् ॥ ७४३ ॥
 मार्कण्डेयस्वरसेनैव दिनं सूक्ष्मं विमर्दयेत् ।
 वदरास्थिप्रमाणेन घटिकाः काप्येन्द्रिपक् ॥ ७४४ ॥
 शूलं शुल्ममुदाघतं वातरोगं निहन्ति च ।
 रसः शूलारिरित्येष धहिमान्घनिपृदनः ॥ ७४५ ॥
 व. रा., शूले ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म, मरिच, सोंट,
 भुनीहींग, वच, जीरा, चिन्मूल सब समभागलेकर बारीकचूर्ण-
 कर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगेरेकेरससे एकदिन-
 मर्दनकर घेकीगुठलीकेराना गोलियेंबनाकर रखओहे । इनमेंसे
 १-१ गोली समय अथवा रोगोशितानुपानकेसाथदेनेसे शूल,
 शुल्म, उदावर्त, वातरोग, मन्दाग्नि ये सब नष्टहोतेहैं ॥ १७८ ॥

१७९ शूलारिरसः (द्वितीयः)

रसं गन्धकं दद्रुणं श्वेतकाच-
 मलं भारशुङ्गं विडङ्गं वराटम् ।
 रविं शम्भुकं मेपजातञ्च शुङ्गं
 रविस्तुकुपयोभि दिनं सम्बिमर्द्य ॥ ७४६ ॥
 पुटे दग्धमेतद्विपल्यापयुक्तं
 मरोचाज्ययुक्तं प्रयुञ्जितं बह्लम् ।
 महाशूलद्रोपे सपक्तौ च रोग
 इमं मन्दह्रौ ददीत प्रहृष्याम् ॥
 क्षये दुर्निवारो विकारो च पाण्डौ
 तथा घातरोगे प्रयुञ्जितं नित्यम् ॥ ७४७ ॥
 रसायनलं., र. का, नि. र., वै. चि., र. वो., शूलाधिकारे ।
 नि. र., वै. चि., शूलहर इतिनामा. र. का. महेश्वररस इतिनाम

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, सुहागा, कालनमक, बारहमींगे
 और कौड़ीकीभस्म, विडङ्ग, ताम्र, घोषा और मेटकेसींगकी-
 भस्म सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण
 कजलीमें मिलाय शर्करा और आककेदूधसे मर्दनकर गोलाबनाय
 शतावरीमधुमें बन्दकर ३-४ कपःशिमोदेकर सूखनेपर गजपुटकी

आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर शुद्धबछनाग और निकट
१-१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मरिच और
पीकेसाथमिलाकर देनेसे उदतशूल, पकिशूल, मन्दाभि, असाध्य-
क्षय, पाण्डु और वातरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १७९ ॥

१८० शूलारिसः

शुण्ठी सौचर्चलं टङ्कं सैन्धवं प्रतिफार्पिकम् ।
मह्लं मापमितं शिष्टुरसेन परिमदयेत् ॥ ७१८ ॥
यदरास्थिप्रमाणेन शुटीं कृत्वा विचक्षणः ।
उष्णतोयाऽनुपानेन शूलञ्च विविधज्वयेत् ॥ ७१९ ॥
अशीतिं वातजात्रोगाश्चाशयेन्नात्र संशयः ।
मत्स्येन्द्रः कृपया पूर्वं गोरक्षाय ददौ किल ॥ ७६० ॥
स्तायनसं, स्तायनाऽधिकारे ।

भाषा—सोंठ, सचल, भुनासुहागा, सेंधागमक १-१ कर्प
शुद्धसोमल १ माशा लेकर बारीकचूर्णकर सहिजनकेरसेसे एक-
दिन मर्दनकर बेरकीशुटलीकेवावर गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इसमेंसे १-१ गोली गरमपानीकेसाथलेनेसे नानाप्रकारकेशूल
और ८० वातरोग नष्टहोतेहैं ॥ १८० ॥

१८१ शूलेर्मसिहिनीगुटिका

धलेः शुद्धस्य भागाद्भागार्द्धं पारदस्य च ।
यिपस्य भागो विहेयो मरिचस्य त्रयः स्मृताः ॥ ७६१ ॥
भागैकं पिप्पलीशुण्ठयोः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
भाचयेच्छुद्धचेरस्य रसेनैव त्रिधासरम् ॥ ७६२ ॥
खुपनरसेनैव भाधनात्रितयं तथा ।
पश्चात्संशोष्य चणकमात्रा कार्या घटी बुधैः ॥ ७६३ ॥
तसोदकेन दातव्या सर्वशूलनिवारिणी ।
अज्वयेच्छोतनीरेण नेत्रस्त्राद्यं विनाशयेत् ॥ ७६४ ॥
शूलेर्मसिहिनी ख्याता न देया यस्य कस्यचित् ॥
शङ्करेण स्वयं प्रोक्ता गोपालपुरतः पुरा ॥ ७६५ ॥
र. का, शूलाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा आधाआधाभाग, शुद्ध-
बछनाग १ भाग, मरिच ३ भाग, पीपल और सोंठ १-१ भाग
लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धरुकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय
अदरत और एण्डकेरसेसे ३-३ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण
गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली गरमजलेसाथ-
देनेसे सबप्रकारके शूलको यह नष्टकरतीहै । ठंडेपानीमेंधिसकर
नेत्रोंमें अन्नतरनेसे नेत्रहाव नष्टहोताहै ॥ १८१ ॥

१८२ शृङ्गलावातनाशनरसः

शुद्धं सूतं विपं गन्धं चास्रकं चाम्लवेतसम् ।
द्वित्रिं माययेत्त्रल्वे हंसपाद्रीरसेस्तथा ॥ ७६६ ॥
काचवृष्यां निवेद्याऽथ कुन्डुटीपुटपाचितम् ।
भाषितं मत्स्यपित्तेन द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥ ७६७ ॥
अनुपानविशेषेण शृङ्गलावातनाशनम् ।
पथ्यं क्षीरीदर्नं देयं नायिकैलजलाऽऽप्युतम् ॥ ७६८ ॥
ब. रा., शृङ्गलावाते ।

टि०—“देह्य पाण्डुसुक्कश्च निद्रानाश क्षिरोव्या । वान्ति हिंसा
च विषोऽथ शृङ्गलावातलक्षणम् ॥ इति”

भाषा—शुद्ध पारा, बछनाग, गन्धक, अम्रकमस, अम्लवेत
सबसमभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर हंसराजकेरसेसे दोदिन मर्दन-
कर गोलिवनाय ३-४ कपर्दमिट्टीदीहुई आतशीशीशीमें भरके
कुन्डपुटपुटीआचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मछलीके-
पित्तेसे एकभावनादेकर २-२ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इसमेंसे १-१ गोली रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शृङ्गला-
वातको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दूधमात और नारियलका-
जल देना ॥ १८२ ॥

१८३ शृङ्गलारसः

रसं गन्धं कस्यो भंसितमपि कापर्दभंसितं,
मरीचं भूचन्द्राम्शुधिरससहस्रांशुलविक्रम् ॥ ७६९ ॥
रसाङ्गयशं टङ्कं सकलमपि चूर्णांकृतमिदं,
क्रमाद्यावन्निष्कं घृतसहितमद्यात्क्षयहरम् ॥ ७७० ॥
र. सि, क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, शङ्खभस्म
४ भा, कौडीभस्म ६ मा., मरिच १२ मा., भुनासुहागा २
भागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१
माशा पीकेसाथलेनेसे क्षय नष्टहोताहै । इसकीमात्रा धीरे-धीरे
बढाकर ४ माशेतककीकरना ॥ १८३ ॥

१८४ शृङ्गाराध्रम् (प्रथमम्)

शुद्धं कृष्णाभ्रचूर्णं द्विपलपरिमितं
शाणमानं यदन्य-
त्कर्पूरं जातिकोपं सजलमिभ्रकृणा
तेजपत्रं लघुङ्गम् ।
मांसी तालीसचोचे गजकुसुमगदं
घातकी चेति तुल्यं,
पथ्या धात्री त्रिभूतं त्रिकुटुरथपृथक्
त्वर्धशाणं द्विशानम् ॥ ७७१ ॥
पला जातीफलाख्यं श्रितितलविधिना
शुद्धगन्धाद्रमकोलं,
कोलाद्दे पारदस्य, प्रतिपद्विहितं
पिपमेकत्र मिश्रम् ।
पानीयेनैव कार्याः परिणतचणक-
स्विप्रतुल्याश्च यत्र्यः,
प्रातः खाद्याश्चतस्रस्तदनु च हि किय-
च्छङ्गवेरं सपर्णम् ॥ ७७२ ॥
पानीयं पीतमन्ते ध्रुयमपहरति
क्षिप्रमेतान्विकारान्,
फोष्ठे दुष्टामिजाताम् ज्वरमुदरकजो
राजयश्म क्षयञ्च ।

कासं श्वासं सशोथं नयनपरिभवं
मेहमेदोविकारां-,
श्ल्घ्दिं श्लाम्लपित्तं तुपमपि महतीं
गुल्मजालं विशालम् ॥ ७७३ ॥
पाण्डुत्वं रक्तपित्तं गरलभवगदान्
पीनसं प्लीहोरोगं,
हन्यादामानिलोत्थान्क्रफपवनकृता-
न्पित्तरोगानशेषान् ।
वर्त्यो वृष्यश्च योगस्तस्त्वरुणतरकरः
सर्वरोगे प्रशस्तः,
पथ्यं मांसैश्च शूपै र्धृतपरिलुलितै
र्गन्धुदुग्धैश्च भूयः ॥ ७७४ ॥
भोज्यं योज्यं यथेष्टं ललितललनया
दीयमानं मुदा य-
च्छृङ्गाराध्रणे कामी युवतिजनशता-
भोगयोगाद्गुणः ।
वर्ज्यं श्लाम्लमादौ दिनकृतिपयचि-
त्स्वेच्छया भोज्यमन्य-
दीयायुः कामभूर्तिर्गतवलिपलितो
मानवोऽस्य प्रसादात् ॥ ७७५ ॥

र. सं., शै. र., र. वि., र. सु., यो. म., रसायनसार, र. चं.,
वासाधिरारे । तथा च वै. र., र. कौ., र. र., घ., रसायनघं.,
र. म. मा., वृ. यो. त., र. क., वै. द., रसायनवाजीकरणयोः ।

भाषा—वज्राध्रमभस्य २ पल, शुद्धकपूर, जावित्री, सुग-
न्धवाला, गजरीपल, तमालपत्र, लौग, जटामांसी, तालीसपत्र,
तज, नागकेदार, इष्ट और धावङ्गीकेफूल ४-४ मासे, हेंदं,
आंजले, पहेङ्, त्रिष्टु २-२ मासे, श्लायची, जायफल और
कन्दुवीचन्द्रसे शुद्धकियाहुआगन्धक ८-८ मासे, पारदभस्य
अपमा रससिन्दूर ४ मासे लेङ्ग बारीकचूर्णकर १-२ दिन
शतावरीविगृह्णकरमे घोटकर भोगेहुएचनेप्रमाण गोलिये बनाकर
रगछोड़े । इनमेमे प्रातःकाल ४-४ गोली अदरम और पानके-
साय म्नाहर भोज्या पानीपीनेसे मन्दाग्निजित्तोरोग, ज्वर, उदर-
पीडा, राजयक्ष्म, हाथ, कास, श्वास, शोथ, नेत्रपीडा, प्रमेह,
मेदोशक्ति, वमन, दृढ, अम्लपित्त, घट्टीहुईगुषा, असाध्यगुल्म,
पाण्डु, रक्तपित्त, निरशोथ, पीनस, पीडा, आमवात, कफ और
वातशरोग, तामस्तपित्तोरोग इनसबको नष्टकर मनुष्यको ज्वान
बनाताहै । थोड़ेदिनतक शाक और अम्लशर्षाका परिमाणकरे ।
इमेबाद भोज्यभोजनकरे । इनके निरन्तर सेवनकरनेसे कर्त-
पलियादिभोगे निरन्तर दोष वर्णुएपन्यमे आजाताहै ॥ १०४ ॥

१८५ शृङ्गाराध्रम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकश्चैव द्रुणं नागकेसरम् ।
जातौकोरश्च कर्पूरं लघुं तैजप्रपत्रकम् ॥ ७७६ ॥
मुषणंश्चापि प्रत्येकं कर्ममात्रं प्रकरयेत् ।
शुद्धवृष्याध्रुणान्तु चतुष्पयं प्रयोजयेत् ॥ ७७७ ॥

तालीसं घनकुष्ठञ्च मांसी त्वग्धातकी तथा ।
प्लावीजं त्रिकटुकं त्रिफला करिपिप्पली ॥ ७७८ ॥
कर्पूरं वा चैतेषां पिप्पलीकायमर्दितम् ।
अनुपानं प्रयोक्तव्यं चोचं ह्रीद्रसमायुतम् ॥ ७७९ ॥
अग्निमान्धादिकाप्रोगानरुचिं पाण्डुकामलाम् ।
उदराणि तथा शोथमानाहं ज्वरमेव च ॥ ७८० ॥
प्रहर्णां श्वासकासौ च हन्याद्यश्मानमेव च
नानारोगप्रशमनं बलवर्णाग्निकारकम् ॥ ७८१ ॥
वृहच्छृङ्गाराध्रनाम विष्णुना परिकीर्तितम् ।
एतस्याऽध्यासमाध्रणे निव्याधि जायते नरः ॥ ७८२ ॥

र. सं., घ., (कासे) र. सु., र. चं., वाजीकरणे ।

टि०—“जीवं सुवर्णं रोह वा यषन परिदीकने । तदायं सर्वरोगाणां
सर्वभोगः प्रकीर्तितः” इति केपुचित्युस्तकेष्वधिकं दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुहागा, नागकेदार,
जावित्री, शुद्धकपूर, लौग, तेजपात और सुवर्णभस्य १-१ कर्प,
अध्रकभस्य ४ कर्प, तालीसपत्र, नागसोया, इष्ट, जटामांसी,
तज, धावङ्गीकेफूल, श्लायची, त्रिकटु, त्रिफला, गजरीपल २-२
कर्पलेकर सबका बारीकचूर्णकर पीपलेकेकाथसे एकदिन मर्दनकर
३-३ रतीकी गोलियांबनाकर रगछोड़े । इनमेसे १ या २ गोली
तज और मण्डुकेसायदेनेसे मन्दाग्नि, अर्धचि, पाण्डु, कामला,
उदररोग, शोथ, आनाह, ज्वर, ग्रहणी, श्वास, कास, राजयक्ष्म,
बलनाश, इनसबको नष्टकर आग्नीको युवावस्थामें लाताहै १०५

१८६ शैलेन्द्ररसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं कान्तभस्य चिपन्तथा ।
वाकुचीत्रिफलाचूर्णं निम्बयद्विगुह्चिजैः ॥ ७८३ ॥
दिनं भृङ्गीद्रवै मयं वाकुच्याश्च कपायकैः ।
भक्षयेल्लोहपात्रस्थं कर्पाद्धं जिह्निकाप्रणुतं ॥ ७८४ ॥
शुक्लाम्लतातेलाभ्यां वाकुचीचूर्णलेपनम् ।
अनुपानविशेषेण सर्वकुष्ठविनाशनः ॥ ८८५ ॥
व. रा., वै. वि., वृषे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्तभस्य, शुद्धवचनाग,
वाकुची, और त्रिफला समभागलेकर बारीकचूर्ण कर परिगन्धककी
नीलवर्णमसलीमेंमिलाय नीमकीछाल, धियरसूल, मिलोय,
भंगरा, वाकुची इनकेदोसे १-१ दिन मर्दनकर सुगाकर रग-
छोड़े । इनमेसे ८-८ मासे लोहेकेपात्रमें मण्डुकेसायघोटकर चांने,
ऊपले वाकुचीकाकाष्ठ पीनेसे कोष्यजिह्वदुष्टको बह नष्टकरताहै ।
गुग्गु और भिल्वीकेतेले वाकुचीकेचूर्णता लेपकरे ॥ १०६ ॥

१८७ शोथकालानलरसः

त्रिषं कुटजर्पाजश्च श्वेत्यमी सैन्धव्यं तथा ।
पिप्पलीं देयुष्यञ्च सज्जातीफलद्रुणम् ॥ ७८६ ॥
लोहमस्रं तथा गन्धं पारदेनेव मिथितम् ।
एतेषां कर्ममाधेण पट्टीं शुक्रामितां गुणाम् ॥ ७८७ ॥

भक्षयेत्प्रातस्तथाय कोकिलाक्षरसेन तु ।
 त्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमयापि वा ॥ ७८८ ॥
 कासं श्वासं तथा शोथं ग्रीहानं हन्ति दुस्तरम् ।
 मेहं मन्दानलं शूलं सङ्ग्रहप्रहणीं तथा ॥ ७८९ ॥
 अवद्यं नाशयेच्छोथं कर्दमं भास्करो यथा ।
 शोथकालानलो नाम रोगानीकविनाशनः ॥ ७९० ॥
 भै र, घ, शोधाधिकारे ।

भाषा—चित्रकमूल, इन्द्रजव, गन्धीपल, सैधानमक, पीपल, लौंग, जायफल, मुनाछुद्दागा, लोह और अन्नकभस्म, शुद्धगन्धक और पारा समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर तालमखानेवैरसेसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली प्रातः काल तालमखानेवैरसेसाथ देनेसे ८ प्रकारवैर, साध्य अथवा अवाप्यकास, श्वास, शोथ, ग्रीहा, प्रमेह, मन्दाग्नि, शूल, सङ्ग्रहप्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८७ ॥

१८८ शोथहारसः (प्रथम)

मृतं कृष्णायसं तात्रं पारदञ्च समाशकम् ।
 पार्यतं त्रिगुणं शुद्धं माक्षिकं ताम्रभागिकम् ॥ ७९१ ॥
 वैक्रान्तं ताम्रभागञ्च मृतं सर्वं प्रमर्दयेत् ।
 ताम्रसं शह्नुभस्म मृगशृङ्गभवं तथा ॥ ७९२ ॥
 सर्वं चिमर्यं खल्वेन सितपिपाननये द्रवे ।
 दिनसप्तमितं पश्चात्सौद्रपिपलिसंयुतम् ॥ ७९३ ॥
 यल्लमात्र लिहेदेतत्सर्वंश्वयथुनाशनम् ।
 दोषजं रोगजं शोफं तथागन्तुसमुद्भवम् ॥
 यत्स्त्रीहं क्षयं पाण्डुं प्रहणीञ्च जयेद्भुवम् ॥ ७९४ ॥
 र म मा, ना. वि, शोथे । ना वि., शोफाजकेसरि-
 रस इति नाम ।

भाषा—लोह और ताम्र भस्म शुद्धपारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक ३ भाग सोनामाखी, वैक्रान्त, शह्नु, मृगशृङ्ग इनकी भस्में १-१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर सफेदपुनर्वावैरसेसे ७ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और मधुनेसाथलेनेसे सबप्रकारका-
 शोथ, यकृत, ग्रीहा, क्षय, पाण्डु, प्रहणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १८८ ॥

१८९ शोथहारसः (द्वितीय)

सूतगन्धरविभस्म तुल्यकं
 सर्वतो द्विगुणभस्म लोहजम् ।
 रक्तचूर्णसहितं विमर्दितं
 काककुष्ठसहितं दिनमेकम् ॥ ७९५ ॥
 थल्लयुग्ममशितो गुडाभया
 नागरेषा सगुडेन कणाभिः ।
 विष्यपत्रजरसेन वा तथा
 शोथहा भवति विश्वरिपत ॥ ७९६ ॥

वासामृताकण्टकारीकवायो माक्षिकसंयुतः ।
 कुष्ठं शोथं जयत्याशु कासं श्वासं वर्मि तथा ॥
 सेकस्तथाऽर्कवर्षाभू निम्बस्वायेन शोथजित् ॥ ७९७ ॥
 र, र वो, शोधाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म समभाग, सब सेदूनीलोहभस्म और कमीला लेकर सबकीनीलवर्णकजलीकर काकज्वा और कुष्ठवैरसेसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कुष्ठ और हर्षकाचूर्ण अथवा सोंठ और कुष्ठ अथवा पीपलकाचूर्ण या केल पत्रस्वरस अथवा सोंठ और चिरायतेकावाथ अथवा अहृषा, गिलोय और मटकट्टैयाकेवाथमें मधुमिलाकर इससेसाथदेनेसे कुष्ठ, शोथ, कास, श्वास, वमन येसब निवृत्तहोतेहैं । शोथमें आक, पुनर्वा और नीमकेवाथका स्वेदन कराना ॥ १८९ ॥

१९० शोधाङ्गुशरसः

रसेद्रगन्धं मृतलोहताम्रं
 नागं तथाऽम्रं समसङ्गव्यकञ्च ।
 निर्गुण्डिकास्फोटकपित्तचिञ्चि-
 पुनर्नवाश्रीफलकेशराजम् ॥ ७९८ ॥
 पया रसेर्भांतिवमेकशश्च
 कोलप्रमाणा घटिका विधेया ।
 शोथज्वरारोचकपाण्डुरोगं
 सर्वाङ्गशोथं विनिवारयेद्य ॥
 पित्तान्वितान्यातभान्काफोत्था-
 ष्छोद्याङ्गुशो नाम निहन्ति रोगान् ॥ ७९९ ॥
 भै र, शोधाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, नाग, और अन्नकभस्म समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर निर्गुण्डी, कोयल, कैश, इमली, पुनर्वा, नारियल, बालाभगा इनप्रत्येकवैरसेसे १-१ दिन मर्दनकर देवरावर गोलियाबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुमाननेसाथ देनेसे एकाङ्ग अथवा सर्वाङ्गशोथ, ज्वर, अहचि पाण्डु इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १९० ॥

१९१ शोधारिसः (शोफारिसः)

हिन्दुलञ्जयपालञ्च मरिचं टङ्गुणं कणाम् ।
 सम्मर्द्यं यल्ल सघृतः सर्वशोफहरः परः ॥ ८०० ॥
 र च, रसायन, यो. र, नि र, शोधाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध शिगरिक, जमात्पेटा, मरिच, सुद्दागा और पीपल समभागलेकर बारीकचूर्णकर पुनर्वा वरीह शोफप्रदवा ओंकेरसमें मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पृतनेसाथ देनेसे यह सबप्रकारशोथोंको निवृत्तकरताहै ॥ १९१ ॥

१९२ शोधारिलोहम् (प्रथमम्)

त्रिकटु त्रिफला द्राक्षा पौष्करं सजलं शशी ।
 लौहं शवा लवङ्गञ्च शङ्गी त्वक् शतपुष्पिका ॥ ८०१ ॥
 विभीतकं विडङ्गञ्च धातकीपुष्पमेव च ।
 एतानि समभागानि श्लक्ष्णचूर्णानि कारयेत् ॥ ८०२ ॥
 सर्वद्रव्यसमझाऽत्र सुशुद्धं लौहकिट्टकम् ।
 कुटजस्य रसेनाऽपि प्रक्षयेत्परिप्लवतः ॥ ८०३ ॥
 वेष्टितं जम्बुपत्रेण पङ्केतं परिलेपयेत् ।
 ततो गजपुटे पक्त्वा स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ ८०४ ॥
 प्रातःकाले शुचि भूत्वा भक्षयेच्छक्तिमानतः ।
 निहन्ति सर्वजं शोथं प्रहृणीञ्च विशेषतः ॥ ८०५ ॥
 उदरेषु च सर्वेषु शोथेषु च विधानतः ।
 विविधा व्याधयश्चान्ये सेवनाद्यान्ति साध्यताम् ८०६
 भै. र., शोयाधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, द्राक्ष, पोद्दकरमूल, सुगन्धवाला, कबूतर, लोहभस्म, वक्, लौंग, काकड़ासौंगी, तज, सौंफ, बहेडा, विडङ्ग, धावड़ीकेफूल सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर बराबरप्रमाणमें शुद्धमण्डूरमिलाकर कुटजके रससे भावनादेकर पिण्डबनाय जासुनकेपतोंमें लपेटकर ४ अहुल कीचड़ जम्बुपत्रद्वारा गजपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलोहेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ माशेसे ३ माशेतक प्रातःकाल पवित्रहोकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे समप्रकारवेशोष, विशेषकर ग्रहणीरोग, उदररोग और समस्तव्याधियां नष्टहोतीहैं ॥ १९२ ॥

१९३ शोधारिलोहम् (द्वितीयम्)

अयोरजस्व्युपणयावशूकं
 चूर्णेञ्च पीतं त्रिफलात्सेन ।

शोथं निहन्यात्सहसा नरस्य
 यथादानि शूकमुदप्रवेगः ॥ ८०७ ॥

भै. र., च. सं., सु. सं., आ. पु., हितो., र. सं., र., र. चि.,
 शोयाधिकारे ।

टि०—र. सं., र. सु., र. चि., एषु शूकपणादिलोहमिति नाम । कण्ठ्यादिविचिन्विनेपदेशे अणुपाने त्रिफलात्सत्स्थाने केवलमुष्णाण्डु गृहीतम्, यावत्सकाऽमात्रं, तद्व्यवसायि स्वग्रे कारणेन नोपलभामहे ।
भाषा—लोहभस्म, त्रिकटु और श्वशार समभागलेकर त्रिफलाके स्वस अथवा हाथवेसाय उचितमात्रामें लेनेसे समस्त-शोथ नष्टहोतेहैं ॥ १९३ ॥

१९४ शोधोदरारिलोहम्

पुनर्नवाऽमृता वह्निर्गवाक्षी मानवज्जिके ।
 सूर्यावर्तकैर्मूलञ्च पृथगष्टपलं जले ॥ ८०८ ॥
 पादशेषे शृतं द्रोणे सुवृते चरुगालिते ।
 लौहचूर्णाष्टपलकं पंचेदाज्यसमं भिषक् ॥ ८०९ ॥
 अर्कस्य द्विपलं क्षीरं स्नुहीक्षीरं चतुष्पलम् ।
 पलद्वयं कौशिकस्य माक्षिकाभ्यजतः पलम् ॥ ८१० ॥

पलाद्धं पारदं शुद्धं गन्धकस्य पलन्तथा ।
 जयपालं ताभ्रमन्नं शुद्धमन्नं प्रदापयेत् ॥ ८११ ॥
 कटुपुष्यहृिकन्दानि शाराख्यं घण्टकपर्णकम् ।
 पलाशस्य च बीजानि कञ्जुकी तालमूलिका ॥ ८१२ ॥
 त्रिफला च क्रिमिरिपुस्त्रिवृद्धन्तीभवं तथा ।
 सूर्यावर्तगवाक्षी च वर्षाभू वैज्रवह्निका ॥ ८१३ ॥
 अपां लौहसमां मात्रां स्निग्धभाण्डे निधापयेत् ।
 एतोऽस्य भक्षयेन्मात्रामनुपानञ्च युक्तिः ॥ ८१४ ॥
 हन्ति सर्वोदरं शीघ्रं नात्र कार्या विचारणा ।
 ये च शोयाः सुदुर्वासाश्चिरकालानुबन्धितः ॥ ८१५ ॥
 तान्सर्वान्नाशयत्याशु तमः सूर्योदये यथा ।
 नातः परतरं किञ्चिच्छोथोदरविनादानम् ॥ ८१६ ॥
 उदराणि पाण्डुरोगं कामलाञ्च हलीमकम् ।
 अशीं भगन्दरं कुष्ठं ज्वरं गुल्मञ्च नाशयेत् ८१७ ॥
 यो. म., भै. र., र. क., र. र., र. का., उदराधिकारे ।

भाषा—पुनर्नवा, गिलोय, चित्रकमूल, इन्द्रायणकीजड़, मानरन्द, मूदरकादूध, हुरहुर और आक्कीजड़कीछाल ८-८ पल लेकर अठगुनेपानीमें चतुर्धासावशेषकायकर यक्षमें छानकर मण्डूर और धी ८-८ पल डालकर पकावे । पकावेसमय आक्कादूध २ पल, मूदरकादूध ४ पल, गूगल २ पल, स्वर्णमाक्षिकभस्म और शिलाजीत १-१ पल, समभाग शुद्धपारेगन्धर्ककीकमली २पल, शुद्धजामालगोटा, ताभ्र और अन्नकभस्म १-१ पल, कटुष्ट, चित्रकमूल, सूरण, वाण्डू, घण्टपाटला, पलाशीज, क्षीरकञ्जुकीकादूध, तालमूली, त्रिफला, विडङ्ग, नितोत, दन्तीमूल, हुरहुर, इन्द्रायणकीजड़, पुनर्नवा, इङ्गोष्ठ सबसमभागकाचूर्ण ८ पल डालकर पकावे । एक तैयारहोनेपर निकालकर चिक्नेवर्तनमें रखछोड़े । ६-७ दिन वीतजानेपर १ माशेसे ३ माशेतकरी-मात्रा रोग और रोगीका बलाबलदेकर रोगोचितानुपानकेसाधनेसे दुस्तर और पुताना शोथ, उदररोग, पाण्डु, कामला, हलीमक, बवासीर, भगन्दर, कुष्ठ, ज्वर, गुल्म इनसबको यह तन्त्राल नष्टकरताहै । इससे बढ़कर और दूसरी दवा शोथहर नहींहै ॥ १९४ ॥

१९५ शोधनरसः

शुद्धसतपलं प्राहं शुद्धगन्धकतः पलम् ।
 तिस्रिरीचीजपलकं त्रिफलाऽष्टपला भवेत् ॥ ८१८ ॥
 सर्वमेकत्र संयोज्य खल्वे दत्त्वा सुमदयेत् ।
 पन्थनिभ्युक्ततोयेन दिनमेकं निरन्तरम् ॥ ८१९ ॥
 दन्तीनीरैस्तथा मर्चस्त्रिज्वलाश्वत्थायतो दिनम् ।
 ततो यदरमात्रेण घटिका रचयेद्बुधः ॥ ८२० ॥
 छायाशुष्का विधायाऽथ करण्डे विनिवेशयेत् ।
 एकां घटीं ददीताऽसामुदरार्तियुजे भिषक् ॥ ८२१ ॥
 उष्णोदकेन दत्त्वाऽथ घर्मे तं स्थापयेत्ततः ।
 विरेचनं प्रजायेत ततो दद्याद्य पय्यकम् ॥ ८२२ ॥
 दत्ते पय्ये स्तम्भनं स्याद्विरेकस्य न संशयः ।
 अनेन सनराजेन दिनद्वयति जलोदरम् ॥ ८२३ ॥

शोषणो नाम मृतेन्द्रो जलोदरनिवर्तकः ।
त्रिदिनात्रिदिनादूर्ध्वं रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ॥ ८२४ ॥
अन्यथा नैव योक्तव्यो घलक्षीणो विनश्यति ।
मुद्गयूपः सुप्रथमं स्याद्विलेपिं वा प्रयोजयेत् ॥ ८२५ ॥
रसालं, उदराधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और जमालगोटा १-१ पल, त्रिपला ८ पल लेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धरकीनील-वर्णकजलीमें मिलाय परेनीवू, दन्तीमूल और निसोततेन्दुवोसे १-१ दिन मर्दनकर छोटेंबरपारार गोलियें बनाकर धाया-शुद्धकर रखछोड़े । इतमेंसे १-१ गोली गरमजलवेमाथ देकर घृषमें बैठानेमें रचनहोगा । पेटमासहोनेपर मूंगकायूप अथवा रिचड़ी देवे । प्रतितीसरेदिन इसीतरहेदेनेसे जलोदर निरृत होताहै । इसका प्रतिदिन प्रयोग नहींकरना क्योंकि जलोदरी प्राय धीगहुभाकरताहै और बलक्षीण आदमीका अकम्मात् गल्यु हुआ करताहै ॥ ११५ ॥

११६ शोफमुद्गररसः

रसं गन्धं मृतं ताग्रं पय्या बालकगुग्गुलुः ।
सममायेन संयुक्तं गुटिकाः कारयेत्ततः ॥ ८२६ ॥
एकैकां सेवयेद्द्वयः शोफपाण्डुपनुत्तये ।
शीतलञ्च जलं देयं तक्रञ्चाम्लं विवर्जयेत् ॥
शोफमुद्गरनामाऽयं पूज्यपादेन निमित्तः ॥ ८२७ ॥
वै चि., व. रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताग्रमस, हरे, तगर गण्टोला और गुग्गुलु समभागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पारे-गन्धकनीलीवर्णकजलीमेंमिलाय माथकापी डालकर यहतक सरलकरे कि गोलीबननेलायकहोजाय । इसकी १-१ मासेकी गोलियां बनाकर १-१ गोली ठंडेजलनेसाथदेनेसे यह शोफको नष्टकरताहै । इसमें छाछ और पटाईका परहेजकरे ॥ ११६ ॥

११७ शोफारिरसः

स्वच्छसूतस्य गन्धेन कृत्वा कज्जलिकां शुभाय ।
ततश्शुल्वं सकान्तञ्च राजावर्तञ्च सौम्यरुम् ॥ ८२८ ॥
अम्रकञ्च शिला तालं विष्वयोपाऽपराजिताः ।
विपत्तिन्दुकथीजात्रि प्रत्येकं रससम्मिताम् ॥ ८२९ ॥
सर्वमेकत्र संयोज्य चूर्णयित्वा ततः परम् ।
भृङ्गराजरसं दत्त्वा मर्दयेद्विषसद्वयम् ॥ ८३० ॥
शोषणं कारयित्वा च दातव्या चणकोपमा ।
रसः शोफारिनामार्यं प्रोक्तो मन्थानभैरवेः ॥ ८३१ ॥
स्थील्यं रोगमरोचकामिसदनं शोफञ्च पाण्डुमयं,
प्लीहानं प्रहणीञ्च मूलकद्वजं वातं तथानालकम् ।
हिफकाश्यासरुफानिलं त्रिमियकृच्छूलञ्च जीर्णज्वरं,
सर्पान्वातरुफामर्याञ्च हरति क्षिप्रं त्रिदोषामयान् ॥ ८३२ ॥
वै. चि., व. रा., शोफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताया, कान्तलोह, लाज-वर्द, चांदी, अम्रक इनकीभस्में, शुद्धमैनसिल, हरिताल और बछनाग, त्रिकटु, कोयल और कुचिला समभागलेकर नीलवर्ण-कजलीकर भंगरेकेरसने दोदिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखाछोड़े । वमनादिकसे कोष्ठशुद्धकरके इतमेंसे १-१ गोली उचितानुपाननेसाथदेनेसे स्थूलता, अरचि, मन्दाग्नि, शोफ, पाण्डु, ग्रीहा, प्रहणी, बवासीर, वातरोग, आनाह, क्षिचकी, श्याम, कफवातविकार, कृमि, यक्ष्मशूल, जीर्णज्वर इनपत्रो यह नष्टकरताहै ॥ ११७ ॥

११८ श्रीकण्ठरसः

स्वर्णताराऽर्ककान्तञ्च तीक्ष्णं वा भारितं समम् ।
कृष्णाऽम्रसरचवमासीकं प्रत्येकं स्वर्णतुल्यरुम् ॥ ८३३ ॥
तत्सर्वञ्चाऽऽन्धितं धाम्यं तत्खोटं मृतपापदम् ।
समं सूतान्मृतं घञ्जं पादांशं तत्र योजयेत् ॥ ८३४ ॥
सर्वं जम्बीरजैर्द्रावैस्ततस्यत्वे विमर्दयेत् ।
दिनेकं तस्मिन्स्यघाऽथ भूषरे पाचयेदिनम् ॥ ८३५ ॥
उद्धृत्य गन्धकं तुल्यं दत्त्वा रुद्धा धमेदुतम् ।
तच्चूर्णं मधुनाऽऽज्येन मापमार्यं लिहेत्सदा ॥ ८३६ ॥
रसः श्रीकण्ठनाम्नाऽयं खेचरत्वं प्रयच्छति ।
संधत्सरप्रयोगेण जीवित्कल्पान्तमेव च ॥ ८३७ ॥
तस्य भूयपुरीषाभ्यां सर्वलौहानि काञ्चनम् ।
पलेकं गन्धकं क्षीरैः क्षामकं चानुपाययेत् ॥ ८३८ ॥
र. सं., रसायनस., रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, चांदी, ताम्र, कान्तलोह, फोलाद, अम्रक-सरच, सोनामाखी इनकीभस्में समभागलेकर अन्धमपामें बन्दकर धमनकरनेसे खोट दैयारहोगा । यह खोट और पापदभस्म समभाग लेकर पोरसे चतुर्थांश हीरेकीभस्म मिलाकर जंभीरीके-रससे एकदिनमर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर भूषर-यन्त्रमें अग्निदे । स्वाहाशीतल्लहोनेपर बराबरका शुद्धगन्धक मिलाय अन्धमपामें बन्दकर धमनकरे । ठंडा होनेपर निकालकर रखछोड़े । इतमेंसे उद्वधराबर समयोचितानुपाननेसाथलेनेसे समस्तरोगोंसे निर्मुक्तहोकर दीर्घजीवी होताहै । उसके मूत्र और पुरीसे समस्तलोहोंका रज बदलजाताहै । एकपल शुद्धगन्धक दूधनेसाथअनुपानमें देनेसे रसका शरीरमें कामणहोताहै ॥ ११८ ॥

११९ श्रीपद्मगणकेसरीरसः

व्योषामृतयमान्यञ्च सूतोऽग्नि गन्धकं शिला ।
सौभाग्यं जयपालञ्च चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ ८३९ ॥
भृङ्गोष्णरजम्बीरार्द्रकतायै विमर्दयेत् ।
अस्य रत्नद्वयं खादेदुण्णतोयाऽनुपानतः ॥
श्रीपदे दुस्तरं हन्ति प्लीहानं हन्ति सेवितः ॥ ८४० ॥
वै र, घ, वै क., श्लिपाधिकारे ।
भाषा—त्रिकटु, शुद्ध बछनाग, अजवाइन, शुद्धपारा, विनरसूल, गन्धक, मैनसिल, सुहागा और जमालगोटा सम

भागलेकर बारीकचूर्णकर पोरान्धकत्री नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगरा, गोखरू, जंभीरी और अदरखके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली गरमजलनेसायदेनेमें दुस्तर फीलायव और शीहानो यह नष्टकरताहै ॥ १९९ ॥

२०० श्रीपदध्वंसीरसः

पारखं टङ्कणं तुल्यं तालकं ताम्रमेव च ।
माक्षिकं कान्तलोहञ्च मृतं शुद्धा शिला तथा ॥८४१॥
एतानि मर्दयेत्सर्वे शिशुनिर्गुण्डिकायुतैः ।
द्विसप्ताहं विशोष्याऽथ सम्यग्गजपुटे पचेत् ॥ ८४२ ॥
शरावसम्पुटे रद्धा काचकूप्यामयाऽपि च ।
सप्तवारं पुटेद्धीमांस्ततः सिद्धो भवेद्भ्रसः ॥ ८४३ ॥
रसोऽयं श्रीपदध्वंसी प्रणीतो नकुलेन हि ।
अस्य गुञ्जाद्वयं खादेत्त्रयं चाऽथ चतुष्टयम् ॥ ८४४ ॥
पञ्चकोलकपायेण हन्त्ययं सत्वरं गदान् ।
श्रीपदं गलगण्डादीन्कुष्ठं विस्फोटकानपि ॥ ८४५ ॥
ना. वि., श्रीपदाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गुहागा और हरिताल, ताम्र, सुवर्ण माक्षिक और कान्तलोहभस्म, शुद्धैतसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सहिजन और निर्गुण्डीबेरस तथा गायके घीसे १-१ दिन मर्दनकर १४ दिनतक कड़ीधूपमें सुपाकर शरावसम्पुटे बन्दकर गजपुटेकी आचदे । स्वाज्ञाशीतलडोनेपर निकालकर पूर्वोक्तद्वयोंसे मर्दनकर शराव अथवा आतशीशीशीमें बन्दकर आचदे । सात आच देनेकेबाद निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे २ से ४ रत्तीतकमात्रा उचितानुमानसेदेकर पञ्चकोलका-कायपिलानेसे श्रीपद, गलगण्ड, कुष्ठ, विस्फोटक वैसेच नष्टहोतेहैं ॥

२०१ श्रीपदारिरसः

कणावचादारुपुनर्नवानां
चूर्णं सविभवं समवृद्धदारु ।
सगन्धमृतस्य निहन्ति यहः
सकाञ्जिकः श्रीपदरोगमुग्रम् ॥ ८४६ ॥

र. का., श्रीपदाधिकारे ।

भाषा—नीपल, वच, देवदारु, पुनर्नवा, मोंठ, विधारा शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धकत्री नीलवर्णकजलीमें मिलाकर रखडोढ़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती काञ्जीबेसापलेनेसे बहेतुए श्रीपदरोगको यह नष्टकरताहै ॥ २०१ ॥

२०२ श्रीपदारिलोहम्

हरीतक्या विमीतस्य धान्याभूषणं सुवृणितम् ।
पट्टालकप्रमाणेन प्राहामेतद्रूपिण्या ॥ ८४७ ॥
तोलद्वयं लोहचूर्णं कान्तलोहस्य जातरितम् ।
तोलद्वयं ततो देयं विशुद्धञ्च शिलाजतु ॥ ८४८ ॥

शुल्वैकत्र समस्तांस्तु त्रिफलान्धाथभावना ।
श्रीपदाद्यगदध्वंसी सर्वव्याधिधिनाशनः ॥
श्रीपदारिरिति ख्यातो लोहो मुनिभिराद्रित् ॥ ८४९ ॥
भै र., र. र., र. सु., टो., श्रीपदाधिकारे । टोडरानन्दे त्रिफलालोहमितिनाम ।

भाषा—हरे, बहेड़ा, आवल, लोह और कान्तलोहभस्म, शुद्धशिलाजीत २-२ तोलेलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाकेजायसे ६-७ भावनाएँ देकर १-१ माथेकी गोलियाबनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक त्रिफलाकेकायसेसायदेनेसे सबधहाके श्रीपद नष्टहोतेहैं ॥ २०२ ॥

२०३ श्लेष्मकालानरसः (प्रथमः)

रसस्य द्विगुणो गन्धः गन्धकाहिगुणं विपम् ।
विपात्तु द्विगुणं देयं चूर्णं त्रिकटुसम्भवम् ॥ ८५० ॥
रस्तुलया प्रदातिव्या चाभया सविभीतका ।
धानी पुष्करमूलञ्च चाजमोदाऽजगन्धिकम् ॥ ८५१ ॥
विडङ्गं कटुफलं चव्यं पञ्चैव लवणानि च ।
लवङ्गं त्रिवृता दन्ती सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ८५२ ॥
भावयेत्सतथा रौद्रे स्वरसेः सुरसोद्वयैः ।
हन्ति सर्वं कफोद्भूतं व्याधिं कालानलो रसः ॥ ८५३ ॥
र. स, र. सु, र. वि, कफरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा., बटनाम ४ भा, त्रिकटु ८ भा, हरे, बहेड़ा, आवल, पोटकरमूल, अज-मोद, बवई, विडङ्ग, कायफल, चव्य, पार्षोन्मक, लौंग, निलोत और दन्तीमूल १-१ भागलेकर बारीकचूर्णकर पां गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय तुलमीबेरसेसे कड़ीधूपं ७ भावनाएँ देकर ४-४ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े इनमेंसे १-१ गोली तुलसीबेगरेह कफप्र अनुपानकेसायदेनें यह कफरोगको नष्टकरताहै ॥ २०३ ॥

२०४ श्लेष्मकालानरसः (महान्) २

हिङ्गुलसम्भवं मृतं शिलागन्धकटुङ्कणम् ।
ताम्रं बर्हं तथाऽभ्रञ्च स्वर्णमाक्षिकतालकम् ॥ ८५४ ॥
धुस्तरं सैन्धवं कुष्ठं पिप्पली हिङ्गु कटुफलम् ।
दन्तीरीजं सोमराजी वनराजफलं त्रिवृत् ॥ ८५५ ॥
यज्जीहीरण सममर्द्यं वटिकां कारयेद्भ्रपक् ।
फलायपरिमाणान्तु सादेदेकां यथावलम् ॥ ८५६ ॥
सन्निपातं निहन्त्याशु वृक्षमिन्द्रादानि यथा ।
मर्त्सिहो यथाऽरण्यं मुगानां कुलनाशनः ॥
तथाऽयं सर्वरोगाणां सद्यो नाशकरो महान् ॥ ८५७ ॥
र. स, र. सु, भै र., र. वि, कफरोगे । र. सु, ज्वरे कफरोगे च । भै र. ज्वराधिकारे ।

भाषा—दिगिरिकसे निकालाहुआपाप, शुद्धमैतसिल, गन्धक और शुद्धा, ताम्र, बज्र, अश्रक और स्वर्णमाक्षिकभस्म, ताल माक्षिक अथवा शुद्धहरिताल, धनुर्वेधीक, ताम्र, कुष्ठ, पीपल,

मुनीर्हीग, कायफल, जमालगोटा, वाङ्गुची, केवाच, निसोत, सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी बज्जलीमें मिलाय गृहकेदूधसे २-३ दिनमर्दनकर मटरवत्वावर गोलियेवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपाननेसाधदेनेमें सतिपातरूपी समस्तरोगोंको यह बहुतशीघ्र नष्टकरताहै ।

२०५ श्लेष्मपित्तान्तकरसः

मृतमृताऽम्रलोहञ्च वह्निगन्धकटङ्कणम् ।
भूमिभ्येन्द्रयवा रास्ना गुड्डी पत्रकं शटी ॥ ८५८ ॥
दिनं पर्यटजे त्राये र्भर्दितं घटकीरुतम् ।
सिताश्रांष्ट्रिं लिह्नेन्मापं श्लेष्मपित्तान्तको रसः ॥ ८५९ ॥
पट्यां कणां गुडं शुण्ठीं कर्पूरं भक्षयेद्गु ।
कफपित्तहरं रसादेदाडिमं गुडनागरम् ॥ ८६० ॥

चि र., दो, र. क, श्लेष्मपित्तारोगे ।

भाषा—पारा, अत्रक, लोह इनीभन्में, चित्रकमूल, शुद्ध गन्धक और गुहागा, चिरायता, इन्द्रजव, राम्ना, गिलोय, पद्मकाठ और कचूर समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय पित्तपापेनेम्बरससे १-२ दिनमर्दनकर १-१ माशेकी गोलियावनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और मधुनेसाधसाकर हूँ, पीपल, गुड और सौंठ समभागमिलाकर १ कप अनुपानमें लेनेसे श्लेष्मपित्त नष्टहोताहै । उसरकहातुआ अनुपान जिन्हें अनुबूल न हो उनको अनार, गुड और सौंठ मिलाकर देना ॥ २०५ ॥

२०६ श्लेष्मवातघ्नरसः

मृत्तौ बलिस्त्रिकटुकं मगधाजटास्रि
चर्यं चिपं लयणनं समभागचूर्णम् ।
सम्भयं भृङ्गपयसा कफरोगसहै
हन्त्याग्निवृद्धिदृशीतिसमीरणभः ॥ ८६१ ॥

रसायनसं., कफवातारोगे ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, त्रिकटु, पिपलामूल, चित्रकमूल, चव्य, शुद्धबलनाग, संधानमक सब समभागलेकर नीलवर्ण कज्जलीकर भंगरेकेरमसे एकदिन घोटकर १-१ माशेकीगोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाधदेनेसे यह कफरोग, मन्दाग्नि और समस्त वातरोगोंको नष्टकरताहै ॥

२०७ श्लेष्मशैलेन्द्ररसः

गन्धकं पारदं चाभ्रं त्र्यूपणं जीरकद्वयम् ।
शटी शृङ्गी यमानी च पुष्करं रामठं तथा ॥ ८६२ ॥
सैन्धवं यावशुकञ्च टङ्कणं गजपिप्पली ।
जातीकोपाऽजमोदे च लौहं यासलवङ्गकम् ॥ ८६३ ॥
धुस्वरवीजं जैपालं कदफलं चित्रकन्तथा ।
प्रत्येकं कार्पिकञ्चैषां श्लेष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ॥ ८६४ ॥
पापाणे विमले पात्रे घृष्टं पापाणमुदुरैः ।
विल्वमूलरसं दत्त्वा चार्कचित्रकदन्तिकाः ॥ ८६५ ॥

शिवरी काञ्जिका यासा निर्गुण्डी गणिकारिका ।
धुस्वरं कृष्णजीरञ्च पारिभद्रकपिप्पली ॥ ८६६ ॥
कण्टकार्याद्रौघैश्चैव मूलान्येतानि दापयेत् ।
एषां मूलरसं दत्त्वा घृष्टमातपशोपितम् ॥ ८६७ ॥
गुञ्जाप्रमाणां घटिकां फारयेत्कुशलो भिषक् ।
चतस्रश्च घटीः रसादेन्नित्यमाद्रिकघारिणा ॥ ८६८ ॥
उष्णतांयानुपानेन घातयाधि व्यपोहति ।
विशति श्लेष्मिकांश्चैव शिरोरोगांश्च दारणान् ॥ ८६९ ॥
प्रमेहान्विशतिञ्चैव पञ्चगुल्मनिषृद्नम् ।
उदराण्यत्रवृद्धिञ्चाप्यामघातविनाशनम् ॥ ८७० ॥
पञ्च पाण्ड्यामयान्दन्ति कृमिस्यौल्यामयापहम् ।
सोदावतं ज्वरं कुष्ठं गात्रकृष्णामयापहम् ॥ ८७१ ॥
यथा गुप्तेन्धने वह्निस्तथा वह्निविवर्धनः ।
श्लेष्मामयिष्टपाहेतो रसेन्द्रो मुनिभाषितः ॥
श्लेष्मशैलेन्द्रको नाम रसेन्द्रगुटिका स्मृता ॥ ८७२ ॥

भै. र., (श्लेष्मज्वरे), र. स., र. वि. (कफे), र. सु (ज्वरे कफे च), र. र (उदरे) । कुवचित्तैस्सन्धस्थाने गैरिक पठितम् ।

भाषा—शुद्धगन्धक और पारा, अत्रकभस्म, त्रिकटु, दोनोजीरे, कचूर, काकडासींगी, अजवाइन, घोटकरमूल, मुनीर्हीग, सैन्धव, यवशार, मुनागुहागा, गजपीपल, जाबिनी, अजमोद, लोहभस्म, जवास, लौह, शुद्धधतूरेकेबीज, जमालगोटा, कायफल और चित्रकमूल १-१ कप लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्णकज्जलीमें मिलाय बेल, आक, चित्रक, दन्ती, अपामार्ग, एरण्डककड़ी, अइस, निर्गुण्डी, अरणी, धतूरा, कालीजीरी, नीम, पीपल, भटकटैया, अदरक इनसबकी अङ्कुरसोंसे धूपमें बैठकर १-१ दिन मर्दनकर १-१ इत्तीकीगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ४-४ गोली अदरककेरम अथवा गरमजलकेसाधदेनेसे वातविकार, २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, मयङ्कर शिरोरोग, २० प्रकारकेप्रमेह, पाचोगुल्म, उदररोग, अत्ररुद्धि, आमवात, पाचप्रकारके पाण्डु, क्रिमि, शूलता, उदावत, ज्वर, कुष्ठ, खुजली, मन्दाग्निप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २०७ ॥

२०८ श्लेष्मान्तकरसः

अत्रक रससिन्दूरं शङ्खभस्म च मौक्तिकम् ।
एकभागं द्वित्रिभागा धार्धभागश्च मौक्तिकम् ॥ ८७३ ॥
कचूरं मौक्तिकादौ स्यात्त्रिफला कर्पसमिता ।
सर्वं सुखल्वे सम्भयं दिनं सिंहास्यतोयत ॥ ८७४ ॥
छायाशुष्कां घटीं कृत्वा रक्तिकादप्रमाणतः ।
आर्द्रस्य रसेनेव मधुना सह लेहयेत् ॥ ८७५ ॥
श्लेष्मोल्बणं वह्निमान्यं शूलं सपरिणामजम् ।
श्लेष्मान्तको रसो नाम विनिहन्यनुपानतः ॥ ८७६ ॥

र. च., कफरोगे ।

भाषा—अन्नकभस्म १ कर्प, रससिन्दूर २ कर्प, शङ्खभस्म ३ कर्प, मौक्तिकभस्म ८ माशे, कचूर ४ मा, त्रिफला १ कर्प लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर अइसेकरसे १-२ दिन मर्दन कर आधीआधीरतीकीगोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरख और मधुकेसाथसेवनकरनेसे कफप्रधान-मन्दाग्नि, शूल, परिणामशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥२०८॥

२०९ श्वन्दूद्रादिलोहम्

श्वन्दूद्रा त्रिफला मुस्ता गुह्वची फल्गुपल्लवान ।
दुर्भं वृशश्च मज्जिष्ठा रोहिणस्प्य च पल्लवान ॥ ८७७ ॥
बला पुनर्नवा श्यामा शारिबे देवदारु च ।
पिप्पली नागक्षेत्रं विडङ्गमरिचानि च ॥ ८७८ ॥
पाठा कम्पिलकं भाद्रौ द्वे हृदिटे निदिग्धिनाम् ।
एरण्डमूलं दन्तीश्च चित्रकं कटुरोहिर्णाम् ॥ ८७९ ॥
एतानि समभागानि शृङ्खणचूर्णानि कारयेत् ।
द्विगुणं सर्वचूर्णैभ्यो लौहचूर्णं प्रदापयेत् ॥ ८८० ॥
मापकृतितयं तस्माच्चतुष्टयमथापि वा ।
पिबेदुष्णेन तायेन मद्येनाऽपि च मद्यपः ॥ ८८१ ॥
मेहशूलोदरार्द्राहशोथार्शः पाण्डुरोगानुत् ।
गामूत्रपिष्टैरतैश्च वटिकास्तत्रदापहाः ॥ ८८२ ॥
र र, प्रमेहाऽधिकारः ।

भाषा—गोखरु, त्रिफला, नागरमोथा, गिलोय, कटूरम, डाम, वृश, मजीठ, गन्धनूण इनकेपत्ते, बला, पुनर्नवा, काली निसोत, दोनोसारिवा, देवदारु, पीपल, सोंठ, विडङ्ग, मरिच, पाठा, कमीला, भारती, दोनोहल्दी, भटवटैया, एरण्डनीजड़, दन्तीमूल, चित्रक और कटुरोहिणी समभागलेकर वारीकचूर्णकर सबसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखडोड़े । इनमेंसे ३ अथवा ४ उड़दतकमाना गरमजल अथवा मद्यक साथलनेसे प्रमेह, शूल, उदररोग, शीहा, शोथ, बवासीर, पाण्डुरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसलोहको गोमूत्रमें पीस कर गोलीभी बनासकैहै ॥ २०९ ॥

२१० श्वयधुधातीरसः

रसगन्धकलाहकृणानिचूता

मरिचामरदाहनिशानिचूता ।

दलितं मृदुगासलिलेन पित्र-

दनुष्पमसुं श्वयधूदरहम् ॥ ८८३ ॥

यो र, त्र यो त, र कौ, रगानस, नि र, शोधाधिकार ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, लोहभस्म, पीपल, निसोत, मरिच, देवदारु, हल्दी त्रिफला सप्तसमभागलेकर वारीकचूर्ण कर रखडोड़े । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतकमाना वटङ्गीके मूत्रकेसाथदेनेसे शोथ और उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ २१० ॥

२११ श्वासकालेश्वररसः

मृतं वङ्ग मृतं लोहं मृताकं मृतमन्नकम् ।

शुद्धसूतञ्च गन्धञ्च माक्षिकं हिङ्गुलं विपम् ॥ ८८४ ॥

जातीफलं लवङ्गञ्च त्वगेलाणागकेशरम् ।
उग्मत्तकस्य बीजानि जैपालं रात्रिदुर्लभम् ॥ ८८५ ॥
एतानि समभागानि मरिचञ्च त्रिभागिकम् ।
सर्वमेतद्विषयेत्खले लोहद्रण्डेन मर्दयेत् ॥ ८८६ ॥
तावत्सम्मर्दयेद्यलाद्यान्मृतौ न दृश्यते ।
शक्राशनस्य स्वरसे भावयेदेकविंशतिम् ॥ ८८७ ॥
द्विगुञ्जाऽत्युत्तमा मात्रा ऋद्धवेररसे युता ।
तद्वद्धं बालवृद्धेषु पथ्यं देयं तदुच्यते ॥ ८८८ ॥
पञ्चश्यासानक्षयं कासं यक्ष्माणं चिनिहन्ति च ।
श्वासकालेश्वरो नाम्ना लोकानामति दुर्लभः ॥ ८८९ ॥
वे क, नि र, व रा, वै चि, श्वासे ।

भाषा—वक्, लोह, ताम्र, अन्नक इनकीभस्मे, शुद्धपारा, गन्धक, सोनामाची, शिगरिक और बछनाग, जायफल, लौंग, तज, इलायची, नागकेशर, शुद्ध धतूरेकीबीज और जमालोग, हल्दी, अवासा येसब १-१ भाग, मरिच ३ भागलेकर वारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भागरेरसे २१ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखरेरसेसाथदेनेसे ५ प्रकारकेखास और कास, क्षय, राजयक्ष्म इनसबको यह दूरकरताहै । बालर और वृद्धोंको आधीमात्रा देनी ॥ २११ ॥

२१२ श्वासकासकरिकेसरीरसः

तारताम्ररसपिष्टिकाशिलागन्धतालसमभागिकं रसे ।
आटूरूपसुरसार्रसम्भवे मर्दये प्रकुर गोलकं तत ८९०

मृत्स्तन्या च परिवेष्य गालकं

यामयुग्ममथ भूधरे पचेत् ।

गालकेन कुर तत्समं तत-

श्वाटरूपकटुकैश्च भावयेत् ॥

श्वासकासकरिकेसरी रसा

चल्लमस्य परिपेवयेद्बध् ॥ ८९१ ॥

र र स, र क ल, र च, र दौ, यो स, र सु, र को, यो च, श्वासकासयोः । योगवद्बध् नश्यत पक्रानय पुरितस्यरोगहरत्वमुक्त्वा ।

भाषा—चांदी और तांबेकीभस्म, पारदपिष्टिका, शुद्धमेन सिल, गन्धक और हरिताल सबसमभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अइसा, तुलसी और अदरखके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुमें बन्दकर ३-४ कपडिमिचकर अञ्जी तह सुबाज दोपहकी भूधरयन्में अग्निदे । स्वाहाश्रीलक्ष्मणेन निकालकर अइसा और त्रिकटुकदोषोंमें १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकसाथदेनेसे श्वास, कासप्रवृत्ति समस्त कफरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २१२ ॥

२१३ श्वासकासचिन्तामणिरसः

पारदं माक्षिकं स्वर्णं समांशं परिकल्पयेत् ।

पारदाद्धं मौक्तिकञ्च सूताद्विगुणगन्धकम् ॥ ८९२ ॥

अन्नश्चैव तथा योज्यं व्योम्नो द्विगुणलौहकम् ।
कण्टकारीरसेनैव छागीदुग्धेन वै पृथक् ॥ ८९३ ॥
यष्टीमधुरसेनैव पर्णपत्ररसेन च ।
भावयेत्सतवारश्च द्विगुञ्जां वटिकां भजेत् ॥
पिप्पलीमधुसंयुक्तां श्यासकासविमर्दिनीम् ॥ ८९४ ॥

र स, घ, र, सु, र, च, भै र श्यासकासयो । भै, र,
श्यासचिन्तामणीति नाम ।

भाषा—शुद्धपाश, सोनामाली और सुवर्णभस्म १-१
भाग, मोतीआषामाग, शुद्धगन्धक और अभ्रकभस्म २-२
भाग, लोहभस्म ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर भट
कटैया, बकरीकादूध, सुलहठी, पान इनप्रत्येकके द्रवोंसे ७-७
भावनार्थ देकर २-२ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली पीपल और मधुकेसाथदेनेसे यह श्यासकासको
नष्टकरताहै ॥ २१३ ॥

२१४ श्यासकासारिरसः

सूतगन्धकणाहरीतकी-
मुण्डिकाश्च वृषकं विभीतकम् ।
चूर्णयेत् समभागतस्ततो
वत्सनाभजरसैर् मीनाक् पचेत् ॥
श्यासकास विनिवृत्तये त्विमं
भक्षयेत् वट्टरास्थिमानतः ॥ ८९५ ॥

र दौ, श्यासकासयो ।

भाषा—शुद्धपाश और गन्धक, पीपल, हर्, गोरसमुण्डो,
अहसा और बहेडा समभागलेकर वारीकचूर्णकर पोरानश्वककी
नीलवर्णकजलीमें मिलाय बजनागेरुवरस अथवा बाथसे मर्दनकर
गोलाबनाय एरण्डपत्रगैरहमें लपेट पुष्टपाककरे । स्वादाशीतल-
होनेपर बेरकी गुठलीकेबराबर गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन
मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तानुपानकेसाथ देनेसे
यह श्यास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१४ ॥

२१५ श्यासकुठाररसः

रसं गन्धं विपश्चैव दृङ्गणश्च मन शिला ।
पतानि दृङ्गमानाणि मरिचान्यष्टदृङ्गकम् ॥ ८९६ ॥
एकैकं मरिचं दत्त्वा खत्वे सूक्ष्मं विधाय च ।
कटुत्रयं दृङ्गपट्टं दत्त्वा पश्चाद्विचूर्णयेत् ॥ ८९७ ॥
सर्वमेकत्र सञ्चूर्ण्य काचकृत्यां विनिक्षिपेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यं पर्णखण्डेन निश्चितम् ॥ ८९८ ॥
सन्निपाते च मूर्च्छायामपस्मारे तथा पुनः ।
अतिमोह्यमापन्ने घ्राणे द्याद्विचक्षण ।
रसः श्यासकुठारोऽयं सर्वैकासनिवृत्तनतः ॥ ८९९ ॥

र कौ, र क ल, वै चि, भा प्र, यो म, वै, वि, वै र,
वृ यो त, रसायनस, नि र, भै र, र का, चि र, यो चि,
र म मा, घ, डो, वै द, भै सा, थि क, यो, र, र सु, ना
वि श्यासे । भा प्र, ज्वरे ।

टि०—वैदग्ध्यं बद्धेयुजापरिमित पण विद्वितीकृत्य स्वादविकरोपरि
क्रमशुद्ध्या मरिचानि भक्षयेदिति विशेष । कासश्यासुरारतनापस्मार
सन्निपातमोहमूर्च्छां रक्तुल्बन्धुतोद्रेणभ्रमस्तव च यत्सत्सन्नादाभान
शूलतिसेदमणोपेथ्य दृष्टप्रत्यय । र स, र च पत्योरक र सु,
घ एतयोर्द्वितीय श्यासकुठारानाम्ना “ दृङ्गण पारद गंध शिलां विष
कटुनिकम् । निषिष्य वनिका कार्या युषामात्रप्रमाणत । उष्णोदक
पिबेचानु धुद्रावायमथामि वा । कास पत्रविष इति श्याम शेषमनु
द्वयम् ॥ शिरोतीगो शिरोत्वानु वृक्षमिद्राशनि वैथा ॥ ” इति पाठो
निहितोऽस्ति । भै र, र म, र च, एणु ध्रमेयु द्वितीयस्तथा च
र सु, घ, एतयोस्तृतीय श्यासकुठारानाम्ना “ रस गन्धो विष दृ
विष्णोषणवदुत्रयम् । सर्वं सगम्यं दातव्यो रस श्यासकुठारक ॥ वात
शेषमसुदुग्धत श्यास कास क्षयपयेत् ॥ ” इति पाठो निहितोऽस्ति । रसे
न्द्रसारसद्ग्रहे “ रसो गन्धो विषश्चैव दृङ्गण समन शिल्म् । पतानि
समभागानि मरिच तश्चतुर्गुणम् ॥ त्रिभाग चूर्णये च खत्वे सर्वं विचूर्ण
येत् । रस श्यासकुठारोऽयं द्विगुण श्यामकामनिर ॥ यदा सञ्जा यदा
पुमा तदा नस्य प्रदापयेत् । प्रापयेत्कामिकारभ सञ्जानननमुत्तमम् ॥
प्रतिस्वयं क्षतशीर्षमेकादशविच श्वयम् । हृद्रीग श्यासशूलं स्वरोध
सुदासणम् ॥ सन्निपात तथा धीर तद्भारोहाणितवयेत् ॥ ” इति तृतीय
पाठ श्यासकुठारानाम्ना निहितोऽस्ति ।

नि र, भा प्र, वै द एणु ध्रमेयु द्वितीय, धन्वन्तरो चतुष,
स्तकिन्नेरे चिक श्यासकुठारानाम्ना “ रसो गन्धो विषञ्जाऽपि दृङ्गणत्र
मन शिला । पतानि वषमानाणि मरिचत्राष्टककम् ॥ कटुत्रय वषयुग्म
पृथगन विनि षिपेत् । रस श्यासकुठारोऽय सर्वैषामनिवारण ॥ ” इति
पाठो निहितोऽस्ति । र म मा, ना वि णयो श्यासकुठारानाम्ना
“ शुद्ध सूत विष गन्ध दृङ्गणत्र मन शिला । वणा शुष्टो समाश्रिते मरिच
सप्तमागिरम् ॥ दत्त्वा सञ्चूर्णयेत्तवावबल जलमत्रिभ । रस श्यास
कुठारोऽयमाद्रव्य रसै युक्त ॥ श्यास इति तथा काम द्विगुञ्ज मत्रि
पातयेत् ॥ ” इति पाठो निहितोऽस्ति । र सु, ना वि एतयो श्यास
रिरस इति नाम्ना “ पारदो बलनाभश्च गन्धक दृङ्गण कणा । समाद्य
द्विगुणा शुष्टी मरिच पत्रभागकम् ॥ मध्वचूर्णमिदं श्ला बहमात्र
प्रदापयेत् । श्यासरिसञ्चो खेष तथ श्यामहर पर ॥ ” इति पाठो
निहितोऽस्ति । ण्यैषां सर्वैषामपि मूल प्रथमश्यासकुठारोऽस्ति, तत्र
यथावस्थितवर्णनां सहाय्य रणात् । तदतिरिक्तपाठेषु चन्द्राम्बोह्यर
णाऽतिरिक्तफलश्यासवापयित्वाकास इति निद्रिहाररत्नीयम् ।

भाषा—शुद्धपाश, गन्धक, बडनाग, सुद्धाग औरमैनसिल
४-४ माघे, मरिच २ कर्ष लेकर १-१ मरिच डालकर सबकी
नीलवर्णकजलीकरे । इसमें १॥ कर्ष त्रिकटुकचूर्णमिलाकर १-२
पहर मर्दनकर शीशोमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रखकर
दानेसे सनिपात, मूर्च्छा, अपस्मार, श्राव, कास बेसथ नष्टहोते
है । अत्यन्तबेदोशीमें इसका नस्य देनेसे लाभहोताहै ॥ २१५ ॥

२१६ श्यासगजाङ्गशरसः (महदादिः)

पलं सूतं पलं गन्धं निकटु निपलं भवेत् ।
यद्गन्धैरुपलश्चैव दिनानि त्रीणि मर्दयेत् ॥ ९०० ॥
सूत्रेण च तथा त्रीणि दिनानि परिमर्दयेत् ।
मापप्रमाणनटकं छायाशुष्कन्तु कारयेत् ॥ ९०१ ॥
नित्यमेकन्तु वटकं दिनानि त्रिंशदेष च ।
श्यासकासज्वरहरमग्निमान्द्याऽरचिप्रणुत् ॥ ९०२ ॥
र कौ, र, र स, र दो, र च, र सु, श्यासाऽधिकरे ।

र. र. स, र. चं, र. सु, एतेषु श्वासहरवटकेति नाम ।
रसेन्द्रत्वमेव सहचरवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा और गन्धक, सोंठ, मिर्च, पीपल और वङ्गमत्स्य १-१ पल लेकर नीलवर्णकजलीकर गोमूत्रमे ३ दिन मर्दनकर १-१ मांशोनीगोलियाबनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे यह सवप्रकारके श्वास और कासको नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ श्वासहारीरसः

कनकमुजगशुल्वं सुतराजं सुगन्धं,
मुनिरसपरिघृष्टं वह्लमात्रं दिनान्ते ।
हरति सकलकासं श्वासहिकासमेतं
त्रिभुवनहितकारी जायते श्वासहारी॥१०३॥

र., श्वासे ।

भाषा—सुवर्ण, नाग और ताम्रमस, शुद्ध पारा और गन्धक समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अगस्त्यकेरससे एक-दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इन मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे यह हिवकी और श्वासकासको नष्टकरताहै ॥ २१७ ॥

२१८ श्वासाङ्कुशरसः

शाणत्रयं पारदञ्च गन्धकं शाणपञ्चकम् ।
त्रिशार्णं वत्सनाभञ्च मरिचञ्च त्रिशार्णिकम् ॥१०४॥
आकलञ्च त्रिशार्णं स्यात्पञ्च जातीफलं क्षिपेत ।
लवङ्गञ्च चतुःशाणं पिप्पली दशदाणिका ॥ १०५ ॥
टङ्गुणं वह्निशाणं स्यात्त्रिशार्णं कनकाह्वयम् ।
करीरार्द्रकनिम्बुत्थे मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥ १०६ ॥
घातगणेषु सर्वेषु कफश्वासे कटीप्रहे ।
नाभिश्चलउदायते प्रमेहे घातशोणिते ॥ १०७ ॥
सर्वसन्धिगते वाते अस्थिये स्नायुगोऽपि वा ।
रसः श्वासाङ्कुशो नाम श्वासकासनिवारणः ॥१०८॥
वह्लाङ्गं वह्लमात्रं वा दद्याच्छ्वासोपशान्तये ।
अनुभूतो मया सम्पूय प्रयोगः कफकासयोः ॥१०९॥
रसायनसं., श्वासे कासे च ।

भाषा—शुद्धपारा ३ भाग, गन्धक ५ भा, शुद्धवध्नाग, मरिच और अजलपरा ३-३ भा, जायफल ५ भा., लौंग ४ भा, पीपल १० भा., मुनासुहागा और शुद्धरतुरेकेचीन ३-३ भागलेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय करीर, अदरक और नीचूके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे एक अथवा आधीगोली उचितानुपानकेसाधनेसे समस्तवालरोग, कफत्रिनिशोध, कटिप्रहे, नाभिश्चल, उदायते, प्रमेह, बालक, समस्त सन्धिघात, अस्थिघात और स्नायुघात इनसबको यह निवृत्तकरताहै ॥ २१८ ॥

२१९ श्वासान्तकरसः

सूतः षोडशभागिकोऽकसमकस्तस्यार्द्धभागो बलिः,
सिन्धुस्तस्य समः सुसूक्ष्ममृदितः पट्टपिप्पलीचूर्णतः।
जम्बोत्स्वरसेन मर्दितमिदं तप्तं सुपके भवेत्,
कासश्वासकगुत्तमश्लजजटं पाण्डुं लिहन्नाशयेत्११०

र. र. स, र. म. मा., र. चं, र. को, र. सु, व रा., श्वासा धिकारे ।

टि०—र सु पारदादिरस इति नाम । व रा पिप्पलीस्थाने द्रव्य नियोज्य सतराजीय इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और ताम्रमत्स्य १६-१६ भाग, शुद्ध गन्धक और सेंधानमक ८-८ भा., पीपल ६ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर जमीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर एण्डवगैरहके-पत्तोंमें लपेट पुटपावकरे । स्वाङ्गशौलहोनेपर निकालकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकवगैरहके रसकेसाधनेसे काश, श्वास, गुल्म, दृल, उदररोग, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २१९ ॥

२२० श्वासारिलोहम् (महत्)

कर्पद्वयं लोहचूर्णं कर्पाङ्गमम्रमेव च ।
सिताकर्पद्वयञ्चैव मधुकर्पद्वयन्तथा ॥ १११ ॥
त्रिफला मधुकं द्राक्षा कणाकोलास्थिवंशजा ।
तालीसपत्रवेडङ्गमेलोपुष्करकेसरम् ॥ ११२ ॥
पतानि श्लक्ष्णचूर्णाणि कर्पाङ्गं पृथक्पृथक् ।
लौहं च लोहदण्डेन मर्दयेत्प्रहरद्वयम् ॥ ११३ ॥
ततो मात्रां लिहेत्सौद्रे बुद्ध्या दोषयत्नवलम् ।
इदं श्वासारिलोहञ्च महाश्वासे विनाशयेत् ॥ ११४ ॥
कासे पञ्चविधञ्चैव रक्तपित्तं सुदारणम् ।
एकसं द्वन्द्वज्ञं चैव तथैव सन्निपातजम् ॥
निहन्ति नाऽत्र सन्देहो भास्करस्तितमिरं यथा ॥११५॥
र. सु, शै र, श्वासे ।

भाषा—लोहमत्स्य २ कर्प, अन्नकमत्स्य ८ मांशे, शक्कर और मधु २-२ कर्प, त्रिफला, सुलहठी, द्राक्ष, पीपल, वेरली-मज्जा, बंसलोचन, तालीसपत्र, विडङ्ग, इलायची, पोहकरमूल और नागकेशर ८-८ मांशे लेकर सबकाबारीकचूर्णकर लोहेके खरलमें दोपहर घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मांशा मधुकै-साधनेसे महाश्वास, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर रक्तपित्त येसब नष्टोतेहै ॥ २२० ॥

२२१ श्वित्रारिगोमः (प्रथमः)

गन्धकं त्रिफला भृङ्गं भृङ्गात्तकफलानि च ।
कट्टुतुम्बस्य बीजाणि भृङ्गराजद्रवेण वै ॥ ११६ ॥
भावयेच्छोषयेच्चैतत्तद्घातसत्तकत्रयम् ।
श्वित्रारिनाम योगोऽयं सिपनिभः प्रतिपादितः ॥११७॥
टङ्गुमात्रममुं दद्याच्छ्वासाघृतमिधितम् ।
भोजयेद्दे प्रयत्नेन रज्ज्याञ्च विशोपतः ॥ ११८ ॥

२२५ श्वेतकुण्डहररसः

चारवीजान्यध्वृणं त्रिफला च कटुत्रयम् ।

तवरजोऽशितः सर्पिर्मधुभ्यां श्वेतकुण्डहृत ॥ २२९ ॥

हितो , वृष्टे ।

भाषा—चिरोजी, लोहमस, त्रिफला, त्रिफळ, वंसलोचन सप्त समभागलेकर एकजगह मिलाकर रखछोडे । इसमेंसे १ माशेसे २ माशेतक मधु और धीमें मिलाकर सेवनकरनेसे श्वेतकुण्ड नष्टहोताहै ॥ २२५ ॥

२२६ श्वेतकुण्डारिरसः

निस्तुपीकृत्य वाकुच्या धीजानां पलविंशतिम् ।

गोजलस्थं त्रिसप्ताहं लोहं पथ्या पलद्वयम् ॥ २३० ॥

गृहीत्वा गोजले शोष्यं सूर्यतापेऽतिनिष्ठुरे ।

काकोदुम्बरिकाट्टोपत्वचां ध्राये त्रिसप्तकम् ॥ २३१ ॥

भावयेत्तस्य चूर्णस्य गन्धसूतं समं कृतम् ।

अम्लेन कज्जली कृत्वा सर्वमेकज कायेत् ॥ २३२ ॥

शिष्टमूलरसेनापि नागवह्नीदलेन च ।

भावनां त्रिदिनें दत्त्वा कर्पाक्षीशां गुटीं कुर ॥ २३३ ॥

पक्वैर्कां भक्षयेत्प्रातः श्वेतकुण्डोपशान्तये ।

चित्रकाङ्क्षित्वचक्षुर्ण राजां गोदुग्धके वरम् ॥ २३४ ॥

क्षिपेद्दक्षि विलोड्याऽथ प्राहयेत्तन्मुत्तमम् ।

तत्तन्कुड्यं चैकं मध्येऽप्यो गन्धवह्नुकान् ॥ २३५ ॥

प्रक्षिप्य गुटिकां पश्चात्प्रपिबेद्वि त्रिसह्यकाम् ।

नयनीतेन चाभ्यङ्ग्य कार्यं स्थेयमथातपे ॥ २३६ ॥

सर्वश्वित्रे प्रजायन्ते स्फोटकाश्चाग्निदग्धवत् ।

प्रथमे सप्तके पाको जायतेऽथ द्वितीयके ॥ २३७ ॥

रोहणञ्च तृतीये हि कुर्वन्ति च न संशयः ।

निम्बुकस्य रसोपेतं कुङ्कुमालेपनं हितम् ॥ २३८ ॥

सतप्ता गुटिका वापि रसस्थालेपने हिता ।

श्वन्नाणां रोहणं रम्यं वर्णं जायते भृशम् ॥ २३९ ॥

त्रिवेले तन्मक्तञ्च पूर्वं देयञ्च सप्तके ।

मद्धुष्टा अपि रूक्षाश्च देया जाते द्विसप्तके ॥ २४० ॥

तृतीये सप्तके देया मद्धुष्टास्विफलाघृतम् ।

घृतमस्यं प्रदातव्यं श्वित्रकुण्ठी वरो भवेत् ॥ २४१ ॥

चम्पकामं वरं देहं कान्तियुक्तञ्च नीरजम् ।

प्राप्नुयान्-ऋषीयुतः सम्यग्भ्रुजो भूमिमण्डले ॥

रसरजप्रभावेण सत्यं सत्यञ्च नान्यथा ॥ २४२ ॥

र स क, रसायनस, र का श्वेतकुण्डे ।

भाषा—घाषकियेहुए वाडुबीनेवीज २० पल्लो गोमूनमें २१ दिन भिगोकर सूयकीरफ़ीधूपमें सुखाय एकदोन कदमरफ़ी छालकेझायमें २१ दिन भायनादेकर इशरीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय कज्जलीकर क्विभी अम्लद्रवसे एकदिन मर्दनकर सिद्धानकीज और पानकेरमेंसे ३-३ दिन भावनाए देकर ८-८ माशेकी मोलियां बनाकर रखछोडे । रात्रिके ३ माशे

चित्रकीजकाचूर्ण ४ पल गायकेदूधमें औटावे और दहीहाल कर जमादे । प्रात काल दहीकी छाछयनाकर ३ माशे शुद्ध

गन्धकजालकर इसकेसाथ १ या २ गोली प्रतिदिन साकर मसलनेसे मालिशकरके धूपमें बैठे । कुछहीदिनबाद श्वित्रस्थानमें अग्निदग्धकीतरह फोडे उठेंगे । पहिले और दूसरे सप्ताहमें ये पकेगे और तृतीयसप्ताहमें स्वयं बन्देहोजायगे । इनकेदाय मिटानेकेलिये नीबूमें केसर घिसकर लगावे अथवा इसीगोलीको छाछमें घिसकर लगावे । इसक्रियासे प्रणोका चिद्द नहीं रहेगा । पहिले सप्तकमें दिनमें ३ बार छाछभातदे । दूसरेसप्ताहमें श्रेह रहित और तीसरे सप्ताहमें त्रिफलाघृतकेसाथ मोठदेवे ॥२२६॥

२२७ श्वेतकुण्डारिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं त्रिफलाभुङ्गवाकुचीः ।

भङ्गातकं तिलान्कृष्णाश्रिम्यवीजं समांशकम् ॥ २५३ ॥

मर्दयेद्भङ्गजत्राये. शोष्यं पेप्यं पुनः पुनः ।

इत्थं कुर्वान्त्रिसप्ताहं रसोऽप्यं सितकुण्डहा ॥

मध्याह्नये निष्कामानं तं खादेच्चिद्भ्रविनाशनम् ॥ २५४ ॥

रसायनसं, शं र, र. सि, र. का, र. चि, वै. क, रसायनस, र क, यो म., (एषु श्वेतारि), र. क ल, र क, र र कौ, र र स, र दी, श्वेतकुण्डारिकारे ।

त्रि०—“पलत्रय गन्धकभुङ्गकृष्णातिलोवैले कटुतुम्बिनी च । भङ्गातकं कटुनिम्बवीजं सर्वं समानं परिभावयेत् ॥, इति रसस्य मधुचये रसदीपिकाया रसरत्नसंयुजाय पाठे इत्येते तत्र पलत्रयस्याने पलत्रयेनि प्रमादात्पाठ मन्नात् । कटुतुम्बिनी अथवा रसाऽभावश्च प्रमादात्सञ्जात इति प्रतीयते, अतोऽन रमान्तरनेति बोध्यम् । यदु तुम्बिनीभावनाऽधिक्ये तु नकाऽपि शक्ति । निरतिशयत्वात् पूर्ववत्पत्स्य कृष्णामिति शब्दस्य स्थाने पिप्पलीपरत्वमपि प्रमादविरहितम् । इ धो त, र कौ प्रतयो ग्रन्थयो श्वेतारिनाम्ना “शुद्धसूतम गन्ध त्रिफला भुङ्गवाकुची । गुणा भङ्गातक कृष्णा निम्बवीज मम पृथक् । मर्दयेद्भङ्गजत्राये दिनमेक निरन्तरम् । वायसीत्यग्रसे देया भावनाश्चैव विंशति । वाडुचीनीनिर्गुहैस्तत्र तिल प्रवर्धयेत् । तत्र भिन्ना भवेदप श्वेतारि नीमो रस ॥” मध्याह्नये निष्कामान तं खादेच्चिद्भ्रविनाशनम् ॥, इति पाठो गहितोऽस्ति । रसनाम्यां श्वेतारिनाम्ना “शुद्ध सूत मम गन्ध त्रिफलाभुङ्गवाकुची । भङ्गातकं त्रिफला कृष्णा निम्बवीज मम समम् ॥” मर्दयेद्भङ्गजत्राये शोष्यं पथ्यं पुन पुन । इत्य कुर्वान्त्रिसप्ताह रस श्वेतारिनी भवेत् ॥” मध्याह्नये खादेयेतिवत् दन्तश्ल विनाशयेत् ॥, इति पाठो गहितोऽस्ति । अन्वयो पाठयोर्मूल प्रथमपाठोऽस्ति तत्र केनाऽपि वारणेन तिलस्थाने शिफा मन्नात्, शिफायाश्च कृष्णशब्देन सन्वन्धो न युज्यतेऽसत्प्रत्यये पिप्पली स्वादित्ति मत्वा स्वतन्त्र पाठ समन्वी । इ यो त, र कौ अनयोपि स प्व त्रम समापनितोऽतोऽनुना पाठस्य लभ्यते तस्य बुद्धिव्यामोहकत्वादेकत्रैव ममावेश समुचित । अथवा पूर्वसिन्धु पाठे गुणाऽभ्रकविप्लीशिलानामभिन्नताया प्रक्षेप दत्ता वाद्य सीत्वात्समेन वाकुचीनीचिन्तित्वा च भिन्नताया भावना दसैव एव रस सम्पादनोय ।

भाषा—शुद्ध पाटा और गन्धक, त्रिफला, भंगरा, वाकुची, वृन्तद्विहतभिलावे, कालेतिल, नीमकीगिरी सप्तसमभागलेकर बारीकचूर्णकर भगरेरसेसे मर्दनकर मुलावे और फिर मर्दन-

को । ऐसे २१ भावनाएं देकर रखजोड़े । इसमेंसे ४-६ मासों मधु और धीकेसाथखानेसे यह धिन्त्रको नष्टकरताहै ॥ २२७ ॥

२२८ पडङ्गरसः

लक्ष्मी हरिहरः काशी त्रिफला कटुरोहिणी ।
कामिनी गुग्गुलु दन्ती घोषाऽमृता च बालकम् १४५
सर्वमेतत्समाहृत्य वातारितैलमर्दितम् ।
पुष्पितं स्फुटितं चक्षुः पटलं घातदूपितम् ॥ १४६ ॥
मुखपाकं दन्तकृमि रक्तजं घृतिनासिकाम् ।
घ्राणस्तनादिरोगञ्च पृतिकर्णं प्रशाभ्यति ॥ १४७ ॥

६. २., नेत्ररोगे ।

भाषा—शुद्धमैनसिल, हरिताल, पारा, कसीस, त्रिफला, कुटकी, दारुहल्दी, गुग्गु, दन्तीमूल, कड़वीतरोई, गिलोय, सुगन्धवाला सबसमभागलेकर कपड़छानचूर्णकर मैनसिल, हरि ताल, पारा और कसीसकी कजलीमें मिलाय एण्डकेतैलमें २-३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती अथवा उचिनमात्राकायमकर ततदोहग्रानुपानकेसाथ देने तथा लगाने और नस्यप्रथतिमें उपयोगकरनेसे आसोंकाफोला, नेत्राधिमन्थ, जाला, वातदोष, मुखपाक, दातोंकेकीड़े, रक्तबिकार, पीनस, नाक और स्तनकेसमस्तारोग, कानोंकीसफ़न येसब्रोग निवृत्तहोतेहैं २२८

२२९ पडङ्गलोहम्

गगनताप्यशिलाजनुकाञ्चना

दिनकरादयसश्च रजः समम् ।

निफलाया बहुभाचितमाज्यव-

न्मधुयुतं विनिहन्त्यखिलाग्नदान् ॥ १४८ ॥

लो ५. (स), सर्वरोगे ।

भाषा—अन्नक, सोनामाली, शिलाजीत, मुक्क, तावा और लोह इनसबको मसमें लेकर निफलाकेकायसे २१ भावनाएँ देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रतीकीमात्रा मधु और धीके साथखानेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २२९ ॥

२३० पडशीतिगुग्गुलुः

सैर्यथासोविषा दाह व्याघ्रीयुक् च चिका वृषम् ।
कृष्णाज्जाम्ना घना भीरु वाय्यालं मिश्रि यहुरीत् ॥ १४९ ॥
पथ्या शुण्ठी लिन्नरुहा शङ्खारग्यधमोक्षुरम् ।
विशाखा मोदकी तिक्ता ग्रन्थिर्भाङ्गी विदारिका १५०
अलम्बुषा हस्तिरुर्णां यस्तनगन्धा विषाणिका ।
दिवाक्षं मुशली कौन्वी काकोली दीप्ययुग्मकम् १५१
त्रिबृहन्ती शिखी शृङ्गी कोकिलाक्षो दुरालभा ।
पञ्चमूलं महद्वीररतः कुण्डलं जोज्जकम् ॥ १५२ ॥
जातीपत्री फलेलञ्च केदारं त्यक्किरातकम् ।
कुङ्कुमं देवकुसुमं विशाला शशिसैन्धवम् ॥ १५३ ॥
मन्दारमूलं कृमिजिद्धेदुग्धा रविपिया ।
गजपिप्पल्यपामागं घानरी नक्तमालक ॥ १५४ ॥

पतै रास्ता समा चाभा द्विगुणा तैः पुरः समः ।
सतं गन्धं हिङ्गुलञ्च टङ्गुणं लोहमन्नकम् ॥ १५५ ॥
गुल्वं यद्गं सूतमस्य नागं ताप्यमयोरजः ।
मिलितं पुरपादञ्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १५६ ॥
पचैच्चतुर्गुणे काथे पुरं पट्कटुजे पुरा ।
तुर्यांशोपिते काथे पूते चात्र विनिक्षिपेत् ॥ १५७ ॥
चूर्णानि पुरमुख्यानि पाचयेन्मृदुवह्निना ।
याचदनतरं तावद्दुटिकाः कारयेत्ततः ॥ १५८ ॥
टङ्गुप्रमाणाः सेव्यास्ता मधुसर्पिःसमन्विताः ।
सप्तधातुगतान्वातान् शिरास्ताप्यस्थिसन्धिगान् ॥
सामान्निरामान्स्सुष्टाङ्गुलमाजानग्नित् केवलान् ॥
यश्माणमग्निमान्द्यञ्च ज्वरं धातुगतं तथा ॥ १६० ॥
गुल्फजानूरकटुसूदरहृत्कुदिक्कसगान् ।
अंसमन्याहनुद्योत्रभूललाटाक्षिशङ्गान् ॥ १६१ ॥
प्रमेदं मूरकृच्छञ्च शूलमाध्वानममरीम् ।
किं पुनर्मेदकान्वातान्प्रत्यङ्गुस्थाञ्जयत्यलम् ॥ १६२ ॥
गुग्गुलुः पडशीति वै नाम्ना भोजेन कीर्तितः ।
क्षीयमाणेन शिष्येण प्रार्थितेन पुनःपुनः ॥ १६३ ॥
स एष राजयोषोऽयं न देयो यस्य कस्यचित् ।
योगेना ऽनेन वर्षेण पण्डोऽपि प्रमदाप्रियः ॥ १६४ ॥
वाजीकरणमन्यच परं नास्माद्विशेषतः ।
गुणोऽस्य सेवनाश्रित्यं यःस्यात्स स्याद्ब्रवीमि किम् ॥
एष नो परिहार्यस्तु पानभोजनमैथुनैः ॥ १६५ ॥
यो र, वै वि, वातव्याव्यधिकारौ ।

भाषा—कटुसैरिया, जवास, अतीस, देवदारु, मटकंडैया, वनभाटा, चन्य, अहूसा, पीपल, नापरमोथा, वच, धनिया, शतावर, खरेटी, सोंफ, मजीठ, हरे, सोड, गिलोय, बचूर, अमिल्लतास, गोखर, पुनर्वा, मुर्वा, कुटकी, गटिकन, भारती, विदारीकन्द, गोररामुण्डी, डोअइन, वनतुलसी, मैदासैरिनी, रुद्राक्ष, मुशली, रेणुका, काकोली, अनमोद, अजवाइन, मिसोत, दन्तीमूल, मोरशिखा, काञ्जसैरिणी, तालमलाना, धमगा, बेल, सोनापाठा, गभार, पाटला, अरणी, कीरतर, कुठ, अमर, जावित्री, जायफल, इलायची, नाप्येशर, तन, विरायता, बेदार, लोण, इन्द्रायण, कपूर, सैन्धव, आककीजड़, विडङ्ग, सत्यानासीकीजड़, हुरहुर, गजपीपल, अपामार्ग, कवाच, बरप्र देसव समभाग, इनसबकीवराबर राजा और दुनी चबूलों फलिया तथा इनसबकी बराबर शुद्धगुलुत्रवे । शुद्ध पारा, गन्धक, दिगरिक और मुद्गागा, कान्तलोह, अन्नक, ताप, वर-पारा, नाग, मुक्कमाक्षिक, फोलाद इनसबकीमसमें मिल्कर गुगुलेम चतुर्थांश लेवे फिर गुगुलेक बराबर पट्कटु (पीपल, पिप लामूल, चन्य, चिद्रक, सोड और मरिच) लेकर जवडुटकर अठथुने पानीमें औंटावे । अर्धावशेष रहनेपर उतारकर इसमें गुगुलेको पकावे । चतुर्थांशवशेष रहनेपर छानकर घातुदव्योंकी कजली और सन्धीगोंका बारीकचूर्णडालकर मन्दशब्दसे पकाव ।

घन तैयार होनेपर ४-४ मांशकी गोलिया बनाकर रज्जोड़े ।
इन्मेंसे १-१ गोली मधु और धीकेसाथ सेनकरनेसे सातो-
धातु, शिरा, ह्यायु, अस्थि और सन्धिगत साम अथवा निराम
वायुरोग, स्वेज्जज्व्याधि, राजयक्ष्म, मन्दाग्नि, धातुगतज्वर,
गुल्म, जातु, ऊह, उदर, हृदय, कुक्षि, वध, अस, मन्या, ह्यु,
कान, भू, ललाट इनसबकेरोग तथा शङ्खक, ऊर्ध्वतम्भ,
प्रमेह, मूत्रकृच्छ्र, शूल, आध्मान, पथरी और तमामवातविकार-
रोंको यह नष्टकरताहै । एकवर्षतक लगातार इसकासेवनकलेसे
तमामरोगोंसे रहित और पण्डत्वसे निवृत्तहोकर उत्तमवाजीकरण
होताहै । दानपानमें विशेष रूकावट नहींहै ॥ २३० ॥

२३१ पढाननगुटिका

विपोषणं दृङ्गणपारदञ्च
सगन्धचूर्णेषु समांशयुक्तम् ।
जैपालचूर्णं द्विगुणं गुटाक्तं
सम्मर्द्य सर्वं गुटिका विधेया ॥ ९६६ ॥
धिरेचनी सर्वधिकारहन्त्री
लघ्नी हिता दीपनपाचनीयम् ।
कुष्ठे हिता तीपत्रं हि शूले
चामाशये चाश्मभवे विकारि ॥
संशोधनी शीतजलेन सम्भक्त्वा
सङ्गाहिणी चोष्णजलेन युक्ता ॥ ९६७ ॥
र स, र, च, र, सु, र, चि, कुष्ठे ।

भाषा—शुद्धवज्रनाग, मरिच, भुनासुहागा, शुद्ध पारा और
गन्धक समभाग, शुद्धजमालोटा सबसे द्वालेर पारेगन्धककी
नीलवर्णकमलीमें सबकाचूर्णमिलाय बराबरकागुड़ डालकर ३-३
रतीकी गोलिया बनाकर रज्जोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली ठंडे-
जलकेसाथदेनेसे पेटसाफहोताहै । मन्दाग्नि, भयङ्करकुष्ठ, बदा-
हुआ आमाशयवाशूल, पथरी इनसबको यह नष्टकरतीहै ।
शीतजलकेसाथलेनेसे रचनकरतीहै और गरमजललेतेही रचन
बन्दहोजाताहै ॥ २३१ ॥

२३२ पढाननरसः

आरं कांस्यं मृतं तांघ्रं दरुं पिप्पली विपम् ।
तुल्यांशं मर्दयेत्पल्लवे याम छिन्नासमुद्भवैः ॥ ९६८ ॥
गुञ्जामानां वटी कृत्वा स्यानुपारैः प्रदापयेत् ।
ज्वरे मन्दानले चैव वातपित्तज्वरेषु च ॥ ९६९ ॥
ज्वरे धैर्यम्यतरणे ज्वरे जीर्णं विशेषतः ।
मुट्रांघ्रं मुद्गपुं वा तन्मूत्रकञ्च केवलम् ॥ ९७० ॥
नारिकेलदकं देयं दाहे चैव विशेषतः ।
पढाननो रसो नाम सर्वज्वरकुलान्तकृत् ॥ ९७१ ॥
झै, र, र सु, विपमज्वरे ।

भाषा—पीतल, कासा, तात्र इनकीभस्में, शुद्धशिगरिक
और वज्रनाग, पीपल सब समभागकर कारीकचूर्णकर एकपहर
गिलोयैन्धेवसमे मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रस

छोड़े । इन्मेंसे १-१ गोली यथाचिनातुपानकेसाथदेनेसे ज्वर,
मन्दाग्नि, वात और पित्तज्वर, विपम, विशेषकर जीर्णज्वरोंको
यह नष्टकरताहै । इसमें पच्य मूग अथवा मूगकायूप अथवा
छात्रभातदेना उचितहै । दाहेहोनेपर नारियलकाजलदेवे ॥ २३२ ॥

२३३ पण्मुखलोहम्

दिनकरात्रककाञ्चनपारदं
सुरभिलोहरजश्च समांशकम् ।
मृदुदुताशचिलासवशीकृतं
सघृतपुष्परमेन निपचितम् ॥ ९७२ ॥
हरति हृज्जठरामयकामला
ग्रहणिकामयमामसर्मारणम् ।
गुदजमेहमथानलमादर्वं
रधिरपित्तमसृग्दरमुद्गतम् ॥ ९७३ ॥

लो.प. (स.), सर्वरोग ।

भाषा—ताम्र, अत्रक, सुरण, लोह इनकीभस्में, शुद्ध पारा
और गन्धक समभागकर नीलवर्णकमलीकर धीपोतकर वैरके-
कोयलोपर रस्तीहुईकड़ादीमें गलाकर पंपटी बनालेवे । इसमेंमें
१ से २ रतीतक धी और मृदुकेसाथसेवनकरनेसे हृदय और
पेटकेरोग, कामला, ग्रहणी, आमवात, बवासीर, प्रमेह, मन्दाग्नि,
रक्तपित्त, रक्तप्रदर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २३३ ॥

२३४ पण्मुखरसः (प्रथमः)

सूतं गन्धं समं शुद्धं सूतांशे सूतताम्रकम् ।
सोवर्चलञ्च सूतांशे जम्ब्यारै दिनसतकम् ॥ ९७४ ॥
मर्दयेदातपे तीक्ष्णे रज्जा लघु पुटेत्प्रयम् ।
दत्त्वाऽऽदाय तु तच्चूर्णं समं त्रिकटुकं पचेत् ॥ ९७५ ॥
पण्मुखोऽयं रसो नाम त्रिगुञ्जेनामशूलजित् ।
परण्डनैलपट्टभागं लघुनस्य दशाष्टकम् ॥ ९७६ ॥
एकं हिद्रु त्रिसिन्धुत्यं सर्वमेकत्र कारयेत् ।
त्रिनिर्घ्नं भक्षयेद्यानु आमशूलप्रशान्तये ॥ ९७७ ॥
र. र, र को, नि र, चि. क, व. रा, यो म, वै चि,
टो, शूले ।

टि०—यो म, टो, एतयो स्थास त्रिकटुक निक्षिप्तम् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्रभस्म और सत्र
समभाग लेर नीलवर्णकमलीकर जंभीरीकेरससे ७ दिनतक
तीक्ष्णपुंमें मर्दनकर इसचूर्णकेबराबर त्रिकटु मिलाकर रखछोड़े ।
इसमेंसे ३-३ रती यथाचिनातुपानकेसाथदेनेसे आमशूलको यह
नष्टकरताहै । इसको देकर एण्डतेल ६ भाग, लहसनकास १८
भा, भुनीहींग १ भा, सेषामक ३ भाग लेर इकोमिलाकर
इसमेंसे १२-१२ मांश अनुपानमें देवे ॥ २३४ ॥

२३५ पण्मुखरसः (द्वितीयः)

हरकांयोन्हाऽऽस्रकचलिकलेकद्विजलिधि-
द्विपद्मविंशद्विर्मिलितमनलेऽसौ यदि पुनः ।

द्वयहं पकः कृप्यां भवति सिकृतायन्त्रजुपित-
स्तलस्थः पण्डित्यप्रलयकृदयं पण्मुखरसः ॥ १७८ ॥
र. कौ., १ यो. त., यो., र. पा., वाजीकरणे ।

भाषा—पारा १६ भाग, ताम्र १ भा, लोह २ भा, वत्र
४ भा, अन्नक ८ भा इनकीभस्मे और शुद्धगन्धक २२ भाग
लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर पण्टीबनाय फिरसे कञ्जलीकर ६-७
कपडमिशीदीहुई आतशीशीशीमे भरने दोदिन बालुनायत्रमे
परावे, इसकी तलस्थभस्मदोगी । इसमेंसे १-१ रत्ती उचितातु-
पानकेसाथदेनेसे यह नपुंगकताको नष्टकरताहै ॥ २३५ ॥

२३६ पण्मुखरसः (तृतीयः)

नागवह्नाऽन्नकाणाञ्च लोहस्य शुल्बकस्य च ।
सिन्दुराणि च पश्चान्नां रससिन्दुरमेव च ॥ १७९ ॥
एतानि समभागानि समाहृत्य विचक्षणः ।
नित्यं तल्लुण्णरुदलीफलयुक्तनु लहेयेत् ॥ १८० ॥
मधुरेष्टाप्रपानानि भुञ्जीत च ययेप्सितम् ।
संक्त्तरार्द्धमात्रेण जरामरणवर्जितः ॥ १८१ ॥
दिव्यदेहो भवेन्मर्त्येस्त्वयं व्याधि विनाशन ।
कृष्णगोक्षीरसंयुक्तं क्षयाणाञ्च प्रयोजयेत् ॥ १८२ ॥
मातुलुङ्गफलाभ्लेन सेययेद्वर्द्धमण्डलम् ।
भ्यासकासादिहृद्रोगपीनवादिप्रशान्तये ॥ १८३ ॥
अस्य प्रयोगचानुयादनुपानविशेषतः ।
सर्वे गदा चित्तद्वयन्ति तूर्णमेव न संशयः ॥
पण्मुखरः कथितः सोऽयं रसेन्द्रो देवदुर्लभः ॥ १८४ ॥
र कौ (हा.), र क यो, सर्वरोगे ।

भाषा—नाग, वह्न, अन्नक, लोह और ताम्र इनसबका-
सिन्दूर और रससिन्दूर समभागलेकर १-२ दिन मर्दनकर रख-
छोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती बालेकेकेफलेमें रखकर खावे
और मधुर अन्नपानका सेवनकरे । ऐसे एकवर्षकेप्रयोगसे बुझापे
और समस्तव्याधियोंसे रदितदोकर दिव्यदेह होजाताहै । क्षयमें
कालीगायकाङ्गु, और श्वास, कास, हृद्रोग, पीनस इनकीनिवृ-
त्तिकेलेये विशेषरूपसे आधेमण्डलक सेवनकरे । इसीप्रकार
अनुपानमेंदेनेसे यह समस्तरोगोंको दूरकरताहै ॥ २३६ ॥

२३७ पोडशकलरसः

रसेन्द्रं सुरभीं शुल्बं शतकृन्मञ्च तारकम् ।
काललोहं रीतिकार्यं विद्रुमं मौक्तिकम् तथा ॥ १८५ ॥
नागवह्नमयस्कान्तं सम्यक्कारितमन्नकम् ।
शुद्धाऽमृतं शहचूर्णं समभागानि मेलयेत् ॥ १८६ ॥
जम्बूजम्बीरपाठाप्रिष्टह्वेररसेन च ।
ततश्चिन्नकालाभ्यां यथाशक्ति विभाषयेत् ॥ १८७ ॥
कान्तापाने विनिक्षिप्य मधुना सितया सह ।
प्राशयेत्कायसिद्धयर्थं सर्वरोगहरं परम् ॥ १८८ ॥
राजयश्मघ्नगुल्मघ्नं भ्यासकासोदपातिजित् ।
ग्रहणीपाण्डुरोगघ्नं मेहर्घिशतिरुच्छ्रजित् ॥ १८९ ॥

त्रिदोषहरणं रक्तपित्तहारि ज्वरान्तकृत ।
कलापोडशसम्पूर्णः साक्षान्मृत्युञ्जयो मतः ॥ १९० ॥
र. क यो., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, सुवर्ण, रजत,
पोलाद, पीतल, काना, विद्रुम, मोती, नाग, वत्र, कान्त,
अन्नक इनकीभस्मे, शुद्धकठनाग, शहभस्म समसमभागलेकर
नीलवर्णकञ्जलीकर जामुन, जंभीरी, पाठा, लालचिन्नक, अदरक,
सफेदचिन्नक, ताड़फल, इनसबकी बयाशास्य भावनाएँ देकर रख-
छोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकीमात्रा मधु और घीकेसाथ कान्त-
लोहकेपानमें रखकर खानेसे राज्यश्म, शुल्म, श्वास, कास,
उदररोग, ग्रहणी, पाण्डु, प्रमेह, मूत्रच्छ, त्रिदोष, रक्तपित्त
और समस्तज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २३७ ॥

२३८ पोडशकलरसायनम्

रसभस्म च भागेकं द्विभागं शुद्धगन्धकम् ।
द्वयो. समं स्पर्णभस्म तारभस्म च भागिकम् ॥ १९१ ॥
फान्तं ताम्रञ्च पद्मञ्च तीक्ष्णकं परमायसम् ।
नागं घेकान्तमन्नञ्च प्रत्येकं भागमेककम् ॥ १९२ ॥
यज्ञैर्द्वयं नीलञ्च गोमेदं पुष्परागकम् ।
मरकतं विद्रुमं मुक्तां पद्मारागं वराटकम् ॥ १९३ ॥
शहभस्म समांशानि रखवमध्ये विनिक्षिपेत् ।
भावना गन्धदुग्धेन ह्यजाक्षीरेण भावयेत् ॥ १९४ ॥
कुङ्कुमाऽशुक्चन्द्रेण बालुकापम्बकेसरैः ।
जातोफलेन तत्पत्रैस्त्रिकटुत्रिफलानिशा- ॥ १९५ ॥
जीरकद्वयमजिष्टाशताह्लाचन्दनद्वयैः ।
चानुजातकञ्जशूरयष्टीमधुकगोक्षुरैः ॥ १९६ ॥
म्रियङ्गुकेशरैः मुस्ताकाफांसीवाजिगन्धजैः ।
त्रियलाजैः शतपर्दीवर्षाभृशिशुकद्वयैः ॥ १९७ ॥
दाडिमीपुष्पजैश्चैव लवङ्गनारिकेलजैः ।
पतेपां सूक्ष्मचूर्णानां कपायांश्च प्रकल्पयेत् ॥ १९८ ॥
द्वदं मर्द्यञ्च भाव्यञ्च सप्तारं विशोष्य च ।
चतुर्गुणां वटी कृत्वा प्रातस्सायञ्च भक्षयेत् ॥ १९९ ॥
दम्पतीभ्यानिपेय्यञ्च रसायनमुत्तमम् ।
यलीपलितविषंति कामदं सुखदं तथा ॥ २०० ॥
अशीतिवार्षिको वृद्धः पुनरेव युवा भवेत् ।
सर्ववातामयान्दन्ति सर्वक्षयविनाशनम् ॥ २०१ ॥
प्रमेहान्विषशतिञ्चैव शुल्मशूलशिरोगदान् ।
पाण्डुरोगमुदावतं कासश्वासाक्षिरोगकान् ॥ २०२ ॥
अशांसि प्रहणीञ्चैवमसृग्दरातिसारकान् ।
पित्तरोगविनिर्णाशि सर्वरोगहरं परम् ॥ २०३ ॥
नष्टधीं पण्डके च पुरुषे पुष्टिदायकम् ।
रष्टीणां प्रदरदोषञ्च नष्टपुष्पं विनाशयेत् ॥
बन्ध्या च लभते गर्भं सर्वलक्षणसयुतम् ॥ २०४ ॥
वीर्यवृद्धिकरं चैव सर्वेन्द्रियबलप्रदम् ।
द्विकालभोजनञ्चैव गोक्षीराजयेन युक्तिम् ॥ २०५ ॥

वर्जयेत्त्वयणांम्लौ च पिण्याक तैलकं तथा ।
राजकोलादिकं सर्वमुवांरुहफलं तथा ॥ १००६ ॥
सर्जशाकांश्च लग्नं वर्जयेद्भोजने तथा ।
त्रिमालं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्लुतम् ॥ १००७ ॥
कलापीडशपूर्णं च रसायनमहोपघम ।
संबन्धप्रप्रयोगेन दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥
र. क. यो. रसायने ।

भाषा—पारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्ण
भस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वज्र, फोलाद,
परमायस १, नाग, वैकान्त, अन्नक, हींग, लसनिया, नीलम,
गोमेद, पुखराज, पना, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौड़ी और
शङ्ख इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सबकाबारीकचूर्णकर गाय
और बकरीकादूध, केशर, अमर, कपूर, सुगन्धवाला, पत्रकेशर,
जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजैरि, मजीठ,
सोंफ, दोनोंचन्दन, चातुजात, रज्जूर, मुल्हठी, गोखरू, त्रियङ्गु,
केसर, नागमोया, कपासकीमज्जा, असगन्ध, तीनोंबला, क्षता-
वर, इटसिट (पंजाबी), दोनोंसरिजन, अनारकेफूल, लौंग,
नारियल इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वस अथवा ह्याधोमे ७-७
भावनाए देकर ४-४ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोहे। इनमेंसे
१-१ गोली सुबहशाम यथोचितानुपानकेसायनेनेसे समस्त वात-
विकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, सूल, शिरोरोग, पाण्डु,
उदावत, कास, श्वास, अक्षिरोग, बवासीर, प्रद्वीग, अतिमार,
रक्षप्रद, पित्तप्रद, नपुंसकत्व, शुक्लाश, उदररोग, नष्टगुण,
वीर्यनाश, इन्द्रियोकीदुर्बलता, इनसबको नष्टकर बलीपल्लादि
कोसे निर्मुक्तहोकर अस्तीवसकाभी बुद्धा फिरसे शुभावस्थाको
प्राप्तहोताहै। इसमें गायके घी और दूधकेसाथ दोबारभोजनकरे।
कवण, खटाई, खली, तैल, बेर, कचरी, सवतरहकेशाक, लहसुन
इनकापरित्यागकरे। घी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे ॥ १०१८ ॥

२३९ सङ्कोचगोलरसः (प्रथम)

अमृतविपपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातञ्च तुल्यम् ।
रसपलघनमेकं गुग्गुलो भांगयुक्तं,
जयति विपविसर्पं कुष्ठराशि जनेता ॥ १००९ ॥
रसेन्द्रमं., कुष्ठरोगे ।

भाषा—शुद्ध संफेद और काला बजनाग, पटोलपत्र, निम्ब-
पञ्चाङ्ग, त्रिफला, वैरसार, अमिलतास और शुद्धतुल्य १-१ कर्प,
पारदभस्म १ पल, अन्नकभस्म और गूगल १-१ कर्प लेकर
बारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेसरससे १-२ दिनमर्दनकर
३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोहे। इनमेंसे १-१ गोली
निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिवायुकेसाथ लेनेसे समस्तविप,
विसर्प और कुष्ठोको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

२४० सङ्कोचगोलरसः (सङ्कोचरसः) २

सूतताम्राङ्गकं तुल्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम् ।
शुद्धं तमर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलकम् ॥ १०१० ॥

त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम् ।
विषचेटोलकं मध्ये यावज्जीर्यति गन्धकः ॥ १०११ ॥
ताचन्मृद्मिना यत्नात्समुद्भूत्य विचूर्णयेत् ।
गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाञ्चाऽमृताविपम् १०१२
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं सप्तम् ॥
चूर्णितं मधुना लेह्यं निष्कमीडुम्प्रापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोष्ठितः ॥ १०१३ ॥
र. स., र. सु. र. वि., व. रा., चि. क., रसतागर, र. वा. र. को.,
कुष्ठे । व. रा. कनकसङ्कोच इति नाम ।

भाषा—ताम्र और अन्नकभस्म १-१ कर्प, शुद्धपारा ८ कर्प
लेकर जमीरीकेरससे मर्दनकरे। नष्टपिटीहोनेपर गोलाननाय
तीनोंकीबराबर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इसगोलको
धीचमें रख मन्दाग्निसे पकावे। तमामगन्धकजलानेपर उतार-
कर चूर्णकरले। फिर इसमें गूगल, नीमपञ्चाङ्ग, त्रिफला, गिलोय,
बजनाग, पवल, वैरसार, अमिलतास ये प्रत्येक रसकी बराबर
लेकर बारीकचूर्णकर गुग्गुलुमें मिलाकर रखडोहे। इनमेंसे
४ मासे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्बखुशुफोनेनष्टरताहै ॥ २४० ॥

२४१ सङ्कोचपिट्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्द्यौं शुद्धताम्रपलद्वयम् ।
खल्वे सङ्घृत्य यत्नेन कारयेत्पिट्टिकां तुघः ॥ १०१४ ॥
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतेलेन पाचयेत् ।
तन्मध्ये पिट्टिका पाच्या भिपजा यत्नपूर्वकम् ॥ १०१५ ॥
तत उद्भूत्य यत्नेन यथा नोद्गीयते रसः ।
ततो योऽयानि वैद्येन भेषज्यानि शुभानि वै ॥ १०१६ ॥
कटुद्रव्यं यथा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विपम् ।
सप्तभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विपात् १०१७
मधुना मर्दयित्वा तु शुट्टिकाः कारयेद्भिषक् ।
शुजा गुजार्धमात्रा वा एकैकां भक्षयेद्दुघः ॥ १०१८ ॥
ज्ञात्वा बलावलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्दुघः ।
शुट्टिका सप्तपर्यन्तं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥
सङ्कोचपिट्टिका होपा प्रसूतौ वातनाशिनी ।
अन्ये ये वातजा रोगा तान् कुष्टांश्च व्यपोहति १०२०
रसेन्द्रमं., वातरोगे ।

भाषा—आठपल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकोरता गल्कर
नष्टपिट्टिका बनाय बारीकसलमलेकपडेमें बाधकर २ पल शुद्ध-
गन्धकको बरावरके कटुतेलमें गलाकर धीचमें गोलोको रख मन्दा
ग्निसे पकावे। गन्धकके जलानेपर पोडलीको तिकाकर कन्-
लीकरे। फिर इसमें त्रिकटु, वच, नागमोया, विडङ्ग, चित्रक-
मूल, शुद्धबजनाग १-१ कर्प, हरे ३ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर
कजलीमें मिलाय १-२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आधी अथवा
१-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखडोहे। रोगी और रोगका
बलावल देखकर इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथदेकर
प्रतिदिन १ गोली बडाकर ७ गोलीतक बडावे। इसकेसेबनसे
प्रक्षुब्धवात, अन्यसमन्वातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोतेहै ॥ २४१ ॥

२४२ सङ्कोचरसः (प्रथमः)

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन
तुपोदकेनाऽपि ददं विमर्द्य ।
सगन्धं ताम्रविपाचितञ्च
भस्मत्वमायाति कृशानुयोगात् ॥ १०२१ ॥
तद्भस्म गन्धाम्भक्तुत्यक्तञ्च
पुनर्विमर्द्यञ्च रसेन तेन ।
मूपगतं तच्च तुपैर्विपकं
यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥
मर्द्यं सताम्रं सह दङ्कणेन
सनागरं मागधिकायुतञ्च ।
सिद्धो भवेद्बलमितो रसेन्द्रो
सङ्कोचनामाऽखिलकुट्टहारा ॥ १०२३ ॥

र, रसेन्द्रम्, उष्टे । रसेन्द्रमत्रले सङ्कोचगाल इतिनाम
पाठस्तु सन्दिग्ध ।

भाषा—शुद्धपारको लोणोकेरस और तुपोदकसे ३-२ दिन
मर्दनकर समभाग गन्धककेसाथ नीलवर्णकज्वलीकर जम्भीरीके
रसमेंघोटकर गोलाबनाय समभाग तावेकीकटोरीमें बन्दकर
३-४ कपड़मिरीलगाय सुखाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख
८ पहरकी कडी अग्निदेवे । स्वादशोतलहोनेपर निकालकर उस-
भस्मकीबराबर शुद्धगन्धक और तुप्य मिलाकर लोणीकेरस और
तुपाम्रसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूपामें बन्दकर
६-७ कपड़मिरीकेर सुखाकर तुपोंमें गजपुटकीआचदे । स्वाद-
शोतलहोनेपर निकालकर मुनाबुहणा, सोंठ और पीपल सम
भागवाचूर्ण रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-२ रती
निम्बपत्राद् अथवा खदिरादिशोथनेसाथलेनेसे यह समस्त-
कुट्टोंको नष्टकरताहै ॥ २४२ ॥

२४३ सङ्कोचरसः (द्वितीयः)

कन्यारसेन सम्मर्द्यः सूतो द्विगुणगन्धकः ।
संस्थाप्य मृदुमये पात्रे ताम्रपात्रेण रोषयेत् ॥१०२४॥
भस्मना प्रयेद्दृढं मुखरोधञ्च कारयेत् ।
तद्यामद्वितयं पाच्यं स्वाद्गुशीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥
भृङ्गद्वेषेण सम्मर्द्या दिवसान्नितयं धिया ।
भृङ्गाग्नित्रिफलाधेह्लास्तामराजीकपायकैः ॥ १०२६ ॥
निवेशयेत्खादिरज कायं राजतरीस्तथा ।
वीजं वातु चिकीयाश्च मलयूत्यप्रजस्तथा ॥ १०२७ ॥
आवत्यं घनतां प्राप्त शोतीत्यं समाहरेत् ।
अनेन कर्ममात्रेण रसं वह्युद्युं धरेत् ॥ १०२८ ॥
त्रिफलायाः पिबेत्तयं तृणार्तांऽपि जलञ्च तत् ।
त्रिरात्रेण भवेच्छुभ्रे स्फोटानामपि सम्भवः ॥१०२९॥

र, उष्टे ।

भाषा—शुद्धपारकी दूनेगन्धककेसाथ नीलवर्णकज्वलीकर
धीवृवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीबराबरके

ताम्रपात्रसे ढककर सुडचूनावगैरहसे सन्धिवन्दकर ६-७ कपड़-
मिरीदेकर हंडीको राखसे भरके ढकनलगाय ६-७ कपड़मिरी
करदे । सूफनेपर २ पहरकी कडी आचदे । स्वादशोतलहोनेपर
निकालकर ३ दिन भगरेकेरससे मर्दनकर ६-६ रतीकी
गोलिया बनाकर रखछोड़े । फिर भंगरा, चिचक, त्रिफला,
विडङ्ग, वाडुची, खैर और अभिलतासके धार्योंको एकजगह
मिलाकर पन बनावे । उसमें वाडुची और कदमरकीछालकाचूर्ण
दशास मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े ।
इसपनकी गोलीकेसाथ पूर्वसेकी १ गोली देकर त्रिफलाकाकाडा
पिठावे । अधिकव्यासलगेनेपर थोड़ापानीपीवे । इसके अति-
रिक्त भोजनवगैरह न करे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे शित्र-
स्थानमें अप्रिदग्धकीतरह छाले उठकर रोगनष्टहोताहै ॥ २४३ ॥

२४४ सङ्कोचशुल्वरसः (सङ्कोचसत्वः)

शुल्यं तालकताण्डवं ध्वनिघ्नं सूतेन्द्रगोलं मृतं,
काश्मीरं सुरदालिपादकटुका कोशातकी सैन्धवम् ।
निर्गुण्डीद्रवघृष्टयद्गुटिका काथैररिष्टोद्भवैः,
श्लेष्माणं विनिहन्ति शार्प्यजगदान् सङ्कोचशुल्वारसः
रसेन्द्रम्, र, कफाधिकारे ।

टि०—ताण्डव यद्द्रव्याद्, अथो निक्षिप्ते सति यथाशान्तावगां
ज्वाला शब्दाश्च प्रादुर्भवन्ति अतो लाक्षणिकमेतन्नाम । शातुसनुहमथे
उपादानादन्ते मृतमिति विशेषणाच्च तत्स्थाने तुगनिशेषस्याऽननुभवशात् ।
गोलशुध्नेन मन शिला श्राद्धा “गोला गोशवरीसत्यो कुन्दीतुयंयो
सिवायम्” इतिमेदिनी ।

भाषा—तावा, हरिताल, जस्त, कासा, अभ्रक, पारा,
मैनसिल इनकीभस्में, केसर, बन्दाळ, मैनफळ, कुटकी, कडवी-
तरों, सेवानमक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकरसे १-२ दिन
मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली नीमरीछालकेकाढेकेसाथ देनेसे कफरोग और
मस्तककेरोग नष्टहोतेहैं ॥ २४४ ॥

२४५ सङ्करभैरवरसः

मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं त्रिसारं पारदं समम् ।
पञ्चकोलकपायेण दिनमेकान्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुकुटपित्तकैः ।
द्विभापमानं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥
हृद्दाहं हन्ति शोष्णेण रसः सङ्करभैरवः ॥ १०३२ ॥
वै चि, वा, रसायनप, हृद्रोगे ।

भाषा—तावा, कोलाद, पारा इनकीभस्में, सबी, मुद्गाग,
यवशार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाढेसे एकदिन मर्दनकर
गोलाबनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाढेसे १ पहर स्वेदनकर
कुकुटकेपित्तसे १ भावनादेकर २-२ माशेकी गोलियें बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाथलेनेसे
यह हृदयकेदाहको शीघ्रनष्टकरताहै ॥ २४५ ॥

वर्जयेत्त्वल्पाश्लो च पिण्याक तैलकं तथा ।
राजकोलादिकं सर्वमुर्वारकफलं तथा ॥ १००६ ॥
सर्जशाकांश्च लघुनां वर्जयेद्भोजने तथा ।
त्रिमासं सेवयेन्नित्यं घृतेन मधुनाऽऽप्युत्तम ॥ १००७ ॥
कलापोऽशपूर्णञ्च रसायनमहोपधम् ।
संवत्सरप्रयोगेण दिव्यदेहश्च जायते ॥ १००८ ॥
र. क. यो. रसायने ।

भाषा—गारदभस्म १ भाग, शुद्धगन्धक २ भा, सुवर्ण-
भस्म ३ भा. रजतभस्म १ भा., कान्त, ताम्र, वज्र, फोलाद,
परमायुष १, नाग, वैकान्त, अन्नक, हीरा, लसनियां, नीलम,
गोमेद, पुत्रराज, पना, प्रवाल, मोती, माणिक्य, कौडी और
शङ्ख इनकीभस्में १-१ भाग लेकर सयकावारीकचूर्णकर गाय
और बकरीकादूध, केशर, अगार, कपूर, सुगन्धवाला, पत्रकेशर,
जायफल, जावित्री, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दोनोंजीरे, मजीठ,
सोफ, दोनोंचन्दन, चातुर्मात, राजूर, मुलट्टी, गोचरु, त्रियङ्गु,
केसर, नाममोथा, क्षपासक्रीमजा, असगन्ध, तीनोंबला, दाता-
वर, इटसिट (पंजाबी), दोनोंसहितन, अनारकेफूल, लौंग,
नारियल इनप्रत्येकने यथासम्भव स्वरस अथवा काथोमें ७-७
भावनाएं देकर ४-४ रतीकी गोलिया बनाकर रखडोहे । इनमेंसे
१-१ गोली सुबहशाम यथोचितानुपानेकेसाथलेनेसे समस्त वात-
विकार, क्षय, २० प्रकारके प्रमेह, गुल्म, सूल, शिरोरोग, पाण्डु,
उदादत, वास, ध्यास, अशिरोग, बवासीर, प्रद्वीग, अतिमार,
रक्तप्रदर, पित्तोरोग, नर्पुसकत्त, शुक्रनाश, उदररोग, नष्टपुत्र,
वीर्यनाश, इन्द्रियोकीदुर्बलता, इनसबको नष्टकर बलीपट्टिकादि-
कोंसे निर्मुक्तहोकर अस्तीबलसकामी बुद्धा फिरसे युवावस्थाको
प्राप्तहोताहै । इसमें गायके धी और दूधकेसाथ दोवारभोजनकरे ।
लवण, खटाई, रासी, तैल, बेर, कचरी, सवतरहजेयाक, लहसन
इनकापरित्यागकरे । धी और मधु विशेष उपयोगमेंलेवे ॥ १००८ ॥

२३९ सङ्कोचगोलरसः (प्रथम)

अमृतविपपटोलं निम्बपञ्चाङ्गयुक्तं,
त्रिफलखदिरसारं व्याधिघातञ्च तुष्यम् ।
रसपलघनमेकं गुग्गुली भांगियुक्तं,
जयति विपविसर्पं कुष्ठराशिं जवेन ॥ १००९ ॥

रसेन्द्रम., कुष्ठोत्तमे ।

भाषा—शुद्ध सफेद और काला बलनाग, पटोलपत्र, निम्ब-
पञ्चाङ्ग, त्रिफला, सैरासर, अमिलतासर और शुद्धतुष्य १-१ कर्प,
पारदभस्म १ पल, अन्नकभस्म और गुग्गुली १-१ कर्प लेकर
वारीकचूर्णकर निम्बपञ्चाङ्गकेस्वरससे १-२ दिनमर्दनकर
३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली
निम्बपञ्चाङ्ग अथवा खदिरादिघाथकेसाथ लेनेसे समस्तविप,
विसर्प और इष्टोंको यह नष्टकरताहै ॥ २३९ ॥

२४० सङ्कोचगोलरसः (सङ्कोचरसः) २

मृतताम्राप्रकं तुष्यं तयोः सूतं चतुर्गुणम् ।
शुद्धं तन्मर्दयेत्खल्वे नष्टपिष्टं सुगोलरुम् ॥ १०१० ॥

त्रिभिस्तुल्यं शुद्धगन्धं लोहपात्रगतं द्रुतम् ।
विपचन्द्रोलकं मध्ये यावज्जीयेति गन्धकः ॥ १०११ ॥
तावन्मृद्वग्निना यत्नात्समुद्भूत्य विचूर्णयेत् ।
गुग्गुलुं निम्बपञ्चाङ्गं त्रिफलाञ्चाऽमृताविपम् १०१२
पटोलं खादिरं सारं व्याधिघातं समं समम् ।
चूर्णितं मधुना लेहं निष्कमौदुम्बरापहम् ॥
रसः सङ्कोचनामाऽयं पुरा नागार्जुनोदितः ॥ १०१३ ॥
र. स., र. सु. र. चि, व. रा., चि. क., रससागर, र. का, र. को.,
कुष्ठे । व. रा. फनकसङ्कोच इति नाम ।

भाषा—ताम्र और अन्नकभस्म १-१ कर्प, शुद्धपारा ८ कर्प
लेकर जमीरीकेरससे मर्दनकरे । नष्टपिष्टोहोनेपर गोलानाय
तीनोंबीचरावर शुद्धगन्धकको लोहेके पात्रमें गलाकर इमगोलेको
वीचमें रख मन्दाग्निसे पकावे । ताम्रगन्धकजलजानेपर उतार-
कर चूर्णकरले । फिर इसमें गुग्गुली, नीमकापञ्चाङ्ग, त्रिफला, मिलेय, बलनाग,
परवल, सैरासर, अमिलताम ये प्रत्येक रसकी बराबर
लेकर वारीकचूर्णकर गुग्गुलुमें मिलाकर रखडोहे । इसमेंसे
४ मासे मधुकेसाथ लेनेसे यह उदुम्बराङ्गकोनष्टकरताहै ॥ २४० ॥

२४१ सङ्कोचपिट्टिकारसः

शुद्धसूतपलान्द्यौं शुद्धताम्रपलद्वयम् ।
खल्वे सङ्घृष्य यत्नेन कारयेत्पिट्टिकां बुधः ॥ १०१४ ॥
गन्धकस्य पले द्वे तु कटुतैलेन पाचयेत् ।
तन्मध्ये पिट्टिका पाच्या भिपजा यत्नपूर्वकम् ॥ १०१५ ॥
तत उद्भूत्य यत्नेन यथा नोद्गीयेत रसः ।
ततो योज्यानि वेषेन भेषज्यानि शुभानि वै ॥ १०१६ ॥
कटुत्रयं वचा मुस्ता विडङ्गं चित्रकं विपम् ।
समभागानि चैतानि पथ्या च त्रिगुणा विपात् १०१७
मधुना मर्दयित्वा तु गुट्टिकाः कारयेत्प्रिपक् ।
गुग्गुला गुग्गुार्थमात्रा वा एकैरुं भक्षयेद्बुधः ॥ १०१८ ॥
ज्ञात्वा बलावलं सत्त्वं द्वे द्वे वा दापयेद्बुधः ।
गुट्टिका सप्तपर्वतं यथायोगेन दीयते ॥ १०१९ ॥
सङ्कोचपिट्टिका होषा प्रसूतां वातनाशिनी ।
अन्ये ये वातजा रोगा तान कुष्टांश्च ध्वपोहति १०२०
रसेन्द्रमं, चातरोगे ।

भाषा—आठपल शुद्धपारेमें दोपल शुद्धताम्रकारेता डालकर
नष्टपिट्टिका बनाय वारीकमलमलेकपत्रमें बाधकर २ पल शुद्ध
गन्धकको बराबरके कटुतैलमें गलाकर वीचमें गोलीको रस मन्दा-
ग्निसे पकावे । गन्धकके जलजानेपर पोष्टीको निवातकर कच्ची-
लीकरे । फिर इसमें त्रिकटु, वच, नाममोथा, विडङ्ग, चित्रक-
मूल, शुद्धबलनाग १-१ कर्प, हरे ३ कर्प लेकर वारीकचूर्णकर
कजलीमें मिलाय १-२ दिन घोटकर मधुकेसाथ आवी अथवा
१-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखडोहे । रोगी और रोगका
बलावल देखकर इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानेकेसाथदेकर
प्रतिदिन १ गोली बढाकर ७ गोलीतक बढावे । इसकेसेवनसे
प्रयत्नवात, अन्यसमस्तवातरोग और समस्तकुष्ठ नष्टहोते ॥ २४१ ॥

२४२ सङ्कोचरसः (प्रथमः)

शुद्धं रसं लोणिसमुद्भवेन
तुपोदकेनाऽपि दृढं विमर्यं ।
सगन्धकं ताप्रविपाचितञ्च
भस्मत्वमायाति कृशाणुयोगात् ॥ १०२१ ॥
तद्रस्म गन्धाभ्मरुतुत्यकञ्च
पुनर्विमर्यञ्च रसेन तेन ।
मृपागतं तच्च तुर्पर्विपकं
यावद्भवेद्भस्म ततो गृहीत्वा ॥ १०२२ ॥
मर्यं सताम्रं सह टङ्गुणेन
सनागरं मागधिक्कायुतञ्च ।
सिद्धं भवेद्बलमितो रसेन्द्रे
सङ्कोचनामाऽखिलकुपुहारी ॥ १०२३ ॥

२. रसेन्द्रम, उष्टे । रसेन्द्रमत्रले सङ्कोचगोल इतिनाम पाठस्तु सन्दिग्ध ।

भाषा—शुद्धपारके लोणिकेस और तुपोदकसे ३-२ दिन मर्दनकर समभाग गन्धककेसाथ नीलवर्णकजलीकर जन्मीरीके रसमेंघोटकर गोलबनाय समभाग तावेकीकटोरीमें बन्दकर ३-४ कपड़मिरीलाय सुलाकर भस्म अथवा लवणयन्त्रमें रख ८ पहरकी कडी अग्निद्वे । स्वात्रस्रोतलहोनेपर निकालकर उस-भस्मकीबराबर शुद्धान्धक और तुय मिलाकर लोणिकेस और तुपाभ्यसे १-१ दिन मर्दनकर गोलबनाय अन्धमृपामें बन्दकर ६-७ कपड़मिरीदकर सुलाकर तुपोमें गरुपुटकीआवदे । स्वात्र-स्रोतलहोनेपर निकालकर भुनासुद्धाना, सौंठ और पीपल सम भागकावर्ष रसकेबराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती निम्बपत्रात्र अथवा खदिरादिकाथकेसाथलेनेसे यह समस्त-कुष्ठोंको बन्दकरताहे ॥ २४२ ॥

२४३ सङ्कोचरसः (द्वितीयः)

कन्यारसेन सम्मर्यः सूतो द्विगुणगन्धकः ।
संस्थाप्य मून्ये पात्रे ताप्रपात्रेण रोधयेत् ॥ १०२४ ॥
भस्मना पूरयेद्दृढं मुखरोधञ्च कारयेत् ।
तयामहितयं पाच्यं स्वाद्गृहीतं समुद्धरेत् ॥ १०२५ ॥
भृङ्गद्रवेण सम्मर्या दिवसत्रितयं धिया ।
भृङ्गाग्नित्रिफलावेह्लासोमराजिकपायकेः ॥ १०२६ ॥
निवेशयेत्पादिरज कार्यं राजतरोस्तथा ।
वीजं वाकुचिकायाश्च मलयूत्यग्रस्तथा ॥ १०२७ ॥
आचर्य घनतां प्रायं शीतीशृतं समाहरेत् ।
अनेन कर्मपात्रेण रसं बह्युगं चरेत् ॥ १०२८ ॥
त्रिफलायाः पिपेत्सोयं तृष्णातीऽपि जलञ्च तत् ।
त्रिपात्रेण भवेत्सिद्धये स्फोटानामपि सम्भवः ॥ १०२९ ॥
२. उष्टे ।

भाषा—शुद्धपारकी दूनेगन्धककेसाथ नीलवर्णकजलीकर पीपुवारकेरससे एकदिन मर्दनकर हण्डीमें रख दोनोंकीबराबरके

ताप्रपात्रसे ढककर शुद्धचावगैरहसे सन्धिबन्दकर ६-७ कपड़-मिरीदेकर हंडीको राखसे भरके ढक्कनलाय ६-७ कपड़मिरी-करदे । सुखनेपर २ पहरकी कडी आचदे । स्वात्रस्रोतलहोनेपर निकालकर ३ दिन भगोरकेरससे मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । फिर भंगरा, चित्रक, त्रिफला, विडङ्ग, वावुची, खैर और अमिलतासके काथोंको एकजगह मिलाकर घन बनावे । उसमें वावुची और कट्टमरकीछालकावर्ष दशरा मिलाकर १-१ तोलेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इसघनकी गोलीकेसाथ पूर्वसकी १ गोली देकर त्रिफलाकावादा पिलावे । अधिकप्यासलानेपर भोजनानीपीवे । इसके अति-रिक्त भोजनवर्षहर न करे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे थिप्र-स्थानमें अभिद्वयक्रीतरह छाले उठकर रोगनश्वीताहे ॥ २४३ ॥

२४४ सङ्कोचशुल्वरसः (सङ्कोचसत्वः)

शुल्वं तालकताण्डवं ध्वनिघनं सूतेन्द्रगोलं मृतं,
कादमीरं सुरदाहिरादकटुका कोशातकी सैन्धवम् ।
निर्गुण्डाद्रवघृष्टवस्तुटिका काथैररिद्रोद्यवैः,
श्लेष्माणं चिनिहन्ति शीर्षजगदान् सङ्कोचशुल्वोरसः
रसेन्द्रमं, २, कफाधिकारं ।

दि०—ताण्डव यशद ब्राह्म, भग्री निक्षिंते सति यशदापानावणों ज्वाला शुद्धाश्च मादुर्भवन्ति अतो वाशुणितमेतन्नाम । पातुमसूहमथे उपदानादन्ते मृतमितिनिशुण्णया तत्स्थाने एणविशेषसाऽननुभवशात् । गालशुद्धेन मन शिला ब्राह्म “गोला गोदावतीमस्यो कुनगीदुर्गो स्त्रियात्” इतिदेदिती ।

भाषा—ताबा, हरिताल, जस्त, कासा, अभ्रक, पारा, मैनसिल इनकीभस्में, केशर, बन्दाल, मैनयल, कुटकी, कडवी-तरीई, सैधानमक सबसमभागलेकर निर्गुण्डीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नीमकीछालकेकाड़ेकेसाथ देनेसे कफरोग और मस्तककेरोग नश्वीताहे ॥ २४४ ॥

२४५ सङ्ग्रहभैरवसः

मृतं ताम्रं मृतं तीक्ष्णं त्रिहारं पारदं समम् ।
पञ्चकोलकपायेण दिनमेकन्तु मर्दयेत् ॥ १०३१ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं भाव्यं कुकुटपित्तकैः ।
द्विमापमात्रं दातव्यं मधुना कणसंयुतम् ॥
हृदाहं हन्ति शोथेण रसः सङ्ग्रहभैरवः ॥ १०३२ ॥
वै. वि, वा, रसायनप, ह्योग ।

भाषा—ताबा, फोलाद, पारा इनकीभस्में, सज्जो, सुद्धाना, यवधार, सबसमभागलेकर पञ्चकोलकेकाड़ेसे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय दोलायन्त्रमें पञ्चकोलकेकाड़ेसे १ पहर स्वेदनपर कुकुटपित्तसे १ भावनादेकर २-३ मासेकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाथलेनेसे यह हृदयकेदाहको शीघ्रनश्वरताहे ॥ १०३१ ॥

२४६ सञ्जीवकरणरसः

रसगन्धकनेनालं पिप्पली सैन्धवं तथा ।
मरिचं हिङ्गुलं ताम्रं मृतात्रं सर्वतुल्यकम् ॥ १०३३ ॥
समभागानि तुल्यानि भावयेद्दत्तनामजैः ।
त्रिदिनं कृष्णसर्पस्य मुखे पिष्ट्वा प्रवेशयेत् ॥ १०३४ ॥
वह्निर्नित्वा च सम्पिप्य तच्चूर्णं रेणुमात्रकम् ।
भोजयेत्सर्वरोगेषु सद्यः प्रत्ययकारकम् ॥ १०३५ ॥
ग्रहान्ध्रप्रयोगेण मृतस्य प्राणदर्शनम् ।
सञ्जीवकरणो नाम्ना सौवर्णकरणस्तथा ॥
सन्तानकरणश्चैव त्रैविध्ये तत्प्रतिष्ठितम् ॥ १०३६ ॥
र.क. यो., नत्रिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, और जमालगोटा, पीपल, सेंधानमक, मरिच, शिंगरिफ, और ताम्रसम सब समभाग, अन्नद्रव्यम् सक्तीवरावर लेकर बटनागकेकाडेसे १-२ दिन मर्दनकर बालेनापरेसुंहेमरदे । ३ दिनाद निकालकर सुखाकर रसछोड़े । इसमेंसे ज्वारकेदानेनीवरावर समयोचितानुपानकेसाय देनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै और तत्क्षण परिचय बताताहै । सत्रिपातादिजनित मूच्छावस्थामें तालुमें पाछेदेकर पर्यन्तमेंसे चेतनाको प्राप्तहोताहै । इसकेप्रयोगसे वन्ध्या गर्भधारणकरतीहै ॥ २४६ ॥

२४७ सञ्जीवनरसः (प्रथमः)

पलमात्रं रसं शुद्धं घरनागसमन्वितम् ।
निक्षिप्य पातनायत्रे त्रिशद्वाराणि पातयेत् ॥ १०३७ ॥
समाह्वयद्वयं सम्यक् पातनायत्रके मृतम् ।
मृते रसे क्षिपेत्तुल्यं भूपालायतमस्मकम् ॥ १०३८ ॥
निर्मल्यं प्रपुगस्मापि निक्षिपेद्वष्टमांशतः ।
ततो निम्बद्वलद्रावैस्त्रिद्वारैश्चि भावयेत् ॥
ततः संशोष्य सञ्चूर्ण्य क्षिपेद्व्यमकरण्डके ॥ १०३९ ॥
सञ्जीवनोऽयं बलुवल्लमानो निशाकुलीचूर्णयुतःसतक्रः
निहन्ति सर्वानपि मेहरोगाघ्नानां नितान्तं कुरुते शुधाञ्ज
र. र. घ., र. सु., र. को., प्रमेहे ।

भाषा—एकलशुद्धनागको गलाकर १ पल शुद्धपारा मिलाय ३० धार ऊर्ध्वपातनकरे । इसमें पारे और नागकी तुल्यय भस्म होगी । फिर इसकोवातर लाजवर्द और अष्टमाश निर्द्वय ब्रह्मराम मिलाकर नौमकेतोवैरमसे ३० दिन मर्दनकर रसछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा हल्दी और अङ्गुलीशुद्धालके ३ मासे पूर्णकेसाय मिलाकर छाछकेसायलेनेसे यह समस्तप्रमेहोंको नष्टकर अल्पत धुवाको जाणनकरताहै ॥ २४७ ॥

२४८ सञ्जीवनरसः (द्वितीयः)

रसगन्धकताम्रञ्च फान्तभस्म समांशकम् ।
मुतालीरससं पष्टं काचचूर्ण्य विनिक्षिपेत् ॥ १०४१ ॥
पाचयेद्बालुकादिभ्ये ठियामान्ते ममुद्धरत् ।
मिन्दूरं त्रिफलाद्योर्वां शारं लयणपञ्चकम् ॥ १०४२ ॥

हिङ्गु गुग्गुलुवही च कुवेराक्षश्च टङ्गुणम् ।
दीप्यत्रयश्च जाती च सुरणं विश्ववत्सकम् ॥ १०४३ ॥
शिमुद्धयं तथा पुह्ली व्याघ्रीत्रयपटोलकम् ।
राक्षसीवल्लवह्ली च कटभीक्षुरपीलुकम् ॥ १०४४ ॥
समभागानि सञ्चूर्ण्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ।
गुञ्जनस्य शृङ्गवेरजम्बीररसभावना ॥ १०४५ ॥
निष्कार्दं मधुना लेह्यं यामे यामे च भक्षितम् ।
अम्लपित्तं निहन्त्याशु सर्वव्याधिहरः परः ॥
कुर्यात्प्राणपरित्राणं सञ्जीवनरसः स्मृतः ॥ १०४६ ॥
व. रा., वै. चि., अम्लपित्ते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र और कान्तभस्म समभागलेकर नीलगणकज्वलीकर मुतालीरससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर २-३ कपडिमिठीकीहुई आतशीशोधीमें रस सुंहेन्द्रकर बालुकायन्त्रमें रख दोषहरकी अग्निदेवे । स्वाद्गतीतलहोनेपर निकालकर रससिन्दूर, त्रिकला, त्रिकुट, यवक्षार, पांचौनमक, मुनीहींग, गूगल, चित्रकमूल, करंजकीमबा, मुनाहृदागा, घुंरासानी और देशी अजवाइन, अजमोद, जावित्री, सुरण, सौंठ, इन्द्रजव, दोनोसहिजनकीछाल, पुनर्नवा, लाल और सफेद भेट-कटैया, वनमांटा, परवल, सेमलकामुगला, हड़जोह, बड्भ्य (काश्मीरीनामहै), तालमखाना, पीतुकीछाल, सयमभागलेकर वारीकचूर्णकर खलम, अदरस औरतंभीरीरसेतोसे १-१ भावना देकर २-२ मासेकी गोलियां बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसायलेनेसे अम्लपितादि समस्त अग्नि-विकारोंको नष्टकर मनुष्यको जीवितदानदेताहै ॥ २४८ ॥

२४९ सञ्जीवनाभ्रम्

वज्रांत्रं मारितं प्राह्यं कर्ममानं सुचूर्णितम् ।
जीरकं फानकं वीजं कर्म वासारसेन च ॥ १०४७ ॥
कण्टकारीसेनैव पलांशेन पृथक्पृथक् ॥ १०४८ ॥
मर्दयित्वा वटी कार्या गुञ्जामात्रा नियोजिता ।
चिपमाख्याडरान्सवांशुं ग्रीहानं यष्टतं यमिम ॥ १०४९ ॥
रक्तपित्तं वातरक्तं प्रहर्णां श्वासकासकी ।
अरुचि शूलहृद्वासायशांसि च विनाशयेत् ॥ १०५० ॥
र. सु., ज्वरतिकारे ।

भाषा—अन्नकर्मम्, जीरा, शुद्धजमालगोटा १-१ कपे लेकर अदुहा, भटकेटिया, आंखले, नागरमोया और गिलोयके १-१ पल्लवमसे क्रमशः मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोतिये बनाकर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाय-लेनेसे समस्त घम या विषमकर, प्लीहा, यष्टर, घमन, रक्तपित्त, वातरक्त, प्रदन्ना, भ्राय, बाय, अदधि, घूल, जीमि-पलाना, यथातीर इनमपदो यह नष्टकरताहै ॥ २४९ ॥

२५० सञ्जीवनीवटी

विडङ्गं नागरं कृष्णा पथ्यामलविर्मातकी ।
यथा गुड्डी भहानं सविषं चात्र योजयेत् ॥ १०५१ ॥

एतानि समभागानि गोमूत्रेणैव पेपयेत् ।
गुञ्जामा गुटिका कार्या दद्याद्रुजै रसैः १०५२
एकामजीर्णगुल्मेषु द्वे विमूढ्याञ्च दापयेत् ।
तिघ्नः स्युः सर्पदष्टेषु चतस्रः सक्षिपातके ॥
घटी सञ्जीवनी नास्त्रा सञ्जीवयति मानवम् १०५३
शा स, श्रु.थो त, नि र, भे सा, रसायनस, वै. र, यो
चि, चि र न, यो र, यो म, वै चि, व रा, चि. क, यो
त, अनीणादौ ।

भाषा—विडङ्ग, सोठ, पीपल, हर्ष, आबले, बहेड़े, बच,
गिलोय, शुद्धमिलावे और बछनाग समभाग लेकर बारीक-
चूर्णकरे । मिलावे और तापीगिलोयको गोमूत्रमें १-२
दिन घोटकर दूसरीचीर्षे मिलावे और अच्छीतरह घोटकर
१-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली अदरकके रसनेसाथ अनोण और गुल्ममें देवे । हैजेमें
२ गोली, सर्पदंशमें ३ और गन्धियात्ममें ४ गोलियोंकी
मात्रा देनेसे यह मनुष्यको जीवितदान देतीहै ॥ २५० ॥

२५१ सञ्ज्ञाप्रबोधप्रथमम्

यच्चा रसोनरुद्रुकं सैन्धवं बृहतीफलम् ।
रुद्राक्षं मधुसारञ्च फलं सामुद्रिकं मतम् ॥१०५४॥
गन्धेशो समभागानि ह्यर्कक्षीरेण भावयेत् ।
भावयेन्मीनपित्तं त्रिवारं चूर्णयेत्ततः ॥ १०५५ ॥
धमनं कथितं श्रेष्ठं सन्निपाते सुदारणे ।
कर्णोल्बणे तीव्रघाते अपस्मारे हलीमके ॥१०५६॥
शिरोरोगे नेत्ररोगे कर्णरोगे विधानत ।
भाषयेद्व्राणछिद्राभ्यां सञ्ज्ञाकरणमुत्तमम् १०५७

रसायनस, सन्निपाते ।

त्रि—अत्र मधुमारसाधनेन मधुयण्डिका ग्राह्या । क्वचिचु चद्र
मश्वरु कथयन्ति ।

भाषा—बच, लहसन, कुटकी, संधानमक, भटकटैयाके
फल रुद्राक्ष, मुलहठी अथवा चन्द्रमश्वरु, समुद्रफल, पारा और
गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्ण
कजलीमें मिलाय आककेदूध और मठलीकेपित्तसे ३-३ भाव-
नाए देकर सुसाकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । कर्णोल्बण भयङ्कर
सन्निपात, तीव्रज्वर, अपस्मार, हलीमक, शिरोरोग नेत्ररोग और
कर्णरोग इनमें इसका नस्यदेनेसे चेतना प्राप्तहोतीहै ॥ २५१ ॥

२५२ सञ्ज्ञाप्रबोधरसः

रुफटिका तुल्यनेपालं मरिचं निम्बयीजकम् ।
पुत्रजीवकमज्जा च निम्बुनीरेडुर्नभाजने ॥ १०५८ ॥
भावना सप्त दातव्या गुटी गुञ्जामिता कृता ।
अञ्जनरसन्निपाताऽक्षिविपाऽपस्मारनाशिनी १०५९
रसायनस, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध फिट्फकी, तुल्य और जमालगोटा, मरिच,
नीमकेपीज और पतनीवाकी मन्वा सब समभागलेकर बारीक

चूर्णकर तावेके बर्तनमें डालकर नीबूकेरसकी ७ भावनाए देकर
१-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली मनुष्यलाला अथवा नीबूकेरसमें विसकर अन्नकरनेसे
सक्षिपात, सर्पविष और अपस्मारको यह नष्टकरताहै ॥ २५२ ॥

२५३ सच्चशेखररसः

सूतं रसकसत्त्वेन सारयित्वा समेन च ।
सत्त्वं तालस्य ताप्यस्य सर्वतुल्यत्रलि क्षिपेत् १०६०
मर्दयेत्सुपचीनीरं राजकीपातकीजले ।
देवदालीरसै यामं यामं लवणयत्रके ॥ १०६१ ॥
पवेच्छीतं विचूर्णयाथ भाजयेत्सैन्धिभि जलेः ।
यवच्छिञ्जहारिकान्ताकन्यानां सलिलैः पृथक् ॥१०६२॥
द्विघ्न्या वटिका चास्य पिप्पली मधुसंयुता ।
प्रयुक्ता हन्ति वेगेन शीतदाहादिकं ज्वरम् ॥ १०६३ ॥
टो०, ज्वराऽधिकार ।

भाषा—शुद्धगरेको समभाग खर्परसत्त्वमें सारणधन्नेसे
मिलाकर समभाग हरिताल और माक्षिकरसत्त्वकेसाथ मिलावे ।
फिर सबकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय नीलार्णकजलीकर करेला,
कड़वीलौकी और बन्दाककेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला,
बनाय शरावसम्युत्तमें बन्दकर १-१ पहर लवणयन्त्रमें पकावे ।
स्वाग्णशीतलहोनेपर निकालकर करेला, कड़वीलौकी, बदाल
जैती, कोयल और पीपुल्लारकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६
रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल
और मधुकेसाथदेनेसे शीत अथवा दाहादियुक्तज्वरोंको यह
नष्टकरताहै ॥ २५३ ॥

२५४ सद्योज्वराङ्कुशरसः

रसञ्च नागवद्भौ च समांशान् मेलयेत्तथा ।
अमृतञ्चाऽपि सदशं मर्दयेदुष्णपरिणा ॥ १०६४ ॥
कटुत्रयेण दातव्यं गुञ्जामात्रं भिषग्वरैः ।
सद्यो ज्वराङ्कुशो नाम सर्वज्वरघिनाशकः ॥ १०६५ ॥
वै चि, ज्वराऽधिकार ।

भाषा—शुद्धपारा, नाग और बड़को इक्षु गलय पाकेकी
बराबर शुद्धबछनागचाचूर्णमिलाय १-२ दिन शुद्धमर्दनकर
गरमपानीसे घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुकेचूर्णकेसाथ देनेसे यह तत्क्षणभाये
हुए ज्वरको नष्टकरताहै ॥ २५४ ॥

२५५ सन्धिवातहररसः

गोदुग्धे गुटिका कार्या बोलगुग्गुत्तुहिङ्गुलेः ।
हरेद्रातव्यायां सर्वसन्धिवातञ्च दु सहम् ॥ १०६६ ॥
रसायनस, वातरोगाऽधिकार ।

भाषा—हीराबोल, गुग्गु और शिंगरिफ समभागलेकर
१-० दिन गोदुग्धमें मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उक्थितानुपानकेसाथदेनेसे यह
सन्धिवातको नष्टकरताहै ॥ २५५ ॥

२५६ सन्धिवातारिरसः (रत्नगर्भपोट्टली)

शुद्धं सूतं विपं गन्धं हिङ्गुलं कटुरोहिणी ।
लोहताम्रमयोभस्म तालकञ्च मनःशिला ॥ १०६७ ॥
अर्कमूलरूपयेण मर्दितं घटकीकृतम् ।
काचकूप्यां निवेदयाथ लेपयेद्ब्रह्ममृत्तिकां ॥ १०६८ ॥
त्रियामं बालुकायन्त्रे पचन्मृद्भिना ततः ।
गुञ्जामात्रं प्रयुञ्जीत सन्धिवातं निहन्त्यलम् ॥ १०६९ ॥
व. रा., वै. चि., सन्धिवाते ।

टि०—वैच्यवन्तामणौ अरमाद्रसाद्रन्धक मन शिलात्र निष्कास्य
पितामहरस इति नाम स्थापितम् । तथाच “सन्धिवात निहन्त्यल-”
नित्यस्य स्थाने अत्युग्र नाशयेन्ज्वरमिति पाठ इत्यनेन सन्धिवात
राशेन सन्धिगसन्धिपात विकश्चित् स्यादिति प्रतिमाति । रसस्य तदनु-
पानस्य चालुयुक्तैकसादुभयस्याऽपि नाशो न कापि विप्रतिपत्ति ।

भाषा—शुद्ध पाटा, बटनाग, गन्धक और शिंगरिक
कुटकी, कान्तलोह, ताम्र और फोलादभस्म, शुद्ध हरिताल और
मैनसिल सयसमभागलेकर नीलवर्णकमलीकर आकनीजङ्केरससे
एकदिनमर्दनकर बेरवावरपोलिथे बनायमुखाकर आतशोशीशीमें
भरके सुहृदन्दकर बालुकायन्त्रमें रच ३ पहली अग्निदे । इस-
मेंसे १-१ रती उचितानुपानकेसायदेनेसे यह सन्धिवातको
दूरकताहै ॥ २५६ ॥

२५७ सन्धिपातकालानलरसः

यद्भन्तु ताम्रपत्रेण सूतं गन्धकतालकम् ।
विपमकं सुवर्णञ्च रसकं हेममाक्षिकम् ॥ १०७० ॥
कृशानुतापयद्दृष्ट्वा दिनं तद्रोहकं पुनः ।
संस्कृत्य मृत्पटेर्गाढं बालुकायन्त्रं पचेत् ॥ १०७१ ॥
त्रिदिनं स्याद्गुणशीतानु पिप्तं भाव्यञ्च पञ्चभिः ।
देवेदिं सर्वतुल्येन धूपितं हि विपेण च ॥ १०७२ ॥
अद्धगुञ्जामितं खादेत्सन्धिपातं सुदुस्तरम् ।
शैत्यतन्द्राप्रलापोत्रं सान्द्रवातरुफोल्गणम् ॥ १०७३ ॥
जयेद्ग्रेत्रेण कृशतां ज्वराज्जीर्णांघ्रवानपि ।
प्रहृण्युदरदोषायाशांऽरचिद्वैद्यैर्व्यपीनसान् ॥ १०७४ ॥
र. क., सन्धिपाते ।

भाषा—अनलरसको प्रक्रियासे बांधाहुआ पाटा, शुद्ध-
गन्धक, हरिताल और बटनाग, ताम्र, सुवर्ण, खपरिया और
सोनामारी इनभीमेंसे सब समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर
चित्रकमलीकरसे एकदिनमर्दनकर गोलाबनाय शरायसम्पुटमें
बन्दकर ३-४ कपडमिठी लगाय सुखाकर ३ दिन बालुका-
यन्त्रकी अग्निदेवे । स्वाप्नशीतत्वोनेपर निष्कालकर पांचोंपित्तोंसे
१-१ भावना देकर पेटकेभीतरलेपदकर सबकोषरावर बटनाग
कागुण नीचेकेपेटमें विषाय डमकन्दय बनाकर ३-४ कपड-
मिठी देकर बटनागसाले पेटको चून्हेपर चढाय इतनी आसद
कि तमासबबटनाग जन्धर धूआं ऊपरके रगमें समाविष्ट होजाय
स्वापशीतत्वोनेपर धीरजसे निष्काशभाषीआधी रमकी गाडियां
बनाकर रगजोडे । इनमेंसे १-१ गोली नमय अथवा रोमोचि-

तानुपानकेसाथ देनेसे सर्वाङ्गशीत, तन्द्रा और अधिकप्रलापयुक्त
वातफोल्गणसन्धिपात, मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, प्रहृणी, उदररोग,
शोथ, बवासीर, अरुचि, पीनय इनसम्बन्धो यह नष्टकरताहै २५७

२५८ सन्धिपातकृतान्तकरसः

शुद्धं सूतं सर्भं गन्धं बृहती कण्टकारिका ।
सक्षौटैः पेपयेद्यामं शुष्कं तद्भाबयेद्दृष्ट्वैः ॥ १०७५ ॥
रक्तशालिनिकावासाभृङ्गीश्वेतापराजिता- ।
रुदन्तीविजयात्राह्नीनिगुण्डीचित्रकद्रवैः ॥ १०७६ ॥
कपिकच्छुकुम्बुलैश्च मरिचानां कपायकैः ।
धन्तूरद्वकणैश्च धूमसारञ्च निक्षिपेत् ॥ १०७७ ॥
रस्तुल्यं ततस्तञ्च दिनं पिप्तञ्च भावयेत् ।
मात्स्यमाहिपमायूरेज्यांतिभ्यत्याश्च तैलकैः ॥ १०७८ ॥
चणमात्रां घटीं कुर्यादक्षयेत्सन्धिपातयुक् ।
अभावे सति पित्तानां विपमुष्टिन् पद्भुणम् ॥ १०७९ ॥
क्षिपेद्ग्रेसस्य तत्सिद्धिस्सन्धिपातकृतान्तकः ।
सेव्यं द्रव्यादानं पच्य घृताभ्यक्तञ्च कारयेत् ॥
धारार शिरसि दातव्या सर्वाङ्गं शीतले जलेः ॥ १०८० ॥
र. सु., सू. प्र., र का, र क यो., सन्धिपाते ।

भाषा—शुद्ध पाटा और गन्धक, भटकटैया, वनभाटा सब
समभागकी नीलवर्णकमलीकर मधु, लालगुञ्जा, अड्डा, भंगरा,
सफेदकोयल, रुदती, भाग, ब्राह्मी, निगुण्डी, चित्रक, केचाक, केचाक
कीजड़, मरिच और धतूरेके यथासम्बन्ध स्वस अथवा हाथोंसे
१-१ भावना देकर पाखीबाबर गृहधूम मिलाकर मछली,
भैंसा और मोरकेपित्तोंमें १-१ भावना देकर मालकागनीके
तलेसे घोटकर चनेप्रमाण गोलिया बनाकर रगजोडे । पित्तोंके
अभावमें पारेसे वडगुण शुद्धचिला डाले । इनमेंसे १-१ गोली
सन्धिपातमें समयोचितानुपानकेसाथदेवे । दाहमालमहोनेपर धोस
अभ्यङ्गराय तिसर टडपानीकी धारा दे तथा खानकरावे ।
अत्यन्तभूखरगमेपर दहीभातदे ॥ २५८ ॥

२५९ सन्धिपातगजव्यालरसः

पूर्ववच्छोधितं सूतं भस्मोभूतं समाहरेत् ।
सुवर्णं रजतं ताम्रं तीर्हणं त्रुपु च नागकम् ॥ १०८१ ॥
माक्षीकमन्त्रकञ्चैत्र समाग्भागान् समाहरेत् ।
भस्मैकृतांश्च तांशोहान् रसेन सह मर्दयेत् ॥ १०८२ ॥
गन्धकं वत्सनामञ्च सर्वैः सममुपानयेत् ।
एकीकृत्याऽथ सर्वं तन्मर्दयेद्द्राक्षद्रवैः ॥ १०८३ ॥
त्रिदिनं कृष्णतुलनांनारैः नम्मर्दयेद्बुधः ।
कृष्णधन्तूरद्रवैः फाषे मरिचसम्भवेः ॥ १०८४ ॥
पिपत्युत्पेक्षेण शुण्डीजे भांयदेद्युधैःपजेस्तया ।
भृङ्गाश्वेत्कमुनिजेः पिपलीकासजे रमेः ॥ १०८५ ॥
तिलपर्णांरमेस्तद्भृत्पर्णांसिद्धिस्तया ।
घटिनारैश्च मण्डूकरसैर्गस्य पयजेः ॥ १०८६ ॥

भृङ्गीरसैः प्रमद्यांथ पश्चात्पित्तैश्च भावयेत् ।
 मधुरमीनवाराहच्छागमाह्रिपसम्भवैः ॥ १०८७ ॥
 धूमपानं ततः कुर्यात्पूर्वांक्तविधियोगतः ।
 गुञ्जाप्रमाणयटिकाः कर्तव्याखिकटोरसैः ॥ १०८८ ॥
 त्रिकटुकाथयोगेन रसेन्द्रं सम्प्रयोजयेत् ।
 अनुपाने प्रदातव्यखिकटो रस एव हि ॥ १०८९ ॥
 पार्थांसि ढालयेत्तत्र सुशीतानि बहून्पि ।
 ततः पथ्यं प्रदातव्यं मुद्गकाथेन संयुतम् ॥ १०९० ॥
 उपचारस्तु पूर्वांक्तः कर्तव्यो नाऽत्र संशयः ।
 शीतद्रव्यैर्भवेद्दीर्यं पित्तबद्धरसोत्तमैः ॥
 सन्निपातगजव्यालो रसेन्द्रः परिकीर्तितः ॥ १०९१ ॥
 रसालं, सन्निपाते ।

भाषा—ऊर्द्धपातनादिसंस्कारकर भस्मकियाहुआ पारा, सुवर्ण, रजत, ताम्र, फोलाद, वज्र, नाग, सोनामाखी, अन्नक इनकीभस्में सब समभागलेर शुद्धगन्धक और बछनाग सबकी धरावर धरावर मिलाय बारीकचूर्णकर अदरखकेरसेसे ३ दिन मर्दनकर काठीतुलसी, धनूरा, मरिच, पीपल, सोंठ, भंगरा, लालम्रगस्त्य, पीपल, हुजुर, अम्बोलियां, चित्रक, ब्राह्मी, आकरोत्रेपेले, भांग इनके यथासम्भव स्वस अथवा धारोसे १-१ भावना देन मोर, मछली, सुअर, बकरा, भेडा इनके पित्तोसे १-१ भावना देवे । फिर मिठीकीहंडीमें इसका लेप देकर दूसरीहंडीमें बरावरकेबछनागकाचूर्णविछार उमकथन्न-बनाय चूलेपर बछनागबाली हडीको रख इतनीआचदे कि बछनाग जलकर तमाम भूआ रसमें समाविष्टहोजाय । स्वाहशीतल-होनेपर त्रिकटुकेकाथसे मर्दनकर १-१ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुके वायकेसाथदेनेसे यह सन्निपातनो नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मीलानेपर ठडेजलकी-धारादे । मुखलानेपर मूकगायुप और भातदे । शीतजलसे पित्त-युक्तसोमें तेजा आतीहै इसलिये तमाम शीतोपचार करे । इनके सेवनसे सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २५९ ॥

२६० सन्निपातगजाडुशरसः

मृतं मृतं मृतञ्चाग्रं शुद्धतालकमाक्षिके ।
 रामठं तुल्यतुल्यं स्थान्मर्दयेत्खल्वके द्रवैः ॥ १०९२ ॥
 बन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैः ।
 धनूरलाङ्गलीपाटाभृङ्गीजम्बीरजै द्रवैः ॥ १०९३ ॥
 त्रिदिनं मर्दयेदेभिश्चर्णं कृत्वा विमिश्रयेत् ।
 विश्दारं सैन्यं व्योषं विपं मधुकसारकम् ॥ १०९४ ॥
 तुल्यं तुल्यं विबुण्यांथ पूर्वांक्तञ्च रसं समम् ।
 पकीकृत्य भवेत्सिद्धः सन्निपातगजाडुशः ॥
 सन्निपातं निहन्त्याशु गुञ्जामात्रः प्रयोजितः ॥ १०९५ ॥
 र घु., र. र. स, र क थो, र र, नि र., र. को. र. का., सु-
 प्र., सन्निपाते ।

टि०—रपरनाकरे माक्षिकरूपाने साम्र निधोजितम् । र घु, र. क थो पत्थनो हिंदूरुयाने विद्रुल निधोजिन ततु न मन्थक। मन्व राम-

ठलैवोक्तम् । शुद्धपरदस्यागमनाथ निर्गुण्डीसुगन्धानिम्बचित्रकैरि-
 त्यत्र रसरनाकरे शुष्ठीगन्धाक्षिकेवैरिति पाठो दृश्ये तत्र गन्धादि-
 शब्देन फांगली (मराठी) ब्राह्मी यन्महाराष्ट्रदेशे कुर्यात्स्वयन्नुविषे प्रसु-
 ज्यते । यत्र तदभावस्तान् कुकुरोरेति प्रसिद्धमौषधं योज्यम् । केचित्तु
 मगधदेशे गेन्द्राशीतिनाम्ना मण्डित्वात्कमारिष शुक्रन्ति, ततु न मन्थक ।
 तसोक्तगन्धपथ्याऽभावात्तत्सत्त्वेनैव गन्धाक्षीनि शुष्कप्रयोगात्सन्निपातद-
 ष्याऽसमर्थत्वार्थः । रसाकर्तृपथयोगे वानस्वरगजाडुशरानाम्ना “रसतालक-
 ताप्याभ्रालूकैवहिरामठान् । पथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपत्तान् ॥
 पाटाभिद्रुमुसैलाबोलथचरुत्तपुटान् । शूरीमधुकसारञ्च जम्बीराम्बेन
 पेपयेत् ॥ कुर्यात्कतकमानेन वटिका सन्नियच्छति । सत्वेद्राहाऽग्निनाम
 वातस्वरगजाडुशः ॥” इत्येक पाठो निहितोऽस्ति । र. र. स, र क्थे,
 र. क थो. एषु सन्निपातगजाडुशरानाम्ना “रसगन्धकामात्रं लाङ्गलीवहि-
 रामठम् । बन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपत्तान् ॥ पाटा क्षारख
 स्वेऽबोलथचरुत्तपुटैः । शूरीमधुकमारान्थां जम्बीराम्बेन मर्दयेत् ॥
 कुर्यात्किं मापमानेन वटिका सा नियच्छति । सत्वेद्राहाऽग्निनामस सन्नि-
 पातगजाडुशः ॥” इति द्वितीय. पाठो निहितोऽस्ति । अनन्वदेरोरिति
 “शृतं यत् शृतं चात्र शुद्धतालकमाक्षिकं—”मित्याद्युपरिनिर्दिष्टः षड् ष
 मूल प्रतीयेत बहुप्रत्यसम्पादात् । रसनाकर्तृपथयोगांशुं अगन्ध-
 मोवेत्तु तदुद्वय चारुमाद्रिभौ प्रकलितौ । सायन्तेकदशाया मरुतामपि
 शुद्धिराडुला भवति यत्कन्धो योगः सत्यादर्नीय इति । अकिन्तु न
 तद्वानि रिति न्यायमग्नीकृत्य योगत्रयनिर्दिष्टानि मूलद्रव्याण्येवैकैकं च य्नां
 निर्वायनानिपारिपे विनाम्य एक एव रस सत्यादीय इति विश्वे तु विज्ञितः ।
 स यथा—मृताभ्रामरसमानि यन्धममाक्षिकालाङ्गलीवहूरैर्यक्षिच वि
 सुशुद्धानि वहिरामठपथ्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बपरवात्तविक्रमु-
 स्तैष्यशोभुश्रीनामधुमारविश्वारमैषन्धोपवनन्ध्याकळोदरं कन्द केमपि
 द्रव्याण्येकत्र सन्निपथ बन्ध्यापटोलनिर्गुण्डीसुगन्धानिम्बविषकल्पोच
 लाङ्गलीपाटाभृङ्गमेवनादशूरीमधुपुत्राणां यन्धमम्ब सत्वे रवे हां
 पथैका भावना प्रदायान्ते जम्बीराम्बेन त्रिदिनं विनये शुष्कप्रम-बद्धि ।
 विषाय सपारोगमनुपान विमन्व प्रयेय इति सर्वं सन्धय पविष्ये ।

भाषा—पारद और अन्नकभस्म, शुद्ध हृत्तक, सोना
 माखी, हींग सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर बाल्लेच्छा क-
 बल, निर्गुण्डी, फांगली (मराठी) अनावने कुदरेण, रोक-
 कीछाल, चित्रकचौज, धनूरा, बकिहरी, पटा, भंग, जन्टे
 इनके रसोसे ३-३ दिनमर्दनकर तैर्नोबुर, कैन्च, सिद्ध,
 शुद्धबछनाग, महुएकासार, छवगमनागेश्वर इतलके भाग
 मिलाकर १-२ दिन पोटकर रखछोड़े । इन्मेंसे १-१ रस
 समय अथवा रोगोचितदुपानकेसाथदेनेसे इत् सन्धक
 पातोंको नष्टरताहै ॥ २६० ॥

२६१ सन्निपातदावानलरसः (प्रसः)

तालकं नागवज्रं दे हरेयोथंश्च द्रुमम् ।
 विश्दारं पञ्चलवर्णं गरलं पार्श्वी शिला ॥ १०९६ ॥
 पतानि समभागानि निन्दुगीणं मन्त्रेण ।
 पाचितं बालुकायन्त्रे दिनेकं तीव्रवाहिना ॥ १०९७ ॥
 स्वाङ्गशीतलमुद्गं शिखिन्ध्याहादिपित्तकैः ।
 भापितं मापमात्रञ्च दान्यं शोणनारमम् ॥ १०९८ ॥
 सन्निपाताग्निहन्त्याशु सुष्यं पथ्यामाचरन् ।
 दावानलरसः स्यातो वंशित्वं यथाकथितम् ॥ १०९९ ॥
 ई रि, कथिते ।

भाषा—शुद्धहरिताल, नाग और वृद्धमसम, शुद्ध पारा और सुहागा, तीनोंसार, पांचोन्नमक, सर्पविष, शुद्ध गन्धक और मैनसिल सब समभागलेकर हरिताल, पारा, गन्धक और मैनसिलकी नीलवर्णकजलीकर अन्यमवचीजोंको मिलाकर नीचके-रससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठीवेकर अच्छीतरहसुखनेपर वालुकायन्त्रमें बन्दकर ४ पहरकी बड़ीआंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर मोर, बकरा और सापके पित्तोंसे १-१ भावना देकर उड़दबगर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातकेसाधनेनेसे यह तमामसन्निपातोंको नष्टकरताहै । मूर्च्छाजगनेपर अन्यन्त मूलत्वे तो दहीभात खानेको देवे ॥ २६१ ॥

२६२ सन्निपातदावानलरसः (द्वितीयः)

मनःशिला रसौ तुल्यौ मर्दनीयौ गवां जलैः ।
 ततस्तु गोलकीकृत्य शोपयित्वा खरातपे ॥ ११०० ॥
 गोपाययित्वा तात्रेण सन्धियन्धं विधाय च ।
 वालुकायन्त्रसम्पकमहोरात्रालसमुद्धरेत् ॥ ११०१ ॥
 अष्टमांशं तत्र योज्यं जातीफलकणाधिपम् ।
 मत्स्यमाहिषचाराहमयूरच्छागसम्भवेः ॥ ११०२ ॥
 पित्तैस्तु सप्तधा भाव्यं टङ्कणं तत्र निक्षिपेत् ।
 सन्निपाते महाघोरे दद्यात्तं प्रच्छन्नादिभिः ॥
 शोहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातविनाशनः ॥ ११०३ ॥

र. क. यो, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध मैनसिल और पारा समभागलेकर गोमूत्रमें २-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय कड़ीभूपमें सुखाकर तावेके-समुद्रमें बन्दकर वज्रमिठीसे सन्धियन्धकर ६-७ कपड़मिठी देकर सुखनेपर वालुकायन्त्रमें ८ पहरकी बड़ी आंचदे । स्वाह-शीतलहोनेपर निकालकर जितनी तावेकीमसमहोईहो उतनी इन्दी मिलाय जायफल, पीपल और शुद्धजनाग अष्टमाश मिलाकर मछली, भेसा, सूअर, मोर और बकरेकेपित्तोंसे ७-७ भावना देकर दशश मुनासुहागा मिलाकर रखछोड़े । इधमेंसे यवप्रमाणमाना सन्निपातमूर्च्छामें ताउमें पाछलगाय रकमें थोड़ीदेर मरलनेसे मूर्च्छां निवृत्तहोतीहै ॥ २६२ ॥

२६३ सन्निपातभैरवरसः (प्रथम)

तात्रं गन्धं रसं श्वेतगुञ्जामरिचपूतनाः ।
 समानपित्तजैपालांस्तुल्यानेकर मर्दयेत् ॥ ११०४ ॥
 युग्मगुञ्जाप्रमाणन्तु नवज्वरहरं परम् ।
 ज्वराद्गुणः सन्निपातभैरवोऽयं प्रकाशितः ॥ ११०५ ॥
 र. स. र. च. र. म. रसायनम. ना वि. र. का. र. सु. सन्निपाते । र. सु. ज्वराद्गुण इति नाम ।

भाषा—तोमप्रमम्, शुद्धगन्धक और पारा, सफेदगुञ्जा, मरिच, बप अथवा जटामांजी, मछलीकापित्त, शुद्धजमालोटा सब समभाग लेकर शारीकपूणैर अथवागन्धकी नीलवर्णकजली में मिलाय मटवीकेपिपनी भावना देकर २-२ रतीकी

गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातकेसाधनेनेसे यह सन्निपात और नवज्वरको नष्टकरताहै २६३

२६४ सन्निपातभैरवरसः (द्वितीयः)

रसो गन्धस्त्रिभिकर्षो कुयोत्कज्जलिनां द्वयोः ।
 ताराभ्रताम्रवङ्गाहिसाराश्लैकैरुकार्पिन्नाः ॥ ११०६ ॥
 शिपुज्वालामुखीशुण्डीबिल्वेभ्यस्तण्डुलीयकात् ।
 प्रत्येकस्वरसैः कुयोद्यामैकैकं विमर्दयेत् ॥ ११०७ ॥
 कृत्वा गोलं वृत्तं वस्त्रे लंबणापूरिते न्यसेत् ।
 काचभाण्डेऽथवा स्यात्यां काचरूपी निवेशयेत् ११०८
 वालुकाभिः प्रपूयाथ वह्नियामह्वयं भवेत् ।
 तत उद्धृत्य तं गोलं चूर्णयित्वा विमिश्रयेत् ॥ ११०९ ॥
 प्रवालचूर्णकपेण शाणमात्रविषेण च ।
 कृष्णसर्पस्य गरलैर्दिवसं भावयेत्तथा ॥ १११० ॥
 तगरं मुशली मांसी हेमाह्वा येतसः कणा ।
 नीलिनी पत्रकं चैला चित्रकश्च कुठेरकः ॥ ११११ ॥
 शतपुष्पा दिवदाली धत्तूरागस्त्यमुण्डिकाः ।
 मधूकजातिमर्दना रसेरेपां विमर्दयेत् ॥ १११२ ॥
 प्रत्येकमेकवेलेश्च ततः संशोष्य धारयेत् ।
 बीजपूरार्द्रकद्रावैर्मरिचैः पोडशोष्मिदैः ॥ १११३ ॥
 रसो द्विगुञ्जाम्रमितः सन्निपाते च दीयते ।
 प्रसिद्धोऽयं रसो नाम्ना सन्निपातस्य भैरवः ॥ १११४ ॥
 शा स, र. प्र. यो. र., नि. र. यो. त. रसायनं, र. का., त्रि., सन्निपाते ।

टि०—शुद्धोपातरद्विष्यां अक्तेवदारुभावनं विणैपेणास्ते विषम अकांशमिति दत्तमिति विशेष । त्रिशशा सन्निपातहर इति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक २-३ बर्षे, चांदी, अत्रक, ताम्र, वृद्ध, नाग और फोलाद इनकी भस्ममें १-१ कर्पलेख परेणवक्त्रो नीलवर्णकजलीमें मिलाय सहिजन, हुहुर अथवा सूर्यमुखी, सोंठ, बेल, कटिवालीचौलाई इनप्रत्येककेस्वसोमें १-१ पहर मर्दनकर गोला बनाय मलमलेके कपड़ेमें लपेट शराव-समुद्रमें बन्दकर ६-७ कपड़मिठी देकर सुखनेपर लगयत्रमें बन्दकर दोपहरकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर प्रवालमर्दन १ बर्षे, शुद्धजनाग ५ मांशे मिलाकर कार्पूरकें जहरसे १ दिन मर्दनकर तगर, मुशली, जटामांजी, सन्यानासी अथवा रेवनचीनी, बेन, पीपल, नील, पत्रज, इलायची, विषह, जंगलीतुलसी, सोंक, बन्दाल, चर्चु, अगस्त्य, गोरसमुष्टी, महुआ, जायिरी, मैनफल इन प्रत्येकके युगामम्भवत्परम अथवा कापोंसे १-१ भावना देकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली विमोरे और अदरारोद्य तथा १६ कालीमिचौडे चूर्णकेसाधनेनेसे यह समस्तपित्तगतोंको नष्टकरताहै ॥ २६४ ॥

२६५ सन्निपातभैरवरसः (तृतीयः)

विषं गन्धं ताम्रभस्म स्तोमलञ्च समांशकम् ।
 पादं सर्वतुल्यं स्थाल्यत्रा धृत्ये तु कज्जलीम् १११५

निर्गुण्डीसुरसाद्रव्ये भावयित्वाऽऽर्द्रकद्रवैः ।
तिलमात्रा वटी देया सन्निपातादिरोगजित् ॥१११६॥
र. चं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध बज्रनाग, गन्धक और सोमल, ताम्रभस्म सम-
भाग, शुद्धपारा सबकीबराबर लेकर नीलवर्णकजलीकरनिर्गुण्डी,
तुलसी और अदरकके रसोंकी १-१ भावना देकर तिलप्रमाण
गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-
पानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्त रोगोंको दूरकरताहै २६५

२६६ सन्निपातभैरवरसः (चतुर्थः)

अष्टलोहमसिताष्टभागकम्
सूतगन्धधनभागमिश्रितम् ।
वह्निनीरमृदितं दिनमेकं
पोडशांशविपमायुभाषितम् ॥ १११७ ॥
गौञ्जिकं सुमरिचाम्निनीरयु-
षसन्निपातहरभैरवो रसः ।
स्याद्रथोद्धत इयाकणस्तमः
शोपितादिसुजये तथा हिमः ॥ १११८ ॥

र. शि., व. रा., र. क. यो., सन्निपाते ।

टि०—व. रा. र क यो प्लयोरीभिवुमारानानैको रसो निहि-
तोऽस्ति तत्राकेतुलभावनां प्रयाय बाहुल्यमायं स्वल्पपाक कृतोऽस्ति ।
विषप्रक्षेपो मातुलभावना च नास्त्यतच्छ्रुति पाठोऽस्ति तस्याऽन्येऽन्त-
र्भागे बोध्यं, बनाऽपि पाककरये क्षयभाव ।

भाषा—आठों लोहोंकीमसमें शुद्ध पारा, गन्धक और
अप्रकभस्म १-१ भागलेकर नीलवर्णकजलीकर चित्रककेस्वरस
अथवा क्षायमें एकदिन मर्दनकर पोडशांश शुद्धबज्रनाग मिलाकर
पाचोंपित्तोंकी १-१ भावनादेकर १-१ रसीकी गोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली १४ अथवा २१ कालीमिर्चोंके-
साथ देकर चित्रककाकाय पिलानेसे अरुणोदयसे अंधेरेकीतरह
सन्निपात नष्टहोताहै ॥ २६६ ॥

२६७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चमः)

क्ष्वेदं व्योषं तपनद्रवदं भागवृद्धया प्रदेयं,
घृत्वा क्षोदं विमलमखिलं योजयेद्ब्रह्ममात्रम् ।
आर्द्रात्तोयाज्ज्वरहरणकृत् सन्निपातेषु पथ्यं,
भक्तं दध्ना फलकृतियुतं भैरवाक्यो रसोऽयम् १११९ ॥
र. शि., सन्निपाते ।

भाषा—कड़वीतरोई, त्रिफळ, ताम्रभस्म और शुद्धशिंगरिफ
क्रमवृद्धभागसे लेकर बारीकणैपर कड़वीतरोईकेरससे एकदिन
मर्दनकर ३-३ रसीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली अदरककेरसकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात नष्टहो-
तेहैं । अत्यन्तमूत्रक ल्गनेपर औचित्य देखकर दहीभात दना ॥

२६८ सन्निपातभैरवरसः (षष्ठः)

व्योषं घचाऽभ्याश्वेदं विडङ्गं सैन्धवं रसम् ।
गन्धकं हरितालञ्च निर्गुण्डीरसमर्दितम् ॥ ११२० ॥

६१

मत्स्यमाहिपधाराहच्छागपित्तैश्च भावयेत् ।
श्रीहिमात्रप्रयोगेण सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२१ ॥
र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—त्रिकटु, वच, हरे, कड़वीतरोई, विडङ्ग, संधानमक,
शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर
निर्गुण्डीकेरससे एकदिन मर्दनकर गळी, भेंसा, सूअर और
बकरेके पित्तोंसे १-१ भावना देकर यवप्रमाण गोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जयित्वातुगानकेसाथ देनेसे यह
समस्तसन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ २६८ ॥

२६९ सन्निपातभैरवरसः (सप्तमः)

सूतं गन्धं लोहकिट्टं विमर्यं
सर्वैस्तुल्यं घत्सनामं नियुज्यात् ।
आर्द्रं भृङ्गं यीजपूरञ्जयन्ती
निर्गुण्डीका व्यस्तताजैर्द्रवैश्च ॥ ११२२ ॥
युक्त्या घटथो भावयित्वा विधेया
गुञ्जाऽर्द्रादं सन्निपातस्य दूनम् ।
शोतैषोतैर्निर्मलस्नानमत्र
पथ्यं दुग्धं शर्करामिर्युतञ्च ॥ ११२३ ॥
रसायनसं., चि. सा. नि. र., यो. र., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, मण्डूरभस्म समभागलेकर
नीलवर्णकजलीकर सबकीबराबर शुद्धबज्रनाग मिलाकर अदरक,
भंगरा, बिजोरा, तितली और निर्गुण्डीकेरसोंसे १-१ दिन
मर्दनकर १-२ चावलभर गोलियां बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-
सन्निपातोंको नष्टकरताहै । अत्यन्तगर्मी मातुलहोनेपर पत्थकी
हवाकरे और खानकरावे । भूख ल्गनेपर शर्करामिलजुवा दूधदेवे ॥

२७० सन्निपातभैरवरसः (अष्टमः)

तालकं गन्धकं सूतं घत्सनामं त्रिभिः समम् ।
शिलाञ्च टङ्गणञ्चैव सर्वेषां समहिङ्गुलम् ॥ ११२४ ॥
मर्दयेच्चित्रजम्बीररसेराद्रस्य च व्यहम् ।
शुद्धिक्वा भाषामात्रा स्यात्सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११२५ ॥
विद्रोपोत्थमतीसारकफपाण्डुामयादिकान् ।
कुशिरोगमुदावर्तं सन्निपातं नियच्छति ॥ ११२६ ॥

रसायनसं., वा., र. क. यो., वै. चि., भै. र., र. सु., व. रा.,
सन्निपाते ।

टि०—भै. र. र. सु. व. रा. एषु शिलाञ्च टङ्गणत्रैवेत्यस्य स्थाने
शस्त्रमूषाश्च भरुमिषिपठ विषयैस्व योगान्तरं स्यापितं परन्तु तदय-
स्याऽपिक्रमयाऽत्रैव निषेध इत्या रसनिष्पादने न वाऽपि श्रुति प्रत्युत
विशिष्टभवेनैव सम्पत्त्यने सा चाऽमीश्रणवैवाऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, गन्धक और पारा १-१ भाग,
शुद्ध बज्रनाग, नैनसिल और मुद्गागा ३-३ भाग, शुद्धशिंगरिफ
१२ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर चित्रक और जंगी-
रीकेरससे ३-३ दिन मर्दनकर उड़द्वरावर गोलियां बनाकर
रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानु-

पानकेसाय देनेसे सन्निपात, त्रिदोषजतिसार, कफरोग, पाण्डु, कुक्षिरोग, उदावर्त, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २७० ॥

२७१ सन्निपातभैरवरसः (नवमः)

अथाप्यं सम्प्रवक्ष्यामि भैरवं सन्निपातिनाम् ।
दरुदं शुद्धसूतञ्च काञ्चनं लोहभस्मकम् ॥ ११२७ ॥
ताम्रभस्माऽन्नकञ्चैव त्रयु सीसं तथैव च ।
मौक्तिकं विद्रुमं ताप्यं कङ्कुष्ठाले मनःशिला ॥ ११२८ ॥
हृद्धानी चित्रकं व्योषं त्रिफलेन्द्रजराभटम् ।
सुतार्द्धममृतं शुद्धं गन्धकञ्च चतुर्गुणम् ॥ ११२९ ॥
एकीकृत्य ततः सर्वं भावयेदातपे खरे ।
व्योपाग्निशिथुसुरासत्रिफलाभृद्गदन्तिजैः ॥ ११३० ॥
निशेऽश्वगन्धागायत्रीकुपुत्र्याथैश्च सप्तधा ।
भावयेत्पञ्चपित्तस्तु त्रिदोषभैरवो रसः ॥ ११३१ ॥
ऽद्भुदेवाऽग्निनिरेण गुञ्जा सैन्धवसंयुता ।
त्रयोदशसन्निपातान्कासश्वासापतानकान् ॥ ११३२ ॥
शूलाऽपरस्मारसम्मोहतन्द्राऽऽध्मानवमिक्लिमीन् ।
वातश्लेष्मोद्भवाग्नाग्नौज्येत्सर्वान्सुदुस्तरान् ॥ ११३३ ॥
जलयोगादि चाहैस्य युक्त्या कुर्याद्यै पूर्ववत् ।
अहो गैरलयोगेन सूच्यग्रेण प्रयोजयेत् ॥ ११३४ ॥

र. घं., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और पारा, सुवर्ण, लोह, ताम्र, अभ्रक, बज्र, नाग, मोती, प्रवाल, सोनामाखी, मुर्दासंघ, हरिताल, भैरसिल, अम्लोनियां, चित्रक, त्रिकटु, त्रिफला, इन्द्रजव, मुनीर्हीण १-१ भाग, शुद्धवज्राग भाषाभाग, शुद्धगन्धक ४ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर त्रिकटु, चित्रक, सहिजन, तुलसी, त्रिफला, भंगरा, दन्तीमूल, हल्दी, अवगन्ध, सैर, कुठ, इन-प्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा भाषोंसे ७-७, और पांचों-पित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली संधेनमक और अदरखकेरसके-साथ देनेसे १३ प्रकारकेसन्निपात, कास, श्वास, खाँचतान, घाल, अस्फार, वैदोशी, तन्द्रा, आध्मान, वमन, क्रिमि, वातश्लेष्मजरोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसकेदनेसे सूच्छी न जगे तो सर्पके विषमें शिलाज्वर सूचीकेजमभागसे मस्तकपर रक्तमैयोगकरे और योग्यता देखकर जलक्रीधारादेवे ॥ २७१ ॥

२७२ सन्निपातभैरवरसः (दशमः)

हिङ्गुलस्य विद्रुद्धस्य सार्द्धतोलचतुष्टयम् ।
गन्धकस्य चिपस्याऽपि प्रत्येकं तोलकद्वयम् ॥ ११३५ ॥
समापकद्वयश्चैव कनकात्तोलकत्रयम् ।
मापेकाधिकतोलैः टङ्कणस्य तथैव च ॥ ११३६ ॥
सम्मर्द्यं जम्बीररसे यंटीश्यायाविशोपिताः ।
गुञ्जेकपरिमाणस्तु कारयेत्कुशलो भिपक ॥ ११३७ ॥
एकान्तु भक्षयेत्कस्य गोलयिन्वाऽऽद्रकद्वयैः ।
घोरं त्रिदोषे दातव्यः सन्निपातस्य भैरवः ॥ ११३८ ॥

भे. र., र. घ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ ४ ॥ तोले, शुद्ध गन्धक और चट-
नाप २-२ तो., सुवर्णमस ३ तोले २ मासे, मुहागा १ तो.
१ माशा लेकर वारीकचूर्णकर जंभीरीकेरससे १-२ दिनमर्दन-
कर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाय छायाशुष्ककर रखडोहे ।
इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रसकेसाथ देनेसे घोरसन्निपात
नष्टहोताहै ॥ २७२ ॥

२७३ सन्निपातभैरवरसः (एकादशः)

तोलकांश्चतुरः सूतादष्टौ गन्धात्तथैव च ।
खल्वयेदकतः कृत्वा जायते कज्जली यथा ॥ ११३९ ॥
मर्दयेत्कज्जलीं तां तु मुण्डीद्रावैस्ततः परम् ।
शुण्ठीद्रावैर्द्विधा भाव्यं कज्जलीं शोषयेत्ततः ॥ ११४० ॥
चतस्रो भावना देया भृङ्गराजरसैस्तथा ।
तिलच्छदारसे द्रवैस्तद्द्रावस्तुकभावना ॥ ११४१ ॥
कृष्णाशिवाविडङ्गानि मरिचानि तथैव च ।
पतान्यर्थपालनि स्युः प्रत्येकं कल्पयेत्ततः ॥ ११४२ ॥
शुण्ठ्याः पलं तथा ताम्रान्मृतात्तद्वत्प्रकल्पयेत् ।
तोलमेकं विषं प्राह्यं कर्पिकं कृष्णजीरकात् ॥ ११४३ ॥
एतत्सर्वं समं कृत्वा मर्दयेत्कज्जलीयुतम् ।
भृङ्गराजस्य तोयेन कृत्स्नं कल्कीभवेद्यथा ॥ ११४४ ॥
क्षिन्धभाण्डे गतं कल्कं ततस्तं विपचेद्भिपकम् ।
मृदुपाको भवेद्यावत्तावत्पाकं प्रयोजयेत् ॥ ११४५ ॥
कार्या सोष्णस्य कल्कस्य घटी चणकसम्मिता ।
सन्निपाते त्रिदोषे च कुष्ठरोगे विशेषतः ॥ ११४६ ॥
वटिका भिपजा देया चित्रकार्द्रकसैन्धवैः ।
कुष्ठे त्रिभिः फलैर्देया वटिका रोगनाशिनी ॥ ११४७ ॥

र. घं., सन्निपाते ।

भाषा—४ तोले शुद्ध पारे और ८ तोले गन्धककी नीलवर्ण-
कज्जलीकर गोररमुण्डी और सौंठकेवरस अथवा कायोंसे २-२
भावनाएं देकर सुखादे फिर भंगरा, बुरहुर और बघुएके स्वर्णो-
की ४-४ भावनाएं देकर सुपाकर पीपल, हरे, विडङ्ग और
मरिच २-२ कर्प, सौंठ और ताम्रभस्म ४-४ कर्प, शुद्धवज्राग और
कालीजीरी १-१ कर्प लेकर वारीकचूर्णकर कज्जलीमें मिलाय भंगरे-
केरससे मल्कवनाये और चिकनेवर्तनमें रस घटुत मन्दआंचसे
मृदुपाककरे। गोली बंधनेलायक होनेपर उतारकर चनेप्रमाणगोलियां
बनाकर रखडोहे । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक तथा अदरखके
रस और सैन्धव केसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ।
कुष्ठमें त्रिकणकेसाथेसाथदेवे ॥ २७३ ॥

२७४ सन्निपातभैरवरसः (द्वादशः)

रसं विषं गन्धकञ्च हरितालं फलत्रयम् ।
जयपालं त्रिवृत्स्वर्णं ताम्रसीसाभ्रलोहकम् ॥ ११४८ ॥
अर्केशीरं लाहलीकं च स्वर्णक्षीरीजमेव च ।
रसैरासं सतकृत्यः प्रत्येकञ्च विमर्दयेत् ॥ ११४९ ॥
अर्कः श्वेताऽद्रकत्रयुपा च सूर्यावर्तश्च कारणी ।
काकजह्रा शोणकश्च कुष्ठं व्योषं विकटुत्तम् ॥ ११५० ॥

योचितानुपानकेसाय देनेसे अत्यन्त भयङ्कर सन्निपात निरृत होता है । इसके देनेसे अत्यन्तदाह मालूमहो तो मत्पेय र जलकी-पारा देवे अत्यन्तभूखमालूमहोनेपर दहीमात खिलावे । यह कईपारका परीक्षितयोग है ॥ २७६ ॥

२७७ सन्निपातभैरवरसः (पञ्चदशः)

सूतं गन्धमृताम्रटङ्कणविषं द्वौ जीरकौ दीप्यकं,
द्वौ क्षारौ लवणानि पञ्च मरिचं निर्गुण्डिकाजं पलम् ॥
संयोज्यापि गुरूपदेशविधिना शुक्रानयं सार्द्रकं,
जीवत्येवहि सन्निपातवहलस्वेदामृतोऽपिञ्चरी ११६९
ना. वि. , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, और बछनाग, अन्नक भस्म, दोनों जीरे, अजमोद, दोनों क्षार, पाचौनमक, मरिच, निर्गुण्डी १-१ पललेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय अदरखेकसे ३-३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गौली अदरखेकसेसायदेनेसे शीतप्रस्वेदयुक्तमी सन्निपाती अच्छाहोजाता है ॥

२७८ सन्निपातभैरवरसः (षोडशः)

शुद्धं सूतं विपश्चान्नं गन्धकं नागटङ्कणम् ।
वटक्षीरे दिने मयं दोलायन्त्रे दिने पचेत् ॥ ११७० ॥
मत्स्यमाह्वयमायूररपित्तं भव्यं दिनत्रयम् ।
देयं हि मापमानञ्च कृपाकायास्तुनातम् ॥ ११७१ ॥
तत्क्षणेन निहन्याद्दे रक्तौष्ठमतिमीपणम् ॥
प्रसिद्धः सन्निपाताल्पभैरवो रस उत्तमः ॥ ११७२ ॥
वै. चि. , वा. , रक्तौष्ठिसन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वटनाग, अन्नक और सीसामसम, सुहागा सब समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर वटके दूधसे एक-दिनमर्दनकर अदरखवेगैरहमनिपातहररसोमें एकदिन दोलायन्त्रसे स्वेदनकर मट्टी, भेंडा और मोरके पित्तोंसे १-१ दिन मर्दन कर उद्बद्धावर गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गौली पीपलके ऋषकेसायदेनेसे रक्तौष्ठीसन्निपातको यह नष्टकरता है ॥

२७९ सन्निपातवडवानलरसः

रसादष्टौ विपात्सप्त पदं पञ्चम्यकतालयोः ।
पङ्कगाम् दन्तिर्वाजानां पञ्चभागान्तु टङ्कणम् ॥ ११७३ ॥
चत्वारो धूर्तवीजस्य व्योषं भागत्रयं भवेत् ।
पतानि वह्निभूलस्य कायेन परिमर्दयेत् ॥ ११७४ ॥
आर्द्रकस्य रसेनाऽथ देयं शुक्राढ्यं हितम् ।
वडवानलरसञ्चोऽयं सन्निपातहरः परः ॥ ११७५ ॥
र. व. , र स. , र क. , सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा ८ भाग, बटनाग ७ भा., शुद्धगन्धक, हरिताल और जमालोटा ६-६ भाग, मुनासुहागा ५ भा., शुद्धपदमेकेबीज ४ भा., त्रिकटु ३ भा. लेकर सबका वारीक-चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय चिनकमूलके ऋषकेसायदेनेसे मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रख-

ओड़े । इनमेंसे १-१ गौली अदरखके रसकेसायदेनेसे यह सन्निपातको नष्टकरता है ॥ २७९ ॥

२८० सन्निपातविध्वंसनरसः

सूतं गन्धं समं शुद्धं तालकं माक्षिकन्तथा ।
मृतताम्रान्नकं धोलं विषं धुस्तूरपीजकम् ॥ ११७६ ॥
निक्षारं रचिपञ्च हिह्वु पाठा पटोलकम् ।
वन्ध्या भृङ्गप्रयं शुण्ठी कन्दं लाङ्गलिकं समम् ॥ ११७७ ॥
सिन्धुवारद्वयैः सर्वं मयं जम्बीरजैरपि ।
दिनेकं वटिका कार्या चणकामाञ्च भक्षयेत् ॥ ११७८ ॥
अत्युन्नं सन्निपातञ्च सर्वोपद्रवसंयुतम् ।
निहन्ति चानुपानेन दशमूलकजेन वा ॥ ११७९ ॥
फपायेण न सन्देहः पथ्यं दूधोदनं हितम् ।
रसो विध्वंसनो नाम सन्निपातनिहन्तनः ॥ ११८० ॥
र र. , र सु. , र क. , र को. , र का. , र क. यो. , सन्निपाते ।

टि०—“प्रतिपादितमार्गेण पात स्वद्वयं वारणम् ।
हेनौ वैश्व सन्देहे कृत्वा पश्चान्ममाहरेत् ॥
हरिताल पञ्चैकममृतं पलमात्रकम् ।
वन्ध्याकन्दपल श्लोकं हृदिनीवन्द्य पठन् ॥
रक्षाय पल श्रयं चित्तं शुष्पी च मागधी ।
पाठापवल्वाहीक पदालकं पलवलम् ॥
सर्वे समानं श्योनं स्वाङ्गद्विदिनं भीक्षुञ्जितं ।
खले वक्त्रा शुष्कमर्दं दिनमेकं समाचरेत् ॥
पकञ्जनीरतोयेन पकञ्जन्मूत्रेण वा ।
फलपूरसे वापि मर्दयित्वा दिनाष्टकम् ॥
तेन कलेन जुर्वीत वटीशकटमित्ता ।
अथवा श्योमनं भस्म पञ्चान्न समाहरेत् ॥
मर्दयेदुक्तीत्या वै सर्वैर्नीपमण्डलम् ।
रचयेद्वटिका प्राक्वन्ध्यायानुक्ताथ ता विरेत् ॥
पूत्रयित्वा महादेव भैरव योगिनीस्तुनाम् ।
विप्राय सङ्गृह्य विधिवत्सन्निपातेऽपि दारणे ॥
वटीमेकां प्रयुञ्जीत भिषग् व्यापिधिवेषवित् ।
रसेन्द्रसेवामात्रेण सन्निपातादिद्रुष्यते ॥
सेतीलकस्य तथा दाहं सद्यो वारयति स्फुटम् ।
दृष्ट्वापथ्यं क्षणादेव निवारयति पारदं ॥
सर्वेषु वातरेणेषु क्षेपनेषु प्रयोषयेत् ।
अग्निमान्द्ये चोदरने विकारे दीवया रस ॥
ऐकाक्षिकं द्राक्षिकं वा चक्रं नाशकं रस ।
पथ्यं प्रापुदितं बुयादुपचारदि पूर्ववत् ॥
सम्भोक्तोऽयं सन्निपातविध्वंसनरसेत्थर ।
सर्वैश्चरद्वैव वातक्षेपनिहर्षण ॥

अथ पाठो रमालङ्कारे निहितोऽस्ति परन्तु तत्र न रमान्तरा, मूल द्रव्याणामेकत्वार्थः । पारदसक्काराणां सर्वत्रैवात्पद्यकता भावति वै यथाशक्य सर्वत्रैवाऽनुष्ठेया, तत्क्षेपनमात्रेण रमान्तरावचनंऽप्येव त्वात् । पथ्यरपिपथीत्रिभक्त्याणामपिच्य प्रदीये परन्तु तेषामप्यत्रैवाऽपि-कृत्या संयोग विषय पक्ष एव रस सम्यग्दीये इति विरलु विवक्षितं ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और सोनामाषी, ताम्र और अन्नकभस्म, मुरमकी, शुद्ध बटनाग और धूर्तमेकेबीज, सुहागा, झंजी, दूधसारा, आकके पके प्रचे, मुनी हींग, प्रादा,

परबल, बाइसखेदासेकाकन्द, स्याह-सपेद और पीला मंगफा, सोंठ, करिहारी सबसेसभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय समाद और जंभीरीके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रखओङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली दशमूल अथवा आकनीजके हाथकेसाथ देनेसे समस्तो-पत्रबयुक्त घोरसन्निपातको यह नष्टकरताइँ । दोष शान्तहोनेपर अत्यन्तमूख लगनेपर दहीभात देना ॥ २८० ॥

२८१ सन्निपातमूर्धरसः (सन्निपातभैरवः)

रसेन गन्धं द्विगुणं गृहीत्वा
तत्पादभागं रवितापहम् ।
भस्मीकृतं योजय मर्दयेत्त-
दिनत्रयं बहिरसेन घर्मे ॥ ११८१ ॥
विपञ्च दत्त्वाऽत्र फलाप्रमाण-
मजादिपित्तैः परिभाषयेच्च ।
वह्मद्वयञ्चास्य द्दीत वहि-
कट्टत्रयाऽऽर्द्रस्य रसप्रयुक्तम् ॥ ११८२ ॥
तेलेन चाऽभ्यज्य बपुश्च कुर्या-
त्क्षानञ्च तोयेन सुशीतलेन ।
यावद्भवेद्दुःसहमस्य शीतं
मूत्रं पुरीषञ्च शरीरकम्पः ॥ ११८३ ॥
पथ्ये यदीच्छा परिजायतेऽस्य
मरीचखण्डं दधिभक्तकं वा ।
स्वल्पं द्दीताद्मरीचभागं
दिनाष्टकं क्षानविधिञ्च कुर्यात् ॥
त्रिदोषजेष्वेव सदा नियोज्यो
ज्वरेषु वै भैरवनामधेयः ॥ ११८४ ॥

र सं., र क., रसायनस, र च, र. वि, वृ. यो. त., र. सु, र दो., यो. म., र का., र सि., र. बो., भे. र, र मू., सन्निपाते ।

टि०—रसचण्डाशी द्वितीयस्थाने सन्निपातभैरव इति नाम । रस दीपिकाका प्राणिपुत्रा इति नाम । भैरवत्त्वान्वत्यां रमशजमुन्दरस्य च द्वितीयस्थाने तारस्थाने ताल निबोधय रसेभर इति नाम स्थापितम् । रसाष्टने तु रसेन्द्रार नामरस, सन्निपातान्वल्लभेति ।

भाषा—शुद्ध पारा ४ भाग, गन्धक ८ भाग, ताप, रजत और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर चित्रक-रससे ३ दिन धूपमें बैठकर घोटै । फिर इतमें १६ वा हिस्सा शुद्धदन्नागमिलाय बकरावगैहड़ पाचोंपित्तोंसे १-१ भावना देकर ६-६ रसीकी गोलियां बनाकर रखओङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, त्रिकटु और अदरकनेरसकेसाथ देनेसे त्रिदोषत्र सन्निपात नष्टहोतेहैं । शिथले मालिनाकरको मरथेपर ठंडेरजली पारानेदे जब शीत असाध होजाय और भस्ममूत्रका त्यागहोकर शरीरकांशलेलगे तब बन्दकरे । अत्यन्त मूखलगनेपर मरिच डालकर चाकर अथवा दहीभात खिलावे । मिर्च और अदरक घोकनेदे । दोषशान्त होनेपरभी दाह शान्त न होतो ८ दिनतक दोहरावसे क्षानकरावे ॥

२८२ सन्निपातहररसः (प्रथमः)

रसाभ्रम्लेच्छताप्यानां शिलागन्धकयोः समम् ।
भृङ्गधूर्तरसैः पिष्ट्वा पञ्चघ्नं दशोपलेः ॥ ११८५ ॥
पुटेदेतद्विभागानेकार्काहौ लौहाच्चतुर्बलेः ।
खल्वे पिष्ट्वा दिनद्वयं पूर्वबह्लुपु सम्पुदेत् ॥ ११८६ ॥
अस्य षोडश भागाः स्युर्नागांशो मर्दयेद्दिनम् ।
वह्ममात्रप्रयुक्तोऽयं सन्निपातं नवज्वरम् ॥ ११८७ ॥
जयेदाद्रिकतोयेन द्वाक्षाखण्डेन पित्तिकम् ।
क्षयपाण्डुविकासादीन् निजयोगैः सकामलात् ॥ ११८८ ॥
शोथं गुडकफाणुक्तः समगन्धरमुद्धतम् ।
व्योपक्षौद्रेण चाशीसि प्रह्वीं गुदजां व्ययाम् ११८९ ॥
नागवल्क्या दलरसैः समं मूत्रे जलोदरम् ।
गुल्मग्रीहोदरे घातजठरं त्रिफलोदकैः ॥ ११९० ॥
व्योपेण सर्वकुष्ठानि विसर्पञ्च पयोयुतः ।
रघुतैलेन शूलानि गुड्डीचसत्त्वसंयुतः ॥ ११९१ ॥
प्रमेहांश्चिद्युतोयेन धनुर्भङ्गादिकानिलान् ।
सन्निपातहरश्चायं रसः सर्वत्र पूजितः ॥ ११९२ ॥

र. क, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, अन्नकभस्म, शिगरिक, सोनामाली, मैनासिल और गन्धक समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर मंगफा और धतूरेके रसोंसे ५-५ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराव-सम्पुटमें बन्दकर १० कण्डोंकी आचदे । स्वाशशीतलहोनेपर निकालकर इतमें द्विगुण ताप और लोहभस्म तथा चतुर्गुणगन्धक डालकर पूर्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर १० कण्डोंकी आचदे । फिर इतमें १६ वा हिस्सा नागभस्म मिलाकर १-१ दिन पूर्वरसोंसे मर्दनकर २-२ रसीकी गोलियां बनाकर रखओङ्गे । इनमेंसे १-१ गोली अदरकनेरस-केसाथदेनेसे सन्निपात और नवज्वर नष्टहोताइँ । द्राघ और खाइकेसाथ पित्तज्वरको, तथा क्षय, पाण्डु, काय, कामला इनको अपने २ अनुपातोंसे, भगन्दर और शोथको गुड और पीपलमें, अर्श, प्रह्वी और गुद्व्यथारो त्रिकटु और मण्डकेसाथ देनेसे यह नष्टकरताइँ । जलोदरको पान अथवा मूत्रोंसे, गुल्म, ग्रीहा, पेटकाबायु, मन्दासि इनको त्रिकलाकेकाष्ठोंसे, समस्त-कुष्ठोंको त्रिकटुसे, विसर्पकोदूधसे, शूलोंको एण्डोकेतैलेसे, प्रमे-होंको गिलोयसर्वसे और धनुर्भङ्गादि भयङ्करातारोंको सदि-जनके रससे यह नष्टकरताइँ ॥ २८२ ॥

२८३ सन्निपातहररसः (द्वितीयः)

पारदं गन्धकं टङ्गं सोपणं गजपिप्पली ।
व्योपञ्च पुस्तुरजलेः पिष्टं गुञ्जाद्वयं क्षुतम् ॥
सन्निपातं निहन्त्यकफपाथेर्यापयुर्गितः ॥ ११९३ ॥
र. स, र. क, सन्निपाते । र. क. पुस्तुरजैरित्यस्य स्थाने
धुस्तुरवैरिति पाठः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक और छुहागा, मरिच, गजपीपल त्रिकटु सब समभाग लेकर नीलवर्णकजलीकर धतूरेकेरससे एक-दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटुयुक्त आकरीजङ्गकेकाढ़ेसेसाधनेसे सन्निपातको यह नष्टकरताहै ॥ २८३ ॥

२८४ सन्निपातहररसः (सन्निपातान्तकः) (तृतीयः)

शुद्धसूतसमोगन्धो दरदं शुद्धखर्परम् ।

रसस्य द्विगुणौ देयौ मृतताम्राभ्यवेतसौ ॥ ११९४ ॥

जम्बीरोत्थै दिनं मयं भूधरे पाचयेद्युगु ।

द्विङ्गु त्रिकटु कर्पूरं पञ्चैतन्मिलितं समम् ॥ ११९५ ॥

सर्वस्यैतत्समं चूर्णमाद्रकस्य रसैः सह ।

महाराष्ट्रयाश्च निर्गुण्डथा जयन्त्याः पिप्पलीद्रवैः ॥

भृङ्गराजद्रवैः सप्त प्रत्येकं भावनाः पृथक् ।

दातव्यश्च चतुर्गुञ्जमाद्रकस्य द्रवैः सह ॥

सन्निपातं निहन्त्याशु सन्निपातहरो रसः ॥ ११९७ ॥

र. क., र. सं., रसायनसं., र. को., र. घ., घ. प्र., सन्निपाते ।

टि०—रसेन्द्रकल्पद्रुमं विहाय सर्वेषु ग्रन्थेषु सन्निपातान्तकरम इति नाम । कुपचिन्नावनार्या जन्मीरस्थाने भृङ्गो नियोजितः । र. घ., र. को., र. (मा.), नि.र., र.भा., र. क. यो., भो.म., रस. सं., एषु "रसमयसम गन्ध ताम्रमयस तयो. समम् । ताम्राद्रा खरं योज्य खर्परश्च द्विङ्गु-हम् ॥, इत्याकारेण पाठ विन्ध्यस्य सन्निपातान्तक इतिनाम स्थापितं तत्र द्विङ्गुल्लपर्ययो द्वैगुण्य, भावनायाश्च जयन्तीपिप्पलीशुद्धस्याने करवीरः केवलीनियोजित इति विद्येपोऽस्ति परमन्त्रं द्विङ्गुल्लपरं द्विगुणं विन्ध्यस्य पाठः स्मृतानीयः । यस्तुतस्तु अरिभक्षेण पाठे रसस्य द्विगुणं देयं मृतताम्राभ्यवेतसमितिपाठे स्वीकृते भ्रमसिद्धिर्वागमनस्य इति ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, शिंगरिफ और खपरिया १-१ भाग, ताम्रमयस और अम्लवेत २-२ भाग लेकर नीलवर्ण-कजलीकर जंभीरीकेरससे एकदिन मर्दनकर भूपपुटकी आंचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकाळकर भुनीहाँग, त्रिकटु, शुद्धकर्पूर सब समभागलेकर पूर्वसकी बराबर मिलाय अदरख, मराठी, निर्गुण्डी, जैती, पीपल और भंगरेके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ४-४ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरसेसाधनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै २८४

२८५ सन्निपाताङ्गुरसः (प्रथमः)

सूतं तुल्यविषं दिनत्रयमितं जम्बाम्मसा मर्दितं,
प्रोत्थाप्यातपगं ततो दिनद्वयं हेमाशुभिः स्वेदितम् ।

तं सूतं समद्विहूलं समधलिं तुल्यालचेतःशिलाः,
ताम्रान्तुल्यविषं विमर्शं सुजयानीरेण गाढं दिनम् ॥ ११९८ ॥

हेमाद्रांलिरसेः सुभाव्यं मुनिशः पित्तैः पृथक् पञ्चभिः,
सूतान्तुल्यविषेण धृषितमिदं स्यात्सन्निपाताङ्गुरः ।

गुञ्जाद्रांलिरसितं सहाद्रकस्योपं पीताशुभयोर्भजे-
द्वयं ससितं समत्रलफलं सत्तालवृत्तानिलम् ॥ ११९९ ॥

पञ्चशुद्धलडोचनाशुद्धलसत्कन्दर्पदं पाङ्गना-
प्रेमालिङ्गनमिन्दुचन्दनमरं मालाः सुपुण्डोज्यलाः ।

जीर्णामं विषमं ज्वरं प्रहणिकां पाण्डुक्षयांश्चाहरे-
द्रुचमप्लीहजलोदरानिलशिरःशूलानयं स्वौषधैः ॥ १२००

र. शं., र. मु., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा और घटनाग समभागलेकर जंभीरीके रससे मर्दनकर टिकड़ी बनाय हमरुयन्त्रसे पारेको उड़ाकर एक-दिन धतूरेकेरससे स्वेदनकर शुद्ध शिंगरिफ, गन्धक, हरिताल, मैनसिल और वटनाग, ताम्रमयस बराबर २ मिलाकर नीलवर्णकजलीकर भांगकेस्वरससे एकदिन मर्दनकरे । फिर धतूरा, अदरख और भंगरेकेरसोंसे ७ दिन मर्दनकर पाचों-पित्तोंकी १-१ भावनादेकर हंडीकेपेदेमें लेपकर समभागवत् नागकाचूर्ण हंडीमें विठाय दोनोंका हमरुयन्त्रबनाकर यहांतक आंचदेवे कि बटनाग सब जलजाय । स्वाहशीतलहोनेपर निकाळकर २-२ चावलभरकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखकेरस अथवा अपने अपने अनुपातोंकेसाथ-देकर मलेपर उट्टेधानीकीघारादेनेसे जीर्ण, आम तथा विषम-ज्वर, प्रहणी, पाण्डु, क्षय, शुष्क, स्त्रीहा, जलोदर वातव्याधि, शिरःशूल इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ २८५ ॥

२८६ सन्निपाताङ्गुरसः (द्वितीयः)

म्लेच्छं ताम्रं विषं पिष्टं भावयेत्पञ्चमायुभिः ।

गुञ्जा तस्याम्बुना हन्ति सन्निपातं नवं ज्वरम् ॥

अपि सर्वान्गदान्दन्धाह्वणीगदमुल्लवणम् ॥ १२०१ ॥

टो., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, ताम्रमयस और बटनाग समभाग लेकर घारीकचूर्णकर पाचोंपित्तोंसे १-१ भावनादेकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली जल अथवा उचितानुपातकेसाधनेसे सन्निपात, नरज्वर, प्रहणी-प्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २८६ ॥

२८७ सन्निपाताङ्गुरसः

निस्त्वज्जोपालजं धीजं द्रानिष्कं प्रचूर्णयेत् ।

मरिचं पिप्पलीं सूतं प्रतिनिष्कं विमिश्रयेत् ॥ १२०२ ॥

भाव्यं जम्बीरजैद्रावैः ससाहं तत्प्रयत्नतः ।

सन्निपातं निहन्त्याशु अङ्गने यः शिष्यः स्मृतः ॥ १२०३ ॥

र. र. घ., भे. सा., र. प्र. सन्निपाते ।

टि०—र. क., रसायनसं., यो. र., एषु रसायनसंवेतनाम्ना क्षोभितान्तुल्यप्रयोगेऽस्ति यथा—“वचाशुद्याश्वोमगंरुकारद्रासं-निष्कुरवद्वृद्धत्याः । फल समुद्रस्य रसोम कन्कं ध्यानं दिनाराशु-मन्धरेणे । अपरवृत्तिशेषमहृष्टिरोक्कं प्रजापन्त्राप्रमनात्मकोद्वाहः । समन्निपातान् शुषिकशुभम् सपीनम् इति हवीमकम् । रसायन नेर-नामयेषु क्षान विचारस्तुवि विदुतेन ॥” इत्यस्तीति नये प्रयोगे. कर-णीयः । अथमनिष्कसंघटी प्रयोगेऽस्ति ।

भाषा—जमालोटेकी गिरी २॥ कप, मरिच, पीपल और पारा ४-४ मादो लेकर एकदिन शुष्कमर्दनकर ७ दिन जंभीरीके रससे पोटर रखओड़े । जंभीरीकेरसकेसाथ इसका अन्ननरनेसे समस्तद्विपात नष्टहोठेहै ॥ २८७ ॥

२८८ सन्निपातान्तकरसः

मृतं कान्ताध्रवैकान्तं ताप्यं तालं समं समम् ।
 मृत्कीटञ्च रसो मर्यं अनयानरमृन्नतः ॥ १२०४ ॥
 राजवृक्षफलव्योपकृष्णाम्बरसमर्दितः ।
 अभिन्यासञ्चरं हन्ति सक्षौद्रो मापतुल्यकः ॥ १२०५ ॥
 रसायनसं., र. को., र. का., सु. प्र., चि. र. म., सन्निपाते ।
 टि०—कुत्रचित् “शुलीटघरसो मर्यं” इत्यवस्थाने “मृच्छितरश्नो
 मर्यं” इतिपाठो दृश्यते ।
 भाषा—कान्त, अन्नक और वैकान्तमस्य, शुद्धसोना-
 माखी, हरिताल, केंचुए और पारा समभागलेकर नीलवर्णकम्बली-
 कर नरमून और हरे, अमिल्लोसकापूदा, त्रिकटु, सफेद-
 वोंहळा इनके यथासम्भवस्वस्व अथवा वापोंसे १-१ दिन
 मर्दनकर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
 गोली मधुकैसाय देनेसे अभिन्यासञ्चर नष्टहोताहै ॥ २८८ ॥

२८९ सप्तविंशकगुग्गुलुः

क्षात्प्रयं त्रिकटुकं त्रिफलाहरिद्रा-
 युन्दारमुस्तलघणत्रयतुम्युरुणि ।
 शुध्यग्निप्रग्निकहुताशनचव्यकुष्ठ-
 माक्षीकपोफकरचिडङ्गविषायुतानि ॥ १२०६ ॥
 यावन्त्यमूनि गजपिप्पलिसंयुतानि
 तावत्प्रमाणमितगुग्गुलयोजितानि ।
 कृत्वा धृतेन गुटिका मनुजैः प्रयोज्या
 पीतानुदुग्धजलकाञ्जिकमुद्गयूपा ॥ १२०७ ॥
 पाण्ड्यामयं क्षयमपस्मृतिमृद्धैवात-
 मुन्मादमामपयनं श्वयथुं प्रमेहम् ।
 हृत्पृष्ठकोष्ठकटिघ्नहृणकुक्षिकक्षा-
 शूलानि नाशयति कुष्ठफिलासरोगान् ॥ १२०८ ॥

चि. क., ग. नि., कुष्ठे । गदनिग्रहे क्षात्रद्वयस्याऽभावो दृश्यते ।

भाषा—सर्जी, सुहागा, त्रिकटु, त्रिफला, हल्दी, दाण-
 हल्दी, नागरमोथा, तीनोंनमक, तुम्लुल, इलायची, चित्रक,
 पिपलामूल, मिलावा, चव्य, कुष्ठ, सोनामाखी, पोहकरमूल,
 विडङ्ग, अतीस ये सब समभाग और इन सबकीबराबर गज-
 यीपल लेकर बारीकचूर्णकर सबकीबराबर शुद्धमूगलको मृतके
 योगसे कूटकर चूगलकाद्रवबनाय घीरे २ समस्तचूर्णको
 मिलादे और ३-३ माशेकी गोलियां बनाकर रखछोड़े । इन-
 मेंसे १-१ गोली जल, दूध, काजी और मूंगकेपूपप्रयुति
 रोगोचितानुषानोंकेसाथ देनेसे पाण्डु, क्षय, अपस्मार, लज्जुवात,
 उन्माद, आम, वातविकार, शोथ, प्रमेद, हृदय, पीठ, कोष्ठ,
 कटि, बहूण, कुक्षि, कास इनकेशूल, कुष्ठ और श्विनको यह
 नष्टकरताहै ॥ २८९ ॥

२९० सप्ताङ्गलोहम्

कनकताप्यरसामुदगन्धक-
 घुमणिलोहरजः सममात्रकम् ।

त्रिफलया समया मधुसर्पिणा

जयति लीडमशेषमधामयम् ॥ १२०९ ॥
 लो. प. सर्वरोगे ।

भाषा—धुवर्ण, सोनामाखी, पारा, अन्नक, इनकीमसमें,
 शुद्धगन्धक, ताप और लोहमस्य सब समभाग, इनसबकी बरा-
 वर त्रिफला मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती मधु और
 धीकेसाथलेनेसे समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ २९० ॥

२९१ सप्ताभ्रकम्

घरावरीवारिद्वारिवीरा-
 रजःसमस्तेनसमांशमन्नम् ।
 क्षौद्राज्यलीढं युवतीसहस्र-
 लीलासहस्रं कुरुते नराणाम् ॥ १२१० ॥
 लो. प., वाजीकरणे ।

भाषा—त्रिफला, शतावर, नागरमोथा, सुग्धवाला, खस,
 सब समभागलेकर सबकीबराबर अन्नकमसमिलाकर रखछोड़े ।
 इसमेंसे ३-३ रती मधु और धीकेसाथ सेवनकरनेसे बहुतसी
 क्षियोंकेसाथ सभोग करनेकीशक्तिको बढाताहै ॥ २९१ ॥

२९२ सप्तामृतरसः (प्रथमः)

मृतसूताभ्रकं तुल्यं मृतलौहं शिलाजतु ।
 गुग्गुलुञ्च शिलाताप्यं समांशमधुना लिह्व ॥
 मासमात्रप्रयोगेण मुखरोगं विनाशयेत् ॥ १२११ ॥
 र २, मुखरोगे ।

भाषा—पारा, अन्नक और लोहमस्य, शिलाजीत, चूगल,
 शुद्धमैनसिल तथा सोनामाखी सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर
 सबकीबराबर मधु मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रती
 खानेसे एकमहीनेमें तमाम मुखरोग निश्चतहोतेहै ॥ २९२ ॥

२९३ सप्तामृतरसः (द्वितीयः)

रसकनकयज्ञतीक्ष्णं शिलाजतुम्लेच्छसंशकं गगनम् ।
 सममात्रं कटुकत्रयतुटिदलजातीफलं लवङ्गञ्च १२१२
 कङ्गुलं त्रिफला तद्युगभागं पूर्वभागतश्चूर्णम् ।
 मापयुगं मधुसहितं भश्यं क्षयशोपकासहरम् ॥ १२१३ ॥
 यो म., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, वज्र, फोलाद इनकीमसमें, शिलाजीत,
 शिपरिक और अन्नकमस्य १-१ भाग लेकर त्रिकटु, इलायची,
 जायफल, लौंग, शीतलचीनी, त्रिफला सब समभागकाचूर्ण १४
 भाग और मधु सबकी बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२
 माशे प्रतिदिनसेवनकरनेसे क्षय, शोष और कासको यह निश्च-
 तकरताहै ॥ २९३ ॥

२९४ सप्तामृतलोहम् (प्रथमम्)

मधुकं त्रिफलाचूर्णमयोरजः समं लिह्व ।
 मधुसर्पियुतं सम्यग्गन्धं क्षीरं पिबेदनु ॥ १२१४ ॥

छदिं सतिमिरां शूलमग्लपितं ज्वरं फलमम् ।
आनाहं मूत्रसङ्गश्च शोथश्चैव निहन्ति सः ॥ १२१५ ॥

च द, भै. र., र. सं., र. सि., घ, नि. र., रसायनसं., पृ. यो.
त., टो., र. घु., र. क, र. वि. र. का., र. र., वै र., शूलचक्षुरोगे च ।

टि०—र. र. सर्वचूर्णसमलोहमिति नाम स्थापितम् । र. घु., र. सं. पत्रयो द्वितीयस्थाने पत्रमधिकं प्रक्षिप्य घृतमधुनो नाम तिक्त्वात्य तिमिरहरलोहमिति नाम स्थापितम्, अत एव प्रयोगे शतव्य. अनुपानमपि देवेव बोध्यम् । भेषज्यरत्नावस्थादौ फलभागोऽतिशयित प्रल्पप्रभतलपरित्यक्तमिति सुषीभिर्विभावनीयम् ॥

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, मुलहठी सब समभागमिलाकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु और पीकेसाथ लेकर गायकादूध पीनेसे वमन, तिमिर, शूल, अम्लपित्त, ज्वर, ग्लानि, आनाह, मूत्रापात और शोथ इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ १२१४ ॥

२१५ सत्तामृतलोहम् (द्वितीयम्)

त्रिफला लोहचूर्णञ्च पटोली मधुयष्टिका ।
सर्वमेकांशतो वृद्धभागाः स्युस्तवराजतः ॥
सर्पिणा भक्षिते यान्ति तस्मिन्नक्षिस्त्रजोऽखिलाः १२१६
हितो, नेत्ररोगे ।

भाषा—त्रिफला, लोहभस्म, परवल, मुलहठी सब १-१ भाग, वंसलोचन ११ भाग लेकर बारीकचूर्णकर वंसलोचनको ६-५ दिन अलग घुटवाकर अन्यवस्तुओंके बारीकचूर्णमें मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ माशा पीकेसाथ लेनेसे नेत्रोंके समस्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ २१५ ॥

२१६ सत्तायसम्

सुरभिभास्करलोहरसात्रकाः
सजतु हेमसमुत्तरजः फलमम् ।
वरुणकादिगणत्रिफलाजल-
स्नापितमातपशुष्कमनेकधा ॥ १२१७ ॥
दलितमाज्यमधुषुत्तिमागतं
हरति यश्मगदं सपत्प्रिहम् ।
श्वसनदोषहृद्दामयपाण्डुतां
कसनमेहमथ प्रहणीगदम् ॥ १२१८ ॥
लो. प, राजयक्ष्मिण ।

भाषा—शुद्धगन्धक, और पारा, ताम्र, लोह, अत्रक, सुवर्ण इनकीमलमें, शुद्धशिलाजीत सप्त समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय वरुणादिगण और त्रिफलाके कायोंसे धूपमें ३-३ अथवा ७-७ भावनाएँ देकर बराबरके मधुमें मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती यथोचितानुपायकेसाथदेनेसे उपद्रवसहित राजयक्ष्म, श्वात, शोथ, हृद्रोग, पाण्डु, काय, प्रमेह, प्रहणी इन सबको यह नष्टकरताहै ॥ २१६ ॥

२१७ समरमुन्दरी गुटिका (स्मरमुन्दरी)

षड्भेदमात्रकं ताप्यं कान्तं चूर्तं समसलम् ।
मद्यं जम्बीरजैत्रौषेदिनं खल्वे ततः पुनः ॥ १२१९ ॥

ग्रहवृक्षस्य वीजानि कार्यासास्थानि राजिका ।
वन्ध्या च यवच्छिञ्ची च पिप्पुा तन्मध्यगं सुन्द ॥ १२२० ॥
पूर्ववन्मदितं गोलं लघुसप्तपुटेः पचेत् ।
ततो गजपुटे दद्यान्मूपां रुद्धा धमेदुटात् ॥ १२२१ ॥
तद्रोलं धारयेद्वनेने शश्वस्तम्मकरं भवेत् ।
हन्ति रोगं जरां मृत्युं गुटिका स्मरमुन्दरी ॥ १२२२ ॥
शश्वस्तम्मकरे गोलं कुम्भकर्णं स्मरेद्यदि ।
आयातं सम्मुलं शत्रुं समोहं स निवारयेत् ॥ १२२३ ॥
ॐ अपयति स्वाहा. अनेन मन्त्रेणाष्टोत्तरसहस्रं जपेत्तदि ।
र. सि., रसायने ।

भाषा—हीरा, सुवर्ण, अत्रक, सोनामाखी, कान्त और पारा समभागलेकर जमीरीकेरससे एक दिन मर्दनकर पलातके-बीज, कपासकीगन्ना, राई, बासलेससेकाबन्ध, तितली सब समभाग लेकर १ दिन जंभीरीकेरसमें अच्छीताहपीसकर गोला-बनाय इसके बीचमें पूर्वसको रस शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु-पुटकी आचदे । स्वाहाशोतलोनेपर फिरसे मर्दनकर पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ लघुपुटदेनेकेबाद एक गजपुटको आचदेकर छ घननकरावे तो इक्षकी गोली तैयारहोगी । इसको मुखमें रखनेसे शल्लोका स्तम्भनहोताहै । रोग, बुढापा, मृत्यु इनसबका नाश होताहै । सामनेसे शत्रुको आताहुआ देखकर कुम्भकर्णका स्मरण करनेसे विशिष्टदोकर शत्रु निरुद्धहोजाताहै । “ ॐ अपयति स्वाहा ” इत्यन्त्रका अष्टोत्तरसहस्र जपकरनेसे इक्षकी सिद्धिहोतीहै ।

२१८ समशर्करलोहम् (प्रथमम्)

लोहाहिगुणं क्षीरं सर्पिर्द्विगुणं समे सितामधुनी ।
पादं विडङ्गसारं तद्वत् त्रुदिवंशजं पचेल्लोहम् १२२४
त्रिकटु वराङ्गं फनकं धात्री यष्टयन्तु चार्धभागञ्च ।
उग्रं शोणितपित्तं समून्लक्ष्णं शतं क्षयं फासम् ॥
रुच्छ्यादमरीञ्चनियमाजयति वरं खण्डखाद्यसमवीर्यम्
यो. म, अश्मवैयिकरे ।

भाषा—लोहभस्म ४ तोले, दूध ८ तोले, घृत, शकर और मधु २४-२४ तो०, विडङ्गतरुडुल, इलायची और वंसलोचन १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर इन्के मिलानर पाकरे । चाशनी तैयारहोनेपर नीचे उतारकर त्रिकटु, तज, सुवर्णभस्म, आवले, मुलहठी और चूच २-२ तोले मिलाकर रखओड़े । ७ अथवा १४ दिन धीतजानेपर ३-३ मासे समय अथवा रोगोचितानुपायकेसाथ देनेसे अत्यन्तबगुह्या रक्तपित्त, मूत्र कृच्छ्र, उर क्षत, क्षय, कास, पथरी, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

२१९ समशर्करलोहम् (द्वितीयम्)

लवङ्गं कटुफलं कुण्डं यमानी त्र्युषणन्तया ।
चिन्नकं पिप्पलीमूलं वासकं कण्टकारिका ॥ १२२६ ॥
चव्यं कर्कटशृङ्गी च चातुर्जातं हरीतकी ।
शठी कङ्कोलकं मुस्तं लोहमश्रं यवाप्रजम् ॥ १२२७ ॥
सर्वं प्रतिसमं चूर्णं तावच्छर्करयाऽन्वितम् ।
सर्वमेकांकृतं चूर्णं स्थापयेत्स्निग्धभाजने ॥ १२२८ ॥

समशर्करकं लोहं घृणं तृणगुणप्रदम् ।
निहन्ति सर्वजं कासे यातश्रेष्मसमुद्भवम् ॥ १२२९ ॥
क्षयकासं रक्तपित्तं भ्वासमाशु विनाशयेत् ।
क्षीणस्य पुष्टिजननं घलयणाग्निवर्धनम् ॥ १२३० ॥

वै. क., भै. र., कासे ।

भाषा—लौंग, कायफल, पुठ, अजनाइन, चिकुड, चिद्रक-
मूल, पिपलामूल, अइठा, भट्टकटैया, चन्प, काकडासीगी, चातु-
जात, हरे, कपूर, शीतलबीनी, नागरमोया, लोह और अन्नक-
भस्म, यक्षार सब समभागलेकर घारीक घृणंकर घरावरकी
शरकी चाशनीमें मिलाय चिकनेवर्तनेमें रखोजे । इसमेंसे ३
मासेमें ६ मासेतक समय अथवा रोगोचितानुपाननेसाथ देनेसे
सयप्रकारके कास, क्षय, रक्तपित्त, श्वाय, घल—वर्णाग्निहास,
इनवक्को नष्टर आदनीकोे पुष्टरताहे ॥ २२९ ॥

३०० समशर्करलोहम् (तृतीयम्)

लोहाद्यनुगुणं क्षीरमाज्यं द्विगुणमुत्तमम् ।
घृणं पादन्तु वैदङ्गं दद्यान्मधुसिते समे ॥ १२३१ ॥
ताम्रपात्रे दृढे पक्त्वा स्यापपेद्धतभाजने ।
मापकादिक्रमेणैव भक्षयेद्विधिपूर्वकम् ॥ १२३२ ॥
अनुपानं प्रयुञ्जीत नारिकेलोदकादिकम् ।
रक्तपित्तं जयत्तौमम्लपित्तं क्षतं क्षयम् ॥
प्रहृष्टरान्तिजननमायुष्यमुत्तमोत्तमम् ॥ १२३३ ॥

र. सं., भै र, र च, र. र, प., र. र, र. क, र. का, र. कपित्ते ।

भाषा—लोहभस्मसे चौथुना दूध और दूना धी, चतुर्थांश
विद्वतगुड, शर्कर और मधु लोहवीरावर लेकर ताबेकी कड़ा
हीमें मन्दाग्निसे पकावे । चाशनी तैयार होनेपर उतारकर रखले ।
६-७ दिन बीतनेपर १-१ मासेसे शुरूकर जहांतक अनुकूल-
होसके उतानीमात्रा बडावे । इसपर नारियलकाजलवगैरह जो
अनुकूलपड़े वह अनुपानमें देवे । इससे पडाहुआ रक्तपित्त,
अम्लपित्त, उर क्षत, क्षय ये सब नष्टोकर आयुवदतीहे ॥ ३०० ॥

३०१ समीरगजकेसरीरसः

नवाहिकेन कुचिलं नवानि मरिचानि च ।
समभागानि सर्वाणि रक्तिकाप्रमितानि च ॥ १२३४ ॥
देयानि प्रातरेतानि पुनस्ताम्रलचर्चणम् ।
कुञ्जे च खड्गपाते च सर्वजे गृह्णस्त्रीगदे ॥ १२३५ ॥
अपवाही प्रयोक्तव्यः शोषे कम्पेऽपतानके ।
विस्वय्यामरुधी देयोऽपस्मारे च विशेषतः ॥ १२३६ ॥
र. कौ., र. चं., वै र, र. र, र. र, नि र, रसायनसं., वै. द,
र. प्र., वै. वि., चि र भ, वातव्याध्यधिकारे ।

टि०—चि र भ, रसवि समीरारिरस इति नाम । रसपारिजते
यातारिरस इति नाम । अत्र नवाहिकेनस्थाने अयाहिकेनमिति
पाठे दृश्यते ।

भाषा—शुद्ध अफीम, कुचिला और मरिच समभागलेकर
घारीकघृणकर पानकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी

गोलिये बनाकर रखोजे । इसमेंसे १-१ गोली पाननेसाथ खानेसे
शुभ्रता, सद्यता, गृह्णी, अपवाहुक, शोष, कम्प, रीचिदान,
विसृचिका, अरवि, अपस्मार इनवक्को यह नष्टरताहे ॥ ३०१ ॥

३०२ समीरपद्मगरसः (प्रथमः)

अन्नगन्धविषयोपरसद्भ्रान्तमांशकात् ।
भाययेत्सत्तथा भृङ्गरसेन स्यात्समीरहा ॥ १२३७ ॥
आर्द्रद्रव्येण गुञ्जाऽस्य रण्डव्योपयुताऽथवा ।
महावाताज्यत्याशु नासाध्मातः प्रबोधकृत ॥ १२३८ ॥
चि. सा., वै र, र. कौ., र. सं., र. ल, चि. र., र. सु,
नि. र, र. च, टो., रसायनसं., वै. चि, रस. घ., र. पा,
वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—अन्नकभस्म, शुद्धान्धक, बज्जाग, पारा और
शुदागा, त्रिकटु सब समभागलेकर नीलवर्णकबलीकर भंगेकेरसमें
७ दिनतक मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोजे ।
इसमेंसे १-१ गोली अक्षरनेरस अथवा शर्करयुक्त त्रिकटुके-
साथदेनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टरताहे । नस्यदेनेसे
मूर्च्छाको दूरकरताहे ॥ ३०२ ॥

३०३ समीरपद्मगरसः

पारदं गन्धकं महं हरितालं तथैव च ।
एतद्युष्टयं सर्वं तुलसीरसमर्दितम् ॥ १२३९ ॥
वर्तं कृत्वाऽन्नकेणैव घेष्येद्वोलकन्तु तत् ।
शराचयुगले क्षित्वा वालुकायन्त्रगं पचेत् ॥ १२४० ॥
क्षीपिकाप्रमितं वह्निं दत्त्वा यामचतुष्टयम् ।
स्वाह्नशीतं समुद्धृत्य नासाऽसौ वातपद्मगः ॥ १२४१ ॥
सन्निपाते तथोन्मादे सन्धिबन्धे कफामये ।
नागवल्क्या दलेनैव भक्षयेद्दुष्क्रिकाद्वयम् ॥ १२४२ ॥
र. सं., रसायनसं., वातरोगे ।

टि०—अत्यार्द्ररिण सप्तदिनानि मर्दनं विधाय युष्ककञ्जिकां
विधाय काचूर्णां विन्यस्य चतुर्थांशं वालुकायं विषाच्य प्रयोजकरो
महत्फल भवतीति स्वीयानुभवाप्रतीति विद्वद्विरावलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोमल और हरिताल समभाग
लेकर नीलवर्णकबलीकर तुलसीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर
गोला बनाय सफेद अभ्रकपेपत्रोंसे लपेटकर शराबसमुद्रमें बन्द-
कर २-३ कारङ्गमिठीदेकर बालुकायन्त्रमें रख मन्दाग्निसे ४ पहर-
की अग्निदे । स्वातशीतअग्निनेपर निकालकर रखोजे । इसमेंसे
२-२ रत्ती पानकेसाथदेनेसे सन्निपात, उन्माद, सन्धिकसधिपात
और कफरोग नष्टोतेहे ॥ ३०३ ॥

३०४ सम्मोहलोहम्

त्रिकटु त्रिफला वह्निं विदङ्गं लौहमन्नकम् ।
एतानि समभागानि घृतेन घटिकां कुरु ॥ १२४३ ॥
कामला पाण्डुरोगञ्च हृद्रोगं शोथमेव च ।
भगन्दरं कौष्ठिकीमन्दानलमरोचकम् ॥ १२४४ ॥

तान्सर्वाश्चाशयेदाशु घलवर्णांश्रिवर्धनः ।

सम्मोहलोहनामाऽर्थं पाण्डुरोगे च पूजितः ॥१२४५॥

र. सं., र. चं., र. सु., पाण्डौ ।

टि०—अथ पाठश्रुत्येनवायनलोहादपत्यासिन इति शुभेभिरविसम्-
रणीयम् ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिकला, चित्रक, विडङ्ग, लोह और
अश्रुमसम समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१
माशा धीकेसाथलेनेसे कामला, पाण्डु, हृद्रोग, शोथ, भगन्दर,
कोष्ठकिमि, मन्दासि, अर्धचि, वलवर्णांश्रिहास इनसबको यह
नष्टकरताहै ॥ ३०४ ॥

३०५ सर्वगदहरीवटिका

भल्लांतं सूतगन्धं त्रिकलविपपुरं

तुल्यभागेन मर्चं,

राजाकभृङ्गचक्षित्रिकटुजलकृता

गुञ्जमात्रा वटी स्यात् ।

दुर्जयाद्यग्निमान्द्यं कृमिकुलदलना

सर्वशूलान्निहन्ति,

पथ्यं दोषानुसारि निरसिलगदहरी

मासमेकं प्रयुक्ता ॥ १२४६ ॥

र. सि., संगदे ।

भाषा—शुद्ध भिलावे, पारा, गन्धक, बछनाग और गुग्गुल,
त्रिकला सत्र समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-
कबलीमें सबको मिलाय नीलाकंके लौंग, भगरा, चित्रक और
त्रिकटुकदवीसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें
बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-
चिन्तानुपानकेमाथेदेनेसे मन्दासि, कृमि, शूल इनसबको एक-
महीनेमें नष्टकरतीहै ॥ ३०५ ॥

३०६ सर्वज्वरसूदनरसः

रसगन्धाश्रिकटुकत्वगोलाकलुरुन्तथा ।

टङ्कणं सर्पगर्दलं पृथग्भागेन मिश्रितम् ॥ १२४७ ॥

वत्सनाभो द्विभागः स्थाण्ड्रङ्गराजसेन वै ।

विमर्चं घटिका कार्यां मुद्रमाना सदा युधेः ॥ १२४८ ॥

अपक्वेषुऽप्यथवा पक्वेषु सामे नीरामके ज्वरे ।

जीर्णं च विपमे चैव दातव्या चार्द्रकद्रवैः ॥

दधिभक्तं सित्ता पथ्यं तापे शीतोदकक्रिया ॥ १२४९ ॥

रसायनंतं., ज्वराऽधिकारं ।

टि०—रसायनमदमद पत्र दिग्भयवति मृगाराजेन्द्रनाम्ना पाठो
ल्लितः । म भृष्टनवोपलम्ब परामर्शमहत्वा लिखित इति प्रतिभानि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, चित्रक, कुट्टी, तत्र, हला-
यची, अकलहरा, गुनागुहाग, सर्पविप १-१ भाग, शुद्धब-
नाग २ भागलेकर धरुद्रा बारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-
कबलीमें मिलाय १-२ दिनभर्गंकरसमे मर्दनकर मूंगरावर
कोलियें बनाकर रखाजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अक्षरकेसाथ
देनेसे पत्र अथवा अरुद्र, साम अथवा निराम, जीर्ण और विप-

मज्जरीको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तभूखलगेनेर दही, भात
और शकरदेवे । अत्यन्तगर्मी मासूमहोनेपर टेंडेजलका प्रयोगकरे ।

३०७ सर्वज्वरहररसः

फलत्रयं त्रिकटुकं जयपालाहिकेनरुम् ।

लवणान्यम्युदश्वेच भाङ्गीं च पित्तपर्पटम् ॥ १२५० ॥

एतानि सममात्राणि विपञ्चैवार्द्रमात्रकम् ।

एषां गुञ्जाप्रमाणेन बन्धनीया गुटी युधेः ॥ १२५१ ॥

एकाहिके तथा जीर्णे विपमे क्षणदाज्वरे ।

भक्ष्येत्यथसा प्रातः सर्वज्वरनिवृत्तये ॥ १२५२ ॥

र. को., ज्वराधिकारे ।

भाषा—त्रिकला, त्रिकटु, शुद्धजमालगोटा और अफीम,
पांचोनीमक, नागरमोथा, भारती और पित्तपापडा १-१ कर्प,
शुद्धबछनाग ८ भासे लेकर बारीकचूर्णकर अक्षरखणैरहेकरससे
एकदिनपोटर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इन-
मेंसे १-१ गोली तुलसीबगैरहेके रसकेसाथदेनेसे एकाहिक, जीर्ण,
विपम और रात्रिज्वर नष्टहोतेहैं । साधारणज्वरमें प्रातःकाल
दूधकेसाथ देना ॥ ३०७ ॥

३०८ सर्वज्वरहरलोहम् (प्रथमम्)

चित्रकं त्रिकला व्योषं विडङ्गं सुस्तकं तथा ।

श्रेयसी पिप्पलीमूलमुशीरं देवदारु च ॥ १२५३ ॥

क्रिरातितक्तकं पाठा कट्टुकी कण्टकारिका ।

शोभाञ्जनस्य बीजानि मधुकं वत्सकं समम् ॥ १२५४ ॥

लीहृतुल्यं गृहीत्वा तु घटिकां कारयेद्भिषक् ।

सर्वज्वरहरं लीहं सर्वरोगहरन्तथा ॥ १२५५ ॥

वातिकं पित्तकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।

द्वन्द्वजं विपमाप्यञ्च धातुस्थञ्च ज्वरज्वयेत् ॥ १२५६ ॥

शीतं कर्पं चृषां दाहं धर्मश्रुतिविभिन्नान् ।

रक्तपित्तमतीसारं मन्दाग्निं कासमेव च ॥ १२५७ ॥

ह्रीहानं यूरतं गुल्मं सामघातं मुद्रारुणम् ।

अशीसि अक्षरमुद्रं मूच्छं पाण्डुं हलीमकरम् ॥ १२५८ ॥

अजीर्णं ग्रहणीञ्चैव यश्माणं श्लोथमेव च ।

पथ्यं चृष्यं पुष्टिकरं सर्वरोगनिवृद्धनम् ॥

सर्वज्वरहरं लीहं चन्द्रनाथेन भाषितम् ॥ १२५९ ॥

र. सं., भै. र., र. चं., ध., र. सु., ज्वराऽधिकारं

भाषा—चित्रक, त्रिकला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोथा,
गजपीपल, पिपलामूल, वत्स, देवदारु, चिरायता, पाठा, कुट्टी,
भट्टट्टया, सहजिनकेबीज, मुलहठी, इन्द्रजव तथा समभागलेकर
सपदीयरार लोहभस्मभिलास तुलसीबैरससे १-२ दिन मर्द-
नकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समय अथवा रोगोचिन्तानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पित्तक,
श्लैष्मिक, सान्निपातिक, द्वन्द्व, विपम और धातुपज्वर, शीघ्र,
कर्प, तुषा, दाह, श्वेदोद्भ्रम, वमन, अम, रक्तपित्त, अतिवाय,
मन्दासि, काय, तीहा, यष्ट, शुष्म, भयङ्कर आमवात, घात-

सीर, भयङ्कर उदररोग, सूच्छा, पाण्डु, हलीमक, अजीर्ण, प्रद्वगी, यक्ष्मा, शोथ, कृशता इनसबसेगोंको यह नष्टकरताहै ३०८

३०९ सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) २

पारदं गन्धकञ्चैव ताम्रमभ्रञ्च माक्षिकम् ।
हिरण्यं तारतालञ्च कर्पमेकं पृथक् पृथक् ॥ १२६० ॥
कान्तलोहं पलं देयं सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वक्ष्यमाणोपधे भाव्यं प्रत्येकं दिनसत्रकम् ॥ १२६१ ॥
कारवेहुरसैवापि दशमूलरसेन च ।
पप्टथाश्च कपायेण त्रिफलाकाथकेन वा ॥ १२६२ ॥
शुद्धध्याः स्वरसेनैव नागवह्नौरसेन च ।
कामलाचौरसेनैव निर्गुण्डयाः स्वरसेस्तथा ॥ १२६३ ॥
पुनर्नवाऽऽङ्गकाम्भोभि भावना परिकीर्तिता ।
रक्तिनादिक्रमेणैव घटिकां कारयेद्भिपक्व ॥ १२६४ ॥
पिप्पलीगुडसंयुक्ता घटिका ज्वरनाशिनी ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति जीर्णज्वरहं तथा ॥ १२६५ ॥
वारिदोषोद्भवञ्चैव नानादोषोद्भवन्तथा ।
सततादिज्वरं हन्ति साध्यासाध्यमथापि वा ॥ १२६६ ॥
क्षयोद्भवञ्च धातुस्थं कामशोकभवन्तथा ।
भूतावेशभयञ्चैव त्रिदोषजनितं तथा ॥ १२६७ ॥
अभिघातज्वरञ्चैव तथाऽभिचारसम्भवम् ।
अभिन्त्यासं महाघोरं विषमं व्याहिकं तथा ॥ १२६८ ॥
शीतपूर्वं दाहपूर्वं त्रिदोषं विषमज्वरम् ।
प्रलेपकज्वरं घोरमर्द्धनारीश्वरं तथा ॥ १२६९ ॥
ग्रीहज्वरं तथा कासं चातुर्थिकविषयम् ।
पाण्डुरोगं कामलाञ्च अग्निमान्यं महागदम् ॥ १२७० ॥
पान्तसर्वाग्निहन्त्याशु पश्चाद्धेन न संशयः ।
शाल्यघ्नं तक्रसहितं भोजयेद्विडसंयुतम् ॥ १२७१ ॥
ककारपूर्वकं सर्वं वर्जनीयं न संशयः ।
मैथुनं वर्जयेत्सावद्यावन्न यलवान्भवेत् ॥
सर्वज्वरहं लोहं दुर्लभं परिकीर्तितम् ॥ १२७२ ॥

र. स, भै. र, घ, र. सु, ज्वराधिकारः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, अत्रक, सोनामाखी, सुवर्ण, रजत इनकीमसमें और रसमाणिक्य १-१ कर्प, कान्त-लोहमस १ पल लेकर नीलवर्णकजलीकर करेला, दशमूल, पितापत्रा, त्रिफला, गिलोय, पान, मकोय, निर्गुण्डी, पुन-नंबा इनप्रत्येककेसोसे ७-७ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखओहै । इनमेंसे १ से २ गोलोतक बलाबल देखकर पीपल और गुडकेसाधदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, जलरो-धोत्थ, कृत्रिम, सततादि विषम, साध्य अथवा असाध्य, क्षयज, धातुस्थ, कामज, शोकज, भूतावेशज, सक्तिपातज, अभिघातज, अभिचारज, असाध्य अभिन्त्यास, शीतपूर्वं अथवा दाहपूर्वं, प्रलेपक, अर्धनारीश्वर, ग्रीहज, चातुर्थिकविषय इत्यादि सम-स्तज्वर, कास, पाण्डु, कामला, मन्दाग्नि इनसबको ७ दिनमें

यह नष्टकरताहै । मूलपानेपर सफेदचावल, छाछ और सबलनमक देवे । कफारादिगणका वर्जनकरे और ज्वरतक शक्ति न आवे ततक मैनुन न करे ॥ ३०९ ॥

३१० सर्वज्वरहरलोहम् (वृहत्) ३

द्विपलं जारितं लोहं रसं गन्धं द्विकर्पकम् ।
कर्पकं त्रिफला व्योषं विडङ्गं मुस्तकं तथा ॥ १२७३ ॥
श्रेयसी पिप्पलीमूलं हरिद्रे दे च चित्रकम् ।
आर्द्रकस्य रसेनैव घटिकां कारयेद्भिपक्व ॥ १२७४ ॥
गुडार्द्रयौ वर्टी कृत्वा भक्षयेद्दर्द्रकद्रवैः ।
सर्वज्वरहं लोहं सर्वज्वरघिनाशनम् ॥ १२७५ ॥
घातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं साक्षिपातिकम् ।
विषमज्वरभूतोत्थं ज्वरं प्लीहानमेव च ॥ १२७६ ॥
मासजं पक्षजञ्चैव तथा संवत्सरोत्थितम् ।
सर्वाङ्गराग्निहन्त्याशु भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १२७७ ॥
भै. र., घ, र. सु, ज्वराधिकारः ।

भाषा—लोहमस २ पल, शुद्ध पारा और गन्धक २-२ कर्प, त्रिफला, त्रिकटु, विडङ्ग, नागरमोया, गन्धीपल, पिपला-मूल, हल्दी, दाहहल्दी और चित्रक १-१ कर्प लेकर वारीक-चूर्णकर अदरखके रससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखओहै । इनमेंसे १-१ गोलो अदरखकेरससेसाथ देनेसे पृथक्, द्रव्य अथवा सभिघातजज्वर, विषम, भूतोत्थ, मासज, पक्षज, संवत्सरज इत्यादि समस्तज्वर, शोहा इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१० ॥

३११ सर्वज्वरहरीवटी (लीलावती, जीर्णज्वरारिः)

एकभागो रसो भागद्वयं शुद्धञ्च गन्धकम् ।
गरलस्य त्रयो भागाश्चतुर्भागा हिमावती ॥ १२७८ ॥
जैपालकः पञ्चभागो निम्बुद्रवधिमर्दितः ।
क्रिमिघ्नप्रमिता वट्यः कार्याः सर्वज्वरच्छिदः ॥ १२७९ ॥
शुद्धयेरेण दातव्या घटिकेका दिनेदिने ।
जीर्णज्वरे तथाऽजीर्णं सामे वा विषमे तथा ॥
ज्वरं सर्वं निहन्तोथे दावो वर्णभवाऽनलः ॥ १२८० ॥

भा प्र, ४ यो त, रसायनस, र. क ल, टो, र का, वै. र., र. सु., यो त, चि र. भ, ना वि, ज्वराधिकारः ।

टि०—वृ यो त, यो त, पतयोर्ग्रन्थो ह्रींलावती वीदिनाम स्थापित रसायनसङ्ग्रहे तु नामद्वयमप्यस्ति स्थानभेदात् । ना वि, "वतुर्गुणितमरिचं भक्षिता ह्रमर्षिता । श्लेयुष्मोदप्लीहक्षयपादादि-रोगनुद ।" इत्यधिक पाठ इत्वा श्लेयाऽधिकारः हेमचरीवटीति नाम स्थापितम् । पञ्चविंशतितमवतनानेन क्रियदेशेभ्य साम्प्रमावहति परन्तु क्लृप्तमाने विभावीप्रयोगात् लाहलीस्थाने च ज्वपालसङ्ग्रहात् मदन-न्दोरेण खतन्त्रतयैव पाठो गृहीतोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, सर्पविष ३ भा., शुद्धमेनसिल ४ भा, जमालगोटा ५ भाग लेकर नीलवर्ण-कजलीकर नीचुकरससे २-३ दिन मर्दनकर विडङ्गकारकर गोलियां बनाकर रखओहै । इनमेंसे १-१ गोलो अदरखकेरसके

साधदेनेसे जीर्ण, अजीर्ण, साम, विषमप्रकृति ज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३११ ॥

३१२ सर्वज्वराहुशिवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं मरिचं नागरं कणा ।
त्वचं जैपालकं कुष्ठं भूमिम्बं मुस्तकं पृथक् ॥१२८१॥
चूर्णयित्वा समांशान् कज्जल्या सह मेलयेत् ।
निर्गुण्ड्याः स्वरसे चैवमाद्रकस्य रसे तथा ॥ १२८२ ॥
भावन्यां कारयित्वा तु घटिकां कारयेद्भिषक् ।
एकेनां भक्षयित्वा तु वृक्षवेष्टश्च कारयेत् ॥ १२८३ ॥
एषा ज्वराहुशिवटी सर्वज्वरविनाशिनी ।
पृथग्दोषांश्च विविधान्समस्तान्विषमज्वरान् ॥१२८४॥
प्राकृतं वैकृतं चापि वातश्लेष्मकृतं तथा ।
अन्तर्गतं वह्निःस्थञ्च निरामं साममेव वा ॥
ज्वरमद्यधिषं हन्ति वृक्षमिन्द्राशनि र्थया ॥ १२८५ ॥
शै. र, र. सु, ज्वराधिकार ।

भाषा—शुद्ध घारा और गन्धक, मरिच, सोंठ पीपल, तन, शुद्धजमालगोटा, कुष्ठ, चिरायता, नागरमोया येसब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय निर्गुण्डी और अदरखकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रस्तीकी गोलियां बनाकर रखडोहें । इन्मेंसे १ से ३ गोलीतक अदरखकेरसकेसायदेकर बखओढ़ाकर छलानेसे पसीनाहोकर साधारण, द्रन्दन, विषम, प्राकृत, अथवा वैकृत, अन्तःस्थ, वहि स्थ, निराम अथवा साम ये समस्तज्वर नष्टहोतेहैं ॥ ३१२ ॥

३१३ सर्वज्वरारिरसः

रसं गन्धकं हिह्रुलं मौक्तिकञ्च
पृथक् उद्भृमानं रविञ्चाददीत ।
त्रिचूर्ण्यं द्विपेत्कृष्णिकायां द्विधामं
खोऽसौ पचेज्ज्वरतिमहौ हरेत्तत् ॥ १२८६ ॥

र. (मा), ज्वराधिकार ।

भाषा—शुद्ध घारा, गन्धक और शिगरिक, मोवी और ताम्रमस्य समभागलेकर सबकी नीलवर्णकज्जलीकर ३-४ कपड़-मिठीदीहुई आतशीशीमीमें रख दोपहरकी तीष्णामि देवे । स्वात्तसीतलदोनेपर निकालकर रखडोहें । इसमेंसे १-१ रस्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाय देनेसे समस्तज्वर और प्रमेहोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१३ ॥

३१४ सर्वतोभद्ररसः (प्रथमः)

सूतं कान्तं गगनतपनं ताप्यकं शुद्धताले,
राजायतं सुरभिमधुकं मानसी चेति तुल्यम् ।
ध्योपातं शिरिकलिककरं भृङ्गतोयेन मधं,
गोलीभूतं भवति विमलः सधंमद्रामिधानः ॥१२८७॥
शूलं शुभं जटरज्जसो घातजान्सर्वरोगान्,
यहो मान्यं कफहरनगदी पीनसञ्च ज्वरार्तिम् ।

ल्लेहं पाण्डुं क्षयकृतरुजः कुष्ठरोगानशेषान्,
मूर्च्छां रोगान्मदनजरुजं हन्ति रोगांस्तथाऽप्यान् १२८८
र. चं, घ., र. र, रससागर, र. सु, रसायने । रसरागधुन्द्रे
श्रेष्ठः पाठोऽस्ति ।

भाषा—शुद्ध घारा, सोनामाती, हरिताल, गन्धक और मैनसिल, कान्तपापाण, अन्नक, ताम्र, लाजवर्दे इनकीमहत्में, सुलहठी, त्रिकटु, कुष्ठ, चिनक, अकलकरा सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय भंगरेकेरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रस्तीकीगोलियां बनाकर रखडोहें । इन्मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसायदेनेसे शूल, शुल्म, ज्वररोग, वातरोग, मन्दाग्नि, कफरोग, पीनस, ज्वर, झीहा, पाण्डु, क्षय, कुष्ठ, शिर और मुखके रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१४ ॥

३१५ सर्वतोभद्ररसः (द्वितीयः)

गन्धेशान्नकताम्रलोहकुनटीतुल्यं समं तालकं,
भोगीम्लेच्छकशीर्षकं समलवं सर्वादिपार्दं विषम् ।
सम्प्रदायैकतोयतोरसमितात्सन्धूपितं तद्विषा-
न्नायं सप्तदिनं पृथक्वदणुगुवासाष्टनिर्गुण्डिका- ॥
व्योपाद्रेत्रिकलासभृङ्गविजयाजैपालजैस्तदसैः,
पित्तैर्वापि जयेदयं रसवरो दुःसन्निपातादिकात् ।
तन्द्रीमोहविषसञ्ज्ञताः किल धनुर्वातं सवातं मिलद्-
दंष्ट्रगन्धनमस्सृतिं नयनयोः क्षेपाद्विष्वचीमपि १२९०
र. क, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध घारा, गन्धक, मैनसिल, तुल्य, हरिताल और शिगरिक, अन्नक, ताम्र, लोह और नाग इनकीमहत्में, अगर येसब समभाग, सनेसे चुर्णीय शुद्धबलनागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय अदरखकेरससे १-२ दिन मर्दनकर पारेकेबराबर बलनागकी डमरुयन्त्रमें धूनीदेकर बरन, अद्वा, अष्टा, निर्गुण्डी, त्रिकटु, अदरख, त्रिकण, भंगरा, भाग, जमालगोटा इनकेदोसे ७-७ भावनाए देकर यथासमय पित्तकीभावनादेकर १-२ चक्रलमरकी गोलियां बनाकर रखडोहें । इन्मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय देनेसे दुष्ट-सन्निपात, तन्द्रा, मोह, मूर्च्छा, धनुर्वात, वातरोग, दन्तगन्ध, अणुस्मार, इनमन्को यह नष्टकरताहै । आवातोंमें डालनेसे देहदो दूरकरताहै ॥ ३१५ ॥

३१६ सर्वतोभद्ररसः (तृतीयः)

सिन्दूरमन्त्रं रजतञ्च हेम
समेन भागेन मनःशिलाञ्च ।
द्विदास्तु घांसी निखिलेन तुल्यं
सम्पर्दयेद्गुगुलुकं प्रयत्नात् ॥ १२९१ ॥
ततस्तु मायप्रमिता विषया
पटीं प्रयुज्जीत यथानुपानम् ।

यं सर्वतोभद्ररसो न हन्ति
न सोऽस्ति रोगः खलु देहिदेहे ॥ १२९२ ॥
भै. र. सर्वतोमे ।

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक, रजत और सुवर्णभस्म, शुद्ध-
मैनसिल १-१ भाग, वसलोचन २ भाग, गुग्गुलु ७ भागलेवर
बारीकचूर्णकर घृतकेयोगसे गुग्गुलुका द्रवबनाय चूर्णको मिला-
कर १-१ माशेकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इसमेंसे १-१
गोली उचितानुगानकेसाधनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥

३१७ सर्वतोभद्ररसः (चतुर्थः)

विशुद्धं गगनं प्राह्यं द्विपरं शुद्धगन्धकम् ।
कर्पूरं कर्पूनाद्वैद्यं हिङ्गुलोत्थरसन्तथा ॥ १२९३ ॥
कर्पूरं केशरं मांसी तेजःपत्रं लवङ्गकम् ।
जातीकोपफलञ्चैव सूक्ष्मैला करिपिप्पली ॥ १२९४ ॥
कुष्ठं तालीसपत्रञ्च धातकी चोचमुस्तकम् ।
हरीतकी च मरिचं शृङ्गवेरविभीतकम् ॥ १२९५ ॥
पिप्पल्यामलरुञ्चैव शाणभागं विचूर्णितम् ।
सर्वमेकीकृतं पिप्पुा वटी कुर्याद्दिगुञ्जिकाम् ॥ १२९६ ॥
भक्षयेत्पर्णखण्डेन मधुना सितयाऽपि वा ।
रोगं श्रान्त्वाऽनुपानञ्च प्रातः कुर्याद्विचक्षणः ॥ १२९७ ॥
हन्ति मन्दानलान्त्वर्वानामदीपं विसृचिकाम् ।
पित्तश्लेष्मभवं रोगं वातश्लेष्मभयन्तथा ॥ १२९८ ॥
आनाहं सूत्रकृच्छ्रञ्च सद्गृहप्रहणी धमिमम् ।
अम्बपित्तं शीतपित्तं रक्तपित्तं विशेषतः ॥ १२९९ ॥
चिरञ्जरं पित्तभवं धातुरथं विपमञ्जरम् ।
कासं पञ्चविधं हन्ति कामलां पाण्डुमेव च ॥ १३०० ॥
सर्वलोहहिताथार्या शिवेन कथितः पुरा ।
सर्वतोभद्रनामायं रसः साक्षान्महेश्वरः ॥ १३०१ ॥

र. सं., ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—अन्नकभस्म २ कर्प, शुद्धगन्धक १ कर्प, शिंग
रिक्तेनिकालाहुआपारा ८ माशे, शुद्धकपूर, केशर, जटामासी,
पत्रन, लौह, जाबिनी, जायफल, छोटैल्लायची, गजवीफल, कुष्ठ,
तालीसपत्र, धावईकेकूल, तज, नागरमोथा, हरे, मरिच, सोंठ,
बहेड़ा, पीपल और आबला ४-४ माशे लेकर सबका बारीक-
चूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अक्षरप बगैरहरेरससे
१-२ दिन घोटकर २-२ रत्तीकी गोलियाबनाकर रखोड़े ।
इसमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाध, पान अथवा मधु
और शक्करकेसाध प्रात कालदेनेसे मन्दाग्नि, आम, देह्या, वात,
कफ और पित्तरोग, आनाह, सूत्रकृच्छ्र, सद्गृहणी, वमन, अम्ब-
पित्त, शीतपित्त, रक्तपित्त, पित्तोत्पज्जीर्णज्वर, धातुस्यविपमञ्जर,
कास, कामला, पाण्डु, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३१७ ॥

३१८ सर्वतोभद्रलोहम् (प्रथमम्)

लोहचूर्णं मृतं ताभ्रमन्नकञ्च पलं पलम् ।
शुद्धसूतञ्च कर्पकं गन्धकार्दपलन्तथा ॥ १३०२ ॥

माक्षिकस्य विशुद्धस्य कर्पं शुद्धा शिला परा ।
सार्धं कर्पं विशुद्धञ्च शिलाजतु तथापरम् ॥ १३०३ ॥
गुग्गुलोश्चापि कर्पकं शाणमानं परस्य च ।
पूर्णं विडम्भम्ल्लातवद्विध्वेताकमुलजम् ॥ १३०४ ॥
करिकर्णपलाशञ्च तालमूली पुनर्नवा ।
घनाऽमृते नागवला चक्रमर्दकमुण्डिके ॥ १३०५ ॥
भृङ्गकेशशाताचर्यां वृद्धदारं फलत्रिकाम् ।
त्रिकटुश्चापि सर्वेषां प्रत्येकञ्च नयेद्विपक्वम् ॥ १३०६ ॥
सर्वमेकत्र सम्मर्धं घृतेन मधुना सह ।
स्निग्धे भाण्डे विनिश्चिष्य ततः कुर्याद्विधानवित् ॥
मापकादिक्रमेणैव लौहं सर्वरसायनम् ।
अम्बपित्तं जयेच्छीघ्रं सर्वोपद्रवसंयुतम् ॥ १३०८ ॥
तद्दशशांसि सर्वाणि सर्वमेव भगन्दरम् ।
पक्तिशूलञ्च शूलञ्च तथांमं कुक्षिसम्मवम् ॥ १३०९ ॥
वातरक्तं तथा कुष्ठं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
आमवातं तथा शोथमग्निमान्द्यं सुदुस्तकम् ॥ १३१० ॥
कामलां वातगुल्मञ्च पिडिकागरगृध्रसीः ।
कासश्वासाकचिहरं वृष्यमेतद्विशेषतः ॥ १३११ ॥
सर्वव्याधिहरं प्रोक्तं यद्येष्टाहारसेविनः ।
यक्ष्माणं रक्तपित्तञ्च वातरोगं विनाशयेत् ॥
संज्ञया सर्वतोभद्रलोहो रसवरः स्मृतः ॥ १३१२ ॥

भै. र., अम्बपित्ते ।

भाषा—लोह, ताभ्र और अन्नकभस्म १-१ पल, शुद्धपारा
१ कर्प, गन्धक २ कर्प, शुद्ध सोनामाली और मैनसिल १-१
कर्प, उत्तमशिलाजीत १॥ कर्प, शुद्धपल १ कर्प, विडम्भ, मिलाने,
चित्रक और सफेदआवकीजड़, पलाशवेद, कालीमुशाली, पुन-
र्नवा, नागरमोथा, गिलोय, नागवला, पवाड, गोरखमुण्डी,
स्याहसकेदभंगरा, शतावरी, विषारा, त्रिफला, त्रिकटु ४-४ माशे
लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमेंमिलाय मधु
और धीरेधीरेमिलानकर चिकनेवर्तमें रखोड़े । इसमेंसे १
माशेसे ३ माशेतक औचित्ती देखकर उचितानुपानकेसाध देनेसे
सर्वोपद्रवजुफ अम्बपित्त, अरु और भगन्दरको यह नष्टकर रसा-
यनका कामकरताहै । तत्तद्विशेष अनुपानोंकेसाधदेकर पच्यवि-
शेषकोसेवनकरनेसे पक्तिशूल, साधारणशूल, आम, कुक्षिशूल, वात-
रक्त, कुष्ठ, पाण्डु, हलीमक, आमवात, शोथ, दुस्तरमन्दाग्नि,
कामला, वातगुल्म, पिडिका, गर, गृध्रसी, कास, श्वात, अस्थि-
यक्ष्मा, रक्तपित्त और वातरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३१८ ॥

३१९ सर्वतोभद्रलोहम् (द्वितीयम्)

गव्येन नयनीतेन स्वर्णमाक्षिककृत्त्रिकी ।
निपिप्येव लेपयेत्लोहं कान्तपाण्ड्यादिसम्ममम् ॥ १३१३ ॥
ध्मापयेत्कर्मकाराग्नीं सिक्त्वा सिक्त्वा पुनः पुनः ।
त्रिफलाक्याथतोयेन ततो निर्वापयेत्सुधीः ॥ १३१४ ॥

पश्चात्सम्पिप्य तल्लौहं दाहयेत्पुटवह्निना ।
 अम्हैरारुप्य विधिना जलधौतं प्रयत्नतः ॥ १३१५ ॥
 रुरक्षणघृणं ततः कृत्वा बहुघृष्टानु कारयेत् ।
 पलञ्चतुष्टयं तस्य मधुकस्यापि ततसमम् ॥ १३१६ ॥
 पथ्याधानीविभीतक्यो रसश्च त्रिकटुस्तथा ।
 वचावह्विचिडङ्गानि कृष्णजीरकजीरके ॥ १३१७ ॥
 दन्ती पुनर्नवा मूली प्रत्येकं पलसह्यया ।
 एलायाः कर्पकं दद्यात्कार्पिकं कांडुरोहिणीम् ॥ १३१८ ॥
 एलाई गन्धकं देयं पलाई गुग्गुलुत्वचम् ।
 चूर्णयित्वा विधानेन सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ १२१९ ॥
 घृतमष्टपलं दत्त्वा क्षीरं चतुःशरायकम् ।
 चतुर्विंशपलकाये त्रिफलाशेषवारिणा ॥ १३२० ॥
 वस्त्रपूतेन विधिवत्पाचयेत्तान्नाभाजने ।
 लोहोद्भवदर्विकया पाकं कुर्याद्विपाकवित् ॥ १३२१ ॥
 शीतलञ्च ततः कुर्यात्किम्बे भाण्डे निधापयेत् ॥
 रक्तिकादिक्रमेणैव घृतेन मधुना सह ॥ १३२२ ॥
 सम्मर्द्य लोहदण्डेन लोहपाने च भक्षयेत् ।
 क्षीरानुपानं दातव्यं पित्तदुष्टायरोगिणे ॥ १३२३ ॥
 तथामकोष्ठिने दद्याद्यवक्षारस्य वारिणा ।
 मूत्रांडदित्पारकपित्तशूलदिसम्मवे ॥ १३२४ ॥
 क्षीरं शर्करया मिश्रमनुपानं प्रयोजयेत् ।
 चतुर्धा प्रहणीरोगे वातपित्तकफोद्भवे ॥ १३२५ ॥
 क्षात्वा कुक्षीं मनाक् शूलमानामग्न्यं सलोहितम् ।
 कुक्षीं दक्षिणतः शूलं नाभिमण्डलकोपरि ॥ १३२६ ॥
 वातपित्तनिदानं हि लक्षयित्वा प्रदीयते ।
 नारिकेलञ्च समधु पानञ्च हितमिच्छता ॥ १३२७ ॥
 रक्तचूर्णं विगन्धत्वमीपत्पानन्तुपैत्तिके ।
 क्षीरं शर्करया युक्तमनुपानन्तु दापयेत् ॥ १३२८ ॥
 कटिप्रिकोद्भवे शूले कुक्षिशूल ओरोचके ।
 आमवातसमुत्थाने मुखन्नाये च दीयते ॥ १३२९ ॥
 ज्वरे सशूले सामे च वायुमामं निवर्तयेत् ।
 यत्रकुत्र समुद्भूते शूले दद्याद्विचक्षणः ॥ १३३० ॥
 वै च, रसायने ।

भाषा—सोनामाखी और पुनर्नवाकेचूर्णको गायके मक्खनमें मिलाय कान्तादिलोहेके बारीकपत्रपरलेपकर लोहाकेयद्वा धमनकराके त्रिफलाकेकाढ़ेमें बारीकचूर्णहोनेतक घुसावे । फिर बारीकचूर्णको लेकर त्रिफलाकेकाढ़ेसे मर्दनकर टिक्की बनाय सुखाकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञाशीतलदोनेपर निकालकर फिर हसीतरहमर्दनकर आचदे । भसमहोनेकेबाद अन्लवर्गमें घोटघोटकर २-४ भाचें देकर पानीसे धोएके और कजलकेसदृश-घोटले । यह लोहभसम और सुलहई ४-४ पल, हरे, आवले, बहेड़े, शुद्धपारा, त्रिकटु, वच, चित्रकमूल, विडङ्ग, कालीजीरी, जीरा, दन्ती और पुनर्नवाकी जड़ १-१ पल, इलायची और कुटुकी १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक ८ माशे, गुग्गुलुकेचूर्णकीछाल

२ कर्ष लेकर सबका बारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलनर्गकजलीमें मिलाय धी ८ पल, दूध २ प्रस्थ, चतुर्थांशानसिद्ध त्रिफलाका-हाथ २४ पललेकर समको तावेकीकड़ाहीमें लोहेकी कड़ईसे चलाताहुआ मन्दाग्निसे पाककरे । घन तैयार होनेपर चिक्ने वर्तनेमें रसजोड़े । इसमेंसे १ माशेसे आरम्भकर ३ माशेतक बढ़ावे । मानाने लोहकेपानमें धी और मधु डालकर लोहेके ढण्डेसे थोड़ीदेर मर्दनकर सेवनकरे ऊपरसे दूधपीवे । इससे दुष्टपित्त क्षान्तहोताहै । आमविकारमें यवझारकाजल, मूर्च्छा, वमन, रुपा, रफपित और शूलमें शरकर मिलाहुआदूध, ४ प्रकारकी प्रहणी, वात, पित्त और वफकी उत्पत्तयामें औचिनी देखकर अनुपानका योगकलेसे ये सब नष्टहोतेहैं । कुक्षिशूल, नाभिशूल, कटिशूल, त्रिकशूल, अरोचक, आमवात, मुखपार, शूलसहितग्वर इत्यादिर्षेमें औचिनीदेकर अनुपानोंका योग करे । आमगन्धपरहित रक्की वमनमें नारियलकेजड़में मधु मिलाकरदेवे केवलपैत्तिक विकारमें शरकरमिला दूधदेवे । इसकेप्रयोगमें वायु और आमपर विशेष लक्ष्य देवे ॥ ३१९ ॥

३२० सर्वतोभद्रावटी

हेमरौप्याम्रलोहानि जतु गन्धकमाक्षिकम् ।
 वटीं रक्तिमितां कुर्याद्विमृष्टं घट्टणाम्भसा ॥ १३३१ ॥
 वटीयं सर्वतोभद्रा निखिलान्मुक्कजांगदान् ।
 हेरुस्तित्तमवांश्चापि शूलं धीयंविधिविधिनी ॥ १३३२ ॥
 आ. वि. रूकामये ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, अत्रक, लोह इनकीभस्में, शिला-जीत, गन्धक और सोनामाखी समभागलेकर बरुणकेकाढ़ेसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोल्या बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बरुणके कायकेसाथ देनेसे दूध और वस्तिके समस्त-रोग और शूलोंको नष्टकर यह बीयेको बढातीहै ॥ ३२० ॥

३२१ सर्वप्रकाशरसः

पारदगन्धकसैन्धवटङ्गणशोतानि तुल्यभागानि ।
 प्रथमं पादगन्धौ कज्जलयित्वा मेलयेत्सर्वम् ॥ १३३३ ॥
 त्रिदिनं सुरदाहिरसेन घृष्टं कं दिनं बहुरसेन ।
 पश्चात्पुटेन दग्ध्ना दिनमेकं मर्दयेद्गोमूत्रे ॥ १३३४ ॥
 अजकरिणीमहिषीखरभूने क्रमश एव सम्मर्द्य ।
 बहुरसकटुकानिमेवैर्बदरामलनीरसेः क्रमान्मर्द्यम् ॥
 सिद्धं त्रिदिनं दद्यात्त्रिवल्लममलाद्रेकमरिच्युतम् ।
 घृतमुद्रवास्तुकाद्रकयुक्तं सुक्तं त्रिदोषशमनाय ॥ १३३६ ॥
 मागधमा मधुना चाश्रमासह्ययममुं गदी ।
 घास्तुकाद्रकमुद्रात्रं त्यजेत् राजयश्मणि ॥ १३३७ ॥
 सिन्धुवाररसेन्धेयार्द्रकैरेकविंशतिदिनान्यमुं रसम् ।
 मुद्रवास्तुकघृताद्रकाशानामुच्यते सपदि गण्डमालया
 त्रिफलासंघनेनाश्रीस्त्रिसप्ताहं त्रिवल्लकम् ।
 कृष्णाण्डकर्मटीतर्कमुक्त्वा स्याद्बुधमशूलजित् ॥ १३३९ ॥
 मरिचार्द्रकनागवह्नीपत्रै-
 स्त्रिदिनं प्रादय हरेज्वरानशोपान् ।

सशिवाद्रकण्टकारिकाभिः

कृतया पथ्यमुपादवीत विन्वेन ॥ १३४० ॥

अहं शुक्लाजलेनाश्रुत घृतमुद्राशानो गदी ।
 कर्कटाद्रकशाकेन मूत्ररोधाद्रिमुच्यते ॥ १३४१ ॥
 सैन्धवगुडसुरदाश्रुभिरश्रुन्मांसगुडाक्षपथ्याशी ।
 चिर्मित्तकुरण्टकाभ्यां सैन्धवतक्राज्यत्यनिलमानम् ॥
 इधुरसेन च भुक्तं दिनेकविंशज्यत्यधिकरुपित्तम् ।
 वृहतीद्वयकर्कटकाऽऽमलकद्राक्षायलयुताघ्नाशी ॥
 दशमूलक्यायेन त्रिसप्तदिवसं निपेय्य रसमेनम् ।
 तुण्डीवार्ताकाभ्यां गुडभक्ताशी भगन्दरज्यति १३४४
 त्रिफलाद्रिकेण जगत्त्रिसप्तदिवसमग्निमान्द्यमपहरति ।
 पथ्यञ्च पञ्चकोलकशूल्याशनं तस्य कुरवक्युक्तम् ॥
 इधुरसार्द्रकसेयी दिनेकविंशज्यत्यनुकुरुजाम् ।
 तर्कं तस्य च भक्तं शार्कं भवतीह तण्डुलोशाकम् ॥

र घृ., राजयश्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा, कपूर और संधानमक सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर बन्दालेकरसते ३ दिन और चीकुराररेरससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुट में बन्दकर भूषणपुटमें स्वेदनकरे । स्वाज्ञशीतलगेनेपर निकालकर गौ, बकरी, हथिनी, भैंस और गधोकेमूनोंसे १-१ दिन मर्दनकर चीकुरार, कुटकी, निम्ब, बेर और आवलेकरसोसे ३-३ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, अदरख और मरिचकेसाथ अथवा धी, मूंग, बघुआ और अदरखकेसाथदेनेसे निद्रोष नष्टहोताहै । पीपल और मधुकेसाथ लेनेसे और बघुआ, अदरख तथा मूंगका सेवन करनेसे दो महीनेमें राजयश्मसे निवृत्तहोताहै । संभाल, सैन्धव और अदरखकेसाथ लेकर मूंग, बघुआ, धी और अदरख भोजन में लेवे तो गण्डमालासे निवृत्तहोताहै । त्रिफला और संधे नमककेसाथ ९-९ रत्ती सेवनकर कोंहवा, ककड़ी और छाछ कापथ्यरखनेसे २१ दिनमें गुल्म और शूलको जीतताहै । मरिच अदरख और पानकेसाथ ३ दिनतक लेनेसे तथा हूँ, अदरख, भटकटैया और बेलके कीहुई पेया पीनेसे समस्तम्बरोको नष्टकरताहै । सफेदगुग्गुलकेतलसे ३ दिनलेकर धी और मूंग पथ्यमें लेनेसे तथा ककड़ी और अदरखका शाक खानेसे सूनरोषसे निवृत्तहोताहै । संधेनमक, गुड और बन्दालेकेसाथ इतका सेवन कर मास, सुक्रेपदार्थ, कचरे, बटसेरया, संधानमक और छाछ पथ्यमें लेवे तो बडाहुआ वायु नष्टहोताहै । ईसके रसकेसाथ लेनेसे २१ दिनमें बडाहुआ पित्त शान्तहोताहै । दोनोंभटकटैया, ककड़ी, आवले, द्राक्ष और बला इनके काथसे बनाएहुए अतका सेवनकरे । दशमूलक्याथकेसाथ दशवासेवनकरके कुदरु, बेंगन, गुड और भात पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें भगन्दर नष्टहोताहै । त्रिफला और अदरखकेसाथलेकर पञ्चकोल, शूल्यमास और कटसरैया पथ्यमें लेनेसे २१ दिनमें मन्दाग्नि दूरहोताहै । ईस

और अदरखके रसकेसाथ इतको लेकर छाछ, भात और चौलाई का शाक जानेसे २१ दिनमें समस्तव्याधियोंसे निमुक्तहोताहै

३२२ सर्वदीपकरणरसः

समभागं रसं नागं संयोज्येकत्र मर्दयेत् ।
 गन्धकेनान संयोज्य दद्याद्रससमां कणाम् ॥ १३४७ ॥
 सर्वमेकत्र शृङ्गीयात्रिदिनं जुम्भणीरसैः ।
 कुमायाश्च तथा माध्या भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४८ ॥
 त्रिर्भावयेद्जामूत्रैस्त्रिगांमूत्रेण भावयेत् ।
 सैन्धवेन ग्रन्थिकेन भावयेच्च पृथक् पृथक् ॥ १३४९ ॥
 सिद्धं शर्करया युक्तं त्रिसप्ताहं निवृत्तकम् ।
 निवृच्छाकाद्यो देया देयं गोधूमभोजनम् ॥ १३५० ॥
 मेहजत्रणभगन्दरार्जुदान् कौष्ठिकजत्रणविपत्रणानपि ।
 सर्वदीपकरणो हृत्त्ययं सूर्यदासकृतिना विनिर्मितः ॥
 र क, र, घृ, वृषणपाथिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नागभस्म, पीपल सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर जभीरी, चीकुरार, पीपल, बकरी और गायकामून, संधानमक, पिपलामूल इनप्रत्येककेद्वोंसे ३-३ दिन भावनाएदेकरबराबरकीशकरमिलाकर ९-९ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े अथवा सुखाकर चूर्णकरले । इसमेंसे ९-९ रत्ती कीमात्रा समयोचितानुपानकेसाथ देकर निसेतप्रश्रिति रेचक शाक और गेंहूकाभोजनदेनेसे प्रमेहपिडिका, भगन्दर, अर्जुन, विद्रधि, विपत्रण इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२२ ॥

३२३ सर्वमुखरोगारिरसः

लोहाश्मजत्वमृतपारदगन्धकश्च
 क्षारत्रयं त्रिकटुताप्यफलत्रिकञ्च ।
 युक्त्या विचूणितमिदं भुञ्जनाऽवलेह्यं
 सर्वेषु कण्टगलतालुगदेषु शास्तम् ॥ १३५२ ॥
 यो म., मुखरोगे ।

भाषा—लोहभस्म, शुद्ध शिलाजीत, बछनाग, पारा और गन्धक, सब्जी, सुहागा, यवक्षार, त्रिकटु, सोनामाखी और त्रिकला समभाग लेकर चारोक्चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण कजलीमें मिलाय शिलाजीतकेसाथ १-२ दिन घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ रत्ती मधुकेसाथदेनेसे कण्ट, गला और तालु इनके समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२३ ॥

३२४ सर्वमुत्तामयहररसः

नूपमाक्षिकनुरथशिलाालनभ-
 शिलजं महिषाख्यरसेन्द्रमितम् ।
 विनिघृष्य रसे रविजे त्रिदिनं
 यदनस्थगदे तिमिरे च हितम् ॥ १३५३ ॥
 यो म, रसेन्द्रम., र. क ल, मुखरोग ।
 टि०—रसकल्पलतायां माक्षिकताले न टरनेसे रविसमावना च नास्ति ।

भाषा—लाजवर्द, सोनामापी, तुल्य, मैनसिल, हरिताल, अत्रक इनकी भस्में, शिलाजीत, भेंसागूल, शुद्धपारा समभाव-लेकर नीलवर्णकजलीकर गूगलरो मिलाय आकण्डेपत्तोंके-रससे ३ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे समस्तमुखरोग नष्टहोतेहैं । अञ्जनरूपसे तिमिर नष्टहोताहै ॥

३२५ सर्वरोगघ्नरसः

मूषा तिन्दुकविस्तारा ह्यायामे पोडशाङ्गुला ।
भाण्डपादस्य पादांशं बालुकाभिः प्रपूरयेत् ॥३२५॥
तस्मिन्निवेश्य द्विशुणं गन्धगर्भगतं रसम् ।
याममात्रं पचेच्छुल्ल्यां क्षिपेद्गन्धस्य चूर्णकम् ॥३२५॥
घायसीनागिनीमत्तमेघनादरसैः पुटेत् ।
स रसः सर्वरोगघ्नो घलीपलितजिह्वयेत् ॥ ३२५६ ॥
र. को०, रसायने ।

भाषा—तैदकेफलकेबारावरौड़ी और १६ अङ्गुल ऊंची मूषाका चतुर्थांश बालुमें द्वाय एकतोला शुद्धगन्धकका बारीक-चूर्ण मूषामें विछाय १ तोला शुद्धपारा रस १ तोले गन्धरसे ढकड़े । फिर बालुभेहुएपानको चूल्हेपर रस १ पहरकी कड़ी आचदे, जब गन्धक पिघलकर जलनेलेगे तब ऊपरसे थोड़ा थोड़ा गन्धकचूर्ण डालताहै जिसमें कि पारा न उड़े । एक पहरवाद यन्त्रको नीचे बताराकर रखोड़े । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर मकोय, पान, धतूरे और कटिवाली चौलाईकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे यह समस्तरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ३२५ ॥

३२६ सर्वरोगघ्नरसः (प्रथमः)

पलत्रयञ्चिन्नकञ्च चेतनी च पलत्रया ।
पारदं व्योपक्रञ्चैव पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥ ३२५७ ॥
जातीफलं वृद्धदारु ग्राहयेच्च पलं पलम् ।
पला मुषा कुष्ठगन्धं दूरदं करहाटकम् ॥ ३२५८ ॥
ज्योतिष्मती त्वगन्नञ्च लोहभस्म पलाढकम् ।
हालाहलं निष्कमेकं गुडं देयं पलाष्टकम् ॥ ३२५९ ॥
भृङ्गराजरसेनैव गुटिका कोलसम्मिता ।
एकैकां भक्षयेन्नित्यं धाताशीति विनश्यति ॥ ३२६० ॥
कुष्ठाष्टादशकं नश्येत् प्रमेहा विश्रान्तिस्तथा ।
अपस्माराः क्षयं यान्ति सर्वनाडीत्रणा अपि ॥ ३२६१ ॥
एकादशविधं शापमुद्धभ्यासप्रसुतिकाः ।
शोथामघातपाण्डुत्वं कामलाशां निहन्ति सः ॥
सर्वरोगघ्नं ख्यातं धाताम्लञ्च चिचर्जयेत् ॥ ३२६० ॥
र. सु, वातज्याधिकारे ।

भाषा—चित्रक और हरं ३-३ पल, शुद्धपारा, त्रिकटु, पिपलामूल, नागरमोथा, जायफल और विचारा १-१ पल, हलायची, वसलोचन, कुष्ठ, शुद्ध गन्धक और शिगरिक, अजल

करा, मालकापनी, तज, अत्रक और लोहभस्म २-२ कर्ष, शुद्धबल्लाग ८ मासे, शुद्ध ८ पल लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय गुडसेवाय १-२ पहर घोटकर भगरेरसेसे १-२ भावनाएं देकर वेववारर गोलियों बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाधनेसे ८० प्रकारकेनागु, १८ वृष्ट, २० प्रमेह, अपस्मार, समस्त नाडीग्न, ११ प्रकारकादोष, ऊर्ध्वश्वस, प्रयुसवात, शोथ, आमवात, पाण्डु, कामला, अंश इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें वातल और अम्लपदार्थोंका परित्यागकरे ॥ ३२६ ॥

३२७ सर्वरोगघ्नरसः (द्वितीयः)

हरवीर्यं गन्धताले शिलां टङ्गणमेव च ।
दूरदं ताम्रभस्माऽथ नागसिन्दूरमेव च ॥ ३२६३ ॥
रोहिणीव्योपसंयुक्तं तथा त्रिफलया युतम् ।
पतेपामष्टमांशानु दन्तीवीजञ्च निक्षिपेत् ॥ ३२६४ ॥
अर्द्धांशं दन्तिवीजानां विषं शुद्धं विनिःक्षिपेत् ।
निष्कार्दं कुड्ममञ्जैव तूर्द्धं मृगनाभिजम् ॥ ३२६५ ॥
निष्कद्वयं देवपुष्पं कर्पूरमर्द्धनिष्ककम् ।
रत्नमध्ये विनिःक्षिप्य सूक्ष्मचूर्णानु कारयेत् ३२६६ ॥
शिष्टमूलरसेनैव मर्दयेच्च दिननयम् ।
भृङ्गराजरसेनैव मर्दयेच्च दिननयम् ॥ ३२६७ ॥
केशराजरसेनैव मेघराजरसेन च ।
धासारसैश्चन्दनेन मर्दितञ्च दिनं पृथक् ॥ ३२६८ ॥
वज्रवह्नीरसेनैव ताम्बूलरसमर्दितम् ।
गुल्लामात्रांश्च घटकाङ्कुयादिवं विचक्षणः ॥ ३२६९ ॥
ज्वरं सप्तविधं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ।
अष्टाङ्गपाण्डुरोगञ्च श्वासं कासञ्च पीनसम् ॥ ३२७० ॥
कुक्षिशूलं पार्श्वशूलं गुल्मरोगमहोदरम् ।
प्रमेहं सोमरोगञ्च पक्षाघातञ्च शैत्यकम् ॥
अशीतिवातरोगांश्च सर्वरोगघ्नः परः ॥ ३२७१ ॥
रसायनप, सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनसिल, शुद्धाग, शिगरिक, ताम्र और नागभस्म, रससिन्दूर, कुट्टी, त्रिकटु, त्रिफला १-१ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा २ कर्ष, शुद्धबल्लाग १ कर्ष, केशर ८ मासे, कस्तूरी ४ मासे, लौह ८ मा, शुद्धरूप २ मासे लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय सहजिनकीजङ्गीकाल और भगरेकेरसोंसे ३-२ दिन और कालाभगरा, कटिवालीचौलाई, अहसा, चन्दन, हज्जोह, पान इत्यनेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियां बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि-तानुपानकेसाधनेसे ७ प्रकारकाज्वर, १३ सन्निपात, ८ प्रकारका-पाण्डु, श्वास, कास, पीनस, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, गुल्म, जलो-दर, प्रमेह, सोम, पक्षाघात, शीतता, ८० प्रकारकेवातलोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२७ ॥

३२८ सर्वलोकाश्रयरसः

शुद्धं सूतं पलं गन्धं गन्धार्थं तालताप्यकम् ।
 अमृतं रसकञ्चैव तालकाण्डविभागिकम् ॥ १३७२ ॥
 पतेयां काजलीं कुर्याद् दृढं सम्मर्द्य वासरम् ।
 त्रिदिनं मर्दयेथाय दत्त्वा निम्बुजलं खलु ॥ १३७३ ॥
 घटीरुह्य विशोण्याऽय काचकृपां निघापयेत् ।
 निष्कतुल्याकप्रेण पिधायाऽऽस्यं प्रयत्नतः ॥ १३७४ ॥
 सार्धाद्गुलमितोत्सेधं मृत्स्नया तां विलेप्य च ।
 ततो माण्डतृतीयोशे सिक्तापरिपूरिते ॥ १३७५ ॥
 निघाय सिक्तामूर्ध्नि सिक्ताभिः प्रपूरयेत् ।
 रुद्धाऽऽस्यं तदधो यद्भि ज्वालेयेत्सार्धावासरम् १३७६
 स्वाङ्गदीतिलितं काचपुटादाह्वयं तं रसम् ।
 पट्टधूपे पिधायाय ताम्रमञ्चं पलद्वयम् ॥ १३७७ ॥
 पलाञ्चममृतञ्चैव मरिचञ्च चतुष्पलम् ।
 एकीरुह्य क्षिपेत्सर्वं नारिकेलकरुण्डके ॥ १३७८ ॥
 साज्यो शुद्धाद्रिमानो हरति रसवरः सर्वलोकाश्रयोऽयं
 घातश्लेष्मोत्थरोगान्मुदजनितगदं शोषपाण्ड्यामयञ्च ।
 यश्मार्णं घातशूलं ज्वरमपि निखिलं वृद्धिमान्यञ्च गुल्मं
 तप्तद्रोणघ्नयोगीः सकलगदचयं दीपनं तत्क्षणेन १३७९
 र. र. स, र. घु., र. को., अर्धोऽपिफारे । र. को. अर्धोऽपि श्लिनाप,
 भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, हरिताल और
 सोनामाटीभस्म २-२ कर्ष, शुद्ध बछनाग और खपरिया १-१
 कर्ष लेकर बायीकवर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकमलीभि मिलाय
 नीबूकेरसवे ३ दिन मर्दनकर छोटीछोटीगोलिया बनाय गुलाबर
 ३-४ कपडमिट्टीदीहुई आतवीसीसीमेंबर षट लगावर ॥
 अहुल कपडमिट्टी चारोंतक लगाय लोहे अथवा मिट्टीकीनादमें
 रस तीसरेदिनसेतक बालुमरके १॥ दिनकी म्मद्वजमिनदेवे ।
 स्वाङ्गदीतलहोनेर निकालकर ताम्र और अभ्रक १-१ पल,
 शुद्धबछनाग २ कर्ष, मरिच ४ पल लेकर सबका कपडइनवर्णकर
 नारियलमें भररखे । इसमेंसे २-२ रसी पीनेसाथ अथवा
 रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे घातश्लेष्मजरोण, बवासीर, शोष,
 पाण्डु, यक्ष्मा, घातशूल, सबप्रकारके ज्वर, मन्दाग्नि, गुल्म
 इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३२८ ॥

३२९ सर्वसन्निपातनाशकररसः

रसं गन्धं विपञ्चैव धन्तूरं मरिचन्तथा ।
 शोधितञ्च तथा तालं माक्षिकञ्च समांशकम् ॥ ३२८० ॥
 दन्तीकायेन सम्भाव्यं गुञ्जामाया घटी कृतम् ।
 साध्यासाध्यासिंहित्याद्यु सन्निपातांशयोदश १३८१
 वै. क., सन्निपाते ।
 भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बछनाग, धतूरेकेबीज, मरिच,
 हरिताल और सोनामाटी समभागलेकर नीलवर्णकमलीवर दन्ती-
 केजायसे मर्दनकर १-१ रसीकी गोलिया बनाकर रतछोड़े ।

इसमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेमें
 ताप्यअथवा अताप्य १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३२९ ॥

३३० सर्वसिद्धिदावटी

पूर्वसिद्धरसे देवि पादांशं हेम योजयेत् ।
 मृतं यजं पलांशेन व्योमसत्त्वं प्रयोजयेत् ॥ १३८२ ॥
 क्षीरकज्जुकितायेन मुरदालीरसेन च ।
 विधिना मर्दयेत्वा तु नष्टपिष्टुतु कारयेत् ॥ १३८३ ॥
 कान्तवर्णपुट्टिं दत्त्वा मूक्युपागते धमेत् ।
 मुट्टिका जायते दिव्या यक्षत्रस्था सर्वसिद्धिदा १३८४
 रयाणवे., रसायने ।
 भाषा—ऊर्दुगतनादि और बीजत्राणादिकियेदुए १ पल
 परेमें पुरर्णनीज और यक्षत्रस्य १-१ कर्ष, अभ्रकताव १ पल
 मिलकर क्षीरकज्जुकी और बन्दालकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर
 कान्तलेहकावर्ण १ कर्ष बालकर धोईदरे पोटकर गोलाबनाय
 अन्धभूपामें बन्दकर दृश्यमनकरनेसे इसकी गोली बनतीहै ।
 इसको मुँहमें रतनेसे समस्तसिद्धियें होतीहै ॥ ३३० ॥

३३१ सर्वसिद्धिप्रदरसः

पातिते स्येदिते सूते जारयेत्तत्र पद्भुणम् ।
 यलिं स्वोपक्रमेणैव यन्त्रे भूधरके ततः ॥ १३८५ ॥
 जीर्णगन्धरसेदी तं खल्वे दत्त्वा विमर्दयेत् ।
 विष्णुकान्तारसेनेन हृत्पर्णासिलिलेस्तथा ॥ १३८६ ॥
 देवदालीरसेस्तद्भृङ्गकन्यारसेस्तथा ॥ १३८७ ॥
 काकमाचीरुष्णधृतं रक्ता च खरमञ्जरी ॥ १३८७ ॥
 तिलच्छदा तथा प्राह्नी शोफणी मेघनिःस्वना ।
 चाङ्गेरीनागयह्वी च मुनिपुष्परसोऽद्रिकः ॥ १३८८ ॥
 मुदाली रक्तसिद्धिश्च रामठं हलिनी तथा ।
 जप्रसूतगर्वीमुश्रं तयेयोत्तरव्याण्णी ॥ १३८९ ॥
 इन्द्रवारुणिका चैव हंसपाद्मी कुबेरदृक् ।
 प्रस्तरौ च शिलाभेदी सस्यारि म्स्त्यस्यलोचना १३९०
 यज्ञयह्वी यज्ञरुन्दो यज्ञद्रुग्धं तु तुग्धिनी ।
 लोमयह्वी सूर्यभक्ता लज्जालुधु र्दन्तिका ॥ १३९१ ॥
 मकैदी घृष्टिकदला पुरीषं खञ्जरीदजम् ।
 पारायतस्य विष्टा च भूलतानीरमेव च ॥ १३९२ ॥
 पलाशमूलककायः कञ्चुकी खर्जुरणम् ।
 शतावरी गोशुर्कं पाठा च यवचिञ्चिका ॥ १३९३ ॥
 मृतसञ्जीवयनिता सर्पाक्षी काकतुण्डिका ।
 ब्राह्मी मण्डकपर्णी च मानुमूलरसस्तथा ॥ १३९४ ॥
 कुक्कुटी नागिनी नागो जयाऽथ फणिमारकः ।
 अभ्रमाररसो व्याघ्री वृहती विपतिवृकः ॥ १३९५ ॥
 शरपुष्पा सहचरी श्रेणपुष्पी च शात्मली ।
 कीविदारो महानीली नीली च गह्वडी तथा ॥ १३९६ ॥
 गोपी नागयला चन्द्रयह्वी च सितभारती ।
 महाराष्ट्री शिखिशिखा योपित्कसुममेव च ॥ १३९७ ॥

अश्वगन्धा चरुमर्दः शिशुद्रुश्च त्रिघृता निशा ।
 प्रत्यक्षपर्णी वाकुची च जयपालश्च फल्गुकाः ॥१३९८॥
 शकवह्नी पटोलश्च फाथश्च त्रिफलोद्भवः ।
 यहुपुष्पी निकोचश्च द्वैवेर्यां चिमर्दयेत् ॥ १३९९ ॥
 व्यस्तेः समस्तेः सम्मर्दंही मासौ च निरुत्तरम् ।
 कल्कीमृतञ्च तं सूतं यथे सोमानले क्षिपेत् ॥ १४०० ॥
 मृदुमध्यक्रमेणैव वह्निं प्रज्वालयेदधः ।
 उपविंशोश्च दिवसान् स्वान्नाशीतलमुद्धरेत् ॥ १४०१ ॥
 यत्र निर्भिद्य गृहीयात्तं सूतं भस्मतां गतम् ।
 एतद्भस्म स्पर्शमात्राद्भस्मं भस्मी भवेत्क्षणात् ॥ १४०२ ॥
 भस्मीभवन्ति लोहानि रससम्पर्कतो ध्रुवम् ।
 अनेन भस्मना सर्वांश्च सत्त्वसङ्गांश्च मारयेत् ॥ १४०३ ॥
 एतस्य भस्मनो देया भावना ज्वरवारणे ।
 मत्स्यादिकानां पित्तानां दशानां वत्सनामजा १४०४
 हृत्पर्णीरुष्णचूर्दैरिजगद्विजयारसैः ।
 महाराष्ट्री तिलदला मण्डूकी तुलसी तथा ॥ १४०५ ॥
 एतैः सम्भाव्य भूतेन्द्रं पित्तैः पश्चाद्विभावयेत् ।
 वत्सनाभं समं दद्याद्रक्तङ्गीं स्वरांशतः ॥ १४०६ ॥
 आदित्यभागं हायिद्रमष्टादां मेपशुद्धिकम् ।
 घेदभागं सक्तुकञ्च दद्यात्सुतञ्च भावयेत् ॥ १४०७ ॥
 रक्तशुद्ध्या च सहितो यदि स्यात्पारदेश्वरः ।
 राजसर्पमात्रेण सन्निपातं विस्वञ्चकम् ॥ १४०८ ॥
 निहन्त्याच्छीततोयानि ढालयेच्छैत्यसम्भवः ।
 कम्पो भवेद्य सर्वाङ्गे यावत्तावद्विचक्षणः ॥ १४०९ ॥
 सर्पपद्ममात्रेण हायिद्रे दापयेद्रसम् ।
 सर्पपद्ममात्रेण मेपशुद्धीयुतं रसम् ॥ १४१० ॥
 राजीचतुष्टयं दद्यात्सक्तुकेन च संयुतम् ।
 वत्सनाभसुतं दद्याद्दुर्जानानेन शरदम् ॥ १४११ ॥
 न न्यूनं नाधिकं देयं शुभेच्छुभिपशुत्तमः ।
 उपचारश्च पूर्वोक्तो यथा लङ्केश्वरे तथा ॥ १४१२ ॥
 अनुपानप्रकारं तु रसेन्द्रस्य यथाक्रमम् ।
 ज्वरादिसर्वरोगेषु शास्त्रयुक्त्या शिवोदितम् ॥ १४१३ ॥
 किराततिक्रमायेन ज्वरान्सर्वांश्चिह्नन्त्यसौ ।
 क्षयरोगं निहन्त्येव मुक्ताभस्मसमन्वितः ॥ १४१४ ॥
 गुञ्जाव्यप्रमाणेन रसं दद्यात्सुनापाययेत् ।
 धारोष्णमजुनीदुग्धं तवराजयुतं तथा ॥ १४१५ ॥
 कणाशुगुलुयोगेन पण्डुरोगं निवारयेत् ।
 लोहभस्मसमायुक्तस्त्रिफलाचूर्णसंयुतः ॥ १४१६ ॥
 सूरणाम्मोऽनुपानेन सर्वांशौ जयति ध्रुवम् ।
 सुतेन्द्रं घङ्गजं भस्म भागैरष्टनिरन्वितम् ॥ १४१७ ॥
 प्रलिह्य मधुना सार्धं मधुधात्रीरसानुपः ।
 प्रमेहान्ते शुक्रमेहद्वयं सर्वाङ्गयद्रुधम् ॥ १४१८ ॥
 शुक्रमेहे रसं जग्ध्वा हरिद्राया रसं पिबेत् ।
 घातव्याधिषु युञ्जीत व्योपसिंहारसैः समम् ॥ १४१९ ॥

अदम्यां पूर्वयोगः स्यान्मृद्वच्छ्रे च पूर्ववत् ।
 कुष्ठे सूतं नियुञ्जीत भस्मना ताप्रजेन वै ॥ १४२० ॥
 उत्पलेदभेद्रग्निमिभि विमुक्तं दोषपञ्जितम् ।
 निहन्त्यं खदिरफाथवाकुचीचूर्णसंयुतम् ॥ १४२१ ॥
 सर्वकुष्ठं निहन्त्येव रसेन्द्रो नात्र संशयः ।
 अथवा निम्बजं चूर्णं पञ्चाङ्गं भावयेज्जले ॥ १४२२ ॥
 निम्बकाथभवेत्तद्वत्कार्यैः खदिरसम्भवेः ।
 सप्त सप्त विभाव्याथ पट्टांशं लोहभस्मकम् ॥ १४२३ ॥
 पङ्क्तिः प्रमुच्यते मासैः सर्वकुष्ठान्न संशयः ।
 गुल्मे क्षारैः समं देयः शूलेऽथ परिणामजे ॥ १४२४ ॥
 ताप्रभस्म समायुक्तः पटुक्षारादिसंयुतः ।
 दातव्यो रसपादुन्ति सव शूलमसंशयम् ॥ १४२५ ॥
 अथवा सर्वरोगेषु प्रयोगोऽयं निरूप्यते ।
 शिलाजतुसमायुक्तो गन्धमाक्षिकयोजितः ॥ १४२६ ॥
 पङ्क्तिलोहभस्ममि युक्तो घृतेन मधुना युतः ।
 सर्वाप्रोगाग्निहन्त्येव रसेन्द्रो नाऽत्र संशयः ॥ १४२७ ॥
 चिराभ्यासवलेनैव बलिञ्च पलितञ्जयेत् ।
 अजरामरतां याति सर्वदा सेवनाश्रयः ॥ १४२८ ॥
 पथ्यक्रमस्तु पूर्वोक्तो वर्जयेच्छयनं दिवा ।
 रात्रौ जागरणं नैव कुर्वीत विपमाशनम् ॥ १४२९ ॥
 नोढाटयेद्यश्चरसःपिशाचप्रहडाकिनीः ।
 आरनालश्च मद्यश्च रसान्तरमुपागतम् ॥ १४३० ॥
 ओदनं नैव युञ्जीत माहिर्यं दधि वर्जयेत् ।
 तक्षीरं तदुघृतं तज्जं तर्कं यन्नाद्विवर्जयेत् ॥ १४३१ ॥
 ययनालञ्च तैलञ्च तैलपकं तिलास्तथा ।
 वर्जयेदतित्यत्नेन कारवेल्हञ्च चिमर्दम् ॥ १४३२ ॥
 कालिङ्गमथ कृष्णाण्डं कर्कोटी च कलिङ्गकम् ।
 इत्यादि सर्धं वर्ज्यं स्वादुतिहास्यमस्ति कुञ्जः ॥ १४३३ ॥
 अतिभोजननिद्रे च घनोष्णमतिशीतलम् ।
 अतिवातो विवर्ज्यः स्यादातपं सर्वथा त्यजेत् ॥ १४३४ ॥
 प्रवाते च गृहे तिष्ठेद्रोगघातमपेक्षकः ।
 अयं रसेभ्यः सर्वसिद्धिप्रदसञ्चकः ॥ १४३५ ॥
 दृष्टप्रभावः सुष्टोऽत्र लोकोपकृतिदेवते ।
 देवीशाल्लानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ १४३६ ॥
 रसालः, ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—ऊर्ध्व, अधः और तिर्यक् पालकके दूधाम्भ
 काशिपादिकेभ्यं स्वेदनकेयुहूप पारिंमं पटुष्णान्यकका सुपरपत्र
 प्रथिते जारणकर ततस्वरत्नें डालकर विशुक्तान्ता, हृष्ण
 (स्ताविशेष अथवा अम्लेनियं), बन्दाल, धौडुंवा, मसौय
 कालापतूर, लाल अणामां, हुहुर, माडी, पुनर्ना, कटिवाली
 चौलाई, तिपतिया, पान, अगस्त्य, सफेदचित्रक, सुशकी,
 लालचित्रक, हींग, करिहारी, बडडीकामुख, चमार्दुपी, इन्द्राण,
 हंसराज, कंजा, पथरी, पापाणमेद, अगियापास, मलेठी, ह-
 जोद, बज्रकन्द, सेहण्डकादू, दूधी, पहाडीवीप, सर्वप्रती

लज्जाल, रुदन्ती, केवाच, विदुआघास, खड्गीरट और क्व-
तरीकी विद्या, केतुद, पलाशकीजङ्गीछाल, कन्बुकी, खजूर
जहरीसूण, शतावर, गोखरू, पाठा, जैती, गिलोय, प्रियद्व,
सर्पाक्षी, काफनासा, छालफूलकी झाड़ी, मण्डूकपर्णी, आकनी
जङ्गीछाल, कुम्भुदक्षिणा, नागदौन, चित्रपर्णी, (शुभ्रपर्णी) भाग,
फणिमार (विट्वाधिर), कनेर, दोनोभट्टकटैया, कुचिला, सर-
फोंका, कटसैर्या, गुमा, सेमल, छालफूलका कचनार, दोनोनील,
गण्डवृद्धी (हिमालयमें इसीनामसे प्रसिद्ध है), अनन्तमूल, नाग-
बला, चादमोगार, सफेदफूलकी झाड़ी, मराठी, मोरशिला,
खीरज, असगन्ध, चक्रवड, सहजिन, निसोत, हल्दी, पनसर
(मराठी), वाकुची, जमालगोटा, कदमर, महर, परवल, निफला,
बहुपुष्पी, चिलगोजा, इनसबके यथासम्भव स्वरसोसे १-१
दिन मर्दनकरे । अथवा सबको इकट्ठीमिलाय इनकेस्वरससे
२ महीनेतक निरन्तर मर्दनकर बमस्वनन्तमें रखकर मृदु, मध्य
और खर इसक्रमसे २१ दिनकी आंचे । स्वाज्ञाशीतलहोनेपर
पारेकी भस्मको निकालकर रखले । किसीमास्वद्वयकेसाय
मिलाकर इसभस्मका हारे अथवा किसीभी लोहपर लेपकरके
आंचेदेनेसे बह फूलजाताहै । इससे तमामधातु और सर्वोंकी
कीहुई भस्म कलपोकणको देताहै । इसपारदभस्ममें ज्वरकेलिये
मत्स्यादि १० पित्त, बछनाग, हृत्पर्णी, कालापत्रा, भाग,
मराठी, हुडुर, मण्डूकपर्णी और तुलसीकी १-१ भावनादेकर
पांचपित्तोंसे फिर भावना देकर समभाग बछनाग और सोल्दवा
भाग छालबछनाग, १२ वा भाग हारिद्रक और आठवाभाग
मेपशुनिक, चतुर्थांश सक्तुक विप अलग २ मिलाकर रखछोड़े ।
छालबछनाग मिलाया हो तो सर्वपके बराबर मात्रा सञ्चारहित
सन्निपातमें देकर मत्स्यपर टंडेजलकीपारा कम्पहोनेतक देवे ।
हारिद्रक मिलायाहोतो दो सर्वपमामात्रा, मेपशुनिकमिलाया
हो तो ३ सर्वप, सक्तुक मिलाया हो तो ४ सर्वप और बछ-
नाग मिलाया हो तो १ रसीकी मात्रा देवे । इसमें न्यूनाधि
कता न करे । उपद्रवोंकी शान्ति लहेधरोंकी तरह करनीचाहिये ।
चिरायतेकेजायसे समस्तज्वरोंकी और मोतीवेसायदेनेसे सम
स्तक्षयोंको नष्टरताहै । क्षयमें २ रती रस देकर धारोष्ण
मायके दूधमें १ माशा बंधलोजन डालकर पिलावे । पीपल
और गुणलकेसायदेनेसे पाण्डुरोगको नष्टकरताहै । लोहभस्म
और निफलाके चूर्णवेसायदेकर सुरणकास्वरस पिलानेसे समस्त-
बासासीरोंको यह नष्टकरताहै । १ रती पारदभस्ममें ८ रती
ब्रह्मभस्म मिलाकर मधुकेसाययाटकर मधु और आंबलेकारस-
पीनेसे शुक्रमेहको छोड़कर समस्तप्रमेहोंको नष्टकरताहै । मधुके
साय रसको देकर हल्दीकास्वरस पिलानेसे शुक्रमेह, तथा निकट
और भट्टकटैयाकेरसेसायदेनेसे वातव्याधियोंको नष्टकरताहै ।
पथरी और मूत्ररूचूममें प्रमेहम अनुपानदेना । वान्तिप्रान्त्या
दिबर्जित तापभस्मकेसाय देकर वाकुचीके चूर्णका प्रक्षेपदिया
हुआ वैरकलाय पिलानेसे समस्तकुष्ठोंको नष्टरताहै । अथवा
नीमके मखे भावना दिवदुध नीमकेपञ्चाङ्गकेचूर्णमें नीम और

वैरकेकायोंकी ७-७ भावनाएं देकर छायादिस्त्रालोदभस्म मिला-
कर रखछोड़े । इसकेसाय रसकाप्रयोग करनेसे ६ महीनेमें
समस्तकुष्ठोंसे निवृत्तहोजाताहै । गुल्ममें क्षारोंकेसाय, परिणाम-
शुल्ममें ताम्रभस्मकेसाय तथा पावोनमक और क्षारोंकेसाय-
देनेसे तमामशूल नष्टहोतेहै । शिलाजीत, गन्धक, सोनामाखी,
६ दोहोंकीमस्मोंकेसाय मिलाकर धी और मधुकेसायदेनेसे
समस्तरोगोंको नष्टकरताहै अधिकदिनके अन्यायसे वलीपलि-
तादिक निवृत्तहोतेहै । निरन्तरके भग्न्याससे अजराभरहोताहै ।
दिनका सोना, रातका जपना और विपमाशन, यक्ष, राक्षस,
पिशाच, ग्रह और डाकिनियोंका निकालना, काष्ठी, बिगाड़ा-
हुआ मद्य और अन्यरसकासेवन, भात, भेंसका दही, दूध,
धी और छाछ, ज्वार, मक्की, तैलकण्ठपापे, सिल, करेला,
कचरे, कलौंदा, कोंदला, ककोड़े, इन्द्रजव, अत्यन्तईंसी, क्रोध,
अतिभोजन, निद्रा, अत्यन्त गरम या ठंडा, अत्यन्तवायु, धूप
इनसबकायत्नसे परित्यागकरे और खुलीहवामें रहे ॥ ३३१ ॥

३३२ सर्वसुन्दररसः (प्रथमः)

पातयेत्स्वेदयेत्सूतं जापयेद्येदमदानचौ ।
प्रायुक्तमानतः पश्चाच्छिलां सञ्चारयेत्समागाम् ॥१४३७॥
तालं ताम्रं समांशेन जापयित्वाऽथ पापदम् ।
चतुःपलमितं नीत्वा तालताप्ये मनःशिला ॥१४३८॥
मृतं ताम्रं तथेतानि सूततुल्यानि योजयेत् ।
पञ्चानां लवणानाञ्च पलानि दश योजयेत् ॥१४३९॥
तालमेकं हेममसम सूतेन सह मर्दयेत् ।
ततस्तत्सर्वमेकत्र मर्दयेदौपधीद्रवैः ॥ १४४० ॥
जयन्तीसलिलैः पूर्वं रक्तशिण्डिकवारिणा ।
सिंहास्यनीरैः सम्मर्द्यां विपतिन्दुकवारिणा ॥१४४१॥
अरणीसलिलैर्नारैर्धर्वरीजैश्च मर्दयेत् ।
महापट्टीजलैः कृष्णधनूरज्जरसेस्ततः ॥ १४४२ ॥
वत्सनाभस्य नीरेण मर्दयित्वा दिनं दिनम् ।
तैरेव पुटयेत्पूर्वक्रमेणैव रसेश्वरम् ॥ १४४३ ॥
खल्वे निःक्षिप्य सञ्चर्ष्य स्थायपेदतियत्नतः ।
सर्वसुन्दरानामाऽयं रसेन्द्रो गुल्मशूलहा ॥ १४४४ ॥
समर्ष्य भैरवं सूतं गुल्मिने सम्प्रयोजयेत् ।
चतुर्गुणप्रमाणेन शुण्ठीघृतसमन्वितम् ॥ १४४५ ॥
द्विदलं चर्जयेत्सर्वं पथ्ये रूक्षाशनं तथा ।
एकमासप्रयोगेण सर्वान्गुल्माग्निवारयेत् ॥ १४४६ ॥
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथ्यते शास्त्रमार्गतः ।
शुण्ठ्याः पलानि पञ्चाशत्पिण्डा वस्त्रेण गालयेत् ॥
चूर्णांश्चिशुणे नरी चूर्णं तच्च विनिक्षिपेत् ।
वासयित्वा दिनेकञ्च कापयेगमन्दवह्निना ॥ १४४८ ॥
चतुर्थांशोऽवशिष्टेऽथ कापं वस्त्रेण गालयेत् ।
गालितकापमभ्येऽथ शुण्ठीमानं घृतं क्षिपेत् ॥१४४९॥

पचेन्मृद्वग्निना शीमान् यावच्छिष्येत वै घृतम् ।
शुण्ठीघृतप्रकारोऽयं कथितः सम्प्रदायतः ॥ १४५० ॥
रसाल, र. मृ, गुल्मे

भाषा—ऊर्ध्वादिपातितकियेहुएपरिमें सुवर्ण, गन्धक, मैनसिल, हरिताल, ताम्र येसब समभागमें जारणकर ४ पलदेवे । फिर शुद्धहरिताल, सोनामाखी, मैनसिल, ताम्रभस्म येसब ४-४ पल और पाचौनमक २-२ पल लेवे । इनमेंसे १ कप हरितालको अगलेकर १ वर्षसुवर्णभस्म मिलाकर पारेका २-४ दिनतक मर्दनकरे फिर अन्यघृतुओंकी कजलीकर मिलावे । इसदेनाद जैती, लालखटसरीया, अड्डसा, कुचिला, अरणी, बबई, मराठी, कालाधतूरा और बछनाग के यथासम्भवस्वरस अथवा बायोसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघु-पुटकी आचदेवे । पेशेप्रत्येकरसके मर्दनेन्याद पुटदेवे । स्वादिशीतहोनेपर निकालकर भैरवका पूजनकर रखओड़े । इसमेंसे ४ रतीबीमात्रा शुण्ठीघृतेसायदेनेमे १ महोनेमें गुल्म नष्टहो-ताई । इसमें सबप्रकारकी दाल और रूक्षभोजनका परित्यागकरे । ५० पल घोटका चूणकर २० गुने पानीमें डालकर एकदिनपरत रखओड़े । फिर मन्दाग्निसे चतुर्थीश्रावशेष कायबनाकर छानले । फिर ५० पल गायकाधी डालकर मन्दाग्निसे पकावे । घृतमान अवशेषरहनेपर छानकर रखओड़े । इसीकानाम शुण्ठीघृतहै ॥

३३३ सर्वसुन्दरसः (द्वितीयः)

गोमूत्रे त्रिफलाकाये तत्त्वा तत्त्वा विनिक्षिपेत् ।
मण्डूरं भस्मसात्कृत्वा चत्वारिंशत्क रक्तिःकाः ॥ १४५१ ॥
पञ्चानां लवणानाञ्च बहूनां शतमाहरेत् ।
मर्दयेच्च रसं भस्म हेन्मो गुञ्जाचतुष्टयम् ॥ १४५२ ॥
जयन्ती मण्डुकी वासा विपतिन्दु जंयाभिधा ।
चर्वरी च महाराष्ट्री धत्तूरो वत्सनाभकः ॥ १४५३ ॥
भावयेत्स्वरसेरेपां पुटे स्वल्पे विनि.क्षिपेत् ।
सर्वसुन्दरनामाऽयं गुल्मशूलविनाशनः ॥ १४५४ ॥
गुञ्जा चतुष्टयस्यास्य शुण्ठीघृतसमन्वितम् ।
दापयेद्रोगिणं घृद्यो द्विदलञ्च विचर्जयेत् ॥ १४५५ ॥
र मृ, गुल्मे ।

भाषा—गोमूत्र और त्रिफलाके कायमें गरमकरके हुआ-कर भस्मकिया हुआ मण्डूर ४० रती, पाचौनमक ६०-६० रती, पारा और सुवर्णभस्म ४-४ रती मिलाकर जैती, मोर-खसुण्डी, अड्डसा, कुचिला, भाग, बबई, मराठी, धतूरा, बछ-नाग इनके यथासम्भवस्वरस अथवा बायोसे १-१ दिन भोट कर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचदेकर शीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे ४-४ रती शुण्ठी-घृतेकेसाय देनेसे गुल्म और शूल नष्टहोतेहैं । तमाम दालोंसे परहेजकरे । शुण्ठीघृत पूर्वयोगमें कहागयाहै ॥ ३३३ ॥

३३४ सर्वसुन्दरसः (तृतीयः)

सूतगन्धविषमेव कारयेद्भाग्युद्धमथ मर्दयेत्ततः ।
आर्द्रवद्विजरेसेन यत्नतः पाचितो हि लवणाप्ययन्त्रकेण

भक्षितो हि किल बहुमात्रया
क्षौद्रकेण सह पिप्पलीयुतः ।
पूर्णचन्द्रवद्य हि सेवितो
यक्ष्महा भवति घातरोगहा ॥ १४५७ ॥

र. प्र. सु, यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और बछनाग कमरुद्धभागसे-लेनर नीलवर्णकजलीकर अदरख और चित्रकेके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघवयन्त्रमें ४ पहरकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वादिशीत होनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रती पीपल और मधुकेसाय सेवनकर पूर्णचन्द्रकीतरह पथ्यपालनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ३३४

३३५ सर्वसुन्दरसः (चतुर्थः)

हेमतापरविपत्रिकां भृशं पूर्वैवथ परिपाचयेत्ततः ।
सूतभस्म धिपगन्धकाचितं मर्दयेत्तदनु तद्विभावयेत् ॥
चित्रकाद्रकरसेन तदक्षणं लोहपात्रकुहरे ततः पचेत् ॥
सर्वसुन्दरसेभ्रंरं त्विमं योजयेन्निगदितानुपानतः ॥
सर्वरोगविनिवृत्तिदो भवेद्रोगयोगविनियोजितो द्रुतम्
र. दी, र. चं, र. (मा), राजयक्ष्मणि ।

भाषा—सुवर्ण, रजत और ताम्रके बारीकपत्रोंकी सूतक-जीवरस (सं. ६४८) के विधानसे अलग २ भस्मकर इनकी बराबर २ पारदभस्म, शुद्ध बछनाग और गन्धक मिलाकर १-२ पहर मर्दनकर चित्रक और अदरखकेरससे १-२ दिन मर्दनकर कडाहीमें डालकर मन्दाग्निसे पकावे और लोहेकीकड़ईसे चलातारहे । जल सुखजानेपर निकालकर घोटकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहारण पानकेसाय देनेसे यह राजयक्ष्मादि समस्तरोगोंको दूरकरताहै ३३५

३३६ सर्वसुन्दरसः (पञ्चमः)

रसं तालं शिलां ताप्यं ताम्रं पञ्च पट्टिन् च ।
द्विश्राणिकानि वज्रस्य मापं सञ्जुष्य भावयेत् १४६०
जयन्तीवद्रीवासाविपतिन्दुजयांघवेः ।
समटङ्कणजे द्राव्ये मेहाराष्ट्रीसुण्ठीजै ॥ १४६१ ॥
शुष्कं लघुपुटे पाच्यं स्वाद्दशीतं समुद्धरेत् ।
रक्तिनैकां ततः खादेदस्माच्छुण्ठीघृताग्विताम् ॥
शुष्कं विचर्जयेत्तावद्गुल्मशूलविनाशनः ॥ १४६२ ॥
र शं, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनसिल और सोनामाखी, ताम्रभस्म, पाचौनमक ८-८ मासो, वज्रभस्म १ मासा लेकर बारीकचूणकर जैती, बेरकीछाल, अड्डसा, कुचिला, भाग और शव, समभाग शुहागिका द्रव, मराठी, धतूरा इनप्रत्येकके स्वरस अथवा बायोसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ३-४ कपभिमिठी देकर सूतनेपर लघुपुटकी आचदे । इसमें से १-१ रती शुण्ठीघृतेकेसायखानेसे गुल्म और शूल नष्टहोताहै । रोगमें निमृणहोनेतक अन्ननखावे केवल दूध और फलोंपर रहे ॥

३३७ सर्वाङ्गसुन्दररसः (षष्ठः)

गद्याणैकं सुकपूर्ं कनकं कङ्कणीं पुरम् ।
 तोलेकैकं समादाय सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४६३ ॥
 हेमाद्वा सर्पगरल्लेकेका भावना भवेत् ।
 अहिफेनरसस्यापि शृङ्गीविषसमुद्भवैः ॥ १४६४ ॥
 वृक्षादन्या भवेदेका शोषयित्वा पुनः पुनः ।
 मयूरमत्स्यमहिषपित्तानामत्र भावना ॥ १४६५ ॥
 आटूरुपरसेनाऽपि मुद्गमाना घटीश्वरेत् ।
 सन्निपाते पुरा देया त्रिदोषोत्थे विशेषतः ॥ १४६६ ॥
 ज्वरे घोरे क्षये कासे हिकारो गे च शस्यते ।
 ग्रीहायां यकृतीत्येवमुदरेषु च दीयते ॥ १४६७ ॥
 गलग्रहे प्रहण्यां तमतिसारैः प्रयोजयेत् ।
 अयमर्शाःसु देयः स्याद्वातजेषु पुनः पुनः ॥ १४६८ ॥
 कफजेषु तथा द्रव्यसमुद्भूतेषु दीयते ।
 रोगयोग्यानुपानेन दातव्यः सर्वसुन्दरः ॥ १४६९ ॥
 नारङ्गं शर्करां द्राक्षां दधिरेम्भाफलन्तथा ।
 शृतं दुग्धं प्रयुञ्जीत भक्तं नक्तं प्रशस्यते ॥ १४७० ॥
 तत्रौषधीगणैः यच्च प्रयोज्यं तद्भिषग्वरैः ।
 शीतलं सलिलं दद्यात्सुवासकुसुमानि च ॥ १४७१ ॥
 अतितापो भवेद्भेदो घृताक्तं शीतवारिणा ।
 स्नापयेद्द्रोणिणं पश्चात्ततोऽसौ लभते सुखम् ॥ १४७२ ॥
 रसचि, र. का., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धकूर ६ मासे, शुद्धधतूरेकेबीज, मालकामनी और गुल्ल १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर रेवनचीनी अथवा सत्यानासी, सर्पविष, अफीम, बछनाग, धूर इनके ब्रवोंसे और मोर, मछली, भैंसा इनके पित्त तथा अहृषेकरसे १-१ भावना देकर मूंगबराबरगोलिया बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे त्रिदोषोत्पसन्निपात, भयङ्करज्वर, क्षय, कास, हिचकी, झीहा, यकृत, उदररोग, गलग्रह, प्रहणी, अतिसार, बवासीर, वातज, कफज और द्रव्यजोग इनसबको यह नष्टकरताहै । नारङ्गी, शर्कर, द्राक्ष, दही, केल, औटाहुआ दूध इनमेंसे औचित्यी देखकर देवे । अत्यन्त मूखलग्नेपर रात्रिमें भोजनदे । अत्यन्तगर्मी मासुमहोनेपर धीका अभ्यङ्गकर ठंडेजलकी धारादे । अच्छेबल और सुगन्धितपुशोंकीमात्रा पहिनावे ॥ ३३७ ॥

३३८ सर्वाङ्गसुन्दररसः (प्रथमः)

यह्यथभ्यत्वभवं चूर्णं त्रयोदशविभागिकम् ।
 दशहो दृढभागश्च शङ्खमसम तथा भवेत् ॥ १४७३ ॥
 त्रयोदश द्वादश च रसः स्यादमृतं प्रथमम् ।
 चिञ्चाम्पकफलत्वक्च गन्धो द्वादशभागिकः ॥ १४७४ ॥
 शृङ्गचैरद्वै भौव्यमेकविंशतिवारिकम् ।
 सर्वाङ्गसुन्दरं भाभ्ना सर्वव्याधिधिनाशनम् ॥ १४७५ ॥

अनुपानन्तु ताम्बूलं त्रिदोषे सन्निपातके ।

आद्रकं त्वनुपानं स्याद्विशिष्यान्यप्रदापयेत् ॥ १४७६ ॥
 र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—चित्रकमूल और पीपलकीछाल १३-१३ भाग, शुनाहुहागा १० मा., शङ्खमसम २ भा, शुद्धपारा १३ भा, बछनाग १२ भा., पकीझमलीकेछिलके ३ भा., शुद्धगन्धक १२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पोरगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरखकेरसे २१ भावनाएं देकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसेसाथदेनेसे त्रिदोषजनसन्निपात नष्टहोताहै । अनुपानविशेषसे तमामज्वरोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३३८ ॥

३३९ सर्वाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

रसालनागशैलानि तुत्यं गन्धरुसोमलम् ।
 सहदेवीनिभ्ययिम्बीरसैः सप्त च सप्त च ॥ १४७७ ॥
 दिनानि सम्मर्धं दृढं कृप्यां द्वान्निशयामकम् ।
 वह्निरातो मेहहरो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १४७८ ॥
 र. ना, प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, हरिताल, मैनासिल, तुल्य, गन्धक और घोमल, नागमसम सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सहदेवी, नीमकीछाल और कुंदरुकेरसोंसे ७-७ दिन मर्दनकर गुलाकर फिरसे कजलीकर ६-७ कपड़मिठी दीहुई आतशीशीशीमें बन्दकर ३२ पहरी अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तप्रमेह और ज्वरोंको नष्टकरताहै ॥ ३३९ ॥

३४० सर्वाङ्गसुन्दररसः (तृतीयः)

गन्धं रसश्च तुल्यांशौ द्वौ भागौ दृङ्गणस्य च ।
 मौक्तिकं विट्ठमं शङ्खमसम देयं समांशिकम् ॥ १४७९ ॥
 हेममसमार्द्धभागश्च सर्वं बल्ये विमर्दयेत् ।
 निम्बुद्रयेण सपिप्य पिण्डिकां कारयेत्ततः ॥ १४८० ॥
 पश्चाद्भ्रजपुटं दत्त्वा सुशीतश्च समुद्धरेत् ।
 हेममसमसमं तीक्ष्णं तीक्ष्णाईं द्रव्यं मतम् ॥ १४८१ ॥
 पकीहल्य समस्तानि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ।
 ततः पूजां प्रकुर्यात् रसस्य दिवसे शुभे ॥ १४८२ ॥
 सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येष राजयश्मनिरुन्तनः ।
 वातपित्तज्वरे घोरे सन्निपाते सुदारुणे ॥ १४८३ ॥
 अशंसु प्रहणीदोषे मेहे गुल्मे भगन्दरे ।
 निहन्ति वातजात्रोगांशुष्णिकाश्च विशेषतः ॥ १४८४ ॥
 पिप्पलीमधुसंयुक्तं घृतयुक्तमथापि वा ।
 भक्षयेत्पण्डित्वाङ्गैः सितया चाद्रिकेण वा ॥ १४८५ ॥
 र स, र च, र. छ, र. र., ध, भै र, राजयश्मनिगि ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और पारा १-१ भाग, शुहागा २ भा, मोती, प्रवाल और शङ्खमसम १-१ मा., कुवर्णमसम आषामाग लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर नीपुकेरसे १-२

दिन मर्दनकर गोलावनाय ३-४ तद् मलमलनेकपङ्के लपेट शरावसमुद्रमें बन्दकर ६-७ कपङ्गमिरीदेकर सुवर्णनेपर गजपुट-फी आंचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर सुवर्णमस्मकी-बराबर लोहमस्म और लोहते आधा शुद्धशिंगरिफमिलाकर १-२ दिन घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्तीकोमाना पीप-लमधु, पी., पानकारस, दाकर और अदरककास इनमेंसे औषिती देकर किसी एक अनुपानकेसाथ देनेसे राजयद्म, घोरवात-पित्तज्वर, भयङ्कर समिपात, बवासीर, सङ्गुहणी, प्रमेह, शुष्म, भगन्दर, वात और कफज्वरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥३४०॥

३४१ सर्वाङ्गसुन्दररसः (चतुर्थः)

अन्नगन्धकरजः पृथगच्छं

तित्तिरीफलविपाक्षयुतञ्च ।

सन्धिमर्द्यं फणिविह्वदलेषु

स्वास्तृतेष्वधिपङ्कहुलगतं ॥ १४८६ ॥

सन्धियथाय रसकल्कमधोर्द्धं तद्दलैः खरयत्रपिधानम् ।
सन्धियाय लघुबह्विकरीषे दांपयेत्युटमयाहृतमेतत् ॥
साहिविह्वदलमुस्तयुगेन प्रागिवान्वितमयातिविमर्द्यं ।
रक्तिकामितमयात्रैकवारं चिन्कोपणवर्गेः सह दद्यात् ॥

वाताग्निसादगुदजातिसुतित्रिदोष-,

नानासमज्वरहरो दधिभक्तपथ्यः ।

सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितो रसोऽय- ,

मार्गैः पुरातनभिपग्भिर्दूरितस्तु ॥१४८९॥

यो चं., वाताग्निमान्याशं सु ।

भाषा—अन्नकमस्म, शुद्ध गन्धक, जमालगोटा और बछ नाग, बहेडा १-१ तोला लेकर बारीकचूर्णकर पानकेरसे १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय पनेपानोंमें लपेटकर डोरेसे लपेटकर गेदकेमद्य बनाय ६ अहुलके गर्तमें पानोंकेबीचमें रख गर्नके-सुंहर अच्छीतरह पानोंकीतरह बिछाकर जङ्गलीकण्डोंके टुकड़ोंका बहुतबल्का पुटदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर दोनों मोषों-काचूर्ण १-१ तोलामिलाय पानकेरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिया बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक, मरिच और त्रिफलकेसाथ देनेसे वातविकार, मन्दाग्नि, बवासीर, अतिसार, त्रिदोष, नानातरहकेज्वर, इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य दहीमात देना ॥ ३४१ ॥

३४२ सर्वाङ्गसुन्दररसः (पञ्चम)

शुद्धसूताघ्नताघ्रायो हिङ्गुलं कार्पिकं समम् ।

गन्धकश्चैकभागः स्यात्सर्वमेकत्र मर्दयेत् ॥ १४९० ॥

सप्तपर्णकिंस्तुक्शीरवासायातारिचारिणा ।

विपमुष्टिसमं सर्वं पेयं तद्गोलकीकृतम् ॥ १४९१ ॥

विपचेद्वालुकफण्ड्रे क्रियामान्ते समुद्धरेत् ।

पिपुलीविपसंयुक्तो रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ।

सर्ववातविकारप्रः सर्वशूलनिघ्नदन्ः ॥ १४९२ ॥

र. सं., र. छ, भ, र. क. वातन्याशं ।

टि०—शुद्धमलकतामाय श्यादिना सर्वसुन्दरान्ना इममेव रस न्यस्तस्य रसेन्द्रव्ययुद्धे पाठान्तर म्थापिन सोऽभिहित्वर इति न विरमणीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा, अन्नक, तात्र और लोहमस्म, शुद्ध-शिंगरिफ और गन्धक १-१ भागलेकर नीलवर्णकम्बलीकर छतिवन, आक और शूअरकेदूध, अडसा और एण्डके स्वर-सोमे १-१ दिन मर्दनकर समभाग शुद्धशुचिलेकाचूर्ण मिलाकर गोलावनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर २-४ कपङ्गमिरी देकर सुख-नेपर वाङ्कान्यन्त्रमें रख दोषहरकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोने पर निकालकर १-१ भाग पीपल और शुद्धगन्धामकाचूर्ण मिला-कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानु-पानकेसाथ देनेसे समस्त वातविकार और शूलोंको यह नष्टकरताहै ॥

३४३ सर्वाङ्गसुन्दररसः (षष्ठः)

शुद्धं सूतं तथा तात्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।

रजतं स्वर्णवङ्गञ्च लोहमग्नं सनागरम् ॥ १४९३ ॥

चूर्णयेत्पञ्चलवणं देयं सर्वतु तुल्यकम् ।

गन्धकं सर्वतुल्यांशं रसेरेपां विभावयेत् ॥ १४९४ ॥

शुण्ठीजयन्तीविजयामहाराष्ट्रिकधृतजैः ।

सर्वाङ्गसुन्दरो नाम्ना रसोऽयं विष्णुनिर्मितः ॥१४९५॥

खादेदेरण्डशुण्ठीभ्यां बह्ममात्रं दिनेदिने ।

कफवातामयं हन्ति चानुपानं घदाम्यहम् ॥ १४९६ ॥

व्योषं सौवर्चलं हिङ्गु करञ्जबीजसंयुतम् ।

पिबेदुष्णाम्बुना चानु सर्वशूलनिघ्नन्तम् ॥ १४९७ ॥

र. सं., र. च, र. सु, भ, शूलाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, तात्रमस्म, मैनसिल, सोनामाखी, हरिताल, रजत, सुवर्ण, बह्म, लोह और अन्नक इनकीभस्में, सोंठ, पाषाणक, सबसमभाग, शुद्धगन्धक सबकीबराबर लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकम्बलीमें मिलाय सोंठ, जैती, भाग, मराठी और धतुरेके स्वरसोमे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ स्तीही गोलियं बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली एण्डमूलऔर सोंठकेसाथ देनेसे यह समस्त वातविकारोंको नष्टकरताहै । त्रिकटु, सचल, मुनीहींग, करञ्जबीज समभागके चूर्णकेसाथ लेकर गरमपानीपीनेसे समस्तशूल नष्टहोतै ॥३४३॥

३४४ सर्वाङ्गसुन्दररसः ७

सूतं सूतं सूतं तात्रं शिलामाक्षिकतालकम् ।

चूर्णयेत्पञ्चलवणानेतद्दाकतुल्यकम् ॥ १४९८ ॥

सूतं स्वर्णञ्च निक्षिप्य सूताद्दशमभागिकम् ।

सूततुल्यं वत्सनामं चूर्णं भावयं दिनावधि ॥ १४९९ ॥

विपशुण्ठीजयावासा विजयारकशाकिनी ।

वद्रीत्वङ्गहाराष्ट्रीद्रवै धन्तुर्जैस्तथा ॥ १५०० ॥

रुद्धा तुपुष्टे पक्त्वा समुद्धृत्य विचूर्णयेत् ।

सर्वाङ्गसुन्दरं नाम रसं शुक्लाचतुष्टयम् ॥ १५०१ ॥

मक्षयेद्वत्शुण्ठीभ्यां शूलशूलानिघ्नन्तति ।

भावयेद्भक्षयेगमांशं मुशाल्याद्रैकजै द्रवैः ॥ १५०२ ॥

अनुपानं लिङ्गद्वित्यं कफशूलप्रदान्तये ।
अनुपानं शूलहरं योजयेद्गोग्रान्तये ॥ १५०३ ॥
र. बो., नि. र., र. र., घृले ।

भाषा—पारा और ताम्रभस्म, शुद्धमंसिल, सोनामाषी और हरिताल, पांचोन्नमक पंचक समभाग, मुक्कभस्म पांचोत्तरानां और शुद्धबज्राग पारेकीपरावर मिलाय बारीकचूर्णकर बज्राग, सोड, ओडहुल, अड्डा, भांग, मरगा, बेर, मराठी, पतुटा इनसबकेसोते १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शराय-तन्मुष्टमें बन्दकर २-४ कपडूमिठी देकर सूरानेपर गुग्गुलुकी आंचदे । स्वाहाशीतलहोनेपर निवालकर रसछोड़े । इतमेंसे ४-४ रती थी और सोटकेसाथ गान्धे दान और हृत्प्लव नटहोताहै । मुताली और अदरकही भावना देकर १ माहात्केने कफशूल नटहोताहै । शूलबिदोषोंमें औचिकी देसकर अनुपान बन्ददेना ॥

३४५ सर्वाङ्गसुन्दररसः (अष्टमः)

शुद्धमिना द्रुते गन्धे चतुःपाणितलोन्मिते ।
लोहमसाप्रमैकेकैः क्षिप्त्या समयतायेत ॥ १५०४ ॥
मागधी मरिचं हिङ्गु क्षीप्यजीरकचिचकाः ।
कौंकेकै चिपं चूर्णं कृत्या सन्धे ततः क्षिपेत् ॥ १५०५ ॥
सर्वेषां पञ्चगुणितं मृतं तान्नं परिक्षिपेत् ।
आद्रकैर्मर्दयेद्वापे द्वयैररण्डजैश्च वा ॥ १५०६ ॥
दिनैर्क्षीपयेत्तच्च भाव्यं शिशुद्रव्यं द्विन्म ॥
सर्पांश्चा घामृताकन्यारिभ्युद्गुणुनर्तयैः ॥ १५०७ ॥
आद्रकस्य त्रयं भांयं दिनान्ते तत्रिरोपयेत् ।
दिने वा धातुकायन्त्रे समान्नाय चिचूर्णयेत् ॥ १५०८ ॥
जातीफलञ्च करूरं कङ्गालं मधुमिश्रितम् ।
रसस्याद्रिमिदं यान्यं मापमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ १५०९ ॥
अनुपानं पिपेक्षास्य कथं त्रिकटुसम्भयम् ।
सन्निपातहरः सोऽयं रसः सर्वाङ्गसुन्दरः ॥ १५१० ॥

र. का., र. घृ., र. बो., शरिपाने ।

भाषा—४ कपे शुद्धगन्धकीने केरकेचोयलोपर ग्लाहर लोह, पारा और अप्रभमसम १-१ कपे डालकर नीचे उतारले । इतमें पीपल, मरिच, भुनीहींग, अत्रवादन, जीरा, चिचक और शुद्ध बज्राग १-१ कपे, ताम्रभस्म ५० कपे लेकर बारीकचूर्णकर अदरक, एरण्ड, सदिजनकीछाल, सर्पांशी, गिलोय, पीईवार, आक, भंगरा, पुनर्वा और अररत्के रतोंमें १-१ भावना देकर गोलाबनाय शरायतन्मुष्टमें बन्दकर २-३ कपडूमिठी देकर सूराने-पर बालुकायन्त्रमें एकदिनी आंचिदेवे । स्वाहाशीतल होनेपर निवालकर रसछोड़े । इतमेंसे ३-३ रतीकीमात्रा जायफल, शुद्धकपूर, शीतलचीनी समभागके १ भांशे चूर्णमें मिलाय मधुक सायदेकर त्रिकटुक वाथ पिलानेसे सन्निपातरो यहनटकरताहै ॥

३४६ सर्वाङ्गसुन्दररसः (नवमः)

हेमाद्रगन्धरसद्वृणोरोप्यताम्रै-
श्वन्द्राश्रियाणरसयुग्मगुणाऽग्निधमानैः ।

जम्बीरनीररससप्तमुष्टेन पक्वं
पूर्णार्हणं सममुमीक्षिकव्यलुञ्जश्च ॥

युक्तानुपानसकलामयनाशनोऽयं
सर्वाङ्गसुन्दर इति प्रथितां रसेदः ॥ १५११ ॥
रगायनं., र. बो., प्रमेहाधिकारो ।

भाषा—मुक्कभस्म १ भाग, अप्रभमसम ३ भाग, शुद्ध-गन्धक ५ भाग, पारा ६ भाग, मुद्गाग २ भाग, रजत ३ भाग, ताम्रभस्म ४ भाग लेकर जंभीरीकेरससे मर्दनकर गोलाबनाय शरायतन्मुष्टमें बन्दकर गुग्गुलुकी आंचिदेवे । स्वाहाशीतलहोनेपर निवालकर जंभीरीकेरसमें पूर्वकर मर्दनकर आंचिदेवे । एमें ७ भांशे देनेकेबाद निवालकर रसछोड़े । इतमेंसे २-३ रतीकी मात्रा मोतीकीभस्म और मरिचकाचूर्ण समभाग मिलाकर रोगोचिनानुपानकेसाथ लेनेसे राजयस्मादिपित्तस्तोषणोको यह नटकरताहै ॥ ३४५ ॥

३४७ सर्वाङ्गसुन्दररसः (दशमः)

शुद्धं रतं चिपं गन्धं शुद्धं तालकमाक्षिकम् ।
पतानि समभागानि खल्वमच्ये चिनिःक्षिपेत् ॥ १५१२ ॥
हंसपादीरसेनेय द्वियामं मर्दयेत् षट्म ॥
काचचूर्णां नियेद्याथ द्यातुकाभिः प्रपूरयेत् ॥ १५१३ ॥
स्वाहाशीतलमुद्धृत्य विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ।
चिपिकान्निहन्त्यागु सर्वैकसं नियच्छति ॥ १५१४ ॥
सर्वाङ्गसुन्दरो ह्येव रोगराजनिन्तनः ।
दशभि मरिचै युक्तां पण्यां पिद्वाऽम्भसा पिबेत् ॥
नाभिज्ञानाति कासञ्च निद्रासुप्तकरं परम् ।
मण्डूरसंयुतं लीढं कफघाताश्रिमान्यनुत् ॥ १५१६ ॥
व. रा., व. चि., चिपिच्यसे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्राग, गन्धक, हरिताल और सोना-माषी समभाग लेकर नीलगणकमलीकर हंसराजकेरससे दोपहर मर्दनकर गुग्गुलु ६-७ कपडूमिठी दीहुई आतशीशीशीमें जल-कर वातुशयन्त्रमें रस दोपहरकी आंचिदेवे । स्वाहाशीतलहोनेपर निवालकर रसछोड़े । इतमेंसे २-२ रती उचितानुपानकेसाथ-लेकर १० मरिच और १ हुरैको पानीमें पीसकर ऊपरसे पीनेसे शुष्कघातको यह निरुत्तरताहै । मण्डूरकेसाथलेनेसे कफ, वायु और मन्दाभिको नटकरताहै ॥ ३४७ ॥

३४८ सर्वाङ्गसुन्दरीवटी

अष्टभागमितं शुद्धं दन्तीर्वाजं कणोपणम् ।
पारदं गन्धकं शुद्धं वरदं टङ्गुणं चिपम् ॥ १५१७ ॥
निवांते रदिराङ्गरिच्युर्णोदिकसुमर्दितम् ।
स्थल्पपिष्टं त्रिकटुकं फलप्रितयचिचक्रम् ॥ १५१८ ॥
प्रत्येकं मागमेकैकं सूक्ष्मचूर्णं प्रकल्पयेत् ।
पलायुतं भृङ्गराजरसेपारदकजैरपि ॥ १५१९ ॥
भाययेत्सप्तशः शुष्कं शुष्कञ्च सायधानतः ।
कीलमजसमाः कार्याः कलायाकृतवस्तथा ॥ १५२० ॥

चणकाकृतयो वटयो देया वलविचारतः ।
 उष्णतोयानुपानञ्च कर्तव्यं कुड्यार्द्धतः ॥ १५२१ ॥
 जाते चिरेके संशुद्धे पथ्यं देयं हितञ्च यत् ।
 पोडादिशान्तेयिन्यं वटी सेव्या यथोचिता ॥१५२२॥
 पलमुष्णजलं पेयमामं गञ्जति सत्त्वरम् ।
 उद्रराणि विनश्यन्ति सर्वं निर्याति क्लिब्यपम् ॥१५२३॥
 प्रथमे सप्तके तक्रमकं लघु सुशीतलम् ।
 द्वितीये दधिभक्तञ्च तृतीये सुलभोजनम् ॥ १५२४ ॥
 यहिदं धातुकृसेव्यं पथ्यवत्समिजानता ।
 जयेत्पोडादिकं सर्वं वटी सर्वाङ्गसुन्दरी ॥ १५२५ ॥
 र. र. कौ., उद्ररोगे ।

भाषा—शुद्ध जमालगोटा, पारा, गन्धक, शिंगरिफ, मुहागा
 और बछनाग, पीपल, मरिच येसव ८-८ भागलेकर नीलवर्ण
 कजलीकर निर्वातस्थानमें खैरेकेजालेपर तप्तयत्नमें चूनेके-
 पानीसे एकपहर मदनकर त्रिकटु, त्रिफला और चित्रकमूलकी-
 छाल १-१ भागका कषड्छन्नचूर्ण डालकर भंगरा और अदरक-
 केरसकी सुखासुखाकर ७-७ भागनाएँ देवे और बेरकीमज्जा,
 मटर तथा चनेप्रमाण गोलियैवनाय छायाशुष्कर रसजोड़े ।
 इनमेंसे बलानलका विचारकर उचितमात्रामें देकर दो पल गरम,
 पानी पिलानेसे तमाममल खारिजहोनेकेबाद अवस्थाका विचार-
 कर उचितपथ्य देनेसे शरीरका मल विशुद्धहोजाताहै । भयङ्कर
 उद्ररोगोंकी निवृत्तिकेलिये एकपल गरमपानीकेसाथ प्रतिदिन
 १-१ गोली लेनीचाहिये । प्रथमसप्तकमें छाछभात, दूसरेमें
 दहीभात और तीसरेमें हलकाभोजन देवे । इतनेबाद अमि और
 धातुओंको बढ़ानेवाली चीजोंका सेवनकरनाउचितहै ॥ ३४८ ॥

३४९ सर्वापस्मारहररसः

स्नातोऽञ्जनञ्च सगरं सूतं सुष्टिब्रयान्यितम् ।
 पक्वीकृत्य तु सम्मथं दशार्द्रं सज्जुर्कं विपम् ॥ १५२६ ॥
 देवशालीरसे प्राहो पाचयाममथं भवेत् ।
 कृत्वा तु गोलकं शुष्कं पाचयेद्गन्धमध्यतः ॥ १५२७ ॥
 ततस्तु घटिकाः कार्या गुञ्जात्रयप्रमाणतः ।
 भक्षिता क्रमयोगेन सर्वापस्मारनाशिनी ॥ १५२८ ॥
 रसेन्द्रं., अपस्मारे ।

भाषा—सुरमेकीभसम, शुद्धबछनाग, पारा, हरिताल, गन्धक,
 और मैन्सिल १-१ भाग, सज्जुक्विय १० वा भाग लेकर
 सचकी नीलवर्णकजलीकर बन्दालकेरससे ३ पहर मदनकर गोला-
 यनाय सुखाकर मलमलकेकषपडेमें लपेट पोष्टीवनाय पोष्टी
 हबनेलायक गन्धकको गलाकर उसमें पोष्टीको रखदे और
 मन्दमन्द इतनी आंचदे कि घीरे २ गन्धक जलजाय । गन्धक-
 का थोड़ाहिस्सा बाकीरहनेपर नीचे उतारकर स्वाङ्गशीतल-
 होनेपर ऊपरका गन्धक खरचदे और दवाको निकालकर बन्दाल
 केरससे एकदिन घोटकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर
 रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली बन्दालकेरसकेसाथ देवे और

धीरेधीरे औचितो देकर गोलकीमात्रा बढ़ाकर ३ गोलियों
 तक देनेसे अपस्मार नष्टहोताहै ॥ ३४९ ॥

३५० सर्वारोग्यवटी

रसं पलमितं तुल्यशुद्धनागेन संयुतम् ।
 द्रावयित्वाऽऽयसे पात्रे सतैले निक्षिपेत्क्षितौ ॥१५२९॥
 ततो घृतं विनिक्षिप्य गन्धकं तद्विलोड्य च ।
 पुनरप्यायसे पात्रे क्षिप्वा प्रद्रव्य निक्षिपेत् ॥१५३०॥
 तत्तुल्यं जारयेत्तालं पुनः सञ्चूर्ण्य पूर्ववत् ।
 तत्तुल्यं जारयेत्सम्यक्पुनः परिशोधिताम् ॥१५३१॥
 तत्तुल्यं चूर्णिते तस्मिन्क्षिपेत्प्रागं निरुत्यकम् ।
 तावदेव मृतं ताप्यं सर्वमन्यच्च तत्समम् ॥ १५३२ ॥
 तीक्ष्णायः सपरे व्योम हित्कूलञ्च शिलाजतु ।
 पृथक्प्रेममाणेन पट्कोलं पट्पला मिश्री ॥ १५३३ ॥
 दीप्यकञ्च चतुर्जातं रेणुकोशीरवेष्टकम् ।
 तुम्बुर मूर्च्छिका राक्षा कङ्कोलं चोरपुष्पकम् ॥१५३४॥
 कण्टकारी किरातञ्च वीजान्युन्मत्तकस्य च ।
 पलद्वयञ्च लाङ्गल्याः सर्वेषां द्वादशांशकम् ॥१५३५॥
 यत्सनामं सितम्भूरि विनिक्षिप्य ततः परम् ।
 त्रिफलानां दशाङ्गीणां कपायेण ततः परम् ॥१५३६॥
 जयन्त्याद्रिकयासानां मार्कवस्वरसैस्तथा ।
 भावयित्वा च कर्तव्या घटिकाश्चणकोन्मिताः १५३७
 एकैका घटिका सेव्या कुर्यात्तीव्रतरां ध्रुवाम् ।
 विसृत्वां सर्वतो हिक्वां सेव्यं स्वादु च शीतलम् १५३८
 सामाञ्च प्रहणीं सदाङ्गुतुर्न शोपोत्कटं पाण्डुता-
 मातिं वातरूपत्रिदोषजनितां शूलञ्च शुल्गामयम् ।
 वाताभ्रान् विलम्बिकाञ्च कसनभ्यासाशाशां विद्रधिं,
 सर्वारोग्यवटी क्षणाद्विजयते रोगास्तथायानापि ॥

र. सु, र. को., र. र. स, र. र. कौ., ग्रहण्यधिकारे । र. र.
 कौ. व्योम निष्कासितं तत्प्रमादादेव ।

भाषा—एकपल शुद्ध नागको कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा
 तेल डालकर १ पल शुद्ध पारा मिलाकर जमीनपर ढालदे । ठंडा-
 होनेपर फिर कड़ाहीमें गलाकर थोड़ा घी और १ पल गन्धक
 डालकर जलावे । गन्धक जल जानेपर पूर्ववत् जमीनपर डालकर
 ठंडाकरे । फिर गलाकर १ पल हरितालका चूर्ण थोड़ा २ डाल-
 कर जलावे इसकेबाद १ पल मैन्सिलको जलाकर १-१ पल
 निरुत्य नाग और सोनामाती डालकर उतारले । फिर दोह और
 अप्रक्रमसम, शुद्धखपरिया, शिंगरिफ और शिलाजीत १-१ कर्प,
 पट्कोल ६ कर्प, सौंफ ६ पल, अजवाइन, चातुर्जात, रेणुका, सस,
 विडङ्ग, तुम्बुल, भारती, राक्षा, शीतलचीनी, खरजवाइन, मर-
 कटैया, चिरायता, शुद्धपूरेकेहीज १-१ पल, शुद्धकरियाही
 २ पल, सपका १ वाहिस्ता शुद्ध सकेदबछनाग लेकर वारीकर्ण-
 कर इन्हे मिलाय १-२ पहर मदनकर त्रिफला, दसमूल, जैती,
 अदरक, अदुसा, भंगरा इनप्रत्येकके यथासम्भवस्वरस अथवा

बाधोमे १-१ भावना देकर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखोये । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे देना, हिचकी, सामग्रहणी, अग्नौकादृष्टना बड़ाहृत्पात्र, पाण्डु, त्रिदोषकी पीडा, शुद्ध, गुल्म, वातरोग, आध्मान, विलम्बिहा, सांगी, श्वास, बसासीर, विरधि इनसबको यह नष्टकरती है । और अलन्तपुत्रको बड़ाती है ॥ ३५० ॥

३५१ सर्वेश्वरचूर्णम्

त्रिकटुत्रिफलाचूर्णं चूर्णं शम्भुकजन्तुजम् ।
यवक्षारं तथा रक्तकटिनी कामरूपिणी ॥ १५४० ॥
शक्चूर्णं समधुक्तं क्षारं दावद्वलोरुद्रवम् ।
कलन्त्रीस्वरसेः शुद्धं मण्डूरं द्विगुणं ततः ॥ १५४१ ॥
पर्शोत्थं प्रयत्नेन चूर्णं सर्वेश्वराह्वयम् ।
प्राङ्प्रच्यान्तकमेणैर भोजनस्य प्रयोजयेत् ॥ १५४२ ॥
माथया चानुपानञ्च दद्याद्द्रजलं पयः ।
गन्धमर्ज्जुतं शुद्धा शूलादन्तरुसन्निभत् ॥ १५४३ ॥
चिरजानसयतो धोमान्दुस्तरान्मुच्यते नरः ।
पक्तिशूलाचर्षयाप्रद्रवशूलाद्य सर्वशः ॥ १५४४ ॥
मुच्यते मानरो यादृग्निष्णोराराधने भवात् ।
शुद्धगुल्मोदराशुद्धि मन्दाश्लित्वमरोचकम् ॥ १५४५ ॥
कासं पञ्चविधं श्वासमूत्रस्तम्भामवातकान् ।
हत्यादेव प्रयोगोऽयमश्विभ्यां निर्मितः पुरा ॥ १५४६ ॥
र. र., शूलाधिकारे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, घोंघेकीभम्म, यवक्षार, शुद्ध लालगुग्गु, अमगन्ध, इन्द्रजय, मुलहठी और चित्रकके पत्तोंकी रास १-१ माग, नालीनेरखते शुद्धकर मसमक्रियाहुआ मण्डूर समे दूना डालकर १-२ पहर घोटकर रखोये । इनमेंसे भोजनकेपहिले, मध्य तथा अन्तमें १-१ माशाकीमात्रा अदररके सम अथवा मायके अर्शोद दूधनेयाय लेनेसे बहुतदिनहा मृत्युरूपशूल, पचिशूल, अग्रद्रवशूल, शीह, गुल्म, उदररोग, मन्दाग्नि, अग्नि, ५ प्रकारका कास और श्वास, कृहस्तम्भ, आमवात इनमनको यह नष्टकरती है ॥ ३५१ ॥

३५२ सर्वेश्वररसः (प्रथमः)

चतुर्गद्याणमानानि शुद्धहेमभवानि च ।
पत्राणि कारयेत्सम्यग्विध्यन्ते कण्टके रंधा ॥ १५४७ ॥
जलवत्कमलान्येव स्वच्छान्येकाङ्गुलानि च ।
शुद्धसूतस्य गद्याणा अष्टौ तानि दलानि च ॥ १५४८ ॥
मिश्रं द्वादशगद्याणं खल्वे पिष्ट्वा दिनत्रयम् ।
प्रस्थिं घल्लेण घघ्नीयात्क्षित्या तां हेमपिष्टिकाम् १५४९ ॥
मृन्मध्यां सूषिकायान्तु तद्द्वार्यमनियत्नतः ।
वालुकापुष्पकुहरे यत्रे मृपां विनिःक्षिपेत् ॥ १५५० ॥
तच्च चूर्णं समारोप्य मृद्धमिं ज्वालयेदधः ।
शुद्धगन्धकगद्याणांश्चिदातिं तत्र निक्षिपेत् ॥ १५५१ ॥

गन्धके मलितेऽतीव जाते तैलस्य सन्निभे ।
प्रक्षिपेदेमेजां पिष्टिं प्रस्थिवद्वाञ्च यत्नतः ॥ १५५२ ॥
क्षिपेद्गन्धकगद्याणांमुहुर्दग्धे च गन्धके ।
एवं दिनाष्टकं स्वेद्या पिष्टी यत्नेन हेमजा ॥ १५५३ ॥
स्वाङ्गशीतां क्षिपेत्खल्वे दग्धगन्धकरुसंयुताम् ।
भृङ्गराजरसेनैकं धासरं मर्दयेद्य ताम् ॥ १५५४ ॥
काञ्चनारतरो मूलत्वचा धीखण्डमर्दिताम् ।
यज्ञीशरेण चैकाहमर्कदुग्धेन धासरम् ॥ १५५५ ॥
एवञ्चतुर्दिनं पिष्ट्वा कार्यां वतुलगोलरुः ।
शारावसम्पुटे क्षिन्वा चतुर्भिश्चाणकैः पुटः ॥ १५५६ ॥
दहाते गन्धको याद्यत्तावदेयो मुहुर्मुहुः ।
मृतं श्वेताम्रजं चूर्णं चूर्णं स्थान्मृतताप्रजम् ॥ १५५७ ॥
चूर्णं पीतरुपर्दीनां शङ्खचूर्णं तुरीयरुम् ।
गद्याणपर्यं प्रत्येकं क्षिपेत्पिष्टे च हेमजे ॥ १५५८ ॥
खल्वे पिष्ट्वा कृतं पिष्टं यज्ञीशरेण धासरम् ।
एकाहमर्कदुग्धेन पिष्ट्वा चैकात्मतां गतम् ॥ १५५९ ॥
गोलं कृत्वा विनिक्षिप्य शरावे सम्पुटेद्य ताम् ।
घल्लसूत्रिकया लिप्त्वा देयो गतान्तरं पुटः ॥ १५६० ॥
स्वाङ्गशीतं नयेद्रोलं खल्वे सञ्चर्णयेद् दृढम् ।
कृपिकायां विनिक्षेप्यं जातः सर्वेश्वरो रसः ॥ १५६१ ॥
साज्यं घल्लमितं प्राहां द्वारिश्चान्मरिच्यैः समम् ।
अष्टादशमहेषु गुल्मयो वांतपित्तयोः ॥ १५६२ ॥
घटकोष्ठेषु मन्दाग्नौ देयः शूलादिरोगिषु ।
कामहीने घल्लशीणे श्लेष्मवातादिरोगिषु ॥ १५६३ ॥
मरिचाज्यैरजीर्णेषु ज्वरेपूष्णीदकेन च ।
तैलक्षारादि चर्ष्ये हि भोजनं मधुरं भवेत् ॥ १५६४ ॥
कामाद्रोगा विलीयन्ते मासैकानन्तरं ध्रुवम् ।
अशांसि नाशमायान्ति साध्यासाध्यानि सत्त्वरम् ॥
शुद्धशीला निवर्तन्ते वाहुशालगुडान्विता ।
दाहणा गुदपीडा च निवर्तताऽस्य सेवनात् ॥ १५६६ ॥

रत्वि, चर्षरोगे ।

भाषा—शुद्धसोनेकेबर्क २ तोले, शुद्धपारा ४ तोलेको रखलें १-१ बर्क डालकर घोट । बर्कमिलजानेपर ३ दिनतक घोटकर गोली बनाय बरमें पोहोली बांधकर रखलेवे । फिर बालुकायबमें गोस्तनाकारमृपाको रख चूर्णके चढ़ाय मन्दाग्नि जलावे । मृपा गरमहोनेपर १० तोले शुद्धगन्धककाचूर्ण मृपामें रखसे जब गलकर तैलनीतरह हुतहोजाय तब हेमपिष्टीकी पीहोली को उसमें डुवावे । गन्धकके जलजानेपर उतनाही गन्धक और डालदेवे । इसतरह ८ दिनतक गन्धकमें उस पिष्टीका स्वेदनकरे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर मृपामेंसे जलेहुएगन्धककेसाथ पोहोलीको निकाल धरलकर भंगेरादस, चन्दनकेदबमें पिस्ताहुआ कचनारकीजइकीछालना कल्क, धूसर और आककादूध इनप्रत्येकमें १-१ दिन नर्दनकर गोलबनाय शरावसम्पुटमें

बन्दकर २-३ कपइमिठीदेकर सूखनेपर ४ जहलीबण्डोंकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् द्वौमं मर्दनकर आचदे । इसतरह जबतक तमामगन्धक न जलजाय तबतक करता रहे । फिर सफेद अन्नक, ताम्र, पीलीकौड़ी और शङ्ख इनकी भस्में ३-३ तोले मिलाय थूकर और आककेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोलायनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर साधारणपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर शीशीमें रख छोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती ३२ कालीमिर्च और धीके साथ देनेसे १८ प्रकारकेप्रमेह, वात और पित्तजगुल्म, बद्धकोष्ठता मन्दाग्नि, शूल, पण्डव, वृषता, स्फ और वातिकरोग, अजीर्ण इनसबको यह नष्टकरताहै । गरमजलकेसाथदेनेसे ज्वरोंको नष्ट करताहै । तैल और धार छोड़कर मधुनोजनकर । एकमहीने वैबाद क्रमशः रोम नष्टहोजातेहैं । बाहुशालगुडकेसाथदेनेसे साम्बअपवाअसाध्य बवासीर और गुदकौपीडा निश्चत होजातीहै ॥

३५३ सर्वेश्वररसः (द्वितीयः)

प्रयोंक्तस्य रसेन्द्रस्य तोलकांश्चतुरः क्षिपेत् ।
अन्नं मनःशिलां तालं गन्धकं कृष्णलोहकम् ॥ १५६७ ॥
शुल्वपत्रं कांस्थभस्म प्रत्येकं सूतमात्रकम् ।
सिन्धुञ्जं फाचलवर्णं सौवर्चलविडोद्भवम् ॥ १५६८ ॥
सामुद्रमिति सतार्द्रमेतत्प्रत्येकमाहरेत् ।
अष्टौ बह्वान् सुवर्णस्य रौप्यं तावद्विधोपयेत् ॥ १५६९ ॥
सूतपिष्टी ततः कार्या स्वर्णरौप्योद्भवा ततः ।
पिङ्ग प्रलेपयेच्छुल्वपत्राण्यमलेन बुद्धिमान् ॥ १५७० ॥
शिष्टानि सर्वद्रव्याणि कल्कीकृत्याऽथ चूर्णयेत् ।
दृढं भाण्डं समादाय तन्मध्ये निक्षिपेद्बुधः ॥ १५७१ ॥
द्रव्यचूर्णं तदुपरि शुल्वपत्राणि फानिचिन्त ।
दद्यादुपरि चूर्णन्तु ततः पत्राणि तद्रजः ॥ १५७२ ॥
पवं क्षिप्वा ततो दद्यान्मुकाचूर्णन्तु कर्षकम् ।
प्रवालचूर्णं कर्षं स्यादुपरिष्टातिपधाय वै ॥ १५७३ ॥
उदीच्यवारुणीनीरं दुग्धनीरसमेव वा ।
दत्त्वा सम्पुटेद्ग्राण्डं दृढं गन्धि विलेपयेत् ॥ १५७४ ॥
विशोष्य सम्पुटं दद्यात्पुटं सजसमाह्वयम् ।
आरण्यच्छाणके दंघाद्वाभ्यै नैव पुटेद्रसम् ॥ १५७५ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य सञ्चर्यं स्थापयेद्रसम् ।
रसेश्वरञ्च सम्पुज्य योगिनीगणभैरवान् ॥ १५७६ ॥
रसेश्वरः प्रदातव्यो ज्वरिताय नवज्वरे ।
यह्नुमानेनानुपानं दद्यादाद्रकञ्जं रसम् ॥ १५७७ ॥
घान्तिश्चेत्सम्प्रजायेत जीवत्येव न संशयः ।
न चेद्घान्ति भवेत्सर्हि त्रियेतैव ज्वरार्दितः ॥ १५७८ ॥
पच्यप्रयोगः प्रागुक्तः कर्तव्यो भिषजा सदा ।
अयं सर्वेश्वरः नाम रसो ज्वरनिवहणः ॥ १५७९ ॥
दृष्टप्रभावः सृष्टोऽत्र लोकोपकृतिहेतवः ।
देवीशास्त्रानुसारेण विविच्य प्रतिपादितः ॥ १५८० ॥
रसालं, ज्वराधिकारो ।

भाषा—ऋद्धपातनादिस्कारोंसे शुद्धकियाहुआ पारा, मैत सिल, हरिताल और गन्धक, अन्नक, फोलाद और कास्थभस्म, षण्टकवेधी तावेकेपत्र ४-४ तोले, सैन्धव, वाचनमक, सञ्जल, नवसादर और समुद्रनमक २-२ तोले, सुवर्ण और चादीकेवर्क ३-३ मासो लेकर पारमें बर्को को मिलाय तावेके पत्रोंको डालकर नीचूकेरसमें घोटकर पारेको पत्रोंपर चढादे । बचेहुए द्रव्योंको नीचूके रससे मर्दनकर सुपाकर चूर्णबनावे फिर एकशरावमें घोडासा चूर्ण विद्याकर तावेकेपत्रोंकी तह जमाय ऊपर चूर्णको छिड़कदे । इसतरह समस्त पत्र और चूर्णकी तह जमाकर १-१ कर्ष मोती और प्रवालकी पिठी क्रमशः विद्याकर चमारदूधो अथवा साधा रण्दूधीकेरससे तरकरके शरावसम्पुटमें बन्दकर बज्रमिठीसे सन्धि बन्दकर २-४ कपइमिठी समस्तपर चढाय सुलाकर जहली-कण्डोंकी गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर योगिनीगण आर भैरवोंका पूजनकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती अदरककेरसकेसाथ ज्वरमें देनेसे यदि बमनहोजाय तो वह अवश्य बचेगा अन्यथा सदायहै । घान्तिहोनेपर अत्यन्त मूक्षसे प्रस्त हो तो मूषकायुपवर्गीरह हल्का भोजन देवे ॥ ३५३ ॥

३५४ सर्वेश्वररसः (तृतीयः)

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रसं परमदुर्लभम् ।
नाम्ना सर्वेश्वरं दिव्यं सर्वरोगकुलान्तकम् ॥ १५८१ ॥
पलेकं तालसत्त्वञ्च नागसत्त्व तथैव च ।
व्योमद्रुतिं पलद्वन्दाद्विपलां माक्षिकद्रुतिम् ॥ १५८२ ॥
सर्वतुल्यं सृत्तं सूतं गन्धकञ्चैव तत्समम् ।
द्वादशांशञ्च बज्रञ्च तावन्मानञ्च मौक्तिकम् ॥ १५८३ ॥
हेमताश्च पद्मानं प्रवालं हेमतत्समम् ।
कान्तलोहं समं योज्यं विमला मणिसत्तकम् ॥ १५८४ ॥
कान्तपापानदिग्भागं ताम्रमष्टमभागकम् ।
खल्वमथै विनिक्षिप्य मदेयतलुरसुन्दरि ॥ १५८५ ॥
गिरिजाकालिकाशुष्कीक्षीरकञ्चक्रियोगतः ।
सप्तधान्यौषधै दिव्यै डमस्वयन्त्रगं पचेत् ॥ १५८६ ॥
अर्द्धार्द्धं लवणं क्षिप्त्वा शरावदृढसम्पुटे ।
यामद्वात्रिंशत्कञ्चैव दातव्यञ्च हठानलः ॥ १५८७ ॥
स्वाङ्गशीतं समुद्गत्य पूजयेद्गणयोगिनीः ।
शुद्धामेकां रसस्याऽस्य त्रिगुञ्जं व्योममाक्षिकम् १५८८ ॥
महिषाज्यद्विकर्षेण भक्षयेत्सर्वकुष्ठान्तु ।
प्रमेहे घातरोगेषु पाण्डुकासहलीमके ॥ १५८९ ॥
आमघाते हातीसारं ब्रह्मण्यर्शभागन्दरं ।
शोफमन्दाग्र्यजीर्णं रोगराजनिवृत्तनम् ॥ १५९० ॥
शुल्मप्लीहमहाशूलमशोः क्षुद्राञ्च नाशयेत् ।
धर्लापित्तनिमुक्तं सेवितः स ज्वरं हरेत् ॥ १५९१ ॥
त्रयोद्दान्साक्षिपाताञ्ज्वरमदधिषं हरेत् ।
घन्ध्याघान्सकलाद्रोगोघ्नाशयेन्नान संशयः ॥ १५९२ ॥
रससागर, कुटे ।

भाषा—दूरिताल और नागमात्र १-१ पल, अग्रक और माक्षिकमुक्ति २-२ पत्र, पादभस्म और शुद्धगन्धक सबकीबराबर, हीरा और मोतीकीभस्म सबसे १० बां भाग, गुग्गुलु, रजत, प्रवाल ६-६ भाग, कान्तलोहभस्म सबकीबराबर, रजत-माक्षिक और माणिक्यभस्म ७-७ भाग, कान्तापाषाण १० भाग, ताम्रभस्म २ भाग लेकर सबकी नीलवर्णकबलीकर कोयल, कालादाना, छोटी हाथीशुण्डी, क्षीरकन्दुपी सप्तधान्य इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्षारोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला-बनाय इन्हींद्वारा १-१ दिन स्वेदनकर चतुर्धा ताम्रकालकर गोलाबनाय धारावममुद्रमें बन्दकर ६-७ काहमिठी देकर सुसनेपर ३२ पहरकी गरजपुटकी कड़ीभांचे । स्वाङ्गशीतल-होनेपर निहालकर योगिनीगणोंका पूजनकर रसजोड़े । इसमेंसे १ रत्ती लेकर ३ रत्ती गुग्गुमाक्षिक और २ कर्ष भेषका घी मिलाकर प्रतिदिन खानेसे समस्तपुत्र, प्रमेह, वातरोग, पाण्डु, काग, हलोनक, आमवात, अतिमार, प्रक्षी, अण, भगन्दर, शोथ, मन्दासि, अजीर्ण, रात्रयक्ष्म, गुल्म, ग्रीहा, महाशूल, शुद्धिहा, १३ प्रकारके सभिपात और ८ प्रकारके ज्वर इनमयकी यह नष्टकरताहै । निम्नतरसेजनेसे बलीप्लिवादिकोंको दूरकर पुरय और त्रियोंके बन्धत्वको दूरकरताहै ॥ ३५४ ॥

३५५ सर्वेश्वररसः (चतुर्थः)

सहदेवीरसे मर्चां दूरदारुप्रपारदः ।
 अहिकेनकभृङ्गाभ्यां शिवनेत्ररसेन च ॥ १५९३ ॥
 गोभीविपाभ्यां प्रत्येकं त्र्यहं तच्च क्षिपेतुनः ।
 कुक्कुटानुषं पुन नीत्वा सम्पद्य मासत्रयं क्षिपेत् ॥
 अकंक्षीरेण सम्मर्द्य त्रियामं शोषयेत्पुनः ।
 दिनेकं डमरूयन्ने यदि दद्यात्पुनश्च तत् ॥ १५९५ ॥
 शीतं शृङ्गीत्वा रसके समे च गलिते पुनः ।
 पाययित्वा च मृवांया रसं सम्मर्दयेत्पुनः ॥ १५९६ ॥
 पक्विशतिवारांश्च शृङ्गीयात्पञ्चभागिकम् ।
 वङ्गं नागञ्च सारञ्च माक्षिकं सोमजं मलम् ॥ १६९७ ॥
 तालसत्त्वं शिलासत्त्वं प्रत्येकञ्च तदर्धकम् ।
 ताप्रं सार्धपलं गन्धं शृङ्गीयाच्च चतुःपलम् ॥ १६९८ ॥
 तन्सर्वं मर्दयेत्त्रिखिरकंक्षीरेण धा पुनः ।
 धृतैतैलेन च विपं फेनं सार्धपलद्वयम् ॥ १६९९ ॥
 मूर्वारसेन सम्मर्द्य रसेरैतेः पुनस्तथा ।
 रविधृतैजयास्तुग्भिः सप्ताहं रघुतैलतः ॥ १६०० ॥
 काचकृप्यां विनिक्षिप्य शुष्कं सम्मुद्रय यत्नतः ।
 गतं छागत्रिंशो पूर्णं पात्रमध्ये च कूपिकाम् ॥ १६०१ ॥
 संस्थाप्यार्थांश्च प्रद्याच्च यामद्वादशकं तथा ।
 शृङ्गीयाच्छीतलं तच्च नीलनीरुदसधिमम् ॥ १६०२ ॥
 ष्वं सर्वेश्वरो नाम्ना रसो भवति दुर्लभः ।
 दत्तस्तण्डुलमात्रस्तु सर्वरोगहरः परः ॥ १६०३ ॥
 क्षयं क्षतं श्वासकासी प्रमेहाग्निशतिं तथा ।

प्रहणीमितिसारांश्च मृषकृच्छ्रान्नि चादमरीः ॥
 इत्यादिरोगाक्षित्वा तु भवेद्भूष्यो रसायनः ॥ १६०४ ॥
 र. का., राजयक्ष्मणि ।
 टि०—अत्रागतधान्यां मारुतानि विक्षिप्य विद्वितानि सन्नि तान्य
 शोषितरीत्या प्रत्येनयानि ।

अथ प्रक्षेप्यरसवभारणम्
 अथार्थिस्तु रसे यानि रसकारीति तानि तु ।
 मारुतानि दि तानि स्य कवयामि विधिं तथा ॥
 शिरीषपत्रके क्षिप्वा रमकं गलितं रसे ।
 कार्मेयैरेनपत्राशतमुपशील्य पुन ॥
 मधुपाकाशरुन्दाश्च रमकं सार्धमुष्णिकम् ।
 सिद्धा तैल च पत्राणि क्षिप्य च विशेषयेत् ॥
 मृत्पात्रे तानि संस्थाप्य मान्यपाशाशुभ्रकम् ।
 शूलेकराभं लिप्त्वा शोषयित्वा धमेन्द्रशम् ॥
 सदिराहारो वास्वय कुर्वांस्तु विधिम् ।
 सर्वं मपरके सिद्धा भोजयेत्पुन पुन ॥
 पुत्रदुष्ट वाप तदिहां गार्धयेच्च ततो दुनम् ।
 रमकं तद्भवेदत्र नाम्ना सर्वेश्वरार्थकम् ॥

अथ प्रक्षेप्यनागमारणम्
 शुद्धनागस्य पत्राणि गलितानि शिपेदिह ।
 शिरीषदन्तिजसे द्वाशाम्बुजसे पुन ॥
 तल्पयेरीनपत्राशरुत्वि प्रक्षिपेदिति ।
 पन्थावाहपापान् मृशमपरीह्य पुन ॥
 यशदीपिनिम्बदूरनिशागिभिल्लनारान्तरा ।
 धृत्वा विमुद्रय शूलेकरांशुः शोषिन भृशम् ॥
 सरामौ च धमेयामोडश नितरां निषक् ।
 निगामेव हि ह्ये नाग मर्वेश्वरे क्षिपेत् ॥

अथ प्रक्षेप्यवङ्गमारणम्
 शुद्धं वङ्गं तु गलितं वारुगेरोनर्विशतिम् ।
 शिपेयकज्ञे क्षीरे रसे मरुकत्स्य च ॥
 निम्बूरुमिश्रिते क्षिप्त्वा वारुगिरिस्तथैव च ।
 शृङ्गीकाया रसे तद्वत्पत्वा तत्त्वा पुन शिपेत् ॥
 शुक्तिचूर्णेन सम्मिश्य विपलवैरुद्रये ।
 तद्विशिष्य निक्षिप्य वह्निं क्षान्तिरायामकम् ॥
 दत्त्वा च रचितं कङ्कृमिश्रितं रेषित पुन ॥
 किरियेत भोजयित्वा मारुतेल्लिखितकम् ॥
 शूलेर्षुर्दिल्लितं त दाहयेत्त्वदिराग्निना ।
 यामद्वादशकं गतं वङ्गं सर्वेश्वरे क्षिपेत् ॥

अथ प्रक्षेप्यलोहमारणम्
 अथ शुद्ध तीक्ष्णलोहं तप्तं तप्तं पुन शिपेत् ।
 दन्त्यामेरीनपत्राशान्मुवांक्षीरेण लेपितम् ॥
 तप्तं तप्तं सोमवतीरसैकोनर्विशति ।
 तालसत्त्वैरुद्रकैल्लिखितं पत्रीकृतं पुन ॥
 मृषामये गन्धकेन टङ्गुणेन च तापयेत् ।
 शङ्खद्रावे क्षिपेदमिषणं तच्च पुन-पुन ॥
 त्रिधार पत्रलवणं नवसारुकीरेण च ।
 ताल सोममल तौरीनिमुद्रावेण मर्दयेत् ।
 निक्षिप्य वास्वणीयन्नाच्छङ्खद्रावेषु पूर्ववत् ॥
 अथ तद्रुत्तिलं शुष्कं मृषाया सदिराजसिना ।
 विनाम ध्यापितं तत्र पादाश पाद शिपेत् ॥

शीतमेकोनपञ्चासद्वत्सूरजरसेन च ॥
मर्दयित्वा भवेत्सिद्ध लोह सर्वेश्वराद्यैः ।

अथ प्रक्षेपमाक्षिकमारणम्

अथ तप्त माक्षिकन्तु क्राञ्जिके प्रक्षिपेद्बुध ।
लिप्तोदुम्बरदुग्धेन हरिद्राया रसे पुनः ॥
क्षिप्तैर्कर्विशतिरिदं मृषाया प्रक्षिपपुनः ।
ऊर्ध्वोऽथो विजया दत्त्वा वह्निः स्वाधामसप्तकम् ॥
शीतमीदुम्बरे दुग्धे भाव्य भाव्य पुनरत्नया ।
उदुम्बरीकल्कभस्म भस्म पालाशान तथा ।
निक्षिप्य मृषामध्ये तु तन्मध्ये माक्षिक क्षिरेत् ।
ऊर्ध्वं छिन्नान् क्षिप्या तदूर्ध्वं भस्म युग्मकम् ॥
क्षिप्या विमुद्रयेत्तत्राह्नौ द्विनिशयामकम् ।
एव माक्षिकमिदं स्याद्रसे सर्वेश्वराद्यैः ॥ इति

भाषा—शिगिरफसे निकालेहुए पारोको सहदेवी, अफीम, भाग, श्दाख, वनगोभी और बज्जनागकेद्वीमें ३-३ दिन रजकर मुर्गीके ताजे अण्डेमें भरकर ३ महीनेतक रखे । खराबहोनेपर अण्डेको बदलताजाय । फिर आकनेद्वयमें ३ पहर मर्दनकर सुखाकर दमस्तयद्रमें बन्दकर ४ पहरकी अग्निदेवे । ऊपर भोगाहुआ ४ तह कपड़ा रखे । सन्धिघर इततरह बन्दकर कि पारा उड़ न जाय । स्वाज्ञशीतलहोनेपर सम्पुटको उपाङ्गनर पारोको धीरजसे रगकर निकाले और १०-२० वार कपड़ेमें छान साफकरले । फिर इसकी बराबर खपरियाको गलाकर पारोको उसमें मिलादे और शीतलहोनेपर खरलेमें ढाल मूर्वाकेरसे २१ दिनतक मर्दनकरे । यहरस ५ पल, यज्ञ, नाग और लोहभस्म, सोनामाखो, सोमल, हरिताल और भैरसिल इनके सत्त्व २॥-२॥ पल, ताम्रभस्म १॥ पल, शुद्धगन्धक ४ पल लेकर सबकी नीलवर्ण कब्जलीकर आकनेद्वय और धतूरेकेबीजोंके तैलसे ३-३ दिन मर्दनकर शुद्धबज्जनाग और अफीम ५-५ कर्प मिलाकर मूर्वा, आककाद्वय, धतूरा, भाग, थूरकाद्वय, एरण्ततैल इनप्रत्येकके द्रवोंमें ७-७ दिन मर्दनकर ६-७ कपड़मिट्टी दीहुई आतशीशीरामिं ढालकर ईतवगैरहकी डाटसे शीशीका मुंहबन्दकर ६-७ कपड़मिट्टी देकर सूतनेपर शीशीको हंडीमें रखे । इस हंडीको खट्टेमें बन्दीकी भीगणियोंके बन्दर रखे यह ध्यानरहे कि हंडीके चारोंतर्फ ४-४ अङ्गुल मीगणी रहे और १२ पहरमें भाव छडी होजाय । इससे रसका स्वेदन होगा । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ चावलभर समय अथवा रोगोचिन्तापुनःकेसाय देनेसे क्षय, उर.क्षत, श्वास, कास, २० प्रकार केप्रमेह, महणी, अतिमार, मूत्ररूच्छ्र, पथरी इत्यादि समस्त-रोगोंको यह नष्टकर शून्य और रसायनका कामकरताहै ॥ ३५५ ॥

३५६ सर्वेश्वररसः (विधूमूर्तिः)

मृताम्रं मृतलोहश्च पारदं मृतमेव च ।
सप्तभागं प्रजुर्वात त्रिभागं विपतिन्दुकम् ॥ १६०५ ॥
हिडिम्ब्याश्च धरं सर्पैः सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ।
मत्स्यपित्ताक्षया देया भावनाः सप्त चातपे ॥ १६०६ ॥

भागैर्क मेलयेत्तत्र पुनः पारदभस्मनः ।
पित्तस्य छागजातस्य माहिपस्य च भावनाः ॥ १६०७ ॥
वराहपित्तस्य तथा प्रदेयाः सप्तसप्त च ।
मयूरस्य क्रमेणैव रसः सर्वेश्वरः स्मृतः ॥
कफोद्रेकं सन्निपातं भूतोन्मादं ग्रहं हरत् ॥ १६०८ ॥
र. का., ज्वराधिकारः ।

भाषा—अत्रक, लोह और पारदभस्म १-१ भाग, शुद्ध-कुचिला ३ भा., भीमसेनीकपूर सबकीबराबर लेकर वारीकचूर्णकर मछलीकेपित्तकी ७ भावनाएं कड़ीधूपमें देकर एकभाग पारद-भस्म मिलाकर बकरा, भेसा, सूअर और मोरकेपित्तकी ७-७ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तापुनःकेसाय देनेसे कफप्रधानसन्निपात, भूतोन्माद, प्रहपीडा इत्यादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३५६ ॥

३५७ सर्वेश्वररसः (पट्टः)

रसगन्धकयोश्चूर्णमेंनीकृत्याऽन्नरन्तथा ।
हेममिश्रं सर्मं कृत्वा मर्दयेद्यामकद्वयम् ॥ १६०९ ॥
ज्यूपणाऽनलवज्जैलाटङ्गुणं हेमतुल्यकम् ।
कण्टकार्या रसे भव्यमेकर्विशतिवारकम् ॥ १६१० ॥
शिप्रुवीजाद्रिकरसेः सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
रसः सर्वेश्वरो नाम कासश्वासक्षयापहः ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं विर्मातकफलत्वचम् ॥ १६११ ॥
र. सं., र. सु., ध., कासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक और मुवर्णभस्म, त्रिकटु, चित्रक, वज्रभस्म, हलायवी, सुनासुहागा येसय समभाग लेकर वारीकचूर्णकर परिगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भटकटैयाकेरसे २१, सहिजनकेबीज और अदरखनेरसोंमें ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकररखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचिन्तापुनःकेसायदेनेसे कास, श्वास, क्षय इनको यह नष्टकरताहै ॥ ३५७ ॥

३५८ सर्वेश्वररसः (सप्तमः)

ताम्रं दशगुणं स्वर्णात्स्वर्णपादं कटुत्रिकम् ।
त्रिफलान्त्रिकटोस्तुल्या त्रिफलाद्द्वयमोरजः ॥ १६१२ ॥
अयसोऽहं विपञ्चैव सर्वं सम्मथ्य यत्नतः ।
सर्वेश्वररसो नाम रक्तगुल्मविनाशनः ॥ १६१३ ॥
र. सं., र. सु., ध., र. चि., गुल्माधिकारः ।

भाषा—स्वर्णभस्म १ तोला, ताम्रभस्म १० तोले, त्रिकटु और त्रिफला ३-३ मासे, लोहभस्म १॥ मासा, शुद्धबज्जनाग ६ रत्ती लेकर सबको इन्हें मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचिन्तापुनःकेसायदेनेसे रक्तगुल्मको यह नष्टकरताहै ॥ ३५८ ॥

३५९ सर्वेश्वरसः (अष्टम.)

रसाद् द्विगुणितो गन्धश्चतुर्भांगान्तु दृङ्गणम् ।
 तथाऽष्टभागो जैपालस्त्र्यहं सम्मर्दयेद् दृढम् ॥ १६१४ ॥
 वल्लो नवज्वरं हन्ति रसः सर्वेश्वराभिधः ।
 वल्लद्वयं हरीतक्या युक्तं वातज्वरं तथा ॥ १६१५ ॥
 द्विवल्लो महल्लखण्डेन लीढः क्षौद्रयुतः कफम् ।
 गुग्गा जीर्णज्वरं घोरं सर्वोषध्रवसंयुतम् ॥ १६१६ ॥
 वल्लस्तु सूतिकारोगं पिप्पलीमधुसंयुतः ।
 पञ्चवर्षस्य बालस्य यवमात्रो ज्वरक्षयेत् ॥ १६१७ ॥
 गुग्गाभिवृद्ध्या चिपमान्यावच्चानुधिकावधि ।
 महल्लखण्डेन संयुक्तो हन्यादोषत्रयन्तथा ॥ १६१८ ॥
 यवानीक्रिमिशुभ्रान्यां वल्लो हन्यात्कृमीन्पि ।
 एवं सर्वगदान्हन्ति रसो भैरवभाषितः ॥ १६१९ ॥
 र सु, वि, र, र, र, र, कौ, र बो, यो स (सुखरत्न),
 ज्वराधिकारे ।

टि०— र स, र च, वि क, र कौ, र म भा णु ग्रन्थेषु
 विद्यादिनोदरम इतिनाम्ना "रसेन्द्रबल्लिदुषी सत्रयबालवीर्ये समे ।
 रम सुप्रदितो भोक्तृपदु विनोदविषापर ॥ एषोयुग्युतो हरेत्सकलेचनीया
 मयाद् । ज्वरश्च जठरामयान्दुग्धं सल्ल भूषाम् ॥ सन्ध्विरेचनाना-
 भावे सुदृढाय विदधतु । मेदाधिक्ये विनेत्रक वन्मूलना त्वचो रसम् ॥"
 इतिपाठे निहितोऽस्ति अत्र सर्ववस्तुपु समना दृश्यते । रसाकृतोपशयो
 च मरिचमधिकतया नियुज्य ज्वराधिकारं विषापर इति नाम स्वापि
 तम् । अनवीर्यवीर्यपुपरितम प्लान्तामौष कर्णवी । "प्लक्ष्माणुण
 दृङ्गण्य समक्या जैपालकास्तसमा, मर्षो वासरं शिवारण्युताधिक्या
 रसे सतया । सशौद्रेण सुभारसेन सकलाग्नीघानवात्ताशये, द्रवो विहृष्ट
 यवानीकामधुतुतं रसुचपिष्यथीक्षौद्रयुतं ॥ उदाररित्मे क्षेप जठरामय
 नाशन । सल्लमाहि वपैथेसर्वं द्रवद्रव्यं दिन मनम् ॥" इत्युदाररि
 नाम्ना रसावधारे शोडो दृश्यत तत्र वस्तुभागेवल्लक्षण्य दृश्यते । तृतीय
 भावनेनुग्रहानमयं श्रुत्वा तदन्तर्भावं सुकर । क्रमादिदृश्यागवस्तुधेतद
 पेश्या गुणाधिक्यं प्रत्यक्ष फलमिति सिद्धिर् विभावनीयम् ।

भाषा— शुद्ध धारा १ भाग, गन्धक २ भा, मुहागा ४
 भा, जमालगोटा ८ भागलेकर परिगन्धकनीनीलवर्णकजलीमें
 सारको मिलाय ३ दिन मर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रती
 समय अथवा शोषोखितानुपापकेसाधनेसे यह नरन्वको नष्ट
 करताड़े । ६ रतीहीनेसाधनेसे वातज्वरको, ६ रतीकोही
 मागामे मलाई और मजुनेसाधनेसे कफको नष्टकरताड़े । १रती
 उचितानुपापकेसाधनेसे समस्तउपशोनेसहित घोरजीणज्वरको
 तथा पीपल और मजुनेसाय सूतिकारोपको नष्टकरताड़े । १-१
 गुग्गा यदाकरनेसे एकाहिक, द्वापाहिक, त्रयाहिक और चातु
 र्थाहिकज्वरको नष्टकरताड़े । मलाईनेसाय भिद्रोषको, अजवादन
 और विष्टकेसाय क्रिमियोको नष्टकरताड़े ॥ ३५९ ॥

३६० सर्वेश्वरसः (सर्वेश्वरलोहम्)

शुद्धं सूतं पलं गन्धं द्विगुणन्तु सूतान्नकम् ।
 त्रिफलं सूतताम्रञ्च पलायं स्वर्णमाक्षिकम् ॥ १६२० ॥
 जैपालं चित्रकं मानं सूरणं घण्टकणकम् ।
 प्रन्धिकं त्रिफला व्यापं त्रिवृता खरमञ्जरी ॥ १६२१ ॥

दण्डोत्पलां वृश्चिकार्कौ कुलिशं नागदन्तिकाम् ।
 सूर्योर्वतञ्च सञ्जुष्यं कर्पमानं विमर्दयेत् ॥ १६२२ ॥
 आर्द्रकस्य रसेनैव चूर्णयित्वा पुनः क्षिपेत् ।
 त्रिपलं लोहचूर्णस्य ततः रसादेच्युभेऽहनि ॥ १६२३ ॥
 सम्पूज्य भास्करं विष्णुं गणनाथं द्विजोत्तमम् ।
 मापमात्रञ्च मधुना कृत्वा शीतजलं पिबेत् ॥ १६२४ ॥
 चूर्णं सर्वेश्वरं नाम सर्वरोगहर्त्रं भवेत् ।
 कठोरप्लीहनाशाय गुल्मोदरहरन्तथा ॥ १६२५ ॥
 कामलां पाण्डुमानाहं यरुकुन्मिठतामयान् ।
 विचर्चामम्लपित्तञ्च कण्डं कुण्डं विनाशयेत् ॥ १६२६ ॥

भै र (वृष्टलोहाधि०), र, र, ५ (सायनं), र. क. शूले ।
 टि०—अत्र षडे विविधैविचरंनगत्तेऽपि मेषज्वरनाशनीस्य
 ण्व पाठो ज्ञेयात् ।

भाषा— शुद्ध धारा और गन्धक १-१ पल, अश्रकभस्म
 ० पल, ताम्रभस्म ३ पल, सोनामाखी २ कर्ष, शुद्ध जमालगोटा,
 चित्रकमूल, मानरन्द, सूरण, मोक्षा अमावसे हंस, गट्टिन,
 विफला, त्रिकटु, निमोत, अपामार्ग, ब्रह्मण्डवी, शिवुआ, जहदी-
 सूरण, धनशर (मराठीनाम) और हुहुर १-१ कर्ष लेकर वारीक
 चूर्णर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय अदरखेकरसे
 १-२ दिन मर्दनकरे । फिर ३ पल लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन
 अदरखेकरसे मर्दनकर १-१ मासेनी गोलिये बनाकर रखजोड़े ।
 सूर्य, विष्णु, गणेश और द्विजातिओंका पूजनकर इनमेंसे १-१
 गोली मधुकेसाधलेकर ठंडाजलीनेसे कठोर, शोधा, शुन्म,
 उदररोग, कामला, पाण्डु, आनाह, दृष्ट, क्रिमि, विचर्चिहा,
 अम्लपित्त, राज, शृश इसवन्को यह दूरकरताड़े ॥ ३६० ॥

३६१ सर्वेश्वरसः (दशमः)

ताप्यो दृङ्गणहेमताररसकं गन्धं यथाभागिकं,
 ताम्रं त्रिदमनुक्तिजं दिापरिजं द्विप्रं तथा भागतः ।
 यद्वायोऽहिरसेन्द्रश्रुतिगगनं वैकान्तकान्तं त्रिशः,
 तत्सम्मर्थं विभावयेद्विदियसे यष्टीप्रिजाताम्युमिः ॥
 मुस्ताशीरघरावृषाऽमुतशरीकन्याविदारीवरी-
 नीरं गोपयसेशुर्द्वयं मुशलीगोपालंपेचामकम् ॥
 मन्दाश्रीं च मृगाङ्गवस्तुनरसी भायस्वतो भाजने,
 द्वे कस्तूरिमुगाङ्गयो मधुकरणां मुस्तुकोऽप्य वल्लो जयेत् ॥
 मेहादौ प्रहणीज्वरोदरमरद्वयाधि र्जं कामलां,
 पाण्डुं बुध्रमगन्दरं उररगणं कृच्छ्रञ्च मुक्तक्षयम् ॥ १६२८
 १ यो. त, र सु, रसायनम्, र श, र. प, र बो, र पा,
 प्रमेहे ।

टि०—रसप्लवो नाथो दृङ्गणिवस्य ग्वांने मार्गकद्विनमिति
 पाठ विभावयितेयु करयनधिक, भावनावास्तु विचरयधिक इति
 विदेष । रसायनमङ्गं द्वौ षष्ठी निवृत्तौ, एवम्पुऽह. पाठ प्रमेहा
 विना, द्विन्व सिद्धेश्वर नाम्ना शवाविवरे स्थापित ।

भाषा— सोनामाखी, ताम्रमाखी, मुहागा, सुवर्ण, रत्न,
 सपरिया इनकोमन्ने, शुद्धगन्धक १-१ भाग, ताम्र, प्रवाल,

मोती,, शङ्ख इनकीमस्में २-२ भाग, वज्र, लोह, नाग, पारा, अम्रक, बैकान्त और कान्तलोह इनकीमस्में ३-३ भाग लेकर सबको बारीक पीस मुलहठी, त्रिजात, नागरमोया, राम, त्रिपला, अहृषा, गिलोय, कचूर, धीउआर, विदारी, शतावर, गायकौदूध, तालमखाना और मुशलीके यथासम्भवदवाओं ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३-४ तह कपड़ेमें लपेट शरावसम्पुमें बन्द कर ३-४ कपडमिरी देकर सूखनेपर गजपुटकी आचड़े। स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर कस्तूरी और कपूरकी २-२ भावनाए देकर ३-३ रत्तीकी गोयलिया बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीपलकेसाथदेनेसे प्रमेह, चवासीर, ग्रहणी, ज्वर, उदररोग, वातविकार, कामला, पाण्डु, छूट, भगन्दर, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र और शुक्लक्षयको यह नष्टकरताहै ॥ ३६१ ॥

३६२ सर्वेश्वरसः (एकादशः)

पलं सूतं चतुर्गन्धं शुद्धं यामं विचूर्णयेत् ।
मृतताप्राभ्रलोहानां द्रवस्य पलं पलम् ॥ १६२० ॥
सुचूर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशान्पिकम् ।
मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥ १६३० ॥
जम्बीरोग्मत्तवासामि, स्नुह्यर्कचिपमुष्टिमि ।
मर्द्यं ह्यारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनं दिनम् ॥ १६३१ ॥
एवं सप्तदिनं मर्द्यं तद्रौतं वखयेष्टितम् ।
घालुकायन्त्रमं स्नेयं त्रिदिनं लिघुवह्निना ॥ १६३२ ॥
आदाय चूर्णयेच्छुष्णं पलैकं योजयेद्विपम् ।
द्विपलं पिपलीचूर्णं मिश्रं सर्वेश्वरो रसः ॥ १६३३ ॥
द्विगुञ्जी लिघ्णते क्षौट्रे, सुसिमण्डलकुण्डनुत् ।
आजालुस्फुटितं चापि वातरक्तमपोहति ॥ १६३४ ॥
वाक्चोदेवकाष्टञ्च कर्ममात्रं सुचूर्णयेत् ।
लिहैदैरण्डतैलात्तमनुपानं सुखावहम् ॥ १६३५ ॥

पृ यो त, शा स, र र स, र प्र सु, र कौ, रसायन स,
ष रा, यो त, र का, वातरके ।

टि०—“सुवर्णं रजतञ्चैव प्रत्येकं दशान्पिकम् । मापैकं मृतवज्रञ्च तालं शुद्धं पलद्वयम् ॥” इत्येकं पथ बलवराजीये रसकार्मणौ न च दृश्यते तत्र इत्येकत्रां बुद्धिपूर्वकं त्वकं वा रत्नत्रयमादात्परिभ्रष्टमिति वा न शक्यम् । रसायनमौ कुष्ठे पाठद्वयं न्यस्तं न न ह्यौरपि पाठरुद्धितः । रसतन्मनुष्ये द्वितीयस्थाने रसद्रव्यद्वये च सर्वेश्वरनाम्नो ‘पालिकं ताम्रपात्रं कर्मैश्च लोहपारदम् । स्नुष्यक्षीरपाठान्निवन्वोशीरवा रिभि ॥ मर्द्यं घालुकायन्त्रे स्वदयेदिवसत्रयम् । कर्षं कणाया पिप्लव विपरस्वाग्निमन्विनिपिपत् ॥ एष सर्वेश्वरं सर्वो शुभग्रामां प्रयुक्तञ्च ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । नि र, र क, दा, वै चि, र (मा), रसा यनम्, र र स, र कौ, र कौ एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नामैव “रसं द्विहृत्वाशानां त्रय कर्षां पलद्वयम् । ताम्रपात्रकौ सर्वं जम्बीराद्रि विमर्देद्वयम् । विपमुष्टयष्टैरनुत्काराजैः पुनः । सत्पथा गोलकं श्लेता स्वदयेदिवसत्रयम् ॥ वाङ्गुकायन्त्रमप्येष्ट्यं शीते निष्क विप्लव च । कर्षं कणायां सूतं स्वात्मर्षेणो वातरक्तञ्चिद् । शुभग्रामाज्यस्य दानव्या इय वा मत्तारिणा । रत्नप्रकोपेण तीजं पिप्लवं परिवर्जयेत् ॥” इति पाठो निबन्धास्ति । र म, र चि, र क, र दी, रसायनम्, अे सा,

यो म, वै रि, व रा, एषु ग्रन्थेषु सर्वेश्वर नाम्ना “श्रुतताप्रात्रं लोहानां द्विहृत्वां पल पलम् । जम्बीरो न्तभागार्णिप स्नुधर्नं चिप मुष्टिमि ॥ मर्द्यं ह्यारिजैर्द्रावैः प्रत्येकेन दिनदिनम् । एव सप्तदिनं मर्द्यं तद्रौतं वखयेष्टितम् ॥ वाङ्गुकायन्त्रं स्वेच त्रिदिनं लघुवह्निना । आदाय चूर्णयेत्तदं यत्नेन योजयेदियम् ॥ द्विपलं पिपलीचूर्णमिश्च मर्द्यं रसम् । द्विगुञ्जो ह्येत्सोर्द्वै सुसिमण्डलकुण्डनुत् ॥ वाक्चोदेवदारुः च कर्ममात्रो विचूर्णितो ॥ लिहैदैरण्डतैरेन हानुपानं सुखावहम् ॥ रसायिपव शिरा मोक्षं पाठे बाधो लभ्यते ॥ जम्बीरो हृष्टिगणु कुणिगाञ्च विधेयत ॥ बलिनी बहुदोषस्य वय स्वस्य शरीरिणः । एतप्रमाणमिच्छन्ति प्रथम शोणिनीमोगे ॥ व्यत्रे वर्षासु विधातुं ग्रीष्मकाले तु शीतले । हेमन्तकालं मन्थादि शब्दकालाख्यं स्मृता ॥” इतिपाठो निहितोऽस्ति । वैषयिन्ता मणो “शुद्धतद्वर्णं पलं याम विमर्देद्वे” इत्यत्रिण पाठः । एतं मर्देऽपि पाठा पूर्वपाठपरिभ्रमं मन्ति, सुवर्णं रजतवज्रञ्चैकं निष्कास्य नामा पाठा प्रकल्पिता इति विद्वङ्किराचरजीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ पल, गन्धक ४ पल, ताम्र, अम्रक और लोहमस्म, शुद्धशिमरिप १-१ पल, सुवर्ण और रजत मस्म २ ॥-२ ॥ कर्षं, हीरामस्म १ माथा, शुद्धहरिताल २ पल लेहर नीलवर्णकज्जलीकर जम्बीरी, धतूरा, अहृषा, शूजर और आक्कादूध, कुमिला, सै-दकनेर इनप्रत्येकके द्रवोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय ३-४ तहान्त्रमें लपेटकर ३-४ कपडमिरी देकर सूखनेपर वाङ्गुकायन्त्रमें ३ दिनमी मन्द आचसे स्वदित करे । स्वाङ्गशीतल होनेपर निकालकर बारीकचूर्णकर शुद्धबल-नाग १ पल और पीपल २ पलका बारीकचूर्णं मिलाकर १-२ दिन मर्दनकर रखओड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती मधुकेसाथ देकर वाङ्गुको और देवदाह समभागका १ कर्षं चूर्ण एण्डतैलके साथ अनुपानमें देनेसे सुप्तता, मण्डल, असाध्य वातरक इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३६२ ॥

३६३ सर्वेश्वरसः (द्वादशः)

स्वर्णं रोप्यं मोक्तिकञ्च विशुद्धञ्च शिलाजतु ।
लोहमग्नं तथा ताप्यं मधुयष्टी च पिपली ॥ १६३६ ॥
मरिचं निश्वकञ्चेति सर्वमेकत्र कारयेत् ।
विमूद्यं प्रहरं यत्नात्कज्जलाद्युतिसन्निभम् ॥ १६३७ ॥
भृङ्गद्वयस्य मर्द्यं शानाशानस्ये पृथक् ।
प्रमेहं विविधं हन्ति मधुमेहं सुदुर्जयम् ॥ १६३८ ॥
चातपित्तसमुद्भूतं तथा कफसमुद्भवम् ।
सर्वेश्वरो रसो नाम्ना प्रमेहकुलनाशनः ॥ १६३९ ॥

अे र, प्रमेह ।

भाषा—सुवर्णं, रजत, मोती, लोह, अम्रक, सोनामारवी इनकीमस्में, शुद्धशिलाजीत, मुलहठी, पीपल, मरिच और सोंठ समभागलेकर बारीकचूर्णकर इकठेमिलाय १ दिन शुष्कमर्दकर स्वाहशफेदभग्ना और गाचके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोयलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक उचितानुपानकेसाथदेनेसे वात, पित्त और कफत्र प्रमेह, तथा दुर्जर मधुमेहको यह नष्टकरताहै ॥ ३६३ ॥

३६४ सर्वेश्वररसः (त्रयोदशः)

रसमस्माऽऽलतुत्याहिवद्गताभ्राच्चारिणः ।
 कटुत्रयाऽमृताऽमानो गोऽहिवेदगजद्विपाः ॥३६४०॥
 समुद्रनृपतिर्ध्वजाः सप्तद्वितियिमन्मथाः ।
 भावयेद्रसकेः सर्वे लुङ्गान्कैः सप्तथा पृथक् ॥३६४१॥
 सर्वेश्वरो भावितः स्याद्द्विगुञ्जः सर्वरोगहा ।
 निजानुपानेरथवा सह खण्डेन यस्मिन् ॥ ३६४२ ॥
 आर्द्राम्भसा पञ्चगुल्मे गुडवातारिविकैः ।
 क्षौद्रेण शैत्ये निर्दिष्टो व्योपाद्रैः साक्षिपातिकैः ३६४३
 ग्रहण्यामप्यतीसारैः हितं पथ्यविर्गो पयः ।
 स्वस्वपथ्यानि वा चैवो दद्यात्सर्वेश्वरे रमे ॥३६४४॥
 र. सं., प्रहण्याम् ।

भाषा—पारद १ भाग, हरिताल ८ भाग, तुल्य ४ भाग, नाग और बद्ध ८-८ भाग, ताम्र ४ भाग, अन्नक १६ भाग, सोनामाखी १५ भाग, और रूपामाखी ७ भाग (इनसबकी-भस्मे), त्रिकटु २ भाग, गिलोय १५ भाग, शुद्धगन्धक ५ भाग लेकर वारीकचूनेकर धातुओंकीचूनीमें मिलाय विजोर-केरसे ७ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी मोलियां बनाकर रख-छोड़े । इनमें १-१ गोली तत्तद्रोगद्वारापाननेसाथ, खाइ अथवा अदरके रसकेसाथदेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै । अदरकेरस अथवा गुड, एण्डकीजड़ और चित्रककेसाथ देनेसे पाँचोंगुल्म, मधुसे शैत्य, त्रिकटु और अदरकेरससे सनिपात नष्टहोताहै । प्रहणी और अतितारमे दूध अथवा उचिनानुपानका योग करना ॥

३६५ सर्वेश्वररसः (चतुर्दशः)

हेमताप्यां दिलेलाद्रिचिपतारैकभागकम् ।
 पृथक् प्रवालशुक्लपकरसञ्ज द्विभागिकम् ॥३६४५॥
 मृतमस्माहिवद्गायो व्योममुक्ताशिलाजनु ।
 गैरिकञ्च विभागं स्यात्सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥ ३६४६ ॥
 विदार्याभ्यमृताभीक्ष्णटीकन्यावरारचनेः ।
 भाष्यनाथ पृथक् सप्त दद्यान्मृगमद्वैस्ततः ॥ ३६४७ ॥
 कणासिताभ्यां मधुना वल्लोऽस्य क्षयमेहजित् ।
 प्रहणीदोपपाण्डुशीयात्पृथुदराणि च ॥ ३६४८ ॥
 कासश्वासो गुल्मसापकुष्ठानि जयति ध्रुवम् ।
 स्वीयानुपानैः सर्वाश्च रोगान्दन्ति रसायनम् ॥
 स्वीयानुद्विचलं दत्ते सर्वेशोऽयं रसो धरः ॥ ३६४९ ॥
 र. सं., धय ।

भाषा—मुवर्ण, सोनामाखी, मैनसिल इनकीभस्मे हला-यकी, दोनों कीदल, शुद्ध बटनाग, रजभस्म १-१ भाग, प्रवाल, मोदीकी शीष, ताम्रभस्म, शुद्धपरारिया २-२ भाग, पारद, नाग, बद्ध, लोह, अन्नक और माँतो इनकीभस्मे, शुद्धशिलाजीन और गेरू ३-३ भागलेकर सबकी नीलकण्ठकमलीकर विशाकीचन्द, चित्रक, गिलोय, रतावर, कच्चा, पीतुंकार, दिवला, नगर-मोषा इनके दद्यात्सर्वेश्वररस अथवा दायोमे ३-३ भागनाग

लेकर कन्तूरी की १ भावना देवे । इसमेंसे ३-३ रती पीयल, शकर और मधुकेसाथदेनेसे क्षय, प्रमेह, प्रहणी, पाण्डु, बवासीर, वातरोग, उदररोग, कास, श्वास, गुल्म, ज्वर, छल, इनसबको नष्टकर बीय और बुद्धिको बढाताहै ॥ ३६५ ॥

३६६ सर्वेश्वररसः (पञ्चदशः)

कनककुलिशतारं पीतिसौवीरताम्रं,
 गगनभुजगसुतं खेचरं तालटङ्गम् ।
 शिलनृपबालिलोहं राजतश्चैव चङ्गं,
 त्रिलवणमृतमेतत्सर्वमेकत्र तुल्यम् ॥३६५०॥
 एतैः समं ते मृतमृतराजं यत्पृथक्कुम्भे दिनेमेकघृष्टम् ।
 कृपीगतं पाचय भृतियन्त्रे दिने हिमं भाषय शृङ्गवेरैः ॥
 यासाः कुरण्टी नृपकुक्कुटी च
 धसूरचिन्निं गजदन्तमेपी ।
 भूमिभ्यमुस्ता हलिनी च दन्ती
 ताम्बूलपर्णा सह ताम्रमली ॥ ३६५२ ॥
 एतत्समुद्रतरसे विभाव्यः
 सर्वेश्वरो नाम रसेश्वरोऽयम् ।
 त्रिगुञ्जमायः खटु सन्निपाते
 रोगानशेषान्विविधानुपानैः ॥
 महोदरं कुष्ठसपाण्डुगुल्मं
 सर्वाश्च रोगान्विनिहन्ति नूनम् ॥ ३६५३ ॥
 र. सं., धये ।

भाषा—मुवर्ण, हीरा, रजत, पीतल, सफेदगुरमा, ताम्र, अन्नक, नाग, पारा, कर्नास, हरिताल, मैनसिल, लाजवर्द, लोह, रजनमाक्षिक, बद्ध इनसबकी भस्मे, मुनामुहागा, शुद्धगन्धक, तीनोंनमक सब समभागलेकर नीलकण्ठकमलीकर सबकी बराबर पारदभस्म मिलाकर धूर और आककेपूषसे १-१ दिन मर्दन-कर फिरसे कजलीबनाय ६-७ कपड़निर्दीदीहुई आतशीशीमीमें भरके भस्मयन्त्रमें रख एकदिनको अग्निदेवे । स्वाङ्गपीतलदोने-पर निकालकर अदरक, अदुषा, पीयासा, अमिललास, रोमलकी छाल, धन्वा, चिन्क, पनवर (मराठीनाम), मेशासींगी, विरायता, नागमोषा, करिहारी, दन्तीमूल, पान और ताल-मलीके यथासम्भव स्वरय अथवा हाथोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी मोलिये बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिनानुपानकेसाथ देनेमें सनिपात, महोदर, कुष्ठ, पाण्डु, गुल्म इत्यादि समस्तदोषोंको दह नष्टकरताहै ॥ ३६६ ॥

३६७ सर्वेश्वररसः (षोडशः)

एकैकोऽमिजरायुहोरकलरोऽग्निं नीलमाभिमययो,
 रिःवान्ताहिशिलाकेन्द्ररसक्रादिप्राः पृथक् स्वर्णतः
 यत्रान्तं तपनीभवादिपि लग्नाः पञ्च प्रवालद्वलः,
 पत्र मृताइरदाद्य सम गगनाद्रुष्याद्य सर्वे ततः ३६५४
 चूर्णात्तुल्य विभाव्य माकरसे मुण्डकीकुमारीगुला,
 यासाभ्योद्वारयिकण्टमुदालोदुम्भीनिशारीद्रयैः ।

वृश्चीवाद्दिमेदतः शतदलात्त्रिस्तस्य गोलं पयः—, पिष्टे दग्धवराटके नैवलये द्विं मौक्तिकं लैपयेत् १६५५
 शुष्क चाथ मृगाङ्गुयल्लवणजे यन्त्रे विपाच्येणजं,
 नाभिं सूतलवं निधाय मृदितः सर्वेश्वरः स्याद्रसः ।
 स्वैस्वैरस्य गदाभिहन्ति सकलान्गुञ्जानुपाने द्रुते,
 यस्मात्तं सपरिग्रहं ग्रहणिकातीसारपाण्ड्यामयान् ॥
 कासापस्मृतिगुल्ममेहैरुशतापण्डत्ववन्ध्यामयान्,
 बीजातिप्रदरोदरं भ्रमभ्रमद्वयासास्त्रपित्तामयान् ।
 अन्यान्घातबलासपित्तगुदिरोगद्रुतान्समस्तानपि,
 व्याधीन्नाशयति प्रसह्य सहसोद्दीताद्यथाऽकांतमः ॥
 र. शं., क्षये ।

भाषा—अन्तर और हीराभस्म १-१ भाग, नीलम और
 माणिस्यभस्म ४-४ भाग, कान्तलोह, नाग, मैनेसिल, ताम्र,
 वज्र, खपरिया इनकीमन्थे ३-३ भाग, सुवर्णभस्म २ भा.,
 वैकान्त और सोनासायीभस्म ५-५ भा., प्रवालभस्म और
 शुद्धगन्धक ६-६ भा., शुद्ध पाटा, शिंगरिफ, अभ्रक और रजत
 भस्म ७-७ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर भंगरा, गोरख-
 मुण्डी, चीन्नीवार, शालग्रामी, अङ्गुठा, नागरमोथा, त्रिकला,
 गोखरू, मुशली, दूधी, बिदारीकन्द, सफेदपुनर्नवा विट्पादिर,
 गुलाब इनके यथासम्भवस्वरस अथवा काथोसे २-३ दिन मर्द-
 नकर गोलावनाय जलीहूर्दकौडी ९ भाग, मोतीभस्म ० भाग
 दूधमें पीसकर गोलेपर लेपदकर मुलाकर शरावसमुद्रमें कन्दकर
 लवणयन्त्रमें एकदिनरातकी आच देवे । स्वाग्नीशतलहोनेपर निकाल-
 कर पारिकीवरावर कस्तूरीमिलाकर पीटकर रखछोड़े । इसमेंसे
 १-१ रती ततद्रोगहरानुपानवेत्तापदेनेसे उपद्रवघहित राजयक्ष्म,
 ग्रहणी, अतिसार, पाण्डु, कास, अपस्मार, गुल्म, प्रमेह,
 वृशता, नृसंस्कत्व, वन्ध्यत्व, बीजदोष, प्रदर, उदररोग, भ्रम,
 मद, श्वास, रक्तपित्त, वातबलासक, पित्त और हृषिकेरोग इन-
 सबको यह इष्टतरह नष्टकरताहै जैसे प्रचण्डसूर्यसे तम नष्ट
 होजाताहै ॥ ३६७ ॥

३६८ सर्वेश्वरलोहम्

गिरिजगन्धकृताप्यरसाङ्गुद-
 शुमणिलीहसुवर्णरजः समम् ।

मधुयुतेन विलीढमिदं नृपान्

सकलरोगचयं विनिहन्ति ॥ ३६५८ ॥

ले. ५., सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्धशिलाजीत, गन्धक, सुवर्णमाक्षिक, पाटा,
 अभ्रक, ताम्र, लोह, स्वर्णभस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजली-
 कर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रती मधुनेसायलेनेसे समस्त-
 रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ३६८ ॥

३७० सर्पपाद्यागुटिका

सर्पपाः पृष्ठपर्णी च तगरं पत्रकेसरम् ।

हरितालं विडङ्गानि रोधद्राश्याप्रियङ्गवः ॥ ३६५९ ॥

चन्दनं वालकं मांसी विद्राला समनःशिला ।
 श्रीवासकं निशा दावीं पत्रकं घ्याममेव च ॥ ३६६० ॥
 सुरसप्रसवाः स्पृका रोचना गन्धनाकुली ।
 अम्लकं कुङ्कुमं दारु स्थौणेर्यं गिरिकर्णिका ॥ ३६६१ ॥
 जात्याः पुष्यं प्रवालञ्च पिप्पलीमरिचानि च ।
 सूक्ष्मैलासिन्धुवारञ्च यद्यथाहं रोधमेव च ॥ ३६६२ ॥
 पताम्यङ्गानि पट्टविंशत्युष्येण परिपेषिताम् ।
 गुटिकां कोलमात्रञ्च छायाशुष्कां हि कारयेत् ३६६३ ॥
 नस्यपानाञ्जने चैषा सम्यग्लेपे च योजिता ।
 पुंसां सर्वविपातानां राजद्वारे रणे तथा ॥ ३६६४ ॥
 वणिजां लाभकामानां विवादे च सदा हिता ।
 सरोरुपा न तिष्ठति यत्र तिष्ठति वेदमनि ॥ ३६६५ ॥
 अनया सम्प्रलितस्य चोत्पल्लिभयं कुतः ।
 सर्पद्रुमयञ्चापि जलरादिभयं न च ॥ ३६६६ ॥
 ग. नि., विपे ।

भाषा—गोलीसरसो, पृष्ठपर्णी (रानभाल. मराठीनाम),
 तगर, पत्रकेशर, हरितालभस्म, विडङ्ग, लोघ, द्राव, प्रियङ्गु,
 सफेदचन्दन, मुगन्धवाला, जटाभासी, इन्द्रायण, शुद्ध मैनेसिल
 और विरोजा, हल्दी, दासहल्दी, पद्मकाठ, खस, तुलसीबिबीज,
 अनन्तमूल, गोरोचन, गन्धनाकुली (मुगन्धरावा), कोकम, केदार,
 देवदारु, छड़ीला, कोयल, जाबिनी, प्रनालभस्म, पीपल, मरिच,
 छोटीइलायची, निर्गुण्टी, मुलङ्गी, देशीलोघ सब समभाग-
 लेकर बारीकचूर्णकर पुष्यनक्षत्रमें इमयोगनिर्माईहूर्दे काटोपधि-
 योके काथसे मर्दनकर ८-८ माशेकी गोखिये बनाकर छाया-
 शुष्ककर रखछोड़े । इनका नस्य, पान, अन्न तथा लेपमें
 उपयोगकरनेसे तनामविष नष्टहोतै । जिमधरमें ये गोखियां
 रहतीहै वहापर हिंसक जानवर, साय, चोर, अग्नि और जलसे
 भय नहीं होता ॥ ३६९ ॥

३७० सामुद्राद्यं चूर्णम्

सामुद्रं सैन्धवं क्षारौ रुचकं रोमकं विडम् ।

दन्ती लोहरजः किट्टं ध्रिवृत्स्वरणकं समम् ॥ ३६६७ ॥

दधिगोमूत्रपयसा मन्दपाचकपाचितम् ।

तं यथाश्रिवलं चूर्णे किञ्चिद्रुष्णेन चारिणा ॥ ३६६८ ॥

औषेण जीर्णे तु भुञ्जीत मांसादिभिर्गन्धभोजनम् ।

नाभिशूलसुःशूलं गुल्मगर्लाहभवञ्च यत् ॥ ३६६९ ॥

परिणामसमुत्थाने शूले च परमं हितम् ।

विद्रस्यष्टीलजं हन्ति कफवातोद्भवं तथा ॥ ३६७० ॥

अन्नद्रव्यं जरयितुमजीर्णं ग्रहणीमपि ।

शूलानामपि सर्वेषामौषधं नास्त्यतः परम् ॥ ३६७१ ॥

यो. र., र., घ., नि. र., ग. नि., ना. नि., रमायनस. र.
 का., यो. म., र. क., टो., भै. र., र. र., उ. यो. त., उ. मा.,
 च. द., शूलाधिकारे ।

भाषा—समुद्र और सैन्धवमव, सज्जी, यवघार, संचल,
 रोमक, विट्, दन्तीमूल, लोह और मण्डूरभस्म, मिमोत,

सुरगन्धं येसव समभाग लेहर बारीकचूर्णकर दही, गोमूत्र और दूध चौगुना चौगुना ढालकर मन्दागिर पकावे और घुसाकर रखछोड़े । इममेंसे ३-३ मासो अमिषल देसकर गरमजलके साथदेनेसे नाभिगुल, छातीकागुल, गुल्म, प्लीहा, परिणाम-गुल, विद्रधि, अजीर्ण, कफवातोद्भवगुल, अन्नद्वन्द्वगुल, अजीर्ण, प्रद्वशी इनगणको यह नष्टकरताहै । गुल्लोकिये इससे बद्धर अन्य औषध नहींहै ॥ ३७० ॥

३७१ सारणमुन्दररसः

मूतं गन्धं समं शुद्धं सप्तधा भाययेत्कमात् ।
स्नुह्यन्तुदुधैः शीखण्डद्वयस्यामाऽभयारसैः ॥ १६७२ ॥
समं नेपालजं चूर्णं देयमेकत्र मर्दयेत् ।
उष्णाम्बुना वह्यधुमं देयमष्टगुणे गुडे ॥ १६७३ ॥
मलाः पूर्वं जलं पश्चात्ततश्चामः शनैः शनैः ।
उदराद्य विनाऽन्त्राणि सर्वं निर्याति किस्त्रियम् १६७४ ॥
जाते विरेके संशुद्धे पथ्यं दध्योद्ग्नं हितम् ।
जयेज्यरादिकाप्रोगाप्रसः सारणमुन्दरः ॥ १६७५ ॥
र. सं. क., रसायनसं., र. क., र. बो., उदराधिकारे ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धकरी नीलगन्धकज-लीकर मूत्र और आककेदूध, दोनोंचन्दन, निवोत और हरीके द्रवोंसे ७-७ भावनाएँ देकर बराबरका शुद्धरमालगोटा मिलाय १-२ दिन मर्दनकर १ रसीकीमात्रा गरमजलकेसाथ अथवा अशुने शुद्धेतापलेनेसे फेड और अन्तर्क्रियोंमेंसे तमाममल निकल जाताहै । अन्धीतरह रचनहोनेकेबाद मूलतलनेपर दही-भात पच्य देना । इससे तमामगन्धभीगष्टहोवेहै ॥ ३७१ ॥

३७२ सारस्वतरसः

रसगन्धो यचां शह्युष्ण्यास्त्रिभिद्रिद्धं पुष्टं ।
चतुर्विंशतियामांस्तु पक्षिं दद्यान्मृदुं भिषक् ॥ १६७६ ॥
मापीऽस्य दुग्धभक्तानुपानेन स्वरभङ्गजित् ।
अयं सारस्वतो नाम रसो जाड्यापहारकः ॥ १६७७ ॥
र. का., स्वरभङ्गे ।

भाषा—समभाग शुद्ध पारे और गन्धकरी नीलगन्धकज-लीकर वच और राह्याहलीकेरसे ३-३ दिन मर्दनकर ४-५ कपइमिश्रीदुग्ध आतलीसीसीसे ढाल शुद्धमर्दर काउद्ययमें रस २४ पहरकी मन्दागि देवे । स्वाश्नवीतच्छोनेपर मुक्तिपूर्वक निश्चालकर रगछोड़े । इममेंसे १-१ मासा दूध और भातके-सापदेनेसे स्वरभङ्ग और जहताहो यह ह्दकरताहै ॥ ३७२ ॥

३७३ सारिवादिवटी

सारियां मधुकं कुष्ठं चातुर्जातं त्रियङ्गुक्म् ।
नीलोत्पलं शुद्धर्चाञ्च देधपुष्पं फलत्रिकम् ॥ १६७८ ॥
अञ्जे सर्वसमञ्चाप्रसमं लाहं पिभाययेत् ।
पेडातजाभ्युना पार्थकायेन ययजाम्बस ॥ १६७९ ॥
काकमाचीरमेनापि शुभ्रामूलद्रव्येण च ।
त्रियुञ्जामिताः पक्षादिद्वयादिका भिषक् ॥ १६८० ॥

धारोष्णेनापि पयसा शतगुलीरसेन च ।
पकेकां योजयेत्प्रातः शीखण्डसलिलेन च ॥ १६८१ ॥
निरितिलान् फर्णजाप्रोगात्र प्रमेहानपि विशातिम् ।
रक्तपित्तं क्षयं ध्याप्तं फलेषु जीर्णज्वरन्तथा ॥ १६८२ ॥
अपस्मारमदासांसि हृद्रोगञ्च मदात्ययम् ।
सारियाद्विपटी हन्यात्सर्वांगदानखिलानपि ॥ १६८३ ॥
भे. र., कर्णरोगे ।

भाषा—सारिया, मुलहठी, कुष्ठ, चातुर्जात, त्रियङ्गु, नीलो-फर, गिलेय, लौंग, त्रिकला देसव समभाग लेकर बारीकचूर्ण-कर सक्कीबराबर २ अन्नक और लोहभस्म मिलाकर काला-भंगरा, शकेदअजुन, जव, मकोय, गुधामूल इनके यथाधम्मर-स्वरास अथवा हाथोंसे १-१ भावना देकर ३-२ रसीकी-गोलियां बनाकर रखछोड़े । इममेंसे १-१ गोली धारोष्णदप अथवा शतावरीकेसे अथवा चन्दनदेजलकेसाथ प्रातःकाललेनेमें कानके समस्तदोग, २० प्रकारकेप्रमेह, रफपित्त, क्षय, श्वाप, श्नीयता, जीर्णज्वर, अपस्मार, मद, अतो, हृद्रोग, मदात्यय इनगणको यह नष्टकरताहै ॥ ३७३ ॥

३७४ सार्वभौमरसः

हेमयज्ञाम्रकाणाञ्च भस्मनां त्रितयं समम् ।
भूनागसत्वभस्मापि तत्समं निशिपेत्पुषः ॥ १६८४ ॥
कृष्णचित्त्ररसेनय मर्दयेद्य दितप्रयम् ।
अमृतस्य फगयेण कुमारीस्वरसेन च ॥ १६८५ ॥
त्रिकटुत्रिकलानाञ्च स्वरमे च विपाचयेत् ।
द्राक्षाफलान्यितं नित्यं शुभ्रामात्रं प्रयाजयेत् ॥ १६८६ ॥
सर्वग्याधिचिनिर्मुक्तो चन्द्रहो भयेपरः ।
त्रियत्स्वप्रयोगेण ज्ञेयेदाचन्द्रतारकम् ॥ १६८७ ॥
सर्वेणामायुधानाञ्च विपाणाञ्च नियारणम् ।
सर्वेदायुष्यपत्यायु सुधि संकीर्तितो भवेत् ॥
सायंभौरसो हाप सर्वराजमनोहरः ॥ १६८८ ॥
र. कौ. (श.), र. क दो., रसायने ।

भाषा—गुर्षप, हरीा और अन्नकभस्म समभाग, वैजुभोंके सारकीभस्म सखेयरावर, कालाचिन्दक, बणनाग, पोरुंभार, त्रिकटु और त्रिकलादेस्वरासोंसे १-१ भावना देकर गोलाकनाय बरावगन्धुमें बन्दकर १-१ कपइमिश्रीदेकर सुग्नेपर गरमदुग्धी आंचदे । रसीतरह प्रमेहके स्वरसेमें मर्दनकर गरमदुग्धे । स्वाश्नवीतच्छोनेपर निश्चालकर रगछोड़े । इममेंसे १-१ रसी द्राघने रसकर गानेमें समस्तग्याधिषोमें निर्मुक्त्तोर बभोर-होताहै । एगप्रद ३ बर्दक म्गारात्र प्रयोगकरनेसे धमल आदुष, शिष और वायुभोमें निर्मुक्त्तोरताहै ॥ ३७४ ॥

३७५ सालम्पाकः (मुञ्जतारक पारः)

प्रस्येकं म्वालिमं पूर्णं दुग्धद्रव्ये विनि. शिपेत् ।
मिनोपलादकं दद्यात्तन्मुलीं विनियन्तेषा ॥ १६८९ ॥

जातीफलं जातिपत्री लवङ्गं मधुयष्टिका ।
 शुक्तिमात्रप्रमाणेन पृथग्र्राह्यं भिषग्वरैः ॥ १६९० ॥
 पिप्पली पिप्पलीमूलं नागकेशरनागरम् ।
 श्वङ्गप्रा मरिचं द्राक्षा घाजिगन्धा शतावरी ॥ १६९१ ॥
 लोहमन्त्रकवङ्गश्च द्वे जरी धान्यकं घनम् ।
 पृथक्पृथक् कर्पमात्रमेला चैव त्रिऋषिका ॥ १६९२ ॥
 आक्षोटं मुशलीञ्चैव चतुःकर्पप्रमाणतः ।
 रक्तचन्दनरूपूरकस्तूरीमासिकेशरम् ॥ १६९३ ॥
 त्वचं कृष्णाऽगुरुञ्चैव प्रमाण तस्य निर्दिशेत् ।
 पञ्च द्वे वह्निभूतानि रसमार्गणमार्गणाः ॥ १६९४ ॥
 भापसंख्याप्रमाणेन यथाभागं नियोजयेत् ।
 सम्यक् पाकं ततो घात्वा देशनालानुसारतः ॥ १६९५ ॥
 सायं प्रातः पलाञ्छन्तु भक्षयेत्सीरस्युत्तम् ।
 घाजीकरो घलकरो कान्तिपुष्टिविबर्धनः ॥ १६९६ ॥
 प्रमेहं वातरोगञ्च हृद्रोगमपि नाशयेत् ।
 अस्य संसेवनाश्रित्यं गच्छेच्च घनिताशतम् ॥
 सर्वव्याधिहरः श्रेष्ठो योगः परमदुर्लभः ॥ १६९७ ॥

रसानयनं, वाजीकरणे ।

१६—साल्म सुजातको रोष स सस्कृतानाना द्रव्यमाषो भूत्वा
 यावननाम्ना जागर्ति ।

भाषा—एकप्रस्य सालमकेचूर्णको १६ सेर दूधमे डालकर
 पकावे । अथौटादूध होनेपर ४ सेर मिथी डालकर चाशनी
 तैयारकरे । फिर जाविनी, लौंग, मुलहठी २-२ कर्प, पीपल,
 पिपलामूल, नागकेशर, सौंकर, गोखरू, मरिच, द्राक्ष, अषाफन्ध,
 शतावरी, कोह, अन्नरु और वज्रमसम, दोनोनीरे, धनिया, नाम
 रमोषा १-१ कर्प, इलायची ३ कर्प, अखरोट और मुशली
 १-१ पल, डालचन्दन ५ माशे, शुद्धकपूर २ माशे, कस्तूरी ३
 माशे, जटाभासी ५ माशे, केसर ६ माशे, तन ५ माशे, काला
 अगर ५ माशे इनसबका वारीकचूर्ण मिलाकर उतारकर जमादे ।
 इसमेंसे अमिबलदेखकर १ तोलेसे ५ तोलेतक खिलकर दूधपि-
 लावे यह अत्यन्त वाजीकरदे कान्ति और पुष्टिको बढाताहै ।
 प्रमेह, वातरोग और हृदयकेरोगोंको नष्टकरताहै । प्रतिदिन सेवन
 करनेसे बहुतती स्त्रियोंकेताप रमणकरसकताहै ॥ ३७५ ॥

३७६ सावित्रवटकः

पलङ्कपा पले द्वे च कृष्णायाश्च पलद्भयम् ।
 पथ्याऽमृताक्षघ्राञ्जीनां पृथगेकैकदाः पलम् ॥ १६९८ ॥
 प्रतीकं चव्यवयोपाश्रिकारवीक्रिमिनाशनैः ।
 चूर्णितैरर्द्धपलिकैस्तिलतेलैः पलद्भयम् ॥ १६९९ ॥
 त्रिफलाया रसप्रस्ये खण्डं प्रस्थयुगं पचेत् ।
 दर्वाप्रलेपात्पाकश्च चातुर्जातरुसंयुतः ॥ १७०० ॥
 सावित्रवटका ह्येते यथाश्रिपलभक्षिताः ।
 कृमिकोष्ठाग्निद्वीषेत्पथ्यशोधगुल्मोदरघ्नान् ॥ १७०१ ॥
 कामलापाण्डुरोगादांभगन्दुग्दघ्नान् ।
 निहन्त्येतद्धि संसिद्धं घयःस्थेयंघलप्रदम् ॥ १७०२ ॥

वायुमेहप्रशमनाश्चक्षुषः प्रीतिवर्धनाः ।
 भवन्त्यतिस्निग्धमुजां वातातपनिपेविणाम् ॥ १७०३ ॥
 नि. र., वै. चि, विमिरोगे ।

भाषा—एकप्रस्थत्रिफलात्रिकादिमें २ प्रस्थ शकर डालकर
 चाशनीतैयारकरे फिर शुद्धकपूर और फोलादभसम २-२ पल,
 हरे, गिलोय, बहेडे और आवले १-१ पल, सुडकररु, चव्य,
 त्रिकटु, त्रिफल, कारवीकेबीज (मराठी नाम) और विडङ्ग २-२
 कर्प, तिलकातेल २ पल, चातुर्जात १-१ कर्प इनसब चीजोंका
 वारीकचूर्ण डालकर उतारले । इसमेंसे १-१ तोलेकीमात्रा दूध
 अथवा समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे क्रिमि, मन्दाग्नि, शोथ,
 गुल्म, उदरकेत्रण, कामला, पाण्डु, अर्श, भगन्दर, ऋण, वायु,
 प्रमेह, नेत्ररोग इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें अधिकवायु
 और धूपका निषेधकरना ॥ ३७६ ॥

३७७ सितामण्डूरम्

धमनविधिविनुद्धं गोजले सप्तधारां-,
 स्तरणिंकिरणशुष्कं शृङ्खणमण्डूरचूर्णम् ।
 विमलतरपलेकं पञ्चसङ्ख्यं सिताया,
 अनवधुतपलानामष्टकं द्वयष्टदुग्धम् ॥ १७०४ ॥
 मृदुदहनशिखाभिर्मन्दमन्दं कटाहं,
 धिगतसलिलशोषं पाचयेत्पाकविज्ञः ।
 वितरितगुडपाके किञ्चिदुष्णेष्वतीर्णं,
 हृदि हृदमनीर्षणं चूर्णितं देयमाशु ॥ १७०५ ॥
 त्रिकटुमधुकेलायासवेडङ्गसारं,
 प्रतनुपटनिघृष्टं गालितं सम्प्रदद्यात् ।
 त्रिफलगदलवङ्गं कर्पमेकैकशश्च,
 तदनुशिदिरिकाले द्वे पले मासिकस्य ॥ १७०६ ॥
 शुभतिथिदिवसाद्वा भोजनादौ निषेव्यं,
 प्रथमदिवसमेनं शाणमानं तदुद्धम् ।
 अहरहनुद्वृद्धया यावदक्षं प्रयोज्यं
 हिमकरश्चिशितं गन्धदुग्धश्च पेयम् ॥ १७०७ ॥
 नियतमयमसाध्यानम्लपित्तोत्थश्लाल्,
 वमिनियहसदाहानाहमोहप्रमेहान् ।
 विविधरुधिररोगान् पित्तयुक्तानशेषां-,
 नपहरति सिताद्यो दिव्यमण्डूरयोगः ॥ १७०८ ॥
 भै. र., अम्लपित्ताऽधिकारे ।

भाषा—धमनकराके ७ बार गायकेशुमेंसे सुसायाहुआ
 मण्डूर १ पल, शकर ५ पल, पुरानापी ८ पल और गायका-
 दूध १६ पल लेकर सबको कडाहीमें डालकर मन्दाग्निपर पाक-
 करे । सुडेपेदश चाशनीहोनेपर उतारकर त्रिकटु, मुलहठी,
 इलायची, जवासा, विडङ्गत्रण्डुल, त्रिफला, सुड, लौंग १-१
 कर्प लेकर वारीकचूर्णकर मिलादे । उखाहोनेपर २ पल मधु मिला
 कर रखडोडे । शुभतिथि और अच्छेदिन इसमेंसे भोजनके-
 आदिमें ४ माशे सेवनकरे फिर १ और २ बढाकर १ कर्पकी मात्रा

कायमरे । चन्द्रमाकी चांदनीमें रक्खाहुआ ठंडा दूध पिलावे । इससे असाध्य अम्लपित्त, शुल, वमन, आनाह, सूच्छा, प्रमेह, रक्तविकार, वात और पित्तरोग नष्टहोतेहैं ॥ ३७७ ॥

३७८ सिद्धकान्तरसः

कान्तलोहस्य चूर्णन्तु कृत्वा सूक्ष्मतमं युधः ।
गन्धकं पारदं दन्तीथीजान्यैकत्र कारयेत् ॥ १७०९ ॥
ततः सम्पेष्य तत्कल्कं मर्दयेत्त्रिदिनं पुनः ।
पतञ्जल्येन मत्स्यस्य पित्तेन परिभाचयेत् ॥ १७१० ॥
सिद्धकान्तरसो ह्येष प्रयोज्योऽभिनावज्ज्वरे ।
शुद्धैवरानुपानेन वल्लश्च भिपगुत्तमैः ॥
नाशयेच्च ज्वरं सद्यो भास्करस्तिमिरं यथा ॥ १७११ ॥
र. को , ज्वराऽधिकारे ।

भाषा—कान्तलोहमस्य, शुद्ध गन्धक, पारा और जमाल गोटा समभागलेकर नीलवर्णकमलीकर सक्कीबरावर मछलीके पित्तसे ३ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखेरसकेसाथदेनेसे अन्धकारको सूर्यकीतरह तत्क्षण ज्वरको नष्टकरदेताहै ॥ ३७८ ॥

३७९ सिद्धदरदामृतम्

हंसपाकस्य खण्डानि सूत्रवद्दानि युक्तिः ।
कर्पूरप्रमाणानि चन्द्रकर्पमितानि वा १७१२ ॥
लौहानि भिन्नानि संस्थाप्य वसुभागं विनिक्षिपेत् ।
पलाण्डुस्वरसं स्वच्छं वियद्दहीभवन्तथा ॥ १७१३ ॥
दरदाहृिगुणं क्षीरं न्यप्रोधस्य विनिक्षिपेत् ।
प्रज्वालयाग्निमधस्तत्र द्रवसंशोषणावधि ॥ १७१४ ॥
उत्तार्य तामधो लौही स्वाङ्गशीताञ्च कारयेत् ।
युक्त्या दरदखण्डानि सम्यक् सर्वाणि चाहरेत् १७१५ ॥
दरदार्यभागेन चूर्णं देवसुमोद्भवम् ।
प्रसार्य तानि खण्डानि भ्रष्टातकफलानि च ॥ १७१६ ॥
पट्टणानि क्रमेणह चित्याकारतया किरिते ।
सन्ध्यां ह्यव्यञ्जनेन समाच्छाद्य प्रयत्नतः ॥ १७१७ ॥
हव्यवाहं समाज्याल्य निर्धूमान्यपसारयेत् ।
घृतं ज्योतिष्मतीतैलं माषुकैरण्डजे मधु ॥ १७१८ ॥
रक्ताचतुर्गुणानीह शोषयेत्क्रमशः शनैः ।
स्वाङ्गशीतानि चाकृत्य सूत्रभस्मादिकं त्यजेत् १७१९ ॥
रक्तिकाद्रितयञ्चास्य वाजीकरणमुत्तमम् ।
ऊरुस्तम्भामवातातिसारपक्षघादिकान् ॥ १७२० ॥
शीताङ्गं तन्दिक्कण्ठीहृद्यकृद्धिद्रधिपण्डताः ।
नाशयेत्पक्षमात्रेण श्रीसिद्धदरदाह्वयः ॥ १७२१ ॥
वृ. क. वाजीकरणे ।

भाषा—सूरीशिंगरिफे १-१ अथवा २-२ कर्पूके टुकड़े कचेसूतमें सपेटकर साफकड़ाहीमें रखे और शिंगरिफे अठगुना सफेदप्याज और अमरवेलकारस तथा दूना बटकादूध डालकर मन्दाग्नि देकर समप्रदशगुलाकर कड़ाहीको नीचे उतारकर रखले ।

स्वाङ्गशीतलोहोनेपर शिंगरिफेके टुकड़ोंको निकालकर कड़ाहीको साफकर शिंगरिफेसे आधा लवङ्गकाचूर्ण विछाकर शिंगरिफेके टुकड़ोंको रख ६ गुने भिलावे चुनकर दूसरे लवङ्गकेचूर्णसे भिलावोंको ढकदे और धीरे २ आंचे । भिलावे तथा लवङ्ग जलकर निर्धूमहोजाय तब कड़ाहीको उतारकर स्वाङ्गशीतलोहोनेपर राख-हटाकर टुकड़ोंको निकालले और कड़ाहीको साफकर फिर टुकड़ोंको रख घी, मालकामनी, महुआ और एरण्डकातेल, मधु, क्रमशः ४-४ गुना डालकर जलावे । अन्तमें कड़ाहीमें इतनी आंच दे कि निर्धूम होजाय । यह ध्यान रहे कि शिंगरिफ उड़ न जाय । फिर कड़ाहीको नीचे उतारकर टुकड़ोंको साफकर पीसकर रख-छोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे ऊरुस्तम्भ, आमवात, अतिसार, पक्षाघात, शीताङ्ग, तन्दा, श्लेष्म, यक्ष्म, ज्वरवाह, ननुसकत्व इनसबको यह नष्टकर उत्तम वाजीकरणकरताहै ॥ ३७९ ॥

३८० सिद्धनाथरसः

द्वादशभागालिक्तोरेकोनपष्टिरहमनस्विन्याः ।
खेचरजलेन सुदिता स्वच्छेन विशोपितेन भृशम् १७२२
तृणशिशिखिशोष्णपट्टविक-
भागेकयुता रक्तिमिता गुटिका ।
एषा त्रिदोषसागरविशोपिणी
वाडवी गुटिका ॥ १७२३ ॥
र. (मा.), सन्निपाते ।

भाषा—त्रिकटु १२ भाग, शुद्धमेनसिल ५९ भागलेकर बारीकचूर्णकर जलमें छुलीहुई कमीसके नितरेहुए पानीसे १-२ दिन पोडकर चित्रक और अटामाली, मरिच और शुद्धबल्लाग-काचूर्ण १-१ भाग मिलाकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषको नष्टकरतीहै ॥ ३८० ॥

३८१ सिद्धभैरवरसः

पारदं तालकं तुल्यं कुमारीरसमर्दितम् ।
दोलायन्त्रे पचेद्यामं मत्स्यपित्तेन भाचयेत् ॥ १७२४ ॥
चणकद्वयमात्रञ्च देयं मधुकणायुतम् ।
जिह्विकासन्निपातघ्नो रसोऽयं सिद्धभैरवः ॥ १७२५ ॥
वै. थि , बा., जिह्वकसन्निपाते ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और हरितालकी नीलवर्णकमली-कर २-३ दिन धीउवारकेरससे मर्दनकर गोलापनाय पीऊं वारके रसमें दोलायन्त्रे १ पहर स्वेदनकर गुलाबर मछलीके-पित्तकी एक भावना देकर दोचनेप्रमाण गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह त्रिदोष-को नष्टकरताहै ॥ ३८१ ॥

३८२ सिद्धमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽष्टगुणे पचेत् ।
पुननेया त्रिवृद्धघोषं विद्धर्गं देवदाकरम् ॥ १७२६ ॥

द्विनिशो पुष्करं वह्निं दन्ती चर्व्यं फलत्रिकम् ।
 कुटजस्य फलं तिस्रा पिप्पलीमूलमुस्तकम् ॥१७२७॥
 विपञ्च प्रतिकर्षं स्याच्चूर्णांश्चैत्य विमिश्रयेत् ।
 मण्डूरस्य च पाकान्ते कोलमानं वर्तयित्वा ॥१७२८॥
 पाण्डुरोफोद्रानाह शूलार्तिहृमिगुल्मनुत् ।
 इत्येवं सिद्धमण्डूरः सर्वरोगविनाशकृत् ॥ १७२९ ॥
 नि. र, र, र, च. रा, वै. चि, र का, र क यो, ना वि.
 पाण्डुरोगे ।

टि०—चरकीयपुनर्नवामण्डूरेण बहुलाशेज्य सादरयमावहदपि विप
 सुतत्वात्सतन्नाया स्यापित ।

भाषा— ८ पल मण्डूरभस्मको अठगुने गोमूत्रमें पकावे ।
 गाढाहोनेपर पुनर्नवा, निशोत, त्रिकटु, विडङ्ग, देवदाह, दोगों-
 हल्दी, पोहङ्गरसूल, चित्रक, दन्ती, चर्व्य, त्रिफला, इन्द्रजव,
 कुटकी, पिपलासूल, नागरमोया, शुद्धवधनाग, इनसमरा चूर्ण
 १-१ बर्ष मिलाकर उतारले । उदाहोनेपर झरेपर बराबर गोलिये
 बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचि
 तानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, शोथ, उदररोग, आनाह, चूल,
 किमि, गुल्म इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३८२ ॥

३८३ सिद्धयोगः

हरीतकीगोक्षुरलोहभस्म
 समांशैर्किरिश्चुरको द्विभागः ।
 सिताक्षिभागं तुहिन्दोदपीतं
 प्रमेहसन्देहमपाकरोति ॥ १७३० ॥

रसायनस, प्रमेहाधिकारः ।

भाषा—हर्ष, गोखरू, लोहभस्म १-१ भाग, तालमखाना
 और शकर २-२ भागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे
 ३-३ मासे दूध अथवा ठेपानीकेसाथलेनेसे यह प्रमेहमानको
 दूरकरताहै ॥ ३८३ ॥

३८४ सिद्धरसः

रसं घञं स्पर्शकान्तं मुण्डं तन्मारितं समम् ।
 माक्षिकं गन्धकं शुद्धं सर्वं जम्बीरकद्रवम् ॥ १७३१ ॥
 सप्ताहं मर्दयेत्खल्वे तद्गोलिञ्चान्धितं पुरेत् ।
 भूधरे दिनमेरुन्तु ख्यातः सिद्धरसः परुत् ॥ १७३२ ॥
 भापेकं मधुना लेह्यं वर्षान्मृत्युजरापहम् ।
 दिव्यकायो नरः सिद्धो भवेद्विष्णुपारुक्रमः ॥१७३३॥
 श्वेतापुनर्नवासूलं क्षीरपिष्टं पलम्पिबेत् ।
 भक्षयेत्पलिकादौ वा क्रामकं परमं रसे ॥ १७३४ ॥
 रसायनतं, रसायने ।

भाषा—पारा, हीरा, सुवर्ण, कान्त, मुण्ड, सोनामाखी
 इनसबकीभस्में और शुद्धगन्धक सब समभागलेकर नीलवर्णकज-
 लीकर जमीरीकेरससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलाबनाय धराव
 सम्पुटमें बन्दकर मूषरयन्त्रमें एकदिनकी अभिदेवे । स्वाज्ञवीतल
 होनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधुकेसाथ

लगातार १ वर्षतकलेनेसे मृत्यु और युवापेको नष्टकर दिव्यकाय
 और दीर्घायुको करताहै । एक अथवा आधापल पुनर्नवाकीजइको
 दूधमें पीसकर पीनेसे रसका शरीरमें कामणहोताहै ॥ ३८४ ॥

३८५ सिद्धलक्ष्मीश्वररसः

अष्टांशदेहमचपले शिरिमूषिकायां
 सञ्चार्य पद्गुणगलि क्रमशोऽधिकञ्च ।
 ऊर्ध्वं पयोऽग्निमघरे विनिधाय धीराः
 सिद्धिं समस्तकरणे स्वक्रे कुर्यात् १७३५
 धृ यो. त, रसायनस, यो म, र, मृ चाजीकरणे ।

टि०—योगमहाशैवे “ससोध्य पिण्णैश्चानसोय शतादागन्धैर
 लम्बवीये । श्रीनिद्धलक्ष्मीसुविलागनामा पीषूपिण्णदारसम्पयुक्त ॥”
 इत्यादिना सुषापिण्ड इति नाम स्थापितम् ।

भाषा—अग्निमें रस्तीहुईमूषामें सुसुक्षित पारेको रख अष्ट-
 माशसुवर्ण और पद्गुणगन्धक अथवा इमसेभी अधिक क्रमपूर्वक
 जाणकरे । सुवर्णजाणकरनेकेबाद पारेका वजनकरके देखे । यदि
 अधिक वजन हो तो बाज्रोंमें दोलायत्रसे स्वेदनकरे । समदा
 आनेपर प्रथमचन्द्रोदयको क्रियासे चन्द्रोदयबनावे और इससे
 रसायन अथवा धातुवादकी क्रियायें सिद्धकरे ॥ ३८५ ॥

३८६ सिद्धवटी

शुद्धं सूतं तथा गन्धं शृङ्गिकं सैन्धवं समम् ।
 सचोगोवत्सविष्टाञ्च द्रवैर्ब्राह्मया विमर्दयेत् ॥ १७३६ ॥
 गुटिका यद्राकारा भक्षिता रोगनाशिनी ।
 किरातादिगणेनेयं सन्निपातं नियच्छति ॥
 कण्ठकुञ्जं चिरोपेण कण्ठामयविनाशिनी ॥ १७३७ ॥
 नि. र, र सु. र को, कण्ठकुञ्जपरिपाते ।

टि०—“किरातकटुकाकाकुञ्जकण्ठकीरानीकलिद्रुलिगिमामया
 कटुबकरफलाशुभ्रि । विषामलकुपुष्करानलकुलीरशृङ्गीवृषे महीपपस
 लैर्य अयाति कण्ठकुञ्ज गण” ॥” इति किरातादि गणः ।

भाषा—शुद्धपारा, गन्धक, वधनाग, सैधानमक और तत्काल
 जन्मेहुए बड़ेकीविष्टा समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर ब्राह्मी-
 केरससे १-२ दिन मर्दनकर बेरबराबर गोलियानाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली किरातादिवायकेसाथदेनेसे सन्निपात, खास-
 कर कण्ठकुञ्ज और कण्ठरोगोंको यह नष्टकरतीहै । चिरायता,
 कुटकी, पीपल, इन्द्रजव, मटकटैया, कचूर, बहेड़ा, देवदाह, हर्ष,
 गिचं, कायफल, नागरमोया, अतीश, आंवले, पोहङ्गरसूल, चित्रक,
 वाक्फासींगो, अहुसा येसब समभागलेकर जवउट बनाकर रखे ।
 इसमेंसे १-१ टोलेका चतुर्मासावशिष्ट क्षाय बनाकर १॥ मासे
 सोंठका प्रशेषदेकर पिलावे यह किरातादिबाधहै ॥ ३८६ ॥

३८७ सिद्धसावरयोगः

मृताग्रं विशतिपलं मृतलोहस्य पञ्चकम् ।
 गन्धकं चेपुपलिकं निमि द्विगुणमाशिरम् ॥१७३८॥
 पथ्या शतपलं योज्यं धात्रीपलशतद्वयम् ।
 सर्वमेकत्र तच्चूर्णं जम्बीरं मर्दयेद्विनम् ॥ १७३९ ॥

भृङ्गीपुनर्नवाद्रव्यैः पातालगगर्डीरसैः ।
 भङ्गातद्विकोरुष्ण्टा द्वास्तिशुण्डी तु लाङ्गली ॥१७४०॥
 क्षीरिणी जलकुम्भी च प्रत्येकं प्रत्यहं द्वयैः ।
 भावयेन्मर्दयेदित्यं मध्याज्याभ्यां विलोडयेत् ॥१७४१॥
 क्षिग्धभाण्डे स्थितं खादेत्प्रित्यं निकृष्टयं क्षयम् ।
 सिद्धसायवरयोगोऽयं त्रिदायाशांभि नाशयेत् ॥१७४२॥
 यो. म., र. का., र. को., अशोऽधिकारे ।

भाषा—अन्नभस्म २० पल, सोहमन्म और शुद्धगन्धक ५-५ पल, शुद्धगोनामाखी ६० पल, हरे १०० पल, आंवले २०० पल मेर सरका बारीकचूर्णर जवारी, भंगरा, पुनर्नवा, पातालगगर्डी, भिलोसो, चित्रक, कटगरेया, हाथीशुण्डी, करि-
 दारी, सिती, जडुम्भी इनप्रत्येकके स्वसोसे १-१ दिन मर्दनकर मधु और घी उचिन्माप्राप्तं मिलाकर धीके बनेनेमें रखजोड़े । इसमेंसे ८-८ मादो प्रतिदिन उचिन्मापाननेमाय-
 लेनेसे त्रिदोषप्रसमातीर नष्टहोताहै ॥ १७४ ॥

३८८ सिद्धमूत्ररसः

पत्रीरुनं शुद्धसूतं सुवर्णं रौप्यमेकतः ।
 मुक्ताफलं ययक्षारं तोलेकैकं प्ररूपयेत् ॥ १७४३ ॥
 रक्तोत्पलद्वलद्रव्ये मर्दयेत्पिपिहिकाठितम् ।
 पशुणं गन्धकं दत्त्वा मर्दयेदिससहयम् ॥ १७४४ ॥
 क्षिप्त्या काचघटीमये सप्रिन्दुधे त्रियामकम् ।
 सिक्ताख्ये पचेच्छीते सिद्धमूत्रन्तु भक्षयेत् ॥१७४५॥
 पञ्चरक्तिप्रमाणेन मुशलीशकरान्वितम् ।
 शुक्रवृद्धिं करोत्येष भजभङ्गञ्च नाशयेत् ॥१७४६ ॥
 दुर्बलं षडुरत्ययं घलयुक्तं करोत्यसौ ।
 मुद्रगर्भं घृतं क्षीरं शालयः क्षिग्धमामियम् ।
 पारायतस्य मांसञ्च तित्तिरिष्य सदा हितः ॥ १७४७ ॥

मे र., र. क., ध्वजमहो, र सु. वाजीवरणे ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्ण और चांदीकेबर्क, मोती, यव-
 क्षार १-१ तोलाकेकर पिट्टी बनाय लालमलकेपूलीकेरससे १-२ दिन मर्दनकर ६ गुना गन्धक बालकर दोदिन मर्दनकर
 मुखाकर ६-८ पत्रमिठी दीर्घे आतशीशीशीमें बालकर बालुका-
 यत्रमें रस ४ पहरकी अमिदेवे । स्वाश्वशीतल्लोनेपर निकाल
 कर रखजोड़े । इसमेंसे ५-५ रतीं सुशली और शकरकेवाय-
 देनेसे शुक्रदानि, ध्वजमह, अत्यन्तशुभता, इनसत्रको यह नष्ट-
 कताहै । पशुपुष्कमग, इष, सपेदचावल, क्षिग्धमांस, कजूतर
 और तीतरका मांस हितकरहै ॥ ३८८ ॥

३८९ सिद्धाभ्रकरसः (लघ्वादिः)

समांशं रसगन्धाम्नं द्रव्यञ्च विशोषितम् ।
 लोहखल्वे विनिःक्षिप्य गव्याज्येन समन्वितम् १७४८
 मर्दकेनाऽपि लोहेन मर्दयेद्विषसत्रयम् ।
 द्रोणीसुखल्यां न्यसेत्खल्वे साङ्गारायां प्रयत्नतः १७४९

इति सिद्धरसेन्द्रोऽयं लघुः सिद्धाभ्रकोमतः ।
 यल्लुहयोरमोजीरैः धारिणा सहितःप्रमे ॥ १७५० ॥
 पीतो हरति घेगंन प्रहर्षामतिदुस्तराम् ।
 अतिसारं महाघोरं सातिसारं ज्वरन्तथा ॥ १७५१ ॥
 पाचनो दीपनो हृद्यो गात्रलाघयकारकः ।
 नागाशुनेन कथितः सद्यः प्रत्ययकारकः ॥ १७५२ ॥
 र. को., र. चं., र सु. प्रदग्याम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और स्त्री शिगरिक, अन्न-
 भस्म सर समभागलेकर गायका घी बालकर लोहेके तप्तखल्वमें
 ३दिनतक मर्दनकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रतींवीमात्रा २ मादो-
 जीरमें मिलाकर जलकेताप प्रात काललेनेसे भयङ्कर संप्रदहणी,
 अतियार, ज्वरातिसार इनसत्रको यह नष्टकरताहै ॥ ३८९ ॥

३९० सिद्धामृतारसः

सौराण्यधाद्य प्रयो भागा भागेकं स्वर्णं गैरिकम् ।
 पूर्णं कृत्वा मापमात्रं गोदुग्धस्यानुपानतः ॥ १७५३ ॥
 प्रभातराले संसेव्यमम्लतैलादि यजेयेत् ।
 शिरोरुमं शिरोरोगमम्लपित्तं विनाशयेत् ॥ १७५४ ॥
 सर्वाणं पित्तभयाघ्नो गान्नाशयेत्प्राऽप्य संशयः ।
 सिद्धामृतरसः स्यातः पूज्यापादेन निर्मितः ॥ १७५५ ॥
 रसायनसं., अम्लपिते ।

भाषा—सुनीफिटकड़ी ३ भाग, सोनागेहू १ भागलेकर
 १-२ पहर घोटकर रखजोड़े । इसमेंसे १-१ माद्या प्रात काल
 गोदुग्धकेसाप देनेसे शिरोरुम, शिरोरोग, अम्लपित्त, पित्तज
 समस्त उपरव इनसत्रको यह नष्टकरताहै ॥ ३९० ॥

३९१ सिद्धेश्वररसः (महादिः) १

शुद्धं सूतं शिलां ताप्यं मृताम्रं मर्दयेत्समम् ।
 जातोफलं लघ्नैले प्रसूनं तद्विभागिकम् ॥ १७५६ ॥
 वृणयेत्सर्वमेकत्र रसः सिद्धेश्वरो महान् ।
 क्रियुञ्जं भक्षयेत्सोद्वैरनुपानमधोच्यते ॥ १७५७ ॥
 पेटोलद्विनिशानिभ्यतिक्रोशातकीवचाः ।
 पृथ्यां यपि समं कार्यं यल्लघूतं तदाहरेत् ॥ १७५८ ॥
 स्याद्यपादयुतं चाज्यं पचेदाज्यावशेषकम् ।
 रतदाज्यं पलादन्तु ह्यनुपानञ्च कुमुधुत ॥ १७५९ ॥
 लेपं सिद्धरसेनैव सुसंस्थाने नियोजयेत् ।
 त्वष्ट्रे लाशुनें पिण्डं बद्धा स्फोटः प्रजायते ॥
 पुनर्लेपं पुनर्यद्धा विनश्येत्सुप्तिमण्डलम् ॥ १७६० ॥
 र. बा., बुध्वाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और मैनसिल, सोनामाखी और अन्न-
 भस्म १-१ भाग, जायफल, लौंग, इलायची, आककी जड़की
 फाल २-२ भागलेकर सबका बारीकचूर्णकर पारेगन्धकी नील-
 वर्णकजलीमें मिलाय बीशीमें रखजोड़े । अथवा आककीजड़की-
 थालकेसाप अथवा स्वरसमें १-२ दिन घोटकर २-२ रतीकी
 मीलियावनाकर रखजोड़े । इसमेंसे २-२ रती मधुकेसापदेक

पटोपत्र, हल्दी, दासहल्दी, नीमकीछाल, कड़वीतोड़केफल
अथवा बीज, वच, हरे, मुडगठी सब समभागलेकर जबकुट चूर्ण-
कर चौमुनेपानीमें पादावशेषकाथर चतुर्थांश गायकाषी डालकर
पकावे । धी वाकीरूनेपर उताकर छानले । इसमेंसे आधापल
ऊपर पिलानेमें सुप्त और मण्डलकुष्ठ नष्टहोतेहैं । सुप्त और मण्डल
स्थानमें लघुनकरसेमें मिलाकर इसरसकालेपकरे और ऊपरसे
लघुनकार्मकवाधे । ऐसे बारम्बारकरनेसे कुष्ठस्थानमें फोड़ाहोकर
अच्छा होजायगा ॥ ३९१ ॥

३९२ सिद्धेश्वररसः (द्वितीयः)

नागं वङ्गं भस्मसूतं लोहं ताम्रं समं समम् ।
हालाहलं त्रिभागं स्यादेकीकृत्य विचूर्णीयेत् ॥ १७६१ ॥
आटरूपाग्निनिर्गुण्डीमहाराष्ट्रीपुनर्नवैः ।
धत्तूरविजयामुण्डीसमुद्रशोषजैरपि ॥ १७६२ ॥
मत्स्यमाहिपमायूररुज्जागवाराहसम्भयैः ।
पित्तैः समस्तैर्व्यस्तैर्वा भावयेच्च भिषग्वरः ॥ १७६३ ॥
गुञ्जामाप्रयोगेण चार्द्रकस्वरसेन तु ।
रसः सिद्धेश्वरो नाम सन्निपातकुलान्तरुः ॥ १७६४ ॥
र. क. यो., सन्निपाते ।

भाषा—नाग, वङ्ग, लोह, ताम्र और पारदभस्म १-१
भाग, शुद्ध बडनाग ३ भागलेकर वारीकचूर्णकर अड़दा, चित्रक,
निर्गुण्डी, मराठी, पुनर्नव, धत्तूर, भाग, गोरखमुण्डी और
समुद्रशोषकेसोते १-१ दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, मोर,
बकरा और सुअरकेपिसोते १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी
गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके
रसकेसाय देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै ॥ ३९२ ॥

३९३ सिन्दूरभूषणरसः (प्रथमः)

अन्नकं रससिन्दूरं विद्रुमं मौक्तिकन्तथा ।
प्रन्थिकं टङ्गुणञ्चैव समभागं विनिक्षिपेत् ॥ १७६५ ॥
मातुलुङ्गरसेनैव मर्दितं त्रिदिनं भवेत् ।
मधुना सुषयेन्नित्यं कुष्ठप्रादशकामलाः ॥ १७६६ ॥
विंशतिं श्लेष्मरोगांश्च चत्वारिंशच्च पित्तजान् ।
अशीतिं वातजात्रोगान्हन्ति शूलशतत्रयम् ॥ १७६७ ॥
प्रमेहान्विंशतिं हन्यात्पण्डोऽपि पुरुषायते ।
बालो वाऽपि च बृद्धो वा गर्भिणी वापि सेवयेत् ।
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धमापितः ॥ १७६८ ॥
रसायनस., वै वि (ल), रसायने ।

टि०—रसायनसमूहस्य द्वितीयस्थाने विद्रुममौक्तिकस्थाने गन्धक
प्रथिवी तिथौ मधु चरुस्वरसेश्च भावनां दत्त्वा पाठान्तर प्रक
ल्पिते दृश्यते ।

भाषा—अन्नकभस्म, रससिन्दूर, प्रवाल और मोतीकी-
भस्म, गठिन, मुनासुहागा सब समभागलेकर बिजोरेकेरससे ३
दिनतक मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय देनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ,

कामला, २० प्रकारके कफरोग, ४० पिनरोग, ८० वातरोग,
३०० शूल, २० प्रमेह, नपुंसकता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

३९४ सिन्दूरभूषणरसः (द्वितीयः)

वैकान्तं जातरूपञ्च घञ्जयिद्रुममौक्तिकम् ।
भुजङ्गमन्नकं कान्तं रससिन्दूरकं क्रमात् ॥ १७६९ ॥
पञ्चचैकभागाः स्युश्चतुर्भागास्तथाऽपरं ।
जातीपुष्परसै रक्तागस्त्यपुष्पेक्षुवालकैः ॥ १७७० ॥
वरीलामज्जवाराहीहिमशात्मलिवारिभिः ।
प्रत्येकैश्च दिनं मर्द्य मापमानन्तु सेवयेत् ॥ १७७१ ॥
इष्टमुष्णादिकं योज्यं कुष्ठप्रादशकामलाः ।
विंशतिं श्लेष्मिकात्रोगांश्चत्वारिंशच्च पित्तकान् १७७२
अशीतिं वातजात्रोगान् हन्ति शूलशतत्रयम् ।
प्रमेहाद्यां महान्वाधीन्सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ १७७३ ॥
अतिसारभवात्रोगांश्छेपमापण्डुज्वरपञ्जयेत् ।
द्वन्द्वोत्पञ्च त्रिदोषोत्थं राजरोगभयङ्करम् ॥ १७७४ ॥
वन्ध्यापि लभते पुनं पण्डोऽपि पुरुषायते ।
प्रदं सर्वग्रन्थीश्च नाशयेद्भूलरोगकम् ॥ १७७५ ॥
बालबृद्धादिभिः सेव्यं गर्भिणीभिर्विशोपतः ।
तत्तत्रोगानुपानञ्च हितं पथ्यञ्च दीयते ॥
सिन्दूरभूषणो नाम रेवणासिद्धमापितः ॥ १७७६ ॥
र. क. यो. सर्वरोगे ।

भाषा—वैकान्त ५ भाग, सुवर्ण और हीरा १-१ भाग,
प्रवाल मोती, नाग, अन्नक, कान्त इनकीभस्में और रससिन्दूर
४-४ भाग लेकर वारीकचूर्णकर चमेली और लालअगस्त्यके
फूल, ईख, सुगन्धवाला, धातावर, खस, वाराहीबन्द, कपूर,
संमलकामुसला इनप्रत्येकके यथासम्भव स्वरस अथवा बायोसे
१-१ दिन मर्दनकर उड़दवारावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इन-
मेंसे १-१ गोली गरमपानी अथवा समयोचितानुपानकेसाय
देनेसे १८ प्रकारकेकुष्ठ, कामला, २० प्रकारकेकफरोग, ४०
पित्तरोग, ८० वातरोग, ३०० शूल, प्रमेह, बवासीर, १३ सन्नि-
पात, अतिसार, पाण्डु, ज्वर, द्वन्द्वोत्प अथवा त्रिदोषज भय-
ङ्करराजरोग, वन्ध्यापन, नपुंसकत्व, प्रदर, सप्तप्रकारकीगर्द,
गलरोग, गर्भिणीरोग, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९४ ॥

३९५ सिन्दूरभूषणरसः (तृतीयः)

सुवर्णं रससिन्दूरं कर्पूरञ्चाहिफेनकम् ।
कर्पमानं पृथङ्मोचसारेलावशरोचनाः ॥ १७७७ ॥
कर्पद्वन्द्वं पृथक्सर्वं मुस्ताकायेन भावयेत् ।
त्रिगुञ्जां घटिकां कृत्वा दापयेत्कुट्जायन्मसा ॥ १७७८ ॥
नाशयेदतिसारांश्च विस्वीचीप्रहणीगदान् ।
पलवर्णांश्चिजननो नासा सिन्दूरभूषण ॥ १७७९ ॥

वृ. क. अतिसारे ।

भाषा—सुवर्णभस्म, रससिन्दूर, शुद्धकपूर और अजीम
१-१ कर्प, मोचरस, इलायची, घंशलोचन २-२ कर्प लेकर

वारीकचूर्णकर नागरमोथेकेकाशसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली कुरैयाकी छालके काठेके साथ देनेसे अतिवार, हैजा, प्रदग्गी, बल-वर्ण और अमिक्री मन्दाता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ३९५ ॥

३९६ सिन्दूरभूपणरसः (चतुर्थः)

शुद्धं सूतञ्च सिन्दूरं पलैकैकं विमर्दयेत् ।
 वासारसेन यामैरुं तेन कुर्याच्च चक्रिकाम् ॥ १७८० ॥
 सुषुकां कारयेन्मृषामुत्तानां द्वादशगहुलाम् ।
 तन्मध्ये गन्धकं शुद्धं क्षिपेत्पलचतुष्टयम् ॥ १७८१ ॥
 पूर्वार्त्तां चक्रिकां तत्र धृत्या लिप्त्वा पुष्टेह्यु ।
 जीर्णं गन्धे तमुद्धृत्य चक्रिकां तां विचूर्णयेत् ॥ १७८२ ॥
 चूर्णाद्दशगुणं योज्यं मृतलोहञ्च मर्दयेत् ।
 लघुनेन दशांशेन चणमाना घटीः किरित् ॥ १७८३ ॥
 यातपाण्डुहरः सिद्धो रसः सिन्दूरभूपणः ।
 पिवेच्चानु ह्यपामार्गस्यैरण्डस्य च मूत्रिकाम् ॥
 तर्कः पिष्ट्वाऽथ कर्पैकां हन्ति पाण्डुं सक्तामलम् १७८४
 र. र. स., र. च., र. र., र. मु., व. रा., र. का., वै. वि., र. को कामलापाण्डुधिकार ।

भाषा—शुद्ध पाटा और सिन्दूर १-१ पलकेकर एकएकर अड़सेकेरससे घोटकर चक्रिका बनाय १२ अहुलकी खड़ी मृषामें रस ८ पल गन्धक डालकर लघुपुट्टी आवेदे । गन्धक-जीर्ण होनेपर चक्रिकासे दशगुनी लोहमस मिलाकर दशांश लहसुनका बल्क मिलाय घोटकर चनेप्रमाण गोलिये बनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली खाकर अगामार्ग अथवा एरण्डकी-जड़ १-१ कर्प छालमें पीसकर पीनेसे वातपाण्डु और कामला नष्टहोतीहै ॥ ३९६ ॥

३९७ सिन्दूरयोगः

सिन्दूरं कानकं धौजं विजयेश्वरयोजकम् ।
 जातीफलं जातिपत्री कटुशिष्टुमफेनकम् ॥ १७८५ ॥
 समुद्रशोपसंयुक्तं लवङ्गञ्च सुतं तथा ।
 माययोज्जिजायकार्थं श्यायानुष्कां कृतां घटीम् ॥
 खादेच्च रक्तिकां नित्यं शुक्रस्तम्भः प्रजायते ॥ १७८६ ॥
 ध, बाजीकरणे ।

भाषा—सिन्दूर, शुद्ध धतूरेकेबीज, भाग, तालमखाना, जायफल, जावित्री, कड़वेसहजिनकीछाल, अहीम, समुद्रशोप, लौंग सब समभागकेकर वारीकचूर्णकर भांगके स्वरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाय छायाशुक्रकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह शुक्रका स्तम्भन करतीहै ॥ ३९७ ॥

३९८ सिन्दूरादिवटी

सिन्दूरं गोस्तनीं शूद्रं भश्यते मासपञ्चकम् ।
 अरुन्दरास्थिप्रदरं नाशामायाति निश्चितम् ॥ १७८७ ॥
 व रा, प्रदे ।

भाषा—सिन्दूर २ रती, आवजोवा (बड़ीद्रास) और मधु १-१-२। भासो मिलाकर प्रतिदिन खाकर दूषणीनेसे रक्त और अस्थिप्रदर नष्टहोतेहै ॥ ३९८ ॥

३९९ सिंहनादरसः (प्रथमः)

लोहपात्रे शुद्धगन्धे द्राविते तत्र निक्षिपेत् ।
 शुद्धं सूतं समं चाल्यं व्याघ्रीद्रावं द्वयोः समम् ॥
 निर्गुण्डच्युत्थं करञ्जोत्थं तुल्यं द्रावं विनिक्षिपेत् ।
 पचेन्मृद्वक्षिना तावथावच्छुष्यं द्रवत्रयम् ॥ १७८९ ॥
 विपं पादयुतं चूर्ण्य सिंहनादोत्तमो रसः ।
 शुक्रामात्रं प्रदातव्यं सन्निपातज्वरान्तकम् ॥ १७९० ॥
 अनुपानैः पिवेत्कार्यं कण्टकार्याः सपुष्करम् ।
 शुद्धचीनागरे युक्तमरुचौ श्वासकासयोः ॥ १७९१ ॥
 र. को., र. स., वि र. भ, र. र., र. क ल, र क, र का, रसायनसं, सन्निपाते ।

टि०—कुचविद्व व्याघ्रीरयाने मार्गो निवोचि। र क ल. नारास-हरस रति नाम । र का येववादरस इति नाम ।

भाषा—लोहेकेपात्रमें शुद्धगन्धक डालकर गलावे । गल-जानेपर बराबरका पाटा डालकर चलावे । एकगोबधोनेपर दोनोंकी बराबर भटकटैयाका स्वरस डालकर चलावे । गूखनेपर उतनाही निर्गुण्डी और करञ्जाका स्वरस ममसे डालकर चलावे । रस-सूखनेपर चतुर्थांश शुद्धगन्धनाग डालकर उतारले और १-२ दिन मर्दनकर रखलेवे । इसमेंसे १-१ रती मधुपूरिहके साथ चटा-कर भटकटैयाकेजायमें पोहवरमूलका प्रक्षेप देकर पिलानेसे सन्नि-पात नष्टहोताहै । गिलेय और सौंठकेजायकेसाथ लेनेसे अरुचि, श्वास और कास नष्टहोतेहै ॥ ३९९ ॥

४०० सिंहनादरसः (भुवनेश्वरः) २

शुद्धं सूतं विपं गन्धं समं मण्डिशिलारसम् ।
 दन्तीयोजं समं रखचे मर्दयेद्वियसद्वयम् ॥ १७९२ ॥
 कारवहोरसेः सम्यक् पुटपाके च योजयेत् ।
 उद्धृत्य चूर्णयेत्स्वदे द्वियामं चानुपानतः ॥
 शुक्रामात्रं प्रदातव्यं विलोमकातनादानम् ॥ १७९३ ॥
 व. रा., वै. वि, विलोमकाते ।

टि०—वैषचित्नामगौ द्वितीरयाने (ज्वरधिकारे) गौरीपापाग मप्रथ विष मण्डिशिलारमन्त्रियावाक्ये विंगोदग्नि। नाम च सुवने-वर रति रसायिनम् । अत्यन्तकटुद्विर्वनम्भारनेच्छा वेपार्थि अस्मिन्नेवले गौरीपापागने निश्चिय रस सन्नापत्रामन्था तु बवापस्वित्र व-योग शेष-निधि सुधीभिराकननीयम् ।

भाषा—शुद्ध पाटा, बज्जनाग, गन्धक, मैनसिल, वगिरिया जनालोटा सब समभागकेकर नीलकण्ठहत्तीहर दोदिनग-केलेक रससे मर्दनकर गोलापत्राय एरण्डपूरिहके पानोंसे सपट पुष्टपाककरे । खाइसोतल होनेपर १-१ रतीकी गोलियां बना-कर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह विलोमकातना नाशकरताहै ॥ ४०० ॥

४०१ सिंहप्रतिपालनम्

सूतं गन्धकवत्सनाभगरलं चैकैरुभागान्वितं,
सर्वं हंसपदीन्द्रवेण मिलितं शुद्धैरुमात्रं भजेत् ।
तैलाभ्यङ्गजलोपचारसहितं पथ्यञ्च दध्योदनं,
नानादोषसमुद्भवान्विजयते सिंहप्रतीपालनम् १७९४
व रा., ज्वराधिकारे ।

टि०—यद्यपि कृतीकर्षसुन्दरस्याऽप्यस्मिन्नैव रसेऽन्तर्भावः कर्तुं
मुचितः तथाऽप्यस्य रसस्य गल्पयुक्तयाऽतिगीर्णवीर्यवाद्द्रव्योरपि
स्वतन्त्रतैव पाठो गृहीतो । अमृतपाथे तु सामुद्रिकतया स्वतन्त्रता सुवरा
मेकाऽस्तीति विद्वद्भिरावलनीयम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, चक्रनाग और सर्पविष सम-
भागलेकर नीलवर्णकजलीकर हसराजकेरसे १-२ दिन मर्दन
कर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली उचितानुपानकेसाथेकर तैलाम्यङ्गकराके मत्पेपर ठंडेनली
घारा देवे । अत्यन्त भूय लगनेपर दहीभातका भोजन करावे ।
इससे नानातहके दोषोंसे जायमान ज्वर नष्टहोतेहै ॥ ४०१ ॥

४०२ सिंहशार्दूलरसः

सुवर्णं रजतं कान्तं ताम्रञ्च त्रुपु सीसकम् ।
भस्मीकृत्य च तत्सर्वं क्रमवृद्धया समांशकम् १७९५
व्योमसत्त्वभवं भस्म सर्वैस्तुल्यं प्रकल्पयेत् ।
फज्जलीं सूतराजस्य सर्वैरेतैः समांशिकाम् ॥ १७९६ ॥
प्रद्राव्य लोहभस्मादि सर्वं तत्र विनिक्षिपेत् ।
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं सद्रथं हि समाहरेत् ॥ १७९७ ॥
ततो विचूर्ण्य तत्सर्वं सप्तधा परिभावयेत् ।
अङ्गुलीवीजसम्भृतकायलेहेन यत्नतः ॥ १७९८ ॥
रुद्धं तदन्धमुपायां सर्वं संस्वेदयेच्छनैः ।
इतिस्दिदो रसेन्द्रोऽयं चूर्णितः पटमालितः ॥ १७९९ ॥
कान्तपात्रस्थितै रान्नौ जलैस्त्रिपलसंयुतैः ।
घृह्णद्भयमितः प्रातः पातव्यां मेहरोगिणा ॥ १८०० ॥
मृगचारिमृगोष्ठेण मेहवृहद्विनाशनः ।
निर्विद्योऽयं रसश्चैव शार्दूल इति नामतः ॥ १८०१ ॥
दीपनः पाचनो रुच्यो ग्रहणीपाण्डुनाशनः ।
आमग्नौ रश्चिह्नसर्वरोगग्नौ योगसंयुतः ॥ १८०२ ॥
र. को , प्रमेहाधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, कान्त, ताम्र, वक्र, नाग इनकीभस्में
क्रमवृद्धभागसे लेकर सबकीबराबर अत्रकसत्त्वभस्म मिलाकर मन्की
बराबर शुद्धपारेगन्धककी नीलवर्णकजलीकी धीपुतीहुई कड़ाहीमें
घेरकेकोयलोपर गलाकर समस्तको मिलाकर उतारले और घोटकर
कजली बनाले । फिर इसके अङ्गुलीकीमञ्जाकेकायकेपनसे ७ दिन
घोटकर गोलावनाय अन्यमुपायां बन्दकर मूधरयन्त्रमें स्वेदनकरे ।
स्वाश्रुशीतलहोनेपर निकालकर चूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ६-६
रतीकीमात्रा कान्तपात्रमें रातभर रज्जेहुए ३ पल जलसेसाय प्रातः
कालनेनेसे समस्तप्रमेहोको यह नष्टकरताहै । यह दीपन और
पाचनहै, ग्रहणी, पाण्डु और आमग्नौ नष्टकरताहै ॥ ४०२ ॥

४०३ सीसरसायनम्

द्रुतद्रावं महाभारं छेदे कृष्णं समुज्ज्वलम् ।
प्रतिगन्धं बहिः कृष्णं शुद्धं सीसमतोऽप्यथा ॥ १८०३ ॥
अत्युष्णं सीसकं क्षिगंधं तिकं वातरुपापहम् ।
प्रमेहतोयदोपत्तं दीपनं चामवातनुत् ॥ १८०४ ॥
सिन्धुवारजटाश्राथे हरिद्राचूर्णकं क्षिपेत् ।
द्रुतनागश्च निर्गुड्यास्त्रिवारं निक्षिपेद्रसे ॥ १८०५ ॥
नागः शुद्धो भयेदेवं मूच्छास्फोटादि नाचरेत् ।
तिर्यगाकारचूर्णं तु तिर्यग्वननं घटं क्षिपेत् ॥ १८०६ ॥
तद्भस्मञ्च चिना सर्वं गोपयेद्यत्नतो मृदा ।
प्राष्ठयन्नाभिधे तस्मिन्मध्ये सीसं विनिक्षिपेत् १८०७
पलविंशतिसम्मानमधस्तादीवानलं क्षिपेत् ।
द्रुते नागे क्षिपेत्सूतं शुद्धं कर्षमितं शुभम् ॥ १९०८ ॥
विमृद्य निक्षिपेत्क्षारमेकं हि पलं पलम् ।
अर्जुनाख्यस्य वृक्षस्य महाराजतरोरपि ॥ १८०९ ॥
दाडिमस्य मयूरस्य क्षिप्त्वा क्षारं पृथक् पृथक् ।
एवं विंशतिरात्राणि पचेत्तीव्रेण वह्निना ॥ १८१० ॥
विघट्टयन् दृढं दोर्भ्यां दूर्भ्यां चाथ प्रयत्नतः ।
रक्तं तज्जायते भस्म कपोताभं विवर्जयेत् ॥ १७११ ॥
नागं दोषविनिर्मुक्तं जायते तु रसायनम् ।
हतमुत्थापितं सीसं दशवारेण शुद्धयति ॥ १८१२ ॥
तन्मृत सीसकं सर्वदोषमुक्तं रसायनम् ।
एवं नागोद्भवं भस्म ताप्यमस्माद्भागिकम् ॥ १८१३ ॥
पादं पादं क्षिपेद्रस्म शुल्बस्य रजतस्य च ।
कान्ताभ्रसत्त्वयोश्चापि स्फटिकस्य पृथक्पृथक् १८१४
सर्वमेकत्र सञ्चर्य पुटेत्तत्रिफलाभ्रसा ।
त्रिशाह्ननगिरीन्द्रैश्च त्रिशाह्नारं विचूर्ण्य तत् ॥ १८१५ ॥
व्योपपेह्लकचूर्णैश्च समांशैः सह योजयत् ।
मघ्नाप्यसहितं हन्ति प्रलीढं वल्लमात्रया ॥ १८१६ ॥
अशीतिं वातजात्रोगान्धनुर्वातान्विशेषतः ।
कफरोगानशेषांश्च सूयरीगांश्च सर्वशः ॥ १८१७ ॥
श्वसः कामसंक्षय पाण्डुं श्वयथुं शीतकफररम् ।
ग्रहणीमाद्यदोषञ्च वह्निमाद्यश्च दुर्जयम् ॥
सर्वाण्युद्दजदोषांश्च तप्तद्रोगानुपानतः ॥ १८१८ ॥
र चू., वातव्याधौ ।

भाषा—नदी पिचलनेवाला, अत्यन्तवज्रनदार, कादनेमें
उज्ज्वल, दुर्गन्धयुक्त इततहका सीसा कार्यक्षम होताहै । सीसा
अत्यन्त गरम, स्निग्ध और तिकरसयुक्त होताहै । वात, कफ,
प्रमेह, जलरोप, मन्दाग्नि और आमवातको नष्टकरताहै ।
निर्गुण्टीकी जड़केकापमें हल्दीकाचूर्ण डालकर नागको गलाकर
३ बार धुवानेमें मूच्छा और स्फोट नहीं करताहै । टडेचूर्णमें
टडा घषारका गोबरसे तमामको उकड़े केवल मुद्द उधाड़ा रहनेद ।
इसमें २० पल शुद्धसीसको डालकर तीक्ष्ण अमिपलावे । पल
जानेपर १ पल शुद्धगता डालदे और अर्जुन, अमिलकास, अनार,

अपामार्ग इनकाक्षार १-१ पल लेकर योड़ा योड़ा डालकर लोहे-
कीकड़ोसे घोटें । ऐसे २० दिनरात बड़ी आत्पेकर मर्दनकरे ।
इसतरहकरनेसे खालरङ्गी भस्म होगी । कषोतवर्ण हो तो उसे
न लेवे । इसको मिनपञ्चकके योगसे उत्थापितकर फिर पूर्ववत्
भस्मकरे । ऐसे १० बारकरनेसे यह समस्तदोषोंसे निमुक्त धीस
रसायन तैयारहोगी । यह भस्म १ भाग, सुवर्णमाक्षिकभस्म
आधाभाग, ताम्र, रजत, कान्त और अन्नकवत्त, स्फटिमणि
इनकीभस्में प्रत्येक चतुर्थांश डालकर त्रिफलाकेकाषसे एकदिन
घोटकर गोलाबनाया शरावत्सम्पुटमें बन्दकर ३० जङ्गलीकण्डोंकी
आचदे । इसतरह ३० आचें देकर इसमें त्रिफल और विजङ्गका
समभागवृषी मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती मधु और
घीकेसाथ देनेसे ८० प्रकारके वातरोग, खासकर धनुर्वात, कफ
रोग, मूलरोग, श्वस, कास, क्षय, पाण्डु, शोथ, शीतज्वर,
प्रह्वणी, आमदोष, दुर्जय मन्दाग्नि, समस्त उदररोग इनसबको
यह नष्टकरतीहै ॥ ४०३ ॥

४०४ मुखभेदीरसः

रसं गन्धं विपञ्चैव हरितालं मनःशिला ।
टङ्गुणं हिदुलञ्चैव टङ्कं टङ्कं पृथक् पृथक् ॥ १८१९ ॥
मरिचञ्च त्रिफलं स्याज्जैपालं टङ्गुपोडश ।
खल्वे चैतानि निक्षिप्य छागपित्तं मर्दयेत् ॥ १८२० ॥
कार्यां स्विन्नचणाकारां घटिका परमोत्तमा ।
विरैकाय प्रदातव्या शीतश्चानुपिबेज्जलम् ॥
तावद्विरैचयेज्जन्तुं याचदुष्णं न सेचयेत् ॥ १८२१ ॥
र र. कौं, विरेचने ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, वज्रनाग, हरिताल, मैन्सिल,
सुहागा और शिंगरिफ ४-४ मासे, मरिच १२ मासे, शुद्ध
जमालगोटा ४ कषे लेकर चारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्ण
कजलीमें मिलाय एकदिन बकरेके पित्तसे घोटकर भीगेहुए चने
प्रमाण कोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडेजल
केसाथ लेनेसे रचनहोगा, उष्णोपचारकरनेसे बन्दहोजायगा ४०४

४०५ मुखविरेचनरसः (प्रथमः)

शङ्खं दहेद्बौलिकया तु घर्मं
त्वग्द्वुरैर्घर्जितदन्तिवीजम् ।
सन्मन्विशुद्धञ्च नवं नियोजयम्
भागा. शरा. सूतलवो बलेञ्च ॥ १८२२ ॥
विमर्दित. स्यात्सुखरेकनाम्ना
गुञ्जात्रयं साज्यमनुष्णदेयम् ।
न ग्लानिदु खं न च कण्डाहो
ज्वरं निहन्याद्विपमं नवं वा ॥ १८२३ ॥
आम्भानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेचितोऽयं जयतीह रेकः ।
तत्रेण भक्तञ्च घृतेन चारिम-
प्रोगानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२४ ॥
र श, विरेचने ।

भाषा—कण्डोंमें रखकर कीहुई शङ्खकी सपेदभस्म और
शुद्ध जमालगोटे ५-५ भाग, शुद्ध पारा और गन्धक २-२ भाग
लेकर नीलवर्णकजलीकर मधुकेयोगसे ३-३ रत्तीकी गोलियें बना-
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली टडेघीनेसाथ देनेसे विना-
किसीउपद्रवके रचनहोताहै । विषम अथवा नवीनज्वर, आम-
वात, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्तभूख
लगनेपर पुतनेसाथभातदेकर छाछपिलावे । अन्यरोगोंमें औचित्य
देखकर अनुपानवगैरहकी योजनाकरे ॥ ४०५ ॥

४०६ मुखविरेचनरसः (द्वितीयः)

विकटु त्रिफला सूतं सिन्धुटङ्गुणगन्धकम् ।
सर्वैः समानं जैपालं राजयोग्यं विरेचनम् ॥ १८२५ ॥
न ग्लानिदु. खं गुदकण्डदाहो-
ज्वरं निहन्याद्विपजं विकारम् ।
आम्भानिलं पाण्डुजलोदरार्ति
संसेचितोऽयं जयतीह वेगात् ॥
तत्रेण पथ्यञ्च घृतेन चारिमित्रो-
गानुरूपं प्रविचार्य देयम् ॥ १८२६ ॥
र. सु, विरेचने ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, शुद्धपारा, संधानमक, सुहागा
और गन्धक समभाग लेकर सबकीबराबर शुद्धजमालगोटा मिलाय
१-२ दिन मर्दनकर अदरखके रसवगैरहमें १-१ रत्तीकी गोलियें
बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ
देनेसे विषमज्वर, आम्भान, पाण्डु, जलोदर इनसबको यह भङ्ग-
करताहै । गुदा और कण्ठका दाह तथा ग्लानि नहीं होती ।
अत्यन्तभूखलगनेपर घी और छाछकेसाथ भात देवे ॥ ४०६ ॥

४०७ मुखविरेचनरसः (तृतीयः)

रसः क्षारलोहं गदं गन्धकञ्च
विमर्थापि जैपालतैलेन यामम् ।
शुद्धञ्चभ्रगुञ्जामिता स्याच्च मात्रा
सदामान्तरैची मुखप्राग्विरैक ॥ १८२७ ॥
वै वि, टो, रसायनसं, विरेचने । टोडरानन्दे सुखातिरेक
इतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, यक्क्षार, लोहभस्म, कुठ, शुद्धगन्धक
समभागलेकर चारीकचूर्ण जमालगोटेके तैलेसे एष्टाहर मर्दनकर
१-१ रत्तीकी मात्रा गुडमें लपेटकर देनेसे आमामन्त रचन होताहै ॥

४०८ सुखातिरेकीरसः

गन्धानलज्योपरसान्सभूङ्गा
न्वाकल्करान् स्फाटिकटङ्गुणाडवान् ।
सुसर्पारफेनयुतान्सांसा-
न्धिवत्सनामाम्बिन्दिसप्तकं तत् ॥ १८२८ ॥
रसेन भूङ्गस्य विभाव्य शुष्कं
शुष्कं विवृण्यार्धममुष्य चूर्णम् । -

अपकसम्बन्धिनि मृत्युनान्नि
 वल्लं प्रदद्यान्नवकेऽनवे वा ॥ १८२९ ॥
 नेपालकुष्ठस्य जलेन सार्धं
 विभाभ्य वृत्वा वटिका प्रदेया ।
 सुपकदोषे गजभाजि पथ्यं
 दध्योदन्नं शर्करया विभिन्नम् ॥ १८३० ॥
 तापोद्गमेऽस्मिन्विदधीत शीत-
 क्रियाः शुभा भोज्यविलासरम्याः ।
 यः पूजयेद्दीशमिन्नञ्च वैद्य-
 स्तस्यज्वरं नाभिभवः कदाचित् ॥ १८३१ ॥
 र. ल. विरचने ।

भाषा—शुद्धान्यक, चित्रक, त्रिकटु, शुद्धपारा, भंगरा,
 मकलकरा, प्रकङ्की, अंसुहृदाप, शुद्धप्ररिदा और अक्षौभ
 १-१ भाग, शुद्धत्रजनाग २ भागलेकर ७ दिनतक भगरेके रससे
 भावनादेकर सुलाकर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रत्तीकीमात्रा
 भगरेकेरस अथवा जलकेसायदेनेसे अपरिपकरोष, नवीन अथवा
 पुरानाज्वर नष्टहोताहै । जमालगोटा और कुटेके जलसे भावना-
 देकर गोलीबनावे और ८ दिनबीतानेपर ज्वरकी परिपकाव
 स्यामें इसकी १ गोली देकर दही और भातखानेको देवे । वैद्य
 सयोगसे ज्वर बडजायतो शीतोपचार करे । जो वैद्य ईश्वरमक्ति
 परायणहोताहै उसका चबुरसे पराजय नहींहोता ॥ ४०८ ॥

४०९ सुगन्धमोदकः

भागद्वयं हरीतम्यास्तथा विभीतकस्य च ।
 पलापञ्चभिभागानि वानरीबीजकान्यथ ॥ १८३२ ॥
 कर्बुरं प्रण्थिभारङ्गी वेदभागाञ्च रेणुकाम् ।
 बत्सनाभं जटामांसीं सोमराजीञ्च नेत्रकम् ॥ १८३३ ॥
 चन्दनं मागधीमूलं शुगुलुं पञ्चपञ्चरुम् ।
 जातीफलं चागुरुञ्च चित्रमूलं त्रयांशकम् ॥ १८३४ ॥
 सुगन्धि जीरकं कुष्ठं गुल्मगुल्मञ्च योजयेत् ।
 यष्टीमधु द्विभागञ्च तलमाञ्च चर्वां शुभाम् ॥ १८३५ ॥
 दिग्भार्गं पक्वकिञ्जल्कं समुद्रशोपलोचनम् ।
 दाहकं बीजभागैकं चाह्नौकं त्रिगुणं स्मृतम् ॥ १८३६ ॥
 रसगन्धकभागैकं किञ्चिच्चन्द्रश्च भाधयेत् ।
 एतत्समं भागचूर्णं चखपूतञ्च कारयेत् ॥ १८३७ ॥
 गुडेन मर्दयेद्धीमान्यटकं कोलमानरुम् ।
 परुंरुं भक्षयेत्साहस्तेलाम्लादीन्विद्यजयेत् ॥ १८३८ ॥
 वातक्षयादमरीकुष्ठगुल्मजोषैर्विचुचिकाः ।
 अरुचि पाण्डुरोगञ्च गण्डमालां भगन्दरम् ॥ १८३९ ॥
 शीतज्वरं सन्निपातं घमनं विपमज्वरम् ।
 उन्मादं प्रहणीरोगं पीनसं मूत्ररुं रूकम् ॥ १८४० ॥
 हिक्रां छर्तां जुम्भणञ्च व्यथां विसर्पिकादिकम् ।
 सर्वरोगांश्च वै हन्ति चलवीर्यकरं परम् ॥ १८४१ ॥
 रोगी वाध्यथवाऽरोगी योगिनां कल्पसाधनम् ।
 सुगन्धमोदकं सोऽयमसहधातुगुणप्रदः ॥ १८४२ ॥

पूर्वांपाजितभाग्यो यो लभते परमोपधम् ।
 सर्वग्रन्थार्थतत्त्वानि निष्पीड्यानन्दकारकः ॥
 रूपया सर्वलोकानां ज्ञानज्योतिरिमं व्यधात् ॥ १८४३ ॥
 र. शा. रसायने ।

भाषा—हरें और बहेडा २-२ भाग, इलायची ५ भा,
 केवाचकेबीज ३ भा, कचूर, गठिन, मारती और रेणुका
 ४-४ भाग, शुद्धबजनाग, जटामांसी, वावची, सुगन्धवाला,
 सफेदचन्दन, पिपलामूल और गुल ५-५ भा, जायफल,
 अगर, चित्रकमूल ३-३ भा, कपूरकाचरी, कालाजीरा, कुष्ठ,
 गुल्म ? (आवला और लालकनेरकौजड़), मुलठ्ठी, वच २-२
 भा, पद्मकेसर १० भा, समुद्रशोप २ भा, देवदाकेबीज १
 भा, हींग ३ भा, शुद्ध पारा गन्धक और कपूर १-१ भाग
 लेकर सबका कपड़छानचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णरज्जलीमें
 मिलाय सबकेनारवर शुद्धकी चाशनीमें डालकर ८-८ माथेकी
 गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली रोग अथवा
 समयोचितानुपानकेसाय देनेसे वातक्षय, कुष्ठ, गुल्म, अजीर्ण,
 हैजा, अरुचि, पाण्डु, गण्डमाला, भगन्दर, शीतज्वर, सन्निपात,
 घमन, विपमज्वर, उन्माद, प्रहणी, पीनस, मूत्ररूच्य, हिवकी,
 मकड़ीकाविष, जमाई, अज्ञौका दटना, विल्कोट, बल और
 बीर्यका अभाव इनसबको यह नष्टकरताहै । तैल और खटाईका
 परित्यागकरे ॥ ४०९ ॥

४१० सुदर्शनरसः (प्रथमः)

सुर्दित्तं मर्दयेत्सुतं दध्ना घर्मं दिनवधि ।
 तच्छुष्कं निष्कपदकं तु सिन्धूरं निष्कमानरुम् १८४४
 यवक्षारस्य निष्कैरुमम्लपर्णांनिशाद्रवे ।
 दिनानां त्रितयं मर्दं लेहं मघाज्यसंयुतम् ॥ १८४५ ॥
 रसः सुदर्शनारस्योऽसौ ग्रहणीरोगशान्तिहृत् ।
 धातकीकुसुमं शुण्ठीपाठाविल्वरसाजैः ॥ १८४६ ॥
 मुस्ता चातिविषा तिका कुटजस्य फलयत्वचम् ।
 तुल्यं श्लोत्रैः पिविच्चानु कर्पं तण्डुलजारिणा ॥ १८४७ ॥
 र को, र वा, ग्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धारेको धूपमें वैठकर दहीकेमाथ दिनभर घोट ।
 सूखनेपर १॥ कर्पारेमें ४-४ मादो रससिन्दूर और यवक्षार
 डालकर अम्लोनिया और हल्दीके अद्भस्वत्ससे ३-३ दिन
 मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली मधु और धीकेसायलेकर धावकेफूल, सोंठ, पाठा,
 वेलकौनड, रसौत, नागरमोथा, अतीस, कुटकी, डुरैयाकोछाल,
 इन्द्रजव समभागका १ तोला चूर्ण लेकर चाबलेके धोवनरसाय
 लेनेसे सद्ग्रहणी नष्टहोताहै ॥ ४१० ॥

४११ सुदर्शनरसः (द्वितीय)

विद्वेषेरुणि च दिशुकुट्टितिमैस्तेलैश्च पित्तैरुयह-
 मामृथाकरेसामृतं द्वियलियुक्तं वालुकायन्त्रगम् ।

मण्डूकविषमपिष्टिदिगुपयसा पक्वया इयं ह्येदये-
द्वारे लघुतस्सुदर्शनरसः स्यात्सधिपातादिपु१८४८
दो०, सतिपाते ।

भाषा—ताम्रभस्म, शुद्ध पारा और घटनाग १-१ भाग,
शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकम्लीकर सहिजनकेरससे ३
दिन, मालकांगनीकेरससे २ दिन और मच्छीकेचित्से १ दिन
मर्दनकर आतशीवीथीमें भरके ३ दिनको आचदे । स्वाहाशी-
तलशेनेपर मण्डूकरणां, कुचिला और सहिजनकेरसोंसे ३-३
दिन स्वेदनकर १-१ रतीनी गोलिया बनाकर रखोढ़े । इन-
मेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोपितानुगानकेगाथदेनेसे
सधिपात नष्टहोताहै ॥ ४११ ॥

४१२ सुदर्शनरसः (तृतीयः)

रसस्य भाग एकः स्याद्गन्धकस्य चतुर्दश ।
मर्दयेन्मासमेकन्तु सहदेव्या रसेद्वयम् ॥ १८४९ ॥
धिपात इयंश्रेष्ठ गोजिह्वारसः योऽशभायनाः ।
तालकांशो द्विशः कूप्माण्डोत्थैः पञ्चदशापि च१८५०
भागमेकं सोममलं पञ्चाशद्गुह्यै रसेः ।
टङ्गुणस्य त्रयो भागा लिङ्गयाः पञ्चसभायनाः ॥ १८५१ ॥
हिडिम्ब्याखिर्नीलकण्ठीरसे द्वादश भायनाः ।
जैपालात्सप्त भागाश्च शिञ्जेनेत्रिभायनाः ॥ १८५२ ॥
आकल्लुक्यचामार्द्धीरूपागरिचनगरम् ।
जीपके च लङ्गानि एकैकांशानि सर्वतः ॥ १८५३ ॥
धूर्तच्छदरसेर्मादंघ्रं सप्तविंशतिभायितम् ।
छायागुष्काञ्च गुटिकां गुजामात्राञ्च कारयेत् १८५४
अयं सुदर्शनो नाम रसः सर्वगदापहः ।
तत्तद्भोगानुपानेन विशेषाज्यरजित्परः ॥ १८५५ ॥
र का, जराऽपि कारे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग और गन्धक १४ भागलेकर
नीलवर्णकम्लीकर १ महीनेतक सहदेवीकेरससे मर्दनकर दोभाग
शुद्धघटनागमिलाय घटनागसेतिसुनी जगलीगोभीकेरससे १६
भावनाएं देवे । फिर २ भाग शुद्धरिताल मिलाकर छपेडहों-
हकेरसकी १५ भावनाएं देकर १ भाग शुद्धनीमलमिलावे और
भंगेकेरसकी ५० भावनाएं देवे । फिर ३ भाग शुद्धाग मिलाय
शिवलिपीकेरसकी ६ भावनाएं देकर ३ भाग शुद्धनीमलमिला-
कर नीलकण्ठीकेरसकी १२ भावनाएं देवे । इनकेबाद ७ भाग
शुद्ध जमालगोडा मिलाकर रुद्राशुद्धे रगकी ३ भावनाएं देकर
अच्छछरा, वच, भारती, पीपल, मरिच, सेंट, जोरा, छत्र
१-१ भाग डालकर धूरुकेपान्थोकेरसकी २७ भावनाएं देकर
१-१ रतीकी गोलियां बनाय छायागुष्ककर रखोढ़े । इनमेंसे
१-१ गोली ताम्रोग्रहदानुगानकेगाथदेनेसे समस्तग्रहोंको यह
नष्टकरताहै ॥ ४१२ ॥

४१३ सुधाकररसः (प्रथमः)

सिन्धुरास्रकृद्देमानि भौतिकं त्रिफलात्मसा ।
दातपुत्रीरसेनापि मर्दयेत्सप्तसत्रया ॥ १८५६ ॥

ततो रक्तिमितां कुर्याद्वर्द्धां छायाविशोपिताम् ।
एकैकां योजयेत्तान्तु यथाद्रोपानुपानतः ॥ १८५७ ॥
रसः सुधाकरः सोऽयं हन्ति दाहं यलाधिकम् ।
प्रमेहानपि घाताम्रं यलशुभकरः परः ॥ १८५८ ॥

आ. वि, दाहाधिकरो ।

भाषा—रससिन्धु, अश्रु, सुवर्ण और मोती इनकीममें
समभागलेकर त्रिफला और दातावरके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं
देकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर छायागुष्ककर रखोढ़े ।
इनमेंसे १-१ गोली समययचितानुगानकेगाथ देनेसे दाह, प्रमेह,
वातरक, बल और शुक्रकीहानिको यह नष्टकरताहै ॥ ४१३ ॥

४१४ सुधाकररसः (द्वितीयः)

तारं ताम्रं रसं तालं स्वर्णं भौतिककविद्रुमम् ।
अम्लप्रेतसजम्पीररसे मर्दंनमाचरेत् ॥ १८५९ ॥
शरूपानवनीताभ्यां लीढं शोषक्षयापहम् ।
करोति दिवसांस्तीघ्रं सर्वाहाररक्षमाऽनलम् ॥ १८६० ॥
ददाति परमं पुंसं घलं नागबलोपमम् ।
परमं घृष्यमायुष्यं नेत्र्यञ्च सुखदादधरत्नम् ॥
सुधाकर इति त्व्यातो रसः परमदुर्लभः ॥ १८६१ ॥
वा, याजीकरये ।

भाषा—रत्न, ताम्र, शुद्ध पारा, हरिताल, सुवर्ण, मोती,
प्रवाल इनसीममें समभागलेकर अम्लप्रेत और जमीरीकेरससे
१-१ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियां बनाकर रखोढ़े ।
इनमेंसे १-१ गोली शरफ और मरुखनेगाथदेनेसे ३ दिनोंमें
यह जठराग्निको प्रकटकरताहै । पातु, आयु और नेत्रोंकी-
ज्योतिषो बढताहै ॥ ४१४ ॥

४१५ सुधानिधिरसः (प्रथमः)

गन्धं सृतं माक्षिकं लोहचूर्णं
सर्पं घृष्टं श्रेफलेनोदकेन ।
लीढे पात्रे गोपय.रपञ्च घृत्वा
रात्री द्वाप्राद्रुक्पित्तप्रशान्त्यै ॥ १८६२ ॥
यो. र, नि. र, ना. वि, र. चि., वै. चि, रघचि, र. प्र, र.
सं, र. का., घ, यो. म., र. सि, र. कौ, र. वं, रसायनं, वै
क., र. र, भे सा, र. क, र गु, र दी., भे. र., चि. सा.,
रकपिते ।

टि०—ना वि., र. दी, भे सा युव विरचयुना रिद्रा भूपरने
पान्ना पुनरपि रिद्रा लेह्याने बरानीर केमयवती वरुषा शुभेष्मन्
समुद्रिन् । दंडान्करे मक्षिक निष्कर वरणीकानीरे भृंगु भूरे
एक विषय बतमान मयाभाष्यां शानं विरिन् । एतद्गुणने वा
मार्थकलनराग्नेन वैपि रिन्ने विरि । अस्य निरुदरान्के
गन्धकारिद्राचननि निन रवनिद्रात्पत्तनपुष्पीन्नि मुन हवने
कौऽप्यभिन्नाः बनेनितानुपनिमिरी एव वती विभिन्नेऽपि, वरनेव
हस्ता वैपयुभिरेऽप्य वरुष वर वरः शक्येन गति ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, पारा, गोवन्दाखी, श्रेफलसम एव
समभागलेकर दिव्यःकेरससे छोड़े के पात्रमें नीलाङ्कुरकी

वनाय त्रिफलाका क्षय मिलाकर दिनभर रखाओड़े । रात्रिको दूधमें मिलाकर पीनेसे रक्तपित शान्त होताहै ॥ ४१५ ॥

४१६ सुधानिधिरसः (द्वितीयः)

धान्यकं बालकं मुस्तं विभं सिन्धु सपांशकम् ।
मण्डूरं द्विगुणं दत्त्वा भावनास्तु चतुर्दश ॥ १८६३ ॥
गोमूत्रं केशराजश्च शोथग्रो भृङ्गराजकः ।
निर्गुण्डो भैरुपर्णी च रसेरपां विभाव्य च ॥ १८६४ ॥
मापह्वयं प्रयुञ्जीत तत्रेण सह बुद्धिमान् ।
केशराजसै वापि भोजनं लघ्वं विना ॥ १८६५ ॥
तत्रेण भोजयेदन्नं पाने तद्रज्ज दापयेत् ।
कामलाज्वरशोथग्रो वृद्धिसन्दीपनः परः ॥
प्रहृष्टीप्रण्डुरोगघ्नः स्मर्यन्व्याघ्रिकिताराजः ॥ १८६६ ॥

भै. र. , दोदे

भाषा— धनियां, सुगन्धवाला, नागरमोया, सोंठ, सैधा-
नमक, सब समभागलेकर सबसे दूना मण्डूर मिलाकर गोमूत्र,
कालामंगरा, पुनर्ना, भंगरा, निर्गुण्डो, मण्डूरपर्णी इनके स्वरस
तथा छाछकी २-२ भावनाएं देकर २-२ मासकी गोलिमें
बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१ गोली छाछ अथवा कालेभण्डेके
रससे देवे । नमकका परित्यागकरे और तनकेसाथ अन देवे ।
इससेसेवनसे कामला, ज्वर, शोथ, मन्दाग्नि, ग्रहणी, पाण्डु रोग
नष्टहोताहै ॥ ४१६ ॥

४१७ सुधानिधिरसः (तृतीयः)

गन्धकं पारदं चाभ्रमेलाप्रन्थिककेशरम् ।
समभागयुतं खल्वे जीरकेण च मर्दितम् ॥ १८६७ ॥
काचकृष्णं निवेदयाथ द्वियामं तु गुणाग्निना ।
स्वाङ्गदीतलमुद्धृत्य द्विगुञ्जं भक्षयेत्सदा ॥
शर्करामधुसंयुक्तमम्लपित्तविकारनुत् ॥ १८६८ ॥

व रा., वै. चि, अम्लपित्ते ।

भाषा— शुद्धगन्धक, पारा, अभ्रकभस्म, इलायची, गरुडिन,
नागेशर, सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर जीरेस्वरससे
एकदिन मर्दनकर सुखाकर ३-४ कपडमिठीदीहुई आतशीवीक्षीमें
भर दोपहर गुणामिमें पकावे । स्वाङ्गदीतलहोनेपर निकालकर
रखाओड़े । इसमेंसे ३-३ रती ाकर और मधुकेसाथदेनेसे अम्ल
पित्त नष्टहोताहै ॥ ४१७ ॥

४१८ सुधानिधिरसः (चतुर्थः)

रसगन्धो समौ शुद्धौ दन्तीकायेन भावयेत् ।
जम्बीरस्य रसेनेव हार्द्रकस्य रसेन च ॥ १८६९ ॥
मातुलुङ्गस्य तोयेन तस्य मज्जारसेन च ।
पृष्ठाद्विशोष्य सर्वास्ताण्डुलञ्जावचारयेत् ॥ १८७० ॥
देवदुष्यं वाणमितं रसपदं मृतऽऽसृत्तम् ।
मापमात्रञ्च तत्सर्वं नागरेण गुडेन वा ॥ १८७१ ॥
सर्वांरोचकशूलार्तिं सामवाते सुदारुणम् ।

विस्वीर्चा चाग्निमान्यञ्च भक्त्वेपञ्च दारुणम् ॥
रस्तोऽयं वारयत्यायुः केशरी करिणं यथा ॥ १८७२ ॥
घ, र. च, र. सं., र क, र. सु, भे र., अरोचके । भै र.
रसकेशरीति नाम ।

भाषा—समभाग शुद्धपारे और गन्धकी नीलवर्णकजली
कर दन्ती, जम्बीरी, अक्षर, विजोरा, विजोरेषेवीजोंकीमन्दा-
इनके द्रवोंकी १-१ भावनादेकर भुगामुहाणा और लौंग ५-५
भाग डालकर पारदसे चतुर्थांश सोमलसम मिलाकर रखाओड़े ।
इसमेंसे उहदरवार माशा सोंठ अथवा गुडकेसाथ देनेमें अरधि,
शूल, भयङ्कर आमवात, हैजा, मन्दाग्नि इनसगरो यह नष्टकरताहै ॥

४१९ सुधापिप्लीयोगः

चण्डलायाः प्रथमेकं स्तुहीशोरेण भावयेत् ।
परुविशतिथा पूर्वं तद्वदं मलमायसम् ॥ १८७३ ॥
तद्वदं दरदं क्षिप्त्वा त्रयमेकत्र भावयेत् ।
गोजिह्वाशालमीक्षीरगोक्षुरेक्षुरसेः पृथक् ॥ १८७४ ॥
श्लश्णचूर्णं पुनः कृत्वा मानां युञ्ज्याद्यथावल्म् ।
क्षीरञ्चानुपिवेत्तस्य मधुकेन समायुतम् ॥ १८७५ ॥
सुधापिप्लीको योगो जीर्णज्वरमपोहति ।
भेदो दोषोदरं शोथक्षयक्षयकरः परः ॥
क्षीणाप्यातृन्वर्धयति प्रोक्तश्चात्रेयस्वरिणा ॥ १८७६ ॥
र. प, जीर्णज्वरे ।

भाषा—एकप्रत्यषपीपलके चूर्णको दूधकेदूधमें २१ भाव-
नाए देकर मण्डूरभस्म ८ पल और शुद्धशिंगरिफ ४ पल मिला-
कर १-२ दिन शुष्कमर्दनकर वनगोभी, सेमल, दूध, गोखरू,
ईख, इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्रायोसे १-१ भावना
देकर १-१ मासकी गोलिमें बनाकर रखाओड़े । इनमेंसे १-१
गोली मुलहठीडालकर पकाएहुए दूधकेसाथलेनेसे जीर्णज्वर, भेद,
शोथ, क्षय, धातुक्षीणता इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४१९ ॥

४२० सुधासाररसः

पृथक्पलिकगन्धाश्मसूतसजातरुजलीम् ।
प्रद्राव्य निक्षिपेद्वयम पलिकं गतचन्द्रिकम् ॥ १८७७ ॥
काष्ठेनालोड्य तत्सर्वं क्षिपेत्कुटजपत्रके ।
पुनः सञ्चुर्यं यत्नेन भावयेत्तदनन्तरम् ॥ १८७८ ॥
बालतिन्दुफलद्रावेः क्षीरे रौद्रमयेस्तथा ।
अरुन्वयप्रसेश्चापि दुग्धिनीस्वरसेस्तथा ॥ १८७९ ॥
पुटपकस्य बालस्य दाडिमस्य रसेः शुभेः ।
रुष्णकाम्बोजिकामूलरसेः कुटजबलकलेः ॥ १८८० ॥
तुल्यांशं विभग्नाग्नारीचूर्णं द्विपलिकं क्षिपेत् ।
मुस्तायसकदीप्याग्नि भोचसारं सजीरकम् ॥ १८८१ ॥
वत्सनामञ्च कर्पाशं प्रत्येकं तत्र निक्षिपेत् ।
विबुर्ण्यं भावयेद्भूयः शुण्ठीकायेन सप्तधा ॥ १८८२ ॥
इत्थं सिद्धो रसः पिष्टः करण्डे विनिवेशितः ।
सुधासार इति ख्यातः सुधासारसमपुतिः ॥ १८८३ ॥

दीपनः पाचनो घ्राही हृद्यो रुचिररस्तथा ।
 दोषत्रयातिसारश्च दुर्जयं भेषजान्तरेः ॥ १८८४ ॥
 आमश्चैवामरकश्च ज्वरातीसारमेव च ।
 सातिसारां विस्त्र्वीञ्च प्रतिघ्नान्ति तत्क्षणात् ॥ १८८५ ॥
 मान्यमानन्यतिनान्तिरिव पुण्यफलोदयम् ।
 पिष्टविश्यादकल्केन विधाय खलु चक्रिकायां ॥ १८८६ ॥
 निक्षिपेत्स्वेदनीयन्ने पक्त्वाऽर्द्धघटिकावधि ।
 आकृत्य तज्जलेर्यं सम्प्रमथ्य हरेद्रसम् ॥ १८८७ ॥
 सुधासाररसं तत्र क्षिप्या धान्यरुसम्मितम् ।
 पूर्वोदितेषु रोगेषु प्रवर्द्धित मीपग्वरः ॥ १८८८ ॥
 गौतक्रेणाजद्भा वा पथ्यं देयं हितं मितम् ।
 बालरम्भाफलं गुर्वाफलं विल्यफलं तथा ॥
 आम्रपेशी च मधुकं वृन्तारुश्च प्रशस्यते ॥ १८८९ ॥
 सर्वातिसारं प्रहणीञ्च हिकां
 मन्दाग्निमानाहमरोचकश्च ।
 निहन्ति सद्यो विहितामपाके
 द्वित्रिप्रयोगेण रसोत्तमोऽयम् ॥ १८९० ॥
 र र स, र को, र सु, र र औ, अतिवारः ।

भाषा—१-१ पल शुद्ध गन्धक और पारोकी नीलवर्ण कजली-
 कर धीपुतीहुईकड़ाहीमें वेरकेकोयलोपर गलाकर १ पल निधन्द्र
 अन्नकभस्म बालकर लकड़ीसे चलाकर एकजीवकरके गोबरपर
 रक्खेहुए बुरैयाकेपत्तोंपर ढालकर पंथी बनावे । स्वाहशीतल
 होनेपर निकालकर तेंदकेरोमलफल, गुलरकाधू, सोनापाठा
 कोछाल, दूधी, अनारका पुटपाक, कालोकम्बोईकीजड़, कुरे-
 याकी छाल इनके यथासम्भ्रम स्वरस अथवा वायोंसे १-१
 भावनादेकर सोंठ और कुन्नीधेरीजड़काचूर्ण १-१ पल मिलावे ।
 फिर नागरमोया, इन्द्रच, अजवाइन, चित्रक, मोचरस, जीरा
 और शुद्धबलगा १-१ कर्प मिलाकर सोंठकेकाडेसे ७ भावनाए
 देकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१
 गोली सोंठ और नागरमोयेके पुटपाककेसाथ देनेसे मन्दाग्नि,
 ह्रोग, अरुचि, योगान्तरसे दुःसाध्य त्रिदोषातिसार, अमा
 तिसार, ज्वरातिघ्नार, अतिसारयुक्तदिसुचिका, प्रहणी, हिचकी,
 आनाह, इनसबको यह नष्टकरताहै । बालक और पृदोंको धनिये
 केबराबर मात्रा देना । गायकेतक अथवा दहीकेसाथ पच्यदेना ।
 कषा बैला और बेल, सुपारी, अमचूर, मुल्दही, वेण वे सच
 पच्यहै ॥ ४२० ॥

४२१ सुप्तवातारिसः

पिचुमात्राणि शुद्धानि धीजानि विपतिन्दुत ।
 बलिस्त्रुती विडङ्गश्च यमानी ज्वपणं शटी ॥ १८९१ ॥
 पलाशदीजं निर्गुण्डी मञ्जिष्ठा काकमाचिका ।
 शङ्खपुण्यत्रिसुरसे रसेरासां विभावयेत् ॥ १८९२ ॥
 यहमानां वटीं कृत्वा निम्नकल्केन दापयेत् ।
 मञ्जिष्ठादिकपायेण कौन्तीकायेन वा दुषः ॥ १८९३ ॥

निहन्ति सुतिवातार्तिं प्रहणीक्षयकामलाः ।
 श्रुतोन्मादमपस्मारमपतन्त्रकमुद्धतम् ॥ १८९४ ॥

नू क, भातव्याधौ ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, गन्धक और पारा, विडङ्ग, अजवा-
 इन, त्रिकटु कचूर, पचायकेबीज, निर्गुण्डी, मजीठ, मकोय,
 येसय १-१ कर्प लेप्पर बारीकचूर्णकर शङ्खपुपी, चित्रक और
 तुलसीके स्वरसेसे १-१ भावना देकर ३-३ रत्तीकी गोलियें
 बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली निम्बकक, मञ्जिष्ठादि-
 काय अथवा रेणुकाके वायकेसाथ देनेसे छुप्तवात, प्रहणी, क्षय,
 कामला, श्रुतोन्माद, अपस्मार, अतन्त्रक इनसबको यह
 नष्टकरताहै ॥ ४२१ ॥

४२२ सुरतानन्दरसः

सूर्ति कृष्णान्नकस्य मृगमदसहितां हिङ्गुलञ्चन्द्रकश्च,
 जातीसस्येन्द्रपुर्णं कनकदलयुतं मौक्तिकं तुल्यभागम् ।
 सम्मथं नागवह्नीद्वलरससहितं घनमेकं मीपग्नि-
 मात्रा गुञ्जाहृषी च घृतमधुसहिता सेवनीया सदैव ॥
 क्षिग्धान्न भोजयित्वा घृतमधुसहितं धातुपुष्टिप्रदञ्च,
 सद्यो यश्मघ्नमेतत्सकलदग्दह कामवृद्धिं करोति ।
 मत्तप्रोढाङ्गनानां निधुवनसमये कामगर्वापहारी,
 गुञ्जासुग्वृद्धिकारी सकलरसवरः सौरतानन्द एष ॥
 वृद्धोऽशीतिक्रमयति दृढयुवा वीर्यकान्ती विधत्ते,
 राश्यां कामान्धकारी सुरतसुखविधौ
 कामिनीनाञ्च तद्वत् ॥ १८९६ ॥

रसायनस, वाजीकरणे ।

भाषा—अन्नकभस्म, कस्तूरी, सिंगरिफ, कपूर, जाविनी-
 लौं, सोनेकेवर्क, मोती सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पान-
 केरसेसे १ दिन मर्दनकर २-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख-
 छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली घृत और मधुकेसाथ लेकर क्षिग्ध
 भोजनकरनेसे धातुशीलता, राजयश्म, पण्डित्य, रक्तदोष इन-
 सबको यह नष्टकरताहै ॥ ४२२ ॥

४२३ सुरसुन्दरीवटी (प्रथमा)

अन्नकं माक्षिकं वज्रं कान्तं हेम समं समम् ।
 सर्वाणि समभागानि सूतयुक्तानि कारयेत् ॥ १८९७ ॥
 गोलकश्च तत कृत्वा पकं निचुलवारिणा ।
 ततस्तं पुटपाकेन स्तम्भयित्वा प्रयत्नत ॥ १८९८ ॥
 पात्रे चास्या विलिप्यापि घनत्रस्था गुट्टिकोत्तमा ।
 स्तम्भयेच्छलसङ्घात विपदोगांश्च नाशयेत् ॥ १८९९ ॥
 अग्नेनैकेन घनत्रस्था घय.स्तम्भं करोति च ।
 वलीपलितहन्त्रीयं गुट्टिका सुरसुन्दरी ॥ १९०० ॥

शै र, र. र, घ, र च, वाजीकरणे ।

भाषा—अन्नक, सोनामाची, हीरा, कान्तलोड, सुवर्ण इन
 कीमत्तं और अग्निस्थायी पाटा समभागलेकर १ दिन शुद्धमर्द
 नकर घसुदकलेवरसेसे १-२ दिन मर्दनकर गोलावनाय पानोंसे

लपेटकर मूषस्पृशकीर्णवदे । ऐसे जनक पारा बंध न जाय तनक आंचि देतारहे । इसको केवल अथवा किनीचीजमें कवलितकर मुखमें रखनेसे शत्रुघ्नहात और विपत्ता आक्रमण नहीं होता । एकवर्षतक लगातार मुँहमें रखनेसे अवस्थाको स्तम्भकर वलीपलितको नष्टकरतीहे ॥ ४२३ ॥

४२४ सुरसुन्दरीवटी (द्वितीया)

स्वर्णमेरुं कान्तमेरुं पञ्चतारं द्विपारदम् ।
त्रिभागं व्योमसरवं स्यात्पद्मार्गं शुल्बचूर्णकम् १९०१
सर्वमेतत्कृतं सूक्ष्मं तप्तखल्वे दिनत्रयम् ।
मर्दयेद्भ्रूलवर्गेण दोलायन्त्रे सकाञ्जिके ॥ १९०२ ॥
तद्रोलं त्रिदिनं पक्वं गुटिका सुरसुन्दरी ।
जायते धारिता घर्त्रे घर्षान्मृत्युजरापहा ॥
भृताडवटमूलञ्च कर्प क्षीरैः पिवेदनु ॥ १९०३ ॥

र. खं., र. का, रसायने ।

भाषा—स्वर्ण और कान्तलोह १-१ भाग, रजत ५ भाग., शुद्धपारा २ भाग, अभ्रकसत्त्व ३ भाग, शुद्धतांबेकाचूरा ६ भाग लेकर सबको इकट्ठा मिलाय तप्तखल्वमें ३ दिन अम्लवर्गकेसाय मर्दनकर गोलाबनाय ४ तहकपड़ेमें बांधकर ३ दिन काञ्जोमें स्वेदनकरे । इसको १ वर्षतक मुचमें रखनेसे बुढ़ापे और मृत्युको यह दूरकरतीहे । कालीमुयली और पापाणभेदकाचूर्ण १-१ कर्प दूधकेसाय लेवे ॥ ४२४ ॥

४२५ सुरूपोरसः

रसं गन्धकं त्र्युपणं नागपुष्पं
घरायुक्तमादौ वराजीवनेन ।
सुमर्यं नगे भांचितं भृङ्गनीरै-
र्घटी मापमाना विधेया भिषग्भिः ॥ १९०४ ॥
जपेदग्निमान्यं कुरद्भाभ्यतापं
कर्फं घातमुन्मत्तभावं क्षणेन ।
समस्तेन्दुरुग्बुन्दमक्षिप्रवाहं
स उक्तो रसान्धो सुरूपेतिनामा ॥ १९०५ ॥

र. का., ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, त्रिकटु, नागकेशर, विफला सब समभागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय त्रिकला और अंगरेकेससे ८-८ दिन मर्दनकर १-१ मादोई गोलियें बनाकर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगन्तकेसापदेनेसे मन्दाग्नि, वात और कफज्वर, उन्माद, क्षय, नेत्रोग इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ४२५ ॥

४२६ सुरेन्द्राभ्रवटी

अन्नं सहस्रशो दग्धं रसं दरदसम्भवम् ।
केशराजाम्मसा शुद्धं गन्धकं हीरकन्तया ॥ १९०६ ॥
विद्रुमं मौक्तिकं हेम रौप्यं माक्षिकमेव च ।
कान्तलोहञ्च सम्मर्चं विधिना बह्वियारिणा ॥ १९०७ ॥

बहुमात्रां घटीं कृत्वा छायायां परिशोषयेत् ।
एकैकां योजयेत्प्राज्ञो यथादोषानुपानतः ॥ १९०८ ॥
क्लोमरोगघिनाशाय बह्वेः सन्धुक्षणाया च ।
न सोऽस्ति रोगो लोकेऽस्मिन्मयिं न विनाशयेत् ॥
यो यः समाश्रयेद्ब्रथाधिः क्लोमितं तमवेश्य च ।
क्रियां संसाधयेद्द्वैद्यो यथादोषं यथायत्नम् ॥ १९१० ॥
अनुप्राण्यन्नपानानि क्लोमामयनिपीडितः ।
सेवेतोप्राणि सर्वाणि यत्नतः परिवर्जयेत् ॥ १९११ ॥
शै. र., क्लोमरोगे ।

भाषा—सहस्रपुटीअभ्रक, शुद्धपारा, अंगरेके रसमें शुद्धक्रिया-हुआगन्धक, हीरा, प्रवाल, मोती, सुवर्ण, रजत, सोनामाषी, कान्तलोह इनकीभस्में सब समभागलेकर पारेगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय चिद्रककेस्वरस अथवा हाथसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर छायाशुष्ककर रखजोहे । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुगन्तकेसाय देनेसे क्लोमरोग और मन्दाग्निको यह नष्टकरतीहे । क्लोमरोगीको सौम्य अन्नका सेवन करावे । तीक्ष्णवस्तुओंसे परहेजकरे ॥ ४२६ ॥

४२७ सुलोचनाभ्रम्

पलं सुजीर्णं गगनन्तु बज्रकं
तेजोवती कोलमुशीरदाडिमम् ।
धान्यम्ललोणी रुचकं पृथग्दिशा-
पलोन्मितं मर्दितमेव सेवितम् ॥ १९१२ ॥
अरोचकं घातकफत्रिदोषजं
पित्तोद्भवं गन्धसमुद्भवं नृणाम् ।
कासं स्वराघातमुद्रोहं रुजं
श्वांसं यलासञ्च यकृद्गन्दरम् ॥ १९१३ ॥
ग्रीहाग्निमान्यं श्वयधुं समीरणं
मेहं भृशं कुष्ठमसृग्दरं कृमीन् ।
श्लाम्बपित्तक्षयरोगमुद्धतं
सरकपित्तं वमिदाहमश्मरीम् ॥
निहन्ति चाशींसि सुलोचनाभ्रकं
चलप्रदं वृष्यतमं रसायनम् ॥ १९१४ ॥

र. सं., घ., र. घ., अरोचके ।

भाषा—निहत्थवज्राभ्रकमत्स्य १ पल, तेजसलकीछाल, बेर, खट, अनार, आचले, अम्लोनियां और संचल १०-१० पल लेकर वारीक चूर्णकर एकदिन शुष्कमर्दनकर रखजोहे । इसमेंसे ३-३ मासे समय अथवा रोगीचित्तानुगन्तकेसापदेनेसे अरुचि, त्रिदोषज-पित्तज और गन्धधूमन कास, स्वरभ्रम, छातीका जकड़ना, श्वास, कफ, यकृत, भगन्दर, श्लेष्मा, मन्दाग्नि, शोथ, वातरोग, प्रमेह, कुष्ठ, रक्तप्रद, किमि, दूध, अम्लपित्त, क्षय, रक्तपित्त, वमन, दाह, पयरी, बवासीर, इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ४२७ ॥

४२८ सुवर्चचाद्यं लोहम्

सुवर्चला ध्याग्रनखं चित्रकं कटुरोहिणी ।
चव्यञ्च देवकाष्ठञ्च दीप्यक लोहमेव च ॥
शोधं पाण्डुं तथा कासमुद्राणि निहन्ति च ॥१९१५॥
र. सं, घ, र सु, र वि, शोधाऽधिकारे ।

भाषा—स्रञ्जी, व्याग्रनख, चित्रक, कुटकी, चव्य, देव-
दाह, अजवाइन और लोहमम्म समभागलेकर बारीकचूर्णकर रख-
छोड़े । इसमेंसे १-१ माशा समय अपना रोगोचितानुपानके
साथ देनेसे शोथ, पाण्डु, वास और उदररोगोंको यह नष्टकरताहै ॥

४२९ सुवर्णपत्ररसः

नागं सूतं गन्धकं घटसनामं
मद्यं चारा कन्यकाया दिनेरुम् ।
गोलं कृत्वा निक्षिपेद्भाण्डमद्ये
संछाद्यं चै थावकेणापि सभ्यम् ॥ १९१६ ॥
मुद्रां दत्त्वा भृतिसामुद्रकेण
यामं चैकं मन्दवह्ना विपाच्य ।
यल्लुञ्जैकं भक्षितं क्षौद्रयुक्तं
यश्माणं तद्भाशयैरिदं प्रसह्य ॥ १९१७ ॥

र प्र सु, यश्मणि ।

दि०—सुवर्णाऽप्राविपि सुवर्णपत्रेति नामपरंप्रयोगेन न शायत इति
विद्वद्भिराबलनीयम् ।

भाषा—नागमत्स, शुद्ध पारा, गन्धक और घटनाग, सम
भागलेकर नीलवर्णकञ्जलीकर धीपुतीहुईकड़ाहीमें
कर गोलाबनाय धारावसम्पुटमें बन्दकर ४-५ कपइमिठी देकर
लवण अथवा मस्मयक्रमें रख एकपहरकी मन्दाग्निसे पकावे ।
स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती
शहदेकेसाथलेनेसे राजयक्ष्म नष्टहोताहै ॥ ४२९ ॥

४३० सुवर्णपर्वटी (प्रथमा)

शुद्धं सुवर्णदलमष्टगुणेन शुद्धसूतेन-
पिण्डितमथो धसुभागभाजि ।
गन्धे द्रुते बदरवह्निषु लोहपत्रे दत्त्वा-
विलोच्य लघुलोहशलाकया तत् ॥ १९१८ ॥
मन्दं निरस्य सुरभीमलमण्डलस्थं
रम्भादले तदुपरि प्रणिधाय चान्यत् ।
रम्भादलं लघु नियम्य तदाददीत
शीतं सुवर्णरसपेटिकाभिधानम् ॥१९१९॥
पित्तोत्त्वणे तु सितया तुगयाऽथ याते
श्लेष्मोत्त्वणे किल तुगामधुपिप्लीभिः ।
क्षीणे विरेकिणि च शोपिणि मन्दवह्ना
पाण्डौ प्रमेहिणि चिरज्वरिणि ग्रहण्यम् ॥
चूडे शिदाौ सुखिनि राक्षि तदेवमायै
भैषज्यमेतदुदितं हितमामयग्रम् ॥ १९२० ॥
बै क, र च, रसायनस, नि र, यो र, श यो. त, रसाय-
नसार, र सु, क्षयाऽधिकारे ।

दि०—निघण्टुरत्नाकोरं पिण्डितमथो इत्यत्र पिण्डितमय इति पाठ
प्रकल्प्य पारदसामभागयोऽपि विनियोगितम् । परन्तु बहुषु ग्रन्थेषु अथो
इत्येव लामात्प्रमादादेवेति प्रतिमाति । विञ्च अयोग्रहणे अपसि गणके
वा भागस्वानवस्था इवारा स्याद, अनुपानेन सूतसमत्वप्रकल्पन त्वग
तेर्गतिरिति न सा भद्रा भेषीरितिक् । रसायनस, वै वि, र च, र,
कौ, दो, यो र, वृ यो त, र स, वै क, भै र, र सु, र क, नि
र, श्यु ग्रन्थेषु चतुर्थासुवर्णदानेनाऽपि एक पाठ प्रकल्पितोऽस्ति ।
अत्र सुवर्णदाने कामचारे बीज्य । पाठान्तर तु गौरात्वात्परिचयम् । अत्र
पाठे कुत्रचित्पारादादिगुण गन्धक निवृज्य कासे नियोग कृतोऽस्ति ।

भाषा—आठभाग शुद्धपारेमें एकभाग सोनेकेवर्क १-१ करके
मिलावे । फिर १-२ पहर घोटकर पिठी बननेपर नीचुकारस
डालकर मर्दनकरे । उस कालाहोनेपर निकालदे, ऐसे जबतक
कालिमा निकलतीरहे तबतककरे । पर इसथातका ध्यान रहे कि
नीचुकरसेसाथ सुवर्णके बर्कौका भाग न निरलजाय । निकला-
हुआ मादमपड़ेतो जलाकर शुद्धकरले । पारेको कपड़ेसे अच्छी-
तरह साफकरले पानीका भाग न रहे । फिर अठगुने शुद्धगन्धक
को धीपुतीहुई कड़ाहीमें डालकर बरेके कोयलोंपर गलावे ।
गलजानेपर पारदपिठीको डालकर घोटें । एकजीवहोनेपर ताजे-
गोबरपर रञ्जलेहुए ताजेकेलेके पर्तोंपर डालकर दूसरेकेलेके पर्तोंसे
धवाकर मोचबसे ढकदे । स्वाज्ञश्रीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े ।
इसमेंसे १-१ रतीकी मात्रा क्रमबद्धभागसे पित्ताधिक्यमें शकर,
वाताधिक्यमें बसलोचन, कफाधिक्यमें बसलोचन, मधु और
पीपलकेसाथ देवे । इससे क्षीणता, दृक्की अनियमितता, शोथ
मन्दाग्नि, पाण्डु, प्रमेद, जीर्णज्वर और ग्रहणी मन्द्यहोतीहै ।
शुद्ध, बालक और सुखी आदमीकेलिये १-१ रतीमात्रा काफीहै ॥

४३१ सुवर्णपर्वटी (द्वितीया)

सुवर्णतारताम्राभ्रसत्त्वलोहामृतै युता ।
पादांशस्तत्कृता ख्याता पर्वटी कथिता बुधै ॥१९२१॥
शुद्धगन्धकरुर्ककं त्रिगुञ्जा रसपर्वटी ।
पण्मासाभ्यन्तरे चैषा वलीपलितनाशिनी ॥
संवत्सरं यदा सेचया ज्वरं हन्ति न संशयः ॥ १९२२ ॥
रससागर, रसायने ।

भाषा—सुवर्ण, चादी, ताम्र, अभ्रकसत्त्व और लोह इन्की-
भस्में, शुद्धवचनाग ४-४ माशे, शुद्ध पारा और गन्धक १-१
कप लेकर पारेगन्धकनीलीवर्णकञ्जलीकर धीपुतीहुईकड़ाहीमें
बरेकेकोयलोंपर गलाकर सुवर्णादि सबकीजें मिलाकर कोहकी
शलाकासे चलावे । एकजीवहोनेपर प्रथम रसपर्वटीकीतरह पर्वटी-
बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रती समय अपना तत्तदोगो
चितानुपानकेसाथदेनेसे ६ महीनेके अन्दर वलीपलितको नष्ट
करतीहै । एकवर्षतकके सेवनसे बुढापेको दूरकरतीहै ॥ ४३१ ॥

४३२ सुवर्णपर्वटी (तृतीया)

स्वर्णं रौप्यं रविगमनकं लोहसूतं समांशं,
मुक्ताभागं चिमलयलिकं पारदाद्युग्मभागम् ।

मद्यं कन्दैः कदलजनिनैः शाल्मलीनां रसैश्च,
कन्याद्रात्रि मुनिदिनमयो बल्युग्मं निहन्यात् ॥
मेहं तापं मधुचपलया माससंसेवितोऽयं,
स्त्रीणां रोगानपि हरति युता पर्वटी काञ्चनीयम् ॥१२३॥
र. प., र. प्र., र. पा. प्रमेहाऽधिकारे ।

भाषा—शुद्धवर्ण, रजत, ताम्र, अश्रक, लोह, भोती क्षसम्बुकी
भस्मं १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भा., पारा १ भाग लेकर
पारेगन्धककी नीलवर्णकम्बलीकर धोपुनीहुईकड़ाहीमें घेरके कोय-
लीपर कम्बलीको गलाय सन्धीजोमो मिलाकर गोबरपर रखे-
हुए केलेकेपत्तोंपर द्वाघर पर्वटी तैयारकरे । स्वाह्मसीतलहोनेपर
केला और संमलकन्द तथा धातुंकारकेसोसे ७-७ दिन मर्द-
नकर ३-३ रतीकी गोखियं बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समय अथवा रोगोचिन्तानुपायकेनाथ अथवा मधु और
पीपलकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे प्रमेह, ज्वर और त्रियोंके
तमामरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ४३२ ॥

४३३ सुवर्णपर्वटी (चतुर्थी)

मृतेन सूत्रपाजेन लोहपर्वटिका समा ।
त्रिगुणं गन्धकं सूतात्सर्वं द्विधौपथीद्रवैः ॥ १९२४ ॥
मर्दितं तद्विनं रुद्धा ध्मातो यद्धो भवेद्रसः ।
तस्मिन्नेते मृतं स्वर्णं क्षिप्त्वा बद्धद्रिकद्रवैः ॥१९२५॥
मद्यं यामं विचूर्ण्याथ व्योपजीरकसेन्धवैः ।
तुल्यः पूर्वरसस्तुल्यं बल्युमेरुन्तु भक्षयेत् ॥ १९२६ ॥
जराभृत्यु निहन्यन्दाह्नेमपर्वटिका रसः ।
अध्वगन्धासमां यदां धानीफलरसे दितम् ॥
भावितं लेह्येल्लोहैः कर्पिकं कामणं परम् ॥ १९२७ ॥
रसायनसं., र. सं., रसायने। रसायनचण्डे हेमार्पटक इति नाम

भाषा—पारदभस्म, लोहपर्वटी और शुद्धपारा १-१ भाग,
शुद्धगन्धक ३ भागलेकर नीलवर्णकम्बलीकर दिव्योपथियोंके
द्रवोंसे यथावश्यक १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय अन्धमूपायें
धनकरनेसे पारदबंधेग । इसमें एकभाग सुवर्णमसम मिलाकर
अदरखके रससे एकपहर घोटकर खिकड़, जीरा और सेंधानमक
पूर्वसेवकी बराबर मिलाकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ रती सम-
व्योपजीरककेसाथ लेकर अथायन्ध और सुन्दरी समभागलेकर
आबलोनेरससे ६-७ भावनाए देकर इसमेंसे १-१ कर्प मधुके-
साथ चाटनेसे रमका शरीरमें अनुकनणहोगा और इससे बली-
पलिनादिकका नाशहोकर दीर्घायुहोगा ॥ ४३३ ॥

४३४ सुवर्णचदरसः

लाङ्गल्या देवदास्याश्च रसे मर्दितपारदः ।
त्रियते स्वर्णपादेन चारितोऽय समांशतः ॥ १९२८ ॥
रसेन मेलितः पश्चाद्रिपतालकगन्धकैः ।
धन्तुस्वीजतेलेन मर्दितस्त्रिदिने सति ॥
गोमये पाचितो मूषामभ्यस्यो घण्यते रसः ॥१९२९॥
यो. म., रसायनाधिकारे ।

भाषा—करिदाही और बन्दालनेरनोंसे ३-३ दिन मर्दन
कर चतुर्थांश अथवा समभाग सोनेके बर्फी का जालकर समभाग
दूरेर शुद्धपारेमें मिलाकर बटनाग, हरिताल और गन्धक ये
प्रत्येक पारिसे चतुर्थांश डालकर धरोक्रेनीजोंकेतौलेसे ३ दिन मर्दन
कर अन्धमूपायें बन्दकर लघुमुद्री बांध दे तो इसकी गोली
बंधजातीहै । इसको मुहमें रखनेसे बलीपलिनादिकका नाशहो-
कर दीर्घायु होताहै ॥ ४३४ ॥

४३५ सुवर्णभूपतिरसः

शुद्धं सूतं समं गन्धं मृतं शुद्धं तयोः समम् ।
अप्रलोहकयो भस्म कान्तभस्म सुवर्णजम् ॥ १९३० ॥
रजतञ्च विषं सम्यक् पृथक् सूतसमं भवेत् ।
हंसपादीरसे मद्यं दिनमेकं वटीकृतम् ॥ १९३१ ॥
काचकूप्यां धिनिक्षिप्य सूदा संडेपथेद्विहः ।
शुष्कां तां बालुकायने दाने मूद्भिना पचेत् ॥१९३२॥
चतुर्गुञ्जितं देयं पिप्पल्याद्रिद्रवेषेण तु ।
द्वयं त्रिदोषजं हन्ति सन्निपातांस्त्रयोदश ॥ २९३३ ॥
आमवातं धनुर्वातं शृङ्खलावातमेव च ।
आत्थवातं पद्भुवातं कफवाताग्निमान्द्यनुत् ॥ २९३४ ॥
काटीवातं सर्वशूलं नाशयेन्नान्द्रुतः शयः ।
गुल्मशूलमुदायतं ग्रहणमिति सुस्तराम् ॥ २९३५ ॥
प्रमेहमुदरं सर्वाभदमरौ मूत्रविड्महन् ।
भगन्दरं सर्वकुष्ठं विद्रधि महतीं तथा ॥ २९३६ ॥
श्वासं कासमर्जाणश्च ज्वरमष्टविधन्तया ।
कामलां पाण्डुरोगञ्च शिरोरोगञ्च नाशयेत् ॥१९३७॥
अनुपानविशेषण सर्वरोगान्विनाशयेत् ।
यथा सूर्योदये नश्येत्समः सर्वगततथा ॥
सर्वरोगघिनाशाय सर्वेषां स्पर्णभूपतिः ॥ १९३८ ॥

नि. र., र. मु., र. चं., रसायनं, व. रा., वै. वि., यो. र.,
र. पा., क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, ताम्रभस्म
२ भाग, अश्रक, लोह, कान्तलोह, सुवर्ण, रजत इनकीयुल्म
और शुद्धबटनाग १-१ भाग लेकर नीलवर्णकम्बलीकर सबचोंमें
मिलाय हंसराजकेरससे एकदिन मर्दनकर फिलि कम्बली बनाय
६-७ कपडमिठी दीहूई आतशीशीशीमें बन्दकर बालुकायन्त्रमें
रख एकदिनकी मन्दाग्निसे पकावे । स्वाह्मसीतलहोनेपर निकाल-
कर रखजोड़े । इसमेंसे ४-४ रती पीपल और अदरखकेसाथ
देनेसे त्रिदोषनाश और १३ सन्निपातोंको यह नष्टकरताहै ।
तत्तद्वहारागुणानुपायदेनेसे आमवात, धनुर्वात, शृङ्खलावात,
ऊरुतन्म, पद्भुवात, कम्पवात, मन्दाग्नि, कटिवात, सन्प्रकारके
शूल, गुल्म, उदावर्ण, भयङ्करग्रहणी, प्रमेह, उदररोग, सबप्रकारकी
पपरी, मलमूत्रविबन्ध, भगन्दर, सबप्रकारकेकुष्ठ, बड़ाहुआ
ज्वर(बाद, श्राव, कास, अजीर्ण, चक्राकारज्वर, कामला, पाण्डु,
शिरोरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४३५ ॥

४३६ सुवर्णयोगः (प्रथम)

मन्त्रीपद्यसमायुक्त सप्तसरफलप्रदम् ।
त्रिल्यस्य चूर्णं पुण्ये तु द्रुत वारान्सहस्रश ॥१९३९॥
श्रीसूक्तेन नर कल्पे समुपानं दिनेदिने ।
सर्पिमधुयुक्त लिहादल्हमानाशन परम् ॥ १९४० ॥
सु स, रसायन ।

भाषा—रत्नगिरीकाचूर्णं पतने मिलाय पुन्यतन्त्रमे एकद्वार
आहुति श्रीसूक्ते देकर अभिषारित्त्रियदुष्ट बिल्वचूर्णको रखले ।
इसमें १-१ तोला १ रत्नीसुवर्णमम्म मिलाकर धी और मधु
के साथ एकवर्षपर लेनेसे अल्हमीका नाशहोताहै ॥ ४३६ ॥

४३७ सुवर्णयोग (द्वितीय)

सुवर्णं पद्मवीजानि मधुलाना प्रियङ्गव ।
गव्येन पयसा पातमलम्प्रां प्रतिपद्येत् ॥ १९४१ ॥
सु स ग नि रसायने ।

भाषा—फल्ल्याग पानवीजीत और प्रियङ्गु समभाग
केर बारीकचूर्णकर रखजे । इसमें १-१ तोला १ रत्नीसुवर्ण
मम्म मिलाकर मधुयुक्तगोदुग्धके साथ अन्नस अल्हमीका नाशहोताहै

४३८ सुवर्णयोग (तृतीय)

नालात्पलदलकाया गव्येन पयसा शृत ।
समुवर्णतिले साधमलहमीनाशन स्मृत ॥१९४२॥
सु स, रसायने ।

भाषा—१ स ३ रत्नीतदुग्धमम्म १ ताले कालेफिलेके
साथ मिलाकर सेनकर नालफलकचूर्ण डालकर औंठया
दुआरुध पीनेसे अल्हमीका नाशहोताहै ॥ ४३८ ॥

४३९ सुवर्णयोग (चतुर्थ)

गव्य पय सुवर्णञ्च मधुच्छिद्यञ्च मासिकम् ।
पातं शतसहस्राभिद्रुत युत्तरथ स्मृतम् ॥ १९४३ ॥
सु स, रसायन ।

टि०—मधु मधुच्छिद्य निषवहरित अथ मधुगिषानमयय
हृदयमिति धानोक्तपुष्पममा मन्त्रादुपकारकाय न हृदय
अग्नि तथापि सुवर्णकुलहासिपवविशेष शवाऽनुभव करले
थी निष्पु निरानम् । मिद्वगमवतु मधुयुक्तविषकीय निष्पु
अत्रकाशने न वे भयान १ प्रयुक्तन हवसि न मिलरणीम् ।

भाषा—१ रत्नी सुवर्णमम्म अथवा अल्पकृति गायकचूर्ण
मोंम और मधु मिलाकर एकद्वारकीपुण्यसे अभिषारित
कर उचितनाशनेसे दोषयुक्त श्रामहोताहै ॥ ४३९ ॥

४४० सुवर्णयोगः (पंचम)

घचापूतसुवर्णञ्च बिल्वचूर्णमिति त्रयम् ।
मेघ्यमायुष्यमारोग्यपुष्टिर्माभायवर्द्धनम् ॥ १९४४ ॥
सु स ग नि रसायने ।

टि०—गन्धिका विरचितियस्य मधुयुक्तद्वयस्य १ स १ स १ स
भाषा—बलागु बलकाचूर्ण १-१ तोला सुवर्णमम्म १ स
३ रत्नीतक दूधके साथ अन्नस मधा आयु आरोग्य पुष्टि और
सौभाग्यकी वृद्धिहोतिहै ॥ ४४० ॥

४४१ सुवर्णयोगः (षष्ठ)

मन्त्रामलकचूर्णन्तु सुवर्णमिति च प्रथम् ।
प्राश्यारिष्टगृहाताऽपि मुच्यते प्राणसहायात् ॥१९४५॥
सु स आ प्र रसायन ।

भाषा—मधु और आलेकाचूर्ण १-१ ताग, सुवर्णमम्म
१ रत्नी मिलाकर लेन उपस्थितारिष्टमो प्राणमगप्ये वचताहै ॥

४४२ सुवर्णयोग (सप्तमः)

शतावरीघृत सम्यगुपयुक्त दिनेदिने ।
सशोऽ समुवर्णञ्च नरन्त स्थापयेत्तरो ॥ १९४६ ॥
सु स, रसायन ।

भाषा—शतावरीपन १ तोला, मधु ६ माग, सुवर्णमम्म
१ रत्नी लेकर प्रतिदिन सवनरसेने घनीप्लादिसस निरु
होकर दोषयुक्तो श्रामहोताहै और रागको बामे करताहै ॥ ४४२ ॥

४४३ सुवर्णयोगः (अष्टम)

गाचन्द्रना माह्निका मधुक् मासिकं मधु ।
सुवर्णमिति मययोग पेय सौभाग्यमिच्छता ॥१९४७॥
सु स रसायन ।

भाषा—गोरोचन ३ रत्नी मेहरो और सुश्लो ३-३
माग, सुवर्णमासिकमम्म १ माग, मधु १ छाया, सुवर्णमम्म
१ रत्नी मिलाकर गादुग्धके साथ लेनेसे अल्हमीका नाशहोताहै ४४३

४४४ सुवर्णयोग (नवम)

पद्मनीलोपत्रकाये यष्टामधुकंसयुते ।
सर्पितासादित गव्यं समुवर्णं सदा पिबेत् ॥ १९४८ ॥
पयधानुपिबेत्सिद्धं तेषामथ समुद्भये ।
अल्हमीकां सन्धायुष्यं राज्याय सुमगाय च ॥१९४९॥
यत्र नादीरिता मन्त्रा यागप्येतपु साधने ।
शब्दिता तत्र सर्वत्र गायत्री त्रिपदा भयम् ॥१९५०॥
पाप्मान नाशयन्तेता द्युष्करीपथय धियम् ।
सुपुं नागवत् चापि मनुष्यममरापमम् ॥ १९५१ ॥
सु स रसायने ।

भाषा—मल्ल्याग नीलेरकाचय सुश्लोकाचल्ह इनस
बनादाहुआ गोपुत यगन्ति १ रत्ना सुवर्णमम्म १ माग
सुश्लोचन्नुभोमे सिद्धिकेदाहुआ दूध १ नये सदा, आयु राग्य
और सौभाग्यका प्राप्तहोताहै । इनयोगमें श्री मन्त्रका यागकी
बहोर त्रिपदा गायत्री समसनी कादिव । इनयोगके कारनकारने
पाप नष्टहोते और विपुलक आकर वसतायम हाताहै ४४४

४४५ सुवर्णयोगः (दशम)

गायत्रिकाभिन्नतमामलकया
रसेन ग्राहं वनहन्त्य चूर्णम् ।
धार्वाकरन्तुष्यमिदं नराणां
रिष्टं समुपप्रमयाकरानि ॥ १९५२ ॥
मेघ अरितान् रसायन च ।

भाषा—गायत्रीसे १००० बार अभिमन्त्रितकियेहुए आव-
लौकेरस्येसाथ १ से ३ रतीतक सुवर्णमन्त्र और आवलेका चूर्ण
लेनेसे उपस्थित अरिष्ट भी नष्टहोता है ॥ ४४५ ॥

४४६ सुवर्णयोगः (एकादशः)

ससितया वचयामलकैरथ
त्रिफलयाऽथ घृतज्यतिभिश्चया ।
कनकजातरजः सततं घृतं
परमिदं हि रसायनमुच्यते ॥ १९५३ ॥

चि. क्र. रसायने ।

भाषा—शकर, वच, आवले अथवा त्रिफलाकेचूर्णकेसाथ
१ से ३ रतीतक सुवर्णमन्त्र घीमें मिलाकरलेनेसे दीर्घायु होता है ॥

४४७ सुवर्णयोगः (द्वादशः)

उन्मादिनामुन्मदमानसाना-
मपस्मृतौ भूतहतात्मनां हि ।
ब्राह्मोरसः स्यात्सवचः सकृद्युः
सदाह्वयुष्यः ससुवर्णचूर्णः ॥ १९५४ ॥

चि. क., यो. त., उन्माद ।

टि०—चरके हृदयावरणरहित विषमन्तावस्थाया सुवर्णरजस
भाषा—मन्त्रदानसुक यथा "शुद्धे हृदि तत शाने हेमचूर्णस्य दापयेत् । हेम
नर्वचिपाय्याशु गराश्च विनियच्छति ॥ न सज्जने हेमपात्रे विष पम्पनेऽ-
शुद्धम् ॥" इत्यत्र चूर्णशब्देन तद्वयस्कृति शोभा सा च रसायनेपादे
विहितोऽस्ति यथामभवश्च विषप्रौषधिभिस्माक दद्यादिनि सम्प्रदाय ।
यथावस्थितचूर्णस्य रक्तार्थो तत्काल प्रशस्नाभावात् तदभावे च हृदयावर
णस्य दुःसाध्यत्वात्, अथवा त्रिफलापधिमि पुटानि दत्त्वा निरूप्य प्रथम
सम्प्राय तस्य दिनरक्तिका यत्र विषप्रौषधिसरसादिभिर्दत्त्वा दीप्त विष
निर्गमयन्ति इति निश्चितम् । चरकौषध्यान्वयेन चिकित्साकल्पात्
"गारुडो हेम इति वदन्ति" इत्यादिना अन्वयः कृतोऽस्ति ।

भाषा—ब्राह्मीकारस १ तोला, वच, कुठ, शङ्खुपुष्पी ३-३
मात्रे, सुवर्णमन्त्र १ से ३ रतीतक मिलाकर लेनेसे उन्माद,
अपस्मार, भूतनाशा येसन नष्टहोते ॥ ४४७ ॥

४४८ सुवर्णयोगचतुष्टयम्

सौवर्णं सुकृतं चूर्णं कुष्ठं मधु घृतं वचा ।
मत्स्याक्षकः शङ्खुपुष्पी मधुसर्पिः सकाञ्जनम् ॥ १९५५ ॥
अर्कपुष्पी मधु घृतं चूर्णितं कनकं वचा ।
हेमचूर्णानि केटयः श्वेता दूर्वा घृतं मधु ॥ १९५६ ॥
चत्वारोऽभिहिताः प्राशाः स्तोत्राद्वैपु चतुर्वर्ण्यि ।
कुमाराणां धनुर्मधोवाचलबुद्धिविध्वनाः ॥ १९५७ ॥
सुधुत, बालरोगाधिकारे ।

टि०—"अथाकामश्च वचया श्रीवाम पम्पनैर । शङ्खुपुष्प्या
वयोर्षी तु विदयां च प्रनेच्छक ॥ नवावधकतलागुडौ तथाशोभार
दान्ते ॥" इति मरनिष्ठ आशुवेदप्रकाशे च त्रयो दोगा अन्ये विद्विजा
सन्ति । इत्यमित्ये सहस्ररोगोपि योगा सम्पत्त्यने तत्सवदुःखवीहनीयमनु
पानानामनित्तत्वात् ।

भाषा—सुवर्णमन्त्र, कुठ, मधु, घृत और वच (१)

मट्टेडी, शङ्खुपुष्पी, सुवर्णमन्त्र, मधु और घी (२) अर्कपुष्पी,
सुवर्ण, वच, मधु और घी (३) सुवर्णमन्त्र, महाशक, वच,
दूधमें पकायाहुआ घी और मधु (४) इन चारों योगोंको
औचित्यी देखकर संयुक्तकर देनेसे छोटबच्चोंकी मेधा, बल और
बुद्धि बढ़ती है ॥ ४४८ ॥

४४९ सुवर्णरसराजरसः

शुद्धं स्वर्णरसं पृथक् पिचुमितं एकत्र सम्मर्दितं ।
मुक्ताविद्रुममापयुग्मसहितं मर्चाऽहिवह्निरसैः ।
गुग्गाहृद्धमितं सुवर्णरसराट् क्षौट्रेण वा गोघृते-
र्जापि यश्ममव प्रमेहदरपण पाद्गामयं वातजम् ॥ १९५८ ॥
नेत्रश्रोत्रग्रन्दं शरोचकरं कायस्य कान्तिप्रदं,
रेतोवृद्धिकरं महाशककरं दीर्घायुरारोग्यदम् ।
पथ्यं शालिघृतं सित्त सुकट्टी गोधूमगोक्षीरकं,
ताम्बूलं चिहितं पटोलमरिचं सोष्णाम्यु कोशातकी ॥
रसायनसं, क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेवर्क १-१ कर्प लेकर एक
जगहमर्दनकर पिटीयनावे । फिर मोती और मूगेकीमत्से १-१
माशा डालकर पानेकरसे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी
गोलिये बनाकर रखोदे । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा
गोपुतकेसाथ देनेसे जीर्णज्वर, राज्यशर्म, प्रमेह, प्रदर, वातज
पाण्डु, नेत्र और कानकी पीडा, अर्धचि, कान्तिका अभाव,
शुम्भस्य इनसबको नष्टकर दीर्घायुको करता है । पुरानेवर्षेद-
चाचल, घी, शकर, केला, गेहूं, गोटुघ, परवल, मरिच, गरम-
जल, तरौई येसब पथ्यहैं ॥ ४४९ ॥

४५० सुवर्णरसायनम्

चतस्रः कृष्णलोहानां पलानि त्रिफला तथा ।
उच्चटा चाञ्जमोदा च पयस्या पिप्पली तथा ॥ १९६० ॥
विदारो मधुयष्टी च तक्षुर्णं पालिकं स्मृतम् ।
पलं सुवर्णचूर्णस्य सप्ताह्नौपयोयजेत् ॥ १९६१ ॥
वह्नस्तःपुरपत्नीनां राह्याञ्च गरनाशनम् ।
शुहस्पतिमतं चूर्णमलक्ष्मीहरणं चिदुः ॥ १९६२ ॥
ग. नि., कल्पे ।

भाषा—चारतरहेकेलोहोंकीमन्त्र १-१ पल, त्रिफला, उर्दि-
गन, अजमोद, क्षीरकाकोली, पीपल, विदारो, सुहृदी सब-
समभागकाचूर्ण १ पल, सुवर्णमन्त्र १ पल मिलाकर रख-
छोदे । इसमेंसे १-१ कर्पकी मात्रा प्रातःकाल दूधकेसाथलेवे ।
अच्छीतरह पचजानेपर रामको दूधभात भोजनमें लेवे । धीरे
२ इसकी मात्रा बढ़ावे । यह पुराने जमानेकेलिये ७ दिनका
प्रयोग लिलावे पर आजकल १ कर्पसे अधिकमात्रा लेनी
सुचिकरहै । हा कितीको अधिक पाचन हो सके तो उतनी
बढावे । जिनके अन्त पुरमें बहुतसी खिये हों णसे राजालोगोंको
इमसा प्रयोगकरना योग्यहै । इसके माधारणसेवनसे समस्त
बनावनी जहर नष्टहोतेहैं ॥ ४५० ॥

४५१ सुवर्णराजवङ्गेश्वररसः

रसाद्रिगुणितं चङ्गं चङ्गाद्रिगुणगन्धरम् ।
 रसाद्धं हेमभागश्च तत्समं मौक्तिकन्तथा ॥ १९६३ ॥
 रसभागान्तु मरिचं तत्समं कान्तनागयोः ।
 कुमारीरससम्पिष्टं खल्वे चूर्णन्तु कारयेत् ॥ १९६४ ॥
 सप्त मूत्रसनं कृत्वा काचकृप्यां विनिक्षिपेत् ।
 वालुकायन्त्रगं कृत्वा दिनमेकं हठाक्षिणा ॥ १९६५ ॥
 स्याद्भृशतीतं समुद्रुत्य पुनः खल्वे विमर्दयेत् ।
 एवं सप्तदिनं कृत्वा घटिकाः कारयेद्बुधः ॥ १९६६ ॥
 चतुर्गुञ्जाम्राणेन योजयेदनुपाततः ।
 सर्वरोगेषु दातव्या प्रमेहान्द्विगुणं विशातिम् ॥ १९६७ ॥
 मूत्रघातं मूत्रकृच्छ्रं प्रद्वाराशीं वर्मास्तथा ।
 रसायनमिदं श्रेष्ठं स्वर्णवङ्गेश्वरो रसः ॥ १९६८ ॥
 रसायनतः, रसायने ।

भाषा—शुद्धागा १ भाग, वज्रभस्म २ भाग, गन्धक ४ भाग, सुवर्ण और मोतीभस्म आधाआधामाग, मरिच, कान्त और नागमस १-१ भागलेख नोलवणंइबलीकर बुमारीके-रससे १-२ दिन मर्दनकर पक्कीयनाय ६-७ कपडिमिरो दीहूर्द आदशीशीशोमें भर एकदिन बालुकायन्त्रमे तीक्ष्णामिमे पकाव । स्याद्भृशतीतवङ्गेनेन निकालकर फिर मर्दनकर पाककरे । ऐसे ७ बार करनेबाद धोतवर रसछोड़े । इसमेंसे ४-४ रसी समय अथवा रोमोचितानुपातके साथ देनेसे सप्तवाराकेप्रमेह, मूत्रापात, मूत्रकृच्छ्र, वातशूलिका, प्रदर, बवासीर, वमन इसवर्गो यह नष्टकराई ॥ ४५१ ॥

४५२ सुवर्णसमकं (चूर्णम्)

स्वर्णचूर्णं समरिचं द्वौ क्षारी त्रिफला यथा ।
 ययान्यः कुञ्जिका हिह्वु तिनित्डीकाम्लयेतसम् ॥ १९६९ ॥
 धान्याजगन्धे प्रायन्तीं दाडिमं सुययाद्रिकम् ।
 कटुका कटुजम्बीरं सन्धिवच्च समानं भिषक् ॥ १९७० ॥
 शिथूता सप्तला इन्तो कम्पिह्व नीलिकाण्डमया ॥
 सुवर्णक्षीरी द्विगुणा सर्वाण्येतानि चूर्णयेत् ॥ १९७१ ॥
 आज्ञे गन्धऽयथा मूत्रे सप्ताहं परिभाष्य तम् ।
 द्विगुणां शर्करां चाथ दापयेत्पुनः खल्वं पिबेत् ॥ १९७२ ॥
 गोमूत्रत्रिफलाक्षारसै मेषुस्सुखाम्बुना ।
 सुवर्णसमकं चूर्णं सर्वरोगातिभेषजम् ॥ १९७३ ॥
 सर्वादिरे मूत्रहृशोपगुल्महृशोगनाशनम् ।
 पाताष्टौलामथानाह भययुं सर्वगात्रजम् ॥
 हृदीमकामलापाण्डुप्रमेहज्वरगुल्महृत् ॥ १९७४ ॥

मे से, म नि, उदररोगे ।
 टि०—अनुपेयन्मानानन्तुरक समरिचमिचममदन पयवध वाग उन्मथने, कान्तवन्वयसुरनि अदावत कटिकांनि मनि वधाय नाम ये सुवर्णसमकं चूर्णमिं प्रत्यक्षेरे इत्यम् । अत्रशुभेयन अनेन येनेन सुवर्णचूर्णन भरिभस्मवन्वय सुवर्णसमकंमिं नयेन अन्तपय वेनेन प्रथमोपु सुवर्ण हृदीमकामलापाण्डुप्रमेहज्वरगुल्महृत् इत्यम् । अत्र मरिच ७ वरा कान्तवन्वयसुरनि सुवर्णसमकंमिं चूर्णमिं ।

गदनिर्महं पञ्चनीलमिति पेने रिक्तं स्थान पूर्णित् दृश्यते परन्तु तपू-
 रणेन सुवर्णसमकमिति नाम्न वाचिसहनिनायाति । बदाचित्तवर्गे-
 पेने सुवर्णक्षीरीयाडमिभेताभूत्वा सुवर्णसनरमिति नाम्न सङ्घरिस्तीति
 वेत्त, तत्र सुवर्णक्षीरीद्विगुणमत्तत्र सुवर्णसमकमिति नाम उचिन
 जायेत । स्वर्णचूर्णमिति पेने पूर्णं तु सुवर्णमिति मरिचादिभिरैकेन
 तुल्यनावावहयत्र योगेऽस्ति तस्युक्तप्रथममिति श्रुत्यत्वा योगनाम्नो
 यथावच्छिन्नाथेकवात् गदनिमहत्त्वत्रकोलमदत्त्वा स्वर्णचूर्णमिति पेना
 रसाभिरुदिते स्थान पूर्णितम् । मन्थय-द्वितीयश्लोकस्य मन्थवापिर्मिति
 वेमानुपलुतेके जलभ्यने तत्र सुवर्णाद्रिकमिति पाठोऽस्माभिः स्थापित ,
 तत्र सुवर्णा मन्थयवा, आद्रिका नागर द्राक्षम् । शोष्णेन तु सुवर्णा-
 म्रथमिति पाठ स्थापित परन्तु द्वौ क्षाराभिरुच्येनेन वषाप्रकस्याऽऽगा
 त्वात् पाठो नायेव । एव चतुर्थश्लोकस्य चतुर्थचरणे दापयेत्यङ्गुल
 पिन्दिति पाठ उल्लभ्यते तत्र यङ्गुलपरद्वार्यामबुद्धा शोष्णन
 पिदिन पिन्दिति पाठ स्थापित परन्तु उदररोगायां विदितनाम्नोरे
 निश्रुतेरमन्वकाप्रत्यभवेन तापउत्पन्न निरुक्तम् । अङ्गुलमिति
 माध्यामाय निर्दिष्टम् यथा—“तत्र मासात्पूर्वं शोष्णप्रायङ्गुलिर्द्वय-
 प्रममभिलासोपभ्यासां विदुषात् । कोलाशिनमिन्तो कन्धमात्रं क्षीरा-
 न्नाद्य बालनमिलानन्त्रायेति ॥” सुश्रुत गा. १०१२८॥ इत्येव
 अङ्गुलपरद्वार्यामन्वेन माया निर्दिष्ट तथाऽस्याऽपि सौमिणेऽङ्गुली
 त्रयवर्णव्याप्तारिमिनां मायां पापयेरिति महेश्वरभिराव । राग च साधा-
 रणमया बद्धाश्रमया जायते इति यथावचित्त पाठ एव साधुरिति मत्वा
 तेषवाऽस्माभिः स्थापित सुवर्णसमं तु विदाम एव विचारयन्तु, अस्माक
 मने तु उदररोगेषु प्रादोशे येन केनापि प्रकारेण हृताहृतस्य स्वारस्ये
 जडमस्य वा शोष्णवर्गेनेन धानुनामिष विरूपन परिणमया शरीर-
 पचुनितस्य सत्त्वसुवर्णस्य च सर्वेकारमिमादशाष्टयानि सुवर्णसम
 प्रतिमन्त इवर्णचूर्णमित्येव पाठन पूरा भेदव्यक् प्रतिमिति इत्यन्-
 मनिस्तिरलेण ॥

भाषा—सुवर्णचूर्णमिति अथवा मन्थ, मरिच, शुद्धागा, यव-
 क्षार, त्रिफला, वच, देशी और सुरासानी अत्रवादन, खरखवा
 इन, काजीजीरी, मुनीहौग, दानगरिया (भारवाङ्गीनाम, शमक,
 युनानीनाम), अमलपेत, धनियां, बर्बर, प्रायमाण, अनार-
 दाना, दन्डत्र, सोंठ, कुट्टो, कङ्गीजीवीरी, संधानमक सब
 १-१ भाग, निमोत, अहुलिया चूर्ण, दन्तीमूल, बन्डोला,
 कालाक्षरा, हरे, वैतवीनी अथवा सत्यानासीकीचङ्क वेणय २-२
 भागलेख बारीकचूर्णकर बहरी अथवा गायके मूत्रेण भावना
 दूरर दुनीदारर मित्राकर रगछोड़े । इनमेंसे रोगीकी तीन अहु
 लियोंके अमनागर जितना चूर्ण आयके उभवा पकाहर गोमूत्र,
 त्रिफला, क्षार, मांसरस, मय अथवा कटुल्लज्ज, इनमेंसे औषधि
 दसहर पिलानेने उदर, शीत, शोष, गुल्म, इमोग, बालुणीय,
 अनाह, सर्वांशोष, हृदीमक, कामना, पाण्ड, प्रमेह, उदर,
 गुल्म, इत्येवछो यह नष्टकराई ॥ ४५२ ॥

४५३ सुवर्णसिन्दूरम् (प्रथमम्)

पारकं गन्धकं स्वर्णं जम्बीररममर्दितम् ।
 काचकृप्यां विनिक्षिप्य वालुकायन्त्रमप्यगम् ॥ १९७५ ॥
 दिनाथं पाण्ययेदन्त्याङ्गातीतलाहृतम् ।
 दमसिन्दूरकं नाम नागलाघ्राघ्नंयुतम् ॥
 प्रयोगे सर्वदोषादि हन्ति सत्यं न संशयः ॥ १९७६ ॥
 ६.६ दो, उदररोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सुवर्णका बारीकचूर्ण अथवा चर्क समभागलेकर नीलगणकजलीकर जंगीरीकेरससे ३-४ दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपइमिट्रीदीहुई आतशीशीशीमें भर दोपहरकी तीक्ष्ण अग्निदेवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर नाग ताम्र और अभ्रकभस्म समभाग मिलाकर रसछोड़े । इसमेंसे १ से ३ रतीक समय अथवा रोमोचितानुपानकेसायदेनेसे यह समस्तरोमोंको दूरकरताहै और पूर्ण पुष्टकरको देताहै ॥ ४५३ ॥

४५४ सुवर्णसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

स्वर्णसिन्दूरमम्रञ्च मौक्तिकं कर्पसम्मितम् ।
हेममाक्षिकृत्वैकान्तवद्भाषायांसि च पित्तलम् ॥ १९७७ ॥
 शिलाजतु प्रवालाब्धिफेनशुगुगुगन्धकान् ।
 क्रोलमानेन सूडूह्ण भ्राचयेह्निष्कारिणा ॥ १९७८ ॥
 ततो गुह्राद्योन्मानां विधाय वटिकां भिषक् ।
 देवदारुकपायेण प्रातः सायञ्च योजयेत् ॥ १९७९ ॥
स्वर्णसिन्दूरसञ्ज्ञोऽयं रसेषु प्रवरो रसः ।
स्नायुजात्रिखिलाप्रोगान्दन्ति नास्त्यन संशयः १९८०
 भै. र. , कायुरोगे ।

भाषा—स्वर्णसिन्दूर, अभ्रक और मोतीकीभस्में १-१ कर्प, सुवर्णमाक्षिक, वैकान्त, वट, लोह, पीतल, प्रवाल इनको-भस्में, शुद्धशिलाजीत, समुद्रफेन, गुगल और गन्धक ८-८ भागो लेकर सबका बारीकचूर्णकर चित्रकमूलकेस्वरस अथवा काथसे १-२ दिन घोटकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोलो सुखहृत्ताम देवदारुककाईकेसायदेनेसे यह समस्त स्नायुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ४५४ ॥

४५५ सुवीर्यरसः

बीजाकृतैरभ्रकसत्त्वहेम-
 ताक्ष्यैरकान्तेः सह साधितो यः ।
 पुनस्ततः पट्टुणगन्धजीर्णः
 सुवीर्यनामा ह्यधिकप्रभायः ॥ १९८१ ॥
 टो., रसायने ।

भाषा—बीजवनाहण्ड अम्रकसत्त्व, सुवर्ण, सुवर्णमाक्षिक, पीतल और कान्तलोह इनका यथाशक्त्य सुमुक्षितपानेको प्रास-देकर पट्टुणगन्धकारणकर सिद्धकियाहुआ पारा देह और लोह दोनोंमें कामकरताहै ॥ ४५५ ॥

४५६ सूचिकाभरणरसः (लघुः) (प्रथमः)

विषं पलमितं सूतः शाणिकभ्रूर्णयेह्ययम् ।
 तच्चूर्णं सम्पुटे क्षिप्त्वा काचलिप्तशारावयोः ॥ १९८२ ॥
 मुद्रां दत्त्वा च संशोष्य ततश्चूर्णान् निवेदायेत् ।
 वह्निं शनैः शनैः कुर्यात्प्रहरद्वयसहस्रहया ॥ १९८३ ॥
 तत उद्धाटयेन्मुद्रामुपरिस्थः शाराचक्रात् ।
 तत्सद्रो धौ भवेत्सतस्त्वं गृह्णीयाच्छनैः शनैः ॥ १९८४ ॥
 वायुस्पर्शां यथा न स्यात्तथा कृप्यां निवेदायेत् ।
 यावत्सूच्या मुखे लग्नः कृप्या निर्याति भेषजम् १९८५

तावन्मात्रो रसो देयो मूर्च्छिते सन्निपातिनि ।
 क्षुरेण प्रच्छिते मूर्च्छि तत्राहुत्स्य च घर्षयेत् ॥ १९८६ ॥
 रक्तभेषजसम्पकान्मूर्च्छितोऽपि हि जीवति ।
 तथैव सर्पवृष्टस्तु मृतावस्थोऽपि जीवति ॥
 यदा तापो भवेत्तस्य मधुरं तत्र दीयते ॥ १९८७ ॥

शा. सं., घ. यो. त., यो. वि. , र. प्र. सु., र. सं. क., र. वि. , रसायनं., र. सु., घ., नि. र., भै. सा., रसायनप., र. क. टो., र. प्र., व. रा., र. को., र. वा., यो. म. घै. वि. , र. क. ल., वि. र. भ., सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धवखनागकाचूर्ण १ पल और शुद्धपारा ४ भागो लेकर १-२ दिन मर्दनकरे । पारा अदृश्य होनेपर कपइछान-वियेहुए काचका पोतादेकरमुखाण्डहए दो शरावोंमें बन्दकर ३-४ कपइमिट्री देकर अच्छीतरह सुखनेपर चूटकर रस दो-पहरकी मन्दाग्नि देवे । स्वाहशीतलहोनेपर धीरजसे शाराको उपाहकर ऊपरके शरावमें लगेहुए पारिकोधीरजसे उगाकर शीशीमें रखले । हवा न लगे । हवा लगनेसे द्रवकी ताकत कम होजातीहै । सन्निपातमें मूर्च्छितहोनेपर तालमें पाछ देकर सूईके अग्रभागपर जितना रस आसके उतना रक्तमें मिलाकर अहु-छोसे घर्षणकरे । रक्तमें मिलेवही मूर्च्छां निवृत्त होजातीहै । इसीतरह सर्पदट्टमें भी कामलेना । इसके देनेकेबाद अत्यन्त ज्वर बढ़ने पर मधुर पदार्थ खानेको देना और शीतकियासे ज्वरको निवृत्तकरना ॥ ४५६ ॥

४५७ सूचिकाभरणरसः (द्वितीयः)

नागं पर्वि हरिणशृङ्गं रसासुरेन्द्रां-
 स्तुत्थं शिलाञ्च रसञ्च समानभागान् ।
 अर्कैरिमेदमुनिर्किञ्चुक्तोयपृष्ठां-
 खिलिः पृथक्च पुटयेत् विचूर्णयेत्तत् १९८८
 सूयो चिडङ्गधिधिवृक्षजवीजहिङ्गुं-
 व्याघ्रीसजीरकरजोयुतमेतदेवम् ।
 सम्मर्दयेच्च पयसा यवच्छिकायाः
 शुक्लं सुचूर्णितमिदं विदधीत वैद्यः ॥ १९८९ ॥
 पाण्डूनायातकृमिमेहसवातरक्त-
 शोफांस्तथा कसनगुल्मकमूत्रकृच्छ्रान् ।
 योग्यानुपानसहितः क्षतजं क्षयञ्च-
 गुञ्जामितो हरति रोगगणांस्तथान्यान् ॥
 टो., पाण्डुधिकारे ।

भाषा—नाग, हीरा, हरिणकाशीग, फिट्कड़ी, गन्धक, तुल्य, बैनसिल, खपरिया छव समभागलेकर नीलगणकजलीकर आक, विट्खदिर, अमृत्य, हाककेपूल इनके स्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलवनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी १-१ आवदेवे । फिर चिडङ्ग, पलाशबीज, हॉग, वनभाटा, बीरा १-१ भागका बारीक चूर्ण मिलाकर जैतीके स्वरससे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।

इन्मैसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे पाण्डु, आमवात, क्रिमि, प्रमेह, वातरक, शोथ, खासी, गुल्म, मूत्रच्छ्द, उर क्षत और क्षयप्रवृत्तियोंको बह नष्टकरताहै ४५७

४५८ सूचिकाभरणरसः (तृतीयः)

रसगन्धकनागञ्ज विषं स्याद्वरजङ्गमम् ।
मात्स्यवाराहमायूरच्छागपित्तं विभाषयेत् ॥ १९९१ ॥
सूचिकाभरणो नाम भेषजेण प्रकीर्तितः ।
सूचिकाप्रेण दातव्यः सन्निपातनियर्हणः ॥ १९९२ ॥
र.स., भै. र., घ, र सु, र.क. यो., र.न, सन्निपाते । केयु-
चित्तुस्तकेयु अन्नकं विशेषेण नियोजितं द्यते ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाममस्म, यथाशक्य स्यावर और जड़मविष समभागलेवर मछली, मूत्रर, मोर और बकरेकेपित्तोंसे १-१ भावना देकर रखछोड़े । इसमेंसे सुईके अन्नभागसे लेकर समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्तमन्निपातोंको नष्टकरताहै ॥ ४५८ ॥

४५९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्थः)

रसयैकान्तहेमाश्रं तीक्ष्णं तात्रं मृतं समम् ।
पङ्क्तिः समं शुद्धगन्धं सर्वं निर्गुण्डिकारसः ॥१९९३॥
कपायैश्चित्रकस्यापि मर्दयेद्विसत्रयम् ।
सूर्यावित्ताङ्गस्त्यभृङ्गैस्तिलपर्णाङ्द्रवारणी ॥ १९९४ ॥
काकमाची महाराष्ट्री कटुणी गिरिकर्णिका ।
धुस्वरस्तुलसी दन्ती बृहती कण्टकारिका ॥१९९५॥
स्नुहर्षकविजया मुण्डी काकतुण्डी जयाऽमृता ।
पतासां भावयेद्वायैश्चतुर्दशदिनावधि ॥ १९९६ ॥
अरुमूलरूपायेण भावयेद्दिनपञ्चक्रम ।
दत्त्वा सञ्जणितं पञ्चपित्तं भाज्यं दिनत्रयम् ॥१९९७॥
विषमुष्टिकपायेण भावयेद्विसत्रयम् ।
जेपालबीजमज्जोत्थतैलेन द्विषसत्रयम् ॥ १९९८ ॥
भावितं शांषितं चूर्णं मधुना सह मिश्रयेत् ।
सूचिकाभरणो नाम रसः स्यात्सन्निपातजित् १९९९ ॥
दापयेत्सूचिकाप्रेण सर्वेषां सन्निपातनाम् ।
ज्वरशूलदोषाशेस्तु ग्रीहपाण्डुगदेषु च ॥ २००० ॥
आध्मानशूलमन्दाग्निकासाश्वसादिरोगिषु ।
श्लेष्मिरुत्थूलदेहेषु चानुपानं पृथक्पृथक् ॥ २००१ ॥
शु. यो. त, र सु, र क. यो., बा, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्धपारा, वेरान्त, सुवर्ण, अन्नक, फोलाद, ताम्र इन्दीमस्यै समभागलेकर सत्री बरार शुद्धगन्धक मिलाकर बारीकचूर्णकर निर्गुण्डी, चित्रक, स्यंमुसी, अगस्त्य, भंगरा, हुहर, इन्द्रायण, मकोय, मराठी, मालहांगनी, कोयल, धनूरा, तुलसी, दन्तीमूल, वनभाटा, भटकटैया, मूत्रर, आक, भांग गोरखमुण्डी, काकनासिका, अण्ठी और गिलेयके स्वसंशोभे १४ दिन, आश्वीजइकादशसे - दिन, पंचोपित्तोंमें १-१ दिन, इषिकेकेसाथ और जमाज्योदकेतैलेमें १-१ दिन

क्रमशः भावनाएं देकर रखछोड़े । इसमेंसे सुईके अन्नभागसे लेकर समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे समस्त सन्निपात, ज्वर, शूल, उदररोग, बरागीर, ग्रीहा, पाण्डु, आध्मान, शूल, मन्दाग्नि, कास, श्वास, कफ, मेद इनसबको बह नष्टकरताहै ४५९

४६० सूचिकाभरणरसः (पञ्चमः)

येन केनाप्युपायेन भस्मीभूतो रसोत्तमः ।
तद्युष्णं बह्मनिष्कृतं तेनैव मिश्रयेत्सुधीः ॥ २००२ ॥
गुल्मे विषं तथा चात्रं खल्वे मयं मुहुर्मुहुः ।
सेवनाच्च विलीयन्ते सन्निपातास्त्रयोदश ॥ २००३ ॥
सूचिकाभरणो नाम नैव देयो ह्यमुच्छिद्यते ।
अस्थोपयोगमात्रेण सन्निपाती भयङ्करः ।
स्वस्थः स्याद्द्विरेणैव संशयावसरो न हि ॥२००४॥
रसचि, सन्निपाते ।

भाषा—शोकीभस्म और शुद्धपारा, तावा और अन्नक-भस्म, शुद्ध बह्मनाग सब समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पारा बहदयहोने तक घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरतीकी-माना समयोचितानुपानकेसाथ मुच्छिद्यसन्निपातोंको देनेसे भयङ्कर सन्निपात निरुत्थतोहै । अमुच्छिद्यवस्थामें इने नहीं देना ॥

४६१ सूचिकाभरणरसः (षष्ठः)

अमृतं गरलं दाम् सर्वतुल्यञ्च द्विद्वुलम् ।
पञ्चपित्तेश्च सध्मद्ये संपंपाभां घटीं चरेत् ॥ २००५ ॥
प्रदेया सूचिकाप्रेण सन्निपातकुलान्तहन ।
वर्जयेत्तिलतैलञ्च द्वापयेद्विषमत्तकम् ॥ २००६ ॥
भै. र., घ., र. सु, र. त, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध बह्मनाग, सध्मद्विष, देवशक १-१ भाग, शुद्ध-शिमरिफ सत्रीबरावर लेकर बारीकचूर्णकर पांचोपित्तोंमें १-१ दिन मदनकर सध्मप्रमाणगोलिये बनार रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूर-करताहै । इसमें तिल और तिलकांत चर्चितकरना । अन्यन्त-भूतल्यानेपर दहीभात खानेसे देना ॥ ४६१ ॥

४६२ सूचिकाभरणरसः (सप्तमः)

खण्डोक्त्य विषं कृष्णं मारुतुगधेऽल्पभाण्डके ।
सर्काजिके सगरले दत्त्वा चुल्यां निधापयेत् ॥२००७॥
सप्ताहं तत उद्धृत्य शरप्यं सञ्जण्यं यतनः ।
सूचिकाभरणो नाम रसो शुभ्रतमो भवेत् ॥ २००८ ॥
सञ्जणानासो विषेष्टस्य यत्नः काजिकपेयितः ।
ग्रहसन्धे प्रयोक्तव्यः शास्त्रास्वतित्तिहोमोदये ॥ २००९ ॥
रगायनम., र. सु. र. र. शी., टो, शु. यो. त, र. का, र. क. यो., र. क. त, सन्निपाते ।

भाषा—शालेबह्मनागके छोटछोट टुकड़ेकर एकवर्तमें बाने । इतने दवा भाण्डकूप, चौगुनीकाशी और बाराहवा गांधिष शलर मुंरबन्दर जहां प्रतिदिन बृहदा जन्मासे बदा एक-कालिन गदा रागु योदकर बर्तनछो दगादे । अष्टदिन

निकालकर वारीकचूर्णकर रखओड़े । इसमेंसे ३-३ रसी काझीमें पीसकर ब्रह्मरन्ध्रपर पाछदेकर लगानेसे सञ्ज्ञानास और भयकर शीत नष्टहोतेहै ॥ ४६२ ॥

४६३ सूचिकाभरणरसः (अष्टम)

अहिफेनं मृतं ताप्रं हिह्लुलं शृङ्गिकं विपम् ।
मत्स्याजगजपित्तन माहिषेण विभाधितम् ॥ २०१० ॥
दातव्यं सूचिकाग्रेण शीततोयं पिबेदनु ।
रसश्चाद्रकतोयेन ह्यनुपानं प्रकल्पयेत् ॥ २०११ ॥
शीताङ्गेपि सितापयः सहचरं दन्ते पुनर्जीवति ।
रयातो योऽत्र स सूचिकाभरणरुः सूच्यग्रमानो रसः ।
किंचा द्वादशरन्ध्रचर्मसु भिपक्वु शखेण कृत्वा पदं,
दद्याच्चाद्रकवारिणा द्रुततरं सञ्ज्ञां लभेताशु हि २०१२
र सु, र (मा), ना वि, दो, सन्निपाते ।

भाषा—अश्लीम, ताम्रभस्म, शुद्धशिंगरिफ, सौंघियाविप, सच समभागलेकर वारीकचूर्णकर मछली, चकरा, हाथी और भेड़के पित्तोंसे १-१ भावनादेकर रखओड़े । इसमेंसे सूईक अग्रभागसेलेकर अदरखके रसकेसाथ देकर ऊपरसे ठंडापानी पिलानेसे समस्तसन्निपात नष्टहोतेहै । शीताङ्गमें शक्क, दूध और कटसैरैयाकेसाथ देनेसे फिरसे जीवन आताहै । यदि इसतरह सञ्ज्ञाप्राप्त न हो तो ब्रह्मरन्ध्रपर शकसे कानपदरकरे अदरखके रसकेसाथ मिलाकर घिसनेसे तत्काल सञ्ज्ञाको प्राप्तहोताहै ४६३

४६४ सूचिकाभरणरसः (नवमः)

हृद्धानी दरदं तुल्यं गरलेन सुमर्दितम् ।
मुद्गप्रमाणवटिका नाभिहृत्तालुदेशके ॥ २०१३ ॥
कुशेन चर्म निर्भिद्य विधुष्याद्रकवारिणा ।
रसप्रवेशमात्रेण नेत्रमुद्गाटयेत्क्षणात् ॥ २०१४ ॥
सावधानो भवेद्यद्वा न चेतन्यं प्रवर्तते ।
ततस्त्वेकां सुवीटिकां दद्याद्द्रिकवारिणा ॥ २०१५ ॥
सर्वथा सुखमाप्नोति भोजयेद्द्विभक्तकरम् ।
सूचिकाभरणो नाम रसः परमदुर्लभः ॥ २०१६ ॥
र सु, र, दो, सन्निपाते ।

भाषा—शुद्ध भैनसिल और शिंगरिफ समभागलेकर संप्र विषसे मदनकर मूगवरावर गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली नामि, हृदय अथवा तालुप्रदेशमें डुशासे चोरकर अदरखजेजलेसाथ मिलाकर घणघणनेसे सन्निपाती तत्क्षण नेत्रोंको खोलदेगा । उससमय १ गोली अदरखके रसकेसाथ घिसकर रिलादेना इससे एकान्त अच्छा होजायगा । अत्यन्त मूखलगनेपर दहीभात खानेको देना ॥ ४६४ ॥

४६५ सूचिकाभरणरसः (दशम)

रुचक्रञ्चक्रकं गन्धं तालकञ्च मन.शिला ।
खर्परी शिखितुल्यञ्च नेपालं विपटङ्कणम् ॥ २०१७ ॥
द्वपदं सैन्धवश्चैव सर्वतुवपन्तु पारदम् ।
मधुकवीजतैलेन मदेयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१८ ॥

दौलायन्त्रे पचेद्यामं तश्चीत्या खल्वमध्यगम् ।
कृष्णसर्पस्य पित्तन भावयेद्विषसत्रयम् ॥ २०१९ ॥
ब्रह्मद्वारं ध्रुवस्पृष्टे गुञ्जामानं प्रदापयेत् ।
जम्बीरस्य जलं देयं सन्निपातं निहन्ति च ॥ २०२० ॥
हिकां मूर्च्छाञ्च कम्पञ्च वाधिर्यं मूकतां तथा ।
ऊर्ध्वश्वासञ्च फासञ्च धनुवातं नियच्छति ॥
सूचिकाभरणो नाम प्राणिनां प्राणदायरुः ॥ २०२१ ॥

धा, व रा, सन्निपाते । वषवराजोये सूचिकामुख्य इति नाम ।

भाषा—कालानमक, अन्नकभस्म, शुद्ध गन्धक, हृत्ताल, भैनसिल, खपरिया, तुल्य, जमालगोटा, घटनाग, मुद्गा, शिंगरिफ, सैधानमक सब समभाग और सबकी बराबर शुद्ध पारा लेकर वारीकचूर्णकर परिको अच्छीतरह मिलाय महुष्ये-वीजोंकेतैलेसे ३ दिन मदनकर उबोतैलेसे ३ दिन दोलायत्रसे पकावे । फिर दोदिन कालेसर्पकेपित्तसे मदनकर १-१ रसीकी गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली ब्रह्मरन्ध्रमें चोरकर जम्बीरकेरसमें घिसकर मदनकरनेसे सन्निपात, हिचकी, मूर्च्छा, कम्प, बहिरापन, गूंगापन, ऊर्ध्वश्वास, फास, धनुर्वात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ४६५ ॥

४६६ सूचिकाभरणरसः (एकादशः)

मृताभ्रमेकान्ततीक्ष्णताप्राप्तं समम् ।
पारदो गन्धकस्ताप्यं नागवह्नी समसमम् ॥ २०२२ ॥
सर्वं निर्गुण्डिकाद्रावे मर्दितं खल्वेकं ततः ।
भृङ्गी पुनर्नवा पाठा चित्रकं बालकाम्पृते ॥ २०२३ ॥
अर्कचक्षूरतुलसीमुण्डोजम्बीरलाङ्गुलम् ।
कुमारो नागवह्नी च ऋवैरपां विमर्दयेत् ॥ २०२४ ॥
काचकूप्यन्तरे क्षित्वा विलेप्य बलमृत्सिकाम् ।
दिनेकं घालुकायन्त्रे पचेन्नोत्वा च चूर्णयेत् ॥ २०२५ ॥
मत्स्यस्य च वराहस्य कमठ्या महिपस्य च ।
अजायाश्च मयूरस्य कृष्णसर्पस्य कौकुटः ॥ २०२६ ॥
मनुष्याभ्यश्चमण्डूकजातैः पित्तैश्च भावयेत् ।
दापयेत्सूचिकाग्रेण सर्वेषां सन्निपातिनाम् ॥ २०२७ ॥
श्लोहशुल्मोदराणाञ्च ग्रहण्यातातिसारिणाम् ।
धनुवातं कम्पवातं हिकावाधिर्यमूकताः ॥ २०२८ ॥
कौन्ड्य हिमोद्ध्विथासांश्च ह्यपरमाराऽतिविभ्रमां ।
तत्क्षणेन निहन्त्याशु यथेच्छं पथ्यमाचरेत् ॥ २०२९ ॥
नारिकेलोदकं दाहे दृष्यन्न पथ्यमाचरेत् ।
तृपातं शीतलजलमिश्रुखण्डानि भक्षयेत् ॥
सूचिकाभरणो नाम सर्वरोगविनाशहृत् ॥ २०३० ॥
र. क यो, सन्निपाते ।

भाषा—अन्नक, सुवर्ण, वैकान्त, फोलाद, ताम्र इनकीभस्में, शुद्ध बटनाग, पारा, गन्धक, सोनामाखी, नाग और बह्रभस्म सब समभागलेकर निर्गुण्डो, भगरा, पुनर्नवा, पाठा, चित्रक, श्लेषवाला, मिलोय, श्राक, धतूरा, तुलसी, गोरखमुण्डो,

जंभीरी, कश्मिरी, पीतुवार और पानोंके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ४-५ कपमिठीदुई आतनीशीमी भरेके मुहन्दकर सुग्नेपर एकदिन पाउछायन्में पकावे । स्वाज्ञसीतलहोने पर निवालर मछली, सुन्दर, कडुशी, भेंगा, बकरी, मोर, कालसांप, सुर्गा, मनुष्य, घोडा, इत्ता, मैदक, इनके यथालाभ पितांसे १-१ दिन मर्दनकर रगछोड़े । इयमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर समयोचितानुगतेनाथ देनेसे समस्तपत्रिका, शोथ, शुष्म, उदररोग, प्रहणी, अतिमार, धनुवांत, कम्पमात, द्विचकी, शक्तिपान, सूंगामन, कुचदान, टंडापसीना, ऊर्ध्वभास, अपस्मार, विभ्रम इनसबको यह नष्टकरताहै । अत्यन्त मूलकानेपर चयेट पच्यदेवे । अत्यन्त दाह मान्द पङ्गेपर दहीभातेकर नारियलकाजल पिलावे और ईश्वरीह चूलेको देवे ॥ ४६६ ॥

४६७ सूचिकाभरणरसः (द्वादशः)

शुष्यं यद्गं तथा नागं क्रमेण भागवृद्धितः ।
समांशममृतं देयमर्कक्षौरंण भाधितम् ॥ २०३१ ॥
अन्धयेप्रलिकायन्ने भ्मापयेदेकराप्रकम् ।
स्याद्दशीतलतां प्रातं धूममूर्ध्यागमाहरेत् ॥ २०३२ ॥
गरलं मुद्धसर्पस्य धूमं सम्मर्द्य खल्यके ।
सूचीमुखाम्रेण पुनस्तालुमूले तु दापयेत् ॥ २०३३ ॥
निश्चेतो चेतनाकारः सूचिकाभरणार्पितः ।
पार्यतीकान्तनिर्दिष्टः सद्यः प्रन्ययकारकः ॥ २०३४ ॥
र. सु., सभिषाते ।

भाषा—ताम्र, बज्र और नागमन्म क्रमवृद्धभागसे लेकर सबको बराबर शुद्धबछनागमिलाकर आक्रेन्दूपसे एकदिन मर्दनकर अणुसमापने कन्दकर एकात घननकरावे । स्वाज्ञसीतलहोने पर ऊपरका धूआं धोरजते उतारकर श्लेषिणिकियेहुए कालेगार्के जइसे मर्दनकर रगछोड़े । इयमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर ताउ-स्थानमें पाउछेकर रसमें मर्दनकरनेसे गुणर निषेध आदमी उठकर बैठजाताहै ॥ ४६७ ॥

४६८ सूचिकाभरणरसः (त्रयोदशः)

घञ्जयेक्रान्तयो भ्रंसम प्रयेकं निष्कसम्मितम् ।
शुद्धाधिपं द्विनिष्कञ्च त्रिनिष्कं चूलिकापटु ॥ २०३५ ॥
पञ्चनिष्कंऽग्निजारद्वयं सर्वमैकत्र मेलयेत् ।
तायङ्गमरमं पायमर्दयेद्विधिमन्त्रयम् ॥ २०३६ ॥
शाङ्गैष्टादिकयुगस्य क्षारनरंण भापयेत् ।
त्रयोविंशतिताराणि यिमूष्य च विशोष्य च ॥ २०३७ ॥
ततो यिमूष्य दिवसं क्षिपेदन्तकरण्डके ।
मृतमज्जीयनाकषोऽयं सूचिकाभरणो रसः ॥ २०३८ ॥
सभिषातेन ताम्रेण सुमूर्ध्याभृगनस्य च ।
नालुनि प्रच्छयिन्याऽयं रसमेनं चितिधिपेत् ॥ २०३९ ॥
सूच्याऽतिगूहमया तोषामिध्रयाऽतिप्रयत्नातः ।
ततस्तेनेन तं लिप्या निधाने सभिषेदापेत् ॥ २०४० ॥
ततोऽर्जमहराहृदं मुक्तम्रयपुरीगरम् ।
लघ्वमञ्जे प्रतापादयं क्षोलायन्ने निरा मुदुः ॥ २०४१ ॥

आयुष्मन्ने विजानीयादन्यथा चान्यथा खलु ।
ततः शीताम्बुसम्पूर्णं कटाहे तं नियेययेत् ॥ २०४२ ॥
तत्र स्योत्कथितं तोषामपनीयापरं क्षिपेत् ।
याचमानममुं पश्चात्पाययेत्ससितं पयः ॥ २०४३ ॥
दधि वा वितयोपेतं नारिकेलजलं तथा ।
रम्भाफलानि दद्याच्च त्रियते स्तोऽन्यथा खलु ॥ २०४४ ॥
लघ्वसञ्जं प्रभायन्ते याचमानं फलादिकम् ।
तस्मादाकृष्य तैलाक्तं तैलं यत्रादिभि हरेत् ॥ २०४५ ॥
लेपयेद्गन्धकपूर्वरापादतलमस्तकम् ।
इत्यादिसिशिरं द्रव्यैः ससरात्रमुपाचरेत् ॥ २०४६ ॥
कर्णाक्षिनासिकायन्त्रे क्षिपेत्पेताधयं मुदुः ।
अष्टमेऽहनि सम्प्राते ददुर्दुरीमूलजं रसम् ॥ २०४७ ॥
ससितं पाययेद्देगमरतारपितुं रसम् ।
रसेऽयतारिते पश्चाद्यपेष्टं भोजनं दधि ॥ २०४८ ॥
ध्यासोच्छ्वासयुतं चान्ये मुक्तजीवनलक्षणैः ।
कटाहे जलसम्पूर्णं निक्षिपेद्दोषलघ्वये ॥ २०४९ ॥
लघ्वयोधं तमाकृष्य पूर्णपरसमुपाचरेत् ।
जीवित्वा यावदायुष्यं त्रियते तदनन्तरम् ॥ २०५० ॥
शाङ्गैष्टा च तथा ध्यामी कर्तारस्तिलपणिता ।
इन्द्रयारणिकामुस्ता हृदिऽऽङ्गोलमृत्तिका ॥ २०५१ ॥
अपामार्गः कणा स्वर्णं कटुतुम्र्या च तन्तिङ्डी ।
शाङ्गैष्टादिकयुगोऽयं सभिषातहः परः ॥ २०५२ ॥
र. र. घ., र. को., सभिषाते ।

भाषा—श्रीरे और वैकान्तबीभम ४-४ मासे, श्द्रीविष ८ मासे, नवमादर १२ मा., अम्बर २० मा., पारदमग गवही बराबर लेकर ३ दिनतक शुष्कमर्दनकर शाङ्गैष्टादिकयुगैशारकेगानीसे २१ दिन तक मर्दनकर सुग्गाकर एकदिन सुग्गापोटकर हाथीदोतही द्विषोमें रखछोड़े । मयइमगिनरतने मन्त्र मरणामग आदमीके ताउमें पाउछेकर बहुनवारीकसूईके अग्रभागसे पानीमें दुहाकर उमके ऊपर त्रिणागर आने उक्ता ताउमें मर्दनकर सर्पाहमें ऐन पोकर निवांश्यापानमें सुगदे । आपोहरके उतागत दन्त और पेताब होकर सञ्जको प्रातहोग और बारम्बार गिर्बो इपर उपर हिलावेगा उतगमय समझना चाहिये कि इयमें जीव बाकीहै । अन्यथा मृत समझना । सुगजापको ईश्वरीय भरीहुई कटाहीमें कटादे । उगकागानी गाम होनेपर निहालकर दुगा टंडाभरदे, इयकमको बराबर जारी रकने । पानी पीनेको मांने लो छहर काल दुहा दूष अपना छहर मिलादुभा दरी अपना नारियलकाजल और केनेका फल देवे । इयमें उक्ता करनेसे रोगी मरनामया इयकाअर ध्यान देवे । अत्यन्त होग आनेपर जो कजादिक मांने लो डेवे और कटाहीमें बरर निहालकर बरने तेजको बोटकर फन्द, केसर और कुरावा गमन करीतर लेग बररे । ऐने ७ दिनक एतेपकमें वरही रगछे । कान, आंन, नाक और मुँह इयमें उक्ताकीके फेदे । आठदिन कटुकी (मुषाका. व.) बरकाग लहर

बालकर पिलावे, इमसे रसनाप्रभाव मन्द पड़जायगा । इसके बाद थोड़ेभोजन और दही दे । रसकाप्रभाव कमहोनेपर यदि श्वातोच्छ्वास अधिक मान्दम हों तो जलपूर्ण कड़ाहीमें वैठावे और पूर्वकीतरह उपचारकरे । इसतरह जितना आयु अवशेष होगा उतनेको भोगरर फिर शरीरत्यागकरेगा । काकजड़ा, अथवा मनोय, बनभाटा, करीर, हुडुहर, इन्द्रायण, नागसोधा, हल्दी, अड्डोल्कीजड़, अषामार्ग, पीपल, धतूरा, कड़वीतूमड़ी, पुरानीइमली, यह शार्ङ्गछादि गणहै ॥ ४६८ ॥

४६९ सूचिकाभरणरसः (चतुर्दशः)

धातूपधातूपरराजमुका-

रसान्नकल्को भृशामर्दितोऽयम् ।

उन्मत्ततैलोद्भवगन्धयुक्त्या

कर्कं क्रमादष्टपुटे विपकः ॥ २०५३ ॥

तद्भु भृशरयन्त्रविनिर्गतः

सकल्पित्तथिपोदधिफेनिलः ।

तिलसमोऽपि कृतान्तनिर्कृतनो

जयति चार्द्रकवारिविराजितः ॥ २०५४ ॥

स्वर्णं तारं त्रपुस्तात्रं सीसकं तीक्ष्णपित्तले ।

संसेते धातवो मुष्याः कांस्याद्याः कृत्रिमाः परे २०५५

महारसाश्चात्परसा विज्ञेया उपधातवः ।

पोडशैते यथाप्राप्त्या क्षिप्यन्ते रसकर्मणि ॥ २०५६ ॥

र. (मा.), सत्रिपाते ।

भाषा—सुवर्ण, रजत, वज्र, ताम्र, नाग, फोलाद, पीतल, कांसा, फूल, जस्त, शिंगरिफ, सोनामाखी, रूपामाखी, चवल, तृतिया, कान्तपापाण, कान्तलोह, वैनान्त, नीलम, गोदन्ती, गन्धक, मैनसिल, तवकीहरिताल, कङ्कठ, मुर्दासङ्ग, कसीस, फिटकड़ी, माणिस्य, पना, पुलराज, हीरा, गोमेद, लगनिया, अफीक, मार्जारस, फीरोजा, संगयशव, स्फटिक, जहरमोहरा, मुंगा, लाजवर्द, लालपत्थर इत्यादि रत्न, मोती, पारा, अथक इनसवकीमसमें समभागलेकर धतूरेरससे १-२ दिन मर्दनकर टिकड़ीवनाय सुखाकर शराचसमुद्रमें धन्दर कुम्भसुटकी आचदे । ऐसे आठ आठ दिनेकेबाद पूर्ववत् मर्दनकर पकेपानोंमें लपेटकर भृशसुटकी आचदे । स्वाहशोतलहोनेपर निफालकर यथालाभ पित्त और विष तथा समुद्रकेन और अम्बरकी १-१ भावनादेकर रखलोड़े । इममेंसे तिलप्रमाण मात्रा अदरपके रसकेसाथ खाने तथा रक्तमेंसयोगकरनेसे भयङ्करसत्रिपातको यह निवृत्त-करताहै ॥ ४६९ ॥

४७० सूचिकाभरणरसः (पञ्चदशः)

रसं सर्पिषं नामि धत्तूररसमर्दितम् ।

सूचिक्रिपण दातव्यं सत्रिपातकुलान्तकम् ॥ २०५७ ॥

दे. वि, सत्रिपाते ।

भाषा—पारदमस, सर्पविष और कस्तूरी समभाग लेकर धतूरेरससे १-२ दिन मर्दनकर रखलोड़े । इसमेंसे सूचिके

अप्रमाणसे लेकर खाने तथा रक्तमें मिश्रणकरनेसे घोरसत्रिपात निवृत्तहोताहै ॥ ४७० ॥

४७१ सूचिकाभरणरसः (षोडशः)

चत्वारो रसभागाः स्यु र्गन्धको द्विगुणस्तथा ।

चत्वारो रसकाङ्गागास्तदर्थं नागयङ्गयोः ॥ २०५८ ॥

तीक्ष्णस्य हि तथा चैकं द्विगुणं हेमतारयोः ।

शुक्लचतुर्ष्यं यत्रं प्रवालञ्च चतुर्गुणम् ॥ २०५९ ॥

गोमेदकञ्च द्विगुणं मौक्तिकञ्च चतुर्गुणम् ।

सर्वांशमिलिताल्पश्चात्पोडशांशान्नकाद्युतिः ॥ २०६० ॥

रत्नोदरे च सम्मर्द्यं यावत्कज्जलसन्निभम् ।

नवसारेण संयुक्तं काचकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६१ ॥

अग्निं प्रदीपयेत्तत्र द्वाविंशत्प्रहरेषु च ।

स्वाङ्गदीतलमुत्तार्यं चूर्णयेद्यत्नतः कृतम् ॥ २०६२ ॥

मत्स्यमाहिपमायूरपित्तेश्च शतभावितम् ।

आजेनापि शतं द्याधरस्वारहयोरपि ॥ २०६३ ॥

ततोऽग्निगर्भं सर्वेषां समांशं मेलयेद्बुधः ।

ततः सिन्दूरवर्णं स्याच्छतवारश्च भावितः ॥ २०६४ ॥

क्रोधिकृष्णाहिसम्भूतैः पित्तेश्च गरलैस्तथा ।

सञ्चयितं ततः शुष्कं ताम्रकूप्यां निधापयेत् ॥ २०६५ ॥

शङ्खडुन्दुभिर्नियेषवीणापट्टहवेणुभिः ।

देवद्विजयोगिधुन्दुकुमारीमैत्रवान्युक्त्वा ॥ २०६६ ॥

पूजयेन्मतिमान्चैद्यत्नतः कर्म समाचरेत् ।

सन्निपाते महाघोरं कालदृष्टे विपोल्वणे ॥ २०६७ ॥

शीतान्ने दृष्टिनाशे च नाड्याश्च विषमे ग्रहे ।

स्मृतिश्रुतिमनोनेष्टे हिक्राध्याससामाकुले ॥ २०६८ ॥

मूर्च्छापञ्चेन्द्रियवषे वैकल्ये नष्टचेतसि ।

वहनाऽत्र किमुक्तेन सञ्जीवयति मानवम् ॥ २०६९ ॥

सूच्यग्रेण च दातव्यो नखदन्तान्तेरेष्वपि ।

कारयित्वा तु जिह्वाग्रे पादाग्रे ग्रहान्त्रके ॥ २०७० ॥

दीयते शङ्खहृदशे सर्वान्ने दाहरोणिते ।

मोहस्तु विनियतं रसलक्षणमुत्तमम् ॥ २०७१ ॥

दधिभक्तं सुप्तं देयं दुग्धहीनन्तु दाद्यन्तु ।

द्राक्षात्सर्वैरकं द्यात्सर्वान्ने दाहसम्भूते ॥ २०७२ ॥

गाढमोहे समुत्पन्ने सिञ्चेत्क्षीरेण मत्तकम् ।

सूचिकाभरणो नाम रसः सर्वज्ञसूचितः ॥ २०७३ ॥

र शं, सत्रिपाते ।

भाषा—शुद्ध पारा ४ तोले, गन्धक ८ तोले, खपरिया ४

तोले, नाग और वज्रमस २-२ तोले, फोलादमस १ तोला,

सुवर्ण और रजतमस २-२ तोले, हीरामस ४ रती, प्रवाल-

मस ४ तोले, गोमेदमस २ तोले, मोती-४ तोले, अथक-

मस सबसे सोलहवाभाग लेकर सरकी नीलवर्णकज्जलीकर १६

वाभाग नवसादर मिलाकर ६-७ वषडिमिश्री दोहूँ आतशीशीशी-

में भरकर वातुकायन्त्रमें रख शलाकासे गन्धकजारणकर मुँह

चन्दन ३२ पहरकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर चन्द्रोदयकी तरह शीशीकी फोड़कर ऊपरलगाहुआ सिन्दूर और नीचे रहीहुई भस्में निकालकर इकट्ठीकरले । सिन्दूरकेऊपर कुछ गन्धक या नव सादरकीभस्म रही हो तो उसे फेंकदे । फिर तलस्यभस्म और सिन्दूरको १-१ दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, मोर, बरुवा, मनुष्य और सुआरकपित्तोंकी १००-१०० भावनाएँ देकर सक्की बराबर अम्बरमिलाकर फणीकालसाफकी मोथयुक्तकर उसना जहर और पित्तानिकालकर उनक १-१ भावना देकर तावेकी डिब्बीमें रखलेवे । नागातरहके वाचोवैसाथ देव ब्राह्मण योगी, कुमारी, भैरव और गुरुलोगोंका पूजनकरे । महाभोरसत्रिघात और भय दूरसर्पदशमें शीताङ्ग, दृष्टिवध, नाडीका विपमगमन, स्मृति धुति और सन्नाहनाह, हिचकी, श्वास मूर्च्छा, विकल्ता इत्यादि चिह्नोक उपशितहोनेपर सूचीक अप्रमाणसलेकर नख और दातोंके अन्दर अथवा श्मश्रुन्ध, दाह, और हृदयप्रदेशमें उषाकर प्रभृतिसे रक्तनिकाकर उसमें शामिलकरनेसे समस्तअङ्गमें दाह और रक्तका निर्गमनहोनेलग और मोह निवृत्त होजाय उसवक समझना कि यह जीवेगा । अधिकमूलखलनेपर दही, भात, द्राक्ष और खजूर रानकोदे । दूध मूलकर भी न दे । दाह होनेपर मत्प्यर दूधकीधाराअथवा पोतेदे । इससे मृतप्रायभी अच्छाहोजाताहै ॥ ४७१ ॥

४७२ सूचिकाभरणरसः (सप्तदश)

पारद गन्धक लोहं ताम्र रौप्यञ्च हेमजम् ।
राजावर्तञ्च गगन तुत्यक हेममाक्षिकम् ॥ २०७४ ॥
मित्रञ्च मौक्तिकञ्चैव समभागानि कारयेत् ।
व्योषकायेन सम्मर्षं वर्तौ कोलप्रमाणत ॥ २०७५ ॥
निक्षिपेत्स्नानसर्पस्य जठरे वटिका बुध ।
आस्यञ्च सुदृढ कृत्वा मृत्स्नाभाण्डे विनिक्षिपेत् २०७६
सप्तधा वर्तयेत्तस्य भाण्डं चुड्यामधिधयेत् ।
त्रिदिन तस्य चण्डाङ्गो पक्त्वा शीत समुद्धरेत् २०७७
खल्वे व्योषाम्मुना मर्षं पाच्य यत्पूर्ववत्क्रिया ।
मात्स्यमाहिषमायूरनाकुलच्छागमेव च ॥ २०७८ ॥
सूचिकाभरणं त हि रस सर्वत्र याजयेत् ।
पूजयेद्रसराजस्य गुरुणा शिवयोगिनाम् ॥ २०७९ ॥
गणेश भैरवञ्चैव पूजयेष प्रयत्नत ।
हृत्तन्तमये भाण्डे निक्षिपेत्सुदृढं बुध ॥ २०८० ॥
मूच्यमेण द्वादीतास्य ध्रुवरन्ध्रे च बुद्धिमान् ।
प्रलस्थाने च ह्यहुषे स्रावयेद्बुधिर तदा ॥ २०८१ ॥
मर्दयेद्दे सुतेल तु सूचिकाभरणे रसे ।
पथ्यञ्च अधिभक्तन्तु हिमकरूरलेपनम् ॥ २०८२ ॥
ईश्वरेण यथा दत्ता धन्वन्तरिरथाऽप्रहीत ।
धन्वन्तरि नमस्तस्य यश प्राप्नोति दुर्लभम् ॥ २०८३ ॥
दत्तक्षेत्रे नरेन्द्रेऽप्य यशस्वी जायते नर ।
तमेव प्रवृत्तं कुर्यात्सूचिकाभरणो रस ॥ २०८४ ॥

अपमृत्युविनाशार्थामायुष्यवर्धनाय च ।

जनानां सुखरूपस्तु कथितं शम्भुना स्वयम् २०८५
र श, सत्रिपाते ।

भाषा—युद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, रजत, सुवर्ण, लाजवर्द, अश्रु, तुत्य, सुवर्णमाक्षिक, लतनिया, मोती इनकीभस्में समभागलेकर सबकी नीलवणकनलीकर थिकटुक कायसे १-२ दिन मर्दनकर बेरुवावर गोखिये बनाकर तक्षण मारहुए कालेसांके पेमें डालकर मुहको अच्छीतरह रेशमके डरिस सीकर मिर्गैवेतनमें ७ घंटे लगाकर रखदे । फिर तमाम हण्डोपर वज्रमिष्टीसे ७ लेपदेकर मुहको अच्छीतरह बन्दकरे । सुखचानेपर चूल्हार चढाय ३ दिनकी कड़ी आचदे । स्वान्शीतलहोनेपर निकालकर त्रिकटुकेकायसे एकदिन मर्दनकर बर बराबर मोखिये बनाय दूसरे सर्पके पटमें रख ३ दिनकी अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर गोखियोंको निकाल मछली, भेंसा, मोर, नरुल और बकरेकपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर गुरु, योगी, गणेश और भैरवकी पूजाकर हाथीदातकी डिब्बीमें रखडोडे । रात्रिगतमें मृतवस्थाहोनेपर श्मश्रुन्धमें रक्त निकाल सूच्यप्रमाणसे लेकर धर्षणकरनेसे सन्नाको प्राप्त होगा । इस प्रयोगमें इस बातका ध्यान रखलेकि चीरा लगनपर जहा रक्त निकले वहापर दवाका प्रयोगकरे । पानीनिकले तो निर्जीव समथकर उसपर मेहनत न करे । अत्यन्तसूख और दाह मालूम पङ्गेपर दहीभात चानेको देवे । चन्दन और कपूरका लेपकरे ॥ ४७२ ॥

४७३ सूचिकाभरणरसः (अष्टादश)

तीक्ष्णं मुण्डार्धचैस्त्वनागापारदगन्धकम् ।
ताप्याम्रालदिलामलेच्छविष्वैक्रान्तमौक्तिकम् २०८६
सप्रमाल सम सर्वं सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
जयाजयन्तीनिर्गुण्डीभूमिजम्बूत्यचिष्रकं ॥ २०८७ ॥
जम्भामृताद्रिकव्यापै काचकृत्या विनिक्षिपेत् ।
सप्तमूलपटं कृत्वा सैकतेऽग्रिमधो दिनम् ॥ २०८८ ॥
ज्यालयेद्रसराजं त शीतं कृषीस्थमाहरेत् ।
तद्वर्द्धममृतं तस्या विषयिकटुचिष्रकं ॥ २०८९ ॥
चिजयाऽऽकल्लकाद्रस्य सप्तधा भावयेत्पृथक् ।
पित्तं मांक्षिपमायूच्छागकालक्षपाद्भवे ॥ २०९० ॥
गरलेन च सिद्धं स्यात्सूचिकाभरणा रस ।
यद्यप्रमाणमानाऽप्य यवत्रिफलानाम्युना ॥ २०९१ ॥
सत्रिपातेषु सर्वेषु शैत्यस्वेद्रप्रणापक ।
दातव्या मूढतायाञ्च दन्तजिह्वागलप्रहं ॥ २०९२ ॥
सूच्याऽङ्गुष्ठनदरे मित्वा तालुके च विनिक्षिपेत् ।
प्राणे वा काश्चिर्घातं ताडुकाद्गुह्यमूला ॥ २०९३ ॥
दातव्या जलयागश्च त्रम कार्पाऽम्बुयोगिण ।
महादेवादितथाऽप्य रसा रसमहादधौ ॥ २०९४ ॥
र श, सत्रिपाते ।

भाषा—कोलाद, सुण्ड, तांवा, अकीक, नाग इनकीभस्में, शुद्ध पारा और गन्धक, सोनामाखी, अन्नकभस्म, शुद्धहरिताल, मैनसिल, रिंगरिफ, यछनाग, पैकान्त, मोती, प्रवाल इनकीभस्में समभाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर भांग, जैती, निगुण्डी, जामुन, चित्रक, जंभीरी, गिलोय, अदरक और त्रिकटु इनके यथासम्भव स्वरस अथवा क्रायोंसे ७-७ भावनाएं देकर आत-शीशीशीमैर मुंहबन्दकर समस्तपर ६-७ कपइमिटीकरदे । सुखनेपर बालुकायत्रमें जल्टी रख एकदिनरातकी आंचदेवे । स्वाप्रशीतलहोनेपर निकालकर इससे आधा शुद्धबछनाग मिलाकर बछनाग, त्रिकटु, चित्रक, भांग, अकलकुरा और अदरकके रसोंसे ७-७ भावनाएं देकर भेंसा, यकरा, सुअर, मछली इनके पित्त और सर्पविषसे १-१ भावनादेकर रखछोड़े । इसमेंसे एक-यत्रमात्र मात्रा जब और त्रिकटुकेक्यायत्रेमात्र सन्निपातमें देनेसे थंवापसीना, प्रलाप, मूढता, दांत, जिह्वा और गलेना जकड़ना येवच निवृत्तहोतेहैं । अत्यन्त वेहोशी होनेपर अंगूठा और तालुमेंसे रफनिकालकर उसस्थानपर धर्षणकरनेसे जल्दी होयमें आजाताहै । अत्यन्त दाह माउम पइनेपर काझीकी धारा देवे और जलकायोगकरावे ॥ ४७३ ॥

४७४ सूचिकाभरणरसः (ऊनविंशः)

माक्षीकीनीलाञ्जनतुल्यकाप्र-
रिालालहिङ्गुलरसायनानि ।

सयज्जमुक्ताफलोविट्टुमाणि

खल्वे विनिक्षिप्य विमर्दितानि ॥ २०९५ ॥

हरिम्रियक्नेहरजोयुतेन सगन्धकेनाल्पपुटानि चाष्टौ ।
दद्याज्जलस्ये कमठास्ययन्त्रे यन्त्रे पचेद्भूधरसञ्चकेच
मत्स्यकासयाराहमयूरच्छागपित्तविषफेनसमेतः ।

आर्द्रकद्रवनिबद्धगुटीकस्सत्रिपातरिपुरेप रसेन्द्रः ॥

कर्पूरेणाद्रकेणाऽथ देयः श्रेयः कृते रसः ।

अथवा योग्यमास्थेयं हृद्गाऽथस्थ्यां गरीयसीम् २०९८

रोगियोगीन्द्रदेवद्विजगुरुरसुरभीयोगिनीवैद्यकन्या-

अभ्यर्च्याऽमृन्धगकुलनकुलक्षौपिष्टुन्धुवज्जम् ।

ध्यायन्भूताधिनायं शुचिपटपिहितं पट्टमध्यास्य धीरो,

विप्राशीर्वाद्दुष्यं रसमयररसं मात्रयोपाद्ददीत ॥ २०९९ ॥

१. (मा.), सभिगतः ।

भाषा—सोनामारी, सुरमा, तुल्य, अन्नक, मैनसिल, हरिताल, रिंगरिफ, हीरा, मोती, प्रवाल, इनसबकीभस्में सम-भागलेकर शरीरकणुमेंकर आकरीजकडीछाल और शुद्धगन्धक अटमांश मिलाकर पचोरेकेदोने एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय वारावगुण्टुमें बन्दकर कुम्भपुटकी आंचदे । ऐसे ८ आंचे देनेके बाद कञ्जयत्रमें राग पहणुगन्धककारणकर पचोरेकेदोने मर्दन-कर गोलाबनाय पके पानोंमें छपेटकर मूएरपुटकी आंचदे । स्वाप्रशीतलहोनेपर निकालकर मछली, भेंसा, सुअर, मोर, यकरा इनकेपित्त तथा अरीम और अदरकदेरगोंसे १-१ दिन-

मर्दनकर १-१ रतीकी मोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली योगी, देव, द्विज, गुरु, गौ, योगिनी, वैद्य और कन्या-ओंका पूजनकर पक्षी, कुलदेवता, नडुल, व्याघ्र, वानर, सूत-नाथ इनको प्रणामकर अच्छेवस्त्र पहिनकर ब्राह्मणोंका आशी-वांद लेताहुआ कपूर और अदरककेसाय अथवा अवस्थोचिता-नुपानकेसाय १-१ गोली लेवे । अत्यन्तदाहहोनेपर पित्तपटित तमामयोगोंमें जलभाराका प्रयोगकरे क्योंकि इससे पित्तपटित योगोंका वीर्य बढ़कर रोगको नष्टकरतेहैं । जहां कोई दवा काम न करतीहो वहांपर पित्तपटितयोगदेनेसे इसतरहका दाह उत्पन्नहोताहै कि वह जलामिपेकविना शान्तहोना मुश्किलहोताहै और उसी गर्मीके मोरे तमामथातुओंका शोषहोकर मनुष्यका मृत्युभी होजाताहै । तमामतरहकी चिकित्साएं करके जिससमय आदमी निराशहोतेहैं और रक्तप्रसरण बन्दहोताहै उससमयपर वैद्य अन्तिमकिया समझकर ऐसेप्रयोगोंका योग करताहै । उससमय तमामथातुएं शुष्कहोजातीहैं और यह एक जल्तीआय शरीरमें दायिलहोतीहै तब जलसेकके अतिरिक्त उसका और इलाजही क्याहै ? इसीलिये उस ज्वालाको शान्तकरनेकेलिये बाष्पा-भ्यन्तर शीतक्रिया लावारीसे करनी पड़तीहै । रिक्तोत्त-होनेकीवजहसे अत्यन्त विक्रिया न हो इसलिये तैल अथवा पीका अम्लज पहिले कियाजाताहै । इस जलामिपेकका अत्य-न्तशीतमे कोपना, मलमूत्रकात्यागहोना, चयास्थितमग्नाकी प्राप्ति ये मद्द परिणामहैं । यदि ये परिणाम नकरे न आवे तो उसे मृतावस्थ समझकर छोड़दे उतापर अन्य किसीभी दवाका प्रयोग न करे ऐसा यह आयुर्वेदका सिद्धान्तहै । इसकी समझकर काममें लावे । वैयकी घोड़ीसो गलती और असावधानीपर रोगीका मरना जीना निर्भरहै इसलिये बहुततंभालकर कामलेवे ॥

४७५ सूचिकाभरणरसः (विंशः)

स्वर्णं तारमुजङ्गयद्गदुरदं फेनायसं शुल्बकं,
ताप्यं तालयुतं सुमर्दितदृढं सूतेन्द्रमिध्रीरत्नम् ।
धारम्वारफट्टप्रयान्तिमिदं श्टङ्गविषं टङ्गणं,
सम्भाध्यं खरलेन तापितमिदं निम्बूरसे जांरितम् ॥
छागोत्थेन युतं वराहशिरिजे मांस्थेन पित्तेनयुक्तं,
एफेकेन समाहृतेन नियतं पित्तेन सम्भाधितम् ।
राजोमानसमं निहन्ति सहसा दौषत्रयं दाढ्यं,
सध्यानाशमगतश्च हास्यनिरतं कालान्तकम्पान्तिवतम् ॥
सर्वोपायमिदा विधानविधिना मुक्तस्य वैद्योत्तमः,
शून्यस्य प्रहितेन्द्रियस्य सहसा भूमौ गतस्याऽधिकम्
शोथान्नस्य सिततापयःसहचरं दत्ते पुनर्जायते,
दक्ष योऽत्र स सूचिकाभरणकं सूच्यप्रमायं रसम् ॥

१. (मा.), रणधारणद्गद, सभिगतः ।

भाषा—शुभ्रं, रत्न, नाग, बर, छोट, ताम्र, पारा, इनकीभस्में, शुद्ध रिंगरिफ, अरीम, गुणभेमाशिक और हरि-
ताल समभागलेकर इधे मर्दनकर त्रिकटु, शौंगिका, शृङ्गा,

नीचु इनके श्रौंसे ततखल्वमे ७-७ भावनाएं देकर बकरा, सूअर, मोर और मछलीके पित्तोंसे १-१ भावना देकर राईप्रमाण गोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरुखप्रभृतिके रससे सूईके अग्रभागमें आवे इतना खिलाने और रक्तमें संयोग करनेसे सञ्ज्ञानास, मदादास्य और मरणान्तकम्प्युक, तथा इन्द्रियोंकी शून्यतासहित सन्निपातको यह दूरकरताहै । जब दम्भादि उपाय और औषधोपचार निष्फल होनेसे असाध्य समझकर वैद्यलोगोंने छोड़दियाहो और मुदांसमझकर जिमीन-परभो उतारलियाहो उससमय इसकेप्रयोगसे पुनर्जीवितलक्ष्य-होताहै । शीताङ्गमें शकरकुच दूधकेसाय देवे और जलसेकादि सन् यथोचित उपचार करे ॥ ४७५ ॥

४७६ सूचिकाभरणरसः (एकविंशः)

शुक्लान्मत्तकतैलधूर्तजरसैः सम्मूर्च्छितं गन्धकं, दत्त्वा हिङ्गुलोहोहाप्रकनकं सर्वाधिकञ्चाऽऽमृतम् । पित्ते भावय नागराजगरसै र्दधात्त्रिदोषे ज्वरे, गुञ्जामात्रमिदं सितामधुयुतं सेव्यञ्च पथ्यं दधि २१०३ र. क, सन्निपाते ।

भाषा—कालेधतुरके तैल और पतौकेरससे गन्धकको पकाकर शुद्धशिमरिफ, लोह, ताम्र और सुवर्णभस्म बराबरप्रमाणसे मिलाकर सबकीबराबर शुद्धवज्राग मिलाय ययालाम पित्तोंकी भावना देकर अदरुख और तुङ्गीकेरसोंकी ३-३ भावनाएं देकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर और मञ्जुशैथदेनेसे यह समस्तसन्निपातोंको दूरकरताहै । अत्यन्तसूक्ष्मलगेपर दहीभात देना ॥ ४७६ ॥

४७७ सूचीमुखरसः (प्रथमः)

रसेन ताप्रापनकं विलिप्य गन्धकेन च, क्षिपेत्तु सुरणोदरे सुवेष्टय गोमयेन तम् । पचेत् तं महापुटे सुशीतलं समुद्रेत्, विपाश्रिपित्तगन्धकै विमृष्टं तं पचेद्दिनम् ॥ २१०४ ॥ शरावसमुद्रे रसः सुरकरूपमेति सः, रसस्तु सूचिकामुखो निरूपितोऽस्य तण्डुलम् । द्वादीत वातरान्त्ये कफाग्निमान्द्यनुत्तये, यथोक्तभक्तभोजनं त्यजेत् चाम्बराजिके ॥ २१०५ ॥

र ही, वातव्याधी ।

भाषा—शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्णकज्जलीकर जड़लीसुरणके रसमें षोडश चतुर्गुणित षण्टकवैधी ताप्रापनोपर लेपदेकर गुञ्जाकर पुष्टजड़लीसुरणमें रफकर ६-७ कपडमिठीदेकर मदापुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निमालकर बज्राग, चित्रक और गन्धक प्रत्येक तापके बराबर मिलाय पात्रोंपित्तोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय शरावसमुद्रेमें बन्दकर एक-दिनकी अभिदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर लालप्रची भस्मको निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ पावल ततद्रीगह्राउपानके-

साथदेनेसे वात और कफव्याधि, मन्दाग्नि इनको यह नष्टकरताहै । इसमें खदी चीजें और राई न खावे ॥ ४७७ ॥

४७८ सूचीमुखरसः (द्वितीयः)

शृतं गन्धकूतालकं मण्डिशिलां ताप्यं शुभं तुत्यकं, जैपालं विपटङ्गुणं मधुफलं कृत्वा समांशं दृढम् । कृत्वा कज्जलिकां विपोल्बणफणेः पित्तैश्च सम्भावये-, त्क्षित्वा सीसककूपिके रसवरं सूचीमुखं नामतः ॥ ब्रह्मद्वारविस्तीर्णलोहितलवं गुञ्जैकमानं ददे-, दत्त्वा सम्युत्पद्यतन्द्रिकधनुर्वाते सशाखाहिमे । कासं श्वासमरोचकं प्रलपनं कम्पञ्च हिकामयम्, मूर्कत्वं बधिरत्वमुन्मदमपस्मारं जयेत्क्षत्तणात् २१०७ र. र स, र को, यो. सं., र क यो, र. शि, सन्निपाते । र. शि. सूचिकाभरणेति नाम ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल, मैनासिल, सोना-माखी, तुत्य, जमालगोटा, और बज्राग, भुनासुहागा, महुआ समभाग लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर सबचीजोंको मिलाय जहरीकालेसर्पकेपित्तसे १-२ दिन मर्दनकर शीतोंमें रखओड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती ब्रह्मरन्ध्रपर पाण्डेवर रक्तमें धर्षणकरनेसे धनुर्वात, शीताङ्ग, कास, श्वास, अर्धचि, प्रलाप, कम्प, हिक्रा, मूर्कता, बधिरता, बन्नाद, अपस्मार इनसबको यह तत्क्षण नष्टकरताहै ॥ ४७८ ॥

४७९ सूचीमुखरसः (तृतीयः)

सौधीरं द्विगुणं निधाय तरणिक्षीरे घटे स्नेहले, ब्राह्मं नागमनुक्षिपेत्प्लुचुतरं क्षुण्णं कृतं मज्जितम् । तद्बन्धं परिरुद्धय भूमिनिहितं सन्दृष्टमानं समु-, दत्त्वाऽऽचूर्ण्य विनिक्षिपेन्मृतरसं तत्पादभागं भिषक् पित्तेः खल्वतले भवेद्द्रसवरः सूचीमुखो मस्तके, सूक्ष्मप्रेण निवेशितोऽद्भुततरं सौधीरयोगाज्जयेत् । तन्द्राशैत्यसुसन्निपातपवनपापस्मारभूतग्रहान्, दध्यन्नं ससितं द्वादीत गदिने शीतोपचारा हिताः ॥ र. श, र ल., र का. सन्निपाते ।

भाषा—मिठीके चिकने बतौनेमें दोतोले सुरमाडाखड़े और ब्राह्मणजातिके एकनागके (मुचात्स्यप्रभा ये च कफिला ये च पत्रगाः । सुगन्धय सुवर्णागस्ते जट्या माह्वणा स्मृता ॥) छोटे २ टुकड़े करके डालकर भावकेदूधसे टुकड़े इबनेलायक बतौनको भरके बज्रमिठीसे सुंभवन्दकर जिमीनमें गाड़दे और ऊपरसे रातदिन अमि जलावे जिसमें कि घड़ेका तमाम पदार्थ जलकर राख होजाय । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निमालकर इमने चतुर्गुणित पारदभस्म मिलाकर रखओड़े । इसमेंसे सूईके अग्रभागसे लेकर खिलाकर काञ्चीपिलावे और रक्तमें प्रवेशकरे तो तन्द्रा, शीताङ्ग, सन्निपात, वातविकार, अपस्मार, भूतग्रह ये सब नष्टहोतैवै । होश आनेपर अत्यन्तभूख मादुम् हो तो शकरकेसाय दहीभावेवे । दाह मादुम् पदनेपर शीतोपचार करे ॥ ४७९ ॥

४८० सूतभस्मयोगः (प्रथमः)

विश्वमैरण्डतैलेन हिङ्गुसौवर्चलान्वितम् ।

सूतसूतकसंयुक्तं भक्षितं सर्वशूलहृत् ॥

पक्तिशूलं तथैवाभद्रवशूलं विनाशयेत् ॥ २११० ॥

व. रा., शूलाधिकारे ।

भाषा—सोंठ, एण्डतैल, भुनीहोंग, सखल, इनकेसाथ पारे-कीभस्म उचितप्रमाणमें देनेसे पक्तिशूल, अभद्रवशूलप्रभृति सम-स्तशूल नष्टहोतेहैं ॥ ४८० ॥

४८१ सूतभस्मयोगः (द्वितीयः)

शङ्खपुष्पीवचाम्राहोीकुष्ठैलाजरसैः सह ।

सूतभस्मप्रयोगोऽयं रक्तिकाहृद्यमानतः ॥

सर्वापिस्मारजाशाय महादेवेन भाषितः ॥ २१११ ॥

र. सं., रसायनसं., र. सु., र. चं., र. म. मा., र. का., ध., र. र. दी. अप्समारे ।

भाषा—शङ्खाहूली, वच, म्राही, कुष्ठ, इलायची, मेंढाक्षींगी, इनके स्वरस अथवा काथोंसे २-२ रत्ती पारदभस्म देनेसे सब-तरहके अपस्मार नष्टहोतेहैं ॥ ४८१ ॥

४८२ सूतभस्मयोगः (विस्फोटकारिः) (तृतीयः)

गुडूचीनिम्बजैः काथैः खदिरेन्द्रयथाम्बुना ।

कपूरत्रिभुगनिभ्यां युक्तं सूतं हिगुञ्जकम् ॥

विस्फोटं त्वरितं हन्याद्वायुर्जलधरानिव ॥ २११२ ॥

र. सु., विस्फोटकरोगे ।

भाषा—गिलोय और नीमका काथ अथवा चैर और इन्द्र-जवका काथ इनमें कपूर और त्रिभुगनिधका योगकर इनकेसाथ २-२ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्तविस्फोटक नष्टहोतेहैं ॥ ४८२ ॥

४८३ सूतभस्मयोगः (चतुर्थः)

ससूतमरुचिप्रं स्यात्तिन्तिडीरुगुडोपणम् ।

फारव्यजाजीरुचकं मूढीकाक्षीद्रुदाडिमम् ॥ २११३ ॥

यो. म., र. सं., र. र. दी., र. सु., अरोचके ।

टि०—रसेन्द्रमरुचिप्रं गुडमरुचिप्रं इति नाम । र. म., र. सु. प्रणयोः " फारव्यजाजीरुचकं मूढीकाक्षीद्रुदाडिमम् " इत्यस्य स्याने " मूढीकाक्षीरकं शृण्वा मातुहृत्स्वैतन्मम् " इति पाठः ।

भाषा—शमाक (यूनानी), गुड, मरिच, कारवी, जीरा, सखल, दास, अनार, मधु, इनकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्मका योग करनेसे अरुचि नष्टहोतीहै ॥ ४८३ ॥

४८४ सूतभस्मयोगः (पञ्चमः)

लघुणाम्बुयरागुक्तं ससूतं यः पिबेन्नरः ।

तस्य नश्यति पौगेन मूत्राघातात्प्रयोजुद्रा ॥ २११४ ॥

यो. म., र. बा., र. र. दी., रसायनम्., मूत्राघाते ।

टि०—ससूतमोनी क्वत्सायाम्बुनमिति पाठी हरकने । एण्डन दीनिकाया क्वत्साम्बुननेमिति पाठः ।

भाषा—मैगानकक, गुग्गुलुनासा, त्रिफला और तिरिका

इनकेसाथ पारदभस्म उचितमात्रामें देनेसे १३ प्रकारके मूत्राघात नष्टहोतेहैं ॥ ४८४ ॥

४८५ सूतभस्मयोगः (श्वययुनाशनः) (षष्ठः)

मण्डूरस्तोष्णं सुलभञ्च मारितं

सूतं वलातोयनिघृष्टकम् ।

पुनर्नवाया धननादजेन

स्याद्भस्मसूतं श्वययूपघाति ॥ २११५ ॥

रसेन्द्रमं., शोथाधिकारे ।

भाषा—मण्डूर, फोलाद, ताप्र और पारदभस्म समभाग लेकर वलाकेस्वरससे मर्दनकर गोलाबनाय गजपुटकी आंचदे । इसमेंसे १-१ रत्ती पुनर्नवा और काटिवालीचौलाईके रसकेसाथ-देनेसे शोथ नष्टहोताहै ॥ ४८५ ॥

४८६ सूतभस्मयोगः (सप्तमः)

कान्तं गन्धकसहितं सूते जीर्णञ्च तत्कृतं भस्म ।

सूयायन्त्रे निहितं साक्षाद्यश्मप्रहर्तुं स्यात् ॥ २११६ ॥

रसेन्द्रमं., यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध बुभुक्षितपरिमे कान्तबोजका जारणकर पहण-गन्धकजारणकरके भस्म बनावे । इसमेंसे १-१ रत्ती समयो-चितानुगानकेसाथ देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्टकरताहै ॥ ४८६ ॥

४८७ सूतभस्मयोगः (सुधानिधिरसः) (अष्टमः)

कणामधुयुतं सूतं मूर्च्छायामनुशीलयेत् ।

शीतसेकायगाहादि सर्वाङ्गे पीडनं हठात् ॥

सुधानिधी रसोनाम मदमूर्च्छांविनाशनः ॥ २११७ ॥

र. सं., ध., र. प्र., र. क. ल., र. र. दी., र. सु., र. क., यो. र., नि. र., यो. म., यो. त., र. का., भा. प्र., वै. द., र. चं., रसायन-सं., मूर्च्छाधिकारे । र. का., मूर्च्छाहरसूत इति नाम ।

भाषा—पीपल और मधुकेसाथ पारदभस्मका योगकर उचितमात्रामें देकर जलभीषारा, अवगाह और सर्वाङ्गीपीडन-करनेसे मद और मूर्च्छाका नाशहोताहै ॥ ४८७ ॥

४८८ सूतभस्मयोगः (शीतपित्तहरः) (नवः)

यवानुगुडसस्मिथो भस्मसूतं द्विवह्वकः ।

शीतपित्तं निहन्त्यागु कटुतैलेन मर्दितः ॥ २११८ ॥

यो. म., र. का., शीतपित्ते ।

भाषा—अजपादन और गुडकेसाथ २ से ६ रत्तीतक पारद-भस्म देकर कटुतैलकी मालिखारनेसे शीतपित्तनष्टहोताहै ॥ ४८८ ॥

४८९ सूतभस्मयोगः (दशमः)

मुस्तापपट्टंकेरुण्डकपायो भस्मसूतकम् ।

गुज्जामार्गं मूर्च्छितं या देयं चातज्वरापहम् ॥ २११९ ॥

वि. र. म., चातज्वरे ।

भाषा—नागरमोषा, पित्तराषण और एण्डनीजफे-शायकेसाथ १ रत्ती पारदभस्म अथवा मूर्च्छितानारा देनेसे चात-ज्वर नष्टहोताहै ॥ ४८९ ॥

४९० सूतभस्मयोगः (एकादशः)

खदिराष्टरुयोगेन भस्मसूतो निहन्ति ताम् ॥२१२०॥

र. का., कोदवाख्यममृिकायाम् ।

भाषा—खैर, त्रिफला, नीमकी छाल, परवल, गिलोय और अड़सेके काषकेसाथ १ से २ रत्तीतक पारदभस्मका योगकरनेसे मसुरिका नष्टहोती है ॥ ४९० ॥

४९१ सूतभस्मयोगः (द्वादशः)

चिञ्जापामार्गशिप्रत्यकुरण्टीस्तुक्पलाशजैः ।

स्वर्जिंशारे भस्मसूतो जम्भाम्भोमर्दितो द्रवैः २१२१

दन्त्युत्थै भक्षयेदस्मात्सर्वाजीर्णविनाशनः ।

रसे यत्र क्षारयोगस्तत्र क्षारः परिच्छ्रुतः ॥ २१२२ ॥

र. क., अजीर्ण ।

भाषा—द्रमली, अपामार्ग, सहिजन, कटसैर्या, मूअर, पलाश और सजीके क्षारोंकेसाथ अथवा जमीरीकेरसकेसाथ अथवा दन्तीमूल स्वरसकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त अजीर्ण नष्टहोते हैं ॥ ४९१ ॥

४९२ सूतभस्मयोगः (त्रयोदशः)

आटरूपनघपह्लवद्रवं पालिकं सरसभस्म वल्लुकम् ।

कर्पसम्मितमधुप्रयोजितं प्राद्व्य नाशयति रक्तपित्तकम्

र. कौ., सखानसं, यो. र., नि र., इ. यो त, स्क्तपित्त ।

भाषा—अड़सेकेनवीनपत्तोंके १ पल स्वरसमें १ से ३ रत्ती तक पारदभस्म और एकपै मधु मिलाकर प्रयोगकरनेसे रक्तपित्त नष्टहोता है ॥ ४९२ ॥

४९३ सूतभस्मयोगः (चतुर्दशः)

दशमूलकपायमिश्रितं भववीजस्य च भस्मकं परम् ।

दशपिप्पलीचूर्णसंयुतं त्रयजातज्वरनाशकारकम् ॥

चि. क., र क ल, र र. दी, क्रिम्यधिकारे ।

टी०—दशमूलीजलसुत सहा ठिकामु योग्येदिति र क ल, र र दी पत्तयो योग्य कपितोऽस्ति परन्तु पिप्पलीवृत्तदशमूलकपायस्याऽपिकार्यैरुत्पादक एव योगो बोध्यः ।

भाषा—दशमूलकेकाठमें १० पीपलकाचूर्ण और २ रत्ती पारदभस्म मिलाकर देनेसे त्रिदोषजननिघात नष्टहोता है ॥ ४९३ ॥

४९४ सूतभस्मयोगः (पञ्चदशः)

रसभस्म वल्लुमानं लीढा मधुना पिबेदनु क्षौद्रम् ।

कोष्णाभ्युना समेतं स्थील्यं मेद.कृतं जयति २१२५

यो. र., वै. क., वै. चि., व रा, रसायनसं., मेदोरोगे ।

भाषा—१ से ३ रत्तीतक पारदभस्मको मधुकेसाथलेकर कटुष्णापानीमें मधुका शरत्तव पीनेसे मेदसे जायमान स्थूलता नष्टहोती है ॥ ४९४ ॥

४९५ सूतभस्मयोगः (षोडशः)

द्विह्नुशुण्ठीयवक्षारपथ्याहृष्णाविडाग्निभिः ।

कुष्ठाग्निमन्यरचकैः पुष्कोन्द्रस्य घाम्मुभिः ॥

हृद्रोगमग्निमन्दत्वं सूतः पीतो विनाशयेत् ॥ २१२६ ॥

शे. सा., हृद्रोगे ।

भाषा—हॉग, सोंठ, यवक्षार, हॉर, पीपल विडनमक, चित्रक, कुठ, अरणी, सचल, पोहकरमूल, बुरैयाकीछाल, इनके-काठकेसाथ १-१ रत्ती सूतभस्मका योगकरनेसे हृद्रोग और मन्दाभि नष्टहोते हैं ॥ ४९५ ॥

४९६ सूतभस्मयोगः (सप्तदशः)

भस्मसूतमजाक्षीरैः कणानिष्कैः पलैः सह ।

व्योपगन्धकक्षौद्रैर्वा भक्षयेद्भक्षयेत्क्षयम् ॥ २१२७ ॥

र. र., र को, र क. ल, राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पीपल ४ मासे, मास, त्रिफळ, गन्धक और मधु अथवा बकरीकादूध इनमेंसे किसी एककेसाथ १ रत्ती पारदभस्म लेनेसे क्षय नष्टहोता है ॥ ४९६ ॥

४९७ सूतभस्मयोगः (अष्टादशः)

सभस्मसूतटङ्कणं कणामजापययुतम् ।

फलत्रयैः कटुत्रयैः समाक्षिकैः क्षयक्षयम् ॥ २१२८ ॥

चि. क., क्षये ।

भाषा—पीपल और बकरीकादूध, मधुसुक त्रिफला अथवा त्रिफळ, मुनासुहागा इनमेंसे किसीएककेसाथ १ रत्ती पारद भस्मका प्रयोगकरनेसे क्षय नष्टहोता है ॥ ४९७ ॥

४९८ सूतभस्मयोगः (ऊर्नविंशः)

सक्षौद्रमाप्रजम्बुत्थं पिबेत्कार्यं रसान्वितम् ।

अथ पित्तज्वरे प्रोक्तं रसमत्र प्रयुज्यते ॥ २१२९ ॥

र क ल, र. र दी., वृष्णायाम् ।

भाषा—आम और जासुनकीछालके साथमें मधु मिलाकर उसकेसाथ एकरत्ती पारदभस्म देनेसे पित्तज्वर नष्टहोता है ४९८

४९९ सूतभस्मयोगः (विंशः)

किराताब्दाऽमृताशुण्ठीकाथाद्वा पर्यटाब्दयोः ।

पिप्पलीधान्यचूर्णाद्वा सूतो हन्त्यखिलाग्नादान् २१३०

पथ्यं निरामे दध्यन्नं सामे मण्डोऽथ यूपकः ।

रसवीर्यविवृद्धयर्थं मृद्धीका वाथ दाडिमम् ॥ २१३१ ॥

र शि., सर्वरोगे ।

भाषा—थिरायता, नागरमोथा, गिलोय और सोंठ इनका-हाथ अथवा पित्तपापडा और नागमोथेका हाथ अथवा पीपल और धनियेकेचूर्णकेसाथ १-१ रत्ती पारदभस्म देनेसे समस्त-रोग नष्टहोते हैं । निरामन्याधिमें पथ्य दहीभात देना और साममें मांड अथवा यूप देना । रसका वीर्य बढ़ानेकेलिये द्राक्ष अथवा अनार खानेको देना ॥ ४९९ ॥

५०० सूत्राजरसः (प्रथमः)

गन्धादमा सूतमुक्ताफलमखिलमिदं

धीजप्रराम्बुमर्द्यं,

याम गाल विपाच्य लणमुपगत
 चीरसूत्र्या प्रवेष्ट्य ।
 सिद्ध स्यात्सूत्रराजा निखिलगदहर
 क्षौद्रवृष्णासमेता,
 यद्दमाण पाण्डुगुदजात् श्वसनऋसनह-
 द्दधाधिघाताभिहन्ति ॥ २१३२ ॥
 र क्षयाधिकारे ।

भाषा—गुद पात और गन्धक मोती इन समभागकेर
 बिजारेकरके मदनकर गोलाबनाय धाराबन्धुमें बन्दकर एक
 पहर उन्नयनमें पकावे । स्वाद्गन्धातलहोनेपर निखिलर रख
 छोड़ । इनमेंसे ३-३ रती पापत्र और मजुकेसायदनेसे रात
 यद्दम, पाण्डु बवासीर, श्राव, कास हृदोग और वातरोग प्रभृति
 घमस्तोगोंका यह नष्टकरताहै ॥ ५०० ॥

५०१ सूत्राजरसः (द्वितीय)

गन्ध मूल शङ्खवैभान्तयुक्त
 कापासास्थिकायता प्रासकैरुम् ।
 घृष्टा गाल हेमजे ताप्रजे वा
 तारात्ये वा सम्पुटे निक्षिपेत ॥ २१३३ ॥
 पश्चात्सुत्कान्तपापाणलेप
 शुष्क कृत्वा सम्पुटे त पुनेत् ।
 भाण्ड स्थूले शुद्धसामुद्रपूर्ण
 शात पश्चात्सम्पुटे चूणयेत् ॥ २१३४ ॥
 दत्त्वा गन्ध पादभाग विपञ्च
 त्रिभ्रष्टैस्तस्त्वेव्येह्लाहपात्रे ।
 दद्यात्पश्चाद्भावना नागवह्ना-
 नारे पिच्छैर्यूपणाद्रैस्त्रिसप्त ॥
 प्रत्येक स्यात्सूत्रराजस्तताऽय
 सिद्धा याज्य सर्परेणेषु युक्त्या ॥ २१३५ ॥
 र दा सवरोग ।

भाषा—गुद गन्धक और पात शङ्ख और वैभान्तगन्ध
 समभागकेर बिनीलेकपास एकदिन मदनकर गोत्रनाय
 सुत्र ताप्र अथवा रतकयम्पुमें बन्दकर कान्तपापाणका लप
 दहर धाराबन्धुमें बन्दकर बरमात्र घण्टे समुद्रनामककाशमे
 रस ८ पहरकी आधे । स्वच्छालहोनेपर निखिलर चतुर्थांश
 गुदगन्ध और बरमाग निखिलर विपञ्च और अदरक रस अथवा
 धारोम लोहकेवात्रमें १-१ दिन स्वदनकर पान पित विरुद्
 और अरसहृदोगेस २१-२१ भागनाए दहर १ १ रतात्रो
 गोत्रिये बनाकर रसका ३ । इनमेंसे १-१ गोला समशोचिता
 पानकपादनम यह समस्तोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५०१ ॥

५०२ सूत्रराजसरसः

मृतस्य राहस्यमुप पश्चात्सुत्कान्तपापाणम् ।
 अङ्गात्सुत्कान्तपापाणम् पश्चात्सुत्कान्तपापाणम् ॥ २१३६ ॥
 प्रयात्ता पुटानि स्युश्चिप्रयुक्तानि पुटानि ।

राजिऋरसतो देया पुट्टा द्वादशसहस्रघ्या ॥ २१३७ ॥
 कुमार्यैकादश पुट्टा द्वादशसहस्रघ्या ध्रुवम् ।
 पारिभद्रत्वचा देया नवार्णै भृङ्गराजत ॥ २१३८ ॥
 उन्नमतेन तथा सप्त विजयोत्यैश्च पद तथा ।
 विभावया तथा पञ्च चत्वारो भानुजा मता ॥ २१३९ ॥
 सोमराज्या नयो देया निफलाया ह्यन्तथा ।
 परुमेक त्रिकटुके लेणनेनैक एव हि ॥ २१४० ॥
 भूमिनागैस्तथा पञ्च देया प्रक्षालन त्रिना ।
 पत्र कृत्वा तथा मर्चा यथा स्याद्रेणुपद्रस ॥ २१४१ ॥
 तत सूत समुच्चृत्य रक्षयेत्सुप्रयत्नत ।
 रहस्य परम वक्ष्ये शृणु शिष्य प्रयत्नत ॥ २१४२ ॥
 रसो राससपत्रोऽय सुपर्ण शुल्बतारकम् ।
 भक्षयेद्विधिवान्धातुन्समुद्र वाडवो यथा ॥ २१४३ ॥
 तत्पुन सूत्रराजाऽपि तालिताऽय यथास्थित ।
 कातुन मम चित्तेऽपि ज्ञानज्यातिरिद् पुन ॥ २१४४ ॥
 भक्षिता सूत्रराजेन धातन कुत्र यान्ति ते ।
 पतत्सर्प समाचक्ष्य तरयन्नाऽपि यतो यते ॥ २१४५ ॥
 ज्ञानज्यातिरनाच-

अगस्त्येन यथा पीत लीलयोदधिज जलम् ।
 देह न दृश्यते किञ्चिन्महावार्येण धीमता ॥ २१४६ ॥
 तथाऽय रसराजाऽपि महावीर्या महाबल ।
 मुखगन्ध कथ तस्य रसराराजस्य सम्भवेत् ॥ २१४७ ॥
 रससौचारक नात्वा तीक्ष्णखल्ले च प्रयेत् ।
 वेहेरुपरि धातय रसा स्यात्प्रहरार्जक ॥ २१४८ ॥
 सुपर्णाऋरसदशातदा शेष पराक्षितम् ।
 पारदस्य पले देय सौवार मापमानकम् ॥ २१४९ ॥
 वह्नियोगन सम्मर्द्य तता घदनगन्धनम् ।
 तस्य पारदराजस्य पूर्वाक्षिपुटिकाऋरत् ॥ २१५० ॥
 तेनैव रसराराजाऽपि ध्यते त्रिसहस्रघ्या ।
 धातना त्रिविधाऋरास्तदुक्त श्रुतयथाऋरे ॥ २१५१ ॥
 परमान भवेत्सुत द्विपल गन्धकस्य च ।
 उभया कज्जली कृत्वा भद्रातरुपलाष्टम् ॥ २१५२ ॥
 पलानि कृष्णतैलस्य चतुर्विंशतिसहस्रघ्या ।
 त्रिभ्यन्वप्रसक्त प्रस्थद्वितयञ्च तथा स्मृतम् ॥ २१५३ ॥
 प्राप्स्यन्ते वस ते धा धर्मनादे विधायते ।
 भक्षयेत्प्रातरुत्थाय छागीदुर्णेन कर्पत ॥ २१५४ ॥
 यामार्द्ध स्यापयेद्धर्मं शुष्टिना वैद्यकेमरी ।
 माषाभ्रराटिका दद्यात्कृष्णतैलेन समुत्तम ॥ २१५५ ॥
 पथ्यमत प्रदातयमम्लक्षारविजितम् ।
 जायते स्यात्कान्तस्य धारारे सप्तगते ॥ २१५६ ॥
 एषर्विदारिपथैश्च श्वेतकुष्ठ प्रदास्यति ।
 विदुमाभ्रमशेषेण सर्वकुष्ठं चिन्तयति ॥ २१५७ ॥
 हृदिगणिकामाकाशमा रीरसस्तथा ।
 एणुप्रथिसर्प कृत्वा पपयेत्सुभभाजत ॥ २१५८ ॥

इष्टिकाघर्षणं कृत्वा तत्र लेपो विधीयते ।
तेन नश्यति तद्विन्दुस्तत्क्षणादेव निश्चितम् ॥
रसोऽयं कुण्डकुहालः प्रोक्तश्च यतिकोविदैः ॥२१५९॥
र. हा, इष्टे ।

भाषा—शुद्धपारेको लेकर अष्टोलनीजङ्केरससे २५, चित्र-
कमलस्वरससे १३, राईकेरससे १०, धीजुवारससे ११, शङ्ख-
कीर्णसे १०, नीमकीछालकेरससे ९, अगवेरससे ८, काले-
धनुकेरससे ७, भागमे ६, हल्दीसे ५, आकनेदूधसे ४, वाडु
चीसे ३, त्रिफलासे २, त्रिकटु और लवणसे १-१, विनाबोए
हुए वैजुओंसे ५ भावनाए देकर शुद्धमर्दनकरे । रतीवीतरह
होजानेपर यह राक्षसमुख पारद तैयारहोगा । इसमें सुवर्ण,
तावा, रजत प्रथमि तमामधातु जीर्णहोजातेहैं तोलनेसे इसमें
वजन नहीं बढता यह बड़ा आधेदेहै । परन्तु जिसतरह अग-
स्त्यरूपिने हसीमें समुद्रकाजल पीलियाधा और उनके शरीरमें
बिस्तीतरहकी विलक्षणता नहीं हुईथी उसीतरह इसपारेमें भी
अद्भुतशक्ति है । पर जब इससे कुञ्जकार्य लेना हो तब इसका मुह
बन्दकरना आवश्यक है । जाल सुरमेको लेकर फोसदकी तल
वार पर धर्मकर अधिके ऊपर रखे, आधेघरमें उसपर सुवर्ण
सदस रेखा निकलेथी उसतमय उसे समझना चाहिये कि यह
असलहै अन्यथा खोटा समझना । राक्षसमुख १ पत्रपारेमें १
माशा जालमुरमा डालकर तप्तखरलमें मर्दनकरनेसे पारेका मुह
बन्दहोजाताहै । १ भाग इसपारेकी गोली बनाय अयुतभाग
पारेमें रखकर आधेघर अगिर रखनेसे समस्तपारा बन्दहोजा
यगा । उसपारेकी सस्कारविशेषसे नानातरहकी घाट्टए तैयार
होतीहै । यदमुखपारा १ पल, शुद्धगन्धक २ पलकी नीलवर्ण
कञ्जलीकर मिलावेकाचूर्ण ८ पल, कालेतिलोंकातैल २४ पल,
नीमकीछालरस २ प्रत्ये लेकर प्रीमक अथवा वसन्तकालमें
धूपमें बैठकर तप्तखरलमें घर्षणकरे । एकजीबहोनेपर रखछोड़े ।
इसमेंसे प्रात काल बरुकीबेधुषेमाथ १ बर्ष देकर कुठीको धूपमें
बैठावे, उड़दकीरोटी और काले तिलका तैल खानेको देवे खटाई
और क्षारसे परहेज करावे । इसके प्रयोगसे ७ दिनमें उसके
शरीरमें फोड़े उठेंगे और २१ दिनमें श्वेतजुष्ट नष्टहोजायगा ।
इसका १-१ विन्दुदनेसे समस्तजुष्ट नष्टहोतीहै । हल्दी, बल-
नाग, केशर, मकोयकारस, रेणुका, गठिन सब समभागलेकर
घारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसको पूर्वतैलमें मिलाकर श्वेतजुष्टपर
ईदसे घर्षणकर एगानेसे तत्क्षण नष्टहोजाताहै ॥ ५०२ ॥

५०३ सूतवटी

कृत्वा गन्धकपिष्टिकाञ्च गगनं तापीरहोदुम्बरं,
कान्तभ्रामकचूर्णसूतकसमं वैकान्ततालान्वितम् ।
पथ्यान्वृषणराजवृक्षममरीकृष्णापण्डतोयैः कृता,
सिद्धा सूतवटी निहन्ति सहसा सर्वाभिधातं महत् ॥
शो. म, रसेन्द्रम, ऋणाधिकार ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक, सोनामारी,
तावा, कान्त, भ्रामक, वैकान्त इनकीसमं, शुद्धहरीताल वेषव

समभागलेकर पारेगन्धको तुलसीवैरहकेरसकेसाथ घोटकर
पिष्टीकरले फिर सबचीजें मिलाकर हों, पिष्टु, अमिलंतास,
अमरवेल अथवा बर्बई, सफेदकोहड़ा इनप्रत्येककेरसोंसे १-१
दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोळियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
१-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह
समस्तवाधाओंको नष्टकरतीहै ॥ ५०३ ॥

५०४ सूतवररसः (प्रथम)

सूतं ताप्रमयोऽन्नफञ्च कनकं नागं तथा चङ्गकं,
तुल्यांशं परिमर्दितं सुरवृतासत्सञ्च धात्रीरसैः ।
चारांखीन्वृहकन्यकास्वरसतो वासाम्बुना सप्तभिः
सिद्धः सूतवरो जयेद्भुततरं रक्तं सपित्तं तथा २१६१
गुञ्जामुममितः सितामधुयुतो वासाम्बुसण्डान्वितो,
वा वासाससशर्कराघृतयुतो लाक्षारसेनैव वा ।
चातुर्जातकणारूपकशिवाधानीसिताक्षौद्रयुक्त,
पथ्यैः क्षौद्रसितान्वितैः सुमधुरैः पित्ताक्षयान्तिप्रदैः ॥
र, रक्तपित्ते ।

भाषा—शुद्धपारा, ताप्र, लोह, अत्रक, सुवर्ण, नाग और
वङ्गभस्म १-१ भाग लेकर सबकीबराबर गिलोयसत्त्व डालकर
आवले और धीजुआरेके स्वरसोंसे ३-३ भावनाए देवे । फिर
अङ्गुसेके रसकी ७ भावनाए देकर २-२ रतीकी गोळियें बना-
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर, मधु (१) अङ्गुसेका
रस और शकर (२) अङ्गुसेका स्वरस, शकर, और धी(३)लासका
स्वरस (४) चातुर्जात, पीपल, अङ्गुसा, हर्ष, आवले, शकर
और मधु (५) इन अनुपातोंमेंसे जहा जिसकी औचित्य हो
वहा उपबेमाथ देनेसे रक्तपित्त शान्तहोताहै । इसमें मधु और
शकरयुक्त मधुरसत्त्वमेंसे उचितहै ॥ ५०४ ॥

५०५ सूतवररसः (द्वितीयः)

व्याम्रीजटामुनिजटासुरसाटरूप-
कार्पासिकाघृतिकास्वरसे विपकः ।
गन्धोपलो रसयुतो द्रवितो नितान्तं
लुप्ताम्बुगोक्षुरगतो मृदितः सुसिद्धः २१६३
कणासिताढ्यः करकाम्बजजाजी-
शिवायुतो वा त्रिसुगन्धयुक्तः ।
सितोपलैलामरिचाज्यजाती-
सुघर्चैलाकुण्डयुतस्तथैव ॥ २१६४ ॥
उशीरधान्योपलचन्दनैलाकणायुतस्तनमधुयुतस्तु ।
विनाशयेत्सूतवरो रसेशस्वरचोर्कं यान्तियुते प्रसह्या
र, अरोचके ।

भाषा—भटकेदेया और अमलकीजङ्ग, तुलसी, अङ्गुसा,
कपास और बनमाटा इनके स्वरसोंमें पकाएहुए गन्धकको मला-
कर बराबरक शुद्धशर्कराकोपकर विजोरे और मोसरुकेरसोंसे
मर्दनकर सुखाकर पीपल और शकर (१) ओलोंकापानी, जीरा
और हर्ष, (२) त्रिसुगन्ध (३) मिश्री, इलायची, मरिच, धी,

जायफल, सजी और कुट, (४) खस, धनियां, कमलघाटा, चन्दन, इलायची और पीपल (५) छाछ और मधु (६) इनमेंसे किसी एक अनुपानकेसाथ १-१ रत्ती देनेसे अरुचि और वान्ति नष्टहोती है ॥ ५०५ ॥

५०६ सूतशेखररसः (प्रथमः)

शुद्धं सूतं मृतं स्वर्णं टङ्कणं वत्सनाभकम् ।
व्योपमुन्मत्तयीजञ्च गन्धकं ताप्रभस्मकम् ॥ २१६६ ॥
चातुर्जातं शङ्खभस्म विल्वमञ्जा कचोरकम् ।
सर्वसमं क्षिपेत्प्रल्वे मयं भृङ्गरसैर्दिनम् ॥ २१६७ ॥
गुञ्जामात्रां घटीं कृत्वा भक्षयेन्मधुसर्पिपा ।
रसोऽयमम्लपित्तघ्नो चान्तिशूलामयापहः ॥ २१६८ ॥
पञ्च गुल्मन् पञ्चकासाग्रहण्यामयनाशनः ।
त्रिदोषोत्थातिसारः श्वासमन्दाग्निनाशनः ॥ २१६९ ॥
उग्रहिकामुदाघतं दाहयाप्यगदापहः ।
मण्डलान्नान् सन्देहः सर्वरोगहरः परः ॥

राजयक्ष्महरः साक्षाद्रसोऽयं सूतशेखरः ॥ २१७० ॥
यो. र., र. चं., वै. क., नि. र., रसायनसं., वै. चि., अम्लपित्तं ।

भाषा—शुद्धपारा, सुवर्णभस्म, मुनाशुद्धागा, शुद्ध वलनाग, त्रिकटु, शुद्धयत्नेयीज और गन्धक, ताप्रभस्म, चातुर्जात, शङ्खभस्म, वेलगिरी, कचूर सबसमभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय भंगोरेरससे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीनेसायलेनेसे अम्लपित्त, वमन, शूल, पाचोऽगुल्म, कास, प्रवृणी, त्रिदोषजातिमार, श्वास, मन्दाग्नि, मयङ्गरदिका, उदाघतं, दाह, व्याप्यरोग, राजयक्ष्म इनसबको यह एकमण्डलमें नष्टकरता है ॥ ५०६ ॥

५०७ सूतशेखररसः (द्वितीयः)

रसं विश्वञ्च कपांडं चतुःकर्षञ्च गैरिकम् ।
मर्दयेद्वेद्वयामं तु ताम्बूलीद्वयारिणा ॥ २१७१ ॥
रक्तिकाप्रमितं योज्यं सितया मधुनाऽथवा ।
अम्लपित्तं घ्नमं मूयच्छन्दश्च हरति ध्रुवम् ॥ २१७२ ॥
रसायनसं., अम्लपित्तं ।

भाषा—शुद्धपारा और सोठ ८-८ मात्रे, शुद्धयोनामं ४ कर्षं रेडर पारा अत्ययोनेमठक शुक्कमर्दनकर पानकेरससे ४ पहर पोटर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शहर अथवा मधुकेसाथ देनेसे अम्लपित्त, घ्नम और सुन-कृच्छ्रो यह नष्टकरता है ॥ ५०७ ॥

५०८ सूतशेखररसः (रक्षाघः) (तृतीयः)

अन्नकं रससिन्दूरं सुवर्णं शुल्बमुत्तमम् ।
लौहं कम्पुजभृतिञ्च विषं कनरवीजकम् ॥ २१७३ ॥
चातुर्जातं टङ्कणञ्च शुण्ठीं व्योपञ्च जेदारम् ।
सपे समं तु कस्तूर्यास्तुर्याशं प्रक्षिपेत्तुर्धुः ॥ २१७४ ॥

आर्द्रद्वेषेण सम्मर्द्य मार्कवस्य रसैर्दिनम् ।
सूतशेखरनामाऽयं तरुणारुणसन्निभः ॥ २१७५ ॥
गुञ्जामानेन मध्वक्तो मध्वार्द्रकरसेन वा ।
जयेद्वातकफोद्रेकं तथा खण्डार्द्रयोगतः ॥ २१७६ ॥
वातपित्तामयं हन्यात्तथा राज्ञाकपायतः ।
वातं गुडचीसर्वेन मधुना सर्वमेहनुर ॥ २१७७ ॥
गोदुग्धखण्डयोगेन पित्तोद्रेकं जयेद्दुग्धम् ।
क्षयं पाण्डुं मेहरुजं जीर्णज्वरमथारुचिम् ॥ २१७८ ॥
प्रदरं हन्ति मान्द्यञ्च सोमरोगं शिरोग्रहम् ।
अनुपानविशेषेण तत्तद्रोगाहरो भवेत् ॥ २१७९ ॥
र. चं., कफरोगे ।

भाषा—अन्नक, सुवर्ण, तांबा, लोह, शङ्ख इनरीभस्में, रससिन्दूर, शुद्ध वलनाग, धतूरेकीज, चातुर्जात, मुनाशुद्धागा सोठ, त्रिकटु, नागकेसर सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे चतुर्थांश कस्तूरी डालकर अदरख और भंगोरेरससे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु अथवा मधु और अदरखके रसकेसाथ देनेसे वात और कफकी अधिकताको यह नष्टकरता है । खाठ और अदरखके रसकेसाथ वातपित्तजन्माधिको नष्टकरता है । राज्ञादि-वाचकेसाथ वायु, गिलोयसक्त और मधुसे प्रमेह, शहरमिलेहुए गोदुग्धसे पित्ताधिक्य, क्षय, पाण्डु, प्रमेह, जीर्णज्वर, अरुचि, प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, सिरका जकड़ना इनसबको यह नष्टकरता है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह तमाम व्याधि-योंको नष्टकरता है ॥ ५०८ ॥

५०९ सूतादिवटी (प्रथमा)

सूतगन्धाभ्रमगधाऽम्लिकामरिचसैन्धवेः ।
गुटिकाऽरौचकहरी जिह्वायदनशुद्धिकृत ॥ २१८० ॥

वृ. यो. त., र. चं., र. गु., र. कौ., रसायनसं., अरौचके ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, अभ्रकभस्म, पीपल, पुरानी शमी, मरिच और सैन्धव समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारे-गन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय शरवेत्सवार गोलियें बनाकर सुंढेमें रखनेसे अरुचिको नष्टकरती है और जिह्वा तथा मुखांशु शुद्धि करती है ॥ ५०९ ॥

५१० सूतादिवटी (चन्द्रप्रभा) २

मृतं मृतं मृतं स्वर्णं मृतं ताप्रं समं समम् ।
तुल्यञ्च खादिरं सारं तथा मोचरसं क्षिपेत् ॥ २१८१ ॥
द्रवैः शाल्मलिमूलाद्यैर् मर्दयेत्प्रहृष्टयम् ।
चणमात्रां घटीं कृत्वा खादिरैरुत्सुताम् ॥
त्रिदोषायमतीसारं सत्वर्न नादायैक्यम् ॥ २१८२ ॥

र. कौ., र. सं., वि. र. म., र. चं., र. कौ., नि. र. मी. घा., र. गु., र. म. ना., र. (मा.), रसायनसं., वै. चि., टो., र. का., यो. म., र. क. उ, वृ. यो. त., ना. वि., अतिपारे ।

भाषा—पारा, सुवर्ण, ताम्र इनकीभस्म समभागलेकर सब कीचरावर खैरसार और मोचरस मिलाकर सैमलकीनङ्ककेरसे दोपहर मर्दनकर चनेप्रमाणगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जीरेकेसाथ देनेसे यह त्रिदोषातिसारको नष्टकरतीहै ॥

५११ सूतादिवटी (तृतीया)

शम्भो. कण्ठविभूषणं रविरथ. सर्वैः समांशं रसं, सम्मर्द्यं त्रिफलात्रिजातचपलामूलं धनं रेणुका । वेह्ल-यूपणचित्रकं समलवं त्वेकत्र सम्मर्दयेत्, कर्तव्या गुटिका गुडद्विगुणिता बह्लोन्मितास्ता हिताः मान्द्यादौ जठरानिले ग्रहणिकाकासे क्षये पायुजे, या चात्यर्थगलप्रहृष्ययधुग्गुल्मोदरव्याधिषु । अष्टीलाईतगृध्रसीयुवतिरुक्कश्रेष्मामयातातिषु, क्षीणानां विषमं प्रमेहनचये सूतादिकेयं वटी २१८४ र, प्रमेहे ।

भाषा—शुद्ध बछनाग, ताम्र और लोह १-१ भाग, पारद-भस्म ३ भागलेकर त्रिफला, त्रिजात, पिपलामूल, नागरमोथा, रेणुका, विडङ्ग, त्रिकटु, चित्रकमूल सब समभागलेकर बारीक-चूर्णकर इक्के मिरास्य १-२ दिन शुष्कमर्दनकर दूनागुडमिला कर ३-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे मन्दाग्नि, उदर-बाधाषु, ग्रहणी, कास, क्षय, बवाबीर, गलग्रह, शोथ, गुल्म, उदररोग, अश्लीला, लकवा, ग्रन्थी, स्त्रीरोग, श्लेष्म, आमवात, क्षीणता, विषमरोग, प्रमेह, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५११ ॥

५१२ सूतादिवटी (चतुर्थी)

शुद्धं सूतञ्च भल्लातपिप्पलीमूलपिप्पली । आकल्लकं जातिपत्री लवङ्गं यङ्गभस्मकम् ॥ २१८५ ॥ मर्दयेत्समभागेन पुराणगुडमिश्रितम् । उपदेशेषु सर्वेषु वटी मायप्रमाणिका ॥ २१८६ ॥ नि र, र च, व रा, वै, चि, रसायनस, उपदसे । रसायन सङ्गहे उपदेशहीवटीतिनाम ।

भाषा—शुद्धपारा, भिलावे, पिपलामूल, पीपल, अजलकरा, जावित्री, लौंग, बह्रमस सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर पारेके अक्षरयहोनेतक घोटकर सबकी बराबर पुराना गुड मिलाकर १-१ माशेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानी-केसाथ लेनेसे समस्त उपद्रव निवृत्तहोतेहै ॥ ५१२ ॥

५१३ सूतिकाप्ररसः

रसगन्धकलौहात्र जातीकोपं सुवर्णकम् । समांशं मर्दयेत्खले छायादुग्धेन पेपयेत् ॥ २१८७ ॥ गुग्गाद्वयप्रमाणेन घटिका कुञ्ज यत्नत । ज्वरातीसाररोगघ्न सूतिकातङ्कनाशन ॥ सूतिकाघ्ना रसो नाम ग्रहणा परिकीर्तित ॥ २१८८ ॥ र स, र चि, र च, र सु, सूतिकायोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अत्रक और सुवर्ण-भस्म जावित्री सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय बकरीकेधसे पीसकर २-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपान-केसाथदेनेसे ज्वर, अतिसार, सूतिकायोग इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ५१३ ॥

५१४ सूतिकातङ्कनाशनरसः

रसाभ्रगन्धकव्योपं सुवर्णमाक्षिकं विषम् । सर्वमेकीकृतं चूर्णं खादेद्रकिचतुष्टयम् ॥ २१८९ ॥ सूतिकाग्रहणीरोगं वह्निमान्यञ्च नाशयेत् । अतिसारञ्च शमयेदपि वैद्यविवर्जितम् ॥ कासश्वासातिसारघ्नो वाजीकरण उत्तमः ॥ २१९० ॥ र स, र. सु, सूतिकायोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनामाखी और बछनाग, अत्रकभस्म और त्रिकटु समभागलेकर बारीकचूर्णकर रखछोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे सूतिकायोग, ग्रहणी, मन्दाग्नि, दुःसाध्य अतिसार, कास और श्वासको यह नष्टकरताहै ॥ ५१४ ॥

५१५ सूतिकातङ्कनाशिनीवटी (सूतिकाप्ररस)

रसं गन्धं मृताभ्रञ्च मृतताम्रञ्च तुल्यरुम् । चूर्णितं मर्दयेद्यत्नाद्रेकपर्णारसेन च ॥ २१९१ ॥ छायाशुष्का वटी कार्या कलायसदृशी तत । मात्रया कट्टना देया सूतिकातङ्कनाशिनी ॥ ज्वरतृष्णाऽरचिहरी शोथघ्नी वह्निदीपनी ॥ २१९२ ॥ भै र, र च, घ, र चि, र. र, र सु, व रा, र स, सूतिकायोगे ।

टि०—केषुचित्पुस्तकेषु श्रुताम्रत्र तुल्यकमिलवस्य स्थाने सूत ताम्र-तद्वदकमिति पाठ । तत्र त्रयाणामर्दं अर्धदं बोध्य तेष्वेव पुस्तकेषु अनु-पानस्थाने क्षीरत्रिकटुना युक्ति पाठे दृश्यते तत्र त्रिकटुना सार्पं क्षीरस्य पाक विधाय दातव्यम् । अन्यत्र तु त्रिकटुना सादं रस मिश्रस्य मथा-दिभि प्रयोजक्यमिति विज्ञेय । र, रसेद्रम एतयो शुल्वेश्वरानाम् । रसायनकथो कृत्वा सिद्धिकां समभागयो । साध्यात्मकं तयोस्तुल्ये मर्दयेद्विषयस्यम् । खराशिकारसेनैव गोल सङ्कोचयेच्छेत् । औदुम्बराख्य ज्यति कुञ्ज शुल्वेश्वरामिष ॥” इति पाठो मिहितोऽस्ति । अत्र रसा-शिकामावनेनाऽपिकाऽस्ति, इयोरपि भावनयोरपत्र समावेश कृत्वा एक एव पाठ सम्पादनीय दिविषामावनानुष्ठाने ह्यल्पभावात् । अपि-कारभेदस्त्वकिञ्चित्कर एकपिचारपद्धिषु योगेषु विविधकारण-शक्तिमत्त्वात् ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अत्रक और ताम्रभस्म समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर द्राक्षीविरसमें १-२ दिन मर्दन कर मटबरवार गोलिये बनाकर छायाशुष्ककर रखछोड़े । इन-मेंसे १-१ गोली त्रिकटुकेसाथ देनेसे सूतिकायोग, ज्वर, तृष्णा, अशचि, शोथ, मन्दाग्नि, इनसबको यह नष्टकरतीहै ॥ ५१५ ॥

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, अन्नकमलम् ४ भाग, ताम्रमस ६ भाग, लेकर सबकी नीलवर्णकजलीकर भंगोकेरसे ७, निगुण्डी, इटसिट और पलाशकेस्वरसोंसे २-३ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली हर्ष, देवदार और सोंठ काकाड़ा (१) मधुयुक्त-पलाशकी जड़कास्वरसे (२) हल्दी और गुड़ (३) विषारा, देवदार और सोंठ (४) एण्डतैलमें पकीहुईहर्ष और गोमूत्र (५) सोंठ, गिलोय और देवदार (६) कुटकी और एण्डतैल (७) एण्डतैलयुक्तधान्याम्ल (८) कज्ज अथवा पतनीचाकेपतों-कास्वरसे (९) विषारा और तुषाम्ल (१०) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेमाद्य औषिती देखकर प्रयोगकरनेसे श्लेषद और कुष्ठ नष्टहोताहै ॥ ५२४ ॥

५२५ सूत्रेन्द्ररसः (तृतीयः)

मुक्ताफलं प्रवालञ्च सुवर्णं रौप्यमेव च ।
रसगन्धकतः सर्वं तोलैकेकं प्रकल्पयेत् ॥ २२२७ ॥
रक्तोत्पलपत्ररसे मर्दयेत्तद्वनीकृतैः ।
मर्दयेत्तत्पुनर्दत्त्वा गन्धं मापचतुष्टयम् ॥ २२२८ ॥
क्षिप्वा काचघटीमध्ये सन्निरुद्धय प्रयत्नतः ।
वालुकायनमप्यस्थानं कृत्वा काचघटीं ततः ॥ २२२९ ॥
पाकस्तत्र तथाकार्यां भवेद्यामत्रयं तथा ।
काचपानात्समाकर्षेत्सिद्धं सूतं ततः परम् ॥ २२३० ॥
भक्षयेद्रक्तिनाः पञ्च रोगैराकान्तपुद्गलः ।
भोजनं सर्वरोगोक्तं यत्नतः कारयेद्भिषक् ॥ २२३१ ॥
दुर्बलं घणुत्ययं यल्लुकुं करोत्यसौ ।
शुक्रवृद्धिं करोत्येव धञ्जभङ्गञ्च नादायेत् ॥ २२३२ ॥
मासेनैकेन सूत्रेन्द्रो रोगनाशाय कल्पते ।
शालयो मुद्गयुक्ताश्च गोधूमा भोजने हिताः ॥ २२३३ ॥
घृतं गव्यं तथा क्षीरं क्षिणं पथ्यं प्रयोजयेत् ।
पारायतस्य मांसञ्च तिचिरे लांयकस्य च ॥ २२३४ ॥
र र स , र चं , र को , वाजीकरणे । र को., मकरध्वज-
रस इति नाम ।

भाषा—मोती, प्रवाल, सुवर्ण, चादी इनकीमसमें, शुद्ध पारा और गन्धक १-१ तोला लेकर नीलवर्णकजलीकर छाल-कमलेके फूलैकेपनसे १ दिन मर्दनकर ४ मासे शुद्धान्धक मिलाय एकदिनपोटकर मुवाकर कजली बनावे । फिर ४-५ रूपइमिठीदीहुई आतवीशीधीमें बन्दकर वालुकायनमें रख ३ पहरकी कड़ी आंचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर शीशीमेंसे निकालकर रखोहे । इसमेंसे ५-५ रत्तीकीमात्रा रोगोचितानुरानकेसाध-देनेसे कृतात्, घल और शुक्रकीदानि, पञ्चभङ्ग इनसबको पक-महीनेमें यह नष्टहोताहै । सपेदचावल, मूंग, गेहूँ, गायक्यापी और दूध इत्यादि क्षिण्यभोजनकरे । कफूत और तीतरकामोक्ष गुणकारकहै ॥ ५२५ ॥

५२६ सूत्रेश्वररसः (प्रथमः)

सूताऽध्नायसमृतिगन्धगरल्लेच्छं सर्वैकान्तकं,
त्रिखिमांकेवाशिप्रुक्वहिसरलाऽस्तङ्काद्रिकाम्मःप्लुतम् ।
श्लक्ष्णीकृत्य विलिप्य भाण्डकुहरे प्राडमानहालाहला-
न्नियंद्मविधुपितो रसवरस्तद्भाण्डनिष्कासितः ॥
सूतेशः सुरसारसेन रसितो गुञ्जाद्वयोतोतिलो,
ह्रन्यादष्टविधाऽवरांश्च विषमांश्चीतोष्णसाधारणान् ॥
र. प., ज्वरे ।

भाषा—पारा, अन्नक, लोह इनकीमसमें, शुद्धान्धक, सप-विष, ताम्र और वैकान्तमसम समभागलेकर कजलीकर भंगरा, सहिजन, चिन्मूल, निसोत, कुष्ठ और अदरकके स्वरसोंसे २-३ दिन मर्दनकर मिश्रीकेपेडमें लेपदेकर इस्के रात्रय चञ्च-नागकाचूर्ण दूसरी हंडीमें विछाय डमल्लय बनाकर मुहबन्दपर चूहेपर रख इतनी आचदेवे कि वहनाग जलजाय । स्वाज्ञशी-तलहोनेपर हंडीकेपेडेमेंसे रसको निकालकर तुलसीकेरससे पोटा-कर २-२ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोहे । इनमेंसे १-१ गोली तुलसीकेरसकेसाधदेनेसे ८ प्रकारकेज्वर, विषम, शीतो-ष्णप्रधान और साधारणज्वर नष्टहोतेहै ॥ ५२६ ॥

५२७ सूत्रेश्वररसः (द्वितीयः)

रसगन्धकयोः कृत्वा कज्जलीं कर्पसम्मिताम् ।
स्थूलदुर्गमांसञ्च वसापित्तञ्च पूर्ववत् ॥ २२३६ ॥
मर्दयेत्पुटयेच्चैव सिद्धः सूत्रेश्वरो भवेत् ।
गुञ्जामात्रं जयेदोषं सर्वशैत्यनिवारणः ॥
देहं सोपद्रवञ्चैव वातं दन्तनिवन्धनम् ॥ २२३७ ॥
र, वातरोगे ।

भाषा—१-१ कर्प शुद्ध पारे और गन्धककी नीलवर्ण-कजलीकर बडेमेटकेमेलास, चर्वा और पिनसे १-१ दिन मर्दन-कर गोलावनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ६-७ रूपइमिठीदेकर सूखनेपर शुद्धपुटनी आंचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रख-ओहे । इनमेंसे १-१ रत्ती समय अथवा रोगोचितानुरानके-साधदेनेसे शीताज्ञ, दन्तविषय इत्यादि उपद्रवयुक्त सत्रिपातको यह नष्टहोताहै ॥ ५२७ ॥

५२८ सूर्यकान्तरसः

ताप्यं गन्धं शुद्धसूतं शिलाजल्यम्लयेतसम् ।
मृतताम्रासकं तुल्यं मघ्नाज्यगुडमिश्रितम् ॥ २२३८ ॥
मापैकं जिह्वकं हन्ति सूर्यकान्तो महारसः ।
मुण्डीपञ्जाङ्गवृणञ्च चाकुचीतुल्यपूर्णकम् ॥
मघ्नाज्यसंयुतं कर्पं लेहयेदनुपानकम् ॥ २२३९ ॥
र र, र सु, चि क., र. का. गुग्गुणिकारे ।

टि.—र सु, चि क., र का सु मूर्धवासरस इति नाम । “रस-गन्धकताप्यमानुषि शिल्पाऽथो अनुनाडमनेन च । अरि वप्य तथाऽ-म्लयेति गुण्ण्डांशमाशुमादिभिः ॥ मघ्नं परिपेभ्य मापद०” निनि षठ उद्रमशुद्रनाशा विविद्याममकणवल्कामेन निर्दिशोऽपि ।

अस्मिन्नप्रकृत्याने शिलानिहिताऽस्त्यम्ब्वेतमस्य च भगवनायां निदो-
गोऽस्ति प्लावङ्गदस्याऽकिञ्चिक्वत्वरमस्युत पूर्वपाठादीनवीर्यत्वाच्च पूर्व-
स्मिन्नेवाऽस्याऽन्तर्भावः कर्णोपः शिलाप्रक्षेपस्त्वनापि न विरुद्धवते ।

भाषा—शुद्ध सोनामासी, गन्धक, पारा और शिलाजीत,
अम्ब्वेत, ताम्र और अन्नकमस समभागलेकर नीलवर्णकचवी-
कर शिलाजीत और अम्ब्वेतको अच्छीतरहमिलाकर १-२ पहर
घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा मधु, पी और गुडके-
साथ मिलाकर खानेसे श्रम्यजिह्वादि कुष्ठोंको यह नष्टकरताहै ।
गोरखमुण्डीका पञ्चाङ्ग और वाकुची समभागका चूर्ण एककण
मधु और पीकेसाथलेनेसे रसका शरीरमें सहकर्मणहोताहै ५२८

५२९ सूर्यचन्द्रप्रभावटी

भिकत्रयं हरिद्रे द्वे तित्का तिकं शटी यचा ।
वेल्लचित्रकतालीसमाङ्गीपद्मकजीरकम् ॥ २२४० ॥
द्वौ क्षारौ पिप्पलीमूलं पट्टनि त्रीणि तुम्बुरु ।
देवदारु बला चव्यं धान्यकं गजपिप्पली ॥
यत्सकातिविपादन्तीश्यामापुष्करकामृताः ॥२२४१ ॥

भागोऽमीपां सूक्ष्मचूर्णाङ्कितानां
भागश्चाद्धैस्तापितोरोद्भवस्य ।
तद्द्रव्याद्या भागवृद्धया परे श्यु-
रत्रं लौहं शैलजं कौशिकञ्च ॥ २२४२ ॥
सम्मर्द्यं गुटिका कार्या सूर्यचन्द्रप्रभाभिधा ।
पूर्वाद्धं तां प्रयुञ्जीत माक्षिकेण परिप्लुताम् ॥२२४३॥
अनुपाने प्रयुञ्जीत तर्कं मधु रसोत्तमम् ।
क्षीरं वदरतयं वा शर्करामिश्रितं जलम् ॥ २२४४ ॥
घृतं सूत्रं तथा चाम्लं स्वादु दाडिमजं रसम् ।
कासं श्वासं तथा शोषमरुचिं पाश्वेवेदान्म् ॥२२४५॥
अशांसि कामलां मेहं पाण्डुरोगं हलीमकम् ।
हृद्रोगं सूत्रकृच्छञ्च श्वयथुं प्रहणीगदम् ॥ २२४६ ॥
यक्षुष्णीहाभिवृद्धिञ्च कृमिं ग्रन्थिं भगन्दरम् ।
श्लोषदं गण्डमालाञ्च व्रणान्नाडीव्रणानपि ॥ २२४७ ॥
अतिस्थूल्यातिकाश्चैव विद्वेषीन्पिष्टिकामपि ।
नासानेत्राश्रिताश्रोगांश्छिरोरोगान्मुदाकृणान् २२४८
मुखरोगानशोषांश्च रक्तपित्तं स्वरक्षयम् ।
ज्वरञ्च सन्निपातोत्थं विषमञ्चापि पैत्तिकम् ॥२२४९॥
विंशतिं श्लैष्मिकांश्चैव संसृष्टान्साश्रिपातिकान् ।
निजानुत्तुभवांश्चैव ये चान्ये नात्रकीर्तिताः ॥
तांस्तान्प्रशमयत्येषा वृक्षामिन्द्राशनि र्थया ॥२२५० ॥

मेधां स्मृतिं कान्तिमनामयत्व-
मायुःप्रकर्षं पवनानुलोम्भम् ।
श्लोषु प्रहर्षं बलमिन्द्रियाणा-
मग्नेश्च कुर्याद्विधिनोपयुक्ता ॥ २२५१ ॥

ग. नि. सर्वरोगे ।
टि०—“ भेष्ठा श्लोषनिडव्गन्धकनिशादावीकराऽऽमृता
देवाहातिनिषा विडुव कःका बुल्लुमुरु फार्ली ।

क्षारौ द्वौ लवणत्रयं गजकणा चव्य तथाऽल्बकर,
तालीस कमगुल्युष्करशटी कुष्ठ किरात धनम् ॥
भार्गी पृषकवीजकं सतुज्ज दन्ती वचातुम्बुरु,
शुद्धी चकटकस्य कर्णकमिता. सर्वा समाना मता. ।
लोहस्य द्विपल पुरस्य च पलान्यद्वौ प्रदधातते,
वाश्यास्त्विकमल शिलाजदशक ताप्य तु वाशीसमम् ॥
मत्स्यन्दीपलपृषकं यूपपृष्ठे दे दे च माक्षीकती,
हेन्योऽयं त्रिमुगन्धकस्य च पल दत्त्वा शुटी निर्मिता ।
सूर्याभं परमेष्ठिना भगवता सर्वप्रभा नामत,
कासधासभगन्दोत्तरनिर्मनीयाप्लुत्वपण्डक्षयान् ॥
शुल्लं विद्वेषिणाश्वंश्लतमकान्सकीपदान्कामलाम्,
खेदं सर्वगतं त्रयोदशविध सा सन्निपातं हेरेद् ।
वातोद्भूतमशीतिसम्पिकमदं सशेषमपिष्टोद्भवम्,
कुष्ठार्शोविषमज्वरानरुचकं सूत्रमहाप्राशयेत् ॥
सर्वान्निर्गमणान्निहन्ति शुष्कामक्षयमाणा बुधे,
यूपशीरस्ते प्रयुज्य बलवान्श्लोषशयो जायते ॥ ”

इति पाठो गो म, वृ यो.त., यो र, नि र, वै. वि एण ग्रन्थेयु
सूर्यप्रभा शुटीति नाम्ना निहितोऽस्ति । अत्र चन्द्रप्रभावामेव त्वगे-
लाह्वरान्प्रभिकतदा निश्चिन्त्य द्रव्यप्रमाणे च ब्यत्यय कृत्वा नामान्तर
स्थापितम् । वैयचिन्तामणौ च व्यत्यस्तः पाठोऽस्ति कुत्रचिन्त्याने भेदो
दृश्यते ।

भाषा—सौंठ, मिर्च, पीपल, हरे, बहेड़ा, आवला तज,
पत्रक, इलायची, हल्दी, दारहल्दी, कुटकी, चिरायता, कचूर,
वच, विडङ्ग, चित्रकमूल, तालीसपत्र, भारङ्गमूल, पप्रकाठ, जीरा,
सर्बो, यवक्षार, पिपलामूल, सैन्यव, संचल, समुद्रनमक, तुम्बुल
(चिरफळ, मराठीनाम), देवदारु, बला, चव्य, धनियां, गज-
पीपल, कुशैयाकीछाल, अतीस, दन्तीमूल, निसोत, पोहङ्गरमूल,
गिलोय १-१ तोला, योनामाखीभस्य और बंसलोचन ६-६
माशे, अन्नकमस १ तोला, लोहभस्य २ तोले, शिलाजीत ३
तोले, गुगल ४ तोले लेकर सबकाबारीकचूर्णकर गुगल और
शिलाजीतकेसाथ कूटकर अन्दाजसे मधु देकर १-१ माशेकी-
गोलिये घनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुमें मिला-
कर सेवनकरे और ऊपरसे मीठीछाल, दूध, बेरकाफाड़ा, शर-
बत, पी, गोमूत्र, खटा और मीठा अनारकारस इनकेसाथ लेनेसे
कास, भास, शोष, अरुचि, पसलीकादर्द, बवासीर, कामला,
प्रमेह, पाण्डु, हलीमक, हृद्रोग, मूत्रकृच्छ्र, शोष, ग्रहणी, यक्षु
और होहारश्मि, क्रिमि, ग्रन्थि, भगन्दर, श्लोषद, गण्डमाला,
व्रण, नाडीमण, अतिस्यूलता और कृशता, विद्वेषि, प्रमेहपिष्टिका,
नासिका, नेत्र, शिर और मुखके मयङ्गरोग, रक्तपित्त, स्वप्नभङ्ग,
ज्वर, सन्निपात, विषमज्वर, पित्तज्वर, द्रव्ज और साश्रिपा-
तिक २० प्रकारकेश्लेष्मरोग, प्राकृत और वैकृत तमामरोग इन-
सबको नष्टकर मेधा, स्मृति, कान्ति, आयु, पुरुषत्व, और इन्द्रिय
बलको देताहै तथा वायुकाअनुलोमन करताहै ॥ ५२९ ॥

५३० सूर्यपावकरसः

त्रिपापाणं हितुत्यञ्च नेपालं तालकं समम् ।
मर्द्यं शुस्करकद्रवेः कुकुटीपुटपाचितम् ॥ २२५२ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य कोलपित्तेन भावयेत् ।
गुडामात्रं प्रदातव्यं शीतज्वरनिवारकम् ॥
सूर्यपावकनामायमीश्वरेण प्रकल्पितः ॥ २२५३ ॥

वै. वि. वा. ज्वराजधिकारे ।

टि०—दीर्घपापुत्रेणाऽयमापातनस्याय विद्यते न तत्रान-
भक्ति महदन्तरत्वात् ।

भाषा—तीनतरहका शुद्धनोमल, तुत्य और हीराकसीस,
जमालोटा, रसमाधिक्य सबसमागलेकर बारीकचूर्णर घट्टे
केरसेसे २-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरानसम्पुटमें बन्द-
कर कुङ्कुमपुटकी आंचदे । स्वाङ्गशीतलशेनेपर सुशरकेपितकी
१ भावना देर १-१ रतीनी गोलिये बनार रजोदे । इत-
मेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसायदेनेसे यह शीतज्वरको
नष्टकरताहे ॥ ५३० ॥

५३१ सूर्यप्रभागुटिका (प्रथमा)

त्रिप्रकं त्रिफला निम्बं पटोलं मधुयष्टिका ।
वराङ्गं केदारञ्चैव यवानो चाम्बलेतसम् ॥ २२५४ ॥
भूमिम्प्रकञ्च दार्वेला मुस्तापपट्टकन्यथा ।
तुत्यकं कट्टका भाङ्गी चय्यपन्नकदीप्यकाः ॥ २२५५ ॥
पिप्पली मरिचं दन्ती शट्टो शुण्ठी च पुष्करम् ।
चिङ्गं पिप्पलीमूलं जीरकं देवदारु च ॥ २२५६ ॥
पत्रकं कुट्टजं राक्षा दुरालम्भामृता त्रिवृत् ।
लातारुकरतालीसं वृक्षाम्लं लवणत्रयम् ॥ २२५७ ॥
धान्यकञ्जाजमोदा च फारवी धातुमाशिकम् ।
जातीफलं तुगाक्षीरी वाजिगन्धा च दाडिमम् २२५८
कट्टोलकमुदीरञ्च द्विशारं रेणुका तथा ।
प्रत्येकं पलमात्राणि सूक्ष्मचूर्णानि कारयेत् ॥ २२५९ ॥
गिरिजस्य पलान्यष्टौ द्वे पले चैव गुग्गुलोः ।
प्रस्यमेकं सितयाश्च घृतस्य कुडवन्तया ॥ २२६० ॥
गिरिजस्य समं लोहं प्रस्थातुं माशिकस्य च ।
सर्वमेकत्र सन्मिश्रयन्निग्धभाण्डे निधापयेत् ॥ २२६१ ॥
ऊरुस्तम्भं घातरोगं हन्त्यर्दितञ्च गुह्रसीम् ।
विद्राघं श्लेष्मिपदं शुल्लं पाण्डुरोगं हलीमकम् ॥ २२६२ ॥
आसं पञ्चविधं घोरं मूत्रहृत्कं गलग्रहम् ।
कानाहमदमरीं यर्षमं प्रहणीमपवाहृकम् ॥ २२६३ ॥
अरोचकं पार्श्वशूलमुदरं सप्तमन्दरम् ।
हृद्रोगं शूलमुक्तम्पविषमज्वरनाशनम् ॥ २२६४ ॥
उरःशतमपे दोगे मुखरोगे च क्षारणे ।
महोपधररादस्माद्दार्ढ्यं पाणितलोन्मितम् ॥ २२६५ ॥
यिविषाप्रानि सुधीत ययेष्टञ्च यपासुरम् ।
गुटिका भास्करो नामा सृष्टा देवेन शम्भुना २२६६
प्रमेहं रक्तपित्तञ्च घातरकं सशामलम् ।
अग्निस्पर्द्धापुनं हृद्यं वीर्यापुःपुष्टिदं भयेत् ॥ २२६७ ॥
ये यानप्रमया रोगा ये च पित्तसमुद्भवाः ।
वृक्तरोगाश्च ये केचिद्दृग्भाः स्नात्रिपातिकाः १२२६८

ते सर्वे प्रशमं यान्ति भास्करेण तमो यथा ।
रोगविद्राघिणी कार्या गुटिका सूर्यवल्लभा ॥ २२६९ ॥
नि. र., र. सु., वै. वि. वाते ।

भाषा—चित्रकमूल, त्रिफला, नीमकीछाल, परवल, मूल-
हठी, तन, नागकेशर, अजनाहन, अम्बलेत, चिरायता, दारु-
हल्दी, इलायची, नागमोथा, पित्तापक्का, शुद्धवृत्तिया, कुन्डी,
भारती, चय्य, पत्रकाड, मयूरशिरा, पीपल, मरिच, स्तनी-
मूल, कचूर, सोंठ, पोहरसूल, विडङ्ग, पिपलामूल, जीरा, देव-
दारु, पत्रज, कुरैयाकीछाल, राक्षा, जवाता, गिलोय, निक्षोत,
मजीठ, भिलांवां, तालीसपत्र, कोकम, तीनोंनमक, पविषां,
अजनाद, वारवी (महाराष्ट्रमेंप्रसिद्ध है), सोनामाची, जायफल,
वंसलोचन, असगन्ध, अनारदाना, शीतलबीनी, खम, दोनों-
क्षार, रेणुका येसव १-१ पल, शिलाजीत ८ पल, शुद्धपुण्ड २
पल, मिथी १ प्रस्य, घी ८ पल, लोहभस्म और मधु ८-८
पल लेकर काष्ठोपधियोंका बारीकचूर्णर शिलाजीत और धूल
को अच्छीतरह मिलाय शकर, घी और मधु मिलाकर चिकने
वर्तनमें रखदे । इसमेंसे १-१ तोला समय अथवा रोगोक्षित-
ानुपानकेसायदेनेसे ऊरुस्तम्भ, वातरोग, लक्ष्वा, एरपी, विक्षि,
श्लेष्म, शुल्म, पाण्डु, हलीमक, ५ प्रकारका कास, भयङ्कर
मूत्रहृत्क, गलग्रह, आनाह, पयरी, अण्डशुद्धि, प्रहणी, अषवा-
हुक, अश्वि, पसलीकादर्द, उदररोग, मगन्दर, हृद्रोग, शूल,
उल्कटदम्भ, विषमज्वर, उर क्षत, भयङ्कर मुखरोग, प्रमेह, रक्त-
पित्त, वातरक, कामला, मन्दाग्नि, हृदयकीबमजोरी, वातरोग,
पित्तोग, समस्त कफरोग, द्रव्ज और सानिपातिक समस्त-
रोगोंको यह नष्टकरतीहे आयु और पुष्टिको बढ़ातीहे ॥ ५३१ ॥

५३२ सूर्यप्रभागुटिका (द्वितीया)

भाङ्गी बह्निजयायुगात्रकदलीपाटावचारोचना,
श्वल्यं पत्रकचिप्रके त्रिकटुकं क्षारख्यं गन्धकम् ।
श्रान्त्यंती हरवीजकेशरविषहृन्तं लवङ्गं कणा,
कुष्ठं शल्पकलं कफप्रत्ययुतं फेनः सङ्गुदार्दपि ॥ २२७० ॥
प्रक्षयीजं ज्योतिर्वीजं बालविल्वं विम्बकम् ।
लवणानि तथा पञ्च जात्यादिकुसुमाधकम् ॥ २२७१ ॥
घातारित्तेलेनेतेषां कल्पिता भिषजांरैः ।
एषा सूर्यप्रभा नाम गुटिकाऽग्निप्रदीपनी ॥ २२७२ ॥
र. र. व., र. को., र. म., अग्निमान्ये ।

भाषा—भाङ्गी, सफेदचित्रकमूल, भाग, जैनी, अश्व-
भस्म, केशरकन्द, पाटा, बच, मोरोचन, चय्य, पत्रज, शाल-
विषक, त्रिकटु, दोनों क्षार, शुद्ध गन्धक, प्रायमाण, शुद्धगता,
केशर, स्याहपदेबध्नाग, लौग, पीपल, वृष्ट, मीनकल, विद्राघ,
समुद्वेन, पत्रा और मालहागनीके बीज, पकरशिरगे हरा
मया हुआ बेल, पांचोन्नक, चमेरी, मालती, जूरी, गोवा-
नूरी, चय्या, मौलीची, कदम्ब, योगता इन आठोंकेपुत्र, सब
घनमाग लेकर बारीकचूर्णकर पाण्डुपट्टकी नीलपांछकीने

मिलाय एण्डकेतैलये घोटकर १-१ माशेको गोलिये बनाकर रखजोके । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपादकेसाधनेसे यह मन्दाग्निसो नष्टकरताहै ॥ ५३० ॥

५३३ सूर्यप्रभाताम्रेष्वरः (आदित्यप्रभापाक्ताम्रम्)

सूतं द्विगुणगन्धेन खल्वे कृत्वा प्रयत्नतः ।
सौवर्चलं रसाद्धेन दत्त्वाऽऽप्लाव्याकेपत्रकैः ॥ २२७३ ॥
तोये धां शियकर्णोत्थे लिंत्वा धर्मेषु पत्रकम् ।
जम्बीरनीरं सुचिरं गलितं मर्दयेच्छुभम् ॥ २२७४ ॥
दद्याद्रक्तिद्वयश्चास्य नागवह्नीद्रवे युतम् ।
गुल्माम्बुपित्तशूलाम्बुहृहापाण्डुज्वरापहम् ॥ २२७५ ॥

र. क, र. को, अम्बुपित्ते ।

टि०—“ फल नेपालशुल्बस्य पत्राणि सुतनूनि च ।
कृत्वा कण्ठकवेचीनि कारयेत्तदनन्तरम् ॥
कषैकत्र दिक्पत्रं कम्मारस्युक्तकान्धयोः ।
मर्दितव्यं शिलाखले रसे दन्तशुद्धयै वै ॥
कल्कत्र पद्मवह्नीना तेन पत्राणि सर्वशः ।
केपयित्वा शिलाखले स्थापयेदातप घरे ॥
यामेकत्र समुद्रुल्य द्रवीभवति नान्यथा ।
वार्ति विरेचनं कृत्वा शुद्धवाय ययाविधि ॥
पूत्रयित्वा सुरान्निप्रान्नीयान्देमाम्बरादिभिः ।
त मृत मधुसर्पिण्यां रक्तिकादिजनेषु च ॥
रीड्या तत्र पित्रेचानु धान्याम्बुज्यापि वा ।
जीर्णं साय समश्रीयाच्छात्यत्र तु पुरातनम् ॥
सेव्यमानं निहन्त्येन्द्रम्बुपित्तं सुरारणम् ।
कास क्षय तथा शोषमर्दानि ग्रहणीगदम् ॥
बामला पाण्डुरोगत्र कुष्ठान्यष्टादशैव च ।
रक्तपित्तं सखात्तियं शूलकवेदोराणि च ॥
वातरोगं प्रतिशयाय विदर्शी विषमज्वरम् ।
सतताभ्यासयोगेन बलीपलितर्वाचित ॥
ताम्रतलुखरो देह सर्वव्याधिविवाञ्जितम् ।
सर्वप्रमानाम् ताम्र सेवनाच्चाम्बुपित्तिदि ॥
जीवेद्वंशत साम द्वितीय इव पावक ॥ ”

इति पाठो रसेन्द्ररनकोशोऽस्ति, अत्र फलभागे विशेषता दृश्यते ।
र र स, र च, र क ल षु पुसक्तपु रसेन्द्ररनकोशे च द्वितीय स्थाने “ फलेभित्तस्य शुल्बस्य सङ्घर्षपत्राणि कारयेत् । तत्सम गन्धक दत्त्वा दले सर्वे विनिक्षिपत् ॥ जम्बीररससुकु दिन धने निधापयेत् । तत शुल्बे द्रवीभूते रसकर्षं नियोजयेत् ॥ तस्मिन्नशुद्रे कोष्ण शोके चैव भागद्वे । नाम्ना तुदयमादेष्परत सष प्रवीरित ॥ ” इति पाठो निहितोऽस्ति, विशेषभावात्सोऽनायासेनैवाऽत्र समावेशितः । र र, र च पतयोस्ताम्रयोगानाम्ना “ रसमन्धक्यो कर्षं प्रत्येक शोषयेद्विषक । तत काञ्चलिका कृत्वा नैपाल ताम्रपत्रकम् ॥ कण्ठेष्वेय विपातव्य सर्वमे कत्र कारयेत् । पात्रे द्वि मृत्तिकोद्रभूते पर दद्याद्रत शुभम् ॥ फलजम्बीर सम्भूत यथाह्नावितमेव तत् । आर्षं स्थापयेत्सायावात्यङ्गोपम भवेत् ॥ पाणिना मर्दयित्वा तु बटिका कारयेत्तत । विशेष्य मानयेद्वरक्तिदय तस्मान्महोपचात् ॥ दिनत्रयान्तरणैव रक्ति रक्तिं विवर्धयेत् । परिष्कारवि पित्तेन धान्यजीरानुपातत ॥ प्रातरतद्रिधातव्यं हन्ति विषाम्बुसम्भवम् । ग्रहण्यामुदत शूलम्बुपित्तत्र दाहणम् ॥ बजीर्णं रक्तपित्तत्र क्षय कुष्ठ विशेषत ॥ ” इति पाठो निहितोऽस्ति परन्तु तत्र निष्पादनप्रतिपाद्य

नुदि. प्रतिभाति, अतस्तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भाव वरणीय । र. का, र. चि प्तयो स्वयमग्निनाम्ना “ विचूर्ण्य गन्धार्पयत्क विशुद्ध रसाद्रिके पत्रे सम च खले । रसाद्धेनैवचलचूर्णयुक्त तत्तल्लित रत्नशिला सुयत्नात् ॥ शरीरवैक र्णमौरुदरैराह्वान्य तत्कज्जलीं, नेपालोद्भवताम्रक फलमित तत्तण्डुवैधायिम् ॥ तेनालेय्य च काञ्चलेन सुचिरं जम्बीरनीर- स्थित, शलासमापितनेरातपवृत्त पिण्डीहन मृदुने ॥ सम्पिण्याशु शुभ सुपर्णनिहित रचीत्रय योजयेत्, तत्तल्लोचितवक्त्रशुद्धिरचिना चूर्णं विना प्रत्यहम् । हन्त्येतदमनाम्बुपित्तं न्यदान्याम्बुशिमाम्बुज्वरान्, रची वरिष्ठमाय षप नियतो रोहोक्तसर्वो विधि ॥ ” इति पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवनति विशेषविशेषाऽभावात् ।

भाषा—शुद्धपारेरी द्विगुणगन्धस्त्रेसाय नीलवर्णवज्जलीकर पारेसे आधासत्रल मिलाय आरु भदवा हस्तिकर्ण पलाश अथवा मूपाकर्णी या इन्द्रायणके पत्तोवेरससे कल्कनयाय पारेसे चतुर्गुणित कण्ठकवेचो तावेके पत्रोपर कल्कना लेप देकर पत्थर की सरलमे रख एकदम तीदणधूपमें रख । अत्यन्तगरम होनेपर दोपहरवाद पत्रोंकी भस्म होजायगी । पूर्वस सुखनेपर जम्बीरीकारस डालकर कर्णधूपमें बैठकर घोट । जब इसकी वृत्ति होजाय तत्र शीशोमें भरकर रखजोके । शुभतिथि, नक्षत्र, वार- युक्तमुहूर्तमें वनम विरेचनादिकसे शुद्धविरेहपु रोगीको दोरत्तीकी माना पानमें डालकर खिलानेसे शुल्म, अम्बुपित्त, शूल, आम, ङ्गीहा, पाण्डु, ज्वर येसच नष्टहोतेहै । रसेन्द्ररनकोशमें १ रत्तीसे १ माशेतकनीमाना मधु और धीकेसाधपेकर छछ अथवा धान्याम्बु पिलाना । जीर्णहोनेपर पुरानेचावल सायङ्कालको देनाखिलाहै और भयङ्कर अम्बुपित्त, कास, क्षय, शोथ, बवा सीर, ग्रहणी, कामला, पाण्डु, १८ इष्ट, रक्तपित्त खाल्दिय, शूल, उदररोग, वातरोग, प्रतिशयाय, विद्रधि, विषमज्वर इत्यादिकोंको नष्टकरताहै तथा हनेवाकेसेवनसे बलीपलिगादिकसे निवृत्त करके शरीरको ताम्रक्रीतरह रूढवनाताहै और १०० वर्षसे ऊपरकी आयुको देताहै । यहफलभागमें लिखाहै ॥ ५३३ ॥

५३४ सूर्यप्रभरसः

विष्णुकान्ता तण्डुली देवदाली
नीली ब्राह्मी सर्पनेत्री पलाशी ।
आसां द्रायं हुम्भजातप्रभृतं
नीत्या विद्वान्द्वित्रियारं यथासम् ॥ २२७६ ॥
तस्मिन्मृतं मर्दयेद्वा द्वािनैकं
गन्धं सूताद्युम्भमाणं सहैव ।
एकीभूतं लोहात्रे क्षणं त-
त्पाच्यं तावद्विद्रुतं यावदेव ॥ २२७७ ॥
शुल्यं पादं चापन्नं चापि सूता-
च्छान्द्र दत्त्वा तापदेवावतार्य ।
निष्कं भुक्तं चास्य पूर्वांनुपातैः
कुष्ठे हन्यात्सर्वपूर्व- प्रभोऽयम् ॥ २२७८ ॥

चि क, र. सु, र. को, र. का, वै. चि, च. रा., उपे । वै. चि., व. रा एतयो सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम ।

दि०—“ विष्णुहान्तेकमूलाञ्जननिनरसा क्षीरिणी देवदाली, सर्पाक्षं जीवनीया मुनिवत्सुसुम त्रद्वयस्य सार । गार्गी चङ्गुपथी धनंरवसुरसे नीलिनी भ्रमसेन, ब्राह्मी बीरा श्रुन्ती मधुमदनशिवा-बाकुचीचक्रमदी । क्षीरकीर्षे सर्वैश्यालभ भिषक् । रसप्रमदयेद्राड रक्षेया निन्तरम् ॥ पथात्मन्यन्विद्युप्यन्तु द्विशुण गन्ध क्षिपेत् । प्रद्राव्य चायसे पात्रे विषु तुषारंश्च क्षिरेत् ॥ पर्यदोमवत्पङ्क स्वाङ्गशीत-ल्ला गत । भनेत्यक्षप्रभो नाम पुण्डरीकहर पर ॥ ” इति पाठो रमा-कगोरे स्तेन्द्रमण्डले च सूर्यप्रभानाम्ना ताद्याभ्रकहिन स्थानि परन्तु तयोर्योगेनाज्यधिकरुग्निमत्तत्पूर्विरभेत् पाठेऽन्याऽन्यन्तर्भाव उक्ति । प्लवङ्गिष्टाऽधिकभावनामप्याधिकवेनाऽप्युष्टाने ह्यन्यभाव इति विद-द्विद्विभावनीयम् ।

भाषा—नीचल, कटिवालीचौलाई, बन्दाल, नील, ब्राह्मी, अन्धाहली, वपूराचारी, अगस्त्य इनके यथासम्भवस्वरस अथवा कायोसे २-२ अथवा ३-३ दिन मर्दनकर दूतागन्धकदेकर १-१ दिन पूर्वद्वेषेसे मर्दनकर मुखाकर कञ्जलीबनावे । फिर धोषुतीहुई लोहेकी कड़ाहीमें डालकर बेरकेकोयलोंपर पिपलाकर पारसेचतुर्थांश ताम्र और अन्नकमस तथा शुद्धकूरु मिलाकर नीचे उतारकर घोंटे । वारीकचूर्णहोनेपर निम्बालकर रखओड़े । इसमेंसे ४-४ मासे कुष्टनाशुपानोकेसायदेनेसे यह समस्त उत्तुर्गोको नष्टकरताहै ॥ ५३४ ॥

५३५ सूर्यरसः (प्रथमः)

एकं भागं घत्सनामञ्च कुर्या-

द्भागद्वयं टङ्गणं दन्तिर्याजात् ।

श्रीनप्येतद्धिहुल्लस्याऽपि तुयः

सद्यो जृतिं नाशयत्येव सूर्यः ॥ २२७९ ॥

र. चं., र. प्र. सु., ज्वर ।

भाषा—शुद्ध वज्राग १ भाग, मुनासुहागा २ भा, शुद्ध जमालगोटा ३ भा शुद्ध शिगरिक चतुर्थांशमिलाकर १-२ पहर घोटकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ रती समयोचिताशुपानकेसाय-देनेसे यह नवम्बरोको दूरकरताहै ॥ ५३५ ॥

५३६ सूर्यरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं त्रिस्तान्पथं पञ्च तालकात् ।

सर्वं शुद्धं विचूर्णयथ चतुर्भागं मृतान्नकम् ॥ २२८० ॥

यथा कुष्ठहृष्टिारि टङ्गणं सैन्धवं विषम् ।

सपाटा द्याह्वली व्योषं प्रत्येकमेकभागकम् ॥ २२८१ ॥

भाषितं भृङ्गिसारेण दिनेकं तस्य भक्षयेत् ।

मायं सूर्यरसो नाम हिषा वैश्यर्यनासजित् ॥ २२८२ ॥

पिप्पल्या सह निगुण्ड्याः धार्यं चानुप्रपाययेत् ।

अष्टकुड्मामिता मश्या विष्याता रसपर्वटी ॥ २२८३ ॥

अक्रिण्टमूलं शुण्ठी च अजाक्षीरं समोदकम् ।

रुहायदिष्टं तं कार्यं सङ्गणं पाययेन्निति ॥ २२८४ ॥

नि. र., र. सु., व रा, र को, र का, वै. वि., र क स कासे

भाषा—शुद्धपाटा १ भाग, गन्ध २ भा, धोनामाधी ३ भा, रगमाक्षिण्य ५ भा., अन्नकमस ४ भा, वष, कुष्ठ, हल्दी,

चित्रक, मुनासुहागा, सैन्धव, शुद्धवज्राग, पाठा, करिहारी और त्रिकटु १-१ भागलेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कञ्जलीमें मिलाय भंगरेकरसेसे एकदिन मर्दनकर उद्भवरावर गोलिये बनाकर रखओड़े । इसमेंसे १ से २ गोलीतक पीपल और संघालके काथकेसाय देनेसे हिचकी, स्वरभङ्ग और कासको यह दूरकरताहै । इसके अभावमें ८ रती रसपर्वटी देवे और रातको गोखल्लीजड़ और सोंठका प्रक्षेपेदेकर बकरीकादूध और पानी समयमाग पकाकर दूधमान अवशेष रहनेपर पीपल डालकर पिलावे ॥ ५३६ ॥

५३७ सूर्यरसः (तृतीयः)

रसगन्धकताप्रात्रं कणाशुण्टसूपणं विषा ।

भूतमेकं विपञ्चैकं सूर्यः कासादिनाशनः ॥ २२८५ ॥

र र., स., रासे ।

भाषा—शुद्ध पाटा और गन्धक, ताम्रकमस ५-५ भाग, पीपल, सोंठ, मरिच, अतीस और शुद्धवज्राग १-१ भाग लेकर वारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकञ्जलीकेसाय १-२ पहर घोटकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोचिताशुपानकेसाय देनेसे यह कासको नष्टकरताहै ॥ ५३७ ॥

५३८ सूर्यवटी

पिप्पली पिप्पलीमूलं विपं हिङ्गुलटङ्गणम् ।

समभागानि चैतानि चूर्णमेकत्र कारयेत् ॥ २२८६ ॥

जैपालं पादभागञ्च शुद्धं कृत्वा विनिक्षिपेत् ।

सर्वचूर्णसमो देयः सूर्यक्षारः सुभञ्जितः ॥ २२८७ ॥

पुटपाकीरुतं वज्रीस्वरसेन चिमदयेत् ।

मायनायितयं दत्त्वा मुद्रमानां प्रकल्पयेत् ॥ २२८८ ॥

नागवह्नीद्वयैः सार्धं द्विकालं भक्षयेत्सूर्योः ।

अजीर्णज्वरकासप्रं हिक्काश्यासांद्रापहम् ॥ २२८९ ॥

गुल्मघ्नीहाभ्लपित्तञ्च नलनातचिनाशनम् ।

शूलाभ्मानहरं सद्यो मूत्रहृच्छ्रामयापहम् ॥ २२९० ॥

घातानुलोमनञ्चैव भेदि दीपनपाचनम् ।

तत्तद्रागानुपानेन योजयेद्द्विदिनाग्निपक्वम् ॥

सूर्याहा यटिका होषा निर्मिता प्रक्षणा पुत्रा ॥ २२९१ ॥

खायनघं, ज्वताऽपिकारे ।

भाषा—पीपल, पिपलामूल, शुद्ध वज्राग, शिगरिक और सुहागा समभाग, शुद्धजमालगोटा सयसे चतुर्थांश, हल्दीबगैरसे अमित्वायी किय्याहुआ कल्मीघोरा छवतीबरावर लेकर पुट-पाकेमें निकालेहुए मूत्रबेरघासे ३ भावनाएँ देकर मगपरावर गोलिये बनाकर रखओड़े । इसमेंसे १-१ गोली पानकरसे अथवा तपरोग्रहताशुपानकेसाय गुनहृच्छ्रामदेनेसे अजीर्ण, ज्वर, कास, हिक्का, श्वाय, उदररोग, गुल्म, शीहा, अन्धपित्त, नलनात, मुत्र, आभ्मान, मूत्रहृच्छ्र, पातोदायन, मलविषय इनसबको दूर नष्टकरताहै और दीपन तथा पाचनहै ॥ ५३८ ॥

५३९ सूर्यवातरसः

तुल्योपणैरसामोदताघ्रात्रैः प्रमशो धृतैः ।
सविपारीशैः छतः कल्कस्त्रिगुञ्जः सूर्यवातनुत् ॥ २२९२ ॥
र. (मा), सूर्यवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, ताप्रभम् ३ भा, अन्नकमस्य ४ भा, शुद्धवज्राग ५ भा., मरिच १५ भागलेकर वारीकनूणैर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाकर रसजोड़े । इसमेंसे ३-३ रती समयोचितानुगानेगाथ देनेसे यह सूर्यवात(अर्धांशभेद व सूर्यांशते) को नष्टकरताहै ५३९

५४० सूर्यशेखररसः (विपसिन्दूरम्)

रसो द्वादशरागघाणो गन्धकस्याऽत्र पोडश ।
दिङ्मूलस्य च चत्वारो घृष्टा कृष्यां विनिक्षिपेत् २२९३
द्वात्रिंशद्भृत्तं दद्यात्सस्मिन् मृते विशोधिते ।
मृदा प्रलिप्य तां कृषीं शोषयित्वा खरातपे ॥ २२९४ ॥
धृत्वाऽथ वालुकायत्रे वह्निं पत्रप्रहरावधिम् ।
दत्त्वोत्तार्य स्वयं शीतं सृतं माणिक्यमग्निम् २२९५
सन्निपाते च दातव्यस्त्रिदोशोत्थे च मृतकः ।
पर्यैव गुञ्जिका मात्रा चोत्तमा सन्निपातके ॥ २२९६ ॥
रोगोद्रेकं समीक्ष्याऽथ वर्षयेद्वा विचक्षणः ।
यदि दाहो भवेदेते स्नापयेद्वाचिचिचञ्चरत् ॥
भोजनं वीचितं कुर्यान्मधुरप्रायमेव च ॥ २२९७ ॥
रसवि, र. च., रसायनस, र. का., बाताधिकारे ।

टि०—यद्यत्र विदिरथाने केवल मत्र दखने तत्र मह निक्षिप्तत्रे प्राय विपसिन्दूर सिन्दु मत्सिन्दूर सूर्यशेखरो वा इत्यादि येष नाम स्थापनीयम् ॥

भाषा—शुद्धपारा १२ भाग, गन्धक १६ भा, शुद्धशिखरिका ४ भा., शुद्धवज्राग ३० भागलेकर वारीकनूणैर पारेगन्धककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय ६-७ कपड़मिट्टीदीडुई आतशी शीशीमें भर वालुकायत्रमें रस ६ पहरकी कमरुद अग्नि देकर पकाये । आधवन्दरतेसमय शीशीकालुङ्गवन्दरतेदेवे । स्थान-शीतलदोनेपर माणिक्यके सहस्र यह सिन्दूर निकलेगा इसे शीशीमें रखलेवे । इसमेंसे १-१ रती समयोचितानुगानेकासाथ देनेसे घोरासन्निपातको यह नष्टकरताहै । रोग और रोगीका बला बल देखकर मात्रानो न्यून या अधिक करदेवे । इसकेदेनेसे दाहमात्रम हो तो ठंडेजलसे स्नान करावे । अत्यन्त मूलजगनेपर मधुप्राय भोजन देवे ॥ ५४० ॥

५४१ सूर्यसिद्धरसः

गुह्वरी भृङ्गराजश्च कुमारी कण्टकारिका ।
त्रिफला कारुमाची च कदली चाजिगन्धिका २२९८
वर्गस्यास्य रसैश्चापि वर्णांशुशालीद्रवैः ।
प्रत्येकं मर्दयेद्वैतैः पारदं प्रतिवासरम् ॥ २२९९ ॥
प्रस्थमात्रप्रमाणेन गाढं गाढं निरन्तरम् ।
अनन्तरं सैन्धवेन प्रस्थद्वयमितेन च ॥ २३०० ॥

प्रत्येकं गैरिकं प्रस्थं खटिकां पिष्ट्स्वपिणीम् ।
कन्यकारसंसंयुक्तां रसं तत्र विमर्दयेत् ॥ २३०१ ॥
दिनप्रथमतिशुद्धं नष्टपिष्टञ्च रत्नके ।
तापिकायत्रमारोप्य मुद्गयेद्यं मुसं ततः ॥ २३०२ ॥
प्रयोदशदिनं याचद्बहिः कुर्यान्निरन्तरम् ।
यथादादाय मृतेन्द्रं कर्तव्यं तस्य पूजनम् ॥ २३०३ ॥
गुरूणां महतां पश्चाद्योगिनां क्रोधवर्जितः ।
मद्मातस्यैमुत्सृज्य मानञ्चाहङ्कारितन्था ॥ २३०४ ॥
प्रक्षर्येच्च कर्तव्यमम्लं द्रव्यं विप्रजयेत् ।
दानं दास्या प्रकर्तव्यं वैद्यतोपणमेव च ॥ २३०५ ॥
अर्द्धगुञ्जां रसं दद्यात्सततं क्रमवर्धितम् ।
रक्तिकाननपर्यन्तं दद्याद्वैद्यो विचक्षणः ॥ २३०६ ॥
भक्तदुग्धश्च मुञ्जीत मुद्गदुग्धघटतं घृतम् ।
शर्करामिश्रुखण्डानि पथ्यार्थं तत्र योजयेत् ॥ २३०७ ॥
एकविंशदिनस्यान्ते नयाश्च निपतन्ति च ।
चत्वारिंशदिनेऽतीते त्वेषाः प्रक्षरन्ति च ॥ २३०८ ॥
एवं पष्टिदिने क्रान्ते मला नाशं व्रजन्ति च ।
अशीतिदिवसस्यान्ते तस्य दन्ताः पतन्ति वै २३०९
एवं स्वयं प्रादयमानं रसायनरसेश्वरम् ।
मासत्रये समायाते नूताः केशा न संशयः ॥ २३१० ॥
दृढा दन्ताश्च जायन्ते नवीनाश्च पुनर्नराः ।
पुनर्नयपुर्नूत्या द्वितीयो मीनकेतनः ॥ २३११ ॥
सिद्धमण्डलसिद्धाङ्गो ब्रह्मायुः कालपारगः ।
दृढाङ्गो यलवान्तोम्या हरियोगो हृदैनद्रियः ॥ २३१२ ॥
निराश्रयो महोत्साहो महाशी च मनोहरः ।
घनितानां शतं गच्छेत्पुत्राणां शतमामुयात ॥ २३१३ ॥
कालभ्रमारसङ्काशाः केशाः स्युर्गुच्छरूपिणः ।
विशालबाहुशोभी स्याद् हृदोः स्थलशोभनः २३१४
कपाटप्रतिमं मीढं हृदयं स्त्रीमनोहरम् ।
अत्युन्नतचपुर्गुर्षिर्विशालनयनाम्बुजः ॥ २३१५ ॥
निर्गुण्डकापत्ररसं त्रिकालं वातुपाययेत् ।
औषधस्य क्षणं स्थित्वा काले ताम्बूलचर्चणम् २३१६
कर्षणकुसुमामोदे निर्मले विनिवेशयेत् ।
अनल्पे सुखदे तल्पे निर्मलास्तरणे सुते ॥ २३१७ ॥
गीतसङ्गीतशास्त्रीयं रामायणपरायणः ।
अपथ्यं न च कर्तव्यं पथ्ये स्थेयं सदा बुधैः ॥
अनिष्टां देहिनां शास्त्रे दौर्मनस्यं सुकर्मणि ॥ २३१८ ॥
रसवि, रसायने ।

भाषा—गिलोय, भगटा, वीङ्गवार, मटकटैया, त्रिफला, मकोय, कदलीकन्द, असगन्ध, इटसिट, मुशली इनप्रत्येकके स्वस्रोतेसे १ प्रस्थ पारेको तसखल्वमें जोरसे मर्दनकरे । फिर दो प्रस्थ सैन्धवसे मर्दनकर पारेको स्वच्छवनापर गेरू और खटि-शामिठी १-१ प्रस्थ मिलाय नमसे पीडुवाकिससे ३-३ दिन मर्दनकरे । नष्टपिठी दोनेपर बहुतमजबूत मिठीकेवर्तमें बन्दर

समस्तपर ७-८ वज्ररूपद्रुमिणी चंद्राय अञ्जीतरह सुखनेपर चूल्हेपर रस १३ दिनकी निन्तरआंचेदे १४ वें दिन अग्निदेना बन्दकरदे औरकोयलोपर रहनेदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर ऊपरके-भागमे आयेहुए पारको निकालकर रखछोड़े । मोघ, मद, मात्सर्य, मान, अहङ्कार इनसबको छोड़कर प्रह्वार्यवत लेकर गुह, दूध और योगीका पूजनकर अम्बलवर्गका परित्यागकरता हुआ यथाशक्ति दानकरे और वैद्यको सन्तुष्टकर आधीरतीसि रसकासेवन प्रारम्भकरे । प्रतिदिन आधीआधीरती बड़ाकर ९ रतीपर मात्रा कायमकरे । मूखलानेपर दूध, भात, सुद्वयूप, घी, दादर और ईखका उचितप्रमाणमे सेवनकरे । २१ वें दिन नख, ४० वें दिन केस गिरेने लगेंगे । ६० दिनवेवाद मल नष्टहोंगे । ८० दिनवाद दांत गिरेने । ३ महीने पूरे होनेपर केस और मज्जवृद्धताका प्रादुर्भाव होगा । फिरसे युवावस्थाको प्राप्तहोकर कल्पसदृश होजायगा । अकस्मात् दिव्यविद्याओंकी प्राप्ति होगी और दीर्घायु होगा । इसप्रकार रससेवनकरनेवालेके समस्त अज्ञ मज्जवृत्त, शोभा और बलयुक्त होजातेहैं तथा इन्द्रियोंकीशक्ति बढ़जातीहै । तमामरोगोंसे निम्मुक्तहोताहै । भूख एकदम बढ़जातीहै । बहुतासी त्रिगुणोंकी सम्मोगशक्ति बढ़कर दिव्यपुत्रोंको उत्पन्नकरनेकी शक्तिबढ़तीहै । केसमोंकेसदृश बाले और गुच्छेदारहोजातेहै । विशालगृह, हठोरस्क और वपाटसदृश मज्ज न हृदयवाला होजाताहै । शरीरका वृद्ध बढ़जाताहै और कमलसदृश विशालनेत्रहोजातेहैं । इसमें तीनोंधमय औषधमक्षणके थोड़ीदेरवाद निर्गुणशीकारसपिलावे । कष्ट और सुगन्धयुक्त पान देवे । विशाल और निर्मलवज्रविधिहुई सुख-कारक वायुपर ध्यानकरावे । शास्त्रीयगीत और सङ्गीत सुनावे । रामायणकापाठकरे । इषतेमेवनेमें अपश्य भूलकरभी न करे । शास्त्रमें मनुष्योंके अविश्वास और सुकर्ममें उदासीनताको देख-कर विश्वासदिलानेके लिये यह योग बहागयाहै ॥ ५४१ ॥

५४२ सूर्यावर्तः (प्रथमः)

तत्रापिष्टदिग्धेन लेपयेद्रचिपप्रकम् ।
 नारायसम्पुटे रज्जा शुष्कं चुल्ल्यामधिश्रयेत् ॥२३१९॥
 अग्निः शनिः शनिर्दयस्ततो यामचतुष्टयम् ।
 स्वाज्ञशीतलमुत्तुल्य धमनेषु प्रयोजयेत् ॥ २३२० ॥
 कासे ह्ये तथा श्वासे कण्ठरोगे च हृद्वहे ।
 मन्देऽग्नौ कफसम्भूते धमेधोऽणाम्मुपानतः ॥ २३२१ ॥
 रघायनसं., श्राये ।

टि०—केवलरूपकेन मारितवाद्रविताण्डेनान्तर्भावितः ।

भाषा—दोभाग शुद्धगन्धकको तर्कमे पीसकर एकभाग वारीक तापके प्रयोग लेपदेकर धारावधमृदमे बन्दकर चूल्हेपर रस कम-ट्ट ४ परकी आंचेदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १ मासकी मात्रा यमनकारकयोगोंकेसाथ देकर गरम पानीपिलानेसे बमनहोगी उगने काष्ठ, हाथ, भाग, कण्ठरोग, हृदय, कफमेरुपर मन्दाग्नि देख नष्टहोतेहैं ॥ ५४२ ॥

५४३ सूर्यावर्तः (द्वितीयः)

मृताग्रं माक्षिकञ्चैव हेमकापांसवीजकम् ।
 तद्गुणं मौक्तिकञ्चाथ गुह्वृचीसत्त्वमेव च ॥ २३२२ ॥
 काकविम्ब्युत्थवीजानां चूर्णं गोवीण्युष्पकम् ।
 सवैः समं हिह्लुञ्च जम्बीररसमर्दितम् ॥ २३२३ ॥
 द्राक्षया हिकिकां हन्ति ब्रह्मणीगदनाशनः ।
 सूर्यावर्तरसेनाम देववैद्यविनिर्मितः ॥ २३२४ ॥
 वै. चि. (ल), हिकिकायां ब्रह्मण्याथ ।

भाषा—अन्नक और सोनामाखीभस्म, शुद्धवृत्ते और कपा-सकेबीज, मुनासुहागा, मुकापिठी, गिलोयसस, कौआट्टोंके-बीज, लवङ्ग १-१ भाग, शुद्धशिगरिक सबकीबराबर लेकर वारीक चूर्णकर जम्बीरीकेरसे १-२ दिन मर्दनकर १-१ रतीकी गोलियेवनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से ३ गोलीतक तुलसी-बगैर उचितानुपानकेसाथ देनेसे हिकीकी, ब्रह्मणी और सूर्या-वर्तको यह नष्टकरताहै ॥ ५४३ ॥

५४४ सूर्योदयरसः

सूतश्मामगुणलोहताम्रनलिका माक्षीकतालामृत्तं,
 वेह्लारामट्टीप्यकिशुकफलं कपिलहृकं कुष्ठकम् ।
 तुल्यासौः परिमर्दितं दिनमयो कन्यावरग्निसिद्धिजा-
 भृङ्गादिः सुरपणिंकारादिरक्षकाग्निः समङ्गाम्बुभिः ॥
 सिद्धौ बह्मिमितो जयेत्कृमिच्छन् निम्नाम्बुदीप्यान्विते,
 वेह्लारामट्टयुक्तया हृमिहयः क्षौद्रान्वितो वाऽग्निमुक्तु ।
 ग्रन्थ्युप्रातिविष्याऽऽलुपत्ररसयुग्वाहीकशिष्टव्यम्बुयुक्तु,
 शूलाध्मानवियन्धगुल्मजठरान्सूर्योदयोऽसौ रसः ॥

२., इत्यधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, ताम्र, कङ्कड़, सोना-मारी, हरिताल इनकीमसमें, शुद्धगुणग, विडङ्ग, हींग, अज-वाइन, पलाशपापड़ा, कमीला, कुष्ठ सब समभागका वारीकचूर्ण-कर परिणयककी नीलवर्णकबलीमें मिलाय धीकुंभा, त्रिफला, चिन्तक, ब्रह्मण्डी, अंगार, दाताव, खैर, भाग, मज्जीत इनकेस्वरस अपवा घायोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलिये बना-कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली नीम, सुगन्धवाला और अजवाइन (१) विडङ्ग और भुनीहींग (२) चिन्तक और मधु-सूक्त विडङ्ग, (३) गठिवन, वन, अतोंस और मुक्कणोंकेपत्तों-कास (४) हींग और सहजिनकास (५) इनमेंसे किमी एक अनुपानकेसाथ औचित्यी देखकर देनेसे क्रिमिरोग, घृल, आम्बान, विषन्ध, गुल्म और उदररोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५४४ ॥

५४५ सेतुगन्धरसः

रसदग्दसुताम्रं फेनगन्धेन तुल्यं,
 मुनिदिनमितपुष्टे विधत्तयेन यद्गम् ।
 ज्वरजनितविदाहे दापयेदाद्रिकेण,
 श्रुतजलहिमपाने तत्रयूगेण पथ्यम् ॥ २३२७ ॥

हत्याज्वरातिसारञ्च सर्वरूपं मुद्रारुणम् ।

वाले वृद्धे च तरुणे सेतुवन्धो महारसः ॥ २३२८ ॥

र. बो., ज्वरातिसारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, शिंगरिफ, अफीम और गन्धक, ताप्र-
भस्म सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अदरखेरेसमे ७
दिवतकमर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखओड़े । इन-
मेंसे १-१ गोली अदरखेरेसकेसाथ देनेसे भयङ्करज्वरातिसार
और दाहको यह नष्टकरताहै । इसमें गरमकियाहुआजल ठंडा-
करकेदेना । छाछ और सूंगके यूपकेसाथ पच्यदेना ॥ ५४५ ॥

५४६ सेतुवन्धवटी

म्लेच्छोपणाहिकेनं शालुकं खदिरसंयुक्तम् ।

कपं कपं चूर्णं कृत्वा विमिश्रयेत्सर्वम् ॥ २३२९ ॥

कपं दग्धकपर्दकचूर्णं दत्त्वा विभाव्यञ्च ।

कञ्चदुडुडिमज्जम्भृष्टद्वापत्रजरसेन प्रत्येकम् ॥ २३३० ॥

पञ्चवारं विभाव्याऽथ कारयेद्धटिकां शुभाम् ।

शुक्लामात्रामतीसारे सेतुवन्धं प्रयोजयेत् ॥

नानावर्णमसाध्यञ्च शूलं पित्तं निवर्तयेत् ॥ २३३१ ॥

ना. वि., सन्निप्रतातिसारे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, मरिच, अफीम, कमलकन्द, खेर-
सार और पीलीकौड़ीकीभस्म १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर
मरसा अथवा जलगीपल, अनार, जामुन और सिंघाड़ेके पत्तोंके-
स्वरससे ५-५ बार भावनाएँ देकर १-१ रत्तीकी गोलिये बना-
कर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली मरसाबगैरहके रसकेसाथ अथवा
समयचितानुगानेकेसाथ देनेसे नानातरहका अतिसार, असाध्य-
शूल और पित्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४६ ॥

५४७ सेवन्तीपाकः

सेवन्तीसुमसाहर्षं घृतप्रस्थे विपाचयेत् ।

घृते पक्वीकृते तत्र निक्षिपेदौषधं भिषक् ॥ २३३२ ॥

सितोपलाचतुष्कञ्च चातुर्जातं पलं पलम् ।

मृद्धीकं पट्टपट्टाञ्चैव क्षिप्रका मधु पल्लप्रकम् ॥ २३३३ ॥

धारसत्त्वं तवक्षीरं श्वेतं जीरं पृथक् पृथक् ।

नागं वङ्गं पलाङ्गञ्च सर्वमेकत्र कारयेत् ॥ २३३४ ॥

कर्पूरं बहुमात्रञ्च दत्त्वा स्थाप्यं सुकुम्भके ।

भक्षयेत्कर्मभान्तु प्रातरेव हि पथ्यमुक् ॥ २३३५ ॥

जीर्णज्वरे क्षये कासे अग्निमान्द्ये प्रमेहेके ।

द्विनरात्रिज्वरे चैव शिरोरोगे प्रशस्थते ॥ २३३६ ॥

प्रदं रक्तज्ञानोगान् कुशाशीसि च नाशयेत् ।

नेत्ररोगान्सुदुष्टांश्च तथा सर्वान्मुलेस्थितान् ॥

नाशयेन्नात्र सन्देहो मण्डलस्य च सेवनात् ॥ २३३७ ॥

नि. र., क्षये ।

भाषा—गीले अथवा लालगुलाबके १००० पुण्योंको
१ प्रस्थ गोपूतमें भूतकर ४ प्रस्थ शकरकी ३ तारी बाशनी
बनाकर चातुर्जात १-१ पल, बीजरहितकालीद्राक्ष ६ पल, मधु

८ पल, गिलोयसत्त्व, तीक्षुर अथवा बंशलोचन, सफेदजीरा,
नाग और वनभस्म २-२ कर्प, शुद्धकपूर ३ रत्ती डालकर चिकने-
वर्तन अथवा काचकेपात्रमें रखओड़े । ७ दिन बीतनेपर इधमेंसे
१-१ कर्प प्रातः काल सेवनकरनेसे जीर्णज्वर, क्षय, कास,
मन्दाग्नि, प्रमेह, दिन और रात्रिकाज्वर, शिरोरोग, प्रदर, रक्त-
ज्वरोग, कुष्ठ, अंस, दुग्नेत्ररोग, समस्तमुखरोग इनसबको १
मण्डल (४९दिन) में यह नष्टकरताहै ॥ ५४७ ॥

५४८ सोमनाथिताम्रम् (प्रथमम्)

शुल्वं सूतसमं द्वयोरपि समो गन्धस्तदर्थः पुनः,
स्तालध्यार्द्धशिलायुतो विरचयेत्पिष्टं ततः कज्जलीम् ।
लिथ्वा ताप्रदलानि मार्तिकदृष्टे पात्रे निधायाऽथ तः,
त्पाव्यं सैकतयन्त्रकेऽर्द्धदिवसं शीतं स्वतो निर्हरेत् ॥
तत्कासश्वसनाग्निमान्द्यगुद्गजानेकातिपाण्ड्यामय-
ग्रीहोरः प्रतिरोधकोष्ठमरुतो रक्तं जयेद्योजितम् ।
घृहद्वन्द्वमितं कणामधुयुतं क्षारार्द्रवारपि वा,
युक्तं सर्वकफामयग्रमचिराद्यत्सोभनाथामिधम् ॥

वै. र., नि. र., र. सु., र. च., चि. र. भ., यो. त., टो., र. क.
यो., र. र. स., र. पा., बा., यो. च., शूले, श्वासे वासे च ।

टि०—रसेन्द्रचूडामणौ कज्जलीं ताप्रपत्राणि प्वायिण विनिक्षिपेरिति
विशेष, कज्जल्या ताप्रदलेषुने अथोरुत्तलिष्वे च फलभागे प्रायश
समानवैवास्ति अतस्तत्र खेच्छाचारस्यैव प्राधान्यम् ।

भाषा—शुद्धताविके बारीकपत्र और शुद्धपारा १-१ भाग,
शुद्धगन्धक २ भा, हरिताल १ भा और मैनसिल आधाभाग
लेकर नीलवर्णकजलीकर जमीरीबगैरहके रससे मर्दनकर ताप्र-
पत्रोंपर लेपदेकर मिश्रिकेपात्रमें नीचे ऊपर रख दूसरे पात्रसे
ढककर कपड़मिठीकर बालुकायत्रमें दोषहरकी कड़ी आंचसे
पकाये । स्वात्रशीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे
६-६ रत्ती पीपल और मधु अथवा यवक्षार और अदरखके
रसकेसाथदेनेसे कास, श्वास, मन्दाग्नि, अर्थ, नानातरहकेपाण्डु,
श्लेहा, उर क्षत, मल्लूरविबन्ध, उदररोग, वातरक और कफ
रोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ५४८ ॥

५४९ सोमनाथिताम्रम् (द्वितीयम्)

यलिना पलमात्रेण तद्रव्यरजसा द्वितैः ।

विपतिन्दुकसाम्येन घत्सनाभपद्मसुतैः ॥ २३४० ॥

कालिकारिशिलाव्योपतालपूगकरञ्जकैः ।

कृत्वा चूर्णं हि जम्बीरद्वयेण विद्रवीकृतम् ॥ २३४१ ॥

तत्सर्वं खल्वके भाण्डे विनिःक्षिप्य ततःपरम् ।

कृतकण्टकवेध्यानि पलताप्रदलान्यथ ॥

लिप्तपादांशसूतानि तस्मिन्कल्के निरुहयेत् ॥ २३४२ ॥

पतत्सिद्धमुखगातं विनिहतं थ्रीसोमदेवोदितं,

शुक्लायुगममितं कणाज्यसहितं सत्वपथ्यसंसेवितम् ।

शुद्धमग्रीहाराकृद्विबन्धजठरं शलाग्निमान्द्यामयं,

वातरक्षेभ्यसद्योपपाण्डुनित्यं जर्त्वादिक्तं नाशयेत् ।

पथ्यं रोगोचितं देयं रसाघातं वियर्जयेत् ।
एतत्सास्पर्श्याहृतं येन तस्य मृत्युर्न विद्यते ॥ २३४४ ॥
र. चू., श्लथिकारैः ।

भाषा—शुद्ध गन्धक और कुचिला १-१ पल, बछनाग, सेंधानमक, करिहारी, मैनसिल, निकट्ट, हरिताल, सुपारी, और बरंज २-२ पल लेकर बारीकचूर्णकर जमीरीकेरससे पीसकर कल्पबनावे । फिर विशेषशुद्धताप्राप्ते कण्टकबेधी पत्र १ पल और शुद्धपारा १ कर्पं खरलेमें डालकर घोंटे । समस्तपारा पत्रोंपर चढ़ जानेपर पूर्वकल्पके भीतर पत्रोंकी तह लगाकर धरावसम्युद्धमें बन्द कर वषट्कमिठीकर लवणयन्त्रमें ४ दिनकी कड़ी आचदेवे । स्वाङ्ग-शीतलहोनेपर निकालकर अच्छीतरह घोटकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती पीपल और घोबेसाय सेवनकरनेसे गुल्म, गीहा, मलविवन्ध, उदररोग, शूल, मन्दाग्नि, वातश्लेष्मरोग, श्लोष, पाण्डु, ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । इसमें पथ्य तत्तद्रोगोचित देवे और रखको मारनेवाली चीजोंका परित्यागकरे । इसमें हमेशा सेवनकरनेवालेका दीर्घायु होताहै ॥ ५४५ ॥

५५० सोमनाथरसः (प्रथमः)

कर्पं जारितलौहञ्च तदूर्ध्वं रसगन्धकम् ।
पलापत्रं निद्रायुग्मं जम्बूवीरणगोधुरम् ॥ २३४५ ॥
विडङ्गं जीरकं पाठा धात्रीदाडिमदङ्गणम् ।
चन्दनं गुग्गुलुः, लोधिं शालार्जुनरसाञ्जनम् ॥ २३४६ ॥
छागीतुग्धेन घटिकां कारयेद्दशरत्निकाम् ।
निर्मितां नित्यनाथेन सोमनाथरसस्त्वयम् ॥ २३४७ ॥
सोमरोगं घृहृविधं प्रदरं हन्ति दुर्जयम् ।
योनिशूलं मेढुशूलं सर्वजं चिरकालजम् ।
घृहृमूर्धं विशेषेण दुर्जयंहन्त्यसंशयम् ॥ २३४८ ॥

र. स., र सु., र. चं, र. चि, सोमरोगे ।

भाषा—लोहभस्म १ कर्पं, शुद्ध पारा और गन्धक, श्लायकी, पात्रज, हल्दी, दाखहल्दी, जामुन, खस, मोखल, विडङ्ग, जीरा, पाठा, आरले, अनारदाना, मुनासुताना, सपेदचन्दन, शुद्धगुगल, लोष, ससुआ, अजुनरीछाल और रसौत ८-८ मारो लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णमज्जलीमें मिलाय बकरीकेदूधमें १-० दिन घोटकर १०-१० रत्तीकी मोलियें बना कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचिततापाननेसाथले नेसे दुःसाह सोमरोग, प्रदर, योनि और मेढुशूल, त्रिदोषज और पुतानाशूल, दुर्जयबहुमूत्र, इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५० ॥

५५१ सोमनाथरसः (द्वितीयः)

हिहूलसम्भनं सूतं पाण्डिधारसामर्दितम् ।
रण्डान्नोपितगन्धञ्च तेनैव फज्जलीकृतम् ॥ २३४९ ॥
तदयोरद्विगुणं लौहिं कन्यारसयिमर्दितम् ।
अन्नकं यद्गन्धं रौप्यं खपरं माक्षिन्तथा ॥ २३५० ॥
सुवर्णञ्च हारं सव्यं प्रत्येयञ्च रसादकम् ।
तत्सप्तं कन्यकाप्रायं मर्दयेद्भयपयस्ततः ॥ २३५१ ॥

भेकपर्णीरसेनैव गुञ्जाद्वयवर्तौ ततः ।
मधुना भक्षयेच्चापि सोमरोगनिवृत्तये ॥ २३५२ ॥
प्रमेहाग्निशतिं हन्ति बहुमूत्रञ्च सोमकम् ।
भूजातिसारकृच्छ्रञ्च भूजाघातं सुदारणम् ॥ २३५३ ॥
र. स., र सु., घ, र. चि, भै. र., सोमरोगे ।

भाषा—द्विगुणिकसे निकालेहुएपारोको २-३ दिन निसोत-केरससे मर्दनकर मट्टपिठी बनाय ऊर्ध्वपातितकरले । गन्धकमें चौगुना बासलेखसेकेरन्द अभावमें केलेनेकन्दवास देकर चलाताहुआ पकावे । रससूखजानेपर गन्धकको धोकर साफकरले । फिर समभाग पारो और गन्धककी नीलवर्णकज्वलीकर दोनोंसे दूनी लोहभस्म मिलाकर १-२ दिन धोड़वारकेरससे मर्दनकरे । इसकेबाद अन्नर, बज्ज, रजत, खपरिया, सोनामाखी और सुवर्ण इनकीमसमें पारोसे आधेआधेप्रमाणमें मिलानर धोड़वार और मण्डकपर्णीके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी मोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाथदेनेसे २० प्रकारकेप्रमेह, बहुमूत्र, सोम, भूजातिसार, मूत्रकृच्छ्र, भयङ्करभूजाघात इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५१ ॥

५५२ सोमनाथरसः (तृतीयः)

रङ्गच्छदेन तनुना परिवेष्टय मुद्रां,
ताम्रस्य सावयवमार्जवकृत्कमध्ये ।
सम्यक् पुटेदतिपटुः सुरभेः शकृद्भिः,
स्यात्सोमनाथरस एष समीरहतां ॥ २३५४ ॥
सि. भे. म, शूल ।

भाषा—शुद्धतावेके पीसेपर बारीक रांगेकेपत्रेकोलपेट भंगरेके पत्राङ्गके १६ गुने कलकमें रख गोलाबनाय शरावसम्युद्धमें बन्दकर ३-४ कणइमिठीदेकर सूखनेपर गायकेकण्डोंकी गजपुदरी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर पैसा फूलाहुआ मिलेगा उसे पीसकर रखछोड़े । इसमेंसे १-५ रत्ती समय अथवा रोगोचिततापाननेसाथ देनेसे यह पाथेयशूलवैरह तमामवासुरोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५५२ ॥

५५३ सोमनाथरसः (चतुर्थः)

पारदगन्धककुन्दशीशिलेसातुल्यमागपरिमृदिताः ।
लोहवरपात्रनिहितास्येता ह्यपदि ततो भाव्याः ॥ २३५५ ॥
स्तुग्जातासितभूतकः नायसिकास्फोटिकादलस्वरसैः ।
दिशुदुलैः सोमतिकतासहितैः क्रमदाः स्थिता रीद्रे २३५६ ॥
तं शुष्कं सिद्धरसं गुञ्जापृद्धथापुष्टप्रिमाणम् ।
ताम्बूलपत्रसहितं पूर्वादितं पथ्यं युञ्ज्यात् ॥ २३५७ ॥
शिवत्रादुभ्यरिपिटिकानुसिधृतित्वहस्तिचर्मणि ।
श्रीसोमनाथगदितं रसायनं दुर्लभं हन्यात् ॥ २३५८ ॥
र. मू, उष्टे ।

भाषा—शुद्ध भारा, गन्धक, मैनसिल और वाडुची यमभाग लेकर वाडुचीका बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकज्वरीमें मिलाय लोरेकरलेमें १-२ पहर मर्दनकर पथ्यकेवर्तनेमें रस मूत्र, कारापट्टा, मर्वाय, विरगोटन, सदिबन, वाडुची इनकेपत

तथा कुट्टकीके स्वरसोसे तीक्ष्णवृषभे १-१ भावना देकर १-१ रत्तीकी गोलिये वनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानमें रखकर देवे और प्रतिदिन १-१ रत्ती बडाकर ८ रत्तीपर मात्रा कायमकरे । कुशोक्तगण्यका सेवनकरनेसे श्वित, उदुम्बर, पिडिका, मुनवरी, सङ्ग, चर्मदल इनसबको यह नष्टकरताई ॥ ५५३ ॥

५५४ सोमनाथरसः (पञ्चमः)

शुद्धसूतकूपलं पलन्तथा गन्धरुञ्ज परिमर्दयेद्विप्रकम् ।
मर्दकेन च सुलोहजेन तं स्वल्पशोषमघलोन्प कज्जलम् ।
पादहोनपलमग्रकं क्षिपेन्मर्दयेदथ च यामसम्मितम् ।
विश्वचूर्णमिह निक्षिपेद्बृहः सिद्धमित्यमहिपत्रवेष्टितम् ।
रक्तिकाप्रभृतिमापकं यथा दीयते च फलवर्गसंयुतम् ।
व्योपमुस्तखदिरानुपानतः पथ्यमत्र यवशालिजं भवेत् ।
अम्लमद्यतिलमैथुनानि वै

मानवो मलयुतानि नो भजेत् ।
श्विञ्चं मुक्त्वा हन्ति कुग्रानि पुंसां
सर्वोद्भूतान्युग्ररूपाणि मासात् ॥

पणमासेन प्राप्तपूयानि जित्वा
धत्ते कार्मिं पूर्णचन्द्रोपमानाम् ॥ २३६२ ॥

र. गृ., कुष्ठे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धरु १-१ पललेकर नीलवर्ण-कमलीकर ३-३ कर्ष अथरुमसम और सौंटाचूर्ण मिलाय एक-पहर मर्दनकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रखकर खिलावे और क्रमसे मात्राबडाकर १ मासपर नियतकर । त्रिफला, त्रिरट्ट, नागरमोथा और शैरसारकाकाय ऊपरसे पिलावे । जब, पुराने-सफेदचावल पथ्यमें देवे । लटाई, मद्य, तिल, मैथुन, मलयुक-पद्मथे इनका परित्याग करनेसे सफेदकुष्ठोंको छोड़कर पूर्णरूप समस्तकुष्ठोंको यह एकमहीनेमें नष्टकरताई । पूयुककुष्ठोंको ६ महीनेमें मिटारन पूर्णचन्द्रकी तरह शरीरकीकान्तिको बढताई ॥

५५५ सोमपाणिरसः

सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेद्विप्रकद्रवैः ।
मापेकं सूततीक्ष्णं स्यान्सूतशुल्यञ्च माश्लिक्नुम् ॥ २३६३ ॥
मापेकैकञ्च सम्मिथ्य पूर्वसूतेऽथ मर्दयेत् ।
धनूरत्रिफलाकन्यावृद्धदायात्रिकद्रवैः ॥ २३६४ ॥
कोशाश्रावकस्य मण्डूक्यया निर्गुण्ड्या भृङ्गचिकेकः ।
वयःस्थपिचुवातारिद्राकाशानन्द्वेरपि ॥ २३६५ ॥
प्रतिद्वयं पलेकैकं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ।
रसांशं च्यूपणं क्षित्वा चणमाना यदी कृता ॥ २३६६ ॥
सम्मिथ्य सन्निपातार्तं दापयेज्जीरकद्रवैः ।
कपायं पञ्चमूलानामनुपानं प्रदास्यते ॥ २३६७ ॥
दस्यञ्चं दापयेत्पथ्यं लुपातं शीतलं जलम् ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सोमपाणी रमेथ्वरः ॥ २३६८ ॥
रषधि, र सु, सू प्र, नि, र, र को, र का., सन्निपातं ।

दि०—दापयदीपिपाया पाणिपुट इति नाम । र अ, र वा,

स्तयो पावटरस इति नाम । योगमहार्णवे पालटान्ना “सूतनिष्कं गन्धनिष्कं मर्दयेद्विप्रकद्रवैः । मापेकं सूततीक्ष्णं सूतशुल्यञ्च माश्लिक्नुम् ॥ मापेकैकं विनिक्षिप्य पूर्वसूतेन मर्दयेत् । धनूरत्रिफलाद्यैः सुता कुट्टनगैरे । जादीकोशासुताद्यैः पंशेथापि बुद्धिमत् ॥ प्रतिद्वयं पलेकैकं दत्त्वा खल्वे विमर्दयेत् ॥ रसांशं च्यूपणं मोचरस क्षित्वा यदीस्तनः । कुशाश्रावकमात्रा वै तस्तिष्ठो जीरकाद्रकं ॥ दापयेत्समूलैः पयैर्वाऽऽनुपानम् ॥ चक्रादिनागं सुवल्दीयोत्पथ्यमहीनगैरे ॥ दस्यञ्चं दापयेत्पथ्यं लुपातं शीतलं जलम् ॥ सन्निपातं निहन्त्याशु रमोऽयं पालटानिभ ॥ ” इति योगो निहितोऽस्ति । अत्र मूलद्रव्येषु तात्क प्रशेषं च मोचरस विशेषतया निक्षिप्य विशेष कुतोऽरितं परन्तव्यं मूल पूर्वैरसं प्लेति शुभोभिर्हंषाकलनीयम् ।

भाषा—४-४ मासे शुद्धपारे और गन्धकरी नीलवर्णकमली कर चित्रकेस्वरससे १-२ पहर मर्दनकर पोलाद, तावा और सोनमाखी १-१ मासा मिलाकर धनूरा, त्रिफला, धीकुला, विधारा, अदरक, जगलीआम, ब्राह्मी, समाद, भगरा, चित्रक, हरे, नीम, एण्ड और भागके यथासम्भ १-१ पल स्वरस अथवा कायोसे मर्दनकर सुताकर छात्राभाग त्रिकटुकावृणं मिलाय चनेप्रमाणगोलिये वनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली जीरके स्वरस अथवा कायोसे मिलाकरदेवे और ऊपरसे पथ्यमूलका-काथदेवे तो यह सन्निपातको नष्टकरताई । अत्यन्तभूखलगनेपर दहीभातदेवे और प्यासलगनेपर छात्रजलदेवे ॥ ५५५ ॥

५५६ सोमवाणरसः

हिङ्गुलं मरिचमारिचानां नागधङ्गमलिजं ज्वलनागलम् ।
पञ्चपित्तगरलं तरलं तलुष्पयुक्तमपि मर्दये गाढम् ॥
तत्समानमखिलं घनवारा भावितं घनमदेन मदेन ।
भावितं तदनुपानभेदतत्सन्निपातसततादिनाशनम् ॥
दो, ज्वराऽधिहारः ।

भाषा—शुद्धमरिचक, मरिच, शीतञ्जीनी, नागकेशर, नाग और वज्रमस, भाग, शुद्धगन्धक और हरिताल समभाग-लेकर घारीकनूणकर पाचोपित्तों और संपिपयसे १-१ भावना देकर एकभाग कधीसमसम मिलाय नागरमोथा, कपूर, कन्तूरी और मार्जारमदकी १-१ भावना देकर आपोआपी रत्तीरी गोलिये वनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समसोपित्तानु-पानकेसाथदेनेसे सन्निपात और सततादिवमस्तन्वरोसे यह नष्ट-करताई ॥ ५५६ ॥

५५७ सोमानलरसः (प्रथमः)

गोमूत्रे पांक्तुर्चीवीजं त्रिसहार्हं विभावयेत् ।
त्वग्ज्वलं शोषितं चूर्णं तुल्यांशां चाममया तथा ॥ २३७० ॥
ततः खादिरवीजांस्त्यक्तपापे मर्दयेत्क्षणम् ।
कङ्कष्टं सूतलोहञ्च तुल्यांशं मधुमिधितम् ॥
कर्पूरं सङ्कुष्ठार्तः खादित्सोमानलो हयम् ॥ २३७२ ॥
र. वा, कुशप्रधिहारः ।

भाषा—प्रतिदिन ताजे गोमूत्रमे २१ दिनतक वाटपीछो भिगोव । श्वशी समस्तत्रिया मोनमनेकर । श्वशी बराबर हरे मिलाय खादिरवेचीजाकेजापमे मर्दनकर रेवनगोनी और लोह,

भस्म १-१ भाग मिलाकर मधुकेसाय १-१ तोलेकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाय लेनेसे सबप्रकारकेकुष्ठ नष्टहोतेहैं ॥ ५५७ ॥

५५८ सोमानलरसः (द्वितीयः)

विशुद्धः पारदो ग्राहो हेमगन्धकजारितः ।
हेमभस्मबलिभ्याञ्च तुल्याभ्यां सह पर्ययीम् ॥२३७३॥
कृत्वा तत्र मृतं सूतं तुल्यं निक्षिप्य मर्दयेत् ।
त्रिफलाव्योपमुस्ताग्निभृङ्गनीरैःपुथक्कृमात् ॥२३७४॥
ततः सञ्चयं मतिमान् रोगदोषानुसारतः ।
सर्वेषु वातरोगेषु ग्रहणैर्गुल्मपाण्डुषु ॥ २३७५ ॥

र. क. यो., वा., वातरोगे ।

भाषा—विशुद्ध और युष्कृतगोरेम यथाशक्त्य सुवर्णवीज और गन्धकरो जारणकर सुवर्णभस्म और शुद्धगन्धक तीनोंसम भागकी नीलवर्णकजलीकर पर्ययीबनाया बराबरकी पारदभस्म मिलाय त्रिफला, त्रिकुट्ट, नागरमोया, चित्रक और भंगेके-स्वरसोसे क्रमशः १-१ भागना देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानके-साथदेनेसे समस्तमातुरोग, ग्रहणी, गुल्म और पाण्डुको यह नष्टकरताहै ॥ ५५८ ॥

५५९ सोमेश्वररसः (प्रथमः)

शालाजुनं लोध्रकञ्च कदम्बागुरुचन्दनम् ।
अग्निमन्यो निशायुग्मं धार्वादाडिमगोक्षुरम् ॥२३७६॥
जम्बूवृारणमूलञ्च भागमेपां पलाङ्ककम् ।
रसगन्धकधान्याद्य्दमेलोपात्रं तथान्नकम् ॥ २३७७ ॥
लौहं रसाञ्जनं पाठा चिडङ्गं टङ्कजीरकम् ।
प्रत्येकं पलिकं भागं पलाङ्कं गुग्गुलीरपि ॥ २३७८ ॥
घृतेन घटिकां कृत्वा स्वादेतगोडशारक्तिकाम् ।
गहनानन्दनायेन रसो यत्नेन निर्मितः ॥ २३७९ ॥
सोमेश्वरो महातेजाः सोमरोगं निहन्त्यलम् ।
एकजं हृद्भ्रजञ्चैव सन्निपातसमुद्भवम् ॥ २३८० ॥
सूत्राघातं सूत्रकृच्छ्रे कामलाञ्च हृलीमकम् ।
भगन्दरोपद्रवो च धिविधान्याडकान्नपानम् ॥
विस्फोटावुदकण्डूश्च सर्वमेहं विनाशयेत् ॥ २३८१ ॥

र. सं., र. वि., घ., र. गु., र. र., भै. र., सोमरोगे ।

भाषा—सपुत्रा, अजुन, लोप, कदम्ब, अगर, सफेद-चन्दन, अण्ठी, हन्दी, दाहहन्दी, भांगले, अनारदाना, गोसूत, जामुन, मसहीजड २-२ कपे, शुद्ध पारा और गन्धक, पनियां, नागरमोया, इलायची, पत्र, अग्रक और लोहभस्म, रशीत, पाठा, चिडङ्ग, सुहागा और जीरा १-१ पल, शुद्धगुल २ कपे लेकर सबबाथरीकचूनेंघर धातुभोकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय धीमे घोटकर २-२ मागेकी मोलियें बनाकर रखाडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अपवा रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे एहज, हृद्भ्रज और मतिपातत्र सोमरोग, सूत्राघात, सूत्रकृच्छ्रे, कामला,

हलीमक, भगन्दर, उपद्रव, पीडादेनेवालेज्वर, विस्फोट, अजुद-खान, प्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५५९ ॥

५६० सोमेश्वररसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं मृतञ्चात्रं गन्धकं मर्दयेत्समम् ।
दिनं निर्गुण्डिकाद्रात्रै रूढाहर्भुधरे पचेत् ॥ २३८२ ॥
उद्धृत्य वाकुचीतैले वाकुच्या वा कपायतः ।
दिनेकं भावयेत्त्रयं निष्कमात्रञ्च भक्षयेत् ॥ २३८३ ॥
वाकुचीं काकमाचीञ्च त्रिफलां चूर्णयेत्समाम् ।
मध्याज्यैः कर्णमात्रञ्च स्वनुपानमिदं लिहेत् ॥
कापालं विषमं कुण्डं हन्ति सोमेश्वरो रसः ॥२३८४॥
र. सु., वै. वि., र. क. ल., चि. क., र. को., व. रा., र. का., कुश्राधिकारे ।

टि०—चिकित्साक्रमवत्पत्न्यर्त्वा तात्र विरोपेण दृश्यते तथा च निर्गुण्ड्या द्रावे सप्तदिवसपर्यन्तं मर्दनं विहितमिति विशेषः ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नभस्म समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर संभालके रससे एकदिन मर्दनकर गोलाबनाय सूययत्रमें एकदिनमी अग्निदे । स्वाह्मदीतलदोनेपर निकालकर वाकुचीकेतैल अथवा वायसे एकदिनमर्दनकर ४-४ मासेकी-गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली वाकुची, मकोय और त्रिफला समभागके १ कपचूर्णकेसाय मधु और धीमे मिलाकर लेनेसे कपाल और विषमकुष्ठको यह नष्टकरताहै ५६०

५६१ सौगतवटी (सौरतवटी)

पारदगन्धकचम्पककेसरसुरसकुसुमकरहाटाः ।
अजमोदाशुधिदोषी जातीपत्रञ्च जातिकफलम् २३८५
प्रत्येकं भागेकं भागद्वितयञ्च शुद्धमहिफेनम् ।
वनयद्रसदशगुटिकाः कार्या मधुनाऽप्य भक्षयेदेकाम्
यामेऽतीते ललनासविधे स्थित्या यवानिकाकार्यम् ।
तेलाद्रै भुञ्जीयादनुपानं चेतदेतस्याः ॥ २३८७ ॥
लिङ्गं कठिनतरं स्याद्दीर्यस्तम्भं भवेधामम् ।
एषा सौगतगुटिका सत्यं सत्यञ्च शुक्ररोधकरो २३८८
र. यो. त., र. की., घ., र. गु., यो. त., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, नागचम्पाकेरूली केसर, तुलसीकेतूल, अहलधरा, अजमोद, समुद्रशोष, जाविनी, जाय-फल १-१ भाग, शुद्ध अफीम दो भागलेकर घनहा थारीक-चूर्णकर मधुकेसाय जत्रलीथेरनसार गोलियें बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली साकर एषहरवाद रीकेगावाहरकर १ कपे अजरादनको ठेलमें मिगोकर गावे । इनमेंसे ध्वज एकदमकठिन-होगा और १ पदर दीर्यकालम्भन होगा ॥ ५६१ ॥

५६२ सौभाग्यवटी

सौभाग्याऽमृतनीरपञ्चलरजणयोयाऽभयाऽश्लामलाः,
निश्चन्द्राप्रकःशुद्धगन्धकरसानेकीट्टान्भावायेत् ।
निर्गुण्डीयुगभृङ्गाजकचूपाऽपामागंपेन्द्रोहस-
त्प्रत्येकस्वरमेन सिसृगुटिका हन्ति त्रिदोषोदयम् ॥

येषां शीतमतीव देहमखिलं स्वेदद्रवाद्रोहितं
निद्रा घोषतरा समस्तकरणव्यामोहमुग्धं मनः ।
शूलध्वासवलासकाससहितं मूर्च्छांऽरुचीं तृड्ज्वरं,
तेषां वै परिहृत्य मृत्युवदनाल्पत्यानयेन्नीचनम् ३२९०
रक्तिकापञ्चकं देयं तरुणस्य शिशोः पुनः ।
रक्तिकाघृतमध्याद्यैरनुपातैः सुखावहैः ॥ २३९१ ॥

र. सं., र. चं., र. मु., भै. र., र. क., घ, ज्वराधिकार । धन्व-
न्तरो सौभाग्यचिन्तामणीति नाम । र. म. मा., टो., ना. वि.,
एउ लीलाविलास इति नाम ।

भाषा—युनाहृदागा, शुद्धबलनाग, जीरा, पाचौनमरु,
त्रिकटु, हरे, बहेडा, आवला, निधन्व अन्नरामम, शुद्ध गन्धक
और पाटा समभागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकम-
लीमें मिलाय दोनोंनिर्गुण्डी, भंगरा, अहसा और अपामार्गके
स्वरसोमें १-१ दिन मर्दनकर ५-५ रत्तीकी गोलियें बनाकर
रखाछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगोचित मधु-
धुवप्रयुति अनुपातोंकेसाथ देनेसे पूर्णरूपप्रतिपात, शूल, धाव,
कफ, कास, मूर्च्छा, अरुचि, तृणा और ज्वरको यह नष्टकरताहै ।
गर्हहृत्तेना पीछे आतीहै । बचेको दोरतीकी मात्रादेना ५६२

५६३ सौभाग्यशुष्ठीपाकः (प्रथमः)

त्रिकटु त्रिफला भृङ्गजीरकद्वयधान्यरुम् ।
त्रिफलाजमोदे लौहाभ्रं श्टङ्गी कटुफलमुस्तकम् ॥२३९२॥
पला जातिफलं मांसी पत्रं तालीसकेशरम् ।
गन्धमाता शटी यष्टी लवङ्गं रक्तचन्दनम् ॥ २३९३ ॥
पतानि सप्तभागानि शुष्ठीचूर्णन्तु तत्समम् ।
सिता डिगुणित तत्र गन्धं क्षीरं चतुर्गुणम् ॥२३९४॥
पक्त्वा कर्पप्रमाणन्तु दुग्धेनापि जलेन वा ।
अम्लपित्तं निहन्त्येतद्रोचकनिषूदनम् ॥ २३९५ ॥
शूलहृद्रोगशामनं कण्ठदाहं नियच्छति ।
हृदाहश्च शिरःशूलं मन्दाभ्रिन्वं विनाशयेत् ॥ २३९६ ॥
हृद्यशूलं पार्थक्यक्षिप्तं घस्तिशूलं शुदे रजम् ।
यलपुष्टिकरञ्चैव यशोरक्षणमुत्तमम् ॥ २३९७ ॥
विशेषादम्लपित्तञ्च सूत्रकृच्छ्रं ज्वरं ध्रमम् ।
निहन्ति नात्र सन्देहो भास्करस्तिमिरं यथा ॥२३९८॥
शे र, घ., अम्लपित्त ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, भंगरा, दोनोंजीरे, धनिया, कुट,
अजमोद, लोह और अन्नरामम, बाकड़ासींगी, कायफल, नाप,
रमोया, इलायची, जायफल, अजामानी, पत्रत्र, तालीसपत्र,
केशर, कपूरकाचरी, कपूर, मुब्दरी, लौंग, लालचन्दन, येमव
सप्तभाग, सौंठ सरहोबदार, धार सबसे दूनी, गायदादप
सबसे चौथुना लेहर औषधियोंका बारीकचूर्णकर सषष्ठे इच्छे
मिलाय भन्वभ्रावसे पचावे । पाश्चैयारदोनेपर उतारकर रखले ।
इसमेंसे १-१ तोला दूध अथवा जलकेसाथ खेनेसे अम्लपित्त,
अदधि, शूल, हृदय, कण्ठ और हृद्यहादह, शिरकाहं, मन्दाभि,

हृदय, पार्थ, कुक्षि और वस्तिकाशूल, गुदाकीपीडा, सूत्रकृच्छ्र,
ज्वर और ध्रमको यह नष्टकरताहै । बल और पुष्टिको देताहै ।
सासकर अम्लपित्तको नष्टकरताहै ॥ ५६३ ॥

५६४ सौभाग्यशुष्ठीपाकः (वृहत्)

नागरं खण्डशः कृत्वा प्रस्थमात्रं भिषग्वरः ।
अजादुग्धाढकद्वये विपचेनमन्दयहिना ॥ २३९९ ॥
घनीभूते तु पयसि शुष्ठीं तस्मात्समुद्धरेत् ।
अतिसूक्ष्माञ्च निष्पिष्य शोषयेदातपे द्दितम् ॥२४००॥
घृतमानीं समावाप्य तदुग्धन्तु पुनः पचेत् ।
यावत्पिण्डत्वमायाति ततस्तन च मिश्रयेत् ॥२४०१॥
चातुर्जातं तुगां पेलुं धान्यं च जीरकद्वयम् ।
मिश्रिमाकल्लं कृष्टं लवङ्गञ्च शतावरीम् ॥ २४०२ ॥
तालमूलीं त्रिकटुकं कपिकच्छुञ्च पटुकटु ।
जातीफलं जातिकोपं श्टङ्गादं बृहदायकम् ॥२४०३॥
त्रिवृत्तं पत्रवीजञ्च त्रिफलाञ्च यलात्रयम् ।
जलं सेव्यं वाजिगन्धा चन्दनागहकारवीः ॥ २४०४ ॥
कङ्गोलमजगन्धाश्च द्राक्षांसाशोऽचारजम् ।
अजमोदाञ्च चातमं नारिकेलगतं तथा ॥ २४०५ ॥
कर्शूरमम्रकं लोहं वज्रं ताम्रं शिलाजतु ।
स्वर्णमाशिकमप्येतत्प्रत्येकं कार्यसम्मितम् ॥ २४०६ ॥
चूर्णीकृत्य क्षिपेत्तत्र पाणिभ्यां मर्दयेद् हृदम् ।
ततः खण्डतुलां पक्त्वा तथा तद्यन्त्रिकां चरेत् २४०७
खण्डनागरकं नासा भेषज्यमिदमुत्तमम् ।
यथाबलमिदं सादेव्यातर्नक्तञ्च भेषजम् ॥ २४०८ ॥
खीणमतिहितं नाऽत्र पथ्यापथ्यविचारणा ।
शयं पाण्डो ज्वरे कासे श्वासे मन्दानले तथा २४०९.
सङ्गहण्यां रक्तगुल्मे प्रद्रे सोमरोगके ।
रक्तपित्ते चाम्लपित्ते सर्वयातामयेषु च ॥ २४१० ॥
पित्तरोगेषु सर्वेषु यातपित्तगदेषु च ।
धातुरोगेषु प्रमेहे च रजोदोषे स्वरक्षये ॥ २४११ ॥
दुग्धक्षये सूयरोगे कामलायां गलप्रहे ।
सूतिकापयन्यायां सत्यमेतन्न संशयः ॥
पया सौभाग्यदा शुष्ठीं खीणां पुत्रमदात्तमा ॥२४१२॥
२ यो. त, रसायनं, टो, यो. र, यो म., वि. र. म,
पा. व, खीरोगेषु ।

टि०—योगमहाशेने कथंभिनमित्यत्र एवमेव पन्थमिनमिति पाठ ।
पाठान्तव्याज "कोतान चोरातीर्थ मन्त्रां भोचकनना" इत्यधिक ।

भाषा—एकप्रस्थ सौंठके छोटछोट टुकड़ेपर दो आठ
बारीके दूधमें मन्दभ्रावसे पचावे । दूध गारादोनेपर सौंठके-
दुद्धोंको निकल करनोकेसरदोनीसपर कड़ीभूमें गुदाकर
करदजानकर ८ पल घीमें मिलाय उतीरूमें ढालकर मात्रा
बनावे । फिर इसमें पाण्डांत, बंदलोचन, विटङ्ग, पनियां,
दोनोंजीरे, सौंठ, अम्लहरा, कुट, लौंग, धारार, कर्तुमुगनी,
त्रिकटु, केराचोदीमवा, पदम, जायफल, जादिया, विपादे,

विधारेकौजड़, निसोत, कमलगडा, जिफला, बला, नागनाला, अतिरला, दोनोरुम, असगन्ध, सफेदचन्दन, अगर, कारवी, शीतलचीनी, बरदंशेरीज, कालीद्राक्ष, अररोट, चिरोजी, अजमोद, बादामरी मींगी, नारियल, शुद्धकपूर, अन्नक, लोह, वज्र, ताम्र, सोनामाखी इनकीभस्मे और शिलाजीत १-१ कर्प लेकर बारीकबूँदकर मावेमें डालकर हाथसे अच्छीतरह मसलनर मिलादे । फिर एरुला सांडनी कड़ीचाशनी बनाय सबचीजोंको मिलाकर लठ्ठुनाकर रखओड़े । इनमेंसे अमिडलदेपकर उचित-मात्रा कायमकरे । स्त्रियोंकेलिये यह विशेषहितकारकहै । पच्यपच्यना विशेष विचार नहींहै । इसके सेवनेसे क्षय, पाण्डु, ज्वर, काम, श्वास, मन्दाग्नि, सङ्घट्टी, रक्तगुल्म, प्रदर, सोम, रक्तपित्त, अम्लपित्त, समस्वाभाविकार, पित्तारोग, वातपित्तारोग, धातुशोष, प्रमेह, रजोदोष, स्वरभङ्ग, दुग्धपच्य, मूत्ररोग, कामला, गल्पप्रद, सूचितारोग इनसबको दूरकर उत्तमपुत्ररौ देताहै ॥ ५६४ ॥

५६५ संशोपणरसः

वृहतीपाटलामूलं वज्रदण्डी च चित्रकम् ।
 मृदन्ती श्वेतगन्धारी फञ्जीमज्जिफिकाऽभयाः ॥ २४२३ ॥
 काकमाची द्विजिह्वा च गन्धर्वाहा द्विकण्टिका ।
 धानीद्वयं चित्रकञ्च श्वेतहिङ्गु सुस्तुमी ॥ २४२४ ॥
 क्षारद्वयं पीपलरञ्च व्योपञ्च तुम्बुरुणि च ।
 तदेकैतत्सुहृदा च द्रव्याण्येतानि योजयेत् ॥ २४२५ ॥
 श्ल्या चूर्णं तदेकांशं माक्षिकं रोहमज्जित च ।
 मृतभस्माभृतञ्चूर्णमेकैकश्ल्याऽखिलन्तथा ॥ २४२६ ॥
 मापमानप्रमाणञ्च योजयेत्तु शलो भिपक्व ।
 संशोपणरसो नाम्ना प्रसिद्धः सर्वरोगहा ॥
 मेरुमप्यणुमात्रञ्च कुरते शङ्करोदितः ॥ २४२७ ॥
 र की. (शा), सर्वरोगे ।

भाषा—वनमाटा और पाटलाकीजड़, वृषकाद्वय, चित्रकमूल, दन्तीमूल, सफेदमउदकैया, फाग, मजीठ, हरे, बकोय, शताव, एरुदमूल, पीले और जलमूलको भट्टैया, आवला, बुईआवला, लालचित्रकमूल, दूधियाहीग, चीठ, देवदाह, लवी और यवशार, पोहकमूल, त्रिकटु, तुम्बुरु बेसन क्रमहृदभागे लेनर शारीकपूर्णकर सोनामाखी, लोह और पारदभस्म शुद्ध-पयनाग १-१ भाग मिलाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ मात्रा समय अपका रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह अत्यन्तमेदको नष्टकर आदमोको सतक बनाताहै ॥ ५६५ ॥

५६६ स्वाधित्यारिरसः

रौप्यमयं तुल्यकञ्च मर्दयेत्कन्यकाम्भसा ।
 सुद्रमायां घट्टीं श्ल्या पापयेत्सह सर्पिषा ॥ २४२८ ॥
 स्वाधित्यारि रसो नाम स्वाधित्ये च्छ्रायुजं गद्म ।
 घातश्लेषोद्भवाश्चापि घातानाथु निवारयेत् ॥ २४२९ ॥
 भेषजान्यत्र योज्यानि यदान्थाधिहराणि च ।
 पच्यमत्र विज्ञानीयाद्वर्ष्यं पुष्टियलप्रदम् ॥ २४३० ॥
 भा. वि. , स्वाधित्ये ।

भाषा—चादी, अन्नक और तुल्यकीभस्मे समभागलेकर कुमारीकेरसे १-२ दिन मर्दनकर सुंगरवार गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली धीकेसाथ देनेसे श्वायुओंकी स्थानप्रथता नष्टहोतीहै । इसमें खासकर वातहर औषधों और पच्यमें पुष्टिहारक पदार्थ देवे ॥ ५६६ ॥

५६७ स्तम्भनरसः

हंसपादं पलादंस्तु घृताकेन च पाचितम् ।
 बल्लमानप्रदानेन हीनकृद्पैवृद्धिकृत् ॥ २४२९ ॥
 रसायनं, वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—दोकरुप शिंगरिफकी डलीको मलमलमें लपेट मोटे-बेगनमें रख भरताकरे । ऐसे १०८ बेगनोंमें भरताकरके निकाल कर रखले । कमनेकम ५० बेगनोंमें अरस रखनाचाहिये । इनमेंसे ३-३ रती उचितानुपानकेसाथदेनेसे यह नष्टशुकी रज्जिनो ररताहै ॥ ५६७ ॥

५६८ स्तम्भनवटी

सद्दहिफेनविमर्दितपारदः

कनकबीजरसेन विमर्दितः ।

समसिताविजयो यदि भक्षितो

न रज्जिनो न दिवा न दिवाकरः ॥ २४२९ ॥

रसायनम्, यो. त. ३ यो. त. ४, वीर्यस्तम्भने ।

भाषा—शुद्ध अफीम और पारदभस्म समभागलेकर कचे ब्यूरेके बीजोंकेरसे पारा अदर्यहोनेतक घोटकर इनकेपरावर शर और भागमिलाकर १-१ रतीकी गोलिया बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली सम्मोगसे १ घटापहिले लेर केवलदूध पीनेसे अत्यन्त स्तम्भनहोताहै ॥ ५६८ ॥

५६९ स्त्रीगदन्नरसः

पारदं गन्धकं कान्तं हेम लोहं सुमारितम् ।
 गगनञ्च समंशिन पुटे गजपुटे पचेत् ॥ २४३३ ॥
 दशमूलानुपानेन द्यूपणेनाथ चा पुनः ।
 दद्याद्दुग्धाद्वयञ्चास्य यथात्रलमथापि वा ॥
 अयं सर्वविकाराणां खोजातानां विनादाकः ॥ २४३४ ॥
 र म सा, ना. वि, स्त्रीरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, कान्त, लोह, सुगर्ग और अन्नकभस्म समभागलेकर दशमूलकेसाथमें २-३ दिन घोटकर-टिकडियेवनाथ मुखाकर घातपसमुदमें बन्दकर गजपुटी आवद । चान्नासोतलोनेवर निकालकर रखओड़े । इनमेंसे २-२ रती दशमूल अथवा त्रिकटुकेसाथदेगाथ देनेसे यह समन्त-रारोगोंको नष्टकरताहै ॥ ५६९ ॥

५७० स्थौल्यगजकेसरीरसः

रसेन्द्रं रजतं ताप्यं गगनं ताम्रलोहकम् ।
 स्वर्णञ्च क्रमशुद्धानि मर्दयेत्पर्यापरिणा ॥ २४२५ ॥
 अन्येन चाम्लयर्षणेन मर्दयेत्समप्रामत्स्यम् ।
 वाचहृष्यां निचायाऽथ पंचग्रामाष्टक्यम् ॥ २४२६ ॥

स्वाङ्गशीतलतां क्षात्वा गृह्णीयात्तच्च मर्दयेत् ।
 आर्द्रकस्वरसेनैव द्रोणपुष्पीरसेन च ॥ २४२७ ॥
 बृहत्याः पत्रतोयेन धीजतोयेन वा पुनः ।
 प्रत्येकं दिनमेकं हि भावनां दापयेत्कमात् ॥ २४२८ ॥
 पिप्पलीमथुना सार्धं चैतद्दुग्धाद्रयं भजेत् ।
 स्थूलदुर्दिनविनाशने मधु-
 स्थौल्यपर्वतविनाशनेऽशनिः ।
 स्थौल्यदोषपरसशोषणक्षमः
 स्थौल्यरोगगजकेसरिरसः ॥ २४२९ ॥
 र. प्र. सु., र. म. मा., स्थौल्ये ।

भाषा—पारा, रजत, सोनामाषी, अन्नक, ताम्र, लोह
 और सुवर्ण इनकीमसमें कमरुद्रभागसेलेकर बिजोरे तथा अन्य
 अम्लवर्षेवरसे ७-७ दिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कभड़मिठीदी-
 हुई आतशीशीशीमें भर सुंढबन्दकर वाळुकायत्रमे रख ८ पहरकी
 द्वात्रिंशे देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर अदरख, गुमा,
 बनभाटा, बिजोरा इनकेरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी
 गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पीपल और
 मधु अथवा मेदोहरानुपानकेसाथदेनेसे यह अत्यन्तस्थूलताको
 नष्टकरताहै ॥ ५७० ॥

५७१ स्थौल्यान्तकरसः (प्रथमः)

रसगन्धौ समौ ताभ्यां द्विगुणं लोहजं रजः ।
 चिडङ्गनागरक्षारनीरेण परिमर्दयेत् ॥ २४३० ॥
 कर्पासं नागरक्षारविडङ्गं परिषेवितः ।
 मापेको मथुना युक्तः स्थौल्यमाशु व्यपोहति ॥ २४३१ ॥
 हिद्दुसौवचेलजाजीव्याधिघातयुतस्तथा ।
 मस्तुसक्तुयुतो वापि व्योपवेह्यायुतोऽपि वा ॥ २४३२ ॥
 रसः स्थौल्यान्तकृच्चैव क्षौद्रतोययुतस्तथा ।
 पथ्यमुष्णन्तु ससौद्रं मण्ड. सोष्णस्तथा हितः २४३३
 स्थौल्यापहरणः सूतो वसन्तकुसुमाकरः ।
 सोऽपि क्षौद्रयुतः क्षारतोयमद्येन वा हितः ॥ २४३४ ॥
 र., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक समभाग, दोनोंसे द्विगुण
 लोहमस लेकर नीलवर्णकजलीकर विडङ्ग और सौंठकेसाथ तथा
 प्रतिसारणीय यवसारासे १-१ दिन मर्दनकर १-१ माशेकी
 गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मथुनेसाथलेकर
 आषाकपे सौंठ, यवसार और विडङ्गकाघूर्ण (१) ह्रीं, सखल,
 जीरा और अमिलतासकाघूर्ण (२) दहीकातोड़ और सत्तू (३)
 त्रिकटु और विडङ्गकाघूर्ण (४) इनमेंसे किसीभी अनुपानकेसाथ
 सेवनकरनेसे यह बहुतशीघ्र स्थूलताको नष्टकरताहै । इसमें मथुके
 साथ गरमचीजे और गरममाडकासेवन उचितहै । स्थौल्यके-
 लिये वसन्तकुसुमाकर रसको मधु और क्षारकेपानी अथवा
 मद्यकेसाथलेना उचितहै ॥ ५७१ ॥

५७२ स्थौल्यान्तकरसः (द्वितीयः)

वन्ध्याककौटकीकन्दद्रव्यै र्मर्द्यं दिनत्रयम् ।
 तालकञ्च मृतं ताम्रं द्विगुणं मथुना लिहेत् ॥
 पिबेत्क्षारोदकं चानु स्थौल्यरोगं विनाशयेत् ॥ २४३५ ॥
 वै. चि., व रा, स्थौल्यरोगे ।
 भाषा—हरिताल और ताम्रमस समभागको बावलेखसेके-
 वन्दके रसेसे ३ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती
 मथुनेसाथलेकर क्षारोदकपीनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ॥ ५७२

५७३ स्थौल्यान्तकरसः (तृतीयः)

सूताश्रमाभ्रविषं लोहं ध्योपञ्च यावत्कजम् ।
 मर्दयेत्सुरसावह्निकन्यातोयं दिनत्रयम् ॥
 गुजामात्रं प्रयुञ्जीत स्थौल्यादौ स्वानुपानतः ॥ २४३६ ॥
 र. सि., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और कजनाग, अन्नक और
 लोहमस, त्रिकटु, यवसार, समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर
 तुल्सी, चित्रकमूल और धीकुवावेस्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दन-
 कर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
 गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको नष्टकरताहै ५७३

५७४ स्थौल्यापकर्षणरसः

सूतयोल्मृततालताम्रकं चार्कदुग्धरसकेन मर्दितम् ।
 क्षौद्रयुक्तमपि चण्डमात्रकं भक्षितञ्च ह्यतिवृंहितञ्जयेत् ॥
 तोयमेकपलमत्र मात्रया पानतोऽप्यखिलमेहहारकम् ॥
 र. प्र. सु., स्थौल्ये ।

भाषा—शुद्धपारा, हीराबोल, हरिताल और ताम्रमस सम-
 भागलेकर आर्ककेदूध अथवा पदस्वरसेसे एकदिन मर्दनकर सुखा-
 कर मधुमेमिलाय ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े ।
 इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथलेनेसे यह स्थूलताको
 नष्टकरताहै ॥ ५७४ ॥

५७५ स्त्रायन्तकरसः

कासीसञ्च शिला चैव गन्धकेन समन्वितम् ।
 वायुच्या मर्दितं खल्वे मर्दयेच्छोषितं दिनम् ॥ २४३८ ॥
 पचिद्गजपुटे मापं भक्षयेदनुपानतः ।
 क्षायुकान्तकरो नाम रसो नकुलसम्मतः ॥ २४३९ ॥
 र म मा., ना वि., स्त्रायुकरोगे ।

भाषा—कासीसमस, शुद्धमैन्सिल और गन्धक समभाग
 लेकर बारीकघूर्णकर वाङ्गुचीके हाथसे एकदिन मर्दनकर टिकड़ी
 बनाय सुखाकर शरावसमुष्टमें बन्दकर गजपुटकी आचदे ।
 स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ माशा
 समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथलेनेसे क्षायुरोग नष्टहोताहै ॥

५७६ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शगजसिंह.)

अष्टौ भागा रसस्य स्यु विपतिन्दो दीशेव च ।
 गन्धकस्य दश द्वौ च कटुत्रिफलयोस्त्रयः ॥ २४४० ॥

वह्निचित्रकमुस्तानां वचाश्वगन्धयोरपि ।

रेणुकाविपकुष्ठानां पिप्पलीमूलकेशरात् ॥ २४४१ ॥

पक्ककस्तु भवेद्भाग इन्द्राण्य मूलतस्तथा ।

चतुर्विंशद्द्रव्याऽथ वटिका चणकाकृतिः ॥

क्रमेणैवाऽनुसेवेत स्पर्शवातापनुत्तये ॥ २४४२ ॥

र. र. स., वि. सा., र. का., वै. वि., व. रा., रसायनसं.,
र. घ., स्पर्शवाते ।

टि०—नि. र. रसादिवदीति नाम शीतविषाधिकारे । व. रा., वै. वि. प्नयो वातारिरस इति नाम विदुसवाते । रमकामनेनो अरमात्या-
टाकिञ्चिदेषाम्य दृश्यते यथा “निष्काहक मृत मृत निष्काहकशमन्यवन् ।
विषमुष्टि र्गन्धपुत्रः सूतकश्च त्रिनिष्ककः ॥ त्रिकुष्ठ विक्रम्य मुस्ता वचा
पक्ककशुक्रम् । विष कुष्ठ कणामूलमश्वमेन्द्रवारुणी ॥ नामकेशरमेकैक
निष्ककश्च मुचूर्णितम् । सर्वतुल्य शुद्ध मिश्रं चणमात्रञ्च मध्येषु ॥
अस्पर्शगर्भितोऽथ मुष्टिमण्डलुषुचिन्तम् ॥” इत्यत्र लेखकप्रमादनज्यो दीप-
प्रतिभाति । स्पर्शगर्भितमिहनामापि कल्पितमेव प्रतीयते । व. रा., वै. वि.,
एतन्नोर्द्वैतीयस्थाने वातगजाद्भुजानाम्ना “अथौ माया स्पर्श्यापि
विषनिन्दोस्तथैव च । गन्धवत्स त्रयो मागाः कटुत्रयफलत्रयम् ॥ गुञ्जा-
मात्रं बर्दौ रसादिसीनिवातनाशनम् । ऊरुसाम्भ निहन्त्याशु स्थानो
वातगजाद्भुजः ॥” इति पाठो निश्चितोऽस्ति स चपरितनपाठस्यैवाप-
भ्रयः प्रतीयते तत्कारणन्तु वृष्टिपाठासादन स्वकृतित्वास्थापन वा
स्थानित्यनुमीयते ।

भाषा—शुद्धपात्र ८ भाग, कुचिला १० भा., गन्धक १२
भा., कुट्टकी और त्रिफला ३-३ भा., मिलावे, चित्रकमूल,
नागरमोया, यच, असगन्ध, रेणुका, बछनाग, कुष्ठ, पिप्पलामूल,
नागकेशर और इन्द्रायणकीजक १-१ भागलेखर शारीकचूर्णकर
पारिगन्धककी नीलवर्णकमलीमें मिलाय २४ भाग शुद्ध मिलाकर
चनेप्रमाण मोलियेवनाकर रखडोड़े । इनमेंसे १-१ गुठो उचि-
तातुगणकेसाय देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै ॥ ५७६ ॥

५७७ स्पर्शवातारिरसः (शीतारिरसः)

रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवाग्निस्वरसे विभाव्य ।
पकार्कपत्रस्य रसेन पश्चाद्विषाचयेद्दशगुणेन यलात् ॥
रसास्रभागश्च विषश्च दत्त्वा विषाचयेद्द्विगुणैश्चर्षणं तद
शीतारिरसश्चास्य रसायनस्य षड्विंश सार्द्धं मरिचाद्रिकेण
मरीचचूर्णेन घृतप्लुतेन सेवेत मांसञ्च घृतञ्च पच्यम् ॥

र. स., र. क., घ., र. चं., र. दी., र. घु., र. र. स., र. क. ल.,
वि. सा., र. को., र. प्र. घु., वै. वि., रसायनसं., वातव्याघ्र-
धिकारे । रसायनसद्भवे शीतपित्तारिरस इतिनाम ।

भाषा—शुद्ध पात्र १ भाग, गन्धक ३ भागकी नीलवर्ण-
कमलीकर पुनरेवा और विषहमूलकाम्लस्योसे १-१ दिन मर्दन-
कर पक्क आककेपत्तोकै अष्टगुणितस्वरसेमें पकाकर रसेमें भाषा
शुद्धचण्डा मिलय चित्रकमूलकाम्लस्य देकर चौदोदेल्लेह
पद्मामे छिद्र पोटर ३-३ रसीकी मोलिये बनाकर रखडोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोठी मरिच और अक्षरपेक्ष्याय अथवा पृश्नुक
मरिचकेचूर्णकेसाय देनेसे यह स्पर्शवातको नष्टकरताहै । इनमें
पुन और मांस अथिच सेवनकराना ॥ ५७७ ॥

५७८ स्पर्शवातारिरसः (स्पर्शारिरसः)

दिनत्रयं स्याद्विषमुष्टिवीजं शुभारनालीयसुयन्त्रमध्ये ।
सुपाचितं भानुपलञ्च तस्य चूर्णं पलैकं परिमूर्च्छितं हि

सूतं द्विगन्धश्च पलाशबीजं

द्विपट्टपलं क्षिग्धघटीगतञ्च ।

सम्मुदय मासं शुभधान्यराशौ

संस्थाप्य चोद्धृत्य समाक्षिकन्तु ॥ २४४६ ॥

लेहं तथा स्पर्शगद्गारिरसञ्चो

प्रसुप्तवातञ्च हि स्तितिकुष्ठम् ।

निहन्ति भूमिभ्यविषापिकानां

मूर्धावचानिभ्यफलत्रयाणाम् ॥ २४४७ ॥

पटोलपाठाद्विनिष्कायशाला-

ग्राह्यीमिष्टुद्गतिसुपन्नकानाम् ।

सतिककोपातकिकासमांशं

चूर्णं समध्याज्यमिहानुपानम् ॥ २४४८ ॥

वि. क. व. रा., र. का., वै. वि., वातव्याघ्रधिकारे ।

टि०—रसकामनेनो विषमुष्टयाः पट्ट पलानि नियोजितानि अत्र तु
द्वादशेति विशेषः । र. र. स., र. वी., र., र. वी., एषु स्पर्शवातारि-
नाम्ना र. स., र. च., घ., र. घु., र. क., एषु पलाशारिरदीति नाम्ना
“पलाशबीजोत्पलेतेन सूत गन्धेन युक्त धिरिन विषयं । अक्षणीकृत तदि-
पनिन्दुबीजं सयोग्येदस्य कलाप्रमाणम् ॥ मासद्वयं निष्कमिन प्रवतार-
शीलि हन्त्याशु मुचूर्णनीयम् ॥ वातरक्तं तथा शीघ्रमस्पर्शस्थानिनितान-
यम् । वातबद्धेऽप्यस्तेऽपि तत्र पितेन भावयेत् ॥ स्पर्शवातारिरसस्थानो
वातपेगकुञ्जलकः ॥” इति पाठो निश्चितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः
कारण्यः । “पलैकं मूर्च्छितं सूतं शुद्धगन्धं पलद्वयम् । चूर्णितं मधु
नाऽऽज्यञ्च क्षिग्धमाष्टे नितोपिडम् ॥ धान्यराशौ स्थितं मासं सत्सु-
त्थाय मध्येषु । अस्पर्शारिरसः कुशाश्च हन्ति मुष्टिप्रमुष्टिकम् ॥” इति
रसेन्दररत्नकोशीयपाठस्तु वृष्टि पत्रास्ति अत्रतस्य रसान्तरतायां
न भ्रान्तिव्यम् ॥

भाषा—काष्ठोमें शुद्धकियाहुआ कुचिला १ पल, रसतिन्दूर
१ पल, गन्धक ३ पल, पलाशबीज ८ पल लेखर शारीक चूर्णकर-
रसतिन्दूर और गन्धकको अन्धीतरह मिलाय थिकनेवतनेमें रख
सुंदबन्दकर सुगन्धितपानकीराशिमें रखदे । ७ अथवा १४ दिन
बाद निकालकर ४-४ मासे मनुकेसायलेनेसे प्रसुप्तवात, सूति-
कारोग, शुद्ध इनसको यह नष्टकरताहै । चिरायत, मेडासौगी,
मूर्धा, यच, नीमकीछाल और त्रिकला अथवा परल, पाटा,
दोनोहल्ली, इन्द्रायण, प्राप्नो, निषोत, पदमहाड इनकायोंको
औथिनी देसकर अत्रुपानमें देवे अथवा कश्मीरसफ्रीकागमें
समभाग मिलाकर मधु और धोकेसायदेवे ॥ ५७८ ॥

५७९ स्मृतिसागररसः

रसगन्धकतालांनां नशिलाताप्यभास्वताम् ।

शुद्धानां मूर्च्छितानाञ्च चूर्णं भाव्यं यथाऽट्टितं २४४९.

एकविंशतिपा पश्चाद्भाषीयावारा तप्येय च ।

कटमीथीजतलेन भाययेदेकपारकम् ॥ २४५० ॥

स्मृतिसागरनामाऽयं रसोऽपस्मारनाशनः ।

सर्पिणा मायमात्रोऽयं भुक्तो हन्यादपस्मृतिम् ॥२४५१

र. कौ., वृ. यो. त, नि. र., रसायनचं., यो. र., र. क. यो., अपस्मारे ।

• टि०—केयुचित्पुस्तकेषु सशिलाताम्रमरुनामिति पाठो लभ्यते, तत्र ताभ्याऽभयोऽस्ति । तत्र तदनाथे शानपूर्वको वा स्यान्नममूलको वा स्वादिति सर्वं दृष्ट्वा तत्रक्षेपे च न क्षापि हानि. प्रतीयते अतस्ताप्युक्त एव पाठो ज्ञायाम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, हरिताल और मैनसिल, सोना-
माखी और ताम्रभस्म सब समभागकी नीलवर्णकजलीकर बच
और ब्राह्मीकेस्वरसोंसे २१-२१ भावनाएँ देकर मालवांगनीके
तेलकी एकभावना देकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा धीके-
साथ देनेसे यह अपस्मारका नाशकताहै और स्मृतिको जाशुत
करताहै ॥ ५०५ ॥

५८० स्वच्छन्दगोलकरसः

पथ्या ज्यूपणयद्विमन्यसुरसाः शृङ्गी विषं दङ्गुं,
गन्धं तालकमाक्षिकायसरजः सृतं द्रव्यन्तीफलम् ।
निर्गुण्डीस्वरसेन भायितमिदं स्वच्छन्दगोलाभिधं,
गुञ्जायुग्ममिदं निहन्ति निखिलं शीतादिपूर्वं ज्वरम् ॥
र. प., ज्वरे ।

टि०—शार्ङ्गपरीयस्वच्छन्दभैरवद्रव्याणि सर्वाण्यस्मिन्तस्मिन् केवल
द्रवनीफलसाधिक्यम् । स्वच्छन्दभैरवे भावनायां गुण्डीनिर्गुण्डीयाजुभे
मुदीने अथ तु निर्गुण्डीयैव भावना प्रदत्ता रति विधेयोऽस्ति तस्याऽग्ने
वाऽन्तर्भाव कर्तुमुचित. परन्तु प्रथमवातगनाद्गुण्डीशेनाखरान. ताभ्यात्
त्रेवाऽन्तर्भावः श्लोऽस्ति । अथ तु ज्वपालयुक्ततया स्वतन्त्रव्ययं निहित
रति गुण्डीभिराकृतनीयम् । वस्तुतस्तु वातगनाद्गुण्डीवाऽयमप्रयोऽस्ति ।

भाषा—हैरं, रिज्ड, अरणी, तुलसी, काकडासीगी, शुद्ध-
खजना, गुनासुहागा, शुद्ध गन्धक, हरिताल, सोनामाखी, लोह-
भस्म, शुद्ध पारा और जमालमोटा समभागलेकर बारीकपूर्णकर
घातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय निर्गुण्डीकेरसे १-२ दिन
घोटकर २-२ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे शीत अथवा दाहपूर्वकज्वर
नष्टहोताहै ॥ ५८० ॥

५८१ स्वच्छन्दनायकरसः (प्रथमः)

सूतगन्धकलोहानि सौष्यं सम्मर्दयेत्प्रथम् ।
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्डीयास्तुलस्या गिरिकर्णजैः २४५३
अग्निमन्याद्रंजं बद्धिजिज्याद्रि जंयासहा-
काकमाचौरसेरासां पञ्चपित्तैश्च भावयेत् ॥ २४५४ ॥
अन्धमृषागतं पथ्याद्वालुकामयन्त्रं दिनम् ।
आदाय चूर्णितं खादेन्मार्पकं चार्द्रकद्रव्ये ॥ २४५५ ॥
निर्गुण्डीद्रामूलानां कषायं सोपणं पिबेत् ।
अभिन्यासं निहन्त्यागु रसः स्वच्छन्दनायकः ॥
छाग्रीदुग्धेन मुद्गं धां पथ्यमथ प्रयोजयेत् ॥ २४५६ ॥
र. वि., र. क. र. सं., रसायन, र. का., यो. म., अभिन्यासे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और रजतभस्म सम-
भागकी नीलवर्णकजलीकर सूर्यमुखी अथवा हुहुर, निर्गुण्डी,
तुलसी, गोकर्ण, अरणी, अदरक, चित्रकमूल, भंग, हैरं, माय-
पर्णी अथवा मुद्गपर्णी और मरुचयकेस्वरस तथा पांचोपित्तोंसे
१-१ भावना देकर गोलावनाय अन्धमृषामें बन्दकर बालुका-
यन्त्रमें रख एकदिनकी अग्निदेवे । स्वाशुतोतलहोनेपर निकालकर
रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा अदरक अथवा निर्गुण्डी और
दशमूलके कायमें मरिचका प्रक्षेपदेकर इसकेसाथदेनेसे यह
अभिन्यासज्वरको नष्टकरताहै । इसमें पथ्य बकरीकेपू अथवा
भृङ्गके यूपकेसाथदेवे ॥ ५८१ ॥

५८२ स्वच्छन्दनायकरसः (द्वितीयः)

शुद्धं सूतं द्विधा गन्धं सूतांश्च सूतहेमकम् ।
सूतसौष्यञ्च ताम्रञ्च सर्वं तुल्यं पृथक् पृथक् ॥२४५७॥
सूर्यावर्तस्य निर्गुण्डीयास्तुलस्याश्चार्द्रकद्रव्ये ।
शृङ्गेनन्तालुकर्णानामग्निकर्ण्यग्निमन्ययोः ॥ २४५८ ॥
तिलपर्णीचित्रकयोः काकमाच्यो रसेः सह ।
मर्दयेत्त्रिदिनं खल्वे शुष्कं पित्तं विभावयेत् ॥२४५९॥
प्रात्स्यमाह्नियपाराहच्छागामायुर्जे दिनम् ।
अन्धमृषागतं पाच्यं बालुकायन्त्रं दिनम् ॥ २४६० ॥
आदाय चूर्णितं खादेन्मार्पकं चार्द्रकद्रव्ये ।
निर्गुण्डीया दशमूलानां कषायं सोपणं पिबेत् ॥२४६१॥
अभिन्यासं निहन्त्यागु रसः स्वच्छन्दनायकः ।
पथ्यं स्पान्मुद्गपूषेण क्षीरं वाऽऽर्ज्यधिषाययेत् ॥२४६२॥
नि. र., र. सु., र. को., र. का, सपिपाते ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ भा., सुवर्गभस्म ३ भा.,
रजत और ताम्रभस्म १-१ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर सूर्य-
मुखी, निर्गुण्डी, तुलसी, अदरक, भंग, धतूरा, मृषाकर्णी,
सफेदचित्रक, गोकर्ण, अरणी, हुहुर, लालचित्रक, मरुचय
इन्केस्वरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, सुभर और
गोरनेपित्तोंसे १-१ भावनादेकर अन्धमृषामें बन्दकर बालुका-
यन्त्रमें रख एकदिनको आंचदेवे । स्वाशुतोतलहोनेपर निकालकर
रखछोड़े । इसमेंसे १-१ मासा अदरक, निर्गुण्डी और दश-
मूलकेस्वरस अथवा कायोंमें मरिचका योगकर औषितीदेखकर
जिसी एककेसाथ देनेसे यह अभिन्यासको दूरकरताहै । इसमें
पथ्य भृङ्गकेपू अथवा बकरीके पूरेकेसाथ देवे ॥ ५८२ ॥

५८३ स्वच्छन्दनायकरसः (तृतीयः)

सूतं सूतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् ।
तुल्यांशो मर्दयेद्वायं विदार्याद्रंजसम्मये ॥ २४६३ ॥
भृङ्गपूषेः काकमाच्युत्थं गिरिकर्णाद्रंजं दिनम् ।
सम्मयं माण्डगं रुद्धा पथेन्मन्दाग्निना दिनम् २४६४
ध्वोपाग्निगन्धकवियेरेरण्यमयद्रुणेः ।
समांशोश्चूर्णितं मिथैस्तुल्यांशं पृथक्संयुतम् ॥ २४६५ ॥
त्रिदिनं मर्दयेद्वायं गुण्डीनिर्गुण्डीभृङ्गजैः ।
अष्टयुजामितं खादेद्रसः स्वच्छन्दनायकः ॥ २४६६ ॥

सर्वेष्वतहः ख्यातो ह्यनुपानमिदं पियेत् ।
लघुनं सैन्धवं तैलं कर्णमात्रं सुखाद्यहम् ॥ २४६७ ॥

र. र., र. का., सत्रिपाते । र. वा. स्वच्छन्दभैरवेति नाम ।

भाषा—शुद्धपारा, फोलाद और कान्तलोह इनकीमल्ले, शुद्धहीताल, सोनामाली और गन्धक समभागलेकर नीलवर्ण-कञ्जलीकर बिदारी, अदरक, भंगरा, मकोय और गोक्षणके स्वसोसे १-१ दिन मर्दनकर हण्डोमें बन्दकर एकदिनकी मन्दाग्नि देवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर त्रिकुट्ट, चिन्क-मूल, शुद्ध गन्धक, और बज्जनाग, दोनों अरणी, सुहागा सब समभागकाचूर्ण समभागमिलाकर गोरखमुण्डी, निर्गुण्डी और भंगरेके स्वसोसे १-१ दिन मर्दनकर ८-८ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लघुन, सेधानमक और तैल समभागमिलाकर १ कर्णकेसाय लेनेसे यह समस्त वातवि-कारोंको नष्टकरताहै ॥ ५८३ ॥

५८४ स्वच्छन्दभैरवरसः (प्रथमः)

ताम्रमस चिपं हेमः शतधा भावितं रसेः ।
शुद्धादं सत्रिपातादिनज्वरहरं परम् ॥ २४६८ ॥
आर्द्राम्बुदाकर्कसिन्धुयुतः स्वच्छन्दभैरवः ।
इन्द्राक्षासितैर्वाद्यं दीध पथ्यं रुचौ ददेत् ॥ २४६९ ॥
र. सं., र. वि., र. सु., रसायनसं., र. क., र. का., यो. म.,
ज्वाधिपिको ।

भाषा—ताम्रमस और शुद्धबज्जनागका चूर्णकर घट्टेके-सोसे १०० भावनाएँ देकर आधीआधीरत्तीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरक, वायूर और पैन्धके-साय देनेसे यह समस्तज्वरोंको नष्टकरताहै । अत्रय दृचिहोने-पर ईश, द्राक्ष, शरर, कचरी और दही इनकेसाय पथ्यदेवे ॥

५८५ स्वच्छन्दभैरवरसः (द्वितीयः)

रसमेकं द्विधा गन्धं गन्धतुल्यञ्च सैन्धवम् ।
ज्वाल्गामुखीरसेः पञ्च दिनानि परिमर्दयेत् ॥ २४७० ॥
मृषिकायां निन्दघाय पुटेद्रात्री च मध्यमम् ।
सर्वं भस्म यदा याति यद्दं तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ २४७१ ॥
प्रह्वयं सङ्ग्रहण्याञ्च कामे भ्यासे चिदोपतः ।
उप्रासु ज्येष्ठान्द्राम्बु स्वल्पनिद्रासु योजयेत् ॥ २४७२ ॥
अन्यरोगेषु तं दद्याद्रसं स्वच्छन्दभैरवम् ।
तुष्टिं पुष्टिमौ कुर्यात्सौकुमार्यञ्च कारयेत् ॥ २४७३ ॥
र. सं., रसिच., र. सु., घ., र. सं., र. का., कासे ।

दि०—एतच्छुद्धं द्विदिनस्थाने ज्वाल्गामुषिपथे निर्गुण्डे
निव्यय रमान्द्रासु तस्मिन्ना मा त्वनादेशेन विदोषात्प्रयात् ।

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक और सेधानमक २-२ भागकी नीलवर्णकञ्जलीकर ज्वाल्गामुषी (जलजंतुल मराठी, अथवा अगिदायासा) के स्वसोसे ५ दिन मर्दनकर पञ्चमपथे बन्दकर ताम्रिमें मध्यमजुड़ेदेवे । एतच्छुद्धं ज्येष्ठान्द्रासु निकालकर रखोड़े । इनमेंसे १-३ रत्ती मध्यम अथवा सेधानमिन्द्रासुके-

सायदेनेसे प्रहणी, सङ्ग्रहणणी कास, श्वास, भयङ्करतन्द्रा, निद्रानास इनसबको नष्टकर आदमीको दृष्टपुष्ट बनाताहै और कान्तिको बडाताहै ॥ ५८५ ॥

५८६ स्वच्छन्दभैरवरसः (तृतीयः)

रसगन्धकयोः शाणं प्रत्येकं कञ्जलीकृतम् ।
सुवर्णमाक्षिकं शाणं शुद्धञ्चैकत्र कारयेत् ॥ २४७४ ॥
सिन्धुचारो रुद्रजटा नागरामलकं तथा ।
वृश्चिकाली रसेरासां कार्यां मुद्गसमा वटी ॥ २४७५ ॥
आर्द्रकस्य रसेः पेया जीरकञ्जानु प्राययेत् ।
स्वच्छन्दभैरवाद्योऽयं सत्रिपाताद्यहन्मतः ॥ २४७६ ॥
प्रहणीसूतिकातङ्कं नाशयेद्विकल्पतः ॥
र. सं., ज्वरे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और सोनामाली समभागकी नीलवर्णकञ्जलीकर संभाल, रुद्रजटा, सोंठ, आंवले और बिलुआ-पासके स्वसोसे १-१ दिन मर्दनकर सूंगररावर गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरककेसाय देकर जीरको पानीमें पीसकर फिलानेसे सत्रिपातकी उभता, सङ्ग्रहणी और सूतिकासोको यह नष्टकरताहै ॥ ५८६ ॥

५८७ स्वच्छन्दभैरवरसः (चतुर्थः)

रसं गन्धं द्रव्जुञ्च विपं चङ्गं मृतं समम् ।
त्रिफलायाः कपायेण मर्दितं दिवसत्रयम् ॥ २४७७ ॥
दोलायने याममात्रं प्राचितं मन्दवह्निना ।
कोलपित्तेन सम्भाय्य गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ॥ २४७८ ॥
आर्द्रकस्यानुपानेन हन्यात्कण्ठककुब्जकम् ।
दध्यधं दापयेत्पथ्यं तुण्याणां शीतलं जलम् ॥
राजोपचारान्कुर्वीत रसः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४७९ ॥
वे. वि., वा., सत्रिपाते ।

दि०—बाहे द्युञ्जु न हटवणे दिवसत्रयस्थाने दिवसत्रयमर्दनं विदितम् ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सुहागा और बज्जनाग, पञ्चमस समभागलेकर त्रिफलाकेजायसे ३ दिन मर्दनकर १ पहर त्रिफलाकेजायमें दोलायने मन्दवह्निपर पकाकर सुखरकेपित्तकी १ भागनादेकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरकके स्वसोसाय देनेसे यह कण्ठज्वरक सत्रि-पातको नष्टकरताहै । मुग्लगनेपर दहीमात देना । प्यामकी अधि-क्यहोनेपर शीतजल पिखाना और शीतोपचारकरना ॥ ५८७ ॥

५८८ स्वच्छन्दभैरवरसः (पञ्चमः)

रमेन द्विगुणं गन्धं शुद्धं सम्मर्दयेद् दृढम् ।
लोहाद्येकं मृतममं प्रत्येकञ्च मृतं क्षिपेत् ॥ २४८० ॥
प्राप्तौ जयन्ती निर्गुण्डी विषमृष्टिः पुनर्नया ।
नीलिका गिरिकर्पणं कृष्णाचरुं सृष्टिक्रम ॥ २४८१ ॥
सूपमं काकमाची च प्रत्येकैकं समाहितः ।
मर्दयेत्त्रिदिनं रस्ये ततः पित्तं विमापयेत् ॥ २४८२ ॥

मात्स्यमाहिपमायूरे यावत्सिकं द्रवैरसम् ।
 शताह्वा जीवनी रास्त्रा याजिगन्धाहिवहृती ॥२४८३॥
 कर्चुरो नागरञ्जैला सर्पाक्षी सुरसत्वचः ।
 जातबालस्य घृष्टा च कणागोक्षुरसंयुतम् ॥२४८४॥
 समैरेभिः कृतां स्रुपां पूर्वोक्तं वेशयेद्रसम् ।
 तैर्निरुद्धय ततो भाण्डे भृगुमये रोधयेत्युनः ॥२४८५॥
 स्रावकेण दृढे सन्ध्यां विलिप्य वस्त्रमृत्तिकां ।
 अल्पाग्निना दिनं प्राच्यं रसमादाय चूर्णयेत् ॥२४८६॥
 पूर्वोक्तं भावयेत्पित्तै रसः स्वच्छन्दभैरवः ।
 आर्द्रकस्य रसे दैव्यः सन्निपाते त्रिगुञ्जकः ॥ २४८७ ॥
 दशमूलेन निर्गुण्ड्याः काथञ्चानु प्रयायेत् ।
 सन्निपातं निहन्त्याशु पथ्यं दद्याद्यथोचितम् ॥२४८८॥
 र सु, र. को., टो., र. (मा.), र. का., ज्वराधिकारे ।

टि०—समुद्रात्पृथक्पृथक् भाग्यो देयुणो वलि ।
 लोहाष्टवक्ष्य कुर्वीत मागानद्यो यथाक्रमम् ॥
 तच्छुष्कं मर्दयेत्पूर्वं दिनमेकं निरन्तरम् ।
 जयन्तीपदतोयेन मर्दयेच्च दिनत्रयम् ॥
 कृष्णाया सुरसायाश्च भाइया नीरैस्तत परम् ।
 पुनर्नवारनैस्तद्विषमुष्टिरसैस्तथा ॥
 नाळिकासलिले मेघो पिरिकण्ठारसैस्तथा ।
 अर्कक्षीरैर्दिनं मयं सर्वावर्तयेत्सत्त्वा ॥
 त्रिजगद्विजयानीरे सर्वान्ते सम्प्रमदयेत् ।
 मात्स्यमाहिपमायूरपित्तैरपि विभावयेत् ॥
 ततस्तद्रोष्कं कृत्वा छायायां सम्प्रशोषयेत् ।
 तुलसीरससन्निधुञ्जैस्त्वम्बिलेपिते ॥
 पक्वमृपान्तेर शिवाया मुख सन्ध्याङ्कुरोपयेत् ।
 घटिकादितय यावदीपमानप्रमाणतः ॥
 पचेत् काष्ठशिक्षिना स्वाङ्गशीतलमुद्धरेत् ।
 सन्निपातहर सोऽय रस स्वच्छन्दभैरव ॥
 नानारोगान्निहन्त्याशु सुविधानेन योचितः ।
 आर्द्रकस्य रसेनैव रस सम्यक् प्रयोचयेत् ॥
 निर्गुण्ड्यासलिलेनाथ वापादा दशमूलजाए ।
 अनुपाने प्रयोक्तव्यं काथश्च दशमूलज ॥
 वहा वाय दिवह वा शीतमाथान्द्रोष्के ।
 कुर्वीत खेदन सन्ध्यापूर्वमूलकायकैः ॥
 रक्तप्राधान्येने रोगे बध्मनो रूषिरच्युती ।
 मलिन विमिश्रन्तु शीते स्वादनुपायकम् ॥
 कर्तव्यं श्रेयान्ते रोगे नश्य तु लज्जुनादिभि ।
 इम प्राच्य रस रोगी सन्निपाताय नवयति ॥
 सुदृञ्च कुलक कल्प्य पथ्याये भिषजा सरा ॥”

इति रसाह्वारविषयादस्त्वस्यैवाप्रसन्नोऽसि । भावनाविशेषेण प्रीति
 श्रेदनेव तदनुष्ठानं क्लृप्तं एव रस सन्धादिना ।
 भाषा—शुद्ध पारा और आठौंलहौंकीभस्में १-१ भाग,
 शुद्धगन्धक २ भाग लेकर नीलवर्णकजलीकर भाक्षी, जेंती,
 निर्गुण्डी, कुचिला, पुनर्नवा, कालादागा, गोकर्ण, आककादृध,
 कलाधयूरा, भग्रा, अड्सा, मन्वय इनेप्रत्येकके द्वौसे २-३
 दिन मर्दनकर मछली, भेंसा, मोर इनेकेपित्तौसे १-१ भावना
 देवे । फिर सोंक, जीवन्ती, रास्त्रा, असगन्ध, पान, कचूर, सोंठ

इलायची, अन्धाहली, तुलसी, तज, तत्कालउत्पन्नहृए बालक्री-
 विष्टा, पीपल और गोखरू सब समभागलेकर बारीकचूर्णकर
 इनकी मूपायनाय पूर्वोक्तसको इसमें रखकर हण्डोमें बन्दकर
 पञ्चमिष्टीसे मुखमुद्रा देकर १ दिनकी मन्दाप्रितसे पकावे ।
 स्वाङ्गशीतलोनेपर पूर्वोक्त औषधियोंके स्वरस और पित्तौसे
 १-१ भावना देकर रखोडे । इसमेंसे २-३ रती दशमूल
 अथवा निर्गुण्डीके काठकेसाय देनेसे यह समस्तसन्निपातौको
 गेटकरताडे । अत्यन्तमूलगनेम यथेष्टभोजनदेवे ॥ ५८८ ॥

५८९ स्वच्छन्दभैरवसः (पष्ठः)

समभागांश्च सङ्गृह्य पारदाभृतगन्धकान् ।
 जातीफलस्य भागाद्द्वै दत्त्वा कुयांच कज्जलीम् २४८९
 सर्वाद्द्वै पिपलीचूर्णं खल्वयित्वा निधापयेत् ।
 गुञ्जैकां वा द्विगुञ्जं वा नागवह्नीद्वलैः सह ॥ २४९० ॥
 आर्द्रकस्य रसेनापि द्रोणपुष्पीरसेन वा ।
 शीतज्वरे सन्निपाते विस्त्र्यां विपमज्वरे ॥ २४९१ ॥
 पानसे च प्रतिश्याये ज्वरेऽर्जौणं तथैव च ।
 मन्देऽग्नौ वमने चैव शिरोरोगे च दारुणे ॥ २४९२ ॥
 प्रयोज्यो भिषजा सम्यग्रसः स्वच्छन्दभैरवः ।
 पथ्यं दयोदनं दद्याद्द्वीश्वय दोषबलावलम् ॥ २४९३ ॥
 भै र, र. को, र. सु, वै. र, व रा, र. झा, टो, र वा,
 र क यो., र र कौ, या., र. पा, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बडनाग और गन्धक १-१ भागकी
 नीलवर्णकजलीकर जायफल आधाभाग मिलाकर १-२ पहर
 मर्दनकर सबसे आधा पीपलफाचूर्ण मिलाकर रखोडे । इसमेंसे
 १ अथवा २ रती पान, अदरक अथवा घूमकेस्वरसकेसाथ
 देनेसे शीतज्वर, सन्निपात, विस्तुचिका, विपमज्वर, पानस,
 प्रतिश्याय, ज्वर, अजीर्ण, मन्दाग्नि, वमन, भयङ्कर शिरोरोग
 इनसबको यह नष्टकरताडे । दोषोंका बलावल देखकर दहीमात
 अथवा अन्यवस्तु पथ्यमें देवे ॥ ५८९ ॥

५९० स्वच्छन्दभैरवसः (सप्तमः)

तीक्ष्णायस्कांतगोदन्तमाक्षिके मर्दितो रसः ।
 समंशांगन्धकः पक्वो हण्डिकायश्चमध्यमः ॥ २४९४ ॥
 व्योपाग्निमन्यसुरसाकन्ददृष्टह्यभयाविपैः ।
 समैःसमं यद्दहं मुण्डोनिर्गुण्डोरसपिण्डितः ॥२४९५॥
 सेवित शमयेद्द्वैतास्त्रास्त्रा स्वच्छन्दभैरवः ।
 विशोपाह्वारत्तकञ्च द्वियह्यञ्चार्द्रके लिहैत् ॥ २४९६ ॥
 र र. स, वातव्याप्यधिकारे ।

भाषा—होलाद, सुष्यक, गोदन्ती, सोनामाक्षी इनकी-
 भस्में, शुद्ध पारा और गन्धक सयसमभागकी नीलवर्ण-
 कजलीकर चिकनीहडोमें रख कोयलोर लोहेकीशगनामे
 चत्रताहुआ एकपहर पाकरे । गन्धकजलजानेस उतारकर
 रसको निकाले । फिर इसमें त्रिकटु, अरणी, तुलसी, सूरण,
 काङ्गझसीमी, हरे और बजनाग सब समभागका बारीकचूर्णकर

पूर्वसकीयवावर मिलाय गोरखमुण्डी और निगुण्डीकेस्वरससे २-२ दिन मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अदरखके रवकेसाथदेनेसे समस्त वात-विकार और विशेषकर वातरक्त नष्टहोताहै ॥ ५९० ॥

५९१ स्वच्छन्दभैरवरसः (अष्टमः)

सूतं नागाग्रकं लोहं हिङ्गुलं रसगन्धकौ ।
जेपालं तुल्यकञ्जात्र कासीसं दशमांशकम् ॥ २४९७ ॥
भावयेत्पञ्चभिः पित्तं जलयोगञ्च कारयेत् ।
सन्निपातहरः सूत एवः स्वच्छन्दभैरवः ॥ २४९८ ॥
र. शं., सन्निपाते ।

भाषा—नाग, अन्नक और कान्तलोह इनकीमल्लें, शुद्ध-दिगारिक, पारा, गन्धक और जमालगोटा १-१ भाग, कसीस-भस्म दशवांभागलेकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें जमाल-गोटके मिलाय पांचोपित्तोंसे १-१ भावना देकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानु-पानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातको नष्टकरताहै । दाहमात्म-होनेपर जलधाराका प्रयोगकरे ॥ ५९१ ॥

५९२ स्वच्छन्दभैरवरसः (नवमः)

गुडं सूतं विषं गन्धं नेपालं टङ्गुचित्रकम् ।
अर्कमूलकपायेण मर्दयेद्याममात्रकम् ॥ २४९९ ॥
दोलायन्त्रे पचेद्यामं गुञ्जामात्रं प्रदापयेत् ।
कोष्ठवातादिकान्वातान्स्वर्णानेय विनाशयेत् ॥ २५०० ॥
व. रा., वै. वि., कोष्ठवाते ।

भाषा—शुद्ध पारा, बज्रनाग, गन्धक, जमालगोटा, सुहागा और चित्रकमूल सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर आककी जड़कीछालकेकोड़ेसे १ पहर मर्दनकर आकके काटेंमें दोलायन्त्रसे १ पहर स्वेदनकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-वातविकारोंको नष्टकरताहै ॥ ५९२ ॥

५९३ स्वच्छन्दभैरवरसः (दशमः)

गुडसूतस्य गद्याणान्द्रश यन्ने हि भूधरे ।
क्षित्वा गन्धकजं देयं षोडशांशं पुटे पुटे ॥ २५०१ ॥
एवं शतपुटे जार्यः पद्भुणः शुद्धगन्धकः ।
अधोवन्नप्रपिधानेन मुखमाच्छादयेद् दृढम् ॥ २५०२ ॥
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा वारम्बारं पुटेच्छतम् ।
एकैकञ्च पुटे देयं वैदेवैद्वैश्च गोमयैः ॥ २५०३ ॥
एवं पुटशतं दृत्वा निष्कास्यो भूधराद्रसः ।
तिथिवर्णसुवर्णस्य स्यस्यस्यापुत्तमस्य च ॥ २५०४ ॥
ताम्रस्याप्यतिशुद्धस्य शुद्धकान्तायसोऽपि च ।
तथा चाप्रकसत्पर्यैकेको गद्याणकः पृथक् ॥ २५०५ ॥
पञ्चानां पञ्च गद्याणानेकप्राचयतेत्युधीः ।
खोटमायतयित्वा च कुर्याच्चर्णं सुसूक्ष्मकम् ॥ २५०६ ॥

पुटोत्तौर्णं रसं क्षिप्त्वा सुपेप्यमतिसूक्ष्मकम् ।
तिथिगद्याणकानाञ्च पिष्टिः स्यादतिसुन्दरा ॥ २५०७ ॥
विंशते निम्बुकानाञ्च खण्डकानि विनिःक्षिपेत् ।
काञ्जिके लघणोपेते स्थालिकायां शनैः मुहुः ॥ २५०८ ॥
दोलायन्त्रेण तां पिष्टिं स्वेदयेच्च दिनत्रयम् ।
काञ्जिकेन समं स्पर्शां निपेदय्यः स्वेदने सदा ॥ २५०९ ॥
खल्वे पञ्चदश क्षेप्या गद्याणाः शुद्धगन्धकात् ।
पिष्टयाः पञ्चदश क्षेप्यामिध्रांस्त्रिंशच्च पेपयेत् ॥ २५१० ॥
सर्वस्य कज्जलीं खल्वे वज्रोक्षीरेण वासरम् ।
दिनेकञ्चार्कदुग्धेन पिष्ट्वा कृत्वा च गोलकम् ॥ २५११ ॥
क्षिप्त्वा सुभूधरे यन्ने पिधानञ्च मुखे न्यसेत् ।
मुखं वस्त्रमृदा लिप्त्वा अष्टभिर्गोमयैः पुटम् ॥ २५१२ ॥
एकैकं चाष्टभिर्देयं छानकैः पुटमष्टभिः ।
त्रयोदश पुटानि स्यु विना कपटमुत्तिकाम् ॥ २५१३ ॥
द्वारं नोद्गाटनीयञ्च भस्म सञ्चालयन्मुहुः ।
चतुर्दशपुटे जातः सिन्दूरामः सुगोलकः ॥ २५१४ ॥
खल्वे कृत्वा च तच्चर्णमेभिश्च भेषजैः पुटेत् ।
त्रिकटो घोरिणा पूर्वं त्वेकविंशतिभावनाः ॥ २५१५ ॥
सप्तार्द्रकरसेनैव सप्त कण्टकशीलिनः ।
फणिनागविपस्यापि गद्याणापञ्च निक्षिपेत् ॥ २५१६ ॥
श्रीखण्डेन प्रदातव्या पञ्चादेकैव भावना ।
तच्चर्णं कुम्भके क्षेप्यं भवेत्स्वच्छन्दभैरवः ॥ २५१७ ॥
प्रत्यहञ्च समुत्थाय रक्तिमात्रञ्च रोगिभिः ।
अनिच्छिन्नो रसो ब्राह्मो शीतने पयसा समम् २५१८ ॥
सर्वेषु च प्रमेहेषु शूलेषु विविधेषु च ।
सयश्मसन्निपातेषु समस्तेष्वपि वायुषु ॥ २५१९ ॥
अतीसारेषु सर्वेषु रक्तातीसारवर्जितः ।
रोमहर्षेषु मेदस्सु समस्तेषुदरेषु च ॥ २५२० ॥
यज्ञकोष्ठे च मन्दाशी गन्धे च वातरक्तना ।
कासे श्वासे तथा शोफेऽजीर्णके श्लेष्मसम्भवे २५२१ ॥
श्वेतवर्जितकुष्ठेषु देयः सप्तदशस्वपि ।
ज्वरेषु च समस्तेषु पित्तज्वरविवाञ्जितः ॥ २५२२ ॥
ज्वरेषु राज्ञो दातव्यो न प्रभाते कदाचन ।
तैलक्षाराम्लवर्ज्यञ्च भोज्यं मधुरभोजनम् ॥ २५२३ ॥
मासेकानन्तरं रोगाद्दिमुच्येत शनैः ध्रुवम् ।
वलयानुचयी शूरो तेजस्वी जायते नरः ॥ २५२४ ॥
र. कं. ली., स्वराधिकार ।

भाषा—पांचतोले शुद्धपारेपर सोलहवां हिस्सा गन्धककाचूर्ण छिड़कर मूथरयन्नकी इतनी आंचदेवे कि गन्धकमात्र जलजाय (जलही छूटे छोटे कण्डोंसे अधिक आंच न दे) ऐसे १०० पुटे देकर पद्भुणगन्धक जाणकरे । फिर विशुद्धसुवर्ण, रजत, ताम्र, कान्त और अन्नकसत्पर ६-६ मांशलेकर एकत्रगढ़ गलाय पारको मिलाकर खोट तैयारकरे, पर यह ध्यान रखते कि पारा पड़नेसे गलीहुई धातुएं उड़ाकरतीहैं ऐसा न होनेपावे ।

इसके बाद नीचूकेरसे मर्दनकर गोलीबनाय ४ दह मलमलके कपड़ेमें रखकर लवणयुक्तकाञ्चीको हंडीमेंभर २० नीचुओंके डूकड़े करके डालदे और ऊपर गोलीको छटकादे । नीचेसे ३ दिनतक इतनी मन्द आंचदे कि पोखरीको केवल वाष्पही लगे उफान न आवे । स्वाशरीतलहोनेपर निकालकर पिटीको खर-लमें डाल जा तोले शुद्ध गन्धकके साथ नीलवर्णकज्वली करे । फिर भूकर और आककेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर ८ जहलीकण्डोंकी भूकरपुटमें आंचदे परन्तु सम्पुटका मुह न खोले । १४ पुटोंमें यह सिन्दूरवर्णना होजायगा । फिर इसको खरलमें डाल त्रिकुटुकेवापसे ११, अदरस और भट्टकैय्याकेरसे ७-७ भावनाएं देकर फणीकाले-सर्पकापि २॥ तोले डालकर सुपावे और चन्दनकेपट्टकी एक भावना देकर सुपाकर शीशीमें रखलोहे । इसमेंसे १-१ रती श्रात काल ठंके जलरेवाय श्रांतिदिनलेवे । इससे समस्तप्रनेह, मानाहरदहेचूले, राजयक्ष्म, समस्तननिपात, वातरोग, रफाति-सा(कोछोइकर समस्त अतिसार, रोमहृष, मेदोरोग, सप्रकारके उदररोग, बद्धकोष्ठा, गन्दाभि, शुल्म, वातरक, वास, खास, शोथ, कफज अजीर्ण, धिररहितसमस्तपुष्ट, पित्तवर्जितसमस्त-ज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । ज्वरोंमें रात्रिमें देना सबेरे नहीं । तैल, क्षार और सटाईको छोड़कर मधुर भोजनकरे । एक महीनेके प्रयोगसे धीरे २ समस्तव्याधियां नष्टहोजातीहै ५९३

५९४ स्वच्छन्दभैरवरसः (एकादशः)

रसगन्धककुष्ठमें भूत्या सहितैश्च मरिचकै द्विगुणैः । तत्समरूपद्वयैर्षुण्यैः स्वच्छन्दभैरवो नामः ॥ २५२५ ॥ कफघातदोषशमनं कुरुते स्वच्छन्दभोजनेनापि । प्रतिदिशसमेकमापप्रमाणतः पुष्टिदो भवति ॥ २५२६ ॥

र. (मा.), रससारसद्भद, कफघाताधिक्ये ।
भाषा—शुद्ध धारा, गन्धक, बाउची, जहलीकण्डोंकीरास १-१ भाग, मरिच और कौडीभम्भ २-२ भागलेकर बारीक-चूर्णकर पोरिगन्धकही नीलवर्णकज्वलीमें मिलाय एकदिन शुष्क-मर्दनकर रखलोहे । इसमेंसे १-१ माथा रोग अथवा समयो-विनाशुपाननेसाय देनेसे यह कफघाताधिक्यको नष्टकरताहै ५९४

५९५ स्वर्जिहारादियोगः

स्वर्जिका यायशकञ्च विजयातिविषया समम् । दीप्यकं पारदं गन्धं निम्बुनीरेण भावयेत् ॥ २५२७ ॥ माषार्द्धं मधुना देयं सितया धृत्नान्वितम् । अनुदद्याद्बह्व्यतिश्वरातीसारदान्तापे ॥ सशूलशोथसहितं प्रहृण्यति प्रणाशयेत् ॥ २५२८ ॥

निर., प्रहृण्यधिकारे ।
भाषा—समी, यमशार, मांश, अनोच, अजवाइन, शुद्ध-पासा और गन्धक समभाग लेकर बारीकचूर्णकर पोरिगन्धकही नीलवर्णकज्वलीमें मिलाय नीचूकरमरी १ भावना देकर आपे-आपे मासोकीगोलिये बनाकर रखलोहे । इनमेंसे १-१ गोली

मधु, क्षार अथवा धीकेसाय देनेसे प्रहृणी, ज्वरातिसार, चूल और शोथनहित प्रहृणी इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ५९५ ॥

५९६ स्वयमभिरसः

शुद्धं सतं द्विधा गन्धं कुर्यात्खल्वेन कज्जलीम् । तयोः समं तीक्ष्णचूर्णं मर्दयेत्कन्यकाद्रवैः ॥ २५२९ ॥ द्वियामान्ते कृतं गोलं ताप्रपात्रे विनिक्षिपेत् । आच्छाद्यैरुण्डपत्रेण यामार्द्धंऽस्त्युष्णता भवेत् ॥ २५३० ॥ धान्यराशौ न्यसेत्पश्चात्त्रिदिनान्ते समुद्धरेत् । सञ्चूर्ण्य गालयेद्रत्ने सत्यं चारितरं भवेत् ॥ २५३१ ॥ भावयेत्कन्यकाद्रवैः सतथा भृङ्गजैस्तथा । कफमाचीकुण्डोत्थद्रवैर्मुण्ड्याः पुनर्नवैः ॥ २५३२ ॥ सहृद्व्यमृतानीलीनिर्गुण्डाधिप्रज्ञैस्तथा । सतथा तु पृथग्द्रवैर्भायं शोष्यं तथाऽऽपते २५३३ ॥ क्षिद्रयोगोऽयमा ख्यातः सिद्धानाञ्च मुखागतः । अनुभूतो मया सत्यं सर्वरोगगणापहः ॥ २५३४ ॥ स्वर्णादीन्मारयेदेवं चूर्णाहित्य तु लोहघत । त्रिफलाभयसंयुक्तं सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २५३५ ॥ त्रिकुटुत्रिफलेलाभिर्जातीफलत्वचङ्गकैः । नश्रभागोन्मिर्तैरैः समः पूर्वैरसो भवेत् ॥ २५३६ ॥ सञ्चूर्ण्यालोडयेत्सोद्रे भैर्यं मापप्रमाणरुम् । स्वयमभिरसो नाम्ना क्षयकासनिवृत्तनः ॥ २५३७ ॥ शा. सं., वै. द., वै. क., र. र. घ., नि. र., सचि, भा. प्र., व. रा., र. प्र., भै. सा., रसायनसं., र. सं., र. को., र. थो., र. का, वै. चि., र. क. व., र. शि., र. र., र. कौ., क्षयाधिकारे ।
टि०—बहुपु पुल्लेपु “शुद्धवारणिकामुत्र शूरीरणाश्रिते मह । मत्प्रेष्येक्षयकामार्गो मायनात्र प्रयान्तवै ॥” इत्यधिकं पाठो इदमे पर तत्र शुद्धवारणिकामुत्रस्य रेचकत्वात्पत्नीतिनि स्वादिचनस्य तत्रैव उभया विद्युदय योजनीयम् । र. प्र., भै. सा., एतयोर्बर्तनीकल्पवृक्षे स्थापनुपान विन्यस्य अनिष्मारित लोह मवेनुव्य विभिधयेदिनि मार-यित्वा स्वयमभिरससम्बन्धं प्रदर्शितम् । र. वि, थो. म, र. (मा.), र. मि, रसायनम, भा म एतु प्रनेपु—

“शुद्ध गत द्विधा गन्धं सन्ने धृष्टा तु कज्जलीम् । तयोः समं बालनीहमवाये तस्य तीक्ष्णकम् ॥ सर्वत्र देवर्त्रेति मरिचं कन्यकाद्रवैः । यामदय सत पश्चात्त्रैत ताप्रपात्रे ॥ भाच्छाद्यैरुण्डपत्रेषु धान्यराशौ निष्पाप्येत् । विदिनान्ते समुद्धृतं त्रि चारितरं भवेत् ॥ कुमारीपुत्रवैरप्ये कफमापी पुनर्नवैः । तीली मुष्टी च निर्गुण्डी सरदेसी क्षयावरी ॥ अल्पानी गोपुरक कण्टकम् बटाइरम् । ज्वेषां भावयद्वादेः गतवराण्युत्पन्नरुम् ॥ ज्वर्णपित्तकफोपरादीनाञ्च कषायकं । शुष्कैर्द्विदिनेभ्य चूर्णं सममेकरुद्राभिपम् ॥ बरा शोषाश्रितिविषेण यन्शोष्यत्करुद्राभम् । मधोव्य कपुटाऽऽश्लेषा निमद्रे भवेत्तरा ॥ राशौ विरेक्यां क्षीरं कृष्णान्नं दिनेन । भ्रमणराजराजपुत्रेणैव निरवदेत् ॥

वीर्यवृद्धिकर श्रेष्ठ रामादातसुखप्रदम् ।
तावत्र च्यवत वीर्यं यावद्रमल न सेवेत ॥
दीपन वान्तिर पुष्टिष्टिस्त्वितिना सदा ।
सुगुप्त कथितं यद् मिन्दोदयेश्वराभिध ॥”

इति पाठो निहितोऽस्ति तत्र भावनानामेतदपश्यता वृद्धत्वम् । रस
नियान्दरप्रवारस्तु षण् क्त्वाऽस्ति । शा स, नि र, र सु, मै सा,
रमायनम्, र. वा, प्यु ग्रन्थेषु लोहरसायन नाम्ना—

“शुद्ध रसेन्द्र भागैर् द्दिगार गृह्णन्धनम् ।
क्षिपत्स्व ज्वलिका कुरवा तत्र तीक्ष्णभव रत्न ॥
क्षिपत्वा कञ्जलिक्कानुत्थ प्रदरेव विमर्देदेव ।
तत्र कन्याद्रव्ये सत्त्वे निदिन परिमर्देदेव ॥
नत मन्थयने तत्र सोष्णो धूम्रोद्गमो महान् ।
अत्यन्त पिण्णित कृत्वा साधुपात्रे निधाय च ॥
मध्ये धान्यैश्चयुत्थ स्व मिदिन धारदेदुष ।
उद्धृत्य तस्मात्सत्त्वे च क्षिपत्वा धर्मं निधायैव ॥
रमे कुटारच्छिद्रायास्त्रिकम् परिभावयेत् ।
सशोथ धर्मं वापेश्व भावयेत्त्रिभ्रदोक्षिपा ।
वासास्तृनाथिनकाया रसे मौल्य क्रमात्क्षिपा ॥
लोहपात्रे तत्र क्षिपत्वा भावयेत्त्रिभ्रदोक्षि ॥
निगुण्णद्रादिमत्त्वमिं विन सङ्कतुरण्टकै ।
पलाशकदलीद्रावे वीर्यकस्य श्रुतेन वा ॥
नीलिकाकालुपाद्रावे वैष्ण्वलफ्लिकारसे ।
त्रिभ्रिचेल यथाशाम भावयेदभिरुपे ॥
भावयेत्त्रिभ्रिचेल ततो नागवज्ररामे ॥
बलवतीगाधुरामि पातालभररामे ॥
तत्र प्रातः शिष्टिद्रायाभ्या कोरनाग्रकम् ।
पन्मत्र वरावाथ विवेदस्वानुपायकम् ॥
मामत्रय शीलित्वा श्याङ्गलोपस्त्रिनाशनम् ।
मन्दाभि श्वासकासो च पाण्डुता कफमारतो ॥
पिप्पलीभ्युप्युक्त हन्यतेनत्र शयय ।
वातास मूत्रदागंध भ्रदार्थो तोषया रुचम् ॥
अष्टशुद्धि जयेदेतच्छिद्रासत्त्वमपुण्ड्रम् ।
बलवर्णकर, वृष्णमापुष परम श्रुतम् ॥
दूष्माण्ड निन्दैलत्र नरात्र रात्रिका तथा ।
मयमस्त्ररमधैव त्यजेतोहस्य सवक ॥”

इति पाठो निहिताऽस्ति । अत्रापि मूलापादात्रावनास्वनि विस्र
राऽस्ति । रसनिर्माणरीत्या नास्ति वनिदिदेपता । किञ्चि पाठेषु
क्षयनापनेमभिरुते रत्न, भावनाथ सर्वा अपि ण्डद्रवायाऽधिकारोपयुक्ता
पत्र द्रव्येने । कस्यामिदमि भावनायां प्रनिर्गुल्ल न दस्यते अतस्त्रि
पादास्तमुपाच मर्वाभि भावनामभिरक एव पाठ सस्युपाच इत्यप्याक
ममनि । भावनानां कामस्त्वयानिर्दिष्टमण वरणीय स यथा—नुमारी,
वायम्पार्थ, पुनर्नवा, स्रदन्वी, शुद्धगी, नीर्य, मिष्टुण्ड, चित्रर,
चाहरी, कुटत्र, वासा, दामिन्, सामरागी, मूष्ण, त्रिकला, बदादुर,
पातालगरमी, कर्णी, सुष्टिनिवा, मृगाल, गापुत्रक, कन्दुमूल, वुर
ष्टक, यक्ष, बन्वा, नागवन्वा, कम्पलफ्लिका, शलात्री, बीजवनिनाय,
पलाशाङ्गस्त्ररमेभि मस्यक एत मन्वना दानन्वा इति ॥

भाषा—शुद्धपारा १ भाग, गन्धक २ मागदो नीलवर्ण-
कदलीकर उदरीवरात्र पालाददा बारीधरेता अलहर पीड-
वारके रम्ये दोपदर मर्दनकर गोलावनाय तावके पात्रमे रस
एण्डपेत्तत्रेणनीसो टडकर कङ्गीधूमं रसदे । आधे परमे यद

अत्यन्तगरमहोजायगा फिर इसे जर्नी पत्तोसे लपेटकर कचेडोरसे
बाध अत्रकी राशिमें दबादे । तीनदिनवाद निकालकर रखलकर
वक्त्रमें छानलेवे इसकी वारितर भस्महोगी । फिर धौडुंवार,
भगरा, मकोय, पीयावासा, गोरखमुग्गे, पुनर्नवा, सहदेवी,
गिलोय, कालादाना अथवा नील, निगुण्डो और चित्रकके
ययासम्भव स्वस अथवा काथोसे ७-७ भावनाएं कङ्गीधूममें
देवे । यह सिद्धयोगहे सिद्धपरम्परासे चला आताहै और कई-
वारका अनुसृतहै । त्रिकला और मधुकेसाथ उचितमानामें
देनेसे यह सबरोगोंपर कामकरताहै । इसीप्रक्रियासेसुवर्णादि
धातुओंकी भी भस्महोतीहै ।

विशेषवचन—इसे अमिसम्पर्क जनक नहीं होता तभी
तक यह वारितर रहतीहै अमिसंयोगहोनेकेबाद पारद गन्धक
उड़जाताहै और केवल धातु पानीमें ह्वजातीहै ॥ ५९६ ॥

५९७ स्वरप्रसादकरसः

पारदं गन्धकं तुल्यं तालकञ्च मनःशिला ।
मर्द्यं तुल्यं पञ्चसोलजलैस्तु दिवसत्रयम् ॥ २५२८ ॥
ततः पृटेद्रजपुटे शरपुह्नाजले; पुनः ।
सम्मद्यं पाचयद्भ्यस्ततः सिद्धो भवेद्रसः ॥ २५३९ ॥
स्वरप्रसादको नाम रसोऽयं दृष्टचिक्रमः ।
पणालण्डेन दातव्यो गुञ्जाद्वयमितो बुधैः ॥
गुञ्जाद्रकेण मद्येन पिप्पलीमधुनाऽथवा ॥ २५४० ॥
र. म. मा, र सु, ना वि, स्वरमेदे ।

भाषा—शुद्ध पारद, गन्धक, हरिताल, और मैनसिल सम
भागकी नीलवर्णकदलीकर पञ्चसोलकेबापसे ३ दिन मर्दनकर
गोलावनाय शरावसमुद्रमें बन्दकर गजपुटकीआचदे । स्वाङ्ग-
शीतलहोनेपर निकालकर ३ दिन शरपुह्नेस्वरसमें मर्दनकर
पूर्ववद गजपुटकी आचदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर
रखओहे । इसमेंसे २-२ रत्ती पान, गुड, अदरक, मयअथवा
पीपल और मधु इनमेंसे किसीभी अनुपायके साथ लेनेसे स्वरभर
नष्टहोताहै ॥ ५९७ ॥

५९८ स्वरभेदहररसः (रसराज)

स्वरभेदप्रतीकारो रसरराजोऽय कथ्यते ।
रसत्रिगुणितो गन्धो द्रावयेहोहोपात्रके ॥ २५४१ ॥
दालयेत्कदलीपने साधयेदपि तेन तु ।
स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य मर्दयेत्पुष्पणाम्बुना ॥ २५४२ ॥
ततश्च जनुतक्रेण दिवसत्रितयं घृयच्छु ।
सिद्धो भयेदेप स्रतः स्वरभेदापहो भवेत् ॥ २५४३ ॥
गुञ्जाचतुष्टयं व्याप्य त्रिसुगन्धगुडेन तु ।
यद्रीपत्रकस्त्रेन घृतसेधययुक्तया ॥ २५४४ ॥
र, स्वरभेद ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भागकी नीलवर्ण-
कदलीकर धौपुनीहुदरीहोही कदलीमें गण्डकर गोथपर रम्ये
हुए केलेके पत्तीपर पंथीधनाय त्रिदृकेनाय, शिलाजीत और
तकसे ३-३ दिन मर्दनकर ४-४ रत्तीकी मोडिये बनाकर

अष्टादशप्रमेहांश्च हन्ति रोगाननेकशः ।
कामान्यर्थयते नृणां स्त्रीणामत्यन्तवह्लभः ॥
कथ्यते हरगौरीशो रसोऽयं पञ्चबाणकृत ॥ २५६० ॥
स्वायंसं., र. पा., प्रमेहाऽधिकारे ।

टि०—रसापिचते “एण्डुकुम्वङ्गोलेखन्नेन च मर्दयेत् ॥”
श्वषिक पाठो दृश्यते तथा च गोक्षीरस्थाने गोपूरण मर्दन विहितम् ॥
भाषा—पारा, अन्नक, सुवर्ण, रजत, यक्ष, सुवर्णमाक्षिक,
नाग, ताम्र, कान्त इनकी भस्में १-१ भाग, तालमखाने, केवाच
और अफीम ३-३ भाग लेकर शुक्रमर्दनकर गायबेदूध, सेम-
लकामुसला और तालमूलीके स्वत्सेसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६
रत्तीनी गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली धारर,
धी और दूधकेसाथलेनेसे यह उपद्रवसहित १० प्रकारके प्रमेहों-
कोनष्टकर पुष्टत्वको देताहै । ६०३ ॥

६०४ हरगौरीरसः (द्वितीय)

फज्जलां कारयित्वा तु तुल्ययो र्गन्धसूतयोः ।
बीजपूररसं शिष्ट्या मर्दयेत्कज्जलं दिनम् ॥ २५६१ ॥
फज्जल्या गोलकं कृत्वा महाकन्दोदरे क्षिपेत् ।
तस्यैव मज्जया कन्दं मृषावकत्रं निरोधयेत् ॥ २५६२ ॥
निरोधयेन्मृदा वस्त्रं ततो देयं पुटं तथा ।
यथार्कश्च निद्राये स्यात्पच्यते केवलो रसः ॥ २५६३ ॥
समाकृष्य ततः कन्दार्ज्जात्याऽन्ते स्वाङ्गरीतलम् ।
त्रिसप्त भायना देयास्तितलपर्णांनिजद्रवे ॥ २५६४ ॥
सम्भयं तज्जलेखं भायनाभावितं रसम् ।
काकमाचीरसैरेव मर्कटीस्वरसेस्तथा ॥ २५६५ ॥
शुष्कं तन्नूर्णितं कृत्वा योजयेत्पूषणैः समम् ।
पञ्चमि लवणैस्तद्वत्क्षाराणां त्रितयेन च ॥ २५६६ ॥
वह्लद्वयं प्रयुञ्जीत शृङ्गवेररसेः प्लुतम् ।
हन्त्यादक्षिभवं मान्यं वातरोगमशोपतः ॥ २५६७ ॥

र. क. यो., र. मृ., अमिमान्ये ।

भाषा—सप्तभाग अमिस्थायी पारे और गन्धकरी नील-
वर्णकज्जलीकर विजोरेररसेस एकदिन मर्दनकर गोलावनाय जूहरी-
सुरणके बीचमेंरख उषीकेदेसे सुवह्वन्दकर ६-७ कपडिमिठी
देकर सुखाकर गजपुटकी आचदेवे । स्वाङ्गरीतलहोनेपर निका-
लले इसका गर्माके महीनेमें दोपहरके सूर्यकेसहसा पाकहोगा ।
इनमें हुजुद्र, मकोय और केवाचके अन्नस्वरसेसे १-१ भागनाए
देकर त्रिकटु, पाचोनमक और तीनोंक्षार पूर्वसकी
बराबर मिलाकर ६-६ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखओड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली अद्रखके रसकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और
समस्त वातरोग नष्टहोतेहैं । ६०४ ॥

६०५ हरगौरीसृष्टिरसः

शुद्धं सूतं चतुर्भागं सूतार्द्धं सूतताम्रकम् ।
गन्धकश्च द्वयोस्तुल्यं मस्तुना मर्दयेदिनम् ॥ २५६८ ॥

गोलकं वन्धयेद्वह्ले वातुकायन्त्रं पचेत् ।
मन्दाग्निना पचेत्तावद्यावत्तासाश्च वातुकाः ॥ २५६९ ॥
स्पष्टं न क्षयते तापमथोद्भूत्य विचूर्णयेत् ।
धात्रीफलरसे र्भान्यं सप्तधा गोमयेन च ॥ २५७० ॥
शृङ्गचूर्णं ततः कृत्वा सर्वं क्षीरेण गोलयेत् ।
वह्लद्वयो वटी कुर्याद्वतमध्ये विपाचयेत् ॥ २५७१ ॥
स्वाङ्गरीताश्च तां ग्नादेत्प्रत्यहं पाचितां पृथैः ।
महिषीक्षीरसुलुकीमनुपानञ्च सर्वदा ॥ २५७२ ॥
हरगौरीसृष्टिरसः सर्वमेहकुलान्तकः ।
दुर्गार्द्धं घृतं पथ्यं शाकञ्चुफलं भवेत् ॥ २५७३ ॥

र. र., चि. र भ., र. को., व. रा., यो. म., र. का., प्रमेह ।

टि०—बहुत्र स्थाने ताम्रस्थाने अन्नक दृश्यते । र. वा. यत्तार्द्धं सूत-
ताम्रभित्तिस्थाने तनुल्यञ्च सूताम्रकमिति पाठ । बहुत्र स्थाने गोमय-
स्थाने गोसुत्र दृश्यते । योगमहापर्वे शुद्धमयन भागैक चतुर्भागं सूता-
म्रकमिति पाठो दृश्यते परन्तु द्वयोस्तुल्यगन्धनाममागमनात्पारदस्य
चतुर्भागां, ताम्रस्याप्रकल्प वा पारदार्द्धभागैश्च स्वीकर्तुं युक्तिया भि-
न्नाति, मात्राधिक्य तयोराधिक्येन सम्भवीति विद्वद्भिराकलीयम् ।
अत्र निष्कन्दयमात्राया अल्पचित्तया तत्स्थाने बहुद्रव्यमिति पाठ प्रक-
ल्पितस्तदनुपेक्षेन विद्वाद्भाग्यन्धकल्पयेदिति पाठो निष्कायित इति शुष्-
गिराकलीयम् ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, ताम्रभस्म ० भा., शुद्धगन्धक
६ भाग लेकर नीलवर्णकज्जलीकर दहीकेतोड़ेस एकदिन धोदकर
गोलावनाय ४ तह मलमलके कपडेमें लपेट बातुकायन्त्रमें रख
बहुतमन्दाग्निसे यथातक पकावे कि तमामवायु गरमहोजाय
और हाथ स्पर्शको सहन न करसके । स्वाङ्गरीतलहोनेपर निका-
लर आवले और गोबर्षेस्वरसेकी ७-७ भागनाए देकर
६-६ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली
प्रतिदिन धीमें पकाकर खावे करसे १ तुल्य भेसकादूध पीवे ।
इससे घमस्तप्रमेह नष्टहोतेहैं । इसमें पथ्य दूधमात, घृत और
कागलहरीका शाक देना ॥ ६०५ ॥

६०६ हररुद्ररसः (हरनेत्ररसः)

तीक्ष्णं शुल्वं नागतारं स्वर्णञ्च मारितं पृथक् ।
एकद्वित्रिचतुःपञ्च क्रमात्पदं शुद्धसूतकात् ॥ २५७४ ॥
चाङ्गुर्याश्च द्रव्ये र्मर्द्यं दिनेकं कृतगोलकम् ।
मृगाङ्कवत्पचेत्स्वाध्याय्यां धालुःशामिः प्रपूरितम् ॥ २५७५ ॥
उद्धृत्य चूर्णयेच्छृङ्गणं हररुद्रो रसोत्तमः ।
मृगाङ्कवत्क्षयं हन्ति तद्वन्माजानुपानकम् ॥ २५७६ ॥
नि र., र. र., र. को., वै. चि., र. का., क्षये । र. का. हर-
रुद्रेति नाम ।

भाषा—फोलाद, तावा, नाग, रजत, सुवर्ण इनकीभस्में
और शुद्धपारा कमशुद्धभागसे लेकर एकदिन शुक्रमर्दनकर अमलो-
नियानेखमें धोदकर गोलावनाय ४ तह मलमलकेकपडेमें लपेट
रारानसम्पुटकर बातुकायन्त्रमें रख एक अहोपात्रकी अग्नि देवे ।
स्वाङ्गरीतलहोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे १ से २ रत्ती-

तत्र समय अथवा रोगोपिनापानकेपाय देनेसे यह धायकी नष्टकरताहै ॥ ६०६ ॥

६०७ हरिचलाङ्गुलारसः

घनभयमृतमत्स्यं कान्तलोहार्कभस्म,
त्रिगुणरससमेतं तुल्यगन्धेन युतम् ।
समतुल्यतमेभिष्टुण ताप्यशूणं,
हरिद्वलमययाँलं सण्डसम्भं मनोम्रम् ॥ २०७७ ॥
हरति सखलशुष्टं सन्धिपातं सुचौरं,
भ्यसनकमनसहं सन्धिपातादिसङ्गम् ।
गन्धिराशिशालानां प्रायकफलादियोगे-
मन्त्रिचयवज्रभार्गाप्रायशूणादियोगे ॥ २५७८ ॥
र र. स, र को, पुष्पाधिकार ।

भाग्य—अत्रकण्ठ, कान्तलोह, क्षाप इनकीभस्मे १-१ भाग, छद्म पात्रा और कण्ठक ३-३ भाग, सुहाग, सोनाभागी, हरितालभस्म अथवा स्यामाशित्रय, हीराबोल और क्षार ९-९ भाग सेछर पागेकण्ठकी नीलकण्ठकीमीमे मिश्रण १-२ दिन पोटकर रगडोके । इनमेंमे ३-३ रती रोगोपिनापानकेपाय अथवा गीरागा, पाउचीका धाय और कण्ठ अथवा मरिच, यव क्षार और भारद्वाजेकाय अथवा शूणकेपाय औषधी देसकर देनेसे यह समस्तशु, पोरामिगत, भाग, काय, सन्धिपात प्रयतिरोगोको नष्टकरताहै ॥ ६०७ ॥

६०८ हरिद्राङ्गुररसः (गृहन्) ?

रसगन्धकलीहृद्य स्युषं पद्मञ्च माशिरकम् ।
समभागान्गु सन्धिपय घटिकां कारयेद्विषकम् ॥ २०७९ ॥
रसाहमामालद्राये भांयिनांशुयं रनेभ्यरः ।
हरिद्राङ्गुरनामाशुयं गहनानन्दभाषितम् ॥
प्रमेहान्घ्नियदति हृति सयं सयं न संदाय ॥ २०८० ॥
र रं, र रि, र गु, र यं, प्रमेह ।

भाग्य—पुत्र पात्रा और कण्ठक, मोद, सुहा, पड, मोन मागी इत्यादीभस्मे समभागसेर नीलकण्ठकीक्षर हरे और लोदरेके ७ दिनक मरनकर १-१ रतीकी कोषिकेकाकर रताओके । इनमेंमे १-१ लोनी औरनेरेस अथवा उषिनापु फनोकेपाय देनेसे यह २० प्रकारके प्रमेहोको नष्टकरताहै ॥ ६०८ ॥

६०९ हरिद्राङ्गुररसः (द्वितीय)

शुभ्रशुभ्राक्षरं सुष्यं धार्श्रवण्यदिताश्रये ।
रसाहं भाययेररत्ने योगाशुये हरिद्राङ्गुर ॥ २०८१ ॥
भाग्यभात्रां घटिकां खादेकापानप्रदानाय ।
महाशिरस्यस्य धांजानि पूषंरगायपेक्षु ॥ २०८२ ॥
र रं, र क स र र ग र र को, र को, रि र र को
र र, को र. र. गु, रे वि र को र, र रं, र क, र वि,
को म, वि र म, रे को र लण्ड्या, र. क, रे क र र
रं, र. स, र म स, २२६ ।

त्रि—पुष्पाङ्गुरातयां निलम्बभवनं न हस्यो । र. रं, र. स, रययय, र रि, र म, र रि, र गु, र गु म्नेपु प्रमेहकेपु (शूणु) नम्या " म्नाजं कर्णो मरनेनरद्वय । रिनेपु एक शूषयां मरंतेमे प्रदीतेरे ॥ शिगेकम्हागु विरामकपुष्पम् । पुष्पेन कर्णेकपु रोगेकाशुय वेदात् ॥ " इति वज्रे शिपिदिशि यव स्यात्प्रमेहनिदानादिना श्रुत्या हरिद्राङ्गुराणि सन्धि, कर्णभस्म-देनमन्त्रिचय हरिद्राङ्गुराणां पाठ इत्येति । कर्णानु हरिद्राङ्गुराणि कर्णोपिनापानं प्रमेहोप्य स्यात् स्यात्स्येति ॥

भाषा—पात्रा और अत्रकमन समभागसेर आधेने और हृदिके खलोको ७-७ भागनाए देकर १-१ मासेकी गोशिये बनाकर रगडोके । इनमेंमे १-१ गोली यनोपिनापानकेपाय देनेसे यह काल और नीलकण्ठको नष्टकरताहै ॥ ६०९ ॥

६१० हरिहररसः

अधातः सम्प्रत्ययामि रसं परमदुर्लभम् ।
रसं हरिहरं नासा मृन्मुदादिघनादानम् ॥ २०८३ ॥
पूर्याकं संसृजं मृतं नागामनयञ्च तत्समम् ।
द्रव्यं समं तालसत्तं मत्स्यं माशिरजं समभागम् ॥ २०८४ ॥
ताम्रमरमाद्यभागेन लोहमस्य तथैव च ।
शर्पंरं स्यंतुल्यञ्च दिग्ना स्येसमा तथा ॥ २०८५ ॥
काकमार्चांशुयं मांष्यं त्रिदिनं सत्ययेद् रटम् ।
काञ्चरुप्यांततः शिष्या जल्पयस्य मण्यगम् ॥ २०८६ ॥
द्वारिणं वासरानघी स्याद्गतीने समुद्यतम् ।
तत्समे गन्धकं योग्यमघांरो नगारादरे ॥ २०८७ ॥
मिही प्यामीं मृगीं हंसीं चण्डीं कालीं च पेलिका ।
पलासां म्यरमे मांष्यं मतथा च पूषक पूषक ॥ २०८८ ॥
पूषकित्तं च कण्ठेन पूषेगुत्तं हटाग्रिना ।
स्याद्गतीने तता गोया पूषयेकपयागिनीः ॥ २०८९ ॥
मृदुर्षं पेषयेदित्यं अगमृन्मुनिपारण ।
पेषयेचन्द्रमूषेण करोति कानर्षीं महाम् ॥ २०९० ॥
राजिषाद्गामं भागं त्रिदिनं मशयदुष्य ।
घट्टच्छायायारित्यं काये वासरत्रिनयेन च ॥ २०९१ ॥
घट्टीपलितनिमुंको पृष्ठा भयनि योयने ।
भ्येनेदो भयेषुपा सासाद् रटं म तु धुतम् २०९२ ॥
आदी रटः एतः शिष्यः पद्याङ्गुरा मया एत ।
गुस्पर्गीशीतथा शानं पाञ्चुकामलभ्यागकात् २०९३ ॥
कामपरमशयं शूलं वृष्ठाद्द्वारान्तथा ।
प्रमेहान्घ्नियदतिशयं जयं सयं निरुत्तयेत् ॥ २०९४ ॥
आध्यानशाश्रुत्परीरतिमारानामन्तरम् ।
अदमर्षीं हृति मा विर्यं सप्रिशासांशुयदाद् २०९५ ॥
अरिषदांरं शिरोगं विरं स्यापरजङ्गमा ।
शरेषांरं शिरोगायु देदं सोदं च शिष्यपति २०९६ ॥
लण्ड्या, रण्ड्ये ।

भाषा—हरिहरके हृदिकेकपुष्प का और कण्ठक १-१ भाग, अत्रकमन और शिपिदिशि १-१ भाग, कण्ठ

और लोहभस्म ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैनसिल २२-२० भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी शीशीमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हठामि देवे । स्वाइशीतलहोनेपर निकालकर उसकीवरावर शुद्धगन्धक और अष्टमाश नवसादर मिलाकर सिंही १, ज्याम्री १, मूगी १, हंसी १, चण्डी १, काली १, वेणिका १, (ये सात औषधिये सङ्केतप्रधान नामसे लिखींहे और योगकर्तनि उनका कोई विवरण नहीं दियाहे इसलिये खास अमुकही वस्तुएँहे यह कहना बहुतदुस्तरहे । परन्तु रसशास्त्रमें जिनसे कामलिखाजाताहे उसहिस्सावसे सिंही=सपेदभट्टकटैया, ज्याम्री=सपेदवनभाटा, मूगी=हिरण्युरी, हंसी=हसराज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, वेणिका=आकाशवेल् इनका ग्रहणकरना उचितहे ।) इनसेस्वरसांसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हठामिदेवे । स्वाइशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े । यह सहस्त्रवेधी होताहे और जराभृत्कुकी दूररताहे । धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों कियाए इससे सिद्धहोतीहैं । शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवा हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहाँ रखवे । भूपल्यनेपर गोदुग्धदेवे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे वलीपलितसे त्रिमुक्ताहोकर जराजीर्णभी आदमी पुन युवावस्थामें आजाताहे इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये । गुल्म, पीडा, बवासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयदम, क्षय, झूल, १८ प्रकारकेडुष्ट, २० प्रमेह, समस्तन्वर, आम्भान, शोथ, प्रहणी, अतिसार, भगन्दर, पथरी, १३ सन्निपात, अस्थिघ्न, शिरोरोग, स्थावर और जडमविष, इनसबको यह नष्टकरताहे । देह और लोह दोनोंमें सदृशकाम करताहे । यद्वाकाली नामकवनस्पतिकेस्थानमें जो हीरवी लिखीहे वह कामानके पद्मरुमें होतीहे और जङ्गलीलोग इसीनामसे परिचितहे । इसकी लता दोफुटतकलम्बी होतीहे पत्ते शुद्धमारके सदृशहोतेहे बार नीचे तैलियारंगकाकन्दहोताहे तथा ज़हरीहे । यह पारेको इततह कायमकरती हे । ६१० ॥

६११ हरीतकीपाकः

प्रस्यमेकं शिवानाञ्च जलद्रोणे निधापयेत् ।
द्विप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७
ग्रन्थिकं चित्रको भाङ्गं शङ्खपुष्पी शटी बला ।
विश्वामामांगंमेधाञ्च पुष्करं गजपिप्ली ॥ २५९८ ॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।
अष्टांशे निःश्रुते चैषां पथ्याः पिष्ट्वा पचेत्ततः २५९९
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोवृत्तं पलपञ्चकम् ।
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धानिका ॥ २६०० ॥
द्वीप्याश्वी जातिपनी च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम् ।
चूर्णमेपां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम् ॥ २६०१ ॥
पठ्यापाक इति ख्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टियलप्रदः ॥ २६०२ ॥

रसकोपे ग्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृता ।
गुदामये श्वासकासे चातरक्ते हितो मतः ॥ २६०३ ॥
वै. वि., जीर्णज्वरादी ।

भाषा—इशमूल २ प्रस्थ, जव १॥ प्रस्थ, गधिन, चिन्क, भारती, शङ्खाह्वली, कचूर, बला, सोठ, अपामार्ग, नागरमोधा, पोद्दरमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जवयुत्त चूर्णकर दोश्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हूँ डालकर बाथकरे । अष्टमांशवधोप रहनेपर उतारले । इसमेंसे हरीको निकालकर अलग पीसेले और काट्टेको छानकर ३ प्रस्थ शुद्ध, गोपुत ५ पल डालकर हरेकान्कक मिलाय पकावे । चादानी तैयार होनेपर जायफल, केशर, चातुर्जात, आंवले, अजवाइन, बड़ेझा, जावित्री, ताम्र और लोहभस्म, त्रिकुट २-२ कपका वारीकचूर्णकर चादानीमें डालकर उतारले । इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक औषिती देखकर उचितानुपानकेसाथदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, प्रहणी, धातुक्षीणता, धातुलाव, शुद्धरोग, श्वास, कास, वातरक इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ६११ ॥

६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी र्यवकाथद्वयादके विशर्ति पचेत् ।
स्विन्ना मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडपूपलम् २६०४
दद्यान्मनःशिलाकर्प कर्पाङ्गञ्च रसाञ्जनम् ।
कुडवाङ्गञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५
च. सं., कासाधिकारे ।

भाषा—आठ आठकपानीमें दोप्रस्थ जवडालकर पकावे । दो आठक वारीकरहनेपर छानकर २० मोटीहरीको डालकर पकावे । एकदम पकजानेपर हरीको मसलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुरानागुड ६ पल, शुद्ध मैनसिल १ कर्प, रसौत ८ माशे, पीपल २ पल डालकर अवलेह तैयारकरे । इसमेंसे ३ से ६ माशेतक समयोचितानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहे ॥ ६१२ ॥

६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी चचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च ।
विभीतकरुफलत्वक्च शङ्खानामि मन्ःशिला ॥ २६०६ ॥
लोभं करञ्जवीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम् ।
कनकं सावरं शृङ्गी विञ्चिणीबीजसूतकम् ॥ २६०७ ॥
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा ।
एतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥
पिष्ट्वा रक्तार्जुनीमूत्रे बल्लमात्रा लुता वटी ।
लूताविस्फोटकञ्चैव जालगर्दभमेव च ॥
गलगण्डं व्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥
गुबन्धपिष्टाक्षकिलाटसूक-
दध्यारनालेक्षुविकारजानि ।
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि
विषर्जयेद्दे गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥
ना. वि., गलगण्ड ।

भाषा—हरे, वच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोध, करञ्जेवज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकी भस्में, पठानीलोध, कारुङ्गासीगी, इमलीके नीजोंकी मञ्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बलनाम सम भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय लाग्याये मूत्रमें १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो चित्तानुपानकेसाथदेनेसे मरुङ्गीका विप, विस्कोट, जल्मर्दम, गलगण्ड, व्रण, गण्डमाला इत्यादि रोगोंको यह नष्टकरती है । गण्डमाला वगैरहमें मूत्रमें पीसकर ऊपर लेपनी करना । भारी, अम्ल, पिडीकी वस्तुएं, मावा, सिरका, दही, काञ्ची, मिर्दाई और कफकारक समस्तवस्तुओंका गलागण्डरोगी परित्यागकरे ॥

६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।
पतानि समभागानि खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥२६११॥
वासाखदिरधन्तूरसेन परिभाषयेत् ।
प्रत्येकञ्च दिनं यामं वालुकायन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य पञ्चपित्तैश्च भाषयेत् ।
गुञ्जामात्रं प्रदातव्यमनुपानं पिबेदनु ॥ २६१३ ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव लज्जालुगिरिकर्णिका ।
अपामार्गश्च सुरसा निर्गुण्डी कर्पमानतः ॥ २६१४ ॥
घाघश्चाष्टावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित् ॥ २६१५ ॥
व रा, पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बलनाम, गन्धक, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अद्दा, खैर और धतूरेके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलाबनाय धारवसम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी वालुकायन्त्रमें अग्निदेवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाएं देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु, त्रिफला, लज्जाउ, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जबदुत चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषकाथसेसाथ लेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सब नष्टहोते हैं ॥ ६१४ ॥

६१५ हाटकगव्यरसः

रसकार्पांश्च चत्वारो यशोर्द्धं तावदेव तु ।
शोषितं घृणितं हृत्वा उभे सत्वतले क्षिपेत् ॥२६१६॥
द्वयोः सम्मेलनं हृत्वा मद्देयेयामानकम् ।
रसाहिगुणितं गन्धं रसाद्धं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥
सर्वेषां कज्जली हृत्वा मर्द्यं जम्बीरवारिणा ।
दिनेन मर्दनं हृत्वा सम्यक् पुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥
मृत्कर्पटप्रलिप्तायां काचक्यूयां विनिक्षिपेत् ।
सिकतायन्त्रके पाच्यं क्रमाद्दाशशायमकम् ॥ २६१९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य रसञ्जामीकप्रमम् ।
गुञ्जाम् मधुना सार्धं लिह्येत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥
शर्करासंयुतं पेयं द्विकर्पञ्च गवां पयः ।
फणिवह्लाद्दलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥
एककालं द्विकालं वा सायं प्रातर्लिहेत्सुषुयोः ।
यलवर्णं करं घृष्यं पुंसां पुंस्त्वविवर्धनम् ॥ २६२२ ॥
मेहत्वं पण्डदोपत्वं नाशयेन्नात्र संशयः ।
क्षयं क्षयकृतं ध्याधि दीर्घव्यं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिकृत ।
हाटकाख्यो रसो नाम सर्वत्र विजयप्रदः ॥ २६२४ ॥
वै. चि, (स), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४-४ कर्प लेकर जस्तको गलाय पारेमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्प शुद्धगन्धक और २ कर्प नवसादर मिलाय नीलवर्णकजलीकर जमीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिष्टीदीहुई आतशीसीधीमें रख १२ पहरकी क्रामामि देवे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे आधीआधीरती मधुकेसाथ सुवहमें लेकर दोकर्प शकरअलाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पानखावे । इसकेसेवनसे बलवर्णामात्र, नपुंसकत्व, प्रमेह, पण्डदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुबलता येसब नष्टहोते हैं ॥ ६१५ ॥

६१६ हाटकेश्वरीगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।
जम्बीरदारपुहोत्थद्रवै मर्द्यं दिनावधि ॥ २६२५ ॥
तद्रोलं यन्धयेद्वह्ने पचेद्गोक्षीरपूरिते ।
दोलायन्त्रे द्विवारानं गुटिका हाटकेश्वरी ॥ २६२६ ॥
जायते धारिता घन्त्रे जरासृत्युचिनाशिनी ।
वर्षमानात्र सन्देहो दीर्घमासुरवाप्नुयात् ॥ २६२७ ॥
दिनेन त्रिफलाचूर्णं घाथैः रतदिरवीजकैः ।
भावितं मधुसर्पिर्भ्यां पलेनं क्रामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥
र ख, र सि, र क, जामुत्पुनाघने ।

भाषा—सोनेकेबर्क ४ मारो, शुद्धपारा १२ मारो लेकर दोनोंको मिलाकर जमीरी और शरपुद्धके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तहछोड़ेमें छेपट दोलायन्त्रसे दूधमें एक-दिनप्रातः स्वेदनकरनेसे गोली कड़ीहोजायगी । इनको १ वर्षतक सुंभमें रखनेसे दीर्घमुहोती है । त्रिफलाचूर्णको सैरनेवीचैके-काथसे १ दिन भावनादेकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ पत्र मधु और पीनेसाथ चाटनेसे रसका शरीरमें कामन्दोवाहै ॥ ६१६ ॥

६१७ हिकान्तकरसः

हेममुकारकफान्तानां भस्म यहमितं धरम् ।
पीजपूररसशूद्रसीवर्णरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥
हन्ति हिकाशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।
का कथा पञ्चहिकानां हरणे पुनश्च्यते ॥ २६३० ॥
र की, शो. र. र. च, र. मु, रसायन, र क, हिकायाम् ।

और लोहमस ८-८ भा., शुद्ध खपरिया और मैन्सिल २२-२२ भाग लेकर मकोयके रससे ३ दिन मर्दनकर काचकी चीशोमें डालकर जलमुद्रादेकर जलयन्त्रमें रख ८ दिनकी हठामि देवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक और अष्टमांश नवसादर मिलाकर सिद्दी १, व्याघ्री १, मूषी १, हंसी १, चण्डी १, काली १, वेणिका १, (ये सात औषधियें सङ्केतप्रधान नामोंसे लिखींहे और योगकर्ताने उनका कोई विवरण नहीं दियाहे इसलिये खास अमुन्ही वस्तुएँहे यह कहना बहुतदुस्तरहे । परन्तु रसाश्लेषमें गिनसे कामलियाजाताहे उसहिंसायसे सिद्दी=सफेदभटकटैया, व्याघ्री=सफेदवनमाटा, मूषी=हिरण्यवरी, हंसी=हंसराज, चण्डी=चण्डालिनीकन्द, काली=हीरवी, वेणिका=आकाशवेल इनका प्रहणकरना उचितहे ।) इनसेस्वरसोसे ७-७ दिन मर्दनकर पूर्वोक्तप्रकारसे ८ दिनकी जलयन्त्रमें हठामिदेवे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर गण और योगिनियोंकी पूजाकर रखछोड़े । यह सहस्रवैधी होताहे और जराभूल्युको दूरकरताहे । धातुवाद सङ्केतके अनुसार चन्द्र और सूर्य दोनों क्रियाएँ इससे सिद्धहोतीहे । शरीरको कल्पोक्तप्रकारसे शुद्धकर इसमेंसे १ राईका दशवां हिस्सा एकान्तवटकीछायामें देवे और ३ दिनतक वहीं रखसे । मूलजलानेपर गोमुग्धदेवे । इसके ३ दिन सेवनकरनेसे बलीपलितसे निर्युक्तहोकर जराजीर्णमी आदमी पुन. युवावस्थामें आजाताहे इसका एकान्तमें सेवन करना चाहिये । गुल्म, हीहा, बवासीर, पाण्डु, कामला, श्वास, कास, राजयक्ष्म, क्षय, शूल, १८ प्रकारकेकुष्ठ, २० प्रमेह, समस्त-चर, आघ्मान, दोष, प्रहणी, अतिसार, भग्नन्द, पयरी, १३ सन्निपात, अस्विच्छूल, शिरोरोग, स्वांबर और जत्रमविष, इनसबको यह नष्टकरताहे । देह और लोह दोनोंमें सद्यकाम करताहे । यहाकाली नामकवनस्पतिरेख्यानमें जो हीरवी लिखीहे वह कागानके पहाड़में होतीहे और जन्नलीलोग इसीनामसे परिचितहे । इसकी छता दोपुटतकलम्बी होतीहे पत्ते गुड़मारके सदृशहोतेहे आर नीचे तेलियारंगकाकन्दहोताहे तथा जहरीहे । यह पारिको हतरह कायमकरती हे ॥ ६१० ॥

६११ हरीतकीपाकः

प्रस्थमेकं शिवानाञ्च जलद्रोणे निधापयेत् ।
द्विप्रस्थं दशमूलञ्च सार्धप्रस्था यवाः स्मृताः २५९७
ग्रन्थिके चित्रको भाङ्गां शङ्खपुष्पी शटी वला ।
विश्यापामार्गमेधाश्च पुष्करं गजपिप्पली २५९८ ॥
इमानि तत्र योज्यानि प्रत्येकञ्च पलं पलम् ।
अष्टांशे निःश्रुते चैषां पथ्याः पिप्पुा पचेत्ततः २५९९
गुडप्रस्थत्रयं योज्यं गोघृतं पलपञ्चकम् ।
जातीफलं केशरञ्च चातुर्जातञ्च धात्रिका ॥ २६०० ॥
दीप्याक्षीं जातिपनी च ताम्रं लोहं कटुत्रिकम् ।
चूर्णमेषां क्षिपेत्तत्र प्रत्येकञ्च पलार्धकम् ॥ २६०१ ॥
पठ्यापाक इति स्यातः कथितो भृगुणा पुरा ।
जीर्णज्वरहरः सद्यस्तुष्टिपुष्टिविबप्रदः ॥ २६०२ ॥

रसकोपे प्रहण्याञ्च क्षीणे धातौ च निःसृता ।
गुदामये श्वासकासे वातरके हितो मतः ॥ २६०३ ॥
वे. वि, जीर्णज्वरादौ ।

भाषा—दशमूल २ प्रस्थ, जब १॥ प्रस्थ, गठिन, चित्रक, भारद्वा, शङ्खाह्वी, कचूर, बला, सोंठ, अपामार्ग, नागरमोषा, पोहकरमूल और गजपीपल १-१ पल लेकर जबकुट चूर्णकर दोद्रोणजलमें डालकर १ प्रस्थ पकीहुई हरेँ डालकर भायकरे । अष्टमांशावशेष रहनेपर उतारले । इसमेंसे हरीवी निकालकर अल्प पीसले और काढ़ेको छानकर ३ प्रस्थ गुड़, गोघृत ५ पल डालकर हरेँकाकक मिलाय पकावे । चादानी तैयार होनेपर जायपल, केशर, चातुर्जात, आंबले, अजवाइन, बहेहा, जाविनी, ताम और लोहमस, त्रिकटु २-२ कर्पका वारीकचूर्णकर चादानीमें डालकर उतारले । इसमेंसे आधेतोलेसे १ तोलेतक औचित्ती देखकर उचितानुपानकेसायदेनेसे जीर्णज्वर, रसप्रकोप, प्रहणी, धातुक्षीणता, धातुलाय, गुदरोग, श्वास, कास, वातरक इनसबको यह नष्टकरताहे ॥ ६११ ॥

६१२ हरीतकीलेहः

हरीतकी र्वयकाथद्वयाढके विशर्ति पचेत् ।
स्त्रिज्जा मृदित्वा तास्तस्मिन् पुराणगुडपट्टपलम् २६०४
दद्याम्नःशिलाकर्ष कर्पाञ्जंश्च रसाञ्जनम् ।
कुडवाङ्गञ्च पिप्पल्याः सलेहः श्वासकासनुत् २६०५
च. सं., कासाधिकारे ।

भाषा—आठ आढकपानीमें दोप्रस्थ जबडालकर पकावे । दो आढक बासीरहनेपर छानकर २० मोटीहरीको डालकर पकावे । एकदम फकानेपर हरीको मखलकर कपड़ेमेंसे छानदे फिर इसमें पुरानागुड़ ६ पल, शुद्ध मैन्सिल १ कर्प, रसौत ८ मासे, पीपल २ पल डालकर अबलेह तैयारकरे । इसमेंसे ३ से ६ मासेतक समयोचितानुपानकेसाय लेनेसे श्वास और कास नष्टहोतेहे ॥ ६१२ ॥

६१३ हरीतक्यादिवटी

हरीतकी वचा कुष्ठं पिप्पली मरिचानि च ।
विभीतकफलत्वन्च शङ्खनाभि मन्ःशिला ॥ २६०६ ॥
लोध्रं करञ्जीजञ्च रजनी रक्तचन्दनम् ।
कनकं साचरं श्ट्नी चिञ्चिणीवीजसूतकम् ॥ २६०७ ॥
रसाञ्जनं गन्धकञ्च श्वेतसौवीरकन्तथा ।
पतानि समभागानि विशुद्धञ्च महाविषम् ॥ २६०८ ॥
पिप्पुा रसाञ्जुनीमूत्रे वल्लमात्रा कृता वटी ।
लूताविस्फोटकञ्चैव जालगर्दभमेव च ॥
गलगण्डं प्रणञ्चैव गण्डमालादिनाशिनी ॥ २६०९ ॥
गुग्गुलुपिप्पुात्रिकिलाटसुक-
दध्यारनालेभुविकारजानि ।
भोज्यानि सर्वाणि कफावहानि
चिचर्जयेद्दे गलगण्डरोगी ॥ २६१० ॥
ना. वि, गलगण्डे ।

भाषा—हैं, बच, कुठ, पीपल, मरिच, बहेड़ा, देशीलोह, करझकेबीज, हल्दी, लालचन्दन, शङ्खनाभि, मैनसिल, सुवर्ण, पारा, सफेदसुरमा इन पाचोंकीभस्में, पतानीलोह, काकड़ासींगी, इमलीकेबीजोंकीमञ्जा, रसौत, शुद्ध गन्धक और बघनाग सम-भागलेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णकजलीमें मिलाय खालगायकेमूत्रमें १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-चितानुपानकेसाथदेनेसे मरुहीकाविष, विस्फोट, जालगर्दभ, गलगण्ड, ऋण, गण्डमाला इत्यादिरोगोंको यह नष्टकरतीहै। गण्डमाला बगैरहमें मूत्रमें पीसकर ऊपर लेपभी करना। भारी, अम्ल, पिष्टीकीवस्तुए, मावा, सैरका, दही, काष्ठी, मिटाई और कफकारक समस्तान्स्तुओंका गलगण्डरोगी परित्यागकरे ॥

६१४ हलीमककुलान्तकरसः

शुद्धसूताऽमृतं गन्धं हरितालं मनःशिला ।
पतानि समभागानि खल्वमप्ये विनिक्षिपेत् ॥२६११॥
वासाखदिरधन्तूरसेन परिभावयेत् ।
प्रत्येकञ्च दिनं यामं धालुःकाम्यन्त्रके पचेत् ॥ २६१२ ॥
स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य पञ्चपित्तैश्च भाजयेत् ।
गुञ्जामानं प्रदातयमनुपानं पिबेदनु ॥ २६१३ ॥
त्रिकटु त्रिफला चैव लज्जालुगिरिकर्णिका ।
अपामार्गश्च सुरस्ता निर्गुण्डी कर्मानतः ॥ २६१४ ॥
कायश्चाष्टावशेषस्तु पीयमानो हलीमकम् ।
नाशयेत्सर्वरोगांश्च कामलापाण्डुशोफजित् ॥ २६१५ ॥
व. रा, पाण्डुरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बघनाग, गन्धक, हरिताल और मैनसिल समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर अड़सा, खैर और धतूरेके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोलावनाय घावसम्पुटमें बन्दकर एकपहरकी धालुकायन्त्रमें अग्निदेवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर पाचोंपित्तोंकी भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखओड़े। इनमेंसे १-१ गोली त्रिकटु, त्रिफला, लज्जालु, कोयल, अपामार्ग, तुलसी और निर्गुण्डी समभागका जवट्ट चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ तोलेके अष्टावशेषउपनिषत्साथ लेनेसे हलीमक, कामला, पाण्डु, शोथ ये सब नष्टहोतेहैं ॥ ६१५ ॥

६१५ हाटकान्तरसः

रसकर्पांश्च चत्वारो यशोदं तायदेय तु ।
शोधितं घृणितं घृत्या उभे रसवतले क्षिपेत् ॥२६१६॥
द्वयोः सम्मेलनं घृत्या मर्दयेद्याममाप्रकम् ।
रसाहिगुणितं गन्धं रसाङ्गं नरसारकम् ॥ २६१७ ॥
सर्वेषां कज्जलं घृत्या मयं जम्बीरयारिणा ।
त्रिनैकं मर्दनं घृत्या सम्यक् शुष्कं समाचरेत् ॥२६१८॥
मूर्त्कर्पटप्रलिसायां काचचूर्णाय विनिक्षिपेत् ।
सिक्ततायत्रके पाच्यं व्रमाद्वात्रश्यामकम् ॥ २६१९ ॥

स्वाङ्गशीतलमुद्गत्य रसञ्चामीकप्रमम् ।
गुञ्जाम् मधुना सार्धं लिहेत्प्रातः समुत्थितः ॥२६२०॥
शर्करासंयुतं पेयं द्विरुपञ्च गवां पयः ।
फणिवह्निदलेनैव सर्वरोगप्रशान्तये ॥ २६२१ ॥
एककालं द्विकालं वा साय प्रातर्लिहेत्सुधीः ।
बलवर्णकरं घृष्यं पुंसां पुंस्त्वविषर्धनम् ॥ २६२२ ॥
मेहत्वं पण्डदोपत्वं नाशयेद्यत्र संशयः ।
क्षयं क्षयकृतं व्याधिं दीर्यत्वं नाशयेत्क्षणात् ॥२६२३॥
अनुपानविशेषेण सर्वरोगप्रशान्तिष्ठत् ।
हाटकान्यो रस्तो नाम सर्वत्र विजयप्रदः ॥ २६२४ ॥
वै. वि, (ल), सर्वरोगे ।

भाषा—शुद्ध पारा और जस्त ४-४ कर्प लेकर जस्तको गलाय पारमें मिलाकर एकपहर शुष्कमर्दनकर ८ कर्प शुद्धगन्धक और २ कर्प नवसादर मिलाय नीलवर्णकजलीकर जम्बीरीके रससे एकदिन मर्दनकर सुखाकर ६-७ कपडमिशीदीहुई भातशीशीसीमें रख १२ पहरकी क्रमामि देवे। स्वाङ्गशीतलहोनेपर ऊपर उड़ेहुए रसको निकालकर रगओड़े। इसमेंसे आधीआधीरती मधुकेसाथ सुवहमें लेकर दोकरी शकरबालाहुआ दूधपीवे और ऊपरसे पान-खावे। इसकेसेवनसे बलवर्णभाव, नपुंसकत्व, प्रमेह, पण्डदोष, उपद्रवसहितक्षय, दुर्बलता येसब नष्टहोतेहैं ॥ ६१५ ॥

६१६ हाटकेशरीरगुटिका

निष्कमेकं स्वर्णपत्रं त्रिनिष्कं शुद्धपारदम् ।
जम्बीर्यारपुहोत्थद्रवे मयं दिनायधि ॥ २६२५ ॥
तद्गोलं बन्धयेद्वले पचेद्गोक्षीरपरिते ।
दोलायन्ने दिवायात्रं गुटिका हाटकेशरी ॥ २६२६ ॥
आयते धारिता यत्रने जरासृत्सुत्रिनाशिनी ।
वर्षमायात्र सन्देहो दीर्घमासुरवाच्युयात् ॥ २६२७ ॥
दिनेकं त्रिफलाचूर्णं धारयः सदिश्याजकैः ।
भाधितं मधुसार्पिभ्यां पलेकं क्रामकं लिहेत् ॥ २६२८ ॥
२ स., २ सि, २ का, जरासृत्सुत्राद्यने ।

भाषा—घोनेकेबर्क ४ मासे, शुद्धपारा १२ मासे लेकर दोनोंको मिलाकर जम्बीरी और धारपुहके स्वरसोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोली बनाय ४ तहकरमें स्पष्ट दोलायत्रसे दूधमें एक-दिनात स्वेदनकरनेसे गोली कहीहोजायगी। इसको १ वर्षतक सुंदर रखनेसे दीर्घमुहोतीहै। त्रिफलाकेचूर्णको खैरकेबीजके-हाथसे १ दिन भावनादेकर रखओड़े। इसमेंसे १-१ पत्र मधु और धीनेसाथ चाटनेसे रगका शरीरमें कामगहोताहै ॥ ६१६ ॥

६१७ द्विकान्तकरसः

हेममुक्ताकंकान्तानां भस्म यत्प्रमितं धरम् ।
बीजपूररसश्रीदसौच्यलरसान्वितम् ॥ २६२९ ॥
हन्ति द्विकाशतं सत्यमेकमात्रा प्रयोगतः ।
का कथा पञ्चद्विकानां हरणे पुनरप्यन्ते ॥ २६३० ॥
र. की, यो. र. र. च, र. सु, (साधनम्), र. च. ह, द्विकान्त

भाषा—सुर्ण, मोती, ताप, कान्तलोह इनकी मसमें सम-
भाग मिलाकर रखोड़े । इसमेंसे ३-३ रती विजोकेरस, मधु
और सन्नकेसाय लेनेसे एकहीमात्रासे सबतरहकी हिकी
दूरहोती है ॥ ६१७ ॥

६१८ हिकानाशनरसः

रसगन्धकधान्याम्रतालनाप्योपलं क्रमात् ।
भागवृद्धं वचाकुष्ठहरिद्राक्षारचित्रकैः ॥ २६३१ ॥
सपाठालाङ्गलीव्योपसैन्धवाक्षविषैः समम् ।
भावितं भृङ्गनीरेण हिक्रायैस्वर्यकासनुत् ॥ २६३२ ॥
र. र. स., रं चं, हिक्रायाम् ।

टि०—अष्टशब्देन गोदन्तो ग्राह्य । रमरत्नमसुचये षण्ठी नाम तु
प्रमादात्मभातम् ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भा, धान्याम्रक-
मत्स ३ भा, हरिताल ४ भा, सोनामाखी ५ भा, गोदन्ती
६ भा., वच, कुष्ठ, हल्दी, यवशार, चित्रक, पाठा, करिहारी,
त्रिकटु, सैन्धव, बहेड़े, शुद्धबलनाग येसब १-१ भागलेकर
बारीकचूर्णकर धातुओंकी नीलचूर्णकजलीमें मिलाय भंगरे-
खसे २-३ दिन घोटकर १-१ रतीकी गोलियें बनाकर रखोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातनेसाथ देनेसे हिकी,
स्वरम्र और कास इनको यद नष्टकरता है ॥ ६१८ ॥

६१९ हिङ्गुलादिगुटिका (प्रथमा)

हिङ्गुलं टङ्गुणं नागं मरिचं मृतरौप्यकम् ।
पत्रतोयेन सम्मर्द्यं मुद्गमना कृता वटी ॥ २६३३ ॥
कासे श्वासे कफे शीते शीताङ्गज्वरसङ्घके ।
मन्दाग्री गुल्मवाते च प्रदास्ता गुटिकोक्तमा ॥ २६३४ ॥
सायनसं, अमिमान्ये ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, गुहाग, नाग और रजतभस्म,
मरिच, सब समभागलेकर पानकेरखसे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समय अथवा रोगो-
चितानुपातनेसाथ देनेसे कास, श्वास, कफ, शीत, शीताङ्गज्वर,
मन्दाग्री, गुल्म, वातरोग इनको यद नष्टकरती है ॥ ६१९ ॥

६२० हिङ्गुलादिगुटिका (द्वितीया)

हिङ्गुलञ्जैकमागञ्च द्विभागा जातिपत्रिका ।
त्रिभागा पूतवीजाश्च चत्वारः श्वेतमारिचाः ॥ २६३५ ॥
पञ्चभागोऽहिफेन. स्वारयद्भागञ्चाजमोदकम् ।
पतत्समाना गाग्धारी बोचतोयेन मर्दयेत् ।
चणमात्रप्रमाणेन स्तम्भनं याममात्रकम् ॥ २६३६ ॥
स्वायनसं वाजीकरणे ।

टि०—तापनशङ्कर एव श्वेतवर्णने भेजमन्त्रिचर्याने जातिम
स्वर्चं निरुद्धेयं निमुद्गेन भावनां रिचवातिनार रमरत्नलाया हिङ्गु-
लारिगुणैः नाभेत् वट्टे निरिदोऽपि । कर्मवैतैश्च जातिपत्रकं निरु-
द्धेयं निरुद्धेयं वा एव एव एव कर्त्तव्यं एतद्वैतैर्गौरवात् । अर्थात्
एतादृशवत्तयां निमुद्गेन एतेनान्तरिद्विधे ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, जावित्री, धतूरेकेबीज, सफेदमरिच,
अफीम और अजमोद कमबूद्धभागसे लेकर सन्की बराबर सुनी-
हॉगमिलाय तजके हाथसे मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर
रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रतिसमयसे १ घण्टे पहिले
मलाईगैरहृदकेसाथ लेनेसे १ पहरका स्तम्भनहोता है ॥ ६२० ॥

६२१ हिङ्गुलादिगुटिका (तृतीया)

हिङ्गुलजातोफलजातिपत्रिका-
गोरोचनाभिर्जयपालकं समम् ।
विभाव्य निम्बकरसैः कृता गुटी-
रौत्कुष्ठिके बालगद्रे गदन्ति ॥ २६३७ ॥
सि. भे. म., बालरोगे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, जावित्री, गोरोचन, सब-
समभाग लेकर सबकीबराबर शुद्ध जमालगोटा मिलाय नीरु-
खसे १-२ दिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें बनाकर रखोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातनेसाथ देनेसे यह सबको
शोथ और जलोदरको दूरकरती है ॥ ६२१ ॥

६२२ हिङ्गुलादिगुटिका (चतुर्थी)

हिङ्गुलं देवगुणञ्च नागफेनं सितायुतम् ।
सशूलां सप्रवाहाञ्च प्रहणीं हन्ति दुस्तराम् ॥ २६३८ ॥
रससं, प्रहण्याम् ।

भाषा—शुद्ध शिंगरिफ, लौंग, अफीम और शकर समभाग
मिलाकर रखोड़े । इधमेंसे १-१ रती समयोचितानुपातने-
साथ देनेसे शूल और प्रवाहिकायुक्त दुस्तरप्रहणारोगनष्टहोता है ॥

६२३ हिङ्गुलादिगुटिका (पञ्चमी)

हिङ्गुलं जातिमोपञ्च नागफेनं सङ्कुडुमम् ।
नागयह्नीद्वररसे वटी मुद्गसमा कृता ॥ २६३९ ॥
अतिसारं निहन्त्याऽगु योगोऽयं निद्धमापितः ।
नादायेद्दहणीरोगं हिङ्गुलादिवटी वरा ॥ २६४० ॥
र सि, प्रहणीरोगे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, जायफल, अफीम और वेदार सम
भागलेकर बारीकचूर्णकर पानकेरखसे मर्दनकर मूंगबराबर गोलियें
बनाकर रखोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपातने-
साथ देनेसे यह प्रहणीरोगको नष्टकरती है ॥ ६२३ ॥

६२४ हिङ्गुलादियोगः

हिङ्गुलं कर्ममात्रं स्यान्मायर्भर्जिततुल्यतः ।
साधंमापलवङ्गुनु जम्भनीरेण मर्दयेत् ॥ २६४१ ॥
विनाय शुष्कं तपध्यात्रनीतेन मर्दयेत् ।
ताम्बूलेन सहाम्नीयादीषुं गुञ्जमात्रकम् ॥ २६४२ ॥
पथ्यं साधारणं कार्यं पञ्चसप्तदिनापथि ।
उपदंशं पूतिमेहं तदुच्ये शूलमण्डले ॥
मर्गं तालुनि सञ्जातं हन्यादेतद्विपजितम् ॥ २६४३ ॥
स्वायनसं, वनद ।

भाषा—शुद्धिगारिक १ कर्ष, धुना वृत्तिया १ माया, लीग १॥ माया, लेकर बारीकपूर्णकर जंभीरीकरसमे एकदिन मदनकर गुलाकर मन्दातमे फोटकर रखाछोके । इममेसे १-१ रती पानकेसाय ५ या ७ दिनवृत्तानेसे उपद्रव, बेदनासहित-गुलाक, कालमे जायमानमग इनसबको यह नटकरताहे । इममे पच्य साधारणकरमे ॥ ६२४ ॥

६२५ हिङ्गुलेखररसः (प्रथमः)

तुल्यांदां मर्दयेत्प्रत्ये पिप्पलीं हिङ्गुलं विषम् ।
 क्रियुञ्जा मधुना देया यातज्यरनिच्युत्तये ॥ २६४७ ॥
 र. सं., नि. र. म., र. गु., भे. र., स्यायनगं., र. नि., र. मं., र. क., घ., र. का., र. चं., दो., र. को., यो. म., वं. वि., र. क. ल., र. त., र. र. को., र. क. यो., र. पा., गानज्वरं ।

रि०—३पिप्पलीनामयो पिप्पल्यादिशृण्वमिति नाम्ना र्थावितम् । रसाविताने जम्बीरप्रभावना अधिकतया हृदये, मधुनाते मित्रायो-मानुषाने शिदितम् नाम च जीर्णकरकर इति र्थावितम्, शिदित-स्थाने वातभजननेति नाम र्थाविति नामनेदेन ही पाठी हृदये । एतच्छुद्धीरोगोद्धारणप्रकारेण वातभेद हिङ्गुलेखरः, ज्वरभित्तं च मूलतर्जनीरुनि नाम इति कृष्ण पाट्य हृदये, एतत्कठीनपयनेति मूलतर्जनीरुनि नाम र्थावितम् एतन्मिशनमूलकमेवास्ति ॥

भाषा—नील, शुद्ध शिगरीक और बटनाग समभाग-लेखर बारीकपूर्णकर रखाछोके । इममेसे २-२ रती मधुकेसाय-देनेसे यह मातज्यरको नटकरताहे ॥ ६२५ ॥

६२६ हिङ्गुलेखररसः (द्वितीयः)

कर्पूरेकः समादाय शुद्धहिङ्गुलगन्धयोः ।
 मायद्रव्यं जीर्णतार्त्रं स्वयंमेकर मर्दयेत् ॥ २६४८ ॥
 शिलायां शिलया धामं शास्त्रालीपत्यभाषितम् ।
 गुञ्जाद्रवां घटीं कुण्ठांमयनेन विषग्वरः ॥ २६४९ ॥
 सम्मर्षं मधुना सादेदतिमारनिर्पादितः ।
 प्रहर्णारोगसहस्रनः सहस्रप्रहर्णायुतः ॥ २६४७ ॥
 प्रयादिकाहान्ततनुरसिमन्वादिस्तम्बुतः ।
 धान्यमीरकजं क्षायमधुनाते प्रयाजयेत् ॥
 हिङ्गुलेखरनामाऽयं रसः स्वयंमेकापटः ॥ २६४८ ॥
 र. गु., मधुनिरोगे ।

भाषा—शुद्धिगारिक और कण्ठ १-१ कर्ष, काष्णम २ मासलेखर मेमनेकरसमे १ पर मदनकर २-२ रतीकी-मोतिसे बनावरखाछोके । इममेसे १-१ गोली मधुमे मिता-करमेनेसे मदी, मापपदनी, प्रशिक्षा, मन्दासि इनसबको यह नटकरताहे । पानिके और शीरीकश्य मनुष्यने मितासे ॥

६२७ हिङ्गुनादियोगः

हिङ्गुगोमेदकप्योपद्रव्यांश्चाक्षिप गांगुलम् ।
 पलाशुसकचकुम्भाः सराशोपान्नेदकम् ॥ २६४९ ॥
 मनेष क्षिप्रमण्डेन घाते बालरसेन वा ।
 मूत्रहृत्पुं कृमिगमेदे हृत्पुनाश व्यपोगति ॥ २६५० ॥
 न. वं. इति र्थावितम् ।

भाषा—भुनीदौग, मोमेद, विहट्ट, कुड, शीमकीरती, गोस्य, र्हायची, कुफाकीछात, बच, गंधे और पोडेकीतीद, पायागमेद सब समभाग लेकर बारीकपूर्णकर रखाछोके । इम-मेसे ३-३ मासे छाछ, दहीकेतोद अथवा बेरकेसायकेसाय देनेसे मूत्रहृत्पु, किमि, प्रमेह और हृत्पुनाको यह नटकरताहे ॥

६२८ हितमभावद्विक्ता

पय्याचतुजांतकरुणुकाहि-
 प्योगाशुद्रामोदरसासिनामेः ।
 मुष्टेन पक्के गुंडिका विगृह्य
 हितमभावस्या हृदपाण्डुहृत्नी ॥ २६५१ ॥
 श्यन्पयर्देकदादाहृत्तं कर्तकज्येकपालिकाः ।
 भाषाः प्रत्येकदां श्लेया भेषजानामिदं प्रमाता ॥ २६५२ ॥
 र. (मा.), पाण्डुरोगे ।

भाषा—हरी ३ भाग, पात्रुवांत ४ भा., रेणुका ३ भा., विगृह्य १ भा., विहट्ट १ भा., नागरमोषा ३ भा., शुद्ध-गन्ध २ भा., घाटा १ भा., पिपह ३ भा. और शुद्धक-नाग १ भागलेखर बारीकपूर्णकर फारेण्यहरी नीलगांडुजनीमे मिलाय समभागशुद्धीकातनीमे डालकर १-१ मासेकी मोतिसे बनावर रखाछोके । इममेसे १-१ गोली रोगोपिभानुषानकेसाय-सेनेसे भयकर पाण्डुरोगको यह नटकरताहे ॥ ६२८ ॥

६२९ हिममूर्च्छनरसः

हृदीमप्यविशोमिहृत्पिहितं सताहमर्कं स्थितं,
 शरीरं दाम्प्यलमहयाममनिदां सुल्लयसिता पाचयेत् ।
 निन्दोऽयं हिममूर्च्छनो रस इति प्रस्तुपते पण्डिते-
 दस्तान्पण्डुलमानतः दामयतो येलान्यरं ज्वालयेत् ॥
 नि. मे. म., ज्वरभित्तारं ।

भाषा—गुलाकीरमे कृष्ण गोदकर गोमन्त्री कनीको रस आककेरुपसे मरके अन्तोऽह मुदकन्दर पूंदेशरेण ८ परकी अतिदेवे । एतच्छुद्धीरोगेन निहन्तकर रखाछोके । इममेसे १-१ पात्र उषिभानुषानकेसाय देनेसे यह निवृत्तमर्क-करको नटकरताहे ॥ ६२९ ॥

६३० हिमांगुरमः

रसस्य कर्मसादाय स्वत्ये निहितस्य बुद्धिमान् ।
 रत्नागणस्यमग्नस्य हृदरगेन विमर्दयेत् ॥ २६५४ ॥
 समपारं तथा साधु श्वेतद्रवांसेन च ।
 निषज्यं द्रुमश कर्षं सादिरसारातः ॥ २६५५ ॥
 कर्षं रसतुल्यंश्च स्वयंमेकर मर्दयेत् ।
 वायविकजनां यानि बुक्या श्वेतवागिणा ॥ २६५६ ॥
 हृत्पुनाशान्दकर्मण्युपायां परिशोषिताम् ।
 प्रातः प्रातश्च मेघेन मध्याहे च यिनोरतः ॥ २६५७ ॥
 नितापाश्च यिनोरत मेघनीयः प्रपततः ।
 पतन्ति मेरुद्वारं मुखसोपहरी परम् ॥ २६५८ ॥

सोमरोगहर् सधर्षिडिकानाशनं मतम् ।

हिमांशुनामतः स्यात् तृष्णादाहनिवारकम् ॥ २६५९ ॥

र. च., र. र. स., र. को., र. क., र. र. की., प्रमेहे । र. को.
रसाद्रिगुटीतिनाम ।

भाषा—एकरूपं शुद्धपारोको रसलम् डालकर लालअगस्त्यके
फूल और सफेददूधवेरसोसे ७-७ बार मर्दनकर सुहागा ८ माघे,
खैरसार और कपूर १-१ कर्षं मिलाकर चन्दनकेरक्तसे घोटकर
चनेप्रमाण गोलियेवनाकर छायाशुष्कर ररजोड़े । इनसे
१-१ गेला प्रतिदिन तीनोंसमय समयोचिताशुषणकेसाय-
लेनेसे प्रमेह, मुखशोष, सोमरोग, पिडिका, तृष्णा और दाहको
यह नष्टकरताहै ॥ ६३० ॥

६३१ हिरण्यगर्भपोट्टली (वालाशिकुमारः) १

उच्चवर्णसुवर्णस्य द्राव्या गद्याणका दश ।

तेषां सहमाणि पत्राणि क्रुयादैकाहुलानि च ॥ २६६० ॥

यावन्मानानि पत्राणि तनुल्यः शुद्धपारदः ।

मिश्रं विशतिगद्याणं निम्बुकस्य रसेन च ॥ २६६१ ॥

तप्तखले हृदं मर्चं यामयुग्माद्रिशुष्यति ।

शुष्के शुष्के रसं दद्यात्पेष्या पिष्टि दिनाष्टरुम् ॥ २६६२ ॥

आरनालं क्षिपेत्स्थाल्यां खण्डे निम्बुकजैः समम् ।

शिप्रयुक्षस्य परैश्च तत्क्षणादोः समाहृतैः ॥ २६६३ ॥

वर्तिते श्रृषिकां क्रुयात्तत्रभ्रं हेमपिष्टिकाम् ।

क्षित्वा यत्रं समाच्छाद्य कृत्वा घृतुलगोलरुम् २६६४ ॥

दोलायन्ते ततः स्थाल्यां चिन्त्यसेद्व्रज्वेष्टितम् ।

इत्थमष्टदिनं स्वेषं यावन्नश्यति काञ्जिरुम् ॥ २६६५ ॥

चणकाख्ययदयांश्च मृदुपत्राणि घृतयेत् ।

तत्पिण्डं प्रक्षिपेद्विमानपक्वकुहटिकान्तरे ॥ २६६६ ॥

विष्णुकान्ताजटानाञ्च श्रीरजण्डस्य च सारकम् ।

पिण्डसोपरि मुक्त्वाऽथ श्रीरजण्डोपरि पिष्टिकाम् ॥

श्रीरजण्डश्च पुनर्दद्यात्पिण्डं यादरकं पुनः ।

घ्नने सूचीमुलच्छिद्रं मृहीषं कारयेद्द्वयः ॥ २६६८ ॥

अधोऽन्यञ्च तदेषं पिचानं कुम्भिकोपरि ।

उपरं कुम्भिकां क्षित्वा चेष्टिनां पक्वमुत्तया ॥ २६६९ ॥

वारम्भारं पुटे तत्र दद्याच्छगणपञ्चकेः ।

यदयाः पत्र पिण्डाद्यं न्यूनं न्यूनं मुहु विधिः ॥ २६७० ॥

एकविंशतिरापञ्चकं युक्त्या दद्यात्पुटानि च ।

स्वैदस्य विधिनाऽनेन रट्टिकासधिमामभयेत् ॥ २६७१ ॥

भूमौ विलेपिता रेखा श्येता निःसरति स्फुटा ।

क्षित्वा तद्गुहरे यन्त्रे घटुर्भिम्ब्याणकैः पुटेत् ॥ २६७२ ॥

प्रदद्यात्स्थान्नाश्रीतिऽत्र युक्त्येत्यं पुटपञ्चकम् ।

पञ्चभिम्ब्याणकैः पञ्च पञ्च पञ्चिञ्च छाणकैः ॥ २६७३ ॥

छाणकैः सप्तभिः पञ्च त्वष्टभिः पञ्चगोमयैः ।

एवं पञ्चपुटप्रान्ते छाणकैः विप्रधेयेत् ॥ २६७४ ॥

एकवृद्धपादिकं देयं यावत्पुटशतं भवेत् ।

छाणकानि च पञ्चादाच्छतानां चतुर्दश ॥ २६७५ ॥

गणितानि भवन्त्येव दत्ते शतपुटे ध्रुवम् ।

पोडशांशविभागेन पिष्टयवस्थात्पुनः पुनः ॥ २६७६ ॥

पद्भुणा जीयते यावदातव्यः शुद्धगन्धकः ।

एवं पुटशते दत्ते लाक्षासिन्दूरसन्निभः ॥ २६७७ ॥

जपाकुसुमसङ्काया उद्यदर्कसमप्रभः ।

अतीवारुणतां प्राप्तं कृषिकायां विनिक्षिपेत् ॥ २६७८ ॥

सिद्धो हिरण्यगर्भोऽभूत्तज्जैः प्रोक्तः पुरा रसः ।

विधिना रक्तिकामेकां ताम्बूलेन च भक्षयेत् ॥ २६७९ ॥

विंशतां च प्रमेहेषु ज्वरेषु विविधेषु च ।

अतीसारेषु सर्वेषु शूलेऽर्जाणं च दुस्तरे ॥ २६८० ॥

कामलायां पाण्डुरोगे हलीमकगदेष्वपि ।

अशीतियातरोगेषु जीर्णदेहेषु दीयते ॥ २६८१ ॥

सम्यग्रोगं परिक्षाय देवो वीचेन रोगिणु ।

क्रमाद्रोगा विलीयन्ते प्रत्यहं सेविते रसे ॥

देहकान्तिः सुवर्णाभा प्रत्यहं जायतेऽधिका ॥ २६८२ ॥

रसचि., र. कं ली., रसायने ।

टि०—रसमारसद्भ्यरे माणिक्यचन्द्रीवरसावतारे च अष्टिभार
नाम्ना “यत् सुवर्णं दहनोदकेन विधाय त्रिष्टि तु पयोधनेषु । गन्धान्
तेले विप्रेक्षित्वाश्च शास्त्रमिद्धोऽभिकुमारनामा ॥ दद्यात्सु सर्वभार
काणा व्योषेण गुप्ता मधुना धूनेन । दन्तातिसारप्रणहोन्वरीष हृत्वा
बलास कुलेऽपिष्टुद्विम् ॥” इति पाठो निधिनोऽस्ति तस्याऽवेवात्मभाव-
कारणीय., विशेषगुणदर्शनात् । गन्धारमदहनोदकपयोधनगन्धकोषे च
प्रथमन स्वर्णपारदो रवेदन त्रिधाय रमरङ्कालीवीकेन बर्तना रसे
निष्पादितेऽप्याह्नवीर्यता मिथिनाऽरिण अतल्ल्यास्तभाव कारणीय
एव । दहनोदकपयोधनगन्धान्धारमैल्लकामन्तरापि गुणहानि न भविष्य-
त्येव । रमरङ्कालीयपक्रियया पारदेऽतिशयलुक्कार्णाभानात् ।

भाषा—उत्तमसुवर्णकेवकं और शुद्धपारा ५-५ तोले लेकर
१-२ पहर मर्दनकर तप्तखल्वमें डाल नीचूकेरमसे दोपहर मर्दन
करे । सुखनेर फिर रसजाले । इसतरह ८ दिनतक मर्दनकर
मन्वृत हण्डीमें पकेनीबुओंकेटुकड़े और काञ्चोभरके कड़े
सहितजकें ताजे परतोंको पीसकर दो गुप्ता बनाय उद्यमें पिठि-
काको रस काञ्चोवाली हण्डीमें दोलायत्र बनाय ८ दिनतक
स्वैदनकरे । काञ्चोसुपरनेर दूसरी डालनाजाय । इसगततर
ध्यान रहे कि उफान आकर पोडलीको रूप्यो न करे । आठवें
दिन आच कड़ी करदे और काञ्चोका डालना बन्द करदे जिनमें
कि नीबू और काञ्चो जलत्राय । स्वाह्नशीतलहोनेपर एक बन्
धुतवर्णमें शरबेरके कोमलयतोंका लुगदा रसकर कोयलकी जड़
और चन्दनके हीरका लुगदा ममसे रसात् । फिर चन्दनके
लुगदे पर पिठोको रस चन्दनके हीरके लुगदेसे ढककर शरबेरके-
पत्तोंका लुगदा रसात् । दहनमें सुई जानेलायक बारीक छेदकर
हण्डीपर लुगदा रस २-२ काष्ठमिठी देकर एक सारदमें हण्डीको
रसादे और पांचघण्टोंके टुकड़ोंसे हंडीको ढककर आंच लगादे ।
स्वाह्नशीतलहोनेपर निहालकर पूर्व्वर पिठोको हंडीमें रसादे ।
परन्तु प्रथमही अपेशा बेरके कल्कप्रयुक्ति वस्तु थोड़े थोड़े कम
करताजाय । इसतरह २१ पुटे देकर परीनिमीनर इयही रेखा

खीचे तो राक्षियामिरीके सन्ध रस्ता निकलेगी । इसको मूष-
यन्त्रमें रस ४ कण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५ पुट देनेके बाद ५-५
कण्डोंके ५ पुट देवे । पाँचपुटोंके बाद १-१ कण्डा घटाता
जाय । ऐसे २३ कण्डोंतक घटाकर १०० पुट देवे । प्रत्येक
पुटमें पिठोंके नीचे ऊपर पोडशास (७॥ मासे) गन्धक देकर
घारावस्तुमें बन्दहर आचदेवे । ऐसे १०० पुटोंमें पहुँच
गन्धक जारण होगा । इसका रस एकदम लालहोगा इसको पीस
कर शीशोमें रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती पानमें रखकर
रामेने २० प्रकारके प्रमेह, समस्तज्वर, अतिमार, शूल, भय
ङ्करअजीर्ण, कामला, पाण्डु, हलीमक, ८० घातोग, बुडारा
इनसबको दूरकर रसायनका काम करतीहै ॥ ६३१ ॥

६३२ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) २

शुद्धं सूतञ्चतुर्भागे द्विभागं गन्धकस्य च ।
भागमेक सुवर्णञ्च त्रिभागं शुद्धमस्य च ॥ २६८३ ॥
सुमारीस्ससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेद् दृढम् ।
गुटिकां कारयेत्तान्तु यध्नीयात्स्वरूपते ॥ २६८४ ॥
यत्ने किञ्चिद्दलि दत्त्वा तत्र गोलं निधाय च ।
यध्नीयात्पोट्टलीं गाढां यथाहरेण येष्टयेत् ॥ २६८५ ॥
सर्वभागसमं गन्धं दत्त्वा मृन्मयभाजने ।
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य मुपे मुद्राञ्च कारयेत् २६८६
विधाय छिद्रं मुद्रास्थं द्रावं दृष्ट्वा शलाकया ।
पाचयेत्सिकतायन्त्रे रसोऽयं स्रुद्यह्निना ॥ २६८७ ॥
यामार्द्धेन सुसज्जातं स्नाह्नशीत समुद्धरेत् ।
कासे भ्यासे क्षये घाते कफे प्रहणिकागदे ॥
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २६८८ ॥
यो र, र चं, कावाधिकारे ।

टि०—रसायनमहद्व साधारणमगमनाम्ना " पादरतु द्विर
याद्विकर्षणम्बरत्तया । ताप्रममद्विर्षं रसास्वर्णं कर्णादिक छिन्ने ॥
कज्जलीं कज्जलाकरां प्रसूनीं प्रयत्न । पोर्टनीं कथयित्वा तु गण
दवादिबन्धक ॥ पोर्टनीय पुनरुत्तरयुवांच दृष्ट्युक्तं । मीं शुभमपान्तु
पापंभूयन्तु कारयेत् ॥ मुन मुद्रां प्रसूनीं बद्धि दवाय सुक्ति ।
स्नाह्नशीत समुद्धृत रस रसादेमगर्भं ॥" इति पद्ये पिठितोमि
तत्वाऽप्यनेकानाम्बं बन्धयेत् । यद्यपि तत्र तापे चतुर्षोडश्याधिक्य
मरितं दत्त्वा तदाभियन्तरीच्छेषसंश्लिषेत्रे चतुर्षोडशरदायाऽधिक्यया
दानेनापि क्षयमावाप्सिः । पाटनर तु महतीरसम् ।

भाषा—पुद्रारा ४ भाग, गन्धक २ भा, मुर्णाम्भ १
भा, ताप्रमम ३ भा ऊपर राबडी नीलपंकेहलीहर पीड
वारदे रससे ७ दिनतक मर्दनकर गोलीबनाय ४ रूद कारेस
धोका गन्धक छिद्रकर उपपर गोलीधोरस वेष्टनीबनाय
मिठीकेदरनेमें मुर्णैकरापर नीचे ऊपर गन्धकदेकर बीचमें
पोरनीधोरस घातकरबीचमें छिद्रर हींशर हरनदेकर कज
मिठी करे और नीच मन्दादि जरावे । बीबरीचने छन्दासे
वेराजामाय । गन्धक मन्दापर आपेराकर उरस ।
रसाह्नोक्तपानेवर निकालकर रसछोड़े । इसमेंसे ८-४ रत्ती

रोगोचितानुपानकेषाय देनेसे कान, आस, क्षय, घात, कफ,
प्रह्नीरोग इनसबको यह नष्टरताहै ॥ ६३२ ॥

६३३ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ३

शुद्धं सूतं त्रिभागञ्च तत्समं शुद्धमस्य च ।
भागीकं गन्धकं दद्यात्तदर्थं स्वर्णमेव च ॥ २६८९ ॥
कज्जलीं कारयेत्तान्तु स्वरूपके सतयासरम् ।
अयं निगुण्डिकाद्रावे मर्दयेद्दिनमसत्रम् ॥ २६९० ॥
अथवा कनकराये गुटिकां कारयेत्ततः ।
किञ्चिद्दलिसमायुक्ते यत्ने गोलं निधाय च ॥ २६९१ ॥
यध्नीयात्पोट्टलीं गाढामेवञ्च त्रि पुटान्छरेत् ।
दृढमृन्मयपात्रे तु गन्धं दत्त्वाऽप्युत्तरम् ॥ २६९२ ॥
तन्मध्ये पोट्टलीं न्यस्य निर्वातमयान्तरे ।
वितस्तिप्रमितं गतं तस्मिन्संस्थाप्य मुद्रयेत् ॥ २६९३ ॥
यत्नेश्च मुक्तिवाभिध ज्वालेद्येदिन्धनानि च ।
यामेन सिद्धतां याति हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥
अनुपानानुसारेण सर्वरोगेषु योजयेत् ॥ २६९४ ॥
यो. र, रमायनर, नि. र., वै वि, कासे क्षयं च ।

टि०—निगुण्डुत्तवाय शुद्धरथाते छिद्र नितोमि तन्मानपूर्वक
वा स्वारणानपूर्वक वा स्यात् ।

भाषा—पुद्र वारा और ताप्रमम ३-३ भा, शुद्ध गन्धक
१ भा, सोनेकेकं आपामाग छेकर ७ दिनतक शुद्धमर्दनकर
निगुण्डी अथवा धनुकेरसमे ७ दिन मर्दनकर गोलीबनाय
गन्धकछिद्रकेदुए करनेमें रस छोड़े बाध । इसीतरह दूसरे
कारणपर गन्धकपिठाय दूसरी और तीसरी तरह देवे । फिर
मिठीके दृढाममें पोर्टनीहेनोकेजरा गन्धकदेकर मुहबन्दकर
६-७ कण्डमिठी देवे । सुवनेपर एकवालियुमरके गुट्टेमें १ पहर
की आंचदे । स्नाह्नशीतपानेवर निकालकर कपड़े और गन्धक
को हटाकर गोलीको मीलसे निकालके । इसमेंसे १-१ रत्ती
समय भया । रोगोचितानुपानकेषाय देनेसे यह समन्तरोगोंको
दूरकरतीहै ॥ ६३३ ॥

६३४ हिरण्यगर्भपोट्टली (स्वर्णगर्भपोट्टली) ४

स्यगंस्य मन्मना नागाश्चत्वारः पादस्य च ।
अष्टौ गन्धस्य ताप्रस्य यद्गस्यैकं समागकः ॥ २६९५ ॥
कर्णदीपयो संस्र भागीं ह्रीं ह्रीं च दृक्कुवात् ।
गुद्रार्थेच्छ मुक्तानां नागास्त्वर्गसमा मया ॥ २६९६ ॥
पञ्चरोलट्टनेन सर्वं तन्नायपेन्त्रिया ।
तिवराचर्मिका कार्यां पोर्टनीं घर्मशीपिता ॥ २६९७ ॥
यत्नेयत्ना बलिभ्या सा पाचनीयाऽल्पवह्निना ।
घटिकाद्वित्रयं शीतां पोर्टनीं मन्नुददानाम् ॥ २६९८ ॥
प्रहृष्यां क्षयरोगेषु चाऽतिमारं ज्वरकामयोः ।
याते वृद्धेऽतिमन्दाप्ली छिन्निगुञ्जां प्रयोजयेत् ॥ २६९९ ॥
स्वर्णवय, प्रहृष्यधिकारे ।

मापा—सुवर्ण और पारदमस ४-४ भाग, शुद्धगन्धक ८ भा., ताप्र और वज्रमस १-१ भा., कौडी और शङ्ख २-२ भाग, सुहागा १ भाग, मोती ४ भाग लेकर सबकी नीलवर्ण कम्बलीकर पञ्चकोलेकायसे ३ दिन मर्दनकर शिखराकार गोलीबनाकर गन्धकयुक्त ३ तद्दृक्पदमें वायु एकगालिस्तके छेदुमें दोषडीकी आंचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर इसमेंसे २-२ रती समय अथवा रोगोचितानुमानकेसाय देनेसे यह प्रहणी, क्षय, अतिसार, ज्वर, कास और मन्दाभिको नष्ट-करतीहे बचे और सुदुर्गो हितकरहे ॥ ६३४ ॥

६३५ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) ५

स्वर्णसिन्दूरक कर्प स्वर्णमस सुमौक्तिकम् ।
तुरीयांशं समं गन्धं त्रयाणामपि मर्दयेत् ॥ २७०० ॥
ताप्रवह्नजुज्जानां भस्मान्ध्वर तु पातयेत् ।
सिन्दूरसममानानि मर्दयेदकदुग्धतः ॥ २७०१ ॥
गुफां कज्जलिकामेतां घराटीश्वेच पूरयेत् ।
मन्दारपरपसा पिष्टदङ्कणेन च मुदयेत् ॥ २६०२ ॥
शङ्खचूर्णे धृता प्ताः पुष्टित्वा गजसञ्ज्ञके ।
पोट्टलीं पूर्ववत्कृत्वा द्विष्टरोगेषु योजयेत् ॥ २७०३ ॥
रसायनसारः,

मापा—यहगन्धकजाति सुवर्णसिन्दूर १ कर्प, सुवर्णमस और शुद्धमोती ४-४ मासे, शुद्धगन्धक ११ कर्प, नात्र, वज्र और नागमस १-१ कर्प लेकर सबकी नीलवर्णकम्बलीकर आरुकेद्वयसे १-२ दिन मर्दनकर सुखाकर शुद्ध पीलीकौडियोंमें भरकर आरुकेद्वयमें पिसेहुए सुहागसे सुहवन्दर एक-हण्डीमें कबोशङ्खकेचूर्णके बीचमें इन कौडियोंको बन्दकर शराव-सम्पुटेदेकर ३-४ समस्तपर कपड़ामिठी देकर सुखाले फिर इस-कोगजपुटकी आंचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर कौडियों सहित पीसकर आरुकेद्वयमें मर्दनकर अभीष्ट आकारकी पोट्टी बनाय ४ तद्दृक्पदमें उपेत देसमसे बांधकर हंडीमें गन्धकको-विद्याय कारपोट्टलीको रखदे। कारसे इतना पिसाहुआगन्धक रूपके फि पोट्टली अच्छीतरसे ढकजाय और गन्धक जलनेपर भी पोट्टली साली न रहे। हंडीको अगिर रख पूर्वरीतह पका-कर साफ़दरते रखले। इसमेंसे उचितमात्रा योग्यानुमानकेसाय देनेसे सद्प्रहणी और रात्रयक्ष्म प्रयुति रोगनष्टहोतेहे ॥ ६३५ ॥

६३६ हिरण्यगर्भपोट्टली (महाहेमगर्भपोट्टली) ६

शुद्धं मृतं पत्रैकं स्यात्पादांशो शुद्धहेमकम् ।
शुद्धं गन्धं मायमेकं प्रतिकर्पं प्रयोजयेत् ॥ २७०४ ॥
त्रयमेकत्र कुर्वात सूर्यं स्वयं विमर्दयेत् ।
सुरडे घन्धयेद्वले स्याप्यं लोहजसम्पुटे ॥ २७०५ ॥
मर्दितं गन्धकपलं तस्योपरि त्वापयेत् ।
सम्पुटे मुद्रितं कृत्वा भूषणाल्युटे पचेत् ॥ २७०६ ॥
स्वाह्नशीतलमुदत्य द्वायं गन्धं परित्यजेत् ।
षेष्टयित्वा पुनर्यत्ने स्ये यद्वा च गोलकम् ॥ २७०७ ॥

तत्तल्यञ्च पुनर्गन्धं सम्पुटे निक्षिपेद्विपक्व ।
मुद्रितं सम्पुटे कृत्वा पुनर्यन्त्रेण पाचयेत् ॥ २७०८ ॥
हेमगर्भरसो नाम्ना सर्वथाधिनिवारणः ।
रोगराजादिकं हन्यादितरेषां तु का कथा ॥ २७०९ ॥
यो. र., नि. र., र. चं, वै. चि., रसायनसं. क्षये वासे च ।

मापा—शुद्धभारा १ पल, सोनेकेबर्क १ कर्प, शुद्धगन्धक ४ मासे लेकर सबकी नीलवर्णकम्बलीकर चित्रकवरीरहनेरससे मर्दनकर पुष्टयत्नमें वायुकर गन्धकयुक्तवत्तकी ३ तह ल्याकर १ पल गन्धकके चूर्णको लोहेकेपात्रमें पोट्टलीके नीचे लपर रख शरावसम्पुटेकर भूषणपुटमें आंचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निकाल-कर गन्धकको साफ़कर फिर वत्तमें वांध उसकीबराबर गन्धकके चूर्णमें रख पूर्ववत् आंचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रख-छोदे। इसमेंसे १ से २ रतीतक उचितानुमानकेसाय देनेसे राजरोगप्रयुति समस्तन्याधिर्णको यह नष्टकरतीहे ॥ ६३६ ॥

६३७ हिरण्यगर्भपोट्टली (सप्तमी)

शुद्धं मृतं त्रिभागञ्च तदर्धांशेन गन्धकम् ।
पादांशं कनकं दद्यात्त्रिभागं शुल्बभस्मकम् ॥ २७१० ॥
मौक्तिकं दशमांशेन प्रवालं तत्समांशकम् ।
कुमारीरससंयुक्तं सप्ताहं मर्दयेत् दृढम् ॥ २७११ ॥
पूगमात्रा गुटीः कृत्वा घेष्टयेत् क्षौमचाससा ।
दृढसूत्रेण सम्बन्धे छायायां शोषयेत्ततः ॥ २७१२ ॥
सघृते मृन्मये पात्रे गन्धं दद्यादुपर्यधः ।
निधाय च्छिद्रमुद्राद्यं द्वायं दृष्ट्वा शलाकया ॥२७१३॥
पाचयेत्सिरुतायन्त्रे सुवेद्यो मृदुनाऽग्निना ।
घटीद्वये समापाते स्वाह्नशीतं समुदरेत् ॥ २७१४ ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे प्रहणिकागदे ।
सर्वरोगेषु दातव्या हेमगर्भाख्यपोट्टली ॥ २७१५ ॥
वै. चि. (ल.), सर्वरोगे ।

मापा—शुद्धभारा ३ भाग, गन्धक ११ भा., सुवर्णमस अथवा बर्क परेसे चतुर्थांश, ताप्रमस ३ भा., मोती और प्रवाल परेसे दशमांश लेकर नीलवर्णकम्बलीकर धीकुंवारके रससे ७ दिनतक मर्दनकर गुपारीकेवरावर गोलिये बनाय रेशमोकपड़ेमें बांधकर छायामें सुखाय धीकेवर्तनमें गन्धककेबीचमें रख वालुकायन्त्रकी अभिदेवे। गन्धक गलनेपर इञ्जासुवार गोलीमें छेदकर और दोषडीको आंचदे। स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रखछोदे। इसमेंसे १-१ रती समय अथवा रोगोचितानुमानके-साय देनेसे कास, श्वास, क्षय, वात, कफ और प्रहणीरोग इनवत्तको यह नष्टकरतीहे ॥ ६३७ ॥

६३८ हिरण्यगर्भपोट्टली (अपूर्वहेमगर्भः) ८

शुद्धपारदभागकं तत्समं स्वर्णजं दृढम् ।
उभयं मर्दयेत्तत्र कलांशो शुद्धगन्धकम् ॥ २७१६ ॥
त्रिभागं रससिन्दूरं गन्धांशं नवसादरम् ।
सर्पमेकत्र सम्मथे भानुहरीं दिनायधि ॥ २७१७ ॥

पट्टकूले दृढे बद्धा कर्ममानाश्च वर्तिकाः ।
 पट्टश्च तन्तुना बद्धा स्थाप्या लोहजसम्पुटे ॥२७१८॥
 गुटीभ्यो द्विगुणं गन्धचूर्णं दद्याद्योपरि ।
 सम्पुटं मुद्रितं कृत्वा भृगुर्भे स्थापयेद्बद्धः ॥ २७१९ ॥
 तस्योपरि द्वाद्वह्निमुपलेः पञ्चभिस्तथा ।
 बद्धा पूर्वक्रमेणैव गन्धं मुद्राश्च दाहनम् ॥ २७२० ॥
 एवं पुनः पुनः सप्तगुडिते स्वाङ्गशीतलाः ।
 ता गुटीं प्राहयेद्वैद्यो निष्कास्योर्द्धस्यकिस्रिपम् २७२१
 तरुणाहणवद्भासे गुणे च रसवद्भवत् ।
 सर्वरोगेषु दातव्य एकेरुसिम्बिद्रोपजे ॥ २७२२ ॥
 त्रिदोषे चादन्तीरेण मधुयुग्मापयेत्सुधीः ।
 पक्षाघाते धनुर्वाते खज्रादौ दन्तबन्धने ॥ २७२३ ॥
 घातजे कफजे रोगे गुञ्जैका त्रिवृदादिभिः ।
 अपूर्वहेमगर्भोऽसौ रोगराजादिकाञ्जयेत् ॥ २७२४ ॥
 रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्धाग्रा और सोनेकेबर्क १-१ भाग लेकर पिटी-
 बनाय १६ बांहिसा शुद्ध गन्धक तथा नवसांद्र, और ३ भाग
 रससिन्धु मिलाकर नीलगंध कजलीकर आककेदूधसे एकदिन
 मर्दनकर १-१ कर्पकी गोलियेबनाकर रेशमीवस्त्रमें बांधकर गन्धक
 और रेशमीवस्त्रकी ३ तद्देकर गोलियोंसे दूधे गन्धकके चूर्णमें
 रखकर लोहेके सम्पुटमें बन्दकर सूर्यपुटमें ५ जङ्गलीकण्डोंकी
 आंचदे । ऐसे ७ पुटे देनेकेबाद निकालकर रखडोहे । इसमेंसे
 १-१ रती अदरल अथवा मधु अथवा मधु और निमोत प्रभृ-
 तिकेसाथ देनेसे दृढ, समस्त अथवा पृथक् दोषोंसे जायमान
 पक्षाघात, धनुर्वात, खज्रादिक, दन्तबन्ध, वातज और कफज.
 रोगोंको यह नष्टकरतीदे । राजयश्मकी परमौषधिहे ॥ ६३८ ॥

६३९ हिरण्यगर्भपोट्टली (श्वेतहेमगर्भ) ९

चन्द्रोदयं रसं श्वेतं रसकपूररसश्चक्रम् ।
 नागवह्नौ मृतौ प्रत्यङ्गर्भं कर्पं प्रदापयेत् ॥ २७२५ ॥
 सूर्ये खल्वे विमर्द्यां दशांशं हेम वापयेत् ।
 स्वर्णदशांशकं शुद्धं मल्लभसम् प्रदापयेत् ॥ २७२६ ॥
 अर्कदुग्धस्तसखल्वे मर्दनीयमहर्द्वयम् ।
 सूर्यांतपे खरे शोष्यं पिष्टिं कुयाम्युट्टं बुधः ॥ २७२७ ॥
 पट्टवले दृढां यध्या गुटिकां पट्टतन्तुना ।
 गुटिकापट्टुणं गन्धं चूर्णयेद्दोहापत्रके ॥ २७२८ ॥
 तत्तत्रां वेशयेच्चुह्यां निर्धमार्त्तिं प्रदापयेत् ।
 गन्धके गुटिकां पक्त्वा लोहद्वयां च चालयेत् २७२९
 यामेकं पाचयेन्मन्दं गुटिकां तत उद्धरेत् ।
 स्वाङ्गशीतां छुरिकया गुटिस्यं यस्त्रमुद्धरेत् ॥२७३०॥
 चन्द्रकान्ति भैवेत्स्वच्छो हेमगर्भो रसोत्तमः ।
 भ्यासे कासे महावाते ज्वरे सर्वगदेपु च ॥ २७३१ ॥
 मधुनाऽङ्गुचेराद्विर्वीर्य रोगयलाथलम् ।
 दन्तपथे तथा शूले गुल्मेऽप्यु हेमगर्भकम् ॥ २७३२ ॥
 रसायनसं., रसायने ।

भाषा—तलस्यचन्द्रोदय, शुद्धरसकपूर, नाग और बज्रभस्म
 १-१ कर्प, सुवर्णभस्म अथवा बर्क सबसे दशांश, स्वर्णसे
 दशांश मल्लभसम डालकर आकके दूधसे तप्तखल्वमें दोदिन मर्दन-
 कर गोली बनाय सुखाकर वस्त्रमें रल रेदामके थोरेसे बांधकर
 पोहलीबनाय लोहेके पात्रमें पशुगन्धकके बीचमें रखकर पत्रावे ।
 पोहलीको लोहेकीकण्टी अथवा शलाकासे लोडपोट्टकर १ पहर-
 तक पकावे फिर कड़ाहीको उतारकर नीचेरखले । स्वाङ्गशीतल-
 होनेर निकालकर रखडोहे । इसमेंसे १-१ रती समयोचित-
 नुपानकेसाथदेनेसे श्वास, कास, महावात, समस्तज्वर, बवासीर,
 दन्तबन्ध, शूल, गुल्म इनसबको यह नष्टकरतीहे ॥ ६३९ ॥

६४० हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भरसायनम्) १०

शुद्धं गन्धं पलाङ्कश्च सूतं शुद्धं पलायकम् ।
 श्लश्यां कज्जलिकां कृत्वा मासमेकं प्रयत्नतः ॥२७३३॥
 प्रवालं मौक्तिकं चान्नं नागं वह्नं पलाङ्ककम् ।
 ताद्यश्च पलमेकञ्च रौप्यभस्म पलाङ्ककम् ॥ २७३४ ॥
 शुद्धहेमः पलान्यष्टौ मर्दयेच्चुक्षणवद् दृढम् ।
 दृढां पोट्टलिकां बद्धा जारस्यत्तदनुन्तरम् ॥ २७३५ ॥
 द्वियामश्च ततः पश्चात्तीक्ष्णशस्त्रेण धर्षयेत् ।
 श्यामाक्षीद्रुतश्चैव चातरोगे प्रशस्यते ॥ २७३६ ॥
 श्लश्वेत्सरसेनैव सन्निपातं निहन्ति च ।
 नानानुपानयोगेन सर्वरोगानिवर्हणः ॥ २७३७ ॥
 भ्यासे कासे समीरोत्ये दोधिरत्ये चामवातके ।
 अशीतिवातरोगेषु ह्युन्मादेषु विरोपतः ॥
 अश्विभ्यां पूर्वमुद्रिं हेमगर्भरसायनम् ॥ २७३८ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्धान्यक २ कर्प, शुद्धाग्रा ८ पल लेकर एक-
 महीनेतक मर्दनकरे । फिर प्रवाल, मोती, अश्रक, नाग, बज्र
 इनकीभस्म २-२ कर्प, ताप्रमसम १ पल, रजतभस्म २ कर्प,
 सुवर्णभस्म अथवा बर्क ८ पल लेकर १-२ दिन मर्दनकर मल-
 मल अथवा रेसमीकपड़ेमें कड़ी पोहली बांध शरावसम्पुटमें बन्द-
 कर दोपहर जङ्गलीकण्डोंकी आंचदे । स्वाङ्गशीतल होनेर निकाल-
 कर साफकठके रखडोहे । इसमेंसे १-१ रती निसोत और
 मधुकेसाथदेनेसे श्वास, कास, वातरोग, शिथिलता, आमवात,
 विशेषकर उन्माद येसब नष्टोतेहे ॥ ६४० ॥

६४१ हिरण्यगर्भपोट्टली (एकादशी)

शुद्धो रसो यत्त्रिसाकनकच्छुद्राश्च
 भस्मापि मौक्तिकमयं मिदुरस्य चापि ।
 कस्तूरिकाश्चरदिनाधिपभस्मताल-
 भस्मानि कर्पमिनभागसमानि कृत्वा २७३९
 सप्ताहमाद्रंकरसेऽथ विमर्द्य सर्वं
 पूर्णफलैः सदशी र्थटिका विधाय ।
 कीरीयासांसि पृथक् चतुरद्वले ता-
 यद्वाऽङ्गपकठसरानिहिता विद्व्यात् २७४०

पका यदा कृसरिका च निसर्गशीता
कौशेयवाससि पुनर्द्वैतगन्धपकाः ।

शुद्धीत कालवलयहिसमानमानां

मर्त्यां भवेदमरतुल्यवपु वैली च ॥ २७४१ ॥

अपस्मारितेथोन्मादेसन्निपातेयु योजयेत् ।

अनुपानविशेषेस्तु युक्ता हन्त्यामयान्यहन् ॥ २७४२ ॥

नू. क., अपस्मारोन्मादसन्निपातेयु ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, सोनेकेवर्क, मोती, हीरा, ताम्र, हरिताल इनकीमसमें, वस्तूरी और अमर १-१ कर्प लेकर नीलवर्णकजलीकर अदरखकेरसे ७ दिनतक मर्दनकर सुपारीके बराबर गोलियें बनाय सुखाकर ४ तह रेशमकेकपड़ेमें प्रत्येक गोलीको रेशमसे कड़ीबांधकर मूंग और वासमतीचाबलोंकी अवपक्रीखिचड़ीमें गोलियोंको बालर सुंदेवन्दर पकावे । रिचड़ी पकनेपर चूल्हेकी आग रींचले । स्वाज्ञाशीतलोनेपर साफूकीहुई गोलियोंको रेशमकेकपड़ेमें बांध पूर्वकीतरह गन्धक-दुसिमें दोषण्टे मन्दाभिपर पकाकर रखडोड़े । इसमेंसेकाल, बल और अमिका बलाचल देवकर १ चावलसे १ रतीतक समयो-चितानुपानकेपाथ देनेसे अपस्मार, उन्माद और घोरसन्निपातको यह नष्टकरतीहै । निरन्तरसेवनकरनेसे बलीपलितको दूरकर दीर्घायुको करतीहै ॥ ६४१ ॥

६४२ हिरण्यगर्भपोट्टली (पीतहेमगर्भः) १२

पीता मनःशिला तालं शुद्धं प्रत्यरूपि च्छुम्मितम् ।

कर्पार्द्ध हेम संयोज्यं तत्पादांशं महाविषम् ॥ २७४३ ॥

मर्दयेद्वस्त्रद्राघिः शुष्कं कृत्वा खरातपे ।

पूर्ववयोष्टलीं वद्धा क्रियां पूर्ववदाचरेत् ॥ २७४४ ॥

हेमगर्भो भवेत्पीताः सर्वरोगनिवर्हणः ।

अनुपानैः सदा देयो वाजीकरण उत्तमः ॥ २७४५ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्ध पीलीमेनसिल और हरिताल १-१ कर्प, सुवर्णमस अथवा वर्क ८ माशे, पीलासोमल २ माशे लेकर वारीक चूर्णकर केशरकेदन्ते एकदिनमर्दनकर कड़ीपूमें सुखा-कर इन्धानुसार गोलियेंबनाय रेशम अथवा मलमलके कपड़ेमें पोष्टली बनाय लोहेकेपात्रमें पहुणागन्धकको पिचलाकर बीचमें पोष्टलीको रख १ पहरकी अमिदेकर पकावे । स्वाज्ञाशीतलोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे २-२ चावल समयोचितानुपानके-साथ देनेसे समस्तविश्रात नष्टहोतेहैं और उत्तम वाजीकरणहै ॥

६४३ हिरण्यगर्भपोट्टली १३

कर्पेकं रसकरपूरं दापयेत्कल्पमध्यतः ।

पादांशं हाटकं योज्यं मापेकं शुद्धमल्लकम् ॥ २७४६ ॥

मर्दयेद्यामामावन्तु सूक्ष्मवले निघापयेत् ।

पोष्टलीञ्च दृढां वद्धा जापयेद्गन्धकद्रवे ॥

याममेकं ततः पश्चाद्योजयेत्सकले गदे ॥ २७४७ ॥

रसायनसं., रसायने ।

भाषा—शुद्धरसकरपूर १ कर्प, सोनेकेवर्क ४ माशे, शुद्ध-सोमल १ माशा लेकर एकपहर मर्दनकर सूक्ष्मवलेमें पोष्टली-बनाय गन्धककेद्रवमें १ पहर पाचकरे । इसमेंसे १-१ रती उचितानुपानकेसाथ देनेसे यह सन्निपातादि समस्तरोगोंको दूर-करतीहै ॥ ६४३ ॥

६४४ हिरण्यगर्भपोट्टली (हेमगर्भपोट्टली) १४

रसखलिरथिरजतकनरुमुक्तातालप्रवाललोहाभ्रम् ।

यद्धा पटे चिपका यलितेले हेपगर्भपोट्टलिका ॥ २७४८ ॥

सि. मे. म., पारदप्रकरणे क्षयादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, ताम्र, रजत, सुवर्ण, मोती-हरिताल, प्रवाल, लोह, अभ्रक इनकीमसमें समभागलेकर चिपक-प्रसृतिके रसे १-२ पहर मर्दनकर गोलीबनाय पूर्ववत् ३ तह गन्धकमुक्कपकड़ेमें पोष्टलीबनाय गन्धककेतैलमें एकपहर पकावे । इसमेंसे १-१ रती रोगोचितानुपानकेसाथदेनेसे यह क्षयादि-समस्तव्याधियोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४४ ॥

अथ पोष्टलीरहस्यम्

अत्र (पोष्टलीविषये) बहवो जना विद्वन्ते यत्स्य योगस्य पोष्टली करणीया कस्य वा न करणीयेति १ तत्र पोष्टलीति प्राह-तनामाऽस्ति तस्मिन्माग्नकरस्य ततदोषयभाण्डसङ्ग्रहविषय-औप-पक्षयो भाण्डममताऽस्त्यसमये गुणराहित्यादि मूलं प्रतीयते पोष्टलीं वद्धा गन्धकद्रवौ पाककरणेकोदोषाणामभावादिद्यं पदति. प्रस्ताऽस्त्यतो धातुप्रचुरयोगाना मध्ये कस्यापि योगस्य पोष्टली-विबत्ताऽस्ति तत्तन्निर्माणे सर्वेषामपि जनानां कामचारोऽस्ति । पर्वतीया जाह्लावाऽधुनाऽप्यौषधानां पिण्डं निर्माय रक्षयन्ति । एतत्प्रकारः प्राधान्येन शब्दोमाहिकान्यायेनाऽत्र तत्तन्व्याम-निर्देशपुर-सर्वे चैन प्रतिपादितास्तत्र तद्वद्वकानि पारद*, गन्धक*, सुवर्ण, मुक्ता, शङ्ख*, वराटी, दह्वर्ण, ताम्रं, नाग, वषं, लोहं, अब्रकं, प्रवाला., रजतं, स्वर्णसिन्दूरं, रससिन्दूरं, नरसार*, मलं, हरितालं, मन.शिला, रसकरपूरं, चन्द्रोदयः, वज्रं, मृग-नाभिः, अग्निचारुधिति पञ्चदशतिपरिमितान्यागतानि तेषां मध्ये एकसो द्विःसप्तशतौ वा प्रस्ताः कृताधेदान्त्ये ज्ञयेत् । तत्र तत्तद्विज्ञान्तादिव्यवहारभेदेन नानाविधा योगा दृश्यन्ते तेषां सामस्त्येन निर्दिताः कर्तुमशक्यस्तथापि दिङ्मात्रप्रदर्शनार्थं केचि-योगाः प्रदर्शयन्ते । अथा-सुवर्णमसमनोऽस्तु कर्षेयु सुविशुद्धसम भागपारदगन्धककल्पकेकथं विभिन्नध्वेषावगोलाभिषस्य बन्वुल-निर्यासादीना वा द्रवेषे द्वियसत्तान्विषय शुद्धगन्धकचूर्णं पादकथं मिथयित्वा सौत्रसम्पादानाय द्वित्रवत्तितान्द्वन्द्वमुवर्णखण्डान्-कुंस्तितान् स्थापयित्वा शिलारामिन्महा कर्तौ विषाय वैशौष्यना माह्विनां कृत्वा समन्विद्रवोद्यु चतुराङ्ककोशेयवाससि वद्धाऽव-स्तनुभिर्ललाभिर्माय बीजानि शुद्धगन्धकं चित्रान् यत्रैनां लोहाशलाकादोलिका स्थापयित्वा मन्दाग्निना पाचयेत् कौशे-यस्य द्रव्याऽस्त्यां विलोक्य मुकुटोद्भवेनैकां कर्तौ निष्ठास्य

वज्रखण्डानि युक्त्या दूरीकृत्य गन्धककालिमानमपहृत्य बटी भण्यदर्शनाङ्कुर्यात् । एन सर्वा अपि बटीर्विरोधयेत् । एव वरणे वषण्यादिशेषजन्मोपघातशुभ्रयशङ्कैव नोदेव्यति । आयु नि कास्तौषधस्य वर्णविपर्ययभीत्या निर्यासादिश्वभन्तरेव केवल दिव्य जलेन पिष्टिकामापाय पोट्टलीं निर्वर्तयन्ति । अनया रीत्या पोट्टल्यां काटिन्याऽपिन्य चित्ताकर्षिणीं वर्णशुद्धुना च सम्पद्यते । प्राचीनपोट्टलीषु तु तुलस्यादिस्वरसमाधाना प्रायो दृश्यन्ते, एतेन तत्तद्रोगईरुष्यैर्येषांशक्य विमुच्य बटिकाविधानस्यति श्रेष्ठा । ये तु केचिद्भवभावनागुणो गन्धकद्रुतिप्रायेन द्वाहृतिविशेषस्य भस्मी- भावात्पोट्टल्या नागच्छतीति प्रत्यत्रतिष्ठन्ते ते त्वज्ञानगह्वरे पतिता एव बोध्या । एवञ्चेर्हि तत्तद्रौषधविशेषैस्समादिततत्प्रादि भस्मवु विहायो वक्तुमेतान्ततोऽसक्य एव स्यात्, इहापरितस्तु यत्नशरीरि निर्दिष्टुमशक्या प्रत्यक्षविरोधात् । गर्भपातकार्योपध निर्मितपातुभस्मना तत्तत्कार्यस्य प्रत्यक्षदृष्टत्वात् । एव गर्भरक्ष कौषधादिष्वपि प्रत्यक्षताऽस्ति । सिद्धसम्प्रदायिकास्तु कृष्ण कुक्कुटुगण्डस्य श्रेयश्च नियोजयन्ति एतेनातिशक्तिन्य भवतिगुण दृष्टिरपि । पोट्टलीषु वर्णभेदेस्तु तद्वर्णभस्मस्ववर्णभेदादुदेति । एकस्मा पोट्टल्या नानावर्णोत्पत्तिरपि नानाविधोपपिष्टिका यण्डाना मेल्नास्तम्पयते । यथाऽस्तान्निर्दिश्यमानचतुरष्टपोड लीनां चचारि अष्टौ वा खण्डानि विधायैकेकविजातीयखण्ड स्यैकत्र स्यापनाशतुषु खण्डेषु चतस्रोऽस्यु खण्डेषुटी विचित्रवर्णा पोष्ट्यवस्तम्पयन्त, परन्तित्रय सतिदेशकाना स्वचातुरीयोजन मात्रकला पाकसमये विभिन्नत्रकलगुणानां साङ्ख्यरोपात्स्वतन्त्र पोट्टलीनिमाणप्रकार एव ज्यायान् । सुवर्णशलाकानां निरानमपि न सर्वत्रोपयोगि तच्छुभ्रतमन्त्रादियोगे वैयध्यत् । बलीय साऽवल जीयते इति न्यायेन ययपि सुवर्णे शतुपनीपेऽयस्कतुं प्राऽल तथापि तत्र दर्शकानां चिन्नाऽऽदादन्तराऽन्यदिकश्चिदप्यु पकरत्वाऽऽतीति विद्वत्सु विज्ञेति । अल्पप्रमाणगन्धकरोगोऽपि पोट्टलीगतपरमाणूना सयोरभक्तशरीयगुणोत्पद्यविधायकश्चेति बो ध्यम् । यत्र कञ्चल्युत्प्लेखस्तत्राऽन्यदस्तुमेल्नाऽनन्तर तयोग वरणीयोऽन्यथाऽऽर्कभङ्गविपातककार्वा पक्षेत्स्यति । यत्र तु कुक्कुटादिशुद्धानमरितं तत्र तु नेय विपद्पुपटिति, अग्नियोगेन काश्मिन्तोऽस्युयात् । पारदस्य मेल्नमपि गन्धकातिरिक्तस्यै सह कृत्वाऽन्ते गन्धकमिध्रणमिति हस्तचातुरी ।

अथ लोकप्रसिद्धा काश्चित्पोष्ट्यवस्तानुपाना अपो निर्दिश्यन्ते ताश्च वैयत्रेण जयराह्वरसंभोगा निर्दिष्टाः । यथा—

हिरण्यगर्भपोट्टली—सुवर्णभस्म १० कर्पां विपुदकञ्जली १ कर्पां, शुद्धगन्धक १ टङ्कमित्तम्, सुवर्णगुण्डुखण्ड ६ रक्तिष्ठा, एवदस्तुचतुरष्टयपठिता । अस्या निर्माणशुचिनिर्दिष्टरीत्या कर गौयम्, इयं माश्रिप्रयाग सम्पन्स्यते । कृष्णाऽन्नादुराऽऽर्क रसादिभिर्नयोचित्यद्गुण्णतो रक्तिमानां मात्रां रात्रयश्चरक सोमबीमेवत्रोत्र क्षयादिषु दण्डाप्य रोमोचिन् विदारिति ॥१॥

तारगर्भपोट्टली—इय भेनवर्णा । रौप्यभस्म १० कर्परि मिष्म, पारदभस्म १ कर्प, विपुदगन्धकूर्पा १ टङ्क, सुवर्णत

तुनन्तुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, एवदस्तुचतुरष्टयपठिता कार्या, निर्माण पूर्ववत् । तुलसीपत्रसमधुम्या स्योचितेनाऽन्येनाऽनुपानेन वा योग प्रमेदशुद्रोपपितविकृतिमृत्न्यापयो निवर्तन्ते । श्वेतजत भस्मशोभेऽन्यादस्नेतवर्णा भविष्यति तद्भावेऽन्ययात्वमिति रहस्यम् । अर्धरक्तिष्ठाकामानादेवरक्तिष्ठा मात्रा बोध्या ॥ २ ॥

ताम्रगर्भपोट्टली—मयूरकण्ठाभताम्रभस्म १० कर्परि मित, पूववद्विपुदकञ्जली १ कर्पां, विपुदगन्धकूर्पा १ टङ्क, विपुदसुवर्णगुण्डुखण्ड ६ रक्तिष्ठा, निर्माण पूर्ववत् । इय मयूरकण्ठाभा भवति । श्वेतताम्रभस्मस्तु शुभ्रवर्णा रसस्य रक्षा । आर्द्रस्वरसमधुम्या अवस्थाविशेषवशेन तदुचितानुपा नेन वा वषण्यत्रिदोपधासकाऽऽवरचुल्पावधययोपा निव र्त्तन्ते । अर्धगुघ्रात एकगुघ्रामिता मात्रा । पय्य रोमोचित देयम् ॥ ३ ॥

लोहगर्भपोट्टली (प्रथमा)—लोहभस्म १० कर्पे विपुद कञ्जली १ कर्पां, विपुद गन्धकूर्पा १ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिष्ठा । निर्माणं पूर्ववत् । लोहभस्मवर्णसमवर्णा, एक गुघ्रातस्त्रिगुघ्रापरिमिता मात्रा । आर्द्रस्वरसमधुम्यां तत्तद्रोग विशेषाऽनुपानेन वा योजिता सङ्ग्रहणीगण्डुकामलग्णरगौभप्रमे द्भ्रदारप्रादायति । रोगोचिन् पय्यम् ॥ ४ ॥

लोहगर्भपोट्टली (द्वितीया)—लोहरीप्यद्वर्णवर्णनाय ताम्रगण्डु(सुवर्णमाश्रिकयशदभस्मानि प्रत्येक द्विकार्पिष्ठापि, कञ्जली २ कर्पां, विपुद गन्धकूर्पागर्भकर्प, सुवर्णतनुतनुखण्डा १२ रक्तिष्ठा । निर्माण पूर्ववत् । इय कृष्णवर्णा । एकगुघ्रातो द्विगुघ्रापरिमिता मात्रा हृदिस्वरसमधुम्याऽऽवरचुल्पावधययोपा हतानुपानेन वा योजिता क्षयप्रमेदशुद्रकामलग्णरगौभप्रदनेत्र रोगप्रदणीप्रघ्नीप्रादायति ॥ ५ ॥

मल्लगर्भपोट्टली—विपुद भस्मभस्म ४ पलं, पारदभस्म २ कर्परभावे शुद्धपारद २ कर्परमित, विपुदगन्धकूर्पा १ टङ्क सुवर्ण तनुतनुखण्डा ६ रक्तिष्ठा । निर्माण पूर्ववत् । इयं श्वेतवर्णा । अर्धतुल्लासारस्य द्विगुघ्रापरिमिता मात्रा इत्येन, इधितरेण, दुग्दसरेण वा तत्तद्रोगहरानुपानेना दत्ता ज्वरश्लेष्मवातव्याध्युद दशरक्तिभगन्दरनाडीनगसासकासामिमात्यप्रघ्नीन् नादायति । पय्य रोमोचितम् ॥ ६ ॥

तालगर्भपोट्टली—हरितालभस्म ४ पल, पारदभस्म २ कर्पे (भस्माऽभावे द्वयमपि सुविपुद प्राश्यम्), पुद्गण्यकूर्पा १ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, निर्माण पूर्ववत् । भस्मयतिता चेच्छेना सम्पन्स्यते विपुदाम्यां चेतरीता । आर्द्र कञ्चसमधुम्यां तत्रोद्गहरानुपानेनां तदुद्गमनाददंरक्तिष्ठा मात्रा प्रयुक्ता चर श्वाऽद्यवतत्रयाधिरकश्लेष्मरोगप्रादायति । पय्य रोमोचिन् देयम् ॥ ७ ॥

शिलागर्भपोट्टली—शुद्धां मन शिला ४ पला, पुद्गणद २ कर्पे, विपुद गन्धकूर्पा १ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिष्ठा, निर्माण पूर्ववत् । इय कुम्भकर्णांशकस्यते । मात्राऽ-

द्वैरहित एकगुञ्जामिता । अतिविपाकदुरोहिणीमधुमिवस्वाविशे-
पातुकलाञ्जुगानैर्वा नियोजिता चेन्नश्रासकासादीप्राशयति ॥

विपगर्भपोष्टली—ममन शिलादरदालकरसकपूराणा
भस्मानि प्रत्येकनेत्रैकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, भस्माऽभावे
सुविशुद्धानि प्राश्याणि । सुविशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनु
तनुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । भस्मघटिता चेद्विंशति
चेन्द्वैता, अन्यथा तु रक्तापीता भविष्यति । भस्मघटिताचेदर्थे
तण्डुलादेकतण्डुलमिता माना । विशुद्धं सम्पादित्वा चेद्वैकतण्डु-
लमानाद्विण्डुलमिता विल्वपत्रनिम्बार्द्रकस्वरसेततद्रोगहरानुपा-
नैर्वा नियोजिता चेदुपदशकिरञ्जवतान्याधिदीशतक्षेम्भविचार
रक्तोपमगन्धरुद्रनाडीगणादीप्राशयति ॥ ९ ॥

रसगर्भपोष्टली—द्रवभस्म ४ पलं, पारदभस्म १ पल
(भस्माऽभावे विशुद्धौ प्राश्यां), विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क,
सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । भस्मघटिता
चेन्द्वैता, विशुद्धान्तुपटिताचेद्वैकवर्णा । १ रक्तिमानात् ३ रक्ति-
माना माना तुलस्यादिस्वरसैर्योजिता पाण्डु निहन्ति । भस्म-
घटिता चेत्तण्डुलमानादर्थैरक्तिमिता माना तत्तद्रोगहरानुपा-
नैर्वा नियोजिता सकलामयानिहन्ति ॥ इत्येका ॥

रसकपूरभस्म १० कर्ष, पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे
सुविशुद्धौ प्रहीतव्यौ) विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुसक-
लानि ६ रक्तिमितानि, निर्माणं पूर्ववत् । भस्मघटिताचेद्वैकत-
ण्डुलमानाद्विण्डुलमिता माना, विशुद्धान्यघटिता चेद्वैकक्ति-
मिता हरिद्रियोगैश्च निहन्ति । भस्मघटिता तु तत्तद्रोगहरानु-
पा नैर्वा सर्वरोगानिहन्ति, पर बाजोकरौ कृष्या च, उभयथाऽपि
श्रेता । इति द्वितीया ।

पारदभस्म १ कर्ष, कजली ४ पला, विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क,
सुवर्णतनुसकलानि ६ रक्तिमितानि, निर्माणं पूर्ववत् । एका
रक्तिकामात्रस्य त्रिगक्तिमिता मात्रा आर्द्रकस्वरसादिभि सर्ष-
रोगानिहन्ति ॥ इति तृतीया ॥

दारुभस्म ४ पल, रसकपूरभस्म २ पल, पारदभस्म १ कर्ष,
सुविशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डानि ६ रक्ति-
तानि, निर्माणं पूर्ववत् । भस्माऽभावे सुविशुद्धं प्राश्यां । भस्म-
घटिता चेत्तण्डुलैकमानाद्विण्डुलमिता माना । विशुद्धान्तुपटिता
चेद्वैकमिता मात्रा दुग्धकनकस्वरसाऽम्ब्या वारीकरी १ । तत्तद्रो-
गहरानुपा नैस्तु सर्वरोगानिहन्ति ॥ इति चतुर्थी ॥ १० ॥

त्रिधातुगर्भपोष्टली—विरुध्य वन्नगायस्यदभस्मानि प्र-
त्येकनेत्रकपलानि, पारदभस्म १ कर्ष, विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क
सुवर्णतनुसकलानि ६ रक्तिमितानि, पारदभस्मनोऽभावे विशुद्ध
पारदं भस्मभिः सह सर्वमित्थाऽऽश्रयतामापादयेत् पश्चात्निर्माणं
पूर्ववत् । श्वेतवर्णा पोष्टली भविष्यति । अर्धरक्तितो रक्तिव्यमाना
मात्रा हरिद्रातुलसीस्वरसाभ्यां नियोजिता प्रमेहदृष्टिमिहप्रद-
शुक्रतोषणाशयति । दुग्धेन सेविता शुक्रं कषयति । पच्य
रोगोचितम् ॥ ११ ॥

रसगर्भपोष्टली—त्रिपाश्चर्यतैक्वान्तमुष्णप्रवालपारदमा

णिश्यपुत्रपरागोमेदनीलह्वाना भस्मानि प्रत्येकनेत्रकपर्णानि,
विशुद्धान्यकचूर्णं ६ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डा १२ रक्तिका,
निर्माणं पूर्ववत् । केचित्तत्र स्रष्टिकृद्भविन्दैर्द्वैर्धाजावताना-
नेकैरुपैमधिकृतया प्रक्षिपन्ति तेषामपि भस्मान्येव प्रहीता
व्यानि । तेषां भस्मप्रज्ञा अगन्त्यसंदिग्धातोऽगन्तव्या । इदा
नीन्तानास्तु वज्र विनाऽन्यत्रानि शतत्रगुणोऽसौ विधीर्णां विधि
निर्वापान् दत्त्वा तेनैव साक विद्युच्चक्रिह्वा निर्माय अटी दत्त्वा
वा पुमानि ददति । अन्ये पुनर्निर्वापाऽनन्तरं कुमारीद्वे विद्युच्च-
क्रिह्वा निर्माय पूर्ववत् पुमानि ददति । आद्रोमलहस्वरसेऽशो-
रसत्रासिर्वापान् दत्त्वा तेनैव विद्युच्चक्रिह्वा निर्माय क्रमोत्तर
विद्बदोत्पलसङ्घेषु त्रिगद्गजपुटेयु दत्तेषुतम भस्म सञ्जायते इति
सर्वेषामेवैरानान् परिचितं प्रवार । अनेन प्रकारेण क्रियमाणानि
भस्मानि हरिद्रावर्णानि सम्पन्त्येते पारदभस्माऽभावे चन्द्रोदथस्य
रससिन्दूरस्य वा योग करणीय । मुक्तानान्तु घतपत्रमुष्णं
(गुलाबजल, हिन्दी) पिष्टिवै श्रेयसी । भस्मीकरणे शहस्र-
वराक येन केनाऽन्युपायेन करणीयम् । रत्नभस्मवर्णाधीनो वर्णः ।
अन्तिमप्रकारेण क्रियमाणेषु भस्मेषु तु कुङ्कुमवर्णा पोष्टली सम्प-
न्त्येते सर्वमानात्पाण्डुमिता माना मृगमदाभिजातेशरज्वती
फलैर्द्वैर्गादिभिश्च प्रयोजिता रसायोज पर्यन्तपाण्डुव्यान् राजरोग
मन्यौषधदुर्बुधसर्वानपि रोगान् नाशयति । परमसतायनी योग
वाहिहा चेति । पच्य रोगोचितं दद्यात् ॥ १२ ॥

अम्रगर्भपोष्टली—निषन्द्रजत्राप्रभस्म ४ पल, पारदभस्म
१ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्धं पारदं), विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क,
सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं पूर्ववत् । इय
रक्तावर्णा सम्पन्त्येते । अथे गुञ्जामिता माना आर्द्रकमुष्ण्या तत्
द्रोगहरानुपा नैर्वा प्रयोचिता श्वासकाशस्य नीरोज्वरादीन् गर्भिणी
रोगाश्च निहन्ति । पच्य रोगोचितं विद्यात् ॥ १३ ॥

माक्षिकगर्भपोष्टली—पुष्पमाक्षिकरौप्यमाक्षिकगण्डहरका-
सोसकात्यरीतिपारदभस्मानि १-१ पलानि, पारदभस्म १ कर्ष,
विशुद्धान्यकचूर्णं १ टङ्क, सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिका निर्माणं
पूर्ववत् । भस्मवर्णाधीनो वर्णः । अर्धैरक्तिमानादेक रक्तिमिता
मात्रा आर्द्रकस्वरसमुष्ण्या तत्तद्रोगहरानुपा नैर्वा नियोजिता प्रमे-
हशीणतापाण्डुफमलोदररोगान् निहन्ति । पच्य रोगोचितम् १४

प्रवालगर्भपोष्टली (श्वेतपोष्टली)—प्रवालमुक्तास्फोटपी-
तसर्वशहस्रभस्मानि प्रत्येक द्विद्विलानि, गोदन्तभस्म ४ पल,
पारदभस्म १ कर्ष (भस्माऽभावे विशुद्धो प्राश्यां), विशुद्धान्य-
कचूर्णं १ टङ्क सुवर्णतनुतनुखण्डा ६ रक्तिका, निर्माणं
पूर्ववत् । इयमतिश्रेया । ३ रक्तिमानाम्पापपरिमिता माना
श्वित्रहृत्पलाऽऽकन्वस्वादिभिर्नियोजिता पाण्डुदकाश्वसासुष्ण्या
श्वित्रं यति बालरोगाव । पच्य रोगोचितम् ॥ १५ ॥

प्रत्यस्यपोष्टलिका पूर्वं चतुर्धाप्रतिपादितस्तास्तु पारदगन्ध-
सुवर्णमुक्ताशह्वराटीटङ्कानास्त्रागवन्नलोहाप्रक्रप्रवालरजतवर्णै-
सिन्दूररससिन्दूरस्रसामरुद्धरितात्मन शिलासकपूरचन्द्रोदय

वज्रभृगमशम्भराणि एतानि पद्मविंशतिर्वस्त्वनि समागतानि तेषु भृगमदाम्बरे द्वे धातुपापाणभिन्ने वस्तुनी मुचुषा त्रयोविंशति धातुपापाणा समागता । समनन्तरनिर्दिष्टपद्मशरोद्रीयु अष्ट त्रिंशद्भस्त्वनि समागतानि तेषु अष्टादशपूर्वोक्तान्येव सन्ति विंशतिषु नूतनानि यथा—मण्डूरयशदसुवर्गमाक्षिकदरुदगाहृदवैशान्त माणिक्यपुष्परगगोमेदनीलस्फटिकराजावर्तकुरुविन्दवैद्यैद्युक्तिकीरोप्यमाक्षिकंस्वरीतिक्कातीस गोदन्ता इत्येतेषा सर्वेषामन्ये कस्यापोह्यत्वां योगचिकीर्षां चेतर्हि भवेदेव, यथा द्वितीयलक्ष्मी नारायणे सर्वेषामपि समावेश इतोऽस्ति आपातदृष्टया त्रिचतुर वस्त्वनि तत्र न दृश्यन्ते यथा रसकर्पूरं हिह्वल, कुरुविन्द, गोदन्ता, परन्तु लक्ष्मीनारायणोक्तपदसंस्कारे इते हिह्वलरस कर्पूरयोर्शनंम्यात्पावश्यत्वमस्ति कुरुविन्दगोदन्तयोरभावोऽपि न दोषावहो लक्ष्मीनारायणे चन्द्रसूर्यकान्तनीलाञ्जनरपाञ्जनमार्जं राश्रफिरीपाण्य (तुल्यमणि) पङ्कजलामधिष्ठतया सम्यगमनात् रसकर्पूरदिद्रव्यचतुष्टयस्याधिपकया दानेनाऽपि धात्यभावोक्ति कान्तपापाणममामगमनम्पद्मरस्य तुल्यद्रव्यसमागमनात्प्राप्तस्य पूर्तिं सञ्जातामिति विपरीदानीभिधत्ता तु लक्ष्मीनारायणेऽन्ये वेति सर्वे पद हस्तिपदे निमग्नमिति न्यायेन सर्वा अपि पोह्यन्ते लक्ष्मीनारायणोदरे सन्निविष्टा जाता सन्ति तत्र रोगा अपि प्रायः सर्व समागता सन्ति परन्तु सर्वेषां द्रव्याणां सम्भरण साधारणजननेन कर्तुमतीक्ष्ण दुरासक्तमत्युपनीत्यत्वात् सर्वे सर्वत्र प्रयोज्यमपि दुरासक्ताऽस्ति अतो यावत्सम्यद्रव्याणा विपरदिता एका कार्या तस्या सर्वत्रोपयोगो निरत्ययन लाभप्रदो भवति । विपरदिता द्वितीया तस्या घोरसन्निगतावस्थायां कण्ठावरो धातु योगो लाभप्रदोऽस्ति अतो विपरदिताया लक्ष्मी नारायणोदरीति विपगर्भपोहरीति वा नामकरणमुचितम् । विपरदितायास्तु रसगर्भपोहरीति मुहद्विरण्यगर्भपोहरीति वा नामकरणमुचितं भवति । धातुपापाणातिरिक्तस्यमदारीना यत्र योग कर्तुमभीष्टस्तत्र एकादशसङ्ख्यापकपोहलीवत्पाक करणीय इति रहस्यम् । हिरण्यगर्भेण लोकाना चित्तमत्यन्त माहृष्टे दृश्यते यथा सामान्यतोऽन्तःपावल्यानालोच्य साधार णाना अन्युपदिशन्ति यदस्मि हिरण्यगर्भं दातव्यमिति । परन्तु सा विज्ञानाऽऽज्ञाना निर्मितहिरण्यगर्भेऽष्टा प्रतीकार्यवदेन रस दात्र पुरितमिति बदिन्तु वैशा अपि साहज कुर्वन्ति तेन रसाद्ये बहुकालाद्भ्रमूला धमा त्पुनरागिना भविष्यत्यतोऽज्ञौकिहृदा चिमद्भ्रमनो मृनप्रायप्रकार साकोपदीर्घज्ञौ सधिकित्सदेह जोष्य लोक प्रचारणीय इति ऋषियन्ततितु एव विनीता प्रायं नेत्यवमतिविस्तरेण ।

६४५ हिरण्यगर्भरसः (प्रथम)

एकान्ता रमराजस्य प्राणां हौ हाटकस्य च ।
मुनापल्लस्य चन्दारा भागा पद् द्दीपनि स्यना ॥
स्वयं बले यंराष्ट्याश्च टङ्गना रसपादिक ।
पणनिभ्युक्तोयेन स्वयंमकर मर्दयेत् ॥ २७०० ॥

सूयामध्ये न्यसेत्कलकं तस्य यत्रं निरोधयेत् ।
गतेऽरत्निप्रमाणे तु पुटेऽत्रिशङ्खनापले ॥ २७५१ ॥
स्वाह्नशीतलतां शाल्या रसं सूयादराश्रयेत् ।
ततः खल्वोदरे मयं सुधाम्ब्यं समुद्धरेत् ॥ २७५२ ॥
एनस्याऽमृतरूपस्य दद्याद्दुःखाचतुष्टयम् ।
घृतमाघ्नीकसंयुक्तमेकोनशिशूपण ॥ २७५३ ॥
मन्दाग्नौ रोगसङ्घे च प्रहृष्यां विपमज्वरं ।
शुदाहुरे महाशूले पीनसे श्यासक्कासयो ॥ २७५४ ॥
अतीसारं महाध्याधो श्यययो पाण्डुके गदे ।
सर्वेषु कुष्ठरागेषु यदृत्स्नीहोदरेषु च ॥ २७५५ ॥
यातपित्तकफोत्थेषु द्रव्यजेपु त्रिजेपु च ।
दद्यात्सर्वेषु रोगेषु धेष्टमेतत्प्रसायनम् ॥ २७५६ ॥
र स, र सु, र च, मै र, र क, प्रह्णरीरोगे ।

भाषा—शुदापारा १ भा, सुवर्गमम २ भा, मोती ४ भा, दाह ६ भा, शुद्धगन्धक और पीलीकड़ी २-३ भा, शुद्धा २ भाग लेकर सुवर्ग १ शारमें मिलाय १-२ पहर घोट कर गन्धककेनाय नीलवर्णकजलीकर । फिर अन्य पचवीजोंको मिलाकर पकेनीबूकेरसे एकदिन मर्दनकर वज्रभृगमे गोलेको रस मुहकन्दकर हाथभरके सङ्घेमें ३० जल्लीकण्ठोंकी आंच कर स्वाह्नशीतलत्तेपर निहालकर रखोजे । हरमेसे ४-४ रसीकी मात्रा २९ बालीमिर्चोकवर्णकेसाय धी और मयुमें मिलाकर लेनेसे मन्दाग्नि, मज्जी, विपमज्वर, अर्त, भयहरघुल, पीनग, श्यास, काव, प्रहृष्यतिसार, शोष, पाण्डु, समस्ताष्ट, यष्ट, गीहा, उदररोग, दन्तूर अथवा शिशुपत्र समस्तरोग मटहोयेदे और आयुरी वृद्धिहोतीहे ॥ ६४५ ॥

६४६ हिरण्यगर्भरसः (द्वितीय)

सूतात्पादप्रमाणेन हेमन् पिष्टिं प्रकल्पयेत् ।
तयो स्याद्विगुणा गन्धो मर्दयेत्काञ्चनारिणा ॥ २७५७ ॥
धृत्वा गालं शिपेन्मूयासम्पुटे मुद्रयेत्तत ।
पञ्चदशरूपेणैव सास्रस्त्रितयं शुध. ॥ २७५८ ॥
तत उद्भेद्य तत्सर्वं दद्यान्न्यञ्ज तत्समम् ।
मर्दयेथाद्रैरस्मैश्चिप्रकस्वरमेत च ॥ २७५९ ॥
स्यु ठपीतयराटांश्च पूर्येत्तेन मुत्तित ।
एतस्मादौषपातु यादृष्टमांशेन टङ्गणम् ॥ २७६० ॥
टङ्गणार्द्धं विपं दत्त्वा पिन्ना मेहुण्डुगुणकं ।
मुद्रयेत्तेन कल्सेन पराटाना मुत्तानि च ॥ २७६१ ॥
माण्डे शूषं प्रलिप्याऽथ घृत्वा मुद्रां प्रदापयेत् ।
गते हस्तोम्मिते घृत्वा पुटेदाण्यकात्पले ॥ २७६२ ॥
स्याहशीत रसं मात्रा प्रदद्याद्द्विकानायनत् ।
पथ्य मृगाशूयजेय त्रिदिन लक्षणं त्यजेत् ॥ २७६३ ॥
यदा छर्दि भयेत्तस्य दद्याच्छिप्राशुन तथा ।
मधुयुन तथा शेषकोपे दद्याद्दुःखाट्टकम् ॥ २७६४ ॥
विरक भजिता भन्ना प्रदेया दधिस्तंयुता ।

जयेत्कासं क्षयं श्वासं ग्रहणीमदधि तथा ।

अग्निञ्च कुरुते दीप्तं कफजातं नियच्छति ॥ २७६५ ॥

शा सं., रसायनसं., र. प्र. सु., दो., र. (भा.), भै. सा., नि. र., र. दी., वै. चि., र. का., रससारसङ्ग्रह, क्षयाधिकारे ।

भाषा—शुद्धपारा ४ भाग, सोनेकेकक १ भा., शुद्धगन्धक १० भागलेकर नीलवर्णकजलीकर कचनारकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्रमूपामें रख सुहृन्दकर ३ दिन मूपार-पुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर उसकीबराबर शुद्धगन्धक मिलाय अदरख और चिन्कुरेसोते मर्दनकर वड़े पीलेरङ्गके कौशोमें भरके समस्तऔपयसे अष्टमांशमुहागा और पोड्यांश बलनागरो मूशरके दूधसे मर्दनकर कौशोका सुहृन्दकर चूनापुतीहुईहण्डीमें रखदे । फिर शरावसे हंडीका सुहृन्दकर ६-७ कपइमिठी समस्तपरदेकर मुखावर हाथभरके रुद्धमें जल्लीकण्डोकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे लोकनाथकीतरह देकर मृगाङ्गकीतरह पच्यपालन करे । ३ दिनतक नमक न खावे । इसके देनेपर वमनहो तो मिलोयकाकाथ, श्लेष्मप्रकोपमें गुड और अदरख; रेचनमें भुनीभांग दहीमें मिलाकरदेवे । इसके प्रयोगसे कास, क्षय, श्वास, ग्रहणी, अधिचि, मन्दाग्नि, कफ और वातगो रोगसेव नष्टहोतेहैं ॥ ६४६ ॥

६४७ हिरण्यगर्भरसः (तृतीयः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तावन्तः कनकस्य च ।
तथोश्च पिष्टिक्तं कृत्वा गन्धो द्वादशभागिकः २७६६
कुर्यात्कज्जलिकां तेषां मुक्ताभागाश्च षोडश ।
चतुर्विंशच्च शङ्खस्य भागकं द्रुणस्य च ॥ २७६७ ॥
एकत्र मर्दयेत्सर्वं पक्वनिम्बूकजं रसेः ।
कृत्वा तेषां ततो गोलं मूपान्मुटके न्यसेत् ॥ २७६८ ॥
मुद्रां दत्त्वा ततो हस्तमात्रे गते च गीमयेः ।
पुटेदारण्यजातेश्च स्वाह्नशीतं समुद्धरेत् ॥ २७६९ ॥
वेदरकिमितं पिष्ट्वा दद्यान्नन्याज्यसंयुतम् ।
एकीनर्विंशदुन्मानमरिचैः सह क्षीयताम् ॥ २७७० ॥
राजते मृन्मये पात्रे काचजे वाऽवलहेहयेत् ।
लोकनाथसम पच्यमतीसारे प्रयोजयेत् ॥ २७७१ ॥
कासे श्वासे क्षये वाते कफे ग्रहणिकागदे ।

शा. स., र. सु., र. प्र. सु., यो. र., र. चं., रसायनसं. र (भा.), भै. सा., चि. र. म., नि. र., र. का., वै. चि., वै. वि., काशाधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा और सोनेकेकक ४-४ भाग लेकर पिष्टीबनाय १२ भाग शुद्धगन्धकेसाय नीलवर्णकजलीकर मोती १६ भा., शङ्खमस २४ भा., सुहागा १ भाग लेकर कजलीमें मिलाय पक्वनीबूकेरससे १-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय वज्र-मूपामें बन्दकर हाथभरके खट्टेमें जल्लोयण्डोकी आंचदे । स्वाह्न शीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्तीकीमात्रा २१ रत्तीके चूर्णकेसाय गोपुपमें मिलाकर चांदी, मिठी अथवा काचके बतनमें सेवनकर लोकनाथकीतरह पच्यपालनेसे कास,

श्वास, क्षय, वातकफ, ग्रहणी और अतिपार इनसबको यह नष्ट-करताहै ॥ ६४७ ॥

६४८ हिरण्यगर्भरसः (चतुर्थः)

रसमस्य त्रिभागं स्यादेकभागं सुवर्णजम् ।
एकभागं मृतं ताप्रमेकभागश्च गन्धकम् ॥ २७७२ ॥
मर्दयेच्चिन्कुराद्यै र्द्वियामान्ते समुद्धरेत्
पूर्वां चराटिकास्तेन द्रुणैस्तथा विलेपयेत् ॥ २७७३ ॥
चराटान्पूरयेद्भ्राणैश्च रुद्धा गजपुटे पवेत् ।
विचूर्णयेत्स्नाङ्गशीसे षोडशो हेमगर्भिकाम् ॥
मृगाङ्गवद्यतुंज्यामक्षणाद्राजयक्ष्मनुत् ॥ २७७४ ॥

ध., र. सु., र. चं., र. को., र. सं., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—पारदमस ३ भाग, सुवर्ण और ताप्रमस, शुद्ध-गन्धक १-१ भाग लेकर कजलीकर चिन्कुरेकेरससे दोपहर मर्दनकर पीलीकौड़ियोंमें भरकर दूधमेंपिठेहुए सुहागेसे कौड़ि-योंका मुंह बन्दकर हंडीमेंरख गजपुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतल-होनेपर निकालकर कौड़ियोंतकित पीतकर रखडोड़े । इसमेंसे मृगाङ्गकीतरह ४ रत्तीकीमात्रामें देनेसे यह राजयक्ष्मको नष्ट-करतीहै ॥ ६४८ ॥

६४९ हिरण्यगर्भरसः (पञ्चमः)

रसस्य भागाश्चत्वारस्तदर्थं कनकं तथा ।
तदर्थं ताप्रकञ्चय मौक्तिकं विद्रुमं समम् ॥ २७७५ ॥
तत्समानेन वलिना सर्वं खड्गे विमर्दयेत् ।
कृत्वा तु गोलकं पश्चात्पवेद्दूधरयनके ॥ २७७६ ॥
मृदुना चलिना चैत्र स्नाङ्गशीतं समुद्धरेत् ।
वलिमेवञ्च संगुहं पद्भुगं जारयेत्सुभीः ॥ २७७७ ॥
हेमगर्भरसो नाम त्रिभु लोकेषु विद्युतः ।
कासश्वासेषु सर्वेषु शूलैषु च हितस्तथा ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वत्रोगाजयेत्परम् ॥ २७७८ ॥
नि. र., क्षये ।

भाषा—पारदमस ४ भाग, सुवर्णमस २ भा., ताप्रमस, मोती, प्रवाल और शुद्धगन्धक १-१ भागलेकर नीलवर्णकज-लीकर अदरखकेरससे १-२ पहर घोटकर इच्छानुसार पोड्यो बनाय गन्धकयुक्त कपडेकी ३ तहनें लपेटकर मूपरुटकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर पुंवनगन्धकको तह देकर पकावे । ऐसे पद्भुगन्धकजारणहोनेकेबाद साफकर रखलेके । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक समयोचिानुपानकेसाथ देनेसे कास, श्वास, शूलप्रथति समस्तरोगोंको यह नष्टकरतीहै ॥ ६४९ ॥

६५० हिरण्यगर्भरसः (षष्ठः)

दरुदं कर्ममात्रं तु मर्दयेत्खड्गमध्यगम् ।
सुवर्णं मायमेकञ्च तत्सर्तं पाटुदं क्षिपेत् ॥ २७७९ ॥
मर्दयेत्प्रथा क्षिपेत्तत्र गन्धकं चार्धमायकम् ।
मर्दयेदर्कजसौरे र्वन्धयेत्पटमध्यगम् ॥ २७८० ॥

यामान्सिद्धो रसो नाम्ना सर्वरोगहरः परः ।
हिरण्यगर्भो गुञ्जैकः क्षयरोगनिवारणः ॥ २७९८ ॥
श्वासकासौ सङ्ग्रहणी वातज्याधीश्च सर्वशः ।
विशेषान्नाशयत्येव यथारोगानुपानतः ॥ २७९९ ॥
र. का., राजयक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्धतावेकवारीकपर्णोको गरमकर नवसादरभिलेपुए निगुण्डीके रसमें ० वार बुझावे । फिर हरिताल और सोमल-सत्त, पारा और गन्धककतिले १-१ भाग लेकर गोमूत्र और आकके दूधसे मर्दनकर पत्रोंपर लेपदेकर गोला बनावे । इसके-बाद तीनोंधार, पोंचोनमक, शोरा, फिटफुडो, और बलनाम येसब पूर्वपिण्डके बराबर लेकर गोमूत्र और आककेदूधमें पीस गोलैपर लेपदेकर सुखाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर २-३ कपह-मिर्द्रेदेकर सुखाय गजपुटमें ८ पहरकी आचदे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर पारा १६ भाग, हरितालमस १२ भाग, और शुद्धगन्धक ८ भाग लेकर आककेदूधसे १-२ दिन पीसकर गोलाबनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर २१ पहरकी जहलीकण्डीकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे क्षय, श्वास, कास, सङ्ग्रहणी, वातज्याधिप्रश्रुति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥ ६५३ ॥

६५४ हीरकरसायनम्

यज्ञं तार्क्ष्यञ्च माणिन्यं पुष्परगं शनैर्मणिम् ।
वेद्व्यमथ गोमेदं मणिञ्चान्द्रं प्रवालकम् ॥ २८०० ॥
भागोत्तरमिदं तस्माद्द्विकान्तं दिग्विभागिकम् ।
माक्षिकद्वयजम्भरम वैक्रान्तसममानकम् ॥ २८०१ ॥
पूर्वस्मादुक्तसम्भारात्विगुणामीशकज्जलीम् ।
आज्जेन पयसा वन्ध्याकर्जाटीमूलसम्भवेः ॥ २८०२ ॥
शावणीद्वयजै हंसपादीकोकनदोञ्जवैः ।
पिष्ट्वा पिष्ट्वा पुटेद्धीमान् कौकुटारय च कज्जली २८०३
वारम्भारं प्रदातव्या भवेद्वज्रसामान्यम् ।
गर्भिणीनां प्रसूतानां धन्व्यानां योनित्यापदाम् २८०४
गुल्मप्रदरयुक्तानां श्लोणामेतद्धितं परम् ।
राजयक्ष्मक्षयहरे स्तम्भनं रेतसः परम् ॥ २८०५ ॥
नू. क., रसायने ।

भाषा—हीरा, पत्रा, माणिन्य, पुखराज, नीलम, वेद्व्यं, गोमेद, चन्द्रान्तमणि, प्रवाल इनकीमसमें कमदुद्धमागसेलेकर वैक्रान्त, सोनामास्री और रूपामाखीमन्म प्रत्येक सबसे १० बाह्रिस्वा इलखसे त्रिगुनी समभागपारगन्धककी कञ्जली मिलाय बक्रीकास, वासलेपसेक्रान्द, लाल और पीली गोरख मुण्डो, हसराज, नीलोपर इनद्वेषोंसे १-१ दिन मर्दनकर गोला-बनाय शरावसम्पुटमें बन्दकर दुक्कडपुटकी आचदे । स्वाहशीतल होनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समय शयवा रोगोचितानुपानकेसाथ देनेसे गर्भिणी, प्रसूता, वन्ध्या, योनि-क्षोषप्रस्त, गुल्म, और प्रदरयुक्त द्वियोनिलिये यह अत्यन्त

हितकरकहै । राजयक्ष्म और क्षयको दूरकरताहै । सम्मोगसे १ पण्डापहिले लेनेसे शुक्रका अत्यन्तस्वप्नमनहोताहै ॥ ६५४ ॥

६५५ हीरचन्द्ररसः (प्रथमः)

स्यात्कुलत्थरसयज्ञकदुग्धै र्वज्रमत्र पुटितं जयपालैः ।
मेपकन्दकदलीचिपकन्दे संस्थितं तदनु किंशुकमूले ॥
मध्ये ततो मुनिपलाशजपिण्डे
पाचनाद्भवति हीरकभस्मम् ।
तत्समं कनकमौक्तिकतारं
तेन पञ्चगुणितं रससारम् ॥ २८०७ ॥
अम्लिकास्वरसमिधितमन्तः
सूरणस्य पिहितं पुटितञ्च ।
सिद्धलोहघनताप्रसमेतं
मृपयाऽथ चिपचेत्पुनरेतत् ॥ २८०८ ॥
इत्थममृतगुणो रसरज्जो
नामतो भनति हीरकयज्ञः ।
धीमताऽऽज्यमरिचैरुपयुक्तः
सन्निपातगद्गानानसक्तः ॥ २८०९ ॥
क्षीणजीर्णविषमन्जरपाण्डु-
श्वसरोपकसनालमन्थ- ।
प्लोहगुल्मजटरादिभिरुदं
स्वागतं हृदि रुजं चिनिहन्ति ॥ २८१० ॥
टो., उवराऽधिकारे ।

भाषा—हीरको कुलथीकेवाध, सेहुण्डकेदूध और जमाल-गोटेके बरकमें ७-७ वार बुझाकर मेपकन्द, कदलीकन्द, चिप कन्द, पलाशकीजड, अगस्त्यमूल, पलाशकेफूल इनमें क्रमशः रखकर शरावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचदे देनेसे भस्म होजा-ताहै । इसभस्मकी बराबर २ सुवर्ण, भोती और रजतभस्म तथा पाचगुनी पारदभस्म मिलाकर इमलीकेद्वेषसे १-२ दिन मर्दन-कर जहरीसूरणके कन्दमें गोलैको रख उसीकी ढाटसे बन्दकर १-७ कपडमिठी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर लोह, अन्नक और ताम्र इनरीभस्ममें पूर्वपिण्डकी बरा-बर मिलाय इमलीकेद्वेषसे मर्दनकर पूर्ववत् सूरणमें रख गजपुटकी आचदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर रखडोड़े । इसमेंसे दो चावलसे १ रत्तीतक समय अथवा रोगोचितानुपानकेसाथ अथवा धी और मरिचकेसाथ देनेसे समस्तसन्निपात, क्षीणता, जीर्ण और विषमन्जर, पाण्डु, श्वास, शोष, कास, मन्दाग्नि, ग्रीहा, गुल्म, जटरोप, हृदयकेरोग इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६५५ ॥

६५६ हीरचन्द्ररसः (द्वितीयः)

टङ्काष्टरसः शुद्धः क्षारिका टङ्गुपोडश ।
खरयूत्रेण सप्ताहमेकोद्वय विमर्दयेत् ॥ २८११ ॥
पिण्डिकायां निरुद्धपाथ काजिके स्वेद्येद्येदिनम् ।
शुद्धं हीरमयो नीत्वा गुञ्जायुग्मं त्रिजातिकम् २८१२

ससावृत्तमिदं तप्तं क्षिप्यते खरसूत्रके ।
 अथ नो म्रियते चैव कदाचिदपि हीरकम् ॥२८१३ ॥
 कण्टकारीरसे चैव पञ्चवेलं प्रपापयेत् ।
 धृत्वाऽग्नी लोहमृपायां म्रियते नान्यथा हि तत् २८१४
 मृतं नीत्वा तदा तैले वसुमाने विनिक्षिपेत् ।
 प्रतप्ते हण्डिकामध्ये रसोऽद्धस्तन दीयते ॥ २८१५ ॥
 नागहोत्रोश्च पत्राणि पण्मापप्रमितानि च ।
 पृथक् पृथक् निधाप्यन्ते हीरकमृपमुखे ततः ॥२८१६॥
 अतिमृशमा च जायेत पिष्टिः सर्वस्य वस्तुनः ।
 पुनरथं मृतं मृतं पूर्वमथं धृतञ्च यत् ॥ २८१७ ॥
 नि.स्रोहे हण्डिकामध्ये कृत्वाऽग्निं ज्वालयेत्ततः ।
 चुष्टिकोपरि विन्यस्य किञ्चित्ताञ्च पिष्टिकाम् २८१८
 क्षिप्त्या तामेकतः कृत्वा स्रोटरूपो रसस्तदा ।
 खल्वे निषिप्य किञ्चिच्च मृत्तिकायाश्च सम्पुटे २८१९
 नियेद्य मृतले किञ्चित्कोकिलैः परिपूर्यते ।
 स्वल्पकृस्तेश्च यान्त्याज्ज्वलद्भिर्प्रदीपनम् ॥२८२०॥
 एवं सिद्धो भवेदेव रसराजश्च साधितः ।
 हीरकस्यो रसो नाम यत्नतः प्रतिपादितः ॥ २८२१ ॥
 यत्र तत्र न यत्कस्यो योक्तव्यो रोगशान्तये ।
 नि.सञ्जः सन्निपाते यस्तस्य तालुनि दीयते २८२२
 रक्तिकाधर्ममात्रश्च सन्निपातं नियच्छति ।
 पुनः सञ्ज्ञां समायाति तदाऽऽस्ये तस्य दीयते २८२३
 शर्कराशोशकारञ्च खण्डमिश्रुप्रियालकान् ।
 पथ्यञ्च पायसञ्चैव कदलीफलमुत्तमम् ॥ २८२४ ॥
 रसालाञ्च परुषांश्च पानकं पथ्यमोरितम् ।
 अतिलौल्यकरं देयं शीतलं सलिलं तृषि ॥ २८२५ ॥
 अग्ने बलमसौ कुर्याद्गहणीरोगनाशनः ।
 दुष्टदुष्टस्यार्दींश्च विकाराप्राशयत्यसौ ॥ २८२६ ॥
 हीरकस्यो रसो नाम्ना यत्र यत्र प्रयुज्यते ।
 ताप्रोगान्प्राशयेन्नूनं रोगयोग्यानुपानतः ॥ २८२७ ॥

यदातक अग्नि जलावे कि तैल जलकर नाग और सुवर्ण गलजाय
 और हण्डी छेदरहितहोजाय । इसकेबाद हीरसे आधी पाद-
 भूम और उतनाही शुद्धपारा डालकर पिष्टीगलनेतक अग्नि दे ।
 गलेहुए धातुद्रवको ईष्टप्रयतिके खरमें डालकर जमाले, यह स्रोत
 तैयारहोगा इसे खरलमें थोड़ा पीतकर मिर्चकी मृषामें डालकर
 सारिष्ठकोयलोके चुरेसे मृषाको भरकर पहेसे यहातक धमनकरे
 कि मेषमेंसे ज्वाल निकलेलेनो । स्वात्रशीतल्दोनेपर निकालकर
 रखडोए । इसमेंसे २ चावलसे लेभर ४ चावल तक ही मात्रा
 सन्निपातेसे मूर्च्छित रोगीके तालुमें पाठकर रक्तमें धरंणकरे ।
 इससे मूर्च्छा जायतहोनेपर अतनीही मात्रा उचितानुगानकेसाथ
 खानेको दे । इससे समस्तमभिगत निवृत्तहोतेहे । मूर्च्छा जगने-
 पर असथ गर्मी मादमहोतीहो तो शशरका शरवत, काली
 अथवा साधारण ईर, राउ, चिरोजी, रौर, फाकैला, अमरग,
 पेया, फालसे, पना इत्यादिक दधिकारक पथ्य देवे । अत्यन्त
 प्यास मादम पडनेपर ठंडा जल दे । रोगी और रोगकां बलाबल
 देखकर तत्तदोद्गहारागुगानकेसाथ शक्य प्रयोगकरनेसे मन्दाग्नि,
 प्रह्णी, कुष्ठ और क्षयको यह नष्टकरताहे ॥ ६५६ ॥

६५७ हीरवद्धरसः (तृतीय)^१

द्वौ भागो मृतहीरकस्य गगनस्य त्रयः पुनः ।
 भस्मसूतस्य चत्वारः पट्टं शुद्धगन्धकस्य च ॥२८२८॥
 मृतलोहस्य द्वौ भागो चत्वारस्ताराम्ब्य च ।
 राचनाया भवन्त्यत्र भावनाः पञ्च सूतके ॥ २८२९ ॥
 तथा सुधर्चलायाश्च दातव्या भायनाः प्रमात ।
 अथो वृद्धायां मृषायां मरये दद्यात् च तं रसम् २८३०
 पुनः शरावद्वितये दद्यात् पश्चाद्भिमुद्रयेत् ।
 हस्तप्रमाणके कुण्ठे पुटो देयः शनै लघुः ॥ २८३१ ॥
 द्वियामं याददेवतञ्ज्जीतमादाय तं रसम् ।
 विधाय भैरवस्याऽथ पूजनं भेषजस्य च ॥ २८३२ ॥
 गुञ्जामात्रममं दद्याद्हीरकं रमेभ्यरम् ।
 परिचेल सधं प्राप्तस्ततस्तत्स्वाभ्युत्पन्नस्य ॥ २८३३ ॥
 क्रोधमात्सर्यमुत्सायं ध्यायामं धर्ममेत्रनम् ।
 अतिप्रलयनं चिन्तामभ्यग्याञ्च धर्जयेत् ॥ २८३४ ॥
 असत्यमापणञ्चैव पर्यं मेर्यं निरन्तरम् ।
 अनेन जायते पुष्टिं दृष्टधारोग्यञ्च जायते ॥ २८३५ ॥
 अनेन सुराममाति पुत्रं चानेन चोत्तमम् ।
 अनेन नश्यते धायुरनेनायुश्च धर्षते ॥ २८३६ ॥
 अनेन लभते कान्तिमनेनापि अरात्रयत् ।
 अनेन पलितं यानि ग्वालियञ्च विनेयतः ॥ २८३७ ॥
 अनेन घसकायः स्याद्दिशेषण निरात्रयः ।
 स्यावरं जह्ममञ्चापि दृष्टिमञ्चापि यष्टिमम् ॥ २८३८ ॥
 अनेन न प्रमयति मेधमानस्य च चचित् ।
 अनेन देयन्पः स्याञ्जायते सुद्विकृतता ॥ २८३९ ॥
 शयं कासं प्रमेहञ्च रत्तपित्तं सुदारणम् ।

सूचि, १. का, सन्निपाते । १. का, हीरकेरहित इति नाम.
 पाठय प्रयोऽस्ति ।
 भाषा—शुद्धपारा २ कपे, सारिका (ऊपरमूमिमें निकलेहुए
 क्षाराद्र) ४ कपेलेकर गर्भकेशुमे ७ दिनतक मर्दनकर गोला-
 बनाय उसकेबीचमें माषप्रजातिके २ रती हीरको बन्दकर ४ तह
 कपेमें लपेट दोलायन्यकनाय खण्डुलधीकीकाष्ठोंमें एकदिन
 स्वेदनकर लोहेकी मृषामें इगपिण्डकाको गरमकरके गर्भके मूषमें
 ४९ बार घुसावे । पिण्डका प्रत्येदवार नवीन बनावे । इगनरह
 करेपरभी कदाचित् भस्महोनेमें कुछ कम रहजाय तो हीरकरह
 पिण्डकामें रात पूर्व १ घननकरके सुगरिक भस्मकाके पचा
 ङके स्वासमें ५ बार घुसाव । इगनरह मगहुएहीको टण्डीमें रख
 महुटुना पीतोमरतोका ३ त्र शालकर गरमकरे । ३ त्र गौतनेत्रय
 त्र हीरसे आधेप्रमाणमें शुद्धपारा डालकर ६ मात्रो बहुत बारीक
 नागकेअग्नेमें दहकर बतनेही गोनेके बारीकअग्नेमें दह कर निर

विद्रव्यघ्नौलिके शुल्मे ग्रहणीमपि दुस्तराम् ॥
अतिसारं महाघोरं सर्वाधंश्च नाशयेत् ॥२८४०॥

रसचि., रसायने ।

भाषा—हृदिकीभस्म २ भा., अन्नकमस ३ भा., पारद-
भस्म ४ भा., शुद्धगन्धक ६ भा., लोहभस्म २ भा., रजत-
भस्म ४ भागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर गोरोचनकेद्वय और घड़ौ-
लोणीके स्वरसकी ५-५ भावनाएं देकर दृग्मूषामें बन्दकर
मूषाको दो घारावोंमें रस ३-४ कपइमिद्री देकर एकहाथमके
खट्टेमें दो पहलमें शान्तहोनेलायक लघुपुट दे । स्वाज्ञतीतल-
होनेपर निकालकर भैरव और दवाका पूजनकर रखछोड़े । इस-
मेंसे १-१ रत्ती मरिचके साथ देकर पानखिलावे । क्रोध,
मत्सरता, कसरत, धूप, अत्यन्तबोलेना, चिन्ता, चुगली, अस-
त्यभाषण इनका परित्यागकर पच्यका सेवनकरनेसे पुष्टि, दृष्टिका
आरोग्य, उत्तमचन्तति और वज्रशरीरको प्राप्तहोता है ।
सबनरहकेबापु, कान्यमाष, गुड़ापा, पलित, खालिय, स्यावर,
जहम और कृत्रिमविष, क्षय, कास, भयङ्करकफित, विदग्धि,
अष्टोला, शुल्म, दुस्तरप्रदणी और अतिसार ये सबरोग नष्ट
होते हैं ॥ ६५७ ॥

६५८ हुताशनरसः (प्रथमः)

पक्वकृष्णदशभागयुक्तं

योज्यं चिपं टङ्कणमूषणञ्च ॥

हुताशनो नाम हुताशनस्य

करोति कृद्धि कफजिघ्राराणाम् ॥ २८४१ ॥

र. सं., र. चं., यो. र., व. यो. त., नि. र., र. कौ., चि.
र. म., वे. चि., वै. र., टो., अजीर्ण ।

टि०—योगरत्नाकरप्रथमपुत्र बुधचिद्विमानभाग टङ्कण निवोभि-
नयति ।

भाषा—शुद्धवधनाम १ भाग, शुनागुहाणा २ भा., मरिच
१२ भाग लेकर बारीकचूर्णकर अदरखचरहके रससे घोटकर
१-१ रत्तीको गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
रोगोपिचानुगतकेसाथ देनेसे मन्दाग्नि और कफरोगको यह
दूरकरताहै ॥ ६५८ ॥

६५९ हुताशनरसः (द्वितीयः)

शलिनांलिरसामृतं सप्त त्रिकटुद्रव्यतो विमर्दयेत् ।
ज्वलनाभ्युत्थतं तथाद्रुकद्रव्यतोऽपि विभाषितं प्रथमम् ॥
भयतीह रसायने परं मरिचैः सहितं भगन्दरम् ।
ग्रहणीमपि नाशयेत्पुनं धृतयुद्धरिचैः निषेधितम् २८४३

तान्द्रव्येषु मपुषिप्यलीभ्यां

धार्तरसशोद्रयुतं प्रथमम् ।

आमानिलं शोद्रहरीतकीभ्यां

पासामधुम्याञ्च रुष्टं निहत्याम् ॥ २८४४ ॥

पञ्चाङ्गनिग्मामलेन धृतं

पूतं कपाशौद्रयुतं निहत्याम् ।

धृतोपणाभ्यां गलगण्डरोगं

श्वासाग्निमान्द्यं श्वयथुं हुताशाः ॥ २८४५ ॥

र., भगन्दरे ।

भाषा—शुद्ध गन्धक, कालादाना, पारा और बज्जनाग सम-
भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारेगन्धककी नीलवर्णकज्जलीमें मिलाय
त्रिकटु, चित्रक और अदरखकेरसोंसे ३-३ दिन मर्दनकर
आधीआधी रत्तीकी गोलीयें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१
गोली मरिचकेसाथदेनेसे भगन्दर; धी और मरिचकेसाथ
प्रदणी, गलगण्ड, श्वास, मन्दाग्नि और शोथ; मधु और पीपल-
केसाथ मृगशृङ्ग और मकड़ोकाविष; आंबलेकेरस और मधुसे
प्रमेह; हरे और मधुसे आमवात; अहूसेकेरस और मधुसे वात-
रस; निम्बपत्राङ्ग और आंबलेसे कुष्ठ; येसब रोग नष्टहोते ॥

६६० हुताशनरसः (तृतीयः)

यावद्भस्म भवेत्कणौ हुतवह संक्षुष्यतेलोहजे,
कम्बो भस्मसप्तमः समौ यलिरसौ दत्त्वाऽङ्गिपादांशकौ
उत्तार्याऽथ तयोः समोपणयिषाभ्यां सार्द्धमेतद्धर्मं,
पिप्प्ला स्याद्ग्रहणीरगादिषु च तद्योगे हुताशो रसः ॥

टो., ग्रहण्याम् ।

टि०—यपयस्मिन्योगेऽनिरसनागरजतः सम्मेलन विहित परन्तु
निस्त्वभस्मान्तरा पशुकार्दितादिरोगजनकत्वसम्भवात्कुमारीरते मर्द-
यित्वा सप्त गजपुत्रान् दत्त्वा योगे निवोचनीयमिति विद्वत्सु विद्वेष
प्राथम्येन ॥

भाषा—राहभस्म १ भा., समभाग पारद और गन्धककी
कज्जली आषामाग मिलाकर रखले । फिर एकभाग शुद्ध सीधेको
लोहेकीकड़ाहीमें गलाकर उपयुक्त तीनोंचीजोंका थोड़ा २ प्रशेप
देकर नीम या बज्जलेके लण्डे अथवा लोहेकी कड़छीसे पर्यङ्करे ।
प्रशेप समाप्त होनेपर सूता पर्यङ्करे । कड़ी आंब देनेपरभी न
जमे तब दहनसे टककर आगपरही रहनेदे । स्वाज्ञतीतलहोनेपर
निकालकर इसकी बराबर मरिच और शुद्धवधनाम मिलाकर १-२
दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती समोपिचानुगत-
केसाथ देनेसे यह पञ्चाङ्गीपरग्रहणरोगको नष्टकरताहै ॥ ६६० ॥

६६१ हृदयेभररसः

रसगन्धकलोहाङ्गं चिद्रुमं मौक्तिकं तथा ।
कन्याद्रोषेण सम्मर्द्यं शुजाद्वयमितो घटीम् ॥ २८४७ ॥
एत्या संशोपयेद्रीद्रवहियोगं विना निषक्त ।
पार्थाम्भसा सर्पिषा च दद्याद्भूद्रोगशान्तये ॥ २८४८ ॥
आ. वि., हृद्रोग ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह, अन्नद, प्रजन
इनकीभस्में और मुलापिष्टी समभागलेकर नीलवर्णकज्जली
पीठेकारके रससे एकदिन मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलीयें बना-
कर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली धी कादर संशुद्र अर्जुनके
बापकेसाथ देनेसे यह हृद्रोगको नष्टकरता है ॥ ६६१ ॥

कर क्षीरकृशुकी और बन्दालकेरसोंसे तप्तजलमें नष्टपिष्टी बनावे । इसकेबाद ३० वां अथवा १६ वां भाग कान्तचूर्ण मिलाय अन्यग्राममें बन्दकर धमनकरमेंसे गुटिका तैयारहोगी । इसको सुंढमें रखनेसे समस्त सिद्धियां होतीहैं ॥ ६६६ ॥

६६७ हेमयोगः (प्रथमः)

मधु मागधिकां विडङ्गसारं
त्रिफलां हेम घृतं सिताञ्च खादेत् ।
जरया नवलीढदेहकान्तिः

समधातुश्च समाः शतञ्च जीवेत् ॥ २८६६ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने ।

भाषा—पीपल, विडङ्गपुल, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभागलेकर सबकी बराबर शकर मिलाकर रगछोड़े । इसमेंसे रोगीका बलाजल देखकर १ मासेसे २ मासेतक मधु और धीकेसाथ मिलाकर लेनेसे बुढ़ापे और धातुओंकी विषमतासे रहितहोकर पूरे १०० वर्षतकजीताहै ॥ ६६७ ॥

६६८ हेमयोगः (द्वितीयः)

सपशवीजामलकामयाशं
सर्पिर्मधुभ्यां कनकं लिहन्तः ।
दीर्घायुषो मन्दजरपोपताः

सरीसृपाणाञ्च भवन्त्यगम्याः ॥ २८६७ ॥

र. र. स., र. र. कौ., रसायने ।

भाषा—कमलगडा, त्रिफला और सुवर्णभस्म समभाग मिलाकर रगछोड़े । इसमेंसे २ रसीसे ६ रसीतककी मात्रा मधु और धीकेसाथ लेनेसे दीर्घायु होतीहै । बुढ़ापे और चित्तशोभादिसेका असर कमहोताहै । सर्पप्रयति शतक जन्तुओंकाभी भय नहीं रहताहै ॥ ६६८ ॥

६६९ हेमयोगः (तृतीयः)

सुवर्णचूर्णात्पलमश्वगन्धा-
रजः समानं हविषा विलीढम् ।
तन्नोति पुष्टिं घृणुयः सुकान्तिं
यलायुरारोग्यकरं नियोज्यम् ॥ २८६८ ॥

लो. ५, रसायने ।

भाषा—सुवर्णभस्म १ रसी और असगन्धकाचूर्ण ३ भागों धीकेसाथ लेनेसे पुष्टि, कान्ति, बल, आयु और आरोग्यकी वृद्धि होती है ॥ ६६९ ॥

६७० हेमलोहम्

तिरीशमोचोन्वलताम्रपुष्पां-
पाठाममद्गान्मुदयस्तकानाम् ।
समे रजांभि हिगुणं समान-
हेमाकेलाहं मधुना प्रयोज्यम् ॥ २८६९ ॥
पीत्या ततस्तण्डुलधायनाम्नो
जयत्यर्ताम्भामुदीर्घयोगम् ।

प्रणष्टवर्हिं कुरुते प्रदीप्तं
बलं घृणुःकान्तिविवर्धनञ्च ॥ २८७० ॥

लो. ५., अतिसारे ।

भाषा—पठानीलोथ, मोचरस, कमलगडा, धावड़ीकीजड़-कीछाल अथवा फूल, पाठा, लज्जतु अथवा मज्जठ, नागर-मोया, इन्द्रजव १-१ भाग, सुवर्ण, ताम्र और लोहभस्म मिलकर पूर्वचूर्णसे दूनी डालकर एकदिनमदनकर रखछोड़े । १५ इंचमेंसे १ से ३ रसीतक मधुकेसाथ देकर ऊपरसे चाबलोंका धोवन पिलानेसे बड़ाहुआ अतिमार नष्टहोताहै । मन्दाभिको प्रदीप्त कर बल, शरीर और कान्तिमें बढाताहै ॥ ६७० ॥

६७१ हेमसुन्दररसः

मृतमृतस्य पादांशं हेमभस्म प्रकल्पयेत् ।
क्षीराज्यमधुसमिधं मापैकं कान्तपात्रके ॥ २८७१ ॥
लेहयेन्मासपद्भुज्जु जराभृत्युचिन्ताशनम् ।
घाकुचीचूर्णकर्षिकं धात्रीफलरसप्लुतम् ॥
अनुपानं लिहेत्रियं स्याद्रसो हेमसुन्दरः ॥ २८७२ ॥
र. चि., र. सं., रसायनसं., र. सं., र. सु., यो. म., आ. प्र., बाजीकरणे ।

टि०—कुञ्चितक्षीराज्यमधुसमिधस्य कारणपात्रे लेहनमुक्तम् । रसा-जशितोमर्णो हेमविट्टिकायोग इतिनाम्ना "पादाशक हेम रसस्य दत्ता गोल सङ्ग्रेसे क्षिप कान्तपात्रे । सुदृग्भिना तापितशोणस्य क्षीरस्य पान मरुणामयप्रम् ॥" इतिपाठो निहिन्दोडरिन सोऽप्ययैवाऽप्यत्रसोऽस्ति तत्र न पाठान्तरात् ।

भाषा—गारदभस्म ४ भाग, सुवर्णभस्म १ भाग मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे उड़दबराबरमात्रा कान्तलोहेकेपात्रमें घृणु और धीकेसाथ लेकर दूधपीनेसे ६ महीनेमें बुढ़ापे और मृत्युका नाशहोताहै ॥ ६७१ ॥

६७२ हेमसुन्दरीगुटिका (प्रथमा)

मृतमृतान्नकान्तालं कर्षं कर्षं समाहरेत् ।
गन्धकञ्च समं सर्वैः सुपातोयेन मर्दयेत् ॥ २८७३ ॥
चन्दनद्वितयेनापि द्रव्येणभुभवेन च ।
यर्षाभूसहदेवयोध रामशीतलिकाम्बुना ॥ २८७४ ॥
गृहकन्यारसेनापि धात्रीफलरसेन च ।
दिनं दिनं विमर्द्यां शोषयेत्तदनन्तरम् ॥ २८७५ ॥
तुण्डीरिकायाः कुण्डल्याः सत्त्वं शुक्रमलप्रमम् ।
त्रिफला कटुका मुस्ता कणा सागरकन्तया ॥ २८७६ ॥
यत्नानि कर्षमानानि पूर्ववद्वाचयेत्समैः ।
रसेन सह सग्मेत्य मर्दयित्वा प्रयदातः ॥ २८७७ ॥
द्राक्षाजेन कणायणेण भावयेद्विष्टयस्तुजे ।
तत्तद्रोगहरौ प्रोक्ता गुटिका हेमसुन्दरी ॥ २८७८ ॥
रगतार, बाजीकरणे ।

भाषा—गारद, अश्रक, कान्तश्रेष्ठ, हरिताल इनकीमध्य १-१ कर्ष, शुद्धगन्धक ४ कर्ष लेकर नीलरसकयरीकर घूनेका

पानी, लाल और सफेदचन्दन, ईख, इटसिट, सहदेवी, जंगली-
कपास, धीबुवार, ताजे आवले इनके द्रवोंसे १-१ दिन भाव
नादेकर सुखाकर कुदर और गिलोयकासत्व, त्रिफला, कुटनी,
नागरमोथा, पीपल, लोथ १-१ कर्पलेकर बारीकचूर्णकर पूर्वद-
वोंकी भावनाएँ देकर सबको इकट्ठा मिलाय द्राक्षाके ऋष्य और
निसरोगमें प्रयोगकरताहो तनाशकद्रवोंसे भावनादेकर १-१
मासेकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ गोलोतक
औथितो देखकर तत्प्रोगहरानुपानकेसाथ देनेसे यह समस्त-
रोगोंको नष्टकरतीहै ॥ ६४२ ॥

६७३ हेमसुन्दरीगुटिका (द्वितीया)

समुखस्य रसेन्द्रस्य पूर्ववत्काञ्चनं समम् ।
जारपेट्टिद्वययोगेन ततो मर्द्यं दिनत्रयम् ॥ २८७९ ॥
दिव्यौषधैः सगोमूर्त्रैर्व्रजमूपान्धितं धमेत् ।
उद्धृत्य धारपेट्टेनैव गुटिकां हेमसुन्दरीम् ॥ २८८० ॥
पलायं गन्धकं चाज्यैर्द्विगुणैर्लेहयेदनु ।
वर्षेकेण जरां हन्ति जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ २८८१ ॥
र ख, र का, रसायने ।

भाषा—उमुशान्तसस्कार कियेहुए १ पल पारमें रसदाखमें
बहेहुए चतुःपञ्चशदिप्रासोंसे समभागसुवर्णका विद्वयोगोंसे
जारणकर यथाशक्य दिव्यौषधि और गोमूत्रसे ३-३ दिन
मर्दनकर ब्रजमूपामें बन्दकर ४ पहर धमनरसेने गोली तैयार
होगी । इसगोलीको मुहमें रखे और दोषकं शुद्धगन्धरको १ पल
गोपूत्रकेसाथ प्रतिदिन सेवनकरनेसे दीर्घायुको प्राप्तहोताहै ॥

६७४ हेममूतकरसः

रसं हेमसमं मर्द्यं पिष्टिकाधेनं गन्धकम् ।
द्विपदीं रजनीं रम्भां मर्दयेत्पट्टान्धितम् ॥ २८८२ ॥
नष्टपिष्टञ्च शुष्कञ्च अन्धमूपानिवेशितम् ।
तुपाग्निना लघुपुटं दत्त्वा भस्मत्वमानयेत् ॥ २८८३ ॥
भक्षणान्दस्य सूतस्य दिव्यदेहमवानुयात् ।
सर्वत्र्याधिं जरां हन्ति वर्षमात्राच्च सूतराट् ॥ २८८४ ॥
रसेन्द्रम्, रसायने ।

भाषा—समभाग शुद्धपारा और सोनेकेबर्क एकजगह मिला-
कर दशमूली, हुरदुर, जलपीपल वगैरहके रसेसे १-२ पहर
मर्दनकर पिष्टी बनावे, फिर शुद्धगन्धक, हंशराज, हल्दी,
केलेकाकन्द और सुहागा येसब मिलकर पिष्टीसे आधे प्रमाणमें
मिलाकर केलेकेकन्दके रसेसे चमकनद्रव्योनेतक मर्दनकर टिक्की
बनाय अच्छीतरह सुखाकर अन्धमूपामें बन्दकर तुपागिका लघु
पुटदेनेसे भस्म तैयार होगी । इसमेंसे आधी रत्तीसे १ रत्तीतक
मात्रा तत्प्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे समस्त व्याधि नष्टहोतीहै ।
एकवर्षके प्रयोगसे बुढापा दूरहोकर दिव्यशरीरको प्राप्तहोताहै ॥

६७५ हेमाङ्गसुन्दररसः (प्रथम)

शुद्धं सूतं समं प्राह्यं लोहं गन्धं सुवर्णकम् ।
कज्जलीकृत्य यत्नेन शुल्बपात्रे भिषग्वरः ॥ २८८५ ॥

राजिकास्वरसं दत्त्वा कृष्णोन्मत्तस्य वै रसम् ।
दत्त्वा दत्त्वा प्रयत्नेन मर्दयेच्च त्रिभिर्दिनैः ॥ २८८६ ॥
त्रिभिश्च सार्यपं तैलं दत्त्वा कल्कं विमर्दयेत् ।
शोषयेद्भानुभिर्मानोर्जालां दद्याच्छनैः शनैः ॥ २८८७ ॥
वालुक्यायत्रयोगे तु प्रोक्तभेषजमध्यतः ।
तावज्ज्वाला प्रदातव्या वालुकात्युष्णतां मजेत् २८८८
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा कर्पयेत्त भिषग्वरः ।
ततो गुञ्जाप्रमाणेन मापमापार्थकं पुनः ॥ २८८९ ॥
ज्ञात्वा रोगं शरीरञ्च योजनीयं युधे. सदा ।
घृतेन मधुना सार्द्धं मर्दयेत्पिता तु खल्वके ॥ २८९० ॥
रसं वा भक्षयेत्पश्चादाज्यं गव्यं गवां पयः ।
सामान्येन तु कर्तव्यं चित्रकार्द्रकसैन्धवै. ॥ २८९१ ॥
रोगिणामनुपानीयं रसमाप्येन भोजनम् ।
सुस्निग्धं नातिमधुरं मांसञ्चैव निहायसम् ॥ २८९२ ॥
भक्ष्यं छायादिकं मांसं ज्ञातं यस्य तु भक्षणम् ।
पतेनापि विधानेन प्रातः प्रातनिषेवयेत् ॥
साध्याऽसाध्येषु रोगेषु तथा व्याधिचयेषु च २८९३
र र, घ., वाजीकरणे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और सुवर्णभस्म
समभागलेकर नीलवर्णकज्जलीकर तावेके पात्रमें तावेके ढण्डेसे
कालेपुत्रकेपत्तीकासत थोडा थोडा दकर ३ दिनतक मर्दनकर ।
फिर ३ दिन सरसोंके तैलेसे मर्दनकर कड़ीभूषमें अच्छीतरह
सुखाकर आतशीशीशीमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख क्रमाभि
देवे । ऊपरकीवालुकेस्पर्शको जब हाथ सहन न करे तब अग्नि
बन्दकरदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर निकालकर रखछोड़े । इसमेंसे
१ रत्तीसे बढाकर आधे अथवा एकमासको मात्रा तक रोग और
रोगीका बलाबल देखकर नियतकरे । धी और मधुमें कुछदेर
खरलकरके दवाका सेवनकरना चाहिये । इसकेपाद गायके दूधमें
गोपूत्र डालकर यथाशक्ति पीना चाहिये । साधारणरोगोंमें
चित्रक, अदरक और सैन्धवकेसाथ देवे । भोजनमें घृतयुक्त
माससत, स्निग्धपदार्थ, साधारणमधुर पन्थ, चिड़िया और बकरी
पैरहका हल्का मांस खाये । साधारणरोगोंमें केवल प्रात काल
औषध देवे । विधिपूर्वककलकेसेवनसे साध्य अथवा असाध्य
रोग निवृत्तहोतीहै ॥ ६७५ ॥

६४६ हेमाङ्गसुन्दररसः (द्वितीयः)

पूर्वसिद्धे रसे क्षिप्त्या रसपादेन काञ्चनम् ।
विमर्द्यापि विधानेन सुपिष्टञ्च विनिक्षिपेत् ॥ २८९४ ॥
कान्तवैकान्तके चैवं क्षिप्तं तत्र विधानतः ।
मधुरत्रयसंयुक्तं मासमात्रं दिने दिने ॥ २८९५ ॥
लीढाऽनुपानं पातव्यं मन्दं तप्तं गवां पयः ।
त्रि.सप्तदिवसैः क्षीणो भवेदक्षीणधातुकः ॥
ऊर्ध्वलिङ्ग. सदा तिष्ठेद्वायवेद्वनिताशतम् ॥ २८९६ ॥
र. र, घ., वाजीकरणे ।

भाषा—शुभ्रान्तसंस्कारकियेहएपारेमें चतुर्थीश सोनेके बर्क डालकर पिष्टीकनावे । फिर उसमें कान्तलोह और वैकान्तकी-भम्म प्रत्येक सुवर्गके बराबर मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ रत्ती मधु, धी और शकरकेसाथ मिलाकर सेवनकरे और ऊपरसे कटुण्य गोदुग्धपीवे । इसप्रयोगको २१ दिनतककरनेसे घातु-क्षीणआदमी घातुसे परिपूर्णहोकर पूर्णपुरुषत्वमें आजाताहै ॥

६७७ हेमाद्रिरसः

वेदकर्म रसं त्र्यक्षं पिप्पला गन्धं पलद्वयम् ।
पलं नागाम्रयोः सर्वं सञ्चूर्यै सिकताघटे ॥ २८९७ ॥
पक्कमूपागतं यामं पचेद्भूयैः क्षिपन्द्रवम् ।
केतकीकुष्ठनिगुण्डीशिद्युप्रमथ्यशिश्वव्यञ्जम् ॥ २८९८ ॥
वन्ध्याहिंसेभकण्युत्थं व्याघ्रीलुङ्गवलोज्ज्वम् ।
अश्वगन्धामनं चारान्धिशिद्रिपुसागरान् ॥ २८९९ ॥
पट्टसप्तवसुद्रिद्वित्रियुगं सुचनतः क्रमात् ।
कुमार्याः पुटयेत्प्रौढो रसो हेमाद्रिसंज्ञकः ॥ २९०० ॥
भुक्तो माषो निहन्याद्यु सर्वांशोरोचरुप्रहान् ।
मन्दाग्न्युन्मादमेदांसि गण्डमालाऽनुदाऽपचीः २९०१ ॥
गलगण्डप्रमेहादीन्मुष्कलिङ्गाक्षिकर्णजान् ।
क्षुद्ररोगांश्च विविधान् गरुडः पन्नगानिव ॥ २९०२ ॥
र. वि., रसायनतं., र. का., र. सि., सर्वरोगे ।

भाषा—जस्त और पारदभस्म १-१ पल, शुद्धगन्धक २ पल, नाग और अन्नकभस्म १-१ पल लेकर नीलगण्डकबली-कर एकपहेमें बालुभर बीचमें पक्कमूपामें इक्षुडबलीको डालकर केरुईका रुण्डा, कुष्ठ, निगुण्डी, सहिजन, पिपलामूल, चिन्क, चन्प, चांसतेपेसेकाकन्द, हंस, हस्तिकर्णरलाश (डोडाइन हिं., फल्लसंवेले म.) भट्टकटैया, यिजोरा, यला, असगन्ध, धीकुंवार इन प्रत्येककेस्वरसोसे २०, २, ३, ५, ७, ६, ७, ८, ८, २, ३, ४, १४, १४, १४, इक्षुडके अग्निपर भावनाए देकर १-१ मासेकी गोशिये बनाकर रखछोड़े । प्रत्येकभावनामें इलनारसे देनाचाहिये कि एफ्यारका डालाहुआरसे एकपहेमें सूखजाय । इसमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोहरातुगाननेसाथ देनेमें सबप्रकारके अरु, अरुधि, गलगण्ड, मन्दाग्नि, उन्माद, मेद, गण्डमाला, अर्बुद, अपची, गलगण्ड, प्रमेह, अण्ड-लिङ्ग-आल-कान इन-बेरोग और नानातरहके शुररोग इनसबको सर्वद्रोहरातुकीतरह यह नष्टकरताहै ॥ ६७७ ॥

६७८ हेमात्रकम् (हेमान्द्रुदम्)

अपूपणाम्बुकरिकेदारत्यचा

तुल्यमागरजसा ममीष्टतम् ।

हेमयारिद्रज्जो मधुप्लुतं

लीडमग्निजडतां तनोहेरेत् ॥ २९०३ ॥

लो. ५., अग्निमान्ये ।

भाषा—विष्ट, गुणगन्धवाल, नागरेदार, सज १-१ भाग, गुण और अन्नकभस्म ३-३ भाग लेकर भारीकण्ठकर १-२

दिन घोटकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ रत्तीतक मधुमें मिलाकर सेवनकरनेसे मन्दाग्निप्रभृति रोगोंको यह नष्टकरताहै ६७८

६७९ हेमात्रसिन्दूरम्

अन्नकं रससिन्दूरं मिश्रितं हेमभस्मना ।
समभागं प्रकुर्यात् रसैराद्रकजैर्युतम् ॥ २९०४ ॥
क्षयञ्च क्षयपाण्डुञ्च क्षयकासञ्च दारुणम् ।
जयेन्मण्डलपर्यन्तं पूर्वकमविधानतः ॥ २९०५ ॥

नि. र., र. सु., यो. र., राजयश्मणि ।

भाषा—रससिन्दूर, अन्नक और सुवर्णभस्म १-१ भाग लेकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । अथवा अदरकके रससे १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तप्तद्रोहरातुगाननेसाथ अथवा अदरककेरसोसाथ एकमण्डलक-देनेसे क्षय, मयङ्गराण्डु और कासको यह नष्टकरताहै ॥ ६७९ ॥

६८० हेमामृतरसः

भागमेकं पारदस्य यलेर्भागद्वयन्तथा ।
हेमः पादमितं भागमेकैकं तारवद्भयोः ॥ २९०६ ॥
अर्जुनस्य कपायेण सम्मर्द्य रक्तिकोन्मिताम् ।
यदौ कृत्वा दापयेच्च सिताऽऽज्यमधुसंयुताम् २९०७ ॥
शाम्यन्त्यनेन हृद्रोगाः सर्वे एव न संशयः ।
श्रीमद्ब्रह्मनाथेन निर्मितोऽयं रसोत्तमः ॥ २९०८ ॥
आ. वि., हृदगे ।

भाषा—शुद्ध पारा १ भाग, गन्धक २ भाग, सुवर्णभस्म अथवा बर्क चतुर्थभाग, रजत और वज्रभस्म १-१ भाग लेकर नीलगण्डकबलीकर अर्जुनकेकायसे मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली शकर, धी और मधुके-साथ देनेसे समस्त हृद्रोग नष्टहोवैहै ॥ ६८० ॥

६८१ हेमाम्बुदलोहम् (प्रथमम्)

उशीरलोप्रोत्पलपन्नकेदार-

न्सचन्दनान्मोचरसोपवृंहितान् ।

मियद्भुनागोत्पलतः समं रजः

परिप्लुतं सूक्ष्मतरणे घाससा ॥ २९०९ ॥

ममानहेमाम्बुदलोहदूर्णं

ममीष्टतं तेन मधुप्रलीढम् ।

विलीढमाश्वेव निहन्ति रक्त-

पित्तं शुदातद्भुमसृक्प्रभृतम् ॥ २९१० ॥

लो. ५., रक्तपित्ते ।

भाषा—राध, लोप, कमलाश, कमलकेदार, सपेदनन्दन, मोचरस, मियद्भु, नागरेदार येसज १-१ भाग लेकर काकडान-पूर्णकर सुवर्ण, अन्नक और लोहभस्म १-१ भाग मिलाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३ से ६ रत्तीतक मात्रा मधुमें मिलाकर देनेमें रक्तपित्त, शुद्ररोग, रक्तप्रर इनसबको यह नष्टकरताहै ॥ ६८१ ॥

६८२ हेमाम्बुदलोहम् (द्वितीयम्)

वराणिशाक्षोदसमं समांशं
हेमाम्बुदाय प्रभवं रजश्च ।
क्षौद्रेण लीढं विनिहन्ति मेहा-
न्ददाति पुष्टिं वपुषः श्रियञ्च ॥ २९११ ॥

लो. ५, प्रमेहे ।

भाषा—क्रिया और हल्दी समभाग लेकर बारीकचूर्ण कर सबकोबराबर सुवर्ण, अन्नक और लोहमस मिलकर रख छोड़े । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक मधुकेसायलेनेसे सबप्रकारके प्रमेह और कृशताको नष्टकर शरीरकी कान्तिको बढाताहै ६८२

६८३ हेमार्कलोहम्

वचाऽप्याठाऽतिविपायिदङ्ग-
गदानलप्रन्थिकवारिविष्वम् ।
समं रजस्तद्भिगुणानि तुल्य-
हेमार्कलोहानि घृतेन लीढा ॥ २९१२ ॥
पीत्याऽनुकोष्णं जलमेव जहा-
होपं ग्रहण्या शुदकीलकांश्च ।
प्राप्नोति बह्विं वपुषः प्रकर्ष-
मुद्गामधामोपचयोपपन्नः ॥ २९१३ ॥

लो. ५, ग्रहण्याम् ।

भाषा—वच, नागरमोषा, पाठा, अतीस, विडङ्ग, कुड, चित्रक, गठिवन, सुगन्धबाला, सोंठ, येसव समभाग लेकर बारीकचूर्णकर सुवर्ण, ताम्र और लोहमस चूर्णसे द्विगुणप्रमाणमें मिलाकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २ रत्तीतक धीकेसाय मिला कर सेवनकर शोषामरमजलीबे । जलकापीना बन्दकरे । यह ग्रहणी, बवासीर, मन्दासि, इनसबको नष्टकर शरीरको दिव्य तेज्युक बनाताहै । ६८३ ॥

६८४ हेमेन्द्रगसः

अतः पर प्रवक्ष्यामि रसायनमनुत्तमम् ।
नानाव्याधिप्रशामनं बलवृद्धिकर परम् ॥ २९१४ ॥
शुद्धसूतस्यैकभागं हेमभागसमीकृतम् ।
द्विगुणं गन्धकं दत्त्वा द्विव्योपधिभिभावितम् ॥ २९१५ ॥
चक्रराजेन तं पक्त्वा यावदेव स्थिरायते ।
भृङ्गराजेन सम्भाव्य घघ्नीयाहुटिकां शुभाम् ॥
हेमेन्द्ररसनामाऽयं कामलादिगदापहः ॥ २९१६ ॥

रससार, कामलादौ ।

भाषा—शुद्ध पारा और सुवर्णमस १-१ भाग, शुद्ध गन्धक २ भाग मिलाकर नीलवर्णकजलीकर यथासम्भव दिव्यो पधियोंकी भावना देकर अनलरस १ २५ में केहेहुके अनुसार बन्दयन्त्रमें यहातक पकावे कि अमिधायी होजाय । फिर भंगोकेरसकी २-४ भावनाए देकर १-१ रत्तीकी गोलीये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाय

सेवनकरनेसे नानाप्रकारकेरोगोंको नष्टकर बल और बुद्धिको बढाताहै । अधिकदिन सेवनकरनेसे कामलावरीह नष्टहोतेहै ६८४

६८५ हंसपोट्टली (प्रथमा)

वराटिकाभस्मसमं सुमसम्
वह्नस्य पादांशरजो रसस्य ।
विमर्चं सर्वं स्वरसेन गाढ
नागार्जुनीशास्मलिजेन यामम् ॥ २९१७ ॥
संशोष्य पश्चान्मरिचांशयुक्तं
क्षौद्रेण च व्याधिवलप्रमाणम् ।
खादेत्प्रणश्यन्ति हि तस्य मेहा
ग्रहण्यतीसारगदाः सफासाः ॥ २९१८ ॥

यो. म, प्रमेहे ।

भाषा—पीलीकौड़ी और वज्रभस्म १-१ भाग, पारदभस्म चतुर्थभाग मिलाकर नागार्जुनी और सेंमलकेस्वरसे १-१ दिन मर्दनकर हिरण्यगर्भपोट्टलीनिर्दिष्टप्रकारसे इसकी पोट्टली बनाकर रखछोड़े । अथवा इसमें पोटशाश मरिचकाचूर्ण मिलाकर रखले । इसमेंसे १ से ३ रत्तीतक व्याधिवलको देखकर मधुकेसायदेनेसे सबप्रकारके प्रमेह, ग्रहणी, अतिसार और कास नष्टहोतेहै ॥

६८६ हंसपोट्टली (द्वितीया)

निष्फेकं मूर्च्छितं सूतं द्विनिष्कं मृततीक्ष्णरुम् ।
शिखितुल्यं तीक्ष्णतुल्यं कर्पादं गन्धमौक्तिकम् २९१९
चिपं निष्फञ्च तत्सर्वं भृङ्गार्द्रसुरसाद्रवैः ।
अग्निपर्णी हरिद्रा च लाङ्गलीकन्दजेद्रवैः ॥ २९२० ॥
मरिचैर्मधुना लेह्या मापेका हंसपोट्टली ।
हन्ति सङ्गृहणी शीघ्रमतिसारञ्च पाण्डुताम् ॥ २९२१ ॥
श्वासदौर्बल्यगुल्माश्च कासं हिकामरोचकम् ।
क्षौद्रेण विजयानिष्कं लेहयेदनुपानकम् ॥ २९२२ ॥

र सु, चि र, र.क, रसायनस, र र दी, ना. वि, ग्रहणी-रोगे ।

हि०—रसायनसद्रव्ये औषधप्रमाण भावनायाञ्च रक्तिक्रिद्रेद प्रदर्शित स अकिञ्चिकर प्रतिमानि, अतो न पृथक्पाठ समुद्धृत ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर १ टङ्क, फोलाद और तुल्यभस्म, शुद्धगन्धक और मुक्तापिष्टी २-२ टङ्क, शुद्धबच्च नाग १ टङ्क लेकर ३-४ पहर शुष्कमर्दनकर भगरा, अद रस, तुलसी, चित्रक अथवा अगियाघास, हल्दी और करि हारीकन्द इनप्रत्येकके स्वरसे १-१ दिन मर्दनकर उड़द्वाराव गोतिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और मरिचकेचूर्णकेसायलेनेसे सङ्गृहणी, अतिसार, पाण्डु, श्वास, कृशता, गुल्म, कास, हिक्रा और अरचिको यह नष्टकरतीहै । यदि पोष्टी बनाई हो तो उसे अन्दानसे शहदमें घिसकर मरिचकाचूर्ण मिलाकर देना । सङ्गृहणी और अतिसारमें १ माघसे १ टङ्कतक भुनीभागका चूर्ण मधुमें मिलाकर ऊपरसे सेवनकराना ॥ ६८६ ॥

६८७ हंसभैरवसः

सूक्तरीक्षोरपुटिते शुक्तिक्षारेण शोधिते ।
 वङ्गे द्रुते रसे क्षिप्त्वा तृतीयंशञ्च हिङ्गुलम् ॥२९२३॥
 छिन्नकारसेन सम्मर्द्य तदर्थांशानि बुद्धिमान् ।
 सौम्यालसिन्द्रशिलाटङ्गानि च निक्षिपेत् ॥२९२४॥
 पलाशवल्कलरसेरकेशीरञ्च सप्तधा ।
 पलाशवटत्रिञ्चानां क्षिप्त्वा क्षारांश्छटावके ॥२९२५॥
 सिद्धो हडाग्निनाऽयं तु द्वात्रिंशत्प्रहरं पुनः ।
 द्विगुणं दापयेच्छीत समानं हंसभैरवम् ॥ २९२६ ॥
 पथ्याऽऽर्जुनविडङ्गोत्थं काथं चानु मधुप्लुतम् ।
 शुक्रमेहादिकान्हुन्ति रसोऽयं हंसभैरवः ॥ २९२७ ॥
 र. का, प्रमेहाऽधिकारः ।

भाषा—द्विगुणखुरी रागेको पिपलार सुअरकिंद्घ और मोतीबीसीपेक्षारजलमें ७-१४ अथवा २१-२१ वार सुजावे । फिर इसको गलाकर समभाग शुद्धपारा और तृतीयांश शिगरिक मिलाकर नकछिकनीकारस देताहुआ पलाश अथवा सफेद आकके ताजे डण्डेसे यहातक मर्दनकरे कि उसको भस्म होजाय । फिर शुद्धसोमल, हरिताल, रससिन्द्र, भैनसिल, सुहागा ये प्रत्येक इसभस्मसे चतुर्थांश ममश डालकर मर्दनकरे फिर पलाशकीजइकीछालके रस और सफेद या साधारण आककेदूधकी ७-७ भावनाएं देकर पलाश, वट और इमलीकेझार प्रत्येक चतुर्थांश देकर मर्दनकरे । अन्तमें नकछिकनीकरसे १-२ दिन मर्दनकर छोटीछोटी टिकिया बनाय सुखाकर शरावसम्पुटेमें बन्दकर इसतरहके महागजपुटकी आवचे जो कि ३२ पहरमें उडाहोजाय । स्वाद्गशीतलहोनेपर निकालकर रखओके । इसमेंसे २ रसीकी मात्रा २ रती भीमतेनी कपूरसेसाय मधुमें मिलाकर देवे । हें, सफेदअर्जुनकीछाल और विडङ्गका काथ मधु मिला कर पिलानेसे शुक्रमेहादि समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ॥६८७॥

६८८ हंसमण्डूरम्

मण्डूरं चूर्णयेत्प्रस्थं गवां मूत्रादके क्षिपेत् ।
 जीर्णान्ते च रविक्षीरं यासानिगुण्डिगोभुरम् ॥२९२८॥
 भुनिम्बतन्तिडीकन्यावर्षाभृशिशुभ्रङ्गराद ।
 तर्कारी त्रिफला मुस्ता याजिगन्धा शतावरी २९२९
 वज्रवह्नी सूक्ष्ममूला वरुणः किंशुकोऽमृता ।
 तण्डुलीयं स्थिरा मुण्डी विन्नी चित्रकणावचाः २९३०
 शिरीषः पिचुमन्दश्च मत्स्याक्षीक्षुरपुष्टिकाः ।
 पृथग्द्वापलं सर्वं पाचयेन्मृत्वुवह्निना ॥ २९३१ ॥
 प्रातःकालेऽस्य कथैकं मधुतफ्रयुतं भजेत् ।
 दोषपाण्डुक्षयोन्मादश्यासकासफकामलाः ॥
 अष्टोदराणि गुल्मान्ध नाशयेद्वर्चश्चि हठात् ॥ २९३२ ॥
 रसायनं, पाण्डुरोगे ।

भाषा—एकप्रस्थ शुद्धमण्डूरकेचूर्णको एक आठक गोमूत्रमें बालकर औठावे । शुद्ध द्रव बांधी रहनेपर आठफाट्प, अद्मा,

निर्गुण्डी, गोरसू, चिरायता, इमली, धीडुवार, इटसिट, सहि जन, भंगरा जेती, त्रिफला, नामरमोथा, असगन्ध, शतावर, त्रिपारीहङ्गजोड़ झाड़ी, वरुणकीछाल, पलाशपुष्प, गिलोय, काटेवालीचौलाई, शालपर्णी, गोररामुण्डी, कुंदरू, चित्रक, पीपल, वच, सिरस और नीमकीछाल, मडेछी, तालमसाना और शरपुङ्गका १०-१० पल चूर्ण डालकर मन्द आचसे पकावे । इसमेंसे १-१ कप मधु अथवा छाछकेसाय प्रातः काल सेवनकरनेसे शोथ, पाण्डु, क्षय, उन्माद, श्वास, कास, कामला, ८ प्रकारके उदररोग, गुल्म और अरचि नष्टहोतेहै ॥ ६८८ ॥

६८९ क्षयकुटाररसः

रसं गन्धञ्च नागञ्च लोहकान्तञ्च तीक्ष्णकम् ।
 अम्रं मण्डूरवङ्गी च द्रव्दं तालभस्मकम् ॥ २९३३ ॥
 कपर्दीभस्म सौभाग्यं सर्वयैकेभूमागिकम् ।
 द्विभागं मागधीचूर्णं वल्लभात्रं निपेययेत् ॥
 क्षयं सोपद्रवं हन्यात्कामलापाण्डुरोगमुत् ॥ २९३४ ॥
 वै चि. (ल.), क्षये ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, नाग, लोह, कान्त, फोलाद, अम्रक, मण्डूर, वङ्ग, शिगरिक, हरिताल और पीली कौड़ी इनकीभस्में, भुनासुहागा, सब समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर सबसे दूना पीपलकाचूर्ण मिलाय ३-४ पहर घोडकर रखओके । अथवा अदरकवंगेहरेरसे ३-३ रतीकी गोलियें बनाकररखओके । इनमेंसे १-१ गोली अवस्थोचितानुपानकेसाय देनेसे उपद्रवसहितक्षय, कामला और पाण्डु नष्टहोते है ।

६९० क्षयकुलान्तरसः

गुह्वचिनासत्वरसेन्द्रभस्म
 कृष्णाम्रकं माक्षिकलोहवङ्गम् ।
 प्रवालमुचाफलहेमपत्रं
 सर्वं समानं त्रिफलारसेन ॥ २९३५ ॥
 सम्मर्दयेत्सप्तदिनानि यत्ना-
 ह्छरुमात्रं मधुना समेतम् ।
 भक्षेद्विहाकं सकलामयत्रं
 सर्वक्षये जीर्णतमे ज्वरे च ॥ २९३६ ॥
 पाण्ड्वामये पित्तमये च कासे
 सरकपित्ते तमके प्रमेहे ।
 यथाऽनुपानं खलु योजनीयं
 पण्डित्यनाशं प्रकरोति सख्यक ॥
 घातौकरं पुष्टियले ददाति
 रसायनं सर्वरुजापहारी ॥ २९३७ ॥

र. वै, क्षये ।

भाषा—गिलोयसत्त्व, पारा, वज्राम्रक, सुवर्णमाक्षिक, लोह, वङ्ग, प्रवाल इनकीभस्में, मुष्पापिठी, सोनेकेबकं सब समभागलेकर ७ दिनतक निफटाके हाथसे मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखओके । इनमेंसे १-१ गोली मधु-

केसाय साय प्रात लेनेसे समस्त श्मेत्प्ररोग, क्षय, पुरानाज्वर, पाण्डु, मित्तास, रक्तपित्त, तमकश्वास, प्रमेह, पण्डता इनसबको यह नष्टकर बल और पुष्टिको बढ़ाकर रसायनका काम करताहै ॥

६९१ क्षयकृन्तनरसः

शिलासूतोत्थकज्वला मारितं शुद्धसीसकम् ।
शुद्धमाक्षिकतुल्यं तत्कज्जली द्विगुणं नयेत् ॥२९३८॥
मर्दन्मन्दारदुग्धेन चक्री शुष्कां धरेत्तले ।
यन्त्रस्याद्धं भरेच्चूर्णं शङ्खजं वह्निना पचेत् ॥ २९३९ ॥
मन्दमध्यमतीव्रेण दिवसत्रितयं ततः ।
चक्रां पिष्ट्वा घने वस्त्रे चालयेत्क्षयकृन्तनम् ॥ २९४० ॥
आज्यमाक्षिकयोगेन सिताशुद्धिरेण वा रसम् ।
लिह्याद्बुद्ध्याद्धयं रोगी सर्वव्यायामयजितः ॥ २९४१ ॥
रसायनसार., क्षये ।

भाषा—मैनसिल और पारेकी कजलीसे कीहुई नागमसम, शुद्धगोनामाखी १-१ भाग, समभाग पारगन्धककीकजली २ भाग लेकर आकृतेदूधसे एकदिन मर्दनकर चक्रीबनाय गुला कर हण्टीमें शङ्खकेचूर्णकेबीचमें रख शरावसम्पुट देकर अच्छी तरह गुलाकर मन्द, मध्य और खर इसक्रमसे ३ दिनकी अग्निदे । स्वाशुतलहोनेपर यत्नसे चकीको निकालकर कपड़ छानकर रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती धी और मधु अथवा शकर और मधुकेमाय लेनेसे उपद्रवपहित क्षय नष्टहोताहै । इसमें सर्भीतरहके व्यायामोंका निषेधहै ॥ ६९१ ॥

६९२ क्षयकैसररसः (प्रथम)

मृतमग्नं मृतं सृतं मृतं लौहं तथा रधिः ।
मृतं नागञ्च कांस्यञ्च मण्डूरं विमला शिला ॥२९४२॥
यज्ञं खर्परकं तालं शङ्खरूपमाक्षिकम् ।
वैकान्तं कान्तलौहञ्च स्वर्णं विद्रुममौक्तिकम् ॥२९४३॥
वराटिका च माणिक्यं राजपट्टञ्च गन्धकः ।
सर्वमेकत्र सञ्चर्य खल्वमध्ये विनिक्षिपेत् ॥ २९४४ ॥
मर्दयेद्भिभातुभ्यां प्रपुटेत्त्रिदिनं लघु ।
भाषयेत्पुट्येदेभिर्वात्सर्वांश्च पृथक् पृथक् ॥ २९४५ ॥
मातुलुङ्गवराघ्निस्यम्बलेतसमार्कवेः ।
ह्यमारार्द्रकरसेः पाचितो लघुबहुना ॥ २९४६ ॥
वातपित्तरुजोरिक्लृष्टाञ्ज्यराक्षानाविधानपि ।
सन्निपातं निहन्त्याशु सर्वाङ्गैकाङ्गमाकृतान् ॥ २९४७ ॥
सेवितश्च सितायुक्तो मागधीरजसा युतः ।
मधुकाऽऽर्द्रकसंयुक्तस्तद्व्याधिहरणोपचः ॥ २९४८ ॥
रोगिभिः सेवितो हन्ति व्याधिराणकेतरी ।
क्षयमेकादशविधं शोषं पाण्डुं किमीज्यैत ॥२९४९॥
कासं पञ्चविधं श्वासं मेहमेदोमहोदरम् ।
अहमरीं शर्करां शूलं प्लीहगुल्मं हलीमकम् ॥
सर्वव्याधिहतो बन्धो वृष्यो मेथ्यो रसायनः २९५०
र. सं., र घु, र क, यक्षमणि ।

भाषा—अत्रक, पारा, लोह, ताम्र, नाग कांस्य, मण्डूर, रौप्यमाक्षिक, मैनसिल, वज्र, खर्पर, हरिताल, शङ्ख, कांस्य-माक्षिक, स्वर्णमाक्षिक, वैकान्त, कान्त, सुवर्ण, प्रवाल, कौडी, माणिक्य, राजावर्त इनकीमसमें, सुक्तापिष्टी, शुनाशुदाया, शुद्ध-गन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर शुक्रमर्दनकर चित्रकके-स्वरस और आकृतेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर टिकड़ीबनाय गुलाकर शरावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी आचये । ऐसे ३ आँचें देकर विजोरा, त्रिफला, चित्रक, अम्बलेत, भंगरा, सफेदकनेर, अदरक, इनप्रत्येकसे स्वरस अथवा वायसे १ दिन मर्दनकर लघुपुटकी आचये । ऐसे प्रत्येककी भावनाकेबाद पुटदेवे । इस-मेंसे १ से २ रतीतक मात्रा शकर, पीपल मधु, अदरक इनके-साय अथवा तत्तद्रोगहरानुपानकेसायदेनेसे वातपित्त और कफ प्रधान नानाप्रकारके ज्वर, सन्निपात, सर्वाङ्ग अथवा एकाङ्गत वायुरोग, उपद्रवपहितक्षय, शोष, पाण्डु, किमि, समस्तश्वास, कास, प्रमेह, मेद, महोदर, अहमरी, शकर, शूल, ग्रीहा, गुल्म, हलीमक, कृषात, बल और बुद्धिकाहास इनसबको यह नष्टकर रसायनका काम करताहै ॥ ६९२ ॥

६९३ क्षयकैसररसः (द्वितीयः)

नेत्रलोचनचन्द्रेन्दुप्रमाणं भागमाहरेत् ।
वह्निजं स्फटिकां भ्रष्टा गरलं नवसागरः ॥ २९५१ ॥
चूर्णमेयां सितायुक्तं गुञ्जाद्धं योजयेद्भियम् ।
क्षयकैसरिनामाऽयं रस परमदुर्लभः ॥ २९५२ ॥
वे वि, र च, रसायनस, नि. र, क्षये ।

भाषा—मरिच २ भाग, मुनीफिटकड़ी २ भा, शुद्धवज्र-नाग और नवसादरपुत्र १-१ भाग लेकर इकोडे घोटकर रख-छोड़े । इसमेंसे आरीरतीकी मात्रा शकरकेसायलेनेसे यह कफ-क्षयको नष्टकरताहै ॥ ६९३ ॥

६९४ क्षयशामकरसः

तुल्यं पारदगन्धकं विकटुकं ताभ्यां रजः कम्बुजं,
तेस्तुल्यञ्च भवेत्कपर्दमसितं स्यात्पारदाद्बहुणम् ।
पादाशो सकलैः समानमरिचं लिह्यात्कनास्ताऽज्यकं,
यावन्निर्यमितं भवेत्प्रतिदिनं मासात्क्षयः शाम्यति ॥
र. च, र र स, क्षये । र र स लोक्षनाथेतिनाम ।

भाषा—पुद्र पारा और गन्धक १-१ भाग, त्रिकटु १ भा, शङ्ख और कौडीमसम ४-४ भाग, सुवासुदाया १ भा, मरिच सबही बराबर लेकर नोलवर्ण+जत्रीर रखछोड़े इस मेंसे ३ रतीसे ४ मासे तक मगुहिते बडाकर पीकेसायलेनेसे एकमहीनेमें क्षयका नाशहोताहै ॥ ६९४ ॥

६९५ क्षयमहारसः

लीढो व्योपचरान्वितो विमलको युक्तो घृतैः सेवितो,
हृन्पादुर्जायहृद्रदं श्वयथुक्तं पाण्डुं प्रमेहाऽरुची ।

शुद्धार्तिं प्रहणीञ्च गुल्ममसृत्यं यक्ष्मामयं कामलां,
सर्वाङ्गिषु सप्तमकृद्वाक्त्रिकमपर्यैर्गैरशेषामयान् ॥ २९५५ ॥

र. स., धवे ।

भाषा—लोह्यनाधिकमस्य १ रतीसे ३ रतीतक त्रिकटु
और त्रिकलाके चूर्णकेमाय घीमें मिलाकर सेवन करनेसे दुर्जय
हृदोग, भयङ्करशोष, पाण्डु, प्रमेह, अरुचि, शूल, प्रहणी,
गुल्म, राजयक्ष्म, कामला, पित्त और वायुरोग, इन सबको यह
नष्ट करता है । तत्तद्रोगहरानुपानकेसायदेनेसे समस्त रोगोंको नष्ट
करता है ॥ ६९५ ॥

६९६ क्षयान्तकरसः (प्रथमः)

लोहञ्च रससिन्दूरं प्रत्येकं कर्पसम्मितम् ।
मौक्तिकं स्वर्णजं भस्म प्रत्येकं श्राणसम्मितम् २९५५
अमृतायाः कर्पमात्रं सत्त्वञ्च त्रिफला तथा ।
कर्पपादं कुडमञ्च कस्तूरी मापसम्मिता ॥ २९५६ ॥
आटरूपरुपायेण त्रिदिनं भावयेत्पृथक् ।
रसः क्षयान्तको नाम गुञ्जामानो मधुप्लुतः ॥ २९५७ ॥
सघृतो राजयक्ष्माणं जयेत्पाण्डुं शिरोग्रहम् ।
जीर्णज्वरं मेहकृजं प्रदरं घृष्टिमान्द्यकम् ॥ २९५८ ॥
सोमरोगं धातुदोषं वातश्लेष्मोद्धवं गदम् ।
उकामयाऽनुपानेञ्च स्वयंरोगान्द्वयं नयेत् ॥ २९५९ ॥
र. चं., धवे ।

भाषा—लोहमस्य और रससिन्दूर १-१ कर्प, मुषापिठी
और गुवर्णमस्य १-१ टट्ट, गिलोयसत्त्व और त्रिकला १-१
कर्प, बेगल ४ मासे, कस्तूरी १ मासा लेबर इन्हेमिलाय अह-
मेक पत्तोंकेसाथ ३ दिन घोटकर १-१ रतीकी गोलियें बना-
कर रसछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली मधु और पीकेसाय लेनेसे
धय, राजयक्ष्म, पाण्डु, शिराकाजकृमिना, जीर्णज्वर, प्रमेह,
प्रदर, मन्दाग्नि, सोमरोग, धातुदोष, वातश्लेष्मरोग इन सबको
यह नष्ट करता है ॥ ६९६ ॥

६९७ क्षयान्तकरसः (द्वितीयः)

मृततुल्यं ह्योमसत्त्वं तयोस्तुल्यञ्च गन्धकम् ।
शुभारीस्वरसेमैर्घं यन्त्रे मेषनके पचेत् ॥ २९६० ॥
दिनद्वयान्ते सद्ग्राहं मशयेद्भक्तिमापकम् ।
शयं शोफं तथा कामं प्रमेहञ्चापि दुष्करम् ॥
पाण्डुरोगञ्च कादर्यञ्च जयेच्छीघ्रं न संशयः ॥ २९६१ ॥
टो., धवे ।

भाषा—शुद्धवत्ता और अशुद्धमस्यमस्य १-१ भाग, शुद्ध
मेषनके ३ भाग लेबर नीलकण्ठकमलोकर पीतुआरकेसाथ एक
दिन मर्दाकर गुप्ताकर विरगे बचनीकर आतवीशीशीमेग
बन्धुधन्यमें दो दिनकी कृतीकावे पचावे । स्वाइतीतल-
होनेपर निचारा कर रसछोड़े । इसमेंसे १-१ रती तण्डुलहरानु
पानकेसाथ देनेसे धय, शोष, काम, दुष्करप्रमेह, पाण्डु, शूलना
इन सबको यह नष्ट करता है ॥ ६९७ ॥

६९८ क्षयारिरसः

भस्मत्वं समुपागतं विधिद्वृतं हेमामृतेनान्वितं,
पादांशेन कणाऽऽज्यबहुसहितं गुञ्जोन्मितं सेवितम् ।
यक्ष्माणं ज्वररोगपाण्डुगुदजांशुकासञ्च कासामयं,
दुग्धाञ्च ग्रहणीं क्षतक्षयमुत्पात्रोगाजयेद्देहिनः ॥ २९६२ ॥
र. स., धवे ।

भाषा—अच्छीतरह विधिपूर्वकीरुई सुवर्णमस्य में बतु-
याँच शुद्ध बटनाग मिलाकर रसछोड़े । इसमेंसे १ रतीकीमात्रा
३ रती पीपलके चूर्णकेसाथ मिलाकर पीके साथ खानेसे राज-
यक्ष्म, ज्वर, पाण्डु, अर्श, श्वास, कास, दुग्धग्रहणी, उर क्षत
प्रगतिरोगोंको यह नष्ट करता है ॥ ६९८ ॥

६९९ क्षारताम्ररसः (प्रथमः)

शङ्खक्षारार्कभृतिञ्च घटाटं लोहभस्मकम् ।
अयोमलं यवक्षारं टङ्कणक्षारमेव च ॥ २९६३ ॥
त्रिकटुं सेन्धुं तुल्यं भृङ्गतोयेन मर्दयेत् ।
आटरूपरसेमैर्घमाद्रकस्वरसेन च ॥ २९६४ ॥
चणमानां घट्टीं कृत्वा रसोऽयं क्षारताम्रकः ।
श्यासे कासे प्रतिदयाये पुराणज्वरपीडिते ॥ २९६५ ॥
मन्देऽग्नौ ग्रहणीदोषे स्वनुपानं यथोचितम् ।
सेचयेत्सप्तरात्रेण नाशयेद्भाऽग्न संशयः ॥ २९६६ ॥
चिरकालानुबन्धे च सेवयेन्मण्डलावधि ।
तत्तद्व्याधिहरं पथ्यं नियमेन समाचरेत् ॥ २९६७ ॥
यो. र., र. सु., वै. वि., नि. र., प्रशयधिकारे ।

भाषा—शङ्खभस्म, घट्टी, ताम्र, कीड़ी, लोह, मण्डू इत-
कीभस्में, यवक्षार, मुनातुहाग, त्रिकटु, तीषानमक सब समभाग
लेकर १-२ पदर शुद्धमर्दनकर भंगरा, अदुषा और अदरकके
स्वसोंसे १-१ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियें बनाकर रस-
छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचिनानुपानकेसाथ लेनेसे श्वास,
कास, प्रतिदयाय, जीर्णज्वर, मन्दाग्नि और ग्रहणी इनको यह
७ दिनमें नष्ट करता है । षट्संखलोगमें एकमण्डलक रोपनहराना
और तण्डुलोगीत पथ्य देना उचित है ॥ ६९९ ॥

७०० क्षारताम्ररसः (द्वितीयः)

पलमितमृततुल्यं तन्मितं गन्धघूर्णं,
यसुमितपलमानं तन्तिन्डीक्षारवर्णम् ।
त्रयमिद्रममिदिष्टे क्षारताम्रास्त्वमेत-
च्छरति सकलशूलं पीतमुष्णोद्वेन ॥ २९६८ ॥
र. र. स., र. स., वै. वि., र. चं., र. को., नि. र., र.
पा., सुने ।

भाषा—ताम्रमस्य और शुद्धमस्य १-१ पल, इमलीके-
क्षारकायुं ८ पल लेबर लीनेको इच्छामिलाय कारीक पीप-
लकर रसछोड़े । इसमेंसे १ मांसेसे २ मांसेक मासमण्डलाय
लेनेसे यह शूल शूलोंको नष्ट करता है ॥ ७०० ॥

७०१ क्षारवटी

अमृतं मेघमस्माऽथ शङ्खं चिञ्चानं सुभास्करम् ।
 क्रमाद्द्विगुणितं कृत्वा तनुव्यञ्ज कटुत्रिकम् ॥२९६९॥
 तुलसीभृङ्गराजाङ्गि मां तुलुङ्गाद्रिकद्रवे ।
 भावितं यद्गुशङ्खं रजो वा गुलिकाऽपि वा ॥२९७०॥
 मापमानां तु सैवेत गुल्मशूलान्विनाशयेत् ।
 मन्दाग्निं ग्रहणीमर्शो गुल्मशूलमरोचकम् ॥
 पतत्क्षारवटी नाम कृशदेहेषु युज्यते ॥ २९७१ ॥
 र र स, विद्रव्यधिकारे ।

भाषा—शुद्धवटनाग, अन्नक और शङ्खमस, इमली और
 आकका क्षार क्रमशः द्विगुणभागे लेकर सज्जी कराकर त्रिकटु
 मिलाकर तुलसी, भगरा, बिचोरा और अदरकके स्वरसोंसे कई
 बार भावनाएँ देकर १-१ माशेकी गोलियें बनाले अथवा चूर्ण
 ही रहनेदे । इसमेंसे १-१ माशा तत्तद्वेगहरानुपानकेसाथ देनेसे
 मन्दाग्नि, ग्रहणी, अर्श, गुल्म, शूल, अस्थि इनसबको यह नष्ट
 करतीहै । कृशशरीरके लिये बहुत उपकारकहै ॥ ७०१ ॥

७०२ क्षीरमण्डूरम्

मण्डूरस्य पलान्यष्टौ गोमूत्रेऽर्द्धाढिके पचेत् ।
 क्षीरप्रस्थञ्च तसिद्धं पक्तिशूलहरं नृणाम् ॥ २९७२ ॥
 वृ मा, रसागर, यो म, र, यो र, च द, र का,
 रसायनस, र क, ल, भै र, र को, टो, नि र, शूलऽ
 धिकारे ।

भाषा—आठपल शुद्धमण्डूरकेचूर्णको २ प्रस्थ गोमूत्रमें
 डालकर पकावे । कुण्ठागडहोनेपर एकप्रस्थ दूधडालकर पकावे ।
 सिद्धहोनेपर ३-३ माशेकी गोलियेंबनाकर रखओड़े । इनमेंसे
 १-१ गोली उचितानुपानकेसाथ देनेसे पक्तिशूलको यह नष्ट
 करताहै ॥ ७०२ ॥

७०३ क्षीरसागररसः

मृतरसगगनार्कं मुण्डतीक्ष्णं सताप्यं,
 सबलिसममिदं स्याद्यष्टिकावारिपिष्टम् ।
 तद्गु सलिलजातैर्वसकैर्गोस्तनीभि-
 मृदितमथ विदारीवारिणा घस्रमेकम् २९७३
 घृतमधुसहितैर्यं बहुमात्रा वटीति,
 क्षपयति गुरपित्तं पित्तरोगं क्षयञ्च ।
 भ्रममदमुखशोषान्दाहवृष्णासमुत्थाय,
 मलयजमिह पेयं चानुपानं सचन्द्रम् २९७४
 रसायनस, र र दी, र शु, टो, र प्र, र च, र का,
 पित्तञ्चरे । र स, र शु, घ, एषु प्रन्थेषु गगनादिवटीति
 नाम वातव्याध्यधिकारे ।

भाषा—गारा, अन्नक, ताम्र शुण्ड, फोलाद, सोनामाखी
 इनकीभस्ममें, शुद्धगन्धक सब समभागलेकर १-२ पहर शुष्क
 मर्दनकर मुलट्टी, कमल, अड्डसा, दाक्ष, विदारी इनके स्वरसोंसे
 १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकी गोलियें बनाकर रखओड़े ।

इनमेंसे १-१ गोली मधु और धीरेसाथ खेनेसे पित्तरोग, क्षय,
 भ्रम, मद, मुखशोष, दाह, तृषा, इनसबको यह नष्टकरताहै ।
 अत्यन्तउष्णतामें कपूरमिश्रित चन्दनकक पीनेको देना ॥७०३॥

७०४ क्षीरोदधिरसः

रसं गन्धकमन्नञ्च शिलाजत्वयसी शुभे ।
 रसाद्भ्रमानं स्वर्णञ्च गृह्कन्याम्नुना भिषक् ॥२९७५॥
 मर्दयित्वा वटीं कुर्यात्कलायपरिमाणतः ।
 त्रिफलाजलयोगेन प्रातः सायञ्च पाययेत् ॥ २९७६ ॥
 गदोद्वेगं महाघोरं रक्तपित्तं क्षतं क्षयम् ।
 प्रमेहं वातजात्रोगान्कामलाञ्च हलीमकम् ॥ २९७७॥
 पाण्डुताञ्च उजरं जीर्णमशसि निखिलानि च ।
 रसः क्षीरोदधिनाम निहन्यान्नात्र संशयः ॥ २९७८ ॥
 भै र, परिशिष्टे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अन्नकभस्म, शिलाजतु,
 लोहभस्म १-१ भाग, पारेसे आधी स्वर्णभस्म लेकर सबकी-
 नीलवर्णकमलीकर धीज्वारके रससे एकदिन मर्दनकर मटरबरा
 बर गोलियें बनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली त्रिफलाके-
 हिम अथवा काथकेसाथ सायप्रातः देनेसे अत्यन्त घबराहट,
 रक्तपित्त, उर क्षत, क्षय, प्रमेह, वातरोग, कामला, हलीमक,
 पाण्डु, जीर्णज्वर, समस्त अंश इनसबको यह नष्टकरताहै ॥

७०५ क्षुधावतीवटी (प्रथमा)

रसाऽयोगन्धकाऽभ्राणि न्यूपणं त्रिफला वचा ।
 यमानी शतपुष्पा च चविका जीरकद्रव्यम् ॥ २९७९॥
 प्रत्येकं पलमेपान्तु घण्टकण्ठपुनर्नये ।
 मानकं ग्रन्थिकं चेष्टं केशराज सुदर्शनी ॥ २९८० ॥
 दण्डोत्पला त्रिघृदन्ती जामातृरुक्तचन्दनम् ।
 भृङ्गापामार्गबुलका मण्डूकञ्च पलाङ्ककम् ॥ २९८१ ॥
 आर्द्रकस्यरसेनाऽथ गुटिकां सम्प्रकल्पयेत् ।
 बदरास्थिसमा चैका भक्षयित्वा पिबेदनु ॥ २९८२ ॥
 वारिभक्त जलञ्चैव प्रातस्त्रयाय मानवः ।
 वटी क्षुधावती नाम सर्वाऽजीर्णविनाशिनी ॥ २९८३ ॥
 अग्निञ्च कुहते दीप्तं भस्मकञ्च नियच्छति ।
 अम्लपित्तञ्च शूलञ्च परिणामरुन्धयत् ॥ २९८४ ॥
 तत्सर्वं शमयत्याशु भास्करस्तिसरं यथा ।
 मधुरं वर्जयेदत्र विशेषात्क्षीरदाकरं ॥ २९८५ ॥
 भै र, घ, र, र अल्पपित्ते । रसरत्नाकोऽभिमान्याऽधि-
 कारेऽस्ति ।

टि०—“अन्नक रसगंधी च यवानी न्यूपण तथा ।
 त्रिफला शतपुष्पा च चविका जीरकद्रवम् ॥
 पुनर्नया वचा दन्ती त्रिपुला घण्टकण्ठिकम् ।
 दण्डोत्पला सारिवे दे चाक्षमात्राणि कारयेत् ॥
 मण्डूर द्विगुण दत्ता पेण्णीय प्रयत्नतः ।
 आर्द्रकादि समालोच्य गुटिकां कारयेत् ॥

म्रदादण्डी, कालाभंगरा, कालावाला, (गु०) काकड़ासींगी इनका बारीकचूर्ण २-२ कर्ष, त्रिफला प्रत्येक आधा आधा अथवा १-१ पल लेकर सबको इकट्ठे मिलाय लोहेकेपात्रमें डालकर अदरकले-रससे भिगोकर धूपमें सुखावे । ऐसे ३ भावनाएं देकर जंगली-वेरवारबर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे ३-३ गोली प्रात-काल भोजनके आदि अथवा अन्तमें खोटे पानीकेसाथ सेवनकर-नेसे अम्लपित्त, नानातरहकाशूल, परिणामशूल, पाण्डु, गुल्म, शोथ, उदररोग, गुदाभय, राजयक्ष्म, ५ प्रकारकाकाश, मन्दाग्नि, अर्धचि, हीहा, श्वास, आनाह, दुस्तरआमवात इनसबको यह नष्टकरती है । इसमें मधुररसको छोड़कर सब पच्यहै । दूध और नारियलका विशेषतया परित्यागकरे । वारिभक्त और खडी-काञ्चीका यथेष्ट सेवनकरे ॥ ७०६ ॥

इसमें जो आये हुए द्रव्यहै उनकी शुद्धि अपोलिखित प्रका-रसे करनी उचितहै । धान्यान्नकको भजोदक, जहलीसुरण, मानकन्द, हड़जोड़, जहरीसुरण (वामनदंडियो म.), कटिवाली चौलाई, सहर्हीचौ, मरसा, पुनर्नवा, वनभाटा, भगरा, लक्ष्मणा, नालाभंगरा इनके स्वरसोंसे १-१ दिन पीसकर टिकड़ी बनाय गजपुटकी आचदे । ऐसे प्रत्येक औषधिमें ७-७ अथवा ३-३ वार पुट देनेसे शुद्धहोकर भस्म होजातीहै बदाचित्त इतने पुट-देनेपरमी मिथुन न हो तो इन्हींके अधिक पुटदेवे ॥ १ ॥

उत्तम लोहचूर्णको धमनकर स्वर्णमाक्षिक, सहर्हीचौ, त्रिफला, एरण्ड, हृत्सिक्कणपलाश, त्रिफला, विधारा, मानकन्द, हड़जोड़, अदरक, दशमूल, गोरखगुण्डी और तालमूलीके द्रवोंमें बुझाकर इन्हींकेद्रवोंमें घोटकर टिकिया बनाय सुखाकर गजपुटकीआचदे । जबतक वारितर न हो तबतक इसकमको चलाता रहे ॥ २ ॥

१०० वर्षसे ऊपर जहातकहोसके पुराने मण्डूरको धोकर साफ करले । फिर अम्रिसाव कर रक्पुनर्नवा, सफेदफूलकीबला, गिलोय, अपामार्ग, कटिवालीचौलाई, इतसिट इनके स्वरसोंमें क्रमश बुझाकर इन्हींके कल्कोंमें क्रमश बन्दकर १-१ गजपुट-देवे । फिर गोमूत्रसे ३ दिन घोटकर अष्टगुणित अथवा चतु-गुणित गोमूत्र डालकर सुखबन्दकर अम्रिपर रख अन्तर्धूमविद-ग्धकर ३ दिनतक उसीचूल्हेपर पड़ा रहनेदे । इसीतरह शुद्धकि याहुआ मण्डूर काममें लेना ॥ ३ ॥

जैती, एरण्ड, अदरक, मकोय, इनके रसोंमें १-१ दिन मर्दनकर डमरूयत्रमें ऊर्ध्वपातनकरनेसे रस शुद्धहोजाताहै ॥ ४ ॥
आवलासार गन्धकके छोटे छोटे टुकड़ेकर लोहेके वर्तनमें डालकर भंगरेकारस देकर कड़ीधूपमें रक्से । ऐसे ३ बारकरके हण्डीमें भंगरेका रसभरकर ऊपरसे बल बाधदे और लोहेकी कड़ाहीमें गन्धकको गलाकर बरझसे छानवे । अथवा उसबल-पर गन्धकके चूर्णको बिछाकर धारावसम्पुन्देकर हण्डीको जिमी-नमें गाड़दे और ढकन पर थोड़ेसे कण्डोकी आचदे जिसमें कि गन्धक गलकर भंगरेके रसमें पड़जाय । स्वाह्मीतलहोने पर भंगरेकेरससे गन्धकको निवाकरक पोंछकर सुखाले, इसी गन्ध-कको इस बटीमें डाले ॥ ५ ॥

७०७ क्षुधावतीवटी (तृतीया)

त्रिहारं पञ्चलयणं शिशुर्कं यशतालकम् ।
अर्कसेहुण्डुगुग्धेन भावयेदिवसद्वयम् ॥ २९९९ ॥
विलिप्य चार्कपत्राणि रुद्धा गजपुटे पचेत् ।
स्वाह्मीतं समुद्भूय चूर्णयेत्कज्जलोपमम् ॥ ३००० ॥
ततो रसं विषं गन्धं त्रिफलां श्यूषणं घृचाम् ।
वह्निपुष्करदन्त्यौ च वृहत्यां चचिका त्रिघृत ॥ ३००१ ॥
समञ्चणं प्रकतैर्व्यं घृत्पूतञ्च कारयेत् ।
निगुण्डीशिशुमूलोत्थरसेन च विभावयेत् ॥ ३००२ ॥
वटी क्षुधावती नाम्ना भक्षयेद्बलमात्रिकाम् ।
अनुपानं प्रदातव्यमभयागुडसंयुतम् ॥ ३००३ ॥
सर्वाऽजीर्णप्रशमनी वह्निमाद्यविनाशिनी ।
सश्वासघातगुल्मार्शःकासहृद्रोगसूदिनी ॥ ३००४ ॥
ना. वि., अभिमान्ये ।

भापा—सर्षी, सुहागा, सबहार, पाचोनमक, सहिजनकी-छाल, हरितालभस्म अथवा रसमाणिक्य १-१ तोलालेकर आक और शूभरेकेदूधसे १-१ दिन मर्दनकर दोतोले शुद्धतावेके कण्ड-कवेधीपत्रोंपर लेपकर गुप्ताय धारावसम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी-आचदे । स्वाह्मीतलहोनेपर बज्जलेसमान चूर्णकर शुद्धपारा, बलनाग और गन्धक, त्रिफला, त्रिकटु, बच, चित्रकमूल, पोह-करमूल, दन्ती, दोनोमटकटैया, चव्य, निसोत, येसव १-१ तोलालेकर कण्डछानचूर्णकर पूर्वकबलीमें मिलाय निगुण्डी और सहिजनकीगण्डीछालके रसोंसे १-१ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकी गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली हर्षे और गुड़ेसाथदेनेसे समस्तअजीर्ण, मन्दाग्नि, श्वास, वातगुल्म, अर्थ, कास, हृद्रोग इनको यह नष्टकरतीहै ॥ ७०७ ॥

७०८ क्षुधावतीवटी (अग्निप्रभावटी)

गन्धं ताल रसं नागं त्रिकटुं त्रिफलां तथा ।
टङ्गुणं जयपालञ्च समं शुद्धं विमर्दयेत् ॥ ३००५ ॥
दिनैकं निम्बुनारेण घटिका मरिचाकृतिः ।
प्रातः सायं सेयनीया चतुर्दशदिनावधि ॥
कफघातादिरोगघ्नी जठराऽनलदीपनी ॥ ३००६ ॥
र. सि, अजीर्ण ।

भापा—शुद्ध गन्धक और बारा, हरिताल और नागभस्म, त्रिकटु, त्रिफला, मुनासुहागा, शुद्ध जमालगोटा सब समभाग-लेकर धातुओंकी नीलवर्णकज्जलीकर काठौपधियोंका कण्डछान चूर्णकर इकट्ठे मिलाय एकदिन नीचूकरसे मर्दनकर मरिचप्रमाण गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १ से २ गोलीतक प्रात-और सायंकाल उचितानुपानकेसाथ १४ दिनतकलेनेसे कफ और वातव्याधि, उदररोग नष्टहोतेहैं ॥ ७०८ ॥

७०९ क्षुधासागररसः

त्रिकटु त्रिफला चैव तथा लयणपञ्चकम् ।
हारत्रयं रसं गन्धं भागमेकं द्विक विषम् ॥ ३००७ ॥

गुञ्जामात्रां घटीं कुर्यात्त्रयङ्गैः पञ्चमिः सह ।
 धुधासागरनामाऽयं रसः सूर्येण निर्मितः ॥३००८॥
 भै. र., र. सु., ध., नि. र., वै. र., चि र भ., रसायनसं.,
 वै. चि., अग्निमान्ये ।

३०—आयुर्वेदविज्ञाने वृद्धिद्वन्द्वनामको रसाऽस्ति तत्र त्रिफलास्याने
 जप्यालु नियोज्य विष्वग्भावनया निष्पादित एतावान्विशेषोऽस्ति
 जप्यालुयुक्तवेनाऽनिरुप्यत्र परस्परमन्तभात् ।

“ रस गन्धक टङ्गुण श्लोषवर्दी, बरादान्यद्वयत्र दिहृदगन्धयम् ।
 शुपासर्वचूर्णस्य वेदाशमागा, पुत्रोत्तरीरन्वीर पङ्क्तिशद्वि ॥
 सुतीन्तिदीशारतक्षारयुग्म, दशैर्नागवहोदवैर्भावनवीयम् ।
 वधैमुद्रमानप्रमाणा च देया, यथेष्टाऽनुपानाश्च मुक् शिण्णोति ॥
 महाभासकसौ हरस्तवंशुल, धुधासागर सागरीवाऽनलाभ ॥ ”
 इति धुधासागरनाम्ना रसागूने पाठ प्रकथितोऽस्ति, तत्र विष्वगाने
 शुपेतिपाठो वेदानुप्रदापोष्यद्वयुद्धिवैद्यनाम्ना सभात् । दिहृदगन्ध-
 गन्धमिति च दिहृक्केनविचारेण कृतमिति बुद्ध्यालुः न भवति घृतस्य
 नामान्नादिहृदकनरय वैद्यर्थम् । गन्धकस्य तु नामनिर्देशेनैव योगप्रा-
 रम्भिकपदार्थे एव समागतनात्सैवार्थ्यमपि स्पष्टमेव । प्रमाणाऽपि चक्षुष्या
 तदरतीत्यपि वक्तु न युज्यते प्रथमविन्यासे एव त्रिगुणयोगस्य वचयितुं
 सुशक्यत्वात् । तस्मादयं योग उपरितनयोगे एवान्नामोऽनीय ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, पाचोनमक, तीनोंशार, शुद्ध
 पारा और गन्धक १-१ भाग, शुद्ध बरनाग २ भाग लेकर
 वारीकचूर्णकर पारेणगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय लौंगके
 काथसे एकदिन मर्दनकर १-१ रत्तीकी गोलियें बनाकर रख
 छोड़े । इसमेंसे १-१ गोलीकापुनः ५ लौंगोंके साथ लेनेसे
 यह मन्दामिको दूरकरताहै ॥ ३००९ ॥

३१० क्षेत्रपालरसः

हिहृदुलञ्च विषं तात्रं लौहं तालकटङ्गणम् ।
 जीरसाहेयफेनञ्च समभागं विमर्दयेत् ॥ ३००९ ॥
 यवादां वटिका कार्या पथ्यं दुग्धौदनं हितम् ।
 लवणाऽम्भोचिवर्ज्यञ्च दातव्यं भिषजां वरैः ॥३०१०॥
 अग्निमान्यं गुणं शौर्यं प्रहृणीमपि दुस्तराम् ।
 ज्वरञ्च विषमं जीणं नाशयेन्नाऽत्र संशयः ॥ ३०११ ॥

भै. र., र. च., शोथे ।

भाषा—शुद्धशिंगरिफ, बरनाग, शुहागा और अफीम,
 तात्र, लोह और हरितालमस, सफेदजीरा सब समभागलेकर
 वारीकचूर्णकर पुनर्ववा अथवा मकोयकेरसे १-२ दिन मर्दन
 कर सूगबरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली
 पुनर्ववाविकाप्रभुभुक्तिसाय देनेसे शोथ, मन्दाग्नि, दुस्तरसङ्ग-
 हणी, विषम और जीर्णज्वर इनसबको यह नष्टकरताहै । पथ्यमें
 दूध और चावलदेवे । नमक और जलका परित्यागकरे ॥३०१०॥

३११ क्षेत्रीकरणरसः

प्रागुक्तं पातितं सूतं स्वेदितं सुसुरतीकृतम् ।
 फलांशं हेमजीर्णञ्च पद्भुणं जीणदानयम् ॥ ३०१२ ॥
 रसमादाय मृद्धीयालुण्णधसूरीरतः ।
 आलुपर्णारसश्चैव नष्टपिष्टो भवेद्रसः ॥ ३०१३ ॥

त्रिफलोत्तरसैर्मर्यः सूतः कृष्णसुवर्णजैः ।
 विशतिञ्च दिनान्येव फलकं सोमानले क्षिपेत् ॥३०१४॥
 अध ऊर्द्धं वलिं दद्याद्रसेन्द्राच्च चतुर्गुणम् ।
 निरुद्धय सुदृढं यन्त्रं बुद्धीमघिनिवेशयेत् ॥ ३०१५ ॥
 ज्वालयेत्क्रमशो वह्निमेकविंशदिनाद्यधि ।
 मृदुमध्योत्तमं प्राक्षो वैश्वानरमतन्त्रितः ॥ ३०१६ ॥
 ज्वालयित्वा स्वाङ्गशोतं यन्त्रमुत्तारयेत्ततः ।
 निर्भिद्य यन्त्रं शूलीयाद्रसं सिन्दूरसन्निभम् ॥ ३०१७ ॥
 एवं भस्मीकृतात्सूताङ्गायं पलचतुष्टयम् ।
 ताप्यं लोहं विडङ्गञ्च शिलाजतु हरीतकीं ॥ ३०१८ ॥
 सर्वं सूतसमं प्राशं प्रत्येकं मर्दयेत्ततः ।
 पत्यमध्ये विनिक्षिप्य सर्वमेकात्मतां यथा ॥३०१९॥
 ब्रजेत्तथाऽथ मधुना घृतेनाऽथ प्रमर्दयेत् ।
 एवं तन्मर्दितं सूतं मध्वाज्येन समन्वितम् ॥ ३०२० ॥
 भक्षयेत्प्रातरत्याय वस्यं घृष्यमतन्त्रितः ।
 शुभगृद्धिकरं पुष्टिर्धनं वह्निदीपनम् ॥ ३०२१ ॥
 गद्याणामार्त्रं स्वौकुण्ठाद्राजयश्मविनाशनम् ।
 प्रमेहं पाण्डुरोगञ्च कामलाञ्च हलीमकम् ॥ ३०२२ ॥
 प्रहृणीमतिसारञ्च नाशयेन्नाऽत्र संशयः ।
 वत्सरुद्धययोगेन घलीपलितहा भवेत् ॥ ३०२३ ॥
 सतताऽभ्यासयोगेन जीयेदाचन्द्रतारकम् ।
 क्षेत्रीकरणनामाऽयं रसः परमसुन्दरः ॥ ३०२४ ॥
 धारोत्थं सर्वदा पेयं गव्यं शर्करया युतम् ।
 न कश्चिद्दधि भुञ्जीत तक्रञ्चापि विद्यजेयेत् ॥३०२५॥
 गोधूमयज्जालय्यन्नं मुद्गं मांसरसन्तथा ।
 प्रायेण तिक्रमयुरकपायकटुकात्मकान् ॥ ३०२६ ॥
 रसानुञ्जीत सततं लवणाम्लं विषजयेत् ।
 ताम्बूलं सततं खादेत्कूर्पूरादिसमन्वितम् ॥
 इक्ष्वः पनसं रम्भाफलादीनि निषेवयेत् ॥ ३०२७ ॥
 रसाल, रसायने ।

भाषा—शुभान्तसस्काराकियेहुए पारेमें पोडशासुवर्णका-
 प्रासदेकर पद्भुणगन्धकजारणकर कालाधतुरा, मूपाकर्णी, त्रिफला
 और कालेधतुरेकेसोसे यथाक्रम ५-५ दिन मर्दनकर टिकिया
 बनाय सुखाकर पारेसे चतुर्गुणित शुद्धगन्धक नीचेकररख डमरू
 यन्त्रमें बन्दकर समस्तपर शुष्पाशुखाकर वज्रमिष्टीसे ७ कपडमि-
 ष्टीकरके चूलेपररख २१ दिनतक सुदु, मध्य और खरामि देकर
 पाकरे । २२ बेदिन लकड़ियोंको निकालले और यत्रको कोय-
 लोपर रहनेदे । स्वाङ्गशीतलहोनेपर युक्तिये यत्रको खोलकर
 ऊपरकेधरेमें लगीहुई सिन्दूर(षर्णमसको निकालकर ४ पललेवे ।
 फिर शुद्धसोनामासो, लोहमस, विडङ्ग, शिलाजीत और हों
 ४-४ पल लेकर वारीकचूर्णकर धी अथवा मधुसे २-२ दिन
 मर्दनकर बल्कबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे ३-३ रत्ती धी और
 मधुकेसाय गिलारर तत्तद्वेगद्वारापुनःकेसाय प्रातःकाललेवे ।

एसे ६ मासे दवाके सेवनकरनेपर बल, वृष्टता, शुक्र, पुष्टि, अग्नि इनकालास, राजयक्ष्म, प्रमेह, पाण्डु, कामला, हलीमक, मद्ग्री, अतिसार इनसबको यह नष्टकरताहै । दो वर्षतक लगातार सेवन करनेसे बलीपलित नष्टहोतैहै । निरन्तर सेवनकरनेसे अत्यन्त दीर्घजीवी होताहै । शकरमिलाहुआ धारोष्णदूध, गेहू, जव, चावल, मूग, मासरस, तिक्त, मधुर, कषाय और कटुरसका-सेवनकरे । लग्न, खटाई, विशेषकर दही और तक्रका वर्जनकरे । कर्पूरादि सुगन्धद्रव्ययुक्तपान, ईख, कटहर और केला वगैरह फलोंका सेवनकरे ॥ ७११ ॥

७१२ ज्ञानाह्वयागुटिका

चत्वारस्तुत्यसत्त्वस्य तावन्तः स्पर्णमाक्षिकात् ।
शुद्धरोप्यस्य चत्वारो बलैको हेमचूर्णतः ॥ ३०२८ ॥
शुद्धोऽष्टादशसंस्कारैः पूर्वोक्तो यस्तु पारदः ।
तस्य बद्धा नवत्रिंशद्द्विपञ्चाशच्च मौलित्वा ॥ ३०२९ ॥
खल्वे प्रक्षिप्य सर्वं तन्मर्दयेद्दिनसप्तमम् ।
वर्णस्य च मूलानि श्रीखण्डं सूक्ष्मकारितम् ३०३०
मृद्ग्नौ स्वेदयेद्देतदौलायन्त्रे दिनद्वयम् ।
स्वेदयेद्दुट्टिकां कृत्वा क्रमात्पञ्चामृतेन च ॥ ३०३१ ॥
मध्वाप्यधिदुग्धञ्च शर्करा चैव पञ्चमी ।
अस्मिन्पञ्चामृते स्वेद्यं यावद्यामाष्टकं भवेत् ॥ ३०३२ ॥
कान्तलोहमये पात्रे मधुपूर्णं गुठी क्षिपेत् ।
तथात्रं धालुकापूर्णस्थालिकायाञ्च चिन्पसेत् ३०३३
शुल्यां स्थालीं समारोप्य वह्नियामाष्टकं भवेत् ।
स्वेदनेऽयं विधिः कार्यः प्रत्येकेनाऽमृतेन च ॥ ३०३४ ॥
नष्टे नष्टे मुहुः क्षेप्यं क्रमात्पञ्चामृतं सदा ।
मधुयुक्तं क्रमेणैव पञ्चधा स्वेदयेच्च ताम् ॥ ३०३५ ॥
तत्तद्रोगानुपानेन सर्वाप्रोगान्निवृच्छति ।
त्रिकालज्ञानमामोति नरः सततसेवनात् ॥ ३०३६ ॥
रसचि, रसायने ।

टि०—यवपत्राऽनवभालुभिरेव गुणी निर्मिता परन्वेताडनप्रक्रियया दिग्ब्रह्मज्ञानप्रतिहारसम्भवप्रायत्वात्तुल्यमाक्षिकैरेमरजताना वादोक्तप्रक्रियया सुधात्वामापाय योगो नित्यादनीय इति रहस्यम् । सुधाप्रकारस्तु अगस्त्य सम्प्रदायादिभिरवगतं तस्य इति ।

भाषा—जुत्य और सुवर्णमाक्षिकके सत्त्व, शुद्धबादी ४-४ बाल, सुवर्णचूर्ण १ बाल (३ रती), अष्टदशसंस्कारकिया-हुआपारा ३९ बाल लेकर ७ दिनतक शुष्कमर्दनकर गोलीबनावे फिर बहणकीप्रदकीछाल और सफेदचन्दनका पानीमें बल्कवनाय उसमें गोलीको रखदे । फिर बून्हेपर मिट्टीकी कड़ाही रख उसमें

दोअहुल बाल विद्याकर कान्तलोहके पात्रको रख औषधपिण्डका दोलायत्रवनाय मधुमें मन्दाभिमे ८ पहरतक स्वेदनकरे । मधु सूखने पर दूसरा डालना जाय । इसीतरह घी, दही, दूध और शक्करके शरबतमें स्वेदनकरे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर विशुद्ध बनाकर रखओहै । इसमेंसे १-१ रती तत्तद्रोगहरानुपानकेसायदेनेसे समस्तरोगनि श्रुतहोतैहै । निरन्तरसेवनकरनेसे त्रिकालज्ञान प्राप्तहोताहै ७१२

७१३ ज्ञानोदयरसः

कलावेदाङ्कचन्द्रांशोः सर्वांशसितया युते ।
शक्राशनरजोजातीफलशुक्रैः सुसाधितः ॥ ३०३७ ॥
सेवितः सात्म्यतो ग्राही जलदोषापनोदनः ।
वातश्लेष्मायमध्यंसी ज्वरतीसारनाशन ॥ ३०३८ ॥
बृंहणैरनुपानैर्हि योजितः कामचुद्धिहृत ।
ज्ञानोदयो भवेदेव साधकानन्दसिद्धिदः ॥ ३०३९ ॥

नि र, वै र, र, कौ, रसायनसि, र ल, र श, दो ज्वराऽतिसार । र सि वाजीकरणे ।

टि०—र ल, र श, दो, एषु ग्रन्थेषु “ विजयाशक्तिसंयोगिनः मण्डनशम्भुभिः । ज्ञानोदयो भवत्येव साधकानन्दसिद्धिदः ॥ कला वेदाङ्कचन्द्रांशो म्रमेण समदांशं । सेवितः सात्म्यतो ग्राही कफवाताप नोदन ॥ ” इति पाठो मिहिनाऽस्ति, अत्र नमण्डनमधिकमस्ति भाग्यश्च चत्वार धरः । अताऽन्तिमभागस्य द्विरुक्तिं करणीया पाठस्तु एक एव करणाय वृषत्वे गौरवान्मण्डनमण्डनेन शक्याऽपिषयाच । निषण्डरजाकरवीधवा राजम शब्दस्य पर्यंकाऽर्थवरणतु हास्यास्पद त्रेधाऽस्ति, रसरजलधमीत्यथोटे रन स्थाने शक्तीति स्पष्टोक्तिवत् । र सि ज्ञानोदयावटीक्षितानाम । तत्र पारदस्थाने दिगुणपरद नियोजितम्, पाठस्त्वैकएव ।

भाषा—धोयाहुआ गाजा अथवा भाग १६ भाग, शुद्ध गन्धक ४ भाग, जायफल ९ भाग, पारदमत्स अथवा चन्द्रोदय १ भाग लेकर वारीकचूर्णकर सक्की बराबर शकरमिलाकर रख छोडे । इसमेंसेप्रकृतिकेअनुसार १ मासेसे २ मासेतककी मात्रा उचितानुपानकेसाथ लेनेसे जलदोष, वायु और कफरोग, ज्वरा दिसार, इनसबको यह नष्टकरताहै वाजीकर अनुपानकेसाथ लेनेसे यह कामकीवृद्धिको करताहै ॥ ७१३ ॥

अन्तः स्थिताऽस्ति वहिरस्ति रसस्वरूप,
सिद्धिप्रदोऽस्तु लयसर्गधिसर्गभेदेः ।
ऊष्माभिधाम्मजति सर्वजगन्निवासी,
हंसो हरिः सकलकृद्रसयोगदास्ये ॥

इत्युप्यर्थना रसाः समाप्ताः



द्राविडादिप्रसिद्धा ये कुम्भजन्व्यासनिर्मिताः
योगास्सम्पगिहन्पस्ताः सर्वदेशहितेच्छया ॥

१ अत्रिकुमाररसः

विशुद्धपारद्विपगन्धकटङ्कणदरदान्समभागान्
किञ्चिदुष्णीकृतपक्वार्कपत्ररसेन यामद्वयं मर्दयित्वा
चक्रीकृत्य सूपायां निक्षिप्य मुखवन्धनं विद्याय
वालुकायत्रे क्रमाश्रितां यामचतुष्टयं विपाच्य स्वाङ्ग-
शीतलं गृहीत्वाऽऽर्द्रकरसेनैकगुण्णाप्रमिते मेविते
सति सर्वज्वरनिवृत्तिर्भवति । सङ्ग्रहण्यतिसारादयो-
ऽपि नश्यन्ति । पथ्यं रोगाऽनुरूपम् । (अगस्त्यप्रो-
क्तवैद्यकशास्त्रे)

टि०—अयं पाठो रत्नाकरोपयोगे वसवराजये च सिद्धाऽत्रिकुमार
नाम्ना गृहीतोऽस्ति परन्तु दरदरादित्यमरिच । तत्कारणं वृष्टिपादाऽऽ-
सदान् प्रतिभाति । न्यासोऽपि अर्धनारीश्वरवैदित्यनाम्ना योऽयं योगोऽस्ति
तत्राऽपि दरदरादित्यम्, भावनयात्रं निगुण्टीकारवल्क्यो गृहीते, लव-
णवन्धने पाकं, नस्ये भक्षणे चेति द्विविधं प्रयोगो दक्षितः । अत्राऽपि
मर्वासां भावनानामनुष्ठानं कृत्वा एक एव योगस्मर्यादित्तद्वेयोगात्प्रा-
भवति । वालुकाकल्वणदन्वयोस्तु कामवारः । वालुकाकल्वणमिश्रणे-
नाऽपि पाकाऽनुष्ठाने क्षुब्धभावः प्रत्युत् द्वयोस्त्वयोगाद्रतिमयोगेन युषा-
श्लेष्मण्णशीलवन्तना शून्यं दृढमवरोधो भवित्यति, नस्ये भक्षणे चाऽ-
प्यव्याहृतीर्थयोगे इति विद्वद्भिरितिसमर्थनीयम् । विशेषमूलनम-अ-
नमैर्गन्धयोर्द्राणिपिपासापयोर्विमानताऽस्ति तद्देशीयतदाङ्गुयमन्या-
नामन्यल्पिया भाषाया च प्रकृतने महापातकं मन्यन्ते इतः वारणा-
दद्यावपि महामहत्त्वशुक्रयोरप्यनयोर्न मरुताऽनुवादोऽभूत् तं-
देशीयोपनामानात्तद्विचि याल्मस्त्रे यथायप्रतिशब्दप्रहामावादारमाभि-
रपि पश्यं न प्रतिबद्धं योगं ईश्वराऽनुष्ठाने द्वितीयाऽऽर्द्रो श्लेष्मणो
वास्वन्तीति विद्वन् विनीना प्रार्थना गवस्येभ्यो यत्रयत्रोपनामसु
मन्देह आनीतं नतं यथाऽन्यथितान्येव तद्देशीयनामानि निहितानि यथा
चेपुगुण्टावर्षादीनि अत्रायुर्वेदशास्त्रोर्विदुःश्रान्तं वगैर्विद्वद्भिः प्रथमैस्मा-
हाय दातव्यं यत्रनत जातं स्तान्नमपि वृषया यत्रनीयं तद्वितीयावृत्ती
दृगीवरिष्यन्ते ।

२ अत्रिकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धमयश्चूर्णं, अमलसारगन्धकं, टङ्कणं, दरदं,
कान्तञ्जेति प्रत्येकमर्द्धपलकं कुमारीरसेन यामच-
तुष्टयं विमृष्टं चूर्णयित्वा ताम्रसम्पुटे निक्षिप्य गाढा-
तपे धूमरेखोद्गमनपर्यन्तं स्थापनीयम् । पुनर्द्वितीयदिने
कुमारीरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शुष्कीभूतं चूर्णि-
तञ्च ताम्रसम्पुटितं विद्यायाऽऽतपे शोषणीयम् ।
सूक्ष्मप्रतया धूमो निःसरति । पुनस्तृतीयदिनेऽप्येवं
कृतञ्चेत्प्रचण्डाऽऽतपस्योगात्प्रकोभूय भस्मीभवति ।
गुण्डायपरिमिते भस्मनि कलाद्वयं (द्वादशरतिकं)
निकटुकचूर्णं मेलयित्वा मधुना सह मेलितञ्चेत्
सन्निपातगुल्मशूलकामलापाण्डुमेहादयो निवृत्तयन्ते ।
पथ्यं रोगानुरूपम् । कार्वेल्लकण्डूः सुतरां धर्म्यः ।
अनुपातमेवात्सर्वेषु रोगेषूपयुज्यते ॥ (अगस्त्य०)

टि०—एवञ्चिन्तु योगेविद्वान्नीलैर्गोमरुण्डपत्रैस्सिद्धं त्रिदिनं
धान्यराशौ स्थाप्यते । आतपनिधानसमयेऽपि वातारिप्रेत्राच्छावन्ते इति
विशेषः सञ्चालोऽस्ति यथा स्वयमभिरसे मर्दनमातपनिधानत्रं एकस्मिन्
द्वेने ममाप्यने । अथ तु महर्षिणा त्रिदिनपर्यन्तं मर्दनमातपशीप-
गात्रं वृत्तमिति भग्नं तूषवधाऽपि गण्यन्त्यने, गुणवैदश्रयन्तु मृदिद-
याऽनुष्ठानेन परीक्षणीयम् ।

३ अत्रिकुमाररसः (स्वयमादिः)

शुद्धपारदः ३ पलः, गन्धकः २ पलः, कान्तसि-
न्दूरं ४ पलं, मनःशिला २ पला, दरदं २ पलं, अयो-
भस्म १ पलं गृहीत्वा कज्जलीकृत्य कुमारीरसेन १५
दिनपर्यन्तं मर्दयित्वा त्रिकटुकचूर्णमिश्रिताऽऽर्द्रकरसे-
नाऽऽर्द्रगुण्णापरिमितमीपद्यं सेवितं सद्द्रिमान्द्यगु-
ल्मोदावतपाण्डुज्वरश्वासकासश्चयथुप्रभृतिरोगान्ना-
शयति । आढको, मुद्गाः, सूर्यणं, वृन्ताकं, शिशुशिम्वी,
भिण्डिका, काकमाचीपत्रं, गोशोरं, गोवृत्तञ्च पथ्यम् ।
मम्लरसो धूमपानं स्त्रीसंसर्गश्च वर्जनीयः ॥ (व्यास-
प्रोक्तवैद्यकशास्त्रे)

४ अत्रिकुमाररसः (वातादिः)

विशुद्धपारदरसकरदरदतालकानि समभागानि
गन्धकञ्च द्विभागं गृहीत्वा चूर्णीकृत्य काचकूपिकायां
निक्षिप्य वालुकायत्रे यामचतुष्टयं पक्त्वा स्वाङ्गशी-
तलं ब्राह्म्यम् । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सहैकगुण्णा-
परिमितः सर्वज्वरेषूपयोजनीयः ॥ (व्यास०)

५ अजीर्णमांशवटी

सर्पदंष्ट्रां १ पलां, विडङ्गपारसीकाकृष्णजीरकराक्षा
(राष्ट्रक) पिप्पलीमूलरसकरदरदगोरोचनकेला-
राणि प्रत्येकं सपादतोलकानि, मृगमदञ्च पादतोल-
कमाहृत्य ताम्रलोदरसेन गर्दभीक्षीरेण चैकेकयामं
मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणां वटीं स्तन्येन दद्यात् । अनया
सर्वे वालरोगा नश्यन्ति । बालस्य मातुः पथ्यक्रमः=
उष्णोदकं, पुराणतण्डुलाः, मरीचमिश्रितसैन्धवचूर्ण-
ञ्चेति । ताम्रूलं पुष्पसङ्गश्च वर्ज्यः ॥ (अगस्त्य०)

६ अण्डवातलेह्यम्

हिङ्गुपारदमनःशिलापिप्पलीगजपिप्पलीसैन्धवट
ङ्कणतालककटुरोहिणीकृष्णजीरकाणि प्रत्येकं पाद-
तोलकानि, शुद्धं जयपालवीजञ्चैरुपलं गृहीत्वाऽऽर्द्रो
जयपालवीजानि एकयामपर्यन्तं सम्पविवमृष्टं पूर्वा-
क्तौषधचूर्णं मेलयित्वाऽऽर्द्रकरसेन द्वियामपर्यन्तं
सम्पद्मर्दयित्वा मरिचप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकां
वटीं शुद्धेन शर्करया वा निर्मिलेत् । अनेन वातपा-
ण्डुगुल्मश्चयथुऽरुहच्छूलमेहाद्यतत्रयथो नश्यति ।
महोदरस्थायिग्रस्तानामण्डवातस्य च विदत्रयाऽऽभ्य-
न्तरे एकवारमीपद्यं देयम् । एवं पक्वदशाऽऽच्युत्वा
जीपथे दत्ते पूर्वोक्तारोगा नश्यन्ति । (अगस्त्य०)

७ अमृतसञ्जीवनरसः

स्तन्यशुद्धशलाकाभ्रैररससिन्दूरद्वन्द्वसञ्चार-
(दालचिन्ना) विपाण्येतानि शुद्धानि समभागान्या-
त्रिकनिर्गुण्डाष्टण्णतुलसारसैमधुना च प्रत्येकदिन
मर्दयित्वा रासगुलाभ्रदि विज्ञाय प्राचानतालशुद्धे
द्राक्षाफलमध्ये वा मुद्रप्रमाणमीपध निधाय एक
यामाऽनन्तर देयम् । मात्राचतुष्टयादधिकमपि न
देयम् । महासन्निपातादिदापेषु निवृत्तपु सस्तु पुन-
रेतदोपध न प्रयाक्तव्यम् । उष्णमुद्रमम्रम्, गाधूम-
रुण्डयूपश्च पथ्य । एतच्च नीलमहप्रन्थ्युपदशपा-
थ्यशूलभृङ्गप्रन्थ्यादानाशयति । मेहरागिणा बाल-
तरणभिण्डिके, औदुम्बरदालाट्ट, गाधूमखण्ड, सि-
तापला, शिशुद्राग्या, पटालद्वय, शरदक्षिमा, प्राचा-
नतण्डुलाश्च पथ्या । एतदोपधेन कस्यचिन्मुखपाना
भवेत्तर्हि शृण्णय्यूलत्वऽप्यायेण शोधन कार्यम् ॥
(व्यास०)

८ अश्वकञ्चुकी (कोडासुरीमात्रा)

नागरमरिचाऽऽमलनाभ्रहृक्कटुरारिणीसेन्धवट-
द्रणशुद्धतालकद्वन्द्वऽऽरतिरूपैरपिप्यलीहरातकाधि-
भीतकट्टणनारकचित्रसत्यव्याघ्रापलाऽमदसारा-
न्ध्रमन शिलात्रिपारदा परण्डवीजमज्जा चेति
प्रत्येक पादतालक शुद्धजयपालाजमधेपट्ट गृह्यात्वा
रसमन्धरादिधातुना नालरणी कज्जली विधाय वरु
शाधिततरुद्रव्यशूर्णेन सहेराष्टय भृङ्गराजरसेन या-
मपट्ट, जम्बारसेन च यामत्रय सम्मिश्रितमृद्य मरि-
चप्रमाणा घटा कुर्यात् । एकैका घटा सेन्धव्युत्तम-
रिचशूर्णेन सह प्रयुक्ता शुल्भरागं नाशयति । एत-
धत्तूरपरसेन शातज्वरा, नागरघाथेन शोणितना-
तरागा, घृतमिधितजातीषुशूर्णेन रक्ताऽतिसार,
विश्यापत्रसेन धातुहास गाधुतेन स्रद्धहृष्यति-
सारादय, निर्गुण्डापरसेन विद्रातिर्महा, मधुना
राजयम्भादय, त्रिकटुशूर्णेन शाताधिकयजकण्डाय-
राध, शिशुप्रसेन शुल्भशूरादय, मेथिकाथानक-
लेन द्रुहज्याधय, स्रग्नीरुशूर्णेनाऽतिदाह,
त्रिकटुशूर्णेन काम आर्द्रकरम्मिधितरुदकत्व
प्रसेन चित्तविघ्नमसन्निपात, नयनातमिधितन्याति-
ष्मतीराजनातीफलत्वकशूर्णेनाऽतिमृषलाधिन्दयति
रक्तकापासुपुपरसेन घनाकरण, ताम्बूने च खाय
शाकरण भयति । एतं तत्तद्रागासुराणाऽपुपाना
दय कल्या । (जगस्य०)

९ अयःसिन्दूरम् (प्रथमम्)

अयशूर्ण, अमलमारगन्धकशैवेकपल गृह्यान्वा
कन्याद्रवण यामचतुष्टय मर्दयित्वा चक्रिका विधाय

शरावसम्पुडित कृत्वा पञ्चाशदुत्पलके पुटा देय ।
पुन कन्यारसेन मर्दयित्वा पूर्ववत्पुटा दय । तत
खले निक्षिप्य पातभृङ्गस्वरसेन मर्दयित्वा पञ्चाश-
दुत्पलके पुटो देय । एतद्रुणादयवसिन्दूर भवति ।
अधेगुञ्जापरिमित मधुना सेवनीयम् । कामभाषण्डु-
शाफादया नदयन्ति सिराश्च हृदा भवन्ति ॥ (व्यास)

१० अयःसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

शुद्धमयशूर्ण ५ पल, पारदगन्धककान्तानि प्रत्येक
पलानि, तालके १ तालक हसपादद्वन्द्वऽऽर्द्धतालक,
एतानि विचूर्ण्य विम्बापत्ररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा
चक्रिका विधाय शरावसम्पुडित कृत्वा शतात्पलके
पुटा देय । पुनभृङ्गरसेनभुरक (नीरुगु) स्वसेन
च यामचतुष्टय सम्मये पूर्ववत् पुटा दय । पुनभृङ्गर-
सेनैका गजपुटा देय । इदमोपध चित्रकघाथेन दिन-
द्वय मर्दयित्वा मापप्रमाणा घटी कृत्वा रामद्विक-
टुशकपुराणा समभागचूणाऽनुपानेन एता घटी वत्ता
चन्महासन्निपातश्वासकासक्षयमेहपाण्डुगुल्मादया
रोगा निवर्तन्ते । पथ्यादिना यथाचित । (व्यास०)

११ अयःसिन्दूरम् (तृतीयम्)

शुद्धाऽयशूर्णकान्तगन्धवान् २-२ पान, पारद-
शैरुपल रसे निक्षिप्य जम्बारसेन दिनद्वय मर्द-
यित्वा शुष्का चक्रिका शरावसम्पुटऽप्युद्धय शाना-
पले पुटा देय । एत रीत्या कुमारीरसेन चत्वार
पुटा देया । एतत् सिन्दूर भवति । शुवाहयपरिमि-
तस्य मधुना सह मथनादस्थिगतज्वरादया नदयन्ति ।
भृङ्गराजमूलशूर्णेन पित्तपाण्डुगुल्मादय, त्रिकटुकले-
हेन गर्भेशूलाऽजाणवातव्याधय, आर्द्रकशूर्णेन यान्त-
घाऽप्रद्रेषश्च नदयति । मण्डलपर्यन्त सेयनाच्छरीर
वज्रसम भयति ॥ (अगस्य०)

१२ आनन्दभैरवसः (महदाडि) ?

गौरीपाषाणद्वन्द्वमन शिलातालकट्टणुणवियगन्ध-
कसञ्चार (दालचिन्ना) मृत्पाण्डुताट्टिपापाणानि
विधिना शुद्धानि चानमाण्डे मुग्गपयन्त यात्रिकाना
मृत्मापुषे उपरितनाना मृत्म शूर्णे निक्षिप्य पञ्चमृ-
त्सिरा कृत्वा हस्तत्रयपरिमिते भूगते माण्डे निधाय
गर्तमापुषे चन्वारिद्रादिना युष्यय मुग्गमुद्रणमुदाट्टो
पथ गृह्यात्वा कुमारीरसेन दिनद्वयपर्यन्तमनान्त मर्द-
यित्वा चन्वारुण्य शरावसम्पुडित कृत्वा मृदा मन्धि
निरास्य भूपुटा देय (अन पुटा देय) । पुनधेतदो-
पध सत्य निक्षिप्य शुद्धपार्श्वे मयूरतुयमसम चैकै-
कपल शुग्मसम (सर्वीरसम) सपादनात्क मिध-
यित्वा पानपुण्यधत्तूरपरसेन यामद्वय मर्दयित्वा
मायमात्रा यगन्ध्यावापुत्वा कृत्वा निरगतनिगन्-

नेन मिथितानामप्रभागावशिष्टकायेन यामचतुष्टय विमृष्ट गुञ्जामिता वटा विधाय स्तन्येन मधुना वा शालेभ्या दद्यात् । अनुपानप्रिशेषे सापद्रवास्सन्निपा-
तादिरागा नश्यन्ति । एतस्याऽनुपानकाय = मूनिम्ने,
पप्टक, थासागूलं, कुष्ठ, विष्णुकान्ता, तित्तपटाल
आकारकरम, त्रिकटुन, अमृता, चित्रक भाङ्गी चेति
सवाणि प्रत्येकपलिकानि सञ्चय्याऽष्टौ भागान्विधा-
यक भाग २४ तोलके जले निक्षिप्याऽप्रभागाऽवशेषि-
तेन काथेन मधुमिथितेन सहैका वटा सेवनाया ।
श्यासकासाद्युपद्रवमुता विषमशीतसन्निपातादद्या
निवर्तन्ते । आढ्यीशुपात्र पथ्य रत्नन वा विधेयम् ।
(व्यास०)

१९ कान्तसिन्दूरम् (प्रथमम्)

चुम्बनलाह शकलीहृत्वाऽजारेसेन सयाज्य मून्म-
यपात्रे निक्षिप्य सप्तकपटमृत्तिका दत्तैकविंशतिदिन-
पर्यन्त भूगर्ते स्थापनीयम् । एतत्पञ्चपलमित गृहीत्वा
गन्धकाऽयश्चणपारदान् पञ्चपञ्च पलिकान् खल्वे
निक्षिप्य जम्बीररसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा शुष्का
चक्रिका शुद्धमून्मयपात्रेऽवरुद्धवाऽष्टयामपर्यन्त गाढा
द्रिना विपद्येत् । एतत्तण्डुलमात्रता गुञ्जापर्यन्त रोग-
बलाखल निरीक्ष्यापयोज्यम् । अजाक्षारेण सेवित-
शुद्धदयन्वचलनसङ्ग्रहणीकामलापाण्डुश्रयधुवातेमहा-
भ्रमूलीरराति । रत्तृद्धिर्भवति शरीरमयस्सहृदाञ्च ।
इन्द्रा, सूरण, तुवरी, पटाल, शिशुदिम्बी, मिण्डिका,
विधापत्र, शरहञ्जिका, औडुम्बरफलानि, गोघृत-
तीरतपाणि, शुष्कमामलकल्लेहञ्च पथ्यम् । तित्तिडा,
तखवस्तुनि खीस्पदानञ्च सुतरा वर्जनीयम् ।
(अगस्त्य०)

२० कान्तसिन्दूरम् (द्वितीयम्)

पूर्वात्तरीत्या शुद्धकान्त गन्धकञ्च प्रतिपञ्चपल
हीत्वा जम्बीररसेनैक्याम मर्दयित्वा गजपुट देयम् ।
त प्रतिपुट पञ्चपल गन्धर्न नियाच्य श्राणि गज
दानि दत्त्वा कृपिनाया स्थापनायम् । तदनन्तर
प्रथमूलत्वच गन्धकञ्च प्रति पञ्चपल खल्वे स्तन्ये
नयाम शुक्लुटाण्डवत्तद्वेण च द्वियाम मर्दयित्वा
रावसमुटऽवरुद्धय गजपुटपाका पलाशुसुमव-
त्तद्वर्ण भस्म भवति (अत्राऽग्निस्थितौ सन्देह ?
लेम वेष्टयम्) । एतच्चक्रिका पूर्वोक्तमौषधञ्च खल्वे
नेक्षिप्याऽष्टैश्लारण विमृष्ट शुष्कचक्रिका शतावधार
रत्नय गजपुटदानात्पण्यर्णमिथित सिन्दूर भवति ।
तत्तण्डुलप्रमाण मधुना मण्डलपर्यन्त मजित मूरम
सेरागतगुप्तवातव्याधिप्रण्डयातगुल्म नलाद्गन्तरया
चण्डमासत प्राधाप्रादायति ॥ (अगस्त्य०)

२१ कालकण्ठमेहनारायणसिन्दूरम्

रसभस्म ८ तालक, गन्धक तालकञ्चैरेकतोलक,
मन शिला रससिन्दूर यशदभस्म चाऽऽर्द्धतोलक,
दूद, तन्तुरजत, वह्नागताप्रभस्मानि प्रत्येक पाद
तोलकानि, तनुतरसुवर्णपत्रमर्द्धतोलक, शुद्ध विषम-
नतोलक, एतानि सम्यक् चूर्णितानि खल्वे निधाय
पीतपुष्पभृङ्गरसेन कन्यारसेन च प्रतियामचतुष्टय,
पलाशपुष्पव्रणेण पारसपिप्पलपुष्परसेन च प्रतिया-
मद्वय मर्दयित्वा शापयेत् । ततो रत्तकापासपुष्पाणि
दशतालके जम्बीररसे निधायऽऽतपे स्थापनी-
यानि । जम्बीररसा यदा श्वेतरूपा भवेत्तदा पुष्पाणि
निष्कास्य तैरेव (जम्भाम्भसा) यामचतुष्टयमना-
रत मर्दयित्वा शुष्क चूर्णं काचवृषिकायामवरुद्धय
वालुकायन्त्रे दीपमध्यतीक्ष्णाग्निभि प्रत्यष्टयाम पा-
काशीलर्णमिथित रत्तर्णमौषध सम्पद्यते । एत-
त्सिन्दूरमधेगुञ्जापरिमित मधुना सेवित चेद्दण्डुलम
महादरश्लेषाण्डुश्रयध्वग्निमान्यदाघातिसारमूलग्रह
ण्यादयो वृद्धमूलरागा निवर्तन्ते । शुद्धचीसरसेन सह
मण्डलपर्यन्त सेजित सक्षिपनाडामासगतप्रमेहान्
गर्भमारकादान् (सहजव्याधीन्), स्वप्नस्त्वलन, मु-
रपाक, सूर्यवितोदिसाररागाग्म स्वप्नेभ्ररागाश्च
नाशयति । अनेन रत्तृद्धिधातुस्वम्भो जायते ।
पथ्य रागानुरूपम् (व्यास०)

२२ कालाग्निरुद्धभैरवरसः

पाद्वेपान्तत तुरजतताग्रलाहसुवर्णमुक्ताना भ-
स्मानि कातसिन्दूरञ्च सवाणि समभागानि खल्वे
निक्षिप्याऽऽर्द्धकभृङ्गचित्रकमूलत्वग्रसे प्रत्येकदिन म
र्दयित्वा विश्राप्य गुक्त्रप्रमाण मधुना सेवनीयम् ।
एतेनाऽजाणाऽप्रद्वपाऽतिसारमेहज्वरा निवर्तन्ते ।
ग्रहणापाण्डुमहावातश्वेतहास्तिवह्ममूमधुमेहादया
नश्यन्ति । शरीर पुष्ट स्वर्णञ्चायञ्च भवति । पथ्य-
वमा रागाचित् । (व्यास०)

२३ कालिङ्गचादिलक्षणम्

इन्द्रवारुणाफलरस २४ तोलक, अम्ल दधि १०
ता, काचलयणं, तीरपर्वतापरटङ्गुणक्षारा, कात
भस्म, शुद्धपारदगन्धकी चैतानि प्रयत्नं सपादताल-
कानि, समुटलयण १२ ता० श्वेतपारदमर्धतोलक
शुद्धजयपात्राजमन्तात्रं गृहात्वा पूर्वाहृत्य पूर्वा
करम दग्नि च मेलयित्वा मुद्गाण्डे क्षाराऽयशोर पायं
ट्वा स्थापयन् । एतदुञ्जामित तालगुटेन पुराणगु-
डन वा प्रात सायं सप्ताहपर्यन्त मेवनीयम् । एतन
यात नलमासरुधिरप्रूरितमहाद्राणि, मूत्राऽपराध
लिङ्गनालशाय, शल्यमृतिमाराताया नश्यन्ति ।

अण्डवायुपाणिपादशोथाश्च निवर्तन्ते । वातिकान्पि-
वर्ज्यं च्छापथ्यम् ॥ (व्यास०)

२४ कृष्णाप्रसिन्दूरम्

कृष्णधान्याम्रकर्मकमूलत्वकपायक्षीरसकण्टकमा-
रिपत्रस्वरसवटजटाकपायक्षीरपीतभृङ्गराजस्वर-
सेः क्रमेण चतुर्ग्रामं विमृद्य चक्रिकां विधाय सम्यक्
शोषयित्वा प्रत्यौषधं गजपुटं दद्यात् । अन्ते प्रत्येक-
पले सार्धसप्तमाषिकामूपरक्षारसुधां संयोज्य स्तन्ये-
नैक्यामं मर्दयित्वा गुण्डां चाक्रिकां विधाय पके-
ष्टिक्रया मूपां निर्माय तस्यां चक्रिकामवरुद्धय गज-
पुटो देयः । विद्रुमवर्णं निश्चन्द्रिकमम्रकसिन्दूरं
निष्पद्यते । एतच्च सिन्दूरं सर्वरोगहरं भवति ।
विल्वादिरेसायनेन सह पित्तपाण्डुकामलामेहाघाश-
यति । खण्डाद्रिकचूर्णेन लेहोऽन वा पित्तगुल्मपुराण-
शूलदादीघ्नाशयति । श्वेतव्याघ्री (तैलवाकुडु) फल-
चूर्णेन सह श्वासकासाद्युपद्रवसहितक्षयरोगो निर्मूलो
भवति । मधुना चातमेहाः, गोघृतेन मधुमेहः, त्रि-
कुकेन ज्वरादयश्च नश्यन्ति । अयःसिन्दूरमम्रकसि-
न्दूरञ्च भृङ्गराजचूर्णं मेलयित्वा मधुना सहैकविंश-
तिदिनपर्यन्तं मण्डलपर्यन्तं वा सेवनेन मेहज्वरमेह-
त्रणाद्यो नश्यन्ति । (आगस्त्य०)

३०—विल्वादिरेसायननिर्माणकम्—विल्वमूल छायागुल्फ रुचा
चूर्णीकृत्य ३० फलपरिमित २८८ तालके जले निक्षिप्य मृत्पात्रे ४८ तोल-
कावशेष पाक कृत्वा बीजपूरस्य २० तोलक, शक्तिप्रवरस्य २० तालक,
पुराणालगुड १२ तोलक, पूर्वोक्तयोः निक्षिप्य रेहपाकसमये नागरं-
द्विसह, पिप्पलीमूल ३ फल, पिप्पली १॥ पत्रा, शरीर सपादतोलिया,
तारंगमपत्र सपादतोलक, नागकेसर २ फल, मरिचाणि ४ पलानि, निम-
कैलासीने १-१ पले, स्वक १ तोलिका, श्वेतजीरक ४ तोलक गृहीत्वा
बखमूर चूर्णयित्वा रेहपाके संयोज्य गोघृत ५ फल, मधु ३ फल मिश्र
यित्वा लेहपाकेनाऽवतार्य आमलकप्रमाणं प्रत्यहं सेवनीयम् । एतेन
पित्तकामलापाण्डुत्वस्यैवमनदिकाः श्वासस्यैव तद्वदधीनससङ्घबन्धवर्द्धय-
लालासावाऽऽरुचोदरज्वलनशरीरप्रमणादयो रोगा नश्यन्ति । अनेन
लेहोऽनयं सिन्दूर कान्तसिन्दूर वा सर्वोष्णोषधुके तपि महती धातुप्रदी-
रकश्चिद्विध भवति ॥

२५ क्षयकुलान्तकरसः

तालकमौक्तिकमुवर्णरजतद्रुमस्मानि समभा-
गानि, चन्द्रसारः (भीमसेनरुद्रम्) विद्रुमभस्म च
सर्वचतुर्ग्रामं खल्वे निक्षिप्य वासापत्ररसेन यामच-
तुष्टयं, श्वेतव्याघ्रीरसेन च यामहयं विमृद्य चक्रिकां
विधाय वायुकायत्रे शिवशक्तिपूजापुरःसरं यामहय-
पर्यन्तं दीपाग्निना पाकं विधाय स्वाङ्गशीतलं ब्राह्मम् ।
एतदधेगुञ्जापरिमितं मधुना सहाऽर्द्धमण्डलमेकमण्डलं
वा सेवितं सन्मेहरक्तश्वासकाससंयुक्तान् सकलौषध-
वयुतान् पण्णवतिसहस्रावकासघ्नादाशयति । मधुमेह-
वह्नुम्रमेहज्वरकुष्ठादीनिपि निहन्तति । शरीरं सुवर्ण-

च्छायं करोति । पथ्यक्रमस्तु यथोचितः । तन्तिन्दी-
रसो धूमपानञ्च दूरतो वर्ज्यम् । (अगस्त्य०)

२६ गण्डौषधम्

कुन्दनपत्राणि (अपरञ्जी), वस्त्ररजततन्त्रयः,
शुद्धमुक्ता, विद्रुमः, यष्टिमधुकं, लवङ्गं, पिप्पली, रु-
द्राक्षः, कुष्ठं, आकारकरभः, कृष्णसारगुट्टम्, रस-
सिन्दूरम्, वासासमृद्धैतानि समभागानि वस्त्रशो-
धितानि स्तन्येन दिनद्वयं विमृद्य शोषयित्वा मधुनि
मेलयित्वा रजतसम्पुटे स्थापनीयम् । सन्निपातप्र-
कोपे रजतशलाकया किञ्चिदुद्धृत्य रसनायां मर्दनी-
यम् । एतेन जिह्वारण्टकाः परञ्जीसाङ्गत्वदोषः वमन-
हिकाद्युपद्रवयुताखयोदश सन्निपातसञ्जातविकारा-
स्सर्वेऽपि नश्यन्ति । एतद्रण्डौषधं तालुमूले निधाय
सायधानतया रस आरवादीनीयः । (व्यास०)

२७ गन्धकरसायनम् (प्रथमम्)

अमलसारगन्धकचूर्णं चतुर्थाशघृतेन सह द्रवी-
कृत्य गोक्षीरे निवापयेदिति साधारणी शुद्धिः । वि-
शेषतो गोक्षीरेण भावयित्वा भृषुटविधानेन गाल-
यित्वा गोक्षीरे निवापयेत् । अस्य विवरणम्—गोक्षीरेण
पादभागान्यूनं मृद्गाण्डमापूर्यं मुखोपरि सूक्ष्मं वल्लं
वद्धोपरि गन्धचूर्णमास्तीर्य शरावेण पिधाय सन्धि-
वन्धनं कृत्वा एतत्पात्रं गर्ते भूसमं निधाय सन्धिपर्य-
न्तं मृदाऽऽलिप्य शरावोपरि २५ उत्पलकैः पुटो देयः ।
गन्धकं द्रवीभूय वस्त्रच्छिद्रैर्मणिघट क्षीरे निपतति ।
पर्युः प्रातरुद्धृत्योष्णोदकेन क्षीरस्थं गन्धकं प्रक्षाल्य
चूर्णीकृत्याऽऽतपे शोषयत् एपेका भावना । एवमेव
गोदधि, इक्षुरसः, तण्डुलीयकरसः, जलकुर्मा (अन्त-
र्तामराकु), सूक्ष्मपाण्डं, वास्तुकं, भृङ्गराजः, त्रिफलाः,
चातुर्जातकं, चित्रकं, आर्द्रकं, (छिन्निषायकु),
मधु, पञ्चामृतं, कृष्णतुलसी, गोघृतञ्चैतेषां द्रवेषु
पूर्वांशप्रकारेण मर्दनादिविधिपूर्वकशोधितं गन्धकं ४
पलं, गोक्षीरे शोधितं हेमक्षीरीचूर्णं ४ पलं, वाकुची-
चित्रकमूलत्वप्रोक्ताकृष्णार्हिसामृल (नद्धुषुपियेव)
तालीसपत्राऽभ्यगन्धापाारसपिप्पलकण्टकपिपलाशम्-
लत्वकृचम्पकपुष्पाणां प्रत्येकपलं गृहीत्वा सम्यक्
चूर्णीकृत्य पत्रत्रयां सितोपलां निक्षिप्य मधुना याम-
चतुष्टयं विमृद्य चीनपात्रे स्थापयेत् । पादतोलकमे-
तद्वल्लं प्रातः सायमेकमण्डलमर्द्धमण्डलं वा सेवनी-
यम् । अनेन मेहप्रन्थयः, क्षुद्रपिडिकाः, कृष्णमेहः,
मेहवायवः, मेहशूलाः, उपदेशः, लिङ्गवणाः, योनि-
प्रन्थयः सूचीमुखीव्यापचेत्यादयो रोगा निवर्तन्ते ।
(व्यास०)

२८ गन्धकरसायनम् (द्वितीयम्)

पूर्वांक्तप्रकारेण शोधितं गन्धकं ६ पलं, त्रिकटुक-
चित्रकवाकुचीवीजान्येकैकपलानि चूर्णितानि गन्धेन
सह मेलयित्वा समभागां शर्करां मिश्रयेत् । अथवा
पञ्चदशपलायाः शर्करायास्तनुलीं विधाय सर्वमपि
चूर्णं पाके निक्षिप्य द्वे द्वे पले घृतमधुनीं मिश्रयित्वा
प्रत्यहं कलाद्वयप्रमाणं सेवनीयम् । एतेन सर्वांपदंश-
कुष्ठव्याधयो मेहग्रन्थयश्च निवर्तन्ते । दुग्धाघ्नं पथ्यम् ।
(व्यास०)

२९ गन्धकामृतलेह्यम्

शुद्धममलसारगन्धकं ८ पलं, आमलकीचित्रक-
त्वद्वागरमरिचाऽथगन्धाहरीतकीविभीतकपिप्पल्य-
पकेरुतोलिकाः, पद्मवीजं, चीनहेमश्रीं, मुशलीञ्चैके-
कपलिकां गृहीत्वा चूर्णाकृत्य २४ तोलके गोश्रीं १६
पलां सितोपलां संयोज्य मृद्धान्डे पाकसमये पूर्वां-
क्तममलसारगन्धकं मेलयित्वा १० पलं मधु निक्षिप्य
लेहापाकमवतार्य प्रत्यहमामलकप्रमाणं प्रातःसायमे-
कविंशतिदिनपर्यन्तं सेवनीयम् । एतेन शरीरव्रणवि-
पादिकाकुष्ठोपदंशकुम्भकुटशिकोपदंशयोनिकुट्टिमनी-
लमेहादयो नश्यन्ति धानुबुद्धिश्च भवति । क्षीराघ्नं,
गोदधि, मुद्गमापवटकाश्चाऽनुकलाः । (अगस्त्य०)

३० गौरोचनवटी (प्रथमा)

शुद्धकान्तविभीतकाऽऽमलकवञ्जलपुष्पगौरोचन-
कुष्ठचित्रकमूलानि एकैकपलानि; मनःशिला रसकर्पू-
रञ्च प्रतिसपादतोलकं सव्ये निक्षिप्य चूर्णाकृत्य ...
(फलिजम्) रसेनैकादश दिनानि मुक्तावर्षारसेन च
दिनद्वयं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा वटीः कुर्यात् । मधु-
मिश्रितस्तन्येन चालानां सन्निपाताऽग्निमान्द्यदोषाः
शांताधिश्यञ्च नश्यति । अनुपानभेदाच्चाऽन्यरोगेषु
यथायथमुपयोज्यम् । (अगस्त्य०)

३१ गौरोचनवटी (द्वितीया)

गौरोचनकेशरसरकर्पूररससिन्दूरऽऽग्निसिन्दूरहि-
मसारैलायीजलयङ्गकुष्ठजातीफलऽऽकारकरभोगि
समभागानि विचूर्ण्य षोडशभागाऽवशिष्टेन श्रीच-
न्दनकायेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वाऽष्टभागावशिष्टेन
लवङ्गकायेनैवमेव शतपत्राऽकणं (गुलायजल) च
यामद्वयं विमृद्य गुञ्जामाना वटी कार्या । बालकानां
स्तन्याऽनुपानेन देवाऽनया कण्टकुम्भप्रभृतयस्म-
न्निपाता निवर्तन्ते । अनुपानविशेषः श्लेष्मज्वरशत
त्वरपातसन्निपातदोषधनुर्वातसर्वाद्गन्धादयो नश्य-
न्ति । बालानां मानुः पथ्यं देयम् । (व्यास०)

३२ चण्डमार्तण्डरसः

वज्रलवणं, महामौरीपापाणयोर्मसम्, कान्तसिन्दूरं,
गन्धकं, तालकमसम्, मृदारष्टकं, रमभस्म चैतानि
सूक्ष्मचूर्णितानि काचकूपिकायां निक्षिप्य यामचतु-
ष्टयं क्रमाग्निना पकीयथं ब्राह्मम् । एतत्तण्डुलपरिमाणं
सेवितं सत्सर्वान्दोगाश्चादायति । स्तन्येन, मधुना,
त्रिकटुककायेन वा सेविते विपदोषाः सन्निपातज्व-
राश्च निवर्तन्ते । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

३३ चतुर्विधवन्ध्वत्वरतैलम्

धुद्रैरण्डवीजतैलं, कपिलागोश्रीं, नारिकेलजलं,
पाण्मासिकमण्डलमण्डं प्रत्येकं १२० तोलकं, औदु-
म्बरसीधु काश्मिरी (धुद्रखर्जुरीसीधु) च ८०-८०
तोलकं, वनतुलसी (रजगुर), कृष्णतुलसी, जल-
पिप्पली (बुकिनाकु) कृष्णकारुमाचीकोकिलाक्षभु-
द्रकारवेह्वानां पद्माणि, पारसपिप्पलपुष्पाणि (नेङ्ग-
रायि चेट्टु), भृतुलसीपत्रं (अजगन्धा), ब्राह्मी
(बहारी), ... (चिप्युतट्टाकु), भूकृष्णाण्डपत्रं (नेह-
गुल्मडिआकु), बृहदग्निमन्थपत्रं (बुद्रुतकाळी),
कपूरचट्टी (पत्रयवानिका, कपूरहठी) चैतिसवस्पा-
तयः । मरिचचीनहेमश्रीरानागरजातीपत्रकेशरसृग्-
मददग्द्रसाखसैलायोजजातीफलभायाफलगोमंचन-
रसरकर्पूराणि प्रत्येकं सपादतोलकानि आपण्ड-
व्याणि । नागरज्ज (चीनापण्डु तै० सन्तरा० हि०)
द्राक्षात्कर्त्तम्भादाडिमीवीजपूरखर्जूरीणां फलरसाः
प्रत्येकं ३० तोलरुपरिमिताः । अथ तैलपाकक्रमः-
आदौ सघ्नान्नस्पतांश्छायाशुष्कान्विधाय चूर्णाकृ-
त्याऽऽपण्डव्याणि वज्रदोषितानि कृत्वा एरण्डतैला-
दिकादम्परीपर्यन्तम्, द्राक्षादिखर्जूरीफलान्ताण्डधान्
महतं मृत्पात्रे निक्षिप्य तैलावशेषं पारं कृत्वा पूर्वां-
क्तचूर्णानि मन्थंनि मेलयित्वा मन्दाग्निना पाकं त्रिचार्य
स्वाह्नान्ये गौरोचनं, मुगमदं, रसकर्पूरं, तिहुलक्षे-
तचतुष्टयमपि चूर्णाकृतं तैले निक्षिप्य सम्यग्गुण्डोद्य
मुत्पन्नधनं विधाय १० दिनपर्यन्तं निरानप्रदोषे संर-
क्षणीयम् । ततः प्रातः सायं प्रत्यहं पादतोलकरुपि-
मितं तैलं द्मृत्पतीभ्यां मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । अयं
गर्भधारणयोगोऽनुभवविद्धः । (अगस्त्य०)

३४ चित्रानन्दभैरवसः

शुद्धरसचिप्यट्टुष्णत्रिकटुकजयपालार्थीजानि मम-
भागानि जम्बोरग्नेन यामचतुष्टयं विमृद्य गुञ्जाप्र-
माणां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽऽकर्त्तमेत प्रयोदश-
मग्निपातेषु प्रयोजयेत् ।

३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सवरीरं, मल्लगौरीपापाणदरद-
पारदात्रभेदि (काशीस) स्फटिकापालतुल्यापर-
क्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ता-
म्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, एलायीजं, त्रिफला,
श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यवानिका,
कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुकान्ता, खुरासानिका, कटुरो-
हिणी, जातीपत्रं, खर्जूराफलं, लडुनं, त्रिकटुकं, जय-
पालञ्जैतेषु शोधितव्यवस्त्वनि सम्यक् शोधयित्वा
भर्जनीयवस्त्वनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णा-
न्त्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुकान्तरसैः प्रत्येकेन सप्त-
दिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनैकरुदिनं विमृद्य मुद्-
प्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य शिपशक्तिगणपति-
पूजां विधाय सुवासिनीब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वाऽत्रदा-
नादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोक्तव्यम् ।
चन्द्रसारतकौलशिलातन्त्रा (कलनार) हुलीपुष्प-
मुद्गातकानां समभागचूर्णं समां सितोपलांमिश्रयित्वा
पादतोलरूपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिवटीमेकां संयोज्य
मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासाद्यो
निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पबायेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धा-
चूर्णनाऽन्नवृद्धिर्नदयति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्यास-
कासी, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य
नेत्राञ्जने कृते शुक्रपटलादयः पण्णवतिर्नेत्ररोगा
नदयन्ति । सकलसङ्ग्रहणीनां शर्करायुक्तम्मापुष्परसेन
त्रिफलाकपायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरागयोर्म-
रीचचूर्णमिश्रितगोमूत्रेण देयम् । निम्बपत्रयिमीतकी-
मरिचनगराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह चिपञ्जत-
ज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातानां देयम् । ज्वर-
सञ्जातदाहं शर्करया, चतुष्पट्टिषिपाणां जम्बीररसेन
सङ्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम् । वृश्चिन्द्रंशे जलेन
क्षतस्थाने लेपनीयम् । नेत्राञ्जनमपि देयम् । अन्त-
र्ज्वराणां दन्ना, व्याहिकनरणाणां कार्द्वेहृद्वायेन,
पित्तक्षेपेज्वरपाणामार्द्रकरसेन, चतुष्पट्टिवातानां
निर्गुण्डीरसेन, कपालकुष्ठप्रग्रियशूलविपरोगेषु निरु-
दुकचूर्णेन दातव्यम् । (व्यास०)

३६ ज्वरकुठाररसः

एरुपलं गौरीपापाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोष्टलं बद्धा
चतुष्पट्टितोलकशिलासुधासण्डे दोलायन्त्रेण याम
द्वयं स्वेदयित्वा ग्राह्यम् । एतं शोधितं गौरीपापाणं,
गन्धकं, तालकं, तुल्यं (पालतुलं), कटुरोहिणीं, जय-
पालवीजानि प्रत्येकमर्षतोलेकानि सम्यग्विचूर्ण्यं शु-
द्रकार्द्वेहृदपत्रमेन यामचतुष्टयं विमृद्य मापप्रमाणं

वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात् । शीतप्रधानज्वरा न-
दयन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्=तालीसनागरपिप्प-
लीमरिचाकारकरभानुसमभागानुविचूर्ण्यऽस्मत्पा-
दतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयमेवनात्
उग्रज्वरास्सन्निपाताद्यो निवर्तन्ते । दोषप्राचल्ये सति
वश्यकमाणं वीरभद्राञ्जनमपि नेत्रयोर्वाज्यम् । पित्तप्र-
तीनां शुष्कतिन्तिडीपत्रोपयोगः कार्यः । (व्यास०)

३७ ज्वरगजाङ्गुररसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्र-
भस्म, द्विजीरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, सद्य-
क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आम-
लकी, विमीतकी, कटुरोहिणी, विडङ्गं, टङ्कणञ्जैतानि
समभागानि सम्यग्विचूर्ण्यं चीनपात्रे निक्षिप्य अम्ब-
दाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽप्लाव्य दश-
दिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः रखले निक्षिप्याऽ-
म्बदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं
चूर्णं चीनपात्रेऽध्वरुद्धयं स्थापनीयम् । गुग्गाढयमाद्दे-
करसेन सह सेवितं विषमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्यक्ष-
न्निपातादीन्द्रादायति । घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं,
आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुल्मरोगो
नदयति । वातपद्धानन्तरं पठ्यम् । तिन्तिडीतक-
धूमपानाद्यो वज्याः । (अगस्त्य०)

३८ ज्वरफणिगरुडरसः

शुद्धपारदगन्धकविपाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं
४ तो., जयपालवीजानि ८ तो० गृहीत्वैकत्र सङ्घृष्य
धनूरमूलकायेन यामचतुष्टयं विमृद्य मरिचप्रमाणा
वटिकाः किरतः । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन
वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकशूलविष्णुकान्तासूनिम्ब-
बायेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलविष्णुमूल-
सरुष्टककरुण्णुमूलनिकटुकबायेन विषपाण्डुश्वयथु-
ज्वरा नदयन्ति । स्तन्येन मधुना वा सङ्घृष्य सन्नि-
पातज्वरेषु नेत्राञ्जने देयम् । पथ्यं रोगोचितम् । अल्प-
मानया बालानामप्युपयोक्तव्यम् । (व्यास०)

टि०—हृष्णमुपलक्ष्ये गरलमभिव दृश्यते । तत्रैव सर्वेषां ममभाग
तत्रा योग विधाय सन्न निष्काल्य भृङ्गरसेनाने वनीर निषेज्याऽऽरे
याधेति नाम स्थापितम् । तदभिप्राये अन्धकारेण प्रष्टव्य ।

३९ ज्वराङ्गुशमैरवरसः

विशुद्धपारदः, विष, गन्धकश्चेकपलं, जातीफल-
मर्षपलं, पिप्पली १॥ पला, सर्वं चूर्णाद्यं ताम्बूली-
स्वरसेनाऽऽर्द्रकरसेन च प्रति यामद्वयं विमृद्य
गुग्गाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनु-
पानेन प्रयोगे वातपित्तक्षेपज्वरा नदयन्ति । यदा-
नीकलेकेन द्रवेण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसारा

निवर्तन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्घहण्यादीनामनु-
पानविशेषः = अतिविषा, मरिच, नागर, तालीसपत्र,
पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्घुष्ण २४ तोलरु-
जले मृन्मयपात्रे निष्काथ्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य
भागद्वयं प्रकल्प्यैकभागमेकरटिकया सायमपर प्रा-
तश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि कृते पूर्वोक्त-
व्याधये निवर्तन्ते । अम्लदाडिमीफलरसेन घमन-
हिके नश्यत । अश्वगन्धा, अनन्तमूल, हेमक्षीरी (पर-
द्वीचक्रा) भृङ्गभाण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेक-
पलं चूर्णावृत्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा
सेविता चेदस्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीत-
पदार्थां वर्ज्यां । (व्यास०)

४० ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) १

द्विपल मह्यपापाण कारवेहृततण्डुलीयरूपत्रसेन
प्रति यामचतुष्टयं मर्दयित्वा शरावसम्पुटितं विधाय
घनतया सप्त मृत्तिका दत्तोत्पलकरणेण पुट दद्यात् ।
तत एव निक्षिप्य त्रिकटुककाथेन यामचतुष्टयं
विमृद्य मुद्रपरिमिता वटी कुर्यात् । मधुमिश्रित-
भ्रष्टजीरकचूर्णे एका वटीं सयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरा-
स्तत्क्षणे निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिरावृत्ता वटी योज-
नीया नाऽधिका । तित्तिडी वर्ज्यां । क्षीरात्र गोधूम-
राण्डयूपञ्चाऽनुकूल । अपि चाऽनन्तमूलकाथेन
यातज्वर, नागरकाथेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्ण-
मिश्रिताऽऽद्रकरसेन श्लेष्मज्वर, धान्यरुकाथेन ताप-
ज्वर, दध्ना सङ्घहण्यतीसारी, भृङ्गराज (शुण्ठगल-
गरा) रसेन ज्वरसञ्जातसर्गाङ्गुलाद्या नश्यन्ति ।
नेत्राङ्गनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणा गिट्टिगेडुलुरस
(ऊपरे पलाण्डुसदृशकन्दो यस्य पत्राणि तालमूली-
सदृशानि बृहन्ति च भवन्ति इति केचिद्बदन्ति अन्ये-
स्तु शङ्खकामाडु), अपङ्क्याते लताकरञ्जपत्ररस,
श्रीसम्भोगाय कामरसूरिका (मरुकर) पत्ररस,
सर्वसन्निपातेषु धन्तूरपत्ररस, अजीर्णस्थोष्णोदकम्,
अरीसा मूलरस, श्वयथुपाण्डुकामलासु भ्रष्टाऽति-
विषाधाय, दुष्टसर्पादिदशनस्य धीजपूररस, वृश्चि-
कधिपस्य गोमयम्, निम्बरीजतैल, मधुरपिच्छभस्म
च । एवमनुपान यथाचितं देयम् । सर्वविषाणामपि
यत्र क्षतं तत्र मधुरपिच्छभस्मना सह निम्बरीजतैल-
मिश्रितेन क्षतस्थान लिम्पेत । आद्रकरसेन नेत्रे अञ्ज-
यित्वा यद्यस्तत्पदयेत्पातालपर्यन्तं इष्टिं प्रसरति ।
पिशाचप्रस्ताना केवलतिलतैलेन मिश्रयित्वा नेत्रा-
क्षरं कृतं चेद्भूतप्रेतपिशाचादयः पलायन्ते । रजमूला-
शाब्ज्याधेनर्वनीतेन सहाऽऽसन लेपनायम् । कन्ध्या-
क्षीणा परिपक्ववटीजचूर्णेन क्रतुकाळे एकवारं

दद्यात् । एवमनुपाने । सर्पवृश्चिकान्मत्तशुनरुविपादौ
पूर्वाक्ततैलेन सह क्षतस्थाने नियाजनीयम् । इत्येव-
मेवाऽनुपानभेदेन सर्वव्याधिषु नियाजनीयम् । शिर-
शक्तिषुजा काया ॥ (अगस्त्य०)

४१ ज्वराङ्कुशरसः (द्वितीय) २

शुद्धपारदगन्धरुद्रवृद्धकृष्णविपतालरुजयपालत्रि-
कटुत्रिफलाश्चेतानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा
चूर्णावृत्य भृङ्गराजसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मरि-
चप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । वृष्णतुलसीरसेन थालक-
ज्वराणां दातयम् । मरिचरुक्लेन वातशुला शीत-
ज्वराश्च नश्यन्ति । चित्ररूपिप्लीग्लतित्तपटोलभू-
निम्बविष्णुक्कान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरभ-
विरुद्रुत्रिफलाऽमृताऽजर्जरीफलतालीसपत्राशीरश्री-
चन्दनाना काथेन पुराणयातपित्तश्लेष्मद्वन्दाऽऽहिका
जीर्णज्वरा नश्यन्ति । पाण्मासिकवयस्कमारभ्य त्रि-
हायणवयस्य पर्यन्तं चालानामेकारात्रांशुधु मुद्रप्रमाण
देयम् । तरणादीनां चणकप्रमाणम् । अम्बरसा वर्ज्यं
शीतलवातपदायाश्च । अस्मिन्प्रोपधे रसगन्धकाद्या
विधिना शाध्या । प्रसृतस्त्रीणां ज्वरादौ लघ्वङ्गन्या-
येनोपयोजनीयम् । पथ्य रागोचितम् । (व्यास०)

४२ ज्वराङ्कुशरसः (महदादि) ३

शुद्धगन्धरुपादविपमह्यपातपुष्पधन्तूरवीजमरि-
चानि प्रत्येकतोलकानि विचूर्ण्य वृष्णधन्तूरपत्र-
स्वरसेन यामचतुष्टयं सम्यग्विमृद्य शुद्धामात्रां वटा
वृत्याऽऽद्रकरसेन सेविता चेद्विषदीतरुप्रधा-
नज्वरा निवर्तन्ते । भ्रष्टशारमिश्रितपुराणतण्डुला
उष्णादकञ्च पथ्यम् । सप्ताऽपत्राभ्य तरिणरागानां
सर्वपापाणगर्भितान्योषधानि वर्ज्यानि । कदाचिम-
हावायुकठिनदापमहासन्निपातकण्ठगतकफजातादि-
दोषैरानान्ताश्चेत्ता तेऽपि प्रयायानि (व्यास०)

४३ ज्वराङ्कुशरसः (चतुर्थ) ४

सम्यक् शुद्धमेकतोलकं मह्यपापाण पट्टतोलके
गर्दनीशार चीनपात्रे मिश्रयित्वा द्विनोलकदिह्नुके
प्राप्तो देयः । दिह्नुला वटा भरति । अयं तण्डुलमात्रो
मरिचकाथेन सह सेवितस्सवाङ्गप्राप्ताशयति ।
अम्बरसा वर्ज्यं । आढर्कायुष, भिण्डिका, गाधूम-
राण्डयुष, शुष्क काकमान्चा (कामाता) एतं शिष्ट-
शिष्यी, क्षीरापत्रञ्च पथ्यम् । अत्रेव सूचना = तित्ति-
मात्राच्छ्रुते मृपात्रेऽङ्गभाग सिक्तया पूरयित्वा
सिक्ततामये काचपात्र निधाय तमये दरदराकलं
निक्षिप्य योगोक्तप्रकारेण ग्रामं दद्यादित्यनुसंधयम् ।
(व्यास०)

३५ चिन्तामणिरसः

शुद्धं पत्रतालकं, सन्धीरं, महुगौरीपापाणदरद-
पारदात्रमेदि (काशीस) स्फटिकापालतुल्यौपर-
क्षारशिलाक्षारटङ्कणानां भस्मानि, सैन्धवं, अयस्ता-
म्रसिन्दूरे, मनःशिला, लवङ्गं, एलावीजं, त्रिफला,
श्रीगन्धचूर्णं (श्वेतचन्दनं), देवदारु, यवानिका,
कुष्ठं, नागकेशरं, विष्णुक्रान्ता, खुरासानिका, कटुरो-
हिणी, जातीपर्णं, खर्जूरोफलं, लशुनं, त्रिरुद्रकं, जय-
पालञ्चेतेपु शोधितव्यवस्त्वनि सम्यक् शोधयित्वा
मर्जनीयवस्त्वनि स्वर्णच्छायं भर्जयित्वा सर्वाणि चूर्णी-
कृत्य पीतभृङ्गनिर्गुण्डीविष्णुक्रान्तरसेः प्रत्येकेन सप्त-
दिनं मर्दयित्वा कृष्णतुलसीरसेनेकदिनं विमृद्य मुद्ग-
प्रमाणा वटीः कृत्वा शृङ्गे निक्षिप्य शिवशक्तिगणपति-
पूजां विधाय सुवासिनीब्राह्मणपूजाञ्च कृत्वाऽत्रदा-
नादिना सन्तोष्याऽनन्तरमेतदौषधमुपयोज्यम् ।
चन्द्रसारतक्रीलशिलातन्वा (फलनार) हुलीपुष्प-
मुञ्जातकानां समभागचूर्णे समां सितोपलांमिश्रयित्वा
पादतोलकपरिमिते चूर्णे चिन्तामणिवटीमेकां संयोज्य
मधुना सह दद्यात् । अनेन रक्तक्षयश्वासकासाद्यो
निवर्तन्ते । पुष्करपुष्पकायेनाऽण्डवायवः, अश्वगन्धा-
चूर्णेनाऽन्त्रवृद्धिर्नश्यति । किञ्च-भृङ्गरसेन श्वास-
कासी, जम्बीररसेन भृङ्गरसेन वा वटीं संघृष्य
नेत्राञ्जने कृते शुक्लपटलाद्वयः पण्यवतिर्नेत्ररोगा
नश्यन्ति । सकलसङ्घर्षाणां शर्करायुक्तस्त्रिपाणरसेन
त्रिफलाकपायेण वा देयः । कामलाश्वयथुरोगयोर्म-
रोचचूर्णमिधितगोमूत्रेण देयम् । निम्बपत्रविभीतकी-
मरिचानगराणां चूर्णेन मधुमिश्रितेन सह विपवात-
ज्वराणां, आर्द्रकरसेन सुखसन्निपातानां देयम् । ज्वर-
सञ्जातदोहं शर्करया, चतुष्पष्टिपिपाणां जम्बीररसेन
सद्घृष्य क्षतस्थाने लेपनीयम् । वृश्चिरुदंशे जलेन
क्षतस्थाने लेपनीयम् । नेत्राञ्जनेन देयम् । अन्त-
ज्वराणां दध्ना, व्याहिकज्वराणां कार्पुष्यकायेन,
पित्तश्लेष्मज्वराणामार्द्रकरसेन, चतुरस्रीतिचातानां
निर्गुण्डीरसेन, कपालकुष्ठप्रमिश्रालविपरोगेषु त्रिरु-
द्रकचूर्णेन दातव्यम् । (व्यास०)

३६ ज्वरकुठाररसः

एकपलं गौरीपापाणं सूक्ष्मवस्त्रे पोष्टलौ चट्टा
चतुष्पष्टितोलकशिलासुषाखण्डे द्रोलायन्त्रेण याम-
द्वयं स्वेदयित्वा ब्राह्मम् । एवं शोधितं गौरीपापाणं,
गन्धकं, तालकं, तुल्यं (पालतुत्तं), कटुरोहिणीं, जय-
पालवीजानि प्रत्येकमर्धतोलकानि सम्यग्विचूर्ण्यं शु-
द्रकार्पुष्यपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मापप्रमाणां

वटीं कृत्वाऽऽर्द्रकरसेन दद्यात् । शीतप्रधानज्वरा न-
श्यन्ति । एतस्याऽनुपानचूर्णम्—तालीसनागरपिप्प-
लोमरित्वाकारकरमान् समभागान् विचूर्ण्यंऽस्मात्पा-
दतोलकेन मधुमिश्रितेन चूर्णेन सह दिनत्रयमेवनात्
उग्रज्वरास्सन्निपाताद्यो निवर्तन्ते । दोषप्राबल्ये सति
वश्यमाणं घोरभद्राञ्जनेमपि नेत्रयोर्योग्यम् । पित्तप्रह-
तीनां शुष्कतिग्निदोषत्रोपयोगः कार्यः । (व्यास०)

३७ ज्वरगजाङ्गुशरसः

शुद्धः पारदः, अमलसारगन्धकः, विषं, ताम्र-
भस्म, द्विजीरकं, चित्रकत्वक्, पञ्चलवणानि, सद्यः
क्षारः, नरसारः, कान्तसिन्दूरम्, हरीतकी, आम-
लकी, विभीतकी, कटुरोहिणी, विडङ्गं, टङ्गणञ्चेतानि
समभागानि सम्यग्विचूर्ण्यं चीनपात्रे निक्षिप्य अम्ल-
दाडिमीफलरसेन भृङ्गराजरसेन चाऽऽल्लव्य दश-
दिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा पुनः खल्वे निक्षिप्याऽ-
म्लदाडिमीफलरसेन यामद्वयपर्यन्तं मर्दयित्वा शुष्कं
चूर्णं चीनपात्रेऽस्वरुद्धयं स्थापनीयम् । गुञ्जाद्वयमार्द्र-
करसेन सह सेवितं विपमशीतज्वरदोषाऽग्निमान्द्यस-
न्निपातादीनाशयति । घृतं, पुराणगुडः, नवनीतं,
आर्द्रकरसः, मधु, एतदनुपानैरष्टविधगुल्मरोगो
नश्यति । वातपदार्थानन्तरं पथ्यम् । तिग्निदोष-
घ्नमपानाद्यो वर्ज्याः । (अगस्त्य०)

३८ ज्वरफणिगरुडरसः

शुद्धपारदगन्धकविपाणि एकैकतोलकानि, हिङ्गुलं
४ तो., जयपालवीजानि ८ तो० गृहीत्यैकत्र सञ्चूर्ण्यं
धतूरमूलकायेन यामचतुष्टयं विमृद्य मरिचप्रमाणा
वटिकाः किरेत । मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽनुपानेन
वातपित्तज्वरः, मरिचचित्रकमूलविष्णुक्रान्ताभूमिम्ब-
काथेन सन्निपातदोषज्वरः, भृङ्गराजमूलविष्मीमूल-
सफण्टकरुन्धुमूलमिरुकटुककाथेन विपपाण्डुश्वयथु-
ज्वरा नश्यन्ति । स्तन्येन मधुना वा सद्घृष्य सन्नि-
पातज्वरेषु नेत्राञ्जने देयम् । पथ्यं रोगोचितम् । अल्प-
मात्रया धालानामप्युपयोज्यम् । (व्यास०)

टि०—कृष्णभूपातीयं गरुडमधिकं दृश्यते । तत्रैव सर्वथा समभाग-
नया योग विधाय रसत्र निष्कारय भूतुरस्थाने जम्बीर त्रियोष्याऽऽऽ-
याञ्चेति नाम स्थापितम् । हरिभ्रायै प्रत्यर्द्धनं प्रथमम् ।

३९ ज्वराङ्गुशरैवरसः

विशुद्धपारदः, विषं, गन्धकञ्जेकपलं, जातीफल-
मर्धपलं, पिप्पली ६॥ पला, सर्वे चूर्णीकृत्य ताम्बूली-
स्वरसेनाऽऽर्द्रकस्वरसेन च प्रति यामद्वयं विमृद्य
गुञ्जाप्रतिमां वटीं कृत्वा मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसाऽऽनु-
पानेन प्रयोगे वातपित्तश्लेष्मज्वरा नश्यन्ति । यवा-
नीकलेन द्रव्येण वा शीतज्वरसञ्जातज्वरातिसाप

नियतन्ते । ज्वरसञ्जाताऽतिसारसङ्घट्टण्यादीनामनु-
पानविशेषः = अतिपिपा, मरिच, नागर, तालीसपत्रं,
पोस्तु चेति प्रतिसपादतोलक सङ्घृष्टुण २४ तोलरु-
जले मृन्मयपात्रे निष्काथ्य चतुर्भागाऽवशिष्टमवतार्य
मागद्वय प्रकल्पकभागमेकत्रटिकया सायमपर प्रा-
तश्च दद्यादेव त्रिचतुराणि दिनानि हृते पूर्वोक्त-
व्याधयो निवर्तन्ते । अम्लदाडिमौफलरसेन धमन-
हिके नश्यत । अश्वगन्धा, अनन्तमूल, हेमश्रीरी (पर-
द्वीचका) मूकम्भाण्ड, कुमारीकन्दश्चेति प्रत्येकमेक-
पलं चूर्णीकृत्य पादतोलकेन चूर्णेन सहैका मात्रा
सेविता चेदस्थिगतसोपद्रवो ज्वरो नश्यति । शीत-
पदार्थां वर्ज्या । (व्यास०)

४० ज्वराडुशरसः (महदादि) १

द्विपल महपापाण कारवेहृततण्डुलीयरूपत्रसेन
प्रति यामचतुष्टय मर्दयित्वा शरायसम्पुटित विधाय
घनतया सप्त मृत्तिका द्ररोत्पलकत्रयेण पुट दद्यात् ।
तत खल्वे निक्षिप्य त्रिकटुकषायेन यामचतुष्टय
विमृद्य मुद्रपरिमिता घटी कुर्यात् । मधुमिश्रित-
म्रष्टनीकरचूर्णे एका घटीं सयोज्य सेवनात्सर्वे ज्वरा-
स्तत्क्षण निवर्तन्ते । महाज्वरेषु त्रिरावृत्ता घटी योज-
नीया नाऽधिका । तित्तिडी वर्ज्या । क्षीरात्र गोधूम-
खण्डयूपश्चाऽनुकूल । अपि चाऽनतमूलकायेन
घातज्वर, नागरकायेन पित्तज्वर त्रिकटुकचूर्ण-
मिश्रिताऽऽद्रकरसेन श्लेष्मज्वर, धान्यककायेन ताप-
ज्वर, दध्ना सङ्घृष्टयतीसारो, भृङ्गराज (शुण्ठगल-
गरा) रसेन ज्वरसञ्जातसर्गाङ्गश्लादया नश्यति ।
नेत्राङ्गनमपि कर्तव्यम् । अतिसाराणा गिट्टिगेडुलुरस
(ऊपरं पलाण्डुसदृशरुन्दो यस्य पत्राणि तालमूला-
सदृशानि वृहति च भवन्ति इति केचिद्वदन्ति अन्ये-
स्तु शृङ्गाटकमाद्यु), अपङ्घाते लताकरञ्जपत्ररस,
रुश्रीसन्भागाय कामकस्त्रिका (मध्यक) पत्ररस,
सर्वसन्निपातेषु धन्तूरपत्ररस, अजीर्णस्थोष्णोदकम्,
अरीसा मूलरस, श्वयथुपाण्डुकामलासु म्रष्टाऽति-
पिपासाय, दुष्टसर्पादिदशनस्य धीजपूररस, वृश्चि-
कविपस्य गामयम्, निम्बयीजतैले, मयूरपिच्छमसम्
च । एवमनुपान यथाचित देयम् । सर्वविषाणामपि
यत्र क्षतं तत्र मयूरपिच्छमसम्ना सह निम्बयीजतैल-
मिश्रितेन क्षतस्थान लिम्पेत् । आद्रकरसेन नेत्रे अञ्ज-
यित्वा यत्रघस्तात्पदयेत्पातालपर्यन्तं इष्टि प्रसरति ।
पिशाचप्रस्ताना कषलतिलतैलेन मिथयित्वा नेत्रा-
क्षरं हृत चेद्भ्रतमेतपिशाचादय पलायन्ते । रसमूला-
शाब्द्याधेनर्वनीतेन सहाऽऽसने लेपनीयम् । वक्ष्या-
क्षीणा परिपकघटीयचूर्णेन क्रतुकाळे एकवारं

दद्यात् । एवमृतुत्रये । सर्पवृश्चिकान्मत्तशुनकविपादी
पूर्वोक्ततैलेन सह क्षतस्थाने नियोजनीयम् । इत्येव-
मेवाऽनुपानभेदेन सर्वत्रयाधिषु नियाजनीयम् । शिर-
शक्तिषुजा कार्या ॥ (अगस्त्य०)

४१ ज्वराडुशरसः (द्वितीय) २

शुद्धपारदगन्धरुद्रददङ्गणविपतालकत्रयपालत्रि-
कटुत्रिपलाश्चैतानि प्रत्येक सपादतालकानि गृहीत्वा
चूर्णीकृत्य भृङ्गराजसेन यामचतुष्टय मर्दयित्वा मरि-
चप्रमाणा मात्रा कुर्यात् । हृण्णतुलसीरसेन वालक-
ज्वराणा दात यम् । मरिचमूलेन घातश्ला शीत-
ज्वराश्च नश्यन्ति । चित्रकपिपलीमूलतितपगेल्भू-
निम्बविष्णुनान्ताऽनन्तमूलयष्टिमधुकाऽऽकारकरम-
त्रिकटुनिफलाऽमृतासञ्जरीफलतालीसपत्रोदारश्चा-
चन्दनाना कायेन पुराणघातपित्तश्लेष्मद्वन्धाऽऽदिका
जीर्णज्वरा नश्यन्ति । पाण्मासिकवयस्कमारभ्य नि
हायणत्रय पर्यन्त बालानामेकारभ्रौषध मुद्रप्रमाण
देयम् । तरणादीना चणकप्रमाणम् । अम्लरसा वर्ज्य
शातलघातपदार्थाश्च । अस्मिन्प्रौषधे रसगन्धकादयो
विधिना शाब्ध्या । प्रसृतस्त्रीणा ज्वरादी ल्यङ्गकरा-
थेनोपयोजनीयम् । पथ्य रोगोचितम् । (व्यास०)

४२ ज्वराडुशरसः (महदादि) ३

शुद्धगन्धरुपादनिमहपातपुष्पधन्तूरवीजमरि-
चानि प्रत्येकतोलकानि विचूर्ण्य हृण्णचक्षूरपत्र-
स्वरसेन यामचतुष्टय सम्यग्विमृद्य गुञ्जामात्रां घटा
हृत्याऽऽद्रंस्वरसेन सेविता चेद्विपदातरुप्रधा-
नज्वरा निवर्तन्ते । म्रष्टशरामिश्रितपुराणतण्डुला
उष्णादश्च पथ्यम् । सप्ताऽष्टयभाभ्य तरिणगालाना
सर्वपापाणगर्भितान्यौषधानि वर्ज्यानि । कदाचिम-
हायायुक्तिनदीपमहासक्षिपातकण्डगतस्फजातादि-
दापेरानान्ताश्चेत्ता तेव्यपि प्रयाज्यानि (व्यास०)

४३ ज्वराडुशरसः (चतुर्थ) ४

सम्यक् शुद्धमेकतोलक महपापाण पट्टनाले
गर्दनीक्षीरे चीनपात्रे मिथयित्वा द्विनोलकहिङ्गुले
प्राप्तो देय । हिङ्गुला घटा भरति । अय तण्डुत्रमात्रा
मरिचकायेन सह सेवितस्सप्राङ्गनाशयति ।
अम्लरसा वर्ज्य । आढकीयुव, मिण्डिका, गाधूम-
खण्डयूप, नुफक काकमाचा (कामाना) फल शिष्ट-
शिर्ष्या, क्षीरात्रश्च पथ्यम् । अथर्व मृन्ना = इति-
मात्राच्छ्रुते मृत्पात्रेऽर्द्धभाग सिकतया पूरयित्वा
सिक्तामध्ये काचपात्र निधाय तमध्ये दरदराकल
निक्षिप्य यागोक्तप्रकारेण प्राप्तं दद्यादित्युसंधयम् ।
(व्यास०)

४४ तालकमात्रा

शुद्धपारद्गन्धरुमनःशिलाविषाणि द्रवतालक-
हेममाक्षिकाप्रकृताप्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य
चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीररसाभ्यामेकैरुदिनं,
अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वप्रसाभ्याश्च द्विद्वियामं
विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरायधोरव्यरुद्धं कुक्कुटपुटो
देयः । एतद्दुष्कामितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्ररसेन सेवितं
सदुन्मादमद्मूर्च्छादीन्नाशयति । पथ्यं यथोचितम् ॥
(व्यास०)

४५ तालसिन्दूरम्

पनतालकं, रकमनःशिला, गौरीपाषाणं, मह्यं,
तुर्यं (मैलुत्तं), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः,
पारदः, सव्वीरं, रसकरूरं, अश्वदन्तपाषाणञ्चैतानि
खल्वे जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कां कृत्य
कण्टकिपलाशशिग्रुरक्त.रूपसाभ्यां पिप्पलाऽर्ककुन्द-
नन्दिवर्धनं (अनन्त म०) पुष्परसेः प्रत्येकं चतुर्विं-
शतितोलकैश्चैकत्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन
मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः । अन्ते शुष्कां
चक्रिकां विधाय शरायसम्पुटितं कृत्वा गजपुटो देयः ।
स्थाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा
पूर्ववत्पुटो देयः । पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदनेनेत-
दत्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति । एतन्मुद्रप्रमाणं मधु-
मिश्रितत्रिकटुकचूर्णं सह दत्तं चेद्दसाध्यशूलाः, एक-
विंशतिमेहास्तद्वन्ध्यश्व, अष्टादशकुष्ठानि, वातपवि-
त्रगण्डमालाराजव्रणगुल्मरोगादयः सङ्क्रामकव्या-
धिञ्चैते सर्वे निर्मूला भवन्ति । आढकी, घालवृन्ताकं,
शिमुद्राम्बी, कृशारा, गोक्षीरं, उष्णोदकञ्चेति सर्वं
पथ्यम् । अम्लधूमौ वज्र्या । (अगस्त्य०)

४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरमः, सव्वीरं, विषं,
रसकरूरं, गौरीपाषाणं, पारदः, जयपालवीजानि,
त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, रास्ना, भारङ्गी,
कटुरोहिणी, सैन्धवञ्चैतेषु शोधनीयानि शोधयित्वा
सर्वाणि सञ्चूर्ण्य भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृद्य गुञ्जा-
परिमितं बटो कृत्वा छायायां विशोष्य भूमिब्रूपार-
येण सर्वज्वरेषु देयम् । जम्बीररसेन विषोपविषाणि,
भृङ्गाद्भिः श्वयथुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिका-
दयः, आमलककाथेन सर्वाङ्गशूलाः, महिषोदन्ताऽ-
तिसाराः, किञ्चिद्भृङ्गजीरकेण गुल्माः, मधुना गर्भवा-
तादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलघमनाऽरो-
चकन्नभ्यादयो नश्यन्ति । वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम् ।
(व्यास०)

४७ त्रिनेत्रसिन्धकम्

शुद्धपारद्जयपालवीजानारिकेलरूपालभस्मप्राची-
नतालगुडानेकैकतोलकान् गृहीत्वा नारिकेलदुधेन
यामद्वयं विमृद्य सिन्धकरूपं विधाय रजतसम्पुटे
स्थापयेत् । एतत्कण्टकितजिह्विकायां किञ्चिन्मात्रं
घर्षणीयम् । कण्टकनीलिमादिद्रोषो नियतं । यमन-
हिक्के, ऊर्द्धश्वासः, इन्द्रियस्तन्घता, अङ्गशीथिल्यं,
चित्तविभ्रमः, सुखसन्निपातज्वरः (स्त्रीसङ्गोत्पन्नः,
यत्सकाशादुत्पन्नो ज्वरस्तत्रस्त्रीजघनप्रदेशाद्रक्तमानी-
याऽञ्जने कृते तन्कान्तिभयतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः)
एते नश्यन्ति । अथ सन्निपाते नश्यन्-भृङ्गन्याम्बी
(उस्तिवेरु), द्रोणपुष्पोमूलं (तुम्भोवेरु), पृति-
करञ्जपिण्याकञ्च समभागमञ्जनवद्विमृद्य नारिकेल-
पुटके संस्थाप्य नश्यं देयम् । सुखसन्निपातो नश्यति ।
मत्कुण्डलधिरमञ्जने देयम् । (व्यास०)

४८ धातुष्टद्विरसायनम्

भूमिकृष्णाम्बु (भूचक्ररुद्रम्), कृष्णमुशली, मु-
ञ्जातकं (सालिमं), त्वक्, लवङ्गं, पलावीजानि,
कोकिलाक्षः (नीरुग्भी), रजतभस्म, जातीफलं,
जातिपत्री, ईसवगोलः (ईसवगोल), सुवर्णभस्म
प्रत्येकं पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागं शर्करां
संयोज्य लेटापाकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं
सेवनीयम् । उपरिष्ठाद्दशतोलकं गोक्षीरं पेयम् ।
वृद्धोऽपि तरुणायते । (अगस्त्य०)

४९ धातुष्टद्विलेहम्

भूकृष्णाम्बुकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं,
कतरुवीजं, अश्वगन्धा, भद्रमुस्ता, तनूकोलं, त्वक्,
जीरकं, पलावीजं, मस्तगी, कासनीवीजं, नागकेशरं,
भारङ्गी, जातीफलं, जातीपथं, अतिविषा, मुञ्जातकं,
मुशलीकन्दं, मज्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा,
चव्यं, धृद्रहरीतकी, कुटजः, तकीकोलं (सलवमि-
यालु), कुमुदकन्दं, ज्योतिष्मतीवीजं, पद्मवीजं, मदन-
कामेश्वरपुष्पं, अहिफेनं, महाराष्ट्री (मराठी मोग्गा),
कपिरुद्रुमूलकमुनशरहृत्किरुण्णतुलसीवीजानि
केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चैत्यन्तिमत्रयं प्रत्येकमयं-
तोलके, अर्वाशोष्ठानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा
चूर्णयित्वा सितोपलातालीशर्करावातामानि प्रत्येकं
१२॥ पलिकानि, आशोष्टं, त्रियाल (सारपण्डु) ज्वेति
४-४ पलं प्राह्यम् । अथ लेटापाकविधिः—पणवति-
तोलके गोक्षीरं शर्कराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय
वातामादित्रयं घृतपक्वमहिफेनञ्च क्षिप्वा तन्तुलीं
विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्याणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं
गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेहं कृत्वा

प्राह्यम् । आमलकप्रमाणं रजतभस्मना धङ्गभस्मना वा मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । शतखोरमणको भवति । स्वप्रस्खलनं निर्मूलं जायते । रक्तवृद्धिधातुपुष्टिश्च भवति । (व्यास०)

५० नवपापाणद्रावकम्

मल्लसञ्जीवनीरौद्रोड्डिमृषिक (यलिका) तालको-
ल्लिपापाणानि, विडसैन्धवसामुद्रसौवर्चलौपरलव-
णानि, स्फटिका, टङ्गणं, मन.शिला चैतान्येकैरुपलि-
कानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि (चमारद्रुधी)
स्वरसेन मर्दयित्वा शुष्कं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वा-
करसेन कल्कं विधाय यामपञ्चरुपर्यन्तमेकजातीय-
काष्ठेन पाकं कृत्वा नलिकायन्त्रेण द्रवो प्राह्यः अत्र
(पापाणद्रुधे) सर्वे धातुपधातवो घट्टा भवन्ति ।
पञ्चमूलव्याधिपूषयोक्तव्यम् ॥ (अगस्त्य०)

टि०—एतन्निरिष्टपापाणपरिचयोऽगस्त्यवैचक्रदेव वक्तव्य । ईश-
रऽनुग्रहश्चेद्भारतीयरसनास्रत्वे विवेचिष्याम ।

५१ नवरत्नमिश्रिताऽथोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकट्टेः, पित्तलं,
नागः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिस्यं,
मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम्, नीलम्, गोमे-
दकम्, पुष्परगञ्जेति प्रत्येकं पादतोलकं खल्वे चूर्णा-
कृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा
शुष्कचक्रिका पक्वैरिकागते निधाय पञ्चमूद्रसैलित्वा
घराहपुटो देयः । एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूर-
मुत्पद्यते । शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम् ।
अनुक्ताऽज्ञातव्याधिन्वेतदुपयोजनीयम् । गुञ्जाद्वय-
परिमितस्य मधुना सह सेवनाद्गुल्मवायुकुष्ठदादयो

नश्यन्ति । गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नयनीतेन शरी-
रदाहः, जीरककायेनोरःपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन
घातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लघुनतैलेन
सङ्ग्रहणी, मरिचकायेन श्वासकासयुतो ज्वरः, नागर-
कायेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकायेन श्वासकासयुतः
क्षयरोगाः, अजाक्षीरेण हृच्छूलं, ग्राही (बहारी)
पत्रदाडिमौपुष्पस्वरसाभ्यां थालानामस्थिगतज्वराः,
तालगुडेन घनीभूताः शूलाः, कीटनिष्टीघन (सञ्जी-
विगृह्णु) चूर्णेन सर्वे मेहरोगाः, आहुली (तंगेडु)
मूलचूर्णेन बहुमूत्ररोगः, गोक्षीरेण पाणिपादशूलानि,
शर्करया मेहप्रन्थयः, लघुनतैलमिश्रितत्रिकटुत्रिकफला-
चूर्णेन मूत्रशुच्छ्रादयः, भृङ्गराजत्रिकटुचूर्णेन मधुना
सह सेवनात्कामलापाणद्रावकः, चन्दनकायेन सह
यातपित्तं, जातीफलचूर्णेन स्त्रीणां श्वेतकुसुमरोगाः,
चानुजातकचूर्णमिश्रितगोघृतेन सहाऽस्थिभेदकमेह-
ध्याधयः, स्तन्येन सह पण्णतनेत्ररोगाः, व्याघ्री-

वासाभुनिम्बशुद्धमुस्तककायेन चतुष्पष्टिर्जराः, अश्व-
गन्धाचीनहेमक्षीरोचिररुजीरकाणां चूर्णेन सह
मधुना सेवनात्पङ्गुवातः, शुद्धमहातकतैलेन सर्वाणि
कुष्ठानि, हैयङ्गवीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लघुनेन
सहाऽतिसारः, नागराऽऽमलकयोतिपत्तोयीजचूर्णेन
सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते । रोगपरिज्ञानपूर्वकं यथो-
चितं पथ्यं देयम् ॥ (अगस्त्य०)

५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः,
गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परगः, पारदः, वङ्गञ्जेति
समभागं गृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा
नवरत्नैः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन
चैकैकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्ध-
गन्धकं मेलयित्वा काचरूपिकायां निक्षिप्य गन्धक-
जारणाऽनन्तरं मुसवन्धनं कृत्वाऽष्टयामपर्यन्तं बालु-
कायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाह्मशीतलं निरीक्ष्य सुग्रहा-
प्यगणेशयोरञ्जनं कृत्वा कृपिकात्त औषधं प्राह्यम् ।
एतत्तण्डुलपरिमितं मधुना सह सेवनीयम् । अनेन
मूत्राऽवरोधाऽदमरीमूत्रद्वारदुर्गन्धमूत्रशुच्छ्रुद्धुमूत्रम-
धुमहेमहप्रन्थयो लिङ्गद्वारशूलो महाकुष्ठानि अशीति-
धातव्याधयो गान्धर्वीत्यं सर्वान्शूलान्श्वेते महाव्या-
धयो नश्यन्ति । देहं वज्रसदृशं भवति । एतस्मिन्न-
पथ्यं नास्ति । मांसरसाः, घृतपकमांसमिश्रितपदार्थाः,
दधिक्षीरघृतवातामाश्रोतादयो गुरुपदार्थाः सर्वेऽपि
सेवनीयाः । (अगस्त्य०)

५३ नवलोलसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्ग-
सीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि चूर्णितानि भृङ्गरा-
जरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिका विधाय शराय-
सम्पुटितं कृत्वा बराहपुटो देयः । स्वाह्मशीतं समुद्रस्य
पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः । एवं पञ्चपुटा
देयाः । विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । अर्धगुञ्जापरि-
मितं मधुना सह सेवनीयम् । एतेन कृष्णमेहाऽण्ड-
घातपीनसगुल्मशूलपक्षघातघृतिरूपाघातपाण्डुपाथ्यं-
शूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति । तत्तज्ज्वरकफायर्मधुना
सह सन्निपातादिषु द्रातव्यम् । काथद्रव्याणि-किरातः,
विष्णुकान्ता, मरिचं, आनारकरभः, ईश्वरी, पाठा,
शिप्रुमूलत्वक् १-२ पलिकानि गृहीत्वा चतुर्धभाग-
ऽवधिं धायं गृहीत्वा त्रितोलकधायंऽङ्गुञ्जापरि-
मितं सिन्दूरमधुना सह मेलयित्वा प्राह्यम् । (अगस्त्य०)

५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतैले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुल-
त्यकाये, पालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

४४ तालकमात्रा

शुद्धपारदगन्धकमनःशिलाविपाणि द्रवतालक-
हेममाक्षिकाप्रकताप्रभस्मानि समानि विचूर्ण्य
चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं,
अम्लदाडिमीफलचित्रकमूलत्वप्रसाभ्याञ्च द्विद्वियामं
विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शराययोरवरुद्ध्य कुम्कुटपुटो
देयः । एतद्दुष्कामितं मधुमिश्रिताऽऽर्द्रकरसेन सेवितं
सदुन्मादमदमूर्च्छादीनाशयति । पथ्यं यथोचितम् ॥
(व्यास०)

४५ तालसिन्दूरम्

पत्रतालकं, रक्तमनःशिला, गौरीपापाणं, महें,
तुर्यं (मैलतुत्तं), अमलसारगन्धकं, हिङ्गुलः,
पारदः, सव्वीरं, रसकर्पूरं, अश्वदन्तपापाणञ्चेतानि
सल्ये जम्बीररसेन दिनद्वयं मर्दयित्वा शुष्कांकृत्य
कण्टकिललाशशिष्टरक्तकार्पासपार्श्वपिपलाऽर्ककुन्द-
नन्दिबर्धनं (अनन्त म०) पुष्परसेः प्रत्येकं चतुर्विं-
शतितोलकैश्चेकत्रसम्मिलितैः स्तोकेन स्तोकेन रसेन
मर्दयित्वा सर्वोऽपि रसः शोषणीयः । अन्ते शुष्कां
चक्रिकां विधाय शरायसमुटितां कृत्वा गजपुटो देयः ।
स्वाङ्गशीतलं भृङ्गराजरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा
पूर्ववपुटो देयः । पुनर्जम्बीररसेन पूर्ववत्पुटदानेनैत-
दत्यन्तरक्तवर्णं सिन्दूरं भवति । एतन्मुद्गरप्राणं मधु-
मिश्रितत्रिकटुकचूर्णेन सह दत्तं चेदसाध्यशलाः, एक-
विंशतिमेहास्तङ्गन्धयश्च, अष्टादशकुष्ठानि, वातपथि-
व्रगण्डमालाराजव्रणगुल्मरोगादयः सङ्क्रामककथा-
धिश्चैते सर्वे निर्मूला भवन्ति । आढकी, बालचूर्णताकं,
शिथुशिम्वी, कृशारा, गोक्षीरं, उष्णोदकञ्चेति सर्वे
पथ्यम् । अम्लघ्नो मी घर्षी । (अगस्त्य०)

४६ त्रिकटुकगुटिका

गन्धकः, तालकं, आकारकरभः, सव्वीरं, विपं,
रसकर्पूरं, गौरीपापाणं, पारदः, जयपालवीजानि,
त्रिकटुकं, त्रिफला, पिप्पलीमूलं, राज्ञा, भारङ्गी,
कटुरोहिणी, सैन्धवश्चैतेषु शोषनीयानि शोधयित्वा
सर्वाणि सञ्चयं भृङ्गजलेन सप्तदिनानि विमृद्य गुञ्जा-
परिमितां वटो कृत्वा छायायां विशोषयेत् । पुनिस्वरुपा-
येण सर्वैश्वर्येण देयम् । जम्बीररसेन विपोषविपाणि,
भृङ्गाङ्गिः श्वयथुपाण्डुकामलावातपित्तमेहपिडिका-
दयः, आमलककाथेन सर्वाङ्गशलाः, महिषीदन्धाऽ-
तिसाराः, किञ्चिद्भृङ्गजरेकेण गुल्माः, मधुना गर्भवा-
तादयः, अम्लदाडिमीफलरसेन पित्तशूलवमनाऽरो-
चकन्नम्यादयो नश्यन्ति । वातपदार्थवर्ज्यं पथ्यम् ।
(व्यास०)

४७ त्रिनेत्रसिन्धकम्

शुद्धपारदजयपालवीजानारिकेलरुपातभस्मप्राची-
नतालगुडानेकैकतोलकाद्य गृहीत्वा नारिकेलद्रुधेन
यामद्वयं विमृद्य सिन्धवरूपं विधाय रजतसमुटो
स्थापयेत् । एतत्कण्टकितजिहिकायां किञ्चिन्मात्रं
घर्षणीयम् । कण्टकनीलिमादिद्रवो नियतते । यमन-
हिषे, ऊर्ध्वश्यासः, इन्द्रियस्तब्धता, अङ्गदौषिल्यं,
चित्तविभ्रमः, सुखसन्निपातज्वरः (खीसद्दोषतन्त्रः,
यत्सकाशादुत्पन्नो ज्वरस्तत्स्त्रीजघनप्रदेशाद्रक्तमार्गी-
याऽङ्गने कृते तच्चान्तिभवेतीति दक्षिणदेशप्रसिद्धिः)
एते नश्यन्ति । अथ सन्निपाते नस्यम्-शुद्धव्याघ्रो
(उस्तिवैरु), द्रोणपुष्पोमूलं (शुष्मवैरु), पति-
करञ्जविण्याकञ्च समभागमञ्जनवद्विमृद्य नारिकेल-
पुटके संस्थाप्य नस्यं देयम् । सुखसन्निपातो नश्यति ।
मत्कुण्डधिरमञ्जने देयम् । (व्यास०)

४८ धातुष्टिद्विरसायनम्

शुष्कभाण्डकन्दं (भूचक्रकन्दम्), कृष्णमुशली, सु-
जातकं (सालिमं), त्वक्, लवङ्गं, एलावीजानि,
कोकिलाक्षः (नीरुगुञ्जी), रजतमसम्, जातीफलं,
जातिपत्री, ईसवगोलः (ईसवगोल), सुवर्णभस्म
प्रत्येकं पादतोलकानि चूर्णयित्वा समभागं शर्करां
संयोज्य लेहापाकं विधाय प्रातः सायञ्च पादतोलकं
सेवनीयम् । उपरिष्ठादशतोलकं गोक्षीरं पेयम् ।
घृद्धोऽपि तरुणायते । (अगस्त्य०)

४९ धातुष्टिद्विलेहम्

शुष्कभाण्डकन्दं, पुष्करकन्दं, त्रिकटुकं, यष्टिमधुकं,
कतरुवीजं, अश्वगन्धा, भद्रमुस्ता, तदकूलं, त्वक्,
जीरकं, एलावीजं, मस्तगी, कासनीवीजं, नागकेशरं,
भारङ्गी, जातीफलं, जातीपथं, अतिविपा, सुजातकं,
मुशलीकन्दं, मञ्जिष्ठा, उशीरमूलं, देवदारु, शतपुष्पा,
चर्व्यं, शुद्धहरीतकी, कुटजः, तबकोलः (सलयमि-
यालु), कुमुदकन्दं, ज्योतिष्मतीवीजं, पद्मवीजं, मदन-
कामेश्वरपुष्पं, अहिफेनं, महाराष्ट्री (मराठी मोग्गा),
फिक्कुरुमुल्लरुल्लगुनशरहञ्चिकारुणुल्लसीवीजानि
केशरं, चन्द्रसारः, रोचना चैत्यन्तमत्रयं प्रत्येकमर्ध-
तोलकं, अवशिष्टानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि गृहीत्वा
चूर्णांकृत्य सितोपलातालीशर्करावातामानि प्रत्येकं
१२॥ पलिकानि, आक्षोदं, त्रियाल (सारपण्डु) ज्वेति
४-४ पलं प्राह्यम् । अथ लेहापाकविधिः—पणवति-
तोलकं गोक्षीरं शर्कराद्वयस्य चूर्णञ्च भाण्डे निधाय
घातामादिष्यं घृतपक्वमहिफेनञ्च क्षिप्वा तन्तुलीं
विधाय पूर्वोक्तसर्वद्रव्याणां चूर्णं मेलयित्वा १५ पलं
गोघृतं, २४ तोलकं मधु च निक्षिप्य लेहं कृत्वा

प्राह्यम् । आमलकप्रमाणं रजतभस्मना वङ्गभस्मना वा मेलयित्वा प्रत्यहं द्विवारं मण्डलपर्यन्तं सेयनीयम् । शनखीरमणको भवति । स्वभस्मरत्नं निर्मूलं जायते । रक्तवृद्धिधातुपुष्टिश्च भवति । (व्यास०)

५० नवपापाणद्रावकम्

महसञ्जीवरीदीर्घादिभूमिक (यलिका) तालको-
ह्लिपापाणानि, विडसन्धवसामुद्रसौवर्चलीपरलव-
णानि, स्फटिका, टड्डुणं, मनःदाला चैतान्यैकेकपलि-
कानि खल्वे चूर्णयित्वा उत्तमारणि (चमारदधी)
स्वरसेन मर्दयित्वा गुल्फं चूर्णं भाण्डे निक्षिप्य पूर्वा-
करसेन कलकं विधाय यामपञ्चरूपपर्यन्तमेकजातीय-
काष्टेन पाकं कृत्वा नलिकापत्रेण द्रव्यो द्राह्यः अत्र
(पापाणद्रव्यं) सर्वे धातुपधातवो यद्वा भवन्ति ।
यद्मूलव्याधिप्रपयोक्तव्यम् ॥ (अगस्त्य०)

दि०—प्राग्दिग्दशापाणपरिचयोऽगस्त्यवैषकोदेव वर्तव्यः । ईश-
राऽमुद्रमहेश्वरतीपरासाधनध्वे विनेचविष्याम् ।

५१ नवरत्नमिश्रिताऽयोलोहसिन्दूरम्

अयः, ताम्रं, तीक्ष्णं, कांस्यं, लोहकिट्टं, पित्तलं,
नागः, वङ्गं, कृष्णसीसकं, रजतं, सुवर्णं, माणिक्यं,
मुक्ता, विद्रुमं, मरकतं, वज्रं, वैदूर्यम्, नीलम्, गोमे-
दकम्, पुष्परामश्चेति प्रत्येकं पादतोलकं खल्वे चूर्णा-
कृत्य पीतपुष्पभृङ्गराजरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा
शुष्कचक्रिकां पक्वैकिकार्गेतं निधाय पञ्चमृदुलैलित्वा
घराहपुटो देयः । एवं पञ्चपुटेषु विद्रुमवर्णं सिन्दूर-
मुत्पद्यते । शिवशक्तिपूजां विधाय निष्कासनीयम् ।
अनुक्ताऽज्ञातव्याधिभेददुपयोजनीयम् । गुआद्वय-
परिमितस्य मधुना सह सेयनाद्भुस्तवायुकुष्ठादयो
नश्यन्ति । गोघृतेनाऽस्थिगतज्वराः, नवनीतेन शरी-
रदाहः, जीरककायेनोऽपित्तरोगाः, आर्द्रकरसेन
पातपित्तज्वराः, स्तन्येन सन्निपाताः, लग्ननतलेन
सङ्गहणी, मरिचकायेन भ्वासकासयुतो ज्वरः, नागर-
कायेनाऽजीर्णज्वराः, व्याघ्रीकायेन भ्वासकासयुतः
क्षयरोगः, अजाशरीरेण हृद्यूलं, प्राही (बहारी)
पत्रदाडिमीपुष्पस्वरसाभ्यां घालानामस्थिगतज्वराः,
तालगुडेन घनोश्मताः शूलाः, कौटनिष्ठीवन (सञ्जी-
विरुद्रु) शूर्णेन सर्वे महारोगाः, आहुली (तंगडु)
मूलशूर्णेन घट्टमृत्ररोगः, गोशरीरेण पाणिपादशूलानि,
शकर्या मेहप्रन्धयः, लग्ननतलेमिधितत्रिकट्टिफला-
शूर्णेन मृत्रहृत्प्रादयः, भृङ्गराजप्रिकट्टकशूर्णेन मधुना
सह सेयनात्कामलापाण्ड्यादयः, चन्दनकायेन सह
पातपित्तं, जातीफलशूर्णेन र्मणीणां भ्वेतदुसुमरोगाः,
चातुर्जातकशूर्णेमिधिततगोघृतेन सहाऽस्थिभेदकमेह-
प्याघयः, स्तन्येन सह धणत्रितितेनरोगाः, व्याघ्री-

वासाभूमिभ्यश्चुद्रमुस्तककायेन चतुष्पष्टिज्वराः, अश्व-
गन्धाचीनहेमशीरीचित्रकजीरकाणां शूर्णेन सह
मधुना सेयनात्पङ्क्यातः, शुद्धमहातकतलेन सर्वाणि
कुष्ठानि, हैयङ्गचीनेन मस्तकशूलं पीनसश्च, लग्नुनेन
सहाऽतिसाराः, नागराऽऽमलकज्योतिष्मतीवीजशूर्णेन
सर्वेऽतिसारा निवर्तन्ते । रोगपरिधानपूर्वकं यथो-
चितं पथ्यं देयम् ॥ (अगस्त्य०)

५२ नवरत्नसिन्दूरम्

वज्रं, मुक्ता, वैदूर्यम्, विद्रुमः, मरकतं, नीलमणिः,
गोमेदकं, रक्तवर्णरत्नानि, पुष्परामः, पारदः, वङ्गश्चेति
समभागं शृहीत्वा पूर्वं वङ्गेन सह पारदं मेलयित्वा
नवरत्नैः सह सञ्चूर्ण्य जम्बीररसेन भृङ्गराजरसेन
चैकेकयामं मर्दयित्वा शुष्कचूर्णं विधाय सर्वसमं शुद्ध-
गन्धकं मेलयित्वा काचकूपिकायां निक्षिप्य गन्धक-
जातरणाऽनन्तरं मुसयन्धनं कृत्वाऽष्टयामपर्यन्तं घालु-
कायद्ये पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं निरीक्ष्य सुसह-
प्यगणेशयोरर्चनं कृत्वा वृषिकात औषधं प्राप्यम् ।
पतत्तण्डुलपरिमितं मधुना सह सेयनीयम् । अनेन
मूत्राऽवरोधाऽऽमरीषद्वारादुर्गन्धमृषकृच्छ्रमृषम-
धुमेहमेहप्रन्धयो लिङ्गद्वाराशूलो महाकुष्ठानि अशीति-
धातुन्याधयो गात्रदीर्घव्यं सर्वाङ्गशूलाश्चेते महान्या-
धयो नश्यन्ति । देहं वज्रसदृशं भवति । एतस्मिन्न-
पथ्यं नास्ति । मांसरसाः, घृतपफमांसमिश्रितपदार्थाः,
दधिशीरघृतवातामाश्रोत्रादयो शुष्कपदार्थाः सर्वेऽपि
सेयनीयाः । (अगस्त्य०)

५३ नवलोलसिन्दूरम्

शुद्धसुवर्णरजताऽयस्ताम्रकांस्यपित्तलनागवङ्ग-
सीसकानि प्रत्येकमेकतोलकानि शूर्णितानि भृङ्गरा-
जरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय श्राय-
सम्पुटितं कृत्वा घराहपुटो देयः । स्वाङ्गशीतं ममूद्वत्य
पुनर्भृङ्गराजरसेन मर्दयित्वा पुटो देयः । एवं पञ्चपुटो
देयाः । विद्रुमवर्णं सिन्दूरमुत्पद्यते । अर्धगुञ्जापरि-
मितं मधुना सह सेयनीयम् । एतेन कृष्णमेहाऽण्ड-
घातपीनसगुल्मशूलपक्षयातमृत्तिकाघातपाण्डुपार्श्व-
शूलप्रभृतयो रोगा नश्यन्ति । तत्तज्ज्वरकायमेधुना
सह सन्निपातादिषु दातव्यम् । कायद्रव्याणि—किरातः,
विष्णुक्रान्ता, मरिचं, आकागकरभः, ईश्वरी, पाठा,
दिग्मूलवृक्ष १-१ पलिकानि शृहीत्वा चतुर्थभागा-
ऽवधिं वाप्यं शृहीत्वा धितोलककायेऽङ्गगुञ्जापरि-
मितं सिन्दूरं मधुना सह मेलयित्वा प्राप्यम् । (अगस्त्य०)

५४ नागसिन्दूरम्

जम्बीररसे, तिलतले, गोमयरसे, गोमूत्रे, कुल्-
त्यकाये, घालमूत्रे च प्रत्येकस्मिन् सप्तवारं शोधितं

चतुःपलं कृष्णनागं मुन्मयपात्रे गालयित्वैकतोलकं
पार्वं मिश्रयित्वा पञ्चाङ्गाऽऽहुलीचूर्णं (तङ्गुचेद्)
यामचतुष्टयपर्यन्तं किञ्चित्किञ्चित्स्वाऽऽहुलीमूल-
दण्डेन घर्षणीयम् । एतस्तिन्दूरं मधुना, घृतेन, नव-
नीतेन वा सेवनीयम् । एतेन शुष्कमेहरसप्रदरकुतु-
मादिरोगमूत्रकृच्छ्रमूत्रमूत्राऽवरोधशर्करामेहाऽ-
श्वरीप्रभृतयः सङ्कीर्णरोगा निवर्तन्ते । (व्यास०)

५५ नारिकेलतैलम्

पकनारिकेलफलानि द्वादश, हेमक्षीरो ८ पला,
हरीतकी चीनमूलिका (रेवन्चीनी) नागराणि
त्रिजिपलानि, शुद्धं जयपालवीजं द्वितोलकं, शुद्धमू-
क्षारशृङ्गाऽऽहुलीपत्र (तङ्गुडाकु) रसकरूराणि प्रत्ये-
कमेकतोलकानि गृहीत्वा सर्वं सङ्घुञ्च १२० तोल-
कजले निक्षिप्यैकरानिपर्युषितं विधाय त्रिरावृत्तफे-
नोद्गमपर्यन्तं पारं कृत्वा स्वाद्ग्राहते जाते जलोप-
योगतं तैलं सावधानतया गृहीत्वा स्थापनीयम् ।
नारिकेलजलानुपापानेनाम्लमण्डेन वा विन्दुद्वयं घ्रयं
वा दातव्यम् । सुखेन विरेचनं भवति । यदि विरे-
चनाऽऽधिस्यं स्यादतिविषामरमस्युतं जलं देयम् ।
क्षीरान्नमादकीखण्डयुपात्रञ्च पथ्यम् । एतेनोपदेश-
सन्धिगतप्रमेहश्वयथुपार्श्वपृष्ठवाता हृच्छ्रुलाऽऽहिरू-
ज्जराद्यो नश्यन्ति । एतत्तैलमेकस्मिन्मासे सप्तदिन-
पर्यन्तं पेयम् । एवं रीत्या मासत्रये जाते पूर्वाक्रोराग
नश्यति । अपि च वन्ध्यास्त्रीणां, अश्वानां, वृषभा-
दीनाञ्च दातव्यम् । पशूनां दानप्रकारः—एकतोलकं
वराङ्गं जलेन सम्मर्द्य तन्मध्ये १० विन्दुपर्यन्तं तैलं
मेलयित्वा बंशनालमुत्तापययितव्यम् । सर्वं पशु-
व्याघयो निवर्तन्ते । (अगस्त्य०)

५६ पञ्चभोहसिन्दूरम्

शुद्धस्वर्णं, रजतं, अयश्चूर्णं, ताम्रं, वङ्गं, पञ्चपा-
पाणानि (दोडि—कार्मुगिल—पगडपुट्ट—शृङ्गि—तिमिर-
कुलपापाणानि) समभागानि खरोले निक्षिप्योपरक्षारं
नरसारञ्च ५-५ पलं गृहीत्वाैतद्वयमपि विचूर्ण्य चीन-
पात्रे निक्षिप्य रात्रौ जयनीर गृहीत्वाऽनेन जयनीरेण
मर्दयित्वा चक्रिकां विधाय शरावसम्पुटीकृत्य कुकुट-
पुट्टं देयम् । एवं रीत्या चत्वारि पुट्टानि देयानि । अ-
र्थाऽनुपातचूर्णम्—लघुपिप्पली, मधुयष्टिः, जीरकं,
चित्रकं, मरिचं, यवानि, कृष्णतिलाः, अश्वगन्धा
चेतानि प्रत्येकपलानि चूर्णीकृत्य चखशोधितं
विधाय समभागं चीनेहमेक्षीरं मिश्रयित्वा भृङ्ग-
राजकामरुस्वरीपरन्तो गोक्षीरं प्रत्येकं २४ तोलकं
कटादि निक्षिप्य पाकसमये पूर्वाकं चूर्णं क्षित्वाऽव-
लोक्य गोघृतं २४ तोलकं, मधु च १२ तोलकं संयोज्य

लेहापाको प्रातः । अर्घतोलकरूपरिमिते लेहो गुञ्जकं
पञ्चलोहसिन्दूरं मेलयित्वा मण्डलान्तं सेवनीयम् ।
अनेनाऽष्टादशदीर्घशूलानि, कुष्ठमेहविचर्चिकादयो
निर्मूला भवन्ति । जम्बीरशुतं, कपित्थफललेहं, शर-
हृक्षिका, गोधूमः, शर्करा, गोघृतं, कोपातकी, चुञ्चु
(सर्पशाकं), वस्तमासञ्ज्ञेतानि पथ्यानि । (अगस्त्य०)

५७ परङ्गयादिलेहम् (महत्)

गोदुग्धशुद्धा चीनेहमेक्षीरी ५ पला, नारिकेलज-
लेन भस्मीकृतं कलनारमसम् २ पलं, आरण्यमहि-
पीक्षीरं १ पलं, पलायोजं १ पलं, घृतस्रष्टं जातीफलं
३ पलं, सितोपला ३ पला, शतायरीरसः ५० तो-
लकः, कैशरं १ । तोलकं नीत्वा चूर्णीकृत्य सितोपला-
यास्तनुतुलं विधाय गोघृतं ४ पलं चिन्त्यस्य सर्वमपि
चूर्णं मेलयित्वा लेहापाकेनाऽवचतार्यं प्रातः सायञ्चेति
द्विवारं प्रत्यहमर्घतोलकं सेवनीयम् । अनेन सर्वं मेह-
धिकारा नश्यन्ति, धातुपुष्टिर्भवति रक्तवृद्धिश्च । पथ्यं
रोगाऽनुरूपम् । (अगस्त्य०)

टि०—अत्र परङ्गीति शब्दोऽप्यकोऽरण्य वैचिन्त्यामगौ परङ्गपा-
दिरसायने बुद्धदारी शक्ति मला, विशलक बुद्धाविति काव्यद्रव्ये
स्पष्टतया कथितम्, भक्षेद्रव्येषु तु परङ्गघट्टेति यथाऽखिलमेकोद्गतम् ।
आधुनिकास्त्वाभ्यादिदेशेषास्तत्स्थाने चीनेहमेक्षीरं (रेवन्चीनी)
नियुज्यन्ति, परङ्गीस्थाने फल्गुचक्रेति शब्दं भ्रष्टिष्यवन्ति, परङ्गी श-
ब्दस्य च गोण्डेषु स्मृतिं मन्यन्ते । सर्वमप्येतदज्ञानविलम्बितम्, न ह्यन-
स्यादिमर्घसमये फल्गुवादियत्पानां सद्भाव किञ्च देवशीर्षाधीन-
देशादारभ्यदेशादेवाऽनुनाऽप्यागमनमस्ति । अतएव रेवन्चीनी किञ्चा
रेवन्दत्तानीति दिविभनामैव तत्रमिदि । कोऽप्यभोपि रेवन्चोपि
तोपीवेति नाम्ना वृष्टि न प्रभवति, परङ्गीति योरोपीयदेशोद्भवा-
नामेवाऽनुनाऽप्यपठितजनानामकरणं कुर्वन्ति । चीनाभिजनानामार-
भ्याणाञ्च तत्तद्देशगमनेनाऽऽवाल्लेखेण व्यवहारोऽस्ति, अत्र परङ्गीचक्रेति
नाम्न प्रादुर्भागेऽज्ञानमूलक एवाऽस्तीति प्रतीयते । रेवन्चोपि विर्य-
तान्यहानि यस्या इति व्युत्पत्त्या परङ्गी इति, रक्षागणि अज्ञानि यस्या
इति व्युत्पत्तौ स्फुराद्गीति शब्द उपपद्यते । बुद्धारुहलायामेकद्वयमपि
नाम साधकतामावहति, एतौयमूलाया शायाना चातिप्रमदगशीरत्वा-
त्ततोऽपत्रो परङ्गी इति फल्गु इति वा सिद्धं भवति । अत एव वैचि-
न्त्यामगौकोणं बुद्धारुहलायचक्रैव स्वीकृताऽस्त्यत एव श्रुतव्यमपि
बुद्धदारीति स्पष्टमेवोक्तम् । बुद्धारुहलस्य केल्किद्रव्ये स्मृतिरिति तु
केषाञ्चिदज्ञानं कथन एषुपाति बुद्धदारीरचवत् चरान्तौ घृषसि-
द्धम्, केल्किद्रव्यस्य तु सर्वान्यप्यहान्यतिग्राहकाणि शीतलानि च,
रक्तप्रदासिताराऽऽर्गोऽरुपिषाद्यौ ग्राहत्वेन सर्वदेशीयनाङ्गनामपि
सम्बन्धापत्तिरिति । अतो बुद्धदारी केल्किद्रव्यनामदानं सर्वथाऽऽचितम् ।
अतोऽगस्त्ययमेवोप्य व्याप्तौकतौगेषु च यत्र यत्र चीनेहमेक्षीरीति नाम
दत्तमस्ति तत्र तत्र प्राय परङ्गीशब्दस्थानेऽर्वाचीनानेन स्थापितमस्तीति
शक्तव्यम् । तद्यमेन शुण्पासित्तु काकनालीवन्ध्यायेन समानयुगलन-
स्यतियोगाद्भवनाति विद्वद्भिर्ज्ञातव्यम् । अतो नीटशी कालपरिणतिरी
दशाऽऽनुवेदत्रचक्रद्वयस्याऽप्यज्ञानाहुनाप्राप्तं सभातस्तदुद्भापय सर्व-
शक्तिमान् परमेश्वर एवाऽप्यर्घनीय इति, ईदम्बिजुषश्च दक्षिणदेशेऽप्य-
ऽस्तीति तु स्वामनेनऽपि न प्रमिष्यति किन्तु सर्वदेशसाधारण्यं विदित्ति
निषण्डयायात्पचामिन्न निवन्धेऽस्माभिर्दिग्दर्शनं कृतमस्ति, तस्मिन्नेव

विशेषतया द्रष्टव्यम् । कदाचिद्देववर्णविशिष्टतयोक्ततायै परशब्दस्य काष्ठणिकार्यं मत्वा पराशीशब्दस्य चीनदेशीयमित्येव रुदिरस्तीति चेत्प विशेषप्रमाणाऽपेक्षाऽस्ति । अस्मन्मते तु वैद्यविन्तानणिकारस्य मतं योपक्रमेदेन वैद्यविन्तानणिकारसमसमपर्यन्तं पञ्जीशब्दो बुद्धाल्लतायामेव प्रतिष्ठित आसीदित्यनुमीयते । कालकमालसम्पत्तया लोपादिम-
शीयो केनचित्प्रतिष्ठापित इति प्रतिभातीत्यलमिति त्रोटोः ।

५८ पाण्डुकामलादिहरतैलम्

ब्रह्मद्राघकनिम्बकरसः (नारद्वन्धकायरसः) २४
तोलकः, जम्बीररसः १२ तोलकः, सेहुण्डश्रीरम्,
शिग्रुपत्रजलपिप्पली (बुकिना) हंसपाद्रीभृङ्गरा-
जानां स्वरसाः, परण्डतैलम्, कान्तभस्म, अयोभस्म
च प्रत्येकं द्विपलं गृहीत्वाऽऽदौ रसानु तैले निक्षिप्य
भस्मद्वयमपि जम्बीररसेनाऽऽलोड्य तैले मेलयित्वा
पिप्पल्येलावीजजातीफलमरिचानि प्रत्येकमर्धतोल-
कपरिमितानि चूर्णितानि निक्षिप्य पाकं कृत्वा
स्वाङ्गशीतं कृष्यां निघापयेत् । श्वयथुपाण्डुदिव्याधि-
प्रस्तानां यथोचितानुपानेन दातव्यम् । पथ्यं रोगानु-
रूपम् । चोप्यतिन्तिडयो जर्ष्ये । (अगस्त्य०)

५९ पिपप्ल्यादिरसायनम्

धुद्रपिप्पली २ पला, विडङ्गनागरे १-१ पले,
चव्यमरिचपिप्पलीमूलानि प्रत्येकं पादोनपलानि,
उशीरैलावीजमांसीजातीपञ्जीलघङ्गहरीतक्यामलक-
विभीतकजातीफलत्यचः प्रत्येकं पादोनद्वितोलिकाः,
भृङ्गराजमूलयुग्मं २७ तोलकं, कान्ताऽयःसिन्दूरे २-२
पले गृहीत्वा सर्वाणि चूर्णांकृत्य घर्षयुतं कृत्वाऽयो-
भस्म भृङ्गराजरसेनाऽऽञ्जनवद्विमृद्य चूर्णेन सह मेल-
यित्वा लोहपात्रे ४८ तोलकं मधु निक्षिप्य १६ पलां
शक्रेण मेलयित्वा पाकसमये पूर्वोक्तं चूर्णं प्रक्षिप्य
लेह्यपर्कं रसायनं प्राह्यम् । पतन्मृन्मयपात्रे स्थापनी-
यम् । आमलकप्रमाणमेकमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा
सेविते ऽरक्त्वाताऽग्निमान्द्यपाण्डुश्यासकासपित्तक्षय-
रोगादीन्घाशयति । पथ्यं रोगोचितम् ॥ (अगस्त्य०)

टि०—यत्सोक्तपिप्पल्यादिरसायने शान्ताऽयं सिन्दूरयोर्भागेऽस्ति,
चतुष्पलं वृषाऽपिचनया निक्षिप्तमस्ति । श्यासकासदादिषु विशेषतया
ऽऽयोभोगदात्राऽपि चतुष्पलवृत्तनिशेगेऽपिका शक्तिरपेक्षणीति प्रति-
भाति ।

६० पुनर्नवादितैलम्

श्वेतपुनर्नवाचिचकैरपण्डशिग्रुपृतीकशाखोटकाऽग्नि-
मन्य (तकाळी) निर्गुण्डमूलानि, त्रिफला, कृष्ण-
यालकं (कुम्भरेड) चैतानि प्रत्येकमेकशतपलिकानि
सहस्रं च त्राणचतुष्टयपरिमिते जले निक्षिप्य चतुर्भा-
गायशेषं विपाच्यकादकं गोश्रीरं, ८० तोलकं तिल-
तलञ्च मिधयित्वा विपचेत् । पाकसमये पिप्पली,
चित्रक, यवानी, यष्टिमधुकं, भृङ्गराजमूलं, सर्पदंष्ट्रा-

वीजानि, अश्वगन्धा, खादिरम्, अतिविद्या, नागरं,
सेन्धवं, लवङ्गं, एलावीजं, वङ्गकान्तभस्मनी, शुद्ध-
गन्धकं, मृगमदः, पुष्करमूलं चैतानि समभागानि
चूर्णांकृत्य तैलपत्रांशं मेलयित्वा पकं तैलं प्राह्यम् ।
अभ्यञ्जननस्याभ्यां चातपित्तपाण्डुश्वयधुनासामणक-
पालशोयाद्यो रोगा निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।
(अगस्त्य०)

६१ पुष्पमणिमात्ररसः

शलाकारसकपूरं, रससिन्दूरं, शुद्धदरुः, कान्त-
सिन्दूरञ्चैतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि, केशरम् २।
तोलकं, गोरोचनं १।।। तो०, चन्द्रसारः पट्टाणकाऽ-
धिकैकतोलकः, तक्रोलं पादोनतोलकं, बुष्टत्रिकटुका-
ऽऽकारकरभाः प्रत्यर्धतोलकाः, चित्रकमूलत्वगनन्त-
मूलश्वेतत्रिबृद्धिभुरकमुशालीयष्टिमधुकशिग्रुमूलत्यच
एतानि प्रत्येकं द्वितोलकानि गृहीत्वा पीतभृङ्गरसेन
चतुर्धामं विमृद्य चित्रकमरिचकण्टकपलाशमूलत्यचां
त्रिष्विपलिकानामष्टमाणाऽवशेषितेन फायेन यामत्रयं
मर्दयित्वाऽरिष्टरीजप्रमाणा वटीश्लायानुष्णाः कृत्वा
स्थापयेत् । शर्करया सह मेहज्वरादिव्येका वटी देया ।
त्रिकटुकचूर्णेनाऽशीतिवातश्याधिषु निषेध्या । एवमे-
कमण्डलमर्धमण्डलपर्यन्तं वा सेवनीयम् । (व्यास०)

६२ प्रभाकररसः

रामठपारदयवानीगन्धकटङ्कणतालकचिपत्रिकटु-
राजि काशिशालाकृष्णजीरकद्रुदहरीतक्य सर्वाणि सम-
भागानि, जयपालवीजानि सर्वसमानि गृहीत्वाऽऽदौ
जयपालं विमृद्य सर्वमपि पूर्वोक्तसम्भारं निक्षिप्य
यामत्रयमनारतं मर्दयित्वा चैतसम्पुटे संस्थापयेत् ।
अथवाऽऽद्रकसेन शुद्धामितां घटिकां निर्माय स्थाप-
येत् । शुद्धाप्रमाणं नागरकायेन सेवितं सज्ज्वराग्नादा-
यति । हरीतकीकायेन श्यासकासो, गोघृतेन रक्तमूल-
व्याधिः, गोश्रीरेण गुदाङ्कुरा नश्यन्ति । लग्ननेत्रं,
मधु, आर्द्रकरसः, एतदनुपानेन शुद्धाप्रमाणं सेवितं
सज्जलोदरमहोदरादीन्घाशयति । सर्पदेशादीनां सयं-
पप्रमाणं निम्बरीजतैलेनाऽञ्जने दद्यात् । यदि नेत्रयोः
शोथः स्यात्कन्याद्रवेण प्रक्षालनीयम् । अपि च दुर्मा-
सात्पादकघ्नोषु, राजघ्नोषु, सन्धिग्रन्थिषु, सिराम-
घ्नोषु चैतदौषधं जिह्वाजलेन घृष्ट्वा घ्नोपरि लिम्पे-
स्त्वर्थं घ्ना निरङ्कुरा भविष्यन्ति । (व्यास०)

६३ वद्धकान्तरजतम्

यक्षसमुद्रलयणं, कान्तं, पारदः, अमलमारगन्धकं,
मनःशिला, दरुदं, दाहभस्म चैतानि खरुचे मन्थयित्वा
चूर्ष्यं . . (गाडिदिगडपात्रु) रसेन यामत्रयं विमृद्य
संशोष्य चूर्णांकृत्य गङ्गाजलकृपिवायां निघायाऽष्ट-

यामं बालुकायां क्रमाग्निना पचेत् । स्वाङ्गशीतमौषधं
तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेत्त्रिपपाण्डुज्वरवातोदर-
गुल्मक्षयरोगादीञ्जयति । (व्यास०)

६४ वृद्धरसण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः,
सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, वंशरोचना चेति प्रत्येकं
सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि
चूर्णीकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं
गाढातपे निक्षिप्यैतत् कलामात्रं सेवनीयम् । अने-
नाऽजीर्णाऽतिसारचमनहिक्काविसृचिकोदरज्वलनाऽ-
रोचकदाहादयो नश्यन्ति । (व्यास०)

६५ वृद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमल-
सारगन्धकं १ पलं, रसरुर्परमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णी-
कृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय बालुका-
यन्त्रविधानेन सार्धैर्यामपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । स्वाङ्ग-
शीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटु रुचूर्णेन
वा देयम् । सद्योपज्वराः, श्वासकासादिसंयुक्तक्षयाश्च
नश्यन्ति । अम्लरसादिकं वर्ज्यम् ॥ (व्यास०)

६६ वृद्धदरदो रसरुर्परश्च (प्रथमः)

एकशकलामकं शुद्धं दरदं रसरुर्परश्च ८-८ पलं
शरावे निक्षिप्य श्वेतहिंसा (तेल्लावुषि) पत्र-
रसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं प्राप्तं दत्त्वा
आरनिकर्पूरं ५ पलं, तुरुफं (साम्राणी, लोवान)
५ पलं, एतद्वयमपि विमृद्य लोहकटाहे निक्षिप्य मन्दा-
ग्निना द्रवीकृत्य पूर्वोक्तं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक्
पाकः कर्तव्यः । खण्डद्वयलघ्नं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवा-
लवृद्धे यथोचितमुपयोजनीयम् । स्तन्येन, मधुना,
पिप्पलीमरिचयोः काथाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातरु-
फयातसम्बन्धिनस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति । अजीर्णशूल-
सन्निपाताः धनुर्द्वारा (कम्प) ऽन्त्रपक्षसन्निशिरोऽ-
र्दितडमरुकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च सोपद्रवा नश्यन्ति ।
क्षीरात्रं पथ्यम् । अम्लरसो वर्ज्यः । (व्यास०)

६७ वृद्धदरदः (द्वितीयः)

एकपलां मनःशिलां जम्बीररसेन विमृद्यैकपलि-
कस्य तुल्यशकलस्योपरि क्वचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य
हसन्तिकोपरि यथोचिताग्नी विन्यस्य तुल्यधूमनि-
र्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । एतद्वल्ले तुल्यभस्म चीन-
पात्रे पञ्चतोलकसेहण्डक्षरेण सह सङ्कल्य्य गाढा-
तपे निदध्यात् । एवं दिनत्रये कृते तुल्यभस्म सिन्धं
भवति । तत एकपलिकं हंसपाकदरदं खर्पेरे विन्यस्य
मन्दाग्निना पचन् पूर्वोक्ततुल्यसिन्धेन सावधानतया
पञ्चटिकापर्यन्तं किञ्चित्किञ्चिद्वा सं दद्यात् । क्षुद्रति-

न्दितीकाष्टौदीपवज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीक्षय
वद्धो भवति । सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम् । स्तन्य-
यानां भ्रष्टपरिपक्वसातला (सरसाणी) काण्डनिर्गु-
ण्डीवरुणमूलत्वग्गवानीकरुकृष्णतुलीस्वरसानां-
मन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम् । अनेन बालानां
सोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति । अजीर्णोन्मिद्यमान्यज्वर-
तिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति । रोगबला-
वलं विज्ञाय दिनत्रयं चतुष्टयं धोपयोज्यम् । अक्षार-
लवणं पथ्यं मानुर्देयम् । तरुणादीनामेतद्विगुणम् ।
पथ्यन्तु यथोचितम् ।

६८ वृद्धदरदः (तृतीयः)

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाका-
रसरुर्परं १ पलं, एतद्वयमपि विचूर्ण्य काचकूपिकामां
निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्वा बालुकायन्त्रे एक-
यामं पचेत् । स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना
तत्तद्रोगोचितकाथेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन्
सविकाराञ्ज्वरांश्च निरन्तति । (व्यास०)

६९ वृद्धदरदः (चतुर्थः)

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदण्डं मन्दाग्नी खर्पेरे
निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया
प्रासं दद्यात् । पुनश्च श्वेतहिंसाफल (उषिपेड्लु)
कुमारीजीवन्तिकास्वरसेः प्रत्येकं यामचतुष्टयं प्राप्तं
दत्त्वा स्वाङ्गशीतं वृद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्रो-
गोचितानुपानेन मधुना वा सेवितं सद्योपसर्गिकृष्या-
धीनामवातरकपित्तादींश्च नाशयति । पथ्यं रोगो-
चितम् । (व्यास०)

७० वृद्धमयः

वृद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजतं, पारदः
गन्धकश्चेतानि प्रत्येकपलानि, शुद्धतालकं मनः-
शिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽङ्गनवद्वि-
चूर्णं दिनद्वयं कन्यारसेन विमृद्य त्रिदिनं शोषयित्वा
काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधायऽष्टयामं बालु-
कायन्त्रे विपाच्य स्वाङ्गशीतां घनीभूतां गुट्टिकामर्ध-
गुञ्जागितां मधुना सह दद्यात् । अनेन सकलसन्नि-
पाता वातमेहादयश्च नश्यन्ति । (व्यास०)

७१ वृद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमागिन्धविट्टममल्लरजतगन्धकरस-
कर्पूरसुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं
विधाय समूलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा
विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्दमध्यखराग्निभि-
र्बालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्वा खल्वे निक्षिप्य
सुगमदः, गोरोचना, चन्द्रसारः, एताव्यैकतोलका-
न्यौषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा वटी हृत्वाऽनुपानविशेषै सकलरोगे-
षुपयोजनाया । अशातबद्धमूलरोगा सर्वे नश्यन्ति ।
(व्यास०)

७२ मूलमान्द्यहरतैलम्

धुद्रैरुण्डीजतैल ४० तोलक, कामकस्तूरिकापत्र-
रस (मररु) ४ पल, शिशुकरञ्जश्वेतपुनर्नवा-
पुरपरत्नप्राह्मीपत्ररस २-२ पल, औदुम्बरत्वक्कोम-
लवटप्ररोहस्वरस ४०-४० तोलक, एतान्सर्वानपि
रसान् तैले निक्षिप्य जातीफल, जातीपत्र, मायाफल,
फर्केटशुद्धी, कुष्ठ, आकारकरभ, शुद्धजयपालञ्जितानि
पादतालकपरिमितानि, लघुन पलाण्डुञ्जैकैकपल
मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकर्पूर, मृगमद,
गोरोचन, केसरञ्ज प्रतिपादतोलक विपके तैले
सयोज्य स्वाङ्गशीतलं ब्राह्म । विन्दुचतुष्टय पञ्चक
या रागवलानुसारेण चालना दातव्यम् । तन्मात्रे
अष्टतिन्तिडी, लवणमिथितोष्णीद्राकात्र पथ्यम् । एतेन
चालस्य अत्युग्रप्रहादिदोषा निवृत्ता भवन्ति ।
महादरपित्तश्लेष्मण्यपादिनिवृत्तिश्च भवति । (अगस्त्य०)

७३ भ्रूणतकलेहम्

गोमूत्रशुद्धानि भ्रूणतकानि १० पलानि, चीन-
हेमश्रीर्यश्वगन्धादारहरिद्रापिप्पलीपिप्पलामूलचि-
कमूलरसकृष्णजारकहरीतकीकृष्णानि १-१ पलानि,
शुष्कारिकेलमज्जा २ पला, निस्तुपास्तिला १८
तोलका, शुद्ध रसकर्पूरसपादद्वितोलक, तालगुड ५
पल गृहीत्वाऽऽदी भ्रूणतकानि नारिकेलेन सहोद-
रले लेह्यानु रूप विधेयम् । बदराफलप्रमाण मण्डल-
पर्यन्त प्रत्यह द्विकालं सेवनीयम् । एतेन कुष्ठशूलय
हृणप्रन्थिगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरोगा सर्वे
नश्यन्ति । तिन्तिडीरस, धूमपानं चातला मादक-
पदार्था स्त्रियश्च वर्जनीया । पथ्य रोगानुकूलम् ।
(अगस्त्य०)

७४ भ्रूणतकीवटी (ब्रह्मनीमल्लतकी)

शुद्धभ्रूणतकीजानि १० पलानि, चित्रकमूल-
त्वक्, चीनहेमश्रीरी, श्वेतहिंघ्रा (तेलुगुपि),
अश्वगन्धा, शरपुत्रमूल, घणत्वक्, दारहरिद्रा, गज-
पिप्पली, धुद्रपिप्पली, हरीतकी, घाबुची, कुष्ठञ्ज
१-१ पलं, शुष्कारिकेलरसञ्ज २ पलं, तालगुड ५
पल, कृष्णतिला ५पला, रसकर्पूरं दरदञ्ज प्रतिस-
पादतोलकं गृहीत्वा भ्रूणतकाना नारिकेलखण्डेन
कृष्णतिलैश्च सह कलक विधाय शेषद्रव्याणा चूर्णं
तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकर्पूरकज्जली मिश्रयित्वा
लोहमुरालेन सम्भक्त्तु सक्तुट्य सिक्थरूपतामापादे-
कमण्डलपर्यन्तमरिष्यात्रप्रमाण सेवनायम् । एतेन

कुष्ठानि, बह्णपादिसन्धिप्रन्थय शूलगुल्मसृत्तिकाया-
तसङ्कीर्णरागा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपा-
नस्त्रीसंसर्गमादकद्रव्योपसेवनानि दूरतस्त्याज्यानि ।
पथ्य रोगोचितम् (व्यास०)

७५ भूपतिगुटिका (प्रथमा)

शुद्धगन्धक २ पल, पारददरदरससिन्दूरसञ्जीरा-
ण्यैकैकपलानि चूर्णीकृत्य काचकृपिकाया निक्षिप्य
ब्रमाग्निना यामचतुष्टय पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतलं
प्राह्म । एतद्भूपतिगुटिकात् एकपलमात्र खल्ये
निक्षिप्य १॥ तोलक गारोचन केसरञ्ज नवाणक
मिश्रयित्वा स्तन्येन, ताम्बूलीदलेन कृष्णतुलसीपत्र-
रसेन च प्रत्येकयामं मर्दयित्वा गुञ्जाप्रमाणा वटीं
विधाय मधुना सह सेवनात्सन्निपातादयो रोगा
निवर्तन्ते । रोगोचितं पथ्यम् । (अगस्त्य०)

७६ भूपतिगुटिका (द्वितीया)

सुरर्णरजतयशदाऽयोमुक्तामाणिक्यभस्मानि शुद्ध-
गन्धकपारदमन शिलातालकमृदारद्वन्द्वविषाणिप्रत्ये
कतोलकानि प्रातरारभ्य सार्य पर्यन्त विचूर्ण्य
जम्बीररसेन यामचतुष्टय विमृद्य शुष्का चमिका
शरायसम्पुटिता हृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वित
स्तित्रयाप्तत पुटो देय । स्वाङ्गशीतं तत्समं
शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वय विमृद्याऽहुल-
माना वटीं हृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपा-
नेन तण्डुलप्रमाणमौषध सेवितं सत् सापटवत्रयाद्-
शसन्निपाताप्राशयति । मधुमिधिताऽऽर्द्रकरसेन
निर्जायाऽपि सजायो भवति । (व्यास०)

७७ मण्डूरवटकः

पादोनाऽष्टप्रत्ये गाम्भ्रे त्रिफलादारहरिद्रे ४-४
पले निक्षिप्य प्राचानलाहविट्ट ९० तोलक, यक्षरा-
चित्तमयधूर्णे ९० तालक, कान्तचूर्णं ४१ तालकं एत
त्रयमपि गाम्भ्रे निक्षिप्य शापणपर्यन्त पाक विधाय
विडङ्गनागरभृङ्गमूलचित्रकमूलत्वक्पिप्पल्येगरीज-
मरिचानां प्रत्येकपलानामष्टमाणाऽवशेषं षाधे हृत्वा
तेन दिनद्वय मर्दयित्वा पादतालिका वटा कुर्यात् ।
एतद्भूतत्रण सह सेवनीयाऽध्या चतुर्गुणितत्रणवृत्त-
गाम्भ्रे मरिचप्रक्षेपं विधाय तेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं
सेवनीय । आदर्शसण्डयुपात्र पथ्यम् । एतेन पाण्डु-
सयाङ्गसायगुल्मादरशूलद्वया निवर्तन्ते । अम्लरसा
धूमपानादिकञ्च त्याज्यमुष्णादक पथ्यम् (व्यास०)

७८ महामेहान्तकरसायनम्

शापितचानहमश्रीरा (परङ्गिचम) चूर्णं १५ पलं,
गोश्रीरुद्धाश्वगन्धाधुमिष्टम्पाण्डसारियाक यामूल-
चूर्णं ५-५ पल, पश्चिमभुक्भान्नातार्लीसि गरीजजाती-

यामं बालुकायां क्रमाग्निना पचेत् । स्वाङ्गशीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं प्रयुक्तं चेद्विपाण्डुज्वरवातोदर-
गुल्मक्षयरोगादीञ्जयति । (व्यास०)

६४ वद्धखण्डार्द्रकम्

आर्द्रकस्वरसः २४ तोलकः, शुद्धगन्धकद्रुतिः, सैन्धवं, अपामार्गक्षारः, यंशरोचना चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वा गन्धकद्रवेण सह क्षारत्रयमपि चूर्णाकृत्याऽऽर्द्रकस्वरसे मेलयित्वा दिनत्रयपर्यन्तं गाढातपे निक्षिप्यैतत् कलामानं सेवनीयम् । अने-
नाऽजीर्णाऽतिसारवमनहिक्काविसृचिकोदरज्वलनाऽ-
रोचकदाहादयो नश्यन्ति । (व्यास०)

६५ वद्धतालकम्

शुद्धतालकं २ पलं, मनःशिला १ पला, अमल-
सारगन्धकं १ पलं, रसकर्पूरमर्धपलं गृहीत्वा चूर्णा-
कृत्य काचकूप्यां निक्षिप्य मुखमुद्रां विधाय बालुका-
यन्त्रविधानेन सार्धैक्यामपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । स्वाङ्ग-
शीतमौषधं तण्डुलद्वयपरिमितं मधुना त्रिकटुकचूर्णेन
वा देयम् । सद्योपज्वराः, श्वासकासादिंसयुक्तक्षयाश्च
नश्यन्ति । अम्लरसादिकं वर्ज्यम् ॥ (व्यास०)

६६ वद्धदरदो रसकर्पूरश्च (प्रथमः)

एकशकलात्मकं शुद्धं दरदं रसकर्पूरश्च ८-८ पलं
शरावे निक्षिप्य श्वेतहिल्ला (तेल्लानुपि) पत्र-
रसेन, लशुनद्रवेण च प्रति चतुर्यामं प्राप्तं दत्त्वा
आरनिकर्पूरं ५ पलं, तुरुष्कं (साम्बाणी, लोबान)
५ पलं, एतद्रयमपि विमृष्टलोहकटहे निक्षिप्य मन्दा-
ग्निना द्रवीकृत्य पूर्वाकं द्वयमपि मध्ये निक्षिप्य सम्यक्
पाकः कर्तव्यः । खण्डद्वयलज्जं किट्टं दूरीकृत्याऽऽवा-
लवृद्धं यथोचितमुपयोजनीयम् । स्तन्येन, मधुना,
पिप्पलीमरिचयोः क्वाथाभ्यां वा सेवनेन गर्भवातक-
फवातसम्बन्धिनस्सर्वे ज्वरा नश्यन्ति । अजीर्णशु-
सन्निपाता, धनुर्घोरा (कम्प)ऽन्त्रपक्षसन्निधिशरोऽ-
र्दितडमरकसर्वाङ्गकण्ठवाताश्च स्रोपद्रवा नश्यन्ति ।
क्षीरान्नं पथ्यम् । अम्लरसो वर्ज्यः । (व्यास०)

६७ वद्धदरदः (द्वितीय)

एकपलां मन शिलां जम्बीररसेन विमृष्टकपलि-
कस्य तुल्यशकलस्योपरि कवचं दत्त्वा सम्यग्विशोष्य
हसन्तिकोपरि यथोचितान्नो विन्यस्य तुल्यधूमनि-
र्गमनपर्यन्तं पाकं कुर्यात् । एतद्वद्वले तुल्यभस्म चीन-
पात्रे पञ्चतोलकसेहण्डुपक्षीरेण सह सङ्कल्प्य गाढा-
तपे निदध्यात् । एवं दिनत्रये कृते तुल्यभस्म विन्यं
भवति । तत एकपलिकं हंसपाकद्रुदं खपरे विन्यस्य
मन्दाग्निना पचन् पूर्वाकृत्यसिषयेन सावधानतया
पञ्चदशिकापर्यन्तं रिद्धिकिञ्चिद्भासं दद्यात् । शुद्धति-

न्तिडीकाष्टैर्दीपयज्ज्वालां दद्यात् अनेन दरदो घनीभूय
वद्धो भवति । सकलज्वरवायुषु प्रयोज्यम् । स्तनन्ध-
यानां भ्रष्टपरिपक्वसातला (खरसाणी) काण्डनिर्गु-
ण्डीवरुणमूलत्वग्घनीकरककृष्णतुलसीस्वरसाना-
मन्यतमेनाऽर्द्धतण्डुलपरिमाणं देयम् । अनेन बालानां
स्रोपद्रवज्वरशान्तिर्भवति । अजीर्णन्द्रियमान्यज्वरा-
तिसारश्वासकाससन्निपाताश्च नश्यन्ति । रोगबला-
बलं विशाय दिनत्रयं चतुष्टयं धोपयोज्यम् । अक्षार-
लवणं पथ्यं मातुर्देयम् । तरणादीनामेतद्दिगुणम् ।
पथ्यन्तु यथोचितम् ।

६८ वद्धदरदः (तृतीयः)

शुद्धदरदः २ पलः, गन्धकः १ पलः, शलाका-
रसकर्पूरं १ पलं, एतत्रयमपि विचूर्ण्य काचकूप्यायां
निक्षिप्य पूर्ववन्मुद्रणादिकं कृत्या बालुकायन्त्रे एक-
यामं पचेत् । स्वाङ्गशीतमर्द्धगुञ्जापरिमितं मधुना
तत्तद्रोगोचितकायेन वा सेवितं सर्वान्वातव्याधीन्
सविकाराञ्ज्वराश्च निरुन्तति । (व्यास०)

६९ वद्धदरदः (चतुर्थः)

पञ्चदशतोलकपरिमितं दरदखण्डं मन्दाग्नी खपरे
निक्षिप्य जम्बीररसस्य यामचतुष्टयं सावधानतया
प्रासं दद्यात् । पुनश्च श्वेतहिल्लाफल (उप्पिपंडुलु)
कुमारीजीवन्तिकास्वरसैः प्रत्येकं यामचतुष्टयं प्राप्तं
दत्त्वा स्वाङ्गशीतं वद्धदरदं तण्डुलपरिमाणं तत्तद्रो-
गोचितानुपानेन मधुना वा सेवितं सद्योपसर्गिकृत्या-
धीनामवातरक्तपित्तादींश्च नाशयति । पथ्यं रोगो-
चितम् । (व्यास०)

७० वद्धमयः

वद्धं समुद्रलवणं, शुद्धं लोहचूर्णं, तन्तुरजत, पारदं,
गन्धकश्चेतानि प्रत्येकपलाणि, शुद्धतालकं मन-
शिला चेति प्रत्येकं सपादतोलकं गृहीत्वाऽऽज्वनवद्वि-
चूर्णं दिनद्वयं कन्यारसेन विमृष्टं त्रिदिनं शोषयित्वा
काचकूप्यां निक्षिप्य मुष्टमुद्रां विधायऽष्टयामं बालु-
कायन्त्रे विपाच्य स्वाङ्गशीतां घनीभूतां मुष्टिकामर्ध-
गुञ्जागितां मधुना सह दद्यात् । अनेन सकलसन्नि-
पाता वानमेहादयश्च नश्यन्ति । (व्यास०)

७१ वद्धमहारसः

शुद्धपारददरदमाणित्रयविद्रुममहुरजतगन्धकरस-
कर्पूरमुक्तातालकसुवर्णानां समभागानां सूक्ष्मचूर्णं
विधाय समुलचित्रकस्वरसेन द्वियामं मर्दयित्वा
विशोष्य काचकूप्यां निक्षिप्य मन्मध्यखराग्निभि-
र्बालुकायन्त्रे यामचतुष्टयं पाकं कृत्या खल्वे निक्षिप्य
सुगमदः, गोरचना, चन्द्रसारः, एतान्यैकतोलका-
न्योषधे मेलयित्वा स्तन्येन चित्रमूलस्वरसेन च

मापप्रमाणा घटी वृत्त्याऽनुपानविशेषै सकलरागे-
धूपयोजनीया । अज्ञातमद्गुलरोगा सर्वे नश्यन्ति ।
(व्यास०)

७२ घालमान्द्यहरतैलम्

शुद्धैरण्डवीजतैल ४० तोलक, कामकस्तूरिकापन-
रस (मकरफ) ४ पल , शिपुमरुज्वेतपुनर्नया-
पुरुषरत्नप्राक्षीपप्ररस २-२ पल , औदुम्बरखजाम-
लजप्रसहस्वरस ४०-४० तोलक , एतान्सवानपि
रसान् तैले निक्षिप्य जातीफल, जातीपत्र, मायाफल,
फर्कटशुद्धी, कुष्ठ, आकारकर्म, शुद्धजयपालञ्चैतानि
पादतालरूपरिमितानि, लघुन पलाण्डुञ्चैरूपल
मेलयित्वा विपचेत् । तत्र सिद्ध रसकरुंर, मृगमद,
गारोचन, केसरञ्च प्रतिपादतोलक विपके तैले
सथाज्य स्वाद्गशातल घ्राह्यम् । विन्दुचतुष्य पञ्चक
वा रागयलानुसारेण घालाना दातयम् । तन्मात्रे
भ्रष्टतिन्तिडी, लघणमिश्रिताष्णादाकात्र पथ्यम् । एतेन
घालस्य अत्युग्रप्रहादिदोषा निवृत्ता भवन्ति ।
महादरपित्तश्लेष्मजरादिनिवृत्तिश्च भवति । अगस्त्य०

७३ भ्रष्टातकलेषम्

गाम्ग्रशुद्धानि भ्रष्टातकानि १० पलानि, चीन-
हेमक्षीर्यश्वगन्धादारुहरिद्रापिप्पलीपिप्पलीमूलचित्र-
कमूलरूपकृष्णजातरुहरीतकीकुष्ठानि १-१ पलानि,
गुप्फनारिकेलमजा २ पला, निस्तुपास्तिला १८
तालका , शुद्ध रसकरुंरसपादद्वितालक, तालगुड ५
पल शुद्धीत्याऽऽदी भ्रष्टातकानि नारिकलेन सहोद्-
रले लेहानुरूप विधेयम् । यदराफलप्रमाण मण्डल-
पर्यन्त प्रत्यह द्विकाले सेवनीयम् । अनेन कुष्ठयल्य-
ह्णमश्रियगुल्ममेहशूलश्वेतपीतरक्तादिरागा सर्वे
नश्यन्ति । तिन्तिडीरस , धूमपानं पातला मादक-
पदार्था स्त्रियश्च यर्जनीया । पथ्ये रागातुल्यम् ।
(अगस्त्य०)

७४ भ्रष्टातकीरटी (ब्रह्ममनीमश्रातरी)

शुद्धभ्रष्टातकीरतानि १० पलानि, चित्रकमूल-
त्यक्, चीनहेमक्षीरी, श्वेतहिंघ्रा (तेलगुपि) ,
अश्वगन्धा, शरपुत्रमूल, यशगन्धक दारुहरिद्रा, गज-
पिप्पली, क्षुद्रपिप्पला, हरीतकी पाचुचा, कुष्ठञ्च
१-१ पले, गुप्फनारिकेलखण्ड २ पले, तालगुड ५
पल , एण्णतिला ५ पला, रसकरुंरं वृद्धञ्च प्रतिस-
पादतालकं शुद्धीत्या भ्रष्टातकाना नारिकेलखण्डेन
एण्णतिलेञ्च सह बन्ध विधाय दोषप्रध्याणा गुणं
तालगुडञ्च मेलयित्वा रसकरुंरखण्डे । मिश्रयित्वा
लाहमुत्तलेन सम्यक् संतुट्य सिक्यरूपतामापाठ-
कमण्डलपर्यन्तमरिष्टेषान्प्रमाणं सेवनीयम् । एतेन

कुष्ठानि, चह्णणादिसन्धिप्रन्थय शूलगुल्मसूतिक्राया-
तसङ्काणरोगा निर्मूलतामापद्यन्ते । अम्लरसधूमपा-
नखीसंसर्गमादकृष्णपापसेयनानि दूरतस्त्याज्यानि ।
पथ्य रागोचितम् (व्यास०)

७५ भूपतिगुट्टिका (प्रथमा)

शुद्धगन्धकं २ पल, पारददरससिन्दूरसञ्चोरा-
ण्येनेरूपलानि चूर्णावृत्य काचरूपिनाया निक्षिप्य
प्रमाश्लिता यामचतुष्टय पाकं कुर्यात् । स्वाद्गशातलं
घ्राह्यम् । एतद्भूपतिगुट्टिकात् एकपलमात्र स्वये
निक्षिप्य १॥ तोलक गाराचन केशरञ्च नवाणक
मिश्रयित्वा स्तयेन, ताम्बूलीदलेन एण्णतुलसीपत्र-
रसेन च प्रयेकयामं मर्दयित्वा शुद्धाप्रमाणा घटीं
विधाय मधुना सह सेयनात्सन्निपातादया रागा
नियतन्ते । रागोचितं पथ्यम् । (अगस्त्य०)

७६ भूपतिगुट्टिका (द्वितीया)

सुर्यरजतयशदाऽयोमुक्तामाणिक्यमस्मानि, शुद्ध-
गंधकरुपाखमन शिलाताम्बूलात्पुट्टयिषानि प्रये-
कतालकानि प्रातरारभ्य सार्य पर्यन्त विमृष्य
जम्बीररसेन यामचतुष्टयं विमृष्य शुष्का चक्रिका
शरायसम्पुटिता वृत्वा सप्तमृत्तिका विधाय वित-
स्तिप्रयास्रत पुटा देय । स्वाद्गशाते तत्समे
शुद्धदरदं मेलयित्वा स्तन्येन दिनद्वय विमृष्याऽऽहुल-
माना घटीं वृत्वा छायाशुष्का विधाय स्तन्याऽनुपा-
नेन तण्डुलप्रमाणमौषध सेवितं सत् सापट्टयप्रयाद-
शसन्निपाताप्रादायति । मधुमिश्रिताऽऽद्रकरसेन
निर्जनाऽपि सजाया भवति । (व्यास०)

७७ मण्डूरवृकः

पादानाऽष्टप्रस्यं गाम्ग्रं त्रिफलादारुहरिटे ४-४
पले निक्षिप्य प्राचीनगह्वरिटे ९० ताण्य, परत्रता-
धितमयधुने ९० ताण्य, कातपूर्णं ४५ ताण्य एत
त्रयमपि गाम्ग्रं निक्षिप्य शाण्णपर्यन्त पाकं विधाय
पिडङ्गनागरभृङ्गमूत्रचित्रकमूल यक्षुपिण्येण्येण्यौज-
मरिचाना प्रयत्नपलानामष्टभागाऽयस्योर्षे वार्धे वृत्वा
तेन दिनद्वयं मर्दयित्वा पादताण्डिकां घटा कुर्यात् ।
एतद्घातत्रण सह सेयनीयाऽयथा चतुर्गुणितप्रमृण-
गाम्ग्रं मन्त्रिचप्रशोरे विधाय तेन प्रत्यह २० दिनपर्यन्तं
सेयनाय । आदर्शारण्डयूषात्रं पथ्यम् । एतेन पाण्डु-
सयाङ्गनायगुल्मादरुणालादया नियन्त । अम्लरसा
धूमपादादिकञ्च त्याज्यमुष्णादक पथ्यम् (व्यास०)

७८ महामेहान्तकरसायनम्

शापितचारुमर्यादां (परद्विजग) गुणं १० पलं,
गोपीरतुष्टाश्वगन्धाम्बुमिष्टुष्णाऽऽमारियाका याम्बू-
गुणं १-१ पल, यष्टिमधुक्भाङ्गमालतीर्येणपातवार्त

पनत्वकक्रोलाऽऽकारकरभराह्नालवङ्गजातीफलनाग
केशरजद्रामांसीपुष्करकन्दधीचन्दननालीकंदोशीरशु-
लत्रिफलागजपिप्पलीत्रिकटुकचव्यरूपित्यमूलानां व-
स्त्रशोधितं चूर्णं १-१ पलं, गोक्षीरेण कल्कीकृताः
खर्चुरीफलवातामराखसद्राक्षप्रियालमज्जानः ५-५
पलाः, चन्द्रसारं, केशरं, रोचना, अय.सिन्दूरं, स्वर्णर-
जततनुपत्राणि, कान्तसिन्दूरं, पलायीजानि सुचूर्णि-
तानि प्रत्येकं सपादतोलकानि गृहीत्वा एकस्मिन्पात्रे
पष्ट्युत्तरशततोलकं गोक्षीरं, अशीतितोलकञ्च शत-
पत्राकं निक्षिप्य १२० तोलिकां सितोपलां मिश्रयित्वा
विपचेत् । पाकं विहाय सर्वमपि पूर्वांके चूर्णं कल्कञ्च
मेलयित्वा ६० तोलकं गोघृतं, ९० तोलकं मधु च
निक्षिप्य सुवर्णगोरोचनसिन्दूरदिवस्त्वनि सर्वाण्यपि
यथोचितं निधाय शिवशक्तिपूजां कृत्वा लेह्यं प्राह्यम् ।
प्रत्यहमाह्नकरूपमाणमेकमण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् ।
एतेनैकविंशतिमेहघातपरमांसगतज्वराऽङ्गदाहादि-
विकारैः सह नश्यन्ति । कपालकुष्ठोऽतिसारनीलमे-
हद्रुपामादयो निर्मूलतां यान्ति । (व्यास०)

३०—भागस्त्रय तयमासी त्रिकुचन्द्रसारा न दृश्यते सुगन्धश्च
सपादतोलकोऽभिप्रेतया निक्षिप्य । नासिधे चन्द्रसारं वरपूरिका चेति
द्वयमपि निक्षिप्तम सर्वमपि सङ्कलयेत् एव पाठ सम्पादनीय ।

७९ महालवणक्षारः (सुप्पुसुत्रम्)

ऊपरक्षारसर्वीरे प्रति २० पले, मयूरतुल्यना-
गाऽमलसारगन्धकरकमनःशिलादरदोष्यपारदानां
प्रतिचतुष्पलानां नीलवर्णां कज्जलीं कृत्वा जम्बीरर-
सेन चतुर्यामं विमृद्य चीनपात्रे निक्षिप्य रात्रौ नीहारे
विन्यस्याऽऽरुणोदयात्प्रागेवाध.पात्रे प्रसृतजलमन्य-
स्यां काचकूपिकायां निधाय मुखमुद्रां कृत्वा स्थाप-
येत् । दिवा चीनपात्रं निर्वातस्थाने संरक्ष्य रात्रौ
नीहारे संस्थाप्याऽवशिष्टद्रवो प्राह्यः । एवं पञ्चपाणि
दिनि यान्जयरसप्रहणपर्यन्तमनुष्ठेयम् । तद्वन्वेत-
स्मिन्द्रवे सर्ववीरशकलं निमज्ज्योन्मज्ज्य कण्डातपे
शोपितं सद्बद्धं भवति । एवं पनतालकमप्यातपशो-
पितं सद्बद्धलवणं भवति । त्रितोलके हंसपाददरदे
खर्परे विन्यस्याऽनेन जयनीरेणाऽष्टयामपर्यन्तं प्रासे
द्वे च दद्धं सत्सिक्थं भवति । एतद्द्वद्विसिक्थकमर्धमु-
द्गप्रमाणं मधुना सेवितं सद्दन्तकाले कण्डाऽवच्छे-
द्येष्मसाधिपातिकशूलपक्षवातरुफरोगादिकान्नाश-
यति । अपि चोपरक्षारशिलासुधे प्रत्यशीतितोलके
महति भाण्डे निधाय द्रोणचतुष्टयं बालकमूत्रं निक्षिप्य
सप्तहमातपे निधाय निर्मलं जलं प्रहृद्य क्षारं
निष्पाद्य पुनरपि बालकमूत्रे निक्षिप्य पूर्ववत्सदं गृही-
यादेवं पञ्चवारं कृते कुन्देन्दुसदसं दिव्यं लवणं
सम्पद्यते । एतद्बद्धं चीनपात्रे निक्षिप्य दिनद्वयं

शोपयित्वा खल्वे जम्बीराद्विर्णयामद्वयं विमृद्य चक्री-
कृत्य छायाशुष्कं विधाय शरावसमुद्रितं कृत्वा
अष्टभिर्दशभिर्वात्पलकैः पुटं दद्यात् । पुनः पूर्वांक-
जयनीरेण सह यामचतुष्टयं विमृद्य दशदिनपर्यन्तमा-
तपे शुष्कमेतद्गुरुमुन्नमित्युच्यते । एतच्च श्रौदेवीसन्नि-
धावाधायोपचारैरभ्यर्च्य शाकान्नपायसान्नादिभिः
सुवासिनीब्राह्मणादीन्सन्तर्प्य श्रीत्रिपुरागणेशभैरव-
महादेवाऽगस्त्यसिद्धगुण्डश्च सम्पूज्य रोगेपूपयोज-
नीयम् । एतद्बद्धं रसोपरसमारकं भवति । रसपा-
पाणलोहादयो यद्धा भवन्ति । अनायासेन भस्मसि-
न्दूरलवणादिरूपतामापद्यन्ते पारदश्च धनीभूय यद्धा
भवति ।

अथ रोगेपूपयोगप्रकारः—शुद्धपारदवत्सनाभग-
न्धरुसुवर्णपत्राणि प्रत्येकरूपलानि, पूर्वांकमहालवणक्षार-
रञ्जयितोलकं मेलयित्वा जम्भाभसा चतुर्यामं विमृद्य
सावधानतया शोषणचूर्णादिकं कृत्वा दृढकाचकृत्यां
निक्षिप्य बालुकायत्रे क्रमाग्निनाऽष्टौ यामान्यचेत् ।
श्रीवालाम्बां सम्पूज्य दीनाऽनाथसाधून् सन्तोष-
कूपिकां स्फोटयित्वा सिन्दूरवर्णं महालग्नं प्राह्यम्
एतेन सर्वे रोगा निवर्तन्ते । एतत्तण्डुलपरिमा-
मधुना सह पण्मासपर्यन्तं सेवितञ्चेत्कायसिद्धिर्भवीति
गोघृतेन सह कुष्ठमूलमेहश्विनमधुमेहबहुमूत्रमूत्र-
चूर्मेहप्रन्थिसोपद्रवोपद्रवभगन्दरपक्षाघातद्वघाता-
दिमहारोगा निर्मूला भवन्ति । दिव्यशरीरं भवति
मृत्युर्निवर्तते । मण्डलपर्यन्तं सेवनीयम् । यद्धा पुवारं
लग्नक्षारः, शुद्धपारदः, सर्वरीरं, दशदीक्षादीक्षित
सौरक्षारः, नरसारश्चेतान् प्रत्येकपलिकान् विचूर्ण्य
श्वेतार्कक्षारमिश्रितेन कुक्कुटाण्डश्चेतद्रवेण मेल-
यित्वा चीनपात्रे निधाय घनातपे एकदिनपर्यन्तं स्थाप-
यित्वा खल्वे यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रिकां कृत्वा
विशोष्य शरावसमुद्रितं विधाय सप्त मूलकपर्दान्त्य
पञ्चोत्पलकैः पुटं दद्यात् । एतस्य नितरां तीक्ष्णसुधा
(कारसुत्रं) भवति । एवं तीक्ष्णसुधां खल्वे निधाय
रसकूर्परसर्वीरे प्रतिसार्धतोलके मेलयित्वा तेनैव
(श्वेतार्कक्षारमिश्रितेन कुक्कुटाण्डश्चेतद्रवेण) याम-
चतुष्टयं विमृद्य चक्रीकृत्य शोपयित्वा शरावसमुद्रितं
विधाय पङ्क्तिपलकैः पुटं दद्यात् । एतदिव्यं क्षारं
भवति । पुनः पूर्ववन्मर्दनसमये धीरं, पूरं, चन्द्रसारं,
सुगन्धमाजारीकामदं प्रत्येकतोलकं मेलयित्वा इन्द्र-
टाण्डश्चेतद्रवेण यामचतुष्टयपर्यन्तं मर्दयित्वा शरा-
वसमुद्रितं विधाय शिवशक्तिगणेशपूजापुर.सरं दशो-
त्पलकैः पुटं दद्यात् । एतदिव्यतरो लवणज्ञारो भवति
सर्वापधेषु योग्यादि सत्सकलरोगान्नाशयति ।
(व्यास०)

८० महावीरद्रावकम्

शुद्धं सर्वाङ्गं, सूर्यशारङ्ग १-२ पलः, स्फटिका ४ पला चूर्णाकृत्या नलिकायन्त्रविधानेन द्रव्यो ग्राह्यः । विन्दुद्वयं मधुना सह सेवितं सत् कृष्णमेहसन्धिधन्वाध्ववातमहोदरादिव्याधीनाशयति । श्वेताऽजामांसशाफेन सह विन्द्वेकपरिमितं जले निक्षिप्य पीत्वा पुनः पूर्वांक्तमांसशाकाहारः कार्यः । मांसद्वेषिणां त्रिचतुरमापघटकानुपाने योजयित्वापिधं ग्राह्यम् । पुनश्च त्रिचतुरान्मापघटकान्भक्षयेत् । अनेन पूर्वांक्तव्याधयो निवर्तन्ते । (अगस्त्य०)

८१ माहेन्द्ररसः

पारदः, गन्धकः, विषं, दङ्गणं, तालकं, ताम्रभस्म, शुद्धजयपालाः, नागरं, पिप्पली, मरिचं, हरीतकी, आमलकी, विभीतकी चैतानि समभागानि भृङ्गराजरसेन दिनद्वयं विमृद्य मरिचप्रमाणां वर्तौ मधुना सह सेवेत । प्रयत्नव्याधिषु विष्णुकान्ताकिराततिककतिकपटोलचित्रकमूलऽमृतान्याघ्नीपिप्पलीमूलनागरमरिचमुशलीकपिकुण्डवीजखालसकृष्णवज्रलघीजानि घराङ्गाऽहिकेने चैतानि सर्वाणि समभागानि चूर्णाकृत्या समभागां सितोपलां मेलयित्वाऽऽतोलकपरिमिते चूर्णे माहेन्द्ररसवर्तौ संयोज्य मधुना सह सेवनीयम् । पञ्चतोलकं क्षीरमनुपेयम् । अनेन धातुवृद्धी रक्तपृष्ठिश्च भवति । (अगस्त्य०)

८२ मेहकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकतालकदङ्गणशङ्खविद्रुमशुक्तिकास्फटिकाभस्मानि शुद्धं विपश्च प्रत्येकरूपलकं गृहीत्वा कन्याजम्बीररसाभ्यामेकैकदिनं मर्दयित्वा चक्रिकां निर्मायाऽष्टदिनपर्यन्तं शोषयित्वा घर्माकृमृत्तिकोत्पलभस्मनुपमिधितेन निर्मितायां वितस्तिपरिमितमुपरिपथमृद्धण्डिकायां कुमारीत्वक्शकलान्यर्धभागपर्यन्तमास्तीर्यापर्यन्तं चक्रिकां स्थापयित्वा शेष मर्धभागमित्पि तैरेव शकलेः परिपूर्णं शरावसम्पुटं दत्त्वा द्वादशमृत्तिका विभायाऽष्टदिनपर्यन्तमातपे शोषयित्वा सुख्यामधिष्ठाप्य तिककोशातक्रीशुष्कत्वेन क्रमाऽग्निनाऽष्टयामपर्यन्तं पाकः कार्यः । स्वाङ्गशीतामुदुघाटय यत्किञ्चिदपि तस्यामुपलभ्यते तत्सर्पमप्याहृत्य पत्रे निक्षिप्य स्वर्गतनुपत्राण्यर्द्धतोलकानि, मुक्ताविद्रुमचन्द्रसारमृगमदरुद्राक्षाऽऽकारकरभतन्तुरजतानि प्रत्यर्धतोलकानि चूर्णाकृतानि पूर्वांक्तौपधे मेलयित्वा स्तन्येन, कृष्णतुलसीरसेन, मधुरदाडिमीफलरसेन च प्रत्येकेन यामचतुष्टयं विमृद्याऽर्धरक्तिक्रामिता वर्तौः कृत्वा तुरक्युग्मेन शोष-

येत् । देवीभैरवीविनायकादिपूजां कृत्वा ब्राह्मणेभ्योऽर्घ्यं दत्त्वेकां वर्तौ मधुना, स्तन्येन तत्तद्रोगानुपानेन वा दद्यात् । व्याघ्रीचूर्णेन लेटेनेन वा मेहरक्तक्षयध्वासकासकफवातक्षयादयः सर्वे नश्यन्ति । अभ्यगन्धालेह्येन अस्थिगतशल्याऽऽगतपुराणज्वरानश्यन्ति । तत्तद्रोगहरण्यथेन चतुष्पष्टिज्वरा नश्यन्ति । वासापत्ररसेन ताम्बूलद्वलरसेन वा सेवितं सत्काममुद्दीपयति । श्रीचन्दनन्यायेन रक्तपित्तं, मधुमिश्रितदारहरिद्राचूर्णेन मेहरोगा अम्लपित्तञ्च, शर्करामिश्रितमरिचचूर्णेनाऽजीर्णरोगो निवर्तते । प्रत्यहमापि स्तन्येनैकवर्षपर्यन्तं सेवितञ्चेदशानागवलो भवति । (व्यास०)

८३ मृगाङ्गरसः (महाराजादिः)

स्वर्णरजताम्रपारदगन्धकतालकदरुमनःशिला-रसरुभस्मानि समभागान्यादाय पीतभृङ्गरसेन दिनद्वयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावयोरव्यरुद्धय दशोत्पलकैः पुटो देयः । तदनु मधुरदाडिमीपुष्परसेन कृष्णतुलसीस्वरसेन च प्रतिपामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कचक्रिकोपरि पादोनेतोलकमाजार्कारिकामदेन (पुनुगुपिहीमदेन) कथंचं दत्त्वा द्वाभ्यामुत्पलाभ्यां पुटो देयः । पुनः स्तन्येन यामद्वयं विमृद्य छायाशुष्कं विधाय चीनपात्रे स्थापयेत् । एतत्तण्डुलपरिमाणं सेवितं सत्सकलरोगाघ्नाशयति । अथेतदनुपानचूर्णम् - आरवधसारिवामूलत्वक्श्रीचन्दनमुञ्जातकभद्रमुस्तानां चूर्णमेकैकपलं गृहीत्वा यत्नपूर्तं समाचरेत् । अर्धतोलकेऽस्मिन्चूर्णेऽर्द्धतण्डुलं रसं मेलयित्वा मधुना सह सेवनीयम् । अनेन कालमेहमेहप्रस्थिमधुमेहवधुमृत्रादिरोगा अग्रादश कुष्ठानि निवर्तन्ते । पूर्वांक्तपरिण पुटत्रयसिद्धमौपधं शतपत्रार्केण यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां चक्रिकां शरावसम्पुटेऽव्यरुद्धय विशदुत्पलकैः पुटं विधाय चित्रकवापेन यामद्वयं विमृद्य पादतोलकं मृगमदं मेलयित्वा स्तन्येन विमृद्य मुद्रप्रमाणा वर्तौः कृत्वा रजतसम्पुटे स्थापयेत् । अनुपानविशेषैः सकलयानन्याधिषुपर्याजनीयोऽयं महाराजमृगाङ्गः । (व्यास०)

८४ रजतभूपतिरसः (प्रथमः)

रजतताम्रमनःशिलाभस्मानि, शुद्धगन्धकः पारदश्च प्रत्येकपलः, कान्तभस्म विपश्चेनि प्रत्यर्धपलं गृहीत्वा चित्रकमूलस्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वाऽऽतपे विताप्य काचरूपिकायां निक्षिप्य मुखवन्धनं कृत्वा घालुकायन्त्रविधानेन गणेशपूजापुरःसरं दीपाग्निना यामचतुष्टयं पाकं कुर्यात् । एतत्पादशुष्कापरिमितं मधुना सह सेवितं विशानिमेदानशीतियातविकारानघौ

शुल्मांश्चाऽनुपानभेदाद्वाशयति । भृक्कृष्णाम्बु-
जातककुमारीमूलवाताममुशलीकपिकच्छुवीजखा-
खसकृष्ण्यञ्चूलवीजवरङ्गाऽहिकेनानि समभागानि
चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतो-
लकपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा
पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितञ्चेत्त्रि-
तरां धातुवृद्धिलिङ्गोत्थापनमनेकक्षीरमणशक्तिश्च
सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

८५ रजतभूपतिरसः (द्वितीयः)

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, यद्वलवणपारदकान्तभ-
स्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमहलगन्धकताल-
फहृष्णस्तामसिन्दूररपि प्रत्येकं द्वादशकलाभितानि,
चूर्णांकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां
चक्रिकां शरावयोरचरुद्धय दशोत्पलकैः पुटो देयः ।
स्याद्गुणशीतोपधस्य मर्दनसमये मृगमदकेशरगोरो-
चनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन
दिनद्वयं विमृद्य मापप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकेका
वटी मधुना सह सेविता चैत्स्रुतिकाखट्वाताऽऽन-
न्दज्वर (पेशाचिक्रज्वरः) मेहवातादयो निवर्तन्ते ।
स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति ।
(व्यास०)

८६ रसकपूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तप्रासं रसकपूरं त्रिक-
द्वनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा
मरिचप्रमाणा वटीः कार्याः । एकेका वटी मधुमि-
थ्रितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवाताद्याशयति ।
यादानामप्युपयोजनीया । वातपदार्था वज्याः ।
(अगस्त्य०)

८७ रसगुटिका (महती)

रसकभस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलापट्टक-
परिमितं, महृपापाणं कलाद्वयं, मयूरतुष्यपारदा-
यद्वाऽर्द्धतोलकौ गृहीत्वा खल्वे निक्षिप्य शुद्धकार-
वेल्लफलरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्गप्रमाणं वटीं
कृत्वा पुराणतालगुडेन निर्गलेत् । चातुर्थिकादयः
प्रलयन्ते । क्षीराक्षं, गोधूमसण्डयूपध्यानुकूलः ।
अन्यत् किमपि न दातव्यम् । (अगस्त्य०)

८८ रसभूपतिः (प्रथमः)

शुद्धपारदो दरुभस्म च २-२ पलं, रससिन्दूर-
तालकमनःशिलाताम्रभस्मानि १-१ पलानि, शुद्धो-
ऽमलसारगन्धकः ४ पलः, पतत्सर्वमपि चित्रकमूल-
स्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा
पुनश्चूर्णांकृत्य गङ्गोदककाचकूपिसायां निक्षिप्य
घनतया सप्त कर्पटमृत्तिका विधाय मृन्मयपात्रे

वालुकान्यत्रविधानेन यामत्रयं क्रमाश्रिता पाकं
कुर्यात् । काचकूर्पीं स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं
प्राह्यम् । पतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमा-
णेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपाताद्वा-
शयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रककाथेन सर्ववा-
तात्, त्रिकटुना हृद्यलादीन्, अतिघिपाकाथेन सङ्घ-
हण्यतिसारादीन्, कृष्णताम्रलीदलरसेन श्लेष्माव-
रोधमूर्द्धन्थासञ्ज, त्रिफलाकाथेनोष्णज्वरान्, यवा-
नीकाथेनाऽऽतिदाहं, स्तन्यमिश्रिताऽऽर्द्धकरसेन कण्ट-
कजिहिकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वात्रो-
गात्राशयति । तत्तद्व्याध्यनुसारेण पथ्यक्रमो हेयः ।
(अगस्त्य०)

टि०—अभिनयोगे तुलसीरसेन मर्दनं द्रव्येषु चाऽयोभरमाऽपि
मेलनीयमिति व्यासप्रोक्ते वैषकशखले अधिकं दृश्यते तरसाऽनुपानेन
कृत्वा एक एव योगो निष्पादनीयः

८९ रसभूपतिः (द्वितीयः)

शुद्धविपारदगन्धकजयपालवीजानि, त्रिकटुक-
रामटे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रककाथेन
सप्तदिनावधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां वटीं कृत्वा
मधुमिश्रिताऽऽर्द्धकरसेन सेवेत् । अनया श्वासका-
सयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं
यथाचितम् । (व्यास०)

९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुष्यं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा
कारवेल्लपत्ररसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मूपां निर्माय
तस्मिन् रजनीकृष्णधत्तृकारवेल्लपत्रस्वरसगृहधूमै-
ष्टिकाचूर्णनरसारविषैर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं
चाङ्गेरीपत्र (पुलिचिन्ताकु) कल्केन सह निक्षिप्य
समभागवल्मीकमृत्तिकाशणपट्टस्त्रिशिलासुधानां
श्लक्ष्णपिष्टानां मूषोपरि कवचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमा-
तपे विशोष्य १८० तोलकधान्यतुपमध्ये निवर्तित-
स्थाने रात्रौ पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत्
सिन्दूरं प्राह्यम् । पतत्सण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना,
नवनीतेन वा सकलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदेहो
भवति । (व्यास०)

९१ रसानन्दभैरवरसः

शुद्धदरुदं ४ पलं, टङ्गुलं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं,
पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्धकरसेन याम-
चतुष्टयं विमृद्य मापमितां वटीं छायाशुष्कां विधाय
मधुमिश्रिताऽऽर्द्धकरसानुपानेन सन्निपातज्वरेषूपयो-
क्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९२ राजव्रणतैलम्

पुरुषगलगोडिका (मगतोण्डा. तै०, गिलहरी.
हिं०) एका, रसकपूरकृष्णखदिरसाऽप्यनियमुस्त-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैलं ४० तोलकं गृहीत्वा
द्रव्यचूर्णेन सह तैलं विपाच्य चर्माऽन्यवक्षोऽस्थि-
वर्ज्यां गलगोडिकां निक्षिप्य पाकः कर्तव्यः । सिद्धे
पाके तन्मांसखण्डादिकं बहिर्निष्कासनीयम् । एत-
त्तैलेन राजम्रणस्याऽऽसनम्रणाञ्च लेपनं कर्तव्यम् ।
मुद्रखण्डपरिमाणं शर्करया सह सेवनीयम् । अम्ल-
रसः सुतरां वर्ज्यः । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धसन्दीरगौरीकार्मुगिलभृषिकमल्लपायाणानि,
तालकगन्धकपारदविपाणि च प्रतिसपादतोलकानि
गृहीत्वा सेहुण्डक्षीरकृष्णनिर्गुण्डिकारवेह्वरक्तकापां-
सनीलीमूलवनशिम्बीपत्रस्वरसैः प्रत्येकं यामचतु-
ष्टयं मर्दयित्वा गुष्कचक्रिकां शरावयोरवरुद्ध्य पञ्चो-
त्पलकैः पुष्टं दत्त्वा विद्रुममुशलयौ २-२ तोलकैः, आ-
रग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि
संयोज्य १० पलायाः शर्करायास्तन्तुलीं विधाय
यथोचितं घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यग्निभ्रयि-
त्वा लेह्यपक्वं ग्राह्यम् । एतत्प्रत्यहं द्विवारमरिच्यो-
जप्रमाणं सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिमेहा, मूत्रकृ-
च्छ्रमेहक्षयशाल्यगतमेहाश्च निवर्तन्ते । अत्र लेह्यं
सुवर्णरजतमुकानामन्यतमं भस्म मेलयित्वा सेवने
कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरसकूर्परससिन्दूरदर-
तालकान्येकैकतोलकानि (मिरपगण्डू) भृङ्ग-
राक्षेष्टुरक . . (चेकृणित्याकु) पत्ररसैः प्रति-

यामचतुष्टयं विमृद्य गुष्कां चक्रिकां शरावयोरवरु-
द्ध्य १२ उत्पलकैः पुष्टो देयः । एतदौषधं पृथ्वीकं
रुद्रप्रतापरसञ्च प्रतिपण्डुलपरिमाणं मधुनि मिथ-
यित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्रप्रमाणमौषधद्वय-
मपि बालानां गर्भेवायुर्व्याधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा
देयम् । हरिद्रीपर्दशयहुमूत्रादिव्याधिषु केवलनवनी-
तेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छ-
लपित्तवायवः, नवनीतेन शरीरोष्णाधिर्न्य, त्रिफ-
लकृष्णैर्न सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तवि-
भ्रमः, त्रिफलास्वाधेनाऽऽन्याधयः, विल्वदिले-
ह्येन पित्तपाण्डित्याद्यो रोगा नश्यन्ति । रोगानु-
सारेण पथ्यकमः । (व्यास०)

९४ रौद्ररसः

शुद्धगन्धकद्रुणविपाणि, नरमूत्रस्वेदितं मृषिक-
पापाणञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपर्यन्तं
विमृद्य मरिचप्रमाणा घटीभ्रष्टायागुष्का विधाय
शीतज्वरसन्निपातवातज्वरादिषु देयाः । (व्यास०)

९५ वङ्गसिन्दूरम्

पूतिकरञ्जतैले गोमये च प्रत्येकादशवारं निर्वा-
पितं ५ पलं वङ्गं मूत्रपात्रे गालयित्वा तण्डुलीयकमूल-

खण्डानि किञ्चित्किञ्चिन्निक्षिप्य कुमारीरुदेन याम-
चतुष्टयं घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुनः
खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा कुपडुटपुष्टं
देयम् । एवं पुटत्रयेण सिन्दूरं भवति । एतत्तण्डुलप्र-
माणं मधुना सेवनीयम् । अपथेतस्याऽनुपानचूर्णम्=
मुञ्जातक (सालमिथी) शास्मलीमूलत्वग्यष्टिमधु-
ककोकिलाक्षवीजवराङ्गाऽर्जुनत्वक्खाखसानि प्रत्येकं
द्विपलानि, आहुलि (तंगेडु) मूलत्वक्पुष्पञ्च प्रति
दशपलं छायागुष्कं गृहीत्वा चूर्णाहित्य समभागं
शर्करां मिथयित्वाऽर्द्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवङ्गसि-
न्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेवनात्सुरामेहोद्दम-
रीशाल्यगतमेहतैलेमेहमूत्रकृच्छ्रेन्द्रियस्त्रालित्यमेहदा-
रणाद्योऽर्द्धमण्डलसेवनातिमूर्धतां यान्ति । मुद्रमा-
पवटकाः, रम्भापुष्पं, मिण्डिका, गोक्षीरं, घृतमजा-
मांसञ्च पथ्यम् । अन्यद्रपथ्यम् । (अगस्त्य०)

९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविपटङ्कणतालकजयपालयीजानि,
लयङ्गत्रिकटुत्रिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्धक-
रसाभ्यां प्रतिपामचतुष्टयं विमृद्य मरिचाभां घटीं
दत्त्वाऽऽर्द्धकरसाऽनुपानेन मधुना सह सकल्पितज-
रैषूपयोजनीयम् । पथ्यं रोगानुरूपम् । (व्यास०)

९७ विपभैरवीरसः

शुद्धविपदरदङ्कणतालगरमरिचविपपलीलयङ्गजय-
पालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्द-
यित्वा मरिचप्रमाणमात्राः दत्त्वा छायागुष्का विधाय
मधुना मरिचकायेन वा सह सेवितं सदेनवारं रच-
यति । त्रिराघृते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्यं
यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९८ विपमसङ्गहणीकापाटरसः

शुद्धरददङ्कणगन्धकविपमरिचवृष्णधन्तुरीजा-
नि समभागानि भृङ्गाकायेन द्वादशयामं मर्दयित्वा
गुजामात्रा घटीः कायाः । अतिविपचूर्णेन मधुना चैत्रा
घटी सेविता चेद्ब्रह्मपित्ताराद्रोद्गाशयति । निम्बकु-
सुमं, मेथिकाचोष्यं, रम्भाकुसुमं, औदुम्बरफलं,
गुष्कतिन्तिडीपत्रञ्चाऽनुकूलम् । (अगस्त्य०)

९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकरामठसन्धयजयपाललङ्गैर्लायीजानि
समभागानि ताम्बूलीद्वलरसेन दिनद्वयं विमृद्य
छायागुष्कामह्लप्रमितां घटीं विधाय ताम्बूलरसेन
जम्बीररसेन वा सन्निपातरोगिणामञ्जनं देयम् ।
(व्यास०)

शुल्मांश्चाऽनुपानभेदाद्वाशयति । भृक्कृष्णाण्डमु-
ञ्जातककुमारोमूलवाताममुशलीकपिकच्छुवीजत्पा-
रसकृष्णनन्दलवीजवराङ्गाऽहिकैतानि समभागानि
चूर्णयित्वा समानां सितोपलां संयोज्याऽर्द्धतो-
लरूपपरिमिते चूर्णे पादगुञ्जापरिमितं रसं मेलयित्वा
पञ्चतोलकगोक्षीरेण सह मण्डलपर्यन्तं सेवितञ्चेत्त्रि-
तरां धातुवृद्धिलङ्गोत्थापनमनेकखीरमणशक्तिश्च
सम्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् । (अगस्त्य०)

८५ रजतभूपतिरसः (द्वितीयः)

तन्तुरजतचूर्णं २ पलं, वद्वलवणपारदकान्तम-
स्मानि प्रत्येकं सार्धतोलकानि, शुद्धमहलगन्धकताल-
ककृष्णनागसिन्धुराणि प्रत्येकं द्वादशकलामितानि
चूर्णीकृत्याऽजापित्तेन यामचतुष्टयं विमृद्य शुष्कां
चक्रिकां शपवयोरवस्वद्ध्वं दशोत्पलकैः पुटो दैयः ।
स्वाङ्गशीतोषधस्य मदनसमये मृगमदकेशरगोरो-
चनानां चूर्णं प्रतिपादतोलकं मेलयित्वा स्तन्येन
दिनद्वयं विमृद्य मापप्रमाणा वटीः कुर्यात् । एकैका
वटी मधुना सह सेविता चैस्त्रितिकारुद्रवाताऽऽन-
न्दज्वर (पेशाधिकज्वरः) मेहवातादयो निवर्तन्ते ।
स्तन्याऽनुपानेनाऽऽसन्नमृत्योरपि रक्षा भवति ।
(व्यास०)

८६ रसकूर्पूरवटी

यामद्वयं वज्रीदुग्धस्य दत्तप्रासं रसकूर्पूरं त्रिक-
ट्टिनि च समभागानि चूर्णयित्वा जलेन मर्दयित्वा
मरिचप्रमाणा वटीः कार्याः । एतेका वटी मधुमि-
थितस्तन्येन सह प्रयोजिता मेहवाताद्वाशयति ।
वालानामप्युपयोजनीया । वातपदार्थां वर्ज्याः ।
(अगस्त्य०)

८७ रसगुटिका (महती)

रसकमस्म ४॥ तोलकं, शुद्धं गन्धकं कलापदक-
परिमितं, मह्लपापाणं कलाद्वयं, मयूरतुल्यपारदा-
वर्ज्याऽर्द्धतोलकां गृहीत्वा रत्ने निक्षिप्य शुद्धकार-
वेल्हफ्लरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मुद्रप्रमाणां वटीं
कृत्या पुराणतालगुडेन निर्गलित्वा । चातुर्थिकादयः
पलायन्ते । शीतान्नं, गोधूमलण्डस्यश्चानुशूलः ।
अन्यत् किमपि न दातव्यम् । (अगस्त्य०)

८८ रसभूपतिः (प्रथमः)

शुष्कार्द्रो द्रव्यमस्म च २-२ पलं, रससिन्दूर-
तालवमन.शिलाताम्रमस्मानि १-१ पलानि, शुद्धो-
ऽमलमारगन्धः ४ पल., एतन्सर्वमपि चित्रकमूल-
स्वरसेन यामद्वयं मर्दयित्वा गाढातपे शोषयित्वा
पुनश्चूर्णीकृत्या गुग्गुद्वक्त्राचतुष्पियायां निक्षिप्य
घनतया सत वण्टगुटिका विधाय गूम्यपात्रे

वालुकान्यत्रविधानेन यामत्रयं क्रमाश्रिता पाकं
कुर्यात् । काचकूर्पूरं स्फोटयित्वा गुटिकारूपतां प्राप्तं
प्राह्वम् । एतत्पादगुञ्जापरिमाणेनाऽर्द्धगुञ्जापरिमा-
णेन वा स्तन्येन सेवितं सत्त्रयोदश सन्निपाताद्वा-
शयति । मधुना पित्तज्वरं, चित्रककायेन सर्ववा-
ताम्, त्रिकटुना हृच्छलादीन्, अतिविपाकायेन सङ्घ-
हृष्यतिसारादीन्, कृष्णताम्बूलीद्वरसेन श्लेष्माव-
रोधमूर्द्धन्धासञ्च, त्रिफलाकायेनोष्णज्वरान्, यवा-
नीकायेनाऽतिदाहं, स्तन्यमिथिताऽऽर्द्धकरसेन कण्ड-
काजिहिकासन्निपातं, एवमनुपानविशेषेण सर्वात्रो-
गान्नाशयति । तत्तद्द्वयाध्यनुसारेण पथ्यक्रमो ह्येयः ।
(अगस्त्य०)

टि०—अस्मिन्नेगे तुलसीसेन मदनं ब्रह्मेण चाऽयोमरणाऽपि
मेलनीयमिति व्यासभोक्ते वैयकशास्त्रे अधिकं दृश्यते तस्याऽनानुष्ठान
कृत्वा एक एव योगो निश्चान्दीय

८९ रसभूपतिः (द्वितीयः)

शुद्धविषपारदगन्धकजयपालवीजानि, त्रिकटु-
रामठे चैतानि समभागानि विचूर्ण्य चित्रककायेन
सप्तदिनाद्यधि मर्दयित्वा मरिचप्रमाणां वटीं कृत्या
मधुमिथिताऽऽर्द्धकरसेन सेवेत् । अनया श्वासका-
सयुता सन्निपातदोषजिह्वादोषा नश्यन्ति । पथ्यं
यथोचितम् । (व्यास०)

९० रससिन्दूरम्

पलचतुष्टयं मयूरतुल्यं दिनत्रयं मधुनि भावयित्वा
कारवेल्हपनरसेन यामचतुष्टयं विमृद्य मूषां निर्माय
तस्मिन् रजनीकृष्णधनुकरवेल्हपनस्वरसगृहभ्रमे-
ष्टिकाचूर्णेनरसारविषैर्दिनद्वयं शोधितं त्रिपलं पारदं
चाङ्गेरीपत्र (पुलञ्चिन्ताकु) कल्केन सह निक्षिप्य
समभागयस्मीकमृत्तिकाशोणपट्टसूत्रशिलासुधानां
शृङ्खणपिष्टानां मूषोपरि कनचं दत्त्वा दिनचतुष्टयमा-
तपे चिदाप्य १८० तालकधान्यतुपमध्ये निरात-
स्थाने रात्रौ पुटं दद्यात् । शिवशक्तिपूजां विधायैतत्
सिन्दूरं प्राह्वम् । एतत्तण्डुलप्रमाणं घृतेन, मधुना,
नवनीतेन वा सरुलामयेषु प्रयोज्यम् । वज्रदहो
भवति । (व्यास०)

९१ रसानन्दभरवरसः

शुद्धर्द्रदं ४ पलं, टङ्गुणं ८ पलं, शुद्धविषं १६ पलं,
पिप्पली १२ पला, चूर्णितान्येतान्यार्द्धकरसेन याम-
चतुष्टयं विमृद्य मापमितां वटीं छायाशुष्कां विधाय
मधुमिथिताऽऽर्द्धरसानुपानेन सन्निपातज्वररूपयो-
क्तव्यम् । पथ्यं यथोचितम् । (व्यास०)

९२ राजनणतलम्

पुरगगलमोटिका (मगतोष्ण. ते०, गिलहरी-
हिं०) एषा, रसकूर्पूरकृष्णपारिमारुघ्नियमस्त-

कानि प्रतिद्विपलानि, तिलतैल ४० तोलक गृहीत्वा
द्रव्यचूर्णेन सह तैल विपाच्य चर्माऽन्त्रवक्षोऽस्थि-
धर्ज्यां गलगोडिका निक्षिप्य पाक कर्तव्य । सिद्धे
पाके तन्मासखण्डादिक बहिर्निष्कासनीयम् । पत-
त्तैलेन राजव्रणस्याऽऽसनव्रणानाञ्च लेपन कर्तव्यम् ।
मुद्गखण्डपरिमाण शर्करया सह सेवनीयम् । अम्ल-
रस सुतरा वर्ज्य । पथ्यं यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९३ रुद्रप्रतापरसः

शुद्धसन्धीरकौरीकामुंगिलमृषिकमल्लपापाणानि,
तालकगन्धकपारद्विपाणि च प्रतिसपादतोलकानि
गृहीत्वा सेदुण्डशरीरफुण्णनिर्गुण्डिकारवेलेरक्तकार्पा-
सनीलीमूलवनशिम्बीपत्रस्वरसे प्रत्येक यामचतु-
ष्टय मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका शरावयोरवद्वध पञ्चो-
त्पलकै पुट दत्त्वा विद्रुमसुरास्यौ २-२ तोलके, आ-
रग्वधपुष्पाणि च ४ तोलकानि विचूर्ण्य भस्मनि
सयोज्य १० पलाया शर्करायास्तन्तुलीं विधाय
यथोचित घृतं मधु च निक्षिप्य चूर्णं सम्यङ्निध्रिय-
त्वा लेह्यपत्रव प्राह्यम् । पतत्प्रत्यहं द्विवारमरिष्टिनी-
जप्रमाण सेवनीयम् । एतेनैकविंशतिमेहा, मूत्र-
चूरेमेहक्षयशलयगतमेहाश्च निवर्तन्ते । अत्र लेह्ये
सुवर्णरजतमुकानामन्यतम भस्म मेलयित्वा सेवने
कायकल्पसिद्धिर्भवति शुद्धरससुरासिसिन्दूरद-
तालकान्यैर्भक्तोलकानि (भिरपमण्ड्रा) भृङ्ग-
राजेक्षुरक (चेकुणित्याकु) पत्ररसे प्रति
यामचतुष्टय विमूद्य शुष्का चक्रिका शरावयोरवद-
द्वध १२ उत्पलकै पुटो देय । पतदौपध पूर्वाक्तं
रुद्रप्रतापरसञ्च प्रतितण्डुलपरिमाण मधुनि मिश्र-
यित्वा मेहव्याधिषु देयम् । मुद्गप्रमाणमौपधद्वय-
मपि बालाना गर्भवायुव्याधौ स्तन्येनाऽण्डतैलेन वा
देयम् । हृदिपदंशबहुमृषादिव्याधिषु केवलनवनी-
तेन तालगुडमिश्रितेन वा देयम् । शर्करया हृच्छ-
लपित्तवायव, नवनीतेन शरीरोष्णाधिन्य, त्रिक-
टुकचूर्णेन सर्वाङ्गशूलम्, यष्टिमधुकचूर्णेन चित्तयि-
ष्टम्, त्रिकलापत्रायेनाऽऽर्वाव्यधय, विल्वादिले-
होन् पित्तपाण्डित्यादयो रोगा नश्यन्ति । रोगानु-
सारेण पथ्यव्रम । (व्यास०)

९४ रौट्ररसः

शुद्धगन्धकटङ्गणयिपाणि, नरमूत्रस्वेदित मृषिक-
पापाणञ्च गृहीत्वा जम्बीररसेन पञ्चयामपयन्त
विमूद्य मरिचप्रमाणा घटीभृङ्ग्यानुष्का विधाय
शीतचरसशिपातवातज्वरादिषु देया । (व्यास०)

९५ वृद्धसिन्दूरम्

पृथिकरजतैले गोमये च प्रत्येकादशवार निगं-
पित ५ पल वद्म मृपात्रे गालयित्वा तण्डुलायकमूल-

खण्डानि किञ्चित्किञ्चिद्विष्य कुमारीकन्देन याम-
चतुष्टय घर्षणे कृते हरिद्रावर्णं भस्म भवति । पुन
खल्वे निक्षिप्य कुमारीरसेन मर्दयित्वा पुष्पुटुपुट
देयम् । एव पुटत्रयेण सिन्दूर भवति । पतत्तण्डुलप्र-
माण मधुना सेवनीयम् । अथेतस्याऽनुपानचूर्णम्=
मुञ्जातक (सालममित्री) शाळ्मलीमूलत्वम्पष्टिमधु-
ककोकिलाक्षवीजवराङ्गाऽर्जुनत्वम्प्रायसानि प्रत्येकं
द्विपलानि, आहुलि (तंगेडु) मूलत्वम्पुष्पञ्च प्रति
दशपल छायाशुष्कं गृहीत्वा चूर्णाष्टित्य समभागा
शर्करा मिश्रयित्वाऽद्धतोलकमात्रया अर्द्धगुञ्जवृद्धसि-
न्दूरेण सह नवनीतेन दिनत्रयं सेवनात्सुरामेहाश्म-
रीशलयगतमेहतेलमेहमूत्रचूरेन्द्रियस्खालित्यमेहदा-
रणाद्योऽर्द्धमण्डलसेवनात्त्रिमूलता यान्ति । मुद्गमा-
पयटका, रम्भापुष्प, मिण्डिका, गोक्षीर, घृतमजा-
मासञ्च पथ्यम् । अन्यदपथ्यम् । (अगस्त्य०)

९६ वातकुठाररसः

शुद्धपारदगन्धकविषटङ्गणतालकजयपालवीजानि,
लवङ्गत्रिकटुनिफलाश्च समभागानि भृङ्गाऽऽर्द्धक-
रसाभ्या प्रति यामचतुष्टय विमूद्य मरिचामा घटी
हृत्वाऽऽर्द्धकरसाऽनुपानेन मधुना सह सकल्पित्तज्य-
रेपुपयोजनीयम् । पथ्य रोगानुरूपम् । (व्यास०)

९७ विपभैरवीरसः

शुद्धविषटददङ्गणनागरमरिचविष्वलीलजय-
पालान् समभागान् जम्बीररसेन यामचतुष्टय मर्द-
यित्वा मरिचप्रमाणमात्रा हृत्वा छायाशुष्का विधाय
मधुना मरिचकायेन वा सह सेवित सदेकारं रेच-
यति । त्रिरावृत्ते दत्ते ज्वरनिवृत्तिर्भवति । पथ्य
यथोचितम् । (अगस्त्य०)

९८ विषमसङ्गहणीकपात्ररसः

शुद्धदरदङ्गणगन्धकविषमरिचटणधनुर्वीजा
नि समभागानि भृङ्गाधयेन द्वादशायाम मर्दयित्वा
गुक्ामात्रा घटी बाया । अतिविषचूर्णेन मधुना चेन्ना
घटी सेविता चेद्दहण्यतिसारादाश्रायति । निग्मु-
सुम, मेथिकाचाप्य, रम्भासुसुम औडुमरपल,
शुष्कतिग्नीदीपत्रञ्चाऽनुकूलम् । (अगस्त्य०)

९९ वीरभद्राञ्जनम्

त्रिकटुकामटसै चरत्रयपाललवङ्गलावीजानि
समभागानि ताम्बूरीरसेन त्तिद्वय विमूद्य
छायाशुष्कामदुलप्रमितायति त्रिधाय ताम्बूलरसेन
जम्बीररसेन वा सक्षिगतारणिनामञ्जन देयम् ।
(व्यास०)

१०० शङ्खद्रावः (महदादिः) १

स्फटिकासूर्यक्षारौ ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चल-
द्रदसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकपूरौपरक्षारान् प्र-
त्येकपलान् चूर्णांकृत्य मृपात्रे निक्षिप्य नलिकाय-
न्त्रेण द्रव्यो ग्राह्यः । शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं
सेवितं सत्पित्तवातशूलदादीनाशयति । पञ्चाष्टम-
त्रिसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४०
पला, ऊपरक्षारः १ पलः, चूर्णांकृतानेतान् मृन्मय-
पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रव्यं गृहीत्वा
पञ्चपलं पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरीमं द्रव्यं
दत्त्वा दिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम् । शुष्के
द्रवे पुनर्द्वयं दातव्यः । एवं पञ्चद्विनपर्यन्तं कृते शुद्धं
पारदमस्य सम्पद्यते । पारदमस्मात्सपादकेन वस्तु-
त्रयमितलितद्रावकेण विन्दुदर्शकं शीतोदकेन सेवितं
कुक्षिच्छललिङ्गदाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकच्छा-
दिरोगान्नाशयति । मधुमिथिताऽऽद्रकस्सेन धमन-
हिनकाऽम्बोद्गारपित्तवायुद्वहाहोदरज्वलनादिरोगा
नश्यन्ति (अगस्त्य०)

१०१ शङ्खद्रावः (महदादिः) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शङ्खमस्य ५ पलं,
काचनीललवणनरसारदङ्कणसद्योऽपामार्गयवपेट-
स्तुर्दाक्षारान् तुरुष्कञ्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा
एतस्य जम्बीररसेन विमृद्य सम्यग्विद्योष्य नलिकादि-
यन्त्रेण द्रव्यो ग्राह्यः । अनेन द्रवेण गुल्मप्लीहशूलाऽऽ-
ध्मानोदावर्तमूत्राऽवरोधकमृत्रविकाररुद्रवाय्वादयो रोगा
निवर्तन्ते । आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चकप्रमाणं सेवितं
चेतुर्दरस्य पित्तदाहादिकं नश्यति । सर्वं श्लेष्मरोगाऽ-
ष्टगुल्मजलोदरादयो निवर्तन्ते । सुवर्णपत्रे विन्दुचतु-
ष्टयमीपधं निक्षिप्य बालानां रक्षावन्धने कृते
श्यास्ररोगः कदापि नात्ययते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।
(व्यास०)

टि०—नलिकायन्त्रविधानम्—एतदप्युक्तिकं सुप्रमाणं क्षारद्रव्य
निधाय गुणदधत्तादिषु कृत्रिकं दे वा बगदिनिर्मितनालिके निवेश्य
जलमुत्था सन्धीनवरद्रवाऽयन्त्रान्नि सन्धहनिक्त्वा पुनरपि प्रथम-
रशुद्धिा प्रत्येकान्त्रेण शुष्कतामाप्य नुत्वावनिष्यत्येव चण्डानि
प्रदद्यात् । नलिकायन्त्रे वाचने मातृकं वा घटे निवेश्यऽऽग्नाऽना-
दौष वा बन्धेन समोदयेत् तत्र गृहीत्वा । नलिकालम्बपटय जले
निवेशनीयम् । तत्रस्थान्त्रोत्थानामात्र निष्पन्ननीयम् । यदा च
प्रथमशुष्कतामपि उपनया द्रवो नि मरिच्यते तदा चतुर्दशवारोप्य
सावन्धने तदा त्रिणां समोदयेदथि बद्धिनि सार्वेत् । यत्र तु नलि-
काया अन्धोदरि । तत्र शुष्कपटयव रजस्य विधाय वस्तुमृन्मयपट
नुतिपासरोपेन रिक पटय तत्राथे दिग्दहनने जगन्धे निश-
नीयम् । उषालं च पूर्वरेषा । सध्मादिपरीणा च पूर्वरेषा । कल्-
कादिरेषा सन्धनीयं वा नोऽप्यनया रेषा गुनि नि मरि-

प्यति । यत्र तु केतलगन्धक गन्धाधिकभागस्य वा द्रव्यस्य नि सा-
रितुमिच्छा चेत्तर्हि भाण्ड नलिका चेदेतद्द्रवमपि काचन भवितव्यम् ।

१०२ सकलविपचोष्यम्

शुद्धपारदगन्धकमल्लतुत्यमनःदिलामरिचक्रन्द
(पामतुण्डगोड्वा. तै०, मिरचियाक्रन्द. हिं०) रामठनिम्ब-
वीजमज्जान. प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालवीजं
१ पलं, एतानि चूर्णांकृत्य श्वेताकंक्षीरेण यामह्वयं, नि-
म्बतेलेन च यामचतुष्टयं विमृद्य शृङ्गसम्पुटे स्थापयेत् ।
कालसर्पविपाणां मरिचप्रमाणं कवचोक्ततालगुडा-
नुपानेन देयम् । निम्बवीजतेलेन सहृष्य नेत्रयोरञ्ज-
नमपि दातव्यम् । एतेन धमनविरेचनादिकं भवति स-
र्पविपाणि च निवर्तन्ते । सर्पदृष्टानामेतदौषधदाने
दिनत्रयमम्लवर्ष्यं पथ्यम् । मनुष्यभ्यजम्बुकमृषिकवृ-
श्चिकृषिपेषु क्षतस्थाने औषधं लेपयित्वाऽग्निना सेकः
कार्यः । वृश्चिकमहावृश्चिकविपेषु क्षतस्थाने लेपनामा-
त्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम् । जम्बुकमृषिकमनुष्यदु-
ष्टसर्पादिदेशेऽन्तर्वह्निश्चौषधं योजनीयम् ।

अपि च—एकपलं मह्यं शरपावे निधाय.....
(गाडिदिगडपाकु. तै०) रसेन श्वेताकंक्षीरेण च
प्रति यामचतुष्टयं ग्रासं दत्त्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेप-
नीयम् । विपदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमाः,
केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरमः,
शृङ्गम्, जटामांसी, तज्जोलं, विवल्फलोद्धकायः, लघ-
ङ्गं, रससिन्दूरं, विम्बोमूलं, यष्टिमधुकं, रास्ना
पलाशवीजानि, पला, त्वक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा
चेति समभागानि स्तन्येन दिनह्वयं विमृद्य शृङ्गस-
म्पुटे निधाय पूर्वोक्तविपप्रस्तानां जिह्वादोषप्रदा-
न्त्ये जिह्वायां धर्षणीयम् । पथ्यं यथोचितम् ।
(व्यास०)

१०३ सर्जीविगुटिका

शुद्धविपतालकपारदगन्धकटङ्कणत्रिकटुयिनीतक्री
गोरोचनतुरुष्कान् प्रत्येकमर्धेतोलकान्, शुद्धजयपा-
लवीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पटपूतं विधाय
कपूरुवह्नी (कपूरली. तै०, पत्रयानिका), रक्तगु-
नर्नवा (पुरपरत्न. तै०) चासातोवपिप्लवीभृङ्ग-
पणतुलसीरसेः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्रप्रमाणा
पटीः कुर्यात् । मृष्टतुलसीपत्ररसेन सहैका मात्रा
सेचिता चेद्बालकानामपतानकषायुं, सन्निपातदोषं,
श्यासकाली, वायुरोगांश्च नाशयति । (व्यास०)

१०४ सन्निपातर्भररसः

शुद्धपारदगन्धकटङ्कणतालकजयपालयिकटुकृषि-
फलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धदूर्ध्वं ४ पलं गृहीत्वा एतस्य
तामूलदलरसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

कृष्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारण-
ज्वरेषूपयोजनीयः । स्तन्येन विपमत्वराः, मधुना
पैत्यदोषाः, मरिचन्यायेन घातज्वराः, मधुमिश्रिता-
ऽऽर्द्रकरसेन पित्तवायवो हृदयज्वलनं सर्वेशूलानि
च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना,
ताम्बूलदलरसेन वा सहूप्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिशु-
मूलत्वग्रसेन लशुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपात-
जनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्रोगयलानुसा-
रेण पथ्यक्रमः कार्यः । (व्यास०)

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्मङ्कुशः) १

शुद्धविषपिप्पल्यावेकैकपले दृढञ्च द्विपलं गृहीत्या
जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकर्वाजप्र-
माणा घटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपाता
द्वयो निवर्तन्ते । शीणि चत्वारि वा दिनानि सेव-
नीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । (अगस्त्य०)

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्मङ्कुशः) २

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिरुविषपारमाक्षि-
कताम्रमहभस्माऽम्रकसिन्दूरानि, सद्यःक्षारनरसार-
कण्ठऽष्टशिरामठाऽतिविषभृद्रपटोलहरीतकीनागर-
विजयामुशलीनिम्बनिर्वासाः, सर्वाणि समभागानि
काकमाचीरसेन दिनद्वयं विमृद्य जम्बीररसेन च
पूर्वघ्नमर्दयित्वा चणक्रममाणा घटीः कृत्वा द्वादशमू-
लप्यायेन, आर्द्रकरसेन, शिशुमूलरसेन, लशुनरसेन,
स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वा घटी संविता चे-
त्सोपद्रवांश्चयोदश सन्निपातान्नाशयति । शिशुमूलत्व-
ग्रसः, अर्कमूलत्वग्रसः, निम्बतैलम्, लशुनरसः, स्त-
न्यम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डीत्वग्रसः, आर्द्रकरसः,
कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि प्रयोदशसन्निपाता-
नामनुपानानि । (व्यास०)

१०७ सञ्जीवटी

सञ्जीवरसदृढभस्मानि, फान्तसिन्दूरं, चन्द्रसारं,
केदारं, गोरोचनं, मृगमदक्ष समभागानि स्तन्येन
मधुना च प्रत्येकं चतुर्षामं विमृद्य गुञ्जाचतुष्टयं दोष-
ज्वरसन्निपातकण्ठवायुक्षिप्तविघ्नमादिष्याद्रकरसाद्य-
नुपानेन यथायोग्यं देयम् । (व्यास०)

१०—अत्र सञ्जीवमिति बहुषु येषामु समागतं इत्यर्थे तस्याऽऽत्मना
पार्था कठोरिच सन्निभम् (Corrosive Sublimate) इति नाम ।
यूनानीवैद्यकं “शालयिक्का” इति नाम्ना प्रसिद्धिः । एतेदोषाऽऽ-
सुषुप्तविनाशु दुष्फलविपरिणामेन युष्मन्नेत्येवमिति नाम्ना प्रसिद्धाय
विषमिनिविनाशु कुञ्जाऽप्यस्य विवरण नाऽऽप्तमपि किन्तु मौर्वरत्नवशा
सौवीरकमिनि नाममात्रमुपलभ्यते तथा—“ एते सौवीरक काष्ठी
सिद्धाश्च रमयावितम् । कुम्भितान मतिमन्मातृवेदोऽग्निनेन वा ॥ १०५
नवनिर्द नित्यं प्रवेक्ष्य विदग्धनाथ । शु उ १०१२-१४” इत्यत्र

उक्त्येन मौर्वीरक सौवीराञ्जनमित्युक्तम् । “ सौवीरजन्त नित्यं हित
मक्ष्णा प्रयोषयेत् । च सू. ५१२३, अ स सू. १, अ ह सू. २४४”
अथ सुवीरामव सौवीरमिति वदता चक्रपाणिना येनेनेन प्रकारेण
स्वपत्या विज्ञेयिनि । इन्द्ररत्नदत्ताभ्यां तु मौनमालम्बितम् । “ सौवीर-
जन्तं तु य तापो धातुर्मेन शिला । बहुषुष्या गुरुक लोहमग्य यौष-
भजनम् ॥ च वि २६१४४” इत्यत्र तु चक्रपाणि सिद्धायामि ।
“ वल्मीकशिखराकारं भङ्गे सौवीरस्यपुति । सौवीराञ्जनमित्याहुःपुत्रो
वेदविदो जना ॥ च द स्वस्थेते ” इत्यत्र नीलाम्बेन एव रुद्धि
कृता । शालग्रामेण तु सौवीराञ्जनं सौवीरजन्तैश्चि द्यारेत्तार्थवाच-
कत्वं स्वीकृतम् । “ सौवीरमेवञ्च कृष्णं बालनीलं सुवीरजम् । स्रोतो
जन तु स्रोतो नदीजं वायुन वरम् ॥ सर्वाविषगुणहरणक आग्नेय-
शीयनिषण्णौ” । “अथन वामनञ्चापि कषोत्ताञ्जनमित्यपि । स्रोतोऽपनञ्च
द्विविधं श्वेतदृष्णविदेत ॥ तद्य स्रोतोऽञ्जनं कुरु सौवीरं श्वेतनीरि-
तम् । वल्मीकशिखराकारं भिन्नमथनमथिभम् । धृष्टनु मैरिकाकारमेवञ्च
स्रोतोऽञ्जनं स्मृतम् । स्रोतोऽञ्जनं मम ह्येयं सौवीरं तनु प्राण्डुलम् ॥ पूष
सर्षापममि वा सौवीराञ्जनमुच्यते । ” इति वैषयिन्नाम्नो प्रसिद्धि-
तम् । वसवराजीयेऽपनपञ्चगुणप्रदर्शने “ पुष्यापन मित शुक्र
हिम सर्वाश्रितोऽग्निः । नीलपानं कृष्णवर्णं नेत्रदोषशुष्यापहम् ॥ रसा-
ञ्जन तु पीताभ विषनेप्रविष्यारणुत् । स्रोतोऽञ्जनं पाण्डुवर्णं चतुष्य सर्वं
रोगनिवृत् ॥ सौवीर रक्तवर्णं च नेत्रवण्डुविषापहम् ॥ ” इति प्रसिद्धि
तम् । तत्र रक्तव्य श्वेतव्य च यथाभेदाव वैधेषु ग्रन्थेषु च परिचयो नीप
रभ्यते । एतेदोषाया अतिघातचिचवदिदृग्दोदन्तवैभ श्वेताञ्जननाम्ना
व्यवहरति । अन्ये तु दशदृष्णपत्राकर्ता मन्यन्ते । तैलद्वयविश
दिदोषेभ्यस्य कर्पूरशिलाजनुनाम्ना व्यवहारोऽस्ति । वसवराजीये च
श्वेताञ्जनं श्रित्तिना तत्स्वपरिचयो नास्ति । एतन्महत्त्ववरो
पतिनामो मन्वाण्य सिद्धान्तमा यत्नतो गोपेतिताऽपि नाऽऽप्तमपि ।
अगस्त्यमोक्षवेपवशास्ते यदि सञ्जीवरनाम्ना पारदकृतिरूपेण तस्या
धातुवारे सर्वोऽभ्यर्थाकारणत्वापदि महत्त्वस्तथागीतमेव तच्छास्यं
स्थापदि अतिप्राचीनवाशारेण पारदकृते प्रसिद्धिरपि सौषुभेऽवल्लव
न तस्याऽपि शङ्कोरिवात् परन्तरेणैरे तत्प्रचारवैरुषकान्तव्यः तुभवेनाऽ
दिभिषगेषु कोऽपि सिद्धान्तं स्वर्गपरिचयो नास्ति । एतन्महत्त्ववरो
मुष्पाकारेण तु स्वकीयग्रन्थे एकादशाऽध्याये तत्रियामर्दनग्रन्थे
“ श्वेतसौवीरत् शुद्धं पचितं विषमुचिता । स्वच्छे पद्वारे वत् निर्जिं
रुष्यहृद्भवेत् ॥ ” इत्यादिरुष्यऽस्य श्वेतसौवीरदत्तनाम्ना प्रसिद्धि
कृताऽस्ति । उक्त्युपमोक्षवेपवशास्ते सौवीरकमिनि परं समागतं तत्र
लेश्वरकामादेन श्वेतव्येन शीतमिति कथं प्रपञ्चयति इतिरेऽदिना
भवति । तत्र टीकावारेण श्वेतदृष्णवशास्ते रमजन्मिति केचित्शु-
नित्ये इति प्रसिद्धम् । तत्रस्य वरुणोऽग्निः श्वेरे नेत्रैष्योष्णान्ना
वीरव्य चाऽपि तत्प्रकारेण इव समम्भं प्रसिद्धम् । काष्ठीर
तत्रपानवादिरेममावनामी राष्यन्मात्रादनुदृष्णादि मन्वपल्ल
वावता तस्यीष्टानं मन्वपि तावता इति शङ्कया कोऽपि कृत्वा न
प्रभवत्येव । सञ्जीवमिति शब्दं स्वकीयशब्दादप्य सौवीरदृष्णवशास्ते
मा प्रसिद्धं । अत्रस्य तद्विषये सर्वेऽपि निरङ्कुकरा अन्येह प्रत्य
यत् तदा प्रसिद्धिः । एषाश्चरितवान्मायिरिवाऽप्ये काष्ठीरसु सञ्जीर
स्वपत्तितमर्काऽभिनवा मन्यन्ते एतन् तत्र सर्वेऽग्निः । एतदृष्णव्य
मोक्षवेपवशास्ते श्वेतदृष्णवशास्ते रमजन्मिति तावत्तमेव पञ्चपत्ति
दृष्टव्यत्तानां सर्वेऽग्निना वषऽप्यस्य विषया कृतमिति । अगस्त्य
मन्वप्य सर्वेऽग्निः श्वेतदृष्णवशास्ते रमजन्मिति इति कथन्तु मायान्य
इव एतेऽपि इदानीं इति शङ्कयते । अत्र सञ्जीवदृष्णवशास्ते निर्दन्
मन्वपि निरदन्तं इव रमजन्ममन्वप्यस्य इत्युच्यते । एतु इतिरे
कान्तो निरदन्तं सर्वेऽग्निः श्वेतदृष्णवशास्ते रमजन्मिति इति

१०० शङ्खद्रावः (महदादिः) १

स्फटिकासूर्यक्षारो ४-४पलौ, शुद्धगन्धकसौवर्चल-
द्वदसैन्धवसामुद्रकाचलवणरसकपूरौपरक्षारान् प्र-
त्येकपलान् चूर्णीकृत्य मृत्पात्रे निक्षिप्य नलिकाय-
न्त्रेण द्रव्यो प्राहाः । शीतोदकेन १० विन्दुपरिमितं
सेवितं सत्पित्तवातशूलद्वीघ्नाशयति । पञ्चावृत्तम-
न्त्रिसंयोगेन शुद्धः सूर्यक्षारः स्फटिका च प्रति ४०
पला, ऊपरक्षारः १ पलः, चूर्णीकृतानेतान् मृन्मय-
पात्रे निक्षिप्य नलिकायन्त्रविधिना द्रवं गृहीत्वा
पञ्चपलं पारदं चीनपात्रे निक्षिप्य तदुपरीमं द्रवं
दत्त्वा दिनचतुष्टयं गाढातपे स्थापनीयम् । शुष्के
द्रवे पुनर्द्रवो दातव्यः । एवं पञ्चदिनपर्यन्तं कृते शुद्धं
पारदभस्म सम्पद्यते । पारदभस्माऽऽपादकेन वस्तु-
त्रयमितलद्रावकेण विन्दुदशकं शीतोदकेन सेवितं
कुक्षिहृच्छूलिलिङ्गाहशूलसहितमूत्राऽवरोधकृच्छ्रा-
दिरोगान्नाशयति । मधुमिश्रिताऽऽद्रेकरसेन वमन-
हिककाऽम्बुद्वारपित्तवायुहृद्वाहोदरज्वलनादिरोगा
नश्यन्ति (अगस्त्य०)

१०१ शङ्खद्रावः (महदादिः) २

सूर्यक्षारस्फटिके प्रति १० पले, शहभस्म ५ पलं,
फाचनीललवणनरसारदङ्गणसद्योऽपामार्गवपपट्ट-
स्तुहीक्षारान् तुर्यकञ्चेति प्रत्येकपलिकान् गृहीत्वा
खल्वे जम्बीररसेन विमृष्ट सम्यग्विद्रव्योप्य नलिकादि-
यन्त्रेण द्रव्यो प्राहाः । अनेन द्रवेण शुल्बमूत्रोद्द्वेषलाऽऽ-
ध्मानोद्वातवृत्राऽवरोधमूत्रविदारद्वेषलाऽवरोधो रोग-
गा नियतन्ते । आर्द्रकरसेन विन्दुपञ्चकप्रमाणं सेवितं
चेतुदरस्थपित्तदाहादिकं नश्यति । सर्वं श्रेष्मरोगाऽ-
ष्टगुलमजलोद्द्वाराद्यो नियतन्ते । सुवर्णपत्रं विन्दुचतु-
ष्टयमीपधं निक्षिप्य घालानां रक्षावन्धने कृते
भ्यासरोगः कदापि नोत्पद्यते । पथ्यं रोगानुरूपम् ।
(व्यास०)

टि०—नलिकात्रयविधानम्—इत्यनेनलिके सुपुटानां शारद्व्य
निगप मन्दापस्तारिष्ठं कृत्वा दे वा वशादिनिमित्तनालिके निरस्य
जम्बुदाया सन्धीनरसकाऽवगन्तुमि सम्यदनिवन्ध्य पुनरपि पञ्चप-
रसुतिरा मन्थिस्तान्त शुभकानायाव नुत्सामपिष्टाय वल्गामि
प्रदद्यात् । नलिभ्युना काचवे मन्थि वा धे विरस्योऽद्रेऽना-
द्रेण वा वनेन समोदरे वाव गृहीयात् । नलिभ्यामन्त्रपत्रेण जने
निरेशनीयम् । तदप्यथान्तामनायाव निवजनीयम् । यदा च
मन्त्रभ्यामन्त्राविति शेषया द्वा नि मन्थयति तदा चतस्र्यकारावप्य
सन्धयन्ते तदा मिनां समन्वयेदन्त्रिये बर्हिनि धारयेत् । यत्र तु नलि-
काया अनालोद्रेण तत्र सुपुटानावप्य चमक विषय वातुमन्त्राव
नुत्सामानां तत्र पत्रेण तत्र विरस्योऽद्रेऽनान्ते निव-
नीयम् । यस्या च पूर्वरेखा । शारदारिणीया च पूर्वरेखा । कन्ध-
कारिदशा रान्तरीया वा मन्थनस्य शिवा गुनेन निरदि-

धन्ति । यत्र तु केवलान्धस्य गन्धाधिकभागस्य वा द्रव्यस्य नि सा-
रविपुमिच्छा चेत्तर्हि भाण्ट नलिका चेत्तेतद्वयमपि काचत्र भवितव्यम् ।

१०२ सकलविपचोप्यम्

शुद्धपारदगन्धकमलतुत्यमनःशिलामरिचकन्द
(पामतुण्डगेष्टा. तै०, मिरचियाकन्द. हि०) रामटनिम्ब-
वीजमज्जानः प्रत्येकं सपादतोलकं, शुद्धं जयपालवीजं
१पलं, एतानि चूर्णीकृत्य श्वेतार्कक्षीरेण यामहयं, नि-
म्बतेलेन च यामचतुष्टयं विमृष्ट शृङ्गसम्पुटे स्थापयेत् ।
कालसर्पविपाणां मरिचप्रमाणं कवचीकृततालगुडा-
नुपानेन देयम् । निम्बवीजतेलेन सकृत्प्य नेत्रयोरञ्ज-
नमपि दातव्यम् । एतेन वमनविरेचनादिकं भवति स-
र्पविपाणि च निवर्तन्ते । सर्पदधानामेतदौषधदाने
दिनत्रयमम्लवर्ज्यं पथ्यम् । मनुष्यश्वजम्बुकमृषिकवृ-
श्चिकविपेषु क्षतस्थाने औषधं लेपित्वाऽग्निना सेकः
कार्यः । वृश्चिकमहावृश्चिकविपेषु क्षतस्थाने लेपनमा-
श्रमेव विधेयमन्तर्न दातव्यम् । जम्बुकमृषिकमनुष्यदु-
ष्टसर्पादिदंशोऽन्तर्बहिश्चौषधं योजनीयम् ।

अपि च—एकपलं मह्यं शरावे निधाय.....
(गाडिदिगडपाकु. तै०) रसेन श्वेताऽर्कक्षीरेण च
प्रति यामचतुष्टयं प्रासं दत्त्वा वृश्चिकदंशस्थाने लेप-
नीयम् । विपदोषप्रकोपे सति शुद्धसुवर्णपत्रं, विद्रुमाः,
केशरम्, रजतचूर्णं, मुक्ता, मृगमदः, आकारकरमः,
शृङ्गम्, जटामांसी, तसकालं, विव्बफलोद्धकायः, लव-
ङ्गं, रससिन्दूरं, विम्बवीजं, यष्टिमधुकं, रास्ता
पलादावीजानि, पला, त्वक्, कुष्ठं, नागकेशरं, द्राक्षा
चेति सममागानि स्तन्येन दिनहयं विमृष्ट शृङ्गस
म्पुटे निधाय पूर्वोक्तविपप्रस्तानां जिह्वादोषप्रदा
न्त्ये जिह्वायां धर्षणीयम् । पथ्यं ययोचितम्
(व्यास०)

१०३ सञ्जीविगुटिका

शुद्धविपतालकपारदगन्धकदङ्गणत्रिकटुयिमीतर्कं
गोरोचनतुर्यकान् प्रत्येकमधेतोलकान्, शुद्धजयपा-
लवीजानि च ४ तोलकानि गृहीत्वा पट्टयूते विधाप
कपूरखली (कपरखली. तै०, पत्रयवानिका), रक्तु-
नर्नया (पुरुषरत्न. तै०) घासातोषपिप्लीभृङ्ग
प्लतुलसीरसेः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा मुद्गप्रमाणा
यटीः कुर्यात् । अष्टतुलसीपत्रमेन सहैका मात्रा
नेयिता चेद्दालकानामपतानकषायुं, सधियातदीर्घं,
भ्यासकसौ, वायुरोगांश्च नाशयति । (व्यास०)

१०४ सञ्जिपातभैरवरसः

शुद्धपारदगन्धकदङ्गणतालकजयपालत्रिकटुयिमी-
फलाः प्रत्येकपलाः, शुद्धद्वर्द ४ पलं गृहीत्वा खल्वे
तामूलद्वारसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा संशोष्य

कृष्णतुलसीरसानुपानेन रक्तिपरिमितः साधारण-
ज्वरेपूपयोजनीयः । स्तन्येन विपमज्वराः, मधुना
पैत्यदोषाः, मरिचन्नाथेन वातज्वराः, मधुमिश्रिता-
ऽऽर्द्रकरसेन पित्तघायवो हृदयज्वलनं सर्वशूलानि
च नश्यन्ति । सन्निपातदोषेषु स्तन्येन, मधुना,
ताम्रमूलदलरसेन वा सङ्घृष्य नेत्राञ्जनं देयम् । शिपु-
मूलत्वप्रसेन लशुनतैलेन वाऽनुपानेन महासन्निपात-
जनितसप्तदोषेषु प्रयोजनीयम् । तत्तद्गोचरबलानुसा-
रेण पथ्यक्रमः कार्यः । (व्यास०)

१०५ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्त्यङ्कुशः) ?

शुद्धविपपिप्ल्यावेकैकपले हृदश्च द्विपलं गृहीत्वा
जम्बीररसेन यामचतुष्टयं मर्दयित्वा मूलकवीजप्र-
माणा वटीः कुर्यात् । आर्द्रकरसेन दत्ते सन्निपाता
दयो निवर्तन्ते । श्रीणि चत्वारि वा दिनानि सेव-
नीयः । पथ्यक्रमो यथोचितः । (अगस्त्य०)

१०६ सन्निपाताङ्कुशरसः (जन्त्यङ्कुशः) ?

शुद्धपारदगन्धकतालकहेममाक्षिकविषतारमाक्षि-
कताम्रमल्लभस्माऽम्रकसिन्दूरानि, सद्यःक्षारत्तरसार-
ककटशुद्धिक्वामठाऽतिविषभृद्रपटोलहरौतकीनागर-
विजयामुशलीनिम्बनिर्यासाः, सर्वाणि समभागानि
काकमाचौरसेन दिनद्वयं विमृद्य जम्बीररसेन च
पूर्ववन्मर्दयित्वा चणकप्रमाणा वटीः कृत्वा दशमूल-
स्वाधेन; आर्द्रकरसेन, शिपुमूलरसेन, लशुनरसेन,
स्तन्येन, मधुना वा मिश्रयित्वा वटी सेचिता वे-
त्सोपद्रवांस्रयोदश सन्निपातान्नाशयति । शिपुमूलत्व
प्रसः, अर्कमूलत्वप्रसः, निम्बतैलम्, लशुनरसः, स्त-
न्यम्, अजगन्धारसः, निर्गुण्डोत्वप्रस, आर्द्रकरसः,
कुक्कुटाण्डतैलम्, मधु चैतानि त्रयोदशसन्निपाता-
नामनुपानानि । (व्यास०)

१०७ सञ्जीवनी

सञ्जीरसदृग्दम्भरामानि, कान्तसिन्दूरं, चन्द्रसारः,
केशरं, गोरोचनं, मृगमदश्च समभागानि स्तन्येन
मधुना च प्रत्येकं चतुर्यामं विमृद्य शुद्धाचतुष्टयं दोष-
ज्वरसन्निपातकण्ठशयुच्चित्तविभ्रमादिप्यार्द्रकरसाद्य-
नुपानेन यथायोग्यं देयम् । (व्यास०)

६०—अत्र सञ्जीरमिति बहुषु योगेषु समागतं दृश्यते तस्याऽऽम्बुभा
पावा कारोति हस्तिमर्द (Corrosive Sublimate) इति नाम ।
यूनानीवैद्यैकं “शाल्पिक्रम” इति नाम्ना प्रसिद्धिः । एतद्वेशीयाऽऽ
युवैसंहितासु दुष्कालविपरिणामेन सुमुनभेकरचक्रेति नाम्ना प्रसिद्धाऽ
विषयसिंहितासु कुत्राप्यस्य विवरणे नाऽऽप्याप्ये किन्तु सौवीरमथवा
सौवीरकमिति नाममात्रमुपलभ्यते यथा—“ शीत सौवीरक वाऽपि
पिष्ट्वाऽय रसभावितम् । कुम्पित्तेन मतिमान्मात्रवेद्यैद्विधेन वा ॥ चूर्णा
जनमिदं नित्यं प्रथोभ्य पित्तशान्तये । सु च १७११-१२” इत्यत्र

अल्हणेन सौवीरक सौवीराञ्जनमित्युक्तम् । “ सौवीरमथन नित्यं शित
मण्यो प्रयोजयेत् । च सू. ५।११३, अ स च, ३, अ ह च, २।४”
अत्र सुवीरामव सौवीरमिति कदाच न्नप्राणिना येनेनेन प्रकोरण
स्वपन्था विशोभित । इन्द्ररुद्राभ्यां तु भौनमालम्बितम् । “ सौवीर-
मथन तुल्य चोषो धातुमेन शिलाः । चक्षुष्या मयुक् लोहमणय दीप्य
भजनम् ॥ च त्वि २६।२४३” इत्यत्र तु चक्षेणापि निद्रादितम् ।
“ बल्मीकशिराकार भङ्गे नीलोत्पलशुति । सौवीराञ्जनमित्याङ्कुरा-
नैदविदो जना ॥ च द स्वस्वृत्ते ” इत्यत्र नीलाञ्जेन एव रुद्धि
कृता । शालग्रामेण तु सौवीराञ्जनं स्रोतोऽञ्जनञ्चेति इत्येकार्कवाच
कत्व स्वीकृतम् । “ सौवीरमथन कृष्ण कालनील सुवीरजम् । स्रोतो
ञ्जन तु स्रोतोज नदी न वाऽनुन वरम् । सर्वोपविगुणकल्पक वाग्भेदे-
शीयनिषण्ठे” ॥ “अञ्जन वामनञ्चापि कपोताञ्जनमित्यपि । स्रोतोऽञ्जनञ्च
द्विविध श्वेतकृष्णविवेधतः ॥ तत्र स्रोतोऽञ्जनं स्व्य सौवीर भेतामीरि-
तम् । बल्मीकशिराकार भिन्नमथनसञ्जिभम् । घृष्टम् गैरिककारमेतद्
स्रोतोऽञ्जनं स्वतम् । स्रोतोऽञ्जनं मम श्रेय सौवीर, तत्तु पाण्डुरम् ॥ धूम.
वर्णभामपि वा सौवीराञ्जनमुच्यते ॥” इति वैद्यचिन्तामणौ प्रदर्शित-
म् । वसवराजीवेऽञ्जनपत्रकणुप्रदर्शने “ पुण्याञ्जनं सितं शुद्धं
विमं सर्वांशिरोगजिदं । नीलाञ्जनं कृष्णवर्णं नेत्रदोषप्रशयहम् ॥ रसा-
नं तु पीताम्र विपनेत्रविकारतुदं । स्रोतोऽञ्जनं पाण्डुरवर्णं चक्षुष्यं सर्वं
रोगजित् ॥ सौवीर रक्तवर्णं च नेत्रकण्डुविषयाहम् ॥” इति प्रदर्शित-
म् । तत्र रक्तस्य श्वेतस्य च यथाभेदाः क्षेत्रेषु प्रत्येषु च परिचयो नोप-
लभ्यते । एतद्वेशीया अतिवाचनविषयविशिष्टोदन्तमेव श्वेताञ्जननाम्ना
व्यवहरन्ति । अन्ये तु यदाहपुष्पवाचकता मन्यन्ते । तैलव्राजिवा
द्विदोषस्य कर्तुं शिलाजनुनाम्ना व्यवहारोऽस्ति । वसवराजीवे च
प्रातःकाले लिखित्वा तत्स्वस्वपरिचयो नाकारि । एतद्व्याहृत्तवरे
पित्ताना मनागपि सिद्धान्तमा यत्नो गयेपिताऽपि नाऽऽसाधते ।
अगस्त्यमोक्षचैषकशास्त्रे यदि सञ्जीरनाम्ना पारदकृतिदृश्यते तस्या
घटुवारे सर्वेषोऽम्बुसहितकारणत्वापदि मध्यगन्धस्यप्रणीतमेव तन्प्राप्तं
इत्यर्थे अतिप्राचीनकालदेव पारदत्वे प्रसिद्धिपरि श्लेषेऽपि नवेरेत्यत्र
न कस्याऽपि शङ्कोद्वेदोऽप्यपरन्वेदोरे तत्प्राचारस्यैकतन्तत्वा हुतलेनाऽ
स्मिन्निषेधे कोऽपि सिद्धान्तं विस्मृत्कर्मतौ च युक्तं । रसप्राप्तं
मुषाकारेण तु स्वकीययन्त्रे एकादशाऽप्याप्ये तारत्रियाप्रदर्शनप्रक्रमे
“ श्वेतसौवीरक शुद्धं पाचितं विपमुदिना । स्वच्छे म्भारं कठं निक्षिप्तं
रूप्यहृद्भवेत् ॥” इत्यादिरूप्येऽस्य श्वेतसौवीरकनाम्ना प्रसिद्धि
कृताऽस्ति । उक्तपुस्तकोद्घारेऽपि शीत सौवीरकमिति परं समागतं तद्
लेखकप्रमादेन श्वेतरसेन शीतमिति कथञ्च सञ्जातमिति बुद्धिदोलायिता
भवति । तत्र टीकाकारैस्तु शीतपारदरवांस्रं रसाञ्जनमिति केचित्पूर्व-
श्रित्यन्ते इति प्रदर्शितम् । तत्राप्य वस्तुनोऽप्यपरं नेत्रीययोगत्वात्
स्वीरस्य वाऽऽशिकरत्नत्वादानुचित इव सङ्गम प्रथमास्ति । कदाचिच्च
तत्त्वयोगमप्यदिसत्भावनामी रात्र्याप्यादावदुद्घोषोपि मनेत्पारदु
दावता तत्परिधानं निश्चेत तावता नि शङ्कता कोऽपि वरितु न
प्रभवत्येव । अतएव नित्यं सर्वेषोऽपि सञ्जीरकनाम्ना सौवीरकनाम्नाऽप्यावा-
ना प्रतीयते । अतएव तद्विषये सर्वेषु निषेधकान् न्यामोहं प्राप्य
यदा तदा प्ररूपन्ति । प्राथम्यविज्ञानमाविताऽन्त कारणास्तु सञ्जीर-
स्वीरपि मतीवाऽभिन्नवां मन्यन्ते परन्तु तत्र समीचीनम् । यतोऽप्यगस्त्य-
मोक्षचैषकशास्त्रे द्वात्रिंशत्शारोत्पत्रप्राणाणां तावगामेव पाकशरवि
शुभेस्वरत्नानि सञ्जीरदीनां यथाशक्तं निरूपणं कृतमस्ति । अगस्त्य
सुनयन प्रतीत्यैवास्मिन्प्राग्भावादावर्षाचीनं इति कथनम् मत्तप्रशय
इव सर्वेषां शुद्धां हृदि रक्षुत्वेन । अत्र सञ्जीरदिप्राणाणां निर्माणं
मतिमानीकालदेव समागतमनीत्ववश्यं मन्तव्यमेव । चतु षष्टिषा
प्राणाणां विवरणं स्वीराऽनुग्रहः शारोत्पत्रप्राणाणां यथाज्ञेयं समेयति ।

१०८ सारिवादिवटी

शुद्धपारदगन्धकौ प्रति दशाणकौ, नागोद्वयाण-
काधिनेकतोलक, तीक्ष्णलोहभस्म ४ तोलकं, ताम्र
भस्म २ तोलकं, सर्वाण्यपि कुमारीद्रवेषेण मर्दयित्वा
शुद्धताम्रपाने निक्षिप्य दिनत्रयपर्यन्तं प्रचण्डाऽऽतपे
स्थापयेत् । नितरां शुद्धतरं भस्मोपलभ्यते । एतद्गु-
ह्यापरिमितं प्रातः सायं मधुना सेवितं सत्सकलपञ्जर-
पाण्डुकामलाश्वयथुगुल्ममेहजाताद्रीनाशयति । अ-
स्यानुपानम्—हेमक्षीरी १० पला, अनन्तमूलं-
४ पलं, विल्ववृष्णहिंन्वामूला (नह्युत्पि. तै०) ५ अ
गन्धाश्वेतहिंस्रामूल (तेल्लुत्पि. तै०) पिण्डा-
लुक (पद्मभङ्गा तै०) मदन (चित्रमङ्गा) नागराणि
प्रति द्विपलानि, चित्रकमूलत्वक् २ १/२ पला, मरिच-
पिपप्ल्यावेकेरुपले, पलालवद्भत्वचोऽर्द्धाऽर्द्धपलाः, ए-
तानि सर्वाणि चूर्णाकृत्याऽर्द्धतोलकपरिमिते चूर्णे
पूर्वाकं भस्म गुह्याद्वयपरिमितं संयोज्य मधुना
सह सेवनात्सन्ततैकाहिकादिज्वरघातकटिशूलकृष्ण-
प्रधानव्याधयो निवर्तन्ते । (अगस्त्य०)

१०९ सुदशनरसः

शुद्धपारदगन्धकमन.शिलापत्सनाभद्रदाऽन्नकृता-
लरहेममाक्षिकाणि प्रत्येकं सपादतोलकानि शूहीत्या
चाङ्गेरी (पुलिचिन्ता) जम्बीरवीजपूरनिगुण्डाभृ-
ङ्गाजरसैः प्रत्येकदिनं मर्दयित्वा शुष्कचक्रिका शरा-
वयोरवल्क्यदाऽर्द्धगजपुटो देयः । पुन. सत्वे निक्षिप्य
चित्रकपञ्चाङ्गकषायेन दिनद्वयं मर्दयित्वा मापप्रमाणा
घटी. कृत्या छायायां शोषयेत् । एतस्यानुपानम्—
रामठत्रिकटुकर्पूराणि समभागानि चूर्णाकृत्या
पादतोलके चूर्णे मधुना सह पूर्वोक्तवटी सेवनीया ।
एतेन सन्निपातवातोन्मादापाणिपादस्तम्भश्यासका-
सक्तनातकफक्षयपक्षकण्ठडम्बक (धनुर्वात) शिरो-
धाव्यादयो रोगा नश्यन्ति । क्षीरार्धं पथ्यम् । अन्य-
त्किमपि न देयम् । (अगस्त्य०)

११० सुवर्णासिन्दूरम्

शुद्धं सुवर्णं मृदुतया चूर्णाकृत्या वीजपूर (मादी
फल) रसेन मर्दनसमये किञ्चिन्नरसार टङ्कणञ्ज
मेलयित्वा सम्पग्निसृष्ट शोषयित्वा पुनर्नीलीपत्र-
रसेन सेहण्डक्षीरेण च प्रतियामद्वयमर्दयित्वा शुष्क-
चक्रिका विधाय शरावसम्पुटेऽचरद्वय गणेशमभ्यर्चयं
मयूरपुटो देयः. सिन्दूर सम्पगते । एतच्चण्डुलपरि-
माणं गोपूतेन सह सेवनीयम् । अनेन पाण्डुघृष्टशूल
कपालशूलपीनसा नश्यन्ति । मधुनोन्मादादयः,
शार्कत्या मणा, चिर्चाचिकावमनादयः, उष्णादकेन

उत्रादयः, शीतोदकेनाऽतिसारो गुल्मरोगश्च नश्य-
ति । मृगमदेन सह शरीरं सुवर्णञ्जायं भवति । एक
संनत्सरसेवनात्पञ्चशतवत्सरं जीवति कायकल्पसि-
द्धिश्च भवति । क्षीरार्धं मापवटका, कन्दपदार्था-
श्चैते पथ्या । अम्लक्षारादिकं वर्ज्यम् । (अगस्त्य०)

१११ सूतसिन्दूरम्

शुद्धपारदः १ पलः, रसकपूर्वटङ्कणकस्तूरीहरिद्रा
(आवाहल्दी हि०) दाहहरिद्राः प्रत्यर्द्धतोलिकाः,
एतानि सर्वाणि खल्वे निक्षिप्य ताम्बूलकृष्णघञ्जूर
रसाभ्यां प्रतियामनयं मर्दयित्वा (मर्दनसमये कला-
चतुष्टयमूपरस्वारमपि योजनीयम्) शुष्कां चक्रिकां
विधाय शरावसम्पुटितं घृता कुक्कुटपुट देयम् ।
एतसिन्दूर नयनीतेन सह पादगुह्यापरिमितं
भोकव्यम् । अनेन कुक्कुटकास (मन्दारकास-
कुक्कुटरदग्नु तै०), पित्तवायुः, घट्टक्षणप्रणयः,
दोषपञ्चराश्व निवृत्ता भवेयुः । यथोचितं पथ्यम् ।
(अगस्त्य०)

११२ स्वर्णभूपतिरसः

पारदतालकगोदन्त (कर्पूरशिलाजतु तै०) ता
प्रगन्धरसकदरदभस्मानि शुद्ध विपञ्च समभाग
शूहीत्या अनन्तमूलचित्रकेशुरकमूलरसैः प्रत्येक
याम मर्दयित्वा तण्डुलमात्र मधुना सह सेवितं सत्
मेहशूलगुल्ममहासन्निपातादिदोषञ्जराशयति औ-
दुम्बरशालादुसूष्णवालवृन्ताकशिशुशिमबीगोक्षीरघृ-
तपुराणतण्डुलाश्च पथ्या. (व्यास०)

११३ हिह्रुलादिवटी (प्रथमा)

लोहरसकर्पूरभस्मनी, शुद्धपारदगन्धकजयपाल-
कृष्णधूर्तवीजतालमल्लविपाणि कटुरोहिणी श्वेतत्रिवृ-
त्तिकटुतित्तुम्बीवीजश्वेताऽपरजिता (तेल्लुगण्डि-
ना तै०) मूलहरितम्भः, एतानि समभागानि चूर्णा-
कृतानि सत्वे ताम्बूलीरसेन सत्तदिनपर्यन्तं मर्दयित्वे
कपल मरिचचूर्णं विमिश्रय्योदकेन विमृष्टं मरिच-
माणां घटी कुपोत । उष्णादकानुपानेन दिनत्रय से-
विता सर्वज्वरान्नाशयति । (व्यास०)

११४ हिह्रुलादिवटी (द्वितीया)

शुद्धरदविपपारदगन्धकटङ्कणजयपालवीजानि,
सेन्धवचिकटुकहरीतकी श्वेतत्रिवृदरिषीजमञ्जयि
प्रकमूलानि प्रति सपादतोलकानि स्नुहीक्षीरेण मर्द-
यित्वा मरिचप्रमाणा घटी एव्योष्णादकानुपानेन
सेविता चेद्वातप्रमापजनितसन्निपातशूलान्. सर्वेऽपि
नश्यन्ति । पथ्यमुष्णादक तण्डुलाश्च, अन्यत्कि-
मपि न देयम् । (व्यास०)

११५ हेमरसगुटिका

शुद्धदरद्विपयराटिकाभस्म त्रिकटुसैन्धवचित्र-
कान् समभागान् जम्बीररसेन चतुर्यामं विमृद्य मरि-
चप्रमाणा वटीश्यायानुष्णा विधाय मरिचकष्याये म-
धुनि वा सेविता सकलज्वरद्वोषाघ्नाशयति । वात-
शोतलाधिन्ये सति त्रिचतुरैर्लवङ्गैः सह भक्षणीया
पथ्यं रोगोचितम् । वातपदार्थास्त्याज्याः । (अगस्त्य०)

इत्यगस्त्यन्यासप्रोक्तसप्रयोगाः समाप्ताः

परिशिष्टो भागः

अथान्नादिप्रसिद्धरसप्रयोगाः

(प्रायो ग्रन्थविशेषपरिचयरहिताः)

१ अष्टादशकलरसः

हिङ्गुलोत्पपारदः, रससिन्दूरः, शुद्धगन्धकं,
सञ्जीर, गौरीपापानं, मलः, मुहाराष्टकं, रसरूपूरं,
औपरक्षारः, ईसपाददरदः, अहिकेनः, शुद्धकान्तम्,
कर्कटशुद्धी, हरीतकीपुष्पं, तुयकः, कर्पूरं, तालक-
ञ्जैतेषु षोडशद्रव्येषु शशुमिप्रमायपरिष्णानपूर्वकं तत्त-
त्समभागं खल्वे निक्षिप्य सर्वाणि चूर्णीकृत्य कुक्कु-
टाण्डतैलेन दिनत्रयं सम्यग्विमृद्य षट्शतम्पुटे संरक्ष-
णीयम् । एतत्सिक्थरूपमौषधमसाध्यसन्निपातकुष्ठ-
पातश्लेष्मरोगेषु अर्धगुञ्जामप्रमाणमुपयोजनीयम् । पथ्यं
रोगानुरूपम् ।

कुक्कुटाण्डतैलनिःसारणोपायः—२० अथवा २५
कुक्कुटाण्डानुष्णोदके निक्षिप्य घण्टाहयपर्यन्तं
मन्दाग्निना विपाच्य उपरितनं त्यजं स्फोटयित्वा त-
दन्तरवल्लं श्वेतकञ्चुकं सुरिकया ह्योहृत्य तद्भ्रं
विद्यमानपीतगोलकान्येःसोहृत्य लोहकटादं निक्षिप्य
शुद्धग्निनाऽऽख्यमपर्यन्तं पाके कृते गोलकानि सर्वा-
ण्यपि द्रवीभूय तैलरूपतामापरत्यन्ते । एतदेवाऽऽ-
ण्डतैलं चीनपात्रे स्थापयित्वा तत्तदुचितसमयेषु
सन्निपातादिष्वनुपानतया नियोजनीयमिति प्राचीन-
वैद्यरहस्यम् । अस्य प्रह्लनादेति पादे सञ्ज्ञा ।

२ कालान्तकसिन्दूरम् (महन)

ताम्बूलस्वरसंशोधिनं गन्धकं ५ तोलकं मूषामामर्दं
निक्षिप्य तदुपरि तण्डुलाग्रशोधितपारदं १० तोलकं
निघायाऽवशिष्टगन्धकचूर्णनाऽऽच्छाद्य लोहचक्रि-
कया मूषामुलं पिधाय सन्धिबन्धं विनय ज्वलद्द्वार-
माये स्थापयेत् । मूषामुलाभ्रानातयणैर्धूमोद्गमनपूर्वक-

विजातीयगन्धकज्जालादर्शनपर्यन्तं निरीक्ष्य बहिः
संस्थाप्य पिहितमुद्गाद्य निर्वोतप्रदेशे स्थाङ्करीतम-
वस्थापयेत् । अत्रेयं सूचना—गन्धकप्रक्षेपात्पूर्वमेव
पलेकं गन्धकं ताम्बूलस्वरसेन विमृद्य मूषायाः कण्ठ-
पर्यन्तं विलिप्त्वाऽऽतपे शोषणीयम् । तदनन्तरं गन्ध-
कप्रक्षेपादिक्रिया कर्तव्या । एतच्च दीर्घकुशिश्ला-
दिरोगेषु कालमेहादिषु च निरुद्धाः प्रवर्तते । अत्र
शर्करामिश्रितं दुग्धाभ्रं पथ्यम् । परुषण्डलसेवना-
त्कुष्ठनिवृत्तिर्भवति । औषधञ्च दधिमण्डेन नय-
नीतेन वा सेवनीयम् । शारधूमपाननस्यादिकं
त्याज्यम् ।

३ गन्धकसिक्थकम्

एकपलामलसारगन्धकचूर्णं लोहकटाहमाये नि-
क्षिप्य पात्रस्याऽधस्तादेरण्डतैलेन दीपं प्रज्वाल्य
भूम्यामलकीपत्रस्वरसं २४ तोलकं गृहीत्वा गन्ध-
कचूर्णस्योपरि किञ्चित्किञ्चिद्भासं दद्यात् । लोहश-
लाकया मन्दं मन्दं चालनीयम् । स्वरसस्य समाप्तौ
सत्यां गन्धकचूर्णं सिक्थं भवति । एतद्यणकप्रमाणं
गोघृतेन सह देयम् । अनेन मेहपिडिकादिव्याधयो
नियतन्ते ।

४ चण्डमारुतरसः

शुद्धं रसकर्पूरं ८ भागं, दरदः ४ भा०, सञ्जीरं
(दालचिकना) गन्धकञ्च २-२ भा०, रससिन्दूरं १६
भागं गृहीत्वा यामह्वयं मर्दयित्वा तण्डुलप्रमाणं स-
न्निपातेऽनुपानविशेषैर्देयम् ।

५ ज्वरकुलान्तकवटी

दशतोलकं मरिचं सद्भुज १५० तोलके जले
निक्षिप्यैकतोलकं शुद्धसञ्जीरं (दालचिकना)
त्रिगुणीकृतवज्रे पोर्टूली बद्धा दोलायन्त्रविधिना १५
तोलकजलावशेषपर्यन्तं विपाच्य माण्डमन्तार्यं स-
ञ्जीरं मरिचानि च खल्वे निघाय दोलायन्त्रीयाऽ-
वशिष्टतैलेन विमृद्य माप (उड्ड) प्रमाणा वटीः
कुर्यात् । दिनत्रयाऽनन्तरमेवा वटी न प्रयोज्या ।
मात्रां भक्षयित्वा किञ्चिदुष्णोदकानुपानं देयम् ।

६ ज्वरस्तम्भनवटी (दुरार्द्रवटी)

शुद्धपारदं १॥ तोलकं, जीरकमस्मार्धतोलकं,
शुद्धगौरीं पादतोलिकां खल्वे निघाय मूषामूलस्वर-
सेन दोलायन्त्रविधानेन रमशोषणपर्यन्तं पाकं कृत्वा
मधुना नागरकलेन वा एका वटी सेविता ज्वर-
स्तम्भनं भवति । पथ्यं यथेच्छम् ।

७ तरणाकरसः

स्वर्णं पारदसञ्जीरं श्वेतमास्करादिदुग्धम् ।
सिन्दूरञ्च समं ध्याप्यं सर्ववस्तुसमं समम् ॥

रक्तण्डुलवृषेण कुम्कुटाण्डरसेन च ।
 वल्लीदलेन सन्मिथं पुनः कुम्कुटपूरितम् ॥
 तरुणाकरसो नाम सन्निपातहरः परः ।
 अर्धोरति च मन्त्रेण संस्थाप्य पृथिवीतले ॥
 वामदेवाय सङ्गृह्य सद्योज्ञातमिदं पचेत् ।
 ब्राह्मणं भोजयेत्पञ्चादौपथं सम्यगर्चयेत् ॥

टि०—सर्पपादरसमकरुदरससिन्धुसन्धीरव्योपाणि समभाषानि
 गृहीत्वा रक्तण्डुलमण्डेन, कुम्कुटाण्डरसेन, नागवल्लीदलखरसेन
 च प्रति वामचतुष्टय विमृष्य त्रयो भूयुः देवाः । अथ भूयुःस्य विवर-
 णम्—द्वारंशाहगुण्यऽऽयाम् अङ्गुलिनयत्रिरुत प्राप्त विधाय सर्पिका-
 र्ण्डुल निकृताभिरास्य तदुपरि शुष्का पूर्वापचक्रिका विन्यस्य चक्रि-
 कोपरि भूसमा मित्रामास्य निकतोपरि पङ्क्तिः सप्तभित्तोलकैः पुट
 दद्यात् । एकतसिन्धुटे औषध कुम्कुटाण्डरसेन मर्दयेत् । शुष्क-
 क्रिकोपरि ताम्बूलखल्लेनाऽऽर्द्धाङ्गुल कच च दत्त्वा विशेष्य पुटे निद-
 ध्यात् । एव हीत्वा पुटय देवम् । तुरीये पुटे रक्तण्डुलमण्डेन दिन-
 त्रयं विमृष्य यथेष्ट दत्त्वा शृङ्गसमुटे स्थापयेत् । महाभक्तिपान्थ्याधि
 गुजामात्र प्रयोक्तव्यम् । पथ्य यथोचितम् ।

८ ताम्रसिन्दूरम्

हंसपादरसः, पलाण्डुरसे शुद्धो गन्धकः, पारदः,
 मनःशिला, तुर्यं, तालकञ्जैतानि प्रत्येकमर्घतोलकानि
 रत्नै विन्यस्य रक्तकापांसपत्रखरसेन विमृष्ट
 यन्तुलाकारं शुष्कां चक्रिकां विधाय वितस्त्रि
 मात्रोच्छ्रिते मृत्पात्रेऽर्द्धमागपर्यन्तं समुद्रलवणं
 विन्यस्य लवणस्योपरि चक्रिकां निधाय पट्टतोलक-
 शुद्धताम्रनिर्मितसमुटेन विधाय कण्ठावधि भाण्डं
 लवणेन पूरयित्वा शरावेण भाण्डमुलं सम्यङ्गि-
 रुद्ध चतुर्यामपर्यन्तं गाढाग्निना पाकं कुर्यात् । उप
 रितनताम्रसमुटे मेघवर्णतया भस्म सञ्जायते ।
 पतत्तण्डुलपरिमाणं घृतेन मधुना नवनीतेन वा से-
 वितं सदसाध्यदयासकासविषमसन्निपातकुष्ठादिम-
 हारोगान्निवारयति । यथोचितं पथ्यम् ।

९ दरदसिन्धुकम्

यितस्त्रिप्रमाणोच्छ्रितमृत्पात्रतलभागे द्वादशतोल-
 कानि श्वेताकंपुष्पाण्यास्नीर्य तदुपरि पट्टतोलकं
 समुद्रलवणं, लवणोपरि त्रितोलकं शुद्धदरदण्डं नि-
 धाय तदुपरि पुनर्द्वादशतोलकानि श्वेताकंपुष्पाण्या
 स्नीर्य पट्टतोलकञ्च लवणं निधाय पात्रमुनं शरावेणा
 ऽयगृह्य दृढसन्धिमुद्रणं कृत्वा शतसप्तचाकरैरण्यां-
 रण्डकैः पुटं दद्यात् । स्वार्द्धरात्रे सत्सौषधं पुष्पक्ष-
 राद्रिकिट्टकं गृहीत्वा चोपनापे निक्षिप्य दशतोल-
 कपरिमितं जम्बीररसमापूर्य तन्मध्ये रक्तजाकुसुम-
 द्वादिनि १० तोलकानि मेलयित्वा दिनसप्तकं तथैव
 संस्थाप्याऽष्टमदिने धुल्यवामारोच्य सिन्धुकं निष्पा-
 द्य कच हूर्पां रक्षयेत् । अलाप्यदयासकासयोरति-
 सिन्धुकं तण्डुलप्रमाणं देवम् ।

१० नवग्रहरसः

शुद्धं सूतं वत्सनामं लोहभस्म च दङ्गणम् ।
 व्योषं गन्धोन्मत्तबीजं सर्वैश्चैव समांशकम् ॥
 कृष्णभृङ्गरसैर्मथं घटी मुद्गरप्रमाणिका ।
 नवग्रहरसो नाम सर्वरोगहरः परः ॥
 द्वासे कासे क्षये गुल्मे प्रमेहे विपमज्वरे ।
 सन्निपातेऽतिसारे च कृष्णसर्पे च वृश्चिके ॥
 अशोतिघातरोगाणामामातौसारनाशनः ।

११ पक्षवातविध्वंसनरसः

हिङ्गुलोत्थपारदोल्लिपापाणे १-१ तोलके, शुद्ध-
 मल्लोऽर्द्धतोलकः, सन्धीरं पादतोलकं, नागरं २
 तोलकं, शुद्धहरीतक्याकारकरभरङ्गनिकाथीजान्येकै-
 कतोलकं, शुद्धहरीतक्याकारकरभरङ्गनिकाथीजान्येकै-
 कतोलकं, शूर्पाण्डुल्य ताम्बूलीदलरसेन दिनत्रयं
 सम्यग्विमृष्ट्य पञ्चसप्ततिनिम्बुकरसस्य शोषण-
 पर्यन्तं सम्यङ्गमर्दयित्वा सर्पप्रमाणाश्ल्यायाशुष्का
 घटीः कुर्यात् । प्रातःसायं घटीद्वयं गोघृतानुपात्रेन
 परिपेय्य कटुष्णजले तौलकं मधु मेलयित्वाऽनुपे-
 यम् । आढकीखण्डयुषो गोघृमरोटिका च पथ्या ।
 सप्तदिनपर्यन्तमौषधं निषेध्य त्रिंशत्तिदिनपर्यन्तं पथ्यं
 पालनीयम् । मासद्वयात्परं मुद्गान्नं भक्षणनीयम् ।
 ततोऽन्यच्छाकशाराऽम्लधूमपानादिकं सर्वधं त्या-
 ज्यम् । यदि बद्धमूलः पक्षवातः स्याद्विषसाहमौषधं
 सेवनीयम् ।

१२ पूरवटी (रसकूर्पूवटी)

पञ्चतोलकं रसकूर्पूरण्डं गृहीत्वा तदवगाहन-
 पर्णात्तस्त्रीस्तन्ये निधाय दिनत्रयपर्यन्तमातपे शोष-
 येत् । प्रत्यहं नवं स्तन्यं पूरणीयम् । चतुर्थदिवसे
 कूर्पूरशकलान्मलं हरीरुल्य हरच्छलोहकटाहै २५
 तोलकं शुद्धं मधु निक्षिप्य पूरशकलं निधाय दीपा-
 ग्निना मधुशोषणपर्यन्तं पचेत् । ततःपरं पूरशकलं
 रत्नै निक्षिप्य पलावाताममज्जगोघृमपिष्टानि प्रति
 सपादतोलकानि मेलयित्वा शुद्धजलेन द्विदिनं
 विमृष्ट्य मसुरप्रमाणा घटीश्ल्यायानुष्काः कुर्यात् ।
 प्रातःसायमेकैकां घटीं भक्षयेत् । द्वितीयदिवसादा-
 रभ्य त्रिदिनपर्यन्तमेकां घटीं धेलाद्वयं प्रचर्षयेत् ।
 पञ्चमदिवसात्पूर्वदेकैकघटीश्ल्याः, पथं सप्तदिवसैः
 प्रयोगमनुष्ठाय चतुर्दशदिवसपर्यन्तं क्षीराश्लेषो
 स्यात् । मासद्वयपर्यन्तं च स्त्रीसङ्गां वर्यः ।

१३ पूर्णचन्द्रोद्धारसः

रजतसुवर्णताम्रनामयङ्गाऽम्लकान्ततीक्ष्णविद्रुश-
 मुकापात्द्वेहमाशिकमस्मानि, शुद्धदङ्गणमनःशि-
 लागन्धकांश्चेति सयान्तममागान्गृहीत्वा मुद्गरपर्णा-
 र्ककापांसुष्पशीरविदारीभाषपर्णाजम्बीरनुलस्य-

तास्वरसैरेकैकदिनं विमृद्य शुष्का घटिका विधाय काचकूपिकायामथरुद्धय दिनत्रयपर्यन्तं त्रिविधाग्नि-
भियांलुकायन्त्रे पाकं कुर्यात् । स्वाङ्गशीतमौषधं
खल्वे निक्षिप्य मृगमदजातीपत्रकपूरैरलामरिचनाग-
केशरत्नकक्रोललयङ्गपिपलीजातीफलानां सममा-
गानां चूर्णं समानं मेलयित्वा नागवह्नीदलरसेन
विमृद्य गुञ्जाम्रमाणा घटिकाः कुर्यात् । ताम्बूलीस्व-
रसेन सहैकैका सेवनीया । अनेनोन्मादमूर्च्छाक्षयपा-
ण्डुकामलाहलीमककफरातबुध्रंघणीस्वरऽऽमयध्वा-
सकासकपित्ताऽऽनाहराजयश्मप्रमेहादयो नश्यन्ति ।
गण्डदण्डिदंहुपीरक्तवृद्धिश्च भवति । दुग्धशर्करासं
पथ्यम् ।

१४ पैत्यान्तकरसायनम्

आर्द्रकं ५ पलं, सैन्धवं २॥ पलं, मरिचानि २
पलानि, सूर्यशरं १॥ तोलकं गृहीत्वाऽऽर्द्रकं जलेन
प्रक्षाल्याऽघशिष्टानि द्रव्याणि विमृद्याऽऽर्द्रकेण सूर्य-
शरं मेलयित्वा यामत्रयं सम्यग्निमृद्य वर्धरास्थिम-
माणाघटिकाः कुर्यात् । एकैका घटी सेविता चेत्पित्त-
घातवमनपाण्डुरासकासाऽऽजीर्णदयो रोगा निवर्त-
न्ते । गर्भिणीनामपि द्वासकासगलपादशोधादिकं
नश्यति । पथ्यं यथोचितम् ।

१५ प्रमेहारिरसः

शुद्धाहिफेनजातीफलमृगमदहिमसारद्वङ्गणस्कटि-
कानरसारसूर्यशरशुक्रिकाशुद्धभेतमल्लानेकैकतोल-
कांगृहीत्वा श्वेताकेशीरेण यामचतुष्टयं विमृद्य चक्रि-
कां विधाय सम्यक् संशोष्य नूतनपुष्टमाण्डे ४० तो-
लिकां सुधामास्तीर्य तदुपरि चक्रिकां निधाय ४०
तोलिकया सुधयाऽऽच्छाद्य २४० उत्पलकैः पुं-
दद्यात् । पतदौषधं गुञ्जाचतुष्टयमामिक्षाऽनुपानेन
देयम् । पथ्यं यथोचितम् । अनेनौषाङ्गिकप्रमेहा
नश्यति ।

१६ विल्वमूलादिवटी (विल्वमुरारिः)

शुद्धपारदगन्धकविल्वमूलत्वक्तालीमपत्रपूतिक
रज्जबीजप्रन्थितगरत्रिफलाऽरिष्टशीजमज्जहस्त्रिदादीर्घी
१-१ तोलिकाः गृहीत्वाऽजामूत्रेण दिनत्रयपर्य-
न्ते विमृद्य घटीविधाय स्त्रीस्तन्येन नेत्रयोरञ्जनं
देयम् । अनेन सर्पवृद्धिकादिविपाणपुंयुर्विसृज्यजी-
र्णवाप्यादिरोगा निवर्तन्ते अम्लघर्ष्यं पथ्यम् ।

१७ महारसः (महादादिः)

गोक्षीरस्वेदितं महं स्तन्यशुद्धञ्च दरदमैकैकतो-
लकं पृथक् चूर्णीकृत्य शरावे चूर्णद्वयमपि निक्षिप्य
पञ्चसप्ततिजम्बीरफलस्वरसाम्रासं दद्यात् । पतन्दि-

यासम्पादने दिनचतुष्टयं भवति । ततः परं शराव-
स्थमौषधमैकीकृत्य चतुर्गुणितं प्रष्टुद्रपिपलीचूर्णं
मेलयित्वाकैकदिनपर्यन्तं विमृद्य काचपात्रे रक्षयेत् ।
विशुद्धित्वत्सरान्तरितभ्यासकासव्याधिषु तण्डुलप्र-
माणं गोघृतेन सह देयम् । एकवारभक्षणेनैव प्रबल-
भ्यासोपशान्तिर्भवति । दुग्धाघ्नं पथ्यम् ।

१८ महाप्रतापरसः

एकस्मिन्काचपात्रे सद्योगामयं विन्यस्य हस्तेन
घटिकाद्वयं सम्यग्घृष्ट्वा कुम्भकं निःसायं कृष्णतुल-
सीकल्केनैकयामपर्यन्तं घृष्ट्वा त्रितोलिकया शर्करया
सहैकतोलकं पारदं मेलयित्वाकैकतापर्यन्तं हस्तेन
घर्षणीयम् । यदा पारदोऽदृष्टः सन् शर्करया सहैकी
भवति तदा त्रिशन्मात्राः कार्याः । मात्राद्वयं
गृहीत्वा सूर्याभिमुखत उरथाय सूर्याय समर्प-
यित्वा दन्तस्पर्शं विना निर्गलेत् । किञ्चिच्छी-
तोदकमनुपानतथा पेयमेधं सायमपि दातव्यम् ।
पथं सप्ताहपर्यन्तमौषधं सेवनीयम् । दुग्धाघ्नं पथ्य-
मितरक्तिमपि न भक्षणीयम्, यदि मुलपाकः स्यात्ता-
म्बूलवह्नीदलेन सह गन्धकतैलं भक्षणीयम् । जनेन
गण्डमालाऽपचीराजम्रणमगन्दरगलकुष्ठादयः सर्वे
रोगा निवर्तन्ते । एकसप्तकेन रोगानिःशेषता न स्या-
त्सर्हि द्वितीयसप्तकेऽपि दातव्यम् ॥

१९ महामूर्च्छान्तकरसायनम्

कान्तलोहयोर्मम २-२ पलं, चन्द्रसारत्रिकुटुक-
त्रिफलाकुष्ठाऽऽसारकरभगजपिपलीजीरकद्वयविड-
ङ्गधान्यंकेलावीजलयङ्गजातीफलजातीपत्रजटामांसी-
तक्रोलत्वङ्गागकेशरचन्यग्रिधृतः प्रत्येकपलिका गृही-
त्वा वरप्रभृतं चूर्णं विधाय नागरं ८० पलं, जम्बी-
ररसः ४० तोलकः, धीजपूररसः ४० तोलकः, वृद्ध-
जम्बीर (संगदराज) रसः ४० तो०, मृगमदः
पादतोलकः, गोघृतं ४० तो०, मधु २४ तो०, देशी-
यशरूप ८० तोलिका, पतानि सहृहा ३०० तोलक-
नीलकचुरामूलस्याऽष्टमागाऽऽरिष्टबाधे शर्करां
निक्षिप्यापयुक्तसत्तान्द्रत्या तन्तुपाकं विधाय चूर्णं
प्रक्षिप्याऽखलोह्य मन्दांसि शन्या मध्याग्यादिकं
निक्षिप्याऽन्ते कस्त्र्यादिसुगन्धिद्रव्याणि मेलयित्वा
लेहापात्रेन सिद्धं रसायनं गृहीत्वा स्थापयेत् । दीवे-
कालमूर्च्छांरोगमिरेतदामलकप्रमाणं लेह्यं प्रयहं
प्रातः सायञ्च सेवनीयम् । अनेन चण्डदेव्यपञ्चविध-
मूर्च्छापित्तकासाऽम्लपित्तसिराऽयरोषध्वासपत्राऽ-
यरोषपित्तपिडिकाप्रभृतिरोगा नश्यन्ति । पथ्यं रोगा-
नुकूलम् ।

दि०—अत्र चन्द्रराशयेन कण्डूत्यादक क्षुपो आसौ न तु मर्कटी, आग्नादौ तथैव व्यवहरात् ।

२० मेहगजाङ्गुशरसः (महदादि)

एकतोलकं कडुपुं (मृदापट्टङ्गं) विशोष्य कृष्ण-
तुलसीपत्रजम्बीररसाभ्यां प्रतिघटिकाद्वयं प्राप्तं
दत्त्वा पूर्वांकरसद्वये एकदिनं विमान्य परेषुः सम्यक्
प्रक्षाल्य शोषयित्वा विचूर्ण्य मरिचहरिद्रे एकैकतोल-
के संयोज्यैकयाममर्दनेन कडुपुं सिन्दूरं भवति ।
एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं गोघृतेन सह सेवनीयम् । गो-
धूमरोटिका दुग्धञ्च पथ्यम् । शर्करा, घृतं, तण्डु-
लाक्षं, क्षारत्रयादिकं सुतरां वर्ज्यम् । यत्र मेहोर्गा-
धिन्मयवशात्सर्वमपि शरीरं स्फुटितं सङ्गणस्या-
नेभ्यः किम्यादयः समुद्भूय प्रयादिकं प्रसरति एता-
दृशमेहोर्गस्यैतदौषधम् । दिनत्रयमेव दातव्यम् ।
चतुर्थदिवसे गृहजम्बीररसमिलितहरिद्रासंयुक्तं चि-
त्राक्षं भक्षणीयमौषधं न सेवनीयम् । एकसप्तके व्य-
तीते सति शुद्धगन्धकुरससिन्दूरपुराणतण्डुलाः १-१
तोलकाः, रसकर्पूरं २ तोलकं, शुद्धकडुपुं पादतोलकं
सर्वाण्यपि शुद्धजलेन विमृद्य गुञ्जाप्रमाणा घटिकाः
कुर्यात् । सप्ताहपर्यन्तं प्रत्यहं प्रातःकाले घण्टतेले
एकां घटीं निमज्ज्य भक्षयेत् । आढकीखण्डयूषाञ्च
पथ्यम् । अन्यत्किमपि न भक्षणीयम् । लघणः सुतरां
वर्जनीयः ।

२१ मेयनादरसः

सूर्यक्षारः १६ तोलकः, नरसारः ९ तोलकः,
स्फटिका ५ तो०, गोदन्तं (कर्पूरशिलाजतु. तै०)
४ तो०, कलनारभस्म (सङ्गेपलीता यू०) २ तो०,
प्रवालभस्म ५ तो०, एतानि सर्वाण्यपि विचूर्ण्य
मृत्पात्रे निधायैकशततोलकं नारिकेलजलं निक्षिप्य
जलाघशोषणपर्यन्तं पाकं हृत्वापथं ग्राह्यम् । एतदौ-
षधं गुञ्जावतुष्टयपरिमितं शर्करामिश्रितमद्रमुस्तार-
सेन, तण्डुलशालनोदकेन, नारिकेलजलेन वा देयम् ।
अनेन लिङ्गदाहोपदंशोपसर्गिकमेहा नश्यन्ति ।

२२ मेहपञ्चाभृतवटी

शहभस्म ५ तोलकं, गोदन्तं (कर्पूरशिलाजतु)
कलनारभस्मैलावीजतण्डुलानि प्रत्येकं सपादतोल-
कानि गोक्षीरेण नारिकेलजलेन च प्रतियामद्वयं अर्द-
यित्वा कतकबीजशोधितजलेन सह कतकचन्दनेन
वा एका घटी देया । रक्तवीतशुद्धरणमेहादिनिवृत्ति-
र्भरति । पथ्यं यथोच्छ्रम् ।

२३ मेहाङ्गुशरसः

शुद्धरसः ५ तोलकः, जातीफलं २॥ तो०, जाती-
पत्री वैशाखैकतोलकं, एतानि सर्वाणि विचूर्ण्य

शुष्कारिकेलगोलकान्तर्निक्षिप्य तेनैव गोलकर्त-
ण्डेन छिद्रं पिघाय पञ्चशेकगोक्षीरे निक्षिप्य
सर्वस्य क्षीरस्याऽवशोषणपर्यन्तं पाकं कुर्यात् ।
क्षीरसत्त्वेन सह नारिकेलखण्डादिकं मिलित्वा किङ्क-
रूपतयोपलभ्यते । तन्नीलवर्णं किङ्कं सम्यग्विमृद्य
स्थापयेत् । एतद्गुञ्जाद्वयपरिमितं घृतेन मधुना वा
देयम् । एतेन रक्तपीतशुद्धहरिद्रातनुमधुमेहादयो
निवर्तन्ते । पथ्यं रोगानुकूलम् ।

२४ मेहान्तकरसः (महदादि.)

शुद्धपारदगन्धकविपताघ्नभस्मत्रिकटुकरेणुकाभ-
द्रमुस्ताजटांमस्येलावीजलवङ्गचित्रकमूलत्वग्जाती-
फलजातीपत्रकेशरचन्द्रसारविडङ्गानि समभागानि
चूर्णाङ्कृत्य विजयापत्ररसेनाऽऽभवात्वा दत्त्वा छाया-
शुष्कं विधाय मधुना लेहापाकं कृत्वा चणकप्रमाणं
सेवनीयम् । अनेन विशतिर्महाः, अजीर्णश्वासकास-
क्षयातिसारश्वयथुवहुद्रुमनादयश्च रोगा नश्यन्ति ।
पथ्यं यथोचितम् ।

२५ मृतोद्धारणरसः

शुद्धमहभूपिकगौरीदोड्डिहरिद्वलपापानानि शुद्ध-
पारदद्विहुलमनःशिलागन्धकयत्सनाभट्टङ्गानि, ता-
म्राऽन्नकलोहभस्मानि, क्षारत्रयलवणपञ्चकातिवि-
पाकुष्ठानि च सर्वाणि समभागानि गृहीत्वा विकटु-
कचित्रककाथाभ्यां जयपालवीजतैलेन चैकैकदिनं
विमृद्य कृष्णसर्पमयूरकूर्ममहिषीछागपित्तानामैकै-
तोलकानां क्रमशो भावना दत्त्वा गुञ्जाप्रमाणा घटि-
काः कुर्यात् । भीमसेनकर्पूरानुपानेन यद्वा शर्करया
सेवितव्यम् । सोपद्रवाणां सन्धिपातदोषाणां निवृत्ति-
मेवति । श्लेष्मप्रधानघातरोगोऽपि नश्यति । नारि-
केलजलपानं, श्रीचन्दनलेपनं, कामिनीसम्भाषणञ्च
न कार्यम् ।

२६ रसरानुपर्वटी

समभागपारदगन्धकयोः कजली इवीकृत्य सम-
भागं ताम्रलोहयोर्भस्म मेलयित्वा कमलाग्निना
मृदुपाकं विधायैरण्डपत्रेषु पर्पटिकां कृत्वा जम्बीर-
रसेन पञ्चकोलककायेन चैकैकदिनं भावयित्वा सं-
शोष्य तण्डुलमण्डनेकदिनं विमृद्य पूर्वांतीपघसमं
टङ्गुणं सौवर्चलञ्च मेलयित्वापिघाङ्गभागं मरिचचूर्णं
संयोज्य चणकामलेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृद्य शोष-
यित्वा धनानाल्यां स्थापयेत् । एतश्चणकप्रमाणमनु-
पानविशेषः सर्वरोगेषु दातव्यम् ।

दि०—रसपथीनामिभ्राजपि भावनावैल्लक्ष्यन्तारसत्त्वेन प्रदर्शिता ।

२७ वसन्तकुसुमाकररसः (प्रथमः)

शुद्धं कनकं तारं रसेन्द्रं पञ्चनिष्कम् ।
यद्गभस्म च सिन्दूरं ताप्यं लोहमयोमलम् ॥

प्रत्येकञ्च चतुर्निष्कं कान्तं गरलमेव च ।
ताम्रभस्म त्रिनिष्कं स्यात्प्रवालं मौक्तिकन्तथा ॥
कर्पूरञ्च तथा कुर्यात्कस्तूरीं द्वयनिष्किकाम् ।
सम्मर्थं वासास्वरसे त्रिदिनञ्च भिपग्वरः ॥
शतावरीगोष्ठुरजैर्विदारीवटरोहजैः ।
सारिवासहदेव्युत्थैश्चन्द्रनाद्रिश्च खादिरैः ॥
कार्पासपुष्पसङ्गकनेविधुमृणालजैः ।
मालतीपुष्पसेव्योत्थैरेभिद्रावैः पृथक्पृथक् ॥
भावयेत्सप्तदिवसान् सेवनीयं प्रयत्नेतः ।
गुञ्जाष्टकप्रमाणेन सिताऽऽज्यमधुसंयुतम् ॥
नवनीतेन सम्मिश्रं गवां क्षीरश्रियोजयेत् ।
प्रत्यहं रक्तिकामात्रं प्रमाणं वर्धयेत्ततः ॥
गुञ्जापोडशपर्यन्तं वर्धयेत्सर्वरोगजित् ।
कृष्णं रक्तञ्च पीतञ्च श्वेतञ्चैव प्रमेहकम् ॥
अस्थिवलावं सोमरोगमरोचकमघृन्दरम् ।
मांसधावनसङ्घाशं सर्वातीसारमेव च ॥
प्रमेहान्विशतिविधान्मूत्रदोषांश्च विनाशितम् ।
अशीतिं शुद्धजात्रोगान्सर्वशूलहरं परम् ॥
ऊर्द्धशूलं योनिशूलं पार्श्वशूलं विरोपतः ।
विनाशयेत्किं बहुना कृष्यं धातुवियर्धनम् ॥
आयुष्यं पुष्टिर्दं मेघ्यं कान्तिसौभाग्यवर्धनम् ॥
महावसन्तनामाऽयं कुसुमाकर ईरितः ॥
वर्षिकं भक्षयेन्नित्यं हन्ति रोगानशोपतः ॥

२८ वसन्तकुमुमाकरसः (द्वितीयः)

गोरोचनं केशरञ्च समभागं, द्वयोः समं शिलाज-
तुभस्म (सफेदसुरमा), सर्वसमं निम्बनियांसम्,
पतत्सर्वमपि खल्वे निधाय गोदधा दिनचतुष्टयं
मर्दयित्वा मुद्गरप्रमाणां घटीं कुर्यात् । श्वेतरक्तप्रदरा-
दिषु प्रमेहेषु च तण्डुलोदकेनोपयोज्यम् ।

२९ वातगजाङ्घुशरसः (महादादिः)

पारदं रक्तमुरगं रौप्यकं कनकन्तथा ।
मण्डूरं नागसिन्दूरं श्यूपणं भृङ्गमूलिका ॥
गारुत्मतश्च मुक्ताश्च समं चूर्णं प्रकल्पयेत् ।
घातप्रधानरोगेषु टङ्कणं विपसंयुतम् ॥
आर्द्रकस्य रसेनेव कृष्णनिर्गुण्डिकारसैः ।
नागवह्नीरसेनेव जम्बीररसमर्दितम् ॥
प्रत्येकं त्रिविधमृद्वैवं पङ्क्तिगणयेन मर्दयेत् ।
सर्वेषां घातरोगाणां दद्याद्युक्तरसेन वै ॥
अपस्मारि धनुवांते विद्रवां रक्तगुल्मके ।
अदमरीमूत्ररुच्छ्रेषु सर्वगात्राङ्गकम्पने ।
प्रयतवातरोगेषु हनुस्तम्भेषु पारदके ।
महानयं सर्ववातगजाङ्घुरा इतीरितः ॥
पथ्यं यथोचितं प्राह्यं सर्वरोगेषु योजयेत् ।

३० व्रणान्तकरसः (महादादिः)

यवानिका ४ तोलिका, खुपसानिका ५ तोलिका,
क्षुद्रहरीतकी ४ तोलिका, अम्लतकशोधितमहात-
काः ४ तो०, पारदः १ तो०, रसकर्पूरम् १ तो०,
मयूरतुथ्यं १ तो०, एतानि चूर्णीकृत्य १२० निम्बुक-
रसेन मर्दयित्वाऽरिष्टबीजप्रमाणां घटीं कुर्यात् । एका
घटी प्रातर्गोघृतानुपानेन निर्गिलनीया । क्षीरशर्क-
रान्नं पथ्यम् । एवं सप्ताहं कार्यम् । चणकमसूरमुद्ग-
मूलकघातिकादयः सुतरां वर्जनीयाः ।

३१ सञ्जीवमहाद्रावकम्

शुद्धसञ्जीवसैन्धवबिडलघणोपरसूर्यक्षारस्फटि-
कासमुद्गलघणानि १-१ पलानि विचूर्ण्योर्द्धनलिकाय-
न्त्रेण द्रावकं प्राह्यम् । महाद्रावकचद्रोगेषूपयोजनीयम् ।

३२ सञ्जीवसिक्वकम्

एकतोलकं सञ्जीरं परिपक्वकारयेत्तुफले विन्यस्य
मृद्धसैः संघेद्य मिथश्चतुर्भिर्वात्पलकैः पुटं दत्त्वा
त्वच्छकटाहं निक्षिप्य शिशुद्रयमूलत्वक्कारयेत्ल-
तामृदुलपत्रनुलसीरक्तकार्पासपत्रस्थरसान् प्रतिपञ्च-
तोलकान् दत्त्वा विपचेत् । शुष्के सति पञ्चतोलकं
मधु मिश्रयित्वा काचपात्रे सम्भृत्य स्थापनीयम् ।
एतत्सञ्जीवसिक्वकमसाध्यव्यासकाससन्निपातज्या-
घ्रियु महाघातप्रकोपे च द्वित्रिवारमुपयोज्यम् । एत-
दौषघसेविनां मयुरं वर्ज्यम् ।

३३ सिक्वद्रावकम् (महाद्रावकम्)

स्वदेशिसिक्वकं २४ तोलकं, सिक्वता १६ पलिका,
शुद्धमहुषापाणरसकर्पूरदरदचन्द्रसारतुफकसैन्धव-
स्फटिकापिप्पलीमूलजीरकक्षुद्रापिप्पलीपवानोराजि-
कारास्नाहरीतक्यः प्रत्येकपलिकाः, महिषाक्षगुग्गुलुः
२ पलः, एतेषु महूरसकर्पूरदरदान् सम्यग्विचूर्ण्य
शेषद्रव्यचूर्णे मिश्रयित्वा सिक्वकञ्च सहस्रं सर्वमपि
सिक्वतायां मेलयित्वा पुष्टमृद्राण्डे निभायोर्द्धनलि-
काविधिना निःशेषं द्रावकं प्राह्यम् । एतद्दिन्द्रुचतुष्टयं
शुद्धजलानुपानेन दत्त्वोर्द्धशरापे पतङ्गितं मसम तण्डु-
लपरिमितं मधुना सह पञ्चपदिनानि दातव्यम् ।
श्वयधुरोगिणां तत्क्षणं मूत्रं निःसरति । असाध्यो
महानपि करपादादिशोथो दिनप्रयाऽभ्यन्तरे क्षयं
याति । पथ्यं यथोचितम् ॥ (भोजप्रगन्धात्)

३४ सुवर्णसूर्यावर्तनसः

स्वर्णमसमं त्येकभागं स्वर्णाङ्गं मृगनामकम् ।
मृतरौप्यञ्च कान्तञ्च माश्रीकं मौक्तिकन्तथा ॥
हमकार्पासमूत्रमेला गोघाणकुमुभं क्षिपेत् ।
नागरं टङ्कणश्चैव कारुविग्न्याश्च योजकम् ॥

अमृतं सर्वद्विगुणमेतद्भव्येषु निक्षिपेत् ।
 द्रवद्विगुणमपि सर्वाङ्गं जम्बीररसमर्दितम् ॥
 आर्द्रकस्वरसेनैव सप्तवारञ्च मर्दयेत् ।
 लवङ्गस्य कपायेण पञ्चवारञ्च मर्दयेत् ॥
 खर्जूरस्याऽनुपानेन क्लीबत्वन्तु विनाशयेत् ।
 द्राक्षाफलाणुपानेन उन्मादक्षयकृत्तया ॥
 आर्द्रकस्याऽनुपानेन हिकाहृद्रोगनाशनम् ।
 गुडामात्रं द्विगुञ्जं वा अनुपानविशेषतः ॥
 सर्वशूलप्रशमनं चित्तविभ्रमनाशनम् ।
 अस्थिहृद्गततापञ्च पुराणज्वरनाशनम् ॥
 महासूर्यावर्तारसो नानारोगनिपूदनः ॥

३५ सूतिकाभरणरसः

शुद्धपारदगन्धकविषद्वद्गुणमरिचानि समभा-
 गानि शृङ्गाऽऽर्द्रकरसाम्यां प्रति यामद्वयं विमूद्य
 जयपालवीजतैलेन यामत्रयं सम्यङ्मर्दयित्वा शृङ्ग-
 सम्भुटे स्थापनीयम् । एतदौषधं सूचिकाग्रेण किञ्चि-
 न्मात्रमादाय जिह्वायां घर्षणमात्रेण सोपद्रवाः सक्षि-
 पाता शान्ता भवेयुः । वाताः शिथिला भवन्ति ।
 पथ्यं यथोचितम् ।

३६ स्वच्छन्नरसः (रसस्वच्छलः)

समभागञ्च सद्वाह्यं पाखाऽमृतगन्धकम् ।
 जातीफलञ्च भागार्जुं पिप्पलीसमभागिका ॥
 अहिबल्ल्युत्थनीरेण मर्दयित्वा दिनद्वयम् ।
 पण्मासं भावयेत्प्राज्ञः पक्वजम्बीरसारतः ॥
 अञ्जनं सन्निपातादौ तमोमोहाल्पनाशनः ॥

विसृष्टरसः

३७ अजमोदादिचूर्णम्

अजमोदाऽम्रकं रास्ना गुडुची विष्वभेयजम् ।
 शतपुष्पाऽश्वगन्धा च शतमूली समाश्रिताः ॥
 सुशुष्कचूर्णमेतेषां भक्षितं सर्पिणा सह ।
 हृत्पृष्ठकटिकोष्ठस्थं मारुतं हन्ति वेगतः ॥
 हितो, वातरोगे ।

भाषा—अजमोद, अम्रकमस, रास्ना, गिलोय, सौंठ,
 सोंफ, देसी असगन्ध और शतावर समभाग लेकर बारीक चूर्णकर
 रखोढ़ें। इसमेंसे १ से २ मासेतक धी अथवा उचितानुपायके
 साथ लेनेसे हृदय, पीठ, कमर, और कोष्ठव्यवहारे यह
 शीघ्र नष्टकरताहै ।

३८ अमरमुन्दरी गुटिका

फान्नचूर्णं पलान्यष्टौ पलान्यष्टौ रसस्य च ।
 एकीकृत्याऽयं सम्मर्थं वीजपुराम्लमर्दितम् ॥

मर्दयेत्तप्तखल्वेन गोलको भवति क्षणात् ।
 मृतवज्रस्य भागैकं गोलभागचतुष्टयम् ॥
 एकीकृत्याऽयं सम्मर्थं भस्मीभवति सूतकः ।
 मारयेद्भूधरे यत्रे सप्तसङ्कलिकाः क्रमात् ॥
 तद्भस्म भागमेकन्तु भागैकं गन्धकस्य च ।
 अन्धमृपागतं घ्मातं खोटो भवति तत्क्षणात् ॥
 द्वात्रिंशन्मृतखोटस्य शुद्धहेक्षश्च विंशतिः ।
 तारं तापत्रं व्योमसत्त्वं कान्तसत्त्वं चतुर्यकम् ॥
 एकैकं द्वादशंशाः स्युः सर्वमेकत्र कारयेत् ।
 अन्धमृपागतं घ्मातं खोटो भवति तत्क्षणात् ॥
 द्वात्रिंशन्मिलतः खोटान् सूक्ष्मचूर्णन्तु कारयेत् ।
 तत्खोटसूक्ष्मचूर्णन्तु आरिष्टरसेषुपुत्रम् ॥
 मर्दयेन्मध्यमाभ्लेन गोलको भवति क्षणात् ।
 गोलकस्य पले द्वे च मृतकान्तस्य तत्समम् ॥
 एकीकृत्याऽयं सम्मर्थं मेघनादरसेन च ।
 मुनिपुष्परसेनैव दिनमेकञ्च मर्दयेत् ॥
 गुटिकाः कारयेदेषु पद्यधिकशतत्रयम् ।
 तत्रैकां गुटिकां सर्पिखिलफलामधुसंयुताम् ॥
 भक्षयेत्पत्रमेकन्तु ब्रह्मगुज्यायते नरः ।
 सर्वास्ता भक्षयेत्पञ्चाद्रुद्रासुः स भवेन्नरः ॥
 अथैका धारिता वन्ने गुटिकाऽमरमुन्दरी ।
 हठाद्रोगान् समस्तांश्च पलितानि च नाशयेत् ॥
 रसाणं, रसायने ।

भाषा—कान्तलोहचूर्ण और शुद्धपारा ८-८ पल मिलाकर
 तप्तखल्वमें डालकर विजोरेके रससे गोलीबननेतक मर्दनकरे।
 इसमें चतुर्धास बज्रभस्म डालकर तप्तखल्वमें मर्दन करनेसे
 पारेकी भस्म होजाती है। फिर उसका गोलाबनाय शरावत-
 म्भुटेमें बन्दकर भूधरपुटकी आचड़े। स्वाह्नशीतल होनेपर निळा-
 लकर एकदिन पूर्ववत् तप्तखल्वमें विजोरेके रसकेसाथ मर्दनकर
 गोला बनाय पूर्ववत् मूधरपुटकी आंचड़े। ऐसे ७ बार पुट
 देनेके बाद यह स्वामी भस्म होजाती है। इस भस्मकी बराबर
 शुद्ध गन्धक मिलाकर अन्धमृपामें घमन करनेसे खोट होजाता
 है। यह खोट ३२ भाग, शुद्धसुवर्ण २० भा०, रजत, ताम्र,
 अम्रक और कान्तसत्त्व ३-३ भाग लेकर सबको इकठा मिलाय
 अन्धमृपामें घमन करनेसे खोट तैयार होगा। इस खोटकी
 बराबर शुद्धपारा मिलाकर मध्यमाभ्लेसे तप्तखल्वमें मर्दन कर-
 नेसे गोला तैयार होगा। इस गोलेमेंसे २ पल, कान्तलोहभस्म
 २ पल लेकर कटियाली चोलाई और अगस्त्यपुष्पके स्वरसोवे
 १-१ दिन मर्दनकर ३६० गोलियें बनाकर रखोढ़ें। इनमेंसे
 १-१ गोली धी, मधु और निक्लकके चूर्णके साथ एक बर्षतक
 लेनेसे मध्याय होता है। इरीतरह समस्त गोलेकी गोलियोंका
 सेवन करनेसे उदाय होता है। इसमेंसे १-१ गोली सुंदमें रस-
 नेसे समस्तारोग और बलीबलिन नष्टोत्तैहै ।

३९ अमीररसः

रसेन्दुर्वर्द्धं दालिचिकणं तारतन्तवः ।
 कर्पं कर्पं समाहृत्य कणिकाः कल्पयेत्तनुः ॥
 तवके पटुमास्तीर्य तत्र ताः कणिका न्यसेत् ।
 विधाय पटुना नेर्मि पिद्व्याचीनपात्रतः ॥
 तद्धो ज्वालयेद्बहिं शनकैः प्रहरत्रयम् ।
 स्वाङ्गशीतं समुद्धृत्य चीनपात्राऽवलम्बकम् ॥
 अध्यामीरनामानं ग्रन्थिवातोपदंशवान् ।
 अहानि सप्त नव वा मर्यादाऽमुष्य भक्षणे ॥
 सितासखं पयो गव्यं पय्यं गोधूमफुल्लिका ।
 भिपजामुपकारार्थं रसोऽयमत्र कीर्तितः ॥
 गुञ्जैका वा द्विगुञ्जा वा मात्राऽमुष्य यथामयम् ।
 पिधाय द्राक्षया प्रातर्गिलेद्वनैर्न च स्पृशेत् ॥
 पटोस्त्रीणि पलानीह तत्र त्यास्तरणं पलात् ।
 द्वाभ्यां पलाभ्यां घटयेत्परितो नेमिवन्धनम् ॥
 सि. भे. म., वातव्याघ्रधिकोर ।

टि०—अयं रसकूपूरं ध्वास्ति भावप्रकाशीयकूपूरभाण्डेस्वरत्नं
 विलक्षणगुणोऽपि नास्ति परन्तु मन्त्रेणे विशेषतया लम्बप्रतिघोऽस्ति
 अत्यस्थाने भावप्रकाशीयवोगो मिश्रिततयालामप्रदीरति ।

भाषा—एक साफ तवेपर एकपल बारीक सेंपेनमकका
 चूर्ण विछाकर रसकूपूर, शिंगरिफ और दालचिकना १-१ कर्प
 लेकर बारीक टुकड़े बनाकर नमकपर रखकर एककर्म चादीकी
 जरीको कैंचीसे बारीकनाटकर उसपर विछाकर चीनीके
 प्यालेसे ढकड़े और २ पल नमककेचूर्णकी चारोंतर्फ दीवाल
 बनादे. फिर तवेको चूल्हेपर षडाय बेरकी पतली दो लकड़ि-
 योंकी मन्दआंच देकर ३ पहर पकावे । चार तह भीगाहुआ
 कपड़ा प्यालेके पैंदेपर रखतारहे । स्वाङ्गशीतल होनेपर नमककी
 दीवालको धीरजसे हटाकर प्यालेमें लगेहुए पारदपुष्पोंको
 निकालकर शीशमें भरले । इसमेंसे १ से २ रत्नीतक द्राक्षके
 अन्दर अन्दर निगलवादे. दातोंमें न लगे ऐसे ७, ९ या १५
 दिनतक सेवन करे । शकर मिलाहुआ गायका दूध, गेंहूँकी
 रोटी और धीके सिवाय कुछभी खानेको न दे । इसके सेवनसे
 ग्रन्थिवात और जर्दश नष्ट होते हैं ।

४० अर्धनारीश्वररसः

सूतो गन्धकतालके मणिशिला हिङ्गलताप्ये विपं,
 संशुद्धं विपतिन्दुधमजनितं नागारियुक्त्वा लाङ्गली ।
 सर्वं श्लक्ष्णशिलातले मुनिदिनं सम्भान्य भृङ्गद्रवैः,
 संशोष्याऽथ विधाय चूर्णमखिलं स्यादर्धनारीश्वरः ॥
 गुञ्जैका खलु चार्द्रवारिसहितां दद्याज्ज्वरे दारुणे,
 द्वन्द्वे वाऽपिलसन्निपातजनिते भूतप्रदे च ज्वरे ।
 तोयं चाऽथ सुततर्हीतलमथ क्षारोदकं वा पिबेत्,
 तत्र पथ्यमथाचरेद्धि लयणं शाकादिभिर्वर्जितम् ॥
 र. बो., सभिषाते ।

भाषा—शुद्धपारां, गन्धक, हरिताल, मैतसिल, शिंगरिफ,
 सोनामाखी, बडनाग, कुचिला, गूधूम, वासिलेखसा और करि-
 हारी समभाग लेकर सबकी नीलवर्णकमलीकर भंगरेके रससे
 ७ दिन मर्दनकर सुखाकर रखओगे । इसमेंसे १-१ रत्नी अद-
 रखके साथ देनेसे भयङ्करज्वर, द्वन्द्वज, सान्निपातिक, भूत और
 महाविशय ज्वर इन सबको यह नष्टकरता है । गरम करके ठंडा
 कियाहुआजल अथवा क्षारोदक पिलावे । संधानमकडाली-
 हुई छाछ देवे । शाक वर्गेरहका त्याग करे ।

४१ अश्वत्थवल्कलादिलोहम्

अश्वत्थवल्कलश्लैच त्रिकटुलौहकट्टकम् ।
 गुडेन सह दातव्यं क्षयरोगविनाशनम् ॥
 नि. र., क्षयाधिकारे ।

भाषा—पीपलकी छाल, त्रिकटु और लोहभस्म समभाग
 लेकर बारीकचूर्णकर रखओगे । इसमेंसे १-१ मासा गुडके
 साथ देनेसे क्षय नष्ट होताई ।

४२ आह्वारिरसः

शुद्धेला सामथा कृष्णा लोहाम्रखर्पेराणि च ।
 समभागं प्रकृतव्यं द्विभागः पारदो मतः ॥
 सर्वमेकत्र सम्मर्थ्य द्रोणपुष्पीरसेन च ।
 बह्ममात्रं प्रदातव्यं पुनर्नवरसैर्युतम् ॥
 ग्रीहानं यकृतं शोथमग्निमान्द्यमरोचकम् ।
 नासाज्वरं विशेषेण सर्वञ्च विपमज्वरम् ॥
 आह्वारिरसो होप नाशयेद्विकल्पतः ॥

भै. र., ज्वराधिकारे । आह्वो नासाज्वरः ।

भाषा—छोटी इलायची, हें और पीपल, लोह, अत्रक
 और खर्परभस्म १-१ भाग, पारदभस्म अथवा रससिन्दूर २
 भाग लेकर बारीक चूर्णकर गुमाकरेससे १-२ दिन मर्दनकर
 ३-३ रत्नीकी गोलियेबनाकर रखओगे । इनमेंसे १-१ गोली
 पुनर्नवरसे रसके साथ देनेसे ग्रीह, यकृत, शोथ, मन्दाग्नि,
 अरुचि, नासाज्वर और विशेषतः समस्त विपमज्वर नष्ट
 होते हैं ।

४३ कनकसुन्दररसः

कनकसुन्दरसाम्रकताप्यकं,
 प्रपु सवीरविषायसगन्धकम् ।
 यसुकराकयुगद्विकरानल-
 त्रितयदिग्गजयुक्कलिकारिकाम् ॥
 पलमितां विनिधाय विमर्दयेत्
 त्रिदिवसं त्रिफलोद्भवकै रसैः ।
 मृदुपुटे परितोष्य कृतं रजः
 कनकसुन्दर एव महारसः ॥
 यमनरेचनगुद्धतनोः सदा
 ऽऽर्द्रकरसेन रसोनरसेन वा ।

निखिलकुष्ठकिलासभगन्दरं
ज्वरविषर्षगरालसकाञ्चयेत् ।

ना. वि., पुष्टे ।

भाषा—शुष्कभस्म ८ कर्प, रजतभस्म २ कर्प, शुद्धपारा १२ कर्प, अग्रक, सोनामासी और वक्रभस्म २-२ कर्प, शुद्ध सन्वीर (दालचिकना) और बटनाग ३-३ कर्प, लोह-भस्म और शुद्धगन्धक ८-८ कर्प, करिहारी १ पल लेजर सबकी नीलवर्णदन्तलीकर त्रिकलाके व्वायसे मर्दनकर गोलाबनाय घरावसम्पुटमें बन्दकर मृदुपुष्टकी आंचदे । स्वाह्नशीतल होनेपर निकालकर रखडोढ़े । इसमेंसे वमनविरोचनादिमें शुद्ध किये हुए रोगीको १-१ रती अदरत अथवा लज्जकेरसकेसाय देनेसे सब प्रकारके कुष्ठ, विन, भगन्दर, ज्वर, विषर्ष, गर और श्लवकको यह नष्टकरताहै ।

४४ कर्पूरतिलकरसः

समभागं रसं नागं संयोज्य प्रथमं ततः ।
क्षारस्यैकं गन्धकस्य द्वौ भागौ तत्र मेलयेत् ॥
तत्सर्वं पञ्चमूत्रेण मर्दयेद्विषसत्रयम् ।
त्रिभिर्गजपुष्टैर्दग्धं भाययेद्वाद्रैकद्रवेः ॥
मुशलीकान्दुजेनापि ततः सिद्धो भवेद्रसः ।
द्विवह्नं मधुना मासं कासश्वासातुरो भजेत् ॥
प्रहण्यां पाण्डुरोगे च तथाऽऽर्द्रकरसान्वितम् ।
पिष्टम्भशूलगुल्मांतरिक्षिफलाक्यायतो भजेत् ।
गोदुग्धेन भजेन्मेही सितामरिच्यवत्क्षयी ।
कर्पूरतिलकः सोऽयं कासे श्वासे प्रशस्यते ॥

र. मू., कावशासयोः ।

भाषा—एकभाग शुद्धनागको गलाकर धनभागपात मिलावे । फिर सबझार १ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग मिलाकर षोडा २ प्रमेर देकर लोहेकी कचरोसे बलावे । नागकीभस्म होनेपर नीचे उतार कसे गधी, गाय, भेड़, बकरी और भेड़के मूत्रोंसे ३-३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय घरावसम्पुटमें बन्दकर गरपुष्टकी आंचदे । स्वाह्नशीतलहोनेपर निकालकर पूर्ववत् मर्दनकर पुष्टे । ऐसे ३ पुट देनेके बाद अदरत और मुशलीके स्वरतोसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसाय एहमहीनेक देनेसे काष्ठ, शय, प्रदली, और पाण्डुरोग, अदरतके रतेसाय विष्टम्भ और दन्त, त्रिफलाके क्षयने शुल्म, गोदुग्धने प्रमेद, पसर और मरिचने हायको यह नष्टकरताहै ।

४५ कर्पूरादिवटी

कर्पूरं रसगन्धकञ्च द्रव्यं तीक्ष्णोद्ध्यं मरुत्कं,
कालोद्धमेन्द्रमयोऽजमोदद्रुतमुक्क पातकपौऽम्बालकं
पन्ना मांसलरालरान्ममलिमयं जातीफलं टङ्गुपै,
तिक्ता विग्धुमयं पिप्रा पिरमिदं प्रत्येकनिष्कान्वितमा

सर्वेषां सदृशं प्रमाणमखिलं कान्ताम्रसिन्दूरकं,
सिन्दूरस्य समञ्च फेनमहिजं तत्पादतः सङ्घिषेत् ।
ह्रैमं कौकिलनेत्रवीजसहितं सर्वञ्च चूर्णीकृतं,
धत्तूरस्वरसेन फेनममलं सम्भाव्य यामह्वयम् ॥
सार्धं तेन विमृष्टं वस्तु सकलं घञ्जद्वयं सादरं,
गुञ्जामात्रवटौ निबद्धय नियतं मध्वन्वितं योजयेत् ।
सर्वेषु प्रहर्णागदेषु सहसा रक्तातिसारेषु च,
आमं शूलयुतं समस्तजनितं नानातिसाराञ्चयेत् ॥-
रायनप० प्रह्वयाम् ।

भाषा—शुद्ध रसकपूर, पारा, गन्धक और तिगरीफ, फोलादभस्म, कमलरुन्द, इन्द्रजव, अजमोद, चित्रकमूल, धावडीकीजङ्गीछाल, पुरानीमली, इलायची, अजामोदी, राल, सेमकका मुसला, जायफल, मुनामुहागा, कुटकी, सैधानमक, शुद्धबटनाग और अतीस ४-४ मासो, कान्तलोह और अग्रकभस्म, रससिन्दूर, शुद्ध अफीम ये सब २१-२१ मासो, शुद्धपतुरेवेचीज और तालमखाना ५१-५१ मासो लेकर सबका बारीक चूर्णकर अफीमको धतुरेकेस्वरससे दोपहर मर्दनकर सवर्णको मिलाय धतुरेकेस्वरसने दोदिन घोटकर १-१ रतीकी गोलिये बनाकर रखडोढ़े । इनमेंसे १-१ गोली मधुकेसायदेनेसे सबप्रकारकी प्रदली, रक्तातिसार, शूलकुष्ठजामा-तिसार, साक्षिप्रातिक अतिसार इनसबको यह नष्ट करती है ।

४६ कामेश्वरमोदकः

सम्यक् शोधितमारितं सुसुजगं वह्नं तथा तीक्ष्णकं,
सूताम्रं तरणिं शिवां परिमितं प्रत्येकमादाय च ।
घात्रीसेन्धवकुष्ठकद्रफलरुणाः शृङ्गी यवानीद्वयं,
यष्टीजीरकसुग्धधान्यकाराट्टीशृङ्गीजयाकेदारम् ॥
तालीसं त्रिसुगन्धकं समरिचं जातीफलं मेथिका,
चूर्णीकृत्य समस्तमेतदखिलं दत्त्वाऽऽर्द्रशक्रासनम् ।
सर्वैस्तुल्यतमांसितान् सुविमलां पद्माऽऽसमानान्क्षिपेत्,
कर्पूरैर्यचूर्णितानपि तथा दत्त्वा तिलाश्रितुषुपात् ॥
सम्यक् शुद्धकलेयरेऽहरो भस्यं सदा कामिभिः,
आधिष्यापिहरं क्षयक्षयकरं कुष्ठापहं शृङ्गम् ।
स्त्रीणां तोयकरं परं धुतिकरं मुष्काम्रिषुद्धिमर्दं,
कासश्वासपलासरोगनिचयप्रदं रसनं देहिनाम् ॥

र. क. स. (मा.), बात्रीहरने ।

भाषा—उत्तम नाग, वक्र, फोलाद, पारद, अग्रक और टाम भस्म, शुद्धगन्धक, आंखिले, सैधानमक, कुष्ठ, कापलक, पीपल, काष्ठजामोदी, दोतो अत्ररादन, सुन्दरी, ह्याद छेदेर जीत, पनिदा, कपूर, मेगामोदी, ओडुलदेपूळ, डेजर, हावीशयद, तत्र, पत्रत्र, इलायची, छेदेरमिचं, आदरत, मेथी ये सब १-१ भाग, इनमेंसे बापीमुनीमोम, और ताककेबेहुरैकित तथा शुद्धकपूर उचिन्नानागसे लेकर सबका बारीकचूर्णकर समभागकरकी बचनीमें अच्छी

तरह मिलाय १-१ तोलेके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ खानेसे शारीरिक और मानसिक रोग क्षय, कुष्ठ, नपुंसकत्व, बुद्धिमंश, शुक्रामिनाश, कास, श्वास, श्लेष्मरोग, इन सबको यह नष्टकरताहै ।

४७ कामेश्वरमोदकः

त्रिकटु त्रिफला शृङ्गी जाती तालीसपत्रकम् ।
कुष्ठसैन्धवधान्याकं नागकेशरकदफलम् ॥
मधुकं मेथिका भाङ्गी यवानी चाजमोदकम् ।
किञ्चिद्भद्रं जीरयुग्मं कर्पूरञ्चं त्रिजातकम् ॥
सवीजविजयां भ्रष्टां सर्वतुल्यां प्रदापयेत् ।
अन्नकं पारदं लोहं स्वेच्छया प्रक्षिपेत्ततः ॥
मधुना घृतमिश्रेण कर्पमात्रन्तु भोजयेत् ।
क्षीरानुपानं निर्दिष्टं भिषजामिष्टकारकम् ॥
घृष्टिवृद्धिकरो वृष्यो वृंहणो बलयर्धनः ।
सर्वव्याधिहरो ह्येव सङ्ग्रहप्रहर्षो जयेत् ॥
कासश्वासान्नाशूलघ्नो बलीपलितनाशनः ।

र. क. ल (ना.) रसायने वाजीकरणे च ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, काकडासाँगी, जावित्री, तालीस-पत्र, कुष्ठ, संधानमक, घनियाँ, नागकेशर, कायफल, मुलहठी, मेथी, भारद्वाजी, अजवायन, अजमोद, अधयुने दोनों जीरे, शुद्धकपूर, तज, पत्रज, इलायची ये सब समभाग, इन सबकी बराबर सबीज भुनीभाग, तथा अन्नक, पारद और लोहमसम औचितो देखकर लेवे । फिर सबका धारीकचूर्णकर मधु और घी मिलाकर १-१ कर्पके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ देनेसे मन्दागि, धातुशीघ्रता, सङ्ग्रह-प्रहर्षी, कास, श्वास, रक्तपित्त, शूल और बलीपलितको यह नष्ट करता है ।

४८ कामेश्वरमोदकः

आकारकूरभ्रः शृङ्गी मस्तकी दरदो रसः ।
जातीफलं कटुफलञ्च पिप्पली किमिदं दनम् ॥
शैलोन्मयविजयायीजं धन्तुरविपतिन्दुकम् ।
जातीपत्रं चङ्गमसम् यवानीयुगलं तथा ॥
वृद्धदार्ढिकेनञ्च मदनञ्चैव कार्षिकान् ।
शृहीत्या चोत्तमं खण्डं सर्वतुल्यं विमिश्रयेत् ॥
मधुना मोदकं कृत्वा श्यावेभिष्कचतुष्टयम् ।
विनाग्निं मोदकं कुर्यादादौ कृत्वा तु कज्जलीम् ॥
रसगन्धकयोर्वैद्यः सम्प्रदायविशारदः ।
शुक्रस्तम्भकरो वृष्य एव उक्तो मनीषिभिः ॥

र. क. ल. (ना.), रसायनवाजीकरणयोः ।

भाषा—अक्षरकरा, काकडासाँगी, मस्तकी, शिंगरिक और पारदमस, जायफल, कायफल, पीपल, विडङ्ग, बीजसहित भाग, शुद्ध धतूरेके बीज, कुचिला, जावित्री, चङ्गमस, दोनों अजवायन, विधारा, श्लीम, मदनमस, शुद्ध पारेगन्धककी

नीलवर्णकज्जली १-१ कर्प लेकर धारीक चूर्णकर सबकी बराबर शक्कर मिलाकर मधुके साथ १-१ कर्पके मोदक बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे धातुशुद्धि और शुक्रस्तम्भन होता है ।

४९ कृमिमेघमातरिश्वारसः

निम्बं चौरं चाजमोदं विडङ्गं
चक्रे यदं सूतराजं विमृच ।
माध्वीकार्तं द्रम्ममानन्तु दद्या-
द्द्वन्याजन्तुन्मातरिश्वेव मेघान् ।

र. मृ. कृमिरोगे ।

भाषा—निम्बशीजमजा, खरजवाइन, अजमोद, विडङ्ग, चक्रवदपारा (अनलरस १२५ देखो) ये सब समभाग लेकर धारीकचूर्णकर १-२ पहर इकडे मर्दनकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधके साथ लेनेसे समस्त किमि नष्टहोतेहै ।

५० खज्जुनिकारिरसः

कुपोलुरजतायांसि सम्भ्राव्याङ्गुनवारिणा ।
मुद्गमानां घटीं कृत्वा शोषयेत्स्यैरश्मिना ॥
पक्ष्यातं घोरतरं गदं खज्जुनिकं तथा ।
रसः खज्जुनिकार्याख्यो हरेद्राशु न संशयः ॥

भै. र. खज्जवाते ।

भाषा—शुद्ध कुचिला, रजत और लोहमसम समभाग लेकर सफेदभङ्गुनीकोखालके कपसे एकदिन मर्दनकर मुगवाराकर गोलिये बनाकर बड़ीधूपमें सुखाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली यथोचितानुपानकेसाथ देनेसे असाध्य पक्षापात और खज्जवात नष्टहोतेहै ।

५१ गन्धकादिलेह्यम्

गोक्षीरशोधिता चीनहेमक्षीरी १२ तोलिका,
गोदुग्धेभूतण्डुलीयकाऽऽकाशयल्लीश्वेतकृष्णाण्ड-
नागाङ्गुनीयास्तुक्तोयपिप्पलीस्वरसशोधितोऽमल-
सारगन्धकः १२ तोलकः, वाकुचीचिप्रकमूलत्व-
प्रास्नाकुण्डलीमूलतालीसपत्राऽश्वगन्धापारसपि-
प्पलकण्टकिपलाशमूलचम्पकपुष्पाणि प्रति १। तोल-
कानि सञ्जर्ण्याऽऽदीगन्धकं खल्वे विमृच चीनशर्करां
९ तोलिकां, चीनहेमक्षीरीचूर्णं, पूर्वोक्तवस्तुचूर्णञ्च
मेलयित्वा १२ तोलकं मधु निक्षिप्य चीनपात्र रक्ष-
येत् । सायं प्रातःपादतोलकं रोगबलानुसारिणाऽद्दम-
ण्डलमेकमण्डलं वा सेवयेत् । अनेन मेहमणाः, पामा-
कालमेहोपद्रवाभ्योनिव्यापत्पाणिपादबन्धशूलानि श्वे-
तरकहादिमेहाश्च निर्मूला भवन्ति । अम्लधूमपान-
खीसङ्गादिकं वर्ज्यमुण्णोदकञ्च पेयम् । क्षीरार्धं, घृतं,
शर्करा, आदकीखण्डपूपश्च पच्यः । (अगस्त्य०)

५२ गुह्यच्यादिवर्णम्

गुह्यच्यातिविषया शुण्ठी भृनिम्यं यथतिकम्म् ।
मुस्तं कणा ययक्षारः कासीसं भ्रमराग्रियः ॥

पतेयां समभागेन चूर्णमेव विनिर्दिशेत् ।
 यष्टुत्लीहपाण्डुरोगमग्निमान्यमरोचकम् ॥
 ज्वरमष्टविधं हन्ति साव्यासाध्यमथापि वा ।
 नानादोषोद्भवञ्चैव धारिदोषभवन्तथा ॥
 विरुद्धभेषजमयं ज्वरमागु व्यपोहति ॥
 भै. २., ग्रीह्यदधिकारे ।

भाषा—गिलोय, अतीस, सोंठ, चिरायता, तितली, नाग-
 रमोथा, पीपल, यवहार, कासीसमल, स्वर्णचम्पक्री छाल
 सब समभागका चूर्ण बनाकर रखजोड़े । इसमेंसे ३-३ मासो
 ततशोहरानुगानकेसाथ देनेसे यक्ष्म, ग्रीह, पाण्डु, मन्दाभि,
 अर्धचि, ८ प्रकारका ज्वर, अलदोषज, विरुद्धभेषजज्वर
 इन सबको यह नष्टकरताहै ।

५३ चन्दनादिचूर्णम्

चन्दनं शास्मलोपुष्पं त्रिजातं रजनीद्वयम् ।
 अनन्तां सारिवां मुस्तमुशीरं यष्टिकामले ॥
 स्वर्णपत्रां शुभां भार्गी देवदारु हरीतकीम् ।
 सर्वद्विगुणितं लौहञ्चैकत्र परिमर्दयेत् ॥
 प्रमेहा विशातिः श्वासः कासो जीर्णज्वरस्तथा । -
 प्राशनादस्य नश्यन्ति दुर्नामानि च कामला ॥
 भै र शुक्लमेहे ।

भाषा—सफेदचन्दन, सेमलेकूल, तज, पत्रज, इलायची
 हल्दी, दाहहल्दी, अनन्तमूल, सारिवा, नागरमोथा, खस,
 मुल्लट्टी, आवले, सनाय, भार्गी, देवदारु, हरे, सब समभाग
 लेकर बारिचचूर्णकर सबसे दूनी लोहमलमिलाकर रखजोड़े
 इसमेंसे ३-३ रती प्रमेहहरानुगानके साथ देनेसे २० प्रकारके
 प्रमेह, श्वास, कास, जीर्णज्वर, बवाभीर, कामला, ये सब
 नष्ट होते हैं ॥

५४ चिञ्चादिलेहाम् (महदादि)

चिञ्चापत्रं शतपलमायसञ्च तदर्धकम् ।
 तदर्धं चित्रमूलं स्यात्तदर्धं फिट्टमाद्रकम् ॥
 निर्युण्डी पाटलो यिल्यो यासा दाय पुनर्नया ।
 धरुणो शूहती चैव फण्टकारी तथैव च ॥
 सहदेवी विदारो च गोपयह्नी च बालकम् ।
 अपामार्गश्च खद्विरो गणकार्यध्वगन्धिके ॥
 घाटाही शालपर्णी च चासन्ती सुरसा धवः ।
 पापाणमेदिमूलञ्च सौमार्ग्यं गोभुरं तथा ॥
 श्टङ्गिका काञ्चनासा च शार्ङ्गो सहचरी शमी ।
 द्योनाकयीर्यूक्षी च राजाके शरपुङ्गिका ॥
 भृङ्गं घामलर्वा दृती हपुया नीलपुष्पिका ।
 आरुष्योऽमृताऽनन्ता कारुह्नीफलतथा ॥
 त्रिकटु त्रिकण चैव चण्डप्रणियन्त्राजिवाः ।
 दीप्य पिष्टङ्गमभुके जीरकोशीरपत्रकम् ॥

श्रीगन्धो दास मञ्जिष्ठा वराङ्गं भद्रमुस्तकम् ।
 प्रत्येकं वन्यमूलञ्च पलं शतकृमाहरेत् ॥
 पलाष्टकं त्वापणस्यं भाण्डगर्भं विनिक्षिपेत् ।
 द्वादशाढकतोयञ्च काथमश्रावरोपितम् ॥
 पुराणस्य गुडस्याऽपि पलानां शतमिश्रितम् ।
 वस्त्रपूतञ्च तत्काथं बीजपुररसन्तथा ॥
 भृङ्गराजाद्रकससं दुःस्पर्शस्वरसं तथा ।
 प्रत्येकं प्रस्यसम्मानं तच्च मन्दाग्निना पचेत् ॥
 व्योपतालीसपत्राणि चातुर्जातविडङ्गकम् ।
 गजकृष्णा नलं चैव ग्रन्थिकं वत्सकं तथा ॥
 त्वरुशीरो धान्यकं जाजी दीप्ययुग्मकरणुकम् ।
 जातीफलञ्च तत्परं लवङ्गं मांसिकं मधु ॥
 भाङ्गी श्वेतं मरीचञ्च त्रिफला कृष्णजीरकम् ।
 रास्नाऽच्योशीरदाव्यञ्च कुङ्कुमं निवृता शटी ॥
 तज्जोलं टङ्गुणं श्टङ्गी कोष्टकं चाहरेद्रिपक् ।
 मञ्जिष्ठा देवदारुश्च प्रत्येकं द्विपलतथा ॥
 पट्गालिततचूर्णं पके सम्मिश्रितं भवेत् ।
 शौंशं शतपलञ्चैव निक्षिपेत्लोहकान्तरुम् ॥
 मण्डूरञ्च तथैव स्यात्प्रत्येकं पलयुग्मकम् ।
 लेह्यं पक्त्वा स्निग्धभाण्डे धान्यराशी विनिक्षिपेत् ॥
 धन्वन्तरिगणाधीशद्विपलान्मिपजोऽर्चयेत् ।
 द्विकालमक्षमात्रस्य भक्षणं मासमात्रकम् ॥
 शोफकामलपाण्डेञ्च दुग्धकं श्वासकासनी ।
 द्वादशक्षयरोगांश्च किमि श्रेष्मज्वरं हरेत् ॥
 पुराणशूलमत्सुप्रं मलसूत्रविषयन्धकम् ।
 प्रमेहपिडिकारोगमग्निमान्यमरोचकम् ॥
 अक्षियुलोदरञ्चैव रक्तपैत्यञ्च छर्दिकम् ॥
 वै. वि. चतुर्विंशतितैत्यरोगे ।

भाषा—छायाशुक्र इमलीके पते १०० पल, मण्डूरका-
 बारिच चूर्ण ५० पल, चित्रमूल २५ पल, अदरखछाहलक
 १२ ॥ पल, संभाल, पाटला, बेल, अट्टया, देवदारु, पुनर्नया,
 वरुण, वडी और छोटी भट्टकट्या, सहदेवी, विशारीकन्द, अन-
 न्तमूल, सुगन्धवाला, अगामार्ग, रौर, अरणी, देवीभगवन्ध,
 बाराहीकन्द, शालपर्णी, माधवीलना, तुलसी, धव, पापाणमेद-
 कीचक, सुहागा, गोसल, काङ्कडसौमी, काञ्चनासा, काङ्-
 कडा, पीयावासा, शमी, मोनापाटा, वीरक, नीलाकं, चर-
 पुट्ट, अंगरा, आंरले, दन्तीमूल, श्राङ्ग, कालाद्रागा, अमलताय,
 गिलोय, जवावा, कोला, त्रिरट्टु, त्रिकला, चण्ड्य, गटिपत्र,
 रास्ना, अजवादन, विडङ्ग, मुल्लट्टी, जीरा, राय, पत्रज, श्वेत
 चन्दन, देवदारु, मजीठ, तज, नागरमोथा इनमेंसे जपती
 बीजे १००-१०० पत्र, दुग्धानकी बीजे ८-८ पल, केहर
 जवट्ट पनाय १२ अण्डयानोंमें आंरले । अट्टयाकादेव
 रदनेर छानकर मिश्रिकेपानमें पनाये । उद्यमें १०० पत्र पुराणा
 गुड दान्धर विक्रारा, अगरा, अररा, जवाय इनका ६१११

१-१ प्रत्यक्ष डालकर मन्दागमिसे पकावे । गोली बननेलायक पन तैयार होनेपर उतारले । फिर त्रिकट्ट, तालीसपत्र, चातुर्जात, विडङ्ग, गजवीपल, नल, पिपलामूल, कुट्टज, तीक्ष्ण, धनिया, जीरा, दोनों अजवाइन, रेणुका, जायफल, जावित्री, लौंग, जटामांसी, मुलहठी, भारद्वाजी, सफेदमिर्च, त्रिकला, कालीजीरी, रास्ना, नागरमोथा, खस, दाहहल्दी, केशर, निसोत, कचूर, शीतलचीनी, भुनासुहागा, काकडासोंगी, पुश्रिणी, मजीठ और देवदार २-२ पल लेकर कपड़छान चूर्णकर मिलादे । ठंडाहोनेपर मधु १०० पल, कान्तलोह और मण्डूरभस्म २-२ पल डालकर चिकनेवर्तनमें रख सुह-बन्दकर ३ दिनतक धान्यकौराशिमें गाड़दे । चौथेदिन निकालकर धन्वन्तरि, मणेश, दिम्पाल, और बैयोंका पूजनकर १-१ कर्षे सुबह शाम एक महीनेतक सेवन करनेसे शोथ, कामला, पाण्डु, कुम्भकामला, श्वास, कास, १२ क्षय, क्रिमि, क्लेष्मन्वर, पुराना भयङ्कर शूल, मलमूत्र विबन्ध, प्रमेहपिडिका, मन्दागमि, अरुचि, अक्षिशूल, उदररोग, रफपित्त, वमन इन सबको यह नष्टकरताहै ।

५५ चिन्तामणिलेखम्

भृङ्गराज (चेपुतट्टाकु तै०) पीतवपुषभृङ्गराजविल्वगोक्षुरमूलप्राचीनामलकीकोकिलाक्षपत्राणां स्वरसाः प्रति ३६ तोलकाः, जम्बूयैदुम्भरत्वङ्गारिकेलपुष्पाणां प्रति ७॥ तोलकानां ४८ तोलके जलेऽष्टावशेषं कार्यं गृहीत्वा पूर्वोक्तसैः संयोज्य मरिचनीलीमूल-यलातिबलाऽरण्यामरीचिकाः कृपित्यमूलानि प्रति १० तोलकानि १२० तोलके शुद्धजले निधाय २४ तोलकं तालगुडं निक्षिप्य १४४ तोलकं गोदुग्धं मेलयित्वा द्रवशोषणपर्यन्तं विपाच्य जीरकैः लालयद्भ्रि-फलायष्टिमथुकरमरिचजातीफलजातीपत्रयवानिका-खुरासानिकातालीसनागकेशरपाटला (करकट्टु तै०) कुष्ठऽऽकारकरभनागराणां ३-३ तोलकानां चूर्ण घनपाके मेलयित्वाऽधतार्यं स्वाङ्गशैत्ये २० तोलकं घृतं २४ तोलकं मधु च निक्षिपेत् । अत्र च त्रिलोह-सिन्दूरं ६ तोलकं, मण्डूरसिन्दूरं ३ तोलकं मेलयित्वा पादतोलकं प्रत्यहं द्विधारं पादमण्डलमर्धमेकं वा मण्डलं सेवनीयम् । अनेन पाण्डुशोथकामला सर्ववायुप्रहण्यतीसारचान्तयो निर्मूला भवन्ति । (व्यास०)

५६ जातीपत्र्यादिवती

टङ्गद्वयमिता जातीपत्री जातीफलं समम् ।
सिन्धुवोपञ्च तन्मात्रमाकारकरुभं समम् ॥
त्वक्तमालां च तन्मात्रापेलाकङ्गोलकी समी ।
पत्तनाभं तत्समानं टङ्गैरुमहिफेनकम् ॥
भूतयोजन्तु टङ्गैर्कमीशनागाजमोदकम् ।
ज्योतिष्मती च कर्पूरी द्विटङ्गा टङ्गमात्रकम् ॥

कुचेलं शोधितं प्राह्यं सर्वं सूक्ष्मं विचूर्णयेत् ।
द्विगुणायाः सितायास्तु पाके चूर्णं विमिश्रयेत् ॥
गुटीं कृत्वा प्रयत्नेन चणकद्वयमानिकाम् ।
महापुस्त्यकरी ह्येषा बलवीर्यविवाधिनी ॥

र. कु. वाजीकरणे ।

भाषा—जावित्री, जायफल, समुद्रशोष, अकलकरा, तत्र, तमालपत्र, इलायची, शीतलचीनी, शुद्धबलनाग २-२ टङ्ग, शुद्ध अफीम और धतूरेके बीज १-१ टङ्ग, रससिन्दूर, नाग-भस्म, अजमोद, मालकगनी, अनन्तमूल २-२ टङ्ग, शुद्ध-कुचिला १ टङ्ग लेकर बारीकचूर्णकर सवसेदुनी शकरही चाशनीमें मिलाकर शोथने प्रमाण गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली वृद्ध अणुपानकेसाथ लेनेसे नपुंसकत्वको दूरकर बल और वीर्यको बढ़ाती है ।

५७ जीवन्त्यादिलेहः

जीवन्ती मधुकं पाठां त्वन्शीरीं त्रिकलां शटीम् ।
मुस्तैले पत्रकं द्राक्षां द्वे गृह्यतीं वितुन्नकम् ॥
सारिवां पौष्करं मूलं कर्कटाख्यं रसाञ्जनम् ।
पुनर्नवां लोहरजम्बायामाणां यवानिकाम् ॥
भाङ्गीं तामलकीमृद्धिं विडङ्गं धन्यावासकम् ।
क्षारचित्रकचव्याम्लवेतसत्रयोपद्राव च ॥
चूर्णीकृत्य समांशानि लेहयेत्क्षीरसर्पिणा ।
चूर्णांतापाणितलं पञ्चकासानेतद्वधपोहति ॥
च., ग. नि., काशाऽधिकारे ।

भाषा—अर्कपुष्पीकी जड़, मुलहठी, पाठा, तीपूर, त्रिकला, कचूर, नागरमोथा, इलायची, पत्रकाट, दाश छोटी और बड़ी भट्टकट्टिया, सोनापाठा, सारिवा, पोहकरमूल, काकडासोंगी, रसीत, पुनर्नवा, लोहभस्म, नायमाण, अजवाइन, भारद्वाजी, मूल्यामलकी, कर्दि, विडङ्ग, जवासा, यवशार, चित्रकमूल कन्य, अम्लवेत, त्रिकट्ट, देवदार, सब समभागलेकर बारीक चूर्णकर रखछोड़े । इतमेंसे ३-३ मासे मधु और पीकेसाथ लेनेसे समस्त कास नष्टहोताहै ।

५८ ज्योतिष्मानरसः

कान्तं सुवर्णमग्नश्च रसं पद्मज्ज्वारितम् ।
घैकांस्तं विद्रुमं रुद्रजटामूलं ह्याऽमिषम् ॥
कङ्कष्ठञ्च समं सर्वं गृहीत्वा यत्नतो भिषक् ।
एकीकृत्य रसेनैडगजपत्रमयेन च ॥
भृतातमूलखदिरमूलषायेन यत्नतः ।
त्रिधा सम्भाज्य विधिवन्मात्रा चणकसमिम्ता ॥
ज्योतिष्माभ्रामकरुसां पातरकं हरिद्रुतम् ।
पुष्टमष्टादशविधं रोगांध्यान्वास्तुदुग्धवान् ॥
तथा गौणोपदेशाच्च विटति पारदाद्भवाम् ।
दुष्टग्रणं गण्डमालां भगन्दरमयापचीम् ॥

नातः परतरं किञ्चिद्वैपजं रक्तमुद्धिकृत ।
सारिवा तन्द्रिका पथ्या पथं गञ्जिनी तथा ॥
चकाङ्गी काय एतेषां ज्योतिष्मद्रससेवनात् ।
यर्थयेदाशु वीर्यञ्च सर्वरोगकुलान्कृत ॥
भापितः श्रीमंदेशेन विद्युधानां यथाऽऽतृप्तम् ॥
शै. र. पुत्राधिकारे ।

भापा—कान्तलोह, सुवर्ण, अन्नक, पहणगन्धकजारित
पारा, वैकान्त, विदुम, रजटा और सफेद कनेरकी जड़, रेव-
चीनी सब समभागलेकर घारीकचूर्णकर पवाङ्केपत्तोंके स्वरस
तथा मिलावे और खैरजीजङ्केकापसे २-३ भावनाएं
देकर चनेप्रमाण गोलिये बनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली
कुश्टानुपानकेसाथ देनेसे भयङ्कर वातक, उपद्रवसहित १८
प्रकारके कुष्ठ, सुनाक, उपदंश, पारदधिकार, दुष्टप्रण, गण्डमाला,
भगन्दर इन सबको यह नष्टकरता है । रक्तमुद्धिके लिये इससे
बढ़कर दूसरी औषधि कम है । सारिवा, भारती, हरे, पित्तपा-
पडा, मांग, गिलोय, इनके कायके साथ सेवनकरनेसे समस्त
रोगोंका नाशहोकर वीर्यकी वृद्धिहोती है ।

✓ ५९ ज्वरचिन्तामणिरसः

तुत्पद्यपञ्च द्रवदं गन्धकं रसतालकम् ।
शङ्खवीजं दन्तिथीजं ताम्रमसम् हलाहलम् ॥
लोहवङ्गमयं मसम् रौप्यमसम् मनःशिलाम् ।
टङ्गुणं श्वेतपाषाणं समभागञ्च योजयेत् ॥
आद्रकस्वरसेमैर्यं घञ्जसूपान्तरं क्षिपेत् ।
स्वर्णमसम् च तीक्ष्णस्य प्रवालं भीषिकं तथा ॥
पतैस्सर्वैः समायुक्तमाद्रकस्वरसेस्तथा ।
शुक्राप्रमाणा घटिका सन्निपातज्वरज्ञयेत् ॥
रघायनप०, सन्निपाते ।

भापा—शुद्ध दोनों वृत्तिये, त्रिगणिक, गन्धक, पारा, हरि-
ताल, कालादाना, जमालगोटा, ताम्रमसम्, बघनाग, लोह, वज्र
और रजतमसम्, शुद्ध मैनसिल, सुदागा और सोमल समभाग
लेकर सबकी नीलवर्णकञ्जलीकर अक्षररकेरसे एकदिन मर्दन-
कर गोलाभाय घञ्जसूपामें बन्दकर सूखसुटकी आंचदे ।
स्वात्रशीतलरोनेर मिक्कालकर सुवर्ण, फोलाद, प्रवाल और
मोदीमसम् १-१ भाग मिलाकर अक्षरके रसेसे एकदिन मर्दन-
कर १-१ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१
गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे सन्निपात, श्वाय, काय,
विषमज्वर, शय इन सबको यह नष्टकरता है ।

✓ ६० ज्वराङ्गुनारसः

लोकनायपस्य शुद्धस्य यलेभ्यैकेकमागकः ।
दौशुषमण्डनात्पथिमांगा महातकस्य च ॥
चत्वारो नागजिहायास्तपाम्लेच्छमुलस्य च ।
चत्वारो मासिकस्यपि सुदीर्घारस्य षोडश ॥

एतन्मृद्वग्निना सर्वं पचेद्भाण्डे च मृन्मये ।
स्वाङ्गशीतलतां ज्ञात्वा समारक्येत्ततः परम् ॥
विषकं भेषजं सम्यक्ततः खल्वै विमर्दयेत् ।
रसो ज्वराङ्गो नाम शीतादिज्वरनाशनः ॥
नागवल्लीदलेनास्य दद्याद्भाञ्जाचतुष्टयम् ।
दद्यान्मण्डादिकं पथ्यं ज्वरिताय ज्वरापहम् ॥
र. म., ज्वराधिकारे ।

भापा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ भाग, हरिताल और
मिलावां ६०-६० भाग, मैनसिल, तविका चूर्ण और सुवर्ण-
मासिक ४-४ भाग लेकर नीलवर्णकञ्जलीकर १६ भाग शुभ्र-
का दूध मिलाकर मिठीके वतैनमें रख मन्दाग्निसे पकावे । दूध
सूखनेपर उतारकर खलमें डाल एकदिन मर्दनकर ४-४ रत्ती-
की गोलियेबनाकर रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानके
साथ देनेसे शीतादि समस्त विषमज्वरोंको यह नष्टकरता है ।
इसमें मांड बगैर हल्का पथ्य देवे ।

६१ ताण्डवारिलौहम्

दाहरामठकपूर्वस्यशदायो यथोत्तरम् ।
प्रगृह्य चतुरावृत्त्या विभाव्य विजयाम्बुना ॥
कुपीलुजकपायेण पायस्य स्वस्वसेन च ।
पङ्क्तिंकां घट्टां कृत्वा युञ्ज्यात्ताण्डवशान्तये ॥
वृंहणं पानमन्नञ्च स्नानं श्रोतस्वतीजले ।
शयनं स्वेदश्चन्यं यत्कर्म तच्चेह शर्मणे ॥
कर्णगाद्यखिलं प्रोक्तमशुभाय पुरातनैः ॥
शै. र. ताण्डवरोपाधिकारे ।

भापा—देवदाह, भुनीहीग, शुद्धकपूर, जस्त और लोहमसम्
ये सब क्रमशःभाग लेकर घारीकचूर्णकर भांगकेस्वरस
अथवा हापसे ४ भावनाएं देकर कुपिलेके काय और अर्जुनके
स्वरसे १-१ दिन मर्दनकर ६-६ रत्तीकी गोलियेबनाकर
रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथ देनेसे
ताण्डवरातको यह नष्टकरता है । वृंहण अनुपान देवे । बहती
हुई नदीमें स्नानकरावे । पूर्ण अन्नपचये रखे । कर्णक्रिया
इसमें वर्जित है ।

✓ ६२ तापाङ्गुनारसः

सूतसूर्यविषयश्च त्रिफलाग्निव्योपमद्दारसो घटिकैका ।
हन्ति मुद्गसुतुलिता नयमाहाद्यांगतेन पयना-
रितलतापम् ॥

र. भो., ज्वराधिकारे ।

भापा—पारा और ताम्रमसम्, शुद्धबघनाग, कुष्ठ, त्रिफला,
विषक, त्रिकटु, ये सब समभागलेकर घारीकचूर्णकर तुलसी-
बगैरकेरसे एकदिन मर्दनकर मूंगबराबर गोलियेबनाकर
रखजोड़े । इनमेंसे १-१ गोली ज्वर आनेसे १ घण्टा पहिले
मुन्नी बगैरकेसाथ केनेसे यह गरम- विषमज्वर और वात-
वेदनाको नष्टकरता है ।

१६३ ताम्रयोगः

त्रिफला ज्यूपणं मुस्तं विडङ्गं चित्रकं तथा ।
 लयङ्गञ्च पृथक् सधे सूक्ष्मं चूर्णं प्रकल्पयेत् ॥
 सर्वेभ्यो द्विगुणं ताम्रं मृतं दत्त्वा प्रमर्दयेत् ।
 मापेकं वा द्वयं वापि लेहयेन्मधुना सह ॥
 समस्तशूलशान्त्यर्थं समस्तसुखहेतवे ॥
 ना. वि., घृले ।

भाषा—त्रिफला, त्रिकटु, नागरमोथा, विडङ्ग, चित्रकमूल
 और लवत्र समभागलेकर बारीकचूर्णकर सबसे द्विगुण ताम्रम-
 स्ममें मिलाय १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे १ से २
 माशेतक मधुकेसाय देनेसे समस्तशूल दूरहोते हैं ।

६४ तालकवटी

तालभागो भवेदेको शिला चैव चतुर्गुणा ।
 चूर्णयित्वा द्वयं चैतद्भावयेत्त्रिफलोदकेः ॥
 कृत्वा तद्गुटिकां रुक्षणां कूपीमध्ये विनिक्षिपेत् ।
 निरुद्धश्च बालुकायन्त्रे यामद्वयमत्तन्द्रितः ॥
 गुञ्जाद्वयं ददीतास्य श्वासकासापनुत्तये ॥
 र. म., श्वासकासयोः ।

भाषा—शुद्धहरिताल १ भाग, मैनसिल ४ भागलेकर बारीक
 चूर्णकर त्रिफलाकेवायसे एकदिन मर्दनकर २-२ रतीकी
 गोलियेबनाकर छायाशुष्ककर आतशीशीशीमें भरके बालुका-
 यन्त्रमें रख दोपहरकी आंचदे । स्वात्तशीतलहोनेपर निकालकर
 रखछोड़े । इसमेंसे २-२ रती उचितानुपानकेसाय देनेसे यह
 श्वासकासकी नष्टकरता है ।

६५ तालकमुन्दरीगुटिका

तण्डुलाभ्युजनीपुनर्नवा
 धावनी कणजलात्रिजेरलम् ।
 मृतवृक्षपिचुमन्दसंयुतः
 स्वेदयेदथ पृथक्पृथक् क्रमात् ॥
 यामकैकमधिकं विचूर्णितं
 शोपयेत्तदनु गन्धकं पुनः ।
 भृङ्गसम्भवरसेन भावितं
 द्रावितञ्च शुभलोहपात्रगम् ॥
 प्रक्षिपेच्च बहुधा घृतान्ते
 शुद्धिमैत्थ्य सुतकमध्यगम् ।
 पारदञ्च गृहकन्यकारसै-
 र्मदितं त्रिफलयोऽग्निना क्रमात् ॥
 स्वेदयेत्त्रिकटुहिङ्गुराजिका-
 क्षारसुग्मलयणैर्दिनत्रयम् ।
 काञ्जिकेन घटदोलिकागतं
 शुद्धमित्थममलञ्च सूतकम् ॥
 अष्टौ भागाः पूर्वशुद्धाश्च ताला-
 द्वां भागाः पूर्वशुद्धाद्रसेन्द्रात् ।

दत्त्वा खल्वे तालकार्थञ्च गन्ध-
 माभूमातं मर्दयेत्कज्जलाभम् ॥
 तालादकं सोमराज्याश्च चूर्णं
 चूर्णं देयं चाभयायाश्च तावत् ।
 पलाशुष्टीकृष्णमुस्ताकराला-
 ल्यगुक्तानां सोपणानाञ्च भागाः ॥
 देयाः सर्वे सूतराजेन तुल्या
 देयास्तालात्सद्विषं पीडशशांशम् ।
 सर्वं सूक्ष्मं पेपितं सिन्धुतोयि-
 र्दद्याच्छुद्धानाञ्च सिद्धा वट्टीस्ताः ॥
 दिने दिने मापकसम्मितानां
 प्रभावतस्तालकमुन्दरीणाम् ।
 समभ्यसन्त्याति नरो विलङ्घ्य
 प्रसह्य कुष्ठार्तिसमुद्रमाशु ॥

श्वित्रोदुम्बरशीर्णसुप्तिरकसाऽऽद्युग्वातवृद्धुकिमी-
 द्वाडीदुष्टभगन्दरप्रहणिकादुर्नामपाङ्गमयात् ।
 कृच्छ्रोन्मादससन्निपाततमकाऽपस्मारमेदोऽज्वरान्,
 हन्यात्तालकमुन्दरीति गुटिका प्रोक्ता स्वयं शम्भुना ॥
 वलिपलितं क्षयरोगं कुष्ठं प्रहणीमसाध्यगद्विपिनम् ।
 विद्वहति विशानानलश्च गुटिका तालकमुन्दरीविहिता
 अतिलवणतैलकाञ्जिकचिपमाशनपानमहीघर्मापि ।
 जागरकोपनमैथुनमद्यविरुद्धकानि सर्वाणि ॥
 परिहरतु यावदेनां करोति पुरयो तालकेश्वरौ गुटिकां
 तावन्ति चान्युपरितो दिनानि गच्छन्मादान्मुक्तिम् ॥
 र. म., कुष्ठे ।

भाषा—चावलकाधोवन, हल्दी, पुनर्नवा, शालपर्णी,
 पीपल, खस, चित्रक, बहेड़ा और नीमके स्वरसोंसे अलग अलग
 १-१ पहर हरितालमें स्वेदनकर सुखाले । फिर गन्धकको
 लोहेकेपात्रमें गलाकर भंगरेके रस और पृतमें निर्वापदेकर
 शुद्धकरे । परेको खटीछाल, धीङ्गुनार, त्रिफला और चित्रकमें
 क्रमसे मर्दनकर गोलावनाय ४ तह करपेमें बाधकर त्रिकटु,
 हींग, राई, सजी, यवशार, पाचोनमकमिलीहुई काशीमें
 दोलायन्त्रसे ३ दिन स्वेदनकरके शुद्धकरे । फिर शुद्धहरिताल
 ८ भाग, शुद्धपारा, गन्धक, वाङ्गुची, हरे, इलायची, सोंठ,
 पीपल, नागरमोथा, कालीजीरी, तज और मरिच ४-४ भाग,
 शुद्धबलनाग १६ वा भाग लेकर बारीकचूर्णकर धातुओंकी नील-
 वणैकजलीमें मिलाय समुदके जलसे १-२ दिन मर्दनकर १-१
 माशेकी गोलियेबनाकर रखछोड़े । इसमेंसे १-१ गोली कुष्ठ-
 हरानुपानकेसाय देनेसे सबतरहकाकुष्ठ, श्वित्र, उदुम्बर, मांसका-
 गिरना, प्रसुप्ति, रकसा, रक्कात, बद्ध, किमि, नाडीवण, दुष्ट-
 भगन्दर, प्रहणी, अर्था, पाण्डु, मूत्रहृच्छ्र, उन्माद, सन्निपात,
 तमक, अपस्मार, मेद, ज्वर, शनसबको यह नष्टकरती है । इसके
 सेवनमें अत्यन्तलवण, तैल, काञ्जिक, विपमाशन, पान, मूभि-
 मय्या, धूप, जागरण, कोप, मैथुन, मद्य, अङ्कुरित अन्न इनसब-

का परित्यागकरे । जितने दिन इसगोलीका सेवनकरे उतने दिनतक तथा औषधसेवनसमाप्तिके बादभी उतनेही दिनतक उजचीजोंका निषेधकरे ।

६६ तीक्ष्णादिवटिका

खर्परान्नरसास्तुल्यास्तीक्ष्णञ्च द्विगुणं मतम् ।
तीक्ष्णपादसमं स्वर्णं जतुकायेन सप्तधा ॥
भाषयित्वा ततः कायां द्विगुञ्जाप्रमिता वटी ।
पलङ्कपाकपायेण रसेनोदुम्बरस्य वा ॥
प्रयोज्या वटिका होया शुभा तीक्ष्णादिनामिका ।
रक्तपित्तं क्षयं कासं यश्मानं श्वसनं ज्वरम् ॥
निहन्यात्सकलात्रोगान् कैसरी करिणं यथा ॥
भै. र., रक्तपित्त ।

भाषा—खर्पर, अन्नक और पारदमस १-१ भाग, लोह-
मस ३ भा०, सुवर्णमस ३ भाग लेकर चारीकचूर्णकर
लाखकेकाड़ेसे ७ दिन मर्दनकर २-२ रतीकी गोलियेबनाकर
रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली गोखरूकेकाथ अथवा गूलरके
फलोंकेसमे देनेसे रक्तपित्त, क्षय, कास, राजयक्ष्म, श्वास,
और ज्वरको यह नष्टकरती है ।

६७ त्रिकटुकाद्या वटी

त्रिकटुत्रिफलादुरालभा
द्विनिशादाह्वचाः सचित्रकाः ।
रसगन्धकककटाह्वया
रुचककटुफलहिङ्गुपत्रिकाः ॥
इति दर्शितभेषजमुंटी
मधुना शानमिता कृता नृणाम् ।
प्रणिहन्ति निषेचिता नरैः
पयनाष्टककफोपजान्घिकारान् ॥

ग. नि., कफरोगे ।

भाषा—त्रिकटु, त्रिफला, जवाह, हल्दी, दाहल्वदी,
देवदारु, वच, चित्रकमूल, शुद्ध पारा और गन्धक, काकडा-
सींगी, कालानमक, कायफल, डीकामाली देसव समभागलेकर
चारीकचूर्णकर पारगन्धककी नीलवर्णकजलीमें मिलाय मधुमें
४-४ मासेकी गोलियेबनाकर रखओड़े । इनमेंसे १-१ गोली
सायं प्रातः लेनेसे श्वेतक और कफरोगको यह नष्टकरती है ।

६८ त्रिनेत्ररसः

टङ्गुणं शोधितं गन्धं मृतं शुल्वायसं रसम् ।
दिनेकमाद्रिकद्रावैर्मयं लघुपुटे पचेत् ॥
त्रिनेत्राख्यो रसो नाम चासाध्यं श्वयथुं जयेत् ।
घट्टुमात्रं पिवेशानु चातारिशिखरीरसम् ॥
भै. र., शोषाधिकारे ।

भाषा—शुद्धसुहागा, गन्धक और पारा, ताप्र और
लोहमस, समभागलेकर नीलवर्णकजलीकर एकदिन अदरखके

रसेसे मर्दनकर गोलाबनाय शारावसम्पुटमें बन्दकर लघुपुटकी
आंचदे । स्वादशीतलह्वोनेपर निकालकर रखओड़े । इसमेंसे
२-२ रती एण्ड और अपामार्गके पत्रस्वरसेसाधनेसे
असाध्य शोष नष्टहोता है ।

६९ त्रिपुरुषो रसः

वज्रं गद्याणमितं फणिवह्निना स्वेदयेद्विवसम् ।
त्रिदिनं क्षिपेत्तुपाम्भसि भूषां कन्यारसेन सम्पूर्य ॥
तत्र निधाय च वज्रं रुद्धमुखीं सप्तभिः पुटेर्विदेह्व ॥
भस्म भवेदिति वज्रं भसितमतः कथ्यते प्रवालस्य ॥
विद्रुमपलं निदध्यादिनमेकं देवदालिरसमध्ये ।
प्रहरं तद्रसपुटे दिनं निदध्याच्च कृष्णधृतरसे ॥
अथ यावनालं निदधीत दिनत्रयं जलस्यान्ते ।
तेन जलेन तद्वं पिन्ना भूषोदरं प्रलिम्पेत ॥
तत्सलिलपूरितायां भूषायां निक्षिपेत्प्रवालञ्च ।
रुद्धमुखीं सप्तपुटेर्विदेह्ववति विद्रुमभस्म ॥
चूर्णजले सिन्दूरिणि निधाय

पलमात्रमौक्तिकं दिवसम् ।

तस्मिन्नेव विषपेदिनमेकमथ प्रकल्पयेन्भूपाम् ॥
वत्सतरीशकृतोऽस्याः कृत्वाऽन्तर्लेपनं दशाहानि ।
तन्मूत्रपूरितायां भूषायां मौक्तिकं क्षेप्यम् ॥
रुद्धमुखीं सप्तपुटेर्विदेह्वतो मौक्तिकं भस्म ।
शुद्धं रसपलमेकं नारङ्गफलोदरे ततः क्षेप्यम् ॥
लवणेन पूरयित्वा नारङ्गं स्थालिकोदरे निहितम् ।
तां माहिषेण पयसा सम्पूर्य तापयेन्मन्दम् ।
यावद्वाऽङ्गुलमानं नारङ्गोपरि स्थितं क्षीरम् ।
तावद्भस्म रसस्य स्यादेवं भस्मानि चत्वारि ॥
तान्येकत्र विमलं जम्बूलरसेर्मस्यानि भूपय्याम् ।

ततः कृत्वा लुङ्गसमाः क्षिपेत्त-

दाऽखिलं ताञ्च प्रपूर्यम्भसा ॥

जम्बीरस्य निरुद्धय तन्मुखमथ त्रिःसप्तवारान्देह्व
सिद्धयेवमसौ रसत्रिपुरुषो रोगौघविध्वंसनः ॥
क्षौद्राक्तो जरणेन शैलजतुना मासैकसंसेधितः ।
कृच्छ्रं शरुण्या युतोऽपि नितरां पिताखुजं नाशयेत् ।
तेलेन पक्त्वा घट्टकान्निपीड्य

तत्तलमिधं दिवसांश्च पञ्च ।

दद्यात्समद्याद्गतचेतनोऽपि

जयेद्दशत्रीनपि सन्निपातान् ॥

जीमूतकन्यारसमिश्रितञ्च

देवो मिषमिश्रिदिनं रसेन्द्रः ।

दुष्टं कष्टं विधिनापविष्टं

विष्टमशूलं विनिहन्ति सद्यः ॥

श्वसं सकासं क्रिमिशूलजातं

क्षीरेण युग्मृद्भस्मो रसेन्द्रः ।

तेनानुपानेन तु तैलपको

भुक्तः स्मरोग्नादमपाकरोति ॥

र. मृ. सप्रिपाते ।

टि०—मूलस्वप्रतिषेधा पारदभस्म दुर्बारात् सप्तमपाके दुग्धे शुष्के
5परां रयालीं मुले न्यस्य नास कर्पूरशुक्रिका दत्त्वा चतुर्विंशते ब्रमद्वया
विना पाकः कर्पूरीयस्तेन रसवर्षासादनं भविष्यति ।

भाषा—६ माघे बज्राभ्रकको पानकेरससे एकदिन स्वेदन
कर तुषाम्बुमे ३ दिन रख सुपामे ढाल धीजुवारकेरससे
सुपाको भरके ७ कपडमिठी देकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञ-
शीतलहोनेपर निकालकर फिर पूर्ववत् घोटकर आचदे । ऐसे
७ आचोंमें बज्राभ्रककीभस्महोगी । एकपल प्रवालको बन्दालके
रसमें एकदिनस्वेदनकर बारीककूकर एकप्रहरमदनकर काले
घट्टेके रसमें ढालकर थोड़ीज्वार ढालदे । तीनदिनवाद उसी
जलमें ज्वारको धीसकर सुपाकेभीतर ठेपनकरदे । फिर उसमें
प्रवालकी टिकड़ीको रख उसीपानीको अन्दरभरके ७ कपड
मिठीदेकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर निकालकर
फिर पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ बार आचें देनेसे भस्महोगी ।
एकपल मोतियोंको सिन्दूरवर्णवृत्तेके पानीमें ढालकर एक-
दिन रहनेदे । फिर दूसरेदिन उसीजलमें २४ घण्टा घोटकर
खरबौलीदका रसपुटीहुई बज्रसुपामे रख खरबेहीमनसे
भरदे । १० दिनवाद कपडमिठीकर गजपुटकी आचदे । ऐसे
७ पुण्डेनेसे भस्महोगी । एकपल शुद्धपारेको नारदकीभीतर
रखकर खण्णसे आधेतकभरीहुई हण्डीमें रख खण्णसे ऊपर
तकभरके भस्मदूधभरदे और भस्म आचसे पकावे । नारगीपर
एकअहुलद्वय धाकीरहजानेपर उतारकर नारद्रीमेंसे पारको
निकाल दूसरेफलमें भरके पूर्ववत् आचदे । ऐसे ७ बार पाक
करे । सातवींबार तमामदूध जलपानेकेबाद हण्डीपर दूसरीहण्डी
रखकर ६-७ कपडमिठीकर सूखनेपर ४ दिनकी आचदे ।
ऊपरकी हण्डीपर मीगाकपड रखे । स्वागशीतलहोनेपर
धीरजसे यन्त्रको खोलकर ऊपर लगेहुए रसपुट्योंको निकाल
ले । इसतरह चारोंभस्मोंको एकत्र मिलाय जभरीकीरससे घोट
कर टिकड़ीबनाय सुपामेरख विजोरे अथवा जभरीकारस
भरके कपडमिठीकर गजपुटकी आचदे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर
निकालकर पूर्ववत् मदनकर आचदे । ऐसे २१ बार गजपुटदेनेसे
यह रस तैयारहोजाताहै । इसमेंसे १-१ रती ततद्रोगहरानु-
पानकेसाथ एकमहीनेतक सेवनकरनेसे मूलच्छत्र, शंखर, मूत्रनेह,
रक्षपित्त इनसबको यह नष्टकरताहै । तैलमें उड़दके बड़े बनाकर
उन्में दवाकर तैलमिकाले । उस तैलकेसाथ ५ दिनतक देनेमें
चेतनारहितभी सप्रिपाती जीवितहोताहै । इसतरह १३
सप्रिपातोंको यह नष्टकरताहै । नागरमोया और धीजुवारके
रसकेसाथ ३ दिनतक देनेसे भयङ्करविष्टम्भ और शूलकी
नष्टकरताहै । इसीतरह श्यास, कास, पक्ष्मण, किमि, शूल इन
सबको नष्टकरताहै । दूध और भगरेरेरसकेसाथ मिलाकर
तैलमें पकाकरदेनेसे स्मरोग्नादको नष्टकरता है ।

७० त्रिलोचनवटी

वारिणा मर्दयेत्तालं स्त्रीसकं मरिच्य विपम् ।

मुद्रमाना वटी कार्या जलेन सितया सह ॥

द्विमुद्रतांन्तरं दद्यात्कमेण घटिकायम् ।

त्रिलोचनवटी होपा पर्यायज्वरनाशिनी ॥

घातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं साधिपातिकम् ।

सर्षाड्यराग्निहन्त्याद्यु प्रयुक्ता ज्वरमादधे ॥

शै र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल और बधनाग, नागभस्म, मरिच,
येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जीकर एकदिन जलकेसाथ
घोटकर सुगवत्वार गोलियेबनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१
गोली जल अथवा शकरकेसाथ २-२ घण्टेसेदेनेसे पालीकेज्वर,
घातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और साधिपातिक ज्वर नष्टहोतेहैं ।

७१ त्रिविक्रमरसः

शुद्धयुताऽमृतं तात्रं शिलातालञ्च गन्धकम् ।

कुष्ठ महाबला पथ्या शिलिकण्ठं विदारिका ॥

परण्डतेलं संयोज्य दिनमेकान्तु मर्दयेत् ।

पुनर्नयाद्रवेणवाऽनुपानं सम्प्रकल्पयेत् ॥

सुज्ञामात्रां वटीं खादद्गुल्मघातनिवहणम् ॥

वे वि गुल्मे ।

भाषा—शुद्ध पारा, बधनाग, ताम्रभस्म, शुद्ध मैन्सिल,
हरिताल और गन्धक, कुष्ठ, महाबला (बह्नी), हें, दुग्धभस्म,
विदारी येसव समभागलेकर नीलवर्णकज्जीकर एकदिन
एण्डतेलसे मदनकर १-१ रतीकी गोलियेबनाकर रखलोड़े ।
इनमेंसे १-१ गोली पुनर्नवाके स्वरसकेसाथ देनेसे गुल्मघात
नष्टहोताहै ।

७२ त्रैलोक्यरक्षामणिरस

सूताम्रगन्धं विपतालरोप्यं तात्रं प्रवालं द्रवञ्च बज्रम्

मयूरतुत्यं कनकेन मिश्रं नेपालचूर्णं मृतलोहभस्म ॥

निर्गुण्डियैश्चानरतोयपिण्डं सुवालुकायत्रगतं विपवम् ।

आर्द्रस्य तोये मरिचैर्विमिश्रं

सुज्ञाप्रमाणं विनिहन्ति दोषम् ॥

मन्दाश्रितीर्णज्वरमारुताना

श्यासञ्च कासं बहुरोगसङ्घम् ।

चिन्तामणिनाम महाप्रभाव-

श्लैलोक्यरक्षामणिपारदेन्द्र ॥

रसायन० ज्वराधिकारे

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक, बधनाग और हरिताल, अभ्रक,
रजत, ताम्र, प्रवाल, सिगरिक, हीरा, मयूरतुत्य, सुवर्ण,
लोह इनकीभस्मों और शुद्धबमालगोटा समभागलेकर नीलवर्ण-
कज्जीकर समात् और चिन्तककेस्वरसोंसे १-१ दिन मदनकर
गोलाबनाय धरावसम्पुमें बन्दकर वालुकायन्त्रमें रख एकदिन-
रातकी अग्निदेवे । स्वाज्ञशीतलहोनेपर १-१ रती अदरखके

रस और मरिचकेसायदेनेसे मन्दाग्नि, जीर्णज्वर, समस्तबायु रोग, श्वास, कासप्रश्रितोर्गोको यह नष्टकरताहै ॥

७३ दरदादिवटी

दरदं पादपलिकामहिफेनञ्च तत्समम् ।
भृङ्गा पलमिता प्राह्या मापकद्वयसम्मिता ॥
गन्धकं चोषणं कृष्णा द्रुङ्गं वत्सनाभकम् ।
धूर्तवीजं कुन्बेलञ्च दरदस्य समं समम् ॥
सर्वे सन्पेपयेत्सूक्ष्मं नीरेण शुट्टिका ततः ।
महुप्रमाना फर्तव्या दिवारानौ प्रदापयेत् ॥
तदेकैकाङ्गलेनेयाऽम्लादिकं परियजयेत् ।
पण्डो पौरुषमासाद्य रमण्या सह मोदते ॥

र. बाजीकरणे ।

१ भाषा—शुद्ध शिंगरिफ और अक्रोम १-१ कर्प, भाग १ पल २ मासे, शुद्धगन्धक, मरिच, पीपल, शुनाखुदाग्नि, शुद्ध बलनाग, धतूरेकेवीज और कुचिला १-१ कर्प लेकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन पानीमें घोटकर मोठ्यरावर गोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानी अथवा उचि तानुपानकेसायलेनेसे पुष्पत्वको प्राप्तहोताहै ।

७४ द्वियोनिरसः

प्राह्यं शुद्धरसात्पलं पलमयो सद्रन्धकाच्छोधितं,
मण्डूराच्च पलद्वयं पलमपि स्यात्पृतनाचूर्णतः ।
चूर्णाहित्य त्रिवृत्पलञ्च सकलं खल्वे निधाय स्थितं,
तं सम्भाव्य सुपीतभृङ्गसलिलप्रस्येन सञ्चर्णितम् ॥
दातव्यं मधुसर्पिपा प्रतिदिनं तत्पेयमापान्यितं,
क्षौद्राम्मोहिमरागदाडिमजलद्राक्षाम्बुपानादिभिः ।
पीत्वाऽम्लं विनिहन्ति मान्यमलसञ्चयासञ्च वक्ष्णोगद्वयं
छर्त्ति सर्वभवामपि क्षययुजं जीर्णज्वराशस्यपि ॥

र. मृ. राजयश्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक १-१ पल, मण्डूरभस्म २ पल, हरे और निसोत १-१ पललेकर बारीकचूर्णकर एकप्रस्य पीलेभगरेकरसे भावनादेकर सुखाकर रखछोड़े । इतमेंसे १-१ माशा द्राक्ष, चन्दन, केदार, अनार, सुगन्ध वाला इनके क्वायकेसायलेनेसे मन्दाग्नि, अल्मक, श्वास, छातीकादर्द, धमन, समस्तवातविकार, क्षय, जीर्णज्वर और बवाबीर नष्टहोतेहै ।

७५ नागार्जुनीवटी

तालेशो द्रुङ्गं गन्धं कुष्ठं त्रिकटुकं विषम् ।
करसादञ्च सर्वाणि समभागानि कारयेत् ॥
मावयेद्भृङ्गराजेन सप्त धतूरजेन च ।
गुञ्जामाषां बटो कृत्वा रात्रौ दद्यात्सुखेच्छया ॥
अशीतिं घातजात्रोगांश्चैपिमिकानेकविंशतिम् ।
पपा नागार्जुनीनाम सिद्धश्लाघ्यामवातनुत् ॥
र. म, वातरोगे ।

भाषा—शुद्ध हरिताल, पारा, सुदागा और गन्धक, कुष्ठ, त्रिकटुक, शुद्धबलनाग, अक्लकरा, सप्त समभागलेकर बारीक-चूर्णकर धातुओंकी नीलवर्णपञ्जलीमें मिलाय भगरा और धतूरेकरसे १-१ दिन मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली रात्रिमें उचितानुपान-केसायदेनेसे ८० प्रकारके वातरोग और २१ श्लेष्मरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

७६ नीलकण्ठरसः

रसस्य भागाश्चत्वारो हेक्त्रो भागचतुष्टयम् ।
अत्र लोहं तथा मुक्ता वैक्रान्तं युग्मभागिकम् ॥
रौप्यं प्रयालं ताप्यञ्च वद्वमेकैकभागिकम् ।
त्रिधा कीदन्तिलाक्षाग्निमूलकायेन भावयेत् ॥
एरण्डपत्रैः संवेष्ट्य धान्यराशौ निधापयेत् ।
ततो दिनत्रयाद्बृह्मसुन्दर्य चणकरुभाः ॥
नीलकण्ठं समभ्यज्यं शुचिः संयतमानसः ।
प्रयुञ्ज्याद्दट्टिका धीमान् यथाव्याध्यनुपानतः ॥
रसायनवर. श्रीदो घातव्याधिविनाशन ।
रसः श्रीनीलकण्ठाख्यो नीलकण्ठेन भापितः ॥
कुष्ठमष्टादशविधं प्रमेहान्विशति तथा ।
नेत्ररोगं तथा दीपान् रजःशुक्रसमुद्भवान् ॥
सन्निपातज्वरं घोरं हृत्सासामुलकण्णजात् ।
रोगं बहुविधं हन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥

मै, र, रसायने ।

भाषा—पारदभस्म अथवा रससिन्दूर और सुवर्णभस्म ४-४ भाग, अत्रक, लोह, मोती और वैक्रान्तभस्म २-२ भाग, रजत, प्रवाल, सुवर्णमाक्षिक और वद्वभस्म १-१ भाग लेकर अर्कपुष्पी, लाख और चित्रकमूलकेक्वायोंसे २-२ दिन मर्दनकर गोलाबनाय एरण्डकेपत्तोंमें लपेटकर धान्यकी-राशिमें ३ दिनतक रखकर चौथेदिन चनेप्रमाण गोलियेंबनाकर रखछोड़े । नीलकण्ठ महादेवका पूजनवर १-१ गोली तत्तद्विग-हरानुपानकेसायदेनेसे १८ प्रकारके कुष्ठ, २० प्रकारकेप्रमेह, नेत्ररोग, रज और शुक्रदोष, सन्निपात, हृदय, नाक, मुख और कानकेरोग इनसबको नष्टकर रसायनका काम करताहै ।

७७ पानीयवटिका

शुद्धः सूतो गन्धरुञ्च हरितालं समांशकम् ।
विपाऽयस्क्रान्तनिम्बानां प्रत्येकञ्च द्विभागिकम् ॥
शोफालीदलजैः काथैर्गुह्वचीपरपटोद्भवैः ।
भाययित्वा ततः कार्यां गुञ्जात्रयमिता वटी ॥
अनुपानं प्रयोक्तव्यं शीतलं सलिलं ह्यनु ।
ज्वरमष्टविधं हन्ति साध्यासाध्यमथापि धा ॥
प्लीहानं यरुतं शौर्यं पाण्डुञ्च सहलीमकम् ।
पानीयवटिका ह्येषा प्रथिता पृथिवीतले ॥

मै, र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—शुद्ध पारा, गन्धक और हरिताल १-१ भाग, शुद्धवज्रनाग, कान्तनेहमम्, त्रिम्यमन्त्रा २-२ भागलेकर नील-वर्णकवलीहर द्वारसिंगारकेपते, गिलोय और पित्तपापड़ेके रवर-छोटे १-१ भावना देकर २-२ रत्तीकी गोलियेबनाकर रस-छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली डेडैजलवेगायदेनेसे घाप्य अथवा अवाप्य ८ प्रकारकाज्वर, प्लीहा, बहुर, शोथ, पाण्डु, हलीमक इन सबको यह नष्टकरती है ।

७८ पित्तान्तकलोहम्

रसे गन्धकमस्रश्च गुहृचीममयां तथा ।
उशीरं यालकं ताघ्रसारं सर्वं समं समम् ॥
गृहीत्वाऽयः सर्वसमं रत्नैः संस्थाप्य मर्दयेत् ।
रक्तिकाद्रयमितं खादेद्दृष्टिकामतियत्नतः ॥
पटोलपत्रधान्याकफार्थेनैवानुपानतः ।
पाण्डुं पित्तोद्भवाप्रोगानशोथान्युत्तं तथा ॥
उपदेशं तथा हन्याद्विरुक्तिं पारदोद्भवाम् ।
लोहं पित्तान्तकं नाम धातरकं सुदारुणम् ॥
दाहश्च हस्तपदपोहंति सूर्यां यथा तमः ॥
शे. र., वातरफे ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, अभ्रकमस्र, गिलोय, हरे, खय, मुगन्धगाला, लालचन्दन येसु समभाग और लोह-मस्र सबकीबराबर लेकर बारीकचूणकर पारेगन्धककीनीलवर्ण-कज्जलीमें मिलाय पटोलपत्र और धनियेकेकापोंसे १-२ पदर मर्दनकर २-२ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पटोलपत्र और धनियेके हापवेगायदेनेसे पाण्डु, समस्त पित्तविकार, उपदश, पारदविकार, भयङ्करवातरफ, हस्तपाददाह इनसबको यह नष्टकरता है ।

७९ प्रदरारिरसः

यङ्गाय.फणिकेतश्च रसः पद्मणजारितः ।
मूले रक्तोत्पलमयं रक्तचन्दनमेव च ॥
समं सर्वमशोकस्य क्वाथैः सम्मर्द्य यत्नतः ।
चणकामा घटी कार्याऽशोककषायं पिबेदनु ॥
प्रदरारिरसो हन्ति द्विविधं प्रदरामयम् ।
घस्ती च वेदनां रक्तघ्रावं घोरज्वरं तथा ॥
भ्रूयाधिक्रयादिकांश्चैव भास्करस्तिमिरं यथा ।
अथवा त्वगशोकस्य गुहृचीयासकत्वचः ॥
रसाञ्जनं मुस्तकञ्च रक्तचन्दनमेव च ।
यपामनु पिबेत्कार्यं सर्वप्रदरान्तये ॥
शे. र., प्रदाधिकारे ।

भाषा—वज्र और लोहमस्र, शुद्ध अफीम, पद्मणगन्धक-जारित रससिन्दूर, लालकमलकाचन्दन, लालचन्दन सब समभाग-लेकर बारीकचूणकर लालअशोककीछालकेकाष्ठसे १-२ दिन मर्दनकर चनेप्रमाण गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लालअशोककीछालकेकाष्ठकेसायदेनेसे दोनोंप्रकारकाप्रदर,

वस्तिशूल, भयङ्कर रक्त्याव, घोरज्वर, बहुमस्र इनघबको यह नष्टकरता है । विसीजगद् यह काम न दे तो अशोककीछाल, गिलोय, अद्भुसकीजकीछाल, रसोत, नागरमोया, लालचन्दन इनके हापवेगाय देवे ।

८० प्लीहारिवटी

सहासाराऽभ्रकासीसलशुनानि समानि च ।
द्रोणपुष्परसेनैव मर्दयेत्प्रहरप्रयम् ॥
यद्द्वयं प्रदातव्यं प्रदोषे सलिलं एतु ।
प्लीहानं यदृतं गुल्ममग्निमान्यं सशोधकम् ॥
कासं श्यासं तृपां कम्पं दाहं शीतं धर्मि भ्रमिम् ।
प्लीहारिवटिका होषा नाशयेपान्न संशयः ॥
शे. र., प्लीहयद्दधिकारे ।

भाषा—एलिया, अभ्रक और कासीसमस्र, एकघोटी-लहान येसय समभागलेकर गुमाकेरसेने ३ प्रदर मर्दनकर १-१ रत्तीकीगोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली साय-कालेसमय पानीकेसाय देनेसे प्लीहा, बहुर, गुल्म, मन्दाग्नि, शोफ, कास, श्यास, कम्प, दाह, शीत, धर्मि, भ्रमि, और भ्रमको यह नष्टकरती है ।

८१ भृङ्गराजलेह्यम्

४८ तोलके भृङ्गराजवरसे ८ तोलकं निर्वाज-
हरीतकीचूर्ण, १२ तोलकञ्च तालगुडं निघाय घनपाके
निवृत्ते त्रिकटुकमयोभस्र च प्रतिवित्तोलकं, घृतम-
धुनीं प्रतिसप्ततोलकं संयोज्य लेह्यपाकं गृहीत्वा प्रत्य-
हं द्विधारे पादतोलकप्रमाणं सेवितश्चेद्भ्रातपित्तपाण्डु-
दायतं गुल्मकामलादयो रोगा नश्यन्ति । क्षाराम्लो
खीसङ्गश्च सुतरां त्याज्यः । (अगस्त्य०)

८२ मालतीकुसुमाकररसः

चन्द्रभागः सुवर्णस्य कर्पूरं युग्मभागिकम् ॥
यद्गुसीसकलोहानां भागत्रयमुदाहृतम् ॥
अम्रप्रवालमुक्तानां भागाध्वत्पार ईरिताः ।
गव्येन पयसा चैव कदलीपुष्पजै रसैः ॥
रसेनेक्षुसमुत्थेन तथा पक्वसेन च ।
उदुम्बररसेनैव भावयेत्सप्तधा पृथक् ॥
रक्तिक्रयमिता हन्ति मालतीकुसुमाकरः ।
रसः सर्वप्रमेहांश्च बहुसूत्रादिकं तथा ।
सोमरोगांश्च संहन्ति भास्करस्तिमिरं यथा ॥
शे. र., प्रमेहे ।

भाषा—सुवर्णमस्र १ भाग, शुद्धकपूर २ भा., वज्र, नाग और लोहमस्र ३-३ भाग, अभ्रक और प्रवालमस्र, मुक्तापिष्टी ४-४ भाग लेकर गायकेदूध, केलेकापुष्प, ईख, कमल और गुल्मकेफलोकेरसोंसे ७-७ भावनाए देकर २-२ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानके-

साय देनेसे समस्तप्रमेह, बहुमूत्र और सोमरोगको यह नष्टकरताहै ।

८३ माहेश्वरवटी

हेममुक्ताऽम्रकाङ्गीकक्षीरकाकोल्ययांसि च ।
कान्तं महाबलामूलं गृहीत्वा समभागिकम् ॥
शुष्कमूलकगोक्षरी तथा श्वेतपुनर्नवा ।
एषां काथेन विधिवद्भाष्येत्सतथा भिपम् ॥
रक्तिद्वयमिता सेव्या वटी माहेश्वराभिधा ।
हेयं विशोपतश्चात्र शस्तं दुग्धान्नभोजनम् ॥
पाण्डुं ब्रूकामयश्चैव शोथं सार्वान्ङ्गिकं तथा ।
जलोदरं तथा मोहं विपमज्वरमेव च ॥
अस्याः प्रयोगान्नद्यन्ति भास्करपत्तिमिरं यथा ।
रसायनाधिकारोक्तान्यौपधान्यपि योजयेत् ॥
न चास्ति शमने किञ्चिन्निदिष्टमस्य भेषजम् ।
पथ्यैर्वैल्यैः सुपाच्यैश्च भिपनेनं प्रपाययेत् ॥

शै, र, वृहामयै ।

भाषा—शुवर्ण, मोती और अन्नरुमस, धुनीफटकड़ी, क्षीरकाकोली, लोह और कान्तलोहमस, बलाकीजड़, सयसम-भागलेकर बारीकचूर्णकर सूतीमूली, गोखरू और सफेदपुनर्नवाके काथोंसे ७-७ भावनाएँ देकर २-२ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकसायदेकर दूधभात पिजानेसे पाण्डु, सुर्वाकार्द, सर्वात्रिशोथ, जलोदर, भ्रम, विपमज्वर इनसबको यह नष्टकरतीहै । इसकेप्रयोगमें रसायनाधिकारोक्त औपधोंकाभी योगकरनाचाहिये ।

८४ मृगाङ्कचूर्णम्

मुक्ताशङ्खप्रवालानि चङ्गञ्जैव समांशरुम् ।
निम्बकाथेन सम्मर्द्यं ततो गजपुटे पचेत् ॥
सर्वतुल्या तुगाक्षीरी दुग्दं तत्कलांशकम् ।
एतत्सर्वं विचूर्ण्याऽयं पिप्पलीमधुसंयुतम् ॥
रक्तिद्वयं प्रदातव्यं कृच्छुरोगप्रशान्तये ।
क्षयं हन्ति तथा कांसं यक्ष्माणं श्वासमेव च ॥
स्वरभेदं ज्वरं मेहान् दीपत्रयसमुत्थितान् ।
मृगाङ्कचूर्णमेतद्वि कासरोगकुलान्तरुत् ॥

शै र., यक्ष्मणि ।

भाषा—मुक्तापिष्टी, शङ्ख, प्रवाल और वज्रभसम सम-भागलेकर नीमकीझालनेकटिसे मर्दनकर गोलाबनाय धाराव सम्पुटमें बन्दकर गजपुटकी आचड़े । स्वात्रशीतलहोनेपर निकालकर सबकीबराबर बसलोचन और अष्टमाश हिहलभसम अथवा शुद्धहिहलडालकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन पोटकर रखलोड़े । इसमेंसे २-२ रत्ती पीपल और मधुकेसायदेनेसे कष्टसाध्यक्षय, कास, राज्यक्ष्म, श्वास, स्वरभेद, ज्वर, त्रिदो-पत्रप्रमेह, इनसबको यह नष्टकरताहै ।

८५ मृगाङ्कवटिका

पारदो गन्धकः शुक्रो लौहमम्रञ्च टङ्गणम् ।
त्रिकटु विफला चव्यं तालीसं पिप्पली तथा ॥
रक्तोत्पलं तथा लाक्षा सर्वमेकीकृतं शुभम् ।
वासाकाथेन सम्भाव्य बहुमात्रां वटीं चरेत् ।
एकेकां वटिकां खादेद्रक्तोत्पलरसप्लुताम् ।
वासाकाथेन पिप्पल्या चोदुम्बररसेन वा ॥
वातिकं पैत्तिकञ्चापि श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ।
वातश्लेष्मोद्भवं वापि पित्तश्लेष्मसमुद्भवम् ॥
सर्वकास निहन्त्यागु ज्वरं श्वाससमन्वितम् ।
रक्तनिष्टीवनं तृष्णां दाहं मेहं व्रमिं वमिम् ॥
ग्रीहगुल्मीन्द्रानाहक्रिमिकण्डूविनाशिनी ।
मृगाङ्कवटिका ह्येषा बलवर्णाग्निकारिणी ॥

शै, र., यक्ष्मणि ।

भाषा—शुद्ध पारा और गन्धक, लोह और अन्नरुमस, शुनाशुहागा, त्रिकटु, विफला, चव्य, तालीसपत्र, पीपल, लाल-कमल और पीपलीकाल समभागलेकर बारीकचूर्णकर अद्भुत-केपञ्चात्रकाथसे ४-५ भावनाएँ देकर ३-३ रत्तीकी गोलिये बनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली लालकमल, अडुसा, पीपल और गूलरके यथासम्भवत्वरस अथवा क्वार्योंकेसाय-देनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक, सान्निपातिक, वातश्लैष्मिक, पित्तश्लैष्मिक कास, श्वास, ज्वर, रक्तनिष्टीवन, तृष्णा, दाह, प्रमेह, भ्रम, वमन, प्लीहा, गुल्म, उदर, आनाह, क्रिमि, कण्डू, इनसबको दूरकर बलवर्णको करतीहै ।

८६ मृगाङ्कवटी (वृहती)

हेमायस्कान्तसूताम्रप्रवालमोक्तिकानि च ।
विभीतकरुकापयेण सर्वाणि भावयेत्त्रिका ॥
परण्डपत्रमव्यर्थश्च धान्यराशौ दिनत्रयम् ।
स्थापयित्वा तदुद्भृत्य द्विगुञ्जां वटिकां चरेत् ॥
विभीतकास्थिशस्यश्च माषार्थं मधुसंयुतम् ।
अनुपानमिह प्रोक्तं काथोवाऽक्षसमुद्भवः ॥
क्षयं हन्ति तथा कांसं यक्ष्माणं श्वासमेव च ।
स्वरभेदं ज्वरं मेहं सर्वांमयविनाशकम् ॥

शै र., द्विकाश्वासाऽभिन्कर ।

भाषा—शुवर्ण, कान्तलोह, पारद, अन्नरु, प्रवाल और मौक्तिकभसम समभागलेकर बारीकचूर्णकर बहेड़ेकेसायसे ३ दिन मर्दनकर गोलाबनाय परण्डकेपत्तीमेंरख करुचेतसे लपेट-कर कमरवातपर धान्यकीराशिमें ३ दिनतक रखे । चौथेदिन निकालकर २-२ रत्तीकी गोलियेबनाकर रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली आषेमामिसे बहेड़ेकेचूर्ण और मधुके साय लेकर अद्भुतकाकाथ पिजानेसे क्षय, कास, राज्यक्ष्म, श्वास, स्वर भेद, ज्वर और प्रमेहप्रभृतिरोगोंको यह नष्टकरतीहै ।

८७ रतिवल्लभमोदकः-

शक्राशनस्य बीजानां चूर्णानि पल्पञ्च च ।
 हृषिपः कुडवञ्चैकं सितप्रस्थं प्रगृह्य च ॥
 शतावरीरसप्रस्थं तथा शक्राशनस्य च ।
 गन्धमाजं पयःप्रस्थं ततः प्रस्थद्वयं पचेत् ।
 धात्री द्विजोरकं मुस्तं त्वगेलापत्रकेशरम् ।
 आत्मगुप्ता चातिवला तालाङ्कुरकशेफरम् ॥
 शृङ्गाटकं त्रिरुदुकं धान्यमभ्रञ्च वङ्गकम् ।
 पथ्या द्राक्षा च काकोदरौ खर्वूरं ध्रुवकं तथा ॥
 कटुका मधुकं कुष्ठं लघङ्गं सारसैन्धवम् ।
 यमानी चाजमोदा च जीरन्ती गजपिप्पली ॥
 प्रत्येकं कर्पमेकान्तु चूर्णितानि शुभानि च ।
 कुडवार्थं पारुशेपे मधुन प्रक्षिपेत्ततः ॥
 मृगाण्डजं सकर्पूरं यथालाभं विनिक्षिपेत् ।
 रतिवल्लभनामाऽयं सेव्यमानो महारसः ॥
 परमोजस्करो बल्यो वातव्याधिघिनाशनः ।
 वातपित्तहरो वृष्यो दृष्टिसन्दीपनः परः ॥
 पित्तश्लेष्माश्रुपित्तमो विपगुल्मज्वरपहः ।
 नाशयेदपमन्दाग्नि रोगाणां क्षयहेतुकः ॥
 न भवेद्भिन्नशैथिल्यं वृद्धानां पुष्टिर्धनम् ।
 यस्य गेहं सदा वङ्गयः पत्न्यः स्युः सुमनोहरा ॥
 रसः सेन्यः सदैवाऽयं मोदको रतिवल्लभ ।
 ये केचिद्विजया योगा लोहवङ्गाभ्रसंयुताः ॥
 युक्ताश्च रसगन्धाभ्यां रसायनवरा मताः ॥
 भै र, वाजीकरणे ।

भाषा—गाजेनेबीज ५ पल, बी ४ पल, शकर १ प्रस्थ,
 शतावर और भागकारस, गाय और वकरीकादूध १-१ प्रस्थ
 लेकर इन्हेकर पकावे । दोप्रस्थ वाजीरहनेपर आवले, दोनोजीरे,
 नागस्रोथा, तज, इलायची, पत्रज, नागकेशर, केवाचकी मन्जा,
 अतिवला, तालाङ्कुर(ताडवाली), कशेरु, सिंचाड़े, त्रिकटु घनिया,
 अन्नक और वङ्गभस्म, हर्, श्राश, कागेली, क्षीरकाकोली, खुहारे,
 तालमखाना, कुटनी, मुलहठी, कुठ, लोण, सेंधानमक, अजवाइन,
 अजमोद, अर्कपुष्पीबीजइ और गजपीपलका १-१ कर्प चूर्ण
 बालकर पकावे । चाशनी तैयारहोनेपर दोपल मधु, कस्तूरी
 और कपूर यथेष्टप्रमाणसे डालकर १-१ तोलेके मोदक बनाकर
 रखलोड़े । इनमेंसे १-१ मोदक दूधनेसा सेवनकरनेसे ओज
 और बलाभाव, वातव्याधि, वातपित्त, नपुसकत्व, दृष्टिदोष,
 पित्तश्लेष्म, रक्तपित्त, विष, गुल्म, ज्वर, मन्दाग्नि, क्षय, ध्वज
 भङ्ग, कृशता इनसबको दूरकरताहै । भागकेयोगोंमें लोह, वङ्ग
 और अन्नकभस्म, पारद तथा गन्धक मिलादेनेसे अत्यन्त रसा-
 यनका कामकरताहै ।

८८ रत्नप्रभावटी

हेमायस्कान्तवैक्रान्तखर्परयासि विद्रुमम् ।
 मुक्ताञ्चैकन सम्मर्थं दार्वाकायेन सप्तथा ॥

भावयित्वा घटीं कुर्याद्रिकृत्ताप्रमितां भिषक् ।
 एषा रत्नप्रभा नाम घटी सततकं हरेत् ॥
 ग्रीहानं वह्निमान्द्यञ्च कामलां यद्वदामयम् ।
 स्नायुशूलं महाघोरं केशरी करिणं यथा ॥
 भै र, ज्वराधिकारे ।

भाषा—सुवर्ण, कान्तलोह, वैक्रान्त, खपरिया, लोह,
 प्रवाल इनकीभस्में और मुक्तापिटी समभागलेकर दारहल्दीकी-
 छालकेकायसे ७ दिन मदनकर १-१ रत्तीकी गोलियेबनाकर
 रखलोड़े । इनमेंसे १-१ गोली तत्तद्रोगहरानुपानकेसाथदेनेसे
 सततज्वर, झीहा, मन्दाग्नि, कामला, यद्वन्, स्नायुक, भयङ्करशूल
 इनसबको यह नष्टकरतीहै ।

८९ रसेन्द्रचूर्णम्

पलोन्मिंतं शुद्धस्तमाद्दीताथ शाणकम् ।
 प्रत्येकं वंशजा मुक्ता निहत्यं हेमभस्मकम् ॥
 द्रावयेदहिफेनस्य शाणं क्षीरे निमज्जितम् ।
 वस्त्रपूतेन तेनैव तत्सर्वं मर्दयेद्भ्रशम् ॥
 छायायामातेपे वाऽथ शोषयेच्चूर्णयेत्ततः ।
 सक्षीरमन्नमश्रीयात्राश्रीयाह्वयणाग्मसती ।
 शौचमाचमनं कार्यमग्निपूतेन वारिणा ॥
 वाससाऽऽच्छादयेदेहं न स्नायादस्य सेवकः ।
 अत्रायुर्वर्तयेत्सर्वाग्निभ्रात्रससेविनाम् ॥
 चूर्णं रसेन्द्रनामेदं रसे श्रेष्ठे रसायनम् ।
 नाशयेद्गहर्णां कृत्वा रक्तातीसारसूतिके ॥
 अग्निमान्द्यादिकं जित्वा दीपयेज्जठरानलम् ।
 पुष्टं हृष्टं बलिष्ठञ्च नरं कुर्याद्विताशिनम् ॥
 भै र प्रहृण्यधिकारे ।

भाषा—रससिन्दुर ४ कर्ष नीलकण्ठीवंशलोचन और निहृत्य
 सुवर्णभस्म ४-४ मासे लेकर वारीकचूर्णकर दूधमें मिलाकर
 कपड़ेसे छानेहुए ४ मासे अफीमसे १-२ दिन मदनकर छायामें
 मुक्ताकर चूर्णबनाकर रखलोड़े । इसमेंसे ४-४ रत्ती दूधकेसाथ
 सेवनकर दूधभातरिलानेसे समस्तपहणी, रक्तातिसार, सुतिका-
 रोग और मन्दाग्नि नष्टहोकर पुष्टि और बल प्राप्तहोताहै । इसके
 सेवनमें लवण और पानीको बिल्कुल छोड़ेवे । शौच और माच-
 मननेलिये गरमपानीसे कामलेवे । स्नान न करावे । शरीरको सुला
 न रखे । ब्रह्मचर्यादि समस्तनियमोंका यथावत् पालनकरे ।

९० रसेन्द्रवाटिका

लोहाभ्रे कोलमाने च तदर्धो रसगन्धकौ ।
 तदर्धा विद्रुमो ग्राह्यः खर्परं विद्रुमैः समम् ॥
 कण्टकारीरसेनापि सारस्यतरसेन च ।
 वासकस्य कपायेण भावयेद्य त्रिधात्रिधा ॥
 रक्तिलयप्रमाणेन घटिकां कारयेत्ततः ।
 सप्तरात्रप्रयोगेण स्वस्त्युद्धिर्भवेन्नृणाम् ॥
 मासमात्रप्रयोगेण विचरैः सह गायति ।

मेघाञ्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥
हन्ति कासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमुत्रकम् ।
रसेन्द्रयटिका ह्येषा धन्वन्तरिचिनिर्मिता ॥

भै. र. , स्वरभेदे ।

भाषा—लोह और अन्नकमल ८-८ मासो, शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ मासो, प्रवाल और रूर्पमल २-२ मासो लेकर नीलवर्णकजलीकर भट्टकटैया, ब्राह्मी और अङ्गुलिके स्वरसोसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अवस्योचितानुपानकेसाथ ७ दिन-तक देनेसे स्वरभङ्ग दूरहोताहै । एकमहीनेमें मधुरकण्ठ होताहै । इसकानिन्तरसेवनरनेसे दिव्यमेघा औरपुष्टि होतीहै । काष, श्वास, प्रमेह और बहुमुत्रका नाशहोताहै ।

९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वङ्गं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चाग्रकं तथा ।
प्रवालं तारमुक्ताञ्च जातीकोपं फलन्तथा ॥
एतेषां समभागेन चातुर्जातञ्च मिथितम् ।
मर्दयेत्त्रिफलाकाथे यटिकां कुरु यत्नतः ॥
रोगांश्च म्रियजा ज्ञात्वा अनुपानं यथायथम् ।
घातिकं पैत्तिकञ्चैव श्लैष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
घ्रायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।
विस्त्रुचिकां क्षयांन्मादीं शरीरस्तम्भमेव च ॥
प्रमेहान्विशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥

भै. र. , प्रमेहे ।

भाषा—लोह, वङ्ग, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अन्नक, प्रवाल, रजत इनकीभस्में और मुक्तापिटी, जाविनी और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जातलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाके काथसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रत्तीकीगोलियें बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पैत्तिक, श्लैष्मिक और सान्निपातिकरोग, नागातरहका वातविकार, अपस्मार, विस्त्रुचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शास्त्रमूलकदलीमूलचूर्णं पारद्मसम् च ।
उदुम्बरवीजचूर्णं लौहो वङ्गश्च विट्टमम् ॥
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो म्रियक् ॥
रत्त्रिद्वयमिता कुर्याद्वटिकाप्रतिशोभनाम् ।
बहुमूत्रान्तको नाम रसः परमज्ञोभनः ॥
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्वान्यथा तमः ।

भै. र. बहुमूत्राधिकारे ।

भाषा—सेमलकामुसला, केलैकाकन्द, पारद्मसम्, गूलके-बीज, लोह, वङ्ग, प्रवाल, मोती इनकीभस्में और शुद्धअस्मीम समभागलेकर बारीकचूर्णकर मालतीपुष्पकेरससे १-२ दिन

मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोष्यो यह नष्टकरताहै ।

९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमग्नं धैर्यान्तं रजतं शाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पसम्मितम् ।
रक्तचित्रकतीयेन तथा ग्राहया रसेन च ।
द्विसप्तद्वयः सम्भाव्य कुर्याद्वह्निमितां घटीम् ॥
रसोऽयं सूर्यया हन्ति मस्तिष्कोदकमाणु च ।
अन्यांश्च शिरसोरोगान्वह्निस्तृणगणानिव ॥
वह्निवद्भासते यस्माद्द्वीयेणैव रसोत्तमः ।
भूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥
नैव शान्तिं गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।
त्रिकूर्चकेन मधुना यत्नतः कुशलो म्रियक् ॥
भै र शीर्षाम्बुरो गे ।

भाषा—सुवर्ण, अन्नक, वैकान्त और रजतमल ४-४मासो, लोहमल, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १-१ कर्पलेकर नीलवर्णकजलीकर रक्तचित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रत्तीकी गोलियेंबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चित्रक और ब्राह्मीके स्वरसोकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रथति समस्त शिरोरोगनष्टहोवेहै । रोगकीशान्ति न हो तो त्रिकूर्चकशास्त्रसे जल निकाले ।

९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारद्मं चाग्रकं तथा ।
आर्द्रकस्वरसेनेव मर्दयेदतियत्नतः ॥
गुग्गाद्वयं प्रदातव्यं नागवह्नीरसैर्युतम् ।
घातश्लेष्मज्वरहरो घातश्लेष्मान्तको रसः ॥
घातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।
सर्वाञ्ज्वराग्निहन्त्यायु भास्करश्चिमिरं यथा ॥

भै. र. , ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, वण्य, चित्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद्म और अन्नकमल समभागलेकर अदरकके-रससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रत्तीकीगोलियेंबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, घातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषजप्रथति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य खदिरस्यादानस्य च ।
तुलां धृषग्वनिष्कवाथ्य द्रोणनानेन चाम्बुना ॥
एकीकृत्य कपायांश्च पादशिष्टान् पुनः पचेत् ।
ततः श्लेषेन्मलयजं घालकं रक्तचन्दनम् ॥
गैरिकं देवपुष्पञ्च घातकं रजनीद्वयम् ।
लोहं जातीफलं श्यामां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

घटप्ररोहा मज्जिष्ठा त्रिंडं मांसी पयोधरम् ।
 कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलयुग्मकम् ॥
 ततः कलायसुहृशीविदध्याट्टिका मिपक्व ।
 रोगान् कण्ठीष्टरसनादन्ततालुसमुद्भवान् ॥
 सहकारवटी हन्यादाश्वेय वदने धृता ।
 जनयेन्मुखसौरभ्यं सुरर्चिं स्थिरदन्तताम् ॥
 भै. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, रैर, असन इनकीछाल १००-१००
 पल्लो कूटकर एकएकदोपजलमें पादावशिष्टक्यायकरके कपड़ेसे
 छानकर एकजगह मिलावे । फिर इसमें सफेदचन्दन, सुगन्ध-
 बाला, लालचन्दन, सोनागेरू, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दास-
 हल्दी, पडानीलोप, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, त्रिफला,
 बटकीजटा, मजीठ, विडमक, जयामांसी, नागरमोया, त्रिकटु,
 लोहमत्स्य और शुद्धकपूर २-२ पलका पूर्ण ढालकर पकावे ।
 पन तैयारहोनेपर मटरबराबरगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे
 १-१- गोली सुंघमें रखकर सूँघनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त
 और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें सुगन्धिकोपैदाकरतीहै,
 रचिको बढ़ातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है ।

९६ सिद्धशास्त्रमलीकल्पः

भूकृष्णाण्डं तालमूली धात्री चैव पुनर्नवा ।
 समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥
 तद्वर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीकृत्य निक्षिपेत् ।
 श्वेतशाल्मलितोयेन सप्तधा भावयेत्ततः ॥
 मादिषेण च दुग्धेन तत्तूर्णं भावयेत्पुनः ।
 शुष्कं तत्तूर्णयेद्यत्नाहोदयेनधुसर्पिणा ॥
 अनेनाशीतिवर्षोऽपि शतधा रमतेत्रिया ।
 ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेव इव स्वयम् ॥
 जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
 शाणमेकन्तु कर्तव्यं दुग्धमत्रानुपानकम् ॥
 भै. र., अजत्रभे ।

भाषा—भुईंनोंहला, तालमूली, आवले, पुनर्नवा और शुद्ध-
 पारा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बारीकचूर्णकर पारे-
 गन्धककी नीलवर्णजलीमें मिलाय सफेदसेमलेकेस्वराससे
 ७ भावनाएं देकर भेसवेदुधमें घोटकर तूर्णबनाकर रखछोड़े ।
 इसमेंसे ३-३ माशा मधु और पीकेसाय मिलाकरलेनेसे
 अत्यन्त वाजीकरणहोताहै ।

९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

पलायपमुशीच्छ चन्दनं सारियाद्यपम् ।
 मेदाद्वयं निशाद्वयं शुद्धचीविश्वभेषजम् ॥
 फलत्रयं यमानीञ्च रोष्यं सर्वसमं तथा ।
 पकीकृतं यद्गन्धानं पाययेद्ब्रह्मसर्पिणा ॥
 स्नायुशूलहरं नाम चूर्णमितद्वरेद्भुयम् ।
 निखिले स्नायुशूलञ्च स्यान्वातामयांस्तथा ॥
 भै र, स्नायुरोगे ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, रास, चन्दन, दोनों-
 सारिया, मेदा, महामेदा, हल्दी, दासहल्दी, गिलोय, सोंठ
 त्रिफला, अजवान येसब १-१ भाग, रजतमन्स्य सयकीबराबर
 लेकर बारीकचूर्णकर १-२ दिन मर्दनकर रखछोड़े । इसमेंसे
 ३-३ रत्ती पायकेपीकेसायदेनेसे समस्तस्नायुरोग और बाल-
 विकारोंको यह नष्टकरताहै ।

स्वरादिरसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तेष्वेकशास्त्र (अगस्त्य), व्यासप्रोक्तेष्वेक-
 शास्त्र (व्यास), रसामृत(रमृ), रसकल्पलता (र क.ल (ना))
 रत्नकुण्डल (र कु) और रसायनम् इनमन्त्रोंको ग्रन्थसूचीमें
 दाखिलकरना ।

२—अगस्त्यमूत्रराज (द्वितीय) में र.भो.को दाखिलकरना ।
 ३—अभिद्रुमारस (तृतीय) में चि र.भ को दाखिलकरना ।
 ४—अभिद्रुमार (पञ्चम) में र.भो, र.पा को दाखिलकरना
 और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

“र.सं., भै.र., र.सु, वै. क., र.सि., रसायनसं.,
 र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुताशाननासा “गन्धेश-
 टङ्गणैकैकं विपमत्र प्रिभागिकम् । अष्टभागान्तु मरिचं
 जम्भाभूमोमर्दितं दिनम् ॥, इति योगो निहितोऽस्ति ।
 यो.र., र.चं. पतयोः “एकंशतः पारदगन्धद्वयः
 कर्पदेशाहाऽसृतेगहभ्रमाः । श्र्यंशत इमिऽयो मरिचं
 त्विमांशं सम्मर्दितं जम्भरसेन गाढम् ॥, इति पाठो
 निहितोऽस्ति । अनयोऽयोरपि अस्मिन्नन्तर्मायः
 सुकरः । यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कर्पदेशायोरभा-
 योऽस्ति द्वितीये च गृहभ्रमस्याऽधिक्यमस्ति इत्या-
 पाततोऽन्तर्मांयो दुष्करः प्रतिभाति । परन्तु प्रथम-
 योगनिर्दिष्टरोगेषु कर्पदेशायोरौचित्यात्तदाधिक्ये
 गुणवृद्धित्यास्ति । द्वितीययोगे यद्गृहभ्रमाधिक्यं
 तत्रक्षेपमधिकतयाऽग्निभुमारो योजनेनाऽपि हस्त्य-
 भायोऽस्ति पाठन्यूनता च महत्फलमिति चिच्छिरा-
 कलनीयम् ।

५—अभिद्रुमार (पट) के मूलाटके स्थानमें नीचे लिगे
 पाठको रचना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

“युतदङ्गणविषाऽन्नकपर्दिना
 गन्धनेन मिलित्वा. समभागाः ।
 पत्सत्राग्निजयाऽतित्रिषाभि.
 शीफलाभ्युज्जिह्व विमये ॥
 सहृद्ग्रहणिकादिनिर्दुष्ये
 सिद्धतां समुपैति रमेन्द्र .
 सातिसारमपि दन्ति दुष्करं
 शोपजात्पमुस्ताऽग्निनाशनम् ॥

मेधाञ्च लभते तीक्ष्णां तुष्टिपुष्टिसमन्विताम् ॥
हन्ति फासं तथा श्वासं प्रमेहं बहुमूत्रकम् ।
रसेन्द्रवटिका रोषा धन्वन्तरिचिनिमिता ॥

शै. र., स्वरमेहे ।

भाषा—लोह और अन्नरसम् ८-८ मासे, शुद्ध पारा और गन्धक ४-४ मासे, प्रवाल और रापरभस्म २-२ मासे लेकर नीलवर्णकजलीकर भट्टाद्रेया, माद्री और अइसेके स्वरसोंसे ३-३ भावनाएं देकर २-२ रतीकीगोलिये बनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली अरुणोचितानुपानकेसाथ ७ दिन-छक देनेसे स्वरभङ्ग दूरहोताहै । एकमहीनेमें मधुक्ण्ड होताहै । इसकानिन्तरसेवगकरनेसे दिव्यमेघा औरपुष्टि होतीहै । काष्ठ, क्षास, प्रमेह और बहुमूत्रना नाशहोताहै ।

९१ वसन्ततिलकरसः

लौहं वज्रं माक्षिकञ्च सुवर्णञ्चप्रकं तथा ।
प्रवालं तारमुक्ताञ्च जातीकोपं फलन्तथा ॥
प्लेपां समभागेन चालुजांतञ्च मिथितम् ।
मर्दयेत्त्रिफलाकाये वटिकां कुण्ड यत्नतः ॥
रोगांश्च भिषजा शाल्या अनुपाने यथापथम् ।
घातिकं पित्तिकञ्चैव श्लेष्मिकं सान्निपातिकम् ॥
घायुं नानाविधं हन्ति चापस्मारं विशेषतः ।
विद्वुचिकां क्षयोन्मादौ शरीरस्तम्भमेव च ॥
प्रमेहान्विशतिञ्चैव नानारोगं विशेषतः ॥

शै. र., प्रमेह ।

भाषा—लोह, वज्र, सुवर्णमाक्षिक, सुवर्ण, अन्नक, प्रवाल, रजत इनकीभस्में और मुक्तापिष्टी, जावित्री और जायफल समभाग, सबकीबराबर चातुर्जांतलेकर बारीकचूर्णकर त्रिफलाके कायसे १-२ दिन मर्दनकर ३-३ रतीकीगोलिये बनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली समयोचितानुपानकेसाथदेनेसे वातिक, पित्तिक, श्लेष्मिक और सान्निपातिकरोग, नानातरहका वातविकार, अपस्मार, विद्वुचिका, क्षय, उन्माद, शरीरस्तम्भ, २० प्रकारकेप्रमेह इनसबको यह नष्टकरताहै ।

९२ बहुमूत्रान्तकरसः

शाल्मलीकदलीमूलचूर्णं पारदभस्म च ।
उदुम्बरवीजचूर्णं लौहो वज्रञ्च विदुमम् ॥
मुक्ताहिफेनसारौ च प्रत्येकं समभागिकम् ।
मर्दयेन्मालतीपुष्परसेन कुशलो भिषक् ॥
रक्तिद्वयमितां कुर्याद्वटिकांमतिशोभनाम् ।
बहुमूत्रान्तको नाम रसः परमशोभनः ॥
मधुमेहं सोमरोगं हन्ति भास्वयान्वया तमः ।
शै. र. बहुमूत्रान्तिकारे ।

भाषा—सैमलकामुसला, फेलेकान्द, पारदभस्म, गूलके-बीज, लोह, वज्र, प्रवाल, मोती इनकीभस्में और शुद्धअफीम समभागलेकर बारीकचूर्णकर मालतीपुष्पोंकेस्वरसे १-२ दिन

मर्दनकर २-२ रतीकीगोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली उचितानुपानकेसाथदेनेसे मधुमेह और सोमरोष्यो यह नष्टकरताहै ।

९३ वह्निभास्वररसः

सुवर्णमग्नं धैकान्तं रजतं क्षाणमानकम् ।
लौहं रसं गन्धकञ्च माक्षिकं कर्पसम्मितम् ।
रक्तचिप्रकतोयन तथा प्राहृया रसेन च ।
द्विसप्तद्वयः सम्भाव्य कुर्याद्वह्निमितां घटीम् ॥
रसोऽयं सर्वथा हन्ति मस्तिष्कोदकमाशु च ।
अन्यांश्च शिरसोरोगान्वह्निस्त्वृणगणानिव ॥
वह्नियद्भासते यस्माद्वायैर्णव रसोत्तमः ।
शूतले प्रथितस्तस्मादाख्यया वह्निभास्वरः ॥
नैव शान्तिं गते व्याधौ मस्तिष्कात्सलिलं हरेत् ।
त्रिकूचैकैकं मधुना यत्नतः कुशले भिषक् ॥

शै. र. क्षीर्णामुत्रोणे ।

भाषा—सुवर्ण, अन्नक, वैकान्त और रजतभस्म ४-४मासे, लोहभस्म, शुद्धपारा, गन्धक और सुवर्णमाक्षिक १-१ कर्पलेकर नीलवर्णकजलीकर रक्तचिप्रक और माद्रीके स्वरसोंसे ७-७ भावनाएं देकर ३-३ रतीकी गोलियेबनाकर रखछोड़े । इनमेंसे १-१ गोली चिप्रक और माद्रीके स्वरसोंकेसाथ देनेसे मस्तिष्कजलप्रवृत्ति समस्त शिरोरोगनष्टहोचेहै । रोगहीनान्ति न हो तो त्रिकूचैकप्रत्येक जल निकाले ।

९४ वातश्लेष्मान्तकरसः

पञ्चकोलं प्रवालञ्च पारदं चाप्रकं तथा ।
आर्द्रकस्वरमेनेव मर्दयेदतियत्नतः ॥
गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं नागवह्नीरसैर्युतम् ।
वातश्लेष्मज्वरहरो वातश्लेष्मान्तको रसः ॥
वातजं पित्तजं श्लेष्मद्विदोषजमपि क्षणात् ।
सर्वाञ्ज्वराग्निहन्त्याशु भास्करम्भिमिरं यथा ॥

शै. र., ज्वराधिकारे ।

भाषा—पञ्चकोल (पीपल, पिपलामूल, चब्य, चिद्रक, सोंठ), प्रवाल, पारद और अन्नकभस्म समभागलेकर अदरसके-रससे १-२ दिन मर्दनकर २-२ रतीकीगोलियेबनाकर रख छोड़े । इनमेंसे १-१ गोली पानकेरसकेसाथदेनेसे वातश्लेष्म, वातज, पित्तज, श्लेष्मज, और द्विदोषरूपप्रवृत्ति समस्तरोगोंको यह नष्टकरताहै ।

९५ सहकारवटी

सहकारस्य निम्बस्य सद्दिरस्याशनस्य च ।
तुलां पृथग्यनिष्काश्या द्रोणमातेन चाशुना ॥
पकीरस्य कपायाञ्च पादशिष्टान् पुनः पथेत् ।
ततः शिपेन्मलयजं घालनं रक्तचन्दनम् ॥
थेरिकं देवपुष्पञ्च घातकीं रजनीद्वयम् ।
लोभ्रं जातीफलं ध्यातां चातुर्जातं फलत्रयम् ॥

यष्टप्ररोहा मञ्जिष्ठा विडं मांसी पयोधरम् ।
 कटुत्रयमयश्चन्द्रं प्रत्येकं पलयुग्मकम् ॥
 ततः कलायसहस्राविंशत्याहुटिका भिषक् ।
 रोगान् कण्ठीघ्नरसनादन्ततालुसमुद्भवात् ॥
 सहकारवटी हन्यादाभ्येव घटने धृता ।
 जनयेन्सुखसौख्यं सुरयचि स्थिरदन्तताम् ॥
 भे. र., मुखरोगे ।

भाषा—आम, नीम, रौर, असन इनतीछाल १००-१००
 पलको कूटकर एकएकरोगजलमें पादावशिष्टकापकरके कपड़ेसे
 छानकर एकजगह मिलावे । फिर इसमें सकेदचन्दन, मुगन्ध-
 बाला, सालचन्दन, सोनागल, लौंग, धावडीकेफूल, हल्दी, दाह-
 हल्दी, पटानीलोष, जायफल, अनन्तमूल, चातुर्जात, त्रिफला,
 कटकीजटा, मजीठ, विडमक, जटामांसी, नागरमोया, त्रिकटु,
 लोदमसम और शुद्धकपूर २-२ पलका चूर्ण बालकर पकावे ।
 पन तैयारहोनेपर मटरकापरगोलिये बनाकर रसाछोड़े । इसमेंसे
 १-१ गौली मुहमें रसकर चूषनेसे कण्ठ, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त
 और तालुके समस्तरोगोंको दूरकर मुखमें मुगन्धिकोपेदाकरतीहै,
 ध्विको बढ़ातीहै और दांतोंको स्थिरकरती है ।

९६ सिद्धशाल्मलीकल्पः

भूकृष्णाण्डं तालमूली धामी चैव पुनर्नवा ।
 समभागं समाहृत्य भागार्धं गन्धकं तथा ॥
 त्वर्धं पारदं शुद्धं कज्जलीहृत्य निक्षिपेत् ।
 भवेत्शाल्मलितोयेन सतथा भावयेत्ततः ॥
 माहिषेण च दुग्धेन तच्चूर्णं भावयेत्सुतः ।
 शुष्कं तच्चूर्णयैद्यत्नाहोदयेनमुससिपिपा ॥
 अनेनादीतियर्षांऽपि शतथा रमतेजिष्या ।
 ऊर्ध्वलिङ्गः सदा तिष्ठेत्कामदेव इव स्वयम् ॥
 जरादिरोगनिर्मुक्तः संसारसुखमश्नुते ।
 शाणमेकल्लु कतव्यं बुग्धमत्रानुपानकम् ॥
 भे. र., ध्वजभरे ।

भाषा—भुर्रिहोहा, तालमूली, आंबले, पुनर्नवा और शुद्ध-
 पाटा १-१ भाग, शुद्धगन्धक २ भाग लेकर बातिकचूर्णकर पारे-
 गन्धककी नीलकण्ठमूलीमें मिलाय घोंदसेमलकेस्वरसमे
 ७ भाजनारं देकर भेगवेदुधमें घोटकर चूनेबनाकर रसाछोड़े ।
 इसमेंसे १-१ माया मधु और पीकेघाण मिलाकरबेनेमें
 अचन्दन बाजीहरणहोताहै ।

९७ स्नायुशूलहरचूर्णम्

पलाशपुमुरीच्छ चन्दनं सारियाशयम् ।
 मेदाशुद्धं निशाशुद्धं शुद्धूर्वायिभ्यभेरजम् ॥
 फलत्रयं यमानीञ्च रौर्यं सयसमं तथा ।
 पक्षीहृतं वल्लमानं पाययेत्प्रयसिपिपा ॥
 स्नायुशूलहरं नाम पूर्णमित्तद्वरेक्यम् ।
 निरिलं स्नायुशूलश्च सर्वान्यातामपांस्तथा ॥
 भे. र., हनुज्रोगे ।

भाषा—छोटी और बड़ी इलायची, राम, चन्दन, सेनों-
 सारिया, मेदा, महामेदा, हल्दी, दाहहल्दी, गिलोय, सोंठ
 त्रिफला, अजवाइन बेलार १-१ भाग, रजनभस्म सबजीबराबर
 लेकर बातिकचूर्णकर १-२ दिन मईनहर रसाछोड़े । इसमेंसे
 २-२ रसी गायत्रेपीकेसापदेनेगे गमम्पन्नायुरोग और पात-
 विकारोंको यह नष्टकरताहै ।

स्वरादिसोंकी विशेषसूचनाएं

१—अगस्त्यप्रोक्तरीयकशास्त्र (अगस्त्य), प्याराप्रोक्तरीयक-
 शास्त्र (ब्यास), रसामृत(रमू.), रसकलाला (र.क.क.(ना.))
 रत्नकुण्डल (र.क.) और रसायनम् इनग्रन्थोंको ग्रन्थपूर्वामें
 दाखिलकरना ।

२—अपास्किमृतारज (द्वितीय) में र.थो.को दाखिलकरना ।

३—अभिष्टमारण (तृतीय) में वि.र.भ कोदाखिलकरना ।

४—अभिष्टमार (पंचम) में र.थो., र.पा.को दाखिलकरना
 और नीचेलिखीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमेंदेना ।

“र.सं., भे.र., र.सु., घं. क., र.सि., रसायनमं.,
 र.का., यो. म., एषु ग्रन्थेषु हुतादाननाम्ना “गन्धेदा-
 ट्कृणैकैकं विषमत्र प्रिभागिकम् । अष्टभागन्तु मरिच्यं
 जम्भाम्मोमर्दितं दिनम् ॥ इति योगो निर्दिताऽस्ति ।
 यो.र., र.घं. एतयोः “एकांशकाः पारदगन्धद्वयाः
 कपर्दशङ्खाऽमृतेगोदधुमाः । त्र्यंशा इमेऽथो मरिच्यं
 त्विमांशं सम्मर्दितं जम्भरत्नेन शाठम् ॥” इति पाठो
 निर्दिताऽस्ति । अनयोर्द्वयोरपि अस्मिन्ग्रन्थमांशः
 सुकरः । यद्यप्यनयोः प्रथमयोगे कपर्दशङ्खयोरमा-
 योऽस्ति द्वितीयो च शूद्रधूमस्त्राऽधिक्यमस्ति इत्या-
 पाततोऽन्तर्मांशो दुष्करः प्रतिभाति । परन्तु प्रथम-
 योगनिर्दिष्टरोगेषु कपर्दशङ्खयोगीचिन्यास्तदाधिक्ये
 गुणशुद्धिरपास्ति । द्वितीययोगे यद्दधुमाधिक्यं
 तत्रप्रथममधिक्यतयाऽस्तिदुष्कारे योजनेनाऽपि हस्त्य-
 मायोऽस्ति पाठान्यन्ततः च महत्प्रत्यमिति विष्टद्वि-
 कलनीयम् ।

५—अभिष्टमार (७) के मुक्तकोटे स्थानमें नीचे लिखे
 पाठसे रचना और टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

“शूद्रद्वुषणियाऽञ्जकपर्दिका

गन्धकेल मिश्रिताः गमभागाः ।

पन्सकाश्रियिज्ञयाऽतिरियाभिः

धीयन्त्याम्युजलेश्च विमर्षं ॥

सहृदप्रदणिकायिनिगृह्ये

मिश्रतां समुनेति रसेन्द्रः ।

सातिसारमपि हन्ति दुष्करं

शोरजाश्वगुल्याऽग्निनाशनम् ॥

स्वीयानुपानैरपि योजनीयो
रोगानुरूपैरशनैर्हितः स्यात् ।
प्रयत्नतः सङ्ग्रहणीनिवृत्त्यै
मन्दाग्नितायां किल पायुजानाम् ॥

२., र. सं., प्रहृष्यधिकारे ।

टि०—रसावतारं रसेन्द्रम इति नाम । रसेन्द्रमासइन्द्रदीर्घाग्नि-
कुमारं अन्नकं नास्ति वस्तुतः त्रिकुण्डिनीभिर्गोऽस्ति । जन्वीराऽऽभ्यामा-
भावना दत्ताऽस्तीति विशेषः । शा., र.क., र.चि., र.च., टो., भे.
सा., र. (भा.), रसायनस., र.क.ल., र.गु., यो.म., र.र.म. एषु
पुस्तकेषु रसेन्द्रसारमश्रमे च द्वितीयस्थाने इंसपोट्टलीति नाम । र.क.
यो., ना.वि. धन्यो. कर्पादिकास इति नाम । रमकामोनी च
गगनघन्द्रेति नाम स्थापितम् । इ. यो. त, आ.वि., भा.म., र.गु.,
यो.म., र.क.ल., नि २., एषु ग्रन्थेषु हुताशनानाम्ना "नागर कौ-
मार्य स्वात्मपंचामत्रं यद्गुणम् । मरिच मार्षेभाग स्वात्तावद्गन्धं वपाट-
कम् ॥ विष कर्पंचतुर्गुणं सर्वमेकत्र चूर्णयेत् ॥" इति पाठो निहिदीऽस्ति
तस्याऽप्यत्रैवान्भावः करणीयः । यद्यप्यग्निस्थाने पारदगन्धयोरुक्तान्त-
तोऽभावोऽस्ति निषेधं च विभागान्तरैरेति श्रुत्याऽप्यन्तदुपेक्षा प्रती-
यते परन्तु योगद्रव्यस्य सद्रशकार्यकत्वात्तरिभ्योऽपि सम्पारितेऽप्य योग-
स्वाऽङ्किञ्चित्त्वत्वादेकैव योगेन मुष्टुनिर्वादी भविष्यतीति विद्वि-
र्विभावनीयम् ।

६—अग्निकुमारस (१८) में टो. (प्रतापलङ्केश्वर) और
र.भा., र.मू.को दाखिलकरना ।

७—अग्निकुमार (२५) में यो.चि.को दाखिलकरना ।

८—अग्निकुमार (२५) में र.मू.को दाखिलकरना ।

९—अग्निकुमार (३०) में रसायनप०को दाखिलकरना ।

१०—अग्निकुमार (३८) में पित्तकुलान्तरु नामा-
न्तर देना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें देना ।

"घसवराजीये घिसपेपित्ताऽधिकारे पित्तकुलान्त-
केति नाम्नाऽप्येव पाठो निहितोऽस्ति तत्र द्विया-
मान्तो पाकः कृतोऽस्ति । आद्रिकस्थाने जीरकाऽगु-
पानञ्च निवेशितम् ।

११—अग्निकुमार (३९) को निकालदेना वइ सत्रिपातभैरव
(४) में गयाइ ।

१२—अग्निकुमार (४०) में व.रा. और वै.चि.कोप्रन्थोंमें
दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना—

"घसवराजीयवैद्यचिन्तामण्योर्विजयभैरवनाम्ना-
ऽप्येव रसो निहितोऽस्ति केवलं तस्मात्ताम्रमपसा-
रितम् । तत्केन कारणेन सज्जातमिति न ज्ञायते
पाठस्त्वेक एवाऽस्ति"

१३—अग्निकुमार(४३)में रसायन., र.पा.को दाखिल-
करना ।

१४—अग्निकुमार (४६) के पाठेस्थानमें नीचेलिखेहुए-
पाठको रखना—

"पारदो गन्धकस्ताम्रकं तालकं
वत्सनाभः समं मर्दयेद्भङ्गजैः ।
याममात्रं रसेऽग्न्युपणोषां त्रिधा

पञ्चकोलेन वा यद्विना च त्रिधा ॥

वह्निकुमाररसः किल एषः

शूलकफप्रहणीरनुपानैः ।

हृत्त्यर्चि श्वसनं कसनं तत्

सततं जाडरपावकमान्यम् ॥

रसायनतं., र.क.यो., अग्निमान्ये ।

१५—अग्निपुत्रोऽवतीर्कोटिष्णीमे नीचेलिखीटिष्णीको
और प्रन्थोंमें रसायनपरीक्षाको दाखिलकरना.

"रसकामधेनावग्निमान्याऽधिकारे वैश्वानरान्मान्य-
को रसो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तरमर्थयति ।

१६—अग्निप्रदरयमें गुबणंपत्रसका अन्तर्भावकरना ।

१७—अग्निमुखचूर्णमें ग.नि.को दाखिलकरना ।

१८—अग्निमुखास (४)को रसवर्द्धी टिष्णीमें लेजाना ।

१९—अग्निरस (प्रथम)में र.को. (वज्रोश्वर)को दाखिल-
करना ।

२०—अग्निरस (४)में व.रा. (श्लेष्मकासविधूलन)को
दाखिलकरना ।

२१—अग्निसन्दीपन (५)में र.चि. (भस्मामृत)को दाखिल-
करना ।

२२—अग्निवत्तिभावटी में र.पा.को दाखिलकरना ।

२३—अष्टोत्तबद्धवटीमें र. सं. को दाखिलकरना ।

२४—अचलेषधमें नि.र., र.त. (गन्धककल्पः), र.को.,
र.म.भा., र.र.कौ., र.क.ल. (एषु नरनारायणा), र.र.स.
(नारायणरसः), इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२५—अजीर्णकण्टक (२)में र.शं. (वातारिः), रसायन
को दाखिलकरना ।

२६—अजीर्णकण्टक(३)कोटिष्णीमें अघोलिखितको लेना

"रसेन्द्रकल्पद्रुमे हुताशनानाम्ना "पारदं गन्धकं
टङ्कं विपं शुण्ठीञ्च पिप्पलीम् । समं विषञ्च समभां
मरिचं मर्दयेदितम् ॥ निर्गुण्डिकारसेर्भाष्यं त्रिधा
पर्यनुपानतः ॥" इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽऽ-
प्यत्राऽन्तर्भावः करणीयः । यद्यप्यापाटददृष्ट्या द्वयो-
रन्तरं प्रतीयते एकत्र पारदगन्धकयोरन्यत्र च दृ-
वस्याऽऽगमनात् । परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या दृष्टेऽप्युभयोः
सत्त्वाभ्याऽप्यन्तमन्तरम् । मरिचप्रमाणेऽधिकान्तरं
प्रतीयते तदेकान्तिरुममीदृशेऽदजीर्णकण्टके एव तदा-
धिन्त्यकरणेनाऽपि क्षत्यभावः । हुताशने निर्गुण्डक-
म्लपर्योर्भावेन दृष्टेते परन्त्वन्तेऽम्लपर्यो एव भा-
वना दत्ताऽस्ति, अजीर्णकण्टके च निर्गुण्डकरसस्था-
वति परन्तु तत्र तीक्ष्णाम्लस्य सत्त्वाभिर्गुण्डिकामा-
धनाऽन्तराऽपि कार्यं सेत्स्यति । यदि च हुताशनी-
कमायनयोरन्यधिका प्रीतिश्चेत्स्य तयोरन्यनुष्ठाने
क्षत्यभाव इति बोध्यम् ।

२७—अञ्जनभैरव (१) में र.का., र.शु.,टो., रसायनसं (भैर-
वाञ्जन) र.पा. इनप्रन्थों को दाखिलकरना ।

२८—अतिसारदब्ध (१) कीटिप्पणी में नीचेलिखी रस-
पोष्टली को प्रन्थसहित दाखिलकरना ।

“रसं वलि विपं शुभं वराटकं समांशतः । विमर्द-
येदिने भृशं कृशानुभूलिकारसैः ॥ क्षिपेच्च भाण्डस-
म्पुटे मृदा च सक्षिरोधयेत् । क्षिपेत्सद्ब्रह्मभाजने मुहु-
मुहुर्जले ततः ॥ पचेच्च यामयुष्मकं शनैस्तु दीपय-
ह्विता । सुशीतलं समुद्धरेद्वधःस्थिते तु पोष्टली ।
भवेत्सद्ब्रह्मभाजने रसस्य भस्म जायते । मरीचकै-
र्धृतप्लुतैर्ददीत पोष्टलीरसम् ॥ विकारपित्तरोगिणे
विधानतः सुषुप्तकम् । करोति पुष्टिदीपनं गदप्रजं
हरेत्सदा ॥ रसेन्द्रभस्म वल्लुं नवेऽनवेऽथवा ज्वरे ।
नियोजयेच्च पिप्पलीमधुप्लुतं तु पैत्तिके ॥ कणाद्रेशु-
ण्डिसंयुतं द्रवेत्कफानिलाधिके । ज्वरे द्दीत यः
कणायके निरूपितोऽस्ति वै । द्दीत सधिपातके
कटुत्रयाऽऽर्द्रजोरकैः । र.दी., र.शं. ज्वराधिकारे”

२९ अतत्रवर्षरसको हटादेना वह कामिनीमदविधूनने
गयाई ।

३०—अनलरसमें र.मू.को दाखिलकरना ।

३१—अनीलरसमें र.चं., र.को., र.दी., र.क., र.र.
स., र.क.ल. (एष पाण्डुरोपणः) र. म. मा. (धनपङ्क-
शोपणः), र.मु. (अनलमूर्तिः), रसायनसं, र.ल., र.शं.
(एष मार्तण्डभैरवः), र.सि., इनप्रन्थों को दाखिलकरना
और “रसराजद्वारे चित्रस्थाने विजया नियोजिता” इसको
टिप्पणीमें देना ।

३२—अनिलारिस (१) में र.र., भै.र., ४ यो.त, र.-
शा., वि.क्र., घ. (एष जलोद्वारिरसः), र.शं., र.दी.
(जलारिः), र.क. (जलोद्वरहरः) इनप्रन्थोंको
दाखिलकरना ।

३३—अनिलारिस (२) में र.शं. (घातारिः), र.,
र.शु., इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

३४—अपस्मारारिसमें र., रसायनसं. इनप्रन्थोंको
दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र., रसायनसं. पतयोरपस्मारारिरसस्य समीर-
पन्नोति नाम स्थापितम् । तत्र न रसान्तरतेति यो-
ष्यम् । तथा च रम्भातीयस्थाने उन्मत्तरसो गृहीत
इति विशेषः । तत्र द्वयोरपि रसाभ्यां मर्दितश्वेदधि-
कतया गुणवृद्धिर्भविष्यति तस्मादुभाभ्यामेव मर्दनं
विधेयमित्यस्मार्कं सम्मतिः ।

३५—अर्चंसको वाडवरसमें लेजाना ।

३६—अभिनवकामदेवरसमें र.मू.को दाखिलकरके मरनो-
दयनीटिप्पणीमें लेजाना ।

३७—अश्लोहयोगमें रसायनसं. को प्रन्थोंमें और अयो-
लिखितको टिप्पणीमें दाखिलकरना ।

“अध्रसस्थाने मृतसूतस्य नियोगो रसायनसद्ब्रह्मे
प्रमादात्सञ्जात इति चिद्विद्विराकलनीयम् ।

३८—अमृतकलानिधिरसमें, सुतराज (प्रथम) और प्रन्थोंमें
र.मू.को दाखिलकरना ।

३९—अमृतभ्रातकमें भै.र.को दाखिलकरना ।

४०—अमृतमञ्जरीरसमें अधोलिखितटिप्पणीको दाखिल-
करना और आनन्दभैरव (द्वितीय) को हटादेना ।

“रसेन्द्रसारसद्ब्रह्मे द्वितीयस्थाने व्योपमधिकतया
नियोज्य आनन्दभैरवेति नाम्ना द्वितीयः पाठः स्था-
पितस्तस्याऽऽयत्रैवान्तर्भूतत्वात्पाठान्तरं त्यजनीयम् ॥”

४१—अमृतमण्डरकोहटाकर शतावरीमण्डर (प्रथम) की
टिप्पणीमें लेजाना ।

४२—अमृतवटी (१) में र.क.यो., वै.चि. (हुताशनस)को
दाखिलकरना ।

४३—अमृतवटी (२) में यो.र., ३ यो.त., र.कौ., र.क.-
ल., र.चं., नि.र., रसायनसं., वै.र., यो. म., र.सि., (एष
जुर्जलजेतारसः) इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

४४—अमृतवरीरसमें र.मू.को दाखिलकरना ।

४५—अमृतवरीतकीमें र.र.स. (पाण्डुरीतकी)को दाखिल
करना ।

४६—अमृताहरसमें र.पा., (अमृताह्वटी)को दाखिल-
करना ।

४७—अमृताण्व (२) में आ.प्र.को दाखिलकरना ।

४८—अमृताण्व (३) में र.क.ल. (ना.)को दाखिलकरना ।

४९—अमृताण्व (६) में र.कौ., र.क.ल., ४ यो.त., यो. त,
रसायनसं., वै.र., र.शु., वै.चि., यो.र. (एष पारदादिपूर्णम्),
चि र.म. (कायकुटारः), र.कि. इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

५०—अमृतैश्वर (२) में रसधं. (क्षुपावाग)को दाखिल-
करना ।

५१—अम्लपित्तान्तररसमें रसायनसं.को दाखिलकरना
और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसायनसद्ब्रह्मे गृताकोदियोग इति नाम स्था-
पितम् । तत्राऽऽम्लस्थानेऽर्कं नियोजितम् । तथा च
“पटोलकटुकीमुण्डीसिताक्षीर्द्रिलिहेदनु” इत्यनुपान-
विशेषः

५२—अयस्कृति (२) में अ.मं. (त्रिभूतायस्कृति) तथा
चि.क.को दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएकी टिप्पणीमें दाखिल
करना त्रिभूतायस्कृतिको मूलाठोंमें निकालदेना ।

“चिकित्साकलिकायां एतस्मिन्गणस्य त्रि,एषां गु-
द्धा स्वतन्त्रतया पाटोनिर्मितः परन्तु तस्या गन्धभे-
देय, एतद्वैश्या हीनगुणा चास्तीति सुधीभिः स-
म्यग्विभाषनीयम् । तस्याच्च पाठो यथा—

“सतित्वकविमीतकामलकसप्तलाशक्षिनी,
पलाशतकशिशापाप्रभृतिभिः पृथक् प्रास्थिकैः ।
त्रिवृत्त्यविरदास्कञ्चलनमन्यपध्यायुतै-
रमीभिरुदकार्मणद्वितयपाचितैरेकशः ॥
पुनस्तत्रोत्तीर्णं श्रुतचरणशेषौपधिजले,
पलाशद्रोण्यन्तः स्थितवति विनिर्वाप्य बहुशः ।
ततस्तस्या सम्यक् तरुणादादिराङ्गारनिकरै-
रयःपिण्डं तस्मिन्नयसि च बिलीने घनतमे ॥

अयस्तुला गोमयपावकेन
संसाध्यते सिध्यति चात्र देयम् ।
अयस्समं मागधिकाद्विचर्ग-
चूर्णं घृतं क्षौद्रमतो द्विभागम् ॥
इत्यामये प्रतिवार्षीया
सैपीपधायस्कृतिरुक्तमात्रा ।

प्रयुक्तया प्रत्यहमायुषश्च
बुद्धेर्धियश्चापि भवेद्विवृद्धिः ॥
न चानया स्थौल्यमपि प्रमेहः

क्षयश्च कुष्ठानि नृणां न सन्ति ।
न पाण्डुता श्लेपीपदरुद्धं च स्या-
। दूर्धानं च स्तम्भरुजः कदाचित् ॥” इति

५३—अयोभस्मयोगमें भा.प्र., वै.चि., यो.म. (लोहा-
पानम्) इनप्रयोगों को दाखिलकरना ।

५४—अयोमोदकमें ग नि., र.क. चि.सा., च.द. (लोहा-
दिमोदक.) इनप्रयोगों को दाखिलकरना ।

५५—अयोरज.प्रभृतिचूर्णमें वृ. मा.को दाखिलकरना ।

५६—अर्कमूर्तिरस (३) में र.मु. तथा अर्केश्वर (२) को
दाखिलकरना ।

५७—अर्षोद्भवातारिरसको हटादेना वह कम्पवातहमें
गयाहै ।

५८—अर्षोडरिसमें र. सं.को दाखिलकरना और नीचे-
लिखेकोटिप्पणीमें देना ।

“गुड्विकाराशमलिकारसेन बोलेन पित्तप्रभवे
प्रदद्यात् । वातारितैलेन कटुत्रयेण वातोद्भवे चात्र
मरीचियुक्तम् ॥ श्लेष्मोद्भवे वह्निगुडाद्रिमिश्रं त्रिदो-
पजे मागधिकाघृतेन । हरीतकीनुण्ठिगुडोऽस्तु ब्रह्मा
फलत्रयेणाऽऽज्यमधुप्रयुक्तम् ॥” इति रसरजशङ्करे
विशेषोऽस्ति । भावनायां बहुस्थाने चित्रकोऽस्ति
नाम च रसेन्द्ररस इति स्थापितम् ।

५९—अर्षोहर (२) में नि.र., वै.क., र.मु., वै.चि.,
र.को. (एषु शिवरस) इनप्रयोगों को दाखिलकरना और शुद्धात्रके
स्थानमें शुब्बात्र पाठकरना ।

६०—अर्षो कुठारस २, ४, ५ और बज्रकुठार इनरसोंके-
इत्यं प्रायः समानहै योश योश मेदकके अलगपाठकियेहै
इसलिये घक्का एकपाठनादेनाचाहिये ।

६१—अर्षो कुठार (५) में र.पा.को दाखिलकरना ।

६२—अश्वकन्धुकी (४) में रसायनप. र.र.कौ., यो.त., र.पा.
इनप्रयोगों को दाखिल करना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें
लेना ।

“रसं गन्धं तथा व्योषं टङ्गुणं मरिचन्तथा । हरि-
तालं विपञ्चैव शाणमात्रं पृथक् पृथक् ॥ दन्तीबीजं
चतुःशाणं खल्वे चैतानि निक्षिपेत् ॥” इत्याकारको
रसकौमुद्यां पाठोऽस्ति तत्र त्रिफलाऽमावः, दन्ती-
बीजं चतुःशाणं नियोज्य निम्बुद्रवेण भावना दत्त्वा
नाम च नृसिंह इति स्थापितम् । तस्याऽप्यश्वकञ्जु-
क्यामेवान्तर्भावः । रसपारिजाते द्वितीयस्थाने चि-
त्रकमधिकतया विन्यस्य भाजुरेचनमिति नाम स्था-
पितम् ।

६३—अश्वगन्धापाक (२) में रसायनसं.को दाखिलकरना ।

६४—अश्वगन्धाऽत्रक (२) में र.मा.को दाखिलकरना ।

६५—अष्टमूर्ति (१) में र.शि. (सन्निपातभैरव) को
दाखिलकरना (

६६—अष्टयामिकवटी में र.क. यो (ज्वराजकेसरी) को
दाखिलकरना ।

६७—अहिवरस में भे.सा., र.म.मा. (नागवध) को दाखि-
लकरना और नागवधके पाठको तवर्गमेंसे निकालदेना ।

६८—आगन्तुज्वरहरकेपाठको हटाकर ज्वरहर (८८) में ले-
जाना और रसेन्द्रमें को दाखिलकरना ।

६९—आशासिद्धरसायनमें र.मु., र.र.स., र.को इनप्रयोगों को
दाखिलकरना ।

७०—आनन्दभैरवरस (३) में र.पा., र.को. इनप्रयोगों को
दाखिलकरना और अचोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसपारिजाते निम्बुकरसेन त्रिदिनं विमृद्यैकः
पाठः कृतः; जातीफलकारवेल्गुटङ्गुवेररसैर्विभाव्य
द्वितीयः पाठः प्रकल्पितः; सकलामयप्रत्वेन गुणश्च
प्रदर्शित इति विशेषः ।

७१—आनन्दभैरवरस (११) में रसायनप. को दाखिलकरना ।

७२—आनन्दभैरवीवटी (१) की टिप्पणीमें “मैपज्यरत्ना-
वल्यां रसरजसुन्दरे च सन्निपातसुर्यति नाम स्था-
पयित्वा टङ्गुणं निष्कास्य त्रिदिनपर्यन्तभावनां
दत्त्वा निष्पादितः ।” इसके दाखिलकरना ।

७३—आनन्दभैरवीवटी (२) में र.र., र.क.यो. र.को,
र.मु., र.चि., र.का, (एषु सन्निपातभैरव) इनप्रयोगों को
दाखिलकरना और “मृक्तात्रं सदङ्गुणम्” के स्थानमें “मृत्-
तात्राऽप्रदङ्गुणम्” ऐसापाठकरना तथा “कुम्भचिद्रभ्रकारहित्य-
मस्ति” इसे टिप्पणीमें देना ।

७४—आनन्दरस (१) में भा.प्र. (आनन्दसूत) को
दाखिलकरना ।

७५—आनन्दरस (२) में रसायनप. को दाखिलकरना ।

७६—आनन्दोदयरसमें र.सं., र.सु., ध., नि.र., र.चि, (एगुलप्यानन्दः) र.क. (आनन्दभैरव) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और आनन्दभैरव (७) को मूलपाठोंमेंसे हटादेना ।

७७—आमलक्यादिलोहमें भै.र. (रक्तपित्तान्तकलोह)को दाखिलकरना ।

७८—आमवातगजकेसरी(१)कीटिप्पणीमें “भैषज्यरत्ना-वल्यामस्मिन्नेत्रेयाऽधिकारे विडङ्गादिलोहमिति नाम्ना द्वितीयो योगो लिखितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्त-र्भावः करणीयः ।

७९—आमवातविध्वंसनमें र.दी, र.चं, र.चि, चि सा, रसायनसं. [वातविध्वंसन] र.कौ., र.श., यो.म., र.सि, र.का, (पवननाशन) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना ।

८०—आमवातारिवटी (२) में र.कल, भा.प्र, वै र, र.र.कौ., र.को. र.चं, नि.र, र.र.स, दो., रसायनस, र.कौ., र.प्र, र.र.दी, चि.र.भ, व.रा, र. (मा), वै चि, (एगु वातारिस), वा (वातारिगुगुल) इनग्रन्थोंको दाखिल करना और अपोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“वैद्यचिन्तामणौ यस्यवराजीये च “पुत्रागं बृहती-युग्मं देवदाससुचूर्णकम् । एतत्पूर्वोपचसमं मर्दयेद्या-ममात्रकम् ॥” इति पाठोऽधिकोऽस्ति ।”

८१—इच्छाभेदी (४) में र.कि., यो.चि, र.धो, र.मू इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और “योगचिन्तामणौ मरिचाऽ भाव ” इसको टिप्पणीमें देना ।

८२—इच्छाभेदी (५) में र.र.कौ को दाखिलकरना ।

८३—इन्द्रोक्तसायनमें रसायनम् को दाखिलकरना ।

८४—इष्टामररसमें र.र.स, र.र.कौ (दीप्तामर), वै चि, व.रा (दण्डामर) नि.र, र.र.दी, र.का., दो, वै चि इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और उद्दामालकरसको निकालदेना और उसमें दीहुई टिप्पणीको टिप्पणीमें देना ।

८५—उदकमञ्जरीरस (१) में चि.क को दाखिलकरना और अपोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“भूयो भूयो भावयेत्तत्रिरात्रं” इत्यस्यात्रे ‘भाज्यः सम्यक् कुष्ठमुण्डी विशालालेहण्डाभिन्नालिनिर्गुण्डि नारीः’ इत्यधिकः पाठो हस्तलिखितप्रतिपु दृश्यते ।

८६—उदप्रकृष्टरसको निकालदेना वह सूर्यकान्तमें गया है ।

८७—उदयभास्कर (२) में र.बौ को दाखिलकरना ।

८८—उदयभास्कर (४) में र.पा को दाखिलकरना ।

८९—उदयभास्कर (५) में र.मू को दाखिलकरना ।

९०—उदयभास्कर (८) में यो.चि को दाखिलकरना ।

९१—उदयभास्कर (१०) को निकालदेना वह रसवरकी टिप्पणीमें गया है वहापर र.मू को दाखिलकरना ।

९२—उदयमार्तण्ड (१) में र.बो को दाखिलकरना ।

९३—उदयमार्तण्ड (२) को निकालदेना वह सूर्यप्रभातात्रे-श्वरकी टिप्पणीमें है ।

९४—उदयादिल (३) को निकालदेना वह रविताण्डवकी टिप्पणीमें है ।

९५—उदरारिस (१) में अपोलिखितटिप्पणीको ग्रन्थ सहित दाखिलकरना ।

“र.सं., ध., भै. र, र.सु., र.चि. एगु ग्रन्थेयु पञ्चाननरस इतिनाम । र.म.मा. (गुल्मगजाराती-रसः), र.र.स. (रक्तोदरकुठारः), र.र.कौ. गुल्म-ज्ज इतिनाम । रसरत्नाकरे गन्धकमधिकतया निक्षि-प्य वज्ररस इति नाम स्थापितम् । रसायनसङ्गहे द्विहारमभयाञ्चाऽधिकतया निक्षिप्य पारदाविद्यटीति नाम प्रदत्तमस्ति ।

९६—उदरारि (४)को निकालदेना वह सर्वेश्वर (८) की टिप्पणीमें गया है ।

९७—उदरारि (७) में उ.यो.त, र.कौ (गुल्मारि.), नि.र, वै चि, र.का, र.र.दी (गुल्मगजाराति), दो. (कुशुदरारि), रसायनस (भैरवरस.) इनग्रन्थोंको दाखिलकरना

९८—उन्मत्तरसमें र.पा को दाखिलकरना ।

९९—उपदेशश्लेष (२)में सुश्रुतको दाखिलकरना और सुश्रुतके पाठको मूलपाठ रखना तथा अपोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“गुन्द्रा तृणविशेषो दर्भवत्सुक्ष्मशलाकारूपः यत्प्रा यो गङ्गायमुनातटे बाहुल्येन लभ्यते । तत्रत्यजना यद्रज्यादिकं निर्माय खट्वाद्याच्छादनं कुर्वन्ति अथवा गृह्याद्याच्छादनवन्धानानि कुर्वन्ति तं तृणविशेषं वर्त-मानसमये ‘वगई’ अथवा ‘वागेर’ इति नाम्ना व्यवह-रन्ति । दर्भसजातीयमिदं तृणम् । तद्गन्ध्या तदीयम-स्म प्रयोज्यम् । रसकल्पलतायान्तु गुन्द्रास्थाने शु-ञ्जैति पाठ उपलभ्यते सः गुन्द्राशब्दस्याऽर्थाऽज्ञाना-त्तत्स्थाने कृतोऽस्ति अथवा प्राचीनसुश्रुतीयुस्तकेषु गुञ्जाया पव विद्यमाननामुपलभ्य तथा कृतोऽस्तीति निश्चयेन वक्तुं न शक्नुमः । परन्तु गुञ्जाया विपन्नत्वा-द्रोपणात्वाज्जन्तुमत्वाच्च योगः सम्यगेवाऽस्तीति वक्तुं युज्यते एव ।

१००—उपदेशहरयोगमें र.को, ध., भा.प्र, भै.र (सप्त-शाणीवटी) को दाखिलकरना ।

१०१—उपदेशहरीवटीको निकालदेना वह सूतादिवटीमें गई है ।

१०२—उमाप्रसादनरसमें र.पा. को दाखिलकरना ।

१०३—उमामाहेश्वरमें व.रा को ग्रन्थोंमें दाखिलकरना और अपोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“संशुद्धं पारदञ्चाम्रमित्यस्यस्थाने शुद्धं सूतं वि-
पञ्चाम्रमिति पाठः कर्णायः । वैद्यचिन्तामणौ द्विती-
यस्थाने तमेव पित्तभावनारहितं पाठं मदनपित्ते
उद्धृत्य तस्य रामबाणेति नाम स्थापनात्स रामबा-
णोऽप्यत्रैवान्तर्भायनीयः केवलं तत्र पित्तैर्भावना न
दातव्या, स च मदनजनितपित्तप्रकोपे दातव्य इति
विशेषः”

१०४—उमाशम्भुकी टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थ-
सहित दाखिलकरना ।

“र.ल., र.पा., एतयोः क्षीरसमुद्र इति नाम ।
शक्तिबलभविर्चितायां रसकौमुद्यां क्षीरार्णव इति
नाम स्थापितमस्ति ।

१०५—एकसूतेधररसमें र.शं.को दाखिलकरना और “रस-
राजशङ्करे भृङ्गवह्निवालकानां भावनाऽधिकतया
दृश्यते” इसको टिप्पणीमें देना ।

१०६—एकाङ्गवीररसमें र.पा.को दाखिलकरना ।

—इतिरससागरस्य—

अथ कवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१०७—कञ्जलीयोगमें अधोलिखितपाठको दाखिलकरना

“पारदं गन्धकं तुल्यं लवङ्गमर्दयेत् दृढम् । याममात्रं
पुटे पाच्यं स्वाङ्गशीतं समुद्धरेत् ॥ गुञ्जाद्वयं प्रदातव्यं
रसो धान्तीभकेसरी । लवङ्गस्यानुपानेन छर्दिं हन्ति
न संशयः ॥ र.म.सा., ना.वि. धमनाधिकारे ॥”

इसकेसिवाय अमिसन्दीपनरस (१), उपदेशोमसिंह, कज-
लीरस; कृम्यङ्गुच, गन्धर्वाख्य, गन्धासमगर्भ, त्रैलोक्यसुन्दर
(३) पापाणभेदी (२-३), पापाणवन्न (१-२), मदाकल्प,
श्रीपदध्वनी (२), श्वेतेभसिंहप्रभृति केवलकञ्जलीकैयोगोंको
भी कञ्जलीयोग नामसे दाखिलकरना ।

१०८—कनकसुन्दर (१) में र. चं. (रोगहर) को दाखिल
करना ।

१०९—कनकसुन्दर (५) में र. पा., र. कि., वै. जी., अणुस्य
इनग्रन्थोंको दाखिल करना और “अणुस्यप्रोक्तवैद्यक-
शास्त्रे पिप्पलीरहितोऽयं पाठो ग्रहणीकपाटनाम्ना
निहितोऽस्ति ।” इसको टिप्पणीमें देना ।

११०—कनकसुन्दरमें सत्तानस, र.क.ल. (ना.) को
दाखिलकरना और “नारायणविरचितरसकल्पलतायां
सिताम्रकमित्यस्यस्थाने शिलाऽम्रकमिति पाठः”
इसको टिप्पणीमें देना ।

१११—कपर्दीहरीमें र.मृ. (विषेकरस), र. (मा.) पोद-
लीसूतको दाखिलकरना ।

११२—कच्छुग्रर (३) को सखरमें लेजाना ।

११३—कम्पगाढामिं वै वि, व.रा. (विषयभेस) को
दाखिलकरना और नीचेलिखेहुएको टिप्पणीमें लेना ।

“अस्यैव पाठस्य वैद्यचिन्तामणिवसवराजीययोः
कटुकीस्थाने कष्टकारिभावनां प्रदाय विजयभैरवेति
नाम स्थापितम् । अग्निवाते वीरभद्रेति च नाम दत्त-
मस्ति तत्र कटुकीस्थाने गोकण्टभावना प्रदत्ताऽस्ति ।
११४—कर्पूरस (५) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको
दाखिलकरना ।

“कस्तूरीहिमकर्णकुङ्कुमसुधा जातीफलं हाटकं,
चाट्येशोपजहेमवीजविजया यष्टी जयन्ती विपा ।
प्रत्येकं यष्टमात्रं मधुघृतसितया लेह्यमानं दिनात्ते,
किञ्चिन्मूर्च्छाप्रपन्नो भजति हि पयो भक्षयेच्छुद्ध-
ण्डम् ॥ स्त्रीणां गर्वाधिकत्वं शमयति सकलं वीर्यपातो
न जातु, लिङ्गोत्थानं भवति च कठिनं योनिभङ्गं
करोति ॥” इति टोडरानन्देऽनुपाने विशेषो दृश्यते ।
यत्राऽस्योपयोगोऽभीष्टस्तत्राऽनुष्ठानं कर्णायमतः
स्वतत्रपाठे भ्रमो न कर्णायोऽनुपानानामनियतत्वात्

११५—कर्पूरस (७) में र. वो.को दाखिलकरना ।

११६—कर्पूरस (११) में आ.प्र. (सुथानिधिरस) को
दाखिल करना ।

११७—कर्पूरस (१३) में र.पा.को दाखिलकरना ।

११८—कर्पूरस (२७) में यो.म को दाखिलकरना ।

११९—कल्पादधरसमें रसधि. की ग्रन्थोंमें दाखिलकरना

और सुलाठमें “धुसूरस्य रसस्यापि भृङ्गराजस्यमा-
वनाः” इसके आगे “वीजपूररसस्यापि तिष्ठो देयाश्च
भावनाः । आर्द्ररस्यस्ते घृष्टा पुटेद्रजपुटेन च ॥
स्वाङ्गशीतलतां प्राप्तं पुनश्चमये सभुपुटेत् । नववा-
रान्धियायैवं तत्समं सूततीक्ष्णजम् ॥ निक्षिप्य मर्द-
येत्खल्वे सञ्जातोऽयं महारसः ॥” इतना पाठ अधिक
दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसचिन्तामणौ अस्य रसस्य ‘विशभागमितं
ताम्र-मित्यारभ्य ‘घान्तिर्भ्रान्तिर्न विद्यते, इत्यन्तस्य
ताम्रयोग इति नाम स्थापितम् । अस्मादग्रस्थभा-
गस्य देवभूतिरस इति नाम स्थापितम् ।

१२०—कल्पशरसमें र. वो.को दाखिलकरना ।

१२१—कलायवटीमें च.द.को दाखिलकरना ।

१२२—कान्तरसमें र.शं.को दाखिलकरना और “रस-
राजशङ्करे सिन्दूरपर्यन्तं नान्नाऽथवा कान्तयद्धना-
म्नाऽयमेवपाठो निहितोऽस्ति सः कान्तरसाध्नाति-
दिच्यते ।” इसको टिप्पणीमें देना ।

१२३—कामरसमें र.प्र.सु, र.चं., खो.वि, इनग्रन्थोंको
दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र.प्र.सु., र.चं., एतयोः “हंसपादकरमधु जाट-
णम्” इत्यस्यस्थाने “वलिवसाप्यथ चाप्रमममकम्”
इति पाठं रूत्या प्रमेहजित्प्रमेहहृदुशेति वा नाम स्था-
पितम् । खोयिहासे वीर्यस्तम्भनपटीति नाम ।

- १२४—कामदेवरस (४) में यो चि को दाखिलकरना ।
 १२५—कामदेवरस (५) में र पा को दाखिलकरना ।
 १२६—कामदेवरस (६) में र पा को दाखिलकरना ।
 १२७—कामदेवरस (९) में र.स, र.को, (मन्मथरस) इन-
 प्रन्थोंको दाखिलकरना और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।
 “रसरत्नसमुच्चये रसेन्द्ररत्नकोशे च मन्मथरस-
 इति नाम दत्तम्, तत्र “मर्द्य इयेतह्यारिरक्तदहनैस्ता-
 लोर्त्से. सप्तधा” इत्यस्य स्थाने “रक्तचित्रकवाराही
 पत्रनिर्यासपेषित—”मिति पाठो भिन्नतया दृश्यते ।
 परन्त्येतावता विशेषेण तत्पृथक्कया पाठो प्रहीतुमयो-
 ग्यः । धाराहा अपि तत्र भावनादाने न काऽपि
 क्षतिः । कामदेवो मन्मथश्चेत्युभौ पर्यायवाचकौ, त-
 द्विशि लक्ष्यमस्त्वा र.को., र.र.स. एतयोः पृथक्
 पाठो निवेशित इति सुधीभिराकलनीयम् ।
 १२८—कामदेवेशरसमें वै. वि (मदनकामेश्वर)को दाखिल-
 करना ।
 १२९—कामधेजुरस (२) की टिप्पणीमें नीचे लिखे-
 हुएकोलेना ।
 “मैपजयरत्नावहयां अमृतार्णवनाम्नाऽयमेव रसो
 निहितोऽस्ति तत्र व्योपाऽभावः, भावनायाश्च त्रिफ-
 लास्थाने चित्रकं नियोजितमिति विशेषः प्रतीयते
 परन्तु सोऽकिञ्चित्करः व्योपयुक्तस्यैव गुणाधिक्यात् ।
 भावनाद्वयस्याऽप्यनुष्ठाने सर्व समञ्जसमेव स्यात् ।
 १३०—कामनायकमें र.सु, र.र.स, र.को इनप्रन्थोंको
 दाखिलकरना और अथोलिखितको टिप्पणीमें देना ।
 “र.र.स., र.को, अनयोर्मदनोन्मत्तनाम्नैको रसो-
 ऽस्ति तेन साकमस्य बहुधा साम्यमस्ति । अत्रद्वयो-
 मिश्रणं कृत्वा बालुकायन्त्रे पाको विहितस्तत्र तु
 यथास्थितमेव प्रयुक्तमिति विशेषो दृश्यते । रसामृते
 मदनकामेश्वरेति नाम ।
 १३१—कामबाणरसमें रसायनप को दाखिलकरना ।
 १३२—कामबिलासिनीवटीमें रसायनसं. (मदनविलास)को
 दाखिलकरना ।
 १३३—कामकुन्दरीगुटीको हेमबन्धुटिकाकी टिप्पणीमें
 दाखिलकरना और र का (स्वर्णकुन्दरी)को दाखिलकरना ।
 १३४—कामिनीमदविधुनमें प्रन्थसहित अथोलिखित
 टिप्पणीको दाखिलकरना ।
 “रसचि., र.सु, रससं., र.क ल., वै.जी., र.वो.,
 पपु बिलासिनीवल्लभेतिनाम । र.सं.क., रसायनसं.
 एतयोर्नामिनीमानमर्दनेति नाम । र.पा., र.क ल.,
 एतयोः कामिनीमदविधुननेतिनाम । रसायतारे प्रमे-
 हमर्दनेतिनाम । चिकित्सारत्नाभरणे धूर्तैतलस्थाने
 सुजङ्गमृङ्गनीराभ्यां भावना प्रदत्ता नाम च प्रमेहा-

रिति । द्वितीयस्थाने अनङ्गवर्धकनाम्नाऽयमेव रसो
 निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

- १३५—कामेश्वरमोदक (१, २) में र.क. ल. (ना.) को
 दाखिलकरना ।
 १३६—कामेश्वररस (२) में र पा को दाखिलकरना ।
 १३७—कालकण्ठक (२) में र.स, ध, र.सु (वातकण्ठक)
 इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।
 १३८—कालवृक्षकमें निर, वै चि (नागेश्वररस) इन-
 प्रन्थोंको दाखिलकरना ।
 १३९—कालवज्राशानिरसमें र.पा (विपारि) को दाखिल-
 करना ।
 १४०—कार्यहरलौहमें र.र. (श्वेतादिलोह) को दाखिल-
 करना ।
 १४१—कासकर्तरीरसको निकालदेना वह चन्द्रामृत (३)
 में गयाहै और “वसवराज्यी प्रमादाद्यमेव पाठः
 कासकर्तरीति नाम्ना द्वितीयस्थाने निहितोऽस्ति”
 इसको टिप्पणीमें देना ।
 १४२—कासकेसरीरसको निकालदेना और उसकेप्रन्थोंको
 नारायणरसमें दाखिलकरना ।
 १४३—कासाङ्गुच (२) में वै र को दाखिलकरना ।
 १४४—कासीसकदरको हटादेना वह भिन्नारिकी टिप्प-
 णीमें गयाहै ।
 १४५—किन्नरकण्ठरसमें मै.र.को दाखिलकरना ।
 १४६—किरतादिमण्डरकी टिप्पणीमें अथोलिखितको
 दाखिलकरना ।
 “चि.र., वै. क., र.सु., यो म, वै.चि., पपुप्रन्थेपु
 लोहामृतनाम्नाऽयमेव योगो निहितोऽस्ति । सङ्गुह
 मृतलोहस्य पलान्यष्टादशानि चेत्यत्र कर्पस्थाने पलं
 सञ्जातमस्ति तद्भानादेवाऽस्ति, मध्याज्याभ्यां लिहे-
 र्कपेमिति वदतोव्याघातजडुपस्थितेः, तस्मादेक एव
 योगोऽस्ति नियण्टुरत्नाकरे द्वितीयस्थानेऽयमेव
 पाठो भूमिभ्यादियटीति नाम्ना निहितोऽस्ति परन्तु
 पाठान्तरता नास्त्येव समानवस्तुघटितत्वात् ।
 १४७—कीटारिसमें कृमिहर (१)को प्रन्थसहित दाखिल
 करना ।
 १४८—कुमुदेहर (२)को हटाकर मृगाङ्ग (१)में दाखिल-
 करना ।
 १४९—कुमुदेहर (४) में र म. मा, र पा.को दाखिल-
 करना ।
 १५०—कुङ्कुमाररस (१) में रसायनप.को दाखिलकरना ।
 १५१—कुङ्कुमरेण (१, २) में र.पा को दाखिलकरना ।
 १५२—कुमुमापुथमें र.को. (वीर्यमहोदधि)को दाखिल-
 करना ।

मिति टीकायां कथितम् । त्रिकलाकटुचव्यानामित्यत्र मूलपाठे कटुशब्देन किङ्प्रहीतव्यमिति संशय्य त्रिकटुनियोजितः । अस्माभिस्तु कटुशब्देन कटुकी गृहीता शोथरोगे तस्या अधिककार्यकरत्वादिति बोध्यम् ।”

१८६—गोमेदकरसायनको टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिलकरना ।

“क्रामणं रसराराजस्य वेधकाले प्रदापयेत् । क्रामणं यो न जानाति धमस्तस्य निरर्थकः ॥ रसा० १७।१६ ॥ अन्नं वा द्रव्यं वा यथानुपानेन धातुषु क्रमते । एवं क्रामणयोगाद्भ्रूसराजो विशति लोहेषु ॥ र.ह० १७।२ ॥ इत्यादिवाच्ये लंहे देहे च क्रामणयोगेर्विना उपरसा नेव क्रामन्ति, इति विचार्य “क्रामणं पादपादेन” इत्युक्तमस्ति । तत्रापि क्रामणानि कानिकानि द्रव्याणि भवन्तीत्यपेक्षायां “अलभ्युपाऽयस्कागतस्य तालकस्य च भक्षणत्वात् । देहे क्रामति सूतेन्द्रो नाऽत्र कार्या विचारणा ॥ रसायण प० १८।११४ ॥ “अरिवर्गहती यङ्गनागौ द्वौ क्रामणं परम् ॥ रसा० प० १७।१४ ॥ “इन्द्रगोपो विपं कान्तं दरुदं इधिरं तथा । रसकं तिलतेलञ्च क्रामणं क्षेपलेपयोः ॥ रसा० प० १७।७ ॥ “शिलया निहतो नागो यङ्गं वा तालकेन शुभेन । क्रमशः पीते शुक्ले क्रामणमेतत्समुद्दिष्टम् ॥ तीक्ष्णं दरुदेन हतं शुल्वं वा ताप्यमारितं विधिना । क्रामणमेतत्कथितं कान्तमुखं माक्षिकैर्वाऽपि ॥ माक्षिकसत्त्वं नागं विहाय न क्रामणं किमप्यस्ति । दलसिद्धे रससिद्धे विधावस्ती भवति खलु सफलाः ॥ र.ह० १७।६,७,८ ॥ इत्यादिभिरनेकानि द्रव्याणि क्रामणानि रसप्रत्येषु निर्दिष्टानि तेषु शरीरौचित्याऽत्र नागयङ्ग-विपदरुदताम्रमाक्षिकसत्त्वस्वर्णगैरिकाणि गृहीतानि सन्तीति विद्वद्भिराकलयनीयम् ॥”

१८७—ग्रहणीकपाट (५)में रसायन. को दाखिलकरना ।

१८८—ग्रहणीकपाट (१३)में र.सु को दाखिलकरना ।

१८९—ग्रहणीकपाट (१९)में र.चं, र.सु. इनग्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसेन्द्रसारसंग्रहे द्वितीयस्थाने भैरवरसानाम्ना कर्णरोगाऽधिकारे एकः पाठो निहितोऽस्ति तत्र त्रिकटुस्थाने केवलं मरिचं नियोजितम् । भावनायां जम्बीरस्थाने आर्द्रकं नियुक्तं तत्र न रसान्तरता भावनाद्वयसत्त्वेऽपि क्षत्यभावात् । मागधीशुण्ठधो-यंगिनापि प्रत्ययायाऽभावात् ।

१९०—ग्रहणीमद्वारणसिद्धिमें र.पा. (ग्रहणीकपाट) को दाखिलकरना ।

१९१—ग्रहणीहररस (३)में र.को, र.क.ल. इनको दाखिल करना और “मुशलीं पेपयेत्तत्रैरथवा तण्डुलौदकैः । कर्पकं पाययेच्चानु पच्यं तक्रोदनं हितम् ॥ द्वे निशो च यथा कुण्डं मुस्तं कटुकरोहिणी । छागमूत्रैः समं पिष्टं रुद्धा गजपुटेः पचेत् ॥ कर्पमात्रं पिबेत्तत्रैरग्नि-दीपनमुत्तमम् ॥” इतना पाठ अधिक दाखिलकरना । रसका-मथेनुकापाठ अधूराहे दूसरेग्रन्थोंमें शम्भुकाश नामहे ।

चवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

१९२—चक्रधररसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना.

“रसदीपिकायां धातोदरहरनाम्ना “ताम्रस्यप-त्रेण निबद्धयसूतं गन्धेन तुल्येन विषेणयुक्तम् । विम-द्वेयेद्विचिदङ्गकृष्णाऽजाजीगुड्डीचोसुरसाद्रवेण ॥ क्षा-रप्रयञ्जेलव्यानि पञ्च सूतेन तुल्यानि च योजयित्वा । जम्बीरनिम्बोत्थरसेन वाऽपि विमद्वेयेद्याममतः क्षि-पेत् । लोहस्यपात्रेऽथ कृशानुनीरैः संस्वेदयेत्तं घटि-काद्वयञ्च । गुञ्जाद्वयञ्चस्य ददीतशुण्ठी घृतेन युक्तं त्यथाऽऽर्द्धकेण ॥ विरेचने तज्जयापालमिश्रमुण्डञ्च साज्यं परिभोजयेत् ॥” इति पाठोऽस्ति । रसावतारे च धातोदरारण्यकृशानुमेघ इति नाम्ना “सूतगन्ध-कविपंविमद्वेयेद्विहनीरसहितं दिनमेकम् । ताम्रपात्र-कुहरं परिलिप्य वालुकान्तरगतन्तु पुटेत् ॥ कृष्णा-ग्निपेलाः सुरसागुड्डीशुक्राम्बुभिर्भावय सप्तवारम् । क्षारप्रथं वै लवणानि पञ्च सर्वेण तुल्यं परिमदनी-यम् ॥ जम्बीरनीरेण दिनं विमयं संस्वेदयेहोहमेघे च पात्रे । धातोदरारण्यकृशानुमेघः शुण्ठीघृताभ्यां म-धुना च बल्लः ॥ कम्पिलकमधुयुक्तः स्तुप्रसमधुनाऽ-पि वा शिवामधुना । धातोदरेणां हितकृद् द्रव्यलघु सुस्निग्धमोजिनां सततम् ॥” इति पाठो निहितो-ऽस्ति । अनयोश्चक्रधरे एव समावेशः करणीयः । अस्यैव प्रपञ्चभूतावेतौ । यद्यपि द्वित्रभावनानु सृ-लक्षण्या विशिष्ट. प्रतिभाति परन्तु योगत्रयघटित-भावनानामेकत्राऽनुष्ठानेऽपि क्षत्यभावाऽस्ति विशे-पगुणोदयश्च भविष्यति । रसावतारीय पाठे कल्कस्य ताम्रपात्रकुहरलेपनेन वालुकासु पुटोऽस्ति इतरयो-स्तु ताम्रपात्रे विन्यस्य सूतनिगन्धनमस्ति परन्तु सूक्ष्मदृष्ट्या तावन्मात्रस्यैव ताम्रसंयोगस्य सजात-त्वाद्दिशेषविशेषाऽभावाऽस्ति । अतस्त्रयाणां मिलि-त्वा एक एव रसः सम्पादनीय इति विक्षेपु विह्वलितः । अनेन छात्राणां विशेषोपकाठे भविष्यति । चक्रधरे

यद्गन्धस्याधिक्यं गुणवृद्धावेव पर्यवस्यति इति सर्वं समञ्जसम् ।

१९३—चक्रवद्वरस (२) में र का (वातारिस)को दाखिल करना

१९४—चक्रवद्वरस (२)के मूलपाठकेस्थानमें रसेन्द्रमन्त्रके अर्धोलिखित पाठको टिप्पणीसहित लेना ।

“शुल्वं सूतसमं कृत्वा खल्वे दत्त्वा दिनत्रयम् ।
नागपर्णाथिलापार्थमेधनादपुनर्नवेः ॥ अश्वमूत्रैर्गवां
मूत्रैर्मर्दयेच्च ततः पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थितं प्राज्ञो जार-
येन्द्रस्मसूतकम् ॥ शुल्वचूर्णं रसे जीर्णं दमयन्ती पुन-
र्नवा । मेघशृङ्गारसैर्घृष्टं रसःस्याद्गणतोपणः ॥ रसे-
न्द्रमं, घणाधिकारे ।

टि०—यौ म, र स, र चि, र मि, मै मा, ध, वै चि, निर,
र क ल, र घ, र का, र म, र शो, र शी, रसायनम, व रा,
र क, वै क, एखड्वाधिकारे तौद्रस नाम्ना “शुद्धं सूतं समं गन्ध
मर्षं यामचतुष्टयम् । नागवह्नीद्वन्द्वैर्मैधनादपुनर्नवा ॥ गामूत्रैषिष
लीडुलैर्मर्षं दत्त्वा पुष्टेषु । खिलैर्दो रसो तौद्रो गुणामात्रोऽर्जुनं जयेत् ॥”
इति पाठे निहितोऽस्ति तत्र प्रमादात्तत्र न सङ्गृहीतम् । केनाऽपि
कारणेनाभ्यग्न वा तत्र शायने साक्षात्प्रत्ये कुत्राऽपि कार्यकरणाऽशुभ
त्वाद् रसान्तरता तु नोद्भावयितुं शक्या मूलद्रव्यैक्यात् । तस्मात्-
स्याऽप्येवोऽन्तर्भाव समुचित । र म मा, र र स, ना वि श्तेषु ग्रन्थेषु
श्रीपदाधिकारे श्रीपदाधिकारीसेतिनाम्ना र शो, र क ल एतयोश्च
श्रीपदेषु नाम्ना “शुल्वचूर्णम घृतं नागवह्नीवलादेव । पाठापुनर्न
वापेधनादपुनर्नवा ॥ विद्विन् मर्दयेत्तत्त्वे ततो गवेषु पचत् ।
मद्यं शीघ्रेणमयुक्तं शुभैकं शीपदं जवत् ॥” इत्ययं योगोऽस्ति । बहुषु
ग्रन्थेषु भावनाया कला न दृश्यते । रसांतरं भरमघ्नक नाम्ना
“शुल्वचूर्णं शुल्वस्य सूतशुल्व विमर्दयेत् । नागपर्णाथिलापथ्या मेघ
नादपुनर्नवा ॥ अश्वमूत्रैर्मर्दयेद्विला तत पुटेत् । चक्रयन्त्रस्थितं
प्राज्ञो जयने भरमघ्नक ॥ गुणादय प्रय वारिसेथ्यं मूलकलीचयुक्त ।
विद्वेष्टैः पचादय वा दशमस्त वा तथा ॥ भरमघ्नकनामाऽयं गल्ग-
ण्वाचरीलभा । ग्रन्थैर्दु गण्डमालां जयेदापुन न सजय ॥ गौधूमयव
मुद्गाश्च पथ्या शोषा पचलजा । रूक्षं सर्वं हितत्र स्वाद्गलगाश्रुति
नाशकम् ॥” इत्ययं योगो निहितोऽस्ति साऽस्मिन्नेव समावेशनीय
स्वतन्त्राऽयोग्यत्वात् । यामशोषाये त्रयोपेधना नाम्ना “शुल्वं यम
समं कृत्वा रसं मर्षं दिनत्रयात् । नागपर्णाथिलापार्थं मयनादपुनर्नवा ॥
मेघशृङ्गारसैर्घृष्टे रसः स्यादग्रायणम् ॥” इति पाठे निहितोऽस्ति । तस्य
भावनायामविशिष्टको विशेषो दत्तो दृश्यते परन्तु तेन पाठान्तरता
अतिव्युत्पन्नाया अतिगौरवाच्छात्राणां विमर्शकत्वात्पेधनां पाठानां
सौंख्यमेवैवान्तरार्थं करणीय । भावनावति श्रद्धा चेदत्राऽपि तदनु
ष्ठाने क्षयमावतोऽस्ति ।

१९५—चतुर्मुत्तरस्य (१) में आ.प्र, र पा, र क उ (ना)
इनग्रन्थोंको टिप्पणीसहित दाखिल करना ।

टि०—अत्र रसायनिक “किञ्चिद्विनाशकारिणं श्वानु विमर्दयेत्”
इत्यस्य स्थाने “किञ्चिद्विनाशकारिणं श्वानु विमर्दयेत्” इतिपाठे दृश्यते
तत्र क्वचूळुश्चेत्तं शान्तिं प्राप्नुयात् । श्वानुश्चेत्तं काष्ठनाती प्राप्नुयात् ।
अन्वयस्यै सामान्यम् । आ प्र, र क उ (ना) एतयोर्भावनायां विनाश
शुद्धस्वादीयानामात्रां दृश्यते । र म मा, ना वि रसायनिकविधि
विधिपरस्पर इति नाम्नाऽन्वयैव योग पठितं परन्तु तत्र “किञ्चि-

तुलसीभाषीरसैथानु विमर्दयेत्” इत्यर्थं पच वृद्धिमत्ति । “किञ्चि-
द्विनाशकारिणं श्वानु विमर्दयेत्” इत्यस्य स्थाने “किञ्चिद्विनाशकारिणं श्वानु
विमर्दयेत्” इत्यनुपाचे च विशेषोऽस्ति । पर्येनावाता रसान्तरता, अत्रैव
तस्याऽन्वयं करणीय । विद्वेष्यां दृष्टप्रत्ययेन तत्रामान्तर रसापि
तमिति रहस्यम् ।

१९६—चन्द्रकलावटी (१) में र,शु को दाखिल करना.

१९७—चन्द्रकान्त (१) में वै चि (सूर्यकान्त)को दाखिल करना ।

१९८—चन्द्रकान्त (२) में नि.र., व रा, र र. (सूर्यवर्त)
इनग्रन्थोंको दाखिल करना ।

१९९—चन्द्रग्रमा (४) में र शू को दाखिल करना ।

२००—चन्द्रशेखर (२)की टिप्पणीमें भै र (चन्द्रशेखर)को
दाखिल करना ।

२०१—चन्द्रोदय (१) के मूलपाठकेस्थानमें अर्धोलिखित-
पाठको टिप्पणीसहित दाखिल करना और ग्रन्थोंमें र पा., र क
ल. (ना), र शो, रसायनप इनको देना ।

चन्द्रोदयः (मकरध्वजः) सिद्धाद्यः

पलमानं रसं सम्यग्गुहसंस्कारसंस्कृतम् ।
तथा पलद्वयं गन्धं शुद्धं हेमं द्विकापिकम् ॥
केलासाऽचलसम्भूते सुदृढे च सुचिक्रणे ।
शीघ्रप्रस्तरजे खल्वे सयं संस्थाप्य मिश्रयेत् ॥
मर्दयेद्यत्नतो वेद्यो यामानष्टौ निरन्तरम् ।
रत्नकार्पासपुष्पस्य श्वेताङ्गोदफलस्य च ॥
कुमार्याश्चरसेः सम्यग्भावयित्वा पृथक् पृथक् ।
स्थापयित्वा काचकूपीमथ्ये सर्वं प्रयत्नतः ॥
रकाङ्गसालसररुपदिश्रीफलोद्भवा ।
काष्ठिनाऽन्यतमेनैव नीरसेन प्रतापयेत् ॥
सुन्दुनाऽनलयोगेन प्राप्यामहितयं पचेत् ।
पुनर्यामह्वयं पाच्यं मध्यतापेन वह्निना ।
अग्निना प्रखरेणैव ततो यामह्वयं पचेत् ।
सूयो मन्दाग्निना पाच्यमवशिष्टद्वियामकम् ॥
स्याद्गहीतमथोद्भूत्य नवचूतदलोपमम् ।
मङ्गुरं लोहितं पिष्टे दाडिम्यहु सुमोपमम् ॥
तताऽप्यतार्यगन्धेन द्विगुणेन विमर्दयेत् ।
भाययेल्लूयंरुद्रयः पाचयेद्यं प्रयत्नतः ॥
एवं वारुद्वयं कुयात्सम्यगौषधिसिद्धये ।
सन्निपाते ज्वरं घोरं मन्दाग्निस्त्वमरोचकम् ।
आमशूलं कर्तोऽशूलं हृच्छलं पतिशालकम् ।
कासं श्वासञ्च यरमाणं शूलं कुष्ठमशोपयत् ॥
गलोत्थानञ्चतुःशुद्धिञ्च तथातीसारमेव च ।
श्रीपदं कफयातीतार्थं चिरञ्जं कुलजन्तया ॥
नाडीनिर्णयं मर्षं घोरं गुदाभयमगान्धरम् ।
घामुं बहुविधं हन्ति श्वजमर्हं विरोपयत् ॥

सेवनादस्य नश्यन्ति सर्वे रोगा न संशयः ।
 करोत्यग्निं यत्नं वायं घलीपलितनाशनः ॥
 विधियत्सेवितो ह्येष मुमुर्षुमपि जीवयेत् ।
 स्येच्छाचारविहारोऽपि न कदाचिद्विपद्यते ॥
 मेधायुःकान्तिजनन. कामोर्दीपनटन्महान् ।
 घृद्धोऽपि तद्यणस्पर्द्धां स्त्रीषु चापि वृषायते ॥
 सेवनादस्य सप्राज्ञो गच्छन्ति प्रमदाशतम् ।
 प्रैलोक्ष्यशुभदं श्रीमदेव एव महौषधम् ॥
 मृत्युञ्जयो यथान्यासान्मृत्युं जयति देहिनाम् ।
 तथाऽयं साधकेन्द्रस्य जरामरणनाशन. ॥
 स्वयं प्रैलोक्ष्यनाथेन प्रैलोक्ष्यहितमिच्छता ।
 समर्पितोऽयं सिद्धेभ्यः करुणाद्रैण वै यत. ॥
 अतोऽयं भुवने ख्यात. श्रीसिद्धमकरध्वज. ।
 भास्यान्यथा तमो हन्ति केसरीकरणं यथा ॥
 तुलासङ्गं यथायद्विस्तथा रोगानसौ हरेत् ॥

आ वि, र त रसायनाधिकारे ।

टि०—इ यो त, रसायनम्, यो म, र घृ, एषुमन्त्रेषु विद्वलक्ष्मी
 श्रुतान्ता “ ब्रह्माग्नेमचवृत्ते शिरिसूषिक्रिया मशार्थं पृष्टुगुणवर्ति
 कमशोऽधिकम् । ऊर्ध्वं पयोऽग्निमपरे विनिपायपीठा सिद्धिं समस्त
 करणे स्वकरो कुरुष्वम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । योगमहागवे च
 “सद्योऽथ सिद्धीं कृतनातमोष रत्नाशक्यैश्चकम्भवीय । श्रीसिद्ध
 लक्ष्मीतुलिसानामा योषुपिण्डोदरसम्प्रवृक्त. ॥” इति पतेन
 गन्धकस्य शतगुणितगारणमपि विहितम् । सुभाषिण्ट इत्यपि नाम
 स्थापितम् परन्तु च द्रोदयादग्निश्च एव केवल पारदसंस्कारविशेष
 घचित इत्यापातनो विराग प्रतीयते परन्तु पारदसंस्कारे समागमना
 शालि रसान्तरताबोधक इति सुभीभिर्विभावनीयम् ॥

२०३—चन्द्रोदय (७)को हटादेना वद मकरध्वज (२)की
 टिप्पणीमें गयाहे ।

२०३—चविकादिमण्डरमें ग नि. (चपलामण्डर, ४ मा.
 (मण्डरवटिका)को दाखिलकरना ।

२०४—चातुर्थिकनिवारणमें र पा (चातुर्थिकगजाङ्कश)को
 दाखिलकरना और तालकेशर (२३)की टिप्पणीमें लेजाना ।

२०५—चातुर्थिकारिस (४)में र षो को दाखिलकरना ।

२०६—चातुर्थिकारि (७)में ना वि को दाखिलकरना ।

२०७—चित्रनायान्तकमें र र स, र र.कौं (धियारि) को
 दाखिलकरना ।

२०८—चिन्तामणिलेखकी टिप्पणीमें अधोलिखितको
 दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र षो को देना ।

“टि०—रसकामनेनी राजवहभैलेखानाम्ना—
 “मूला पकलोहानि दन्तीवीजनि दङ्कणम् ।
 वारुण्येरेष्वहीजानि राजवृक्षाऽभयाविवृत् ।
 पलाशवीजमेकम् जैपाल तसम भवेत् ।
 रसुवीरीरेष सन्निष्य भावयेत्तिदिनत्र तर ॥
 नारिकेलके लिप्सा महागाढावो र्थितम् ।
 तारहीलम्बु जायते शूदीला नाभिण्डले ॥

अणुनात्रमणैनेन दशवारान्निरेचयेत् ।
 तत शीतोदकनेव शीघ्र प्रक्षालयेद्युष ॥
 गन्धरा भावयेदम्भम्यङ्गत्र विवर्जयेत् ।
 गुत्तिकाऽऽभागमात्रेण सप्तवारान्निरेचयेत् ॥
 एतत्तैरेन पथ्यादिफल युक्तिविभावितम् ।
 निष्पील्य हले विद्युत् विरेचनकर परम् ॥

इति पाठो निहितोऽस्ति । इदं तैल चिन्तामणिलेखेन समान वर्तते ।
 तैलेपादान्द्रव्येषु वारुण्येरेष्वराजवृक्षपलाशवीजान्दधिकानि सन्ति ।
 भावनायात्राऽस्मिन् रसुवीरीरे हृद्यते, अत उभयोयोगोर्द्वैतव्याप्तौ
 भावनागन्ध मिश्रण इत्या तैल निष्पाद्यते चेत्तर्हि शुणाधिक्य भवि
 ष्यति । अस्मिन्तैरे गुत्तिकाग्राणमिति पाठो हृद्यते तत्र तैलनिष्कासना
 दुर्बलितस्य कल्कस्य गुत्तिकां विभाव तदाऽऽग्रेण विरेचनानि
 मत्विष्यन्तीनि निर्भाव्यम् ॥”

२०९—चिन्तामणिस (१०) को इच्छामेदी (६) में
 लेजाना ।

२१०—चिन्तामणिस (१२) में र.ग को दाखिलकरना ।

२११—चिन्तामणिस (१७) में र.ग को दाखिलकरना ।

२१२—चिन्तामणि (२२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको
 दाखिलकरना ।

“भैषज्यरत्नावल्या चूलिकावटीति नाम्नोदराऽ-
 धिकारे “रसा गन्धो विषं तालं त्रिकटु त्रिकला
 तथा । दङ्गणं समभागञ्च जयपालञ्चतुर्गुणम् ॥ भृङ्ग-
 राजरसेनाऽथ केशराजरसेन वा । मधुना घटिका
 कार्या गुञ्जाद्वयमिता शुभा ॥ चूलिकाख्या घटी ख्याता
 शोथोदरचिनाशिनी । कामला पाण्डुरोगञ्च आम-
 वातं हलीमकम् ॥ हन्याद्गन्धरं कुण्ड मूहानं गुल्म-
 मेव च ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽऽयुग्मैवा-
 न्तर्भावः सुकरः ॥”

२१३—वैतन्योदयरसमें भै र को दाखिलकरना
 २१४—चोडसिद्धरसको ज्वरकुलान्तकमें लेजाना और
 नीचेलिलेहूणको टिप्पणीमें देना ।

“रत्नाकरौषधयोगे कजलीस्थाने द्विभागो द्रवो
 नियोजित । अत्र त्वेकैकभागो गन्धकपारदौ स्तः
 इत्यापाततो रसान्तरता प्रतीयते परन्तु गन्धकपार-
 दसंयोगेनैव द्रवस्य जायमानत्वादभिन्नताऽनयो-
 रिति सुधीभिर्विभावनीयम् ।

२१५—छदिसहारसमें यो र (जोरकादिस), र च (सूत
 मसमयोग) को दाखिलकरना ।

२१६—जयावटीमें आ प्र को दाखिलकरना ।

२१७—जातीफल्यदिवदी (३)में र पा को दाखिलकरना.

२१८—जीर्णज्वारिसमें ताभयग (१०) को दाखिल
 करना ।

२१९—ज्वरकुलान्तरसकी टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना ।

“रसगन्धो विशुद्धो ह्यौ दङ्गणञ्च कटुत्रयम् । द-
 न्तिथीजञ्च संयोज्य समारोहे भिषग्वरेः ॥ प्रदेधो

मापमात्रो वै ज्वरशूलार्दितस्य तु । सज्वरं याममात्रेण शूलं हन्ति कफोद्भवम् ॥” इति नारायणविलासे द्वितीयस्थाने पाठोऽस्ति तस्य पृथग्पाठानर्हत्वम् ॥”

२३०—ज्वरकेसरी (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको देना ।

रत्नाकरौषधयोगे जयपालस्थाने टड्डुणं नियोज्य योगीति नाम्ना रसान्तरतया पाठो निहितोऽस्ति सोऽप्यत्रैवान्तर्भवति । टड्डुणेऽधिकश्रद्धा चेदस्मिन्नेव तद्योगस्य सुकरत्वात्पाठान्तरताऽयोग्यत्वम् ॥”

२३१—ज्वरकेसरी (३) में वा. (शीताङ्गुश) को दाखिल करना ।

२३२—ज्वराजसिद्धमें र.पा.को दाखिल करना ।

२३३—ज्वरगजाङ्गुश (२) को निकालदेना वह सत्रिपात-गजाङ्गुशमें गयादे ।

२३४—ज्वरध्वान्तदिवाकररसको विश्वतापहरणमें दाखिल करना ।

२३५—ज्वरभैरव (१) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको दाखिल करना ।

“र.सं., र.चं., पतयोः सर्वाङ्गसुन्दरेति नाम द्रव्या रेचनाऽधिकारेऽयमेव पाठः स्थापितः । र.सं., र.चं., भै.र., घ., र.क.यो., र.सु., नि.र., एषु ग्रन्थेषु ज्वरकेसरीति नाम्ना पाठो निहितोऽस्ति यथा (ज्वरकेसरी १) अत्र टड्डुणाभावोऽस्ति । अत्र टड्डुमित्यस्य स्थाने चैवेति पाठः प्रमादात्सञ्जात इति प्रतिभाति । भृङ्गभावनाऽनुष्ठानन्तु कृतमपि न दोषायहं पाठस्त्वेक एव करणीयः । निघण्टुरत्नाकरेऽजीर्णाऽधिकारे रामबाणनाम्ना “विनिष्कं शुद्धजेपालं विप-गन्धेशटङ्गुणम् । भृङ्गराजरसेः पिष्टे—” तिपाठोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । भृङ्गरसेन प्रथमं भावनां प्रदायाऽन्ते द्रोणपुष्पीस्वरसेन भावनायां गुणवृद्धिरेव भविष्यति ॥”

२३६—ज्वरशूलहरमें र.क.यो. (पर्वटीरस)को दाखिलकरके मूलपाठोंमें से हटादेना वह रक्तितण्डवकी टिप्पणीमें गयादे ।

२३७—ज्वरहरस (७) में र.को को दाखिल करना ।

२३८—ज्वराङ्गुश (१) का नाम र.र.स.में चानुर्ध्विहर रखादे ।

२३९—ज्वराङ्गुश (४) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना ।

“र.मु., वै वि, रसायनसं, एषु ग्रन्थेषु शीताङ्गु-शानाम्ना “नृत्यकाङ्गागमेकञ्च तालकं द्विगुणतया । तालाग्निगुणितः शयः सयमेकत्र कारयेत् ॥ भावितं सूर्ययोगेन तोयेद्य पूर्णजेस्तथा । भावितं सप्तवारणि शीलकं शूपमपततः । पुटेद्भ्रजपुटेऽप्य सिद्धो भ्रय-

त्यसौ रसः ॥” इत्यादि पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽत्रैव पाठोऽन्तर्भावः सुकरः । तालनृत्यकयोर्भागव्य-त्यासस्त्वकिञ्चित्करः पुटदानेन तालाधिकभागस्यो-द्ध्रियमानत्वात् । भावनाविशेषस्यात्राऽप्यनुष्ठाने क्षत्यभावात् ।

२३०—ज्वराङ्गुश (७) में वै वि, वा. (रामबाणरस)को दाखिल करना ।

२३१—ज्वराङ्गुश (८) को शीतमधु (१) में दाखिल करना ।

२३२—ज्वराङ्गुश (९) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना ।

“रसगन्धटङ्गुमसिते समांशकं परिमृद्यजातिफल-सप्तभावितम् । सितयोपयुज्य नवरक्तिकोन्मितं मयि-ताम्रमुग्बिजयते विसृचिकाम् ॥” इति पाठो रस-चण्डांशौ रसरत्नसमुच्चये च निहितोऽस्ति । रस-रत्नसमुच्चये “विमृद्य गन्धोपलटङ्गुणे च सम्भाव्य वारानय सप्तजात्याः । तोयैः फलानां०” इति विसृ-चीविध्वंसनाम्ना द्वितीयः पाठो निहितोऽस्ति सोऽ-प्यत्राऽनायासेनेव समाविशति ॥”

२३३—ज्वराङ्गुश (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिल करना ।

“रसेन्द्रकल्पद्रुमे “पारदं गन्धकं टड्डुं विपञ्च म-रिचं समम् । चूर्णितं सूततुल्यञ्च बीजं नैकुम्भजं शुभम् ॥ पिष्टं निम्बुद्वैभांश्वै रक्तिकार्द्वं कफञ्जयेत् ॥” इति हुताशननाम्ना योगो निहितोऽस्ति । योगचन्द्रि-कायां ज्वरभेदीति नाम्ना “गन्धटङ्गुणविषोष्पणद-न्तीबीजकट्टफलमुपेतसार्धम् । मर्द्यमाद्रकजलेरथं मापं तत्सितार्द्रेऽस्युज्यरभेदी ॥” इति पाठो निहि-तोऽस्ति । पतयोरत्राऽन्तर्भावः सुकरः पतदपेक्षया मूलयोगस्याऽधिककार्यकरत्वात्

२३४—ज्वराङ्गुश (१२) में र.पा., र.कि., र.को, रसा यनप. (ज्वराङ्गुश) अणस्य., व्यास. (सुतसञ्जीवनी) इनम-न्योंको दाखिल करना ।

२३५—ज्वराङ्गुश (१७) को वैष्णवरसमें दाखिल करना ।

२३६—ज्वराङ्गुश (१८) में रसायनप. (गण्डभैरव) को दाखिल करना ।

२३७—ज्वराङ्गुश (१९) की टिप्पणीमें अधोलिखितको ग्रन्थमदित दाखिल करना ।

“रसगन्धकनेपालं समं खल्वे विमर्दयेत् । अभ्य-स्यवत्कलद्राये दोलायन्त्रेण पाचयेत् ॥ याममात्रं ततो नोत्था शुक्रामात्रप्रमाणकम् । सितकणायुतं खादे-द्विषमज्यन्जाशनम् ॥ सूर्यज्वरं क्षणाद्दन्ति नाम्नाऽपि भाग्यवीरसः ॥” इति दृष्टचिन्तामणी पाठोऽस्ति त-

स्य मूलमयमेव रसः । कटुकतीनिकासनस्य प्रयोजनं न प्रतीयते । अथवत्थवल्कलद्रावे स्वेदनेत्राऽप्यनु-
ष्ठिते क्षत्यभावः । स्वेदनाऽनन्तरं भृङ्गरसेन वटिका-
करणे सर्वे सामञ्जस्यं भविष्यति । पृथक्पाठकल्प-
नन्तु सर्वथाऽन्याप्यमेव ।

२३८—ज्वराकुश (२१) में र क यो. को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना—

“द्वियामं मर्दयेद्वैरीपापाणं कितधद्रवैः । जीरकेण
समायुक्तं शीतिकाज्वरनाशनम् ॥” इति रत्नाकरौप-
धयोगे पाठोऽस्ति । चूर्णद्रव्यस्वेदनाऽनन्तरं कितधद्र-
वेण मर्दनं विधाय जीरकानुपानेन प्रयोगेऽहते द्वयोर-
प्येकत्र समावेश. करणीयः । अनेन गुणवृद्धिरपि
भविष्यति पाठहासश्च महत्फलम् ।

२३९—ज्वराकुश (२२) में र का, को दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“रसकामधेनौ शीतमञ्जीनाद्या “चूर्णालसौम्यतु-
स्थानि तुस्यतुल्यार्द्धमर्षकम् । कारवल्याः सप्तपुटः
रसः स्याच्छीतमञ्जनः ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति
तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः । यद्यपि शङ्खशुक्ति-
चूर्णस्य भेदो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः । द्वयो-
रपि चूर्णे प्रायशः समानधर्मत्वात् ॥”

२४०—ज्वराकुश (२५) को हटादेना वह रामबाण
(५)की टिप्पणीमें गयाई ।

२४१—ज्वरारिस (२) में भै. र को दाखिलकरना ।

२४२—ज्वरारिस (१०) की टीकामें “स्वाशौतल होने-
पर निकालकर ऊपरलगेहुएपारेकी उतारकर उससे द्विगुण-
जमालगोटा और त्रिगुण शुद्धवठनाग डालकर” इसतरहका पाठ
करना उचितहै ।

२४३—ज्वरारिस (११) की टिप्पणीमें अधोलिखितको
दाखिलकरना और नारसिंहरस (प्रथम)को निकालदेना ।

“वसधराजीय नारसिंहरसस्याऽनेनाऽक्षरशः स-
मताऽस्ति केवलं उवरा रौ कुमारिरसेनभावनास्ति
नारसिंहेऽर्कमूलवक्त्रपायस्य भावनाऽस्तीति विशेषो
दृश्यते परन्तु स अकिञ्चित्कोऽस्ति. द्वयोरपि भाव-
नयोरैकत्र समावेशेन गुणवृद्धिरेव भविष्यति पाठद्व-
यभ्रमो निरस्ती भविष्यतीति महत्फलम् ।

२४४—ज्वरारिस (१२) में वै र. (रामबाण), र. सि.
(लीलावतीवटी) इनप्रयोगोंको दाखिलकरना ।

तवर्गीयरसोंकी विशेषसूचनाएं

२४५—ताम्रपर्पटी (२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको
दाखिलकरना ।

“र. सु. सु. प्र., र को., र का, व. रा, र. क. यो एषु
ग्रन्थेषु ज्वराऽधिकारे विजयपर्पटी नाम्नैको रसोऽ-
स्ति तत्र चतुर्भांगविपनियुक्तिः कदलीद्वलापतनञ्चेति
विशेषो दृश्यते परन्तु सोऽकिञ्चित्करः, चतुर्भांग-
विपक्षेपेणाऽपि क्षत्यभावात् । मात्रायामपि समान-
ताऽस्ति पाठान्तरनिरसनञ्च महत्फलम् ॥”

२४६—ताम्रपर्पटी (३)की टिप्पणीमें अधोलिखितको
दाखिलकरना ।

“रसरत्नमणिमालायां विस्फोटद्वर्पटीनाम्ना
“मृतं तात्रं मृतं सूतं गन्धकेन च मर्दयेत् । कुर्यात्प-
र्पटिकां शुभ्रां ताञ्च खादेद्यथाबलम् ॥ त्रिफलाचूर्ण-
संयुक्तां विस्फोटार्तः सुप्तीभयेत् ॥” इतिपाठो निहि-
तोऽस्ति स ताम्रपर्पट्या अभिन्न एव । सर्वत्र सूतयो-
गेषु मृतश्चोभियुज्येत तर्हि शतगुणाऽऽधिन्यमिति
वारंवारं सूचितमस्माभिः । अनुपाने त्रिफलाचूर्ण-
प्रयोगस्तु योगस्य स्वतन्त्रतामापादयितुमशक्य एव ॥

२४७—ताम्रपिष्टिका (२) क मूलपाठके स्थानमें अधोलि-
खितपाठको लेना ।

“विशुद्धं तुर्यताम्रञ्च रसं गन्धं समांशकम् । श-
तावरीरसेर्मर्षं कटुतैले विपाचितम् । सूत्रकृच्छ्र जय-
त्येय रसेन्द्रः शकैरान्वितः । कुण्डलीनीरमयुयुक्
पिप्लवीक्षीद्रयुक्तथा । यासपापाणमित्पथ्या गोभु-
रारम्यधैः कृतः । काथः समाक्षिको हन्ति कृच्छ्र-
दाहकृत्तान्वितम् ॥ रसावतारे

२४८—ताम्रयोग (२१)को हटादेना वह रविताण्डवकी
टिप्पणीमें गयाई ।

२४९ताम्रयोग (९) में र सु, (सूर्यप्रभ)को दाखिलकरना ।

२५०—ताम्रयोग (१०)की टिप्पणीमें “यो स, रसे-
न्द्रमं. एतयोर्बालरोगाऽधिकारे यालरोगहर इति
नाम्ना पठितः” इसको दाखिलकरना ।

२५१ताम्रयोग (१९)को हटादेना वह सूर्यप्रभाताप्रेक्षरमें
गयाई ।

२५२—ताम्रसायन (१) में व द को दाखिलकरना और
टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

“रसकामधेनौ रसायनसङ्घट्टे च “गन्धकेन हतं
तात्रं गुञ्जाहार्द्धं प्रकल्पयेत् । रसोऽयं शुद्धमार्तण्डा
गलत्पुष्टविनाशनः ॥” इत्याकारकः कुष्ठे योगोऽस्ति
तस्याप्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

२५३—ताम्रसुन्दरस्य (अधोलिखित) को रसवत्की टिप्प-
णीमें लेजाना—

“निष्कारनालपुट्टाद्यैर्याममेकं पचेत्ततः ॥

उभारकै. पचेत्तानि सप्तवारान् सकाञ्जिकैः ।

एषं संशुद्धिमायान्ति जलेन क्षालयेत्ततः ॥

शुद्धाना ताम्रपत्राणा शृङ्गीयात्पलपञ्चकम् ।
 कर्पञ्च रसता ग्राह्य पक्वनिम्बुक्वारिणि ॥
 यावच्छुद्धत्वमायाति तावत्तत्र विमर्दयेत् ।
 निम्बुकरसयुक्तेन गन्धकद्विपलेन च ॥
 पत्राणि तानि सल्लिप्य यत्रे सैकतके क्षिपेत् ।
 सम्यक्पचेत्ततस्तानि घृहिना दिनपञ्चकम् ॥
 स्वाङ्गरीत विदित्या च तत शुल्ब समुद्धरेत् ।
 शृङ्गण तच्चूर्णयेत्स्रज्ये त्वजाश्वारण सम्पुटेत् ॥
 दिनत्रय तथाऽऽप्येन दध्ना च सितया तत ।
 माक्षिकेण तु तच्छुल्ब शुद्ध स्यात्पुट्यागत ॥
 उत्कलेदन्नमदाहादि दपि सर्वैर्यिजितम् ।
 शुल्बमात्रानुपानानि वक्ष्यन्तेऽत समासत ॥
 घृष्टमेव दृढीताऽस्य शूलै वानजसम्भवे ।
 सौय र्गल कुबेराक्ष रामत चाक्षसम्मितम् ॥
 पिथेत्त्रेण तदनु गव्येनाल्पम्लकेन च ।
 दद्याद्द्विद्वयञ्चास्य शूलजे परिणामजे ॥
 स्वर्जिकादङ्गणेनाऽथ पञ्चैव लयणानि च ।
 अभ्यत्युक्त्रिकाशाराभार्गीपावन्नामठम् ॥
 एषा चूर्णानु लङ्गेन सप्तयाराश्च भावयेत् ।
 कर्षमात्रे पिथत्पञ्चात्तच्चूर्णितभावनम् ॥
 घृष्टद्वयमित शुल्ब रांगराजे प्रयाजयेत् ।
 छिन्नासस्यस्य बहेन सितागद्याणकान्वित ॥
 अजाक्षीरेण तदनु पातय्या बलयर्धन ।
 शुद्ध ताम्र घृष्टमात्र हरातक्याश्च तिग्दुकम् ॥
 पिथेत्काण्णेन तोयेन शायशुल्बमादरेषु च ।
 घृष्टद्वयञ्च शुल्बस्य प्राणद् द्वाद्दसम्मितम् ॥
 पक्वविशदिनाम्येव सेषयेद्बह्वर्णो गदे ।
 मधुना भक्षयेत्ताम्राद्विशुद्धाद्रविकाश्रयम् ॥
 वासांस पिथेत्पञ्चात्कासभ्यासापनुत्तये ।
 घृष्टत्रयञ्च शुल्बस्य त्रिफलामधुमिधितम् ॥
 प्रात सम्मशयेत्प्राणी प्रह्वार्यरेता भवेत् ।
 एकानदशामामेषु पृगीपलितयजित ॥
 अष्टादशानु शुष्णु ताम्रपत्रहृत्पुष्टयम् ।
 पिथेत्परदिरतायेन याहवारजसा समम् ॥
 रतिषापञ्चर्ष शुल्बाद्व्यापचिप्रकसयुतम् ।
 न युष्ण्यात्कादिक पथ्य दुग्धं तेऽञ्च राजिकम् ॥
 सतत्र भक्षयेत्कन्दं शुष्णं बल्यञ्च यान्मुकम् ।
 नानारागेभ्यनि प्रोक्ता रमाऽय ताम्रसुन्दर ॥
 द्वापादिक सर्माद्यादौ शुल्ब द्वाष्य मात्रया ।
 येषु रांगेषु य यागा देवास्त तदनन्तरम् ॥
 र मृ, द्वाडे । अत्रशानिचिद्रुपानानि विशेषतया
 निहितानि सन्ति परन्त्वुपानानामनियतयात्तद्वान-
 नार्थं स्वतः प्रगाढस्यापनम्प्याऽव्याग्यत्वाद्दसपर द्याऽ
 स्यान्तमप्यङ्गानि ॥

२५४—ताम्रसुन्दरीवर्णमे रसायन को दाखिलकरना ।
 २५५—ताम्रमण्ड (१) में गनि, र मृ को दाखिल
 करना ।

२५६—तालकयोग (१) में र क, र का को दाखिलकरना
 और टिप्पणीमें "र क, र का एतयामिभ्रपञ्चकनाम्ना-
 ऽयमेव यागा निहिताऽस्ति" इसको देना ।

२५७—तालकधर (२) में र मृ को दाखिलकरना ।
 २५८—तालकेशर (८) में आ प्र को दाखिलकरना ।
 २५९—तालकेशर (१०) में र मृ को दाखिलकरना ।
 २६०—तालकेशर (१५) को तालके र (२७) में लेजाना
 २६१—तालकधर (१७) में र मृ को दाखिलकरना ।
 २६२—तालकधर (२३) की टिप्पणीमें अपोलिखितको
 दाखिलकरना ।

"र, र स, र मु, र र कौ, र का, र क ल, एषु
 चातुर्यिकनिवारणनाम्ना "त्रिभाग तालक विधादे-
 कभागान्तु पारदम् । तदर्थं गन्धकञ्चैव तदर्थां तु मन-
 शिला । कारवह्नीदलरसेमर्दयेत्प्रहरत्रयम् । पाचि-
 ता बालुकायत्रे चातुर्यिकनिवारण ॥ इति पाठा
 निहिताऽस्ति । अनयोन्तालकप्रमाणे भावनायाञ्च
 विशेषता प्रतीयते परन्तु साऽकिञ्चित्करी विशेषता,
 त्रिभाग तालकं निक्षिप्य कारवह्नाच्चूराभ्यामुभा-
 भ्यामपि भावना प्रदाय निष्पादिते रसे सर्वं साम-
 जस्य भवेदित्येक एव पाठ स्यापनीय ॥"

२६३—तालकधर (२७) में विरभ, र मृ (धीतारि)
 को दाखिलकरना ।

२६४—तालकधर (२८) में र मु (शुल्बताडेशर), र षं
 (विषमसुन्द) र मृ इनमन्त्रोंको दाखिलकरना और अर्धं
 लिखितको टिप्पणीमें लेना ।

"रसरत्नसमुच्चये शूलगजकेसरीति नाम्ना रसर
 रङ्गिण्याञ्च शूलमकेसराति नाम्ना "ग्लप्रमाणमूते
 यन्ना द्विगुणेन च । शुद्धत्रिपलतालेन कृत्या पञ्च
 ङ्का न्यहम् । पलमानेन कर्तव्य शुद्धताम्रस्य सम्पु-
 टम् । पिधानपात्रसङ्घ्रस्ततल्पात्रस्य धालतु । ष
 जली सम्पुटस्यान्तनिर्दूषात्तदन तरम् ॥ अघस्ताद्
 परिष्ठाद्य मस्युटस्याऽऽस्तिपुत्तः । आक्ण्ड पटुपु
 ता निधाय च निरुद्धय चाविशोष्य गनसम्पन्नेन पुट
 पुटयेत्तत । पटवृण विधायाऽथ क्षिपेद्रम्यकरण्डे
 पण्याट्टंरस्तापेता पहमाना निषेधित । रस
 नि शेषशूलप्र स्यात्पुलगजकमरा ।' अ
 यागा निहिताऽस्ति । यद्यपि द्रव्यप्रमाणे यदकिञ्चि-
 छिदाश दृश्यते परन्तु साऽकिञ्चित्कर, ताम्रमात्र-
 स्याऽपिनिहित्यात् ॥"

२६५—(२९) की टिप्पणी में अपोलिखित इना-

“रत्नाकरौपधयोगे रसपारिजाते च शीतभजन-
नाम्ना “तुल्यमेकं त्रयं तालं शिलाचूर्णं चतुर्गुणम् ।
कुमारीरससम्पिष्टं कुन्कुटीपुटपाचितम् ॥ तुलसी-
रससंयुक्तं शीतज्वरविनाशनम् ॥” इति पाठो निहि-
तोऽस्ति तत्र वस्तुषु प्रमाणन्यत्यास इति विशेषः ।
भाजनाद्वयस्य तु द्वयोरपि स्थाने दाने क्षत्यभावो-
ऽस्ति ।”

२६६—तालकेश्वर (३४) में र.सु (शीतारि) को दाखिल-
करना ।

२६७—तालसिन्दूर (२) के मूलपाठके स्थानमें नीचेलिखे-
हुए पाठको रखना

“शुद्धं रसं निष्करातं तदुद्धं
शुद्धं बलिं कञ्जलिकाञ्च कुर्यात् ।
सौराष्ट्रिकागन्धरतुर्यभाग्ना
देयाऽत्र तद्वद्धरितालभागम् ॥
सम्मर्द्य गाढं नवसाद्रञ्च
तालाचृतीयांशयुतञ्च सर्वम् ।
कौमारिकाम्भ.परिमदितं वा
तत्काकमाचीस्वरसेन तद्वत् ॥
साद्रञ्च तत्काचघटे निधाय
दृढं पचेद्दे सिकताख्ययन्त्रे ।
सपञ्च सप्तप्रहरांश्च याव-
देवं पचेद्भय इह त्रिपारम् ॥
तत्सिद्धसुतं विनिगृह्य युक्त्या
सर्वेषु योगेषु निवेशनीयम् ।”

इति योगमहाण्ये पाठोऽस्ति । रत्नाकरौपधयोगे
रसत्रिलहरितालटङ्कणनरसारनागभस्मानि समप्रमा-
णानि गृहीत्या कञ्जलिकां विधाय रविमूलाऽऽर्द्रका-
न्धिमूललशुनत्रिफलानागवह्नीरसे प्रत्येकं पञ्चपञ्च
भाजनाः प्रदाय काचकूप्यां भूत्वा पञ्चपञ्चवासरेश्च
पाचयेत् । तस्य रसस्याऽयमेरसा मूलम् ।
रत्नाकरौपधयोगकर्ता सर्वत्रैवेत्यमेव मूलपाठेषु क-
पोलकल्पितां युक्तिं समाहृत्य निष्पयोजनां सहयां
पर्ययति ।”

२६८—तालसिन्दूर (४) में र.सु को दाखिलकरना इतमें
शीतारि नाम है ।

२६९—तालसिन्दूर (७) में र.क.यो को दाखिलकरना ।

२७०—तालसिन्दूर (८) की भागमें हरितालका प्रथम दृष्ट
गया है ।

२७१—त्रिकटादिलोद (२) क स्थानमें नीचेलिखापाठ
टिप्पणीसहित रखना—

“द्योगं त्रिवृत्तिककराहिणी च सायारजस्का त्रि-
फलारमेन । पीतं षफातयं शमयेच्च शाकं सूत्रेण
गन्धेन हरितकी वा ॥”

च स, मे सं, अ ह, र चि रसायनम्, र का, ग नि
ना वि शोयाधिकारे ।

टि०—अल्पहितया विप्रकास्थाने त्रिपुला दृश्यते । नारायणविलासे
केन कारणेन त्रिपुत्रिकाभिनेति न ज्ञायते । सायोरजस्केति विशेषणन्तु
त्रिपुत्रिका नियुक्त्य सायुरी मूलद्रव्ये निवेशिष्य । विप्रकथा विपुष्ट स्ते
नेति प्रत्यामत्तिन्यायेन त्रिपुत्रिका सकृत् सायुत्र त्रिपुत्रिकारसेन पीतमिति
स्वतन्त्रतया निहितम् । प्राचीनरोगाणि लिपि प्रायो यत्रस्था भवति,
अतस्तदीयोक्तिं समीचीना प्रतिभाति योगस्वरव्येवाऽस्ति स्वतन्त्रता-
श्रमो न कर्णीय इति बोध्यम् ।

२७२—त्रिगुणाख्यरसमें रसायनसु को दाखिलकरना ।

२७३—त्रिदोषनीहारविनाशमूर्त्युकी टिप्पणीमें अधोलि-
खितपाठको दाखिलकरना और ग्रन्थोंमें र.सु दोबार छगया
है सो ठीककरना ।

“रसेन गन्धं द्विगुणं प्रगृह्य पुनर्नवावहिरसेर्विमर्द्य
पकारकपशोत्थरसे प्रथला-

द्विपाचयेद्दृष्टगुणे च पश्चात् ॥

रसार्धभागेन विपञ्च दत्त्वा

विपाचयेद्द्विजले क्षयञ्च ।

शीतारिसन्नाऽस्य रसस्य

यल्लं तदुद्धमर्द्यं यदि धाद्रकेण ॥

प्ररोचचूर्णेन घृतेन घापि

सेवेत मासं सवृत्तञ्च पथ्यम् ॥

इति रसामृते पाठो दृश्यते सोऽस्यैव प्रपञ्चः प्रति-
भाति । भाजनानान्तु ग्रहणमत्रयमेव करणीयम् ॥”

२७४—त्रिदोषशमन में त्रिशक्तिकाञ्जनरसको दाखिलकरना
और अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“र सं, र र, र चं, र चि, र सु, र फो, ध, र का
(सूतहेमयोग) र सं क, रसायनसं, र प्र (स्यल्पमृ-
गाङ्करसः) इति नामभ्यां “रसभस्म हेमभस्म तुल्यं
गुञ्जाद्वयं भजेत् । दोषं बुद्धाऽनुपानेन मृगाङ्कोऽयं
क्षयापहः ॥ इति योगा गन्धकरदितो निहितोऽस्ति
परन्तु गन्धरयोगेन विशेषकार्यकरत्वात्पुटदानेन च
गन्धकस्योद्दीयमानत्वादेरु एव यागो न्याय्यः नाना-
योगरूपने छात्रमुद्धिष्याबुलीमायात् ।

२७५—त्रिनेत्रस (३) में आ प्र को दाखिलकरना ।

२७६—त्रिनरग (५) में अरमरीहर (३) को दाखिल-
करना और ग्रन्थोंमें र.क.को दाखिलकरना ।

२७७—त्रिपुरमेखरयत्री टिप्पणीमें नीचेलिखेहुए दो देना ।

“रसरत्नदीपिकाया रसस्य द्वी भागी स्वर्णस्य
चक्रस्तथा । पिष्टयास्ताम्रप्रधानां लेपः, ऊर्ध्वाऽप्या
गन्धकदानानन्तरं मत्स्याक्षिनींरग सेचनम् । अनु-
पाने च मृगशृङ्गचूर्णस्य याग इति विशेषः ।”

२७८—त्रिकलागुग्गुत्तु नामने कितगुग्गुत्तु और व्याधि-
साईल्यगुग्गुत्तुमे तद्वार्य लेखना ।

२७९—त्रिकलामण्डूर (२) में ग नि (मण्डूरयोग), वृ मा, चि सा इन प्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२८०—त्रिकलामण्डूर (३)में कलायवटीको अनुपानमें लियाहै सो अलग कलायवटीमें दाखिलकरना ।

२८१—त्रिकलारसायन (३) में वृ मा को दाखिलकरना ।

२८२—त्रिकलालोह (२)में मु च, हितो, ग नि, र मा इनप्रन्थोंको दाखिलकरना और “सुधुते पाण्डूधिकारे गोमूत्रा नुपानमस्ति” इसको टिप्पणीमें देना ।

२८३—त्रिकलालोह (५) की हटादेना वह श्लेषदारिलोहमें गयाहै ।

२८४—त्रिकलालोह (९) की टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको लेना—

“व्योषं शतावरी त्रीणि फलानि द्वे बले तथा ।
सर्वांमयहरो योग सेव्यो लोहरजोन्वितः ॥ एतद्व-
क्ष.क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रजम् ॥” इति यो-
गमहार्णवे मुखरोगाधिकारे सप्तमृतलोहनाम्ना यो-
ज्यं पाठः सोऽप्यमेव । र र, र प्र, भै. र, टो, एषु
राजयक्ष्मणि विन्ध्यवासियोगनाम्नोको योगो पठि-
तोऽस्ति सोऽक्षरशोऽन्तर्भवति । फलभागे “एष
वक्ष क्षतं हन्ति कण्ठजां विविधां रजम् । राजयक्ष्माण-
मस्युत्रं बाहुस्तम्भार्दितं तथा ॥” इति विशेषोऽस्ति
सोऽप्यत्रैव निवेदनीयः ।

२८५—त्रिकलालोह (१०)में चि सा, ग नि को दाखिल
करना ।

२८६—शिशुवनकीर्तिसं र पा को दाखिलकरना ।

२८७—त्रिमूर्तिस (१) की टिप्पणीमें अपोलिखितको
प्रन्थसहित दाखिलकरना ।

“रसरत्नाकरेऽप्यमेवपाठो गौडरसनाम्ना निहितो-
ऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः सुकरः भायनाविशेषे
प्रातिश्रेयस्रेव तदनुष्ठाने क्षत्यभावः ।

२८८—श्लोक्यचिन्तामणि (४) में र पा, र को, रसाय-
न इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२८९—श्लोक्यवृडामणिमें र मृ (श्लोक्यरशामणि) को
दाखिलकरना ।

२९०—श्लोक्यडम्बरस (२) में र मृ को दाखिलकरना ।

२९१ श्रृंगणादिलोहम् (१) में भै र को दाखिलकरना और
“भेषजयत्नात्स्वां त्रिकलास्थान विजया दरयत्, अन्नरूपा
ऽमात्र” इनको टिप्पणीमें लेना ।

२९२ श्रृंगणादिलोह (२) में भै र को दाखिलकरना ।

२९३—श्रृंगणरघो टिप्पणीमें अपोलिखितको दाखिल-
करना ।

“रत्नामृते सुरिकारनाम्ना “दरदा जयपालश्च
नुद्धो संयोजितो समो । त्रिकटुत्रिफलाग्भाभिः सूर्य-
रोद्मयिभावित ॥ यहद्रयमिता दत्तस्तथा हिगुड-

मिश्रितः । हन्ति गुल्मोदरूप्लीहशोकापाण्डुामयक्रि-
मोन् ॥ कुप्राऽऽनाहज्जश्वसाविस्कोटगुद्दानपि ॥”
इति पाठो निहितोऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः
करणीयः ।

२९४—धातुज्वराङ्गुशोमें र पा को दाखिलकरना ।

२९५—धातुपञ्चामृत (१) में र को को दाखिलकरना ।

२९६—धानीलोह (१)में ग नि (धात्र्याधवलेह), भा प्र,
चि सा, र प्र, वृ मा, च द, नि र, इनप्रन्थोंको दाखिलकरना
और “हृन्द्माधवे धानीस्थाने त्रिकलानियोजिता” इसको
टिप्पणीमें देना ।

२९७—धानीलोह (३)में वृ मा, ग नि को दाखिलकरना ।

२९८—नवज्वराङ्गुशोमें र म, वै. क, र चि, र क, व रा,
र क यो (श्रीतभञ्जी) इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

२९९—नवज्वरारण्यकृशातुमेघको हटादेना वह रविताण्डव-
की टिप्पणीमें गयाहै ।

३००—नवायसलोह (१) में चि सा, यो. चि, चि क,
र मृ इनप्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको टिप्पणी-
में देना ।

“नवायसायः क्रिपया प्रयुक्त पाण्डुामयार्द्राग्रह-
णीविकारान् । नानाविधं स्थावरजङ्गमाख्यं क्षिणोति
गुल्मानुदराणि शोथम् ॥” इति पाठो लोहपद्धतो
हेमनवकमिति नाम्ना निहितोऽस्ति तत्र लोहस्थाने
हेम्नो योग इत्येवविशेषः ।”

३०१—नवायस (३) में भै र, र स र च, र मृ, र क, प
(क्षयकेदारी) इनप्रन्थोंको दाखिलकरना और अधोलिखितको
टिप्पणीमें देना ।

“भेषज्यरत्नायल्या “नवभागान्वितं लोहं समं सि-
न्दूरसन्निभम्—” मिति येन केनाऽपि प्रकारेण भ्रष्टं
पाठमासाद्य समं सिन्दूरसन्निभमित्यस्य कोऽर्थो
भवेदिति सन्दिह्य रससिन्दूरं तदप्य प्रकल्प्य
स्थतन्न. पाठ प्रकल्पितः तत्र प्रमाद् एव भूलम् । ध,
र सं, र चं, र सु, र क, एषु प्रग्येषु “नवभागो-
न्मितस्तुल्यं लोहपारदसिन्दुर—” मिति पाठं प्रकल्प्य
स्वाशाने प्रस्टीटृतमिति रसप्रग्याना शाचनीयता,
एवमेव यहद्र स्थानेषु स्वाऽशानेन प्राचानपाठा भ्रष्टी-
वृता. सन्ति । पुनस्तत्पाठो नानातरसप्रकल्पने च पूर्वा-
त्प्रग्येषु क्षयकेसरीति नाम स्थापितम् । यथार्थ-
तया अयत्ना नवभागयुक्ततया नवायसमित्येव नाम-
स्थापितमता नवायसतुर्नाये स्थापनीयम् ।

३०२—नागन्द (३) की टिप्पणीमें अपोलिखितको
दाखिलकरना ।

“रत्नामृते ‘नागप्रकारसः’ इति नाम्ना
‘नागनाम्ने पाण्डे भलायत्या

वहौ मन्दे तेन चूर्णेन चार्द्धम् ।
दत्त्वा सूक्ष्मं सद्भिर्न व्यंशमस्मा-
च्छुष्णीमृतं मारिचं चूर्णकञ्च ॥

दद्यात्तस्माद्रक्तिकैकां प्रयत्ना-
युक्तां वैद्यो नागपत्रेण पुंसः ।
हृन्त्याद्रोगांश्चेन्मवातप्रभृताम्
कुर्याद्ब्रह्मः पाटवं देहसौख्यम् ॥”

इति पाठो निहितोऽस्ति । तत्र मूलद्रव्येषु समान-
ताऽस्ति केवलं भागेषु व्यत्यासः कृतोऽस्ति तस्या-
प्यत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।

३०३—नागाजुनीवटी (४)को हृद्यदेना वह भ्रमनाशिनी
वटीमें गई है ।

३०४—नाराचस (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको
देना ।

“रसचण्डांशौ षोडशगुणे गोमूत्रे पक्त्वा वटिका-
रूपं प्रणीयाऽस्मिन्कुमार नाम स्थापितं तद्विक्रिञ्चि-
रम् । तस्याऽत्रैवाऽन्तर्भावः करणीयः । गोमूत्राऽनु-
पानेन दत्ते तदीयाऽभीष्टसिद्धिरपि सुसाधा भविष्य-
ति पृथक्पाठकल्पने गौरवात् ॥”

३०५—नाराचस (२)में र.बो., (नाराच) रसायन,
(ज्वरादुघ्न)को दाखिलकरना ।

३०६—नाराचस (६)में अधोलिखित टिप्पणीको ग्रन्थ
सहित दाखिलकरना ।

“रसपारिजाते कणाविश्वयोर्द्धाभागौ, जयपालस्य
च दशमागा इति विशेषः ॥”

३०७—नाराचस (९)में र.बो.को दाखिलकरना ।

३०८—नाराचस (१४)में यो.चि.को दाखिलकरना ।

३०९—नीलकण्ठरसमें र.बो.को दाखिलकरना ।

पवर्गीयर्सोंकी विशेषसूचनाएं

३१०—पद्मामृतमें र.चं., र.बो. (वृत्तिघोरोगनाशन)को
दाखिलकरना ।

३११—पद्मकत्र (३)को मन्थानभैरव (१) में दाखिल
करना ।

३१२—पद्मामृत (९)में चि.सा.को दाखिलकरके नीचे
लिखेको टिप्पणीमें देना ।

“चिकित्सासौरं वातरक्तारिरस इति नाम । नि-
घण्टरत्नाकरे तु नामद्वयमपि स्थापितम् तत्तु प्रमाद
पथ ।

३१३—पद्मादिलोह (१)में ना.वि.को दाखिलकरना ।

३१४—पानीयमज्जवटी (१)में वै.क., रसचि को दाखिल-
करना और “त्रिवृता मुस्तकश्चैव त्रिफलाऽयूप्यन्तथा”

इसके स्थानमें “अयूप्यं त्रिफलामुस्तं त्रिवृता चित्र-
कन्तथा” ऐसा पाठकरना । भै.र., घ., वै.क. रसचि. इनमें
शूलान्तक नामसे आया है ।

३१५—पित्तसुरके पाठको रक्तपिताङ्गसमें दाखिलकरना ।

३१६—पित्तान्तक (१)में भै.र.को दाखिलकरना और
अधोलिखितको टिप्पणीमें देना ।

“यदाऽत्र माक्षिकं त्यक्त्वा सुवर्णमपि दीयते ।
महापित्तान्तको नाम सर्वपित्तविनाशकः ॥” इति
पाठो भैपज्यरत्नायल्यां परिशिष्टेऽधिकतया महापि-
त्तान्तकेति नाम्ना दत्तः ।

३१७—पित्तान्तक (२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको
दाखिलकरना ।

“र.सं., र.चं. एतयोर्द्धितीयस्थाने घ., र.र.स.
एतयोश्च स्वतन्त्रतया रक्तपित्तान्तकनाम्ना एको रसो
निहितोऽस्ति तत्र ताद्रभस्म नाऽस्ति । यदीद्राक्षाऽमृ-
ताद्वैश्व भावना प्रदक्षाऽस्ति तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावः
सुकरः । “मापमानं निहन्त्याशु रक्तपित्तं सुदाहण-
मित्यर्थपद्यस्य तु समावेशोऽत्रैव करणीयः ।

३१८—गीयूप्यन्तरसमें र.म. (अमृतगुन्दरीवटी) को
दाखिलकरना ।

३१९—पुत्रवर्धमानरसमें र.र.स., र.को. (वर्धमानरस)
र.र.को. (सन्तानवर्धमान) इनप्रयोगोंको दाखिलकरना ।

३२०—प्रमेहकैतुको हृद्यदेना वह हरिसङ्करस (२) में
गया है ।

३२१—शुक्रमूत्रान्तक (२)में भै.र.को दाखिलकरना ।

३२२—नालोगान्तककी टिप्पणीमें नीचेलिखेहुएको
दाखिलकरना ।

“भैपज्यरत्नायल्यामस्मिन्नेवप्रकरणे रामेश्वररस
इति नाम्ना द्वितीयो योगो निहितः सोऽप्यस्माद्-
भिन्न एव ॥”

३२३—अप्राणशुद्धिकारीटिप्पणीमें अधोलिखितको देना.

“रसायनसं., र.र.दी., वृ.यो.त., र.म.मा. एषु
पुस्तकेषु हिरण्यगर्भेगुट्टिकेतिनाम्ना “उन्मूल्य मूलं
विपजं चिद्व्याघ्रमेंऽस्यमृतं कनकांशपिष्टम् । संयेष्ट-
येत्कोलमयेन तत्तु मामेन पश्चाद्विपचेदियामम् ॥धत्त-
रयोऽङ्गवतेलमध्ये सम्पद्धतां याति सुरस्यितांऽ
यम् । सम्मोगकाले दृढतां करोति र्द्यस्य दुग्धं भ-
जतां नराणाम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति अत्र
चतुर्थांशं सुघण्डानमात्रस्य विशेषः ॥”

३२४—आरुहरस (१)की टिप्पणीमें “रसशामभेनो
शूलगजकेशरी नाम्ना टङ्गुणरहितोऽयमेव पाठोऽस्ति
तस्याऽप्यत्रैवान्तर्भावोऽस्ति ।

३२५—महोदयत्रयपरामे र. को. (सुदोदय) को
दाखिलकरना ।

३२६—मानसुरणाद्यं लोहमे त्रिक्रयादिलोह (३) को दाखिलकरना ।

३२७—मिहिरोदयरसमे भे. र. को दाखिलकरना ।

३२८—गुणाङ्कस (१) में कुमुदेकर (०) को दाखिल करना ।

३२९—मृतसध्नीवन (१०) को सन्धिवातारिकीटिप्पणीमें लेजाना ।

३३०—मृत्युञ्जय (१९) को टिप्पणीसहित मुनयोग (१०) में दाखिलकरना ।

अन्तःस्थीयर्सोंकी विशेषसूचनाएं

३३१—यक्ष्महर को हटावेना यह राजयक्ष्मव रिमत्तकैसरीमें गयाहे

३३२—रत्नेर (१) में भे. र. को दाखिलकरना ।

३३३—रसपर्पटी (१) में गन्धकर्पटीको ग्रन्थसहित दाखिलकरना ।

३३४—रसपिष्टिकां रसेन्द्र (हेमपिष्टिका) को दाखिलकरना ।

३३५—रसवरकीटिप्पणीमें उदयभास्वर (१०), ताम्रपर्पटी ३, ताम्रयोग (७), ताम्रयोग (१३), ताम्रन्दरस, त्रिनेत्र (३), त्रिनेत्र (७), इनरसोंस अन्तर्भाव होगयाहे इनको मूलाद्यमेंसे हटावेना और अधोलिखितरों रसरकी टिप्पणीमें दाखिलकरना—

“र.चि., यो र., र.सि., र.चं., ध., वै.चि., चि सा, र र., नि र., र.की. चि ब्र., भे.र., र.सं, र त, रसा-यनसं. र.क., घ.रा, र. (भा.), भे सा र रु, र का, यो म, एषु पुस्तकेषु हृदयार्णय नाम्ना “शुद्धं सृतं समं गन्धं मृतं ताम्रं तयोः समम् । मर्दयेत्त्रिकला-षार्थैः काकमाचीद्रवेर्द्रिनम् ॥ चणमात्रां वर्टीं रसादे-द्रसोंस्यं हृदयार्णयः । कावमाचीफलं कर्प त्रिकलाप-लयेत्युत्तम् ॥ द्वात्रिंशत्तोलकं तोयं षाधमष्टायदोषि-तम् । अनुपामं पिबेद्यात्र हृद्रोगे च फफोत्थिते ॥” इति पाठोनिहितोऽस्ति ”

३३६—रसतिन्दूर (१) में र. ग. (रसांशुन्दर) को दाखिलकरना और र.चि., र.का., र.ग., इनग्रन्थोंकोभी दाखिलकरना ।

३३७—रसेश्वरस्य (४) में शरम्मस “रतोपरमलोद्गनि धान्याग्रघ विशेषतः,” यह आपाषोऽरदगयादे उमे जोइदना और र.का. (पर्वतर) को दाखिलकरना ।

३३८—रीटातितम (२) में फरदाजा (२) को दाखिलकरना केवल भागामे अन्तरदे ।

३३९—लोकनाथ (१२) की टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना ।

“चि.क., नि.र., वै.चि. र.को., एषु पुस्तकेषु हि-रण्यगर्भे नाम्ना “निष्कद्रयं पारदमस्मनस्तु प्रगृह्य ह्येन्द्रश्च तदर्धभागम् । निष्कद्रयं शोधितगन्धकस्थ हुताशनद्रावयुते समस्तम् ॥ समर्थं संशोष्य पुन-र्द्वियाममन्ते चराटीः खलु तेन पूर्याः । तन्मन्त्रये रोध्य सुपुष्टमाण्डे तद्वै गजाख्ये सुपुटे पचेच ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । तस्याऽत्रैवान्तर्भावः समुचितः तदपेक्षयाऽत्र सुवर्णस्य हेतुगुण्यं दृश्यते परन्तु तद् हेतुगुण्यं लोकनाथे नियोजनेऽपि क्षत्यभावात्तस्ति प्र-त्युत्त गुणवृद्धिरेव भविष्यति ।”

३४०—लोहपत्रकी टिप्पणीमें अधोलिखितको लेना—
“गदनिग्रहे त्रिकुलोहयोगेति नाम्ना “त्रिकुलोहचूर्णञ्च ह्यमेतत्समांशकम् । पीतमुष्णाम्मस्ती हन्ति शोफरोगमसंशयम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति विशेषपाऽभावादतस्याऽत्रैवान्तर्भावः करणीयः ।”

३४१—वहिस (२) में रसरजस्य (द्वितीय) और र.घ. (जलोदरहर) को दाखिलकरना ।

३४२—वातजाकुण्ड (१) की टिप्पणीमें अधोलिखितको दाखिलकरना ।

“वैद्यचिन्तामणौ द्वितीयस्याने यत्किञ्चिद्देहं कृ-त्वा कफमसारिनाम्ना “मृतं सृतं तीक्ष्णकान्तं तालं माक्षिकगन्धकम् । तुर्यांशं मर्दयेत्पलये वातारराट्कौ-द्भयैः ॥ भृङ्गजैः काकमाच्युत्यैगिरिकन्याद्रवेर्द्रिनम् । मर्दितं भाण्डमं रुद्धा पचेन्मन्दाग्निना दिनम् ॥ द्या-पाग्निगन्धकचिपं सुरणाऽभयटङ्गणम् । समांशं चूर्णितं मिश्रं तुल्यांशं पूर्वपाचितम् ॥ त्रिदिनं मर्दयेद्वायुमु-ष्णदीनिगुण्डिभृङ्गजैः । अष्टगुजामितं खादेत्कफनात-निर्तन्तम् ॥” इति पाठो निहितोऽस्ति । तत्र विशेष-पाऽभावादस्मिन्नेवान्तर्भवति ।

३४३—वातजाकुण्ड (३) को हटावेना वह स्वसंसारारिकी टिप्पणीमें गयाहे ।

३४४—वातराशस्य (२) में व्याप को दाखिलकरना ।

३४५—विदरनापदरणसमे यो.च (द्रगेकयञ्कर) को दाखिलकरना ।

ओष्णरसोंकी विशेषसूचनाएं

—००००००—

३४६—गताश्रीमोदक में भे. र.को दाखिलकरना ।

३४७—शुद्धवातान्नाशामे वै.चि.को दाखिलकरना इयमे त्रिगुणाख्यनामदे ।

३४८—सत्रिगालसूर्यमे र ४ (सत्रिभातकालानल) को दाखिलकरना ।

३४९—सर्वतोभद्रकोमे भै र को दाखिलकरना ।

३५०—सुवर्णयोग (१०) में र र को, र र स को दाखिलकरना और 'एतयोर्भाय-यभिमन्त्रणस्थाने खदिर-भावना प्रदाय योगो निष्पादित' इसको टिप्पणीमें देना ।

३५१—सूतभस्मयोग (१६) में रसायनस, र का, र क ल (ह्रोगदर) इनप्रन्थोंको दाखिलकरना ।

३५२—स्वास्त्रियारिमे भै र को दाखिलकरना ।

आपाततो विभिन्नरसानामेकी- करणदिग्दर्शनम्

—SANCHEZ—

(१)—तृतीयाऽग्निकुमाररसे द्वितीयाग्निकुमारस्य द्वितीयविजयरसस्य चान्तर्भाव करणीय । द्वयोरपि तदपेक्षया विपशिष्टमूल्योरभाव । द्वितीयाऽग्निकुमारं द्विक्षारस्थाने त्रिकटुर्नियोजितो भावनायाश्च शिष्टुर्नास्ति । विजयरसे भावनासमानता दृश्यते । अतस्तृतीयाऽग्निकुमारं त्रिकटोर्नियोग कृत्वा एक एव पाठ सम्पादनीय ।

(२)—४२ सङ्घाकाग्निकुमाररसे ११, १८, २२, २३, २४, ३८, ४३, ४४, ४५ ४६ सङ्घाकाग्निकुमाररसाना, अमृतपालरसस्य, प्रथमचण्डेश्वरस्य शूलेभसिंहिनीगुटिकायाश्चान्तर्भाव करणीय । ४२ सङ्घाकाग्निकुमारापेक्षया एकादशतमेऽग्निकुमारे मरिचाऽभाव, द्रव्यप्रमाणे ताद्रूपारद्गन्धकऽमृताना ८, १२, २० (अनुपातेन २-३-५) भागा भावनाया निम्बुकभृङ्गाद्रंकाऽमृता गृहीता सन्ति पाकस्य चाऽभावोऽस्ति । अष्टादशसङ्घाकाग्निकुमारे ताद्राऽभाव, पारद्गन्धकयो समभागयो कज्जली कृत्वा गन्धकचतुर्थांशं विप नियोज्य पाकानन्तर अर्धाऽर्धभागे विपमरिचे मिश्रयित्वा योगो निष्पादित । द्वाविंशतितमेऽग्निकुमारे पारद्गन्धकविपताम्रभस्मना प्रमाणे समानता मरिचाऽभावश्च दृश्यते, पाकानन्तर रसार्थममृत निक्षिप्य चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्तेनाऽऽर्द्रकरसेन भावना प्रदत्ताऽस्ति । प्रयोर्विशोऽग्निकुमारे ताद्राऽभावः पारद्गन्धकमरिचाना समानता दृश्यते । पाकात्प्राक् विप पारदाचतुर्थांशं पाकानन्तरञ्चाष्टमांशं नियोजितम् । चतुर्विंशतितमे त्रिकटुत्रिफलयोराधिक्य, प्रमाणे च सर्वद्रव्याणां समानता, निर्गुण्डधग्निदमनीवह्विद्याघ्नीद्वयपाताल

तिन्दुक्रीन्द्रवारुणीना भावना विशेषतया दृश्यन्ते । अपत्रिंशत्सङ्घाके तीक्ष्णमधिकं, मरिचाऽभाव, पाकानन्तरञ्च विपमपि न नियोजितम् । त्रिचत्वारिंशत्तमे पारद्गन्धकविपताम्राणा प्रमाणे समानता, पाकानन्तर पारद्सम मरिचं चतुर्थांशञ्च विप नियोज्य योगो निष्पादित । पञ्चचत्वारिंशत्तमे ताद्र-मरिचयोरभाव, तालकमधिकं दृश्यते । प्रमाणे च पारद्गन्धकतालाना १-२-३ भागा, पाकानन्तरञ्च षोडशश विपं नियोजितमस्ति । पद्चत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे तालकमधिकम्, मरिचाऽभाव, प्रमाणे सर्वसमता, भावनायाश्चैकमधिकतया दृश्यते । अमु तपालरसे मरिचाऽभाव समभागपारद्गन्धकविपाणा कज्जलीं ताद्रपात्रेण पिधाय हण्डिकाया पाक कृतोऽस्ति । प्रथमचण्डेश्वररसे रसगन्धकविपताम्राणि समभागानि गृहीत्वाऽऽर्द्रकनिर्गुण्डयो प्रति-सप्तभावना प्रदाय योगो निष्पादित । अत्र कृपिका पाकराहित्य मरिचाभावश्च । शूलेभसिंहिनीगुटिकाया ताद्राऽभाव, एकैकभागयो पिप्पलीनागरयोरधिभ्य, प्रमाणञ्च पारद् ३; गन्धक ३; विप १ मरिचानि ३ इति क्रमोऽस्ति । भावनायामपि आर्द्र-कैरण्डौ गृहीतौ ।

उपरिनिर्दिष्टेषु पाठेषु कुत्रचित् तीक्ष्णस्य बुज-विद्धरितालस्य पिप्पलीनागरत्रिफलाना वा नियोगो मूलद्रव्येषु दृश्यते । भावनायाश्च निम्बुकभृङ्गाद्रंकाऽमृतानिर्गुण्डधग्निदमनीचित्रकक्याघ्नीद्वयपातालतिन्दुक्रीन्द्रवारुण्येरण्डाकां चित्रकत्रिकटुसैन्धवयुक्ताऽऽर्द्रकरसश्चाऽधिकतया दृश्यते । एषा सर्वेषामनुष्ठान द्विचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमारे कृत्वेक एव योग सम्पादनीय । एतेन क्षत्यभावो पाठेषु महती लघुता च भविष्यति ।

(३) चतुर्दशाग्निकुमारस्याग्निप्रदरसेऽन्तर्भाव करणीय । अग्निकुमारे पाकानन्तरमेव पडश विप निक्षिप्तं त्रिकटुस्थाने मरिचानि नियोजितानि हस्-राजभावनायाश्चाधिभ्य दृश्यते । अग्निप्रदरसे हस्-राजभावनानुष्ठानेनैव क्षत्यभावो भविष्यति ।

(४) विंशतिचत्वारिंशत्सङ्घाकाग्निकुमारस्या-नवमवडवानलरसस्य चा तर्भावं धुधासागररसे करणीय । यता विंशतितमेऽग्निकुमार धुधासागराऽपेक्षया विपराहित्य, गन्धकटङ्गणौ द्विद्विभागौ द्विक्षारस्थाने द्विक्षारग्रहण कृतमस्ति, भावनायाश्चाऽऽर्द्रक गृहीतम् । चत्वारिंशत्तमे ताद्राधिभ्य, त्रिफ-लपिप्पलयोरभाव, विपस्यैकभागो भावनायाश्च द्वैकं गृहातमस्ति । वडवानले विपामावो भावनायाश्च निर्गुण्डीगृहीताऽस्ति । धुधासागररसेऽपि ताद्रं

नियोज्याऽऽर्द्रकनिर्गुण्डयोर्भावनानादाने क्षत्यभावोऽस्ति पाठहासश्च महत्फलम् ।

(५)—सप्तचत्वारिंशत्तमेऽग्निकुमाररसे ४, ५, ७, ६, २५ सह्याकात्रिकुमाररसानां शृङ्खलाख्यरसस्य चान्तर्भावः करणीयः यत्र चतुर्थेऽग्निकुमारे ४७ सह्याकाफाठोपस्रया विपटङ्कणौ सूतसमौ, शङ्खवराटयोश्च द्वौ द्वौ भागौ नियोजितौ । पञ्चमेऽग्निकुमारे टङ्कणः सूतसमः, शङ्खवराटको द्विद्विभागौ नियोजितौ । षष्ठे शङ्खमरिचयोरभावः, प्रमाणे सर्वेषां द्रव्याणां समानता त्रिकुटोपाधिक्यञ्च दृश्यते । सप्तमे शङ्खस्थाने स्वर्जिका गृहीता द्रव्यप्रमाणेऽपि पिप्पलिनागरस्वर्जिटङ्कणकपर्दानामेकैको भागो निहितोऽस्ति । पञ्चविंशतितमेऽग्निकुमारे विपटङ्कणयोरभावः, प्रमाणे च पारदः $\frac{1}{2}$, गन्धः $\frac{1}{4}$ शङ्खः १, वराटिका २, मरिचानि ३ इत्यन्तरं कृतमस्ति । शृङ्खलाख्यरसे विषाऽभावः, प्रमाणेऽपि शङ्खः ४, कपर्दः ६, मरिचानि १२, टङ्कणं $\frac{1}{2}$ इति क्रमः प्रदर्शितः । उपरि निर्दिष्टेषु पाठेषु त्रिकटुस्वर्जिकयोराधिक्यं भावनासमानता चास्ति । कुत्रचित् नागवल्क्याद्रैक्यद्विदिशि प्रमूलमातुलुहानां भावनानियोगोऽधिकतया कृतोऽस्ति । प्रथमनिर्दिष्टरससङ्केतरुलिकोकापाठे त्रिकटुस्वर्जिकयोः सर्वासाञ्च भावनानामनुष्ठानं कृत्यैकं पत्र पाठः कल्पनीयः । एतेन पाठलाघवे महदुपकृतं भविष्यति ।

(६)—प्रथमकुण्डगजकसररसे द्वितीयाऽग्निगर्भरसस्य १५, २७, २८, ३८, ६० सह्याकतालकेश्वराणाञ्जान्तर्भावः करणीयः । अग्निगर्भरसे रसगन्धकौ समौ तालकश्च द्विगुणं गृहीत्वा गुञ्जारसेन त्रिदिनं विमृष्ट समभागताम्रपात्रे लेपे विधाय घालुकायन्त्रे द्विषामान्तः पाकः कृतोऽस्ति । पञ्चदशे सप्तविंशतितमे च तालकेश्वरे समभागौ पारदतालकौ कारवल्लीरसेन सप्तदिनपर्यन्तं विमृष्ट समभागताम्रसमुद्रे धृत्या दिनेकं घालुकायन्त्रेण पाकः कृतोऽस्ति । अष्टाविंशतितमे तालकार्ये पारदं चतुर्थीशञ्च गन्धकं गृहीत्वा कञ्जलीकृत्य कारवल्लीरसेन विमृष्ट ताम्रपात्रे लेपयित्वा शराश्रेण मुषं पिधाय अनुष्ठानद्वयान्तं सूत्रैर्बद्धा घालुकायन्त्रे धान्यस्फुटनपर्यन्तं पाकः कृतोऽस्ति । अष्टविंशत्तमे शुद्धतालकं स्थाल्यां निधाय समभागताम्रपात्रेण च्छाद्य धान्यस्फुटनपर्यन्तं विषाच्य ताम्रपात्रमुद्घाट्य तालकसमं गन्धकं दत्त्वा पूर्वविधानेन विषाच्य समभागं पारदभस्म मेलयित्वा योगो

निष्पादितः । षष्टितमे तालकभस्मगन्धकारवैकैकभागौ ताम्रभस्म द्विभागं गृहीत्वा घालुकायन्त्रे पाकः कृतोऽस्ति । एते सर्वेऽपि रसकङ्कालीयोककुण्डगजकसररसेऽन्तर्भाविनीयाः । कुण्डेषु सोऽथताम्रभस्मनोऽप्युपयोगो न दोषावहः प्रत्युत गुणप्रकर्षायैव । तत्रैव गुञ्जकारवल्लीभावनानुष्ठानमधिकतयाऽपि न निषिध्यते ॥

(७)—पत्रमष्टमज्वराङ्कुशे त्रयोविंशतितमतालकेश्वरस्य अष्टविंशत्तम ज्वराङ्कुशस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(८)—एवं ७, ९, ३०, ३२, ३६, ३७, ४२, ४६, ४८, ४९, ५०, ५१, ५५, ५८, ६४, ६५, ७७ एतत्सह्याकतालकेश्वराणां पञ्चविंशत्तमज्वराङ्कुशस्य चाष्टमतालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(९)—एवं २२, ३४, ४०, ४५, ५९ सह्याकतालकेश्वराणां मेकषष्टितमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः करणीयः ।

(१०)—एवं ६, १४, १६, ६२ सह्याकतालकेश्वराणां ७६ तमे तालकेश्वरेऽन्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(११)—एवं प्रथमत्रिकटुदिलोहे गुडूचीलोहस्य, १, २, ३, ४, ५, सह्याकत्रिकटुयादिलोहानां, तृतीयत्रिकटुलोहस्य, तृतीयनवायसलोहस्य, द्वितीयलक्ष्मणालोहस्य चान्तर्भावः करणीयः ॥

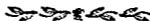
(१२)—एवं द्वितीयत्रिकटुदिलोहे २, ८, १२, सह्याकत्रिकटुलोहानां, प्रथमपञ्चमधानीलोहयोः, प्रथमपण्यादिलोहस्य, प्रथमशर्करालोहस्य, षष्ठमण्डरयोगस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१३)—एवं सप्तत्रिकटुलोहेऽमृतापानलोहप्रथमपञ्चमत्रिकटुलोहयोश्चान्तर्भावः करणीयः ।

(१४)—एवं प्रथमनवायसलोहे चतुर्थनवायसलोहस्य, लोहपञ्चकस्य, २, ३, ४, ६, सह्याकविड्डलोहानां, शोधादिलोहस्य चान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।

(१५)—एवं द्वितीयलोहयोर्मे द्वितीयतृतीयशर्करालोहयोरन्तर्भावः करणीयः ।

(१६)—एवमेव लोहगुटिकायां प्रथमगुडमण्डरस्य गुडलोहस्य, प्रथमद्वितीयगोमूत्रमण्डरयोः, चतुःसममण्डरस्य, जीवितवर्धनस्य, तक्रमण्डरस्य द्वितीयतृतीयत्रिकटुलोहयोः द्वितीयपण्यादिलोहस्य मधुमण्डरस्य, प्रथमतृतीयपञ्चमलोहयोगानाञ्जान्तर्भावः कर्तुमुचितः ।



नामान्तरसे आयेहुए रसोंकी सूची*

अगस्तित्वटी	स्वर	८५	अशोत्ररसः	ऊष्म	३२८	कफारिरसः	कु	४१
अग्निकुमाररसः	स्वर	९३	अष्टादशाज्ञलोहम्	कु	२६९	करवीररस	अन्तःस्थ	१०५
अग्निकुमाररसः	पु	५५५	अक्षादिलोहम्	कु	४७४	कर्पूरचन्द्रोदयरसः	उद्	७४
"	अन्तःस्थ	१०६	आदित्यप्रभाशकतामम्	ऊष्म	५३३	काञ्चनमोहनरसः	कु	१२९
"	ऊष्म	२६६	आनन्दभैरवरसः	स्वर	३१०	कान्तपिष्टीरसः	कु	३५२
अग्निगर्भावटी	कु	३७०	"	पु	६७१	कामदीपकरसः	उद्	१९
अग्निगुण्डी	कु	३२६	अगुनन्दरसः	स्वर	३१०	कामदेवरसः	कु	१८८
अग्निदीपनीवटी	अन्तःस्थ	२७०	आमवातान्तकरसः	स्वर	३२२	कामदेवस्तम्भनम्	कु	१६४
अग्निप्रभूतवटी	क्ष	७०८	"	अन्तःस्थ	५८६	कामधेनुरसः	कु	४०१
अग्निमान्धवटी	स्वर	६३	आज्ञासिद्धरायानम्	कु	५६	कामलाहलीमकविश्वंजनरसः	कु	१७८
अग्निमुखचूर्णम्	अन्तःस्थ	४४४	इच्छाभेदीरसः	कु	३९५	कामिनीदर्पनरसः	कु	१८८
अग्निरसः	तु	३७९	इच्छाभेदीरसः	तु	४३४	कानेश्वरमोदकः	पु	३०९
"	पु	४१९	उदप्रकुल्लः	ऊष्म	५२८	कानेश्वररसः	अन्तःस्थ	५०९
अग्निसुतरसः	स्वर	३२	उदयभास्कररसः	स्वर	३७६	कानेश्वरवटी	कु	१९९
अग्निसूनुरसः	स्वर	३२	"	अन्तःस्थ	१०४	काण्याम्भोधिरस	पु	२३६
अजीर्णकण्टकरसः	तु	२४	"	अन्तःस्थ	११२	काण्यसागररसः	कु	६२
अञ्जनरसः	पु	७१७	उदयमार्तण्डरस	ऊष्म	५३३	कौस्यपोष्टी	कु	२४९
अतिसारस्तम्भनम्	उद्	१८०	उदयादित्यरसः	अन्तःस्थ	५४	कालभञ्जेश्वररसः	कु	२२१
अनन्तसुन्दरः	कु	१८७	उदरजन्तुविश्वंजनरसः	कु	३३४	कालाभिभैरवरसः	पु	३०९
"	पु	२५	उदरारियोगः	अन्तःस्थ	४४४	कालाभिरुदरसः	स्वर	६३
"	पु	५११	उदरारिरसः	स्वर	३७५	"	कु	२४६
अपूर्वमालिनीवसान्तः	अन्तःस्थ	४३१	"	ऊष्म	३५९	कासकर्तरीरसः	पु	४१९
अपूर्वहेमगर्भः	ऊष्म	६३८	उद्दामरसः	स्वर	३५५	कासकेशरीरसः	कु	२६०
अभिनवकामदेवः	पु	५११	उद्दामाख्यरस	स्वर	३९९	कासप्ररसः	कु	२६२
अभ्रगर्भपोष्टी	ऊष्म	६४४	उन्मादाङ्कुरारसः	स्वर	४०६	कासनाशनरसः	कु	३६२
अमरसुन्दरी	अन्तःस्थ	५०४	उपदंशहरीवटी	ऊष्म	५१२	कासमर्दनीवटी	कु	२६२
अमृतकलानिधिरसः	स्वर	१८५	उपदंशेभकेशरीरसः	स्वर	४१३	कासभासारिरसः	पु	४१९
अमृतपर्यटरीसायनम्	अन्तःस्थ	७३	उमाशाम्भुरसः	पु	२७२	काससंहारभैरवरसः	अन्तःस्थ	५४२
अमृतप्रभरसः	स्वर	१८९	कनकप्रभा	कु	१६	कासहावटी	कु	२६२
अमृताणवः	ऊष्म	२२	"	कु	१९	कासीसवद्धरस	ऊष्म	२९३
अमोघरामबाणरसः	अन्तःस्थ	१८२	कनकसङ्कोचरसः	ऊष्म	२४०	कीटमर्दरस	कु	२७१
अयोरजीयम्	अन्तःस्थ	३०२	कनकसुन्दरी	कु	१५३	"	कु	३२६
अयोरजः प्रभृतिचूर्णम्	पु	८२	कनकामिडुमार	स्वर	३२	कुटजलेहः	कु	३८८
अर्कादिगुटी	ऊष्म	६९	कन्दर्पकोकिलरसः	कु	३२	कुसुमरसः	पु	५६४
अर्द्ध्यामिकरसः	उद्	२०६	कपर्दपोष्टीरसः	कु	२४९	कुल्लवटी	कु	२८३
अर्द्धाज्ञवातारिरसः	कु	५८	कपर्देशरसः	कु	३६	कुष्ठप्ररसः	अन्तःस्थ	१०४
अर्धशान्तिरसः	तु	१६६	कफतुल्लकेतुरसः	कु	४८	कुष्ठालकेश्वरः	तु	१०२

* जुदे जुदे ग्रन्थोंमें एकही रसका जुदे जुदे नामसे ग्रन्थकारोंने सप्रहकियाहै उनमेंसे जिसग्रन्थकापाठ अर्द्धाहै उसको उसीग्रन्थमें आयेहुए नामसे इसग्रन्थमें सप्रहकरके शेषनामोंको ग्रन्थसहित टिप्पणीमें अपना शीर्षकमें नामान्तरसे दारिलकियाहै। इन्हींके जो रस जिमग्रन्थमें दारिलहै उनकी यह सूचीहै जैते 'अगस्तित्वटी' यह स्वरसख्या ८५ अर्थात् अग्निप्रभापादमें दारित्थहै इनीरह अन्वयभी समझना।

कुण्डलनरस	अन्त स्य	२१०	महृणीकपाटस	स्वर	३०७	जलबोध	सुद	१६८
कुण्डावानरस	अन्त स्य	५४४	"	कु	५५१	जलमञ्जरीरस	सुद	५८
कुण्डरचूर्णम्	पु	६	"	कम्प	४९	जलयोगी रस	सुद	१६८
कुण्डरितालेखरस	तु	८६	महृण्यङ्कुशरस	कु	५५४	जलन्यायीरस	सुद	१६८
कुण्डातीदावानलरस	तु	८१	महृण्यङ्गलरस	कु	५२१	जलोदरकुटाररस	स्वर	३९०
कुण्डान्तकपनी	सुद	८६	धृतदौदरसायनम्	तु	२२७	जलोदरहररस	अन्त स्य	४४४
कुण्डान्तधरस	कु	२९६	धोरावोली	स्वर	२६६	जातरुपायसम्	कु	१३४
कुण्डारिरस	कु	२८८	चन्द्रपञ्चामृत	पु	७०	जातीफलरस	कु	५३३
कुण्डेखरस	कु	२९६	चन्द्रपद.	अन्त स्य	५९९	जिह्वाकपाताङ्गुस	कु	५८
कुण्डान्तधरस	अन्त स्य	५९९	चण्डमातुरस.	पु	३७५	जीरकादिवटी	सुद	१८०
कृमिनाशिनी	कु	३२६	चण्डभैरवरस	पु	४३८	जीर्णज्वरहररस	अन्त स्य	४३०
कृमिसुदर	कु	३२६	चण्डद्वररस	सुद	५६	"	कम्प	६२५
कृमिरोगारिरस	कु	३३१	चण्डसङ्गहादककपाटे	कु	५५१	जीर्णज्वरारिरस	सुद	१८९
कृमिचतुरस	कु	३२८	चतुर्गन्धकजीर्णसिन्दूरम् अन्त स्य	१११	चतुदशाङ्गोदम्	अन्त स्य	१८६	
कृमिहररस	कु	१७१	चतुर्दशायसम्	अन्त स्य	१८६	चन्द्रनादिवती	कु	३४६
कसरदिक्वी	कु	७३	चन्द्रनादिवती	कु	३४६	चन्द्रकलारस.	सुद	२०२
कैशोरसुगुञ्ज	तु	३४०	चन्द्रप्रहरस	सुद	६४	चन्द्रप्रभरस	सुद	७४
रोगेन्द्रस	तु	३०२	चन्द्रप्रभरस	सुद	७४	"	पु	६४६
खड्गनारायणरस	स्वर	९७	"	अन्त स्य	५०४	ज्वरदाहणरस	सुद	२०८
राग्न्यायम्	तु	५०	चन्द्रप्रभास	सुद	५५	ज्वरभ्रान्तदिवाकर	अन्त स्य	५३७
राघवगवनी	तु	३७२	"	कम्प	५१०	ज्वरभैरवरस	सुद	१२५
रागनमुत्तरस	कम्प	७९	चन्द्रसोसरस	स्वर	३७८	ज्वरमर्दनरस	सुद	२६६
रागनादिवती	क्ष	७०३	चन्द्रार्करस	सुद	६१	ज्वरसुरारिरस	सुद	२९३
रात्रयर्णपमानरस	पु	३३	चन्द्रोदयरस	सुद	६७	"	अन्त स्य	४३०
रात्रद्रास	स्वर	२८५	चण्डलामङ्गलम्	सुद	८७	ज्वरशूलहररस	अन्त स्य	५४
रात्रदरहररस	तु	३९५	चर्मन्तिकरस	कु	२९६	ज्वरहस्तिहररस	सुद	२२९
रात्रककल्प	कु	४३१	चातुर्थिकनिराण	सुद	२२९	ज्वराङ्गुस	सुद	२२३
रात्रधरसायनम्	पु	१२१	चातुर्थिकमाङ्गुस	कम्प	१३३	"	सुद	२९६
रात्रघ्नादिप्रदानम्	कम्प	४१५	चित्रागारादिरस	अन्त स्य	७४	"	तु	३६५
रात्रधरस	कु	४४४	चित्रविभागहररस	अन्त स्य	७४	"	पु	७१७
रात्रमन्दरस	पु	२४६	चिन्तमनिचतुस	सुद	२८	"	अन्त स्य	५४
रात्रेन्द्रामणिरस	कु	४६६	चिन्तामणिमहाङ्गुस	सुद	२६८	"	अन्त स्य	१७३
रात्रेन्द्राचूर्णरस	कु	४६२	चिन्तामणिरस	सुद	२८७	"	अन्त स्य	६२७
रात्रेन्द्राङ्गुस	कु	२८५	"	सुद	२४८	"	कम्प	१३३
रात्रेन्द्रारिरस	कु	२८५	"	तु	३६५	"	कम्प	१३४
रात्रमङ्गलम्	पु	६०	त्रिभैरहररस	तु	४३४	ज्वरान्तरस	सुद	२९३
रात्रादियोग	कु	४०४	त्रयस	तु	३६०	"	पु	२२७
रात्राधिहररस	स्वर	२५०	त्रयत्रय	तु	१०६	ज्वरारिरस	सुद	२९९
रात्रान्तपुण	कु	४८७	त्रयद्वयी	अन्त स्य	५०६	"	सुद	२९९
रात्रान्तरस	पु	४८६	त्रयसुकार	सुद	१६८	"	अन्त स्य	४४८
रात्रोदरस	कु	४०४						
रात्रेन्द्रा	क्ष	१००						

"	कम्प	१३४	"	तु	१६१	दधिवटी	अन्त	स्व	६१६	
"	कम्प	१२८	"	तु	१६२	दरदव टी	अन्त	स्व	६४०	
ज्वरारण्यदावानल	शुद्ध	२०८	तालज्वराङ्कुशरस	शुद्ध	२४७	दरदादिपुत्रपाक	तु		२९९	
ज्वरेभकेसरीरस	शुद्ध	२०२	तालाङ्कुरस	शुद्ध	२४७	दशसारपित्तान्तकरस	पु		१६९	
ज्वालामुखरस	शुद्ध	२५६	"	तु	१५०	दशाङ्गलोहम्	अन्त	स्व	१८६	
टङ्कणसूत	पु	१	तालादियोग	तु	७५	दासरायनम्	अन्त	स्व	२९४	
टङ्कणादिकटी	स्वर	६२	तिकत्रयरस	क	२६२	"	अन्त	स्व	३०१	
सद्यज्वरगजाङ्कुश	शुद्ध	२०३	तिमिरहरलोहम्	कम्प	२९४	दाहान्तकरस	क		५८	
"	तु	४२७	तीक्ष्णरस	तु	३०२	दिव्यमाणिक्यरस	पु		५६८	
सद्यज्वरारिरस	शुद्ध	२५०	तीक्ष्णादिरस	क	१७८	दिव्यामिकुमाररस	स्वर		४०	
"	शुद्ध	३००	तृष्णारिरस	अन्त	स्व	१२५	"	स्वर	४८	
"	शुद्ध	३०१	त्रिकट्टरसायनम्	क	४४३	दीपनामिकुमाररस	स्वर		२५	
"	शुद्ध	३०२	त्रिकट्टादिलोहम्	तु	३७९	"	स्वर		३९	
"	कम्प	१३८	त्रिगुणरस	अन्त	स्व	५४२	"	स्वर	३०	
ताण्डवरस	क	४६८	त्रिगुणाख्यरस	अन्त-स्व	५४	दुर्लभरस	पु		१२०	
ताण्डवभैरवरस	अन्त	स्व	त्रिदण्डरस	तु	१७९	द्विगन्धजीर्णसिन्दूरम्	अन्त	स्व	११०	
ताण्डवराङ्कुश	शुद्ध	२५९	त्रिधातुगर्भपोष्टली	कम्प	६४४	द्विगुणाख्यरस	तु		१८१	
"	शुद्ध	२६०	त्रिनेत्ररस	क	२६२	द्विमूर्तिरस	स्वर		४४०	
ताप्यादियोग	अन्त	स्व	"	शुद्ध	१६५	धातुपञ्चामृतरस	पु		५६	
ताम्रकल्प	तु	३७	"	तु	१८०	धातुपाकरस	शुद्ध		२५४	
ताम्रगर्भपोष्टली	कम्प	६४४	"	पु	१०६	धूमप्रयोग	पु		३५२	
ताम्रपर्पटी	अन्त	स्व	"	अन्त	स्व	१०४	नयनामृतलोहम्	तु		३५२
"	अन्त	स्व	त्रिपुरभैरवरस	स्वर	१८५	नवज्वरविनाशनरस	पु		२२९	
ताम्रपाक	अन्त	स्व	त्रिफलाकान्तयोग	तु	२२३	नवज्वरहरी वटी	शुद्ध		२१७	
ताम्रयोग	अन्त	स्व	त्रिफलागुग्गुलु	तु	२३५	नवज्वरारण्यकृशातुमेघ	अन्त	स्व	५४	
"	अन्त	स्व	"	अन्त	स्व	६३४	नवज्वरारिरस	शुद्ध		२१७
"	कम्प	५३३	त्रिफलाकैरस	तु	२२६	"	तु		३६६	
ताम्ररसायनम्	तु	५४	त्रिफलालोहम्	क	४७४	"	तु		४२७	
ताम्रेन्द्ररस	अन्त	स्व	"	कम्प	२०२	"	अन्त	स्व	५४	
तारगर्भपोष्टली	कम्प	६४४	त्रिमूर्तिरस	स्वर	४४०	"	अन्त	स्व	४३०	
तारपर्पटी	अन्त	स्व	"	अन्त	स्व	५०४	नवत्नमृगामाङ्गरस	पु		६२७
तारकेश्वररस	तु	७६	त्रिमूर्त्यादिरस	अन्त	स्व	२२	नवत्नराजमृगामाङ्गरस	पु		६१६
"	तु	१४४	त्रियोनिरस	अन्त	स्व	३०८	"	पु		६३८
"	अन्त	स्व	त्रिलोचनरस	तु	१९०	नवत्नाभिकुमाररस	स्वर		४१	
तालकट्टी	तु	७७	त्रिविक्रमरस	अन्त	स्व	४५७	नवलोहामिकुमाररस	स्वर		४६
"	कम्प	९७	त्रिमुन्दररस	शुद्ध	१०६	नवायसमण्डूरम्	स्वर		१२४	
तालकेश्वररस	क	२००	त्रैलोक्यकीर्तिरस	कम्प	११५	नवायसम्	क		३६९	
"	शुद्ध	२५३	त्रैलोक्यकम्बर	अन्त	स्व	१३७	नागभस्मादियोग	पु		६०५
"	पु	१४२	त्रैलोक्यतापहरणरस	अन्त-स्व	५३७	नागवध	स्वर		२८१	
"	अन्त	स्व	त्रैलोक्यरक्षामणि	कम्प	४९	नागाञ्जनी वनी	तु		२८९	
तालगर्भपोष्टली	कम्प	६४४	त्रैलोक्यमुन्दररस	तु	२६७	"	पु		४६८	
तालचन्द्रोदय	शुद्ध	७६	त्र्यम्बकेश्वररस	क	५८	"	अन्त	स्व	३६६	
"	तु	१५९	त्र्युषणादिमण्डूरम्	पु	४८६	नागादियुनी	क		४८४	
"	तु	१६०	त्र्युषणादिलोहम्	कम्प	१९३	नायिकाचूर्णम्	अन्त	स्व	२४९	
"						"	अन्त	स्व	२९०	

नारसिंहरसः	कम्प	३९९	पिताज्वरान्तकरसः	सुद	२८७	बालमृगाङ्गरसः	पु	६१६
नाराचरसः	पु	४४८	पित्तपाण्डुरिरसः	अन्तःस्थ	२७६	"	पु	६१७
नारायणरसः	कु	२५२	पित्तमञ्जरसः	सु	२१०	"	पु	६१८
नारायणज्वराङ्गुक्षः	सुद	२८२	पित्तमुद्गररसः	अन्तःस्थ	३४	"	पु	६१९
"	अन्तःस्थ	६४०	पित्तहिंसकरसः	कु	२११	"	पु	६२०
नित्योदितरसः	अन्तःस्थ	४९५	पिनाकपाणिरसः	अन्तःस्थ	५४	बालरसः	पु	३७२
निशालोहम्	सु	२३६	पिप्पल्यादिचूर्णम्	कम्प	६४२	बालामिडुमाररसः	कम्प	६३१
नीलवण्टरसः	अन्तःस्थ	५०४	पीडारिरसः	पु	१६२	विभीतकलवणम्	पु	४८५
नृपतिवल्लभ.	सु	४६१	पीतहेमगौररसः	कम्प	६४२	बृहज्ज्वरचूडामणिः	सुद	१४०
पञ्चबाणरसः	कम्प	६०३	पीयूषसुन्दररसः	सुद	१४५	बृहत्तालकेश्वररसः	अन्तःस्थ	१३९
पञ्चबन्धरसः	सु	२४	पुनर्नवादिवटी	पु	१९८	बोलबद्धरक्षारिरसः	पु	३८३
पञ्चाननरसः	पु	१८	पुनर्नवामण्डूरम्	कम्प	३८३	बोल्यद्धरसः	पु	३८३
"	पु	२७	पुष्पयन्त्रालेहः	पु	५०१	ब्रह्माक्षरसः	सु	४३२
"	कम्प	१२८	पूष्णचन्द्ररसः	अन्तःस्थ	३१५	भक्षपाकवटी	पु	४३५
पञ्चाननवटी	सु	४४६	पूष्णचन्द्रोदयरसः	सुद	७४	भक्षवारिरसः	पु	१०९
"	पु	१०६	पूष्णन्दुरसः	पु	२०३	भक्षविपाकवटी	अन्तःस्थ	३८६
पद्माभूतम्	सु	३४२	प्रच्छन्नरसः	सु	१८८	भगन्दरकेशरी	अन्तःस्थ	५४
पद्माभूतरसः	सुद	२८	प्रतापामिडुमाररसः	स्वर	४७	भगन्दरमूलरसः	अन्तःस्थ	५४
"	सुद	४६	प्रत्यञ्जनयनामृतम्	सु	३५३	भगन्दरनाशन	अन्तःस्थ	५४
"	सु	४४६	प्रदरिपुररसः	पु	२५०	भगन्दरहररसः	अन्तःस्थ	५४
"	पु	२७	प्रदीपनरसः	अन्तःस्थ	१५९	भद्रकालीरसः	पु	१६५
पद्मार्च्यरसः	कु	१७८	प्रमाकररसः	सु	१८५	भागोत्तरवटी	स्वर	७७
पद्म्यादिवटी	कम्प	१५५	प्रभावती वटी	पु	३९५	भीममण्डूरम्	कु	४७४
पर्पटीरसः	सु	३६६	"	अन्तःस्थ	५८४	भुकोत्तरीया वटी	पु	४००
"	अन्तःस्थ	५४	प्रमदानन्दरसः	स्वर	३०८	भुवनेश्वररसः	कम्प	४००
"	कम्प	६१८	प्रमेहकुठाररसः	सुद	४३	भूतभैरवचूर्णम्	सुद	२४७
पर्पटीसूतः	पु	५०	प्रमेहकेतुररसः	कम्प	६०९	भूतभैरवरसः	सुद	२४७
पलाशादिवटी	कम्प	५७८	प्रमेहप्रमञ्जनरसः	पु	२९८	"	सुद	२४८
पाणिपुटः	कम्प	५५५	प्रमेहवञ्जरसः	पु	२७५	भृताङ्गाररसः	पु	४१९
पाणिलुडारसः	कम्प	२८१	प्रमेहसेतुररसः	पु	२६४	श्युवटी	पु	१११
पाण्डुरोगप्रः	अन्तःस्थ	२७६	"	कम्प	६०९	भैरवानन्दरसः	पु	५०३
पाण्डुहरः	पु	१०६	प्रमेहहरः	पु	२७२	मकरध्वजरसः	सुद	७४
पापाङ्गयोग	पु	१२६	प्रमेहहारिरसः	अन्तःस्थ	३२९	"	सुद	८०
पारदादिगुटिका	स्वर	३९०	प्रलयकालामिरसः	पु	३०९	"	कम्प	५२५
पारदादिचूर्णम्	अन्तःस्थ	१२५	प्रवररसः	पु	२२९	मण्डूरयोगः	कम्प	५४
पारदादियोगः	कु	३३६	प्रवालगर्भगोह्वी	कम्प	६४४	मण्डूरवटकः	सुद	८७
पारदारिद्य.	कम्प	२१९	प्रज्ञामिडुमाररसः	स्वर	३७	"	अन्तःस्थ	२७९
पाल्मरसः	कम्प	५५५	प्रसन्नभैरवरसः	पु	३०९	मण्डूरवटकः	अन्तःस्थ	११६
पावटरसः	कम्प	५५५	प्राणरक्षाविषायी	सुद	४	मण्डूरवटकः	पु	४८६
पिण्डीरसः	कु	५८	प्राणाभिडुमारः	स्वर	३७	मदनकामदेवरसः	कु	१६३
पितामहरसः	कम्प	२५६	प्राभेश्वररसः	पु	२३६	"	कु	१७६
पित्तनालान्तहरसः	पु	४४८	श्रीहारिरसः	अन्तःस्थ	३	"	अन्तःस्थ	११०
पित्तकासान्धरसः	कु	२६२	शक्क्यादिवटी	पु	४१९	मदनकामेश्वररसः	पु	१९६
			शालज्वरान्धुमारसः	सुद	२७२	मदनमोदक	कु	३७

मदनसुन्दर.	अन्त स्थ	४१	मालिनीवसन्त.	अन्त स्थ	४३४	”	पु	२८८
मदात्ययहर.	अन्त स्थ	१६६	माहेश्वरस.	अन्त स्थ	५४	मेहाङ्गारसः	पु	३०६
मधुवातारि रस	पु	१८०	माक्षिकगर्भपोह्ली	ऊष्म	६४४	मेहारिरसः	अन्त स्थ	५३२
मधुक्नेही रसः	अन्त स्थ	४७७	माक्षिकयोगः	अन्त स्थ	३१५	मेहेभकण्ठीरवरसः	पु	३०६
मधुकादिचूर्णम्	पु	२५२	माक्षिकाद्यबलेहः	अन्त स्थ	३१५	मेहेभकेशरीरस	पु	२६१
मन्यानभैरवरसः	तु	३६९	मुञ्जातकफाकः	ऊष्म	३७५	मौरेश्वरः (नि र.)	अन्त स्थ	५४
मन शिलाज्वराह्वस	उद्	२८१	मुस्तादिलोहम्	अन्त स्थ	३१४	यष्टपादिलोहम्	तु	३४९
मदनज्वरारि	अन्त स्थ	२०६	मूनकृष्णान्तकरस.	अन्त स्थ	५९९	यक्ष्महररसः	अन्त स्थ	१५१
मलयभैपोह्ली	ऊष्म	६४४	मूनकृष्णारिरसः	पु	५९७	यक्ष्मान्तकलोहम्	अन्त स्थ	१८६
मालचन्द्रोदयः	पु	५३९	मूर्च्छाहरसूतः	ऊष्म	४८७	यक्ष्मारिलोहम्	अन्त स्थ	३१५
”	पु	५४०	मूर्च्छितरसः	पु	५४५	योगवाही रसः	उद्	१६५
”	पु	५४१	मूलकुठाररसः	स्वर	२५५	रक्षपित्तकुठाररसः	अन्त स्थ	२९
मलज्वराह्वसः	उद्	२६५	मृगराज्ज्वरस.	ऊष्म	३०६	रक्षमाहेश्वररसः	अन्त स्थ	५४
मल्लपर्वटी	पु	९०	मृगाङ्गपोह्लीरस	अन्त स्थ	२७०	रक्षसूतशेखररसः	ऊष्म	५०८
मल्लकमृगाङ्गः	पु	१८३	मृगाङ्गपोह्लीरस	ऊष्म	२८	रक्षारिरसः	पु	३८३
महदमिकुमाररसः	स्वर	४९	मृगाङ्गरस	अन्त स्थ	३३	”	अन्त स्थ	१०४
”	स्वर	५६	मृतज्वरारिज्वराह्वस	तु	८८	रतिबल्लभरसः	पु	२०९
”	अन्त स्थ	६	मृतसञ्जीवनरसः	स्वर	३०३	रत्नगर्भपोह्लीरस.	ऊष्म	२५६
महाकल्कः	तु	३१७	”	तु	१००	”	ऊष्म	६४४
महाकालरसः	क	२१७	मृतसञ्जीवनीरसः	पु	६५१	रत्नगर्भमृगाङ्गरसः	पु	६१५
”	क	२१८	”	अन्त स्थ	७३	रत्नगर्भेश्वररसः	अन्त स्थ	७०
”	क	२१९	”	ऊष्म	६२५	रत्नगिरिरस.	क	९
”	क	२२०	मृतसूतरस.	पु	५९७	रविताण्डवरसः	अन्त स्थ	५४
महाकालामिध्वरसः	क	२३३	मृत्युञ्जयरसः	पु	१८	रविमुन्दररसः	उद्	१०६
महाकालानलरसः	क	२४१	”	पु	३०९	”	उद्	२४९
महागन्धकम्	क	५४७	”	पु	३९९	रसकपवबाणरसः	पु	९
महागन्धसुपेरसः	पु	७१७	”	अन्त स्थ	२८३	रसनेसरीरसः	ऊष्म	४१८
मदामालिनीवसन्तः	अन्त स्थ	४३३	मेघनादरस	ऊष्म	३९९	रसगर्भपोह्लीरसः	ऊष्म	६४४
मदायसचूर्णम्	तु	३७७	”	पु	२७५	रसगुटिका	पु	४१९
मदारजतादिवटी	अन्त स्थ	४०	मेघबन्धरस.	पु	२७५	रसपण्डोशु	अन्त स्थ	३४०
महाराजनुपतिबल्लभः	तु	४६०	मेघोदहरसः	पु	७१५	रसपर्वटी	उद्	८६
महाराजमृगाङ्गरसः	पु	६२४	मेघडकान्तकरसः	पु	२६३	”	अन्त स्थ	१११
महाराजवटी	अन्त स्थ	१५८	मेघराजाङ्गाररसः	पु	२६९	रसपिठिका	अन्त स्थ	१०४
महाराजवीटिका	क	४२२	मेघदल्लवटी	पु	३	रसमत्सकः	स्वर	२३२
महासेतुरस	पु	२८२	मेघद्विदसिंहरसः	पु	२६७	रसभूपतिः	स्वर	४५
महाहैमगर्भपोह्ली	ऊष्म	६३६	मेघनिहन्तनरसः	पु	२७४	”	स्वर	६०
महेश्वररसः	ऊष्म	१७९	मेघभैरवरसः	पु	२७६	”	स्वर	५१
महोदधिरस.	क	४७९	मेघमैदरसः	पु	२७७	रसयोगामिकुमारः	स्वर	२९
”	तु	१३	मेघसुन्दररस	पु	२७८	रसराजरस	उद्	२२९
माणाया वटी	पु	८८	मेघमृगाङ्गरसः	पु	२७९	”	अन्त स्थ	५४
माणिक्यरस	तु	२५४	मेहरसायनम्	पु	२८०	”	अन्त स्थ	१०४
मार्तण्डोदयभास्करः	पु	२३३	मेघसूदनरसः	पु	२८७	”	अन्त स्थ	४३०
मार्तण्डोदयरस	स्वर	३७६	मेहहररस	पु	२८५	”	ऊष्म	५९८

रससिन्दूरम्	सु	५५	राजवटी	कु	४३८	वह्यानलरसः	शन्त स्य	३८७
"	पु	५६	"	सु	४४०	"	शन्त स्य	४५६
रससिन्दूररसः	पु	३९४	राजवीटिका	कु	४२३	वडधामुलरस	शन्त स्य	३९८
"	सु	४१७	राजाग्निकुमाररसः	स्वर	४५	"	शन्त स्य	४०३
रसादियुटिका	शन्त स्य	२१०	रामवागरसः	कम्प	१२३	बन्दिहकुमाररसः	स्वर	११
रसादिवटी	कम्प	५७६	रजादलनरसः	पु	३३	बन्दिचूडिकारसः	शन्त स्य	३७२
"	कम्प	६३०	रोगमुसारिरसः	कु	३९६	बन्दिबीर्यरसः	शन्त स्य	४४४
रसायनभैरव	कम्प	२८७	"	सु	३६९	वमनीरम	स्वर	३७५
रसायनामृतम्	शन्त स्य	२५०	रुक्मिणिकुमाररसः	स्वर	४३	वसन्तकुसुमाकररस	पु	३०७
रसेन्द्रपुटी	कु	४५७	रुवानन्दरसः	स्वर	३१०	वसन्तराजरसः	शन्त स्य	४२८
रसेन्द्रचिन्तामणिः	कु	५८	रुद्रेश्वररसः	सुद्र	८६	वातकेशरीरस	शन्त स्य	६२७
रसेन्द्ररस	कु	२८४	रुक्मीधिलाघरसः	पु	४४८	वातगजसिंहरस	पु	३३
"	सु	३०२	"	शन्त स्य	७६	वातगजाङ्गुलः	शन्त स्य	४५६
"	शन्त स्य	७३	सीलावती वटी	कम्प	३११	"	कम्प	५७६
रसेन्द्रराजरसः	कम्प	२८१	सीलाविलाघरस	कम्प	५६२	"	कम्प	५८०
रसेशः	पु	३८४	सोकनायरस	शन्त स्य	१९८	वातज्वरकुलान्तक	सुद्र	१९८
"	शन्त स्य	१०४	सोकेषरपोडली	शन्त स्य	२७२	वातज्वरगजाङ्गुलाः	सुद्र	२०४
रसेश्वररसः	कम्प	२८१	"	शन्त स्य	२५५	"	कम्प	२६०
राजचण्डेश्वररसः	सुद्र	२०	सोकेषररसः	शन्त स्य	२६०	वातज्वरारिरसः	सुद्र	३०५
"	सुद्र	२१	"	शन्त स्य	२६१	वातापितान्तकरस	पु	१६९
राजतालेष्वररसः	सु	९०	"	शन्त स्य	२७०	वातपितान्तकवटी	शन्त स्य	४५७
"	सु	११३	"	शन्त स्य	२७१	वातभञ्जनरस	कम्प	६२५
राजमृगाङ्गरस	सु	६२५	सोकोत्तररसः	सु	४३६	वातमुद्गररसः	कु	२११
"	पु	६२६	"	सु	४३७	वातमेहान्तकरस	शन्त स्य	३२९
"	पु	६२७	सोहृगर्मपोडली	कम्प	६४४	वातरकान्तकरस	सु	१११
"	पु	६२८	सोहृगुगुल्ल-	सु	२३५	वातरकारिरसः	शन्त स्य	४६०
"	पु	६२९	सोहृगुटिका	सु	२२७	वातवज्ररसः	कु	४५७
"	पु	६३०	सोहृगुपटी	शन्त स्य	७३	वातशार्ङ्गलरस	कु	४५७
"	पु	६३१	सोहृरसायनम्	कम्प	५९६	वातशूलहा रसः	शन्त स्य	१९२
"	पु	६३२	सोहृरसः	पु	१०५	वातसम्मोहरसः	पु	१६५
"	पु	६३३	सोहृवेधसिन्दूरम्	शन्त स्य	३०७	वाताग्निकुमार	स्वर	५२
"	पु	६३४	सोहृसिन्दूरम्	शन्त स्य	३०८	वातारिपाक	स्वर	४४५
"	सु	६३५	सोहृसुन्दरः	सु	५२	वातारिरसः	शन्त स्य	४१३
"	पु	६३६	"	पु	१०७	"	शन्त स्य	४५०
"	पु	६३७	सोहृामृतरस	सु	३४९	"	शन्त स्य	४५६
"	पु	६३८	वह्नवदरस	सु	७६	"	कम्प	३०९
"	सु	६३९	वह्नेन्द्ररसः	सु	५२	"	कम्प	५७६
"	सु	६४०	वज्रपाणिरसः	कु	२२०	वातारिवटी	शन्त स्य	४६०
"	सु	६४१	वज्रमण्डूरम्	पु	४७५	वातारिहररस	शन्त स्य	४८४
"	सु	६४२	वज्ररस	शन्त स्य	३८२	वातारिगणव	शन्त स्य	५४
"	सु	६४३	वज्रादियुटी	शन्त स्य	३६६	वाङ्किकमुष्णरस	शन्त स्य	३३३
"	सु	६४४	वडवाग्निरस	पु	९६	विभगमोशरस	शन्त स्य	२०२
"	सु	६४५	"	शन्त स्य	३९१	विजयपपटी	शन्त स्य	७३
"	सु	६४६	वडवाग्निहोहम्	शन्त स्य	३८१	विजयभैरवरस	पु	४१९

विजयवटी	पु	१३८	वेदविद्या वटी	अन्त स्थ	३२९	शिलाजस्वादिदोहम्	अन्त स्थ	३१५
"	अन्त स्थ	५०४	वैका-तगुणी	अन्त स्थ	६०३	शिलाजतुस	ऊष्म	९९
विजयसिद्धरम्	अन्त स्थ	१११	वैद्यनाथवटी	पु	३७२	शिलासारस	ऊष्म	९४
विजयादिगुड	अन्त स्थ	५०९	वैरोचनरस	अन्त स्थ	१६३	शीघ्रज्वरारिस	तु	३६५
विजयानन्दरस	अन्त स्थ	५०३	"	अन्त स्थ	२७०	शीतकुलान्तक रस	अन्त स्थ	१८०
विजयानलमण्डूरम्	पु	४७९	वैधानररस	अन्त स्थ	६२५	शीतगजकेसररस	ऊष्म	१११
विजयेधररस	तु	७५	व्याधिगजकेसररस	अन्त स्थ	२०५	शीतगजाङ्गुशरस	ऊष्म	१३०
विज्यादिदोहम्	अन्त स्थ	२८०	"	अन्त स्थ	४३०	शीतज्वरनिवारणरस	पु	५४३
विद्याधररस	ऊष्म	३५९	व्याधिहरणरस	पु	४०६	शीतज्वरहररस	चुद्र	२४८
विद्यावनेधररस	अन्त स्थ	५३२	व्योमगुटी	पु	१३८	शीतज्वरान्गुशरस	ऊष्म	१२३
विद्यावाग्निधररस	अन्त स्थ	५३२	व्योपादिदोहम्	तु	१७३	शीतज्वरारिस	चुद्र	२४७
विद्याविनोदरस	ऊष्म	३५९	मणरोपणरस	अन्तस्थ	६५०	"	ऊष्म	१२३
विनोदविद्याधररस	अन्त स्थ	५३०	मणहररस	तु	११८	"	ऊष्म	१२३
विषामूर्तिरस	ऊष्म	३५६	मध्वद्विपकेसररस	अन्त स्थ	५८८	शीतपित्तहररस	ऊष्म	४८८
विश्वधररस	कु	३५	शङ्खगर्भरस	ऊष्म	२८	शीतपित्तारिस	ऊष्म	५७७
"	अन्त स्थ	५४४	"	ऊष्म	२९	शीतमञ्जी रस	स्वर	४४०
"	ऊष्म	२७३	शङ्खगर्भपोष्टलीरस	ऊष्म	२८	"	चुद्र	२४८
विषगर्भपोष्टली	ऊष्म	६४४	शङ्खनाभि रस	ऊष्म	३१	शीतभैरवरस	ऊष्म	११६
विषधररस	अन्त स्थ	५६४	शङ्खापिण्डेन्द्र	ऊष्म	४९	शीतमातङ्गकेसररस	अन्त स्थ	१७७
विषप्रहारी रस	अन्त स्थ	५६४	शङ्खवटी	ऊष्म	३६१	"	अन्त स्थ	१८१
विषमज्वराङ्गुशलोहम्	चुद्र	४१	शङ्खविषोदयरस	चुद्र	२७०	शीतहा रस	ऊष्म	१२८
विषमज्वरारिस	ऊष्म	१२३	शङ्खोदररस	अन्त स्थ	१६२	शीताङ्गुशरस	स्वर	४४०
विषमज्वरेमसिहररस	ऊष्म	१२३	शङ्खादिदोहपर्वटी	अन्त स्थ	२८१	"	चुद्र	२४८
विषरसायनम्	स्वर	१८१	शम्बुकादिमोदक	ऊष्म	६२	"	ऊष्म	१२८
विषासिद्धरम्	ऊष्म	५४०	शम्बुकायसम्	ऊष्म	६२	शीतारिस	चुद्र	२४८
विषुचीविष्वजनरस	पु	६५६	शर्करामण्डूरम्	ऊष्म	५५	"	तु	८८
विषुचीविष्वजनी	कु	४४३	"	ऊष्म	५६	"	अन्त स्थ	५५९
विषुचीवारणरस	स्वर	९२	शर्करालोहम्	ऊष्म	५५	"	ऊष्म	१२३
विस्फोटकारिस	ऊष्म	४८२	शशिवूड	ऊष्म	१२	"	ऊष्म	१२८
वीरचन्द्ररस	अन्त स्थ	५७२	शशिवधररस	अन्त स्थ	१४	"	ऊष्म	५७७
वीरविक्रमरस	अन्त स्थ	११५	शशिलेखा वटी	अन्त स्थ	१०४	शीतारिवटी	ऊष्म	३३०
वीरेश्वररस	अन्त स्थ	५४८	शाङ्खी ज्वराङ्गुश	ऊष्म	१२९	शुक्रपूर्णरस	कु	१२८
वीर्यरोषिणी	पु	३९६	शाम्भवी वटी	पु	३३	शुद्धचिन्तामणिरस	चुद्र	११३
वृद्धवि-तामणिरस	चुद्र	१२८	शिक्षियद्धरस	ऊष्म	१००	शुद्धसूतयोग	ऊष्म	४८३
वृद्धज्वराङ्गुश	चुद्र	२०८	शिक्षिवाडवरस	अ त स्थ	३९९	शुक्लघ्नन्दरस	तु	३५
"	तु	३६५	शिर शूलादिवज्ररस	ऊष्म	८०	शुक्लाङ्गुरस	ऊष्म	५२४
वृद्धतालकेधररस	तु	१४५	शिलागर्भपोष्टली	ऊष्म	६४४	शुद्धेषधररस	ऊष्म	५१५
"	तु	१४६	शिलाव-मोदयरस	ऊष्म	१०३	शुक्लजकेसररस	तु	४३
वृद्धनवायसचूर्णम्	तु	३३०	"	ऊष्म	१०४	"	अन्त स्थ	६४
वृद्धवसन्तमालतीरस	पु	२२१	"	ऊष्म	१०५	"	अन्त स्थ	१०४
वृद्धयङ्गुशविनेत्ररस	तु	१९२	शिलाजतुषुयोग	अन्त स्थ	३१९	शूलद्विपत्री वटी	ऊष्म	११५
वृद्धपाटवीकुडाररस	अन्त स्थ	५८७	शिलाजतुषुणी	ऊष्म	८१	शूलमञ्जी रस	पु	१६३
वृष्यशशी	अन्त स्थ	५९३						

शूलमर्दनरसः	स्वर	७२	”	कम्प	२८४	सिंहनादूलरसः	पु	६४३
शूलहररसः	तु	४५	सन्निपातारिरसः	उद्र	२६६	सुखरेचकरसः	कम्प	३५९
”	कम्प	१७९	सन्निपातोन्मूलनरसः	अन्तःस्थ	५७६	सुखातिरेकरसः	कम्प	४०७
शूलारिरसः	पु	५५६	सप्तामृतवटी	पु	४१९	सुदर्शनज्वराङ्कुशरसः	उद्र	२७१
शोषाभिषेदी	तु	३७७	सप्तोत्तरवटी	पु	४१९	सुदर्शनरसः	कु	५२१
शोफगजकेसरी रसः	कम्प	१८८	समहेममृगाङ्गरसः	कु	२८०	सुधानिधिरसः	कु	७७
शोफाङ्गुशरसः	अन्तःस्थ	५४	समीरपत्रगरसः	अन्तःस्थ	४५०	”	कु	८३
शोफारिरसः	कम्प	१९१	समीरशुलेभहरिरसः	कम्प	१५८	”	कम्प	४८७
श्रवणरोगहररसः	कु	६३	समीरारिरसः	कम्प	३०१	सुधापिण्डरसः	कम्प	३८५
श्रीखण्डवटी	अन्तःस्थ	२०५	सम्मोहलोहम्	तु	१७४	सुरेचनकरसः	तु	४३४
श्रीसूर्यरसः	उद्र	४६	सर्वचूर्णसमलोहम्	कम्प	२९४	सुवर्णमालिनीवसन्तरसः	अन्तःस्थ	४३५
श्लेष्मोदरारण्यकृशाशुमेघः	अन्तःस्थ	५४	सर्वज्वरगजाङ्कुशरसः	उद्र	२०५	सुवर्णमृगाङ्गरसः	पु	६३८
श्वयमुनाशनरसः	कम्प	४८५	सर्वज्वरहररसः	उद्र	२०८	सुवर्णलोकनाथरसः	अन्तःस्थ	२६७
श्वसकासारिरसः	पु	४१९	”	उद्र	२३६	सुवर्णवसन्तमालतीरसः	अन्तःस्थ	४२८
”	अन्तःस्थ	५४	”	उद्र	२३७	सुवर्णवैक्रान्तवद्वरसः	अन्तःस्थ	६०३
”	कम्प	९७	”	उद्र	२३८	सूचिकाभरणरसः	कम्प	४७८
श्वसकुंठाररसः	अन्तःस्थ	५४	”	उद्र	२३९	सूचिकामुखरसः	कम्प	४६५
श्वसचिन्तामणिरसः	कम्प	२१३	सर्वपित्तविनाशकरसः	पु	१७०	सूतभस्म	उद्र	१४७
श्वसजिता रसः	अन्तःस्थ	५४	सर्वरोगघ्नरसः	कम्प	१०२	”	पु	५१४
श्वसभैरवरसः	पु	४५३	सर्वसुन्दररसः	कम्प	३४२	सूतभस्मप्रयोगः	पु	५९८
श्वसहरवटकः	कम्प	२१६	सर्वान्द्रसुन्दररसः	कु	५४७	सूतराजरसः	पु	६५१
श्वसद्वैपादिरसः	अन्तःस्थ	५४	”	तु	७६	सूतराजीयरसः	कम्प	२१६
श्वसतारिरसः	कम्प	२१५	”	पु	३२४	सूतवरः	उद्र	१७९
श्वेतहेमगर्भरसः	कम्प	६३९	”	कम्प	६३४	सूतादिवटी	अन्तःस्थ	५०४
श्वेतारिरसः	कम्प	२२२	सर्वैश्वरपर्पटीरसः	अन्तःस्थ	५३८	सूताभयोगः	पु	३०
”	कम्प	२२७	सर्वैश्वररसः	पु	४३७	सूतिष्कारिरसः	कम्प	५१६
पञ्चाननरसः	अन्तःस्थ	६०७	सहचरवटी	कम्प	२१६	सूतिष्कानिन्दरसः	कु	४६६
सङ्कोचज्वररसः	कम्प	२४४	सामज्वरहररसः	उद्र	२४०	सूर्यप्रभा वटी	ऊपर	५२६
सङ्कोचगोलरसः	उद्र	४८	सार्विभौरसः	कम्प	१८५	सूर्यशेखररसः	कम्प	१३४
”	कम्प	२४२	सिद्धगणेशरसः	कम्प	२७६	सूर्यवर्तारसः	अन्तःस्थ	५४
सङ्कोचरसः	कम्प	२४०	सिद्धचिन्तामणिरसः	उद्र	३३५	”	कम्प	४२८
सञ्जीवनरसः	पु	६५८	सिद्धतालेकेश्वररसः	तु	१०७	सूर्यश्वररसः	स्वर	२२७
सद्योश्वसारिरसः	उद्र	३०४	”	कम्प	११६	सोमलसत्वम्	तु	२३४
सन्धिकारिरसः	अन्तःस्थ	५७६	सिद्धप्राणेश्वररसः	पु	३२५	सौभाग्यचिन्तामणिरसः	कम्प	५६३
सन्निपाततूलानलरसः	अन्तःस्थ	९७६	सिद्धमृत्युञ्जयरसः	पु	६०८	सौरतवटी	कम्प	५६१
सन्निपातभैरवरसः	पु	४६१	सिद्धवटी	स्वर	२६४	स्तम्भनरसः	अन्तःस्थ	१९७
”	कम्प	२८१	सिद्धाग्निकुमाररसः	स्वर	३१	स्पर्शगजसिंहरसः	कम्प	५७६
सन्निपातहररसः	कम्प	२६४	”	स्वर	४२	स्पर्शारिरसः	कम्प	५७८
सन्निपातान्तकरसः	अन्तःस्थ	५७६	”	स्वर	५७	स्फरसुन्दरी	कम्प	२६७
”	कम्प	१४३	सिद्धेश्वररसः	कम्प	३६१	स्वच्छन्दनाथकरसः	अन्तःस्थ	४५०
सन्निपातान्तकरसः	कम्प	२८४	सिद्धोदयरसः	पु	३८३	स्वच्छन्दभैरवरसः	अन्तःस्थ	५४
सन्निपातानलरसः	कम्प	२८१	सिंहनादरसः	स्वर	२८५	”	अन्तःस्थ	४५०
			सिद्धमन्दूरम्	तु	६०	”	अन्तःस्थ	५४२
						”	कम्प	५३८

स्वयमग्निरसः	पु	४४५	हिङ्गवादिचूर्णम्	कम्म	३५	हेममृगाङ्गरसः	पु	६४७
	कम्म	५३३	हीरवेधितारसः	कम्म	६५६	हेमरसः	अन्त स्थ	५९९
स्वर्णगर्भपोटलीरसः	कम्म	६३४	हृदयार्णवरसः	तु	१९१	हेमसुन्दररसः	कु	१९
हरगौरः	पु	२८५	हेमकुञ्जरकेसरी रसः	पु	२६१	हेमान्द्युदम्	कम्म	६७८
हरगौरीरसः	सुद्र	७७	हेमगर्भपोटली	कम्म	६३२	हेमवती वटी	कम्म	३११
"	पु	२७२	हेमगर्भपोटलीरसः	कम्म	६३३	हंसमण्डूरम्	पु	४८६
"	अन्तःस्थ	११०	"	कम्म	६४५	क्षयगुटिका	कु	२६४
"	"	१११	"	कम्म	६४४	क्षयमृगाङ्गरसः	पु	६३६
हर्नेत्ररसः	कम्म	६०६	हेमगर्भलोक्रनायपोटली	अन्तःस्थ	२५८	"	पु	६३८
हरसाशाङ्गरसः	कु	४०१	हेमताररसः	पु	२९८	क्षयारिरसः	कम्म	९४
हृत्प्रियावलेहः	तु	३३०	हेमपर्पटकरसः	कम्म	४३३	क्षारताम्ररसः	सुद्र	३५
हृषीकेश्यादिवटी	कु	४९०	हेमपर्पटी रसः	अन्तःस्थ	७३	क्षारयोगः	अन्तःस्थ	३७८
हलीमन्त्रयोगः	कु	३९२	हेमपिठिकायोगः	कम्म	६७१	क्षुद्रोषकरसः	स्वर	९४
हस्तिपञ्चाननरसः	कु	४२३	हेमवदरसः	पु	२७५	ज्ञानोदया वटी	कम्म	७१३
द्विकान्वासारिरसः	कम्म	११						

Index of the Introduction

	Page		Page
Origin and Growth of Āyurveda	1	Indians and the Greeks ...	14
Āryan's knowledge of medical science	2	Arabians indebted to Indians	14
Relation between the Indians and the Greeks ...	3	for medical science ...	14
Western scholars and Sanskrit texts	3	Selucus Nicator on India ...	14
Beginning of the Vedas ...	4	Roman colony at Madura ...	15
Whitney on medical science ...	4	Universities of Takshasīlā and Nālanda ...	15
Atharvaveda on surgical operation	4	Buddhism and Āyurveda	15
Operation of अस्मरी (strangury stone) ...	5-6	Revision of Suśruta ...	15
Vedic Upāṅgas ...	7	New era dating from 5100 Years	16
Operation during pregnancy ...	7-9	Āyurvedic period between 600 B. C. and 850 A. D. ...	16
Operation when there is मूत्रगर्भ	10-12	Egyptian civilisation an offshoot of the Indian ...	16-17
Surgery known to the people of the Vedic age ...	13	Relations of the two civilisations	18
Ashtādhyāyī of Pānini ...	13	Emigrants of India civilised other races ...	18-19
Sanskrit is the Language of languages ...	14	Greece colonised by the Indians	19

	Page		Page
Greek words derived from Sanskrit	20	Āyurvedic period begins from 600	
Indians influenced the progress of medicine in Egypt and Greece	20	B. C.	30
Vedic literature the oldest record	20	Vedas are eternal	30
Indebtedness of Greeks to the Indians	20	Maxmuller on Vedic period	31
Indians and the Romans	21	Lokmānya Tilak's view	31
Forum the early Latin burial ground	21	Period of the Vedic hymns 6000	
Brahmā the revealer of medicine	21	B. C. according to Tilak	32
Dependence of Greek anatomy on that of India	22	Existence of medical science in the Vedas	32
Kāśi older than Cos.	23	Medical hymns from the Vedas & their translations	33-61
Indians and the Arabians	23	Medical science existed in the Vedic age	61
Arabians borrowed from the Indians	23	Wonderful cures by the Aśvins	62
Hindu medical works translated by the Arabs	23	Preservation of dead bodies	62-63
Hindus were induced to reside at the court of Caliphs	24	Descent of Āyurveda	64-65
Bagdad was the cradle of Arabian literature	24	Rigvedic hymns on Consumption	66-67
Persian translations of original Sanskrit Works	25	Suśruta samhitā	68
Vijaynagar a great seat of learning	25	Date of Suśruta	68-69
Mahomedans visited Vijaynagar	25	Contemporary authors	69-70
Medical science next to Veda	26	Charaka samhitā	71
Wrong interpretations to valuable medical truths	26	Kāśi and Takshaśilā	71
Profession of physicians not regarded honourable	26	Different views about Charaka	71-72
Physicians not invited for the Śrāddha	26	Chronological order regarding different authors on medicine	72
The Āyurvedic period	27	Patanjali's Mahābhāshya	73-75
Renaissance of Sanskrit learning	27	Patanjali lived before Śākyabuddha	76
Search of philosophical truths	28	Patanjali preceptor of Pushyamitra	77
Dharmas and Hirās (Sirās)	28	Mahābhāshya prior to Mahābhārata	78
Professor Harvey and circulation of blood	28	Mahābhāshya and Subandhu	79
Respiration even observed by the Rishis	29	Patanjali and Kālidāsa	80
Comic systole and diastole	29	Patanjali and different authors	81-83
Indians and Europeans from the same Āryan race	30	Bhela Samhitā	84
		Vāgbhata and Mādhava	84
		Bhāvamiśra	85
		Miscellaneous samhitās	85
		Syphilis (Venereal Disease)	85-90
		Small-pox	90-98
		Cholera (Vishūchikā)	98-101
		Purifying water	102
		Properties and uses of अमृत	103
		Conclusion	104

अथ रसयोगसागरस्योपोद्धातीयविषयानुक्रमणिका

विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः
आयुर्वेदमहत्त्वे प्रतीयविदुषामभि- प्रायाः १		अधःशरीरावयवाः ७७		जाम्बीलः १०८	
वेदे शल्यचिकित्साकर्मः २		साधारणाः स्थूलाः शारीरभावाः ७८		उच्छुद्धौ १०८	
भारतीयविद्याया प्रीसदेशगमनम् ८		सूक्ष्माः शारीरभावाः ७९		प्रतिष्ठा १०८	
भारतीयविद्याया रोमदेशगमनम् १३		आर्षसन्दिग्धशारीरविवरणम्... ८०		मांसविवरणम् १०९	
भारतीयविद्याया आरब्धदेशगमनम् १५		देवकोशाः, हिरण्मयः कोशाः... ८०		कीकसाः ११४	
आयुर्वेदस्य मध्यकालः १७		प्रीवाः... .. ८०		ओजोविवरणम् ११४	
आयुर्वेदस्य प्राक्कालः १८		अपरकण्ठः ८१		लोहितम्-पाप्मा-तमः १२१	
आयुर्वेदपरम्परा (सुश्रुतमते) ... २३		मन्याः ८१		प्रीव्याः १२२	
„ (चरकमते) २४		जण्डिकाः ८१		स्कन्ध्याः १२२	
सुश्रुतसंहितायाश्चरकसंहितातो- ज्येष्ठत्वम् २५		शुष्ककण्ठः ८१		निधिविवरणम् १२२	
महाभाष्यप्रणेता पतञ्जलिरेव- चरकप्रणेतेति निर्णयः २६		स्कन्धौ, अंतौ ८१		वैधानरः १२९	
पतञ्जलेः कास्तिर्णयः २७		कफोडौ ८२		सुश्रुतचरकमल्लशारीरकोष्ठकम् ८२	
वेदसंहिताया निर्माणकालनिर्णयः ३१		हस्ती, पादौ ८२		ऊर्ध्वशारीरावयवाः १३२	
वाग्मत्माधवभावमिश्रणां कालः ३२		अनु इ.. ८२		मध्यशारीरावयवाः १४०	
वेदे उपदेशरोगस्य विवेचनम्... ३३		पक्षिः... .. ८४		अन्तःकोष्ठावयवाः १४२	
वेदे विसृचिकाया विवेचनम्... ३४		कोटः ८५		अधःशारीरावयवाः १४६	
वेदे दृष्टादृष्टक्रियाणां विवरणम् ३५		वर्ज्ये ८५		साधारणाः स्थूलाः शारीरभावाः १४८	
दृष्टादृष्टकारणसमुदायेन रोगाणा- मुत्पत्तिसम्भवेऽपि त्रिदोष- जनितत्वे प्राधान्यम् ४१		कुन्तापानि ८५		सूक्ष्माः शारीरभावाः १५३	
त्रिप्रजात्वेन त्रिधातुत्वेन च वेदवाक्यै- त्रिदोषनिर्मुक्तिः संवत्सरेण पृथ- साम्यञ्च ४१-४८		जघनम् ८५		सुश्रुतसन्दिग्धशारीरविवरणम्... १५४	
त्रिदोषाणां पञ्चभूतात्मकत्वम्- तद्वृत्तिद्विध ४८		जघनम् ८५		शिरः १५४	
वेदादायुर्वेदाच्च वातपित्तकफनां जन्मशरीरकारणत्वम्, क्रिया- भेदाद्दोषघातुमलादिनाम्पहण- विवरणञ्च ५०-७२		अनूकविवरणम् ८५		अधिपतिः १५४	
वैदिकशारीरावयवकोष्ठकम् ऊर्ध्वशारीरावयवाः ७३		करुकराणि ९०		मस्तुलुङ्गाः १५४	
मध्यशारीरावयवाः ७४		शृङ्गः ९०		आयुर्वी १५४	
कोष्ठपता बाह्यावयवाः ७५		भासयम् ९१		उत्क्षेपी १५४	
अन्तःकोष्ठावयवाः ७६		श्लशिः... .. ९१		स्थपनी १५४	
		अनूतुजौ ९२		शङ्खौ १५४	
		हृदयविवरणम् ९२		नयनसुदुदः १५४	
		क्लोमविवरणम् ९६		तारका १५५	
		तनिमा (यष्ट्व) १०१		दृष्टिः १५५	
		पाजस्यम् १०१		कनीनकमतः सन्धिः १५५	
		हृदीक्षुम् १०२		नेत्रशिराः १५५	
		बहुवचनान्त्रविवरणम् १०२		अपाङ्गौ १५५	
		पुरीतव् १०५		कणे १५५	
		वनिष्टुः १०६		शूत्राटकानि १५५	
		गवीन्यौ (मतस्ने) १०७		मातृकाः-नीले-मन्ये १५५	
		सिकतावती १०७		विचुरे १५६	
		लोहितवासयः १०७		कृष्ठाटिके १५६	
		उल्बः-जरायुः १०७		अवट्ट... .. १५७	
		कुम्भलम् १०८			

विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः	विषयाः	पृष्ठाङ्काः
अंसफलके ...	१५७	श्लेष्मशुबौ (कुम्भुसौ) ...	१६०	गुल्फौ ...	१६४
कक्षयरे ...	१५८	अनिलायनानि ...	१६१	कूर्ची ...	१६४
मणिवन्धौ ...	१५८	रक्ताशयः ...	१६१	तलहृदये ...	१६४
उरः ...	१५८	आमाशयः ...	१६१	क्षिप्रि ...	१६४
अपलापी ...	१५८	अप्रवहे स्रोतसी ...	१६२	कलाविवरणम् ...	१६४
स्तनमूले ...	१५८	स्थूलान्त्रैकदेशाः—अन्त्रम् (उपान्त्रम्) ...	१६३	स्रोतोविवरणम् ...	१६८
स्तनरोहिता ...	१५८	गुदम् ...	१६३	सुश्रुतीयाः स्त्रियकोष्ठकम्, तद्विवरणञ्च ...	१७०-१७८
शुदास्थिविवरम् ...	१५८	पुरीषबहानि स्रोतांसि ...	१६३		
नाभिः... ..	१५९	पौरुषम् ...	१६३		
ज्योतिःस्थानम् ...	१५९	गर्भशय्या ...	१६३		
बृहत्स्यौ ...	१५९	अपरा ...	१६३		
पार्श्वसन्धी ...	१५९	विशेषे ...	१६३		
त्रिकसन्धि. ...	१५९	लोहिताक्षे ...	१६४		
नितम्बौ ...	१६०	उर्ध्वौ ...	१६४		
कुक्षन्दरे ...	१६०	आण्यौ ...	१६४		
कटीकतरुणे ...	१६०	जातुनी ...	१६४		
अपस्तम्भौ ...	१६०	इन्द्रवस्ती ...	१६४		

अथ संस्कृतोपोद्घातीयशुद्धिपत्रकम् १७९
 Errata ... ७
 रसयोगसागरे प्रमाणतयोपन्यस्तानां
 सुदितप्रन्यानां सङ्केताः ... २०
 रसयोगसागरे प्रमाणतयोपन्यस्तानां
 हस्तलिखितप्रन्यानां सङ्केताः २१
 List of Books referred २३

अथ प्रथमभागरसयोगसागरीयशुद्धिपत्रकम्

पृष्ठे पङ्क्तौ
 २४ (उपोद्घातीय) ७

अशुद्धम्
 प्रजापति (दक्षः)
 |
 इन्द्रः

शुद्धम्
 प्रजापतिः (दक्षः)
 |
 अश्विनौ
 |
 इन्द्रः

१६ (उपो०) २८-२९

कलोमभिर्गर्भाणां चन्द्रमसां
 तर्पणेन ह्योम्नो द्वापारत्वं
 गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितम् ।

... वल्मीकान् ह्योमभिरित्यत्र ह्योम्ना वल्मी-
 कानां तर्पणेन कलोम्नो गोलत्वमन्ताः साव-
 काशत्वं विलक्षणनाल्याकारत्वं सूचितम् ।
 शतपथादीं नानास्थले चन्द्रसादृश्याद्द्रवा-
 धारत्वं गोलत्वं प्रवहद्द्रवत्वञ्च विज्ञापितं
 भवति अतएवाऽस्मिन्मन्त्रे कलोमभिर्गर्भा-
 भिरिति विलक्षणो विन्यासः कृतोऽस्ति ।

१९ (उपो०) ९-१०-११

अत्र तिलमिलनेन कलोमकथितं
 तत्पिपासास्थानमित्यभिप्राय इति
 दीपिकायामाद्यमनेन व्याख्यातम्—
 तच्च भक्षुकोशदर्शनसंस्कारमूलकं
 प्रतिभाति ।

... तिलम्बु शोणितकिट्टप्रभवं दक्षिणाभितं
 यदृत्समीपे कलोमसंज्ञकं भवति तच्च जल-
 वाहिसिरामूलं कथितमत्रैव तृष्णाच्छादनकं
 प्रतिपादितम् । तृष्णा पिपासा तस्यादच्छादनं
 करोतीत्यर्थः” इति दीपिकायामाद्यमन्त्रः

श्लोके	पङ्क्तौ	अङ्गदम्	शुद्धम्
१५२ (उपो.)	१३	प्राणवहेस्रोतसी शा. १११२ Pulmonary arteries	... प्राणवहे द्वे शा. १११२ Two Bronchi
१५२ (उपो.)	२१	सञ्ज्ञावहानि उ. ६११८ सञ्ज्ञावहानि उ. ६११८ } सञ्ज्ञावहनाब्जः उ. ४६१६ }
१५२ (उपो.)	२३	उदकवहेस्रोतसी शा. १११२ Alimentary and Lymphatic Systems	... उदकवहे द्वे शा. १११२ 1 Mouth; Pharynx & Œsophagus 2 Common Duct formed by Junction of the Bile & Hepatic Ducts and Pan- creatic Duct:
७ (र.यो.)	३५	तुषूर्णल्यं षूर्णतुल्यं
७	६३-६४	और १ ३/४ सेर शकर बालकर	... ३ ३/४ सेर शकर और २ पल घृत बालकर
९	१२	कचूर, कान्तलोह कचूर, बेलगिरी, त्रिकटु, पनियां जायफल, लौंग, कपूर, कान्तलोह
१०	४२	र. रा. घु. र. घु.
१०	४४	गन्धक, प्रत्येक	... गन्धक, टकूप प्रत्येक
१५	१०	छानकरके छानकरके
१५	३०	लेकर मसूर लेकर सबके बराबर चित्रकमूल बालकर मसूर
२५	३४-३५	बलनाग, त्रिंशार (ययशार, सञ्जी और मुद्गाग) और	... बलनाग, कान्तलोह और
२९	५४	रखना और शीशीके रखना ऊपरसे २-२ अथवा आधाआधाकर्यं शुद्धबलनाग और हरिताल बालकर शीशीके
२९	६५	पैरोंकासोना पैरोंकी सूजन
३३	५४	पीतल, गन्धक पीतल, हरिताल, गन्धक,
४०	८	संचल, हींग, दालचीनी, हल्दी, सुवर्ण	... संचल, विप, दालचीनी, हल्दी, मानकन्द और सुवर्णमसम
४०	२६	एकदिनसागकेकायसे १-१ दिन साग और खिरनीके प्रवोंसे
४०	४९	गोमूत्रवाँ गोमूत्रवाँ
४४	३६	मधेरा मधेरा
४९	२६	लेना और लेना, इन तीनोंके बराबर त्रिकटु और
५५	२३	काठीमसम काठीमसम
५६	७	लेकर घतूरेके लेकर सबकी बराबर मिरच मिलाकर घतूरेके
६६	२	४२ तोले २४ तोले
६८	१६-१७	उसमें २-२ तोले उसमें १-१ तोला
६८	५०	मिलाकर बहुत मिलाकर धी और मधुके साथ बहुत
७१	३३	साथ खाना साथ मधुमें मिलाकर खाना
७४	४९	गूकर बर्फ

श्लोके	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
८१	५	शुरासानी) गजपीपल ...	शुरासानी) तगरगण्डोला, गजपीपल
८९	३६	लोहभस्म ३ भाग और मुशली ४ भाग	गन्धक ३ भा०, लोहभस्म ४ भा० और मुशली ५ भाग
८९	४०	एकएक ...	सातसात
९०	४३	लोहचूर्ण ३ भाग ...	लोहचूर्ण २ भाग
९४	५०-५१	सुगन्धवाला, जीरा ...	सुगन्धवाला, नागरमोथा, पाठा, जीरा,
१०२	८	चिब्रज्यैरिक ...	चिब्रज्यैदरिक
१०६	१८-१९	रससे और ७ बार संप्रविपसे, ७ बार बन्दाकेरससे और	रससे और
१०६	४४-४५	तीक्ष्णलोह ४ भाग, ताम्रभस्म ५ भाग सोनाभाखी ६ भाग, और शुद्धजमाल- गोटा ७ भाग	तीक्ष्णलोह ४ भाग, दिह्ल ५ भाग, ताम्रभस्म ६ भाग, सोनाभाखी ७ भाग और शुद्धजमालगोटा ८ भाग
१०६	६७	दूबकेरसमें ...	दूबके १ सेररसमें
१०७	६३	पञ्चपुण्यैस्तु ...	पञ्चपुण्यैस्तु
१०८	२७	६ पहर ...	१२ पहर
११४	६३	मुलहठी ...	पीपल
१२२	६२	राव १०० ...	राव ८०
१२३	५	प्रत्येक ३ तोला और शुद्धपारा	प्रत्येक ३ तोला, अग्रक, वन्न, लोह इनकीभस्में १-१ पल और शुद्धपारा
१२३	१०	सूजन, वादी ...	सूजन, घूल, वादी,
१२४	६८	खपरिया प्रत्येक ...	खपरिया, वन्न प्रत्येक
१२४	६९	अङ्कुरोंकेरससे १ पहर ...	अङ्कुरों और पीडुंवारकेरससे १-१ पहर
१२५	१५	हरताल, सबको ...	हरताल, भुनासुहागा सबको
१२५	२९	कोर्प ...	व्योर्प
१२६	१	रोग, ८० वात ...	रोग, मगन्दर, ८० वात
१२८	४१	डालकर ३ दिन ...	डालकर भंगरेकेरससे ३ दिन
१२९	२२	गन्धक, त्रिकट्ट ...	गन्धक, शुद्धविप, त्रिकट्ट
१३२	३६	अनार ...	खेटेअनार
१५५	३९	कचूर ...	खजूर
१७२	१०-११	मिर्च, यवशात ...	मिर्च, पीपल, यवशात
१७४	३५	सोंठ ...	पीपल
१७५	१७-१८	और उसमें ५ पलआक ...	और उसमें ट्टसिट, भिलांवां, चित्रक, दन्ती, निसोत, इन्द्रायण, आक, विचारा, क्षीरकंचुकी, कालीमुशली, क्षतावर, कोयल नील, एरण्डमूल, अमलतास, बला, असन ये प्रत्येक ४ पल लेकर इनका अष्टावशोम काय और ५ पल आक
१८१	३७	१० तोले ...	४० तोले
१८६	५२	५ मा. ...	८ मा.
१८७	३४	१ तो., अथवा ...	१ तो., गन्धक १ तो., अथवा
१९०	३३	वाला अधिक ...	वाला दिनको सोना अधिक

शृङ्ख	पङ्क्तौ	अशुद्धम्	शुद्धम्
१९०	४३	मालकागनी ...	गेंहुला
१९२	५५-५६	निर्गुण्डी, अदररा ...	निर्गुण्डी, चित्रक, अदररा
१९४	२४	केवीज) लोहभस्म ...	केवीज) शतावरी, लोहभस्म
२०५	६९	दोरोज ...	तीनरोज
२१०	४५	पारेकीभस्म ३ तोले ...	पारेकीभस्म १२ तोले
२१८	५१	गन्धक, रसमाणिक्य ...	गन्धक, ताम्रभस्म, रसमाणिक्य
२१९	४८	(मकोय) इत ...	(मकोय) कोयल, इन
२२३	१७	जीरा ये सब ...	जीरा, चित्रक येसब
२२३	२३	निर्गुण्डी, बज्रवली ...	निर्गुण्डी, अक्षता, बज्रवली
२२४	११	काष्ठी, सोंठ ...	काष्ठी, दुरदुर, सोंठ
२३४	१४	यवक्षार ३ पल ...	यवक्षार २ पल
२३४	६३	कसौजी, चित्रक ...	कसौजी, धतूरा, हंसराज, चित्रक
२४१	२६-२७	समुद्रशोष ये प्रत्येक २ तोलेलेकर	येप्रत्येक २ तोले, समुद्रशोष १ तोलालेकर
२४५	६५	चादीभस्म ..	चादी और सुवर्णभस्म
२५२	३१	बनाकरगुल्मीको ...	बनाकर सुवर्णकेसाथ गुल्मीको
२५२	३३-३४	इन्द्रजव येसब ...	इन्द्रजव, देवदार ये सब
२५४	३	रजतभस्म ...	सुवर्णभस्म
२५४	५२	साथचाटनेसे ...	साथ १ वर्षतकचाटनेसे
२६४	२०-२१	काचभस्म येसब ...	काचभस्म, नागभस्म ये सब
२६४	३८	जायफल और ..	जायफल, धतूरेकेवीज और
२६४	५२	श्वेतकनेर और चित्रककेरसोंसे	श्वेतकनेर, चित्रक और कालीमुशलीकेरसोंसे
२६५	५५	जायफल ...	कायफल
२६५	६६	दन्ती ...	भाग
२७५	४२-४३	समुद्रशोष, जटामांसी ...	समुद्रशोष, मुशली, जटामांसी
२७६	३१	गजपीपल, सेंधानमक, समुद्रशोष	गजपीपल, समुद्रशोष
२७७	५५-५६	सबवर्णसेदूनी ...	वन्न और लोहसे दूनी
२७७	६५	अष्टम ...	सप्तम
२७८	३०	दालचीनी, खुरासानाी	दालचीनी, मूर्वा, खुरासानाी
२७८	३१	मालकागनी, शुद्धकुचिला	मालकागनी, केशर, शुद्धकुचिला
२७८	३४	१० तोले ...	१० पल
२७९	३७	कच्चाकेवीज, येसब ..	कच्चाकेवीज, जटामांसी, अकलकरा ये सब
२८३	१८	शुद्धबछ्माग १ भाग ...	शुद्धबछ्माग ११ भाग
२८४	३५	चित्रक इतप्रत्येकके	चित्रक, फुटकी इनप्रत्येकके
२८६	२५	कर नीबूकेरसकी सात ...	कर सहिजनकीचक्रीछाल, अमरबेल और नीबूकेरसकीसातसात
२९८	६०	ताम्रभस्म, शङ्खभस्म ...	ताम्र, अत्रक और शङ्खभस्म
३०६	४४	कीजड़, दारहल्दी	कीजड़, हल्दी, दारहल्दी,
३०६	४५-४६	चक्रवर्णकेवीज, अगस्त्य ...	चक्रवर्णकेवीज, कटिवालीचौलाईकीजड़, अगस्त्य
३०६	६७	चित्रक, केवाच ...	चित्रक, गोरखमुण्डी, केवाच
३०९	४३	मधु २० पल ...	मधु १० पल
३१०	४३-४४	मैनसिल १॥।। तो.	मैनसिल ९ माथे

श्लोके	पङ्क्ति	अशुद्धम्	शुद्धम्
३१३	४७	तोलाकेकादिमें	तोलासोंठके कादिमें
३१९	१५-१६	नीम, आक और शूकरकादूध इन प्रत्येकसे १-१ रोज़ मर्दनकर	और नीमकेद्वोंसे १-१, तथा आकऔर शूकरकेदूधसे ५-५ भावनाएं देकर
३२१	३१	बीज ये सब	बीज अन्नकभस्म ये सब
३२६	३	चण्य, अदरख	चण्य, नागकेशर, पीपल, अदरख
३२६	५५	स्वर्णभस्म ३ तोले	शुद्धबछनाग और स्वर्णभस्म ३-३ तोले
३२८	२५	शुण्ठी	मुण्ठी
३२८	२६	धस्तु	धसु
३२८	४७	तगर	अगर
३२९	२७-२८-२९	शुद्धगन्धक ३ भा., भुनासुहागा ४ भा., यवक्षार ५ भा.	ताम्रभस्म ३ भा. शुद्धगन्धक ४ भा. भुनासुहागा ५ भा. यवक्षार ६ भा.
३५६	३२	५ तोले	५ पल
३५६	६०	निसोत ३ भाग	निसोत २ भाग
३८०	१४	पिप्पलीकी १-२	पिप्पली और नीबूके स्वरसकी १-१
३८१	३९	कान्तलोहभस्म	ताम्रभस्म
३८२	२६	सैन्धव	पांचौनमक
३८२	३१-३२	विडङ्ग १-१ भाग	विडङ्ग और चित्रक १-१ भाग
३९०	६४	मरसाकेपते, दहीकापानी इनप्रत्येकके...	मरसाकेपते इनप्रत्येकके
३९४	१८-१९	निकालकर सेंसर, फुट, अतीस, केलेकी जड़ इनप्रत्येकके स्वरसोंसे ७-७ पुट	निकालकर इसमें जीरा, सेमलकीछाल और इठ प्रत्येक समभाग मिलावे फिर इस समस्तकी बराबर अतीसकाचूर्ण मिलाकर केले-केरसकी ७ भावनाएं
३९४	५०	१-१ गोली दहीके	१-१ गोली बिल्वपत्रस्वरस अथवा दहीके
३९६	११	भांगकेरससे	भांगके रससे
३९७	६८	शिगरिफ, बछनाग	शिगरिफ, कसीस, बछनाग
४००	२०	मोती २ तोला, शुद्धगन्धक... ..	मोती २ तोले, लोह, अन्नक और शङ्खभस्म भुनासुहागा १-१ तोला, शुद्धगन्धक
४०९	४३	होनेपर लोहेकी	होनेपर १६ वामाग शुद्धबछनाग मिलाकर लोहेकी
४२६	५०	पलास	कटहर
४२८	७	केकर नागर	केकर शुद्धकपूरकेजल, नागर
४४३	६७	२६ तोला	२९ तोला
४४४	२९	१-१ तो.	३-३ तो.
४४४	५२	भिलावां, वाङ्गची	भिलावां, त्रिफला, वाङ्गची
४४६	१४	दन्तीमूल ६ भाग	दन्तीमूल और अकलकरा ३-३ भाग
४४९	३२	शुद्धगन्धक १ भाग	शुद्धगन्धक २ भाग
४५५	१५-१६	कौडी, तुल्य	कौडी, सुरमा, तुल्य
४७४	२२	इध, मधु	इध, घृत, मधु
४८४	५१	१ प्रहर	३ प्रहर
४८९	६६	१-१ भाग	२-२ भाग
४९०	३३	गन्धक २ पल	गन्धक और त्रिफला २-२ पल
४९०	६७	नमक, हींग, नीम	नमक, नीम

पृष्ठे	पङ्क्ति	अशुद्धम् .	शुद्धम्
५९५	४५	अपामार्गं	चित्रक
५९५	६५	भट्टकट्टयाका	तीर्णोभट्टकट्टयाजोका
६०५	४०	पारदमस्य	ताम्रमस्य
६०७	३४	गन्धक, ताम्र	गन्धक, पारा, ताम्र
६१४	४४	सेलेनेसे	से मधुकेसाय लेनेसे
६२३	४	ताम्र और सुवर्णमस्य	ताम्र, सुवर्ण और रजतमस्य
६२३	३४	पारा, वह्न	पारा, लोह, वह्न
६२४	६१	५ भाग	६ भाग
६२५	६५-६६	पारेसे आधी वैकान्तमस्य मिटाकर सहिजनकीजड़ और	पारेसे चतुर्धा वैकान्तमस्य मिटाकर सहिजनकी जड़कीछालके रवरससे ७, और
६२९	२८	स्वर्णको	ताम्रको
६२९	२९	स्वर्णबीजका	ताम्रबीजका
६३३	२१-२२-२३	वाराहीकन्द ये सब समभागलेकर चारीकचूर्णकर सहिजनकीजड़कीछाल भंगरा इनके रसोंसे १-१ भावनादेकर	वाराहीकन्द, त्रिफला, सहिजन कीजड़कीछाल ये सब समभाग लेकर चारी कचूर्णकर भंगरेके रससे षोडश
६३४	५३	पारेकीघटावर	पारेसेदूनी
६३५	४८	१-१ सेर देकर	१-१ सेर और गोमूत्र ८ सेर देकर
६४०	३	शकरकेसाय	शर और त्रिफलाकेसाय
६५९	२७	धीकुंवार, त्रिफला	धीकुंवार; भंगरा, त्रिफला
६६२	५६	पारेकी घटावर	पारेसे चतुर्धा
६६३	४०	संधानमक, खपरिया (अभावमें जस्तामस्य) कसीस	संधानमक, कसीस
६६९	१२	निसे... ..	निशा
६७१	११	माशालेकर	माशा मधुसे लेकर
६८६	५१	सोठ, मरिच, पारा, गन्धक... ..	सोठ ३ भाग, मरिच, पारा और गन्धक २-२ भाग
६८७	१०	६-६ रत्नी गरमपानी	६-६ रत्नी क्षारोंकेसाथ अथवा गरमपानी
६९०	८-९-१०-११	भंगरेकेरघची २-३ भावनाएँ देकर स्याहघकेद तुलसी, अश्वकमस्य आंवला देप्रत्येक १ तोला मिटाकर घाफेद पुनर्नाथके रघसे १-२ भावनाएँ देकर इमलीकेबीजघटावर गोलिमें बनाकररराओके । इनमेंसे १-१ गोली छाप	भंगरा, चिजोरा, हल्दी, अदरक, प्रवारिणी, दोनोतुलसी, नागरमोथा, आंवले इनके घटावोंसे १-१ भावना देकर इमलीके बीजघटावर गोलियेबनाकर रराओके । इनमेंसे १-१ गोली घफेद पुनर्नाथकेरम, छाप
६९१	३२	भंगरेकेरघसे	अदरकके रघसे
६९२	१४	भांगरेके	भांगके
६९६	२	पनोंसे	दुनोंसे

द्विविधसूचीरहस्य

इसप्रन्थमें लगभग सवाचारद्वार रसप्रयोगोंका सङ्ग्रहदोनेसे रसयोगसागर यह अन्वर्थ नामहै । इतने अथाह समुद्रमेंसे अभीष्ट योगको निकालना साधारण बात नहींहै । इसलिये इसकी रोगानुसारिणी सूची बनाकर इसके अन्तमें लगाई गईहै। सूचीमें प्रथम रोगोंकेनाम दियेगयेहैं जैसे ज्वर इत्यादि। रसोंकीसङ्ख्याकेबीचमें स्वर, ऊ, बुद्ध, तु, पु, अन्त स्याः, ऊम् (ऊम्णा) ऐसे सङ्केत दियेगयेहैं । यद्यपि ये सङ्केत विद्वानोंसे परिचितरहतेहैं परन्तु सर्वसाधारणकेलिये नीचे स्पष्टता की जातीहै जैसे स्वरः इससङ्केतसे अ आ इ, ई, उ ऊ, ऋ ऌ लृ. ए. ऐ ओ. औ. अं. अः इन १६ अक्षरोंका बोध होताहै । ऊ से क. ख ग. घ ङ. ५ । बुद्ध से च छ. ज झ. ङ ट ठ. ड. ढ ण. १० । तुसे त. थ. द. ध. न ५ । पुसे प. फ. ब. भ. म ५ । अन्तःस्याः से य. र. ल. व. ४ । ऊम्णाणः से श. प. स. ह. क्ष. ञ. ६ इनका बोधहोताहै । व्याकरणके अनुसार यद्यपि क्ष और ञ ऊम्णमें नहीं आतेहैं । संयुक्ताक्षरदोनेकेकारण ङ का चवर्गमें समावेश होना अत्यावश्यक था क्योंकि ज और भ के संयोगसे यह बनाहुआहै और वे दोनोंही चवर्गमें आजातेहैं परन्तु क और सके संयोगसे क्ष बनाहुआहै इसमें वितण्डाका सम्भवहै कि इसे चवर्गमें रक्खाजाय वा ऊम्णमें ? । वर्णमालिकाको प्रधान रखकर ऊम्णके अन्त्यमें रक्खागयाहै । अगस्त्यसंहिता और मुण्डमाला प्रवृत्ति तन्त्रोंमें बाह्यान्तर्भावकान्यासादिकोंमें ऐषादी क्रम रक्खागयाहै । वर्णमालिकामें तो क्ष को मेरुस्थानाऽऽपन्न रक्खाजाताहै यहवात तान्त्रिकसिद्धान्तमें प्रसिद्धहै । इनविचारोंसे क्ष को ऊम्णके अन्त्यमें रक्खागया तब उसके आगे ङ कोभी रखदियाहै इसलिये ऊम्णसे श. प. स. ह. ङ ह इन ६ अक्षरोंका विन्यास कियाहुआहै । केवल नामसेही किसी रसका पाठ देखा हो तो समस्त प्रन्थमें अकारादिक्रमसे रसोंका विन्यास कियाहुआहै उसे निकालकर देखलेवें । यदि किसी रोगकेलिये कोई रस देखा हो तो सूचीमें दियेहुए ज्वरादिरोगोंके नीचेके अङ्कोंको निकालकर देखलेवें । इसप्रन्थमें सौकरार्थ स्वर. ऊ. बुद्ध तु पु. अन्त स्थ और ऊम्ण ऐसे सङ्ख्याके ७ विभाग किये हुएहैं जैसे स्वरमें १ अगदेश्वर, ऊम् १ कङ्कालखेचरीवटी, बुद्धमें १ चक्रघर, तु में १ तक्रमभूर, पुमें १ पक्षिचालहर, अन्तःस्थमें १ यकृत्प्लीहाहारिलोह, ऊम्णमें १ धकटाक्षविह्वटी, इसतरह सातसङ्ख्याओंके सङ्केतोंको समझ केना । बस इसतरह यह प्रन्थ समाप्तहोताहै । इसके बाद सूचीमें अ व्या. यह सङ्केत आताहै । इसमें अगस्त्य और व्याससम्प्रदायको लक्षितकियाहै यह आठवीं सङ्ख्या है । इसकेबाद परिशिष्टभाग रक्खागयाहै उसका सङ्केत परि० ऐसा रक्खाहै । इसमें दक्षिणेश्वरप्रसिद्ध हृण्णभूषालीयप्रथमि प्रन्थोंके योगहैं और सङ्ग्रहकरनेकेसमय कईकारणोंसे छूटेहुए

योगोंका सङ्ग्रहहै इतकीभी सङ्ख्या ज़रूरीहै इसतरह ९ विभागोंमें इसकी सूची समाप्तहोतीहै । ऐसी सूची दो हैं एक रोगानुसारिणी दूसरी अधिकारानुसारिणी । रोगानुसारिणीसूचीमें योगोष्ण प्रधान २ सभीरोगोंका सङ्ग्रहहै इसलिये इसका आकार बहुतबड़ा होगयाहै । केवल ज्वरमें २४००के लगभग रस आगयेहैं । इतनेमेंसे साधारण आदमीका काम नहींहै जो कि अपने अभीष्टयोगको निकाललेवे इसलिये अधिकारपरत्वेन दूसरी सूची बनाई गईहै इसमें १योग एवहीरोगमें आयाहै । तोभी ज्वराधिकारमें लगभग ७०० रस आयेहैं इन्हें देखकर यह कल्पना स्वाभाविक होतीहै कि एकरोगमें इतने योगोंकी भरमार क्योंहुई ? पर इसका रहस्य ऐसाहै कि आयुर्वेदमें ज्वरको बहुतही प्रधानता दीगईहै इसके पेटमें बहुतसेरोग आजातेहैं इसीलिये “देहेन्द्रियमनस्तापी सर्वरोगप्रजो बली । ज्वरः प्रधानो रोगाणामुक्तो भगवता पुरा ॥” ऐसाकहागयाहै और चरकने तो रोगसामान्यवा नाम ज्वर रक्खाहै इसलिये ज्वरके बहुतसेयोग अन्यव्याधियोंमें कामकरतेहैं जैसा कि रोगानुसारिणी सूचीमें दियागयाहै । अन्यरोगोंमें इतनी भरती नहींहै बाजू २ रोगोंमेंतो एकएकहीयोग आयेहुएहैं जैसे कि छुलसन्निपातप्रभृतिमें । कदाचित् वह योग किसीजगह काम न देवे तो ऐसा न समझना कि इसकेलिये अब दुनियामें कोईयोगही नहींहै ऐसी जगहमें जितने सन्निपातकेयोगहैं वे प्रायः सभी कामदेतेहैं । बहुत जगह तो जिसरोगका विशेषपरिचय नहींहै पर उसमें ज्वरहै तो उसमें साधारण और विशेषज्वररूप सभी औषधें काम देतीहैं जैसे कि इनफ्लूएन्झा प्रभृतिमें अथवा प्लेगमें हुआथा । इनरोगोंमें अन्य पैथीवाले रास्पाही खोजते रहगये पर आयुर्वेदोपासक दोषोंकी प्रधानताको देखकर सन्निपातमेव प्रभृति योगोंको देकर रोगियोंके आशावांछाप्राप्त्ये इतीलिये चरकने कहाहै कि “विकारनामाऽऽखालो न जिहीयत्कदाचन । न हि सर्वविकाराणां नामतोऽस्ति ध्रुवा स्थिति ॥” अर्थात् अधर्मकीउत्कटतासे जब कि जनपदबुद्धिसकारक सङ्ग्रामकव्याधियां निकलपड़तीहै उनका नामविशेष मादूम न होनेसे वैय लज्जित न होकर दोषोंकी उत्कटताकी तरफ ध्यान देकर चिकित्सा करे उसमें वैयको यश मिलताहै । ऐसी ऐसी सब व्याधियोंके नाम शास्त्रमें नहीं आयाकरतेहैं । एकविशेषघात ध्यानमें रखनेलायक यह है कि ज्वरप्रयोग प्रायः ज्वरोंमें और ज्वरजनित उपद्रवोंमें कामदियाकरतेहैं इसलिये प्रन्थकारोंने ज्वरके लिये बहुतही योगनिर्माणकियेहैं । उन्हें औचित्यदेखकर कास, श्वास, मूर्च्छा, तन्द्रा, धातुन्याधि प्रभृतिमें निगूढकरना उचितहै केवल अधिकारको पकड़कर बैठे रहना उचित नहींहै । इसीतरह रसायनयोगोंको प्रमेह, शोष, राज-

यश्म, जीर्णज्वर और कृशताप्रभृतिमें प्रयुक्तकरना उचितहै । इस सूत्रसे जिनरोगोंमें अस्वयोग आयेहै वहापर ध्वजाना न चाहिये, बुद्धिसे काम लियाजायगा तो सैकड़ोंयोग तैयार होजायगे । जिसतरह सागर (समुद्र) रत्नोंका आकर होनेपरभी सबको रत्नोंकी पोछी नहीं देदेताहै किन्तु वे रत्न गोते लगानेवालोंके ही हाथलगतेहैं इसीतरह यह (रसयोगसागर) ज्ञाताऽ-ज्ञातसमस्तरोगोंको दूरकरनेवाले योगोंका सागरहै तथापि जैसा आयुर्वेदान्यासीकेलिये उपयोगीहै वैसा अनन्यासीकेलिये नहींहै वैसे तो समुद्रका उपयोग लवणकेलिये मनुष्य-

पशुक्षि सर्वसाधारणहै पर जिस सौष्टवसे उसके ज्ञाता काम, लेतेहै वैसा अज्ञ नहीं । इस प्रत्यवेरहेतेहुए किसीभी योगके बनानेके नामसे कोई किसीको ठग नहींकराहै इतना उपयोग तो सर्वसाधारणकेलिये अनिवार्यहै । इसलिये श्रीमन्तोंके धर्मो भी इसरो स्थानदेना अत्यावश्यकहै । इसकेबाद रोगानुसारिणी और अधिकारानुसारिणी सूची क्रमसे दीहुईहै उन्हें देखो । इनसूचियोंमें स्थानरतादि रोगोंके विचित्रनाम आतेहै वे दक्षिणदेशप्रसिद्धरोगहैं उनके लक्षण माघवनिदानादि-ग्रन्थोंमें नहींहै इसलिये वे यहाँ देदियेजातेहैं यथा—

दक्षिणदेशप्रसिद्धा रोगविशेषाः

(वसवराजीयतोऽवगन्तव्याः)



स्थानवातलक्षणम्

महावातो भवेद्देहे दिवारात्रौ च शूलनम् ।
सदानिरसनं स्वेदः स्थानवातस्य लक्षणम् ॥

शीतवातलक्षणम्

देहेऽतिशीतता मूर्च्छा नेत्रघ्नमणमेव च ।
कण्ठशूलं शिरःशूलं शीतवातस्य लक्षणम् ॥

मधुवातलक्षणम्

ज्वरः पाण्डुश्च हिक्रा च नासिकाऽस्रच्छ्रुतिस्तथा ।
देहकण्डूः शिरःकण्डूः कफः स्थान्मधुवातके ॥

गुल्फवातलक्षणम्

शरीरं पाण्डुवर्णञ्च कटिदेशे च तापनम् ।
शिरःशूलं नेत्रशूलं गुल्फशूलं विद्राहिक्रा ॥
तन्निद्रा नश्यते रात्रौ गुल्फवातस्य लक्षणम् ॥

शूलवातलक्षणम्

इन्द्रियं पुंस्त्ववर्ज्यञ्च विदाहञ्च विकारिताम् ।
अन्तर्वायुः प्रकुर्यात् शूलवातस्य लक्षणम् ॥

क्षीणवातलक्षणम्

क्षीणे च वाते शिरसोव्यथा च
नासानद्रे दुःखितमङ्गशूलम् ।
दिवा च रात्रौ च विनष्टनिद्रः
कपालनेत्रे च विवृद्धशूलम् ॥

स्त्राशुकवातलक्षणम्

देहस्य स्फुटनं पुंसामङ्गवैकल्पपीडनम् ।
देहशोफो नेत्रशूलं स्त्रायुवातस्य लक्षणम् ॥

शृङ्खलावातलक्षणम्

पाण्डुता शुष्कता वेहे निद्रानाशः शिरोव्यथा ।
घान्ति हिक्रा च विस्फोटः शृङ्खलावातलक्षणम् ॥

विलोमवातलक्षणम्

तन्द्राधिस्यमतिश्वासः पाण्डुता नेत्रशूलनम् ।
स्वेदो हिक्राऽतिरान्तिश्च विलोमवातलक्षणम् ॥

दधिवातलक्षणम्

अक्षिशूलं कर्णशूलं नासाशूलं शिरोघ्नम् ।
हिक्राऽतिसारकं चैव दधिवातस्य लक्षणम् ॥

मन्दवातलक्षणम्

पाण्डुता च घ्नमो मूर्च्छा स्वेदः कण्ठे परिघ्नमः ।
घान्तिरामधिकारश्च मन्दवातस्य लक्षणम् ॥

रक्तवातलक्षणम्

रक्तवान्तिश्च हिक्रा च मूर्च्छा दाहश्च कम्पनम् ।
देहकान्तिहरः स्वेदो रक्तवातस्य लक्षणम् ॥

सुप्तवातलक्षणम्

भयं बीभत्सता रौटं शोथः कर्णात्तरुग्भवेत् ।
मूर्च्छाकम्पघ्नमस्वेदाः सुप्तवातं विनिर्दिशेत् ॥

भोगवातलक्षणम्

विधूमञ्च विदाहः स्यादम्लोद्धारः प्ररुम्पनम् ।
अङ्गवैकल्पकोपी च विस्पष्टं वातकोपनम् ॥
नेत्रशूलं शिरःशूलं भोगवातस्य लक्षणम् ॥

किक्किसावातलक्षणम्

कटिप्रदेशशूलञ्च महाशूलाऽवरोधनम् ।
पादे पीडा शिरोघ्राणे किक्किसावातलक्षणम् ॥

क्रोधपित्तलक्षणम्

सदा च तामसाचारो दुर्भाषा तीव्रताशुणाः ।
शिरोभ्रमणदोषश्च क्रोधपित्तं विनिर्दिशेत् ॥

मधुपित्तलक्षणम्

अद्यच्च मधुरोद्रेकः उपःकाले च कोपिता ।
शिरोभ्रमणमाधुर्यं छर्द्दरोम्णाञ्च हर्षणम् ॥

चर्मपित्तलक्षणम्

जिह्वाङ्गे चर्मशीर्णत्वं करपादौष्ठकादिके ।
शीघ्रकण्ठयलं हिक्का चर्मपित्तस्य दोषजाः ॥

मूर्च्छापित्तलक्षणम्

अद्यच्च मधुरं चक्त्रं प्रसेको भ्रममूर्च्छनम् ।
छर्द्दरोमाञ्चकश्चैव मूर्च्छापित्तस्य लक्षणम् ॥
कुसुमपित्तलक्षणम्

आतापो नासिकारक्तमतितुष्णा प्रपीडनम् ।
कच्चिच्छोणितवाहश्च कुसुमं शीर्षसम्भवम् ॥

भ्रंशपित्तलक्षणम्

अपभ्रंशो मतिस्तम्भः सदा चिन्तानिरीक्षणम् ।
सम्भाषणमतिक्रोधाद् भ्रंशपित्तस्य लक्षणम् ॥

सुखसन्निपातलक्षणम्

तरुणज्वरमध्ये तु युवतीसङ्गमो यदा ।
तत्क्षणाद्गारुणाद्दोषाद्गन्धकल्पकम्पनम् ॥
घक्षोऽन्तरे च सन्तापः प्रलापस्तापविभ्रमौ ।
पाणिपादतले शीते दोषस्त्रीसङ्गमे स्मृतः ॥

अथ मानविवरणे सुश्रुतः

“पलकुडवादीनामतो मानं तु व्याख्यास्यामः ।
त्र द्वादश धान्यमाया मध्यमाः सुवर्णमापकाः, ते
पोडश सुवर्णं, अथवा मध्यमनिष्पावा एकोनविं-
शतिधरणं, तान्यर्द्धतृतीयानि कर्पः, ततश्चोद्धुं चतुर्गु-
णमभिवर्धयन्तः पलकुडवप्रस्थादकद्रोणा इत्यभिनि-
ष्पद्यन्ते, तुला पलशतं, तानि विंशतिभारः । शुष्काणा
मिदं मानं, आर्द्रद्रव्याणाञ्च द्विगुणमिति ॥ चि.३।१।७”

अथ शार्ङ्गधरोक्तं मागधीयं मानम्

त्रसरेणुवुधेः प्रोक्तस्त्रिंशता परमाणुभिः ।
त्रसरेणुस्तु पर्यायनाम्ना वंशी निगद्यते ॥
जालान्तरगते भानौ यत्सूर्क्ष्मं दृश्यते रजः ।
तस्य त्रिंशत्तमो भागः परमाणुः स कथ्यते ॥
जालान्तरगतैः सूर्यकरैर्वंशी विडोन्मयते ।
पङ्क्तुशीभिर्मरीचिः स्यात्ताभिः पङ्क्तुस्तु राजिका ॥
तिष्ठती राजिकाभिश्च सर्पपः प्रोच्यते बुधेः ।
यवोऽष्टसर्पपैः प्रोक्तो शुद्धा स्यात्तच्चतुष्टयम् ॥
पङ्क्तुस्तु रक्तिकाभिः स्यान्मापको हेमधान्यकौ ।
मापैश्चतुर्भिः शाणः स्याद्वरणः स निगद्यते ॥
दङ्कः स एव कथितस्तद्वयं कोल उच्यते ।
क्षुद्रको वटकश्चैव द्रवणः स निगद्यते ॥
कोलद्वयञ्च कर्पः स्यात्स प्रोक्तः पाणिमानिका ।
अक्षं पिबुः पाणितल किञ्चित्पाणिश्च तिन्दुकम् ॥

विडालपदकं चैव तथा पोडशिका मता ।
करमध्यो हंसपदं सुवर्णं कवलग्रहः ॥
उदुम्बरञ्च पर्यायैः कर्प एव निगद्यते ।
स्यात्कर्पाभ्यामर्द्धपलं शुक्तिरष्टमिका तथा ॥
शुक्तिभ्याञ्च पलं द्वैयं मुष्टिरात्रं चतुर्थिका ।
प्रकुञ्चं पोडशी विल्वं पलमेवात्र कीर्त्यते ॥
पलाभ्यां प्रसृतिर्ज्ञेया प्रसृतश्च निगद्यते ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवोऽर्द्धशरावकः ॥
अष्टमानं च स द्वैयः कुडवाभ्याञ्च मानिका ।
शरावोऽष्टपलं तद्वज्ज्यमत्र विचक्षणः ॥
शरावाभ्यां भवेत्प्रस्यश्चतुष्पस्यैस्तथाटकम् ।
भाजनं कंसपात्रञ्च चतुःषष्टिपलं च तत् ॥
चतुर्भिरादकैर्द्रोणः कलशो मन्वणोर्मणौ ।
उन्मानश्च घटो राशिर्द्रोणपर्यायसञ्चकाः ॥
द्रोणाभ्यां शूर्पकुम्भौ च चतुःषष्टिशरावकः ।
शूर्पाभ्यां च भवेद्द्रोणी वाहो गोणी च सा स्मृता ॥
द्रोणीचतुष्टयं खारी कथिता सूक्ष्मबुद्धिभिः ।
चतुःसहस्रपलिका पण्यवत्यधिका च सा ॥
पलानां द्विसहस्रञ्च भार एकः प्रकीर्तितः ।
तुला पलशतं ज्ञेया सर्वत्रैवैप निश्चयः ॥
मापटङ्काश्विचरानि कुडवः प्रस्यमादकम् ।
राशिर्गोणी खारिकेति यथोत्तरचतुर्गुणाः ॥

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

ययो द्वादशभिर्गौरसर्पैः प्रोच्यते बुधैः ।
यद्यद्वयेन गुञ्जा स्यात्त्रिगुञ्जो वल्ल उच्यते ॥
मापो गुञ्जामिष्टाभिः सप्तभिर्वा भवेत्कचित् ।
स्याद्यतुर्मापकैः शाणः स निष्कष्ट्क एव च ॥
पद्यापो मापकैः पङ्क्तिः कर्पः स्याद्दशमापिकः ।
चतुष्कर्पैः पलं प्रोक्तं दशशाणमितं बुधैः ॥
चतुष्पलैश्च कुडवं प्रस्याद्याः पूर्वघनमताः ॥ इति ॥

उपरिनिर्दिष्ट मानोंमें प्रथममान सुश्रुतोक्त है और द्वितीय तथा तृतीय शार्ङ्गधरोक्त है । शार्ङ्गधरका प्रथममान मागध है और द्वितीय कलिङ्गदेशीय है । इनदोनों मानोंमेंसे मागधमान को ही श्रेष्ठवत्तया है "मानञ्च द्विविध प्राहु कालिङ्ग मागधं तथा । कालिङ्गान्मागध भेदमेव मानविदो विदु ॥ च. क. १२।१०२., इसलिये सुश्रुतीयमानकेसाथ शार्ङ्गधरोक्त मागधमानकी तुलना की जाती है । सुश्रुतमें १२ उडदका १ मापा माना है तथा शार्ङ्गधरमें ६ रतीका १ माशा माना है और कर्पको दोनमें १६ माशेका लिखा है । वजनकरनेसे १ रतीके बराबर दो उडद होते हैं । सुश्रुतके हिसाबसे एककर्ममें १९२ उडददोते हैं और शार्ङ्गधरमें ६ रतीके माशेके हिसाबसे ९६ रतियें होती हैं । इन रतिओंको द्विगुणकरनेसे १९२ उडद बनते हैं इससे यह सिद्ध होता है कि सुश्रुतको भी ९६ रतीका कर्म और ६ रतीकाही माशा मान्य है सो शार्ङ्गधरके मानके बराबर है । आजकल व्यवहारमें एकतोलेनीभी रतियें ९६ मानी जाती हैं । वितनेही लोग ३२ बालका तोला मानते हैं वहापर परिशुष्ट लालरगका बाल लिया जाता है वह ३ रतीके लगभगदोनेसे बेड़ी तोलेमें ९६ रतियें गिनी जाती हैं पर वह प्रमाण ठीक नहीं है । लालरगके बालोंकी विषमताके कारण वितनेही लोग ४० बालोंका तोला मानते हैं इसीलिये सुश्रुतने मध्यमनिष्पावोंसे वजनको नियत किया है वह बराबर है । बैसेतो हीं प्रथमरतिलेको तोलेमें ६२ रतियोंकाही तोला लिखा जाता है पर वह एकदम परिशुष्ट लालरग अथवा साधारण रतीफल (यह कालेदानेकी जाती है इसे पटनेप्रथतिके अजली लोग रतीके नामसेही पुकारते हैं उसका बीज लग्न होता है) एकतोलेमें लगभग ६२ या ६३ चढते हैं वह तोला ९६ रतीके तोलेसे लगभग १ चावल अधिक होता है । इसलिये सुश्रुतीय जो कर्म है उसका सब तोलोंसेसाथ सादर्य आता है यह देखकर उन ऋषियोंके सुद्विवैभवपर विस गुणप्राप्तीके अन्तःकरणमें पुण्यभाव उत्पन्न न होगा ? निष्कर्षमें उपरिनिर्दिष्टकर्म और व्यावहारिकतोला एकबराबर होता है । यदि आजकलके प्रचलित रुपयोंकेसाथ बराबरी करनी हो तो पल्लमानजका जो किन्विप रहित नया सिक्का है वह उपरिनिर्दिष्ट तोला या कर्मके बराबर वजनमें है परन्तु इससे पहिलेके दो सिक्के कुछ कम हैं इसलिये रुपयोंसे तोलेनेका कामलिया जाय तो वर्तमान नये सिक्केसे

लेना उचित है पर एकान्तत उसपरमी भरोसा न रखना उसमेंमी एकदूतमें टकसालकी गलतीसे अथवा घिसनेसे अथवा तेजायमें डालकर चांदी निकालनेनेकी वजहसे कुछ फेर रहता है इसवातपर ध्यान रखना । कर्मके १६ माशे मानेगये हैं और आजकल तोलेके १२ माशे मानेजाते हैं इसजगह आपातत विशेष आता है परन्तु तोलेमें मापा ८ रतीका मानाजाता है उपरिनिर्दिष्ट कर्ममें ६ रतीका माना है इसलिये कर्ममें १६ और तोलेमें १२ माशेका आमासामान्य प्रतीत होता है वास्तविकमेद नहीं ।

सुश्रुतमें धरणकामान "अथवा मध्यमनिष्पावा वा एकोनविंशतिधरणम्, तान्यधैतृतीयानिकर्म" इतरह दिया है । इसवाक्यसे कर्मका २॥ वा हिस्सा धरणहोता है और उसमें १ कर्मका २॥ वा भाग ७७ उडद अर्थात् ३८॥ रती होती है । सुश्रुतने १९ मध्यम निष्पावोंका (सिकेबीजोंका) १ धरण कहा है । इसलिये एकनिष्पाव २ रतीके लगभगहोता है यह प्रमाण अन्यकिसीमानसे नहीं मिलता । यद्यपि शार्ङ्गधरने शाणकापर्याय धरण दिया है पर वह सुश्रुतसेविच्छेद है । इसका भेद आगे कलिङ्गमानके कोष्ठसे मालूमहोगा । यहापर "पलस्य दशमाशेन धरणं परिकीर्तितम्" इस कृष्णाशेके वचनकी तरफ शार्ङ्गधरका ध्यान बलागया है और कलिङ्गमानमें पलका दशमाश शाण होता है इसलिये शाणका पर्याय समझकर धरण लिखदियाहो यह सम्भव है परन्तु कृष्णाशेका मान जुदा है उसमें पलका दशमाश शाण नहीं आता है इसलिये यह शार्ङ्गधरकी भूल है । पदधरणादियोग खास सुश्रुतके हैं अन्यग्रन्थोंमेंभी सुश्रुतहीच गये हैं इसलिये इसका हिसाबकरनेमें शार्ङ्गधरने गलतीकी है खबर न पढ़नेसे शाणका नाम रखदिया है । इसीतरह वैश्वकशब्दसिन्धुमें भी "पलदशमाशोऽयं योग पञ्चगुञ्जामाशेण प्रत्यादेरय" यहापर सुश्रुतीय माशेको ५ रतीका समझा है यह भी भूल है । ५ रतीकामापा वैजयन्तीकोप और याज्ञवल्क्यस्मृतिकी मिताक्षराटीकामें दिया हुआ है— "त्रयस्त्रिंशतिर्माशेः सैव मरीचिका । रयेणुश्च रेणुश्च तास्तिस्रो राजसर्पे । धुरणश्च यवाप्रथं ते त्रयो गौरसर्पे ॥ तेऽष्टौ च षोडश तु स्या मापोऽथवा त्रिभि । सर्वैरुञ्जा पञ्च गुञ्जा माप कुन्ये तु सप्त ता ॥ ल्यमापो द्विगुञ्जो वा परण षोडशेव ते । शतमान तु दशभिर्धरेण पलमेव च" इत्यादि वैजयन्तीकोप अथवा "जालसूर्यमरीचिश्च त्रयरेणु रज स्मृतम् । तेऽष्टौ लिङ्गा च तास्तिस्रो राजसर्पे उच्यते ॥ गौरस्तु ते त्रय पञ्चभिर्धरे मध्यस्तु ते त्रय । कृष्णल पञ्च ते मापस्ते सुवर्णस्तु षोडश" मिताक्षरा टीका । वैजयन्तीकाले २ गुञ्जाका ल्यमापा मानकर १६ कृष्णमापोंका धरण बनाया है वह ३२ रतीका होता है और "दशभिर्धरेण पलमेव च" इसवाक्यसे पलका १० वांभाग धरणहोता है । इनदोनों वाक्योंमें परस्पर विरोधप्रतीत होता है परन्तु ५ रतीके माशेके हिसाबसे भी पलके

१० वेदिसोमं ३२ ही रती आतीहै इषये विरोध नहीं आता परन्तु सुप्रतीय धरण इनसबसे जुदाहै हाँ "पक्ष्म्य दशमामेन धरणे परिधीर्तितम्" यह इन्द्रगत्रेयका वाक्यहै सो सुप्रतसे बराबर मिलताहै ।

गद्याणकामान शार्ङ्गधर और यत्रतत्र प्राहृतमे आताहै । प्राहृतमे इषकेलिये राख कोई परिभाषा नहींहै । माद्रमहोताहै कि शार्ङ्गधरहीसे उठाकर लोगोंने रक्खा होगा । शार्ङ्गधर और इन्द्रगत्रेय दोनोने ६ मासोका इषे बतलाया है और मासोका प्रमाणभी दोनोका बराबरहै इषलिये जहाँकहीं गयाण आवे वहाँ ४८ रतीका लेना उचितहै ।

उद्दसे नीचेका जो मानहै उसे चरक और शार्ङ्गधर प्रथति ने दियाहै । उसका आरम्भ परमाणुसे कियाहै परन्तु वह किसीका किसीकेसाथ नहीं मिलता । कारणहै कि उसका आरम्भ परमाणुसे किया हुआहै वह आनुमानिकहै उसका तोल कटिपर होना अव्यम्भवहै । यद्यपि राजिकावर्षरहका तोल कटि प्रथतिसे होसकताहै पर बीजरूपहोनेसे उनकाभी यथार्थ तोल नहीं होसकता, कारणकि जब एकफलीमें होनेवाले बीजोंकी भी प्रायः परस्पर सादृश्य नहीं होती तब दूसरे वृक्ष और विभिन्न २ भूमि तथा कालमें उत्पन्नहोनेवाले बीजोंकी सादृश्य कैसे होगी ? इसका अन्तर देखनाहो तो बीजोंको तोलकर खातिरी करते यही कारणहै कि "यत्रो द्वादशभिर्गोसर्पैः प्रोच्यन्ते पुषेः ।" यहाँपर कालिप्रमाणमें १२ सर्पंपका जब बतलायाहै और मापमानमें "यत्रोऽस्यसर्पे प्रोचोः" ऐसा पूर्वसे विरुद्ध लिखाहै । यह तो मूर्खोंकी जान सकताहै कि यह वाक्य विसिद्धके सिवाय कौन लिखेगा ? परन्तु इसमें ऐसा नहींहै यह बीजोंके फेरसे हुआहै । पुष्ट पीलीसरसोंके अन्दाजसे ८ सर्पंपकाही १ जब होताहै और छोटी सर्पंप १९ चढ़तीहै वष इतनाही भेद हुआहै । कोई कदाचित् यह कहकर अपना पिण्ड धुजने कि सर्पंपादिक पदार्थ काल्पनिकहैं और कल्पनामें सब धृषक धृषक कहने परमी विरोध नहीं होसकता । परन्तु यह बात यथार्थ नहींहै क्यों कि जब कल्पना ही करनी थी तो "जालान्तरगतैः सूर्यंरैर्वशी विलोक्यते" इत्यादि वाक्य लिखनेकी कोई जरूरत नहींथी । इससे यह स्पष्ट प्रतीत होताहै कि सर्पंपादिक पदार्थ काल्पनिक नहींहैं किन्तु सहीहैं । उनके समय, क्षेत्र और देशप्रथतिके भेदोंसे बीजोंमें भेदहोनेसे यह सब पाप सुसंवेद्यहै इसीविषयको तोचकर सुप्रतने नीचेके प्रमाणको न लिखकर केवल उद्दसे प्रमाणका आरम्भ कियाहै । एक और भी कारणहै कि सुप्रतीय औषधोंमें उद्दसे नीचेके प्रमाणकी अपेक्षाभी नहींहै । हाँ रसप्रयोगमें हीरप्रथतिकी भस्मोंमें राजिकाप्रथतिके मानकी आवश्यकता रहतीहै तब बहापर प्रायः करके बीजोंके आकारसे रोगीके बलाबलको देखकर मात्राका निर्धारणकरना यह वैद्यका खास कर्तव्यहै इसीलिये "स्थिति नास्त्येव मानायाः कालमार्थं वयो बलम् । प्रकृतिं दोषदसौ च दृष्ट्वा मात्रा प्रकल्पयेत्" इत्यादि वाक्य कहेहुएहैं ।

"पङ्क्यस्त्यस्तु मरीचि स्यात्पामरीच्यस्तु सर्पंपः । अष्टौ ते सर्पंपा रक्षास्तपङ्क्यथापि तद्वयम् ॥" चरक ॥ "जालान्तरगतैः सूर्यंरैर्वशी विलोक्यते । पङ्क्यीभिर्मरीचिः स्यातामि पङ्क्यस्तु राजिका ॥ तिग्भी राजिकाभिश्च सर्पंपः प्रोच्यते पुषे ॥" इत्यादि शार्ङ्गधरीय पाठ आपसमें मिलते नहींहै उसका कारण यहहै कि पक्ष्मयस्तुओंका विचारहै वह ध्यानमें न आनेसे औपारिष्टिक अनुमानकरके लोगोंने बिगाड़ाहै इसलिये परस्पर विरोध माद्रमहोताहै शार्ङ्गधरने कोई अपना स्वतन्त्र मत नहीं प्रदर्शित कियाहै किन्तु प्राचीन संहिताओंके आधारही पर ग्रन्थ लिताहै । चरकीयपाठको न समझनेसे लोगोंने बिगाड़ाहै इसीलिये यह विरोध आकर खड़ाहुआहै । चरकीयपाठ "जालान्तरगतैः सूर्यंरैर्वशी विलोक्यते । पङ्क्यस्तु मरीचि स्यात्पामरीच्यस्तु राजिका ॥ तिग्भी राजिकाभिश्च रचसर्पंप इच्यते । अष्टौ ते सर्पंपा रक्षास्तपङ्क्यथापि तद्वयम् ॥" ऐसाहोनाउचितहै । ३ राईका १ रक्षसर्पंप और २ रक्षसर्पंपका १ गौरसर्पंप प्रत्यशहै इसमें सन्धेदका कोई अवसरनहींहै ।

वर्तमान चरकीयपाठ "पङ्क्यस्त्यस्तु मरीचि स्यात्पामरीच्यस्तु सर्पंपः । अष्टौ ते सर्पंपा रक्षिस्तपङ्क्यथापि तद्वयम् ॥ धान्यमापो भवेदेको धान्यमापद्वयं यव । अण्डिकास्ते तु चत्वारस्ताधत्तसस्तु मापकः ॥ हेमय धानकथोको भवेच्छण्डण्तु ते प्रय ॥" ऐसा मिलताहै । इसमें रत्ति या रक्ति यह पाठ अशुद्धहै इसकी जगह रक्षा ऐसा चाहिये क्योंकि यह सर्पंपोंका विशेषणहै और इसकी साक्षी चक्रपाणिदत्तभी देरहे हैं । "धान्यमापद्वयं यव" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि धान्यमाप और सतुप यवका वजन एकबराबरहोताहै इसीलिये चक्रपाणिदत्तने पूर्वटीकाकारोंका मत बतलाते हुए "ते तु चत्वार इति-यवचत्वारः, अन्ये तु मापाधत्तारथ अण्डिका इति वदन्ति" ऐसा लिखाहै यहाँपर गौर करके देखिये यव और धान्यमाप समप्रमाणहोनेसेही किसीटीकाकारने यवकी अण्डिका बतलाई और दूसरोंने धान्यमापकी अण्डिका बताईहै इनदोनोंका अभिप्राय एकहीहै । चक्रपाणिदत्तको अशुद्धपाठका भेद नहीं माद्रम हुआ इसीलिये वेचारे मोहजालमें पड़े । इसकाभी कारण यह माद्रमहोताहै कि अण्डिकापदार्थ इनको हात न हुआ यहाँकी अण्डिका सुप्रतीय निष्पावहै जिसे कि हिन्दीमें सेमकाबीज कहतेहैं । उसे समकक्ष ४ यवकेसाथ अथवा ४ उड़दोंकेसाथ तोलकर देखलीजिये बराबरहोताहै । इसलिये "धान्यमापद्वयं यव" के स्थानमें "धान्यमापसो यव" ऐसा पाठ होना उचितहै । "अण्डिकास्ते तु" यह पाठभी अशुद्धहै क्योंकि ४ यव अथवा उड़दोंकी १ अण्डिका होतीहै एकवचन होनेसे विसर्ग अथवा सकार नहीं रहसकता यह अज्ञान हत पाठहै । कृष्णात्रेयमें मतान्तरकेनामसे "अण्डिका चापि निर्दिष्टा वृष्णिन्माप द्वयेन वै" यह विलक्षण अण्डिका बतलाईहै यहाँपर मापशब्दसे धान्यमाप समझना इसलिये यह गुत्राका पर्यायहै अण्डाहति

होनेसे अण्डिका मानलीहै पर यह चरकसुश्रुतीय अण्डिका नहींहै ।

“हेमथ धानकथोचो” यह भी पाठ अशुद्धहै । आचार्यने मापशब्दके दो अर्थ बतलाएहैं अर्थात् १ सुवर्णका माप और दूसरा अनाजका माप अर्थात् उद्ध । धान्यशब्दसे स्वार्थमें ‘कृ’ प्रत्ययकरके धान्यक शब्द बनाया हुआहै अर्थात् माप अथवा मापक शब्द जहां आताहै वहां सुवर्ण-माप अर्थात् १६ उद्ध और एक अन्नविशेष यानी १ उद्धका बोधहोताहै इसभेदको बताना आचार्यका अभिप्रायहै । वह अभिप्राय “हेमथ धान्यकथोचो” इसतरहके पाठहोनेसे व्यक्तहोसकताहै ।

कोई दुराग्रहाविष्ट यह कहे कि यहाँपर “हेमथ धानकथ” ऐसाहीपाठहै क्योंकि इसपाठको लिखतेहुए अष्टाङ्गसूत्रकारने “मापकस्य पर्यायो हेमो धानकथ” ऐसा लिखाहै इसलिये ये दोनों मापके पर्यायहै आप जैसा कहरहेहैं वसा नहींहै । इसजगहपर सर्वेतेः प्रथम अकारान्त हेमशब्दका होना सम्भव है या नहीं? यह विचारणीयहै । “हि गतौ” स्वादिसे मनिन् प्रत्यय करनेसे हेमन् शब्द बनताहै इसलिये हेमन् नकारान्त शब्द होताहै न कि अकारान्त, यह प्रथम विपत्ति है । कदाचित् कोई शब्दशास्त्र पर अनास्याकरके पृथक्तासे अकारान्त माननी लेवे तो सुवर्ण शब्दको कर्पका पर्याय मानाहै और सुवर्णकापर्याय हेम है । पर्यायशब्दका यथेष्ट प्रयोगहोताहै तब हेम शब्दके प्रयोगमें कर्प लिया जाय या मापया? यह भारी विपत्ति होगी । इसलिये जैसा हमने कहाहै सो ठीकहै यह पाठ बहुतादिनका विगड़ानुआहै इसीलिये अष्टाङ्गसूत्रकारने पर्यायवाचकता लिखवालीहै । उसको देखकर शाङ्गधरनेमी व्यामोहमें पड़कर “मापको हेमधान्यको (धानको)” ऐसा पाठलिखाहै । यदि चरकको मापाके पर्याय हेम और धान्यक अथवा धानक अभिप्रेतहोते तो कहींपरभी उनका प्रयोग तो कियाहोता यह निर्विवादहै इसलिये चरकीयपाठको सुधारना अत्यावश्यकहै । इसजगहकी मूलसे देखिये कितना बिज्व होगयाहै । परिभाषाप्रदीपप्रमूढिमें अकारान्त हेमशब्द और धान्यक अथवा धानकशब्दको “मापमिते माने” ऐसा लिखदियाहै तभी, पर उसका उदाहरण प्राचीनसंहिताओंमें न देखके । किसीने शाङ्गधरको बतलाया और किसीने इसी विवादप्रसूत चरकीयकल्पस्थानको निर्दिष्ट किया है परन्तु संहिताओंमें व्यवहारमें लायाहुआ न बतलाया इसलिये इस अन्वयपरम्पराको दूरकरना उचितहै ।

इसीतरह शाङ्गधरके पाठकोभी सुधारना आवश्यकहै यथा—
“पृथुशीनिर्मरीचि. स्याताभिः पङ्क्तिस्तु राजिका । तिघ्नी
राजिकाभिश्च रत्नसर्पेण श्लष्यते ॥ तद्वनेन भवेदन् मध्यमो गौर-
सर्पेण । यवोऽश्वर्षपैस्तेषु शुष्ठा स्यात्तद्वनेन च ॥ पङ्क्तिस्तु
रफिकाभिश्च मापसो हेममायज्ज ।” वस इत्तरहका पाठ रत्न-

नेसे “शुष्ठा स्यात्तन्नुत्थम्” और “यवद्वयेन शुष्ठा स्यात्” इनदोनों पाठोंका परस्पर विरोध नहीं आताहै । नहींतो एकही पुराणके परस्पर विरुद्ध दो पाठ होनेसे मतप्रलाप कहा जायगा । इसीतरह “भाजनं कंसपात्रम्” इत्यजगह “भाजनं पात्रं कं-
थेव” ऐसा पाठ होनाचाहिये । कारणकि चरकने दो आठक का नाम कंस रखाहै “कंसः प्रस्थापकं तथा” प्रस्थापक यह नाम आठकका नहीं होसकताहै वह ४ प्रस्थापक होताहै इसलिये जगहवाहुआ पाठ रचना उचितहै । उसके आगे चरकने “कंसधनुर्गुणो द्रोणः” की जगह “कंस द्विगुणितो द्रोणः” ऐसापाठकरना । शाङ्गधरने “घाठके कंस आख्यातस्तथा प्रस्थापकं भवेत्” ऐसा पाठ रखनेसे मार्गविशुद्धहोजायगा । “तेदिका घाठकोऽस्त्रियाम् । कंसं चाय” इसतरह सामान्यकोडं, गणाध्यायमें वैजयन्तीकोपने इसभ्रमकी दूरकरदियाहै । दोडरानन्दमें कृष्णात्रेयके उद्धरणमें “चतुःप्रस्थैर्भवेत्कंसः स स्याद्भ्रा-
जनमाठकम् । पात्रं चूर्पापकं गात्रं पर्याये कर्मसो विदुः” ऐसा पाठदियाहै पर वह प्रत्यक्ष विरुद्धहै कारणकि आगे चलकर “द्रोणाम्या चूर्पापकं च” ऐसा स्वयं कृष्णात्रेयने कहाहै इसलिये बहुर “चतुःप्रस्थैर्भवेत्पात्रं स स्याद्भ्राजनमाठकम् । कंसः प्रस्थापकं गात्रं” ऐसा पाठकरनेसे मार्ग विशुद्ध होजायगा । इसीतरह “गोणीचूर्पापकं विद्यात्पारी मारी तथैव च” इसजगह जिसतरह चूर्पापकको गोणी होतीहै उसीतरह दो गोणीकी १ खारी, २ खारीकी १ भारी, और २ भारीका १ बाह होताहै ऐसा अर्थ तथैवपणे समझना इसी अर्थको स्पष्ट-
करनेकेलिये “द्वान्त्रिष्वैव जानीयाद्गात्रं चूर्पाणि बुद्धिमान्” ऐसा आचार्यने बतलासा करदियाहै । चरकीय खारीके साथ शाङ्ग-
धरकी खारी नहीं मिलती और प्रायः सबकेसाथ समानता आतीहै । वैजयन्ती कोपने मान बहुत दूरतक बतलायाहै यह उसके कोडकमें खारीसे आप दियाहै ।

जारकहीहुई चरकीयपाठकी अग्रप्रस्तासे बहुतेमे लोगोंको यह भ्रमहोगयाहै कि सुश्रुतकेपरिच चरकीयकर्म इनाहै कारणकि सुश्रुत मध्यम १२ उद्धोंका १ मासा मानतेहैं और ऐते १६ माशेका १ कर्म मानतेहैं तब सुश्रुतके हिसाबमें १९२ उद्धोंका कर्म-
होताहै । चरकमें २ उद्धोंका १ जव, ४ जवकी १ अण्डिका और ४ अण्डिकाओंका १ मासा अर्थात् १६ जव अथवा ३२ उद्धका १ मासा होताहै । ऐसे ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १ कर्म होताहै । इन १ कर्मके १९२ जव अथवा ३८४ उद्धहोतेहैं । इसतरह चरकीयकर्म सुश्रुतीय कर्मसे ठीक द्विगुणहोताहै । इसतरहका भ्रम लोगोंके मनमें ठसगयाहै । इसीकारणसे “कालिङ्गमानश्च चरकाचार्यसंमतं” इत्या दुकडं ढरणने लिखदियाहै सो मूलहै इसका कारण “धान्यमापद्वयं यव.” यह अशुद्धि मानहै इसके अतिरिक्त कोई कारण नहींहै देखिये—सुश्रुतीय १९ अण्डिकाओंका १ धरण और २॥ धरणका १ कर्म होताहै । २॥ धरणकी ८८ अण्डिका होतीहै उतनीही चरकीयकर्मकी होतीहै इनका नाम सुश्रुतने निरव्यान और

चरकने अण्डिका रक्खाहै ये दोनों एकही वस्तु-
है । उद्धके हिसाबसे "तत्र द्वादश धान्यमापा. मध्यमा
सुवर्णमापक", ते पोडश सुवर्णम्" इसतरह कर्ष बनायाहै ।
१२ उद्धका १ माशा और १६ माशेका १ कर्ष अर्थात् १९२
उद्धका कर्षहै । चरकीयकर्षमी १९२ उद्धकाही होताहै
क्योंकि यवका वजन उद्धके बराबरहोताहै इसको जो
चाहे सो धरकमे कटिपर रखकर देखलेवे । इसलिये "धान्य-
मापद्वयं यव." की जगह "धान्यमापसमो यव" ऐसा पाठ
सुधारलेनेसे ४ यव अथवा उद्धकी १ अण्डिका, ४ अण्डिका
का १ माशा, ३ माशेका १ शाण और ४ शाणका १
कर्षहोताहै अर्थात् १९२ उद्ध या यवका १ कर्ष हुआ इसमें
अन्तरहीक्याआया ? हां चरकीय १२ माशेकाकर्षहै औरसुधु-
तीय १६ माशेकाहै यह आपाततः भेद मालूमहोताहै परन्तु
सुधुतीयमापा ३ अण्डिका (१२ उद्ध) काहै और चरकीय
४ अण्डिका (१६ उद्ध) काहै इसलिये मापोंमें अवरय भेदहै
चरकीयमापा बड़ाहै और सुधुतीय छोटा । निष्कर्षमें सुधुतीय
६ रत्तीका मापा होताहै और चरकीय ८ रत्तीका । इसलिये
केवलमापोंमेंही भेदहै इसकेसिवाय कर्षप्रश्रुतिमें कोईभेदनहींहै ।
यदि "ताश्चतस्रश मापक"की जगह "तास्त्रिसप्तथैकमापक"करदिया
जाय और "भवेच्छाणस्तु ते त्रय" की जगह "शाणस्यात्तचतुष्ट-
यम्" ऐसा कर दियाजाय तो फिर मापोंमेंभी फरक न आवेगा-
चरकीयमूलपाठकी अशुद्धिको समझनेकी शक्ति न होनेसे चक्र-
पाणिदत्तने यहापर अंडवंड लिखमारारहै वह सर्वथा अनादियहै ।
चक्रपाणिदत्तकी तरह अष्टाङ्गसङ्ग्रहकारनेभी "परिमार्ष पुन
पङ्कश्यो मरीचि. । ताः पट् सर्षपः, तेषां तण्डुलः । तौ धान्य-
मापः । तौ यव" ऐसी अविचारसे अशुद्धपाठकीही ब्याख्या
करदीहै । इसीतरह "तुला पुन. पलशतं, तानि विंशतिभारं"
यह अन्यग्रन्थोंकी चरकनेसाथ खिचड़ी पकाडालीहै कारण कि
इसभारका नाम चरकमें नहींहै किन्तु सुधुत और कृष्णात्रेयमें
है । चरकमें भारको बाह बतलायाहै उससे आपेको भारी
बताईहै वहभी इसभारसे अधिकप्रमाणकीहै । इसलिये यह
प्रतीतहोताहै कि इनसबने इसका तल्लपसं न करके एक अन्दा-
जसे लिखमारारहै । कितनेही अज्ञ लोग सुधुतीय धरणमानको
अन्यमत बालातेहैं और यहाका कर्ष ८० रत्तीकाहै इसतरह
ब्याख्यान करतेहै सो अज्ञताहै । यहा दो मत नहींहै किन्तु
उसीमानको द्वितीयप्रकारसे सिद्धकियाहै इनमें अणुमानभी
अन्तर नहींहै जैसा ९६ रत्तीका कर्ष पहिलाहै वैसाही यहहै
और इसीको पञ्चधरणादियोगोंमें लियाहै ।
"त्रिरजोभिश्च सिकृता तामिः षोडशभिः क्षुपा ।
द्वयेन सर्षपे रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥
तद्द्वयं धान्यमापः स्यात्तद्द्वयं रक्तिका मता ।
चतुर्भिरण्डिका क्षेया पङ्क्तिर्वहः प्रकीर्तितः ॥
पकृगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टभिर्मार्षकः स्मृतः ।
रक्तिभिः पञ्चभिर्मार्षः पङ्क्तिर्वांसप्रभिरत्रिभिः ॥
दशभिर्वा भवेदत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ।
अण्डिका चापि निर्दिष्टा कचिन्मापद्वयेन च ॥

चतुर्भिर्मार्षकैः शाणत्रिभिर्वाऽऽत्रेयसम्मतम् ।
गद्याणो मार्षकैः पङ्क्तिः शाणाभ्यां द्रवृणो मतः ॥
कोलश्च घटकश्चैव स भवेत्तुल्यद्रवृणकः ।
शाणैश्चतुर्भिः कर्षः स्यादक्षं पाणितलं विदुः ॥
पिबुः सुवर्णकं किञ्चिद्द्विडालपदकं तथा ।
उदुम्बरो हंसपदं करमध्यश्च तिन्युकम् ॥
कवलप्रहः पाणिकश्च स प्रोक्तः पाणिमानिका ।
कर्षद्वयेनाष्टमिका शुक्तिः सैव प्रकीर्तितः ॥
शुक्तिभ्यां तु प्रकुञ्जः स्यात्पलं मुष्टिश्चतुर्थिका ।
आत्रं चित्त्व पलाभ्यां स्यात्प्रसृतिः प्रसृतस्तथा ॥
पलस्य दशमांशेन धरणं परिकीर्तितम् ।
प्रसृतिभ्यामञ्जलिः स्यात्कुडवञ्च चतुष्पलम् ॥
वेणुवाक्षांयसादीनां भाण्डं यच्चतुर्द्वलम् ।
विस्तीर्णमथ वृत्तञ्च कुडवं तं विनिर्दिशेत् ॥
कुडवाभ्यां शरायः स्यान्मानिकाऽष्टपलं तथा ।
चतुर्भिः कुडवैः प्रस्थस्तथा सुप्तमितीरितः ॥
चतुष्पस्थैर्भवेत्पात्रं तत् स्याद्वाजनमाढकम् ।
कंसः प्रस्थाष्टकं गात्रं पर्यायैः क्रमशो विदुः ॥
चतुराढकसङ्घातो द्रोणश्च परिकीर्तितः ।
कलशो नत्वणो राशिमणश्च परिकीर्तितः ॥
द्रोणाभ्यां शर्षकुम्भो च चतुष्पष्टिशरायकः ।
शर्षाच द्विगुणा द्रोणी वहो गोणी च सा स्मृता ॥
तुला पलशतं तासां विंशतिभार उच्यते ।

कृष्णात्रेयसंहिता.

उपरिनिर्दिष्ट कृष्णात्रेयसंहिताकाभी यह मान चरकीयमानसे
मिलता जुलगाहै केवल १-२ स्थानोंपर नाममात्रका अन्तरहै
यथा—"त्रिरजोभिश्च सिकृता तामिः षोडशभिः क्षुपा ।
द्वयेन सर्षपे रक्तस्ते चाष्टौ तण्डुलं विदुः ॥" अर्थात् ३ रजडी
१ सिकृता, १६ सिकृताकी १ राजिका और २ राजिकाका
१ रक्तसर्षप मानाहै इसहिसाबसे १ रक्तसर्षपमें ९६ प्रणरेणु
होतेहै । चरकीयमानमें १ रक्तसर्षपके १०८ प्रणरेणु मानेगयेहै
केवल १२ प्रणरेणुका अन्तर आताहै । यह आनुमानिक प्रमाण
होनेसे इतने अन्तरका होना सम्भवहै इसलिये यह विशेष
ध्यान देने योग्य नहींहै ।

आगे चलकर "पकृगुञ्जाफलैस्तुल्यैरष्टभिर्मार्षकः स्मृतः ।
रक्तिभिः पञ्चभिर्मार्षः पङ्क्तिर्वांसप्रभिरत्रिभिः ॥ दशभिर्वा भवे-
दत्र प्रोत्तमाधममध्यमाः ॥" माशेके उत्तम, मध्यम और
अधम तीनभेदोंसे १०, ८, ७, ६, ५ और ३ रत्तियोंके
६ तरहके माशे बतायेहै । इनमेंसे १० और ८ रत्तीकामाशा
उत्तम, ७ और ६ रत्तीका मध्यम, तथा ५ और ३ रत्तीका
अधमकोटिये रक्खाहै । कृष्णात्रेयने उर्ध्वकप्रमाणमें ८ रत्तीका
मापालियाहै इसहिसाबसे कर्षकी १२८ गुष्ठा या रत्ती
होतीहै । यह चरकीयकर्षसे प्रमाणमें ३२ रत्ती अधिक हो

जाताहै । यदि ६ गुञ्जाका मध्यममापा लियाजाय तो दोनों-
कर्म एकचरित्रर होजातेहैं । औषधप्रमाणमें ६ गुञ्जाकामापा-
लेना ठीकमालूम पड़ताहै क्योंकि कृष्णात्रेयसंहिताकी परिभाषा
में “घम्यादिरक्तमोक्षेण माने मूत्रवसादिषु । वमनादिषु
योज्यश्च मायकथाष्टरक्तिक ॥” अर्थात् वामकफत्रया, रक्तमोक्ष,
मूत्र और वसादिकोंकेमानमें ८ रतीकामापालेना ऐसा विशिष्ट
रूपसे कहाहै । साधारणतया ६ रतीकामापा मानलेनेसे सुशुत,
चरक और कृष्णात्रेयके कर्ममें कोई अन्तर नहीं रहता ।
वैसेतो “कषायादिनिरुहेषु द्रव्यमानविधावपि । ततोऽष्टादश-
भिर्मापैर्मापकः परिकीर्तित ॥ लोहस्तनादिविषये दशरक्तिक-
मापकः” इत्यादि कार्यपरत्वेन ९ रतीकामो माशा मानाहै
उन सन्को मान्य करना असम्भवहै । कहीं २ पर १४ रतीका
मापा भी बतायाहै पर वह व्यवहार्य नहींहै ।

मागधमानमें कुड्वका विशेषमान “वेणुनाशांसयादीना
भाण्डं यचतुरह्वलम् । विस्तीर्णमथ वृत्तत्र कुड्वं तं विनिर्दि-
शेत् ॥” इसतरह दियाहै । कुड्वसे नीचेका मान यहा नहीं
दियागयाहै पर हिसाबलगाकर बनाया जासकताहै । इसमें
अहुलका मान जानना अत्यावश्यकहै इसलिये वास्तुविद्या-
प्रभृतिमें मान बतलायाहै । यथा—“परमाणुमिष्टामिष्टसंयु-
रिति स्मृत । त्रसरेणुध रोमाप्र लिक्षा युका यवस्तथा ॥
क्रमशोऽष्टगुणा प्रोक्ता यवोऽष्टगुणितोऽहुलितः ॥” यहापर
क्रमश परमाणु, त्रसरेणु, रोमाप्र, लिक्षा, युका, यव इनकी
आरम्भसे उत्तरोत्तर अष्टगुणित सङ्ख्या आतीहै इसहिाबसे १
यवमें ३२७६८ परमाणु होतेहैं और तुलामानमें १ यवके
५१८४० परमाणु होतेहैं । इन्ही ८ यवोंकी चौड़ाईका व्यास
१अहुलहोताहै तुलामानमें परमाणुसे आरम्भ तो इसीके सदृशहै पर
इसमें तद्गत शूरत्व (वजन) लियागयाहै और अहुलमानमें तद्गत
व्यास लिया गयाहै इसलिये दोनोंका विषयभिन होनेसे दोष
नहीं आता क्योंकि मान सहस्रधा होताहै इसबातको आगे
सूचित करेंगे । अहुलसे आगेका माप यद्यपि यहा अत्यन्त
अपयुक्त नहींहै परन्तु किसीको यह अपेक्षा हो कि इसके
आगेका माप किसतरहकाहै ? इस आकाङ्क्षाको शान्तकरनेके-
लिये तथा भूमिस्थद्रव्यके अद्विबल तथा धराचक्रादिद्वारा
विज्ञानकेलिये उपयुक्तहोनेसे यहा देदियागयाहै ।

यद्योदरैरहुलमष्टसहस्रैः—

हैस्तोऽहुलैः पद्गुणितैश्चतुर्भिः ।

हस्तैश्चतुर्भिर्भवतीह षड्पङ्कः,

क्रोशः सहस्रद्वितयेन तेषाम् ॥

स्याद्योजनं क्रीराचतुष्टयेन,

तथा करणां दशकेन वंशः ।

निरतनं विंशतिवशासहस्रैः,

क्षेत्रं चतुर्भिश्च सुजेनियद्भम् ॥

लौलावती (परिभाषा)

अथ कलिङ्गदेशीयमानम्

कलिङ्गदेश यद्यपि इससमय अप्रसिद्धता होगयाहै परन्तु
“तथा मत्स्यकलिङ्गाथ कौशिकंथ समन्ततः । अन्वीक्ष्य
दण्डकारण्ये खपवंतनदीशुद्धम् ॥ नदी गोदावरीं चैव सर्वमेवा-
नुपश्यत । तथैवान्नाथ पुण्ड्राथ चोलान् पाण्ड्याथ केरलान् ॥
वालमीकि० किष्कि० ४११११-१२” प्लत्रिदिग्दर्शने गोदा-
वरीके उत्तरमें मत्स्य, कलिङ्ग और कौशिक ये देशहैं और
गोदावरीके दक्षिण आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पाण्ड्य और केरलो
बतलायाहै इससे यह निर्धारित होताहै कि विजयनगरके समीप
कलिङ्गदेश होना चाहिये । वहाका कर्म १० माशेका प्रथम
समयमें होगा ऐसा अनुमान होताहै क्योंकि उसकी कुछ छाया
नीचे दियेहुए बोधक्रममें मिलतीहै परन्तु इससमय उसमें फेरफार
होकर कईतरहके मान होगयेहैं । आधुनिक कलिङ्गदेशीयतोल
इधरकारहै जो कि शाङ्गधरीय कलिङ्गमानसे मिलताहै ।

कलिङ्गदेशीयमानम्	शाङ्ग०
३२ गुञ्जा=१ वरहा	१ शाण
१० वरहा=१ पल	१ पल
८ पल=१ सेर	१ शराव
५ सेर=१ बीसा	२॥ प्रत्य
८ बीसा=१ मन	५ आठक
२० मन=१ भार	१०० आठक

आन्ध्रदेशीयप्रचलितमानम्

१ भार=२० मन	१/३ तोला=७ १/३ चित्रम्
१ मन=८ बीसा	१/३ तोला=३ १/३ चित्रम्
१ बीसा=५ सेर	१ चित्रम्=२ अङ्गुिा
१ सेर=८ पल	१ अङ्गुिा=२ गुञ्जा
१ पल=३ तोला (१० वरहा)	१ गुञ्जा=४ चावल (सद्रुप)
१ तोला=३० चित्रम्	१ चावल=३ राजिका
१/३ तोला=१ १/३ चित्रम्	

इसमानमें पलके वजनतक कलिङ्गदेशीयमानहै पलसे नीचे
के वजनमें अन्तर करदियाहै इससमय १ पलके ३ तोले
मानकर तोलेको १२० गुञ्जाका बनायाहै इस हिसाबसे
१ पलकी ३६० गुञ्जा होतीहैं और कलिङ्गमानके १
पलकी ३२० गुञ्जा होतीहैं इनदोनोंमें ४० गुञ्जाका अन्तर
आताहै सो मान्य होताहै कि व्यापारियोंने फरेबीसे इस-
भेदको घुसादियाहै कारणकि देनेकेलिये प्राचीनतोल रक्खाहो
और लेनेकेलिये बनावटी तोल बनादियाहो यह सम्भवहै ।
उदाहरणार्थ आजकल इण्डोनेशमेंभी वसराप्रभृतिसे मोती बगैरह
लाये आतेहैं वे वहाके तोलेके हिसाबसे आतेहैं वहाका तोल
यहाके तोलेसे कुछ अधिकहै सो व्यापारी लोग उसतोलसे
लाकर यहा इसतोलसे बेचतेहैं यह फर्क हरीफाईकाहै । इसी-
तरह दक्षिणदेशमें भी हुआहै तोलमें सवजनहके व्यापारी प्राय
ऐसीही युक्ति कियाकरतेहैं इसकी निर्यता करनी असम्भव
जैसाहै स्वार्थप्रधान दुनियासे हरीफाईका जाना असम्भव है ।

२ गोणी=१ वाह

२ वाह=१ खारी (दूधरोंके मतमें कुम्भी)

बहुतोंके मतमें २ कंसकी १ खारी होतीहै इसीको मानी अथवा वाह कहतेहैं । कितानेही ४ खारीका १ वाह बतलातेहैं । खारीके चतुर्थांशको गोणिका कहते हैं । कितानेही २ प्रस्थको वाहकहतेहैं । २० कुम्भको अटी और १० कुम्भको पात्रमिक अथवा कुम्भकहतेहैं । सुवर्णके ८ और तांबेके ७० पलोंको धारणकहतेहैं । दूसरेलोग तांबेके १० पलोंको धारणकहतेहैं । रूप्यके ३॥ पलको शतमान, १०० पलको तुला, १० तुलका १ ऋक्ष अथवा पटिक, २ पटिका १ शाकभार अथवा शलाह, १०शाकभारको सम, साह, पारमार अथवा शाकट कहतेहैं ।

- १० तुला=१ ऋक्ष
- १० ऋक्ष=१ आचित
- १० आचित=१ द्रुपाचित
- १० द्रुपाचित=१ होट
- १० होट=१ हेलक
- १० हेलक=१ समक
- १० समक=१ सम
- १० सम=१ वाहित
- १० वाहित=१ भारित

माप, शाण, तल, मुष्टि, अञ्जलि, प्रस्थ, आढक, द्रोण, गोणी, खारी ये क्रमसे चतुर्युग समझना । हस्तादिकोंके मानको पाप्यकहतेहैं । इन्द्रादिकोंके मापको हुबय, तराजूके तोलको पौतव और हस्तादिकके मापनेकी डोरीको भागसूत्र अथवा रामसूत्र कहतेहैं ।

मानवधर्मशास्त्रमें “जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्म दृश्यते रजः” इत्यादि कुछ तत्सामयिक दृष्टिके मानका उद्देश्य क्रियाहै पर वह औपपोपयोगि नहींहै । उससमयभी व्यवहारोंकी भिन्नताको लेकर कईतरहके मान थे उन्हीं सबकी खिचड़ी वैजयन्तीकीपरकारने पकाईहै इसे मानवधर्मशास्त्रका मान नहीं समझना । मानवधर्मशास्त्रीयमान नीचे दियाहै उसे देखकर चात्तिसी हो सकतीहै यथा—

“जालान्तरगते भानौ यत्सूक्ष्म दृश्यते रजः ।
 प्रथमं तत्प्रमाणानां त्रस्ररेणुं प्रचक्षते ॥
 त्रस्ररेणुभिरष्टाभिलिखैका परिमाणतः ।
 ता राजसर्पपस्तिस्त्रस्ते त्रयो गौरसर्पपः ॥
 सर्पपा पटू ययो मध्वस्त्रियवं त्वेककृष्णलम् ।
 पञ्चकृष्णलको मापस्ते सुवर्णस्तु षोडश ॥
 पलं सुवर्णाञ्चत्वारः पलानि धरणं दश ।
 द्वे कृष्णले समभूते विश्लेषो रौप्यमापकः ॥
 ते षोडश स्याद्धरणं पुराणश्चैव राजत ।
 कर्पापणस्तु विश्लेषस्तात्रिक कार्षिक पण ॥

धरणाणि दश श्लेषः शतमानस्तु राजतः ।
 चतुःसौवर्णिको निष्को विश्लेषस्तु प्रमाणतः ॥
 पणानां द्वे शते सार्धे प्रथमः साहसः स्मृतः ।
 मध्यमः पञ्च विश्लेषः सहस्रं त्वेव चोत्तमः ॥

मनु० ८।१३२-१३८

जिसतरह कलिङ्गमानकी दुर्दशा हुईहै उसीतरह हिन्दी गणितकी पुस्तकोंमें मानकी दुर्दशाहै यथा ८ खसखस=१ चावल, ८ चावल=१रत्ती, ८ रत्ती=१माशा, १२ माशे=१ तोला इसजगह ८ खसखसका जो १ चावल लिखाहै सो खबरनहीं किसमहायाम्यने अन्दाजसे लिखडालाहै । तोलमें लाल चावल लियाजाताहै इस १ चावलपर लगभग ७५ खसखस चबतेहैं और लिखनेवालेने ८ ही खसखस लिखेहै । इसपर कुछभी विचार न करके पुस्तकोंमें बैसाही भेडियापसान चलारखाहै इसतरफ किसीकी भी दृष्टि नहीं गई । सन् १९२२ में निर्णय सागरप्रेसमें लीलावतीकी छटीक पुस्तक छपीहै उसकी टीकामें भी ‘तोलपरिमाणभारतीय’ शीर्षककेनीचे ८ खसखसका १ चावल लिखाहै । वज्रनमें तथा आकारमें किसीभीतरह १ चावल के बराबर ८ खसखस नहीं होते । इसकी तर्क देखकर चित्त अत्यन्त खिन्न होताहै इसीतरह सबजगह तोलमें बहुत फेरफार हुआहै उसे सुधारनेकी आवश्यकताहै ।

सुधुतीयमान प्राचीनकालसे चला आताहै चरकने भी इसीको बतलायाहै । मनुष्योंकी अग्निके हासकेकारण कलिङ्गमानकी पीछेसे कल्पना हुई प्रतीतहोतीहै । इन्हीं दोनोंमानोंका अनुकरण करके लोगोंने नानातरहके तोल बनाए हुएहैं । मागधीयप्रस्थमें १६ रुपयेभर वज्रन बटाकर ८० रुपयेका बहाली सेर बनायाहै इसीमें १६ रुपये और मिलाकर ९६ रुपयेका पहाड़में सेर बनायाहै इसीतरह कहीं अधिकता कहीं न्यूनता करके सेर बनाए हुएहै परन्तु सबका मूल मागधमानही है ।

इसजगह शूद्ररहस्य यहहै कि मागधीतरह मापादि विभागयुक्त कोईभी तोल लियाजाय तो उसमें किसीतरहका अन्तर या हर्ज नहीं होताहै परन्तु जिसमानसे कामलिया जाय वहापर उसी मानके वजनको काममें लेना चाहिये उसमें साङ्ख्य करनेसे दोष उपस्थित होगा । यदि एकयोगमें ५ बस्तुएं कर्षप्रमाण लिखीहों तो उन पावोंके तोलनेमें एकही कर्षका उपयोग करना चाहिये जैसे १० रत्तीके माशेसे १६ माशेका कर्ष मानकर द्वापए लेते तो पावोंको उसीकर्षसे लेना उचितहै और कुडवादि मापसे कोई चीज उसमें आईहो तो उसेभी इसीकर्षके हिसाबसे डालना उचितहै ऐसा करनेसे कोईभी अन्तर न पड़ेगा इसीकारण अपने अभिमत मानकी दिखलाकर मानविशेषकी नियतता दूरकरनेके अभिप्रायसे देखिये सुश्रुत क्या लिखतेहैं यथा—“तत्राऽन्यत्वपरिमाणस मितताना यथायोग त्वक्चर्ममूलादीनामात्मपरिशोषिताना छेद्यानि खडगश्लेष्टदिवित्वा भेधान्ययुतो भेददिवित्वाऽवकुड्याऽष्टयुणेन

षोडशगुणेन वाग्भ्रमासाभिषिच्य स्यात्वा चतुर्भागावशिष्टं काय-
यित्वाऽपहरेदित्येय कषायपाककल्पः ॥ स्नेहाश्चतुर्गुणो द्रव स्नेह-
चतुर्धाशो भेषजकल्कस्तदैकघ्नं समुज्य विपचेदित्येय स्नेह
पाककल्पः ॥ अथवा तत्रोदकद्वये त्वक्पत्रममूलादीनां तुलामा-
वाप्य चतुर्भागावशिष्टं निष्कवाप्यापहरेदित्येय कषायपाककल्पः ॥
स्नेहकुडवे भेषजपलं षष्ठं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपचेदि-
त्येय स्नेहापाककल्पः ॥ सु. चि. ३११८” यद्वापर ‘अन्यत-
मपरिमाणसम्मितानां, से यद्दी ज्ञापनं करातेहै किं परिमाण
कोई व्यवस्थित वस्तु नहींहै । दुनियामें परमाणुसे लेकर
हिमाद्रिप्रभृति समस्त पदार्थं स्वेतारपदार्थपरिच्छेदकं होतैहै वे
कहींपर ऊंचाई, कहींपर नीचाई, कहींपर घेर, कहींपर विस्तार,
कहींपर हृत्तात्, कहींपर स्मौल्य, कहींपर आकार, कहींपर गुण,
कहींपर काल, कहींपर गुह्यत्वादि विशेषे गुण अर्थात् वजन
इत्यादिभेदोंसे कईतरहकी परिच्छेदकताको निष्पन्न करतेहै ।
इसमेंसे प्रकरणविशेषको देखकर अमीष्ट परिच्छेदकताको निर्धा-
रितकरना यह परिच्छेदकता खास कर्तव्यहै । यद्वा प्रकरण
चिकित्साका है इसमें बहुधा वजन (तोल) की सुलत पडतीहै
क्योंकि वजन (तोल) विना किसीभी चीज़को तैयार नहीं
करसकते और न देखसकते । जो रातदिन व्यवहारमें आनेवाला
आहारहै उसमेंही तोलविना चीज़ोंको तैयार करना चाहै
तो नहींकरसके । उदाहरणकेलिये चावलप्रभृतिको लेलेवें जब
चावल और जल ठीकवजनसे ढालकर अन्दाज़की अमि ल्गाई
जायगी तभी पानेकेयोग्य चावल तैयारहोगे अन्यथा नहीं ।
इसीलिये “ न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते वचित् ॥”
शाङ्ग० ॥ “तत्र सर्वाण्येवोपशानि व्याध्यमिपुत्र्यबलान्यमित-
मीक्ष्य विद्वन्वात् ॥ सु. सू. ३११०” “इत्यप्रमाणं तु यदु-
क्तमस्मिन्मध्ये तु तत्कोष्ठप्रयोजनेषु । तन्मूलमालम्ब्य भवेद्विकल्प
स्तेषां विकल्पोऽन्यधिको नभावः ॥ च. क. १२।८३” इत्यादि
वाक्य कहेगोयें । इन वाक्योंसे यह निष्कर्ष निकलताहै कि
प्रथम वस्तुस्थितिको देखकर जैसी जद्वा योग्यता मातृमपके
वैसा ध्यवहारकरे । योग्यताके ज्ञानमें आतुरको दारीरसम्पत्ति,
देन और कालाधिकोही तुलना मुख्यकारणहै । तोषनिर्मूलन
कार्यमें औषध मुख्यकारण होताहै और प्रमाणप्रभृति समस्त
उपकरण होतेहैं इनको योग्यता देखकर औषधमात्राका निर्धा-
रण करना वैद्यकी बुद्धिपर निर्भरहै वैद्यकी बुद्धि बटानेकेलिये
दासकर्मोंमें एक दिग्दर्शनकरायाहै न कि तावन्मात्र मर्यादांमें
उसे निबद्धकियाहै ।

पूर्वोक्तपुत्रीय उदाहरणोंमें त्वक्, पत्र, मूल, पत्र, पुष्प
प्रभृतिको गुणमें सुखाद्यर काहेकेयोग्य वृत्तर अठगुने अपषा
सोल्हगुने पानीमें पकाकर चतुर्भागावशिष्टप्रकाशाप्रदण बत
सायाहै और आगे चलकर १ तुलाद्रव्यको क्रेडोण (२५६ पल)
जल्में पकाकर चतुर्भागावशिष्टं बाष्पलेनेको लिखाहै तथा बीचमें
स्नेहसे चतुर्गुण द्रव और द्रवचतुर्भास कल्क ढालकर स्नेहका
गुद, मध्य, रार, यह त्रिविध पाक लिखाहै । इनसे कल्क,

स्नेह और कायका प्रमाणतो विस्पष्ट होजाताहै परन्तु
स्नेहापेक्षया काय्य द्रव्यका विस्पष्टीकरण नहींहोताहै कि
वह कितना लियाजाय ? इसकेलिये प्रसिद्धयोगोंमें जद्वा जो
प्रमाण लिखाहो उसे लेना और जद्वा काय्यका प्रमाण नहीं
लिखाहै वद्वापर “स्नेहभेषजतोयानां प्रमाणं यत्र नेरितम् ।
तत्रेयं विधिरस्येयो निर्दिष्टे तत्तदेव तु ॥ अनुके द्रवकार्ये तु
सर्वत्र सलिलं मतम् । कल्ककायावनिर्देशे गणात्साम्प्रयोज-
येत् ॥ सु. चि. ३११५-१०” इस्तरह निर्धारण कियाहै
यथापि स्नेहसे द्रवके चातुर्गुण्य विधानसे काय, क्षीर, मध
और आसवप्रभृति सभी उपस्थितहोतैहै तथापि प्रत्यासत्ति-
न्यायसे ऊपर कषायकल्पका विधान लिखनेसे कषायही सर्वत
प्रथम युद्धयाहूँ होताहै और वह ८, १६ और ५ गुने जल्में
पकानेके भेदसे ३ तरहकाहोताहै उनमेंसे अन्यतम कषाय
स्नेहसे चतुर्गुणित होनाचाहिये यह निर्धारित होताहै ।

यथापि तृतीयकल्पमें इससमय “अथवा तत्रोदकद्वये०”
ऐसापाठ सुधुतमें मिलताहै परन्तु वह उचितनहीं प्रतीतहोताहै
कारण कि तुलानाम १०० पलकाहै । उसे १ द्रोण अर्थात् २५६
पल जल्में उबालकर चतुर्भागावशेष रखकर कार्यकरना हुस्तरहै ।
यद्वा तद्वा करके क्रियाभी जायगा तो वह निकम्माहोगा । कारण
कि अल्पपाकसे कषायमें शारका निकलना असम्भवहै इसलिये
यद्वापर द्विद्रोण ऐसा पाठ अनुमित होताहै ऐसा होनेसे ५१२
पल जल होगा उसका चतुर्भागावशेष १२८ पल रहजायगा ।
इसमें चतुर्धास ३२ पल स्नेह पकसेगा । इस (तृतीयकल्पमें)
स्नेहसे तिसुनेसे कुछ अधिक काय्य द्रव्य आताहै इसीको
लोगोंने चतुर्गुणके नामसे लिखदियाहै देखो इन्दुटीकामें
लिखीहुई पद्यरूपपरिभाषा—“चतुर्गुणेन तोयेन बाष्पयेदौष-
धानि तु । ऋषीणां सुधुतादीनां सर्वेषां मतमीदृशम् ॥ एता-
वास्तु विशेषोऽन शेषमनापि पूर्ववत् । काय्य तु भेषज स्नेहा-
दन पक्षे चतुर्गुणम् ॥ १६-१० अ. स. कल्प०” यह धारी-
कीसे विचार न करनेसे लिखागयाहै और सुधुतीयपाठकी
अनुद्धिका पता न लगनेसे “पल्लव्यपेक्षयाऽन्यस्ति तथा प्रत्य-
व्यपेक्षया । सुधुतस्य तु य पूर्वमुपन्यस्तविरन्तः ॥ पाठ
पल्लव्यपेक्षया शाफक तदुदाहृतम् । इत्येव त्रिविधं प्रोक्तं
कषायप्रदणं प्रति ॥ २१-२२” ऐसी क्विनीने मनगडन्त कल्प-
नाभी करदालीहै । इनके कथनानुसार यदि माना जायगा
तो ४, ८ और १६ की जगह ८, १६ और ३२ गुण जल
देना होगा और वैसा होनेसे ८ और १६ गुणितकदना अक्षय
होगा इसलिये पल्लव्यपेक्षया और प्रत्यव्यपेक्षयाकाजापठ अपे-
जतीन्यायसे दूषितहोनेके कारण सर्वथा त्याग्यहै क्योंकि
इन्होंने अपने कहेहुएकामो पालन न होसका यथा—“चतुर्गुणोदकं
पक्षे स्नेहाद्द्रव्यं चतुर्गुणम् । अष्टांशिकं पल्लव्यं द्रव्यशायस्य
जायते । इन्द्रप्रस्थे विन्कल्पे शुद्धं तथ भवेद्यदि । आर्यं चेत्
दूतं सद्यस्तत पल्लवादायम् । स्नेहप्रस्थे भवेत्ताप्ये वृष्यभ्राती-
रपलाधियम् । एवं बह्वत्वाद्द्रव्यस्य यद्गुणुगिनोदकः ।

सकल्योभिततस्तत्र स्नेहः स्याद्वीर्यवतरः ।" यदा तुलामानमेंगो द्विगुणपरिभाषाको लगानेसे नियमभङ्ग हुआ इससे हमने जो पूर्वमें रास्ता बतलायाहै वही श्रेयस्करहै । सुश्रुतकेपाठको सुधारलेनेसे राजमार्ग विशुद्ध होजायगा । पथरूपपरिभाषापनिर्माताने अच्छीतरह सुश्रुतीयपाठकी अशुद्धिको न विचारकर छात्रोंनेलिये एक नवीन जाल फैलादियाहै वह सर्वथा हेयहै । सुश्रुतने तृतीयकल्पमें द्रव्यापेक्षया पत्रगुणसे कुछ अधिक जल दियाहै और स्नेहसे नाममात्र अधिक त्रिगुण द्रव्य दियाहै इससे सुश्रुतीय तृतीयकल्पमें स्नेहसे चतुर्गुणित काश्यका विषाणहै ऐसा कहनाभी भ्रमहै । यद्वापर कितनेही लोगोंने तृतीयकल्पनेसे नियमार्थ मानकर "तुलाद्रव्ये जलद्रोणो द्रोणे द्रव्यतुलाम्भसि । ततः पलशते द्रव्ये जलद्रोणोऽपि चेष्यते ॥" व्याख्या=यत्र तुलाद्रव्य जले पचेदित्युक्त परं जलप्रमाणं नोक्त तत्र द्रोणमितं जलं प्राह्यम् । यत्र तु द्रोणमिते जले द्रव्य पचेदित्युक्त परं द्रव्यप्रमाणं नोक्त तत्र द्रव्य तुलाप्रमाणं प्राह्यमिति" ऐसा मनगडन्त श्लोक बनाडालाहै । "भक्षितेऽपि लघुने न शान्तो व्याधि" इसन्यायसे ऐसी कुकल्पना करनेपरभी उछ अभीष्टसिद्धि नहीं होतीहै क्योंकि शुष्कद्रव्यके चूर्णको २॥ गुने जलमें डालनेसे अपने बराबरके पानीको तो स्वयं शोषण करलेगा बाकी १॥ गुना बचेगा वह अतिपर चढानेसे १-२ उफानके बाद उसीमें लीनहोजायगा तब चतुर्भागावशेषमें क्या बाकी रहजायगा ? इसको विचारा होता तो ऐसा न लिखाजाता । कदाचित् कहे कि "लेहे यत्राऽस्ति वो भागो निर्दिष्टो द्रवकल्कोः । तत्रापि पादिकं कल्को द्रवात्कार्यो विज्ञानता ॥ तुलाद्रव्य जले द्रोणे द्रोणे द्रव्ये तुला मता । देयो गुडं सिता चापि इति सर्वत्र निश्चितम् ॥ अवलेहद्वयं लेहद्वयं तस्य मानं पलद्रव्यम् ॥ इयं गोपुरके वाक्यमें यह कल्पना अक्षरशः मिलतीहै इसे मनगडन्त क्यों कहुनीचाहिये ? नहीं उकोडरणमें लेदविधान बतलायाहै यद्वापर क्यापनिष्पन्नद्रोणेकेबाद लेह तैयार करनेके लिये गुड अथवा शकर किस प्रमाणसे डालनी चाहिये इसका निर्धारण कियाहै । गुडरूप द्रव्यतुलाको द्रोण परिमित द्रवमें अर्थात् जलप्रभृतिमें पकाकर चाशनीकरनी यदि शर्करासे लेह तैयार करना हो तो एकतुलानवायमें एकद्रोण शर्करा डालकर चाशनी करनी यह विलपटयता कहागयाहै इसलिये गोपुरके उदाहरणसे अथवा सुश्रुतके कथनसे (अथवा तत्रोदकद्रोणे त्वक्प्रमूलादीनां तुलामानाप्य चतुर्भागावशिष्ट निःकवाद्यप्यहरेत्) उक्तानिप्रयत्नो नही निकालसकेहै । कोई न कवाद्यप्यहरेत्) उक्तानिप्रयत्नो नही निकालसकेहै । कोई यह कहेना चाहिये कि केवल प्रमाणसे यथालम्ब जलमें पाक क्यों नहीं ? इसजगह बड़ाभारी रहस्य यह है कि पैसाहोनाही असम्भवहै तब खाली सुक्ति या प्रमाण क्या करसकताहै । पयोक्षपदाथं (स्वर्गादिप्राप्तिप्रवृत्ति) में प्रमाण देकर धोताओंको सुखकरसकेहै परन्तु प्रत्यक्षमें नहीं । कदाचित् कोई यह शब्दा बरै कि "कुड्डये चूर्णितं द्रव्यं प्रक्षिप्तं द्विगुणेनले । अहोत्तारं स्थितं तस्माद्भूतेस्वरस उतम ॥ कृष्णात्रेय०" इत्यादिकथानोंमें

द्विगुणजल डालकर कपाय प्रहणकियाहै तब प्रकृतमें तो २॥ गुना जलहै इसमें हर्जक्या ? ठीकहै परन्तु यद्वापर क्याय नहीं कियागयाहै इसलिये इसमेंसे पानी निकल आवेगा, यह विषय दृष्टान्तहै । देखिये-"क्वाथ्यद्रव्यस्य बाहुल्यादुदकं स्वल्पमेव चेत् । सम्यक् पाकत्र मुञ्चन्ति हीनवीर्यन्तु केवलम् ॥ क्वाथ्य० द्रव्यं घट्टसमं जलं दशघट क्षिपेत् । नि क्वाथ्यं पादशेषं तु शुद्धं सापघटं न्यसेत् ॥ विमूय सन्धितं यच्च तथासवमितीरितम् ॥ वृद्धसुश्रुत" "आसवारिष्टयोर्धनं न गुणो लभ्यते यदा । एकद्विनिशुतं कृत्वा दापयेद्गुणद्वये ॥ गोपुरः" "प्रसारण्यादिनिर्दिष्ट शतमेकं पृथक्पृथक् । जलद्रोणेन वैकेकं साधयेच्छुष्ककुड्मिम् ॥ सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति वारा स्वल्पेन निश्चितम् ॥ शौनक ॥" "दधि क्षीरं च र्हिरे ह्यारानालेऽप्य पुण्यजे । रसे तपेयुधात्रीणा मयुमस्त्वासवादिके ॥ एतानि सर्ववस्तुनि स्नेहयोगे विशेषतः । सम्यग्वीर्यं न मुञ्चन्ति जल देवं चतुर्गुणम् ॥ कृष्णात्रेय० ॥" "मापकादि पल यावद्दात्पोऽडशिकं जलम् । तूर्ध्वं कुड्व याचतोयमष्टगुणं भवेत् ॥ प्रस्थादे. कुड्वार्ध्वं सखिलञ्च चतुर्गुणम् । प्रस्थादित क्षिपेमीरं शर्रीं यावच्चतुर्गुणम् ॥ यराहमिहिर ॥" चतुर्गुणसे नीचे पानी देकर काय करनेमें कितने आचार्ये निष्कल्ला बतला रहेहैं तब इन गवेपकोंका निकालडुआ सिद्धान्त किसतरह मान्य होसकताहै ? कोई यहभी शब्दा न करे कि "रदिरघातुलामुदकद्रोणे विषाच्य पोडशावशिष्टमवतार्याऽगुणतं निदध्यात्, तमामलकरसमधुसार्पिर्भि संसृज्योपशुद्धीत । एष एव सर्वशससरेपु कल्प० ॥ सु चि. १११३" यद्वापर १ द्रोणका पोडशावशेष कियाहै तब चतुर्भागावशेषकरनेमें आपको क्या विपत्तिहै ? हा ठीकहै यद्वापर शरके छोटेछोटे टुकड़ेकरके कल्पके निकालनेके प्रकारसे कायकियाहै यद्वापर शार तत्कालाहत आरंभ कियेजाताहै सो वह पानीको नहीं शोषणकरसकता इसलिये वह होसकताहै कारण कि उसमें जैसे जैसे पानी कम होताजाताहै वैसे वैसे टुकड़े निकालदिये जातेहैं शेषमें सवटुकड़े निकालदिये जातेहैं । बचेहुए जलको जलाकर बोडशावशेषकरके रसलियाजाताहै वह शिलाजतुकी तरह घन तैयारहोताहै । कल्पनिकालनेवाले भी ऐसाही करतेहैं इसलिये आमलकरसरस, मधु और धी ये तरल पदार्थ उसके अनुगान बतायेहैं । पर यद्वाका स्थान विषयमें यद्वापर टुकड़े नहीं दियेजाते किन्तु जबकुट चूर्ण दियाजाताहै सो वह बालतेही फूलजायगा और बराबरके पानीको शोषणकरलेगा इससे यथाथं कायकरनेमें विपत्तिहोगी इसलिये उक्तदृष्टान्त कार्यसाधक नहीं होसकताहै । सुश्रुतके मूलग्रन्थमें द्विशब्द निकलनेकी गवाही इत्यन्तनी देरहैहै "उदकद्रोणविषये तुलाद्रव्यस्याऽऽयापनेन ज्ञापयति-निःक्वाथ्य द्रव्यं जले पत्रगुणे निःक्वाथयेत्" इस इत्यन्तकेलेखसे यह स्पष्ट निकलताहै कि मूलग्रन्थात् पठिलेका द्विद्रोणे ऐसाहीया इसलिये पूर्वटीकाओंको देखकर "जले पत्रगुणे निःक्वाथयेत्" ऐसा लिखाहै अन्यथा यह लिखना

असम्भवया । कदाचित् कोई यह शङ्का करे कि द्रवद्वैगुण्य परिभाषाको उपस्थितकरके इन्होंने पञ्चगुणजल लिखाहै तो यह उचित नहींहै कारण कि उस परिभाषाको कोई आधार नहींहै । कदाचित् कहें कि “शुष्काणामिदं मानम्, आर्द्रवाणाञ्च द्विगुणम्” (सु. वि. ३१।७) यहाँपर आचार्यने स्वयंही वचनरूपसे स्वीकृतकीहै ? सो ठीकनहीं । यहाँपर का पाठ ‘आर्द्रव्याणां’ ऐसा है । उसमें कारण यह है कि यदि आचार्य द्रवद्वैगुण्यको मानलेवें तो प्रत्यभरमें जहाकहीं द्रव आवेगा वहाँ सबजगह इस परिभाषानी उपस्थिति होनेसे समस्तप्रत्य शङ्कान्तरहोनेसे अनास्था दोष आजायगा और जो शङ्कारहितत्वादि आसवाक्योंके गुणहै वे इसप्रत्यसे निकल-जानेके कारण प्रत्य आप्तवाक्यत्वसे वञ्चित रहजायगा । चरक और सुश्रुतीय कल्पिय आसवारित्थोंकी सूची आगे दीहुईहै उनमें अधिकसे अधिक ३२, और न्यूनसे न्यून ४ गुणित जलदेकर ऋष्य विधेहै । ३२ गुणसे अधिकजल किसीनेभी नहीं दिया है देखो—“आसवारित्थसाध्येयु द्वारित्राणुणसम्मि- तम् । खदिरादेः प्रतिपलं जलमाहुधिकित्सकाः ॥ यद्बभूवुत्” यह इसप्रमाणसे आगे कोईभी नहीं कहाहै इसीवातको दिख-लानेकेलिये सूची दीगईहै यदि हम द्रवद्वैगुण्यपरिभाषा मान-लेतेतो स्नेह और आसवारित्थप्रभृति समस्तस्थान अनास्थाप्रस्त होजायगे । जैसे अमयारित् (सु वि ६।१५) में २१ गुना जल आयाहै वहापर ४२ गुना देना होगा । इसलिये सुश्रु-तीय मूलपाठ आर्द्रव्याणां ऐसाही पूर्वमेंया यह निश्चित होताहै उसकीजगह लेखकप्रमादसे ‘द्रवाणां’ ऐसाहुआ प्रतीतहोताहै । इसीको देखकर “शुष्कद्रव्येष्विदं मानमेवमादि प्रकीर्तितम् । द्विगुणं तद्द्रवेष्विदं तथा सद्य समुद्भूतम्” ऐसा चरकके कल्प-स्थानमें दृढबलने बनालियाहै कदाचित् कहें कि अनुकल्पानोंके लिये परिभाषानी आवश्यकताहै २ नहीं बढ़ाकेलिये ८, १६ और पञ्चगुणित पानीकानिर्देश पर्याप्तहै इसलिये सुश्रुतका ‘द्रव्याणां’ ऐसाहीपाठहै यह निर्विवादहै । इसीतरह चरककोभी द्रवद्वैगुण्य परिभाषा अभिप्रेत नहींहै । यदि दृढात् मानलेगे तो पिण्डासव (च. वि. १५।१६१) में विपत्तिदोगी । वहापर चतु-र्थांश पानी देकर पिण्डको यवराशिमें रक्ताहै । यदि द्वैगुण्यपरिभाषाको उपस्थितकरेंगे तो अधिक द्रव होजानेसे इसे पिण्ड पागलभी नहीं कहसकेगा । इसलिये चरककोभी यह परिभाषा अभीष्ट नहींहै । चरकके अभिप्रायसे न समझ-कर दृढबलने लिखादीहै । परन्तु इसका उपयोग वे भी न करसके देखिये—स्नेहव्यापारिसिद्धिमें “दद्यात्तुल्यं यत्ना रसना मधुसन्धो पुनर्नवात् ॥” इसलैलमें ३३ पल दवाको ४ दोष-पानीमें पकायाहै यह पानी श्वयम् ३२ गुनाहै यदि द्रव-द्वैगुण्य परिभाषा लगाकर द्विगुणमानेगे तो ६४ गुना होजायगा इसको कोई पागलभी सुख नहीं बतावेगा क्योंकि कषाथोंमें ३२ गुने जलसे अधिक कहींपरभी नहीं आताहै । इष्यप्रत्न क्वापघो १ दोष घोरघर १ आरुह तैठ पकायाहै इष्यमें

१० पल जीवनीयगणका कल्क दियाहै । यद्यपि वह तैलसे ६॥ अंश होताहै परन्तु इसमें १ आरुह दूध भी बालागयाहै । पकनेपर उसका कल्क (सीठी) १ प्रत्य निकलेगा । परन्तु उसमेंसे तृतीयांश घृत जुदा होजायगा और १०॥ पलके लगभग रहजायगा सो इसकोभी कल्कमें गिनलियाजाय तो स्नेहसे लगभग २॥ वा हिस्सा कल्क (सीठी) आताहै सो बराबरहै । स्नेहकल्कमें यही गुण रहस्यहै इसको न समझनेसे स्नेहपाकमें लोगोंको धोखाहोताहै । केवल द्रव्यकल्ककी ही गिनती न करना किन्तु स्नेहपाकोत्तर उसमें सीठी कितनी निकलेगी इसवातपर ध्यान रखकर “स्नेहकुडवे भेषजपलं पिण्डं कल्कं चतुर्गुणं द्रवमावाप्य विपेषित्तयेय स्नेहपाककल्प (सु वि. ३१।८) अथवा “क्वाप्याचतुर्गुणं वारि स्नेहत्काथं चतुर्गुणम् । क्षीरं स्नेहसमं दयात्कल्कश्च स्नेहपादिकः ॥ शिवमेखला ॥” इस प्रक्रियाका अवलम्बनकरके स्नेहोंको सिद्धकरलेनेमें किसीभी तरहकी विपत्ति उपस्थित नहीं होतीहै और न द्विगुणपरिभा-षाका आश्रय लेनापड़ताहै । इस दृढबलके दशमूलदि तैलसे यह निर्धारण होता है कि केवल दृढबलने सुश्रुतीय अशुद्धिको न समझकर द्रवद्वैगुण्य लिखते दो पर उसका उदाहरण कहींभी न दिखलासके । इसीतरह “शुष्कमेयेष्विदं मानं द्विगुणं तु द्रवद्रव्योः” ऐसा पाठ अष्टाज्ञसङ्ग्रहमें भी कल्पित बना परन्तु “धनमेवानीयौषधान्युषो भेदधित्वा छेदधित्वा छेद्यानि प्रसा-स्योदकेन शुचौ रक्षायापयोभेः प्रलिप्ताया ताम्नायोष्मयान्य-तमाया स्थाल्या समावाप्य बहुल्पपानीयप्राहितामापयानामाक-ल्प्य यावता मुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेत्प्रायेच । अधामावधिप्रित्य महत्यासने सुलोपविष्टः सर्वतः सततमव-लोकयन् द्रव्यांश्चषयन् मृदुना परित समुपगच्छताऽनलेन सापयेत् । अवतार्य च परिसुतं ययाहंसर्शं प्रयुञ्जीत ॥ अ रं. क. ८” इसजगह ‘बहुल्पपानीयप्राहितामौपयानामाकल्प्य यावता मुकरसता स्यात्तावदुदकमासेचयेत् ॥’ यही अपना सिद्धान्त दिया परन्तु द्रवद्वैगुण्य परिभाषाका पता इनकोभी न लगा और इन्हींका अनुकरणकरके “शुष्कादिमानमारम्य यावत्स्थाल-त्कुडवियथितः । द्रवद्रव्यशुष्कव्याणा तावन्मानं सद्यं मतम् ॥ प्रत्यादिमानमारम्य द्विगुणं तद्द्रवार्थयोः । मानं तथा तुलयाथ द्विगुणं न कल्पित्स्वल्पम् ॥ शांत् २० ११३—१४” इनको लिखकर “शुष्क नवीने यद्द्रव्यं योज्यं सच्छकम्भम् । आर्द्रञ्च द्विगुणं शुष्कादेप संप्रै नियथ ॥ शांत् २० १४६” इष-जगहपर जो सुश्रुतीय सिद्धान्तहै उसीको बतलाया किन्तु यहाँ द्रवका नाम नहींलिया यदि द्रवद्वैगुण्यअभिप्रेत होता तो द्रवार्द्र-द्रवक शुष्कापर पाठ किया होता । इससे प्रतीत होनाहै कि इन्हींमें द्रवद्वैगुण्यका कुछ नियथ नहीं हुआ । इषप्रमक होनेका मुख्यकारण तो सुश्रुतीय ‘द्रव्याणां’ श्रेयजगद ‘द्रवाणां’ होनाहै । दूसरा औरभी कारण प्रतीत होताहै तो यह कि “रक्तिकादिषु मानेषु यावदि कुडवे भवेत् । कुडवेद्रव्योस्तावमुल्यं मानं प्रयोञ्जेत् ॥ शुष्कद्रव्येष्विदं मानं द्विगुणं तु द्रवार्थयोः ।

यद् इत्यु कृत्वाद्भ्रं प्रस्थादिश्रुतनामकम् । द्विगुण न तुलामान मिति मानविदो विदु ॥” यह उद्धरण गोपुररक्षितकेनामसे टोडरानन्दमें दिया हुआ है सो यह गोपुररक्षितका है या नहीं इसका पता साक्षात् संहिताके मिलेबिना लगना मुश्किल है । परन्तु इतना अनुमान किया जा सकता है कि गोपुररक्षितप्रभृति सुश्रुतसहाध्यायी है उन सबमें सुश्रुतको श्रेष्ठ माना है देखो “वत्स सुश्रुत ! इह खल्वानुवेदप्रयोजनं व्याधु पद्यताना व्याधिपरिमोक्ष स्वस्वस्य रक्षणञ्च ॥ सु सु १११३” इत्यादि स्थानोंमें बारम्बार सुश्रुतके प्रति सम्बोधन देकर धन्वन्तरिभगवानका उपदेश आता है इसलिये इन सबमें सुश्रुतही प्रधान विद्वान् ये इनके प्रतिकूल गोपुररक्षितादि नहीं लिख सकेंगे । सुश्रुतमें रक्षिकादि कृत्वान्त और प्रस्थादि तुलान्तकी अवधि नहीं दी है इसलिये यह कहींका प्रक्षिप्त वाक्य मालूम होता है । यदि यह टीक सिद्धान्तहोता तो कहींपरमी आसव या स्नेहसाधनप्रकरणमें इसका पालन किया होता, सो देखनेमें नहीं आता है ।

कदाचित् यह शक्य करें कि चरकके मुनिपणकृत्वाजैरी पृतमें “चतुःप्रत्ये शत प्रस्थ कषायमवतारयेत् । च वि १४२३५ के नीचे “त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽत्र विज्ञेयो द्विपलाधिक ॥” यह श्लोकलिखा हुआ देखनेमें आता है । सोही प्रमाण है ? नहीं विनायोगकी समाप्तिके इसका यहाँ रखना अकारणतान्त्रिक जैसा मालूम होता है । योगोंकी विशेषसूचनाएँ उनके अन्तमें दी जाती है बीचमें नहीं । इससे यह साफ प्रक्षिप्त मालूम होता है परन्तु यह आजकलका प्रक्षिप्त नहीं है । इसका रहस्य न समझकर चक्रपाणिदत्तने इसपर “तथा त्रिंशत्पलानि तु प्रस्थो विज्ञेयो द्विपलाधिक इति विज्ञेयम् । परिभाषासिद्धा र्थाभिधायकम् । अत एव दृढबलसस्थानेऽपि द्रव्यैर्द्रव्याभिधान भविष्यति ॥” ऐसी व्याख्यामी कर दी है यद्यपि हास्यास्पदके कारण कि यद्यपर इस अर्थपरकी कोई आवश्यकता नहीं है देखिये ‘अजापगुण्या बला दार्वां वृद्धिपर्णा त्रिकण्डक । न्यमोधोऽम्बराभ्वत्स्यशुक्राश्च द्विपलोन्मिता ॥ कषाय एवा०” एक कषाय यह है । ‘कलिद्रा शात्मल पुष्प वीरा चन्दनमुत्पलम् । कटुफल चित्रक मुस्त त्रियङ्गवतिविषा स्थिरा ॥ पदोत्पलाना किञ्चक समज्ञा सनिदिग्धिका । बिल्व मोचरस पात्रोभागा कर्षसमान्वाता ॥” इस द्वितीयकषायको ४ प्रस्थ जलमें पादावशिष्टकापकरणसे एकप्रस्थ हाय होगा इसीतरह सुनिषण्णक और चाङ्गेरीका स्वरस १-१ प्रस्थ होगा । यह सब मिलकर ४ प्रस्थ द्रव रहेगा इसमें स्नेहसे चतुर्गुणित द्रव होनेसे इसकापाक भरावर होजायगा । इसकेलिये “त्रिंशत्पलानि प्रस्थोऽत्र०” इस प्रक्षिप्तवाक्यकी आवश्यकताही क्या है ? इसका कुछभी विचार करते तो चक्रपाणिदत्तको इस परकी प्रक्षिप्तता मालूम होजाती । इसयोगमें “पण्यास्तु जीवन्तो कटुरोहिणी । पिप्पली पिप्पलीमूल नागर सुरदारक च ॥” इतना यह आवाप है इसकी कषायमें गिनती नहीं

करनी चाहिये । इसभेदको न समझकर मालूम होता है कि लोगोंने इस प्रक्षिप्त परकी बीचमें डाल दिया है । अथवा द्रव द्वैगुण्य परिभाषाके भर्जने ऐसा काम किया हो यद्यपि सम्भव है । यदि आचार्यको इससे अधिक द्रव अभीष्ट होता तो “चतुःप्रत्ये शत प्रस्थ कषायमवतारयेत्” की जगह ‘अष्टप्रत्ये शत चाश कषायमवतारयेत्’ ऐसा पाठ करनेमें आचार्यको क्या चिपत्ति थी ? यह कोई पद्मवद्वगीरह छन्द नहीं है जिसकेलिये कि इतनी कूटकल्पना करनी पड़ी । एक और विचित्र रहस्य यह है कि इसके पूर्व कई घृत और तैल आयें हैं उनमें कहीं-परमी इस परकी देनेको जगह न मिली और यहाँ आकर आचार्यको भान हुआ । इसलिये यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि यह पद्य पीछेसे लगाया हुआ है । इसके अतिरिक्त अन्य स्थलोंमेंभी उलूकत नहीं मालूम होती है । यदि आचार्यको १ श्रेणकी जगह द्विदोण अभीष्ट होता तो दो का नाम लेनेमें कोई पाप योझाही लगता, प्रत्युत इससे विपरीत देखनेमें आता है देखो पूर्वोद्धिष्ट दृढबलकी उदाहरणमें दशमूलादितैलमें “चतुःश्रेणोऽम्बरा पक्त्वा श्रेणोपेण तेन च । तैलात्क समक्षीर जीवनीय पलोन्मिते ॥” यद्यपर ३२ गुना पानी बतला दिया सो बायोकी परमावधि तक पहुचगये । यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा अभीष्ट होती तो “युग्मदोणोऽम्बरा पक्त्वा” ऐसा पाठ करते । पर वैसा न करनेसे यह भेदियेसाधन जैसाही मालूम पड़ता है ।

इसीतरह त्रिफलात्वक् त्रिकटुक सुरसा मद्यपन्तिका (सु चि १३४) इस महानीलीपृतमें जलापेक्षया काष्य इत्युकी अधिकता होनेसे टीकाकारोंने इसे अनार्प कहा है । दृढगनेभी इसत्रातका परिचय दिया है । यदि द्रवद्वैगुण्य परिभाषा होती तो जलापेक्षया काष्यद्रव्यकी आधिक्य बल्लग कभी नहीं कहते । इसलिये द्रवद्वैगुण्य परिभाषा सुश्रुतमें नहीं है अर्थात् ‘द्रव्याणा’ ऐसीही पाठ प्रतीत होता है । हा । इसपरिभाषाका एक रहस्य यह मालूम होता है कि मानप्रकरणमें एक रक्षिकादि मान और दूसरा कृत्वादिमान अथवा खारीमान और तुलामान ऐसे दोतरहके मान देखनेमें आते हैं इनमें रक्षिकादि और तुला यह मान तराजूसे तोलनेका है तुला नाम तराजूहीका है । “नैवयोधमविषमूलमूलनीताजुलाभ्य (पा० ४।४।९१) तुलया सम्मित तुल्यम्” इत्यादिसंज्ञोंमें पाणिनिने भी तराजूही का नाम लिया है और १०० पल का नाम तुला (व्यावहारिक पंसेरी) माना जाता है वह श्रेणोही की तरह काश्चित्कई क्योंकि साधारणतया अधिक गन्ना तोलनेकेसमय पंसेरीसे काम लिया जाता है बस इसीलिये १०० पलकामी नाम तुला रखलिया गया है । अबभी यत्र तत्र दशोंमें तुलामानसे तराजूकातोत और कृत्वा, प्रस्थ अथवा खारीमानसे माप समझा जाता है । यह अबभी दोतरहका दशोंमें प्रचलित है और भाषणमें तथा तोलने वस्तुओंके गुणत्वमें बहुतगया अन्तर आता है । उदाहरणार्थ त्रिपयाममें उद्द और भरहरकी धुलीदात तथा

पीलीससौं २० तोले आतीहै उसमें चावल, उड़द और तेल २३ तोले, जल २५ तो०, मधु ३० तो०, बाज ३५ तो०, लोहभस्म ४५ तोले और लाजा २। तोले आतीहैं सो देखिये कितना अन्तरहै । प्राचीनसमयमें साधारण्यवहारमें मापका प्रचार अधिकथा सो कहीं इस मापकोही लेकर तो लोगोंने यह द्रवद्रैगुण्य परिभाषा नहीं मानलीहै । चरक अथवा सुश्रुतमें इसकी चर्चा नहीं कीहै पर कृष्णात्रेयने मानप्रकरणमें “वेणु-वार्श्यासदादीनां भाण्डं यच्चतुरङ्गलम् । विस्तीर्णमय वृत्तं च तन्मानं कुडवं विदुः” ऐसा कुडवमान बतायाहै । इनकीतरह दूसरोंने भी लिखाहो यह सम्भवहै । उद्योको लेकर यह गड़बड़ी हुईहो यहमी होसकताहै कारणकि इसका प्रमाण कुडवहीसे कियाहै उसके नीचेका मान या तो अन्दाजसे लेलियाकरतेये या कटिसे तोलतेये । वह तोल द्वादश और शुष्कका बराबरही भाषा करता था इसको “रक्ति-कादिषु मानेषु यावदि कुडवो भवेत् । शुष्कद्रव्ययोस्ताप-सुत्यं मानं प्रयोजयेत् ॥” इसवाक्यसे बतायाहै । यहाँपर ‘सुत्यं मानं, जो दियाहै उसका अर्थही यह होताहै कि कटिसे तोलकर बराबरकियाहुआ भाग । इसकोबाद “यद् द्रव्यं कुडवाद्द्रव्यं प्रत्यादिधृतनामकम् । द्विगुणं तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥” अर्थात् कुडवसे आगे जो प्रत्यादिक-सङ्ख्याहै उसे भी जब सराजमें तोलकर केना हो तो वहाँपर भी सब वस्तुओंका बराबरही मान लेना यह अर्थहै । इसका अभिप्राय यहहै कि तुला (तराजू)से चाहे जिस द्रव्यको तोले उनके तोलमें कोईभी अन्तर नहीं आताहै हां जब इसे कुडवादिमापसे लेंगे तबतो न्यूनाधिक्य होनी अनिवार्यहै यह इसका मुख्य अर्थहै । इसीलिये “रक्तिकादिषु मानेषु यावदि कुडवो भवेत् । द्वादशशुष्कद्रव्याणां तावन्मानं समं मतम् ॥ यद्-द्रव्यं कुडवाद्द्रव्यं प्रत्यादिधृतनामकम् । द्विगुणं न तुलामानमिति मानविदो विदुः ॥” ऐसा विस्पष्टविन्यास कियागयाहै पर बहुतसे लोग इसके रहस्यको न समझकर “यद् द्वादशैव द्रव्यं ध्रुवनामकं प्रत्यादि तद्द्विगुणं प्राञ्च, तुलामानं न, अर्थात् द्विगुणं न कार्यम्” ऐसा अन्यथकरके कुडवसे ऊपर प्रत्यादि प्रसिद्धानामसे आयाहुआ द्वादशैव द्रव्यं द्विगुणं लेना पर साक्षात् तुलाकेनामसे आयेहुएको द्विगुणं न करना ऐसा अर्थकरतेहैं । कितनेही अक्ष यह अर्थ करतेहैं कि जहाँ प्रसति, अग्रलिप्रसृतिसे नाम आयेहो वहाँपरभी द्विगुणं न करना । देवो-“विद्योपः कथ्यतेऽप्योऽपि माने शुष्कद्रव्याश्रये शुष्कद्रव्याश्रयं मानं निर्दिश्य यदुदाहृतम् ॥ ६२ ॥ द्रवेषु द्विगुणं मानं सयथै-वोद्वृत्तं च । द्विगुणं मानमित्येवदारम्यं कुडवादिदि ॥ ६३ ॥ शुष्कणाञ्च द्वापणाञ्च समं तु कुडवादपः । तुलामामपि नैवेष्टा द्विगुणा मानकल्पना ॥ ६४ ॥ तुला पलगतं चैव तच्छुष्कद्रव-योर्मतम् । पलं चतुर्गुणं चैवं प्रसिद्धापकादिदम् ॥ ६५ ॥ यदापस्तुलामापं रसे तैलादकं पचेत् । यदुक्तं घटमेवात्र पलानां परिणमते ॥ ६६ ॥ चतुर्गुणमेतच्च पलं नाष्टपुण्ड्रकम् । द्रवस्य

द्विगुणत्वे स्यात्पलमष्टपुण्ड्रकम् ॥ ६७ ॥ नैवाञ्छली न प्रसृते न पले न पलादपः । द्वापणामौपधानां हि द्विगुणं मानमित्येते ॥ ६८ ॥ अ. सं. कल्प इन्दुटीका ॥” इसीतरह औरभी कईलोगोंने प्रयासकियाहै पर वह पूर्वाक्रीतिसे लब्धास्पद नहींहोताहै इसमेंभी शुष्कापेक्षया आर्द्रैगुण्यमें तो सुश्रुतभी सहमतहैं परन्तु द्रवकेलिये झगड़ाहै । झगड़ाही नहीं किन्तु उसकी उपयुक्तताभी नज़र नहीं आतीहै इसलिये इसकी प्रसि-प्ततामें कुछभी सन्देह नहींहै । इसीतरह कईतरहके पुटकरवाक्य और भी मिलतेहैं वे भी छात्रोंकेलिये जालरूपहैं उनमेंसे जो जो उपपत्तिरहितहैं उन्हें प्रशिक्षणसमझकर अनादिय समझना । उनमेंसे कतिपयके उदरण नीचे दिये जातेहैं । यथा— “आर्द्रद्रव्यं द्रवद्रव्यैः पलैश्चभिरैव च । शुष्कद्रव्यैः चतुष्केण कुडवः समुदाहृतः ॥ हारीत० ॥ “आर्द्रस्यापला मात्रा कुडवस्य प्रमाणतः । मयुतैलपूताद्वैश्च शुष्कद्रव्ये चतुःपले ॥ पुष्कलवत० ॥ “गुडगुण्डुलुनाहीकैः त्रिफलारिष्टनागैः । कृष्माण्डाकनिम्बानां कुडवथाश्रभिः पलैः ॥ विश्वामित्र०” “लाजापायसनालिकेरसलिलैर्मूर्तिस्तथा काञ्चिकै र्मत्स्यण्डीम-धुतकमस्तुमादिरादीनां भवेद्द्वैगुणः । वासानिम्बपटोलिकेतकि-बलाकृष्माण्डकेन्दीवरीः, वर्षान्कृत्तजाश्वमारसहिता व्योयो-श्वण्णाम्नाऽश्रुताः ॥ मांसी नागबला सहाचरपुरं हिंवाद्रकं नित्ययोः प्राहास्तास्तणामेव न द्विगुणिता ये चैशुजातास्तथा ॥ रचरर्षण०” “गुडरामकण्डुदीनां मांसीकृष्माण्डयोरपि । शुद्धस्या गुणु-लोथव प्रस्यः पीठशभिः पलेः ॥ भेल०” “लाजापायस-नारिकेलसलिलं मूर्तं जलं काञ्चिकं, द्वात्रिंशत्पलकं तदर्थ-मुदितं प्रस्यं रसायोपयोः । तैलं शौद्रपृतञ्च विंशतिपलं शीरश्च त्रिंशत्पलं, तद्वपञ्चकपञ्चकं गुडपलं चाष्टादशं प्रोच्यते ॥ प्रस्यं तु पोडरापलं द्रव्ये ऋषे रसे तथा । शौद्रे सर्पिपि तैले च प्रस्यं विंशत्पलं भवेत् ॥ इत्यागमेन द्वैगुण्यं निरामस्य द्रवस्य च । द्वात्रिंशता पलेः प्रस्यं प्रोक्तं पायसलाजयोः ॥ सूत्रकाञ्चिकमस्त्व-म्युनारिकेलाममतामपि । मूलत्वदाहृषणायोः पुष्पस्य च फलस्य च ॥ शिशाखवणञ्जोदलोहानां गोमयस्य च । पलेःपोडराभिः प्रस्यो रसस्य ह्यौपपस्य च ॥ प्रस्यं पलानां विंशत्या तैले मासि-कसर्पियोः । शीरे च विंशतिः प्रस्यो दध्नः स्यात्पञ्चविं-शतिः । गुडस्य सप्तदशभिरितिभोजमते स्थितिः । शुद्धस्य दशनिष्कं हि पलमात्रेण पूजितम् ॥ शशिःकुम्भकस्तूरीशर्करा-शुद्धक्यांशि च । वनेने न निरुद्धे च तथा शोणितमोक्षणे । साधेनयोदरापले प्रस्यमाहुर्मनीपिणः ॥ पद्महलं तु विस्तीर्णं द्वादशाङ्गुलमायतम् । एतन्मागधिकं प्रस्यं मानमाण्डेऽपु वृजि-तम् ॥” इत्यादिस्फुल्लोमें जिसवस्तु का एकने ४ पलका कुडव बतायाहै उसका दूसरोंने ८ पलका बतायाहै यह कहीं तोल और मापकेभेदसे, तथा कहीं तद्वत् ‘किञ्च हिदाषसे है’ जैसे कि शुष्का १० पलका प्रस्य मानाहै यहाँपर शुद्धको छाननेसे यदि वह विशुद्ध न होगातो कल्पिकम् १ प्रस्यमेंसे १ पल किञ्च निरुद्धनायाग उसको निकालनेकेलिये १० पलका प्रस्य

मानलिया । क्षीरका २० पलका प्रस्थ मानाहै इसमें मापके हिसाबसे ४ पल अधिक आवेगा । इसमेंदेने दिखानेकेलिये २० पलका प्रस्थ मानलिया । दहीका २५ पलका प्रस्थ मानाहै उसमेंभी मापही का भेद मालूम पड़ताहै इत्यादि अवान्तरभर्दों कोलेकर नानातरहके प्रस्थ और कुडवादिफलोंमें भेददेखनेमें आताहै परन्तु यह भेद चरक और सुश्रुते नहीं मानाहै इसलिये सुश्रुतकी मानपरिमापामें "द्रवाणा को प्रविष्टरूना तन्त्रको व्याकुलकरताहै

अस्तु इस वितण्डाको छोड़कर प्रकृतविषयकी तरफ ध्यानदी जिये । क्यायमें मृदुता, साधारणता और तीक्ष्णत्वोत्पादनाहै सुश्रुतने क्वाप्यद्रव्यकी त्रिविधयोजना की है यद्यपि मृदुत्वादिगुणोदय द्रव्यबाहुल्यसे अथवा द्रव्यगत व्याधि विकृतिसे ठेदि मदा वहाऽऽप्रेत्यत्वादि गुणोत्से हुआकरताहै तथापि यहापर द्रव्यबाहुल्यको लेकरही भेद बतलाना आचार्यको अभीष्टहै । एकपलमें १६ पल जलदेकर ४ पलावशित क्यायमें १ पल घृतादिस्नेहका पाककरनेसे मृदुप्रकृतिक स्नेह तैयारहोगा क्योंकि स्नेहसम द्रव्यका सार स्नेहमें आयाहै इसे मृदुप्रकृतियोंमें नियुक्तकरना, दोपल द्रव्यको ८ पल पानीमें पकाकर २ पल अवशितक्यायमें २ कर्ष स्नेह पकानेसे साधारणप्रकृतिकस्नेह तैयारहोताहै क्योंकि स्नेहसे द्विगुण द्रव्यका इसमें सार आयाहै इसे मध्यम प्रकृतिक व्यक्तियोंको देना । इसीतरह ३ पल ८ माघे द्रव्यको ५ पल जलमें उवालकर ११ पलावशित क्यायमें ११ कर्ष स्नेह पकानेसे तीक्ष्णप्रकृतिकस्नेह तैयार होगा, इसे जवान और साहसिक लोगोंको अथवा कुष्ठप्रश्रुति भयहर व्याधियोंमें देना चाहिये यह आचार्यका अभिप्रायहै । तृतीयकल्पमें सुश्रुतमता सुसार स्नेहसे ठीक चतुर्गुण क्वाप्यद्रव्य नहीं आताहै इस बातपर ध्यानरखना चाहिये । हा "क्वाप्याचतुर्गुण कारि स्नेहात्क्वाप्य चतुर्गुणम् । क्षीरं स्नेहसम द्यात्कल्कश्च स्नेहपादिक ॥ द्रवेण केवलेनैव स्नेहपाको भवेद्यदि । तत्राम्बुपित कल्क स्याज्जल चापि चतुर्गुणम् ॥ ऐसा शिवने खलातन्त्रमें मिलताहै सो परपरिमापाकीतरह सुश्रुतीयतृतीय कल्पका आनुमानिक अर्थमानकर लिखाहै अथवा अपनी कल्पनासे कायमकियाहो, इसका पता प्रस्थनिर्माणकाल्पान साधेहै सो होना मुदिकलहै । अन्यलोगोंने द्रव्यगतमृदुता, साधारणता और कठिनताको लेकर जलपरिमाणमें भेद बत लायाहै यथा—"मृदो चतुर्गुण देय कठिनेऽष्टगुण जलम् । कठिनात्कठिने देय बुधे षोडशिक जलम् ॥ मृदादिवायवसृष्ट्यात् मानानुके चिकित्सका । मध्यस्थोभयगामित्वादिच्छन्त्यष्टगुण जलम् ॥ काप्यद्रव्यपले कारि द्विरष्टगुणमित्युच्यते । चतुर्भागावधे पतुं पेय पलचतुष्टयम् ॥ क्षारपाणि ॥ इत्यादिवाक्योंमें काप्यद्रव्यके परिमाणमें कुछ अन्तर नहींहै उचका प्रमाण तीनोंजगह बराबरहै इसलिये यह विषय प्रयत्नहै इसपर ठीक ध्यान रखना चाहिये । 'मापकादिक यावद्वायव्योऽधिक शल्यम् । तूर्ध्वं कुडव यावतोभयमष्टगुण भवेत् ॥ प्रस्थादे

कुडवाद्ूर्ध्वं सलिलञ्च चतुर्गुणम् । प्रस्थादित क्षिपेनीर स्तारौ यावच्चतुर्गुणम् ॥' यराहमिहिरने तोलकी सीमावाचकर षोडशादिगुणजलकी व्यवस्थाकीहै परन्तु इसमें बीज क्याहै यह निर्धारित नहीं होताहै तैसेही प्रामाणिक आयुर्वेदीयसहि ताभिक्षेसाय सबदितभी नहीं होताहै इसलिये यह उतना मूल्यवान् सिद्धान्त नहीं निर्धारितहोताहै ।

रस या गुटिका प्रभृतिमें भावना देनेकेलिये जहापर साक्षात् स्वरस मिलसकताहो वहापर अच्छीतरह आर्द्र होखे ताव न्मात्र स्वरस देनेका प्रमाण समझना "द्रवेण यावता द्रव्यमेकीभूयार्द्रता व्रजेत् । तावत्प्रमाण निर्दिष्ट भिषग्भिर्भावनाविधौ ॥ कृष्णात्रेय ॥" स्वरसाऽभावमें भाव्यद्रव्यसमक्वाप्यको अष्टगुणितपानीमें उवाकर भाव्यद्रव्यसम अवशित रहनेपर भावना देना यह साधारणनियमहै । यदि इससे भाव्यमान द्रव्य अच्छीतरह आम्बुत न होसके तो भाव्यद्रव्यसे द्विगुण वाध्यद्रव्यको १६ गुने पानीमें वधितकर भाव्यमानद्रव्यसे द्विगुण अवशित रखकर उससे भावना देना । देखिये—"भाव्य द्रव्यसम क्वाप्य कायोऽशास्तु तेन हि । आर्द्रं यावद्धि तद्भाष्य सप्ताहं भावनाविधौ ॥" कृष्णात्रेय । उपरिनिर्दिष्ट जलप्रमाण साधारणतया स्नेहपाकविषयक अथवा पानविषयक वा भाव नाविषयक समझना ।

'स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव्य, स्नेहचतुर्गुणो भेषजकल्कस्तदिकल्प्य समुज्य विषयेदित्येव स्नेहपाककल्प ॥ सु चि ३१८ इसवाक्यमें द्रवचातुर्गुणको देखकर यह सन्देह उठना स्वाभा विकहै कि यह चातुर्गुण्य सङ्घातापेक्षया है या प्रत्येकापेक्षया ? जहा वाचनिक प्रामाण्यनिर्देश किया हो वहाकेत्रिये तो किसीतरहके विचारको अवकाश ही नहींहै कारणकि विधि वाक्यमें सन्देहका कोई कारण नहीं रहता इसीलिये 'स्नेहभेषजतोयानां प्रमाण यत्र नेरितम् । तत्राऽय विधिरास्त्रेयो निर्दिष्टे ततदेव तु ॥' इससे उपरकहाहुआ सिद्धान्त स्पष्ट होजाताहै । परन्तु अनुकल्पानमें क्या करनाचाहिये ? यह आकाङ्क्षा उठनी स्वाभाविकहै । उसकेलिये 'स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव्य' यह साधारणनियम आचार्यने कियाहै । जिसजगह एकद्व बतलायाहो परन्तु प्रमाण न दिखायाहो वहापर "स्नेहा चतुर्गुणो द्रव्य" यह परिमापा उपस्थितहोकर सन्देहको दूरक रेगी । परन्तु जहा क्याय क्षार आरनाऽ, माघरसादि कईद्व प्रमाणहित बतायेहों या बालनेहों तो वहाहैलिये सन्देह उपस्थितहोगा कि यहां चतुर्गुणत्व किसतरह लियाजाय ? इसकलिये 'चिनिगामनाविरदाद्विचाराय' अर्थात् जहा विशेष कोई गमक न हो वहापर अविशेषसे काम लिया जाताहै प्रथमें जितने द्रव आयेहों वे प्रत्येक स्नेहहै चतुर्गुणित सेनेवाहिये यह सिद्धान्त स्थिरहोताहै । इसीलिये 'स्नेहाच्चतुर्गुणो द्रव इति चनान्त्सर्वेषुदृक्क्षाराद्यो शृण्वन्ते । केचिदेव पठन्ति यत्रैकत्रिचतुर्गुणद्वयव्याणि तत्र सवाणि चतुर्गुणानि, पत्रय

श्रुतीनि समानानि इति तथा चोक्तम् "पञ्चप्रथति यत्र स्युर्द्र-
वाणि स्नेहसविषौ । तत्र स्नेहसमान्याहुरन्यत्र स्याच्चतुर्गुणम् ॥
इति" ऐसा व्याख्यान बल्हणेने कियाहै । उल्हणका मुख्य
सिद्धान्त वहीहै जो हमने बतलायाहै । इसीलिये "चित्रक-
न्योपसिन्धुत्व० सु. उ ४२।२५" यहापर "द्वयादीनि
मूलकस्वसान्त्वानि प्रत्येकं धृताच्चतुर्गुणानि" ऐसा उल्हणने
व्याख्यान कियाहै । "पञ्चप्रथति यत्र स्यु ०" यह पद्य
अग्निवेशसंहिताकाहै इसके चतुर्थपादमें "अर्वाक् तस्माच्चतुर्गुणम्"
ऐसा पाठ है जिसजगह चारसे ऊपर द्रवहों वहापर स्नेहके
बराबर लेवे और पाचसे नीचे अर्थात् १, २, ३, ४, इन-
प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुणित लेवे, यह स्वरसत अर्थ निकलता
है । इसीको स्पष्टकरनेकेलिये "यत्र द्वित्रिद्वैत्र्यै कुर्यात्स्नेहा-
च्चतुर्गुणम् । क्षीर स्नेहसम दद्याच्चतुर्भिश्च चतुर्गुणम्,," इसपद्यको
जैयटने लिखाहै । टोबरानन्दमें "पञ्चप्रथति०," श्लोकको
लिखकर "अस्याऽयमर्थः—युक्तो द्रवस्तत्रैकेन चातुर्गुण्य,
द्वाम्यामपि चातुर्गुण्य, त्रिभिरपि चातुर्गुण्यमिति,,
ऐसा खुलासा करके 'तत्र जैयटः, ऐसा लिखकर
"यत्र द्वित्रिद्वैत्र्यै—" इसपद्यको उद्धृतकियाहै इससे हमारा-
कहाहुआ सिद्धान्त स्थिर होताहै । इसरहस्यको न जाननेवाले
कितनेही लोगोंने इसका उच्छाही अर्थ कियाहै देखिये—“स्ने-
हाच्चतुर्गुणे द्वे इति वचन एकद्वित्रिद्वेषु चतुर्गुणत्वन्वये
स्नेहसायननिषेधार्थम्, न तु पञ्चप्रथतिद्वेषु चतुर्गुणाधिक्ये
प्रतिषेधार्थम्, तेन यत्रैकेन द्रवेण पाकस्तत्रैकेन चतुर्गुण्य,
यत्र द्वाम्यां द्वाभ्यां स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाम्यां ताभ्यां
चातुर्गुण्यं, यत्र त्रिभिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र त्रिभिर्भिल्लितैश्चातुर्गुण्यम्
यत्र तु चतुर्भिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति ।
यत्र तु पञ्चप्रथतीनि द्रवाणि तत्र तु सर्वाणि स्नेहसमान्येव
श्राव्याणि ॥” इत्येव कया अर्थका अर्थयं कियाहै ।

जहां सर्पविष या हास्टिकप्रभृति द्रवके योगसे स्नेह पका-
नाहो वहापरमी क्या इसनियमको लगासकेंगे ? यदि स्वीका
रेंगे तो महा अनर्थहोगा इसलिये—“स्नेहाच्चतुर्गुणे द्वे इति
वचन एकद्वित्रिद्वेषु चतुर्गुणत्वन्वये स्नेहसायननिषेधार्थम्, न
तु पञ्चप्रथतिद्वेषु चतुर्गुणाधिक्ये प्रतिषेधार्थम्” यह मन क-
ल्पित नियम निर्मूलहै कारणकि एकत्राक्यसे परस्परविषुद दो
नियमनिकाळने न्यायविरुद्धहै । "चतुर्गुणान्वये द्वे स्नेहो
न साम्यः" ऐसा नियम बनानेके तब वाक्य निराकाङ्क्ष होनेसे
आकाङ्क्षाका उत्पान कैसे होगा ? इसवातको सोचा होता तो
ऐसी भंडवड कल्पना न थी होती इनलिये यह वाक्य अशुद्ध
द्रवप्रमाणत्वल्ले दिग्दर्शनापेहै । यह न तो द्विगुणियुद्धमें निषे-
पकरताहै और न पञ्चप्रथति द्रवोंमें विधिमुद्रया प्रवृत्तहोताहै ।
साधारणवाक्यहोनेसे जहांइहींही द्रव आवेगा वहां इषुद्धी उप-
रिचयित होगी वे चाहे जितने क्यों न हों । यदि चतुर्गुणमा-
त्रका नियमकरते तो "दोके द्रवयुते सिद्धं मृत्कारजसे घुमे ।

सु उ ५१।२५" यहापर द्रवयुते द्रवमें तैलसिद्धकियाहै । यदि
चौयुने द्रवका नियमहोता तो आचार्य अपने नियमका आपनेसे
कैसे भङ्गकरते ? और देखो "सुवहा कालिका भार्गी शुका-
ख्या मैत्रुल फलम् । . . ॥ सु उ ५१।२३-२४" "गोप
वल्गुयुक्ते सिद्ध स्यादन्यद्विगुणे घृतम् ॥ सु उ, ५१।२६"
इत्यादि स्नेह द्विगुणद्रवमें सिद्धकियेहै । इसलिये चतुर्गुणसे
कम द्रवमें स्नेहसिद्ध नहीं होताहै यह नियमभी निर्मूल हुआ ।

चित्रकादिघृतमें दधि, आरनाल बदर, मूलक इनप्रत्येकद्रव
रसोंको उल्हणने चतुर्गुणित बतायाहै इसलिये "यत्र द्वाम्या
द्वाभ्यां स्नेहपाकस्तत्र स्नेहद्विगुणाम्यां ताभ्यां चातुर्गुण्यम्,
यत्र त्रिभिर्द्वै त्रेहपाकस्तत्र त्रिभिर्भिल्लितैश्चातुर्गुण्यम्, यत्र तु
चतुर्भिर्द्वै स्नेहपाकस्तत्र स्नेहसमैश्चतुर्भिश्चातुर्गुण्यमिति ।"
यह व्याख्यानभी निर्मूल उद्धरताहै । इससे जहां वाचनिक
प्रमाण आवे उसको दैसाही लेना और अन्यत्र जितने द्रव
हों उन प्रत्येकको स्नेहसे चतुर्गुण लेना यही सुधुतीयसिद्धान्त
मालूमहोताहै । हा उल्हणनेचने चारसे ऊपर इसका नियमन्यत्र
कियाहै पर सुधुतके मतमें नहींहै । यहापर सुधुतके कईतरहके
द्रवप्रमाण देखनेसे यही सिद्धान्त निकलताहै कि स्नेहादि
पदार्थ तैयार करनेकेलिये केवल हमारा दिग्दर्शनहै जहां येव
जैसी औचित्य समसे वहा वैसा योग करे । इन्हीं सब बातोंको
विचारकर मालूम होताहै कि "बह्ल्लपपानीयमाहितानौषध्या
नाम्नाकल्प्य यावता मुक्तसता स्यात्तावदुदकमासेचयेच्छोपदेव"
अर्थात् मूठ, मध्य और कठिनत्वादि भेद समझकर यह निर्वा-
रितकरे कि इन औषधोंमें कितने गुना पानी देनेसे इनका
अच्छीतरह सार निकल आवेगा उतना पानी देकर वापकरके
उचित शेष रखले । ऐसा वागमटने निष्कर्ष निकालाहै । इस
कथायकल्पके आधुनिक कालपनिकजालमें न पक्कर आर्यभट्ट
दायसे काम लेना चाहिये ।

जहां कल्ककी औषधें निर्दिष्टहैं वहांपर हम जैसा प्रथम
कहचुकेहैं उसके अनुसार जितनेभी पदार्थ स्नेहमें आनेवालेहैं
उनसबकी सीटीको जोड़कर उधसे चतुर्गुणित स्नेहको रखकर
कामकरनेसे निर्दिष्ट स्नेहसिद्ध होगी । पाकके मूठ, मध्य और
खरत्वेके लक्षण जैसे सुधुतने दिखेहैं उसीतरह समझना क्या
"अत ऊर्ध्वं स्नेहपाकक्रममुपदेश्याम । स तु त्रिविध
तद्यथा—मूठमध्यम चर इति तत्र स्नेहोपधिदिवेकमार्थं यत्र
भेपत्रं स मूठरिति, मधुचिञ्जमिष विराट्मन्त्रिलेपि भेपत्रं यत्र
स मध्यमं, कृष्णमवसत्रमोपदित्तर चिर्णं च यत्र भेपत्रं
त चर इति, अत ऊर्ध्वं द्वाभ्यन्तरे भवति, तं पुनः साधु
साधयेत् । यत्र पानाम्यवहायोदुत्तु . न्यायाऽन्यद्वयोर्मध्यमं,
वस्तिकर्णमूलयोदुत्तु चर इति ॥११॥ भवत्तथापि चतुर्गुणपदमे
प्राप्ते पेनस्योपरमे तथा । गन्धवर्णत्वादीनां सम्यक्तौ सिद्धि
मादिदेत् ॥११॥ घृतान्येव विषस्यस्य जानीयात् इत्यत्रो गिरह् ।
येनोपतिपार्थ तैलस्य शेष पत्तरदिशत् ॥११॥ सु चर. ३१

जहां कल्कप्रयुक्तिका निर्देश न कर केवल गणमात्र निर्दिष्ट कियाहो जैसे कि "सौवर्चल्यवक्षारकटुकान्योपचित्रैः । ववाभ्रयाविडम्बैश्च साधितं श्वासान्तये ॥ सु उ ५११२५" इत्यादिमें 'अनुफे द्रवकार्ये तु सर्वत्र सलिल मत्म् । कल्क क्वाथावनिर्देशे गणात्तस्मात्प्रयोजयेत् ॥ सु चि ३१११०,, इसरिभाषासे कामलेना ।

आजकल "आपिधानमुखे पात्रे जल दुर्जरता व्रजेत् । तस्मा दावरण त्यक्त्वा कापादीना विनिधय ॥" अर्थात् ढकेहुए बतनमें जल जल्दी नहीं सूखता इसलिये खुलेमुहके बतनमें वायु पकाना चाहिये । कितनेही लोग दुर्जरका अर्थ पाचनमें भारी होताहै ऐसाकरतेहैं । इसी धुनमें लोग सगेहुएहैं परन्तु यह श्लोक कहाँकोहै इसका पता नहीं चलताहै । हाँ आनकल शार्ङ्गधरमें शामिल कर रखाहै परन्तु आढमलके समयमें शार्ङ्गधरमें यह श्लोक नहींथा ऐसा अनुमान होताहै यदि होता तो इसकी व्याख्या की होती । इस श्लोककी रचना भी अण्डवण्डहै इसका अन्तिमपाद अपने अर्थको प्रकटनहींकरताहै । किसी योग्य पुरुषका बनायाहुआ होता तो 'विनिधय, की जगह 'विधि स्मृत' श्रुते विधि, 'वायस्य करणे विधि' इत्यादि पाठ होता । आस्तपुरुष प्राय अघ्याहारनिरपेक्ष वाक्यका प्रयोग किया करतेहैं इसलिये यह साफ बनावटी नजर आताहै । यदि यह सिद्धान्त प्राचीन होता तो दाल बगैरह ढकनेकाभी रिवाज न होता प्रत्युत विपरीत देखनेमें आताहै । ढके बिना पदार्थपरमाणुओंका पृथक्करण जल्दी नहीं होता और पाचनहोनेमें पृथक्करणही मुख्य कारण होताहै इसलिये द्वितीय जो अर्थहै वह निर्मूलकहै । "वृद्धवैद्योपदेशेन पिबेत्काथ सुपाचितम्" यह शार्ङ्गधरने स्वीकृत कियाहै । 'सुपाचितम्' का अर्थही यह है कि अच्छीतरह काष्ठद्रव्य परमाणुओंका जिसमें विशेष होगयाहो और उसके गन्ध, वर्ण तथा रस विकृत नहुए हों इसीवातको आढमलने दिख लायीहै यथा—"सुपाचितमिति गन्धवर्णरसान्वितम् । तदुत्तमम्—द्रव्यस्य गन्धवर्णैश्च शुल्य कार्यकर विदुः । तद्विशुद्ध विशुद्धाय कषायममृतोपमम् ॥" यह उद्धरण दियाहै । इसपर अच्छीतरह ध्यानदेकर विचारना चाहिये इस श्लोकके निकल विपरीतार्थक वह पयहै । बिना ढकेहुए काथकरनेमें चन्दनादि जो गन्ध द्रव्यहैं और उनका गुण गन्धहीपर अवलम्बितहै वह गन्ध उसमेंसे निकल जायगा तब बाकी सीठी रहकर कामही क्या करेगी । इसवातको आजकलके वैद्य भेडिया पसलने पढ़कर भूलगयेहैं परन्तु अर्कलॉचिनेवाले अक्षर इसकी तर्क अच्छीतरह ध्यानदेतेहैं और अर्कनिकालनेकेलिये आज कल नवीनशोधके जमानेमेंभी इसतरहके यन्त्र बनाए जा रहेहैं कि जिनमेंसे किसीतरहभी गन्ध या वाष्प न उड़नेपावे । जब द्रव्यस्य गन्धही निकलजायगा तब बाकी रह क्या जायगा ? इसको सस्त्री भी समझसकताहै । हाँ कदाचित् जन्दीबनानेके दिसावसे यह वाक्य बनाया गयाहो तो वह भी मूर्खताहै

उसकेलिये उपदेशकी खुरुरत नहीं उसे तो सवलोग जानतेहै । जब जल्दी होतीहै तब गुदप्रदाशनकाभी पता नहीं चलताहै क्या इसकेलिये किसी विधिवाक्यकी खुरुरतहै ? अर्कलॉच नेकासिद्धान्तभी इसीरहस्यको लेकर प्रचलित हुआहै उसका सिद्धान्तहै कि द्रव्यस्थ गुण और गन्ध प्राय सबके सब वाष्पमें शामिल रहतेहै इसलिये सुगन्ध द्रव्योंका अर्क गितना कामकरताहै उतना काथ नहीं करता यह प्रत्यक्ष विषयहै ।

आसवोंकेलिये यदि वे खदिरसारकीतरह कठिन द्रव्य हों तो १ पल क्वाथद्रव्यमें ३२ पलपानीदेकर अष्टमासावशेष रहनेपर उसकी बराबर पुरानागुड़ देवै—"आसवादिषु साध्येषु द्वान्नि श्लुणसम्मितम् । खदिरादे प्रतिपल जलमाहुधित्वित्स्का ॥ अष्टावशेषित कृत्वा गुड वायसम क्षिपेत् ॥ वृद्धसुश्रुत ॥" जहां द्रव्य अधिक हो और पानी कम कहाहो अथवा अनुमानसे छोड़ना हो तो कम न छोड़ना । वैसाकरनेमें द्रव्यकासार न निकलनेसे यथार्थ गुणोदय नहींहोगा इसलिये १ द्रोणद्रव्यमें १० द्रोणपानीदेकर उबालनेपर २॥ द्रोण अवशेषकवायसमें १॥ द्रोण पुराना गुड ढालकर अच्छीतरह मर्दनकर सन्धानकरना उचित है ।—"क्वाथ्यद्रव्यस्य बाहुल्यादुदक स्वल्पमेव चेत् । सम्यक् पाकं न मुञ्चन्ति हीनवीर्येन्तु कैवल्यम् ॥ क्वाथ्यद्रव्य घटसम जल दशघटे क्षिपेत् । नि क्वाथ्य पादशेषे तु गुड सार्ध-घट न्यसेत् ॥ विमृश सन्धित यव तवावसर्गितोरितम् ॥ वृद्धसुश्रुत ॥" मृदुप्रकृतिकरोगियोंकेलिये द्रव्योंका क्वाथ न बनाकर जहां आसव तैयार करनाहो वहापर औषध चूर्णके बराबर पुराने गुड़को चौगुने पानीमें मिलाकर जबउदचूर्ण ढालकर सन्धानकरे, यह अत्यन्त मृदुप्रकृतिक आसव होताहै इस रहस्यको न समझनेवालोंने क्वाथसिद्धसन्धानको अरिष्ट और क्वाथबिनाको आसवकहतेहै ऐसा नियम बनारखाहै । और इसकेलिये "यद्पक्वौपधान्मुस्या सिद्ध मय स आसवः । अरिष्ट क्वाथसिद्ध स्यात्तयोर्मान पलोन्मितम् ॥" ऐसा वाक्यभी बनारखाहै जैसे कि शार्ङ्गधरने लिखाहै और इसीकी छायारूप "विना क्वाथेन सन्धानमासव प्रोच्यते चित्त" ऐसावाक्य बिना नामनिदानका नारायणबिलासमें दियाहै । "पक्वौपधान्मुसिद्ध यन्मय तत्स्यादरिष्टकम् । यद्पक्वौपधान्मुस्या सिद्ध मय स आसवः ॥" ऐसा भाव-प्रकाशनेभी लिखाहै यद्यपिशार्ङ्गधरने अपने लक्षणपर ध्यान देकर बर्ताबमी वैसाही कियाहै परन्तु यह आर्षसिद्धान्तनहींहै यदि ऐसा होता तो "आसवाऽरिष्टयोर्धनं न गुणो लभ्यते यदा । एकद्वित्रिंशत् कृत्वा दापयेद्गुणुदये ॥" जहां आसव और अरि ष्टोंमें विनाक्वाथकेसन्धानसे यथार्थगुणोदय न होवे तो एक दो बार अथवा तीनबार औषधोंका प्रक्षेपदेकर क्वाथ बनाकर सन्धान करना, अर्थात् प्रथमपाक ३० गुने जलने करके फिर दोबार और करना क्योंकि आसवोंमें अधिकसे अधिक ३२ गुने जलका विभागहै इससेभी अधिक तेज करना हो तो प्रथमपाक ३२ गुणमें, फिर १९ गुणमें और तृतीयअटगुणमें

करना. ऐसा गोपुरके कदमेसे पूर्वलक्षण निर्मूल होजाताहै (सूचना प्रतिपाक योग्यतानुसार नयाजल देना) आसवमें "अथावशेषितं कृत्वा गुडं क्वायसमं क्षिपेत् ॥ गुडं क्वायौपधसमं जलं चापि चतुर्गुणम् ॥ आसवारिष्टमयेषु श्वावापथ दशांशकः ॥ शौद्र्य गुडपादोनं प्रदातव्यं भिषकमैः ॥" क्वाय अथवा क्वायौपधके बराबर गुड देना । यदि गुडकेस्थानमें मधु देना हो तो चतुर्विंश क्म देना यह शुद्धधुतका सिद्धान्तहै । "अरिष्टेषु च सर्वेषु द्रोणे पलदत्तं गुडम् । चिरस्थायिष्वरिष्टेषु द्विगुणं गुडमावपेत् ॥ शौद्रं क्षिपेद्गुडस्यार्धे प्रक्षेपस्तु दशांशिक ॥ ३२ गुणप्रमृति उचितजलमें क्वायको बनाकर चतुर्थे अथवा अष्टमांशावशेष रहे हुए १ द्रोण द्रवमें १०० पल गुड देना । यदि उसे बहुतदिन रखना हो तो २०० पल देना और गुडकी जगह मधु देना हो तो गुडसे आधा देना । यह गोपुरका सिद्धान्तहै । दशांशप्रक्षेप दोनोंमें परावरहै । इसतह जहां गुडमधुप्रमुक्तिका निर्देश न हो वहां इसपरिभाषासे कामधेना उक्तेलिये विचारकरनेकी कोई आवश्यकताही नहींहै जहां जैसा लिखाहो वैसा करना । पुन "अभियवे" स्वादिसे "करोरु" (पा. ३।३।५७) प्रत्ययकरनेसे आसवराहसिद्धहोता है । सन्धानकरके द्रव्यस्थितिको जुदा करनेकानाम साधारणतया आसवहै । इसकेभेद और योनि "धान्याम्लमूलासारपुष्पकण्डपत्रत्वचो भवन्त्यासवयोनिर्भवेति ॥ सद्गृहेणाष्टौ शर्करानवम्याः तास्वेष द्रव्यसंयोगकरणोऽपरिह्लायेषासु यथा पच्यतमानामासवानां चतुरशीति निबोध ॥ च. सू. २।५।४८" में चरकने बतलायेहैं । इनमें सुरा १, सौवीर २, तुपोदक ३, मैरेय ४, मेदक ५, धान्याम्ल ६, इनमेंदोसे मयके अन्नसंयोगसे खास ६ भेद बताएहैं । धान्यासव ६, फलासव १६, मूलासव ११, सारासव २०, पुष्पासव १०, काण्ठासव ४, पत्रासव २, त्वगासव ४, शर्करासव १, इष्टतरह मोटे हियासवसे ८४ भासव बतलाए हैं । इनके द्रव्यसंयोग, विभाग और संस्कार नानातरहके होनेकेकारण नानातरहके आसव होतेहैं । "एषामासवानामासुत्पलादासवसञ्ज्ञा ॥" इससे योग्यत्वज्ञा बतलाईहै । इसका अपरपर्याय अभियवहै । इन दोनों उपसर्गोंके अनेकावृत्त होनेसे भासव बहुतप्रकारके होतेहैं यह अर्थ सिद्ध होताहै उनमेंसे एकप्रकार वहहै जिसमें द्रव्यमेंसे समस्तसार निःकल आवे, जैसे कि मयका रींचना । दूसरा यहहै कि जिसमेंसे अधिकतर सार निःकल आवे, जैसे अरिष्ट । तीसरा वहहै जिसमें कि द्रव्य उससे पृष्ण न कियेजावे परन्तु सन्धानरूपमें मयगन्ध और यहिद्विध मादकता उत्पन्न होजावे, जैसे कि सुरभवे, काष्ठी-प्रभृति । इनके अगान्तरभेद इत्राओं होतेहैं पर उन्हें लोकेमें मयके नामसे नहीं पुकारतेहैं किन्तु काष्ठी, सौदा, आचार, सुरभवा प्रभृति नामोंसे जाने जातेहैं । परन्तु "आयुत्तरवादा-धया." यह लक्षण सबजगह व्याप्तहोनेसे सन्धानरूपमें भिन्नमें व्यक्त अथवा अल्पक मददो उत्पन्नकी आसवमें गिनतीहै

इसलिये "कान्दमूलपलायथ तद्विद्यात्वाद्युतम् ॥ च. सू. २।५।२०" यहां इसवातको स्पष्ट करदीहै । मयवर्ग, च. सू. २।५।७६-१९३ में सुरा १, मदिरा २, जगल ३, अरिष्ट ४ ये चारभेद बतायेहैं । "न रिष्यत इत्यरिष्टम्" अर्थात् नहीं सङ्केतवाला पदार्थ, यहांपरमी अर्थापत्तिसे आसवावर्धेही व्यक्त होताहै । जिसमें मयसार उत्पन्नहोताहै वह पदार्थ सङ्गतानहींहै इसीलिये आजकल आलकोहल या रेकटीफाइडरिष्ट यत्किञ्चित्प्रमाणमें डालकर कषे (बिनाचाचनीके) काथोंके रखनेकी रिवाज चलीहुईहै । मयवर्गीय समस्तपदार्थोंमें यह (मयसार) योदेवहुत प्रमाणमें रहताहीहै इसअर्थको व्यक्तकरनेकेलिये अरिष्टशब्द रक्खीहै इसीलिये चतुरशीति आसवप्रदर्शनप्रकरणमें अरिष्टका नाम निशानतक नहीं दियाहै और मयवर्गमें जिनका नाम आसव दियाथा उनमेंसे शार्कर १, पक्कस २, शीतरसिक ३ और गौड ४ इनका अरिष्टशब्दसे निर्देश कियाहै वहांपर मधुशब्दका मधुप्रधानासव ऐसा चक्रपाणिद्वारा अर्थ-कियाहै यह उनकी गलतीहै । मधु स्वयं ही आसवहै इसको अधिकखानेसे नशा होताहै देखो वाल्मीकिरामायण सु० ६१, ६२ सर्ग "मधुनि द्रोणमात्राणि वाहुभिः परिश्रवते । पिवन्ति कषयः केचित्सहस्रास्तन हृत्वथ ॥ प्रन्ति स्म सहितास्सर्वे भक्षयन्ति तथा परे । मधुञ्छिष्टेन केचिच्च जन्तुरन्योन्यमु-ल्कटाः ॥ अपरे वृक्षमूलेषु दाह्या सुषु व्यथयिष्यताः । अत्यर्थञ्च मदगन्ताः पर्णाण्यास्तास्यं शेरते ॥ उन्मत्सवैगाः प्लवगा मधुमत्ताश्च हृत्वथ ॥ इष्टप्रकरणको देखनेसे स्पष्ट विदित होगा कि मधुमें कितनी मादकताहै । यह मधुमशिकार्जोका बनायाहुआ पुष्पासवहै इसलिये "यि-यन्धन्मं कफम्लम मधु लज्जल्पमास्तम् ॥" ऐसा चरकने इसका गुण बतलायाहै । इसके बाद समण्डसुरा, मधुलिका, सौवीरक, तुपोदक और अम्बुहाधिकको कहकर मयवर्गको समाप्त कियाहै इसलिये आसव और अरिष्ट एकार्थवाचकहै । इसीकारणसे "दिव्याः प्रथमा विविधा सुराः श्रुतसुरा अपि । शर्करासव-माष्ठीकाः पुष्पासवकलासवाः ॥ वा. रा. सुं. १।४।२२-२३" में रावणकी पानमूमिमें सुरा और श्रुतसुरा इनदोनोंसे अन्न-योगजन्यमय तथा आसवोंसे अन्नरहित मयवर्गको कहकर समस्त मयवर्गकी सत्ता सूचितकीहै वहांपर अरिष्टका पृष्ण निर्देश नहीं कियाहै ।

अब श्रुतके मयवर्ग (सू० ४।५।१७० से २१६ तक) की तर्क ध्यानरीजिये इसमें मारुतीक (अहरी) १ शार्कर (शजूरी) २, श्वेता ३, प्रथमा ४, मधुलिका ५, आशिठी ६, सुरा (सप्तम आयां स्वच्छमाग) की बतलाकर कोहल १, जगल २ और पक्कस ३ इसतरह क्रमशः अमाष्टिभागके गुणोंको कहकर गौड १, शार्कर २, पक्कस ३, शीतरसिक ४, आशिठ ५, जाम्ब ६, सुराग ७, मय्यासव ८, मैरेय ९, इस्वासव १०, मधुकासव ११, इन ग्यारहवीं गुणोंको बतलायाहै । यद्यपि पूर्वपरमें सीपुष्टो कदा और शीचमं भासवोंका निर्देश कियाहै ।

यदा आसवविरोधका नाम नहीं प्रतीतहोता कारण कि इसके समनन्तर ' निर्दिशेदसतधान्यान् कन्दमूलफलसवान्' ऐसा वाक्य आनेसे यद्वापर आसववाच्यसे सीधुही अभिप्रेत मान्यहोताहै कारण कि रससे इनके गुणोंका निर्देश कियाहै । रससे प्राय सीधु (ताडी) या शुष्क (सिरका) ही तैयार किया जाताहै आसवविरोध नहीं । आसवविरोधकानाम इसके आगभरिष्ठ रक्खाहै और इसे तीक्ष्ण मानाहै देखिये—“अरिष्टो द्रव्ययोग्यसत्कारादधिको गुणै । बहुदोषहरथिव दोषाणां क्षम नय स ॥ दीपन. कृत्वात्म रस पित्तविरोधन । गुलाऽऽ भ्मानोदरप्लीहज्वराऽजीर्णांऽर्शां हित ॥ इति ” राज्ञ रोगैरुद्देके रश्मं यत्किञ्चित् सत्कारदेकर मयस्वमे लयेहुएको सीधुमें १, यन्त्रद्वारा र्खीचकर तैयार कियेहुएको आसवमें २ (कोहल १ जगल २ और बरुस ३ भी इसीमें शामिलहै) और दशमूलादि दवाओंकेकायमें अपवा शुद्धजल या तक्रादि द्रवोंमें औषधचूर्ण तथा गुडादिपर्याय देकर सन्धानकिये हुएको अरिष्टमें गिनाहै । “न रित्यतीत्यरिष्टम् ” अर्थात् चिरस्थायिद्रव्य, वस इतनीनविभागोंमें प्रधान मयचूर्णको समाप्त कियाहै। इसकेबाद शुष्क (सिरका) और उदकेभेद, गौडशुष्क, रसशुष्क, मधुशुष्क, आसुत, सुरब्धे और आचार वगैरह, गुपाम्यु तथा धान्याम्बुको गौणमयमें दाखिल कियाहै । इससे “यदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्ध मय स आसव । अरिष्ट. क्वापसिद्ध स्यात्तयोर्माने परोन्मितम्” यह वाक्य निर्मूल उदरताहै देखिये सुभुत वि० १०१६ अरिष्टको बिनाक्वापके बनायाहै और पलाशासुरके परिप्लुत जलको क्वथितकर यत्किञ्चित् गाढाहोनेपर उष्णकरके सन्धानकियाहै इससे उक्तलक्षणकी विपरीतता देखनेमें आतीहै । यद्वापर यह शङ्का न करे कि वहा क्षास्तु क्वापका विधान नहींहै ? पलाशासुरपरिलु तस्य उष्णोदकस्य शीतीभूतस्य त्रयोभागाः” गरमकर ठंडे कियेहुएके तीनभाग, इससे क्वापकरना व्यक्तहोताहै अन्यथा यह कहनेकी आवश्यकताही क्या थी ? यद्वापर अवाप्तर यह शङ्का न करे कि अरिष्ट और आसव दो भेद एकही जगह क्यों कतलाए ? इसका रहस्य यहहै कि इततरहकेसन्धानके दो प्रकारहैं एक क्वथितकरके निष्पन्नकरना और दूसरा बिना क्वापका इसीलिये “प्रास्थिकीं पिप्पलीं पिष्ट्वा गुडं मध्य विभीतकात् । उदकप्रस्यसयुक्त यक्पले निषापयेत् ॥ तस्मात्पल गुजासात्तु सलिलाञ्जलिस्तुतम् । पित्रेऽपिण्डासवो वेप रोगानीक विनाशन ॥ च. वि १५१९१-१९२” इसप्रकारका चरकने पिण्डासव कहाहै सुभुतने “पिप्पल्यादिद्रवो गुल्मकफरोगहर स्मृत ॥ सु सू ४५११९६” इत्यादिकोंकी अरिष्टसज्ञा दीहै इससे सीधु और प्रसन्नाऽऽसव द्विविधसुराको छोडकर प्रधान मयका तृतीयो प्रकारहै उसे साधारणतासे अरिष्ट और आसवके नामसे निर्देशकरतेहैं । यह चाहे क्वथितकरके किया जाय अथवा क्वापबिना कियाजाय यह तो वैद्यकी बुद्धिपर आधारहै इसे हम प्रथमही सूचितकरचुकेहैं कि क्वथितकी

अपेक्षा बिनाक्वथित मृदुप्रकृतिकहोताहै । अर्थात् “मृदुप्रकृतिक् आसवस्तद्विभ्रमरिष्टम्” इसभेदको छेकर भेदकरें तो अवश्य हो सकताहै पर “पदपक्वौषधाम्बुभ्यां सिद्ध मय स आसव । अरिष्ट क्वापसिद्ध स्यात् ० । शार्ङ्ग ०, भा प्र” अरिष्टासव सीधुनां गुणान् कर्माणि चादिशेत् । युद्धथा यथास्व सत्कार मवेक्ष्य कुशातो भिक् ॥ सु सू ४५११९७” की टीकामें “द्रव्यप्रधानमरिष्टम्, द्रवप्रधान आसव, उभयप्रधान मयम्” इततरह कियेहुए लक्षण अन्याप्यादिदोषनययुक्तहोनेसे त्याज्य है । अरिष्टलक्षणमें द्रव्यप्राधान्यदीहै तो औषधमात्रमें यह लक्षणहोनेसे निरर्थकहै दुनियामें कौनसा औषधहै जिसमें कि द्रव्यप्रधान न हो ? इसीलिये “नानौषधिभूतं जगति निश्चितम्” यह सिद्धान्त कियाहै इससे (ऊपरका लक्षण) निरर्थकहोआ । इसीतरह द्रवप्राधान्यमेंभीहै प्रधान और अग्रधान रोगोत्तरहके मयमें यत्किञ्चित् प्रमाणमें द्रवभी अपेक्षितहै उसके बिना मयभेदका बननाही असम्भवहै कदाचित् कहें कि उक्तलक्षणमें एकदम द्रवकी अधिकता अभीष्ट है तो सीधु और सुरामें अतिव्याप्तिहोनेसे यह लक्षणभी निष्कर्माहै । चरकीय पिण्डासवमें एकदम द्रव कर्महै इसीलिये उसका नाम पिण्डासव रक्खाहै इसलिये यहलक्षणभी दूषितहै । इसीतरह “उभयप्रधान मयम्, यहभी अप्राप्तहै । जैसाहमने पूर्वमें कहाहै वही मयमागैहै लोगोंके कियेहुए लक्षण छान- सुद्धिको व्यासुम्भ करनेवालेहैं । कुष्ठप्रकरणमें अरिष्ट और आस वका जो प्रयुक्त विधानहै वह क्वथिताकथित प्रकारको क्वापके लियेहै कुटीकी इच्छाहो तो पलाशासवमें सुरब्धे वगैरह भी तैयार करके देसकचेहैं इसलियेभी आसवप्रकार जुदा बतायाहो यहभी सम्भवहै । इसलिये “सुराभन्याऽऽसवारिष्टाल्लेद्वाधर्मा न्ययस्कृती । सहस्रशोऽपि कुर्वीत धीजेनाऽनेन बुद्धिमान् ॥” इस उक्तासहमने अग्रयुक्त मन्थकोभी गिनायाहै । कदाचित् कोई द्रव्यप्रधानका प्रक्षेपप्रधान यह अर्थ करे तो वहभी अभ यारिष्ट दन्सारिष्ट, गण्डीरारिष्ट प्रभृतिमें अन्यासहोनेसे अप्राप्तहै ऊपर दियेहुए व्याप्यानको समझनेकेलिये सुभुतीय और चरकीय कतिपय आसवारिष्टोंकी सूची नीचे दीजातीहै । यथा

लोघ्रासव (च वि ६।४१) में ३२ गुनेजलमें चतु र्धांशवसेप कायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको प्रमेदादि रोगोंमें प्रयुक्तकियाहै ।

मूलासव (च वि १५१५७) में १४७ गुन जलमें चतु र्धांशवसेप क्वापकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको प्रहणी- प्रभृतिरोगोंमें प्रयुक्तकियाहै

सुरालमासव (च वि १५१५३) में ११ गुनेजलमें चतु र्धांशवसेप क्वापकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अशमं प्रयुक्त कियाहै ।

शर्करासव (च वि १४१५४) में अठ्ठमेजलमें चतु र्धां शवसेप क्वापकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अशमं प्रयुक्त कियाहै ।

पलाशक्षारासव (सु. चि. १०१७) में पलाशकी भस्मको ६ गुने पानीमें डालकर नितोहेणु जलको अमिर गाडाबनाय-प्रक्षेपरहित सन्धानकरके कुष्ठमें प्रयुक्त किया है।

गौडासव (सु. सू. ४४१२८) में ५ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहितका सन्धानकरके विरचनादिकमें प्रयुक्त किया है।

मधुकासव (च. चि. १५१४७) में चतुर्गुणजलमें तृतीयांशावशिष्ट स्वाय करके प्रक्षेपरहितसन्धानकियेहुएको प्रहण्यादिदोर्गोंमें प्रयुक्त किया है।

पिण्डासव (च. चि. १५१६१) में चतुर्धाजलदेकर पाकरहितही सन्धानकरके प्रदूषीप्रभृतिमें प्रयुक्त किया है।

पुनर्नवाद्यरिष्ट (च. चि. १२१३४) में ३२ गुनेजलमें अर्धवशेषकायकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको श्वयुमें प्रयुक्त किया है।

अमयारिष्ट (च. चि. १४१३९) में २५ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्ट वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शमें प्रयुक्त किया है।

अमयारिष्ट (सु. चि. ६१५५) में २१ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्त किया है।

दन्त्यारिष्ट (सु. चि. १४१४५) में १६ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्त किया है।

फलारिष्ट (च. चि. १४१४९) में १२॥ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकरके अर्शप्रश्रुतिमें प्रयुक्त किया है।

दन्त्यारिष्ट (सु. चि. ६१५४) में १० गुनेपानीमें चतुर्धावशिष्टस्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्त किया है।

गण्डीरारिष्ट (च. चि. १२१२९) में ८ गुनेपानीमें त्रिभागावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपरहित सन्धानकियेहुएको श्वयुमें प्रयुक्त किया है।

वीजकारिष्ट (च. चि. १६१०६) में ५१ गुनेजलमें चतुर्धावशिष्ट स्वायकरके प्रक्षेपदेकर सन्धानकियेहुएको पाण्डुमें प्रयुक्त किया है।

मध्वरिष्ट (च. चि. १५१६४) में पञ्चगुण जलदेकर विनापाककियेही सन्धानकर प्रहण्यादिदोर्गोंमें प्रयुक्त किया है।

कनकारिष्ट (च. चि. १४१५९) में चतुर्गुणजलदेकर पादशेष स्वथितकर प्रक्षेपसहित सन्धानकियेहुएको अर्शमें प्रयुक्त किया है।

पूतीकारिष्ट (सु. चि. १०१६) में श्रव्यापेक्षया आपेसे कुछ अधिक जल देकर पाकरहित सन्धानकरके कुष्ठादिकमें प्रयुक्त किया है।

अष्टशतारिष्ट (च. चि. १२१३२) में तृतीयांश जलदेकर विनापाक कियेही सन्धानकिये हुएको श्वयुमें प्रयुक्त किया है।

फलत्रिकारिष्ट (च. चि. १२१३९) में जलरहितकाही सन्धानकरके श्वयुमें प्रयुक्त किया है।

लोहारिष्ट (सु. सं. १२१२२) में १६ गुनेजलमें चतुर्भागावशिष्ट स्वायकरके सन्धानकियेहुएको प्रमेहपिडकाप्रश्रुतिमें नियुक्त किया है।

घात्र्यरिष्ट (च. चि. १६१११) में आंबलोकेश्वरसंघमें विनापाककियेही सन्धानकरके पाण्डुर्गोंमें प्रयुक्त किया है।

आसवोंमें प्रायः घृतमाण्ड लियाजाताथा उसमें चन्दन और अगरका, अथवा जटामांषी और मरिचका, तथा कहीं कहींपर केवल अगरका घुपलिया है। पीपल, मधु और घृतका लेप सुष्ठुमें बतलाया है। चरुमें पिप्पली और मधुकालेप (मध्वरिष्टमें), पीपल, चन्द, त्रियम्बु, मधु और घृतका लेप (शक्रेतासवमें), तथा इलायची, मृगाल, अगर और चन्दन-कालेप (मधुकासवमें) चतलाया है। मध्वरिष्टमें घृतमाण्डकी जगह कोरापत्रा उपयोगमें लिया है परन्तु आजकल आसवोंको लकड़ीके पीपेमें रखनेका प्रचार हुवा है इसमें प्रथम जो आसव रखा जाता है उसमें जिसतरहकी लकड़ीहोगी उसका विशेष अंश आवेगा। हां वह कई बारका होजायगा तो इतना अंश नहीं आवेगा इसवातका ध्यान रखनाचाहिये। इसीलिये आचार्योंने घृतमाजन लिया है क्योंकि इसमें कोईचीज्जुमिलनेका सम्भवनहीं रहता और स्नेहके कारण बाहरसे सुक्ष्मककौटोंका प्रवेशभी नहीं होता है। इसीलिये जन्तुजन्तुदवाओंका घृष और प्रलेप लिखाहुआ है। इनका अनुष्ठान करानाभी उचित है।

आसवोंमें समय अधिकतर १ महीनेका रक्ताहुआ है कहीं-कहीं शक्रेतासव प्रश्रुतिमें मासापे भी आता है पर यह अवधि मयसार उत्पन्न करनेकी है। "घनात्यये तथा शीघ्रे सन्धानं पृष्टद्वैर्भवेत्। इहन्ते शिशिरे दधान्यं भिषजा दिग्निदवाधि ॥ प्राष्टद्वयन्ते सन्धानं भवेत्प्रदिनेन वै ॥" इस इष्टद्वयुक्तके वाक्यसे अल्पकालमें सन्धान व्यक्तहोता है पर वह आसवपरक नहीं है वहांपर तुषाम्बु प्रभृतिका प्रकरण है अमिश्रितसन्धान बहुत-जल्दी होता है इसलिये वहां वैसी अवधि बतलाई है। यद्यपि इस-वाक्यमें प्राष्ट समयमें भी सन्धान कहा है पर वही तुषाम्बु प्रश्रुतिकेलिये है। येसव सन्धान चिरकालतक रखनेकेलिये नहीं होते हैं। योके समयकेलिये कियेजाते हैं आसवोंका सन्धान प्राष्टकालमें कियाहुआ बुराबहोजाता है उसकेलियेसबसे उत्तम वासन्त और शीघ्र ऋतु है। जहांपर उष्णता कमहोगी वहांपर आसव विषहजायगे इसवातका ध्यानरखनाचाहिये।

नस्यमें ८ विन्दु (१) श्रुक्ति (२) और पाणिश्रुक्ति (३) इततरह ३ मात्राएं बताई हैं ये प्रत्येकनासापुत्रकेलिये सम-ज्ञानीचाहिये क्योंकि गयीप्रश्रुतिने ऐसा स्पष्ट कहा है यथा- "प्रायोगिके नस्ये प्रत्येकं नासापुत्रयोरष्टौ विन्दवः स्नेहनायं

वद्विगुणाः शक्तिप्रमाणा इति ।" यदापर आठके द्विगुणको शक्तिनाम देनेसे ३२ कानाम पाणिशुक्ति अर्थतः आजाताई । "प्रायोगिकं स्नेहिकञ्च द्विविधं नल्पमुच्यते । प्रायोगिके विन्दुवोऽष्टौ स्नेहिके शक्तिरिष्यते ॥" इसभोजके वाक्यमें प्रायोगिकनस्यमें आठ विन्दु बत्ताकर स्नेहनमें शक्ति बतलाई है इसलिये यहाँ प्रायोगिकको द्विगुणकरके शक्ति नाम दियाहो यह अनुमान होताई । भोजने उसे द्विविधतुर्गुणभी बतलायाई सो भी इसीक्रमको मानकर होसकताई क्योंकि १६ को २,३,४से गुणित करनेसे ३२,४८ और ६४ विन्दुहोतेहैं । ये यथाकथञ्चिन् जवान और शूणके नाकमें ढालेजासकतेहैं परन्तु इन्द्रहारीतके सहेतको छेकर चले तो भोजका कथन एकान्तः निरर्थक होताई देखिये "प्रदेशिन्या निममे द्वे पर्वणी गत्क्रोऽपरिष्णम् । नस्यादिपु तु विज्ञेयो भिषगिर्भिन्दुसम्पन्नः ॥ विन्दुभियाष्टभिः शाणः प्रोक्ष्येति भिषकमी । क्षत्रिषाद्विन्दुभियाश्च श्रुतिश्चैव विधीयते ॥ द्वे शूणी पाणिशुक्तिश्च नस्यकर्मणि पूजिताः ॥ इन्द्रहारीत ॥

तेलादिद्रवनिमग्नतर्जनीद्रव्य—

पर्वण्युत्तमप्रद्व=१ विन्दु (४रती)

८ विन्दु=१ घाण (३२रती)

३२ विन्दु=१ शुक्ति (१२८रती)

३ शुक्ति=१ पाणिशुक्ति (२५६रती)

इसहिषावसे १२८ रतीकी १ शुक्ति होतीई उसे २,३,४ गुणितकरनेसे २५६,३८४,५१२ रतियोंकीमात्राएँ होतीहैं । इनका उपयोग मनुष्यपर तो क्या ? गोमहिपररभी होना दुस्तरहै इसलिये इन्द्रहारीतके वाक्यमें "अखिलं, का अर्थ ८ विन्दुका १ विन्दु नहीं गिनना किन्तु तर्जनीके २पर्व तैलमें डबाकर टपकानेसे ८ विन्दुतो बराबर गिरतेहैं और दो विन्दु पीछेसे अल्पप्रमाणके गिरतेहैं उन्हें अलग न गिनकर ८ ही विन्दु गिनना, यह अखिलका अर्थकरना कारण कि "तस्य प्रमाणमष्टौ विन्दवः प्रदेशिनीपर्वद्रवनि.स्रताः प्रथमा मात्रा, द्वितीया शुक्ति, तृतीया पाणिशुक्ति, इत्येतास्तिष्ठो मात्रा यथावत् प्रयोज्याः ॥ सु.चि. ४०।२८" यदापर अखिलका नामनिगानतक नहीं है । इसतरहके व्याख्यान करनेसे हारीतका उद्धरण बराबर लजाताई क्योंकि तर्जनीव्युत्त १ विन्दु आधीरती या १ उद्ध या १ जबके बराबर होताई । इंगलियमेंभी १ मिमि (विन्दु) १ मेनके बराबर होताई । २ मेनकी १ रतीहोतीई इसलिये ८ विन्दुओंकी ४ रती हुई । इनका बाल, इद्र और जवान सबपर उपयोग होसकताई परन्तु इन ८ विन्दुओंका १ विन्दु गिनने जैसा कि क्षात्रेधर और वाग्भटने कहाई यथा—"स्नेहे प्रन्थिद्रव्यं यावन्निममा चोद्धृता तत् । तर्जनीयं स्वदेन्द्रिं घा मात्रा विन्दुसंज्ञिता ॥ एव विधैर्विन्दुसञ्ज्ञैरष्टभिः घाण उच्यते ॥ क्षात्रे ०. ८।३९ ॥" "मर्शप्रमाणं तु प्रदेशिन्याह्वलिपर्वद्रव्या-चिममोद्धृतायावत्पतति स विन्दुः ॥ अ.सं.सू. २९" इनके

हिषावसे प्रतिविन्दु ४ रतीहोनेसे ८ विन्दुओंकी ३२ रतियें होंगी और ६४ विन्दु होंगे । इनका प्रतिनासापुटमें एकवार उपयोग होना दुस्तरहै सब १६ और ३२ विन्दुओंका उपयोग कैसे होसकेगा ? यद्यपि "अग्नी दशाष्टौपद्भिर्विन्द्व उत्तम-मध्यमकनीयस्योमात्रा" ऐसी मनगढन्तमात्रा कायम करके अपने व्याख्यानको सन्नत करनेका प्रयास वाग्भटने कियाई परन्तु इसका मूल क्याहै ? इसतरहके प्रश्नका उत्तर क्यादिया जायगा इसका कुछभी विचार न किया । इसलिये "न मात्रामात्र मन्थत्र विधिदागमवर्जितम्" इसपर विश्वास रखनेवालोंको सावधान होना उचितहै । देखो यहाँपर दशविन्दुकी मात्रा विदेह सुभ्रत और हारीतप्रथति विसोभी महर्षिने नहीं बतलाई और ६ की मात्रा वैरेचनिककीहै ८ स्नेहनकी, सो इनकाभी साह्य करके ऋषिसिद्धान्तका कितना विप्लव कियाई इसको विचारके वाग्भटपर अन्धधरना न रखनीचाहिये । इन्होंने अपना मनगढन्त सिद्धान्त बनाकर लोगोंके मनमें यह टंयानेकी कोशिस कीहै कि सुभ्रतादि ऋषियोंका इसविषयमें अज्ञानहै इसलिये ये दोनों (क्षात्रेधर और वाग्भटके) व्याख्यान अश्रदेय हैं कारण कि एवंविध व्याख्यान "अखिलं"की गौरवमससे लिये गयेहैं । भोजका जो निबन्धहै वह सुभ्रतीय गुणहस्योके उद्घाटनार्थही है । आचार्यने वैरेचनिकनस्यमें "वत्वारो विन्दवः पद् वा तथाऽष्टौ वा यथावत् ॥ शिरोविरेक-स्नेहस्य प्रमाणमभिनिर्दिशेत् ॥ सु.चि. ४०।३६" यदापर ४,६ और ८ विन्दुओंकी मात्रा बतलाकर अन्तमें "यथावत्" को सिद्धान्त मानाहै । इससे यह लक्षितकराया कि चिकित्साका प्रत्यक्ष विषयहै इसमें जैसी जहाँ औचित्य हो तदनुकूल कल्पना करनीचाहिये इसके अतिरिक्त और कोई मार्ग नहींहै । यही बात विदेहने कहाई देखो "चतुरश्रुतो विन्दुनेनेकस्मिन् समाचरेत् । अध्वर्यो द्विगुणां वापि त्रिगुणा वा चतुर्गुणाम् ॥" अर्थात् प्रत्येक नासापुटमें विरेचनाथ ४-४ विन्दु डाले, और औचित्य देखकर ६,८,१२,१६ इत्यादिकका अनुष्ठानकरे अर्थात् चिकित्साशास्त्र औचित्यको देखकर प्रयत्न होताहै । यहाँ ध्यानदीजिये विदेहने जैसे वैरेचनिकनस्यकी मात्रा ४ विन्दु एकनासापुटकलिये नियतकरके ठेठ, दो, तीन और चारगुणितका उसमें विकल्प बतलायाहै वैसेही जेहनमेंभी यह सिद्धान्त अनायाससे उपरिगत होगा । तब विदेहके सिद्धान्तसे वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ विन्दुओंको द्विगुणकरनेसे ८ विन्दु नियत होतीहै इसमें पूर्व विकल्पोंका योगकरनेसे १२,१६,२४,३२ इतने विन्दुओंकी मात्राएँ आतीहैं । सुभ्रतने अन्वर्थ और त्रिगुणको छेठकर उत्तरोत्तरको द्विगुण कियाहै । यथा विदेहनिर्दिष्ट वैरेचनिकसाधारणमात्रा ४ विन्दुहै जेहनार्थ स्वभावतः ८ हुए । इन्हें द्विगुणकरनेपर १६ को मध्यम, तथा इनकोभी द्विगुणकरके ३२ को उत्तम मात्रा मानी । इसतरहस्यको देखकरनी सुभ्रतने १६ विन्दुओंकाही नाम शुक्ति रक्खाहै यह निःसन्देह अनुमान

होताहै । उद्धारीतेने साधारणस्नेहनमात्रको बर्थात् ८ विन्दु
 ओंको चतुर्गुणितकरके शुक्ति नामरक्साहै इतना मतभेद अव-
 श्यहै परन्तु नस्यका विधान कर्णज्वरुगोक्त निहरणार्थहै ।
 यह विषय प्रधानतया शालाक्यतन्त्रकाहै इसके प्रथमाचार्य
 महाराजविदेहहै । सुश्रुतप्रवृत्तिनेमी उन्हींके तन्त्रानुसूल रचना
 कीहै । इससे यह निर्धारित हुआकि १६ विन्दुओंकानाम
 शुक्ति और ३२ को पाणिशुक्ति कहतेहैं । भोजने शालाक्य-
 तन्त्रके मूलनी तरफ ध्यान न देकर केवल सुश्रुतकी
 मूलनिर्माता समशकर " प्रायोगिक स्नेहिकत्र० " इत्यादि
 पक्की रचनाकीहै उसमें " तस्य प्रमाणमष्टौ विन्दवः प्रथमा
 मात्रा, द्वितीया शुक्ति ० " इसवाक्यको क्रमश विरचन
 और स्नेहनमें ल्यायाहै देखिये—“ प्रायोगिके विन्द्वोऽष्टौ
 स्नेहिके शुक्तिरिष्यते । ” इति परन्तु सुश्रुतीयसन्दर्भमें तृती-
 यमात्रा पाणिशुक्ति रहजातीहै इसकी व्याख्याकलिये “दोयो-
 ञ्छ्रायसमासाय दद्याद् द्वित्रिचतुर्गुणम्” इस चतुसंपदकी रचनाकी।
 परन्तु सुश्रुतका यह अभिप्राय नहींहै किन्तु उन्हींमें ८, १६
 और ३२ की मात्रा निवृष्ट मध्यम और उत्तम भेदोंको
 लेकर तीनों स्नेहनकेलियेही बताईहै । रचनकेलिये आगे
 स्वतन्त्रमात्राका निर्धारणकियाहै देखिये—“चत्वारो विन्दवः
 पद्मा तथाऽष्टौ वा यथाबलम् । शितोविरक्तस्नेहस्य प्रमाणमभि-
 निर्दिशतः ॥ सु चि ४०।३६ ” इसजगदपर भोजसे इतनीही मूल
 हुईहै कि मूल सुश्रुतहीको मानलिया । इसमें विपत्ति यही आवेगी
 कि शुक्तिको द्वित्रिचतुर्गुण करनेसे ६४, १६ और १०८ विन्दु
 आतेहैं सो इनका मनुष्यके प्रत्येक नासायुर्में समावेश होना
 दुर्घटहै । इसलिये विदेहकी मूलपुरय मानकर व्यवस्थाकरनी श्रेय
 स्कन्ध* द्रव्यादष्टगुण क्षीर क्षीरात्तौय चतुर्गुणम् । क्षीराऽवशेष
 कर्त्तव्य क्षीरपाके त्वथ विधि ॥ यह श्लोक टोडरानन्दमें
 कृष्णात्रेयके नामसे उद्धृतकियाहै । सुश्रुतीयवाजीकरणऽधि-
 कारमें “ वस्तापण्डसिद्धे पयसि भावितानघृत्तिलान्, ”
 इसश्लोककीटीकामें उद्धरणे “परिभाषामाह” इसतरहलिखकर
 इसीश्लोकको लिखाहै और इसे क्षीरपाकविषयक परिभाषा
 मानीहै परन्तु सुश्रुत अथवा चरकने इसका निर्देश नहीं कियाहै,
 करे भी क्या? जैसे आर चीचोंके कवाथोंका विधानहै
 वैदेहि क्षीरकाहै, हां केवल क्षीरमें कठिनवस्तुओंका पाककरना
 हो तो उसमें थोडेबहुत नलकी अपेक्षा अवश्य होतीहै क्यों कि
 दूध गरम होनेसे स्वयं धीघ्र गाटा होजाताहै और उसमें
 चिकनाई होनेके कारण कवाथ्यद्रव्यमेंसे तदीयसारका घुसकरण
 प्राय नहीं होताहै इसलिये जैसी जहाँ योग्यता हो उतना
 जल देना आवश्यकहै । वस्तापण्डप्रपतिके पाककेलिये दुग्धसम
 अथवा दुग्धद्विगुणित जल पर्याप्तहै । कदाचिच्च जल नदिया जाय
 तो भी वह सिद्ध होजायगा, इसीलिये सुश्रुतके किसीभी क्षीर
 पाकमें कोई नियम विशेष निर्धारित नहीं कियाहै । प्रत्येक
 वस्तुपाककेलिये नियम बांधे जाय ता सक्षारमें यावन्मात्रद्रव्य-

केलिये तत्परिमित परिभाषायें बनानीं होंगी । खाद्यवस्तुपा-
 कके लिये पाचशास्त्रके नियम जाननेकी खास सुदूरतह
 पर वह भी क्वाथनियमसे बहिर्भूत नहींहै। क्वाथोंके लिये ३२
 गुने तक पानीका निर्धारणकिया हुआहै उसीके भीतर सम-
 स्तपाकशास्त्रकाविषय समाप्त होताहै इसीलिये सुश्रुतादि
 महर्षियोंने प्रत्येकपाककेलिये स्वतन्त्रनियमनहीं बांधेहै । उप-
 रिनिर्दिष्टश्लोक यदि यथायत्न कृष्णात्रेयकथित हो तो उसे दिग्द-
 र्शनार्थ समझना किन्तु परिभाषात्वेन नियन्त्रण करना उचित
 नहीं, इसीतरह क्षीरमद्यगुण द्रव्यात्क्षीरानीर चतुर्गुणम् । क्षी-
 रावशेष तत्पत्नी शूलमामोद्भव जयेत् ॥ इसशास्त्रपरकवाथ्य-
 कोमी दिग्दर्शनार्थ समझना । अथ स्वरसादिनिर्मुक्त ।
 स्वरस—सद्य समुद्रताल्लुष्णपाल्यटनिष्पीडितातु य ।
 द्रव्यादसौ चिनियाति स रस स्वरसश्च ॥

निर्यासः—इच्छात्स्य चिनियाति स निर्यासो जतुश्च ।
 क्वाथ—शुक्रद्रव्यमुपादाय स्वरसानामसम्भवे ।
 वारिण्यद्यगुणे साध्यं मात्रा पादाऽवशेषितम् ॥ चन्द्रनन्दनः
 शीतः—उच्च वर्णित द्रव्य प्रक्षिप्त द्विगुणे जले ।
 अहोरात्र स्थित तन्माद्भवेत्स रस उत्तम ॥
 स्वरसस्य गुरुत्वेन शुक्तिमान् प्रदापयेत् ।
 बन्दिह्निद रस चैव पलमात्रं प्रदापयेत् ॥ कृष्णाऽऽत्रेयः
 फाण्टः—अष्टाश्वेत्पितेऽप्युण्जले क्वाथ्यपले क्षिपेत् ।
 विषय पट्टतू तमल फाण्टमिति स्यूतम् ॥
 कल्क—य पिण्डश्चाद्रूपिष्ठाना स कल्क इति कीर्तित ।
 चूर्णम्—अत्यन्तगुणक यद्द्रव्य कृष्टित बलगाहितम् ।
 चूर्णं स्यात्सुदुर्को रेणु रतो मात्राऽन्य तिन्दुक्म् । आत्रेयः
 पुटपाकः—पुटेन पच्यते यस्मात्पुटपाकस्ततो मत ।
 सुषिष्ट कुडव द्रव्य वारिणा काञ्चिकेन वा ॥
 पुटकात्मन्तं बद्ध सान्द्रपट्टेन लेपितम् ॥
 अद्भुतमानत पथाद्रोमयामिप्रदीपितम् ॥
 सिन्दूरवर्णत प्राप्त माह्वेत्तदस शुभम् ।
 गुटिका—शुभादिर्वात्तलचूर्णो वर्ति स्याद्गुटिका शुद्ध ।
 मोदको बटक पिण्डो तन्मात्रा चूर्णवन्मत । पराशरः
 रसक्रिया—आपादीना पुन पाकाद्भवभावो रसक्रिया ।
 मात्रा रसत्रियायाश्च लिप्तात्पाणिग्लिय ॥ गोपुटः
 मण्डादि—सिक्थे विरहितो मण्ड पेया सिक्थश्चमन्वित ।
 विलेपी बहुसिक्था स्याद्यथागूर्विरुद्रवा ॥
 अत्र पत्रगुणे सिद्ध विलेपी वा चतुर्गुणे ।
 चतुर्दशगुणे मण्डो यथायू पद्गुणेऽस्मत्सि ॥ वृ० सु०
 पानकादि—वर्षमान् ततो द्रव्य साधयेत्पास्थिकेऽस्मत्सि ।
 अर्द्धशत प्रयोच्यय पानपेयादिसविधौ ॥ अग्निपेदाः
 यूपः—यष्टसुद्रदानान्नु पलेकेन विपाचित ।
 पृताऽनीतविद्वलस्तनुयुष कृताऽष्ट ॥ नलः
 स्फुटित साधितो यूपस्त्वष्टादागुणे जले । चूडसुश्रुत

१५	९१	२५३	२७६	५५१	३९१	१११	५०१	१५७		२८६	१८१	६४०	३१८	१९८	५४७
१७	९२	२५४	२७७	५५३	४०६	११२	५१७	१५८	बुद्ध	२९१	१८५	६४१	३३०	२२९	५६९
४३	९३	२५५	३२१	५६३	४०७	११३	५२६	१५९	१५	२९२	१९६	६४६	३५३	२३०	५७०
५७	९४	२५७	३२२	५६४	४०८	११४	५३९	१६४	२२	२९५	२०१	६४७	३५५	२३२	६०३
६०	९५	२५८	३४२	६३१	४२१	११५	५३०	१६७	२३	३१३	२०२	६४८	३६४	२३५	६०६
८७	९६	२६१	३५७	६३९	४२२	११६	५३१	१७४	२६	३१४	२०३	६४९	३६५	२३६	६०९
१५१	११०	२६४	३७०	६५४	४२८	११७	५३३	१७५	२७	३१८	२०४	६८५	३६८	२५७	६११
१५५	१११	२६५	४०५	६५८	४२९	११९	५५६	१७७	६३		२२१	६८६	३६९	२७४	६१७
१५६	११६	२६८	४०८	६७५	४३०	१२१	५९७	१८१	६९	घ	२६६	६९०	३७०	२८५	६३३
१८६	१२५	२६९	४०९	६८६	४८९	१२२	६४२	१८६	७०	४	२६७	७०९	३७१	२९०	६३६
२०२	१२६	२७०	४४५	६९५	४९६	१२३	६४३	१९४	७४	५	२६९	७१९	३७५	३०६	६३७
२०४	१३१	२७१	४४७	७०१	४९८	१२४	६४५	१९६	७५	१२	२९४	७२९	३७७	३०९	६४१
२०९	१३३	२७३	४४७	७०९	५००	१२५	६५१	२०४	७६	६२	२९५	७३९	३८३	३०८	६५०
२१०	१३५	२७५	४५४	७१०	५०१	१२६	६५५	२०७	७७	६७	३०९	७४९	३८३	३०९	६५१
२६४	१३७	२७७		७११	५०२	१२७	६८७	२२४	७९	९१	३३०		४२१	३१०	६५२
२६५	१३८	२७९			५०४	१२८	७१०	२६७	९६	१६६	३७४	४७	४२४	३११	६५४
२६६	१४०	२८०	१५		५११	१२९	७१२	२७४	१०९	१८७	३९४	४८	४२८	३१२	६५५
२७४	१४४	२८१	१६		५२१	१३०		२७५	११४	१९०	४१२	४९	४३०	३१६	६६२
२७५	१५७	२८२	२१		५२८	१३३		२८५	११६	२०९	४१७	५०	४३१	३१७	६६७
३०५	१६०	२८६	३६	११	५२९	१३४	घं. व्या.	२९२	११८	२३६	४४४	५२	४३२	३२०	६६८
४१०	१६५	२८८	५४	६८	५३१	१३५	७	३०६	१२०	२५७	४५१	५९	४३४	३२५	६७२
४३५	१८७	२८९	५८	८९	५४१	१३६	४१	३२५	१२२	२५८	४६९	७०	४३६	३३५	६७४
४४०	१९३	२९०	१४५	१२१	५५१	१३७	८५	३४९	१२९	२८५	४७०	८३	४६६	३३६	६७५
४४१	१९७	२९१	१४७	१५८	५५५	१३८	८७	४४७	१३०	२८८	४७१	८८	४६८	३५९	६७६
४४७	१९९	२९४	१६१	१६८	५५६	१३९	१०८		क्र	१३१	३११	४८३	१०६	४९९	३६८
															६७८
क्र	२०४	३०५	१७२	१७१	५५७	१४०				क्र	१३६	३१७	५१२	११०	५१४
	३०५	३१३	१८५	१७२	५५८	१४१	परि०			६	१३७	३२०	५१९	१११	५१५
५५	२०६	३१४	१९७	१७३	५५९	१४३	८	८९	१४०	३२२	५३३	११२	५१७	३८४	६९१
६२	२१०	३१५	२२१	१७५	५६०	१४४	१०	१०४	१११	३२६	५४०	११३	५८१	३८५	६९६
१०४	२१६	३२३	२४३	१७७	५६१	२२२	४०	११२	१५१	३४१	५५४	११४	६०४	३८८	६९९
१०५	२१७		२४५	१७८	५६२	२४९	६२	११३	१५४	३४२	५५६	११५	६०५	३९४	७०४
११०	२२०		३०९	१७९	५६७	२५३	७०	१२२	१५८	३४४	५५७	११६	६०८	४१३	७१०
१२१	२२३	१२	३२८	१८०	५६७	२६५	७७	१५१	१६५	४३८	५६०	११७	६११	४१९	७१२
१२२	२२७	३२	३३५	१८१	५६९	२६६	८३	१५५	१६६	४४७	५६३	११८	५८१	४२२	
१४९	२२९	५४	४३५	१८२	५९४	२७४	८८	१५७	१७९	४५८	५८५	११९	६२७	४३०	परि०
१७२	२३०	६७	४३९	१८३	६१६	२८५		१७२	१८७	४६२	५८६	१२४		क्रम	४३१
३६४	२३१	६८	४४१	१८४	६२७	३०६		१७३	१८८		५८७	१२८			४३२
३६९	२३२	७०	४५०	२०४	६३४	३०७		१९०	१८९		५८८	१७०	९	४३३	५३
३९१	२३३	७८	४५९	२१२	६४२	३०८		२७६	१९०	२	५८९	२०१	११	४४९	७४
४७०	२३४	८८	४६३	२२८	६४३	३०९		२८२	१९१	४९	५९९	२२७	१२	४५३	७७
४८१	२३५	९६	४६९	२३४	६४४	३१०		३१३	२१०	५३	६०२	२२९	३६	४५४	
	२३७	१००	४७०	२६९		३११		३१४	२११	५६	६१९	२३४	२१	४५५	
															परि०
१३	२४४	१०१	४७१	२७५	५	३१२	२	३९१	२२०	५९	६२०	२५५	४३	४९९	
२१	२४५	११९	५३०	२९४	१९	३१७	६	४७०	२२१	६१	६२१	२५७	५१	५०१	
३५	२४६	१२९	५३७	३०२	३३	३५९	७	४७७	२२२	६२	६२३	२५८	१०३	५०८	
४१	२४७	१३८	५४०	३१८	५०	४०४	१९	४८१	२२३	६४	६२४	२६८	१०४	५१३	
६१	२४८	१५७	५४१	३२७	७६	४०५	४१	५०३	२२५	७२	६२५	२७९	१०५	५१८	३७२
६३	२४९	२१०	५४३	३५६	१०३	४०६	७६	५०५	२२६	७९	६२८	२८०	१०६	५२३	
८९	२५०	२३५	५४४	३७५	१०४	४०९	१२०	५४६	२२४	१६१	६३३	३०७	१०७	५२५	
९०	२५१	२४४	५४९	३८७	१०५	४१९	१२८	५४८	२२७	१७६	६३५	३१२	११७	५२६	१५

अन्तःस्थाः

शतःस्थाः

परि०

जीर्णवृत्ते

स्थाः

क्रम

अध्यायवृत्ते

घ

घ

३०९	३३६	२१३	१४०	२१	४१४	३९९	७०२	४१०	१४२	३३७	५१७	५३	२४०	अ.व्या.	१८७
	१५५	२१५	१४२	६२	४१६	४०१	७०४	४११	१४४	३३८	५२६	६६	३९०	४७	
	१५९	२२४	१४३	६७	४२३	४१८	७१७	४२१	१४५	३४०	५२७	६७	३९७		
	१८२	२२५	१४५	७३	४४१	४२४		४२२	२०४	३४१	५२९	७०	४३९		
	१८६	२२८	१५०	७८	४४२	४३५		४५०	२१७	३४५	५४०	७५	५४८		
	२०८	२३१	१५१	८५	४६६	४३९		४६६	२४७	३५४	५५५	७६	६५२		
४१७	२०९	२३३	१५४	९१	४४२	४३९		४४२	२४७	३५५	५६६	८८	६५३		
	२१०	२३४	१५७	१११	४४३	४५९		४४०	२५०	३५९	५६३	८९	६७१		
	२१८	२३५	१५८	१२९	४४८	४६८		४८७	२५१	३६४	५८१	९१	६७३		
२९६	२२७	२३७	१५९	१३३	४५८	४७०		४८८	२५२	३६६	५८३	९४			
	२३४	२३८	१६०	१५५	४५९	४७३		४९०	२५७	३६८	५८६	९९			
	२७३	२३९	१६१	१५७	४६०	४७४		४९४	२५८	३७०	५८७	१०३			
	२७९	२४०	१६३	१५८	४६१	४७६		४९८	२५९	३७१	५८८	१०४			
	२९१	२४१	१६६	१७१	४६२	४८०		५००	२६०	३८३	५८९	१०५			
	२९२	२४४	१७०	१८३	४७४	११७		५०५	२६१	३८५	५९१	१०६			
	२९४	२४७	१७१	१८५	५२८	१३०		५०६	२६२	३८६	५९३	१०७			
खरा.	३००	२५१	१७३	१८६	५३०	१४४		५१४	२६३	३८८	६०२	१०९			
	३०१	२८९	२०४	१८७	५३३	१५०		५३२	२६४	३८९	६०३	११२			
१६	३०२	२७६	२०६	१८८	५३८	१५५		५३६	२६५	३९०	६०४	११३			
१७	३०३	३९१	२१६	१८९	५३९	१५८		५३९	२६६	३९१	६०५	११४			
२१	३०४	३९२	२१७	१९०	५४०	१७०		५४४	२६७	४०९	६४१	११५			
२५	३०४	३९५	२१७	१९१	५४१	१७५		५५१	२६८	४१६	६४२	११६			
३०	३५९	३९७	२२४	१९५	५४८	२००		५५७	२६९	४३५	६४३	११७			
३१	३६५	४५८	२२५	१९९	५५२	२०१		५६५	२७०	४५४	६४४	११८			
३३	३६७	४५९	२२६	२०५	५५३	२०३		५६६	२७१	४५५	६४५	११९			
३५	३६८	४६०	२२७	२०९	५५६	२०३		५६७	२७२	४५६	६४६	१२०			
३७	३७५	५३९	२३७	२१०	५६३	२०३		५७१	२७३	४५७	६४७	१२१			
३८	३९५	५५२	२४४	२३७	५७२	२२८		५७३	२७४	४५८	६४८	१२२			
३९	४०२		२५५	२३९	५७५	२३०		५७६	२७५	४५९	६४९	१२३			
४३	४४१	खर.	२५७	२४७	२३६	२२६		५७७	२७६	४६०	६५०	१२४			
४४		क	२७०	२५९	२३८	२३६		५८१	२७७	४६१	६५१	१२५			
४६		क	२७३	२६४	२३९	२३६		५८२	२७८	४६२	६५२	१२६			
४७	१५	४९	२७४	२७३	२४०	२४२		५८५	२७९	४६३	६५३	१२७			
४८	१७	६४	२७४	२७५	२४३	२४३		५८६	२८०	४६४	६५४	१२८			
५०	२१	६५	२७५	२८५	२४४	२४४		५८७	२८१	४६५	६५५	१२९			
५१	४४	१०९	२८२	२९६	२०८	२५५		५९१	२८२	४६६	६५६	१३०			
५३	४५	११०	२८९	३११	३०९	२६५		५९६	२८३	४६७	६५७	१३१			
५६	६१	१११	२९०	३२२	३१०	२६९		६००	२८४	४६८	६५८	१३२			
५६	६६	११२	२९१	३३६	३२०	२७१		६०३	२८५	४६९	६५९	१३३			
५६	१००	११४	२९५	३३८	३२३	२७१		६०५	२८६	४७०	६६०	१३४			
५७	१०३	११६	३०४	३४२	३२४	२७३		६०७	२८७	४७१	६६१	१३५			
६५	१०८	११९	३१३	३५७	३२५	२७५		६०९	२८८	४७२	६६२	१३६			
८६	११०	१२३	३१४	३८३	३२७	२७६		६११	२८९	४७३	६६३	१३७			
८७	११३	१२५	३१६	३८४	३२९	२७७		६१२	२९०	४७४	६६४	१३८			
९१	११५	१२८	३२०	३८५	३४१	२७८		६१३	२९१	४७५	६६५	१३९			
१०२	१२०	१३१	३२६	३७२	३७९	२७९		६१४	२९२	४७६	६६६	१४०			
१०३	१२१	१३२	३२९	३७४	३८०	२८०		६१५	२९३	४७७	६६७	१४१			
१०५	१०२	१३३	३३५	३९०	३८१	२८१		६१६	२९४	४७८	६६८	१४२			
१०६	२०४	१३४	४०५	३९५	३८५	२८५		६१७	२९५	४७९	६६९	१४३			
१२०	२०८	१३७	४१५	४०७	३९७	२८६		६१८	२९६	४८०	६७०	१४४			
१३४	२११	१३८	४१३	३९८	३९८	२८७		६१९	२९७	४८१	६७१	१४५			

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

अ.व्या. १८७

क

खर.

क

११६	३३०	२६०	५५०	५१२	७१३	४२७	बु	१५७	१७९	५२५	१८५	२५७	६४	३६०	६४४
११७	४३२	२८५	६४४	५१४	५१६	२४८	१५८	१८३	५२६	१८७	२५८	६९	३९४	६४५	
११८	४५१	२८७	६४५	५४३	५२३	२८५	१५९	१९१	५२७	१९०	२६०	७०	४०१	६४६	
११९	४७२	२९३	६५१	५५८	५३२		१६०	१९३	५२८	१९३	२६९	७५	४०३	६४७	
१२४	४९०	३०९	६५५	५८०	५३५		१७५	२६९	५२९	१९७	२७५	८८	४१४	६४८	
१५१	५०९	३०२	६५६	५९६	५४३	५२	१८०	२७३	५३०	२७२	२८५	९३	४४४	६४९	
१५५	५१०	३०४	६६७		५४६	६६७	१८१	३१८	५३१	२८३	२८७	९९	४६६	६५१	
१५६	५१४	३०६	६९०	कम	५४९		१८२	३२४	५३२	२८९	२८८	१०९	४६९	६६७	
१५९	५१६	३१९		११	३०३	ब्र	१८३	३३३	५३३	३१८	३०१	११०	४८७	६८१	
१८०	५२३	३९०		१३	३०५	ब्र	१९७	३५१	५३४	३२१	३०४	११३	४९१	६८२	
१८१	५२५	३९८		११	१८५	ब्र	२००	३५३	५३५	३२२	३०९	११४	४९८	६८५	
१८७	५२६	४०९		४३	१८८	ब्र	२०२	३६१	५३६	३११	११७	५०५	६८७		
२००	५३३	४४९	८	४६	१६८	ब्र	२०४	३६४	५३७	३२०	१३५	५०९	६९०		
२२१	५३५	४५४	४४	४८	कम	६६७	२०२	३६९	५३८	२	३२१	५१३	७१९	७१९	
२२१	५३८	४५८	४२	४९	कम	६६७	२०२	३७३	५३९	५	३४३	१४८	५१३		
२९२	५४६	४६२	७१	६०	२९१		२९१	३७४	५४०	११	३६९	१९०	५१६		
२९३	५४७		८९	११०	५१०		२९६	३८६	५४१	१२	३७५	१९३	५४०		
२९४	५४८	ब्र	९८	१६४	अ.ब्या.		२९७	३८८	५४२	१४	३७७	१८१	५४७		
२९६	५५१	१४	१०८	३३८	१	२१६	३०७	३८९	५४३	२१	३७९	१८६	५४९	८	
३०२	५५५	२१	१४८	२७०	८	१	३१०	३९०	५४४	२२	३९०	१८८	५५०	९	
३११	ब्र	३५	१६०	३०८	१३	कम	३११	४१२	५४५	३०	३९१	१८९	५६०	१५	
३५७	ब्र	३५	१६०	३०८	१३	कम	३११	४१२	५४५	३०	३९१	१८९	५६०	१५	
३६४	२५	४३	१६७	३४१	२१	४३०	३२३	४२०	५४६	३४	३९४	१९७	५६१	२५	
३९५	३२	४५	२१७	३५४	२२	परि०	३२५	४२३	५४७	४२	३९६	१९८	५६६	४१	
४०१	३५	४८	२२८	३५५	२९	परि०	३२५	४२४	५४८	४४	३९७	२०१	५६७	४३	
			२२८	३५५	२९	परि०	३२५	४२४	५४८	४४	३९८	२०२	५६८	४७	
			२२८	३५५	२९	परि०	३२५	४२४	५४८	४४	३९८	२०२	५६८	४७	
			२२८	३५५	२९	परि०	३२५	४२४	५४८	४४	३९८	२०२	५६८	४७	
५	१६५	७०	२३६	३७९	५१	रकातिसारे	१४	४३६	५५२	५६	४४९	२०५	५८३	५२	
११	१८०	१३६	२३७	३८९	५२	रकातिसारे	१५	४५१	५५३	६०	४५६	२०६	५८४	६३	
१९	१८२	१४८	२३७	३९४	५३	रकातिसारे	१६	४६७	५५४	६१	४५८	२११	५८९	६७	
२१	१८५	१८१	२४७	३९५	५४	रकातिसारे	१७	४७७	५५५	६२	४५९	२१२	५९९	६९	
६३	१८६	१८६	२४९	४१०	५५	रकातिसारे	१८	४७९	५५६	६३	४६०	२१३	६००	७०	
९३	१८७	२०५	२५०	४२०	५६	रकातिसारे	१९	४८१	५५७	६४	४६१	२१४	६०६	७१	
९६	१८८	२०६	२५१	४६६	५७	रकातिसारे	२०	४८३	५५८	६५	४६२	२१५	६०७	७५	
१०७	२१९	२१२	२५९	५१०	५८	रकातिसारे	२१	४८५	५५९	६६	४६३	२१६	६०८	७९	
१३५	२२३	२३८	२६९	५१३	५९	रकातिसारे	२२	४८७	५६०	६७	४६४	२१७	६०९	८३	
१७५	२१८	२५३	२७२	५१४	६०	रकातिसारे	२३	४८९	५६१	६८	४६५	२१८	६१०	८७	
१९१	२६१	३०२	५१९		६१	रकातिसारे	२४	४९१	५६२	६९	४६६	२१९	६११	९१	
१९६	२८०	३२७	५२२		६२	रकातिसारे	२५	४९३	५६३	७०	४६७	२२०	६१२	९५	
२५३	५	३२३	३४८	५४६	६३	रकातिसारे	२६	४९५	५६४	७१	४६८	२२१	६१३	९९	
२७२	५६	३२५	३५५	५९३	६४	रकातिसारे	२७	४९७	५६५	७२	४६९	२२२	६१४	१०३	
२७३	१५४	३२६	४२२	६१०	६५	रकातिसारे	२८	४९९	५६६	७३	४७०	२२३	६१५	१०७	
३२४	१५७	३२९	४२९	६३१	६६	रकातिसारे	२९	५०१	५६७	७४	४७१	२२४	६१६	१११	
३५१	१९०	३३१	४३४	६३४	६७	रकातिसारे	३०	५०३	५६८	७५	४७३	२२५	६१७	११५	
३६५	१९५	३३३	४३५	६३५	६८	रकातिसारे	३१	५०५	५६९	७६	४७५	२२६	६१८	११९	
३७१	१९७	३३५	४३६	६३६	६९	रकातिसारे	३२	५०७	५७०	७७	४७७	२२७	६१९	१२३	
३७५	१९८	३३७	४३७	६३७	७०	रकातिसारे	३३	५०९	५७१	७८	४७९	२२८	६२०	१२७	
३८०	२१२	३७६	४८८	६७०	७१	रकातिसारे	३४	५११	५७२	७९	४८१	२२९	६२१	१३१	
३८६	३३०	३८६	५००	६८५	७२	रकातिसारे	३५	५१३	५७३	८०	४८३	२३०	६२२	१३५	
३८७	३३९	४०३	५०१	६८६	७३	रकातिसारे	३६	५१५	५७४	८१	४८५	२३१	६२३	१३९	
३८९	३५६	५४९	५०६	७११	७४	रकातिसारे	३७	५१७	५७५	८२	४८७	२३२	६२४	१४३	

२१७	४१६	६	२१७	५२६	७१०	२४७	२५४	४५१	३	३५	४९०	२६४	५५	४०	३२
२२८	४२२	१०	२१९	५३१	७११	२५१	२५५	४७७	४५	४३	५०५	२७३	६	६२	३३
२३०	४२४	११	२२५	५३३	७१३	कम्प	२५६	४७९	४७	४६	५०६	२८०	७७	६३	४६
२३९	४२५	१२	२२६	५४३	क.व्या.	२६	२५७	४८५	४९	४८	५३५	२८२	८१	परि०	५१
२४०	४२६	१३	२३४	५५८	२९	२५८	४८६	५६	५०	५४७	३०६	८२	८२	परि०	५३
२४५	४२७	२२	२३५	५६६	१	१८७	२५९	५०६	६०	६७	५५८	३१०	१६५	२७	५४
२४६	४२८	२३	२३७	५६९	८	५८५	२६६	५१६	६१	६९	५६९	३१७	१९४	६५	५५
२४८	४२९	३५	२४०	५७०	१३	६२६	२६८	५२३	६४	७५	५७३	३२७	१९७	७४	५८
२४९	४३५	३१	२४६	५८५	१९	२७२	५२९	९७	८८	८८	५९४	३५६	२०९	युद्धप्रसो	५९
२५०	४३६	३४	२५०	५८६	२१	२७७	५३३	११८	९९	६१८	३५८	२३३	२३३	क	६२
२५७	४३९	३८	२५४	५९५	२२	२९९	५४७	१२४	११०	६२६	३८६	२३८	२३८	क	६३
२५८	४४१	४२	२५५	५९६	३५	३२३	५५१	१६६	१११	६३८	३९०	२४९	२४९	क	६४
२५९	४४५	४३	२६१	६०३	३९	३२६	५५६	१८२	११७	६३९	४०७	२५७	२५७	क	६५
२६०	४४८	४४	२६१	६०६	४०	३७६	५५६	१८२	११७	६४२	४१६	२८२	२८२	क	६६
२६६	४४८	४५	२६५	६१०	४१	३९७	५९७	१९७	११७	६४४	४२९	३०८	३०८	क	६७
२७०	४६६	४६	२६७	६११	८८	४	४२२	३	११९	१८८	६५१	४३०	३२६	क	७०
२७१	४७१	४७	२६८	६१७	९८	७	४४६	४	२०१	१८९	६८७	४३५	३२८	क	७४
२७२	४८०	४९	२७०	६२२	८	८	४	५	२२८	१९७	७१६	४४१	३३१	क	८०
२७३	४८७	५०	२७४	६२३	९	९	५	६	२३०	१९८	४४६	३३७	३३७	क	८२
२७४	४८८	५१	२८४	६२६	१३	१०	८	९	२४५	२०७	५००	३४०	३४०	क	८३
२८०	४९९	५५	२८५	६३२	४४	१६	१४	१०	२५२	२१७	५०१	३४१	३४१	क	८४
२८१	५००	६०	२८८	६३३	५५	२२	१७	१२	२५६	२२७	५०६	३५०	३५०	क	८५
२९६	५०१	६१	३०९	६३४	६५	३६	१८	१४	२६०	२३८	५	५११	३५२	क	९४
२९७	५०२	११०	३१५	६३५	८९	५५	२५	१५	२७०	२७०	११	५१४	३५४	क	९६
२९८	५०४	१५४	४०२	६३६	५९	६९	२६	२४	२७५	२७६	३३	५१५	३६१	क	९७
२९९	५०६	१६०	४०३	६३७	६३	९६	२७	२५	२८०	२७८	३४	५२४	३६५	क	९८
३००	५०७	१६५	४०५	६३८	६७	१०७	२८	२८	२८४	२८४	३५	५३०	३७३	क	९९
३०१	५०९	१६९	४०९	६३९	७५	१०९	३७	२८	२८५	२९७	३८	५५०	३७६	क	१०८
३०३	५११	१७४	४१६	६४०	९६	१३५	४९	३५	३५८	२९८	३९	५५३	३८७	क	१२०
३०६	५१२	१८३	४२०	६४७	१२०	१४५	५१	३७	३७६	३१५	४०	५६७	३८७	क	१३३
३०७	५१४	१८५	४२१	६५०	१३०	१५१	५२	३७	३७७	३१६	४२	५६९	३८७	क	१३८
३१२	५२३	१८७	४२२	६५३	२८	१४६	५३	३८	३१९	६६	५३४	४५९	४५९	क	१४८
३१३	५२४	१८८	४३०	६५४	१५०	१५०	५४	३८	३२०	६६	५३६	४५९	४५९	क	१५०
३१०	५२५	१९२	४३१	६५६	१६१	१६१	५५	३९	३२९	६७	५३९	४६०	४६०	क	१५०
३४८	५३०	१९७	४३२	६५७	१६५	१६५	५६	४०	३३०	६८	५४१	४६१	४६१	क	१५०
३५३	५३८	२२९	४३३	६५९	१७४	१७४	५७	४१	३३१	६९	५४३	४६३	४६३	क	१५०
३५५	५४३	२३३	४३५	६६०	१७६	१७६	५८	४२	३३२	७०	५४५	४६५	४६५	क	१५०
३६३	५४५	२३५	४३६	६६१	१८२	१८२	५९	४३	३३३	७१	५४७	४६७	४६७	क	१५०
३६५	५५८	२३६	४३७	६६२	१८७	१८७	६०	४४	३३४	७२	५४९	४६९	४६९	क	१५०
३६८	५६०	२३७	४३८	६६३	१९३	१९३	६१	४५	३३५	७३	५५१	४७१	४७१	क	१५०
३६९	५६४	२३८	४३९	६६४	१९९	१९९	६२	४६	३३६	७४	५५३	४७३	४७३	क	१५०
३७०	५६६	२४९	५०१	६७६	११९	२००	३१९	१६९	४०३	७५	५५५	४७५	४७५	क	१५०
३७१	६०४	२५७	५०६	६७८	२२०	२०३	३२४	१६५	४०३	७६	५५७	४७७	४७७	क	१५०
३७७	६०९	२६३	५१०	६८३	४३२	२२२	३४३	१८२	४१४	७७	५५९	४७९	४७९	क	१५०
३८३	६११	२८५	५११	६८४	४८०	२२९	३६१	१८४	४१५	७८	५६१	४८१	४८१	क	१५०
३९५	६१३	२८६	५१३	६८५	५७१	२४८	३७३	१८८	४१६	७९	५६३	४८३	४८३	क	१५०
३९६	६१६	२९०	५१४	६८६	११९	२४९	३७८	१९३	४१७	८०	५६५	४८५	४८५	क	१५०
४०३	६२१	२९६	५१८	६९५	२५०	२६०	३८२	२१९	४१८	८१	५६७	४८७	४८७	क	१५०
४०७	६३२	२९९	५१९	६९८	२५१	२५१	४२४	३२२	४१९	८२	५६९	४८९	४८९	क	१५०
४०८	३०८	५२३	६९९	७०१	२५२	२५२	४२७	३२३	४२०	८३	५७१	४९१	४९१	क	१५०
४१५	कम्प	३१६	५२५	७०१	२१७	२५३	४३०	३३४	४८७	२४७	४९	क.व्या.	२६	क	२६२

२९२	१९३	५४६	२२३	२६९	५८	४०५	६३७	११५	३३६	४८७	४२	३२१	६०४	८८	२६६
२९४	१९६	५४७	२२७	२७५	६७	४२३	६३८	११६	३४१	४८८	४६	३२८	६१९	८९	२७२
२९६	२१४	५५२	२५७	२८१	७०	४२५	६४२	११७	३५५	४९३	४७	३३४	६२६		२९०
२९७	२१६	५५४	२६१	२८२	७२	४२८	६४३	११८	३५६	५०१	५०	३३५	६३४		२९६
२९८	२२४	५५८	२७२	२८७	७५	४३२	६४५	११९	३६२	५०४	५१	३३६	६४५		३२७
३००	२३२		२९५	२८८	७४	४३३	६४६	१२०	३६४	५०६	५५	३३७	६४६		
३०२	२७३	सूत्र	३१३	२९९	७९	४३४	६४४	१२६	३६५	५०७	६०	३५०	६५५		
३०६	२७४	२	३१५	३१०	८८	४३५	६७२	१२८	३६८	५०८	६२	३५१	६५६		
३१०	३१३	४	३१८	३२१	९३	४३९	६७९	१३१	३७०	५०९	६४	३५२	६५८	१	११
३१२	३१४	९	३२२	३२५	९९	४४४	६८२	१३५	३७१	५१४	८२	३५४	६५९	४	१५
३१३	३१७	२४		३२८	१०३	४४७	६८५	१३६	३७३	५१५	१०३	३६८	६६०	५	२७६
३१४	३१९	२५	सू	३२९	१०५	४४९	६८६	१३८	३७५	५१९	१०४	३६९	६६०	८	३५३
३२६	३२५	२६	२	३४१	१०८	४५७	६८७	१५९	३७७	५२५	१०५	३९५	६७२	११	३५४
३२७	३२९	२७	१०	३४५	११०	४६५	७१४	१६१	३७८	५३८	१०६	४०२	६७४	१२	३७५
३४६	३४५	२८	२४	३५९	१११	४६६	७१६	१८६	३७९	५४५	११०	४०३	६७७	२७	४२३
३६६	३५३	३२	४४	३६०	११२	४६९	७१७	१८७	३८२	५४६	११४	४०९	६८०	२८	४३६
३७०	३५५	३६	४५	३७५	११३	४७६		२०२	३८३	५४७	११५	४१४	६८३	२९	४३७
३७५	३६३	३७	४६	३७७	११५	४८०	धत्तास्याः	२१७	३८६	५५०	११६	४१६	६८७	३०	४३८
३७६	३६४	५०	४९	३७९	११६	४८४	१	२१९	३८८	५५३	११७	४१८	६९६	४२	४४०
३८७	३६५	५२	५१	३९५	११७	४९१	३	२२०	३९०	५५६	११८	४२०	६९९	४३	४८४
३८९	३७२	६३	५३	४०९	११९	४९८	६	२२७	३९१	५५७	११९	४२५	७०६	४५	५३७
३९५	३७८	६९	६०	४११	१२७	५००	९	२४०	३९२	५७९	१२३	४२६	७०९	४६	५४१
	३७९	७०	६१	४१८	१२१	५१३	१६	२४१	३९६	५८०	१२४	४२७	७०७	६७	५४८
	३८२	७२	६२	४१९	१२८	५१५	१७	२४५	३९७	५८४	१२५	४३०	७०९	७०	सूत्र
८	३८४	७४	६५	४२०	१७२	५१६	१८	२४६	४०२	५८५	१२७	४३१	७१०	८१	२५
११	४३२	७७	६८	४२०	१७४	५१७	१९	२४७	४०५	५९१	१२७	४३२	७११	८२	३६
१४	४३०	८८	७०	४२५	१७६	५३२	२०	२४९	४०८	६०९	२०६	४३३	७१२	८३	६५
१४	४३३	१०३	१२४	४२७	१७७	५४०	२१	२५०	४१२	६१३	२०७	४३५	७१३	८४	११०
१८	४३०	१०९	१३९	४३३	१८६	५४१	२२	२५८	४१३	६१६	२०८	४५९	७१४	८५	११५
१९	४३२	११०	१४२	४५८	१८८	५४४	२३	२५९	४१५	६१८	२१६	४७७	७१५	८६	१३४
२१	४३५	१११	१५०	४५९	२००	५४९	२४	२६०	४१६	६२०	२१०	४९५	७१६	८७	१९९
२३	४३६	१२२	१६४	४६०	२०७	५५५	२५	२६४	४२१	६२१	२११	५०१	७१७	८८	२२५
५३	४४०	१२९	१७७	४६१	२०९	५५६	२६	२६५	४२५	६२४	२१२	५०६	कर्म	८९	
५६	४४१	१३८	१७३	४६२	२१०	५५८	२७	२७०	४२९	६३२	२१३	५०८	सू	९९	
७३	४४२	१४१	१७४	४६३	२११	५६०	२८	२७३	४३८	६३५	२१५	५१४	४२६	१००	१४
७४	४५१	१५३	१८४	४६४	२१४	५७१	२९	२७७	४३९	६३९	२१६	५१५	ब.व्या.	१०१	१४
९३	४६१	१५५	१९३	४६५	२१५	५७३	३०	२८१	४४०	कर्म	२१७	५१७	ब.व्या.	१०२	५३
१०३	४७०	१६२	१९५	४६६	२१८	५७५	३१	२९३	४४१	५	२४८	५१९	३	१३३	८५
१०६	४७२	१७०	१९७	४६७	२२०	५८१	३२	२९४	४४३	८	२५०	५२३	२१	१५७	९६
१०७	४८१	१७२	१९९	४६८	२२१	५८४	३३	२९७	४४४	१०	२५१	५२५	३०	१५९	१२८
१०९	४८६	१७९	२०१	४६९	२२२	५९०	३४	३०३	४४५	११	२८२	५३१	३७	१७१	१७४
११०	४८७	१७४	२०९	४७०	२२९	५९१	३५	३०५	४४६	१४	२९०	५३२	५९	१७२	२०६
११९	४९०	१८५	२२८	४७१	२३४	६०६	३६	३०६	४४७	१८	२९९	५४२	६७	१७५	२६०
१३४	५०३	१८७	२३०	४७२	२३५	६०७	३७	३०७	४४८	२६	३०४	५४७	परि०	१८४	२८७
१३५	५१२	१९०	२३१	४७३	२३६	६०८	३८	३०९	४४९	२७	३०५	५४८	१८५	२८८	३४१
१४५	५१९	१९१	२४०	४७४	२३७	६०९	३९	३१०	४५०	२८	३०६	५४९	५२	१९३	३८१
१५१	५२९	१९२	२४१	४७५	२३८	६१०	४०	३११	४५१	२९	३०७	५५०	५४	१९४	३९९
१५२	५३७	१९९	२४२	४७६	२३९	६११	४१	३१२	४५२	३०	३०९	५५१	७२	२०३	४०५
१८३	५३८	२१६	२५३	४७७	२४०	६१२	४२	३१३	४५३	३१	३१०	५५२	७४	२०४	४५८
१९१	५४०	२१९	२५४	४७८	२४१	६१३	४३	३१४	४५४	३२	३११	५५३	८०	२०६	४६०
१९३	५४२	२२०	२६०	४७९	२४२	६१४	४४	३१५	४५५	३३	३१२	५५४	८१	२०८	४६०

४६१	५८४	भस्मके	७४	५९६	परि०	३१५	४०९	५०३	क	२८५	कम	५०	क	५०१	२
४६२	६३२	क	१३८	६३२	४३	३७५	४५८	५२४	१४	२८७	२१	५५	१४	५०६	५
३	कम	४२४	२७०	कम	७४	३७८	४५९	५२५	१०१	२८८	२२	५६	१७	५१४	११
१६	१३	क	२८२	२३		३८९		५७९	११७	३०४	२६	५७	२०	५२६	१५
४८	१४	क	३१५	२५				५८५	१७२	३११	३७	५९	२१	५३३	४६
५२	१८	२२५	२५	३५				६३४	१८३	३७७	३८	६९	२३	५४६	४९
७३	२२	क	३५	३६				कम	२७१	३८७	१९७	६६	२४	५६३	५३
२१५	२३	क	२७	३६				१५७	३१७	३९७	२७१	१२०	२५	५७४	५४
३११	२४	५४९	२९	३९				१५७	३१६	३९८	२७४	१२४	५७	५७५	५६
३३२	२५	कम	१६९	४१				१६३	३१७	४१८	२७५	१२७	६९	५७६	५७
३३५	३२		२६२	४३				३१२	३१८	४३६	२७९	१३७	७३	५७७	५८
३७९	३५	७०५	३०४	११४				३१३	३१९	४५५	२८०	१४१	१०४	५७८	५९
४००	३६		३३१	१६४				३१८	३२०	४५६	२८६	१५०	१०७	५७९	६०
४०३	३७		४०५	१७४				३१९	३२१	४५७	२८९	१५५	१०९	५८०	६१
४०४	४०	विस्तृष्टिकायाम्	४५८	२५०				३२०	३२२	४५९	२९०	१५७	११०	५८१	६२
४७४	४१		४६०	२०१				३२१	३२३	४६०	२९१	१५८	१११	५८२	६३
४६६	४२		२५७	३१७				३२२	३२४	४६१	२९२	१५९	११२	५८३	६४
५३३	११४	विस्तृष्टिकायाम्	५	३१७				३२३	३२५	४६२	२९३	१६०	११३	५८४	६५
५४०	१६७	खरा:	४६	३५०				३२४	३२६	४६३	२९४	१६१	११४	५८५	६६
५७३	१७४		१४८	३५५				३२५	३२७	४६४	२९५	१६२	११५	५८६	६७
५८१	२५०	११	२५५	४००				३२६	३२८	४६५	२९६	१६३	११६	५८७	६८
६७५	३०८	१४	३१५	४५८				३२७	३२९	४६६	२९७	१६४	११७	५८८	६९
७१	३५३	२८	४७८	४९२				३२८	३३०	४६७	२९८	१६५	११८	५८९	७०
७५	४०२	५४	५३३	५८९				३२९	३३१	४६८	२९९	१६६	११९	५९०	७१
८०	४०९	५०	५४०	६५९				३३०	३३२	४६९	३००	१६७	१२०	५९१	७२
१५९	४६१	९७	५८१	परि०				३३१	३३३	४७०	३०१	१६८	१२१	५९२	७३
१७७	४६९	१०४	६५६	१६				३३२	३३४	४७१	३०२	१६९	१२२	५९३	७४
२१७	५८९	१२०	६७५	१९				३३३	३३५	४७२	३०३	१७०	१२३	५९४	७५
२७८	५९३	१८१	७५५	२६				३३४	३३६	४७३	३०४	१७१	१२४	५९५	७६
३७९	६३१	३६२	८३२	३३				३३५	३३७	४७४	३०५	१७२	१२५	५९६	७७
४८८	७०५	३८५	९८५	४०				३३६	३३८	४७५	३०६	१७३	१२६	५९७	७८
४९५	७०९	क	११६	४६				३३७	३३९	४७६	३०७	१७४	१२७	५९८	७९
४०५	७३२	व.व्या.	१७९	५३				३३८	३४०	४७७	३०८	१७५	१२८	५९९	८०
४१५	११		२१६	५९				३३९	३४१	४७८	३०९	१७६	१२९	६००	८१
४१८	२२		२१६	६५				३४०	३४२	४७९	३१०	१७७	१३०	६०१	८२
४७७	४०		४१५	७८				३४१	३४३	४८०	३११	१७८	१३१	६०२	८३
५०१	६४		४७१	९८				३४२	३४४	४८१	३१२	१७९	१३२	६०३	८४
५०७	६७		५०८	१०५				३४३	३४५	४८२	३१३	१८०	१३३	६०४	८५
५०८	८२		५३५	११५				३४४	३४६	४८३	३१४	१८१	१३४	६०५	८६
५०९	परि०		५३७	१२२				३४५	३४७	४८४	३१५	१८२	१३५	६०६	८७
५१०			५४३	१३०				३४६	३४८	४८५	३१६	१८३	१३६	६०७	८८
५१०	१६		५७१	१४१				३४७	३४९	४८६	३१७	१८४	१३७	६०८	८९
५७१	४३	वृद्ध	५७९	४१				३४८	३५०	४८७	३१८	१८५	१३८	६०९	९०

विलम्बिकायाम्

खरा:

क

कम

व.व्या.

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

कम

खरा:

क

३४४	१०१	४४४	१४	३०२	५८६	३१६	५४८	१०८	२९८	३१९	५९४	४२५	५३३	७४	२८०
३४८	१०२	४७७	२५	३०७	५८९	३१७	५४९	परि०	३५९	३२६	५९५	४३५	५५९	९३	२८२
३४९	१०३	४७८	३६	३०८	६१४	३१८	५५८		३६२	३४७	६१८	४४५	५६४		२८४
३७५	१०४	४७९	४६	३१२	६१५	३२६	५६४	१३	३६४	३४८	६२०	४९२	५६९		३११
३७७	१०५	४८०	४८	३१६	६१६	३२७	५६६	१४	४२३	३४९	६२२	५००	५९६		३४३
३७८	१०६	४८२	४९	३१५	६३४	३२८	६०३	४४	४२४	३७५	६३७	५०१	६०३		३४७
३७९	१०७	४८५	६७	३१७	६३२	३३१	६१०	५२	४८८	३७७	७३८	५०९	६१०	स्वराः	३८०
३८०	१०८	४८६	७०	३१८	६३४	३३५	६१४	५४	४८९	३८०	६४६	५१६	६१४		
३८१	११०	४८७	७१	३३०	६३५	३५०	६२८	५५	५४०	४४०	६५७	५१७	६१७		५८
३९२	१७१	४८९	७६	३३४	६३८	३५४	६३१	६५	४४७	४४७	६७५	५५०	६३१		६१
३९४	१७२	४९०	७७	३३६	६३९	३६०	६४५	७७	४४९	४४९	६८१	५५८	६३४		६३
३९६	१७७	५०६	८७	३३६	कर्म	३६०	६५५	७८	२५	४४९	६८१	५७९	६८८		६५
३९७	१८८	५१५	८९	३५५	१	३६६	६७९	८१	३२			५८६	६८९		७२
४११	१६६	५१७	९३	३५८	५	३६७	६८०	८३	३४			६३४	६९५	क	९८
४२१	१९७	५१८	१०६	३६६	६	३६८	६८६	८५	५२	१४			७०४		९९
४२५	१९८	५५४	१२९	३६९	१३	३७६	६८८	८६	७६	१६			७११	१४	१०३
४४०	२०७	५५६	१३१	३७०	२६	३८२	६८९	८७	७८	१७			७११	५६	१०८
४४७	२१०	५६०	१३४	३७१	३३	३८४	६९०	८९	१०२	३५	३	६	अ.व्या.	१३२	१६८
४४९	२१५	५६१	१३५	३७५	३८	३८५	६९२	९०	१०३	४५	११	५५	२	१३७	१९६
४५७	२१८	५६७	१३६	३८८	५०	३८८	६९५	९१	११८	४८	६७	८३	९	१५१	१९८
४५८	२१९	५७३	१३५	४०७	५१	३९४	६९६	९२	११८	४९	७०	१४५	१९	१५५	२०६
४५९	२४१	५७५	१३६	४५	५५	३९६	६९७	९३	११९	५३	७१	१५४	१९	१६३	२०८
	२४८	५७८	१३८	४२४	६२	४०२	६९८	९४	१५४	८२	७५	१६६	३५	२६९	३२०
	२६३	५९४	१६०	४२५	८१	४०३	७०४	९५	१८५	१०८	७६	१८५	४०	२९८	५५६
२	२७६	५९५	१६१	४२६	१५४	४०५	७०६	९६	१९७	११०	८२	१९४	४६	३५१	५७५
७	२७८	५९९	१६२	४२७	१५९	४०६	७११	९७	२१०	११९	१२७	१९३	४६	३५९	६३८
१३	२९३	६३०	१६४	४३४	१६४	४०९	७१२	९८	२११	१२८	१३९	२३२	४६	३६२	६८७
१४	२९७	६३२	१७०	४३५	१६६	४१६	७१६	१२४	२७२	१३६	१४१	२३३	४६	३६३	
१६	३०५	६३६	१७५	४३६	१७९	४२२	अ.व्या.	१५२	२८९	१९८	१३४	३०४	१३	४३०	
१७	३१३	६३१	१७६	४४५	१८४	४३६	२	१७९	३२२	२०७	१३५	३०९	५४	४८१	अन्तरस्थाः
२८	३१५	६३४	१७७	४६२	१८५	४३८	३	२१७	३२४	२१५	१५८	३१७	५५	५०६	
२९	३१७	६३८	१८७	४६४	१८८	४३०	४	२७३	३२५	२१६	१६०	३१८	८१	५४०	
३४	३२०	६३९	१३०	४८०	१९०	४३१	५	३१३	५	२६३	३३०	३२६	८८		१
३५	३२२	६४२	१३३	४८७	१९४	४३२	६	३१४	१८	२७८	३३७	३३०		वृद्ध	२१६
४१	३२४	६४३	१३७	४९२	१९७	४३३	७	३१५	३०	३०५	३४०	३३१			२१७
४५	३२९	६४६	१४०	५००	१९८	४३५	११	३६५	५३	३१५	३४५	३३६			२१८
४८	३३३	६७५	१४१	५०१	२०३	४४९	१९	३६७	६०	३२०	३७६	३८४			२१९
४९	३३३	६७९	१४२	५०४	२०९	४५२	२१	क	८४	३२२	३८०	३८५			२२०
५३	३३५	६८३	१४४	५०६	२१९	४५३	२३	क	८५	३२४	३८१	३८८			२२१
५४	३३७	६८३	१४५	५०९	२२७	४५४	२४	१४	९८	३२३	३९१	३९३			२२२
५८	३४१	६८५	१४७	५११	२३८	४५५	३८	१७	१५८	४२३	३९३	३९६	१५१	११६	२६४
६१	३४४	६८६	१४८	५१४	२४०	४५७	४०	२१	१७४	४७८	३०२	३९६	५००	१९०	३३०
६४	३७५	६८७	१७६	५१६	२४२	४५९	४६	२३	१९५	४७९	३०३	४१६			३३६
६७	३७७	७११	१७७	५१७	२८५	५००	५१	८९	२३६	४८०	३०७	४२१			३५५
७२	३७८	अन्तरस्थाः	२८०	५३०	२८९	५०१	५३	१०४	२३९	४८२	३१२	४३५	२८०		४०४
७५	३८५	अन्तरस्थाः	२८१	५३८	२९०	५०८	५८	१४२	२८०	४८६	३१७	४३९	३११	५	४६४
७६	३८६	अन्तरस्थाः	२८४	५५०	२९६	५१५	५९	१५५	३८३	५०६	३३४	४५३	३११	५६	५१७
८०	४१४	१	२९१	५५७	३०४	५२३	६०	१७७	३८४	५५४	३५३	४५४	३१५	१२९	६०९
९८	४२७	८	२९२	५५८	३०८	५२३	६३	१७८	३८६	५६०	३५५	४५५	३१५	१७४	६३०
९९	४२९	११	२९३	५५९	३०९	५३१	७७	१८३	३०६	५६२	३७७	५६१	३१५	१९५	६३०
१००	४३९	१३	२९४	५६०	३१४	५३३	९३	१९३	३११	५८७	४०७	५३१	कर्म	२३५	कर्म

२६	१००	३७८	५५	२१	१९८	२९	४८७	१९०	२८७	४६	३३३	६०७	८	२२२	४२१
५५	१७२	३८३	८१	२५	१९९	३०	५०३	१९१	२८८	४७	३६७	६०८	९	२२७	४२२
६६	१९०	३९२	१४०	२९	२०४	३९	५०५	१९२	३००	५०	३७०	६०९	११	२२९	४२३
१९४	२६९	४११	१८४	३०	२०५	५३	५१६	१९३	३०८	५४	३७४	६१०	१८	२३०	४२४
२५१	३१३	४३३	२३०	३३	२०७	५७	५२०	२२५	३११	५६	३७५	६१२	२०	२३३	४२५
३०९	३५८	५०६	२३३	३३	२१३	६२	५२८	३२२	३१७	५७	३८८	६१४	२३	२३४	४२६
३१८	३५९	५०५	२३७	३१	२१४	८९	५२९	३२३	३२४	६१	३९४	६१५	२९	२३५	४२७
३५४	३६३	५४९	२४९	४९	२२२	१०६	५५२	३२४	३२८	६४	४०१	६१६	४१	२३६	४२८
४५२	४२३	६०३	२९१	५०	२२४	१०७	५५४	३२५	३३०	६५	४२३	६१७	४४	२३७	४२९
५२९	४२६	६२७	२९८	५१	२६७	१०९	५	३४३	६६	४२५	६२०	४६	४६	२३९	४३०
५३१	४७७	६४२	२९९	५५	२६९	११०	उद्ग	११	३४४	६७	४२७	६२१	४७	२४०	४३१
५५९	४८१		३००	५७	२७०	१११	४	१५	३४६	६९	४३१	६२२	४९	२४२	४३५
६१४	उद्ग		३०८	६५	२७१	११७	१४	३०	३६०	७६	४४४	६२३	५०	२४३	४३६
६३१			३१७	६८	२७२	११९	२३	३४	३७५	७८	४५२	६२४	५२	२४४	४३९
६९२	२४		३१८	७६	२७४	१२१	२३	४२	३७६	१०५	४५७	६२५	५५	२४५	४४४
७०४	४२	८	३१९	९२	२७५	१३०	२४	४४	३७९	१४२	४६९	६२६	६०	२४७	४६४
७११	६३	२९	३६७	९६	२७८	१३१	२६	४५	३८१	१४८	४७१	६२७	६८	२४८	४७७
परि०	७३	३०	३७३	९७	२८०	१३३	२७	४७	३८६	१६९	४७४	६२८	७०	२४९	४८०
	१४१	३१	४१५	१२०	२८१	१३४	२८	४८	३८९	१७२	४७८	६२९	७६	२६३	४८८
१३	१४८	३२	४२७	१२४	२८२	१३५	३३	५६	३९१	१७४	४८३	६३०	८३	२६४	४९३
७७	१५७	३३	४३९	१२८	२८५	१३६	३४	६३	३९३	१७५	४९३	६३१	८७	२६६	४९९
	१९३	३४	५०४	१३३	२८८	१३७	३५	७२	३९४	१७७	४९४	६३२	८८	२६९	५००
	२१६	३५	५२९	१३७	२९१	१३९	४०	७३	३९६	१८८	५०६	६३३	८९	२७०	५०१
	२८७	३६	५३१	१३८	२९५	१४०	४९	८५	३९७	१९९	५०९	६३४	९३	२७२	५०५
	उ		५३३	१४१	२९९	१४१	५१	८७	३९९	१९६	५१३	६३५	९८	२७४	५०९
	रुक्मिणी		५५६	१४३	३०४	१९०	६५	९३	४०९	१९८	५१६	६३६	१०६	२७७	५११
	४२	९८	६५७	१५१	३४८	१९१	६६	१२१	४११	२०६	५१५	६३७	११०	२७९	५१४
	१२८	१२२	६८१	१५५	३६१	१९३	६७	१२४	४१२	२०७	५१७	६३८	१११	२८१	५२५
क्षराः	१३९	१३०	६९०	१५६	३७५	१९६	७०	१२५	४२५	२१०	५२०	६३९	११२	२८२	५३८
	१५७	१३६	७०४	१५७	३७६	२२२	७२	१५८	४४०	२१३	५२९	६४०	११३	२८३	५४३
१३५	१६९	१३७	१५८	१५८	४००	२२४	७४	१६५	४४४	२१८	५५७	६४१	११४	३०३	५४५
१५०	२६०	१४३	१५९	१५९	४१५	२३८	७५	१६७	४४७	२२५	५५८	६४२	११५	३०४	५४७
१८३	३११	१५८	१६३	४३४	२४३	७७	७९	१६२	४४९	२२७	५६०	६४३	११६	३१३	५५३
१८७	३२६	२५८	१६४	४४५	२४७	८०	८०	१६५	४५३	२३५	५६१	६४४	११७	३१५	५५७
१९०	३९५	२८३	१६५	४४७	२५३	८१	८१	२०९	४५५	२४०	५६६	६४५	११८	३१८	५६०
१९४	४०९	२९५	१६६	४४८	२५४	८२	८३	२३०	४५५	२४४	५६७	६४६	११९	३१९	५६४
२२२	४५६	३०३	१७०		२७०			२३३	४५६	२६७	५६८	६४७	१२३	३२३	५६५
२२३	४५८	३३०	परि०	१७४	७	२७९	८४	२३९	४५७	२६९	५७३	६४८	१२३	३४८	६०४
२२५	४०४	१३	१७५	८	२८०	८५	८५	२४१	४५८	२८०	५७५	६४९	१२५	३५३	६०८
३१२	उ	४२३	१७७	९	३१२	९९	८६	२४२	४५९	२९४	५७६	६५०	१२६	३५६	६०९
३१५	१४	४२६	१७८	१०	३१३	१००	८७	२४३	४६०	२९५	५७८	६५१	१२७	३५७	६११
३१६	३०	४२९	१८०	१२	३१४	११६	८८	२४४	४६१	२९६	५८३	६५२	१२८	३५८	६१३
४०९	४३	४६३	१८१	१४	३५८	११७	८९	२४५	४६२	२	३०५	६५३	१२९	३५९	६१५
४२९	१६३	४६३	१८७	१६	३७३	१२०	९०	२६०	४६३	७	३१५	६५५	१३०	३६०	६१६
क.	१७३	४९३	१८९	१७	३८४	१२२	९१	२६२	४६४	१६	३१७	६५६	१३१	३६१	६१७
१४	१९६	५७९	१९१	१८	४२०	१३१	९२	२६७	४६५	१७	३१९	६५९	१३२	३६२	६१९
२३	२१०	६१३	१९२	२०	४३३	१३९	९३	२६९	४६६	१८	३१९	६६४	१३३	३६३	६२०
२४	३२९		१९४	२१	४३३	१४६	९४	२७०	४६७	१९	३२३	६६५	१३४	३६४	६२१
२९	३७०	कृष्ण	१९६	२३	४४९	१६६	९५	२७४	४६८	२०	३२७	६६६	१३५	३६५	६२२
३६	३७५	५३	१९७	२४	४७७	१७९	९६	२७५	४६९	२१	३३३	६६७	१३६	३६६	६२३
		२													

३१	३५५	५४२	८९	क.	उरोमिष्ट	१५१	५४	३५६	१९२	२८८	६४	४०१	६१६	४९	२६५
३७	३५७	५४७	६९०	३९	उरोमिष्ट	१५५	५६	३५८	१९३	२९७	६६	४१०	६१७	५२	२६६
४३	३६४	५४९	६९१	१२८	उ	१५६	८९	३५९	२०६	२९८	६७	४१९	६१८	५८	२७०
४४	३६५	५४९	६९२	११३	उ	१५७	१०१	३७९	२१०	३००	७२	४२३	६१९	७०	२७३
४५	३६८	५६९	६९३	४५	उ	१५८	१०३	३८४	२१९	३०३	८०	४२३	६२०	७४	२७४
४६	३७३	५७०	६९४	४५	उ	१५९	१०४	४०४	२२५	३०८	१०५	४३९	६२२	७६	२९५
५०	३७४	५९६	६९५	४८५	उ	१६०	१०६	४२३	२२५	३११	१०९	४४५	६२३	९१	३०२
५१	३८४	६०३	६९६	उ	उ	१६३	१०७	४७९	३०७	३१७	११०	४५२	६२४	९८	३०३
५५	३८५	६०६	६९७	२४	उ	१६५	११०	५४७	३१३	३४१	११८	४५३	६२५	९९	३०५
८३	३८८	६०९	६९८	३२	उ	१६७	११७	उ	३१४	३४३	११९	४५७	६२७	१०४	३३६
८९	३९३	६१९	७०३	३२२	उ	१७४	११९	उ	३२२	३६९	१२१	४६४	६२८	१०७	३४२
९४	३९४	६१५	७०४	३२२	उ	१७७	१२१	४	३२३	३७९	१२७	४६५	६२९	१११	३५५
९५	४०३	६१७	७०६	उ	उ	१८७	१२३	१४	उ	३८७	१४०	४६६	६३४	११२	३५६
१७९	४०९	६३२	७११	उ	उ	१९२	१२८	३३	उ	३८९	१४१	४६८	६३५	११३	३६२
१८३	४१३	६३३	७१२	५	उ	२००	१३०	२४	५	३९३	१६४	४७०	६३६	११४	३६३
१८४	४१४	६३४	७१३	२५२	उ	२०१	१३१	२६	१०	३९४	१७२	४७१	६३७	११५	३६८
१८५	४१५	६३५	७१४	२६०	उ	२०५	१३५	२७	२२	३९५	१७३	४७४	६३८	११६	३६९
१८८	४२१	६३६	७१८	४०९	उ	२०१	१४५	२८	४५	३९७	१७५	४७८	६३९	११७	३६९
१९८	४२२	६३७	७२२	उ	उ	२६६	१४९	३४	४६	४०२	१७७	४७९	६४५	११८	३७०
२११	४२५	६३८	७२५	उ	उ	२६८	१५१	३५	४८	४०८	१८१	४८७	६४६	११९	३७१
२२९	४२६	६३९	७२९	२९	उ	२६९	१८३	३६	४९	४१६	१८८	४९०	६४७	१२२	३८३
२३०	४२७	६४३	७३४	५४	उ	२७२	१९०	४०	५४	४२५	१९६	४९१	६४३	१२८	३८६
२३५	४२९	६४४	७३५	२५	उ	२८०	१९१	४९	५५	४४०	१९८	४९८	६४८	१२९	३८९
२३६	४३०	६४६	७३५	५९४	उ	२८७	१९२	५१	६७	४४४	२००	५००	६७९	१३५	४०४
२३७	४३१	६४७	७३५	२१	उ	२८८	१९६	५२	८४	४४७	२१३	५०३	६८२	१३६	४०८
२३८	४३२	६४८	७३६	२४	उ	२९६	२२४	६३	९७	४४९	२१४	५०५	६८३	१३७	४१६
२८२	४३३	६४९	७३६	२९	उ	३०६	२३८	६८	१२४	४५१	२१५	५०९	६८५	१३८	४१९
२८५	४३५	६५०	७३६	३०	उ	३२७	२४१	६९	१२८	४५४	२२७	५१०	६९२	१५८	४२२
२९०	४४९	६५१	८२	१०	उ	३३३	२४७	७०	१४४	४५८	२४८	५१५	६९५	१६१	४२४
२९३	४५०	६५२	८८	३६	उ	३६३	२५०	७२	१४८	४५९	२८०	५२७	७०३	१८६	४२५
२९६	४५३	६५३	१८६	४१	उ	३६४	२५१	७३	१५५	४६३	२९३	५३३	७०८	१८८	४२६
२९८	४५४	६५४	३०२	४२	उ	३७५	२५२	७४	१५७	४६४	३०६	५३७	७१०	२०३	४२७
२९९	४५५	६५५	४६२	४५	उ	४००	२५३	७७	१५८	४६६	३१०	५३८	७११	२१४	४२८
३००	४५७	६५६	४६३	४७	उ	४१५	२५४	७८	१६४	४६८	३१५	५४४	७१५	२१५	४३२
३०८	४८६	६५७	४६४	४९	उ	४४१	२५५	८०	१६७	४७०	३१९	५४९	७१९	२१६	४३५
३१४	४९६	६६१	५०	५०	क.	२५६	९९	१७४	१६३	१७७	३१७	५५६	७२३	२१७	४३६
३१६	४९७	६६३	२९८	५१	क.	२५७	१००	१७८	१७७	३२०	३२०	५६०	७२७	२१९	४४०
३१८	५००	६६५	५४	६४	क.	२५८	८	२५८	१०९	१९५	२९	३२२	५६१	९	२३०
३२०	५०१	६६७	५४	६५	क.	२५९	९	२५९	११६	२३०	३४	३२९	५६७	११	२३२
३२१	५०६	६६८	६५	६५	क.	२६०	११	११	११९	२३९	४२	३३२	५६८	१३	२३३
३२५	५०८	६७१	६५	६५	क.	२६१	१७	१७	१२२	२४३	४५	३३३	५७५	१४	२३५
३२६	५१०	६७३	६५	६५	क.	२६२	१७	१७	१२३	२४३	४५	३३३	५८२	१८	२३५
३२८	५११	६७५	६५	६५	क.	२६३	१७	१७	१२४	२४३	४५	३३३	५९४	१९	२४०
३३१	५१३	६७६	६५	६५	क.	२६४	१७	१७	१२५	२४३	४५	३३३	६०६	२०	२४१
३३४	५१५	६७९	६५	६५	क.	२६५	१७	१७	१२६	२४३	४५	३३३	६१९	२१	२४३
३३५	५१९	६७९	६५	६५	क.	२६६	१७	१७	१२७	२४३	४५	३३३	६३२	२२	२४५
३३७	५२३	६८०	६५	६५	क.	२६७	१७	१७	१२८	२४३	४५	३३३	६४५	२३	२४६
३४०	५२५	६८२	६५	६५	क.	२६८	१७	१७	१२९	२४३	४५	३३३	६५८	२४	२४८
३४६	५२९	६८४	६५	६५	क.	२६९	१७	१७	१३०	२४३	४५	३३३	६७१	२५	२५०
३५०	५३९	६८७	६५	६५	क.	२७०	१७	१७	१३१	२४३	४५	३३३	६८४	२६	२५२
३५४	५३३	६८८	६५	६५	क.	२७१	१७	१७	१३२	२४३	४५	३३३	६९७	२७	२५४

४३८	५२९	१५	३०४	६३४	३२०	३२७	१५७	१२७	२१३	४३३	१०६	९१	५०५	६५	१८७
४४०	५३१	४२	३०५		३५६		१५७	२१४	५१९	१८०	९२	५०७	६८	१८९	
४५९	५६३	५१	३८६	कम	४२०	क	२१५	२८८	५८०	१८१	९३	५१६	७२	१९१	
	६०३	५२	४१२		४३३	१८२	२२९		६३०	१८२	१०१	५३९	८४	२०१	
	६५५	७३	४४७		२४५	२४४			६३४	१८७	१०६	५४७	१२०	२०२	
२७	६६१	१३८	४७६		३०२	२५			कम	१८८	१०७			२०६	
४६	६६३	१५१	५०७		१९	३२६	३३५	३९		१९१	११०			२०९	
६७	६८०	१५७	५४९	२५	कला:	८६	३३३	३३९	१४८	४४	१९३	१२३	२	१६७	२१०
७८	६९५	१६९	५९४	४०	४५	२९४	४५८	४२०	१५१	१८४	१९४	१२८	४	१९२	२१३
१४८	७०७	२२८	५९६	६२	१५०	४३५		४२५	२३२	२०७	१९६	१३०	२६	१९५	२१५
२१४	अ.व्या.	३३३	५९७	१३१	१८७	४५१		४३१	२४९	४१९	१९७	१३१	२७	२३१	२१७
२५४		क	५९८	१४६		४८४	१७	४३३	२७४	४५९	१९८	१३४	२८	२६०	२१८
३११	६	क	५९९	२३०	क	५५१	३८	४३५	४१४	४५४	१९९	१३९	३३	२७५	२२२
४०३	१९	१९	६००	२३७	९०	५५९	७६	४७०		५६५	२०४	१४२	४०	२८८	२२३
४९३	५५	४१	६०१	२९८	९१	११८	५४१	कला:	५७०	२१२	१४५	४४	२९५	२२४	
५७३	८८	५७	६०२	३१७	२६४	परिः	१४९	६३०	७२	५७१	२२५	१५०	४९	२९९	२२५
			६७२	३३१	४७७	१९	१५०	६३४		५७२	२६७	१५२	५२	३१७	२३०
	शान्त स्थाः	१०४	१५७	३५५		१५१		कम	६०	५७४	२७०	१८४	७४	३२६	२६६
	हस्त स्थाः	१९४	३६१	४०९	५२	१५३	२१	१२४	५५३	२७१	१८५	७५	३४४	२६७	
५०	क	२४५	४३५	४५५	कला:	१५४	२२	१४८	६२७	२७२	१८७	७६	३४६	२६९	
१२९	क	३०८	४५१	४५९	कला:	१५५	२३	१७६	६७७	२७४	१८८	७७	३५९	२७२	
२२०	३३०	३११	४५७	३०८	२०५	२५	१७६	६९२	२७५	१९९	८०	३६४	२७६		
२५६	२४९	३२७	९३	५०७	३११	२६१	३८	२४०		२७८	१९३	८१	३६६	२८०	
३७३	३४६	९८	५२९	३२६	४५	२६३	६२	२५१	परिः	२८०	१९७	८२	३७७	२९३	
३८३	३६०	१५७	५३१	३४३	५५	२७०	१४६	२८१	६५	२८२	२०५	८३	३९९	२९४	
३८८	३९४	१७६	५३८	४५८	१५०	२७८	१६२	२८२		२९५	२३५	८४	४०९	२९५	
४२७	४५८	२१५	५५१		१८२	२८४	३३०	४१९		३१२	२४७	८५	४११	२९७	
४४७	४५९	२३७	५५९		१८३	३११	३३१			३२७	२४९	११७	४१२	३०४	
५५६	कला:	२४४	५६३	३८	१८७	३६०	२९८	क		३४९	२६४	१४१	४१३	३३०	
५८५	क	२६१	६२७	११८	१९३	४१४	३५५	६		३६१	२७३	१४६	४१४	३९४	
	कम	५४	६५९	२६०	२६०	४४७	४२७	४३		४०९	२८२	१५८	४१७	४०१	
		५५	२६०	२६५	अ.व्या.	२६१	४७३	४३५	१८८	४१	४१५	२०२	१६४	४१९	४०९
६	१५०	७६	३३५		२७८	४००	५३१	२०८	४९	४२३	३१२	१७०	४५६	४१२	
३८	१८३	८०	३३६	५२	२९८	३०३	५४९	६१०	३१५	५४	४३४	३१३	१७९	४५८	४१७
६३	१८७	१७१	३३९	५४	३७४	४	५९४	६९२	५६९	८९	४४७	३१४	१९०	४६२	४३३
२२९	२११	१८८	३३९	७९	३८६	क	५९९	६९९	७९५	९२	४४५	३४४	१९१	४४४	
२३०	२०३	२०४	३४३	९३	४१२	९०	६०१	अ.व्या.	७१६	११७	४४७	३४५	२८९	क	४५५
२३३	४४४	२०५	३४४	९५	४४७	९१	६३७	५३		१२०	३४८	२९५	९	४६९	
२४५	क	३०६	४०७	१००	५९४	१९३	६५७	५४		१२३	३७८	३२३	१३	४७०	
२८९		३४८	४२०	१०१	६०१	२६४	६७२	१५		१२८	३६६	३२३	३९	४७१	
२९०	३६४	३६१	४१५	परिः	६२९	२७३	८७४	परिः	१२५	११	४०७		५२	४७२	
२९६	२७३	२६३	४३१		६३६	३८४		६	१५५	१२	४२२	क	५६	४७३	
३०४	३१३	२७०	४३५	२९	६८९	क	६८९	२९	८९	१५६	१७	४२७	५	६१	४९२
३७३	३८४	३७८	४६१	६९	शान्त स्थाः	६९	शान्त स्था	६९	२३५	१५७	३०	४३०	९	७३	४९३
३७४	४३०	२८०	४७१		१५	१५	१५	२७७	१५८	३८	४४९	१२	७४	४९४	
३७५	४३१	२९४	४९९	शिवस्थिति	२३	५३	२४	२९३	१५९	३९	४७७	४४	७८	४९५	
४३०	४७७	३११	५४१		२५	७३	४४	३८५	१६५	५७	४८१	४८	१२३	४९६	
४४२	४६६	३१२	५५३		२५	७३	४४	३८७	१७७	६३	४८६	५५	१३३	४९७	
४९०	५०६	३६०	५५८		२४४	११७	८९	४०४	१७४	८९	४९८	६१	१७४	४९९	
५००	५२२	५९९	कम	३२२	१५४	९३	शिवस्थिति	४१३	१७५	९०	५०३	६३	१७५	५००	

४२७	९६	४३१	१९	का	वहसुखे	३०५	२५	२४५	३७५	२६२	६३२	३६६	२६३
४३१	१०२	४३२	३१	४९६	अ	३०६	३२	२५२	३७७	२६५	६३४	३६७	२६५
४३२	१०९	४३३	३२	अ	अ	३०७	३६	२५६	४०५	२८०	कृष्ण	३७१	२७१
४३३	११६	४३४	२४	अ	अ	३०८	५२	२६४	४१२	२८३	७	३७६	
४३४	११६	४३५	२७	३०४	अ	३०९	६३	२६६	४२९	२८३	७	३८२	
४३५	१८४	४५०	२८	३०६	अ	३१०	७०	२७३	४३९	२९३	८	४०३	
४३६	१८७	४५१	२९	अन्तस्थाः	अ	३११	७२	२७८	४७९	२९४	१३	४०५	
४३७	२०७	४५२	४५	अन्तस्थाः	अ	३१२	८८	२८४	५३३	२९५	१४	४०६	१९९
४३८	२०९	४५४	४६	अन्तस्थाः	अ	३१३	१०३	२८८	५५९	३००	१६	४०७	
४३९	२१८	४५६	५१	अन्तस्थाः	अ	३१४	१०८	२९५	५५६	३०२	१७	४०८	
४४०	२२९	५०८	५३	अन्तस्थाः	अ	३१५	११८	३११	६३७	३०५	१८	४२८	
४४१	२३०	५११	५४	अन्तस्थाः	अ	३१६	१२२	३२५	६३८	३१२	१९	४३५	
४४२	२३३	५२९	५५	अन्तस्थाः	अ	३१७	१२३	३७५	६३९	३१३	२१	४५२	
४४३	२३५	५३१	५६	अन्तस्थाः	अ	३१८	१२३	४०२	६४२	३१७	२२	४५९	
४४४	२३६	५४७	५७	अन्तस्थाः	अ	३१९	१२७	४०९	६४४	३१८	२३	४६६	
४४५	२३७	५५१	६१	अन्तस्थाः	अ	३२०	१५४	४२७	६४६	३३१	२४	५११	
५००	२३८	५५९	७०	अन्तस्थाः	अ	३२१	१७२	४२८	६७३	३३३	२५	५३१	
५०१	२४७	५६४	७३	अन्तस्थाः	अ	३२२	१७३	४२९	६८२	३५५	२६	५३३	
५०४	२८२	५६९	७८	अन्तस्थाः	अ	३२३	१८७	४३४	६८३	३५६	२७	५३८	
५०६	२८९	६०१	७९	अन्तस्थाः	अ	३२४	१९०	४३६	६८५	३५९	२९	५४४	
५११	२९०	६०३	८०	अन्तस्थाः	अ	३२५	२१०	४३९	६८६	३७९	३०	५४८	
५१४	२९३	६०५	८२	अन्तस्थाः	अ	३२६	२१६	४४०	७०६	३९३	३१	५४९	
५१८	२९६	६०६	८४	अन्तस्थाः	अ	३२७	२२३	४४९	७११	३९५	३२	५६५	
५२३	२९९	६०८	८५	अन्तस्थाः	अ	३२८	२२५	४५८	७१४	४०४	३३	५७१	
५२४	३००	६०९	८६	अन्तस्थाः	अ	३२९	२२९	४५९	७१५	४०८	३४	५७३	
५२६	३०२	६१०	९३	अन्तस्थाः	अ	३३०	२३५	४६०	७१६	४१३	३५	५७९	
५३८	३०६	६१५	११२	अन्तस्थाः	अ	३३१	२३८	४६५	७१७	४१८	३६	५८०	
५४१	३०९	६२७	११३	अन्तस्थाः	अ	३३२	२४३	४६९	७१८	४२३	३७	५८५	
५४२	३१०	६३०	११४	अन्तस्थाः	अ	३३३	२४९	४७०	७१९	४२८	३८	५९०	
५४९	३१३	६३३	११५	अन्तस्थाः	अ	३३४	२५५	४७५	७२०	४३३	३९	५९५	
५५८	३१६	६३६	११६	अन्तस्थाः	अ	३३५	२६०	४८०	७२१	४३८	४०	६००	
५६९	३१९	६३९	११७	अन्तस्थाः	अ	३३६	२६६	४८५	७२२	४४३	४१	६०५	
५७८	३२२	६४२	११८	अन्तस्थाः	अ	३३७	२७२	४९०	७२३	४४८	४२	६१०	
५८९	३२५	६४५	११९	अन्तस्थाः	अ	३३८	२७८	४९५	७२४	४५३	४३	६१५	
५९०	३२६	६४६	१२०	अन्तस्थाः	अ	३३९	२८४	४९९	७२५	४५८	४४	६२०	
५९१	३२७	६४७	१२१	अन्तस्थाः	अ	३४०	२९०	५०४	७२६	४६३	४५	६२५	
५९२	३२८	६४८	१२२	अन्तस्थाः	अ	३४१	२९६	५०९	७२७	४६८	४६	६३०	
५९३	३२९	६४९	१२३	अन्तस्थाः	अ	३४२	३०२	५१४	७२८	४७३	४७	६३५	
५९४	३३०	६५०	१२४	अन्तस्थाः	अ	३४३	३०८	५१९	७२९	४७८	४८	६४०	
५९५	३३१	६५१	१२५	अन्तस्थाः	अ	३४४	३१४	५२४	७३०	४८३	४९	६४५	
५९६	३३२	६५२	१२६	अन्तस्थाः	अ	३४५	३२०	५२९	७३१	४८८	५०	६५०	
५९७	३३३	६५३	१२७	अन्तस्थाः	अ	३४६	३२६	५३४	७३२	४९३	५१	६५५	
५९८	३३४	६५४	१२८	अन्तस्थाः	अ	३४७	३३२	५३९	७३३	४९८	५२	६६०	
५९९	३३५	६५५	१२९	अन्तस्थाः	अ	३४८	३३८	५४४	७३४	५०३	५३	६६५	
६००	३३६	६५६	१३०	अन्तस्थाः	अ	३४९	३४४	५४९	७३५	५०८	५४	६७०	
६०१	३३७	६५७	१३१	अन्तस्थाः	अ	३५०	३५०	५५४	७३६	५१३	५५	६७५	
६०२	३३८	६५८	१३२	अन्तस्थाः	अ	३५१	३५६	५५९	७३७	५१८	५६	६८०	
६०३	३३९	६५९	१३३	अन्तस्थाः	अ	३५२	३६२	५६४	७३८	५२३	५७	६८५	
६०४	३४०	६६०	१३४	अन्तस्थाः	अ	३५३	३६८	५६९	७३९	५२८	५८	६९०	
६०५	३४१	६६१	१३५	अन्तस्थाः	अ	३५४	३७४	५७४	७४०	५३३	५९	६९५	
६०६	३४२	६६२	१३६	अन्तस्थाः	अ	३५५	३८०	५७९	७४१	५३८	६०	७००	
६०७	३४३	६६३	१३७	अन्तस्थाः	अ	३५६	३८६	५८४	७४२	५४३	६१	७०५	
६०८	३४४	६६४	१३८	अन्तस्थाः	अ	३५७	३९२	५८९	७४३	५४८	६२	७१०	
६०९	३४५	६६५	१३९	अन्तस्थाः	अ	३५८	३९८	५९४	७४४	५५३	६३	७१५	
६१०	३४६	६६६	१४०	अन्तस्थाः	अ	३५९	४०४	५९९	७४५	५५८	६४	७२०	
६११	३४७	६६७	१४१	अन्तस्थाः	अ	३६०	४१०	६०४	७४६	५६३	६५	७२५	
६१२	३४८	६६८	१४२	अन्तस्थाः	अ	३६१	४१६	६०९	७४७	५६८	६६	७३०	
६१३	३४९	६६९	१४३	अन्तस्थाः	अ	३६२	४२२	६१४	७४८	५७३	६७	७३५	
६१४	३५०	६७०	१४४	अन्तस्थाः	अ	३६३	४२८	६१९	७४९	५७८	६८	७४०	
६१५	३५१	६७१	१४५	अन्तस्थाः	अ	३६४	४३४	६२४	७५०	५८३	६९	७४५	
६१६	३५२	६७२	१४६	अन्तस्थाः	अ	३६५	४४०	६२९	७५१	५८८	७०	७५०	
६१७	३५३	६७३	१४७	अन्तस्थाः	अ	३६६	४४६	६३४	७५२	५९३	७१	७५५	
६१८	३५४	६७४	१४८	अन्तस्थाः	अ	३६७	४५२	६३९	७५३	५९८	७२	७६०	
६१९	३५५	६७५	१४९	अन्तस्थाः	अ	३६८	४५८	६४४	७५४	६०३	७३	७६५	
६२०	३५६	६७६	१५०	अन्तस्थाः	अ	३६९	४६४	६४९	७५५	६०८	७४	७७०	
६२१	३५७	६७७	१५१	अन्तस्थाः	अ	३७०	४७०	६५४	७५६	६१३	७५	७७५	
६२२	३५८	६७८	१५२	अन्तस्थाः	अ	३७१	४७६	६५९	७५७	६१८	७६	७८०	
६२३	३५९	६७९	१५३	अन्तस्थाः	अ	३७२	४८२	६६४	७५८	६२३	७७	७८५	
६२४	३६०	६८०	१५४	अन्तस्थाः	अ	३७३	४८८	६६९	७५९	६२८	७८	७९०	
६२५	३६१	६८१	१५५	अन्तस्थाः	अ	३७४	४९४	६७४	७६०	६३३	७९	७९५	
६२६	३६२	६८२	१५६	अन्तस्थाः	अ	३७५	५००	६७९	७६१	६३८	८०	८००	
६२७	३६३	६८३	१५७	अन्तस्थाः	अ	३७६	५०६	६८४	७६२	६४३	८१	८०५	
६२८	३६४	६८४	१५८	अन्तस्थाः	अ	३७७	५१२	६८९	७६३	६४८	८२	८१०	
६२९	३६५	६८५	१५९	अन्तस्थाः	अ	३७८	५१८	६९४	७६४	६५३	८३	८१५	
६३०	३६६	६८६	१६०	अन्तस्थाः	अ	३७९	५२४	६९९	७६५	६५८	८४	८२०	
६३१	३६७	६८७	१६१	अन्तस्थाः	अ	३८०	५३०	७०४	७६६	६६३	८५	८२५	
६३२	३६८	६८८	१६२	अन्तस्थाः	अ	३							

४४७	२२५	१७६	२६९	१६५	२	अन्तःस्थाः	२९९	३६५	११८	३२०	३७१	२६५	१८४	६	३४५
क	३१३	१८८	२८१	१६७	१५	घ	३७०	१२२	३२१	३७८	२७३	१८७	९	४४५	
	३२२	१९७	२८३	१७४	५७		३७२	१५०	३२४	४२३	२७४	१८८	१९		
२३	३२३	१९८	२९५	१८७	१००		३११	३७७	१५४	३२५	४५२	२७७	१८९	२१	४०५
१०१		३११	३०२	१८८	३४५	घ	३३०	३९७	१५७	३२९	४७५	२८०	१९०	२३	५०५
१०९	ध	३२४	३३१	१९७	३६५	घ	४४६	१७२	३३०	४७६	२८३	१९१	३५		५५७
११७	५	३३४	३३३	१९९	३६९	अन्तःस्था		१८२	३३१	४७८	२९२	१९२	३८		७१४
१२९	१२	३३६	३५५	२०९	३८६	घ	१९७	३३९	४७९	२९३	१९३	४०			
१३५	१६	३३७	३५६	२४९	३८९	घ	१९९	३४३	४८६	३०२	१९४	४६			
१४५	२३	३३८	३९६	२८२	३९०	५७९	१४	२१०	३७५	४९०	३०३	१९६	५६		
१५१	४५	३३९	४०४	२८५	३९६	क		२१६	३७७	५२५	३०६	१९७	५८		
२८९	४६	३७१	४०७	३०८		क	५०१	११२	२२५	३७९	५४४	३१२	२०९	६०	६७
२९०	४९	३७५	४०८	३१०		क	५३६	११३	२९३	३९९	५४८	३१७	२१०	७७	९७
२९८	५४	४०३	४१३	३१४	३५३		६२२	११७	३१३	४०९	५४९	३१८	२४८	१०८	२३५
३१९	५५	४२३	४३४	३३७	४२४	क	११९	३२३	४२१	६३८	३५५	२५७			२३६
३२४	५६	४४७	४६६	३५१		क	१२१	३२९	४३६	६३९	३७९	२८२			३३१
३२५	६८	४७६	४७९	३५४		क	१२९	३३०	४४०	६४४	३८६	२९४	२४		४०४
३५३	११८	४८६	४८७	३६०	११८	क		३३९	४५८	६४६	३९१	३९६	३३		४०७
३५८	१४०	५२९	४९९	३७०	१२२	खराः	१५१	२	४५९	६७५	४०४	३०४	५५		५३८
३६४	१६४	६३७	५००	३७९	१३३	२	१५२	५		६८२	४०७	३०८	६८		५८९
४३४	१७४	६३९	५०१	४२७	१५४	४	२१४	१२	घ	६८३	४१६	३१८	७७		क
४३०	२१२	६३२	५०६	४५२	१७२	१६	३२७	१६	घ	६८५	४७९	३३६	९०		क
४७१	२१९	६४६	५३०	४५९	१७३	२६	४०५	२६	घ	६८६	४८०	३७७	९३		२०७
४७०	२३०	६५४	५३८	४६६		४०६	२८७	४६	घ	७०६	४९२	३८२			
४७६	२३६	६७२	५५३	५१८		४५	४५	५६	घ		५००	४०३			
४८८	२४५	६८२	५५६	५२९		५३	२९८	६०	घ	५०१	४१६	४१६	३३		४०४
४८९	२५६	६८३	५५८	५३८	२३	६	५९	३१९	६८	७२	५०६	४१९			५३८
५०६	३०५	७०६	६३१	५४९	१७२	३१	१००	३५९	१२४	९५	५११	४२७			
५२९	३११	७१४	६३६	६१०	१९३	३३	१२०	३७१	१३८	१००	५१५	४३८			
५३६	३२९	७३०	६३४	६२१	१९३	३३	१२४	३७४	१३२	१०२	५१७	४५०	५५६		खराः
५४	३४५	७३४	६५५	६४५	२४१	७२	१२७	४८१	१३९	१०३	५३८	४८५			२६८
५४५	३९९	७३९	६९३	६९२	२६२	८०	१२८	४८९	१४८	१०५	५५७	५११			४२२
५४	४२१	अन्तःस्थाः	७४	७०६	३२९	१०८	१३७	५०१	१६५	१०६	५५८	५१८			४४४
२४	४२७	१	१५			पैरि०	१५५	५०२	१७२	१०८	५७६	५२२			अन्तःस्थाः
२५	४३४	२	१६	अ.व्या.	घ		१५५	५०६	१७३	११०	५८५	५२९			घ
५३	४३९	३	१७	अ.व्या.	घ		१६४	५१४	१७४	१२६	५९४	५३३			खराः
६३	४५८	४	१८	१०१	घ		१८५	५२६	१७७	१३६	६३३	५५५	६७		२७६
७०	४६०	५	१८	पैरि०	घ		१९३	५४६	२०१	१८८	६३४	६१०	४४२		२७६
७२		७	२३		घ		२००	५६५	२०२	१९६	६३४	६१०	४४२		२७६
८८		१२९	२४	५२	घ		२१३	५८३	२१३	१९८	६३४	६१०	४४२		२७६
१०१	४१	१३९	२५	७७	घ		२१४	५९	२२५	१९८	६३५	६१०	४४२		२७६
१०२	४८	१५७	२६	७८	घ		२२०	६५	२४०	२०५	६३६	६१०	४४२		२७६
१०३	५३	१७६	२७	७९	घ		२२६	७१	२४३	२०६	६३७	६१०	४४२		२७६
११६	७५	२०६	३८	८५	घ		२७२	७२	२६१	२१८	६३८	६१०	४४२		२७६
११३	७९	२१७	४३	८८	घ		२१३	७४	२६२	२१९	६३९	६१०	४४२		२७६
१५१	८८	२५५	५५	९५	घ		२१४	८८	२६७	२२०	६४०	६१०	४४२		२७६
१९३	९९	३५५	६५	१०५	घ		२२१	१००	२७४	२३३	६४५	६१०	४४२		२७६
१९९	१०३	३४७	१५५	१०५	घ		२२३	१०१	२७५	२३४	६४६	६१०	४४२		२७६
२१०	११७	३६२	१६२	१०६	घ		२२६	१०२	२७६	२३५	६४७	६१०	४४२		२७६
२१६	१७३	३६५	१६४	खराः	घ		२५६	१०८	२९९	२३७	६४८	६१०	४४२		२७६

२२०	४५	५४१	५१४	९	९०	१८८	५३८	४२७	१५२	क	घ	शान्तः	८९		२
५४९	८९	५९१		२६	८३	२८७		४७७		घ				९	२
७१४	१३४		कम	२७	२२४		कम		१५२	क	घ			१७	१८२
	१८३	कम	५३३	४८	४२५	घ	८१	४६३	९	४६३	२५७			१९९	२६९
	२७३	६२	५८९	२५५	४३३	१३६	२३३	११७		४६४				२६९	२७९
४०७	२६७	१८४	६९९	४३५	४७६	२४३	२३८			४६५				२८४	२९७
	३६७	२३८	५९१	५३५	३११	२९१	२९१			४६६				३०५	३१७
	५१६	३५७	६२४	६०५	३२६	३६७	३२६			४६६				३२६	३३७
	कम	३१४		कम	कम					३९४				३५४	३६५
	१४९	२४	४०९	५६४	३५४	घ	४२७	१६		३९४				४०१	४१३
	२२८	७३	५८९	६५४	३६७	६	४४९	३६२		३९४				४४७	४५९
	२५१	१००	६४५	३६४	१४	४५१	३८६			३९४				४८३	४९५
	३६७	३२२	अ.व्या.	अ.व्या.	२१०	५०८	४१२			४१२				५३१	५४३
	४६४	३३३		२७	२४७	५४७	५४७			४१२				५६६	५७८
	६७७		५१	२९	३३	२४८	५५०			४१२				६०३	६१५
		कम	५३	५५	५७	५८	५९			४१२				६४१	६५३
	१२४	२२	११०	१८७	परि०	२४९	५६४			४१२				६८६	६९८
			३६०	५१		२५०	६५४			४१२				७३१	७४३
				५१		२५१	६८८			४१२				७७६	७८८
						२५२	७२१			४१२				८२१	८३३
						२५३	७५६			४१२				८६६	८७८
						२५४	७९१			४१२				९११	९२३
						२५५	८२६			४१२				९५६	९६८
						२५६	८६१			४१२				१००१	१०१३
						२५७	८९६			४१२				१०४६	१०५८
						२५८	९३१			४१२				१०९१	११०३
						२५९	९६६			४१२				११३६	११४८
						२६०	१००१			४१२				११८१	११९३
						२६१	१०३६			४१२				१२२६	१२३८
						२६२	१०७१			४१२				१२७१	१२८३
						२६३	११०६			४१२				१३१६	१३२८
						२६४	११४१			४१२				१३६१	१३७३
						२६५	११७६			४१२				१४०६	१४१८
						२६६	१२११			४१२				१४५१	१४६३
						२६७	१२४६			४१२				१४९६	१५०८
						२६८	१२८१			४१२				१५४१	१५५३
						२६९	१३१६			४१२				१५८६	१५९८
						२७०	१३५१			४१२				१६३१	१६४३
						२७१	१३८६			४१२				१६७६	१६८८
						२७२	१४२१			४१२				१७२१	१७३३
						२७३	१४५६			४१२				१७६६	१७७८
						२७४	१४९१			४१२				१८११	१८२३
						२७५	१५२६			४१२				१८५६	१८६८
						२७६	१५६१			४१२				१९०१	१९१३
						२७७	१५९६			४१२				१९४६	१९५८
						२७८	१६३१			४१२				१९९१	२००३
						२७९	१६६६			४१२				२०३६	२०४८
						२८०	१७०१			४१२				२०८१	२०९३
						२८१	१७३६			४१२				२१२६	२१३८
						२८२	१७७१			४१२				२१७१	२१८३
						२८३	१८०६			४१२				२२१६	२२२८
						२८४	१८४१			४१२				२२६१	२२७३
						२८५	१८७६			४१२				२३०६	२३१८
						२८६	१९११			४१२				२३५१	२३६३
						२८७	१९४६			४१२				२३९६	२४०८
						२८८	१९८१			४१२				२४४१	२४५३
						२८९	२०१६			४१२				२४८६	२४९८
						२९०	२०५१			४१२				२५३१	२५४३
						२९१	२०८६			४१२				२५७६	२५८८
						२९२	२१२१			४१२				२६२१	२६३३
						२९३	२१५६			४१२				२६६६	२६७८
						२९४	२१९१			४१२				२७११	२७२३
						२९५	२२२६			४१२				२७५६	२७६८
						२९६	२२६१			४१२				२८०१	२८१३
						२९७	२२९६			४१२				२८४६	२८५८
						२९८	२३३१			४१२				२८९१	२९०३
						२९९	२३६६			४१२				२९३६	२९४८
						३००	२४०१			४१२				२९८१	२९९३
						३०१	२४३६			४१२				३०२६	३०३८
						३०२	२४७१			४१२				३०७१	३०८३
						३०३	२५०६			४१२				३११६	३१२८
						३०४	२५४१			४१२				३१६१	३१७३
						३०५	२५७६			४१२				३२०६	३२१८
						३०६	२६११			४१२				३२५१	३२६३
						३०७	२६४६			४१२				३२९६	३३०८
						३०८	२६८१			४१२				३३४१	३३५३
						३०९	२७१६			४१२				३३८६	३३९८
						३१०	२७५१			४१२				३४३१	३४४३
						३११	२७८६			४१२				३४७६	३४८८
						३१२	२८२१			४१२				३५२१	३५३३
						३१३	२८५६			४१२				३५६६	३५७८
						३१४	२८९१			४१२				३६११	३६२३
						३१५	२९२६			४१२				३६५६	३६६८
						३१६	२९६१			४१२				३७०१	३७१३
						३१७	३००६			४१२				३७४६	३७५८
						३१८	३०४१			४१२				३७९१	३८०३
						३१९	३०७६			४१२				३८३६	३८४८
						३२०	३१११			४१२				३८८१	३८९३
						३२१	३१४६			४१२				३९२६	३९३८
						३२२	३१८१			४१२				३९७१	३९८३
						३२३	३२१६			४१२				४०१६	४०२८
						३२४	३२५१			४१२				४०६१	४०७३
						३२५	३२८६			४१२				४१०६</	

७१	१६४	६२१		१५	१६	६३०		१२६	सूक्त	२५	६६६	३५२	१०६	परि०	१६९
	६	अ.व्या.		२२	५२	६३५		१२८		२६	६८१	३५४	१०९	३८	१७०
	३२८	१७		२३	५६			१३६	२	४०	६८४	३५७	१०४	४८	१७४
	६			२७	६७			१३९	३	५८	६९३	३६०	१०८	४८	१७५
	१८८	६२		४०	१६३			१४१	७४	६४	६९६	३६१	११८	७६	१७६
				४०	१६१			१४३	७७	६९	६९६	३६६	११७		१७९
				४९	२१३	१९		१४३	१६६	७०	७१९	३६५	११४		१८०
				५६	३७४	२०		१४७	१६७	७१		३६६	११९		१८१
				८१	३७५	२१		१४९	१७०	७४		३६७	१२५		१८२
				८२	३७८	२२		१८९	२०७	८४		३७०	१३०		१८३
				८३	३९४	५०		१९०	२१७	८७		३७१	१३४		१८४
				८४	४१७	१०४		१९७	२२७	८९		३७५	१३७		१८५
				८५	४३४	२२९		१४२	३४५	९		३८०	१३९	८९	१८६
				९९	५४०	२३३		१४३	३४९	११		३८१	१४०	९०	१८७
				१२२	५६७	३३६		१४९	३५५	४७		३८३	१४४	१२०	१८८
				१२५	५६८	३३७		१५०	३६६	४८		३८४	१४१	१२१	१८९
				५१	६२४	३९०		१५१	३६७	५८		३८५	१४२	१२२	१९०
				४२	६३०	३०५		१५२	३६८	६२		४०७	१४७	१२३	१९१
				४३	६३१	३१६		१५७	३६९	७२		४२१	१४८	१२५	१९२
				४६	६३८	३२७		१५८	३६९	८३		४२३	१४९	१२६	१९३
				५०	६५२	३६२		१६५	३८३	८७		४२७	१५०	१२७	१९४
				५१	६५६	३६६		१६६	३८५	१९३		४२८	१५१	१२८	१९५
				५२	६५७	३६८		१६७	३८६	२१५		४३१	१५२	१२९	१९६
				५३	६५८	३६९		१६८	३८७	२१६		४३५	१५३	१३०	१९७
				५४	६५९	३७०		१६९	३८८	२१९		४३९	१५४	१३१	१९८
				५५	६६३	३७३		१७४	३९९	२१९		४४५	१५५	१३२	१९९
				५६	६६५	३७५		१८०	४०३	२२१		४४८	१५६	१३३	२००
				५७	६७१	४०३		१८१	४०७	२२२		४५१	१५७	१३४	२०१
				५८	६७५	४०४		१८६	४०८	२२३		४५३	१५८	१३५	२०२
				५९	६७५	४०५		१८८	४०५	२२४		४५४	१५९	१३६	२०३
				६०	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६१	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६२	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६३	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६४	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६५	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६६	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६७	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६८	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				६९	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७०	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७१	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७२	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७३	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७४	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७५	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७६	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७७	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७८	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				७९	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८०	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८१	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८२	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८३	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८४	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८५	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८६	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८७	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८८	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				८९	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९०	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९१	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९२	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९३	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९४	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९५	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९६	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९७	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९८	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				९९	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४
				१००	६७५	४०६		१९१	४०६	२२५		४५५	१६०	१३७	२०४

४०३	२६	२१७	४९५	५३१	८९	३११	५६३	३८५	अव्या	१	५६७	१	३३८	६२	
४१७	३९	२१८	४९७	५६१	१०२	३४६		३८८		१	५६८	१	३३९	१०७	
४२०	१३३	२२२	४९८	५७०	१४०	३४८		३९७	४८	१		१	३४०	१५२	
४४३	१७३	२२३	४९९	५७६	१९४	३६९		४१४	४९	१		१	३४१	१५३	
		१७४	२२४	५००	६२९	१९५	४२३	४२२	८४	१		१	३४२	१५४	
५		१९५	२५८	५०१	६४९	१९६	४२४	४		१		१	३४३	१५५	
		२०१	४०९	५०३	६५०	१९७	४२५	५७	५२५	१		१	३४४	४३१	
८		२०२	४५५	५०४		२२४	४२७	१४७	५६१	१		१	३४५	४३७	
९		२०३	४६६	५०५		२२५	४४६	१८४	६२०	४६	१२९	१	३४६	४३८	
१०		२०४	४६९	५०६		२२६	४४७	१८५	६७१	४७	३९६	१	३४७	४३९	
११		२०५	४७२	५०७		२२७	४७८	२३५	६७२	४८	४६७	१७५	३४४	४०५	
१२		२०६	४९१	५०८	८	२२९	४८३	२९१	६७५	५६		१७६	३४५	४०६	
१३		२०९	४९२	५०९	४१	२३२	४८५	३७५	६७६	७३		१७७	३४६	५३४	४०७
२५		२१५	४९४	५१३	६५	२३९	५८३	३७९	७३२	८७		१७८	३४७	७११	४०८

अत्यन्तोपयुक्तपदार्थोंका शोधन तथा भस्मप्रकार ।

भस्मोंका प्रकरण बहुत लम्बा चौड़ाई इसलिये समस्त इसजगहदेना अवश्यक है । ईश्वरकी दया होगी तो उभे भारतीयरसायनतत्त्व नामक ग्रन्थमें दियाजायगा जिसमेंकि यथाशक्य भारतवर्षमें मिलने वाले धातुपधान, रसोपरस और रसोपरलोकी गवेषणा करके उनका शोधन, माण और अनुपान प्रसूति दिये जायगे । धाय १ यथाशक्य धातुपदाका सिद्धविषय भी दिया जायगा । सम्प्रति इसग्रन्थस्य योगोंके तैयारकरनेमें जिनके विना कार्य नहीं चलसकता है उनका १-१ प्रकार दियाजाता है । उनमेंसे नी जिन जिनके प्रकार हस्तग्रन्थमें आनुकेहैं उनकी सूचना यीगर्है और रहेहुओंका शोधन तथा भस्मविधान दिया जाता है ।

- रत्नोंकीभस्में—द्वितीयभागके ५८२ पृष्ठमें रत्नगर्भपोटनीके अन्तर्गत विधान है ।
- सुवर्णभस्म—हिरण्यगर्भपोटनी (प्रथमा) में देखो ।
- ताम्रभस्म—ताम्रयोग (२३) में देखो ।
- नागभस्म—नागभस्मयोग (प्रथम) में देखो ।
- कान्तलोहभस्म—कान्तलोहरसायनमें देखो ।
- लोहभस्म—अगहस्यप्रोफ अथ-सिन्दूर (संख्या ९) में देखो ।
- माक्षिकभस्म—धनेश्वर (चतुर्थ) की टिप्पणीमें देखो ।
- अश्वत्थभस्म—अश्वत्थयन (सं० १५०) तथा अश्वत्थसिन्दूर (सं० १५१) में देखो ।
- तालभस्म—तालकेश्वर (अष्टम) में द्वितीयप्रकार देखो ।

प्रत्येकपदार्थके शोधन और मारण ग्रन्थमेंदेखे बनकरहके मिलतेहैं । परन्तु तैत्र, लक, मोमूज, काशिक और गुण-त्यक्तय इन प्रत्येकमें ७-७ बार पुनानेसे सिद्ध होतेहैं परन्तु गलनेकी शक्यताके शोच इनके पत्रे बनकर गुण-याकरतेहैं पर जो गुण गलनेसे होताहै वह पत्रोंसे नहीं होताहै । नाग और कृत्त गलनेमें बहुत आचनहै पर इन्हें गुणे पात्रमें भूषकर नहीं पुनाना, नहीं तो ये सबककर नुकसानकरतेहैं इसलिये सिद्धियथीकेबर्तनको जिमीनमें गडकर शोधन इत्येको मरके ऊपर सच्छिद्रहन्नीको रस उधके छिद्रमेंसे इन्हें लक्ष्मना वाक्षिये । इसदरह उपरदेका समान नहीं रहता । परन्तु जहाँ अपिचग्रन्थमें सुद्धि करनीहो वहाँपर गवैस्य सहायिष्णुनागरर वरुका पत्र चरदेना और ऊपर बाँधनी कम्पी छीडी रघकर शोनोंतरु दो अहमियोंको दबनेदेखिये सजकरदेना लक बीबनेसे ल्हेदुर प्रत्येको इन्हेंसे ओरसे

शब्दतो होगा पर किसीतरहका मुद्रसान नहींहोगा । स्वाहशीतलहोनेपर पाटको दूरकर नीतरका द्रव निकालकर धातुको लेकर फिरसे गलाना और दूसरे नवीन द्रवमें सुसाना । द्रव कमसेकम सुसनेवाली धातुसे चतुर्गुणित होनाचाहिये और प्रतिवार नयाद्रव भरना चाहिये । इसतरह करनेसे सामान्यतया सब धातुओंकी शुद्धि होजातीहै । विशेषकर नियुग्नी, मंगरा, आककादृष, केशरका द्रव इनमें क्रमशः यथाशक्य सुसावे देनेसे धातुओंकी विशुद्धि और विशेष गुणाधान होताहै । नाग और वज्रको २१-२१ बार अर्कदुग्ध और केशरकेपानीमें सुसावे देनेसे अत्यन्तही शुभोदय होताहै । अर्केशर अधिक न मिले तो एकवारके द्रवमें २-२ सुसावे देनेसेभी हर्ज नहींहै कारण कि साधारणशुद्धिसे विपभाग निकलजाताहै केवल गुणाधानार्थ इनमें सुसाव दिया जाताहै । केशर मंहगी चीखहै इसलिये उत्तमप्रकारतो पानीमें अष्ट-मांश केशर डालनेकाहै पर कमसेकम द्वादशांश तो अवश्यही पीसकर छोडनी चाहिये ।

रजतभस्म—२० तोले विशुद्ध रजतका थारीकरेता बनाकर जहली करेलेके पधांगखरसमें ६-७ दिनतक मर्दन-कर ४-४ आनेमरकी टिकडियें बनाय कड़ेधूममें सुराकर शणवधमुटमें बन्दकर गट्टेमें २ सेर कण्डोंकी आचदे । आंच अधिक न होनी चाहिये नहींतो चांदी गलकर थप्पा होजायगी । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर दिनभर पूर्वद्रवमें मर्दनकर टिकडीबनाय सुसाकर २॥ सेर कण्डोंकी आंचदे । कदाचित् प्रथममुटमें आंचका प्रमाण अधिक मात्रा पड़ेतो ४-५ आंचोंतक उतनाही प्रमाण रखे । जैसेजैसे आंचको सहन करने लगे वैसेवैसे बढ़ाताजाय । १५-२० आंचोंकेबाद आधेमन जहली-कण्डोंकी आंचदेनेमेंभी हर्ज नहींहै । ३० आंचें देनेकेबाद १ मनकण्डोंकी आंचदे । ४० आंचोंकेबाद पूरे गजमुटकी आंचदे । ऐसे १०० मुटमें उत्तमोत्तम भस्म होतीहै । रजत और सुवर्ण भस्महोनेमें बड़े दुर्जरहें इनकी भस्मोंकी शास्त्रधरवगैरहने बहुतथोड़े पुटोंकी आंचोंमें सिद्धि लिखीहै परन्तु यह निश्चय और निश्चय नहीं होती इसवातपर ध्यान देना उचितहै ।

वज्रभस्म—दलदार और मजबूत मिट्टीकी कडाहीलेकर भट्टीपर इसतरह रखे कि उसका पेंदा भट्टीमें चलाजाय केवल ४-४ अण्डल ऊपर रहे । इसमें ८० तोले शुद्धवज्रको गलाकर पोखके डोडोंके चूर्णका (बनतेकदिना अफीमनिकाळे हुए हों तो अच्छाहै) प्रक्षेप देकर बबूलके हरे डण्डेसे षण्णकरे । जबतक समस्तवज्रकी भस्म न होजाय तबतक प्रक्षेप देताजाय लगभग ४ पहरमें भस्म होजातीहै (सूचना—इसे कितनेही अन्न भस्म समझकर खानेको देतेंहैं यह खानेके योग्य नहींहै ऐसेही जित्त और नागमें रामसना ।) इसकेबाद प्रक्षेपदेना बन्दकर २ पहरतक कफो आंचलगवावे और चलाताजाय । इसवातका ध्यान रहे कि भस्म उठने न पावे । फिर भस्मको मिट्टीके बड़ेशरावसे ढककर यथावस्थित छोड़दे । २४ घंटेबाद स्वाहशीतलहोनेपर धीरजसे निकालकर सुमारीखरससे २ दिन मर्दनकर १-१ तोलेकी टिकडियां बनाकर कफोधूममें सुरावे । फिर ५-५ सेर बबूलके दो सूखे कण्डे लेकर एकदंतमें एक कण्डेकी रखकर टाटविछाकर सुटेहुए निनोलोंकी (कार्पासपी-जोंकी) एक अण्डल मोटी तह जमाकर टिकडियोंको इसतरह रखे कि एकदूसरीसे अलगरहे । फिर टिकडियोंपर एकअण्डलमोटी दूसरी तह जमाकर बचीहुई टिकडियोंको रखदे, ऐसे ३ तहतक जमाकरहैं । फिर इसपर दो अण्डल-मोटी निनोलोंकी तह देकर दूसरे कण्डेसे ढककर गोबरसे सन्धिषण्डकरदे । कुछ सुपुत्रानेपर १५ सेर कण्डे ऊपर जमाकर आंच लगाने । यह किया निर्वात स्थानमें करनी चाहिये । तीसरेदिन स्वाहशीतल होनेपर सावधानीसे ऊपरकी राखको हटाकर टिकडियोंको निकालले । फिर पूर्ववत् सुमारीखरसमें एकदिन मर्दनकर मुष्पटिकडियोंसे शरासमुटमें बन्दकर एकमनकण्डोंकी आंचदे । ऐसे ५-६ आंचें देनेकेबाद यदि एकदम सफेद होजाय तो रखले । कदाचित् कुछ काजिमा रहगई हो तो सुटेगमुटकी एक आंचदेवे । यह अत्यन्त सफेद और निश्चय भस्म होतीहै ।

यदादभस्म—त्रिदोषका थारीकरेता बनाकर मिट्टीकी कडाहीमें मन्द अग्निपर गरमकर क्रमशः त्रिगुण तैलदिक द्रव्योंको ढालकर सुरावे । सबकेपीछे इतनी आंचदे कि छिद्र सब जलजान । फिर शोरा, हरिताल, गन्धक, मेनधिल, सुहागा, सिट्करी, नरसार ये प्रलेक अष्टमांशलेकर थारीकचूर्णकर रखले । इसकेबाद जिसके नीचे अग्नि जलावे और नीमके ताने डण्डेसे घलताकरे । जब जिस गलकर उठने लगे तब उपर्युक्तचूर्णकी मुट्टीके देकर ढंढेसे घलनाजाय । इण-तरह जबतक समस्त जिसकी भस्म न होजाय तबतक यहीक्रम जारी रखे । भस्म होनेपर चूर्ण देना बन्दकरके १ पहर-तक अग्निदेकर पोटे । फिर वज्रकी तरह ढककर रखदे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर चीनी अथवा पर्यरके पात्रमें रख जलहालकर चलदे । पानी निरत अनेपर धीरजसे निकालकर दूसरागानी भरदे । ऐसे जबतक भस्ममें शारका भाग रहै तबतक इसीतरह करता जाय । फिर सध्याभस्मकी सुराकर सुमारीखरसमें पोटर टिकडीबनाय मुष्पट टिकडीबनाय धातुकर वज्रकीतह निनोलोंके बीचमें रखकर आंच दे । स्वाहशीतलहोनेपर निकालकर सुमारीखरसमें टिकडियां बनाय गजमुटकी आंचदे । ऐसे ३-४ आंचें देनेसे निश्चय श्रेष्ठ भस्म होगी । धनुसादमें किसीके अग्निप्यायि जिसकी जुम्बर हो तो जलमें मोहर रखले आंच न दे । दरि उठनेवागी धनुशोको कथम करने धी इच्छा हो तो धोना नहीं बँधेही काममें डेतेना ।

पित्तल च कांश्यभस्म—पूर्व रीतिसे विशुद्ध कांस्य और पीतलके टुकड़ेकरके मूपाकर्णा, ब्राह्मी या अङ्गुष्ठा तथा-
छामचूर्ण, शुद्ध गन्धक और मैन्सिल प्रत्येक अष्टमाश डालकर नीचूकेरसमें घोटकर टुकड़ोंपर लेपकरे । सूतनेपर ऊपर-
कहीहुई वनसतियोंके चूर्णकी ऊपर नीचे तह देकर शरावघम्पुटमें बन्दकर इतनी आच दे कि चूर्ण और गन्धक जलज्यों ।
इसकेबाद निकालकर पूर्ववत् ३-४ आंचेंदे । भस्मदोनेपर (नीचूकीनगह काटेवालीचोलाईके रससे कामलेवे) खरलमें घोटकर
टिकडिया बनाकर आचदे । क्रमश आचको बढ़ाता जाय । २० पुटकेबाद चूर्णकी तह देना बन्दकरदे और गजपुटकी
आच दे । ऐसी २-३ आचोंमें विशुद्धभस्म होगी । रंग न आया हो तो अखीरकापुट उपकीहुई टिकडियोंको देदे ।

कसीसभस्म—कुमारी, भटकटैया और सलानासीके खरलोंमें क्रमश ३-३ दिन घोटकर सुखाकर ३-४ दिनतक
बहुतखड़े दहीमें डालकर रहनेदे । गाढाहोनेपर घोटकर १-१ तोलेकी टिकिया बनाय सुखाकर जलभगरेके चूर्णके धीचमें
टिकडियोंको रख गजपुटकी आचदे खाइशीतलहोनेपर निकालकर रखले ।

तृथभस्म—५-५ तोलेकी तुल्यकी चमकदार डलियें लेकर कच्चे सूतसे लपेटकर मिट्टीकी हथौड़ीमें २ सेर अननुस
पत्थरके चूलेकी डलियोंमें दबाकर इतना पानी डाले कि सारा चूना फूटजाय । फिर घड़को फोड़कर डलियोंको निकालकर
सुखादे । इसकेबाद १-१ डलीको नारियलके धरावर मँसके ताजे गोबरमें रखकर धूपमें सुखावे । जब अन्दरकी डली
दिलानेसे खूबखड़ बजनेलगे तब निकालकर डलीपरसे सूतको खोलकर लोहेके तवेपर रखकर तेलियागेह १ रतलको
पीसकर आधेगेहसे डलीको शिखारकर ढकदे और चूहेपर रख नीचे बेर या शमीकीलकवीकी १ पहर मन्द आचदे ।
यह ध्यान रहे कि कहींसे हवा निकलती देखे तो दूसरे गेहसे दबादे । फिर धीरे २ आच बढ़ाकर २ पहर मध्यमाग्नि
और १ पहरकी तीमाग्नि देकर खाइशीतल करके निकालले । जहा कहीं (औषधनिर्माणमें) तुल्यका प्रयोग आवे वहाँ
इसभस्मको काममें लेवे ।

मह्लभस्म—नरगुन ८० तोले, जवइटमिचं १५ तोले, काटेवाली चोलाईकी जइवा क्लक ५ तोले लेकर सबको
मिट्टीकी हथौड़ीमें भरके ३ तोले मलनी डलीको दोलायत्रविधिसे भूतशोधनपर्यन्त वाष्प देवे मूतका सम्पर्क न होनेपावे । फिर
काचकेवर्तनमें डलीको रखकर ह्वनेतक आक्कादूप भरके धूपमें रखे । दूध नया बदलताजाय परन्तु मजदर जमीहुई
दूधकी तहको अलग न करे । २२ वें दिन अपामार्गके क्षारको आकके दूपमें पीसकर एकलेपलगाकर सुखादे । ऐसे
७ लेपलगानेकेबाद बारीक कपड़ेपर आकके दूपमें पिसे हुये अपामार्गके क्षारका लेपदेकर सुखासुखाकर ७ तह चढ़ावे ।
फिर मिट्टीकी कुलहडीमें मह्लसे चतुर्गुण अपामार्गके क्षारमें दबाकर ढकन लगाय ७ कण्डमिट्टीदेकर अच्छीतरह सूतनेपर
मिट्टीके षडेमें आधेमन बकरीकी मींगणियोंकी निर्वातस्थानमें आचदे । ७ दिनगढ़ सावधानीसे मजको निम्नलकर रखछोड़े ।
इसे योग्यचिकित्सककी सलाहसे काममें लेवे उरुद्रविषहै ।

पारदशुद्धिः—वानारु पारेमें जिस, रागा और शीसा मिले हुए आतेहैं इसलिये जो कुदरती शिगरिकहै (अमा-
वमें वनावटी) उसे मगवाकर नीचू और आककेपत्तोंकेरसमें १-२ दिन घोटकर छोटीछोटी टिकडियें बनाय अच्छीतरह-
सुखाकर डमरुयन्त्रमें बन्दकर चूहेपर चढाय नीचे वेर, बजूल, खैर, धव बंगरह सारिछलकडियोंकी मन्द, मध्य और
तीव्र इसक्रमसे ४ पहरकी आग्निदेवे । ऊपरके षडेपर ४ तह मोटे कपड़ेकी गद्दीको पानीमें तरकरके रखदे और उसे
१-१ घण्टेकेबाद ठडेपानीमें तरकरके निचोड़कर रसताजाय । इसका मतलब यह है की अत्यन्तगर्मीपानेसे पारा फिरी न
फिरी राखेसे निकल जातारै । तर रहनेसे न जायगा । ४ पहरकेबाद आचदेना बन्द करदे और साधारणदोयलींर
यन्त्रको रक्वाणरहनेदे तथा गद्दीको हटादे । खाइशीतलहोनेपर बहुतसामालकर कपडमिट्टीको ढरकर ऊपरके षडेमेंसे बारीक
कपड़ेके सहारेसे पिसकर तन्नामपारेको निकालले । नीचेके षडेकीटाख जब एष्टम श्वेतहोवातीदे उससमय पारा नीचेकी
हथौड़ीमें भी चला आताहै तब ऊपरकीहथौड़ीतरह नीचेकी हथौड़ीमेंसेभी पारेको निकालले और राखकोनी देखले उसमें पारा
मिला न हो । इसतरह पारेको निकाल खारीके कपड़ेसे १०८ बार छाननेसे फलिमारहित होजातारै । यह इषडी काम-
चलाऊ शुद्धि हुई । विशेष शुद्धि की इच्छा हो तो रोहेका खरल अथवा मोटेपेंडेकी कपाडी और रोहेका मूषड लेकर
इसतरहके चूहेपर रखे कि जिसमें आगेपीछे दोनोंतरफसे ईंधन देसय । फिर इसमें अग्नीप्रनाण पारेको डालकर
उससे १६ वां हिस्सा संधानमक और अत्यन्त खडी काशी अथवा नीचूकारस देकर घोटतरादे । रासुग्नेपर नया
दिताजाय । ४ पहरकेबाद गरमापानीसे इसयुक्तिसे धोवे कि पारेडा अश पानीमें न जाय । निकालेहुए पानीको मिट्टी
अथवा पीनीकेवर्तनमें रखें बारग कि कदापिद भूलसे पारा चलाया हो तो उसमेंसे पीडनसे । दूसरेदिन १२ वां
हिस्सा नोसादर और नीचूकारस देकर ४ पहर उसीतरह घोटकर थोकर साफकरे । तीसरे दिन षडेगांन हथौड़ीचूर्ण
और नीचूके रसमें शोधनकरे । इतीतरह चित्रमूलमीठाल, कच्चे सहिबनकी जइडीठाल, चाखरी (त्रिगडिया),
एष्टभूम, एकगोटी लहसन, त्रिफला, त्रिकटु इनप्रत्येकके पोडगासचूर्ण और नीचूकेरसमें ४-४ पहर मर्दन और शोधनकरे ।

इससेमी विशेष शुद्धिकरनी हो तो मर्दनकेबाद गरमपानीसे न धोकर डमरूयन्त्रमें रख ऊर्ध्व, अधः अथवा तिर्यकपातन-करताहै । इससे अल्पन्तविशुद्धहोजाताहै । इषकेबाद विषोपविष जितने मिलसकें उनमें मर्दनकरके शोधनकरे यह समस्तकायकेलिये उपयुक्तहोजायगा । जहां कजली हो वहां उसकेसाथ शुद्धगन्धककेयोगसे नीलवर्ण कजली बनाकर काममें लेवे और चन्दोदयप्रसूति समस्तसिन्दूरको तैयार करके पारदभस्मके अभावमें डाले । सिन्दूरको प्रकार प्रन्थमें विस्तृतरूपसे दियाहै ।

गन्धकशुद्धिः—लाळिमायुक्त आवलासार गन्धकलेकर लोहेकीकड़ाहीमें डालकर धरणी, भंगरा अथवा तुलसीका चौगुना रस देकर साधारण अग्निपर औटावे । कमीकमी चला दियाकरे । थोड़ा रस वाकीरहनेपर उतारकर गरमपानीसे धोकर साफकरले फिर धूपमें सुखाकर बारीकचूणकर चतुर्थांश गायके धीकेसाथ गलाकर चौगुने गायके दूधमें छानदे । ठंडाहोनेपर निकालकर गरमपानीसे साफकरके सुखाले । ऐसे तीनबारकरनेसे विशुद्धहोजाताहै ।

मनःशिलाशुद्धिः—लोहेकी कड़ाहीमें मैनसिलको साधारण गरमकरके चौगुने गोमूत्रमें बुझावे । ऐसे १०० बार बुझानेसे एकान्ततः विशुद्ध होजातीहै । गोमूत्र प्रतिवार नयालेना ।

वत्सनामशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर दोलायन्त्रसे खेदितकर छोटे छोटे टुकड़ेकरके पीलीसरसोंके तैलमें भिगोएहुए ४ तहकपचेमें पोष्टीबनाय ३ दिन रखकर कड़ीधूपमें सुखाकर रखले ।

विषमुष्टिशुद्धिः—परिपुष्टसेद्रुकचिलोंको गोमूत्रमें डालकर रखदे गोमूत्र प्रतिदिन बदलतारहे । २१ वें दिन साफ पानीमें डालदे और पानीको प्रतिदिन बदलतारहे । १० दिनबाद कुचिलोंको छीलकर मीतरका अक्षर निकालकर पानीमें ही डालताजाय । फिर अल्पन्तखटीकाधीमें ४ पहर खेदनकर गरमपानीसे धोकर ४ पहर दूधमें उवाले । यदि इनकी विजता दूर करनी हो तो गोखरू, हूरें और शतावरके क्वाथमें ४ पहर उवालकर छोटे २ टुकड़े बनाय सुखाकर रखले ।

मृदारशुद्धिः—मृदारशुद्धको ७ बार बकरीके मूत्रमें गरमकरके बुझावे । फिर चतुर्थांशसेधेनमककेसाथ १ पहर पानीमें घोटकर अठगुने पानीमें मिलाकर रखदे । नितरनेपर पानीको निकालकर दूसरा सेधानमक डालकर पूर्ववत् घोटकर पानीडालकर रखदे । ऐसे २१ बार करके नमकका तमाम हिस्सा निकालकर सुखाकर रखले ।

भ्रूतकशुद्धिः—भेंसके गोबरमें चौगुना पानी डालकर भिलावोंकी पोष्टीको दोलायन्त्रमें लटकावे । पोष्टी गोबरमें डूबीहै । फिर ४ पहर मन्दआँधसे पकाकर गरमपानीसे धोबाले । इसीतरह ४-४ पहर गोमूत्र, दुग्ध और नारियलके पानीमें पकावे । नारियलकेपानीमें पकानेसे पहिले इनकी टोपी उतारदे । इसतरह शुद्धकियेहुए भिलावोंको काममें लेवे । इसीतरह जयपालकी शुद्धि करे परन्तु नारियलके जलमें न पकावे । अन्तमें उनकी जिह्वाको निकालकर नींबूकेरसमें सहातक घोंटे कि चिकनाई निकलजाय ।

घत्सरा, फरिहारी, कनेरशुद्धिः—गोमूत्र और दुग्धमें ४-४ पहर खेदनकरले ।

शिलाजतुशुद्धिः—यवर्णीय रसधर्या २९ में देखो ।

शान्ति धियं सिद्धिमनन्तविश्रुतिं मानं महोत्साहमकुण्ठितोद्यमम् ।

आयुस्ततिं रोगसमूहवर्जितां विष्णुर्विद्व्याद्रसयोगसागरे ॥

इति धीरसयोगसागरे परिशिष्टं समाप्तम्

अत्रविषये विशिष्टविदुषामभिप्रायाः ।

अथ बहोः कालात् प्रतीक्षितस्य प्रन्यरत्नस्य समवलोकनेन सर्वं महान्तं प्रमोदमावहामि । बम्बईनगरवास्तव्यैः प्रश-
स्वयशोभिर्भिषग्वरेण्यैः सुहृद्भ्यश्चोद्दरिप्रपथशर्मभिः सुव्यवस्थया शताधिकानां रसप्रन्यानां विकीर्णानि प्रयोगजातानि सुस-
शुद्ध विरचितोऽयं रसयोगसागरो रसजगति कामप्यतिशायिनीं सुधर्मां धरो । विषमस्थलेषु मार्मिकटीकया संवलितमिदं
प्रन्यरत्नं हिन्दीटीकायाः साहित्येन न केवलं विदुषां भिषजामेवोपयोगिन् किन्तु साधारणचिकित्सकानामपि, अनल्पमुपयोगीति
को नाम विद्वान् विवदेत् ।

इत्यपि वक्तुं सुशक्तं यदथावधि सङ्ग्रहप्रन्यानां निर्माणे यः प्रयासः समजति तत्र मूर्धन्यभूतोऽयं प्रयत्नातिशयः । मन्वे
चैकाकिन एवास्य प्रन्यरत्नस्य सङ्ग्रहणात् पुस्तकनिवहानां निधानं केवलं भारापितमेव स्वाद्दयानाम् । वैद्यराजमहोदयैर्मुद्रणा-
धिकार्यं स्वयं सावधानतया विहितमिति शुद्धप्रायस्याऽऽस्तोऽङ्कनं नितरां प्रकाशयति । प्रन्येन सहोपोद्धातभागोऽपि दर्शनीय-
तमः । ध्यानपूर्वकमध्ययनेन निषग्वरेभ्यानां न केवलमायुःशास्त्रविषयकं, किन्तु शास्त्रान्तरविज्ञानमपि सुतरां भवति विज्ञात-
मिति किं बहुना स्वयंयुगौरेस्य विषयेऽनल्पप्रत्यनेनेति ।

जयपुर, मार्गशीर्षं }
शुक्र ११ सं. १९८६ }

आयुर्वेदमार्तण्ड लक्ष्मीराम स्वामी, आयुर्वेदाचार्यः ।
राजकीय आयुर्वेदिक कालेज

श्रीमान् विविधामममपरिशीलनासमश्रमसमासादितोपादेयवैदुष्यप्रकर्षः, शास्त्रन्यायातुरूपवाक्यविन्यासपरिज्ञानपरि-
निष्ठान्तःकरण आयुर्वेदवित्तमोप्यखिलशास्त्रनिष्णातधिपणः, मारतवर्षप्रहृष्वर्षिललितलेखः पण्डितप्रवरः वैद्यवरदश्रीहरिप्रपथ-
महाशयोऽभिनेयव्येवणापूर्णं रसयोगसागरमिषं खलत्सुषं प्रबन्धं निर्माव मनोहरं मुद्रापयित्वा चावलोकनार्थं मत्त्वविषे
तदेकं सङ्कषं पुस्तकं प्राहिणोत् एतदर्थं शुभंयुगौदार्द्रेऽहसिफपरदशतघन्यवादाः सन्नुतराम् । प्राच्यप्रतीच्यविचारसंघयतदुचि-
तचारुविवेचनात्पुर्वसमभितवेदविभूतिरुपायुर्वेदप्रामाण्यम्भवत्यापकोपोद्धातप्रकरणदर्शनध्रुवातुरागवशीकृतान्तरतयाऽन्यत्रापी-
दद्य एवायमिति समधिकोत्सवप्रविश्रम्भः स्रोतव्ये मूकता मूकत्वैवेति प्रतीयन्नन्वेषां द्वित्राणां समर्पानामीदृशानुकृती प्रोत्साह-
दानार्थमत्र प्रावर्तिषि स्तोकलेखाय इति विद्योदयोदन्तः सन्तः क्षाम्यन्नुतराम् ।

भारतीयचिकित्साशास्त्रमपरिपूर्णं तात्त्विकशरीरविज्ञानरहितम् शास्त्रचिकित्साशून्यं नातिप्राचीनमिहादि वैदेषिकचिकि-
त्सकणैर्लाल्यमानं कुरुनाकल्पम्प्रलपनमेतदुपक्रमार्कदर्शनाम् विच्छिन्नाम्रविलायं विलीयते इति केषां हृदययुगां हृदयानि
प्रमोदोदयवशान्नदानि न भवेयुः । अस्मिन् ऋगादिमन्त्रैः शरीरावयवविभागस्थाननामगणनादि निर्दिश्य सन्दिग्धस्यलवि-
शेषे मन्त्रान्तैः सम्वादाऽभिमतार्थविशेषं साधु व्यवातिष्ठिपद् प्रत्यकारः । अपाचीकरथ रुचिरमत्र व्याख्यातुपुद्गशान्तरभ्रमप्र-
मादायुपञ्जमित्तमर्थान्तरम्, पराकस्य पराचीकरचात्र वैदेषिकानां विमतानि मतानि । समतुपुपथ काश्चर्यपूर्णमानसमह-
विप्रणीतप्राणप्राणतरणिविकित्सापरायणानि मनीषियामन्तःकरणानि ।

वैद्यकस्याऽस्य प्रणेतरथैविवेचनात्पुर्वं परिशुद्धशब्दप्रयोगप्रागल्भ्यं विविधशास्त्रपरिशीलनकौशलं, पुगतनपुण्यप्रभावो-
पनतप्रज्ञाप्रतिभावैर्भवय परयतः कस्य सचेतसचेतधिराय न चित्रीयते ? न ताभ्यश्चराण्युपलभे वैरस्य बाह्वर्षं संक्षयं कर्तुं
पार्वेयमित्युपारम्यते । ईदृशाऽपूर्वप्रन्यप्रभनप्रकाशानान्यां जगतो महीयातुपकारः सम्पद्येत इत्यन न कस्यापि विशाविदाम्बि-
वादः । एषमेव शास्त्रोक्तविधिना रसनिर्माणतदुपयोगप्रकारप्रकाशनमुत्सैरियन्त ईदृशाधोपकार इति तु अररिचहूपेयं सत्प्रा-
वतामपि ।

पाटलिपुत्र (पटना). सं. १९८६ }
कार्तिक शुक्र द्वादशी }

महामहोपाध्याय हरिहररूपालु दिवसे
रामनिरजनदास सुराधीयविद्यालय

स्वस्ति श्रीमता विशिष्टायुर्वेदरसशास्त्रोदधिपारंगतानां वैद्यवर्दानां हरिप्रपथशास्त्रिणां चरणकमलेषु जनस्थाननिवाशिन्ने
देषधपोपनामकस्य कुरुनाकिणः सहस्रसः सक्षतयः विलसन्नुतराम् । भीमदिः स्रग्गदितस्य रसयोगसागरप्रन्यराजस्य प्रथमं
भागं समधिगम्य समालोच्य च प्रमोदततमां नेवेतः । अपरिमितप्रायानां रसयोगानामेतस्मिन् सङ्ग्रहात् सर्वेषां धार्मिके-
निधानं रसयोगसागर इति । विविधानां रसयोगानां बह्वशास्त्र पाठाः प्रदर्शिताः समुपलभ्यन्ते । यथा प्रन्यरत्नम् एव

अभिज्ञानरस्य पञ्चाशत् (५०) पाठास्तथा चाप्ये अर्धनारीनटेश्वरस्य सप्तदश (१७) कालामिहस्य दस (१०) चन्द्रोदयस्य सप्त (७) उवराङ्गस्य नवत्रिंशत् (३९) ताम्रयोगस्य त्रयोविंशतिः (२३) तालकेश्वरस्य तु एकोनशीतिः (७९) इत्यादयोऽनेके विविधाः पाठाः प्रदर्शिता वर्तन्ते । अधुना मुद्रितग्रन्था न तावदुरधिगमाः किन्त्वमुद्रितानां दुष्प्राप्याणां प्राचीनलिखितग्रन्थानामेकत्रीकरणं नाम कठिनतमो व्यापारः । सत्यामपि एवमवस्थायां दीर्घयोगपरिविद्धद्वयैः सम्पद्य यथाकथयित्वा-शदधिकानमुद्रितानन्यान्यान्यं प्राचीनलिखितग्रन्थान् समाकलय्य तत्राद्यं मुद्रितग्रन्थस्य च विषयजातं, ततस्थान् पाठमेदांश्च समालोच्य भुद्रापितास्ते सर्वे अकारादिवर्णानुक्रमेणाऽस्मिन् ग्रन्थराजे ।

अहण्णीरसायनेकस्थानेषु अनेकानां व्याख्यातृणामर्थनिर्णये प्रमादस्थानानि प्रदर्श्य युक्तार्थविशदीकरणार्थं पण्डितवर्गैर्विरचिता संस्कृतटीकैव केवलमलं यत्नं तेषां पाण्डित्यप्रदर्शनाय । अपि च कासीसादिरच, त्रिदोषाङ्गशरसादिस्थलेषु तेषां निस्तुतं भार्यं तु मुनरां पाण्डित्यपूर्णं वर्तते । तथा चास्मिन् ग्रन्थराजे पण्डितमहाभागैर्नूतनकल्पा इति निर्दिष्टाः अत्रकल्पः, अश्वकंसुकी, कन्दर्पजीवनः ताम्रयोगाद्यनेकेऽनुभूतयोगाः सुसष्टं प्रत्यावेदयन्ति महाभागानां चिकित्सानैपुण्यं तेषां चन्द्रनोदिवद्वत्त्वेन रचनाचार्यैश्च । गुरुपरम्परयैव केवलमस्तत्सकाशमागतानविज्ञातमूलान् कांश्चिदनुभूतयोगान् ग्रन्थराजेऽस्मिन् समुपलभ्य परं हर्षसुपागताः स्मः ।

रसयोगसागरस्य पूर्वोद्धृतोऽस्मिन् ग्रन्थे १७९६ योगाः ७३१४ श्लोकाश्च वर्तन्ते । प्रथमतस्त्वेतदेव सुमहत्कठिनं यन्त्रतादिकेभ्योऽन्यान्यपुस्तकेभ्य एतेषां रसयोगानामेकत्रीकरणं, तत्तद्व्यतिदेशपुरःसरं तेषामकारादिवर्णानुक्रमेण विरचनं च नाम । एतस्मिन् ग्रन्थे एवं विरचितानां योगानां शुद्धाऽशुद्धविचारोऽपि कृतो वर्तते । कार्यमिदं कियन्तं परिश्रममावहति कियतीं च विद्वत्तां प्रकटीकरोतीति अकृतैतादृशव्यवसायैर्दुःशकं कल्पनापथमन्यानेतुम् । सुविचार्य चास्य ग्रन्थस्योपयोगितां मूल्यमल्पमेवाभाति यदस्य द्वादशरूप्यका इति । ग्रन्थस्याऽस्य उपोद्धात एव केवलमर्हत्वेतदधिकं मूल्यमिति मन्यामहे । अतिविस्तृते ग्रन्थस्याऽस्योपोद्धाते “आयुर्वेदस्य प्राक्कालः” त्रिदोषविचरणम्, आर्षशारीरावयवाः, सन्दिग्धशारीरविवरणम्, इत्याद्यनेकानामायुर्वेदीयविषयाणां साक्षोपाङ्गं विवरणं कृतं वर्तते । विवरणे चास्मिन् पदपदे वेदेभ्यः प्रमाणानुपन्यस्तानि, पाश्चात्यानामपि विदुषामभिप्रायाः समुद्धृता वर्तन्ते । हृदयङ्गमेव विचारपरिच्छलेन चैतेन विवरणेन सत्यामपि क्वचित् कुत्रचिन्मतभिन्नतायामवश्यमेव सर्वेषामायुर्वेदीयानां भनांति वेदप्रवणानि शारीरावयवविचारप्रवृत्तामपि च क्रियेरनित्यं नस्ति नस्तोऽपि सन्देहः ।

नासिक सं. १९८६
माघ शुद्ध अष्टमी

तत्रभवतः प्रेमाकाङ्क्षी
देवधरोपनामकः कृष्णशर्मा.
तथा च पं. हरिशास्त्री पराङ्कर वैयः
आकोला (वरा)

भवतां रसयोगसागरस्य प्रथमभागं हृष्टाऽख्यन्तमहादितोऽसि । यथा वेदोद्धाराय व्यासस्य प्रादुर्भावः समभूतयैवाऽऽयुर्वेदोद्धाराय भवदाविर्भाव इति । उपोद्धाते समधिकं वैदुष्यं प्रकटीकृतं महानस्थलेषु च संस्कृतविवरणमपि कृतम् । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामन्येषां चोपादेशो भविष्यतीत्याराते । विद्यालये प्राच्यनालये चोपयोगिताव्योऽयं ग्रन्थ इति शम् ।

अमदाबाद आषाढ कृष्ण
सप्तमी १९८६ वि०

वैद्य नारायणशङ्करो देवशङ्करात्मजः ।

वैद्य पण्डित श्रीहरिप्रबन्धदामिः सङ्गृहीतो रसयोगसागरः परममहान् रसनिबन्धो विधीयते मया चाधुनः हृषया ग्रन्थकृतुणां । अत्रायदेश्वरादीनां निरासनिपर्यन्तानां १७९५ रसानां दशमे सङ्ग्रहः । सङ्ग्रहार्थं सङ्गृहीतानां ग्रन्थानां सङ्गा अष्टोत्तरं शतम् । तेषु च ५३ ग्रन्था मुद्रिताः ६० ग्रन्थाश्च हस्तलिखिताः । एतावतां ग्रन्थानां सङ्गदे अपेक्षितस्य कालस्य द्रव्यस्य सर्वेदाय तेषां तात्पर्यावगमे तथाभूतायाः प्रतिभायां मानसकल्पनायामेतरकथनीयं भवति यदलोकसामान्यवैभवेषु महापुरुषेष्वन्यत्रोऽयं वैद्यवरः श्रीहरिप्रबन्धपण्डितः पण्डितमार्तण्डः । परममहती भूमिका प्रकाशयन्ती कर्तुंयद्युत्तमं मुस्ताय कल्पते परतो देशान्तरवैद्यैः कृतां पूर्वजानां कीर्तिं धारयन्ती । सन्दिग्धार्थानां शब्दानां तात्पर्यनिधयमायाऽऽरतोऽपि यत्रो हस्तासुत्याय कथयति कर्तुंस्तदस्पर्शि पाण्डित्यम् ।

मुम्बार्पुरी वैद्य शृङ्गलक्ष्मी
सं. १९८४ वि.

पं. रमापति मिश्रः ।

अस्माभिः प्राचीना नूतना बहवो ग्रन्था पठितास्तेष्वेकनाम्ना प्रसिद्धा भिन्नक्रियात्मका बहुसङ्ख्यावन्तो रसा दृश्यन्ते । ते कठिनगुणशब्दक्रियात्वात्कठिना दुर्लभ्याश्च । तेषु मुद्रितानां लभ्यानां मूल्यमधिकं भारो विशेषश्च । एतत्सर्वं पर्यालोच्य बहूनां विदुषां प्राचीनानां नूतनानां भिन्ननामप्रार्थना कृता—कोऽपि रसग्रन्थ एतादृश केनाप्याचार्येण कृतं प्राप्यते ? यस्मिन् सर्वेषां रसानां समावेशः स्यात् परन्त्वद्यावधि न कोऽपि ग्रन्थो लब्ध इदंश्च । एतेन शुष्कयामाशालतायां धीमद्विर्वेषानु-
शासनकारिभिर्द्वैरिप्रपन्नशास्त्रिभिः कृतो रसयोगसागरो लब्धः । अस्मिन् एकनाम्ना बहूनां रसानां नानाक्रियावतां समावेशः कृतोऽस्ति । कठिनानां शब्दानां गुणानां क्रियाणाञ्च प्रत्यक्षनिदर्शनम् । अयं सर्वैर्वेषानामधारिभिरसङ्गृहीतव्योऽनेन पार्श्ववर्तिना कस्याऽपि ग्रन्थस्यापेक्षा न भवति ।

कलकता वैष्यशुद्धा }
प्रतिपदा १९८६ वि० }

भगीरथस्वामी

वैद्यप्रकाशश्रीयुतहरिप्रपन्नविपश्चिद्वी 'रसयोगसागर' प्रणयनेन न केवलं सामान्यजनता किन्तु भिन्नजनताऽपि चिरमनुग्रहीता यतोऽनं प्राचीनरसग्रन्थानां प्रयोगस्तथा सर्वांगता यथा वर्णानुक्रमेण रसा उपस्थाप्यन्ते येन तत्तदधमार्गणम-
तीव सुकरतामापन्नमुपकरिष्यल्ल्यावुर्वैदिविदो रसवैद्यान् ॥

किञ्च टिप्पणीप्रदानेन रसपाठेषु सन्दिग्धानशान् विद्वन्पद्मिर्महाशयैरेतै रसायनशास्त्रवारम्परि परिष्कृता, यथा रति-
कामरसे—आपातत प्रतीयमानमर्थं पुरस्कृत्य प्रवृत्तितत्त्वोवहेति सम्प्रदर्श्य रसशोधनार्थं प्रागुपयुज्य प्रमदाप्रथमात्तैव परि-
शुद्धरसयोगानन्तरे पालाशमूलरसं शुट्टिकाषण्ठे नियुञ्जाने साङ्केतिकसरणिराविष्कृता परिहृतश्च मालिन्योद्दहन्तम् ।

एव महता परिश्रमेण सम्पादितोऽयं ग्रन्थः सर्वेषां रसग्रन्थेषु प्रधानगणनामर्हति ।

जामनगर श्रावणशुद्धा }
१० सं. १९८६ }

महामहोपाध्याय शास्त्री—हाथीभाई शर्मा.

काशीनिवाशिवैद्यपण्डितश्रीहरिप्रपन्नसमविरचितोऽयं "रसयोगसागरो" ग्रन्थो लोकोपकारको वैगानन्दो निरालम्ब-
कारकोऽपूर्वं उत्तमश्चेति सम्मनुते ।

मुम्बापुरी श्रावणशुद्धार्णिमाया }
सन् १९८५ }

ययुनन्दनं झा.

बृहन्मन्दिरस्थबालकृष्णगुहाद्वैतसंस्कृतवाटशालाप्रधानाध्यापक ।

रसमन्थोऽयम् । अत्रच तेषु तेषु वैद्यकग्रन्थेषु पठिता रसयोगसङ्कलितास्त्वस्मिन् । एकत्र नानाप्रथीपरसयोगशा-
स्त्रं द्रष्टुं शक्यत इति ग्रन्थस्यास्य विशेषोऽयम् । हिन्दीभाषानुवादेन साकं तत्तत्मूलप्रथीयसंस्कृतभाषामयवाटा अत्र समुद्-
त्तास्त्वस्ति । अकारादिक्रमेण रसयोगानामनं विन्यासः कृतो वर्तते । प्रारम्भे चान् भूमिकाद्वयं सयोजितमस्ति । एकमात्रं
भाषामयम् १०४ पृष्ठ्यात्मम्, अन्यत्संस्कृतभाषामयम् १७८ पृष्ठ्यात्मम् । तत्र चायुर्वेदस्येतिहासस्य महत्त्वं चाधिहृत्य
महानिचारः कृतो वर्तते । घनचिकित्सापत्रेषु देवनागरीशरैर्मुद्रितः ।

मनुभाषिणी काथी, प्रभवसक्तरे वृधिक्रमाधे १० दिवस ।

निखिलरसशास्त्रीयदुरवगमाद्यप्राचीनरसयोगासर्वेऽप्यत्र सप्रथमं पौर्वापर्यधर्माशुर्वैकं हिन्दीसंस्कृतव्याख्याद्वयेन
परिष्कृताश्च पूर्वोत्तरपरिशिष्टाश्च भागनयात्मकतया आदिश्रुन्ता यथाकमं निबद्धासंस्कृतद्वयो विदुषाश्च योगः । आदातु
पोद्दातोऽयमायुर्वेदनिगमागमसामर्थ्यमाचार्याणां सकलकलापरीक्षणय बोधयति । प्रायः आयुर्वेदसंज्ञाशास्त्रोपासने रस-
योगः प्राचीना नवीना व्यासागमसंज्ञोपाध्यानेनैव शास्त्रोपासकतया समुद्गीताधरितायां ह्य दृश्यन्ते, सकलणय निरूपणं सुते-
स्यस्यादिसङ्कृतम् । संस्कृता अस्वस्तुता आचार्यां केवलं भाषामयविदो भिन्नोऽपि पुष्ट्यर्थं साधयेयुः । सत्सादय रसयोग
सागरो निखिलभारतीयोऽयुर्वेदविद्वज्जनादरणीयो माननीयवाचिरादेवाच दत्तारक दिगन्तविद्यमननीयपरिलम्बयर्थयो मे
नमोऽस्मन्तानि हरिप्रपन्नाचार्याणां समुत्सन्नतराम् ।

मुम्बापुरी, विक्रमवत्सरे }
१९८७ आश्विनशुद्ध २ सुधे }

सुप्रह्लादयशस्वी.
वृष्णातीर्थवाचस्य, श्रीपुष्पनिरिसम्पन्नविद्वान् ।

षोडशाधिवेशनसम्बन्धिनां प्रदर्शनां जयपुरे भोहमयीवास्तव्यैः श्रीपण्डितहरिप्रपन्नाचार्यमहाशयैः पुस्तकविभागे प्रेषितो रसयोगसागरस्य प्रथमो भागः परीक्षणसमितेर्निर्णयमनुसृत्य सवहुमानं सप्रमोदं च प्रशस्यते इति प्रमाणयति उत्तमप्रेषि प्रमाणपत्रमिदम् ।

अखिलभारतवर्षीयवैद्यसम्मेलनम् }
चत्रं क्र० १४ सं. १९८३ }

पं. मदनमोहनमालवीयः
षोडशाधुर्वेदसम्मेलनसभापतिः

ईशमहाशयपण्डितहरिप्रपन्नशर्मभिः सम्पादितो रसयोगसागरनामा विशालग्रन्थो निरीक्षितः । अनेकान् दुष्प्राप्यान् हस्तलिखितान्मुद्रितांश्च ग्रन्थान् महाप्रयासेन समाहृत्य, रसानामैको विस्तीर्णसङ्ग्रहोऽस्मिन् रसयोगसागरे कृतो दृश्यते । अस्याऽप्यन्येन रसशास्त्राऽभ्यासकानां तच्छास्त्राध्ययनं सुखसार्थं सुगमं च भविष्यति इति मे मतिः । अस्ौ सर्वेषामुपरि विद्वद्भार्याणां महानुपकारः संजातः । यदस्मिन्ग्रन्थे पण्डितवरैः खानुभूतानां रसप्रयोगाणामपि सङ्ग्रहः कृतो विद्यते । किमति-विस्तरेण, सर्वैर्गुणैः मर्मैश्च एतदुत्कृष्टं पुस्तकं स्वकीयपुस्तकालये सङ्ग्राह्य पण्डितमहाशयानां श्रमसार्थक्यं कार्यमिति मेऽभिप्रायः सर्वेभ्यः प्रार्थना च इति शम् ।

कार्तिककृष्णे अमावस्या
सं. १९८७ वि० }

प्राणाचार्य वैद्यराजवासुदेवाचार्यजी पेनापुरे
सुम्बापुर्याम्

उच्चरुसिताऽऽधुर्वेदस्य श्रेष्ठान् मृतकल्पं रसतन्त्रमुद्दिधीर्पुराचार्यप्रवरसकलशाल्मनिष्ठातपण्डितहरिप्रपन्नशर्मणधिर-कालादनवरतकृतभ्रमस्य फलस्वरूपो रसयोगसागराभिधो ग्रन्थो मम दृष्टिप्रथमास्कृष्टसम्प्रति । साक्षादयं रसप्रयोगाणामा-करोऽस्ति जलधिरिव सुखानाम् । अस्मिन् द्योतमाना रसाः स्वकं गुणोत्कर्षं दर्शयन्तोऽहृद्द्वारेण परस्परं संधैयन्तीव विलसन्ति, अहमपूर्वाऽहमिति । दशोत्तरशतसङ्ख्याकहस्तलिखितमुद्रितग्रन्थस्थरसप्रयोगाणामपूर्वमिमं सङ्ग्रहसमुद्रमवगाहयितुं कस्य प्रयुक्त-चेतसंधितो न कामयेत । सम्प्रत्युपलब्धमानरसवात्पियकृतध्वानां निकरोऽस्य विद्यमानत्वे भाररूपएव लक्ष्यते । अनेनै-केनैव मकररूपेण निखिलरसग्रन्थमरत्याः स्वकीयोदरे प्रतिष्ठापिताः । भाषाटीकया च बालवैद्यानामप्युपयोगिता प्रदर्शिता । वृहत्सप्तमोषोद्धातोऽप्यस्य ग्रन्थस्य प्रत्यक्तुः प्रकाण्डपाण्डितं द्योतयति विषयविवरणपाठं च । सन्दिग्धसारीविवरणद्वारा स्वैर्याजुस्वीकृतसारीरतन्त्रस्याऽमृतीकरणं कृतं निरस्तं चाज्ञानरूपं तमः । किं बहुना, अस्य ग्रन्थरजसाऽऽदरो विषुषवैद्यसमा-जेन कर्तव्य इत्याशासे ।

तिमिः पथनी कार्तिककृष्णा }
संवत् १९८७ }

पण्डित जयनारायण दीक्षितः
आगराप्रान्तान्तर्गतं टेह्रू ग्रामाभिजनः

युगेऽस्मिन्वैज्ञानिकेऽन्यदेशेभ्यो भारतस्य हीनां दशां जानन्ति जनाः, परन्तु ग्रन्थरजसाऽस्य प्रभाभरणे समुत्साहितं तदज्ञानतमः । अस्य ग्रन्थस्य सङ्गृहीतारः श्रीहरिप्रपन्नाः सन्ति, ते किल मार्मिका विद्वांस आधुर्वेदस्य । अस्य तैरतीवोत्तमो वैदुष्यपूर्णोषोषोद्धातोऽस्ति, तस्मिन्पिपु येपु विषयेषु विचारः कृतः सोऽप्येव प्रतिभाति । आधुर्वेदेतिहाससङ्कलनं सङ्गृही-तृणामगाधपरिधमं व्यनक्ति । सर्वदेशगुहलं भारतस्थितिसाधितम् । शाल्मन्किरसाऽपि वृद्धभारतस्य कृते न नूननं वरिस्त्विति गर्भिणीनिययकचिकित्सोऽप्येन प्रकटीकृतम् । इदमपि भिषक्वरेण साधितं यदेयां रोगाणामर्वाचीनलं पाथाख्या अवगच्छन्ते तेषां रोगाणां निदानचिकित्साप्रयत्नो वैदिककालेपि मर्द्वाणां कटाऽऽमलकवृक्षाता आरान्, समकारि च शारीराऽऽयवयानामपि पूर्णां विचारः । भिषक्वराणां प्रमाणोपन्यासदृष्ट्या चेतयकितं भवति । अधुना ग्रन्थविषये वक्तव्यमवशिष्टम्, शतघृत्साऽधि-कम्बो मुद्रितहस्तलिखितग्रन्थेभ्योऽस्मिन् सङ्ग्रहः कृतः । महाभारतं इव यो रसोऽस्मिन्वर्णितस्त्वस्यैव उच्चं जगति विद्यते, योऽत्र नास्ति स राधुषमिवाऽवगन्तव्यः । विशेषसूचनोऽप्येन प्रयोगकर्तृणां सङ्गृहीतुभिः कुञ्चन रसानां साऽनुभूतलक्ष-चनया च मूलतः समुत्पादितोऽभिधासः । किमधिकं बदायो वैद्यवयोगाभिमं श्रेष्ठं स्मारयन्तो विरामामः ।

धीरा भूषा धनाश्राः शुद्धितिसद्दद्या भारतीयाः परे वा नानाविधाप्रवीणा विधिपशुगमणप्रतये यजन्वतः ॥

आधुर्वेदे स्वकीये परविषयमये लक्ष्यबोधाय वैद्या विज्ञाप्यन्ते भवन्तः तद्विनयमिह तद्व्येतां मानये स्ते ॥ १ ॥

सम्बद्धं ता० १ । ११ । १९३० }

गोखामिडुलवीसुमधी १०८-
श्रीगोकुलनाथ महाराजः

धन्यः स परमशुभातः परमेश्वरो, यस्य प्रसादान्मयाऽयं पियानवारिष्णुर्लक्षतस्य सद्युद्धिमतस्तदुद्दहस्य सम्बद्धं निवा-ग्निः पण्डितप्रवरहरिप्रपन्नशास्त्रिणो विविधताश्रीवरसोपधिविपुलसङ्ग्रहपरिपूर्णं रसयोगसागरनामकग्रन्थरजसाऽऽदरं रक्षा निरतं हारितोऽस्मि । ग्रन्थोऽयं वैद्यानामुपकारेणोषोषोपयोगी च भविष्यतीति जाने । उक्ततास्त्रिवरोऽनः परमशुभतं ग्रन्थं

निर्मातुं यतिप्यते इत्याशा मे । यदायुर्वेदविषये चिकित्साविधिविद्वांसो बहवः साम्प्रतं दृश्यन्ते परन्तु ग्रन्थप्रणयनद्वारा तद्विशिष्टगुणदर्शका विरलाः सन्ति, एवं स्थितौ शास्त्रिवरेण तादृशो नितरामनीष्टः कार्यभारः शिरसा गृहीत इति परं प्रमुदितोऽस्मि श्रीप्रभेवाऽन्यामपि तदीयां यशस्विनीं कृतिं दृक्ष्यामीत्याशासे ।

इन्दौर ता० २ । ११ । १९३० }

वैद्यर्यालीरामशर्मा द्विवेदी

मोहमयीषास्त्रिधूमत्पण्डितवरवैद्यराजहरिप्रपञ्चशर्ममहोदयनिर्मतोऽकारादिसर्वगान्तो रसयोगसंगरो बलादारपति गुणप्राह्मिणाममत्तराणां मानसानि । हेतुसैरेव ग्रन्थरत्नैः संस्कृतवाङ्मयं प्रात्यहिनीमभिदुद्धिमाप्स्यति । सोऽयं सर्वरिभिपरिमः संप्राप्तः प्रचारणीयधेयस्वाकम्बुनुरोधो विद्वत्सु इत्यभिप्रैति वेदान्तशास्त्री पचतीर्थी हरिदत्तशास्त्री

२८ । १० । १९३० }

प्रधानाध्यापकः

महाविद्यालयज्वालालपुरीयः

पुस्तकमस्माभिः सर्वतो निभालितमतीवोपकरिष्यति भिपजामिति प्रत्यर्थं द्रव्यति । एतत्सम्पादयता भवता बहूपकृतः कविराजसमाज इति विवम् ।

शाहूर शुद्धबोधतीर्थस्वामी २८ । १० । ३०

यह ग्रन्थ वस्तुतः रसयोगरत्नोंका सागर ही है । इसमें ग्रन्थकर्ता ने बहुमूल्य अमृत रत्नोंका समावेश किया है जो कि वैद्यविद्याके अनुपम अलङ्कार स्वरूप हैं । इसमें आद्युत्तरफलप्रदायी अतएव पूर्णाभुक्त अनेक रसयोग विद्यमान हैं । इन-योगोंका भूरिभूरि प्रयत्न करनेपरही अन्यत्र प्राप्तहोना कठिन ही नहीं असम्भव है । अत एव यह ग्रन्थ छोटेसेछोटे और बड़ेसेबड़े वैद्योंके तथा जनसाधारणकेलिये परमोपयोगी है । इस रत्नाकरके रचयिता दर्शनशास्त्रमें निष्णात और आयुर्वेदके सूर्य रसयोगविज्ञानपारङ्गत भिपज्ञप्रवर वैद्यपण्डित हरिप्रपञ्चजी हैं । भारतवर्षमें आज आयुर्वेदके अद्वितीय विद्वान् हैं । आपकी रासायनिक क्रिया और भिन्नभिन्नवनसत्त्वियोंकी अनुभूति परावाद्याको पहुँची है । आपने अपने इस आयुर्वेदिक विज्ञानका सर्वसाधारणको लाभपहुँचानेकी शुभकामनासे बहुतबड़ोंके अनवरतपरिभ्रमसे इसका सम्पादनकरके असाधारण लोरोपकार किया है । ऐसे ग्रन्थकी संसारमें इससमय बड़ी आवश्यकता थी । इसपुस्तककी समालोचनात्मकभूमिकाओं ग्रन्थकारने अपना अप्रति मपाण्डित्य झलकाया है । यदि इस पुस्तकके थोड़ेसी प्रयोगोंका अनुष्ठान क्रियामया तो संसारको आशातीत-लाभहोगा । अतमें मैं आशाकरता हूँ की इसग्रन्थसे जनता पूर्णलाभ उठावे और ग्रन्थकर्ता पूर्ण यशस्वी बनें ।

वेदान्ताभ्रम. }
सिद्धपुर. ८।१०।३० }

स्वामि रघुवराचार्य वेदान्ती
तर्कतीर्थ, वेदान्ततीर्थ, न्यायव्याकरणाचार्य, मीमांसोपाध्याय
वेदान्तशिरोमणि, दर्शननिधि.

रसयोगसंगारका निर्माण और प्रकाशनकरके वैद्य पं. हरिप्रपञ्चजीने वैद्यसमाजके ऊपर अनुल उपकार किया है । इसशास्त्रमें अत्र ऐहा शेष मुद्रितहोने मिलेगा जो इसग्रन्थमें न आयाहो । यह ग्रन्थ पण्डितजीके १० वर्षोंके अहर्निशके अथाह परिभ्रमका फल है । प्रत्येक वैद्यको यह ग्रन्थ अवश्य खरीदकर इससे लाभ उठाना चाहिये । हम परमेश्वरसे प्रार्थना करते हैं कि परमेश्वर पण्डितजीको चिरायुकरें और पण्डितजी ऐसे अनुपमग्रन्थ तैयार करके सृष्टिप्रदाय आयुर्वेदका उद्धार करें ।

कालवादेवीरोड. }
मम्बई ता. ४।१०।३० }

आयुर्वेदमार्तण्ड
वैद्य यादवजीत्रिकमजी आचार्य

वैद्यसम्मेलनपत्रिका.

इस अपूर्व सर्वोपयोगी महद्ग्रन्थका निर्माण पण्डित हरिप्रपञ्चशर्मा शास्त्री भिपण्णचार्यजी सम्प्रेषिकासीने किया है । संस्कृतमें तथा अंग्रेजीमें उपोद्घात लिखा है, जोकी सभी वैद्य महानुभावों और आयुर्वेदके विद्यार्थियोंके लिए उगा-देय है । इसग्रन्थके अध्ययनसे रसतन्त्र (रसचिकित्सा) का ज्ञान पूर्ण होजायेगा । जिनप्रकार यह ग्रन्थ साधारणतः देग-नेमें सुवर्षेपकारी प्रतीतहोता है उससे कहीं अधिक इसकी उपादेयता समालोचनात्मकग्रन्थीरहिते देगनेसे शान्दी ही है । वास्तवमें आयुर्वेदशास्त्रके विद्वान् ही पण्डितजीके इस अद्वितीय परिभ्रमका अनुभव करसकेंगे ।

विद्वानेय विज्ञानाति विद्वज्जनपरिभ्रमम् । नहि वन्द्या विज्ञानाति गुर्वी प्रमथयेदनाम् ॥

इससे अच्छी रसविद्या का ग्रन्थ आज तक नहीं प्रकाशित हुआ । इसके महत्त्व को देखते हुए इसकी कीमत जो रखी है सो न्यून है ।

जो वैद्य इसग्रन्थको पढ़कर रसविकिरता करेंगे उन्हें ज्ञानन्यूनताजन्य प्रत्यवाय नहीं होगा और लोकमें यशके मार्ग होंगे आयुर्वेदका भविष्य उज्वल होगा । अतः मैं समस्त आयुर्वेदभेमियोंसे अनुरोध करता हूँ की इसग्रन्थरत्नको बिना विलम्बके शीघ्र मंगवाकर लौकिक व पारलौकिक लाभ उठावें ।

यदि सन्ति गुणा ग्रन्थे विकसन्त्येव ते स्वयम् । नहि कस्तुरिकामोदः शपथेन विभाव्यते ॥

इस न्यायके अनुसार यह ग्रन्थ गुणहोनेके कारण स्वयं प्रसिद्धि पावेगा ।

कानपुर,
सितम्बर १९२८ }

सत्यदेवपाण्डेय आयुर्वेदाचार्य वेदान्तशास्त्री
संयुक्तमन्त्री; नि० भा० धा० वि० पी०

विज्ञान

इस बृहद्ग्रन्थमें रसोंके बनानेकी स्पष्टरूपसे विधि दी गई है ।

अनेक आप्त, अनाप्त, प्राच्य और पाश्चात्यग्रन्थोंकी सहायतासे विद्वान् लेखकने इसमें दो विस्तृत भूमिकायें भी दी हैं । ग्रन्थके आरम्भमें अंग्रेजीकी मनोहर और विद्वत्तापूर्ण भूमिका है । संस्कृतकी भूमिकामें कई नवीन विषयोंका समावेश किया गया है । अंग्रेजीकी भूमिकासे लेखककी अगाध विद्वत्ताका परिचय होसका है । प्राच्य और पाश्चात्य इतिहासज्ञोंके वचनोंकी उद्धृतकरके वैद्यकशास्त्रका सुन्दर इतिहास और अतीतभारतके गौरवका मनोहरचित्र इसमें अंकित किया गया है । वेदोंके अवतरण प्रस्तुत करके लेखकने यह प्रदर्शित करनेका प्रयत्न किया है की रसायन और वैद्यक विद्याका आदि मूल वेदोंमें विद्यमान है । हार्नेले आदि पाश्चात्यविद्वानोंकी चरक तथा सुश्रुतके निर्माणकालविषयक अन्तिपरणी श्रीहरिप्रपञ्चजीने विचारपूर्वक प्रकाश डाला है ।

वैदिक, ब्राह्मण, और सुश्रुतकालमें शरीरावयवोंकी समानान्तरनामोंकी सूची वैदिक साहित्यके अध्ययन करनेवालोंको अवश्य बहुमूल्य सिद्ध होगी । एक सूचीमें शरीरके अवयवोंके चरक तथा सुश्रुतवर्णित नाम तो दिये ही गये हैं उनके साथसाथ अंग्रेजी पदभी रखदिये गये हैं । इसप्रयासके लिए समस्तपाठकोंको हृदयसे कृतज्ञ होना चाहिए । रसोंके बनानेकी विधि-सङ्ग्रहमें लेखकने बड़ा परिश्रम किया है । गिनभिन्न प्राच्यग्रन्थोंके श्लोकोंको उद्धृतकरके उनका भाषानुवाद भी दे दिया गया है । सारांश यह है की ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी है और अपने ढंगका निराला है । हिन्दी साहित्य इसप्रकारकी पुस्तकों पर गर्वकरसका है । हमें पूर्ण आशा है की उदारजनता इसका समुचित समादर करेगी ।

इलाहाबाद,
अगस्त १९२७ }

आरोग्यदर्पण

रसप्रयोगोंका एक बृहत्सुन्दर संग्रहकिया है । उपोद्घातके आरम्भमें पण्डितजीने आयुर्वेदके इतिहासपर अच्छाप्रकाश डाला है, उपोद्घातका प्रधानभाग शारीराविवेचनसे परिपूर्ण है, यह अंश बहुतही खोजके साथ लिखा गया है । इसग्रन्थमें अनेक उद्धरणों और सुक्तियोंद्वारा सिद्ध किया है कि वेदोंमें शक्तिविकिरता, रोगविज्ञान, और शरीरका बहुतकुछ वर्णन मिलता है । वेदोंमें व्यवहृत बहुतसे शब्द दिसलाए गए हैं कि जो शारीरावयववाची हैं परन्तु भाष्यकारोंमें उन्हे अन्यार्थोंमें प्रयुक्तकिये हैं । वेदव्यवहृतशब्दोंकी सुश्रुतमें व्यवहृत तदर्थबोधक शब्दोंसे तुलना की गई है, अर्थकरनेमें पण्डितजीने पर्याप्तविवेचनाबुद्धिसे कामलिया है ।

कुमोदि सन्दिग्धशब्दोंपरभी खूब टीका टिप्पणी की गई है । सारांशतः यह उपोद्घात स्वतन्त्ररूपेण भी एक अत्यन्त उपयोगी और विद्वान् वैद्योंके देखनेयोग्य ग्रन्थ है ।

वृद्धिदर्पण

बम्बईके प्रतिद्वैत और प्रकाण्डपण्डित श्रीमान् हरिप्रपञ्चशर्माजीने एकबडेमार्कका, और खोजपूर्ण तथा नितान्त विचारणीय उपोद्घात लिखकर, स्वर्णमें गुणघोषादानकी सन्निवेशित कर दी गई है । हमारी सम्मतीमें तो, इस अपूर्व रसोपध-समूहके सुविस्तृतसंग्रहके विनामी, यदि केवल, यह बहुगवेषणागवेषित-उपोद्घातमात्रही सदैवोंके सामने उपस्थापित किया-

गया होता, तो, वह अकेलाही समस्त ग्रन्थके मूल्यसे, अधिक न्योछावरका अधिकारी होजाता । इसप्रकारकी गम्भीरगवेषणाओं और पाण्डित्यपूर्ण परिश्रमोंकी सराहना और समादरकाद्वारा यदि गुणहोंकी ओरसे बन्द करदियाजाय तो, लोकसङ्घदृष्टिसे कितनीभारी हानि उपस्थितहोसकीहै इसका उत्तरतो बहुश्रुत और बहुवृद्धोपासकविद्वान् लोग सहजमेंही देसकेहैं । इसलिए प्रत्येक विद्वान् वैय महानुभावसे हमारी विनीतप्रार्थना है की वे इसग्रन्थको खरीदकर साहसी और बहुशास्त्रनिष्णात वैय. पं. हरिप्रपन्नजीकी अवश्य उत्साहवृद्धि करें ।

लाहौर, कार्तिक सं० १९८५

इस एकही पुस्तकके साथ रत्नेसे चिकित्सकका परमोपकार हो सकताहै । पाण्डित्यकी दृष्टिसे इसका उपोद्घात अत्यन्त महत्त्वका है ऐसी अनेक गूढविषयकी जटिलवार्तापर पण्डितजीने प्रकाश डालाहै कि जिसके मननसे आयुर्वेदके उत्तमप्रय प्रस्थियोंके उद्घाटनमें बड़ाभारी सहारा मिल सकताहै । विषय और पाण्डित्यकी दृष्टिसे भी ग्रन्थ परमोपादेय है । आशाही नहीं विश्वास है कि वैद्यवन्दु इस उपादेय ग्रन्थको अपनेपास रखकर अपनी और अपने व्यवसायकी उन्नति करेंगे ।

हिन्दुविश्वविद्यालय }
बनारस ४/१/२०

कविराज प्रतापसिंह रसायनाचार्य

सङ्ग्रहका प्रकार नयाहै उपयोगी और उपादेय है ।ग्रन्थकर्ता विद्वान् हैं शास्त्रमर्मज्ञ हैं एकभिष्टकरी हैसियतसे इतना कहसकता हूँ कि—

सागरः सागरस्येव प्रथतां पृथिवीतले । यशो गायन्तु विद्वांसो हरिप्रपन्नशर्मणः ॥

वह्यान ता. १४/१/२६

स्वामी सोमतीर्थ

रसयोगसागर अत्यन्त हर्ष व उत्साहका कारण हुआ. सैकड़ों संस्कृत व हिन्दीके ग्रन्थ मंगवाये गये परन्तु रस-योगसागरविशेष अपनी भाविका नया ही अद्भुत ग्रन्थ है, कर्ताकी विद्वत्ता व चतुराई प्रतिपृष्टसे प्रकट होतीहै.

होशियारपुर (पंजाब) }
१५/१/२०

हीरसिंह भी. ए.

मायुरी

“रसयोगसागर” एक सर्वोत्कृष्ट तथा सर्वसुन्दर संप्रद्वग्रन्थ है । रसयोगीके सङ्ग्रहके साथ साथ कितनेही स्थलोंपर आयुर्विज्ञानाचार्य, सुयोग्य सङ्ग्रहकर्ता महोदयने रसनिर्माणविधिमें अपनी क्रियाकुशलता, अनुभव, दूरदर्शिता तथा सङ्गमखण्डिसेगी पूरा-पूरा कामलियाहै । एकएक रसके जितने भी भेद तथा उपभेद प्राचीन, अर्वाचीन, प्रकाशित एवं अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पाएजातेहैं, वे प्रायः सभी इसग्रन्थमें विद्यमानहैं । संस्कृत श्लोकोंका हिन्दीभाषान्तरभी अन्य प्रकाशित वैद्यकग्रन्थोंकी अपेक्षा सुन्दर तथा सुन्दर है । अग्नेयीमें और संस्कृतभाषामें भूमिका लिखकर अपने प्रकाण्डपाण्डित्य, व्यापक ज्ञान तथा आदर्शगवेषणपरायणताका परिचय दियाहै । हमें मुजकंठसे खीकार करना पडताहै कि इसग्रन्थके दोनोही उपोद्घात बहुतही सुन्दर, विचारपूर्ण, मननीय, पठनीय तथा आयुर्वेदप्रेमियोंके लिए बडेगर्वकी सल्लु हैं ।

इसग्रन्थमें कितनेही बुरुहस्थलोंपर मूलश्लोकोंका संस्कृतभाषामें भाष्य, अर्थ तथा टिप्पणी लिखकर लेखकमहोदयने सोनेसे सुहानेका काम कियाहै । फलतः कड़े दृष्टियोंसे यह ग्रन्थ बहुतही उपयोगी तथा अपने ढंगका एकहै । हमें यह लिखते हुए बड़ीही प्रसन्नता होती है की “रसयोगसागर” का नाम सार्थकहै । यह ग्रन्थ आयुर्वेद प्रेमियोंकेलिये सर्वथा उपादेयहै । इसग्रन्थने एकबडेभारी अभावकी पूर्ति कीहै । अन्तमें हम आयुर्विज्ञानाचार्य, वैद्यवर्षे पण्डित हरिप्रपन्नशर्माजी को इसमहत्त्वपूर्ण ग्रन्थरसके लेखन व सम्पादनमें किएएए असीम धनके लिये अभिनन्दन तथा इसग्रन्थके सम्पादनमें प्राप्तकीहुई सफलताके लिये हार्दिक बधाइयाँ देतेहैं ।

रत्ननज, मार्गशीर्ष }
सं० १९८४

गयाप्रसादशास्त्री “धीहरि”

सरस्वती

ऑक्टोबर १९२८

यह आयुर्वेदशास्त्रसम्बन्धी एक महत्वपूर्ण सङ्ग्रहग्रन्थ है । इसके सङ्ग्रहकार पण्डित हरिप्रपन्नजीने इसकी रचना षडेपरिधमके साथ की है । इस सङ्ग्रहसे आपकी अध्ययनशीलता ही नहीं प्रकटहोती है, किन्तु साहित्यिक सुखिनी । अपने इसका सङ्ग्रहण और सङ्गृहीतमूलश्लोकोंका सम्पादन नये ढङ्गसे किया है । इससङ्ग्रहकी रचनामें सङ्ग्रहकारने इसका हिन्दीमें भाषान्तरनी किया है । इससे इसकी उपयोगिता और भी बढ गई है । असंस्कृतज्ञानी इसका अच्छीतरह उपयोग कर सकेंगे ।

सङ्ग्रहकारने इसकी भूमिकामें अपने पाण्डित्य और अध्ययनशीलता का खासा परिचय दिया है । इसमें (भूमिकामें) आयुर्वेदकी प्राचीनता वैदिककालसे सिद्ध की गई है । एवं उसका इतिहास दिया गया है, साथही शारीरविज्ञानकी सविस्तर विवेचना की गई है । यह महत्वपूर्णग्रन्थ अनेक ज्ञातव्य बातोंसे पूर्ण है ।

यह सङ्ग्रह अपने टङ्कका निरालाही नहीं, किन्तु विश्वसनीय एवं उपयोगीमी है । आयुर्वेदके ज्ञाताओं तथा उसके प्रेमरखनेवाले लोगोंको इस उत्कृष्टग्रन्थका सङ्ग्रह अवश्य करना चाहिए ।

विश्वमित्र

कलकत्ता, २०-१२-१९२७

उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास और रहस्य और उसके चरकसुश्रुतादि ग्रन्थोंका माहात्म्य अत्यन्त योग्यताके साथ वर्णित है । एकएकयोगके जितने भी नेद अवतकके प्रकाशित और अप्रकाशित ग्रन्थोंमें पायेजाते हैं उनसबका इसएकही ग्रन्थरत्नमें सङ्ग्रह है । रसयोगसागर एक अद्वितीय और अनुपम ग्रन्थ बना है । इस एक ग्रन्थरत्नकोही अपनेपास रखनेसे वैद्योंकेलिए अन्यरसग्रन्थोंके सङ्ग्रहकी प्रायः कोई आवश्यकता न रहजायगी । संस्कृतश्लोकोंके नीचे सुबोध हिन्दीमें उनके अर्थभी दिये गये हैं । इतनाही नहीं, जहाँ कोई गूढार्थ है वहाँपर सुयोग्य श्लोकने खानुभव एवं टिप्पणियाँदेकर सोनेमें सुगन्धि पैदा करदी है । यह ग्रन्थरत्न रसचिकित्सकोंके बहुतही कामका है । इसके सहारेसे केवल हिन्दीज्ञान-रखनेवाले चिकित्सकभी पूरापूरा लाभ उठासकते हैं । वैद्यमात्रको इसकी एकप्रति खरीदकर ग्रन्थकर्ताको उत्साहदान करना चाहिए । हम ऐसे अमूल्य सङ्ग्रहकेलिये ग्रन्थकर्ताको हार्दिक धन्यवाद एवं बधाई देते हैं ।

प्रताप.

रसप्रयोगोंके इसप्रकारके एक सङ्ग्रहकी परमावश्यकता थी । आयुर्वेदमें रसग्रन्थोंका कोईभी ऐसा सङ्ग्रह नहीं है जो अकारादि क्रमसे हो और जिससे यह जानाजासके कि कौनकौनसा पाठ किसकिस ग्रन्थमें है और एकहीनामसे भिन्नभिन्न कितने योगप्रचलित हैं ।

वैद्य हरिप्रपन्नजीने धर्म और व्यवसाय्य इसकार्यको करके वैद्यसमाजका बड़ा उपकार किया है, भिन्न २ रसोंके भिन्न २ ग्रन्थों और अधिकारोंके अनुसार कई २ पाठोंका सङ्ग्रह इसमें है जिन्हें एकत्रित करना कमभ्रमसाध्य नहीं है ।

अग्नेमी तथा संस्कृत अवतरणिका सङ्ग्रहकर्ताने खोज और विद्वत्तापूर्वक लिखी है । इसके उपोद्घातमें आयुर्वेदका इतिहास तथा सम्पूर्ण शारीरज्ञानका वर्णन किया गया है । साथही पाश्चात्य शारीरका तुलनात्मक वर्णन है । यदि इसका उपोद्घातभागही पुस्तककार प्रकाशित होता तो भी यह भारतीय शिक्षितसमाजकेलिए एक आरदयकवस्तु होती । पुस्तक सभी दृष्टिओंसे उपयोगी है ।

प्रत्येक वैद्यको अपनेपास इस अत्यन्त उपयोगी, पठनीय, मननीय एवं सङ्ग्रहणीय ग्रंथकी एकप्रति रखनी चाहिए ।

कानपुर,
ता. १४/१२/२८ }

विषयप्रज्ञ शिचनारायणमिश्र, वैद्यशास्त्री

भगीरथ

बंबई ता. १५/११/१९२७

पुस्तकको देखकर हमारे हृदयमें बढामारी हृष्य होता है.

इस ग्रन्थके रसप्रयोगोंका सङ्ग्रह तो प्रायः सभीवैद्योंके कामका है. परन्तु उपोद्घातका विषय विद्वान् वैद्योंके त्रिये अत्यन्त है ।

संस्कृत उपोद्घातमें आर्यशारीरतल नामक सन्दर्भ बहुतही महत्वका है । भारी मन्थन करके वेदोंमेंसे जहाँ जो कुछ मिलता उतना शारीरतल खींच लिया है । वेदोंमें खासकर अथर्ववेद और शतपथब्राह्मणमें शारीरतलका उल्लेख विशेष है ।

इस शारीरतत्त्वको एकत्रित करके सुश्रुतके शारीर और आधुनिक शारीरसे तुलना करनेका पण्डितजीने खूब परिश्रम किया है । सन्दिग्धस्थानोंमें सविस्तर प्रमाणदेकर पण्डितजीने अच्छा प्रकाश डाला है । टिप्पणियोंको देखकरही पाठक जान सकते हैं कि किन २ सुदृढ प्रमाण और युक्तियोंसे इनके यथार्थ अर्थोंका प्रतिपादन किया है ।

रसग्रन्थोंमें एकही नामके अनेक प्रयोग हैं और एकही प्रयोगके अनेक नाम रखे हुए हैं, ऐसी प्रयोगोंकी अव्यवस्थामेंसे प्रयोगोंको छांटना कितना कठिन काम है, उसको अनुभवकी विद्वानही जानसकते हैं । इस ग्रन्थमें बहुतसे प्रयोग इतने कूटसङ्केतोंमें लिखे हुए आवे हैं कि जिनको देखकर मगज चकर खाता है उनकाभी सरल अर्थ पण्डितजीने बरी-योम्यतासे किया है । हम पाठकगणसे पण्डितजीके किये हुए वास्तविक विस्तृतभाष्यको देखनेका अनुरोध करते हैं । सम्पूर्ण वैद्य और आयुर्वेदप्रेमी जनतासे हमारी प्रार्थना है कि ऐसे ग्रन्थको एकवार अवश्य देखें और सद्गद करें,

धर्मभूषण

अयोध्या, जनवरी १९२८

इसमें रसोंका अपूर्व वर्णन है । प्रायः सभी वैद्यकग्रन्थोंके रसोंका इसमें समावेश किया गया है । इसकी विद्याल भूमिका तो भारतीय वैद्यविद्याकी प्रमाणभूतही है । इसमें वैद्यकशास्त्रकी सर्वोत्कृष्टमहत्ता और सर्वतोभावेन उपयोगिता दिखाते हुये कतिपय देशान्तरिय वैद्यों (डाक्टरों) के मतोंकी सप्रमाण समालोचना की गई है । ग्रन्थकर्ताके अगाधपाण्डित्यक इस भूमिकासे परिचय होता है । ऐसी भूमिकाएँ असाधारणगुणविशिष्ट ब्यक्तिही लिख सकते हैं । भूमिका सस्कृतभाषामें है । इसका प्रायः सभी विद्वानोंको अध्ययन करना चाहिए । यह सर्वथा उपादेय है ।

सुधानिधि

प्रयाग कार्तिक १९८४

इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत चढीबढी है । एक इस ग्रन्थके पासरहनेसेही फिर अनेक रसग्रन्थोंकी उतनी अधिक आवश्यकता नहीं रहजाती । यही नहीं एक औषधिके पाठके लिये अनेक पुस्तकोंके पत्रे सलत्नेकी आवश्यकता नहीं ।

आयुर्वेदविद्याके विलासी और खोजी विद्वानोंके लियेभी इस ग्रन्थकी उपयोगिता बहुत ऊँचे दर्जेकी है । भूमिकामें आयुर्वेदके इतिहास और शारीर तथा रोगविज्ञानसंबन्धी अनेक विवादों और उल्लंघनोंकी सुधिया सुलझानेका प्रयत्न किया गया है । पण्डित हरिप्रपन्नजी इस पुस्तकको छपाकर वैद्यसमाजके धन्यवादभाजन हुये हैं ।

श्रीमान् विद्वद्भर वैद्यराज पण्डित श्रीहरिप्रपन्नशर्माजीने इस अनुपम ग्रन्थरत्नकी रचना करके वैद्यवर्गका बड़ा उपकार किया है—अनेक आकर प्रथमों—(जिनमें बहुतसे अमौलिक अग्रकाण्डित और अग्रप्राप्य हैं) जो 'रसयोग इष्ट उषर वित्ते पश्येते उन्हें एक जगह अकारार्थि व्रमसे इच्छे करके इसग्रन्थकी बरी गागर (सटका) में मानो सागरको भर दिया है ।

ग्रन्थके आकार प्रकार और रंगढंगको देखकर समग्र कर्ताके पाण्डित्य और परिश्रमकी प्रशंसा करनी पड़ती है, ग्रन्थके आरंभमें बहुतविस्तृत १७८ पेजका संस्कृतमें उपोद्घात है, जो बरी खोज और विद्वत्तासे लिखा गया है, जिसमें ऐतिहासिक और दार्शनिक रीतिसे वैद्यकविषयका विशद विवेचन किया गया है, यह उपोद्घात पढ़ने लायक है, बड़े कामकी चीज है संस्कृत उपोद्घातका सार १०४ पृष्ठोंमें अंग्रेजीमें भी दिया है, जिसमें अंग्रेजी जाननेवाले वैद्य और जिज्ञासुगैंगकटरलोगनी लाभान्वित होसकेंगे । ग्रन्थके इस पहिले भागमें 'अ-से 'न' तक अनुक्रमके कोई दोहजार योग हैं प्रत्येक योगके मूलश्लो-कोंका सरल हिन्दीमें अनुवाद है, साथमें समग्रकृतों जहातहा अपने अनुभवकी लिपितेगये हैं कि कौन योग किस रोगपर अनुभूत है । पुस्तक सवप्रकारसे उपादेय और सबतरहसे सुन्दर है ।

काव्यडूटीर नायक नगला
म्हादपुर (बिजनौर) कार्तिकसुद ६ । ८७ वि. }

पद्मसिंह शर्मा.

केसरी

पुणे, ता. २१/१२/२८

सुबंद्देचे प्रसिद्ध वैद्य पण्डित हरिप्रपन्नजी यानी ऋषेद, अयर्वेद, यजुर्वेद, सतपथब्रह्मण, उपनिषदं व आयुर्वेदीय ग्रन्थ यांचा चिकित्सक व सशोधक सुदीन अभ्यास करून आयुर्वेदाची उदरति व अभ्युदय यांचें ऐतिहासिक रक्षा विचारण करणारा इमजी व संस्कृत उपोद्घात या ग्रन्थाचे प्रारंभी जोडला आहे तो विशेष मननीय व विचार करण्यसारखा आहे यांत सहाय नाही अमूल्य ब्रह्मण भारतीय वैद्यांउदें देवला आहे. वेचळ छापील ग्रन्थाचा सद्गद करणें मुझां फिदी कटपद याची कल्पना सामान्य लोकांसदि आहे. पण इत्यलिसिन प्रय सम्पादन करणें व त्यांचा संभद करणें हें फिदी प्रागचें व फिदी

Bombay, 13th, July 1928.

It was with great pleasure that I went through your valuable exhaustive book *Rasayogasāgara*. Your collecting and systematic grouping of the various formulae of *Āyurvedic* prescriptions will be of great help not only to professional *Vaidyas*, but also to laymen. I found your introduction especially instructive and I am sure it will be of great help to all those, who wish to study and understand our ancient medical system.

D. D. SATHAYE.

Ophthalmic Surgeon.

Calcutta, 8th 1930.

The introduction in which you have discussed the progress of medicine and surgery in ancient India will prove highly interestingThe commentary in Hindi, "*Bhasā*", will prove highly useful to those who are not well acquainted with Sanskrit.

P. C ROY.

University College of science and Technology.

Bombay, 30 10-1929

Rasayogasāgara (is) the *Āyurvedic* book of Chemical Pharmacy..... This book contains in detail the different *Āyurvedic* chemical preparations with mercury as their basis. This work is full of such preparations collected from different *Āyurvedic* works . .with true authentic names of the drugs... ..Introduction contains a synopsis in English of the origin of the *Āyurveda* and its spread in different countries. Going deep into the matter of the origin of *Āyurveda*, you have established its superiority ... for which you deserve best thanks of the medical public. In short you have been able to prove that the origin of *Āyurveda* dates so far back as that of the Vedas, and that if there is any unrivalled science in this world to heal diseases it is only *Āyurveda* the oldest and the bestdifferent healing sciences came into existence as offshoots of *Āyurveda*you have proved the thoroughness of the *Āyurvedic* science by giving equivalent *Āyurvedic* terms of different arteries, veins, organs, tissues etc known to the *Āyurvedic* practitioners from olden times its introduction shows your deep knowledge of the science. The book is really very useful to *Vaidyas*, *Āyurvedic* students, Doctors and *Hakims*.

POPAT PRABHURAM L M & S, PRANACHARYA

Principal, Prabhuram *Āyurvedic* College.

Nepal, 24-5 1928.

.. .. *Rasayogasagara* Vol I the valuable and welcoming giftThis book is one of the best and well suggested and defined books, that I have ever met with and *Vaidyas* might have met with.

A. M. VAJRACHARYA.

Librarian, Trichandra Collage, Nepal

Modern Review, March 1928

This is a laudable attempt at the compilation of a Sanskrit-Hindi dictionary of Āyurvedic Rāsa medicine. The various medicines are arranged in alphabetic order and original Sanskrit texts, with reference, tika where deemed necessary, and translation in modern Hindi given in each case from what we can see it is likely to be a valuable addition to the literature on this subject.....A table of Sanskrit anatomical terms with their English equivalents is given.

K. N. C.

Breslau, 4 1 1930.

Your work will do much in propagating the understanding of Āyurvedic medicine, especially through the table comparing Sanskrit anatomical words with their English equivalents. I congratulate you on what you have done already. And I am looking forward to further issues of your appreciable publication.

Prof. D CHUNIT.

Director of Staats und Universitäts Bibliothek.

Göttingen, 2-5 1930

I have studied the statement of your Introduction with the most vivid interest, being fully convinced, that also here in Germany the high value of the Indian medical systems and the necessity to study them is more and more recognised. For the Sanskrit scholar in my opinion the occupation with the Āyurveda is indispensable in consideration of the better understanding of the Veda, especially the Atharvaveda. I wish you the best progress of your meritorious task and should be grateful for informing me about the publication of further parts of your work in order to buy them for the University Library of Göttingen.

Prof. Fik

Director of Göttingen Universitäts Bibliothek.

27 French Road Chattrapty Sea face

Bombay 23 10 1930.

I have great pleasure in going over the two Books "Rasayogasagara" and "Klomyathathya" written by Vaidyaraj Hariprapannaji. His control over Sanskrit is very good and the former book is like a treasury of Indian Pharmacopoeia. In these days of Swadeshism, this should supply a foundation for the Industrial Development of Indian drugs. Panditji also seems to be a thinker of pure reason as one could see from his "Klomyathathya". His theory is very interesting but his arguments are still more interesting and sound. I should congratulate Panditji on production of such useful & instructive Volumes.

J. DURLABH DHURUV, M. S. F. R. C. S. D. L. O.

Surgeon to Sir J. J. Hospital.

Bombay 15 10-1930.

I had occasion to read the reply of Pandit Hariprapannaji to Vaidyaraj Kawade Shastri re the actual meaning of the word ग्लोय. I have come to the conclusion that Panditjee is correcting in writing the ग्लोय as Gall bladder.

D. D. SATHAYE
Ophthalmic Surgeon



होमयाथातथ्ये आभप्रायाः ।

पण्डितहरिप्रपन्नजीप्रापितः "होमयाथातथ्यं" नाम प्रबन्धो मया समग्रमवलोकितः । पण्डितमहाशयैः शतपर्यन्तं गणनासनेयसंहिताऽथर्वेसंहितादीनामतीवपरिभ्रमपूर्वकमभ्यासं कृत्वा तत्रस्थानि यानि यानि श्रुतिवचनानि अत्र उद्धृतानि तैः सर्वैरायुर्वेदीयशारीरसंशयास्वस्थानानां सर्वसंशयच्छेदि विवेचनं राज्ञातमिति मन्ये । आयुर्वेदशास्त्रं तदभ्यासवत् प्रबन्धलेखकैरुपकृता इति मे मतिः सर्वभियारवैरयं निबन्धः सूक्ष्मतयाऽभ्यस्य शारीरज्ञानवृद्धिरवश्यं कार्या, येन निबन्धकाराणां परिभ्रमः सफले भवेत् । पण्डितमहाशयानां कार्यमभिनन्दनीयम् ।

मुम्बापुरी आश्विन कृष्ण }
चतुर्दशी सं. १९८७ }

पेनापुरे उपाह्व वासुदेवशास्त्री.

-इह खलु होमयाथातथ्यमिलाख्यग्रन्थसङ्ग्रहे यथायुर्वेदतन्त्रार्णवमुन्मथ्यालभ्यन्नं प्रविचिच्योद्घाटितमेतद्विनिर्णयनीयं श्रीहरिप्रपन्नशास्त्रिमहोदयेन भिषक्चक्रचूडामणिना तद्विदितमेवास्ति वैयवर्तरीतोऽस्माभिरपि लोकोत्तरोपकारकप्रमहोत्सवं धन्यवादाः समर्चन्ते ।

हिन्दुविश्वविद्यालय, काशी भाद्रपदशुक्ल }
अष्टमी सं १९८७ }

धर्मदासकविराज
अध्यक्ष आयुर्वेद विद्यालय,

इह खलु 'होमयाथातथ्य'पदानिधमन्थसङ्ग्रहे प्राचेतसाऽभ्यन्तराऽवयवप्रणिगदने यथा प्रवचनशक्तिश्चाऽन्वेषण-चातुर्यचमत्कृतिः प्रतिभापरिणतिर्विद्वज्जनमनोऽनुरजननीतिलेखनीतिरापामांरावगमनप्रीतिर्निर्दिष्टता । नैतत्सर्वं केनाऽपि तिरोहितं वरीवर्ति इति सुविदितमेवास्तिवलोकितप्रम्यमनीपिभिरतोऽस्मै सूरिसमाधैतचरणसरोरुहरजये चिकित्सकाय न धन्य-वादप्रदानमन्तरा मनोऽवरुष्यत इति दिक् ।

अगस्त्यवृण्ड, काशी, भाद्रपद शुक्ल }
अष्टमी सं. १९८७ }

मिषगचार्य श्रीसत्यनारायणशास्त्री

निर्दिष्टाभिनवनिबन्धाऽभिधानालोचनाव्यवहितोत्तरक्षण एवोद्भूतकुतूहलेन मयाऽयमामूलोपान्तमालोचित एव सकौतु-कम् । प्रणेत्राऽन नैकशः श्रुतिस्मृत्यगदङ्कारप्राच्यनिबन्धालोडनेन विपश्चिन्मनोविनोदावहं प्रमाणजातप्रचुरं प्रास्थापि यत्कोमनो याथात्म्यं तेन सुष्टहीतनामधेयाना वैद्यपण्डित हरिप्रपन्नजी महाशयानां निरुपमवैदुष्येण लेखनपाटवेन च प्रमोदमुदिरखान्तः सन् प्रयुज्य तेष्यो धन्यवादान् अपूर्वोऽयं निबन्धः सर्वैर्विद्वद्भिर्विशेषतश्च भिषग्वैरवश्यं सङ्गाहः सादरं परिचेयधेलाभिप्रैति ।

मुम्बापुर आश्विनकृष्ण }
एकादशी सं. १९८७ }

पणशीकरोपाधिधारी वासुदेवशास्त्री.

अयि महाशयाः "श्रीमतां होमयाथातथ्यम्" सायन्तं याथातथ्येनाऽवलोक्य प्रफुल्लितं चित्तं मदीयम् । कदा-चाललाहितेन विप्रवेनाऽऽशुतं होमतत्त्वं पुनरपि लोकिकरीत्या वैदिकपद्धत्या च समर्पणं भवता प्रमाणीकृतमित्यत्र नास्ति शयाऽवकाशलेशोऽपि । ग्रन्थेऽस्मिन् भाषामयेऽपि भावगाम्भीर्यं धर्मशीलता कार्यपटुता लिपिकुशलता चारमनधेन्द्रियाणां च रङ्गदक्यैवाऽतो नव्यशारीरतत्त्वजिज्ञासूनामवश्यमिदं सहायकरं सम्पत्स्यत इत्याशावे ।

पटना
ता० १९१११३० }

पं. हजारीलालसुकुलः ।
रसायनाऽऽयुर्वेदिकपाठशालाऽध्यापकः । आयुर्वेदाचार्यः ।